सम्पादक :—
प्रो० रामरखसिंह सहगल

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ...	... ६) रु०
छः माही चन्दा	... ५) रु०
तिमाही चन्दा ...	... ३) रु०
एक प्रति का मूल्य	... ≡)

Annas Three Per Copy

भविष्य

सचित्र राष्ट्रीय साप्ताहिक

आध्यात्मिक स्व[राज्य] हमारा ध्येय, सत्य हमारा साधन और प्रेम हमारी प्रणाली। जब तक इस पावन अनुष्ठान में हम अविचल हैं, त[ब त]क हमें इसका भय नहीं, कि हमारे विरोधियों की संख्या और शक्ति कितनी है।

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एक मात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

संख्या १, पूर्ण संख्या २५

वर्ष १, खण्ड ३ | इला[हा]बाद—वृहस्पतिवार; १६ मार्च, १६३१ | संख्या १, पू[र्ण संख्या २५]

उपद्रव

[...]गया

स्वर्गीय मौ॰ मोहम्मदअली (आपके कराची षड्यन्त्र केस की कार्यवाही अन्दर देखिए)

वर्ष १, खण्ड ३, | इलाहाबाद—वृहस्पतिवार—१६ मार्च, १६३१ | संख्या १, पूर्ण संख्या २५

बम्बई की सभा में साम्यवादियों का उपद्रव

राष्ट्रीय झण्डा उतार कर लाल झण्डा फहराया गया

कॉङ्ग्रेस और महात्मा गाँधी के नाश के नारे लगाए गए

साम्यवादियों को महात्मा गाँधी का सम्बोधन

कॉङ्ग्रेस लाहौर के अपने 'स्वतन्त्रता' के प्रस्ताव को भूली नहीं है। कराँची में उसी प्रस्ताव की पुनरावृत्ति होगी और कॉङ्ग्रेस के उन नेताओं को जो गोलमेज़ परिषद् में भाग लेंगे, यह स्पष्ट चेतावनी दे दी जायगी कि वे ऐसी कोई स्वराज्य-योजना स्वीकार न करें जिसमें देश की ११ शर्तों के अनुसार 'स्वतन्त्रता के सार' की माँग पूरी न हो।

बम्बई में १७वीं मार्च को वहाँ के मिलक्षेत्र में महात्मा गाँधी के भाषण के लिए एक विराट सभा की योजना की गई थी ; परन्तु सभा के निश्चित समय के पहिले ही 'लाल झण्डा-समिति' (गिरनी कामगार यूनियन) के ४० सदस्य भीड़ को चीर कर मचान पर चढ़ गए और उन्होंने तिरङ्गे राष्ट्रीय झण्डे को उतार कर अपना लाल झण्डा फहरा दिया। उसके बाद उन्होंने 'महात्मा गाँधी का नाश हो' और 'कॉङ्ग्रेस का नाश हो' के नारे लगाए। परन्तु बाद में कॉङ्ग्रेस-वालण्टियरों ने फिर से राष्ट्रीय झण्डा फहरा दिया और जनता में शान्ति स्थापित हो गई। श्री० के०एफ़० नॉरिमेन और कॉङ्ग्रेस के अन्य नेताओं ने श्रमजीवी नेताओं से शान्ति रहने की प्रार्थना की और उन्हें इस बात का आश्वासन दिया कि उनके दो वक्ताओं को सभा में अपने विचार प्रकट करने का अवसर दिया जाएगा। सभा में महात्मा गाँधी के प्रवेश करते ही जनता ने 'महात्मा गाँधी की जय' के नारे लगाए, परन्तु कुछ लाल झण्डी वालों ने उस समय भी कुछ विरोधी नारे लगाए।

सभा श्री० नॉरिमेन के सभापतित्व में प्रारम्भ हुई। उन्होंने प्रारम्भ में श्रमजीवी नेता मि० रानादिवे को भाषण देने के लिए बुलाया। मि० रानादिवे ने कॉङ्ग्रेस और महात्मा गाँधी का बड़े क्रोधपूर्वक विरोध किया और महात्मा गाँधी पर मेरठ षड्यन्त्र केस के क़ैदियों को मुक्त न करने का दोष लगाया।

महात्मा गाँधी का भाषण

उनके बाद महात्मा गाँधी ने लाल झण्डी वालों के बहुत कुछ विरोध करने पर भी अपना भाषण प्रारम्भ किया। भाषण के प्रारम्भ में ही उन्होंने कहा कि मैंने अपने जीवन में कभी श्रमजीवियों को धोखा नहीं दिया और न भविष्य में कभी धोखा दूँगा। मैं उस समय से जब कि वर्तमान श्रमजीवियों और साम्यवादियों का जन्म भी न हुआ था, श्रमजीवियों के उत्थान का प्रयत्न कर रहा हूँ। लाहौर कॉङ्ग्रेस के पूर्ण स्वतन्त्रता के प्रस्ताव की अवहेलना का मुझ पर जो लाञ्छन लगाया गया है, उसके सम्बन्ध में मैं यही कहना चाहता हूँ कि कॉङ्ग्रेस अपने उद्देश्य पर स्थिर रहेगी और कराची में उसी प्रस्ताव की पुनरावृत्ति करेगी, साथ ही कॉङ्ग्रेस की ओर से जो सदस्य गोलमेज़ परिषद में जावेंगे उन्हें स्पष्ट रूप से यह चेतावनी दे दी जावेगी कि वे कोई ऐसी स्वराज्य-योजना स्वीकार न करें जिसमें देश को 'स्वतन्त्रता का सार' प्राप्त न हो सके। मेरठ षड्यन्त्र-केस के क़ैदियों के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी ने कहा कि मैं समस्त राजनैतिक क़ैदियों के छुटकारे का इच्छुक हूँ, परन्तु इस सम्बन्ध में कोई वचन नहीं दे सकता। परन्तु मैं यह विश्वास दिलाता हूँ कि मैं उस समय तक चैन न लूँगा जब तक सब राजनैतिक क़ैदी मुक्त न हो जायँगे।

श्री० सहगल जी

वहाँ से महात्मा गाँधी दादर की सभा में व्याख्यान देने गए और वहाँ उन्होंने दिल्ली की सन्धि के सम्बन्ध में कहा कि दिल्ली की अस्थायी सन्धि से कुछ स्वराज्य प्राप्त नहीं हो गया। इस अवसर पर यह नहीं कहा जा सकता कि उसका परिणाम क्या होगा। जो लोग यह कहते हैं कि गोलमेज़ परिषद् असफल हो जाने के उपरान्त युद्ध की पुनरावृत्ति आसानी से न हो सकेगी, वे स्वराज्य के योग्य नहीं हैं।

सन्ध्या समय आज़ाद मैदान में पं० जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व में एक विराट सभा हुई उसमें भाषण देते हुए महात्मा गाँधी ने कहा कि पिछले बारह महीनों में किसी ने शान्ति का विचार तक नहीं किया। पर सच्चे सत्याग्रहियों का यह कर्त्तव्य है कि वे सदैव शान्ति और युद्ध दोनों के लिए ही तैयार रहें। इस सन्धि में कोई ऐसी बात नहीं जिससे हमें लज्जित होना पड़े। सत्याग्रही सदैव त्याग पथ पर रहते हैं और यदि उन्हें अपने विरोधियों से सन्धि करने का अवसर आवे तो उन्हें विचारपूर्वक उसमें भाग लेना चाहिए और इसी भाव से कॉङ्ग्रेस वर्किङ्ग कमिटी ने यह सन्धि की है।

महात्मा जी ने क़ैदियों के छुटकारे के सम्बन्ध में कहा कि अगर आप लोग सन्धि की शर्तों का पूरी तरह पालन करेंगे तो उससे बचे हुए राजनैतिक क़ैदियों के छुटकारे में भी सहायता मिलेगी। मैं यह विश्वास दिलाता हूँ कि यदि उचित समझौता न हो सका तो युद्ध फिर प्रारम्भ होगा। भावी शासन-विधान में प्रतिबन्ध (Safeguards) उसी समय स्वीकार किए जावेंगे जब वे भारत के लिए लाभदायक होंगे। अन्त में उन्होंने विदेशी कपड़े के बहिष्कार, खद्दर पहिनने और हिन्दू-मुस्लिम एकता और छुआछूत दूर करने पर ज़ोर दिया।

दोपहर के उपरान्त महात्मा गाँधी पण्डित जवाहर लाल नेहरू और सरदार पटेल के साथ मिल मालिकों के एक प्रभावशाली दल से मुलाक़ात करने मिल एसोसिएशन के दफ़्तर में गए और वहाँ लगभग एक घण्टे तक मिल-मालिकों से विदेशी कपड़े के व्यापारियों का भार हलका करने के सम्बन्ध में विचार करते रहे।

—प्रेस-प्रतिनिधि के प्रश्न करने पर जामनगर के सुप्रसिद्ध नेता श्री० लवनप्रसाद ने कहा है कि यदि राजाओं की हार्दिक इच्छा संयुक्त शासन विधान में सम्मिलित होने की है तो उन्हें भी तुरन्त सब राजनैतिक क़ैदियों को छोड़ देना चाहिए। राजकोट और वरोल रियासतों ने सब राजनैतिक क़ैदियों को, जो इस सविनय अवज्ञा भङ्ग आन्दोलन के समय पकड़े गए थे, छोड़ दिया है। जोधपुर रियासत ने इस आन्दोलन के पहले पकड़े हुए क़ैदियों को छोड़ दिया है। जामनगर, पटियाला और दूसरी रियासतों ने अभी तक इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं किया।

* * *

—आगरा का १२वीं मार्च का समाचार है, कि पं० श्रीकृष्णदत्त जी पालीवाल ११ ता० को जेल से छोड़ दिए गए। आगरे के १३८ राजनैतिक क़ैदियों में से दो नहीं छोड़े गए, शेष सब छोड़ दिए गए हैं। इन दो में से एक पर सविनय अवज्ञा भङ्ग आन्दोलन के प्रारम्भ होने के पहले से राज-विद्रोह का मुक़दमा चलाया गया था; दूसरे न छूटने वाले पञ्जाब के एक सज्जन हैं।

—मद्रास का ६वीं मार्च का समाचार है, कि श्री० कोण्डा वेण्डूटपाया कल गुण्टूर जेल से छोड़ दिए गए। तीस व्यक्ति और भी छोड़े गए, इनमें १० स्त्रियाँ भी शामिल थीं। इन लोगों के मुक़दमों का अभी फ़ैसला न हुआ था।

—लाहौर का ११वीं मार्च का समाचार है, कि श्रीमती राजवती कौल, श्रीमती डी० ई० बेदी, श्रीमती वृजनारायण, श्रीमती कौशल्या देवी और दिल्ली की ४४ स्त्रियाँ आज जेल से छोड़ी गईं। बाद को श्रीमती आसफ़ अली और श्रीमती बसन्ती देवी भी छोड़ दी गईं।

सीमा प्रान्त के 'गाँधी'

श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, जो सीमा प्रान्त के 'गाँधी' के नाम से विख्यात हैं, ११वीं मार्च को लाहौर पहुँच गए उनका और जेल से छुटी हुई स्त्रियों का बड़े समारोह से स्वागत किया गया।

जेल में ११ पौण्ड वज़न बढ़ गया

देहरादून का ६वीं मार्च का समाचार है, कि नैनीताल के कुँअर आनन्दसिंह जो यहाँ 'ए' क्लास के क़ैदी थे, आज प्रातःकाल छोड़ दिए गए। उनका वज़न जेल में ११ पौण्ड बढ़ गया है और वे बहुत प्रसन्न हैं।

—अजमेर का ११वीं मार्च का समाचार है, कि सब राजनैतिक क़ैदी छोड़ दिए गए, परन्तु श्री० शङ्करलाल वर्मा, जो प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी के सेक्रेटरी थे और श्री० कवीलदास शर्मा जो कॉङ्ग्रेस के प्रसिद्ध काम करने वालों में से थे, अभी तक नहीं छूटे हैं। ये दोनों सज्जन उन पर्चों के बाँटने के लिए गिरफ़्तार हुए थे, जिनमें वर्किङ्ग कमिटी का पुलिस और फ़ौज सम्बन्धी प्रस्ताव था। इनके न छूटने से शहर के लोगों में बहुत असन्तोष फैल गया है। और इस ओर महात्मा जी और पं० जवाहरलाल नेहरू का ध्यान आकर्षित किया गया है।

राजनैतिक क़ैदियों को प्रीतिभोज

प्रतापगढ़ का १०वीं मार्च का समाचार है, कि छूटे हुए राजनैतिक क़ैदियों और वहाँ के स्वयंसेवकों को पृथ्वीगञ्ज स्टेट के भूतपूर्व मैनेजर श्री० ठाकुर साहब गजानन सिंह जी ने प्रीतिभोज दिया।

—नागपुर का ११वीं मार्च का समाचार है, कि आज नागपुर सेण्ट्रल जेल से २०० के क़रीब 'सी' क्लास के क़ैदी छोड़े गए। जब वे जुलूस बना कर सीताबल्दी की ओर जा रहे थे, दूसरी ओर से जेल की गाड़ी आई और सड़क की चौड़ाई की कमी से ड्राइवर गाड़ी को क़ाबू में न रख सका। १० आदमियों को साधारण चोटें लगीं।

कॉङ्ग्रेस के प्रसिद्ध कार्यकर्ता डॉ० एन० बी० खरे-होम-मेम्बर और डिप्टी-कमिश्नर से मिले और इस दुर्घटना की जाँच कराने को कहा। उन्होंने जाँच कराने का वादा किया है।

—बनारस का १६वीं मार्च का समाचार है, कि पुलिस ने लाजपतराय रोड पर अवस्थित एक दूकान की "भगतसिंह" नामक पुस्तिका के लिए तलाशी ली और कहा जाता है क उसकी ६ प्रतियाँ वह ले गई।

स्वागत

श्री० सहगल जी पर से राजविद्रोह का मामला उठा लिया गया !

पाठकों के प्रेम ने उन्हें खींच बुलाया

पाठक 'भविष्य' के विगत् अङ्क में पढ़ चुके होंगे, कि 'भविष्य' के सम्पादक और सर्वस्व श्री० रामरखसिंह जी सहगल गत २री मार्च को ६॥ बजे रात्रि को दण्ड विधान की १२४वीं 'ए' धारा (राजविद्रोह) के अभियोग में गिरफ़्तार करके तुरन्त ही नैनी जेल भेज दिए गए थे। आपके मामले की पेशी ७ वीं तारीख़ को पहिली बार हुई थी उस दिन आपने जेल की अदालत की कार्यवाही में भाग नहीं लिया था। अतएव मामला १३ ता० के लिए स्थगित कर दिया गया था। दूसरी पेशी के दिन, जब मि० बमफ़र्ड जेल में मामले की कार्यवाही के लिए पहुँचे तब उन्होंने सहगल जी से प्रश्न किया—"मि० सहगल क्या आप जानते हैं, मैं किस लिए यहाँ आया हूँ?" सहगल जी ने हँस कर उत्तर दिया—"हाँ ! मुझे पता चला है कि गवर्नमेण्ट इस मामले को बहुत कमज़ोर समझती है, इसलिए आप मुझ पर से केस उठाने के लिए यहाँ आए हैं।"

१३वीं मार्च को नैनी जेल से बाहर निकलते ही सहयोगी 'लीडर के प्रतिनिधि द्वारा लिया हुआ सहगल जी का चित्र

वस्तुतः उसी दिन मामला उठा लिया गया और आप नैनी जेल से क़रीब १० बजे दिन के रिहा कर दिए गए। जेल से छूटने के उपरान्त आप १२ बजे के क़रीब 'चाँद' कार्यालय में आए और वहाँ फाटक पर प्रेस और ऑफ़िस के कर्मचारियों ने उनका 'इनक़िलाब ज़िन्दाबाद' के नारों से ख़ूब स्वागत किया। उनके छूटने की इस ख़ुशी में सन्ध्या-समय उन्हें कर्मचारियों की ओर से एक सम्मान-पत्र समर्पित किया गया और एक प्रतिभोज भी दिया गया। सम्मान-पत्र के उत्तर में आपने एक ओजस्वी और अत्यन्त मार्मिक वक्तृता दी, जिसमें उन्होंने अपने जीवन का उद्देश्य तथा अपनी सफलता के कारण समझाए। वक्तृता के एक-एक शब्द में आत्माभिमान टपकता था। इसी वक्तृता में आपने कहा कि 'जब तक मेरे पास चाय की एक प्याली तक शेष रहेगी, तब तक मैं 'चाँद' और "भविष्य" प्रकाशित करता रहूँगा; चाहे पत्र एक पृष्ठ का ही क्यों न निकले, पर निकलेगा अवश्य।'

कुछ 'साहित्य-सेवियों' का गुण्डापन

इस संस्था तथा सहगल जी से असन्तुष्ट कुछ 'साहित्य-सेवी' गुण्डों ने बड़ी चालाकी से इस अवसर से अनुचित लाभ उठाने का प्रयत्न किया। सारे शहर में इस बात की अफ़वाह फैला दी गई है, कि सहगल जी किसी षड्यन्त्र केस के सम्बन्ध में पकड़े गए थे और वे इसलिए छोड़ दिए गए हैं, क्योंकि उन्होंने सरकारी गवाह बनना स्वीकार कर लिया है। लोगों को बड़ी चलाकी से सारी घटना इस प्रकार बतलाई गई, कि जिसमें उनकी समझ से सन्देह की बहुत कम गुञ्जाइश थी। कहा गया, कि २७ तारीख़ को स्वर्गीय 'आज़ाद' कम्पनी बाग़ में गोली से मारे गए, उसी रात को संस्था घेर ली गई और २८ फ़रवरी को हथियारबन्द पुलिस द्वारा तलाशी ली गई और २री मार्च को वे गिरफ़्तार कर लिए गए। इतनी बातें समझा कर, अन्त में यह कहा गया है, कि इक़बाली गवाह बनने के कारण ही वे इतनी जल्द जेल से मुक्त कर दिए गए हैं !

इस बात की भी अफ़वाह सुनने में आई है कि श्री० सहगल जी ने ही स्वर्गीय 'आज़ाद' का पता देकर उन्हें पुलिस द्वारा पकड़वा दिया था, यह भी सुना जाता है, कि इस संस्था द्वारा क्रान्तिकारियों की आर्थिक सहायता की जाती है और उनके पास यह धन रूस से आता है !!

एक दूसरी श्रेणी के लोगों ने यह अफ़वाह भी उड़ाई है कि 'चाँद' कार्यालय सदा से क्रान्तिकारियों का अड्डा रहा है और 'बम-फ़ैक्टरी' मातृ-मन्दिर में स्थापित की गई थी। सम्भवतः इसी अफ़वाह के वशीभूत होकर मातृ-मन्दिर की तलाशी इतनी कड़ी ली गई, कि पेड़ तक खोद कर देखे गए और अचार और पानी के मटकों तथा तकियों तक में बम ढूँढ़े गए थे।

हमें आशा है, विचारशील व्यक्ति इन सभी अफ़वाहों को घृणा एवं रोष की दृष्टि से ही देखेंगे। जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, सहगल जी भारतीय दण्ड-विधान की १२४वीं 'ए' धारा के अनुसार 'भविष्य' में 'स्वर्गीय खुदीराम बोस' की जीवनी प्रकाशित करने के अभियोग में गिरफ़्तार किए गए थे और गत १३वीं मार्च को बिना किसी शर्त प्रान्तीय गवर्नमेण्ट ने उनका मामला उठा लिया; फल-स्वरूप वे मुक्त कर दिए गए।

काशी में १००० स्वयंसेवकों को प्रीति-भोज

गत शुक्रवार को श्रीमती भगवती देवी और श्री० शिवप्रसाद जी गुप्त ने अपने सेवा-उपवन में स्वयंसेवकों को प्रीति-भोज दिया। ज़िले के भी बहुत से स्वयंसेवक आए थे। कुल स्वयंसेवकों की संख्या एक हज़ार के क़रीब थी।

—मद्रास का १२वीं मार्च का समाचार है, कि श्री० सत्यमूर्ति वेलोर जेल से छोड़ दिए गए।

*　　*　　*

तपोभूमि से लौटने वाली देवियों का सादर स्वागत

कलकत्ते की श्रीमती मोहिनी देवी, जिन्हें नमक-क़ानून भङ्ग करने के कारण छः मास की सज़ा दी गई थी।

कलकत्ते की श्रीमती लावरायप्रभा मित्र, जिन्हें सत्याग्रह-आन्दोलन में चार मास का दण्ड दिया गया था।

कलकत्ते की श्रीमती विमल प्रतिभा देवी, जिन्हें नमक-क़ानून भङ्ग करने के अपराध में छः मास की सज़ा हुई थी।

सत्याग्रह-संग्राम में जेल-यात्रा करने वाली कलकत्ते की सर्व-प्रथम महिला—श्रीमती इन्दुकुमारी गोइनका।

स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द की दौहित्री—श्रीमता उषा देवी, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुई हैं।

झाँसी के यूथलीग की प्रेज़िडेण्ट—श्रीमती पिस्तादेवी, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुई हैं।

लखनऊ कॉङ्ग्रेस कमिटी की चौथी डिक्टेटर—श्रीमती श्यामरानी देवी साहनी, जिन्हें छः मास की सज़ा दी गई थी।

आगरे की सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कार्यकर्त्री—श्रीमती शुकदेवी, जिन्हें छः मास की सख़्त सज़ा दी गई थी।

सूरत कॉङ्ग्रेस कमिटी की डिक्टेटर—श्रीमती बसुमती ठाकोर, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुई हैं।

लाहौर के नए षड्यन्त्र केस की मनोरञ्जक कार्यवाही

मुख़बिर द्वारा पुलिस पर भीषण दोषारोपण

"पञ्जाब की पुलिस को मैं बेईमान समझता हूँ"

"यदि तुम बयान न देते तो तुम्हारे भाई, बहिनों और स्त्री को गिरफ़्तार कर लिया जाता"

"सच्चे बयान का पन्ना जला कर दूसरा जोड़ दिया गया" :: सर्कारी गवाह का सनसनी-पूर्ण बयान

लाहौर का ६ठी मार्च का समाचार है, कि आज स्पेशल ट्रिब्युनल के सामने लाहौर के नवीन षड्यन्त्र-केस की पेशी हुई। अभियुक्तों के अन्यतम-वकील लाला रामलाल के प्रश्न के उत्तर में इक़बाली गवाह ने कहा कि मुझे डी० एस० पी० सय्यद अहमदशाह मोटे-मोटे सवालों का जवाब बता दिया करते हैं।

वकील—वह कौन से मोटे-मोटे सवाल हैं, जिनका जवाब आपको बताया जाता था? और आप क्यों इक़बाली गवाह बने?

गवाह—क्योंकि पार्टी के सभी मेम्बरों ने सारी गुप्त बातें प्रकट कर दी थीं; इसलिए मैंने भी भेद खोल दिया और इसीलिए मैं इक़बाली गवाह बना लिया गया। दूसरा सवाल जो मुझे पुलिस अफ़सर ने पढ़ाया था, वह यह था कि अभियुक्तों से दोस्ती और हमदर्दी ज़ाहिर करना। किसी से दुश्मनी न ज़ाहिर करना।

वकील—बयान देने से पहले किसी व्यक्ति को आपने शनाख़्त किया था?

गवाह नहीं।

वकील—आपको पुलिस ने किसी प्रकार की धमकी दी?

गवाह—मुझे अपना बयान पुलिस के सामने देने के बाद कहा गया, कि अब तुम सीधे रास्ते पर आ गए हो। और अगर तुम बयान न देते तो तुम्हारे भाई, बहनों और स्त्री को गिरफ़्तार कर लिया जाता और उन्हें भी मुक़द्दमे में शामिल कर लिया जाता।

वकील—तुम्हें इससे किसी प्रकार का डर पैदा हुआ?

गवाह—मुझे डर था कि मेरा भाई दीनानाथ अभियुक्त बना लिया जायगा। परन्तु मुझे दूसरे रिश्तेदारों के लिए कोई डर न था। क्योंकि वे तो मेरा काम करते ही न थे।

वकील—आपने बयान किस लिए दिया?

गवाह—मैंने बयान इसलिए दिया था, कि मुझे माफ़ी देने का वचन दिया गया था। दूसरी वजह यह थी, कि मैं समझता था कि अगर मैं बयान दे दूँ तो मैं भी बच जाऊँगा और मेरे रिश्तेदार भी गिरफ़्तार न होंगे।

वकील—गिरफ़्तारी के बाद आपका कौन सा रिश्तेदार शाही-क़िले में मिला?

गवाह—मेरी स्त्री १५ सितम्बर को मुझसे शाही क़िले में मिली थी।

वकील—आपको किस समय मालूम हो गया, कि आपका कोई रिश्तेदार गिरफ़्तार नहीं हुआ है?

गवाह—मुझे बयान देने से पहले ही पता लग गया था।

वकील—तुम्हारी इच्छा स्त्री से मिलने की थी या वही तुमसे मिली।

गवाह—वह मुझसे ख़ुद ही मिली।

वकील—दीनानाथ शाही क़िले में आपको कब मिला था।

गवाह—सितम्बर के अन्त में। उसने मुझसे बतलाया कि वह मुलाक़ात से एक दिन पहले लाहौर आया है।

वकील—आपने दीनानाथ को क्यों बाहर भेज दिया था।

गवाह—जब हंसराज ने मुझे बतलाया कि हमारी गिरफ़्तारी की सम्भावना है, इसलिए मैंने दीनानाथ को गाँव पर भेज दिया। क्योंकि मुझे डर था, कि वह भी गिरफ़्तार कर लिया जायगा।

वकील—आपने अपनी स्त्री से, जब वह क़िले में मिली थी, क्या कहा था?

गवाह—मैंने उससे कहा था कि अब दीनानाथ की गिरफ़्तारी का खटका नहीं है, इसलिए वह वापस आ जाए। क्योंकि तुम्हें प्रतिदिन यहाँ आने में कष्ट होगा और वह बराबर आकर मुझसे मिल सकता है।

वकील—इसके सिवा और आपने स्त्री से क्या कहा था?

गवाह—मैंने उसको बतलाया था कि मैं इक़बाली गवाह बन गया हूँ।

वकील—१५ सितम्बर से पहले आपने कौन सी जगह की पहचान की थी?

गवाह—जहाँ तक मुझे याद है, मैंने उस वक़्त तक भगवतीचरण की मौत की जगह की पहचान की थी।

वकील—आपने लाहौर के दूसरे स्थानों की कब पहचान की?

गवाह—माफ़ी का वचन मिलने के बाद।

वकील—आपने कितनी बार पहचान की?

गवाह—केवल एक बार मैजिस्ट्रेट के सामने।

वकील—रावलपिण्डी में भी आपने कई स्थानों की पहचान की थी?

गवाह—हाँ।

वकील—कौन-कौन वहाँ से गए थे?

गवाह—मि० महमूद, मैजिस्ट्रेट, ख़ाँ साहब अताउल्लाह इन्स्पेक्टर, मलिक बरख़ुरदार सब-इन्स्पेक्टर, मियाँ मोहम्मद हेड कॉन्स्टेबिल, मेरे साथ लायलपुर गए थे।

वकील—आप लोग किस तारीख़ को रावलपिण्डी गए थे?

गवाह—याद नहीं। मैजिस्ट्रेट के सामने बयान देने के बाद।

वकील—क्या आप ख़ैरातीराम की कार पर बैठ कर लायलपुर गए थे?

गवाह—नहीं।

वकील—फिर किसकी मोटरकार में गए थे?

गवाह—मि० चमनलाल की कार में जो मि० महमूद के दोस्त थे? क्योंकि सी० आई० डी० की मोटर ख़राब थी।

वकील—वह जगह जहाँ पर आपने खाना खाया था, उस दूकान को ढूँढ़ने के लिए पैदल गए थे, या मोटर पर?

गवाह—मैं पैदल गया था। जब वह दूकान न मिली तो पुलिस ने ज़बरदस्ती मुझसे एक सिक्ख की दूकान शनाख़्त करवा ली।

वकील—उस वक़्त पुलिसवालों ने उससे क्या सवाल किया और उसने क्या जवाब दिया?

गवाह—पुलिसवालों ने उससे पूछा तो उसने जवाब दिया कि जिस वक़्त की आप बातें करते हैं, उस वक़्त मेरी दूकान वहाँ न थी।

वकील—उस सिक्ख दूकानदार ने या आपने उस दूकानदार की शनाख़्त की?

गवाह—न उसने मुझे शनाख़्त किया और न मुझसे उसकी शनाख़्त कराई गई।

वकील—आपने कितने कारख़ाने पुलिस को दिखलाए।

गवाह—एक मैंने अपनी जानकारी से और दूसरा पुलिस के कहने पर दिखाया।

वकील—आप शेख़ूपुरा कब गए और किस कार में गए और कौन सा मैजिस्ट्रेट आपके साथ था?

गवाह—मैं शेख़ूपुरा मैजिस्ट्रेट के दौरे के समय गया और मिस्टर महमूद के साथ गया।

वकील—वहाँ पर कौन था।

गवाह—उस मकान में, जिसमें बम का चलना बयान किया जाता था, एक बुढ़िया थी।

वकील—उसने आपकी शनाख़्त कब की?

गवाह—२५ दिसम्बर को, लेकिन उसने पुलिस के कहने पर शनाख़्त की।

वकील—पहले ख़ैरातीराम सरकारी गवाह बने या तुम?

गवाह—ख़ैरातीराम।

वकील—आपने मुक़द्दमे के दौरान में शाही क़िले में किस मुल्ज़िम को देखा?

गवाह—मैंने जयप्रकाश और भीमसेन को दो-तीन दफ़े देखा—उनको इस वक़्त हथकड़ियाँ लगी हुई थीं और वे चारपाइयों से बँधे हुए थे। इस समय मैं भी हथकड़ियों से जकड़ा और चारपाई पर बँधा हुआ था।

वकील—क़िले में कितनी हवालातें हैं?

गवाह—दस-बारह।

वकील—क्या आपका भाई आपसे कभी-कभी मिलता था?

गवाह—हाँ।

वकील—आपके भाई का बयान किस तरह लिया गया और किस अफ़सर ने लिया?

गवाह—सय्यद अहमदशाह डी० एस० पी०, सी० आई० डी० ने मेरे बयान से कुछ ऐसा बयान निकाल लिया था, जो मेरे बयान की ताईद करता था—और वह भी क़ानूनी पकड़ में नहीं आ सकता था। उन्होंने ही मुझसे कहा कि मेरा भाई दीनानाथ क़ानूनी पकड़ में न आएगा। मुझसे कहा गया कि मैं उससे अदालत में वह बयान देने को कह दूँ, जो सय्यद अहमदशाह ने लिखा था।

वकील—आपसे सय्यद अहमदशाह डी० एस० पी० ने क्या कहा था?

गवाह—मुझसे कहा था कि सरदार गुलाबसिंह को सरकारी गवाह मुआफ़ी के वादे पर बना लिया जावेगा और वह मेरे बयान की पूरी तरह ताईद करेगा।

वकील—क्या आपको मैजिस्ट्रेट के मकान पर रोज़ाना ले जाया जाता था?

गवाह—ख़ाँ साहब मिस्टर अताउल्ला, मलिक बरख़ुरदार अली, मियाँ मुहम्मद हेड-कॉन्स्टेबिल रोज़ाना मुझे मैजिस्ट्रेट के बँगले पर ले जाते थे।

वकील—क्या पुलिस अफ़सर आपका बयान साथ ले जाते थे?

गवाह—हाँ।

वकील—आप अपना बयान ख़ुद ही देते थे या मैजिस्ट्रेट के सवालों का जवाब?

गवाह—मैजिस्ट्रेट ने कभी मुझसे कोई सवाल नहीं किया।

वकील—मलिक बरख़ुरदार और तुम कहाँ बैठे रहते थे?

गवाह—एक कोच पर।

वकील—क्या मलिक बरख़ुरदार आपका पुलिस का बयान हाथ में रखते थे?

गवाह—हाँ।

वकील—आपको कभी मलिक साहब ने मैजिस्ट्रेट के पास अकेले छोड़ा?

गवाह—एक मिनिट के लिए भी मुझे मैजिस्ट्रेट के पास अकेला नहीं छोड़ा गया।

वकील—क्या जो बयान आप मैजिस्ट्रेट के रूबरू देते थे वह पुलिस अफ़सर क़िला शाही में ले जाते थे?

गवाह—हाँ, दूसरे दिन आख़िरी सफ़ा ले आते थे जिसके आगे मेरा बयान शुरू कर दिया जाता था। जब मैजिस्ट्रेट साहब लञ्च के लिए जाते थे तो मैं मलिक बरख़ुरदार अली से मोटी-मोटी बातें पूछ लिया करता था। मुझे मेरा बयान पढ़ कर नहीं सुनाया गया। लेकिन आख़ीर में मैजिस्ट्रेट साहब ने लिख लिया था कि पढ़ कर सुनाया गया। "दुरुस्त तसलीम किया गया।" इस रोज़ ८ तारीख़ थी। लेकिन मैजिस्ट्रेट साहब ने मुझसे १०वीं नवम्बर लिखवा लिया। मेरे दिल में विचार आया कि मैं कोर्ट में जाकर इन मैजिस्ट्रेटों की चालाकी बयान कर दूँगा।

वकील—आपने उस वक़्त मैजिस्ट्रेट साहब से क्यों नहीं कहा, कि आज ८वीं तारीख़ है और मुझसे १०वीं नवम्बर लिखा रहे हो।

गवाह—अगर मैं ऐसा करता तो मेरे कान अच्छी तरह खींचे जाते और पुलिस मुझे मारती। यहाँ पर मौक़ा है; मैं साफ़ बयान कर रहा हूँ।

अपना बयान ख़तम करने के बाद मुझे न मैजिस्ट्रेट के आगे ले जाया गया और न बयान पढ़ कर सुनाया गया।

वकील—बयान देने के बाद आपके बयान में कोई तब्दीली शाही क़िला में हुई?

गवाह—मेरे बयान में बहुत-कुछ तब्दीलियाँ की गईं जिनमें से एक मुझे याद है। मेरे मैजिस्ट्रेटी बयान से एक सफ़ा उड़ा लिया गया और उसकी जगह दूसरा लिख कर रख दिया गया था।

इसके बाद अदालत लञ्च के लिए बरख़ास्त हुई।

जलपान के उपरान्त बहस फिर प्रारम्भ हुई

गवाह—पहले मैंने मैजिस्ट्रेट के सामने बयान दिया था कि १६ दिसम्बर को काकोरी-दिवस मनाया गया। इस जल्से के सभापति पं० हृदयनारायण थे। भगवतीचरण ने व्याख्यान देते हुए १८५७ के 'ग़दर' शब्द का इस्तेमाल किया। सभापति ने कहा कि ग़दर की जगह 'जङ्ग आज़ादी' इस्तेमाल किया जावे। मैंने यह भी बतलाया था कि मिस्टर भगवतीचरण ने मैजिक लैण्टर्न से तस्वीरें दिखलाई थीं और तस्वीरों के हालात भी सुनाए थे।

इसके बाद जब यह बयान पुलिस के हाथ आया तो पुलिस ने अपने काग़ज़ निकाल कर देखा कि इस जलसा के सभापति मिस्टर एम० ए० मजीद थे और तस्वीरें मि० केदारनाथ सहगल ने दिखाई थीं। इसलिए पुलिस ने इसके बारे में आपस में सलाह की। बयान तब्दील करने के लिए मेरे सामने ख़ाँ साहब सय्यद अहमदशाह डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस, ख़ाँ साहब शेख़ नियाज़ अहमद, डी० एस० पी०, ख़ाँ साहब मिर्ज़ा अताउल्ला इन्स्पेक्टर और मलिक बरख़ुरदार अली ने सलाह की। इसके बाद उन्होंने एक पृष्ठ मैजिस्ट्रेट के सामने दिए हुए बयान की फ़ाइल से निकाला। दूसरे दिन पुलिस अफ़सर एक पृष्ठ मेरे बयान का ठीक करके मेरे पास लाया। यह मैजिस्ट्रेट के हाथ का लिखा हुआ दिखलाई देता था। जो पृष्ठ मेरे बयान से निकाला गया वह जला दिया गया और जो पृष्ठ दुरुस्त करके लाया गया था वह बयान में शामिल कर दिया गया। इसकी ताईद मेरे बयान से होती है, क्योंकि मैंने अपने बयान में तारीख़वार सब बातें बतला दी हैं। दिसम्बर के माह में १८ अप्रैल का बयान है।

जिस जल्से का मैंने ऊपर ज़िक्र किया है, वह असल में 'काकोरी-दिवस' का जल्सा नहीं था, बल्कि लाहौर में एक जल्सा अप्रैल में हुआ था। इसका विवरण मैंने ग़लती से काकोरी-डे के जल्से के ज़िक्र में कर दिया और क्योंकि इससे पहले मैंने यह बयान भी दिया था, कि मैंने भगवतीचरण को लाहौर के जल्सों में व्याख्यान देते देखा था, इसलिए पुलिस के अफ़सरों ने यह फ़ैसला किया कि मेरे बयान में काकोरी-डे के विवरण का ज़िक्र अप्रैल वाले जल्से में कर दिया जावे और काकोरी-डे के विवरण को बढ़ा दिया जावे इसलिए दूसरे वर्क़ में जो पुलिस दूसरे दिन मैजिस्ट्रेट से लिखा कर लाई, पुलिस की इच्छानुसार परिवर्तन थे।

प्रश्न—इस बयान में जो परिवर्तन किए गए हैं उसे ज़रा फ़ाइल में दिखला दो जिसको बाद में पुलिस ने दुरुस्त करके लिखा था। गवाह ने वह बयान दिखला दिया जो पृष्ठ ५ पर था। फिर बयान किया कि जब दोनों बयानों को आपस में मिलाया गया तो इसमें से कई शब्द छूटे हुए थे—उन्हें एक काग़ज़ पर लिखा गया और बाद में मैजिस्ट्रेट साहब से ठीक करवा दिया गया। मैजिस्ट्रेटी बयान में ये शब्द कोने पर लिखे हुए दिखलाए गए।

वकील—कब इस बयान में तब्दीली हुई थी?

गवाह—मुझे पूरी तरह याद नहीं कि यह तब्दीली मेरे बयान होने के बीच में ही हुई, या बाद में। मुझे जो बयान याद करने के लिए दिया गया था उसमें मेरे मैजिस्ट्रेटी बयान को भी और बढ़ाया गया था।

वकील—इस बयान के बढ़ाने को तुम भूल समझते हो या बेईमानी?

गवाह—पञ्जाब पुलिस को मैं बेईमान समझता हूँ। इससे मैं यह नतीजा निकालता हूँ कि पुलिस ने बेईमानी से ही ऐसा किया। मुझे दिसम्बर में मैजिस्ट्रेटी बयान को याद करने के लिए उसकी नक़ल दी गई थी। बाद को यह कॉपी ले ली गई और साइक्लोस्टाइल से छपी हुई दी गई। पुलिस ने कई बार मेरी परीक्षा ली, पर मैं हर बार सफल रहा।

दूसरे सरकारी गवाहों के बयान मुझे १० जनवरी को शाम को दिए गए। वे साइक्लोस्टाइल से छपे हुए थे। एक दिन मेरे सामने किसी पुलिस अफ़सर ने सरनदास गवाह का बयान दिया, जिसमें मैंने पढ़ा कि ७वीं जून को लाहौर में हंसराज, इन्द्रपाल और गुलाबसिंह मेरी मौजूदगी में बम बनाते थे और रावी नदी के किनारे पर गए थे, लेकिन मेरे बयान में इसके विरुद्ध था इसलिए पुलिस अफ़सरों ने आपस में सलाह करके मौजूदगी के पहले 'अदम' लफ़्ज़ बढ़ाना तय किया और जब मुझे साइक्लोस्टाइल से छपी हुई कॉपी दी गई तब उसमें यह शब्द जोड़ा हुआ था।

सफ़ाई के वकील ने अदालत से यह बयान लेकर देखा तो उसमें 'अदम' शब्द वास्तव में बढ़ा पाया। इसकी ओर अदालत का ध्यान आकर्षित किया गया और अदालत से प्रार्थना की गई, कि इस बात को नोट कर ले कि यह शब्द स्पष्टतः बाद में बढ़ाया हुआ दिखलाई देता है।

* * *

लाहौर का १६वीं मार्च का समाचार है, कि श्री० श्यामलाल एडवोकेट के जिरह करने पर मुख़बिर इन्द्रपाल ने कहा, कि पुलिस ने उसे सरकारी गवाहों की एक सूची और अन्य घटनाओं सम्बन्धी तारीख़ आदि, इसलिए पहिले ही दे दी थी, ताकि मुख़बिर उसे ज़बानी याद कर ले! मुख़बिर का कहना था, कि ट्रिब्यूनल के सामने उसका बयान जिन दिनों हो रहा था, उन दिनों में भी पुलिस उसे बराबर अपनी मनचाही बातें कहने के लिए सिखलाती रही।

प्र०—साइमन कमीशन का बहिष्कार क्यों किया गया था?

पुलिस के इस प्रश्न पर आपत्ति करने पर श्री० श्यामलाल ने कहा, कि वे यह बात केवल इसलिए स्पष्ट कराना चाहते हैं, कि साइमन कमीशन के विरोध के सम्बन्ध में ही पञ्जाब में हिंसात्मक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ था, जिसके लिए गवर्नमेण्ट सर्वथा ज़िम्मेदार है। इस पर कोर्ट ने इसी प्रश्न को अन्य रूप में रखने की अनुमति दे दी।

प्र०—उस समय जनता की मनोभावनाएँ क्या थीं?

उ०—इस गोरी-कमीशन के प्रति जनता में बड़ा असन्तोष फैल रहा था। (स्वर्गीय) लाला लाजपतराय के पीटे जाने पर यह असन्तोष और भी अधिक बढ़ गया था।

शेष कार्यवाही 'भविष्य' के आगामी अङ्क में प्रकाशित की जायगी।

* * *

तलाशी में पिस्तौल मिली

कानपुर का १३वीं मार्च का समाचार है, कि लोकमन मुहाल के श्री० केदार अहीर के मकान पर सब-इन्स्पेक्टर अब्दुल वाहिद ने कुछ पुलिस कर्मचारियों के साथ छापा मारा और उसके घर की तलाशी ली। तलाशी में एक दोनली पिस्तौल, २७ कारतूस, ३२ बोर और २४ टोपियाँ मिलीं। श्री० केदार का पता नहीं लगा, पुलिस उनकी तलाश में है।

* * *

शारदा-क़ानून तोड़ने वालों पर मुक़दमे

दिल्ली में ११वीं मार्च को एसेम्बली में यह प्रश्न पूछा गया, कि शारदा-एक्ट के अनुसार क़ानून के विरुद्ध विवाह करने पर कितने मुक़दमे अब तक चले, कितनों को दण्ड मिला, कितने हिन्दुओं के विरुद्ध थे और कितने मुसलमानों के। उत्तर में गवर्नमेण्ट की ओर से बतलाया गया, कि कुल २९ मुक़दमे चले जिनमें से २५ हिन्दुओं पर, ३ मुसलमानों पर और १ ईसाई पर थे। इनमें से ११ सफल हुए, ६ ख़ारिज कर देने पड़े, चार को छोड़ देना पड़ा, एक वापस ले लिया गया और चार अभी विचाराधीन हैं। छः मुक़दमों में जुर्माने किए गए, एक में एक माह सादी क़ैद, दूसरे मुक़दमे में क़ैद का दण्ड हुआ, पर अन्त में वे क्षमा कर दिए गए।

अफ़ग़ानिस्तान के भूतपूर्व शाह का पत्र

पेशावर का समाचार है, कि ज़मींदार-पत्र में सम्राट अमानुल्ला का एक पत्र प्रकाशित हुआ है, जिसमें उन्होंने लिखा है कि जनरल नादिर ख़ाँ ख़ुद बादशाह बन बैठने पर अपने उन सब वादों को भूल गए, जो उन्होंने १९२९ में उस समय के बादशाह के साथ किए थे।

पत्र में यह भी कहा गया है, कि यूरोप जाने के समय अमानुल्ला के दस करोड़ रुपए अपने साथ ले जाने की बात ग़लत है। वे ख़ज़ाने से एक पाई भी नहीं ले गए। उनके पास कुछ अपने प्राइवेट रुपए थे। हिन्दुस्तान के पीरों की बेइज़्ज़ती करने की बात से भी इन्कार किया गया है और वर्तमान सम्राट नादिरख़ाँ की राज्य-प्रणाली से जो बेचैनी अफ़ग़ानिस्तान में उत्पन्न हुई है, उस पर दुःख प्रकट किया गया है।

श्री० गुप्ता की गवर्नर से भेंट

श्री० सेन गुप्त कलकत्ते में गवर्नर से मिले और अपने ११ ता० के लिखे हुए पत्र तथा इधर जो और बातें मालूम हुई थीं उन पर बातचीत की। अपने पत्र के द्वारा कॉङ्ग्रेस के उन कार्यकर्ताओं को जो केवल सन्देह के कारण अब भी जेलों में पड़े हैं या जो समझौते के अनुसार छुटकारे के अधिकारी होते हुए भी अब तक नहीं छोड़े गए, तुरन्त छोड़ देने के लिए उन्होंने गवर्नर का ध्यान आकर्षित किया है। गवर्नर ने जाँच करने का वचन दिया है।

बर्मा में नया ऑर्डिनेन्स

बर्मा-विद्रोह के बारे में १,००० से अधिक आदमी पकड़े गए थे, किन्तु इनमें से आधे से अधिक छोड़ दिए गए हैं। अब एक नया ऑर्डिनेन्स जारी किया गया है जिसके अनुसार ३५० आदमियों पर मुक़दमे चलाने की आज्ञा दी गई है और शङ्का है कि मुक़दमों की संख्या अभी बढ़ानी पड़ेगी। फ़ैसले में देर न हो, इसलिए विशेष अदालतें बनाई जावेंगी। इनमें ऐसे हाकिम होंगे जो रङ्गून में हाई-कोर्ट के जज अथवा सेशन जज रहे हों। जिनको ५ वर्ष से कम के लिए कारावास का दण्ड मिलेगा, उनकी अपील इस ऑर्डिनेन्स के अनुसार न हो सकेगी।

विदेशी कपड़ों की होली

अहमदाबाद का समाचार है, कि वहाँ महात्मा गाँधी जी ने सेठ रणछोड़ लाल इत्यादि के यहाँ से इकट्ठे किए हुए दस हज़ार रुपयों के विदेशी कपड़ों की होली जलाई।

कराची कॉङ्ग्रेस

महात्मा गाँधी २४ मार्च को कराची पहुँचेंगे। वहाँ उनके ठहरने के लिए एक कुटी कॉङ्ग्रेस नगर में बनाई गई है। कार्यकारिणी समिति ने यह निश्चय किया है कि दर्शकों के ठहरने का स्थान 'हरचन्दराय विशनदास नगर' में होगा। ठहरने के लिए कुल समय के लिए चार रुपए, आठ आने चार्ज होगा। जाने वाले लोगों को तुरन्त सूचना भेज देनी चाहिए, क्योंकि स्थान केवल दो हज़ार आदमियों के लिए है। प्रतिनिधियों को ३) ही देना होगा।

सब राजनैतिक क़ैदियों को छोड़े बिना राजनैतिक वायु मण्डल शुद्ध नहीं हो सकता

डॉ० किचलू का वक्तव्य

एसोसिएटेड प्रेस के सम्वाददाता से डॉ० किचलू ने मुलाक़ात में कहा, कि बिना सब राजनैतिक क़ैदियों को छोड़े राजनैतिक वायु-मण्डल शुद्ध नहीं हो सकता। उन सभी क़ैदियों का, जो देश-भक्ति के कारण जेल गए हैं, छोड़ा जाना आवश्यक है—चाहे वे हिंसावादी हों या अहिंसावादी। सरकार को उचित है कि इन सब क़ैदियों को छोड़ कर युवकों को सन्तुष्ट करे।

एक लाख स्वयंसेवकों को भर्ती करने की प्रतिज्ञा

लाहौर में श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ने, जो सीमा-प्रान्त के 'गाँधी' समझे जाते हैं—अपने व्याख्यान में कहा कि अभी युद्ध रोकने के वास्ते समझौता हुआ है, सन्धि नहीं हुई है। राष्ट्रीय कार्य के लिए एक लाख लाल कुर्ते वालों को सीमा प्रान्त से मैं भरती करूँगा। आपने यह भी कहा कि पठानों को जातीय झगड़ों से कोई वास्ता नहीं है। वे उन हिन्दू, मुसलमानों और सिक्खों के साथ हैं, जिन्होंने भारत को स्वतन्त्र कर देने का प्रण किया है!

—जनरलगञ्ज के विदेशी कपड़े के कुछ व्यापारियों ने कॉङ्ग्रेस की लगाई हुई मुहरें तोड़ डाली हैं। यह समाचार पाते ही कॉङ्ग्रेस की ओर से इन व्यापारियों की दूकानों पर शान्तिपूर्ण धरना जारी कर दिया गया है।

—बनारस का ११वीं मार्च का समाचार है, कि तपोनिधि श्रीकृष्ण स्वामी जी ने श्री० विश्वनाथ जी के नए मन्दिर के शिलान्यास की हिन्दू यूनिवर्सिटी के हाते में स्थापना की। बहुत भीड़ इकट्ठी हुई थी। पं० मदनमोहन मालवीय जी ने अपने व्याख्यान में कहा कि यह मन्दिर हिन्दू-मात्र के लिए खुला रहेगा, अतः इसमें अछूत लोग भी जा सकेंगे।

क्या भारतवर्ष की जन-संख्या ३५ करोड़, १० लाख हो गई?

दिल्ली का १४ मार्च का समाचार है, कि भारतवर्ष की जन-संख्या २६ फ़रवरी, १९३१ को ३५ करोड़, १० लाख थी। सन् १९२१ की जन-संख्या ३१ करोड़, ९० लाख थी इसलिए ३ करोड़, २० लाख लोग इस बीच में बढ़े?

राजा साहब कालाकाँकर की चीज़ों की क़ुर्की

लखनऊ का १७वीं मार्च का समाचार है, कि ख़रीफ़ क़िश्त की मालगुज़ारी के ३८,०००) अभी तक अदा न होने से डिप्टी कमिश्नर प्रतापगढ़ की आज्ञानुसार राजा साहब कालाकाँकर की दो मोटरकारें, एक मोटर लॉरी, एक मोटर-बोट, दो हाथी, कुछ घोड़े और गाड़ियाँ क़ुर्क़ कर ली गई हैं!

राजा साहब को कुल ८८,०००) के क़रीब इस क़िश्त में देना पड़ता है, इसमें ५०,०००) के क़रीब दिया जा चुका है। उनकी मालगुज़ारी सदैव ठीक समय पर अदा होती रही है। इस बार आर्थिक सङ्कट में पड़े हुए किसानों से लगान वसूल नहीं किया जा सका, यह उसी का परिणाम है।

वे महात्मा गाँधी को अपने यहाँ सदैव टिकाया और उनकी यथाशक्ति सदैव सेवा किया करते थे। पाठकों को स्मरण होगा पं० मोतीलाल नेहरू का देहान्त लखनऊ में उनकी कोठी में ही हुआ था। लोगों कहना है कि सरकार ने उनके राजनैतिक कामों से चिढ़ कर ही यह कार्रवाही की है। राजा साहब की अवस्था केवल २३ वर्ष की है।

पं० जवाहरलाल नेहरू का बम्बई में स्वागत

ता० १५वीं मार्च को पं० जवाहरलाल, श्रीमती कमला नेहरू आदि के साथ बम्बई पहुँचे। स्टेशन पर मि० नरीमैन, सेठ जमनालाल बजाज आदि ने आपका स्वागत किया। पं० जवाहरलाल ने जुलूस निकाला जाना पसन्द नहीं किया। वे मोटर में बैठ कर सीधे अपने निवासस्थान चले गए। ता० १६ को उनकी और श्रीमती कमला नेहरू की एक्स-रे से परीक्षा की गई, क्योंकि आप लोगों का स्वास्थ्य ठीक न था। आप निरन्तर सार्वजनिक सभाओं में व्याख्यान दे रहे हैं।

'बम का कारख़ाना'

लाहौर का १६वीं मार्च का समाचार है, कि गोपाल किशन, कुँवर और चूना आज एडिशनल ज़िला मैजिस्ट्रेट के सामने लाए गए और फिर मुक़दमा ३१ तारीख़ तक के लिए स्थगित कर दिया गया। ये लोग ३१ जनवरी को पकड़े गए थे। पुलिस का कहना है कि शीशा मोती बाज़ार में ये लोग बम का कारख़ाना चला रहे थे। पुलिस ने हमला करके कुछ बम बनाने वाली कुछ वस्तुओं को प्राप्त किया था और वे लोग पकड़े गए थे।

श्री० सज्जन सिंह की अपील ख़ारिज

लाहौर का १६वीं मार्च का समाचार है, कि श्री० सज्जन सिंह की अपील हाईकोर्ट ने ख़ारिज कर दी। सेशन्स जज ने मिसेज़ कर्टिस की हत्या के लिए फाँसी का दण्ड इन्हें दिया था। वह बहाल रहा।

ख़ुफ़िया पुलिस के अफ़सर पर वार

चिटगाँव का १६वीं मार्च का समाचार है, कि पुलिस के असिस्टेण्ट सब-इन्स्पेक्टर श्री० शशाङ्क भट्टाचार्य जी के पेट में, जब कि वे चिटगाँव से २० मील दूर बरामा नामक गाँव में थे, किसी ने गोली मार दी। आप सन्ध्या को चिटगाँव के अस्पताल में लाए गए हैं। आपकी हालत चिन्ताजनक बतलाई जाती है। गोली मारने वाले का अभी तक पता नहीं चला है।

मोटर में बम

कलकत्ते का १४वीं मार्च का समाचार है, कि मानिकतल्ला में एक मोटर-ड्राइवर मोटर को रात में जिस स्थान में बन्द कर के गया, प्रातःकाल उसी स्थान में मोटर पर एक टोकरी उसे मिली। जिसमें कहा जाता है, कि एक बम मिला है।

कॉङ्ग्रेस का उद्देश्य पूर्ण स्वतंत्रता है

"औपनिवेशिक-स्वराज्य दासत्व की निशानी है"

जनता को आगामी युद्ध के लिए तैयार रहने का आदेश

बम्बई के आज़ाद मैदान में राष्ट्रपति का भाषण :: राष्ट्रपति की क्रान्तिकारियों से सहानुभूति

गत १४वीं मार्च को राष्ट्रपति पण्डित जवाहरलाल नेहरू इलाहाबाद से बम्बई गए थे। जिस शान से बम्बई ने राष्ट्रीय संग्राम में भाग लिया था, राष्ट्रपति के पहुँचने पर उसने उसी शान से उनका स्वागत भी किया। गत रविवार को आज़ाद मैदान में श्री० के० एफ़० नॉरीमेन के सभापतित्व में एक विराट सभा हुई थी, उसमें भाषण देते हुए राष्ट्रपति ने कहा, कि जब मैं पिछली बार जेल से रिहा हुआ था, तब बम्बई ने मुझे निमन्त्रण दिया था; परन्तु एक सप्ताह के बाद ही मैं फिर गिरफ़्तार कर लिया गया। जेल से छूटते ही मुझे बम्बई का निमन्त्रण याद आया। और मैं आज उसकी सेवा में उपस्थित हो सका हूँ। बम्बई के राष्ट्रीय संग्राम की ख़बरें मुझे जेल की चहारदीवारी के अन्दर भी मिल जाती थीं और उन्हें सुन कर मेरी छाती फूल जाती थी। मुझे जेल में दुःख केवल इस बात का था, कि मैं व्यक्तिगत रूप से तुमुल संग्राम में भाग नहीं ले सका और मैं जेल ही में यह सोचा करता था; जब कभी मुझे बम्बई जाने का अवसर प्राप्त होगा, मैं वहाँ अवश्य जाऊँगा और इस बात की परीक्षा करूँगा, कि मेरे जैसा निर्बल व्यक्ति क्या बम्बई की स्त्रियों की तरह देश की कुछ सेवा कर सकेगा या नहीं? मुझे इस बात का बहुत दुःख है कि ऐसे समय में, जब कि मुझे एक राष्ट्रीय सैनिक की हैसियत से युद्ध में भाग लेकर शत्रु का मोरचा फ़तह करना चाहिए था, मैं इस सभा में भाषण दे रहा हूँ।

दिल्ली की अस्थायी-सन्धि

दिल्ली की अस्थायी सन्धि का वर्णन करते हुए, राष्ट्रपति ने कहा कि 'हमारे जनरल ने हमें युद्ध अस्थायी रूप से बन्द करने की आज्ञा दी है। परन्तु यह सदैव याद रक्खो कि उसने हमें कुछ समय के लिए केवल धावा करने से रोका है। यह सन्धि नहीं है और हमारा युद्ध उस समय तक बन्द नहीं हो सकता, जब तक हम अपने देश को पूर्ण स्वतन्त्र न कर लेंगे। मुझे इस बात का अत्यन्त दुःख है कि हमें कुछ दिनों के लिए मोर्चा छोड़ कर वाक्-युद्ध में रत होना पड़ेगा। अभी सन्धि-पत्र की स्याही सूखने भी नहीं पाई और लोग उसकी विवेचना कर उसके अलग-अलग मतलब निकालने लगे हैं। मैं जब वकालत करता था, तब शब्दों की हत्या कर उनसे अपना मतलब निकालने का प्रयत्न करता था, परन्तु मैं अब उससे घृणा करता हूँ। मैंने किसी निश्चित-अर्थ से सन्धि पर अपनी सहमति दी थी। हमारे जनरल ने उसका अर्थ बिलकुल स्पष्ट कर दिया है और उसकी अक्षरशः पूर्ति पर ही सन्धि सम्भव है।' लाहौर कॉङ्ग्रेस के पूर्ण स्वतन्त्रता के प्रस्ताव की ओर २६वीं जनवरी की पूर्ण स्वतन्त्रता की प्रतिज्ञा की याद दिलाते हुए पण्डित जी ने कहा, कि 'पूर्ण स्वतन्त्रता की वह प्रतिज्ञा आपने ही की थी और यदि आप उसे भूल गए हों तो घर जाकर उस पर ख़ूब विचार कीजिए। याद रक्खो! हम उस प्रतिज्ञा से एक इञ्च पीछे नहीं हट सकते। वह हमारा आदर्श है और हम यह जानना चाहते हैं कि देश उसे प्राप्त करने के लिए कहाँ तक अपना बलिदान करने के लिए तैयार है। हमें उस आदर्श से च्युत करने का सामर्थ्य किसी में नहीं है। जिस कॉङ्ग्रेस ने इतनी शक्तिशाली गवर्नमेण्ट से लोहा लिया है, वह अपना आदर्श नहीं बदल सकती। स्वयं महात्मा गाँधी बदलने में असमर्थ हैं। केवल भारतीय राष्ट्र उसे बदल सकता है!

इस अवसर पर भीड़ चारों ओर से राष्ट्रपति के दर्शन के लिए प्लेटफ़ॉर्म की ओर उमड़ पड़ी। सब सभा में हुल्लड़ मच गई और यह प्रतीत होने लगा, कि सभा को विवश होकर भङ्ग करना पड़ेगा; परन्तु राष्ट्रपति ने भाषण देने का निश्चय कर लिया था। वे अपने स्थान से एक इञ्च भी न हटे। लगभग १५ मिनिट तक भीड़ में अशान्ति रही, परन्तु अन्त में वालण्टियरों की सहायता से सभा में शान्ति हो गई और पण्डित जी ने फिर अपना भाषण प्रारम्भ किया। उन्होंने कहा कि मैं भाषण देने का निश्चय कर चुका था, यदि सभा में केवल १० व्यक्ति भी रहते, तो भी मैं भाषण देता।

श्री० के० एफ़० नॉरिमेन

'संसार के सब से बड़े साम्राज्य को घुटना टेकना पड़ा'

शान्ति स्थापित हो जाने पर राष्ट्रपति ने फिर भाषण प्रारम्भ करते हुए कहा—

"हमने संसार के सब से बड़े साम्राज्य से युद्ध ठाना है" और यद्यपि हम अशस्त्र हैं, परन्तु हमारे जनरल ने हमें सत्याग्रह का वह शस्त्र दिया है, जिसने एक शक्तिशाली साम्राज्य को भी घुटनों पर ला दिया है। व्यक्तिगत रूप से मुझे यह स्वीकार करने में किञ्चित सङ्कोच नहीं है, कि मैं शस्त्रों के उपयोग से ज़रा भी नहीं हिचकिचाता। मुझे इस बात में शर्म नहीं मालूम पड़ती, कि हमने इस युद्ध में शस्त्रों का उपयोग नहीं किया। शर्म तो मुझे इस बात की मालूम पड़ती है कि मेरा देश दासत्व के बन्धन में पड़ा हुआ है।

"परन्तु शस्त्रों का उपयोग करने के पहिले हमें उसकी व्यावहारिकता पर अवश्य विचार करना चाहिए। यही सोच-विचार कर हमने अपनी स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए अहिंसात्मक पथ का अवलम्बन किया है और समस्त संसार ने इतने से ही उसकी शक्ति का परिचय पा लिया है।

'हमारे वीर कॉमरेड'

"यद्यपि हमने अहिंसात्मक पथ का अवलम्बन किया है, परन्तु हमारे कुछ भाई ऐसे भी हैं, जिन्होंने दूसरा—हिंसात्मक-पथ ग्रहण किया है। वे हमारे वीर कॉमरेड (साथी) हैं। उनमें से अधिकांश अभी भी जेलों की चहारदीवारी में बन्द हैं। मुझे ऐसी परिस्थिति में, जब कि वे जेलों में सड़ रहे हैं; जेल से बाहर होने में शर्म मालूम होती है। हम अपने सभी साथियों को जेल से मुक्त नहीं कर सके, परन्तु इससे यह न समझना चाहिए कि हमें उनसे सहानुभूति नहीं है। यह हमारी निर्बलता है, कि हम उन्हें स्वतन्त्र नहीं कर सके, परन्तु हममें शक्ति आते ही हम उन्हें मुक्त किए बिना चैन न लेंगे।

श्री० चन्द्रशेखर आज़ाद

"हमारे एक वीर कॉमरेड की हत्या हाल ही में हुई है। उसका नाम था चन्द्रशेखर आज़ाद। दस वर्ष पहले वह १५ वर्ष का एक बालक था और बनारस के एक स्कूल में अध्ययन करता था। गत असहयोग आन्दोलन में अध्ययन को तिलाञ्जलि देकर वह जेल गया और वहाँ 'महात्मा गाँधी की' जय बोलने पर उसे कोड़ों की सज़ा दी गई। परन्तु कोड़े उस वीर के नारे न रोक सकते थे। हर एक कोड़े के उपरान्त उसके मुँह से 'महात्मा गाँधी की जय' का नारा निकलता था और वह उस समय तक जय बोलता रहा, जब तक बिल्कुल बेहोश न हो गया! इस कोमल बालक की निर्भीकता की सराहना किए बिना कौन रह सकता है? उसने देश की गुलामी के प्रतिकार के लिए एक दूसरे पथ का अवलम्बन किया था और वह अपने सिद्धान्त पर दृढ़ रहने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए तैयार था। अवसर आते ही उसने अपनी आहुति दे दी। यह एक क्षण के लिए भी न सोचो, कि हम उनके पथ का अनुसरण न करने के कारण उनसे किसी प्रकार ऊँचे हैं!

औपनिवेशिक स्वराज्य और दासत्व

"सम्भव है कि औपनिवेशिक स्वराज्य और पूर्ण-स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में फिर वादविवाद उठ खड़ा हो, परन्तु हमारा आदर्श तो पूर्ण स्वतन्त्रता है और हम उस पर डटे रहेंगे। हमें ब्रिटिश लोगों और उनके देश से कोई द्वेष नहीं है, परन्तु मैं उनकी साम्राज्यवादी नीति और उनके मनोभावों से घृणा करता हूँ और मैं उस पद्धति का नाश किए बिना चैन न लूँगा! औपनिवेशिक स्वराज्य के अन्तर्गत अर्थ-व्यवस्था और फ़ौज अङ्गरेज़ों के हाथों में रखने की योजना की गई है और यदि ये दोनों उनके हाथों में रहे तो हमारा दासत्व से मुक्त होना कैसा?

पण्डित जी ने ऑस्ट्रेलिया का उदाहरण देकर कहा, कि यद्यपि उस उपनिवेश में गोरी जाति बसती है, परन्तु 'बैङ्क ऑफ़ इङ्गलैण्ड' ने उसे दिवालिया बनाने में कोई बात उठा न रक्खी थी। ऐसी परिस्थिति में यह नहीं कहा जा सकता, कि यदि भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य दे दिया जाय तो उसकी क्या दुर्गति हो। उन्होंने इजिप्ट का उल्लेख करते हुए कहा कि यद्यपि उसे नाम-मात्र की स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई है, परन्तु पुलिस और फ़ौज अङ्गरेज़ों के हाथों में होने के कारण उसे अब भी उनकी ठोकरें खानी पड़ती हैं। औपनिवेशिक स्वराज्य के अन्तर्गत आर्थिक और सामाजिक वातावरण में भी विशेष परिवर्तन न होने पाएगा और मैं उसे सहन करने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं हूँ।

'पूर्ण-स्वराज्य'

'पूर्ण-स्वराज्य' का अर्थ समझाते हुए राष्ट्रपति ने कहा कि "मैं यह चाहता हूँ कि भारतीयों का फ़ौज पर पूर्ण अधिकार हो और ब्रिटिश फ़ौज का एक-एक सैनिक यहाँ से शीघ्र ही हटा लिया जाय। देश के शासन की बागडोर पूर्णतः भारतीयों के सुपुर्द कर दी जाय। दूसरी बात यह है, कि देश की आर्थिक व्यवस्था में विदेशियों का कोई हाथ न हो। वर्तमान आर्थिक वातावरण में परिवर्तन होने की नितान्त आवश्यकता है और यदि उसके सङ्गठन में बम्बई के पूँजीपति बिलकुल मिट जावें, तो भी मुझे रञ्च-मात्र क्लेश न होगा; मैं स्वतन्त्रता देश के मुट्ठी भर पूँजीपतियों के लिए नहीं चाहता। मैं तो आज़ादी देश के करोड़ों ग़रीबों के लिए चाहता हूँ। परन्तु इस प्रकार की आज़ादी औपनिवेशिक स्वराज्य के अन्तर्गत सम्भव नहीं है और इसीलिए मैं उसका विरोधी और 'पूर्ण-स्वतन्त्रता' का समर्थक हूँ।"

भारत का राष्ट्रीय क़र्ज़

"यदि हमें क़र्ज़ के बोझ से दबा हुआ स्वराज्य मिला, तो वह हमारे किसी काम का न होगा। क्या आप जानते हैं, यह क़र्ज़ किस प्रकार हमारे सिर मढ़ा गया था? हमारी इच्छा के विरुद्ध हमारे पड़ोसियों के विरुद्ध युद्ध का ऐलान किया गया था; वीर अफ़ग़ानों के प्राण सङ्कट में डाले गए थे, बर्मियों की हत्याएँ की गई थीं और इन कार्यों के ख़र्च का बोझ हमारे ऊपर लादा जाता और ब्याज सहित उसका रुपया वसूल किया जाता है। क्या यह मूर्खता की हद नहीं है? हम इस प्रकार का क़र्ज़ देने के लिए तैयार नहीं हैं। न्याय के अनुसार तो इस बात की आवश्यकता है, कि भारत के साथ ब्रिटेन ने जो अत्याचार किए हैं, उनके प्रायश्चित्त स्वरूप वह स्वयं भारत को प्रति वर्ष हरजाना दे। गत महा युद्ध के समय भारत की ओर से ब्रिटेन को १ अरब ५० करोड़ रुपए पुरस्कार स्वरूप युद्ध के ख़र्च के लिए दिए गए थे! भारत-जैसे ग़रीब देश में इतनी सामर्थ्य नहीं है, कि वह इतनी बड़ी रक़म पुरस्कार स्वरूप में कर सके। भारत के खाते में वह रक़म ब्रिटेन के नाम लिखी जाना चाहिए और उसकी एक-एक पाई वसूल होनी चाहिए। जो लोग गोलमेज़-परिषद में सम्मिलित होने गए थे, वे ब्रिटेन में भारत को गिरवा रख आए हैं और यहाँ वापिस आकर डींगे हाँकते हैं कि वे वहाँ से भारत को स्वतन्त्रता का पैग़ाम लाए हैं! देश ऐसी थोथी स्वतन्त्रता को कभी स्वीकार नहीं कर सकता और न वह इस क़र्ज़ को ही स्वीकार करेगा। हम उसका निर्णय स्वयं अपने हाथों से नहीं करना चाहते, परन्तु यह अवश्य चाहते हैं, कि भारत के राष्ट्रीय क़र्ज़ के निर्णय का भार एक स्वतन्त्र ट्रिब्यूनल के हाथों में सौंप दिया जाय।"

कराची कॉङ्ग्रेस का कर्त्तव्य

"कॉङ्ग्रेस वर्किङ्ग कमिटी ने इस अस्थायी सन्धि की शर्तें इसलिए स्वीकार की हैं, कि उसका प्रस्ताव विरोधी दल की ओर से आया था और इस सम्बन्ध में वह हठ-धर्मी का परिचय नहीं देना चाहती थी। कराची कॉङ्ग्रेस के सम्मुख बड़ी विकट समस्या उपस्थित है। वही देश के भाग्य का निर्णय करेगी। अपने भाषण के अन्त में राष्ट्रपति ने कहा—
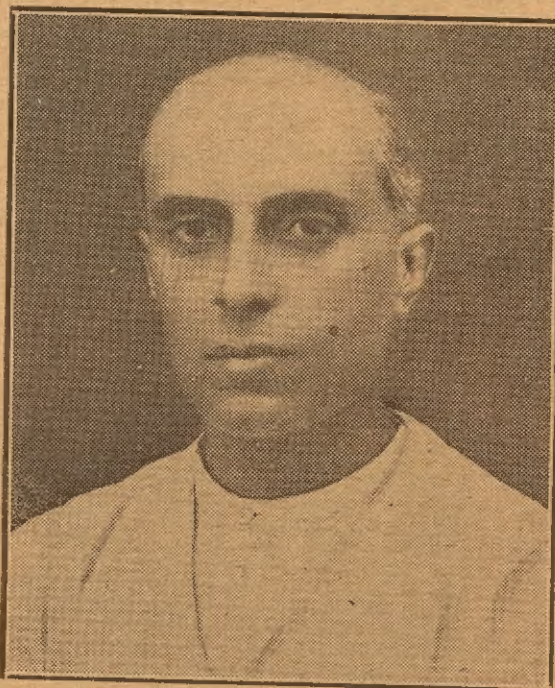
राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू

मैं अन्त में आपको यह चेतावनी देता हूँ, कि यह अन्तिम सन्धि नहीं है; और स्वतन्त्रता के संग्राम का अभी अन्त नहीं हुआ है। समझौता केवल इस बात का हुआ है, कि थोड़ी अवधि के लिए दोनों दल अपने हमले स्थगित कर दें। परन्तु आप युद्ध के लिए सदैव तैयार रहें; न मालूम किस क्षण बिगुल फूँक दिया जाय और तुमुल संग्राम फिर प्रारम्भ हो जाय। इसके साथ ही विदेशी कपड़े को बहिष्कार के द्वारा और कॉङ्ग्रेस के रचनात्मक कार्य-क्रम में रत रह कर अपने मनोभावों को युद्ध की ओर आकर्षित करते रहिए। इससे देश में युद्ध का वातावरण बना रहेगा और जब फिर जनरल की आज्ञा होगी, हम और भी अधिक शक्ति से युद्ध में रत हो सकेंगे और अपना अन्तिम उद्देश्य प्राप्त करके ही चैन लेंगे। यदि आप उसके लिए तैयार हैं, तो स्वतन्त्रता शीघ्र ही हमारा दरवाज़ा खटखटाएगी।

* * *

१४,३३५ क़ैदी रिहा!

लन्दन का १६वीं मार्च का समाचार है कि हाउस ऑफ़ कॉमन्स में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए मि० बेन ने मेजर ग्रेहम पोल को बतलाया है कि १३वीं मार्च तक देहली-समझौते के अनुसार कुल १४,३३५ राजबन्दी कारागार से मुक्त किए गए हैं, जिसमें १३,९२७ पुरुष हैं और ४०८ स्त्रियाँ।

साम्यवाद की सफलता

लन्दन का ६वीं मार्च का समाचार है, कि रूटर के मॉस्को के समाचार से मालूम हुआ है, कि मालोटोव ने सोवियट की सर्व-दल कॉङ्ग्रेस की रिपोर्ट लिखते हुए कहा है, कि रूस में साम्यवाद की सफलता पूर्णतः निश्चित है। पर उसने इस पर भी ज़ोर दिया है कि सोवियट की विदेशों से सम्बन्ध रखने वाली बातों की निगरानी अब भी ज़रूरी है, क्योंकि शान्ति को नष्ट करने वाली कुछ लहरें सोवियट लोगों के विरोध के लिए बढ़ रही हैं।

रूस के सम्बन्ध में अमेरिका की नीति निश्चित होगी

लन्दन का ६वीं मार्च का समाचार है, कि रूटर के वाशिङ्गटन के तार से मालूम हुआ है कि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट मि० स्टिम्सन ने कहा है, कि सम्पूर्ण अवस्था का अच्छी तरह अध्ययन करके एक निश्चित नीति रूस के सम्बन्ध में रहेगी। वे स्वयं उन बातों पर विचार कर रहे हैं जिन्हें रूस चाहता है।

रासायनिक वस्तुओं से हाथ-पाँव जल गए

जापान की राजधानी टोकियो में सैकड़ों पुरुष, स्त्रियाँ और बच्चे राजधानी के एक सिरे पर यह देखने को इकट्ठा हुए थे कि फ़ौजी वायुयानों द्वारा रासायनिक मिश्रणों को हवा में छिड़क-छिड़क कर धुएँ के पर्दे कैसे बनाए जा सकते हैं। एकाएक इन जहाज़ों से कुछ रासायनिक वस्तुएँ भीड़ के ऊपर गिर पड़ीं जिससे कितने ही लोगों के हाथ, मुँह और कपड़े जल गए।

संयुक्त शासन कमिटी की लन्दन में बैठक

महात्मा गाँधी जी की उपस्थिति की आशा

मि० मैक्डॉनल्ड ने ता० १२ मार्च को हाउस ऑफ़ कॉमन्स में विवाद के अन्त में कहा कि संयुक्त शासन कमिटी की एक बैठक लन्दन में शीघ्र होने के लिए, लोगों के बुलाने के लिए वायसराय को लिखा जा चुका है और यह आशा की जाती है कि इस कमिटी में गाँधी जी मौजूद होंगे। उन्होंने यह भी कहा कि मेरा यह दावा है कि सब दलों के अधिकांश लोग गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स के काम में सहायता देने में सम्मिलित होंगे। इस गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स द्वारा वह काम कर रहे हैं, जो मज़दूर-दल की सरकार के आने से पहले प्रारम्भ हो गया था, यह असम्भव है कि उन सब परिवर्तन को, जो पूर्व में और विशेषतः भारत में हो रहा है, हम चुपचाप देखते रहें और यह कहते रहें कि अब तक हमने जो कुछ कह दिया है, वही अन्तिम बात है, जिसके कहने का हमारा विचार है।

* * *

महात्मा जी का आदेश

देश के सम्मुख नया कार्य-क्रम

आई० सी० एस० वालों की अपेक्षा स्वयंसेवकों का सम्मान अधिक होना चाहिए

केवल स्त्रियाँ धरना दें :: पुरुष खद्दर तैयार करें

अहमदाबाद में ११वीं मार्च को एक सभा में महात्मा गाँधी ने जनता को नया कार्य-क्रम समझाते हुए कहा, कि "यद्यपि स्त्री-वालण्टियरों की संख्या पुरुष-वालण्टियरों से कम थी, पर काम स्त्रियों ने अधिक किया। बहुत कम लोगों को यह विश्वास था और बाहरी दुनिया के लोगों को तो बिल्कुल ही विश्वास न था कि स्त्रियाँ इतनी अधिक संख्या में स्वयं-सेविकाएँ बनेंगी, हर्ष के साथ जेल जावेंगी और मार सहेंगी। संसार भर पर इसका बहुत प्रभाव पड़ा है। यह न समझा जाना चाहिए, कि वालण्टियर लोगों ने कोई भूल नहीं की। कोई भी मनुष्य पूर्ण नहीं है, परन्तु स्वयं-सेवकों में दोषों की अपेक्षा गुणों की संख्या कहीं बढ़ी-चढ़ी है। अब शान्ति के वायु-मण्डल में हमारी ज़िम्मेदारी और भी बढ़ गई है। जिन्हें बाहरी जोश की ज़रूरत पड़ती है, उन्हें कठिनता होगी। शान्तिपूर्ण धरना का अर्थ यह है कि एक कड़े शब्द तक का प्रयोग न हो। यह आशा न करनी चाहिए, कि बाज़ीगर के आम के पेड़ की भाँति, यह महान् कार्य भी तुरन्त कोई फल दे देगा। भविष्य में धरना देने के काम में उत्साह बनाए रखना चाहिए। यह निर्णय कर लेना चाहिए कि कितना काम पुरुष करेंगे और कितना स्त्रियाँ। यदि धरने का काम केवल स्त्रियाँ करें तो देश का वायु-मण्डल अधिक अच्छा रहेगा। सङ्गठन आदि के काम में स्त्रियाँ पुरुषों से सहायता ले सकती हैं, किन्तु उनका विशेष कार्य धरना ही होना चाहिए। शेष पुरुषों को खद्दर की उत्पत्ति के काम में लगना चाहिए, जिसके बिना विदेशी वस्त्र-बहिष्कार असम्भव है। स्वयंसेवक लोगों को उनके आवश्यकीय ख़र्च के लिए कुछ रुपए मिलने चाहिएँ, पर उनकी सेवा का सम्मान आई० सी० एस० (भारतीय सिविल सर्विस) से अधिक होना चाहिए।

विलायती माल के बहिष्कार के बारे में प्रश्न पूछा जाने पर महात्मा जी ने उसके उत्तर में कहा, कि एक आदमी को सदैव कोड़े नहीं लगाए जा सकते। जब समझौते की बातचीत हो रही है, तब कोड़े को अलग रख देना चाहिए। विलायती सामान का बहिष्कार विलायत के लोगों को दण्ड देने का एक साधन है। परन्तु यदि विलायत के लोग हमसे मित्रता करें और हमें पूर्ण-स्वराज्य दे दें तो हम उनके सामान को अन्य देश वालों के सामान की अपेक्षा अधिक पसन्द करेंगे। मित्र से ही तो लोगों को सामान लेना चाहिए।

"क्या हमें सरकारी कॉलेज में जाना चाहिए?"

इस प्रश्न के उत्तर में महात्मा जी ने कहा—अभी नहीं, जब पूरा समझौता हो जावे तब ऐसा किया जा सकता है। इस प्रश्न के उत्तर में, कि स्वयंसेवकों को किन नियमों के अनुसार चलना चाहिए? महात्मा जी ने उत्तर दिया कि झूठ न बोलना चाहिए, अपशब्द न कहना चाहिए, तम्बाकू न पीनी चाहिए, स्वादिष्ट पदार्थ न खाने चाहिए। "क्या चाय पी सकते हैं?" महात्मा जी ने हँसते हुए कहा—"साबरमती नदी से चाय पी सकते हैं!"

थी घुड़दौड़ बड़ी भारी जो इर्विन की गाँधी के साथ। आख़िर उसमें मार दिया गाँधी जी के घोड़े ने हाथ॥

इटावा में गोली-काण्ड

तीन आदमी मरे :: कई घायल हुए

इटावा ज़िला काँङ्ग्रेस कमिटी के मन्त्री पं० गोपीनाथ दीक्षित ने इटावे से प्रयाग आकर यह समाचार यहाँ दिया, कि कुछ लोग भरथना स्टेशन पर छूटे हुए क़ैदियों के स्वागत के लिए गए थे और वहाँ से उनके साथ 'ढकाओं का नगला' नामक गाँव में पहुँच कर उन्होंने जुलूस निकाला। यह गाँव इटावे से १६ मील दूर है। जब जुलूस समाप्त हो गया और लोग भूमि पर बैठे महात्मा गाँधी की जय-जयकार कर रहे थे, तब अतिरिक्त-पुलिस के सिपाहियों ने आकर उन पर गोली चलाई, जिससे ३ आदमी मरे और कई घायल हुए। लाठियों से भी कई लोगों को चोटें आईं। दफ़ा १४४ लगा कर मीटिङ्ग को रोकने की कोई आज्ञा नहीं निकली थी। यह गाँव उन चार गाँवों में से एक है, जो करबन्दी आन्दोलन में सब से आगे हैं।

सरकारी विज्ञप्ति

ज़िला मैजिस्ट्रेट का कहना है, कि १० वीं मार्च की शाम को छः सौ लाठीबन्द देहातियों की भीड़ हाथ में राष्ट्रीय झण्डे लिए पुलिस के किराए के मकान के चबूतरे के पास पहुँची और पुलिस वालों को धमकी दी कि घर ख़ाली करके चले जाओ नहीं तो तुम्हारी बन्दूक़ें छीन ली जायँगी और तुम्हें मार कर जला दिया जावेगा। कुछ लोगों ने चबूतरे पर भी चढ़ना चाहा, पर वे हटा दिए गए। तब चबूतरे के नीचे खड़े हुए लोगों ने ईंटें फेंकना आरम्भ किया और ज़बर्दस्ती घर में घुस चलने के लिए चिल्लाए। ख़तरा देख कर गोलियाँ चलाई गईं। कुल १२ कारतूस छोड़े गए। गोली चलने से भीड़ हट गई। ३ आदमियों के मरने की ख़बर है। घायलों की संख्या का पता नहीं। पुलिस वालों में सब के चोटें लगी हैं। मैजिस्ट्रेट ने घटनास्थल पर पहुँच कर घर पर ईंटें लगने के निशान देखे। वहाँ बहुत सी ईंटें पड़ी हुई थीं!!

* * *

भविष्य की नियमावली

१—'भविष्य' प्रत्येक बृहस्पति को सुबह ४ बजे प्रकाशित हो जाता है।

२—किसी ख़ास अङ्क में छपने वाले लेख, कविताएँ अथवा सूचना आदि, कम से कम एक सप्ताह पूर्व, सम्पादकों के पास पहुँच जाना चाहिए। बुधवार की रात्रि के ८ बजे तक आने वाले, केवल तार द्वारा आए हुए आवश्यक, किन्तु संक्षिप्त, समाचार आगामी अङ्क में स्थान पा सकेंगे, अन्य नहीं।

३—लेखादि काग़ज़ के एक तरफ़, हाशिया छोड़ कर और साफ़ अक्षरों में भेजना चाहिए, नहीं तो उन पर ध्यान नहीं दिया जायगा।

४—हर एक पत्र का उत्तर देना सम्पादकों के लिए सम्भव नहीं है, केवल आवश्यक, किन्तु ऐसे ही पत्रों का उत्तर दिया जायगा, जिनके साथ पते का टिकट लगा हुआ लिफ़ाफ़ा अथवा कार्ड होगा, अन्यथा नहीं।

५—कोई भी लेख, कविता, समाचार अथवा सूचना बिना सम्पादकों का पूर्णतः इतमीनान हुए 'भविष्य' में कदापि न छप सकेंगे। सम्वाददाताओं का नाम, यदि वे मना कर देंगे तो, न छापा जायगा, किन्तु उनका पूरा पता हमारे यहाँ अवश्य रहना चाहिए। गुमनाम पत्रों पर ध्यान नहीं दिया जायगा।

६—लेख, पत्र अथवा समाचारादि बहुत ही संक्षिप्त रूप में लिख कर भेजना चाहिए।

७—समालोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ आनी चाहिएँ।

८—परिवर्तन में आने वाली पत्र-पत्रिकाएँ तथा पुस्तकें आदि सम्पादक "भविष्य" (किसी व्यक्ति-विशेष के नाम से नहीं) और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र तथा चन्दा वग़ैरह मैनेजर "भविष्य" चन्द्रलोक, इलाहाबाद के पते से आना चाहिए। प्रबन्ध-विभाग सम्बन्धी पत्र सम्पादकों के पते से भेजने में उनका आदेश पालन करने में असाधारण देरी हो सकती है, जिसके लिए किसी भी हालत में संस्था ज़िम्मेदार न होगी!!

९—सम्पादकीय विभाग सम्बन्धी पत्र तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र अलग-अलग आना चाहिए। यदि एक ही लिफ़ाफ़े में भेजा जाय तो अन्दर दूसरे पते का कवर भिन्न होना चाहिए।

१०—किसी व्यक्ति-विशेष के नाम भेजे हुए पत्र पर नाम के अतिरिक्त "Personal" शब्द का होना परमावश्यक है, नहीं तो उसे संस्था का कोई भी कर्मचारी साधारण स्थिति में खोल सकता है और पत्रोत्तर में असाधारण देरी हो सकती है।

—मैनेजिङ्ग डाइरेक्टर

१६ मार्च, सन् १६३१

चेतावनी

गवर्नमेण्ट से—

जो पंक्तियाँ हम आज लिखने जा रहे हैं, वे केवल हमारी ही धारणाओं को व्यक्त नहीं करतीं, वरन् उनमें करोड़ों आत्माओं की करुण रागिणी का मौन निदर्शन पाठकों को मिलेगा। पूँजीवाद एवं साम्राज्यवाद तथा दमन और अत्याचार की पाशविक लीलाओं से झुलसी हुई करोड़ों आत्माएँ आज शान्ति की उपासना में संलग्न हैं। उठते-बैठते, सोते-जागते आज वे शान्ति-मरीचिका को ढूँढ रही हैं; किन्तु ज्यों-ज्यों हम उसकी ओर बढ़ने का प्रयत्न करते हैं, त्यों-त्यों वह परछाहीं की भाँति हमारे आगे-आगे दौड़ती अवश्य है, किन्तु जिस प्रकार अपनी परछाहीं को सतत प्रयत्न करने पर भी हम पकड़ नहीं सकते, ठीक उसी प्रकार यह माया-मरीचिका भी हमें पग-पग पर ठग रही है।

इतने तुमुल राष्ट्रीय संग्राम के पश्चात् ३री मार्च को देश के प्राण महात्मा गाँधी और भारत के वर्तमान वायसराय लॉर्ड इर्विन में क्षणिक-समझौता (Truce) हुआ था और शान्ति के उपासकों ने अपने हृदय की समस्त शक्ति को एकत्रित करके इसी समझौते का स्वागत किया था। इस क्षणिक-समझौते में लॉर्ड इर्विन की विजय हुई थी अथवा महात्मा गाँधी की, यह इतिहासकारों के विवेचन का विचारणीय विषय है, हमारा नहीं। आशा यह थी, कि ब्रिटिश गवर्नमेण्ट देश के इस जाग्रत आत्माभिमान की ठीक उतनी ही क़द्र करेगी, जितनी उसे करनी चाहिए; देश के समस्त राजबन्दी, चाहे वे अहिंसात्मक क्रान्ति के उपासक हों अथवा हिंसात्मक क्रान्ति के—दोनों ही मुक्त कर दिए जावेंगे और इस प्रकार देश का वर्तमान कलुषित वातावरण परिवर्तित होकर पूर्व और पश्चिम के सम्मिलन को स्थायी एवं सुदृढ़ करने में सहायक होगा; परन्तु शासन-चक्र जिस प्रगति से चल रहा है, उसे दृष्टि में रखते हुए, हमारा यह सुख-स्वप्न निकट-भविष्य में सफल होगा भी या नहीं, हमें इसमें भारी सन्देह है।

हम देख रहे हैं—'क्रान्तिकारियों' की बात तो जाने दीजिए—वे नवयुवक, जिन्होंने केवल महात्मा गाँधी के सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लिया था और जिन व्यक्तियों ने शराब तथा विलायती कपड़ों की दूकानों पर शान्तिपूर्वक धरना मात्र दिया था और जो भारतीय पुलिस की कृपा द्वारा दफ़ा ४२१ के अनुसार जेल में ठूँस दिए गए (यह किसी के मकान में घुसने का अभियोग है) थे, वे आज भी जेलों में बन्द पड़े अपने देश-प्रेम और स्वातन्त्र्य-प्रियता का मूल्य चुका रहे हैं—आज तक वे कारागार से मुक्त नहीं किए गए। मेरठ षड्यन्त्र केस के 'अभियुक्त' बिना किसी निर्णय के लगभग २ वर्षों से जेल में पड़े सड़ रहे हैं। इस सिलसिले में पाठकों को हम यह भी बतला देना चाहते हैं, कि इन व्यक्तियों पर बादशाह से बग़ावत (Waging War against the King) करने का अभियोग चलाया गया है; किन्तु इनके इस बग़ावत में अभी तक हिंसात्मक युद्ध का कोई भी प्रमाण देशवासियों के सामने उपस्थित नहीं किया गया है। आज अण्डमन (कालेपानी) में सैकड़ों राजनैतिक बन्दी अपने जीवन की अन्तिम घड़ी गिन रहे हैं! विभिन्न षड्यन्त्रों में सम्मिलित सैकड़ों 'फ़रार' (भागे हुए) नवयुवक और नवयुवतियाँ आज अपनी सारी शक्ति अपने आत्म-रक्षा में लगा कर भी अपने को सुरक्षित नहीं समझ रही हैं। सर्दार भगतसिंह आदि अनेक नवयुवक आज अपने जीवन की अन्तिम घड़ियाँ जेलों की चहारदीवारी में गिन रहे हैं। बङ्गाल के सैकड़ों प्रतिभाशाली नवयुवक आज बिना किसी व्यक्त-अभियोग के राजबन्दियों (Detenus) का करुणापूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे हैं; एक ऐसी विकट परिस्थिति में यह आशा करना, कि केवल नमक बनाने वाले अथवा धरना देने वाले थोड़े से क़ैदियों को छोड़ देने मात्र से देश में शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो जायगा, पत्थर से पानी निकालने की आशा के समान दुराशा मात्र है।

लॉर्ड इर्विन की सरकार को ज़रा ठण्डे दिल से इस बात पर विचार करना चाहिए, कि किसी भी न्याय-प्रिय गवर्नमेण्ट की दृष्टि में समझौते के अवसर पर हिंसात्मक अथवा अहिंसात्मक क़ैदियों का एक ही मूल्य होगा, क्योंकि दोनों ही श्रेणी के लोग क्रान्ति के उपासक हैं, दोनों ही श्रेणी के लोग वर्तमान शासन-प्रणाली को जड़मूल से उखाड़ कर फेंक देने पर तुले हुए हैं, 'शान्ति और रक्षा' के नाम पर होने वाले अन्यायों को दोनों ही दल के लोग घृणा एवं रोष की दृष्टि से देखते हैं; भारतीय बहू-बेटियों पर पुलिस द्वारा होने वाले अमानुषिक, भीरु एवं निरीह अत्याचारों को दोनों ही दल वालों ने प्रतिहिंसा के भयावह दृष्टिकोण से देखा है। एक दल वालों ने वर्तमान शासन-प्रणाली को आर्थिक सङ्कट में डाल कर क़ानून और व्यवस्था का दिन-दहाड़े श्राद्ध करके इन असह्य अपमानों का बदला चुकाया है, दूसरे ने इस शासन-प्रणाली के कुछ कल-पुर्ज़ों को जड़-मूल से उखाड़ फेंकने का प्रयत्न किया है—अथवा यों कहिए कि एक ने पेट पर आक्रमण किया है, दूसरे ने पीठ पर—पर लक्ष्य दोनों का एक है। वर्तमान शासन-प्रणाली के विरुद्ध दोनों ने ही खुली बग़ावत की है; भेद केवल इतना है, कि एक दल के लोग अधीर क्रान्तिकारी हैं, दूसरे दल के धीर। एक दल में सहनशीलता की भावना अधिक है दूसरे में कम, एक दल डङ्के की चोट पर क़ानून और व्यवस्था का श्राद्ध करता है, दूसरा छिप कर; स्पष्ट-भेद केवल इतना है, कि अहिंसात्मक दल की संख्या अधिक है, हिंसात्मक विचार वालों की कम, पर किसी भी शासन-प्रणाली के लिए दोनों ही दल के लोग समान रूप से घातक हैं। ऐसी परिस्थिति में बहुसंख्यक दल के विप्लववादियों से पक्षपात करना सर्वथा न्याय

का गला घोटना है। यदि गवर्नमेण्ट का विश्वास है, कि राजनैतिक बन्दियों को जेल-मुक्त कर देने मात्र से वास्तविक समझौता सम्भव है, तो कोई कारण नहीं है, कि पक्षपात से काम लिया जाय! विभिन्न षड्यन्त्रों के जो विभिन्न अभियोग आज ब्रिटिश न्यायालयों में चल रहे हैं, उनकी कार्यवाहियों को पढ़ने से पता चलता है, कि केवल आत्म-रक्षा की स्वाभाविक भावनाओं से प्रेरित होकर आज अनेक नवयुवक तथा नवयुवतियाँ भागी-भागी फिर रही हैं और उनके पीछे फिर रही हैं पुलिस वालों की अनेक टोलियाँ! एक ओर निर्धन भारत की गाढ़ी कमाई के लाखों रुपए पुलिस के चारा-पानी में व्यय हो रहे हैं, दूसरी ओर नैसर्गिक प्रश्न है आत्म-रक्षा का। आत्म-रक्षा को वर्तमान क़ानून-विधान में भी अन्यतम स्थान दिया गया है। यदि कोई व्यक्ति आत्म-रक्षा के लिए हत्या अथवा हत्याएँ कर डाले तो वर्तमान क़ानून उसे निर्दोष क़रार देता है, किन्तु वर्तमान क़ानून अथवा क़ानून की परिभाषा करने वाले विप्लववादियों के सम्बन्ध में इस क़ानून का अर्थ एक विशेष कोष के आधार पर लगाते हैं। जिस समय किसी भागे हुए विप्लववादी नवयुवक की मुठभेड़ पुलिस से हो जाती है, उस समय ठीक इसी नैसर्गिक आत्म-रक्षा का प्रश्न उसके सामने उपस्थित हो जाता है। वह अपने शत्रु पर अपनी सारी शक्ति से आक्रमण करता है; यदि वस्तुस्थिति साधारण हो, तो बात दूसरी है; किन्तु अपनी पीठ पर क़ानून की सुविधानुसार परिभाषा करने वालों का साथ पाकर पुलिस भी डट जाती है, और जहाँ एक भी पुलिस वालों का चूहा-बिल्ली तक विप्लववादियों का शिकार हुआ, तहाँ तुरन्त एक नए षड्यन्त्र का सूत्रपात हो जाता है। आज जो अनेक षड्यन्त्र-केस विभिन्न स्थानों में चल रहे हैं, वे हमारी इस धारणा की निरन्तर पुष्टि कर रहे हैं; ऐसी परिस्थिति में यह अवश्यम्भावी और सर्वथा स्वाभाविक है, कि नित्य ही देश के किसी कोने में आत्म-रक्षा का प्रश्न उपस्थित होता रहेगा और एक न एक भयावह काण्ड अनुष्ठित होते रहेंगे, और यदि ऐसा हुआ तो हम पूछना चाहते हैं, इन अप्रिय-कार्यों की नैतिक ज़िम्मेदारी किस पर रहेगी?

देश की राष्ट्रीय महासभा ने, महात्मा गाँधी ने तथा अन्य सभी नेताओं ने इन विप्लववादियों से शान्त रहने की अपील की है और जिस दिन से यह अपील की गई है, उस दिन से आज तक कोई भयङ्कर काण्ड हमारे सुनने में नहीं आया है। इस बीच में लाहौर तथा उसके निकटवर्ती एक स्टेशन पर दो नवयुवक क्रान्तिकारी होने के सन्देह पर पकड़े भी गए हैं। उनके पास आत्म-रक्षा का साधन होते हुए भी, उन्होंने इसका उपयोग नहीं किया और वे हथियारों सहित गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। इन घटनाओं से गवर्नमेण्ट को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए और हिंसात्मक क्रान्तिकारियों की रिहाई पर ठण्डे दिल से विचार करना चाहिए। गवर्नमेण्ट के पास शक्ति और साधन की कमी नहीं है; यदि फिर कभी वे हिंसात्मक क्रान्ति की ओर झुकें तो वह उन्हें तुरन्त गिरफ़्तार कर सकती है। कोई नया ऑर्डिनेन्स पास करके बिना कारण बतलाए ही, बङ्गाल के राजबन्दियों की भाँति उन्हें नज़रबन्द (Detenus) रख सकती है; उस हालत में किसी को शिकायत का मौक़ा नहीं मिलेगा, और गवर्नमेण्ट का पक्ष आज से कहीं सबल सिद्ध होगा; किन्तु यदि शीघ्र ही इन नवयुवकों एवं नवयुवतियों की रिहाई नहीं की गई, तो प्रतिक्षण परिस्थिति गम्भीर होने की आशङ्का बनी रहेगी और जिस शान्ति की उपलब्धि में आज शासक और शासित—दोनों ही संलग्न हैं, वह दिन-दिन हमसे दूर होती जायगी।

इस सिलसिले में गवर्नमेण्ट को हम यह भी बतला देना चाहते हैं, कि वह ज़माना लद गया, जब दमन द्वारा स्वेच्छाचारी शासन-प्रणाली का क़ायम रखना सम्भव था; आज देश का स्वाभिमान पूर्णतः जाग्रत हो चुका है, आज देश का बच्चा-बच्चा स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए अधिक से अधिक मूल्य देने को लालायित हो रहा है, भारत-माता आज अपने पैरों पर खड़ी होने पर तुल गई है और जब कभी किसी पराधीन देश में ऐसा वातावरण एक बार उपस्थित हो जाता है, तो संसार की कोई भी शक्ति उस देश को अधिक दिनों तक दमन के बल पर अपने अधीन रखने में समर्थ नहीं हुई है—सारे ब्रह्माण्ड का इतिहास हमारे इन विचारों का पोषक है।

वर्तमान परिस्थिति गवर्नमेण्ट के पूर्णतः अनुकूल है। इस समय यदि दूरदर्शिता एवं उदार-हृदयता और मित्रता की भावनाओं से काम लिया गया, तो निश्चय ही वह जनता के स्नेह और श्रद्धा का भाजन हो सकेगी और लोकमत तथा भारतीय मनोवृत्ति को अपने अनुकूल रख सकेगी; भारतवर्ष और ब्रिटेन का सम्बन्ध परस्पर अकाट्य मित्रता के सूत्र में बँध जायगा; अतएव यदि वास्तव में गवर्नमेण्ट अपने और भारत के सच्चे कल्याण की आकांक्षा रखती है, तो हृदय खोल कर उसे अपनी इस बदली हुई मनोवृत्ति का परिचय देना होगा!!

* * *

विप्लववादियों से—

इस सिलसिले में हम उन विप्लववादियों को भी, जिनका विश्वास हिंसात्मक क्रान्ति में है, अपनी ओर से इस बात की चेतावनी देना अपना कर्त्तव्य समझते हैं, कि उन्हें भी देश के वर्तमान वातावरण से पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए। उन्हें अपनी ओर से ऐसा कोई भी कार्य न करना चाहिए, जिससे वर्तमान शान्तिपूर्ण वातावरण के कलुषित होने की ज़रा भी सम्भावना हो। उन्हें इस सुअवसर पर ठण्डे दिल से बैठ कर अपने पग-पग पर होने वाली विफलताओं के इतिहास पर अश्रुपात करना चाहिए। परिस्थिति के अनुकूल न होने के कारण, आज उन्होंने भारत-माता के कितने लालों को कौड़ियों के मूल्य में खो दिया है, कितनी माताओं की गोदियाँ ख़ाली कर दी हैं, कितने पिताओं के अवलम्बों की आहुति दे डाली है, कितनी बहिनों को भ्रातृ-प्रेम से वञ्चित कर दिया है, कितने ही निर्धन परिवारों के पोषकों को उनसे छीन लिया और कितनी नवयुवतियों का सौभाग्य-सिन्दूर उन्होंने पोंछ डाला है—तो हमारी निश्चित-धारणा है वे अवश्य रो पड़ेंगे; जिस समय वे अपने जमा और ख़र्च के खाते को उलट कर एक बार देखेंगे, तो उनके नेत्रों से अविरल-अश्रु की धारा प्रवाहित हुए बिना नहीं रह सकती।

लगभग एक दर्जन सरकारी कर्मचारियों की गुप्त हत्याओं के बदले में उन्होंने हज़ारों देशवासियों का निर्मम बलिदान कर डाला है। आज सैकड़ों प्रतिभाशाली नवयुवक, जिनमें से एक-एक व्यक्ति में अहिंसात्मक उपायों द्वारा कम से कम एक-एक ज़िले के सङ्गठन करने की क्षमता थी—आज जेलख़ाने के सीख़चों में पड़े अपने जीवन की घड़ियाँ गिन रहे हैं। इतना बड़ा त्याग, इतनी अनुपम तपस्या और इतनी कठोर साधना का परिचय यदि अन्य रूपों में दिया गया होता, तो न जाने देश की वे कितनी ठोस सेवा कर सकते थे, क्योंकि उनके हृदयों में स्वदेश-प्रेम, स्वार्थहीनता और आत्मोत्सर्ग का एक विशाल और असाधारण विश्व छिपा हुआ था—उनके हृदयों में उच्च श्रेणी की दया, नेकी तथा बलिदान की आग धायँ-धायँ करके जल रही थी—ऐसे लालों को खोकर आज भारत-माता चीत्कारपूर्ण रोदन कर रही है। माता के इन अश्रुओं को उन्हें पोंछना चाहिए, उन्हें चाहिए, कि अपनी सारी शक्ति वे भारतवासियों के सङ्गठन में लगा दें और अपना सारा पराक्रम कॉङ्ग्रेस के निर्धारित कार्य-क्रम की भेंट चढ़ा दें, हमारी दृष्टि में इसी में उनका तथा उनके देश का कल्याण है। भारतीय महासभा की कार्य-प्रणाली कुछ दिन पहले चाहे कितनी ही त्रुटिपूर्ण रही हो, किन्तु आज उसका निर्धारित-ध्येय ठीक वही है, जो हिंसात्मक क्रान्ति के उपासकों का—कुछ अंशों में कॉङ्ग्रेस की खुली बग़ावत का दायरा और भी विस्तृत है।

वर्तमान हिंसात्मक क्रान्तिवादियों का विश्वास है, कि हमारी वर्तमान ग़ुलामी का कारण नौकरशाही के कुछ पुर्ज़े मात्र हैं। शायद उनका यह विश्वास है कि इन पुर्ज़ों को नष्ट कर देने से वर्तमान शासन-प्रणाली स्वयं नष्ट हो जायगी—कम से कम उस पर क्रान्तिवादियों का आतङ्क अवश्य छा जायगा और पहिले की अपेक्षा वह भारतवासियों के मनोभावों की विशेष क़द्र करने लगेगी—पर आज तक की घटनाओं ने यह उनका कोरा भ्रम प्रमाणित किया है। स्वर्गीय सॉण्डर्स और सिम्पसन आदि सरकारी कर्मचारी क्रान्तिकारियों की इसी धारणा के बलिदान हुए हैं। कलकत्ते के पुलिस कमिश्नर सर चार्ल्स टेगार्ट पर इसी धारणा के वशीभूत होकर बार-बार आक्रमण किए गए थे, पर इसका फल क्या हुआ? अनुभव यही सिद्ध करता है, कि एक स्वेच्छाचारी सरकारी कर्मचारी की हत्या की गई और तुरन्त उससे भी क्रूर कर्मचारी ने उसका स्थान ग्रहण कर लिया; दमन-चक्र और भी ज़ोरों से चलाया गया और उसका परिणाम वही हुआ, जिसका उल्लेख ऊपर की पंक्तियों में किया जा चुका है। अस्तु।

सारांश यह है, कि हिंसात्मक क्रान्तिवादियों का उद्देश्य भी वर्तमान शासन-प्रणाली को नष्ट करना है और आज की कॉङ्ग्रेस का भी यही उद्देश्य है। अन्तर केवल इतना ही दिखाई पड़ता है, कि क्रान्तिकारी नौकरशाही के कुछ कल-पुर्ज़ों के नाश करने के पक्ष में हैं और कॉङ्ग्रेस उस सारी मैशीन को, जिसके अङ्ग यह कल-पुर्ज़े हैं—वर्तमान कॉङ्ग्रेस की भी यह निश्चित-धारणा है, कि भारतवर्ष का नैतिक और आध्यात्मिक उत्थान बिना वर्तमान शासन-पद्धति मिटाए, एक बार ही असम्भव है। दोनों दल वालों का उद्देश्य एक है—दोनों का चरम-साध्य देश की स्वतन्त्रता है—केवल पथ दोनों के भिन्न हैं, साधन अलग हैं। जिस दिन यह दोनों शक्तियाँ परस्पर मिल कर कार्य करने लगेंगी, वह दिन वास्तव में भारतीय स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए किए जाने वाले उद्योगों के इतिहास में प्रथम वर्ष-गाँठ का अमर-दिवस समझा जायगा!!!

* * *

क्या यही समझौता है?

३री मार्च के प्रातःकाल महात्मा गाँधी और लॉर्ड इर्विन का ऐतिहासिक समझौता हुआ, जिसकी चर्चा 'भविष्य' के गताङ्क में विस्तृत रूप से की जा चुकी है। इस समझौते के बाद यह आशा थी, कि नौकरशाही के पुर्ज़े लॉर्ड इर्विन के आदेशों का अक्षरशः पालन कर देश में शान्ति का वातावरण उपस्थित करने में अपनी सारी शक्ति से योग देंगे और विद्वेष एवं प्रतिहिंसा की जो उपेक्षणीय भावनाएँ आज देश के वायु-मण्डल को कलुषित कर रही हैं, उन्हें समूल नष्ट करने में सहायक होंगे; पर ३री मार्च के बाद पुलिस द्वारा होने वाले जिन अत्याचारों के समाचार हमारे पास आए हैं और आ रहे हैं, उन्हें देखते हुए हमें विश्वास नहीं होता, कि परिस्थिति निकट-भविष्य में सुधर सकेगी। हम इस सिलसिले में कुछ प्रमाण भी देने को तैयार हैं:—

(१) ६ठी मार्च को नेलोर (मद्रास) में गाँधी-इर्विन समझौते के स्वागत करने के अभिप्राय से नगर-

निवासियों ने एक वृहत् सभा की थी। सभा के प्रारम्भ होते ही अपने दल-बल सहित पुलिस वहाँ पहुँच गई। यह शान्तिपूर्ण सभा ग़ैर-क़ानूनी ही घोषित नहीं की गई, बल्कि कहा जाता है, पुलिस ने जनता पर लाठियों की भी वर्षा की। इसके विरोध-स्वरूप मद्रास व्यवस्थापिका सभा में एक विरोध का प्रस्ताव भी हाल ही में उपस्थित किया गया है।

(२) ढाका का समाचार है, कि ४वीं मार्च को मुन्शीगञ्ज के सशस्त्र पुलिस के एक जत्थे ने वहाँ के काँग्रेस ऑफ़िस पर धावा किया और काँग्रेस का ताला तोड़ कर तलाशी लेना आरम्भ कर दिया।

(३) जब कि अन्य सारे ऑर्डिनेन्स रद्द किए जा चुके हैं, बर्मा-विद्रोह के सम्बन्ध में एक नया ऑर्डिनेन्स इस समझौते के बाद ही पास किया गया है।

(४) १२ वीं मार्च को बङ्गाल के प्रतिभाशाली नेता श्री० जे० एम० सेन गुप्ता ने महात्मा गाँधी के नाम एक तार भेजा है, जिसका सारांश यह है :—

कुछ ज़िलों के अधिकारी अब तक पुरानी नीति ही बरत रहे हैं। ६ तारीख़ को एक सब-डिविज़नल ऑफ़िसर ने अतिरिक्त-पुलिस-कर वसूल किया। कराटाई हाउस, जिस पर पुलिस ने सत्याग्रह के दिनों में दख़ल कर लिया था, अब तक पुलिस के हाथ में है। बहुत से क़ैदी जो क्षणिक-सन्धि के अनुसार छोड़ दिए जाने चाहिएँ, अब तक नहीं छूटे हैं। गत ६ मार्च को आरामबाग़ में पुलिस ने लाठियाँ चला कर जुलूस भङ्ग कर दिया, जिससे ११ स्त्रियाँ और ६ पुरुष घायल हुए। बङ्गाल में नज़रबन्द क़ैदियों का न छूटना काँटे की तरह चुभता है। नज़रबन्दों में बहुत से भारतीय काँग्रेस-कमिटी के सदस्य हैं। पहले की तरह मैं आपसे पुनः प्रार्थना करता हूँ कि इनको रिहाई के लिए आप पुनः प्रयत्न करें।

(५) कलकत्ते का १२वीं मार्च का समाचार है, कि बङ्गाल ऑर्डिनेन्स के अनुसार काशीपुर (ज़िला फ़रीदपुर) के श्री० फनीभूषण दत्त नज़रबन्द कर लिए गए।

(६) संयुक्त प्रान्तीय काँग्रेस कमिटी के प्रधान मन्त्री डॉक्टर सय्यद महमूद ने भी गाँधी-इर्विन समझौता हो जाने के बाद भी गवर्नमेण्ट द्वारा इसका पूर्णतः पालन न होने के सम्बन्ध में बड़ा रोष प्रकट किया है। आपने ख़ास तौर से पुलिस की ज़्यादतियों के सम्बन्ध में एक वक्तव्य भी प्रकाशित किया है।

(७) गुण्टूर तथा पेदापुर आदि स्थानों से भी पुलिस द्वारा लाठी-प्रहारों के वीभत्स समाचार आए हैं।

(८) काशी का समाचार है, कि वहाँ की जनता ने "आज़ाद-दिवस" मनाने का निश्चय किया था, किन्तु अधिकारियों द्वारा आज्ञा नहीं दी गई और दफ़ा १४४ का 'राम-बाण' छोड़ दिया गया।

(९) १०वीं मार्च का क्लेशपूर्ण समाचार है, कि इटावा ज़िला में पुलिस द्वारा गोली चला दी गई थी, जिसके फल-स्वरूप ३ व्यक्तियों की मृत्यु हुई और कितने ही घायल हुए। इस दुर्घटना की जाँच करने के लिए संयुक्त प्रान्तीय काँग्रेस कमिटी ने स्वर्गीय पं० मोतीलाल नेहरू के दामाद, श्री० आर० एस० पण्डित को नियुक्त किया था। आपने अभी तक निम्न-लिखित वक्तव्य प्रकाशित कराया है, जाँच अभी हो रही है :—

इटावा ज़िला काँग्रेस कमिटी के सेक्रेटरी श्री० गोपीनाथ दीक्षित ने प्रान्तीय काँग्रेस कमिटी में इस आशय की रिपोर्ट की है, कि इटावे से १६ मील दूर 'काको-के-नगले' में अतिरिक्त-पुलिस के गोली चलाने से २ आदमी मरे और ३ घायल हुए। (बाद का समाचार है ३ मरे। स० भविष्य) कुछ आदमी लाठियों से घायल हुए।

कहा जाता है, कि लखनऊ से छूटे हुए राजबन्दी आए थे। भर्थना स्टेशन पर उनका स्वागत किया गया। वहाँ से वे जुलूस द्वारा नगले ले जाए गए। कहते हैं कि पुलिस ने गोली तब चलाई, जब जुलूस शान्तिपूर्वक गाँव में पहुँच चुका था और जुलूस वाले ज़मीन पर बैठे हुए 'महात्मा गाँधी की जय' के नारे लगा रहे थे। इस गाँव में जुलूस आदि न निकालने के लिए १४४ धारा नहीं लगी हुई है। कहा जाता है, कि पुलिस सब-इन्स्पेक्टर उपस्थित न था, अतिरिक्त-पुलिस के हेड-कॉन्स्टेबिल के नेतृत्व में सिपाहियों ने गोलियाँ चलाईं। यह गाँव उन चार गाँवों में से है, जहाँ अतिरिक्त-पुलिस रक्खी गई है और वहाँ दो सप्ताह पूर्व गोरी फ़ौज दौरा कर चुकी है। यह गाँव लगानबन्दी आन्दोलन का केन्द्र रह चुका है। इटावा काँग्रेस के प्रमुख कार्यकर्ता घटनास्थल पर पहुँच चुके हैं।

(१०) बङ्गाल का समाचार है, कि ६वीं मार्च को आरामबाग़ की महिलाओं ने अपना एक जुलूस निकाला था, कहा जाता है पुलिस के एक लठबन्द जत्थे ने इन देवियों पर बुरी तरह आक्रमण किया, जिसके फलस्वरूप १० महिलाओं को सख़्त चोटें आईं और अनेक घायल हुईं। राह-चलतों की भी, कहा जाता है, पुलिस ने अच्छी मरम्मत की।

इसी प्रकार के अन्य अनेक दुखमय समाचार नित्य ही सुनने में आ रहे हैं। इन घटनाओं से और चाहे कुछ प्रकट हो अथवा नहीं, पर इतना तो स्पष्ट है कि भारतीय ख़ज़ाने से पुश्त-दर-पुश्त पलने वाली भारतीय पुलिस किस हद तक निरङ्कुश बना डाली गई है। क्या वास्तव में लॉर्ड इर्विन और उनकी सरकार इनको क़ाबू में करने से असमर्थ है? क्या कोई भी साधन उनके पास शेष नहीं रह गया है, जिससे वे भारतीय पुलिस को शान्तिपूर्ण वातावरण का महत्व और ऐसा न होने से उसकी हानियाँ इन्हें समझा सकें??

* * *

सुभाष बाबू की चेतावनी

गाँधी-इर्विन समझौते के सम्बन्ध में उनकी स्पष्ट राय जानने के लिए, यद्यपि प्रेस-प्रतिनिधियों ने बङ्गाल के प्राण—श्री० सुभाषचन्द्र बोस को कई बार घेरा, किन्तु वे आज तक इन्कार करते रहे। उनका कहना था, कि बिना परिस्थिति को पूर्णतः समझे और बिना म० गाँधी से मिले, वे इस सम्बन्ध में एक शब्द भी नहीं कहना चाहेंगे। इसी उद्देश्य से १६ मार्च को सुभाष बाबू केवल महात्मा गाँधी से मिलने के लिए बम्बई पधारे थे और उनसे मिल कर १७ मार्च को वे पुनः कलकत्ते लौट आए। यहाँ बङ्गाल के सभी प्रसिद्ध नेताओं से सलाह करके वे अपना वक्तव्य प्रेस के हवाले करेंगे, किन्तु बम्बई में एक प्रेस-प्रतिनिधि से बातें करते हुए उन्होंने इतना स्पष्ट कर दिया है, कि जब तक बङ्गाल के ८०० राजनैतिक बन्दी बिना किसी शर्त के मुक्त नहीं कर दिए जाते, तब तक ब्रिटिश गवर्नमेण्ट से किसी प्रकार का सहयोग स्थापित करना एक बार ही असम्भव है। उन्होंने कहा है, कि यह एक ऐसा प्रश्न है जिसकी घर-घर चर्चा हो रही है, प्रत्येक विचार के लोग इस बात के लिए खिन्न हो रहे हैं। उनका कहना है, कि शान्तिपूर्ण वातावरण को स्थापित करने के लिए यह परमावश्यक है कि प्रत्येक राजबन्दी को—चाहे उसका अपराध हिंसात्मक हो अथवा अहिंसात्मक क्षमा-दान किया जावे। उन्होंने बहुत स्पष्ट शब्दों में इस बात की घोषणा की है, कि यदि शीघ्र ही मेरठ षड्यन्त्र केस के बन्दी, बङ्गाल के नज़रबन्द (Detenus) तथा हिंसात्मक अपराधों के लिए दण्डित होने वाले लोग नहीं छोड़ दिए गए, तो राजनैतिक परिस्थिति बहुत गम्भीर हो जाने की सम्भावना है।

इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं, कि यदि शीघ्र ही परस्पर के अनेक वैमनस्यों को तिलाञ्जलि देकर काँग्रेस और गवर्नमेण्ट में वास्तविक समझौता न हुआ और यदि राष्ट्रीय संग्राम दूसरी बार छिड़ गया—जिसकी पग-पग पर सम्भावना है, तो इसका परिणाम दोनों ही दलों के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। काँग्रेस और गवर्नमेण्ट दोनों को ही इस सुअवसर से समुचित लाभ उठाना चाहिए, देश और राज्य का इसी में कल्याण है!

* * *

"पूर्ण स्वराज्य" की व्याख्या

कराची काँग्रेस को क्या करना चाहिए?

१५वीं मार्च को बम्बई के आज़ाद मैदान में होने वाली सभा में व्याख्यान देते हुए राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू ने "पूर्ण स्वराज्य" की व्याख्या करते हुए अपनी स्थिति बिल्कुल साफ़ कर दी है। आपने कहा है कि "पूर्ण स्वराज्य" का अर्थ है फ़ौज, अर्थ-विभाग, तथा शासन-प्रबन्ध का पूर्णतया भारतवासियों के हाथ में आ जाना। आपने स्पष्ट शब्दों में कहा है, कि वह कोई समझौता न होगा, जो इन समस्याओं को हल करने में असमर्थ सिद्ध हो और वे हमेशा उस समझौते से दूर रहेंगे, जो लाहौर काँग्रेस की शर्तों को पूरा न करेगा। आपने यह भी कहा है कि वे किसी विधान को तब तक स्वीकार नहीं कर सकते, जब तक देश का शासन-भार जनता के हाथों में पूर्णतः न आ जावे। केवल थोड़े से अङ्गरेज़ों के स्थान पर मुट्ठी भर हिन्दोस्तानियों को नियुक्त करने के विधान को वे कोई विधान नहीं मानते।

राष्ट्रपति से प्रश्न करने पर, कि उन्होंने देहली वाले अस्थायी-समझौते को क्यों स्वीकार किया? पं० जवाहरलाल जी ने कहा, कि चूँकि लॉर्ड इर्विन ने काँग्रेस के महत्व को ही स्वीकार नहीं किया, बल्कि काँग्रेस को भारत की राष्ट्रीय संस्था भी मान लिया, जिसके पीछे देश की विशाल शक्ति लगी हुई है और चूँकि महात्मा गाँधी को काँग्रेस की ओर से प्रतिनिधित्व का पूर्ण अधिकार दे दिया गया था, इसलिए यदि उनके समझौते का आदर न किया जाता—और ख़ासकर ऐसी हालत में, जब कि विपक्षी स्वयं समझौता करने को उत्सुक थे—तो इससे काँग्रेस की सङ्कीर्णता प्रकट हो सकती थी।

आपने जनता से इस बात का अनुरोध किया है, कि उसे कराची काँग्रेस में 'पूर्ण स्वराज्य' के प्रस्ताव पर ही ज़ोर देना चाहिए, जिसकी उन्होंने व्याख्या की है। आपने अन्त में यह भी स्पष्ट कर दिया, कि देहली में जो क्षणिक-समझौता (Truce) हुआ है, वह शान्ति का परिचायक नहीं है। इसे केवल विश्राम की अवधि मात्र समझना चाहिए—कुछ दिनों के लिए आन्दोलन के बढ़ते हुए वेग को कम अवश्य कर दिया गया है, किन्तु यह कोई स्थायी समझौता नहीं है। उन्होंने जनता को इस बात का आदेश भी दिया है, कि अवसर पड़ने पर, आगामी युद्ध के लिए उसे सदैव प्रस्तुत रहना चाहिए।

जनता राष्ट्रपति के इन विचारों का कहाँ तक पालन करती है, इसका उत्तर आगामी सप्ताह में होने वाला राष्ट्रीय महासभा का ४५वाँ अधिवेशन देगा।

* * *

[श्री० प्रकाशदत्त जी, एम० ए०]

दुनिया में सभी तरह के मनुष्य होते हैं—अच्छे से अच्छे और बुरे से बुरे, दिन-रात दूसरे की भलाई में व्यस्त रहने वाले और दिन-रात केवल अपने मतलब पर दृष्टि रखने वाले भी। पण्डित रघुनाथ माधव पुरोहित इनमें से किस प्रकार के जीव हैं, लोगों के लिए यह एक कठिन समस्या रही है। वह नगर के प्रतिष्ठित रईस और वकीलों के मुकुट-मणि समझे जाते हैं। कहते हैं कि क़ानून उनकी जिह्वा की छोटी नोक पर नाचा करता है। जिन्हें कचहरियों में जाने का चस्का है वह अक्सर कहा करते हैं—बस वकील हैं तो पुरोहित जी। ऐसी जिरह करते हैं, ऐसी बहस करते हैं, कि अदालत उनका मुँह ताकने लगती है, और वकील बेचारों की तो नानी ही मर जाती है। शायद ही उनका मुवक्किल अदालत से उदास मुँह लिए बाहर निकलता हो। सच को झूठ और झूठ को सच कर दिखाना पुरोहित जी के बाएँ हाथ का खेल है।

फिर भी इधर एक मुद्दत से पुरोहित जी की ओर जनता के ख़याल अच्छे नहीं रहे। बात उन दिनों की है, जिन दिनों देश में असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ था, और ग़रीब लोगों ने दो रोटियाँ पाने की आशा में सरकार से खटपट शुरू कर दी थी। उन दिनों पुरोहित जी जनता के सम्मान-पात्र थे। वह समझती थी कि यह योग्य व्यक्ति हैं और इनकी सहायता से हमारा बहुत-कुछ काम बन सकता है। अतः उसने पुरोहित जी से बहुत-कुछ अनुनय-विनय की, पर वह जहाँ के तहाँ रहे। उन्होंने अपनी प्रखर बुद्धिमत्ता से—अपूर्व तर्क-शक्ति से यह सिद्ध कर दिया कि यह आन्दोलन केवल चुटकी की आवाज़ है, जो बजते ही वायु में विलीन हो जाती है। ऐसे आन्दोलन से मिले-जुलेगा तो कुछ नहीं, हाँ तकलीफ़ें ज़रूर द्रौपदी के चीर के समान बढ़ जावेंगी।

इस पर जब किसी-किसी ने कहा कि साहब, यह तो स्वार्थ की बातें हैं, तब पुरोहित जी ने हँस कर जवाब दिया—यदि मैं स्वार्थ की ही बातें करता हूँ तो क्या बुरा करता हूँ। आप लोग भी तो स्वार्थ की बातें करते हैं। शायद आप लोग कहेंगे कि यह तो परमार्थ है। इस पर मेरा कहना यह है कि यद्यपि स्वार्थ और परमार्थ देखने में दो अलग-अलग चीज़ें ज़रूर हैं, पर वह हैं असल में एक ही, दोनों एक ही जगह से पैदा होती हैं, दोनों की जाति भी एक ही है, और दोनों का उद्देश्य तो एक है ही। परमार्थी परार्थ-साधन कर अपने हृदय में सुख की अनुभूति करता है, तो स्वार्थी स्वार्थ-साधन कर प्रसन्न होता है। जब दोनों का उद्देश्य "स्वान्ताय सुखः" है, तब एक की प्रशंसा और दूसरे की निन्दा क्यों की जाय? पर नहीं, प्रशंसा और निन्दा करना तो दुनिया का स्वभाव ही है और उसका यह कार्य भी 'स्वान्ताय सुखः' के उद्देश्य से होता है, अतः मैं उसे दोषी नहीं ठहराना चाहता।

पुरोहित जी अपने इस तर्क से अपनी दृष्टि में चाहे जैसे बने रहे हों, पर वह जनता की दृष्टि में नीचे गिर गए और बहुत नीचे गिर गए। फिर भी उनकी स्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ा, उनकी प्रैक्टिस ज्यों की त्यों चलती रही, आमदनी का द्वार पूर्ववत् खुला रहा। क्या किया जाय, लोगों को उसके पास जाना ही पड़ता है, जिससे उन्हें स्वकार्य-सिद्धि की आशा रहती है। उनके मन में भले ही उसके प्रति बुरी से बुरी भावना रहती हो।

असहयोग आन्दोलन से दूर रहने के कारण पुरोहित जी सरकार की दृष्टि में और भी समा गए। वह असहयोग आन्दोलन के शमनार्थ स्थापित की गई लिबरल-लीग के प्रधान बनाए गए। उनका उद्योग सरकार को इतना पसन्द आया कि उसने उनका रुतबा अब और भी विस्तृत कर दिया। वह 'राव साहब' से 'राव बहादुर' बना दिए गए। यही क्यों, वह अपने उद्योग से नगर के म्युनिसिपल-बोर्ड और बाद में डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड के प्रधान पद पर भी जा पहुँचे। अस्तु—

जब स्वातन्त्र्य-संग्राम आरम्भ हुआ, तब पुरोहित जी का सौभाग्य-सूर्य मध्याह्न में चमक रहा था। पुरोहित जी के पुराने कारनामे याद कर लोगों ने उन्हें फिर छेड़ना शुरू किया। उनके साथी मुस्करा कर कहते थे—"इस बार तो आपको देश का साथ देना ही पड़ेगा।" पुरोहित जी हँस कर जवाब देते थे—"मैंने पहले भी कहा था, और अब भी कहता हूँ कि ऐसे टण्टे-बखेड़ों से कुछ होने-जाने का नहीं। ब्रिटिश सरकार के पास काफ़ी ताक़त है।"

परन्तु देश के दीवाने इस बार सचमुच पञ्जे झाड़ कर पुरोहित जी के पीछे पड़ गए। उनका कहना था—इस बार तो हम आपको साथ लेकर ही रहेंगे। हमें आपके व्यक्तित्व की आवश्यकता है। देश आपकी योग्यता और प्रतिभा को चाहता है।

एक दिन कॉङ्ग्रेस कमिटी के वयोवृद्ध डिक्टेटर तिवारी जी, पुरोहित जी के यहाँ जा पहुँचे। उनके साथ जोश की मदिरा पिए हुए और भी कई युवक थे। सिपाहियों का वह दल देख कर पुरोहित जी बड़े सङ्कट में पड़ गए—कर्त्तव्य-पथ जैसे उनके सामने से तिरोहित होने लगा। वह समझ गए कि इस बार बला से बचना मुश्किल है। उन्होंने हिकमत से काम लेने की ठानी। देश के दीवानों से बोले—आप लोग विश्वास कीजिए, मेरी आत्मा आपके साथ है। परन्तु परिस्थिति आदमी को लाचार कर देती है। सच मानिए, यदि घरू झञ्झटें मेरे सिर पर न होतीं, तो मैं अभी वकालत पर लात मार कर आप लोगों के साथ हो जाता।

तिवारी जी ने उत्तर दिया—मैं आपको वकालत त्याग देने के लिए विवश नहीं करता। आप चाहें तो वकालत करते हुए भी देश के बहुत-कुछ काम आ सकते हैं। हमारी सभा-समितियों में सम्मिलित हो सकते हैं, हम लोगों को अपनी अमूल्य सम्मतियाँ देकर मार्ग बतला सकते हैं। और हाँ, आपको इन विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करने में क्या कठिनाई हो सकती है? क्या आप स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार नहीं कर सकते?

पुरोहित जी ने मुस्करा कर कहा—क्यों नहीं! आयन्दा मैं स्वदेशी वस्तुओं का ही उपयोग करूँगा।

पाण्डेय जी की ज़बान बोलने के लिए भीतर ही भीतर घबरा रही थी। अब वह और शान्त न रह सकी, वह यौवन का उद्दाम-वेग सँभालने में असमर्थ हो गई। पाण्डेय जी बोल ही उठे—वकील साहब, 'उपयोग करूँगा' की बात नहीं है। अब इन अपवित्र विदेशी वस्तुओं को जला कर अपना घर पवित्र कर डालिए। और हाँ, टाइटिल का यह तावीज़ कब तक गले में बाँधे रहिएगा? इसका त्याग करने में, मैं तो देखता हूँ कि आप किसी घरू झञ्झट का बहाना नहीं कर सकते।

पुरोहित जी ने एक कड़ी निगाह पाण्डेय जी पर डाली, परन्तु सँभल कर कहा—मैं समझता हूँ, कि टाइटिल का त्याग किए बिना भी कुछ न कुछ देश-सेवा की जा सकती है। फिर भी मैं आपके प्रस्ताव पर विचार करूँगा।

परन्तु पाण्डेय जी को सन्तोष कहाँ, घृणा-सूचक ध्वनि में बोले—शायद आपको यह बतलाने की ज़रूरत नहीं है कि यह टाइटिल नहीं, ग़ुलामी की निशानी है

एक बेहूदे छोकरे की—जो ठीक से पढ़ा-लिखा भी नहीं है—यह धृष्टता! पुरोहित जी के शरीर में आग लग गई, उनकी भृकुटियाँ चढ़ गईं, आँखें सुर्ख़ हो गईं, परन्तु वह ग़ुस्से को पी गए। वृद्ध तिवारी जी उनका वह भावान्तर समझ गए, बात कहीं और न बिगड़ जाय, यह सोच कर उठ खड़े हुए और नम्रतापूर्वक बोले—"पुरोहित जी, आपसे हमें बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं। हमारी आन्तरिक अभिलाषा तो यही है, कि आप हमारे पथ-प्रदर्शक बनें। आशा है, हमारी प्रार्थना व्यर्थ न होगी। अच्छा आज्ञा दीजिए, फिर कभी सेवा में उपस्थित होऊँगा।"

तिवारी जी उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही चल पड़े। उनके साथियों ने भी उनका अनुसरण किया। रास्ते में पाण्डेय जी बोले—"मैं तो पहले से ही जानता था कि इस ग़ुलाम से कुछ न बन पड़ेगा।" दूसरे साहब उनकी हाँ में हाँ मिलाते हुए बोले—"कुछ न पूछिए साहब, ऐसी कायर तबियत का आदमी मैंने आज से पहले कभी न देखा था।"

वृद्ध तिवारी जी उन लोगों को झिड़क कर बोले—बस तुम लोगों की यही बातें सुन कर तो हम लोगों का हृदय बैठ जाता है। पाण्डेय जी, आज तुमने पुरोहित जी का अपमान कर बहुत बुरा किया—बनते हुए खेल को बिगाड़ दिया। तुम नहीं जानते, पुरोहित जी बड़े सज्जन हैं, तभी वह उस अपमान को पी गए। क्या तुम जानते हो कि पुरोहित जी ने कभी कुछ देश-सेवा की ही नहीं? आज तक वह न जाने कितने ग़रीबों के मुक़द्दमे मुफ़्त लड़ चुके हैं। और वह महाराष्ट्र कन्या-पाठशाला किसकी बदौलत चल रही है? किसी की निन्दा करने के पहले हमें उसके गुणों पर भी एक नज़र डाल लेनी चाहिए। फिर हमारा युद्ध सत्य और प्रेम पर निर्भर है। यदि हम स्वयं सत्य और प्रेम को ठुकरा कर अपने भाइयों का ही जी दुखाने के कारण हुए तो हमसे देश-सेवा क्या, देश-हानि ही होगी।

पाण्डेय जी ने लज्जित होकर कहा—गुरु जी, आप कहते तो सच हैं, पर क्या किया जाय, ऐसे लोगों को देख कर जी जल उठता है, और ज़बान ख़ामख़ाह बेलगाम हो जाती है।

सच है, जनता उसी पर रीझती है, जो हृदय से उसके साथ चलता है।

२

सुगृहिणी की प्राप्ति मनुष्य के लिए परमात्मा का आशीर्वाद है। और वह आशीर्वाद पुरोहित जी को प्राप्त हुआ था। उसका नाम था सावित्री। सावित्री गुणों में चाहे सावित्री की समता की न रही हो, पर पति के लिए वह आरम्भ से अन्त तक सावित्री ही रही। पति की सेवा उसका जीवन-मन्त्र था, पति को प्रसन्न देखना उसका सुख था, और पति को घर-गृहस्थी की चिन्ताओं से मुक्त रखना उसकी कर्त्तव्यशीलता थी।

और पुरोहित जी भी सावित्री पर मरते थे। वह उनके हृदय की अधिष्ठात्री देवी थी। उन्होंने उसे गृहस्थी की स्वच्छन्द राज्य दे रक्खा था। जो कुछ कमा कर लाते, उसके सामने डाल देते थे। वह चाहे तीन के तेरह और तेरह के तीन करती रहे—इससे पुरोहित जी को कुछ मतलब न था। अगर उन्हें एक पैसे की भी ज़रूरत पड़ती तो वह सावित्री से माँगते थे।

उस वर्ष जब सावित्री उदर-पीड़ा से त्रस्त हुई, तब पुरोहित जी अत्यन्त आकुल, अत्यन्त चिन्तित हुए। उन्होंने नगर के सभी चिकित्सकों की चिकित्सा करा डाली, पर सावित्री को कुछ लाभ न हुआ। इस दौड़-धूप में पुरोहित जी का घर चौपट हुआ जा रहा था, आमदनी पर पानी फिर रहा था, पर उन्हें इसकी कुछ चिन्ता न थी। चिन्ता थी तो यही कि चाहे हज़ारों बिगड़ जायँ, पर मेरी सावित्री अच्छी हो जाय।

अन्त में पुरोहित जी अपनी प्रैक्टिस पर लात मार, घर-द्वार नौकरों के भरोसे छोड़, सावित्री को साथ लेकर लखनऊ, काशी, कलकत्ता, बम्बई, आदि स्थानों का चक्कर काटते फिरे। वह यात्रा का कष्ट झेलते थे, चिकित्सकों से प्रार्थनाएँ करते थे, स्वयं अपने हाथों सावित्री को दवा-पानी देते थे, चिन्ताओं के मारे घुले जाते थे, परन्तु उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। अन्त में बम्बई के एक डॉक्टर की चिकित्सा से सावित्री रोग-मुक्त हुई।

जान बची, लाखों पाए—पुरोहित जी को बड़ा आत्म-सन्तोष हुआ। उन्होंने घर लौटने पर सावित्री को दस हज़ार रुपए का एक चेक भेंट किया। सावित्री के नेत्र भर आए। उसने पुरोहित जी के पैर पकड़ कर कहा—तुमने मुझ पर सदा जो अकृत्रिम स्नेह किया है, वही क्या कम है? मेरी सेवा-सुश्रूषा में तुमने जो कष्ट सहा है, वही मेरे लिए सर्व-श्रेष्ठ पुरस्कार है, फिर इस चेक की क्या ज़रूरत थी? परन्तु मैं तुम्हारे दान का तिरस्कार नहीं कर सकती। जब तुमने इतनी कृपा की है; तब इतनी कृपा और करो कि मुझे नियमित रूप से सौ रुपए मासिक दिया करो।

पुरोहित जी ने पुलकित होकर पूछा—क्या करोगी?

सावित्री ने उत्तर दिया—नगर की महाराष्ट्र कन्याओं की शिक्षा के लिए कोई प्रबन्ध नहीं है। मेरी अभिलाषा है कि उनके लिए एक पाठशाला स्थापित की जावे।

पुरोहित जी के मुख पर गौरव की आभा दिखलाई दी। उन्होंने स्नेहपूर्ण दृष्टि से सावित्री की ओर देखा और हँस कर कहा—यह तो तुम्हारे ही अधिकार की बात है। ऐसे पवित्र उद्देश्य पर तुम चाहो, तो सौ क्या, सवा सौ भी निछावर कर सकती हो।

थोड़े ही दिनों में पाठशाला के लिए एक छोटा सा, परन्तु दिव्य भवन तैयार हो गया और तब एक दिन शुभ मुहूर्त देख कर पाठशाला जारी कर दी गई। सावित्री स्वयं पाठशाला का सञ्चालन करती थी। घर-गृहस्थी के कार्यों से छुट्टी पाते ही पाठशाला में जाती और शेष समय वहीं बिताती थी। इतना ही नहीं, वह स्वयं बालिकाओं को कई विषय पढ़ाती और सब तरह से उनका उत्साह बढ़ाती थी। बालिकाओं पर उसका अकृत्रिम स्नेह रहता था और बालिकाएँ भी उस स्नेह को समझती थीं। अस्तु—

उस दिन नगर में झण्डाभिवादन था। एक सयानी-सी बालिका राष्ट्रीय झण्डा ले आई थी। उसे देख कर सब बालिकाएँ बहुत प्रसन्न हुईं, लगीं आपस में सलाह करने कि हम भी पाठशाला पर झण्डा चढ़ावेंगी। इतने में सावित्री ने पाठशाला में प्रवेश किया। आज पुरोहित जी जल्दी कचहरी चले गए थे, इसलिए सावित्री भी घरेलू कामों से जल्दी छुट्टी पाकर पाठशाला में आ गई थी। उसे देखते ही बालिकाएँ प्रसन्न हो उठीं, चारों ओर से घेर कर बोलीं—माँ, आज घर-घर राष्ट्रीय झण्डे फहरा रहे हैं। हम भी अपनी पाठशाला पर झण्डा चढ़ावेंगी, और उसका गीत गावेंगी।

बालिकाओं के इस सरल व्यवहार से सावित्री का कोमल मातृ-हृदय मुखरित हो उठा। उसने थोड़ा सा हँस दिया, फिर बालिकाओं से कहा—हाँ-हाँ, पाठशाला तुम्हारी है। आनन्द से उस पर झण्डा चढ़ाओ और उसका गीत गाओ।

बालिकाओं की चञ्चलता और भी चञ्चल हो उठी। उन्होंने बात की बात में पाठशाला पर झण्डा फहरा दिया। फिर सब एक क़तार में खड़ी हो गईं और झूम-झूम कर गाने लगीं—

विजयी विश्व तिरङ्गा प्यारा।
झण्डा ऊँचा रहे हमारा॥

बालिकाओं के हृदय से निकली हुई वह कोमल एवं मधुर स्वर-लहरी वायु-मण्डल में व्याप्त होकर दूर-दूर तक राष्ट्रीय गौरव का उद्बोधन करने लगी। सावित्री सोचने लगी—जो बात आज बालिकाओं को सूझी वह पहले मुझे क्यों न सूझी? बालिकाओं की वह सरलता और उनकी झण्डे के प्रति वह स्नेह-भावना देख कर उसका हृदय बार-बार आनन्द-विभोर होने लगा। बार-बार उसके हृदय में एक भाव उत्थित होने लगा—

इसकी शान न जाने पाए।
चाहे प्राण भले ही जाए॥

कचहरी का समय ख़तम होने पर पुरोहित जी घर को लौटे। कन्या-पाठशाला राह में ही पड़ती थी। उनकी नज़र उस पर फहराते हुए झण्डे पर पड़ी। उन्होंने शोफ़र को गाड़ी रोकने की आज्ञा दी। गाड़ी रुकते ही वह उतर कर पाठशाला के अहाते में जा पहुँचे। उस समय पाठशाला की छुट्टी हो चुकी थी। माली अहाते में लगे हुए पौधों को पानी दे रहा था। पुरोहित जी को देखते ही बेचारा हाथ बाँध कर खड़ा हो गया।

पुरोहित जी ने उससे पूछा—यह झण्डा किसने चढ़ाया है

माली बोला—मैं क्या जानूँ सरकार, लड़कियों ने चढ़ाया होगा।

पुरोहित जी—हूँ। अच्छा, तू इसे उतार ले।

माली—और जो कहीं मालकिन नाराज़ हुईं तो?

पुरोहित—ज़्यादा बात मत कर, मैं जैसा कहता हूँ, वैसा ही कर।

माली ने झण्डा उतार लिया। पुरोहित जी चलने लगे, परन्तु फिर न जाने क्या सोच कर लौट पड़े और माली के सामने दियासलाई फेंक कर बोले—"और सुन, इसमें आग लगा दे।" माली ने भयभीत होकर कहा—"नहीं सरकार, यह गाँधी जी का झण्डा है। कहीं मालकिन नाराज़ हुईं, तो उन्हें क्या जवाब दूँगा।" पुरोहित जी डपट कर बोले—"मूर्ख कहीं का, मेरा नाम ले देना।"

माली ने झण्डे में दियासलाई लगा दी।

३

वह चिनगारी थी, जहाँ जाती थी, आग लगाती थी। ज्योति उसका नाम था। जब स्वतन्त्रता का संग्राम आरम्भ हुआ, तब उसके हृदय में छिपी हुई देश-भक्ति की आग ज्वालामुखी की नाईं भड़क उठी। उसने घर-गृहस्थी का मोह ठुकरा दिया; अपनी बहिनों के हृदय में देश-प्रेम की ज्योति जाग्रत करने का व्रत धारण किया और सर पर कफ़न बाँध कर निकल पड़ी। ज्योति घूमती-फिरती हमारे नगर में भी आई। उसका आगमन नगर की महिलाओं के लिए बरकत हुआ। उनमें नव-स्फूर्ति का जागरण हुआ। मुहल्ले-मुहल्ले में उनकी सभाएँ होने लगीं, खादी के प्रति उनका प्रेम बढ़ चला, आभूषणों के लिए उमड़ी

हुई लालसाएँ शिथिल हो चलीं। रोज-रोज उनके जुलूस निकलने लगे। उनके विजय-गान से दिशाएँ काँपने लगीं। ज्योति ने सोई हुई देवियों को जगा दिया—उनके हृदय दुर्गा और लक्ष्मी के त्याग, वीर्य और बलिदान पर निछावर होने के लिए ललकने लगे।

महाराष्ट्र कन्या-पाठशाला में राष्ट्रीय पताका का अपमान किया गया है, वह जला डाली गई है—इस समाचार ने महिला-समाज के कलेजे में आग लगा दी। दूसरे दिन दोपहर होते-होते महिलाओं का एक दल कन्या-पाठशाला के सामने जा पहुँचा। प्रत्येक देवी के हाथ में राष्ट्रीय पताका थी। उनके नेत्रों से अग्नि-कण वह रहे थे; पर ज्योति का नेतृत्व उनकी प्रदीप्त ज्वाला को शीतल कर रहा था। चारों ओर एक ही आवाज गूँज रही थी—

विजयी-विश्व तिरङ्गा प्यारा।
झण्डा ऊँचा रहे हमारा॥

और उस आवाज में कितना ओज, कितना तेज, कितना क्षोभ और कितना स्वाभिमान भरा हुआ था।

महिलाओं का वह दल देख कर, उनका वह वीर-गान सुन कर सावित्री का हृदय बैठ गया, फिर भी उसने साहस कर फाटक खुलवा दिया। महिलाएँ एक-एक करके भीतर चली गईं। सावित्री एक भीरु अपराधिनी की नाईं उनके सामने खड़ी हो रही। लज्जा ने उसके मस्तक को नत कर दिया था, वह ज्योति तथा उसकी साथिन महिलाओं के स्वागतार्थ दो शब्द भी न कह सकी। जिह्वा कुण्ठित थी, नेत्र ऊपर न उठते थे।

विदुषी ज्योति ने पहली ही दृष्टि में सावित्री के हृदय को पढ़ लिया, कहा—श्रीमती जी, आप उदास न हों, हम जानती हैं, कि कल की दुर्घटना में आपका कोई अपराध नहीं है। हम यहाँ आपको उलाहना देने की ग़रज से, या लज्जित करने के विचार से नहीं आई हैं।

सावित्री के जी में जी आया। किञ्चित सिर ऊँचा कर बोली—बहिन, मैं बिलकुल निरपराधिनी हूँ। मैंने सोचा भी नहीं था कि भारत-माता का यह गौरव, यह सम्मान मेरी पाठशाला में इस प्रकार धूलि-धूसरित होगा। मैं पतिदेव के लिए क्या कहूँ।

ज्योति—आपके पतिदेव ने भयङ्कर पाप किया है।

सावित्री नीचा सिर किए चुप रही।

इतने में कुछ महिलाएँ बोलीं—इस पाप का प्रायश्चित्त होना चाहिए। हम पाठशाला पर ये सब झण्डे लगावेंगी।

सावित्री ने उन्हें उत्तर दिया—पाठशाला आप ही लोगों की है। यदि आपने उसे यह गौरव प्रदान किया, तो मैं अपना अहोभाग्य समझूँगी।

उधर महिलाएँ पाठशाला पर झण्डे चढ़ाने में प्रवृत्त हुईं, इधर ज्योति ने सावित्री से कहा—बहिन! इतने से ही पाप का प्रायश्चित्त नहीं हो सकता। भारतमाता का सम्मान इतने अल्प मूल्य का नहीं है। वह मूल्य चुकाने के लिए—उस हत-सम्मान को पुनर्जीवित करने के लिए आपको बहुत-कुछ करना पड़ेगा। क्या आप अपने पतिदेव को सुमार्ग पर नहीं ला सकतीं?

सावित्री ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया—बहिन, मैं उनकी दासी हूँ। उनसे क्या कह सकती हूँ? वह स्वयं विद्वान हैं, अपना हिताहित सोचने की उनमें बुद्धि है।

ज्योति ने किञ्चित उत्तेजित होकर कहा—वह स्वयं विद्वान हैं—यह एक ही कही! उनमें अपना हिताहित सोचने की बुद्धि होती, तो वह कभी ऐसा भीषण पाप न करते। जानती हो, उनके इस पाप से जनता कितनी उत्तेजित हो उठी है, और उसकी इस उत्तेजना का परिणाम कितना भीषण हो सकता है?

सावित्री का मस्तक उन्नत हो गया, गर्वपूर्वक बोली—सब जानती-समझती हूँ, परन्तु आप मेरे सामने मेरे देवता की निन्दा कदापि नहीं कर सकतीं। आपको यह स्मरण रखना चाहिए कि वह मेरे सर्वस्व हैं, और उनसे मुझे कुछ भी कहने-सुनने का अधिकार नहीं है।

ज्योति को हँसी आ गई। उसने स्नेह-मिश्रित स्वर में कहा—बहिन, मैं तुम्हारा भाव समझती हूँ, और उस पर गर्व भी करती हूँ। परन्तु क्षमा कीजिए, आपके पतिदेव का सम्मान भारतमाता के सम्मान से बहुमूल्य नहीं है। फिर मैं उनकी निन्दा ही कहाँ कर रही हूँ? जो सत्य बात है, वही कह रही हूँ। रही यह बात कि आप उनकी दासी हैं, सो मैं इसका दृढ़तापूर्वक प्रतिवाद करती हूँ। आप उनकी दासी नहीं हैं, अर्द्धाङ्गिनी हैं, जीवन-सहचरी हैं, केवल इसी नाते आपको उनके कार्यों में हस्तक्षेप करने का अधिकार है। परन्तु नहीं, मैं आप पर यह दबाव नहीं डालना चाहती कि आप उनसे कहा-सुनी करें और घर में कलह मचावें। मैं आपसे केवल यही कहना चाहती हूँ, कि आप भारत-माता की पुत्री हैं, और आपको माता के सम्मान की रक्षा करनी चाहिए। यदि आप चाहें तो स्वयं पति के पाप का प्रायश्चित्त कर, उस सम्मान की रक्षा कर सकती हैं।

सावित्री ने प्रसन्न होकर उत्तर दिया—आपका कथन सही है। मैं इस सम्बन्ध में अपने कर्तव्य को निश्चित कर चुकी हूँ, और जब आप यहाँ आ गई हैं, तब आपको भी मेरी कुछ सहायता करनी पड़ेगी, ताकि मैं अपनी तुच्छ सेवाएँ ज़रा ठिकाने से भारत-माता के चरणों पर अर्पित कर सकूँ।

अब तक महिलाएं पाठशाला पर झण्डे चढ़ा चुकी थीं और एक क़तार में खड़ी होकर अपना प्यारा विजय-गीत गाने जा रही थीं। दो-एक महिलाओं ने ज्योति और सावित्री को पुकारा—"आइए, झण्डे का अभिवादन करें!"

ज्योति और सावित्री उनमें जाकर मिल गईं। तब सब देवियों और बालिकाओं ने मिल कर गाना आरम्भ किया—

विजयी विश्व तिरङ्गा प्यारा।
झण्डा ऊँचा रहे हमारा॥

पाठशाला का छोटा सा अहाता उस राष्ट्रीय ध्वनि से मुखरित हो उठा। अबकी बार स्वर में ओज, तेज और क्षोभ नहीं था, स्वाभिमान, आत्म-सन्तोष और हृदय का आह्लाद था।

गान समाप्त होने पर सावित्री ने एक गौरव-भरी दृष्टि पताकाओं से सजे हुए पाठशाला-भवन पर डाली। फिर ज्योति से कहा—हाँ, तो आप मेरी सहायता करेंगी या नहीं?

ज्योति ने नत-शिर होकर उत्तर दिया—मैं तो आपकी एक तुच्छ सेविका-मात्र हूँ। आप आज्ञा कीजिए।

सावित्री मुस्करा कर बोली—आज्ञा यही है, कि आज पाठशाला से ही महिलाओं का जुलूस निकाला जावे। उसमें मैं भी सम्मिलित रहूँगी, मेरी बालिकाएँ भी साथ रहेंगी। इसके पश्चात् अन्य कार्यों की ओर ध्यान दिया जायगा।

यह प्रस्ताव सुन कर समस्त महिलाएँ और बालिकाएँ बहुत प्रसन्न हुईं। तुरन्त जुलूस निकालने की तैयारियाँ होने लगीं, और तैयारियाँ समाप्त होते ही बड़ी शान का जुलूस निकला। उसके आगे-आगे, राष्ट्रीय झण्डे लिए हुए ज्योति और सावित्री थीं, और पीछे-पीछे महिलाएँ तथा बालिकाएँ वैतालिक रागिनी में गाती जा रही थीं—

विजयी विश्व तिरङ्गा प्यारा।
झण्डा ऊँचा रहे हमारा॥

लोगों ने आश्चर्यपूर्ण नेत्रों से वह दृश्य देखा।

४

आज पुरोहित जी की तबियत बहुत रञ्जीदा थी। कचहरी से लौटते समय वह देखते आए थे, कि पाठशाला झण्डों के शृङ्गार में नव-बधू के समान उत्फुल्ल हो रही है, और उन्हें यह भी मालूम हो गया था कि आज सावित्री झण्डा लेकर जुलूस के साथ गई है। वह बार-बार सोचते थे कि सावित्री को यह क्या ख़ब्त सूझा है, उसे यह हवा क्यों लग गई, कैसे लग गई।

सावित्री अब तक नहीं लौटी थी। पुरोहित जी बड़ी बेचैनी से उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। थोड़ी देर में सावित्री ने कमरे में प्रवेश किया। उसे देखते ही पुरोहित जी अपनी बेचैनी दबा गए, मुस्करा कर बोले—कहिए सरकार! यह कैसा ख़ब्त है? यह क्या रङ्ग-ढङ्ग है?

सावित्री यह व्यङ्ग न समझी हो, सो बात नहीं, परन्तु उसने कुछ अनजान सी बन कर उसी ढङ्ग से पुरोहित जी के शब्द दोहराए—कैसा ख़ब्त हुज़ूर? कैसा रङ्ग-ढङ्ग?

पुरोहित जी—पाठशाला पर राष्ट्रीय झण्डे फहराना और फिर झण्डा लेकर जुलूस में सम्मिलित होना।

सावित्री—अच्छा, तो पाठशाला पर राष्ट्रीय झण्डा फहराना और जुलूस में सम्मिलित होना, तुम्हारी समझ में ख़ब्त है?

"और नहीं तो क्या?" पुरोहित जी कुछ रुखाई से बोले—"सावित्री, तुम पहले ऐसी नहीं थीं, तुमने कभी मेरी इच्छा के विरुद्ध कोई काम नहीं किया—मेरी आज्ञा के बिना तुम कभी कुछ करने की सोचती भी न थीं। फिर इसी बार क्यों ऐसा किया?"

"इस बार"—सावित्री ने नम्रतापूर्वक कहा—"मुझसे तुम्हारी इच्छा छिपी नहीं रही, और मैं ही क्यों, सारा नगर तुम्हारी इच्छा को जान गया है। तुम्हारी इस इच्छा को जानते हुए, मैंने तुमसे आज्ञा या सम्मति लेने की जरूरत नहीं समझी।"

"अच्छा !"—पुरोहित जी कुछ रुष्ट स्वर में बोले—"तो यह कहो, इस बार तुमने मुझसे विद्रोह करने का निश्चय कर लिया है।"

"अवश्य !"—सावित्री ने कुछ क्लेशपूर्वक उत्तर दिया—"यदि देश की कुछ सेवा करना स्त्री के लिए विद्रोह है, यदि पति को कलङ्क-मुक्त करना या उसके पाप का कुछ प्रायश्चित्त करना पत्नी के लिए विद्रोह है, तो अवश्य मैंने तुम्हारे प्रति विद्रोह करने की ठान ली है।" और फिर कुछ दृढ़-स्वर में कहा—"परन्तु जो कुछ करने का मैंने निश्चय किया है, वह मेरे अधिकार की बात है, और मैं वह अवश्य करूँगी।"

पुरोहित जी सावित्री की प्रकृति से खूब परिचित थे। उसका दृढ़ता-सूचक उत्तर सुन कर नम्र हो गए, बोले—सावित्री, कैसी बहकी हुई बातें कर रही हो? मैंने क्या पाप किया है? और तुम उसका क्या प्रायश्चित्त करोगी?

"तुम्हारा पाप?"—सावित्री ने व्यङ्ग ध्वनि में कहा—"तुम नहीं जानते? कल तुमने पाठशाला पर चढ़े हुए झण्डे को माली से नीचे उतरवा दिया था?"

पुरोहित जी—हाँ!

सावित्री—और फिर उसे जलवा भी डाला था?

पुरोहित जी—हाँ! पर इससे क्या हुआ?

सावित्री—कुछ नहीं! जानते हो, जनता ने तुम्हारे इस कार्य को किस दृष्टि से देखा है? और वह तुम्हारे बारे में क्या कहती है?

पुरोहित जी हँस कर बोले—खूब जानता हूँ, उसने मेरे इस कार्य को घृणा की दृष्टि से देखा होगा, और वह मेरी निन्दा करती होगी। परन्तु मुझे न उसकी घृणा की परवाह है और न निन्दा की।

सावित्री ने जोशपूर्वक उत्तर दिया—परन्तु मुझे तो है। मैं तुम्हारे नाम पर लगी हुई उस घृणा और निन्दा को धो डालने का निश्चय कर चुकी हूँ।

पुरोहित जी और भी नम्र हो गए, स्नेहपूर्ण स्वर में बोले—प्रिये! मैं तुम्हारी पति-भक्ति को जानता हूँ। यदि तुम मुझसे सत्य ही स्नेह करती हो, तो अपने निश्चय का त्याग कर दो। तुम नहीं जानती, ऐसे कार्यों से सरकार रुष्ट होती है। अभी वह मेरा सम्मान करती है, सभी बड़े-बड़े ऑफ़िसर मेरा लिहाज़ करते हैं—मुझे मानते हैं। जानती हो, सरकार से बड़ी-बड़ी मुश्किलों से सम्मान मिलता है। तुम्हारी यह देशभक्ति देख कर सरकार अप्रसन्न हो जायगी। मैं उसकी नज़रों में गिर जाऊँगा।

सावित्री ने भी वैसे ही स्नेहपूर्ण स्वर में उत्तर दिया—परन्तु प्राणेश्वर! तुम जनता की दृष्टि में ऊँचे चढ़ जाओगे। सरकार तुम्हारा जो सम्मान करती है, वह वास्तव में सम्मान नहीं है, वह तो केवल अपना स्वार्थ साधने के लिए लोगों के सामने सम्मान की छाया फेंकती रहती है। फिर सरकार से सम्मान पाना कुछ मुश्किल नहीं है, मुश्किल है जनता से सम्मान प्राप्त करना। यदि तुम जनता का साथ दो, तो वह तुम्हें अपने पलकों पर बिठावेगी, और तब तुम्हें मालूम होगा कि वास्तविक सम्मान कहाँ है, और वह कैसा होता है। फिर सरकार भी हृदय से तुम्हारा सम्मान करेगी, चाहे वह ऊपर-ऊपर भले ही नाराज़ी दिखलावे। यदि तुम्हें सम्मान की ही भूख है, तो जनता से सम्मान प्राप्त करो—उसके हृदय का राज्य प्राप्त करो। इस सरकारी सम्मान को—इस झूठे सम्मान को एकबारगी त्याग दो।

बात सोलह आने सच थी, पुरोहित जी के हृदय पर असर कर गई। फिर भी वह ऐसे लोगों में से थे, जो हृदय की बात नहीं मानते—उसे जबर्दस्ती कुचल डालने में ही अपना पुरुषार्थ समझते हैं। तर्क का आश्रय लेकर बोले—सावित्री! तुम्हारा कहना सच है, परन्तु हमारे देश की जनता अभी मूर्ख है, वह स्वयं विचार करना नहीं जानती। भेड़ियाधसान वाला मज़मून है। रही आन्दोलन में भाग लेने की बात, सो यह आन्दोलन चलेगा ही कितने दिन? थोड़े दिन में ही सब लोग काँख-कूँख कर बैठ रहेंगे, तब व्यर्थ ही सरकार को रुष्ट करने से क्या लाभ? और झण्डे को पूछो, तो वह प्राण-विहीन है, जब उसमें प्राण-प्रतिष्ठा होगी, तब मैं ही क्या, सम्पूर्ण संसार उसके सामने नत-शिर होगा। परन्तु वह दिन अभी दूर—बहुत दूर है।

परन्तु सचाई और सरलता के सामने तर्क नहीं टिकता। सावित्री सहज-भाव से बोली—जनता मूर्ख अवश्य है, परन्तु अपना हिताहित कौन नहीं समझता? और आन्दोलन का चलना न चलना जनता पर नहीं, नेताओं पर निर्भर करता है। आप जैसे लोग आगे आवें और चाहें तो आन्दोलन क्यों न चलेगा? रही झण्डे में प्राण-प्रतिष्ठा स्थापित होने की बात, सो जब तुम्हीं उसका अपमान करोगे, तब वह सजीव कैसे होगा? क्या तुमने कभी सुना है कि किसी अङ्गरेज़ ने यूनियन जैक का अपमान किया हो या उसे जला डाला हो?

पुरोहित जी का तर्क कुण्ठित हो गया। उन्होंने सोचा कि यह यों राह पर न आवेगी, किसी तरह इसे फुसलाना चाहिए। तब वह अपनी सारी बुद्धिमत्ता को दाँव पर लगा कर बोले—अच्छा भई, तुम्हीं जीतीं। तुमने मेरे पाप का प्रायश्चित्त कर ही डाला, अब तो सब मामला ख़तम है न?

सावित्री ने मुस्करा कर उत्तर दिया—अभी कहाँ! अभी तो पाप का प्रायश्चित्त आरम्भ ही किया गया है—पूर्ण प्रायश्चित्त होने के लिए तो बहुत समय चाहिए। बहुत दूर जाकर यह साधना समाप्त होगी।

पुरोहित जी का माथा ठनका। वह घबरा गए, परन्तु सँभल कर बोले—यह बेवक़ूफ़ी छोड़ो, इन बातों में कुछ सार नहीं है।

सावित्री ने बड़े ही भोलेपन से कहा—तो स्वदेश-सेवा करने वाले यह सब लोग बेवक़ूफ़ ही हैं? गाँधी जी, नेहरू जी, अन्सारी जी, नायडू जी बेवक़ूफ़ हैं?

पुरोहित जी उबल पड़े, गरज कर बोले—हाँ-हाँ, सब बेवक़ूफ़ हैं।

सावित्री घबराई नहीं, उसने बड़े ही धैर्य से पूछा—तब बुद्धिमान कौन है? क्या अकेले आपको ही ईश्वर ने बुद्धि दी है?

पुरोहित जी इस प्रश्न का क्या उत्तर देते? "अच्छा है, जो तुम्हें दिखे, वही करो। पर कहे देता हूँ, कि इस हठधर्मी का परिणाम अच्छा न होगा।" यह कह कर अन्यत्र चले गए।

सावित्री के नेत्र भर आए। वह बड़ी देर तक वहीं बैठी रही और न जाने क्या-क्या सोचती रही।

५

पुरोहित जी जब क्लब से लौटे, तो उन्होंने घर में सावित्री को न पाया। नौकर से पूछा—सवित्री कहाँ है? इतना अँधेरा हो गया है, क्या वह अब तक पाठशाला से नहीं लौटी?

नौकर ने उत्तर दिया—सरकार, वह पाठशाला से तो चार बजे लौट आई थीं, परन्तु थोड़ी ही देर बाद फिर बाहर चली गईं। बहुत सी स्त्रियाँ आई थीं, उनके साथ वह स्त्री भी थी, जो थोड़े दिन हुए बाहर से इस शहर में आई है और सभाओं में स्वराज्य पर व्याख्यान देती है। वह सब आज सभा करेंगी और आपस में कहती थीं कि नमक बना कर क़ानून तोड़ेंगी।

पुरोहित जी के पैरों के नीचे से जैसे धरती खिसकने लगी। घबरा कर बोले—नमक बना कर क़ानून तोड़ेंगी! तब तूने उस कमबख़्त को क्यों जाने दिया? रोका नहीं?

नौकर आँखें फाड़ कर पुरोहित जी की ओर देखने लगा, फिर कुछ साहस कर बोला—मैं उन्हें रोकता? सरकार, भला मेरी इतनी सामर्थ्य कहाँ जो उन्हें रोकता।

पुरोहित जी ने हैरान होकर कहा—जा, देख तो सभा का क्या रङ्ग-ढङ्ग है। देर मत कर, जल्दी जा और ख़बर लेकर आ।

नौकर चला गया।

पुरोहित जी कुर्सी पर बैठ गए। आज उन्हें सावित्री पर बड़ा ही क्रोध आ रहा था, चेहरे पर उदासी और निराशा झलक रही थी। मन ही मन ताव-पेंच खाकर बड़बड़ाने लगे—गाँधी ने भी क्या आँधी पैदा कर दी है। चारों ओर विध्वंस ही विध्वंस—ख़राबी ही ख़राबी। बेटे को बाप की परवा नहीं, पत्नी पति को कुछ समझती नहीं; आन्दोलन क्या है—एक तमाशा है। जिन लोगों को घरवालों की ही चिन्ता नहीं है, वह देश की सेवा करने का हौसला रखते हैं। घरवालों को जलाते हैं, रुलाते हैं और कहते हैं कि हम देश की सेवा कर रहे हैं। वाह री देश-सेवा! और सरकार को तो देखो, लोग उसकी जड़ खोद रहे हैं, और वह कानों में तेल डाले पड़ी है। लाहौर में कॉङ्ग्रेस हो रही थी, लोग स्वाधीन होने के मन्सूबे बाँध रहे थे, पर लॉर्ड इर्विन अपने महलों में रङ्गरेलियों में मस्त थे। गाँधी अल्टीमेटम दे रहा था, सत्तू बाँध कर नमक-क़ानून ध्वस्त करने जा रहा था, फिर भी लॉर्ड इर्विन के कानों पर जूँ न रेंगी। जब चारों ओर तहलक़ा मच गया, क़ानून कुचला जाने लगा, तब हज़रत के होश ठिकाने

आए। पर महीने-दो महीने की सज़ा देने और दस-पाँच रुपए जुर्माना ठोंक देने से क्या होता है। लोग जेल जाना भी एक फ़ैशन समझने लगे हैं। काश मैं वायसराय होता !

परन्तु पुरोहित जी की यह बड़बड़ाहट बहुत देर तक जारी न रही। दूसरे ही क्षण वह सावित्री की चिन्ता से बेचैन हो उठे। क़ानून तोड़ने वाली बात है, पुलिस न जाने क्या बर्बरता कर बैठे। सावित्री अभी स्त्रियों के बहकावे में आकर वहाँ चली ज़रूर गई है, पर यदि वहाँ उस पर पुलिस कुछ अत्याचार कर बैठी, तब वह मुझसे क्या कहेगी, और लोग भी मेरे विषय में क्या ख़्याल करेंगे।

अब पुरोहित जी स्थिर न रह सके। किसी शक्ति ने उन्हें उठा कर खड़ा कर दिया और ढकेल भी दिया। वह ख़ुद समाचार जानने के लिए सभा-स्थल की ओर चल पड़े। अभी दस-पाँच ही क़दम चले थे, कि वृद्ध तिवारी जी आते हुए दिखाई पड़े और उनके साथ काफ़ी भीड़ भी थी, जो बार-बार 'भारत-माता की जय' 'महात्मा गाँधी की जय' 'देवी सावित्री की जय' के नारे से दशों दिशाओं को कँपाती आ रही थी।

पुरोहित जी का हृदय धड़कने लगा। लोगों ने उन्हें घेर लिया। तिवारी जी आगे बढ़ कर बोले—महाराज ! हमें आपसे इतनी बड़ी आशा न थी। परन्तु आज आपको पाकर हम लोग धन्य हो गए। देवी सावित्री ने हम लोगों का मुँह उज्ज्वल कर दिया। हमें इस बात का गौरव है कि हमारे यहाँ उन्होंने ही पहले-पहल क़ानून भङ्ग किया, और अपनी क़ुर्बानी से हमारे उत्साह में उफ़ान उत्पन्न कर दिया है। पुलिस उन्हें गिरफ़्तार कर ले गई है।

पुरोहित जी का हृदय धक् से हो गया। वह अवाक् हो रहे, पुनः सँभल कर एक सर्द आह छोड़ते हुए बोले—जो कुछ हुआ, अच्छा ही हुआ। सावित्री ने गिरफ़्तार होते समय कुछ सन्देश दिया है ?

तिवारी जी ने सोल्लास उत्तर दिया—उस समय मैं वहीं था। सावित्री देवी बिल्कुल प्रसन्न थीं। उन्होंने आपके लिए यही सन्देश दिया है कि आप उनकी तनिक भी चिन्ता न करेंगे, और घर-द्वार की चिन्ता छोड़ कर आन्दोलन को अधिकाधिक बढ़ावेंगे।

पुरोहित जी व्यग्रता पी गए, चिन्ता दबा गए, अपने सम्पूर्ण जोश को समेट कर बोले—आप मुझे इस यज्ञ की एक तुच्छ आहुति समझने की कृपा करें। मैं कल से ही एक तुच्छ सैनिक की नाईं इस भीषण युद्ध में योग दूँगा। आशा है, आप लोग मेरी सेवाएँ स्वीकृत करेंगे।

भीषण जय-ध्वनि से आकाश गूँज उठा। वृद्ध तिवारी जी अत्यन्त नत-शिर होकर बोले—ईश्वर आपको चिरञ्जीवि करे। मैं इस काया-कल्प के लिए आपको नगर की ओर से बधाई देता हूँ। कल से आप हम लोगों के स्वामी और हम आपके तुच्छ सेवक होंगे।

* * *

फ़्रान्स की राज्यक्रान्ति के कारण

[श्री० त्रिवेणीप्रसाद जी, बी० ए०]

(शेषांश)

अठारहवीं सदी में फ़्रेञ्च सम्राट तीन प्रकार से कर वसूल करते थे।

१—सम्राट की व्यक्तिगत ज़मींदारी की आय

सब से पहला नम्बर सम्राट की व्यक्तिगत ज़मींदारी की आय का है। यूरोप में यह रिवाज बहुत दिनों से चला आ रहा था कि राजा अपने व्यक्तिगत व्यय के लिए, अपने राज्य का एक भाग अलग कर लेता था। इस ज़मींदारी पर, जिसका ज़मींदार राजा स्वयं होता था, उसका पूर्ण अधिकार रहता था। राजा अपनी इस ज़मींदारी पर, अपनी इच्छानुसार कर बढ़ा-घटा सकता था। राजा के लिए व्यक्तिगत दृष्टि से इसका मूल्य बहुत अधिक था। किन्तु १८वीं सदी में, फ़्रान्स की सारी सम्पत्ति ही राजा की सम्पत्ति समझी जाती थी। राजा की व्यक्तिगत ज़मींदारी, और सरकारी सम्पत्ति में नाम-मात्र का अन्तर रह गया था।

२—सरकारी-कर

इसके बाद उन करों की बारी आती है, जो प्रजा पर लगाए जाते थे। ऐसे कर, वहाँ तीन प्रकार के थे।

(अ) इनकम टैक्स

यह टैक्स, जजों के वेतन, ज़मींदारों की आय, कारीगरों की आमदनी और किसानों की उपज पर प्रतिशत ५ के हिसाब से लगाया जाता था। धर्माध्यक्षों को तो टैक्स देना ही नहीं पड़ता था। प्रभावशाली ज़मींदार भी, अपनी ज़मींदारी की आय कम बता देता था और इस प्रकार अपेक्षाकृत कम टैक्स देता था। फलतः इस टैक्स का अधिक भार ग़रीब जनता ही पर पड़ता था।

(ब) पोल टैक्स (Poll Tax) या मुण्ड-कर

दूसरा टैक्स वह था, जो भिन्न-भिन्न श्रेणी के लोगों को देना पड़ता था। सरकारी लेखा के अनुसार, फ़्रान्स में २२ श्रेणी के मनुष्य थे। इन सबों से भिन्न-भिन्न परिमाण में यह कर वसूल किया जाता था। उदाहरण-स्वरूप, एक नौकरानी को साल में ७२ सेण्ट देने पड़ते थे।

(स) भूमि-कर

तीसरा कर था, भूमिकर। यह कर केवल किसानों को देना पड़ता था। इसलिए यह उनके लिए घृणास्पद हो गया था। इस कर के वसूल करने का ढङ्ग भी बड़ा विचित्र था। यह निश्चित नहीं था कि किस व्यक्ति को कितना कर देना पड़ेगा; बल्कि प्रत्येक वर्ष, स्थानीय अधिकारी (Intendants) सरकारी माँग के अनुसार, प्रत्येक गाँव पर, कर बैठा देता था। अब प्रत्येक गाँव के किसानों से, निश्चित कर के अनुसार, यह टैक्स वसूल किया जाता था। कर निश्चित करने के समय किसानों की अवस्था की ओर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया जाता था। क्योंकि स्थानीय अधिकारियों को तो सरकार की माँग पूरी करनी होती थी। इसलिए किसानों में बड़ा असन्तोष फैला हुआ था। ये बेचारे साल भर की कड़ी मेहनत के बाद फ़सल तैयार करें, और वह सरकारी ख़ज़ाने में जमा कर ली जाय, यह कहाँ का न्याय है? किन्तु बेचारों का कोई वश न था। वे मुँह ताकते रह जाते थे और उनकी मेहनत की कमाई मुफ़्त ही लुट जाती थी। इस बेबसी के कारण उनके हृदय में आग जल रही थी। घर में नन्हें-नन्हें बच्चे भूखों मर रहे थे, स्वयं उनमें परिश्रम करने की शक्ति शेष न रह गई थी। ऐसे भीषण अवसर पर, उनके सामने का ग्रास निर्दयतापूर्वक छीन लिया जाता था ! ऐसी अवस्था में कोई कहाँ तक धैर्य धारण कर सकता है ? सदियों से धधकती हुई घृणा, असन्तोष और क्रोध की आग कब तक हृदय में छिपी रह सकती है ? ग़रीबों की आह; सम्राटों के तोपख़ानों से अधिक भयङ्कर होती है।

३—परोक्ष-कर (Indirect Taxes)

उपर्युक्त करों के सिवा दूसरे प्रकार के भी कर थे, जो भिन्न-भिन्न वस्तुओं पर लगाए जाते थे, और जिनका सरकार से सीधा सम्बन्ध न था। इस प्रकार के करों के वसूल करने का हक़ सरकार बेंच दिया करती थी। इसका फल यह होता था कि इन अधिकारों के ख़रीदने वाले, बड़ी बेरहमी से कर वसूल करते थे। जो लोग इनसे बचने की कोशिश करते थे, उन्हें सरकार कड़ी सज़ाएँ देती थी। फलतः ऐसे टैक्सों को लोग घृणा की दृष्टि से देखते थे। इन करों के वसूल करने का ढङ्ग ठीक वैसा ही था, जैसा कि आजकल भारतवर्ष में मादक द्रव्यों पर टैक्स वसूल किया जाता है। यहाँ शराब, गाँजा और भाँग आदि वस्तुओं के बेंचने के लिए सरकार लाइसेन्स दिया करती है; १८वीं सदी में फ़्रान्स में भी नमक आदि वस्तुएँ बेंचने के लिए सरकार लाइसेन्स नीलाम किया करती थी !

नमक-कर

इस प्रकार के करों में सब से अधिक उल्लेखनीय नमक-कर है। यह कर फ़्रान्स के प्रत्येक व्यक्ति पर अप्रकट रूप से लगाया गया था। फ़्रान्सवासी

इस कर को अन्य सभी करों से अधिक घृणा की दृष्टि से देखते थे। क़ानून के अनुसार ७ वर्ष से ऊपर की आयु के प्रत्येक व्यक्ति को साल में कम से कम ७ पौण्ड नमक ख़रीदना पड़ता था। कोई व्यक्ति यदि इससे कम नमक ख़रीदता, तो उसे कड़ी सज़ा दी जाती थी। यदि कोई इस ७ पौण्ड में से अचार आदि खाद्य पदार्थों के लिए थोड़ा सा नमक बचा ले; उसके लिए अतिरिक्त नमक न ख़रीदे, तो भी वह दण्डनीय समझा जाता था। यह परिमाण केवल नित्य के भोजन के लिए ही नियत था। अन्य कार्यों के लिए अलग नमक ख़रीदना पड़ता था। फ़्रान्स में एक नहीं, हज़ारों-लाखों ऐसे ग़रीब थे, जिनके खाने का भी ठिकाना न था; फलतः यह सोचने की बात है कि इस कर के कारण उन पर क्या बीतती होगी। यहाँ पर यह भी कह देना उचित होगा कि नमक बेचने वाले, वास्तविक मूल्य से कई गुना अधिक मूल्य पर नमक बेचा करते थे। इसलिए नमक भोजन के लिए अत्यावश्यक पदार्थ होने पर भी ग़रीबों में इतनी शक्ति न थी कि वे अत्यावश्यक परिमाण में इस ईश्वर-प्रदत्त वस्तु का उपयोग कर सकें। ग़रीबों को क़ानून भङ्ग करने के अपराध में सज़ाएँ दी जाती थीं। ग़ैर-क़ानूनी नमक बेचने के अपराध में भी नित्य कितने ही व्यक्ति दण्ड पाते थे। प्रजा के कष्ट की ओर ध्यान देने वाला कोई न था। सरकार गम्भीर निद्रा में मग्न थी। उसकी निद्रा भङ्ग करने के लिए ही १७८९ की क्रान्ति की आवश्यकता थी।

ज़मींदारी-कर (Feudal dues)

हम पहले बता आए हैं कि किसानों से उनकी उपज के अनुसार एक प्रकार का इनकम टैक्स वसूल किया जाता था तथा उन्हें भूमि-कर भी अलग देना पड़ता था। इन करों के अतिरिक्त उन्हें ज़मींदारों को भी, उनका ज़मींदाराना हक़ अदा करना पड़ता था। ज़मींदार सरकार को कुछ दे या न दे, किन्तु साधारण प्रजा के लिए ज़मींदार को कर चुकाना आवश्यक था। इस कर से सरकार का कोई सम्बन्ध न था। ज़मींदार, साधारण भूमि-कर के अतिरिक्त, और भी कितने ही प्रकार के कर प्रजा से वसूल किया करते थे, जिनका उल्लेख इस छोटे से लेख में करना कठिन है।

शहरी ज़मींदार, जो राज-दरबार को छोड़ कर, देहातों में जाना पाप समझते थे, प्रायः अपनी ज़मींदारी किसी अन्य व्यक्ति को ठेके पर दे दिया करते थे। इसका फल यह होता था कि वह व्यक्ति निरीह और दीन प्रजा से बड़ी निर्दयता-पूर्वक पाई-पाई वसूल कर लेता था। इस प्रथा के कारण साधारण प्रजा बड़े कष्टों में थी। देहाती ज़मींदार तो कभी-कभी दया भी दिखाते थे, और विशेषकर देहातों में रहने के कारण वे किसानों से हिलमिल से गए थे। पर शहरी ज़मींदारों में ऐसी कोई बात न थी। इस अमानुषिकता के कारण, किसानों का हृदय ज़मींदारों, विशेषतया उन शहरी ज़मींदारों के प्रति घृणा और क्रोध से बौखला उठता था। किन्तु बेचारे क्या करें? हृदय की आग हृदय को ही जलाती थी। हाँ, आगे चल कर वह समय आया, जब यह आग ज्वालामुखी के द्रव की भाँति फूट निकली, और सारा फ़्रान्स उससे दग्ध हो गया। इस क्रान्ति में ज़मींदारों को भी अधिक हानि उठानी पड़ी थी। प्रजा की मुक्ति के लिए, और देश में एकता का झण्डा फहराने के लिए ज़मींदारों का दर्प चूर्ण करना अनिवार्य था।

गिरजाघर सम्बन्धी टैक्स (Tithes)

गिरजाघर भी अपने लिए अलग टैक्स वसूल किया करते थे। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आय का १०वाँ अंश धर्मार्थ निकाल देना पड़ता था। फ़्रान्स में कैथलिक सम्प्रदाय का बोल-बाला था। अन्य सम्प्रदाय के लोग भी थे, पर वे अपने गिरजों के लिए कर वसूल नहीं कर सकते थे। कैथलिक सम्प्रदाय को कोई माने या न माने, पर उसके लिए कर देना ही पड़ता था। १८वीं सदी में धर्म पर से लोगों की श्रद्धा उठ सी गई थी और वह भी केवल पाखण्ड का रूपान्तर बन गया था। इसी से यह अनावश्यक कर लोगों को और भी खलता था। विशेषकर दूसरे सम्प्रदाय के लोगों के लिए, जिन्हें इस कर से कोई लाभ न था, यह अत्यन्त आपत्तिजनक था।

प्राचीन काल में यह कर ग़रीबों की भलाई के लिए व्यय किया जाता था। पर इस समय ग़रीबों की भलाई करना तो दूर रहा, उनके शव पर धर्माध्यक्षों का धर्म-ताण्डव जारी था। यही कारण था कि क्रान्ति के समय धर्म को देश-निकाला दे दिया गया था।

राज्य-शासन

क्रान्ति के पहले, फ़्रान्स स्वेच्छाचारी राजाओं के पञ्जे में जकड़ा हुआ था। राजा अपने राजत्व को ईश्वर-प्रदत्त अधिकार समझता था। वह शासन-सम्बन्धी प्रत्येक विभाग का प्रधान था। क़ानून बनाने का (Legislative), क़ानूनों को कार्यरूप में परिणत करने का (Executive) और न्याय करने का (Judicial)—तीनों प्रकार के अधिकार उसके हाथ में थे। यह मानी हुई बात है कि एक व्यक्ति के हाथ में तीनों अधिकारों का रहना महा अनर्थकारी है। फ़्रान्स के राजाओं ने अपने अधिकारों का सदा दुरुपयोग ही किया। सदुपयोग करने की योग्यता ही उनमें न थी।

१८वीं सदी के फ़्रान्स के राजे बड़े विलासी और निकम्मे थे। राज्य-शासन की ओर वे बहुत कम ध्यान देते थे। शासन-सम्बन्धी सारे कार्य मन्त्रियों के हाथों में थे। इसलिए शासन का अच्छा या बुरा होना, साधारणतः मन्त्रियों के व्यक्तित्व पर ही निर्भर था।

राजकीय समिति (Royal Council)

ये मन्त्री राजकीय समिति की सहायता से राज्य-कार्य करते थे। इस समिति में ६ मन्त्री और ३० अन्य सदस्य होते थे। इन सदस्यों में सभी व्यक्ति ज़मींदार-वंश के होते थे। मध्यम श्रेणी के केवल वे ही व्यक्ति इसमें होते, जो रुपए देकर इस पद को ख़रीद लेते थे। ये सभी राजा की हाँ में हाँ मिलाने वाले लोग थे। प्रजा-पक्ष का एक भी व्यक्ति वहाँ न था।

प्रान्तीय शासन

प्रान्तीय शासन के लिए प्रत्येक प्रान्त में एक-एक शासक नियुक्त किया जाता था। ये शासक-गण, भारतवर्ष के शाही ज़माने के सूबेदारों से कम न थे। बादशाह की तरह ये भी गुलछर्रे उड़ाया करते थे। इन्हें कुछ विशेष कार्य नहीं करना पड़ता था। ये केवल बादशाह के साथ रह कर उनकी मुसाहिबी किया करते थे। पैरिस के राजमहल में बैठे-बैठे ही ये अपना कर्तव्य पालन करते थे!

स्थानीय शासन (Local Government)

स्थानीय शासन के लिए फ़्रान्स ३४ विभागों में बँटा था। प्रत्येक विभाग में एक राजकर्मचारी (Intendant) नियत था। यह राजकर्मचारी मध्यम श्रेणी का व्यक्ति था, किन्तु गुणों में यह अपने से ऊपर वालों से किसी प्रकार कम न था।

ये ३४ राजकर्मचारी अपनी कठोरता और स्वेच्छाचारिता के लिए विख्यात थे। राज्य का वास्तविक कार्य तो इन्हीं के हाथों में था। प्रजा से कर वसूल करना, सड़क और सार्वजनिक स्थानों की मरम्मत करवाना आदि कार्य इन्हीं लोगों के ऊपर था। किन्तु साधारण प्रजा के व्यक्ति होते हुए भी, सरकार के लाड़ले बनने की महत्वाकांक्षा ने, इन्हें प्रजा की पंक्ति से बरबस अलग कर दिया था। ये अपने को शासक और अपने भाइयों को शासित समझते थे! फिर शासक और शासित—बाघ और बकरी में सद्भाव कैसा?

अन्य छोटे-छोटे स्थानों में, इन कर्मचारियों के प्रतिनिधि रहते थे, जो उनकी ओर से कार्य करते थे।

अन्य राजनैतिक संस्थाएँ

फ़्रान्स का राजनैतिक सङ्गठन इस प्रकार बहुत सरल जान पड़ता है, पर वास्तव में वैसा नहीं था। अन्य राजनैतिक संस्थाएँ भी उस समय वर्तमान थीं, जो शायद इसलिए जारी रक्खी गई थीं कि बहुत पुराने ज़माने से चली आ रही थीं, या उनसे सरकार का कोई विशेष अभिप्राय सिद्ध होता था। पार्लामेण्ट, प्रान्तीय समितियाँ, टाउन कौन्सिलें आदि कई संस्थाएँ थीं। इन सभी संस्थाओं के अधिकारों की विशेष व्याख्या नहीं की गई थी, इस कारण कार्यक्षेत्र में बहुधा उलझनें पैदा हो जाया करती थीं। इन संस्थाओं ने, अन्य प्रकार की उलझनों के साथ मिल कर १८वीं सदी के फ़्रान्स के इतिहास में इस प्रकार की गड़बड़ी उपस्थित कर दी है कि इस-मार्ग को परिष्कृत करना सर्वथा असम्भव है।

न्याय-विभाग

फ़्रान्स में उस समय न्याय-विभाग की अवस्था भी अत्यन्त शोचनीय हो गई थी। न्याय का स्वाँग रचा जाता था अवश्य, किन्तु उसका कुछ अर्थ नहीं था। मुक़दमें में जीतना-हारना, जजों की प्रसन्नता और अप्रसन्नता पर निर्भर था। वकीलों ने भी बड़ी धाँधली मचा रक्खी थी। न्याय के इस प्रपञ्च ने कितने ही घरों का नाश कर दिया था।

एक ही विषय से सम्बन्ध रखने वाले, भिन्न-भिन्न विरोधी क़ानून प्रचलित थे। इसलिए न्याय चाहने वाले और न्याय करने वाले—दोनों को कठिनाइयाँ उठानी पड़ती थीं। इसके अतिरिक्त ये क़ानून विदेशी भाषाओं में अथवा लैटिन में लिखे हुए होते थे। इससे साधारण जनता के लिए, जिनमें शिक्षा का विशेष प्रचार नहीं था, इन क़ानूनों के रहस्य को समझ सकना सर्वथा असम्भव था। साधारण लोग तो यह भी नहीं समझ सकते थे कि अभियुक्त के साथ न्याय किया जा रहा है या अन्याय। इस क्षेत्र में भी वे ही कठिनाइयाँ उपस्थित थीं, जो फ़्रान्स की तत्कालीन संस्थाओं का एक विशेष गुण बन रही थीं। अदालतें तो वहाँ कई प्रकार की थीं, किन्तु उनके अधिकारों की व्याख्या करने की कोशिश नहीं की गई थी। फलतः उनके अधिकार अस्पष्ट होने के कारण अनेक असुविधाएँ उपस्थि होती थीं।

बेनामी वारण्ट (Letters de catchet)

फ़्रेञ्च सरकार ने, अपने विरोधियों को गिरफ़्तार करने के लिए एक अत्यन्त घृणास्पद प्रथा जारी कर रक्खी थी। जिस व्यक्ति को गिरफ़्तार करना होता था, वह बेनामी वारण्ट से, बिना किसी रोक-टोक के गिरफ़्तार किया जा सकता था। यह बेनामी वारण्ट, एक काग़ज़ का टुकड़ा था, जिस पर सम्राट के हस्ताक्षर बने हुए होते थे। इसमें अभियुक्त के नाम का स्थान ख़ाली रहता था। जब किसी को गिरफ़्तार करना होता था, अभियुक्त के नाम के स्थान पर उसका नाम लिख दिया जाता था। अब चाहे वह व्यक्ति निरपराध ही क्यों न हो, पर उसे जेल की हवा खानी ही पड़ती थी। उसके लिए न्यायालय में विचार होने की आवश्यकता न थी। यह वारण्ट राज्यकार्य ही के लिए परिमित रहता तो विशेष असह्य न प्रतीत होता। किन्तु प्रत्येक धनी-मानी व्यक्ति, जिस पर सम्राट का विशेष अनुग्रह रहता था, इस बेनामी वारण्ट से लाभ उठा सकता था। वह रुपए देकर सरकार से ऐसे वारण्ट ख़रीद सकता था और अपने व्यक्तिगत शत्रुओं को गिरफ़्तार करा सकता था। इस कारण, इन व्यक्तियों का आतङ्क समाज पर छाया रहता था। स्वयं वालटेयर और मीराबो इसके शिकार बन चुके थे।

ऋण का बोझ

१८वीं सदी में फ़्रेञ्च सम्राटों की विलास-प्रियता यहाँ तक बढ़ गई थी कि किसानों की गाढ़ी कमाई उनकी विलास-सामग्री के लिए, पानी की तरह बहा दी जाती थी। मुसाहिबों को पेन्शन के रूप में ख़ासी रक़म दी जाती थी। राज्य-शासन में उतना व्यय नहीं होता था, जितना कि सम्राट के व्यक्तिगत कार्यों में, उनके मुसाहिबों की पेन्शन में, महल की सजावट में, और सुन्दर रमणियों को उपहार देने में! इसका विरोध करे तो कौन करे? सभी तो एक ही अपराध के अपराधी थे। फलतः सभी आगे ही पैर बढ़ाते थे। इस विलास-कानन से बाहर निकलना न कोई चाहता था और न किसी में इतना साहस ही था।

इसका फल यह हुआ कि सरकार पर ऋण का बोझ बेतरह लद गया। १७८६ में तो यह ऋण बढ़ कर ६०,००,००,००० सिक्के हो गया था। इसके लिए प्रति वर्ष २,५०,००,००० फ़्रैङ्क व्याज-स्वरूप देना पड़ता था। फ़्रेञ्च सरकार की आर्थिक कठिनाइयों का एक कारण और था। ग़रीब प्रजा से तो पाई-पाई कर वसूल किया जाता था, किन्तु ज़मींदार और धर्माध्यक्षगण करों से विमुक्त थे। ज़मींदार अगर कुछ देते भी थे, तो वह केवल नाम-मात्र के लिए। धर्माध्यक्षगण भी ज़मींदार की हैसियत से कभी-कभी कुछ दे दिया करते थे; किन्तु अधिकांश बोझ बेचारी ग़रीब प्रजा ही पर था। साधारण प्रजा में अकेले यह बोझ सहन करने की शक्ति न थी। इसी से समय-समय पर सरकार को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था।

इस प्रकार सारे फ़्रान्स में अन्याय और अन्यायियों का बोल-बाला था। बेचारी दरिद्र प्रजा अन्याय और अत्याचार की चक्की में पिसी जाती थी। उस ओर ध्यान देने वाला कोई नहीं था। १४वें लुई को फ़्रान्स की दशा का ध्यान आया था; किन्तु उसकी निद्रा उस समय भङ्ग हुई थी, जिस समय वह मृत्यु-शय्या पर पड़ा हुआ था। वह स्वयं तो उस समय कुछ नहीं कर सकता था, पर उसने अपने अल्पवयस्क पुत्र (१५वें लुई) को फ़्रान्स की दशा की ओर ध्यान देने के लिए समझाया। उसने कहा था—"बेटा, प्रजा के कष्टों को दूर करने का यथासम्भव शीघ्र प्रयत्न करना। अभाग्यवश जिस कार्य को मैं नहीं कर सका, उसे तुम अवश्य पूरा करना।"

किन्तु फ़्रान्स के दुर्भाग्य से या सौभाग्य से, १५वाँ लुई अत्यन्त विलासी और स्वेच्छाचारी निकला। उसके समय में व्यभिचार तो एक फ़ैशन हो गया था। वह चाहता तो था अकेले ही फ़्रान्स का शासन करना, किन्तु न तो उसमें इतनी क्षमता थी और न उसे इसके लिए फ़ुर्सत ही थी। उसने राज्य-कार्य का पूरा भार निकम्मे और स्वार्थी मन्त्रियों पर छोड़ रक्खा था। ऐसी परिस्थिति में प्रजा के लिए धैर्य धारण करना कठिन था। फ़्रान्स की परिस्थिति दिन-बदिन नाज़ुक ही होती गई।

जिस समय १६वाँ लुई गद्दी पर बैठा, उस समय भी राजवंश के हित की रक्षा करते हुए, फ़्रान्स की दशा सुधरना असम्भव नहीं हो गया था। हाँ, इसके लिए एक दृढ़-हृदय शासक की आवश्यकता थी। फ़्रान्स की दशा सुधारने का अर्थ था, सम्राटों, ज़मींदारों और धर्माध्यक्षों के स्वार्थों पर कुठाराघात! १६वाँ लुई, प्रजा की भलाई तो चाहता था, पर ज़मींदारों और धर्माध्यक्षों का विरोध करने की शक्ति उसमें न थी। लुई के निकम्मेपन, उसकी रानी मेरी आँत्वानेत तथा उसके मित्रों का राज्य-शासन में अनधिकार और अनुचित हस्तक्षेप आदि से फ़्रान्स की जनता की आँखों में राजवंश काँटे की तरह खटकने लगा। लुई बड़ा भोला था। उसके इस भोलेपन ने सारा मामला बिगाड़ दिया। उसके मित्र उसे जिस ओर चाहते, लुढ़का देते थे। यही कारण था कि फ़्रान्स की भलाई के लिए कुछ करने की इच्छा रखते हुए भी वह कुछ न कर सका।

इस प्रकार धीरे-धीरे भभकने वाले सभी साधन पहले ही इकट्ठे हो चुके थे, १६वें लुई के समय में इसमें आग भी लग गई। सारा फ़्रान्स प्रज्वलित हो उठा। असंख्य नर-नारियाँ भस्मीभूत हो गईं। लुई ने भी अपनी प्यारी रानी मेरी आँत्वानेत के साथ इसी में भस्म होकर अपने और अपने पूर्वजों के पापों का प्रायश्चित्त किया।

* * *

रजत-रज

[संग्रहकर्त्ता—श्री० लक्ष्मीनारायण जी अग्रवाल]

चन्द्रदेव प्रकृति को देख-देख कर मुस्करा रहे थे। प्रकृति, चन्द्रदेव का हँसना देख उनके प्रति क्रोध प्रकट कर रही थी।

युवती कलिका अपनी जननी का उपहास न देख सकी; वह चट से खिल उठी और चन्द्रदेव को चिढ़ाने लगी।

❀

दोष को छिपाने में ही उसके संग्रह करने की इच्छा होती है।

❀

लघु जन की प्रभुता तिमिर मध्य ही है।

ऊषा का आगमन होते ही तारागण एक-एक करके लुप्त हो जाते हैं।

❀

मूर्ख के हाथ सँदेशा भेजना, धन देकर हानि ख़रीदना है।

❀

नेक स्त्री अपने पति के लिए स्वर्ण-मुकुट है; कुटिला भयङ्कर विषधर।

❀

सूर्य पश्चिम में सागर के तीर पर स्नान करने के लिए उतरता है। उसके काषाय रङ्ग के वस्त्र, बादलों के रूप में, आकाश में बिछ जाते हैं।

❀

कोई अपने आश्रित का दयापात्र नहीं बनना चाहता।

❀

चित्रकार प्रकृति का प्रेमी है, अतएव वह उसका ग़ुलाम और मालिक भी है।

❀

गुलाब की पत्तियों में सौन्दर्य है या पराग में? उसका रङ्ग और आकार सुन्दर है या उसकी सुगन्ध और मधु?

❀

साधारण मनुष्य होना राजा होने से अच्छा है।

❀

यौवन का अर्थ है परिवर्तन और नवयुवक का परिवर्तन पसन्द।

❀

हे वारिद! अपने हृदय में चिर सञ्चित वारि को बड़ी कुशलता से छिपाए हुए तुम आकाश में किसकी खोज में दौड़ रहे हो?

❀

माया के मोह में फँसा हुआ मनुष्य नरक का अधिकारी है, चाहे वह मूर्ख हो अथवा विद्वान।

अगर या गोबर जो भी आग में गिरेगा अवश्य जल कर राख हो जायगा।

❀

अर्धनिशा में विकसित प्रभात निहित है।

❀

कार्य वही अच्छा जिसका अन्त अच्छा। अस्तु, कार्य करने के पहले सोच लो कि परिणाम क्या होगा।

सुप्रसिद्ध भारतीय राजनीतिज्ञों के मुक़द्दमे

७—अली भाई—१९२१

सन् १९२१ की १४वीं सितम्बर को कलकत्ता-मेल मद्रास जाते समय निश्चित समय पर कुछ मिनिटों के लिए वाल्टेयर स्टेशन पर रुकी। महात्मा गाँधी, मौलाना मुहम्मदअली और उनकी धर्मपत्नी उस गाड़ी में यात्रा कर रही थीं। स्टेशन पर गाड़ी रुकते ही वे प्लेटफ़ॉर्म पर उतरे। वहाँ नेताओं के दर्शन के लिए भीड़ पहले से ही एकत्रित हो चुकी थी। गाड़ी छूटने से पहले जैसे ही मौलाना मुहम्मदअली जनता से कुछ कहने के लिए आगे बढ़े, वैसे ही एक पुलिस-ऑफ़िसर ने उन्हें विजगापट्टम के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट का गिरफ़्तारी-वारण्ट दिखाया, जिसमें उन पर दण्ड-विधान की १०७ वीं और १०८ वीं धाराओं के अभियोग लगाए गए थे। उन्होंने गम्भीरतापूर्वक वारण्ट स्वीकार किया और महात्मा जी तथा अपनी धर्मपत्नी से विदा लेकर पुलिस-ऑफ़िसर के साथ वाल्टेयर के जेल की ओर चले गए।

भारत-सरकार ने पहले से ही इस आशय का एक 'प्रेस नोट' प्रकाशित कर दिया था कि वह अली भाइयों और उन अन्य नेताओं पर फ़ौजदारी मामला चलावेगी, जिन्होंने कराची के जुलाई सन् १९२१ के अखिल भारतीय खिलाफ़त कॉन्फ़्रेन्स के अधिवेशन में भाग लिया था, जिसमें भारतीय फ़ौज में से मुसलमान सैनिकों को निकालने के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास किए गए थे। इसी नोटिस के अनुसार बम्बई-सरकार ने मौलाना मुहम्मदअली को गिरफ़्तार करने के लिए वारण्ट भेजा था।

इसके बाद वाल्टेयर जेल से वे कुछ समय के लिए मुक्त कर दिए गए थे, परन्तु फिर शीघ्र ही बम्बई के वारण्ट के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए और पुलिस की गहरी निगरानी में एक स्पेशल ट्रेन द्वारा कराची भेज दिए गए।

उनके भ्राता मौलाना शौकतअली भी १६ वीं सितम्बर को बम्बई में गिरफ़्तार कर तुरन्त कराची भेजे गए। इन दोनों के अतिरिक्त डॉक्टर किचलू भी, जो उसी मामले के अभियुक्त थे, प्रायः उसी समय लाहौर में गिरफ़्तार कर मुक़द्दमे के लिए कराची भेजे गए। इस मामले के अन्य अभियुक्त पीरग़ुलाम मुहद्दीद, मौलवी हुसेनअहमद, मौलवी निसारअहमद और शारदापीठ के श्रीशङ्कराचार्य थे, जो विभिन्न स्थानों से गिरफ़्तार कर मामले की जाँच के लिए कराची भेज दिए गए थे।

सभी अभियुक्त कराची के सिटी मैजिस्ट्रेट की अदालत में पेश किए गए, जहाँ उनके मामले की प्रारम्भिक कार्यवाही हुई। सरकारी वकील मि० टी० जी० एलफ़िन्स्टन ने मामला प्रारम्भ किया और कई गवाहों की जाँच की; परन्तु अभियुक्तों ने मामले में अपनी ओर से पैरवी करने से बिल्कुल इन्कार कर दिया। कुछ अभियुक्तों ने अदालत के सम्मुख, अपनी स्थिति समझाने के लिए, कुछ बयान अवश्य दिए। जिस समय अदालत में मामले की कार्यवाही हो रही थी, उसी समय अकस्मात् एक ऐसी घटना हो गई, जिससे 'प्रेस' के बहुत अधिकार छीन लिए गए। 'बॉम्बे-क्रॉनिकल' का रिपोर्टर अपने पत्र के लिए अपराधी नेताओं से जिस समय सन्देश ले रहा था, उसी समय मैजिस्ट्रेट से उसकी रिपोर्ट कर दी गई, इसके परिणाम-स्वरूप मैजिस्ट्रेट ने अदालत में केवल उसी का प्रवेश करना बन्द नहीं कर दिया, बल्कि दूसरे पत्र-प्रतिनिधियों को भी अन्दर जाने का निषेध कर दिया गया। अन्त में मामला ३०वीं सितम्बर को सेशन्स की जाँच के लिए सिन्ध के जुडीशियल कमिश्नर के सुपुर्द कर दिया गया।

स्वर्गीय मौलाना मोहम्मदअली

सेशन्स की जाँच स्वयं जुडीशियल कमिश्नर मि० जे० सी० केनेडी ने की। पाँच व्यक्तियों की एक जूरी नियुक्त की गई, जिसमें दो हिन्दू और तीन ईसाई सम्मिलित थे। ईसाइयों में एक सज्जन अङ्गरेज़ थे। सरकारी कार्यवाही में इलाहाबाद के मि० रास एल्सटन की सहायता ली गई थी। अभियुक्तों पर जो अभियोग लगाए गए थे, वे दो भागों में विभक्त किए जा सकते हैं। पहले भाग में दण्ड-विधान की १२४-अ और १५३-अ धाराएँ सम्मिलित थीं, जिनके अनुसार राजविद्रोह और जातीय वैमनस्य फैलाने के अभियोग लगाए गए और दूसरे भाग में १२०-ब, १३१, और ५०५वीं धाराएँ सम्मिलित थीं, जिनके अनुसार सरकार को उखाड़ फेंकने के षड्यन्त्र रचने और सैनिकों में विद्रोह फैलाने के प्रयत्न के अभियोग लगाए गए थे। सेशन्स में भी अभियुक्तों ने पहले की नाईं अपनी रक्षा करने या मामले में भाग लेने से साफ़ इन्कार कर दिया। परन्तु उन्होंने अपने व्यक्तव्य अदालत में दिए और उनमें से सब से अधिक मार्मिक वक्तव्य मौलाना मुहम्मदअली का था। उनका वक्तव्य, जो उन्होंने जूरी के सम्मुख दिया था, एक लम्बे भाषण के रूप में था और उसमें उन्होंने यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया था कि मुसलमानी धर्म के अनुसार एक मुसलमान का, बिना किसी कारण के, दूसरे मुसलमान को मारना ग़ैर-क़ानूनी है और इसलिए खिलाफ़त कॉन्फ़्रेन्स में जो प्रस्ताव पास हुआ है, वह मुसलमानी क़ानून के अन्तर्गत है। उन्होंने यह भी कहा कि मुझे महारानी विक्टोरिया की सन् १८५८ की उस घोषणा पर विश्वास है, जिसमें भारतीयों को धार्मिक स्वतन्त्रता दी गई थी। अपने भाषण में उन्होंने अपने प्रमाणों को सिद्ध करने के लिए क़ुरान की बहुत सी आयतों का भी उल्लेख किया। यद्यपि उनका भाषण लम्बा था, तथापि वह स्पष्ट और अत्यन्त ज़ोरदार था, बीच-बीच में उन्होंने हास्यरस की जो पुट दी थी और मि० रास एल्सटन को जो ताने मारे थे, उनसे कार्यवाही अत्यन्त मनोरञ्जक हो गई थी और दर्शक हँसी से लोट-पोट हो गए थे।

उदाहरणार्थ, अपना भाषण प्रारम्भ करने के पहले उन्होंने अदालत तथा जूरी से यह कहने की प्रार्थना की कि अदालत की ओर मुँह फेर कर बैठे, नहीं तो सम्भव है, "मैं उन्हें उसी प्रकार भड़का दूँ जिस प्रकार मैंने फ़ौज को भड़काया है" (लोग इस पर खिलखिला कर हँस पड़े) एक बार उन्होंने जूरी से कहा—"महाशय, मैं चाहता हूँ कि आप उन महिलाओं के सामने, जो आपके पीछे बैठी हैं, पर्दा बन कर बैठ जायँ, नहीं तो सरकारी वकील मेरे विरुद्ध उन्हें अपनी ओर आकर्षित करने का एक और अभियोग लगा देंगे।" (इस ताने से दर्शकों में हँसी का फ़व्वारा फूट पड़ा।) उन पर अपने भाई से सम्बन्ध स्थापित होने का जो अभियोग लगाया गया था, उसके सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि "मेरा भाई मेरे जन्म के समय उपस्थित था और हम दोनों एक ही घर में रहते हैं। जब हम दोनों स्कूल में पढ़ते थे, तब वह मेरे पॉकेट में से मेरे पैसे निकाल ले जाता था और यदि मैं उन्हें वापिस माँगता था, तो वह मारते-मारते मेरा कचूमर निकाल लेता था, बस यही मेरा और उसका सम्बन्ध था।" (इस मज़ाक़ पर भी दर्शकों का हँसते-हँसते पेट फूल गया।) एक बार उन्होंने जूरी को, मि० रास एल्सटन से सावधान करते हुए कहा—"आप समझे, वे आपकी आँखों में सरासर धूल झोंक रहे हैं—आपने कराची की पुरानी धूल नहीं देखी ?" इस बार भी दर्शक अपनी हँसी न रोक सके। परन्तु अपने भाषण के अन्त में वे भावावेश से अत्यन्त उत्तेजित हो गए थे। अपनी सत्यता और अपने पवित्र विश्वासों की साक्षी के लिए ईश्वर को पुकारते समय "उनका गला रुँध गया, गालों पर से आँसुओं की धारा बह गई और वे अपना आपा भूल कर, अपने स्थान पर बैठ गए।"

(शेष मैटर २७वें पृष्ठ के पहले कॉलम में देखिए)

देश के राजनैतिक रङ्गमञ्च पर

गत २६ जनवरी को स्वतन्त्रता-दिवस के उपलक्ष में होने वाली वृन्दावन की एक महती सभा का दृश्य।

कुँवर दीपनारायण सिंह। आप बिहार के सुप्रसिद्ध नेता और कॉङ्ग्रेस की वर्किङ्ग कमिटी के सदस्य हैं।

श्री० सीतादेवी, सम्पादिका 'महिला-सुधार' कानपुर, जो राष्ट्र-सेवा के कारण १ साल की सज़ा भोग कर लखनऊ जेल से छूटी हैं।

तपोभूमि से लौटने वाली देवियों का सादर स्वागत

मेरठ की महिला-स्वयंसेविकाओं की कप्तान—श्रीमती उर्मिला देवी शास्त्री, जिन्हें ६ मास का दण्ड मिला था।

विलेपारले (बम्बई) की श्रीमती देवयानी इन्द्र-विजय देसाई, जो पिकेटिङ्ग के अपराध में जेल गई थीं।

श्रीमती रानी विद्यादेवी

आप बेरुआ (हरदोई) के ताल्लुक़ेदार के छोटे भाई श्रीयुत जङ्गबहादुरसिंह की धर्मपत्नी हैं। नमक-क़ानून भङ्ग करने के कारण आपको ७ मास की सज़ा हुई थी।

बम्बई की श्रीमती भिखारबाई, जो विदेशी कपड़े की दूकान पर धरना देने के अपराध में जेल गई थीं।

श्रीमती मीरा

आप हज़ारीबाग़ (बिहार) की प्रभावशाली राष्ट्रीय कार्यकर्त्री हैं, जिन्हें सत्याग्रह आन्दोलन में ६ मास की सज़ा हुई थी।

मेरठ के महिला-सत्याग्रह-दल की प्रधाना—श्रीमती प्रकाशवती देवी, जिन्हें ५½ मास की सज़ा दी गई थी।

तपोभूमि से लौटने वाली देवियों का सादर स्वागत
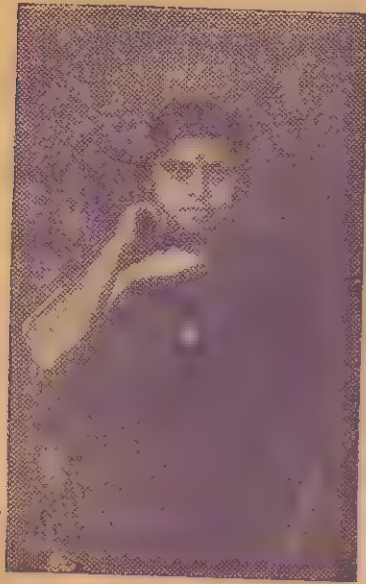
गाँवों में घूम-घूम कर स्वदेशी का प्रचार करने वाली—धारवाड़ की श्रीमती कृष्णा-बाई पञ्जीकर।

कराची 'युद्ध-समिति' की डिक्टेटर—श्रीमती कीकीबेन छबीलदास

दक्षिण कनारा महिला-सङ्घ की मन्त्रिणी—श्रीमती रत्नबाई।

कलकत्ते की कुमारी ज्योतिर्मयी गङ्गोली, एम० ए०, जो नमक-क़ानून भङ्ग करने के कारण ६ मास के लिए जेल गई थीं।

सत्याग्रह-संग्राम में सबसे पहले जेल जाने वाली—श्रीमती रुक्मिणी लक्ष्मीपति। (आन्ध्र प्रान्त)

दिल्ली की एक उत्साही राष्ट्रीय कार्यकर्त्री—श्रीमती आह्लादेवी सूरी।

कालीकट की सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कार्यकर्त्री—कुमारी ई० नारायण खुट्टी, बी० ए०।

बड़ोच के देश-सेविका-सङ्घ की प्रधाना—श्रीमती कुसुम बेन।

अथानी (बेलगाँव) की विदुषी—श्रीमती अम्बावा-बाई, जिन्हें सत्याग्रह-आन्दोलन में २ मास की सज़ा हुई थी।

राष्ट्रीय संग्राम के कुछ उत्साही सैनिकों का स्वागत

अभिनन्दन कर रहा मौन या वाणी से सारा संसार ! पहनाते हैं तुमको हम अनुराग-भरे हृदयों का हार !!

करनाटक "वार-कौन्सिल" के डिक्टेटर—श्री० हनुमन्तराव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०, जिन्हें छः मास की सज़ा दी गई थी।

काशी के सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्ता—श्री० रामेश्वर-सहाय सिंह जी—जिन्हें तीन मास की सज़ा दी गई थी।

बम्बई के १७वें "वार-कौन्सिल" के मन्त्री, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुए हैं।

लखनऊ के सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्ता—पं० हरिश्चन्द्र बाजपेयी, जिन्हें करबन्दी-आन्दोलन के सम्बन्ध में ६ मास की सज़ा हुई थी।

'प्रताप' के प्रतिभाशाली सम्पादक—श्री० गणेश-शङ्कर विद्यार्थी, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुए हैं।

कलकत्ता कॉरपोरेशन के मेयर—श्री० सुभाष-चन्द्र बोस, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुए हैं।

धारवाड़ के सुप्रसिद्ध चित्रकार—श्री० नारायण-राव हम्पासर—जिन्हें ३ मास का दण्ड मिला था।

लाहौर के नवयुवक कार्यकर्त्ता—श्री० ख़ुश-हालचन्द कैफ़ी, जिन्हें १ वर्ष की सज़ा दी गई थी।

बम्बई के वयोवृद्ध राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता और म्युनिसिपुल कमिश्नर—श्री० कञ्जी करमसी मास्टर—जिन्हें नमक-आन्दोलन के सम्बन्ध में ६ मास का दण्ड दिया गया था।

तू दिलनशीं[1] रहे, कि तू दीदानशीं[2] रहे,
मैं साथ ही रहूँगा तेरे, तू कहीं रहे !
आँखें बचा के, आँखों के परदे में, आके बैठ,
मैं भी यह चाहता हूँ, तू परदानशीं[3] रहे !
इस तरह मैं, नमाज़े शहादत[4] अदा करूँ।
सर पर हो तेग़,[5] तेग़ के ऊपर जबीं[6] रहे।

—"नौशा" आज़मगढ़ी

पूरी हुई, न ख़ूने शहीदाँ की आरज़ू।
मक़तल में वह चढ़ाए हुए, आस्तीं रहे।

—"सईद" आज़मगढ़ी

अब दह्र[7] में, असीरे क़फ़स[8] एक हमीं रहे,
ख़ाक ऐसी ज़िन्दगी पे, रहे या नहीं रहे !
उस बज़्मे[9] ऐश में भी, हम अन्दोहगी[10] रहे,
कम्बख़्त दिल ने, साथ न छोड़ा कहीं रहे !
जाए बहार, आए ख़िज़ाँ, हमको क्या ग़रज़,
अपनी निगाहे-शौक़ बहार आफ़रीं[11] रहे।

—"सुहैल" आज़मगढ़ी

एक मुशतेपर ने,[12] आग लगा दी जहान में,
हम ऐसे कमनसीब, जहाँ थे वहीं रहे !
उसकी मसर्रतों[13] की, नहीं कोई इन्तिहा,
एक आस्ताने[14] नाज़ पे, जिसकी जबीं[15] रहे।
फ़रियाद हो, कि नग़मा[16] सुकूँ[17] हो, कि इज़तिराब[18]
जो कुछ हो इश्क़ में, वह सुरूर-आफ़रीं[19] रहे।

—"एहसान" आज़मगढ़ी

फिरते रहे निगाहों में, या दिलनशीं रहे,
वह दूर रह के, और भी मुझसे क़रीं[20] रहे।
ममनून[21] पाक बाज़िए क़ल्बे-हज़ीं[22] रहे
हम तेरी याद से, कभी ग़ाफ़िल नहीं रहे।
पहलू में हसरतें रहीं, ग़म दिलनशीं रहे,
सद शुक्र,[23] क़ब्र में भी अकेले नहीं रहे।
गर दूँ[24] के ज़ुल्म उठाओ, कि कुएसनम[25] के जौर,
दुश्मन अब आसमान रहे, या ज़मीं रहे
तुरबत[26] में भी, जफ़ाए[27] फ़लक[28] से अमाँ[29] नहीं
अब आसमान सर पे रहे, या ज़मीं रहे।
महशर[30] के दिन भी, कूचए क़ातिल को ख़ैर हो,
कल आसमाँ रहे न रहे, यह ज़मीं रहे।
"क़ुदसी" हमें यह एक दिले आशुफ़्ता[31] क्या मिला,
दोनों जहाँ में हम तो, कहीं के नहीं रहे।

—"क़ुदसी" जायसी

आँखों में वह रहे, कभी दिल में मकीं[32] रहे,
परदे का उनको शौक़ था, परदा-नशीं रहे।
हर वक़्त उठते-बैठते, रहता ख़िज़ाँ का ख़ौफ़,
अच्छा हुआ बहार में, जो हम नहीं रहे।

१—दिल में रहने वाला, २—आँखों में रहने वाला, ३—परदे में रहने वाला, ४—क़त्ल होने के समय की नमाज़, ५—तलवार, ६—माथा, ७—संसार, ८—क़ैदी, ९—आनन्द का समाँ, १०—रंजीदा, ११—बहार पैदा करने वाली, १२—मुट्ठी भर, १३—ख़ुशियाँ, १४—चौखट, १५—माथा, १६—राग, १७—ठहराव, १८—बेचैन, १९—आनन्द पैदा करने वाली, २०—नज़दीक, २१—दुखी हृदय—२२—सैंकड़ों धन्यवाद, २३—आकाश, २४—माशूक़ की गली, २५—क़ब्र, २६—ज़ुल्म, २७—आकाश, २८—चैन, २९—प्रलय, ३०—परेशान, ३१—रहना,

आँखों में वह रहे, कभी दिल में मकीं रहे,
परदे का उनको शौक़ था, परदा-नशीं रहे !
पहलू में हसरतें रहीं, ग़म दिलनशीं रहे,
सद शुक्र, क़ब्र में भी अकेले नहीं रहे !

अहले-जुनूँ[32], बहार का मौसिम अब आ गया
साबित किसी तरह, न कोई आस्तीं रहे !
मिट्टी में जब से अपना दिलेज़ार मिल गया,
हसरत नहीं रही, वह अब अरमाँ नहीं रहे !

दुनिया की हर एक बात समझता हूँ मैं

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

अल्ताफ़ो[1] इनायत[2] को समझता हूँ मैं।
उल्फ़त, को मुहब्बत को समझता हूँ मैं,
आगाह[3] हूँ आगाह बख़ूबी "बिस्मिल",
दुनिया की हक़ीक़त को समझता हूँ मैं।

× × ×

बेकार हैं, बेकार समझता हूँ मैं
आराम में आज़ार[4] समझता हूँ मैं।
है रङ्ग बुरा बाग़े-जहाँ का "बिस्मिल"
जो गुल[5] है, उसे ख़ार[6] समझता हूँ मैं।

× × ×

यह नाज़, यह अन्दाज़ समझता हूँ मैं,
परदे में जो है राज़[7] समझता हूँ मैं।
दम भर को भी ग़ाफ़िल नहीं रहता "बिस्मिल"
हर साँस की आवाज़ समझता हूँ मैं।

× × ×

अतवार[8], चलन घात समझता हूँ मैं,
दिन-रात को, दिन-रात समझता हूँ मैं।
नैरङ्गीए[9] आलम से हूँ वाक़िफ़ "बिस्मिल"
दुनिया की हर एक बात समझता हूँ मैं !

१—कृपा, २—कृपा, ३—ख़बरदार, ४—तकलीफ़, ५—फूल, ६—काँटा, ७—भेद, ८—ढङ्ग, ९—सांसारिक बातें।

दुनिया यह जानती है, कि दुनियाए-इश्क़ में,
उस दिल का क्या जवाब, जो दर्द[33] आफ़रीं रहे,
मूसा[34] से कोहेतूर पे, क्यों खुल के बात की,
सरकार आप तो, बड़े परदानशीं रहे।

३२—दीवाने, ३३—दर्द से भरा हुआ, ३४—हज़रत मूसा पैग़म्बर से मतलब है, जो तूर पहाड़ पर ईश्वर की ज्योति देखने गए थे,

कल क्या चहल-पहल रही, साक़ी की बज़्म[35] में,
अफ़सोस है कि हज़रते "ज़ाहिद" नहीं रहे।

—"ज़ाहिद" इलाहाबादी

हमको रहा फ़िराक़[36] का, रोना तमाम उम्र
और वह हमारे दिल ही में, गोशानशीं[37] रहे।

—"मजरूह" आज़मगढ़ी

है दाग़हाए दिल से, चराग़ाँ[38] मज़ार पर
क्या ग़म जो फूल मेरी लहद[39] पर नहीं रहे।

—"असीर" आज़मगढ़ी

आज़ारे[40] बाग़बाँ से, हम अक्सर हज़ीं रहे,
अच्छे वही रहे, जो चमन में नहीं रहे।
दस्ते-जुनूँ को, शग़ल से मतलब कहीं रहे,
दामन न रह सके, न रहे, आस्तीं रहे।
तासीर हुस्नो इश्क़ की, क़ायम युहीं रहे,
नक़्शे-क़दम पर उनके, हमारी जबीं[41] रहे !
पहलू में अपने जब दिले जज़्ब[42] आफ़रीं रहे,
फिर क्या मजाल, चैन से कोई कहीं रहे।
ऐ चश्मे-शौक़, चाहिए कुछ एहतरामे[43] हुस्न,
जलवत[44] में किस तरह कोई ख़लवत-नशीं[45] रहे !
मर कर, तिलस्मे[46] हस्तिए[47] मौहूम खुल गया
यानी फ़ना[48] के बाद, कहीं के नहीं रहे !
दुनिया कहाँ से चल के, कहाँ तक पहुँच गई,
और अपना है यह हाल, जहाँ थे वहीं रहे !
बिजली ने गिर के ख़ाक में, हमको मिला दिया,
तिनके भी आशियाँ[49] के सलामत नहीं रहे।
दैरो[50] हरम[51] की ख़ाक बहुत मैं उड़ा चुका,
लेकिन खुला न राज़, कहाँ वह मकीं रहे ?
ऐ अहले ज़ौक़[52] शौक़ तसौव्वर[53] से काम लो,
महदूद[54] हुस्न यार के जलवे नहीं रहे

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

३५—समाँ, ३६—विरह, ३७—कोने में बैठने वाली, ३८—रोशनी, ३९—क़ब्र, ४०—दुख, ४१—माथा, ४२—आकर्षण पैदा करने वाला—४३—आदर, ४४—सभा, ४५—अकेले में रहना, ४६—जादू, ४७—चोला ४८—मरने के बाद, ४९—घोंसला, ५०—मन्दिर, ५१—काबा, ५२—दर्शक, ५३—ध्यान, ५४—घेरा।

(२०वें पृष्ठ का शेषांश)

उनके बाद मौलाना हुसेन अलीमुहम्मद ने एक लम्बा वक्तव्य दिया, जिसमें धार्मिक पुस्तकों के बहुत से उद्धरण दिए गए थे। डॉक्टर किचलू ने अपने छोटे से वक्तव्य में कहा कि मैं अहिंसात्मक सत्याग्रही हूँ। पीरग़ुलाम मुहद्दीद ने अपने संक्षिप्त वक्तव्य में अदालत को इस बात की इत्तिला दी कि मैं धर्म-गुरुओं का वंशज हूँ और मेरे बारह लाख चेले हैं। मेरे प्रपितामह को एक बार सलाम करने से इन्कार करने के अभियोग में सम्राट जहाँगीर ने गिरफ़्तार कर लिया था, परन्तु बाद में उन्होंने बहुत पश्चात्ताप किया और पीर को रिहा कर दिया। मुझे भी आशा है कि मुग़लों की उत्तराधिकारी ब्रिटिश गवर्नमेण्ट भी मेरी गिरफ़्तारी पर पश्चात्ताप करेगी और मुझे रिहा कर देगी। मौलवी निसारअहमद ने गवाही और कार्यवाही की कड़ी आलोचना की। श्री० शङ्कराचार्य ने अदालत की आज्ञा के अनुसार खड़े होकर वक्तव्य देने से इन्कार किया और उन्होंने बैठे ही बैठे अपना वक्तव्य दिया। उन्होंने कहा कि मैंने हिन्दुओं के धर्मगुरु की हैसियत से हिन्दुओं को मुसलमानों के धार्मिक युद्ध में सम्मिलित होने की सलाह दी थी और इस प्रकार हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रयत्न किया था।

मौलाना शौकतअली का वक्तव्य बहुत स्पष्ट और निर्भीकतापूर्ण था। उन्होंने अपने वक्तव्य में समस्या का धार्मिक दृष्टि से नहीं, बल्कि राजनैतिक दृष्टि से विचार किया। उनके वक्तव्य में हास्य-रस का अंश उनके भाई से कम नहीं था। प्रारम्भ ही में उन्होंने जजों से अपील की कि यदि आप मुझे बीच में टोकेंगे तो मैं भी अपने भाई की नाईं सब बातें भूल जाऊँगा। उन्होंने अपने डील-डौल के सम्बन्ध में कहा—"महाशय, मैं एक भयानक जन्तु दिखलाई देता हूँ। आप आधी रात को मुझे किसी गली में देख कर डर के मारे काँप जाएँगे। मेरी प्रार्थना है कि आप मेरी डील-डौल देख कर मुझे सज़ा न दें।" महात्मा गाँधी से अपनी तुलना करते हुए उन्होंने कहा कि "महात्मा ख़ुदा के भेजे हुए दूत हैं और मैं उसका बदमाश हूँ।" उनके इस वक्तव्य से सभी दर्शक खिलखिला कर हँस पड़े।

जज ने जूरी को एक लम्बा भाषण दिया, जिसमें उन्होंने उसे अभियुक्तों के अभियोग और उनके सम्बन्ध में क़ानून की आज्ञा समझाई। जूरी ने अपने दो घण्टे की बहस के बाद पहले अभियोग के अनुसार सभी अभियुक्तों को निरपराध पाया। परन्तु दूसरे अभियोग के अनुसार श्रीशङ्कराचार्य को छोड़ कर, अन्य छः अभियुक्त अपराधी क़रार दे दिए गए। जज ने जूरी से सहमत होकर उन छः अभियुक्तों को दो-दो साल के कठिन कारावास का दण्ड दिया। मौलाना मुहम्मदअली को इसके अतिरिक्त दण्ड-विधान की ११७वीं धारा के अनुसार दस से अधिक व्यक्तियों को भड़काने के अभियोग में दो साल की कठिन सज़ा और दी गई। उन्हें ये दोनों सज़ाएँ साथ-साथ भोगने की आज्ञा दी गई थी। श्रीशङ्कराचार्य छोड़ दिए गए।

* * *

चीन के विद्यार्थी

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

चीन के विद्यार्थियों का वहाँ के समाज में बहुत ऊँचा स्थान है। उन्हें चीन के समाज में सदा सबसे ऊँचा स्थान मिला है। जितनी लोग उनकी इज़्ज़त करते थे तथा जितना उनसे डरते थे उतना वे अन्य किसी भी पुरुष से न डरते थे। १९१६ में जब यान-शिह-के (Yuan shih-kai) ने चीन में राजतन्त्र की स्थापना करनी चाही तो उसके अरमानों पर पानी फेरने वाला चीन का एक स्कॉलर ही था। उसने मेक्सिको के डायज़ (Diaz) के शासन-काल का चित्र जनता के सामने रख कर राजतन्त्र की स्थापना असम्भव कर दी। बीसवीं सदी के चीन के स्वाधीनता-संग्राम में जितना चीन के विद्यार्थियों का हाथ है उतना किसी भी अन्य समुदाय का नहीं है। यही नहीं, बल्कि संसार के किसी भी देश के विद्यार्थियों ने अपने देश का उतना साथ नहीं दिया जितना कि चीन के विद्यार्थियों ने।

जब १९०४—५ में जापान ने रूस पर महान् विजय पाई तो सारा संसार चकित हो गया। आधुनिक इतिहास में पहले-पहल एशिया के एक राष्ट्र ने युद्ध यूरोप में के एक बड़े राष्ट्र को पछाड़ा था! जापान की इस विजय ने एशिया में—विशेषकर चीन में—जान फूँक दी। जापान के इस विजय के रहस्य को अध्ययन करने के लिए चीन के सैकड़ों विद्यार्थी जापान गए। एक समय चीन के ऐसे २०,००० विद्यार्थी जापान में शिक्षा पा रहे थे। कुछ समय तक जापान ही चीन के देश-भक्त विद्यार्थियों का केन्द्र रहा। पर ज्यों-ज्यों जापान और चीन एक-दूसरे से अलग होते गए और ज्यों-ज्यों चीन की संसार के अन्य देशों से विशेषकर अमेरिका से घनिष्ठता बढ़ती गई त्यों-त्यों चीन के विद्यार्थी जापान छोड़ कर अन्य देशों को जाने लगे।

१९२७ में चीन के ८,००० विद्यार्थी विदेशों में शिक्षा पा रहे थे। उसमें से २,५०० अमेरिका में, २,००० फ़्रान्स में, २,००० जापान में, ५०० जर्मनी में, ६५० रूस में तथा २०० इङ्गलैण्ड में थे।

चीन के विद्यार्थी-आन्दोलन में विदेशों में शिक्षित विद्यार्थियों के अलावा चीन ही में पढ़ने वाले विद्यार्थियों का भी बड़ा ज़बर्दस्त हाथ था। इसके बाद भी चीन में कुछ ऐसी घटनाएँ हुई जिसके कारण विद्यार्थी समुदाय चीन का अगुवा बना रहा। मई १९२५ में शङ्घाई अन्तर्राष्ट्रीय सेटलमेण्ट में विदेशी पुलिस द्वारा विद्यार्थियों का क़त्ले-आम, जून १९२६ का शाक़ी का क़त्ले-आम तथा मार्च १९२७ की नानकिङ्ग की गोले-बारी आदि घटनाओं ने विद्यार्थियों को चीन का अगुआ बनने का मौक़ा दिया। उन्होंने चीन की जनता में महान जागृति पैदा कर दी।

इन विद्यार्थियों ने एक और क्षेत्र में अपना कौशल दिखलाया। उन्होंने मज़दूरों के सङ्घ (Union) में प्रवेश किया। जहाँ-जहाँ सङ्घ न थे वहाँ-वहाँ उन्होंने सङ्घों का सङ्गठन किया। कुछ सङ्घों के वे मन्त्री बने और कुछ स्थानों पर उनके परामर्शदाता। जून १९२५ में शङ्घाई में राष्ट्रीय विद्यार्थी फ़ेडरेशन का सातवाँ वार्षिक अधिवेशन हुआ था। उसमें कुछ प्रस्ताव पास किए गए थे, जिनका उद्देश्य निम्न-लिखित था :—

(१) पूँजीपतियों के विरुद्ध मज़दूरों का पक्ष समर्थन करना और सरकार से काफ़ी रक्षा पाने में मज़दूरों की सहायता करना।

(२) मज़दूरों का सङ्गठन करने तथा प्रचार-कार्य में उनकी सहायता करना।

(३) रात्रि-पाठशालाएँ स्थापित करना और जनता के लिए साहित्य प्रकाशित करना, ताकि राजनैतिक मामलों में मज़दूरों का ज्ञान बढ़े।

(४) हड़ताल के समय बेकार मज़दूरों की सहायता करना।

जब सोवियट यूनियन ने अपने चीन के विशेष रियायतों को छोड़ दिया और १९२४ में चीन और रूस में सन्धि हुई, जिसका ज़िक्र मैं अपने एक पिछले लेख में कर चुका हूँ* और जब मास्को में सनयातसेन-विश्वविद्यालय की स्थापना हुई तो चीन के विद्यार्थियों को एक नवीन मार्ग दिखलाई दिया। और वह मार्ग था पूर्व के दलित राष्ट्रों तथा जातियों को उठाना। चीन के विद्यार्थी अपनी शिक्षा के लिए रूस जाने लगे। अब रूस में चीन के इतने विद्यार्थी पढ़ने जाते हैं कि कुछ लोगों का अनुमान है कि भविष्य में चीन को दे देने की नीति को उन्होंने चीन के लिए बड़ा अपमानकारी समझा।

४ मई को पेकिन के कोई ३,००० विद्यार्थियों का, जिसमें अधिकतर सरकारी विश्वविद्यालय के विद्यार्थी थे, एक जलूस लिगेशन क्वार्टर गया। उनका इरादा शाण्टङ्ग नीति के विरोध में इङ्गलैण्ड और अमेरिका के मन्त्रियों को एक दरख़्वास्त देने का था। चीन के सिपाहियों ने उन्हें भीतर नहीं जाने दिया तब वे Tsas-ju-lin के मकान पर गए, जिसे वे देशद्रोही समझते थे। वे मकान में ज़बर्दस्ती घुस गए, खिड़कियाँ तथा फ़रनीचर आदि तोड़ डाला। उन्होंने Chang Tsung-Ksiang जो चीन की तरफ़ से जापान का मन्त्री था, पकड़ लिया तथा उसे बुरी तरह पीट डाला। उन्होंने अर्थ-सचिव पर भी हमला किया। जब पुलिस ने १,००० लड़कों को पकड़ कर जेल में बन्द कर दिया तो ३०,००० और लड़कों ने आकर अपने को गिरफ़्तार होने के लिए ललकारा। उन सबके लिए जेल में स्थान न था, अतएव सब के सब छोड़ दिए गए।

चीन के विद्यार्थी प्रत्येक ज़िले में फैल गए।

* देखिए 'भविष्य' के २२वें अङ्क का "सोवियट रूस और एशिया के राष्ट्र" शीर्षक लेख।

उन्हें लोगों ने चन्दा दिया और वे चीन के गाँव-गाँव में अपना सन्देशा ले गए। लड़कियाँ, जिनकी मरदों की तरफ़ देखने की हिम्मत न पड़ती थी, या तो लड़कों के साथ जुलूस में चलती थीं या सड़कों के किनारों पर खड़ी होकर व्याख्यान देती थीं। व्यापारियों ने भी लड़कों का साथ दिया और अपनी दूकानें बन्द कर दीं। रिक्सा-कुलियों ने भी जापानी मुसाफ़िरों को ले जाने से इन्कार कर दिया। विद्यार्थियों में उस समय इतना जोश था कि वुचङ्ग कॉलेज (Wuchang College) के एक विद्यार्थी ने देश-भक्ति का उदाहरण स्थापित करने के लिए याङ्गट्सी नदी में कूद पड़ा और डूब गया। नो यॉङ्ग पार्क (No Yong Park) अपनी पुस्तक में लिखता है कि उस समय उसने चीन के दो विद्यार्थियों को देखा था, जो सीढ़ियों पर बैठे हुए चीन के इस अपमान पर फूट-फूट कर रो रहे थे। चीन के शहरों की सड़कों पर विद्यार्थी घूम-घूम कर जापानी माल ढूँढ़ते और उन्हें इकट्ठा कर आग लगा देते थे। उन्होंने जापानी माल का बड़ा ज़बर्दस्त बॉयकॉट किया। उन्होंने चीन के कैबिनेट से तीन देशद्रोहियों को इस्तीफ़ा देने के लिए मजबूर किया। चीन के विद्यार्थियों ने इस आन्दोलन में अपने कामों द्वारा संसार को चकित कर दिया। और तब से विद्यार्थी ही वहाँ की जनता के नेता हैं। मिस्टर वुडहेड ने अपनी पुस्तक में चीन के विद्यार्थियों के अपने शिक्षकों तथा बड़ों के प्रति अनुचित व्यवहारों के अनेक उदाहरण दिए हैं। आप अपनी पुस्तक में एक स्थान पर लिखते हैं—"१९१९ के बाद से विद्यार्थीगण दिन प्रतिदिन हाथ से बाहर निकले जा रहे हैं। उन्होंने अपने-यूनियन बना लिए हैं। जिसमें उन्नीस वर्ष से छोटे बालक तथा बालिकाएँ शामिल हैं। वे सदा विदेशियों के विरुद्ध तथा राजनैतिक प्रदर्शन किया करते हैं।" वील साहेब चीन के विद्यार्थी-सङ्गठन की सफलता पर लिखते हुए कहते हैं—"एक योजना तैयार कर ली गई है, जिसके द्वारा ये नौजवान प्रत्येक रात को हज़ारों की तादाद में सड़कों पर निकल पड़ते हैं और अपने नारों से क़रीब के निवासियों को भयभीत करते हैं।"

३० मई १९२५ के सङ्घाई के क़त्ले-आम के बाद मिस्टर वार्ड (Harry F. Ward) ने, जो उस समय चीन में थे, लिखा था—"चीन का विद्यार्थी-आन्दोलन अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय समस्याओं पर प्रभाव डालता है।.........अतएव इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं है कि अधिकारियों ने मौक़े का लाभ उठा कर तीन विश्वविद्यालयों को, जो बोलशेविक प्रचार के केन्द्र समझे जाते थे, बन्द कर दिया।"

आइए, हम इस विद्यार्थी-आन्दोलन के कुछ हिस्सों पर अपनी दृष्टि डालें।

बॉक्सर (Boxer) विद्रोह के पश्चात् जब चीन ने अपनी पुरानी परिपाटी छोड़ी तथा नवीन विचारों का प्रचार हुआ, तब चीन के नवयुवकों ने अपने लिए नया मार्ग तय किया तथा पुरानी रूढ़ियों को नष्ट करने का निश्चय किया।

१९११ के विद्रोह में चीन के विद्यार्थियों का बहुत-कुछ हाथ था। जापान तथा अमेरिका से लौटे हुए विद्यार्थियों ने माँचू राज को नष्ट करने में बहुत बड़ा भाग लिया।

यूरोप के गत महायुद्ध के समाप्त होते-होते उन्होंने अपना बड़ा ज़बर्दस्त सङ्गठन कर लिया था। जब पेरिस पीस कॉन्फ्रेन्स (Paris Peace Conference) ने शाण्टङ्ग प्रदेश के जरमन अधिकारों को जापान को देने की घोषणा की तो चीन के विद्यार्थी-समुदाय में आग लग गई। वे चीन के इस अपमान को सहन न कर सके। चीन के एक प्रान्त को बिना चीन से सलाह लिए किसी देश की कलचर को प्रभावित करने में अमेरिका के स्थान को रूस ले लेगा। अमेरिका ने ही चीन के विद्यार्थियों को स्वराज्य का पाठ पढ़ाया था। परन्तु भविष्य में चीन का मार्ग-प्रदर्शक अमेरिका रहेगा या रूस, यह प्रश्न अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के धुरन्धरों के सम्मुख उपस्थित है। संक्षेप में, पूर्वी राष्ट्रों की एक लीग स्थापित करना चीन के विद्यार्थियों के सामने एक नवीन लक्ष्य है, जिसका वे बहुधा सपना देखते हैं।

मिस्टर लेविस गैनेट (Lewis Gannett) ने १८ मार्च, १९२८ को पेरिस से एक पत्र लिखा था। यह पत्र 'नेशन' में ५ मई, १९२६ को प्रकाशित हुआ था। इस पत्र से हमें चीन के विद्यार्थियों के भावों का पता चलता है। उस पत्र में एक स्थान पर लिखा है—"जापानी डिस्ट्रायर्स वाली घटना के परिणाम-स्वरूप विद्यार्थियों की सभाएँ हुईं, जिसमें उन्होंने इस घटना का विरोध किया। अल्टीमेटम ने पेकिङ्ग के स्कूलों को बन्द कर दिया। इन दिनों विद्यार्थियों की चीन में भारी ज़िम्मेदारी है। वे अपने को जनता को जगाने वाला तथा नवीन राष्ट्र का निर्माता समझते हैं।" विद्यार्थियों की एक कमिटी ने चीन के अधिकारियों से मिल कर जापान के इस नवीन अत्याचार का विरोध करना चाहा। पर उन्हें आज्ञा नहीं मिली।

इस विद्यार्थी-आन्दोलन ने चीन की पुरानी इमारत की जड़ हिला दी है। और एक नई इमारत खड़ा कर रहा है। चीन के नौजवानों में वही सब बातें पाई जाती हैं जो आजकल संसार के और नौजवानों में पाई जाती हैं। पुरानी बातों को न मानना, पुरानी सामाजिक परिपाटी के विरुद्ध काम करना, बड़े-बूढ़ों का बहुधा विरोध कर बैठना तथा उनकी सलाह और इच्छा के विरुद्ध काम करना। इन्हीं सब कारणों से बहुधा चीन के पुराने ढर्रे के बड़े-बूढ़े लड़कों से नाराज़ रहते हैं, जैसा कि आजकल सभी जगह होता है।

चीन के युवकों में और यूरोप आदि के युवकों में एक ख़ास अन्तर है। यूरोप के युवकों का दृष्टिकोण आजकल अन्तर्राष्ट्रीय है। भिन्न-भिन्न देशों के युवक अपने को एक समझते हैं और उनका आन्दोलन अपने देश से ही सम्बन्ध न रख कर सर्व-व्यापी है। पर चीन के युवकों का दृष्टिकोण केवल राष्ट्रीय है और ठीक भी है। लोग पहले घर में चिराग़ जला कर तब मसजिद में चिराग़ जलाते हैं। उन्हें अभी अपने देश से ही छुट्टी नहीं मिलती, फिर भला वे बेचारे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में कैसे कार्य कर सकते हैं!

* * *

बन्दियों का स्वागत

[श्री० आनन्दीप्रसाद जी श्रीवास्तव]

छूतिमय कारावास काल का
सम्प्रति तो है अन्त हुआ,
भक्ति-भाव से जनता के
प्लावित सा आज दिगन्त हुआ।
मुखश्रियाँ कितने लोगों की
पुलकित हैं स्वागत में आज,
कितने मृदुल हृदय देशों पर
हुआ हर्ष का सुन्दर राज।
कितनों की आँखें प्रस्तुत हैं
साजे मोद सजलता साज,
मिल लेने को गले उपस्थित
है उत्कण्ठित सकल समाज।
किया त्याग तुमने स्वदेश के
लिए बड़ा, था भाग्य बड़ा,
इसीलिए है आज तुम्हारे
सम्मुख भारत नम्र खड़ा।
मातृभूमि गद्गद है, चुप है,
कर वात्सल्य भरा सम्मान,
गुप्त गवाक्षों में नभ के है
प्रभु की तोषमयी मुस्कान।
तुम तो अपने तन में, मुख में
नई ज्योति हो भर लाए,
क्लेश-सिन्धु से मणि लाए हो,
या हो मणि बन कर आए।
सतत सरलता सदन तुम्हारे
वदन शान्त गम्भीर ललाम,
मृदु निराश मन के आश्वासन
शान्ति, दया, समता के धाम।
लाए हैं सन्देश कौन से
किन मार्मिक वचनों में आज?
कौन फूल झरने वाले हैं
सुरभित करते हुए समाज?
चक्की में पीसा है तुमने,
जनता के दुर्भावों को
उन्नत किया न जाने कितने
अवनत वक्र स्वभावों को।
अभिनन्दन कर रहा मौन या
वाणी से सारा संसार,
पहनाते हैं तुमको हम अनु—
राग भरे हृदयों का हार।
शुद्धात्माओं के सङ्कट में
पड़ने का यह शुभ परिणाम,
कुछ अनुकूल हो रहा है वह,
दैव जो कि अब तक था वाम।
आगे हमें बढ़ाया था, अब
आगे हमें बढ़ाओ और,
तुम भारत के प्राण सदृश हो
तुम जनता के हो शिरमौर।
किन्तु भाग्य में अभी तुम्हारे
है बन्दीपन का आनन्द,
हो जाओगे हम लोगों के
मन के कारागृह में बन्द।

* * *

साहित्य का सपूत

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—१; दृश्य—३

स्थान—सड़क

(एक अख़बार बेचने वाला कुछ किताबें और अख़बार बेचता हुआ आता है।)

बेचने वाला—लीजिए-लीजिए "दैनिक समाचार" एक-एक आने, "भारत-प्रभा" दो-दो आने।

(यदुनाथ और रमाकान्त का आना)

यदुनाथ—लाना भाई एक "दैनिक समाचार" दे देना।

बेचने वाला—(अख़बार देकर) उपन्यास भी दिखाऊं? बहुत बढ़िया हैं।

यदुनाथ—क्या बँगला या अङ्गरेज़ी का अनुवाद है?

बेचने वाला—नहीं साहब, बिल्कुल मौलिक हैं। देखिए तो।

यदुनाथ—तब रहने दें। सब देखे पड़े हैं।

बेचने वाला—वाह साहब! अभी तो प्रेस से निकले हैं, आप कहते हैं देखे पड़े हैं। अजी महाशय, ये सब नए उपन्यास हैं।

यदुनाथ—हाँ, कहने के लिए नए होंगे, मगर उनमें बातें तो पुरानी होंगी, वही जो सब में अकसर हुआ करती हैं। कहानी एक ही ढङ्ग की। चरित्र-चित्रण, भाव-प्रदर्शन, बातचीत, सब एक ही तरह। किसी में भी नवीनता नहीं। दो सफ़ा पढ़िए और अन्त तक का हाल जाँच लीजिए। ऐसी कहानियाँ पढ़ने में क्या मज़ा? अनुवादित होते तो ले भी लेता। क्योंकि अनुवाद में और बातों का आनन्द न सही, तो कम से कम प्लॉट-बन्धन ही में कुछ नवीनता या विचित्रता देखने में आती।

बेचने वाला—यह सब न लेने के बहाने हैं बाबू जी!

(जाता है)

रमाकान्त—हाँ भाई यदुनाथ, यह तो मैं भी देखता हूँ कि हमारे यहाँ किताबों की इतनी भरमार होते हुए भी उनमें विचित्रता का आनन्द नहीं आता। कोई नई बात घटना-बन्धन में, विचारों में या वर्णन-शैली में ग़रज़ किसी में भी नहीं मिलती। आख़िर क्यों?

यदुनाथ—मैं कोई ज्ञानी तो हूँ नहीं कि इसका कारण ठीक-ठीक बता सकूँ। फिर भी जहाँ तक मेरी बुद्धि काम करती है, वहाँ तक मैं यही समझने के लिए मजबूर होता हूँ कि हमारे यहाँ के लेखक बस लेखक बनने से मतलब रखते हैं, लेखक होना नहीं चाहते। इसीलिए इस कला में मेहनत नहीं करते।

रमाकान्त—मेहनत की एक ही कही। भला लिखने में कौन सा पहाड़ ढाना पड़ता है?

यदुनाथ—यही तो भूल है, भाई रमाकान्त, कि लोग समझते हैं कि यह बहुत आसान काम है और इसे सभी पढ़े-लिखे लोग कर सकते हैं। अगर कहीं ऐसा होता तो आज के दिन हजारों पढ़े-लिखों में सिर्फ़ दस या पाँच लेखक न निकलते, बल्कि एक सिरे से सभी लेखक हो जाते। क्योंकि नाम पैदा करने का किसे शौक़ नहीं होता? मगर इसमें तो ऐसी मिहनत दरकार है कि बहुतों के छक्के छूट जाते हैं। एड़ी-चोटी का पसीना एक हो जाता है। उस पर भी बरसों सर मारने पर कहीं सफलता की झलक दिखाई पड़ती है।

रमाकान्त—मगर मेहनत किन बातों में पड़ती है, यह तो कहो।

यदुनाथ—मानवी स्वभाव के रहस्यों की थाह लेने में, भाव-समुद्र को मथने में, चरित्रों को खोजने में, प्रकृति और स्वाभाविकता को अपनाने में। इन बातों को ढूँढ़ना, परखना और समझना, फिर उनकी बारीकियाँ दिखला कर उनमें नई-नई बात पैदा करना ठट्ठा नहीं है। इसके लिए ख़ाली विद्या-बुद्धि और ज्ञान ही नहीं, बल्कि दिल-दिमाग़ और आँखें भी चाहिए।

(संसारीनाथ का आना)

संसारीनाथ—कौन कहता है? जहाँ ज़रा दुम हिला देने से काम निकलता हो, वहाँ इतना दिमाग़ ख़र्च करना कौन सी अक़लमन्दी है जनाब? सारी विचित्रता, नवीनता, मौलिकता और योग्यता अब तो सिर्फ़ इतनी सी बात में घुसी हुई है कि एक थे राजा उन्होंने खाया खाजा, उसके बाद एक छोटी सी शिक्षा की दुम उसमें खोंस दो और वाहवाही लूट लो। जब नाम कमाने का इतना सहल नुस्ख़ा हो रहा है, तब किसे पड़ी है कि साहित्य के लिए माथापच्ची करे? दूसरे बेगार के काम में मेहनत? राम कहो।

रमाकान्त—वाह! भाई संसारीनाथ, ख़ूब कहा! हद कर दी। क्या हम लोगों की बातचीत यहीं खड़े सुन रहे थे?

संसारी—अरे! यार डेढ़ कोस से तो तुम लोगों की आवाज़ सुनाई पड़ती है, छिप कर सुनने की क्या ज़रूरत?

यदुनाथ—अजी मारो गोली इन बातों को। इनकी इस बात के आगे अब इस पर कुछ कहना बेकार है। हाँ भाई संसारीनाथ, तुम अपनी कहो। तुम्हारे प्रेम का क्या हाल है?

संसारी—आह! तुमने भी क्या याद दिला दिया। हाल क्या बताऊँ दोस्त, बेहाल है। तक़दीर ने तो बड़ी मदद की। पहिले ही दिन साहित्यानन्द के घर में क़दम रखते ही उनकी बीबी और लड़की दोनों सामने पड़ गईं। फिर क्या, भीतर तक मेरी पैठ हो गई। और घर में आने-जाने का सहारा हो गया। ईश्वर की कृपा से चपला की माँ मेरे बर्ताव से ख़ुश होकर मुझे अपने एक निजी आदमी की तरह मानने भी लगी है, मगर अफ़सोस! जिसके लिए उन लोगों की मैं इतनी ख़ुशामद करता हूँ, वह मेरी तरफ़ आँख उठा कर भी नहीं देखती। मेरे पहुँचते ही वह किसी न किसी बहाने वहाँ से खिसक जाती है या कभी शर्म से सर झुका कर वहीं मूर्ति बन जाती है।

यदुनाथ—ओहो! यह तो आसार अच्छे हैं यार, इसमें अफ़सोस काहे का?

रमाकान्त—प्रेम में कुमारियों की पहले-पहल यही हालत होती है भाई! क्यों भाई यदुनाथ?

यदुनाथ—बेशक! अरे म्याँ तुम अपनी तक़दीर को धन्यवाद दो कि वह भी तुम्हें प्यार करने लगी।

संसारी—सच बताओ यार? आह! यही जो कहीं मुझे विश्वास हो जाता, तो मैं मारे ख़ुशी के जमीन पर पैर न रखता।

यदुनाथ—अजी यह तो प्रेमियों का जन्म भर का रोना होता है। तुम इस चक्कर में न पड़ो। जैसे अक़लमन्द हो वैसे अक़लमन्दी से काम करो। उसकी शादी चटपट अपने साथ तय करा लो। नहीं मौक़ा निकल जाएगा तो रह जाओगे अपना सा मुँह लेकर।

संसारी—तो भाई क्या करूं। अपने ऊपर जब पड़ती है, तब कुछ भी करते-धरते नहीं बन पड़ता। मुझे ख़ुद ताज्जुब है कि मैं जो दूसरों को उँगलियों पर नचा सकता हूँ, इस मामले में क्यों इतना बुद्धू सा हो रहा हूँ। जहाँ चपला का ध्यान आया, वहाँ मैं अपनी परछाहीं तक से भड़कने लगता हूँ।

रमाकान्त—तुम्हारी ही नहीं, प्रेम में सबकी यही हालत होती है भाई। फिर भी यह तो सोचो कि बिना हाथ चलाए मुँह में कौर भी नहीं जाता। ख़ैर! अपने साहित्यानन्द से किसी दिन चपला की शादी का चर्चा छेड़ो। उसे ख़ुद ही इसके लिए परेशानी होगी।

संसारी—वह तो पत्र निकाल कर अब सम्पादक होने के चक्कर में हैं। इस ख़ब्त के आगे ईश्वर जाने, उन्हें अपनी लड़की की शादी की कुछ फ़िक्र भी है या नहीं।

यदुनाथ—होगी कैसे नहीं? कौन ऐसा बाप है, जो लड़की पर जवानी चढ़ते ही उसकी शादी की फ़िक्र में मरता न हो?

संसारी—अजी वह आदमी हों तब तो। वह तो एक ऐसे अजीब जीव हैं कि क्या कहूँ।

यदुनाथ—अरे यार! तो मुझसे क्यों नहीं एक दिन मुठभेड़ करा देते। मुझे तो ऐसे लोगों से मिलने में बड़ा मजा आता है।

रमाकान्त—हाँ, है तो वह मिलने ही लायक़। यह मैंने भी सुना है। ऐसा आदमी पाकर भी जब तुम उसे अपने रङ्ग पर नहीं चढ़ा सकते, तब तुम क्या करोगे संसारीनाथ?

संसारी—आख़िर तुम लोग किस दिन के लिए हो। तुम्हीं कुछ मेरी मदद करो।

यदुनाथ—तो अब तक कहा क्यों नहीं ? यह तुम्हारी ग़लती है ! उधर क्या देख रहे हो ?

संसारी—(एक तरफ़ देखता हुआ) अरे ! वह तो इधर ही आ रहे हैं।

यदुनाथ—कौन ? साहित्यानन्द । यही हैं ?

रमाकान्त—(उसी तरफ़ देख कर) हाँ-हाँ, यही हैं । मैं पहचानता हूँ । अरे ! तुम कहाँ चले ?

संसारी—मुझे टल जाने दो । मेरे सामने उस मामले की बातचीत करना ठीक नहीं ।

यदुनाथ—ठीक है या नहीं, यह मैं जानता हूँ । तुम पहिले ज़रा मेरी जान-पहचान तो कराते जाओ ।

संसारी—तुम अपनी जान-पहचान भाई ख़ुद कर लो । नहीं अगर वह इस बात पर कहीं बिगड़ बैठे तो सब मेरे मत्थे जाएगी ।

यदुनाथ—अच्छा यही सही । मगर तुम रुको तो । वह लो वह आगया ।

(साहित्यानन्द अपनी पगड़ी बाँधता हुआ आता है और पगड़ी का बहुत बड़ा हिस्सा ज़मीन पर घसिटता हुआ जाता है)

यदुनाथ—(आगे बढ़ कर) प्रणाम !

साहित्यानन्द—प्रणा—अयं !

(पगड़ी छोड़ कर दोनों हाथ प्रणाम करने के लिए जोड़ता है, वैसे ही सर की पगड़ी हाथ से छूट कर ज़मीन पर गिर पड़ती है । उसका एक सिरा उठा कर फिर बाँधना शुरू करता है)

रमाकान्त—(आगे बढ़ कर) मैं भी प्रणाम करता हूँ ।

(साहित्यानन्द प्रणाम करता है, पगड़ी फिर ज़मीन पर गिर पड़ती है)

साहित्यानन्द—(नङ्गे सर और पगड़ी ज़मीन पर) तीसरा कौन है ? वह भी इसी वक्त—हुँक—समय प्रणाम कर ले । तब मैं अपनी पगड़ी उठाऊँ । नहीं फिर गिर पड़ेगी । रास्ते भर—हुँक—मार्ग भर मारे प्रणामों के गिरती ही आई है ।

संसारी—(सामने आकर) मैं हूँ संसारीनाथ । मैं तो मकान ही पर सलाम कर आया था ।

साहित्यानन्द—हाँ, ठीक है, ठीक है । (पगड़ी उठा कर बाँधने लगता है । मगर एकाएक उसे छोड़ कर पर्दे की तरफ़) वह लो, फिर किसी ने प्रणाम किया ।

(प्रणाम करता है और पगड़ी फिर गिरती है ।)

रमाकान्त—उधर आप किसे प्रणाम करते हैं ? वह तो मैं सर खुजा रहा था, उसी को परछाहीं है ।

साहित्यानन्द—हाँ ? वाहरे हम ! जब से हमने अपने को सम्पादक होना घोषित किया, तब से हमारा यह मान कि परछाहीं तक प्रणाम करने लगी ? क्यों न हो । अब मेरे अवश्य ही सकल मनोर्थ पूर्ण हो जाएँगे । (कमर पर हाथ रख कर) बार-बार पगड़ी उठाते-उठाते श्वास फूल गया । (साँस लेता है)

यदुनाथ—(अलग मुस्करा कर) भई वाह ! इसने तो अच्छी बानगी दिखाई । राम ! राम ! ऐसे लोग भी जब सम्पादक होने लगे, तब साहित्य का क्या कहना है । (प्रकट) संसारीनाथ, खड़े देखते क्या हो । देखो कितनी देर से ज़मीन पर पगड़ी पड़ी हुई है ।

संसारी—अरे ! माफ़ करना, मैं किसी और ही धुन में था । (लपक कर पगड़ी उठाता है और उसका एक सिरा साहित्यानन्द को देकर) लीजिए, अब बेखटके बँधिए । गिर नहीं सकती ।

रमाकान्त—तुम्हीं बाँध दोगे तो कौन सा बड़ा हाथ टूट जाएगा ?

संसारी—हाँ भई, ग़लती हुई । मैं ही बाँधे देता हूँ ।

(साहित्यानन्द के पीछे खड़ा होकर पीछे ही से उसके सर पर पगड़ी लपेटने लगता है ।)

साहित्यानन्द—क्या कहा, ग़लती हुई ?

संसारी—(लपेटता हुआ) हाँ ग़लती हुई, जो अब तक...

साहित्यानन्द—नहीं जी, ग़लती नहीं—

संसारी—(लपेटता हुआ) अच्छा भूल हुई ।

साहित्यानन्द—यह भी नहीं । कहो अशुद्ध हुआ ।

संसारी—अशुद्ध हुआ ? (संसारीनाथ एकाएक पगड़ी छोड़ कर हँसता हुआ पीछे हटता और अपने मुँह में रूमाल ठूँसता है ।)

रमाकान्त और यदुनाथ—वाह ! सम्पादक जी ! वाह ! सम्पादक जी !

साहित्यानन्द—अरे ! यह कैसा गड़बड़-सड़बड़ बाँध दिया, यह तो खिसकी जाती है ।

यदुनाथ—(साहित्यानन्द के सर से पगड़ी उतार कर) हाँ, यह ढीली रह गई थी । आओ सब लोग मिल कर इसे बाँधें । सम्पादक लोग सबके लिए आदरणीय होते हैं, कुछ अकेले संसारीनाथ के लिए नहीं । उस पर आपकी बातचीत तो देखो, कैसे महापुरुष हैं ।

साहित्यानन्द—(गर्व से ऐंठ कर) अवश्य ! अवश्य ! (यदुनाथ से) आप सच्चे गुण-ग्राहक हैं ।

यदुनाथ—अच्छा आप पगड़ी के इस सिरे को अपनी खोपड़ी पर कस के दबाए कोल्हू की तरह बीच में खड़े रहिए और हम लोग दूसरे सिरे को लेकर आपके चारों ओर बैल की तरह चक्कर लगाएँ ।

साहित्यानन्द—ओहो ! मेरा इतना बड़ा सम्मान ! आप सचमुच बड़े गुण-ग्राहक हैं ।

यदुनाथ—आप इसी के योग्य हैं महाराज !

(साहित्यानन्द पगड़ी का एक सिरा अपनी खोपड़ी पर दबा कर खड़ा होता है और तीनों आदमी दूसरा सिरा पकड़ कर ताने हुए उसके चारों तरफ़ घूमते हैं । बीच-बीच में संसारीनाथ इस काम में हिचकिचाता है, मगर यदुनाथ इशारा से उसे दबा लेता है ।)

साहित्यानन्द—अरे ! अरे ! खोपड़ी के साथ मेरा हाथ भी बँधा जाता है ।

रमाकान्त—दूसरे हाथ का सहारा लेकर जल्दी से निकाल लिया कीजिए ।

साहित्यानन्द—अरे ! मेरी आँखें भी बँध गईं और मुह भी बँधा जाता है ।

यदुनाथ—कुछ परवाह नहीं, बाद को ठीक कर देंगे ।

(पगड़ी साहित्यानन्द की खोपड़ी से लेकर गर्दन तक लिपटती जाती है ।)

साहित्यानन्द—(पगड़ी के साथ ख़ुद भी चारों ओर घूमता हुआ) अरे ! बाप रे बाप ! ठहरो-ठहरो । गर्दन में फाँसी लगी जाती है ।

यदुनाथ—गर्दन नहीं महाराज, ग्रीवा कहिए । आप तो जल्दी में साहित्य भी भूल जाते हैं । हाँ-हाँ, नाचिए मत । नहीं हम लोगों को और तेज़ दौड़ना पड़ेगा । (दौड़ कर चक्कर लगा कर) बस-बस, थोड़ा और सब्र कीजिए । हो गया, यह लीजिए पगड़ी का आख़िरी फेंटा भी खोंस दिया गया ।

(सब लोग अलग हो जाते हैं और साहित्यानन्द अन्धे की तरह हाथ फैलाए हुए भटकता है ।

साहित्यानन्द—अरे भाई, मेरी आँखें तो खोल दो ।

यदुनाथ—ज़रा सुस्ता लें, बहुत थक गए हैं महाराज !

(संसारीनाथ साहित्यानन्द की आँखें खोलने के लिए बढ़ता है । मगर रमाकान्त उसे रोकता है और उसे ज़बर्दस्ती अपने साथ घसीट ले जाता है ।)

(रमाकान्त और संसारीनाथ का जाना)

साहित्यानन्द—(पगड़ी खोलने की कोशिश करता हुआ) अरे ! यह कैसी पगड़ी है ? न सरकाए से सरकती है, न खोले खुलती है । अरे भई, सुस्ता चुके !

(यदुनाथ आवाज़ें बदल-बदल कर चिल्लाता और ज़मीन पर पैर पटकता है ।)

यदुनाथ—(आवाज़ बदल-बदल कर) अरे बाप रे ! बाप रे ! दङ्गा हो गया दङ्गा ! मर गया ! मर गया ! हाय ! हाय ! यह लाठी लगी । हाय बाप ! यह छुरा लगा । भागो-भागो ।

(साहित्यानन्द घबड़ा कर इधर-उधर अन्धे की तरह भटक-भटक कर गिरता है)

साहित्यानन्द—अयँ ! यह क्या हुआ । हाय ! हाय ! किधर जाएँ ।

(रमाकान्त अपने साथ दो-चार आदमी लाता है और साहित्यानन्द को दिखलाता है । रमाकान्त और यदुनाथ आवाज़ बदल कर लड़ने वालों की तरह चिल्लाते हैं और सब चुपके-चुपके हँसते हैं ।)

यदुनाथ और रमाकान्त—मारो-मारो, जाने न पाए, मार दो खोपड़ी दो हो जाए । और कस-कस के । सब भाग गए ! अब इधर चलो ।

(साहित्यानन्द मारे डर के इधर-उधर भागता है । और पर्दे से कई बार टकराता है ।)

साहित्यानन्द—हाय राम ! सब भाग गए, हम कैसे भागें ? अब क्या करें ? चलो यही बड़ी बात है कि मेरे मुँह और खोपड़ी पर पगड़ी बँधी है, नहीं तो मेरी भी खोपड़ी अब तक दो हो जाती । (पर्दे से टकरा कर) अरे बाप रे ! यह लाठी लगी ! हे परमात्मा ! हे परमेश्वर ! हे दीनानाथ !

रमाकान्त—(आवाज़ बदल कर) यह कौन जानवर है ?

साहित्यानन्द—कौन हम ? हम जानवर नहीं, साहित्य के सपूत हैं ।

यदुनाथ—(आवाज़ बदल कर) ओहो, तभी अपने आँख-कान बन्द किए हुए हैं ।

पहला दर्शक—असली है, असली है ।

(सब लोग फिर मारो-मारो का शोर मचाते हैं । इस दफ़े साहित्यानन्द भटकता-भटकता निकल भागता है । उसी के पीछे सब हँसते हुए जाते हैं ।)

पट-परिवर्तन

(क्रमशः)

* * *
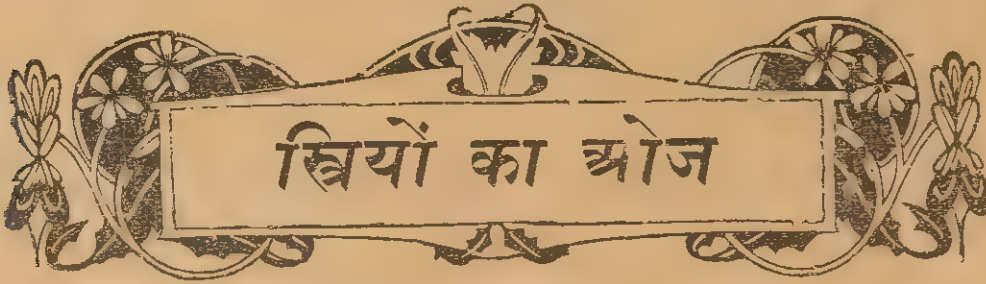
सिंहनी का बदला !

[श्री० "अरुण"]

"महाराज की जय हो !"
"आ गए ? कहो क्या समाचार है ?"
"नागौर के राव राजा ने......"
"कहो, कहो ?"
"अभयदान मिले अन्नदाता !"
"बोलो—शीघ्र बोलो—क्या कहते हो ?"
"महान् अनर्थ हो गया......"
"क्या ?"
"महाराज ! नागौर-नरेश ने आपका बड़ा अपमान किया !"
"...........?"
"आपका पत्र पढ़ कर वे क्रोध से काँपने लगे और मेरे देखते-देखते उसे टुकड़े-टुकड़े करके पैरों से कुचल डाला।
"फिर ?"
"और कहा कि अपने महाराज से कह देना—"
"क्या ?"
"कि प्रमिलाकुमारी को बलात् हरण करने का विचार स्वप्न में भी न करें, सिसोदिया-वंश अपनी मान-रक्षा करना ख़ूब जानता है।"
"और भी ?"
"जब तक नागौर में राठौरों का एक बच्चा भी जीवित रहेगा, तब तक तुम्हारे जैसे कामलोलुप पिशाचों की दाल नहीं गल सकती।"
"फिर ?"
"हाँ महाराज ! यह भी कहा कि तुम्हारे महाराज की बँदरघुड़कियाँ उनके अन्तःपुर में ही काम देती होंगी ; जब मर्दों से सामना पड़ेगा, तब छट्ठी का दूध याद आ जायगा।"
"हूँ—यह ढिठाई ?"
"और सरकार के लिए यह सौगात भी भेजी है।"
"नङ्गी कटार ?"
"जी महाराज !"
"ओफ़ ! मेरे टुकड़ों पर पला हुआ गुलाम मुझे ही चुनौती दे ! यह अवज्ञा—यह अभिमान ! ठहर—सेनापति !"
"अन्नदाता !"
"समझते हो—इस अपमान को—इस नीचता को ?"
"श्रीमान् की क्या आज्ञा है ?"
"मेरा हृदय जल रहा है—अब सहन नहीं होता। सेनापति !"
"महाराज !"
"आज ही हमारी सारी सेना नागौर की ओर कूच करेगी। तैयार हो ?"
"जो आज्ञा !"
"और सरदारो !"
"आज्ञा नरनाथ !"
"जानते हो ?"
"क्या ?"
"राजा का अपमान........."
"................"
"प्रजा का अपमान है !"
"प्रजा का अपमान है, श्रीमन् !"
"तो फिर उपाय ?"
"नीच को उसके पाप का दण्ड मिलना चाहिए।"
"तो चलो !"
"जो आज्ञा, भगवान एकलिङ्ग की जय !"

२

"बहिन !"
"क्यों ?"
"एक बात पूछूँ, बताओगी ?"
"बताऊँगी—"
"गुलाब का फूल देखा है ?"
"देखा है।"
"कैसा लगता है ?"
"बड़ा सुन्दर, क्यों ?"
"परन्तु......"
"परन्तु क्या ?"
"उसमें बड़े तीक्ष्ण काँटे होते हैं।"
"तो क्या हुआ ?"
"जानती हो, क्यों ?"
"नहीं बहिन, तुम्हीं बताओ।"
"जिसमें वह सरलता से पाने की वस्तु न रहे।"
"बस !"
"—उसकी सुन्दरता रक्षित रह सके—अधिक नहीं तो उसके विकास के बाद कुछ समय तक।"
"रानी ! तुम्हें क्या हो गया है आज ?"
"और सुनो, कुम्हलाते हुए फूल को भी देखा है ?"
"कहो......"
'संसार की दृष्टि ही उसे इस दशा को पहुँचा देती है—सुनती हो प्रमिला !"
"हाँ बहिन, किन्तु इन सब बातों का प्रयोजन क्या है ?"
"प्रयोजन ? कुछ भी नहीं—हीः हीः हीः ही !"
"......वाह !"
"सुना है, अजमेर के चौहान-नरेश से तुम्हारी सगाई ठहरी है !"
"अयँ ? क्या कहा ?"
"अब तो मुँह मीठा होगा ही प्रमिला ! दिल्ली के सम्राट तुम्हें ब्याहेंगे !"
"कौन कहता है रानी ?"
"मैं कहती हूँ !"
"किससे सुना ?"
"दरबार में अजमेर-राज्य से दूत यही सन्देशा लेकर आया था।"
"परन्तु......"
"परन्तु, क्या ?"
"कुछ भी नहीं !"
"कुछ तो ?"
"बहिन !"
"क्या प्रमिला !!"
"तुमने यह बात कैसे कही ?"
"क्यों ?"
"असम्भव—मेरा हृदय तुमसे छिपा नहीं।"
"प्रमिला ! परिस्थिति बड़ी ही जटिल है—जानती हो, दिल्लीपति चौहान कैसे आ रहे हैं ?"
"कैसे ?"
"रणस्थल में ही तुम्हारे साथ भाँवरें फिरने, तलवारों का चढ़ावा लेकर। बरछों की पालकी में बिठा कर, तुम दिल्ली ले जाई जाओगी—कुछ जानती हो ?"
"रानी !"
"कहो !"
"मैं राजपूत-कन्या हूँ !"
"फिर ?"
"पिता जी की आन मेरी आन है—चौहान राजा आवें—नागौर में हिजड़े नहीं बसते ! मेरा कर्तव्य भी निश्चित है !"

३

"मारो ! मारो !!"
"बाईं ओर सरदार ! बाईं ओर !"
"हर-हर महादेव !"
"ओफ़ ! महाराज कहाँ ?—वह गिरा—"
"अब क्या होगा ?"
"सँभलिए श्रीमान् !"
"नीच ! कापुरुष ! जा, अपनी लगाई हुई आग में स्वयं ही भस्म हो जा !"
"महाराज ! समय नहीं है। भागिए—दुर्ग का द्वार टूट चुका !"
"बचिए—आह ! म...रा...विदा महाराज ! पा...नी...."
"चल बसे वीर ! उफ़ !"
"पकड़ लो ! बाँध लो—यही महाराज हैं।"
"हर-हर महादेव !"
"आओ फिर—एक—दो—तीन—चार—पाँच बस ?"
"बढ़ो आगे !"
"तुम्हीं क्यों नहीं बढ़ जाते ?"
"हमारी जान फ़ालतू है, क्यों ?"
"डर गए, बस !"
"लहँगे पहन कर घर में घुस रहो—यहाँ प्राणों का मोह ?"
"पकड़ लो—"
"आओ न पकड़ो—जाता हूँ, देखो ! जय भी एकलिङ्ग की !"

"मार लिया है इस बार—जाने न देना—घोड़े बढ़ाओ !"

"बन्दी कर लो—जान से न मारना !"

"अरे बाप रे ! मरा......"

"जुहारसिंह !"

"हाँ पिता जी ! मैं आ गया !"

"आओ बेटा ! मारो इन कुत्तों को !"

"हर-हर महादेव !"

"एक से दो हो गए !"

"बढ़ो ! मारो !"

"अब कहाँ जाता है बुड्ढा—ले !"

"आह ! बेटा...बेटा !"

"गिर गए पिता जी ! ओफ़ ! लीजिए, अपने घातक का सिर—जा-जा, पातकी, धोखेबाज़, अपने कर्मों का फल भोग !"

"हाय रे—मरा—म...रा"

"बे....टा....प्रमिला को....ब....चा.....ना शङ्कर..."

"चल बसे ! पूज्य पिता ! हमें अनाथ छोड़ कर चले गए !"

"पकड़ो ! पकड़ो ! अकेला है !"

"हाँ, आ जाओ !! बढ़ो, पकड़ो !"

"हर-हर महादेव !"

"आग से क्यों खेलते हो पापियो ! जाता है—शेर—साहस हो तो पकड़ो !"

"निकल गया ?"

"निकल गया !"

"दुर्ग की ओर चलो !"

"जय श्री एकलिङ्ग की !"

३

"राव राजा वीरगति को प्राप्त हुए !"

"अयँ ! पिता जी ?"

"हाँ !"

"जुहार कहाँ है ?"

"युद्ध में..."

"फिर ?"

"हमारी हार हुई—दुर्ग में शत्रु-सेना प्रवेश कर चुकी !"

"हर-हर महादेव !"

"भागिए-भागिए ! राजकुमार भी आहत होकर बन्दी हो गए !!"

"क्या कहा ?"

"महल ख़ाली कर दीजिए—अब देर नहीं !"

"कायर ! ला अपनी तलवार मुझे दे !"

"राजकुमारी ! क्या करती हो ?"

"बस चला जा यहाँ से—नीचे की कोठरी में सब सामान ठीक है—बिगुल बजते ही आग लगा देना—समझा ?"

"जो आज्ञा !"

"हर-हर महादेव !"

"आओ माँ दुर्गे ! आज तुम्हें जी भर रक्त पिलाऊँगी—इतना तुमने कभी न पिया होगा !"

"प्रमिला !"

"ओफ़ रानी ! तुम कहाँ ?"

"मरने आई हूँ !"

"क्यों ? आज तो मेरी शादी है न !"

"मेरी भी है !"

"नहीं बहिन ! तुम जाओ, यहाँ तुम्हारा काम नहीं"

"क्या चौहान राजा का अकेले ही स्वागत करोगी ?"

"हाँ, ऐसा स्वागत करूँगी, जैसा किसी ने न किया होगा !"

"हर-हर महादेव !"

"जाओ रानी, तुम्हारे हाथ जोड़ूँ, इस समय चली जाओ"

"आ गए—आ गए—प्रमिला !"

"आने दो !"

५

"बहिन !"

"कहो प्रमिला !"

"हम कहाँ हैं ?"

"यह न पूछो, क़ैदियों को इतना अधिकार नहीं !"

"लेकिन आज जाने कैसा जी करता है !"

"क्यों ?"

"आओ, तुम्हें एक बार भेंट लूँ !"

"क्या सोचती हो रानी ? एक बार आओ, हम दोनों मिल लें, बहुत दिनों से तुम्हें प्यार नहीं किया !"

"आह ! कितना सुख है !"

"छिः-छिः ! रोती हो ?"

"नहीं तो"

"तुमको मालूम है ?"

"क्या ?"

"आज मेरी सुहागरात है !"

"किसके साथ ?"

"तुम्हारे साथ रानी !"

"ठीक ; चौहान राजा आएँगे, क्यों ?"

"होगा भी—रानी ! एक काम करो !"

"बोलो"

"वह फूल मुझे ला दो !"

"तुम्हें ?"

"हाँ !"

"सुनो—कोई आता है !"

"जाओ—चुपचाप ले आना !"

"महाराज आते हैं—"

आदर्श-चरित्र

"आह ! ख़ुदा अगर इनके पीछे भी दो आँखें जड़ दिए होता तो बेचारे मुड़ कर देखने की ज़हमत से बच जाते !"

"क्यों बहिन ?"

"योंही, हमारे भाग्य का निर्णय दूसरे के हाथ है !"

"इससे क्या ?"

"हम तुम फिर मिलेंगे या नहीं, कौन जानता है, बहिन !"

"दुर पगली !"

"सच कहती हूँ !"

"क्या हो गया है तुमको ?"

"मेरे अधिक पास आ जाओ रानी !"

"देखो उधर—सरोवर के जल पर छिटकी हुई चाँदनी कैसी भली मालूम होती है !"

"हाँ !"

"जी चाहता है, नीचे जाकर वहीं थोड़ी देर बैठती !"

"किन्तु......"

"और देखो—बीच में खिला हुआ वह कुमुदिनी का फूल कैसा सुन्दर है ?"

"........"

"जा—द्वार बन्द कर देना !"

"जो आज्ञा श्रीमान् !"

"हृदयेश्वरी !"

"पधारिए राजन् !"

"धन्य भाग्य, तुम्हारे श्रीमुख से स्वागत के शब्द तो सुनने को मिले—प्रियतमे !"

"दासी तो सदैव सेवा में उपस्थित है !"

"घूँघट क्यों डाल रक्खा है ? अभिन्न प्राणियों में परदा कैसा ?"

"महाराज ! अपराध क्षमा हो, यही तो हम अबलाओं की लाज है !"

"ऊँह, हटा दो इसे, तुम्हारा चन्द्रमुख तो देखूँ"

"श्रीमान को अधिकार है !"

"तो फिर लो—अयँ ! अरे बाप रे ! यह क्या करती हो ?"

"इन्द्रिय-लोलुप पिशाच ! बोल—क्या चाहता है ?"

"ओफ़ ! प्रमिला ! मैं तुम्हारा दास हूँ, यह कटार तो छाती पर से हटाओ !"

"निर्लज्ज ! नारकी कीट ! वासना के पुतले ! अपने पापों का फल भोगने को तैयार हो जा !!"

"क्षमा—राजनन्दिनी ! क्षमा करो !"

"क्षमा ? तेरे जैसे दुष्ट को ? आज राठौरी कटार तेरा रक्त-पान करेगी, नीच !"

"अपराधी देवी ! क्षमा करो !"

"पितृहन्ता को कैसे क्षमा करूँ ! कापुरुष ! क्षत्राणियों के धर्म-तेज को नहीं जानता ?"

"बहिन ! क्षमा...तुम्हारी ही शरण में हूँ ।"

"ना—आज तुझे उचित शिक्षा दूँगी । अधिकारों का दुरुपयोग करने वालों के लिए तेरी मृत्यु उदाहरण बनेगी ।"

"अभय दो बहिन ! इस जीवन में अब ऐसा काम न करूँगा ।"

"अच्छा जा, तेरे रक्त से अपना हाथ कलङ्कित न करूँगी । लेकिन मेरी कुछ शर्तें हैं—उन्हें मानना होगा !"

"स्वीकार है देवी !"

"पहिली यह कि मेरे भाई जुहार को मुक्त कर उसे नागौर का राज्य वापस कर दो । दूसरी यह कि इस प्रान्त की सीमा से बीस मील तक तुम्हारी सेना दिखाई न दे और तीसरी यह कि इस जीवन में किसी राजपूतनी पर कुदृष्टि न डालना—समझे !"

"प्रतिज्ञा करता हूँ, बहिन !"

"पगड़ी छूकर शपथ लो—"

"शपथ है ।"

"तो जाओ—छोड़ती हूँ ! भूलना मत—विदा—"

"अरे ! यह क्या—सब समाप्त ! धन्य सती !"

* * *

सवेरे सरोवर के निर्मल जल पर दो कोमल शव उतरा रहे थे !!

* * *

इस घटना का वर्णन इतिहास में नहीं है—राजपूताने के आदि-ग्रन्थों में भी खोजने पर नहीं मिलता । सम्भव है कि इतिहासकारों ने एक ऐसे प्रसिद्ध और प्रतापी हिन्दू-सम्राट का कलङ्क मान कर न लिखा हो, जिसकी यश-गाथाएँ आज तक जीवित हैं, किन्तु इस उदारता का क्या मूल्य है ? पाठक बतलाएँ ?

* * *

अजी सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

संसार में कुछ प्राणी ऐसे होते हैं, जिन्हें ईश्वर की ओर से दिव्य-दृष्टि प्रदान की हुई होती है । जो बात सर्व-साधारण को दिखाई नहीं पड़ती, उसे वह इस प्रकार देख लेते हैं, जिस प्रकार कि आकाश में उड़ता हुआ गिद्ध भूमि पर पड़ी हुई छोटी से छोटी लाश को देख लेता है । ऐसे ही दिव्य-दृष्टिधारी लोगों में मेरी जान-पहचान के एक व्यक्ति हैं । इन्हें अपने और अपनी पत्नी के अतिरिक्त संसार में सब स्त्री-पुरुष चरित्रहीन दिखाई पड़ते हैं । इनसे जब कभी बात करने का अवसर मिला, तब इन्होंने ज़माने भर की शिकायत ही की । अमुक नेता स्वार्थी है, अमुक लीडर धूर्त है, अमुक लेखक चोरी करता है, अमुक कुछ भी नहीं जानता, अमुक का नाम पता नहीं, इतना विख्यात क्यों हो गया—उसे तो कुछ भी नहीं आता—इत्यादि ! संसार में कोई व्यक्ति ऐसा नहीं जिसके अन्तःकरण में छिपी हुई बुराई को इनकी दिव्य-दृष्टि एक्स-किरणों की भाँति न देख लेती हो । आप लेखक भी हैं और लेख भी लिखा करते हैं । अपने लेखों में भी आप संसार के पापों का रोना रोया करते हैं—मानो ईश्वर ने इन्हें संसार के पापों का कॉण्ट्रेक्टर बना कर भेजा है ।

एक दिन का ज़िक्र है, मैं घूमता-घामता उनके दरेदौलत पर पहुँच गया । उस समय वह लेख सामने रक्खे बैठे थे । मैंने पूछा—कहिए, क्या हो रहा है ?

वह मुँह बना कर बोले—एक लेख लिख रहा हूँ ।

"किस विषय पर ?"

"हमारे तीर्थ-स्थानों में जो व्यभिचार होता है उस पर !"

"लेख तो महत्वपूर्ण है"

"कैसा कुछ !"

मैंने कुछ क्षण चुप रहने के पश्चात् पूछा—क्या सचमुच तीर्थ-स्थानों में व्यभिचार बहुत होता है ? मुझे तो दो-चार तीर्थ-स्थानों में जाने का अवसर प्राप्त हुआ है । परन्तु मुझे तो कोई ऐसी बात दिखाई नहीं पड़ी, जिसके बल पर मैं यह कह सकूँ कि वास्तव में ऐसा होता है । यह मैं नहीं कहता कि बिल्कुल नहीं होता ; होता होगा—जहाँ हज़ारों स्त्री-पुरुष इकट्ठे होते हैं, वहाँ कभी-कभी दो-चार वारदातें हो जाना बड़ी बात नहीं है, पर जैसा कि आप कहते हैं वह बात मैंने नहीं देखी ।

वह हँस कर बोले—आप देख ही नहीं सकते । आप गए और चले आए । वहाँ दो-चार रोज़ रहिए तो पता चले ।

मैंने कहा—दो-चार रोज़ क्या, आठ-आठ, दस-दस दिन रहा हूँ और ऐसे लोगों को जानता हूँ जो महीनों रहे हैं, परन्तु न तो मैंने कभी कुछ देखा और न उन लोगों से सुना ।

वह बोले—एक बात और है—"जिन खोजा तिन पाइयाँ"—जो खोजा करता है, कोशिश करता है, उसे ये बातें दिखाई पड़ती हैं, हर एक को थोड़े दिखाई पड़ती हैं ।

"हाँ, यह बात हो सकती है—खोज तो मैंने कभी की नहीं"

"वहाँ रहिए और ज़रा आँख-कान खोले रहिए तो अवश्य दिखाई पड़े । हरिद्वार में हर की पैड़ी पर सैकड़ों दुश्चरित्र स्त्री-पुरुष घूमते रहते हैं, और मैं दिखा सकता हूँ ।"

"हरिद्वार में मैं भी पन्द्रह-पन्द्रह दिन तक रहा हूँ और मेरे अनेक मित्र ऐसे हैं जो महीनों रहे हैं, पर उन्हें तो एक भी दुश्चरित्र स्त्री नहीं मिली ।"

"तो क्या वहाँ सब सच्चरित्र ही जाती हैं ?"—इन्होंने हँस कर कहा ।

"यह भी मैं नहीं कहता । परन्तु बिना देखे-सुने केवल अनुमान से सबको या अधिकांश को दुश्चरित्र समझ लेना भी अन्याय है ।"

"अच्छा, कभी मेरे साथ चलिए तो मैं आपको दिखा दूँगा ।"

"अच्छी बात है, जब आप जाने लगें तो मुझे बताइएगा ।"

"मैं तो बहुधा जाया करता हूँ ।"

"क्यों ?"

"यही लीला देखने । मैं इस विषय का पूर्ण अध्ययन कर रहा हूँ और प्रत्येक बात का अनुभव प्राप्त करता हूँ ।"

"अच्छी बात है । इस बार मैं आपके साथ अवश्य चलूँगा ।"—यह कह कर मैं बिदा हुआ ।

पन्द्रह दिनों के पश्चात् एक दिन वह मेरे पास आए और बोले—हरिद्वार चलते हो ?

"क्या आप जा रहे हैं ?"

"हाँ, कल जा रहा हूँ ।"

"तो मैं भी चलूँगा ।"

"तो तैयार रहना ।"

दूसरे दिन मैं उनके साथ हरिद्वार के लिए रवाना हुआ । उन महाशय ने स्टेशन से ही मनुष्यों के चरित्र का अध्ययन आरम्भ कर दिया । एक स्त्री घूँघट निकाले बैठी थी । संयोग से उसने घूँघट उठा कर एक बार देखा और मेरे साथी से उसकी आँखें एक क्षण के लिए मिल गईं । उन्होंने झट मेरा हाथ दबाया और मुस्करा कर बोले—देखा ?

मैंने पूछा—क्या ?

"बस इसीलिए तो कहता हूँ कि आँख-कान खोले रहो, बुद्धू बन कर बैठे रहते हो, इसीलिए कुछ देख-सुन नहीं पाते । वह स्त्री, जो घूँघट निकाले बैठी है, दुश्चरित्र है, इसने अभी मेरी ओर किस प्रकार देखा था, यह तुमने ग़ौर नहीं किया ।"

मैंने कहा—उसने देखा तो एक बेर अवश्य था; पर आपकी ओर देखा था या किसी दूसरी ओर—इसका निश्चय नहीं कर पाया ।

"यही तो सारी बात है—इसका निश्चय करने के लिए अनुभव चाहिए ।"

मैंने कहा—ऐसा अन्तर्यामी अनुभव अभी मुझे प्राप्त नहीं हुआ ।

"देखिए धीरे-धीरे हो जायगा—ज़रा हरिद्वार पहुँचें ।

वहाँ हर की पैड़ी पर इतनी दुश्चरित्र स्त्रियाँ मिलेंगी कि चाहे गठरी बाँध लाइए।"

इसी प्रकार वह रेल में भी स्त्री-पुरुषों का अध्ययन करते हुए गए। न जाने कितनी स्त्रियों को उन्होंने दुश्चरित्र बताया और कितने पुरुषों को बदमाश। यद्यपि मेरी समझ में ख़ाक न आया कि वह किधर से दुश्चरित्र तथा बदमाश दिखाई पड़ते थे। एक स्त्री और पुरुष रेल में स्थान पाने की शीघ्रता के कारण कुछ घबराहट में चौकन्ने थे। उन्हें देख कर आप झट बोल उठे—यह आदमी इस स्त्री को भगाए लिए जा रहा है।

मैंने पूछा—यह आपने कैसे जाना?

वह बोले—यह दोनों कितने घबराए हैं—यह आपने देखा?

मैंने कहा—थर्ड क्लास में यात्रा करने वाले अशिक्षित लोग बहुधा घबराए से रहते ही हैं।

उन्होंने कहा—बस यही तो आप जानते नहीं, इनकी घबराहट दूसरे तरह की थी।

मैंने कहा—होगी, मैंने तो कोई ऐसी बात देखी नहीं।

"देखो कैसे, अनुभव हो तब तो देखो?"

ख़ैर, हम लोग हरिद्वार पहुँचे और एक धर्मशाला में अड्डा जमाया। उचित समय पर हम लोग स्नान करने के लिए गए। स्नान करने में मेरे साथी प्रत्येक स्त्री को घूर-घूर कर देखते थे। क्यों? इसलिए कि वह अच्छे-बुरे की परख करते थे। यदि उन्हीं की तरह कोई अन्य पुरुष स्त्रियों को देखता था तो वह झट उनकी सूची के बदमाश कॉलम में प्रविष्ट हो जाता था। स्नान करके लौटते समय मैंने उनसे पूछा—कहिए, आप तो कहते थे कि यहाँ बदमाश औरतों की गठरी बाँध लो, परन्तु मुझे तो एक भी न दिखाई पड़ी।

वह बोले—ये जितनी नहा रही थीं, सब बदमाश थीं—इनमें मुश्किल से एकाध अच्छी थी।

मैंने कहा—तो इनमें से दो-चार को साथ लिए चलते।

वह मेरी ओर चकरा कर देखते हुए बोले—कहाँ लिए चलते?

"धर्मशाला में। आख़िर जब आप हो तो कुछ मनोरञ्जन का सामान भी तो चाहिए।"

वह मुस्करा कर बोले—ओहो! आपका यह मतलब है; पर भाई मैं तो कभी ऐसा काम करता नहीं।

मैंने कहा—पर उस्ताद, मैं तो इसके लिए तैयार हूँ, प्रबन्ध करना तुम्हारे हाथ है। सवेरे चार-छः पकड़ लाए उन्हें शाम को छोड़ दिया; शाम को चार-छः साथ लगा लाए, उन्हें सवेरे छोड़ दिया—क्यों कैसी रहेगी?

वह बोले—पकड़ क्या लाए, कोई भेड़-बकरी है क्या?

"आपकी बातों से तो अब तक यही मालूम होता रहा है। आप तो गठरी बाँधने को कहते थे—गठरी तो घास-फूस की बाँधी जाती है, भेड़-बकरी तो फिर भी ग़नीमत हैं।"

शाम को पुनः प्लेटफ़ॉर्म पर घूमने गए। वहाँ हज़रत घूम-घूम कर सबको देख रहे थे। हठात् मुझसे बोले—ये दो स्त्रियाँ जो जा रही हैं, जानते हो क्या कहती थीं?

मैंने कहा—यह सौभाग्य तो आप ही को प्राप्त है कि आप उनकी बातें समझ सकें।

वह बोले—ये पञ्जाबी भाषा में मेरी ओर लक्ष्य करके कह रही थीं कि यह आदमी कितना सुन्दर है।

"अच्छा! तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं, सुन्दर तो आप किसी हद तक कहे जा सकते हैं।"

"अब यदि मैं चाहूँ तो इन दोनों को फाँस सकता हूँ।"—वह अकड़ कर बोले।

मैंने कहा—तब तो आपकी सुन्दरता के सम्बन्ध में कुछ कहना गोया अपने फँसाने का सामान करना है। उन बेचारियों को शायद यह बात मालूम नहीं है। ख़ैर, तो श्रीगणेश कीजिए।

उन्होंने फिर देखा; परन्तु वे दोनों दूर निकल गई थीं। मैंने कहा—अफ़सोस, ऐसे सुन्दर आदमी को इतना मौक़ा भी न दिया कि वह आत्म-निर्णय तो कर लेता। अस्तु।

जहाँ कहीं दो-चार स्त्रियों को हँसते देख लिया, बस बोल उठे—"ये हम लोगों को देख कर हँस रही थीं।" यदि कहीं कुछ भीड़ के कारण कोई स्त्री इनसे भिड़ कर निकली, बस आप तुरन्त बोल उठे—"देखा, यह स्त्री कैसा धक्का मार कर चलती है।" एक बार मज़े में आकर आपने भी एक स्त्री के कुहनी मार दी। वह तुरन्त ही घूम पड़ी और बोली—तुम्हें दिखाई नहीं पड़ता क्या—अन्धों की तरह चलते हो।

जीवित-जाति

[ले० श्री० 'मगन']

जिसमें स्वावलम्ब, साहस,
सद्गुण, सुनीति का हो भण्डार;
जिसमें विद्या, कला, कुशलता,
गुण, वैभव का हो विस्तार।

❀

जिसमें 'परदा,' 'जड़ता,' 'बन्धन,'
हों न नारियों के शृङ्गार,
जिसमें कभी नहीं होता हो,
'धर्म' नाम पर पापाचार।

❀

जिसमें हो प्रति व्यक्ति समझता,
देश-द्रोह को निज अपमान!
वह है 'जीवित-जाति'; उसी की—
रह सकती है जग में 'शान'!

* * *

मैंने कहा—देखिए, जिसके आपने कुहनी मारी थी, वह बुला रही है।

वह बोले—चले आओ चुपचाप।

मैंने कहा—उस्ताद, इस हवा में किसी दिन वह बेभाव की पड़ेगी कि चाँद गञ्जी हो जायगी।

वह बोले—आप समझे नहीं।

मैंने कहा—बिलकुल नहीं, इन बातों के समझने का कुल कॉन्ट्रैक्ट आप पहले से हथिया चुके हैं।

उन्होंने कहा—मज़ाक़ नहीं, उसने इसलिए कहा कि जिसमें हम लोग ठहर कर कुछ बातें करें।

अभी तक तो मैं उनकी बातों पर मन ही मन हँसता रहा; परन्तु अब मुझे क्रोध आने लगा। मैंने कहा—जनाब, अच्छा हुआ जो आप नहीं ठहरे, वरना खोपड़ी देवी आज बड़ी मुसीबत में फँस जातीं।

सम्पादक जी, कहाँ तक लिखूँ, हम लोग तीन दिन यहाँ रहे और वह दुष्ट यही बकता रहा कि अमुक बदमाश है, अमुक ऐसी है, अमुक वैसी है। वहाँ से बड़ा दावा करके गए थे, परन्तु वहाँ यह एक भी स्त्री ऐसी नहीं दिखा सके, जिसे मैं दुश्चरित्र मानने के लिए बाध्य होता।

घर लौटते समय वह बोले—देखा आपने, यहाँ कितना व्यभिचार होता है?

मैंने कहा—अरे यार, ज़रा तो ईश्वर से डरो—तुम वहाँ से बड़ी-बड़ी बातें मारते हुए आए थे; परन्तु वहाँ तुमने कोई बहादुरी न दिखाई। यदि ऐसी एक स्त्री भी दिखा देते, जो वास्तव में बदमाश होती, तब भी मैं तुम्हारी बात मान लेता। हाँ, तुम अलबत्ता बदमाशी का जामा पहने घूमते रहे, परन्तु किए-धरे कुछ न हुआ। ऊपर से कहते हो व्यभिचार होता है—व्यभिचार होता है तुम्हारा सिर!

वह बोले—जब मेरा इस पर लेख निकले तब देखना।

मैंने क्रोध को दबा कर पूछा—लेख में क्या लिखोगे?

"यहाँ के व्यभिचार का वर्णन लिखूँगा। जिसमें लोगों की आँखें तो खुलें।"

"यदि यहाँ जो तुमने देखा है वही लिखोगे, तब तो तुम्हारा लेख रद्दी की टोकरी में फेंका जायगा।"

"सो मैं ऐसा बेवक़ूफ़ नहीं हूँ—यह मैंने समझ लिया कि यहाँ ऐसा होता है—बस, अब घटनाओं की कल्पना कर लूँगा।"

मैंने कहा—जी चाहता है तुम्हें पीट चलूँ। तुम्हारे ऐसे धूर्तों ने ही बहुत से भ्रम फैला रक्खे हैं। यह मैं नहीं कहता कि यहाँ सब पुण्यात्मा ही आते हैं। व्यभिचार कहाँ नहीं है—कुछ न कुछ सभी जगह है; परन्तु आप जो रूपक अपने लेख में बाँधेंगे, उसका तो कहीं यहाँ नाम भी नहीं है।

"आपके लिए नहीं है, मेरे लिए तो है।"

मैंने कहा—यदि मेरी चले तो आप ऐसे आदमियों को पागलख़ाने की चहारदीवारी के अन्दर ही रक्खूँ। आप तो साधारण पागल से कहीं अधिक ख़तरनाक हैं। आप झूठ के पुल बाँधेंगे और सम्पादक आपकी बात को वेद-वाक्य समझ कर ज्यों का त्यों छाप देंगे, और ज़्यादा तबीयतदार हुए तो एक टिप्पणी जड़ देंगे। बस ख़तम, देश का उद्धार हो गया।

सम्पादक जी, आप ऐसे लेखकों से सावधान रहें, जो अपनी कल्पनाओं को सत्य घटना का रूप देकर सम्पादकों की आँखों में धूल झोंकते हैं और भ्रम फैलाते हैं।

भवदीय,
—विजयानन्द (दुबे जी)

* * *

श्रीजगद्‌गुरु का फ़तवा

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

किसी ने क्या ख़ूब कहा है कि 'अजगर को मख राम देवैया !' बेचारे हिज़ होलीनेस इस चिन्ता के मारे मरे जाते थे कि अकेले चचा चर्चिल ब्रिटिश साम्राज्य की डूबती हुई नौका का डाँड पकड़ेंगे या लग्गी ? मगर ग़फ़ज़लहु अल्लाहताला, 'राँड के सोग में कुँवारी'-स्वरूप बबुआ बाल्डविन भी उनका साथ देने के लिए तैयार हैं। फलतः अब ब्रिटिश साम्राज्य के अकाल में ही काल-कवलित होने की कोई आशङ्का नहीं रह गई !

❀

स्वर्गवासी बाबू बालमुकुन्द गुप्त का कथन है कि—"जैसे लिबरल वैसे टोरी, जो परनाला वही है मोरी !" लेहाज़ा अगर कल बाल्डविन ने चर्चिल की चेंचें सुन कर कान बन्द कर लिया था और आज उसमें श्री० नीलू-बाबू के सरस सङ्गीत का मज़ा पा रहे हैं, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि बेचारे कोई सीता-सावित्री तो हैं नहीं, जो आजन्म दादा मुग्धानल देव का ही पल्ला पकड़े रहें ?

❀

राजनीति-क्षेत्र में क़लाबाज़ी दिखाने में ही तो मज़ा है,—'निगाहे यार की बिजली इधर चमकी उधर चमकी !' फिर बक़ौल स्व० मि० पिट, विलायत के पार्टी-लीडरों का दिमाग़ तो हमेशा 'टू लेट' (To Let) रहता ही है। भाड़े के टट्टुओं की पीठ पर, जो पैसे दे वह सवारी गाँठे। इस समय बेचारा अपनी लीडरी की रक्षा करे या ज़बान की !

❀

ख़ैर, अपने राम तो भड़क आदमी ठहरे, जहाँ तक चहल-पहल रहे, वहीं तक इनके लिए अच्छा है। छान-छून कर बैठने के बाद कुछ शग़ल तो चाहिए ही ! यही हाल हमारे बूढ़े भारत दादा का भी है। बड़े-बड़े नाज़ो-अन्दाज़ के मज़े लूट चुके हैं। इन्हें न 'लिबरल टोरी की चिन्ता है, न परनाले-मोरी की'। अब यह अच्छी तरह समझ चुके हैं कि—

"सुर्ख़रू होता है इन्साँ, ठोकरें खाने के बाद,
रङ्ग लाती है हिना, पत्थर पे पिस जाने के बाद।"

❀

परन्तु 'राम खुदैया' में पड़े बेचारे दादा मुग्धानल देव—धोबी के उस ग़रीब कुत्ते की तरह, जो घर का रहा, न घाट का ! बेचारे ने बड़ी मेहनत से जो 'फ़ेडरल का फन्दा' तैयार किया था, उसे चचा चर्चिल और बाल्डविन की जोड़ी अगर एक ही दुलत्ती में छिन्न-भिन्न कर दे तो कोई आश्चर्य नहीं। इसलिए बेचारे बड़े सशङ्कित भाव से कभी अफ़िसरों की दुम सहलाते और कभी उन्हें रिझाने के लिए तूमड़ी बजाते फिरते हैं। कहीं फ़ेडरल फिसला तो बेचारे की दशा उस विफल-मनोरथा अभिसारिका सी हो रहेगी, जो 'रतिहू ते गई पति (लाज) हू ते गई, इतहू ते गई उतहू ते गई !'

❀

इधर सखी नौकरशाही ने भी शान्ति का बुर्क़ा तो ओढ़ लिया है, परन्तु "हुस्न छिपता नहीं छिपाए से, पर्दादारी ही पर्दादारी है !" फलतः पुराने अभ्यास के कारण 'तीरे-नज़र' भी चलाती जाती हैं। आख़िर, बेचारी कुछ हज तो कर नहीं आई हैं और न किसी वैष्णव की चेली ही हो गई हैं। लेहाज़ा शिकार सामने आ जाता है तो 'नाथ साथ धनु हाथ हमारे' वाली नीति के अनुसार एक-दो निशाने लगा लेती हैं। इसमें हर्ज ही क्या है ?

❀

इसीलिए उनके अपनी सहृदयता, शान्ति-कामना और नेकनीयती का दुन्दुभी-निनाद करने पर भी उनकी चञ्चला-चपला पुलिस देवी ने बङ्गाल के आरामबाग़ नामक स्थान में एक कम एक दर्जन भले आदमियों और आधा दर्जन 'भले आदमिनियों' की खोपड़ियों की मरम्मत कर दी है। कहीं-कहीं पिटनी (प्युनिटिव) पुलिस के लिए दक्षिणा भी पूर्ववत् ही वसूल की जाती है। भई, जन्म-जन्मान्तर की पड़ी हुई आदत एक दिन में थोड़े ही छूटती है। सुना नहीं है,

मोहब्बत असर करती है रफ़्ता-रफ़्ता,
मोहब्बत की ख़ामोश चिनगारियाँ हैं !

❀

इसके अलावा, लोगों की शिकायत है कि राज-बन्दियों को छोड़ने में भी कन्जूसी की जा रही है। लोग चाहते हैं, कि एकाएक डरबे का 'पिंहान' खुल जाए और सब के सब एक साथ ही फुर्र से निकल भागें। मगर जनाब, मोहब्बत भी तो कोई चीज़ है या नहीं ? किसी से साल भर का सम्बन्ध और किसी से छः महीने का। बिदा-बिदाई के समय मिलने-जुलने में भी तो कुछ समय लगता है। फिर इतनी जल्दी किस बात के लिए है ? शान्ति अगर कुछ दिन के बाद ही स्थापित होगी तो क्या महाभारत अशुद्ध हो जायगा ?

❀

इसलिए श्रीजगद्‌गुरु की राय है कि देश में शान्ति भी स्थापित हो जाए और श्रीमती नौकरशाही की अतिथि-शाला की चहल-पहल में भी ख़लल न आए। अन्यथा एकाएक घर सूना हो जाने पर बेचारी घबरा जाएँगी। इसीलिए हिज़ होलीनेस की छोटी सखियाँ यानी प्रादे-शिक वधूटियाँ बड़ी सावधानी और छानबीन के साथ मेहमानों की बिदाई की व्यवस्था कर रही हैं। बात यह है, कि उन्हें कुछ बन्दियों से प्रगाढ़ प्रेम हो गया है।

❀

इधर यार लोगों का यह हाल है कि उनकी सारी जमी-जमाई गृहस्थी ही उजाड़ फेंकना चाहते हैं। उनकी पुलिस लाठी भी न चलाए, 'सब धान बाइस पसेरी' के अनुसार 'आमिषाशी' और 'शाकाहारी' बन्दी भी छोड़ दिए जाएँ, बूढ़े बाबा बीसवीं सदी की सुधाबिन्दु से भी लोगों को वञ्चित रक्खें। भाड़ में गई ऐसी शान्ति। ऐसी मूल्यवान शान्ति लेकर क्या उन्हें चाटना है। इससे तो वह अशान्ति ही हज़ार दर्जे अच्छी थी। कम से कम संसार में शोहरत तो हो रही थी ! इसीलिए सखी चाहती हैं कि सद्भावना भी क़ायम रह जाय और गाँठ की कौड़ी भी ख़र्च न हो। फलतः यह "दानि कहाउब और कृपणाई" की नीति कुछ बुरी नहीं है।

❀

इसी शास्त्रोक्त नीति के अनुसार इटावे में कुछ काले गोलियों द्वारा मुक्तिधाम भेज दिए गए हैं; जिसके लिए अख़बार वाले हल्ला मचा रहे हैं। बतलाइए, इन नारद के वंशधरों को कौन समझाए कि इन ज़रा-ज़रा सी बातों के लिए वावेला मचाना कोई भलमनसाहत की बात नहीं है। यह सब शीघ्र शान्ति स्थापित करने के लिए साधु-प्रयत्न हैं। जिन्हें गोली लग गई वे हमेशा के लिए शान्त हो गए और ऐसे शान्त कि सनसनाने से कोई सरोकार ही नहीं। फलतः श्रीजगद्‌गुरु इस उद्योग के समर्थक हैं।

❀

और इसके साथ ही मुग्ध हैं, उस घोषणा-पत्र पर, जिसे संयुक्त प्रान्त की सरकार ने, इटावा के गोली-काण्ड के सम्बन्ध में प्रकाशित करने की कृपा दिखाई है। घोषणा क्या है, पण्डित माखनलाल जी चतुर्वेदी की छायावादी कविता है। क्या मजाल, जो एक शब्द भी समझ में आ जाय। मगर जनाब, यह हमारी सुशीला सरकार की सदाशयता है कि वह कालों के मरने पर एक कम्युनिक निकाल दिया करती हैं। उनकी सद्‌गति के लिए श्रीमती की इतनी दया काफ़ी है।

❀

इटावा गोली-काण्ड सम्बन्धी सरकारी कम्युनिक का कथन है कि लखनऊ जेल से छूटे हुए कुछ क़ैदियों की सम्बर्द्धना के लिए लोगों ने एक जुलूस निकाला था और पुलिस के 'आरामगाह' पर अड्डा जमाना चाहते थे। फलतः गोली चलाना अनिवार्य हो गया। होना ही चाहिए। एक तो क़ैदियों के लिए जुलूस निकालना ही महापाप और ऊपर से पुलिस का 'रङ्ग-महल' दख़ल करने की चेष्टा ! ऐसे अनर्थकारियों को तो फ़ौरन तोप-दम कर देने की आवश्यकता थी। परन्तु पुलिस बेचारी तो न्याय-परायणता, मनुष्यत्व और सहृदयता आदि महा आफ़तों से जकड़ी थी, इसी से फ़क़त दो-चार जुलू-सियों को 'भून-भान' कर ही रह गई।

❀

आप पूछते हैं, आख़िरश वे लोग पुलिस के आराम-गाह पर दख़ल जमाने क्यों जाते थे ? कौन जाने क्यों जाते थे। श्रीजगद्‌गुरु ऐसे वाहियात प्रश्नों का उत्तर देने और ऐसी बातों की छानबीन में समय नष्ट करने को बाध्य नहीं हैं। समझ लीजिए कि दख़ल जमाने जाते थे और गोली चलाना आवश्यक था और आवश्यक था, सरकारी कर्तव्य के पालन के लिए एक "अनभिल आखर अर्थ न जापू, प्रगट प्रभाव महेश प्रतापू" के अनुसार कम्यूनिक निकाल देना। सारी विधि पूरी हो गई, अब बस, सुशील बालक की तरह चुप रहिए। समझ गए न ?

❀

'मुकम्मिल आज़ादी' के लँगोटिया यार मौ० हस-रत मोहानी की राय है कि "कॉङ्ग्रेस की मौजूदा जद व जहद के मानी हिन्दू-राज हैं, और मुसलमानों को इस जद व जहद के साथ शामिल नहीं होना चाहिए। बस, इसी ईमानदारी और सचाई से खचाखच भरी हुई बात के लिए कुछ 'कॉङ्ग्रेसिए' मौलाना पर लाल-पीले हो रहे हैं और उन्हें 'बिना पेंदी का लोटा' 'चिकना घड़ा' और 'ख़फ़्फ़तुल-हवास' आदि विशेषणों से विभूषित कर रहे हैं। शायद उन्हें मालूम नहीं कि मौलाना 'मुकम्मिल आज़ादी' के पक्षपाती उस वक्त थे, जब जिन्ना साहब के 'चौदह रत्न' मुसलिम क्षीर-सागर के गहरे गर्भ में थे।

मगर अब ज़माना बदल गया है और मौलाना इस बात के क़ायल हैं कि—

"बदल जाए ज़माना तो बदल जाव,
ज़माना हाथ से जाने न पाए।"

❀

इसके सिवा अब 'मुकम्मिल-आज़ादी' की बाँग का महत्व ही क्या है। अब तो लाला घुरहूराम से लेकर ख़ैराती मियाँ तक सभी 'मुकम्मिल-आज़ादी मुकम्मिल आज़ादी' चिल्ला रहे हैं, इसलिए मौलाना ने उस पुराने गीत को छोड़ दिया है। क्योंकि आप ठहरे जीते-जागते 'चोंचों के मुरब्बा' या 'चन्द्रकान्ता' वाले तेजसिंह के बटुआ। कभी 'मुकम्मिल आज़ादी' का स्वप्न देखा तो कभी कम्युनिज़्म का तराना छेड़ा। कभी ख़िलाफ़त आन्दोलन में टाँग अड़ाया, तो कभी हिन्दोस्तान में मुस्लिम बादशाहत क़ायम करने में लगे। जिधर की बयार उधर की ओर पीठ!

❀

अङ्गरेज़ों ने अपने दोस्त शाह नादिरख़ाँ को कई करोड़ रुपए उधार दिया है और साथ ही अफ़ग़ानिस्तान में अपनी अमीरी की बुनियाद मज़बूत कर डालने के लिए दस हज़ार राइफ़िलें और पचास हज़ार कारतूस भी बतौर तोहफ़े के भेजा है। और एक हिज़ होलीनेस के दोस्त हैं, हज़रत 'भविष्य' के सम्पादक साहब, जो पूरे बारह रोज़ तक सखी नौकरशाही के मेहमानख़ाने के मज़े लूटते रहे और वहाँ से मुग्दर हिला कर लौटने पर हिज़ होलीनेस के लिए गोला-बारूद भेजना तो दूर रहा, एक पॉवंट बतरने वाली क़ैंची भी न भेजी।

❀

इतना ही नहीं, होली ख़तम हो जाने पर भी बेचारी नौकरशाही और उसकी पुलिस को अँगूठा दिखा दिया। पुलिस ने, सुनते हैं, उस दिन पाख़ाना तक टटोल डाला, परन्तु अन्त में तरसती ही चली गई! इसके बाद १२४ (अ) का फन्दा फेंका तो वह कमबख़्त भी दिन-रात के अन्धाधुन्ध प्रयोग के कारण ऐसा घिस गया था, कि बारह दिन से अधिक ठहर हो न सका। अब बताइए, बेचारी क्या करे?

❀

लेहाज़ा, यार लोगों ने जब देखा कि नैनी से 'नैन-सैन' से बेदाग़ बच आए और मुँह भी मीठा नहीं कराया तो अफ़वाह उड़ा दी कि सरकारी गवाह बन कर छूट आए हैं। आख़िर ये 'बिनु काज दाहिने-बाएँ' वाले हज़रात चूकते कैसे? ऐसे मौक़े पर भी अगर दिल का ग़ुबार न निकालते तो क्या हैज़े से मरते?

❀

ख़ैर, यह अच्छा ही हुआ। अफ़वाह उड़ाने वालों ने अपनी वंश-मर्यादा का परिचय देने के साथ ही सम्पादक जी को भी सावधान कर दिया कि आइन्दे अगर फिर श्रीमती नौकरशाही के दरबार से मेहमानदारी का निमन्त्रण आवे, तो यारों की दावत का बन्दोबस्त अवश्य हो और कुछ न बन पड़े तो 'कोंपर' ही सही; बेचारे उसी को चाट कर सब्र कर लेंगे।

❀

श्रीमती नौकरशाही की एसेम्बली नाम-धारिणी गूदड़ी में भी एक से एक बेशक़ीमती लाल छिपे पड़े हैं। अभी हाल में एक सज्जन ने अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय दिया है। आप बेसरकारी सदस्य हैं, और नाम है, मि० हिचकोट। आप सरकारी घाटे के कारण अत्यन्त दुखी हैं और सलाह दी है कि कृषिजात वस्तुओं तथा हिन्दुओं के यौथ परिवारों पर आय-कर बढ़ाना चाहिए। इसके साथ ही पान और दियासलाई पर भी। निस्सन्देह बेचारा बड़ी दूर की कौड़ी लाया है। जब ऐसे-ऐसे 'दुर्रे बेबहा' मौजूद हैं, सखी को घाटा कैसे रह सकता है?

❀

शिक्षा-विभाग में आश्चर्यजनक उन्नति

[सङ्कलित]

रूस में अनिवार्य शिक्षा-प्रणाली है। वहाँ के शिक्षा-मन्त्री वहाँ की शिक्षा की उन्नति के विषय में कहते हैं :—

"सोवियट रूस की शिक्षा-प्रणाली का प्राथमिक उद्देश्य शिक्षा को ग़रीब और अमीर—सब तक पहुँचाने का है। इस विषय में हम लोगों ने बहुत उन्नति कर दिखाई है, यहाँ तक कि संसार में आजकल कोई भी ऐसा देश नहीं है, जहाँ पर हाईस्कूल तथा साइन्स की संस्थाएँ इतनी संख्या में हों, जितनी कि हमारे यहाँ हैं।

"ज़ार का शासन तो रूस में दारिद्र्य तथा अशिक्षा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं छोड़ गया था। करोड़ों रूसी पैदा होते थे और मर जाते थे, पर उनसे अपनी मातृभाषा का एक अक्षर भी लिखते-पढ़ते न बनता था। रूस में, जो कि संसार का सब से बड़ा देश है, न ट्रेनिङ्ग स्कूल थे, न मेडिकल तथा टेकनिकल कॉलेज ही थे। स्कूल में जाने वाली उमर के आधे से ज़्यादा लड़के अशिक्षा के अन्धकार में सड़ा करते थे।

"सन् १९१७ की राज्यक्रान्ति के बाद शिक्षा तथा सभ्यता की उन्नति पर विशेष करके ध्यान दिया गया। रूस की प्रजा ने अपनी संस्कृति का क्रान्तिमय उत्थान करने का कार्य अपने हाथों में ले लिया और उसे बड़े ही उत्साह के साथ करना शुरू किया। इसीलिए रूस ने सभ्यता तथा शिक्षा में इतनी उन्नति की है, जो कि संसार में कभी भी नहीं देखी गई है।

"अक्टूबर की राज्यक्रान्ति के पहले ही साल से प्राथमिक पाठशालाएँ रूस के कोने-कोने में फैल गईं। गृह-युद्ध तथा राजकार्यों में अन्य देशों के विघ्न डालने के कारण यह उन्नति जितनी होनी चाहिए, नहीं हो सकी। पर सोवियट सेना की विजय होने के पश्चात यह कार्य और भी वेग के साथ शुरू हो गया, और विद्यार्थियों की संख्या बड़े वेग से बढ़ने लगी। अन्त में १९२९ में विद्यार्थियों की संख्या १½ करोड़ तक पहुँच गई। स्कूल जाने वाली उमर के लड़कों की औसत, जो कि पचास फ़ीसदी थी, १९२९-३० में ९२ फ़ीसदी तक पहुँच गई।

"यह आश्चर्यजनक उन्नति हमें हमारी व्यावसायिक तथा औद्योगिक उन्नति के कारण करनी पड़ी है। हर एक नया कारख़ाना, हर एक नया फ़ार्म अब सोवियट गवर्नमेण्ट ही बनाती है। इन सब में हज़ारों की संख्या में शिक्षित तथा होशियार मज़दूरों की आवश्यकता पड़ती है। शिक्षा-विभाग का ख़र्च पुराने ज़ार की गवर्नमेण्ट के के शिक्षा-ख़र्च से तिगुना हो गया है। और अगले साल तक वह पुराने ख़र्च से सात गुना हो जावेगा।

"विद्यार्थियों के अतिरिक्त इन लोगों को शिक्षा के लिए हम लोग एक बड़ी संख्या में अध्यापक तैयार कर रहे हैं। हम लोगों के स्कूल बिलकुल वैज्ञानिक तर्ज़ के पर हैं। और उनमें धार्मिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा की बू नहीं है।

"हमारी शिक्षा केवल अनिवार्य ही नहीं, पर रूसियों के लिए मुफ़्त है। इसके अतिरिक्त गवर्नमेण्ट की तरफ़ से विद्यार्थियों को पुस्तकें, काग़ज़, क़लम इत्यादि पढ़ने-लिखने की चीज़ें भी मुफ़्त दी जाती हैं। नाश्ता तथा सवारी का इन्तज़ाम भी गवर्नमेण्ट ही करती है।

"प्राथमिक पाठशालाओं के लिए आजकल हमारे यहाँ तीन लाख मास्टर हैं और वे यह काम केवल तनख़्वाह के लिए नहीं, परन्तु एक नए सोवियट समाज की रचना करने की इच्छा से करते हैं। स्कूल में केवल रूसी भाषा ही नहीं पढ़ाई जाती, जैसा कि ज़ार के ज़माने में होता था। सब अन्तर्गत प्रान्तों की ३९ भाषाएँ पढ़ाई जाती हैं। और मास्को के एक ख़ास छापेख़ाने में अल्प संख्यक जातियों के लिए उनकी भाषाओं में पुस्तकें छापी जाती हैं। कई कॉलेजों में जातियों के मास्टरों को शिक्षा दी जाती है।

"हमारे उन्नति-मार्ग में कई विघ्न-बाधाएँ हैं, पर हमें पूर्ण आशा है कि हम अपने असंख्य मज़दूर तथा किसानों की सहायता तथा सहानुभूति से अपने कार्य में शीघ्र ही सफलता प्राप्त कर सकेंगे।"

* * *

समाज की

पाक-चन्द्रिका
चाँद कार्यालय, इलाहाबाद

इस अङ्क का मूल्य ६ आना

कॉङ्ग्रेस-अङ्क

श्री० रामरखसिंह सहगल

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ... ... ६) रु०
छः माही चन्दा ... ५) रु०
तिमाही चन्दा ... ... ३) रु०
एक प्रति का मूल्य ... ≡)
Annas Three Per Copy

भविष्य

सचित्र राष्ट्रीय साप्ताहिक

आध्यात्मिक स्वराज्य हमारा ध्येय, सत्य हमारा साधन और प्रेम हमारी प्रणाली है। जब तक इस पावन अनुष्ठान में हम अविचल हैं, तब तक हमें इसका भय नहीं, कि हमारे विरोधियों की संख्या और शक्ति कितनी है।

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़ी कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़्ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए!

[illegible] | [illegible] | संख्या २, पूर्ण संख्या २६

नए राष्ट्रपति सर्दार वल्लभभाई पटेल

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' (हिन्दी अथवा उर्दू-संस्करण) का प्रचार कर, वे संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एक मात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३, | इलाहाबाद—सोमवार, ३० मार्च; १९३१ | संख्या ५, पूर्ण संख्या २६

राष्ट्रपति सर्दार पटेल का भाषण

बहिनो और भाइयो !

मैं अपने संक्षिप्त भाषण के प्रारम्भ में पण्डित मोतीलाल जी की मृत्यु पर श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, पण्डित जवाहरलाल और अन्य कुटुम्बियों के दुःख में हार्दिक सहानुभूति प्रकट करता हूँ। मैं जानता हूँ, कि समस्त राष्ट्र की सहानुभूति के कारण यह दुःख बहुत कुछ कम हो गया है। देश की इस भीषण परिस्थिति में उनकी मृत्यु होने से उस पर भयङ्कर वज्रपात हुआ है। पण्डित मोतीलाल की सहायता की उस समय सब से अधिक आवश्यकता प्रतीत हुई थी, जब महात्मा गाँधी लॉर्ड इर्विन से सन्धि की बातचीत कर रहे थे। मौलाना मुहम्मद अली की मृत्यु के शोक के अभी हमारे आँसू सूखने भी न पाए थे, कि राष्ट्र पर यह एक नया प्रहार हो गया। यद्यपि दुर्भाग्यवश मौलाना मुहम्मद अली के और हमारे विचारों में मतभेद था, परन्तु हम उनकी वीरता, देश-भक्ति और निर्भीकता को कभी विस्मृत नहीं कर सकते। उन्होंने अपने हार्दिक विचारों को कभी छिपाने का प्रयत्न नहीं किया। मैं बेगम मुहम्मद अली, मौलाना शौकत अली और उनके समस्त कुटुम्ब के साथ अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रदर्शित करता हूँ। इन महापुरुषों के अतिरिक्त मैं उन अज्ञात वीरों की मृत्यु पर भी समवेदना प्रदर्शित करता हूँ, जिन्होंने गत बारह महीनों में सत्याग्रह आन्दोलन में बिना किसी प्रसिद्धि की इच्छा से आत्म-बलिदान किया है। ईश्वर उनकी आत्माओं को शान्ति दे और उनका वह आत्म-बलिदान इस विकट युद्ध में हमें अधिकाधिक आत्मोत्सर्ग के लिए प्रोत्साहित करे।

विप्लववादियों को फाँसी

सरदार भगतसिंह, श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु की फाँसी से समस्त देश में असन्तोष की आग फैल गई है। मैं उनकी कार्य-पद्धति से सहमत नहीं हो सकता और इसमें सन्देह नहीं कि राजनैतिक हत्या उतनी ही अवाञ्छनीय है, जितनी एक साधारण हत्या। परन्तु सर्दार भगतसिंह और उनके साथियों के अनन्य देश-प्रेम, उनके अतुल त्याग साहस और निर्भीकता की मैं स्तुति किए बिना नहीं रह सकता। एक विदेशी गवर्नमेण्ट की निष्ठुरता का परिचय उतना अधिक और कभी नहीं मिला, जितना इन तीन वीरों को फाँसी पर लटकाते समय। समस्त राष्ट्र ने एक स्वर से उनकी फाँसी का विरोध किया और उनकी फाँसी को सज़ा रद्द करने की प्रार्थना की, परन्तु सब प्रार्थनाएँ निष्ठुरतापूर्वक ठुकरा दी गईं; परन्तु हमें इस फाँसी से आवेश में आकर अपने पथ से भ्रष्ट न हो जाना चाहिए। पशुबल के इस नृशंस प्रदर्शन से हृदयहीन शासन-विधान की ओर हमारी घृणा बढ़ती जा रही है; और यदि हम अपने निश्चित पथ पर आरूढ़ रहेंगे तो उससे हमारी शक्ति की वृद्धि होगी और हमें अपने उद्देश्य की प्राप्ति में भी सफलता प्राप्त होगी। ईश्वर इन वीर देश-भक्तों की आत्माओं को शान्ति दें और उनके कुटुम्बियों को इस बात से सन्तोष मिले, कि समस्त राष्ट्र ने उनकी मृत्यु पर ख़ून के आँसू बहाए हैं।

आत्म निवेदन

आपने एक सीधे-सादे किसान को जिस प्रतिष्ठित पद पर आरूढ़ किया है, उस पर किसी भी देशभक्त को अभिमान हो सकता है। मैं यह अच्छी तरह से जानता हूँ कि आपने मुझे यह सम्मान एक तुच्छ सेवक की हैसियत से नहीं दिया, बल्कि इस ज़िम्मेदारी को सौंप कर आप ने गुजरात के आश्चर्य-जनक बलिदान का स्वागत किया है। गत बारह महीनों में जो अपूर्व राष्ट्रीय जागृति हुई है, उसका श्रेय यद्यपि सभी प्रान्तों को समान रूप से है, परन्तु आपने अपनी उदारता से उसका मुकुट गुजरात को पहिना दिया है। हमें इसके लिए ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिए, कि यह राष्ट्रीय जागृति आत्म-शुद्धि के रूप में अवतरित हुई है।

भूतपूर्व राष्ट्रपति पण्डित जवाहरलाल नेहरू

युद्ध के प्राङ्गण में

यद्यपि आन्दोलन में भूलें हुई हैं, परन्तु इसमें किञ्चित सन्देह नहीं, कि भारत ने संसार के सम्मुख इस बात का ज्वलन्त उदाहरण रख दिया है, कि सार्वजनिक अहिंसात्मक आन्दोलन न तो केवल मनुष्य की महत्वाकांक्षा है और न स्वप्न; उसका निर्माण ऐसे दृढ़ सिद्धान्तों पर हुआ है, जिनमें मनुष्य मात्र का उन दुःखों से निवारण करने की शक्ति है, जो हिंसात्मक प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न हो गए हैं। हमारे अहिंसात्मक आन्दोलन की सफलता का सब से बड़ा सबूत किसानों का सङ्गठन है। लोगों का विश्वास था कि उन्हें अहिंसात्मक युद्ध के लिए सङ्गठित करना कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव है; परन्तु इस युद्ध में उन्होंने जो वीरता दिखाई है वह किसी से छिपी नहीं है। किसानों के अतिरिक्त स्त्रियों और बच्चों ने भी इस युद्ध में बड़ी वीरतापूर्वक भाग लिया है। युद्ध का बिगुल बजते ही वे युद्ध में कूद पड़े और उसमें उन्होंने जो कार्य किया, उसका इस अवसर पर अनुमान लगाना सम्भव नहीं है। परन्तु यह कहना अत्युक्ति न होगा, कि उन्होंने अन्तिम दिनों में युद्ध को सजीव अहिंसात्मक बनाए रखने की बहुत चेष्टा की है। यदि अहिंसा के सिद्धान्तों के अनुसार इस आन्दोलन पर विचार किया जाय तो हमारा युद्ध विश्व की शान्ति के लिए है और संसार ने—विशेषतः अमेरिका ने उसमें अपनी सहानुभूति प्रदर्शित की है और उस सहानुभूति से हमें सन्तोष और शक्ति मिली है।

कॉङ्ग्रेस और गोलमेज़ परिषद

हाल ही में दिल्ली में जो सन्धि हुई है, उसमें हमें अपने राष्ट्रीय जीवन के इस वीर युग पर अधिक प्रकाश डालने की आवश्यकता नहीं रह जाती। आपकी कार्यकारिणी समिति ने आपकी स्वीकृति की आशा से सन्धि की थी और अब आप उसे स्वीकृत करने के लिए यहाँ एकत्रित हुए हैं। आपको उसे अस्वीकृत करने तथा वर्किङ्ग-कमिटी पर अविश्वास का प्रस्ताव पास करने का अधिकार है, परन्तु मुझे इसमें किञ्चित सन्देह नहीं, कि सन्धि दोनों दलों के हित की कामना से की गई है और आप उसे स्वीकृत करेंगे। यदि हम सन्धि स्वीकार न करते तो वह हमारी भूल होती और हमारे गत एक वर्ष के आत्म-बलिदान का कोई उपयोग न होता। हम सत्याग्रही हैं और इस हैसियत से हमें सदैव सन्धि के लिए तैयार रहना चाहिए। और इसीलिए जब हमारे सम्मुख सन्धि का अवसर आया तब हमने गोलमेज़ परिषद में ब्रिटिश प्रतिनिधियों के सम्मुख पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव रखने की आशा से तथा प्रधान मन्त्री, वायसराय और कुछ सुप्रसिद्ध भारतीय नेताओं की प्रार्थना से हमारी वर्किङ्ग कमिटी ने इस बात का विचार किया कि यदि कॉङ्ग्रेस को देश के स्वतन्त्र अधिकारों पर ज़ोर देने की स्वतन्त्रता दी जायगी तो निमन्त्रण मिलने पर कॉङ्ग्रेस गोलमेज़ परिषद में भाग लेगी और भारत के लिए उपयुक्त शासन-विधान का निर्णय करेगी। यदि हमें कॉन्फ्रेन्स में सफलता न मिली, तो अपना पुराना आत्म-

बलिदान का मार्ग हमें फिर से ग्रहण करना पड़ेगा। और फिर संसार की कोई शक्ति हमें कलङ्क का टीका न लगा सकेगी। हम अपने इच्छानुसार पूर्ण स्वराज्य लेंगे और फ़ौज, विदेशी नीति, अर्थ-विभाग के पूर्ण अधिकारों पर ज़ोर देंगे और यदि कोई प्रतिबन्ध रहेगा तो वह केवल भारत की हित-कामना के लिए होगा। जब सन्धि के द्वारा शक्ति दूसरे के हाथों में सौंपी जाती है, तब उस दल के हित के लिए प्रतिबन्धों की आवश्यकता होती है। भारत की रूढ़ियों की ग़ुलामी के कारण उसे बाहरी सहायता की आवश्यकता हो गई है। यदि ब्रिटेन हमें सहायता देने के लिए तैयार होगा, तो हम उसे सहर्ष स्वीकार करेंगे। हमें अपनी फ़ौज को दृढ़ बनाने की आवश्यकता है और हमें उसमें अङ्गरेज़ों की सहायता लेने में कोई विरोध नहीं है। मैंने उदाहरणार्थ केवल एक का उल्लेख किया है। इस प्रकार फ़ौज में कुछ ब्रिटिश ऑफ़िसर और कुछ ब्रिटिश सैनिक रक्खे जा सकते हैं, परन्तु हम अपनी फ़ौज का शासन अङ्गरेज़ों के हाथों में नहीं सौंप सकते। हम कृतज्ञतापूर्वक उनका उपदेश ग्रहण कर सकते हैं, परन्तु उनका नेतृत्व कभी स्वीकृत नहीं कर सकते। वास्तव में बात यह है कि शान्ति-रक्षा के नाम पर ब्रिटिश फ़ौज भारत पर अपना प्रभुत्व स्थापित रखने के लिए यहाँ रक्खी गई है। स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है, कि ब्रिटिश फ़ौज यहाँ अतिरिक्त विद्रोह के समय अङ्गरेज़ों के अधिकारों और अङ्गरेज़ स्त्री-पुरुषों की रक्षा के लिए रक्खी गई है। मुझे ऐसी एक भी घटना स्मरण नहीं आती, जहाँ विदेशियों के आक्रमण से भारतीयों की रक्षा के लिए भारतीय फ़ौज का उपयोग किया गया हो। सीमा प्रान्त पर अफ़ग़ानी हमले हुए हैं और ब्रिटिश ऐतिहासिज्ञों ने उनसे हमें यह पाठ के पढ़ाया है कि वे युद्ध हमले थे। ब्रिटिश ऐतिहासिज्ञों की इस धमकी से हमें भयभीत न हो जाना चाहिए। हमें फ़ौज की आवश्यकता अवश्य है, परन्तु ऐसी फ़ौज की आवश्यकता नहीं, जिसका ख़र्च हमारा रक्त चूस कर चलाया जाता हो। यदि कॉङ्ग्रेस ने अपने अधिकार प्राप्त कर लिए तो फ़ौज में बहुत कमी होने की सम्भावना है।

अर्थ-व्यवस्था

फ़ौज की तरह हम अर्थ-विभाग की व्यवस्था भी ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के हाथों में नहीं सौंप सकते। यदि राष्ट्र के हाथों में अर्थ-व्यवस्था नहीं रहेगी तो वह कभी फल-फूल नहीं सकता।

हमसे यह भी कहा जाता है, कि यदि लम्बे-लम्बे वेतन वाले ब्रिटिश सिविल ऑफ़िसर भारत में नियुक्त न किए जायँगे, तो शासन सुसङ्गठित न हो सकेगा और उसका नैतिक पतन भी हो जायगा। कॉङ्ग्रेस ने अपने कुछ ही वर्षों के सङ्गठन में अपने अवैतनिक या कम वेतन वाले कार्यकर्त्ताओं के द्वारा जिस शासन-योग्यता का परिचय दिया है, उससे उनकी योग्यता स्पष्ट हो जाती है। शासन को इस नैतिक पतन से बचाने के लिए हमारे धन का जिस प्रकार अपव्यय किया जाता है, वह ग़रीब जनता के लिए सह्य नहीं है इसलिए यदि भारत अपना उद्धार करना चाहेगा तो उसे बड़े-बड़े वेतनभोगियों के वेतनों में बहुत न्यूनता करनी पड़ेगी।

राष्ट्रीय ऋण

राष्ट्रीय ऋण के सम्बन्ध में हम पर बहुत से दोष आरोपित किए जाते हैं ये दोष अन्याय-सङ्गत हैं। हमने ऋण के सम्बन्ध में कभी कोई विरोध नहीं किया। हाँ! हम यह अवश्य चाहते हैं, कि उस ऋण की निरपेक्ष जाँच हो जाय और उससे इस बात का निर्णय कर लिया जाय कि इस देश पर सच्चा ऋण कितना है।

पूर्ण-स्वतन्त्रता

लाहौर कॉङ्ग्रेस स्वतन्त्रता का जो प्रस्ताव पास कर चुकी है, हम उससे एक इञ्च भी पीछे नहीं हट सकते। परन्तु इस स्वतन्त्रता का यह अर्थ नहीं है कि हम ब्रिटेन या किसी अन्य स्वतन्त्र राष्ट्र से सम्बन्ध ही न रक्खें। इसलिए ब्रिटेन और भारत के बीच में समानता का सम्बन्ध रहना कुछ असम्भव नहीं है। हम अपने आपस के लाभ के लिए यह स्थापित कर सकते हैं और अपनी इच्छानुसार उसे भङ्ग भी कर सकते हैं। यदि परस्पर सन्धि से भारत स्वतन्त्रता प्राप्त करेगा तो उसे ब्रिटेन से सम्बन्ध रखना पड़ेगा। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि देश में एक ऐसा भी दल है, जो इस बात पर विश्वास करता है कि यदि भारत और ब्रिटेन में सम्बन्ध रहे तो उसकी अवधि निश्चित हो जाना चाहिए। मेरे विचार उस दल से भिन्न हैं। मेरी सम्मति में ऐसा करना हमारी कमज़ोरी की निशानी है।

संयुक्त शासन

भारत के लिए भविष्य में संयुक्त शासन-प्रणाली की रचना करना, इस समय जितना आकर्षक प्रतीत होता है, उसमें उतनी ही अधिक कठिनाइयाँ हैं। राजा-महाराजा अपने शासन की बागडोर ढीली करने के लिए शीघ्र ही तैयार न होंगे; परन्तु यदि वे अपनी प्रजा के लिए शासनाधिकार देने के लिए तैयार हो जायँ तो उससे भारत को बहुत लाभ होगा। उनके सहयोग से भारत में जन-सत्तात्मक शासन प्रणाली की नींव डालने में कोई बाधा उपस्थित नहीं हो सकती। मुझे आशा है, कि राजा लोग इस शासन-विधान की रचना में रोड़े न अटकाएँगे और उसमें पूर्ण सहयोग देंगे। उनकी जनता को भी उतने ही अधिकार दिए जाने चाहिएँ, जितने बाक़ी भारत के निवासियों को हों। संयुक्त भारत के निवासियों को कुछ समानाधिकार दिए जाने चाहिएँ और यदि उन्हें समानाधिकार हों तो उन अधिकारों की रक्षा के लिए न्यायालय भी एक ही हो। यह कहना अनुचित न होगा कि देशी रियासतों के प्रतिनिधियों का संयुक्त असेम्बली में निर्वाचित होना अत्यन्तावश्यक है।

ब्रह्मा की समस्या

गवर्नमेण्ट की ख़बरें रोक लेने की नीति के कारण हमें वहाँ की सच्ची परिस्थिति का हाल मालूम नहीं होने पाता। इस समस्या का निर्णय कि ब्रह्मा भारत के साथ मिल कर रहेगा या अलग—वही स्वयं कर सकता है; परन्तु हमारा यह कर्तव्य है कि हम उसकी समस्या के सब पहलुओं पर विचार करें। ब्रह्मा में दो दल हैं, एक ब्रह्मा को भारत के साथ रखने के पक्ष में है और दूसरा विपक्ष में। और यदि विपक्षी दल को अपनी आवाज़ उठाने का अधिकार है, तो दूसरे दल को भी अपनी आवाज़ उठाने में स्वतन्त्रता देना आवश्यक है। इसलिए कॉङ्ग्रेस को जो यह सन्देश भेजा गया है कि ब्रह्मा को भारत के साथ मिलाए रखने वाले पक्ष को अपनी सम्मति प्रकट करने की स्वतन्त्रता नहीं है, उसका विरोध करना चाहिए। इस सम्बन्ध में जो यह प्रस्ताव उपस्थित किया गया है, कि ब्रह्मा की समस्या का निराकरण उसकी जनता के ऊपर छोड़ दिया जाय, उससे मैं पूर्णतयः सहमत हूँ।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

परन्तु अन्य सभी समस्याओं के पहले हिन्दू-मुस्लिम समस्या का सुलझाना अत्यन्तावश्यक है। कॉङ्ग्रेस ने अपनी परिस्थिति लाहौर कॉङ्ग्रेस में बिल्कुल स्पष्ट कर दी थी। इस सम्बन्ध में उसने निम्न प्रस्ताव पास किया था:—

"नेहरू रिपोर्ट का निर्णय अस्वीकृत हो जाने के कारण जातीय मामले में कॉङ्ग्रेस की सम्मति देना अनावश्यक समझती है। क्योंकि कॉङ्ग्रेस का विश्वास है कि स्वतन्त्र भारत में यह समस्या राष्ट्रीय ढङ्ग से स्वयं सुलझ जावेगी। परन्तु चूँकि मुसलमान सिक्खों और अन्य अल्प-संख्यक जातियों ने नेहरू-रिपोर्ट के निर्णय को अस्वीकृत कर दिया है; इसलिए कॉङ्ग्रेस भारत के भावी विधान में उस समय तक कोई निर्णय स्वीकृत नहीं करेगी, जब तक वे जातियाँ उसे मञ्जूर न कर लें।"

इस प्रस्ताव के अनुसार कॉङ्ग्रेस किसी शासन-विधान की रचना में उस समय तक भाग नहीं ले सकती, जब तक इन अल्प-संख्यक जातियों की समस्या न सुलझ जाय। एक हिन्दू की हैसियत से, अपने भूतपूर्व सहयोगियों के निर्णय के अनुसार मैं इन अल्प-संख्यक जातियों को एक काग़ज़ और स्वदेशी फ़ाउण्टेनपेन दूँगा और उस पर उनसे अपनी शर्तें लिखने का आदेश दूँगा; और बिना किसी हिचकिचाहट के उस पर अपने दस्तख़त कर दूँगा। मैं जानता हूँ कि समस्या सुलझाने के लिए यह सब से सरल उपाय है और उसके लिए हिन्दुओं में साहस की आवश्यकता है। वास्तव में हमें काग़ज़ पर अङ्कित एकता की नहीं, बल्कि हार्दिक एकता की आवश्यकता है। और यह हार्दिक एकता उसी समय प्राप्त हो सकती है, जब हिन्दू अपना समस्त साहस एकत्र कर अल्प-संख्यक जातियों को उनकी माँगें समर्पित करने के लिए तैयार हो जायँ। एकता चाहे उपर्युक्त रीति से प्राप्त हो और चाहे किसी अन्य रीति से, परन्तु यह बात दिन प्रति दिन स्पष्ट होती जाती है कि जब तक इस समस्या का निर्णय न हो जाय, तब तक किसी कॉन्फ़्रेन्स में भाग लेना निरर्थक है। कॉन्फ़्रेन्स ब्रिटेन और हमारे बीच में समझौता कर सकती है। वह हमें राजाओं के निकट ला सकती है, परन्तु हममें एकता नहीं ला सकती। यह एकता हमें अपने में स्वयं लानी पड़ेगी। कॉङ्ग्रेस को भी उसका लाभ करने में कोई यत्न न उठा रखना चाहिए।

विदेशी कपड़े का बहिष्कार

यह सब को स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए, कि कॉङ्ग्रेस जितनी शक्ति प्राप्त कर सकेगी उतनी ही पूर्ण स्वराज्य ध्येय की प्राप्ति में उपयोगिनी सिद्ध होगी। गत बारह महीनों में उसने निश्चय ही बहुत शक्ति प्राप्त की है और उसे वे ही समझ सकते हैं, जो समय के साथ चल रहे हैं। परन्तु वह पर्याप्त नहीं है और जल्दबाज़ी और घमण्ड से जल्दी खो भी जा सकती है। जो अपनी पूँजी पर गुज़र करता है वह फ़िज़ूलख़र्च कहा जा सकता है। इसलिए हमको और भी अधिक शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। उसे प्राप्त करने का एक उपाय है इस समझौते को अक्षरशः पूरा करना और दूसरा है प्राप्त-शक्ति को दृढ़तापूर्वक अपने में रखना। इसलिए मैं अपने कार्य के उस अङ्ग के विषय में कुछ पंक्तियाँ कहना चाहता हूँ। हम विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार-सम्बन्धी कार्य बहुत-कुछ कर चुके हैं। वह उचित है और हमारा कर्तव्य है। बिना इसके भारतवर्ष की दरिद्र जनता भूखों मरती रहेगी। क्योंकि यदि सस्ता विदेशी कपड़ा भारत के ग्रामों में आता ही रहा, तो चरख़े वालों का रोज़गार नहीं चल सकता। अतएव विदेशी कपड़े को इस देश से निकाल बाहर करना चाहिए। यदि वह मुफ़्त भी मिले तो भी मँहगा है। भारतवर्ष के लाखों आदमी इसलिए नहीं भूखों मरते कि देश में धन नहीं है, वरन् इसलिए कि उन्हें काम नहीं मिलता, वे इसलिए भूखों मरते हैं कि उनके गाँवों में उनको सरलतापूर्वक फ़सल के बाद कोई काम ही नहीं मिलता। देश को इस बेकारी के रोग से छुड़ाने के लिए लगातार आन्दोलन की आवश्य-

स्वर्गीय श्री० राजगुरु

स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह

स्वर्गीय श्री० सुखदेव

कता है। कोई उपयुक्त काम न होने के कारण बेकारी हमारे ग्राम निवासियों की रग-रग में समा गई है। इसके लिए सब से अच्छी युक्ति है, अनावश्यक होने पर भी स्वयं चर्खा कातना और खादी पहनना।

भारतीय मिलों का कर्तव्य

अखिल भारतवर्षीय चरखा-सङ्घ ने बहुत महत्त्वपूर्ण काम किया है, परन्तु कातने और खद्दर का वायु-मण्डल पैदा करना कॉङ्ग्रेस का काम है। मेरी समझ में सब से अच्छा और प्रभावशाली बहिष्कार का आन्दोलन है। ऐसा इशारा किया जाता है, कि जो तर्क विदेशी वस्त्र के विषय में लागू होता है वही स्वदेशी मिल के कपड़े के लिए भी लागू होता है। यह कुछ हद तक ठीक है, परन्तु जितने कपड़े की भारतवर्ष में खपत है, उतना मिलों से नहीं बनता। बहुत वर्षों तक वे हमको उतना कपड़ा देती रहेंगी, जितने की हमें हाथ के कते-बुने कपड़े के अतिरिक्त आवश्यकता होगी। परन्तु यदि वे खद्दर के साथ प्रतिद्वन्द्विता करेंगी, यदि उनका माल खद्दर के विरुद्ध अनुचित उपायों से बेचा जायगा, तो वे भी मार्ग-कण्टक ही सिद्ध होंगी। सौभाग्य से बहुत सी मिलें कॉङ्ग्रेस के साथ मिल कर काम कर रही हैं और उनकी वृत्ति देश-भक्तिपूर्ण है। उनके व्यापारी खद्दर के गुणों को समझ रहे हैं। वे समझ रहे हैं, कि उससे लक्ष-लक्ष ग्रामीण जनता को क्या लाभ हो रहा है। परन्तु मैं निश्चयपूर्वक कहता हूँ, कि यदि खद्दर के व्यापारी देश-भक्ति का लिहाज़ न रखते हुए खद्दर को सहायता पहुँचाने के बदले, उसे हानि पहुँचाने का प्रयत्न करेंगे, तो उनको वैसे ही विरोधभाव का सामना करना पड़ेगा, जैसा विदेशी वस्त्र के व्यापारियों को करना पड़ता है। विदेशी वस्त्र के व्यापारियों को यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि विदेशी वस्त्र-बहिष्कार राजनैतिक-शस्त्र रूप से नहीं है, वरन् एक सामाजिक और आर्थिक उपाय के रूप में सर्वदा व्याप्त रहने के उद्देश्य से इस आन्दोलन का प्रादुर्भाव हुआ है। यदि ये व्यापारी भविष्य का ध्यान रक्खें तो इन्हें जनता के हित की दृष्टि से विदेशी वस्त्र का व्यापार छोड़ देना चाहिए। उनको सहायता पहुँचाने के लिए सब कुछ किया जा रहा है, परन्तु उनके द्वारा बहुत अधिक त्याग किया जाना आवश्यक है।

विदेशी व्यापारियों का कर्तव्य

हम आशा करते हैं कि अङ्गरेज़, जापानी और अन्य देशीय विदेशी वस्त्र के व्यापारी कॉङ्ग्रेस की इस नीति का कोई बुरा अर्थ न लगावेंगे। यदि वे भारतवर्ष में अपने वस्त्रों का व्यापार न करके, भारतवर्ष की सहायता करेंगे तो उनको भारतवर्ष में अन्य वस्तुएँ विक्रय करने को मिलेंगी और इसके उद्योग भी करने को मिलेंगे।

पिकेटिङ्ग

इस बात से मेरा ध्यान पिकेटिङ्ग की ओर जाता है। यह न त्यागी गई है और न त्यागी जा सकती है। मैं वहाँ समझौते का वाक्य उद्धृत करता हूँ "पिकेटिङ्ग शान्तिपूर्ण होगी। अशान्त विरोध, उत्तेजनापूर्ण नीति, बलपूर्वक रोका आदि बातें न होंगी और साधारण क़ानून को भङ्ग करने वाली कोई बात न होगी और यदि किसी स्थान पर इनमें से कोई बात की जायगी, तो वहाँ पिकेटिङ्ग बन्द कर दी जायगी" पिकेटिङ्ग एक साधारण क़ानूनी अधिकार है और निर्धारित सीमा के भीतर वह केवल क़ानूनन ही जायज़ नहीं है, वरन् बहुत अधिक शिक्षात्मक भी है।

स्त्रियों का कर्तव्य

उसका काम नम्र प्रार्थना द्वारा समझाना है, न कि विरोध तथा स्वतन्त्रता का हिंसात्मक अवरोध। मैं हिंसात्मक शब्द का प्रयोग समझ-सोच कर कर रहा हूँ। सार्वजनिक मत की अवरोधात्मक शक्ति सदैव रहेगी। वह सार्वजनिक उन्नति करने वाली और स्वतन्त्र भाव की वृद्धि करने वाली है। अहिंसात्मक पिकेटिङ्ग सार्वजनिक मत पैदा करने वाली वस्तु है। वह ऐसा वायु-मण्डल ला देती है जो निर्बाध होता है। यह स्त्रियों के द्वारा बड़ी उत्तमतापूर्वक व्यवहार में लाई जा सकती है। इसलिए मैं आशा करता हूँ, कि भारतीय स्त्रियों ने जिस महान कार्य का आरम्भ किया है, उसे वे करती जायँगी। इसके लिए उनके प्रति राष्ट्र अत्यन्त कृतज्ञ होगा और लाखों भूखों मरने वाले उन्हें आशीर्वाद देंगे।

ब्रिटिश वस्तुओं का बहिष्कार

इसके बाद मैं ब्रिटिश माल के बहिष्कार के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ। यह विचार उतने ही दिनों से चला आ रहा है, जितने दिनों से कॉङ्ग्रेस चली आ रही है। यह हमें भली-भाँति ज्ञात है कि गाँधी जी के राजनैतिक क्षेत्र में आने के पश्चात ब्रिटिश माल के बहिष्कार के बदले विदेशी वस्त्र का बहिष्कार आरम्भ हुआ, (केवल ब्रिटिश वस्त्र का नहीं) उन्होंने उसे आर्थिक और सामाजिक उन्नति के भाव से किया। परन्तु ब्रिटिश माल का बहिष्कार एक अतिरिक्त-राजनैतिक शस्त्र है। गत युद्ध की आँधी में इसका महत्त्वपूर्ण व्यवहार हुआ। अब कम से कम कुछ दिन के लिए समझौता हो गया है और हम विचार-विनिमय और सभाओं द्वारा अपने उद्देश्य की प्राप्ति करना चाहते हैं। अतएव हमको अब राजनैतिक शस्त्र का उपयोग न करना चाहिए। जब तक हम अङ्गरेज़ों को इस प्रकार हानि पहुँचाते जावेंगे, तब तक उनसे मित्रतापूर्वक बात और विचार नहीं कर सकेंगे। अतएव हमको कम से कम इस समय तो ब्रिटिश माल के बहिष्कार-शस्त्र का प्रयोग न करना चाहिए। हमको स्वदेशी पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए, क्योंकि वह सब राष्ट्रों का जन्म-सिद्ध अधिकार है। जो कुछ हम अपने देश में पैदा कर सकते हैं, उसको अवश्य उत्साहित करना चाहिए। उसको छोड़ कर हमें विदेशी नहीं ग्रहण करना चाहिए, चाहे वह ब्रिटिश हो चाहे

कॉङ्ग्रेस का शोक-प्रदर्शन

कॉङ्ग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने २७वीं मार्च को सर्दार भगतसिंह और उनके साथियों की फाँसी के सम्बन्ध में निम्न-लिखित प्रस्ताव पास किया है। प्रस्तावक स्वयं राष्ट्रपति थे।

कॉङ्ग्रेस, यद्यपि किसी भी रूप में राजनैतिक हिंसा के पक्ष में नहीं है, परन्तु वह सर्दार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० सुखदेव की वीरता और उनके आत्म-बलिदान की प्रशंसा करती है और उनके सन्तप्त कुटुम्बियों के साथ अपनी सहानुभूति प्रकट करती है। उसकी राय में ये तीनों फाँसियाँ प्रतिहिंसा के भावों से प्रेरित होकर लगाई गई हैं और उनकी फाँसी को रद्द करने की राष्ट्रीय माँग की अवहेलना की गई है। कॉङ्ग्रेस की यह भी राय है कि गवर्नमेण्ट ने दो राष्ट्रों में मैत्री भाव उत्पन्न करने और विप्लववादियों की सहानुभूति प्राप्त करने का स्वर्ण-अवसर खो दिया है।

अन्य देश का। यह जातीय उन्नति के लिए आवश्यक है। अतएव हमें देशी बीमा कम्पनियों, बैङ्कों, जहाज़ी कम्पनियों और इसी प्रकार की अन्य कम्पनियों के पक्ष में भारी आन्दोलन करके उन्हें उत्साहित करना चाहिए। यह कह कर, कि वे निम्न कोटि की हैं या महँगी हैं, हमें उनका तिरस्कार नहीं करना चाहिए। केवल सहायतापूर्ण समालोचना और व्यावहारिक सहायता से हम उन्हें सस्ते और उच्चकोटि के बना सकते हैं।

समानाधिकार का प्रश्न

समान स्वत्व के बारे में बहुत सी असंगत बातें कही जाती हैं, परन्तु बली और कमज़ोर, राक्षस और बौने, हाथी और चींटी में समान स्वत्व की बात ही क्या?

यदि अपनी अपार सम्पत्ति और सामान लेकर लॉर्ड इञ्चकेप स्वर्गीय सेठ नरोत्तम मुरारजी के साथ समान स्वत्व चाहें, तो वह समान स्वत्व का परिहास मात्र होगा। लॉर्ड इञ्चकेप और सेठ नरोत्तम के उत्तराधिकारियों में समान स्वत्व की बात तो तभी हो सकती है, जब सेठ नरोत्तम के उत्तराधिकारी धन-सम्पत्ति और सामान में उनके बराबरी पर पहुँच जायँ। अत्यन्त असमानों के बीच में समान स्वत्व की बात करना तो बहुत ग़रीब से बड़े अमीर की बराबरी करना है। इसी प्रकार उनके साथ, जिन्हें कुछ लोग उच्च 'जातियाँ' कहते हैं उनसे 'नीच जातियों' के समान स्वत्व की बात करना दोनों की बराबरी करना है और नीच जातियों का अपना बड़प्पन छोड़ कर, अपने को नीचे झुकना है। अङ्गरेज़ों की तुलना में हम लोगों की नीच जातियों से भी गई-बीती अवस्था है। अतएव भारतीय उद्योग-धन्धों की रक्षा करना और अङ्गरेज़ी या विदेशी का त्याग करना हम लोगों के राष्ट्रीय अस्तित्व के लिए आवश्यक है। यह रक्षा संयुक्त शासन की अवस्था में भी रहनी चाहिए। ब्रिटिश संयुक्त राज्य के भीतर भी रक्षा की बात कोई बुरी नहीं है। उपनिवेशों में उनकी उन्नति के लिहाज़ से उसका व्यवहार है।

नशीली वस्तुओं का त्याग

जैसे विदेशी वस्त्र का बहिष्कार लाखों भूखों मरने वालों के लिए आर्थिक आवश्यकता है उसी प्रकार राष्ट्र की नैतिक उन्नति के लिए नशीली वस्तुओं का बहिष्कार भी आवश्यक है। नशीली वस्तुओं के बिल्कुल त्याग करने के विचार का आविर्भाव उसके राजनैतिक प्रभाव के दमन के बहुत पहले हुआ था। कॉङ्ग्रेस ने उसको आत्म-शुद्धि के उपाय के रूप में बहुत पहले सोचा था नशीली वस्तुओं पर जो कर उपार्जित होता है, उसको सरकार यद्यपि निषेधात्मक कार्यों के उपयोग में लाती है, तिस पर भी उनकी दूकानों पर हमारा धरना जारी रहेगा, परन्तु उसका व्यवहार निर्धारित सीमा में ही रहेगा।

मैं सरकार से अनुरोध करता हूँ, कि इस परिवर्तन काल में वह केवल दो वस्तुओं की पिकेटिङ्ग को ही अधिक कष्ट न समझे, बल्कि यह पहले ही से समझ ले कि राष्ट्र अपने क़ानून बनावेगा और उसके साथ एकमत होकर उसे काम करना चाहिए, चाहे वह ऐसा करे चाहे न करे, हम लोग तब तक शान्ति से न बैठेंगे, जब तक एक भी गज़ कपड़ा विदेश से आवेगा या यहाँ हमारे भूले हुए भाइयों को बिगाड़ने के लिए एक भी शराब की दूकान रहेगा!

नमक की समस्या

मैं थोड़ा सा नमक के बारे में भी कहना चाहता हूँ। नमक पर आक्रमण बन्द हो जाना चाहिए। नमक-क़ानून-भङ्ग भी बन्द हो जाना चाहिए। परन्तु वे ग़रीब जो नमक के पड़ोस में बसते हैं, अपने पड़ोस में नमक बनाने और बेचने के लिए स्वतन्त्र हैं। यह सत्य है कि नमक-कर अभी रद्द नहीं हुआ है।

कदाचित कॉङ्ग्रेस कॉन्फ्रेन्स में भाग ले, चाहे इस समय हम नमक-कर बन्द करने के लिए ज़ोर न दें, पर वह आगे चल कर बन्द होगा ही। इस समय तो वे ग़रीब लोग, जिनके लिए यह युद्ध जारी किया गया था, इस कर से बच गए हैं। मैं आशा करता हूँ कि कोई भी नमक का व्यापारी सरकार की इस ढिलाई का अनुचित लाभ न उठावेगा।

एक आवश्यक निवेदन

पूर्व सूचना के अनुसार 'भविष्य' का यह विशेषाङ्क शुक्रवार को न निकल कर आज सोमवार को केवल इस लिए निकल रहा है, क्योंकि राष्ट्रपति का भाषण तभी छापा जा सकता है जब उनकी आज्ञा प्राप्त हो ले। आज उनकी आज्ञानुसार ही इस अङ्क को प्रकाशित करना सम्भव था। प्रेस की ओर से ज़रा भी देरी नहीं होने पाई थी—हमें केवल राष्ट्रपति के इस ऐतिहासिक भाषण की प्रतीक्षा थी। पाठकगण देरी के लिए हमें दोष न दें!

ग्यारह शर्तें

उपरोक्त भाषण से मालूम होता है कि जिन बातों में शिक्षित जनता दिलचस्पी लेती है उन बातों में मैं दिलचस्पी नहीं लेता। मुझे रोटी, मछली और क़ानूनी सम्मान से कोई दिलचस्पी नहीं है। किसान उन्हें नहीं समझते और न उनका उनके ऊपर कुछ असर पड़ता है मैं यही विश्वास करता हूँ कि गाँधी जी की ग्यारह शर्तें ही स्वराज्य का सार हैं। जो इन शर्तों के अनुसार नहीं है वह स्वराज्य नहीं है। यद्यपि मैं ज़मींदार, राजा-महाराजा आदि के अधिकारों को वहाँ तक मानता हूँ, जहाँ तक वे पसीना बहाने वाले करोड़ों किसानों को हानि नहीं पहुँचाते, तथापि मैं पददलित जनों को अपनी दुर्दशा से ऊपर उठने में सहायता देने में दिलचस्पी लेता हूँ और उनको इस देश के किसी बड़े से बड़े के बराबर बनाना चाहता हूँ। ईश्वर को धन्यवाद है, सत्य और अहिंसा के सिद्धान्तने उन्हें अपनी इज़्ज़त और शक्ति का परिचय दिया है। तब भी अभी बहुत काम करने की आवश्यकता है। हमें यह सोच लेना चाहिए कि हम उनके लिए बने हैं न कि वे हमारे लिए। अपने क्षुद्र ईर्षा द्वेष को हमें दूर कर देना चाहिए। धार्मिक लड़ाइयों को बन्द कर देना चाहिए। सबको यह समझ लेना चाहिए कि कॉङ्ग्रेस का अस्तित्व पसीना बहाने वाले करोड़ों किसानों के लिए है और वह निर्धन मनुष्य मात्र के लिए काम करने वाली एक दुर्दमनीय शक्ति हो जावेगी।

अस्पृश्यता का कोढ़

व्यावहारिक कार्य क्रम का एक और अङ्ग है जिसके बारे में अभी मैंने कुछ नहीं कहा है। वह अस्पृश्यता को नष्ट करने का महत्वपूर्ण कार्य है। इस समस्या में मरहम-पट्टी से काम न चलेगा। यदि हिन्दुओं ने अपने में से यह बुराई निकाल दी होती, तो राष्ट्र का विगत शान्त-युद्ध और भी गौरवपूर्ण होता। परन्तु गौरव और बहादुरी को एक ओर रखिए, इस आत्म-शुद्धि के प्रधान कार्य के बिना स्वराज्य भी प्राप्त करने योग्य वस्तु नहीं रह जायगी। हिन्दू-धर्म पर यह धब्बा रहते हुए, यदि स्वराज्य मिल भी जाय, तो ऐसा ही अस्थायी होगा, जैसा विदेशी वस्त्र के पूर्ण बहिष्कार के बिना स्वराज्य हो सकता है।

प्रवासी भाइयों का प्रश्न

अन्त में हमें अपने प्रवासी भाइयों को नहीं भूलना चाहिए। दक्षिण अफ़्रिका, पूर्वीय अमेरिका और संसार के अन्य भागों में उनका भाग्य अब भी अधर में टँगा हुआ है। सौभाग्य है कि दीनबन्धु एण्ड्रूज़ दक्षिण अफ़्रिका में हमारे देशवासियों की सेवा कर रहे हैं। पण्डित हृदयनाथ कुञ्जरू ने पूर्व अफ़्रिका के हिन्दुस्तानी मामलों में विशेष भाग लिया है उन्हें आश्वासन देने के लिए कॉङ्ग्रेस उन्हें उनसे अपनी सहानुभूति का विश्वास दिला सकती है। वे जानते हैं, कि उनकी दशा उतनी ही सुधरेगी जितना हम अपने उद्देश्य की ओर बढ़ेंगे। आपकी ओर से मैं उन सरकारों से, जिनमें अधिकारों में हमारे भाई हैं, प्रार्थना करता हूँ, कि वे हमारे भाइयों से उचित बर्ताव करें, क्योंकि वे उस राष्ट्र के व्यक्ति हैं, जो अपना पूर्व गौरव शीघ्र ही प्राप्त करने वाला है और जो किसी को हानि पहुँचाना नहीं चाहता। हम उनसे प्रार्थना करते हैं, कि वे हमारे भाइयों के साथ वही बर्ताव करें, जो वे हमसे उस समय चाहेंगे, जब उनके साथ व्यवहार करने के लिए स्वतन्त्र होंगे। यह माँग बहुत बड़ी माँग नहीं है।

राष्ट्रपति का निमन्त्रण

अब मैं आपको वह कार्यवाही करने के लिए आमन्त्रित करता हूँ, जिसका समयानुसार निमन्त्रण करने के लिए आपने मुझे आमन्त्रित किया है। मतभेद अवश्य होगा परन्तु मैं विश्वास करता हूँ कि उपस्थित महाशयों में से हर एक हमें इस कार्य को गौरवपूर्ण और उद्योग की ओर प्रगतिशील बनाने में सहायता देंगे।

* * *

कानपुर में भयङ्कर उपद्रव

क़रीब २५० मरे :: ५०० घायल हुए :: ३०० मकान फूँक डाले गए

मन्दिरों और मस्जिदों पर धावे :: घरों और दुकानों में आग :: बच्चों की निर्मम हत्याः: शहर भर में फ़ौज और पुलिस की शिकायत

क्या विद्यार्थी जी का शव जलते हुए मकान में डाल दिया गया !

कानपुर का २४वीं मार्च का समाचार है कि वहाँ सरदार भगतसिंह और उनके साथियों की फाँसी की सज़ा के समाचार प्राप्त होते ही शहर भर में हड़ताल हो गई। सरकारी विज्ञप्ति का कहना है, कि कुछ मुसलमानों की दुकानें हड़ताल होने पर भी खुली थीं और उन्हीं को बन्द करवाने के प्रयत्न में कॉङ्ग्रेस दल वालों से उनका झगड़ा हो गया और उसने भयङ्कर रूप धारण कर लिया। उपद्रव यहाँ तक बढ़ गया कि लोगों ने करेन्सी दफ़्तर, तार-घर और कचहरी पर भी धावा बोल दिया और उन पर पत्थरों की वर्षा की। इस उपद्रव से शहर भर में सनसनी फैल गई। मस्जिदों और मन्दिरों पर धावे किए गए, और दुकानें लूटी गईं तथा उनमें आग लगा दी गई है। इसके फलस्वरूप रास्तों पर आहतों और मृतकों का ढेर लगते जाने के बड़े रोमाञ्चकारी समाचार आए हैं। उपद्रव शान्त करने के लिए इलाहाबाद, गया, लखनऊ तथा जौनपुर से सशस्त्र पुलिस और फ़ौज भेजी गई है। उपद्रव में महिलाओं पर हर प्रकार के अत्याचार किए गए हैं और मासूम बच्चों की हत्याएँ की गई हैं। लाला कल्लूमल के कई लाख के भवन में आग लगा देने का भी समाचार आया है।

कानपुर से २७वीं और २८वीं मार्च को जो समाचार आए हैं, उनसे स्पष्ट मालूम होता है कि वहाँ की परिस्थिति में उस दिन तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ। वहाँ अभी भी दङ्गे का आतङ्क फैला हुआ है। शहर भर के बाज़ार, बैङ्क, शिक्षा-संस्थाएँ, व्यापारिक केन्द्र और मिलें इत्यादि बन्द हैं। शहर में १४४वीं दफ़ा लगा दी गई है, परन्तु उससे भी परिस्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। महिलाओं और बच्चों पर होने वाले अत्याचार अत्यन्त भयावह हैं। ऐसे बहुत से मृतक और घायल बच्चे और स्त्रियाँ मिली हैं, जिनके अङ्ग भङ्ग कर दिए गए हैं और बच्चों को दोनों टाँगों के बीच में से चीर डाला गया है और दोनों की निर्मम हत्याएँ की गई हैं।

क्या श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी मारे गए !

कानपुर के समाचारों से मालूम हुआ है कि हिन्दी के प्रतिभाशाली लेखक, और 'प्रताप' के यशस्वी सम्पादक श्री० गणेशशङ्कर जी विद्यार्थी गत मङ्गलवार से लापता हैं। वे इस भयानक काण्ड के समय अपनी जान हथेली पर रख कर उपद्रव शान्त करने का प्रयत्न कर रहे थे। उनके एक आहत साथी का कहना है कि हम दोनों पर मुसलमानों ने धावा किया था और मैंने उन्हें एक लाश घसीटते हुए देखा था। इसके बाद का समाचार है कि वे मार कर एक जलते हुए मकान में झोंक दिए गए! बाद के समाचारों से यह भी पता चलता है कि अभी परिस्थिति में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है।

प्रयाग के कमिश्नर श्री० कुँवर महाराजसिंह जी कानपुर गए हैं। कहा जाता है, वहाँ के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के बङ्गले पर हिन्दू और मुसलमान नेताओं की एक सभा की गई थी, पर अभी तक कुछ विशेष परिवर्तन देखने में नहीं आया। जनता को इस बात की शिकायत है कि जब से दङ्गा शुरू हुआ, शहर में एक भी पुलिस और फ़ौज का पता नहीं चलता, न उन लोगों ने जनता की किसी प्रकार की सहायता ही की है। सहयोगी 'लीडर' के विशेष प्रतिनिधि का कहना है कि कानपुर के नेताओं के साथ वे स्वयं मोटर पर प्रायः उन सभी मोहल्लों में गए, जहाँ उपद्रव विशेष भयङ्कर रूप धारण किए हुए है, पर उन्हें कहीं भी पुलिस के दर्शन नहीं हुए। पत्र छपते-छपते हमारे सम्वाददाता का कहना है, कि अब तक लगभग
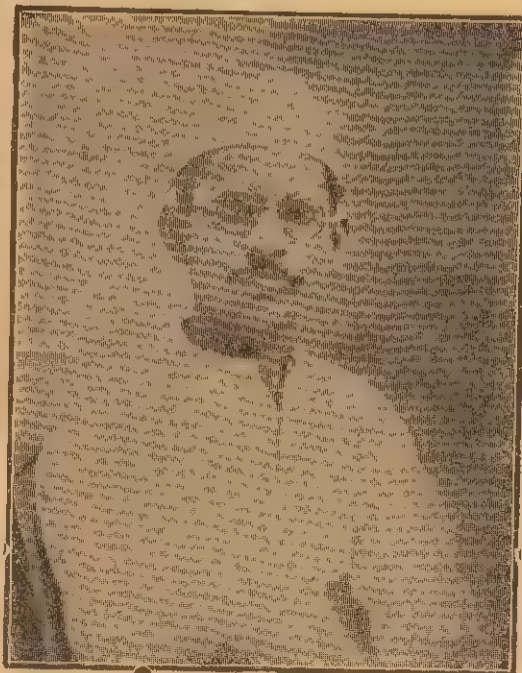
एकता के प्रयत्न में शहीद होने वाले स्वर्गीय श्री० गणेशशङ्कर जी विद्यार्थी।

२५० व्यक्ति जान से मारे जा चुके हैं। ५०० से अधिक घायलों की संख्या बतलाई जाती है और कहा जाता है, क़रीब ३०० मकान और दूकानें बिल्कुल जला कर ख़ाक कर दी गई हैं।

यद्यपि यह उपद्रव हिन्दू-मुसलमानों के वैमनस्य का फल बतलाया जाता है, किन्तु फिर टकसाल, तार-घर तथा कचहरियों पर धावे क्यों किए गए—यह पहेली किसी के समक्ष में नहीं आ रही है—घर-घर इसी बात की चर्चा है। इन समाचारों से फ़तहपुर तथा इलाहाबाद में भी बड़ी सनसनी फैल रही है।

विदेशी कपड़े के व्यापारियों के नाम "हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन" की

'लाल चिट्ठी'

मुज़फ़्फ़रपुर के एक सम्वाददाता ने आज ही हमारे पास एक 'लाल चिट्ठी' प्रकाशनार्थ भेजी है, सम्वाददाता का कहना है, ऐसी 'लाल चिट्ठियाँ' प्रत्येक कपड़े तथा परचून के व्यापारियों के पास आई हैं और इसके कारण विशेषकर वहाँ के मारवाड़ियों में बड़ी सनसनी फैली हुई है। पत्र का अविकल रूप यह है:—

सावधान ! सावधान ! सावधान !!

अख़बारों में यह ख़बर पढ़ कर हम लोगों को बड़ा ताज्जुब होता है कि मुज़फ़्फ़रपुर [शहर का नाम हाथ से लिखा गया है, शेष छपा है।—स० 'भविष्य'] के तुम कपड़े के व्यापारियों ने अभी तक विलायती कपड़ा मँगाना और बेचना बन्द नहीं किया है। ऐसे नाज़ुक वक़्त में, जब कि मातृ-भूमि के उद्धार के लिए देश-भक्त जेलों में ठूँसे जा रहे हैं और फाँसी के तख़्तों पर लटकाए जाते हैं—तुम व्यापारियों का यह नीच काम देशद्रोहिता का नमूना है। इसलिए हमारी कमिटी ने यह फ़ैसला किया है, कि अगर तुम लोग नोटिस पाने पर विलायती कपड़ा या और किसी तरह का विलायती माल ख़रीदना और बेचना बन्द नहीं करते हो तो तुम्हारे जान व माल की ख़ैरियत नहीं है। याद रक्खो, तुम्हारी भी वही हालत होगी, जो बनारस और पेशावर के व्यापारियों की हुई है। इसलिए हम तुमको इस नोटिस के ज़रिए आगाह किए देते हैं, कि अगर तुम लोगों ने १ ली मार्च से विलायती माल बेचना बन्द नहीं किया तो हमारे दल के आदमी तुम्हारी इस करतूत का बदला अवश्य लेंगे।

सेक्रेटरी,
हिदुस्तान रिपब्लिकन
एसोसियेशन।

क्रा० प्रे० मास्को......४,०००

गाँधी-इर्विन-सन्धि असन्तोषपूर्ण है

श्री० विट्ठलभाई पटेल का वक्तव्य

वियना (ऑस्ट्रिया) से २१वीं मार्च को भारतीय असेम्बली के भूतपूर्व प्रेज़िडेण्ट श्री० विट्ठलभाई पटेल ने कॉङ्ग्रेस के प्रेज़िडेण्ट के पास एक तार भेजा है, जिसमें उन्होंने गाँधी-इर्विन समझौते से असन्तोष प्रकट किया है। परन्तु उन्होंने यह भी लिखा है कि उसे भङ्ग करने से बड़ी भारी राष्ट्रीय क्षति होने की सम्भावना है। उन्होंने कॉङ्ग्रेस से प्रार्थना की है कि वह महात्मा गाँधी को इस बात का आदेश दे दे कि वे पूर्ण औपनिवेशिक स्वराज्य से रत्ती भर भी कम अधिकार स्वीकार न करें।

* * *

"मैं स्वतन्त्रता का सत्व चाहता हूँ; ब्रिटेन उसकी छाया रख सकता है"

"मैं ब्रिटिश सेना को एक दिन के लिए भी भारत में नहीं देख सकता"

"मैं, ब्रिटिश फ़ौज को भारत में एक दिन के लिए भी नहीं देख सकता। भारत को सीमा प्रान्त के हमले का कोई भय नहीं है और न कोई विदेशी शक्ति भारत को हड़प करने के लिए लालायित ही है। मेरा अफ़रीदियों पर काफ़ी प्रभाव है और यदि अफ़रीदी हमारे ऊपर हमला करेंगे तो मैं उनका अपने सत्याग्रह से उसी प्रकार विरोध करूँगा, जिस प्रकार ब्रिटिश गवर्नमेण्ट का कर रहा हूँ। भारत संसार का सब से निर्धन देश है। वह वायसराय के तीन शाही महलों का बोझ सहन नहीं कर सकता। नई दिल्ली में चकाचौंध भले ही हो, परन्तु भारत के असंख्य जर्जरित गाँवों से उसकी कोई समता नहीं की जा सकती।......सत्याग्रह-आन्दोलन में पुलिस ने जिस बर्बरता और नृशंसता से काम लिया है, उसके मेरे पास अकाट्य सबूत मौजूद हैं। मैंने वायसराय से पुलिस की उन नृशंसताओं की स्वतन्त्र जाँच करने के लिए कहा था, परन्तु उन्होंने जाँच करने से साफ़ इन्कार कर दिया।"

कुछ दिन पहले 'न्यूज़ क्रॉनिकल' के विशेष सम्वाददाता मि० रॉबर्ट बार्नेज़ ने इलाहाबाद में महात्मा गाँधी से मुलाक़ात की थी। उन्होंने उसका सार पत्रों में प्रकाशित कराया है। यहाँ पाठकों की जानकारी के लिए उसी का अनुवाद दिया जाता है :—

महात्मा गाँधी से मेरी केवल आध घण्टे मुलाक़ात हुई और उसमें निम्न बातचीत हुई :—

महात्मा गाँधी ने स्वर्गीय पण्डित मोतीलाल जी नेहरू के भव्य आनन्द-भवन में, जहाँ मेरी मुलाक़ात के दूसरे ही दिन वर्किङ्ग कमिटी ने गोलमेज़ परिषद पर अपनी सम्मति दी थी, मेरा स्वागत किया। जब मैं पहुँचा तब महात्मा गाँधी धूप में ज़मीन पर बैठे हुए थे। मेरे पहुँचते ही उन्होंने मेरे लिए कुर्सी मँगाई, परन्तु मैंने कुर्सी पर बैठने से इन्कार कर दिया और उन्हीं के सामने ज़मीन पर बैठ गया।

महात्मा गाँधी ने कहा—"मैं स्वतन्त्रता का सत्व चाहता हूँ; ब्रिटेन उसकी छाया रख सकता है। गोलमेज़ परिषद से हमें वह सत्व प्राप्त नहीं हुआ।"

मुझसे बातचीत करते समय वे अपना भोजन करते जाते थे। महात्मा गाँधी दिन भर में केवल एक बार भोजन करते हैं; भोजन बिल्कुल सादा—केवल गोभी की तरकारी और रोटी का—था। उनके आसपास शुद्ध खद्दर पहिने उनके कुछ शिष्य हम दोनों की बातचीत सुनने के लिए बैठे थे।

मैंने प्रारम्भ में प्रश्न किया—"गोलमेज़ परिषद में आप किस बात के निर्णय की आशा करते थे?"

महात्मा गाँधी ने मुस्कुरा कर उत्तर दिया—"यह आपने बड़ा अच्छा प्रश्न किया; मेरी यह आकांक्षा थी, कि गोलमेज़ में भारत को प्रतिबन्ध-रहित उत्तरदायी शासन सौंपा जाता। प्रतिबन्धों का अर्थ यह है, कि हममें अभी भी अपने देश का शासन करने की योग्यता नहीं है।

"भारत में ब्रिटिश फ़ौज की कोई आवश्यकता नहीं है। उसके भारत में रहने का अर्थ केवल यही है कि भारत अभी भी ब्रिटेन के चङ्गुल में है। मैं तो यह चाहता हूँ, कि ब्रिटिश फ़ौज यहाँ से कल हटा ली जाय। सीमा प्रान्त के हमले का भारत को कोई डर नहीं है। किसी दूसरी विदेशी शक्ति की इच्छा भारत को हड़प करने की नहीं है। अफ़रीदी सीमा प्रान्त के गाँवों को लूटने के सिवा और कुछ न करेंगे। परन्तु यदि वास्तव में कहा जाय, तो मेरा अफ़रीदियों पर भी बहुत प्रभाव है। मैं उनका मुक़ाबला भी अपने सत्याग्रह-आन्दोलन से उसी प्रकार करूँगा, जिस प्रकार ब्रिटिश गवर्नमेण्ट का कर रहा हूँ। यद्यपि मैं व्यक्तिगत रूप से फ़ौज का विरोधी हूँ, परन्तु भारत को क भारतीय फ़ौज की आवश्यकता अवश्य पड़ेगी।

"भारतीय फ़ौज को वर्तमान फ़ौजी शिक्षा देने के लिए हमें युद्ध-विशारदों को दूसरे देशों से बुलाने की आवश्यकता पड़ेगी। हम शायद अङ्गरेज़ ऑफ़िसरों की सहायता स्वीकार कर लें, परन्तु यदि उन्होंने इन्कार किया तो हम ज़र्मनी, फ़्रान्स जापान या अन्य किसी विदेशी शक्ति के सहयोग का प्रयत्न करेंगे।

"भारत की अर्थ-व्यवस्था में भी हम कोई प्रतिकार स्वीकार नहीं कर सकते। भारतीयों को अर्थ-व्यवस्था में तो ईश्वर ने ही निपुण बना कर भेजा है। भारत संसार का सब से अधिक निर्धन देश है। वह वायसराय के लिए तीन शाही-महलों का बोझ सहन नहीं कर सकता। विशाल और आँखों में चकाचौंध उत्पन्न करने वाली नई दिल्ली निराली है; उसका भारत के असंख्य जर्जरित गाँवों से क्या सम्बन्ध है! अभागे भारत के ऊपर यह भार नहीं तो क्या है? राष्ट्रीय आय में से प्रायः आधा धन फ़ौज में ख़र्च किया जाता है।

"गोलमेज़ परिषद के आर्थिक प्रतिबन्धों के अनुसार यदि हिसाब लगाया जाय, तो राष्ट्रीय आय में से केवल २० प्रतिशत हमारी व्यवस्था के लिए बच जाता है। हम इसे स्वीकार नहीं कर सकते। देश की जो आमदनी होगी, उसे केवल देश की उन्नति में ही व्यय करना होगा।"

जाँच करने से इन्कार

इसके बाद मेरी बातचीत पुलिस के अत्याचारों के सम्बन्ध में प्रारम्भ हो गई।

महात्मा गाँधी ने कहा—"सत्याग्रह-आन्दोलन में पुलिस ने जिस बर्बरता और नृशंसता से काम लिया है, उसके मेरे पास अकाट्य सबूत मौजूद हैं। मैंने वायसराय से पुलिस की इन करतूतों की स्वतन्त्र जाँच करने के लिए कहा था, परन्तु उन्होंने जाँच करने से साफ़ इन्कार कर दिया। यदि मैं आपसे यह कहूँ कि आपके नौकर ने मुझे लूट लिया है, तो क्या आप उसके इन्कार करने पर चुप हो जायँगे? कोई सभ्य व्यक्ति ऐसा व्यवहार न करेगा। यदि पुलिस की करतूतों की जाँच के लिए एक जाँच-कमिटी नियुक्त होती तो यह आवश्यक नहीं था, कि मैं उसमें सम्मिलित होता; परन्तु जाँच अतीव आवश्यक थी।

"आप मुझसे कहते हैं, कि जब से मॉडरेट लोग गोलमेज़ के लिए इङ्गलैण्ड गए हैं, तब से वहाँ के वायु-मण्डल में बहुत परिवर्तन हो गया है। परन्तु उसका प्रभाव भारत में क्यों नहीं मालूम पड़ता? यहाँ तो पुलिस के अत्याचार कुछ भी न्यून नहीं हुए।"

इसके बाद मैंने महात्मा जी से यह प्रश्न किया कि क्या हिन्दू-मुसलमानों के आपसी झगड़े उत्तरदायी शासन के मार्ग में रोड़े नहीं हैं?

महात्मा गाँधी ने उत्तर दिया—"आपसी झगड़े स्वतन्त्रता के मार्ग में कोई रोड़े नहीं हैं। उन्हें उत्पन्न करने का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व ब्रिटिश लोगों पर है। गाँवों में जातीय भेद-भाव बिल्कुल नहीं है। यह आपसी भेद-भाव और जातीय लड़ाई-झगड़े केवल शहरी हैं और वहाँ अङ्गरेज़ों का प्रभाव है और वे दोनों जातियों में झगड़े उत्पन्न करने के उपाय सदैव सोचा करते हैं। ये झगड़े उस समय तक के लिए हैं, जब हमें शासन का उत्तरदायित्व प्राप्त नहीं हुआ। देश पर हिन्दू-मुसलमानों का सम्मिलित शासन होते ही ये झगड़े और भेद-भाव विलीन हो जायँगे।

"मेरे सम्बन्ध में दूसरे दल के लोग कहा करते हैं, कि क़ानून भङ्ग कर मैं अच्छा नहीं कर रहा हूँ। इस प्रश्न पर मेरा उत्तर यही है, कि सिर तोड़ने से क़ानून तोड़ना कहीं अच्छा है। यदि देश की स्वतन्त्रता के लिए सत्याग्रह का अवलम्ब छोड़ दिया जाय, तो उसे प्राप्त करने का दूसरा मार्ग केवल खुला विद्रोह और युद्ध है। मैं पाशविक शक्ति का विरोध आत्म-दमन से करना अधिक पसन्द करता हूँ। और उसे ग़ैर-क़ानूनी नहीं कहा जा सकता। हम क़ानून भङ्ग करने के परिणामों को जानते-बूझते उन्हें भङ्ग करते हैं। कहीं-कहीं कॉङ्ग्रेस मतावलम्बियों ने भी उत्तेजित होकर वार कर दिए हैं। परन्तु सभी जगह फ़ौज में कुछ बाग़ी सैनिक सम्मिलित रहते हैं।"

मैंने महात्मा जी से प्रश्न किया—"क्या आप इस विचार से सहमत हैं, कि ब्रिटिश लोगों ने अपने शासन-काल में भारत की कोई भलाई नहीं की।"

महात्मा गाँधी ने मुस्कुरा कर उत्तर दिया—"मैं यह नहीं कह सकता, कि ब्रिटिश लोगों ने भारत की कोई भी भलाई नहीं की। उन्होंने हमें सङ्गठन का पाठ पढ़ाया है; परन्तु वह पाठ तो हम किसी भी हालत में पढ़ जाते। क्लाइव और हेस्टिंग्ज़ की करतूतों का स्मरण करो। भारतीय ऐतिहासज्ञों की बात छोड़ दीजिए; परन्तु ब्रिटिश ऐतिहासज्ञ तो उनकी प्रशंसा करते कभी नहीं थकते।

"मैं उत्तरदायी शासन का सत्व चाहता हूँ और उससे कम में कभी सन्तोषित नहीं हो सकता।

"मैं सन्धि के अवसर की बाट जोह रहा हूँ। यदि मेरा वश होता तो मैं उसे झपट कर छीन लेता।"

सर शंकरननायर के स्पष्ट विचार

"अर्थ—व्यवस्था और फ़ौज भारतीयों के हाथ में रहे बिना स्वराज्य केवल मख़ौल होगा"

ब्रिटेन पर से भारत का विश्वास क्यों उठा ?

[ग्रेट-ब्रिटेन के प्रधान-मन्त्री ने गोलमेज़ परिषद् के समाप्त होने पर अपनी घोषणा में कहा था, कि यद्यपि शासन-सुधारों में किसी प्रकार का प्रतिबन्ध अच्छा नहीं है, परन्तु भारत की हितकामना ध्यान में रखते हुए ये प्रतिबन्ध अत्यन्तावश्यक हो गए हैं। प्रधान-मन्त्री के इन शब्दों में क्या तथ्य था, यह विचारवान पाठक स्वयं समझ सकते हैं। हमारी समझ में तो यह स्पष्ट है कि शासन-सम्बन्धी प्रतिबन्धों की योजना भारत के हित के लिए नहीं, वरन् ब्रिटेन के हित के लिए की गई है। निम्न लेख में सर शङ्करन नायर ने तर्कपूर्ण दलीलों से यह स्पष्ट कर दिया है, कि इङ्गलैण्ड के हाथों में भारतीय अर्थ-व्यवस्था और फ़ौज का क्षण भर भी रहना भारत के लिए अत्यन्त घातक है। पाठकों को स्मरण होगा कि शासन-सुधारों के सम्बन्ध में जो भारतीय समिति स्थापित की गई थी, सर शङ्करन नायर उसके सभापति थे और उन्होंने इस सम्बन्ध में जो रिपोर्ट पेश की थी, उसी के साथ एक मेमोरेण्डम भी पेश किया गया था। निम्न लेख में पाठकों की जानकारी के लिए उसीके कुछ अंशों का अनुवाद दिया जाता है।

—स० "भविष्य"]

युद्ध कालीन क़र्ज़ का भार इङ्गलैण्ड को गर्दन ऊँची नहीं करने देता। इस बोझ को हलका करने के लिए उसने अपना भविष्य गिरवी रख दिया है और उससे अपना पिण्ड छुड़ाने के लिए वह हर एक उपाय काम में लाएगा। ये उपाय चाहे न्यायपूर्ण हों या अन्यायपूर्ण, परन्तु शक्ति के साथ स्वार्थ का सम्मेलन हो जाता है, तब स्वभावतः उनके अवलम्बन में आना-कानी नहीं की जाती, और यदि सम्भव हुआ तो किसी न किसी रूप में यह बोझ भारत पर छोड़ने का प्रयत्न किया जायगा, परन्तु भारतीय जनता उसे कभी स्वीकार न करेगी।

इङ्गलैण्ड का व्यापारिक पतन

इङ्गलैण्ड का समस्त वैभव उसके निर्यात व्यापार पर निर्भर है; भारत की सूती कपड़े की चुङ्गी लङ्काशायर के लाभ के लिए ही उठाई गई थी। मोटे कपड़े में इङ्गलैण्ड अब हार मान चुका है और महीन तथा फ़ैन्सी कपड़े में जर्मनी और जापान ने उसे चुनौती दे दी है। इस प्रकार संसार के कपड़े के व्यापार से उसके पैर उखड़ चुके हैं। स्वभावतः लङ्काशायर की दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई बेकारी को दूर करने के लिए ब्रिटिश गवर्नमेण्ट इङ्गलैण्ड का माल भारत में ठूँसने का प्रयत्न करेगी। इसी प्रकार इङ्गलैण्ड को केवल कपड़े के व्यापार ही में नहीं, लोहा, फ़ौलाद और जहाज़ी व्यापार में भी मुँह की खानी पड़ी है। जनता और गवर्नमेण्ट के सम्मिलित अथक परिश्रम करने पर भी वह अपने व्यापारिक पुनरुत्थान में असमर्थ हो गया है। उसके इस व्यापारिक पतन के कारण ही बेकारी की समस्या ने भयङ्कर रूप धारण कर लिया है। ऐसी परिस्थिति में भारत को इङ्गलैण्ड के चङ्गुल से बचाने के लिए दूरदर्शी भारतीय पार्लामेण्ट और एक ऐसे ही दूरदर्शी अर्थ-सचिव की नितान्त आवश्यकता है।

विदेशी प्रतियोगिता

भारत की आर्थिक परिस्थिति के अनुसार इङ्गलैण्ड की बेकारी की समस्या पर विचार करने की आवश्यकता है। इङ्गलैण्ड अपने व्यापारिक उत्थान के लिए अन्य देशों की तथा स्वयं अपनी आर्थिक परिस्थिति की गम्भीरतापूर्वक जाँच कर रहा है। महायुद्ध के बाद ही से उसके व्यापार पर भयङ्कर आघात हुआ है; और उसी समय से व्यापारिक उत्थान के लिए उसके व्यापार-विशारद और पूँजीपति, बैङ्कों और व्यापारिक संस्थाओं के साथ मिलने लगे हैं। ब्रिटिश गवर्नमेण्ट उन्हें शक्ति-भर सहायता देती है, उसकी ओर से उसके दूत देश-देश में भ्रमण करते हैं और उसका व्यापारिक सङ्गठन दिन-प्रतिदिन उन्नति कर रहा है। भारत के सम्बन्ध में उसकी अन्य देशों से प्रतियोगिता होने के कारण ही भारतीय व्यापार चौपट हो रहा है।

भारतीय व्यापारियों की संख्या नगण्य है; इस देश में पूँजीपतियों का अभाव है; हमारे बैङ्कों का अस्तित्व इङ्गलैण्ड के बैङ्कों पर निर्भर है और हमारा व्यापारिक सङ्गठन भी बिल्कुल ढीला है। गवर्नमेण्ट व्यापारिक उत्थान के लिए हमें आवश्यक सहायता नहीं देती और बिना गवर्नमेण्ट की सहायता के किसी उद्योग-धन्धे का पनपना प्रायः असम्भव है। रेलों का मुख्योद्देश्य अन्य देशों के माल को देश में फैलाना और यहाँ के कच्चे माल को अन्य देशों में भेजना है। अन्य देशों का माल यहाँ के माल की अपेक्षा सस्ता बेचा जाता है। भारतीय व्यापार को इस विदेशी प्रतियोगिता के भीषण आघात से बचाने के लिए भी एक दूरदर्शी भारतीय पार्लामेण्ट की आवश्यकता है, जिसका अपने ख़ज़ाने और व्यापार पर पूर्ण अधिकार हो।

इङ्गलैण्ड के पास व्यापार के सब साधन मौजूद हैं—उसके पास अतुल पूँजी, शक्ति और ज़बरदस्त सङ्गठन है। तिस पर भी वह अमेरिका—यहाँ तक कि स्वयं अपने उपनिवेशों से ही व्यापारिक प्रतिस्पर्धा में हार मान गया है। ऐसी परिस्थिति में जब तक अर्थ और व्यापार पर भारतीयों का आधिपत्य न हो जाय, तब तक उससे व्यापारिक क्षेत्र में उन्नति करने की क्या आशा की जा सकती है। भारत के उद्योग-धन्धों के लिए पूँजी इतनी सस्ती नहीं मिलती, जितनी सस्ती ब्रिटेन की व्यापारिक संस्थाओं को मिल जाती है। इसका प्रधान कारण यह है, कि बैङ्कों का समस्त व्यापार अङ्गरेज़ों के ही हाथ में है। भारत का सोना इङ्गलैण्ड के लाभ के लिए वहीं सञ्चित किया जाता है, जिससे भारत को लाभ के बदले, भयङ्कर हानि हो रही है। यदि भारत का सोना भारत ही में सञ्चित किया जाय, तो इङ्गलैण्ड की व्यापारिक परिस्थिति इतनी डावाँडोल हो जायगी, जितनी इस समय भारत की है। परन्तु इस आर्थिक नीति के परिवर्तन की उस समय तक सम्भावना नहीं है, जब तक भारत की अर्थ-व्यवस्था एक दूरदर्शी भारतीय अर्थ-सचिव के हाथ में न आ जाय।

स्वतन्त्र व्यापार

इङ्गलैण्ड में एक ऐसा ज़बरदस्त दल तैयार हो रहा है, जो अमेरिका और यूरोप से व्यापारिक प्रतिस्पर्धा करने के लिए समस्त ब्रिटिश साम्राज्य के व्यापारिक सम्मिलन के पक्ष में है। इङ्गलैण्ड की अपेक्षा भारत में श्रमजीवियों की मज़दूरी बहुत न्यून है और उसका यह परिणाम हुआ है, कि इङ्गलैण्ड के श्रमजीवियों की मज़दूरी में भी कमी होती जाती है। कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रतिनिधि भारतीय मज़दूरों की मज़दूरी बढ़ाने का प्रयत्न इसलिए कर रहे हैं, कि उससे ब्रिटेन की मज़दूरी की समस्या हल हो सके। इङ्गलैण्ड का एक दल साम्राज्य के अन्तर्गत देशों में

स्वतन्त्र व्यापार के पक्ष में है। यदि उपनिवेशों को यह व्यापारिक-स्वतन्त्रता दे दी जाय तो वे स्वार्थों की रक्षा अच्छी तरह कर लेंगे; परन्तु बेचारा भारत इङ्गलिश गवर्नमेण्ट के चङ्गुल में रह कर इस घातक नीति का भी विरोध नहीं कर सकता।

फ़ौज का भार

भारत के सुचारु शासन के लिए यह अत्यन्तावश्यक है, कि अर्थ-व्यवस्था—जनता पर टैक्स लगाने तथा उस आय को ख़र्च करने का अधिकार भारतीयों के हाथ में दे दी जाय और उसमें सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट का कोई हाथ न रहने पावे। इस अधिकार से यह स्पष्ट हो जाता है, कि भारतीयों को फ़ौज के बजट का निर्णय करने का भी अधिकार होगा। परन्तु इस सम्बन्ध में दो बातें ध्यान में रखने योग्य हैं। एक तो यह, कि जब तक निरस्त्रीकरण की समस्या हल न हो जायगी तब तक ग्रेट-ब्रिटेन की जनता पर से वर्तमान टैक्स का भार कम होने की कोई सम्भावना नहीं है। इसलिए साम्राज्यवादी दल सेना और शस्त्रों की कमी की पूर्ति भारत के ख़ज़ाने से करने का प्रयत्न करेगा। दूसरी बात यह है, कि कुछ विद्वानों का मत है कि आगामी महायुद्ध का घमासान पूर्व और प्रशान्त-महासागर के आसपास होगा और उसका अधिकांश बोझ भारत पर लाद दिया जायगा। इस प्रकार भारत का फ़ौजी ख़र्च असह्य हो जावेगा।

प्रायः यह कहा जाता है, कि 'वार ऑफ़िस' भारत-स्थित ब्रिटिश फ़ौज को केवल रिज़र्व फ़ौज के रूप में मानता है और उसका उपयोग साम्राज्य पर कोई विपत्ति आने पर किया जायगा। कुछ लोगों का तो यहाँ तक कहना है, कि 'वार ऑफ़िस' ने यह ब्रिटिश फ़ौज जान-बूझ कर भारत के ख़र्च पर भारत में रक्खी है। यह कहा जाता है, कि भारत में एक-तिहाई फ़ौज आन्तरिक शान्ति की रक्षा के लिए है और यह दलील पेश की जाती है कि उसके लिए कुछ ब्रिटिश फ़ौजों की आवश्यकता है। इसी उद्देश्य से साठ हज़ार ब्रिटिश सैनिक भारत में रक्खे गए हैं। यह भी कहा जाता है, कि भारतीयों के उपद्रव भारतीय फ़ौज के द्वारा दबाना उचित न होगा और ऐसे अवसरों के लिए ब्रिटिश फ़ौजों की आवश्यकता है। परन्तु गत शताब्दी के अन्त में ब्रिटिश फ़ौजों का उपयोग शान्ति-रक्षा के स्थान में प्लेग को दबाने के सम्बन्ध में किया गया था और उसी घटना के बाद से गवर्नमेण्ट ने भारतीयों को घटाना प्रारम्भ कर दिया।

इसी प्रकार की एक दूसरी घटना, जिसमें फ़ौज की सहायता की आवश्यकता पड़ी थी, बङ्ग-भङ्ग थी। मुसलमान गवर्नमेण्ट के पक्ष में होकर बङ्ग-भङ्ग का समर्थन कर रहे थे और हिन्दू, जो शक्ति भर उसका विरोध कर रहे थे, राजविद्रोही क़रार दे दिए गए थे, और उनका दमन करने के लिए ब्रिटिश नहीं, बल्कि गोरखा फ़ौज की सहायता ली गई थी। पञ्जाब में जो झगड़े हुए थे, उनमें भी हिन्दू गोरखों की सहायता ली गई थी। मलाबार में मोपला-विद्रोह के समय भी हिन्दू फ़ौज की ही सहायता ली गई थी। उपर्युक्त घटनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है, कि गवर्नमेण्ट यह समझ गई है, कि ब्रिटिश फ़ौज के हाथों कोई ज़्यादती हो जाने के कारण जनता भड़क जाती है और हाल ही की घटनाओं से यह और स्पष्ट हो जाता है, कि जहाँ तक हो सकता है, गवर्नमेण्ट ऐसे अवसरों पर भारतीय फ़ौज की ही सहायता लेती है।

पुलिस

सन् १८५७ के विद्रोह के पहले तक फ़ौज की आवश्यकता युद्ध तथा आन्तरिक शान्ति दोनों के लिए थी; परन्तु बलवे के पश्चात् शान्ति-रक्षा के लिए पुलिस की आयोजना की गई थी। और यदि पुलिस इस आन्तरिक शान्ति-रक्षा में असफल हुई है, तो उसका सारा दोष उन लोगों पर है, जिन्होंने उसका सङ्गठन किया था। इसमें सन्देह नहीं, कि यदि पुलिस भारतीयों के हाथों में छोड़ दी जाती, तो वह अपने उद्देश्य की पूर्ति में अवश्य सफल होती और फिर पुलिस की सहायता के लिए जो फ़ौज रक्खी जाती है, उसकी आवश्यकता न पड़ती और भारत के सिर से इस प्रकार की अतिरिक्त फ़ौज का एक बड़ा भारी बोझ उतर जाता।

यदि शासन-सम्बन्धी प्रतिबन्धों की सच्ची योजना और उन्हें कार्यरूप में परिणत करने की व्यवस्था की गई है, तो भारत के लिए जिस शासन-विधान की रचना की गई है, वह न तो उत्तरदायी शासन है और न औपनिवेशिक स्वराज्य। ब्रिटेन इस अप्रिय-सत्य को छिपाने का प्रयत्न कर रहा है; उसे साहसपूर्वक भारत के सम्बन्ध में अपनी नीति स्पष्ट कर देना चाहिए।

—मि० विंस्टन चर्चिल

सीमा-प्रान्त की समस्या

सीमा प्रान्त को बाहरी हमलों से सुरक्षित रखने के लिए पहले १२,००० सैनिकों की 'पञ्जाब फ़्रण्टियर फ़ौज' पञ्जाब-सरकार के अधीन नियुक्त की गई थी और वह वर्तमान ब्रिटिश फ़ौज से अधिक योग्यता से वहाँ की रक्षा करती थी। परन्तु अब उस फ़ौज के स्थान में ब्रिटिश फ़ौज रख दी गई है और जिसके कारण फ़ौज का ख़र्च बहुत ज़्यादा बढ़ गया है। यदि भारतीय शासन निर्वाचित मेम्बर के हाथों में होता और उसकी अर्थ-व्यवस्था किसी योग्य भारतीय के हाथ में होती, तो वह इस फ़ौजी ख़र्च को कभी न बढ़ने देता।

महायुद्ध और भारत

यूरोपीय महायुद्ध के समय भारत ने जर्मनी से युद्ध करने के लिए अपनी फ़ौजें भेजी थीं; यद्यपि जर्मनी से उसकी कोई दुश्मनी न थी और स्वयं लॉर्ड कर्ज़न ने इसे स्वीकार किया है। भारतीय वहाँ कुछ अपने देश तथा देशवासियों की रक्षा के लिए युद्ध करने न गए थे; और न स्वयं उन्होंने उस युद्ध की रचना की थी। भारतीय फ़ौजों को वहाँ उत्तर की कड़ाके की सर्दी का कभी स्वप्न में भी अनुभव न हुआ था; ऐसे भयानक गोली-काण्ड को उन्होंने स्वप्न में न देखा था और न उन्हें प्राणघातक रसायनिक द्रव्यों का ही कुछ अनुभव था। उन्होंने कभी आकाश का युद्ध न देखा था और खाइयों की वर्तमान लड़ाई से वे बिल्कुल अनभिज्ञ थे। परन्तु इतना होने पर भी वे मौत के मुख में ढकेल दिए गए। जिस समय भारतीय फ़ौजें इस भयङ्कर युद्ध के लिए भेजी गई थीं, उस समय केनेडा और ब्रिटेन की फ़ौजों को युद्ध के नए विज्ञान और नई कलाओं की शिक्षा दी जा रही थी और वे कई महीनों की शिक्षा के पश्चात् युद्ध के मैदान में भेजी गई थीं। ऐसी परिस्थिति में भारतीय फ़ौजों के सैनिकों का बहुत बड़ी तादाद में मरना बिल्कुल स्वाभाविक ही है।

युद्ध के अन्त में ब्रिगेडियर जनरल रॉबिन्सन ने कहा था, कि युद्ध के समय भारत लाखों सैनिकों तथा सिविल ऑफ़िसरों के लिए रसद भेजता था। और यह सहायता वह उस समय कर रहा था, जब उसे स्वयं अपने देशवासियों के भरण-पोषण के लिए गेहूँ और चावल की अतीव आवश्यकता थी। ग़ल्ला भारत से बाहर भेज कर ब्रिटिश गवर्नमेण्ट ने अत्यधिक लाभ उठाया। और युद्ध के उस भीषण काल में, जब मित्र-राष्ट्रों के पैर उखड़ने लगे थे, जब सम्राट ने स्वयं भारतीय फ़ौज की सहायता के लिए भारत से अपील की थी और मि० लॉयड जॉर्ज दुःख-भरी आवाज़ से भारत के सामने हाथ फैलाए थे; तब पहले युद्ध में निर्बल हो जाने पर भी उसने एक बार फिर सिर उठाया और अपने लाखों सैनिकों की आहुति देकर विजय-पताका अङ्गरेज़ों के सुपुर्द कर दी। परन्तु जब विजय के उपरान्त उसके बाक़ी बचे हुए सैनिक भारत लौटे, तब उनका स्वागत पञ्जाब का हत्या-काण्ड रच कर उनके भाइयों के ख़ून से किया गया! और वे हृदय-विदारक अपीलें युद्ध का अन्त होते ही भुला दी गईं!!

युद्ध के समय यह कहा जाता था, कि इङ्गलैण्ड उन सभी राष्ट्रों की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध कर रहा था, जो विदेशी शासन से कुचले जा रहे थे। परन्तु अब कहा जाता है कि हममें देश का शासन करने की योग्यता नहीं है। महायुद्ध के प्रारम्भ में मार्सलीज़ में हमारी फ़ौजों को उसी समय, जिस समय केनेडा और ब्रिटेन की फ़ौजें युद्ध की शिक्षा प्राप्त कर रही थीं, नई-नई मैशीनें और युद्ध के घातक अस्त्र और द्रव्य प्रयोग के लिए दे दिए गए थे, परन्तु अब न तो हम युद्ध के ही योग्य हैं और न फ़ौजी शिक्षा प्राप्त करने के। जिन लोगों का मस्तिष्क इतना विषैला है, उनके हाथ में भारत का भाग्य आपत्तियों से ख़ाली नहीं है और इसलिए हमारा विचार है कि उसके ऊपर जो लाञ्छन लगाए गए हैं, वे इस बात का उपयुक्त प्रमाण हैं, कि उसे औपनिवेशिक स्वराज्य अवश्य मिलना चाहिए।

* * *

'भविष्य' की कराची-कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ

कॉङ्ग्रेस-भवन के दो प्रधान प्रवेश-द्वार—दाहिनी ओर वाले द्वार का नाम 'भुर्गरी द्वार' और बाँई ओर वाले का 'अमर दत्तात्रेय और मेघराज द्वार' है। प्रथम द्वार सिन्ध के स्वनाम धन्य मुसलमान नेता स्व० भुर्गरी के पवित्र नाम की स्मृति है जो बम्बई कौन्सिल के सदस्य थे और हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रबल पक्षपाती थे। दूसरे द्वार का सम्बन्ध उन अमर स्वदेश-सेवकों की स्मृति से है जो विगत १६ अप्रैल, १९३० को, कराची सत्याग्रह समिति के नेताओं के मुक़दमे के समय कराची की अदालत में पुलिस की गोलियों से शहीद हुए थे।

इस चित्र में, दाहिनी ओर कराची कॉङ्ग्रेस के नेताओं के निवास स्थान तथा बाँई ओर 'हरचन्द नगर' के अन्यान्य स्थानों का दृश्य है।

इस चित्र में कराची कॉङ्ग्रेस-भवन का भीतरी दृश्य दिखाया गया है। एक ओर वक्ता मञ्च, तथा स्वागत-समिति का स्थान, और दूसरी ओर दर्शकों की गैलरियाँ तथा बीच में प्रतिनिधियों के बैठने के स्थान का दृश्य है।

कराची कॉङ्ग्रेस-भवन के सामने राष्ट्रीय पताका-स्तम्भ का दृश्य—सभा-भवन के दो प्रधान द्वारों का दृश्य तथा सामने का खुला मैदान जहाँ से बाहरी दर्शक राष्ट्रीय समारोह की झाँकी ले सकते हैं।

'भविष्य' की कराची-कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ

स्वर्गवासी सेठ हरचन्दराय विशनदास, भूतपूर्व एम० एल० ए०। आप कॉङ्ग्रेस के एक उत्साही कार्यकर्ता और विगत सन् १९१३ की कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के सभापति थे। आपकी आकस्मिक मृत्यु सन् १९२९ में दिल्ली में हुई थी। आप स्वर्गीय लाला लाजपतराय के बुलाने पर, एसेम्बली में साइमन कमीशन के विरुद्ध वोट देने गए थे। आप ही की अमर-स्मृति में कराची कॉङ्ग्रेस-स्थान का नाम सेठ हरचन्दराय विशनदास नगर रक्खा गया है।
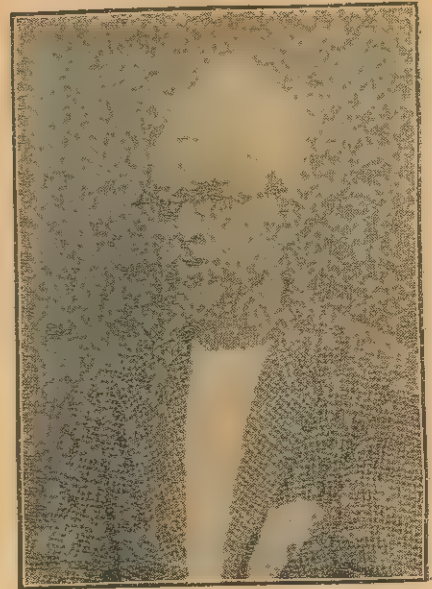
श्री० सन्तदास ईदानमल, बी० ए०, एल०-एल० बी०—कराची कॉङ्ग्रेस वालण्टियर-कोर के जनरल कमाण्डिङ्ग ऑफ़िसर।

कराची कॉङ्ग्रेस की स्वयंसेविकाओं का जत्था अपने ऑफ़िसर के प्रति सम्मान प्रदर्शन कर रहा है।

श्री० कीकीबेन चावलदास लालवानी—आप कराची कॉङ्ग्रेस स्वागतकारिणी समिति की अन्यतम उप-सभानेत्री हैं।

श्री० काशीबेन जी० कोटक—आप कराची सत्याग्रह समिति की अन्तिम डिक्टेटर की हैसियत से छः महीने की कठिन कारागार की सज़ा भोग कर आई हैं।

श्रीमती कुसुमबेन मुन्शी—आप भड़ोच के वकील श्री० ठाकोरलाल मुन्शी की पुत्री और भड़ोच के देश-सेविका सङ्घ की सभानेत्री हैं।
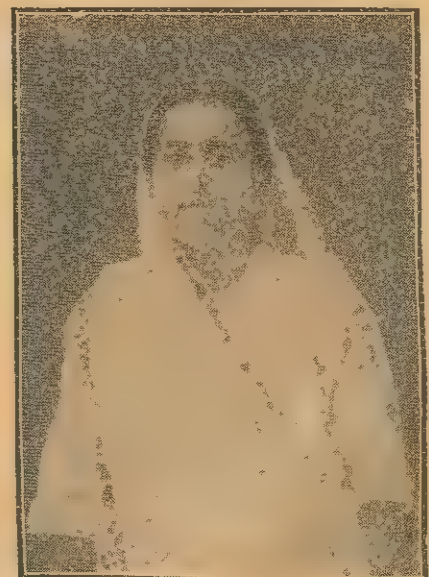
कुमारी पार्वती टी० गिडवानी—आप कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के महिला-विभाग की मन्त्रिणी हैं।

'भविष्य' की कराची-कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ

श्री० जी० एच० लालवानी—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के प्रकाशन-विभाग के सक्रेटरी इञ्चार्ज।

डॉक्टर जेमी एन० आर० सेठना—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वयंसेवक-सेना के शिक्षादाता।

सेठ ज्येष्ठाराम भवनजी—कराची कॉङ्ग्रेस कमिटी के मन्त्री तथा स्वयंसेवक-सेना के अन्यतम सीनियर ऑफ़िसर।

श्री० गुलराजमल जयरामदास—आप कराची कॉङ्ग्रेस के प्रतिनिधियों को स्टेशन से उनके निवास-स्थान पर पहुँचाने वाली समिति के मन्त्री हैं।

श्री० डी० डी० चौधरी—आप कराची कॉङ्ग्रेस की एडवाइसरी कमिटी के सदस्य और रेलवे-सुविधा-विधायिनी उप-समिति के मन्त्री हैं।

श्री० चैथराम टी० वलेछा, बी० ए०—आप कराची कॉङ्ग्रेस के मुद्रण और प्रकाशन-विभाग के मन्त्री हैं।

प्रो० एन० आर० मलकानी—पण्डाल डिकोरेशन (सजावट) कमिटी के सेक्रेटरी।

श्री० लालजी एम० मेहरोत्रा, बी० ए० बी० एल०—स्पेशल कैम्प कमिटी के सेक्रेटरी।

प्रो० घनश्याम जेठानन्द, एम० ए०, एल्-एल्० बी०—विषय-निर्वाचिनी समिति के मन्त्री।

'भविष्य' की कराची-कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ

श्री० जयन्तीलाल पारिख—आप कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागत-समिति के कोषाध्यक्ष और मुनीम हैं।

सेठ रवजी जेठाभाई—सभा-भवन सुसज्जित-कारिणी समिति के मन्त्री हैं।

श्री० तीरथ जी० सवानी बी० ए०—कराची में होने वाले अखिल भारतवर्षीय विद्यार्थी-सम्मेलन के संयोजक

श्री० हाफ़िज़ नसीर अहमद—आप कराची में होने वाले 'जमायतुल-उलमाए-हिन्द' की स्वागत-समिति के सेक्रेटरी हैं।

कुमारी जेठो सिपाहीमलानी, बी० ए०—आप कराची के 'हरचन्द नगर' अस्पताल की मन्त्रिणी हैं, जो गाँधी अस्पताल के तत्वावधान में कॉङ्ग्रेस अवसर के लिए खोला गया है।
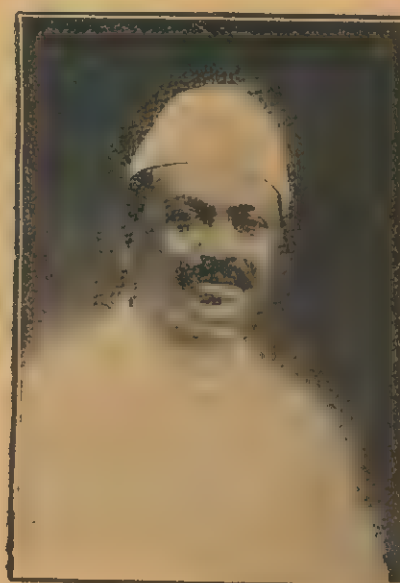
श्री० शिवराम चवन—आप कराची कॉङ्ग्रेस की प्रतिनिधि स्वागत-कारिणी समिति के मन्त्री हैं।
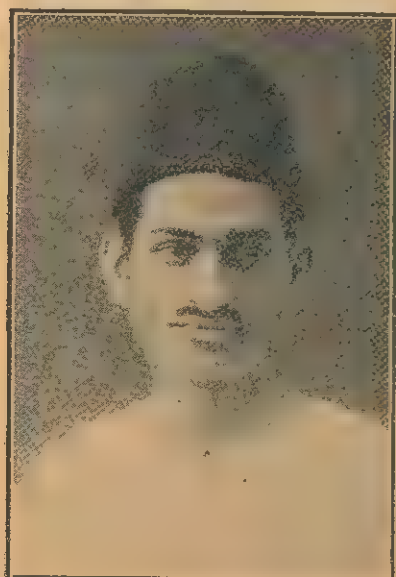
कॉमरेड मुबारकअली—कराची में होने वाले अखिल भारतीय नवजीवन सभा—सम्मेलन के प्रधान मन्त्री।

हकीम फ़तह मुहम्मद सेहवानी—आप कराची में होने वाले 'जमायतुल-उलमाए हिन्द' कॉन्फ्रेन्स की स्वागत-समिति के प्रधान मन्त्री हैं।

सेठ शिवदास वी० मानेक—आप कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागत-समिति की 'स्टीमर-सुविधा-विधायिनी समिति' के मन्त्री हैं।

पञ्जाब के तीनों विप्लववादी फाँसी पर लटका दिए गए

लाहौर में सनसनी

शहर भर में पुलिस, फ़ौज और हवाई जहाज़ों का पहरा

५० हज़ार स्त्री-पुरुष का रोमाञ्चकारी करुण-क्रन्दन

लाहौर का २३वीं मार्च का समाचार है, कि सन्ध्या के साढ़े सात बजे लाहौर सेण्ट्रल जेल में सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० सुखदेव फाँसी पर लटका दिए गए। सेण्ट्रल जेल के भीतर क़ैदियों द्वारा लगभग ७ बजे बड़ी देर तक 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगते रहे, जिससे आसपास के लोगों को इस बात का पता लग गया, कि सरदार भगतसिंह आदि फाँसी पर लटकाए जा रहे हैं।

स्व० भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह ने तार-द्वारा अधिकारियों से इस बात की प्रार्थना की थी कि भगतसिंह और उनके साथियों के मृतक शरीर अन्त्येष्टि क्रिया के लिए उन्हें दे दिए जायँ, परन्तु मृतक शरीर उन्हें नहीं दिए गए और आधी रात को सतलज नदी के किनारे जला दिए गए।

कुटुम्बियों से अन्तिम मुलाक़ात नहीं हो सकी

लाहौर का २३वीं मार्च का समाचार है, कि जेल के पदाधिकारियों ने उस दिन सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० सुखदेव के माता-पिता और भाइयों और बहिनों के अतिरिक्त अन्य सम्बन्धियों को उनसे मुलाक़ात करने की आज्ञा नहीं दी। इस आज्ञा के विरोध में सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह ने वायसराय, गवर्नर और होम-मेम्बर को तार भेजा था। परन्तु उस सम्बन्ध में कोई कार्यवाही होने के पहले ही तीनों उसी दिन सन्ध्या को फाँसी पर लटका दिए गए।

भगतसिंह और उनके साथियों की फाँसी से लाहौर में बड़ी सनसनी फैल गई है। अङ्गरेज़ी और कुछ मुसलमानी दुकानों को छोड़ कर फाँसी के विरोध में २४वीं मार्च को पूरी हड़ताल रही। शहर के कोने-कोने में लोग नङ्गे सिर एकत्रित हो रहे थे। आकस्मिक घटना के भय से फ़ौज बिल्कुल तैयार रक्खी गई थी और शहर भर में सशस्त्र पुलिस का पहरा था। आकाश में वायुयानें भी इसी उद्देश्य से उड़ रही थीं। नौजवान भारत-सभा ने एक विराट सभा में फाँसी के विरोध में एक प्रस्ताव पास किया और श्री० भगतसिंह, राजगुरु तथा सुखदेव का स्मृति-चिन्ह स्थापित करने का निश्चय किया तथा उसके लिए रुपए की अपील भी की गई। सवेरे इस सभा के अतिरिक्त काले झण्डों सहित एक विराट जुलूस निकाला गया और मिण्टो-पार्क में लगभग १०,००० स्त्री-पुरुषों की एक सभा हुई। सबके चेहरों पर उदासी छाई हुई थी। जब सभा में सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह रोते-चिल्लाते हुए उपस्थित हुए, तब सभा में उपस्थित स्त्री-पुरुषों के धैर्य का बाँध टूट गया और वे फूट-फूट कर रोने लगे। जब सभी बच्चों की नाईं रो रहे थे, तब सभा में से एक बच्चे ने उठ कर कहा कि भगतसिंह मरे नहीं हैं, वे ज़िन्दा हैं।

२ बजे दिन को नीला-गुम्बद से एक मौन जुलूस आरम्भ हुआ और ६ बजे शाम को मोरी गेट के बाहर समाप्त हुआ। शहर काँग्रेस दफ़्तर और पञ्जाब सेवा-दल के झण्डे आधे अन्तर पर (half mast) फहरा रहे थे।

सरदार भगतसिंह के अन्तिम उद्गार

फाँसी के कुछ दिन पहले सरदार भगतसिंह और उनके साथियों ने दया-प्रार्थना के लिए इन्कार करते हुए पञ्जाब गवर्नर को लिखा था—"अन्त में हम केवल यह कहना चाहते हैं, कि आपकी अदालत के फ़ैसले के अनुसार हम पर सम्राट के विरुद्ध युद्ध करने का अभियोग लगाया गया है और इस प्रकार हम युद्ध के शाही क़ैदी हैं। अतएव हमें फाँसी पर न लटका कर गोली से उड़ाया जाना चाहिए। इसका निर्णय अब आपके ही ऊपर है, कि जो कुछ अदालत ने निर्णय किया है, उसके अनुसार आप कार्य करेंगे या नहीं। हमारी आपसे विनम्र प्रार्थना है और हमें पूर्ण आशा है कि आप कृपा कर फ़ौजी महकमे को आज्ञा देकर हमारे प्राण-दण्ड के लिए एक फ़ौज या पल्टन के कुछ जवान बुलवा लेंगे।"

कहा जाता है कि, इस सम्बन्ध में एक सिक्ख और एक अन्य व्यक्ति की गिरफ़्तारी हुई है।

देश भर में असन्तोष की काली घटा

नेताओं की निराशा

महात्मा गाँधी का वक्तव्य

नई दिल्ली से कराची काँग्रेस के लिए रवाना होने के पहले ता० २४ को महात्मा गाँधी ने सहयोगी "हिन्दोस्तान टाइम्स" में प्रकाशित होने के लिए निम्न-लिखित वक्तव्य दिया है :—

"भगतसिंह और उनके साथी अमर-शहीद हो गए हैं। उनकी मृत्यु से आज लाखों व्यक्ति दुखी हैं। मैं इन नवयुवक देश-भक्तों की लगन की भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ ; परन्तु मैं देश के नवयुवकों को इस बात की चेतावनी देता हूँ, कि वे उनके पथ का अवलम्बन न करें। हमें भरसक उनके अभूतपूर्व त्याग, अदम्य उत्साह और विकट साहस का अनुकरण करना चाहिए, परन्तु उन गुणों का उपयोग उनकी तरह न करना चाहिए। देश की स्वतन्त्रता हिंसा और हत्याओं से प्राप्त नहीं होगी। गवर्नमेण्ट के सम्बन्ध में मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ, कि उसने विप्लववादियों की सहानुभूति प्राप्त करने का यह स्वर्ण-अवसर खो दिया है। सन्धि की शर्तों के अनुसार उसका यह कर्तव्य था, कि उनकी फाँसी की सज़ा वह कुछ समय के लिए स्थगित कर देती। अपने इस कार्य से उसने सन्धि पर बड़ा आघात किया है और इस बात का परिचय दिया है, कि उसमें अभी भी जनता के मनोभावों को कुचलने की शक्ति है। पशुबल के इस प्रदर्शन से यह स्पष्ट हो जाता है, कि बड़ी-बड़ी घोषणाएँ और सहानुभूति-सूचक सन्देश देने के उपरान्त भी वह अपनी शक्ति और शासनाधिकार से ज़रा भी हाथ खींचना नहीं चाहती। परन्तु गवर्नमेण्ट की इस दुर्नीति से काँग्रेस को अपने उद्देश्य और अपने निश्चय से तिल-मात्र भी न डिगना चाहिए। आवेश में आकर हमें पथ-भ्रष्ट न होना चाहिए। हमें यह समझ कर सन्तोष कर लेना चाहिए, कि फाँसी की सज़ाएँ रद्द करना सन्धि के प्रस्तावों में निहित न था। गवर्नमेण्ट पर हम गुण्डापन का दोष आरोपित कर सकते हैं, परन्तु हमें उस पर सन्धि भङ्ग करने का दोष न मढ़ना चाहिए। मेरी व्यक्तिगत राय से भगतसिंह और उनके साथियों की फाँसी से हमारी शक्ति बढ़ गई है। हमें आवेश में आकर इस अवसर को व्यर्थ न खोना चाहिए। इस फाँसी के विरोध में देश भर में हड़तालें होना बिल्कुल स्वाभाविक है। इन देश-भक्तों की फाँसी के विरोध में मौन-जुलूस निकालने से अधिक उनका सम्मान नहीं हो सकता। इस अवसर पर हमें देश पर और अधिक आहुति देने के लिए तैयार होना चाहिए।"

सरदार पटेल

२४वीं मार्च को सरदार पटेल ने भगतसिंह और उनके साथियों की फाँसी के सम्बन्ध में नई दिल्ली में निम्न वक्तव्य दिया :—

"अङ्गरेज़ी क़ानून इस बात पर अभिमान से झूमता था, कि वह गवाही में जिरह के द्वारा प्रमाणित किए बिना किसी अभियुक्त को सज़ा नहीं देता, परन्तु उसी क़ानून ने ऐसी गवाही के विश्वास पर, जो घटना के बहुत देर बाद प्राप्त हुई थी और जिसमें जिरह का नाम न था—भारत के एक श्रेष्ठ युवक की हत्या कर डाली। किसी व्यक्ति को डाकता और उच्छृङ्खलता के अपराध में सज़ा दी जा सकती है, परन्तु उसे फाँसी पर लटका देना कहाँ का न्याय है।"

पं० मदनमोहन मालवीय का क्लेश

पं० मदनमोहन मालवीय ने कराची को प्रस्थान करने के पहले मुलाक़ात में कहा—"इस फाँसी से मुझे इतना दुख हुआ है कि मेरे मुँह से शब्द नहीं निकलते।"

पं० जवाहरलाल नेहरू का वक्तव्य

२४ ता० को नई दिल्ली में राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू ने अपने वक्तव्य में कहा—"मैंने इन देश-भक्तों के अन्तिम दिनों में अपनी ज़बान पर लगाम लगा रक्खी थी, क्योंकि मुझे सन्देह था, कि मेरे ज़बान खोलते ही कहीं फाँसी की सज़ा रद्द होने में बाधा न पहुँचे। यद्यपि मेरा हृदय बिलकुल पक गया था और ख़ून अन्दर से उबाल खा रहा था, परन्तु तिस पर भी मैं मौन था। परन्तु अब फ़ैसला हो गया। हम देश भर के लोग मिल कर भी भारत के ऐसे युवक की रक्षा न कर सके, जो हमारा प्यारा रत्न था और जिसका अदम्य उत्साह, त्याग और विकट साहस भारत के युवकों को उत्साहित करता था। भारत आज अपने प्यारे बच्चों को फाँसी से छुड़ाने में असमर्थ है। इस फाँसी के विरोध में देश भर में हड़तालें होंगी और जुलूस निकलेंगे। हमारी इस परतन्त्रता और असहायता के कारण देश के कोने-कोने में शोक का अन्धकार छा जायगा। परन्तु उनके ऊपर हमें अभिमान भी होगा और जब इङ्गलैण्ड हमसे सन्धि का प्रस्ताव करेगा, उस समय उसके और हमारे बीच में भगतसिंह का मृत-शरीर उस समय तक रहेगा, जब तक हम उसे विस्मृत न कर दें।"

मौलाना ज़फ़रअली का वक्तव्य

"अभागे भारत ने अपने इतिहास में ऐसी असहायता का कभी अनुभव नहीं किया था, जैसी असहायता का अनुभव उसने २३ ता० को भगतसिंह की फाँसी के अवसर पर किया है।"

श्री० आसफ़अली का वक्तव्य

लाहौर में २३ वीं मार्च को श्री० आसफ़अली ने 'हिन्दुस्तान टाइम्स' को निम्न वक्तव्य प्रकाशनार्थ भेजा है :—

"मैं दिल्ली से लाहौर, पञ्जाब-गवर्नमेण्ट से आज्ञा लेकर भगतसिंह से इस आशय से मिलने आया था, कि मैं क्रान्तिकारी दल के नाम उनसे एक पत्र प्राप्त करूँ, जिसमें वे उन्हें इस बात का आदेश दें, कि अब तक महात्मा गाँधी के अहिंसात्मक आन्दोलन से भारत के लिए स्वतन्त्रता प्राप्त करने की आशा है, तब तक के लिए वह अपने हिंसात्मक कार्य स्थगित कर दें। मैंने उनसे मुलाक़ात करने के लिए हर एक उपाय से काम लिया, परन्तु चारों ओर से दरवाज़ा बन्द पाया। मैंने पदाधिकारियों को यह स्पष्ट रूप से समझा दिया था, कि भगतसिंह से मिलने का उद्देश्य केवल अहिंसात्मक आन्दोलन के लिए सहायता प्राप्त करना है और उन्हें यह विश्वास भी दिलाया था, कि उस मुलाक़ात से मुझे बहुत सफलता मिलने की आशा है, परन्तु मेरी अनुनय-विनय का मुझे जो उत्तर मिला, उसमें अधिकार का मद निहित था। यदि मुझे भगतसिंह से मुलाक़ात करने का अवसर दिया जाता, तो मुझे विश्वास है कि क्रान्तिकारी दल से महात्मा गाँधी के मार्ग का अनुकरण कराने में बहुत सहायता मिलती। ऐसे मामले में, जिसका सम्बन्ध लाखों भारतवासियों से है, भगतसिंह जैसा देश-भक्त उन लोगों को, जिनका यह विश्वास है कि राजनैतिक दोषों को पूरा करने के लिए राज्यक्रान्ति की आवश्यकता है—उपदेश देने में किञ्चित सङ्कोच न करता।

* * *

कुछ समाचार-पत्रों की सम्मतियाँ

भगतसिंह और उनके साथियों को फाँसी पर लटकाने में जल्दबाज़ी कर गवर्नमेण्ट ने समस्त देश के मनोभावों को कुचलने का प्रयत्न किया है। उसने ऐसे अवसर पर जो भयङ्कर भूल की है, उसका सन्धि पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता।

—हिन्दू (अङ्गरेज़ी)

राजनैतिक दृष्टि से इससे अधिक शैतानी कार्य की योजना नहीं की जा सकती।

—स्वराज्य (अङ्गरेज़ी)

गवर्नमेण्ट ने विप्लववादियों की सहानुभूति प्राप्त करने का सुवर्ण-अवसर हाथ से खो दिया है।

—स्वदेश मित्रम् (अङ्गरेज़ी)

भगतसिंह और उनके साथियों की फाँसी से देश के शिक्षित युवकों में भयङ्कर असन्तोष फैलने की सम्भावना है। उनके प्राणों की भिक्षा के लिए गवर्नमेण्ट के पास हज़ारों प्रार्थना-पत्र भेजे गए, सैकड़ों सभाएँ हुईं; परन्तु अन्त में उनका परिणाम कुछ भी न निकला। यद्यपि जनता ने इन वीर और अमर देशभक्तों को, जिन्हें क़ानून ने अन्तिम दण्ड दिया था, जुलूस निकाल कर और अन्य प्रकार से बचाने का प्रयत्न किया था; परन्तु उनकी क़ानूनी कार्यवाही में इतनी भूलें थीं, कि यदि गवर्नमेण्ट चाहती तो उन्हें क़ानून के आधार पर मुक्त कर सकती थी। इसमें सन्देह नहीं, कि गवर्नमेण्ट ने कराची कॉङ्ग्रेस के अवसर पर उन्हें फाँसी पर लटका कर महात्मा गाँधी के मार्ग में काँटे बिखरा दिए हैं।

—लीडर (अङ्गरेज़ी)

सरदार भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव की फाँसी की सज़ा रद्द न कर, गवर्नमेण्ट ने जैसी भयङ्कर भूल की है, उसकी तुलना कई वर्षों की किसी भयावह घटना से नहीं की जा सकती। इस देश के इतिहास में इतनी सनसनी किसी मामले में नहीं फैली, जितनी इस मामले में; और न कभी किसी मामले में फाँसी की सज़ा रद्द कराने के लिए देश ने इतनी अनुनय-विनय ही की है।

—ट्रिब्यून (अङ्गरेज़ी)

सरदार भगतसिंह को फाँसी हो गई और सरकार समझती है, कि शायद इन देश-भक्तों को फाँसी देकर उसने विप्लववाद का नाश कर दिया है, पर उसे मालूम होना चाहिए, कि इस एक ही घटना से उसकी कठिनाइयाँ हज़ार गुना बढ़ गईं। और इससे केवल यही भय नहीं है कि विप्लव की आग और भी भड़केगी, वरन् यह भी सम्भव है कि इस घटना से महात्मा गाँधी का प्रभाव भी एकदम कम हो जाय, जिसने देश को ख़ून-ख़राबी से अब तक बचा रक्खा है।

—रियासत (उर्दू)

सरदार भगतसिंह आदि को फाँसी देकर सरकार ने केवल अपने ही मार्ग में कठिनता का सामान पैदा नहीं कर लिया है, बल्कि कॉङ्ग्रेस को भी मुश्किल में डाल दिया है।

—अवध अख़बार (उर्दू)

हम यह तो नहीं कह सकते, कि सरकार ने यह काम बुद्धिमानी का किया है या मूर्खता का, क्योंकि यह तो समय ही बताएगा। परन्तु यह अनुमान करना कठिन नहीं, कि इससे देश में बेचैनी बढ़ेगी और महात्मा गाँधी जैसे बुद्धिमान और प्रभावशाली नेताओं का स्थान नवयुवक कौन लेंगे।

—शेर ख़ालसा (उर्दू)

× × × जहाँ तक देश में शान्ति की प्रतिष्ठा और भारत तथा इङ्गलैण्ड के सम्बन्ध को क़ायम रखने का प्रश्न है, हमारी राय में इस फाँसी से उसको असह्य चोट लगी है। लॉर्ड इरविन और मि० मैकडॉनल्ड ने एक से अधिक बार दोनों देशों में अच्छा सम्बन्ध स्थापित करने की अपील की थी, जिसके उत्तर में महात्मा गाँधी ने अपना सत्याग्रह बन्द कर दिया और सरकार को मौक़ा दिया......परन्तु शोक है कि इन्हीं लॉर्ड इरविन और मि० मैकडॉनल्ड के शासन-काल में सरदार भगतसिंह आदि को फाँसी के तख़्ते पर लटका कर देश की शान्ति के पर्दे पर बिजलियाँ गिराने की चेष्टा की गई है।

—वतन (उर्दू)

× × × शासन-तन्त्र ने एक ऐसा क़दम बढ़ाया, जिसका परिणाम किसी दशा में अच्छा नहीं हो सकता। शासन-तन्त्र में सञ्चालकों को सोचना चाहिए, कि जिस भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव के लिए पेशावर से बम्बई और काश्मीर से कन्याकुमारी तक के लोग मेमोरियल भेज रहे हैं, आख़िर कोई बात है, जिसकी वजह से देश उन्हें जीवित रखना चाहता है। अफ़सोस है कि नौकरशाही ने शासन को सर्व-प्रिय बनाने का एक नायाब मौक़ा सदा के लिए खो दिया।

—मिलाप (उर्दू)

समस्त भारत के एक स्वर से प्रार्थना करने पर भी आख़िर भगतसिंह फाँसी पर लटका ही दिया गया और नौकरशाही ने अपनी अदूरदर्शिता से हिंसावादी दल को अहिंसावादी राजनीतिकों के विरुद्ध आन्दोलन करने तथा सर्वसाधारण को उत्तेजित करने का मौक़ा दे ही दिया।

—रोज़ाना ख़िलाफ़त (उर्दू)

सरदार भगतसिंह को फाँसी देने में यदि क़ानून से मजबूर थी, तो क्या यह ग़ैर-क़ानूनी तौर पर फाँसी देने के लिए भी वह मजबूर थी? जिस न्याय की नींव पर ब्रिटिश सरकार का दावा है, कि उसका महल खड़ा है, क्या वह यही है?

—अर्जुन (हिन्दी)

सरकार की ज़िद से यह बात सिद्ध होती है, कि उदारता के ढोल पीटने पर भी सरकार अपने हाथ की शक्ति कम नहीं करना चाहती।

—नवीन भारत (हिन्दी)

सरकारी हलक़ों में इङ्गलैण्ड और भारत के सम्मान-पूर्ण समझौते के शत्रु तो बहुत से हैं, परन्तु जिस व्यक्ति ने वायसराय को इस आख़िरी मौक़े पर इन नौजवानों को फाँसी पर लटकाने की सलाह दी है, वह सचमुच दोनों देशों का कट्टर दुश्मन भी है और अत्यन्त मूर्ख भी।

—पञ्जाब-केसरी (हिन्दी)

समस्त राष्ट्र के आवेदन-निवेदन से भी भारत-सरकार विचलित नहीं हुई। भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव को फाँसी पर लटक कर प्राण दे देना पड़ा! ये जीवनाञ्जलि देकर मृत्यु का स्वागत करने को प्रस्तुत थे। इन्होंने क्षमा की प्रत्याशा नहीं की थी—प्रार्थना भी नहीं की थी, इनका अन्तिम पत्र इस बात का प्रमाण है। तब भी इनकी मृत्यु के कारण सारे देश पर विषाद की काली छाया पड़ गई है। यह शोक की स्तब्धता नहीं, क्षोभ का गाम्भीर्य है।..............सरकार के मनोभावों में परिवर्तन हुआ है—ऐसा विश्वास न होता तो समस्त देश इस तरह क्षमा-प्रार्थना और प्रत्याशा न करता। विप्लवी और विप्लव के सन्देह में गिरफ़्तार व्यक्तियों को उत्पीड़ित न करके, अगर दया द्वारा उन्हें हिंसा के पथ से लौटा लाने की नीति का अवलम्बन किया जाता तो तोप व बन्दूक़ के बल से बलवान ब्रिटिश सरकार को कोई दुर्बल समझ कर उपहास नहीं करता!

—आनन्द बाज़ार पत्रिका (बँगला)

* * *

भविष्य की नियमावली

१—'भविष्य' प्रत्येक बृहस्पति को सुबह ४ बजे प्रकाशित हो जाता है।

२—किसी ख़ास अङ्क में छपने वाले लेख, कविताएँ अथवा सूचना आदि, कम से कम एक सप्ताह पूर्व, सम्पादकों के पास पहुँच जाना चाहिए। बुधवार की रात्रि के ८ बजे तक आने वाले, केवल तार द्वारा आए हुए आवश्यक, किन्तु संक्षिप्त, समाचार आगामी अङ्क में स्थान पा सकेंगे, अन्य नहीं।

३—लेखादि काग़ज़ के एक तरफ़, हाशिया छोड़ कर और साफ़ अक्षरों में भेजना चाहिए, नहीं तो उन पर ध्यान नहीं दिया जायगा।

४—हर एक पत्र का उत्तर देना सम्पादकों के लिए सम्भव नहीं है, केवल आवश्यक, किन्तु ऐसे ही पत्रों का उत्तर दिया जायगा, जिनके साथ पते का टिकट लगा हुआ लिफ़ाफ़ा अथवा कार्ड होगा, अन्यथा नहीं।

५—कोई भी लेख, कविता, समाचार अथवा सूचना बिना सम्पादकों का पूर्णतः इतमीनान हुए 'भविष्य' में कदापि न छप सकेंगे। सम्वाददाताओं का नाम, यदि वे मना कर देंगे तो, न छापा जायगा, किन्तु उनका पूरा पता हमारे यहाँ अवश्य रहना चाहिए। गुमनाम पत्रों पर ध्यान नहीं दिया जायगा।

६—लेख, पत्र अथवा समाचारादि बहुत ही संक्षिप्त रूप में लिख कर भेजना चाहिए।

७—समालोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ आनी चाहिएँ।

८—परिवर्तन में आने वाली पत्र-पत्रिकाएँ तथा पुस्तकें आदि सम्पादक "भविष्य" (किसी व्यक्ति-विशेष के नाम से नहीं) और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र तथा चन्दा वग़ैरह मैनेजर "भविष्य" चन्द्रलोक, इलाहाबाद के पते से आना चाहिए। प्रबन्ध-विभाग सम्बन्धी पत्र सम्पादकों के पते से भेजने में उनका आदेश पालन करने में असाधारण देरी हो सकती है, जिसके लिए किसी भी हालत में संस्था ज़िम्मेदार न होगी !!

९—सम्पादकीय विभाग सम्बन्धी पत्र तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र अलग-अलग आना चाहिए। यदि एक ही लिफ़ाफ़े में भेजा जाय तो अन्दर दूसरे पते का कवर भिन्न होना चाहिए।

१०—किसी व्यक्ति-विशेष के नाम भेजे हुए पत्र पर नाम के अतिरिक्त "Personal" शब्द का होना परमावश्यक है, नहीं तो उसे संस्था का कोई भी कर्मचारी साधारण स्थिति में खोल सकता है और पत्रोत्तर में असाधारण देरी हो सकती है।

—मैनेजिङ्ग डाइरेक्टर

२७ मार्च, सन् १९३१

परीक्षा का अवसर

अन्त में वही हुआ, जिसकी किसी भी विचारशील व्यक्ति को आशा नहीं थी। सारे देश की संयुक्त प्रार्थना ठुकरा दी गई। जीवन-भिक्षा के लिए पसारी हुई भारतवासियों की झोली में तीन अभागे भारतीय नौजवानों की ठण्डी लाशें डाल दी गईं ! तीनों असहाय राजबन्दी २३वीं मार्च की शाम को लाहौर सेण्ट्रल जेल में फाँसी के तख़्ते पर लटका दिए गए ! इस एकाङ्गी नाटक का सब से लज्जापूर्ण पहलू यह था, कि अकारण ही ऐसी-ऐसी अड़चनें उपस्थित कर दी गईं, कि पिता पुत्र को और पुत्र पिता को, माँ बेटे को और बेटा माँ को; भाई बहिन को और बहिन भाई को, अन्तिम बार आँखें भर कर देख भी नहीं सके थे, कि काला पर्दा गिरा दिया गया। इससे भी ग्लानिपूर्ण बात यह थी, कि इन अभागे (अभागे इसलिए, कि इन बेचारों ने पराधीन भारत में जन्म लिया था) नवयुवकों की लाशें तक सम्बन्धियों को नहीं दी गईं और बेचारों को हृदय मसोस कर रह जाना पड़ा ! ऐसी परिस्थिति में नवयुवकों को अपनी परवशता पर घृणा उत्पन्न होना बिल्कुल स्वाभाविक है। मूर्तिमती करुणा का निरीक्षण उन लोगों ने किया है, जो २४वीं मार्च को होने वाली लाहौर की शोक-सभा में उपस्थित थे। समाचार-पत्रों का कहना है, कि लगभग ५०,००० लोगों की उपस्थिति थी और सभों की आँखें भरी हुई थीं—ठीक उसी समय, जब कि सभा की कार्यवाही प्रारम्भ होने जा रही थी, स्वर्गीय सरदार भगतसिंह के पूज्य पिता सरदार किशनसिंह जी बालकों के समान फूट-फूट कर रोते हुए आए—वे पुत्र-वियोग में अपने बाल नोचते और कहते थे कि, "हाय साडे पुत्तर दी लाश तक ज़ालमाँ ने नहीं दित्ती" (अर्थात् ज़ालिमों ने मेरे पुत्र का शव तक मुझे नहीं दिया) उनके करुण-विलाप के प्रारम्भ होते ही सारी सभा फूट-फूट कर रोने लगी, स्त्रियों की हिचकियाँ बँध गईं। उपस्थित महिलाओं के बार-बार आग्रह करने पर स्वर्गीय श्री० शिवराम राजगुरू की पूजनीय माता और बहिन को प्लेटफ़ॉर्म पर दर्शन देने के अभिप्रायः से खड़ी होना पड़ा। कहा जाता है, उस समय सारी उपस्थिति अपने सर्वोच्च स्वर से ढाड़ें मार-मार कर रो रही थी। श्री० राजगुरु की भगिनी के अतिरिक्त, अन्य कई महिलाएँ बेहोश तक हो गईं ! बच्चे माता-पिता को रोते देख कर रो पड़े ! दुखित परिवारों को धैर्य धराने वाला और उन्हें सान्त्वना देने वाला सभा में एक भी व्यक्ति नहीं था; यद्यपि प्रत्येक हृदय में सहानुभूति और समवेदना की प्रत्यक्ष-भावनाएँ हिलोरें ले रही थीं, किन्तु इन अभागों के पास साधन ही क्या था ? हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य रूपी कोढ़, विश्वासघातियों की टोली और पाण्डु-वर्ण के नवयुवकों के अतिरिक्त इन अभागों के पास रक्खा ही क्या था ?? एक ओर था विशाल एवं सङ्गठित ब्रिटिश साम्राज्य, क़िले के समान बड़ी-बड़ी सुरक्षित जेलें और भाड़े की पुलिस और पल्टनों के चमकते हुए शस्त्रों का आतङ्क और दूसरी ओर थी निरीह भारतवासियों की खुली छातियाँ और ठण्डी साँसें ! कौन किसको धैर्य बँधवाने का साहस करता ? अस्तु।

महात्मा गाँधी, राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू तथा श्री० जे० एम० सेन गुप्ता-जैसे प्रतिभाशाली नेताओं के वक्तव्यों को पढ़ कर सहसा इस दुखदाई समाचार पर विश्वास करने की इच्छा नहीं होती थी, किन्तु दुर्भाग्य से समाचार सत्य था। महात्मा गाँधी बार-बार—२२वीं मार्च की सन्ध्या तक—देशवासियों को खुले शब्दों में आश्वासन दिलाते रहे हैं, कि यदि "भारतवासी सन्धि की शर्तों का पूर्णतः पालन करेंगे तो अहिंसात्मक ही नहीं, वरन हिंसात्मक क़ैदियों तक के मुक्त होने की पूरी सम्भावना है" कलकत्ते में अपना वक्तव्य देते हुए, श्री० सेन गुप्ता महोदय ने भी इसी प्रकार की अनेक अनर्गल एवं निराधार बातें कह डाली थीं। लाख चेष्टा करने पर भी देशवासी नेताओं की इस पहेली को आज तक नहीं समझ सके हैं—वे जानना चाहते हैं, कि महात्मा गाँधी-जैसे प्रतिष्ठित नेता ने आख़िर किस भ्रम में पड़ कर यह ख़याली-पुलाव पका डालने का साहस किया था ? तरुण-भारत आज महात्मा जी से इस बात की कैफ़ियत तलब करना चाहता है और एक हद तक उसका यह कार्य क्षम्य भी है।

इस सिलसिले में यह बतला देना भी अप्रासाङ्गिक न होना चाहिए, कि यद्यपि गाँधी-इर्विन समझौते की सफलता पर एक ओर जहाँ अधिकांश जनता ने हर्ष और सन्तोष प्रगट किया था, वहाँ दूसरी ओर एक छोटा-सा दल ऐसा भी था, जिसने सदा इस समझौते को सन्देह एवं घृणा की दृष्टि से देखा था; दुर्भाग्य से आज देश में ऐसी विषम परिस्थिति उत्पन्न हो गई, जिसने बलात् बहुमत को दूसरे दल वालों की दूरदर्शिता का क़ायल कर दिया है और २२वीं मार्च को देश का जो सब से कमज़ोर दल था, वही स्वेच्छाचारिता का पुट पाकर २३ वीं मार्च की शाम को देश का सब से प्रबल अङ्ग बन गया है। आज एक ऐसा दल भी देश में उपस्थित हो गया है, जो महात्मा गाँधी के नेतृत्व में कार्य करना चाहता अवश्य है, किन्तु इच्छा से नहीं—बाध्य होकर, क्योंकि देश के समक्ष कोई दूसरा कार्यक्रम उपस्थित ही नहीं है, अतएव कर्तव्य समझ कर ही यह दल महात्मा गाँधी और उनकी राजनीति का साथ दे रहा है। गर्म-दल के नवयुवक तो आज खुले-आम महात्मा जी को गालियाँ दे रहे हैं। बम्बई में मज़दूर-दल के नेताओं ने "गाँधी का नाश हो" के खुले नारे लगाए थे और २९ वीं मार्च का समाचार है, कि कराची पहुँचने पर एक दल ने महात्मा गाँधी का काले झण्डे लेकर इसी प्रकार के नारों से स्वागत किया है।

"हमें नेताओं की ज़रूरत नहीं"

"गाँधी-इर्विन समझौते का नाश हो"

"महात्मा गाँधी का नाश हो"

आदि अनेक प्रकार के नारों द्वारा देश के पूज्य एवं प्रतिष्ठित नेताओं का स्वागत होना, भविष्य के गर्भ में छिपी हुई एक विषम परिस्थिति का परिचायक है, इसमें सन्देह नहीं।

इस गर्म दल के नेताओं का कहना है, कि जिस समझौते के लिए अगस्त में स्वयं गवर्नमेण्ट ने कॉङ्ग्रेस को आमन्त्रित किया था, वह आज के समझौते की अपेक्षा बहुत सस्ता सौदा होता। उस समय भी गवर्नमेण्ट समस्त राजनैतिक क़ैदियों को बिना किसी शर्त के छोड़ देने को तैयार थी, पुलिस के अत्याचारों की जाँच, न तब होती और न आज हुई। रह गया नमक का मामला, वह भी किसी तरह हल हो ही गया होता। फिर इन ७-८ महीनों में (अगस्त से ३री मार्च तक) इतनी आहुतियाँ देने की क्या आवश्यकता थी? सैकड़ों लोगों की जानें पुलिस की लाठियों और गोलियों द्वारा गवाँ कर, माँ-बहिनों का इतना असहनीय निरादर करा कर तथा ५०-६० हज़ार देशवासियों को आख़िर जेल भेजने की ज़रूरत ही क्या थी; जब कि कॉङ्ग्रेस को उन्हीं माँगों पर सन्तोष कर लेना था, जो कि अगस्त में स्वयं उसके चरणों पर लोट रही थीं?

इस समझौते में यदि गर्म दल के भारतवासियों को आशा की कोई झलक दिखाई दी थी, तो केवल महात्मा गाँधी तथा कुछ अन्य नेताओं का यह भ्रम-पूर्ण आश्वासन कि हिंसात्मक राजबन्दी अवश्य ही छोड़ दिए जावेंगे। स्वर्गीय सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु तथा श्री० सुखदेव के सम्बन्ध में महात्मा जी का स्पष्ट वक्तव्य था, कि "इन नवयुवकों की केवल फाँसी की सज़ा को बदल कर आजीवन कारावास-दण्ड ही नहीं कर दिया जायगा, बल्कि यदि इस समझौते को मनसा-वाचा-कर्मणा से कार्यरूप में परिणत किया गया, तो ये सारे राजबन्दी बिल्कुल मुक्त कर दिए जावेंगे।" जहाँ तक हमारा ख़्याल है, भारतवासियों की ओर से—जिसमें हम हिंसात्मक क्रान्तिकारियों को भी जोड़ लेते हैं—कोई भी बात ऐसी नहीं की गई, जो गाँधी-इर्विन समझौते के विरुद्ध कही जा सके। ऐसी हालत में देशवासियों का महात्मा गाँधी के प्रति क्षणिक असन्तोष का फैलना अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता।

गर्म दल के भारतवासियों का स्पष्ट मन्तव्य यह है, कि जब तक लॉर्ड इर्विन की सरकार सभी राजनैतिक क़ैदियों को छोड़ना स्वीकार न कर लेती—चाहे वे हिंसात्मक राजबन्दी थे अथवा अहिंसात्मक—तब तक इस समझौते को उन्हें तिरस्कार की दृष्टि से देखना चाहिए था। गर्म दल के भारतवासियों का यह पूर्ण विश्वास है, कि महात्मा गाँधी यदि इस शर्त पर अड़ गए होते—ख़ास-कर, जब कि उनकी अधिकांश शर्तें पूरी नहीं की गई थीं, तो झक मार कर लॉर्ड इर्विन को उनके सामने इस मामले में नत-मस्तक होना पड़ता। इस दल वालों का यह निर्णय बिल्कुल निराधार भी नहीं है। आयर्लैण्ड में भी स्वतन्त्रता-युद्ध के अन्त में ठीक ऐसे ही समझौते का अवसर उपस्थित हुआ था, महात्मा गाँधी के स्थान पर वहाँ आसीन थे श्री० डी० वेलेरा और लॉर्ड इर्विन के आसीन को बृटिश-प्रतिनिधि की हैसियत से सुशोभित करने वाले थे, मि० लॉयड जॉर्ज। कार्यवाही प्रारम्भ होने के पूर्व ही मि० डी वेलेरा ने पहिला प्रश्न उपस्थित किया था समस्त राजबन्दियों को फ़ौरन छोड़ देने का—चाहे वे हिंसात्मक क्रान्ति के पुजारी हों अथवा अहिंसात्मक क्रान्ति के! दूसरा कोई उपाय न देख कर, ब्रिटिश प्रतिनिधि मि० लॉयड जॉर्ज को घुटने टेक देने पड़े थे और अन्त में मि० डी वेलेरा की पूर्ण विजय हुई। सारे राजबन्दी जब रिहा कर दिए गए, तब कहीं समझौते के प्रश्नों पर विचार किया गया। ओडूगन (Mr. Odugan) और मि० मैकगोमन (Mr. MacGoman) जैसे भयङ्कर हिंसात्मक क्रान्तिकारी, जिन्हें मृत्यु दण्ड की आज्ञा सुना दी गई थी—केवल रिहा ही नहीं कर दिए गए, बल्कि उनके परामर्श से समझौते का ढाँचा निर्माण हुआ था। कौन कह सकता है, यदि महात्मा गाँधी भी ज़रा अधिक दूरदर्शिता से काम लिए होते, तो इन नवयुवकों की सम्भवतः जानें बच गई होतीं। गर्म दल के लोगों का महात्मा गाँधी पर इसी बात का रोष है और हमें भय है, इस दल के लोगों को कराची-कॉङ्ग्रेस के अवसर पर शान्त रखना महात्मा जी के लिए सहज कार्य नहीं होगा।

इस सिलसिले में हम फिर उन नवयुवकों से भी अपील करना अपना कर्तव्य समझते हैं—जिनका विश्वास प्रतिहिंसा और परिशोध में है—कि उन्हें 'भविष्य' के गताङ्क में प्रकाशित हमारी उन पंक्तियों पर अवश्य विचार करना चाहिए, जो उन्हीं को सम्बोधन करके लिखी गई थीं। सरदार भगतसिंह, श्री० शिवराम राजगुरु तथा श्री० सुखदेव के शरीर अब इस नश्वर जगत की वस्तु नहीं रहे, मिट्टी और शक्ति वाला अंश आज क्रमशः मिट्टी और भगवान में मिल गया होगा। उनके अधिकांश साथी, सहायक और सलाहकार आज जीवन के उस पार हो गए हैं, जो थोड़े-बहुत शेष बचे हैं, वे भूखे प्यासे रह कर जगह-जगह मारे फिर रहे हैं—इस समय जीवन-रक्षा का प्रश्न उनके लिए सर्वोपरि एवं स्वाभाविक है। ऐसी असङ्गठित परिस्थिति में क्षणिक रोष और आत्म-ग्लानि के वशीभूत होकर उन्हें कोई भी ऐसा कार्य न करना चाहिए, जिससे अकारण ही और भी क्षति उठानी पड़े। उन्हें स्मरण रखना चाहिए, कि महात्मा गाँधी ने अपना आन्दोलन आरम्भ करते हुए कहा था, कि उन्हें अपने असहयोग और अहिंसा के उपयोग में सच्चा विश्वास है और सफलता की उन्हें पूर्ण आशा भी है। उन्होंने हिंसात्मक क्रान्ति के उपासकों से बड़े ज़ोरों से इस बात की अपील की थी, कि परमात्मा के नाम पर वे उनके आन्दोलन को कम से कम ३ वर्षों तक अपने हिंसात्मक कार्यों द्वारा धक्का न पहुँचावें। उन्होंने यह भी कहा था, कि इस अवधि में यदि भारत स्वतन्त्र न हो गया, तो अपने इस आन्दोलन में स्वयं उन्हें अविश्वास हो जायगा और फिर "उन्हें हिंसात्मक क्रान्ति के पुजारियों के रास्ते में रोड़े अटकाने का कोई नैतिक हक़ न होगा।" उनके इस आन्दोलन का एक वर्ष ३रा मार्च को समाप्त हो चुका है; अतएव महात्मा गाँधी के शब्दों में आगामी दो वर्षों तक यदि किसी भी प्रकार की उद्दण्डता का परिचय दिया गया, तो स्वतन्त्रता के इस युद्ध की सारी विफलता का दोष उनके माथे में सदा के लिए कलङ्क की भाँति लग जायगा, इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं। अस्तु।

इसी प्रश्न का एक दूसरा पहलू भी है। अन्यत्र प्रकाशित "भारत की स्वाधीनता-साधना" शीर्षक लेख के कुशल लेखक ने कॉङ्ग्रेस के आन्दोलन से साथ ही साथ रौलेट कमिटी की रिपोर्ट के आधार पर भारतीय हिंसात्मक आन्दोलन की भी चर्चा की है, उसे एक बार ठण्डे दिल से विचार करने पर उन्हें मालूम होगा, कि उनका दल आज की अपेक्षा सन् १९०७ से १९२४ तक हज़ार गुना सुदृढ़ और सङ्गठित था। अपनी ओर से भारत में विप्लव उपस्थित कर देने में उन्होंने कोई कसर उठा नहीं रक्खी थी, फिर भी उन्हें पग-पग पर असफलता हुई थी और अन्त में एक प्रकार से उनके सारे ही दल का नाश हो गया; फिर आज उनकी संख्या और शक्ति कितनी है, जिसके बल पर वे संसार के सब से शक्तिशाली राष्ट्र से लोहा लेना चाहते हैं? अधिक से अधिक उनकी संख्या समस्त भारत में एक से दो सहस्र तक आँकी जा सकती है, जिनके पास न धन है, न अस्त्र-शस्त्र; न देशवासियों का पूर्ण सहयोग है और न सङ्गठन! ऐसी परिस्थिति में हिंसात्मक क्षेत्र में बिना समझे-बूझे कूद पड़ना कहाँ तक बुद्धिमानी है, इसका निर्णय हमारी अपेक्षा वे अधिक उत्तमता से कर सकते हैं।

हमारी तो निश्चित-धारणा है, कि जहाँ उन्हें इतनी अधिक क्षति उठानी पड़ी है, वहाँ इन तीन प्रतिभाशाली नवयुवकों की भी आहुति समझ कर वे सन्तोष करें और अपनी सारी शक्ति कॉङ्ग्रेस के अहिंसात्मक आन्दोलन में उस समय तक लगा दें, जब तक कोई निश्चित निबटारा नहीं हो जाता।

सहसा विश्वास करने की इच्छा तो नहीं होती, किन्तु यदि कॉङ्ग्रेस और गवर्नमेण्ट में किसी भी प्रकार का समझौता हुआ, तो अब यह समझौता तभी सम्भव होगा, जब शेष सारे राजनैतिक बन्दी—चाहे वे हिंसात्मक अपराध के दोषी हों अथवा अहिंसात्मक अपराधों के—छोड़ नहीं दिए जाते। उन्हें आशापूर्ण नेत्रों से उस शुभ दिन का स्वागत करना चाहिए, उनका रास्ता रोकना बुद्धिमानी का परिचायक नहीं है।

गवर्नमेण्ट से हमें केवल इतना ही कहना है, कि एक ऐसे समय में, जबकि भारत की राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन होने जा रहा था—उसने इन तीन नवयुवकों को फाँसी पर लटका कर ऐसी भयङ्कर अदूरदर्शिता का परिचय दिया है, जिसका प्रायश्चित्त केवल भारत को ही नहीं, इङ्गलैण्ड को भी करना होगा। इन तीन नवयुवकों को यदि फाँसी पर लटकाना ही गवर्नमेण्ट का अभीष्ट था, तो दो-चार सप्ताह उनके और जीवित रहने से ब्रिटिश राज्य का ध्वंस नहीं हुआ जाता था। जहाँ वे न्याय के नाम पर वर्षों से कारागार में पड़े सड़ रहे थे, वहाँ २-४ सप्ताह और भी वास्तविक शान्ति के नाम पर रक्खे जा सकते थे; किन्तु यह प्रश्न नहीं था, प्रश्न यह था, कि इस सुअवसर को ब्रिटिश गवर्नमेण्ट हाथ से इसलिए नहीं जाने देना चाहती थी, कि उसे इतने तुमुल राष्ट्रीय संग्राम के बाद अपनी तथा महात्मा गाँधी के शक्ति की परीक्षा करनी थी। पर आज जबकि ये पंक्तियाँ लिखी जा रही हैं, हमारे लिए इस परीक्षा के नताजे पर टिप्पणी करना सम्भव नहीं है। बिना कॉङ्ग्रेस की यवनिका पतन हुए, किसी भी निश्चित-धारणा पर पहुँचना एक बार ही असम्भव है; किन्तु इतना तो स्पष्ट है कि आज भारत के सभी राजनीतिज्ञ परीक्षा की कसौटी पर चढ़े हुए हैं, आज इनकी दूरदर्शिता पर भारत का भावी कल्याण और इनकी अदूरदर्शिता पर देश का सर्वनाश निश्चित है।

धन्यवाद

मेरे जेल से मुक्त होने पर जिन मित्रों तथा सम्बन्धियों ने बधाई के पत्र तथा तारादि मेरे पास भेजे हैं, समयाभाव के कारण उनकी सेवा में व्यक्तिगत-पत्र लिखना मेरे लिए सम्भव नहीं है; अतएव इन पंक्तियों द्वारा उन सभी भाई-बहिनों को मैं हृदय की सारी सच्चाई से धन्यवाद देता हूँ और मुझे आशा है, वे इसे स्वीकार करेंगे।

मेरी अनुपस्थिति में आए हुए पत्रों का उत्तर देना भी सम्भव नहीं था और चूँकि इतनी जल्दी मेरे मुक्त होने की कोई सम्भावना नहीं थी, इसलिए अनेक पत्रों का फ़ाइल कर दिया जाना भी स्वाभाविक ही था।

जिन मित्रों को पत्रोत्तर न मिला हो, उनसे मैं क्षमा-प्रार्थी हूँ।

—रामरखसिंह सहगल

हमारा सरदार !

[श्री० दीनानाथजी, एम० ए०]

राष्ट्र-निर्माण के समय किसी भी देश की आधार-शिला उसके योद्धाओं पर रक्खी जाती है। इसीलिए योद्धा देश के प्राण होते हैं। शताब्दियों की ग़ुलामी के उपरान्त आज देश ने करवट बदली है और उसमें जागृति का सञ्चार हुआ है। आधुनिक भारत का नए सिरे से निर्माण हो रहा है और इस राष्ट्रीय निर्माण के उद्योग में सन् १८५७ से लेकर अब तक भारत अपने अगणित योद्धाओं की आहुति दे चुका है। आधुनिक भारत की नींव में जिन योद्धाओं की अस्थियाँ गारे के रूप में लग चुकी हैं, वे इस देश के चमकते हुए नक्षत्र के समान हैं। देश की भावी सन्तति सदैव उनकी पूजा करेगी। सरदार वल्लभभाई पटेल उन्हीं योद्धाओं में से हैं, जिनका भारतीय राष्ट्र-निर्माण में ज़बरदस्त हाथ है। बारदोली का उदाहरण सम्मुख रख उन्होंने देश के किसानों को जिस प्रकार स्वतन्त्रता के संग्राम के लिए अग्रसर किया है, वह भारतीय स्वतन्त्रता के इतिहास में चिर-स्मरणीय रहेगा। बारदोली के सत्याग्रह संग्राम में कुछ दिन पहले उन्होंने जिस वीरता से नौकरशाही से लोहा लिया था, उसे पाठक अभी भूले न होंगे। नौकरशाही ने वहाँ हर सम्भव-उपाय से सरदार को परास्त करने का प्रयत्न किया था। नौकरशाही मशीन के छोटे से पुर्ज़े से लेकर बड़े तक ने उनके आन्दोलन को कुचलने के लिए घृणित से घृणित उपाय से काम लिया, परन्तु सरदार पटेल ने अपनी शान्त और सत्याग्रह की निर्दोष नीति पर दृढ़ रह कर नौकरशाही को ऐसा करारा जवाब दिया, कि अन्त में उसे घुटने टेक देने के लिए विवश होना पड़ा। उस समय से देश यह अच्छी तरह समझ गया है, कि उनमें इस युद्ध का सेनापति होने की पूरी क्षमता है और ऐसे भीषण समय में युद्ध-समिति ने उनके हाथों में राष्ट्रीय संग्राम का भार सौंप कर अत्यन्त दूरदर्शिता से काम लिया। 'भविष्य' के पाठकों की जानकारी के लिए 'सर्दार वल्लभभाई पटेल' शीर्षक पुस्तक के कुछ महत्वपूर्ण पृष्ठ यहाँ उद्धृत किए जाते हैं :—

वंश-परिचय

गुजरात में लवा और कदवा नाम की, कुरमी जाति की दो उपजातियाँ हैं। ये जातियाँ लव और कुश की वंशज कही जाती हैं। सरदार वल्लभभाई इन्हीं में से लवा उपजाति के एक रत्न हैं। गुजरात के पेटलाद ताल्लुक़ा में करमसद एक गाँव है। उसी गाँव में सरदार पटेल के माता-पिता रहते थे। उनके यहाँ खेती होती थी। उनके पास घर की कुछ ज़मीन भी थी। सरदार पटेल के पिता श्री० झवेरभाई बड़े वीर और साहसी थे। सन् १८५७ की आज़ादी की लड़ाई में उन्होंने ख़ूब खुल कर भाग लिया था। झाँसी की वीराङ्गना महारानी लक्ष्मीबाई का प्रान्त उनका अच्छी तरह देखा-भाला था। ग़दर के दिनों में तीन बरस तक घरवालों को उनका पता तक न चला।

श्री० झवेरभाई बड़े ईश्वर-भक्त थे। वे 'स्वामी-नारायण' की सेवा में रात-दिन लगे रहते थे। ५५ वर्ष की उम्र से वे उनकी सेवा करने लगे थे। घर में केवल एक बार भोजन के लिए आते थे। सारा समय उनका भजन-पूजन में ही लगता था। झवेरभाई का स्वास्थ्य बहुत अच्छा था। जीवन के अन्तिम समय तक वे प्रतिदिन मुट्ठी भर कच्चे चावल और बाजरा चबाया करते थे। ९२ बरस की उम्र में उनका देहान्त हो गया। सरदार पटेल की पूजनीया माता भी उनके पिता के ही समान संयमी और धर्मशीला हैं। आजकल उनकी उम्र ८० बरस की है, तो भी वे दिन-दिन भर भजन-पूजन और चरख़ा कातने में लगी रहती हैं।

माता-पिता के इन गुणों का प्रभाव सरदार पटेल के चरित्र पर भी ख़ूब पड़ा है। उनके जीवन में संयम, सादगी, कष्ट-सहन, साहस आदि गुणों का बहुत व्यापक विकास हुआ है। सचाई और दृढ़ता तो उनमें कूट-कूट कर भरी है। बड़े से बड़े ख़तरे और कष्ट-सहन के समय पीछे हटना तो वे जानते ही नहीं। बारदोली के सत्याग्रह-संग्राम के अवसर पर 'सरदार' की दृढ़ता का परिचय देश भर को मिल चुका है।

बाल-जीवन और शिक्षा

राष्ट्रपति वल्लभभाई पटेल

वल्लभभाई का बाल-जीवन माता-पिता के साथ गाँव में ही बीता। आरम्भ ही से पिता को उनकी शिक्षा का बड़ा ध्यान था। वे रोज़ सवेरे बालक-वल्लभ को खेत पर ले जाते और रास्ते में आते-जाते उसे पहाड़े याद कराते थे। वल्लभ का बाल-जीवन बड़ा मनोहारी था। उनके विद्यार्थी-जीवन में अनेक ऐसी मनोरञ्जक घटनाएँ हुईं, जिनसे घर और बाहर के सभी लोगों को समय-समय पर बड़ा आनन्द मिला।

वल्लभभाई को, प्रारम्भिक शिक्षा कुछ तो गाँव में, और कुछ पेटलाद में मिली। माध्यमिक शिक्षा के लिए उन्हें नड़ियाद और बड़ौदा जाना पड़ा। जब वे नड़ियाद में पढ़ते थे, तब उन्होंने अपने स्कूल में एक आन्दोलन खड़ा कर दिया। बात यह थी कि स्कूल के एक मास्टर स्कूली पुस्तकों का व्यापार करते थे। वल्लभभाई ने आन्दोलन उठाया कि कोई लड़का उनसे पुस्तकें मोल न ले। लड़कों में बड़ी उत्तेजना फैली, यहाँ तक कि हड़ताल हो गई। ५-६ दिन तक स्कूल बन्द रहा। अन्त में शिक्षक को झुकना पड़ा इस पर वल्लभभाई ने हड़ताल का भी अन्त करा दिया। वहीं से उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा पास की।

मुख़्तारी

वल्लभभाई के माता-पिता की आर्थिक दशा अच्छी न थी। वे बहुत साधारण हैसियत के आदमी थे। इसलिए वल्लभभाई ने कॉलेज की पढ़ाई का मोह छोड़ दिया। कॉलेज की पढ़ाई के लिए बहुत रुपए की ज़रूरत होती है। एक मामूली आदमी इस पढ़ाई का ख़र्च नहीं उठा सकता। असल बात यह है, कि वल्लभभाई को ऊँची साहित्यिक शिक्षा प्राप्त करने का चाव था ही नहीं। ४-५ बरस का समय कॉलेज की ऊँची पढ़ाई में खो देना उनके लिए बहुत कठिन था। उन्होंने मुख़्तारी का इम्तिहान पास किया और गोधरा में मुख़्तारी करने लगे।

आरम्भ ही से वल्लभभाई को विलायत जाकर बैरिस्टरी पढ़ने की धुन थी। इसी धुन में उन्होंने मुख़्तारी शुरू कर दी थी। गोधरा के बाद उन्होंने बोरसद में मुख़्तारी का काम किया। वल्लभभाई के पास अधिकतर फ़ौजदारी के मामले आते थे। अपनी कार्य-पटुता और बुद्धि-कौशल के बल पर थोड़े ही दिनों में वे ज़िले भर में प्रसिद्ध हो गए।

वल्लभभाई के पास क़त्ल, डाका, धोखा-धड़ी से रुपया मार लेने आदि के मामले बहुत आते थे। दीवानी मामलों की ज़िम्मेदारी वे अपने ऊपर बहुत कम लेते थे। वे अपने मुक़दमों को बड़ी चतुरता से लड़ते थे। उनकी सूझ-बूझ विलक्षण थी। अपने मामले को सिद्ध करने के लिए वे जिस ढङ्ग से दलीलें देते थे, उससे अदालतों के हाकिम दङ्ग रह जाते थे। फ़ौजदारी अदालतों के अधिकारियों तथा पुलिस आदि महकमों के हाकिमों पर वल्लभभाई का बड़ा रोब था। हाकिम-हुक्काम उनके डर से काँपते रहते थे।

पत्नी-वियोग

एक बार गोधरा में प्लेग की बड़ी भयङ्कर बीमारी फैली। अदालत के नाज़िर का लड़का बीमार हो गया। वल्लभभाई ने उसकी भरसक दवा-दारू और सेवा-शुश्रूषा की, पर वह बच नहीं सका। उसका देहान्त हो गया। श्मशान से लौटते ही स्वयं भी बीमार पड़े। उनके गिल्टी निकल आई। इससे वल्लभभाई तनिक भी नहीं घबड़ाए। बीमारी की दशा में ही वे गाड़ी में बैठ कर पत्नी के साथ आनन्द चले आए और उनसे कहा—"तुम करमसद जाओ और मैं नड़ियाद जाता हूँ, वहाँ अच्छा हो जाऊँगा।" इस दशा में किस पत्नी को पति का साथ छोड़ देने का साहस हो सकता है? वल्लभभाई ने बड़ा ज़ोर डाल कर अपनी पत्नी को करमसद भेज दिया।

नड़ियाद पहुँच कर वे अच्छे हो गए। करमसद में उनकी पत्नी बीमार पड़ीं। वल्लभभाई उन्हें 'ऑपरेशन' के लिए बम्बई पहुँचा आए। प्रति दिन उनके ऑपरेशन की ख़बर यहाँ उन्हें मिलती ही रहती थी। थोड़े दिन बाद पत्नी की तबीयत ज़्यादा गिर गई। एक दिन वल्लभभाई अदालत में एक मुक़दमा लड़ रहे थे, कि उन्हें तार से पत्नी के देहान्त की ख़बर मिली। तार को पढ़ कर उन्होंने मेज़ पर रख लिया। जब मुक़दमे का काम समाप्त हुआ, तब अदालत से बाहर आकर उन्होंने मित्रों से उस तार की चर्चा की। इस घटना से उनके दृढ़ स्वभाव का पता चलता है। कठिन से कठिन समय पर, बड़े से बड़ा सङ्कट पड़ने पर भी, वे धीरज को नहीं खोते। जीवन की एकमात्र सहचरी के देहावसान का तार मिलने पर उनके माथे पर शिकन तक नहीं पड़ी। वे

अदालत में बराबर अपना काम करते रहे। असल बात यह है, कि कठिन से कठिन परीक्षा के अवसर पर भी उनका हृदय विचलित नहीं होता। वीरता, साहस, धीरज आदि गुण वल्लभभाई की उँगली के इशारे नाचते हैं।

विदेश-यात्रा

वल्लभभाई को विलायत जाकर बैरिस्टरी पास करने की धुन आरम्भ ही से थी। मुख़्तारी करते हुए वे विदेश-यात्रा की तैयारी करने लगे। विलायत जाने के लिए जिस कम्पनी से पत्र-व्यवहार हो रहा था, उसका अन्तिम पत्र वल्लभभाई के बड़े भाई विट्ठलभाई के हाथ पड़ गया। अङ्गरेज़ी में दोनों का नाम वी० जे० पटेल होने के कारण यह गड़बड़ हो गई। श्री० विट्ठलभाई ने छोटे भाई से कहा—"मैं तुमसे बड़ा हूँ, पहले मुझे इङ्गलैण्ड हो आने दो। मेरे वापस आ जाने पर तुम्हें जाने का अवसर मिल सकेगा, पर तुम्हारे लौट कर आ जाने पर मेरा जाना नहीं हो सकेगा।" इस बातचीत के १२ दिन बाद श्री० विट्ठलभाई पटेल इङ्गलैण्ड चले गए। वे तीन वर्ष बाद देश में वापस लौटे। फिर वल्लभ भाई विलायत गए। वहाँ पहुँचते ही वे पढ़ाई में जुट गए। इस समय उनकी उम्र आधी हो चुकी थी। संसार का व्यावहारिक ज्ञान भी उन्हें हो चुका था और अपनी लाभ-हानि, भला-बुरा समझने की क्षमता उनमें थी। अब उनके पथ-भ्रष्ट होने की कोई सम्भावना नहीं थी।

बचपन में वल्लभभाई बड़े नटखट और चञ्चल स्वभाव के थे। किन्तु इङ्गलैण्ड पहुँच कर वे एक गम्भीर स्वभाव के सौम्य विद्यार्थी बन गए। पढ़ने में उन्होंने बड़ा परिश्रम किया। वल्लभभाई के रहने की जगह से 'मिडिल टेम्पिल' का पुस्तकालय ११ मील दूर था। वे सवेरे उठ कर पुस्तकालय में जा बैठते और पढ़ने में जुट जाते। वहीं वे दूध और रोटी खा लेते और दिन भर पुस्तकें पढ़ने में लगे रहते। शाम होने पर जब सब लोग चले जाते और कर्मचारी उन्हें पुस्तकालय के बन्द होने की सूचना देते, तब वे उठ कर घर आते। कहते हैं, कि इन दिनों उन्होंने सत्रह-सत्रह घण्टे तक लगातार अध्ययन किया। इसका फल भी उन्हें वैसा ही मिला। वे बैरिस्टरी की परीक्षा में प्रथम श्रेणी में प्रथम उत्तीर्ण हुए। इससे ५० पौण्ड की एक छात्रवृत्ति मिली और चार टर्म की फ़ीस मुआफ़ हो गई। इम्तिहान में प्रश्न-पत्रों के जो उत्तर वल्लभ भाई ने लिखे, उन्हें पढ़ कर परीक्षकों को बड़ा ताज्जुब हुआ। उनमें से एक ने हिन्दुस्तान में रहने वाले चीफ़ जस्टिस स्कॉट के नाम वल्लभभाई को एक पत्र भी लिख दिया था। पत्र में लिखा था कि वल्लभभाई-जैसे आदमी को न्याय-विभाग की ऊँची से ऊँची जगह दी जानी चाहिए। वल्लभभाई बैरिस्टरी की परीक्षा पास कर लेने के दूसरे ही दिन हिन्दुस्तान के लिए जहाज़ पर रवाना हो गए। विलायत की सैर करने के लिए दो-चार दिन को भी वे वहाँ नहीं ठहरे।

बैरिस्टरी

हमारे देश में वकालत और बैरिस्टरी का पेशा प्रायः अच्छा नहीं समझा जाता। इस पेशे से आमदनी तो ख़ूब होती है, पर मनुष्य का नैतिक पतन हो जाता है। लेकिन दुर्भाग्य या सौभाग्य से हमारे देश के बड़े-बड़े नेता इन्हीं वकील या बैरिस्टरों में से निकले हैं। उनमें से अधिकांश इस समय अपनी वकालत छोड़ चुके हैं। महात्मा गाँधी पहले स्वयं बैरिस्टर थे। परन्तु इस पेशे में छल, कपट, बेईमानी, झूठ, मक्कारी आदि बातों की भरमार देख कर उनका कोमल हृदय व्यथित हो उठा। उन्होंने सदा के लिए इस अनैतिक धन्धे से अपना पीछा छुड़ा लिया। बैरिस्टर के रूप में अधिक समय तक वे 'नैतिक दिवालिया' कैसे बने रहते? उन्हें तो गले में झोली डाल कर, एक महापुरुष के रूप में भारत का हृदय-सम्राट होना था!

श्री० वल्लभभाई विलायत से एक सुयोग्य बैरिस्टर बन कर लौटे। थोड़े ही दिनों में उनकी बैरिस्टरी अच्छी चमक निकली। अहमदाबाद में वल्लभभाई की बैरिस्टरी की धाक जम गई। लोग अपने मामले इन्हीं के पास लाने लगे। उनकी योग्यता के सामने पुराने-पुराने वकील-बैरिस्टरों का रङ्ग फीका पड़ गया। बैरिस्टरी से उन्होंने धन भी कमाया और नाम भी।

नाज़ करती है बजा, तुझ पर ज़मीं गुजरात की

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

मञ्ज़िले मक़सूद[1] का, बस रहनुमा[2] तू है पटेल,
कश्तिए हिन्दोस्ताँ का, नाख़ुदा[3] तू है पटेल !
मुफ़लिसों का, बेकसों का आसरा तू है पटेल,
देश वाले मानते हैं, पेशवा तू है पटेल,
तेरी क़ुरबानी पे, दिल क़ुरबान, जी क़ुरबान है,
देवता है दर-हक़ीक़त, कहने को इनसान है !

हो वतन आज़ाद, ले देकर तुझे यह काम है,
बैठते-उठते यही अरमान सुबहो-शाम है !
कौन कहता है कि तुझको आरज़ूए-नाम है ?
तू समझता है कि क्या तकलीफ़, क्या आराम है।
देखते ही देखते क्या ज़ोर पर यह आ गई,
तेरे दम से और भी "गाँधी" की आँधी छा गई!

रञ्ज भी सहता है तू, तकलीफ़ भी सहता है तू,
अपनी धुन में मस्त रहता है, मगन रहता है तू !
शान से मौजों की सूरत हर घड़ी बहता है तू,
बात कहने की जो होती है, वही कहता है तू !
बारडोली से ज़माने भर ने जाना है तुझे,
क्यों न हो, गाँधी ने भी सरदार माना है तुझे !

तेरी भी सजधज निराली और अनोखी शान है,
बाँकपन में बाँकपन है, आन में क्या आन है !
शम्अ[4] आज़ादी पे परवाना सिफ़त[5] क़ुर्बान है,
आबरू है तू वतन की, तू वतन की जान है।
आज तेरी बात है, फिर हो कमी किस बात की?
नाज़ करती है बजा, तुझ पर ज़मीं गुजरात की!

पाँव बे समझे हुए, आगे कभी धरता नहीं,
सब हँसें जिस काम पर, वह काम तू करता नहीं।
कहते हैं डरना किसे, हरगिज़ कहीं डरता नहीं,
सौ मुसीबत में भी, आहे-सर्द तू भरता नहीं !
रङ्ग तेरा देख कर, यह ऐसा आलम देखकर,
सर झुका देती है दुनिया तेरा दम-ख़म देखकर!!

१—इरादा किया हुआ, २—रास्ता दिखाने वाला, ३—खेवट ४—दीपक, ५—तरह।

परन्तु विलायत की शिक्षा और बैरिस्टरी का नशा वल्लभभाई पर अधिक दिनों तक न ठहर सका। खेड़ा ज़िले के ग़रीब किसान अपना दुखड़ा लेकर उनके पास आने लगे। दिन पर दिन उनका ध्यान देश की दर्दनाक हालत की ओर खिंचने लगा।

समय-समय पर वल्लभभाई और उनके बड़े भाई विट्ठलभाई पटेल में देश की वर्तमान अवस्था पर बातचीत होती थी। विट्ठलभाई पटेल बम्बई में बैरिस्टरी करते थे। उनका काम भी अच्छा चलता था। परन्तु उनका बहुत सा समय सार्वजनिक कामों में चला जाता था। एक बार दोनों भाइयों में देश के सामयिक प्रश्नों पर बातचीत हो रही थी। दोनों भाइयों ने निश्चय किया कि देश की आज़ादी के लिए ऐसे लोक-सेवी संन्यासियों की ज़रूरत है, जो अपना जीवन उत्सर्ग कर सकें। श्री० विट्ठलभाई ने देश-सेवा का काम अपने ऊपर लिया और परिवार के भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी वल्लभभाई के कन्धों पर पड़ी।

महात्मा गाँधी का प्रभाव

पहले-पहल जब महात्मा गाँधी अहमदाबाद आए, तब वल्लभभाई की बैरिस्टरी ख़ूब चल रही थी। महात्मा गाँधी ने आकर बहुतों की शान्ति भङ्ग की। परन्तु वल्लभभाई का ध्यान उनकी ओर आकर्षित न हो सका। 'गुजरात क्लब' में बैठ कर अपने मित्रों से उन्होंने एक बार कहा था—"गाँधी क्यों इन लोगों के सामने ब्रह्मचर्य की बातें करते हैं? यह तो भैंस के सामने भागवत सुनाने की सी बात है!"

थोड़े दिन बाद महात्मा गाँधी गुजरात के राजनैतिक कामों में भाग लेने लगे। इससे वल्लभभाई का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ। उन्हें अब कुछ सार्वजनिक काम होने की आशा दिखाई दी। उन्होंने सोचा, कि अब शायद प्रान्त में कुछ ठोस काम हो सकेगा।

गोधरा में प्रान्तीय राजनैतिक कॉन्फ़्रेन्स का अधिवेशन हुआ। उसके सभापति थे महात्मा गाँधी। उसमें रचनात्मक कार्यक्रम का एक ढाँचा बनाया गया। कार्यक्रम को पूरा करने के लिए एक कमिटी बनी। वल्लभभाई उसके मन्त्री नियुक्त किए गए।

वल्लभभाई ने अपने साथियों के साथ बड़े उत्साह से काम आरम्भ कर दिया। उन्होंने कमिश्नर प्रैट से बेगार के सम्बन्ध में लिखा-पढ़ी की। कमिश्नर का उत्तर न मिलने पर उन्होंने फिर एक ७ दिन का नोटिस भेजा और लिख दिया, कि इसका उत्तर न मिला तो हाईकोर्ट के फ़ैसले के आधार पर बेगार को ग़ैर-क़ानूनी ठहराने और प्रान्त भर में लोगों के बेगार बन्द कर देने की सूचना दे दी जायगी। नोटिस की मियाद पूरी होने के एक दिन पहले ही कमिश्नर ने वल्लभभाई को बुला कर बातचीत कर ली। गाँधी जी इससे बड़े ख़ुश हुए। और उसी समय से वल्लभभाई अधिकाधिक उनके सम्पर्क में आने लगे। आगे चल कर तो गाँधी जी के साथ सार्वजनिक क्षेत्र में इतने घुले-मिले कि एक-दूसरे के जीवन-मरण के साथी बन गए।

सत्याग्रह और असहयोग

सत्याग्रह और असहयोग में महात्मा गाँधी के जीवन का वह अमर तत्व निहित है, जो आज भारत के कोने-कोने में गूँज रहा है। देश के अनेक स्थानों में सत्याग्रह के परम सत्य ने पशु-बल और मदमाती सत्ता पर विजय प्राप्त की है। इसी तत्व के सहारे न्याय को अन्याय पर, आत्मबल को पशु-बल पर, और सत्य को झूठ और मक्कारी पर विजय मिली है। इसी तत्व के बल पर देश के सैकड़ों निर्बल प्राणियों के सामने बड़े-बड़े शक्तिशाली अधिकारियों तक को झुकना पड़ा है।

असहयोग के युग में देश की जनता में पञ्जाब-हत्याकाण्ड से बड़ा असन्तोष फैल रहा था। महात्मा गाँधी ने इस देश के लोगों से अपील की कि विदेशी शासन के ज़ुल्मों से त्राण पाने का अमोघ अस्त्र असहयोग है। महात्मा जी की अपील पर देश के हज़ारों आदमी सरकार से असहयोग करने पर तुल पड़े।

वल्लभभाई ने असहयोग में बैरिस्टरी छोड़ दी। पहले वे अपने लड़के, लड़की को ऊँची शिक्षा के लिए विलायत भेजना चाहते थे। परन्तु अब उन्होंने असहयोग की दीक्षा लेकर उन्हें सरकारी स्कूल से भी उठा

लिया। यह सब करके वल्लभभाई गुजरात में असहयोग का प्रचार करने लगे। उन्होंने प्रान्त भर में दौरा किया और घर-घर में नवयुग का पुनीत सन्देश पहुँचा दिया।

देश भर में असहयोग की आग जल रही थी। लोगों में बड़ी भारी उत्तेजना थी। हज़ारों आदमी देश के लिए सहर्ष जेल जाने लगे। असहयोग की सी आँधी देश में आज तक पहले कभी न चली थी। शक्तिशाली सत्ताधारियों के आसन हिल उठे। उन्होंने आन्दोलन की आग को दबाने के लिए सारी शक्ति लगा दी। परन्तु सरकार के सारे उद्योगों पर पानी फिर गया। सरकारी दमन ने आन्दोलन की आग को अधिकाधिक प्रज्वलित करने के लिए घी का काम किया। जैसे-जैसे सरकार ने दमन किया, वैसे ही वैसे लोगों में उभाड़ आया और आन्दोलन की आग ने उग्र रूप धारण किया।

अन्त में वह दिन भी आया, जब असहयोग के प्रवर्तक महात्मा गाँधी गिरफ़्तार करके जेल में बन्द कर दिए गए। वल्लभभाई उन्हें जेल के फाटक तक पहुँचा आए। वहाँ से वापस आकर वे बड़ी सरगर्मी से कॉङ्ग्रेस का काम करने लगे। महात्मा जी की अनुपस्थिति में तो गुजरात के काम का सारा भार वल्लभभाई के कन्धों पर आ पड़ा। उन्होंने उस भार को जिस योग्यता से वहन किया, वह सचमुच उन्हीं के अनुरूप था।

वल्लभभाई गाँधी जी की पल्टन के बड़े ज़बरदस्त योद्धा हैं। वे तर्क नहीं, ठोस काम करना ख़ूब जानते हैं। गाँधी जी की गिरफ़्तारी के बाद देश भर में एक सन्नाटा छा गया। थोड़े दिन बाद ही आन्दोलन के काम में शिथिलता के आसार दिखाई देने लगे। परन्तु वल्लभभाई मैदान में डटे हुए बराबर रचनात्मक कार्य में जुटे रहे। कॉङ्ग्रेस के उसी काम में उन्हें सफलता दिखाई देती थी। चरख़ा, खादी का पुनरुत्थान, किसानों का सुदृढ़ सङ्गठन, अछूतोद्धार, राष्ट्रीय शिक्षा के लिए कुछ व्यावहारिक ठोस काम, आदि बातों में वल्लभभाई को किसी हद तक देश की वर्तमान समस्या के सुलझने की आशा दिखाई पड़ती थी। वे गुजरात प्रान्त में इसी उद्योग में जुटे रहे। उस दशा में, जब कि प्रायः देश भर में असहयोग-आन्दोलन की प्रतिक्रिया की लहर उमड़ रही थी और हिन्दू-मुसलमान आपस ही में एक-दूसरे के सर फोड़ने में लग रहे थे, वल्लभभाई अपने पथ से तनिक भी विचलित न हुए और निरन्तर अपने उद्योग में लगे रहे।

उस समय वल्लभभाई ही राष्ट्रीय-गुजरात के एकमात्र कर्णधार थे। इन्हीं दिनों उन्होंने ब्रह्मा की यात्रा की और गुजरात-विद्यापीठ के लिए १० लाख रुपए इकट्ठे करके लाए। असहयोग आन्दोलन में वल्लभभाई ने देश के लिए जो त्याग और सेवाएँ कीं, उन्हें देश कभी भुला नहीं सकता। स्वतन्त्र भारत के इतिहास में उनके ऐसे कार्य-दक्ष योद्धाओं की अमर-कृतियाँ बड़ा महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करेंगी।

पूर्ण स्वतन्त्रता

लाहौर-कॉङ्ग्रेस के बाद देश में पूर्ण स्वतन्त्रता का आन्दोलन बढ़ने लगा। युवक-दल तो बहुत पहले ही से इधर अग्रसर हो रहा था। राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू और श्री० सुभाषचन्द्र बोस बहुत पहले से युवकों के द्वारा देश को समझाते आ रहे थे, कि ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर स्वराज्य का स्वप्न देखना केवल ढकोसला है। सरकार से निराश होकर, लाहौर-कॉङ्ग्रेस से तो महात्मा गाँधी और पण्डित मोतीलाल नेहरू ने भी पूर्ण स्वतन्त्रता की आवाज़ बुलन्द की। महात्मा गाँधी ने सरकार को चेतावनी दी कि यदि सरकार देश की माँगें पूरी न करेगी, तो सत्याग्रह-आन्दोलन का सूत्रपात होगा। परन्तु सरकार के ऊपर महात्मा जी की चेतावनी का कोई असर नहीं पड़ा। वह सदा की तरह इस बार भी चुपचाप कान में तेल डाले बैठी रही। महात्मा गाँधी ने नमक-सत्याग्रह की तैयारी आरम्भ कर दी। १२ मार्च, सन् १९३० को ७८ स्वयंसेवकों के साथ महात्मा गाँधी साबरमती-आश्रम से डाँडी में नमक-क़ानून तोड़ने के लिए रवाना हुए। सरदार वल्लभभाई अपने उसी पवित्र क्षेत्र बारडोली के मैदान में डटे हुए अपना काम कर रहे थे।

७ मार्च, सन् १९३० को सरदार वल्लभभाई बोरसद ताल्लुक़े के रासगाँव में एक भाषण देने गए। वहाँ पहुँचने पर ज़िला-मैजिस्ट्रेट का उन्हें एक ऑर्डर मिला। उसमें भाषण देने की मनाही की गई थी। सरदार ने मैजिस्ट्रेट की आज्ञा भङ्ग कर भाषण दिया, इसलिए वे गिरफ़्तार कर लिए गए। इसी अपराध में सरदार को ३ महीने की क़ैद और ५०० रुपए जुर्माने की सज़ा दे दी गई। जुर्माना न देने के कारण उन्हें ३ सप्ताह तक और जेल में रहना पड़ा। वे साबरमती जेल में रक्खे गए। जेल में सरदार वल्लभभाई को बड़ा कष्ट सहना पड़ा। कहते हैं, कि उन्हें वहाँ पाँच पैसे रोज़ की ख़ुराक पर रहना पड़ता था। जेल की अवधि पूरी होने पर सरदार वल्लभभाई २६ जून को छोड़ दिए गए। जेल में उनका वज़न १२ पौण्ड कम हो गया।

जेल से छूटने पर देश में सरदार वल्लभभाई का बड़ी धूमधाम से स्वागत हुआ। बाहर आकर उन्होंने देश को सत्याग्रह आन्दोलन में व्यस्त देखा। महात्मा गाँधी, राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू तथा अगणित सत्याग्रही स्वयंसेवक जेल में बन्द किए जा चुके थे। इस आन्दोलन की आग की लपटें दूर-दूर तक फैल चुकी थीं। यह दशा देख कर सरदार का हृदय बल्लियों उछलने लगा। एक योद्धा को और क्या चाहिए? चारों ओर घात-प्रतिघात की जलती हुई आग की लपटों में घुस कर अपने कठोर कर्तव्य का पालन करना ही एक योद्धा के जीवन का उत्तम उद्देश्य है। सरदार बड़ी तत्परता से लड़ाई में जुट गए। महात्मा गाँधी ऐसे रण-कुशल सेनापति की अनुपस्थिति में उनका जेल से बाहर आ जाना देश के लिए सौभाग्य की बात थी।

इधर सरकार ने कॉङ्ग्रेस की कार्यकारिणी समिति को ग़ैर-क़ानूनी क़रार दे दिया और राष्ट्रपति पण्डित मोतीलाल नेहरू, डॉक्टर महमूद आदि नेताओं को गिरफ़्तार करके जेल में बन्द कर दिया। जेल-यात्रा करते समय पण्डित मोतीलाल जी ने राष्ट्रपति के आसन पर सरदार वल्लभभाई पटेल को बैठा दिया। इस सर्वोच्च आसन पर बैठ कर तो सरदार ने दूने उत्साह से राष्ट्रीय युद्ध का सञ्चालन किया। उनके नेतृत्व में धरसाना और बडाला के मोर्चों पर सत्याग्रही स्वयंसेवकों ने जिस वीरता और साहस के साथ लड़ाई लड़ी, वह घटना भारत के इतिहास में सचमुच बड़ा महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करेगी। सैकड़ों स्वयंसेवकों और देवियों ने पुलिस की लाठियों की मार अपने सीने खोल कर सहन की। उस वीरता को देख कर सत्ताधिकारियों की क्रूरता और पशुता भी ठिठक कर रह गई। सरदार पटेल को तिलक-दिवस पर सत्याग्रह करने के कारण दुबारा जेल की सज़ा दी गई थी। परन्तु वे उन देशभक्तों में से हैं, जिन्हें जेलें क्या, संसार की कोई शक्ति अपने सिद्धान्त से टस से मस नहीं कर सकती। जेल से छूटते ही उन्होंने फिर अपना कार्य द्विगुणित उत्साह से प्रारम्भ कर दिया, और आज महात्मा गाँधी के साथ वे जो कार्य कर रहे हैं, वह किसी से छिपा नहीं है।

यदि सरदार पटेल को स्वतन्त्रता के युद्ध का शिवाजी कहा जाय, तो अत्युक्ति न होगी। वर्तमान शासन-प्रणाली की सत्ता मटियामेट करने के लिए उन्होंने किसानों का जो सङ्गठन किया और उन्हें जिस प्रकार युद्ध में अग्रसर किया, वह भारत के स्वतन्त्रता के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा। सरदार वास्तव में 'किसानों के राजा' हैं। उनकी सेवाओं को स्वीकार कर देश ने उन्हें राष्ट्रपति बना कर उनके हाथों में अपनी नौका की पतवार सौंप दी है। उनके नेतृत्व में देश भर के किसान भावी-युद्ध में दसगुने उत्साह से भाग लेंगे। हम अपने नए राष्ट्रपति का हृदय से स्वागत करते हैं।

* * *

स्वतन्त्रता

[श्री० आनन्दीप्रसाद जी श्रीवास्तव]

ग्रस्त सूर्य के सदृश राष्ट्र है,
जिसके बिना नहीं भाता,
जिसे विनय से और याचना
से वह कभी नहीं पाता,
राष्ट्रों के हृदयों के भीतर
छिपी हुई जो रहती है,
जो उनके गुरु-तन के नस-नस—
में बिजली सी बहती है,

पूजो उसको भक्ति, शान्ति से—
आज सभी भारत के लाल,
अपने मन के आत्मिक बल का
परिचय दो जग को इस काल!

केवल जिसके कारण होता,
राष्ट्रों का है उन्नत भाल।
जिसकी रक्षा करती केवल
निर्भयता की दृढ़ करवाल॥
केवल जो लाती राष्ट्रों में
उन्नतिशील शान्ति अभिराम;
राष्ट्रों के समूह में है जो—
कर सकती राष्ट्रों का नाम॥

पूजो उसको भक्ति, शान्ति से
आज सभी भारत के लाल,
अपने मन के आत्मिक बल का
परिचय दो जग को इस काल!!

जो ला सकती है राष्ट्रों में
स्वर्ग सम्पदाएँ सारी।
काम करा सकती है उनसे—
जो भारी से भी भारी॥
जो कि बना सकती है उनको,
निज चरमोन्नति-व्रतधारी।
जो दे सकती शक्ति उन्हें फिर,
बनने की जग-हितकारी,

पूजो उसको भक्ति, शान्ति से
आज सभी भारत के लाल,
अपने मन के आत्मिक बल का
परिचय दो जग को इस काल!!

लाखों मोती हैं, मगर उस आब का मोती नहीं !

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

आज गुलज़ारे[1] जहाँ में, है खिज़ाँ आई हुई,
आज है मख़लूक़[2] मग़मूम[3], और तड़पाई हुई !
आज है अनदोहो[4] हिरमाँ की घटा छाई हुई,
आज है बेढब कली हर दिल की कुम्हलाई हुई !
पत्ती-पत्ती, डाली-डाली, सर झुकाए ग़म में है;
एक-दो का ज़िक्र क्या, सारा चमन मातम में है!

देखते ही देखते, बदला है मैख़ाने[5] का रङ्ग,
पोने वालों में कहाँ मस्ती, कहाँ अगली उमङ्ग ?
साग़रो[6] ख़ुम[7] दम बख़ुद, बिगड़े हुए महफ़िल के रङ्ग,
मिट गया वह लुत्फ़ेरिन्दी[8], चल बसी सारी तरङ्ग
जाम[9] में बाक़ी नहीं मै[10] सिर्फ़ ख़ाली जाम है,
और मोतीलाल-से साक़ी[11] का लब पर नाम है!

जब नहीं साक़ी, तो लुत्फ़े अञ्जुमन[12] हासिल नहीं,
दिल ही दिल है सिर्फ़, कोई आरज़ूए-दिल नहीं !
हल किसी सूरत से हो जाए यह वह मुश्किल नहीं,
अहले-महफ़िल की नज़र में, बानिए-महफ़िल नहीं!
ग़ैर मुमकिन है, कि आ जाए कभी वह होश में,
सो रहा है चैन से, जो मौत की आग़ोश[13] में !

मिल नहीं सकता कोई लीडर हमें इस आन का,
कोई रहबर,[14] कोई ग़मख़्वार, इस निराली शान का!
क़ौल का पूरा था वह, पक्का बहुत था ध्यान का,
देश की धुन में दिखाया करतब अपनी तान का,
बादशाही छोड़ दी, उसने चमन के वास्ते !
और पीरी[15] में फ़क़ीरी ली वतन के वास्ते !

काम करने वाले जो हों, काम करना सीख जायँ,
पाँव मैदाने-सियासत[16] में वह धरना सीख जायँ
यूँ निडर होकर हरीफ़ों[17] से न डरना सीख जायँ
देश पर मरना किसे कहते हैं, मरना सीख जायँ !
जान जोखों ख़ल्क़[18] में था काम मोतीलाल का,
रहती दुनिया तक रहेगा नाम मोतीलाल का !

बाँकपन के साथ थी, हर आन मोतीलाल की,
वह समुन्दर पार आली शान मोतीलाल की !
दौलते दुनिया रही मेहमान मोतीलाल की,
देश-सेवा के लिए थी जान मोतीलाल की !
यूँ तो दुनिया के समुन्दर में कमी होती नहीं,
लाखों मोती हैं मगर, उस आब का मोती नहीं!

१—बाग़, २—जनता, ३—दुखी, ४—रञ्ज, ५—शराबख़ाना, ६—प्याला, ७—मटका, ८—पीने का मज़ा, ९—प्याला, १०—शराब, ११—पिलाने वाला, १२—सभा, १३—गोद, १४—रास्ता दिखाने वाला, १५—बुढ़ापा, १६—राष्ट्रीयता, १७—बैरियों, १८—संसार ।

राष्ट्रीय महासभा की अधिवेशन-सूची

स्थान	सन्	प्रतिनिधि-संख्या	सभापति
१—बम्बई	१८८५	७२	श्री० उमेशचन्द्र बैनर्जी
२—कलकत्ता	१८८६	४३६	श्री० दादाभाई नौरोजी
३—मद्रास	१८८७	६०७	श्री० बदरुद्दीन तय्यब जी
४—प्रयाग	१८८८	१,२४८	श्री० जॉर्ज वील
५—बम्बई	१८८९	१,८८९	श्री० सर विलियम वेडरबर्न
६—कलकत्ता	१८९०	६७७	श्री० फ़ीरोज़शाह मेहता
७—नागपुर	१८९१	८१२	श्री० आनन्द चार्लू
८—प्रयाग	१८९२	६२५	श्री० उमेशचन्द्र बैनर्जी
९—लाहौर	१८९३	८६७	श्री० दादाभाई नौरोजी
१०—मद्रास	१८९४	११६	श्री० मि० वेब
११—पूना	१८९५	१,५८६	श्री० सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी
१२—कलकत्ता	१८९६	७८४	श्री० मु० रहमतुल्ला सयानी
१३—अमरावती	१८९७	६९४	श्री० शङ्करन नायर
१४—मद्रास	१८९८	६१३	श्री० आनन्दमोहन बोस
१५—लखनऊ	१८९९	१,३९४	श्री० रमेशचन्द्र दत्त
१६—लाहौर	१९००	५६७	श्री० नारायण चन्द्रवरकर
१७—कलकत्ता	१९०१	८९६	श्री० दीनशाह वाचा
१८—अहमदाबाद	१९०२	४१७	श्री० सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी
१९—मद्रास	१९०३	५३८	श्री० लालमोहन घोष
२०—बम्बई	१९०४	१,०१०	श्री० सर हेनरी कॉटन
२१—काशी	१९०५	७५८	श्री० गोपाल कृष्ण गोखले
२२—कलकत्ता	१९०६	१,६६३	श्री० दादाभाई नौरोजी
२३—सूरत	१९०७	१,६००	श्री० रासबिहारी घोष
२३—मद्रास	१९०८	६२६	श्री० रासबिहारी घोष
२४—लहौर	१९०९	२४३	श्री० मदनमोहन मालवीय
२५—प्रयाग	१९१०	६३६	श्री० सर विलियम वेडरबर्न
२६—कलकत्ता	१९११	४४६	श्री० विशननारायण दर
२७—पटना	१९१२	२०७	श्री० आर० एम० मुधोलकर
२८—कराची	१९१३	५५०	श्री० नवाब सय्यद महमूद
२९—मद्रास	१९१४	८६६	श्री० भूपेन्द्रनाथ बोस
३०—बम्बई	१९१५	...	श्री० सर एस० पी० सिंह
३१—लखनऊ	१९१६	...	श्री० अम्बिकाचरण मजुमदार
३२—कलकत्ता	१९१७	४,९६७	श्री० एनी बीसेण्ट
विशेष—बम्बई	१९१८	४,९६७	श्री० सय्यद हसन इमाम
३३—दिल्ली	१९१८	४,८९९	श्री० मदनमोहन मालवीय
३४—अमृतसर	१९१९	...	श्री० पं० मोतीलाल नेहरू
विशेष—कलकत्ता	१९२०	...	श्री० लाला लाजपतराय
३५—नागपुर	१९२०	...	श्री० विजय राघवाचार्य
३६—अहमदाबाद	१९२१	४,७२६	श्री० हकीम अजमल ख़ाँ
३७—गया	१९२२	...	श्री० सी० आर० दास
३८—कोकनद	१९२३	...	श्री० मुहम्मद अली
विशेष—दिल्ली	१९२३	...	श्री० अब्दुल कलाम आज़ाद
३९—बेलगाँव	१९२४	...	श्री० महात्मा गाँधी
४०—कानपूर	१९२५	३,१६२	श्री० सरोजिनी नायडू
४१—गोहाटी	१९२६	...	श्री० श्रीनिवास आयङ्गर
४२—मद्रास	१९२७	२,६९४	श्री० डॉ० अन्सारी
४३—कलकत्ता	१९२८	...	श्री० पं० मोतीलाल नेहरू
४४—लाहौर	१९२९	...	श्री० पं० जवाहरलाल नेहरू
४५—कराची	१९३१	...	श्री० सरदार वल्लभभाई पटेल

क्या सबा[19] उड़ कर ख़बर लाई इलाहाबाद में
मुरदनी-सी सब पे क्यों छाई इलाहाबाद में
जमा हैं किस के तमन्नाई[20] इलाहाबाद में
लखनऊ से किसकी लाश आई इलाहाबाद में ?
ले गए थे बहरे दरमाँ[21] सब उसे परदेस में,
मौत आ पहुँची वहाँ भी ज़िन्दगी के भेस में!

१९—हवा, २०—चाहने वाले, २१—दवा के वास्ते,

सब से अहले-वतन को काम लेना चाहिए,
दरसे[22] इबरत[23] इनको सुबहो शाम लेना चाहिए,
रात-दिन परमात्मा का नाम लेना चाहिए,
रूहे मोती लाल से इनआम लेना चाहिए !
सबहैं बिस्मिल हर तरफ़ "बिस्मिल" मचा कुहराम है,
कहते हैं मरना जिसे, जीने का वह अनजाम है !

२२—सबक़, २३—शिक्षा ।

सीमा-प्रान्त के "गाँधी" और उनका सङ्गठन

सीमा प्रान्त के 'गाँधी'—श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, जो अभी जेल से छूटे हैं।

चारसद्दा (सीमा प्रान्त) के राष्ट्रीय नेताओं सहित श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ।

पेशावर के पठान नेताओं सहित—

श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

बाईं ओर से बैठे हुए—श्री० ख़ाँ अब्दुल अम्बर ख़ाँ, श्री० सय्यद लालबादशाह, लाहौर के राष्ट्रीय पञ्जाबी नेता—श्री० के० सान्तनम, श्री० ख़ाँ अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और श्री० ख़ान अलीगुल ख़ाँ।

पाठकों को स्मरण होगा, अभी हाल ही में श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ साहब ने फ़र्माया है, कि आगामी राष्ट्रीय युद्ध में, जब कभी ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हुई, तो वे अहिंसात्मक युद्ध के लिए एक लाख ख़ुदाई-ख़िदमतगार भेंट करेंगे।

वार्षिक सम्मेलन के अवसर पर अपने अनुयायियों (ख़ुदाई ख़िदमतगारों) सहित सीमा प्रान्त के 'गाँधी'—श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

[आप ही बीच में शुद्ध खादी की पोशाक में खड़े हैं]

'भविष्य' की कराची-कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ
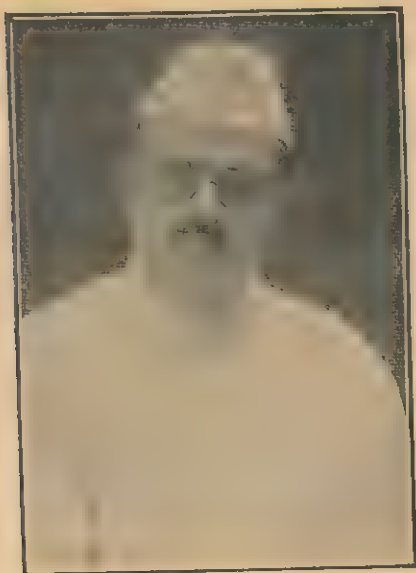
श्री० जयरामदास दौलतराम—कॉङ्ग्रेस-वर्किङ्ग-कमिटी के अन्यतम-सदस्य और कराची कॉङ्ग्रेस के प्रमुख कार्यकर्ता।

डॉ० चैतराम पी० गिडवानी—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी-समिति के सभापति।

लाला यशवन्तराय चूड़ामणि—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी-समिति के अन्यतम उप-सभापति।

कराची-कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी-समिति का कार्यालय।

डॉ० ताराचन्द जे० लालवानी, एम० बी०-बी० एस०—कराची कॉङ्ग्रेस कमिटी के अन्यतम जनरल सेक्रेटरी।

श्री० राम बी० गोटवानी—आप कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के अन्यतम सेक्रेटरी और सिन्ध प्रान्त के प्रमुख राष्ट्रीय कार्यकर्ता हैं।

श्री० आर० के० सिधवा—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी-समिति के अन्यतम जनरल सेक्रेटरी।

'भविष्य' की कराची-कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ

आचार्य ए० टी० गिडवानी, एम० ए०—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के अन्यतम उप-सभापति।
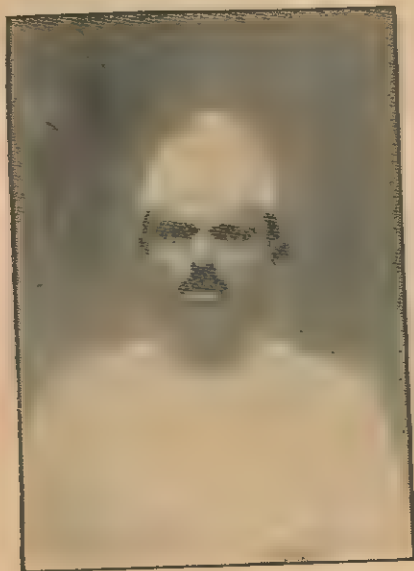
श्री० नारायणदास आनन्दजी बेचर—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के अन्यतम उप-सभापति।

स्वामी गोविन्दानन्द जी—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के अन्यतम उप-सभापति।

श्री० मणिलाल जी व्यास—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के उप-सभापति।

सेठ हरिदास लाल जी—कराची कॉङ्ग्रेस स्वागतकारिणी समिति के अन्यतम उप-सभापति।

सेठ मूल जी विसराम नर्सी—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के अन्यतम सेक्रेटरी।

सेठ लालचन्द पानाचन्द—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के अन्यतम कोषाध्यक्ष।
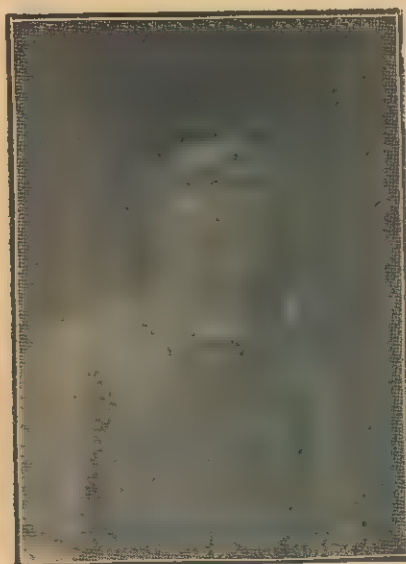
श्री० दुर्गादास अडवानी—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के आप प्रमुख कार्य-कर्ता हैं। आप की ही देखरेख में कराची कॉङ्ग्रेस का सभा-भवन बना है।

सेठ ईसरदास वारानमल—कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के अन्यतम कोषाध्यक्ष।

देश और विदेश के राजनैतिक रङ्गमञ्च पर

अमेरिका की भारतीय कॉङ्ग्रेस की अध्यक्षता में मनाया जाने वाला 'स्वतन्त्रता-दिवस' (१९३०) के प्रीतिभोज का दृश्य—जिसमें डॉक्टर सण्डरलैण्ड आदि सैकड़ों सुप्रसिद्ध अमेरिकन शरीक हुए थे।

अमेरिका-स्थित भारतीय कॉङ्ग्रेस के प्रधान—श्री० रामलाल बालाराम वाजपेयी।

उज्जैन के सुप्रसिद्ध सेठ सौभाग्यचन्द्र म्होणोत की पुत्र-वधू—श्रीमती सज्जनकुमारी म्होणोत, जिन्हें विदेशी वस्त्रों की दूकान पर धरना देने के कारण जेल-दण्ड मिला था।

अमेरिका-स्थित भारतीय कॉङ्ग्रेस के प्राण और सुप्रसिद्ध देश-भक्त बाबू शैलेन्द्रनाथ घोष।

[अमेरिका से श्रीमती रागिनी देवी द्वारा भेजे हुए 'भविष्य' के ख़ास चित्र]

शाहाबाद (बिहार) ज़िले की प्रथम सत्याग्रही-महिला—श्रीमती कुसुमकुमारी देवी। आप ही ने २६ वीं जनवरी को आरा में राष्ट्रीय झण्डा फहराया था।

स्वर्गीय पं० मोतीलाल के श्राद्ध-दिवस पर गोण्डिया (मध्य प्रान्त) में श्रीमती राधाबाई पोफ़ली की अध्यक्षता में निकलने वाले जुलूस का दृश्य।
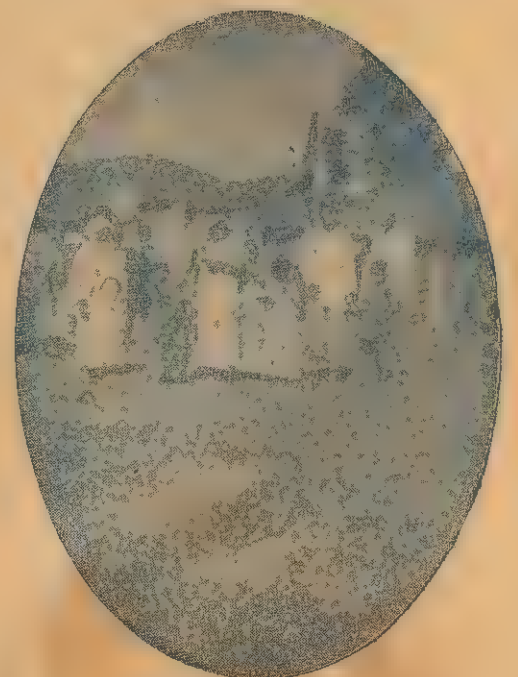
इश्क़ में दरपेश है अब मरने-जीने का सवाल,
यह मुझे मुश्किल हो शायद,वह मुझे मुश्किल नहीं!
तेग़[1] हाज़िर, आप भी आमादा, दिल भी बेक़रार,
अब मेरी मुश्किल की आसानी,कोई मुश्किल नहीं!
आप इसको जानते हैं "नूह" मेरा नाम है ?
अपने दुशमन का डुबो देना मुझे मुश्किल नहीं !
—"नूह" नारवी

क्या यह कहते हो,तेरा दिल इश्क़ के क़ाबिल नहीं
बाँधलो हिम्मत तो फिर मरना भी कुछ मुश्किल नहीं!
—"एहसान" बाँदवी

शम्आ[2] से महफ़िल में परवाने ने यूँ जल कर कहा,
आशिक़ों का खेल जाना जान पर मुश्किल नहीं ।
—"अख़्तर" मुरवाबी

मेरी आसानी की तदबीरें बहुत आसान हैं,
तुम अगर चाहो तो यह मुश्किल,कोईमुश्किलनहीं!
—"अख़्तर" नागपुरी

लो यह कहते हैं मेरी आहे रसा के हौसले,
अर्श[3] आज़म का हिला देना कोई मुश्किल नहीं
—"इस्माईल" बम्बई

जाँ फ़िदा करना समझता था मैं मुश्किल आप पर,
लेकिन अब यह काम भी मेरे लिए मुश्किल नहीं
—"अज़्वी" निज़ामी

इश्क़ में यह हाल मेरा है, कि मेरे वास्ते—
ज़ब्त भी मुश्किल नहीं,फ़रियाद भी मुश्किल नहीं !
—"हामिद" अज़ीमाबादी

कुल्फ़तें[4] बर्दाश्त कीं, जितनी थीं राहे-इश्क़ में !
अब यह रोना है कि मुश्किल भी कोईमुश्किलनहीं।
—"हबीब" बरारी

मुख़तसिर रूदाद[5] यह अपने सितम की जानिए
जान दे देना मेरे नज़दीक कुछ मुश्किल नहीं !
—"ख़लीक़" फ़ैज़ाबादी

शाकिरे-तक़दीर हों कुंजे क़फ़स[6] में शादमाँ[7]
गो क़फ़स की तीलियों का तोड़ना मुश्किल नहीं !
—"साग़र" अकबराबादी

दिल में सब कुछ है मगर इज़हार के क़ाबिल नहीं,
दूसरा दिल है हमारा उक़दए[8] मुश्किल नहीं!
एक सदा कुंजे-क़फ़स से आई और तड़पा गई,
कोई कहता था रिहा होना,मेरा मुश्किल नहीं
—"सीमाब" अकबराबादी

तुझसे दम आँखों में आकर रह गया ऐ शौक़ेदीद
वरना मरना क्या है,मरना तो कोई मुश्किल नहीं
—"इनायत" बरारी

जब कहा मैंने कि फ़ुरक़त[9] में हुआ जीना मोहाल,
बोले मरना तो बहुत आसान है,मुश्किल नहीं
—"फ़ातेह" मर्यांवाली

इश्क़ में मर-मर के जीना है कमाले ज़िन्दगी
वरना मरने को तो मर जाना, कोई मुश्किल नहीं
—"मुज़्तर" बदनेरा

कारे-हिम्मत जान देना इश्क़ में ऐ दिल नहीं,
ज़िन्दगी मुश्किल है,मर जाना तो कुछ मुश्किल नहीं
—"नातिक़" गुलावटी

जब खिंची तेग़े तवस्सुम[10] हँस के ज़ख़्मों ने कहा
सुर्ख़रू होना हमारा, अब कोई मुश्किल नहीं !
—"नईम" खाण्डवी

कीजिए मुझको कभी तेग़े-तवस्सुम से हलाक,
काम यह आसान है, यह काम कुछ मुश्किल नहीं
—"बाबर" बरारी

१—तलवार, २—दीपक ३—आकाश, ४ तकलीफ़,५—कहानी, ६—पिंजड़ा ७—ख़ुश ८—गिरह, ९—विरह, १०—हँसी,

तेग़ हाज़िर, आप भी आमादा, दिल भी बेक़रार,
अब मेरी मुश्किल की आसानी, कोई मुश्किल नहीं !
शम्आ से महफ़िल में परवाने ने यूँ जल कर कहा,
आशिक़ों का खेल जाना जान पर मुश्किल नहीं ।

आप हैं मुश्किलकुशा तो फिर मुझे मुश्किल है क्या
आपके होते हुए मुश्किल, मुझे मुश्किल नहीं
—"यूसुफ़" बरारी

ऐ 'असर' अल्लाह से मुझको मदद दरकार है
सहल कर देना उसे मुश्किल का कुछ मुश्किल नहीं
—"असर" बदापुरी

सुनलो एक दिन "अख़्तरे"-ख़सता के दिलकी आरज़ू
इतने ही अरमान हैं, चाहो तो कुछ मुश्किल नहीं
—"अख़्तर" मुज़फ़्फ़रपुरी

तायराने[11] पर शिकस्ता में अगर है इत्तेफ़ाक़,
दूर करना बाग़ से सय्याद का मुश्किल नहीं !
—"बाँके" देहरादूनी

जो न देखा था ग़म वह देखेंगी,
दिल के कहने में आ गईं आँखें !
क्यों चुराते हो देख कर आँखें ?
कर चुकीं मेरे दिल में घर आँखें ।
ज़ोफ़[12] से कुछ नज़र नहीं आता,
कर रही हैं डगर-डगर आँखें !
चश्मे-नरगिस को देख लें फिर हम,
तुम दिखादो जो एक नज़र आँखें !
है दवा इनकी आतिशे[13] रुख़सार[14],
सेंकते हैं उस आग पर आँखें ।
कोई आसान है तेरा दीदार,
पहले बनवाए तो बशर[15] आँखें ।
जलवए-यार की न ताब हुई,
टूट आई हैं किस क़दर आँखें ।
दिल को तो घूँट-घूँट कर रक्खा,
मानतीं ही नहीं मगर आँखें !
न गई ताक-झाँक की आदत,
लिए फिरती हैं दर-बदर आँखें !
क्या यह जादू भरा, न था काजल,
सुर्ख़ करलीं जो पोंछ कर आँखें ?
यह निराला है शर्म का अन्दाज़,
बात करते हो ढाँक कर आँखें !
ख़ाक पर क्यों हो नक़्शे-पा[16] तेरा
हम बिछाएँ ज़मीन पर आँखें !
नवहागर[17] कौन है मुक़द्दर[18] पर,
रोने वालों में हैं मगर आँखें ।
यही रोना है गर शबे-ग़म का,
फूट जाएँगी ता-सहर[19] आँखें !
हाले-दिल देखना नहीं आता,
दिन को बनवाएँ चारागर आँखें ।

११—पक्षियों पर, १२—कमज़ोर, १३—आग, १४—चेहरा १५—आदमी, १६ पैर, १७ रोने वाला, १८ क़िस्मत, १९ सुबह,

"दाग़" आँखें निकालते हैं वह,
उनको दे दो निकाल कर आँखें ।
—"दाग़" देहलवी

हमको क्या कुछ दिखा गईं आँखें,
इस क़दर रोए, आ गईं आँखें !
हुस्न की शह जो पा गईं आँखें,
तेरी आँखें चुरा गईं आँखें !
हाय वह शर्म, वह हया, वह हिजाब,
मैंने छेड़ा लजा गईं आँखें ।
जो न देखा था ग़म वह देखेंगी,
दिल के कहने में आ गईं आँखें !
क्यों न अब देख लें नज़र भर कर,
तुमको मौक़े से पा गईं आँखें ।
जिनसे लुत्फ़ो करम[20] की थी उम्मीद
वही आँख दिखा गईं आँखें !!
हो गया नाम आँसुओं का मगर,
ख़ूने-दिल में नहा गईं आँखें
रात भर जागना पड़ा हमको,
वह न आए, तो आ गईं आँखें !
ज़ब्ते सैलाबे[21] ग़म भी करने पर,
"नूह" तूफ़ान उठा गईं आँखें !
—"नूह" नारवी

उस हसीं को जा पा गईं आँखें,
लुत्फ़ क्या-क्या उठा गईं आँखें !
चार आँखें हुईं जो ज़ालिम से,
दिल पे बिजली गिरा गईं आँखें !
लाख परदों में वह छुपे जाकर,
लेकिन इस पर भी पा गईं आँखें !
मर गया, मर मिटा दिले मुज़तर[22],
आँखों आँखों में खा गईं आँखें !
मेरे दिल में, जिगर में, सीने में,
अब तुम्हारी समा गईं आँखें ।
लाख परदों में वह छुपे जाकर,
लेकिन इस पर भी पा गईं आँखें ।
अहदे-तिफ़ली[23] से अहदे-पीरी[24] तक,
एक दुनिया दिखा गईं आँखें ।
वाह रे उनका हुस्ने आलम ताब,
देखना था, कि आ गईं आँखें !
देख लेना ग़ज़ब हुआ "बिस्मिल"
दिल में उनकी समा गईं आँखें !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

२०—कृपा, २१—बाद, २२—बेचैन, २३—बचपन का ज़माना, २४—बुढ़ापे का ज़माना।

[श्री० 'बघेल']

क्रान्ति का स्वागत करने का साहस आज तक किसी ने नहीं दिखलाया। कौन चाहेगा उसे—खून की विकराल धारा, मृतकों का भीषण चीत्कार, जीवन की निकृष्ट आहुति, हज़ारों का बलिदान, लाखों के लिए वैधव्य और सन्तान-हीनता का कारुणिक-दृश्य ! कौन इसका स्वागत करेगा ?

लेकिन, वह आती है, जब उसे आना होता है। संसार की कोई शक्ति—कोई प्रतिबन्ध उसे रोक नहीं सकता। एक बहाना मिला और क्रान्ति की आग धायँ-धायँ जलने लगी—प्रलय का प्रारम्भ हो गया। एक दिन प्रातःकाल कुएँ पर मङ्गल पाँड़े एक सिपाही से झगड़ पड़ा और उसी चिनगारी से सन् ५७ का सिपाही-विद्रोह हो गया। उसे आना था, आया और अपनी समस्त भीषणता के साथ आया !

क्रान्ति आग है। आग में पापी भी जलता है, पुण्यात्मा भी। ईश्वर के दरबार में पक्षपात नहीं होता। क्रान्ति भी ईश्वरीय विधान है। उसकी भयङ्करता में अपराधी और निरपराधी—सभी को समानता से पिस जाना पड़ता है।

फ्रान्स में रोटी वाला गोली से उड़ा दिया गया। क्योंकि उसने भूखे क्रान्तिकारियों को सस्ती या मुफ़्त रोटियाँ न दी थीं। क्या वह अपराधी था ? नहीं, परन्तु उस आग की झोंक ने उसे भी झकझोर कर पीस डाला।

फ्रान्स की राज्यक्रान्ति 'धू-धू' रव से चीत्कार कर रही थी। हज़ारों क्रान्तिकारी राजसत्ता की ओर से मृत्यु-चक्र में पीस दिए जाते थे। मानव-जीवन अधिकारियों के लिए एक खेल हो रहा था। जीवन का पाना कठिन था, परन्तु गँवाना सरल ! बहुत जाँच कर किसी का विश्वास किया जाता था। स्वयं अपने ही विश्वसनीय पदाधिकारी स्मिथ पर राज-सत्ता को अविश्वास हो गया। राजा ने—निरङ्कुश शासक ने—अपना अविश्वास प्रकट कर दिया। स्मिथ पदवी का मान और लालसा त्याग कर भाग गया।

स्मिथ वीर था, साहसी था और महान राजनीतिज्ञ था। वह साधारण किसान से प्रधान के पद पर पहुँचा था। सैनिक-रूप में उसने जो वीरता दिखाई थी, उसे फ्रान्स का राजनीतिक-मण्डल पूर्णतया जानता था और राजसत्ता का उस पर सब से अधिक विश्वास था। उसने पहिले शाहन्शाह को समझाया। परन्तु राजसत्ता अपनी क्रूरता में बहुत आगे बढ़ चुकी थी। स्मिथ उस बाढ़ को रोक न सका। परन्तु उसने राजा का साथ नहीं छोड़ा। कैसे छोड़ता ? उसने राजकीय विभाग से ४-५ वर्ष तक भोजन और अधिकार पाया था। उसने राजा का साथ देना अपना कर्तव्य समझा।

उसका एक नवयुवक बन्धु था रॉबर्टसन। अभी हाल ही में राजा का एक प्रधान, क्रान्तिकारियों द्वारा आहत हुआ, तब राजाज्ञा से स्मिथ ने उसे शासन और व्यवस्था के लिए पेरिस—क्रान्तियों के महान उपकेन्द्र में—भेजा था। रॉबर्टसन को क्रान्तिकारियों के बीच भेजने का अर्थ स्मिथ जानता था। तभी तो जब वह विदाई के लिए सामने आया तो स्मिथ रो पड़ा था !

रॉबर्टसन ने अपराधी युवक का पता लगा कर उसे न्यायालय या बधिकालय के सुपुर्द कर दिया था। परन्तु रॉबर्टसन अपने गले के नीचे गोली का ज़ख्म और दर्द लेकर लौटा था। और आह ! उसी से क्रान्ति का पहिला बलिदान—क्रान्तिकारियों के भीषण रक्त-पिपासी क्रूरता की पहिली आहुति का सम्पादन हुआ। उसने वीर की तरह मृत्यु का आलिङ्गन किया। परन्तु उस आहुति के बाद वही स्मिथ राजसत्ता की आँखों का काँटा हो गया। लिरोटा ने चुराली खाकर स्मिथ को राजकीय विश्वास से दूर—बहुत दूर—अन्धकार में ढकेल दिया।

लिरोटा एक अदस्य साहसी चीफ़ था। परन्तु वह विद्रोहियों को न दबा सका था, उनके सामने से जान लेकर भाग आया था। रॉबर्टसन ने उसकी रिपोर्ट की थी। परन्तु अन्त में रॉबर्टसन मार डाला गया। अतः लिरोटा ने स्मिथ को ही अपनी ईर्ष्याग्नि की आहुति बनाया।

ईर्ष्या ने एक वीर को कायर बना दिया ! लिरोटा ने स्मिथ की चुराली खाई।

स्मिथ की जगह लिरोटा प्रधान हुआ।

२

स्मिथ किसान से प्रधान हुआ था, अब वह फिर प्रधान से किसान बन गया !

स्मिथ बूढ़ा और अशक्त था; परन्तु कायर न था। उसे भी प्रजा-सत्ता की चिन्ता थी और वह आन्दोलन की ओर आशापूर्ण नेत्रों से देखता था। परन्तु क्रान्तिकारियों में शामिल होकर काम करने की शक्ति उसमें न थी, इसलिए वह कभी-कभी अत्यन्त व्याकुल हो उठता था। उसने क्रान्तिकारियों को दण्ड भी दिलाया था, इसलिए पश्चात्ताप की आग में उसका हृदय जलता था।

श्रीमती स्मिथ कहतीं—स्वामी ! इस आन्दोलन की प्रगति धीमी क्यों हो रही है ? क्या हमारा प्यारा जेम्स भी 'ग़ुलाम नागरिक' कहलाएगा ?

जेम्स उनका पुत्र था। बहुत सुन्दर, भोला और प्यारा।

स्मिथ उत्तर देता—नहीं जोरा, आन्दोलन ने बाह्य रूप त्याग कर आन्तरिक उन्नति के सम्पादन में अपनी शक्ति लगाना प्रारम्भ कर दिया है। वह आन्दोलन अब चरम सीमा पर पहुँच कर ही रहेगा। हमारा जेम्स अपने समय का स्वतन्त्र नागरिक होगा।

"यदि तब तक देश स्वतन्त्र न हुआ ?"

"तो जेम्स वीर की तरह इसी युद्ध में शामिल होगा ? तुम वीर-माता बनोगी।"

"क्या हमारी आँखें उसकी वीरता के कार्य देखने का सौभाग्य प्राप्त करेंगी ?"

"प्रिये ! धैर्य धारण करो। वह शीघ्र ही अपने कर्तव्य की ओर अग्रसर होगा। वह स्वतन्त्र नागरिक होकर ही रहेगा। यह मेरी दृढ़ धारणा है।

जोरा प्रसन्न हो जाती। वह भूल जाती थी अपने गत वैभव को—अपने पूर्ण समृद्ध और सुखी जीवन को !

यह उनकी तपस्या का युग था। मूल्यवान विलास-उपादानों की जगह कठोर संन्यास का सामना करना बड़ा कष्टकर होता है; परन्तु जहाँ स्वतन्त्रता की भावना है, वहाँ कष्ट चुपचाप सिमट कर सन्तोष की सामग्री—वीरों का सुखमय खिलौना—बन जाता है !

क्रान्ति की धारा में शिथिलता देख कर राजसत्ता ने दमन-नीति को चरम-सीमा तक पहुँचा कर, उसे अच्छी तरह मटियामेट कर डालने का आयोजन किया। एक मृत्यु-चक्र (Death Wheel) का निर्माण किया गया। बड़ा विशाल था, वह मृत्यु-चक्र ! उसके चारों ओर लोहे के बड़े-बड़े तीक्ष्णधार काँटे लगे थे ! क्रान्तिकारी एक क़तार में खड़े किए जाते थे और एक के बाद एक उसी चक्र में डाल दिए जाते थे ! पहिले मानव-शरीर काँटों से क्षत-विक्षत होता था, फिर नीचे कुएँ में चक्र की गति से जाकर दो चक्रों के बीच छिप जाता था। इसके बाद दोनों चक्र अलग-अलग हो जाते थे और मृत शरीर लहू-लुहान होकर नीचे कुएँ में गिर पड़ता था !

इस क्रूर-कार्य—चक्र-सञ्चालन—का सम्पादन राजपुत्र को दिया गया था। वह इस अधिकार से अत्यन्त प्रसन्न था। क्योंकि उस समय श्रीसम्पन्न अधिकारियों को ऐसे क्रूर कर्मों में विशेष आनन्द मिलता था। यह उनके मनोरञ्जन की एक साधारण सामग्री थी। उफ़ ! वे मनुष्य थे या पिशाच ?

राजा के कोप से लिरोटा भी बच न सका। उसका भाई क्रान्तिकारी दल में शामिल हो गया था। राजा को इससे बड़ा क्रोध हुआ और लिरोटा को भ्रातृ-हत्या की आज्ञा दी गई। उसने साफ़ इन्कार कर दिया। लिरोटा को प्राण-दण्ड का हुक्म सुनाया गया !

स्मिथ की भी जोरों से खोज हो रही थी। दोनों दल उसकी खोज में थे। राज-दल उसके लिए प्राण-दण्ड की व्यवस्था लेकर ढूँढ़ता था और क्रान्तिकारी दल उसकी पूजा की सामग्री लेकर उसके अनुसन्धान में था !

परन्तु स्मिथ राजधानी से दूर—अज्ञात स्थान में जीवन के अवशेष दिन बिता रहा था। वह दोनों दलों की पहुँच के बाहर चला गया था।

३

जेम्स 'क्रान्ति' का अर्थ समझने लगा था। अक्सर भागे हुए क्रान्तिकारी उसकी झोपड़ी में आश्रय लेने आते थे और कुछ दिनों के बाद पुनः अपने विकट कार्य के सम्पादन के लिए चल देते थे। क्रान्तिकारी उसे एक ग़रीब की कुटिया ही समझते थे—यह नहीं जानते थे कि स्वयं स्मिथ यहीं वृद्ध-कृषक बन कर रहता है।

कुटी का रक्षक या प्रधान मालिक जेम्स ही था। वही वहाँ बराबर रहता था। क्योंकि माता-पिता तो अपना अधिकांश समय खेतों में ही बिताया करते थे।

* * *

प्रातःकालीन ठण्ढी वायु ने स्मिथ को जगा दिया था, वह अँगीठी के सामने आग ताप रहा था और अपनी पत्नी से बीज की उत्तमता की समालोचना कर रहा था। जोरा धीमे स्वर से पति की बातों का उत्तर दे रही थी।

"खड़ाक...धम ! धम ! धम !"

किवाड़ खुला और एक अस्त-व्यस्त पुरुष झोपड़ी के अन्दर घुस पड़ा।

जोरा सहम गई। स्मिथ खड़ा हो गया। फिर ज़ोर से चिल्ला कर उसने पूछा—तुम कौन हो ? डाकू हो या फाँसी की आज्ञा सुनाने आए हो ?

"..................!"

आगन्तुक केवल हाँफ रहा था।

"अरे ! तुम कौन हो ?" स्मिथ ने फिर डाँटा—"राज-कर्मचारी, क्रान्तिकारी या लूट-मार करने वाले विश्वासघाती ? बोलते क्यों नहीं ?"

"मैं क्रान्तिकारी हूँ !"

आगन्तुक काँप रहा था।

"कौन ? लिरोटा ! अरे तुम कब से क्रान्तिकारी हुए ? मुझे पहिचानते हो ? मैं स्मिथ......"

"ओह ! तुम स्मिथ हो। मैं तुम्हारा शत्रु हूँ। तुम मुझे क्या आश्रय दोगे ? अच्छा स्मिथ, प्रणाम ! मैं जाता हूँ।"

"कहाँ जाओगे लिरोटा ? कब तक भागते फिरोगे ? क्रान्तिकारी होकर भी तुम्हें जीवन का मोह बना ही है ? अभी भी मुझसे डरते हो ?"

लिरोटा सिर थाम कर बैठ गया। धीरे-धीरे कहने लगा—स्मिथ ! तुम्हारे पद को पाने के लिए मैं कायर बना था, परन्तु आज जीवन का मोह लेकर यहाँ नहीं आया हूँ। सिर्फ़ आज भर के लिए आश्रय दो। मैं मरने के पूर्व कुछ कर जाना चाहता हूँ। मैं बड़ा नीच था न स्मिथ ?

"नहीं, लिरोटा ! समृद्धिवान होने की लालसा किसे नहीं होती ? आज तुम मेरे बड़े भाई हो। यह तुम्हारी कुटिया है, जब तक चाहो, रह सकते हो। परन्तु तुम्हें इस तरह भागना क्यों पड़ा ?"

"ओह ! स्मिथ, आज मेरे प्राणदण्ड की व्यवस्था की गई थी। उस पिशाच-चक्र में मैं भी डाला जाने वाला था। ओह ! बड़ा भीषण था, वह चक्र।

"......परन्तु मुझसे क्रान्तिकारी दल का उपमन्त्री मिल चुका था और वहाँ भी हम लोग एक षड्यन्त्र की तैयारी कर चुके थे। मुझे सफलता की आशा न थी।

"वध-स्थल में कम्पाउण्ड के बाहर शोर हुआ—'एक पागल भीतर घुस रहा है। देखो ! रोको ! बचाओ !' सचमुच एक विक्षिप्त पागल कठघरे के भीतर आ गया था। बधाध्यक्ष—राजपुत्र ने कहा—'आने दो ! जैसे ७०० वैसे ७०१। उसे भी चक्र में झोंक दिया जायगा।' सन्नाटा हो गया, परन्तु वह विक्षिप्त मनुष्य चक्र की ओर बढ़ रहा था ! राजपुत्र मुस्कुरा रहा था। मैं जीवन से निराश होता जा रहा था !

"पागल मेरे समीप आ गया। उसने मेरे हाथ में पिस्तौल दी। मैं समझ गया। मैंने राजपुत्र पर गोली चलाई और वह गिर पड़ा—क़यामत तक के लिए वहीं सो गया ! मेरे पीछे ७०० क्रान्तिकारी बलिदान के लिए—क्रूर चक्र में पिसने के लिए खड़े थे। इन सात सौ मनुष्यों की प्राण-रक्षा हुई। हम लोग उपमन्त्री के सशस्त्र सेना की सहायता से भाग निकले।

"मुझे भी राजधानी छोड़ कर भाग जाना पड़ा। मेरा मृत्यु-वारण्ट निकल चुका है और जासूस मेरी खोज में लगे हैं।"

"अच्छा लिरोटा, तुम उस पयालों के ढेर में छिप जाओ। घर में जेम्स रहता है, वह तुम्हारे भोजन-पानी की व्यवस्था करेगा। उसे अपना सेवक समझना।"

"तो क्या आज मैं बच जाऊँगा ?"

"हाँ-हाँ, तुम्हारा बाल भी बाँका न होगा।"

"मुझे तो विश्वास नहीं होता।"

"तुम घबड़ाए हुए हो—"

४

दो बजे वारण्ट-इन्स्पेक्टर और सात सिपाही उस जीर्ण-शीर्ण कुटीर में घुस गए। जेम्स बिल्ली के साथ खेलता-खेलता सो गया था। वारण्ट-इन्स्पेक्टर ने उसे जगाया।

जेम्स चौंक उठा—तुम लोग कौन हो ? बाहर जाओ—बाबा घर में नहीं हैं।

"कहाँ गए हैं ? लड़के !"

"मैं नहीं बताऊँगा। तुम लोग चले जाओ यहाँ से।"

इन्स्पेक्टर ने बालक को गोद में लेकर पुचकारा—तुम्हारा नाम क्या है बेटा !

"जेम्स !"

"जेम्स ! बड़ा अच्छा नाम है। अच्छा जेम्स, यहाँ आज कोई आया है ?"

"तुम्हें......?"

जेम्स गोद से उतर गया—मुझे नहीं मालूम। निकलो......!

इन्स्पेक्टर ने एक सिपाही की ओर देखा। सिपाही ने बच्चे को कुछ मिठाई दी और कुछ खिलौने दिए। बच्चा मिठाई खाने लगा और इन्स्पेक्टर की दाढ़ी से खेलने लगा। इन्स्पेक्टर ने ठहर कर कहा—और मिठाई लोगे ? अच्छा, अभी और मँगाते हैं। वह आदमी कहाँ छिपा है ? मिठाई ख़रीदना तो वही अच्छा जानता है......।

जेम्स फिर तमक कर इन्स्पेक्टर की गोद से उतर गया। बोला—मैं नहीं जानता, निकल जाओ मेरे घर से !

जेम्स बाँध दिया गया और घर की तलाशी ली गई। कोना-कोना छान डाला गया। लेकिन सब व्यर्थ हुआ।

इन्स्पेक्टर ने तमञ्चा निकाला और एक सुनहली घड़ी और जेम्स से बोला—"देखो, यदि कोई तुम्हें डरावे तो उसे इस तमञ्चे से मार देना। और सुनो, तुम्हारे बाप ने मुझे यहाँ भेजा है कि तुम्हें यह घड़ी दे दूँ और तुम उस आदमी को मुझे बता दो। मैं उसे कहीं अच्छी जगह छिपाऊँगा, लो यह घड़ी। अरे रक्खो।" बालक सोचने लगा—"यह घड़ी ! 'टिक-टिक !' कितनी सुन्दर है ! उस आदमी की क़ीमत क्या इस घड़ी के बराबर होगी ? नहीं ! बाबा और माँ मेरे सुन्दर उपहार को देख कर प्रसन्न हो जाएँगे !"

लेकिन वह रुक गया; उसे कुछ भय-सा मालूम हुआ।

इन्स्पेक्टर ने देखा कि मृग चौकड़ी मार रहा है। बोला—जेम्स, मेरा विश्वास करो, बताओ वह कहाँ है ?

बालक की आँखें पयाल के ढेर की ओर हो गईं। उसे बोलने या बतलाने की आवश्यकता न हुई। पयाल धुन डाला गया और बेचारा लिरोटा घसीट कर बाहर निकाला गया !

जेम्स की आँखें आशङ्का से डबडबा गईं।

* * *

जेम्स के उपहार की कथा सुन कर माँ के होश उड़ गए। वह सिर थाम कर रह गई। वह पति के क्रोध को जानती थी। वह उदास हो गई। उसे सामने अन्धकार ही अन्धकार दीख पड़ा। हाय ! क्या होगा ? अवश्य ही जेम्स को भयानक दण्ड...ओह ! माता का कोमल हृदय काँप गया।

स्मिथ की आँखों से अङ्गारे निकलने लगे। जोरा उसे मनाने लगी।

"बस जोरा, चुप रहो। मुझे नहीं मालूम था, यह चटोरा देश की प्रगति में बाधक होगा; जनता के साथ विश्वासघात करेगा।"

* * *

"नाथ ! आख़िर वह हमारी सन्तान......"

"रहने दो जोरा ! यही तो और दुःख की बात है कि वह तुम्हारा पुत्र होकर भी कायर है। क्या तुम 'कायर की माँ' कहलाना पसन्द करोगी ? बोलो !"

जोरा उदास हो गई—तब क्या होगा ?

"जोरा ! तुम्हें क्या हो गया है ? क्या होगा ! अपराध का दण्ड-प्रतिशोध ! करनी का फल प्रत्येक को मिलना ही चाहिए।"

स्मिथ की आँखों में प्रतिहिंसा की आग जल रही थी !

जोरा रो रही थी।

इस समय स्मिथ क्रोध से पागल हो रहा था और जोरा शोक से आंत-प्रांत !

"भगवन् ! अनाथ और अबला के तुम्हीं मालिक हो।"

"छिः ! जोरा, उठो ! जाओ, बालक को खाना खिला दो—उसे आज जङ्गल ले जाऊँगा। जाओ, वह भी उदास हो रहा होगा। उसे बहलाओ।"

जोरा चुपचाप भीतर चली गई। उसके पैर आज मन-मन भर के हो रहे थे।

५

"बाबा!......"

"चुप रह, अहमक़! हरामख़ोर! सीधे चल!"

जेम्स बाबा की गोद में चढ़ने की फ़रियाद करना चाहता था। वह सहम गया। उसकी आँखें डबडबा गईं। वह डर से खड़ा हो गया।

"आगे बढ़ो!"—स्मिथ इस समय भयानक हो गया था।

बालक काँप गया और आगे चला। स्मिथ के हाथ में भरी हुई बन्दूक़ थी।

"बोल तो रे, नदी के किनारे खड़ा होकर तू क्या कहेगा? याद है न?"

"परमपिता! मेरे अपराधों को क्षमा कर और अपने राज्य में मुझे स्थान दे।" बालक ने रोते-रोते कहा।

"ठीक है, यही कहना और फिर हाथों को ऊपर उठा देना—भूलना नहीं! देखो वह नदी का किनारा—वह टीला—वही वह स्थान है। मैं जङ्गल की ओर जाता हूँ।"

आज बालक डर रहा था, लेकिन पिता की आज्ञा माननी होगी!

बालक ने घुटने टेक कर ईश्वर से प्रार्थना की। उसके दोनों हाथ ऊपर उठ गए। उसकी आँखों से अविरल अश्रु-प्रवाह हो रहा था!

"धायँ! धायँ!!" बन्दूक़ की आवाज़!

बालक का मृत-देह नदी के प्रवाह में बह गया।

* * *

जोरा झोपड़ी के द्वार पर खड़ी थी, अप्रतिभ और सशङ्कित! स्मिथ धोर-गम्भीर गति से उसके पास पहुँचा।

"मेरा बच्चा?"—जोरा ने दीनता से पूछा!

"वह तुम्हारा बच्चा नहीं, तुम्हारी गोद का कलङ्क था। वह कायर-कलङ्क अब न रहा। अब तुम वीर-माता हो।"

स्मिथ की आवाज़ में क्रोध अथवा ग्लानि की गन्ध भी न थी।

"आख़िर वह हमारा ही तो था!"—भर्राई हुई आवाज़ में जोरा ने कहा।

"कुल-कलङ्क था, देशद्रोही था! जोरा, मेरे यहाँ देशद्रोही के लिए स्थान नहीं है।"

जोरा रो रही थी! स्मिथ चुप था!

पिता कर्तव्यशीलता और न्याय का कठोर पुतला है, उसे पुत्र-शोक में आँसू बहाने का अधिकार नहीं है।

होनहार सन्ध्या की अँधियारी में लीन हो रहा था और मूढ़ संसार दीपक का समाज सजा कर उसके स्वागत में लगा था।

* * *

भारत की स्वाधीनता-साधना

[श्री० अभयङ्कर वर्मा, एम० ए०; एल-एल्० बी०]

यद्यपि इतिहासकारों का कथन है, कि धार्मिक विभिन्नता तथा विचार-वैचित्र्य के कारण विदेशियों के आक्रमणों से बचने के लिए भारत ने कोई सङ्गठित चेष्टा नहीं की, तथापि यह मानना ही पड़ेगा, कि समय-समय पर स्वाधीनता के उपासकों ने अपने धर्म, सभ्यता तथा अपनी राष्ट्रीय-विशेषता की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व तक अर्पण कर देने में भी आनाकानी नहीं की। विश्व-विजयी सिकन्दर से लेकर, मुसलमानों के आक्रमण-काल तक का भारतीय इतिहास भारतीय वीरों के अद्भुत आत्मोत्सर्ग की कथाओं से भरा पड़ा है। मुसलमानी राजत्व-काल में भी भारत ने अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए यथेष्ट चेष्टा की थी।

कौन नहीं जानता कि राजपूताना के स्वतन्त्रता-प्रेमी वीरों ने अपनी मातृ-भूमि की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए केवल अपना ही नहीं, बल्कि अपने बच्चों और स्त्रियों तक का बलिदान कर दिया था। स्वतन्त्रता का वह अनन्य-पुजारी अपना राज-सिंहासन छोड़ कर भूखे बच्चों और असूर्यम्पश्या राजराजेश्वरी के साथ, एक-दो नहीं, लगातार पच्चीस वर्षों तक बनों की ख़ाक छानता रहा। गुलाब के फूल-से कोमल बच्चों को भूख से तड़पते देखा, घास की रोटी के लिए उन्हें बिलखते देखा, कोमल-शय्या पर विश्राम करने वाले अपने कलेजे के टुकड़ों को पत्थर की कठिन और खुरखुरी चट्टानों पर सोते देखा, कङ्करीले रास्तों पर चलने के कारण नवनीत-कोमल पैरों से रक्त की धारा बहते देखा; परन्तु अपने प्रण से विचलित नहीं हुआ। दिल को दहला देने वाली मुसीबतों का सामना किया, परन्तु स्वतन्त्रता के कौस्तुभ-मणिमाल को एक क्षण के लिए भी वक्षस्थल से अलग नहीं किया। वह कोमलाङ्गी रमणियाँ, जिनकी रूप-राशि से राज-महल उद्भासित हो उठता था, स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए नङ्गी तलवारें लेकर शत्रु-सागर में कूद पड़ी थीं। माताओं ने अपने दुध-मुँहे बच्चों की कमरों में अपने हाथों से तलवारें बाँध कर उन्हें समर-क्षेत्र में भेजा था। नव-विवाहिता वधू ने अपनी तमाम आशा और हृदय के मधुर अरमानों को हँसते-हँसते मातृ-भूमि के चरणों पर अर्पित कर दिया था। हज़ारों वीर बालाएँ जातीय सम्मान और गौरव की रक्षा के लिए आग की गगनचुम्बी लपटों से लिपट गई थीं। आह! उन जौहर व्रत-धारिणी देवियों के आत्मोत्सर्ग की कथा किस कठोर हृदय की आँखों को अश्रु-सिक्त नहीं कर देती? स्वतन्त्रता के लिए इतना त्याग स्वीकार किस जाति ने किया है? किस जौहरी ने उस महारत्न का इतना मूल्य दिया है, जितना राजपूताना ने दिया है। स्वतन्त्रता की रक्षा में इस महातीर्थ के कण कितनी बार रक्त-रञ्जित हुए हैं, इसका हिसाब कौन बतलाएगा? स्वतन्त्रता के लिए राजपूताना कितनी बार पुरुष-शून्य हो चुका है, कौन जानता है? महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, राणा राजसिंह और राठोर-वीर दुर्गादास को अमर कीर्तियाँ देश की विलुप्त स्वाधीनता की रक्षा का उद्योग ही तो हैं। गुरु गोविन्दसिंह, वीरवर फत्ता, प्रतापादित्य आदि महावीरों ने भी इस सम्बन्ध में स्तुत्य प्रयत्न किया है। महारानी लक्ष्मीबाई, ताँतिया टोपी, बाबू कुँवरसिंह और नाना साहब के कारनामे भी, किसी से छिपे नहीं हैं। इतिहास साक्षी है कि इन प्रातः स्मरणीय वीरों ने स्वतन्त्रता देवी के चरणों पर अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर दिया है। यद्यपि हमें यह स्वीकार करना ही पड़ेगा, कि यदि समस्त राष्ट्र को सङ्गठित करके देश को परतन्त्रता के बन्धन से मुक्त करने की चेष्टा की गई होती, तो शायद यह दिन देखने को नहीं मिलते। परन्तु वास्तव में उस समय की परिस्थिति ही कुछ और थी, सङ्गठन के इतने साधन भी मौजूद न थे और न उन बातों के इसके लिए यथेष्ट सुयोग ही प्राप्त हुआ था। अस्तु।

सन् ५७ के बाद

सन् १८५७ के ग़दर के बाद से भारत में शान्ति रही। सरल हृदय, निरीह भारतवासियों को परलोकवासिनी महारानी विक्टोरिया के उस घोषणा-पत्र पर, जिसे उसने ग़दर की समाप्ति के बाद प्रचारित कराया था, अगाध विश्वास था। उन्हें स्वप्न में भी इस बात की आशङ्का न थी, कि वह मधुर शब्दों का एक जाल-मात्र है और उन्नीसवीं शताब्दी के अङ्गरेज राजनीतिज्ञ इच्छा करते ही उसे रद्दी की टोकरी में डाल देंगे तथा स्पष्ट शब्दों में कह देंगे, कि वह एक राजनीतिक चालबाज़ी मात्र था। अगर उन्हें एक क्षण के लिए भी मालूम हो जाता, कि महारानी का वह घोषणा-पत्र अनायास ही ठुकरा दिया जायगा, तो यह सम्भव न था, कि वे अर्द्ध शताब्दी तक निश्चेष्ट भाव से बैठे रह जाते। क्योंकि विद्रोह आन्दोलन की उपशान्ति के कुछ काल बाद ही बङ्गाल के विख्यात समाज-सुधारक राजा राम-मोहन राय ने राजनीतिक अधिकार-लाभ की आवश्यकता का अनुभव किया था और अपनी समस्त शक्ति लगा कर बङ्गालियों को उसके उप-

युक्त बनाने की चेष्टा में लग गए थे। इस अद्भुत कमशील व्यक्ति के उद्योग से बङ्गाल के साहित्य, समाज और धर्म-क्षेत्र में एक साथ ही जागृति के लक्षण दिखाई देने लगे थे।

इसके बाद स्वर्गवासी सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी का आविर्भाव हुआ। इनकी वाणी में अद्भुत शक्ति थी। इन्हाने देशवासियों के राजनीतिक अधिकार की रक्षा के लिए सरकारी नौकरी छोड़ दी और स्व० कविराज उपेन्द्रनाथ सेन की सहायता से 'बङ्गाली' नाम का एक अखबार निकाला। कुछ दिनों के बाद ही तत्कालीन राजनीतिज्ञ स्व० आनन्दमोहन बसु ने भी बैनर्जी महाशय का साथ दिया और सन् १८७६ में 'इण्डियन एसोसिएशन' या भारत-सभा नाम की एक राजनीतिक संस्था की स्थापना हुई। उन दिनों बैनर्जी महाशय नवयुवक थे और धारा-प्रवाह अङ्गरेज़ी बोल सकते थे, इसलिए बङ्गाल के नवयुवकों पर उन्होंने शीघ्र ही अच्छा प्रभाव जमा लिया। भारत-सभा के सदस्यों की संख्या सौ तक पहुँच गई। परन्तु बैनर्जी महाशय इतने से ही सन्तुष्ट होने वाले न थे। उन्होंने बङ्गाल के बाहर भी अपने कार्य-क्षेत्र का विस्तार करना चाहा और प्रचार के लिए समस्त भारत का भ्रमण करने का विचार किया। फलतः देश के शिक्षित युवकों पर इनकी वाग्मिता का अच्छा प्रभाव पड़ा और कलकत्ता की तरह पूना में भी 'सार्वजनिक सभा' नाम की एक राजनीतिक संस्था की स्थापना हुई।

सन् १८८० में लॉर्ड रिपन भारत के वायसराय नियुक्त हुए। ये बड़े सहृदय और न्याय-प्रिय अङ्गरेज़ थे। इन्होंने 'स्थानीय स्वायत्त-शासन' विधान का निर्माण किया और म्युनिसिपैलिटी तथा लोकल बोर्डों में थोड़ा सा अधिकार भारतवासियों को दिला दिया। उस समय यह तुच्छ अधिकार भी भारतवासियों के लिए एक अलभ्य वस्तु थी। इसलिए आनन्दोल्लास के साथ ही सारे देश में लाट साहब के सुयश का डङ्का पिट गया।

इसी समय मि० अलबर्ट नाम के एक सज्जन ने प्रस्ताव किया, कि भारतीय विचारक अङ्गरेज़-अभियुक्तों के मामलों का भी विचार कर सकेंगे। उस समय गोरी दुनिया में एक तुमुल आन्दोलन आरम्भ हुआ। काले और विचार करेंगे? गोरों का इससे बढ़ कर अपमान की बात और क्या हो सकती है??

परन्तु अलबर्ट साहब की इस ग़लती से भारतवासियों का थोड़ा सा उपकार हुआ। उनकी आँखों के सामने से माया-मरीचिका हट गई और उन्हें स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने लगा, कि काले और गोरे रङ्गों में दिन और रात का सा अन्तर है—कालों का स्वार्थ अलग है और गोरों का अलग। साथ ही उन्हें इस बात का भी पता लग गया, कि हमारे गौराङ्ग प्रभु-गण हमें किस हेय दृष्टि से देखते हैं।

कॉङ्ग्रेस का इतिहास

इस घटना के कुछ दिन बाद ही बम्बई में 'इण्डियन नेशनल कॉङ्ग्रेस' या भारतीय राष्ट्रीय महासभा का प्रथम अधिवेशन हुआ। सभापति थे श्री० उमेशचन्द्र बैनर्जी। उस समय भारत सरकार के स्वराष्ट्र मन्त्री मि० ह्यूम थे। सन् १८८५ में इन्होंने शासक और शासितों में भाव-विनिमय की इच्छा से इस 'कॉङ्ग्रेस' की स्थापना कराई। उद्देश्य रक्खा गया—शासन-कार्य में थोड़ा-बहुत अधिकार प्राप्त करना और सरकार के कानों तक अपनी आवश्यकताओं की पुकार को पहुँचाना। सन् १८८६ में इसका दूसरा अधिवेशन कलकत्ते

स्वर्गीय तौंतिया टोपी

में हुआ और श्री० दादाभाई नौरोजी ने सभापति का आसन सुशोभित किया। सन् १८८५ से १८९६ तक महासभा केवल परमुखापेक्षी थी। अपनी आवश्यकताओं और अभियोगों के सम्बन्ध में कुछ प्रस्ताव पास कर लेना और एक प्रार्थना-पत्र के साथ उसकी नक़ल सरकार की सेवा में भेज देना, बस, यही कॉङ्ग्रेस का काम था! बड़े दिन की छुट्टियों में इसका एक अधिवेशन हो जाता और कुछ अङ्गरेज़ी पढ़े-लिखे लोग वहाँ जाकर अपनी वाग्मिता का परिचय दे आया करते थे। सरकार भी उनकी प्रार्थनाओं और प्रस्तावों के लिए एक 'प्राप्ति-स्वीकार' लिख कर भेज देती थी। इस प्रकार दोनों ही अपने कर्तव्यों का पालन कर निश्चिन्त हो जाते थे।

सन् १८९७ में, देश में कुछ जागृति के लक्षण दृष्टिगोचर हुए। लोकमान्य श्री० बाल गङ्गाधर तिलक का सम्बन्ध कॉङ्ग्रेस से आरम्भ से ही था। परन्तु वे आवेदन-निवेदन और कोरे प्रस्ताव पास कर लेने के पक्षपाती न थे। वे देश को जाग्रत करना चाहते थे। वे जानते थे कि जिस तरह स्वयं मरे बिना स्वर्ग नहीं दिखाई देता, उसी तरह अपने पैरों के बल खड़े हुए बिना राजनीतिक अधिकार भी प्राप्त नहीं होते। वे प्रारम्भ से ही देश को जाग्रत करने की चेष्टा में थे। इसके लिए उन्होंने 'केसरी' और फिर 'मराठा' नाम के दो शक्तिशाली समाचार-पत्र भी निकाले। इसके सिवा सन् १८९५ में उन्होंने 'शिवाजी उत्सव' मनाने का आयोजन किया। लोकमान्य की यह चेष्टा नौकरशाही की नज़रों में खटक रही थी। 'केसरी' की निर्भीकतापूर्ण आलोचनाएँ और शिवाजी-उत्सव में लोगों का लाठी और तलवार के खेल दिखाना उसे फूटी आँखों भी नहीं सुहाता था। इसका एक अन्यतम कारण और भी था। पूना-निवासी श्री० दमोदर चापेकर और श्री० बालकृष्ण चापेकर नाम के दो उत्साही युवकों ने 'चापेकर-सङ्घ' नाम की एक संस्था की स्थापना की थी। इस सङ्घ का उद्देश्य था, देश के युवकों के शरीरों और मनों को देश-सेवा के उपयुक्त बनाना। इसके साधन रक्खे गए थे व्यायाम-चर्चा द्वारा शरीर की तथा श्री शिवाजी महाराज की कीर्तियों के मनन और अनुशीलन द्वारा मन की उन्नति करना! लोकमान्य इस सङ्घ के प्रधान पृष्ठपोषक थे। शिवाजी-उत्सव का आयोजन भी इसी सङ्घ द्वारा ही उन्होंने कराया था। सन् १८९७ में, तीसरे शिवाजी-उत्सव के उपलक्ष में लोकमान्य ने अपने पत्र में एक वीरत्वपूर्ण कविता छापी थी और एक वक्ता ने खुली सभा में घोषणा की थी, कि हम लोग अपनी खोई हुई स्वाधीनता का पुनरुद्धार करना चाहते हैं; हम अपनी समवेत चेष्टा द्वारा उसे प्राप्त करेंगे।

मि० रैण्ड की हत्या

इस साल एक बड़ी दुखदाई दुर्घटना हुई। पूना में प्लेग फैला था। सरकारी कर्मचारियों ने नगर को इस भीषण महामारी से बचाने की चेष्टा आरम्भ की, परन्तु नगर-निवासियों के लिए यह चेष्टा प्लेग से भी अधिक असह्य हो उठी। लोकमान्य तिलक ने 'केसरी' में इस रक्षा-काण्ड की घोर निन्दा की और उन अत्याचारों का भी वर्णन किया, जो प्लेग-निवारण के बहाने पूनावासियों पर किए जाते थे। इधर श्री० दामोदर चापेकर ने इन अत्याचारों से उत्तेजित होकर प्लेग-निवारक कर्मचारी मि० रैण्ड और उसके सहकारी को जान से मार डाला। इसके लिए चापेकर को फाँसी दी गई।

स्वर्गवासी लोकमान्य तिलक इन दिनों बड़ी निर्भीकता के साथ स्वाधीनता-मन्त्र का प्रचार कर रहे थे। वीरत्व-व्यञ्जक एक कविता तो पहले ही छाप चुके थे। नौकरशाही के लिए ये बातें असह्य थीं। उसने उनके ऊपर राजद्रोह-प्रचार का इलज़ाम लगाया और वे १८ महीने के लिए जेल भेज दिए गए। इस साल कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन मध्य-प्रान्त के अमरावती नगर में

हुआ। श्री० शङ्करन नायर सभापति थे। कॉङ्ग्रेस ने पूना के प्लेग-काण्ड और श्री० तिलक के कारादण्ड की तीव्र निन्दा की। कॉङ्ग्रेस के मञ्च पर ऐसी गर्मागर्म वक्तृताएँ इससे पहले कभी नहीं हुई थीं।

नरम और गरम दल

तिलक के कारादण्ड का जनता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। कॉङ्ग्रेस का एक दल इस घटना से बेतरह विक्षुब्ध हो उठा। अङ्गरेजी न्यायालयों पर से लोगों का विश्वास बहुत हद तक उठ गया और आत्म-शक्ति द्वारा मुक्ति प्राप्त करने का विश्वास दिनोंदिन दृढ़ होता गया। परन्तु दूसरा दल अङ्गरेजों का परम-भक्त था! उसे उनकी न्याय-परायणता, सहृदयता और उदारता पर दृढ़-विश्वास था। उसकी दृष्टि में आत्म-निर्भरता अपराध था—राजद्रोह था। वह प्रार्थना महामन्त्र का कट्टर उपासक था, उसके मतानुसार सब रोगों की वही एक-मात्र दवा थी। इस तरह कॉङ्ग्रेस में दो दलों की सृष्टि हो गई! अङ्गरेजी अख़बार वालों ने व्यङ्ग से एक का नाम रक्खा 'मॉडरेट' या नरमपन्थी और दूसरे का 'इक्स्ट्रीमिस्ट' यानी चरमपन्थी।

बङ्गाल का विच्छेद

३ दिसम्बर सन् १९०३ को सरकार ने घोषणा की कि शासन-कार्य की सुविधा के लिए बङ्गाल दो भागों में बाँट दिया जाएगा। बङ्गालियों ने इसका विरोध किया। बरसों तक घोर आन्दोलन हुआ। परन्तु सरकार ने एक न सुनी और १६ अक्टूबर सन् १९०६ को यह घोषणा कार्यरूप में परिणत कर दी गई—बङ्गाल का बटवारा होगा।

परन्तु बङ्गाली इस अपमान को चुपचाप नहीं सह सके। इसके कारण उनके हृदयों में जो तीव्र आग धधक उठी थी, वह धीरे-धीरे सारे भारतवर्ष में फैल गई। वाग्मिप्रवर सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी और श्री० विपिनचन्द्र पाल ने अपनी ओज-भरी वक्तृताओं द्वारा बङ्गाल में एक नवजीवन का सञ्चार कर दिया। बङ्गालियों ने ब्रिटिश माल का बहिष्कार आरम्भ किया। साथ ही स्वदेशी प्रचार और जातीय शिक्षा के लिए भी उद्योग करने लगे। इस समय कवि-सम्राट रवीन्द्रनाथ भी आजकल की तरह 'विश्व-प्रेमी' नहीं, केवल स्वदेश-प्रेमी थे। उनकी भावपूर्ण कविताओं ने सोने में सुगन्ध का काम किया। कायर कहाने वाले बङ्गालियों में उनकी लेखनी ने रूह फूँक दी। इधर पाण्डीचेरी के तपस्वी श्री० अरविन्द घोष और उपाध्याय ब्रह्मबान्धव की लेखनियाँ भी ग़ज़ब ढाने लगीं।

बङ्गाल के कुछ नवयुवक स्वाधीनता के लिए पागल हो उठे। उन्होंने वैध मार्ग का अवलम्बन परित्याग किया। ऋषिराज बङ्किमचन्द्र के 'बन्देमातरम्' मन्त्र का प्रचार पहले ही हो चुका था। इस महामन्त्र के कई युवक-साधक केवल 'बन्देमातरम्' का ज़ोर से उच्चारण करने के कारण जेल की हवा भी खा चुके थे। मन्त्र सिद्ध हो चुका था, उसने बङ्गालियों की विशीर्ण शिराओं के शीतल शोणित को उष्ण कर दिया। वक्र मेरु-दण्ड सीधे हो गए। बङ्गालियों का यह नवीन उत्थान देख कर मानो उनकी चिर-सङ्गिनी कायरता जान लेकर भागी। राजद्रोह, सम्राट के विरुद्ध युद्ध-घोषणा की तैयारी और गुप्त षड्यन्त्रों के मामलों की रिपोर्टों से अख़बारों के कॉलम भर गए। सरकारी 'सिडिशन सरकूलरों' के मारे सभा-समितियाँ त्राहि-त्राहि पुकारने लगीं। चिर-शान्तिपूर्ण विशाल भारत अशान्ति का घर बन गया। कारादण्ड, अर्थदण्ड, वेत्राघात, द्वीपान्तर और फाँसी का बाज़ार ऐसा गरम हुआ कि लोग आश्चर्य में पड़ गए।

इधर कॉङ्ग्रेस में दो दलों की सृष्टि तो पहले ही हो चुकी थी, विप्लव-पन्थियों का रङ्ग और आत्म-निर्भरता वाले चरमपन्थियों का ढङ्ग देख कर बेचारे 'मॉडरेटों' का कलेजा दहल उठा। उन्होंने जातीय आन्दोलन से धीरे-धीरे किनाराकशी आरम्भ की, परन्तु राष्ट्रीयतावादियों के मार्ग में अड़ङ्गा लगाने से बाज़ नहीं आए।

स्वर्गीय बाबू कुँवरसिंह

कॉङ्ग्रेस का ध्येय स्वराज्य

यह १९०६ का ज़माना था। कॉङ्ग्रेस का २२ वाँ अधिवेशन कलकत्ते में हुआ। स्वर्गीय दादाभाई नौरोजी ने तीसरी बार कॉङ्ग्रेस के सभापति के आसन को अलङ्कृत किया था। राष्ट्रवादियों ने लोकमान्य तिलक को सभापति के आसन पर बिठाना चाहा था, परन्तु मॉडरेट तो उनके नाम से घबराते थे। उन्होंने इस प्रस्ताव का विरोध किया। इसके सिवा वे विदेशी बहिष्कार के भी विरुद्ध थे। परन्तु कॉङ्ग्रेस का यह अधिवेशन अत्यन्त उत्साहपूर्ण था। अन्त में विजय भी राष्ट्रीय दल वालों की ही हुई। कॉङ्ग्रेस ने विदेशी वस्तु बहिष्कार सम्बन्धी प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत रह कर औपनिवेशिक स्वतन्त्रता लाभ करना कॉङ्ग्रेस का ध्येय माना गया। सुयोग्य सभापति ने अपने भाषण में इसके लिए 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया था। इस शब्द के साथ स्वर्गीय नौरोजी महाशय की स्मृति सदैव विजड़ित रहेगी।

श्यामजी कृष्ण वर्मा का उद्योग

मातृ-भूमि की गोद से अलग—विदेशों में वास करने वाले कुछ भारतीय नवयुवक बड़ी आशा और उत्सुकता से इस राष्ट्रीय उत्थान की गति-विधि लक्ष्य कर रहे थे। उन्होने वहीं बैठे-बैठे इस राष्ट्रीय महायज्ञ में भाग लेने का विचार किया। प्लेग-काण्ड के समय पूने में जो हत्या हुई थी, उसके सम्बन्ध में नाटूभाई की आज्ञा से विख्यात दो महाराष्ट्र युवकों को देशान्तर-वास की सज़ा दी गई थी। इससे श्यामजी कृष्ण वर्मा नाम के एक गुर्जर युवक के मन पर विचित्र प्रभाव पड़ा। ये महर्षि दयानन्द सरस्वती के शिष्यों में थे। क्रान्ति की लहर से इनका हृदय ओत-प्रोत था। पूना के प्लेगी-कर्मचारियों की हत्या के कारण जिस भीषण अत्याचार की सृष्टि हुई थी, उसके प्रतिकार की चेष्टा के लिए वर्मा जी इङ्गलैण्ड चले गए। शायद उन्हें आशा थी कि इङ्गलैण्ड वाले उनसे सहानुभूति दिखाएँगे। परन्तु यह आशा केवल आशा ही रह गई; सफल नहीं हुई। साथ ही स्वतन्त्रता-प्रेमी वर्मा जी भी फिर इस पराधीन देश में न आए और वहीं रह कर इसे बन्धन-मुक्त करने की चेष्टा में लग गए! सन् १९०५ में उन्होंने 'इण्डियन होमरूल सुसाइटी' नाम की एक संस्था की स्थापना की और 'इण्डियन सोशलिस्ट' नाम का एक अख़बार भी निकाला। इस अख़बार में उन्होंने घोषणा की कि भारतवासियों में स्वतन्त्रता के भावों का प्रचार करने के लिए वे ऐसे छः आदमी चाहते हैं, जो विदेशों में जाकर इसके सम्बन्ध में शिक्षा लाभ करें। इसके लिए वे उन्हें एक हज़ार रुपए की वृत्ति भी प्रदान करेंगे। इस घोषणा को पढ़ कर कई भारतीय नवयुवक उनके साथ हुए। जिनमें नासिक के श्री० विनायक दामोदर सावरकर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन्होंने भारतीय नवयुवकों के दिलों में देशात्मबोध की जागृति के लिए 'मित्र-मेल' नाम की एक संस्था की स्थापना की थी। परन्तु अन्त में उस समिति का कार्य-भार अपने छोटे भाई श्री० गणेश दामोदर सावरकर को सौंप कर वे लन्दन चले गए। सावरकर जैसा उत्साही

साथी पाकर वर्मा जी ने फ़ौरन 'इण्डिया हाउस' नाम की एक संस्था की स्थापना कर डाली और प्रवासी भारतीय युवकों को विप्लव-मन्त्र की दीक्षा प्रदान करने लगे।

राष्ट्र की जाग्रति

इधर भारतवर्ष विशेषतः बङ्गाल में चापेकर-सङ्घ की तरह समितियों की स्थापना होने लगी। युवकों ने बड़े उत्साह से लाठी, तलवार और छुरी आदि चलाने का अभ्यास आरम्भ कर दिया। कुछ दिनों के बाद कई बड़ी-बड़ी समितियों का सम्बन्ध लन्दन के इण्डिया हाउस के साथ स्थापित हो गया।

सन् १९०६ की कॉङ्ग्रेस के बाद नौकरशाही ने इस राष्ट्रीय जागरण को बलपूर्वक कुचल डालने का विचार किया। पुलिस का अत्याचार ज़ोरों से चलने लगा। पञ्जाब के दो शेर—स्वर्गीय लाला लाजपतराय और सरदार अजीतसिंह—बिना विचार के ही क़ैद करके मण्डाले (बर्मा) भेज दिए गए।

सन् १९०७ में कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन नागपुर में होने वाला था। यद्यपि उस समय देश में राष्ट्रीयता की दुन्दुभी बज चुकी थी, परन्तु कॉङ्ग्रेस की बागडोर मॉडरेटों के ही कम्पमान हाथों में थी। वे नागपुर में कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन करने को तैयार न हुए। क्योंकि वहाँ तिलक-दल के महाराष्ट्रों का विशेष प्रभाव था; इसलिए बम्बई के विख्यात मॉडरेट नेता सर फ़ीरोजशाह मेहता ने सूरत में कॉङ्ग्रेस के अधिवेशन करने का आयोजन किया। मेहता महोदय को यह कुटिल चाल राष्ट्रीय दल वालों को अच्छी नहीं लगी। उन्होंने कॉङ्ग्रेस को छोड़ कर अपनी अलग संस्था क़ायम करने का विचार किया। परन्तु लोकमान्य तिलक इसके लिए तैयार नहीं हुए। वे कॉङ्ग्रेस को मॉडरेटों के हाथों से छीन लेने के पक्षपाती थे। लाला लाजपतराय मण्डाले से लौट आए थे। इसलिए राष्ट्रीय दल वाले उन्हीं को कॉङ्ग्रेस का सभापति बनाना चाहते थे। परन्तु मॉडरेटों को भय था कि उनके सभापति होने से सरकार नाराज़ हो जाएगी, इसलिए उन्होंने बङ्गाल के मॉडरेट (सर) रासबिहारी घोष को सभापति चुना। इसके साथ ही उन्होंने यह भी घोषणा की कि 'स्वराज्य बहिष्कार' और 'जातीय शिक्षा' सम्बन्धी प्रस्तावों की आलोचना कॉङ्ग्रेस में नहीं हो सकेगी। राष्ट्रीय दल वाले मॉडरेटों की इस मनोवृत्ति से अत्यन्त क्षुब्ध हुए। उन्होंने सूरत में श्री० अरविन्द घोष के सभापतित्व में एक सभा की। निश्चय हुआ कि भीरुता और दुर्बलता को प्रश्रय प्रदान कर कॉङ्ग्रेस की मर्यादा को न बिगड़ने दिया जाए। लोकमान्य ने श्री० रासबिहारी घोष से मिल कर उन प्रस्तावों को ग्रहण करने के लिए अनुरोध किया। परन्तु उन्होंने ऐसा करने से साफ़ इन्कार कर दिया। राष्ट्रीय दल वाले हताश होकर लौट आए और निश्चय किया कि कॉङ्ग्रेस के खुले अधिवेशन में ये प्रस्ताव रक्खे जाएँ और घोष महाशय के सभापतित्व का विरोध किया जाए। मॉडरेट भी अपने पक्ष का समर्थन करने के लिए तैयार थे। अधिवेशन आरम्भ हुआ। तिलक कुछ कहने के लिए उठे। इतने में किसी बदमाश ने उन पर एक जूता फेंका, जो तिलक को तो नहीं लगा, परन्तु बङ्गाल के सुप्रसिद्ध मॉडरेट नेता श्री० सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी की दाढ़ी को चूम कर एक दूसरे मॉडरेट सज्जन के ऊपर जा पड़ा। सारी सभा में हुलस्थूल मच गया। कुर्सियाँ चलीं, डण्डे चले, हाथा-पाई हुई और अन्त में कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन ही स्थगित कर देना पड़ा।

स्वर्गीय नाना साहब

सन् १९०८ में कॉङ्ग्रेस का वही स्थगित अधिवेशन मद्रास में हुआ। सभापति भी वही श्री० रासबिहारी घोष महाशय हुए। मैदान साफ़ था। महाराष्ट्र-केसरी श्री० तिलक देव राजद्रोह के प्रचार के अपराध में ब्रिटिश न्यायालय द्वारा छः वर्षों के लिए मण्डाले के जेलख़ाने में भेजे जा चुके थे। बङ्गाल के स्वदेशी-प्रचारक नेता श्री० श्यामसुन्दर चक्रवर्ती, श्री० कृष्णकुमार मित्र, श्री० शचीन्द्रप्रसाद बोस, श्री० अश्विनीकुमार दत्त, श्री० सतीशचन्द्र चट्टोपाध्याय, राजा सुबोधचन्द्र मल्लिक, श्री० मनोरञ्जन गुह ठाकुरता, श्री० पुलिनबिहारी दास और श्री० भूपेन्द्रनाथ नाग, सन् १९१८ के तीसरे रेगूलेशन के अनुसार बिना विचार के ही निर्वासित कर दिए गए थे। बङ्गाल के इन नौ नेताओं का निर्वासन इतिहास में 'नौ रत्नों के निर्वासन' के नाम से विख्यात है। इस घटना ने उस समय सारे देश में एक विचित्र सनसनी फैला दी थी।

१९०७-८ का विप्लव-काण्ड

सन् १९०७ की ६ठी दिसम्बर को बङ्गाल के छोटे लाट अपनी स्पेशल ट्रेन द्वारा मेदिनीपुर जा रहे थे। विप्लववादियों ने बम द्वारा उनकी गाड़ी उलट देने का आयोजन किया, परन्तु तक़दीर अच्छी थी, बेचारे लाट साहब बच गए। केवल कुछ गाड़ियाँ चूर होकर रह गईं।

इसी साल की २३वीं दिसम्बर को ग्वालन्दो के स्टेशन पर किसी ने ढाका के भूतपूर्व मैजिस्ट्रेट मि० एलेन पर पिस्तौल का वार किया। साहब को चोट तो करारी लगी थी, परन्तु मरे नहीं। इस घटना के कई दिन बाद बङ्गाल में कुष्टिया नामक स्थान में एक अङ्गरेज़-पादड़ी पर भी गोली छोड़ी गई थी। परन्तु इन दोनों अपराधियों का आज तक पता नहीं लगा।

सन् १९०८ की ११वीं अप्रैल को चन्दननगर के मेयर के घर में एक बम फटा। परन्तु मेयर बच गया। ३० अप्रैल को खुदीराम बोस और प्रफुल्लचन्द्र चाकी ने मुज़फ़्फ़रपुर में श्रीमती केनेडी और उनकी कन्या कुमारी केनेडी को बम फेंक कर मार डाला। ये दोनों विप्लववादी युवक कलकत्ते के प्रेज़ीडेन्सी मैजिस्ट्रेट मि० किङ्ग्सफ़र्ड को मारने आए थे, जो मुज़फ़्फ़रपुर में जज नियुक्त हुए थे, परन्तु धोखे में पड़ जाने के कारण बेचारी दोनों स्त्रियों को चोट लगी और वे मर गईं।

घटना के दूसरे दिन खुदीराम बैनी नाम के एक गाँव में पकड़ा गया था। अन्त में उसे फाँसी की सज़ा दी गई थी और चाकी ने आत्म-हत्या करके न्याय के शिकञ्जे से अपना पिण्ड छुड़ाया था।

इस घटना के कुछ दिन बाद ही, ता० २ मई सन् १९०८ को कलकत्ते के माणिकतल्ला नामक महल्ले में पुलिस ने बम बनाने के एक बड़े कारख़ाने का पता लगाया। यहाँ बहुत से बम, रिवॉलवर, बन्दूकें और कारतूस आदि युद्ध-सम्बन्धी सामान पाए गए। इसके सिवा कलकत्ता के हैरिसन रोड के एक मकान में भी कुछ ऐसे ही सामान पाए गए थे। इसी साल कलकत्ता के ग्रे-स्ट्रीट नामक स्थान में एक बम फटा था और ढाका ज़िले के बाढ़ा ग्राम में एक भीषण डकैती भी विप्लववादियों द्वारा हुई थी। यह डकैती बड़ी साहसपूर्ण थी। चार आदमी क्रान्तिकारियों द्वारा मारे गए थे।

इन भयङ्कर घटनाओं के कारण सारे देश में सनसनी फैल गई। अख़बार वालों ने इस विप्लव-काण्ड की घोर निन्दा की, विप्लवपन्थियों को आततायी, पागल और देशद्रोही कहा गया। मॉडरेट ही नहीं, कितने ही 'एक्सट्रीमिस्ट' भी इन घटनाओं के कारण सन्नाटे में आगए और कुछ दिनों के लिए कॉङ्ग्रेसी आन्दोलन दब गया।

माणिकतल्ले में जो कारख़ाना पकड़ा गया था, उसके सम्बन्ध में श्री० अरविन्द घोष के छोटे

भाई श्री० बारीन्द्रकुमार घोष और श्री० उल्लासकर दत्त आदि ३४ नवयुवकों पर मामला चला। इसके बाद श्री० अरविन्द घोष आदि भी इसी मामले में पकड़े गए। इस मुक़दमे का नाम 'अलीपुर षड्यन्त्र-केस' रक्खा गया था। वर्षों तक बड़ी धूम के साथ मामला चलने पर श्री० अरविन्द आदि कई आदमी तो छूट गए, परन्तु बाक़ी १५ अभियुक्तों को कालापानी तथा कठोर कारावास का दण्ड दिया गया था। इस मामले में श्री० बारीन्द्रकुमार और श्री० उल्लासकर दत्त आदि कई अभियुक्तों ने अपना अपराध स्वीकार करते हुए, गरमागरम बयान भी दिए थे।

इन्हीं अभियुक्तों में नरेन्द्र गोस्वामी नाम का एक नवयुवक भी था। वह सरकारी गवाह हो गया और उसने विप्लववादियों के सारे षड्यन्त्रों का भण्डाफोड़ कर दिया। फलतः अलीपुर की सेण्ट्रल जेल के अन्दर ही श्री० कन्हाईलाल दत्त और श्री० सत्येन्द्रनाथ बोस ने पिस्तौल की गोलियों द्वारा नरेन्द्र का काम तमाम कर दिया। जिस समय यह अद्भुत दुर्घटना हुई थी, उस समय श्री० कन्हाईलाल को १०५ डिग्री ज्वर था। कहते हैं, पुलिस को आज तक इस बात का पता न लगा कि जेल के अन्दर इन्हें पिस्तौल कहाँ से मिल गई। अस्तु।

नन्दलाल बैनर्जी नाम के एक पुलिस-इन्स्पेक्टर ने, मुज़फ़्फ़रपुर बम-काण्ड के अन्यतम नायक श्री० प्रफुल्ल को पकड़ने की चेष्टा की थी। जिस दिन श्री० कन्हाईलाल को फाँसी दी गई थी, उसके एक दिन पहले कलकत्ता के सरपेण्टाइन लेन में किसी ने नन्दलाल को गोली मार दी और वह वहीं ढेर हो गया!

जिस रोज़ नन्दलाल मारा गया था, उसके दो रोज़ पहले एक और बड़ी सनसनीपूर्ण घटना हुई। कलकत्ता के मध्य भाग में 'ओवरटून हॉल' नाम की एक अट्टालिका है, वहीं 'यङ्गमेन क्रिश्चियन एसोसिएशन' का कार्यालय है। उस दिन वहाँ कोई जलसा था। बङ्गाल के तत्कालीन लेफ़्टिनेण्ट गवर्नर सर एण्ड्रू फ़्रेज़र भी जलसे में आए थे। सैकड़ों गण्य-मान्य अङ्गरेज़ और हिन्दुस्तानी वहाँ मौजूद थे। उसी समय जितेन्द्रनाथ नाम के एक बङ्गाली युवक ने उन पर हमला किया। परन्तु सर एण्ड्रू के भाग्य से उसकी छःनली पिस्तौल ख़राब थी, इसलिए उसकी चेष्टा विफल हो गई और लाट साहब बाल-बाल बच गए।

इस साल, अर्थात् १९०८ ईस्वी में, केवल बङ्गाल में ही इस तरह की कुल २१ वैप्लविक घटनाएँ हुई थीं।

कॉङ्ग्रेस का वैध आन्दोलन

सन् १९०८ से लेकर १९२४ तक कॉङ्ग्रेस के वैध आन्दोलन में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई पड़ा। १९०८ में भारत को मार्ले-मिण्टो शासन संस्कार प्राप्त हुआ। 'मॉडरेट' नेताओं ने इसे अपने परिश्रम का फल समझ कर सिर और आँखों पर चढ़ाया। उन्हें विश्वास था, कि इसी तरह वैध आन्दोलन करते रहने से और अधिकार भी प्राप्त होंगे, इसलिए उन्होंने कॉङ्ग्रेस को भी अच्छी तरह अपने क़ब्ज़े में रक्खा। इसके लिए एक 'क्रीड' बनाया गया और जो इस क्रीड पर हस्ताक्षर कर देता था, वही कॉङ्ग्रेस का प्रतिनिधि हो सकता था। परन्तु राष्ट्रीय दल इस क्रीड के विरुद्ध था, इसलिए छः वर्षों तक कॉङ्ग्रेस सम्पूर्ण रूपेण मॉडरेटों के हाथ में रही। इस समय कॉङ्ग्रेस का उद्देश्य था—

"ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वायत्त-शासन सम्पन्न देशों की तरह शासन-प्रणाली प्राप्त करना और देश के शासन-कार्य में उन्हीं की तरह अधिकार लाभ करना। इसके लिए उपाय निर्धारित हुआ, वैध आन्दोलन और धीरे-धीरे अधिकार प्राप्त करते जाना। इसके साथ ही राष्ट्रीय एकता की वृद्धि, राष्ट्रीय भावों का प्रचार तथा देश की मानसिक, नैतिक, आर्थिक और वाणिज्य सम्बन्धी उन्नति करना भी कॉङ्ग्रेस का ध्येय रखा गया।

विप्लव की प्रगति

इधर विप्लवपन्थियों का आन्दोलन ज़ोरों के साथ चल रहा था। अलीपुर षडयन्त्र-केस में तथा नरेन्द्र की हत्या वाले मामले में आशुतोष विश्वास नाम के एक बङ्गाली ने सरकार के पक्ष

स्वर्गीय राजा राममोहन राय

का समर्थन किया था, इसलिए सन् १९०९ की १० फ़रवरी को एक नवयुवक ने विश्वास को गोली मार दी और इसके लिए उसे फाँसी की सज़ा दी गई।

पुलिस के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट मियाँ शमसुल आलम अलीपुर षडयन्त्र-केस के पैरवीकार थे। इसलिए १९१० की २४ जनवरी को श्री० वीरेन्द्रनाथ गुप्त नाम के नवयुवक ने उन्हें दिन-दहाड़े और कलकत्ता हाईकोर्ट के जनाकीर्ण फाटक पर गोली मार दी। वीरेन्द्र को फाँसी की सज़ा दी गई थी।

इस तरह के क्रान्तिकारी अनुष्ठानों की बढ़ती देख कर सरकार ने विशेष सतर्कता का अवलम्बन किया। उसने सन् १९०८ के फ़ौजदारी क़ानून में यह सुधार किया कि वैप्लविक अपराधों का विचार सनातन नियमानुसार न कर, 'चट मँगनी और पट विवाह' के अनुसार होगा। इसके बाद ही बङ्गाल के विभिन्न स्थानों की, प्रायः आधे दर्जन समितियों और सभाओं को ग़ैर-क़ानूनी संस्था क़रार दे दिया गया।

सन् १९०९ में फ़रीदपुर ज़िले के फ़तहजङ्ग नामक गाँव में पुलिस के एक गुप्तचर के धोखे में उसका भाई मार डाला गया। इसी साल बङ्गाल के नागला, हल्दबाड़ी और हवड़ा आदि कई स्थानों में डकैती तथा गुप्त साज़िश आदि के अभियोग में बहुत सी गिरफ़्तारियाँ हुईं और कई मामले चले। हवड़ा के षड्यन्त्र-केस में ५० युवकों पर मामला चलाया गया था। इनमें छः हल्दबाड़ी की डकैती वाले मामले में पहले ही सज़ा पा चुके थे। बाक़ी ४४ कई महीनों के बाद बेदाग़ छोड़ दिए गए। इस साल की वैप्लविक घटनाओं में सब से बड़ी घटना ढाके का षड्यन्त्र-केस था। इसके सम्बन्ध में कुल ४४ नवयुवक पकड़े गए थे, जिनमें १५ दण्डित हुए और बाक़ी छूट गए।

सन् १९१० में, विप्लव की बाढ़ रोकने के लिए सरकार ने प्रेस-क़ानून पास किया। फल-स्वरूप कितने ही अख़बार बन्द हो गए। देश ने इस क़ानून का घोर प्रतिवाद किया था, परन्तु कोई फल नहीं हुआ। इस साल विप्लववादियों ने पुलिस के तीन गुप्तचरों की हत्याएँ कीं। एक ढाका ज़िले के एक गाँव में मारा गया, दूसरा मैमनसिंह ज़िले में और तीसरा बारीसाल में। २१ फ़रवरी को कलकत्ते में श्रीशचीन्द्र नाम का एक जासूस भी मारा गया। ढाका ज़िले के सोनारङ्ग नाम के गाँव में कुछ युवकों ने एक राष्ट्रीय विद्यालय की स्थापना की थी। आस-पास के गाँवों के कुछ आदमियों ने, कहा जाता है, पुलिस से मिल कर, विद्यालय वालों के विरुद्ध एक जाली मामला दायर कर दिया। इससे कुछ नवयुवक अत्यन्त उत्तेजित हो उठे और कई आदमियों को मार डाला।

सन् १९११ में नवाखाली में विप्लववादियों ने एक विप्लववादी को ही मार डाला। बात असल यह थी, कि शारदाचरण चक्रवर्ती नाम का एक विप्लववादी विप्लवी-दल की कुछ बन्दूकें तथा अन्यान्य सामान लेकर अलग हो गया था और अपना एक दल बना कर कुछ स्वार्थ-साधन करना चाहता था। इसलिए विप्लववादियों ने एक दिन उसका काम तमाम कर दिया। इसके सिवा इस साल ढाका और मेदिनीपुर में दो पुलिस के चर भी मारे गए थे।

सन् १९१२ में विप्लव-काण्ड कुछ शिथिल था। इस साल कहीं कोई उल्लेख योग्य घटना नहीं हुई। परन्तु सन् १९१३ में फिर आग भड़की। इस साल की २९वीं सितम्बर को कलकत्ता के 'कॉलेज स्क्वायर' नामक मैदान में पुलिस का एक बङ्गाली हेड-कॉन्स्टेबिल मार डाला गया। इसके दूसरे दिन मैमनसिंह के एक दारोग़ा पर बम फेंका गया। इससे पहले दो बार और उसे मार डालने की चेष्टा की गई थी, परन्तु सफलता नहीं प्राप्त हुई। इसके कुछ दिन बाद ही बारीसाल के षड्यन्त्र-केस का सूत्रपात हुआ। इस मामले में सरकार और विद्रोहियों में एक समझौता हुआ। १२ अभियुक्त अपराध स्वीकार कर जेल गए और बाक़ी सोलह छोड़ दिए गए। इसी साल कलकत्ता के राजाबाज़ार नाम के मोहल्ले में पुलिस ने एक बम का कारख़ाना पकड़ा और श्री० अमृतलाल हाज़रा नाम का एक युवक १६ साल के लिए जेल भेजा गया।

१९१४ की बङ्गाल के विप्लव सम्बन्धी घटनाओं में चटगाँव के सत्येन्द्रसेन की हत्या और ढाका के रामदास की हत्या विशेष उल्लेख योग्य है।

सत्येन्द्र पुलिस का वेतनभोगी जासूस था। वह विप्लवपन्थियों में आ मिला और सारा भेद पुलिस को बतला दिया। इसलिए १९ जून को दिन-दहाड़े वह मार डाला गया। रामदास का भी वही हाल था। पहले वह विप्लववादी था, पर अन्त में पुलिस का जासूस बन गया। फलतः उसे भी जान से हाथ धोना पड़ा। १९ जुलाई को वह ढाका के बकलैण्ड पुल पर वसन्त चटर्जी नाम के जासूस के साथ टहल रहा था। इसी समय किसी विप्लवी ने उस पर आक्रमण किया। वसन्त ने पानी में कूद कर अपनी रक्षा कर ली।

१९०८ से १९१४ तक में विप्लव की आग सारे भारतवर्ष में फैल गई। उसका वर्णन हम आगे चल कर करेंगे। अस्तु।

महासमर और विप्लवी

सन् १९१४ में यूरोप में महासमर की आग भड़क उठी। राजशक्ति को व्यतिव्यस्त देख कर मॉडरेटों ने निश्चय किया कि इस साल कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन न किया जावे। परन्तु अन्त में, उस साल मद्रास में और दूसरे साल अर्थात् १९१५ में बम्बई में कॉङ्ग्रेस के अधिवेशन हुए और निश्चय हुआ कि इस सङ्कट के समय में ब्रिटिश सरकार की सहायता की जाय। इस प्रतिश्रुति का केवल कॉङ्ग्रेस ने ही नहीं, वरन् सारे देश ने ख़ूब पालन किया। साधारण से साधारण मनुष्य ने भी युद्ध-फ़ण्ड में रुपए दिए। केवल धन ही नहीं, जान देने में भी देश ने अपनी उदारता और त्याग-शीलता का ख़ूब परिचय दिया।

परन्तु विप्लवी किसी और ही धुन में थे। जिस समय देश ब्रिटिश सरकार की सहायता करने में जुटा था, उस समय वे उसके विरुद्ध षडयन्त्र करने में लगे थे। उन्होंने इस अवसर से लाभ उठा कर सशस्त्र विद्रोह की तैयारी आरम्भ कर दी। चारों से आयोजन आरम्भ हुआ। कलकत्ते की एक दूकान से ५० पिस्तौलें और ४६ हज़ार कारतूस लूट कर उसी समय देश के विभिन्न केन्द्रों में बाँट दिए गए। हथियार पा जाने पर विप्लवादी और भी उत्साहित हुए। इस साल के आरम्भ में ही कलकत्ता के शोभा बाज़ार के पास एक पुलिस का इन्स्पेक्टर मार डाला गया था। वसन्तकुमार नाम के पुलिस कर्मचारी को, जिसने ढाके के बकलैण्ड पुल से कूद कर अपनी रक्षा की थी, मारने के लिए फिर चेष्टा हुई। परन्तु इस बार भी वह बच गया। उसके बदले एक दूसरे हेड-कॉन्स्टेबिल की हत्या हुई और दो कॉन्स्टेबिल घायल हुए।

आए दिन की इन हत्याओं और उत्पातों के कारण सरकार विशेष विचलित हो उठी। उसने इसके प्रतिकार के लिए 'भारत-रक्षा-क़ानून' या डिफ़ेन्स ऑफ़ इण्डिया एक्ट के नाम से एक क़ानून पास किया। परन्तु लोगों को सन्देह हुआ, कि इस क़ानून के कारण जौ के साथ घुन भी पिस जाएँगे। इसलिए इसका घोर विरोध किया गया। परन्तु सरकार ने इस क़ानून को पास करके ही दम लिया। बात वही सामने आई। इस क़ानून की बदौलत बङ्गाल के बाहर के सैकड़ों नवयुवक बिना विचार के ही यत्र-तत्र नज़रबन्द कर दिए गए।

इतने में १९१५ का ज़माना था। श्रीमती एनी बेसेण्ट ने 'होमरूल' आन्दोलन आरम्भ किया। देश के अधिकांश नेताओं ने उनका साथ देने का वचन दिया। १९१६ में लखनऊ में कॉङ्ग्रेस के इकतीसवें अधिवेशन की तैयारियाँ आरम्भ हुईं। मॉडरेटों की अहम्मन्यता के कारण जो लोग कॉङ्ग्रेस से अलग थे, वे भी इस साल उसमें शरीक हुए। इसके सिवा मुसलमान भी आए। वहीं मुस्लिम लीग का अधिवेशन भी हुआ। दोनों ही राष्ट्रीय संस्थाओं ने होमरूल सम्बन्धी प्रस्ताव स्वीकार किया। इस सम्बन्ध में लोकमत तैयार करने की इच्छा से लोकमान्य तिलक और श्रीमती बेसेण्ट ने प्रचार-कार्य आरम्भ किया।

इधर नौकरशाही ने एक ओर शासन-संस्कार और दूसरी ओर लाल आँखें दिखा कर इस राष्ट्रीय भावना को कुचल डालने की चेष्टा की। भारत-रक्षा-क़ानून के फन्दे में हज़ारों युवक फाँसे गए। यहाँ तक कि श्रीमती एनी बेसेण्ट, मौ० शौकत-अली और मौ० मोहम्मद अली भी नज़रबन्द किए गए। परन्तु इस दमन से आन्दोलन का

स्वर्गीय लोकमान्य तिलक

बाल भी बाँका नहीं हुआ। एक ओर कॉङ्ग्रेस का वैध आन्दोलन और दूसरी ओर विप्लव आन्दोलन पूर्ण उत्साह के साथ चलने लगे। बल्कि विप्लव आन्दोलन ने तो एक दूसरा ही रूप धारण किया। सन् १९१५ की १२वीं फ़रवरी को कलकत्ते के गार्डनरीच नामक स्थान पर दिन-दहाड़े बर्ड कम्पनी का ख़ज़ाना लूट लिया गया। कम्पनी के कर्मचारी एक मोटरगाड़ी पर रुपए लाद कर ले जा रहे थे। विप्लवियों ने रास्ते में गाड़ी रोक ली और सैकड़ों आदमियों के देखते-देखते १८ हज़ार रुपए लेकर चल दिए। इसके ठीक दस दिन बाद बेलियाघाटा (कलकत्ता) के एक चावल के व्यापारी के २० हज़ार रुपए लूटे गए और एक मोटरगाड़ी चलाने वाला भी मार डाला गया।

एक दिन विख्यात विप्लववादी श्री० यतीन्द्र-नाथ मुकर्जी पथरियाघाटा (कलकत्ता) के एक मकान में अपने साथियों से कुछ परामर्श कर रहा था। इतने में वहाँ नीरद नाम का एक अजनबी आदमी पहुँच गया। यतीन्द्र ने उसे पुलिस का आदमी समझ कर फ़ौरन गोली दाग़ दी। २८ फ़रवरी को कलकत्ता के कॉर्नवालिस स्क्वॉयर के पास एक पुलिस कर्मचारी मारा गया। वह गया था, चित्तप्रिय नाम के एक विद्रोही को गिरफ़्तार करने। इसी वर्ष के ३० नवम्बर को कलकत्ते में एक कॉन्स्टेबिल मारा गया था। २९ अगस्त को पुलिस की सहायता करने के अपराध में मुरारी-मोहन नाम का एक युवक मारा गया था। ३ मार्च को कुम्मिले में एक हेड मास्टर की हत्या हुई। १९ अक्टूबर के मैमनसिंह का पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री० यतीन्द्रमोहन अपने बच्चे के साथ मारा गया। १९ दिसम्बर को विश्वासघात के अपराध में धीरेन्द्र विश्वास की हत्या हुई।

श्री० यतीन्द्रनाथ मुकर्जी का ज़िक्र ऊपर आ चुका है। गत महासमर के दिनों में इसने अपना एक मज़बूत दल बना लिया था। विदेशों से शस्त्रास्त्र मँगाने की तैयारियाँ की गई थीं। परन्तु कई कारणों से इस विषय में सफलता प्राप्त नहीं हुई। पथरियाघाटा में नीरद की हत्या करने के कारण यतीन्द्र को कलकत्ता छोड़ देना पड़ा। वह चन्द साथियों को लेकर उड़ीसा प्रान्त के बालेश्वर नामक स्थान में जाकर रहने लगा। वहाँ एक दिन उसे ख़बर मिली, कि पुलिस उसका पीछा कर रही है। साथी उस समय वहाँ मौजूद न थे। उन्हें ख़बर देने में कुछ देर हो गई। जब साथी आ गए तो उसने भागने की चेष्टा की। वह महानदी पार करके किसी निर्जन स्थान में निकल जाना चाहता था। परन्तु पुलिस ने घेर लिया। दोनों ओर से गोलियाँ चलीं। कई पुलिस वाले और ग्रामवासी मारे गए। यतीन्द्र अपने साथियों सहित नदी पार करके एक जङ्गल में छिप गया। पुलिस ने आकर जङ्गल को चारों ओर से घेर लिया। यतीन्द्र को ख़बर लगी तो उसने तथा उसके साथियों ने निश्चय किया कि जीते जी आत्म-समर्पण नहीं करेंगे। उस समय यतीन्द्र के साथ चित्तप्रिय, नरेन्द्र, मनोरञ्जन और ज्योतिषचन्द्र नाम के चार युवक थे। उधर पुलिस थी, सैकड़ों की संख्या में। कुछ देर के बाद पुलिस की सहायता के लिए घुड़सवारों की एक टोली भी आ पहुँची। इन पाँचों युवकों ने पुलिस वालों का मुक़ाबला किया। पुलिस जलधारा की तरह गोलियाँ चलाने लगी। यतीन्द्र-दल भी मुँहतोड़ उत्तर दे रहा था। अन्त में चित्तप्रिय को गोली लगी और वह धराशायी हुआ। यह देख कर यतीन्द्र मानो और भी उत्साहित हो गया और दोनों हाथों में पिस्तौल लेकर दनादन गोलियाँ छोड़ने लगा। अन्त में घायल होकर गिर पड़ा। थोड़ी देर के बाद दोनों (यतीन्द्र और चित्तप्रिय) मर गए। नरेन्द्र और मनोरञ्जन को अदालत ने फाँसी की सज़ा दी थी। ज्योतिषचन्द्र को आजन्म के लिए कालेपानी की सज़ा दी गई थी, परन्तु बहरामपुर की जेल में ही उसकी मृत्यु हो गई!

इस प्रकार १९०६ से लेकर १९१६ तक केवल बङ्गाल में २१० वैप्लविक अनुष्ठान हुए और १०१ चेष्टाएँ विफल हो गईं। इन तमाम घटनाओं से १,३०८ मनुष्यों का सम्बन्ध था। ३९ मामले चले थे, जिनमें ८४ आदमियों को सज़ा दे दी गई। दस साज़िश के मामले चले थे, जिनसे १९२ आदमियों का सम्बन्ध था। इनमें से ६३ को कड़ी

सजाएँ दी गई थीं। फ़ौजदारी क़ानून के अनुसार ८२ आदमियों से नेकचलनी के लिए ज़मानत और मुचलके लिए गए थे। अस्त्र-आईन और विस्फोटक पदार्थों को रखने के अपराध में ५९ मामले चले, जिनमें ५८ आदमियों को सज़ाएँ दी गई थीं।

शासन-संस्कार

२० अगस्त सन् १९१७ को इङ्गलैण्ड की पार्लामेण्ट के उद्घाटन के समय सम्राट ने श्रीमुख से कहा कि भारतवासियों को धीरे-धीरे दायित्व-मूलक शासन-प्रणाली प्रदान करना ही भारत में ब्रिटिश शासन-नीति का उद्देश्य है। यह सुन कर मॉडरेटों को बड़ी ख़ुशी हुई। परन्तु राष्ट्रीय दल अपने आत्म-निर्भरता वाले सिद्धान्त पर डटा रहा। इस साल कॉङ्ग्रेस का बत्तीसवाँ अधिवेशन कलकत्ते में हुआ था। श्रीमती एनी बेसेण्ट निर्वासन से छुटकारा पा चुकी थीं। राष्ट्रीय-दल वालों ने बड़े उत्साह से उन्हें सभानेत्री निर्वाचित किया। इस साल कॉङ्ग्रेस सोलहो आने राष्ट्रीय दल वालों के हाथ में थी। परन्तु शासन संस्कार की आशा से मॉडरेटों ने भी कॉङ्ग्रेस का साथ दिया था। बड़ा ही उत्साहपूर्ण अधिवेशन था। सभानेत्री का ऐसा अपूर्व स्वागत हुआ, कि जिसका वर्णन करना मुश्किल है। लोकमान्य तिलक भी इस अधिवेशन में शामिल थे। प्रतिनिधियों की संख्या प्रायः पाँच हज़ार थी। लखनऊ के १५वें अधिवेशन को छोड़ कर, दूसरे किसी अधिवेशन की प्रतिनिधि-संख्या इससे अधिक नहीं हुई थी।

सम्राट महोदय की उपर्युक्त घोषणा के अनुसार १८ जुलाई, सन् १९१८ को भारत-सचिव और बड़े लाट ने एक रिपोर्ट दाख़िल की। महासमर के समय जो सब्ज़ बाग़ दिखाया गया था, उससे लोग अत्यन्त आशान्वित हो गए थे। कितने ही तो भारत में किसी नवयुग के आने का स्वप्न देख रहे थे। परन्तु उपर्युक्त रिपोर्ट ने उनकी तमाम आशाओं पर पानी फेर दिया। फलतः कॉङ्ग्रेस ने बम्बई में अपना एक ख़ास अधिवेशन करके इस नवीन शासन-संस्कार को एक स्वर से अग्राह्य कर दिया।

इस समय भारत-रक्षा-क़ानून का ख़ूब दौर-दौरा था। अधिकांश विप्लवी जहाँ-तहाँ नज़रबन्द करके रक्खे गए थे, परन्तु विप्लववाद ने देश का पिण्ड नहीं छोड़ा। १९१६ की १६वीं जनवरी को कलकत्ते के मेडिकल कॉलेज के सामने आम रास्ते पर और दिन-दहाड़े एक पुलिस का दारोग़ा मार डाला गया। ३० जुलाई को डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट बसन्त चटर्जी मारा गया। इसके अलावा इसी साल ढाका, सिराजगञ्ज और वाजिदपुर में कई पुलिस-कर्मचारी विप्लववादियों द्वारा मारे गए थे।

१९१७ में बङ्गाल के बचे हुए विप्लववादियों ने आसाम में जाकर आश्रय लिया। पुलिस को इसकी ख़बर लग गई और गोहाटी में उनका स्थान घेर लिया गया। परन्तु विप्लववादियों ने आत्म-समर्पण नहीं किया। ख़ूब गोलियाँ चलीं और अन्त में कई घायल विद्रोही पुलिस द्वारा पकड़े गए और कई पुलिस की आँखों में धूल डाल कर उसी समय नौ-दो-ग्यारह हो गए। इन्हीं भागने वालों में नलिनी नाम का एक नौजवान था, जो कई स्थानों में भ्रमण करता हुआ ढाका पहुँचा! पुलिस ने उसका वासस्थान घेर लिया। नलिनी और उसके साथी तारिणी ने निकल भागने की कोशिश की, परन्तु कामयाब न हुए। तारिणी तो पुलिस की गोली खाकर वहीं ढेर हो गया और नलिनी घायल होने पर भी भाग खड़ा हुआ। परन्तु चोट क़रारी लग चुकी थी, इसलिए शीघ्र ही पकड़ लिया गया और अस्पताल में जाकर मरा। इस समय विप्लववादियों का दल छिन्न-भिन्न हो गया था। उनके कई दलपति पुलिस द्वारा पकड़ कर नज़रबन्द कर दिए गए थे। कोई सञ्चालन करने वाला न था।

इसके बाद नवीन शासन-संस्कार जारी हुआ। सरकार ने उदारता दिखाई। अधिकांश विप्लववादी छोड़ दिए गए। परन्तु उसके साथ ही महात्मा गाँधी ने असहयोग आन्दोलन आरम्भ कर दिया, इसलिए विप्लववादियों ने अपनी चेष्टा स्थगित कर दी।

तपस्वी अरविन्द घोष

रौलट-एक्ट

१९१८ से १९२४ तक राष्ट्रीय आन्दोलन की ख़ासी धूम थी। महासमर के अवसान के बाद भारत-रक्षा क़ानून उठा देने का समय आया। परन्तु राजसत्ता ऐसा करने के लिए तैयार न थी। उसने उसे स्थायी रूप देने के लिए एक कमिटी बैठाई। उसका नाम था, 'रौलट-कमिटी'। कुछ दिनों की जाँच-पड़ताल के बाद उसने रिपोर्ट दी कि विप्लव आन्दोलन को निर्मूल करने के लिए भारत-सरकार के हाथ में एक निरङ्कुश क्षमता की अत्यन्त आवश्यकता है। परन्तु देश ऐसी निरङ्कुश क्षमता देने के लिए तैयार न था। फलतः सारे देश में तीव्र असन्तोष का सञ्चार हुआ। १९१८ में कॉङ्ग्रेस का तैंतीसवाँ अधिवेशन दिल्ली में हुआ। पण्डित मदनमोहन मालवीय सभापति थे। रौलट कमिटी की रिपोर्ट का घोर विरोध हुआ, परन्तु सरकार ने इसकी कोई परवाह न की। कौन्सिल के भारतीय सदस्य भी चिल्लाते ही रह गए, परन्तु क़ानून पास ही कर डाला गया। सरकार के इस जनमत की उपेक्षा का जनता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। सारे देश ने एक स्वर से इसकी निन्दा की। महात्मा गाँधी ने इस आन्दोलन के सूत्रधार के रूप में खड़े होकर घोषणा की कि "रौलट-क़ानून भारतवासियों के न्यायसङ्गत और मनुष्यों के जन्मसिद्ध स्वाभाविक अधिकारों का बाधक है। इसलिए जब तक यह क़ानून उठा न लिया जाएगा, तब तक हम लोग सम्मिलित भाव से इस अपमानजनक और असङ्गत क़ानून का विरोध करते रहेंगे। हम लोग उपद्रवहीन नीति के अवलम्बन द्वारा इस क़ानून में बाधा प्रदान करेंगे।" देश ने इस घोषणा का अन्तःकरण से समर्थन किया और असहयोग आन्दोलन की नींव पड़ी। भारत ने एक सम्पूर्ण नवीन राजनीतिक मार्ग का अवलम्बन किया। इस घोषणा के अनुसार निश्चय हुआ कि आगामी ६ अप्रैल को सारे देश में हड़ताल की जावेगी। परन्तु फिर यह तारीख़ बदल कर १३ अप्रैल कर दी गई। इधर दिल्ली वालों ने ६ अप्रैल को ही हड़ताल कर दी। क्योंकि उन्हें तारीख़ बदली जाने की सूचना ठीक समय पर नहीं मिल सकी थी। अस्तु।

जलियाँवाले बाग़ का हत्या-काण्ड

दिल्ली की पुलिस ने यह आकस्मिक भीड़-भाड़ देख कर उस पर गोली चला दी। इससे लोग और भी असन्तुष्ट हुए। प्रतिवाद-स्वरूप अमृतसर के जलियाँवाले बाग़ में एक सभा हुई। उस समय सर माईकेल ओडायर बहादुर पञ्जाब के गवर्नर थे। उनकी आज्ञा और परामर्श से जनरल डायर नाम के एक फ़ौजी अफ़सर ने जलियाँवाले बाग़ की सभा पर गोलियों की वर्षा कर दी। कितने ही मारे गए और कितने ही घायल हुए। सारे देश में एक कुहराम-सा मच गया। जनरल डायर के इस अमानुषिक काण्ड से देशवासी इतने निराश हुए कि उन्हें प्रतिवाद, प्रस्ताव और वैध आन्दोलन पर विश्वास ही नहीं रहा।

इस साल कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन अमृतसर में हुआ। सभापति का आसन स्वनामधन्य स्वर्गवासी पण्डित मोतीलाल जी नेहरू ने ग्रहण किया। इस अधिवेशन से पहले ही सरकार द्वारा नवीन शासन-संस्कार की घोषणा हो चुकी थी, इसलिए महात्मा गाँधी और पण्डित मदनमोहन मालवीय की सलाह से कॉङ्ग्रेस ने निश्चय किया, कि यद्यपि यह शासन-संस्कार सन्तोषजनक नहीं है, तथापि इसे स्वीकार कर लेना चाहिए। महात्मा जी को आशा थी कि इङ्गलैण्ड ओडायरी अत्याचार का प्रतिकार करेगा, इसलिए उसकी जाँच के लिए एक निरपेक्ष कमिटी बैठाने की माँग भी पेश की गई। परन्तु सरकार ने इस पर भी कान नहीं दिया। अन्त में जब कमिटी के लिए चारों ओर से घोर पुकार हुई तो 'हण्टर कमिटी' बैठाई गई। महात्मा गाँधी आदि कई भारतीय नेता भी इस कमिटी में शामिल हुए। सरकार से कहा गया, कि पञ्जाब के कई नेता, जो जनरल डायर के 'मार्शल-लॉ' के कारण जेलों में हैं, उनकी भी गवाहियाँ ली जाएँ। परन्तु सरकार ने इसे स्वीकार नहीं किया। इधर हण्टर साहब की कमिटी निरपेक्षिता को बालाए-

ताक़ रख कर जाँच करने में लगी। इसलिए कॉङ्ग्रेसी नेता कमिटी से अलग हो गए और उन्होंने स्वतन्त्र रूप से जाँच आरम्भ की। डायरी और ओडायरी अत्याचार का पर्दाफ़ाश हो गया। परन्तु इङ्गलैण्ड की पार्लामेण्ट ने अत्यन्त निर्विकार चित्त से इस अमानुषिक अत्याचार का समर्थन कर दिया।

असहयोग आन्दोलन

महासमर के समय इङ्गलैण्ड के प्रधान-मन्त्री महोदय ने मुसलमानों को आश्वासन प्रदान किया था, कि लड़ाई के कारण उनकी ख़िलाफ़त को कोई नुक़सान नहीं पहुँचाया जाएगा। तुर्क साम्राज्य में भी किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं होगा। किन्तु महासमर समाप्त होते ही वे अपनी प्रतिश्रुति को एकदम भूल गए। इसलिए भारतीय मुसलमानों में भी तीव्र असन्तोष का सञ्चार हुआ। न्यायान्तर न देख कर, महात्मा गाँधी ने असहयोग का भेरी निनाद किया। १९२० के सितम्बर में कलकत्ते में कॉङ्ग्रेस का एक विशेष अधिवेशन हुआ। पञ्जाब-केसरी स्व० लाला लाजपतराय उसके सभापति बनाए गए। देशबन्धु दास, श्री० विपिनचन्द्र पाल और पण्डित मदनमोहन मालवीय जैसे धुरन्धर नेताओं के विरोध करने पर भी असहयोग-सम्बन्धी प्रस्ताव पास हो गया। महात्मा गाँधी की विजय हुई।

इसके कुछ दिन बाद अर्थात् दिसम्बर में कॉङ्ग्रेस का नियमित अधिवेशन नागपुर में हुआ। जो देशबन्धु कॉङ्ग्रेस के विशेष अधिवेशन के समय असहयोग के विरोधी थे, उन्होंने ही वहाँ असहयोग-सम्बन्धी प्रस्ताव उपस्थित किया। बाइस हज़ार जनता के सामने कॉङ्ग्रेस की ओर से घोषणा की गई कि—

"सर्व प्रकार वैध और शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा अपने बाहुबल से स्वराज्य लाभ करना ही कॉङ्ग्रेस का उद्देश्य है।"

बड़े धूमधाम से असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ। विलायती वस्तुओं का बहिष्कार, स्कूल-कॉलेजों का बहिष्कार और अदालतों के बहिष्कार की धूम मच गई। हज़ारों विद्यार्थी कॉलेज और स्कूल छोड़ कर असहयोग की पताका के नीचे आ गए। तिलक स्वराज-फ़ण्ड में कई लाख रुपए आए। विलायती वस्त्रों की होलियाँ भी खूब जलीं। सरकार घबरा उठी। बड़े लाट ने कहा, मैं तो किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गया हूँ। आन्दोलनकारियों से जेलख़ाने भर गए। समस्त नेता पकड़ कर जेलों में ठेल दिए गए। प्रायः साल भर तक यही हालत रही।

१९२१ में, स्व० हकीम अजमल ख़ाँ की अध्यक्षता में कॉङ्ग्रेस का पैंतीसवाँ अधिवेशन अहमदाबाद में हुआ। इस कॉङ्ग्रेस के सभापतित्व के लिए स्व० देशबन्धु दास चुने गए थे, परन्तु सरकार ने उन्हें पहले ही पकड़ कर छः महीने के लिए जेल भेज दिया था, इसलिए हकीम साहब सभापति बनाए गए। इस कॉङ्ग्रेस में असहयोग और शान्तिपूर्ण क़ानून-भङ्ग का प्रस्ताव फिर से स्वीकार किया गया था। कॉङ्ग्रेस के सभी उत्साही कार्यकर्ता गिरफ़्तार हो चुके थे, इसलिए महात्मा गाँधी जी राष्ट्रीय आन्दोलन के एक मात्र कर्णधार बना दिए गए। मौ० हसरत मोहानी ने इस कॉङ्ग्रेस में एक पूर्ण स्वतन्त्रता-सम्बन्धी प्रस्ताव उपस्थित किया था। परन्तु वह स्वीकृत नहीं हुआ।

इस अहमदाबादी अधिवेशन के बाद सारे देश में 'क़ानूनतोड़' आन्दोलन आरम्भ हुआ। महात्मा जी करबन्दी के लिए बारदोली ताल्लुके को जगाने में लगे। वह बारदोली द्वारा असहयोग की समस्त विधियों की पूर्ति करा कर सारे भारतवर्ष के लिए एक आदर्श खड़ा करना चाहते थे। परन्तु इसी समय गोरखपुर के चौरीचौरा नामक स्थान में एक भयङ्कर दुर्घटना हो गई। पुलिस के अत्याचारों से ऊब कर वहाँ के अधिवासियों ने अपना संयम खो दिया और ईंट का जवाब पत्थर से देने पर उतारू होगए। पुलिस का एक थाना जला दिया गया और कुछ कर्मचारी मार डाले गए। महात्मा जी का सारा सङ्कल्प व्यर्थ हो गया। उन्होंने आन्दोलन को अनिर्दिष्ट काल के लिए स्थगित कर दिया।

मौलाना हसरत मोहानी

इसके बाद नेताओं ने निश्चय किया कि देश शान्तिपूर्ण प्रतिरोध आन्दोलन के लिए प्रस्तुत है या नहीं, इस बात की जाँच के लिए एक कमिटी बनाई जाय। वही हुआ, कमिटी बन गई। जाँच आरम्भ हुई। कई महीने के बाद उसकी रिपोर्ट प्रकाशित हुई। कमिटी ने निश्चय किया कि देश तैयार नहीं है, इसलिए कौन्सिलों पर अधिकार करके अन्दरूनी आन्दोलन आरम्भ किया जाए। देशबन्धु दास आदि और कई नेताओं ने भी जेल से निकलने पर इसी मत का अवलम्बन किया। इधर महात्मा गाँधी राजद्रोह प्रचार के अपराध में कई वर्षों के लिए जेल जा चुके थे। राष्ट्रवादियों में दो विचार-धाराएँ बह रही थीं। एक दल कौन्सिल-प्रवेश का पक्षपाती बना और दूसरा अपरिवर्तनवादी (No-changer) कहलाया।

स्वराजपार्टी का आविर्भाव

१९२२ में कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन गया में हुआ था। सभापति के आसन पर स्व० देशबन्धु सी० आर० दास विराजमान थे। दोनों दलों में तुमुल द्वन्द्व चला। परन्तु अन्त में कौन्सिल विरोधियों की ही जीत रही। श्री० दास कौन्सिलों में जाने के पक्ष में थे। इसलिए कॉङ्ग्रेस के सभापतित्व से इस्तीफ़ा देकर उन्होंने पं० मदनमोहन मालवीय आदि के साथ अपना एक अलग दल बनाया और उसका नाम रक्खा गया 'स्वराज दल'। इस दलबन्दी के कारण कॉङ्ग्रेस का कार्य ढीला पड़ गया। कुछ लोगों ने सुलह-समझौते की चेष्टा की, परन्तु उसका कोई फल नहीं हुआ।

गया के बाद कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन दिल्ली में हुआ। ताज़ा-ताज़ा जेलख़ाने से आए हुए मौलाना मुहम्मदअली ने प्रस्ताव उपस्थित किया कि बाधा प्रदान करने के लिए स्वराज दल कौन्सिलों में जा सकता है। प्रस्ताव बहुमत से पास हो गया। स्वराज-दल ने बड़े उत्साह से कौन्सिलों में जाने की तैयारियाँ आरम्भ कर दीं।

पुनः विप्लव-काण्ड

असहयोग काल में सारा देश स्वतन्त्रता-आन्दोलन में लगा था, इसलिए विप्लवपन्थियों ने अपना आन्दोलन बन्द कर रक्खा था। परन्तु असहयोग के विफल होते ही, उन्होंने फिर अपना कार्य आरम्भ कर दिया। वे एक दिन (ता० ३ अगस्त १९२३) शाखारी टोला (कलकत्ता) के पोस्ट ऑफ़िस में पहुँचे और पिस्तौल दिखा कर ख़ज़ाना लूटने की चेष्टा की। परन्तु कुछ हाथ न लगा। अन्त में पोस्ट-मास्टर को मार कर वे वहाँ से चलते बने। इसी सम्बन्ध में वरेन्द्र नाम का एक नवयुवक गिरफ़्तार हुआ था और उसे फाँसी की सज़ा दी गई। परन्तु अन्त में सरकार ने सज़ा बदल कर आजीवन के लिए उसे कालापानी भेजा था। इस हत्याकाण्ड के सम्बन्ध में एक षड्यन्त्र केस भी चलाया गया था। परन्तु अन्त में सभी अभियुक्त मुक्त कर दिए गए थे।

१२ जनवरी को गोपीमोहन साहा नाम के एक विद्रोही ने, कलकत्ता के चौरङ्गी रोड पर मि० डे नाम के एक अङ्गरेज़ को मार डाला था। यह मारने गया था कलकत्ते के पुलिस-कमिश्नर सर चार्ल्स टेगार्ट को, परन्तु धोखे में पड़ गया। इसे फाँसी की सज़ा दी गई थी।

गोपीमोहन की फाँसी के सम्बन्ध में बङ्गाल के कॉङ्ग्रेसियों में एक प्रबल मतभेद उठ खड़ा हुआ था। सिराजगञ्ज में प्रादेशिक राजनीतिक कॉन्फ्रेन्स का जलसा था। तरुण-दल चाहता था कि गोपीमोहन की देश-भक्ति की प्रशंसा की जाए। परन्तु अहिंसावादी दल इसके विरुद्ध था। अन्त में प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। इस पर ऐङ्गलो इण्डियन अख़बार अत्यन्त नाराज़ हुए। महात्मा गाँधी ने भी एक लेख लिख कर इस प्रस्ताव की कड़ी निन्दा की थी। ख़ैर, दूसरे साल जब फ़रीदपुर में उक्त प्रादेशिक कॉन्फ्रेन्स का अधिवेशन हुआ तो वह प्रस्ताव वापस ले लिया गया।

३१ जुलाई १९२४ को कलकत्ता के मिर्ज़ापुर स्ट्रीट में एक पिस्तौलधारी युवक गिरफ़्तार किया गया। पूछने पर उसने बताया कि इसी स्ट्रीट के शिशिरकुमार नाम के एक दूकानदार ने यह

राष्ट्रीय झण्डाभिवादन

कलकत्ता कांङ्ग्रेस के प्रारम्भ होने के पहिले राष्ट्रपति स्वर्गीय पं० मोतीलाल जी नेहरू राष्ट्रीय झण्डे के प्रति सम्मान प्रकट कर रहे हैं। उनकी बग़ल में फ़ौजी पोशाक में प्रधान सेनापति (General Officer Commanding) श्री० सुभाषचन्द्र बोस खड़े हैं।

राष्ट्रीय संग्राम के कुछ उत्साही सैनिकों का स्वागत

अभिनन्दन कर रहा मौन या वाणी से सारा संसार ! पहनाते हैं तुमको हम अनुराग-भरे हृदयों का हार !!

जबलपुर की शहर कॉङ्ग्रेस कमिटी के डिक्टेटर—श्री० सवाईमल जी, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुए हैं।

बम्बई के सब-प्रथम क्रिश्चियन—श्री० जॉज लुईस, जो सत्याग्रह संग्राम में जेल गए थे।

बटाला (पञ्जाब) के वकील—पं० श्रीनाथ भनोट, जिन्हें राज-विद्रोह के अभियोग में एक वर्ष की सज़ा दी गई थी।

राणपुर (काठियावाड़) से प्रकाशित होने वाले सुप्रसिद्ध 'सौराष्ट्र' के सम्पादक—श्री० अमृतलाल दलपतभाई सेठ, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुए हैं।

बम्बई के प्रसिद्ध कॉङ्ग्रेस-बुलेटिन के प्रथम सम्पादक—श्री० जयन्त दलाल, जिन्हें दो वर्ष की सख़्त सज़ा दी गई थी।

थोतमाल (मध्य प्रान्त) के सुप्रसिद्ध नेता—डॉक्टर बी० एम० ताम्बे, जिन्हें ९ मास का दण्ड दिया गया था।

मुरादाबाद कॉङ्ग्रेस कमिटी के डिक्टेटर और मन्त्री—श्री० हृदयनारायण जी, बी० एस-सी०, एल्-एल्० बी०, जो हाल ही में छूट कर आए हैं।

अहमदनगर ज़िले के डिक्टेटर, जिन्हें सत्याग्रह-आन्दोलन में ६½ मास का कठिन कारावास-दण्ड दिया गया था।

राष्ट्रीय संग्राम के कुछ उत्साही सैनिकों का स्वागत

अभिनन्दन कर रहा मौन या वाणी से सारा संसार ! पहनाते हैं तुमको हम अनुराग-भरे हृदयों का हार !!

कोयम्बटूर कॉङ्ग्रेस कमिटी के डिक्टेटर—श्री० वेलप्पा नायडू, जो हाल ही में जेल से छूट कर आए हैं।

महात्मा जी की नज़रबन्दी के पश्चात् 'नवजीवन' का सञ्चालन करने वाले—श्री० मोहनलाल भट्ट, जिन्हें चार मास की सख़्त सज़ा दी गई थी।

धारवाड़ और हुबली कॉङ्ग्रेस कमिटियों के डिक्टेटर—श्री० गुरुराज उदयपिथर, जिन्हें छः मास का कठिन कारावास-दण्ड मिला था।

बम्बई के राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता—श्री० बी० एन० माहेश्वरी, जो वर्तमान आन्दोलन में दूसरी बार जेल भेजे गए थे।

नीमार (सी० पी०) ज़िला कॉङ्ग्रेस कमिटी के डिक्टेटर—श्री० बाबू तोताराम जी सुखदाने, जिन्हें जङ्गल-क़ानून तोड़ने के अपराध में तीन मास का कठिन कारावास-दण्ड दिया गया था।

हिन्दुस्तानी सेवा-दल के मन्त्री—श्री० बी० एन० मालगी, जिन्हें चार मास का दण्ड दिया गया था।
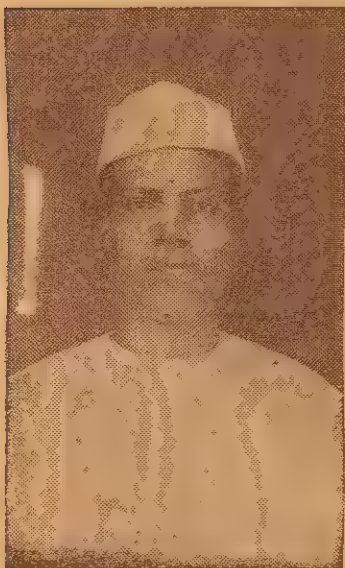
तैमिल-नैडू कॉङ्ग्रेस कमिटी के भूतपूर्व उप-प्रधान, जिन्हें एक वर्ष की सज़ा दी गई थी।

बेलारी कॉङ्ग्रेस कमिटी के मन्त्री—श्री० राघवेन्द्र राव, जिन्हें एक वर्ष की सज़ा हुई थी।

भारतीय महासभा के भूतपूर्व महारथी

स्वर्गीय मौलाना मुहम्मदअली—सन् १९२३

महात्मा गाँधी—सन् १९२४

स्वर्गीय लाला लाजपतराय सन्—१९२०
(विशेष अधिवेशन)

मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद—सन् १९२३
(विशेष अधिवेशन)

पं० जवाहरलाल नेहरू—सन् १९३०

स्वर्गीय पं० मोतीलाल नेहरू—सन् १९१९—१९२८

डॉक्टर अन्सारी—सन् १९२७

श्रीमती सरोजिनी नायडू—सन् १९२५

पं० मदनमोहन मालवीय—सन् १९०९—१९१८

पिस्तौल मुझे दिया है। पुलिस ने उस दूकान की तलाशी ली, परन्तु कुछ हाथ नहीं लगा। दूसरे दिन उस दूकान पर एक बम गिरा और एक दूकानदार मर गया। पुलिस ने शान्तिलाल नाम के एक आदमी को सन्देह में गिरफ्तार किया और अन्त में वह छोड़ दिया गया। परन्तु छूटने के कई दिन बाद बेलियाघाटा के स्टेशन के पास रेलवे लाइन पर उसकी लाश पाई गई थी।

१९२३ में विप्लवपन्थियों ने चटगाँव में एक दूकान से १७,००० रुपए लूट लिए। एक दारोगा ने इस सम्बन्ध में, एक आदमी को गिरफ्तार किया था, जो कुछ दिनों बाद किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा, मार डाला गया था।

१९२४ में कलकत्ता और फ़रीदपुर में पुलिस ने दो बम बनाने के कारखानों का पता लगाया था। यह देख कर बङ्गाल की सरकार ने एक ऑर्डिनेन्स जारी किया और उसके अनुसार ६३ आदमी नज़रबन्द किए गए। इसके सिवा सन् १९२२ के तीसरे रेगुलेशन के अनुसार भी १९ आदमी नज़रबन्द थे। इनमें श्री० सुभाषचन्द्र बोस, श्री० सत्येन्द्रचन्द्र मित्र और श्री० अनिलवरण राय भी शामिल थे।

१९०५ में कलकत्ते के पास दक्षिणेश्वर नामक स्थान में एक बम का कारखाना पकड़ा गया था। इसी सम्बन्ध में एक षड्यन्त्र का मामला भी चला था, जिसमें कई नवयुवकों को कई साल की सख़्त सज़ाएँ दी गई थीं।

जेल में हत्या

दक्षिणेश्वर बम विभ्राट् के क़ैदी अलीपुर के प्रेसिडेन्सी जेल में थे। २८ मई, सन् १९२८ को रायबहादुर भूपेन्द्रनाथ चटर्जी नाम का एक पुलिस-अफ़सर वहाँ किसी काम के लिए गया था। क़ैदियों ने उसे वहीं मार डाला। इस मामले में दो अपराधी फाँसी पर लटकाए गए और बाक़ी आठ आजीवन के लिए कालेपानी भेजे गए थे।

असहयोग का अन्त

१९१४ में कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन बेलगाँव में हुआ था। उस समय महात्मा गाँधी जेलखाने से आ गए थे। उन्होंने ही सभापति का आसन सुशोभित किया। इस कॉङ्ग्रेस में असहयोग-नीति स्थगित की गई और स्वराजियों की नीति बहाल रक्खी गई, अर्थात् उन्हें कॉङ्ग्रेस के नाम पर कौन्सिलों में जाने का अधिकार प्राप्त हो गया। इसके बाद महात्मा गाँधी ने अपनी सारी शक्ति चर्खा और खद्दर के प्रचार में लगा दी।

उन दिनों भारत के प्रधान-मन्त्री लॉर्ड बर्केनहेड थे। उनके और स्वराज-पार्टी के साथ समझौते की बातचीत चल रही थी। परन्तु अन्त में लॉर्ड बर्केनहेड ने कोरा जवाब दे दिया। देशबन्धु इससे बहुत हताश हुए और इस घटना के कुछ दिन बाद ही दार्जिलिङ्ग में उनकी मृत्यु हो गई। १९२५ में कानपुर में और १९२६ में गोहाटी में कॉङ्ग्रेस के अधिवेशन हुए, पर इन दोनों अधिवेशनों में कोई विशेष उल्लेख योग्य बात नहीं हुई। केवल हिन्दू-मुसलमानों का विरोध मिटाने की कुछ चेष्टाएँ हुई थीं। १९२७ में मि० जिन्ना ने मेल-मिलाप के लिए मुसलमानों की ओर से चौदह शर्तें पेश की थीं, तब से आज तक वही इस सम्बन्ध में कॉङ्ग्रेस का आलोच्य विषय है।

साइमन कमीशन

मॉण्टेगू-चेम्सफ़ोर्ड रिफ़ॉर्म जारी करने के समय कहा गया था, कि इस विधान के अनुसार कार्य करके अगर भारतवासी अपनी योग्यता का परिचय देंगे, तो दस वर्ष के बाद इसकी दूसरी क़िस्त भी उन्हें दी जाएगी। इस वादे को पूरा करने के लिए इङ्गलैण्ड की पार्लामेण्ट ने साइमन कमीशन की नियुक्ति की। उद्देश्य था, भारतवासियों की योग्यता की जाँच करना। भारतवासियों ने इस कमीशन का एक स्वर से बहिष्कार किया। जहाँ-जहाँ कमीशन गया, वहाँ-वहाँ लोगों ने काले झण्डे और मातमी जुलूस निकाल कर उसका निरादर किया। अन्त में सब दल के भारतीय राजनीतिज्ञों के सहयोग से एक शासन-विधान तैयार किया गया। इसके लिए स्वर्गवासी पण्डित मोतीलाल जी नेहरू की अध्यक्षता में एक 'नेहरू कमिटी' बिठाई गई थी। उसने एक विधान तैयार किया, जो कलकत्ते की कॉङ्ग्रेस में स्वीकृत हुआ था। इस कॉङ्ग्रेस के सभापति स्वयं पण्डित जी थे। इससे वहीं सर्वदल सम्मेलन भी हुआ था, उसमें मुसलमानों तथा सिक्खों ने इस विधान का विरोध किया था। क्योंकि वे अपने लिए कुछ विशेष अधिकार चाहते थे और हिन्दू उन विशेष अधिकारों के विरोधी थे। ख़ैर, कलकत्ते की यह कॉङ्ग्रेस विशेष महत्वपूर्ण थी। इसमें प्रस्ताव पास हुआ कि अगर साल भर के अन्दर सरकार नेहरू रिपोर्ट के विधानानुसार भारत को औपनिवेशिक स्वराज न प्रदान करेगी, तो अगले साल की १ली जनवरी को कॉङ्ग्रेस पूर्ण स्वतन्त्रता को अपना ध्येय बनाएगी।

स्वतन्त्रता की घोषणा

परन्तु सरकार ने इस प्रस्ताव की ओर ध्यान नहीं दिया। वह साइमन कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार ही कार्य करना चाहती थी। बड़े लाट साहब ने यह कहा भी था कि भारत को औपनिवेशिक स्वराज प्रदान करना ही पार्लामेण्ट का उद्देश्य है। परन्तु वह कब तक मिलेगा, यह नहीं कहा जा सकता।

इसके बाद कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन लाहौर में हुआ। पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने सभापति का आसन सुशोभित किया। कलकत्ता कॉङ्ग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार गत ३१ दिसम्बर १९३० की आधी रात के बाद कांङ्ग्रेस ने अपना ध्येय पूर्ण स्वतन्त्रता विघोषित कर दिया। यह देख कर सरकार कुछ घबराई। अधिकारियों ने इस प्रस्ताव की हँसी उड़ाई, धमकियाँ दीं और अन्त में राउण्डटेबुल कॉन्फ़्रेन्स की चर्चा आरम्भ हुई। इधर कॉङ्ग्रेस ने सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ किया। इसके बाद जो हुआ, वह अभी असमाप्त है।

कर्ज़न वेली की हत्या

इस लेख के आरम्भ में हम लन्दन में एक इण्डिया हाउस नाम की संस्था की स्थापना का ज़िक्र कर चुके हैं। १ जुलाई, सन् १९०९ को इस हाउस के सदस्य श्री० मदनलाल ढींगरा ने ब्रिटिश सरकार के इण्डिया-हाउस के पोलिटिकेल ए० डी० सी० कर्नल सर विलियम कर्ज़न वेली को गोली से मार दिया। इसे फाँसी की सज़ा दी गई थी। इसने अपने अदालती बयान में कहा था, कि भारतीय नवयुवकों को जिस अमानुषिक ढङ्ग से निर्वासन-दण्ड और फाँसी आदि की सज़ाएँ दी जा रही हैं, उसके सामान्य प्रतिवाद-स्वरूप मैंने जान-बूझ कर एक अङ्गरेज़ का रक्त बहाया है। श्री० ढींगरा अमृतसर ज़िले का रहने वाला था। इसका जन्म एक पञ्जाबी क्षत्रिय-वंश में हुआ था। यहाँ से बी० ए० पास करके बैरिस्टरी पास करने वह इङ्गलैण्ड गया हुआ था।

कुछ और विप्लवी कार्य

नासिक के श्री० विनायक दामोदर सावरकर के भाई श्री० गणेश दामोदर सावरकर को आजीवन द्वीपान्तर की सज़ा दी गई। नासिक के मैजिस्ट्रेट मि० जैकसन ने इन्हें दौरा सुपुर्द किया था। एक दिन मि० जैकसन किसी भोज-सभा में बैठे थे, वहीं किसी ने उन्हें गोली मार दी। इस घटना के बाद नासिक षड्यन्त्र नाम का एक विराट मामला चला। ३८ अभियुक्तों में से २७ को सज़ाएँ हुईं, जिनमें तीन मि० जैकसन की हत्या करने के अपराध में फाँसी पर लटकाए गए।

इसी साल के नवम्बर महीने में बड़े लाट साहब अपनी लेडी साहबा के साथ अहमदाबाद गए तो उनकी गाड़ी में एक बम फेंका गया। परन्तु वह फटा नहीं, इसलिए लाट-दम्पति सही-सलामत बच गए।

संयुक्तप्रान्त में विप्लव का श्रीगणेश

१९०७ में इलाहाबाद से 'स्वराज' नाम का एक पत्र निकलता था। यह क्रान्ति का प्रचारक था। इसी के जन्मकाल से संयुक्त-प्रान्त में भी क्रान्तिकारी भावों का प्रचार आरम्भ हुआ। शान्तिनारायण नाम का एक पञ्जाबी युवक इस पत्र का प्रवर्तक था। मुज़फ़्फ़रपुर हत्याकाण्ड के बाद तीव्र लेख प्रकाशित करने के कारण उसे कठोर कारावास की सज़ा दी गई थी। इसके बाद आठ सम्पादकों ने मिल कर इस पत्र का सम्पादन आरम्भ किया, जिनमें तीन को कारावास की सज़ा दी गई थी। सन् १९१० में प्रेस-क़ानून के कारण यह अख़बार सदा के लिए बन्द हो गया। सन् १९०९ में इलाहाबाद से श्री० सुन्दरलाल ने 'कर्मयोगी' नाम का एक साप्ताहिक पत्र हिन्दी में निकाला था। यह भी कई अंशों में उसी पथ का पथिक था। ख़ूब फड़कते हुए लेख प्रकाशित होते थे। संयुक्त प्रान्त के जातीय उत्थान में इस पत्र से बड़ी सहायता मिली थी। प्रेस-क़ानून के कारण इसका भी अस्तित्व विनष्ट हुआ।

१९०८ में श्री० होतीलाल वर्मा ने अलीगढ़ के छात्रों में राजद्रोह का प्रचार किया था, इसलिए

उन्हें दस साल तक कालापानी निवास का दण्ड दिया गया।

बनारस षड्यन्त्र

इसके बाद बनारस षड्यन्त्र की बारी आई। कई पञ्जाबी नवयुवकों ने संयुक्त प्रान्त में विप्लव आन्दोलन आरम्भ किया था। परन्तु उन्हें सफलता नहीं प्राप्त हुई। इसके बाद बङ्गाली विप्लववादियों का आविर्भाव हुआ और वे ही यहाँ कुछ सफल भी हुए। सन् १९०८ में श्री० शचीन्द्रनाथ सान्याल ने काशी के बङ्गाली टोले में एक 'अनुशीलन समिति' की स्थापना की। १९१३ तक इस संस्था का कार्य निर्विघ्न रूप से चलता रहा। परन्तु इसके बाद पारस्परिक मतभेद के कारण श्री० शचीन्द्र ने 'युवक समिति' नाम की एक दूसरी संस्था का निर्माण किया। विप्लववाद का प्रचार करना ही इस समिति का भी उद्देश्य था। शचीन्द्र ने कलकत्ते के विप्लववादियों के साथ सम्बन्ध स्थापित कर अपने उद्देश्य की पूर्ति आरम्भ की। सन् १९१४ में श्री० रासबिहारी बोस ने कलकत्ते से आकर इस संस्था का सञ्चालन-भार ग्रहण किया। श्री० रासबिहारी दिल्ली और लाहौर षड्यन्त्र का फ़रार अभियुक्त था। परन्तु पुलिस की आँखों में धूल झोंक, निर्विघ्न रूप से काशी में रहने लगा। इसी समय महाराष्ट्र का विप्लवी युवक श्री० विष्णुगणेश पिङ्गले से रासबिहारी की जान-पहचान हुई। श्री० शचीन्द्र अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए पञ्जाब चला गया और अमेरिका की ग़दर पार्टी से सम्बन्ध स्थापित कर भारतव्यापी विप्लव की तैयारी करने में लगा। इधर रासबिहारी भारत छोड़ कर विदेशों में कार्य करने के लिए चला गया। यहाँ का काम श्री० शचीन्द्र और श्री० नगेन्द्रनाथ दत्त (जो विप्लवी दल में 'गिरिजा दादा' के नाम से प्रसिद्ध था) सँभालते रहे। परन्तु कुछ दिनों के बाद ही बनारस षड्यन्त्र-केस में ये लोग पकड़ लिए गए। इस मामले में बहुत से विप्लववादियों को सज़ाएँ हुई थीं और इसके बाद जब 'मॉण्टेगू-चेम्सफ़र्ड' शासन-संस्कार का प्रवर्तन हुआ तो सरकार ने मेहरबानी करके इन्हें छोड़ दिया था। श्री० नगेन्द्रनाथ का जेलख़ाने में ही देहान्त हो गया।

काकोरी काण्ड

असहयोग आन्दोलन की विफलता के बाद विप्लवपन्थियों ने फिर सिर उठाया। श्री० शचीन्द्र आदि ने फिर एक नए दल का सङ्गठन कर डाला। इस दल का प्रधान केन्द्रस्थान लखनऊ बनाया गया। देश ने इस दल का पहले-पहल परिचय प्राप्त किया था, ९ अगस्त सन् १९२५ को। उसी दिन अवध रुहेलखण्ड रेलवे के काकोरी स्टेशन पर रेलगाड़ी रोक कर सरकारी ख़ज़ाना लूटा गया था। इस समय कई यात्रियों की हत्याएँ भी हुईं। फिर काकोरी षड्यन्त्र-केस चला। श्री० रामप्रसाद 'बिस्मिल', राजेन्द्र लाहिड़ी, श्री० रौशनसिंह, श्री० अशफ़ाक़ उल्लाह को फाँसी की सज़ा दी गई; श्री० शचीन्द्र तथा अन्यान्य कई व्यक्तियों को आजीवन कालापानी तथा जेल की सज़ाएँ दी गईं।

मध्यप्रदेश

१९१५ में मध्यप्रदेश में भी विप्लव की चेष्टा की गई थी, परन्तु सफलता नहीं प्राप्त हुई। श्री० रासबिहारी ने अपने साथी श्री० नलिनिमोहन सान्याल को सिपाहियों में राजद्रोह का प्रचार करने के लिए जबलपुर भेजा। परन्तु कोई सफलता नहीं प्राप्त हुई। ढाका के श्री० नलिनीकान्त घोष और मध्य-प्रान्त के श्री० विनायकराव कापले ने भी वहाँ विप्लव-प्रचार की चेष्टा की थी। श्री० कापले ने एक छोटा सा दल भी तैयार कर लिया था, परन्तु वह पकड़ लिया गया और कापले नौ-दो-ग्यारह हो गए। सन् १९१८ की ९ फ़रवरी को लखनऊ में किसी ने कापले को गोली मार दी। लोगों का अनुमान है कि सम्भवतः इसने अपने दल वालों के साथ विश्वासघात किया था, इसी से मार डाला गया।

बिहार में चेष्टा

बिहार में भी श्री० अर्जुनलाल सेठी, मोतीचन्द्र माणिकचन्द, जयचन्द और ज़ोरावरसिंह ने विप्लव-प्रचार की चेष्टा की थी। परन्तु कोई सफलता नहीं मिली। १९१३ में श्री० शचीन्द्र आदि ने बाँकीपुर में एक शाखा समिति की स्थापना की थी। बिहार नेशनल कॉलेज का श्री० बङ्किमचन्द्र मित्र इस शाखा समिति का सञ्चालक था, परन्तु अन्त में वह बनारस षड्यन्त्र में पकड़ लिया गया, इसलिए बाँकीपुर की शाखा समिति टूट गई। इसके बाद डिफ़ेन्स ऑफ़ इण्डिया एक्ट या 'भारत-रक्षा क़ानून' का जन्म हुआ। इसलिए विप्लववाद दुर्बल हो गया।

मद्रास का विप्लव-आन्दोलन

मद्रास में विप्लव आन्दोलन का सूत्रपात पहले-पहल सन् १९०८ में हुआ था। श्री० सुब्रह्मराय शिव और श्री० चिदम्बरम् पिले ने पराधीनता के विरुद्ध तीव्र आन्दोलन किया। ९ मार्च को श्री० पिले ने तिन्नेवेली में एक गर्मागरम भाषण दिया था, इसलिए वे श्री० सुब्रह्मराय के साथ पकड़ लिए गए। इन गिरफ़्तारियों से तिन्नेवेली की जनता बेतरह बौखला उठी। कई पुलिसवालों को पीटा, सरकारी दफ़्तरों में आग लगा दी और म्युनिसिपैलिटी का कार्यालय भस्म कर दिया गया। अन्त में बहुत से आदमी पकड़े गए और २७ को कड़ी सज़ाएँ दी गईं।

१९०८ में किसी ने मद्रास से 'इण्डिया' नाम का एक अख़बार निकाला। यह राजद्रोह का प्रचारक समझा गया और इसके सञ्चालक श्री० श्रीनिवास आयङ्गर को सज़ा दी गई। इसके बाद 'इण्डिया' का छापाख़ाना पॉण्डीचेरी चला गया। एम० पी० तिरुमल नाम का एक नवयुवक इस छापेख़ाने में काम करता था। वह कुछ दिन के बाद लन्दन के श्री० श्यामजी कृष्णजी के इण्डिया हाउस में चला गया और मद्रास के विप्लववादियों से सम्बन्ध स्थापित किया। उन दिनों नीलकण्ठ ब्रह्मचारी और शङ्कर कृष्ण अय्यर मद्रास में विप्लववाद का प्रचार कर रहे थे। सन् १९१० में वैञ्ची अय्यर नाम का एक और युवक इनके साथ मिल गया। इसी साल के दिसम्बर में वी० वी० एम० अय्यर नाम का एक नवयुवक लन्दन के इण्डिया हाउस से भारत आया और पॉण्डीचेरी में एक गुप्त समिति की स्थापना करके नवयुवकों को पिस्तौल चलाने की शिक्षा प्रदान करने लगा। थोड़े दिनों के बाद मद्रास का वैञ्ची अय्यर भी उसी के साथ जा मिला।

१९११ की १७वीं जून को इन दोनों युवकों ने तिन्नेवेली के मैजिस्ट्रेट की हत्या की। इस सम्बन्ध में एक तिन्नेवेली षड्यन्त्र-केस चला और ९ आदमियों को सज़ाएँ दी गईं।

श्रीराम राजू

मद्रास के विप्लवपन्थियों में श्रीराम राजू का नाम विशेष उल्लेखनीय है। यह गोदावरी ज़िले का रहने वाला था। थोड़ा सा पढ़-लिख कर इसने संन्यास ले लिया और विगत असहयोग आन्दोलन के दिनों में विज़गापट्टम और गोदावरी के ज़िलों में घूम-घूम कर शराब के विरुद्ध प्रचार करता रहा और पञ्चायतें स्थापित करता रहा। सन् १९२२ में अफ़वाह उड़ी कि राजू विप्लववादी है और विप्लव कराने के लिए अपना एक दल बना रहा है। पुलिस ने उसे गिरफ़्तार किया, परन्तु अन्त में प्रमाणाभाव के कारण छोड़ दिया गया।

गोदावरी एजेन्सी में एक तहसीलदार रहता था। वह तहसीलदार भी था और ठीकेदार भी। सरकार क़ुलियों को रोज़ाना छः आना मज़दूरी दिया करती थी, परन्तु तहसीलदार साहब उसमें चार आने अपने पॉकेट में रख लेते और दो आने क़ुलियों का देते। राजू को तहसीलदार की इस बेईमानी की ख़बर लगी, वह इसके प्रतिकार का उपाय सोचने लगा। शीघ्र ही एक दल तैयार हुआ और उसका उद्देश्य भी तहसीलदार से प्रतिशोध लेने की सीमा का उल्लङ्घन कर गया। राजू ने सशस्त्र विद्रोह की तैयारी आरम्भ कर दी। गूदमगिरि की गहन गुफाओं में एक गुप्त सङ्घ की स्थापना हुई और पुलिस-थानों पर आक्रमण करके बहुत से हथियार आदि संग्रहीत हुए। सरकार की पुलिस राजू की तलाश में लगी। छः बार राजू-दल से पुलिस का प्रत्यक्ष-सङ्घर्ष हुआ। कई सङ्घर्ष तो बड़े ही भीषण हुए। पेदाभोला नामक ग्राम के पास जो भीषण सङ्घर्ष हुआ था, उसमें सरकार के दो अङ्गरेज़ कर्मचारी खेत रहे और कई घायल हुए। परन्तु राजू बेदाग़ निकल गया। सन् १९२४ में सरकारी सेना-दल ने एकाएक आक्रमण करके राजू की सेना को हरा दिया। सरकारी इश्तहार से पता चला कि राजू मारा जा चुका है, परन्तु लोगों की धारणा है कि वह अभी जीवित है।

पञ्जाब का विप्लव-आन्दोलन

जिस तरह बङ्गाल में बङ्ग-विच्छेद के कारण विप्लव आन्दोलन की सृष्टि हुई थी, उसी तरह पञ्जाब में चनाब नदी के किनारे के उपनिवेश के कारण विप्लव आन्दोलन का आविर्भाव हुआ था। इस आन्दोलन के नेता स्वर्गवासी लाला लाजपतराय और सरदार अजीतसिंह थे। सरकार ने इन दोनों नेताओं को बिना विचार निर्वासित किया। परन्तु आन्दोलन नहीं बन्द

हुआ। छः महीने के निर्वासन के बाद सरदार साहब मुक्त कर दिए गए। इसके बाद उन्होंने अपने भाई सरदार किशनसिंह (सरदार भगतसिंह के पिता) और कविवर लालचन्द 'फ़लक' को साथ लेकर तुमुल आन्दोलन आरम्भ कर दिया। परिणाम यह हुआ, कि सरकार की पुलिस उनके पीछे पड़ गई। यह देख कर सरदार अजीतसिंह तो फ़ारस चले गए; परन्तु सरदार किशनसिंह और लाला लालचन्द पकड़ लिए गए। इन दोनों सज्जनों पर राजद्रोह-प्रचार का मामला चला था और कठिन कारावास की सज़ा दी गई थी।

लाला हरदयाल

लाला हरदयाल पञ्जाब विश्वविद्यालय के ग्रेजुएट हैं। सरकार से वज़ीफ़ा पाकर ये शिक्षा प्राप्त करने के लिए ऑक्सफ़र्ड गए। परन्तु पाश्चात्य शिक्षा पर उनकी श्रद्धा नहीं हुई। इसलिए ऑक्सफ़र्ड से लौट कर हिन्दोस्तान चले आए। यहाँ उन दिनों स्वदेशी आन्दोलन की धूम थी। लाला जी ने इस आन्दोलन में बड़े ज़ोरों से भाग लिया। विदेशी बहिष्कार और जातीय भावों का प्रचार करने लगे। इसके साथ ही सन् १९०८ में उन्होंने अपनी एक पार्टी बना डाली तथा धीरे-धीरे विप्लव वाद का प्रचार करने लगे। परन्तु कुछ दिनों के बाद ही उन्हें मालूम हुआ कि इस प्रकार के काम देश की अपेक्षा विदेशों में रह कर अच्छी तरह किया जा सकता है, इसलिए पार्टी का काम श्री० दीनानाथ और श्री० अमीरचन्द को सौंप कर वे स्वयं अमेरिका चले गए। अन्त में कुछ दिनों पार्टी का काम बङ्गाल के विख्यात विप्लवी श्री० रासबिहारी बोस ने सँभाला था। अमेरिका जाकर लाला हरदयाल ने जो विप्लव-सम्बन्धी अनुष्ठान किया था, उसका उल्लेख हम आगे चल कर करेंगे।

लाला हरदयाल और उनके बाद श्री० रासबिहारी के विदेश चले जाने के बाद भी पार्टी का प्रचार-कार्य चलता रहा था। दिसम्बर सन् १९१५ में भारत के वायसराय लॉर्ड हार्डिङ्ग दिल्ली गए। वहाँ बड़े समारोह से उनके स्वागत का सामान किया गया था। एक बड़े से हाथी पर सवार होकर जब वे नगर की ओर बढ़े, तो किसी ने उनके ऊपर बम फेंका। परन्तु संयोग अच्छा था, निशाना चूक गया और लाट साहब तो बच गए, परन्तु उनका अरदली मर गया। इस घटना के पाँच महीने बाद लाहौर के लॉरेन्स गार्डन में एक बम फटा था, जिससे एक आदमी मर गया। पुलिस का अनुमान है कि ये दोनों काण्ड उसी लाला हरदयाल की स्थापित की हुई पार्टी ने किया था। अन्त में इन दोनों घटनाओं का आश्रय लेकर 'दिल्ली षडयन्त्र' वाले मामले की सृष्टि हुई थी। जिसमें श्री० अमीरचन्द, बालमुकुन्द, अवधबिहारी और वसन्तकुमार विश्वास को फाँसी की सज़ा दी गई थी।

उधर अमेरिका पहुँच कर लाला हरदयाल ने बड़े ज़ोर-शोर से प्रचार-कार्य आरम्भ किया और शीघ्र ही एक 'ग़दर पार्टी' की स्थापना हुई और 'ग़दर' नामक एक अखबार भी निकाला गया। उद्देश्य यह था, कि यहाँ से धन, जन और हथियारों का संग्रह करके भारत में सशस्त्र विद्रोह आरम्भ कर दिया जाय। परन्तु थोड़े दिनों के बाद ही अमेरिकन सरकार को इस पार्टी के उद्देश्यों का पता लग गया। और लाला हरदयाल गिरफ़्तार कर लिए गए। अन्त में १६ मार्च, सन् १९१६ को वे ज़मानत पर छोड़ दिए गए और वहाँ से स्वीटज़रलैण्ड चले गए। परन्तु उनकी पार्टी बनी रही और उसका कार्य-सञ्चालन उनके सहकर्मी श्री० रामचन्द्र करते रहे।

कोमागाता मारू

अमेरिका के कनाडा नामक स्थान में बहुत से सिक्ख रहते थे। उनका काम था, मेहनत-मज़दूरी करके जीविका अर्जन करना। यह बात कनाडा-वासियों को बहुत बुरी मालूम हुई। फलतः वहाँ की सरकार ने क़ानून बनाया, कि जिस एशिया-वासी के पास २०० डॉलर न होंगे, वह कनाडा में पैर भी नहीं रखने पाएगा। इस क़ानून के कारण वहाँ के प्रवासी भारतवासियों में बड़ी खलबली

बाबा गुरुदत्तसिंह

मची। उन्होंने इस क़ानून के विरुद्ध घोर आन्दोलन आरम्भ किया। सन् १९१३ में कुछ प्रवासी उसी आन्दोलन के सिलसिले में यहाँ भी आए थे। हमें जहाँ तक स्मरण है, कनाडा की सरकार ने यह भी नियम बनाया था, कि जिस एशिया-वासी का अपना जहाज़ होगा, उस पर यह २०० डॉलर वाला नियम लागू न होगा। फलतः विख्यात पञ्जाबी-वृद्ध बाबा गुरुदत्तसिंह ने सिक्खों के एक दल के साथ कैनाडा जाने का विचार किया। उन्होंने हॉङ्गकॉङ्ग से कोमागाता मारू नाम का एक जहाज़ भाड़े पर लिया और शङ्घाई, मोजी तथा योकोहामा से बहुत से भारतीय यात्री लेकर २३, मई १९१४ को वैङ्कोवर पहुँचे। उस समय उस जहाज़ में ३५१ सिक्ख और २१ मुसलमान यात्री थे। वैङ्कोवर के अधिकारियों ने उन्हें जहाज़ से उतरने नहीं दिया। फलतः यात्रियों और पुलिस में मुठभेड़ हुई। सिक्खों ने पुलिस को मार भगाया। इसके बाद उन पर सशस्त्र पुलिस का हमला हुआ, यात्रियों की हार हुई और वे जहाज़ लौटा लेने को बाध्य किए गए। इससे उनमें भयङ्कर असन्तोष का सञ्चार हुआ।

जिस समय यह जहाज़ लौट रहा था, उस समय यूरोप का महासमर आरम्भ हो चुका था। जापान आने पर यात्रियों ने सुना, कि उन्हें ब्रिटिश सरकार के विख्यात एशियाई बन्दरगाह हॉङ्गकॉङ्ग में भी उतरने नहीं दिया जाएगा। इसलिए मजबूर होकर उन्होंने अपना जहाज़ कलकत्ते की ओर चलाया। रास्ते में हॉङ्गकॉङ्ग तथा सिङ्गापूर में उन्होंने उतरने की चेष्टा की थी, परन्तु अधिकारियों ने नहीं उतरने दिया। अन्त में, २९ सितम्बर सन् १९१४ को कोमागाता मारू कलकत्ते के बजबज नामक बन्दरगाह पर पहुँचा। बङ्गाल-सरकार ने उन्हें तुरन्त पञ्जाब भेज देने के लिए एक स्पेशल ट्रेन का प्रबन्ध पहले से ही कर रक्खा था। परन्तु सिक्खों ने तुरन्त ही स्पेशल ट्रेन पर सवार होना स्वीकार नहीं किया। इधर पुलिस ने उन्हें ज़बरदस्ती गाड़ी पर चढ़ाने का उद्योग आरम्भ किया। इधर यात्री बिगड़ उठे। इधर पुलिस भी गरम हो गई। दोनों ओर से गोलियाँ चलने लगीं। इस लड़ाई में १८ सिक्खों ने प्राण विसर्जन किया। रङ्ग बेढब देख कर २८ सिक्खों को लेकर बाबा गुरुदत्तसिंह ग़ायब हो गए। ६० सिक्खों को उठा-उठा कर ट्रेन में चढ़ाया गया। बाक़ी गिरफ़्तार किए गए और जनवरी महीने तक हवालात में रख कर फिर छोड़ दिए गए। ३१ नज़रबन्द किए गए।

इस घटना के कारण विदेशों से लौटे हुए सिक्खों में तीव्र असन्तोष का सञ्चार हुआ। उन्होंने सरकार को एकदम ध्वंस कर डालने का विचार किया। भयङ्कर षड्यन्त्र आरम्भ हुआ। कनाडा, अमेरिका, हॉङ्गकॉङ्ग, फ़िलीपाइन, जापान और चीन से बहुत से भारतवासियों ने आकर इस षड्यन्त्र में योग दिया। सरकार भी विचलित हुई। दमन आरम्भ हुआ। एक नए क़ानून की सृष्टि करके विदेश से लौटे हुए सिक्खों को कष्ट दिया जाने लगा। परन्तु यह विप्लव आन्दोलन मरा नहीं। सरकार की सतर्कता से बच कर वह अपनी शक्ति बढ़ाने लगा। १६ अक्टूबर १९१४ को फ़ीरोज़पुर, लुधियाना ब्रेञ्च लाइन के चौकीमान स्टेशन पर विप्लवपन्थियों के लिए कुछ हथियार आने वाले थे। अमेरिका से लौटे हुए कुछ सिक्ख उन्हें लेने के लिए चौकीमान पहुँचे और स्टेशन पर आक्रमण करके स्टेशन-मास्टर तथा पानी पाँड़े को मार डाला। स्टेशन को भी लूट लिया। परन्तु वहाँ कोई हथियार आदि नहीं मिला।

२९ अक्टूबर को 'तोसामारू' नाम का एक जापानी जहाज़ अमेरिका से भारत आया था। इसमें १३७ पञ्जाबी यात्री थे। ये पञ्जाब के विप्लव-वादियों से मिल कर सङ्गठित विद्रोह करने के लिए आए थे। कई टोलियाँ बना कर विभिन्न स्थानों में एक साथ ही लालक्रान्ति की आग भड़काना चाहते थे। परन्तु भारत पहुँचते ही सरकार ने उनमें से १०० को गिरफ़्तार करके नज़रबन्द कर लिया। जो नज़रबन्द नहीं किए गए थे, उनमें से ६, इसके बाद, विभिन्न षड्यन्त्रों में लिप्त रहने के कारण फाँसी पर लटकाए गए। ६ को कारावास की सज़ाएँ दी गईं, ६ आजीवन के लिए कालेपानी भेजे गए थे।

२७ नवम्बर को १५ विप्लवपन्थी फ़ीरोज़पुर में सरकारी खज़ाना लूटने जा रहे थे। रास्ते में एक पुलिस के दारोग़ा तथा ग्राम-पञ्चायत के कुछ लोगों ने उन्हें रोका। परन्तु विद्रोहियों ने उन्हें गोली मार दी। पुलिस ने फिर उनका पीछा किया और फिर एक सङ्घर्ष आरम्भ हुआ। इसमें दो विप्लवी मारे, सात पकड़े गए और ६ भाग गए।

इन कार्यों के अतिरिक्त, पञ्जाबी विप्लववादियों ने उन दिनों पञ्जाब के विभिन्न स्थानों में ९ डाके डाले थे और ६ बार ट्रेनें उलटने की चेष्टाएँ की गई थीं। एक डकैती के सम्बन्ध में सिर्फ़ एक आदमी पकड़ा गया था, जिसके पास २४५ कारतूस और एक रिवॉल्वर मिला था।

लाहौर षड्यन्त्र

हम ऊपर 'रौलट कमिटी' का उल्लेख कर आए हैं। इस कमिटी ने अपनी विस्तृत रिपोर्ट में लाहौर षड्यन्त्र-केस का उल्लेख किया है, उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :—

कोमागाता मारू के यात्री पकड़ लिए गए थे, वे जनवरी के आरम्भ में ही छोड़ दिए गए। उसी समय अमेरिका से आए हुए कुछ पत्र पकड़े गए थे। जिनमें अङ्गरेज़ों के प्रति विद्वेष भाव फैलाने की चेष्टा की गई थी, और कुछ पत्र जर्मनी से आए थे, जिनमें जर्मनी की विजय का ज़िक्र था और बहुत सी उत्तेजनापूर्ण बातें थीं। इन पत्रों द्वारा सरकार को इस बात का भी पता लग गया, कि पञ्जाब के विप्लववादी दल से अमेरिका की 'ग़दर पार्टी' का सम्बन्ध है। १९१४ में विष्णु-गणेश पिङ्गले नाम का एक महाराष्ट्र युवक पञ्जाब आया और वहाँ की पार्टी को बङ्गाल की पार्टी से सहयोग कराने का वचन दे गया। पिङ्गले पूना ज़िले का रहने वाला था और थोड़ी ही उमर में अमेरिका चला गया था। जिस समय ग़दर पार्टी वाले सिक्ख यहाँ आए थे, उसी समय वह भी अमेरिका से यहाँ चला आया था। उसके पञ्जाब आने पर विप्लवपन्थियों की एक सभा हुई। इस सभा में सरकारी खज़ाना लूटने, भारतीय सैनिकों में विद्रोह का प्रचार करने, अस्त्र संग्रह करने, बम बनाने और डकैती द्वारा अर्थ-संग्रह करने की बातें तय हुईं। पिङ्गले ने कहा था, कि वह बम बनाने वाले एक निपुण बङ्गाली को यहाँ ला देगा। उसका प्रस्ताव स्वीकृत हो गया। बम बनाने के लिए उपादान संग्रह करने को आदमी भी नियुक्त कर दिए गए। लुधियाना के कई विद्यार्थियों ने इस काम में सहायता दी। इसके बाद बनारस से श्री० रासबिहारी बोस आए। उनके लिए अमृतसर में एक मकान लिया गया। वह कई बङ्गाली युवकों के साथ १९१५ के फ़रवरी महीने तक उस मकान में थे। यहाँ रह कर वह सिक्ख विप्लववादियों के साथ कार्य करते रहे। २१ फ़रवरी को विद्रोह आरम्भ करने की बात तय थी और साथ ही यह भी निश्चय था, कि पहले लाहौर में ही श्रीगणेश होगा। निर्धारित तिथि को सैनिकों की सहायता करने के लिए रासबिहारी ने उत्तर भारत के कई स्थानों में आदमी भेजे। इसके साथ ही उन्होंने यह भी चेष्टा की थी कि ग्रामवासी इस विद्रोह में शामिल हों। विद्रोह के लिए कई बम तैयार हुए, अस्त्र संग्रह हुए, पताकाएँ भी बनवाई गईं और युद्ध-घोषणा का मज़मून भी तैयार कर लिया गया। रेलवे और टेलिग्राफ़ ध्वंस करने के लिए औज़ार भी एकत्र कर लिए गए। आवश्यक अर्थ-संग्रह करने के लिए कई डकैतियाँ पहले ही हो चुकी थीं।

परन्तु एक गुप्तचर के द्वारा सरकार को इन बातों का पता लग चुका था। इसलिए नियत समय से पूर्व ही पुलिस ने रासबिहारी के आवास-स्थल पर धावा बोल दिया। सात आदमी पकड़े गए। कितने ही रिवॉल्वर, बम, और बम बनाने का सामान तथा पताकाएँ बरामद हुईं। दूसरे दिन दो आदमी और भी पकड़े गए। इसके बाद और भी कई स्थानों पर खाना-तलाशियाँ हुईं। जिनमें चार आदमी और १२ बम पकड़े गए। इनमें पाँच बम बङ्गाली ढङ्ग के थे, जिनमें तीन पुराने और दो नए थे। इसके साथ ही कुछ ऐसे प्रमाण भी मिले, जिनसे मालूम हुआ कि लाहौर, फ़ीरोज़पुर, रावलपिण्डी, बनारस, जबलपुर और पूर्व बङ्गाल में एक ही दिन सशस्त्र विद्रोह की घोषणा कर दी जाने वाली थी।

श्री० रासबिहारी और पिङ्गले पुलिस के आने से पहले ही भाग चुके थे। कुछ दिनों के बाद पिङ्गले मेरठ की छावनी के पास पकड़ा गया था। उसके पास एक बम भी था।

२० फ़रवरी को एक हेड-कॉन्स्टेबिल और एक दारोग़ा से कुछ विप्लववादियों का भेंट हुई। पुलिस वालों ने थाने में चलने को कहा। विप्लवियों ने गोली दाग़ी, हेड-कॉन्स्टेबिल मर गया और दारोग़ा घायल हुआ।

'डिफ़ेन्स ऑफ़ इण्डिया एक्ट' पास हो जाने पर ९ भागों में बाँट कर विप्लववादियों का विचार किया गया था। पहले मामले में ६१, दूसरे मामले में ७४, और तीसरे में १२ अभियुक्त थे। इनमें २८ को फाँसी हुई, २९ छोड़ दिए गए और बाक़ी कालेपानी तथा जेलख़ाने भेजे गए। इसके अलावा कई अपराधियों का विचार सामरिक ढङ्ग (Court Martial) से हुआ था और कई साधारण अदालत द्वारा दण्डित किए गए। पहले मामले में विद्रोह का उद्योग करने वाले और नेता शामिल किए गए। दूसरे में उनके सहकारी और तीसरे में विभिन्न प्रकार के विप्लववादी थे। इसके सिवा 'डिफ़ेन्स ऑफ़ इण्डिया एक्ट' के अनुसार बहुत से आदमियों को नज़रबन्द किया गया। अन्त में पञ्जाब के कतिपय प्रतिष्ठित सज्जनों की सहायता से सरकार इस विप्लववाद को दबाने में समर्थ हुई। लाहौर षड्यन्त्र वाले मामले में जिन्हें कालेपानी की सज़ा दी गई थी, उनमें अधिकांश ५०-५० और ४०-४० वर्ष की उमर के व्यक्ति थे।

दमन चक्र

'डिफ़ेन्स ऑफ़ इण्डिया एक्ट' के अनुसार तीस आदमी जेलों में नज़रबन्द थे। ११३ अपने-अपने गाँवों में और ८५ विभिन्न गाँवों में, रोक रक्खे गए थे। भारत-प्रवेश सम्बन्धी क़ानून के अनुसार ३३१ आदमी रोके गए थे। अमेरिका से जो सिक्ख आए थे, उनमें २,५७६ अपने-अपने गाँवों में नज़रबन्द कर दिए गए।

षड्यन्त्र वाले मामले के बाद, १९१७ में जो लोग स्वदेश वापस आए थे, उनमें से ४१९ आदमी नज़रबन्द किए गए थे। इसके सिवा एडवाइज़ारी कमिटी ने भी इस विप्लव-व्यापार को रोकने में सरकार की काफ़ी सहायता की थी। अख़बारों पर ख़ूब कड़ी नज़र रक्खी गई थी। कितने ही पत्रों के लिए यह आज्ञा थी कि अख़बार प्रकाशित करने से पहले मज़मून पुलिस को दिखा दिया जावे। श्री० विपिनचन्द्र पाल और लोकमान्य तिलक का पञ्जाब में प्रवेश करना तक निषिद्ध था।

रौलट कमिटी की रिपोर्ट का कथन है कि इस विप्लव-काण्ड के कारण पञ्जाब में भयङ्कर ख़ून-ख़राबी होने की सम्भावना हो गई थी।

बर्मा में विप्लव

सन् १९१५ में श्री० हसन ख़ाँ और श्री० सोहनलाल पाठक नाम के विप्लववादी श्याम होकर बरमा पहुँचे। इन दोनों का ग़दर-पार्टी से विशेष सम्बन्ध था। इन्होंने वहाँ जाकर सरकारी मिलेटरी पुलिस को भड़काने की चेष्टा की। किन्तु मेमियो की सवार-पुलिस के एक जमादार ने सोहनलाल को गिरफ़्तार करा दिया। उस समय उसके पास तीन पिस्तौल और २७० कारतूस थे। इसके पाँचवें दिन सोहनलाल का सहकर्मी नारायण सिंह भी वहीं पकड़ा गया। उसके पास भी एक पिस्तौल थी। इस समय श्याम राज्य की सीमा पर एक रेलवे लाइन तैयार हो रही थी। वहाँ बहुत से जर्मन इञ्जीनियर और पञ्जाबी सिक्ख काम कर रहे थे। अमेरिका की ग़दर पार्टी ने निश्चय किया था, कि ये जर्मन और सिक्ख अस्त्र चलाना सीखेंगे और जब बरमा की मिलेटरी पुलिस क़ब्ज़े में आ जाएगी तो फ़ौरन बरमा दख़ल कर लिया जाएगा। परन्तु अन्त में भण्डा फोड़ होगया और बहुत से विद्रोही गिरफ़्तार करके दण्डित किए गए।

रङ्गून के मुसलमानों ने भी एक विप्लवी दल बनाया था। उन्होंने १९१५ को बक़रीद के दिन विप्लव करने का आयोजन किया था। परन्तु तैयारी पूरी न होने के कारण यह तारीख़ बदल दी गई थी। इसके साथ ही पुलिस को इस षडयन्त्र का पता भी लग गया और कई आदमी नज़रबन्द कर लिए गए।

विदेशों से अस्त्र लाने की चेष्टा

ऊपर लिखा जा चुका है कि विप्लववादियों ने विदेशों से हथियार लाने की भी चेष्टा की थी। १९१५ में श्री० जितेन्द्रनाथ लाहिड़ी नाम का एक विप्लवी युरोप से भारत आया। उसने बङ्गाली विप्लववादियों को बतलाया कि जर्मनी अस्त्र और अर्थ देने को तैयार है। व्यवस्था ठीक करने के लिए उसने कुछ आदमियों को 'बटाविया' (जर्मनी) भेजने की ज़रूरत बताई। इस प्रस्ताव के अनुसार श्री० नगेन्द्रनाथ भट्टाचार्य मि० मार्टिन नाम धारण कर बटाविया गया। इसके साथ ही अवनीन्द्र नाथ मुकर्जी नाम का एक युवक जापान भेजा गया।

बटाविया जाकर सी० मार्टिन ने जर्मन राजदूत से मुलाक़ात की। उसने बताया कि भारतीय विप्लववादियों की सहायता के लिए अस्त्र-शस्त्र लेकर एक जहाज़ कराची के लिए जा रहा है। मार्टिन ने कहा, उसे बङ्गाल भेजने की व्यवस्था कर दीजिए। जर्मन राजदूत ने इसे स्वीकार कर लिया। इस जहाज में तीस हज़ार राइफ़ल, बन्दूक़ें और प्रत्येक बन्दूक़ के लिए ८०० के हिसाब से कारतूस थे। इसके सिवा दो लाख रुपए नक़द भी थे। निश्चय हुआ था, कि सुन्दरबन (गङ्गासागर सङ्गम के पास) जहाज़ से सारा सामान उतार लिया जाएगा। सब बातें तय करके मि० सी० मार्टिन उर्फ़ श्री० नरेन्द्र भारत वापस आ गया। श्री० यतीन्द्रनाथ के साथ परामर्श करके यह भी ठीक कर लिया गया, कि यह सब सामान कहाँ-कहाँ रक्खा जाएगा। यह भी निश्चय हुआ, कि पूर्व बङ्गाल के लिए कुछ हथियार 'हाथी द्वीप' में, पश्चिम बङ्गाल के लिए 'रायमङ्गल' नामक स्थान में और बाक़ी बालेश्वर में उतारा जाएगा। साथ ही यह व्यवस्था भी कर ली गई कि विप्लव आरम्भ होने पर कलकत्ते के पास की तीनों रेलवे लाइनें ध्वंस कर दी जाएँगी, ताकि सरकार विद्रोह दमन करने के लिए पलटनें न भेज सके।

१ जुलाई को 'मैवरिक' जहाज़ के रायमङ्गल पहुँचने की बात थी। कुछ लोग उसकी प्रतीक्षा के लिए रायमङ्गल पहले ही पहुँच गए थे। परन्तु दस दिन तक इन्तज़ार करने पर भी जब जहाज़ नहीं आया तो हताश होकर लौट आए। पीछे मालूम हुआ कि सारी चेष्टा विफल हो चुकी है।

* * *

इस परिमित स्थान पर इससे अधिक विवरण देना सम्भव ही नहीं था, हाल के होने वाले काण्डों से पाठक पूर्णतः परिचित हैं, अतएव आशा है, पाठकगण इसी से सन्तोष करेंगे।

* * *

स्वर्ण-कणिका

[श्री० 'जौहरी']

अत्याचार हमें नहीं डरा सकता, बल्कि वह हमें अपने सङ्कल्प में दृढ़ कर देगा। आत्म-दलन करने वालों की शोणित-धारा से स्वाधीनता-मन्दिर की नींव मज़बूत होती है और हमारे नौजवान आत्मदाताओं के रक्त से हमारी साधना पवित्र होगी। हमारा विश्वास चाहे सत्य हो या भ्रान्त, हम अपने को सर्वशक्तिमान ईश्वर का यन्त्र-स्वरूप समझते हैं, हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि हम उसी की ज्योति से उद्भासित पथ पर चल रहे हैं। इसे विभ्रम कह सकते हो, इसे कुसंस्कार के नाम से पुकार सकते हो, इसे उन्मत्तता समझ सकते हो, हमें मानव-समाज में विभ्रान्त व्यक्तियों का समूह कह सकते हो, परन्तु हमारी तरह सुदृढ़ विश्वास लेकर जब मनुष्य कार्य करता है, तब वह अप्रतिहत-पराक्रम और दुर्धर्ष हो उठता है। इस सत्य की उपलब्धि अगर तुम नहीं कर सकते, तो तुम्हारा इतिहास पढ़ना वृथा है। मनुष्य जब इस तरह के विश्वास का विश्वासी होकर कार्य में प्रवृत्त होता है, तो वह संसार की सारी आपदाओं, बाधाओं और विघ्नों का सामना कर सकता है।

❀

पशुबल का भय मत करना, वेत्राघात के भय से भयभीत मत होना, कारागार का स्वागत कर लेने पर तुम संसार के आत्म-दान करने वालों का सम्मान प्राप्त करने के अधिकारी हो सकोगे।

❀

युवको, मातृ-भूमि की सेवा के लिए जाग्रत होओ, युवकोचित साहस और उद्यम के साथ मातृ-भूमि की सेवा-साधना में लग जाओ। स्वदेशी आन्दोलन के साथ विद्यार्थियों का सम्पर्क रखना उचित नहीं, इस युक्ति द्वारा तुम्हें भ्रान्त करने की चेष्टा होती है। ऐसी धारणा को एक क्षण के लिए भी अपने हृदय में स्थान न देना। स्वदेशी आन्दोलन की अपेक्षा पवित्र साधना युवकों के लिए दूसरी नहीं हो सकती।......महाराष्ट्रोचित साहस, शौर्य और त्यागशीलता का परिचय प्रदान करो।

❀

स्वाधीनता-संग्राम में एक दिन में विजय नहीं मिलती। ईर्ष्यापरायणा स्वतन्त्रता देवी दीर्घकाल-व्यापी कठोर साधना से अपने भक्त के प्रति प्रसन्न होती हैं। इतिहास पढ़ो। स्वाधीनता-संग्राम चलाने के लिए कठोर सहिष्णुता, धैर्य, त्याग और निष्ठा की आवश्यकता होती है, उसे सीखो।

❀

विद्यार्थियो, हम अपने कार्य का भार तुम्हारे ऊपर दे जाते हैं। तुम इसके लिए अपने को उपयुक्त बना लो। सत्यपरायणता और पुरुषोचित निर्भीकता सीखो, अन्याय और अत्याचार के प्रति घृणा का भाव अपने चित्त में जगा लो। अपने अन्तर्तम पुरुष को जगा लो। अपनी पारिपार्श्विक अवस्था की उन्नति करो।

❀

सारा इतिहास इस बात की घोषणा कर रहा है, कि स्वेच्छाचारी शक्ति की कोई भित्ति नहीं होती। इस शक्ति को स्थायी बनाने के लिए जनता की गम्भीर अनुरक्ति में उसे प्रतिष्ठित करना अनावश्यक है। स्वेच्छाचार शासन के परिवर्तन का एक स्तर है। उसकी मीयाद को अनावश्यक रूप से बढ़ाना उचित नहीं है। पुनर्गठन का समय अब आया है। इसलिए शक्ति जगी है, उपादान संगृहीत हो चुका है।

—स्व० सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी

❀

भारत के जल और भारत की मिट्टी में एक चिर-सत्य छिपा है। वह सत्य प्रत्येक युग में नए-नए रूप से और नए-नए भावों में प्रकट होता है। हज़ारों परिवर्तन, आवर्तन और विवर्तन के साथ वह चिर-सत्य ही प्रकट हो उठा है। साहित्य, दर्शन, काव्य, युद्ध, विप्लव, धर्म, कर्म, अज्ञान, अधर्म, स्वाधीनता और पराधीनता में, वही अपने को घोषित कर रहा है। वही भारत का प्राण, भारत की मिट्टी, जल और वायु है; वही प्राणों का बहिरावरण है।

❀

विवेकानन्द की वाणी से चित्त तृप्त हो गया। समझ में आ गया, कि भारतीय, चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, पारसी हो या क्रिस्तान, वह भारतीय है।......... इस संसार में भारत का भी स्थान है, अधिकार है, साधना और कर्तव्य है।

❀

सत्याग्रह हमारे स्वाधीनता-संग्राम का अन्तिम अस्त्र है। मैं इसे ब्रह्मास्त्र कहता हूँ। कुरुक्षेत्र के धर्मयुद्ध में महावीर गाण्डीवी ने, जिस तरह सब से पहले पाशुपत्यास्त्र का प्रयोग नहीं किया था, महावीर कर्ण ने भी जिस तरह, सबसे पहले 'एकाघ्नी' अस्त्र का व्यवहार नहीं किया था। कोई वीर ऐसा नहीं करता—हम भी सब से पहले अपने अन्तिम अस्त्र का व्यवहार नहीं करेंगे। किन्तु सब अस्त्र समाप्त हो जाएगा—अन्त जब स्वयं हमारे सामने आकर खड़ा हो जायगा, तब धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र के रथी को हृदय में धारण करके हम अपने अन्तिम अस्त्र के प्रयोग करने में सङ्कोच नहीं करेंगे—भयभीत न होंगे, क्योंकि हम जानते हैं, कि यह युद्ध है। यह युद्ध पशुबल के विरुद्ध मनुष्य के आत्मबल का युद्ध है। इस धर्म-युद्ध में हम विजयी होंगे या हार जायँगे—इससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। हमें यह विश्वास है, कि संसार का अतीत और वर्तमान इतिहास हमारे इस संग्राम की तरह एक संग्राम भी नहीं दिखा सकता। एक ओर वर्तमान युग के नवाविष्कृत विज्ञान की सहायता से सज्जित सैन्य-श्रेणी और दूसरी ओर निरस्त्र, दुर्भिक्ष-पीड़ित—भूख और प्यास से म्रियमाण तीस करोड़ नर-कङ्काल है! कमर में वस्त्र का एक टुकड़ा लपेटे देशव्यापी क्षुधा और दरिद्रता की जीवित मूर्ति—भारत के प्रधान सेनापति, आज केवल आत्मबल को हाथ में लेकर, हमें समरक्षेत्र में बुला रहे हैं।

❀

.........तुमने इस स्वाधीनता संग्राम में बड़ा त्याग किया है, बहुत कष्ट सहा है—तुम्हारे ही ऊपर राजरोष ने संहारमूर्ति के रूप में आत्म-प्रकाश किया है। अभी समय नहीं आया है, कि हम कुछ सम्मानपूर्वक अस्त्र रख कर विश्राम कर सकें। युद्ध अभी भी तुम्हारी अपेक्षा के कल-कोलाहल से मुखरित है। जाओ वीर, युद्ध करो, इतिहास के एक अत्यन्त गौरवान्वित युद्ध के तुम सिपाही हो, इसे कदापि न भूलना। जब युद्ध का अन्त होगा, जब सन्धि हो जायगी और शान्ति का शुभा-

गमन होगा—तब संयत शान्त भाव से शान्तिमय मिलन-मन्दिर में—समुन्नत सिर से तुम प्रवेश करोगे—यह स्वप्न मैं साश्रु-नेत्रों से देख रहा हूँ।......मिलन-मन्दिर के यात्री जिसमें तुम्हें देख कर कह सकें, ये वे ही सिपाही हैं, जिन्होंने युद्ध-क्षेत्र में भय को पराजित किया है, मृत्यु को तुच्छ समझा है और युद्ध के अन्त में जयमाल धारण करने पर विनय और सौजन्य से शत्रु को भी जीत लिया है।

—स्व० देशबन्धु चित्तरञ्जन दास

स्वराज्य हमारा जन्मगत अधिकार है। इस संग्राम में हमें ऐक्य-बद्ध होना होगा। जब तक सर्वसाधारण हमारे कामों में सम्मिलित न होंगे, तब तक हमें सफलता नहीं प्राप्त होगी।

❀

ज्ञानहीन ग्रामवासियों को हमें सब से अधिक उपयुक्त राजनीति की शिक्षा देनी होगी। गाँव-गाँव में जाकर स्वाधीनता-वाणी की घोषणा करनी होगी। ऐसे युवकों का दल आजकल कहाँ है? ग्रामवासियों को जगाओ। अगर स्वराज्य लेना चाहते हो तो जन-शक्ति को कर्मक्षेत्र में खींच लाओ।

❀

सन्, १८१८ से १९१८ तक पूरे सौ वर्ष हो गए, दासता का असहनीय जीवन व्यतीत करते हुए! स्वराज्य-लाभ किए बिना भारत कदापि सुखी नहीं हो सकेगा। जीवित रहने के लिए हमें तुरन्त ही स्वराज्य की आवश्यकता है। तुम अगर स्वाधीनता चाहो, तो स्वाधीन हो सकते हो और अगर स्वाधीनता न चाहो, तो तुम्हारा पतन अनिवार्य है! स्वाधीनता के बिना तुम्हारी पतितावस्था कभी भी नहीं दूर हो सकती। तुममें अनेक ऐसे हैं, जो अस्त्र धारण करना पसन्द नहीं कर सकते।...... तुममें क्या आत्म-संयम की शक्ति नहीं है? तुम क्या इस प्रकार नहीं चल सकते, कि विदेशी राजशक्ति ज़रा भी सहायता न प्राप्त कर सके, इसी का नाम असहयोग है। क्या तुम इसे कर सकते हो? अगर कर सकते हो, तो तुम कल से ही स्वतन्त्र हो।

❀

राजनीति के सम्पर्क में रहने से हमें आपदाओं का सामना करना पड़ेगा। मैं इस प्रकार की आपदाओं का सामना करने को सर्वदा प्रस्तुत हूँ। सरकार मुझे सता कर कुछ भी नहीं कर सकती, क्योंकि मैं दूसरों की तरह कच्चा नहीं हूँ, मैं जनता का केवल सेवक हूँ। अगर सङ्कट में पड़ कर लज्जाजनक कायरता दिखाऊँ, तो जनता उत्साह-हीन हो जायगी। अगर मैं दण्डित होऊँ तो सर्व-साधारण की सहानुभूति ही मुझे बल प्रदान करेगी।

❀

यद्यपि जूरी ने मुझे दोषी बताया है, तथापि मैं अपने को निर्दोष समझता हूँ। जिस शक्ति द्वारा यह संसार परिचालित होता है, वह शक्ति माननीय विचार-क्षमता से कहीं श्रेष्ठ है। जिस पवित्र कार्य की साधना की मैंने कोशिश की है, मेरे क्लेश भोगने से देश उसकी सिद्धि की ओर अग्रसर होगा। मालूम होता है, भगवान की ऐसी ही इच्छा है।

❀

विरुद्ध पक्ष चाहता है, कि मैं सिर झुका कर दोष स्वीकार कर लूँ। मुझसे ऐसा नहीं हो सकता। मेरे चरित्र-बल पर ही जनता के ऊपर मेरा प्रभाव निर्भर करता है और मेरी देश-सेवा का सुयोग भी उसी पर निर्भर है। ऐसी दशा में अगर मैं भय का वशवर्ती होऊँ तो महाराष्ट्र में रहना या अण्डमन में रहना मेरे लिए बराबर है!

❀

कर्त्तव्य की राह गुलाब-जल से सींची हुई नहीं होती और गुलाब फूल की हँसी से भरा होता है। यह बात सच है, कि हम जो कुछ चाहते हैं, वह इस तरीक़े से विप्लव है, क्योंकि हम नौकरशाही शासन-पद्धति में सम्पूर्ण परिवर्तन चाहते हैं और यह भी सच है, कि यह विप्लव रक्तपात-विहीन होगा, परन्तु रक्तपात अब न होगा, तब इसके लिए देशवासियों को कोई दुःख या कष्ट भी सहना न पड़ेगा, ऐसा विश्वास अगर किसी का हो तो वह उसकी निर्बुद्धिता का परिचायक होगा। केवल दुःख-कष्ट ही नहीं, गुरुतर दुःख-कष्ट भोगना पड़ेगा। क्योंकि दुःख-कष्ट भोगने के लिए प्रस्तुत हुए बिना, किसी विषय में भी सफलता नहीं प्राप्त हो सकती। तुम्हारा विप्लव रक्तपात-विहीन होगा, परन्तु यह न समझ लेना, कि तुम्हें उसके लिए कष्ट भी स्वीकार न करना पड़ेगा, अथवा जेल न जाना होगा।

—स्व० लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलक

ब्रिटिश जनता ने भारतवर्ष को युद्ध द्वारा नहीं जीता है। एक दल के लोगों को भय न दिखाते तथा दूसरे दल वालों को काम में न लगाते तथा भारतवासियों द्वारा नैतिक और आर्थिक सहायता न प्राप्त होती, तो वे भारत को नहीं जीत सकते थे। उनके भारत के जीतने की कथा बड़ी ही कलङ्कपूर्ण है। ब्रिटिश इण्डियन कोर्ट में जिस समय भारतीय क़ानून द्वारा प्रतिष्ठित सरकार को नष्ट कर डालने के अभियोग में उपस्थित किए जाते हैं, तो उस समय वास्तव में बड़ी हँसी आती है। पूछने की इच्छा होती है, किस क़ानून के आधार पर इस देश में यह सरकार प्रतिष्ठित है?

❀

फाँसी की रस्सी, जल्लाद का कुठार, तोप का गोला, मनुष्य के जीवन का नाश कर सकता है; किन्तु जाति की शक्ति उससे बढ़ती है। निर्वासन, नज़रबन्दी कारागार, अत्याचार, जायदाद की ज़ब्ती आदि अस्त्रों द्वारा अत्याचारी स्वतन्त्रता-कामियों का ध्वंस करना चाहता है। परन्तु अब तक इस प्रकार की चेष्टाएँ व्यर्थ ही सिद्ध हुई हैं।

❀

युवकों ने कारागार का भय छोड़ दिया है। कुछ दिनों में मृत्यु का भय भी उन्हें विचलित न कर सकेगा तब सरकार क्या करेगी? गवर्नमेण्ट उन्हें जेल दे सकती है; फाँसी पर लटका सकती है; किन्तु जेल जाने में कोई हरज नहीं है, मृत्यु हो जाय तो भी कोई चिन्ता नहीं—ऐसी मनोवृत्तियों के उदय होने पर क्या होगा?

❀

स्वाधीनता-प्राप्ति की चेष्टा करने का प्रत्येक जाति को अधिकार है।.........जिस अवस्था में पड़ कर सरकार हमारी माँग स्वीकार करने को बाध्य होगी। जब तक हम उस अवस्था की सृष्टि न कर सकेंगे; तब तक पूर्ण स्वाधीनता तो क्या, औपनिवेशिक स्वायत्त-शासन भी सरकार हमें न देगी। इस सम्बन्ध में मुझे ज़रा भी सन्देह नहीं है, आप चाहे पूर्ण स्वाधीनता चाहते हों या औपनिवेशिक स्वराज्य चाहते हों, इस अवस्था की सृष्टि करने के जो काम हैं, वही वास्तविक काम हैं।

❀

धन क्या तुम्हारा है? जिसके हाथों में बल है, जिसके हाथों में फ़ौज है, धन उसी का है, तुम तो सिर्फ़ ख़ज़ाञ्ची हो। धन के साथ ही जिसमें शारीरिक बल नहीं है, बुद्धि नहीं है, सङ्गठन की शक्ति नहीं है, उसके धन का आज न सही, कल कोई दूसरा उपभोग करेगा ही। धन उसी के काम आता है, जिसमें आत्म-बल होता है। धन रहने से ही अगर सब कुछ हो सकता, तो आज हिन्दू जाति की इतनी दुर्दशा न होती। सोमनाथ का मन्दिर जिन्होंने पाया था, उनके पास धन की क्या कमी थी? परन्तु धन कुछ भी न कर सका। महमूद ग़ज़नवी की तलवार से सोमनाथ की मूर्ति टुकड़े टुकड़े हो गई थी।

—स्वर्गीय लाला लाजपतराय

× × × हम देखते हैं, कि हमें जो अधिकार प्राप्त हैं वे हमारे शासकों के दिए हुए दान हैं। जब तक उनकी मर्ज़ी होगी, तब तक हम उन अधिकारों का उपभोग कर सकेंगे। वे हमें अधिकार-वञ्चित कर सकते हैं—उनके हाथों में जो क्षमता है, उसके बल से बीच-बीच में, किसी प्रकार का कारण दिखाए बिना ही अधिकार से वञ्चित किया गया है। निर्यातन और निष्पेषण के लिए सरकार ने कितनी व्यवस्थाएँ कर रक्खी हैं, उसकी लम्बी-चौड़ी फ़िहरिस्त तैयार करने से कोई लाभ नहीं है। स्वर्गीय देशबन्धु ने अपने जीवन के अन्तिम कई वर्षों तक उनके लिए घोर संग्राम कर चुके हैं। हमें उस आत्मोपलब्धि, आत्मोन्नति और आत्म-विकास के सुयोग से वञ्चित रक्खा गया है। अपने देश के अभ्यन्तरीन और वहिर्व्यापार से हमें दूर रक्खा गया है।

❀

यद्यपि अनेक अन्यायों के लिए सरकार ज़िम्मेदार है। तथापि यह बात अकपट भाव से स्वीकार करना होगा, कि अपनी वर्तमान अवस्था के लिए हम स्वयं भी कई अंशों में ज़िम्मेदार हैं। एक जाति का विभिन्न अंश जिस बन्धन में बँधा रहता है, उस बन्धन के सामर्थ्य और असामर्थ्य के ऊपर ही जाति का सामर्थ्य और असामर्थ्य निर्भर रहता है। कई शताब्दियों से हमारा वह बन्धन शिथिल हो गया है। हम छोटे-बड़े बहुत से सम्प्रदायों में बँट गए हैं।.........सर्वसाधारण में अज्ञानता और दरिद्रता और उच्च श्रेणी वालों में बढ़ते हुए असन्तोष के लिए अनेक अंशों तक सरकार ही ज़िम्मेदार है, इसमें सन्देह नहीं। परन्तु अपनी सामाजिक व्यवस्थाओं के लिए, जिसके कारण अपने लाखों भाइयों को हमने दलित और अस्पृश्य बना कर रक्खा है—जिस व्यवस्था के अनुसार हमने स्त्रियों को उनके वास्तविक अधिकारों से वञ्चित कर रक्खा है; निश्चय ही इसके लिए सरकार ज़िम्मेदार नहीं है।

❀

धर्म का उच्च आदर्श चाहे कुछ भी हो, हमारे प्रतिदिन के व्यवहार में धर्म का आदर्श बन गया है! कट्टरता, धर्मोन्मत्तता, असहिष्णुता, सङ्कीर्णता, स्वार्थपरता और जो कुछ समाज के लिए कल्याणकर है, उसके विपरीत भाव! परधर्मावलम्बी को घृणा करना ही आजकल धार्मिक होने का प्रधान लक्षण है। ऐहिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जितने अन्याय होते हैं, उनसे कहीं अधिक होते हैं धर्म के पवित्र नाम पर। हिन्दुओं और मुसलमानों में जिन तुच्छ कारणों को लेकर सङ्घर्ष उपस्थित होते हैं, उन्हें देख कर विस्मित होना पड़ता है।

—स्व० पण्डित मोतीलाल नेहरू

❀

सारी ख़राबियों का मूल कारण यह है, कि तुम दुर्बल हो—अतिदुर्बल! तुम्हारा शरीर दुर्बल है, तुम्हारा मन दुर्बल है, आत्म-विश्वास तो तुम्हारे अन्दर बिलकुल ही नहीं है। शत-शत वर्षों से विदेशी विजेताओं ने तुम्हें पीस डाला है। तुम्हारे अपने जनों ने भी तुम्हारे बल का हरण किया है। इस समय तुम पददलित, घायल, मेरुदण्डहीन, फोड़े की तरह हो। इस समय तुम्हें बल और वीर्य की ही आवश्यकता है। तुम्हें विश्वास करना चाहिए, कि तुम आत्मा हो—अमर-अमोघ बलशाली!!

—स्व० स्वामी विवेकानन्द

❀

असहयोग आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास

[श्री० 'भुक्तभोगी']

ईसा की बीसवीं शताब्दी का सन्, १९१९ भारत के इतिहास का एक चिरस्मरणीय साल है। क्योंकि इस साल कुछ ऐसी महत्वपूर्ण घटनाएँ हुई थीं, जिनकी अमिट छापे भारतवासियों के दिलों पर रहेगी। इसी साल समस्त भारत के एक स्वर से विरोध करने पर भी सरकार ने वह 'रौलट एक्ट' नाम का काला क़ानून पास कर डाला था, जिसे महात्मा गाँधी ने "शासक-शरीर की भीतरी बीमारी का प्रकट चिन्ह" बताया था। उसी साल 'जले पर नमक' की तरह भारत को 'मॉण्टेगु चेम्सफ़र्ड' रिफ़ॉर्म मिला था, जिसे भारत के राज-नीतिज्ञों ने शासन-सुधार की मृग-मरीचिका नहीं, वरन् भारतवासियों का उपहास माना था। उसी साल पञ्जाब में वह अमानुषिक घटना सङ्घटित हुई थी, जिसे देख कर अत्याचार का दिल भी दहल सकता था। देश के शासन-कार्य में कुछ वास्तविक अधिकार प्राप्त करने की आशा से, यूरोपीय महासमर में, दिल खोल कर भारत ने साम्राज्य की सेवा की थी। वह इसके बदले में थोड़े से मानवोचित अधिकारों की ओर आशा लगाए बैठा था, परन्तु इसकी वही दशा हुई, जो एक बूँद के लिए घनघटा की ओर टकटकी लगाए हुए चातकी की अकस्मात् वज्रपात हो जाने पर हो जाती है! जनता ने पञ्जाबी अत्याचार की जाँच के लिए एक 'रॉयल कमीशन' की पुकार मचाई। परन्तु उसके बदले में लॉर्ड हण्टर की अध्यक्षता में एक कमिटी बैठी, जिसे स्वयं भारत-सरकार ने नियुक्त किया, अथच उसी की नृशंसतापूर्ण कारंवाई की जाँच होने वाली थी।

जिस समय सरकार कमीशन नियुक्त करने में आगा-पीछा कर रही थी, उसी समय कॉङ्ग्रेस ने अपनी एक स्वतन्त्र जाँच-कमिटी नियुक्त कर ली। इस कमिटी में महात्मा गाँधी, पण्डित मोतीलाल नेहरू, देशबन्धुदास और अन्यान्य कई वकील-बैरिस्टर थे। सरकार ने जेल में बन्द नेताओं को उस कमिटी के सामने आकर अपना बयान देने की अनुमति नहीं दी, इसलिए कॉङ्ग्रेस ने सरकार की नियुक्त की हुई हण्टर कमिटी का बहिष्कार कर दिया। यहीं से असहयोग आन्दोलन का सूत्रपात्र हुआ।

अमृतसर कॉङ्ग्रेस

'हण्टर कमिटी' तथा ग़ैर-सरकारी कमिटी की नियुक्ति के पहले ही, अमृतसर में कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन हुआ। हण्टर कमिटी के सामने जो गवाहियाँ हुई थीं उससे पञ्जाब के अत्याचार का बहुत कुछ भण्डाफोड़ हो चुका था। इसलिए सारे देश में असन्तोष की आग धधक उठी। पञ्जाब के अत्याचार के सम्बन्ध में निन्दासूचक प्रस्ताव उपस्थित करते हुए लोकमान्य तिलक ने जो वक्तृता दी थी, उसमें आपने कहा था—"प्रजा की रक्षा के लिए ही राजा होता है, न कि बेपरवाही के साथ प्रजा की हत्या करने के लिए! प्रजा की रक्षा का भार जहाँ व्यक्ति-विशेष के ऊपर न्यस्त होता है, वहाँ उसकी ज़िम्मेदारी और भी अधिक होती है। साथ ही उसका प्रभाव और वेतन भी अधिक होता है, वर्तमान क्षेत्र में इन तमाम का असद्व्यवहार किया गया है। इसलिए अगर हम इसके विचार का दावा करें, तो इसमें कोई अन्याय की बात नहीं हो सकती। लन्दन में नहीं, यहीं जालियाँवाले बाग़ में ही उनका विचार होना चाहिए और अगर आवश्यकता हो तो वहीं उन्हें दण्ड भी मिलना चाहिए। कुछ लोगों का कहना है, कि उन्हें भारत में नहीं आने देना चाहिए! मैं पूछता हूँ क्यों? विचार के समय उपस्थित रहने के लिए और उपयुक्त दण्ड ग्रहण करने के लिए, उनका वहाँ आना अत्यावश्यक है। इस सम्बन्ध में मेरा मनोभाव अत्यन्त तीव्र है। युद्ध के बाद क़ैसर के प्रति इङ्गलैण्ड वालों का जैसा मनोभाव देखा गया है, इस सम्बन्ध में मेरा मनोभाव भी वैसा ही है। फ़ौजी क़ानून के समय पञ्जाब में जो निष्ठुर अत्याचार हुए हैं, उसकी तुलना में क़ैसर के कार्य क्या दूषणीय हैं? क़ैसर को सारे संसार के विरुद्ध लोहा लेना पड़ा था। हमारी सरकार ने कहा है, कि देशवासियों ने विद्रोह आरम्भ किया था, इसलिए उनके विरुद्ध सरकार को भी हथियार धारण करना पड़ा। परन्तु वास्तव में बात ऐसी न थी। पञ्जाब के लोगों ने विद्रोह आरम्भ किया था, यह घोर मिथ्या है। देश के लोगों को भयभीत करने के लिए ही लापरवाही के साथ यह हत्या की गई है। अगर किसी सभ्य देश में इस प्रकार का कार्य हो तो मैं कहूँगा धिक्कार है, उस सभ्यता को। दूसरे किसी देश में ऐसा कार्य नहीं हो सकता। इङ्गलैण्ड में यदि यह काण्ड हुआ होता, तो वहाँ वाले अपराधी को दण्ड दिलाने के लिए नौ महीने तक चुपचाप नहीं रह सकते थे। एक महीने में ही सब मामला ख़तम हो जाता। पार्लामेण्ट में प्रश्नों पर प्रश्न होते, वितर्क पर वितर्क होते। अपराधी को दण्ड न देने पर कोई मन्त्रि-सभा अपने को निरापद नहीं समझ सकती। दुर्भाग्य की बात है कि हम लोग छः हज़ार मील पर हैं, और हमारी सरकार प्रजातन्त्रमूलक नहीं है। इसीसे ब्रिटिश सरकार अपने को सम्पूर्ण निरापद समझ रही है।" इसी तरह अन्यान्य कई वक्ताओं ने भी इस काण्ड की निन्दा की और सबकी यही इच्छा थी, इसके प्रतिकार की कोई तदबीर अवश्य होनी चाहिए।

इसी समय ब्रिटिश पार्लामेण्ट ने 'मॉण्ट-चेम्सफ़र्ड' सुधार को भी स्वीकार कर लिया था और अपनी उदारता का परिचय देने के लिए, जिन लोगों को पञ्जाब के बलवे (?) में सज़ाएँ दी गई थीं और जिन्होंने मार-काट में भाग नहीं लिया था, वे छोड़ दिए गए थे। इसके अनुसार पञ्जाब के कई नेता और अलीबन्धु जेल से छूटते ही सीधे कॉङ्ग्रेस के पण्डाल में आए तो लोगों ने बड़े उत्साह से उनका स्वागत किया।

यद्यपि पार्लामेण्ट के दिए हुए हास्यास्पद सुधारों को कॉङ्ग्रेस ने स्वीकार कर लिया; परन्तु जनता इससे सन्तुष्ट न थी। पञ्जाब के भयङ्कर काण्ड के बाद, इस आँसू पोंछने के प्रयत्न को उसने अपमानजनक समझा।

स्पेशल कॉङ्ग्रेस

अमृतसर कॉङ्ग्रेस के दो महीने बाद, मार्च सन् १९२० में कॉङ्ग्रेस की जाँच कमिटी की रिपोर्ट प्रकाशित हो गई। उसमें प्रकट की हुई बातों के कारण सारे देश में क्रोध का सञ्चार हुआ। इधर सरकार ने हण्टर कमिटी की रिपोर्ट प्रकाशित करने में अन्यथा विलम्ब कर दिया। इससे लोगों का सन्देह और भी बढ़ गया और वह सन्देह कुछ दिनों के बाद और भी पक्का हो गया। अब हण्टर कमिटी में 'अल्पमत' और 'बहुमत' के नाम से दो प्रकार की रिपोर्टें प्रकाशित कीं। इधर सरकार ने 'इण्डेमनिटी क़ानून' के नाम से एक नया क़ानून पास करके, अत्याचारियों के विरुद्ध क़ानूनी कारंवाई करने का रास्ता ही रोक दिया। इसके बाद भारत-मन्त्री तथा भारत-सरकार ने हण्टर कमिटी की रिपोर्ट पर अपनी असन्तोषजनक सम्मति प्रकट की। परन्तु कॉङ्ग्रेस जनमत की उपेक्षा नहीं कर सकी। उसने तुरन्त ही कलकत्ते में अपना एक 'विशेष अधिवेशन' किया। लाला लाजपतराय इस अधिवेशन के सभापति बनाए गए। पण्डित मदनमोहन मालवीय और देशबन्धु सी० आर० दास के प्रबल विरोध करने पर भी प्रतिनिधियों ने असहयोग का सिद्धान्त स्वीकार किया। कहा गया, कि अनन्त काल से प्रजा की शिकायतों पर ध्यान न देने वाली सरकार की सहायता न करना इस देश में धर्म माना गया है। इसका उपयोग भी प्रजा ने कई बार किया है। इसी पुरानी प्रथा के कारण बङ्गाल के विच्छेद के समय भी कुछ अंशों में सरकार की सहायता न करने का भाव उत्पन्न किया था। इसके सिवा, सन् १९०६ में, बनारस-कॉङ्ग्रेस के सभापति की हैसियत से श्री० गोपालकृष्ण गोखले ने भी इसी मार्ग की ओर इशारा किया था। उन्होंने कहा था—"यदि ऐसे आदमियों की राय का भी निरादर कर दिया जाय, यदि भारतवासी गूँगे पशु की तरह हाँके जाएँ, यदि ऐसे मनुष्यों को, जिनका किसी दूसरे देश में प्रसन्नता से सम्मान किया होता, उनके ही देश में उनकी असहाय तथा अपमानजनक अवस्था का अनुभव कराया जाय, तो मैं यही कहूँगा कि जनता के हित के लिए नौकरशाही के साथ सब प्रकार के सहयोग की आशा को विदा कर दो। ब्रिटिश शासन के एक सौ वर्ष बाद भी यदि ऐसी अवस्था उत्पन्न होती है तो ब्रिटिश शासन पर मेरी समझ में इससे बढ़ कर कोई दूसरा दोषारोपण नहीं हो सकता।"

ये वाक्य गोखले महोदय ने बङ्ग-विच्छेद के प्रतिष्ठित विरोधियों के सम्बन्ध में कहे थे। इसके दो वर्ष बाद स्वर्गीय लोकमान्य ने सत्याग्रह के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। सन्, १९०९ में लाहौर-कॉङ्ग्रेस में प्रवासी भारतवासियों के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव उपस्थित करते हुए गोखले महोदय ने सत्याग्रह के सम्बन्ध में कहा था—"सत्याग्रह क्या है? वह प्रधानतः आत्म-रक्षा मूलक है और नैतिक और आध्यात्मिक शस्त्रों से लड़ा जाता है। सत्याग्रही अत्याचार का विरोध स्वयं कष्ट सहन करके करता है। वह पाशविक बल का सामना आत्मिक बल से करता है। वह मनुष्य के अन्दर रहने वाले पशु का मुक़ाबला मनुष्य के अन्दर रहने वाले देवता से करता है। वह अत्याचार का मुक़ाबला सहनशीलता से करता है। बल का मुक़ाबला अन्तरात्मा से करता है। अन्याय का मुक़ाबला विश्वास से और अधर्म का मुक़ाबला धर्म से करता है।"

महात्मा गाँधी ने इस असहयोग की नीति को कार्य-रूप में परिणत करने का भार लिया और असहयोगी की

(४६वें पृष्ठ का शेषांश)

हम जितने प्रकार के पाप-भारों से पीड़ित हो रहे हैं, उनमें कापुरुषता सबसे बड़ा पाप है और इससे भी बड़ा है हिंसा। रक्तपात और रक्तपात के नाम पर जितने कार्य हैं, उसकी अपेक्षा भी कापुरुषता अत्यन्त कलुषित होती है। क्योंकि भगवान के ऊपर से विश्वास हटते ही और उसकी विभूति के सम्बन्ध में अज्ञान होने से ही मनुष्य कापुरुष हो जाता है।

—महात्मा गाँधी

* * *

कर्मसूची तैयार करके वे संग्राम में प्रवृत्त हुए। एक ओर पञ्जाब के अत्याचारों की उपेक्षा और दूसरी ओर मुसलमानों की ख़िलाफ़त के साथ अविचार, इन दोनों घटनाओं ने असहयोग आन्दोलन के लिए मैदान साफ़ कर दिया।

ख़िलाफ़त कॉन्फ़्रेन्स

नवम्बर सन् १९१९ में दिल्ली में ख़िलाफ़त कॉन्फ़्रेन्स का अधिवेशन हुआ। मुसलमानों में बड़ी उत्तेजना फैली थी। हिन्दू भी काफ़ी तादाद में शामिल थे। महात्मा गाँधी की सलाह से कॉन्फ़्रेन्स ने निश्चय किया, कि यदि ख़िलाफ़त का मसला सन्तोषजनक भाव से हल न हो तो सरकार से सहयोगिता करना एकदम बन्द कर दिया जाय। इसके बाद कॉन्फ़्रेन्स की दूसरी बैठक, १९२० की १७ अप्रैल को मद्रास में हुई। वहाँ असहयोग नीति का स्पष्टीकरण इस प्रकार हुआ—(१) ऑनरेरी पद, सरकारी उपाधियाँ और कौन्सिलों की मेम्बरी छोड़ दी जाए, (२) सरकारी नौकरी छोड़ दी जाए, (३) पुलिस और फ़ौज की नौकरियाँ छोड़ दी जाएँ, (४) सरकारी कर देने से इन्कार कर दिया जाए।

यद्यपि अभी तक असहयोग का सम्बन्ध अधिकतर ख़िलाफ़त के मसले से ही था, तो भी महात्मा गाँधी ने इसे गर्म दल के नेताओं के सामने पेश करने का निश्चय किया और इसके लिए इलाहाबाद में एक कॉन्फ़्रेन्स बैठी। असहयोग का कार्यक्रम तैयार करने के लिए महात्मा गाँधी और मुसलमान नेताओं की एक कमिटी बनाई गई। इस कमिटी ने असहयोग का कार्यक्रम जुलाई में प्रकाशित किया और उसमें अदालतों के बहिष्कार का भी ज़िक्र आया।

इसके बाद कलकत्ते में कॉङ्ग्रेस का विशेष अधिवेशन हुआ था, जिसका ज़िक्र हम ऊपर कर आए हैं।

नागपुर कॉङ्ग्रेस

नागपुर की कॉङ्ग्रेस दिसम्बर सन् १९२० में हुई थी। कौन्सिलों का निर्वाचन हो चुका था। राष्ट्रीय दल वाले नेता कॉङ्ग्रेस का आदेश मान कर निर्वाचन-द्वन्द्व से अलग रहे। फलतः इन चुनावों के बारे में तीन वर्ष तक विचार करने की कोई आवश्यकता न रही। स्कूल, कॉलेज और अदालतों के बहिष्कार का कई प्रभावशाली नेताओं ने घोर विरोध किया, परन्तु चौदह हज़ार प्रतिनिधियों में से अधिकांश ने कलकत्ते के प्रस्ताव पर दृढ़ रहने का ही निश्चय किया। फलतः थोड़े से रद्दोबदल के साथ यहाँ भी असहयोग-सम्बन्धी प्रस्ताव प्रबल बहुमत से पास हो गया।

उसी समय कनाट् के ड्यूक भारत की सैर करने आ रहे थे। इसलिए कॉङ्ग्रेस ने यह भी निश्चय किया, कि राज-परिवार से किसी प्रकार का द्वेष न रखते हुए भी, ड्यूक महोदय के स्वागत-समारोह का बहिष्कार किया जाए। फलतः जब जनवरी में ड्यूक आए तो जिस शहर में गए वहाँ पूर्णहड़ताल रही, मानो भारत ने दिखा दिया, कि अब वह गुलाम या पराधीन नहीं रहना चाहता। दिल्ली और कलकत्ता-जैसे शहरों में जहाँ ड्यूक महोदय को सूनी सड़कों पर सरकारी स्वागत मिल रहा था, वहाँ जब महात्मा गाँधी या कोई और नेता जाता था तो उनके मुँह से स्वतन्त्रता का सन्देश सुनने के लिए लाखों की भीड़ होती थी।

नागपुर कॉङ्ग्रेस ने नवीन सङ्गठन की नियमावली बनाई। कॉङ्ग्रेस का ध्येय बदल दिया गया, कॉङ्ग्रेस तथा उससे सम्बन्ध रखने वाली कमिटियों का पुनः सङ्गठन हुआ, उनके चुनाव के सम्बन्ध में नियम बने, प्रतिनिधियों की संख्या निश्चित की गई, और कॉङ्ग्रेस के कार्य को बराबर जारी रखने के लिए एक वर्किङ्ग कमिटी भी बनाई गई।

३१ मार्च, सन् १९२१ में बेज़वाड़ा में कॉङ्ग्रेस की स्थायी समिति की बैठक हुई और निश्चय हुआ, कि आगामी जून तक कॉङ्ग्रेस का कार्य सञ्चालन करने के लिए एक करोड़ रुपए एकत्र कर लिए जायँ, कॉङ्ग्रेस के एक करोड़ सदस्य बनाए जाएँ और भारत के २० लाख घरों में चर्ख़े चलवाने का प्रबन्ध हो। इसके बाद समिति की दूसरी बैठक बम्बई में हुई और निश्चय हुआ, कि आगामी ३० सितम्बर के अन्दर-अन्दर विदेशी वस्त्र का सम्पूर्ण रूप में बहिष्कार कर दिया जाए तथा युवराज के आने पर उनके स्वागत-समारोह का बहिष्कार भी किया जाए।

स्वयंसेवक आन्दोलन

२२ और २३ नवम्बर को समिति की एक बैठक फिर बम्बई में हुई और निश्चय हुआ कि बङ्गाल, पञ्जाब और संयुक्त प्रान्त में जहाँ सरकार ने स्वयंसेवक दल के सङ्गठन को ग़ैर-क़ानूनी क़रार दिया है, वहाँ से सब स्वयंसेवक दलों को एक सङ्गठन के अन्दर लाकर सरकार के विधान को चुनौती दी जाए। सरकार ने पहले तो आन्दोलन की दिल्लगी उड़ाई। बड़े लाट साहब ने उसे मूर्खों की योजना बता कर उपहास किया। फिर इस बात का प्रचार किया गया, कि अगर अङ्गरेज़ भारत से अपना हाथ खींच लें तो रक्त-प्रलय आरम्भ जायगा। यह भी घोषित किया कि असहयोगी लोग बोलशेविज़्म को बुलाना चाहते हैं। अन्त में कौन्सिलों के मॉडरेट नेताओं से प्रार्थना की गई कि वे इस मुसीबत में सरकार की सहायता करें। असहयोग आन्दोलन का दमन करने के लिए प्रान्तिक सरकारों के पास नई-नई योजनाएँ भेजी गईं। 'सिडिशस मीटिङ्ग एक्ट', क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेण्ट और १४४ धारा का मनमाना उपयोग होने लगा। सरकारी अफ़सरों ने 'अमन सभाएँ' क़ायम कीं। एङ्ग्लो इण्डिया एसोसिएशन की एमरजेन्सी कमिटी ने भी आन्दोलन के विरुद्ध अंधाधुन्ध प्रचार किया। अली-बन्धु गिरफ़्तार हुए और कराची में उन पर मामला चला और उन्हें भारी सज़ा दी गई। आपके मुक़द्दमे की पूरी कार्यवाही पाठकों ने 'भविष्य' के गताङ्क में पढ़ी ही होगी!

अली-बन्धुओं को १ नवम्बर को सज़ा दी गई। इस सज़ा में कॉङ्ग्रेस ने मत-स्वतन्त्रता को दबाने का प्रयत्न देखा, इसलिए उसने अली-बन्धुओं के अपराधों को अपनी कमिटियों में पास किए प्रस्तावों में भी किया। उसके समर्थन में हज़ारों आदमियों ने भाग लिया। सरकार पूर्णरूप से कुण्ठित हो गई। फिर किसी आदमी पर उन अपराधों के लिए मामला नहीं चलाया गया।

प्रिन्स का आगमन

१७ नवम्बर को प्रिन्स ऑफ़ वेल्स भारत का भ्रमण करने आए। उस दिन सारे भारत में हड़ताल रही। वास्तव में सरकार ने उन्हें किसी राजनीति के उद्देश्य की सिद्धि के लिए बुलाया था। परन्तु देश ने उनके स्वागत-समारोह का बहिष्कार करके उसे विफल कर दिया।

इसके बाद नौकरशाही ने और भी उग्र मूर्ति धारण की, इलाहाबाद में कॉङ्ग्रेस कमिटी के ५५ सदस्य एक साथ ही गिरफ़्तार कर लिए गए, उन पर यह मज़ेदार इलज़ाम लगाया गया, कि वे स्वयंसेवक भर्ती करने के लिए मसौदा बना रहे थे। इनमें से प्रत्येक को १८ महीने की सख़्त सज़ा दी गई। परन्तु अन्त में कुछ दिनों के बाद वे छोड़ दिए गए।

नेताओं की गिरफ़्तारियाँ

देशबन्धु चितरञ्जन दास, जो कि अहमदाबाद कॉङ्ग्रेस के सभापति चुने गए थे, २३ दिसम्बर को गिरफ़्तार कर लिए गए। उन पर वालण्टियर बनाने के लिए अपील प्रकाशित करने का अपराध लगाया गया और दो महीने तक हवालात में रक्खे जाने पर छः महीने के लिए जेल भेजे गए। हवालात के ज़माने में कहा जाता है, कि उन्हें एक सार्जेण्ट ने मारा भी था। अपने मामले के समय देशबन्धु ने अदालत की कार्रवाई में कोई भाग नहीं लिया और न अपना पक्ष समर्थन किया।

इसके बाद ही मौ० अबुलकलाम आज़ाद की गिरफ़्तारी हुई। शायद नौकरशाही ने हिन्दू नेता के बाद एक मुसलमान नेता को गिरफ़्तार करना भी मसलहत समझा। आप पर १२४-अ धारा के अनुसार मामला चला और सज़ा दी गई। आपके बाद लाला लाजपतराय, आचार्य भगवानदास, पं० जवाहरलाल नेहरू तथा अन्यान्य सैकड़ों नेता और हज़ारों स्वयंसेवक पकड़े गए। गाँधी टोपी और खद्दर तो मानो नौकरशाही के लिए मानो 'हौआ' बन गए थे। इनका उपयोग करने वालों का हर तरह अपमान और तिरस्कार होता था। खद्दर का कुर्ता, गाँधी टोपी पहनना ही राजद्रोही होने का चिह्न था। सैकड़ों नहीं, वरन् हज़ारों आदमी इसी महाभयङ्कर अपराध में पकड़े गए थे। स्वयंसेवकों को पीटना और जाड़े के दिनों में उन्हें नङ्गा करके तलावों में डाल देना, पुलिस के लिए एक साधारण दिल-बहलाव था। जिनके ऊपर कोई विशेष अपराध नहीं लगाया जा सका, उनके लाइसेन्स ज़ब्त करके हथियार ही छीन लिए गए। राष्ट्रीय विद्यालयों के काग़ज़ात नष्ट कर देना भी विद्रोह-दमन का एक उपाय था।

जनता ने बड़ी शान्ति और संयम से काम लिया। इस आन्दोलन का इतना प्रभाव पड़ा कि श्रीमान् बड़े लाट साहब तक 'चकरा' गए। २४ जनवरी को बारदोली से सामूहिक सत्याग्रह प्रारम्भ करने का स्मरणीय निर्णय किया गया। महात्मा गाँधी ने उसे अन्तिम और अमिट निर्णय कहा था और सरकार के पास 'अल्टीमेटम' भेजा। सारा देश शारीरिक शक्ति के ऊपर आत्मिक शक्ति की विजय देखने के लिए उत्सुक हो उठा। परन्तु ईश्वर की इच्छा कुछ दूसरी ही थी।

चौरीचौरा-काण्ड

गोरखपुर ज़िले के चौरीचौरा नामक गाँव में पुलिस के अत्याचारों से लोग घबरा उठे। संयम और सहिष्णुता का बाँध टूट गया। उत्तेजित जनता ने थाने में आग लगा दी और पुलिस के कई आदमियों को पकड़ कर आग में झोंक दिया। यह दुर्घटना का समाचार महात्मा गाँधी को मिला, तो वे अत्यन्त मर्माहत हुए। उन दिनों बारदोली में कॉङ्ग्रेस कमिटी की बैठक हो रही थी। वहाँ निश्चय हुआ कि "बारदोली तथा अन्य स्थानों में जो सामूहिक सत्याग्रह आरम्भ होने वाला था, वह मुलतवी कर दिया जावे और तब तक मुलतवी रहे जब तक कि वातावरण इतना अहिंसात्मक न हो जावे, कि गोरखपुर की जनता के अत्याचार या बम्बई या मद्रास की गुण्डेबाज़ी पुनः न होने का विश्वास हो जाय।" इसके साथ ही असहयोग-सम्बन्धी सारे आन्दोलन भी बन्द कर दिए गए और विधायक कार्यक्रम निश्चित किया गया।

इसके बाद २४ और २५ फ़रवरी को दिल्ली में कॉङ्ग्रेस कमिटी की बैठक हुई। महात्मा जी ने लोगों को समझाया कि बारदोली के प्रस्ताव के कारण नागपुर कॉङ्ग्रेस का प्रस्ताव उलटा नहीं जाता। परन्तु जनता तो निराश हो चुकी थी। महात्मा गाँधी ने भी इस नैराश्य का अच्छी तरह अनुभव किया था। वे समयोपयोगी कार्यक्रम बनाने की चिन्ता में लगे। परन्तु नौकरशाही ने इसे महात्मा जी की कमज़ोरी समझा और वे गिरफ़्तार कर लिए गए।

महात्मा गाँधी का मुक़दमा

महात्मा गाँधी का विचार संसार के इतिहास की एक स्मरणीय घटना है। महामति एण्ड्रयूज़ ने इसे महात्मा ईसा के विचार से तुलना की थी। महात्मा जी के

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

राष्ट्रपति सहित सन् १९३० की कॉङ्ग्रेस-वर्किङ्ग-कमिटी के प्रतिभाशाली सदस्य

पहली पंक्ति (बाईं ओर से) श्री० महादेव देसाई, बाबू राजेन्द्रप्रसाद, सरदार शार्दूलसिंह, सरदार वल्लभभाई पटेल (भावी राष्ट्रपति), डॉक्टर अन्सारी, पं० जवाहरलाल नेहरू (राष्ट्रपति), पं० मदनमोहन मालवीय, मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद, श्री० जे० एम० सेन गुप्ता, श्रीमती केप्टन और कुमारी मनीबेन पटेल।

दूसरी पंक्ति (बाईं ओर से) चौधरी ख़लीक़ुज़्ज़माँ, श्री० मेलवी, डॉक्टर सय्यद महमूद, डॉक्टर पट्टाभी सीतारामैया, श्री० जैरामदास दौलतराम, डॉक्टर सत्यपाल, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, श्री० सुन्दरलाल, श्री० सी० राजगोपालाचारी, श्रीमती उर्मिला देवी और श्री० तसद्दुक़ अहमद ख़ाँ शेरवानी।

तीसरी पंक्ति (बाईं ओर से) पं० गोविन्द मालवीय, श्री० शङ्करलाल बैङ्कर, श्री० के० एम० मुन्शी, श्री० मथुरादास टीकम जी, पं० गोविन्द वल्लभ पन्त, लाला दुनीचन्द, श्री० आसफ़अली, श्री० रफ़ी अहमद क़िदवई, श्री० यूसुफ़ इमाम और मौलाना अब्दुल बारी।

बम्बई के कॉङ्ग्रेस के अस्पताल के उत्साही डॉक्टरों, नर्सों और वालण्टियरों का ग्रूप; जिन्होंने सत्याग्रह-संग्राम में देश की अपरिमित सेवा की है।

तपोभूमि से लौटने वाली देवियों का सादर स्वागत

अभिनन्दन कर रहा मौन या वाणी से सारा संसार ! पहनाते हैं तुमको हम अनुराग-भरे हृदयों का हार !!

कलकत्ते की श्रीमती शान्तिदास, एम० ए०, जिन्हें वर्तमान आन्दोलन में चार मास का दण्ड मिला था।

देहली की प्रभावशाली प्रचारिका—श्रीमती पार्वती देवी डिडवानिया, जिन्हें छः मास की सज़ा हुई थी।

कलकत्ते की श्रीमती अशोकलता दास, जिन्हें सत्याग्रह-आन्दोलन में चार मास की सज़ा हुई थी।

कलकत्ते की श्रीमती इन्दुनलिनी भट्ट, जिन्हें वर्तमान आन्दोलन के सम्बन्ध में कारा-वास-दण्ड दिया गया था।

बम्बई के सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री० के० नटराजन की लड़की—कुमारी नटराजन, जिन्हें वर्तमान आन्दोलन में दो मास की सज़ा दी गई थी।

उपनगर (बम्बई) की डिक्टेटर—श्रीमती कमला बेन, जिन्हें ६ मास का कारा-वास-दण्ड दिया गया था।

तपोभूमि से लौटने वाली देवियों का सादर स्वागत

अभिनन्दन कर रहा मौन या वाणी से सारा संसार ! पहनाते हैं तुमको हम अनुराग-भरे हृदयों का हार !!

राष्ट्रीय महिला-समिति (कलकत्ता) की प्रेज़िडेण्ट—सौभाग्यवती चमेली देवी गुप्ता जिन्हें पिकेटिङ्ग के अपराध में छः मास की सज़ा हुई थी।

१७ वर्षीय कुमारी मगन चूनी, जिन्हें वर्त्तमान आन्दोलन में एक मास की सज़ा दी गई थी।

श्रीमती चमेली देवी गुप्ता की १३ वर्षीय बालिका—कुमारी सरस्वती, जिन्हें पिकेटिङ्ग के अपराध में चार मास का दण्ड मिला था।

ब्यावर कॉङ्ग्रेस कमिटी की डिक्टेटर—श्रीमती सत्यभामा देवी, जो वर्त्तमान आन्दोलन में अपने बच्चे सहित जेल गई थीं।

तीरुपुर (मद्रास) 'युद्ध-समिति' का सर्व-प्रथम सदस्या—श्रीमती पद्मावती अशर, जिन्हें सत्याग्रह आन्दोलन में छः सप्ताह की सज़ा हुई थी।

तपोभूमि से लौटने वाली देवियों का सादर स्वागत

अभिनन्दन कर रहा मौन या वाणी से सारा संसार ! पहनाते हैं तुमको हम अनुराग-भरे हृदयों का हार !!

बगलकोट (करनाटक) स्त्री-सेविका-सङ्घ की नेत्री—कुमारी सीताबाई बलबल्ली, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुई हैं।
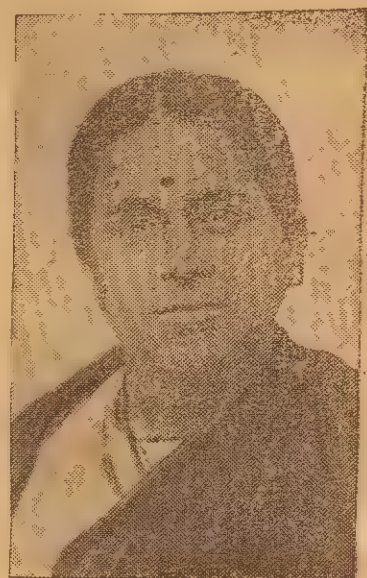
आगरे की सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्री—श्रीमती शान्तीदेवी, जो वर्तमान आन्दोलन में अपने बच्चे सहित जेल गई थीं।
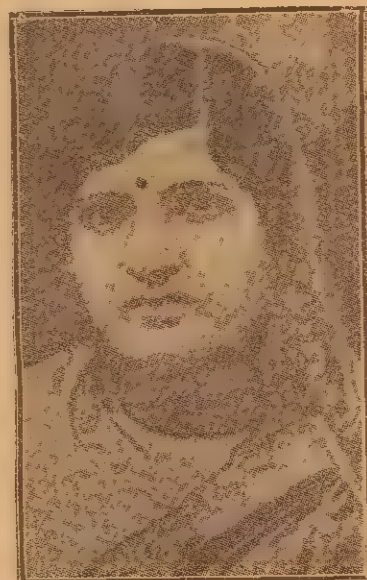
देहली के महिला-वालण्टियर-दल की प्रधान सञ्चालिका—श्रीमती कोहली, जो हाल ही में जेल से मुक्त हुई हैं।

कानपुर की सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कार्यकर्त्री—श्रीमती सरला देवी शर्मा, जिन्हें तीन मास की सज़ा दी गई थी।
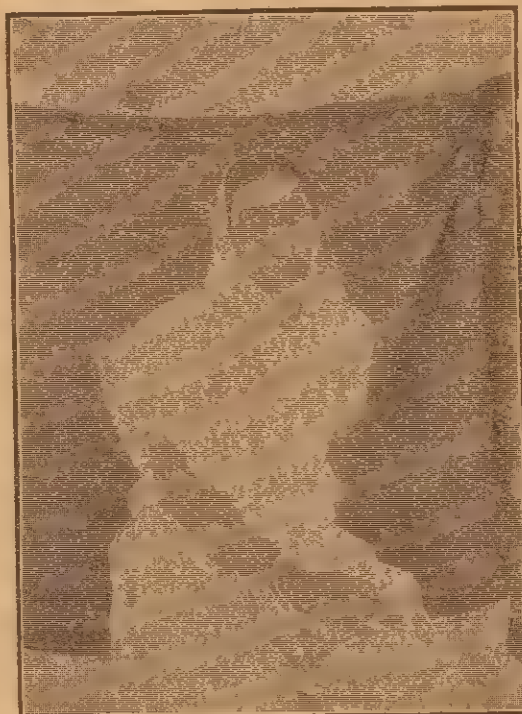
कैरा ज़िले की सर्व-प्रथम महिला-डिक्टेटर—श्रीमती भक्तिलक्ष्मी गोपालदास, जिन्हें वर्तमान-आन्दोलन में छः मास का कारावास-दण्ड दिया गया था।

नागपुर की सर्व-प्रथम मारवाड़ी-ब्राह्मण महिला—श्रीमती गङ्गाबाई चौबे, जो जङ्गल-क़ानून तोड़ने के अपराध में जेल गई थीं।

ऊपर राजद्रोह-प्रचार का अपराध लगाया था। आपने अदालत की कार्रवाई में कोई भाग नहीं लिया था। परन्तु एक बड़ा ही मार्मिक बयान दिया था, जिसकी कुछ पंक्तियों का भाव इस प्रकार था :—

"अपना बयान पढ़ने से पहले मैं यह बतला देना चाहता हूँ कि विद्वान एडवोकेट जनरल ने मेरे सम्बन्ध में जो मन्तव्य प्रकाशित किए हैं, मैं उनका सम्पूर्ण भाव से अनुमोदन करता हूँ। उन्होंने अपने भाषण में मेरे प्रति सम्पूर्ण सुविचार किया है। क्योंकि यह बिल्कुल सच है, कि वर्तमान शासन-पद्धति के प्रति असन्तोष फैलाने का मुझे नशा-सा हो गया है। मैं इस सत्य को अदालत से छिपाना नहीं चाहता। विद्वान एडवोकेट-जनरल का यह कथन सत्य है, कि 'यङ्ग-इण्डिया' से जब से मेरा सम्बन्ध है, तभी से मैंने इस असन्तोष का प्रचार आरम्भ नहीं किया है, वरन् उसके बहुत पहले से किया है। इस दुखदायी-कर्त्तव्य का पालन मैंने अपनी ज़िम्मेदारी को अच्छी तरह समझ कर किया है। बम्बई, मद्रास, चौरीचौरा, की दुर्घटनाओं के बारे में एडवोकेट जनरल ने मेरे ऊपर जो दोषारोपण किया है, मैं उन सबका समर्थन करता हूँ। मैंने रात-रात भर सोच कर देखा है, कि उन घटनाओं से अपना सम्बन्ध अस्वीकार करना मेरे लिए असम्भव है। एक शिक्षित और दायित्व-ज्ञान-सम्पन्न मनुष्य की हैसियत से, मुझे इन कार्यों का फलाफल जानना चाहिए था। एडवोकेट जनरल का यह कहना भी सच है, कि मैं जानता था कि मैं आग से खेल रहा हूँ। मैंने अपनी ज़िम्मेदारी समझ कर ही काम किया है और अगर मैं अभी छोड़ दिया जाऊँ, तो वही काम करूँगा। आज सवेरे मैंने सोच कर देखा है, कि इस समय जो बातें मैंने कही हैं, उन्हें अगर नहीं कहता तो मेरे कर्त्तव्य-पालन में त्रुटि रह जाती।

"मैं हिंसा से बचना चाहता हूँ, अहिंसा मेरा परम धर्म है। किन्तु मुझे अपने लिए रास्ता चुन लेना पड़ा है। जिस शासन-पद्धति ने हमारे देश की अपूर्णीय क्षति की है, उसे या तो मैं स्वीकार कर लूँ, या उसके विरुद्ध आवाज़ उठाने की सारी ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ले लूँ। मैं जानता हूँ, कि मैं तथा मेरे देशवासियों ने समय-समय पर पागलों की तरह काम किया है। मैं उसके लिए अत्यन्त दुखित हूँ, और जो कुछ मैंने किया है, उसके लिए कठोर से कठोर दण्ड की प्रार्थना करता हूँ। मैं दया की भिक्षा नहीं माँगता। मैं अपने को निर्दोष प्रमाणित करने की चेष्टा भी नहीं करता। क़ानून की दृष्टि में जो इच्छाकृत अपराध है, मैंने उसी को नागरिक का प्रथम कर्त्तव्य समझा है। उसके लिए मुझे जो कठोर से कठोर दण्ड दिया जा सके, मैं उसी के लिए प्रार्थी हूँ। विचारक महाशय! अगर आपकी यह धारणा हो, कि जिस शासन-तन्त्र या क़ानून की आप परिचालना में सहायता कर रहे हैं, वह देश के लिए मङ्गलकर है, तो आप मेरे सब से कठोर दण्ड का विधान करें या स्वयं पद-त्याग करें। आप मेरे मतानुसार काम करेंगे, इसकी मुझे आशा नहीं है।"

महात्मा जी का वक्तव्य समाप्त होने पर जज साहब ने अपना लम्बा फ़ैसला सुनाया और महात्मा जी को ६ वर्ष की सज़ा सुना दी गई।

* * *

कराची-यात्रा

[सहयोगी 'भारत' में पं० लक्ष्मीधर जी वाजपेयी]

एक वर्ष सत्याग्रह-आन्दोलन होने के बाद इस वर्ष कराची नगर में राष्ट्रीय महासभा होने जा रही है। इसलिए इस वर्ष की महासभा भारतवर्ष के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना होगी। इस लेख के निकलते-निकलते राष्ट्रीय यात्री कराची के लिए अपना सामान बाँधते रहेंगे। अतएव, ऐसी दशा में, उनके लिए यह लेख अवश्य ही उपयोगी और मनोरञ्जक होगा।

शहर की स्थिति

कराची नगर हिन्द महासागर के पश्चिमी कोने पर एक बड़े भारी मैदान में बसा है। प्रयाग से कराची को दिल्ली, भटिण्डा और सामसट्टा, इन जङ्क्शनों से जाना पड़ता है। किराया रेल का, थर्ड क्लास का, इस समय चौदह-पन्द्रह रुपए के बीच में है। भटिण्डे के आगे ही राजपूताने के उत्तरी भाग का रेगिस्तान शुरू हो जाता है। ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते जाइए, रेतीला मैदान बढ़ता जाता है। सामसट्टा जङ्क्शन है, भावलपुर रियासत के आगे। इसके आगे जब गाड़ी चलती है, तब कोसों का मैदान चारों तरफ़ नज़र आता है। कहीं वृक्षों का नाम-निशान नहीं है, हाँ, बीच-बीच में करील और थूहर की झाड़ियाँ मैदान भर में दिखलाई देती हैं, जिनके कारण मैदान के दृश्य की रमणीयता और भी बढ़ जाती है। हवा प्रायः तेज़ चला करती है, जिससे मैदान की रेत उड़-उड़ कर खिड़कियों से रेलगाड़ी के अन्दर आती और मुसाफ़िरों के कपड़ों और शरीर को धूलि-धूसरित कर देती है। खिड़कियाँ बन्द कर देने पर भी रेत से बचत बहुत कम होती है।

पाँच-छः वर्ष हुए, मैंने कराची की यात्रा की थी; और उसका सचित्र वर्णन २४ सितम्बर १९२५ की "माधुरी" पत्रिका में छपवाया था। उसी के आधार पर मैं पाठकों को यहाँ कुछ वृत्तान्त देने बैठा हूँ। प्रयाग से डाकगाड़ी के द्वारा कराची पहुँचने में अधिक से अधिक ४८ घण्टे लगते हैं। कराची का स्टेशन बहुत सुन्दर तो नहीं है, परन्तु चारों ओर कोसों का मैदान होने के कारण, लम्बा-चौड़ा ख़ूब है। रेलवे के लम्बे-चौड़े गोदाम हैं, जिनमें लाखों मन गल्ला, रूई, बिनौला, इत्यादि भारत की—विशेषकर पञ्जाब की अमूल्य सम्पत्ति विदेशों को भेजने के लिए उतारी जाती है।

शहर कोसों के रेतीले मैदान में ख़ूब खुला हुआ बसा है। सड़कें ख़ूब चौड़ी और बहुत ही साफ़ हैं। म्युनिसिपैलिटी ने सफ़ाई का बहुत ही अच्छा प्रबन्ध कर रक्खा है। अनेक घोड़ा-गाड़ियों और अन्य वाहनों के निरन्तर चलते रहने पर भी सड़कों पर कहीं गन्दगी दिखाई नहीं देती। मेहतर टोकरी और झाड़ू लिए घूमते ही रहते हैं। जहाँ ज़रा सी गन्दगी देखी, चट साफ़ कर दिया। परन्तु गलियों की दशा अच्छी नहीं है। गलियाँ यद्यपि पक्की और साफ़ बनी हैं; पर बस्ती के लोग सफ़ाई का ख़्याल नहीं रखते। ऊँचे-ऊँचे भवनों के ऊपर से स्त्रियाँ गन्दा पानी और कूड़ा-करकट दिन भर नीचे गलियों में फेंका करती हैं। वह गन्दगी कभी-कभी रास्ता चलने वालों के ऊपर भी गिर पड़ती है; और यदि कोई बिगड़े दिल का गुण्डा हुआ तो उन स्त्रियों को चलते-चलते दो-चार अभद्र शब्द भी सुना ही देता है! यह प्रथा बहुत ही बुरी है। परन्तु जब तक शहर के निवासी स्वयं इनका सुधार न करना चाहें, म्युनिसिपैलिटी बेचारी कर ही क्या सकती है।

कराची के भवन प्रायः बहुत ही साफ़-सुथरे और सुन्दर बने हुए हैं। विशेषता यह है कि सब प्रायः एक ही रङ्ग—ख़ाकी रङ्ग—से पुते हैं। इसलिए शहर की रमणीयता और भी बढ़ गई है। सवारियाँ यहाँ मोटर, ट्राम, घोड़ागाड़ी, ऊँटगाड़ी और गधागाड़ी हैं। ऊँटगाड़ी और गधागाड़ी केवल बोझा ढोने के काम आती है। बैलों का उपयोग प्रायः नहीं के बराबर है। ट्रामगाड़ी यहाँ पर पहले बिजली से नहीं, बल्कि मोटर से चलती थी। अब शायद बिजली से चलने लगी हो।

समुद्र के किनारे और भारत के पश्चिम कोण पर होने के कारण कराची का जल-वायु प्रायः समशीतोष्ण है। स्वास्थ्य के लिए यहाँ का जलवायु बहुत ही लाभदायक जान पड़ता है।

व्यापार-व्यवसाय

व्यापार-व्यवसाय यहाँ जो कुछ है, वह बन्दरगाह के कारण है। अपने देश की चीज़ों को बाहर भेजना और बाहर की चीज़ों को अपने देश में पहुँचाना ही यहाँ के व्यापारियों का धन्धा है। जहाज़ी स्टेशन अर्थात् बन्दरगाह और रेलवे-स्टेशन दोनों में से किसी के गोदामों को देखिए, माल से पटे पड़े हैं। भारत से गल्ला, रूई, बिनौला अन्य तेलहन-दाना, तथा कच्चा माल रवाना किया जा रहा है, और विदेश से आने वाला कपड़ा, तथा नाना प्रकार की विलासिता की चीज़ें जहाज़ों से उतार कर, भारत के शहरों में भेजने के लिए रेलगाड़ी पर लादी जा रही हैं। यहाँ के अधिकांश व्यवसायी और कुछ नहीं, सिर्फ़ विदेशी कम्पनियों के दलाल या एजेण्ट हैं। शहर के बाज़ार विदेशी माल से सदैव पटे रहते हैं। कराची का अधिकांश व्यापार पञ्जाब, सिन्ध और दिल्ली प्रान्त के साथ होता है।

दर्शनीय स्थान

मनोरा

यह स्थान बन्दरगाह से लगभग डेढ़ मील दूर समुद्र के बीच में है। यह एक पहाड़ी है, जिसको घेर कर सरकार ने समुद्री क़िला बना लिया है। इसमें एक दीप-

आदर्श चित्रावली

THE IDEAL PICTURE ALBUM

The Hon'ble Justice Sir B. J. Dalal of the Allahabad High Court, says :

Dear Mr Saigal,

Your album is a production of great taste & beauty & has come to me as a pleasant surprise as to what a press in Allahabad can turn out. Moon worshipped & Visit to the Temple are particularly charming pictures, life like & full of details. I congratulate you on your remarkable enterprise & thank you for a present which has given & will continue to give me a great deal of pleasure.

Yours sincerely
B J Dalal.

The Hon'ble Mr. Justice Lal Gopal Mukerjea of the Allahabad High Court :

. . . The Pictures are indeed very good and indicate, the high art of printing them in several colours . . . I am sure the Album ADARSH CHITTRAWALI will be very much appreciated by the public.

W. E. J. Dobbs, Esq., I. C. S., District Magistrate and Collector, Allahabad :

I am glad that Allahabad can turn out such a pleasing specimen of the printers art.

Sam Higginbottom, Esq., Principal Allahabad Agricultural Institute :

. . . I think it is beautifully done. Most of the guests who come into the Drawing room pick it up and look at it with interest.

A. H. Mackenzie, Esq., Director of Public Instruction, U. P. :

. . . I congratulate your press on the get-up of the Album which reveals a high standard of fine Art Printing.

The Indian Daily Mail :

. . The Album ADARSH CHITTRAWALI is probably the one of its kind in Hindi—the chief features of which are excellent production, very beautiful letter-press in many colours, and the appropriate piece of poem which accompanies each picture.

The Hon'ble Sir Grimwood Mears, Chief Justice Allahabad High Court :

. . . I am very glad to see that it is so well spoken of in the Foreign Press.

मूल्य केवल ४) रु०
डाक-व्यय अतिरिक्त

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Price Rs. 4/- Nett.
Postage extra.

स्तम्भ, अर्थात् "लाइट-हाउस" भी है। इससे रात को 'सर्च लाइट' डाल कर जहाज़ों के आने-जाने का पता लगा सकते हैं। क़िले में विशेषकर फ़ौजी सामान रहता है। इसको देखने के लिए यात्री लोग डोंगी पर जाते हैं। किराए की सुन्दर सजी हुई डोंगियाँ बन्दरगाह के पास समुद्र में रहती हैं।

बन्दरगाह

कराची का बन्दरगाह शहर से लगभग तीन मील पर है। इसको वहाँ पर "केमारी बन्दर" कहते हैं। शहर से बन्दरगाह को जो लम्बी सड़क जाती है, उसका नाम भी "बन्दर रोड" है। बन्दरगाह को जाते समय बीच में समुद्र का एक बहुत बड़ा लम्बा-चौड़ा सोता पड़ता है। इसके ऊपर दो सुन्दर पुल बने हुए हैं। इस डबल पुल को "हार्डिंज ब्रिज" या "नेटिव जट्टी पुल" कहते हैं। बहुत ही विशाल और भव्य पुल है। पुल के एक तरफ़ शहर के स्त्री-पुरुषों के नहाने के लिए अलग-अलग घाट बने हुए हैं। स्त्रियों का घाट चारों ओर दीवाल से घिरा है। एक पुल घोड़ागाड़ी, ट्राम और मनुष्यों के आने-जाने के लिए है, और दूसरा रेलगाड़ी के लिए। बन्दरगाह पर पहुँचने पर सामने ही "मनोरे" इत्यादि को जाने के लिए सुन्दर सजी हुई डोंगियाँ दिखलाई देती हैं। इसके एक ओर हट कर जहाज़ों का बड़ा भारी अड्डा है। जिस दिन हम बन्दरगाह देखने गए थे, उस दिन "सीटी ऑफ़ पेरिस" और "शिमला" नामक सुन्दर वृहद्काय जहाज़ भी इसी बन्दर पर लगे हुए थे। इनमें से एक जहाज़ मुसाफ़िरों को लेकर जाने को तैयार था। इसके सब से निचले दरजे, यानी तीसरे दर्जे, में बहुत से पञ्जाबी और सिक्ख इत्यादि जानवरों की तरह भरे हुए थे। सब अपने दर्जे के बड़े-बड़े छेदों से मुँह निकाल कर खाने-पीने का सौदा रास्ते के लिए ख़रीद रहे थे। मुझे उनको देख कर बड़ा कौतूहल हुआ।

हवा-बन्दर या क्लिफ़्टन

यह स्थान कराची शहर से कोई ७८ मील पर समुद्र के किनारे है। यहाँ एक बहुत ही लम्बा-चौड़ा प्लेटफ़ॉर्म है। प्लेटफ़ॉर्म में एक ओर सुन्दर बेञ्चें पड़ी रहती हैं। दोनों तरफ़ और बीच में सुन्दर पत्थर की विशाल बारहदरियाँ बनी हुई हैं। बीच से एक लम्बा सा पुल नीचे समुद्र की ओर मैदान में चला जाता है। हवा खाने के लिए यह स्थान बहुत ही सुन्दर, रमणीय और भव्य है। चारों ओर कोसों तक मैदान और सामने समुद्र का मनोहर दृश्य है। हवा यों ही कराची में, मैदानों के कारण, बड़ी तेज़ रहती है—फिर "हवा-बन्दर" का कहना ही क्या है! यहाँ समुद्र-स्नान का बड़ा आनन्द है। इस स्थान को श्री० जहाँगीर कोठारी नाम के एक पारसी सज्जन ने तीन लाख रुपए लगा कर बनवाया है। परन्तु जैसे बम्बई में "चौपाटी" की सैर का आनन्द सभी ग़रीब और अमीर ले सकते हैं, वैसे यहाँ नहीं। क्योंकि यह "हवा-बन्दर" शहर की बस्ती से बहुत दूर पड़ता है। मोटर और घोड़ागाड़ी वाले ही सहज में पहुँच सकते हैं। इस स्थान के पास समुद्र के किनारे शिवजी का एक मन्दिर भी है, जहाँ शिवरात्रि के दिन बड़ा भारी मेला लगता है।

सरकारी बाग़ या चिड़ियाघर

यह स्थान शहर से कोई तीन मील के फ़ासले पर है। बाग़ में नाना प्रकार के स्थल-चर, जलचर और नभ-चर जीव-जन्तु और पशु-पक्षी एकत्र करके यथास्थान पाले गए हैं। बीच में एक सुन्दर कृत्रिम तालाब बना हुआ है। उसके ऊपर सैर करने के लिए एक ऊँचा सा "हैङ्गिङ्ग ब्रिज" अर्थात् झूलता हुआ पुल भी बहुत सुन्दर बना हुआ है। इस तालाब में भाँति-भाँति के जल-पक्षी और मछलियाँ इत्यादि हैं। इनके सिवाय जगह-जगह पानी के कुण्डों में विचित्र-विचित्र अन्य जल-जन्तु भी हैं। इस बाग़ में कई प्रकार के शेर, चीते, भेड़िए, हिरन, बन्दर, दरियाई घोड़े, दरियाई हाथी और जङ्गली सुअर इत्यादि मौजूद हैं। चित्र-विचित्र रङ्ग के पक्षी भी जगह-जगह किलोलें कर रहे हैं। मैंने शेर के साथ एक बिल्ली को भी खेलते हुए यहीं पर देखा। बिल्ली शेर के मुँह से माँस का टुकड़ा खींच कर खा रही थी। दोनों को प्रेम से खेलते हुए देख कर पहले तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। फिर अपने साथी मित्रों से मैंने कौतूहलपूर्वक कहा—बिल्ली शेर की मौसी कहलाती है। यह मौसी का प्रेम है!

मग्घापीर

यह स्थान कराची से बहुत दूर, कोई सोलह मील पर है। यहाँ घोड़ागाड़ी, ताँगा तथा मोटर जाती है। पूरा एक दिन का सफ़र है। यहाँ की एक पहाड़ी पर "मग्घे पीर" की एक पुरानी दरगाह है। नीचे एक सुन्दर तालाब है, जिसमें बड़ी-बड़ी सुन्दर मछलियाँ और मगरमच्छ हैं। यहाँ से कुछ दूर पर गन्धक के गरम जल के सोते हैं, जिनमें स्नान करने से चर्म-रोग दूर हो जाते हैं। यह स्थान बहुत ही स्वास्थ्यप्रद समझा जाता है। यहाँ कुष्ठ रोग के बहुत से रोगी आकर निवास करते हैं। कहते हैं, इस जलवायु और स्नान से उनको बहुत लाभ होता है।

रहन-सहन इत्यादि

कराची शहर सिन्ध प्रान्त के अन्तर्गत है। इसलिए यहाँ की मुख्य भाषा सिन्धी है, जो अरबी के समान टेढ़े और उलटे अक्षरों में लिखी और छापी जाती है। कुछ उत्साही मारवाड़ी और सिन्धी भाई राष्ट्रीय भाषा हिन्दी के प्रचार की ओर ध्यान दे रहे हैं। मारवाड़ी विद्यालय, शिकारपुरी पञ्चायती स्कूल और पुस्तकालय, प्रियतम धर्म-सभा, आर्य-समाज, सिन्धु-संस्कृत उत्तेजक मण्डल, न्यू हाई स्कूल, सरस्वती मन्दिर पाठशाला, इत्यादि संस्थाओं के द्वारा हिन्दी-प्रचार का कार्य हो रहा है।

हिन्दू सभ्यता का प्रभाव यहाँ बहुत कम देखा जाता है। लोगों का रहन-सहन विलासितापूर्ण है। बड़े-बड़े कुलीन हिन्दुओं में भी मांस-भक्षण का प्रचार है। यहाँ की सब्ज़ी-मण्डी के पीछे की ओर आधे से अधिक हिस्से में मांस की ही दूकानें हैं। मछलियाँ तो जगह-जगह बिकती हैं। सिन्धी, मारवाड़ी, कच्छी, गुजराती, पञ्जाबी, पारसी इत्यादि जाति के लोग विशेष दिखाई देते हैं। स्त्रियों में पर्दे का रिवाज़ यहाँ बिल्कुल नहीं है। पोशाक सुन्दर पहनने का यहाँ बहुत शौक़ है। हिन्दू-धर्म के मन्दिर इत्यादि बहुत ही कम दिखाई देते हैं! आग़ाख़ानी मज़हब का यहाँ बहुत प्रचार हो रहा है। हज़ारों हिन्दू स्त्री और पुरुष इनके फेर में पड़ कर मुसलमान बन गए हैं, जिनको वहाँ "ख़ोजा" कहते हैं। आग़ाख़ाँ का एक बड़ा भारी मठ है, जिसमें उनकी ओर से एक मुसलमान गुरु महन्त रहता है। ईसाई-मिशन की तरह इनका ख़ूब प्रचार हो रहा है। लाखों रुपया हिन्दुओं ही से लेकर उन्हीं को मुसलमान बनाने में ख़र्च किया जाता है। आग़ाख़ानी गुरुओं ने कुछ ऐसे आकर्षण रक्खे हैं कि जिनमें भोले और ग़रीब ही नहीं, बल्कि बड़े-बड़े अमीर भी फँस जाते हैं। यहाँ हिन्दू-धर्म और सभ्यता के प्रचार की बड़ी आवश्यकता है। इसके बिना सच्चे राष्ट्रीय भाव भी मज़बूती से क़ायम नहीं रह सकते। इसको मैंने कराची में ख़ूब अनुभव किया है।

* * *

यह पुस्तक 'कमला' नामक एक शिक्षित मद्रासी महिला के द्वारा अपने पति के पास भेजे हुए पत्रों का हिन्दी-अनुवाद है। इन गम्भीर, विद्वत्तापूर्ण एवं अमूल्य पत्रों का मराठी, बङ्गला तथा कई अन्य भारतीय भाषाओं में बहुत पहले अनुवाद हो चुका है। पर आज तक हिन्दी-संसार को इन पत्रों के पढ़ने का सुअवसर नहीं मिला था।

इन पत्रों में कुछ को छोड़, प्रायः सभी पत्र सामाजिक प्रथाओं एवं साधारण घरेलू चर्चाओं से परिपूर्ण हैं। उन पर साधारण चर्चाओं में भी जिस मार्मिक ढङ्ग से रमणी-हृदय का अनन्त प्रणय, उसकी विश्व-व्यापी महानता, उसका उज्ज्वल पति-भाव और प्रणय-पथ में उसकी अक्षय साधना की पुनीत प्रतिमा चित्रित की गई है, उसे पढ़ते ही आँखें भर जाती हैं और हृदय-वीणा के अत्यन्त कोमल तार एक अनियन्त्रित गति से बज उठते हैं। अनुवाद बहुत सुन्दर किया गया है। मूल्य केवल ३) स्थायी ग्राहकों के लिए २।) मात्र !

आज हमारे अभागे देश में शिशुओं की मृत्यु-संख्या अपनी चरम-सीमा तक पहुँच चुकी है। अन्य कारणों में माताओं की अनभिज्ञता, शिक्षा की कमी तथा शिशु-पालन सम्बन्धी साहित्य का अभाव प्रमुख कारण हैं।

प्रस्तुत पुस्तक भारतीय गृहों की एकमात्र मङ्गल-कामना से प्रेरित होकर, सैकड़ों अङ्गरेज़ी, हिन्दी, बङ्गला, उर्दू, मराठी, गुजराती तथा फ्रेञ्च पुस्तकों को पढ़ कर लिखी गई है।

गर्भावस्था से लेकर ९-१० वर्ष के बालक-बालिकाओं की देख-भाल किस तरह करनी चाहिए, उन्हें बीमारियों से किस प्रकार बचाया जा सकता है, बिना कष्ट हुए दाँत किस प्रकार निकल सकते हैं, रोग होने पर क्या और किस प्रकार इलाज और शुश्रूषा करनी चाहिए, बालकों को कैसे वस्त्र पहनाने चाहिएँ, उन्हें कैसा, कितना और कब आहार देना चाहिए, दूध किस प्रकार पिलाना चाहिए, आदि-आदि प्रत्येक आवश्यक बातों पर बहुत उत्तमता और सरल बोल-चाल की भाषा में प्रकाश डाला गया है। मूल्य २); स्था० ग्रा० से १॥) मात्र !

छप रही है !

प्रकाशित हो रही है !!

[लेखक—अध्यापक ज़हूरबख़्श जी 'हिन्दी-कोविद']

'स्फुलिङ्ग' विद्याविनोद-ग्रन्थमाला की एक नवीन पुस्तक है। आप यह जानने के लिए उत्कण्ठित होंगे, कि इस नवीन वस्तु में है क्या ? न पूछिए कि इसमें क्या है ! इसमें उन अङ्गारों का ज़ख़ीरा है, जो एक अनन्त काल से समाज की छाती पर धधक रहे हैं, और जिनकी सर्व-संहारकारी शक्ति ने समाज के मन-प्राण निर्जीव-प्राय कर डाले हैं। 'स्फुलिङ्ग' में वे चित्र हैं, जिन्हें हम नित्य देखते हुए भी नहीं देखते और जो हमारे सामाजिक अत्याचारों का नग्न प्रदर्शन कराते हैं। 'स्फुलिङ्ग' देख कर समाज के अत्याचार आपके नेत्रों के सामने सिनेमा के फ़िल्म के समान घूमने लगेंगे। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि 'स्फुलिङ्ग' के दृश्य देख कर आपकी आत्मा काँप उठेगी, और हृदय ? वह तो एक-बारगी चीत्कार कर मूर्च्छित हो जायगा। 'स्फुलिङ्ग' वह वैतालिक रागिनी है, जो आपके सदियों के सोए हुए मन-प्राणों पर थपकियाँ देगी। 'स्फुलिङ्ग' में प्रकाश की वह चमक है, जो आपके नेत्रों में भरे हुए घनीभूत अन्धकार को एकदम विनष्ट कर देगी।

'स्फुलिङ्ग' में कुशल-लेखक ने समाज में नित्य घटने वाली घटनाएँ कुछ ऐसे अनोखे ढङ्ग से अङ्कित की हैं, कि वे सजीव हो उठी हैं। उन्हें पढ़ने से ऐसा बोध होता है, जैसे हमारे नेत्रों के सामने दीनों पर पाशविक अत्याचार हो रहा हो तथा हमारे कानों में उनकी करुण चीत्कार-ध्वनि गूँज रही हो। भाषा में ओज, माधुर्य और करुणा की त्रिवेणी लहरा रही है। हमारा अनुरोध है, कि यदि आपके हृदय में अपने समाज तथा देश के प्रति कुछ भी कल्याण-कामना शेष है, तो आज ही 'स्फुलिङ्ग' की एक प्रति ख़रीद लीजिए। पुस्तक छप रही है। शीघ्र ही ऑर्डर रजिस्टर करा लीजिए !

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक इलाहाबाद

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

बड़े घर की बात है, कहते डर लगता है। इसलिए मेहरबानी करके इसे अपने ही तक रहने दीजिएगा। सुनते हैं,—सच झूठ की राम जानें—आज श्रीमती नौकरशाही और "भविष्य" के सम्पादक श्री० सहगल जी में "मन तू शुदम, तू मन शुदी, मन तन शुदम तू जाँ शुदी; ता कस न गोयद बाद अज़ीं मन दीगरम तू दीगरी।"* का मधुर व्यापार चल रहा है। एक क्षण की जुदाई भी नाक़ाबिले-बर्दाश्त हो रही है। वास्तव में जब दिल से दिल मिल जाता है, तो ऐसा ही होता है।

❀

नैनी जेल के एक दर्जन दिनों के वे मज़े अभी भूलने न पाए थे, कि क़ासिद इलाहाबाद के मैजिस्ट्रेट साहब का नामद्-नामी लेकर पहुँचा;—'जल्दी मिलिए, बहुत ज़रूरी काम है; 'भविष्य' के किसी लेख के बारे में बात-चीत करनी है।' हमें डर है, कि कहीं यह उल्फ़त का बाज़ार कुछ दिन यों ही गरम रह गया, तो एक दिन श्रीमती जी 'कुलकानि' गँवा कर दादा 'भविष्य' की गलियों में धूनी रमा कर बैठ जायँगी और खञ्जड़ी बजा-कर अलापने लगेंगी—

"अपने पिया की मैं जोगन बनूँगी।"

❀

उधर लँगोटी बाबा को नई दिल्ली के रङ्गमहल का ऐसा चसका लगा है, कि लकुटिया के सहारे लम्बे डेग डालने के लिए हमेशा तैयार ही बैठे रहते हैं। वहाँ तक राज़ो-नमाज़ की बातें होती रहती हैं। यहाँ तक कि जेलख़ाने के कटोरे में 'मधुकरी' भी वहीं पहुँच जाती है। बताइए, इसे बसन्त का असर कहें या कलिकाल की ख़ूबी?

❀

अरे भई, समझौता हो गया, आए दिन की मुसीबत से जान बची। मुफ़्तख़ोरों के लिए दोनों वक़्त रोटी-दाल का इन्तज़ाम करने से छुट्टी मिली। बस, श्रीमती ने निश्चिन्त होकर कानों में तेल डाल लिया है, अब न श्री० सुभाषचन्द्र बोस की पुकार सुनती हैं, और न श्री० राजेन्द्रप्रसाद जी की चिल्लाहट पर कान देती हैं। मगर जनाबे आली, यह प्रथम चुम्बन में गाल-कटौअल हिज़-होलीनेस को ज़रा भी अच्छी नहीं लगती। यह तो वही कहावत हुई कि 'शोरबा' चट कर जाना और बोटी से परहेज़!

❀

इसलिए अपने राम की सीधी-सादी सम्मति है, कि श्रीमती एक बार अपने राजनीतिक 'क़फ़स' का दरवाज़ा खोल कर भरपेट शान्ति के मज़े लें या फिर वही पहले वाली 'रफ़्तार-बेढङ्गी' आरम्भ कर दें। यह 'नीमे दरूँ नीमे बरूँ' वाली नीति अच्छी नहीं। अन्यथा यह समझौता अन्त में 'हँसब ठठाई, फुलाउब गालू' की तरह हास्यास्पद ही सिद्ध होगा।

❀

भई, यह बूढ़ा भारत भी, माशाअल्लाह, तक़दीर का साँढ़ ही मालूम होता है। इसके फटे दामन में एक न एक चहल-पहल मची ही रहती है। गाँधी-इर्विन समझौते की कृपा से 'लाठी-खोपड़ी-सम्मेलन' का क्षणिक अवसान हुआ तो चट 'दाढ़ी-चोटी-सम्मेलन' आरम्भ हो गया! एक चहल-पहल गई, तो दूसरी आरम्भ हुई। मानो—

आके सज्जादनशीं क़ैस हुआ मेरे बाद,
रही न सहरा में ख़ाली कोई जा मेरे बाद।

❀

'मरज़ बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की' का मज़मून है। लीडराने-मुल्क मेल-मिलाप के लिए सिर-मग़ज़न कर रहे हैं, मगर सनीचर देव के सामने एक नहीं चलती, जैसे अल्लाह मियाँ की नहीं चलती, उस मरदूद शैतान के सामने। इसलिए क्यों न एक दफ़े दाढ़ी-दल के रुस्तमों और चोटी-पार्टी के महावीरों को दिल का ग़ुबार निकाल लेने दिया जाए। आख़िर, बेचारों के दिलों में जो जोशे-जवानी छिपा है, वह काँटे रूँधने से थोड़े ही रुकेगा। मछली जब तक पर्वत से नहीं टकरायगी, तब तक उसे आटे-दाल का भाव कैसे मालूम होगा?

❀

मासिवा इसके, जिन तपस्वियों ने युगों की कड़ी मेहनत के बाद यह साम्प्रदायिकता की मज़बूत बुनियाद क़ायम की है, उन्होंने अपनी दाढ़ी के बाल कुछ धूप में सुखा कर सफ़ेद थोड़े ही किए हैं। लड़ने-भिड़ने की 'प्रेक्टिस' क़ायम रहेगी, तभी तो 'इक़बाली मुस्लिम भारत' का स्वप्न सार्थक होगा, या वह कोई कबाब-रोटी का लुक़मा है, कि ज़बान पर रक्खा और चटनी के सहारे नीचे उतार दिया।

❀

और फिर, इन पवित्र कामों से महाप्रभु भी तो प्रसन्न रहते हैं और इस दृष्टि से 'आम का आम और गुठलियों का दाम' भी खड़ा हो जाता है। इहलोक और परलोक, दोनों की राह एक साथ ही साफ़ हो जाती है। इसीलिए १,००८ श्रीजगद्गुरु भी चाहते हैं, कि यह चहल-पहल ता-क़यामत क़ायम रह जाए। आमीन! आमीन!!

❀

इसलिए 'भविष्य'-सम्पादक जी से प्रार्थना है, एक दिन अपने इलाहाबाद में भी दाढ़ी-चोटी-मिलन महोत्सव करा दें। क्योंकि वह तीर्थराज है, उसका काशी से पीछे पड़ जाना अतीव लज्जा की बात है। इसके सिवा चचा-चर्चिल की चिन्ता भी दूर होनी चाहिए। आख़िर बेचारे कब तक 'हाय भारत! हाय गुलबदन!' और हाय रे वह सबूट चरणों की ठोकरों से तिल्लियों का फूटना!!!' बेचारे याद करते होंगे तो होंठ चाट कर रह जाते होंगे।

❀

यह सुन कर दाढ़ी-चोटी महा-मिलन के प्रेमी मात्र को प्रसन्नता होगी, कि बाबा ख़लीलदास साहब आजकल काशी में ही टिके हैं और गत दङ्गे का सारा दोष हिन्दुओं के मत्थे मढ़ कर चिर-शान्ति की व्यवस्था में लग गए हैं। अल्लाह आपकी साधु प्रचेष्टा को सफलता दे।

❀

श्रीजगद्गुरु को यह भी ख़बर लगी है, कि अबकी काँग्रेस में हिन्दू-मुस्लिम मेल के लिए बड़ी-बड़ी चेष्टाएँ हो रही हैं। परन्तु चहल-पहल-पन्थियों को घबराना नहीं चाहिए, क्योंकि शुभकार्य में विघ्न तो होते ही रहते हैं और फिर उस काँग्रेसी-मेल की वक़अत ही क्या है। जहाँ पूँछ पकड़ कर ज़रा सी मरोड़ दी, कि बेड़ा पार! एक झटका लगा कि पगहा अलग और खूँटा अलग!

❀

काशी के बाद आगरा और मिर्ज़ापुर के हिन्दू-मुस्लिम बहादुरों को 'रुस्तमे-हिन्द' और 'कलियुगी भीमसेन' की पदवियाँ मिलनी चाहिएँ। क्योंकि इन बेचारों ने जान पर खेल कर अपनी वीरता और बहादुरी की नाक रख ली है। अब मजाल नहीं किसी की, जो इन्हें 'अ-वीर' कह सके। मगर कानपुर वाले तो एकदम फिसड्डी निकले! खोपड़ी-मरम्मत का हाथ में आया हुआ सुवर्ण-सुयोग कमबख़्तों ने खो दिया। समझ में नहीं आता, कि ये कायर दस भले आदमियों में मुँह कैसे दिखाएँगे!

❀

लोग कहा करते हैं कि, गुण ना हिरानो गुण-ग्राहक हिरानो है!' मगर माशा अल्लाह, बम्बई कॉरपोरेशन ने हमारे ऑर्डिनेन्साचार्य श्रीमान लॉर्ड इर्विन को मानपत्र देने का प्रस्ताव पास करके इस अत्यन्त पुरानी और 'ज़ङ्ग आलूदा' उक्ति को दो कौड़ी का सिद्ध कर दिया है और साथ ही अपनी गुण-ग्राहकता का भी यथेष्ट परिचय प्रदान किया है। फलतः गुण अगर हो तो अपनी लँगोटी बेच कर भी उसके 'ग्राहक' होने वाले यहाँ मौजूद हैं।

❀

फिर बम्बई कॉरपोरेशन ने तो अपनी गुण-ग्राहकता का ही परिचय नहीं दिया है; बल्कि इस पवित्र कार्य द्वारा अपना आक़बत भी सुधार डाला है। अब अगर उसके वंशधर नास्तिक निकल जावें और मरने पर उसे पिण्डा-पानी न दें, तो भी कोई चिन्ता नहीं। क्योंकि उसका यह पुण्य-कार्य ही उसे तथा उसकी सात पुश्त को तारने के लिए काफ़ी है।

❀

बम्बई कॉरपोरेशन की तरह श्रीजगद्गुरु भी इर्विन शासन-काल के 'एडमायरर' हैं। क्योंकि जितनी काली खोपड़ियों की मरम्मत इस शासन-काल में हुई है, उतनी भारत के किसी नवाबी ज़माने में भी न हुई होगी। यही नहीं जनाब, कितने ही भाग्यशाली तो इस शासन-काल की बदौलत स्वर्ग के मज़े लूट रहे हैं, कितनी ही स्त्रियाँ सौभाग्य-सिन्दूर के विषम भार से बच गई हैं! फलतः लाट इर्विन को मान-पत्र देने का इरादा करके बम्बई कॉरपोरेशन ने डङ्के की चोट सिद्ध कर दिया है कि—'क़द्र गौहर शह बेदानद या बेदानद जौहरी।'

❀

ऑर्डिनेन्स प्रसव करने में तो 'इर्विनी रामराज्य' ने रहमत चाचा की काबुली बकरी और मदारू मियाँ की मुर्ग़ी को भी मात कर दिया था! भारत की तक़दीर खोटी है, कि आप अपनी कृपा-छाया समेटने वाले हैं, वरना कुछ दिन में 'ऑर्डिनेन्सी चूज़ों' के मारे भारत-

* मैं तू हो जाऊँ और तू मैं होजा; मैं शरीर होजाऊँ और तू प्राण होजा। ताकि इसके बाद कोई कह न सके कि मैं दूसरा हूँ और तू दूसरी है।

—मीर ख़ुसरो

मधुबन

हिन्दी-संसार 'कुमार' महोदय के नाम से पूर्ण परिचित है। इस छोटी-सी पुस्तक में कुमार जी की वे कविताएँ संग्रहीत हैं, जिन पर हिन्दी-संसार को गर्व हो सकता है। आप यदि कल्पना का वास्तविक सौन्दर्य अनुभव करना चाहते हैं—यदि भावों की सुकुमार छवि और रचना का सङ्गीतमय प्रवाह देखना चाहते हैं, तो इस मधुबन में अवश्य विहार कीजिए। कुमार जी ने अभी तक सैकड़ों कविताएँ लिखी हैं, पर इस मधुबन में उनकी केवल उन २६ चुनी हुई रचनाओं ही का समावेश है, जो उनकी उत्कृष्ट काव्य-कला का परिचय देती हैं।

हम केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि हिन्दी-कविता में यह पुस्तक एक आदर की वस्तु है। एक बार हाथ में लेते ही आप बिना समाप्त किए नहीं छोड़ेंगे। पुस्तक बहुत ही सुन्दर दो रङ्गों में छप रही है। मूल्य केवल १)

स्मृति-कुञ्ज

नायक और नायिका के पत्रों के रूप में यह एक दुःखान्त कहानी है। हृदय के अन्तःप्रदेश में प्रणय का उद्भव, उसका विकास और उसकी अविरत आराधना की अनन्त तथा अविच्छिन्न साधना में मनुष्य कहाँ तक अपने जीवन के सारे सुखों की आहुति कर सकता है—ये बातें इस पुस्तक में अत्यन्त रोचक और चित्ताकर्षक रूप से वर्णन की गई हैं। आशा-निराशा, सुख-दुख, साधन-उत्कर्ष एवं उच्चतम आराधना का सात्विक चित्र पुस्तक पढ़ते ही कल्पना की सजीव प्रतिमा में चारों ओर दीख पड़ने लगता है। मू० ३)

हिन्दू-त्योहारों का इतिहास

हिन्दू-त्योहार इतने महत्वपूर्ण होते हुए भी, लोग इनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानते। स्त्रियाँ, जो विशेष रूप से इन्हें मनाती हैं, वे भी अपने त्योहारों की वास्तविक उत्पत्ति से बिलकुल अनभिज्ञ हैं। कारण यही है कि हिन्दी-संसार में अब तक एक भी ऐसी पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। वर्तमान पुस्तक के सुयोग्य लेखक ने छः मास कठिन परिश्रम करने के बाद यह पुस्तक तैयार कर पाई है। शास्त्र-पुराणों की खोज कर त्योहारों की उत्पत्ति लिखी गई है। इन त्योहारों के सम्बन्ध में जो कथाएँ प्रसिद्ध हैं, वे वास्तव में बड़ी रोचक हैं। ऐसी कथाओं का भी सविस्तार वर्णन किया गया है। प्रत्येक त्योहार के सम्बन्ध में जितना अधिक खोज से लिखा जा सकता था, लिखा गया है। पुस्तक के दो संस्करण हाथों हाथ बिक चुके हैं। सजिल्द एवं तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर से मण्डित पुस्तक का मूल्य केवल १।।); स्थायी ग्राहकों से १=)

बाल-रोग-विज्ञानम्

इस महत्वपूर्ण पुस्तक के लेखक पाठकों के सुपरिचित, 'विष-विज्ञान', 'उपयोगी चिकित्सा', 'स्त्री-रोग-विज्ञानम्' आदि-आदि अनेक पुस्तकों के रचयिता, स्वर्ण-पदक-प्राप्त प्रोफ़ेसर श्री० धर्मानन्द जी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य हैं, अतएव पुस्तक की उपयोगिता का अनुमान सहज ही में लगाया जा सकता है। आज भारतीय स्त्रियों में शिशु-पालन सम्बन्धी समुचित ज्ञान न होने के कारण सैकड़ों, हज़ारों और लाखों नहीं, किन्तु करोड़ों बच्चे प्रति वर्ष अकाल-मृत्यु के कलेवर हो रहे हैं। इसमें बालक-बालिका सम्बन्धी प्रत्येक रोग, उनका उपचार तथा ऐसी सहज घरेलू दवाइयाँ बतलाई गई हैं, जो बहुत कम ख़र्च में प्राप्त हो सकती हैं। इसे एक बार पढ़ लेने से प्रत्येक माता को उसके समस्त कर्त्तव्य का ज्ञान सहज ही में हो सकता है। और वे शिशु सम्बन्धी प्रत्येक रोग को समझ कर उसका उपचार कर सकती हैं। मूल्य लागत मात्र २।।) रु०

अनाथ

इस पुस्तक में हिन्दुओं की नालायक़ी, मुसलमान गुण्डों की शरारतें और ईसाइयों के हथकण्डों की दिलचस्प कहानी का वर्णन किया गया है। किस प्रकार मुसलमान और ईसाई अनाथ बालकों को लुका-छिपा तथा बहका कर अपने मिशन की संख्या बढ़ाते हैं, अनाथालय में अनाथ बालकों पर कैसे अत्याचार किए जाते हैं, इसका पूरा दृश्य इस पुस्तक में दिखाई देगा। भाषा अत्यन्त सरल, मधुर तथा मुहावरेदार है। मू० ।।।); स्था० ग्रा० से ।।-)

अपराधी

सच जानिए, अपराधी बड़ा क्रान्तिकारी उपन्यास है। इसे पढ़ कर आप एक बार टॉल्सटॉय के "रिज़रेक्शन" विक्टर ह्यूगो के "लॉ मिज़रेबुल" इबसन के "डॉल्स हाउस" गोस्ट और ब्रियो का "डैमेज्ड गुड्स" या "मेटरनिटी" के आनन्द का अनुभव करेंगे। किसी अच्छे उपन्यास की उत्तमता पात्रों के चरित्र-चित्रण पर सर्वथा अवलम्बित होती है। उपन्यास नहीं, यह सामाजिक कुरीतियों और अत्याचारों का जनाज़ा है !!

सच्चरित्र, ईश्वर-भक्त विधवा बालिका सरला का आदर्श जीवन, उसकी पारलौकिक तल्लीनता, बाद को व्यभिचारी पुरुषों की कुदृष्टि, सरला का बलपूर्वक पतित किया जाना, अन्त को उसका वेश्या हो जाना, ये सब ऐसे दृश्य समुपस्थित किए गए हैं, जिन्हें पढ़ कर आँखों से आँसुओं की धारा बह निकलती है। शीघ्रता कीजिए, केवल थोड़ी सी प्रतियाँ शेष हैं। मूल्य २।।) स्थायीग्राहकों से १।।।=)

व्यवस्थापिका 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

वसुन्धरा पट जाती और 'कुकड़ूँ कूँ' की कर्ण-भेदी आवाज़ के मारे भङ्ग-बूटी छानने पर सुख से निद्रादेवी की आराधना में भी व्याघात उपस्थित हो जाता।

❀

इसलिए बम्बई का गुणग्राही कॉरपोरेशन अगर एक साथ ही देवऋण, पितृऋण और ऋषिऋण से परित्राण पा जाना चाहता है, तो उसे लगे हाथ लॉर्ड इर्विन महोदय का कोई विमल स्मारक भी बनवा डालना चाहिए। ताकि अगली पीढ़ी वाले देखें और गुण-ग्राहकता के साथ ही भवभयहारिणी राजभक्ति की भी शिक्षा ग्रहण करें।

❀

ख़ैर, कुछ भी हो अपने राम तो लॉर्ड इर्विन की राजनीतिज्ञता के क़ायल हैं। ऐसी जादू की लकड़ी फेरी कि लँगोटी बाबा भी पिघल कर मोम हो गए। मन्चेस्टर की तोंदों की चिन्ता मिटी और मरम्मत-तलब खोपड़ियों का सनीचर भी बिना काली वस्तु दान किए ही उतर गया! बस, अब चिर शान्ति के मज़े लीजिए और लाट साहब के जाहोजलाल की तरक़्क़ी के लिए मियाँ मदार की मज़ार पर रेवड़ी-बताशे चढ़ाइए।

❀

नैनीताल के सब-डिवीज़नल मैजिस्ट्रेट साहब फ़रमाते हैं—"अतिरिक्त पुलिस-कर की वसूली में समझौता बाधक नहीं है।" एसेम्बली के गुलिस्तान के बुलबुले हज़ार-दास्तान श्री० क़ेरार का इरशाद है—"सन्धि में इस प्रकार की कोई शर्त नहीं है, कि नज़रबन्द भी छोड़ दिए जायँ और मैं विश्वास दिलाता हूँ, कि हिंसात्मक और अहिंसात्मक क़ैदियों का विचार करने में प्रान्तिक सरकारें उदारता से काम करेंगी।" बस, और चाहिए क्या? लॉर्ड इर्विन का यह गोरखधन्धा-नुमाँ समझौता है या कोई मज़ाक़ है। इसे अच्छी तरह समझना हो तो पहले भर पेट बूटी छानिए या बम्बई कॉरपोरेशन के स्वर में स्वर मिला कर 'देहिपद-पल्लव-मुदारम्' गाइए।

❀

फलतः हज़रते आला, इस इर्विनी समझौते के अनुसार अगर कुछ बाधक है तो कालों का स्वतन्त्रता के लिए छटपटाना, वरना सखी नौकरशाही की तो 'वही रफ़्तार बेढङ्गी जो पहले थी, वह अब भी है!' वही अठखेलियाँ वही अल्हड़पन, वही बात-बात पर तिनकना और मुँह नोचने के लिए दौड़ पड़ना। बताइए, यह श्रीमान् लॉर्ड इर्विन साहब की जादू की लकड़ी का करिश्मा नहीं तो और क्या है? ऐसी हालत में भी अगर उनके 'स्मारक-फ़ण्ड' में चन्दा देने के लिए आप जोरू के गहने गिरवी न रक्खेंगे तो क्या मुँह लेकर इस देश में रहेंगे?

❀

कॉङ्ग्रेस आन्दोलन की बदौलत यों तो बड़े-बड़े भाग्यशालियों का पता लगा है, परन्तु जैसी तक़दीर अल्लाह मियाँ ने कानपुर के नेशनल प्रेस को अता की है, वैसी शायद ही किसी की हो। जब से आन्दोलन आरम्भ हुआ है, तब से २२ बार उसकी लँगोटी की तलाशी हुई। फलतः हमारी राय है, कि भारत भर के प्रेसों की सभा करके उसे 'सर्च-प्रूफ़' की पदवी दी जाए और सरकार से प्रार्थना की जाए कि वह अपनी पुलिस की नाक की दवा करा डाले नहीं तो वह दिन दूर नहीं, जब उसे नौकरशाही के लहँगे में भी राजद्रोह की बू मालूम होने लगेगी।

❀

लॉर्ड लॉयड ने मञ्चेस्टर की एक सभा में भाषण देते हुए कहा कि "मि० गाँधी ने कहा है कि भारत में विलायती कपड़े न आने पाएँगे।" इस पर श्रोताओं ने कहा कि इन्हें गोली मार दी जानी चाहिए। बात ठीक है। जिनके पूर्वजों ने अफ़ीम न खाने के लिए हज़ारों चीनियों का क़त्ल करा दिया था, उनके वंशधर अगर कपड़े न ख़रीदने के कारण गाँधी को गोली मार देने की आज्ञा दें, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? अङ्गरेज़ के बच्चे से इससे अधिक और आशा ही क्या की जा सकती है? तुलसी बाबा ने क्या झूठ लिखा है कि:—

फरई कि कोदौ बालि सुसाली,
मुकुता स्रवै कि सम्बुक ताली?

❀

एक हिसाबी ने पता लगाया है, कि हिन्दू-राज्य में एक रुपए का एक मन घी बिकता था, मुसलमानी राज्य में २॥) का एक मन और अङ्गरेज़ी राज्य में ४७) का एक मन बिकता है। इससे मालूम होता है, कि यह राज्य पिछले राज्यों की अपेक्षा अधिक क़द्रदाँ है—यह वस्तु का मूल्य समझता है। इसलिए ईश्वर की अगर कृपा हो और यह राज्य कुछ दिन और रह जाए तो लड़के सुन कर आश्चर्य में पड़ जायँगे कि इस देश में 'घी' नाम की भी कोई वस्तु होती थी और वह खाई भी जाती थी।

❀

'बॉम्बे क्रॉनिकल' को ख़बर लगी है कि गत गोलमेज़ के अवसर पर जब राजा लोग लन्दन-तीर्थ में गए थे, तो एक राजा साहब के एक वक़्त के भोजन के लिए एक दिन चार हज़ार पौण्ड ख़र्च हुए थे, दूसरे राजा साहब ने लाखों रुपए ख़र्च करके एक जहाज़ को ही रङ्गमहल बना रक्खा था और तीसरे हज़रत ने चार लाख रुपए अपनी क़मीज़ों और बनियाइनों के लिए ख़र्च किया था। किया होगा जनाब, तो आपका क्या? वही कहावत हुई कि 'तेली का तेल जले और मशालची की छाती फटे!' आख़िर राजापन की क्या कोई दुम होती है? मुफ़्त की गङ्गा और हराम का ग़ोता ही तो राजापन है।

❀

'कौवे का साथी कोयल' स्वरूप भारत के पुराने नमकख़्वार लॉर्ड लॉयड ने भी चचा-चर्चिल के कन्धे से कन्धा भिड़ा दिया है और एक दिन नशे के झोंक में आकर बक गए कि 'अगर भारत को स्वायत्त-शासन दिया गया, तो इङ्गलैण्ड का दीवाला हो जाएगा।' आख़िर पुराना नमकख़्वार ठहरा, इसलिए बेचारे ने बात सवा सोलह आने सच्ची कह डाली है। मगर इन काले सङ्गदिलों की खोपड़ी में यह बात कहाँ धँसती है? इनकी तो बस यही चेष्टा है कि श्रीमती नौकरशाही के प्रेमालिङ्गन से मुक्त होकर ज़रा आराम की साँस लें। इसके बाद आपका दीवाला निकले या आपको क़ारूँ का ख़ज़ाना मिल जाए।

❀

नासिक के कलाराम मन्दिर के देवता जी पर, सम्भवतः फिर साढ़ेसाती महाराज की नज़र पड़ गई है। कई दिन हुए अछूतों की एक वृहद्वाहिनी ने देवता जी के आरामगाह पर हमला कर दिया था। परन्तु "जाको राखे साईयाँ, मारि सक नहि कोय, बाल न बाँका करि सकै जो जग बैरी होय।" फ़ौरन पुलिस पहुँची और अछूतों को मार भगाया; वरना देवता जी की ज़ात-पाँत गई ही थी!

❀

ब्रिटिश-साम्राज्य के शिर का महाशनीचर दूर हो गया! इसके साथ ही राहु और केतु की चिन्ता भी दूर हो गई। सारा देश चिल्लाता ही रह गया। मगर श्रीमती ने सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० सुखदेव को अमर बना कर ही दम लिया! अब न चर्चिल साहब के हाथ से 'कोहनूर' के निकल जाने का खटका रहा और न लॉर्ड लॉयड को म० इङ्गलैण्ड के दिवालिया हो जाने की चिन्ता रही! इसलिए श्रीमती नौकरशाही को चाहिए कि इसकी ख़ुशी में एक दिन भर पेट थिरक लें। क्योंकि ताण्डव-नृत्य का ऐसा सुअवसर फिर नसीब न होगा!

❀

बला से इस उद्दण्डता के कारण सारा देश विक्षुब्ध हो उठा है और गाँधी-इर्विन समझौते की ज़िन्दगी ख़तरे में पड़ गई है। शान्ति की कामना कौन, नौकरशाही का कमबख़्त अङ्ग कर रहा है! यहाँ तो परमात्मा से प्रार्थना है कि किसी तरह फिर वह दिन आए और काली खोपड़ियों के साथ 'चौगान' खेलने का मौक़ा मिले।

* * *

समाज-सेवा, देशभक्ति तथा एक देशोपकारी संस्था की आड़ में यदि अत्यन्त भयङ्कर तथा वीभत्स घटनाओं का नग्न चित्र देखना हो अथवा 'महाशय जी' व 'देवी जी' नामधारी नर-पिशाचों के आन्तरिक पापों का भण्डाफोड़ देखना हो तो इस पुस्तक को उठा लीजिए। कुछ ही पन्ने पढ़ कर आप आश्चर्य की मूर्ति बन जायँगे, आपके रोम-रोम काँपने लगेंगे। जो स्त्री कि वाह्य जगत् में अत्यन्त पूज्य, अनिन्द्य सुन्दरी, विदुषी, सुशीला तथा समाज-सेविका है, वह वास्तव में व्यभिचारिणी, कलङ्किनी, पापिनी, हत्यारिणी तथा एक वेश्या से भी घृणित है। समाज में प्रतिष्ठित रहते हुए वह भीतर ही भीतर इन पापों की पूर्ति के लिए कैसे-कैसे रहस्य रचती है—इसका अत्यन्त रोमाञ्चकारी वर्णन इसमें किया गया है।

सुखवती देवी नाम्नी एक अत्यन्त सुन्दरी तथा विदुषी महिला किस प्रकार अपने पति का गला घोंट कर, एक प्रेस तथा मासिक पत्र की सञ्चालिका बन जाती है, समाज-सेवा की आड़ में किस प्रकार देवी जी ने अनेक धनिक पुरुषों को अपने जाल में फँसा कर रुपया ऐंठा तथा ब्रह्मचर्य के पवित्र नाम पर किस प्रकार दर्जनों होनहार नवयुवकों का सर्वनाश किया और एक नवयुवक के प्राण लेकर ही अपने प्राण त्यागे; इतना नाटक खेलते हुए भी किस प्रकार देवी जी समाज में पूज्य ही बनी रहीं—इसका सारा रहस्य जादू की क़लम से लिखा गया है। पुस्तक के एक-एक शब्द में रहस्य भरा हुआ है। पुस्तक की छपाई-सफ़ाई दर्शनीय है। पृष्ठ-संख्या लगभग २०० ; मूल्य लागत मात्र १॥) रु०, स्थायी ग्राहकों से १=) मात्र। शीघ्रता कीजिए। पुस्तक छप रही है। अभी से अपना नाम रजिस्टर करा लीजिए।

देवताओं के गुलाम

यह पुस्तक सुप्रसिद्ध मिस मेयो की नई करतूत है। यदि आप अपने काले कारनामों को एक विदेशी महिला के द्वारा मार्मिक एवं हृदय-विदारक शब्दों में देखना चाहते हैं, तो एक बार इसके पृष्ठों को उलटने का कष्ट कीजिए। धर्म के नाम पर आपने कौन-कौन से भयङ्कर कार्य किए हैं ; इन कृत्यों के कारण समाज की क्या अवस्था हो गई है—इसका सजीव चित्र आपको इसमें दिखाई पड़ेगा। मूल्य ३); स्थायी ग्राहकों से २।)

साहस और सौन्दर्य की साक्षात् प्रतिमा मेहरुन्निसा का जीवन-चरित्र स्त्रियों के लिए अनोखी वस्तु है। उसकी विपत्ति-कथा अत्यन्त रोमाञ्चकारी तथा हृदय-द्रावक है। परिस्थितियों के प्रवाह में पड़ कर किस प्रकार वह अपने पति-वियोग को भूल जाती है और जहाँगीर की बेगम बन कर नूरजहाँ के नाम से हिन्दुस्तान को आलोकित करती है—इसका वर्णन इसमें बहुत ही रोमाञ्चकारी भाषा में मिलेगा। मूल्य ॥)

☞ व्यवस्थापिका 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Registered No. A—2087

यह वही पुस्तक है, जिसकी ६,००० प्रतियाँ हाथोंहाथ समाप्त हो चुकी है; जिसने असंख्य स्त्रियों को पाकशास्त्र की पण्डिता बना कर उनका जीवन सार्थक किया है; और जिसके लिए हमारे पास बधाइयों तथा प्रशंसा-पत्रों के ढेर लग गए हैं।

इस पुस्तक में प्रत्येक प्रकार के अन्न तथा मसालों के गुण-अवगुण बतलाने के अलावा पाक सम्बन्धी शायद ही कोई चीज़ ऐसी रह गई हो, जिसका सविस्तार वर्णन इस बृहत् पुस्तक में न दिया गया हो। प्रत्येक तरह के मसालों का अन्दाज़ साफ़ तौर से लिखा गया है। ८३६ प्रकार की खाद्य चीज़ों का बनाना सिखाने की यह अनोखी पुस्तक है। दाल, चावल, रोटी, पुलाव, मीठे और नमकीन चावल, पुलाव, भाँति-भाँति की स्वादिष्ट सब्ज़ियाँ, सब प्रकार की मिठाइयाँ, नमकीन, बङ्गला मिठाई, पकवान, सैकड़ों तरह की चटनी, अचार, रायते और मुरब्बे आदि बनाने की विधि इस पुस्तक में विस्तृत रूप से वर्णन की गई है। प्रत्येक चीज़ों के बनाने की विधि, इतनी सरल भाषा में वर्णन की गई है कि साधारण हिन्दी जानने वाली महिलाएँ भी भली भाँति समझ सकती हैं। प्रत्येक घर में इस पुस्तक का रहना अनिवार्य है। शीघ्रता कीजिए; केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं।

मूल्य ४) रु० स्थायी ग्राहकों से ३) रु० मात्र !

Printed and Published by R. SAIGAL—(Editor) at the Fine Art Printing Cottage.
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad.

छप गई !   प्रकाशित हो गई !!

व्यङ्ग-चित्रावली

यह चित्रावली भारतीय समाज में प्रचलित वर्तमान कुरीतियों का जनाज़ा है। इसके प्रत्येक चित्र दिल पर चोट करने वाले हैं। चित्रों को देखते ही पश्चात्ताप एवं वेदना से हृदय तड़पने लगेगा; मनुष्यता का याद आने लगेगी; परम्परा से चली आई रूढ़ियों, पाखण्डों और अन्ध-विश्वासों को देख कर हृदय में क्रान्ति के विचार प्रबल हो उठेंगे; घण्टों तक विचार-सागर में आप डूब जायँगे। पछता-पछता कर आप सामाजिक सुधार करने को बाध्य होंगे!

प्रत्येक चित्रों के नीचे बहुत ही सुन्दर एवं मनोहर पद्यमय पंक्तियों में उनका भाव तथा परिचय अङ्कित किया गया है। इसके प्रकाशित होते ही समाज में हलचल मच गई। प्रशंसा-पत्रों एवं सम्मतियों का ढेर लग गया। अधिक प्रशंसा न कर हम केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि ऐसी चित्रावली आज तक कहीं से प्रकाशित नहीं हुई। शीघ्रता कीजिए, नहीं तो पछताना पड़ेगा।

इकरङ्गे, दुरङ्गे, और तिरङ्गे चित्रों की संख्या लगभग २०० है। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय, फिर भी मूल्य लागत मात्र केवल ४); स्थायी तथा 'चाँद' के ग्राहकों से ३); अब अधिक सोच-विचार न करके आज ही आँख मींच कर ऑर्डर दे डालिए!!

मूल-लेखक—
महात्मा काउण्ट टॉल्सटॉय

अनुवादक—
प्रोफ़ेसर रुद्रनारायण जी अग्रवाल, बी० ए०

यह रूस के महान् पुरुष काउण्ट लियो टॉल्सटॉय की अन्तिम कृति है। यह उन्हें सब से अधिक प्रिय थी। इसमें दिखाया गया है कि किस प्रकार कामान्ध पुरुष अपनी अल्प-काल की लिप्सा-शान्ति के लिए एक निर्दोष बालिका का जीवन नष्ट कर देता है; किस प्रकार पाप का उदय होने पर वह अपनी आश्रयदाता के घर से निकाली जाकर अन्य अनेक लुब्ध पुरुषों की वासना-तृप्ति का साधन बनती है; और किस प्रकार अन्त में वह वेश्यावृत्ति ग्रहण कर लेती है। फिर उसके ऊपर हत्या का झूठा अभियोग चलाया जाना, संयोगवश उसके प्रथम भ्रष्टकर्ता का भी जूरी में सम्मिलित होना, उसकी ऐसी अवस्था देख कर उसे अपने किए पर अनुताप होना, और उसका निश्चय करना कि चूँकि उसकी इस पतित दशा का एकमात्र वही उत्तरदायी है, इसलिए उसे उसका घोर प्रायश्चित भी करना चाहिए—सब एक-एक करके मनोहारी रूप से सामने आते हैं, और वह प्रायश्चित का कठोर निर्दय-स्वरूप, वह धार्मिक भावनाओं का प्रबल उद्रेक, वह निर्धनों के जीवन के साथ अपना जीवन मिला देने की उत्कट इच्छा, जो उसे साइबेरिया तक खींच कर ले गई थी। पढ़िए और अनुकम्पा के दो-चार आँसू बहाइए। इसमें दिखाया गया है कि उस समय रूस में त्याग के नाम पर किस प्रकार मनुष्य-जाति पर अत्याचार किया जाता था। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय, सजिल्द पुस्तक का मूल्य लागत मात्र केवल ५) स्थायी ग्राहकों से ३॥।)

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, [illegible]

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' (हिन्दी अथवा उर्दू-संस्करण) का प्रचार कर, वे संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एक मात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३, | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार, २ अप्रैल; १९३१ | संख्या ३, पूर्ण संख्या २७

कानपूर के उपद्रवों की भीषणता !

सरकारी रिपोर्ट भ्रान्तिपूर्ण है :: मनुष्यों की लाशों को गिद्ध खा रहे हैं।

पुलिस और फ़ौज की शिथिलता :: सड़कों और गलियों में लाशों का ढेर

५०० मकान जला कर ख़ाक कर दिए गए :: २,००० घर लूट लिए गए !!

सहयोगी 'लीडर' के विशेष सम्वाददाता ने कानपुर के उपद्रवों के सम्बन्ध में ३१वीं मार्च को जो रिपोर्ट प्रकाशनार्थ भेजी है, वह वास्तव में बड़ी रोमाञ्चकारी है। उसी का सार नीचे दिया जा रहा है :—

आपका कहना है, कि कानपुर में जैसा भयङ्कर उपद्रव हुआ है, उसकी कल्पना तक कठिन है। लेजिस्लेटिव ऐसेम्बली तथा प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभा में इन उपद्रवों की जो चर्चा सरकार की ओर से की गई है, वह केवल उस तार के आधार पर है, जोकि कानपुर के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट ने यू० पी० गवर्नमेण्ट के चीफ़ सेक्रेटरी के पास भेजा था, सरकारी अस्पताल सम्बन्धी रिपोर्ट तथा अन्य बातों के साथ ही डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट ने एक जुमला यह भी लिखा था—"इसके अतिरिक्त अन्य जगहों में भी बहुत सी लाशों का निबटारा किया गया है।" (A good many corpses disposed of elsewhere) किन्तु एसेम्बली तथा कौन्सिल में यह बात किसी को भी नहीं बतलाई गई।

बहुत से हिन्दू और मुसलमान चूहों की भाँति फँसा कर एक मकान में भर दिए जाते और मकान बन्द करके उनमें आग लगा दी जाती थी। प्रायः ख़ाली घरों में आग लगाने के पहिले उसे लाशों से भर दिया जाता था। जो लाशें पर्याप्त अग्नि न मिलने के कारण अधजली रह जाती थीं, अधजले मकानों की बाँस-बल्लियाँ और कुन्दे गिर कर उन्हें छिन्न-भिन्न कर देते थे। इन बल्लियों और शहतीरों के नीचे बहुत सी लाशें आग बुझाने वालों (Fire Brigade) को मिली हैं।

एक और आवश्यक बात बड़ी चालाकी से छिपाई जा रही है। गत शनिवार से लाशें अस्पताल में बिल्कुल नहीं जाने पातीं। मि० बेलिस नामक मैजिस्ट्रेट ने—जिन्हें उस दिन से लाशों को उठवाने का काम सौंपा गया है—लाशों की संख्या बतलाने से इन्कार कर दिया। यद्यपि इधर तीन दिनों में भी काफ़ी जानें गई हैं, किन्तु डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट भी इस सम्बन्ध में कुछ नहीं बतला सकते। म्युनिसिपैल्टिी के मेहतर (बम-पुलिस विभाग) तथा सेवा-समिति के वालण्टियर भी लाशों को उठवाने में मदद दे रहे हैं। यदि लाशें कुछ दिनों इसी प्रकार सड़कों और गलियों में और पड़ी रहीं तो बीमारी फैल जाने की बहुत सम्भावना है। फ़ौजी अधिकारियों का कहना है कि ऐसी गन्दगी में वे फ़ौज को रहने की इजाज़त नहीं दे सकते।

मृतकों के शरीर इतने दिनों तक पड़े रहने के बाद इतने अधिक विकृत हो गए हैं कि यह पहचानना एक बार ही असम्भव हो गया है कि इनमें कौन हिन्दू की लाश है और कौन मुसलमान की। कुछ लाशों को गिद्धों ने खा डाला है और केवल हाड़-मांस ही शेष रह गए हैं।

कानपूर के निवासियों की आर्थिक हानियों के सम्बन्ध में कोई अन्दाज़ लगाना कठिन है। मोटी तौर से पता चलता है, कि लगभग ५०० मकान जला कर ख़ाक कर डाले गए और उन घरों की संख्या, जो लूटे गए हैं, इससे चौगुनी (अर्थात् २,०००) समझी जानी चाहिए, लोगों का यह निश्चित-विश्वास है, कि यदि पुलिस इस ओर ज़रा भी ध्यान दिए होती तो कानपूर की जनता को इतनी अधिक हानि कदापि न उठानी पड़ती। जनता को पुलिस पर बड़ा अविश्वास हो गया है। लोगों में प्रायः इस बात की चर्चा सुनने में आती है, कि यदि इस प्रकार के आक्रमण गवर्नमेण्ट की सम्पत्ति अथवा उसकी शक्तियों पर किए जाते, तो पुलिस और फ़ौज क्या कर डालती ? लोगों का विश्वास है, कि यदि उपद्रव के पहिले ही दिन पुलिस अपने अस्तित्व को प्रकट कर दिए होती, तो कदापि शैतान का यह ताण्डव कानपूर में न हुआ होता।

डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के सम्बन्ध में सम्वाददाता का कहना है, कि वे प्रायः अपने बङ्गले के सब से भीतर वाले कमरे में छिप कर उपद्रवों के सम्बन्ध में विचार किया करते थे, शायद ही वे कभी बाहर निकले हों। शहर में कैसा भयङ्कर उपद्रव होता रहा, इस बात का उन्हें बहुत कम पता चला होगा। कानपूर के नए सुपरिण्टेण्डेण्ट-पुलिस ने विगत सप्ताह ही ज़िले का चार्ज लिया था, वे बिल्कुल नए हैं। एक सब से खेदपूर्ण बात यह है, कि इनकी नियुक्ति रेलवे पुलिस से हुई है, अतएव नगर-रक्षा तथा उसके शासन-ज्ञान से उनका अनभिज्ञ होना स्वाभाविक ही बतलाया जाता है।

जिन स्थानों में विशेष उपद्रव हुआ था, 'लीडर' के विशेष सम्वाददाता ने लगभग उन सभी स्थानों का निरीक्षण किया है, आपका कहना है, कि मोहल्ले के मोहल्ले एक बार ही श्मशान के रूप में परिवर्तित हो गए हैं। शहर का कुछ हिस्सा तो बिल्कुल नष्ट-प्रायः हो गया है। जहाँ सैकड़ों मकानों की आबादी थी वहाँ शायद ही एक मनुष्य का दर्शन होता है। हिन्दुओं के मोहल्लों की दशा बड़ी करुणपूर्ण है।

हिन्दू और मुसलमान नेता यथाशक्ति दोनों जातियों में समझौता करने का प्रयत्न कर रहे हैं। यद्यपि पहिले की अपेक्षा हालत सुधरती हुई बतलाई जाती है, किन्तु स्थिति अभी तक गम्भीर है। मोहल्ले-मोहल्ले में नेता घूम रहे हैं।

'भविष्य' के तार द्वारा आए हुए १ली अप्रैल के समाचार

[एसोसिएटेड प्रेस ऑफ़ इण्डिया]

—बनारस में फिर गुण्डों का आतङ्क छा गया है और कहा जाता है कि दङ्गे की अफ़वाह से सनसनी फैल गई है। वहाँ के डिस्ट्रिक्ट-मैजिस्ट्रेट ने दफ़ा १४४ के अनुसार हथियार तथा लाठी आदि लेकर आगामी दो महीनों तक सड़कों पर लोगों के निकलने की मनाही कर दी है।

—महात्मा गाँधी ने कराची में एक प्रेस-प्रतिनिधि से इस अफ़वाह को निराधार बतलाया है, कि वे जून में विलायत जाने वाले हैं। आपने यह भी कहा, कि कॉङ्ग्रेस के प्रतिनिधियों के विलायत जाने का प्रश्न भी अभी तक अनिश्चित है। आपने कहा कि गोलमेज़ परिषद में भाग लेना सर्वथा कॉङ्ग्रेस के अधीन है और अभी तक उसने कोई पक्का निश्चय नहीं कर पाया है।

—अहमदाबाद का समाचार है, कि मण्डावा स्टेट की प्रजा ने अपनी असमर्थता के कारण कुछ दिन हुए अधिकारियों से कमी करने की प्रार्थना की थी जो स्वीकृत नहीं हुई; अतएव उन्होंने कोई दूसरा उपाय न देख कर एक पैसा भी लगान न देने का निश्चय कर लिया है और घरबार छोड़ कर बड़ोदा राज्य में भागे जा रहे हैं।

—आज अखिल भारतवर्षीय कॉङ्ग्रेस में नई कार्यकारिणी समिति का निर्वाचन हो गया। नई वर्किङ्ग कमिटी के सदस्यों की सूची इस प्रकार है :—

(१) सर्दार वल्लभभाई पटेल, (२) पण्डित जवाहरलाल नेहरू, (३) डॉक्टर महमूद, (४) श्री० जैरामदास दौलतराम, (५) श्री० जमनालाल बजाज, (६) महात्मा गाँधी, (७) श्री० ऐने (८) श्रीमती सरोजिनी नायडू, (९) डॉक्टर आलम, (१०) बाबू राजेन्द्रप्रसाद, (११) सरदार शार्दूलसिंह, (१२) डॉक्टर अन्सारी, (१३) मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद, (१४) श्री० सेनगुप्ता और (१५) श्री० के० एफ़० नॉरीमैन।

इस नए निर्वाचन को असाधारण महत्व इसलिए दिया जा रहा है, क्योंकि शीघ्र ही होने वाली गोलमेज़ परिषद के लिए कॉङ्ग्रेस के प्रतिनिधियों की हैसियत से जाने वाले सदस्यों का निर्वाचन इन्हीं नेताओं में से होगा।

—देहली का समाचार है, कि बड़ी व्यवस्थापिका सभा की देहली की बैठक आज अर्थ-बिल पास करके समाप्त हो गई। पक्ष में २१ और विरोध में १२ वोट थे

कराची कॉङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी समिति के सभापति डॉ० चैतराम का अभिभाषण

बहनो और भाइयो,

अपने जीवन में मुझे इस बात का गर्व रहेगा कि मैं आज स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए अपने राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास के इस महत्वपूर्ण अवसर पर आपका स्वागत कर रहा हूँ।

सरदार भगतसिंह की फाँसी

सरदार भगतसिंह और उनके साथियों की शोचनीय फाँसी के कारण आज समस्त भारतवर्ष गम्भीर शोक और दुःख के सागर में डूबा हुआ है। इसीसे हम कॉङ्ग्रेस के निर्वाचित सभापति का स्वागत यथेष्ट समारोह-पूर्वक नहीं कर सके हैं। यदि आज दूसरी अवस्था होती तो कराची बड़े उत्साह और उमङ्ग से आपका स्वागत करता। परिस्थिति की गम्भीरता का ख़्याल करके हमें कॉङ्ग्रेस की सारी तैयारी, सजावट और आनन्दोत्साह भी स्थगित कर देना पड़ा है।

स्वागत

हमें यह जान कर अतीव सन्तोष प्राप्त हो रहा है कि हम अपनी लड़ाई के ऐसे साथियों और मित्रों का स्वागत कर रहे हैं, जिनमें से प्रायः सब ने आराम और सुख को लात मार दिया है और जो हमारे पास जेल-जीवन की कठिनताएँ भोग कर नवीन उत्साह के साथ आए हैं। गत बारह महीनों के जेल-जीवन ने इनके सेवा और त्याग के भावों को और भी चमका दिया है।

स्वर्गीय पण्डित मोतीलाल जी नेहरू

इस विख्यात ऐतिहासिक कॉङ्ग्रेस के अधिवेशन में आप लोगों को अतिथि-रूप में देख कर हम विशेष आनन्द का अनुभव कर रहे हैं; परन्तु साथ ही हमें इस बात का अपार दुःख है कि हम लोगों में जो स्वदेश-सेवा के भावों के सर्व-श्रेष्ठ अधिकारी थे, भाग्य की निष्ठुरता के कारण वही पण्डित मोतीलाल जी नेहरू हम लोगों में नहीं हैं। भारत के इतिहास में जिन लोगों ने अमर कीर्ति स्थापित की है, स्वर्गीय पण्डित जी का स्थान उनमें अन्यतम है।

स्वर्गीय मौ० मुहम्मद अली

देश के महान नेता मौ० मुहम्मद अली को भी कुटिल काल ने हमसे छीन लिया है। उन्होंने हमसे बहुत दूर—लन्दन में जाकर कर्त्तव्य की बलिवेदी पर आत्मोत्सर्ग किया है। सन् १९२१ में इसी कराची में जो ऐतिहासिक मुक़दमा हुआ था, स्वर्गीय मौलाना साहब उसके प्रधान नायक थे।

हमारा साल भर का आन्दोलन

महात्मा गाँधी के डाण्डी मिशन से लेकर दिल्ली के समझौते तक, पूरे बारह महीने हमने एक सजीव जीवन के रूप में व्यतीत किया है। गत १९२०-२१ में हम भावावेश के एक ऊँचे शिखर पर आरूढ़ हो गए थे किन्तु दस वर्षों में उस भावावेश ने जातीय जीवन की एक असाध्य साधना के रूप में परिणत होकर हमें दर्शन दिया है। हमारे संग्राम ने संसार को नए ढङ्ग से यह दिखा दिया है कि मनुष्य जाति के कामों को नियन्त्रित करने वाली शक्तियों में अन्तिम शक्ति पशुबल ही नहीं है। मनुष्य के जो अधिकार हैं उनकी प्रतिष्ठा केवल शारीरिक बल द्वारा ही प्रतिष्ठित हो सकती है, यह भ्रान्त धारणा हमारे इस आन्दोलन के कारण शायद नहीं रहेगी। महात्मा की यह वाणी केवल भारतवर्ष के लिए ही नहीं, वरन् सारे संसार के लिए है। इस आन्दोलन के फल-स्वरूप सत्याग्रह का जो नवीन रूप परिस्फुटित हुआ है, वह केवल हमारी ही नहीं, वरन् सारे संसार की सम्पत्ति है और सारा संसार उसके लिए अपना दावा पेश करेगा। आज से दस साल पहले नागपुर में जो एक सिद्धान्त के रूप में सुनाई पड़ा था, वह आज एक ज़बरदस्त वास्तव के रूप में परिणत है और जो फ़ौलाद से बाज़ी मार ले जाने को तैयार है, उसने यह सिद्ध कर दिया है कि अगर यथेष्ट रीति से इसका व्यवहार किया जाए तो यह पुरानी दुनिया के फ़ौलादी हथियारों में मुर्चा लगा

डॉ० चैतराम पी० गिडवानी

देगा। इस नए हथियार में दृढ़ता और सहनशीलता की ऐसी शक्ति का पता लगा है जो स्वप्न में भी सोची नहीं जा सकती थी। यह नया हथियार उन लोगों के लिए एक नई आशा का सञ्चार करता है जो अत्याचार के शिकार हो रहे हैं। भारत की देवियाँ, जिनके सम्बन्ध में संसार को यह विश्वास दिलाया जाता है, कि वे केवल अन्तःपुर की सामग्री हैं, या आनन्द-भवन की पुतलियाँ हैं, उन्होंने वीरता का ऐसा आदर्श दिखाया है, कि जिसका संसार के इतिहास में कोई उदाहरण नहीं मिलता। स्त्रियों के सिवा बच्चों ने भी इस संग्राम में भाग लेकर अपनी स्वदेश-भक्ति का परिचय दिया है। देहाती किसान, जिनके लिए ब्रिटिश शासन में केवल भूख और उपवास की व्यवस्था है, उन्होंने ने भी स्वतन्त्रता के प्रकाश का अनुभव किया है और ऐसे त्याग किए हैं, जिनके सामने शराब और विलायती कपड़े बेचने वालों की विख्यात तकलीफ़ कुछ भी नहीं है।

हमारे राष्ट्र ने बड़ी सफलता के साथ लाठियों का सामना किया है। और घोड़ों की टापों के नीचे कुचले जाने की तकलीफ़ों को बरदाश्त किया है। ये वे कार्रवाइयाँ हैं, जिन्हें हमारे विदेशी शासक पशुबल का एक साधारण व्यवहार मात्र समझते हैं।

असन्तुष्ट नवयुवकों के प्रति

मुझे इस सम्बन्ध में ज़रा भी सन्देह नहीं है, कि हम में कुछ लोग ऐसे हैं जो असन्तुष्ट हैं और कुछ और ही समझ रहे हैं; परन्तु मैं उन्हें बता देना चाहता हूँ कि उनकी ग़लत-फ़हमी और अविश्वास के रहते हुए भी देश दृढ़ता के साथ अपने उस पथ पर अग्रसर होता रहेगा, जिसे हमारे आदरणीय नेताओं ने निर्मित किया है। मैं यह भी आशा करने का साहस करता हूँ कि मेरे वे निर्भीक देश-भक्त जिन्होंने विभिन्न मार्ग का अवलम्बन किया है जो दुर्भाग्यवश अभी तक जेल की कोठरियों में बन्द हैं, शीघ्र ही हमारे युद्ध में साथी बन जायँगे और उस हथियार को ग्रहण करेंगे, जिससे भारत के लिए आज़ादी और संसार के लिए शान्ति प्राप्त होगी।

गाँधी-इर्विन समझौता

जिस गाँधी-इर्विन समझौते के कारण कॉङ्ग्रेस का यह अधिवेशन सम्भव हुआ है, उसकी विस्तृत आलोचना करने का यह स्थान नहीं है। जिन लोगों ने इस समझौते की निन्दा की है, वे इस बात को भूल गए हैं कि यह केवल कुछ काल के लिए संग्राम को स्थगित करने के लिए किया गया है न कि यह संग्राम की शान्ति का समझौता है। इसके द्वारा संग्राम का अन्त सदा के लिए नहीं किया गया है। वर्किङ्ग कमिटी को जब यह बात मालूम हुई कि हमारा प्रतिद्वन्दी-दल सन्तोषजनक समझौते के आधार पर शान्तिपूर्ण आलोचना करने के लिए उत्सुक है तो उसने युद्ध को कुछ काल के लिए स्थगित कर देना उचित समझा। वास्तव में ऐसा करके उसने कोई अनुचित कार्य नहीं किया है। आलोचना की सफलता को छोड़ कर और किसी दशा में भी आन्दोलन को बन्द कर देने का कोई कारण नहीं है। यहाँ केवल यही पूछा जा सकता है कि जिस भित्ति पर आलोचना के सफल होने की आशा हम कर सकते हैं, वह भित्ति तैयार है या नहीं? इससे पहले लॉर्ड रीडिङ्ग और लार्ड इर्विन ने भी महात्मा गाँधी के साथ आलोचना करने की एक बार चेष्टा की थी। उस इतिहास से हम अच्छी तरह सावधान हैं, इसीसे हमारे आदरणीय नेताओं ने यह अच्छी तरह निश्चय कर लिया है कि कॉङ्ग्रेस को किसी प्रकार के फन्दे में नहीं फँसने देंगे। महात्मा जी ने इस मामले में किसी प्रकार से भी आत्म-समर्पण नहीं किया है। हमारे राष्ट्र की प्रतिष्ठा पहले ही की तरह आज भी अविचलित है। आज हम लोग उसी समझौते को दृढ़ करने के लिए यहाँ एकत्रित हुए हैं।

सरकार की भ्रान्ति

लाहौर की फाँसी-सम्बन्धी घटना से सरकार की भयङ्कर भ्रान्त बुद्धि का परिचय हमें प्राप्त हुआ है। इस घटना से यह समझना कठिन है कि सरकार अपने अधिकारों को कम करने के लिए तैयार है। हम अपने देश का स्वयं शासन करेंगे, यह हमारा जन्मगत अधिकार है, इसे ब्रिटेन को अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा। हमारा अभिभावक बन कर जिस उद्धत नीति का प्रयोग वह कर रहा है, उस नीति को उसे छोड़ना ही पड़ेगा और जिस तरह छोटे बच्चे को उपदेश दिया जाता है, उस तरह उपदेश प्रदान की स्पर्धा भी उसे छोड़ देनी पड़ेगी। अब हमारे साथ उसे सम्पूर्ण समानता का व्यवहार करना पड़ेगा। जो समान मर्यादा का दावा कर रहे हैं, वे अगर हमारे साथ सम्मानजनक आलोचना की मूल नीति को भङ्ग करेंगे, तो समस्त संरक्षण-व्यवस्था रद्द कर दी

जाएगी। इङ्गलैण्ड के ज़बरदस्ती स्थापित किए हुए स्वार्थों की रक्षा के लिए हम अपने जन्मगत अधिकारों में से तिल भर भी परित्याग करने के लिए प्रस्तुत नहीं हैं। प्रत्येक संरक्षण की व्यवस्था भारत की स्वार्थ-रक्षा के लिए होनी चाहिए। भारत में जो अङ्गरेज़ी सेना है, उसे अब से एकदम हटा लेना होगा और आर्थिक विषयों में जैसी पूर्ण स्वाधीनता ब्रिटेन को प्राप्त है, हमारी आर्थिक व्यवस्था भी वैसी ही पूर्ण स्वाधीन और अटूट रहेगी। महात्मा जी ने अस्थायी समझौता स्वीकार कर लिया है, परन्तु मैं यह सोचने से बाज़ नहीं रह सकता कि लाहौर में जो फाँसी की कार्रवाई हुई है, वह सरकार के फ़ैसले की बड़ी भारी ग़लती है।

महात्मा जी ने पुलिस की ज़्यादतियों की जाँच वाली माँग को इसलिए छोड़ दिया था कि इससे दोनों दलों में वैमनस्य बढ़ जाने की सम्भावना थी। हमें आशा करनी चाहिए कि मेल-मिलाप के भावों का उचित उत्तर दिया जाएगा, परन्तु सरकार ने हमारे लिए यह सोचना कठिन कर दिया है कि उसकी इच्छा अपने अधिकारों को छोड़ने की है।

बङ्गाल के नज़रबन्द

बङ्गाल के उन बहुत से नवयुवकों की नज़रबन्दी जो बिना विचार के ही क़ैद कर लिए गए हैं, अब अधिक बेचैनी का कारण बनेगी। मैं महात्मा गाँधी के नेतृत्व पर पूर्ण विश्वास रखता हूँ, परन्तु साथ ही मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि लक्षणों से ऐसा नहीं मालूम होता कि सुलह होगी और हम अपने घर में मालिक बनेंगे। परन्तु अब ब्रिटेन को यह स्वीकार करना चाहिए, हमें अपने घर का मालिक बनने का पूरा हक़ है। इसलिए उसे अभिभावकता की स्पर्धा का त्याग करना चाहिए और यह समझना चाहिए कि उसका काम अब नाबालिग़ों को उपदेश देना नहीं है, वरन् उन लोगों के साथ समझौता करना है जो बराबरी के हक़दार हैं और बराबरी का व्यवहार चाहते हैं।

दावे की स्पष्टता

हमें अब यह बात साफ़ तौर से बता देनी चाहिए कि हम क्या चाहते हैं। प्रस्तावित संयुक्त राष्ट्र की भित्ति क्या होगी, वह हमें निर्दिष्ट रूप से व्यक्त कर देना चाहिए। लन्दन में, देशी नरेशों की रियासतों को सम्मिलित करके जिस संयुक्त राज के बारे में प्रस्ताव किया गया है, उसे पाकर हम किसी तरह भी सन्तुष्ट नहीं हो सकते। केन्द्रीय सरकार को दायित्व अर्पण करने की बात केवल भारतीय शासन-तन्त्र की एक व्याख्या नहीं होगी। यही दायित्व ही हमारे दावे का मूल है। अगर तुलना की जाय तो संयुक्त शासन-तन्त्र एक बाहरी आवरण मात्र सिद्ध होगा और केन्द्रीय सरकार का दायित्व ही होगा स्वायत्त शासन की मूल-भित्ति। हमें अपने जन्म-सिद्ध अधिकारों के विरुद्ध कोई ऐसी बात स्वीकार न करनी चाहिए जो इङ्गलैण्ड के टोरी दल की ख़ातिर से या अङ्गरेज़ों के लाभ के ख़याल से पेश की जाए। प्रत्येक सेफगार्ड या सुरक्षित अधिकार भारत की भलाई के ख़याल से स्थापित होना चाहिए। गोरी फ़ौज को अविलम्ब यहाँ से हटा लेना चाहिए। हम अपने देश में अपना राज्य स्थापित करेंगे। वह गोरी फ़ौज जो हम पर शासन करने की इच्छा से रक्खी गई है, शीघ्र यहाँ से चली जानी चाहिए। हम अपने राष्ट्र की सम्पत्ति पर उतना ही अधिकार चाहते हैं जितना इङ्गलैण्ड को अपने राष्ट्र की सम्पत्ति पर है। इङ्गलैण्ड ने हमारी राष्ट्रीय सम्पत्ति का जो दुरुपयोग किया है, उसे देखते हुए उसे यह शोभा नहीं देता कि वह फिर हमारे हित का ठेका ले और हमारी सम्पत्ति पर अपना अधिकार रक्खे।

हमारी माँगें

क्षणिक सन्धि की शर्तें गाँधी जी ने तय की हैं, पर स्थायी सन्धि की शर्तें तो आपको तय करनी हैं। उन पर यहाँ बहस कीजिए और उन्हें तय कीजिए। आप अपनी माँगों को अपने सन्धि-सन्देश वाहकों के सामने रखिए और उनसे कहिए कि वे उन्हीं के आधार पर बातचीत करें। हमारी माँगें स्पष्ट शब्दों में होनी चाहिए। जिस सङ्घ-शासन की बात की जा रही है उसका रूप हमें तय करना है। हम लन्दन की पिछली गोलमेज़ सभा के इस प्रस्ताव से सहमत और सन्तुष्ट नहीं हो सकते कि सङ्घ-शासन में देशी राज्य न रहें, देशी नरेश रहें और वे मनमाने तौर पर बिना किसी प्रतिबन्ध और शर्तनामे के शासन-चक्र चलाने में शरीक हों। हम तो केन्द्रीय अधिकार चाहते हैं, मुख्य प्रश्न तो अधिकार का है। सङ्घ-शासन तो उस अधिकार के सञ्चालन की एक विधि एक उपाय मात्र है। हम देशी राज्यों के साथ सङ्घ-शासन में सम्मिलित होंगे, पर इस बात का बराबर ध्यान रखेंगे कि हमारे लक्ष्य की सिद्धि हो। हम मृग-मरीचिका में नहीं फँसना चाहते। बहुत से उन्नतिशील देशी राज्य अब लोकमत को मानने लगे हैं और यह आशा की जा सकती है कि वे अपने राज्यों में भी प्रजा का प्रतिनिधि शासन स्थापित करेंगे। हम ब्रिटिश भारतवासी ऐसे ही राज्यों के सङ्घ में प्रवेश कर लाभ उठा सकते हैं।

एक मत होकर मुक़ाबला करें

अब मैं आपका अधिक समय नष्ट नहीं करूँगा। मुझे अन्त में यही कहना है कि हमारी सब आशाएँ स्वप्न की तरह भङ्ग हो जायँगी, यदि हम आगामी सन्धि की बातचीत में एक मत होकर मुक़ाबला नहीं करेंगे। पिछले गोलमेज़ का दुःखद दृश्य हम नहीं उपस्थित करना चाहते।

मज़हबी और जातीय समझौते विलायत में नहीं किए जा सकेंगे। प्रत्येक दल के विश्वस्त प्रतिनिधियों को स्पष्ट बातें करनी होंगी। बार-बार नए सिरे से नए-नए प्रस्ताव रखने से मामला तय नहीं होगा। इसी तरह अगर समस्या उलझी रहेगी तो उसे कैसे सुलझाया जायगा। पञ्चायत की नियुक्ति से सम्भव है वह सुलझे। क्या भारत में एक अथवा अनेक ऐसे सच्चे और भले मनुष्य नहीं रह गए जिन पर हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई सबका विश्वास हो और जो गम्भीरतापूर्वक निष्पक्ष रीति से अपना फ़ैसला सुना सकें?

मित्रो, मैं एक बार फिर स्वागत-प्रबन्ध की त्रुटियों का सङ्केत कर आपसे क्षमा-याचना करता हूँ। हमारे प्रान्त में हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियों का मेल देख पड़ता है और प्रान्त की अनेक कलापूर्ण इमारतें तथा स्थान भी देखने लायक़ हैं। यदि आप काँग्रेस के बाद यहाँ ठहर कर उन्हें देखने का कष्ट करें तो हम सब अनुगृहीत होंगे।

क्या फिर युद्ध की सम्भावना है?

कराची काँग्रेस की विषय-निर्धारिणी समिति में श्री० सुभाषचन्द्र बोस का वक्तव्य

गत २८ मार्च को काँग्रेस की विषय निर्धारिणी समिति में भाषण देते हुए बङ्गाल के युवक-नेता श्री० सुभाषचन्द्र बोस ने कहा—

श्री० सुभाषचन्द्र बोस

गाँधी-इर्विन समझौते के सम्बन्ध में काँग्रेस के वामपन्थी दल (Left wingers) के कर्तव्य के सम्बन्ध में मैं एक वक्तव्य प्रदान करना चाहता हूँ। इस समझौते की शर्तों से हम ज़रा भी सन्तुष्ट नहीं हो सके हैं। परन्तु देश के स्वार्थ को दृष्टि में रखते हुए किसी को भी वर्तमान समय में काँग्रेस के अन्दर दलबन्दी की सृष्टि करना उचित नहीं है। मैं इसी सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता हूँ।

कराची काँग्रेस के अधिवेशन के थोड़े दिन पहले ही, सर्व-साधारण के बार-बार अनुरोध और प्रतिवाद करने पर भी सरकार ने सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० सुखदेव को फाँसी देकर अपना असली रूप दिखा दिया है। साथ ही उसने यह भी बता दिया है, कि वह हम लोगों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहती है। ऐसी हालत में अगर हम आपस में दलबन्दी और मतभेद की सृष्टि करें तो हम स्वयं सरकार के फन्दे में फँस जायँगे। जिस सरकार ने देश-व्यापी आन्दोलन होने पर भी इन लोगों की फाँसी की सज़ा रद्द नहीं की, वह आसानी से भारतवासियों को देश-शासन-सम्बन्धी क्षमता भी अर्पण नहीं करेगी, यह हम निस्सन्देह रूप से कह सकते हैं। हम यह भी निश्चित रूप से कह सकते हैं कि हमें फिर संग्राम-क्षेत्र में उतरना पड़ेगा। इन्हीं सब कारणों से परस्पर दलबन्दी और फूट की सृष्टि न करके, हमें भावी समर के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए। इस समय हम लोगों का सर्व-प्रधान कर्तव्य है, समवेत शक्ति के साथ सरकार के विपक्ष में खड़ा होना और संसार को दिखा देना, कि हमारी जातीय काँग्रेस महात्मा गाँधी के नेतृत्व में पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए सब तरह से तैयार है।

—दीनाजपुर (बङ्गाल) का समाचार है, कि २४वीं मार्च को डाकख़ाने के हरकारे पर धावा करके 'डाकुओं' ने डाक का थैला उससे छीन लिया। कहा जाता है, हमला करने वाले भद्र-पुरुषों की पोशाक में दो नवयुवक थे। थैले में से कुछ रुपए, रजिस्ट्री और बीमा आदि निकाल कर आक्रमणकारियों ने वहीं जङ्गल में थैला फेंक दिया था। अभी तक इन 'भद्र पुरुषों' का पता नहीं चला है।

—कराची का समाचार है, कि सिन्धिया स्टीम नेविगेशन कम्पनी ने विदेशी-वस्त्र बहिष्कार की केन्द्रीय संस्था को इस आशय का पत्र लिखा है कि कॉङ्ग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार वे विदेशी वस्त्रों को जब भारत से बाहर भेजना चाहें, तो कम्पनी अपने जहाज़ों द्वारा ये बहिष्कृत कपड़े संसार के किसी भी देश में मुफ़्त पहुँचा देगी।

—काङ्गड़ा (पञ्जाब) ज़िले के अन्तर्गत गोपीपुर नामक स्थान के प्रतिभाशाली कॉङ्ग्रेस कार्यकर्ता श्री० उपाध्याय तुलसीराम जी शास्त्री, जिन्हें वर्तमान राष्ट्रीय आन्दोलन में भारतीय दण्ड-विधान की १०८वीं धारा के अनुसार एक वर्ष का दण्ड दिया गया था। गाँधी-इर्विन समझौते के कारण २७वीं मार्च को अटक जेल से रिहा कर दिए गए, लेकिन घर पहुँचते ही अधिकारियों द्वारा उन्हें इस बात की सूचना दी गई कि उनका नाम "१० नम्बर के रिजिस्टर" (जिसमें बदमाशों और गुण्डों के नाम अङ्कित किए जाते हैं) में लिख लिया गया है। उन्हें इस बात की चेतावनी भी दी गई है कि बिना अधिकारियों की अनुमति के वे इस स्थान से कहीं नहीं जा सकते। इस घटना से ज़िले भर में बड़ा असन्तोष फैल गया है।

—अजमेर का २८वीं मार्च का समाचार है, कि वहाँ के राष्ट्रीय नेता श्री० जी० एस० पथिक, सम्पादक "राजस्थान-सन्देश" तथा प्रधान प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी के घर पर पुलिस ने धावा किया। तलाशी लेने पर उसे कोई इच्छित वस्तु वहाँ नहीं मिली। हाल ही में किसी ने अजमेर की रेलवे लाइन पर एक बम रख दिया था, जो ट्रेन आने के पहिले ही फट गया था। कहा जाता है, यह तलाशी इसी बम-काण्ड के सम्बन्ध में हुई थी।

—अमृतसर का २८वीं मार्च का समाचार है, कि 'फ़्री प्रेस' को मालूम हुआ है कि अमृतसर की जेल में रहने वाले समस्त विचाराधीन राजनैतिक तथा कुछ साधारण क़ैदियों ने २४वीं मार्च से अनशन करना आरम्भ कर दिया है। कारण जेल का दुर्व्यवहार बतलाया जाता है। इस अनशन से क्रुद्ध होकर अधिकारियों ने जेल-नियम की ५२वीं धारा के अनुसार श्री० केवलकृष्ण, देवराज, चिरौंजीलाल तथा श्री० जैरामसिंह आदि पर नया मामला चला दिया है। उनका कहना है, खाना न खाकर इन क़ैदियों ने जेल का अपमान किया है।

—मद्रास का समाचार है, कि स्वर्गीय सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु तथा श्री० सुखदेव की फाँसी के विरोध-स्वरूप मालाबार के अतिरिक्त पुलिस के जमादार श्री० कुमार नायर ने अपने पद से इस्तीफ़ा दे दिया है।

—नोआखाली (बङ्गाल) का समाचार है, कि वहाँ के मौलवियों और मौलानाओं की अध्यक्षता में एक महती सभा करके मुसलमानों ने भविष्य में कॉङ्ग्रेस का साथ देने का निश्चय कर लिया है,

—शेख़ूपुरा (पञ्जाब) का २८वीं मार्च का समाचार है, कि ज़िला-कचहरी के अर्ज़ीनवीस श्री० हरबंसलाल चोपड़ा का लाइसेन्स इसलिए रद्द कर दिया गया है, क्योंकि उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया था और इसी कारण उन्हें दफ़ा १०८ के अनुसार १ वर्ष का दण्ड दिया गया था। कहा जाता है, गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार उन्हें उनका पद मिल जाना चाहिए था, ख़ासकर जब कि आठ अर्ज़ीनवीसों की जगह वहाँ ख़ाली हैं।

—देहली षड्यन्त्र केस वाले मामले को चलाने के लिए पञ्जाब-कौन्सिल के मेम्बर और गोलमेज़ परिषद के सदस्य चौधरी ज़फ़रउल्ला पब्लिक प्रॉसीक्यूटर नियुक्त किए गए हैं। जिस ट्रिब्यूनल के सामने यह मुक़दमा चलेगा, अभी तक उसकी नियुक्ति नहीं हुई है।

* * *

श्री० सेनगुप्त का वक्तव्य

कराची का २६वीं मार्च का समाचार है, कि एक सभा में व्याख्यान देते हुए बङ्गाल के प्रतिभाशाली नेता श्री० जे० एम० सेनगुप्त ने कहा कि "६ महीने पहले जब मैं यहाँ था, तब ६० हज़ार देशभक्त जेलों के अन्दर पड़े हुए थे और उन पर लाठियों की वर्षा हो रही थी। उस समय नाना प्रकार की यातनाओं को झेलते रहने

श्री० सेनगुप्त

पर भी मैंने किसी के चेहरे पर उदासी न देखी थी, उनका चेहरा प्रसन्न था, परन्तु जेल से मुक्त होने पर भी प्रसन्न रहने के बदले तुम्हारे चेहरे पर आज मैं उदासी देख रहा हूँ। जेल से मुक्त होने के बाद मैं बराबर से यही कहता आया हूँ कि हिंसात्मक और अहिंसात्मक का भेदभाव किए बिना ही जब तक समस्त राजनीतिक बन्दी मुक्त नहीं किए जायँगे, तब तक समझौते की कोई आशा नहीं। दोनों के कार्य करने की प्रणाली में भिन्नता अवश्य थी, परन्तु उनका उद्देश्य एक था। इसलिए हिंसात्मक क़ैदियों के साथ भिन्न रूप से व्यवहार करना उचित प्रतीत नहीं होगा। साथ ही सरकार से नाना प्रकार से प्रार्थना करते रहने पर भी सरदार भगतसिंह आदि को फाँसी दे दी गई। आज हम लोगों के ऊपर शोक का पहाड़ टूट पड़ा है। उन आत्माओं के प्रति हमें श्रद्धा दिखानी चाहिए तथा महात्मा जी की आज्ञानुसार हमें चलने के लिए तैयार रहना चाहिए।"

* * *

बर्मा में अभी तक उपद्रव जारी है!

विद्रोहियों ने पुलिस-स्टेशन पर धावा किया :: सिपाहियों से भरी लॉरी पर भी आक्रमण हुआ

२२ विद्रोही मारे गए :: सरकारी विज्ञप्ति का सार

बर्मा-विद्रोह के सम्बन्ध में गवर्नमेण्ट की ओर से २६वीं मार्च को जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है, उसका सार इस प्रकार है:—

२५ तारीख़ को प्रातःकाल लगभग ६५ विद्रोहियों ने थोरवान-स्थित किमयाडी थाने पर हमला किया, किन्तु पुलिस ने उन्हें मार भगाया। इस मुठभेड़ में कहा जाता है ३ मरे और ४ घायल हुए। पुलिस ने एक बन्दूक़ तथा अन्य कई हथियार विद्रोहियों से छीन लिए। पुलिस वालों में से किसी को चोट तक नहीं आई।

विज्ञप्ति में यह भी कहा गया है कि जब विद्रोहियों का आक्रमण थाने पर हो ही रहा था, तभी डिस्ट्रिक्ट मेडिकल ऑफ़िसर पुलिस के एक जत्थे के साथ घटनास्थल पर पहुँच गए। विद्रोहियों ने डॉक्टर पर भी हमला कर दिया, जिससे उनके शिर में चोट आई। पुलिस ने फिर दो विद्रोहियों को मार डाला और बहुतों को घायल कर डाला गया। ठीक उसी समय पञ्जाबी पल्टन ने एक दूसरे बलवाइयों के कैम्प पर धावा बोल दिया। फलतः २२ विद्रोही जान से मार डाले गए और ७ जीवित गिरफ़्तार कर लिए गए, कहा जाता है विद्रोहियों का बहुत सा सामान भी ज़ब्त कर लिया गया है।

* * *

रङ्गून का बाद का समाचार है, कि बर्मा में विद्रोहियों का आतङ्क अभी तक जारी है, छोटे-मोटे हमले नित्य ही हुआ करते हैं, हाल ही में जङ्गल के मिस्टर पीकॉक नामक एक अङ्गरेज़ अफ़सर पर भयङ्कर हमला किया गया। बेचारे इन्सीन के अस्पताल में पड़े हैं। दूसरा समाचार है, कि रङ्गून से ४० मील की दूरी पर एक स्थान पर विद्रोहियों ने एक वृक्ष काट कर मार्ग में डाल दिया और जैसे ही पुलिस से भरी हुई लॉरी उससे टकराई वैसे ही पुलिस वालों पर विद्रोहियों ने हमला कर दिया। इस हमले का फल क्या हुआ, इसका कोई समाचार अभी तक नहीं आया है।

कॉङ्ग्रेस की डायरी

हमें खेद है स्थानाभाव के कारण बहुत से कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी समाचार 'भविष्य' के प्रस्तुत अङ्क में नहीं जा सके। आगामी अङ्क में पाठकों को कॉङ्ग्रेस की पूरी डायरी मिल जायगी।

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की फाँसी और उसके बाद

सरदार भगतसिंह के लिए श्री० बटुकेश्वरदत्त का सन्देश

फाँसी के तख्ते से सरदार भगतसिंह की गर्जना

उनका अन्तिम नारा क्या था? "ब्रिटिश-झण्डे का क्षय हो"

जेल के क़ैदियों ने "भगतसिंह ज़िन्दाबाद" के नारे लगाए

एक लाख व्यक्तियों का जुलूस :: महिलाएँ गले में काला कपड़ा लपेटे थीं

नेताओं ने यह दुखदाई समाचार कैसे सुना :: राष्ट्रपति बेहोश होते-होते बच गए

फाँसी कैसे दी गई? एसेम्बली में तहलका मच गया!

सरदार एकदम निश्चिन्त थे

२३ मार्च को सरदार और उनके साथियों से अन्तिम भेंट करने के लिए उनके घर वालों को सूचना तो दी गई थी, पर वे भेंट नहीं कर सके। पर 'मिलाप' को मालूम हुआ है कि उस दिन सरदार भगतसिंह अपनी कोठरी में बैठे हुए ऊँचे स्वर से गा रहे थे। केवल यही पद सुनाई पड़ा—

मेरा रँग दे बसन्ती चोला;
इसी रङ्ग में रँग के शिवा ने
माँ का बन्धन खोला।

* * *

फाँसी कैसे दी गई?

जब हाईकोर्ट में दी हुई दोनों दरख़्वास्तें नामन्ज़ूर हो गईं, तब लाहौर की सेण्ट्रल जेल में फाँसी देने का प्रबन्ध किया जाने लगा। साधारणतः फाँसी प्रातःकाल दी जाया करती है, पर सरदार को रात में ही ख़तम कर डालने का निश्चय कर लिया गया था। 'उर्दू 'प्रताप' को ख़ास तौर पर मालूम हुआ है कि चार से छः बजे तक जेल का यह हाल था, कि जेल के जो वार्डर बाहर थे, वे बाहर ही रह गए और जो अफ़सर भीतर थे, वे भीतर ही रह गए। जेल के सभी दरवाज़े बन्द कर दिए गए। एक कमरे में जेल-सुपरिण्टेण्डेण्ट, एक मैजिस्ट्रेट और पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट बैठे हुए थे। जेल के बाहर और भीतर ज़बर्दस्त पहरे का प्रबन्ध था। ७ बज कर ३५ मिनट पर तीनों देशभक्त कोठरियों से निकाले गए। उनकी आँखों पर टोपी पहनाई गई और फाँसी के तख़्ते पर वे खड़े कर दिए गए। मालूम हुआ है, कि ठीक इसी समय 'डाउन-डाउन विद यूनियन जैक' (ब्रिटिश झण्डे का क्षय हो) के नारे लगाए गए, जो आधे मिनट तक लगते रहे। फिर आवाज़ें बन्द हो गईं। उसके बाद तीनों लाशें स्ट्रेचर पर रक्खी गईं और दीवार के एक छेद से बाहर कर दी गईं। फाँसी लग चुकी, पर जो अफ़सर जेल के भीतर थे, वे बाहर नहीं हुए। कहा जाता है, कि उनका भोजन भी वहीं भेजा गया। फाँसी के समय सेन्ट्रल जेल सभी क़ैदी बैरकों में बन्द कर दिए गए थे।

दूसरी रिपोर्ट

सहयोगी 'मिलाप' को पता चला है, कि पहले ठीक सात बजे सरदार भगतसिंह के गले में फाँसी का फन्दा डाला गया। सरदार साहब ने बड़े ऊँचे स्वर में अपने दोनों साथियों से विदा ली। जवाब में उन्होंने 'भगतसिंह ज़िन्दाबाद' का नारा लगाया। इस तरह उनका नारा लगाना था, कि सेण्ट्रल जेल के राजनीतिक तथा साधारण क़ैदियों को सिगनल मिल गया। यद्यपि सभी क़ैदी अपनी-अपनी बैरकों में उस वक़्त बन्द किए जा चुके थे, तो भी उन्होंने ज़ोर-ज़ोर से 'भगतसिंह ज़िन्दाबाद' के गगन-भेदी नारे लगाए। उनके नारे जेल के बाहर भी सुने जाते थे। सरदार के बाद श्रीयुक्त राजगुरु को और अन्त में श्रीयुक्त सुखदेव को फाँसी दी गई। शहीदों की भस्म भी नहीं दी गई। २४ मार्च को प्रातःकाल

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह

नगर के विभिन्न मुहल्लों में ज़िला मैजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर से निम्न-लिखित पोस्टर चिपके हुए पाए गए—

"सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि कल शाम को भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को फाँसी दे दी गई और इसके बाद जेल के बाहर लाश ले जाकर सतलज के किनारे भस्म कर दी गई और राख नदी में बहा दी गई।"

लाश के टुकड़े

कहा जाता है, कि श्रीमती पार्वती देवी और भगतसिंह की बहिन को श्मशान के पास एक टूटे हुए पुल के नीचे लाश के अधजले टुकड़े मिले हैं। उन्हें लॉरी में लाहौर लाया गया।

तब प्रायः एक लाख व्यक्तियों का एक जुलूस, जिसमें सभी नङ्गे सिर एवं नङ्गे पाँव थे, सरदार भगतसिंह तथा उनके साथियों का फ़ूल लेकर निकला, जो सभी प्रमुख सड़कों पर घूमा। महिलाएँ गले में काला कपड़ा लपेटे हुए थीं। जुलूस ठीक वहाँ जाकर समाप्त हुआ, जहाँ लाला जी की अन्त्येष्टि हुई थी। लोगों के चलने से इतनी धूल आकाश में उड़ रही थी कि दूर तक देखा तक नहीं जा सकता था तथा जहाँ तक दृष्टि जाती थी, नर-मुण्ड ही नर-मुण्ड दिखाई देता था। जब सारा जन-समुदाय रावी-तट पर बैठ गया, तो डॉ० पुरुषोत्तम शर्मा ने सरदार भगतसिंह की मृत्यु पर महात्मा जी के वक्तव्य को हिन्दी में पढ़ सुनाया। सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह ने बताया कि किस तरह एवं कब सरदार तथा उनके साथियों का अन्तिम संस्कार किया गया। शव के भस्मावशेष की चर्चा करते समय वे कई बार फूट-फूट कर रो पड़े थे, जिससे समस्त जनसमुदाय, ख़ासकर महिलाएँ भी उसी तरह फूट-फूट कर रोने लगी थीं। सर्वत्र घोर उदासी छाई थी।

पञ्जाब-सरकार की विज्ञप्ति

पञ्जाब-सरकार ने निम्न-लिखित विज्ञप्ति निकाली है:—

"पत्रों और अन्यान्य साधनों द्वारा भगतसिंह, सुखदेव व राजगुरु के अन्तिम संस्कार के विषय में भाँति-भाँति की झूठी अफ़वाहें फैल रही हैं। इसलिए सच्चे हालात प्रकाशित करना आवश्यक है। २३ मार्च को ८॥ बजे रात को लाहौर सेण्ट्रल जेल से एक लॉरी में लाद कर तीनों लाशें निकाली गईं। इनके साथ दो लॉरियाँ ईंधन आदि की थीं, उनमें पुलिस के प्रहरी भी सवार थे। सतलज के तट पर क़ैसरेहिन्द पुल के पास ये लॉरियाँ पहुँचीं। गण्डासिंहवाला के पास एक आचार्य और एक ग्रन्थी भी आ मौजूद हुए। पौने बारह बजे रात को चितारोहण हुआ और ४ बजे तक आग इतनी बुझ चुकी थी कि भस्म हटाई जा सके। दोनों शास्त्रज्ञों से परामर्श लेकर मङ्गलवार को सुबह ४ बजे भस्म एकत्रित करके एक लॉरी में रक्खी गई। वह लॉरी लाहौर के फ़ीरोज़पुर-पुल के समीप पहुँची और सवेरे पौने ६ बजे सतलज की निम्न धारा में भस्म बहा दी गई। शव बिल्कुल जल चुके थे और उनका कोई अङ्ग न छूटने पाया था। उक्त आचार्य एवं ग्रन्थी ने सभी आवश्यक धार्मिक संस्कार किए थे। यह बयान बिल्कुल ग़लत है कि जलाने के पहले लाशों को टूक-टूक कर दिया गया था। यह भी सच नहीं है, कि भारतीय अथवा गोरी पलटन लाशों के साथ गई थीं। २४ तारीख़ की दोपहर

को अन्त्येष्टि के सम्बन्ध में डिप्टी कमिश्नर ने जो विज्ञप्ति निकाली थी, वह उक्त कार्यक्रम को जानते हुए प्रकाशित की गई थी। जेल-विधान के अनुसार बन्दियों के शव उनके सम्बन्धियों को इसलिए नहीं दिए गए, कि अन्तिम संस्कार के अवसर पर प्रदर्शन होंगे और जन-शान्ति भङ्ग होने की आशङ्का उत्पन्न हो जाएगी।"

नेताओं ने किस तरह समाचार सुना

२३ मार्च को ६॥ बजे रात की गाड़ी से कराची कॉङ्ग्रेस में शामिल होने के लिए जब दिल्ली स्टेशन पर नेता लोग पहुँच चुके थे, तब सबके चेहरों पर उदासी छाई हुई थी। कारण, टेलीफ़ोन से यह मालूम हो गया था, कि लाहौर में ७ बजे सरदार भगतसिंह, श्रीयुक्त सुखदेव और श्रीयुक्त राजगुरु को फाँसी दे दी गई। पं० जवाहरलाल नेहरू, मालवीय जी और महात्मा जी की आँखों में आँसू थे। पं० जवाहरलाल नेहरू ट्रेन चलते हुए रोते-रोते गिरते-गिरते बचे, जो कठिनाई से सँभाले गए।

श्रीयुक्त सेनगुप्त की राय

कराची में श्रीयुक्त सेनगुप्त ने कहा है कि "तमाम राष्ट्र की पुकार की ओर ध्यान न देकर पुरानी सिविलियन मनोवृत्ति का परिचय दिया गया है। इस समय नौकर-शाही ने जो नया वार चलाया है, उससे हमें सावधान रहना चाहिए। एकता में अनेकता उत्पन्न न होनी चाहिए और न शत्रु की यही अभिलाषा पूर्ण होनी चाहिए कि महात्मा गाँधी के अविच्छिन्न नेतृत्व में आघात पहुँचे। शहीदों की आत्मा को शान्ति प्राप्त हो और भारत और भी अधिक शीघ्रता से अहिंसात्मक साधनों से स्वतन्त्रता प्राप्त करे।"

एसेम्बली में शोक-प्रकाश

२४ मार्च को दिल्ली में प्रश्न-काल के समाप्त होते ही श्री० रङ्गाचारियर ने एसेम्बली में निम्न-लिखित घोषणा की—"हार्दिक शोक और घोर क्रोध के साथ मैं यह बयान देने के लिए खड़ा हुआ हूँ। गत ७ अक्टूबर को एक स्पेशल ट्रिब्यूनल ने भगतसिंह और उनके दो साथियों को जो प्राणदण्ड दिया था, कल रात को वह कार्यरूप में परिणत कर दिया गया। हम सरकार की इस हरकत पर शोक और रोष प्रकट करते हैं। इस मुक़दमे के हालात सबको मालूम हैं। उन कारणों को दोहराना अनावश्यक है, जिनसे प्रेरित होकर अभियुक्तों की पीठ पीछे ऑर्डिनेन्स द्वारा विशेष प्रबन्ध करके यह मामला चला था और इस कार्रवाई का यह परिषद सर्वदा विरोध करती रही है। जनसाधारण के बहुमत का विश्वास है, कि कम से कम भगतसिंह का तो उस अपराध से कोई सम्बन्ध न था, जिसके कारण उन्हें फाँसी पर टाँग दिया गया है। इस विषय में लोकमत का प्रदर्शन विभिन्न रूप से सरकार के आगे किया जा चुका है। जनता को पूर्ण विश्वास था और अहोरात्रि उसकी यही प्रार्थना थी, कि सरकार उस सबल लोकमत का ख़्याल करे, जिसे भारत की उस महान् आत्मा ने प्रकट कर दिया था। सरकार ने जनमत को ठुकरा दिया है और हमारे विचार में ऐसा कार्य किया है, जिसका भयङ्कर परिणाम होगा। जनमत की इस उपेक्षा से सरकार ने स्वयं अपने और देश के लिए भी भीषण आपत्ति का आह्वान किया और कर रही है। न्याय के साथ दया भी दिखाई जाती, तो सरकार का सम्मान बढ़ जाता। पर दुःख है कि सरकार नेक सलाह पर कोई विचार नहीं करती। इस समय जिस शान्त वातावरण की आवश्यकता थी, वह दूर हो गया है। हम इससे हार्दिक क्रोध और शोक प्रकट करते हैं। एसेम्बली की आज की कार्यवाही में हम कोई भाग न लेंगे।" श्रीयुत रङ्गाचारियर के बयान के बाद सरदार भगतसिंह और उनके साथियों के प्राणदण्ड के प्रतिवाद-स्वरूप नेशनलिस्ट पार्टी के सब मेम्बर परिषद्-भवन से उठ कर चले आए। इस बयान का जवाब देने के लिए सर जेम्स क्रेरार खड़े तो हुए, पर वाग्बाणों से जर्जर हो गए। उन्होंने सरकार की ओर से कहा कि "आप लोगों

स्वर्गीय श्री० शिवराम राजगुरु

को कोई शिकायत तो न होनी चाहिए, क्योंकि सरकार यह बात कभी नहीं मान सकती कि इस मामले में बन्दियों के साथ पूरा न्याय नहीं हुआ। सरकार का निश्चित-मत है, कि प्रतिवादी पक्ष को अपने पक्ष में सभी प्रमाण देने का पूरा मौक़ा दिया गया। ब्रिटिश साम्राज्य के, सब से बड़े न्यायालय द्वारा विचार किया जा चुका है। जिस कारण यह मामला चला, उससे तमाम भारत में हलचल मच गई थी। इसे कोई मेम्बर अस्वीकार नहीं कर सकता। सरकार ने मामले के सभी अङ्गों पर भली-भाँति विचार कर, दण्डाज्ञा को न्याय-पूर्ण ही पाया। सरकार यदि इस मामले में दया-प्रदर्शन कर सकती, तो उसे सन्तोष होता, परन्तु सब बातों को ध्यान में रखते हुए दया-प्रदर्शन करने पर सरकार भारत के प्रति अपना कर्तव्य पालन करने से वञ्चित हो जाती। क़ानून की रक्षा के लिए आवश्यक था, कि दण्डाज्ञा कार्य में परिणत कर दिखाई जाय।"

शोक-प्रदर्शन

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह, श्री० शिवराम राजगुरु तथा श्री० सुखदेव की फाँसी का विरोध केप कैमोरिन से हिमालय तक—प्रत्येक शहर, क़सबे और गाँव में किया गया है। हड़ताल और जुलूसों के जो समाचार हमारे पास आए हैं, उन सभों को 'भविष्य' में प्रकाशित करना स्थानाभाव के कारण एक बार ही असम्भव है।

मेम्बर यह कह कर उठ कर बाहर चले गए कि "हम यह उपदेश सुनने नहीं आए।" श्री० एस० सी० मित्र, श्री० डी० के० लाहिड़ी और मि० सादिक़ हुसेन, तीनों इण्डिपेण्डेण्ट मेम्बर भी उठ कर चले गए।

सर अब्दुर्रहीम ने कहा, कि विरोधी दल की अनुपस्थिति में इस वर्ष के सब से महत्वपूर्ण प्रस्ताव फ़ाइनेन्स बिल पर विचार स्थगित रक्खा जाय, क्योंकि सरकार को अभी मनमानी करने का मौक़ा मिल गया है। सरकार की ओर से इसका विरोध करते हुए बिल का फ़ैसला करने पर ज़ोर दिया गया। अध्यक्ष ने कहा, कि ऐसे महत्वपूर्ण विषय को किसी दल-विशेष की इच्छा पर मैं छोड़ना नहीं चाहता। इसलिए दूसरे मामलों का निपटारा होने के बाद कल शाम तक फ़ाइनेन्स बिल का निर्णय कर लिया जायगा। अतएव पोस्टल बिल पर वाद-विवाद होने के उपरान्त बैठक दूसरे दिन के लिए स्थगित कर दी गई।

सरदार भगतसिंह का अन्तिम पत्र

फाँसी पर लटकाए जाने के पहले सरदार भगतसिंह, श्रीयुक्त शिवराम राजगुरु और श्रीयुक्त सुखदेव ने लाहौर सेण्ट्रल जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट के द्वारा पञ्जाब के गवर्नर को यह पत्र भेजा था:—

"उचित सम्मान के साथ हम नीचे लिखी बातें आपकी सेवा में उपस्थित करना चाहते हैं:—

"हम लोगों को १९३० की ७वीं अक्टूबर को उस अङ्गरेज़ी अदालत अर्थात् स्पेशल ट्रिब्यूनल ने फाँसी की सज़ा दी थी, जो भारत में अङ्गरेज़ी शासन के प्रधान वायसराय द्वारा जारी किए हुए "स्पेशल लाहौर कॉन्सपिरेसी केस ऑर्डिनेन्स" के अनुसार नियुक्त हुआ था। हम लोगों के विरुद्ध प्रधान अभियोग महाराज पञ्चम जॉर्ज याने इङ्गलैण्ड के महाराज के विरुद्ध युद्ध करने का लगाया गया था। उक्त अदालत के निर्णय से दो बातें निश्चित हो जाती हैं—पहली यह कि अङ्गरेज़ राष्ट्र और भारतीय राष्ट्र के बीच युद्ध की अवस्था उपस्थित है और दूसरी यह कि, हम लोगों ने वास्तव में उस युद्ध में भाग लिया था, जिससे हम युद्ध के क़ैदी हैं।

"दूसरी बात कुछ आत्मश्लाघा-सी जान पड़ती है, किन्तु फिर भी हम इसे स्वीकार करने ही की नहीं, बल्कि इसके लिए अपने को महान् प्रतिष्ठा-प्राप्त समझने की अपनी इच्छा को दबा नहीं सकते। पहली के सम्बन्ध में हम कुछ विस्तार में जाने को लाचार हैं। उक्त वाक्य से जैसा प्रकट होता है, वैसा युद्ध प्रत्यक्ष नहीं दिखाई देता है। हम नहीं जानते, कि 'युद्ध करने' का अर्थ अदालत ने क्या लगाया, किन्तु हम इसे यथार्थ अर्थों में स्वीकार करना चाहते हैं। पर अपना विचार स्पष्ट करने के लिए कुछ विस्तृत व्याख्या की आवश्यकता जान पड़ती है।

युद्ध जारी है

"हम यह कहना चाहते हैं, कि युद्ध छिड़ा हुआ है और यह तब तक जारी रहेगा, जब तक मुट्ठी भर शक्तिशाली लोगों ने मिहनत-मज़दूरी करने वाले भारतीयों और जन-साधारण के प्राकृतिक साधनों पर अपने स्वार्थ-साधन के लिए अधिकार जमा रक्खा है। इस प्रकार स्वार्थ साधने वाले चाहे अङ्गरेज़ पूँजीपति हों या हिन्दुस्तानी उन्होंने आपस में मिल कर लूट जारी कर रक्खी हो या शुद्ध भारतीय पूँजी से ही ग़रीबों का ख़ून चूसा जा रहा हो, इन बातों से अवस्था में कोई अन्तर नहीं आता। कुछ परवाह नहीं, यदि आपकी सरकार नेताओं वा भारतीय समाज के चौधरियों को थोड़े सुभीते देकर अपनी ओर मिला लेने में सफल हो जाए और समझौता हो जाय। किन्तु जन-साधारण पर इसका बहुत कम असर पड़ता है। इसकी कुछ परवाह नहीं, अगर एक बार फिर नौजवानों से विश्वासघात किया गया है। इस बात का भी दुःख नहीं, अगर हमारे राजनीतिज्ञ फिसल गए हैं और वे सुलह की बातचीत में उन गृहहीन और दरिद्र देवियों को भूल गए हैं, जो दुर्भाग्यवश क्रान्तिकारी दल की मेम्बर समझी जाती हैं और हमारे राजनीतिज्ञ उन्हें अलग अपना दुश्मन समझते हैं, क्योंकि उनके विचार

में वे 'हिंसा में विश्वास रखती हैं।' इन वीर देवियों ने निस्सन्देह अपना सब कुछ बलिदान कर दिया है। उन्होंने अपने पतियों को बलिदान किया और बलिदान के लिए पेश किया, अपने भाइयों को भेंट चढ़ा दिया और जो कुछ उनके पास था सब कुछ निछावर कर दिया, बल्कि अपने आप को भी निछावर कर दिया। लेकिन आपकी सरकार उन्हें बाग़ी ख़्याल करती है। आपके एजेण्ट भले ही झूठी कहानियाँ गढ़-गढ़ कर उन्हें बदनाम करें और पार्टी को बदनाम कर लें, लेकिन युद्ध तब भी जारी रहेगा।

युद्ध के भिन्न-भिन्न रूप

"हो सकता है, कि युद्ध भिन्न-भिन्न समयों में भिन्न रूप ग्रहण कर ले। किसी समय यह प्रकट रूप धारण कर सकता है और कभी छिपे रूप में हो सकता है। कभी हलचल मचाने वाले आन्दोलन का रूप पकड़ सकता है और कभी-कभी भयङ्कर रूप धारण करके जीवन-मरण का दृश्य उपस्थित कर सकता है। चाहे जिस रूप में भी यह युद्ध हो, उसका प्रभाव आप पर पड़ेगा। यह आपकी इच्छा है, कि चाहे जो रूप पसन्द कर लें, लेकिन यह युद्ध जारी रहेगा। इस में छोटी-छोटी बातों की परवाह नहीं की जायगी। बहुत सम्भव है कि यह युद्ध भीषण रूप धारण कर ले। नए उत्साह, बढ़ी हुई दृढ़ता और अटल स्थिरतापूर्वक यह युद्ध तब तक चलता रहेगा, जब तक साम्यवादी प्रजातन्त्र की स्थापना नहीं हो जाती और वर्तमान समाज के स्थान में नए सिरे से समाज का ऐसा सङ्गठन नहीं हो जाता, जिससे स्वार्थियों के स्वार्थ-साधन बन्द हो जायँ और समाज एवं मानव जाति को सच्ची शान्ति मिले।

अन्तिम युद्ध

"बहुत शीघ्र ही अन्तिम युद्ध छिड़ेगा और उसमें आख़िरी फ़ैसला हो जायगा। साम्राज्यवाद और पूँजीवाद अब थोड़े ही दिनों के मेहमान और हैं। यही युद्ध है, जिसमें हमने खुल कर भाग लिया है और इसके लिए हमें गर्व है। हमने इस युद्ध को नहीं शुरू किया है और न हमारे जीवन के साथ यह समाप्त ही होगा। यह तो ऐतिहासिक घटनाओं और वर्तमान समाज के परिणाम-स्वरूप है। हमारा बलिदान तो इतिहास के उस अध्याय में वृद्धि करने वाला होगा, जिसे मारे यतीन्द्र दास और कॉमरेड भगवतीचरण के अद्वितीय बलदानों ने प्रकाशमान बना दिया है। अब रही अपनी बात, सो हम इस विषय में इतना ही कहेंगे, कि आपने जब हमें फाँसी पर लटकाने का निश्चय ही कर लिया है, तो आप ऐसा करेंगे। आपके हाथों में शक्ति है और आपको अधिकार प्राप्त है। लेकिन हम यह कहना चाहते हैं कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का सिद्धान्त आपके सामने ......आप उसीके अनुसार काम कर रहे हैं। इस कथन को सिद्ध करने के लिए हमारे मुक़दमे की कार्रवाई ही काफ़ी है। हमने कभी प्रार्थना नहीं की और न हम किसी से दया-भिक्षा माँगते हैं और न उसकी आशा ही रखते हैं। हम केवल यही बताना चाहते हैं कि आपकी अदालत के निर्णय के अनुसार हम युद्ध में प्रवृत्त रहे हैं और इसलिए युद्ध-क़ैदी हैं। इसी से हम चाहते हैं कि हमारे साथ वैसा ही बर्ताव किया जाय अर्थात् हमारा दावा यह है कि हमें फाँसी न देकर गोली से उड़ा देना चाहिए। अब यह सिद्ध करना आपके हाथ है, कि आप गम्भीरतापूर्वक वैसा ही समझते हैं, जैसा आपकी अदालत ने कहा है और इसे कार्य द्वारा सिद्ध करें।

"हम बड़ी उत्सुकता से आपसे निवेदन करते और आशा करते हैं, कि आप बहुत कृपा करके सेना-विभाग को हुक्म देंगे कि हमें प्राणदण्ड देने को वह एक सैनिक-दस्ता या गोली मारने वालों की टुकड़ी भेजे। आशा है कि आप हमारी यह बात स्वीकार करेंगे, जिसके लिए हम आपको पहले ही से धन्यवाद दे देना चाहते हैं।"

श्री० बटुकेश्वर दत्त का पत्र

सरदार भगतसिंह के साथ एसेम्बली बम-काण्ड में जन्म भर के लिए कालेपानी की सज़ा पाए हुए श्रीयुत बटुकेश्वर दत्त ने सलेम जेल से सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह को एक पत्र भेजा था, जिसमें उन्होंने लिखा था कि, "मेरे जीवन में यह पहला ही अवसर है, कि मैं आपको पत्र लिख रहा हूँ। लेकिन इस नाज़ुक मौक़े पर जब मेरे प्यारे कॉमरेड सरदार भगतसिंह की क़िस्मत का फ़ैसला होने वाला है, यह बहुत ही कठिन मालूम पड़ता है, कि मैं इस चिट्ठी को किस तरह शुरू करूँ। तो भी अवस्था मुझे कुछ शब्द लिखने को लाचार करती है। अगर आपके दिल को इससे कुछ रञ्ज पहुँचे तो मैं आशा करता हूँ, कि आप मुझे इसके लिए क्षमा करेंगे। सरदार जी, यह तो आप अच्छी तरह जानते हैं कि मेरा भगतसिंह से क्या सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध भ्रातृ-भाव के प्रेम और मित्रता का है, जिसे मानव-जाति के कल्याण के क्षेत्र में हमारे सम्मिलित दायित्व ने और
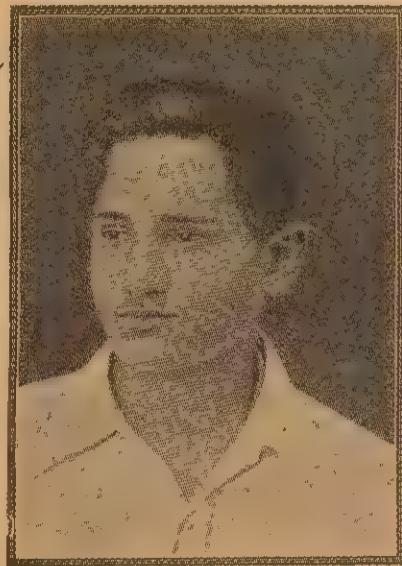
श्री० बटुकेश्वर दत्त

भी मज़बूत कर दिया है। प्रेम का यह स्रोत मेरे हृदय में उमड़ रहा है और इसने मुझे लाचार कर दिया है कि मैं उच्च अफ़सरों से यह प्रार्थना करूँ, कि यदि मेरा भाग्य साथ नहीं देता कि अपने उन मित्रों का, जिनके ऊपर काली घटाएँ घिर रही हैं, अन्त तक साथ दे सकूँ तो मुझे कम से कम इतना मौक़ा दे दिया जाय कि मैं उनका आख़िरी दर्शन कर सकूँ और इस अवसर पर अपने प्रेम-भाव का परिचय दे सकूँ और हम सदा के लिए एक दूसरे से पृथक् होने के पहले एक-दूसरे का अन्तिम अभिवादन कर सकें। लेकिन मुझे बहुत ही अफ़सोस है कि अफ़सरों ने एक ऐसे आदमी के भाव की परवाह नहीं की, जिसे अपने प्यारे मित्र के शोकजनक वियोग के बाद जेल की चहारदीवारी के भीतर ज़िन्दा ही गड़ जाना है। सरदार से मिलने की मेरी प्रार्थना अस्वीकार कर दी गई। और क्या लिखूँ ? यदि सम्भव हो तो मेरे ये भाव मेरे साथी सरदार तक पहुँचा दें। मैं अनुभव करता हूँ :—

आज़माइश है कड़ी,
लब पर कोई शिकवा न हो।
फिर मिलेंगे जा यक़ीं,
दिल में कोई धड़का न हो॥

आपका,
बटुकेश्वर दत्त

* * *

सरदार भगतसिंह का संक्षिप्त चरित्र

सरदार भगतसिंह के जीवन के जो हाल उनके पूज्य पिता सरदार किशनसिंह जी से मालूम हुए हैं, वे बड़े मनोरञ्जक हैं। सरदार भगतसिंह का जन्म १६०७ ई० में ग्राम बङ्गा, ज़िला लायलपुर में हुआ। अभी आप ३ वर्ष के ही थे, कि आपको सारा गायत्री मन्त्र याद हो गया था। बाल्यावस्था से ही इनमें नेतृत्व का शौक़ था और वह शिवाजी की तरह अपने मित्रों के दल बना कर सैनिकों की तरह युद्ध-क्रीड़ा किया करते थे। कहते हैं कि एक बार ला० पिण्डीदास ने सरदार भगतसिंह से, जब वे अभी बच्चे ही थे, पूछा कि तुम बड़े होकर क्या काम किया करोगे ! बालक भगतसिंह ने तोतली पञ्जाबी में उत्तर दिया कि 'मैं बन्दूकाँ बेचा करूँगा' अर्थात् मैं बन्दूकें बेचा करूँगा। यह उत्तर उनके सैनिक भाव का प्रकाशक था। प्रारम्भिक शिक्षा उन्होंने अपने गाँव के स्कूल में प्राप्त की। बाल्यावस्था में इनके लालन-पालन का भार इनकी चची अर्थात् सरदार अजीतसिंह (जो इस समय देश से बाहर निर्वासन का जीवन बिता रहे हैं) की धर्मपत्नी पर था। सरदार भगतसिंह की दादी इन्हें 'भागोवाला' अर्थात् सौभाग्यवान के नाम से पुकारा करती थीं। प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त करने के अनन्तर सरदार भगतसिंह लाहौर के दयानन्द ऐङ्ग्लो वैदिक स्कूल लाहौर में भर्ती हुए। अभी एण्ट्रेन्स में ही पढ़ते थे कि असहयोग आन्दोलन आरम्भ हो गया और वे लाहौर में राष्ट्रीय कॉलेज में जो उन्हीं दिनों खोला था, पढ़ने लगे। सरदार भगतसिंह को अध्ययन का बड़ा शौक़ था। राष्ट्रीय कॉलेज में उन्हें भिन्न देशों के राष्ट्रीय तथा राजनीतिक इतिहास पढ़ने का बड़ा अवसर मिला। साम्यवाद और रूस के क्रान्तिकारी आन्दोलन पर आपने बहुत सी पुस्तकें पढ़ीं। यह कहने में अतिशयोक्ति न होगी कि सरदार भगतसिंह की अङ्गरेज़ी भाषा तथा साहित्य की योग्यता किसी अच्छे से अच्छे ग्रेजुएट से कम नहीं थी। उनके जितनी पुस्तकें किसने पढ़ी होंगी ? कई पुस्तकों को जो उनके भावों से मेल खाती थीं, उन्होंने कई-कई बार पढ़ा और उत्तम पुस्तकों के पृष्ठों के पृष्ठ उन्हें कण्ठस्थ हो गए। ऐतिहासिक नाटक खेलने का उन्हें बड़ा शौक़ था। राष्ट्रीय क्लब बनाया हुआ था, जिसमें वे स्वयं वीर-रस से पूर्ण पाट किया करते थे। एक बार वीर लालसिंह के नाटक में आपने ऐसा पार्ट किया कि देखने वाले मुग्ध हो गए। इन्हीं दिनों में आपने युवकों में राष्ट्रीय काम के लिए रुचि उत्पन्न करने तथा उन्हें सङ्गठित करने के उद्देश्य से नौजवान भारत सभा की स्थापना की। इस सभा के आप ही जन्मदाता थे। १६२७ ई० में आपकी सगाई का प्रबन्ध हुआ तो सरदार भगतसिंह घर से भाग गए और कानपुर के हिन्दी पत्र 'प्रताप' में बलवन्तसिंह के नाम से काम करने लगे। जब गङ्गा और जमुना में बाढ़ आई तो आपने मिस्टर बी० के० दत्त के साथ मिल कर बाढ़-पीड़ितों की सहायता का अति हितकर कार्य किया। इसके बाद आप कानपुर के समीप एक राष्ट्रीय स्कूल में हेडमास्टर के तौर पर काम करते रहे और अपना अधिक समय गुमनामी में व्यतीत किया। दिल्ली में भी उन्होंने बहुत काल निवास किया। अप्रैल १६२६ ई० को असेम्बली में बम फेंकने की घटना हुई। इसके बाद मुक़द्दमा चला और जन्म भर के कालेपानी की सज़ा हुई। फिर लाहौर षड्यन्त्र केस में फाँसी की सज़ा १६३० के ७ अक्टूबर को मिली। २३ मार्च १६३१ ई० को प्रायः ७॥ बजे शाम को आपको फाँसी दे दी गई।

"विश्वमित्र"

* * *

पञ्जाब के अधिकारियों की लॉर्ड इर्विन को धमकी

"यदि फाँसी की सज़ा रद्द की गई तो हम एक साथ इस्तीफ़ा दे देंगे"

श्री० आसफ़ अली को सरदार भगतसिंह से क्यों नहीं मिलने दिया गया ?

निम्न-लिखित तार लाहौर-स्थित 'फ़्री प्रेस' के विशेष सम्वाददाता ने समाचार-पत्रों में प्रकाशित होने के लिए २३वीं मार्च को भेजा था, जो केवल 'सेन्सर' ही नहीं किया गया, बल्कि कहा जाता है, तार एकदम अधिकारियों द्वारा रोक लिया गया था। सरदार भगतसिंह आदि की फाँसी की सज़ा रुकवाने के लिए नेताओं ने जो-जो प्रयत्न किए थे, इस तार से सारी बातों पर अच्छा प्रकाश पड़ता है; पाठकों की जानकारी के लिए तार की नक़ल नीचे उद्धृत की जा रही है :—

"ऐसा प्रतीत होता है, कि महात्मा गाँधी ने सरदार भगतसिंह आदि की फाँसी की सज़ा रद्द कराने के लिए कोई उपाय उठा नहीं रक्खा। वायसराय से बार-बार

स्वर्गीय श्री० सुखदेव

इस सम्बन्ध में ज़ोर दिया गया। महात्मा जी का अन्तिम प्रयास २१वीं मार्च की सुबह किया गया था, जब कि वे महामना पं० मदनमोहन मालवीय तथा अन्य कई कॉङ्ग्रेस के नेताओं सहित लॉर्ड इर्विन से मिलने गए थे। सुना है महात्मा गाँधी से वायसराय ने अन्त में कहा था कि फाँसी की सज़ाओं को वे काले-पानी में तो नहीं बदल सकते, पर अधिक से अधिक ३री या ४थी अप्रैल तक फाँसी को रोक सकते हैं। ताकि कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन सकुशल समाप्त हो जाय। कहा जाता है, महात्मा जी ने एक सप्ताह के हेर-फेर में कोई लाभ नहीं देखा और अन्त में उन्हें यही कहना पड़ा कि यदि वे फाँसी देना ही चाहते हैं तो निश्चित तिथि को कॉङ्ग्रेस के अधिवेशन के पूर्व ही इन नौजवानों को फाँसी पर लटकाया जा सकता है, ताकि देश को भी इस बात का पता चल जाय कि देश कहाँ तक पहुँच पाया है, यदि पहिले ही फाँसी लगा दी गई तो कॉङ्ग्रेस की परिस्थिति का अन्दाज़ा लगाने में भी सुविधा हो सकती है।

कहा जाता है वायसराय की इस मुलाक़ात के पूर्व ही महात्मा गाँधी ने अपने सामने ही एक वक्तव्य (Manifesto) तैयार करा के श्री० आसफ़ अली के हाथ इसलिए लाहौर भेजा था, ताकि वे इस पर स्वर्गीय सरदार भगतसिंह आदि के वे हस्ताक्षर करा लावें, जिससे उनकी फाँसी के सम्बन्ध में लिखा-पढ़ी करने में सुविधा हो सके। महात्मा जी ने इन नौजवानों के लिए एक सन्देश भी भेजा था। लेकिन श्री० आसफ़ अली को इन स्वर्गीय नौजवानों से मिलने तक नहीं दिया गया।

लाहौर में ३ दिन ठहरने के पश्चात उन्हें पञ्जाब-गवर्नमेण्ट के होम-मेम्बर का एक पत्र इस आशय का मिला, कि जो वक्तव्य वे सरदार भगतसिंह आदि को दिखाने अथवा हस्ताक्षर कराने के उद्देश्य से अपने साथ लाए हैं, उसकी एक नक़ल यदि वे उन्हें भेजें तो उनसे भेंट कराने के प्रस्ताव पर विचार किया जा सकता है। श्री० आसफ़ अली ने ऐसा करने से साफ़ इन्कार कर दिया और इस प्रकार आपकी अन्तिम मुलाक़ात स्वर्गीय सरदार भगतसिंह आदि से न हो सकी।

'फ़्री प्रेस' को विश्वस्त सूत्र से इस बात का पता चला है, कि यद्यपि लॉर्ड इर्विन सरदार भगतसिंह आदि को फाँसी देने के पक्ष में स्वयं नहीं थे किन्तु पञ्जाब-गवर्नमेण्ट के लगभग सभी अङ्गरेज़ अफ़सरों ने लॉर्ड इर्विन को इस बात की धमकी दी थी, कि यदि उन्होंने फाँसी की इस सज़ा को रद्द कर दिया, तो वे एक साथ अपने पदों से इस्तीफ़ा दे देंगे।

क्या सरदार भगतसिंह आदि की अन्त्येष्टि क्रिया धर्मानुसार हुई थी ??

पञ्जाब के सिक्खों में असन्तोष

सिक्ख-नेता ज्ञानी शेरसिंह जी का वक्तव्य

अन्यत्र प्रकाशित समाचारों से पाठकों को पता लगेगा, कि यद्यपि गवर्नमेण्ट की विज्ञप्ति का कहना है, कि सरदार भगतसिंह आदि की अन्त्येष्टि क्रिया धर्मानुसार और विधिपूर्वक सम्पन्न हुई थी; किन्तु पञ्जाब की जनता को जो प्रमाण अब तक अन्यथा प्राप्त हो सके हैं, उनके बल पर वह इस आश्वासन पर विश्वास-करने को तैयार नहीं है। गवर्नमेण्ट का कहना है, कि दाह-कर्म के पश्चात् फूलादि सतलज में डाल दिया गया था, किन्तु यह भी सत्य प्रतीत होता है कि अधजले (झौंसे हुए) कुछ लाश के टुकड़े उसी स्थान से पाए गए हैं, जहाँ इन नवयुवकों की अन्त्येष्टि क्रिया की गई थी और लाहौर में इन्हीं टुकड़ों के शव का जुलूस निकाला गया था, जिसके पीछे एक लाख व्यक्तियों की भीड़ थी। इस सम्बन्ध में पञ्जाब के सुप्रसिद्ध सिक्ख-नेता ज्ञानी शेरसिंह जी ने, जो सिक्खों के धार्मिक नेता भी हैं, प्रेस के लिए एक वक्तव्य २७वीं मार्च को अमृतसर में प्रकाशित किया है, जिसका सारांश यह है:—

"मैंने सरकार द्वारा प्रकाशित उस विज्ञप्ति को पढ़ा है, जिसमें यह कहा गया है कि सरदार भगतसिंह के शव की अन्त्येष्टि-क्रिया सिक्ख-धर्मानुसार की गई है। गवर्नमेण्ट की यह विज्ञप्ति सत्य से परे है, परन्तु यदि इसे सत्य भी मान लिया जाय तो यह तो स्पष्ट है कि अन्त्येष्टि क्रिया सिक्खों के धर्मानुसार नहीं हुई थी। किसी 'ग्रन्थी' को बिना ऐसे चार अन्य सिक्खों के, जो कि सिक्ख-धर्म को कड़ाई से मानने वाले हों, अन्त्येष्टि क्रिया करने का कोई अधिकार नहीं है।

"अन्त्येष्टि क्रिया के साधारण नियम यह हैं कि श्मशान की ओर प्रस्थान करने से पूर्व शव को दही और दूध से स्नान कराया जाता है। अर्थी चार सिक्खों के कन्धों पर होनी चाहिए। इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि मृतक के शरीर पर पाँचों 'कक्का' (सिक्खों के धार्मिक चिह्न) मौजूद हैं या नहीं? 'रागियों' की एक सङ्गीत-मण्डली होनी चाहए। इन रागियों को इस समय गुरु तेग़बहादुर की बानी के 'शब्द' गाना चाहिए, जो इसी अवसर पर गाए जाते हैं। यदि शव किसी 'शहीद' का हो, तो विशेष 'शब्द' गाए जाने चाहिए, जैसे कि "जिस मरने ते जग डरे, मेरे मन आनन्द" (अर्थात् जिस मृत्यु से संसार भयभीत होता है, उससे मुझे आनन्द प्राप्त होता है) इसके अतिरिक्त और भी ऐसी अनेक बातें हैं, जिनकी उपेक्षा न होनी चाहिए।

"स्वयं गवर्नमेण्ट के वक्तव्य को पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है कि इस मामले में इस प्रकार की कोई बात भी नहीं की गई थी। इस विज्ञप्ति का केवल इतना ही कहना है, कि अन्तिम संस्कार एक ऐसे 'ग्रन्थी' द्वारा सम्पन्न कराया गया, जिसका नाम और पता तक नहीं बतलाया गया!

"इस प्रकार के अधूरे वक्तव्य से सिक्ख-जनता कदापि सन्तुष्ट नहीं हो सकती और वह उन सारी बातों का गवर्नमेण्ट से प्रमाण चाहती है, जिनका उल्लेख सरकारी वक्तव्य में किया गया है, और वह इस मामले में गवर्नमेण्ट से कैफ़ियत तलब करना चाहती है। गवर्नमेण्ट को सारी बातें स्पष्ट रूप से प्रकाशित करना चाहिए।"

भविष्य की नियमावली

१—'भविष्य' प्रत्येक वृहस्पति को सुबह ४ बजे प्रकाशित हो जाता है।

२—किसी ख़ास अङ्क में छपने वाले लेख, कविताएँ अथवा सूचना आदि, कम से कम एक सप्ताह पूर्व, सम्पादकों के पास पहुँच जाना चाहिए। बुधवार की रात्रि के ८ बजे तक आने वाले, केवल तार द्वारा आए हुए आवश्यक, किन्तु संक्षिप्त, समाचार आगामी अङ्क में स्थान पा सकेंगे, अन्य नहीं।

३—लेखादि काग़ज़ के एक तरफ़, हाशिया छोड़ कर और साफ़ अक्षरों में भेजना चाहिए, नहीं तो उन पर ध्यान नहीं दिया जायगा।

४—हर एक पत्र का उत्तर देना सम्पादकों के लिए सम्भव नहीं है, केवल आवश्यक, किन्तु ऐसे ही पत्रों का उत्तर दिया जायगा, जिनके साथ पते का टिकट लगा हुआ लिफ़ाफ़ा अथवा कार्ड होगा, अन्यथा नहीं।

५—कोई भी लेख, कविता, समाचार अथवा सूचना बिना सम्पादकों का पूर्णतः इतमीनान हुए 'भविष्य' में कदापि न छप सकेंगे। सम्वाददाताओं का नाम, यदि वे मना कर देंगे तो, न छापा जायगा, किन्तु उनका पूरा पता हमारे यहाँ अवश्य रहना चाहिए। गुमनाम पत्रों पर ध्यान नहीं दिया जायगा।

६—लेख, पत्र अथवा समाचारादि बहुत ही संक्षिप्त रूप में लिख कर भेजना चाहिए।

७—समालोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ आनी चाहिएँ।

८—परिवर्तन में आने वाली पत्र-पत्रिकाएँ तथा पुस्तकें आदि सम्पादक "भविष्य" (किसी व्यक्ति-विशेष के नाम से नहीं) और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र तथा चन्दा वग़ैरह मैनेजर "भविष्य" चन्द्रलोक, इलाहाबाद के पते से आना चाहिए। प्रबन्ध-विभाग सम्बन्धी पत्र सम्पादकों के पते से भेजने में उनका आदेश पालन करने में असाधारण देरी हो सकती है, जिसके लिए किसी भी हालत में संस्था ज़िम्मेदार न होगी !!

९—सम्पादकीय विभाग सम्बन्धी पत्र तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र अलग-अलग आना चाहिए। यदि एक ही लिफ़ाफ़े में भेजा जाय तो अन्दर दूसरे पते का कवर भिन्न होना चाहिए।

१०—किसी व्यक्ति-विशेष के नाम भेजे हुए पत्र पर नाम के अतिरिक्त "Personal" शब्द का होना परमावश्यक है, नहीं तो उसे संस्था का कोई भी कर्मचारी साधारण स्थिति में खोल सकता है और पत्रोत्तर में असाधारण देरी हो सकती है।

—मैनेजिङ्ग डाइरेक्टर

सम्पादकीय विचार

२ अप्रैल, सन् १९३१

भारतीय पुलिस

डॉक्टरों की वृद्धि के साथ ही साथ जिस प्रकार नित्य ही नए-नए रोगों की वृद्धि होती जा रही है, वकीलों की वृद्धि के साथ ही साथ जिस प्रकार मुक़दमों और मुक़दमेबाज़ों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है, ठीक उसी प्रकार ज्यों-ज्यों भारतीय पुलिस (जिसमें ख़ुफ़िया पुलिस भी शामिल है) की संख्या में वृद्धि हो रही है, उतनी ही अधिक जुर्मों और 'षड्यन्त्रों' की संख्या में दिनोंदिन वृद्धि होती जा रही है। अस्तु।

अङ्गरेज़ों के आगमन के बहुत पहिले से ही प्रायः भारतीय शासकों के यहाँ भी पुलिस एवं सी० आई० डी० का एक विशेष मोहकमा होता था, जिसे 'गुप्तचर' विभाग कहा जाता था। महाराजा विक्रमादित्य तथा चन्द्रगुप्त के एकछत्र शासन-काल के इतिहास में भी इन गुप्तचरों का उल्लेख मिलता है। भेद केवल इतना है कि उन गुप्तचरों के शरीर में—हाड़-मांस के ढाँचे के भीतर—आत्म-प्रकाश की रेखाएँ पूर्णतः आलोकित थीं—उन्हें संसार का कोई भी प्रलोभन अपने जीवन के निश्चित सिद्धान्तों से डिगा नहीं सकता था, संसार के सारे वैभव उन्हें एक साथ भेंट करने पर भी उनकी आत्मा को ख़रीदने की शक्ति सम्राट तक में नहीं थी; धर्म में उनका अविचल विश्वास था, आत्मा उनकी पथ-प्रदर्शिका थी; निष्ठा और कर्तव्य-परायणता की गोद में उन्होंने जन्म लिया था; सत्य उनका धर्म था, कर्तव्य उनका साधन था और सेवा थी उनकी साध्य वस्तु। वे जीवन-मरण के गम्भीर प्रश्नों की मीमांसा करने वाले थे—अपनी पेट-पूजा का प्रश्न वे आवश्यक अवश्य समझते थे, किन्तु इस प्रश्न को आत्मा के ऊपर वे स्थान नहीं देते थे।

एक बात और है, गुप्तचर-विभाग में कार्य करने वाले कर्मचारी प्रायः अच्छे से अच्छे तथा सत्यनिष्ठ एवं उच्च परिवारों से चुने जाते थे। इन कर्मचारियों के हृदयों में कष्ट पीड़ितों की सेवा में ही सारा जीवन व्यतीत कर देने की लगन होती थी। वे जनता के ज़रा-ज़रा कष्टों की जाँच करते फिरते थे, समय के अत्याचारियों को वे ढूँढ़-ढूँढ़ कर राज्य-दण्ड दिलाया करते थे। प्रायः इतिहासों में इस बात के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं, जबकि हिन्दू सम्राट एवं मुस्लिम बादशाह तक स्वयं कम्बल ओढ़ कर—अथवा भेष बदल कर—गाँव-गाँव में आधी रात को घूमा करते थे। इस भ्रमण का उद्देश्य होता था केवल इस बात का पता लगाना, कि उनके राज्य में किसी आगन्तुक को कष्ट तो नहीं हुआ? राज-कर्मचारियों द्वारा किसी प्रजा पर अत्याचार तो नहीं हुआ? उनके राज्य में कोई भूखा तो नहीं रहा? इत्यादि-इत्यादि बातों के साथ, ही अपने इस कौशल द्वारा वे गुप्तचरों के कार्यों एवं रिपोर्टों की भी परीक्षा करते थे। आज भारत का बच्चा-बच्चा अपने जीवन में वही सुख-स्वप्न देखने की आशा से उसका अधिक से अधिक मूल्य चुकाने पर तुल गया है—आज श्रद्धास्पद महात्मा गाँधी तथा देश के सभी पूज्य नेता भारत में इसी 'राम-राज्य' को स्थापित करने के लिए अपना सर्वस्व निछावर करने पर अड़ गए हैं—अस्तु।

इस चित्र का दूसरा पहलू है आजकल की भारतीय पुलिस! यहाँ की पुलिस शान्त और निशस्त्र जनता पर लाठियों की वर्षा करने में बहुत निपुण सिद्ध हो चुकी है। उसने ख़ासतौर से पञ्जाब, गुजरात तथा बिहार में अपनी जिस वीरता का परिचय दिया है, 'भविष्य' के स्तम्भों में उसकी चर्चा हमारे लिए सदा एक दुखद-कर्तव्य रही है। इस समय प्रमाण जनता के सामने है। कानपुर की वही पुलिस, जिसने कई बार निशस्त्र जनता पर भयङ्कर लाठियों की वर्षा करके अपने पुरुषत्व को धन्य माना था, आज बलवे के समय उस पुलिस का एक चूहा-बिल्ली तक सड़कों पर दिखाई नहीं देता था। कानपुर के सभी प्रतिष्ठित नेताओं के बार-बार प्रार्थना करने पर—अनुनय-विनय करने पर भी अधिकारियों ने, कहा जाता है, विशेष ध्यान नहीं दिया; अन्यथा इतनी अधिक जानें कौड़ियों के मूल्य पर न चली जातीं, सैकड़ों व्यक्तियों का सर्वस्व इस प्रकार अपहरण न हो गया होता। देश के मातृत्व का इतना अधिक निरादर न हो सकता और निरीह बच्चों की इतनी निर्मम हत्याएँ—इतनी सरलता से न की जा सकतीं। जिस देश की जनता तथा 'शान्ति और रक्षा' के नाम पर देश की सारी आय का लगभग आधा हिस्सा फूँका जाता हो, उसी जनता का सर्वस्व स्वाहा होते देख कर पुलिस और फ़ौज कानों में तेल डाल कर सोई रहें—यह अपमान आज केवल भारतवासी ही सहन कर सकते हैं; संसार की कोई भी जीवित जाति इस ग्लानि को सहन नहीं कर सकती। पुलिस के सम्बन्ध में इसी प्रकार के अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं, किन्तु स्थानाभाव के कारण उनका विस्तृत उल्लेख सम्भव नहीं है। इस सम्बन्ध में अन्यत्र प्रकाशित श्री० ब्रेल्सफ़र्ड महोदय का एक विचारणीय लेख पाठकों को मिलेगा, जिसमें एक सत्यनिष्ठ और स्पष्टवक्ता अङ्गरेज़ ने अपना हृदय चीर कर काग़ज़ पर रख दिया है। भारतीय पुलिस द्वारा किए गए इन नृशंस अत्याचारों के उदाहरण जङ्गली जातियों के इतिहास में भी मुश्किल से मिलेंगे।

पिछले आन्दोलन के ज़माने में भारतवासियों ने भारतीय पुलिस का सच्चा स्वरूप अपनी आँखों से देख लिया है। इन्हीं अत्याचारों से महात्मा गाँधी-जैसे साधु प्रवृत्ति वालों तक का ख़ून खौल गया था और यही कारण है कि महात्मा गाँधी ने पुलिस के इन अत्याचारों की एक निष्पक्ष जाँच के लिए इतना आन्दोलन उठाया था। समझौते के समय भी यह माँग उपस्थित की गई थी। यहाँ तक कहा गया था, कि इस जाँच-

कमिटी की नियुक्ति स्वयं लॉर्ड इर्विन अपनी इच्छानुसार कर सकते हैं, फिर भी वायसराय महोदय ने इस शर्त को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि लॉर्ड इर्विन इस जाँच के अवश्यम्भावी परिणाम से पूर्णतः परिचित थे। यद्यपि महात्मा गाँधी समझते थे, कि जो गवर्नमेण्ट पेशावर में होने वाले हत्याकाण्ड सम्बन्धी जाँच कमिटी की रिपोर्ट तक को ज़ब्त कर सकती है, जिसके प्रधान हों लेजिस्लेटिव एसेम्बली के भूतपूर्व प्रेज़िडेण्ट—वह गवर्नमेण्ट इतना साहस कदापि नहीं कर सकती। लॉर्ड इर्विन ने, कहा जाता है, पुलिस द्वारा किए गए अनेक अत्याचारों को स्वीकार करते हुए भी जाँच कमिटी की नियुक्ति करने से साफ़ इन्कार कर दिया। कहा यह गया कि "इस जाँच से जनता और पुलिस का वैमनस्य और भी बढ़ जायगा और एक ऐसे समय, जबकि समझौते के फल-स्वरूप शान्त वातावरण की चेष्टा की जा रही है, इस प्रकार की जाँच बुद्धिमानी का परिचायक नहीं होगा।" इत्यादि

यह घटना ३री मार्च की है, किन्तु कटे पर नमक छिड़कना दुर्भाग्य से वर्तमान शासन-प्रणाली का सनातन नियम रहा है! अभी उस रोज़ की घटना है, २८वीं मार्च को वायसराय के निवासस्थान पर देहली-पुलिस की ४½ बजे शाम को परेड हुई थी, जिसमें पुलिस के बहुत से कर्मचारियों को उनकी 'निस्पृह' और 'ठोस' सेवाओं के लिए काराज़ी सनद, बिल्ले और तमगे भेंट करते हुए और पुलिस के कार्यों की सराहना करते हुए लॉर्ड इर्विन ने एक व्याख्यान भी दिया था। इस व्याख्यान का सारांश यह था, कि भारत की पुलिस जितनी वफ़ादार, राजभक्त और शुभचिन्तक है, वैसी पुलिस संसार के पर्दे पर नहीं मिल सकती। आपने कहा कि, "समय-समय पर भारतीय पुलिस द्वारा की गई सेवाओं के बोझ से गवर्नमेण्ट दबी जा रही है।" और अन्त में आपने आशा प्रकट की कि "इसी प्रकार" वे सदैव राजभक्ति का परिचय देते हुए भारतीयों का मुखोज्ज्वल करते रहेंगे। आपने अपने पिछले ५ वर्षों के शासन-काल में पुलिस द्वारा की गई सेवाओं की बड़ी प्रशंसा की और ख़ासकर उन 'सेवाओं' की, जो पुलिस द्वारा पिछले लगभग एक साल में की गई हैं। आपके व्याख्यान की कुछ पंक्तियाँ ये हैं:—

"××× They have not been easy years for me, or for you, or for anyone else concerned in the administration of this country. There have been times, especially in the last twelve months, when things have been done which have been a severe test of good temper and restraint, when hours of duty have been long and more than usually arduous and danger to life and limb has had to be constantly faced.

"It is greatly to the credit of the police that they have taken these exceptional difficulties as all in the day's work. Officers and men have shown a fine example of loyalty, courage, and discipline, and have raised the high traditions of their service to a level on which they may rightly be proud.

"You may rest assured that the Government on their part are very conscious of the debt they owe your service on this account. The discipline and efficiency of a country's police force is to a high degree, the criterion of good government and the measure of the extent to which the administration retains the confidence of the population at large.

"I think the Government of India may well congratulate themselves on having as protectors of the King's peace a force so efficiently organised, so well disciplined and possessed of so fine a sprit as the Indian Police×××."

हमारे कहने का अभिप्राय यह कदापि नहीं है, कि पुलिस के समस्त कर्मचारी इतने ही पतित हैं, जिनका उल्लेख ऊपर की पंक्तियों में किया गया है। हमारे देखने में एक से एक बढ़ कर न्याय-प्रिय पुलिस के कर्मचारी आए हैं—अङ्गरेज़ और हिन्दुस्तानी दोनों ही प्रकार की पुलिस में हमें एक से एक ऐसे व्यक्तियों के परिचय का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, जिनकी सज्जनता और शिष्टता के हम क़ायल हैं और ऐसे व्यक्तियों को भारतवासियों ने सदा आदर की दृष्टि से देखा है; किन्तु यह एक अप्रिय-सत्य है, जिसको निष्पक्ष अङ्गरेज़ों तक ने खुले शब्दों में स्वीकार किया है, कि भारत की अधिकांश पुलिस के नैतिक पतन के लिए वर्तमान शासन-प्रणाली सर्वथा ज़िम्मेदार है। पुलिस के अत्याचारों को समय-समय पर प्रत्येक उपायों से प्रोत्साहन देना, वर्तमान शासन-प्रणाली का एक निन्दनीय साधन रहा है और हाल में होने वाली घटनाओं ने यह स्पष्ट कर दिया है, कि जब तक वर्तमान शासन-प्रणाली का अन्त नहीं होता, तब तक भारतीय पुलिस के सुधार की आशा करना पत्थर में से पानी निकालने की आशा के समान दुराशा मात्र है।

* * *

एक निष्फल प्रयास

विगत सोमवार को पञ्जाब की व्यवस्थापिका सभा में ख़ुफ़िया पुलिस पर होने वाले व्यय के लिए एक अतिरिक्त-बजट पेश किया गया था। यह एक ऐसी विचित्र माँग थी, जिसका दूसरा उदाहरण आज तक हमारे सुनने में नहीं आया था। ख़ज़ाने से रुपया पहिले ही ख़र्च किया जा चुका था, केवल उसकी टकसाली स्वीकृति की रस्म अदा करने के लिए यह बिल गवर्नमेण्ट की ओर से पेश किया गया था। पञ्जाब कौन्सिल के प्रतिभाशाली सदस्य रायबहादुर श्री० सेवकराम जी ने बड़े ज़ोरों से इस अनुचित माँग का विरोध किया। आपके द्वारा उपस्थित किए गए विरोधों का क्रम इस प्रकार था:—

(१) आपका पहिला विरोध यह था, कि गवर्नमेण्ट क्या पहिले सोई हुई थी, जो आज उसने इस प्रकार करवट ली है। यदि अधिक धन की आवश्यकता थी, तो व्यवस्थापिका सभा की पिछली बैठक में, जो गत जनवरी मास में हुई थी, यह माँग पेश क्यों नहीं की गई?

(२) आपका दूसरा विरोध इस बात का था, कि ख़ुफ़िया पुलिस के मद में जहाँ तक हो सके, कम व्यय होना चाहिए, क्योंकि यह बड़ा ही निकम्मा मोहकमा है। आपने कहा, कि कभी-कभी तो ख़ुफ़िया पुलिस वाले झूठे मामले बना डालते हैं। आपका कहना था, कि यदि इस मोहकमे पर ख़र्च होने वाले धन को घटा दिया जाय, तो निश्चय ही ख़ुफ़िया पुलिस द्वारा निर्मित केसों में अवश्य सन्तोषजनक कमी हो सकती है।

(३) आपकी तीसरी आपत्ति यह थी, कि चूँकि देश का राजनीतिक वातावरण पहिले की अपेक्षा बहुत कुछ सुधर गया है, इसलिए कोई कारण नहीं है, कि इनकी संख्या की वह वृद्धि क़ायम रक्खी जाय, जो पिछले दिनों में की गई थी; शीघ्र से शीघ्र अतिरिक्त-ख़ुफ़िया-पुलिस को अलग कर देना चाहिए।

इसमें सन्देह नहीं, कि रायबहादुर श्री० सेवकराम जी के इस विरोध से प्रत्येक देशवासी सहमत होगा। उन्होंने जनता के सच्चे मनोभावों को इतनी निर्भीकता से व्यवस्थापिका सभा के सामने उपस्थित करके वास्तव में देश की बड़ी सेवा की है। हम उनके इस सत्साहस की प्रशंसा करते हैं; किन्तु हमें खेद है कि उनके इन महत्वपूर्ण विरोधों को समर्थन करने वाला सभा में एक भी सदस्य नहीं मिला और फलतः गवर्नमेण्ट की यह माँग अक्षरशः पास कर दी गई। इस घटना से जनता को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। ये भारतीय जनता के वे ही 'प्रतिनिधि' हैं, जो वोटों की भिक्षा माँगने के समय अपनी देशभक्ति में बर्फ़ के समान गले जाने का उपक्रम करते हैं। परमात्मा इन्हें सुबुद्धि दें।

* * *

स्वर्गीय विद्यार्थी जी!

यह कल्पना करते हुए भी हृदय काँप जाता है, कि सहयोगी 'प्रताप' के यशस्वी सम्पादक, संयुक्त प्रान्त के अन्यतम नेता और काँङ्ग्रेस कमिटी के सभापति श्री० गणेशशङ्कर जी विद्यार्थी अब इस संसार में नहीं रहे! गत ३० मार्च के 'पत्रों' में ख़बर छपी है, कि आपका विकृत शव कानपुर के किसी मुसलमान के एक अध-जले मकान में पाया गया है! यद्यपि कई दिनों तक पड़े रहने तथा आततायियों की छुरियों के अगणित घावों के कारण शव को देख कर पहचानना कठिन था, परन्तु
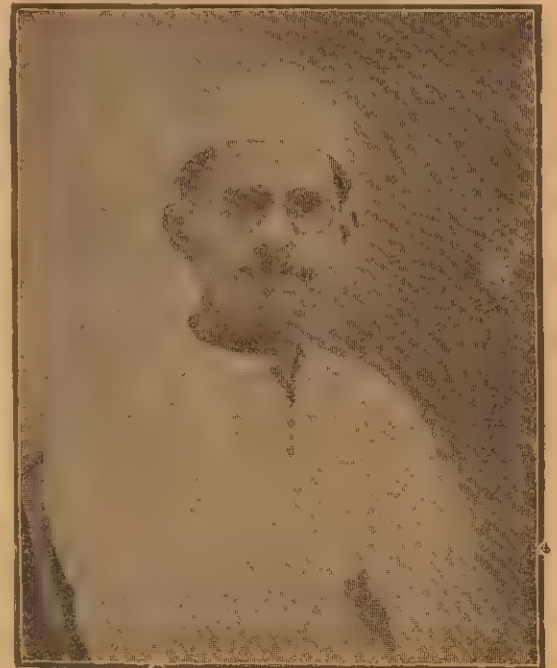
स्वर्गीय श्री० गणेशशङ्कर जी विद्यार्थी

आपकी भुजा पर 'गजानन' शब्द अङ्कित था, इसीसे निश्चित रूप से जाना जा सका कि लाश आप ही की थी! स्व० विद्यार्थी जी भारतीय राष्ट्र के सच्चे सेवक, अक्लान्त कर्मी और साहसी सिपाही थे। फलतः आपकी मृत्यु भी वैसी ही हुई है, जैसी एक सच्चे राष्ट्र-सेवक की होनी चाहिए।

आपकी शोकजनक मृत्यु के सम्बन्ध में जो ख़बरें प्रकाशित हुई हैं, उनसे पता चलता है कि विगत मङ्गलवार को कानपुर में खेदजनक दङ्गा आरम्भ होने पर निर्भीक-हृदय विद्यार्थी जी ने उसे शान्त करने की बड़ी चेष्टा की थी और बहुत से आपद्ग्रस्त मुसलमानों तथा हिन्दुओं की रक्षा भी की थी। मानो यही आपके जीवन की अन्तिम राष्ट्र-सेवा थी। क्योंकि इसके बाद आपकी सौम्य मूर्ति का किसी को दर्शन

नहीं मिला—आप फिर वापस नहीं आए ! इससे मालूम होता है कि अपने जीवन को सङ्कट में डाल कर जिन लोगों को आपने मृत्यु से बचाया था, उन्हीं लोगों ने, बदले में आपकी हत्या करके अपनी कृतज्ञता (!) का भयङ्कर परिचय दिया !!

यद्यपि विद्यार्थी जी हमसे बहुत दूर चले गए हैं, साथ ही उनके वियोग की असह्य व्यथा भी शीघ्र दूर होने वाली नहीं है और न उस असीम हानि की ही शीघ्र पूर्त्ति सम्भव है, जो आपकी आकस्मिक मृत्यु के कारण इस अभागे देश को सहन करनी पड़ी है, तथापि आपकी स्मृति अमिट है। विद्यार्थी जी वीर थे, इसलिए आपने मृत्यु भी वीर-वाञ्छित ही प्राप्त की है। हिन्दू-मुस्लिम एकता के आप प्रबल पक्षपाती थे और उसीके लिए मर भी मिटे ! इसीलिए हमें विश्वास है कि आपका यह 'ख़ूने नाहक़' उस वाञ्छित एकता की नींव को सुदृढ़ बनाएगा। क्योंकि अब समय आ गया है, जब कि इस राक्षसी लीला की प्यास ऐसे ही महान व्यक्तियों के रक्त से बुझेगी !

क्या हम आशा करें कि जो लोग अकारण ही ऐसे घृणित काण्डों की सृष्टि कर, ऐसे निरीहों और अपने परम हितैषियों के रक्त से अपना हाथ काला करते हैं, वे इस घटना से कुछ शिक्षा ग्रहण करेंगे ? न जाने भारत-माता के दामन से ये घृणित कलङ्क के दाग़ कब मिटेंगे और इस देश के निवासी कब होश सँभालेंगे ? विद्यार्थी जी ने तो अपना जीवन सार्थक कर लिया। जाति की सेवा में मर मिटना—उसके लिए अपने को निछावर कर देना—आपके जीवन का लक्ष्य था, उसे आपने अच्छी तरह पूरा कर दिया। ईश्वर उनकी आत्मा को सद्गति और शान्ति प्रदान करे और उनके शोक-सन्तप्त आत्मीय वर्ग को—उफ़ ! हमारी कल्पना की आँखें उन बेचारों की शोक-विह्वल, दयनीय मूर्ति देख रही हैं। हमारा हृदय व्याकुल हो रहा है। समझ में नहीं आता कि हम किन शब्दों में उनकी बूढ़ी माता, उनकी विधवा पत्नी और उनके मासूम बच्चों को सान्त्वना प्रदान करें ! हम इस महान विपत्ति में उनके प्रति अपनी आन्तरिक समवेदना प्रकट करते और ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, कि वे उन्हें यह भीषण शोक सहन करने की शक्ति दें !

* * *

सन् १९३१ की मनुष्य-गणना

गवर्नमेण्ट के निर्धारित नियमों के अनुसार प्रत्येक ११वें वर्ष भारतीय मनुष्य-गणना की नई रिपोर्ट प्रकाशित की जाती है। पिछली रिपोर्ट सन् १९२१ में प्रकाशित हुई थी, अन्य कई आपत्तियों के अतिरिक्त, अखिल भारतीय काँग्रेस को एक सब से बड़ी आपत्ति इस बात की थी, कि जिस ढङ्ग से रिपोर्ट प्रकाशित की जाती है, उससे समस्त देश की विभिन्न जातियों में विभेद होना स्वाभाविक है और भारतवासियों को अपनी शक्ति और सङ्गठन का ठीक-ठीक पता नहीं चलता। अनेक ऐसी जातियाँ अछूतों की श्रेणी में डाल दी जाती हैं, जो वास्तव में अछूत नहीं हैं, इत्यादि। अपनी इन्हीं धारणाओं के अनुसार काँग्रेस ने इस बार भारतवासियों से मनुष्य-गणना का सर्वथा बहिष्कार करने की अपील की थी। अधिकांश जनता ने इस राष्ट्रीय आज्ञा का पालन किया और अनेक स्थानों में केवल मनुष्य-गणना सम्बन्धी अपराधों के लिए हज़ारों व्यक्ति जेल भी भेजे गए। पिछले ३-४ महीनों के समाचार पढ़ने से पता चलता है, कि अनेक स्थानों में तो जनता ने मनुष्य-गणना के लिए नियुक्त अफ़सरों की किसी भी प्रकार की न तो सहायता दी और न उनके प्रश्नों का उत्तर।

इतना सब कुछ हो गया, पर इसका प्रभाव गवर्नमेण्ट पर ज़रा भी नहीं पड़ा। सन् १९३१ की मनुष्य-गणना की रिपोर्ट प्रकाशित कर ही दी गई। जिसके अनुसार जन-संख्या में ३ करोड़, २० लाख की वृद्धि बतलाई गई है। सन् १९२१ की मनुष्य-गणना के अनुसार भारत की कुल जन-संख्या ३१ करोड़, ९० लाख थी, जो इस रिपोर्ट के अनुसार २६वीं फ़रवरी, १९३१ को बढ़ कर ३५ करोड़, १० लाख होगई है। प्रान्तों के हिसाब से इस रिपोर्ट में जन-संख्या इस प्रकार बतलाई गई है :—

प्रान्त	जन-संख्या १९२१		जन-संख्या १९३१
बङ्गाल ...	४,६६,९५,५३६	...	४,९९,९७,३७६
बिहार-उड़ीसा	३,४०,०२,१८९	...	३,७५,९०,३५६
बिहार	२,३३,८०,२८८	...	२,५६,५०,९१७
उड़ीसा	४९,६४,८७३	...	५३,००,३९८
छोटा नागपुर	५६,५३,०२८	...	६६,३९,०४१
बम्बई ...	१,९३,४८,२१९	...	२,११,०२,१२६
बर्मा ...	१,३२,१२,१९२	...	१,४६,५२,२७२
मध्य प्रान्त और बरार	१,३९,१२,७६०	...	१,५४,७२,६२८
कुर्ग ...	१,६३,८३८	...	१,५४,७२,६२८
देहली ...	४,८८,१८८	...	६,३६,८२७
मद्रास ...	४,२३,१८,९८५	...	४,६७,३१,८५०
सीमा-प्रान्त...	२२,५१,३४०	...	२४,२३,३८०
पञ्जाब ...	२,०६,८५,०२४	...	२,३५,८०,८२०
संयुक्त प्रान्त...	४,५३,७५,७८७	...	४,८४,२३,२६४
आसाम ...	७६,०६,२३०	...	८७,८४,९४३
अजमेर मेरवाड़ा	४,९५,२७१	...	५,६०,५७६
अण्डमन और निकोबार्स	२७,०८६	...	२९,४६३
बिलोचिस्तान	४,२०,६४८	...	४,६३,४९२

जिन कारणों का उल्लेख ऊपर की पंक्तियों में किया गया है, उन्हें दृष्टि में रखते हुए हमारी तो यह निश्चित धारणा है, कि यह रिपोर्ट केवल कर्तव्य समझ कर एक निर्धारित ढर्रे के अनुसार ही प्रकाशित की गई है। देश के इतना विरोध करने पर भी क्या यह मामला सरदार भगतसिंह आदि को फाँसी पर लटकाने के समान ही इतना आवश्यक था, कि ४-६ महीने की प्रतीक्षा करना गवर्नमेण्ट के लिए सम्भव न था ? जबकि इस सम्बन्ध के एक प्रस्ताव में स्वयं भारतीय गवर्नमेण्ट ने इस रिपोर्ट को केवल "काम-चलाऊ" (Sufficiently accurate for practical purposes) बतलाया है !

यदि जन-संख्या की वृद्धि किसी देश की सुख-समृद्धि का परिचायक कहा जा सकता है, और यदि इसी बात को दृष्टि में रख कर यह रिपोर्ट प्रकाशित की गई है, तो हमें भय है, गवर्नमेण्ट को इस सम्बन्ध में निराश होना पड़ेगा।

* * *

'भविष्य' और सरकार

सहगल जी को फिर चेतावनी दी गई !

इस संस्था के जन्म से आज तक जितने सरकारी हमले उस पर हुए हैं—बहुत कम पत्र-पत्रिकाओं पर इस प्रकार के निन्दनीय हमले हुए होंगे—हमारे सन्तोष का केवल यही एक मात्र अवलम्ब है। अपने देश की जो थोड़ी-बहुत सेवा अब तक इस संस्था द्वारा हो सकी है, हमारी गवर्नमेण्ट भी समय-समय पर उसकी दाद देती रही है। हमने सदैव इन आक्रमणों को अपने लिए तथा अपने देश के लिए गौरव समझा; किन्तु इधर जब से 'भविष्य' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है, तब से इन आक्रमणों ने दूसरा ही स्वरूप धारण कर लिया है। यदि ऐसा न होता, तो इन पंक्तियों के लिखने की आवश्यकता ही नहीं थी। पहिले संस्था के प्राण श्री० सहगल जी पर केवल अहिंसात्मक राज-विद्रोही होने का सन्देह किया जाता था, किन्तु इधर कुछ दिनों से उनकी गणना हिंसात्मक क्रान्तिकारियों की श्रेणी में हो रही है। इसके हम कुछ प्रमाण भी देने को तैयार हैं :—

(१) यों तो पुलिस ने सदा ही इस संस्था तथा इसके प्रवर्तकों का पीछा किया है; किन्तु पिछले ५-६ महीनों से हमारे लिए इनका यह कार्य असह्य हो गया है और दिनोंदिन स्थिति गम्भीर होती दिखाई दे रही है। पिछले २-३ महीनों से तो संस्था के चारों ओर चौबीसों घण्टे ख़ुफ़िया पुलिस वाले चक्कर काटा करते हैं।

(२) ख़ुफ़िया पुलिस के एक मुसलमान दारोग़ा साहब ने अपने "सुराग़" लगाने का एक प्रशंसनीय उपाय ढूँढ़ निकाला था। वे गत मास दोपहर में, जब प्रेस के कर्मचारियों के विश्राम का समय होता था—निर्धारित समय पर वे नित्य-नियम से 'भविष्य' के सम्पादकीय विभाग में समाचार-पत्रों को पढ़ने के बहाने से जा बैठा करते थे। सम्पादकीय विभाग उन्हें कार्यालय का कोई क्लर्क समझने लगा था। एक रोज़ पं० भगवती-प्रसाद जी पाण्डेय के प्रश्न करने पर आपने अपने को डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के स्कूल का अध्यापक बताया; किन्तु दूसरे दिन से उन्होंने हाते के अन्दर आना त्याग दिया।

(३) हमें पता लगा है, कि जिस दिन स्वर्गीय आज़ाद की हत्या हुई थी, उस रोज़ संस्था की दोनों मोटरों के नम्बर मि० नटवॉयर ने मँगवा लिए थे। उसी दिन रात को 'चन्द्रलोक' रात भर घिरा रहा, जो कि हमें दूसरे दिन उस समय मालूम हुआ, जब कि तलाशी के लिए संस्था पर धावा मारा गया।

(४) २८वीं फ़रवरी को संस्था पर सशस्त्र पुलिस का जैसा भीषण आक्रमण हुआ था, उसका समाचार पाठकों ने 'भविष्य' में पढ़ा ही होगा। संस्था के साथ ही साथ मातृ-मन्दिर की तलाशी भी कम निन्दनीय नहीं थी। पेड़ खोद कर तथा घड़ों और मटकों में बमों की तलाश करना, संस्था की स्त्रियों को, किसी भी पुरुष की अनुपस्थिति में—ख़ासकर ऐसी स्थिति में, जबकि संस्था की अधिष्ठात्री भी वहाँ न हो—डरा-धमका कर "दुर्गा-देवी" का पता पूछना पुलिस के हद दर्जे के गुण्डापन का परिचायक है। 'चाँद' कार्यालय तथा संस्था का टेलीफ़ोन पहिले ही काट दिया गया था, ताकि कोई बात भी न पूछी जा सके, पीछे पता चला कि संस्था की नर्स मिसेज़ सॉलोमन के क़रीब १०० ख़ानगी पत्र उनका ताला तोड़ कर पुलिस ने अपने क़ब्ज़े में कर लिया, हाज़िरी के रजिस्टर, दूध तथा धोबी आदि के हिसाब के रजिस्टर—सब पुलिस उठा ले गई। कहा जाता है, अङ्गरेज़ी में सब चीज़ों की सूची बना कर कुमारी लक्ष्मी नाम की एक लड़की से उस पर हस्ताक्षर करा लिया गया। सब कन्याओं के नाम और पते पूछे गए। हमें पता चला है, लड़कियों ने अपने फ़र्ज़ी नाम और झूठे पते पुलिस को इसलिए नहीं लिखवाए, कि वे भी बम बनाने में सहगल जी का साथ देती थीं, बल्कि इसलिए, कि उनके परिवार पर किसी प्रकार की आँच न आवे। इन अक़्ल के दुश्मनों को इतना नहीं सूझा, कि संस्था में कन्याएँ तथा महिलाएँ किस उद्देश्य से आती हैं ? जिस उद्देश्य से आती हैं, वह सदा गुप्त रक्खा जाता है। स्वयं संस्था के प्रवर्तकों तक को उनका असली नाम और पता नहीं बतलाया जाता ऐसी हालत में पुलिस को अपना सच्चा परिचय वे कैसे बतला सकती थीं ?

(५) इस संस्था में आने वाला प्रत्येक पत्र तथा तार डाकख़ाने और तार-घर में देख कर भेजा जाता है। राष्ट्रीय संग्राम के ज़माने में देश की विभिन्न कॉङ्ग्रेस कमिटियाँ जो रिपोर्ट अथवा समाचार आदि भेजती थीं, उनमें बहुत कम हमें प्राप्त हुए हैं। सैकड़ों जगह से हमारे पास शिकायतें आ चुकी हैं। शाम की डाक से आए हुए पत्रों का दूसरे दिन आना नित्य की बात हो गई थी; किन्तु पोस्ट-मास्टर को शिकायत करने से अब ऐसा बहुत कम होता है।

(६) गत मास की बात है, कुमारी लीलावती जी, जिनका विस्तृत परिचय और चित्र पाठकों को अन्यत्र मिलेगा, एक ख़ानगी कार्य के लिए यहाँ आई थीं। उनका भी बुरी तरह ख़ुफ़िया पुलिस द्वारा पीछा किया गया। २ रोज़ देवी जी यहाँ रहीं, अतएव चन्द्रलोक का पहरा भी दुगना कर दिया गया। साईकिल पर दिन भर ख़ुफ़िया पुलिस वालों को चक्कर काटते देखा गया है।

(७) आम तौर से भलेमानसों को गिरफ़्तार करने के लिए प्रायः पुलिस का एक अफ़सर जाता है; किन्तु २री मार्च को सहगल जी की गिरफ़्तारी के समय सारी कोठी ख़ुफ़िया पुलिस द्वारा बाहर से घेर ली गई थी। संस्था के कर्मचारियों ने उन्हें उस समय देखा था, जब सहगल जी की मोटर फाटक के बाहर निकल गई थी। तीन दारोग़ा साथ थे। सम्भवतः यह समझा गया कि शायद पुलिस वालों पर सहगल जी अथवा उनके क्रान्तिकारी साथी बम न पटक दें।

इस सिलसिले में एक बड़ी मनोरञ्जक घटना सहगल जी ने बतलाई है। उन्हें गिरफ़्तार करने ख़ुफ़िया पुलिस के दारोग़ा श्री० भृगुप्रकाश आए थे। मोटर पर सहगल जी दाहिनी ओर बैठे और वे बाईं ओर। मोटर जैसे ही चलने लगी, उनके घर की महिलाओं तथा उपस्थित कर्मचारियों ने उन पर पुष्पों की वृष्टि की थी। कुछ सुन्दर गुलाब के फूल भी थे। जब मोटर जमना-पुल के उस पार पहुँची, तो फूलों की सुगन्धि और भी भली मालूम हुई। सहगल जी का कहना है, कि वे अपने बाएँ हाथ से मोटर की सीट पर पड़े हुए कुछ फूल उठा कर सूँघना चाहते थे। संयोग से उनका हाथ दारोग़ा साहब की जेब से छू गया, जिसमें एक पिस्तौल और गोलियाँ रक्खी थीं। दारोग़ा साहब एकदम चौंक पड़े, उन्होंने तुरन्त अपनी रक्षा का साधन दाहिनी जेब से निकाल कर बाईं जेब में रख लिया और नैनी-जेल तक वे उसे बड़ी सावधानी से पकड़े रहे। शायद उन्हें इस बात का भय हो गया था कि फूल के बहाने से सहगल जी उनकी जेब से पिस्तौल निकालने का प्रयत्न कर रहे थे !!

(८) सहगल जी की गिरफ़्तारी, इसलिए हुई थी, क्योंकि उन्होंने 'भविष्य' की १९वीं संख्या में स्वर्गीय खुदीराम बोस (एक क्रान्तिकारी युवक) की संक्षिप्त जीवनी प्रकाशित कर दी थी। मामला इतना कमज़ोर था, कि अन्त में सरकार को उसे उठा लेना पड़ा।

(९) १३ मार्च को सहगल जी नैनी जेल से रिहा हुए और २०वीं मार्च को स्थानीय डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट महोदय का एक प्रेम-पत्र मिला, जिसमें उन्हें २३वीं मार्च को उनसे मिलने का बड़ा गम्भीर अनुरोध था। मिलने पर प्रान्तीय गवर्नमेण्ट के चीफ़ सेक्रेटरी (चौबे) कुँवर जगदीशप्रसाद साहब की ओर से उन्हें इस आशय की चेतावनी दी गई, कि उन्हें स्वर्गीय पं० चन्द्रशेखर आज़ाद का इतना विस्तृत समाचार तथा जीवनी 'भविष्य' में इस 'ढङ्ग' से नहीं छापनी चाहिए थी। हिदायतनामे में कहा गया था, कि इसके अर्थ हैं विप्लवकारियों को खुला प्रोत्साहन देना। विप्लवकारियों के नामों के पहिले सम्मान-सूचक शब्द लगाने पर भी एतराज़ किया गया था। अन्त में उनसे कहा गया कि भविष्य में यदि 'भविष्य' में इस प्रकार के 'कड़े' लेख पाए गए, तो गवर्नमेण्ट को बाध्य होकर उन पर राजविद्रोह का अभियोग चलाना पड़ेगा—इत्यादि।

* * *

इन कतिपय बिल्कुल नई कृपाओं के अतिरिक्त आए-दिन की ज़ब्तियों और मुक़दमों में संस्था को आज तक जो-जो हानियाँ पहुँचाई गई हैं, भारत का बच्चा-बच्चा उससे पूर्णतः परिचित है। 'चाँद' को जिन-जिन प्रहारों का शिकार होना पड़ा है, वह कोई पुरानी बात नहीं है; किन्तु 'भविष्य' को अपने जीवन के प्रथम प्रभात से ही विशेष गौरव प्राप्त रहा है।

पाठकों को स्मरण होगा 'भविष्य' के पहिले ही अङ्क की लगभग २२,००० कॉपियाँ डाकख़ाने में रोक ली गई थीं; जो १२ रोज़ तक डाकख़ाने में डाले रखने के बाद छोड़ दी गईं—क्योंकि उसका कोई लेख क़ानूनी शिकञ्जे में नहीं लाया जा सका। फिर जिन थोथे कारणों की आड़ में बार-बार ज़मानतें माँगी गईं, उसका विवरण पाठकों को विदित ही होगा। पाठकों को यह भी स्मरण होगा, कि इन्हीं कारणों से खीज कर चौबे जी (चीफ़ सेक्रेटरी) को सहगल जी ने उन्हीं अभियोगों के बल पर – जिनके कारण ज़मानत माँगी गई थी—खुली अदालत में केस चलाने की चुनौती दी थी, और इस पत्र की नक़ल उन्होंने प्रान्तीय गवर्नर तथा वायसराय के पास तक भेजी थी। पाठकों को सुन कर आश्चर्य न होना चाहिए, कि आज तक इन पत्रों का उत्तर किसी भी साहब ने देने की कृपा नहीं की। कुछ लोगों का भ्रम है, कि इसी चुनौती (Challenge) के कारण सहगल जी को गिरफ़्तार कर उन पर राज-विद्रोह का केस चलाया गया था। जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, सहगल जी पर यह केस स्वर्गीय खुदीराम बोस की जीवनी प्रकाशित करने पर चलाया गया था।

सम्भवतः सहगल जी को विलायत जाने के लिए 'पास-पोर्ट' भी इसी भय से नहीं दिया गया, कि कहीं वे पश्चिम के विप्लवकारियों से मिल कर भारतीय विप्लव-कारियों का सङ्गठन न करा दें। जिस समय उनको पास-पोर्ट देने से सपरिषद् गवर्नर ने इन्कार कर दिया था, उस समय यह पहेली समझ में नहीं आ रही थी, किन्तु बाद की होने वाली घटनाओं ने सारी परिस्थिति को कञ्चन के समान स्पष्ट कर दिया है। किसी मसख़रे ने प्रान्तीय गवर्नमेण्ट को इस बात का विश्वास दिला दिया है, कि इस संस्था द्वारा ही सारे क्रान्तिकारी दलों का सञ्चालन किया जा रहा है और यह संस्था ही इस प्रान्त के क्रान्तिकारियों का 'अड्डा' है। जिस दिन इस संस्था की तलाशी हुई थी, उस दिन पुलिस के २ अफ़सरों की बातचीत से ऐसा प्रतीत हुआ है कि पुलिस वालों में से किसी ने 'भयङ्कर' क्रान्तिकारी को संस्था में आते हुए देखा था। पुलिस के कुछ गुर्गों ने अपने हाकिमों को शायद यह भी जड़ दिया था, कि स्वर्गीय 'आज़ाद' यहीं रहा करते थे। इन भले आद-मियों से हम यह पूछना चाहते हैं, कि जब उन्होंने किसी क्रान्तिकारी को संस्था में आते देखा था, तो उसे गिर-फ़्तार क्यों नहीं किया ? यदि अपने जीवन का भय था तो शोर क्यों नहीं कर दिया ? संस्था के सञ्चालकों को इस बात की सूचना तुरन्त क्यों नहीं दी गई ? हम जानना चाहते हैं, गवर्नमेण्ट हमारे इन प्रश्नों का क्या उत्तर देती है ?

यदि सहगल जी पर किसी प्रकार का अभियोग है तो खुली अदालत में केस क्यों नहीं चलाया जाता ? फिर इन निन्दनीय उपायों की क्या ज़रूरत है ? यदि किसी राजनैतिक पत्रिका का सञ्चालन एवं सम्पादन ही हिंसात्मक-क्रान्ति को प्रोत्साहन देना है; तो वास्तव में हमें एक भी शब्द नहीं कहना है। किसी भी प्रकार की विपत्ति का हम हृदय की सारी प्रसन्नता से स्वागत करने के लिए तैयार हैं।

इस सिलसिले में प्रान्तीय गवर्नमेण्ट को हम यह भी बतला देना चाहते हैं, कि यद्यपि इस संस्था द्वारा प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं की नीति कुछ आवश्यकता से अधिक स्पष्ट और खरी रही है, किन्तु इसका अर्थ यह लगाना मूर्खतापूर्ण है, कि संस्था हिंसात्मक सिद्धान्तों की पक्षपातिनी है, अथवा उसका उद्देश्य हिंसात्मक विचारकों का समर्थन करना है। रही उनकी चर्चा करने की बात, सो इसके सम्बन्ध में हमें केवल इतना ही निवेदन करना है, कि हम पत्रकार का यह नैतिक कर्तव्य समझते हैं, कि वह अपने पाठकों के समक्ष किसी समस्या के दोनों पहलू ईमानदारी से रख दे और जनता को उन्हें स्वयं समझने का अवसर दे। हमने केवल इसी उद्देश्य को सामने रख कर ईमानदारी से अपने इस सिद्धान्त एवं कर्तव्य का पालन किया है। किसी भी प्रकार के अत्याचार का विरोध करना तथा उसके विरुद्ध जनता तथा गवर्नमेण्ट का ध्यान आकर्षित करना पत्रकार का पवित्र-तम कर्तव्य है, फिर चाहे वह अत्याचार पुलिस का हो या जनता का, सरकार का हो या किसी हाकिम-विशेष का ! यदि इसी उद्देश्य का कोई पत्रकार ईमानदारी से पालन न कर सके, तो उसके पत्र-सञ्चालन का उद्देश्य ही क्या हो सकता है ? दुर्भाग्य से आज समस्त भारत में शायद ही कोई ऐसा भाग्यशाली पत्रकार अथवा पत्र-सञ्चालक हो, जो पत्रों के प्रकाशन द्वारा आर्थिक लाभ उठाता हो, अतएव भारतीय पत्र-सञ्चालकों एवं पत्र-कारों पर आर्थिक प्रलोभनों का दोष लगाया ही नहीं जा सकता; यदि आर्थिक लाभ ही करना किसी-पत्रकार के जीवन का अन्तिम लक्ष्य है, तो उसे 'च तुष्ट' की औषधियाँ बना कर लाभ उठाने से कौन सा क़ानून रोक सकता है ? अस्तु।

अन्त में हम देशवासियों को उनके अकाट्य सहयोग एवं सहानुभूति के लिए उन्हें संस्था तथा उनके प्रवर्तकों की ओर से हार्दिक धन्यवाद देते हैं और उन्हें सहगल जी के शब्दों में विश्वास दिलाते हैं, कि जब तक हमारे पास चाय की एक प्याली तक शेष रहेगी, तब तक 'भविष्य' तथा 'चाँद' इसी निर्भीकता एवं दृढ़ता से देश तथा समाज की सेवा करते रहेंगे—चाहे ये पत्र एक ही पृष्ठ के निकलें, पर निकलेंगे अवश्य ! जब तक अहिंसा हमारा धर्म है, सत्य हमारा साधन है और कर्तव्य हमारी साधना है तथा जब तक देशवासियों की संस्था से सहानुभूति है, तब तक एक क्या, विश्व की सारी सरकारें एक साथ मिल कर भी हमें अपने निर्धारित लक्ष्य से विचलित नहीं कर सकतीं !!

* * *

आत्म-कथा

[श्री० सिद्धराज ढडढा, एम० ए०]

"बहुत दिनों की बात है"—पर्वत-शिला के नीचे से बहते हुए स्वच्छ झरने की छटा को निहारते हुए उस रमणी ने कहना आरम्भ किया—"जब मेरा जन्म हुआ और सरस्वती के रमणीय किनारों पर मैं बाल्योचित क्रीड़ाओं में अपने शैशव के प्रथम दिनों का सदुपयोग करती थी। परन्तु मैं अपने माता-पिता को नहीं पहचानती। जब से मैंने होश सँभाला, तब से गगन-विहारी, गिरिराज हिमालय को पिता और विशाल-हृदया सिन्धुदेवी ही को मैंने अपनी माता माना है।

"मैं सुन्दर थी, मेरे बालक-रूप में सबकी आशाएँ केन्द्रित थीं। सरस्वती के किनारे निवास करने वाले कवि बड़े प्रेम से मेरा पोषण करते और मेरे सुकुमार हृदय में अपूर्व संस्कारों के बीज बोते थे—मैं उनकी प्रेम-पात्री थी और वे मेरे पिता-तुल्य पूज्य थे। निर्दोष आनन्द की क्रीड़ाओं में मेरा बाल्यकाल व्यतीत हो गया।

"वसिष्ठ और अरुन्धती ने मेरे बाल्यकाल के हौसले पूरे किए। उनकी पर्णकुटी की छाया में, मैं बड़ी होने लगी। ऋषि ने मुझे पवित्रता का पाठ पढ़ाया और ऋषि-पत्नी ने श्रद्धा के संस्कार दिए। वसिष्ठ के तप की भव्यता और अरुन्धती के आत्म-समर्पण की महत्ता—दोनों से मेरा हृदय प्रेरित होने लगा। उनके स्नेहयुक्त संरक्षण में मैं बड़ी हुई—उत्साह और आशाओं से मेरा हृदय खिल उठा—जीवन का प्रथम प्रहर समाप्त हुआ!

"किशोरवयस्का की मोहिनी ने सब को मोहित कर लिया! मुझ को देख कर बालक और युवाओं के हृदयों में उत्साह उमड़ आता और वृद्ध लोग अपने जीवन की सफलता सिद्ध हुई मानते—वे मेरी बढ़ती हुई रूप-राशि को देख कर—एक-दूसरे की ओर गर्व से देखते। सब लोग मुझको सत्कारी और समृद्ध बना कर मेरा गौरव बढ़ाने में अपने प्राणों तक की परवाह नहीं करते!

"मेरे जीवन में वसन्त का आगमन हुआ, तपोवन की पवित्र धूमराशि से देदीप्यमान मेरा शरीर अधखिली कलिका के समान समीर के मन्द झोंके से हिल उठा। इतने में आए, मेरे प्रियतम मेरे प्राण! भरतों में श्रेष्ठ, विश्व-विजेताओं के समान—राजर्षि! उनके पग-पग में विजय का उत्साह था, उनकी आँखों में गर्व की मस्ती थी और जिह्वा पर वेद थे—उनकी बुद्धि में सविता के भर्गवरेण्य का वास था। ये थे—मेरे वीर, मेरे कवि—मेरे नाथ!

"इनकी छटाओं से मुग्ध होकर मैंने इन्हें आत्म-समर्पण किया। मैं इनके पुरुषत्व की महा-देवी बनी—मेरी आर्यता से वे आर्य हुए! मेरे स्वामी देवों के प्रिय और आर्यों के अधिपति थे। इनके मन्त्रों से जीवन का सञ्चार होता, इनके अतुल पराक्रम से पृथ्वी और आकाश गूँजते, इनकी तेजमयी दृष्टि के सामने तीनों लोकों की प्रतिभा मन्द पड़ जाती।

"जिस प्रकार वीर अर्धाङ्गिनीको ग्रहण करता है, उसी प्रकार उन्होंने मुझे ग्रहण किया—मनुष्यता के प्राबल्य से और उत्साह के वेग से! एक क्षण में मैं छोटी बाला से वीराङ्गना हो गई और प्रियतम के साथ महाराज्ञी-पद के पाने की उत्कण्ठा मेरे हृदय में उत्पन्न हुई।

"उनकी वीरता से सुदास का उद्धार हुआ, क्रूरता से शत पुत्रों के पिता वसिष्ठ सन्तानहीन हुए। अपने सौन्दर्य और रसिकता से इन्होंने उर्वशी को वश में किया, अपनी उदारता से अनार्यों को संस्कारी बनाया और आश्रित त्रिशङ्कु को तारने के लिए नए स्वर्ग का निर्माण करके इन्द्र का गर्व भञ्जन किया। इतना होने पर भी महत्ता-जनित नम्रता से उन्होंने इस अमर प्रार्थना का उच्चारण किया—'धीयोयोनः प्रचोदयात्!'

"अपने प्रियतम के हृदय की देवी, मैं भरत-श्रेष्ठ के नाम से 'भारती' कही-जाने लगी। अपने असंख्य पुत्रों के गर्व की निधान, मैं 'भारतमाता' कहलाने लगी। गौरव और सत्ता के नशे में चूर बनी हुई मैंने अपनी मोहिनी से तीनों लोकों को पागल कर दिया—मेरे आँगन में देवों के देव भी अवतार लेकर आने लगे।

"मेरे हृदय में विश्व-विजय की महत्वाकांक्षा उत्पन्न हुई—जगज्जननी की अतुल शक्ति का मुझ में सञ्चार हुआ। साथ ही साथ मेरी नसों में उछलते हुए समुद्र के समान प्रणय-कापूर भी आया करता और जिधर मेरी दृष्टि पड़ती उधर ही सौन्दर्य का अद्भुत विलास दिखाई पड़ता। ऐसा मालूम होता था, मानो मेरी विजय-यात्रा की कोई सीमा नहीं थी। मेरी प्रेरणा से भूखण्ड और द्वीपों के बीच का अन्तर नहीं के बराबर रह गया।"

इतना कहते-कहते उस रमणी की आँखों से विजय की अद्भुत प्रभा निकलने लगी। उसकी आवाज में विजयोल्लास की ध्वनि गूँजने लगी। "परन्तु"—खिन्न स्वर से उसने अपनी कहानी फिर से आरम्भ की—"मेरे भाग्य ने पलटा खाया। एक दिन और दिनों की तरह, आँगन में बैठी हुई मैं प्रियतम की राह देख रही थी। परन्तु उस दिन मेरे प्राणनाथ नहीं आए! जो कभी मेरा वियोग सहन नहीं कर सकते थे, वही आज मुझे विरह-वेदना से व्याकुल कर रहे थे। वे कभी मुझे छोड़ कर चले जायँगे, ऐसी आशा न थी। परन्तु वे न आए! समय बीतने लगा। मैं विरह-वेदना से व्याकुल होने लगी।

"वे आएँगे, मुझे निरन्तर यही आशा लगी रहती थी, परन्तु फिर भी वे न आए। उनके और मेरे संयोग से उत्पन्न हुए वीरों ने अपना तेज दिखाया—नदी और पर्वतों को पार करके वे मेरी कीर्ति को समुद्र के अन्त तक ले गए।

"वर्षों पर वर्ष बीत गए, परन्तु न तो मेरे जीवन-धन ही आए, न मेरी आशा ही भङ्ग हुई। मैं उनकी राह देखती रही। वे नया अवतार धारण करके आएँगे, इसी विश्वास से मैं अपने विरही हृदय को आश्वासन देती रही। एक दिन किसी ने मुझे मङ्गल-सन्देश सुनाया—"जिस मानवता ने मुझे मोहान्ध किया था, वह फिर यमुना के तट पर उत्पन्न हुई है। मेरे हृदय में उत्साह उमड़ आया, मेरे प्रणय के आनन्दमय स्वप्न मेरे सामने आने लगे। आशा की कली खिल उठी। मैं उनसे मिलने को लालायित हो गई। हम मिले। परन्तु मेरे मानसिक क्षितिज पर फिर निराशा के बादल छा गए। यह मेरा वीर नहीं था। मैंने उसमें स्वस्थता पाई, चतुरता पाई, ज्ञान भी पाया। परन्तु गगन-भेदी उत्साह और प्राबल्य से उछलती हुई प्रचण्ड मानवता की तरङ्गें—अपने प्रियतम के आदर्श की मतवाली—मैंने उसमें नहीं पाई। आशा के भङ्ग होने से अपमानिता-भामिनी की भाँति मैं फूट-फूट कर रोई।

"इस नए वीर को अपनी दैवी सम्पूर्णता के सामने मेरी तो पूछ भी नहीं थी। उन्होंने मेरे पुत्रों को आपस में लड़ाया। छोटी-छोटी बातों में मान-हानि का विचार करके उन्होंने घर में ही आग लगा दी। निराशा की मूर्च्छा में पड़ी हुई मुझको, वे सब भूल गए। मेरी 'निराधारी' की किसी ने परवाह नहीं की।

"आशा छोड़ कर एक दिन मैं गवाक्ष पर बैठी आँसू बहा रही थी। प्रियतम के बिना मेरा जीवन भी मुझे निरर्थक प्रतीत होता था। उसी समय द्वैपायन नाम-धारी वृद्ध और ज्ञान गम्भीर एक महात्मा वहाँ पर आए। मुझे विरहाकुल देख कर उन्होंने सान्त्वना दी और कहने लगे—'बाले, श्रद्धावान कभी आशा को नहीं खोता।' उनकी सौम्यता से आकर्षित होकर मैंने उन्हें अपनी करुण-कहानी सुनाई। ज्ञानार्द्र हृदय की उदारता दिखलाते हुए द्वैपायन ने कहा—'सुन, आशा के बिना श्रद्धा सम्भव नहीं और श्रद्धा के बिना सिद्धि सुलभ नहीं होती।' मैंने उनसे पूछा—'तो मैं श्रद्धा किस प्रकार रक्खूँ?'

"स्मरणों के अभ्यास से ही श्रद्धा निश्चल होती है बेटी!"—ऋषि ने उत्तर दिया—"अपने स्वामी के संस्मरण तू मुझे सुना दे। मैं उसकी एक संहिता तुझको बना दूँगा, जिसका निरन्तर पाठ करने से तेरी श्रद्धा स्थिर रहेगी।"

"मैंने अपनी कथा उनको आद्योपान्त सुनाई और उन्होंने उसकी संहिता बनाना आरम्भ किया। थोड़ी उन्होंने बनाई। पश्चात्, नैमिषारण्य में एकत्रित उनके शिष्यों ने उसे पूरी की। उस संहिता का पाठ करके श्रद्धा के बुझते हुए दीपक की ज्योति को ज्यों-त्यों सञ्जीवित रखने का प्रयास करती हुई मैं अपना जीवन निर्वाह करने लगी।

"इस नई श्रद्धा से मैं अपने प्राणनाथ की प्रतीक्षा किया करती थी। वे आवें, उस समय कहीं मेरा विशाल भवन उजड़ा हुआ न दिखाई दे, इस डर से मैं सदा उसको जैसा था वैसा ही बनाए रखने का प्रयत्न किया करती थी। स्मरण-संहिता का पाठ करती हुई अपने उत्साह को अविचल रखने के लिए मैं सदा कुछ न कुछ नया काम किया ही करती। और नाथ के आने पर पहिले से अधिक तेजस्विता बताने के हेतु मैंने ज्ञान की समृद्धि एकत्र करना आरम्भ किया—क्योंकि मुझको निरन्तर यह डर लगा रहता कि कहीं वे आवें और मुझे देख कर निराश न हो जायँ!

"कुछ काल व्यतीत होने पर एक प्रबुद्ध पुरुष आए। उन्होंने सुमधुर स्वर से मेरा दुःख पूछा और मेरे ऊपर दया करके उन्होंने उन दुःखों को निवारण करने के मार्ग सोचे। अपने प्रियतम का प्रेम छोड़ कर, कीर्ति और आकांक्षाओं का आकर्षण छोड़ कर—अपने प्रणय के उत्साह को दबा कर शान्ति-आराधन करने की सलाह उन्होंने दी। दुःख और विरह से अशान्त बने हुए हृदय को शान्त करने के लिए मैं उस तथागत के शरण में गई।

"कितने ही उपाय रोग से भी अधिक भयङ्कर होते हैं। इस नए उपाय से थोड़ी शान्ति अवश्य मिली। परन्तु मेरे प्रेम की ज्वाला मन्द होने लगी। स्वामी की याद से उत्पन्न होने वाला उत्साह अदृष्ट हो गया और उनके लिए अपने तन और रस की रक्षा करने का उत्साह भी जाता रहा। मैं विरह-व्याकुला गृहिणी के बदले सङ्गहीन साध्वी हो गई। अपने गौरव की रक्षा करना मैं भूल गई और दूसरों के उद्धार की योजना करती हुई भटकने लगी। अपने विशाल भवनों और रमणीय कुञ्जों में अपने प्रियतम के शब्दों की प्रतिध्वनि सुरक्षित रखने के बदले अनुकम्पा के आडम्बर के कारण मैंने हर एक को उनमें कोलाहल करने दिया। इस नए धर्म की शरण में जाते हुए मैंने धर्म की भी रक्षा नहीं की।

"इस प्रकार मैं साध्वी हो गई। जिस समय मैं स्वयं अपने उद्धार के पहिले जगत् का उद्धार करने की उत्कण्ठा से चारों दिशाओं में घूम रही थी। उस समय मुझे दो पुरुष मिले। एक कौटिल्य नाम का राज-कर्मचारी था और दूसरा उसका शिष्य। द्वैपायन की सङ्कलित की हुई संहिता से उनको मेरे नाथ की प्रेरणा मिली थी। वे मुझसे आकर मिले और मेरा वर्तमान स्वरूप देख कर खेद प्रकट करने लगे।

"'देवि!'—कौटिल्य ने भृकुटी चढ़ा कर मुझसे कहा—'यह कैसा वैराग्य लेकर तुम बैठ गई हो? अपने स्वामी के संस्मरणों को तुमने भुला दिया? क्या उनकी राह देखते-देखते थक गईं? क्या प्रणय-द्रोही विधवा के समान तुमने भी सतीत्व को साधुता में खोजना आरम्भ किया है? देवि! निर्बल ही विस्मृति-रूपी शान्ति को खोजता है। देवों को भी दुलभ तुम्हारे जैसी जननी को यह शोभा नहीं देता। चलो, घर लौट चलो। क्या तुम्हारे प्राण-स्वामी लौट कर आवेंगे, तब उनको सूने शयनागार में स्थान दोगी? यदि उनको पितृयज्ञ करना होगा तो क्या यवन और चीनसङ्घ के पाद-स्पर्श से मलिन वेदी उन्हें दिखाओगी? तुम्हारे रूप को निहारने की यदि उनकी इच्छा होगी तो क्या तुम इस व्रत-उपवासादि से सूखे हुए शरीर का उपहार उनके सामने रक्खोगी? चलो, लौट चलो। हम तुम्हारे नाथ को खोज कर लाएँगे—तुम अपना आँगन सजा-सँवार कर तैयार हो जाओ।"

"प्रतापी कौटिल्य के वचनों से मेरा भ्रम दूर हुआ। निराशा के बादलों को भेद कर प्रकाश की किरणें दिखाई देने लगीं। मैंने अपनी ओर देखा, तो मालूम हुआ कि मैं कितनी अधम हो गई थी। तत्काल साधुता का आडम्बर छोड़ कर मैं घर आई। मेरे हृदय में छिपा हुआ प्रणय फिर जाग्रत हो गया और नवोढ़ा के उत्साह से मैं अपने प्रियतम के आने की राह देखने लगी।

"उन दोनों में जो बन सकता था, वह मैंने

आवाहन

[श्रीमती राजराजेश्वरी देवी मिश्र 'नलिनी']

तेरे हेतु नाथ! मन-मन्दिर सजा के सौम्य,
प्रेम का पवित्र-दीप नेह से जलाया है।
पथ पर तेरे दृग-पाँवड़े बिछाए फिर,
धोने को चरण नैन-नीर सरसाया है।
जीवन के बाग़ से चुने हैं पुष्प पूजा हेतु,
बैठने को देव! हृदयासन बिछाया है।
भक्ति-भाव-भाजन में चारु-चाव-चन्दन ले,
प्यारे पद-वन्दन में बासर बिताया है।

❀

मेरे मन-मन्दिर के द्वार, द्वारकेश! खुले,
आओ हृदयासन पै सुख से विराजो नाथ!
पाने को तुम्हारे प्राण आकुल हुए हैं अति,
सुख से समाकुल सनेह साज साजो नाथ।
आतुर हुए हैं देखने को मञ्जु-मूर्ति नैन,
प्यारे प्रेम-बैन बारि उर उपराजो नाथ!
गुन-गण गाती गिरा सुन कुछ जाओ उसे,
नीके "नलिनी" के नेम-नेह से निवाजो नाथ!!

❀

किया। सामान्य जनों के सञ्चार से भ्रष्ट हुआ मेरा भुवन फिर सुन्दर और रमणीय होने लगा। मेरे वीर की कीर्ति को शोभा देने वाली उसकी भव्यता फिर चमक उठी। जहाँ उसकी मानवता विश्राम ले सके, ऐसे मनोहर कुञ्जों में फिर से पक्षियों का कलरव सुनाई दिया।

"मेरे पुत्र भी पिता को लौटा लाने के प्रयत्न में लगे। उन्होंने उनकी खोज में प्रत्येक दिशा में गमन किया। मेरे पास सन्देश आने लगे। मेरे नाथ का पता लग गया हो, ऐसा मालूम होता था। वर्षों की विरहिणी, मैं प्रणय से पागल हो गई। मैंने अपना केश-पाश सँवारा, कुमकुम राग धारण किया और छोड़े हुए वस्त्राभूषण भी अङ्गीकार किए। राह देखते-देखते जो मनोकामनाएँ शान्त हो गई थीं, वे फिर एकबारगी प्रचण्ड वेग से उछलने लगीं। 'वे आए, वे आए' की ध्वनि कानों में आने लगी। ऐसा मालूम हुआ, मानो मेरे वीर के उत्साह की तरङ्गें चारों ओर से आ रही हैं। मैंने नाथ के पैरों की आवाज़ सुनी। मैं उनका स्वागत करने दौड़ी।

"समाचार मिला कि कौटिल्य और उसका मित्र दोनों स्वधाम चले गए। मेरी आशाओं का पर्वत चूर-चूर हो गया। मैं भग्न-हृदया होकर लौटी। कौटिल्य के मित्र के छोटे भाई ने मुझे बहुत आश्वासन दिया और मेरे नाथ को खोज कर लाने का वचन देकर वह बाहर गया। परन्तु गया सो गया। 'तथागत' की सिखलाई हुई शान्ति से 'अशोक' होने की लालसा में वह मेरे प्रियतम की शोध करना भूल गया। संसार को केवल भ्रम मान कर धार्मिक दिग्विजय के द्वारा देवों के प्रिय होने की बात उसको पसन्द आई!

"मैं अब तक सुरक्षित अवश्य थी, परन्तु मेरे दुर्भाग्य का श्रीगणेश हो चुका था। पुत्र कैसे भी हों, परन्तु पति-विहीना नारी तो निराधार ही रहती है। सब लोग मुझे सान्त्वना देते, मेरे गौरव की रक्षा करने का प्रयत्न करते, परन्तु मेरा सुख तो गया, सो गया ही! कितने ही मुझको विश्वास दिलाते कि वे मेरे प्रियतम की खोज में घूमते हैं, कितने ही बेदरकारी से किसी बात की भी परवाह न करते। मुझ पर यह दोषारोपण किया जाता कि मैं अपने स्वामी की राह देखते रहने में उनके प्रति अन्याय करती थी। अतः अब मैं खुले दिल से अपनी विरह-वेदना भी किसी से नहीं कह सकती थी। समय-समय पर कोई वीर आशा के अङ्कुर प्रकट करता, परन्तु फल कुछ नहीं हुआ!

"कैसी दुर्दशा थी! मेरा हृदय कहता कि मेरे प्राणनाथ अभी जीवित हैं। मैं उनकी राह देखती, रात-दिन शय्या सँवार कर उनके पैरों की ध्वनि सुनने को कान लगाए, उनके आने की प्रतीक्षा में बैठी रहती। इधर मेरे पुत्र शान्ति के लोभ से उनको भूलने का प्रयत्न करते और पिता को सद्गत मान कर उनको श्रद्धाञ्जलि देने को तैयार हो जाते। परन्तु मेरे हृदय में विश्वास था कि मेरे प्राणनाथ अभी जीवित हैं और मेरे पुत्र उन्हें मरा हुआ समझ कर उनका तर्पण करते। ऐसी भयानक स्थिति का क्या किसी ने अनुभव किया है?

"पुरुष जैसा पत्नी को प्रिय होता है, वैसा क्या पिता कभी पुत्रों को प्रिय हो सकता है? अश्रद्धा के कारण कितने ही अपने पिता के स्वरूप को भी भूलने लगे। मेरे प्राणनाथ की प्रचण्ड, तपस्यात्मक, सर्वाङ्ग-सुन्दर प्रफुल्ल मानवता को भूल कर, उस यमुना पुलिनवासी वासुदेव की चतुरता, स्वस्थता और विशेषकर उसके विलास-क्रीड़ा को अपने सामने आदर्श मान कर उसको अर्घ्य समर्पण करने लगे। वे जिसे मेरा प्राण समझते थे, उसकी मुझे परवाह भी न थी। जिसे मैं चाहती थी, उसे वे सब भूलने लगे।

"मेरे गात्र शिथिल हो गए, मेरा सौन्दर्य फीका होने लगा और मेरा उत्साह मन्द पड़ गया। काल्पनिक शान्ति और निर्माल्य-विलास को खोजते हुए मेरे पुत्रों को अपने-पराए की भी पहचान न रही। पड़ोसी आकर घर के मालिक बनने लगे। मान की भेंट देने के बहाने वे घर में आए और

मेरे पुत्रों की निर्बलता से लाभ उठा कर, मेरी रक्षा करने के बहाने, घर में रहे। मेरे पुत्रों ने अपने पिता के लौटने की आशा छोड़ दी और पराश्रय में ही अपनी बड़ाई समझने लगे। मानो युगों की निराधारता मेरे सिर पर आ पड़ी हो, इस प्रकार मैं अशक्त और अस्वस्थ होकर पड़ी रही और पराधीनता तथा विरह की तीव्र वेदना को भूलने के प्रयत्न में मैं अपनी स्थिति का विचार भी न कर सकी।

"मेरे पुत्र अपने पिता को तो भूल ही गए थे, अब वे मुझको भी भूलने लगे! मेरे भुवनों में अब परदेशी क्रीड़ाएँ करते और आनन्द-विलासमय अट्टहास से उनके कोने-कोने गूँज उठते। मेरे उद्यानों में परदेशियों का पग-रव सुनाई देने लगा। परदेशी मेरे, मेरे पुत्रों के और मेरी समृद्धि के स्वामी बन कर आनन्द करने लगे। सृष्टि के सौन्दर्य-तत्व की मूर्त्ति के समान मैं अब पराधीन हो गई! उन्होंने मुझे हीरों से भूषित किया और बहुमूल्य कमख़ाब से मेरा शरीर ढंका। अगणित दासियाँ मेरी सेवा में लगी रहती थीं। मेरे द्वार पर हाथी झूमते और नौबत बजती थी। मेरे रङ्ग-महल में गवैयों की तान और सोने के झाँझर से शोभित मयूरों की नर्तन-ध्वनि सदा सुनाई देती थी। मेरा ठाट बेगमों के समान था—मेरा राजसी परदानशीन-जैसी थी।

"हाय! हजारों वर्षों के भी ऐसे ऐश-आराम को मैं क्या करूँ? एक क्षण—केवल एक क्षण—के लिए मेरे प्राणनाथ लौट कर आ जाते। एक क्षण के लिए मैं उनके पार्श्व में खड़ी होकर अपने संयुक्त स्वर से अपने कुञ्जों को गुँजा सकती! एक पल के लिए अपने संयुक्त बल से हम विजय-प्रयाण आरम्भ कर सकते! परन्तु यह सब मेरे भाग्य में कहाँ? भोग-विलास के अन्धकारमय वातावरण में कभी-कभी मुझको प्राणनाथ का स्मरण हो आता और थर-थर काँपती हुई आँखें फाड़ कर मैं चारों ओर देखती—क्या मेरे स्वामी आवेंगे तो मुझे इतनी अधम जान कर चले जायँगे?"

रमणी ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से ऊपर को देखा और एक दीर्घ निश्वास छोड़ा। दिशाएँ काँप उठीं! कपोलों पर से बह कर कुछ आँसू की बूँदें झरने के निर्मल जल के साथ मिल कर त्वरित गति से अनन्त की ओर बह चलीं!

"एक दिन सह्याद्रि पर्वतों से एक वीर आया"—देवी ने फिर कहना आरम्भ किया—"और अनेक विघ्नों को दूर करके वह मुझसे मिला। तीक्ष्ण हृदय-भेदी दृष्टि से मेरी ओर देख कर, स्वाभिमानमत्त उस वीर ने कहा—'माँ! माँ! तुझे लज्जा नहीं आती? तू अपने अप्रतिम, अद्वितीय स्वामी की याद छोड़ कर इस क्षुद्र विलास में बेहोश हो गई है? यदि तू ही अपने प्राण को इस प्रकार भूल जायगी, तो हम लोग कैसे उसकी स्मृति को बनाए रक्खेंगे? तू ही जब अपने टेक और गौरव को भूल गई, तो हमारा क्या होगा?'

"'वत्स'—मैंने दुःखार्त हृदय से कहा—'जब सभी मुझको भूल गए, तो मैं अपने आपको भूल जाऊँ, इसमें आश्चर्य ही क्या है?'

"'मैं न तो तुझको भूलूँगा और न भूलने दूँगा'—शङ्कर के अवतार के समान उग्र उस वीर ने कहा—'मुझको पिता की छोड़ी हुई निशानी और अपना आशिष दे—मैं जाकर तेरे और अपने प्राण का पता लगाऊँगा!'

"कृतज्ञ हृदय से मैंने उसे आशीर्वाद दिया और रङ्ग-महल की जाहो-जलाली भूल कर फिर प्रियतम की राह देखने लगी।

"परन्तु मैं क्या राह देखूँ? मेरा तो भाग्य ही फूटा हुआ था। जो विलासी परदेशी घर में आकर बसे थे, उनको तो मैंने वश में कर लिया, परन्तु वह सब और साथ ही में मेरे पुत्र भी, इतने भोग-विलासप्रिय हो गए थे कि उन्होंने अपने आपको कपटी और चालाक व्यापारियों के हाथ बेच दिया और उसी दशा में आनन्द मनाने लगे। हमारा सर्वस्व उनके हाथों में चला गया!

"उन नीरस व्यापारियों की दृष्टि में न तो मैं महादेवी ही रही और न 'हरम का नूर'! उनके लिए तो मैं केवल एक क्रीत-दासी थी। मेरी समृद्धि उनके घरों को शोभित करने गई, मेरे पुत्र उनकी सेवा में अहोभाग्य मानने लगे और मैं—आर्य-जननी, जिसके उद्धार के लिए द्वैपायन जैसे ज्ञानी और कौटिल्य जैसे राजनीतिज्ञ मर मिटे थे—आज दासों की दास बन गई!!!

'मैं अधम से भी अधम हो गई हूँ। अब इससे अधिक अधम दशा की तो मैं कल्पना भी नहीं कर सकती। मेरे गौरव का कहीं पता नहीं है! घर में पेट भर खाने को अन्न नहीं है! मेरे पुत्र पिताहीन हैं। वे अब बिलकुल निराश्रय और निराधार हो गए हैं। इससे भी बुरी दशा मेरे अन्तर की है। जब मैं भोग-विलास और आनन्द में मग्न थी, तो अपनी दशा का ज्ञान भूली हुई थी। परन्तु अब तो दासता के कारण नेत्रों के सामने का परदा हट गया और मुझे अपनी दशा का तीव्र ज्ञान हुआ है! मुझको अपना गया हुआ सुख-साम्राज्य अखरता है। गया हुआ गौरव सदा मुझको डङ्क मारता है। मैं अपनी लुटी हुई सम्पत्ति की कल्पना भी नहीं कर सकती। पुत्रों की विवशता देख कर मेरा हृदय भग्न प्राय हो गया है। अपने प्राणनाथ की प्रतापी मूर्ति के चिन्तन से भी अब मैं काँप उठती हूँ—वे क्या कहेंगे?—परन्तु भूल जाने की चेष्टा करने पर भी अब प्रति क्षण उनकी दिव्य आँखें मेरी ओर तिरस्कारपूर्ण हँसी से देखती हुई मालूम होती हैं। कभी-कभी उनके शब्द सुनाई देते हैं—'मैं आता हूँ—यह आया—परन्तु तू पहले क्या थी और अब क्या है?' तिरस्कारयुक्त अट्टहास के साथ यह शब्द अनन्त में विलीन हो जाते हैं!"

अनवरत अश्रु-प्रवाह की भेंट पाकर, आनन्द से उछलते हुए निर्मल झरने के नाद में अब भी उस अट्टहास की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती थी!*

* श्री० के० एम० मुन्शी की एक गुजराती कहानी का अनुवाद।

*   *   *

निराली है शान गाँधी की

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

सुना रहा हूँ, तुम्हें दास्तान गाँधी की,
ज़माने भर से, निराली है, शान गाँधी की,
रहे रहे न रहे, इसमें जान गाँधी की,
न रुक सकी, न रुकेगी ज़बान गाँधी की।
यही सबब है, जो वह दिल से जी से प्यारा है,
वतन का, अपने चमकता हुआ सितारा है।
बना था मस्त, कोई और कोई सौदाई,
हर एक सिम्त थी, ग़फ़लत की जब घटा छाई,
उसी की अक़्ल रसा, काम वक़्त पर आई,
मरीज़ मुल्क है, मसनूने चारा फ़रमाई।
नए ख़याल में, एक एक का दिल असीर हुआ,
इधर अमीर हुआ, और उधर फ़क़ीर हुआ।
जफ़ाओ जौर ने की ख़ूब अपनी बरबादी,
ख़राब हाल न दिन रात क्यों हो फ़रियादी,
बना दिया था क़फ़स का बुरी तरह आदी,
मगर है शुक्र मिला हमको दरसे आज़ादी।
ज़माना कहता है, गाँधी महात्मा वह है,
बशर नहीं है, हक़ीक़त में देवता वह है,
जो दिल में याद है, तो लब पे नाम उसका है,
जो है तो ज़िक्र, फ़क़त सुबहो शाम उसका है,
भलाई सब की हो, जिससे वह काम उसका है,
जहाँ भी जाऊँ, वहाँ एहतराम उसका है।
उठाए सर कोई क्या, सर उठा नहीं सकता,
मुक़ाबले के लिए, आगे आ नहीं सकता।
किसी से उसको मुहब्बत, किसी से उलफ़त है,
किसी को इसकी है, उसको किसी की हसरत है,
वफ़ाओ लुत्फ़ो तरहुम की, ख़ास आदत है,
ग़रज़ करम है, मदारात है, इनायत है।
किसी को देख ही सकता नहीं है मुश्किल में,
यह बात क्यों है, कि रखता है दर्द वह दिल में।
जफ़ाशआर से होता है बरसरे पैकार,
न पास तोप, न गोला, न क़ब्ज़े में तलवार,
ज़माना ताबए इरशाद, हुक्म पर तैयार,
वह पाक शक्ल से, पैदा हैं जोश के आसार।
किसी ख़याल से चरख़े के बल पे लड़ता है,
खड़ी है फ़ौज यह तनहा मगर अकड़ता है।
तरह-तरह के सितम, दिल पर अपने सहता है,
हज़ार कोई कहे कुछ, ख़ामोश रहता है,
कहाँ सरशिक हैं, आँखों से ख़ून बहता है,
सुनो सुनो कि यह एक कहने वाला कहता है।
जो आबरू तुम्हें रखनी हो, जोश में आओ,
रहो न बेख़ुदो बेहोश, होश में आओ।
पयामे सुलहो अमन का पयाम उसका है,
फ़िसाद जिससे न उठे, वह काम उसका है,
इसी सबब से ज़माने में, नाम उसका है,
जिसे ख़याल है उसका, ग़ुलाम उसका है।
खिले हैं फूल की सूरत से अब चमन वाले,
बजा है नाज़ करें उस पे जो वतन वाले।
रफ़ाह आम से मतलब है, और रग़बत है,
अनोखी बात, निराली रविश, नया ढब है,
यही ख़याल था पहिले, यही ख़याल अब है,
फ़क़त है दीन यही, बस यही तो मज़हब है।
अगर बजा हो तो "बिस्मिल" की अर्ज़ भी सुन लो,
चमन है सामने, दो-चार फूल तुम चुन लो।
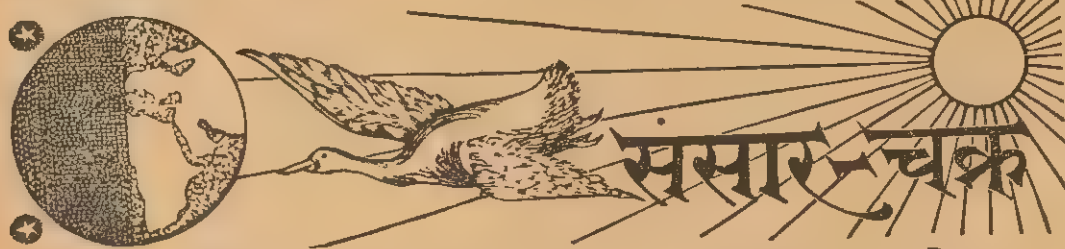
रीफ़ का स्वाधीनता-उद्योग और ग़ाज़ी अब्दुल करीम

[डॉ० आनन्दीदीन जी तिवारी, एम० बी० एच०]

यूरोप की साम्राज्यवादी शक्तियों की जीभ में एशिया और अफ्रिका का ख़ून लग गया है। वह उसके स्वाद का आनन्द पा चुकी हैं। उसीके कारण वे बलिष्ट और हृष्ट-पुष्ट हैं। इसीलिए वह चिरकाल तक अपना अधिकार इन महादेशों की अभागी जातियों पर बनाए रखना चाहती हैं। विगत महायुद्ध के समय जब जर्मन सैनिक फ़्रान्स के वक्षस्थल पर नृत्य कर रहे थे और वहाँ की सुकुमारी ललनाएँ अपनी रक्षा के लिए घोर चीत्कार कर रही थीं, तब इन्हीं साम्राज्यवादी शक्तियों ने, स्वाधीनता, समानता तथा भ्रातृत्व का राग गला फाड़-फाड़ कर अलापा था। संसार इनके वाग्जाल में फँस गया। युद्ध का नक़शा बदल गया। फ़्रान्स का सङ्कट टल गया, इङ्गलैण्ड की विपत्ति दूर हो गई—और पुराने वादे विस्मृति के गर्भ में विलीन हो गए!

यूरोप की गृद्ध-दृष्टि सर्वदा इस खोज में रहती है कि कहाँ कौन सी खानें हैं, कहाँ की भूमि उर्वरा है और कहाँ से कितना कच्चा माल प्राप्त किया जा सकता है। इस लोभ और पर-धन-लोलुपता के कारण साम्राज्यवादी स्पेन और फ़्रान्स ने रीफ़ में जो अत्याचार किए हैं, वह बीसवीं शताब्दी पर एक अमिट कलङ्क है। रीफ़ का दुर्भाग्य यही है कि वहाँ कोयले की खानें अधिकता से पाई जाती हैं।

स्पेनी और फ़्रान्सीसी व्यापार के बहाने रीफ़ में पहुँचे। अँगुली छूने का अवसर मिलते ही, उन्होंने पहुँचा पकड़ने की चेष्टा की। रीफ़ के व्यवसाय, अन्न-धन तथा खनिज सम्पत्ति पर शीघ्र ही स्पेन का अधिकार हो गया। कोयले के लोभ से जर्मनी ने भी इस ओर क़दम बढ़ाए, किन्तु फ़्रान्स और स्पेन के कारण उसकी दाल न गली।

अली हुसेमेस उपसागर के निकटवर्ती प्रदेशों में कोयले की खानें प्रचुर परिमाण में पाई जाती हैं। उस स्थान पर अपना अधिकार बनाए रखने के लिए रीफ़ के तेफ़ासित नामक स्थान पर क़ब्ज़ा रखना आवश्यक है! सन् १९२० ई० की १३वीं जनवरी को यूरोप की साम्राज्यवादी शक्तियाँ सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर कर रही थीं। उस मास में पेरिस में M. Leou Bourgeois की अध्यक्षता में League of Nations की प्रथम बैठक हो रही थी। एक ओर शान्ति और आत्म-निर्णय का मधुर राग पेरिस के कोमल कण्ठ से निकल कर संसार को मुग्ध कर रहा था और दूसरी ओर गौराङ्ग स्पेन कृष्ण अफ्रिका की एक क्षुद्र जाति के गले में ग़ुलामी का तौक़ बाँधने का प्रयास कर रहा था। सन् १९२० में स्पेन ने उस स्थान पर दख़ल कर लिया। उत्तरोत्तर स्पेन का लोभ बढ़ता गया। रीफ़ सरदारों को रिश्वत का लालच दिखा कर वह उन्हें अपने हाथ में करने की कोशिश करने लगा। किन्तु रीफ़ अरब हैं। उनके रक्त में मरुभूमि की ऊष्णता होती है। स्पेन के मुक़ाबले में शक्तिहीन होने पर भी उन्होंने अत्याचार के विरुद्ध खड़े होने का सङ्कल्प किया।

यहाँ पर रीफ़ का कुछ हाल बता देना प्रयोजनीय प्रतीत होता है। अफ्रिका के पश्चिमी तट पर अटलाण्टिक महासागर के किनारे मोरक्को प्रदेश है। इसका उत्तरीय भाग स्पेन के अधिकार में है, तथा दक्षिणीय भाग फ़्रान्स के क़ब्ज़े में है। इसी उत्तरीय भाग में रीफ़ नाम का एक प्रान्त अवस्थित है, जहाँ बहुत सी कोयले की खानें हैं। स्पेनियों ने अपनी तोपों के बदौलत इन्हें अपने क़ब्ज़े में कर लिया और इसके साथ ही जुआर का व्यवसाय भी अपने हाथ में लिया। परिणाम-स्वरूप रीफ़-निवासी भूखों मरने लगे। क्योंकि स्पेनियों ने जुआर की दर चढ़ा कर ४५) मन कर दी। इस अबाध शोषण के कारण रीफ़वासी ग़रीब होगए। सारे प्रान्त में भयङ्कर अकाल पड़ गया। और इसके साथ ही विदेशी शासन के प्रति विद्रोह की आग भड़क उठी।

सन् १९०७ में मेलिला बन्दर पर पहले-पहल विद्रोह का सूत्रपात हुआ। मोरक्को के युवकों ने एक गुप्त समिति की स्थापना करके स्पेनियों को अपने देश से भगाने की चेष्टा आरम्भ की। परन्तु सङ्गठन-शक्ति के अभाव के कारण युद्ध में हार गए।

परन्तु इस हार का परिणाम अच्छा हुआ। समस्त देश में नवजीवन का सञ्चार हुआ। नेताओं ने जाति को जगा कर सङ्गठित करने के लिए उपयुक्त शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था आरम्भ की। समस्त भेदभाव भूल कर मोरक्कोवासी एकता के पवित्र सूत्र में आबद्ध हुए।

सन् १९२० में दूसरा विद्रोह आरम्भ हुआ और इसके नेता हुए वीरवर ग़ाज़ी अब्दुल करीम। इनका जन्म सन् १८८८ में, रीफ़ प्रान्त में ही हुआ था। इन्होंने अपना आत्म-चरित्र रीयूनियन द्वीप में (Reunion Island), जहाँ वह आजकल अपना निर्वासन-काल व्यतीत कर रहे हैं, लिखा था। किन्तु वह पुस्तक भी फ़्रान्स के स्वेच्छाचारी शासन के कारण रीयूनियन द्वीप की सीमा को लाँघ न सकी। रीयूनियन द्वीप हिन्द महासागर में मॉरिशस और मडागास्कर टापुओं के मध्य में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल एक हज़ार वर्ग-मील है। आबादी १७,३१,१९० है। यहाँ गन्ने की खेती अधिकता से होती है। इसकी राजधानी सेण्ट डेनिस (St. Denis) है।

अब्दुल करीम ने पिता रीफ़ के एक सम्भ्रान्त ज़मींदार थे। अब्दुल करीम के दो भाई हैं। अब्दुल करीम की प्राथमिक शिक्षा फ़ेज के मदरसे में हुई थी। कई वर्ष तक अध्ययन करने के पश्चात् उन्होंने अत्यन्त गौरव के साथ यहाँ की अन्तिम परीक्षा पास की। इसके बाद उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से वह फ़्रान्स और स्पेन गए। वहाँ पहुँच कर उन्होंने पाश्चात्य भाषाओं का भी अनुशीलन किया। फ़्रान्स और स्पेन के कई विश्वविद्यालयों में रह कर अब्दुल करीम ने पाश्चात्य विज्ञान में भी यथेष्ट पारदर्शिता प्राप्त की। फिर मैडरिड के सैनिक विद्यालय में युद्ध-विद्या का अध्ययन किया। किसी जाति का सर्वोच्च नेता होने के लिए, जिस शिक्षा की आवश्यकता होती है, अब्दुल करीम ने यूरोप में निवास करके, अपने को उससे भली भाँति सुसज्जित कर लिया। इसी समय उन्हें अपने पिता के स्वर्गवास का समाचार मिला। इसलिए विवश होकर रीफ़ लौटना पड़ा। इसके कुछ समय बाद उन्हें स्पेन सरकार की अधीनता में एक उच्च पद मिल गया।

इसी समय स्पेन के अत्याचार तथा शोषण-नीति के कारण समग्र रीफ़ में हाहाकार मचा हुआ था। स्पेन के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए मेलिला बन्दर में गुप्त समिति की स्थापना हुई, जिसका उल्लेख हमने ऊपर किया है। अब्दुल करीम के हृदय में भी स्वदेश-प्रेम की ज्वाला धधक उठी। वह भी इस गुप्त समिति के सदस्य हो गए। विद्रोह का दावानल भड़क उठा। किन्तु दुख के साथ कहना पड़ता है, कि उसको अपने उद्देश्य में सफलता न मिली। अब्दुल करीम उस समय केवल १९ वर्ष के थे। इस विद्रोह में उन्होंने अद्भुत प्रतिभा और असीम साहस का परिचय दिया था।

अस्तु, स्पेन की सेना ने इस दल को भङ्ग कर उसके नेताओं को क़ैद कर लिया। अब्दुल करीम भी गिरफ़्तार कर जेल की चहारदीवारी के भीतर ठूँस दिए गए। किन्तु यह असाधारण साहसी पुरुष जेल से किसी न किसी भाँति निकल आया और रीफ़ पहुँच कर पुनः सेना-संग्रह करना आरम्भ कर दिया। रीफ़वासी शान्ति से अपना कृषक-जीवन व्यतीत करते थे। उनमें यह शक्ति और सामर्थ्य कहाँ थी कि पश्चिम की एक बलवान शक्ति का सामना करने का साहस करें। किन्तु अब्दुल करीम ने उनके हाथ में हल की मुठिया के बदले बन्दूक़ सधाई। यूरोप से गुप्त-रूप से अस्त्र-शस्त्र मँगाए गए। खुले तौर से स्पेन से युद्ध की

घोषणा की गई। संसार कटाक्ष भाव से हँसने लगा, कि रीफ़ किस प्रकार स्पेन के विरुद्ध खड़ा हो सकेगा। किन्तु रीफ़ ने तो युद्ध का डङ्का बजा ही दिया था। संसार को इस अरब-नेता के साहस का परिचय मिल गया। स्पेन ने बार-बार आक्रमण किया; किन्तु बार-बार उसको मुँह की खानी पड़ी। अन्त में क्षुद्र रीफ़ ने स्पेन को नीचा दिखाया, और बहुत से अफ़सर, तथा अस्त्र-शस्त्र रीफ़ के अधिकार में आ गए। स्पेन को पराजित करके अब्दुल करीम ने रीफ़ में गणतन्त्र की स्थापना की। रीफ़-निवासियों ने अपने योग्य नेता का उचित सम्मान कर उन्हें अपने गणतन्त्र का सभापति निर्वाचित किया।

परन्तु युद्ध में पराजित होने के बाद भी स्पेन चुप न रहा। इस घोर अपमान से क्षुब्ध होकर, उसने एक महती सेना संग्रहीत करके फिर रीफ़ पर आक्रमण कर दिया। किन्तु इस युद्ध में भी स्पेन की वही बुरी गति हुई। उसकी सेना को वीर अब्दुल करीम की देश-भक्त सेना ने घेर कर, बड़ी बुरी तरह पराजित किया। इस सम्वाद से स्पेन की राजधानी मैडरिड में कोलाहल मच गया। स्पेन के प्रधान-मन्त्री और वर्तमान यूरोप के अन्यतम सर्वश्रेष्ठ सैनिक नेता जनरल प्राइमो डी रेवरा ने स्वयं मोरक्को पर चढ़ाई की। निर्भीक सैनिक अब्दुल करीम ने यह घोषणा की, कि यदि स्पेन रीफ़ पर अधिकार करने की चेष्टा करेगा तो देश-रक्षार्थ रीफ़ का एक-एक बच्चा अपने को बलिवेदी पर चढ़ा देगा।

जिस जाति ने स्वाधीनता के रक्षार्थ इतना कठोर व्रत धारण किया हो, उसको संसार की कोई भी जाति अपनी अधीनता में रखने का दुःसाहस नहीं कर सकती। इस महाप्रण के सम्मुख स्पेन को फिर पराजित होना पड़ा। उसकी बहुत सी सेना भी गिरफ़्तार कर ली गई। बार-बार पराजित होने के कारण स्पेन क्लान्त हो उठा और सन्धि का प्रस्ताव उपस्थित किया। यूरोप की दो-तीन शक्तियाँ मध्यस्थ बनीं। उस समय मि० रेमजे मैकडॉनल्ड इङ्गलैण्ड के प्रधान-मन्त्री थे। अब्दुल करीम ने सन्धि के विषय में उन्हें एक पत्र लिखा था। उसका कुछ भावार्थ हम नीचे देते हैं, जिससे पाठकों को अब्दुल करीम के स्वाधीनता-प्रेम की भावना का पता लग जायगा। अब्दुल करीम ने लिखा था :—

"अपने देश और जाति की स्वाधीनता को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए, प्राणों की आहुति का प्रण करके हमने युद्ध किया है। स्पेन ने बार-बार हमको पराधीनता की जञ्जीर में बाँधने की चेष्टा की है। किन्तु वह आज सन्धि का प्रस्ताव कर रहा है। रीफ़ के गौरव को बिन्दु-मात्र भी धक्का लगे—इस प्रकार की किसी भी सन्धि के लिए मैं सहमत नहीं हूँ—इससे युद्ध का सञ्चालन जारी रखना ही अच्छा है। यदि यूरोप हमारे स्वाधीनता के जन्मदत्त अधिकार को स्वीकार न करेगा, तो जब तक रीफ़ के एक भी बच्चे के शरीर में प्राण रहेगा, तब तक रीफ़ स्पेन के विरुद्ध युद्ध जारी रक्खेगा।"

स्पेन ने ४० लाख रुपया देकर अपने बन्द सैनिकों का उद्धार कराया। स्पेन को इस लज्जाजनक पराजय से अपमानित होकर, वहाँ के जन-साधारण की श्रद्धा अपनी गवर्नमेण्ट पर से उठ गई और देश में विद्रोह की आग सुलग उठी। बम देवता का नाद यत्र-तत्र सुनाई देने लगा। किन्तु स्पेन-सरकार ने भीषण दमन-नीति का अवलम्बन करके इस विद्रोह को शान्त किया।

उसी जमाने में दक्षिण अमेरिका के Beunos Aires प्रान्त के विश्वविद्यालय के छात्रों ने अपने प्रजातन्त्र की शताब्दी उत्सव के अवसर पर अब्दुल करीम को सभापतित्व ग्रहण करने के लिए आमन्त्रित किया। परन्तु कई राजनैतिक अड़चनों के कारण वे उस उत्सव में योग-दान न कर सके। किन्तु जो भाषण उन्होंने उस अवसर के लिए वहाँ भेजा था, उसका कुछ अंश हम यहाँ देंगे। इससे पाठकों को यह मालूम हो जायगा, कि रीफ़-नेता अब्दुल करीम किसी भी सभ्य देश के नेता की बराल में समानता का स्थान ग्रहण करने की योग्यता रखते हैं।

"आपके स्वाधीनता-स्मृति-दिवस के निमन्त्रण-पत्र का उत्तर देते हुए, मेरा हृदय आनन्द और

ग़ाज़ी अब्दुल करीम

गर्व से उमड़ आया है। संसार की प्रत्येक जाति को अपनी विशेषताओं के अनुसार अपनी शासन-प्रणाली स्थापित करने का पवित्र अधिकार है। इस अधिकार में औरों का हस्तक्षेप करना भयानक पाप है।

"एक शताब्दी पूर्व आपके पूर्वजों ने जिस भावना से प्रेरित होकर, अपने देश की स्वाधीनता प्राप्त की थी, वही एक भाव इस क्षुद्र रीफ़ प्रान्त में हमारे हृदय को आन्दोलित कर रहा है—उसी प्रेरणा से जीवन की एकमात्र अभिलाषा स्वाधीनता के लिए हमने अपना जीवन और धन समर्पण कर दिया है।

"विगत महायुद्ध ने यूरोप की अन्तरात्मा को विषाक्त कर दिया है। शोषण-नीति और राज्य-लोलुपता ने उसको अन्धा बना दिया है। नैतिक अनाचार से यूरोप का रोम-रोम कलङ्कित है। तब भी उसका विश्वास है कि उसको उदार-निर्मल सभ्यता संसार की अन्यान्य जातियों को ग्रहण करनी ही पड़ेगी।

"हम चाहते हैं कि भावी मानव-समाज शान्ति और शृङ्खला की नींव पर स्थापित हो। हम मरु-भूमि-निवासी अरब विदेशियों के बन्धन से मुक्त होना चाहते हैं। उसी पथ के पथिक मिश्र ने हमसे पहले ही यात्रा आरम्भ कर दी है। हम लोग भी आज मोरक्को में, उसी पथ की ओर अग्रसर हो रहे हैं। समय आने पर—स्वाधीनता का समय आने पर—Algiers जागेगा, ट्यूनिस जागेगा और ट्रिपोली की निद्रा भी भङ्ग होगी।

"हमारे इस संग्राम और दावे के पीछे अन्याय या पाप नहीं है। यह बात मिथ्या है कि स्पेन-वासियों से घृणा रखने के कारण हमने यह आन्दोलन आरम्भ किया है। हम कैसे भूल सकते हैं कि यह भूमि किसी समय हमारे पूर्वजों की क्रीड़ास्थली रह चुकी है। कौन स्पेन-वासी नहीं जानता कि जिसके कारण उनकी शिल्पकला आज संसार में उन्नति पर है, उनमें से अधिकांश अरब ही हैं। जिस देश को हमने अपनी शिल्प-कला से अलंकृत किया है, अपने परिश्रम से हमने जिस भूमि को उद्यान बना दिया था—उससे अपना सम्बन्ध-विच्छेद करके हमने उसको तन्द्रा और जड़ता के हवाले कर दिया है।

"आप लोग, जो स्पेन के मित्र हो गए हैं (क्योंकि उसने आपकी स्वाधीनता स्वीकार कर ली), यह न समझें कि मैं आपको स्पेन के विरुद्ध उत्तेजित कर रहा हूँ। आशा है, आप मेरी सहानुभूति के सम्बन्ध में ग़लतफ़हमी न करेंगे।"

रीफ़ ने स्पेन के दाँत खट्टे कर दिए, किन्तु विश्व के रचयिता ने स्वाधीनता उसके भाग्य में न लिखी थी। फ़्रान्स की दृष्टि में अब्दुल करीम खटकने लगे। यूरोप में फ़्रान्स ने स्वाधीनता-प्राप्ति के लिए सब से अधिक बलिदान किया है। फ़्रान्स स्वातन्त्र्य-प्रियता के लिए प्रसिद्ध है। फ़्रान्स जानता है कि स्वातन्त्र्य की अभिलाषा एक महान संक्रामक रोग है। फ़्रान्स ने सोचा कि कहीं इस रीफ़-सरदार की वाणी टिट्यूनिस, अलजेरिया, ट्रिपोली आदि की निद्रा न भङ्ग कर दे। रीफ़ की विजय कहीं उन स्थानों में विद्रोह का बीज न बपन कर दे। ऐसी अवस्था में फ़्रान्सीसी सत्ता की नींव डगमगा उठेगी। फ़्रान्स को सत्ता को संरक्षित रखने के लिए रीफ़ पर अधिकार रखना नितान्त प्रयोजनीय था। इसीलिए फ़्रान्स ने रीफ़ के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। इधर बेचारा रीफ़ अभी एक युद्ध की थकावट से ही व्याकुल था। उसकी एक विपत्ति तो ईश्वर की कृपा से टल गई थी। किन्तु इस बार घोर विपत्ति के काले मेघों ने उसके आकाश को आच्छन्न कर लिया। परन्तु अब्दुल करीम ने साहस और वीरता को न छोड़ा। उन्होंने अपनी सामान्य शक्ति को एकत्रित कर शत्रु से मोर्चा लिया। इस युद्ध में अब्दुल करीम ने जिस वीरता और स्वातन्त्र्य-प्रेम का परिचय दिया, वह इस बीसवीं शताब्दी के इतिहास में अनुपम है।

फ़्रान्स के दाँत पहले रीफ़ ने खट्टे कर दिए। उसके धन-जन की इतनी हानि हुई, कि फ़्रान्स में इस युद्ध को बन्द करने का सार्वजनिक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। किन्तु फ़्रान्स की साम्राज्यवादी सरकार ने इसकी ओर कुछ ध्यान न दिया। धन

और जन को पानी की तरह बहा कर फ़ान्स ने अब्दुल करीम को पराजित किया।

अब्दुल करीम गिरफ़्तार कर रियूनियन द्वीप भेज दिए गए। स्वाधीनता, समानता तथा भ्रातृत्व का समर्थक फ़ान्स क क्षुद्र जाति को पराधीनता के बन्धन में बाँध कर गर्व से फूल उठा। संसार की महाशक्तियों ने इस अन्याय का ओर आँख तक न उठाया। गौराङ्ग बेलजियम की स्वाधीनता की रक्षा के लिए, रक्त की नदियाँ बह चली थीं, किन्तु रीफ़—कृष्ण रीफ़—तो मानो पराधीनता का ही उपभोग करने के लिए संसार में जन्मा है। संसार में स्वाधीनता की डींग हाँकी जाती है, अपने स्वार्थ के लिए, समानता का राग अलापा जाता है, अपने तुच्छ स्वार्थ के लिए और भ्रातृत्व का डङ्का बजाया जाता है, केवल अपने निजी स्वार्थ के लिए। संसार स्वार्थ-सागर है। वर्तमान संसार की नीति हमको यही शिक्षा दे रही है।

अब्दुल करीम जिस दुर्ग में बन्दी हैं, उसका नाम Chateaux Morange है। यह बहुत पुराना क़िला है। समय की गति ने इसकी भी दशा में परिवर्तन कर दिया है। वह भी दुर्बलता का शिकार हो गया है। दुर्बल दुर्बल से सहानुभूति रखता है। वह भी दुर्बल जाति के नेता वीर अब्दुल करीम को आश्रय प्रदान कर अपनी सहानुभूति का परिचय दे रहा है।

एक बार एक पत्र के सम्वाददाता ने इस द्वीप में अब्दुल करीम से भेंट की। उसने अब्दुल करीम से प्रश्न किया कि इस द्वीप में तो आपको अच्छा लगता होगा? अब्दुल करीम ने उत्तर दिया कि इस द्वीप में मैंने कुछ भी नहीं देखा।

"किन्तु, यह क़िला और इसके आसपास का स्थान तो बड़ा सुन्दर है?"

अब्दुल करीम ने उत्तर दिया—यह क़िला तो जीर्ण-शीर्ण है, और इसकी हवा भी स्वास्थ्य के लिए हितकर नहीं है।

"यहाँ का पहाड़ी दृश्य तो आपकी जन्म-भूमि के सदृश ही है। मैं समझता हूँ कि यह तो आपको अच्छा ही मालूम होता होगा।"

"मैं तो बन्दी हूँ। बन्दी को क्या अच्छा लगेगा। क्या किसी बन्दी के हृदय में सुख की वासना रहती है? आज हम अपने प्रिय रीफ़ से कितनी दूर हैं। इससे अधिक और कौन सा दुःख हो सकता!"

"किन्तु आपने युद्ध में तो बड़ी वीरता दिखाई है?" थोड़ी देर के लिए बन्दी का मुख-मण्डल उज्ज्वल हो उठा।

"मैंने तो स्पेन को एक तरह पराजित ही कर दिया था, उनको हमारे देश में घुसने का क्या अधिकार है? वे नीच हैं, जो जबर्दस्ती हमारी स्वाधीनता का अपहरण करना चाहते हैं। रीफ़ ने तो अन्त तक प्राणों की बाज़ी लगा कर युद्ध किया है, किन्तु अन्त में फ़ान्स की सेना की अधिकता के कारण हमको पराजित होना पड़ा।"

सम्वाददाता जिस समय जाने लगा था, उस समय फ़्रान्सीसी सेना के एक अफ़सर ने कहा—"अब्दुल करीम भयानक साहसी और बुद्धिमान है। मुझे भय है कि अगर उसको किसी दिन मौक़ा मिला, तो वह इस द्वीप से फ़रार होकर फिर रीफ़ में स्वाधीनता की आग प्रज्वलित कर देगा।"

वीरवर अब्दुल करीम आज बन्दी हैं, परन्तु रीफ़ के सीने में अत्याचार की आग आज भी धधक रही है। हमें विश्वास है कि एक दिन वह एकाएक भड़केगी और पराधीनता के सारे बन्धनों को भस्मीभूत करके दम लेगी। कौन कह सकता है कि अब्दुल करीम की साधना विफल जावेगी?

* * *

भारतीय गाँवों में असन्तोष की आग

पुलिस के भीषण अत्याचारों का रोमाञ्चकारी वर्णन

"लगानबन्दी महात्मा गाँधी के आन्दोलन की चरम सीमा है और यदि यह आन्दोलन भारत में फैल गया तो ब्रिटिश शासन का अन्त होते देर न लगेगी।××× महात्मा गाँधी और सरदार वल्लभभाई पटेल ने इन गाँवों के निवासियों को किसी जादू के प्रभाव से विमोहित कर लिया है। किसान उनकी आज्ञा को ईश्वरीय आज्ञा मानते हैं और उसे पालन करने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने के लिए तैयार हैं। गुजरात के गाँवों में जहाँ-जहाँ मैंने भ्रमण किया है, लोगों को यही कहते सुना है कि, 'जब तक महात्मा गाँधी और सरदार पटेल हमें आज्ञा न देंगे, हम गवर्नमेण्ट को लगान कदापि न देंगे।' उन्होंने यह भी कहा कि 'स्वराज्य-प्राप्ति के लिए ही हम अपनी तुच्छ आहुति चढ़ा रहे हैं।"

["न्यू लीडर" (लन्दन) में—श्री० एच० एन० ब्रेलसफ़र्ड]

शासन का कलङ्क

भारत में भ्रमण करते समय मैंने पाँच दिन गुजरात में व्यतीत किए हैं और मैं जीवन भर उन्हें न भूलूँगा। उन पाँच दिनों में मेरा हृदय जितना व्यथित हुआ है, उतना जीवन में कभी नहीं। वहाँ की घटनाओं पर कोई कितना ही विचार करे और कोई लेखक कितनी ही एकाग्रतापूर्वक उन्हें अङ्कित करने का प्रयत्न करे, परन्तु

भारत के सच्चे हितचिन्तक और इस लेख के यशस्वी लेखक श्री० एच० एन० ब्रेल्सफ़र्ड

उनका चित्र चित्रित नहीं किया जा सकता। भारतीय स्वतन्त्रता का संग्राम गुजरात में चरम सीमा पर पहुँच गया था, और वहाँ संग्राम की विशाल आहुति प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होती थी। वहीं भारत की ब्रिटिश गवर्नमेण्ट ने लगान वसूल करने में किसानों पर अत्यन्त नृशंस और बर्बर अत्याचार किए हैं। पर यदि मैंने क़ानून की भयङ्कर अवज्ञा और किसानों पर किए गए पाशविक अत्याचारों का दृश्य अपनी आँखों से न देखा होता, तो मुझे किसी के मुँह से सुन कर उनकी भयावहता पर कभी विश्वास न होता। पुलिस को इस आन्दोलन में दो रूप दिए जाते हैं। गवर्नमेण्ट की दृष्टि में वह राजविद्रोहियों का दमन और 'क़ानून और शान्ति' की रक्षा करने वाली राजभक्ति की प्रतिमूर्ति है, परन्तु भारतीयों की दृष्टि में, जिनसे भ्रमण के समय मेरा घनिष्ट सम्बन्ध रहा है, वह हमारे भारतीय शासन का अत्यन्त भयङ्कर कलङ्क है। हमारे शासन में उससे अधिक कलङ्कित और कोई दूसरा मोहकमा नहीं है। वहाँ की पुलिस के भारतीय तथा ब्रिटिश ऑफ़िसर घूँस के लिए प्रसिद्ध हैं, और हरएक अङ्गरेज़ अपनी बातचीत में इसे स्पष्ट रूप से स्वीकार करता है। पुलिस के इस भयङ्कर पतन का रहस्य जानने के लिए इतिहास के पन्ने उलटने पड़ेंगे। हम भारत के पूर्व विजेताओं का अनुसरण कर रहे हैं और हमारा शासन उन्हीं भारतीयों के द्वारा होता है, जिनका मुग़लों के शासन से घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। अब उसमें यूरोपियन ढङ्ग का समावेश अवश्य हो गया है, परन्तु उसकी रूढ़ियों से अभी तक वह पिण्ड नहीं छुड़ा सका। इसका फल यह हुआ है कि भारतीयों में अत्याचार सहन करने की शक्ति आ गई है।

लगानबन्दी की आँधी

लगानबन्दी महात्मा गाँधी के आन्दोलन की चरम सीमा है और यदि भारत में सभी जगह इसका प्रचार हो गया तो ब्रिटिश शासन का अन्त होते कुछ देर न लगेगी। इस आन्दोलन के प्रचार के लिए लोगों के सर्वोच्च त्याग की आवश्यकता है, क्योंकि जब भारतीय गवर्नमेण्ट लगान न देने पर चल या अचल सम्पत्ति ज़ब्त करती है, तो उसे यह मिट्टी के मोल बेच डालती है। गुजरात में सात सौ से लेकर एक हज़ार तक प्रति बीघे क़ीमत की ज़मीन एक या दो रुपए में बेची गई है और खेती सींचने के पाँच-पाँच हज़ार के पम्प लगान वसूल करने के लिए सोलह-सोलह रुपए में बिकते देखे गए हैं। इन अत्याचारों के होने पर भी गुजरात के किसान अपनी प्रतिज्ञा पर अटल हैं।

कई कारणों से लगानबन्दी आन्दोलन के लिए गुजरात केन्द्र चुना गया है। वहाँ के गाँव भारत के अन्य प्रान्तों के गाँवों से अधिक समृद्ध हैं। किसानों के पास उनके निजी खेत हैं और वहाँ अविद्या का भी उतना प्रकोप नहीं है, जितना भारत के अन्य भागों में। इन किसानों में से बहुतों ने मल्लाह के रूप में संसार का भ्रमण किया है, बहुत से अर्थोपार्जन के लिए दक्षिण अफ्रिका जाते हैं और वहाँ से अपनी कमाई का कुछ भाग (मैंने सुना है, साल भर में १५० पौण्ड या लगभग दो हज़ार रुपया) अपने कुटुम्बियों के लिए भेजते हैं। वहाँ की भूमि अत्यन्त उपजाऊ है और उसमें कपास, तम्बाकू, गन्ने और अन्न की फ़सल अच्छी होती है। इन किसानों के मकान भारत के अन्य भागों की नाईं मिट्टी के नहीं, बल्कि ईंट के और प्रायः दो मञ्ज़िले बने हैं और उनमें सुन्दर चित्रकारी भी है। उनके गाय-बैल इतने स्वस्थ और सुन्दर हैं कि किसान उन पर फूले नहीं समाते। भारतीय किसान की समृद्धि के ये ही प्रधान चिह्न हैं।

किसानों की भीष्म-प्रतिज्ञा

परन्तु इस आन्दोलन में वे अपने इस सुन्दर स्वर्ग को लातों से रौंदने के लिए तैयार हो गए हैं। कई वर्षों से गुजरात के इन गाँवों पर गाँधी और उनके अनुयायियों का प्रभाव छाया हुआ है। और मैंने बहुत से गाँवों में सत्याग्रह-आश्रम देखे हैं, जो अब गवर्नमेण्ट ने ज़ब्त कर लिए हैं। परन्तु अभी भी अछूतों के स्कूल जारी हैं और खादी-प्रचार का कार्य ज़ोरों से हो रहा है। दो वर्ष पहले बारडोली गवर्नमेण्ट से लगानबन्दी के सम्बन्ध में युद्ध कर चुका है और उसमें वह विजयी हुआ है।

महात्मा गाँधी और सरदार वल्लभभाई पटेल ने इन गाँवों के निवासियों को किसी जादू के प्रभाव से विमोहित कर लिया है। किसान उनकी आज्ञा को ईश्वरीय आज्ञा मानते हैं और उसे पालन करने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने के लिए तैयार हैं। गुजरात के गाँवों में जहाँ-जहाँ मैंने भ्रमण किया है लोगों को यही कहते सुना है कि, "जब तक महात्मा गाँधी और सरदार पटेल हमें आज्ञा न देंगे, हम गवर्नमेण्ट को लगान कदापि न देंगे।" उन्होंने यह भी कहा कि "स्वराज्य-प्राप्ति के लिए ही हम अपनी तुच्छ आहुति चढ़ा रहे हैं।" अपनी इस प्रतिज्ञा की पूर्ति के लिए वे जो कुछ कर रहे हैं, उस पर किसी को एकाएक विश्वास न होगा। गाँव के गाँव उजाड़ हो गए हैं और घरों में झाँक कर देखने से एक टूटी लकड़ी भी दिखाई नहीं देती। यदि बाजारों में और रास्तों पर किसी के चलने-फिरने की आहट मिलती है, तो वह केवल बन्दरों के कूदने-फाँदने की। दिन में कभी-कभी किसी किसान या मन्दिर के पुजारी के दर्शन हो जाते हैं। परन्तु और सभी लोग ब्रिटिश राज्य की सीमा से बाहर चले गए हैं और बड़ौदा राज्य की सीमा में खजूर के झाड़ों के नीचे झोपड़ियाँ बना कर रहते हैं। परन्तु ब्रिटिश राज्य की सीमा छोड़ देने पर भी ये लोग चैन से नहीं रहने पाते, कभी-कभी ब्रिटिश पुलिस एक हिन्दुस्तानी ऑफ़िसर के नेतृत्व में सीमा लाँघ कर वहाँ भी धावा किया करती है और वहाँ इन किसानों के साथ ही बड़ौदा राज्य की प्रजा को भी लाठियों से पीटती है। इन अभागे किसानों के कष्टों का अन्त नहीं है. परन्तु जब तक गाँधी स्वयं लगान-बन्दी के आन्दोलन का अन्त न कर दें, तब तक वह फैलता ही जायगा।

लगान न देने के कारण किसानों की जो ज़मीन और भैंसें ज़ब्त की गई हैं, उन्हें बेचना कोई आसान कार्य नहीं है। उनके सङ्गठन को देख कर दाँतों अँगुली दबानी पड़ती है। गुजरात में मुसलमानों की जन-संख्या बहुत कम है और वहाँ के हिन्दू जातीय बन्धन से जकड़े हुए हैं। जो व्यक्ति जाति के नियमों का उल्लङ्घन करता है, वह जाति से बहिष्कृत कर दिया जाता है। एक हिन्दू के लिए इससे भयङ्कर दण्ड नहीं दिया जा सकता।

कुछ और बस नहीं, तो मुँह चिढ़ा रहा हूँ मैं!

[जनाब "आजिज़" लखनवी]

नसीबे खुफ़्ता को अपने जगा रहा हूँ मैं,
ग़ज़ल वह गाते हैं, तबला बजा रहा हूँ मैं!
तुम्हारे वास्ते दुनिया से लड़ रहा हूँ मैं,
अकेला जाके रक़ीबों में घुस पड़ा हूँ मैं!
इलाही भागते हैं लोग किस लिए मुझसे,
मलेरिया हूँ न थैसिस न कॉलरा हूँ मैं!
किसी की बज़्म है क्या गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स,
शरीक होके जो नाकाम आ रहा हूँ मैं?
वह आज घर मेरे आए हैं बाद मुद्दत के,
दुआएँ रात के बढ़ने की माँगता हूँ मैं!
यह कमसिनी की अदा और चोरियाँ दिल की,
तुम्हारी दीदा-दिलेरी को देखता हूँ मैं!
कोई यह कह दे ज़रा गोलमेज़ वालों से,
इधर भी देख लें लट्टू नचा रहा हूँ मैं!
है छेड़-छाड़ असीरी में भी हसीनों से,
कुछ और बस नहीं, तो मुँह चिढ़ा रहा हूँ मैं!
न ताल-सुर से हूँ वाक़िफ़ न राग से माहिर,
ग़ज़ल का रङ्ग हो क्या ख़ाक, बेसुरा हूँ मैं!
कहूँ किसी से जो मुमकिन हो मुझको 'वायरलेस'
मुझे न सुन, कि बहुत दूर की सदा हूँ मैं!

मुझे ऐसे उदाहरण मालूम हैं, जहाँ लाठियों के प्रहार और अन्य अत्याचारों के कारण कुछ लोगों के लगान देने पर जाति ने उन पर कड़ा जुर्माना किया है और भविष्य में ऐसा अपराध होने पर उन्हें जाति-च्युत करने की धमकी दी गई है। मेरे भ्रमण के समय में भी लगान देने के अपराध में कई लोगों को १०१ रुपया जुर्माना देना पड़ा है। इस जातीय बन्धन के कारण किसानों की इच्छा होने पर भी उन्हें लगान देने का साहस नहीं होता।

यूनिवर्सिटी के कलङ्क

इसी जातीय बन्धन के कारण हिन्दू ज़ब्त जायदाद नहीं ख़रीद सकते। और इसीलिए गवर्नमेण्ट यह जायदाद वैरिया लोगों को बेचने का प्रयत्न करती है। ये लोग अत्यन्त ग़रीब होते हैं। उनका मुख्य पेशा मज़दूरी है। गवर्नमेण्ट की दृष्टि में भी ये लोग नीच माने जाते हैं और जब कोई चोरी या हत्या होती है, तब इन्हीं पर अधिक सन्देह किया जाता है। इन्हीं लोगों को उकसा कर ज़ब्त जायदाद ख़रीदने के लिए तैयार किया जाता है। कमिश्नर ने मुझसे स्वयं कहा था, कि इस अवसर पर हमारा प्रधान उद्देश्य वैरिया लोगों को जायदाद दिला कर उनकी आर्थिक परिस्थिति सुधारना है। गवर्नमेण्ट की इस नीति से यह स्पष्ट पता चलता है कि उसका मन्तव्य इन लोगों को अपने पक्ष में कर अपना शासन दृढ़ करना है। यह कार्य सब-कलेक्टरों (मामलातदारों) पर छोड़ दिया गया है, जो यूनिवर्सिटी के शिक्षित ग्रेजुएट होते हैं। ये ऑफ़िसर गाँवों में चक्कर लगाते हैं और इन वैरिया लोगों को पट्टीदारों से अपना पहले का बदला चुकाने के लिए उकसाते हैं और उनसे कहते हैं कि "यदि पट्टीदार तुमसे क़र्ज़ का रुपया माँगे तो तुम उसके टुकड़े टुकड़े कर दो। तुम्हारा बाल बाँका न होने पाएगा। जिसे गाँधी टोपी पहने देखो, उसे ख़ूब मारो। इसके साथ ही उन्हें ज़मीन ख़रीदने के लिए उकसाया जाता है और यह उन्हें एक या दो रुपए प्रति एकड़ के भाव से बेच दी जाती है। एक व्यक्ति ने तो यहाँ तक कहा, कि ये ही ऑफ़िसर मकानों को जलाने की आज्ञा देते हैं।

न्याय का स्वाँग

पुलिस जब गाँवों में पहुँचती है, तब वह वहाँ के उन लोगों को, जो दिन में वहाँ आ जाते हैं या दिन भर काम करके लौटते हैं, घेर लेती है और उन्हें ऑफ़िसरों की आँखों के सामने तक बड़ी निर्दयता से पीटती है। कभी-कभी तो ऑफ़िसर स्वयं अपनी लाठी से उन्हें पीट कर न्याय का स्वाँग रचते हैं। मैंने स्वयं एक आदमी का टूटा हुआ हाथ और दूसरे का कटा हुआ अँगूठा देखा है। इसी मार के कारण एक स्त्री के शरीर पर बहुत से घाव भी मैंने देखे हैं। मार के कारण उसका मुँह सूज गया था। मुझे मालूम हुआ था कि ऐसे भी लोग थे, जिन्हें और भी अधिक गहरे घाव लगे थे और वे अस्पताल में पड़े थे। गुजरात के भ्रमण में मैंने प्रायः सभी गाँवों में घायल व्यक्ति देखे हैं, जो लाठी या बन्दूक़ के कुन्दों से पीटे गए थे। ये अत्याचार लगान वसूल करने के लिए किए जाते थे। परन्तु अधिकांश उदाहरणों में ये मार खाने वाले वे लोग न होते थे, जिन्हें लगान देना होता था। वे लोग गाँव छोड़ कर चले गए थे और उनका लगान मार-पीट कर इन निरपराध लोगों से वसूल किया जाता था। इस मार का एक दूसरा उद्देश्य लोगों के हृदय में भय उत्पन्न करना भी था। इसी कारण एक आदमी पर उस समय तक मार पड़ती रही, जब तक उसने अपने सिर से गाँधी टोपी न उतार ली। एक दूसरा आदमी केवल इसलिए आहत किया गया, कि उसने पुलिस को सलाम नहीं किया। उसके शरीर पर एक बन्दूक़ के कुन्दे का और बारह लाठियों के घाव थे। और ये सब अत्याचार किए जाते थे क़ानून की रक्षा के लिए!

* * *

साहित्य का सपूत

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—१ ; दृश्य—४

(साहित्यानन्द का मकान)

चपला—(मोज़ा बुनती हुई बीच-बीच में द्वार की ओर ताक कर) इस वक्त, तो वह पिता जी से मिलने रोज़ ही आते हैं। मगर अभी तक नहीं आए। (द्वार की ओर देख कर) शायद आ रहे हैं। (रुक कर) नहीं-नहीं, यह तो हवा का झोंका था। पिता जी बाहर गए हुए हैं। टेसुआ काम में लगा हुआ है। जो कहीं आ जाते तो मैं ही द्वार खोलती और एक दफ़े नजदीक से......आह ! संसारीनाथ, न जाने तुमने मुझ पर क्या कर दिया है कि तुम्हें आँख भर के देखना तो अलग रहा, तुम्हें सामने पाते ही यह निगोड़ी पलकें नहीं उठतीं। क्या करूँ ? (द्वार की ओर ताक कर) बड़ी देर हो गई। क्या न आएँगे ? सुबह तो पिता जी से मिल ही चुके हैं। शायद न आएँ। (ख़ुशी से चौंक कर) वह द्वार खटका। आ गए ! (द्वार की ओर बढ़ कर जाती है) नहीं-नहीं, मुझसे द्वार न खोला जाएगा। हाय ! राम ! क्या करूँ। अरे ! टेसू ! ओ टेसू !

(एक छोकरे का आना)

टेसू—क्या है चपला बीबी ?

चपला—(ख़ुशी, लज्जा और घबराहट के साथ) अरे ! देख-देख, कोई बाहर आया है। (मुँह फेर कर मोज़ा बुनती हुई धीरे-धीरे भीतर की ओर जाने लगती है।)

(टेसू द्वार की ओर जाता है।)

चपला—(अलग) हाय ! मुझसे अब तो यहाँ खड़ा भी नहीं हुआ जाता।

टेसू—(पलट कर) कोई तो नहीं है बीबी ! कुत्ता था।

चपला—(एकाएक मुरझा कर) कुत्ता था।

टेसू—(जाता हुआ, घूम कर) अरे ! दरवाजा बन्द करना तो भूल ही गया।

चपला—रहने दे, मैं बन्द कर दूँगी। जा अपना काम देख।

(टेसू जाता है। चपला द्वार से उल्टी तरफ़ मुँह किए मोज़ा बुनती हुई सोच में खड़ी रहती है। द्वार की ओर से चुपके-चुपके संसारीनाथ आता है)

संसारी—(ख़ुशी में चौंक कर अलग) धन्य भाग ! आज आते ही दर्शन मिला। और—और यहाँ पर दूसरा कोई भी नहीं। मगर आह ! करूँ क्या ? (सर पीट कर) तमाम सोची हुई बातें तो इनको देखते ही दिमाग़ से उड़ गईं। क्या करूँ ? पैरों से लिपट जाऊँ कि कलेजे से लगा लूँ ? मुँह चूमूँ कि चाँद-सा मुखड़ा देखूँ ? प्यार करूँ कि दिल का दुखड़ा रोऊँ ? क्या करूँ, क्या न करूँ, कुछ समझ में नहीं आता।

चपला—(संसारीनाथ को बिना देखे हुए) उफ़ ! अब तक नहीं आए।

संसारी—कौन ?

चपला—(घूम कर देखती है और ख़ुशी से चिहुँक उठती है) अरे ! कौन ? आप ? (झट से मुँह फेर कर भागना चाहती है)

संसारी—हाँ, मैं ही हूँ। मगर आप कहाँ चलीं ? ज़रा सुनिए तो !

चपला—(रुक कर, मुँह फेरे, सर झुकाए, मोज़ा बुनती हुई) कहिए !

संसारी—क्या ? नहीं, हाँ, आपके पिता जी से मिलने आया था।

चपला—(कुछ रञ्जीदा होकर) उन्हीं से ? (सामने होकर गम्भीरता से) अच्छा तो बैठक में चल कर बैठिए।

(जाना चाहती है)

संसारी—ठहरिए, ज़रा ठहरिए तो। बात तो सुनिए।

चपला—(ताने के ढङ्ग पर) जब काम पिता जी से है, तब आप मुझे क्यों रोकते हैं ? मिलने उनसे आए और बात मैं सुनूँ ? जी रहने दीजिए। मुझसे मतलब, ग़रज़, वास्ता ?

संसारीनाथ—(चकरा कर) अरे ! हाँ, अगर किसी को आप ही से मतलब हो ?

चपला—मगर आपको तो पिता जी से है। आप अपनी कहिए। दूसरों के फेर में क्यों पड़ते हैं ?

संसारीनाथ—अगर कोई सुने तो अपनी कहूँ भी।

चपला—(ताने में) कोई अपना हो तो उसकी कोई सुने भी।

संसारी—(आवेश में बढ़ कर) आह ! चपला, यह क्या कहती हो। मैं अपना नहीं तो क्या बेगाना हूँ ?

चपला—इसको आप जानें या पिता जी, जिनसे मिलने आप आते हैं।

संसारी—और तुम नहीं जानतीं ? क्यों ? (मोज़ा पकड़ कर) ज़रा आँख उठा कर बोलो।

चपला—(सटपट कर पिछड़ती हुई) पिता जी घर पर नहीं हैं।

संसारी—जानता हूँ, क्योंकि अभी-अभी उनसे बाज़ार में मुठभेड़ हो चुकी है। तभी तो मौक़ा देख कर मैं......

चपला—(मोज़ा संसारीनाथ के हाथ से खींचती हुई) हाँ-हाँ, सूइयाँ चुभ जाएँगी। छोड़ दीजिए।

संसारी—अच्छा ज़रा एक दफ़ा इधर देख तो लो।

चपला—(झुँझला कर मोज़ा खोलती हुई) अरे ! अरे ! जाइए आपने मेरे बीने हुए जाल सब बिगाड़ दिए।

संसारीनाथ—नाराज़ न हो। लो।

चपला—अब तो बिगड़ गया। क्या करूँ उसे लेकर ?

संसारी—इतनी सी बात के लिए इतनी नाराज़गी ?

चपला—(कनखियों से देख कर मुस्कराती हुई) तब कितनी सी बात के लिए होनी चाहिए ?

संसारी—(आवेश में) आह ! कम से कम इतनी तो हो। (झपट कर आलिङ्गन करता हुआ) अरी मेरी चपला प्यारी !

(उसके दोनों गालों को बड़े ज़ोरों से चुचकार की आवाज़ करता हुआ चटाख़-चटाख़ चूमता है, वैसे ही साहित्यानन्द अपने मुँह पर पगड़ी लपेटे हुए, अन्धे की तरह हाथ फैलाए द्वार की ओर से आता है। चपला झुँझला कर भाग खड़ी होती है। संसारीनाथ उसी ओर ललचाई नज़रों से देखता रहता है।)

साहित्यानन्द—यह कौन मूर्ख मुझे चुचकार-चुचकार कर बुला रहा है। मैं कुकुरानन्द थोड़े ही हूँ। मैं हूँ साहित्यानन्द।

संसारी—(साहित्यानन्द को देख कर—अलग) हाय ग़ज़ब ! यह क्या ? सर मुँड़ाते ही ओले पड़े ! यही बड़ी ख़ैरियत हुई कि इसकी आँखों पर पट्टी अब तक बँधी हुई है।

(चुपके से द्वार की ओर भाग जाता है)

(भीतर की तरफ़ से सरला आती है।)

सरला—क्या हुआ क्या, जो चपला यहाँ से इतनी बदहवास गई है। (साहित्यानन्द को देख कर) अरे ! यह क्या ? यह कौन घर में घुस आया।

(पलट जाती है)

साहित्यानन्द—(इधर-उधर टटोलता हुआ) क्यों भाई, चुच-चुच ही करना जानते हो या बोलना भी ? बस चुचकार कर रह गए। अरे ! कोई बताओ, मैं कहाँ निकल आया। (टेसू एक बड़ा सा डण्डा लाकर साहित्यानन्द को मारना शुरू करता है।) "बाप रे बाप ! यह तो लट्ठ है। धत् ! धत् ! निकल यहाँ से।"

साहित्यानन्द—हाय ! हाय ! यहाँ भी दङ्गे वाले पहुँच गए। अब किधर भागूँ ?

(सरला को झाड़ लिए आना)

सरला—मैं भी आ गई। डरना मत। मार-मार, अच्छी तरह मार।

(साहित्यानन्द पिटता हुआ द्वार के बाहर किया जाता है।)

पट-परिवर्तन

(क्रमशः)

* * *

आह !

[श्री० बद्रीनारायण जी शुक्ल]

रिझाऊँ अर्पण कर क्या तुम्हें ?
विश्व में है मेरा कुछ नहीं।
फूल-फल-पत्रों को भी स्वत्व
निर्धना मैं कह सकती नहीं॥

हृदय था मेरे केवल एक,
उसे दे चुकी प्रथम ही अहो !
बची जीवन-धन केवल 'आह',
उसे कैसे दे डालूँ कहो ?

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

ये दृश्य उस समय के हैं, जब कि (गत २७-२८ फ़रवरी को) मेरठ कॉलेज तथा मेरठ जुबिली क्लब के अधिकारियों ने भूतपूर्व डिप्टी मैजिस्ट्रेट सर सीताराम जी, बी० ए० के 'नाइट-हुड' की पदवी प्राप्त करने के उपलक्ष में एक स्वागत-समारोह तथा प्रीति-भोज का आयोजन किया था, जिसका उक्त कॉलेज के विद्यार्थियों तथा महिला स्वयंसेविकाओं ने पूर्ण बहिष्कार किया था। ६०० विद्यार्थियों में से केवल ६० इस समारोह में सम्मिलित हुए थे। पुलिस महिला पिकेटरों को पकड़ने के लिए जेल की लॉरी लेकर आई थी। सर सीताराम साहब पिकेटरों से बचने के लिए निश्चित समय से दो घण्टे पहले ही एक पतली गली के रास्ते सभा-स्थान में आए थे। पिकेटरों ने 'नाइट-हुड का नाश हो' और 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाए।

शान्ति और क़ानून के संरक्षकों की निगरानी में धरना देने वाली मेरठ की महिला स्वयंसेविकाएँ।

बहिष्कार के कारण आमन्त्रित व्यक्तियों से सूनी कुर्सियों का दृश्य।

जेल की लॉरी—जो शायद भय-प्रदर्शन के लिए लाकर खड़ी की गई थी।

इन चित्रों में गोरयाकोठी (सारन) के उन अत्याचारों का मौन वर्णन है, जो चौकीदारी टेक्स वसूल करने के लिए आई हुई पुलिस ने किया था। इस सम्बन्ध में वहाँ ६१ गिरफ़्तारियाँ भी हुई थीं, जिनमें १३ वहाँ के हाई-स्कूल के विद्यार्थी और शिक्षक थे।
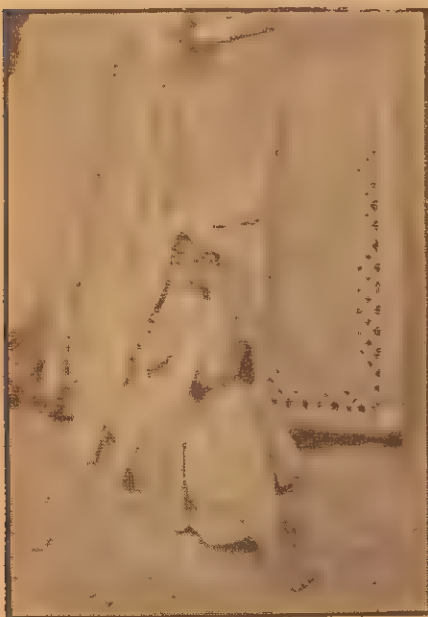
स्व० रामसेवक सिंह की दुखिनी माता, जिसके रुपए-पैसे, कपड़े-लत्ते तथा गहने आदि—सर्वस्व अपहरण कर लिए गए थे।

श्री० गोरखसिंह के अनाज रखने के कोठले तोड़-फोड़ डाले गए।

श्री० रामजीवन सोनार की दूकान—ढाले हुए पीतल तथा काँसे के बर्तन तोड़-फोड़ डाले गए हैं।
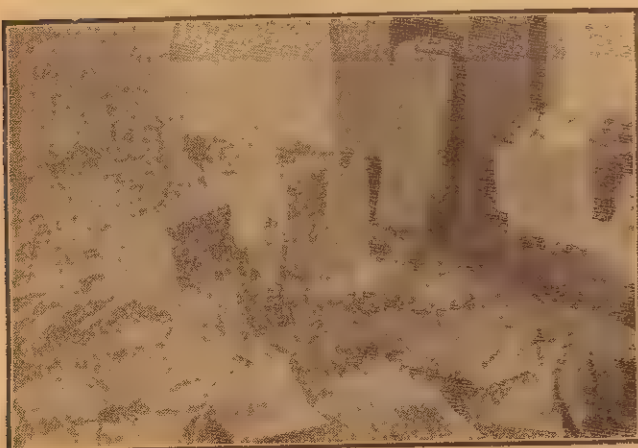
श्री० हरदेवसिंह के आँगन का दृश्य—रसोई के बर्तन तोड़ डाले गए हैं।

श्री० नारायणप्रसादसिंह के दालान का दृश्य, जहाँ पुलिस ने आलमारी, टेबिल और कुर्सी के खण्ड-खण्ड कर डाले और किताबें नष्ट-भ्रष्ट कर दीं।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

महाराष्ट्र शुश्रूषा पथक, काशी—सत्याग्रह आन्दोलन की धूम के समय डॉ० काशीनाथ जी दुबे ने इस 'पथक' की स्थापना की थी। पुलिस की लाठीबाज़ी के समय तथा हिन्दू-मुस्लिम दङ्गे के समय पथक ने घायलों की अच्छी सेवा की है।

बाईं ओर से कुर्सी पर—दूसरे—पं० राजेश्वर शास्त्री, द्रविड़, तीसरे—बङ्गाल हिन्दू-मिशन के प्रमुख कार्यकर्त्ता स्वामी सत्यानन्द जी, चौथे—हिन्दू-महासभा के कार्यकर्त्ता श्री० बाबाराव सावरकर, पाँचवें—डॉ० काशीनाथ जी दुबे, अवशिष्ट—पथक के स्वयंसेवक।

श्रीमती मञ्जुभाषिणी अम्मल—आप त्रिचूर की 'भारतीय महिला एसोसियेशन' की मन्त्री चुनी गई हैं।

कराची की श्रीमती श्यामसुन्दरी भाटिया—जो हाल ही में जेल से मुक्त हुई हैं।

कुमारी प्रकाशवती 'विदुषी' (शान्तिदेवी)—१५ वर्षीय बालिका—आप ६ मास तक कारादण्ड भोग कर हाल ही में जेल से मुक्त हुई हैं।

श्रीमती मेहरबाई कदगर—आप पहली पारसी महिला हैं, जो कराची सत्याग्रह समिति की 'डिक्टेटर' रह चुकी हैं।

श्रीमती कस्तूरीबेन जीवराज—आप कराची सत्याग्रह समिति की आठवीं डिक्टेटर थीं और पुलिस द्वारा गिरफ़्तार भी कर ली गई थीं, परन्तु गाँधी-इर्विन समझौते के कारण आप पर मुक़द्दमा नहीं चला।

राष्ट्रीय संग्राम के कुछ उत्साही सैनिकों का स्वागत

अभिनन्दन कर रहा मौन या आगे है सारा संसार ! पहनाते हैं तुमको हम अनुराग-भरे हृदयों का हार !!

'भविष्य' कार्यालय के कुछ कर्मचारियों का चित्र, जो श्री० सहगल जी की जेल से रिहाई होने पर उनके स्वागत के समय लिया गया था।

सर्वेंट्स ऑफ़ इण्डिया सोसाइटी के भूतपूर्व सदस्य—प० वेङ्कटेशनारायण जी तिवारी, एम० ए०; जिन्हें करबन्दी आन्दोलन के सम्बन्ध में कारावास-दण्ड दिया गया था।

बम्बई तिलक विद्यालय के आचार्य—प्रो० आपटे, जिन्हें वर्तमान आन्दोलन में छः मास का दण्ड मिला था।

देहरादून के उत्साही कॉङ्ग्रेस कार्यकर्ता—पं० हरिकृष्ण गौड़—वर्तमान आन्दोलन में आपको तीन माह की क़ैद की सज़ा दी गई थी।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ
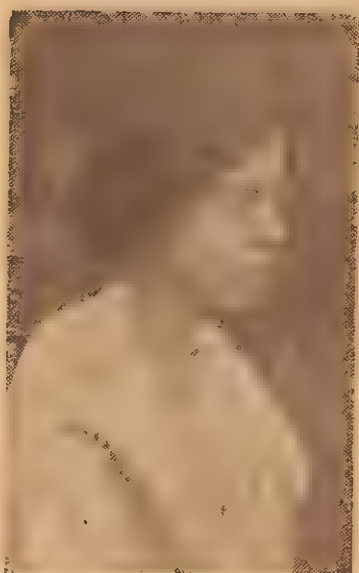
कुमारी उमा बोस—कलकत्ता युनिवर्सिटी की बी० एस० सी० की परीक्षा में सर्व-प्रथम स्थान पाने वाली—आपको 'मनमथनाथ भट्टाचार्य स्वर्ण-पदक', 'सान्तोमणि रजत-पदक' तथा पोस्ट ग्रेजुएट स्कॉलरशिप दिया गया है।

शेख़ूपुरा (पञ्जाब) के सुप्रसिद्ध बैरिस्टर श्री० सदाराम जी की कन्या-रत्न और इलाहाबाद के मातृ-मन्दिर की प्रिन्सिपल—कुमारी लीलावती जी—जो कलकत्ते में दन्त-चिकित्सा का अध्ययन कर रही हैं।

श्रीमती काले—आप औंध राज्य की 'स्टेट एसेम्बली' की सदस्या हैं।

श्री० के० के० वर्मा—आप काङ्केर राज्य के सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री० आर० पी० वर्मा के सुपुत्र हैं। आप भारत की ओर से जहाज़ी शिक्षा के लिए चुने गए हैं।

श्री० ठाकुर गोपालशरणसिंह—आप रीवाँ राज्यान्तर्गत नई-गढ़ी के चीफ़ और हिन्दी के विख्यात कवि हैं। अपने ख़ान्दान में एक पुत्र के होने के उपलक्ष में आपने अपनी प्रजा को ५० हज़ार रुपए बक़ाया लगान माफ़ कर दिया है।

मास्टर नरेन्द्र—आप संयुक्त प्रान्त के प्रथम उड़ाके (हवाई जहाज़ सञ्चालक) हैं। आपकी अवस्था बहुत थोड़ी है। आप फ़तेहपुर ज़िले के एक प्रतिष्ठित ज़मींदार के पुत्र हैं।

श्री० वैद्यनाथ अय्यर—आप नेलोर के सेशन जज श्री० के० एस० वेङ्कटाचल अय्यर के पुत्र हैं और आई० सी० एस० की परीक्षा देने के लिए इङ्गलैण्ड गए हैं।

डॉ० ए० सौज़ा—आप संयुक्त प्रान्त के 'पब्लिक हेल्थ विभाग' के असिस्टेण्ट डाईरेक्टर हैं। ईसाइयों के जगद्गुरु पोप ने आपको नाइटहुड की पदवी से विभूषित किया है। आप लखनऊ के प्रमुख केथलिक हैं।

कम नहीं वह भी ख़राबी में पे वसअ़त[1] मालूम,
दश्त[2] में है वह मुझे ऐश, कि घर याद नहीं।
करते किस मुँह से हो, ग़ुर्बत[3] की शिकायत "ग़ालिब"
तुमको बे-मेहरिए[4], याराने[5] वतन याद नहीं।
—"ग़ालिब" देहलवी

अब रिहाई की तमन्ना, दिले नाशाद नहीं,
रास्ता अपने नशेमन[6] का मुझे याद नहीं।
ज़िन्दगी थी वही, या और कोई आलम था,
क्या कहें इससे ज़्यादा, हमें कुछ याद नहीं!
उसको बे-दर्द गिरफ़्तारे जुनूँ कहते हैं,
जिसको दुनिया की ग़ुलामी का सबक़ याद नहीं।
जब कोई ज़ुल्म नया करते हैं, फ़रमाते हैं,
अगले वक़्तों के हमें तर्ज़े-सितम[7] याद नहीं।
—"वकवस्त" लखनवी

दिल लगाने की जगह आलमे[8] ईजाद नहीं,
ख़्वाब आँखों ने बहुत देखे, मगर याद नहीं।
आज असीरों[9] में वह हँगामए फ़रियाद नहीं,
शायद अब कोई गुलस्ताँ[10] का सबक़ याद नहीं!
तोबा भी भूल गए, इश्क़ में वह मार पड़ी,
ऐसे औसान गए हैं, कि ख़ुदा याद नहीं!
फ़िक्रे-इमरोज़[11], न अनदेशए फ़रदा[12] की ख़लिश,
ज़िन्दगी उसकी, जिसे मौत का दिन याद नहीं।
—"यास" लखनवी

लब पे शिकवा नहीं, नाला नहीं, फ़रियाद नहीं,
हो गई सुलह, तो अब जङ्ग मुझे याद नहीं।
—"अकमल" इटावी

किस तरह आपके वादे का यक़ीं आए मुझे?
फिर मुकर जाओगे, कह दोगे कि मुझे याद नहीं!
—"बिरयाँ" निहोरवी

दर्दे-दिल से, मेरे लबे मायले फ़रियाद नहीं,
मैं वह बुलबुल हूँ, जिसे तर्ज़ेफ़ुग़ा[13] याद नहीं!
—"जौहर" मथुरावी

अपना शेवा तो कभी, नालओ फ़रियाद नहीं,
हमको मरने के सिवा, और तो कुछ याद नहीं।
—"हसरत" पीलीभीती

हज़रते "दर्द" को जब देखते हैं, कहते हैं,
आपका नाम मुझे मुशफ़िक़े[14] मन याद नहीं!
"दर्द" ग्वालियारी

ढूँढ़ने को तुझे, ऐ मेरे न मिलने वाले—
वह चला है, जिसे अपना भी पता याद नहीं!
हुस्न से चूक हुई, उसकी है तारीख़[15] गवाह,
इश्क़ से भूल हुई है, यह मुझे याद नहीं!
लाओ इक सिज्दा करूँ आलमे बदमस्ती में,
लोग कहते हैं कि "साग़र" को ख़ुदा याद नहीं!
—"साग़र" अकबराबादी

मैं तो बेचैन हूँ, अब तक भी सितम सहने को,
पर उन्हें कोई भी अन्दाज़े-जफ़ा याद नहीं!
"सीमाब" बुलन्दशहरी

देख कर बज़्म[16] में वह मुझको यह फ़रमाते हैं,
कहीं देखा है इन्हें, अब हमें कुछ याद नहीं।

१—फैलाव, २—जङ्गल, ३—परदेश, ४—बेमुरौवती, ५—दोस्त, ६—घोंसला, ७—ज़ुल्म, ८—संसार, ९—क़ैदी, १०—बाग़, ११—आज, १२—कल, १३—याद करने का ढङ्ग, १४—श्रीमान, १५—इतिहास, १६—सभा

किस तरह आपके वादे का यक़ीं आए मुझे,
फिर मुकर जाओगे, कह दोगे, कि मुझे याद नहीं !!
मौत आई, जो अयादत को, उसे क्या सूझी ?
मैं तो समझा था, किसी को भी मेरी याद नहीं!

वादओ क़ौल, उन्हें याद दिलाया तो कहा,
हाँ हमें याद नहीं, याद नहीं, याद नहीं।
—"शाकिर" ग्वालियारी

आह किस वक़्त किया तूने रिहा ऐ सय्याद,
आशियाने[17] का निशाँ भी, हमें जब याद नहीं!
इन्तेहा[18] यह है, कि बाक़ी न रहे होशो-हवास,
इब्तेदा[19] इश्क़ की कैसे हुई, यह याद नहीं!
—"शैदा" अमरोहावी

याद वादे की नहीं, वादे की मीयाद नहीं,
यह भी एक तर्ज़े-जफ़ा है, कि वफ़ा याद नहीं!
—"गुमनाम" सिकन्दराबादी

रक्खेगा याद भला, अपनी जफ़ाएँ क्यों कर,
उस सितमगर[20] को वफ़ाएँ भी मेरी याद नहीं!
—"साबिर" मड़ियावी

लाख हो दरपए-आज़ार ज़माना, लेकिन—
दिल से "महमूद" के जाएगी तेरी याद नहीं।
—"महमूद" कानपूरी

मैं तो मदहोश मए[21] इश्क़-बुताँ हूँ साक़ी,[22]
बेख़ुदी का है यह आलम, कि ख़ुदा याद नहीं।
—"शरर" टोंकी

वह अलमनाक[23] कभी मेरी हिकायत सुन लें,
क़ैसो-फ़रहाद की रूदाद, जिन्हें याद नहीं।
मौत आई जो अमादन[24] को उसे क्या सूझी,
मैं तो समझा था, किसी को भी मेरी याद नहीं।
—"हफ़ीज़" इमरतसरी

कुछ अज़ल[25] ही से मुझे आदते फ़रियाद नहीं,
लाख सीखे मगर अन्दाज़े-फ़ुग़ाँ याद नहीं।
—"रहमत" अज़कवाबी

दैर[26] में बजता है नाक़ूस,[27] अज़ाँ मसजिद में,
कौन सा घर है, कि जिस घर में तेरी याद नहीं!
—"अफ़सर" साहब

ग़म न मिलने का तेरे ऐ सितम-ईजाद नहीं,
अपनी हस्ती का भी ख़ुद मुझको पता याद नहीं!
—"मनतिक़" साहब

ज़िक्र अपना नहीं, फ़िक्रे-दिले-नाशाद नहीं,
ख़ुद फ़रामोश हूँ, कुछ तेरे सिवा याद नहीं।

१७—घोंसला, १८—अन्त, १९—शुरू, २०—ज़ालिम, २१—शराब, २२—पिलाने वाला, २३—दुख भरा, २४—देख-भाल, २५—आदि, २६—मन्दिर, २७—शङ्ख,

कल ही की बात तो है वाक़ए अहदो वफ़ा,
आओ मैं याद दिला दूँ, जो तुम्हें याद नहीं।
आओ तनहाई में शिकवों की सफ़ाई कर लें,
हम कहें याद है कुछ, तुम कहो कुछ याद नहीं।
आज आती नहीं पहलू से सदा नाले की,
दिल कहाँ भूल गए "सैफ़" हमें याद नहीं।
—"सैफ़" अकबराबादी

इक झलक देखी थी जलवे की कि गुम होश हुए,
हमनशीं[28] इसके सिवा और मुझे याद नहीं!
राहे गुम करदा हूँ ऐसा, मैं रहे-उलफ़त में,
कि जिसे मञ्ज़िले मक़सूद भी अब याद नहीं।
—"सहीम" मुरादाबादी

पूछा जब, भूल गए क्या? तो कहा, याद है ख़ूब,
क़ौल की याद दिलाई, तो कहा याद नहीं।
—"गुलशन" लाहौरी

शेवए इश्क़ो वफ़ा भूल गए, भूल गए,
और सब कुछ है तुम्हें याद, यही याद नहीं!
घर में आए हुए सय्याद के मुद्दत गुज़री,
गुल[29] तो गुल ही हैं, नशेमन भी हमें याद नहीं!
अरसए[30] हश्र में पहचान ही लेंगे उनको,
वह हमें याद हैं, हम उनको अगर याद नहीं!
—"शातिर" इलाहाबादी

इस तरह बाग़ें जहाँ में, कोई बरबाद नहीं,
एक तिनका भी नशेमन का हमें याद नहीं!
इस क़दर होश है, चमकी थी कहीं बर्क़े जमाल[31],!
किसका जलवा नज़र आया, यह हमें याद नहीं!
वह अगर मेरी वफ़ा भूल गए, भूल गए,
क्या सितम है, उन्हें अपने भी सितम याद नहीं!
रात-दिन अब मेरी ग़ुर्बत में बसर होती है,
वह मुसाफ़िर हूँ जिसे लुत्फ़े-वतन याद नहीं!
सर वह सर ही नहीं, जिसमें नहीं सौदा तेरा,
दिल वह दिल ही नहीं, जिस दिल में तेरी याद नहीं!
महव[32] ऐसा था तेरी याद में मरने वाला,
रूह कब जिस्म से निकली, उसे कुछ याद नहीं!
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

२८—साथी, २९—फूल, ३०—प्रलय, ३१—ईश्वरी ज्योति, ३२—मगन।

'क्योमिनटैङ्ग'

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

सम्भवतः हिन्दी के बहुत थोड़े पाठक उपर्युक्त नाम से परिचित होंगे। 'क्योमिनटैङ्ग' चीन के उग्र राष्ट्रीय दल का नाम है, जो आजकल चीन पर शासन कर रहा है। यह चीन की वही राजनैतिक पार्टी है, जिसके हाथों में इन दिनों चीन-जैसे महान एशियाई राष्ट्र की बागडोर है।

सन् १८९५ की बात है। एक रात को एक नवयुवक, जिसकी उम्र उस समय तीस साल की थी, अपने कुछ बहादुर साथियों और अनुयायियों के साथ कैनटन में खड़ा था। नवयुवक अपने वीर लड़ाकों के साथ माञ्चुओं पर धावा करना चाहता था। वह था चीन के प्रजातन्त्र का पिता—चीनी राष्ट्र का भाग्य-विधाता डॉक्टर सनयातसेन, और उसके बहादुर लड़ाके थे उस संस्था के सदस्य, जिसे चीनी भाषा में 'काओ लाओ हुइ' (Kao Lao Hui) कहते हैं। इस सभा का सङ्गठन डॉक्टर सन ने स्वयं कैनटन मेडिकल कॉलेज में किया था। उपरोक्त संस्था ही वर्तमान 'क्योमिनटैङ्ग' (Kaomintang) की जननी है।

अपने प्रथम प्रयत्न में असफल होने पर डॉक्टर सन को अपनी जान बचाने के लिए चीन छोड़ कर भागना पड़ा था। वे बहुत समय तक अमेरिका तथा इङ्गलैण्ड आदि देशों में रहे। सन् १९०१ में डॉक्टर सन तथा उन्हीं के विचार के कुछ और लोगों ने मिल कर जापान में 'टङ्ग मेङ्ग हुइ' (Tang Meng Hui) नाम के एक दल का फिर सङ्गठन किया। १९१२ में चीन में भीषण राज्य-क्रान्ति हुई। उस क्रान्ति के बाद १९१२ में 'काओ लाओ हुइ' का पुनः सङ्गठन किया गया, और तब से वही दल चीन देश का राष्ट्रीय दल बन गया। उसे ही 'क्योमिनटैङ्ग' कहते हैं।

चीन की क्रान्ति में क्योमिनटैङ्ग का बहुत कुछ हाथ था। राष्ट्रीय पार्लामेण्ट के दो-तिहाई सभासद इसी पार्टी के सदस्य थे। १९१३ में चीन के प्रेसिडेण्ट युआन शिहकं (Yuan Shihkai) ने पार्लामेण्ट से क्योमिनटैङ्ग के सभासदों को निकाल दिया। जब युआन शिहके ने १९१६ में प्रजातन्त्र हटा कर राजतन्त्र स्थापित करना चाहा, तो क्योमिनटैङ्ग ने खुल्लमखुल्ला विद्रोह करके उसकी योजना को असफल कर दिया। १९१७ में प्रेसिडेण्ट ली युआन-हङ्ग ने पार्लामेण्ट तोड़ दी। तब क्योमिनटैङ्ग के सभासदों ने कैनटन जाकर अपनी अलग सरकार क़ायम की। दक्षिण के सात सूबे उनके इस कार्य में सहायता कर रहे थे। १९२० में उनमें आपस में फूट पड़ गई और वे कैनटन, शङ्घाई तथा युनन नाम के तीन पृथक-पृथक दलों में विभक्त हो गए। १९२१ में डॉक्टर सन के उद्योग से उन लोगों में पुनः एकता हुई और तब उन्होंने डॉ० सनयातसेन को दक्षिण प्रजातन्त्र का सभापति चुना। परन्तु डॉक्टर सन उस पद पर बहुत काल तक न रह सके। क्योंकि कई कारणों से उन्हें कैनटन छोड़ देना पड़ा। परन्तु तब से अपनी मृत्यु तक, वे बराबर कैनटन आया जाया करते थे।

एक समय था, जब क्योमिनटैङ्ग के सभासद केवल कुछ ख़ास-ख़ास लोग ही हो सकते थे। पर डॉक्टर सन ने कैनटन छोड़ने के पश्चात् ही विद्यार्थियों तथा आम लोगों को राष्ट्रीय आन्दोलन में लाने का प्रयत्न किया और क्योमिनटैङ्ग ख़ास लोगों की चीज़ न रह कर आम जनता की वस्तु हो गई। आजकल इसके पाँच लाख सभासद हैं। चीन का कोई भी स्त्री-पुरुष, जो लिख-पढ़ सकता है तथा उपयुक्त संस्था के तीन सिद्धान्तों को मानता है, वह दो सभासदों के समर्थन करने पर, इसका सभासद हो सकता है। आज चीन में क्योमिनटैङ्ग ही एक सङ्गठित राजनैतिक संस्था है। प्रत्येक दूसरे वर्ष इस कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन होता है। क्योमिनटैङ्ग की तीसरी कॉङ्ग्रेस में ४५९ प्रतिनिधि शामिल हुए थे। १५१ प्रतिनिधि नानकिङ्ग सरकार से नामज़द किए गए थे। ११९ प्रतिनिधियों की स्वीकृति सरकार ने दी थी। ८९ प्रतिनिधि क्योमिनटैङ्ग की शाखा-सभाओं से चुने गए थे। इन प्रतिनिधियों में तीन स्त्रियाँ भी थीं। इसी कॉङ्ग्रेस में क्योमिनटैङ्ग की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी का चुनाव होता है, जिसमें ३६ सभासद होते हैं। देश के शासनाधिकार (Executive Powers) इसी कमिटी के हाथों में रहते हैं।

१९२६ तक चीन के केवल दो सूबे, क्वाङ्गटुङ्ग और क्वानसी ही राष्ट्रीय सरकार के हाथ में थे। परन्तु १९२८ के जून मास तक समस्त देश उनके हाथ में आ गया। सन् १९१२ के बाद यह पहला ही अवसर है, कि समस्त चीन देश एक सरकार के अधीन हुआ है।

क्योमिनटैङ्ग की इस महान् सफलता का एक मात्र कारण जनता की सहानुभूति है। इसके सदस्य जहाँ-जहाँ गए, जनता ने हृदय से उनका स्वागत किया, उन्हें अपना त्राता, मित्र, रक्षक और अपना सच्चा प्रतिनिधि समझ कर उनकी सहायता की।

चीन के विद्यार्थियों तथा मज़दूरों ने उनकी ठोस सहायता की। उन्होंने पहले ही से मज़दूर-सङ्घ तैयार कर लिए थे तथा प्रदर्शन के लिए तैयार थे। जैसे ही क्योमिनटैङ्ग की सेना उत्तरीय सेना के क़रीब पहुँची, वैसे ही उत्तरीय सेना के विरुद्ध, तमाम जनता ने विद्यार्थियों तथा मज़दूरों के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। इस तरह बिना किसी कठिन परिश्रम के क्योमिनटैङ्ग को विजय मिलती गई। विद्यार्थियों तथा मज़दूरों को यह ढङ्ग सिखाने का श्रेय सोवियट रूस को है।

नवीन राष्ट्रीय युद्ध का श्रीगणेश १९२६ से हुआ। इसका नेता चिआङ्ग के-शेक (Chiang Kai-Shek) था। एक महीने के बाद ही राष्ट्रीय सेना की ध्वजा याङ्गट्सी नद के किनारे उड़ने लगी। दो महीने के बाद ही उन्होंने वुचाङ्ग को घर दबाया और वू पी-फू (Wu Pei-Fu) को हुपेह सूबे के बाहर खदेड़ दिया। केवल चार महीने में ही उन्होंने पेकिङ्ग राज्य के मुक़ाबले में वुचाङ्ग में एक केन्द्रीय सरकार की स्थापना भी कर दी। १९२१ की गर्मियों में उन्होंने याङ्गट्सी नदी पार कर ली और शानटङ्ग सूबे में पैर रक्खे। परन्तु अन्त में वहाँ से भगा दिए गए।

अब चिआङ्ग के-शेक ने राष्ट्रीय सेना के सेनापति के पद से स्तीफ़ा दे दिया तथा एक बुद्ध-मन्दिर में रहने लगा। कुछ समय बाद वह जापान गया। सन् १९२१ के दिसम्बर महीने में उन्होंने डॉक्टर सनयातसेन की साली मिस सङ्गमीलिना से अपनी शादी कर ली। इसके बाद वे फिर क्योमिनटैङ्ग का सरकार के प्रधान शासक (Chief Executive) के पद पर आ विराजे।

१९२१ वाली क्योमिनटैङ्ग की असफलता का सब से बड़ा कारण था, आपस का मतभेद। उस समय क्योमिनटैङ्ग के गरम और नरम दलों में बहुत बड़ा मतभेद हो गया था।

चीन में भी कम्यूनिस्ट पार्टी है। इस पार्टी का सङ्गठन १९२० में हुआ था। पर इसका काम इतना गुप्चुप होता था, कि इसके अस्तित्व का किसी को पता ही न था। जब कम्यूनिस्ट दल के लोगों ने क्योमिनटैङ्ग में प्रवेश करना चाहा, तब लोगों को उनका पता चला।

१९२५ में डॉक्टर सनयातसेन ने इन लोगों को क्योमिनटैङ्ग में इस शर्त पर ले लिया कि ये लोग उसके सिद्धान्तों तथा उसकी नीतियों को मानेंगे। कुछ काल तक तो काम चलता रहा। परन्तु फिर कम्यूनिस्ट लोगों ने नरम दल वालों को निकाल देना चाहा। जिस समय चिआङ्ग के-शेक युद्ध कर रहा था, कम्यूनिस्ट लोगों ने लड़ाई के युद्ध क्षेत्र में ही अपना काम करना चाहा। २४ मार्च, १९२१ की घटना गरम दल वालों की एक चाल थी। सेना, जो चिआङ्ग के-शेक के अधीन एक सेनानी था और कम्यूनिस्ट दल से सहानुभूति रखता था, उसकी सेना ने नानकिङ्ग को लूटा तथा विदेशी लोगों को मार डाला। इसका उद्देश्य था विदेशी राष्ट्रों तथा चिआङ्ग के-शेक में झगड़ा करा देना। विदेशी लोगों को इस गरम और नरम दल के झगड़ों का पता ही नहीं था। हाँ, जब चिआङ्ग ने गरम दल वालों को निकाल बाहर कर दिया, तब उन्हें इस झगड़े का पता चला।

नानकिङ्ग की घटना के बाद ही, १५ अप्रैल, १९२१ को क्योमिनटैङ्ग की कार्यकारिणी कमिटी की बैठक नानकिङ्ग में हुई। हॉङ्को की कम्यूनिस्ट सरकार के मुक़ाबले में नानकिङ्ग में एक स्वाधीन सरकार की स्थापना की गई। उस कमिटी ने गरम दल वालों को पार्टी से एकदम निकाल देने का भी निश्चय किया। ये लोग अपने काम में सफल हुए और १२ नवम्बर को नानकिङ्ग सरकार ने हॉङ्को की सरकार को हटा दिया।

११ दिसम्बर, १९२१ को गरम दल वालों ने कैनटन शहर को अपने अधिकार में कर लिया और नानकिङ्ग के नरम दल वाले अफ़सरों को निकाल बाहर कर दिया गया। पर सरकारी सेना ने कैनटन को फिर अपने अधिकार में कर लिया। लोगों का विचार है कि इन कामों में रूस के बोलशेविकों का हाथ था। निकोलस बुख़ारिन ने एक व्याख्यान दिया था, जो 'प्रवदा' पत्र में छपा था, उससे भी पता चलता है कि कैनटन-विद्रोह में रूस का हाथ था।

इस घटना के बाद नानकिङ्ग सरकार ने सोवियट सरकार से सारे सम्बन्ध हटा लिए और चीन से बोलशेविकों का नाम मिटाने पर कमर कस ली। सैकड़ों रूसियों को चीन छोड़ने की आज्ञा दी गई। क़रीब-क़रीब २,२०० कम्यूनिस्ट लोगों को प्राण-दण्ड दिया गया।

इस तरह नानकिङ्ग के नरम दल वालों ने गरम दल वालों को पार्टी से निकाल दिया। उन्होंने क्योमिनटैङ्ग राज्य में अमन-चैन क़ायम किया। इन सब उलझनों को सुलझाने के बाद, १९२८ में उन लोगों ने उत्तर की ओर बढ़ना आरम्भ किया। चिआङ्ग के-शेक, फेनायु सिआङ्ग और येनसी शान के मिल जाने से राष्ट्रीय-पक्ष को विजय निश्चित हो गई और राष्ट्रीय सरकार का पेकिङ्ग पर अधिकार हो गया। पेकिङ्ग पर अपना अधिकार जमा लेने के बाद राष्ट्रीय सरकार ने अपनी राजधानी वहाँ से हटा कर नानकिङ्ग में स्थापित की।

१९२४ तक डॉक्टर सनयातसेन ने स्वप्न में भी सोवियट सरकार के ढङ्ग पर सरकार स्थापित करने का इरादा न किया था। वह पश्चिमी ढङ्ग की सरकार—विशेषतः जिस तरह की सरकार अमेरिका में है—पसन्द करते थे। उनकी पार्टी का सङ्गठन भी अमेरिका की राजनैतिक पार्टियों के ढङ्ग पर ही हुआ था। उनकी सरकार का आधार अमेरिका की सरकार थी और उनका विधान भी अमेरिका के विधान की भाँति था। १९०३ में उन्होंने कनाडा तथा अमेरिका में एक मिशन भेजा, जिसका अभिप्राय था, सेना का सङ्गठन करने के लिए सुयोग्य लोगों को लाना। पर मिशन को अपने काम में सफलता न मिली। तब उन्होंने अङ्गरेज़ों का सहयोग प्राप्त करना चाहा, पर अङ्गरेज़ों ने भी कुछ विशेष ध्यान नहीं दिया।

अमेरिका तथा इङ्गलैण्ड से निराश होकर डॉक्टर सन पेकिङ्ग के सोवियट के प्रतिनिधि काराखान के पास गए। काराखान ने माइकेल बोरोडिन को उसका सलाहकार बना कर भेजा। अब डॉक्टर सन ने सोवियट ढङ्ग की सरकार में अपनी दिलचस्पी दिखाई और राष्ट्रीय दल ने सोवियट कमिटी सिस्टम को ग्रहण किया। लेकिन आगे चल कर अक्टूबर १९२८ में कमिटी सिस्टम के स्थान पर पाँच बोर्ड रक्खे गए। आजकल चीन की वर्तमान सरकार का सङ्गठन निम्न-लिखित रूप में है:—

क्योमिनटैङ्ग राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस का जलसा होता है। इसमें पार्टी की केन्द्रीय शासन-कौन्सिल चुनी जाती है। इस कौन्सिल का चेयरमैन चीन के प्रजातन्त्र का प्रेज़िडेण्ट होता है। केन्द्रीय शासन-कौन्सिल स्टेट-कौन्सिल का चुनाव करती है। इस स्टेट-कौन्सिल में १२ से लेकर १६ तक सदस्य होते हैं और वे पाँचों बोर्डों के मुखियों को चुनते हैं। शासन-बोर्ड के अधीन १० मन्त्री होते हैं।

९ अक्टूबर, १९२८ को क्योमिनटैङ्ग की केन्द्रीय शासन-कौन्सिल द्वारा चिआङ्ग के-शेक चीन का प्रेज़िडेण्ट चुना गया।

वर्तमान चीन के विधायक डॉक्टर सनयातसेन

चीन का प्रजातन्त्र संसार के दूसरे प्रजातन्त्रों से भिन्न है। इसमें न तो पार्लामेण्ट है और न कोई विधान ही है। चीन के राजनीतिज्ञों का विश्वास है कि वर्तमान स्थिति में एक राजनैतिक दल का ही चीन पर शासन होना चाहिए और जब मार्ग साफ़ हो जावे तब वैध (Constitutional) सरकार की स्थापना की जावे। जिस तरह रूस में कम्यूनिस्ट दल शासन करता है, उसी तरह चीन के शासन की बागडोर राष्ट्रीय दल के हाथों में है।

पेकिङ्ग के रॉकफ़ेलर अस्पताल में मृत्यु-शय्या पर पड़े हुए डॉक्टर सनयातसेन ने एक वसीयतनामा लिखा था। क्योमिनटैङ्ग के सिद्धान्त तथा उसकी नीति इसी वसीयतनामे पर निर्धारित हैं। वसीयतनामे में डॉक्टर साहब लिखते हैं:—

"चीन को स्वाधीनता तथा स्वतन्त्रता दिलाने के लिए चालीस वर्ष तक मैंने लगातार परिश्रम किया। इन वर्षों के मेरे अनुभव ने मुझे पूर्णतया विश्वास दिला दिया है कि अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए हमें चीन की तमाम जनता की सहायता प्राप्त करनी चाहिए और जो दूसरे देश चीन से बराबरी का बर्ताव करते हैं, उनसे मिल कर काम करना चाहिए।

"क्रान्ति अभी सफल नहीं हुई है, इसलिए यह अत्यावश्यक है कि मेरे तमाम साथी अपना पूरा बल लगा कर अपना ध्येय प्राप्त करें।

"मेरे साथियो, युद्ध जारी रक्खो। राष्ट्रीय समस्याओं को हल करने के लिए तथा ग़ैर मुल्कों के साथ की हुई अनुचित सन्धियों को रद्द करने के लिए नवीन उत्साह से कार्य करो। ये सब बातें शीघ्र से शीघ्र कर डालना चाहिए।"

डॉक्टर सनयातसेन के तीन सिद्धान्त बहुत प्रसिद्ध हैं। उनका पहिला सिद्धान्त था, चीन की राष्ट्रीय स्वाधीनता, दूसरा प्रजातन्त्रवाद और तीसरा सिद्धान्त था साम्यवाद। अपने प्रथम सिद्धान्त द्वारा वे चीन की पाँचों जातियों को सङ्गठित कर चीन को विदेशी पञ्जों से छुड़ाना चाहते थे। उनके दूसरे सिद्धान्त का मतलब था, शासन की बागडोर जनता के हाथों में सौंप देना। जनता को वे सारे अधिकार मिलने चाहिए, जो कि प्रजातन्त्र देश की जनता को मिले रहते हैं। तीसरे सिद्धान्त द्वारा वे चीनी राष्ट्र की आर्थिक स्थिति सुधारना चाहते थे। वे चाहते थे कि देश की भूमि कुछ लोगों के हाथों में न रह कर, राष्ट्र के अधिकार में रहे। इसके अलावा रेल आदि उपयोगी धन्धे भी सरकार के हाथों में न रहें, ताकि सर्व-साधारण उनसे पूरा लाभ उठा सकें। इसी तीसरे सिद्धान्त के कारण लोग बहुधा कहा करते हैं कि डॉक्टर सन साम्यवादी थे। परन्तु वास्तव में वे साम्यवाद की केवल थोड़ी सी बातें मानते थे। वे न तो निजी सम्पत्ति प्रथा को मिटा देना चाहते थे और न पूँजीपतियों के विरुद्ध युद्ध-घोषणा करना चाहते थे।

क्योमिनटैङ्ग का प्रथम राष्ट्रीय सम्मेलन जनवरी १९२४ को कैनटन नगर में हुआ था। इस सम्मेलन ने डॉक्टर सन के उपर्युक्त तीनों सिद्धान्तों को क्योमिनटैङ्ग के सिद्धान्त मान लिए। परन्तु साथ ही उसने उन सिद्धान्तों को अधिक गरम बना दिया। उनमें कुछ ऐसे परिवर्तन किए गए, जिससे कि वे पहले से अधिक गरम हो गए।

डॉक्टर सन ने प्रसिद्ध पुस्तक 'National

विद्याविनोद-ग्रन्थमाला

की

विख्यात पुस्तकें

मानिक-मन्दिर

यह बहुत ही सुन्दर, रोचक, मौलिक, सामाजिक उपन्यास है। इसके पढ़ने से आपको पता लगेगा कि विषय-वासना के भक्त कैसे चञ्चल, अस्थिर-चित्त और मधुर-भाषी होते हैं। अपनी उद्देश्य-पूर्ति के लिए वे कैसे-कैसे जघन्य कार्य तक कर डालते हैं और अन्त में फिर उनकी कैसी दुर्दशा होती है—इसका बहुत ही सुन्दर तथा विस्तृत वर्णन किया गया है। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल तथा मधुर है। मूल्य २॥) स्थायी ग्राहकों से १॥।=)

मनोरमा

यह वही उपन्यास है, जिसने एक बार ही समाज में क्रान्ति मचा दी थी !! बाल और वृद्ध-विवाह से होने वाले भयङ्कर दुष्परिणामों का इसमें नग्न-चित्र खींचा गया है। साथ ही हिन्दू-विधवा का आदर्श जीवन और पतिव्रत-धर्म का बहुत सुन्दर वर्णन है। मूल्य केवल २॥) स्थायी ग्राहकों से १॥।=)

नयन के प्रति

हिन्दी-संसार के सुविख्यात तथा 'चाँद'-परिवार के सुपरिचित कवि आनन्दीप्रसाद जी की नौजवान लेखनी का यह सुन्दर चमत्कार है। श्रीवास्तव महोदय की कविताएँ भाव और भाषा की दृष्टि से कितनी सजीव होती हैं—सो हमें बतलाना न होगा। इस पुस्तक में आपने देश की प्रस्तुत हीनावस्था पर अश्रुपात किया है। जिन ओज तथा करुणापूर्ण शब्दों में आपने नयनों को धिक्कारा और लज्जित किया है, वह देखने ही की चीज़ है—व्यक्त करने की नहीं। पढ़ते ही तबियत फड़क उठती है। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय ! दो रङ्गों में छपी हुई इस रचना का न्योछावर लागत-मात्र केवल ।=) ; स्थायी ग्राहकों से ।)॥ मात्र !

शुक्र और सोफ़िया

इस पुस्तक में पूर्व और पश्चिम का आदर्श और दोनों की तुलना बड़े मनोहर ढङ्ग से की गई है। यूरोप की विलास-प्रियता और उससे होने वाली अशान्ति का विस्तृत वर्णन किया गया है। शुक्र और सोफ़िया का आदर्श जीवन, उनकी निःस्वार्थ देश-सेवा, दोनों का प्रणय और अन्त में संन्यास लेना ऐसी रोमाञ्चकारी कहानी है कि पढ़ते ही हृदय गद्गद हो जाता है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल २॥)

गौरी-शङ्कर

आदर्श-भावों से भरा हुआ यह सामाजिक उपन्यास है। शङ्कर के प्रति गौरी का आदर्श-प्रेम सर्वथा प्रशंसनीय है। बालिका गौरी को धूर्तों ने किस प्रकार तङ्ग किया। बेचारी बालिका ने किस प्रकार कष्टों को चीर कर अपना मार्ग साफ़ किया, अन्त में चन्द्रकला नाम की एक वेश्या ने उसकी कैसी सच्ची सहायता की और उसका विवाह अन्त में शङ्कर के साथ कराया। यह सब बातें ऐसी हैं, जिनसे भारतीय स्त्री-समाज का मुखोज्ज्वल होता है। यह उपन्यास निश्चय ही समाज में एक आदर्श उपस्थित करेगा। छपाई-सफ़ाई सभी बहुत साफ़ और सुन्दर है। मूल्य केवल ॥।)

☞ व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Reconstruction Programme' में चीन देश की उन्नति के उपाय पचीस निबन्धों में लिखे हैं। पाँचवें निबन्ध में उन्होंने राष्ट्रीय माँग को तीन मञ्ज़िलों में विभाजित किया है। सबसे पहली मञ्ज़िल सैनिक व्यवस्था है। इस व्यवस्था के अनुसार शासन की बागडोर सैनिकों के हाथ में रहेगी। ताकि वे देश में एकता स्थापित कर उसे बलवान बना सकें। दूसरी मञ्ज़िल में जनता को शासन का भार उठाने के लिए तैयार होना पड़ेगा। परन्तु जब तक जनता तैयार न हो जावे, तब तक जनता के नाम पर एक राजनैतिक दल देश पर निरङ्कुश शासन जारी रक्खेगा। वर्षों तक शिक्षा पाने के बाद जनता शासन-भार उठाने योग्य हो जावेगी और यही तीसरी तथा अन्तिम मञ्ज़िल होगी। देश की उन्नति के लिए डॉक्टर सनयातसेन ने १,००,००० मील लम्बी रेल तथा १०,००,००० मील की सड़कें बनाने के लिए और नहरों, नदियों तथा बन्दरगाहों की उन्नति के लिए विदेशी पूँजी, मैशीन, तथा अनुभवी पुरुषों का प्रयोग करने की अनुमति दी थी।

समय-समय पर क्योमिनटैङ्ग कॉङ्ग्रेस ने चीन की आन्तरिक नीति तथा वैदेशिक नीति पर प्रस्ताव पास किए हैं। सन् १९२६ के अक्टूबर में कॉङ्ग्रेस का विशेष अधिवेशन कैनटन में हुआ था। उस कॉङ्ग्रेस ने निम्न-लिखित प्रस्ताव पास किए थे :—

"विषम सन्धियों को रद्द करना, आयात और निर्यात-कर की स्वाधीनता, चुङ्गी को रद्द करना, रेलवे और बन्दरगाहों का निर्माण करना, मिशन शिक्षालयों की सरकार द्वारा रजिस्टरी, तथा क़ानून, राजनीति और शिक्षा में औरतों को मर्दों के बराबर अधिकार।"

सन् १९२८ की तीसरी अक्टूबर को क्योमिनटैङ्ग की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी की बैठक हुई थी। डॉक्टर सन के तीन सिद्धान्तों को पूर्णतया कार्य में परिणत करने के लिए तथा चीन की जनता को शासन-भार उठाने के योग्य बनाने के लिए, ताकि चीन में पूर्ण प्रजातन्त्र की स्थापना हो सके, निम्न-लिखित प्रस्ताव पास किए गए थे :—

१—जब तक कि जनता तैयार नहीं हो जाती है; क्योमिनटैङ्ग के प्रतिनिधियों की राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस चीन पर शासन करेगी।

२—क्योमिनटैङ्ग के प्रतिनिधियों की राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस तमाम राजनैतिक अधिकार केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी को सौंपती है।

३—चीन में वैध शासन की स्थापना करने के इरादे से चुनाव आदि का चीन में क्रमशः प्रचार किया जावे।

४—क्योमिनटैङ्ग की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी की राजनैतिक कौन्सिल राष्ट्रीय सरकार द्वारा किए हुए राष्ट्रीय कार्यों का निरीक्षण करेगी।

५—चीन के प्रजातन्त्र की राष्ट्रीय सरकार के प्रारम्भिक क़ानूनों का संशोधन आदि, क्योमिनटैङ्ग की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी की राजनैतिक कौन्सिल में पास किए गए प्रस्तावों द्वारा ही होंगे।

क्योमिनटैङ्ग की तीसरी कॉङ्ग्रेस की बैठक सन् १९२९ के १५ मार्च से २८ मार्च तक हुई थी। इस कॉङ्ग्रेस ने चीन की वैदेशिक नीति पर निम्न-लिखित महत्वपूर्ण विचार प्रकट किए थे :—

तीसरी राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस इस बात का अनुभव कर रही है कि संसार के अन्य देशों ने चीन को बराबरी का पद दे दिया है। तथा चीन को आयात तथा निर्यात-कर (Tariff) में स्वाधीनता मिल गई है। इस सफलता का मुख्य कारण यही है कि क्योमिनटैङ्ग के हाथों में चीन सङ्गठित तथा दृढ़ है।

क्योमिनटैङ्ग की प्रथम राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस ने यह तय कर दिया था कि चीन की वैदेशिक नीति में मुख्य दो बातें होंगी—(१) उन तमाम सन्धियों को रद्द करना, जिनमें चीन को बराबरी के अधिकार नहीं दिए गए हैं। (२) अन्य देशों के साथ नवीन सन्धियाँ करना, जिसमें चीन को तथा उन देशों को एक से और बराबरी के अधिकार हों।

प्रथम राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस ने जो बातें तय की थीं उनका सार निम्न-लिखित है :—

(१) चीन और अन्य देशों के बीच की तमाम विषम सन्धियों को रद्द करना। और नवीन सन्धियाँ करना।

(२) भविष्य में जितनी सन्धियाँ चीन से और अन्य देशों के बीच होंगी, उनमें इस बात का विशेष ध्यान रक्खा जायगा कि किसी भी देश के अधिकारों पर आघात न पहुँचे।

(३) चीन केवल उन्हीं क़र्ज़ों को मानेगा और अदा करेगा, जो चीन को राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में हानि नहीं पहुँचाते।

विषम सन्धियों को रद्द करने के लिए घोर आन्दोलन किया जावेगा। तमाम चीन की बाग-डोर मज़बूत हाथों में रक्खी जावेगी और डॉक्टर सन के तीन सिद्धान्तों के अनुसार कार्य किया जावेगा। डॉक्टर सन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Plans for the National Reconstruction' में चीन का सङ्गठन करने के लिए जो-जो योजनाएँ लिखी हैं, उन्हीं के अनुसार चीन का सङ्गठन किया जावेगा। जितना ज़बरदस्त तथा शीघ्र यह सङ्गठन होगा, उतनी ही ज़बरदस्त तथा शीघ्र हमें सफलता मिलेगी। जब सब कठिनाइयों पर विजय प्राप्त हो जावेगी, तब आगे क़दम बढ़ाया जावेगा। डॉक्टर सन तमाम संसार में एक भ्रातृत्व स्थापित करना चाहते थे और संसार में शान्ति स्थापित करने का यही एक मार्ग था। डॉक्टर सन कहा करते थे कि संसार के इतिहास में दो पृथक-पृथक नीतियाँ पाई जाती हैं। पहिली नीति तो है, कमज़ोरों की मदद करना। चीन प्राचीन काल में इसी नीति का उपासक था। दूसरी नीति है कमज़ोरों पर शासन करना—साम्राज्यवाद—जिसका पश्चिम आज पुजारी है। डॉक्टर सन का विचार था कि साम्राज्यवाद संसार को नष्ट कर देगा। डॉक्टर सन ने यह भी घोषणा की थी कि जब चीन स्वाधीन तथा ताक़तवर हो जावेगा, तब वह संसार के कमज़ोर देशों की सहायता करेगा।

डॉक्टर सन के उपरोक्त विचार ध्यान में रखते हुए तीसरी राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस ने अपनी नीति बनाई है। बल्कि तीसरी कॉङ्ग्रेस की नीति अक्षरशः डॉक्टर सन की नीति है। इस नीति का लक्ष्य है, संसार में अचल शान्ति स्थापित करना, और यह तभी सम्भव है, जब संसार के सब देश स्वाधीन हों और एक दूसरे के बराबर हों। इसी लक्ष्य को प्राप्त करना ही क्योमिनटैङ्ग की नीति है।

* * *

रजत-रज

[संग्रहकर्ता—श्री० लक्ष्मीनारायण जी अग्रवाल]

सरिता के विमल सलिल में प्रतिबिम्ब के बहाने तारागण क्रीड़ा करते हैं।

❀

लकड़हारे की कुल्हाड़ी ने अपने बेंट के लिए वृक्ष से लकड़ी माँगी।

वृक्ष ने दे दिया।

❀

कटुवचन का घाव गहरा होता है।

❀

व्योम से पतित होकर स्वाति-बूँद सीपी के अङ्क में सो जाती है। सीपी कृपा करके उसे अनुपम आभा प्रदान करती है।

परन्तु कृतघ्न मोती सीपी का उदर विदार देता है।

❀

"रजनी-पति! किसकी राह देख रहे हो?"

"दिन-पति की। जिन्हें निज स्थान देना है।"

❀

माताओं पर देश का भविष्य अवलम्बित है।

❀

बाल्य जीवन की भोली स्मृतियाँ अपने मनोहर पङ्ख फैला कर आकाश में तैरती हैं।

❀

कुरूपा स्वाधीनता, सुन्दरी पराधीनता से कहीं सुन्दर है।

ईर्ष्या में गुण-ग्राहकता नहीं होती।

❀

पुष्प मुरझाते और मर जाते हैं, उनकी पङ्खड़ी बिखर कर मिट्टी में मिल जाती है; पर उनके लिए कौन शोक करता है?

❀

मनोभावों के अनुचित आवेश को हम बहुधा मुस्कराहट से छिपाते हैं।

❀

गुदड़ी ही में लाल होते हैं।

❀

मातृभूमि की बलि-वेदी पर वीर आत्माएँ अपना जीवन त्याग देती हैं। इससे क्या होता है?

देश के उत्थान-काल का उदय।

❀

बलवान बलहीन से कहीं उत्तम है; परन्तु क्या सज्जन बलवान से श्रेष्ठ नहीं है?

❀

पवन के प्रबल वेग को तरु-निकर नहीं सह सकते। उसके सहने की शक्ति केवल गिरिवर में ही है।

❀

यौवन-काल में सौन्दर्य जगमगा उठता है।

मानव-हृदय अपनी दुर्बलताओं में ही सबल होने का स्वाँग भरता है।

सुप्रसिद्ध भारतीय राजनीतिज्ञों के मुक़दमे

महात्मा गाँधी—१९२२

सन् १९२२ की १४वीं फ़रवरी के चौरीचौरा हत्याकाण्ड ने, जिसमें २२ कॉन्स्टेबिलों की हत्या की गई थी और एक पुलिस चौकी जला कर ख़ाक कर दी गई थी, देश-भर में सनसनी फैला दी थी। उस समय के असहयोग आन्दोलन पर इस घटना का भयङ्कर प्रभाव पड़ा। महात्मा गाँधी ने उसे ईश्वर की चेतावनी समझा और बारदोली का आन्दोलन स्थगित कर दिया। इस घटना के उपरान्त बारदोली में कॉङ्ग्रेस वर्किङ्ग-कमिटी की जो बैठक हुई थी, उसमें उसने केवल आन्दोलन ही स्थगित नहीं किया, वरन् पिकेटिङ्ग करना और जुलूस निकालना भी बन्द कर दिया और रचनात्मक कार्यक्रम के नाम से राष्ट्र के हाथों में केवल खद्दर-प्रचार रह गया। वर्किङ्ग कमिटी ने वे सब कार्य स्थगित कर दिए, जिनमें जेल जाने का भय था।

कॉङ्ग्रेस के इस नीति-परिवर्तन से महात्मा जी के अनुयायी उनसे बहुत असन्तुष्ट हो गए। अपने समालोचकों को उत्तर देते हुए महात्मा जी ने २३वीं फ़रवरी के 'यङ्ग-इण्डिया' में लिखा था :—

"इन समालोचनाओं से कॉङ्ग्रेस वर्किङ्ग कमिटी के निर्णय पर मुझे और भी दृढ़ विश्वास हो गया है। परन्तु यदि देश मेरे इस कार्य का विरोध करता है, तो भले ही करे, मुझे उसमें कोई आपत्ति नहीं है। मैंने तो केवल अपना कर्तव्य पालन किया है।"

२५ ता० को दिल्ली में अखिल भारतीय कॉङ्ग्रेस कमिटी की बैठक हुई और उसमें बारदोली के प्रस्ताव की पुनरावृत्ति की गई। परन्तु साथ ही कट्टर असहयोगियों के सन्तोष के लिए उसमें थोड़ी रद्दो-बदल कर दी गई। गवर्नमेण्ट महात्मा गाँधी पर पहले से ही दाँत लगाए बैठी थी, इस प्रस्ताव के कारण उसने उन पर क़ानूनी कार्यवाही करने का निश्चय कर लिया। उनकी गिरफ़्तारी का वर्णन एक आश्रमवासी ने निम्न शब्दों में किया है—

"महात्मा गाँधी की गिरफ़्तारी की अफ़वाह से पाँच दिन से आश्रम में बड़ी सनसनी फैली है। सदैव की नाईं हमने सन्ध्या समय महात्मा गाँधी के साथ ईश-प्रार्थना की और उसी समय उन्होंने अपनी गिरफ़्तारी की अफ़वाह का समाचार सुनाया। उन्होंने कहा कि शायद मैं इसी रात को गिरफ़्तार कर लिया जाऊँ। साथ ही उन्होंने गिरफ़्तारी के बाद हमें दूने उत्साह से कार्य करने की सलाह दी। उसके बाद उन्होंने श्री० कृष्णदास को 'यङ्ग-इण्डिया' के सम्पादन के सम्बन्ध में कुछ उपदेश दिया। रात्रि को दस बजे महात्मा गाँधी के सो जाने के उपरान्त जब श्री० शङ्करलाल बैङ्कर और अनुसुइया बाई, जो महात्मा गाँधी से मिलने आए थे, आश्रम से मोटर में लौट रहे थे, तब रास्ते में उन्हें पुलिस-सुपरिण्टेण्डेण्ट मिले। पुलिस-सुपरिण्टेण्डेण्ट ने श्री० शङ्करलाल बैङ्कर को रास्ते में ही गिरफ़्तार कर लिया और उन्हें लेकर महात्मा जी को गिरफ़्तार करने आश्रम में आए। परन्तु उन्होंने आश्रम के अन्दर प्रवेश नहीं किया, केवल अनुसुइया बाई के हाथों उनके पास गिरफ़्तारी का सन्देश भिजवा दिया और साथ ही यह भी कहला भेजा कि वे जितना समय तैयारी के लिए लेना चाहें, ले सकते हैं। महात्मा जी गिरफ़्तारी के लिए तैयार थे। उन्होंने कुछ पुस्तकें लेने के उपरान्त आश्रमवासियों से 'कविवर नरसिंह महता' कृत अपना प्यारा गीत गाने के लिए कहा। उसके समाप्त होते ही वे सुपरिण्टेण्डेण्ट की मोटर पर सवार हो गए। मोटर रवाना होते ही 'सियावर रामचन्द्र की जय' और 'वन्देमातरम्' के नारे लगाए गए। उन्हें साबरमती जेल तक पहुँचाने श्रीमती कस्तूरीबाई गाँधी और कुछ अन्य लोग उनके साथ गए थे।"

दूसरे दिन महात्मा गाँधी और श्री० शङ्करलाल जी बैङ्कर मामले की कार्यवाही के लिए अहमदाबाद के असि-

महात्मा गाँधी

स्टेण्ट मैजिस्ट्रेट मि० ब्राउन की अदालत में उपस्थित किए गए। उन पर 'यङ्ग-इण्डिया' में प्रकाशित चार लेखों के आधार पर राज-विद्रोह का अभियोग लगाया गया था। अभियोग लगाने के उपरान्त उनका मामला सेशन्स सुपुर्द कर दिया गया।

अहमदाबाद के डिस्ट्रिक्ट और सेशन्स जज मि० सी० एन० ब्रूमफ़ील्ड आई० सी० एस० की अदालत में इस चिरस्मरणीय मामले की कार्यवाही का श्रीगणेश सन् १९२२ की १८ वीं मार्च को हुआ। कार्यवाही प्रारम्भ होने के घण्टों पहले से ही अदालत खद्दरधारियों से खचाखच भर गई थी। दर्शकों में सरदार पटेल, पण्डित जवाहरलाल नेहरू और श्रीमती सरोजिनी नायडू भी उपस्थित थीं। अदालत के अहाते के बाहर पुलिस का और अन्दर फ़ौज का कड़ा पहरा था। महात्मा गाँधी और श्री० बैङ्कर, पण्डित मदनमोहन मालवीय के साथ ११ बज कर चालीस मिनिट पर उपस्थित हुए। महात्मा गाँधी के अदालत में प्रवेश करते ही सब दर्शक खड़े हो गए और उस समय तक खड़े रहे, जब तक उन्हें मैजिस्ट्रेट ने अपनी बाईं ओर बैठने के लिए कुर्सी न दे दी। वहाँ के एडवोकेट जनरल सर टॉमस स्ट्रेङ्गमैन ने लीगल रिमेम्बरेन्सर और मि० वाइल्ड के साथ ठीक ११ बज कर ५० मिनिट पर प्रवेश किया और जज के आते ही १२ बजे कार्यवाही प्रारम्भ हो गई।

उनके ऊपर दफ़ा १२४-ए के अनुसार तीन अभियोग एक साथ लगाए गए थे। जज के यह पूछने पर कि क्या वे इन अपराधों के दोषी हैं। महात्मा जी ने उत्तर दिया—"मैं सभी अभियोगों पर अपने को दोषी क़रार देता हूँ।" श्री० बैङ्कर ने भी अपने को दोषी क़रार दिया।

इसके उपरान्त महात्मा गाँधी ने अपना निम्नलिखित ऐतिहासिक बयान पढ़ा:—

"जब १९१४ में इङ्गलैण्ड और जर्मनी का युद्ध छिड़ा तो मैंने लन्दन में उस वक़्त रहने वाले हिन्दुस्तानियों, मुख्यतः विद्यार्थियों का एम्बुलेन्सकोर लन्दन में बनाया। अधिकारियों ने उसके कार्य को बहुमूल्य कहके सराहा है। आख़िरी वक़्त जब १९१७ में लॉर्ड चेम्सफ़ोर्ड ने दिल्ली की युद्ध-परिषद में रङ्गरूटों की ख़ास प्रार्थना की, तब मैंने खेड़ा में अपना स्वास्थ्य जोखिम में डाल कर प्रयत्न किया; लोग भी तैयार हो चुके थे कि युद्ध बन्द हो गया। हुक्म मिला कि अब रङ्गरूटों की आवश्यकता नहीं है।

"सेवा करने के इन सब प्रयत्नों में मेरे इस विश्वास की प्रेरणा थी कि इस प्रकार की सेवाओं से अपने देश-बन्धुओं के लिए साम्राज्य में पूर्ण समानता का पद प्राप्त करना सम्भव है।

आघात

"पहला धक्का मुझे रौलेट एक्ट के स्वरूप में लगा। वह क़ानून जनता की सब सच्ची स्वाधीनता छीनने के लिए बनाया गया था। उसके विरुद्ध गहरा आन्दोलन शुरू करने की प्रेरणा का मैंने अनुभव किया। उसके बाद पञ्जाब के अत्याचार हुए, जो जलियाँवाला बाग़ के क़त्लेआम से शुरू हुए और अन्त में रेंगने के हुक्म, सार्वजनिक रूप से कोड़े मारने तथा अन्य अवर्णनीय अपमानों तक पहुँचे। मुझे यह भी मालूम हुआ कि टर्की की एकता और इस्लाम के तीर्थ-स्थानों के सम्बन्ध में दिए हुए प्रधान-मन्त्री के प्रतिज्ञात वचन पूरे किए जाने की आशा नहीं है। किन्तु १९११ की अमृतसर कॉङ्ग्रेस में मित्रों की गम्भीर चेतावनियों और अनिष्ट सूचनाओं के होते हुए भी मैं सहयोग और मॉण्टेगू चेम्सफ़ोर्ड सुधार को काम में लाने के पक्ष में लड़ा, इस आशा से कि प्रधान-मन्त्री हिन्दुस्तान के मुसलमानों को दिया हुआ वचन पूरा करेंगे, पञ्जाब के घावों पर मलहम लगेगा और सुधार यद्यपि अपूर्ण और असन्तोषजनक हैं, तो भी हिन्दुस्तान के जीवन में आशा के नवीन युग के चिन्ह-स्वरूप होंगे।

आशाओं का विध्वंस

"किन्तु वह आशा नष्ट हो गई। ख़िलाफ़त का वचन पूरा नहीं किया गया। पञ्जाब के अत्याचार पर सफ़ेदी पोती गई और अधिकांश अपराधी केवल बिना सज़ा पाए ही नहीं रहे, किन्तु सरकारी नौकरी में बने रहे और कुछ हिन्दुस्तान के ख़ज़ाने से पेन्शन पाने लगे। और कुछ को तो इनाम तक दिया गया। मैंने यह भी देखा कि सुधार केवल हृदय-परिवर्तन के चिह्न ही नहीं हैं, किन्तु वे हिन्दुस्तान की सम्पत्ति बहा ले जाने और उसकी ग़ुलामी को बढ़ाने के एक उपाय मात्र हैं। मैं सङ्कोच के साथ इस परिणाम पर पहुँचा कि ब्रिटिश सम्बन्ध ने हिन्दुस्तान को राजनैतिक तथा आर्थिक दृष्टि से इतना असहाय बना दिया है, जितना कि यह पहले कभी नहीं था। शस्त्रहीन हिन्दुस्तान किसी भी आक्रमणकारी से हथियारों की लड़ाई लड़ना चाहे तो वह लड़ने की शक्ति नहीं रखता। यहाँ तक हालत है कि हमारे कुछ सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति भी सोचते हैं कि औपनिवेशिक पद प्राप्त करने के योग्य बनने में हमें कई युग लगेंगे। हिन्दुस्तान

इतना ग़रीब हो गया है कि वह अकाल को नहीं रोक सकता। अङ्गरेज़ों के आने के पहले हिन्दुस्तान अपनी करोड़ों झोपड़ियों में कातता और बुनता था, जिसकी उसे अपनी थोड़ी सी किसानी की आमदनी बढ़ाने के लिए आवश्यकता थी। हिन्दुस्तान के अस्तित्व के लिए अत्यन्त आवश्यक यह घरेलू धन्धा, जैसा कि अङ्गरेज़ गवाहों ने वर्णन किया है, अविश्वसनीय, हृदयहीन और अमानुषिक उपायों से नष्ट कर दिया गया। शहरों के रहने वाले बहुत कम जानते हैं कि हिन्दुस्तान की भुखमरी जनता किस प्रकार धीरे-धीरे निर्जीव होती जा रही है। वे बहुत कम जानते हैं कि उनकी तुच्छ सुख-सम्पत्ति उस कार्य की दलाली मात्र है, जो कि वे विदेशियों के लिए करते हैं, वह लाभ और दलाली जनता से चूसी जाती है। गाँवों में ख़ाली आँख से दिखाई देने वाले अस्थि-पञ्जरों की प्रत्यक्ष गवाही किसी भी शाब्दिक तर्क और अङ्कों के इन्द्रजाल से नहीं दबाई जा सकती।

"इसमें कोई शक नहीं कि हिन्दुस्तान के शहरवासियों और इङ्गलैण्ड को, यदि ऊपर कोई ईश्वर है तो, मनुष्यता के प्रति इस अपराध के लिए, जो कि शायद इतिहास में अपूर्व है, जवाब देना पड़ेगा।

क़ानून का व्यभिचार

"इस देश में स्वयं क़ानून का उपयोग विदेशी लुटेरों के फ़ायदे के लिए किया गया है। पञ्जाब के फ़ौजी क़ानून के मुक़दमों की मैंने जो निष्पक्ष जाँच की है, उससे मुझे विश्वास हो गया है कि कम से कम ९५ फ़ी सदी सज़ाएँ पूरी तरह से ग़लत हैं। हिन्दुस्तान के राजनैतिक मुक़दमों का मेरा अनुभव मुझे इस परिणाम पर पहुँचाता है कि सज़ा पाए हुए प्रत्येक १० व्यक्तियों में से ९ बिलकुल निरपराध थे। देश-प्रेम ही उनका अपराध था। हिन्दुस्तान की अदालतों में यूरोपियन और हिन्दुस्तानियों के बीच होने वाले ९९ फ़ी सदी मुक़दमों में हिन्दुस्तानियों को न्याय नहीं मिला है। यह अत्युक्तिपूर्ण चित्र नहीं है। जिन हिन्दुस्तानियों का ऐसे मामलों से कुछ सम्बन्ध रहा है, उनमें से प्रायः प्रत्येक का यही अनुभव है। मेरी राय में विदेशी लुटेरों के लाभ के लिए जान-बूझ कर या अजाने क़ानून का व्यभिचार किया जाता है।

सब से बड़ा दुर्भाग्य !

"सब से बड़ा दुर्भाग्य तो यह है कि इस देश के शासन का कार्य करने वाले अङ्गरेज़ और उनके हिन्दुस्तानी साथी यह नहीं जानते कि मैंने जिसका वर्णन करने का प्रयत्न किया है, उस अपराध में वे स्वयं लगे हुए हैं। मुझे इस बात से सन्तोष है कि बहुत से हिन्दुस्तानी अफ़सर सचमुच विश्वास करते हैं कि वे संसार में सब से अच्छी प्रणाली का शासन चलाते हैं और हिन्दुस्तान निश्चित यद्यपि धीमी उन्नति कर रहा है। वे नहीं जानते कि वह एक ओर भय-सञ्चार की सूक्ष्म, किन्तु परिणाम-जनक प्रणाली तथा शक्ति का प्रदर्शन है और दूसरी ओर आक्रमण का जवाब देने या आत्म-रक्षा करने की सब शक्तियाँ छीन लेने से जनता पुरुषत्वहीन हो गई है। और उसमें कपट की आदत पड़ गई है। इस भयङ्कर आदत ने शासकों के अज्ञान और आत्मछल की वृद्धि की है।

क़ानून प्रीति नहीं गढ़ सकता

"१२४-अ धारा, जिसका सौभाग्य से मुझ पर अपराध लगाया गया है, नागरिकों को स्वाधीनता का दमन करने की दृष्टि से बनाई हुई इण्डियन पिनल-कोड की राजनैतिक धाराओं में शायद सर्व-प्रधान है। प्रीति क़ानून द्वारा गढ़ी नहीं जा सकती, न नियमित की जा सकती है। यदि किसी को किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति प्रीति नहीं है, तो जब तक वह हिंसा का विचार नहीं करता है, उसे न बढ़ाता है, न उत्तेजना देता है, तब तक उसे अपनी अप्रीति को पूर्ण रूप से प्रकट करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

"परन्तु जिस धारा का श्रीयुत बैङ्कर और मुझ पर अपराध लगाया है, उसमें केवल अप्रीति को बढ़ाना ही जुर्म है। मैंने उस धारा के कुछ मुक़दमों का अध्ययन किया है और मैं जानता हूँ कि हिन्दुस्तान के सब से अधिक प्यारे देशभक्तों में से कुछ को उसके अपराध में दण्ड दिया गया है। इसलिए उस धारा का अपराध लगाए जाने को मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ। मैंने अपनी अप्रीति के कारणों का संक्षिप्त रेखांश देने का प्रयत्न किया है। किसी एक भी शासक के प्रति मेरा व्यक्तिगत कुभाव नहीं है। प्रत्युत राजा के शरीर के प्रति अप्रीति नहीं हो सकती। किन्तु जिस सरकार ने किसी भी पहली प्रणाली की अपेक्षा हिन्दुस्तान को अधिक हानि पहुँचाई है, उसके प्रति अप्रीति रखना मैं सद्गुण मानता हूँ। हिन्दुस्तान पहले किसी भी समय की अपेक्षा ब्रिटिश राज्य में कम पुरुषत्व रखता है। इस विश्वास को रखते हुए मैं इस प्रणाली के प्रति प्रीति रखना पाप मानता हूँ और जो लेख मेरे ख़िलाफ़ गवाही में पेश किए गए हैं, उनमें मैंने जो कुछ लिखा है, उसको लिखना मैं अपना बहुमूल्य सौभाग्य मानता हूँ।

"वास्तव में मेरा विश्वास है कि हिन्दुस्तान और इङ्गलैण्ड जिस अस्वाभाविक अवस्था में रहते हैं, उसमें से निकलने का उपाय असहयोग बताने में मैंने उन दोनों की सेवा की है। मेरी नम्र राय में अच्छाई के साथ सहयोग के समान ही बुराई के साथ असहयोग हमारा कर्तव्य है। परन्तु भूतकाल में असहयोग बुराई करने वाले के प्रतिहिंसा के रूप में ही प्रकट किया जाता रहा है। मैं अपने देशवासियों को यह दिखाने का प्रयत्न करता हूँ कि हिंसात्मक असहयोग बुराई को ही बढ़ाता है और बुराई हिंसा से ही क़ायम रक्खी जा सकती है। उस बुराई का सहारा हटा देने के लिए हमें पूर्ण रूप से हिंसा से रहित होना चाहिए। अहिंसा का अर्थ है कि हम बुराई से असहयोग करने की सज़ा अपनी इच्छा से भोगें।

"इसलिए क़ानून में जो इरादतन जुर्म है और जो मुझे नागरिक का सब से बड़ा कर्तव्य मालूम होता है, उसके लिए पूर्ण दण्ड को निमन्त्रण देने और प्रसन्नता-पूर्वक भोगने पर मैं तुला हूँ। इसलिए न्यायाधीश और पञ्च महोदय, आपके लिए केवल एक ही मार्ग खुला है, वह यह कि यदि आप अनुभव करते हों कि जिस क़ानून को आप चलाते हैं, वह बुरा है और उसमें वास्तव में मैं निरपराध हूँ, तो आप अपने पदों से इस्तीफ़ा दे दें या बुराई से सम्बन्ध तोड़ दें, या यदि आपका विश्वास हो कि जिस प्रणाली और क़ानून को चलाने में आप मदद करते हैं, वे इस देश के लोगों के लिए अच्छे हैं, अतः मेरी कार्यवाही सार्वजनिक हित को हानिकारक है, तो आप मुझे कड़े से कड़ा दण्ड दें।"

महात्मा गाँधी का ऊपर का बयान हो जाने पर जज ने महात्मा जी को ६ साल की सादी क़ैद और श्रीयुत शङ्करलाल जी बैङ्कर को १ साल की सादी क़ैद और १,०००) जुर्माना, यदि जुर्माना न दें तो ३ मास की अधिक क़ैद का दण्ड दिया।

जज का फ़ैसला

फ़ैसला सुनाते हुए दौरा जज मिस्टर ब्रूमफ़ील्ड ने कहा:—

"गाँधी जी! आपने अपराध स्वीकार करके एक तरह से मेरा काम बहुत आसान कर दिया है। परन्तु यह निर्णय करना सरल नहीं है कि आपको कितनी सज़ा दी जाय। मैं नहीं समझता कि इस देश में किसी जज के सामने इतना कठिन काम कभी उपस्थित हुआ है। क़ानून की नज़र में न तो कोई छोटा है और न बड़ा। अब तक मुझे जिन-जिन लोगों का फ़ैसला करना पड़ा है अथवा भविष्य में करना पड़ेगा, उन सबकी अपेक्षा आप भिन्न कोटि के पुरुष हैं। इस बात को मैं अपने ध्यान से नहीं हटा सकता। आप अपने करोड़ों देश-भाइयों की दृष्टि में महान देशभक्त हैं, महान नेता हैं, इस बात को भी मैं अपने ख़्याल से अलग नहीं कर सकता। जो लोग राजनैतिक मामलों में आपसे अलग रहते हैं, वे केवल आपको अलौकिक ही नहीं, वरन् साधु-कोटि के पुरुष मानते हैं।

"पर मुझे तो आपका विचार एक ही दृष्टि से करना है। क़ानून के अधीन रहने वाले मनुष्य की तरह ही आपका इन्साफ़ करना है। ऐसे अपराध के लिए जो क़ानून की दृष्टि से गम्भीर है और जिसे अपराधी ख़ुद क़बूल करता है, मैं इस बात को नहीं भूलता हूँ कि आपने हिंसा-काण्ड के ख़िलाफ़ बहुत-कुछ उपदेश किया है और मैं यह भी मानने के लिए तैयार हूँ कि कितने ही मौक़ों पर आपने हिंसा-काण्ड को रोका भी है। परन्तु आपके राजनैतिक उपदेश के स्वरूप को देखते हुए और उपदेश जिन लोगों को दिया गया, उनके स्वभाव को देखते हुए यह बात मेरी विचार-शक्ति के बाहर है कि यह आशा आप कैसे कर सकते हैं कि आपकी हलचलों की बदौलत हिंसा-काण्ड न होगा? भारत में शायद ही कोई लोग ऐसे हों, जिन्हें इस बात का सचमुच दुःख न हुआ हो कि आपने किसी भी सरकार के लिए आपको स्वतन्त्र रखना असम्भव कर डाला है। पर आपने वह स्थिति ला दी। मैं इसी बात का विचार कर रहा हूँ कि आपके साथ न्याय भी हो और सार्वजनिक हित की रक्षा हो; इन दोनों बातों का मेल कैसे बैठे? आपको सज़ा करने के विषय में मैं क़रीब बारह वर्ष पहले के ऐसे ही एक मुक़दमे का अनुसरण करना चाहता हूँ। श्री० बाल गङ्गाधर तिलक को इसी दफ़ा की रू से सज़ा दी गई थी। उस समय उन्हें अन्त को ६ बरस की सादी सज़ा भोगनी पड़ी थी। मुझे विश्वास है कि मैं यदि आपको श्री० तिलक की जोड़ में बिठाऊँ, तो यह आपको अनुचित न दिखाई देगा। अतएव आपको हर एक अपराध के लिए दो-दो वर्ष की सादी क़ैद अर्थात् सब मिला कर ६ वर्ष की सादी क़ैद की सज़ा देना मुझे अपना कर्तव्य मालूम होता है। यह सज़ा देते समय मैं इतना और कहना चाहता हूँ कि भविष्य में यदि भारत का राजनैतिक वायु-मण्डल शान्त हो और सरकार आपकी सज़ा कम करके आपको मुक्त कर सके तो उस दिन जितना आनन्द मुझे होगा, उतना शायद ही और किसी को हो।"

फिर उन्होंने श्री० बैङ्कर को एक वर्ष की सादी क़ैद और एक हज़ार रुपए जुर्माने की सज़ा सुनाई।

फ़ैसला सुनाए जाने के बाद महात्मा जी ने दौरा जज से कहा मैं सिर्फ़ एक शब्द और कहना चाहता हूँ। मुझे फ़ैसला सुनाते समय आपने स्वर्गीय लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलक के मुक़दमे की याद दिला कर मेरी बड़ी इज़्ज़त की है। उन महान पुरुष के साथ मेरे नाम का जोड़ा जाना मैं बड़े से बड़ा सौभाग्य और बड़ी से बड़ी इज़्ज़त समझता हूँ, और मुझे जो सज़ा दी गई है, वह तो मुझे हलकी से हलकी मालूम होती है।

* * *

उमासुन्दरी

इस पुस्तक में पुरुष-समाज की विषय-वासना, अन्याय तथा भारतीय रमणियों के स्वार्थ-त्याग और पतिव्रत का ऐसा सुन्दर और मनोहर वर्णन किया गया है कि पढ़ते ही बनता है। सुन्दरी सुशीला का अपने पति सतीश पर अगाध प्रेम एवं विश्वास, उसके विपरीत सतीश बाबू का उमासुन्दरी नामक युवती पर मुग्ध हो जाना, उमासुन्दरी का अनुचित सम्बन्ध होते हुए भी सतीश को कुमार्ग से बचाना और उपदेश देकर उसे सन्मार्ग पर लाना आदि सुन्दर और शिक्षाप्रद घटनाओं को पढ़ कर हृदय उमड़ पड़ता है। इतना ही नहीं, इसमें हिन्दू-समाज की स्वार्थपरता, काम-लोलुपता, विषय-वासना तथा अनेक कुरीतियों का हृदय-विदारक वर्णन किया गया है। छपाई-सफ़ाई सब सुन्दर है। मूल्य केवल ॥I) आने स्थायी ग्राहकों के लिए ॥-) ; पुस्तक दूसरी बार छप कर तैयार है।

घरेलू चिकित्सा

'चाँद' के प्रत्येक अङ्क में बड़े-बड़े नामी डॉक्टरों, वैद्यों और अनुभवी बड़े-बूढ़ों द्वारा लिखे गए हज़ारों अनमोल नुस्ख़े प्रकाशित हुए हैं, जिनसे सर्व-साधारण का बहुत-कुछ मङ्गल हुआ है, और जनता ने इन नुस्ख़ों की सचाई तथा उनके प्रयोग से होने वाले लाभ की मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है। इनके द्वारा आए-दिन डॉक्टरों की भेंट किए जाने वाले सैकड़ों रुपए बचाए जा सकते हैं। इस महत्वपूर्ण पुस्तक की एक प्रति प्रत्येक सद्गृहस्थ को अपने यहाँ रखनी चाहिए। स्त्रियों के लिए तो यह पुस्तक बहुत ही काम की वस्तु है। एक बार इसका अवलोकन अवश्य कीजिए। छपाई-सफ़ाई अत्युत्तम और सुन्दर। मोटे चिकने काग़ज़ पर छपी हुई पुस्तक का मूल्य लागत मात्र केवल ॥I) रक्खा गया है। स्थायी ग्राहकों से ॥-) मात्र !

यह पुस्तक सुप्रसिद्ध मिस मेयो की नई करतूत है। यदि आप अपने काले कारनामे एक विदेशी महिला के द्वारा मर्मिक एवं हृदय-विदारक शब्दों में देखना चाहते हैं तो एक बार इसके पृष्ठों को उलटने का कष्ट कीजिए। धर्म के नाम पर आपने कौन-कौन से भयङ्कर कार्य किए हैं; इन कृतियों के कारण समाज की क्या अवस्था हो गई है—इसका सजीव चित्र आपको इसमें दिखाई पड़ेगा। पढ़िए और आँसू बहाइए !! केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं। मूल्य केवल ३) स्थायी ग्राहकों से २।)

यह उपन्यास अपनी मौलिकता, मनोरञ्जकता, शिक्षा, उत्तम लेखन-शैली तथा भाषा की सरलता और लालित्य के कारण हिन्दी-संसार में विशेष स्थान प्राप्त कर चुका है। इस उपन्यास में यह दिखाया गया है कि आजकल एम० ए०, बी० ए० और एफ़० ए० की डिग्री-प्राप्त स्त्रियाँ किस प्रकार अपनी विद्या के अभिमान में अपने योग्य पति तक का अनादर कर उनसे निन्दनीय व्यवहार करती हैं, और किस प्रकार उन्हें घरेलू काम-काज से घृणा हो जाती है। मूल्य केवल २); स्थायी ग्राहकों से १॥)

मनोहर ऐतिहासिक कहानियाँ

इस पुस्तक में पूर्वीय और पाश्चात्य, हिन्दू और मुसलमान, स्त्री-पुरुष—सभी के आदर्श छोटी-छोटी कहानियों द्वारा उपस्थित किए गए हैं। केवल एक बार के पढ़ने से बालक-बालिकाओं के हृदय में दयालुता, परोपकारिता, मित्रता, सचाई और पवित्रता आदि सद्गुणों के अङ्कुर उत्पन्न हो जायँगे और भविष्य में उनका जीवन उसी प्रकार महान और उज्ज्वल बनेगा। मनोरञ्जन और शिक्षा की यह अपूर्व सामग्री है। भाषा अत्यन्त सरल, ललित तथा मुहावरेदार है। मूल्य केवल २) से स्थायी ग्राहकों १॥)

आयरलैण्ड के ग़दर की कहानियाँ

छोटे-बड़े सभी के मुँह से आज यह सुनने में आ रहा है कि भारतवर्ष, आयरलैण्ड बनता जा रहा है। उस आयरलैण्ड ने अङ्गरेज़ों की ग़ुलामी से किस तरह छुटकारा पाया और वहाँ के शिनफ़ीन दल ने किस कौशल से लाखों अङ्गरेज़ी सेना के दाँत खट्टे किए, इसका रोमाञ्चकारी वर्णन इस पुस्तक में पढ़िये। इसमें आपको इतिहास और उपन्यास दोनों का मज़ा मिलेगा। मूल्य केवल—दस आने।

मनोरञ्जक कहानियाँ

इस पुस्तक में १७ छोटी-छोटी, शिक्षाप्रद, रोचक और सुन्दर हवाई कहानियाँ संग्रह की गई हैं। कहानियों को पढ़ते ही आप आनन्द से मस्त हो जायँगे और सारी चिन्ताएँ दूर हो जायँगी। बालक-बालिकाओं के लिए यह पुस्तक बहुत उपयोगी है। केवल एक कहानी उनको सुनाइए—ख़ुशी के मारे उछलने लगेंगे, और पुस्तक को पढ़े बिना कदापि न मानेंगे। मनोरञ्जन के साथ ही प्रत्येक कहानियों में शिक्षा की भी सामग्री है। शीघ्रता कीजिए, केवल थोड़ी कॉपियाँ और शेष हैं। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल १॥) ; स्थायी ग्राहकों से १=)

व्यवस्थापिका 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

आख़िरश बर्दवान के महाराजाधिराज बहादुर भी बोले और ख़ूब बोले। हमें चिन्ता थी, कि आपकी राजनीतिज्ञता की बोलती आजकल बन्द क्यों है! मगर अब मालूम हुआ कि बेचारी केवल मौक़ा देख रही थी और ज्योंही मौसिम आया त्योंही चहक उठी। लेहाज़ा, अब कोयलों को चीख़-चीख़ कर कहना आरम्भ कर देना चाहिए कि—

'अब तो दादुर बोलिहैं, हमें पूछिहै कौन !!!'

❀

श्रीमुख का शुभाशीर्वाद है कि 'या तो गाँधी का आन्दोलन नष्ट हो जायगा या गाँधी स्वयं मर मिटेगा!' आशा है, चचा-चर्चिल और उनके पार्श्वरक्षक, भारत के पुराने नमकख़्वार लॉर्ड लॉयड महोदय अब निश्चिन्तता पूर्वक पेग पर पेग चढ़ाना आरम्भ कर देंगे! क्योंकि महाराजाधिराज ख़ुशामद्-मन्त्र के सिद्ध योगी हैं, युगों तक विलायती किशोरियों, युवतियों और प्रौढ़ाओं की कमरें थाम कर थिरकने के पश्चात् आपने यह अलौकिक सिद्धि प्राप्त की है। इसलिए, जिस तरह शनिदेव की दृष्टि कभी विफल नहीं जाती, उसी तरह महाराजाधिराज की यह भविष्यवाणी भी विफल नहीं जा सकती।

❀

दुःख की बात सिर्फ़ इतनी ही है कि, आपके हमजिन्स और हमनवा बङ्गाल के 'बनैले चाँद' (विपिन चन्द्र?) गाँधी और गाँधीवाद के पीछे वर्षों से लट्ठ लेकर दौड़ते रहने के कारण आजकल बीमार हो गए हैं, वरना ये दोनों हज़रात एक साथ ही गाँधीवाद को कोस-कोस कर, "चमारों के मनाने से ढोर नहीं मरते"—इस पुरानी कहावत पर हरताल फेर देते!

❀

ख़ैर, जिनकी कृपा से चिन्ता-रहित होकर लन्दनी कोहक़ाफ़ की परियों के साथ इस नश्वर जगत् में ही 'जन्नती' लुत्फ़ हासिल हो रहा है, उनकी प्रसन्नता के लिए संसार के महान पुरुष को कभी-कभी कुछ खरी-खोटी सुना कर जन्मभूमि की गोद का कलङ्क बनना तो परम धर्म ही ठहरा। इसके सिवा विभीषण और जयचन्द के नामलेवों की भी तो बड़ी आवश्यकता है। लेहाज़ा श्रीमान जगद्गुरु के लिए यह प्रसन्नता की बात है, कि भारत-दादा के पुराने गूदड़ में अभी ऐसे जीव हैं और स्वर्गीय स्वनामधन्यों (विभीषण और जयचन्द) के नाम के डूबने की अभी कोई सम्भावना नहीं है।

❀

कराची से ख़बर आई है, कि लालकुर्ती दल के जाँबाज़ों ने सरदार भगतसिंह आदि को पुनर्जीवित करने का पक्का इरादा कर लिया है और इस शुभ-कार्य के मङ्गलाचरण-स्वरूप उन्होंने कराची में महात्मा गाँधी आदि नेताओं का काले झण्डे से स्वागत करके अपनी रङ्गीन मिज़ाजी का परिचय दिया है और सरदार भगतसिंह आदि की आत्माओं की शान्ति के लिए—'गाँधी का नाश हो' और 'गाँधी गो बैक' के नारे भी लगाए हैं। इससे मालूम होता है, कि मियाँ के बदले बीबी का मुँह नोचने वाले बहादुर इस देश में अभी बहुत हैं।

❀

इसी सिलसिले में एक युवक कुल-कमल-दिवाकर जी,—"जैसे तोर में मोर घुसे"—अपने बाहुबल से भीड़ को चीरते-फाड़ते महात्मा जी के पास पहुँचे और उनके हाथों में काले खद्दर के कुछ टुकड़े देते हुए बोले—"मैं इन्हें इसलिए आपको देता हूँ कि आप सरदार भगतसिंह को वापस लावें।" ज़हे क़िस्मत! बड़ी हिम्मत की! अगर जब वापस लाने का इतना सुन्दर सामान मौजूद ही था तो फिर स्वयं क्यों न तकलीफ़ की? श्रीमान जैसे वीरवरों के लिए स्वर्ग कुछ दूर थोड़े ही है। एक छलाँग का तो मामला है!

❀

सुनते हैं, इन युवकों का अद्भुत स्वदेश-प्रेम, अलौकिक महावीरता और स्वर्गीय सरदार भगतसिंह के प्रति अटल अनुराग देख कर निष्ठुर हृदय महात्मा गाँधी मुस्करा पड़े थे। परन्तु आह! यह भावुकता, यह भोलापन और यह दयनीय निरीहता क्या मुस्कराने देने की चीज़ थी! क़सम अलहदपन की, अपने राम तो ऐसे अवसर पर फूट-फूट रोते और अभागिनी भारत-जननी को भर पेट कोसते, जिसने इन चलते-फिरते भू-भारों को वृथा ही अपनी छाती पर लाद रक्खा है!

❀

मगर यार जगद्गुरु, हिज़ होलीने स' का लावारिस पुछल्ला पाकर भी तुम निरे पोंगा ही रह गए! बारह वर्ष दिल्ली में भाड़ झोंकते और आधे वर्ष मियाँ 'भविष्य' को फ़तवा सुनाते बीता—पूरे साढ़े बारह वर्षों का ख़ून कर डाला—परन्तु न ख़ून लगा कर शहीद बनने का शऊर आया और न मौक़ा देख पाँचों सवारों में शिरकत हासिल करने की अक़्ल!

❀

देखो तो कैसी अक़्ल भिड़ाई! हर्रे लगी न फिटकिरी और रङ्ग चोखा उतरा। सारे देश के अख़बारों में नाम छप गया। भूतपूर्व राष्ट्रपति ने समझाया-बुझाया, श्री० सेन गुप्त और डॉक्टर आलम ने सान्त्वना दी—क़सम ख़ुदा की कई मिनिट के लिए जन-समूह पर ऐसा रोब ग़ालिब हो गया कि कुछ न पूछो। मगर—मगर, बुरा हो कमबख़्त सम्वाद-दाताओं का, किसी ने अपने अख़बार में छापने के लिए तस्वीर नहीं उतारी! फलतः यह लालसा—

"ऊधो मन की मन ही रही!"

❀

अमाँ, इस लँगोटी वाले बूढ़े ने तो दिन-दहाड़े ग़ज़ब कर दिया। लखी नौकरशाही के जीते जी स्व० सरदार भगतसिंह को 'शहीदों का सरताज', 'आत्मत्यागी' 'देश-भक्त' और न जाने क्या-क्या कह डाला! एक ज़माना था कि बेचारे कविवर 'अकबर' के लिए ख़ुदा का नाम लेना मुश्किल था। हज़रत कफ़े-अफ़सोस मलते और दर्दनाक लहजे में फ़रमाते—"रक़ीबों ने रपट लिखवाई है जा-जा के थाने में, कि अकबर नाम लेता है ख़ुदा का इस ज़माने में!" और एक यह ज़माना है कि सरदार भगतसिंह की तारीफ़ सुन कर लखी को ग़श आ जाना तो दूर रहा, पेशानी पर शिकन भी नहीं आती। अरे यह भगतिन कहीं हज्ज तो नहीं कर आई!

❀

अजी जनाब, हमारी श्रीमती उस बेवकूफ़ बनिए की तरह 'सब धान बाइस पसेरी' बेचने वाली नहीं हैं। नई-नई अदाएँ करतीं और नई-नई अदाएँ दिखाया करती हैं। इनके ज़िन्दाँ में आशिक़ेज़ारों के लिए श्रेणियाँ बनी हैं—ए०, बी० और सी० क्लास! कोई तीरे-नज़र का निशाना है तो कोई बाँकी अदा का! किसी के लिए घी घना और किसी के लिए चना भी मना! यह सब उनकी नित्य नई सूझ के करिश्मे हैं—

जब कोई ज़ुल्म नया करते हैं, फ़रमाते हैं,
अगले वक़्तों के हमें तर्ज़े-सितम याद नहीं!

❀

फिर एक और बात भी तो है। वैद्यक शास्त्र के अनुसार किसी के लिए बैंगन बादी और किसी के लिए पथ्य होता है; किसी के लिए स्व० खुदीराम बोस का परिचय छापना १२४-अ धारा के अनुसार राजद्रोह-प्रचार का अपराध है और किसी के लिए स्व० भगतसिंह की प्रशंसा कुछ नहीं। बक़ौल बाबा तुलसीदास:—

जेहि अघ हत्यो व्याध जिमि बाली,
फिरि सुकण्ठ सोइ कीन्ह कुचाली।
सोइ करतूति विभीषण केरी,
सपनेहुँ सो न राम हिय हेरी।

❀

कहावत है कि 'जिसका जिसका लेवें नाँव, कमली ओढ़े सारा गाँव।' मानो भुस के ढेर में चिनगारी पड़ गई है या कुएँ में किसी ने भाँग घोल दी है! कहीं मातमी जुलूस निकल रहे हैं और कहीं शोक सभाएँ हो रही हैं। कोई 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' पुकार रहा है तो कोई 'भगतसिंह ज़िन्दाबाद' के नारे बुलन्द कर रहा है, मगर श्रीमती जी का यह हाल कि—

लब पे शिकवा नहीं, नाला नहीं, फ़रियाद नहीं!
हो गई, सुलह तो अब जङ्ग उन्हें याद नहीं।

❀

ख़ैर, कानपुर के जाँबाज़ों ने इस गए-गुज़रे ज़माने में भी बहादुरी की नाक रख ली! 'आए थे हरि-भजन को ओटन लगे कपास!' निकले तो थे, स्व० भगतसिंह आदि की आत्मा को निहाल करने तथा अपने स्वदेश-प्रेम की बानगी दिखाने, परन्तु बदहवासी के कारण चोटी की झाड़ में दाढ़ी उलझ गई और फट पड़ी बहादुरी! फिर तो वही कहावत हुई कि 'गिलास मुँह से लग जाना चाहिए, शराब तो पेट में भरी है!'

❀

बड़ा मज़ेदार मुल्क है जनाब, क़सम ख़ुदा की, दाल का भाव तो वही टके पसेरी है। किसी ने कह दिया, 'कौवा कान ले गया!' बस, बहादुरों की टोली दौड़ पड़ी कौवे के पीछे! कहीं बूढ़ों पर तड़ातड़ पड़ने लगी, कहीं जवानों के दो-दो टुकड़े तड़पते दिखाई देने लगे, कहीं स्त्रियों की बेहुरमती हुई तो कहीं मासूम बच्चे बीच से चीर डाले गए! उधर 'भुस में आग लगाय जमालो दूर खड़ी!'

❀

कानपुर में पुलिस थी, फ़ौज थी, हथियार पकड़ने वाले तिरछे-बाँके गोरे और गोरखे थे; मगर इन्हें ने तीन सौ 'ईमानदारों और काफ़िरों' को दोज़ख़ तथा बहिश्त की राह दिखा दी और १२ सौ को अस्पतालों की चारपाइयों की शोभा बढ़ाने के लिए भेज दिया! बात यह थी, कि गत सत्याग्रह-संग्राम में काली खोपड़ियों का कचूमर काढ़ते-काढ़ते बेचारे 'हथियारधारी' थक गए थे और मासिवा इसके, यह कोई राजनीतिक व्यापार भी न था। इसी से दख़ल दरमाक़ूलात की भी चन्दाँ ज़रूरत न थी।

❀

आदर्श चित्रावली

THE IDEAL PICTURE ALBUM

The Hon'ble Justice Sir B. J. Dalal of the Allahabad High Court, says :

Dear Mr Saigal,

Your album is a production of great taste & beauty & has come to me as a pleasant surprise as to what a press in Allahabad can turn out. Moon worshipped & Visit to the Temple are particularly charming pictures, life like & full of details. I congratulate you on your remarkable enterprise & thank you for a present which has given & will continue to give me a great deal of pleasure.

Yours sincerely B J Dalal.

The Hon'ble Mr. Justice Lal Gopal Mukerjee of the Allahabad High Court :

. . . The Pictures are indeed very good and indicate, the high art of printing them in several colours . . . I am sure the Album ADARSH CHITTRAWALI will be very much appreciated by the public.

W. E. J. Dobbs, Esq., I. C. S., District Magistrate and Collector, Allahabad :

I am glad that Allahabad can turn out such a pleasing specimen of the printers art.

Sam Higginbottom, Esq., Principal Allahabad Agricultural Institute :

. . . I think it is beautifully done. Most of the guests who come into the Drawing room pick it up and look at it with interest.

A. H. Mackenzie, Esq., Director of Public Instruction, U. P. :

. . . I congratulate your press on the get-up of the Album which reveals a high standard of fine Art Printing.

The Indian Daily Mail :

. . The Album ADARSH CHITTRAWALI is probably the one of its kind in Hindi—the chief features of which are excellent production, very beautiful letterpress in many colours, and the appropriate piece of poem which accompanies each picture.

The Hon'ble Sir Grimwood Mears, Chief Justice Allahabad High Court :

. . . I am very glad to see that it is so well spoken of in the Foreign Press.

मूल्य केवल ४) रु०
डाक-व्यय अतिरिक्त

☛ व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Price Rs. 4/- Nett.
Postage extra.

हमारी गोरी-बी अर्थात् श्रीमती नौकरशाही धर्म-भीरुता की सगी नानी हैं—सारा कानपुर आपस में लड़-कट कर मर जाय, परन्तु प्रजा के धर्म-कर्म में दख़ल न देने की अटल प्रतिज्ञा जो उनके ककड़दादा जी ने की थी, उससे वे विचलित नहीं हो सकतीं। सम्भवतः इसी से उनके हथियारधारी ऐसे मौक़े पर बहुधा 'न्यूटरल' हो जाते हैं। फलतः कानपुर के दङ्गे के कारण श्रीमती और उनकी आयुष्मती को कोस कर श्री० चिन्तामणि आदि कौन्सिल के मेम्बरों ने घोर अधर्म किया है। इसलिए श्रीजगद्गुरु की व्यवस्था है, कि ये लोग त्रिवेणी में स्नान तथा ठूँठे अक्षयवट का दर्शन कर अपने पाप का प्रायश्चित्त कर डालें, नहीं तो परलोक में बड़ी दुर्गति का सामना करना पड़ेगा।

❀

पुलिस की लाठियों की शीतल छाया में थिरकने-वाली श्रीमती नौकरशाही की गुणग्राहकता के तो अपने राम जन्म-जन्मान्तर से क़ायल हैं। इन्हें आशा ही नहीं, विश्वास है कि श्रीमान बड़े लाट साहब ने जिस तरह, गत सत्याग्रह आन्दोलन में स्त्रियों की बेइज़्ज़ती और दुधमुँहे बच्चों का सिर फोड़ देने के सिलसिले में उन्हें तमग़े दिए और उनके 'सहस्रनाम' के सस्वर पाठ से अपनी वाणी सार्थक है, उसी तरह कानपुर की पुलिस और मिलेटरी पुलिस के लिए भी एक 'महामहिम्न' की रचना कर डालेंगे और उनकी मङ्गल-कामना के लिए पीर साहब की मज़ार पर लोबान जला कर अपने हृदय के विमल 'मातृ-स्नेह' का परिचय प्रदान करेंगे।

❀

या पाक परवर-दिगार! मृत्यु के बाद, अगर तेरी मख़लूक़ को इस अकिञ्चन के फ़तवों की फिर ज़रूरत पड़े और इसका पुनर्जन्म अनिवार्य हो जाय, तो या ख़ुदाया, तुझे तेरी बुज़ुर्गी की क़सम, इसे ऐसे मुल्क में पैदा करना, जहाँ बूटी मिले या न मिले, परन्तु उस मुल्क के बड़े लाट लॉर्ड इर्विन अवश्य हों! क्योंकि आप लासानी गुण-ग्राहक और 'पुलिस-प्रशंसक' ही नहीं, वरन् और भी अनेकानेक गुणों की खान हैं।

❀

ख़ुदा आपके जाहो-जलाल को दिन-दूनी और रात चौगुनी तरक़्क़ी बख़्शे। आपके अशेष गुणों के सम्बन्ध में तो बस इतना ही कह देना काफ़ी होगा कि—लिखति यदि गृहीत्वा (अवश्य ही लेखनी) सारदा सर्वकालम्, तदपि तव गुणानाम् 'लाट' पारं न याति!" आपके शासन-काल में ७९ हज़ार भारतवासियों को जेल भेज कर श्रीमती नौकरशाही ने 'पचहत्तर हज़ारी' की पदवी प्राप्त की है। फलतः पुलिस को पुरस्कृत करके आपने जिस अशेष गुण ग्राहकता का परिचय दिया है, उसी तरह नई दिल्ली में आपकी मर्मरमूर्ति की स्थापना का उद्योग करके कतिपय भारतवासियों ने भी अपनी प्रभु-भक्ति का परिचय दिया है। भारत का कुछ धन अगर इस शुभ-कार्य में लग जाएगा तो निश्चय ही इसकी सद्गति हो जाएगी, इसका हमें सवा सोलह आने भरोसा है।

❀

परन्तु अतीव मर्मवेदना के साथ कहना पड़ता है, कि 'लॉर्ड इर्विन-स्मृति-रक्षा-समिति' ने यह घोषणा करके कि इस शुभ-कार्य में कोई पाँच हज़ार से अधिक नहीं दे सकेगा, वास्तव में उदार हृदय प्रभुभक्तों को बड़ा धोखा दिया है। पुण्यार्जन के इस सुवर्ण-सुयोग को यों सङ्कुचित और सीमित करके देश के राजाओं, रईसों और अमीर-उमरावों के साथ घोर विश्वासघात किया गया है।

❀

ख़ैर, हमारी राय है कि भारत के पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश के किसी सुउच्च पर्वत-शिखर पर श्रीमान् की एक स्वर्ण मूर्ति स्थापित करने के लिए एक दूसरी कमिटी बनाई जाय, क्योंकि अभी हाल में ही महात्मा गाँधी को सीमान्त प्रदेश की ओर न जाने की आज्ञा देकर आपने वहाँ के अधिवासियों को भयङ्कर आफ़त से ही बाल-बाल नहीं बचाया है, बल्कि अपनी दूरदर्शिता का परिचय देकर उन्हें कृतज्ञता के मज़बूत पाश में भी बाँध लिया है।

❀

ख़ैर साहब, कॉङ्ग्रेस हो गई और ख़ूब हुई। मगर सब से अच्छी हुई, राष्ट्रपति सरदार पटेल की स्पीच—मानो कोई बाबा आदम के ज़माने की बुढ़िया निस्तब्ध रात में बैठी-बैठी 'विहाग' गा रही हो! ध्वनि है, लय और मूर्च्छना है, मगर वह बूटी के नशे को 'दोबन्द' करने वाला वसन्त कोकिला का पञ्चम स्वर नहीं—गायिका के गले में दम नहीं। पैंतालीस वर्ष की बुढ़िया कॉङ्ग्रेस के बूढ़े सभापति से इससे अधिक और आशा ही क्या की जा सकती थी—"कहाँ से लायगा क़ासिद बयाँ मेरी ज़बाँ मेरी!"

❀

वही वर्षों का कासा हुआ—चर्वित चर्वण! न चाट की तुर्शी न कचालू का चटपटापन! सुनते हैं, सभापति की स्पीच का नाम सुन कर जो चटोर कान (?) महीनों से होंठ चाट रहे थे, बड़े खिन्न रहे! आश्चर्य नहीं, कि बेचारों की आँखें डबडबा आई हों! ज़रा कराची की ओर कान लगा कर सुनिए तो सही, कोई मन-चला युवक रो तो नहीं रहा है? उफ़!—

दूर से आए थे साक़ी सुन के मयख़ाने को हम,
बस तरसते ही चले एक बूँद पैमाने को हम!

❀

बात यह है, कि श्रीमती नौकरशाही अपना बोरिया-बिस्तर समेट रही है और श्रीमती कॉङ्ग्रेस से मि० जॉन-बुल की यारी होने वाली है। सभापति महाशय को आशा है कि मि० जॉनबुल 'काले बहादुरों' को बन्दूक़ चलाना और रुपए वसूल कर तिजोरी में बन्द करना सिखा कर फ़ौरन अपने घर की राह लेंगे। क्योंकि बेचारे की उदारता चर्रा उठी है और त्याग भी कमर सीधी करके खड़ा हो गया है इसीसे आपने अपनी स्पीच को अथ से इति तक 'ओ३म् शान्तिः शान्तिः' से भर दिया है।

❀

अलहम्दोलिल्लाह! बड़ा लुत्फ़ रहेगा। हिज़ होली-नेस श्रीजगद्गुरु बग़ल में 'कुण्डी-सोटा' और कन्धे पर 'दोनली' रख कर जङ्गल की ओर निकल जायँगे बटेर मारने और श्रीमती हर होलीनेस मीर मुन्शी के साथ बैठ कर बजट पर विचार करेंगी। लल्ला कहता है, हम 'कमनधरन चीफ़' (कमाण्डर-इन-चीफ़) होंगे। उधर लाला घासीराम का लड़का घसीटू भी इसी पद का उमेदवार! फलतः उस रोज़ बदलू के पीपल तले, इसी बात के लिए दोनों में उठापटक हो गई!

❀

उधर जॉनबुल को भी कोई घाटा नहीं रहेगा। कपड़ा और शराब तो वे इस देश में नहीं बेचने पावेंगे, परन्तु काँच के मूल्यवान बर्तन, टीन के खिलौने, लकड़ी के बुरादे का आटा और चुक़न्दर की चीनी का व्यापार वे बड़ी ख़ुशी से कर सकेंगे। ठीक है, बेचारे हमारे-लल्ला को तीर-कमान सिखायेंगे—राज्य शासन की शिक्षा देंगे तो उन्हें कुछ गुरुदक्षिणा भी तो मिलनी ही चाहिए। आख़िर बेचारे लाद देंगे, लदवा देंगे और लादनेवाले को भी साथ कर देंगे तो क्या कुछ लेंगे नहीं?

❀

ख़ैर, कॉङ्ग्रेस में जो घाटा था, उसे नौजवान भारत-सभा वालों ने पूरा कर दिया। उन्होंने शीघ्रातिशीघ्र भारत का उद्धार कर डालने की इच्छा से एक लम्बी पताका पर यह लिख कर टाँग दिया था, कि—"गाँधी ब्रिटिश शासकों का दोस्त है!" इसके सिवा पितृऋण से मुक्त हो जाने के लिए उन्होंने पण्डित मालवीय जी का भी जीते जी श्राद्ध कर डाला! उन्हें देखते ही नौजवान भारत-सभा में 'तृप्यन्ताम! तृप्यन्ताम!!' की ऐसी व्योमविहारी ध्वनि उठी कि सारा पितृलोक गूँज उठा! आह! कमबख़्त दैव दो-चार ऐसे ही लायक़ वंशधर इस बूढ़े वृकोदर को भी दे देता तो माशाअल्लाह, यह मरने के बाद अपने कुण्डी-सोटे की चिन्ता से मुक्त हो जाता!

❀

मर्दुम-शुमारी की रिपोर्ट निकल गई। गत दस वर्षों में श्रीमती नौकरशाही की 'कोख' ऐसी भरी जैसे बरसात में बरसाती मेढकों के मारे धरित्री का दामन भर जाता है। करोड़ दो करोड़ नहीं जनाब, पचास लाख सालाना के हिसाब से गत दस वर्षों में पूरे पाँच करोड़ बाल-गोपालों की वृद्धि हुई है! इसलिए श्रीमती जी से पूछना है कि आख़िर इन वंशधरों की छट्ठी कब होगी? बड़ी ग़लती हुई, गत दिल्ली-उद्घाटन के अवसर पर ही इनके लिए 'नान्दीमुख श्राद्ध' की भी व्यवस्था हो जाती तो एक ही ख़र्च में दोनों काम हो जाते। ख़ैर, अब से सही।

❀

लेकिन, ज़रा इन कालों की एहसान-फ़रामोशी तो देखिए। कानपुर में कुछ लोग दाढ़ी-चोटी की उलझन में फँस कर भवसागर पार हो गए तो ये कमबख़्त उसका सारा दोष श्रीमती के मत्थे मढ़ रहे हैं और पचास लाख सालाना के हिसाब से जो वृद्धि हुई है, उसके लिए किसी के फूटे मुँह से दाद को एक शब्द भी नहीं निकलता। इधर 'भविष्य' के सम्पादक जी की शिकायत है कि हमारे 'चाँद' और 'भविष्य'-परिवार की, गणना ही नहीं हुई। होती क्यों जनाब, खुदीराम बोस की जीवनी छापने वाले का शुमार 'मर्दुम' में करके क्या श्रीमती नौकरशाही अपने लिए एक नई आफ़त खड़ी करतीं?

❀

गो यही शिकायत श्रीजगद्गुरु को भी है। क्योंकि ये हज़रत भी अपनी हज़रताइन के साथ 'मरदुम' बनने की इच्छा से, गत २६ फ़रवरी की रात को चिराग़ जला कर आकाश के तारे गिनते रहे, मगर किसी 'शुमार-कुनिन्दे' ने आकर न पूछा कि—"हाल क्या है?" फलतः उसी दिन से बेचारे परेशान हैं और रोज़ एकान्त में तोंद खोल कर बग़ौर मुआइना करते और सोचते हैं, कि आया इस कमबख़्त के अन्दर कुछ 'मर्दुमी' भी है या यों ही भिश्ती मियाँ की मशक के साथ बाज़ी लगाए बैठी है?

❀

ख़ैर, मर्दुमशुमारी के परम गणितज्ञ ऑफ़िसर महोदय से निवेदन है कि अगर जगद्गुरु की 'मर्दुमी' की परीक्षा किए बिना ही आपने समझ लिया है, कि वह 'मर्दुम' नहीं हैं तो न सही, आपकी मर्ज़ी! इसमें इस ग़रीब का चारा ही क्या है? मगर कृपया अपनी रिपोर्ट में एक 'ज़मीमा' जोड़ कर 'चाँद' और 'भविष्य'-परिवार वालों की गणना तो अवश्य ही कर डालिए। अच्छा रहेगा। पूरी संख्या बजाय ३९ करोड़ के, ३९ करोड़ १ सौ हो जायगी। आशा है अपना शुमार आपने करा डाला होगा। वरना ३९,००,००,१०१ हो जाता तो और भी अच्छा हो जाता।

❀

Printed and Published by R. SAIGAL—(Editor), at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad

सम्पादक :—

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ..	८) ००
छः माही चन्दा ..	४) ५०
तिमाही चन्दा ...	२) ५०
एक प्रति का मूल्य ...	≈)

Annas Three Per Copy

भविष्य

सचित्र राष्ट्रीय साप्ताहिक

आध्यात्मिक स्वराज्य हमारा ध्येय, सत्य हमारा साधन और प्रेम हमारी प्रणाली है। जब तक इस पावन अनुष्ठान में हम अविचल हैं, तब तक हमें इसका भय नहीं, कि हमारे विरोधियों की संख्या और शक्ति कितनी है।

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़ी कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़्ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए!

वर्ष १, खण्ड २ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; ९ अप्रैल, १९३१ | संख्या ४, पूर्ण संख्या २८

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह जी के विद्यार्थी-जीवन का चित्र

([illegible])

यह पुस्तक 'कमला' नामक एक शिक्षित मद्रासी महिला के द्वारा अपने पति के पास भेजे हुए पत्रों का हिन्दी-अनुवाद है। इन गम्भीर, विद्वत्तापूर्ण एवं अमूल्य पत्रों का मराठी, बङ्गला तथा कई अन्य भारतीय भाषाओं में बहुत पहले अनुवाद हो चुका है। पर आज तक हिन्दी-संसार को इन पत्रों के पढ़ने का सुअवसर नहीं मिला था।

इन पत्रों में कुछ को छोड़, प्रायः सभी पत्र सामाजिक प्रथाओं एवं साधारण घरेलू चर्चाओं से परिपूर्ण हैं। उन पर साधारण चर्चाओं में भी जिस मार्मिक ढङ्ग से रमणी-हृदय का अनन्त प्रणय, उसकी विश्व-व्यापी महानता, उसका उज्ज्वल पति-भाव और प्रणय-पथ में उसकी अक्षय साधना की पुनीत प्रतिमा चित्रित की गई है, उसे पढ़ते ही आँखें भर जाती हैं और हृदय-वीणा के अत्यन्त कोमल तार एक अनियन्त्रित गति से बज उठते हैं। अनुवाद बहुत सुन्दर किया गया है। मूल्य केवल ३) स्थायी ग्राहकों के लिए २।) मात्र!

आज हमारे अभागे देश में शिशुओं की मृत्यु-संख्या अपनी चरम-सीमा तक पहुँच चुकी है। अन्य कारणों में माताओं की अनभिज्ञता, शिक्षा की कमी तथा शिशु-पालन सम्बन्धी साहित्य का अभाव प्रमुख कारण हैं।

प्रस्तुत पुस्तक भारतीय गृहों की एकमात्र मङ्गल-कामना से प्रेरित होकर, सैकड़ों अङ्गरेज़ी, हिन्दी, बङ्गला, उर्दू, मराठी, गुजराती तथा फ्रेञ्च पुस्तकों को पढ़ कर लिखी गई है।

गर्भावस्था से लेकर ९-१० वर्ष के बालक-बालिकाओं की देख-भाल किस तरह करनी चाहिए, उन्हें बीमारियों से किस प्रकार बचाया जा सकता है, बिना कष्ट हुए दाँत किस प्रकार निकल सकते हैं, रोग होने पर क्या और किस प्रकार इलाज और शुश्रूषा करनी चाहिए, बालकों को कैसे वस्त्र पहनाने चाहिएँ, उन्हें कैसा, कितना और कब आहार देना चाहिए, दूध किस प्रकार पिलाना चाहिए, आदि-आदि प्रत्येक आवश्यक बातों पर बहुत उत्तमता और सरल बोल-चाल की भाषा में प्रकाश डाला गया है। मूल्य २); स्था० ग्रा० से १॥) मात्र!

छप रही है!

प्रकाशित हो रही है!!

[लेखक—अध्यापक ज़हूरबख़्श जी 'हिन्दी-कोविद']

'स्फुलिङ्ग' विद्याविनोद-ग्रन्थमाला की एक नवीन पुस्तक है। आप यह जानने के लिए उत्कण्ठित होंगे, कि इस नवीन वस्तु में है क्या? न पूछिए कि इसमें क्या है! इसमें उन अङ्गारों को ज्वाला है, जो एक अनन्त काल से समाज की छाती पर धधक रहे हैं, और जिनकी सर्व-संहारकारी शक्ति ने समाज के मन-प्राण निर्जीव-प्राय कर डाले हैं। 'स्फुलिङ्ग' में वे चित्र हैं, जिन्हें हम नित्य देखते हुए भी नहीं देखते और जो हमारे सामाजिक अत्याचारों का नग्न प्रदर्शन कराते हैं। 'स्फुलिङ्ग' देख कर समाज के अत्याचार आपके नेत्रों के सामने सिनेमा के फ़िल्म के समान घूमने लगेंगे। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि 'स्फुलिङ्ग' के दृश्य देख कर आपकी आत्मा काँप उठेगी, और हृदय? वह तो एक-बारगी चीत्कार कर मूर्च्छित हो जायगा। 'स्फुलिङ्ग' वह वैतालिक रागिनी है, जो आपके सदियों के सोए हुए मन-प्राणों पर थपकियाँ देगी। 'स्फुलिङ्ग' में प्रकाश की वह चमक है, जो आपके नेत्रों में भरे हुए घनीभूत अन्धकार को एकदम विनष्ट कर देगी।

'स्फुलिङ्ग' में कुशल-लेखक ने समाज में नित्य घटने वाली घटनाएँ कुछ ऐसे अनोखे ढङ्ग से अङ्कित की हैं, कि वे सजीव हो उठी हैं। उन्हें पढ़ने से ऐसा बोध होता है, जैसे हमारे नेत्रों के सामने दीनों पर पाशविक अत्याचार हो रहा हो तथा हमारे कानों में उनकी करुण चीत्कार-ध्वनि गूँज रही हो। भाषा में ओज, माधुर्य और करुणा की त्रिवेणी लहरा रही है। हमारा अनुरोध है, कि यदि आपके हृदय में अपने समाज तथा देश के प्रति कुछ भी कल्याण-कामना शेष है, तो आज ही 'स्फुलिङ्ग' की एक प्रति ख़रीद लीजिए। पुस्तक छप रही है। शीघ्र ही ऑर्डर रजिस्टर करा लीजिए!

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि वे यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' (हिन्दी अथवा उर्दू-संस्करण) का प्रचार कर, वे संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एक मात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३, | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार, ९ अप्रैल, १९३१ | संख्या ४, पूर्ण संख्या २८

मिदनापूर के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की निर्मम हत्या !

पेशावर के अ० डिप्टी-कमिश्नर पर आततायी का निष्फल-आक्रमण !!

देहली-शिमला एक्सप्रेस ट्रेन को उलट देने का प्रयत्न !!!

कानपुर का दङ्गा शुरू कैसे हुआ ? पहिले अङ्गरेज़ों पर हाथ साफ़ किया गया !!

कानपुर में नेताओं के प्रयत्न से शान्ति हो रही है :: देहली कॉन्फ्रेन्स में स्वयं मुसल्मान लड़ मरे !!

(एसोसिएटेड प्रेस द्वारा ८वीं अप्रैल की रात तक आए हुए 'भविष्य' के विशेष तार)

—पेशावर का ७वीं अप्रैल का समाचार है, कि गत रविवार की रात को कोई मनुष्य १०॥ बजे के समय कैप्टेन बार्न्स के बङ्गले पर पहुँचा। कैप्टेन साहब उस समय सो रहे थे। आगन्तुक ने उनके कमरे की ओर बढ़ने की चेष्टा की। सन्तरी के फ़ायर करने पर वह भाग गया।

अनुमान किया जाता है, कि यह मनुष्य या तो हबीब नूर (जिसे कैप्टेन बार्न्स को मारने की चेष्टा करने के अपराध में ३० घण्टों के भीतर फाँसी दे दी गई थी) का कोई सम्बन्धी हो, या वह 'लालकुर्ती' वालों में से कोई हो। कहा जाता है, कि हबीब नूर के सम्बन्धियों ने, हबीब नूर की फाँसी का बदला लेने की धमकी भी दी थी।

—मिदनापुर का ७वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के ज़िला मैजिस्ट्रेट मि० जेम्स पेड्डी पर, जिस समय आप स्कूल में शिक्षा-सम्बन्धी प्रदर्शिनी की देख-भाल कर रहे थे, किसी ने पिस्तौल से आक्रमण किया और उन्हें ७ गोलियों से घायल किया। वे तुरन्त अस्पताल भेजे गए; किन्तु उनकी हालत चिन्ताजनक होती जाती थी। दो बार ऑपरेशन कर उनके शरीर के भीतर घुसी हुई गोलियाँ निकाल ली गईं। एक गोली उनके पेट में घुस गई थी, इससे अँतड़ियों पर ज़ख़्म पहुँचा था। अँतड़ियाँ सी भी दी गईं, किन्तु सारे प्रयत्न निष्फल सिद्ध हुए ! बाद को 'भविष्य' के विशेष तार से पता चला है कि सन्ध्या को ५ बजे आपकी मृत्यु हो गई !!

इस आक्रमण के सम्बन्ध में अनेक मकानों की तलाशियाँ ली गई हैं और कुछ लोग सन्देह पर गिरफ़्तार भी किए गए हैं।

—कोचिन का समाचार है, कि वहाँ हिन्दू और क्रिश्चियनों के बीच दङ्गा हो गया है। हिन्दुओं ने एक धार्मिक जुलूस निकाला था। जब वह जुलूस गिर्जा के समीप पहुँचा तो बाजा बन्द कर दिया गया। किन्तु गिर्जे के फाटक के लाँघ जाने के बाद जब फिर बाजा शुरू किया गया, तो क्रिश्चियनों ने इस पर एतराज़ किया। फलतः दङ्गा शुरू हो गया, जिसमें दोनों ओर के लोगों को चोटें आई हैं। कहा जाता है, कि दङ्गे के समय पुलिस का एक इन्स्पेक्टर इस मामले को शान्त करने के लिए गिर्जा के पादरी के पास पहुँचा, तो उसे रोक लिया गया और दङ्गा समाप्त हो जाने के बाद ही वह छोड़ा गया।

—शिमला का ६ठी अप्रैल का समाचार है, कि आज सवेरे लालरू स्टेशन से आगे नॉर्थ वेस्टर्न रेलवे की दिल्ली एक्सप्रेस को गिराने का भीषण प्रयत्न किया गया था। कहा जाता है, कि लालरू स्टेशन से चल कर ट्रेन एक मील भी न जाने पाई थी, कि अचानक एक भयङ्कर टङ्कार के साथ ट्रेन रुक गई। एक डब्बा, जिसमें प्रथम और द्वितीय श्रेणी के दर्जे थे, लाईन पर से उतर गया और

देहली से 'अखिल भारतवर्षीय' मुस्लिम-कॉन्फ्रेन्स के जो वीभत्स समाचार तथा प्रस्ताव हमारे पास भेजे गए हैं, इस अङ्क में हम जान-बूझ कर उन्हें स्थान नहीं दे रहे हैं। हम इसे मुट्ठी भर मुसलमानों का मुल्लापन मात्र समझते हैं।

उपरोक्त पंक्तियाँ समाप्त होते ही आज रात का 'भविष्य' का ख़ास तार है, कि बहस के सिलसिले में, जबकि देश की वर्तमान राजनैतिक परिस्थिति के सम्बन्ध में विचार हो रहा था, कॉन्फ्रेन्स में ख़िलाफ़त-वादियों और दूसरे पक्ष के मुसलमानों में वाद-विवाद इतना अधिक बढ़ गया, कि मार-काट तक की नौबत आ गई !! परिणाम-स्वरूप बेचारा एक मुसलमान स्वयं मुसलमानों के हाथ से मार डाला गया और सैकड़ों बेचारे घायल हुए हैं। परमात्मा देश के इस अङ्ग को तथा हिंसात्मक विचार के पक्षपातियों को सुबुद्धि प्रदान करें। हम आगामी अङ्क में इस घृणित विषय पर विस्तृत रूप से लिखेंगे।

—स० 'भविष्य'

इञ्जिन भी उलट गया। एक ऐङ्ग्लो-इण्डियन महिला और फ़ायरमैन के सिवा और किसी को चोट नहीं आई है। कहा जाता है कि रेल की पटरी हटा दी गई थी, यदि ड्राइवर ने फ़ुर्ती से गाड़ी को रोक न लिया होता, तो भयङ्कर क्षति होती। कहा जाता है कि गाड़ी को उलटने का षड्यन्त्र पहले ही से रचे जाने की सम्भावना है, और यह घटना ऐसे समय में हुई है, जब कि लाट साहब का दफ़्तर देहली से शिमले को जा रहा है।

—'पायोनियर' के एक विशेष सम्वाददाता को कानपुर के मि० अर्नेस्ट से वहाँ के दङ्गे के सम्बन्ध में जो बातें मालूम हुई हैं, उसका सार नीचे दिया जाता है:—

गत २४वीं मार्च को भगतसिंह सम्बन्धी एक जुलूस निकाला गया। इस जुलूस में विशेषकर नवयुवक और विद्यार्थी सम्मिलित थे, ये लोग दूकानदारों को दूकानें बन्द करने के लिए बाध्य करते थे। राह चलते लोग भी अपना असबाब छोड़ देने के लिए बाध्य किए गए। इस जुलूस के लोगों ने दूकानों पर और नागरिकों पर पत्थर भी फेंका। मि० टेबर फ़िशर, मिसेज़ ल्यूक और मि० सेडन इस प्रकार घायल हुए। मि० सेडन की तो बाँह ही टूट गई है और अन्य चोटें भी लगी हैं।

इस दङ्गे में श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी (जिन्होंने अपना प्राण तक अर्पण कर दिया) श्री० योग, श्री० ए० हून, श्री० जङ्गबहादुर, श्री० एस० सी० चटर्जी (क्राइस्ट-चर्च कॉलेज के प्रिन्सिपल) मि० गोर्डन, मि० टीबर फ़िशर और म० ई० वी० डेविड आदि सज्जनों ने रिलीफ़ (सहायता) का कार्य उठाया था। कुँवर महाराजसिंह के अनुरोध करने पर क्रिश्चियनों ने एक स्वयंसेवक-दल तैयार किया, जिसकी सेवा सराहनीय है। क्रिश्चियनों में, हिन्दू और मुसलमान दोनों दल वाले विश्वास रखते थे, इस कारण इन्हें अपने कार्य में सफलता भी मिली।

—कानपुर से 'भविष्य' के विशेष सम्वाददाता लिखते हैं, कि बाहरी नेताओं के आने से नगर-निवासियों को बहुत-कुछ ढाढ़स बँध गया है और उन्होंने उनके आदेशानुसार दूकानें खोलना तथा कारबार करना आरम्भ कर दिया है। कानपुर की जनता विशेषकर राष्ट्रपति सरदार वल्लभभाई पटेल, मौलाना अब्बुल क़लाम आज़ाद, बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन, श्री० आर० एस० पण्डित, सेठ जमनालाल बजाज तथा लखनऊ व कानपुर के सभी हिन्दू-मुसलमान नेताओं की विशेष कृतज्ञ है, जिनके प्रयत्नों से शैतान के इस रौद्र ताण्डव का अन्त हुआ। पुलिस तथा अन्य सरकारी कर्मचारियों के रहस्यपूर्ण मौनावलम्बन की घर-घर निन्दा हो रही है और गवर्नमेण्ट से एक निष्पक्ष जाँच की प्रार्थनाएँ भी की जा रही हैं। जनता ने कानपुर के अधिकारियों के विरुद्ध कई सभाओं में "अविश्वास" के प्रस्ताव पास किए हैं।

* * *

—मद्रास २री फ़रवरी—'हिन्दू' के राजामुन्दरी के सम्वाददाता ने ख़बर दिया है, कि प्योवाडापल्ली में पुलिस और जनता के बीच एक दङ्गा हो गया, जिसके फल-स्वरूप २ मनुष्यों की मृत्यु हो गई है।

कहा जाता है कि ६,००० मनुष्यों का एक जुलूस एक गाड़ी पर महात्मा गाँधी का फ़ोटो रख कर लिए जा रहा था। पुलिस वालों ने इस पर आपत्ति किया और महात्मा जी की फ़ोटो को गाड़ी पर से हटा लेने के लिए कहा। कहा जाता है कि पुलिस ने जुलूस पर लाठियाँ चलाईं, जिसके फल-स्वरूप जनता ने भी ईंटें चलाईं, तब पुलिस ने फ़ायरें कर दीं। इससे उत्तेजित होकर लोगों ने कोठापीट के सब-मैजिस्ट्रेट की अदालत में आग लगा दी, जिससे वहाँ का सारा सामान जल कर ख़ाक हो गया है। परिस्थिति अब पूर्णतया शान्त है। अब तक कोई गिरफ़्तारी नहीं की गई है।

—ख़बर है कि कॉङ्ग्रेस की कार्यकारिणी ने यह निश्चित किया है कि गोलमेज़ परिषद में कॉङ्ग्रेस की ओर से केवल महात्मा गाँधी ही प्रतिनिधि होंगे। इसमें सन्देह नहीं कि महात्मा जी कार्यकारिणी समिति तथा अन्य नेताओं से भी सम्मति अवश्य लेंगे, जैसा कि उन्होंने गाँधी-इर्विन समझौते के समय किया है। उस समझौते की सफलता से लोगों को विश्वास हो गया है कि वर्तमान समस्या को हल करने के लिए यही अच्छा तरीक़ा है। कॉङ्ग्रेस वाले इस बात पर ज़ोर देते हैं, कि कार्यकारिणी के इस निश्चय से महात्मा जी को कॉङ्ग्रेस की ओर से कार्यवाही करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त हो गया है।

—'ज़मींदार' का सम्वाददाता काहिरा से लिखता है कि अमानुल्ला ख़ाँ अफ़ग़ानिस्तान की सीमा को रवाना हो गए हैं। हज़ारों प्रतिष्ठित पुरुषों ने एक प्रार्थना-पत्र भेज कर उन्हें बुलाया है।

—कराची का समाचार है, कि बङ्गाल के सिक्खों का एक डेपुटेशन महात्मा गाँधी, पं० जवाहरलाल नेहरू तथा श्री० सेन गुप्त से मिला। उसने बाबा गुरुदत्तसिंह को छोड़ देने के लिए कोशिश करने की प्रार्थना की। नेताओं ने उन्हें विश्वास दिलाया कि वे भरसक इसका प्रयत्न करेंगे।

—कलकत्ते का १ली अप्रैल का समाचार है, कि १ ली अप्रैल, १६३० के दिन गाड़ीवानों की हड़ताल में जो लोग मारे गए थे, उनकी यादगारी में आज किसानों ने हड़ताल मनाई। हॉली-डे पार्क में एक सभा भी की गई, जिसमें सरकार से उनके कष्टों को दूर करने की प्रार्थना की गई।

—भरतपुर का समाचार है, कि आजकल वहाँ, सनातन-धर्मसभा की ओर से ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य बालकों का यज्ञोपवीत संस्कार हो रहा है। इस सम्बन्ध का एक जुलूस बड़े समारोह से शहर में निकाला गया। यह जुलूस जब जुमा मसजिद के नीचे होकर गुज़र रहा था, तो मुसलमान भाइयों ने बड़े प्रेम से इसका स्वागत किया। दोनों धर्मावलम्बी नेतागण आपस में प्रेमपूर्वक मिले। यही नहीं, श्री० सनातन-स्वयंसेवक लीडर और अन्जुमन वालंटियर लीडरों का भी अपूर्व सम्मेलन हुआ। शरबत-ठण्डई आदि का भी बहुत सन्तोषजनक और ख़ासा प्रबन्ध था।

—ख़बर है कि दिल्ली की पुलिस ने लिङ्ग्विया कॉलेज के ४ छात्रों को क्रान्तिकारी होने के सन्देह में गिरफ़्तार किया है।

—नई दिल्ली का २री अप्रैल का समाचार है, कि कौन्सिल ऑफ़ स्टेट के आज की बैठक में उपस्थिति बहुत थोड़ी थी। आज विदेशी नमक पर कर और गेहूँ-बिल में दो प्रस्ताव उसके सामने थे। विदेशी नमक पर कर सम्बन्धी प्रस्ताव का केवल एक ही सदस्य ने विरोध किया, इसलिए वह बहुमत से पास हो गया। गेहूँ-बिल भी पास हो गया।

—कलकत्ते की एक ख़बर है कि कृष्णनगर में रात्रि के समय एक बम फटने की सूचना मिली है। किसी प्रकार की हानि नहीं हुई है। पुलिस ने अब्दुल सतीन नामक एक युवक को गिरफ़्तार किया है। कहा जाता है, कि यह घटना राजनैतिक है।

—गत २री अप्रैल का एक समाचार है, कि वॉयसराय ने महामना पं० मालवीय जी को गोलमेज़ परिषद में सम्मिलित होने के लिए आमन्त्रित किया है। मालवीय जी इस बात पर विचार कर रहे हैं, कि वे कॉङ्ग्रेस के प्रतिनिधि होकर जायँ या स्वतन्त्र रूप से।

—नागपुर का २री अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के प्रथम श्रेणी के मैजिस्ट्रेट ने 'महाराष्ट्र' के सम्पादक श्री० गोपाल अनन्त के मामले का फ़ैसला कर दिया है। पत्र पर राजद्रोह का अभियोग था। सम्पादक को १२४-ए धारा के अनुसार १ साल की कड़ी क़ैद की सज़ा दी गई है।

मुसलमान भाइयों से महात्मा गाँधी का अनुरोध

"मुसलमान धर्म के मानने वाले मौलवियों और मुल्लाओं से मेरा यह अनुरोध है कि वे मुसलमानों के हृदय से साम्प्रदायिकता के भावों को जड़ से उखाड़ डालें और उन्हें सहनशीलता और एकता का उपदेश देवें। मैं हिन्दुओं से भी इस बात का अनुरोध करूँगा कि वे बदला न लें और यदि मुसलमान भाई ग़लत रास्ते पर भी हों, तो भी वे उन्हें अपना भाई ही समझें।"

—कलकत्ते का २री अप्रैल का समाचार है, कि पटुआखाली सत्याग्रह के नेता श्री० सतीन सेन, जो पिकेटिङ्ग ऑर्डिनेन्स के अनुसार दार्जिलिङ्ग जेल में क़ैद किए गए थे, छोड़ दिए गए हैं, किन्तु उन्हें बैरीसाल, जहाँ उनका घर है, जाने की मुमानियत कर दी गई है।

—नई दिल्ली का २री अप्रैल का समाचार है, कि गडोडिया डकैती के अभियुक्त विश्वम्भरदयाल जयपुर में गिरफ़्तार किए गए हैं और उसी दल का एक मनुष्य सरकारी गवाह हो गया है।

—अहमदाबाद का १ली अप्रैल का समाचार है, कि बड़ौदा राज्य के निकट माँडव स्टेट के किसानों ने कर न देने का निश्चय कर लिया है। कहा जाता है कि उन्होंने इस वर्ष और गत वर्ष के लगान की मुआफ़ी के लिए अधिकारियों से प्रार्थना की थी। इसके उत्तर में उनसे कहा गया कि ४ दिन के भीतर वे इस वर्ष की मालगुज़ारी अदा कर दें, नहीं तो उचित कार्रवाई की जायगी। इस पर वे लोग राज्य छोड़ कर बड़ौदा राज्य में जा रहे हैं।

—अहमदाबाद का ६ठी अप्रैल का समाचार है, कि राजकोट के विद्यार्थियों का एक दल स्वदेशी और खद्दर-प्रचार का कार्य करता हुआ, जामनगर स्टेट के अकोट नामक गाँव में पहुँचा। वहाँ प्रचार के उद्देश्य से एक सभा की गई, जिसे पुलिस ने भङ्ग कर दिया। पुलिस ने उन विद्यार्थियों को राज्य की सीमा के बाहर भी कर दिया।

एक दूसरे कार्यकर्ता को, जो काठियावाड़ में विदेशी कपड़े के बहिष्कार का कार्य कर रहा था, मोर्वी स्टेट से निकल जाने की आज्ञा दी गई। उस कार्यकर्ता ने इस आज्ञा का उल्लङ्घन किया। तब अधिकारियों ने उसे मोटर पर बिठा कर, राज्य की सीमा से बाहर एक जङ्गल में ले जाकर छोड़ दिया।

—कलकत्ता, ६ठी अप्रैल—ऐसा समझा जाता है कि सिम्पसन हत्या-काण्ड के अभियुक्त श्री० दिनेश गुप्त और चाँदपुर के इन्स्पेक्टर की हत्या के अभियुक्त श्री० रामकृष्ण विश्वास के सम्बन्धियों ने गवर्नर के पास, इन पर दया दिखाने के लिए, एक प्रार्थना-पत्र भेजा है। ख़बर है कि प्रिवी कौन्सिल में अपील करने की भी तैयारी हो रही है।

—बाँकुरा की एक स्त्री के मृत्यु के बाद फिर जी उठने की आश्चर्यजनक ख़बर सुनने में आई है।

कहा जाता है कि बाबू कालीपद बैनर्जी की स्त्री श्रीमती कराली देवी की मृत्यु हिस्टीरिया रोग से हो गई। मृत्यु के समय एक डॉक्टर भी उपस्थित थे। जब लोग दाह-क्रिया के लिए उन्हें श्मशान में ले गए और चिता पर रखने की तैयारी करने लगे, उसी समय मृत शरीर में फिर जान आ गई। साँस शुरू हो गई और वह स्त्री बोलने भी लगी। लोग उसे उठा कर घर ले आए। अब वह अच्छी है। किन्तु उसकी आँखें ख़राब हो गई हैं। उसने कहा है कि मृत्यु के बाद उसकी मामी, जो ६ वर्ष पहले मर चुकी थी, उसके पास आई और उससे अपने पीछे-पीछे चलने को कहा। जब वह एक अँधेरे मकान में पहुँची तो उसकी मामी अदृश्य हो गई, और दो छाया-मूर्ति वहाँ पर उपस्थित हुईं। उनमें से एक ने कहा, "यहाँ इसे कौन लाया है। इसकी आवश्यकता नहीं है।" इसके बाद उसे इस दुनिया में भेज दिया गया।

—लाहौर का ६ठी अप्रैल का समाचार है, कि भगतसिंह जाँच-कमिटी की पहली बैठक आज सन्ध्या-समय हुई।

कमिटी में एक प्रस्ताव पास किया गया है, जिसके द्वारा यह घोषित किया गया है, कि कमिटी सरदार भगतसिंह और श्री० सुखदेव की मृत-देह के सम्बन्ध में जाँच करने वाली है, और १२वीं अप्रैल तक वह कार्यकारिणी को अपनी रिपोर्ट दे देगी।

प्रस्ताव में यह भी कहा गया है, कि आगामी १२वीं अप्रैल को कमिटी की सार्वजनिक बैठक लाजपतराय-हॉल में होगी, और कमिटी वहाँ लोगों की गवाही दर्ज करेगी। प्रस्ताव की एक-एक कॉपी मृतक के सम्बन्धियों और पञ्जाब-सरकार के चीफ़ सेक्रेटरी के पास भेज दी गई है।

—महात्मा गाँधी की लन्दन-यात्रा के सम्बन्ध में वहाँ के हिन्दुस्तानियों में बड़ी-बड़ी तैयारियाँ हो रही हैं। लन्दन की कॉमनवेल्थ ऑफ़ इण्डिया लीग ने निश्चय किया है कि वह महात्मा गाँधी के आने पर उनका प्रेमपूर्वक स्वागत करेगी। ब्रिटिश पार्लामेण्ट के सदस्य मि० पीटर फ़्रीमैन जिस कार्यकारिणी के सदस्य हैं, उसने भी भारतीय कॉङ्ग्रेस को बधाई देने का निश्चय किया है।

गाँधीवाद का नाश नहीं हो सकता

अहिंसा ही के द्वारा सफलता प्राप्त की जा सकती है

महात्मा जी का नवयुवकों से अनुरोध

कॉङ्ग्रेस कैम्प में एक सभा में व्याख्यान देते हुए महात्मा गाँधी ने कहा है, कि युवकों के प्रति उन्हें ज़रा भी क्रोध नहीं है, बल्कि जिस गम्भीरता के साथ उनके प्रति व्यवहार किया गया है, उसे देख कर वे प्रसन्न हुए हैं। वे उनके प्रति अत्यन्त निकृष्ट व्यवहार कर सकते थे, वे उन्हें मार तक सकते थे, जिसके लिए मनसूबे बनाने की आवश्यकता नहीं थी, "किन्तु जब तक ईश्वर की यह इच्छा है कि मैं भारत की सेवा करूँ, तब तक कोई मुझे नहीं मार सकता। पर जब मेरा काल आएगा, तब मुझे कोई भी नहीं—चतुर से चतुर डॉक्टर भी नहीं—बचा सकता।" आगे महात्मा गाँधी ने कहा, कि उनके युद्ध की नींव सत्य और धर्म है, और इसी आधार पर उन्हें बढ़ना चाहिए। संक्षेप में यह गाँधीवाद है, कल नवयुवकों ने जिसका तिरस्कार किया था।

गाँधी जी ने आगे बतलाया, कि उनकी अथवा उनके अनुयायियों की मृत्यु हो जाने से ही गाँधीवाद का नाश नहीं हो सकता। क्योंकि गाँधी का मूलमन्त्र अहिंसा और प्रेम है। अहिंसा के द्वारा ही भारतवासियों ने युद्ध कर हज़ारों औरत, मर्द और बच्चों को इस ओर आकर्षित किया है। हिंसा के द्वारा कार्य करने पर, ऐसा करना असम्भव हो जायगा। वे नवयुवकों से अनुरोध करते हैं, कि वे उनके सिद्धान्तों को अपनावें। आगे महात्मा जी ने कहा कि, यदि नवयुवकगण कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन असम्भव कर देते, तो भी वे भगतसिंह को नहीं लौटा सकते थे। किन्तु हाँ, देश की उन्नति में वे बाधा ज़रूर पहुँचाते। अन्त में उन्होंने कहा कि "स्वराज्य ही मेरी महत्वाकांक्षा है। स्वराज्य अथवा शान्ति और प्रेममय सरकार के लिए अहिंसा की आवश्यकता है। अहिंसा ही के द्वारा हम उसे प्राप्त कर सकते हैं। मेरा यही एकमात्र स्वप्न है। उसी एक स्वप्न के लिए मैं जीता हूँ, खाता हूँ, और बोलता हूँ। किन्तु जिस दिन मेरी अन्तरात्मा कह देगी, कि देश को अब मेरी आवश्यकता नहीं है, जिस दिन मुझे विश्वास हो जायगा, कि जनता ने मेरी ओर से मुँह फेर लिया है, उसी दिन मैं अनशन कर प्राण त्याग करूँगा।"

* * *

असेम्बली में मि० मूर की बौखलाहट

"कानपुर के दङ्गे के सम्बन्ध में अधिकारियों ने लापरवाही दिखाई है।"

असेम्बली में कानपुर के दङ्गे के सम्बन्ध में श्री० रङ्गा अय्यर और मि० आर्थर मूर के बीच जो मनोरञ्जक बहस हुई है, और जिसमें मि० मूर ने अन्त में यही स्वीकार किया है, कि प्रारम्भ में अधिकारियों ने लापरवाही की है, उसका कुछ अंश पाठकों के मनोरञ्जनार्थ नीचे दिया जाता है:—

आर्थर मूर बोल ही रहे थे, कि श्री० रङ्गा अय्यर ने पूछा—कानपुर में शान्ति स्थापित करने के लिए सेना कब आई?

सभापति—शान्ति! शान्ति! माननीय सदस्य उत्तर नहीं देना चाहते।

मि० मूर—यह बात तो हम सभी जानते हैं।

श्री० अय्यर—मैं माननीय सदस्य के मुख से सुनना चाहता हूँ, कि शान्ति-स्थापन के लिए कानपुर में सेना कब बुलाई गई?

सभापति—माननीय सदस्य खड़े हैं। वे या तो बैठ जायँ, या उत्तर दें। (श्री० अय्यर को लक्ष्य कर) माननीय सदस्य उन्हें इस प्रकार बाधा नहीं दे सकते।

मि० मूर—महाशय, मैं उत्तर नहीं देना चाहता। हम सभी जानते हैं, कि शोलापुर में शान्ति स्थापित करने के लिए सेना बुलाई गई थी। कानपुर की स्थिति के सम्बन्ध में हम अभी निर्णय नहीं कर सकते, किन्तु कानपुर में रहने वाले यूरोपियनों का विचार है, कि अधिकारियों को अधिक मुस्तैदी दिखानी चाहिए थी।

श्री० अय्यर—अधिकारियों ने अधिक मुस्तैदी क्यों नहीं दिखाई?

मि० मूर—मैं नहीं जानता। हम लोग कोई नहीं जानते।

श्री० अय्यर—आप अपना समाचार-पत्र पढ़ते हैं?

मि० मूर—महाशय, मैं माननीय सदस्य के इस बात का विरोध करता हूँ कि कानपुर में यूरोपियनों के ऊपर किसी प्रकार का ख़तरा नहीं था, और इसीलिए सरकार ने कुछ नहीं किया।

श्री० अय्यर—मैंने ऐसी कोई बात नहीं कही है। मैंने कहा है........

मि० मूर—मैं मान नहीं सकता।

सभापति—शान्ति! शान्ति!

मि० मूर—वास्तव में इस दङ्गे में यूरोपियनों का बड़ा भारी नुक़सान हुआ है। यह मैं नहीं जानता कि किसी की जान गई है या नहीं। पर इतना मैं जानता हूँ कि आर्थिक हानि बहुत अधिक हुई है। इसलिए माननीय सदस्य की दलील व्यर्थ है। किन्तु यूरोपियन समाज के लोग इस बात को मानते हैं, कि आरम्भ में कुछ लापरवाही अवश्य दिखाई गई है।

श्री० अय्यर—'कुछ' नहीं, बहुत अधिक लापरवाही दिखाई गई है, जो घातक सिद्ध हुई है, और उसी से इतनी अधिक जानें गई हैं।

❀ ❀ ❀

विद्यार्थी जी का अन्तिम पत्र

निम्न-लिखित पत्र अपनी मृत्यु के ३-४ घण्टे ही पहिले स्वर्गीय श्री० गणेशशङ्कर जी विद्यार्थी ने श्रीमती इन्दुमती गोयनका के नाम लिखा था, जिससे कानपुर के अधिकारियों के रहस्यपूर्ण मौनावलम्बन पर प्रकाश पड़ता है:—

आदरणीया बहिन जी,

सादर नमस्कार! मैं आपसे भली-भाँति परिचित हूँ। मेरी धारणा है, कि मैंने आपको कलकत्ते में आज से दश वर्ष पहिले देखा था। उस समय आप बहुत छोटी थीं।

यहाँ की दशा निःसन्देह बहुत बुरी है। हम लोग शान्ति के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। आपकी यह इच्छा, कि आप प्राणों पर खेल कर भी शान्ति के लिए प्रयत्न करें, बहुत स्तुत्य है। किन्तु मैं अभी आपको आगे आने के लिए नहीं कह सकता। मुसलमान नेताओं में से एक भी आगे नहीं बढ़ता। पुलिस का ढङ्ग बहुत निन्दनीय है। अधिकारी चाहते हैं कि लोग अच्छी तरह से निपट लें। पुलिस खड़ी-खड़ी देखा करती है। मसजिद और मन्दिर में आग लगाई जाती है। लोग पीटे जाते हैं और दूकानें लूटी जाती हैं। यह दङ्गा तो कल ही समाप्त हो जाता, यदि अधिकारी तनिक भी साथ देते। मैंने अपनी आँखों से अधिकारियों की इस उपेक्षा को देखा है। ऐसी अवस्था में मैं आपसे कैसे कहूँ कि आप आगे आइए। अधिकारियों को तो यह ईश्वरदत्त अवसर प्राप्त हुआ है। वे इस पर सन्तुष्ट हैं। ईश्वर उनके इस सन्तोष को भङ्ग करे, इस बात को सभी भले आदमी चाहेंगे।

प्रताप कार्यालय, कानपुर २६।३।१९३१ — विनीत, गणेशशङ्कर विद्यार्थी

"पूर्ण स्वाधीनता के बिना समझौता नहीं हो सकता"

भूतपूर्व राष्ट्रपति का छात्रों के प्रति उपदेश

गत २७वीं मार्च को अखिल भारतीय छात्र-परिषद में व्याख्यान देते हुए पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा है:—

"कानपुर का हत्याकाण्ड हमें यह सिखाता है, कि हिंसा का प्रयोग, चाहे अच्छे भावों से प्रेरित होकर ही क्यों न किया जाय, वह हमीं पर आ पड़ेगी और हमें ख़ून में घसीट ले जायगी। हमारे विरोधी ही इससे लाभ उठाते हैं। आजकल कोई भी महत्वपूर्ण समस्या, हिंसा के द्वारा हम हल नहीं कर सकते, और साम्प्रदायिक झगड़ों में तो यह उपाय कारगर हो ही नहीं सकता। अस्थायी क़ानूनों और प्रबन्धों द्वारा भी हम इस मामले को हल नहीं कर सकते। रोग की जड़ पर ही आक्रमण करके हम उसका विनाश कर सकते हैं। नवयुवकों को ही इन समस्याओं को हल करने में अधिक परिश्रम उठाना पड़ेगा। नवयुवक निश्चय ही एक नई परिस्थिति उत्पन्न कर देंगे, और उन्नति में बाधा डालने वाली बुराइयों का समूल नाश करेंगे। नवयुवकों को यह अवश्य याद रखना चाहिए, कि जब तक एक नवीन क्रम को कार्य-रूप में नहीं लाया जाय, जिससे असमानता और स्वार्थपूर्ण प्रवृत्ति दूर हो जाय और धर्मान्धता का नाश हो जाय, तब तक स्वतन्त्रता कोरा शब्द ही है। सन्धि के विषय में आजकल ज़ोरों से चर्चा चल रही है; किन्तु मैं नवयुवकों को याद दिलाना चाहता हूँ, कि कोई भी जीवित देश किसी प्रकार का भी समझौता करने पर तैयार नहीं हो सकता, यदि उसके द्वारा पूर्ण स्वाधीनता नहीं मिलती हो। कोई भी समझौता, यदि उससे पूर्ण स्वाधीनता नहीं मिलती हो, अवश्य ही असफल होगा और इस प्रकार युद्ध जारी रखना पड़ेगा।

"इसलिए नवयुवकों को पूर्ण स्वाधीनता और सामाजिक समानता के अर्थ को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। नारे लगाने के दिन बीत गए। अब युवकों को कार्य करना चाहिए, क्योंकि कार्य ही का महत्व है।"

* * *

एक नया ऑर्डिनेन्स

लॉर्ड इर्विन का अन्तिम उपहार!

नई दिल्ली की ६ठी अप्रैल की ख़बर है, कि वायसराय ने एक नया ऑर्डिनेन्स जारी किया है। इस ऑर्डिनेन्स के अनुसार जो कोई भी किसी प्रकार के समाचार, वक्तव्य या अफ़वाह को प्रकाशित करे अथवा अन्य किसी प्रकार से उसका प्रचार करे, जिससे विदेशी राष्ट्रों के साथ सरकार के सम्बन्ध में विद्वेष उत्पन्न हो या उत्पन्न होने की सम्भावना हो तो वह दण्डनीय होगा। किन्तु यदि वह समाचार या वक्तव्य गवर्नर जनरल या स्थानीय सरकार अथवा किसी अन्य अधिकारी द्वारा (जिसे सपरिषद गवर्नर जनरल के द्वारा ऐसा करने का अधिकार दिया गया हो) किए गए शिकायतों से सम्बन्ध रखता हो तो वह दण्डनीय नहीं होगा।

१८९८ के क्रिमिनल प्रोसीजर की ८९-ए धारा से लेकर ९९-जी धारा तक की व्यवस्थाएँ और १८९८ के भारतीय पोस्ट ऑफ़िस एक्ट की २७-बी से लेकर २७-डी तक की धाराएँ किसी भी पुस्तक, समाचार-पत्र या अन्य प्रकार के काग़ज़ातों पर (जिनके सम्बन्ध में किसी मनुष्य को २री धारा के अनुसार सज़ा दी जा सकती है) उसी प्रकार लागू हो सकती हैं जैसे वे राजविद्रोहात्मक पुस्तकों, समाचार-पत्रों या अन्य काग़ज़ात पर लागू होती हैं।

अन्तिम व्यवस्था पोस्ट-ऑफ़िस में समाचार-पत्रों आदि को रोक लेने का भी अधिकार देती है।

लाहौर के नए षड्यन्त्र केस की मनोरञ्जक कार्यवाही

'मेरी हजामत ५वें-७वें कभी जूतों और कभी उस्तुरे से होती थी'

"हम वॉयसरॉय को केवल ज़ख्मी करना चाहते थे"

"मैजिस्ट्रेट पुलिस के हाथों की कठपुतली थे"

"शनाख़्त-परेड के समय ख़ास चिन्ह बता दिए जाते थे"

भीमसेन और जयप्रकाश चारपाई से बँधे थे :: सरकारी गवाह की जिरह

लाहौर, २१ मार्च। आज नियमानुसार लाहौर के सेण्ट्रल जेल में स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने द्वितीय लाहौर षड्यन्त्र वाले मुक़दमे की सुनवाई आरम्भ हुई। अभियुक्त ठीक दस बजे अदालत के कमरे में लाए गए। उन्होंने आते के साथ ही 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' 'भगतसिंह ज़िन्दाबाद' 'श्री० सुखदेव ज़िन्दाबाद' और 'श्री० राजगुरु ज़िन्दाबाद' के नारे लगाए। इसके बाद "लाहौर के अभियुक्त ज़िन्दाबाद" का गगन-भेदी नारा लगा और फिर विप्लव-गान गाया गया। इसके बाद अभियुक्तों के अन्यतम वकील श्री० अमोलकराम ने इक़बाली गवाह इन्द्रपाल की जिरह आरम्भ की। वकील के प्रश्न के उत्तर में गवाह ने कहा—जब कैलाश और मैं 'बम की फ़िलॉसफ़ी' शीर्षक इश्तहार बाँटने के लिए रावलपिण्डी गए थे तो वहाँ खाना खाया था। मैंने रावलपिण्डी में ज्ञानचन्द मेहरा की तलाश करके पुलिस के सामने उस दूकान की पहचान की थी। यह पहचान पुलिस के दबाव से की गई थी। इसी जगह मैंने और सरदार गुलाबसिंह ने खाना खाया था। मैंने ज्ञानचन्द का नाम पुलिस को नहीं बतलाया था। दरअसल मैंने और सरदार गुलाबसिंह ने वहाँ पर कभी खाना नहीं खाया था। पुलिस-अफ़सर ने मुझे बतलाया था, कि यह पहचान १९ जून के सिलसिले में कराई जा रही है। जब मैंने डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की सराय की पहचान मैजिस्ट्रेट के सामने की थी तो सराय के मुन्शी को बुलाया गया था, मैंने मुन्शी की पहचान की थी। वास्तविक बात यह है, कि सराय के मुन्शी ने मुझे कभी शनाख़्त नहीं किया। मैं उस मुन्शी का नाम नहीं जानता।

इसी अवसर पर अभियुक्त शिवराम ने कहा कि मेरी तबीयत ख़राब है; सिर में पीड़ा हो रही है। मुझे जेल में वापस भेज दिया जाय। इसके बाद हरवंशलाल, वंशीलाल और मलिक कुन्दनलाल ने भी कहा कि हमारी तबीयतें ख़राब हो रही हैं; हमें भी जेल भेज दिया जावे और हमारी ग़ैर-हाज़िरी में जो कार्रवाई होगी, वह हमें मन्ज़ूर है। इस पर सब अभियुक्त वापस भेज दिए गए।

इसके बाद मुख़बिर ने अपना बयान जारी करते हुए कहा—मैंने शेख़ूपुरा में भी कई स्थानों की पहचान की थी। ये सभी स्थान पुलिस ने मुझे पहले ही दिखा दिए थे और ज़बरदस्ती पहचान कराया था। वास्तव में मैं इससे पहले कभी शेख़ूपुरा नहीं गया था। गिरफ़्तारी के बाद मैंने शाही क़िले में भीमसेन और जयप्रकाश को चारपाइयों से बँधे हुए देखा और ये कराह रहे थे। मैं उन्हें आसानी से देख सकता था, क्योंकि उन दिनों मुझे भी चारपाई से बाँध दिया जाता था। यह कमरा मेरी जगह से ४० गज़ के फ़ासले पर था।

शाही क़िले में ही स्पेशल स्टाफ़ ने हमारे मुक़दमे की भी बुनियाद रक्खी है। लाहौर के शाही क़िले में १९० के क़रीब अफ़सर, सब-इन्स्पेक्टर, हवलदार और सिपाही रहते हैं। आमतौर से जब मुझसे किसी आदमी की पहचान कराई जाती थी तो उस आदमी को, जिसे मुझे पहचानना होता था, पुलिस कॉन्स्टेबिलों में बुलाया जाता था। ये पुलिस कॉन्स्टेबिल शाही क़िले के ही होते थे। कई दफ़ा कुछ पुलिस कॉन्स्टेबिल और दूसरे आदमी भी शामिल किए जाते थे। शाही क़िले में मेरी हजामत पाँचवें-सातवें रोज़ हो जाती थी।

मि० एम० सलीम (ट्रिब्यूनल के एक जज)—कैसी हजामत? जूतियों से या उस्तुरे से अथवा मार-पीट द्वारा? (हँसी)

गवाह—कभी जूतियों से और कभी उस्तुरे से। (हँसी)

एक बार जब मेरी शनाख़्त-परेड हो रही थी, तो एक लड़का वहाँ पर मुझे शनाख़्त करने आया। उसने उपस्थित पुलिस अफ़सरों से पूछा, कि किधर से छठा नम्बर है? एक पुलिस अफ़सर ने कहा—दाहिनी ओर से! इससे मैंने अनुमान किया, कि पुलिस शनाख़्त से पहले बता देती है। यह वही लड़का था, जिसकी दूकान पर, मेरे मैजिस्ट्रेटी बयान में फ़ालूदा खाने का ज़िक्र आता है। बाज़ शनाख़्त-परेड के समय गवाह को ख़ास निशान बता दिया जाता था, जैसा कि मेरे चेहरे पर एक छोटा सा निशान है। इस निशान को मैंने पहले कभी नहीं देखा था। यह निशान मुझे पुलिस वालों ने दिखाया था! इस पर मैंने आइने में देखा तो वास्तव में निशान है।

प्रश्न—क्या आप बता सकते हैं, कि चन्दगीलाल ने क्यों शनाख़्त नहीं किया?

उत्तर—पहले गिरधारीलाल और रामसरूप मेरी पहचान नहीं कर सके। इस पर ख़ाँ साहब सईद अहमद शाह ने नाराज़ होकर कहा कि अगर इन्होंने सरकारी गवाह होकर भी शनाख़्त नहीं किया तो इनकी ज़मानतें ली जाएँ और इनके स्थान पर दूसरे गवाह बनाए जायँ। इसलिए चन्दगीलाल ने मुझे शनाख़्त नहीं किया। इसके बाद अदालत लञ्च के लिए उठ गई।

* * *

लञ्च के बाद अभियुक्तों ने अदालत से कहा कि हम थक गए हैं, हमें बैठने के लिए कुर्सियाँ दी जाएँ। इस पर उन्हें कुर्सियाँ दे दी गईं।

गवाह कहने लगा—मि० महमूद पुलिस की दस्तावेज़ियों को अच्छी तरह जानते थे। इसलिए पुलिस वाले पहचान के समय उन्हीं को लाया करते थे। पुलिस वाले जो कुछ लिखवाना चाहते थे, उनसे लिखवा लेते थे। इसलिए मेरे दिल में ख़्याल पैदा हुआ कि मैजिस्ट्रेट पुलिस की हाथों की कठपुतली थे। जैसे पहले तीन-चार रोज़ तक मेरा बयान अधूरा-क़लमबन्द किया जाता था, परन्तु इसके बाद मलिक बरख़ुरदार अली के कहने पर मैजिस्ट्रेट साहब ने पूरा बयान लिखना आरम्भ किया। मैजिस्ट्रेट महमूद जान-बूझ कर कभी साइनबोर्ड पढ़ने लगते और कभी सिगरेट पीने में लग जाते थे।

मदनलाल इक़बाली गवाह कभी मेरे मकान पर नहीं ठहरा। यह वास्तविक बात है कि मेरे बयान में पुलिस ने बहुत सी बातें बढ़ा दी हैं। यह ठीक है कि हम वायसराय की गाड़ी उड़ाने का इरादा नहीं रखते थे, बल्कि सिर्फ़ वायसराय को ज़ख़्मी करने का इरादा था। हम वायसराय की ट्रेन को उड़ा सकते थे। अगर हम चाबी को पुल पर दबा देते तो मुमकिन है वायसराय की गाड़ी नदी में गिर जाती और उसमें की एक चिड़िया भी न बचती। लेकिन हमारी पार्टी का उद्देश्य हत्या करने का नहीं था। वह सिर्फ़ आतङ्क जमाना चाहती थी। इसके बाद अदालत बरख़्वास्त हो गई।

* * *

गत १ अप्रैल को लाहौर के सेण्ट्रल जेल में उपर्युक्त मुक़दमे की पेशी फिर स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने हुई। अभियुक्तों ने नित्य नियमानुसार अदालत के सामने आते ही 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' आदि नारे लगाए और "हिन्दियो, अब दिन गए तक़रीर के तहरीर के" यह गाना गाया। आज फिर इक़बाली गवाह इन्द्रपाल की जिरह आरम्भ हुई। गवाह ने कहा—यशपाल के साथ मैं व्यायामशाला में गतका खेलना और लाठी चलाना सीखने जाया करता था। वहाँ पर नौ-दस आदमी सीखने आया करते थे। जिनमें शान्तिस्वरूप और भीमसेन के नाम मुझे याद हैं। वहाँ पर गतका चलाना यशपाल सिखाया करते थे।

मुझे इस बात का पता नहीं कि यह इन्तज़ाम किसकी ओर से था। लेकिन जहाँ तक मुझे याद है, कि यशपाल ने मुझे बताया था कि इसका इन्तज़ाम डॉ० गोपीचन्द के सुपुर्द है। मैं "दैनिक भीष्म" में फ़रवरी १९२७ से जनवरी १९२९ तक रहा। मेरी मौजूदगी में, लछमणसिंह आज़ाद, स्वामी प्रकाशानन्द, पण्डित मेलाराम जी वफ़ा, लाला राजनारायण अरमान, लाला करमचन्द और प्रिन्सिपल गुलशन राय, "दैनिक भीष्म" के सम्पादक रह चुके हैं। मुझसे सरदार भगतसिंह और मि० सुखदेव को शनाख़्त नहीं कराया गया था। सरदार भगतसिंह भी अक्सर मेरे पास कुछ मज़मून और शहीदों की तस्वीरों पर शेर लिखवाने के लिए आया करते थे। इन दिनों पण्डित रूपचन्द मेरे साथ रहा करते थे।

जब साइमन कमीशन लाहौर में आया तो उसके विरुद्ध प्रदर्शन करने के लिए एक बड़ा जुलूस तैयार किया

गया था, जो 'साइमन गो बैक' 'साइमन गो बैक' के नारे लगाता था। इस जुलूस का नेतृत्व लाला लाजपतराय करते थे। [इसके सिवा मौलाना ज़फ़रअली ख़ाँ एडीटर और मालिक अख़बार 'ज़मींदार' और श्री० सन्तराम भी इस जुलूस के साथ गए थे। मैं तारीख़ नहीं बता सकता। जब रेलवे स्टेशन पर पुलिस के अफ़सरों ने लाला जी पर लाठियाँ बरसाईं तो लाला जी ने कुछ नहीं कहा और चुपचाप खड़े रहे थे। मेरे सामने पुलिस अफ़सर ने, जो कि अङ्गरेज़ था, लाला जी पर लाठियाँ चलाईं। मैं नहीं कह सकता कि उसने लाला जी को क्यों मारा। लाला लाजपतराय के अलावा और भी बहुत लोगों को चोटें आई थीं। मेरे कोई चोट नहीं लगी। मैं उस पुलिस अफ़सर को नहीं पहचान सकता, जिसने लाठियाँ चलाई थीं।

मैंने मि० यशपाल से पूछा था कि यह कौन पुलिस-अफ़सर है, जिसने लाला जी पर लाठियाँ चलाई हैं? उसी रोज़ एक महती सभा हुई थी। मुझे याद नहीं कि यह बताया गया था या नहीं कि किस अफ़सर ने लाला जी पर लाठियाँ चलाई थीं। यशपाल से मिलने से पहले भी मेरे दिल में पुलिस के प्रति असन्तोष था।

यशपाल ने मुझे उस पुलिस अफ़सर का नाम नहीं बतलाया था, परन्तु यह कहा था कि वह सुपरिण्टेण्डेण्ट ऑफ़ पुलिस था। इसके बाद भी मैंने पुलिस-अफ़सर के नाम का पता लगाने की कोशिश की थी। यह ठीक है कि कमीशन के आने के दिन जिस पुलिस अफ़सर ने लाला जी पर लाठियों की वर्षा की थी, उसकी हत्या के षड्यन्त्र में मैंने भाग नहीं लिया था।

यशपाल से परिचय होने से पहले मैंने किसी क्रान्तिकारी दल का नाम नहीं सुना था। क्रान्तिकारी दल के संयोजक से जब किसी का परिचय होता था, तो उससे उनका असली नाम नहीं बतलाया जाता था। बल्कि पार्टी का नाम बतलाया जाता था। मुझे याद नहीं कि मैं यशपाल से सौण्डर्स की हत्या के दिन मिला था या नहीं।

एक रोज़ यशपाल ने मुझसे पोटाशियम क्लोरेट और एमोनियम कारबोनेट मँगवाए थे। जब मैं ये चीज़ें ख़रीद कर ले आया तो ईशरदास ने, जो कि डी० ए० वी० कॉलेज में पढ़ता था और साइन्स का विद्यार्थी था, कहा कि ये तो भड़कने वाली चीज़ें हैं और बम बनाने में इस्तेमाल होती हैं, तो मैंने कहा, मुझसे किसी आदमी ने दवाई बनवाने के लिए ये चीज़ें मँगवाई हैं।

जब सरदार भगतसिंह और मि० बी० के० दत्त ने एसेम्बली हॉल में बम फेंका, उसके तीन-चार रोज़ बाद अख़बार में मैंने पढ़ा कि सरदार भगतसिंह और मि० बी० के० दत्त गिरफ़्तार हो गए हैं। मैंने यशपाल से पूछा कि क्या उनमें से कोई इक़बाली गवाह बन गया है? तो उन्होंने बतलाया कि उनमें से कोई इक़बाली गवाह नहीं बनेगा। बल्कि वह इक़बाली बयान देंगे, जिसमें भारत की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक अवस्थाओं का वर्णन करेंगे, जो कि ख़राब हो चुकी हैं।

१५ अप्रैल को जो बम फ़ैक्टरी पकड़ी गई थी उसकी पहचान मैंने नहीं की। यशपाल उस दिन लाहौर में ही था, जिस दिन सुखदेव, जयगोपाल और किशोरीलाल गिरफ़्तार किए गए थे। इनमें से जयगोपाल इक़बाली गवाह बन गया था। मैं दिल्ली में साधू बन कर तीन महीने रहा। वहाँ पर मैं भीख माँग कर गुज़ारा करता था। मुझे याद नहीं कि दिल्ली के किसी आदमी ने मेरी पहचान की थी, जिसने मुझे भीख दी थी। आमतौर पर औरतें और बच्चे मेरे स्थान पर मुझे भीख दे जाया करते थे।

जिस वक़्त भगवतीचरण मेरे पास आया, उस वक़्त चिराग़ गूजर मेरे पास बैठा हुआ था और यशपाल उसके बाद आया। उस समय रक्खाराम ज़ैलदार मेरे पास मौजूद था। मैंने देवीसहाय गूजर को पुल पर से गाड़ी ले जाते हुए कई बार देखा था। मुझे यशपाल से हिदायत मिली थी कि मैं पता लगाऊँ कि रात के वक़्त कौन-कौन पुल पर से जाते-आते हैं।

मुझे याद नहीं कि शनाख़्त-परेड में देवीसहाय ने मुझे शनाख़्त किया था या नहीं। मैंने कोई बमसाज़ी की किताब नहीं पढ़ी। कई कॉन्स्टेबिल मेरे पास कभी-कभी पड़ाव पर आया करते थे। २७ अक्टूबर को जब वायसराय की गाड़ी वहाँ से गुज़री तो मैंने पुलिस वालों को लाइन के पास खड़ा देखा था। जब मैं दोबारा दीवाली के रोज़ गया तो अपने साथ कुछ मिठाइयाँ लेता गया था। देवीसहाय चौकीदार ने शाही क़िले में मेरी पहचान नहीं की थी।

इसके बाद अदालत लञ्च के लिए उठ गई और लञ्च के बाद फिर थोड़ी सी जिरह होकर मुक़दमा मुलतवी हो गया।

* * *

गत २ अप्रैल को उपर्युक्त मुक़दमे की फिर पेशी हुई और अभियुक्तों के वकील ने इक़बाली गवाह इन्द्रपाल की जिरह आरम्भ की। गवाह ने बयान दिया—मैंने यशपाल के पास हिन्दुस्तानी रिपब्लिकन आर्मी की नियमावली देखी थी, वह अङ्गरेज़ी ज़बान में थी। जब मैंने मोटर साइकिल के लिए ट्यूब मोहम्मद याक़ूब की दूकान से ख़रीदा था, तो उसका 'कैशमेमो' भी लिया था। यह ट्यूब यशपाल की मोटर साइकिल के लिए ख़रीदे गए थे। मैंने यह कैशमेमो मिस्त्री को लौटा दिया था। क्योंकि मुझे उसकी कोई आवश्यकता न थी। इसके बाद मैंने फिर मोटर साइकिल मरम्मत के लिए मिस्त्री को दे दी। इसके बाद मोटर साइकिल को मैंने शाही क़िले में देखा था। जब मैं लायलपुर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की सराय में गया था, तो मैंने असली नाम की जगह अपना नाम रामलाल बताया था। मैंने मुक़दमे के दौरान में किसी रजिस्टर पर अपना दस्तख़त नहीं देखा। सराय में मेरा कोई जानकार नहीं था। मैंने ज़हरीली गैस तैयार नहीं की। गिरफ़्तारी से पहले मुझे उस आदमी का पता नहीं लगा, जिससे यशपाल मई में युनिवर्सिटी ग्राउण्ड में मिला था और जिसको वह विश्वास न करने योग्य ख़्याल करता था। गिरफ़्तारी के बाद मुझे पता लगा, कि वह आदमी नरायन था, जो किसी षड्यन्त्र के मामले में अभियुक्त है। जब अमीरचन्द अभियुक्त भगतसिंह वग़ैरह का मुक़दमा सुनने आया था तो मैंने उसे अन्दर जाने की दरख़्वास्त लिख दी थी। वह अपने साथ शीशियाँ ले गया था; जिनमें अरक़ और शर्बत थे। मैंने अङ्गरेज़ी किसी स्कूल में नहीं पढ़ी। परन्तु अगर दो आदमी आपस में अङ्गरेज़ी बोलते हों तो मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ और बोल भी सकता हूँ। यशपाल मुझे अङ्गरेज़ी में चिट्ठियाँ लिखा करता था। लेकिन मैं उसे हिन्दी में लिखता था। मैंने यशपाल को कई दफ़े अङ्गरेज़ी में चिट्ठियाँ लिखते देखा है। इसके अलावा हंसराज, भगवतीचरण, सुखदेव और राजगुरु को भी अङ्गरेज़ी में चिट्ठियाँ लिखते देखा था। पं० चन्द्रशेखर आज़ाद और प्रेम को भी अङ्गरेज़ी में लिखते देखा था। 'जेल-एक्शन' के बारे में कुछ काग़ज़ात यशपाल ने मेरी उपस्थिति में ही लिखा था। उन पर उन आदमियों के और पार्टी के सदस्यों के नाम थे, जिनको अदालत के कमरे में गोली से मार डालने का इरादा था। काग़ज़ के दूसरे हिस्से पर जो तैमूर, स्वामी और एस० लिखा है, इसका मतलब यह है कि जब सरदार भगतसिंह और उनके दूसरे साथियों को 'जेल-एक्शन' करके छुड़ाया जाय तो इनको इन आदमियों के पास ठहरने का इन्तज़ाम किया जाय। इसके लिए यशपाल ने कई दूसरे आदमियों के नाम भी लिखे थे।

इसी समय अभियुक्त सरदार गुलाबसिंह ने अदालत से प्रार्थना की कि मेरे दाँतों में दर्द हो रहा है और ख़ून भी आ रहा है, इसलिए मुझे जेल भेज दिया जाए। अदालत ने प्रार्थना स्वीकार कर ली।

गवाह फिर वकील के प्रश्नों का उत्तर देने लगा—मैंने गुरुदत्त-भवन के नज़दीक उस मकान की पहचान की थी, जहाँ पर मैंने अभियुक्त किशनगोपाल को शादी के दिन ठहरे हुए देखा था। डुप्लीकेटर के दाम मैंने अपनी पॉकेट से दिए थे। 'एक्शन' का काम पार्टी सेण्ट्रल पार्टी की आज्ञा से किया करती थी। कोई सरकारी नौकर सेण्ट्रल पार्टी का सदस्य नहीं हो सकता था। परन्तु मेरी जानकारी में अब तक सिर्फ़ एक सरकारी आदमी रक्खा गया था। इसका नाम मि० विजयकुमार सिन्हा और पार्टी-नाम बच्चू था। इसको आल इण्डिया सोशल रिपब्लिकन पार्टी का सदस्य इसलिए बनाया गया था कि वह सी० आई० डी० की तमाम रिपोर्टें और कार्रवाइयों की नक़ल पार्टी को दे दिया करे। क्योंकि वह सी० आई० डी० का इन्फ़ॉर्मर (सम्वादवाहक) था। इसको आजीवन क़ैद की सज़ा सरदार भगतसिंह आदि के साथ दी जा चुकी है। वह अख़बारों का रिपोर्टर भी था। मैंने ख़्वाजा ताजदीन और ख़ाँ साहब सय्यद अहमद शाह को हरीराम पहलवान के बारे में बातें करते सुना था! वे कह रहे थे कि हिन्दू-मुस्लिम उपद्रवों के दिनों में तो हरीराम पहलवान मुसलमानों को मार कर बच गया है, अब इसे भी इस मामले में घसीट लो। महम्मददीन मल्लाह ने कभी मेरी पहचान नहीं की। 'जेल-एक्शन' के दिन मैं अपने भाई दीनानाथ और रूपचन्द को साथ लाया था। परन्तु मैंने उनको यह भेद नहीं बताया था कि हम लोग भगतसिंह आदि को छुड़ाने आए हैं। वहाँ पर हमारे साथ एक जेल के वार्डर ने ताश खेला था। उसने कभी मेरी पहचान नहीं की। पुलिस ने इक़बाली गवाह मदनगोपाल को शनाख़्त-परेड से पहले ही मुझे दिखा दिया था और मुझसे कहा था, कि इसे मैजिस्ट्रेट के सामने शनाख़्त करना और कहना कि इसे भी 'जेल-एक्शन' के दिन चन्द्रशेखर आज़ाद के साथ देखा था। 'जेल-एक्शन' के सम्बन्ध में जिस दूसरे सिक्ख को पुलिस ने मुझे दिखाया था, उसके सम्बन्ध में कहा था कि यह मोटर-ड्राइवर था। परन्तु वास्तव में वह व्यक्ति दोनों में से कोई भी नहीं था। इस सिक्ख को टहलसिंह कहते थे। मदनगोपाल और टहलसिंह को मुझे पुलिस ने एक ही दिन दिखाया था। शनाख़्त-परेड होने से पूर्व मुझे कई आदमी दिखाए गए थे। मुझे याद नहीं कि मैं कितने आदमियों को दिखाया गया था। ४ तारीख़ को मैं कई आदमियों को दिखाया गया था। माराजदीन को मैं नहीं जानता। परन्तु उसने मेरी पहचान की थी। मैंने उसे पहले कभी नहीं देखा था। मैं क़यास कर सकता हूँ कि मैं पहले माराज़दीन को दिखाया गया था। अक्टूबर के आरम्भ में मैं कई आदमियों को दिखलाया गया था। लेकिन मैं उन्हें देख सकता था। क्योंकि वे उस कमरे में थे, जिसके दरवाज़े पर चिकें लगी हुई थीं। उस दिन मुझे पुलिस-अफ़सर ने बुलाया। परन्तु जब मैं वहाँ गया तो उसने कहा कि मैंने आपको नहीं बुलाया, बल्कि राजेन्द्रपाल को बुलाया है। यह भी एक तरीक़ा मुझे उन्हें दिखाने का था।

इसके बाद अदालत लञ्च के लिए उठ गई। लञ्च के बाद गवाह ने कहा—जब मैं और हंसराज ख़ैरातीराम इक़बाली गवाह को देखने के लिए शाहदरा गए थे तो उसके साथ दो-तीन नौजवान थे। ख़ैरातीराम ने हंसराज

(शेष मैटर ८वें पृष्ठ के तीसरे कॉलम के नीचे देखिए)

कराची-कॉङ्ग्रेस के कुछ महत्वपूर्ण प्रस्ताव

प्रजा के प्राथमिक अधिकारों के सम्बन्ध में कॉङ्ग्रेस ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया है :—

"इस कॉङ्ग्रेस की यह सम्मति है, कि जनता को आर्थिक लूट से बचाने के लिए, राजनैतिक स्वाधीनता में करोड़ों ग़रीबों की आर्थिक स्वाधीनता भी सम्मिलित कर ली जाय, ताकि सर्वसाधारण यह समझ सके, कि कॉङ्ग्रेस का स्वराज्य उनके हित के लिए होगा। इसलिए यह आवश्यक है, कि कॉङ्ग्रेस की स्थिति इस सरलता से समझाई जावे, कि सर्वसाधारण भी उसे समझ सकें। अतः कॉङ्ग्रेस यह घोषणा करती है, कि वह जो भी शासन-विधान स्वीकार करेगी उसमें निम्नलिखित बातें होंगी, अथवा स्वराज्य-सरकार को इनके अनुसार कार्य करने की शक्ति दी जायगी :—

नागरिक अधिकार

(१) सर्वसाधारण के नागरिक अधिकार, जैसे (क) सभा करने की स्वतन्त्रता; (ख) लिखने और बोलने की स्वतन्त्रता (ग) विचार-स्वातन्त्र्य; (घ) किसी भी नौकरी, पेशे या व्यापार में किसी भी व्यक्ति पर धर्म या जाति के लिहाज़ से कोई रुकावट न होगी; (ङ) प्रत्येक नागरिक को समानाधिकार तथा सार्वजनिक कुओं, सड़कों और अन्य सार्वजनिक स्थानों के उपयोग करने की स्वतन्त्रता; (च) सार्वजनिक शान्ति के लिए आवश्यक नियन्त्रण के साथ, हथियार रखने और साथ ले चलने की स्वतन्त्रता।

(२) सरकार की ओर से धर्म में निष्पक्षता।

मज़दूर-हित

(३) कारख़ानों के मज़दूरों को आवश्यक वेतन, काम के निश्चित घण्टे; काम की उचित व्यवस्था; वृद्धावस्था, बीमारी और बेकारी के समय आर्थिक सङ्कट से बचाव।

(४) मज़दूरों को दासता से मुक्ति और दासता सम्बन्धी शर्तों से छुटकारा।

(५) स्त्री मज़दूरनियों का संरक्षण और विशेष कर प्रसव-काल में छुट्टी की व्यवस्था।

(६) स्कूल जाने योग्य लड़कों को फ़ैक्टरियों में नौकरी करने से रोकना।

(७) अपने हित के लिए मज़दूरों को सङ्घ बनाने का अधिकार, और झगड़ों को निबटाने के लिए पञ्चायतों की व्यवस्था करने का अधिकार।

किसान-हित

(८) मालगुज़ारी और लगान में आवश्यक कमी और बिना पैदावार की ज़मीन पर आवश्यकतानुसार कुछ काल के लिए लगान की माफ़ी।

(९) एक निश्चित आय के बाद कृषि-सम्बन्धी आय पर इनकम टैक्स लगाना।

(१०) उत्तराधिकार सम्बन्धी सम्पत्ति पर टैक्स।

मताधिकार

(११) प्रत्येक बालिग़ को मताधिकार।

अनिवार्य-शिक्षा

(१२) अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा।

सैनिक व्यय

(१३) सैनिक व्यय, वर्तमान सैनिक व्यय का कम से कम आधा होना चाहिए।

शासन व्यय

(१४) दीवानी विभाग में व्यय और वेतन काफ़ी घटाया जाय। किसी भी मुलाज़िम को—विशेष तौर पर रक्खे गए विशेषज्ञों को छोड़ कर—५००) से अधिक मासिक वेतन न मिले।

विदेशी वस्त्र

(१५) देश से विदेशी सूत और विदेशी कपड़े को निकाल कर देशी कपड़े का संरक्षण।

मादक द्रव्य

(१६) मादक द्रव्यों का पूर्ण निषेध।

नमक पर ड्यूटी नहीं

(१७) नमक पर कोई ड्यूटी न रहे।

विनिमय दर

(१८) विनिमय दर निश्चित करना, जिससे देशी कारबार की उन्नति हो और जनता को सहायता मिले।

(१९) उद्योग-धन्धों पर राज्य का नियन्त्रण।

(२०) ब्याज सम्बन्धी कारबार पर नियन्त्रण।

* * *

कॉङ्ग्रेस की विषय निर्वाचिनी समिति ने स्वर्गीय श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की असामयिक मृत्यु पर निम्नलिखित प्रस्ताव पास कर शोक प्रकट किया :—

"युक्त प्रान्त की कॉङ्ग्रेस कमिटी के सभापति श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु पर कॉङ्ग्रेस शोक प्रकट करती है और उनके कुटुम्ब के साथ आदरपूर्वक सहानुभूति प्रकट करती है।"

* * *

सभापति ने कानपुर के दङ्गे के सम्बन्ध में निम्नलिखित प्रस्ताव उपस्थित किया :—

"यह कॉङ्ग्रेस कानपुर की दुर्घटना पर दुःख प्रकट करती है और मृतकों तथा आहतों के कुटुम्बियों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करती है।"

* * *

सरदार भगतसिंह और उनके साथियों की लाशों के टुकड़े-टुकड़े किए जाने के सम्बन्ध में इस बात की जाँच के लिए कार्यकारिणी समिति ने निम्न-लिखित प्रस्ताव पास किया है :—

"अख़बारों में इस आशय की ख़बर छपी है, कि स्वर्गीय सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० सुखदेव की लाशों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले गए थे और इस प्रकार उनके मृत शरीर का अपमान किया गया था।" जन-साधारण में इस समाचार से अत्यन्त असन्तोष फैला है। यह कार्यकारिणी समिति निम्न-लिखित सज्जनों को, उपर्युक्त बातों की जाँच के लिए नियुक्त करती है :—

पं० सान्तनम्, श्री० अब्दुल कादिर कसूरी, डॉ० सत्यपाल, श्री० बरकत अली, श्री० जीवनलाल कपूर और श्री० हंसराज।

राष्ट्रीय पताका

नई कार्यकारिणी समिति ने निम्न-लिखित प्रस्ताव पास किया है :—

"वर्तमान राष्ट्रीय पताका को जनसाधारण आदर की दृष्टि से देखता है, पर तो भी कुछ लोग उसके तीन रङ्गों पर आपत्ति करते हैं। इस आपत्ति का कारण साम्प्रदायिक भाव ही है। यह कार्यकारिणी समिति इस प्रस्ताव के द्वारा इस विवाद के निबटारे के लिए और कॉङ्ग्रेस के प्रति यह सिफ़ारिश करने के लिए, कि राष्ट्रीय पताका कैसी होनी चाहिए, निम्न-लिखित सज्जनों को नियुक्त करती है :—

सरदार वल्लभभाई पटेल, पं० जवाहरलाल नेहरू, डॉ० पट्टाभी सीतारामय्या, श्री० एस० एम० हार्डिकर, श्री० डी० बी० केलकर, मास्टर तारासिंह और मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद।

* * *

कॉङ्ग्रेस की विषय निर्वाचिनी समिति ने विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के सम्बन्ध में निम्न-लिखित प्रस्ताव पास किया है :—

(१) पिछले १० वर्षों में, गाँवों में कार्य करने से यह बात स्पष्टतया विदित हुई है, कि जनता की भयङ्कर दरिद्रता का कारण उनकी बेकारी, और बेकार समय के लिए कोई रोज़गार का न होना ही है। चर्ख़ा ही सर्वत्र इस कमी को दूर कर सकता है। यह देखा गया है, कि चर्ख़ा और खद्दर का त्याग करने पर लोग या तो विदेशी वस्त्र ख़रीदते हैं या देशी मिलों के बने कपड़े ख़रीदते हैं। इस प्रकार जनता की दो प्रकार से हानि होती है, एक तो वे मेहनत करने और उसका फल पाने से वञ्चित रह जाते हैं और दूसरे कपड़े का मूल्य उन्हें देना पड़ता है।

(२) इन दोनों प्रकार के नुक़सानों से बचने का एक ही उपाय है, कि विदेशी कपड़े और सूत का बहिष्कार किया जाय, और खद्दर को अपनाया जाय। देशी मिल के कपड़ों का उपयोग आवश्यकता पड़ने पर ही किया जाय।

(३) यह कॉङ्ग्रेस इसलिए जनता से अनुरोध करती है, कि वह विदेशी कपड़े न ख़रीदे; और विदेशी कपड़े के व्यापारियों से उसका अनुरोध है, कि वे उस व्यापार को—जिससे करोड़ों ग़रीबों को नुक़सान पहुँचता है, छोड़ देवें।

(४) यह कॉङ्ग्रेस सभी कॉङ्ग्रेस-संस्थाओं तथा उससे सम्बन्ध रखने वाली संस्थाओं को आदेश देती है, कि वे खादी का प्रचार कर बहिष्कार आन्दोलन को प्रोत्साहित करें।

(५) यह कॉङ्ग्रेस देशी राज्यों से अनुरोध करती है, कि वे रचनात्मक कार्यों में हाथ बटावें और विदेशी कपड़े तथा विदेशी सूत को अपने राज्य में आने से रोकें।

(६) यह कॉङ्ग्रेस देशी मिल के मालिकों से अनुरोध करती है, कि वे इस महान रचनात्मक और आर्थिक आन्दोलन में नीचे लिखे उपायों द्वारा सहायता पहुँचावें—(१) हाथ के काते हुए सूत का उपयोग कर और इस प्रकार ग्राम्य उद्योग में नैतिक सहायता पहुँचा कर; (२) ऐसे कपड़ों का बनाना बन्द कर, जिससे खद्दर को नुक़सान पहुँचने की सम्भावना है, और इसलिए वे अखिल भारतीय चर्ख़ा समिति के साथ सहयोग कर; (३) अपनी बनाई वस्तुओं का दाम कम से कम रख कर; (४) विदेशी सूत, रेशम या कृत्रिम रेशम का बहिष्कार कर; (५) विदेशी कपड़े के व्यापारियों के विदेशी माल से अपने स्वदेशी का विनिमय कर और उस विदेशी माल को विदेश में भेज कर; (६) चूँकि कॉङ्ग्रेस विशेषकर ग़रीब मज़दूरों का हित चाहती है, इसलिए मिल-मालिकों को चाहिए कि वे मिल में काम करने वाले मज़दूरों की उन्नति करें और उनके हृदय में यह भाव उत्पन्न करें, कि मिल-मालिक उनके सुख और दुःख दोनों में सहायक हैं।

(७) इस कॉङ्ग्रेस का बड़ी-बड़ी विदेशी कम्पनियों के प्रति यह विचार है, कि यदि वे भारतीय बहिष्कार की सरलता और आवश्यकता को स्वीकार करें और उस विदेशी व्यापार से असन्तोष प्रकट करें, जिससे भारतीय जनता को आर्थिक हानि

सहनी पड़ती है, तो इससे अन्तर्जातीय भ्रातृभाव में वृद्धि होगी और व्यापारिक नियमों में भी क्रान्ति उपस्थित हो जायगी।

कॉङ्ग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने निम्न-लिखित ३ प्रस्ताव पास किए हैं :—

(१) यह कॉङ्ग्रेस दक्षिणी अफ़्रिका और पूर्वी अफ़्रिका में बसने वाले भारतीयों की स्थिति से सम्बन्ध रखने वाली घटनाओं को भयपूर्ण दृष्टि से देखती है। जिस क़ानून को पास करने का विचार किया जा रहा है, वह की हुई प्रतिज्ञाओं के बिल्कुल विपरीत है, और कुछ अंशों में वह क़ानूनी अधिकारों पर भी हस्तक्षेप करता है। किन्तु भारत अभी पराधीन है, इसलिए यह कॉङ्ग्रेस उन भारतीयों के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के सिवा और कुछ करने में असमर्थता का अनुभव करती है, तो भी यह कॉङ्ग्रेस वहाँ की सरकारों से अनुरोध करती है कि वे उन भारतीयों के प्रति न्याय का वही बर्ताव करें, जिसकी आशा वे अपने जाति के लिए, स्वतन्त्र-भारत से करते हैं। यह कॉङ्ग्रेस श्री० सी० एफ़० एण्ड्र्यूज़ और पं० हृदयनाथ कुँजरू को उन भारतीयों के लिए निस्स्वार्थ परिश्रम करने के लिए धन्यवाद देती है।

* * *

(२) यह कॉङ्ग्रेस उन सभी कार्यकर्ताओं को बधाई देती है, जिन्होंने गत भद्र अवज्ञा आन्दोलन में बड़े-बड़े कष्टों को झेला है, जिन्हें लाठी, गोली, आदि की चोट आई हैं, जिन्होंने घर छोड़ दिया है और जिनकी जायदादें ज़ब्त कर ली गई हैं। यह कॉङ्ग्रेस विशेषकर उन भारतीय महिलाओं को बधाई देती है, जिन्होंने हज़ारों की संख्या में देश के स्वातन्त्र्य-संग्राम में हाथ बटाया है। यह कॉङ्ग्रेस उन्हें विश्वास दिलाती है, कि उसे ऐसा कोई भी शासन-विधान स्वीकार नहीं होगा, जिसमें वोट सम्बन्धी अधिकारों के सम्बन्ध में स्त्री-पुरुष सम्बन्धी कोई भेदभाव पैदा किया गया हो।

(३) यह कॉङ्ग्रेस गत १२ महीनों में मादक द्रव्यों के निषेध के सम्बन्ध में जनता की प्रत्यक्ष उन्नति पर सन्तोष प्रकट करती है, और सभी कॉङ्ग्रेस संस्थाओं को आदेश देती है, कि वे नए उत्साह से इस आन्दोलन को जारी रक्खें। यह कॉङ्ग्रेस आशा करती है कि महिलाएँ भी लोगों से मादक वस्तुओं को छुड़ावेंगी, जिनसे शरीर और आत्मा दोनों को हानि पहुँचती है।

* * *

बर्मा के सम्बन्ध में कॉङ्ग्रेस में निम्न-लिखित प्रस्ताव पास किया गया है :—

"कॉङ्ग्रेस यह स्वीकार करती है, कि बर्मा-निवासियों को यह अधिकार है, कि वे चाहें तो बर्मा को भारत के साथ रक्खें और भारत के साथ उसके स्वराज्य के लिए दावा करें अथवा उसे भारत से पृथक कर लें। भारत के साथ रहने पर भी, बर्मा को यह अधिकार होगा, कि वह जब चाहे, भारत से अलग हो जाय। कॉङ्ग्रेस भारत-सरकार की, बर्मा सम्बन्धी नीति की निन्दा करती है। बर्मा के निर्वाचित प्रतिनिधियों को अपने विचार प्रकट करने का अवसर न देकर, वह उनकी इच्छा के विरुद्ध बर्मा को भारत से पृथक करने जा रही है। मालूम होता है, कि यह प्रयत्न जान-बूझ कर इसलिए किया जा रहा है कि ब्रिटेन का आधिपत्य बर्मा पर सदा बना रहे, और अङ्गरेज़ उसे साम्राज्यवाद का अड्डा बना सकें। यह कॉङ्ग्रेस ऐसी किसी भी नीति के विरुद्ध है, जिससे बर्मा की पराधीनता सदा बनी रहे, और शासक-जाति को अनुचित लाभ हो। कॉङ्रेस की सम्मति में ऐसा होना पूर्व के अन्यान्य राष्ट्रों के लिए भी हानिकर होगा। कॉङ्रेस ज़ोर देकर कहती है, कि बर्मा-सरकार को जो असाधारण अधिकार दिए गए हैं, वे लौटा लिए जावें, और वह घोषणा भी लौटा ली जाय, जिसके अनुसार बर्मा की प्रमुख राष्ट्रीय संस्थाएँ ग़ैर-क़ानूनी क़रार दी गई हैं; जिससे वहाँ फिर शान्तिपूर्ण वातावरण उत्पन्न हो, और बर्मा वाले भविष्य के सम्बन्ध में विचार कर सकें।"

* * *

कराची कॉङ्ग्रेस के सम्बन्ध में कुछ नेताओं की सम्मतियाँ

डॉक्टर सत्यपाल

कराची कॉङ्ग्रेस बहुत सफल हुई है। महात्मा गाँधी का इस पर पूर्ण प्रभाव रहा है। सरदार भगतसिंह और उनके साथियों की फाँसी हो जाने से, सारे कॉङ्ग्रेस में गम्भीर शोक छाया हुआ था और प्रत्येक व्यक्ति दुखित दिखाई पड़ता था।

इस कॉङ्ग्रेस के प्रस्ताव बड़े महत्वपूर्ण हैं। गाँधी-इर्विन के समझौते, प्राथमिक अधिकारों की घोषणा, अन्तर्राष्ट्रीय नीति की घोषणा आदि से सम्बन्ध रखने-वाले प्रस्ताव विशेष महत्व के हैं। इतने थोड़े समय में और ऐसी गम्भीर परिस्थिति में, इतना अच्छा प्रबन्ध करने के कारण स्वागतकारिणी समिति बधाई की पात्र है।

डॉक्टर सत्यपाल

महात्मा गाँधी ने एक बार फिर अपना प्रभाव जमा लिया है। इतना ही नहीं, उनका प्रभाव यहाँ तक लोगों पर पड़ा है कि जो कल तक उनका विरोध करते रहे, वे अब शान्त हैं और कुछ हालतों में उन्होंने उनके सामने मस्तक झुका दिया है।

सरदार शार्दूलसिंह

कॉङ्रेस के गत अधिवेशन में, उदारतापूर्ण प्रकृत बुद्धि ने अधीर और व्यर्थ आलोचना के ऊपर विजय प्राप्त की है। महात्मा गाँधी सत्य और अहिंसा के अवतार हैं। भारतवासियों के हृदय में उनके प्रति एक अन्धविश्वास उत्पन्न हो गया है; कराची अधिवेशन हमें यह बतलाता है, कि जनता का यह अन्ध-विश्वास किसी कुपात्र में नहीं है। इस कॉङ्रेस में गाँधी जी ने अपने को, न केवल सत्य और अहिंसाप्रिय सिद्ध किया है, बल्कि उन्होंने यह भी सिद्ध किया है कि वे बड़े बुद्धिमान पुरुष हैं। ज़रा भी न दबने वाले विरोधियों को भी उनके गम्भीर और परिष्कृत बुद्धि के सामने झुकना पड़ता है।

सरदार मङ्गलसिंह

कराची कॉङ्रेस ने निश्चय ही यह सिद्ध कर दिया है कि गाँधी कॉङ्ग्रेस हैं और कॉङ्ग्रेस गाँधी है। इस कॉङ्रेस से ये तीन बातें सिद्ध हुई हैं :—

(१) देश को महात्मा जी के नेतृत्व पर पूर्ण विश्वास है।

(२) कॉङ्रेस कभी ब्रिटिश साम्राज्यवादी सिद्धान्तों के सामने दब नहीं सकती।

(३) कॉङ्रेस सदा जनता का साथ देगी, और कॉङ्रेस का राज्य ग़रीबों और दलितों का राज्य है।

डॉ० आलम

कम से कम एक बात में कराची कॉङ्ग्रेस की सफलता अद्वितीय है। देश की वर्तमान परिस्थिति में प्रायः प्रत्येक विचार के लोगों ने महात्मा गाँधी के नेतृत्व को स्वीकार किया है। प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव कर सकता था, कि कॉङ्ग्रेस ने जो कुछ भी कहा है, वह भारत की भलाई के लिए और कॉङ्ग्रेस के मुख थे महात्मा जी। महात्मा जी एक प्रकार से भारत के सम्राट कहे जा सकते हैं। किन्तु हाँ, यह उनके लिए प्रशंसा की बात है, कि उन्होंने दूसरों के विचारों पर भी बराबर ध्यान दिया, यद्यपि वे उनके विचारों को अपने साँचे में ढालने में सदा सफल रहे।

महात्मा जी ने जो स्थान और सफलता प्राप्त की है, वह उनके योग्य ही है। वास्तव में उन्होंने ही यह संग्राम छेड़ा था, और उन्हें ही इसके अन्त करने का भी अधिकार था।

भगतसिंह और उनके साथियों की फाँसी की ख़बर ने कॉङ्ग्रेस में ऐसा तहलका मचा दिया था, कि कभी-कभी तो यह उत्तेजना दुर्दमनीय जान पड़ती थी। किन्तु अन्त में अहिंसात्मक भावों की ही विजय हुई। जातीय भावों पर जो आघात पहुँचा है, उसका सदुपयोग किया गया है।

स्वागतकारिणी समिति का प्रबन्ध सराहनीय था। मुझे एक अख़बार में यह पढ़ कर बहुत आश्चर्य हुआ, कि स्वागतकारिणी का प्रबन्ध इतना ख़राब था, कि कुछ प्रतिनिधियों को दूसरी जगह ठहरना पड़ा। मैं भी उन लोगों में से था जो कॉङ्ग्रेस कैम्प से बाहर ठहरे हुए थे। किन्तु एक व्यक्तिगत सम्बन्ध के कारण ही मैं एक सज्जन के यहाँ ठहरा हुआ था, स्वागतकारिणी के कुप्रबन्ध के कारण नहीं। मैं दावे के साथ कहता हूँ, कि इतने थोड़े समय में स्वागतकारिणी ने जैसा प्रबन्ध किया था, उससे बढ़ कर सुप्रबन्ध नहीं हो सकता था। इस सम्बन्ध में वहाँ की म्युनिसिपैलिटी का नाम भी उल्लेख योग्य है।

* * *

भारत के स्वतन्त्र होते ही संसार से युद्ध का ख़ात्मा हो जायगा

सीमा-प्रान्त के लोग म० गाँधी के झण्डे के नीचे रहेंगे

ग़ुलामों का कोई मज़हब नहीं :: हिन्दू मुसलमान क्यों लड़ते हैं ?

सीमा-प्रान्त के 'गाँधी' और भूतपूर्व राष्ट्रपति के महत्वपूर्ण भाषण

कराची कॉङ्ग्रेस ने अपने अन्तिम अधिवेशन में सीमान्त प्रदेश के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास किया, वह तथा उसके सम्बन्ध में पण्डित जवाहरलाल नेहरू और ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ने जो भाषण दिए थे, उसका सारांश नीचे दिया जाता है :—

प्रस्ताव

"यह कॉङ्ग्रेस घोषित करती है कि भारतीय जनता का भारत की सीमा पर बसने वाले लोगों और देशों से कोई झगड़ा नहीं है और उनसे वह मित्रतापूर्ण सम्बन्ध रखना चाहती है। कॉङ्ग्रेस, सीमा प्रान्त में सरकार की हमलावर नीति को और सीमा प्रान्त की जनता की स्वाधीनता नष्ट करने वाले साम्राज्यवादी उपायों को नापसन्द करती है। कॉङ्ग्रेस की राय है कि सरकार इस नीति में भारतीय सेना और धन का उपयोग न करे और सरहद्दी जातियों की सीमा से सेना हटा ले।"

भूतपूर्व राष्ट्रपति का भाषण

इस प्रस्ताव को कॉङ्ग्रेस के सामने उपस्थित करते हुए पण्डित जवाहरलाल जी नेहरू ने कहा :—

"सीमान्त प्रदेश पर जो सेना रक्खी गई है, उसका मतलब हम लोगों को यह विश्वास दिलाना है, कि सरहद पर एक भारी ख़तरा है और वहाँ के लोग ऐसे जङ्गली हैं कि मौक़ा पाते ही हमें खा जायँगे। बाज़ लोगों की ऐसी ही धारणा है। परन्तु वास्तव में ऐसी धारणा एक कायरता है। हमें विचारना चाहिए, कि ऐसा क्यों किया जाता है और हमें अपने पड़ोसियों के सम्बन्ध में जानने की आवश्यकता है। पिछले ज़माने में जो लड़ाइयाँ हुई हैं, उनमें काम तो हम आए और फ़ायदा दूसरों ने उठाया। क्योंकि हमने प्राण गँवाए, रुपए बरबाद किए और अन्त में प्राप्त हुई बदनामी! परन्तु यदि भारत स्वतन्त्र हो तो ऐसी लड़ाइयाँ असम्भव हो जायँगी। क्योंकि हम अपने देश में स्वतन्त्र रहकर ही प्रसन्न रह सकते हैं और अपनी मित्रता भी क़ायम रख सकते हैं। जो लड़ाइयाँ पिछले ज़माने में हुईं, वह हमने दूसरों के लिए कीं। परन्तु अब तो हम समझदार हो गए हैं। हमें अपने पड़ोसियों से कोई भय नहीं होना चाहिए। स्वतन्त्र भारत में किसी पड़ोसी के साथ हमारी लड़ाई न होगी। परन्तु यदि कोई हम पर चढ़ाई करेगा तो हम अवश्य ही आत्म-रक्षा करेंगे। उस समय हमारी यही नीति होगी। जैसे अन्य देश वाले अपने यहाँ स्वतन्त्र हैं, वैसे ही हम भी अपने देश में स्वतन्त्र रहेंगे। स्वतन्त्र इलाक़ों में अङ्गरेज़ों का हस्तक्षेप अनुचित है और अङ्गरेज़ी सरकार की अग्रसर कही जाने वाली नीति ही इसके लिए ज़िम्मेदार है। सीमान्त का इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है, जिनमें भारत से उनका सम्बन्ध तोड़ने के लिए चेष्टाएँ हुई हैं। अपने भूतकालीन अनुभवों को ध्यान में रखते हुए, यह आवश्यक है कि यदि सीमाप्रान्त के अधिवासियों में कोई भ्रमात्मक धारणा उत्पन्न हो गई हो, तो उसे दूर कर दिया जाए और उनके प्रति मित्रता तथा सदिच्छा के भाव प्रकट कर दिए जाएँ।

सीमा प्रान्त के 'गाँधी' का भाषण

इसके बाद सीमा प्रान्त के गाँधी ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ने प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा :—

"सीमान्त की वास्तविक घटनाओं के बारे में अङ्गरेज़ी सरकार भारतवासियों को हमेशा अन्धकार में रखती है। गत अप्रैल को पेशावर वाली घटना का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा, कि पेशावर और चारसद्दा की भीषण दुर्घटनाओं के बाद ही अफ़्रीदियों ने महात्मा गाँधी और मेरे छुटकारे की माँग की थी। सरकार ने जब उनकी प्रार्थनाएँ अनसुनी कर दीं, उनके घरों पर तोपों का हमला करके उन्हें तबाह कर दिया, तो उन्होंने विशुद्ध आत्म-रक्षा के भावों से प्रेरित होकर ही

सीमा-प्रान्त के गाँधी ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

ऐसा किया। अब वह ज़माना चला गया, कि अङ्गरेज़ सरकार अफ़्रीदियों का भय दिखा कर भारत को उनके विरुद्ध किए रहती थी। आज पठानों का महात्मा गाँधी और उनके आन्दोलन में पूर्ण विश्वास है। मैं महात्मा गाँधी, तथा कॉङ्ग्रेस को यह विश्वास दिलाता हूँ, कि यदि भविष्य में फिर सत्याग्रह आन्दोलन छिड़ा तो भारत को स्वराज्य दिलाने के उद्योग में अफ़्रीदी कभी पीछे नहीं रहेंगे। उस समय हम दिखा देंगे कि हम कौन हैं और क्या कर सकते हैं।

"हमारे इलाक़े के लोग सब से पहले दमन के शिकार हुए, जबकि हम आपके मुल्क की आज़ादी के साथ सहानुभूति दिखाने के लिए अग्रसर हुए। मैं आज साफ़ कह देना चाहता हूँ, कि हम भारतवर्ष को स्वतन्त्र देखना चाहते हैं। और हम इसके लिए कौन्सिलों की जगहें नहीं माँगेंगे, वरन् गाँधी जी के नेतृत्व में इस लड़ाई में भाग लेंगे। हम लोग तो प्रेम और मोहब्बत के मतवाले हैं। हमें प्रेम से हर कोई जीत सकता है। मैं महात्मा जी को यक़ीन दिलाता हूँ, जब दूसरी बार आप लड़ाई छेड़ेंगे तो हम आपका साथ देंगे।

"मुझे अफ़सोस है कि हमारे मुल्क में मामूली-मामूली बातों पर साम्प्रदायिक झगड़े उठाए जाते हैं। पीपल के पत्ते के लिए और मसजिद के सामने बाजे बजने से लोग भड़क जाते हैं। मैं तो यह कहता हूँ, कि ग़ुलामों का कोई मज़हब नहीं हो सकता। यह तो सब का एक सम्मिलित देश है, हमको इसकी सेवा करने के लिए किसी पर एहसान नहीं करना चाहिए। बल्कि अपना फ़र्ज़ पूरा करना चाहिए।"

इसके बाद आपने महात्मा गाँधी से अनुरोध किया कि वे केवल इस प्रस्ताव को पास ही न करावें, बल्कि इस पर पूरा अमल करावें।

इसके बाद आपने इस बात पर अफ़सोस ज़ाहिर किया, कि महात्मा गाँधी जी को सीमान्त प्रदेश में नहीं जाने दिया गया। अफ़रीदियों ने महात्मा गाँधी को इसलिए बुलाया था, कि वह आकर देख लें, कि भारत को दासता में रखने के लिए किस तरह लाखों रुपए नष्ट किए जाते हैं। अफ़रीदियों ने महात्मा जी को पञ्च मुक़र्रर किया था और कहा था कि यदि वे हमें निर्दोष पावें तो सरकार पर इस बात का दबाव डालें, कि वह हमें स्वतन्त्र कर दे। सीमान्त तथा इसके आस-पास के देशों में केवल महात्मा गाँधी ही शान्ति स्थापित करा सकते हैं और इस लाखों रुपए का ख़र्च घटाने में सहायक हो सकते हैं।

* * *

(५वें पृष्ठ का शेषांश)

को रुपए नहीं दिए। यह सब बातें ग़लत हैं कि हमने रावलपिण्डी में अभियुक्त किशनगोपाल के घर पर गनकॉटन तैयार किया था। मैं शेख़ूपुरा भी नहीं गया और न वहाँ बम मारा था। यह बिल्कुल ग़लत है। मुझे पता नहीं कि पुलिस ने क्यों मेरे बयान में ये बातें जोड़ दीं। नारायणी देवी, रामनाथ और बुड्ढे को मैं पहले दिखाया गया था। मैं शेख़ूपुरा के किसी आदमी को नहीं जानता। मुझे पता नहीं कि शेख़ूपुरा में बम मारने का काम किसे सौंपा गया था? मैं १६ जून को रावलपिण्डी से लाहौर आ गया और अभियुक्त रूपचन्द को १६, १७, १८ और १९ जून को लाहौर में ही देखता रहा। १८ जून को सुबह क़रीब आठ बजे मैं जहाँगीरीलाल के मकान पर गया।

इसके बाद आज के लिए अदालत उठ गई।

* * *

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह सम्बन्धी प्रस्ताव का समर्थन

भूतपूर्व राष्ट्रपति का वक्तव्य

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह सम्बन्धी प्रस्ताव उपस्थित करने के अवसर पर पं० जवाहरलाल नेहरू ने अपने भाषण में कहा :—

"जब अहिंसा के पुजारियों ने भगतसिंह की कहानी को सुना तो वे भी उनकी वीरता की सराहना किए बिना न रह सके। व्यक्तिगत रूप से मुझे इस प्रस्ताव पर कुछ कहते सङ्कोच सा होता है। संसार में न जाने कितने मनुष्य मरे, किन्तु भगतसिंह की स्मृति प्रत्येक की सम्पत्ति है। मैं भगतसिंह को अच्छी तरह जानता हूँ। मैं उनके उस उत्साह से भी परिचित हूँ, जो उनका एक विशेष गुण था। यह गुण उनमें ठीक उसी प्रकार से था, जैसे अँधेरी रात में एक प्रकाशमान तारा हो। आज संसार भगतसिंह के समान मर्दों और बच्चों की अतुलनीय वीरता और प्रगाढ़ देश-भक्ति के कार्यों को देख कर चकित हो गया है।

भूतपूर्व राष्ट्रपति पण्डित जवाहरलाल नेहरू

"भगतसिंह किस प्रकार गिरफ़्तार किए गए, उनके साथ कैसा सलूक किया गया, और उन्हें किस प्रकार फाँसी दी गई, और वायसराय ने किस प्रकार उनकी मृत्यु के आज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर किया, यह सब बातें आपको मालूम हैं।

"आज मैं आपको केवल यही बतलाना चाहता हूँ, कि भगतसिंह उन लोगों में से थे, जिनकी क़ुर्बानी अद्वितीय है। अनेकों ने क़ुर्बानियाँ की हैं, किन्तु भगतसिंह की क़ुर्बानी सर्वोच्च है। मेरा अनुमान है कि सारे देश में, गाँव-गाँव में बच्चे ध्यानपूर्वक भगतसिंह की कहानी को सुनते होंगे।

"आज हम एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पर विचार करने के लिए इकट्ठे हुए हैं, मनोरञ्जन के लिए नहीं। हम अपने वर्तमान कार्यों द्वारा तथा अपने उस मार्ग के द्वारा, जिसे हमने भविष्य के लिए निश्चित किया है, अपने भाग्य का निर्णय करने जा रहे हैं। सम्भव है कि भगतसिंह ने जिस मार्ग का अवलम्बन किया था, हमारा मार्ग उससे भिन्न हो, किन्तु एक बात पर आप अवश्य सहमत होंगे, कि हम लोग उस ढङ्ग की वीरता को अपना सकते हैं। यह बात सम्भव है। आज हम लोगों ने गाँधी जी के मार्ग को चुना है, और आप विश्वास करें, हम लोगों ने काफ़ी सफलता भी प्राप्त कर ली है। आज मैं सच्चे दिल से आपके सामने कह रहा हूँ। मैं कोई बात छिपा नहीं रहा हूँ। मैं यह नहीं कहता कि आप अवश्य हथियार रक्खें, आप अवश्य गोली चलावें अथवा किसी की हत्या करें, या हिंसा का कोई कार्य करें। मेरा यह विश्वास है कि प्रत्येक मनुष्य का यह अधिकार है कि वह इसका निर्णय करे कि उसे क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। किन्तु इस समय हम जो कुछ भी करें, साथ मिल कर करें। हमें यह याद रखना चाहिए कि हम लोगों का एक ही शत्रु है, और यदि हम अहिंसा के मार्ग से हट जावें, तो इसका अर्थ यह होता है कि हम आपस में ही झगड़ रहे हैं।

"मैं फिर आपसे कहता हूँ कि मैं आपसे कोई बात छिपा नहीं रहा हूँ। मैंने दिल खोल कर आपके सामने रख दिया है। हम अहिंसा के मार्ग पर चल चुके हैं। अब भी हमारा यही ध्येय होना चाहिए। चाहे जो कुछ हो, हमारा मार्ग अहिंसा का है, और यही रहेगा।

"मित्रो, मैं आपको याद दिलाना चाहता हूँ, कि हमें लम्बी यात्रा करनी है। भगतसिंह और विद्यार्थी जी के समान अनेकों मनुष्य इस यात्रा में हमसे बिछुड़ गए। इस लम्बी यात्रा में उन लोगों का जीवन उस शिला-खण्ड के समान है, जो लोगों को मार्ग की दूरी बताया करता है। अभी अनेकों हमसे अलग होंगे। हमारा देश, अब भी गुलामों का देश है। जब हम स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए कमर कस कर तैयार हैं, तो हमारा त्याग भी महान होना चाहिए। इसलिए हमें चाहिए कि हम अपने उद्देश्य को अच्छी तरह समझ लें। जिस मार्ग का हम लोगों ने अवलम्बन किया है, उससे हटने का कोई प्रश्न नहीं उठना चाहिए।"

* * *

महामना मालवीय जी का वक्तव्य

महामना पं० मदनमोहन मालवीय ने सरदार भगतसिंह-सम्बन्धी प्रस्ताव का समर्थन करते हुए अपने भाषण में कहा :—

"मेरा कार्य बहुत ही कठिन है। मैंने अनेक कॉङ्ग्रेसों में भाषण दिया है, किन्तु कभी ऐसा शोकजनक प्रस्ताव मेरे सामने नहीं आया। पं० जवाहरलाल का भाषण आप लोगों ने सुना है। आप लोगों से, विशेषकर नवयुवकों से, यह कह देना मेरा कर्तव्य और अधिकार है, कि मैं इस प्रस्ताव पर अवश्य कुछ कहूँगा। आह, यह बहुत सत्य है, और यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम उस युवक को नहीं बचा सके। जो कुछ हो, यह प्रस्ताव जिसे स्वयं गाँधी जी ने तैयार किया है, और जिस पर हम लोगों ने—जिनके बाल देश की सेवा में सफ़ेद हो गए हैं—यहाँ अच्छी तरह विचार कर लिया है, आपके सामने है। मैं जानता हूँ कि वे तीनों युवक जिन्हें फाँसी दी गई है, नई पीढ़ी के सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि थे। उन लोगों ने जाति की इज़्ज़त की रक्षा की है। किन्तु हाँ, यह याद रखिए, उनका मार्ग हिंसात्मक था। उनकी देश-भक्ति उच्चकोटि की थी। जब मुझे याद आती है, कि १९१४ से हमारे कुछ वीर नौजवान कैसे इसी तरह अदृश्य हो गए, तो मेरा हृदय शोक से उमड़ पड़ता है।

"प्यारे भाइयो, हमारे अहिंसा की स्कीम में हिंसा को छोड़ कर, प्रत्येक वस्तु के लिए स्थान है। इसमें वीरता के लिए स्थान है, देश-प्रेम के लिए स्थान है और उच्च से उच्च त्याग के लिए स्थान है। आज भगतसिंह की कहानी घर-घर में कही जाने वाली कहानी है, क्योंकि जिस स्वतन्त्रता का वह स्वप्न देखता था, और जिसे प्राप्त करने के लिए उसने दृढ़-सङ्कल्प कर लिया था, उसी के लिए उसने अपना जीवन विसर्जन किया है।

पण्डित मदनमोहन मालवीय

प्यारे भाइयो, उसी स्वतन्त्रता की कल्पना हम अपने आन्दोलन में नहीं कर सकते। आप यह याद रक्खें कि भारतवर्ष ने आज महात्मा जी को अपना नेता चुना है। किन्तु उनका नेतृत्व और लॉर्ड इर्विन जैसे पुरुष भी भगतसिंह को नहीं बचा सके। ऐसा जान पड़ता है कि ईश्वर ने हम लोगों को इसके द्वारा चेतावनी दी है। भगतसिंह अपनी जान हथेली पर रखता था। किन्तु उसके इस त्याग के द्वारा भी अपने ध्येय को हम नहीं प्राप्त कर सके। वायसराय ने स्वयं कहा है :—"इस प्रकार के मामलों में सम्राट की दया प्राप्त करने की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।" हमारा देश कुछ अधिक चाहता भी नहीं था। मुझे विश्वास है कि यदि घटनाओं का स्वरूप कुछ दूसरे ढङ्ग का होता तो इस क्रान्त जाति के लिए शान्ति स्थापित करना सम्भव था, किन्तु घटनाओं का स्वरूप कुछ दूसरा ही है। महात्मा गाँधी जी, जिनके समान पुरुष कई शताब्दियों तक नहीं उत्पन्न हुआ है; जो आज संसार में बेजोड़ हैं, वायसराय भी जिनकी बातें प्रेम तथा ध्यानपूर्वक सुनते थे, वह भी उन तीनों युवकों को नहीं बचा सके। जब मैंने इस असहायावस्था का अनुभव किया तो मेरे ऊपर मानो वज्रपात हो गया। मैं एक क्षण के लिए कल्पना करता हूँ कि यदि इङ्गलैण्ड में तीन अङ्गरेज़ बच्चों को इसी तरह फाँसी दे दी गई होती तो क्या होता। इङ्गलैण्ड क्या कहता? आज हमारा यह कर्तव्य है कि हम अपने भेदभाव को भुला दें। इसलिए भाइयो

आप महात्मा गाँधी और कॉङ्ग्रेस के बतलाए हुए मार्ग पर चलें। इसके विषय में आप ऐसे ही सोचें जैसे आप नित्य भोजन करते हैं। मुझे विश्वास है, आप उन वस्तुओं को अवश्य प्राप्त करेंगे, जिनकी कामना आप करते हैं। भगतसिंह चला गया। मुझे विश्वास है कि उसका भस्म जो सतलज और रावी में डाल दिया गया है, जल में विलुप्त हो गया है। किन्तु भगतसिंह की आत्मा जीवित है। उसका देश-प्रेम, उसका साहस, उसके भीतर की वह आग, उसके आत्मा की पवित्रता, ये सभी मार्ग-प्रदर्शक अग्निशिखा के समान आपके सामने प्रज्वलित हो रहे हैं। नवयुवको, प्रतिज्ञा करो कि तुम कभी भगतसिंह को नहीं भूलोगे।

"इस विशाल जन-समूह को, स्वयं भगतसिंह के पिता को देख कर मेरे हृदय का बाँध टूट जाता है। इस कठिन परीक्षा के बाद इस मनुष्य को यहाँ देख कर हृदय उमड़ पड़ता है। सचमुच महान पुत्र का यह महान पिता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि उसका शोक हमारा और आपका शोक है। नवयुवको, फिर भी मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप अहिंसा के पथ पर डटे रहें। इससे सिवा भलाई के और कुछ नहीं हो सकता, सरकार को यह समझा देगी, कि इसका अर्थ एकता है। सरकार भी समझ जायगी कि भगतसिंह की फाँसी का अर्थ है नवीन और संयुक्त भारत। मित्रो, ईश्वर आपकी सहायता करेंगे।

"अपना भाषण समाप्त करने के पहले मैं राजगुरु की माता को आपके सामने लाता हूँ। सचमुच वह माता धन्य है, जिसने राजगुरु के समान पुत्र को देश की भेंट कर दी।"

* * *

विद्यार्थी जी का ख़ून किसी न किसी दिन हिन्दू-मुसलमानों को एक कर देगा

आपका परिवार समवेदना नहीं, बल्कि बधाई का हक़दार है

महात्मा गाँधी का तार पं० बालकृष्ण शर्मा के नाम

कानपुर ३ अप्रैल

कराची से महात्मा गाँधी ने 'प्रताप' के सम्पादक पण्डित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' को निम्न-लिखित तार भेजा है :—

"मैं इतना व्यस्त था कि न आपको कोई चिट्ठी लिख सका और न तार दे सका। यद्यपि मेरा दिल ख़ून के आँसू बहाता है, तथापि वह श्रीयुत गणेशशङ्कर विद्यार्थी जैसे सज्जन की गौरवपूर्ण मृत्यु के लिए समवेदना भेजने से इन्कार करता है। यह सन्देश सिर्फ़ आज तक ही सीमित नहीं है, बल्कि विद्यार्थी जी का जो रक्त बहाया गया है, वह किसी न किसी दिन हिन्दुओं और मुसलमानों को सम्मिलित कर देगा। इसलिए विद्यार्थी जी का परिवार शोक-प्रकाश का नहीं; वरन् बधाई का हक़दार है। ईश्वर करे विद्यार्थी जी का आदर्श और त्याग दूसरों को भी उत्साहित करे।

* * *

९ अप्रैल, सन् १९३१

महात्मा गाँधी की विजय

कराची कॉङ्ग्रेस का यह ४५वाँ अधिवेशन अपनी अनेक विशेषताओं के लिए भारतीय इतिहास में एक चिरस्मरणीय अधिवेशन माना जायगा, इसमें सन्देह नहीं। यों तो सन्, १८५७ के स्वतन्त्रता-संग्राम के बाद से—जिसे हमारे शासक तथा 'शिक्षित' भारतवासी 'सिपाही-विद्रोह' अथवा 'ग़दर' के नाम से पुकारते हैं—आज तक भारतवासी स्वतन्त्रता की खुली हवा में साँस लेने को छटपटा रहे हैं, किन्तु यदि सच पूछा जाय, तो भारतवासियों द्वारा वास्तविक प्रयत्नों का प्रारम्भ हुआ है सन्, १९२८ की कलकत्ता कॉङ्ग्रेस से। उस समय से देशवासियों में स्वतन्त्रता-प्राप्ति की एक लगन-सी समा गई है और उन्होंने अपनी क़ुर्बानियों द्वारा संसार को अपनी स्वतन्त्र-प्रियता का वास्तविक परिचय देना प्रारम्भ कर दिया है। लाहौर वाले कॉङ्ग्रेस के महा-अधिवेशन के बाद से विगत १५ महीनों में भारत-वासियों ने वैध एवं अहिंसात्मक आन्दोलनों द्वारा अपने शासकों पर प्रगट कर दिया है, कि वे अब किसी भी शर्त पर पराधीन रहने को तैयार नहीं हैं और देश की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए वे उसका अधिक से अधिक मूल्य देने के लिए तुल गए हैं। अस्तु—

सन्, १८८९ से लेकर सन् १९२१ तक अधिकतर स्वतन्त्रता-प्राप्ति का सारा उद्योग प्रायः काग़ज़ों और व्याख्यानों तक सीमित था। चौरीचौरा वाले हत्याकाण्ड के बाद तो भारतवासियों के इन उद्योगों में और भी शिथिलता आ गई थी। यह अनुमान किया जाता था, कि अब सदियों तक हतोत्साह भारतवासियों का करवट तक लेना सर्वथा असम्भव है। किसी भी विचारशील व्यक्ति को इस बात की कल्पना तक करने का साहस न होता था, कि इस गम्भीर और सुदीर्घ मौनावलम्बन के बाद—केवल ७-८ वर्षों के भीतर ही—इतना विकट परिवर्तन देश में उपस्थित हो जायगा, किन्तु एशियाटी प्रदेशों में उठी हुई क्रान्ति की लहर भारत को अछूता कैसे छोड़ सकती थी? श्रद्धास्पद महात्मा गाँधी, जो अपने सत्याग्रह आन्दोलन की विफलता से हतोत्साह होकर एक कोने में जाकर बैठ गए थे, एकाएक तिलमिला उठे, देशवासियों का दिनोंदिन बढ़ता हुआ अपमान उनके लिए एक बार ही असह्य हो गया; उन्होंने फिर एक बार अपनी सुप्त शक्ति का आह्वान किया, अस्तु।

सन्, १९२८ में कलकत्ते में होने वाले कॉङ्ग्रेस के खुले अधिवेशन में, जबकि देश पूर्ण-स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए मचल रहा था—महात्मा गाँधी ने भारतवासियों के इस स्वतन्त्रता आन्दोलन का नेतृत्व ग्रहण करना स्वीकार कर लिया। यदि उस समय महात्मा गाँधी का व्यक्तित्व गवर्नमेण्ट और जनता के बीच में अटल पर्वत की भाँति अवस्थित न होता, तो देश के प्राङ्गण में जैसे भयङ्कर काण्ड अनुष्ठित हो गए होते, उनकी कल्पना मात्र से रोमाञ्च हो आता है। महात्मा गाँधी ने परिस्थिति की गम्भीरता पर विचार करते हुए देशवासियों को एक बार फिर ब्रिटिश गवर्नमेण्ट को अपनी भूलों को सुधारने का अवसर देने का आदेश किया। तरुण-भारत ने उनकी इस दूरदर्शिता को महात्मा जी की कमज़ोरी समझ कर उसकी जो खिल्ली उड़ाई थी, वह पुरानी बात नहीं है; किन्तु अपने निर्धारित पथ से ज़रा भी विचलित न होकर, महात्मा जी ने एक बार फिर न्याय के लिए शासकों का दरवाज़ा खटखटाया। उन्होंने वायसराय महोदय से सम्मानपूर्वक समझौते की भिक्षा माँगी, पर कोई प्रयत्न फल नहीं हुआ—तरुण-भारत की पनपती हुई आशा-लता के विरुद्ध पूर्ण-स्वाधीनता के स्थान पर उन्होंने गवर्नमेण्ट के आदेशानुसार औपनिवेशिक स्वराज्य (Dominion Status) ही पर सन्तोष कर लेने की स्वीकृत दे दी; लेकिन इस शर्त पर; कि आगामी कॉङ्ग्रेस के पूर्व ही औपनिवेशिक स्वराज्य की घोषणा गवर्नमेण्ट द्वारा कर दी जानी चाहिए। इस घोषणा के लिए पूरे एक वर्ष की अवधि गवर्नमेण्ट को दी गई; किन्तु फिर भी उन्हें निराश होना पड़ा; गवर्नमेण्ट ने इसे भारतवासियों की एक निस्सार धमकी मात्र समझी; किन्तु इस बार का अपमान भारतवासी सदा की भाँति सहन न कर सके, अन्त में सन्, १९२९ वाले कॉङ्ग्रेस के लाहौर के अधिवेशन में पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव सर्व-सम्मति से केवल पास ही नहीं किया गया, बल्कि भारत के कोने-कोने में पूर्ण स्वाधीनता का सन्देश भी पहुँचा दिया गया। साबरमती का संन्यासी अपनी लँगोटी और कमण्डल तथा चुने हुए ८० चेलों को साथ लेकर १२वीं मार्च, सन् १९३० को स्वाधीनता की साधना के लिए निकल पड़ा, उसने प्रतिज्ञा कर ली, कि बिना स्वराज्य प्राप्त किए वह अपनी कुटिया में पैर न रक्खेगा।

बूढ़े संन्यासी का यह प्रस्थान, मानो युद्ध की दुन्दुभी थी। सारे देश में एक बार ही तहलका मच गया। फिर जो कुछ भी देशवासी कर सकते थे, कोई बात उठा नहीं रक्खी गई। किन्तु शासकों ने महात्मा गाँधी के इस प्रस्थान को भी बच्चों का खेल समझा और इस ओर तब तक विशेष ध्यान नहीं दिया गया, जब तक अपनी आँखों से गवर्नमेण्ट ने महात्मा जी के पीछे सारे देश को नहीं देख लिया। ज्यों-ज्यों आन्दोलन प्रबल वेग से बढ़ने लगा और उसे सफलता मिलती गई, त्यों-त्यों गवर्नमेण्ट के चिन्ता की सीमा न रही। चूँकि यह सारी घटनाएँ हाल ही की हैं, इसलिए इस आन्दोलन की विशेष आलोचना करना व्यर्थ है। अस्तु।

विगत ३री मार्च, सन् १९३० को महात्मा गाँधी ने अन्तिम बार लॉर्ड इर्विन को चेतावनी दी थी और विधि का विधान ही तो है, ठीक ३री मार्च, सन् १९३१ को लॉर्ड इर्विन और महात्मा गाँधी में क्षणिक-समझौता

हो गया। जैसा कि हम अपने पिछले लेखों में लिख चुके हैं, देश के कुछ प्रमुख नेताओं तथा तरुण-भारत ने इस समझौते को उपेक्षा की दृष्टि से देखा और इसे भी महात्मा गाँधी की पराजय और लॉर्ड इर्विन की विजय समझा, किन्तु सभों की उत्सुक दृष्टि कराची के कॉङ्ग्रेस पर लगी हुई थी, देशवासी आशापूर्ण नेत्रों से राष्ट्रीय महासभा के अन्तिम निर्णय की ओर टकटकी लगाए हुए थे। इसी बीच में दैव के दुर्विधान से २३वीं मार्च की सन्ध्या को लाहौर षड्यन्त्र-केस के तीन विप्लववादी नवयुवकों को देश का इतना विरोध करने पर भी फाँसी पर लटका दिया गया—एक बार ही सारे देश में कुहराम मच गया। विचारशील व्यक्तियों के चिन्ता की सीमा नहीं रही। सर्व-साधारण को कॉङ्ग्रेस में भयङ्कर फूट हो जाने की स्वाभाविक शङ्का होने लगी, किन्तु गाँधी-इर्विन समझौते को देश के जिस भाग ने सन्दिग्ध नेत्रों से देखा था, उसके हर्ष की सीमा न रही। सारांश यह, कि राष्ट्रीय महासभा में पग-पग पर फूट और वैमनस्य की सम्भावना प्रबल हो रही थी। भारतीय स्वतन्त्रता के विरोधियों का अनुमान था, कि इधर कॉङ्ग्रेस में फूट पड़ जायगी, उधर हिन्दू-मुसलमानों का वैमनस्य अपनी चरम-सीमा पर पहुँचा हुआ है ही, अतएव गोलमेज़ परिषद् में इन दलबन्दियों के कारण विफलता अवश्यम्भावी है। इन विरोधियों का यह भी अनुमान था, कि इन फाँसियों द्वारा भारतीय नवयुवकों का ख़ून खौल जायगा और वे हिंसात्मक उपायों का अवलम्बन करेंगे और यदि ऐसा हुआ, तो इस सारे आन्दोलन को कुचल देना एक साधारण सी बात हो जायगी; पर जो अनहोनी बातें कॉङ्ग्रेस के इस अधिवेशन में हुई हैं, उनसे हमारे विरोधियों के छक्के छूट गए हैं, इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं। भारतीय इतिहास में सम्भवतः यह पहिला ही अवसर है, जब कि नेताओं ने अपनी ठोस राजनीति का विश्व को परिचय दिया है। निस्सन्देह आज का भारत आपस के फूट और वैमनस्य की हानियों का अनुभव करने लगा है, जो भारत के उज्ज्वल-भविष्य का परिचायक है।

आज सारे देश ने महात्मा गाँधी का एकाधिपत्य नेतृत्व स्वीकार करके वास्तव में बड़ी दूरदर्शिता का परिचय दिया है। आज यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय, तो देशवासियों ने अपने देश का सारा उत्तरदायित्व सौंप दिया है राष्ट्रीय महासभा को; कॉङ्ग्रेस ने अपना दायित्व सौंपा है कॉङ्ग्रेस की कार्यकारिणी समिति (वर्किङ्ग कमिटी) को और वर्किङ्ग कमिटी ने सारा उत्तरदायित्व सौंप दिया है महात्मा गाँधी को। ऐसी हालत में यदि यह कहा जाय कि 'भारत' और 'गाँधी' एक ही वस्तु के दो भिन्न-भिन्न नाम हैं, तो इसमें अत्युक्ति न होगी।

गर्म दल के नेताओं ने इस परीक्षा के अवसर पर जिस उदार नीति का परिचय दिया है वह उनकी महानता का परिचायक है। भूतपूर्व राष्ट्रपति और तरुण-भारत के प्राण—पं० जवाहरलाल नेहरू तथा श्री० सुभाषचन्द्र बोस आदि नेताओं का इस प्रकार महात्मा गाँधी को आत्म-समर्पण कर देना, वास्तव में बड़े आश्चर्य की बात है। पाठकों को स्मरण होगा, पं० जवाहरलाल नेहरू ने एक-दो बार नहीं, जब से गाँधी-इर्विन समझौता हुआ है, अपने प्रत्येक व्याख्यान और वक्तव्य में इस समझौते से असन्तोष प्रकट किया है। इतना ही नहीं, जब कि महात्मा गाँधी आदि सारे नेता दिल्ली में उपस्थित थे; उस समय पं० जवाहरलाल नेहरू ने उनके मुँह पर महात्मा जी से स्पष्ट शब्दों में कहा था, कि महात्मा जी ने "ऐसा निस्सार समझौता करके अपने देश को वायसराय के हाथ बेच दिया है।" उन्होंने खुले शब्दों में कहा था, कि इस कारण वे केवल महात्मा गाँधी का विरोध ही नहीं करेंगे, बल्कि इसके लिए वे पूरी तरह झगड़ेंगे भी। जिन पं० जवाहरलाल नेहरू की ऐसी अविचल धारणा हो, उन्हीं के द्वारा कॉङ्ग्रेस के खुले अधिवेशन में समझौते वाले प्रस्ताव को पेश और समर्थन कराना महात्मा गाँधी के महान् तपोबल का द्योतक है। श्री० सुभाषचन्द्र बोस ने भी कम त्याग का परिचय नहीं दिया है। आपने भी खुले शब्दों में गाँधी-इर्विन समझौते से असन्तोष प्रकट करते हुए आत्म-समर्पण के अवसर पर जो वक्तव्य कॉङ्ग्रेस सब्जेक्ट कमिटी में पढ़ा था, उसके प्रत्येक शब्द में वेदना और कर्तव्यपालन की ध्वनि उठती है। देश के स्वार्थ को दृष्टि में रखते हुए स्वयं आपने दलबन्दी के दलदल में फँसने से अपने सहयोगियों को चेतावनी दी थी। आपके कुछ शब्द इस प्रकार हैं:—

कराची कॉङ्ग्रेस के अधिवेशन के थोड़े दिन पहले ही, सर्व-साधारण के बार-बार अनुरोध और प्रतिवाद करने पर भी सरकार ने सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० सुखदेव को फाँसी देकर अपना असली रूप दिखा दिया है। साथ ही उसने यह भी बता दिया है, कि वह हम लोगों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहती है। ऐसी हालत में अगर हम आपस में दलबन्दी और मतभेद की सृष्टि करें, तो हम स्वयं सरकार के फन्दे में फँस जायँगे। जिस सरकार ने देशव्यापी आन्दोलन होने पर भी इन लोगों की फाँसी की सज़ा रद्द नहीं की, वह आसानी से भारतवासियों को देश की शासन-सम्बन्धी क्षमता भी अर्पण नहीं करेगी, यह हम निस्सन्देह रूप से कह सकते हैं। हम यह भी निश्चित रूप से कह सकते हैं, कि हमें फिर संग्राम-क्षेत्र में उतरना पड़ेगा। इन्हीं सब कारणों से परस्पर दलबन्दी और फूट की सृष्टि न करके, हमें भावी समर के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए। इस समय हम लोगों का सर्व-प्रधान कर्तव्य है, समवेत शक्ति के साथ सरकार के विपक्ष में खड़ा होना और संसार को दिखा देना, कि हमारी जातीय कॉङ्ग्रेस महात्मा गाँधी के नेतृत्व में पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए सब तरह से तैयार है।

बहुत दिनों से महात्मा गाँधी तथा उनके अनुयायियों का प्रयास था, कि गर्म दल वालों के चङ्गुल से छूट कर कॉङ्ग्रेस शुद्ध अहिंसात्मक अपरिवर्तनवादियों के हाथ में आ जावे। कॉङ्ग्रेस के गया वाले अधिवेशन से यह प्रयास भीतर ही भीतर जारी था। सरदार वल्लभभाई पटेल, यदि सच पूछा जाय, तो नाम मात्र के लिए राष्ट्रपति चुने गए हैं, अन्यथा कॉङ्ग्रेस का सारा नेतृत्व महात्मा गाँधी के अधीन है—महात्मा गाँधी को कॉङ्ग्रेस का मस्तिष्क और सरदार को कॉङ्ग्रेस की ज़बान समझना चाहिए। कॉङ्ग्रेस की नई वर्किङ्ग कमिटी तथा कार्यकर्ताओं का जैसा और जिस प्रकार का एकाङ्गी निर्वाचन हुआ है, वह भी हमारी इसी धारणा की पुष्टि करता है। महात्मा गाँधी ने स्वयं वर्किङ्ग कमिटी के सदस्यों को चुन कर, जिस समय कॉङ्ग्रेस में अपनी सूची पेश की थी, उस समय सारी कॉङ्ग्रेस अवाक् रह गई। अनेक लोग जी मसोस कर रह गए; किन्तु किसी को विरोध में एक भी शब्द कहने का साहस नहीं हुआ, कुछ व्यक्तियों के महात्मा गाँधी से इस निर्वाचन पर एक बार पुनः विचार करने की प्रार्थना करने पर महात्मा गाँधी ने जो उत्तर दिया था, वह भी हमारी इसी धारणा की पुष्टि करने वाला है। आपने इस निर्वाचन पर पुनः विचार करने से इन्कार करते हुए कहा कि "मैंने जिन लोगों को वर्किङ्ग कमिटी का सदस्य बनाना उचित समझा, उन्हें चुन लिया और कुछ ऐसे लोगों को छोड़ दिया, जो मुझे अतीव प्रिय हैं।" (I took those whom *I wanted* and left some whom I liked very much.)

सारांश यह, कि कॉङ्ग्रेस के प्रत्येक क्षेत्र में इस बार महात्मा गाँधी की आश्चर्यजनक विजय रही। इस बात से जनता चाहे जितना भी विरोध प्रकट करे, पर इतना तो अवश्य मानना पड़ेगा, कि सारा देश आज महात्मा गाँधी के बतलाए हुए अहिंसात्मक उपायों द्वारा स्वराज्य प्राप्त करने पर तुला गया है। ऐसी हालत में हज़ार व्यक्तिगत विरोध के होते हुए भी प्रत्येक भारतवासी का कर्तव्य है, कि वह महात्मा गाँधी के आदेशानुसार ही कार्य करे और जब तक कोई निश्चित निबटारा न हो ले, तब तक, न तो महात्मा गाँधी का व्यक्तिगत विरोध करे और न उनके आन्दोलन में रोड़े ही अटकाए; इसी में देश का भावी कल्याण है।

*　　■　　*

राष्ट्रपति का भाषण

इतने तुमुल राष्ट्रीय संग्राम के पश्चात देशवासियों का अनुमान था, कि राष्ट्रपति का भाषण बड़ा ज़ोरदार होगा, कितने ही लोग तो केवल कॉङ्ग्रेस में भिन्न-भिन्न नेताओं के 'धुँआधार' व्याख्यान सुनने की आशा से ही सैकड़ों मील का सफ़र करके कराची गए थे। उनका अनुमान था, कि व्याख्यान सैकड़ों पृष्ठों का होगा, जिनमें खुले दिल से ब्रिटिश गवर्नमेण्ट की निन्दा की गई होगी और उसको गालियाँ दी गई होंगी, इत्यादि-इत्यादि—ऐसे लोगों को निस्सन्देह बड़ा निराश होना पड़ा होगा और वे सहानुभूति के पात्र हैं। अस्तु।

सरदार वल्लभभाई पटेल के भाषण में जो सब से बड़ी विशेषता है, वह यह कि पिछले ४४ वर्षों में कॉङ्ग्रेस के मञ्च से जितने भी व्याख्यान दिए गए हैं, राष्ट्रपति का भाषण उन सभों से छोटा और सारगर्भित है। उसमें एक भी शब्द का निरर्थक प्रयोग नहीं किया गया है, किन्तु साथ ही उसमें कोई मौलिकता भी नहीं है। यह व्याख्यान नहीं, देशवासियों के सामने जो कार्यक्रम महात्मा गाँधी ने उपस्थित किया है, उसकी पुनरावृत्ति मात्र है।

आज हमारा देश जिस नाज़ुक परिस्थिति में होकर गुज़र रहा है वह प्रकट ही है। मनुष्य मात्र की सच्ची सेवा ही राष्ट्रीय कॉङ्ग्रेस का उद्देश्य है और परिस्थिति के गम्भीर होने के साथ ही साथ कॉङ्ग्रेस का दायित्व भी कुछ कम नहीं बढ़ गया है, ऐसी हालत में कोरे व्याख्यानों द्वारा देश का हित नहीं हो सकता। इस समय एक ऐसे राष्ट्रपति की देश को आवश्यकता थी, जो कर्मयोगी हो और जिस पर देशवासियों का अविचल विश्वास हो—जो निर्धनों का विश्वासपात्र हो, सच्चा सिपाही हो और हो महात्मा गाँधी का अन्ध-भक्त। 'भविष्य' के कॉङ्ग्रेस-अङ्क में प्रकाशित सरदार वल्लभभाई पटेल की जीवनी पढ़ कर पाठकों को अवश्य ही उन पर अटूट श्रद्धा हुई होगी और उन्होंने देख लिया होगा, कि इस समय उनसे बढ़ कर इस दायित्व को ग्रहण करने वाला कोई नेता नहीं था। सरदार पटेल को राष्ट्रोत्थान की सारी ज़िम्मेदारी सौंप कर देशवासियों ने उनके व्यक्तित्व की नहीं, बल्कि उनके तथा महात्मा गाँधी के सिद्धान्तों के प्रति हार्दिक श्रद्धा और सम्मान प्रकट किया है। उनके दिए गए भाषण को पढ़ कर हमारी तो यह धारणा है, कि राष्ट्रपति ने अपने उत्तरदायित्व का पालन बड़ी योग्यतापूर्वक किया है। इस समय कॉङ्ग्रेस तथा महात्मा गाँधी की स्पष्ट नीति थी गाँधी-इर्विन समझौते को देशवासियों से स्वीकृत कराके उसी के अनुसार अपने भावी कार्यक्रम का निर्माण करना तथा भारत और ब्रिटेन के बीच सम्मानपूर्ण समझौता करा के अन्य प्रदेशों को दिखा देना कि भारत-

वासी व्यर्थ में देश का वातावरण कलुषित करने के पक्ष में नहीं हैं और वे ब्रिटिश राजनीति को अधिक से अधिक अवसर देकर उसे खोखला साबित करना चाहते हैं, ताकि आवश्यकता पड़ने पर भारतवासी अन्य राष्ट्रों की सहानुभूति अपने पक्ष में कर सकें—अस्तु।

वर्तमान राजनीति के इस जटिल पहलू पर टीका-टिप्पणी करना इस समय हमारा ध्येय नहीं है और न है उपयुक्त समय। इन पंक्तियों द्वारा हम केवल यही बतलाना चाहते हैं, कि कॉङ्ग्रेस ने वर्तमान राष्ट्रपति को जो ज़िम्मेदारी सौंपी थी, उन्होंने अधिक से अधिक बुद्धिमानी से उसे निबाहा है। गोरे तथा अर्द्ध-गोरे पत्रों तक को राष्ट्रपति के इस महत्वपूर्ण भाषण की निन्दा करने का साहस नहीं हुआ है। राष्ट्रपति के भाषण के प्रत्येक शब्द में गाँधी-इर्विन समझौते का समर्थन टपकता है और जब कॉङ्ग्रेस और उसके एकाधिपत्य स्वामी का यही आदेश था—तो हमारा ख़्याल है, आपका भाषण इससे अधिक अच्छा और स्पष्ट हो ही नहीं सकता था।

अन्तर्साम्प्रदायिक समस्या पर राष्ट्रपति ने जैसे उदार विचार प्रगट किए हैं, वह उन्हीं के योग्य था और इससे उनकी स्वतन्त्र-प्रियता की लगन और निष्ठा टपकती है। आपके व्याख्यान का यह अंश देश-प्रेम के उन भावनाओं का द्योतक है, जो किसी स्वतन्त्रता-प्रेमी के हृदय में हिलोरें लिया करती हैं। राष्ट्रपति के व्याख्यान का यह अंश निश्चय ही जातीय सङ्गठन के इतिहास में युगान्तर उपस्थित करने वाला है।

हम हृदय की सारी उमङ्गों से राष्ट्रपति के इस भाषण का स्वागत करते हैं और उनकी इस सफलता पर उन्हें बधाई देते हैं।

* * *

"बाबा ख़लीलदास"

जिन दिनों काशी में हिन्दू-मुसलमानों का वैमनस्य अपनी चरम-सीमा लाँघ चुका था और काशी के वक्षस्थल पर शैतान का ताण्डव हो रहा था, उन्हीं दिनों से "बाब ख़लीलदास" नामक एक मुसलमान पीर की शिकायतें—एक-दो नहीं, सैकड़ों की संख्या में हमारे पास आई थीं और आज भी आ रही हैं; काशी के कुछ प्रतिष्ठित सज्जनों ने स्वयं यहाँ आकर 'बाबा ख़लीलदास' के साम्प्रदायिक आन्दोलनों की निन्दा करते हुए हमसे इस सम्बन्ध में एक नोट लिख कर गवर्नमेण्ट का ध्यान आकर्षित करने की प्रार्थनाएँ की थीं, किन्तु "बाबा ख़लीलदास" के विरुद्ध जो अभियोग लगाए जाते हैं, बिना उनका पुष्ट-प्रमाण अपने हाथ में आए उनका प्रकाशन क़ानूनी दृष्टि से बुद्धिमानी का परिचायक न होगा, अतएव तब तक हम उन्हें प्रकाशित नहीं कर सकते, जब तक सारे प्रमाण हमारे यहाँ उपस्थित न हो जायँ। हमारा अनुमान है, आगामी एक मास के भीतर हम इस सम्बन्ध में सारी बातें निर्भीकता से देशवासियों के सामने रखने में समर्थ हो सकेंगे। कुछ गवर्नमेण्ट के अफ़सरों से भी इस सम्बन्ध में हमारी लिखा-पढ़ी हो रही है। हम इसके परिणाम की भी प्रतीक्षा में हैं। किन्तु हमें विश्वास नहीं होता, कि गवर्नमेण्ट इन बातों से इतनी भी परिचित न हो, जितने परिचित हम हैं। हम गवर्नमेण्ट से यह जानना चाहते हैं कि—

(१) क्या यह ठीक नहीं है, कि काशी की हिन्दू जनता ने हज़ारों की संख्या में वहाँ के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पास इस सम्बन्ध में प्रार्थना-पत्र भेजे थे?

(२) क्या यह सत्य नहीं है, कि उन प्रार्थना-पत्रों के सम्बन्ध में समुचित जाँच करने के पश्चात बाबा ख़लीलदास को काशी से तुरन्त निकल जाने की आज्ञा दी गई थी?

(३) क्या यह ठीक नहीं है, कि दूसरे ही दिन किसी अज्ञात कारण से यह आज्ञा वापस ले ली गई?

(४) क्या यह सत्य नहीं है, कि इलाहाबाद में, जब कि मार्च के पहिले सप्ताह में बाबा ख़लीलदास पधारे थे—उनकी गिरफ़्तारी की आज्ञा दी गई थी?

(५) क्या यह ठीक नहीं है, कि आज्ञा देने के थोड़ी ही देर के बाद, यह आज्ञा भी काशी वाली आज्ञा के समान वापस ले ली गई और उन्हें केवल शहर तुरन्त छोड़ देने का आदेश दिया गया?

(६) क्या यह सत्य नहीं है, कि आजकल बाबा ख़लीलदास लखनऊ में अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं?

आख़िर वह कौन सा ऐसा कारण है, कि जहाँ भी बाबा ख़लीलदास पहुँच जाते हैं, वहाँ की हिन्दू जनता में एक बार ही सनसनी फैल जाती है? अभी उस दिन सहयोगी 'लीडर' तक को इस सम्बन्ध में एक प्रतिवाद छापना पड़ा था। क्या भारतवासियों द्वारा निर्वाचित "प्रतिनिधियों" में से एक में भी इतना साहस नहीं है कि कौन्सिल तथा बड़ी व्यवस्थापिका सभा में इस सम्बन्ध के प्रश्न उपस्थित करके गवर्नमेण्ट को इनका सन्तोषजनक उत्तर देने के लिए बाध्य कर सके?

हम मनुष्यता और शिष्टता के नाम पर गवर्नमेण्ट से प्रार्थना करते हैं, कि वह हमारे उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर अपने गज़ट में देने की कृपा करे!

* * *

पत्रकारों का सराहनीय उद्योग

गत १२वीं मार्च को कलकत्ते में पत्रकारों की सभा में जो कार्यकारिणी कमिटी नियुक्त हुई थी, उसकी पहली बैठक गत २०वीं मार्च, १९३१ को 'सुहृन्मणी' कार्यालय में हुई। श्री० जे० सी० बोस ने सभापति का आसन ग्रहण किया। सभा में निम्न-लिखित सज्जन उपस्थित थे:—

श्री० मुहम्मद अकराम ख़ाँ (मोहम्मदी); श्री० अब्दुल हकीम (हमीफ़ी); श्री० जे० सी० गुप्त (एडवान्स); श्री० जे० एन० भट्टाचार्य्य (आनन्द बाज़ार पत्रिका); श्री० ए० के० एम० शमसुद्दीन (सुल्तान); श्री० महम्मद ख़ैरुल अनाम ख़ाँ (मोहम्मदी); श्री० किशोरी मोहन बैनर्जी (इन्डस्ट्री) और श्री० मृणालकान्ति बोस।

निम्न लिखित प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुए:—

साम्प्रदायिक समाचारों के प्रकाशन में तथा उन पर टीका-टिप्पणी करने में समाचार-पत्रों को निम्न सिद्धान्तों पर ध्यान देना चाहिए:—

(क) साम्प्रदायिक प्रश्नों पर या सम्प्रदायों से सम्बन्ध रखने वाले राजनैतिक प्रश्नों पर विचार करना यदि आवश्यक हो, तो निष्पक्ष भाव से उन पर विचार करना चाहिए, जिनमें किसी सम्प्रदाय-विशेष अथवा उसके किसी शाखा के व्यक्तियों को किसी प्रकार की चोट न पहुँचे।

(ख) किसी सम्प्रदाय अथवा उसके एक हिस्से के प्रति मनोमालिन्य उत्पन्न करने वाले भावों को बुद्धिमानी के साथ छोड़ देना चाहिए।

(ग) यदि किसी सम्प्रदाय अथवा उसके एक हिस्से के मतों का उल्लेख करना आवश्यक हो तो सम्मानपूर्ण भाषा में भावों को प्रकट करना चाहिए यदि दो सम्प्रदायों के मतों में अन्तर दिखाया जाय, तो उसमें नम्रता और उदारता से काम लेना चाहिए। लेख का सम्बन्ध केवल विवाद के महत्व से ही होना चाहिए।

(घ) भयङ्कर अपराध, चाहे वह किसी सम्प्रदाय के मनुष्य के द्वारा किया गया हो, सर्वथा निन्दनीय है। ऐसे अवसरों पर अपराधी का—चाहे वह किसी सम्प्रदाय का क्यों न हो—पक्ष नहीं लेना चाहिए।

(ङ) साम्प्रदायिक झगड़ों के समाचार के प्रकाशित होने के बाद ही टिप्पणी नहीं निकालनी चाहिए। जब तक विस्तारपूर्वक सारी बातें मालूम न हो जायँ, और दोनों पक्ष वालों का वक्तव्य प्राप्त न हो जाय, तब तक टीका-टिप्पणी नहीं करनी चाहिए। समाचारों के प्रकाशित करने में निम्न-लिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है:—

(च) जहाँ तक सम्भव हो, साम्प्रदायिक झगड़ों से सम्बन्ध रखने वाले समाचारों में साम्प्रदायिकता की छाप नहीं होनी चाहिए। केवल सीधी-सादी बातों का उल्लेख मात्र होना चाहिए।

(छ) साम्प्रदायिक झगड़ों से सम्बन्ध रखने वाले समाचारों के प्रकाशित करने के पहले यह देख लेना चाहिए कि समाचार विश्वस्त-सूत्र से प्राप्त हुआ है या नहीं। अफ़वाहों को अधिक स्थान नहीं देना चाहिए।

(ज) भयङ्कर अपराधों के समाचारों में, जहाँ तक सम्भव हो, किसी सम्प्रदाय के साथ उनका सम्बन्ध होने के विषय में, सम्मति नहीं प्रकट करनी चाहिए। इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि स्थानीय समाचारों को इस ढङ्ग से प्रकाशित न किया जाय, जिसमें उनका अनुचित महत्व बढ़े।

समाचारों के शीर्षक देते समय इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए, कि उससे किसी सम्प्रदाय-विशेष, या उसके किसी अंश की निन्दा तो नहीं होती है।

हिन्दू-मुसलमान के जाति-परिवर्तन सम्बन्धी समाचारों में नमक-मिर्च नहीं लगाना चाहिए। उस पर टीका-टिप्पणी भी नहीं करनी चाहिए। पत्रकारों के लिए यह उचित है कि वे यथा-सम्भव जाति-परिवर्तन के समाचारों को प्रकाशित ही न करें।

हिन्दू-मुस्लिम प्रश्नों पर जो विचार किए जायँ, वे दोष दिखाने के अभिप्राय से नहीं, बल्कि दोनों सम्प्रदायों में मैत्री उत्पन्न करने के अभिप्राय से।

सम्प्रदायों से सम्बन्ध रखने वाले राजनैतिक प्रश्नों पर बिना किसी राग-द्वेष के विचार करना चाहिए, और इसका एक मात्र उद्देश्य, देश की भलाई के लिए राष्ट्रीयता का प्रचार करना और 'लो और दो' वाली नीति का भाव फैलाना, होना चाहिए।

सभा की कार्यवाही की कॉपियाँ समाचार-पत्रों के सम्पादकों के पास भेजी जायँ, और उनसे सभा की कार्यवाही पर विचार करने, तथा उसके अनुसार कार्य करने की प्रार्थना की जाय।

यदि कोई उपर्युक्त प्रस्तावों का उल्लङ्घन करे तो कमिटी के सदस्यों को अथवा पत्रकारों को कमिटी का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहिए, और कमिटी अपनी बैठक में उन पर विचार करे, और उचित कार्यवाही करे।

× × ×

यह बतलाने की आवश्यकता नहीं, कि यदि भारतीय पत्रकार इन सिद्धान्तों को दृष्टि में रखते हुए पत्रों में टीका-टिप्पणी करें, तो साम्प्रदायिक समस्याओं के सुलझाने में बहुत कुछ सहायता मिल सकता है और आजकल के कलुषित वातावरण में बहुत हद तक सुधार किया जा सकता है। हम हृदय से इन प्रस्तावों का अभिनन्दन करते हैं और इन पत्रकारों को उनकी इस सामयिक सेवा के लिए बधाई देते हैं।

* * *

दारोग़ा साहब

[श्री० कालीशङ्कर जी त्रिपाठी]

जहाँ मेरे घोड़े की टाप पड़ती थी, वहाँ रुपयों की वर्षा आरम्भ हो जाती थी। वास्तव में मैं इस घोड़े को बड़ा भाग्यशाली जानवर समझता था और वह ऐसा था भी। जब से यह जानवर मेरे पास आया, मुझे रुपए पैदा करने की नित नई तरकीबें सूझने लगीं। सच पूछिए तो मुझे एक ऐसा ढङ्ग मालूम हो गया, जो पुलिस के दारोग़ाओं को अब तक मालूम ही न था। इस सूझ के लिए मैं बहुत कुछ अपनी बुद्धि और शिक्षा का भी कृतज्ञ हूँ। जब मैं अङ्गरेज़ी स्कूल में पढ़ रहा था, तभी से इतना कुशल और बुद्धिमान था, कि अपने हस्तलाघव से मित्रों की जेब से रूमाल या फ़ाउण्टेन पेन उड़ा दिया करता था। वे बेचारे आश्चर्य करते ही रह जाते थे। परन्तु यदि किसी समय मेरी चतुरता असफल हो जाती तो मस्तिष्क की शान्ति काम दे देती थी। मैं फ़ौरन हँस कर कह देता—"भाँप गए, ज़रा रूमाल में झटका लगाने में देर हो गई।" यह ढङ्ग ऐसा था, कि यदि किसी मित्र ने चोरी पकड़ ली तो मज़ाक़, नहीं तो चीज़ अपनी और अपने बाप की।

परन्तु इससे भी अधिक शिक्षा मुझे इस नौकरी से मिली! मुरौव्वत करना तो यहाँ महा-पाप समझा जाता था। परन्तु जन्म-संस्कारों के कारण मैं इस गुण में कम अभ्यस्त था। मैं जिस महानुभाव की मातहती में पहले-पहल रक्खा गया था, वे मेरे इस अवगुण के कारण बहुत बिगड़ा करते थे। एक दिन ऐसी एक घटना हुई, कि मैं उनका पूर्णतया अनुयायी हो गया। मेरे एक सम्बन्धी एक डकैती के मामले में फँस गए। मेरे बड़े भाई उनकी सिफ़ारिश करने आए, मैंने भी ज़ोर दिया। इस पर मेरे एक अफ़सर ने मुझसे कहा—"बस तुम नौकरी कर चुके! अरे तुम्हें यही नहीं मालूम कि ऐसे ही मामलों में तो जेबें गरम होती हैं। तुम कुछ नहीं पैदा कर सकते। तुम्हारा इस नौकरी में रहना व्यर्थ है। अरे भले आदमी! उनके भी भले बने रहो और अपना काम भी सिद्ध कर लो।" ऐसा ही हुआ, मेरी सिफ़ारिश की तारीफ़ भी हुई और रक़म भी गहरी हाथ लगी। बस उस दिन से मैंने निश्चय कर लिया, कि यदि मैं किसी की सुनूँगा तो केवल रुपए की।

फिर भी मुझमें एक दुर्बलता रह गई और वह थी, मेरी स्त्री रमा। उसके कारण कभी-कभी मुझे अपने सिद्धान्त से डिग जाना पड़ता था। इसी घोड़े के प्राप्त करने में उसने कितनी अड़चनें डालीं। मैंने एक गङ्गापुत्र से धमकी देकर कहा कि दफ़ा ११० में चालान कर दूँगा। नहीं तो अपना घोड़ा मुझे दे दे। बेचारा गँवार तो था ही, राज़ी हो गया। परन्तु घर में देवी जी रुष्ट हो गईं और लगीं बकझक मचाने—"मेरे एकलौते पुत्र को वह गङ्गापुत्र कोसेगा, मैं उसका शाप क्यों लूँ! अगर उसका घोड़ा लोगे, तो मैं लड़के को लेकर अम्माँ के पास चली जाऊँगी।" मुल्ला की दौड़ मसजिद तक। मैं समझ गया, कि इनकी धमकी में कितना तत्व है। हाँ, भय था तो केवल इतना कि कहीं घोड़ा आने पर देवी जी कोप-भवन में न चली जावें। किन्तु मैं यह भी समझता था कि स्त्री-पुरुष की लड़ाई अधिक काल तक नहीं चलती। जहाँ तनिक चुटकी ली, वह झुँझलाई, क्रोध के साथ हँसी आ गई और बस सन्धि का मसौदा तैयार हुआ। यही सोच कर मैं घोड़ा ले आया और मेरा अनुमान भी ठीक ही निकला। ठीक क्यों न निकलता? पुलिस का दारोग़ा ठहरा। यहाँ सत्यता चाहे कुछ न हो, परन्तु अनुमान अपना काम कर ही जाता है।

हाँ, वह घोड़े वाली बात तो रही गई। जब मैं उस गङ्गापुत्र के घर से इस भाग्यशाली जानवर को ले आया, तो कुछ दक्षिणा भी माँगी। इसके उत्तर में वह अपनी दरिद्रता का दिग्दर्शन कराने लगा। किन्तु ऐसी बातें सुन कर मेरा क्रोध और भी बढ़ जाता है। उसने मुझे शान्त करने की इच्छा से कहा—"हुज़ूर, मैं आपको एक ऐसी सोने की चिड़िया फँसा दूँगा, कि आप ख़ुश हो जाएँगे। आप यहाँ के ज़मींदार साहब को रैपुरा वाली डकैती के मामले में पकड़िए, मैं गवाही दे दूँगा।" मैंने ऐसा ही किया। इस काम में मुझे इतनी रक़म मिली कि उसका ख़ून मुँह में लग गया, परन्तु इन गवाहियों में एक ऐब था, यानी अभियुक्त के छूट जाने की आशङ्का थी। परन्तु मैंने एक दूसरी ही युक्ति सोच निकाली। मैंने कुछ सज़ायाफ़्ता लोगों को मुख़बिर बना लिया। उनका काम था केवल झूठी गवाहियाँ देना और बड़े-बड़े आदमियों को फँसा देना, कि ये भी हमारे साथ लूट में थे। इन मुख़बिरों को बहुधा मैं छुड़ा लेता या सज़ा हो जाने पर कुछ रुपए दे देता था।

मेरा यह व्यापार बड़े ढङ्ग से चल रहा था। जब कभी बाज़ार ढीला देखता तो लोगों को सङ्केत कर देता और फिर डाकेज़नी का बाज़ार गरम हो जाता। इस युक्ति की लपेट में मैंने शिवमङ्गलसिंह को ले डाला। यह था तो एक बहुत बड़ा ज़मींदार पर साथ ही अव्वल दर्जे का कञ्जूस भी था। कभी किसी त्यौहार पर भी मेरे यहाँ दूध-दही न भेजता था। अब की बार फन्दे में आ फँसा। मैंने उसे थाने की कोठरी में ठूँस दिया और सत्कार के लिए कुछ सिपाही भी तैनात कर दिए। परन्तु जिस समय सिपाही उनकी सेवा कर रहे थे, मेरी देवी जी कोठे पर खड़ी, चिक की आड़ से सब हाल देख रही थीं। यह बात उस दुष्ट को भी ज्ञात हो गई। वह लगा चिल्लाने—"दरोगाइन जी की दुहाई, हम आपकी रैयत हैं। मुझे बचाइए, आपका पुत्र चिरञ्जीवी हो।" बस यही अन्तिम वाक्य मेरी स्त्री के ऊपर जादू का असर कर गया। मुझे बाद में ज्ञात हुआ, कि माता पुत्र को आशीर्वाद देने वाले के ऊपर सर्वस्व वार सकती है। बस वे लगीं अनुनय-विनय करने। परन्तु जब मुझ पर इसका कुछ भी असर न हुआ, तो अश्रु-वर्षा आरम्भ हुई। मैं स्त्री को अश्रु बहाते नहीं देख सकता था, बस यही मुझमें एक दुर्बलता थी। शिवमङ्गलसिंह मेरे पञ्जे से बेदाग़ छूट गया।

२

भादों की अँधेरी रात थी। मैं आनन्दपूर्वक सो रहा था। एकाएक एक सिपाही ने दरवाज़ा खटखटाया। नौकरानी ने आकर सूचना दी कि "हुज़ूर को दो तीन आदमी बुलाने आए हैं। रानीगञ्ज में आज रात को डाका पड़ने का भय है।" मेरे लिए यह समाचार कोई नई बात न थी, इन दिनों गङ्गा जी में बाढ़ आ जाने से यहाँ डाकुओं की भी बाढ़ आ जाती है। ये लोग गङ्गा-पार से आते और रातोंरात अपना काम करके चल देते हैं।

मैं शीघ्रता से उठा और लैम्प जला कर अस्त्र तथा वस्त्र से सुसज्जित होने लगा। रमा भी जग गई थी। वह मेरी आतुरता को व्याकुल दृष्टि से देख रही थी। न जाने क्या सोच-समझ कर बोली—"यदि इस समय न जाओ तो।" मैंने हँस कर कहा—"नौकरी से हाथ धोना पड़ेगा। क्योंकि न जाना नियम-विरुद्ध है।"

रमा—परन्तु यह तो जान लो, कि ये लोग कहाँ से आए हैं?

मैं रमा की शङ्का ताड़ गया और सन्तुष्ट करने के हेतु नौकरानी से पुछवाया। मालूम हुआ कि वे लोग रानीगञ्ज से आए हैं। रमा फिर किसी गहरी चिन्ता में मग्न हो गई और धीरे से बोली—सिपाही तो सब जायँगे न?

मैं—नहीं, दो थाने पर रहेंगे।

रमा—दो की यहाँ क्या आवश्यकता है, एक को और अपने साथ लेते जाओ।

मैं कुछ न बोला। भोली-भाली रमा की दुश्चिन्ता पर कुछ हँसी आई और कुछ क्रोध। किन्तु यह विचार कर, कि प्रेम में शङ्का होती है, मैंने उसके मुँह की ओर देखा। अश्रु की हलकी-हलकी बूँदें दोनों नेत्रों में तैर रही थीं। परन्तु मुझे इस समय यह प्रेम का अभिनय ज़रा भी न रुचा। मैं बरसाती और हैट आदि से सुसज्जित होकर चलने ही वाला था, कि रमा का कोमल हाथ मेरे हाथ में आ गया। उसने रुँधे स्वर से कहा—"मेरा एक कहना करोगे?" उसकी सरलता मेरे ऊपर अपना काम कर गई। मैंने धैर्य देते हुए कहा—"आज तुम इतनी व्याकुल क्यों हो रही हो? इससे पहिले तो तुम इतना विह्वल कभी नहीं हुईं।"

उसने उत्तर दिया—मेरी व्याकुलता का भी तो यही कारण है कि मुझे इससे पहले इतनी विह्वलता कभी नहीं हुई। मेरे हृदय में एक आशङ्का उठती है। बोलो, मेरी एक बात मानोगे ?

मैं—क्यों नहीं, बशर्ते कि वह उचित हो।

रमा—तुम आज सिपाहियों ही के साथ जाना, घोड़ा बढ़ा कर आगे न चले जाना।

मैं—अच्छी बात है, यही करूँगा।

मैं घर से बाहर निकला ही था, कि रमा ने कुण्डी खटखटाई। मैं लौट आया। वह अपने आँसू रोकती हुई, हँस कर बोली—इतनी जल्दी में हो कि मुन्नू का मुख भी नहीं चूमा।

मेरा तीन वर्ष का बालक मुन्नू सो रहा था। मैंने बिना जगाए ही उसका मुख चूम लिया। वह रो पड़ा। रमा उसके सुलाने में व्यस्त हो गई और मैं घर से बाहर निकला।

३

मैं कुछ दूर तक तो सिपाहियों ही के साथ चलता रहा, क्योंकि रमा की आशङ्का ने मुझे भी शङ्कित कर दिया था। किन्तु फिर सोचा कि कहीं सिपाही इसे मेरी भीरुता न समझें। इसलिए मैंने घोड़े को आगे बढ़ाया। पहले रमा की बातों पर हँसी आई, फिर दया। बेचारी की दाहिनी आँख फड़कने लगी होगी।

अकस्मात् बिजली चमकी। दृश्य की भयङ्करता नेत्रों के सामने घूम गई। रात का घोर अन्धकार, वायु के झोंकों से वृक्षों का हरहराना, उस पर उल्लू का कर्ण-कटु शब्द—आदि ने उस अँधेरी निशा को एक विकट रूप दे रक्खा था। धीरे-धीरे फुहार पड़ने लगी। मैं बरसाती पहने था; किन्तु मुख पर जल-बिन्दु श्रमसीकरों से मिल रहे थे। वायु के एक तीव्र झोंके से समीपवर्ती वृक्ष हिल उठा। मेरे हृदय में किञ्चित भय उत्पन्न हुआ। साथ ही एक सार्थक, किन्तु व्यर्थ सा प्रश्न हुआ। "वे आदमी जो मुझे बुलाने आए थे, कहाँ गए ?" एकाएक घोड़ा रुक गया। दूसरे ही क्षण मैं भूमि पर दिखाई पड़ा। एक हाथ मेरे मुँह को बन्द किए था और दूसरा मेरे मुँह में कपड़ा ठूँसने का प्रयत्न कर रहा था। मेरे हाथ रस्सी से कसे जा रहे थे और पैर बँध चुके थे। अब मेरी समझ में आया कि मैं बदमाशों के हाथ में पड़ गया हूँ। मैंने अपने को छुड़ाने का प्रयत्न किया था, परन्तु हाथ-पैर बँधे होने से मेरा यत्न व्यर्थ गया। मैंने पुकारने का प्रयत्न किया, क्योंकि मैं जानता था कि मेरे सिपाही तीन-चार फ़र्लाङ्ग से अधिक दूर न होंगे, परन्तु यह भी व्यर्थ हुआ। क्योंकि मेरे मुँह में कपड़ा ठूँसा हुआ था। मुझे वे लोग मार्ग से अलग, गङ्गा की ओर ले चले। मेरे घोड़े को भी एक बदमाश मेरे साथ, उसी ओर ले चला।

४

कुछ देर के बाद एक ने प्रश्न किया—"कहिए दारोग़ा साहब, आपने तो हम लोगों को ख़ूब लूटा; धन भी लिया और आबरू भी।" इसकी ध्वनि में एक खड़खड़ाहट सी मालूम होती थी। शायद अपनी आवाज़ छिपाने के लिए उसने मुँह में कङ्कड़ डाल लिया था।

दूसरे ने उत्तर दिया—"इस पूछ-ताछ से क्या मतलब ? बस इसे गङ्गा मैय्या को सौंप दो। इसकी भी बन जायगी और हमारी भी। "गङ्गा जी को पैरिबो, विप्रन को व्यवहार। पार लगे तो पार है, नहीं पार तो पार।" क्यों दारोग़ा साहब ?"

मैं जल-भुन कर ख़ाक हो गया। परन्तु विवश था। सोचा, अगर छूट पाऊँ, तो एक-एक की ख़बर लूँ, परन्तु यहाँ तो ये सब के सब बोली ही बदले थे, पहिचानूँ किसे ? और फिर छूटने की आशा भी तो न थी।

तीसरे ने उसी ध्वनि में कहा—"दारोग़ा साहब, जो कुछ कहना हो कहिए, नहीं तो हम अपना काम करें।" उसने मेरे मुँह का कपड़ा निकाल दिया।

मैं गिड़गिड़ा कर बोला—अबकी बार माफ़ कर दो भाई, फिर कभी ऐसी ख़ता न होगी।

बदनाम वही होंगे जो बदनाम करेंगे

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

हम कुछ न करेंगे यही एक काम करेंगे,
पीकर मये हुब्बे वतन अब नाम करेंगे !
आराम की हसरत है तो तकलीफ़ उठाएँ,
तकलीफ़ उठाएँगे तो आराम करेंगे !
हम सुबह को बँगले से चले आए यह कह कर,
साहब से मुलाक़ात सरे शाम करेंगे !
बदनाम जो हैं उनका कभी नाम न होगा,
कुछ नाम किया है अभी कुछ नाम करेंगे !
बेकार न बैठेंगे न बैठेंगे कभी हम,
अरबाब वतन के लिए कुछ काम करेंगे !
आग़ोश में दिल होगा तो आराम कहाँ का,
पहलू में न दिल होगा तो आराम करेंगे !
"बिस्मिल" को न बदनाम करें मान लें कहना,
बदनाम वही होंगे, जो बदनाम करेंगे !

मेरी बात सुन कर सब हँस पड़े और बोले—ठीक है, हम माफ़ करदें और कल तुम हथकड़ियाँ डलवा दो। देखते हैं, अभी भी तुम्हारा पुलिसपन नहीं गया है।

मैंने फिर कुछ नहीं कहा।

मुझे मृत्यु-दण्ड सुना दिया गया। मेरे हाथ-पाँव बाँध कर गङ्गा जी में फेंक देने की तैयारी हुई। मैं मन ही मन अभागे घोड़े को कोस रहा था, कि इसी ने मेरा सत्यानाश किया है। यदि इस समय भी हिनहिना दे, तो सम्भव है कि मेरे सिपाही आ जायँ। किन्तु वह इस प्रकार मौन था, मानो मुझ अन्यायी को दण्ड पाते देख कर वह भी प्रसन्न हो। फिर मुझे रमा के आँसू स्मरण हो आए। मैं उन आँसुओं के लिए रो उठा, किन्तु व्यर्थ। मैं हाथ-पाँव पकड़ कर पृथ्वी से उठा लिया गया। एक ने कहा—अरे अब तक पाप किए सो किए, अब तो गङ्गा-मैय्या को भज लो। देखो, मैं छै बार गङ्गा जी का नाम तुमको सुनाऊँगा और सातवीं बार तुम स्वयं उनकी गोद में दिखाई दोगे !

गङ्गा जी का नाम पाँच बार न जाने कितने कष्ट के साथ मैंने सुना और छठी बार अचानक मेरे मुँह से निकल पड़ा—हाय, मेरी स्त्री और पुत्र !!

मैं झुला कर फेंक दिया गया, किन्तु मेरा हाथ एक व्यक्ति ने नहीं छोड़ा।

बदमाशों का दल उस मनुष्य के ऊपर बिगड़ उठा। परन्तु उसने केवल इतना ही कहा—सच-मुच यह अपनी स्त्री के लिए जीवित रखने योग्य है।

इसके बाद कुछ सलाह-मशविरा हुआ। शायद दूसरी सज़ा तजवीज़ की गई।

* * *

एक नाव आई। मेरी आँखों पर पट्टी बाँधी गई और एक लाठी पीठ से बाँध दी गई, ताकि मेरा शरीर झुक न सके। मैं नाव पर बिठा दिया गया। थोड़ी देर बाद नाव रुकी। मेरे पाँव ऊपर उठा दिए गए और मुझे गङ्गा की बाढ़ में तने तक डूबे हुए एक पेड़ में लटका कर मुझे अपनी जीवन-लीला का उत्तरदायित्व सौंप दिया गया।

मुझे उनके न्याय पर दुःख था। दुष्टों ने कितना कष्टमय दण्ड दिया है। मानो मैं अपनी मृत्यु के क्षण गिनने के लिए छोड़ दिया गया। उफ़ ! यह जीवन और मृत्यु के बीच का हिंडोला कितना भयङ्कर था ! यह निश्चय था, कि मैं इस प्रकार रात भर टँगा नहीं रह सकता।

आह ! अब नहीं सहा जाता। पीड़ा के मारे हाथ उखड़े जाते हैं। लाठी के कारण शरीर हिल ही नहीं सकता। उँगलियाँ ढीली हुई जा रही हैं। रमा की वह मूर्ति—आह ! उसके नेत्रों में अश्रु भरे हुए हैं। डाल छूटी जा रही है। मैं अब चला !!

प्रातःकाल हुआ। मुझे दो-तीन मल्लाह चेतना में लाने का प्रयत्न कर रहे थे। किन्तु मैं दूसरी दुनिया के धोखे में था। न तो मैं नेत्र खोलता था, न बोलता था। मैंने धीरे-धीरे नेत्र खोले।

मुझे यह मृत्यु-लोक जान पड़ा, पूछा—कौन गाँव है ?

मल्लाहों ने कहा—कुसुमपुर।

* * *

वास्तव में अब मेरा जीवन बदल गया है। मैं अब उन्हीं महाशय के आश्रय में रहता हूँ, जिनको मैंने डाकाज़नी के मामले से बचाया था। यद्यपि वह मेरे इस कार्य के लिए कृतज्ञ हैं और मुझे कुछ ज़मीन भी जीविका के लिए दे दी है। किन्तु केवल मेरा हृदय जानता है, कि मैंने उनके साथ भी छल करके रुपए लिए थे। इन विचारों से कभी-कभी मुझे बड़ी वेदना हो उठती है, किन्तु वही मेरी भोली-भाली रमा मेरे साथ है। मेरे दुःखों को वह अपनी मुस्कान से उड़ा देती है। मेरा पुत्र अब संस्कृत पढ़ने गुरू जी के यहाँ जाता है। मेरा जीवन अब थोड़े से अन्न और कुछ रुपयों में ही व्यतीत होता है। इस शान्तिमय जीवन का सुख बस मैं ही जानता हूँ।

वह घोड़ेवाला गङ्गापुत्र कभी-कभी मुझसे मिलने आया करता है। उसे देख कर मुझे सङ्कोच होता है और मुझे देख कर उसे।

* * *
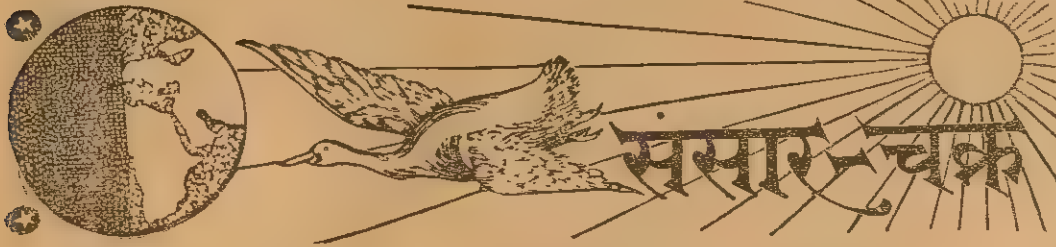
संसार का भावी महासमर

[पं० जनार्दन भट्ट, एम० ए०]

आजकल यूरोप एक बारूदखाना बन रहा है। बारूद तैयार है, बस ख़ाली चिनगारी लगाने की देर है। उस पर तुर्रा यह, कि जो जातियाँ भावी महासमर में सफलता पाने के लिए जी तोड़ कर परिश्रम कर रही हैं और अपनी युद्ध-सामग्री बढ़ा कर दूसरी जातियों को कुचल डालने की फ़िक्र में हैं, वही सब से ज्यादा शान्ति-शान्ति की दुहाई देती हुई सुनाई पड़ती हैं। पिछले महायुद्ध के बाद ऐसा मालूम पड़ता था, कि मानो यह आख़िरी लड़ाई थी और संसार अब सदियों तक सार्वभौमिक शान्ति के साम्राज्य में अविच्छिन्न सुख का अनुभव करेगा; पर शान्ति की आशा एक अभागे मनुष्य के सपने के समान साबित हुई। अभी पिछले महासमर में बहा हुआ ख़ून लड़ाई के मैदान में सूखने भी न पाया था, कि एक दूसरे महायुद्ध के काले बादल यूरोप के आसमान में मँडराते हुए नज़र आ रहे हैं।

इसमें सन्देह नहीं, कि यह युद्ध यूरोप में छिड़ेगा। पर इससे यह न समझना चाहिए कि इसका दायरा ख़ाली यूरोप तक ही महदूद रहेगा। इसकी लपेट में एशिया और अमेरिका की भिन्न-भिन्न जातियाँ भी आ सकती हैं। पर इसकी आग शुरू-शुरू भड़केगी यूरोप में। वहीं से इस आग की लपक एशिया और अमेरिका में भी पहुँच सकती है। अतएव आइए देखें, इस महायुद्ध के कौन-कौन से कारण होंगे और क्यों यह लड़ाई यूरोप में ही भड़केगी?

मुख़्तसर में, इस महायुद्ध का सब से बड़ा कारण यह होगा, कि कुछ जातियों के अधिकार में बहुत बड़ी दौलत, बहुत सी ज़मीन, अनेक देश और अनेक साधन हैं, पर उन्हीं के मुक़ाबिले की दूसरी जातियाँ उन साधनों से वञ्चित होकर हाथ मल-मल पछता रही हैं और ईर्ष्या की भट्ठी में निरन्तर जलती रहती हैं। वे बहुत दिनों से इस बात की ताक में हैं, कि कब मौक़ा मिले और कब हम इन मदमत्त जातियों को पछाड़ कर संसार की जातियों के बीच वही दर्जा हासिल करें, जो इन आगे बढ़ी हुई जातियों को हासिल है। इस दृष्टि से संसार का सब से महत्वपूर्ण स्थान यूरोप है। वहाँ के जितने राष्ट्र हैं, सब दो बड़े विभागों में बँटे हुए हैं। एक विभाग में वे सब जातियाँ हैं, जिनके पास अधिक देश, अधिक धन और अधिक शक्ति है और दूसरे विभाग में वे जातियाँ हैं, जिनके पास दूसरे से कम ज़मीन, कम दौलत और कम ताक़त है। इन दोनों में अधिक भाग्यशाली वही देश है, जिसके सिर पर पिछले महायुद्ध में विजय का सेहरा बँधा था। वे देश मुख्यतः इङ्गलैण्ड और फ़्रान्स हैं।

जो जातियाँ किसी युद्ध में विजयी होती हैं, वे स्वभावतः नफ़े में रहती हैं। विजयी के परिणाम में आमतौर पर उनकी अभिलाषाएँ पूरी हो जाती हैं। वे स्वभावतः यही चाहती हैं, कि जो सम्पत्ति, जो देश और जो शक्ति हमारे हाथ में आ गई है, वह सदा हमारे हाथ में बनी रहे। वे सदा शान्ति, मेल और भ्रातृ-भाव की बातें बूका करती हैं। क्योंकि बिना शान्ति स्थापित हुए वे उस सम्पत्ति और सुख का यथेष्ट उपभोग नहीं कर सकतीं, जो युद्ध के परिणाम में उन्हें प्राप्त हुए हैं। अतएव युद्ध के बाद विजयी जातियाँ सदा शान्ति-शान्ति का मन्त्र जप कर दूसरी जातियों को अपने भाग्य पर निर्भर रहने का उपदेश दिया करती हैं। यही हाल फ़्रान्स और इङ्गलैण्ड का है। ऊपर से दिखाने के लिए वे ही सब से ज्यादा शान्ति के के लिए उत्सुक दिखाई पड़ते हैं! उन्हीं के प्रधान उद्योग से राष्ट्र-सङ्घ या "लीग ऑफ़ नेशन्स" की स्थापना हुई, जिससे दुनिया को यह विश्वास हो जाय, कि इङ्गलैण्ड और फ़्रान्स युद्ध का सदा के लिए अन्त कर देने के लिए कितने उत्सुक हैं। अस्तु।

इनके अलावा कई छोटे-छोटे देश और भी हैं, जिनको शान्ति से ही फ़ायदा है। ये देश जेकोस्लोवेकिया, ज्यूगोस्लाविया, रूमेनिया और पोलैण्ड हैं। ये सब देश पिछले महायुद्ध की बदौलत बने हैं। वे अभी तक अपनी स्थिति को मज़बूत नहीं बना पाए हैं। नए युद्ध से उन्हें कोई लाभ की सम्भावना भी नहीं है। युद्ध से उलटा उनमें से दो-एक का अस्तित्व ही लोप हो सकता है। इनमें से हर एक देश में कई अल्प-संख्यक जातियाँ भी बसती हैं। उदाहरण के तौर पर रूमेनिया में १ करोड़, २५ लाख रूमेनियन और ५० लाख अन्य जातियों के लोग बसते हैं। इसी तरह ज्यूगोस्लाविया में लगभग आधे दर्जन के अल्प-संख्यक जातियाँ रहती हैं। जेकोस्लोवेकिया में ६७ लाख जेक्स, २२ लाख स्लोव्क्स और ५० लाख दूसरी जातियों के लोग बसते हैं। यही हाल पोलैण्ड का भी है। पोलैण्ड के २ करोड़, ९० लाख निवासियों में असली पोल्स सिर्फ़ १ करोड़, ८० लाख ही हैं। आम तौर पर इस तरह के देश, जिनमें कई एक दूसरे से भिन्न जातियाँ निवास करती हैं, युद्ध के इच्छुक नहीं होते, क्योंकि युद्ध से उनके छिन्न-भिन्न हो जाने का बड़ा डर रहता है। इनके अलावा कई छोटे-छोटे देश, जैसे स्विटज़रलैण्ड, डेनमार्क, बेल्जियम, हॉलैण्ड इत्यादि भी हैं, जो युद्ध के ख़िलाफ़ रहते हैं; क्योंकि उदासीन रहने पर भी इन्हें अप्रत्यक्ष रीति से युद्ध से कुछ न कुछ हानि अवश्य उठानी पड़ती है। इन सब देशों को शान्ति से ही लाभ है।

लेकिन कई देश ऐसे भी हैं, जो भावी महासमर से भरपूर लाभ उठाने का स्वप्न देख रहे हैं। इन देशों में हङ्गरी का दर्जा अव्वल है। पिछले महायुद्ध के परिणाम में हङ्गरी की ७२ फ़ी सदी ज़मीन और ६४ फ़ी सदी आबादी उसके हाथ से निकल गई। हङ्गरी के ३० लाख निवासी अपनी मातृभूमि से विलग करके विदेशियों की हुकूमत में रख दिए गए। हङ्गरी इससे भीतर ही भीतर क्रोध की आग में जल रहा है और जिस सन्धि की बदौलत यह हालत हुई है, उस सन्धि को उलट देने का मौक़ा ढूँढ़ रहा है। हङ्गरी के सब ही लोग इस सन्धि के विरुद्ध हैं। अगर उन्हें यह पक्का निश्चय हो जाय, कि युद्ध में जाने से जो ३० लाख हङ्गरी-निवासी अपनी मातृभूमि से अलग कर दिए गए हैं, वे फिर हङ्गरी को वापस मिल सकते हैं, तो वे आज संग्राम छेड़ने को तैयार हैं। हङ्गरी की बड़ी-बड़ी संस्थाएँ युद्ध के लिए तैयारी कर रही हैं। हङ्गरी-निवासी अपने पराधीन भाइयों को विदेशियों की ग़ुलामी से छुड़ाना अपना पवित्र कर्तव्य मान रहे हैं। यदि युद्ध से उनका यह उद्देश्य सिद्ध होता हो, तो फिर उन्हें दुनिया क्या कहती है, इसकी परवाह नहीं है।

यही हाल मेसिडोनिया की भी है, जो बालकन प्रायद्वीप के मध्य में स्थित है। मेसिडोनिया की भूमि ग्रीस, ज्यूगोस्लाविया और बलगेरिया, इन तीन देशों के बीच बँट गई है। मेसिडोनियन इससे बहुत ही असन्तुष्ट हैं। वे आज़ादी चाहते हैं। आज़ादी की लड़ाई लड़ने के लिए उन्होंने एक क्रान्तिकारी संस्था भी स्थापित कर रक्खी है। इस क्रान्तिकारी संस्था का उद्देश्य गुप्त या प्रकट रीति से शत्रु-दल के प्रधान-प्रधान व्यक्तियों की हिंसा करना है। चूँकि बलगेरिया के अधिकतर लोग मेसिडोनियन हैं, इसलिए बहुत से बलगेरियन भी मेसिडोनियन लोगों के इस उद्योग के साथ सहानुभूति रखते हैं। मेसिडोनियन लोग भी भावी महायुद्ध से अपना उद्देश्य सिद्ध करने का स्वप्न देख रहे हैं।

एक बड़ी शक्ति जो हङ्गरी, मेसिडोनिया और बलगेरिया से सहानुभूति रखती है—इटली है। पिछले महायुद्ध से इटली को जितनी आशा थी उतना लाभ नहीं हुआ। इटली यह समझता है, कि हमारे महत्व के अनुसार जितनी भूमि हमको मिलनी चाहिए थी, उतनी नहीं मिली। मुसोलिनी के नेतृत्व में इटली धीरे-धीरे बड़ा शक्तिशाली बन रहा है। उसमें आत्माभिमान की मात्रा दिनोंदिन बढ़ रही है। वह अपनी वर्तमान स्थिति से सन्तुष्ट नहीं है। वह चाहता है, कि दुनिया में जो दर्जा

बड़ी-बड़ी शक्तियों को प्राप्त है, वही हमें भी मिले। वह इस बात से भी असन्तुष्ट है, कि युगोस्लेविया का कुछ हिस्सा, जो उसको मिलना चाहिए था, युगोस्लेविया को दे दिया गया है। इसलिए वह यूरोप के वर्तमान देशों की सीमा में भारी परिवर्तन कराने की धुन में लगा हुआ है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि कभी युद्ध छिड़ा, तो इटली शायद पहला देश होगा, जो उसमें कूदेगा।

अब रह गई जर्मनी की बात। यह तो निश्चय ही है कि जर्मनी की ताक़त दिन पर दिन बढ़ रही है। जर्मन लोग फिर से आस्मान के नीचे अपना उचित स्थान प्राप्त करना चाहते हैं। पिछले महायुद्ध के बाद जो सन्धि हुई, उससे जर्मनी की आबादी का एक बड़ा हिस्सा अपनी मातृभूमि से अलग करके दूसरे देशों में मिला लिया गया। इससे जर्मनी बहुत असन्तुष्ट है। ३ लाख, ३५ हज़ार जर्मन ज़ेकोस्लेवेकिया में, १ लाख पोलैण्ड में और कई लाख जर्मन दूसरे देशों में बटे हुए हैं। इनमें से बहुत से जर्मन फिर से अपनी मातृभूमि के अन्दर आना चाहते हैं और जिनको फिर से अपनी मातृभूमि मिलने की आशा नहीं है, वे कम से कम अपनी मातृभूमि को सर्वोच्च स्थान पर स्थित देखना चाहते हैं। संसार में फिर से अपना सर्वोच्च आसन ग्रहण करने के लिए जर्मन जी-तोड़ परिश्रम कर रहा है। इसी उद्देश्य से वह ऑस्ट्रिया के साथ एक होना चाहता है। यह एक निश्चित-सी बात है कि चाहे देर में हो या जल्दी, जर्मनी और ऑस्ट्रिया दोनों एक सम्मिलित राष्ट्र बन कर यूरोप में अपना सिक्का जमाने का प्रयत्न करेंगे। यूरोप में जो भावी परिवर्तन होने वाले हैं, उनमें जर्मनी और ऑस्ट्रिया का मिल कर एक राष्ट्र बनना निश्चित-सा है।

अब रह गया रूस। वह तो युद्ध के लिए उधार खाए बैठा है। वह पूँजीपति और साम्राज्यवादी राष्ट्रों से घिरा हुआ है और उनके द्वारा सताया भी काफ़ी गया है। वह इन राष्ट्रों की बदौलत, न तो अपना व्यापार बढ़ा सकता है और न अपने सिद्धान्तों का प्रचार ही स्वतन्त्रता के साथ कर सकता है। इसलिए वह भी युद्ध के लिए कमर कस कर तैयार है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, हङ्गरी, मेसिडोनिया, बलगेरिया, इटली, जर्मनी और रूस, इतने देश युद्ध के पक्ष में है। फिर युद्ध क्यों नहीं छिड़ता? इसका कारण यही है, कि अभी उन सभों के बीच आपस में कोई समझौता नहीं हो पाया है। जिस दिन इन राष्ट्रों के बीच समझौता हुआ, कि फिर युद्ध छिड़ने में देर न लगेगी। युद्ध छिड़ते ही जो देश इस समय शान्ति-शान्ति चिल्ला रहे हैं, वही शायद युद्ध के मैदान में सब से आगे दिखाई पड़ेंगे। पिछला महायुद्ध बालकन प्रायद्वीप से शुरू हुआ था और भावी महायुद्ध भी यदि छिड़ेगा, तो वहीं से छिड़ेगा; क्योंकि पिछले महायुद्ध की सन्धि से असन्तुष्ट जातियाँ अधिकतर वहीं निवास करती हैं।

* * *

क्या क़ैसर वास्तव में संसार की शान्ति का बैरी था?

"मुझे युद्ध से घृणा है। मैं युद्ध नहीं चाहता। मैं शान्ति-प्रेमी हूँ। युद्ध से केवल दोनों दल का सर्वनाश होता है"

—क़ैसर

[यह लेख लेडी नोरा बेंटिंक नामक एक सुप्रसिद्ध अङ्गरेज़ महिला द्वारा लिखा गया है। आप एक डच रईस की धर्मपत्नी हैं, जो क़ैसर का मित्र था। आपका क़ैसर से ख़ूब परिचय था।

—सं० 'भविष्य']

क़ैसर की वास्तविक प्रकृति तथा स्वभाव से बहुत कम लोग परिचित हैं। वह गत महायुद्ध के रणाङ्गण में विरोधी दल का नेता था, इसीसे इङ्गलैण्ड तथा उसके सहयोगियों ने उसकी बहुत निन्दा की थी। संसार के अधिकतर लोग यह समझते हैं कि जर्मनी का बादशाह क़ैसर अत्यन्त क्रूर प्रकृति का मनुष्य था। उसमें प्रेम, ममता तथा दया का तो लेश-मात्र भी न था। वह बड़ा लोभी तथा घमण्डी था और अपने सैनिक बल द्वारा सारे यूरोप को अपने क़ब्ज़े में करना चाहता था। गत महायुद्ध को आरम्भ करने का सारा दोष भी उसी पर मढ़ा जाता है। यह विरोधी दल के आन्दोलन का फल है। उन्होंने अपने समाचार-पत्रों तथा अन्य पुस्तकों में क़ैसर की हर तरह से निन्दा की थी। उन्होंने क़ैसर के ऐसे चित्र बना कर प्रकाशित किए थे, जिनसे उसकी आँखों से क्रूरता टपकती थी और मुख-मुद्रा से घमण्ड तथा दुष्टता झलकती थी। अधिकांश जनता, जो क़ैसर के वास्तविक स्वभाव तथा गुणों से परिचित न थी, उसे वर्तमान युग का 'रावण' समझती थी।

परन्तु जब हम क़ैसर के वास्तविक स्वभाव को देखते हैं, तब हमें इन पत्रकारों तथा लेखकों की धूर्तता का पता चलता है। मैं इस विषय में ठीक-ठीक पता दे सकती हूँ। क्योंकि क़ैसर के स्वभाव से मैं पूर्णतया परिचित हूँ। जर्मनी की बादशाहत से त्याग-पत्र देने के पश्चात् मैंने क़ैसर के विषय में एक पुस्तक लिखी थी, जिसे देख कर वे मुझसे बहुत अप्रसन्न हुए थे। परन्तु इसमें मेरा कोई दोष न था। जर्मनी के कुछ लेखकों ने, जो कि क़ैसर के विरोधी थे, मेरी आज्ञा के बिना मेरी पुस्तक का कुछ अंश जर्मन भाषा में प्रकाशित किया।

वे वाक्य इस तरह से रक्खे गए थे कि उनका मतलब बिल्कुल बदल गया था। इससे सम्राट मुझसे बहुत अप्रसन्न हुए। इस घटना का वर्णन मैंने एक विशेष उद्देश्य से किया है। मैं इससे यह दिखाना चाहती हूँ कि मैं यहाँ क़ैसर की झूठी प्रशंसा न करूँगी। मैंने अपनी पुस्तक में सारी सच्ची बातों का वर्णन किया था। उनमें से कुछ बातें ऐसी भी थीं, जो कि क़ैसर के विरुद्ध थीं। परन्तु मैंने उन्हें छिपाने के बजाय सत्यप्रियता के कारण पुस्तक में उनका उल्लेख किया था।

अब मेरा क़ैसर से प्रथम परिचय का हाल सुनिए। मैं उस घटना को कभी नहीं भूल सकती। आज से ३३ वर्ष पूर्व, जब मैं पाठशाला में पढ़ती थी, सम्राट विलियम क़ैसर ड्रेसडन में सेना का निरीक्षण करने आए थे। उस समय मुझे सम्राट का दर्शन प्राप्त हुआ। सम्राट के विभव-पूर्ण तथा अनुपम गुणयुक्त व्यक्तित्व की मेरे हृदय में बड़ी गहरी छाप पड़ी। मुझे अभी तक अच्छी तरह से स्मरण है, मैंने अपनी बचकानी सारङ्गी का नाम "विलियम" रक्खा था, क्योंकि मैं समझती थी कि क़ैसर का व्यक्तित्व मेरी सारङ्गी से निकलने वाले सङ्गीत की तरह कोमल, मधुर और सुन्दर था। बचपन का ख़याल बहुधा सच होता है और इस महायुद्ध के हो जाने पर भी क़ैसर के विषय में मेरी वही धारणा है, जोकि प्रथम दर्शन के समय थी। क़ैसर के वास्तविक स्वभाव को जानने के लिए यह अति आवश्यक है कि जर्मन-सरकार के सारे कार्यों से उसे अलग रक्खा जावे। उसके शासन-काल में बहुत सी बातें ऐसी हुईं, जिनसे वह तनिक भी सहमत न था। परन्तु राजनैतिक चालों के मारे उसे उन कार्यों का समर्थन करना पड़ता था। विरोधी दल ने जर्मनी के कार्यों की बेहद निन्दा की है। संसार को जर्मनी तथा उसके सम्राट के विरुद्ध भड़काने के उद्देश्य से उन्होंने उस पर कई दोषारोपण किए हैं। इसलिए अधिकांश लोग यह समझते हैं कि क़ैसर मूर्ख तथा घमण्डी प्रकृति का था। इसलिए उसके साथी उससे डरते थे और उससे घृणा करते थे।

मेरी तरह जिनको क़ैसर के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वे जानते हैं कि यह मत सर्वथा असत्य है। क़ैसर का प्रत्येक मित्र उसे बहुत ही ज़्यादा प्यार करता था। उसके मित्र अभी तक उसकी भलाई के लिए चिन्तित रहते हैं। क़ैसर के ख़ानगी नौकर भी उसे बहुत ज़्यादा चाहते हैं। यही नहीं, ऐसा कोई मनुष्य नहीं है, जो उसके मन-माधुर्य तथा अपूर्व आतिथ्य से मुग्ध न हो जाता हो।

इस विषय में मैं एक घटना का वर्णन करूँगी। १० नवम्बर, सन् १९१८ को मैं अपनी मोटर पर ईजडन की ओर निकली, यहाँ मुझे एक ख़बर

मिली। जर्मन सेना के अन्तिम पराजय से दुखित होकर सम्राट जब अपनी मातृभूमि जर्मनी से अन्तिम विदा लेकर हॉलैण्ड की ओर भाग रहे थे, तब एक डच सैनिक ने उनकी मोटर रोकी थी और उनसे अनुमति-पत्र (Passport) माँगा था। मुझे मालूम हुआ कि वह सैनिक इसी ग्राम में रहता था। मैं उससे मिली। वह एक साधारण सा किसान था। मैंने उससे पूछा कि "क्या तुमसे .कैसर से भेंट हुई थी?" वह हँस कर बोला—"जी हाँ, एक रोज़ रात को हम लोग डच सीमा की रक्षा कर रहे थे, इतने में अँधेरे में मुझे कुछ मोटरें आती हुई दिखाई दीं। हमें देख कर उन्होंने अपनी मोटरों की गति और तेज़ कर दी, परन्तु हम लोग रास्ते में क़तार बना कर खड़े हो गए और उन्हें मोटरें रोकनी पड़ीं। पहिली मोटर का दरवाज़ा खुला और एक अधिकारी बाहर कूदा। उसकी पोशाक से मैं यह समझ गया कि यह सेना का कोई बड़ा अधिकारी है। वह लपक कर मेरे पास पहुँचा। हम लोगों ने उसे सलाम किया। वह बहुत अप्रसन्न मालूम होता था। उसने हम लोगों से कहा—तुम हम लोगों को क्यों रोक रहे हो?

मैं—यदि आप हमें अपना अनुमति-पत्र दिखा देवें, तो हम तुरन्त ही रास्ते से हट जायँ।

अधिकारी—हम लोगों के पास अनुमति-पत्र नहीं है। तुम्हें हमें जाने देना पड़ेगा। हम बहुत आवश्यक कार्य से जा रहे हैं।

मैं—यदि आपके पास अनुमति-पत्र नहीं है, तो हमें आपको रोकना पड़ेगा। इस विषय में हम और कुछ नहीं कर सकते।

यह सुन कर वह अधीर हो उठा और बोला कि मैं तुम्हारे अफ़सर से मिलना चाहता हूँ, मुझे टेलीफ़ोन पर ले चलो। मैंने उसे एक सिपाही के साथ दफ़्तर की ओर रवाना किया।

इतने ही में तीसरी मोटर का दरवाज़ा खुला और एक वृद्ध पुरुष उसमें से उतरा। वह मेरी ओर आया। वह नीली पोशाक पहिने हुए था। परिश्रम के कारण वह मैली और गन्दी सी हो गई थी। जब वह मेरे पास आया तो मैंने देखा कि उसका एक हाथ छोटा था। इसी से मैं समझ गया कि यह क़ैसर है। उसके मुख से गम्भीरता तथा करुणा टपकती थी, रोष या चिन्ता का तो नाम भी न था। यह कितने आश्चर्य की बात थी? क्या कोई भी साधारण मनुष्य जीवन के ऐसे विकट समय में इतना शान्त रह सकता था? वह मेरे पास पहुँचा और शान्त-भाव से मुझसे यहाँ-वहाँ की बातें करने लगा। वह मुझसे सिनेमा के विषय में बातें करता रहा। मुझसे पूछता रहा कि मैंने रेमब्रेण्ट तथा अमस्टरडेम के दर्शनीय स्थान देखे हैं या नहीं? वह मुझसे बोला कि हॉलैण्ड मुझे बहुत प्रिय है और मैं अपने मित्र काउण्ट बेटिएक के साथ कई दिनों तक यहाँ रह चुका हूँ। फिर वह बोला—"मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। तुमने हमें रोक कर अपनी कर्त्तव्यनिष्ठा दिखाई है।" कुछ देर के बाद उसने मुझसे पूछा—"क्या तुम चाहते हो कि सन्धि हो जावे?" मैंने कहा—"जी हाँ!" इस पर उसने बिना किसी क्रोध के उत्तर दिया—"अब से चौबीस घण्टे बाद तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो जावेगी।"

उसकी बातों से प्रकट होता था कि वह युद्ध से तङ्ग आ गया था। अनुमति-पत्र न होने के कारण मुझ ऐसे साधारण सैनिक ने उसे कई घण्टे वहाँ रोक रक्खा था, परन्तु इससे वह ज़रा भी अधीर न हुआ और उस ठण्ढक में शान्त भाव से बातें करता रहा।

यही वह क़ैसर था, जिसका सम्पूर्ण वैभव, समस्त राज्य छिन चुका था। इस समय वह अपनी प्राण-रक्षा के लिए भाग रहा था। यदि क़ैसर में घमण्ड या नीचता होती, तो वह इस समय अवश्य प्रकट हो जाती। मैं तो समझती हूँ कि यूरोप में शान्ति स्थापित करने के उद्देश्य से क़ैसर ने अपना सर्वस्व समर्पण कर दिया। इस पर भी लोगों का यह विश्वास है कि अपनी सत्ता की उन्नति करने के उद्देश्य से उसने गत महायुद्ध आरम्भ किया था। मुझे यह निश्चय रूप से मालूम है कि वह इस युद्ध के बहुत विरुद्ध था। सन् १९१४ में जब उसके मन्त्री युद्ध-घोषणा पर उसके हस्ताक्षर कराने पहुँचे, तब वह बड़ी देर तक हस्ताक्षर करने से इन्कार करता रहा। वह बार-बार यह कहता था कि "मुझे युद्ध से घृणा है। मैं युद्ध नहीं चाहता। मैं शान्ति-प्रेमी हूँ। युद्ध से केवल दोनों दलों का सर्वनाश होता है। मैं इस घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर न करूँगा।"

यह कह कर वह अपने कमरे में टहलता रहा, परन्तु आख़िर में उसके मन्त्रियों ने उसे हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया। इससे बचने का केवल एक मार्ग था, वह था राज्यपद से त्याग-पत्र दे देना। पर वह ऐसे समय में अपने देश का साथ नहीं छोड़ना चाहता था। इससे उसे अपने मन्त्रियों का कहना मानना पड़ा।

आज क़ैसर सारे राज्य-भारों से अलग होकर अपने जीवन का शेष भाग डूर्न में बिता रहा है, उसे यह जान कर बहुत दुःख होता है कि गत युद्ध छेड़ने का सारा दोष उसी के सिर मढ़ा जाता है। और संसार की जनता उसे क्रूर तथा घमण्डी समझती है। इसलिए निष्पक्ष जनता को चाहिए कि वह विपक्षी दल के जाल में न फँसे और .कैसर के वास्तविक स्वभाव से परिचित होने का प्रयत्न करे। आज .कैसर की आयु ७२ वर्ष की है। यदि आज वर्तमान संसार .कैसर के वास्तविक रूप को समझ ले, तो इससे उसकी वृद्ध आत्मा को बड़ी शान्ति मिलेगी।

* * *

वीर जवाहर

[श्री० 'द्विजश्याम']

औसर हू पै सचेत रह्यो न डिग्यो डग
साँची सोई थिरता है।
मोहनी मन्त्रन और षड्यन्त्रन सों
नहीं मोहिबो माहिरता है।
है गुन ही की चिरन्तनता 'द्विजश्याम'
नहीं बय की चिरता है।
नीति ही सों पग आगे परै सो
जवाहर तेरी जवाहिरता है।

* * *

तूफ़ाने ज़राफ़त

ग़फ़लतों का ख़ूब देखा है तमाशा दह्र[1] में,
मुद्दतें गुज़री हैं मुझको होश में आए हुए।
ख़ानए दिल को मेरे तोड़ा तो क्या ऐसी नमूद,
चश्म[2] बद दूर आप तो हैं मसजिदें ढ़ाए हुए।
सेठ साहब के यहाँ शादी है रिन्दों[3] को नवेद,
अच्छे-अच्छे ताएफ़े हैं शहर में आए हुए।
बाई जी ने सच कहा लाओ कोई ताज़ा ग़ज़ल
गीत क्या गाऊँ ग्रामोफ़ोन के गाए हुए
हो चुकी दो दिन की शादाबी उड़ा रङ्गे बहार
फूल हैं सूखे हुए, ग़ुञ्चे[4] हैं मुरझाए हुए

× × ×

ख़ुद गवारा नहीं फ़रियाद का यह जोश मुझे,
कर भी चुकती अजल[5] आकर कहीं ख़ामोश मुझे।
अक़्ल कुछ कर न सकी क़द्र शिनासीय जुनूँ,
बज़्मे[6] हस्ती में मुबारक न हुआ होश मुझे।
हालते क़ाबिले फ़रियाद के सब हैं शायद,
इससे क्या होता है कर दीजिए ख़ामोश मुझे।
ताब नज़्ज़ारये गुलज़ार मैं क्या लाऊँगा,
रुत बदलना ही किए देता है बेहोश मुझे।
बुतपरस्ती में भी परदे का हूँ हामी[7] "अकबर"
बख़्श ही देगा .ख़ुदावन्द ख़तापोश[8] मुझे।

× × ×

बज़्मे तरब[9] में भी जो हज़ीं[10] से हज़ा रहे,
दिल उसका उसके साथ है, कोई कहीं रहे।
करते तमाम उम्र चुनाँ और चुनीं रहे,
आख़िर में की नज़र तो जहाँ थे वहीं रहे।
रक्खे न हमसे दोस्त उमीदे निशाते[11] तबआ
गो अञ्जुमन[12] वही है, हम अब वह नहीं रहे!
पैदा ज़्यादा सबसे दलीलें हमीं ने कीं,
और शुबहे में भी सबसे ज़्यादा हमीं रहे।

—स्वर्गीय "अकबर" इलाहाबादी

* * *

क्यों न बँगले पर फिरें अहबाब[13] इतराए हुए,
जो कलक्टर थे वह बन कर लाट हैं आए हुए।
कह रहे थे लोग यारों में बड़ी शेख़ी के साथ,
हम हज़ारों इस तरह के हैं डिनर खाए हुए।
अरदली यह कह के लेता है ख़बर एक-एक की,
क्यों हो बदली की तरह, बँगले पे तुम छाए हुए।
रात-दिन कॉलिज के लड़कों में इसी का ज़िक्र है,
वह विलायत से नई डिगरी हैं अब लाए हुए।
लोग कहते हैं, तड़पने को हमारे देख कर,
तुम हो "बिस्मिल" क्या किसी क़ातिल के
तड़पाए हुए।

× × ×

अब उभरने न कभी देगा मेरा जोश मुझे,
आप क़ानून से करने लगे ख़ामोश मुझे।
ज़ीस्त[14] कहते हैं जिसे नींद है बेहोशी की,
मौत जब आएगी तो आएगा कुछ होश मुझे।
देख लेता हूँ ज़माने की तरफ़ ऐ "बिस्मिल",
अब तड़पने का वह बाक़ी न रहा जोश मुझे।

"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

१—संसार २—बुरी आँख से बचाए, ३—पीने वाले, ४—कलियाँ, ५—मौत, ६—संसार ७—साथी, ८—गुनाह छुपाने वाला, ९—आनन्द, १०—दुखी, ११—ख़ुशी, १२—सभा, १३—साथी, १४—ज़िन्दगी

साहित्य का सपूत

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—१; दृश्य—५

रास्ता

(साहित्यानन्द का क्रोध में बड़बड़ाते हुए आना)

साहित्यानन्द—मूर्खा है, दुष्टा है, एकदम-उहुँक—सहूरत (पैर दो-तीन बार ज़मीन पर पटक कर) पदाघात के योग्य है। ऐसी स्त्री का मुँह काला! नहीं-नहीं, मुख श्याम वर्ण! जो अपने प्राणनाथ को टेसुआ ऐसे अनुचर से पिटवा दे और स्वयं भी धोयँ-धोयँ डण्डा चलायमान करे। परमात्मा भला करे मेरी पगड़ी बाँधने वालों का, जिन्होंने अपने पाग-बन्धन कला-कौशल से मेरे मुण्ड को इतना सुरक्षित कर दिया था कि वह विदीर्ण होने से बच गया। फिर भी उस हत्यारिन ने नोच-खसोट कर पगड़ी खोल ही डाली। तभी तो उसकी बदमाशी-उहुँक—पाजीपन—उहुँक उहुँक-उद्दण्डता मुझे दृष्टिगोचर हुई। नहीं तो मैं इसी भ्रम में रहता कि दङ्गेवाले ही यह धमाधौयँ मचाए हुए हैं। और पूछने पर कहती क्या है कि तुम्हीं तो लल्लू बन कर आए, मेरा क्या दोष? (दाँत पीस कर) झूठी कहीं की! नहीं-नहीं, मिथ्यावादिनी कहीं की। मैं लल्लू हूँ? जब आँख मूँदे मैं अपना गृह जान सकता हूँ तब क्या वह मुझे नहीं पहचान—उँहुक-बोध कर सकती थी? पशु भी मनुष्य को केवल सूँघ कर चीन्ह लेते हैं, परन्तु उसमें तो इतनी भी शक्ति, इतनी भी बुद्धि नहीं है। राम! राम! वह कदापि पत्नी होने योग्य नहीं है। (इधर-उधर देख कर) अरे! टेसुआ कहाँ गमन कर गया। घर से साथ चला और यहाँ तक आते-आते अन्तर्धान हो गया। उस दुष्ट ने मुझे लौट कर अन्वेषण करने का कष्ट दिया? अच्छा मिल जाए तो बताता हूँ।

(लौट जाता है)

(दूसरी तरफ़ से संसारीनाथ, यदुनाथ और रमाकान्त को फिड़कता हुआ आता है।)

संसारी—चलो हटो, ऐसा भी कोई मसख़रापन करता है? ऐन वक्त पर साहित्यानन्द को घेर-घार कर उनके घर में कर दिया।

यदुनाथ—भाई मुझे क्या मालूम था कि तुम उस वक्त अपनी चपला के साथ अन्दर नाटक कर रहे हो।

संसारी—बस-बस, रहने दो। मेरा बना-बनाया खेल का खेल बिगाड़ा और साहित्यानन्द के सामने जाने की मेरी हिम्मत तोड़ी अलग। तुम लोगों के इस बर्ताव से वह मुझसे ज़रूर नाराज़ हो गए होंगे। क्योंकि उस वक्त तुम्हारे साथ मैं भी था।

रमाकान्त—इसकी फ़िक्र न करो। उनकी नस पहचान कर हम लोगों ने उसी वक्त उनकी ऐसी दवा कर दी है कि तुम एक नहीं, लाख बार उनके सामने जाओ, वह भड़क नहीं सकते। हाँ, उनके एकाएक फट पड़ने से जो तुम्हारा मज़ा किरकिरा हो गया, इसका अलबत्ता मुझे अफ़सोस है।

यदुनाथ—अफ़सोस काहे का? क्या फिर इन्हें वैसा मौक़ा न मिलेगा?

संसारी—आह! मौक़ा लेकर मैं क्या करूँ, जब चपला के सामने मेरे मुँह से बोल ही नहीं फूटता। वह तो न जाने कैसे मुझमें उस वक्त, इतनी हिम्मत आ गई थी कि उसे प्यारी कह कर कलेजे से लगा लिया और झट मुँह चूम लिया। यों मुद्दतों से मेरा दिल प्यारी-प्यारी का रट लगाए रहा, मगर सच जानो कि सैकड़ों कोशिशें करने पर भी यह कम्बख़्त ज़बान उसके मुँह के सामने उसे कभी प्यारी न कह सकी। इसीलिए तो उस मौक़े के ख़राब हो जाने पर मुझे इतना अफ़सोस है।

यदुनाथ—(हँस कर) अहाहाहा! प्यारी-प्यारे वग़ैरह तो दिल के शब्द हैं भाई, इनको ज़बान कहना क्या जाने? जब प्रेम के आलिङ्गन में एकाएक प्रेम का जोश भड़क उठता है, तभी आवेश में चुपके से कानों के पास ये शब्द मुँह से निकल पड़ते हैं। वैसे तो दिल ही दिल में रहना जानते हैं और निकलते भी हैं तो बस एकान्त में, या ख़तों में।

रमाकान्त—वाह उस्ताद! मान गया। तुमने बड़ी गहरी बात बताई। बहुत सच है। मगर अफ़सोस तो यह है कि हमारे औपन्यासिकों के हाथ में ये टके पसेरी से भी बत्तर हो रहे हैं।

यदुनाथ—यह तो इसलिए कि यह लोग अनुभव को कोई चीज़ नहीं समझते। बस दूसरों ही के सहारे पर चलना जानते हैं। इसीलिए आँख मूँदे अङ्गरेज़ी के "Dear Darling" पर अपनी भाषा के "प्यारे-प्यारी" को अन्धाधुन्ध न्योछावर कर रहे हैं। दिल पर हाथ रख कर आँखें खोलें, तब तो उन्हें मालूम हो कि है कहाँ "Dear Darling!" जिनको शिष्टाचार ने इतना मुर्दा बना दिया है कि उन्हें एक भावहीन बूढ़ा पति भी अपनी खूसट बुढ़िया के लिए, अपने सामाजिक नियमानुसार सभों के सामने कहने को मजबूर है। दुश्मन तक के लिए Dear Sir इस्तेमाल ही होता है। और कहाँ हमारे प्रेम-रस में डूबे हुए "प्यारी-प्यारे" ऐसे अनमोल शब्द! दोनों का मुक़ाबला कैसा?

संसारी—अजी भाड़ में जाए तुम्हारी "Dear Darling" मुझे इनसे मतलब? किसी की जान जाए और किसी को लेक्चर की सूझे।

रमाकान्त—अरे यार, लेक्चर नहीं, बात पर बात निकल ही पड़ती है, इसके लिए कोई क्या करे? औपन्यासिक चरित्रों की तरह कोई थोड़े ही बातें कर सकता है कि कहीं पर निशाने पर से बहकने न पाएँ?

यदुनाथ—मैं देखता हूँ संसारीनाथ, कि ज्यों-ज्यों प्रेम तुम्हारे दिल में बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों तुम्हारी अक़्ल पर......

संसारी—पत्थर पड़ता जाता है। बस यही न? अच्छा तो मेरी जान छोड़ो, मेरी दुम के पीछे क्यों पड़े हो?

रमाकान्त—(मुस्करा कर) क्या करें, तुम्हारी प्रेमलीला सुनने में बड़ा मज़ा आता है।

संसारी—अपने सर पड़ती तो यह मज़ा-फ़ज़ा सब भूल जाता। चले हैं दाँत निकालने। हुँ हुँ!

(चिढ़ कर जाना चाहता है)

यदुनाथ—वाह! वाह! क्या दिल के साथ आदमियत भी खो बैठे? (संसारीनाथ का हाथ पकड़ कर) अजब आदमी हो। तुम तो प्रेम में पड़ कर ऐसे बदलते जाते हो कि कुछ कहा नहीं जाता। ठहरो-ठहरो, ज़रा दम ले लो। वह देखो, तुम्हारे साहित्य के सपूत आ रहे हैं।

संसारी—(अब दूसरी तरफ़ जाने का उद्योग करता हुआ) नहीं, मुझे जाने दो। हाथ जोड़ता हूँ।

यदुनाथ—क्यों? क्यों?

संसारी—तुम लोग फिर कुछ न कुछ बेहूदापन करोगे।

यदुनाथ—नहीं-नहीं, तुम्हारे मतलब की बातें करूँगा। वह लो, वह पहुँच गए।

(साहित्यानन्द आकर फिर पीछे की तरफ़ घूम कर देखता है। और यदुनाथ अपनी जेब से रूमाल निकाल कर झट अपने सर में पट्टी बाँधता है।)

साहित्यानन्द—(पीछे देखता हुआ) कहीं पता नहीं। न जाने किधर बिचर गया। (घूम कर सामने देखता हुआ) कौन? संसारीनाथ?

संसारीनाथ—(घबरा कर) ज-ज-जी! प-प्रणाम।

साहित्यानन्द—कहो, तुम्हारे वे दोनों मित्र दङ्गे में मारे गए या बचे? ये लोग कौन हैं? आहा! आप ही लोगों को पूछ रहा था। आप दोनों तो अभी जीवित प्रतीत होते हैं।

यदुनाथ—यही सोच तो हम लोगों को भी आपके बारे में थी। और मुझे तो अब भी विश्वास नहीं होता कि आप आप ही हैं। सच बताइए, आप मरे तो नहीं।

साहित्यानन्द—नहीं-नहीं, मैं तो अपनी पगड़ी की कृपा से साफ़—उहुँक—प्रत्यक्ष बच गया। उन दुष्टों को पता ही नहीं चला कि उसके भीतर मेरा मुखारविन्द किधर है और मुण्ड किधर है। परन्तु आप तो मानो चोट खा गए।

संसारी—(अलग) भई वाह, अच्छी पट्टी पढ़ा रक्खी है। चलो जान में जान तो आई।

यदुनाथ—(अपने सर पर हाथ रख कर) जी हाँ, आप ही के बचाने की कोशिश में।

संसारी—कोशिश नहीं, चेष्टा कहिए।

यदुनाथ—ठीक कहा। साहित्य-निधान! धन्य हैं आप, कि आपको साहित्य का सदा ध्यान तो बना रहता है। भला ऐसे जीव इस हिन्दी-संसार में कहाँ? ईश्वर आपको आपकी बुद्धि समेत चिरायु करे। देखो जी रमाकान्त, तुम भी और

संसारीनाथ, तुम भी आपसे सर्वदा साहित्यिक भाषा में वार्तालाप किया करो।

साहित्यानन्द—(बीच ही में सर हिला कर) हाँ-हाँ, जैसी पुस्तकों में लिखी होती है। यही तो सब से कहा करता हूँ।

यदुनाथ—क्योंकि आप साहित्य के—

साहित्यानन्द—साहित्य के, हाँ कहो-कहो!

यदुनाथ—भतीजे हैं।

साहित्यानन्द—अरे! भतीजे नहीं, सपूत।

यदुनाथ—वही बात हुई, देखिए अब तो मैं आपके विचारानुकूल शुद्ध बोलने लगा न?

साहित्यानन्द—हाँ थोड़ा-बहुत—नहीं-नहीं—किञ्चित महान। परन्तु अभी आपको अभ्यास की आवश्यकता है।

रमाकान्त—(मुस्करा कर) किञ्चित महान?

यदुनाथ—ख़ैर—नहीं नहीं नहीं नहीं—क्या नाम के हाँ, अस्तु। अस्तु, जब बिना अभ्यास के किञ्चित-किञ्चित शुद्ध बोलने लगा तो कुछ दिवस पर्यन्त मैं अवश्य ही महान-महान शुद्ध बोलने लगूँगा।

साहित्यानन्द—ओहोहो। इस बार तो आप अत्यन्त ही स्वच्छ भाषा बोल गए। आप बड़े तीक्ष्ण बुद्धि वाले हैं। शीघ्र ही उन्नति कर जाएँगे। (रमाकान्त से) आप क्यों मौन हैं, आप भी तो कुछ बोलिए। यदि आप सब लोग इसी प्रकार बोलने लगें तो फिर क्या कहना है।

यदुनाथ—जी हाँ, तब पुस्तकें पढ़ने की कोई आवश्यकता न रह जाएगी।

साहित्यानन्द—निस्सन्देह। इसे तो मैंने सोचा ही नहीं था। वाह! वाह! आम के गुठली के मूल्य। (रमाकान्त से) कहो भाई—उहुँक—भ्राता, हाँ-हाँ, कहो भ्राता है न?

रमाकान्त—मैं सोच रहा हूँ, आप इतने उदास क्यों प्रतीत होते हैं।

यदुनाथ—यह मुझसे पूछो, चिन्ता के मारे।

साहित्यानन्द—(ठण्ढी साँस लेकर) हाँ चिन्ता तो आजकल सचमुच नाक में दम—उहुँक—नासिका में श्वास किए हुए है।

यदुनाथ—वाह! वाह! नासिका में श्वास! (साहित्यानन्द के पैर छूकर) धन्य हैं आप। बलिहारी है! आप साहित्य के सपूत ही नहीं, वरन् नाती-परनाती सब कुछ हैं।

रामाकान्त—(मुँह छिपा कर अपनी हँसी रोकता हुआ) मैं तो समझा नासिका में बाँस कह रहे हैं। अस्तु, चिन्ता किस बात की?

यदुनाथ—अजी इतना भी नहीं जानते कि आप बाल-बच्चे वाले हैं, आपको चिन्ता न होगी तब क्या पेड़-पालो को होगी।

साहित्यानन्द—बस-बस-बस-बस, यही बात—उहुँक—वार्ता, हाँ यही वार्ता है। मैं बाल-बच्चे वाला हूँ, यही चिन्ता है। (यदुनाथ से) आप तो मानो अन्तर्यामी हैं।

यदुनाथ—हाँ, कुछ ज्योतिष भी जानता हूँ इसीलिए। आपके कोई लड़का तो है नहीं, केवल एक सज्ञान पुत्री है, वह भी कुँवारी?

साहित्यानन्द—और स्त्री भी तो है।

यदुनाथ—हाँ-हाँ!

साहित्यानन्द—इसीलिए तो चिन्ता इतना व्याकुल किए हुए है।

यदुनाथ—क्यों नहीं।

साहित्यानन्द—यदि मेरा विवाह न हुआ होता, तो इस समय फिर क्या पूछना था।

यदुनाथ—और क्या, तब यह झञ्झट सर पर पड़ता ही क्यों? न पेड़ होता न पत्ते गिनने पड़ते।

साहित्यानन्द—बिल्कुल सच है—उहुँक—सम्पूर्ण सत्य है। तब इस समय सचमुच चिन्ता-फिन्ता कुछ भी न होती।

रमाकान्त—मैं समझ गया। आपको आजकल विवाह की चिन्ता घेरे हुए है।

नयनामृत

[श्री० केदारनाथ जी, बी० ए; बी० टी० 'बेकल']

(ग़ज़ल)

जाने क्या जादू डाल दिया,
नँदनन्द तुम्हारी आँखों ने।
आँखों की राह पिलाया है—
मकरन्द तुम्हारी आँखों ने।
भागूँ दिल छूटा जाता है—
ठहरूँ झाँकी की ताब नहीं।
दोनों ही रस्ते कर डाले,
हैं बन्द तुम्हारी आँखों ने।
सैनों से आश बँधा देना,
एक प्रेम-तरङ्ग उठा देना।
क्या बतलाऊँ क्या-क्या न दिया,
आनन्द तुम्हारी आँखों ने।
चटकीं, मटकीं, सहमीं, झिझकीं,
सकुचीं, चमकीं ताका मारा।
कैसे-कैसे यह सीखे हैं,
छल-छन्द तुम्हारी आँखों ने।
चितवन से चित्त चुराते हो—
पलकों से तीर चलाते हो।
एक अद्भुत जाल बिछाया है,
बृजचन्द तुम्हारी आँखों ने।
करुणा की दृष्टि पड़ी जिस पर—
उसका सब सङ्कट दूर किया।
"बेकल" का छिन में काट दिया,
भव-फन्द तुम्हारी आँखों ने।

साहित्यानन्द—(चौंक कर) अरे! आपने कैसे जाना? बस-बस, इसी चिन्ता में तो मरा जाता हूँ।

यदुनाथ—अच्छा तो अब आपको अधिक मरने की आवश्यकता नहीं है। ईश्वर चाहेगा तो हम लोग आपका बेड़ा पार लगा देंगे।

(रमाकान्त और संसारीनाथ इशारों में ख़ुशी-ख़ुशी बातें करते हैं)

रमाकान्त—जी हाँ, यह कौन सी बड़ी बात है।

साहित्यानन्द—अहो भाग्य! अहो भाग्य! यदि आप लोग किसी उचित व्यक्ति से सम्बन्ध लगा सकें, तो बड़ा उपकार हो।

(संसारीनाथ, यदुनाथ और रमाकान्त को चुपके से खोद कर इशारा करता है।)

यदुनाथ—सम्बन्ध लगा ही समझिए।

साहित्यानन्द—सचमुच? परन्तु मैं साहित्यिक व्यक्ति चाहता हूँ, जिसे साहित्य में अच्छा ज्ञान हो और साहित्य ही में बराबर—उहुँक—क्रमशः वार्तालाप कर सके।

(रमाकान्त संसारीनाथ की ओर देखता है और संसारीनाथ सर हिला कर कुछ हामी भरता है।)

रमाकान्त—वैसा ही व्यक्ति लीजिए। साढ़े तीन घण्टे तक लगातार—उहुँक, क्या कहा था आपने, क्रमशः—हाँ क्रमशः साहित्य ही साहित्य बोले तब बात है।

साहित्यानन्द—हाँ? और रूप गुणों में?

यदुनाथ—उत्तम।

साहित्यानन्द—चाल-ढाल?

रमाकान्त—निष्कलङ्क।

साहित्यानन्द—योग्यता?

यदुनाथ—बढ़ी-चढ़ी।

साहित्यानन्द—ओहो! भला उसे भी यह सम्बन्ध पसन्द—उहुँक—अँ—अँ (पॉकेट से डिक्शनरी निकाल कर) हाँ, रुचिकर-रुचिकर होगा?

रमाकान्त—सर-आँखों से।

यदुनाथ—होना ही चाहिए। क्योंकि प्रेम ने तो उसको पहिले ही मुग्ध कर रक्खा है।

साहित्यानन्द—हाँ? वाह! वाह! और मुझे ख़बर भी नहीं—उहुँक—समाचार भी नहीं।

यदुनाथ—बस, अब आज्ञा हो तो मैं आपकी ओर से बातचीत पक्की कर लूँ।

साहित्यानन्द—परन्तु मैं भी तनिक देख-भाल कर उसकी परीक्षा तो कर लेना चाहता हूँ।

यदुनाथ—देखने को आप सैकड़ों बार देख चुके हैं।

रमाकान्त—और इस समय भी देख रहे हैं।

साहित्यानन्द—(चारों तरफ़ देखता हुआ) नहीं तो। कहाँ?

रमाकान्त—(संसारीनाथ को सामने करके) यह लीजिए, जी भर के देख लीजिए।

साहित्यानन्द—यह तो संसारीनाथ है।

यदुनाथ—जी हाँ, यही हैं।

संसारी—हाँ, मैं ही आपकी पुत्री को प्यार करता हूँ और उससे विवाह करना चाहता हूँ।

साहित्यानन्द—अरे! यह क्या? मैं तो अपने पुनर्विवाह के बारे में बातचीत कर रहा हूँ। और यह बदमाश बीच में कूद कर कहता है कि मैं आपकी पुत्री को प्यार करता हूँ। मेरे ही मुँह पर ऐसी धृष्टता? खड़ा तो रह, पाजी कहीं का। मैं नहीं जानता था कि यह ऐसा लुच्चा है। तेरी ऐसी-तैसी।

(संसारीनाथ भाग जाता है। साहित्यानन्द उसको मारने के लिए उसके पीछे दौड़ जाता है। रमाकान्त और यदुनाथ पहिले आश्चर्य में मूर्तिवत् हो जाते हैं, उसके बाद एकाएक हँस पड़ते हैं।)

यदुनाथ—(हँसता हुआ) आहाहाहा! भई वाह! यह तो अच्छा तमाशा हुआ।

(दोनों हँसते हुए जाते हैं)

(क्रमशः)

* * *

विलायत में लोकतन्त्र के बारे में बड़ी-बड़ी बातें

रङ्ग-भेद भारतीय विद्यार्थियों के लिए विशेष हानिप्रद

एक संयुक्त समिति की स्थापना सफ़ेद और अन्य रङ्ग वालों में मैत्री-भाव बढ़ाने के लिए हुई है। उसकी कार्यकारिणी कमिटी के सभापति श्री० हैनरी एस० एल० पोलक ने प्रसिद्ध पत्र 'स्पेक्टेटर' में लिखा है :—

"रङ्ग-भेद से वैमनस्य होने के बहुत से उदाहरण दिए जा सकते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय विद्यार्थियों के प्रश्न पर मित्र-मण्डली ने यथेष्ट ध्यान दिया है और गत वर्ष घर-घर जाकर, जाँच करके अपनी रिपोर्ट तैयार की है। इस रिपोर्ट से मालूम होता है कि बेडफ़ोर्ड प्लेस में पन्द्रह घरों में से चौदह रङ्गीन चमड़े वालों को रखने से इन्कार करते हैं। उसका कारण यह है, कि उनमें रहने वाले सफ़ेद चमड़े के लोग अन्य रङ्ग वालों के साथ नहीं रहना चाहते। बर्न्सविक स्क्वायर में भी यही बात देखी गई। यहाँ पर सफ़ेद चमड़े की 'श्रेष्ठता' बनाए रखने को और इस जगह के सम्मान को बचाए रखने के लिए लोगों से यह कहा गया है कि वे रङ्गीन चमड़े वालों को बाहर रक्खें।

ईसाई विद्यार्थियों के आन्दोलन, पूर्व और पश्चिम की मित्र-मण्डली तथा भारतीय विद्यार्थियों के सङ्गठन और निवास-स्थानों द्वारा समुद्र पार के विद्यार्थियों के लिए बहुत बड़ा काम हो रहा है।

"होटलों के स्वामी यह स्वीकार नहीं करते कि उनके यहाँ रङ्ग-भेद है, पर रङ्गीन चमड़े वालों को उनके यहाँ स्थान पाने में विशेष कठिनाइयाँ होती हैं। एक होटल ने तो अमेरिका के दो सफ़ेद चमड़े वालों को एक हबशी को बुलाने और उसे दावत देने से रोका था। हाँ, यह अवश्य है कि भले घर की स्त्रियों और शरीफ़ आदमियों के लिए रङ्ग-भेद न होने देने के लिए विशेषतः आज्ञाएँ जारी हो चुकी हैं।

"अब इस संयुक्त समिति की स्थापना से यह आशा की जाती है कि यह रङ्ग-भेद का वैमनस्य यहाँ से दूर हो सकेगा। ऐसी समिति ने अमेरिका और अफ़्रिका में बहुत-कुछ सफलता प्राप्त की है।

"यह समिति रङ्ग-भेद के पक्षपात से उत्पन्न होने वाले भ्रमों और कष्टों का अध्ययन कर उन्हें बुद्धिमत्तापूर्वक दूर करने का उपाय करेगी। इस सम्बन्ध में जो और अधिक जानना चाहें, उन्हें सेक्रेटरी मि० जोन पी० फ्लेचर, फ्रेन्ड्स हाउस, इस्टन रोड, लण्डन, N. W. I. से लिखा-पढ़ी करनी चाहिए।"

विश्व-भारती और विश्व-बन्धुत्व

श्री० रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपनी विश्व-भारती के बारे में कहा है :—

"यही एक ऐसा विद्यालय है, जिसके विद्यार्थी पश्चिम से आने वाले दर्शकों के साथ भी सर्वथा स्वाभाविक सम्बन्ध रखते हैं। ऐसा वायु-मण्डल उन्होंने यूरोप के कई विद्वानों की सहायता से बनाया है। इस राजनैतिक अशान्ति के भारी तूफ़ान के समय भी वे इस काम को करते रहने का प्रयत्न कर रहे हैं। राष्ट्रीयता की सङ्कीर्णता को दूर रखने को, दूसरे रास्ते पूर्व और पश्चिम के सहानुभूति और सहयोग के भावों के साथ मिलने के लिए होने चाहिए।"

इस पर सुप्रसिद्ध पत्रिका "मॉडर्न रिव्यू" में उसके सुयोग्य सम्पादक ने लिखा है :—

"हम हर्ष के साथ इस तथ्य को मानते हैं कि शान्ति-निकेतन के विद्यार्थियों में पश्चिम के दर्शकों के प्रति उपेक्षा का भाव नहीं है। पर हम नहीं जानते कि उनका किन विद्वानों से मतलब है, जब कि वे कहते हैं कि इस वायु-मण्डल के बनाने में यूरोप के बड़े विद्वानों में से कुछ का हाथ है। जहाँ तक हम जानते हैं, पश्चिम से आने वाले दर्शकों और काम करने वालों में से कुछ में, चाहे वे बड़े विद्वान कहलाने के अधिकारी हों या न हों, ऐसे वायु-मण्डल की रचना के लिए जिस गहरी बुद्धिमत्ता तथा सहानुभूति की और जातीय अभिमान तथा अपनी श्रेष्ठता के पक्षपात से मुक्त होने की ज़रूरत होती है, वे सब गुण रहते हैं और कुछ में नहीं रहते। हमें किसी के नाम लेने की इच्छा नहीं है, परन्तु हमारे पास छपे हुए और अन्य ऐसे प्रमाण हैं, जिनसे प्रकट होता है कि इस सुन्दर संस्था के दर्शकों में और कुछ समय तक वहाँ रहने वालों में कुछ ऐसे भी विद्वान थे, जो 'जातीय श्रेष्ठता' के अभिमान से मुक्त न थे। परलोकवासी मि० पियर्सन के समान बहुत ही थोड़े आदमी होते हैं, यद्यपि वे बहुत बड़े विद्वान् न थे।

"यह सचमुच बहुत ही सौभाग्य की बात भारतवर्ष और संसार भर के लिए होगी, यदि आदर्शवादी और विद्वान लोग, जो जातीय श्रेष्ठता का अभिमान न रखते हों, केवल इङ्गलैण्ड से ही नहीं, वरन् अन्य सभ्य स्वाधीन देशों से भी यहाँ आवें। कविवर की भाँति के असाधारण मनुष्य सभी जगह से सम्मान प्राप्त कर सकते हैं और विदेशी लोगों में से कुछ ऐसे भी हैं, जो किसी न किसी प्रकार के आदर्शवाद का नाम लेकर उनसे जान-पहिचान करना चाहते हैं। परन्तु स्वतन्त्र और स्वाधीन देशों की ऐसी बहुत ही कम आत्माएँ हैं, जिनमें पराधीन भारतवर्ष के साधारण पुरुषों और स्त्रियों के प्रति सचमुच प्रेम या आदर हो। हमारी पराधीन दशा से सर्वसाधारण के साथ हमारा सम्बन्ध विच्छिन्न हो जाता है और हमारी अच्छाइयाँ, हमारे गुण, और कार्य सब से छिप जाते हैं।

"स्वतन्त्र व्यक्तियों में से सर्व-साधारण लोगों का, उन लोगों के प्रति सम्मान-भाव रखना, जो कि पराधीनता-पाश में बँधे हैं, कठिन है। हम पूर्ण हृदय से कविवर की बात का समर्थन करते हैं, जब वे सङ्कीर्ण और स्वार्थपूर्ण राष्ट्रीयता की निन्दा करते हैं—ऐसी ढङ्ग की, जो 'मेरा देश, चाहे उचित करे या अनुचित' के लिए है, परन्तु हमारा विश्वास है कि उन्हीं के लेखों और व्याख्यानों से ऐसे वाक्य उद्धृत किए जा सकते हैं, जिनसे यह स्पष्ट है कि वह राष्ट्रीयता—चाहे जो नाम उसका रखिए—जिससे भारतवर्ष की राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने का प्रयत्न हो रहा है, इस देश और पश्चिम के सच्चे आपसी मित्र-भाव और सम्मान के लिए आवश्यकीय है।"

*　　*　　*

सैनिक

[श्री० मधुसूदनप्रसाद मिश्र, 'मधुर']

कौन ? कौन इस विपुल वेग से
　　बढ़ा चला जाता पल-पल ?
जिसकी गति रोके न रुकेगी
　　चाहे गिरि हो या दलदल !
जिसकी एक-एक गति में हो
　　मानवता का भरा विकाश !
लखके जिसको जग से होता
　　दानवता का शीघ्र विनाश !
जिसकी सरस गिरा शुचि देती
　　आगे बढ़ने का सन्देश
जादू कर जाते मानस पर
　　जिसके मङ्गलमय उपदेश !
सविता की-सी रश्मि निकलती
　　जिससे निर्भयता की आज
जिसकी भौंहों के तनने से
　　कितने मिटते-बनते ताज !

×　　×　　×

अहे विलक्षण सैनिक ! तेरी
　　सङ्गर-नीति अपूर्व, विचित्र !
प्राणों का उत्सर्ग सिखा जो
　　कर देती है तुम्हें पवित्र,
दुख की गठरी लाद माँथ पर
　　किस फल को जाते लाने
दूर,—बहुत ही दूर लक्ष्य औ
　　पथ कण्टकमय मस्ताने !
किन्तु वीर ! इस रण-यात्रा में
　　कष्टों से मत घबड़ाना !
कर में ले करवाल सत्य का
　　आगे ही बढ़ते जाना !
यदि हिंसा को मिटा सको तुम
　　अटल अहिंसा के बल पर;
सैनिक ! स्वयं तुम्हें बर लेगी
　　विजय-श्री आलिङ्गन कर !

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

कराची कॉङ्ग्रेस के अवसर पर अखिल भारतवर्षीय शिशु-सम्मेलन का आयोजन करने वाले—श्री० सेवक बी० मोतवानी—जिसका अधिवेशन श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय की अध्यक्षता में हुआ था।

कराची कॉङ्ग्रेस के अवसर पर होने वाले मुस्लिम शिक्षा कॉन्फ्रेन्स के प्रधान-मन्त्री—ख़ान बहादुर वली मोहम्मद हसन अली।

कॉङ्ग्रेस के स्वागतकारिणी सभा की जाँच-कमिटी के मन्त्री—श्री० निश्चलदास, बी० ए०—राष्ट्रीय कार्य करने के अभिप्राय से आपने अपनी वकालत भी छोड़ दी है। आप हाल ही में जेल से छूट कर आए हैं।

कराची के गांधी-हस्पताल के निस्स्वार्थ कार्यकर्ताओं का ग्रुप; जिन्होंने राष्ट्रीय युद्ध में देशवासियों की प्रशंसनीय सेवा की है। हस्पताल रात-दिन खुला रहता था और इस हस्पताल की मोटरें घायलों की तलाश में घूमा करती थीं। पुलिस द्वारा की जाने वाली प्रत्येक लट्ठबाज़ी के अवसर पर हस्पताल की मोटरें सामने खड़ी पाई जाती थीं।

अखिल भारतवर्षीय नौजवान सभा के उत्साही कोषाध्यक्ष—श्री० चिरंजीलाल जी—जिसका अधिवेशन हाल ही में कराची में हुआ था।

कराची में होने वाले जमायतुल-उलेमा परिषद की स्वागतकारिणी सभा के दो प्रधान-मन्त्रियों में से एक—श्री० हाफ़िज़ शरीफ़ हुसेन—आप इङ्गलैण्ड, फ़्रान्स, जर्मनी, इटली आदि देशों का भ्रमण करके हाल ही में लौटे हैं। अब आपका 'पास पोर्ट' ज़ब्त कर लिया गया है। अब आप भारत के बाहर नहीं जा सकते।

कराची में होने वाली 'ज़ात-पाँत-तोड़क-मण्डल' परिषद के सभापति और कराची के उत्साही राष्ट्रीय कार्यकर्ता—श्री० अमोलकराम साहनी, एम० ए०

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

डेनमार्क की राजकुमारी एलेक्ज़ेण्डरिन लुइस (उम्र १५ साल) और युवराज गॉर्म (उम्र १२ साल)—डेनमार्क के राजघराने के बालक-बालिकाओं को स्वतन्त्र जीविकोपार्जन की शिक्षा ग्रहण कराने की प्रथा है। तदनुसार राजकुमारी पुस्तकों की जिल्दबन्दी का तथा राजकुमार लकड़ी का काम सीख रहे हैं।

मिसेज़ एलेक्ज़ेण्डर—आप जयपुर के महिला-मण्डल की सभानेत्री और जयपुर स्टेट गर्ल-गाइड्स की कमिश्नर हैं। भारतीय महिला-समाज के उन्नति-सम्बन्धी कामों में आप विशेष भाग लेती हैं।

श्रीमती एम० लक्ष्मी अम्मल—आप मद्रास की 'हिन्दू-महिला लक्ष्मी-विलास सभा' की सभानेत्री हैं। दरभङ्गा-नरेश ने आपको 'धर्म-चन्द्रिका' की उपाधि से विभूषित किया है।

(दाहिनी ओर से) स्वर्गवासी पण्डित मोतीलाल नेहरू, श्रीमती सरोजिनी नायडू और श्रीमती रामेश्वरी नेहरू। (स्व० पण्डित जी के एक हाल के लिए चित्र से)

श्रीमती शान्तिदास, एम० ए०—आप कलकत्ता नारी-सत्याग्रह-समिति की मन्त्रिणी हैं आगरे में एक व्याख्यान देने के कारण आपको चार महीने की सज़ा दी गई थी।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

कराची कॉङ्ग्रेस के कुछ स्वयंसेवकों की टोली, जिन्होंने कॉङ्ग्रेस-नगर में पुलिस और फ़ौज का काम बड़ी योग्यता से किया था। सरकारी पुलिस तथा फ़ौज के किसी भी कर्मचारी को कॉङ्ग्रेस के हाते में फटकने तक नहीं दिया गया था।

श्रीमती जी० के० चेटियर, बी० ए०—आप मङ्गलोर (मद्रास) की प्रथम श्रेणी की ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट नियुक्त हुई हैं।

कानपूर के सुप्रसिद्ध नेता—श्री० जी० जी० जोग—जिन्हें हाल ही में होने वाले दङ्गे में गुण्डों ने बुरी तरह घायल किया था।

हैहयवंशी क्षत्राणी—सौभाग्यवती श्रीमती दुर्गादेवी वर्मा (देहली)। आप इस जाति में पर्दा-प्रथा के मस्तक पर पाद-प्रहार करने वाली सर्व-प्रथम महिला-रत्न हैं।

रामनद (मद्रास) ज़िला बोर्ड की सदस्या—श्रीमती मारगथा वल्ली अम्मल—आप ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट भी हैं।
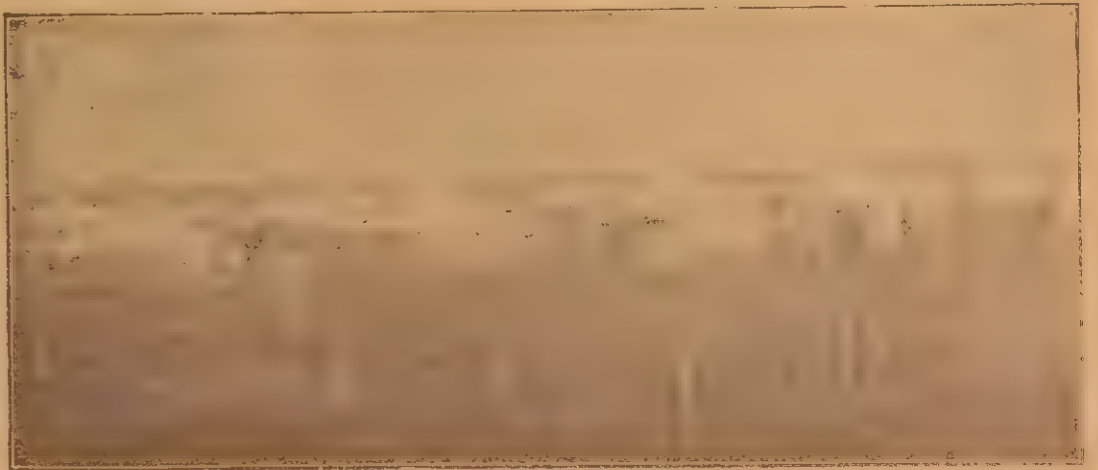
कराची कॉङ्ग्रेस में सारे नेताओं को ठहराने का प्रबन्ध ख़ीमों में ही किया गया था—इस चित्र में पाठक उन्हीं तम्बुओं का मनोहर दृश्य देखेंगे।

कराची कॉङ्ग्रेस के कुछ नए स्वयंसेवक, जिन्हें क़वायद की शिक्षा दी जा रही है।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

कराची का वह विशाल भवन, जिसमें अखिल भारतवर्षीय नौजवान सभा की स्वागतकारिणी सभा का कार्यालय था और कॉङ्ग्रेस के साथ ही कराची में जिसका महान अधिवेशन हुआ था।

कराची के १६ वर्षीय सत्याग्रही शहीद स्वर्गीय श्री० मेघराज लल्ला, जो पुलिस की गोली के शिकार हुए थे। कॉङ्ग्रेस के फाटक का नामकरण इसीलिए 'शहीदों का फाटक' रक्खा गया था। फाटक पर आपका चित्र भी बना था। आपका यह चित्र मृत्यु के बाद लिया गया था।
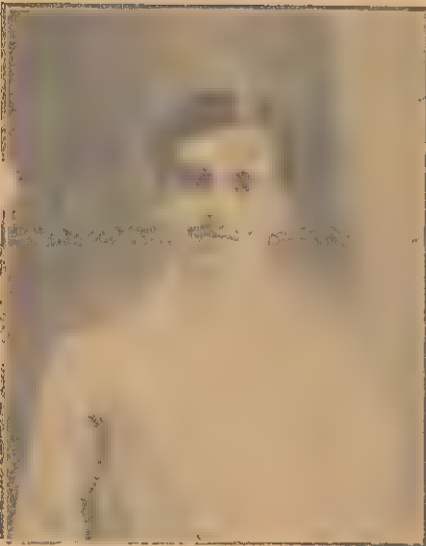
अखिल भारतवर्षीय नौजवान सभा के स्वागत-कारिणी समिति के मन्त्री—श्री० खिल्लूमल टी० गुरनानी—जिसका अधिवेशन कराची में हुआ था।

कराची में होने वाली खादी-प्रदर्शिनी का दृश्य, जिसमें केवल हाथ के बुने और कते सूत के कपड़ों का प्रदर्शन किया गया था।

कराची में महात्मा गाँधी के रहने के लिए उनकी आज्ञानुसार केवल मिट्टी और फूस द्वारा एक झोपड़ी तैयार की गई थी, क्योंकि महात्मा जी ने आलीशान अट्टालिकाओं में रहने से अपनी अनिच्छा प्रकट की थी। उसी कुटिया का दृश्य पाठक इस चित्र में देखेंगे। यह स्थान कराची में 'तीर्थ' हो गया था।

तीसरी बार हाल ही में जेल से छूटने वाले तथा बस्ती कॉङ्ग्रेस कमिटी के सभापति—पण्डित सीताराम जी शुक्ल।

मैं असीरी में भी ख़ामोश इसी ख़ौफ़ से हूँ,
मेरे नाले सुने, ऐसा दिले सय्याद नहीं !
सब्ज़ए-बाग़ से कहती हैं यह शाख़ें झुक कर,
सर उठाने की जगह गुलशनें-ईजाद नहीं !

फ़रियाद

ख़ैर दिल की नहीं, ख़ैरियते-सय्याद नहीं,
आज क़ाबू में मेरे जज़्बए फ़रियाद नहीं !
नाला उसको नहीं कहते, जिसे नाकामी हो,
हो जो तासीर की मुहताज वह फ़रियाद नहीं !
—"निसार" फ़ीरोज़ाबादी

वस्अते-हौसलए आशिक़े जाँबाज़ न पूछ,
जान है लब पे, मगर मामले फ़रियाद नहीं !
—"शरर" टोंकी

गिलए जौर नहीं, शिकवए बेदाद नहा,
शुक्र अल्लाह का है, आपसे फ़रियाद नहीं !
—"उज़्र" साहब

शम्अ़ा सा आग में अपनी ही जला करता हूँ,
आपका हुक्म तो मुहरे लब-फ़रियाद नहीं !
—"फ़हीम" कागरोली

दास्ताने ग़मे दिल शिकवए बेदाद नहीं,
बात सुनने की है, नाला नहीं, फ़रियाद नहीं !
—"सहीम" मुरादाबादी

दिल में ख़ुश हूँ, कि वह आमादए बेदाद नहीं,
लबे फ़रियाद भी अब मामले फ़रियाद नहीं !
—"अकमल" इटावी

जब से क़ाबू में हमारे दिले नाशाद नहीं,
हमको कुछ काम बजुज़ नालओ फ़रियाद नहीं !
—"बिरयाँ" निहोवी

अर्शवाले न सुनें सारी ख़ुदाई सुन ले,
इस क़दर पस्त मज़ाक़े लबे फ़रियाद नहीं !
—"साग़र" अकबराबादी

यह ग़लत है कि हमें तर्ज़े फ़ुग़ाँ याद नहीं,
अब वह आलम है कि गुंजाइशे फ़रियाद नहीं !
तग़मए दर्दे मुहब्बत है सदा से ख़ाली,
क्या सुने कोई यह नाला नहीं,फ़रियाद नहीं !
—"चकबस्त" लखनवी

बे बुलाए हुए वह आप चले आएँगे,
रायगाँ जाने को मज़लूम की फ़रियाद नहीं !
—"शातिर" इलाहाबादी

मर गया क्या शबे ग़म आपका बीमारे फ़िराक़,
अब वह शेवन नहीं, नाला नहीं,फ़रियाद नहीं !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

सय्याद

वाए क़िस्मत, कि चमन में हूँ, मगर शाद नहीं,
जौरे गुलचीं मुझे क्या कम है,जो सय्याद नहीं !
—"रहमत" अज़कावाली

मैं तो उड़ चलने को तैयार हूँ, लेकिन अफ़सोस,
मुझमें परवाज़ की क़ूवत अभी सय्याद नहीं !
—"शग़फ़" सैलाई

आशियाने को मेरे कर न गया हो बरबाद,
आज सुनता हूँ,कि गुलज़ार में सय्याद नहीं !
—"सहीम" मुरादाबादी

बुलबुले ज़ार का उड़ना है क़फ़स से मुश्किल,
पर कतरने की ज़रूरत, कोई सय्याद नहीं !
करके नाला यही कहती है क़फ़स में बुलबुल,
आज या मैं नहीं या ख़ानए-सय्याद नहीं !
—"शातिर" इलाहाबादी

बे ज़बानों ने असीरी की बदल दी दुनिया,
जिसको सय्याद समझते थे, वह सय्याद नहीं !
—"अकमल" इटावी

रूहे-बुलबुल ने ख़िज़ाँ बन के उजाड़ा गुलशन,
फूल कहते रहे हम फूल हैं, सय्याद नहीं !
—"साग़र" अकबराबादी

मैं वह तायर हूँ, कभी ख़ौफ़ से आज़ाद नहीं,
कौन से वक़्त मेरी ताक में सय्याद नहीं !
—"शाकिर" ग्वालियारी

मैं असीरी में भी ख़ामोश इसी ख़ौफ़ से हूँ,
मेरे नाले सुने, ऐसा दिले सय्याद नहीं !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

ईजाद

सब्ज़ए बाग़ से कहती हैं यह शाख़ें झुक कर,
सर उठाने की जगह गुलशने ईजाद नहीं !
—"चकबस्त" लखनवी

पुर असर क्या मेरा नाला मेरी फ़रियाद नहीं,
इनसे वाक़िफ़ अभी चर्ख़े सितम ईजाद नहीं !
—"शातिर" इलाहाबादी

न वह आहें, न वह नाले, न वह बेताबिए दिल,
अब वह पहिला सा मेरा आलमे ईजाद नहीं !
—"साग़र" अकबराबादी

दिल को तसकीन है अब वह लबे-फ़रियाद नहीं,
वह भी पहिला सा मगर, अब सितम ईजाद नहीं !
—"सीमाब" बुलन्दशहरी

हुस्न कहते हैं इसे, जो रहे मसरूफ़े-सितम,
जिसमें यह चीज़ नहीं, वह सितम ईजाद नहीं !
—"फ़हीम" कागरोली

हाँ ज़रा फिर तो कहो, फिर तो कहो, फिर तो कहो,
हम सितमगर सितमआरा सितम ईजाद नहीं !
फूल दस-बीस अगर हैं तो हैं काँटे लाखों,
सैर करने की जगह गुलशने ईजाद नहीं !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

बेदाद

क्या अजब है कि दिले दोस्त हो अपना मदफ़न,
कुशतए नाज़ हूँ मैं, कुशतए बेदाद नहीं !
—"यास" लखनवी

कोइ नाला नहीं, शेवन नहीं, फ़रियाद नहीं,
अपनी रुदाद है यह शिकवए बेदाद नहीं !
इसमें जो लुत्फ़ है, वह लुत्फ़ तरहहुम में कहाँ,
तेरी बेदाद हमारे लिए बेदाद नहीं !
—"शातिर" इलाहाबादी

कर दिया तेरी जफ़ाओं ने मेरा दिल पत्थर,
अब मुझे ग़ैर से भी शिकवए बेदाद नहीं !
—"बिरयाँ" निहोवी

मुलतफ़ित हो न अगर हुस्न तो है फ़ितरते हुस्न,
यह कोई ज़ुल्म नहीं, यह कोई बेदाद नहीं !
—"निसार" फ़ीरोज़ाबादी

लब पे इस वास्ते आती मेरी फ़रियाद नहीं,
उनकी बेदाद करम है कोई बेदाद नहीं !
—"महमूद" कानपूरी

एक ज़माना है तेरे जौरो सितम का शाक़ी,
कौन कहता है, कि तू बानिए बेदाद नहीं !
—"शरर" टोंकी

क्या निराला यह सितम पे सितम ईजाद नहीं,
अब कलेजे में तेरा नावके बेदाद नहीं ।
अरसए हश्र में क्या अपनी तबीयत बहले,
सब हैं मौजूद, वही बानिए-बेदाद नहीं !
क्यों मेरे सीने में रहता है मेरे पहलू में,
दूसरा दिल है, तेरा नावके बेदाद नहीं !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

आबाद

कम नहीं जलवागरी में तेरे कूचे से बिहिश्त,
यही नक़्शा है वले, इस तरह आबाद नहीं ।
—"ग़ालिब" देहलवी

दिल जो वीरान हुआ हो गई दुनिया वीरान,
कोई घर ख़ुश नहीं, बस्ती कोई आबाद नहीं ।
—"चकबस्त" लखनवी

अहले उलफ़त की निगाहों में वह हैं ख़ाना-बदोश,
तेरे घर में, तेरे कूचे में, जो आबाद नहीं ।
—"शातिर" इलाहाबादी

दश्त में क़ैस नहीं कोह पे फ़रहाद नहीं,
है वही इश्क़ की दुनिया, मगर आबाद नहीं ।
—"साग़र" अकबराबादी

यास ही यास मेरे दिल में नज़र आती है,
इस तरह घर यह है आबाद कि आबाद नहीं !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

उस्ताद

दर्स दुनिया को मुहब्बत का दिया करते हैं,
हज़रते इश्क़ कोई आप सा उस्ताद नहीं ।
—"अफ़सर" साहब

कोई कुछ भी कहे "शातिर" मगर अपना है यह क़ौल,
तर्क करने को कभी ख़िदमते उस्ताद नहीं ।
—"शातिर" इलाहाबादी

क़द्रदाँ क्यों मुझे तकलीफ़ सख़ुन देते हैं,
मैं सख़ुनवर नहीं शायर नहीं, उस्ताद नहीं !
—"चकबस्त" लखनवी

दाद इतनी तुम्हें क्यों अहले सख़ुन देते हैं,
तुम तो पे हज़रते "बिस्मिल" कोई उस्ताद नहीं !
—"बिस्मिल" इलाहाबाद

चीन की शिक्षा-प्रणाली

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

चीन की प्राचीन शिक्षा-प्रणाली बड़ी विचित्र थी। उसमें चीन के पुराने साहित्य को छोड़ कर और किसी विषय को स्थान ही न था। बहुत काल तक तो चीन का काम चलता रहा, पर जब वहाँ और देश के लोग आने लगे तब उसे अपनी पुरानी शिक्षा-प्रणाली की कमज़ोरियाँ मालूम होने लगीं। परन्तु जब सन् १८९४ में जापान जैसे छोटे देश ने चीन को चित्त कर दिया तब उसकी आँखें खुल गईं और वहाँ के राजनीतिज्ञों ने अपनी शिक्षा-प्रणाली को सुधारने का निश्चय किया। अब तक चीन में सरकारी मदरसे न थे। लड़के निजी तौर पर शिक्षा पाते थे। पर १८९८ के सुधार आन्दोलन के समय सरकार की तरफ़ से पश्चिमीय शिक्षा पाने के लिए सरकारी पाठशालाओं की स्थापना की गई। १९०१ में महारानी डोवागर (Dowager) ने एक आज्ञा-पत्र जारी किया, जिसके द्वारा गाँवों और क़स्बों में सरकारी प्राइमरी मदरसों की, ज़िलों में मिडिल स्कूलों की तथा प्रान्तिक राजधानियों में कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। १९०५ में पुराना सिविल सर्विस इम्तिहान उठा दिया गया और जिन कमरों में इम्तिहान होते थे, वहाँ पाठशालाओं की कक्षाएँ लगने लगीं। १९११ में जब प्रजातन्त्र की स्थापना हुई, तब सरकार की तरफ़ से सरकारी शिक्षा—विशेषकर आधुनिक विज्ञान की शिक्षा—पर विशेष ज़ोर दिया गया।

१९०८ से लेकर १९२२ तक चीन में भिन्न-भिन्न पाँच स्कूल-योजनाएँ काम में लाई गईं। ये योजनाएँ निम्न-लिखित पाँच देशों से ली गई थीं—जापान, जर्मनी, फ़्रान्स, इङ्गलैण्ड तथा अमेरिका। १९२२ की नई प्रणाली न तो जापानी है और न अमेरिकन, यह पूर्णतः चीन ही की है। इस प्रणाली की मुख्य-मुख्य बातें ये हैं—प्रथम ६ वर्षों में प्रारम्भिक शिक्षा, फिर ६ वर्षों में उससे ऊँची शिक्षा और तत्पश्चात् चार या ६ सालों में कॉलेज-शिक्षा। प्रारम्भिक शिक्षा के ६ साल दो भागों में बाँट दिए गए हैं। पहले चार वर्षों में शिक्षा का श्रीगणेश होता है तथा बाद के दो वर्षों में उससे ऊँची शिक्षा दी जाती है। पहले चार वर्षों की शिक्षा सबके लिए ज़रूरी है। इससे कोई बच नहीं सकता। हाई स्कूल या मिडिल स्कूल के ६ वर्ष, तीन-तीन वर्ष के दो भागों में विभाजित हैं। इन ६ वर्षों की शिक्षा के पश्चात् कॉलेज की शिक्षा प्रारम्भ होती है। इस तरह जब एक विद्यार्थी का कॉलेज का चौथा वर्ष समाप्त होता है, तब वह १६ वर्ष तक शिक्षा पा चुका होता है।

चीन के प्रारम्भिक मदरसों में ७०,००,००० विद्यार्थी पढ़ रहे हैं, मिडिल स्कूलों में १,५०,००० विद्यार्थी शिक्षा पा रहे हैं तथा कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में ३०,००० युवक अध्ययन कर रहे हैं। चीन में ३० राष्ट्रीय विश्वविद्यालय हैं, ४८ प्रान्तिक विश्वविद्यालय हैं, २७ निजी कॉलेज हैं और १८ मिशनरी विश्वविद्यालय तथा कॉलेज हैं।

इन शिक्षालयों में वही विषय पढ़ाए जाते हैं, जो यूरोप आदि के शिक्षालयों में पढ़ाए जाते हैं। हाँ, चीन से सम्बन्ध रखने वाले कुछ विषय अवश्य बढ़ जाते हैं। जैसे, चीन का इतिहास तथा साहित्य पर। उद्योग-धन्धों की शिक्षा पर सब से अधिक ध्यान दिया जाता है। पुराने काल में हाथ से काम करने को लोग बहुत बुरा समझते थे। उस समय हाथ की उँगलियों के नाख़ूनों को बढ़ा कर रखने का बड़ा रिवाज था, ताकि यह मालूम हो सके कि वे हाथ से काम नहीं करते। कभी-कभी तो लोगों के नाख़ून तीन-तीन और चार-चार इञ्च बढ़े देखे गए थे। पहले-पहल तो लड़कों को अपने नाख़ून कटवाने तथा हाथ से काम करने की हिम्मत ही न पड़ती थी। पर यह सब बातें अब पूर्णतया बदल गई हैं। अब तो वे लोग बड़े गर्व से ये सब काम सीखते हैं। पहले मदरसों में सैनिक ड्रिल भी नहीं होती थी, पर २७ अगस्त, १९२८ को चियाङ्ग-के-शेक (Chiang Kai-Shek) ने यह घोषणा की कि विश्वविद्यालयों, कॉलेजों तथा मिडिल स्कूलों में सैनिक शिक्षा जारी की जावेगी और प्रारम्भिक मदरसों में स्काउटों का सङ्गठन किया जावेगा।

चीन के शिक्षा की उन्नति का बहुत-कुछ श्रेय बॉक्सर-हर्जाने (Boxer Indemnity) को है। १९०८ में अमेरिका ने उसे, जो चीन से इस हर्जाने के रूप में रक़म मिली थी, उसका एक हिस्सा चीन को लौटा दिया। यह लौटी हुई रक़म पेकिङ्ग में Tsing Hua कॉलेज के स्थापित करने में तथा अमेरिका के कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाले चीन के विद्यार्थियों को वज़ीफ़े देने में ख़र्च की गई। प्रत्येक वर्ष ७० या ८० विद्यार्थी वज़ीफ़ा देकर चीन से अमेरिका भेजे जाते हैं। १९२४ में अमेरिका की काँग्रेस ने एक प्रस्ताव पास कर प्रेज़िडेण्ट को अधिकार दिया कि वह बॉक्सर-हर्जाने की बाक़ी बची हुई रक़म भी चीन को लौटा दें। यह रक़म भी चीन में शिक्षा-प्रचार में ख़र्च की गई। यह रक़म शिक्षा के मद में अनेक बातों में ख़र्च की जाती है। अमेरिका की इस उदार नीति के कारण चीन और अमेरिका में बहुत घनिष्ठता हो गई। चीन में मिशन मदरसे भी हैं। ३,००,००० विद्यार्थी प्रोटेस्टेण्ट मिशन मदरसों में शिक्षा पा रहे हैं। तथा २,६०,००० कैथोलिक मिशन मदरसों में पढ़ते हैं। इसके अलावा मिशन के १८ कॉलेज तथा विश्वविद्यालय भी हैं। पाठकों को यह याद रखना चाहिए कि मिशन की शिक्षा ने चीन के राष्ट्रीय आन्दोलन पर बहुत प्रभाव डाला है। चीन के राष्ट्रीय नेताओं में से ५० फ़ीसदी ने इन्हीं शिक्षालयों में शिक्षा पाई थी। पर इन शिक्षालयों में विदेशी शिक्षा दी जाती है और विदेशी भाषा, साहित्य तथा इतिहास प्रति दिन पढ़ाया जाता है। अतएव चीन की राष्ट्रीय सरकार ने इन शिक्षालयों के सञ्चालन के लिए नियम बनाए हैं। इन शिक्षालयों पर निम्न-लिखित बातें लागू की गई हैं:—

१—इन शिक्षालयों में सरकारी करीकुलम लागू होगा।

२—इनका सरकारी निरीक्षण हुआ करेगा।

३—इनका इन्तज़ाम बोर्ड ऑफ़ डाइरेक्टर्स द्वारा होगा, जिसमें बहुसंख्या चीनियों की होगी।

४—शिक्षालय का सभापति एक चीनी ही होगा। और शिक्षकों में वही विदेशी रक्खे जावेंगे, जिनके लिए डाइरेक्टर प्रार्थना करेंगे।

५—इनमें धार्मिक शिक्षा के लिए लड़कों को बाध्य नहीं किया जावेगा।

६—प्रत्येक सोमवार की सुबह को चीन के प्रजातन्त्र के पिता सनयातसेन की यादगार मनाई जाया करेगी।

चीन की राष्ट्रीय सरकार मिशन के स्कूलों के बारे में वही कर रही है, जो किसी समय जापानी सरकार ने कोरिया के मिशन स्कूलों के बारे में किया था, या जो श्याम के लोगों ने अपने देश में किया था। १९१७ में डॉक्टर हु-शिह (Hu-Shih) ने, जो पेकिङ्ग के सरकारी विश्वविद्यालय में एक प्रोफ़ेसर थे, इस बात का प्रचार किया कि लिखी भाषा के स्थान पर बोलने की भाषा का प्रयोग किया जावे। और डॉक्टर साहब का उपरोक्त विचार चीन के लिए कोई नई बात नहीं है। १२वीं शताब्दी से लेकर १५वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक, चीन के साहित्य का प्रत्येक भाग बोलने की भाषा में लिखा गया था। डॉक्टर हु-शिह का यह आन्दोलन सारे देश में बात की बात में फैल गया। आजकल चीन के क़रीब-क़रीब सभी पत्र आदि पे हुआ (Pai Hua) या सादी भाषा में छपते हैं।

यद्यपि आजकल चीन में प्रजातन्त्र राज्य है। पर चीन के ९५ फ़ीसदी लोग लिख-पढ़ नहीं सकते। चीन की इस अशिक्षा का सब से बड़ा कारण वहाँ की वर्णमाला है। चीन में ६०,००० वर्णमालाएँ हैं। इन ६०,००० वर्णमालाओं को याद रखना हर एक के बस की बात नहीं है। चीन का इतिहास पढ़ने से पता चलता है कि २८वीं शताब्दी B. C. में चिड़ियों के पञ्जों की नक़ल करके चङ्ग चीह (Tsang Chieh) ने इन वर्णमालाओं का आविष्कार किया था। पहिले वर्णमालाओं का रूप उन्हीं वस्तुओं से मिलता था, जिनका वे बोध कराती थीं। जैसे मान लीजिए कि आदमी लिखना था तो आदमी की शक्ल बना देते थे। अगर दो औरतों की सूरत साथ बना दी जाती थी तो उससे 'लड़ाई' शब्द का बोध होता था। और अगर तीन औरतों की सूरत साथ-साथ बना दी जाती थी तो 'बातचीत' शब्द का बोध होता था। प्रत्येक वस्तु तथा भाव के लिए एक-एक निशान था। १९१२ में एक आन्दोलन उठाया गया था, जिसका मतलब था कि कुल ३,००० वर्णमालाएँ चुन ली जाएँ। पर १९२२ तक इस आन्दोलन का कोई परिणाम न हुआ। १९२२ में मिस्टर वाई० सी० जेम्स (Y. C. James) ने चीन की जनता को शिक्षित करने के लिए आन्दोलन उठाया। उन्होंने ६०,०००

वर्णमालाओं में से १,००० वर्णमालाएँ छाँटीं। और उन्हीं से जनता को शिक्षित किया। अब यह आन्दोलन चीन में बहुत फैल गया है। इन १,००० अक्षरों को याद करने के पश्चात् एक पुरुष सरलता से पत्र, पुस्तक आदि पढ़ सकता है। और एक विद्यार्थी इन अक्षरों को सरलता से याद भी कर सकता है। इस नवीन योजना द्वारा प्रति वर्ष १०,००,००० बालक पढ़ाए जाते हैं।

अन्त में पाठकों को यह भी स्मरण रखना चाहिए कि चीन में तीन भाषाएँ तथा १९ बोलियाँ प्रचलित हैं। इससे चीन की जनता को शिक्षित करने में और भी कठिनाई पैदा हो जाती है।

चीन की राष्ट्रीय सरकार ने चीन की जनता को शिक्षित करना अपना लक्ष्य बना लिया है। मई, १९२८ में नानकिङ्ग में राष्ट्रीय शिक्षा-कॉन्फ्रेन्स हुई थी। उसमें निम्नलिखित बातें तय हुई थीं :—

१—जिन फ़ैक्टरियों तथा गोदामों में ४० या इससे अधिक लोग काम करते हों, उनमें स्कूल खोले जावें।

२—ऐसे स्कूलों के लिए विशेष पुस्तक आदि तैयार की जावें।

३—विशेष व्याख्यान का प्रबन्ध किया जावे।

४—सफ़ाई तथा स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया जावे।

५—लड़कों के खेल-कूद तथा मनबहलाव के लिए उचित प्रबन्ध किया जावे।

६—ख़ान्दानी उद्योग-धन्धों की शिक्षा प्रोत्साहित की जावे।

७—स्त्रियों के लिए औद्योगिक मदरसे खोले जावें।

८—सरकारी पुस्तकालय तथा वाचनालय स्थापित किए जावें।

मैंने उपरोक्त लाइनों में चीन की शिक्षा-प्रणाली की मुख्य-मुख्य बातें बतलाने का प्रयत्न किया है। आगे चल कर मैं इसी शिक्षा-प्रणाली को पूर्णरूप से बतलाने का प्रयत्न करूँगा। पाठकों को यह बात स्मरण रखना चाहिए कि शिक्षा का प्रश्न चीन की सरकार के सामने एक मुख्य प्रश्न है। यदि चीन की सरकार ने यह प्रश्न हल कर लिया तो उसके और काम सरल हो जावेंगे। उसके सामने बहुत सी कठिनाइयाँ हैं। पर प्रयत्न करने से ये कठिनाइयाँ दूर हो सकती हैं। जब चीन की जनता शिक्षित हो जावेगी, तो चीन का प्रजातन्त्र का मार्ग बहुत सरल हो जावेगा।

* * *

मिश्रित रक्त-समस्या

ऐङ्ग्लो-इण्डियनों का भविष्य

रेवेरेण्ड डब्ल्यू० ए० हॉब्सन 'चर्च टाइम्स' में लिखते हुए कहते हैं, कि हम मिश्रित रक्त के मनुष्य भी ईश्वर की सन्तान उतनी ही मात्रा में हैं, जितनी मात्रा में कि कोई हो सकता है; और कैथोलिक गिर्जे से हमारा भी सम्बन्ध वैसा ही है, जैसा कि इसका सम्बन्ध किसी अङ्गरेज़, इटालियन, ग्रीक या जापानी से है। इस लेख में विशेषतया उनके विषय में विचार किया गया है, जो पहले 'यूरेशियन' के नाम से पुकारे जाते थे, और जिन्हें आजकल ऐङ्ग्लो-इण्डियन्स कहा जाता है, जिनमें लेखक भी एक है।

यदि हम इस समस्या को भली-भाँति समझना चाहते हैं तो ऐङ्ग्लो-इण्डियनों के प्रति जो पक्षपातपूर्ण विचार यूरोपियनों के बीच फैले हुए हैं, पहले उन पर विचार करना होगा। भावुकता को एक ओर रख कर, सभी बातों के आधार पर हमें वैज्ञानिक रूप से इस विषय पर विचार करना होगा। हम जानते हैं कि पक्षपातपूर्ण विचारों से सभी बातों पर भी कुछ दूसरा ही रङ्ग चढ़ जाता है। इसलिए हमें पहले इन पक्षपातपूर्ण विचारों को हटा देना चाहिए।

यह बात कि अङ्गरेज़ जाति का विचार काले रङ्ग वालों के प्रति पक्षपातपूर्ण है, उतनी ही प्रसिद्ध है, जितनी कि यह बात कि वे एक द्वीपवासी हैं। यह सम्भव है कि वे देशी लोगों पर शारीरिक और राजनैतिक अत्याचार न करें (यद्यपि अमेरिका के संयुक्त-राज्य के उन भागों में, जहाँ अङ्गरेज़ अधिक संख्या में हैं, वहाँ के आदि निवासियों पर शारीरिक अत्याचार (Lynchings) की बात बहुधा सुनी जाती है) किन्तु संसार के प्रत्येक भाग में (जहाँ अङ्गरेज़ जाति का सम्पर्क किसी दूसरे वर्ण वाली जाति से है) वे अपने को असवर्ण जातियों से अलग रखते हैं, और उनके प्रति एक ऐसे भाव को अपने हृदय में स्थान देते हैं, जिसका उन बेचारों पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

उच्चता की थोथी दलील

इससे यह समझना आसान है कि अङ्गरेज़ लोग किस भाव से ऐङ्ग्लो-इण्डियनों या दूसरी मिश्रित-रक्त की जातियों को देखते हैं। यदि वे एक काले मनुष्य से घृणा करते हैं और उसे अपने पास भी नहीं फटकने देते, तो उस मनुष्य से तो अवश्य ही घृणा करते हैं, जिसमें उस काली जाति के रक्त के साथ उनके रक्त का सम्मिश्रण हुआ है। ऐङ्ग्लो-इण्डियन जाति उन्हें बराबर यह याद दिलाती है कि तुम झूठी श्रेष्ठता धारण किए हो। ऐङ्ग्लो-इण्डियन लोग इस बात की पुष्टि-स्वरूप हैं कि अङ्गरेज़ लोग संसार को केवल यह दिखाते हैं कि वे भारतीयों से कोई सम्पर्क नहीं रखते, तो भी दरअसल में वे भारतीय स्त्रियों से सम्बन्ध रखने से बाज़ नहीं आते। यही कारण है कि वे ऐङ्ग्लो-इण्डियन लोगों से घृणा करते हैं। उन्हें अपनी सन्तान मानने और उनके साथ अच्छा व्यवहार करने में वे अपनी मानहानि समझते हैं, क्योंकि ऐसा करने से यह समझा जायगा कि वे भारतीयों को अपने बराबर समझते हैं। इस कारण ऐङ्ग्लो-इण्डियनों को दुरदुराया जाता है और उनके साथ अन्याय किया जाता है। उनकी नीचता सिद्ध करने के लिए यह ग़लत बात कही जाती है कि मिश्रित-रक्त की जातियों में, दोनों जातियों के केवल दोष ही आते हैं, गुण नहीं।

इसका कोई कारण समझ में नहीं आता कि वे केवल दुर्गुणों के ही अधिकारी कैसे हैं? यदि इस बात को न माना जाय, कि सभी जातियाँ एक ही मानव जाति की भिन्न-भिन्न शाखाएँ हैं, तो साधारण दृष्टि से भी विशुद्ध रक्त की कोई जाति नहीं मिलेगी। स्वयं अङ्गरेज़ों में भी अनुमान से बाहर भिन्न-भिन्न रक्तों का सम्मिश्रण हुआ है। आज की अङ्गरेज़ जाति में रोमन, एङ्गल्स, सैक्सन्स, डेन, नॉर्मन आदि जातियों के रक्तों का सम्मिश्रण हुआ है। तो भी कोई यह नहीं सोचता कि अङ्गरेज़ों में उन लोगों का केवल अवगुण ही आया है, गुण नहीं। इसमें सन्देह नहीं कि ऐङ्ग्लो-इण्डियनों की नसों में भारतीय रक्त है, किन्तु अङ्गरेज़ों की नसों में भी एशियाई जातियों का रक्त है। नॉर्डिक जाति का विकास यूरोप में हुआ हो, यह सम्भव है; लेकिन भूमध्यसागर तट-वासी तथा आल्पाईन के निवासी अफ़्रीका और एशिया से ही आए थे। उनके रक्त के सम्मिश्रण का जो प्रभाव यूरोप पर पड़ा है, वह प्रत्यक्ष है। फिर ऐसी दशाओं में परिणाम को जानते हुए भी विपरीत कल्पना करना बिना जड़ की बात है।

केवल अभिमान और राजनैतिक भय इस बात को स्वीकार करने से उन्हें रोकता है। हमारे प्रमाण को विपरीत सिद्ध करने का कोई यत्न नहीं किया गया है। सीधी-सादी बातों से इसकी पुष्टि हो रही है। पेड़-पौधे तथा पशुओं की दोनस्ली जातियाँ ऊसर होती हैं, किन्तु यह बात मनुष्यों में नहीं है। इससे यह सिद्ध होता है कि मानव जातियों में स्वाभावतः एक-दूसरे में अन्तर रहा है। जाँच करने से मालूम होता है कि ऐङ्ग्लो-इण्डियन लोग शारीरिक अवस्था में भी अङ्गरेज़ों से नीचे नहीं हैं। यद्यपि यह बात सच है कि ऐङ्ग्लो-इण्डियनों का पालन-पोषण एक अङ्गरेज़ की तरह नहीं हुआ है, और उन्हें अनुकूल जलवायु भी नहीं मिली है, तो भी शारीरिक शक्ति से सम्बन्ध रखने वाले खेलों में अङ्गरेज़ों से वे अच्छे

रहे हैं। दो वर्ष पहले जो हॉकी खेलने वालों का दल यूरोप गया था, उसके १३ खेलाड़ियों में ९ ऐङ्गलो-इण्डियन थे।

अधिकांश ऐङ्गलो-इण्डियनों की दशा ऐसी नहीं है कि वे विश्वविद्यालय की ऊँची शिक्षा प्राप्त कर सकें। किन्तु स्वभावतः इसकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण होती है। निरक्षरता तो इनमें है ही नहीं। १०० फ़ी सदी हमारे बच्चे स्कूलों में पढ़ते हैं। इनमें अधिकांश मध्यम श्रेणी तक की शिक्षा पा लेते हैं। भारत की अन्य जातियों की तुलना में (यदि संख्या के हिसाब से विचार किया जाय तो) ग्रेजुएटों की संख्या उनसे बहुत अधिक है। उन नौकरियों में भी, जिनमें बुद्धि और धैर्य की आवश्यकता है, ऐङ्गलो-इण्डियनों की ही संख्या अधिक है।

इस प्रकार रेलवे, टेलिग्राफ़, चुङ्गी, डाक, डॉक्टरी आदि विभागों में ऐङ्गलो-इण्डियनों की ही

चलता है आगे बन साहब, ईसाई जो हुआ अछूत!
जो हिन्दू, वह मुर्गी ढोता, पीछे यह किसकी करतूत?

संख्या अधिक है। ऐसी कोई भी ऊँची नौकरी नहीं है, जिसमें ऐङ्गलो-इण्डियनों ने सम्मान के साथ काम न किया हो। सेना में भी, जहाँ रङ्ग का विचार अधिक किया जाता है, कुछ विख्यात लोग मिश्रित-रक्त की ही जाति के हैं। दो भारतीय रिसाले ऐङ्गलो-इण्डियनों के नाम से प्रसिद्ध हैं। स्कीनर के वारबर्टन रिसाले के नाम से प्रत्येक भारतीय सिपाही परिचित है। गत महायुद्ध के समय, फ्रान्स में भारतीय आक्रमणकारी सेना का नायक एक ऐङ्गलो-इण्डियन ही था। उस महायुद्ध में जेपलीन को पहले-पहल नीचे लाने वाला मनुष्य ऐङ्गलो-इण्डियन ही था। उस युद्ध में हमारी जाति का १/१० भाग लगा हुआ था। फिर भी तारीफ़ इस बात की है कि ऐङ्गलो-इण्डियनों को सेना में कठिनाई से स्थान मिलता है। उन्हें अपना अलग रिसाला रखने की आज्ञा नहीं मिल सकती।

यूरोपियनों और ऐङ्गलो-इण्डियनों की नैतिकता

धार्मिक विषयों में यह प्रसिद्ध ही है कि ऐङ्गलो-इण्डियन लोग सच्चे धार्मिक होते हैं, और गिर्जे से उनका सम्बन्ध बहुत गम्भीर है। भारत में रहने वाले यूरोपियनों में फ़ीसदी १० भी नियमपूर्वक गिर्जे में नहीं जाते। हम यूरोपियनों से कहीं अधिक सच्चरित्र और धार्मिक हैं। हाल तक हमारे बीच तलाक़ की प्रथा बिलकुल ही नहीं थी। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि ऐङ्गलो-इण्डियन लोग एकदम आदर्श ही हैं। किन्तु यह बात सच है कि यूरोपियनों की अपेक्षा सच्चरित्रता की मात्रा इनमें अधिक है।

इस सम्बन्ध में एक दूसरी बात भी विचारणीय है। दो विरोधी जातियों की, जिनकी सभ्यता भिन्न है, सन्तान होने से ऐङ्गलो-इण्डियनों के मष्तिष्क में एक द्वन्द्व का उठना स्वाभाविक है, जो उनकी उन्नति और विकास में बाधा पहुँचाता है। यदि आधुनिक मानस-शास्त्र ठीक है, तो यह बात भी ठीक है, किन्तु साधारणतया लोग इसे नहीं मानते हैं।

यह अन्तर्द्वन्द्व तब तक जारी रहेगा, जब तक भारतीय जातियाँ यूरोपियनों के बराबर नहीं समझी जाएँगी। किन्तु इस बीच में इस विरोध को मिटाने के लिए शिक्षा की सहायता ली जा सकती है।

किन्तु हमारे लिए कठिनाई यह उपस्थित होती है कि हमारे स्कूलों में, जो यूरोपियनों के हाथ में हैं, हमारे भारतीय पक्ष को दबाने का और हमारे बच्चों को यूरोपियनों की भाँति बनाने का यत्न किया जाता है। ऐसा करने का राजनैतिक उद्देश्य है। ऐसा इसलिए किया जाता है, कि राजनैतिक मामलों में हम भारतीयों से अलग रहें, न कि इसलिए कि हमें यूरोपियनों में स्थान मिले। इस प्रकार हमारा भारतीय और यूरोपीय दोनों पक्ष दबाया जाता है, और फल-स्वरूप हम उस योग्यता को नहीं प्रकट कर सकते, जो दोनों जातियों से हमें प्राप्त होती है।

इङ्गलैण्ड के मिशनरी स्कूल इसी नीति का पालन करते हैं। विज्ञापनों में वे यह दिखाते हैं कि वे अङ्गरेज़ी ढङ्ग की प्रथम श्रेणी की शिक्षा देने वाले स्कूल हैं। उसके सभी शिक्षक अङ्गरेज़ ही होते हैं और किसी भी दशा में भारतीय शिक्षकों को नहीं रक्खा जाता। वे संसार को इस बात की भी सूचना देते हैं कि उनका वातावरण सम्पूर्णतया अङ्गरेज़ी है। फ़ीसदी ७५ विद्यार्थी उसमें ऐङ्गलो-इण्डियन हैं, जिनमें फ़ीसदी ९० का भारत से आजीवन सम्बन्ध रहेगा; और उन्हें भारत से घृणा करने की शिक्षा दी जाती है।

इस मिश्रित-रक्त की समस्या को ईसाई-चर्च ही हल कर सकती है। एशिया, अफ़्रिका या अमेरिका में काले ईसाइयों की शिक्षा का प्रबन्ध गिर्जा ही करती है। यदि ये चर्च काली जातियों के साथ अपने व्यवहार में तथा उनकी शिक्षा की प्रणाली में धर्म का व्यावहारिक नियम ला दें, तो सारा विवाद मिट जाय।

* * *

रजत-रज

[संग्रहकर्ता—श्री० लक्ष्मीनारायण जी अग्रवाल]

शक्ति ने संसार से कहा—"तुम मेरे हो।" संसार ने उसे अपने राज्य-सिंहासन पर क़ैद कर लिया।

प्रेम ने संसार से कहा—"मैं तुम्हारा हूँ।" संसार ने उसे स्वतन्त्रता दे दी।

❀

गौरैया मयूर की पूँछ के बोझ से शोकित है।

❀

तुम मुस्कुराते हो। पर कब? जब तुम्हारे अधरों की ओर देखते-देखते मैं निराश हो जाता हूँ।

तुम हँस पड़ते हो। पर कब? जब तुम्हारे रूखे ओठों को देखते-देखते मुझे तुम्हारे प्रेम में शङ्का होने लगती है।

❀

सन्ध्या की सुनहली सुन्दरता में भावी अन्धकार छिपा हुआ है।

❀

रेणु के प्रत्येक कण में सूर्य की झलक है।

❀

बुझने के पूर्व दीपक एक बार अधिक प्रकाशमान होता है।

❀

नियमों से सुधार नहीं होते; सुधारों से नियम बनते हैं।

❀

बदला लेने की अपेक्षा क्षमा करने में अधिक आनन्द है।

❀

श्रद्धा दान से नहीं, अनुभव से प्राप्त होती है।

❀

ईश्वर की धूल की महत्ता सिद्ध करने के लिए मनुष्य की मूर्ति धूल में टुकड़े-टुकड़े हो जाती है।

❀

जुगनुओं की भाँति तारे प्रकट होने से नहीं डरते।

❀

सरिता भयभीत होकर बड़े वेग से अपने प्रियतम उदधि की ओर भागती है।

❀

उपाय दुखों के अवलोकन से ही प्राप्त होते हैं, दुख से दूर भागने से नहीं।

❀

लुटेरों का धन्धा धनिकों की लूट का प्रतिबिम्ब है।

* * *

× × ×एक बात हम सरकार को भी कहना चाहते हैं। काँङ्ग्रेस ने तो सन्धि की शर्तों के अक्षरों का ही नहीं, उसके तात्पर्य का भी पालन किया है, और अब उसे स्वीकार भी कर लिया है; पर सरकार का व्यवहार असन्तोषपूर्ण रहा है। वास्तव में, सन्धि की शर्तों के अक्षरों का नहीं, तो उसके तात्पर्य की प्रत्येक प्रकार से अवहेलना करने का तो अवश्य ही प्रयत्न किया गया है। हम हाल की फाँसियों के विषय में नहीं कहते। उनका सन्धि से कोई सम्बन्ध नहीं था। हमारा मतलब उन बहुसंख्यक क़ैदियों से है, जो केवल इसीलिए जेलों में सड़ रहे हैं, क्योंकि कुछ स्थानीय अधिकारियों का मस्तिष्क इतना सङ्कीर्ण है, कि वे सन्धि की शर्तों को उदारतापूर्वक काम में नहीं लाना चाहते। हमारा मतलब उन महिलाओं से है, जो कुछ व्यक्तियों की शैतानी नीति के कारण अब तक जेलों में बन्द हैं। हमारा तात्पर्य उस प्यूनिटिव पुलिस से है, जो अब भी कतिपय स्थानों में तैनात की जाती है; और हमारा तात्पर्य उस असाधारण विलम्ब से है, जो ज़ब्त जायदादों के लौटाने में की जा रही है। हमारा मतलब इन सबों से तथा उस मूर्खतापूर्ण और रुखाई के भावों से है, जिसकी द्वैध शासन में प्रधानता रहती है। हमें आशा है कि सरकार भी शान्ति के लिए काँङ्ग्रेस की ही तरह उत्साह दिखलाएगी, और वह लॉर्ड इर्विन के शब्दों और उनकी इच्छाओं का उसी प्रकार आदर करेगी जिस प्रकार काँङ्ग्रेस ने महात्मा गाँधी के सम्बन्ध में किया है।

—हिन्दुस्तान टाइम्स (अङ्गरेज़ी)

महात्मा गाँधी ने भङ्ग अवज्ञा आन्दोलन को उठा लिया और काँङ्ग्रेस को भी ऐसा करने के लिए सहमत करने में वे सफल हो सके। महात्मा जी ने पलक मारते जो कुछ प्राप्त कर लिया है, वह किसी अन्य काँङ्ग्रेस नेता से नहीं हो सकता था। उन्होंने इस बात का सच्चा प्रमाण दिया है, कि वे अपनी प्रतिज्ञा को पूरी कर सकते हैं। देश की अभी जैसी अवस्था है, किसी नेता के लिए एक तूफ़ान पैदा कर असन्तुष्ट जनता का प्रिय बन जाना कोई बड़ी बात नहीं है। किन्तु अपनी लोकप्रियता की रक्षा करते हुए, सहयोग के लिए देश का आवाहन करना किसी दूसरे नेता के लिए असम्भव है। इसमें सन्देह नहीं कि कुछ बेहूदे नवयुवकों ने उन्हें गालियाँ दीं, और उन काले फूलों से उनका स्वागत किया गया, जो नर्म दल वालों के लिए तैयार किया गया था, क्योंकि लोगों को सन्देह था कि वे (नर्मदल वाले) नौकरी और ख़िताब चाहने वाले हैं, पर तो भी महात्मा जी की नैतिक प्रतिष्ठा दृढ़ है।

यद्यपि भारतवर्ष में तथा भारत की भलाई चाहने वालों में इससे पूर्ण सन्तोष होगा कि काँङ्ग्रेस ने बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य किया है, तो भी कुछ लोगों को इससे शोक होगा। इन लोगों ने महात्मा गाँधी को दग़ाबाज़ और पागल से लेकर धर्मान्ध तक कह डाला था। किन्तु उन्हें यह जान कर अत्यन्त आश्चर्य होगा और वे चिढ़ेंगे भी, कि इस 'अर्द्धनग्न' फ़क़ीर ने सच्चे दिल से लॉर्ड इर्विन की नीति की परीक्षा लेना स्वीकार कर लिया है।

गोलमेज़ परिषद में काँङ्ग्रेस के भाग लेने के प्रस्ताव का पास हो जाना, केवल महात्मा गाँधी की व्यक्तिगत विजय ही नहीं है, किन्तु यह एक अच्छी बुद्धि की विजय है। इससे भविष्य सुन्दर प्रतीत हो रहा है।

—लीडर (अङ्गरेज़ी)

इस प्रस्ताव से हमें ऐसा जान पड़ता है, कि यह महात्मा गाँधी और पं० जवाहरलाल नेहरू के बीच समझौते का परिणाम है। इसके कुछ खण्डों के भाव प्रशंसनीय हैं; किन्तु अन्य खण्डों से साफ़ मूर्खता टपकती है। ये आवश्यक अधिकारों की घोषणा से आगे बढ़ गए हैं, और इससे भावी शासन-विधान में कठिनता उपस्थित हो जाती है। इससे क्या हानि है, यह शीघ्र ही प्रकट हो जायगी। सेना का व्यय अपने हाथों में रखने के लिए कुछ कहना

हम किसी के लिए काँटे नहीं बोने वाले

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

तुम यह क्या कहते हो, रोते रहें, रोने वाले,
दिल के अरमाँ कभी पूरे नहीं होने वाले !
ख़्वाब से चौंकना दुशवार नज़र आता है,
देखें कब तक यूँ हीं सोते रहें, सोने वाले !
महफ़िले-नाज़ में हँस-हँस के यह कहना उसका
अभी क्या रोए हैं, अब रोएँगे रोने वाले।
बारे ग़म से तेरे उश्शाक़ को फ़ुरसत कैसी
सर उठा सकते नहीं, बोझ के ढोने वाले।
बाग़े आलम से गुज़र जाएँगे नक़दत की तरह
हम किसी के लिए काँटे नहीं बोने वाले !
हो चुके बिस्मिले-अन्दाज़ हम उनके "बिस्मिल"
अब किसी के लिए बिस्मिल नहीं होने वाले !

* * *

आसान है, किन्तु उसे करना आसान नहीं है। यदि शासन-विधान द्वारा उसकी सीमा निर्धारित कर दी जाय, तो राष्ट्र पर कठिन आपत्ति पड़ने पर अस्त्र-शस्त्रों की अपेक्षा, जिनमें धन का व्यय होता है, आत्मिक बल का ही प्रयोग सम्भव है। हाँ, महात्मा गाँधी को वायसराय या सरकारी नौकरों को ५००) से अधिक मासिक मिलने पर ईर्ष्या हो सकती है, किन्तु इस प्रकार के उदारतापूर्ण वेतनों से ही कोई भी सरकार नहीं टिक सकती है। मज़दूरों की भलाई से सम्बन्ध रखने वाली बातों, टैक्सों को श्रेणी-बद्ध करना, निषेधाज्ञाओं का पालन कराना, औद्योगिक व्यवसाय की रक्षा-सम्बन्धी बातों तथा इसी प्रकार की अन्य बातों का समावेश शासन-विधान में उपयुक्त नहीं है। इन समस्याओं को तो क़ानून बना कर हल करना चाहिए। विदेशी कपड़े को आने से रोकने का जो विधान है, वह साफ़ ऊटपटाँग मालूम पड़ता है। इस पर विस्तारपूर्वक कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं। अधिक ब्याज और कम वेतन सम्बन्धी अंशों की अस्पष्टता ने उनके मूल्य का अपहरण कर लिया है।

—पायोनियर (अङ्गरेज़ी)

एक जातीय सङ्गठनकर्त्ता संस्था की हैसियत से, जिसका उद्देश्य केवल देश की सेवा है, काँङ्ग्रेस की मान-मर्यादा कराची में होने वाले उसके ४५वें अधिवेशन में दिए गए, सभापति सरदार वल्लभभाई पटेल के भाषण से बहुत ही बढ़ गई है। भारत की परिस्थिति इस समय अत्यन्त नाज़ुक है। ऐसे समय में काँङ्ग्रेस के समान एक संस्था का सभापतित्व ग्रहण करना, जो देश के प्रत्येक सम्प्रदाय और जाति की भलाई के लिए स्थापित की गई है, और जिसकी कार्यकारिणी समिति एक ऐसा वातावरण उत्पन्न करना चाहती थी, जिसमें भारत और ब्रिटेन के बीच सम्मानपूर्ण समझौता सम्भव हो, किसी तरह भी सहज कार्य नहीं था। सभापति के भाषण को पढ़ कर हम कह सकते हैं, कि सरदार पटेल ने अपने कठिन कर्त्तव्य का पालन बड़ी निपुणता के साथ किया है। उनके भाषण में गाँधी-इर्विन समझौते की छाप है।

अन्तर्साम्प्रदायिक समस्याओं के सम्बन्ध में यह भाव—जो समझौते के भावों से अधिक महान है, बड़ी उदारता के साथ प्रकट किया गया है। यह देश-प्रेम के उस भाव से परिपूर्ण है जो परतन्त्र देश के एक बच्चे को तब तक बेचैन किए रहता है, जब तक कि उसे स्वतन्त्रता प्राप्त न हो जाय। काँङ्ग्रेस के गत अधिवेशनों के सभापतियों के भाषणों पर प्रकाश न डाल कर भी, हम यह कह सकते हैं कि सरदार पटेल का भाषण जातीय सङ्गठन के इतिहास में युगान्तर उपस्थित करने वाला है।

—मुसलमान (अङ्गरेज़ी)

भला उस सरकार पर किसी का विश्वास कैसे हो सकता है, जो पहले तो कहती है, कि वह अपने ख़र्च में एक रुपया भी नहीं घटा सकती, किन्तु संयोगवश वह कम से कम डेढ़ करोड़ रुपए घटाने के लिए तैयार हो जाती है। बात असल यह है, कि वर्तमान उच्चाधिकारियों का दल भारतवर्ष की वर्तमान क्रान्तिशील दशा का सामना करने में असमर्थ है। इसने न तो कुछ सीखा है, और न यह कुछ सीख ही सकता है। उसके अनुसार अधिकारियों के शब्द पवित्र माने जाने चाहिएँ; और अधिकारियों की आज्ञा घुटने टेक कर लेनी चाहिए; और इसके लिए उन्हें धन्यवाद देना चाहिए, कि मर्त्यलोक के मनुष्यों का यह अहोभाग्य है कि देवताओं ने उनसे सम्बन्ध जोड़ा है। भारत का प्रत्येक मनुष्य यह जानता है, कि व्यय बढ़ाया गया है। सारा संसार इस देश के मिलिटरी बजट पर हँसता है। सारे संसार में इस बात की निन्दा की जाती है, कि यह केवल फ़िज़ूलख़र्ची है जो एक शासक जाति ने शासित जाति के मत्थे मढ़ दिया है। अधिकारीवर्ग इन आलोचनाओं की परवा भी नहीं करते। न केवल ये अपने आपको स्वयं बदनाम करते हैं, बल्कि ये बहुत जल्दी ही अपनी पराजय भी स्वीकार कर लेते हैं, जिससे ये झूठे और बेईमान सिद्ध हो जाते हैं। इनकी अन्तिम शरण वायसराय हैं, जिनकी ख्याति की आड़ में ये अपनी राजनीतिज्ञता की दुहाई देते हैं। ये लॉर्ड इर्विन के लिए परवाह नहीं करते। वे यह ज़रा भी नहीं सोचते कि हमारे कार्यों से उनकी कठिनाइयाँ बढ़ती हैं या नहीं। सौभाग्यवश भारतीय जनता अब लॉर्ड इर्विन को जान चुकी है। फ़ाइनेन्स बिल पर लॉर्ड इर्विन की प्रशंसा को लोग उनके वैध अधिकारों का अनुचित

उपयोग नहीं, बल्कि बोर्वन स्वरूप सिविलियनों के प्रति एक फटकार समझेंगे। सुस्टर, रेनी, क्रेरर तथा दिल्ली के अन्य उच्च पदाधिकारी सिविलियनों ने अनजाने में लॉर्ड इर्विन की एक और प्रशंसा कर दी है और अपने कफ़नों के ऊपर कुछ और खूँटे ठोक लिए हैं।

—इण्डियन डेली मेल (अङ्गरेज़ी)

*　　*　　*

कराची कॉङ्ग्रेस

कराची कॉङ्ग्रेस ने कई उपयोगी प्रस्ताव पास किए हैं; पर उन सब प्रस्तावों में सब से अधिक महत्वपूर्ण और सब से अधिक उपयोगी वह प्रस्ताव है, जिसमें "स्वराज्य" शब्द की व्याख्या की गई है। हम उस स्वराज्य को दो कौड़ी का स्वराज्य समझते हैं, जिसमें देश की करोड़ों ग़रीब जनता को कोई अधिकार प्राप्त न हो और वह ग़रीबी और गुलामी में उसी तरह दबी रहे, जिस तरह वह आज दबी हुई है। जब से महात्मा गाँधी ने कॉङ्ग्रेस का नेतृत्व ग्रहण किया है, तब से आज तक महात्मा जी तथा कॉङ्ग्रेस के अन्य कर्णधार देश की दबी हुई जनता के हित को सदा सर्वोपरि समझते रहे हैं। इस वर्ष कॉङ्ग्रेस ने यह बात स्पष्ट कर दी है कि स्वराज्य ग़रीबों के हित के लिए होगा।××× इस समय देश में दो विचार-धाराएँ काम कर रही हैं। एक विचार-धारा गाँधीवाद को प्रवाहित करती है और दूसरी विचार-धारा लेनिनवाद या कार्ल-मार्क्सवाद को आन्दोलित करती है। कराची कॉङ्ग्रेस का उक्त स्वराज्य पथ-निदर्शन सम्बन्धी प्रस्ताव महात्मा गाँधी के सिद्धान्तों का आर्थिक स्पष्टीकरण मात्र है। यह कहना ग़लत है, कि कराची कॉङ्ग्रेस का यह प्रस्ताव साम्यवादी विचारों का रूप है। यह प्रस्ताव तो आर्थिक गाँधीवाद का स्पष्टीकरण मात्र है। इस प्रस्ताव को पास करने के लिए हम देश के प्रतिनिधियों को बधाई देते हैं। गाँधी-इर्विन समझौते को स्वीकृत करते हुए कॉङ्ग्रेस ने जो प्रस्ताव पास किया है, वह अत्यन्त स्पष्ट है। देश को पूर्णरूप से निर्बन्ध रखते हुए कॉङ्ग्रेस गोलमेज़ कॉन्फ्रेन्स में जायगी। इसका मतलब यह कि गोलमेज़ सभा की बेल चढ़ती नज़र नहीं आती। देश को सङ्गठनात्मक कार्य में किञ्चित मात्र भी शिथिलता नहीं आनी देनी चाहिए। बड़ा ही अच्छा होता, यदि कराची कॉङ्ग्रेस देश को स्पष्ट रूप से सङ्गठन का काम बराबर करते रहने का आदेश देती। किन्तु यदि कॉङ्ग्रेस ने प्रस्ताव करके इस तरह का कोई आदेश नहीं दिया तो इसका अर्थ यह नहीं कि हम सङ्गठन के काम में शिथिलता करें। देश भर की कॉङ्ग्रेस कमिटियों को ग्राम-सङ्गठन का काम ख़ूब ज़ोर-शोर से करते रहना चाहिए। इस दिशा में ढिलाई करना आत्मघात के तुल्य होगा।

—प्रताप (हिन्दी)

*　　*　　*

कानपुर में वीभत्सता का ताण्डव !!!

अधिकारियों की निन्दनीय लापरवाही !!

घृणित नरमेध और सम्पत्ति की होली !

गत २४ मार्च को कानपुर नगर में एक भयानक हिन्दू-मुस्लिम दङ्गा हो गया। चार दिन तक शहर में जिस वीभत्सता का ताण्डव होता रहा, वह युक्त-प्रान्त के साम्प्रदायिक झगड़ों के इतिहास में एक अनहोनी घटना है। दङ्गे का प्रारम्भ कैसे हुआ, इसका अभी तक ठीक-ठीक पता नहीं चल सका है। इसकी जाँच हो रही है। पर इतना हम ज़रूर कहते हैं, कि कानपुर के सरकारी कर्मचारियों को प्रकारान्तर से इस बात का पता लग चुका था कि गत २४ तारीख़ को कानपुर में कुछ अवटित घटना घटने वाली है। हमें इस बात का प्रमाण मिल गया है। मौक़े पर हम उस बात को प्रकट करेंगे। इस दङ्गे में मनुष्य अपने अत्यन्त पाशविक रूप में प्रकट हुआ। निहत्थे, राहगीरों, स्त्रियों और बच्चों का क़त्ले-आम बड़ी निर्दयता से हुआ। सोते हुओं की गर्दनों पर हाथ साफ़ किए गए। लड़खड़ाते बूढ़ों की हत्याएँ हुईं। वृद्धाएँ और बालिकाएँ छुरियों के घाट उतारी गईं। नवयुवतियों पर पाशविक अनाचार किए गए। घरों में आग लगाई गई। स्त्रियों, बच्चों और मर्दों को मकानों से निकलने न दिया गया और मकानात भस्मसात कर दिए गए। गोलियाँ चलीं, तमञ्चे चले। सैकड़ों आदमी मारे गए और लाखों की सम्पत्ति लुट गई। यह सब भयङ्करता बराबर चार-पाँच दिनों तक होती रही। मिसरी बाज़ार, बाँसमण्डी, बेकनगञ्ज, कर्नलगञ्ज, ग्वाल-टोली, बूचड़ख़ाना, चौबे गोला, नई चौक, परेड, नई सड़क, चमनगञ्ज, रामनारायण बाज़ार, पटकापुर, मछली बाज़ार, बकर मण्डी, मनिहारियाँ बाज़ार, मैदा बाज़ार, अनवरगञ्ज, फ़र्राशख़ाना, सदर बाज़ार आदि मोहल्लों में ऐसे-ऐसे अनाचार और अत्याचार हुए, कि जिनके स्मरण मात्र से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। पूछने वाले पूछ सकते हैं कि आख़िर यह सब जब हो रहा था तब क्या कानपुर में कोई शासन नहीं रह गया था? हम अपने उत्तरदायित्व को बख़ूबी समझते हुए भी यह कहने का साहस करते हैं, कि दङ्गे के इन दिनों में कानपुर के सरकारी अधिकारियों ने जिस निन्दनीय उपेक्षा, उच्छृङ्खलता, पक्षपात और नालायक़ी का परिचय दिया है, वह वर्णनातीत है। अधिकारी लोग खुल्लम-खुल्ला अपने सामने खड़े-खड़े दूकानों का लुटना और बच्चों, स्त्रियों और निहत्थे राह चलने वालों की बर्बरता-पूर्ण हत्या होना देखते रहे; पर उनके कान पर जूँ तक न रेंगी। बेशर्म पुलिस के अधिकारी और निर्लज्ज ज़िले के सूत्र-सञ्चालक मानो इस भयानकता से बहुत ख़ुश थे। जब उनसे कानपुर की जनता प्रबन्ध करने या सहायता देने को कहती, तो वे ठहाका मार कर हँसते और कह देते कि गाँधी को बुलाओ, वह सब कुछ कर लेगा, आकर हमसे रोना क्यों रोते हो ?! हमारे पास शहर के ऐसे-ऐसे सम्भ्रान्त व्यक्तियों के बयान हैं, जिसमें वे अधिकारियों का नाम ले-लेकर उनके ऊपर उस बर्बरतापूर्ण उपेक्षा का लाञ्छन लगाते हैं। एक सज्जन ने पुलिस के सुपरिण्टेण्डेण्ट को टेली-फ़ोन द्वारा इत्तिला दी कि गुण्डों का एक दल बन्दूक़ें चलाता और घरों में आग लगाता तथा लूट-पाट करता आगे बढ़ रहा है। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट के बङ्गले से जवाब मिलता है, कि तुम लोग भी गुण्डों का मुक़ाबला करो। उनसे फिर कहा जाता है कि उन गुण्डों के पास ग़ैर क़ानूनी हथियार हैं। वे बन्दूक़ें दाग़ रहे हैं। ऐसी हालत में मुक़ाबला करना असम्भव है। तब पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट के यहाँ से ताने के साथ कहा जाता है कि अगर मुक़ाबला नहीं कर सकते तो स्वराज्य का मज़ा लूटो। (If you can't do any thing then enjoy Swaraj !) मुमताजअली नाम का एक सब-इन्स्पेक्टर अपने सामने घरों को लुटते और मार-काट होते देखता रहा; जब उससे कहा गया कि देखो यह क्या हो रहा है, तो वह बेशर्मी से बोला, गाँधी को बुला लो। नादिरअली सब-इन्स्पेक्टर के ख़िलाफ़ सैकड़ों नागरिकों ने शिकायतें कीं, लेकिन उसकी ओर किसी अधिकारी ने ध्यान तक न दिया। इतना ही नहीं, सुनने में तो यहाँ तक आया है कि पुलिस वालों ने अपनी बन्दूक़ें गुण्डों को दे दीं और उन्होंने अपने आगे लोगों की हत्याएँ करवाईं। कानपुर के अधिकारियों के इस नितान्त बर्बरतापूर्ण व्यवहार की वजह से ही कानपुर का हिन्दू-मुस्लिम दङ्गा इतना भयङ्कर रूप धारण कर गया; वरना परिस्थिति को क़ाबू में लाना कोई कठिन बात न थी। पुलिस का व्यवहार अत्यन्त पक्षपातपूर्ण रहा है। कानपुर के स्वयं ज़िलाधीश ने एक-दो से नहीं, दसों शिकायत करने वाले नागरिकों से, ताना-ज़नी करते हुए, कहा है कि गाँधी को बुलाओ, वह सब ठीक कर देगा। अब तक १०८ मुसलमान तथा १२८ हिन्दुओं की लाशें मिल चुकी हैं। क़रीब ७५ लाख की सम्पत्ति लुट और नष्ट हो चुकी है। कानपुर की यह क्षति भयङ्कर है। इसलिए स्वयं नागरिकों को अब शान्ति-स्थापन के कार्य में अग्रसर होना चाहिए।

*　　*　　*

प्रज्वलित बलिदान के यज्ञ-कुण्ड में !

श्रीयुत गणेशशङ्कर विद्यार्थी की आहुति !!

दङ्गे का पहला दिवस

गत २४ मार्च को कानपुर में तीसरे पहर हिन्दू-मुस्लिम दङ्गा शुरू हो गया। विद्यार्थी जी निकले और झगड़े के स्थानों में पहुँच कर लोगों को शान्त करने, उनकी प्राण-रक्षा करने तथा उनके मकान और दूकान को जलने तथा लूटने से बचाने की कोशिश करते रहे। शाम तक वे इसी धुन में मारे-मारे फिरते रहे और लोगों को बचाते वक़्त उनके पैरों में कुछ चोट भी आई। उस दिन पुलिस का जो रवैया उन्होंने देखा, उससे वे इस नतीजे पर पहुँचे कि पुलिस बिलकुल सुस्ती और पक्षपात से काम ले रही है, ऐसी दशा में लोगों की जान-माल की रक्षा करने के लिए जाना व्यर्थ है।

दङ्गे की भीषणता ने विचार बदल दिया

२४ की रात में और २५ को सुबह दङ्गे का रूप और भी भीषण हो गया और चारों तरफ़ से लोगों के मरने, घायल होने, मकान जलाए जाने और दूकान लूटे जाने की ख़बर आने लगी। इन लोमहर्षण समाचारों को सुन कर उनका सदा का परोपकारी हृदय विघल उठा और वे नौ बजे सुबह बिना कुछ खाए-पिए लोगों को बचाने के लिए निकल पड़े। उनके दो-एक मित्रों ने उन्हें जाने से रोका भी, पर वे न रुके, न रुके। शुरू में आपको पटकापुर वाले खींच ले गए और आपने वहाँ से कुछ हिन्दू-परिवारों को सुरक्षित स्थानों में भेजा। वहाँ से फिर बङ्गाली मोहाल और फिर इटावा बाज़ार पहुँचे। क़रीब ३ बजे तक वे इन दोनों मोहल्लों के मुसलमानों को निकाल-निकाल कर उनके इच्छित स्थानों पर भेजते रहे और इस प्रकार यहाँ लगभग १५० मुसलमान स्त्री-पुरुष और बच्चों को बचाया। उस समय उन्हें जिन्होंने देखा वे बतलाते हैं, कि विद्यार्थी जी अपना ढेढ़ पसली का शरीर लिए, नङ्गे पाँव, नङ्गे सिर, बिना कुछ खाए-पिए घायलों और निस्सहायों को बचाने में किस प्रकार व्यस्त थे। किसी को कन्धे पर उठाए हैं तो किसी को गोदी में लिए अपनी धोती से ख़ून पोंछ रहे हैं !

हिन्दू-मुस्लिम दोनों एक समान

उनके लिए हिन्दू और मुसलमान दोनों एक समान थे। दोनों के अच्छे कार्यों से उनका हृदय शान्त होता अथवा बुरे कार्यों से दुखी होता था। बङ्गाली मोहाल में जब वे मुसलमानों को बचाने में व्यस्त थे, कुछ हिन्दू भाइयों ने उन्हें जल पीने को कहा। उन्होंने जवाब दिया कि जिस मोहल्ले में हमारे भाइयों (मुसलमानों) पर इतना अत्याचार हो रहा है, मैं वहाँ कदापि पानी नहीं पी सकता। इसके बाद एक दूसरे मोहल्ले में फिर एक भाई ने जल पीने का अनुरोध

किया तो उन्होंने कहा कि मेरे साथ में जो मुसलमान भाई हैं, जब तक वे पानी नहीं पिएँगे, मैं भी नहीं पी सकता। इस पर उन हिन्दू सज्जन ने उन मुसलमान भाइयों को खिलाया-पिलाया और फिर विद्यार्थी जी ने भी पानी पिया।

घातक स्थान :: आदर्श निर्भीकता

इसी बीच उनसे लोगों ने मुसलमानी मोहल्ले में हिन्दुओं पर होने वाले अत्याचारों का हाल कहा और यह अच्छी तरह जानते हुए भी, कि उन मोहल्लों में रहने वाले धर्मान्ध और उन्मत्त मुसलमानों के बीच जाना आग में कूदना है, वे अपनी स्वाभाविक निर्भीकता के साथ वहाँ चल पड़े और मिश्री बाज़ार तथा मछली बाज़ार के हिन्दुओं को बचाते हुए चौबे गोला पहुँचे। उस समय उनके साथ दो मुसलमान और दो हिन्दू स्वयंसेवक थे। वहाँ पहुँचते ही मुसलमानों ने इन लोगों पर—विद्यार्थी जी पर भी—हमला किया, पर मुसलमान स्वयंसेवक के यह कहने पर कि "पण्डित जी को क्यों मारते हो, इन्होंने तो सैकड़ों मुसलमानों को बचाया है" उन्हें छोड़ दिया। परन्तु थोड़ी देर बाद मुसलमानों का दूसरा दल आया और उसने फिर इन लोगों पर हमला किया। इस समय एक मुसलमान स्वयंसेवक तो भाग गया और एक विद्यार्थी जी को बचाने के लिए वहाँ से उन्हें खींचने लगा। इस पर विद्यार्थी जी ने उससे कहा—"क्यों घसीटते हो मुझे? मैं भाग कर जान नहीं बचाऊँगा। अगर मेरे ख़ून से ही इनका हृदय शान्त होता हो, तो लो यह मेरा सर सामने है।" यह कह ही रहे थे कि चारों तरफ़ से इन लोगों पर चोटें होने लगीं। तीनों स्वयंसेवक घायल होकर गिर गए, जिनमें एक हिन्दू स्वयंसेवक तो चल भी बसा। इसके बाद विद्यार्थी जी को कितनी चोट आई, कैसे मरे आदि का कुछ भी पता नहीं चलता। यह ध्यान देने की बात है, कि जब तक विद्यार्थी जी मुसलमानों को बचाते रहे, तब तक तो एक मुस्लिम डिप्टी कलक्टर तथा कुछ कॉन्स्टेबिल उनके साथ थे, पर मुसलमानी मोहल्लों में पहुँचते ही वे ग़ायब हो गए।

लाश अस्पताल में पाई गई

शाम को आपके परिवार वालों तथा मित्रों को पता चला कि विद्यार्थी जी घायल होकर कहीं पड़े हैं। उसी दम कई आदमी उनका पता लगाने निकले और न केवल उस रात (ता० २५) को ही, बल्कि ता० २६ को दिन भर उनका अथवा उनकी लाश का पता लगाया जाता रहा, परन्तु कुछ भी पता नहीं चला। पुलिस ने लाश ढूँढने तक में कोई मदद नहीं दी। मित्रों तथा परिवार वालों ने समझ लिया, कि मुसलमानों ने उन्हें मार कर बग़ल के जलते हुए मकान में फेंक कर भस्मीभूत कर दिया। पर ता० २८ को एकाएक पता चला कि अस्पताल में कुछ लाशें आई हुई हैं, जिनमें एक के विद्यार्थी जी की लाश होने का सन्देह है। डॉ० जवाहरलाल और पं० शिवनारायण मिश्र वहाँ पहुँचे और यद्यपि लाश फूल कर बहुत बदरूप हो गई थी, फिर भी उन्होंने उनके खद्दर के कपड़े, बाल आदि देख कर पहचान लिया, कि वह दरअस्ल विद्यार्थी जी की लाश है। उनकी जेब से तीन पत्र भी निकले, जो विद्यार्थी जी को लोगों ने लिखे थे।

अन्त्येष्टि क्रिया

उत्तेजना न फैले, इस आशङ्का से लाश मिलने का पता लोगों को नहीं दिया गया और दाह-क्रिया के लिए शव चुपचाप श्मशान-घाट ले जाया गया। फिर भी क़रीब १,००० आदमी वहाँ एकत्र हो गए, जिनमें शहर के सभी गण्य-मान्य पुरुषों के अलावा श्री० पुरुषोत्तमदास टण्डन, श्री० रमाकान्त मालवीय और श्री० आर० एस० पण्डित भी थे। टण्डन जी ने वहाँ पर एक बड़ा ही मर्मस्पर्शी भाषण दिया, जिसमें विद्यार्थी जी के बलिदान से सबक़ सीखने को कहा।

—प्रताप (हिन्दी)

* * *

सभापति का अभिभाषण

कराची कॉङ्ग्रेस के सभापति सरदार वल्लभभाई पटेल के भाषण में वर्तमान भारत की राजनीतिक चिन्ता और कार्य-पद्धति के समस्त रूपों का दिग्दर्शन है। उन्होंने भारत के अग्रगामी राजनीतिक अभिप्राय को ही भाषा का रूप दिया है।

सरदार पटेल कर्मी पुरुष हैं, भावुकता का मोहमय आवेश, तत्व विश्लेषणयुक्त उच्च कोटि की राजनीति-दर्शन आपके अभिभाषण में नहीं है। अति कठोर वास्तविकता के क्षेत्र में खड़े होकर किस तरह सफलता के साथ वर्तमान समस्याएँ सुलझाई जा सकती हैं, यही बात आपने महासभा के प्रतिनिधियों तथा देशवासियों के सामने रक्खी है।

राष्ट्रक्षेत्र में श्री० वल्लभभाई महात्मा गाँधी के अनुगामी हैं। जिस युग में केवल वाक्य द्वारा कॉङ्ग्रेस का सभापति और देश-सेवक हुआ जा सकता है, वह ज़माना अब नहीं रहा। महात्मा गाँधी ने राजनीति को बहस और व्याख्यान की सीमा से खींच कर कठोर कर्मभूमि में लाकर रख दिया है। इस कार्य में जो महात्मा जी के अनुगामी हैं, उनमें सरदार पटेल अन्यतम हैं।...... .. सरदार जी के अभिभाषण में कोई चौंका देने वाली नई बात नहीं है—स्वराज्य लाभ के लिए कोई नया पथ भी आपने नहीं बताया है।

सरदार जी ने संख्यालघिष्ट हिन्दुओं को उदारता के साथ सब प्रकार से स्वार्थ-त्याग करने का उपदेश दिया है। साम्प्रदायिक एकता की स्थापना के लिए सब दल के नेताओं को मिल कर एकान्त आग्रह के साथ कर्तव्य निर्धारित करना चाहिए। सम्प्रदाय के नाम पर व्यक्तिगत लोभ, क्रोध, और स्वार्थपरता को प्रश्रय देने की चेष्टा न करके, जब समस्त दलों के राजनीतिज्ञ-गण मिल कर चेष्टा करेंगे तो निश्चय इस प्रश्न की मीमांसा हो जायगी। ऐसा समय इससे पहले ही आया था। परन्तु वृथा सन्देह में कुछ साम्प्रदायिक नेताओं ने इसे व्यर्थ कर दिया। इसके फल से देश का सर्वनाश हो रहा है। इससे किसी सम्प्रदाय का कोई लाभ नहीं हुआ है। बल्कि इससे दोनों जातियों की दुर्दशा, अशान्ति और हानि की ही वृद्धि हुई है। हमें आशा है, अब कॉङ्ग्रेस के सभापति के आह्वान पर कान देकर सभी दल के नेता भारतीय इतिहास के इस कलङ्कपूर्ण अध्याय का अन्त कर डालेंगे।

सम्मानजनक समझौते से या सङ्घर्ष द्वारा स्वराज्य लेने के लिए एकता की बड़ी ज़रूरत है। इसीलिए सभापति ने अपने अभिभाषण में इस प्रश्न पर विशेष ज़ोर दिया है।

—आनन्दबाज़ार पत्रिका (बङ्गला)

* * *

आपस में लड़ाई नहीं अच्छी

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

खिंचना नहीं अच्छा, यह रुखाई नहीं अच्छी,
यह जङ्ग, यह शोरिश[1], यह ढिठाई नहीं अच्छी!
'बिस्मिल' की सुनो बात तुम ऐ हिन्दुओ 'बिस्मिल'
मिल जाओ अब आपस में, लड़ाई नहीं अच्छी!

* * *

हम देख के क़िस्मत को, जबीं[2] कूट रहे हैं,
बेबस वह समझ कर, जो हमें लूट रहे हैं!
हिन्दू भी, मुसलमान भी, रस्ते से भटक कर,
मैदाने-तरक़्क़ी की सड़क कूट रहे हैं!
आपस की लड़ाई से हुआ नफ़्आ यह 'बिस्मिल'
रिश्ते जो मुहब्बत के थे वह टूट रहे हैं!

* * *

चलना ज़रा मुहाल है गाड़ी अब अड़ गई,
क्या लुत्फ़े-इत्तेफ़ाक़ गिरह दिल में पड़ गई!
"बिस्मिल" कोई भी पूछने वाला नहीं रहा,
वह क्या बिगड़ गए, मेरी दुनिया बिगड़ गई!

* * *

मज़हबी कामों में उलझन बेसबब पड़ने लगे,
वह उधर, यह इस तरफ़ हर बात पर अड़ने लगे
बढ़ गया 'बिस्मिल' ख़ुदाई[3] में यह अब कैसा निफ़ाक़,
हिन्दुओ-मुसलिम जहाँ देखो, वहीं लड़ने लगे!!

* * *

१—झगड़ा, २—माथा, ३—संसार

इण्डियन नेशनल कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन

कॉङ्ग्रेस के इतिहास में यों तो उसके कई महत्वशाली अधिवेशन हुए हैं, परन्तु अब तक सब से अधिक-महत्व अहमदाबाद कॉङ्ग्रेस को दिया जाता था। परन्तु कराची कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन जिन विशेषताओं से पूर्ण है, उसने अपने महत्व को अहमदाबाद कॉङ्ग्रेस से भी बढ़ा दिया है। अहमदाबाद के अधिवेशन पर अगर समस्त भारत की दृष्टि थी, तो कराची कॉङ्ग्रेस पर सारे संसार की नज़र। इस कॉङ्ग्रेस के सभापति सरदार पटेल का भाषण अन्यान्य सभापतियों के भाषणों की अपेक्षा सब से छोटा और संक्षिप्त था। कारण यह था, कि इसकी तैयारी हफ़्तों पहले से आरम्भ नहीं हुई थी, इसमें राजनीति के वर्तमान प्रश्नों पर ही विचार किया गया था। सरदार पटेल ने अपने भाषण के आरम्भ में स्वर्गीय पं० मोतीलाल जी नेहरू, मौलाना मुहम्मदअली और सत्याग्रह संग्राम के 'गुमनाम' सिपाहियों की मृत्यु पर अफ़सोस ज़ाहिर किया। इसके बाद सरदार भगतसिंह, श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु के आत्मोत्सर्ग पर ज़ोरदार शब्दों में दुःख प्रकट किया और इन तीनों आत्मोत्सर्गकारियों की प्रणाली का विरोध करते हुए उनकी देश-भक्ति, साहस, और त्याग की प्रशंसा की। आपने यह भी कहा कि सरकार ने उनकी प्राण-भिक्षा की माँग के विरुद्ध इन्हें फाँसी देकर अपनी कठोर-हृदयता का परिचय दिया है।

सरदार पटेल ने सत्याग्रह के महत्व का वर्णन करते हुए गाँधी-इर्विन समझौते पर प्रकाश डाला और बतलाया, कि समझौते की शर्तों के अनुसार हम पूर्ण स्वराज्य और सेना तथा आय-विभाग को अपने अधिकार में करने की माँग पेश कर सकते हैं। आपने कहा कि नवीन शासन-व्यवस्था में कुछ सुरक्षित अधिकार रहेंगे, और भारत की भलाई के लिए उनका रहना अत्यावश्यक बताया। जैसे, आपने कहा, कि हम अपनी सेना में अङ्गरेज़ अफ़सर और गोरे सिपाही रक्खेंगे; परन्तु हमारी सेना अङ्गरेज़ों के अधिकार में नहीं रहेगी। हम अङ्गरेज़ों से परामर्श लेंगे, परन्तु उनकी आज्ञा के अनुसार नहीं

चलेंगे। भारतीय ऋण की आलोचना करते हुए आपने कहा कि हम ऋणों को चुकाने से इन्कार नहीं करते, परन्तु ऐसे बहुत से ऋण हैं, जिनके औचित्य पर हमें सन्देह है, उनकी निरपेक्ष जाँच होनी चाहिए।

भावी शासन-विधान की आलोचना करते हुए आपने कहा कि 'फ़ेडरेशन' एक हृदय को प्रसन्न करने वाला ख़याल ज़रूर है, परन्तु इससे बहुत सी नई कठिनाइयाँ भी पैदा होती हैं। फ़ेडरेशन शासन-प्रणाली में देशी नरेशों के सम्मिलित होने वाले प्रश्न पर प्रकाश डालते हुए आपने कहा, कि उनके सम्मिलित होने से 'डिमॉक्रेसी' की प्रगति को ठेस नहीं लगनी चाहिए। हमें आशा है कि राजा लोग इस शासन-विधान की रचना में रोड़े न अटकाएँगे। उनकी प्रजा को भी उतने ही अधिकार दिए जाने चाहिएँ, जितने बाक़ी भारतवासियों को हों।

जहाँ तक भारतीय रियासतों की सात करोड़ बेज़बान प्रजा के हित का सम्बन्ध है, सरदार पटेल के ये शब्द उत्साहवर्द्धक हैं। परन्तु हमारी राय है, कि रियासती देवताओं के दिमाग़ से स्वेच्छाचारिता के भावों को निकालने के लिए ये शब्द और भी ज़ोरदार होते तो अच्छा था। रियासतों की प्रजा का 'फ़ेडरल लेजिस्लेशन' में प्रतिनिधित्व का अधिकार दिया जाना महज़ 'आशा' नहीं, वरन् अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि रियासतों की सात करोड़ प्रजा से हक़ों की उपेक्षा करके कोई शासन-विधान सफलता नहीं प्राप्त कर सकता।

सरदार पटेल ने अपने भाषण में साम्प्रदायिक निर्वाचन की आलोचना करते हुए साम्प्रदायिकतावादियों को लाहौर कॉङ्ग्रेस के सिद्धान्तों का ध्यान दिलाते हुए कहा है, कि कॉङ्ग्रेस ऐसे किसी शासन-विधान की रचना में भाग नहीं ले सकती; जब तक अल्प-संख्यक जातियों की समस्या न सुलझ जाए। इसके साथ ही आपने एक हिन्दू की हैसियत से कहा कि "मैं अल्प-संख्यक जातियों को काग़ज़ क़लम दे दूँगा कि वे अपनी माँगें लिख दें और फिर बिना किसी सङ्कोच के उस पर अपना हस्ताक्षर कर दूँगा।" आपने हिन्दुओं को उदारता और साहस से काम लेने का उपदेश देकर बताया है कि हमें काग़ज़ पर लिखी हुई एकता की आवश्यकता नहीं, वरन् आन्तरिक एकता की आवश्यकता है। हमें ऐसी काग़ज़ी एकता नहीं चाहिए, जो ज़रा दबाव पड़ते ही नष्ट हो जाय। ईश्वर करे भारत की तमाम जातियाँ कॉङ्ग्रेस के सभापति के उपदेशों को अपने दिलों पर अङ्कित कर लें और भारतीय स्वतन्त्रता के आन्दोलन में कन्धे से कन्धा भिड़ा कर लग जाएँ और साम्प्रदायिकता के झमेले को सदा के लिए दूर कर दें।

—'रियासत' (उर्दू)

* * *

उठ ! हिन्दू-जाति !! उठ !!!

[श्री० 'मगन']

उन्नति की दौड़ हो रही है जातियों में अब;
उसमें ओ ! हिन्दू-जाति ! बन अग्रसर जा !
काम करने का है ज़माना अब आया अरी !
'जीवितों' की भाँति क्यों न काम कुछ कर जा ?
'आने वाली-सन्तति' के लिए गुण, शीलता की;
धीरता की, वीरता की थाती क्यों न धर जा ?
ऋद्धि-सिद्धि, सम्पदा से, विमल विभूतियों से;
ऐरी भूरि-भागिनी ! भवन क्यों न भर जा ?

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

"बेवक़ूफ़ की भैंस बियानी और सारा गाँव मट्ठा लेकर दौड़ा।" श्रीमती नौकरशाही ने कॉङ्ग्रेस वालों को नक्कू बनाने के लिए थोड़े से सत्याग्रही क़ैदियों को छोड़ दिया, तो लोग उन्हें बेवक़ूफ़ समझने लगे और लगे माँग पर माँग पेश करने ! मानो परशुराम की तरह श्रीमती जी वानप्रस्थ लेने जा रही हैं और उसके पूर्व सारी सम्पत्ति बाँट देना चाहती हैं !

❀

फलतः सरदार भगतसिंह आदि की प्राण-भिक्षा के बदले "बाबा, माफ़ करो" सुनने पर भी लोगों ने बङ्गाल के विप्लववादी नवयुवक श्री० दिनेशचन्द्र गुप्त और श्री० रामकृष्ण विश्वास के 'प्राणदान' के लिए हमारी श्रीमती जी का कान खाना आरम्भ कर दिया है। मगर सखी कोई मोम की पुतली नहीं हैं, कि अनुनय-विनय और आवेदन-निवेदन से पिघल जायँगी। ऐसे-ऐसे भिखमङ्गे रोज़ ही उनकी डेवढ़ी से धक्के देकर भगाए जाते हैं। यहाँ वह गुड़ नहीं जो चिउँटे खायँ !

❀

कुछ लोगों ने क़ानूनी पेंच भिड़ाया है कि सन् १९१५-१६ में जिन राजनीतिक क़ैदियों को आजन्म जेल की सज़ा दी गई थी, उन्हें अब छोड़ देना चाहिए, क्योंकि जेलख़ाने के नियमानुसार ऐसे क़ैदी १४-१५ वर्ष में छूट जाते हैं। परन्तु जनाब, वे साधारण अपराधों के क़ैदी होते होंगे, राजनीतिक नहीं। क्योंकि राजनीतिक क़ैदियों के लिए श्रीमती की इच्छा ही 'जेल मेनुएल' और 'इण्डियन पिनल कोड' है।

❀

बात यह है, कि बहुत दिनों तक उन क़ैदियों के घर में रहने के कारण श्रीमती को उनसे ख़ास मुहब्बत हो गई है। इसलिए उन्हें छोड़ने का ख़याल करते ही निबहुरी वियोग-व्यथा अपनी विकराल सूरत लेकर सामने खड़ी हो जाती है, इसलिए बेचारी मजबूर हैं। हमें तो रङ्ग-ढङ्ग से मालूम होता है, कि उन्हें वैतरणी पार तक अपने साथ ले जायँगी।

❀

अब की कराची कॉङ्ग्रेस में न दलबन्दियाँ हुईं और न लोगों ने दादा धुग्धानल देव के महाप्रसाद को ही सिर पर चढ़ाया। इससे कलकत्ते के 'भारत-बन्धु' उर्फ़ 'स्टेट्समैन' साहब की व्याकुलता बहुत बढ़ गई है; बेचारा बिन पानी के मछली की तरह छटपटा रहा है। इसलिए श्रीजगद्गुरु की राय है, कि कॉङ्ग्रेस ने जितने प्रस्ताव—विशेषतः भारत की स्वतन्त्रता के सम्बन्ध के—पास किए हैं, वे सब रद्द कर दिए जाएँ और यहाँ की बादशाहत 'स्टेट्समैन' के एडीटर साहब को सौंप दी जाय, नहीं तो बेचारा कुढ़-कुढ़ कर मर जाएगा।

❀

भला यह भी कोई बात है, कि हज़ारों आदमी एकत्र हों और सभी एक स्वर से महात्मा गाँधी का नेतृत्व स्वीकार कर लें। जूतम-जूता और गुत्थम-गुत्था तो दूर रहा, कोई चूँ तक न करे ? इतना बड़ा अनर्थ बेचारे 'भारत-बन्धु' कैसे बरदाश्त कर लें ? इसीसे उन्होंने श्री० सुभाष बोस का पक्ष लिया है और इस बात के लिए फुक्का फाड़ कर रो रहे हैं, कि वे कॉङ्ग्रेस की वर्किङ्ग कमिटी में क्यों नहीं चुने गए !

❀

ख़ैर, इसी बहाने महात्मा गाँधी और कॉङ्ग्रेस वालों को कोस कर बेचारे को अपने दिल का बुग़्ज़ निकालने का मौक़ा मिल गया और भारत के नमक से भी अदा हो गया ! वरना, श्रीजगद्गुरु तो उस बेचारे के लिए बुरी तरह चिन्तित थे। क्योंकि कॉङ्ग्रेस की सफलता उसकी अकाल मृत्यु के लिए कम न थी।

❀

"नाम कपूरचन्द और बास गोइँठे का भी नहीं।" यही हाल रियासत कपूरथला का है। इसलिए हमें सुन कर ख़ुशी हुई कि वहाँ के महाराज बहादुर कुछ दिनों के लिए फ़्रान्स जा रहे हैं। सुनते हैं, महाराज बहादुर अब तक २५ बार यूरोप जा चुके हैं। इससे मालूम होता है कि अभी 'अष्टोत्तरी' के पूरी होने में काफ़ी देर है। परन्तु एक बार फ़्रान्स हो आने से पुण्य उतना ही प्राप्त होगा। क्योंकि "और तीर्थ बार-बार, गङ्गासागर एक बार।"

❀

भई, इस मनहूस देश में क़सम ख़ुदा की, बड़ी गरमी पड़ती है। सच पूछिए तो राजा-महाराजाओं के लायक़ तो आजकल यहाँ की आबोहवा रहती ही नहीं। इसीलिए महाराज ने गरमी भर फ़्रान्स में ही रहने का विचार किया है। इससे दो लाभ होंगे, महाराज को कलियुगी परिस्तान के मज़े मिलेंगे और ग़रीब प्रजा के रुपए भी सार्थक हो जावेंगे।

❀

मगर कुछ लोगों का एतराज़ है कि ग्रीष्मावकाश के लिए नैनीताल, मसूरी या काश्मीर क्या बुरा था ? लाहौल बिलाक़ूवत ! कहाँ पेरिस के वे दिल-फ़रेब नज़ारे और कहाँ हिन्दुस्तान का नैनीताल वग़ैरह—"ख़ाक को आसमाँ से क्या निस्बत !"

❀

परम पुलिस-पोषक श्रीमान लॉर्ड इर्विन महोदय आगामी १४ अप्रैल को 'होम' (घर) जा रहे हैं, बाबा शाह मदार निर्विघ्न उनकी यात्रा पूरी करें। मगर हमारी राय है, कि यात्रा से पहले वे एक बार कानपुर की पुलिस की प्रशंसा में दो-चार शब्द अवश्य कहते जाएँ। क्योंकि यह अत्यावश्यक कार्य जितनी निपुणता के साथ आप कर सकते हैं, उतनी निपुणता के साथ, ख़ुदा झूठ न बुलवाए, कोई भाट भी नहीं कर सकता।

❀

यद्यपि बोरसद की पुलिस ने ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा के लिए, स्त्रियों और बच्चों पर लट्ठ-वर्षा करके अपार सुयश और सुख्याति अर्जित की है, और रावण तथा कंस की पुलिस को भी मात कर दिया है, तथापि अगर आप बेईमानी से और पक्षपात से काम न लें, तो कानपुर

की पुलिस ने भी, माशाअल्लाह अपार कीर्ति और सुयश प्राप्त किया है। लेहाज़ा अगर उन्हें दो-चार स्वर्ण-पदक प्रदान किए बिना ही लाट साहब इङ्गलैण्ड चले जाएँगे, तो उनकी गुणग्राहकता में अवश्य ही बट्टा लग जाएगा।

❀

ज़रा कल्पना तो कीजिए, कानपुर में दिन-दहाड़े छुरियाँ चल रही हैं, निरीह निहत्थे मारे जा रहे हैं, मासूम बच्चों की टाँगें चीर दी जा रही हैं, स्त्रियों के स्तन काट लिए जा रहे हैं, घर जलाए जा रहे हैं और पुलिस खड़ी 'सहनशीलता' ('Balance of mind') से काम ले रही है! इतने पर भी अगर उसे दाद न मिली; इस अपूर्व कर्तव्य-परायणता के लिए उसे स्वर्ण-पदक न दिए गए और उसकी प्रशंसा न की गई तो धिक्कार है, ब्रिटिश राज्य को, उसकी गुण-ग्राहकता को और उसकी न्याय-निपुणता को!

❀

अपने राम तो मुग्ध हैं, कानपुर की पुलिस के उन उत्तरों पर, जो उसने सहायतार्थियों को दिए थे। आप भी सुनेंगे? ओहो! तब तो बड़े चटोर हैं आप! अच्छा सुनिए। सुन कर निहाल हो जाइएगा, आपके कान आनन्द के मारे मुँह बाकर रह जाएँगे और इस अपूर्व पुलिस-कीर्ति के श्रवण से जो अक्षय पुण्य प्राप्त होगा, उसकी बदौलत उन्हें (अर्थात् आपके कर्ण-युगल को) अनन्त काल तक बैकुण्ठ-सुख प्राप्त होगा।

❀

कानपुर में अन्धेर मचा हुआ है, ख़ून-ख़राबी, लूट-तराज़ और मार-काट का बाज़ार गर्म है! दारोग़ा जी हाथ में छड़ी लिए, सिगरेट के धुएँ उड़ाते चहल-क़दमी कर रहे हैं! इतने में कोई आफ़त का मारा सामने आता है और हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाने लगता है:—"दोहाई सरकार की! मेरी रक्षा कीजिए। वह देखिए मेरा घर लुटा जा रहा है, मेरे बच्चे क़त्ल हो रहे हैं, हमारी स्त्रियाँ बेइज़्ज़त हो रही हैं, उन्हें बचाइए! ईश्वर आपका भला करेगा, आप दारोग़ा से 'सोंपरडण्ट' हो जाएँगे। दोहाई धर्मावतार, मुझे बचाइए।"

❀

ईषत् हास्यस्मित मुख से उत्तर मिलता है:—"लाल पगड़ी हाय-हाय का मज़ा लूटिए! कॉङ्ग्रेस को बुलाइये! और हाँ, गाँधी के पास क्यों नहीं जाते? हा-हाहा! हम कुछ नहीं कर सकते!" कहिए, कैसा मनोरञ्जक उत्तर है! जीवन-जन्म सफल हुआ, आपके कानों का या नहीं? अगर नहीं, तो भाड़ में जाएँ ऐसे कान! उनमें कीड़े पड़ें—वे बहरे हो जाएँ।

❀

अजी जनाब, यही तो पुलिस की कर्तव्यपरायणता है, इसीके लिए तो ग़रीबों का रक्त चूस कर उनकी तोंदें मोटी की जाती हैं और उनकी प्रशंसा में कलक्टर साहब से लेकर बड़े लाट साहब तक ज़मीन-आसमान के क़ुलाबे बाँध देते हैं। अभी हाल ही में बड़े लाट ने श्रीमुख से कहा है, कि ऐसी पुलिस संसार में कहीं नहीं है। किन्तु अगर इतने पर भी आपके कानों की तृप्ति नहीं हुई, तो हम क्या करें?

❀

भाई साहब, आप पुराने पुण्यात्मा हैं। बड़े भाग्य से यह ग़ुलामी—यह पराधीनता आपको नसीब हुई है। कानपुर की पुलिस ने जो कुछ किया है, वही उसे उचित भी था। क्योंकि इससे आप अपनी ग़ुलामी—अपनी दयनीय विवशता का कुछ अनुभव कर सकेंगे। मुमकिन तो नहीं, कि आपकी जन्मजन्मान्तर की बन्द आँखें इतने से ही खुल जाएँ, परन्तु उस बेचारी ने अपने कर्तव्य का पालन कर ही दिया है। अब आप जानें और आपका भाग्य जाने!

❀

अब ज़रा दिल्ली के मुस्लिम कॉन्फ़्रेन्स की कर्तव्य-परायणता का हाल सुनिए और दोनों हाथों चूतड़ पीट कर थिरकना आरम्भ कर दीजिए! क्योंकि उसके वक्ताओं, प्रस्तावकों और प्रस्तावों ने एक साथ ही हिन्दू-मुस्लिम मिलन की सड़क को पीट कर पक्की कर दिया है। अब जहाँ महात्मा गाँधी ने ज़रा सा धक्का दिया कि मिलन का छकड़ा मोटरकार को मात करता हुआ, धड़ल्ले से आगे बढ़ा।

❀

इस महती सभा के महासभापति महामहिमान्वित मौ० शौकतअली साहब थे और आपने अङ्गरेज़ों की वदान्यता, सौहार्द और सहृदयता का ऐसा मधुर राग गाया, कि जिसकी हद नहीं। आपके महत्वपूर्ण भाषण के सम्बन्ध में बस इतना ही कह देना अलम होगा, कि अगर भारत की पुलिस की प्रशंसा में लाट साहब ने भाटों को मात कर दिया है, तो मौ० शौकतअली ने अङ्गरेज़ों की प्रशंसा में लाट साहब को भी मात कर दिया है।

❀

बहुत थोड़े शब्दों और 'हिज़-होलीनेसी' भाषा में आपके भाषण का सार मर्म यह है, कि हम इस देश पर बड़ी योग्यता के साथ साढ़े आठ सौ वर्षों तक बादशाहत कर चुके हैं, इसलिए 'बादशाही हक़' स्वरूप हमें 'जिन्ना सागर' के 'चौदह रत्न' अवश्य मिलने चाहिएँ, उसमें एक कानी चित्ती भी कम नहीं हो सकती। और अगर हिन्दू उस चौदह को पौने चौदह करना चाहेंगे, तो मामला गड़बड़ हो जाएगा, भारत पराधीन रह जाएगा। अर्थात् दूसरे के अमङ्गल के लिए हमें अपनी नाक कटा लेने में ज़रा भी उज़्र न होगा। क्योंकि हम ठहरे भूतपूर्व 'इम्परर ऑफ़ इण्डिया!' लेहाज़ा 'खाएँगे गेहूँ, नहीं तो रहेंगे एहूँ,' अर्थात् योंही।

❀

हिन्दुओं से ये चौदह रत्न वसूल करने के लिए तमाम हिन्दुस्तान के मुसलमानों को सङ्गठित हो जाना चाहिए और क़ारूँ के ख़ज़ाने से भी बड़ा एक 'फ़ण्ड' स्थापित कर डालना चाहिए। क्योंकि "कौड़ी के सब जहान में नक़्शेनगीन हैं, कौड़ी न हो तो कौड़ी के फिर तीन-तीन हैं!" समझ गए न?—'जो दाम नहीं तो कुछ भी नहीं!'

❀

अच्छा, अब उक्त कॉन्फ़्रेन्स के प्रस्तावों की चाशनी मुलाहिज़ा हो। बनारस, आगरा, मिर्ज़ापुर और कानपुर के दङ्गों की सारी ज़िम्मेदारी हिन्दुओं पर है! ये बड़े बदमाश, कमीने और नीच हैं। बस-बस, 'यही तो मैं भी कहता हूँ', कि सारी बदमाशी कमबख़्त हिन्दुओं की है। अजी जनाब, इन्होंने केवल दङ्गा ही नहीं किया है, बल्कि शरीफ़ मुसलमानों को बदनाम करने के लिए अपनी स्त्रियों के स्तन तक काट डाले हैं, अपने घरों में आग लगा दी है और अपने बच्चों की टाँगे तक चीर दी हैं।

❀

यही नहीं, कॉङ्ग्रेस की अहिंसा-नीति केवल एक पाखण्ड है, जो एक शक्तिशाली साम्राज्य के विरुद्ध चलाई गई है। इसके सिवा हिन्दू 'सिविल वार' की तैयारी में हैं। इसके बाद—"या सरकार दौलत मदार! हमारी रक्षा करो या हमें आज्ञा दे दो तो फिर देखो, कि हम इन काफ़िरों को कैसा मज़ा चखाते हैं।"

❀

यह है जनाब, हिन्दू-मुस्लिम एकता की वह पक्की सड़क, जिसे हमारे मौलाना साहब बुज़ुर्गवार ने अपनी निगरानी में तैयार कराई है और इसी पर चल कर हमारे कॉङ्ग्रेसी लीडर भारत को स्वतन्त्र करना चाहते हैं। सचमुच यह बालू पेर कर निकाला हुआ तेल बड़ा ही मूल्यवान होगा और अशर्फ़ी सेर बिकेगा।

❀

एक बदाऊँनी मौलाना साहब तो ऐसे पिनके कि ख़ुदा की पनाह! मगर उनकी बातों पर हँसिएगा मत, नहीं तो नाराज़ हो जायँगे। आप कहने लगे—"गाँधी की जय का अर्थ है, मुसलमानों की क्षय!" ख़ुदा बचाए आपकी उस मूल्यवान 'लुग़त' को, जिसमें 'गाँधी की जय' का ऐसा अर्थ लिखा है। ज़रा उसे हिफ़ाज़त से रखिएगा।

❀

इसके बाद एक बम्बई के सेठ साहब की बारी आई। अफ़सोस, कि आपके हाथ में कोई हथियार नहीं था, वरना सारा कुफ़्र आप एक ही दिन में तोड़ कर रख देते और मुसलमानों को आज ही उठा कर बहिश्त के फाटक पर पहुँचा देते। आप हाजी हैं, पुण्यात्मा हैं, मुसलमानों की भलाई के भाव आप आपके अन्दर कूट-कूट कर भरे हैं, इसलिए आपने उन्हें बम्बई की घटना की भी याद दिला दी, ताकि दाढ़ी-चोटी-सम्मेलन की इतिश्री कानपुर की घटना तक ही न रह जाए।

❀

ख़ैर जनाब, इस कॉन्फ़्रेन्स के बाद, सत्याग्रह के तुषारपात के कारण मुरझाई हुई हमारी प्रियतमा सखी की आशालता लहलहा उठी होगी और साथ ही चर्चा-चर्चिल की भुजाएँ भी फड़क उठी होंगी। इससे आशा होती है कि अगले 'किङ्ग्स- बर्थ डे' की ख़ान बहादुरों की लिस्ट में काफ़ी इज़ाफ़ा हो जायगा।

❀

मगर आश्चर्य तो यह है कि इतनी पैंतरेबाज़ी हुई और भारतीय आज़ादी के इज़ारदार मौलाना मोहानी साहब बिल्कुल ख़ामोश रहे। न गाँधी को कोसा न काफ़िरों को जहन्नुम रसीद करने की कोई तदबीर बताई। ऐसा नायाब मौक़ा आपने अपने हाथ से न जाने कैसे निकल जाने दिया?

'चाँद' के असाधारण सम्मान से लोग क्यों डाह करते हैं ??

आख़िर 'चाँद' में गुण क्या है ?

'चाँद' के ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखाना सद्विचारों को आमन्त्रित करना है।

'चाँद' ही समस्त भारत में ऐसा प्रभावशाली पत्र रहा है, जिसने अपने थोड़े से ही जीवन में समाज तथा देश में खलबली मचा दी है।

'चाँद' की प्रशंसा सभी श्रेणी के विचारशील व्यक्तियों, राजाओं, महाराजाओं, बड़े-बड़े प्रसिद्ध नेताओं और आला अफ़सरों ने की है। सभी भाषा के पत्र-पत्रिकाओं ने जितनी प्रशंसा 'चाँद' की की है, उतनी किसी पत्र की नहीं।

'चाँद' ही समस्त भारत में ऐसा प्रभावशाली एवं भाग्यशाली पत्र है, जो निर्धन की कुटिया से लेकर राजा-महाराजों की अट्टालिकाओं तक आपको मिलेगा।

'चाँद' तथा इस संस्था ने पत्र-पत्रिकाओं तथा अपने प्रकाशनों द्वारा थोड़ी-बहुत—जो भी सेवा भारतीय समाज और देश की की है, वह सहज ही विस्मरण करने की बात नहीं है।

'चाँद' के प्रत्येक अङ्क में आपको गम्भीर से गम्भीर राजनैतिक एवं सामाजिक लेखमालाओं के अतिरिक्त, सैकड़ों एकरङ्गे, दुरङ्गे और तिरङ्गे चित्र तथा कार्टून मिलेंगे, जो किसी भी पत्र-पत्रिका में आपको नहीं मिल सकते।

'चाँद' में प्रकाशित कविताओं के सम्बन्ध में कुछ कहना व्यर्थ है। जिस पत्रिका की उर्दू शायरी का सम्पादन कविवर "बिस्मिल" करते हों और हिन्दी कविताओं का सम्पादन करते हों कविवर आनन्दीप्रसाद जी श्रीवास्तव और प्रोफ़ेसर रामकुमार वर्मा, एम० ए०, जैसे सुविख्यात कवि, उस पत्रिका की कविताओं से कौन टक्कर ले सकता है ?

'चाँद' में प्रकाशित लेखों के सम्बन्ध में पाठकों को स्वयं निर्णय करना चाहिए। हम इस सिलसिले में केवल इतना ही निवेदन करना चाहते हैं, कि सभी सुप्रसिद्ध लेखकों का अभिन्न सहयोग 'चाँद' को प्राप्त है। फिर श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, श्री० विजयानन्द (दुबे जी) और हिज़ होलीनेस श्री० १०८ श्री० जगद्गुरु के चुटीले विनोद आपको किस पत्र-पत्रिका में मिलेंगे ??

❀ ❀ ❀

यदि अभी तक आप 'चाँद' के ग्राहक नहीं हैं, तो इन्हीं पंक्तियों को हमारा निमन्त्रण समझें और इष्ट-मित्रों सहित 'चाँद' के ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखा कर हमें और भी उत्साह से सेवा करने का अवसर प्रदान करें।

विज्ञापनदाता भी भरपूर लाभ उठा सकते हैं

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Printed and Published by R SAIGAL—(Editor), at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad

सम्पादक :—
श्री रामरखसिंह सहगल, बी० ए०

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ... ... ६) रु०
छः माही चन्दा ... ५) रु०
तिमाही चन्दा ... ... ३) रु०
एक प्रति का मूल्य ... ॐ)
Annas Three Per Copy

भविष्य

अखिल राष्ट्रीय साप्ताहिक

आध्यात्मिक स्वराज्य हमारा ध्येय, सत्य हमारा साधन और प्रेम हमारी प्रणाली है। जब तक इस पावन अनुष्ठान में हम अविचल हैं, तब तक हमें इसका भय नहीं, कि हमारे विरोधियों की संख्या और शक्ति कितनी है।

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़ी कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए!

वर्ष १, खण्ड २ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार; १६ अप्रैल, १९३१ | संख्या ४, पूर्ण संख्या [illegible]

स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह एवं स्वर्गीय राजगुरु का वंश-परिचय

(२९वें पृष्ठ पर देखिए)

स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह के पूज्य पिता—सर्दार किशनसिंह जी

स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह के दादा सर्दार अर्जुनसिंह जी

(१) अपने बच्चे [illegible] सहित स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह की सहोदरा—श्रीमती अमर कौर (२) स्वर्गीय शिवराम राजगुरु की सहोदरा—सौभाग्यवती गोदावरी बाई और (३) उनकी पूज्यनीया माता सौभाग्यवती पार्वती बाई ।

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' (हिन्दी अथवा उर्दू-संस्करण) का प्रचार कर, वे संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एक मात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३, | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार, १६ अप्रैल, १९३१ | संख्या ५, पूर्ण संख्या २९

स्पेन में प्रजातन्त्रवादियों की विजय

बादशाह को बाध्य होकर गद्दी-परित्याग करना पड़ा

बर्मा का उपद्रव दिनोंदिन भयङ्कर होता जा रहा है !

पं० जवाहरलाल नेहरू के क़त्ल की धमकियाँ : देहली षड्यंत्र केस में ४५० सरकारी गवाह पेश होंगे

अमृतसर, कराची और हैदराबाद (सिन्ध) में पिकेटिङ्ग शुरू हो गई !

(एसोसिएटेड प्रेस द्वारा १५वीं अप्रैल की रात तक आए हुए 'भविष्य' के विशेष तार)

—मैड्रिड (स्पेन की राजधानी) का १४वीं अप्रैल का समाचार है, कि स्पेन में प्रजातन्त्र स्थापित हो गया है। वहाँ के बादशाह अलफ़ोन्ज़ो ने गद्दी का परित्याग दिया है।

कहा जाता है, कि गत १२वीं अप्रैल को म्युनिसिपल अधिकारियों का निर्वाचन हुआ था, उसमें प्रजातन्त्रवादियों और साम्यवादियों की ही जीत हुई थी। उस समय वहाँ की सरकार के सामने यह प्रश्न उठा था, कि जनता की इस क्रान्तिकारी इच्छा के सामने वह क्या करे ? अब ताज़े समाचारों से पता चलता है, कि प्रजातन्त्रवादी नेताओं ने, निर्वाचन के बाद १३वीं अप्रैल को निम्नलिखित सूचना निकाली है :—

"यदि अधिकारियों ने, गत घटनाओं से शिक्षा ग्रहण नहीं की है; तो हम प्रजातन्त्रवादी सार्वजनिक शान्ति स्थापित करने और विदेशी राष्ट्रों के सम्मुख पूर्ण उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिए तैयार हैं। बादशाह अलफ़ोन्ज़ो ने वास्तव में गद्दी का परित्याग करके बड़ी बुद्धिमानी का परिचय दिया है—वहाँ का जनता का ऐसा विचार है।

—रङ्गून (बर्मा) का तार है, कि हाल ही में फिर सशस्त्र उपद्रवकारियों ने पुलिस और फ़ौज पर भयङ्कर हमले कर दिए थे, जिसके फल-स्वरूप २०० उपद्रवकारी मारे गए या ज़ख़्मी हुए। पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० स्मिथ घायल होकर रङ्गून के हस्पताल में लाए गए हैं। कहा जाता है पुलिस को विशेष क्षति नहीं हुई है।

—आज देश का वातावरण जैसा कलुषित और हिंसा-पूर्ण हो रहा है, उसके अनुसार जो भी न हो जाय, थोड़ा है ! एक ओर मुस्लिम धर्म को कलङ्कित करने वाले मुट्ठी भर मुल्लाओं के अनर्गल प्रलाप और उत्पात हो रहे हैं दूसरी ओर राष्ट्रीय विचार के पक्ष वाले नेताओं को क़त्ल की धमकियाँ दी जा रही हैं ! १२वीं अप्रैल की शाम को भूतपूर्व राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू को दो ऐसे गुमनाम पत्र मिले हैं, जिनमें उनके क़त्ल की बेहूदा धमकियाँ दी गई हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये पत्र कुछ गुमराह अङ्गरेज़ों की ओर से लिखे गए हैं। नेहरू महोदय का अपराध यह बतलाया जाता है, कि उन्होंने स्वर्गीय सर्दार भगतसिंह के कार्य की प्रशंसा की है !! पं० जवाहरलाल नेहरू ने हमें टेलीफ़ोन द्वारा बतलाया है, कि इस प्रकार के गुमनाम पत्र उन्हें प्रायः मिला करते हैं, जिन्हें पढ़ कर वे अपनी रद्दी की टोकरी में डाल देते हैं।

—नई दिल्ली का समाचार है, कि दिल्ली षड्यन्त्र का मामला आज स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने पेश किया गया। अभियुक्तों के नाम ये हैं—श्री० धन्वन्तर, रुद्रदत्त, मनोरथलाल, विश्वम्भर दयाल, प्रोफ़ेसर निगम, हुमायूँ राम गुप्त, विद्याभूषण, हरकेशसिंह, गजानन्द पोतदार, धीरमलप्रसाद जैन, इच्छारीलाल गुप्त, अक्षय कपूरचन्द जैन, बाबूराम गुप्त और वैशम्पायन कैलाशपति उपनाम शीतल। गिरिवरसिंह, बालकृष्ण, रामलाल तैलङ्ग और मदन गोपाल सरकारी गवाह बन गए हैं। श्री० मदन गोपाल लाहौर षड्यन्त्र केस में भी सरकारी गवाह था। मामला शुरू होने पर सरकारी वकील ने कहा, कि मामला अभी तैयार नहीं है, इसलिए ट्रिब्यूनल एक सप्ताह तक मामले को स्थगित रक्खे। सरकारी वकील ने कहा कि ४२१ गवाहों के सिवा २० या ३० अन्य गवाहों के भी नाम पेश किए जायँगे। अभियुक्तों के वकील ने कहा, कि यह आश्चर्य की बात है, कि १ली नवम्बर से लेकर आज तक, सरकारी वकील मामला तैयार नहीं कर सके। उन्होंने कहा कि मुक़द्दमे की पेशी में इस प्रकार विलम्ब करना अत्यन्त अनुचित है ; क्योंकि अभियुक्तों को अभी यह भी नहीं मालूम है, कि उन पर क्या-क्या अभियोग लगाए गए हैं। सरकारी वकील ने उत्तर में कहा, कि इस विलम्ब का कारण यह है कि गवाहों की सूची बहुत बड़ी है, और इस बात की कोशिश की जा रही है कि अभियुक्तों को अपनी सफ़ाई देने का पूरा मौक़ा मिले।

—काबुल का एक समाचार है कि, प्रसिद्ध अफ़ग़ान डाकू इब्राहीम बेग, अफ़ग़ान के युद्धमन्त्री के साथ युद्ध में मारा गया है। उसके साथी भी गिरफ़्तार कर लिए गए हैं।

—ख़बर है कि श्री० शास्त्री लॉर्ड इर्विन के साथ एक ही जहाज़ पर इङ्गलैण्ड जा रहे हैं। आप वहाँ जाकर पूर्वीय अफ़्रिका की पार्लियामेण्टरी संयुक्त कमिटि के समक्ष अपना वक्तव्य पेश करेंगे।

—ख़बर है कि, करांची और हैदराबाद (सिन्ध) में पिकेटिङ्ग शुरू हो गई है। यह पिकेटिङ्ग गाँधी-इर्विन समझौते की शर्तों के अनुसार ही हो रही है।

—अमृतसर का समाचार है कि वहाँ विदेशी कपड़े पर पिकेटिङ्ग फिर शुरू हो गई है। व्यापार पर इसका बहुत बुरा असर पड़ा है। विदेशी चीज़ों का आना एक दम बन्द-सा हो गया है।

मौ० शौकतअली ने प्रान्तीय और केन्द्रीय शासन-समितियों के मुस्लिम सदस्यों से यह अनुरोध किया है कि वे यह सूचित करें, कि वे संयुक्त निर्वाचन के पक्ष में हैं या पृथक निर्वाचन के पक्ष में।

'भविष्य' की मूल्य-वृद्धि

पूर्व सूचना और उसमें दिए गए कारणों के अनुसार आगामी अङ्क से 'भविष्य' का वार्षिक चन्दा १२) रु०, ६ माही ६॥) रु० तथा तिमाही चन्दा ३॥) रु० हो जायगा और प्रति क़ॉपी का मूल्य तीन आने से बढ़ कर चार आने हो जायगा ; किन्तु इस मूल्य-वृद्धि के साथ ही साथ 'भविष्य' में, जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं, अधिकांश पाठक उसकी कल्पना तक नहीं कर सकते। हम पाठकों को इस बात का सादर विश्वास दिलाना चाहते हैं, कि 'भविष्य' के प्रकाशन द्वारा हम एक पैसे तक के आर्थिक लाभ की आशा नहीं करते ; किन्तु साथ ही हम 'भविष्य' को संसार के किसी भी उच्च कोटि के पत्र के पीछे भी नहीं देखना चाहते। आज 'भविष्य' की १४,००० प्रतियाँ छप रही हैं। यदि यह संख्या घट कर १,००० तक हो जाय तब भी हमें इसकी ज़रा भी शिकायत न होगी; किन्तु जो सामग्री हमने अपने पाठकों को 'भविष्य' में देने का निश्चय किया है, उसमें हम कमी करने को तैयार नहीं हैं। अस्तु।

इस सम्बन्ध में विशेष न लिख कर, हम पाठकों को केवल इस बात का विश्वास दिलाना चाहते हैं, कि मूल्य-वृद्धि के सम्बन्ध में किसी प्रकार की टीका-टिप्पणी न कर, केवल आगे निकलने वाले अङ्कों की प्रतीक्षा करें और यदि उन्हें 'भविष्य' में प्रकाशित सामग्री के समान भारत की किसी भी भाषा में प्रकाशित होने वाले पत्र में वैसी सामग्री मिल जाय, तो उस दिन से उन्हें चाहिए कि वे शपथ ले लें कि भविष्य में वे 'भविष्य' को छूएँगे भी नहीं—इससे अधिक हम कुछ नहीं कह सकते।

—व्यवस्थापक 'भविष्य'

—१०वीं अप्रैल का एक स्थानीय समाचार है, कि कुछ यूरोपियनों और एङ्ग्लो-इण्डियनों ने पुलिस से इस बात की शिकायत की है, कि उनकी गाड़ियों पर ढेले फेंके गए हैं। मि० ए० डब्ल्यू० मिल्स ने ख़बर दी है कि मि० थॉमस जब अपनी स्त्री और मिसेज़ मिल्स के साथ फ़िटन पर, शहर से लौटे आ रहे थे, पावर-हाउस के पास कुछ लड़कों ने उनकी फ़िटन पर ढेले फेंके। कहा जाता है, कि सरदार भगतसिंह की फाँसी के बाद से ही ऐसी घटनाएँ हो रही हैं। पुलिस के डिप्टी-सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० इकराम हुसैन पर भी, ढेले फेंके जाने की शिकायत है।

कॉङ्ग्रेस के अधिकारियों को इन घटनाओं के सम्बन्ध में कोई ख़बर नहीं मिली है। एक प्रेस-प्रतिनिधि के पूछने पर, पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि उन्हें इन घटनाओं के सम्बन्ध में कुछ भी मालूम नहीं था। प्रेस-प्रतिनिधि के ही मुख से उन्हें ये सब बातें मालूम हुईं। उन्होंने कहा कि "यदि ये बातें सत्य हैं, तो मैं उन लड़कों के कार्य की घोर निन्दा करता हूँ।"

कॉङ्ग्रेस का एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव
"सभी राजनैतिक क़ैदी छोड़ दिए जायँ"

"इस कॉङ्ग्रेस की सम्मति में, यदि इस (गाँधी-इर्विन) समझौते का उद्देश्य, भारत और ब्रिटेन के भावों में परिवर्तन लाना है, तो सरकार को उचित है कि वह सभी राजनैतिक क़ैदियों को छोड़ दे, समझौते की शर्तें उनके सम्बन्ध में लागू हों चाहे न हों। इसके अतिरिक्त भारतीय जनता के विचारों और कार्यों पर जो रुकावटें डाली गई हैं, वे भी उठा ली जायँ और देशी रियासतों के भी राजनैतिक क़ैदी छोड़ दिए जायँ। यह कॉङ्ग्रेस सरकार को याद दिलाती है, कि भगतसिंह आदि की फाँसियों के कारण जो असन्तोष फैला है, वह बिना इस प्रस्ताव के अनुसार काम किए, कम नहीं हो सकता।"

—सूरत का १०वीं अप्रैल का समाचार है, कि जिन लोगों ने आन्दोलन के समय ज़ब्त किए हुए खेत को नीलाम में ख़रीदा था, वे इस समय बड़ी मुसीबत में पड़े हैं। उन खेतों में अनाज तैयार है, किन्तु काटने और ढोने के लिए कोई मज़दूर नहीं मिल रहा है। कहा जाता है कि मि० गॉर्डर नामक एक मनुष्य ने काठियावार से कुछ मज़दूरों को बुलवाया। किन्तु मज़दूरों को जब यह मालूम हुआ, कि खेतों में 'बाबर' लोग धरना दे रहे हैं, तो आधे से अधिक मज़दूरों ने तो उसी समय काम करने से जवाब दे दिया। गाँव वालों को जब इन मज़दूरों के आने की बात मालूम हुई तो, कहा जाता है कि उन्होंने उनसे, खेतों में काम न करने की प्रार्थना की। इन सब बातों को सुन कर पुलिस वहाँ आ धमकी और लगभग ७४ व्यक्ति, जिसमें औरत, मर्द और बच्चे तक शामिल हैं, गिरफ़्तार कर लिए गए।

कुछ बङ्गाली यात्री, जो इसी ओर से जा रहे थे, इस तमाशे को देखने के लिए ज़रा ठहर गए। कहा जाता है कि पुलिसमैनों में से एक ने, एक यात्री से कहा कि 'भाग जाओ, नहीं तो गोली मार दूँगा।

—अफ़वाह है कि लॉर्ड इर्विन भारत से वापस जाने के बाद ब्रिटिश राजदूत बना कर वाशिङ्गटन भेजे जायँगे।

—लाहौर का ८वीं अप्रैल का समाचार है, कि श्री० सजनसिंह को जिन पर मिसेज़ कर्टिस की हत्या का अभियोग था, फाँसी दे दी गई।

—श्री० सी० एफ़० एण्ड्र्यूज़ ने केपटाउन से निम्नलिखित तार भेजा है :—

"यह प्रायः निश्चित है कि भारत और दक्षिण अफ़्रिका में जो समझौता होने वाला है, वह केपटाउन अथवा प्रिटोरिया में होने वाली आगामी शरद्-ऋतु की कॉन्फ़्रेन्स में होगा। ट्रान्सवाल में रहने वाले सभी भारतीयों का भाग्य इसी परिषद के निर्णय पर अवलम्बित है। इसलिए वहाँ की भारतीय कॉङ्ग्रेस ने श्री० शास्त्री की आवश्यकता सर्वसम्मति से स्वीकार की है। कोई भारतीय स्वदेश लौटने के लिए तैयार नहीं है; इसलिए लौट जाने का प्रश्न उठाना निरर्थक है।"

—अफ़वाह थी, कि श्री० अमानुल्ला पुनः राजत्व-प्राप्ति के लिए अफ़ग़ानिस्तान आने वाले हैं। कहा जाता है कि ९वीं अप्रैल को नेपल्स से जद्दा (मक्का) के लिए वे रवाने हो चुके हैं। उनका उद्देश्य केवल तीर्थ-यात्रा बतलाया जाता है।

—सिलहट का ८वीं अप्रैल का समाचार है, कि गोविन्दगञ्ज नामक एक स्थान की आबकारी की दूकान तीन बार नीलाम पर चढ़ाई गई, किन्तु कोई ख़रीदने वाला नहीं मिला। इस कारण दूकान बन्द हो जाने की घोषणा कर दी गई है।

—रङ्गून का ७वीं अप्रैल का समाचार है, कि ४ पुलिस के आदमियों की एक विद्रोही से मुठभेड़ हुई। पुलिस वालों ने विद्रोही को पकड़ लिया और उसे विद्रोहियों के अड्डे की ओर चलने के लिए वाध्य किया। अड्डे के समीप पहुँचने पर और विद्रोहियों ने पहुँच कर पुलिस वालों को घेर लिया, जिसके फल-स्वरूप एक सब-इन्स्पेक्टर मारा गया और दूसरा लापता है। अन्य दो घायल हुए हैं।

—पेशावर का ९वीं अप्रैल का समाचार है, कि मि० बार्न्स पर फिर जो आक्रमण करने की चेष्टा की गई थी, उसके सम्बन्ध में वहाँ बड़ी सनसनी फैल रही है। एसोसिएटेड प्रेस के एक विशेष सम्वाददाता के साथ जब मि० बार्न्स वहाँ घूमने निकले तो 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' से उनका स्वागत किया गया।

—रङ्गून का ७वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के ज़िला मैजिस्ट्रेट ने एक बङ्गाली को, विद्रोहात्मक पर्चे बाँटने के सम्बन्ध में तीन साल की कड़ी क़ैद की सज़ा दी है। कहा जाता है कि पर्चे में, सरकारी अफ़सरों को मारने के लिए उकसाया गया था।

—लाहौर का १०वीं अप्रैल का समाचार है, कि लाहौर षड्यन्त्र-केस के सरकारी गवाह रामशरणदास और ब्रह्मदत्त पर झूठी गवाही देने के सम्बन्ध में, अभियोग उपस्थित करने के लिए, सरकार की ओर से हाईकोर्ट में एक दरख़्वास्त दी गई थी, क्योंकि इन दोनों ने स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने अपना बयान बदल दिया था। इस कारण इन पर भारतीय दण्ड-विधान की १९३वीं धारा के अनुसार मुक़द्दमा चलाने की अनुमति माँगी गई थी। हाईकोर्ट ने अनुमति दे दी है।

—लखनऊ का १३वीं अप्रैल का समाचार है, कि किङ्ग जॉर्ज मेडिकल कॉलेज के समीप एक बम फट जाने से तीन मनुष्य घायल हो गए हैं। कहा जाता है कि ये तीनों व्यक्ति कॉलेज के अस्पताल से आ रहे थे, इसी समय उन्हें ढँकी हुई कोई वस्तु मिली। उनमें से एक ने कौतूहलवश उसे उठा लिया, और उसे उठाते ही, एक गोल सी वस्तु नीचे गिर पड़ी, जिसके फल-स्वरूप एक भयानक धड़ाका हुआ, और वह मनुष्य बुरी तरह घायल हो गया। अन्य दो भी घायल हुए हैं। पुलिस इस विषय की जाँच कर रही है।

—सूरत का १३वीं अप्रैल का समाचार है, कि माण्डवी ताल्लुके में ताड़ी की दूकानों पर धरना देने के लिए एक समिति स्थापित की गई है।

—लन्दन का १२वीं अप्रैल का समाचार है कि पुर्तगाल की दशा शोचनीय हो रही है। कई सेनाओं ने सरकारी आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया है। अधिकारीगण कुछ स्थानों में सैन्य संग्रह कर रहे हैं। कहा जाता है कि वहाँ का प्रसिद्ध वायुयान-सञ्चालक फ़्रान्सिस्को आरागाओ आकाशमार्ग से, सरकार के विरुद्ध बलवा फैलाने का उद्योग कर रहा है।

राष्ट्रवादी मुसलमानों के प्रयत्न

—१२वीं अप्रैल का एक स्थानीय समाचार है कि श्री० ख़्वाजा के बङ्गले पर राष्ट्रवादी मुसलमानों की एक सभा हुई, जिसमें मुस्लिम नेशनलिस्ट पार्टी की स्थानीय शाखा स्थापित की गई। श्री० मीर फ़ख़रुद्दीन हुसेन इसके अध्यक्ष और डॉ० एम० एच० फ़ारूक़ी, बार-एट-लॉ, इसके सेक्रेटरी निर्वाचित किए गए हैं। मिसेज़ ख़्वाजा, मिसेज़ अञ्च और मिसेज़ सिद्दीक़ी ने आगामी लखनऊ कॉन्फ़्रेन्स में भाग लेना निश्चित किया है।

—लाहौर का १२वीं अप्रैल का समाचार है, कि पञ्जाब के राष्ट्रवादी मुसलमानों ने अपना एक दल स्थापित कर लिया है। मौलाना अब्दुल्ला इसके अस्थायी अध्यक्ष और डॉ० मुहम्मद आलम इसके सेक्रेटरी बनाए गए हैं।

—कानपूर का ९वीं अप्रैल का समाचार है, कि हिन्दू और मुसलमानों की एक एक सभा में, मौलाना आज़ाद सुभानी ने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर एक भाषण दिया। उन्होंने मुसलमानों में खादी पहनने के लिए अनुरोध किया। मौलाना साहब ने, मुसलमानों में खादी का प्रचार करने के लिए एक कमिटी बनाई है।

—पेशावर का १०वीं अप्रैल का समाचार है कि, अमानुल्ला की चिट्ठियों का संग्रह, जो पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ था, ज़ब्त कर लिया गया है। इस्लामियाँ कॉलेज के एक विद्यार्थी की लिखी हुई पश्तो भाषा की एक पुस्तक भी ज़ब्त कर ली गई है।

—लाहौर का ९वीं अप्रैल का समाचार है कि, श्री० सुभाषचन्द्र बोस ने, जो मेरठ षड्यन्त्र के अभियुक्तों को देखने गए थे, उनके सम्बन्ध में कहा है कि अधिकांश दुर्बल हो गए हैं। पर तो भी उन लोगों का उत्साह कम नहीं हुआ है।

—अहमदाबाद का ११वीं अप्रैल का समाचार है, कि भावनगर पिकेटिङ्ग-मण्डल की सत्याग्रह-समिति ने मोर्वी राज्य में स्वयंसेवकों को भेज कर सत्याग्रह करने का विचार किया है। कहा जाता है कि हाल ही में एक स्वयंसेवक, जो वहाँ विदेशी कपड़े का बहिष्कार कार्य करने गया था, राज्य-कर्मचारियों द्वारा बलात् निकाल दिया गया था। इसी के प्रतिवाद-स्वरूप यह सत्याग्रह किया जायगा।

पुलिस ने अपनी शक्ति का सर्वथा दुरुपयोग किया है !

सरकारी गवाह जुडिशियल हवालात में रक्खे जाएँ

लाहौर हाईकोर्ट में दरख़्वास्त :: पुलिस के विरुद्ध शिकायतों की भरमार

लाहौर ७ अप्रैल। आज लाहौर हाईकोर्ट के डिविज़नल बेञ्च में, मि० जस्टिस मिडे और जस्टिस मे० के० एम० टेप के सामने, लाहौर के नए षड्यन्त्र वाले मुक़दमे के सरकारी गवाहों की ओर से दरख़्वास्त दी गई कि उन्हें पुलिस की हवालात से जुडिशियल हवालात में स्थानान्तरित कर दिया जाय। आवेदनकारियों के अन्यतम वकील श्री० समीरचन्द ने अपनी बहस में मुक़दमे की तफ़सील देते हुए कहा कि स्पेशल ट्रिब्यूनल ने अपने हुक्म में यह स्वीकार किया है कि अदालत को विशेष कारणवश सरकारी गवाहों को स्थानान्तरित करने का अधिकार है। गवाह इन्द्रपाल को, उसकी गिरफ़्तारी से दो महीने बाद माफ़ी का वचन दिया गया। इसी तरह दूसरे गवाहों को भी माफ़ी का वचन देने में काफ़ी समय लगा। रिमाण्ड अर्थात् सबूत इकट्ठा करने के लिए मोहलत लेने की हालत में एक अभियुक्त को दो सप्ताह तक पुलिस की हिरासत में रक्खा जा सकता है, परन्तु किसी गवाह को एक क्षण के लिए भी हिरासत में रखना अनुचित है। अभियुक्त को भी दो सप्ताह के बाद नहीं रक्खा जा सकता। इसलिए इन गवाहों को हिरासत में रखना नितान्त अनुचित है। और विशेषतः उस दशा में, जब कि पहले गवाह को तीन महीने लग चुके हैं। मुद्दई के ७१९ गवाह अभी गवाही देने को बाक़ी हैं, जिसका आशय यह है कि सरकारी गवाहों को अभी कम से कम तीन साल तक नज़रबन्द रक्खा जाएगा। हालाँ कि क़ानून के अनुसार पन्द्रह दिन के बाद हिरासत अनुचित है।

वकील ने धारा ३ का उल्लेख करते हुए कहा कि पुलिस की हिरासत में किसी को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं। उचित हिरासत जुडीशियल है, इसलिए पुलिस की हिरासत किसी तरह उचित नहीं है।

सरकारी गवाह को हिरासत में रखने का उद्देश्य यह होता है कि जब आवश्यकता हो, उसे अदालत के सामने उपस्थित कर दिया जाय। इसका यह उद्देश्य कदापि नहीं है कि उसे गवाही पढ़ाई जाए या सबक़ याद कराया जाए। लेजिस्लेटर ने हिरासत के लिए जेलख़ाना नियत किया है और 'रिमाण्ड' जेल में हो सकता है, पुलिस के पास नहीं। विद्वान वकील ने कलकत्ता और लाहौर हाईकोर्ट का उदाहरण देते हुए कहा कि धारा ३४४ के अनुसार हिरासत जुडीशियल होती है, इसके विपरीत अभियुक्त की स्थिति मालख़ाने की एक चीज़ सी रह जाती है। लोकल गवर्नमेण्ट ने हिरासत में रहने वाले क़ैदियों के लिए जेलख़ाना बनाया है। इन्द्रपाल को जेल में भेजा गया। लोकल गवर्नमेण्ट को अख़्तियार न था, कि शाही क़िले को जेल बना देती, जब कि शाही क़िला पुलिस के अधिकार में है। नोटीफ़िकेशन हो जाने पर पुलिस को वहाँ से चला जाना चाहिए, एक दारोग़ा को वहाँ का प्रबन्धकर्ता होना चाहिए। अगर ऐसा नहीं हो तो वह जेल नहीं हो सकता। क़ानून एक क्षण के लिए भी सहन नहीं कर सकता कि सरकारी गवाह पुलिस की हिरासत में रहे। फिर तीन साल तक वहाँ रखने का तो ज़िक्र ही वृथा है। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि सरकारी गवाहों को पुलिस के पास न रक्खा जाए। और अगर कोई अदालत इनकी रक्षा नहीं कर सकती तो उसे कोई अधिकार नहीं, कि वह इनके मुक़दमे की सुनवाई कर सके। दफ़ा १६७ का आशय है कि पन्द्रह दिन के बाद अभियुक्त पुलिस की हिरासत में न रहे। क्या यह उचित है कि गवाह इतने समय तक एक फ़रीक़ के अधिकार में रहे? विद्वान वकील ने गवाह इन्द्रपाल के बयान का उदाहरण देकर कहा कि इसे मारा-पीटा गया था। सम्भव है कि दूसरों के साथ भी ऐसा बर्ताव किया जाता हो। इस तरह न्याय का उद्देश्य पूरा नहीं होता। सम्भव है, यह कहा जाए कि पहले गवाही हो ले, फिर बहस हो जायगी; परन्तु हमें सन्देह है कि कोई शरारत होगी। आख़िर झूठे बयानों को अदालत की मिसिल में लाने की आवश्यकता क्या है? फ़साद को आरम्भ में ही दबा देना चाहिए। इन्साफ़ का तक़ाज़ा है कि सरकारी गवाहों को फ़ौरन जुडिशियल हवालात में भेजा जाए। उनकी रक्षा का एतराज़ महज़ एक लँगड़ी दलील है।

जवाब में सरकारी वकील ने कहा कि इस बात का विचार करना मैजिस्ट्रेट का काम है कि अपराधी कहाँ रक्खा जाय। अगर वह चाहे तो उसे कोर्ट-इन्सपेक्टर या नाज़िर के पास भी रख सकता है। ट्रिब्यूनल ने गवाहों को बुलाया और उनकी इच्छा के अनुसार पुलिस की हिरासत में भेज दिया। यह आज़ाद गवाह का ख़्याल नहीं है, बल्कि सरकारी गवाह का मसला है। कोई क़ानून मुद्दई को अपने गवाहों को तैयार करने से नहीं रोक सकता। केवल इन्द्रपाल के कथन का आधार लेकर गवाहों को जुडिशियल हवालात में भेजना उचित न होगा। ऐसे विप्लव-सम्बन्धी मुक़दमे में, जिसमें इन्द्रपाल के बयान के अनुसार, मृत्यु का दण्ड हो, सरकारी गवाहों की रक्षा का प्रश्न अत्यावश्यक है। इन्द्रपाल ने पुलिस के विरुद्ध बयान दिया है। उसके पास सार्टिफ़िकेट है, वह जेल के अन्दर और बाहर भी सुरक्षित है और स्वतन्त्र मनुष्य की तरह फिरेगा। परन्तु दूसरे गवाहों की रक्षा ज़रूरी है। क्योंकि भय है कि कहीं विप्लववादी उन्हें जेलख़ाने में ही न मार डालें। इसी मुक़दमे में ज़िक्र आया है कि भगतसिंह और उनके साथियों को छुड़ाने की कोशिश की गई थी। अगर यह सम्भव है, तो जेल में सरकारी गवाह भी सुरक्षित नहीं रह सकते। इसलिए इनका जेल में रखना भय से ख़ाली नहीं है। और जेल में जान बचाने के लिए इनके पास वही उपाय रह जाता है, जिसे इन्द्रपाल ने अख़्तियार किया है।

क़ानून के अनुसार लोकल गवर्नमेण्ट को अधिकार है कि किसी विशेष अवस्था में जेल के सिवा किसी और स्थान को भी इसके लिए निश्चित कर दे।

सरकारी वकील ने कहा कि मुझे आश्चर्य है कि अभियुक्तों के गवाह क्यों इस तरह पुलिस के विरुद्ध हैं। पुलिस हर हालत में भर्त्सना के योग्य नहीं होती। अब प्रश्न यह है कि सरकार ने गवाहों को रखने के लिए शाही क़िला निर्दिष्ट किया है, तो क्या अदालत कोई दूसरा स्थान निर्दिष्ट करेगी। हिरासत का सवाल अदालत के सामने ख़ास अदालत में पैदा होता है।

इसके बाद अपने अन्तिम वक्तव्य में अभियुक्तों के वकील ने फिर कहा कि यह अजीब दलील है कि इन्द्रपाल का बयान साबित नहीं हुआ। प्रश्न यह है कि ऐसी हालत में गवाहों को स्थानान्तरित करना चाहिए या नहीं। यह सरकारी गवाह का काम नहीं है कि सबूत पेश करे। सरकार के लिए कोई कारण न था कि शाही क़िले को इसलिए निर्दिष्ट करती, जब कि एक नहीं, तीन जेलख़ाने यहाँ मौजूद हैं। अगर कोई व्यक्ति तीन साल तक पुलिस की हिरासत में रह सकता है, तो दफ़ा १६७ के बनाने की आवश्यकता ही क्या थी? सरकारी गवाहों को पुलिस के अधिकार में रखने का उद्देश्य ही यह है, कि वे पुलिस की मरज़ी के मुताबिक़ अपना बयान दें। इस्तग़ासा का मतलब यह है कि वे पुलिस के हाथों से बाहर न जाएँ। परन्तु क़ानून के अनुसार जेलें मौजूद हैं, इसलिए प्रथम तो लोकल सरकार को कोई और स्थान निर्दिष्ट करने का अधिकार नहीं और अगर किया भी गया तो पुलिस वहाँ एक क्षण के लि भी नहीं रहनी चाहिए और उस स्थान का जेल के मातहत होना भी आवश्यक है।

दोनों पक्षों की दलीलें सुन कर अदालत ने फ़ैसला स्थगित रक्खा।

* * *

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की चिता पर मेला

सेण्ट्रल सिक्ख लीग की घोषणा

अमृतसर, ९ अप्रैल—आज सेण्ट्रल सिक्ख लीग के अधिवेशन में ज्ञानी गुरुमुखसिंह ने घोषणा की कि जिस स्थान पर सरदार भगतसिंह और उनके साथियों के शव जलाए गए थे, उस स्थान पर बैसाखी के दिन एक राजनीतिक मेला लगेगा और इसी तरह प्रति वर्ष लगा करेगा। इस दिन वहाँ राजनीतिक सभाएँ और दीवान (सिक्खों की महती सभा) होंगे।

चलती रेल में डाका

मैमनसिंह का ११वीं अप्रैल का समाचार है, कि तीन साहा व्यापारी १०,०००) रुपए के साथ ट्रेन से सफ़र कर रहे थे। कहा जाता है कि तीन युवकों ने चलती ट्रेन में, उन पर आक्रमण किया। व्यापारियों ने जब सीधी तरह से रुपए देने से इन्कार किया तो उन्होंने फ़ायर किया, जिसके फलस्वरूप एक तो वहीं मर गया। दूसरा व्यापारी अस्पताल में मर गया। तीसरे की अवस्था विशेष शोचनीय नहीं है। डाकू लापता हैं।

—कानपूर का १३वीं अप्रैल का समाचार है कि 'बोल्शेविक-रशिया' नामक एक पुस्तक के सम्बन्ध में, पुलिस ने 'प्रताप प्रेस' और ऑफ़िस की तलाशी ली। कोई सन्देहजनक वस्तु नहीं पाई गई है।

—रङ्गून का समाचार है कि एक मुसलमान सरवेयर ने एक यूरोपियन कप्तान पर तीन गोलियाँ चलाईं। कप्तान को एक गोली लगी है। वह मुसलमान लापता है।

—नागपुर के सत्याग्रही नेता जनरल अवारी पागलख़ाने में बन्द हैं। उन्हें छुड़ाने के लिए पागलख़ाने के समीप सत्याग्रह किया जा रहा है।

* * *

पण्डित जवाहरलाल नेहरू का भाषण

भावी शासन-विधान में नौकरियाँ और वेतन :: रूस का मनोरञ्जक दृष्टान्त

साम्प्रदायिक दङ्गों पर विचार

कानपुर के गत साम्प्रदायिक दङ्गे द्वारा उत्पन्न इलाहाबाद में फैले हुए आतङ्क को दबाने के प्रयत्न में ८वीं एप्रिल की रात में जो मुहल्ला-सभा हुई थी, उसमें भाषण करते हुए पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा, कि कानपुर का दङ्गा, जो इतने दिनों तक चलता रहा, उसका स्पष्ट कारण यह था, कि तीन दिन तक उसके रोकने का कोई भी यत्न नहीं किया गया। कानपुर का दङ्गा हड़ताल कराने के प्रयत्न में नहीं हुआ। बात यह है कि काँङ्ग्रेस की शक्ति और उसके व्यापक प्रभाव को कम करने के असफल प्रयत्न इधर विरोधियों की ओर से प्रायः होते रहे हैं। पहले कहा जाता था कि काँङ्ग्रेस केवल हिन्दुओं की संस्था है लेकिन सविनय अवज्ञा आन्दोलन में काफ़ी बड़ी तादाद में मुसलमानों ने भाग लिया। मेरा ख़्याल है, कि जन-संख्या के अनुपात से यदि विचार किया जाय तो मालूम होगा, कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन में जेल जाने वालों की संख्या में हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों की संख्या औसतन अधिक रही है। विराम-सन्धि और स्वाधीनता-संग्राम का स्थगित हो जाना, मेरी राय में, साम्प्रदायिक उपद्रव चाहने वालों के लिए चिढ़ जाने का एक मौक़ा हो गया है। आपने कहा, कुछ लोग ऐसे हैं, जिनका विचार है कि स्वराज्य हो जाने से उनका कोई लाभ न होगा। इसलिए वे मौजूदा शासन-प्रणाली के बनी रहने और जातिगत झगड़ों के होते रहने में ही दिलचस्पी रखते हैं!

कानपुर के उपद्रव ने क्षोभ और दुःख पैदा कर दिया है। सैकड़ों जानें गईं, जिनमें एक यू० पी० का रत्न था। उसने दोनों सम्प्रदाय के आपद्ग्रस्त लोगों की जानें बचाने में अपनी जान दे दी। शान्ति के लिए प्रयत्नशील जानकर भी कुछ उन्मत्त लोगों ने उन पर हमला कर दिया और उनकी जान ले ली। श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु ने इस बात को स्पष्ट कर दिया है कि काँङ्ग्रेस वाले देश की सेवा में जीवनोत्सर्ग करने के लिए सन्नद्ध हैं। फिर आपने कहा, मुझे इस बात का गर्व है, कि ऐसी महान आत्मा उत्पन्न करने का गौरव संयुक्त प्रान्त को प्राप्त है।

आगे आपने कहा, अब प्रश्न यह है कि इस समय हमें क्या करना चाहिए। यह एक मानी हुई बात है कि गत १२ महीने के हमारे राष्ट्रीय युद्ध ने सारे संसार को हिला दिया। और संसार के राष्ट्रों में इस देश के प्रति दिलचस्पी पैदा कर दी है। झुण्ड के झुण्ड यूरोपीय तथा अमेरिकन पत्र-प्रतिनिधि किस प्रकार कराची में महात्मा जी को घेरे रहते थे, यह इस बात का प्रमाण है। इस देश के प्रति संसार की सहानुभूति का कारण यह है, कि विदेश वाले यह बात अपने मन में अच्छी तरह समझे हुए हैं कि भारत बहुत शीघ्र स्वाधीन होने वाला है, इसलिए प्रत्येक देश इस देश से मैत्री स्थापित करना चाहता है।

आगे चल कर आपने कहा कि काँङ्ग्रेस-अधिवेशन के अवसर पर, किसी भी कार्यवाही में किसी प्रश्न पर भी हिन्दू-मुस्लिम-भेद नहीं उत्पन्न हुआ। यह प्रश्न और भेद तो कुछ ऐसे हिन्दू और मुसलमान स्वार्थियों की स्वार्थपरता का परिणाम है, जो ऊँची-ऊँची सरकारी नौकरियों और वेतनों के लिए लालायित हैं। आपने कहा, लोगों को यह याद रखना चाहिए, कि आख़िर ऐसी नौकरियाँ बहुत थोड़ी और परिमित हैं, इसलिए हिन्दू और मुसलमानों के सामने मुख्य प्रश्न इन थोड़ी सी नौकरियों का नहीं है। मुख्य प्रश्न यह है, कि सर्वसाधारण की ग़रीबी कैसे दूर हो, देश के उद्योग-धन्धों तथा व्यापार की उन्नति कैसे हो और किसानों की हालत में सुधार कैसे हो। यही वे प्रश्न हैं, जिनसे हिन्दू और मुसलमान दोनों का वास्तविक सम्बन्ध है।

काँङ्ग्रेस और स्वराज्य

काँङ्ग्रेस के उस प्रस्ताव की व्याख्या करते हुए, जिसमें स्वराज्य की परिभाषा की गई है, पण्डित जी ने कहा कि उन तमाम बातों में से, जिनका काँङ्ग्रेस को ध्यान है, एक बात ग़रीब समुदाय का उत्थान करना है। दूसरी बात जो काँङ्ग्रेस चाहती है, वह है सैनिक-व्यय का काम करना। इससे ग़रीबी का सुधार होगा।

इसी ग़रीबी के सुधार को सामने रखते हुए काँङ्ग्रेस ने निर्णय किया है कि स्वराज्य शासन में अधिकारियों के वेतन कम होंगे। आपने कहा, काँङ्ग्रेस के उस निर्णय के अनुसार, जिसमें स्वराज्य शासन में ५००) रुपया मासिक वेतन से अधिक किसी अधिकारी को न दिए जाने की बात कही गई है, कुछ लोगों और कुछ पत्रों ने मूर्खतापूर्ण कहा है, लेकिन खेद की बात है कि उन्होंने उस निर्णय के आन्तरिक तत्व को नहीं समझा। काँङ्ग्रेस नहीं चाहती कि कोई शख़्स शासन-प्रबन्ध में इसलिए नौकरी चाहे कि उसमें बड़ी-बड़ी तनख़्वाहें ।काँङ्ग्रेस का मतलब है कि जो लोग सरकारी नौकरी में आवें वे या तो शुद्ध-देश-सेवा की प्रेरणा से आवें, या नौकरी के पद की उच्चता से प्रेरित होकर आवें, अर्थ-लोभ वश न आवें। सार्वजनिक सेवकों को उतना ही वेतन दिया जा सकता है, जितने से उनका भरण-पोषण हो जाय। आपने बतलाया कि रूस में धन के ख़्याल से कोई भी व्यक्ति ऊँची नौकरी की लालसा नहीं करता। वास्तव में बात यह है कि ५००) रु० मासिक वेतन भी अधिक है। इतना वेतन काँङ्ग्रेस ने डर कर निर्धारित किया है। मेरी राय में तो इतने से, जितना काँङ्ग्रेस ने तय किया है, कहीं कम वेतन होना चाहिए। क्योंकि रूस में सब से अधिक वेतन २५०) रु० या २७५) रु० मासिक से अधिक नहीं है। रूस में लोग एक निश्चित संख्या से अधिक कमरों तक में नहीं रह सकते। वहाँ जिनके बड़े-बड़े मकान थे, वे आवश्यकता से अधिक जगह उपयोग करने से रोके गए। बाक़ी जगह दूसरों को, जिनके घर न थे, वे देने के लिए विवश किए गए। आपने कहा काँङ्ग्रेस इस देश में एक नई ही प्रणाली चलाना चाहती है, जिसके सिद्धान्त बिल्कुल नए होंगे और जिनसे दोनों सम्प्रदायों का हित साधन होगा। आपने कहा, मैंने सुना है कि कुछ लोग काँङ्ग्रेस वालों पर यह दोषारोपण करते हैं, कि वे स्वाधीनता-संग्राम में अगुवा इसलिए बनते हैं, कि स्वराज्य होने पर वे बड़ी-बड़ी नौकरियाँ पा सकें। मेरी इच्छा है कि मुख्य-मुख्य काँङ्ग्रेस कार्यकर्ता अभी से घोषित कर दें, कि स्वराज्य होने पर स्वराज्य-शासन में वे किसी भी तरह के पद या नौकरी का हक़ न पेश करेंगे।

आपने कहा, महात्मा गाँधी स्वयं ही इस विषय पर ऐसी कोई घोषणा निकालने की बात सोच रहे थे; जिससे काँङ्ग्रेस कार्यकर्ताओं पर किसी तरह के प्रलोभन का दोषारोपण न किया जा सके। लेकिन कुछ लोगों के मना करने पर ऐसी घोषणा नहीं की गई। ऐसी घोषणा निकालने से सम्भव है, कुछ कठिनाइयाँ उपस्थित हो जायँ, जैसे स्वराज्य-शासन के लिए उपयुक्त व्यक्तियों के न मिल सकने पर या घोषित व्यक्ति-विशेष पर ही प्रजा का शासन के लिए विश्वास होने पर, घोषणा का पालन सम्भव न होगा। आपने कहा, अगर मेरी राय आप पूछिए तो वह यह है, कि देश के स्वाधीन होने पर ऐसा होना चाहिए कि ऊँची नौकरियाँ होवें ही नहीं, केवल पञ्चायत का शासन हो।

आपने कहा, हिन्दू और मुसलमान दोनों ही भारत में ग़रीबी से दिन काट रहे हैं। सम्भवतः मुसलमान अधिक ग़रीब हैं। अगर ग़रीबी दूर करने के उपाय किए जा रहे हैं, तो उनसे दोनों ही का लाभ होगा। ये सब बातें शासन चलाने के ढङ्ग पर अवलम्बित रहेंगी।

मैं चाहता हूँ कि लोग इस बात पर ज़ोर डालते रहें कि शासन-भार कुछ ऊँचे अधिकारियों के हाथ में न रहे बल्कि उसका सूत्र ग़रीब जनता के हाथों में रहे। ऐसी व्यवस्था में कोई हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा उठ ही कैसे सकता है?

आपने कहा, मैंने सुना है कि दिल्ली की ऑल-इण्डिया मुस्लिम कॉन्फ़्रेन्स में मेरे एक पुराने दोस्त ने कहा है, कि मुसलमान युद्ध के लिए तैयार हैं। आपने कहा, अगर कोई हिन्दू या मुसलमान ताक़त आज़माई करना चाहता हो, तो वह काँङ्ग्रेस-दफ़्तर में चला जाय, मैं कुछ आदमी उसके लिए भेज दूँगा, जो उसके सामने जाकर सर झुका देंगे और मैं भी अपना सर झुकाने को तत्पर रहूँगा, कोई भी व्यक्ति किसी प्रकार का प्रतिघात न करेगा। अगर मि० ज़हूर अहमद राजनीतिक आधार पर काँङ्ग्रेस को चैलेञ्ज दें, तो मैं उनके सामने सर झुकाने को तैयार न हूँगा, लेकिन अगर धार्मिक मामले में वे चैलेञ्ज दें, तो मैं नत-मस्तक होने को तैयार हूँ।

बड़के भैया का अनर्गल प्रलाप

"मैं हज़ारों गाँधियों का मुक़ाबला करूँगा"

बम्बई का १३वीं अप्रैल का समाचार है कि, मुसलमानों की एक साम्प्रदायिक सभा में महात्मा गाँधी की तीव्र आलोचना करते हुए मौलाना शौकतअली ने कहा है, कि मुसलमान महात्मा गाँधी से न्याय की आशा नहीं कर सकते। यदि आवश्यकता पड़ेगी तो मुसलमानों के लिए मैं अकेले ही हज़ारों और लाखों गाँधी का मुक़ाबला कर सकता हूँ। 'टाइम्स ऑफ़ इण्डिया' के प्रतिनिधि से मौलाना साहब ने कहा है, कि भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी एक ख़तरा हैं। उनका कहना है कि महात्मा गाँधी केवल हिन्दू और मुसलमानों को ही लड़ाना नहीं चाहते, बल्कि मुसलमानों को आपस में भी लड़ाना चाहते हैं। कानपुर, आगरा आदि स्थानों के दङ्गों का उल्लेख कर आपने कहा, कि इन सभी वारदातों को देखते हुए मुसलमान पृथक निर्वाचन को नहीं छोड़ सकते। महात्मा गाँधी का मुट्ठी भर मुसलमानों की सहायता से आन्दोलन कराना ख़तरे की जड़ है।

* * *

साहित्य का सपूत

हमें खेद है, स्थानाभाव के कारण इस अङ्क में 'साहित्य का सपूत' शीर्षक नाटक प्रकाशित नहीं हो सका, आगामी अङ्कों में यह धारावाही रूप से छपेगा, पाठकगण क्षमा करें।

—सं० 'भविष्य'

महात्मा जी के कार्यों की आलोचना और उनका समाधान

"समझौते से ही हमारे उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो गई है"

दिल्ली के समझौते के बाद से लोगों ने महात्मा जी से प्रश्न पर प्रश्न पूछना शुरू कर दिया है। महात्मा जी ने 'यङ्ग इण्डिया' में इन प्रश्नों के जो उत्तर दिए हैं, नीचे वे ही पाठकों की जानकारी के लिए दिए जाते हैं :—

प्रश्न—वे विद्यार्थी, जिन्होंने आन्दोलन के समय स्कूल छोड़ दिए थे, इस समय क्या करें ?

उत्तर—(१) आन्दोलन समाप्त नहीं हुआ है, बल्कि उसने एक भिन्न अर्थात् रचनात्मक स्वरूप धारण किया है।

(२) विद्यार्थीगण मादक द्रव्यों के सेवन करने वाले और विदेशी कपड़े का व्यवहार करने वाले लोगों के हृदय पर प्रभाव डाल सकते हैं और उन्हें सुधार सकते हैं।

(३) वे उन बहिनों को सहायता पहुँचा सकते हैं, जो शान्तिमय पिकेटिङ्ग कर रही हैं।

(४) वे गाँवों में रह कर खादी-प्रचार-कार्य कर सकते हैं।

(५) वे शहरों में खादी की फेरी कर सकते हैं।

(६) सभी छात्रों को नित्य-प्रति कम से कम आधा घण्टा चर्ख़ा या तकली कातना चाहिए।

(७) अन्य बातों की जानकारी के लिए वे राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों के रजिस्ट्रारों के पास लिखें।

विदेशी कपड़े

प्रश्न—इस समय पिकेटिङ्ग का कार्य ढीला पड़ गया है, इस कारण विदेशी वस्त्रों के लिए नए ऑर्डर भेजे जा रहे हैं। बचे हुए विदेशी कपड़ों की भी अच्छी बिक्री हो रही है। इसे रोकने के लिए आप क्या कर रहे हैं ?

उत्तर—इस प्रश्न से यह जान पड़ता है, कि पिकेटिङ्ग का अर्थ दबाव है। यदि बात ऐसी ही है तो भी दबाव डाल कर कोई कार्य करने की अपेक्षा, स्वतन्त्रता अधिक वाञ्छनीय है। मेरा यह विश्वास है कि यदि कार्यकर्तागण अपना कार्य जारी रक्खेंगे, तो जनता विदेशी कपड़ा नहीं ख़रीदेगी। हम लोगों ने बेचने वालों की ओर अधिक और ख़रीदने वालों की ओर कम ध्यान दिया है। अतएव जनता में प्रचार-कार्य की अधिक आवश्यकता है। हमारा उद्देश्य है, समझा-बुझा कर सुधारना, दबाव डालना नहीं। दबाव तो हिंसा का ही एक अङ्ग है। किन्तु शान्तिपूर्वक सुधार अहिंसा और प्रेम का फल है।

प्रश्न—मज़दूरों और किसानों का उपकार करते हुए क्या आप पूँजीपतियों और मज़दूरों की कलह को रोक सकते हैं ?

उत्तर—हाँ, अवश्य ! यदि लोग अहिंसा के मार्ग पर चलें तो इस कलह से बचना सहज है, गत १२ महीनों में यह सिद्ध हो गया है, कि अहिंसा को यदि नीति भी मान लिया जाय, तो क्या सम्भव नहीं हो सकता ? किन्तु जब लोग इसे अपने आचरण का एक सिद्धान्त मान लेंगे तो यह कलह एक असम्भव वस्तु हो जायगी। अहमदाबाद में इसकी परीक्षा की जा रही है। इससे अत्यन्त सन्तोषजनक फल प्राप्त हुए हैं, और बहुत सम्भव है, कि यह पूर्णतया सन्तोषजनक सिद्ध हो जाय। हम पूँजीपतियों का नाश नहीं करना चाहते, बल्कि पूँजीवाद का नाश चाहते हैं। पूँजीपतियों के विषय में मेरा विचार है, कि वे अपने को उन मनुष्यों का विश्वासपात्र समझें, जिनसे उनकी उन्नति होती है और उनकी पूँजी बढ़ती है। मज़दूरों को पूँजीपतियों के सुधार तक ठहरने की आवश्यकता नहीं है। यदि पूँजी एक प्रकार की शक्ति है, तो परिश्रम भी एक प्रकार की शक्ति है। दोनों का उपयोग, विनाशक या रचनात्मक दोनों प्रकार के कार्यों के लिए किया जा सकता है। दोनों को एक-दूसरे पर निर्भर करता है। यदि कोई मज़दूर अपनी शक्ति का अन्दाज़ा पा ले तो वह अपने मालिक का हिस्सेदार बनने के योग्य है। पर यदि वह अपने मालिक की सम्पत्ति का एकमात्र अधिकारी बनना चाहे, तो वास्तव में वह सोने के अण्डे देने वाली मुर्ग़ी की हत्या करना चाहता है। सुयोग और सुबुद्धि में बराबर असमानता रही है और अन्त तक रहेगी। नदी के किनारे रहने वाले किसी मनुष्य को सूखी भूमि पर रहने वाले एक मनुष्य से अधिक अन्न उत्पन्न करने का सुयोग मिल जाता है। यदि असमानता से हमें सामना करना ही पड़े, तो भी आवश्यक समानता हममें बनी रह सकती है। प्रत्येक मनुष्य को अपनी आवश्यकताओं पर उतना ही अधिकार है, जितना कि पशु-पक्षियों को है। प्रत्येक अधिकार के साथ, उसकी रक्षा के उपाय भी हैं। यदि परिश्रम करना कर्तव्य है, तो परिश्रम के फल से वञ्चित करने वाले के साथ असहयोग करना अधिकारों की रक्षा का साधन है।

भाव-परिवर्तन

यदि मालिक और मज़दूर के बीच आवश्यक समानता मान ली जाय, तो मालिकों (पूँजीपतियों) का नाश हमारा उद्देश्य नहीं होना चाहिए। हमें उनके भावों में परिवर्तन लाने की चेष्टा करनी चाहिए। यदि वे ग़लत राह पर होंगे तो हमारा असहयोग उनकी आँखें खोल देगा। यदि असहयोग करने के बाद हमारे स्थान पर दूसरे लोग आ जायँ, तो इससे हमें भयभीत नहीं होना चाहिए, क्योंकि हम उन पर भी अपना प्रभाव डालने की आशा करते हैं, और उन्हें मालिक की भूलों में सहायता पहुँचाने से रोक सकते हैं। इस ढङ्ग की शिक्षा की प्रगति मन्द है अवश्य, किन्तु इससे लाभ अवश्यम्भावी है। यह आसानी से सिद्ध किया जा सकता है, कि पूँजीपतियों का नाश, अन्त में मज़दूरों का नाश है।

बेकारी की समस्या

प्रश्न—जो सत्याग्रही क़ैदी जेलों से छोड़ दिए गए हैं, व यदि बेकार हैं तो क्या करें ?

उत्तर—यदि वे काम करने को तैयार हों, और ईमानदार हों, तो इसमें सन्देह नहीं कि किसी कॉङ्ग्रेस संस्था में उन्हें काम मिल जाय। हर एक को काम के लिए कॉङ्ग्रेस या उससे सम्बन्ध रखने वाली संस्थाओं की ओर ताकने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक सच्चा व्यक्ति अपनी योग्यता और सच्चाई के द्वारा काम पा सकता है।

प्रश्न—कॉङ्ग्रेस ने गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में कोई भाग न लेने का निश्चय किया था। आपका भी यही निश्चय था। किन्तु अब आपने उस ओर बढ़ने का निश्चय कर लिया है। आप इसका क्या उत्तर दे सकते हैं ? क्या आप सदा सत्य के लिए देश का बलिदान करते रहेंगे, और हमें सत्य और अहिंसा की परीक्षा का साधन समझते रहेंगे ? क्या आप इस बात का अनुभव नहीं करते, कि आत्मिक विकास के लिए सारी ज्योति को आप गढ़े में ढकेल रहे हैं ? हम लोगों में से बहुतों का यह विचार है कि आपके सिद्धान्त 'राष्ट्रीय स्वभाव' हो गए हैं, जो पूँजीपतियों के लिए तो लाभदायक हैं, पर पीड़ितों के लिए विष के समान हैं।

उत्तर—समय के साथ व्यवहारों में भी भेद होता है। मूर्खतापूर्ण स्थिरता सङ्कीर्ण मस्तिष्क का भूत है। यदि मैं अस्थिर हूँ, तो मेरी अस्थिरता बुद्धिमत्तापूर्ण है। किन्तु वास्तव में मैं अपने भूत और वर्तमान आचरणों में कोई अस्थिरता नहीं पाता हूँ। गोलमेज़ परिषद् के स्थायी रूप से बॉयकॉट करने का कोई सवाल ही नहीं था। कॉङ्ग्रेस ने इसलिए उसमें जाना अस्वीकार किया था, कि उसकी शर्तें अस्वीकृत कर दी गई थीं। इस समय वह इसलिए जा सकती है, कि उसका मार्ग खुला हुआ है। मैं आशा करता हूँ, कि जो लोग वहाँ जायँगे, वे शान्ति के सन्देश को वहाँ निश्चित रीति से व्यक्त करेंगे। यहाँ 'सत्य' के लिए अपने देश का बलिदान करने का कोई सवाल नहीं है। इस सम्बन्ध में सब से पहली बात कार्यकारिणी सभा का निश्चय है। दूसरी बात यह है, कि इससे देश को किसी तरह भी हानि नहीं पहुँचाई गई है। किन्तु मुझे यह कहने में सङ्कोच नहीं है, कि यदि 'सत्य' और 'देश' में से, मुझे किसी एक को चुनना पड़े, तो मैं 'सत्य' का ही साथ दूँगा, क्योंकि 'सत्य' मेरे लिए ईश्वर है। ऐसी दशा में मैं 'सत्य' के लिए देश की क़ुर्बानी तक करने से पीछे न हटूँगा। मेरा विश्वास है कि किसी व्यक्ति या जाति ने 'सत्य' का बलिदान कर कुछ प्राप्त नहीं किया है, इसलिए 'सत्य' के लिए देश का भी बलिदान कर देना एक महान् त्याग है।

मेरे सच्चे कार्यकर्ता

जो लोग मेरे सत्य के अनुसन्धान में मेरा साथ देते हैं, वे वास्तव में मेरी परीक्षाओं की कसौटी नहीं हैं। वे वास्तव में मेरे अमूल्य सहकारी हैं, जिन्हें मेरे ही समान सत्य के अनुसन्धान में आनन्द मिलता है, जैसा कि और किसी वस्तु के अनुसन्धान में नहीं मिलता।

(शेष मैटर ६वें पृष्ठ के तीसरे कॉलम के नीचे देखिए)

"अखिल भारतवर्षीय" मुस्लिम-कॉन्फ़्रेन्स

मुट्ठी भर साम्प्रदायिक मुसलमानों का मुल्लापन

नई दिल्ली २ अप्रैल—आज अखिल भारतीय मुस्लिम परिषद का विशेष अधिवेशन आरम्भ हुआ। उपस्थित सज्जनों में निम्न-लिखित प्रतिष्ठित सज्जन थे :—

सर मुहम्मद शफ़ी, सर अब्दुल क़ैयूम, सर अकबर ख़ाँ, मलिक फ़ीरोज़ ख़ाँ नून; सेठ अब्दुल्ला हाँरू, डॉ० ज़ियाउद्दीन अहमद, श्री० अब्दुल अज़ीज़ और मौलाना हसरत मोहानी।

स्वागतकारिणी समिति की सभानेत्री बेगम मुहम्मद-अली ने अपने भाषण में कहा कि "यदि आप लोग मेरे पति के बताए हुए मार्ग पर चलेंगे, तो आप निश्चय स्वतन्त्रता प्राप्त करेंगे।"

सभापति मौलाना शौकतअली ने अपने भाषण में, हिन्दू-मुसलमानों के सम्बन्ध में कहते हुए कहा कि "गत कई वर्षों से इन दोनों जातियों ने भारत में अशान्ति फैला रक्खी है। यदि शीघ्र ही समझौता न हुआ, तो गृह-युद्ध का उठ खड़ा होना सम्भव है। ऐसी दशा में पूर्ण स्वराज्य तो दूर रहे, अधूरा स्वराज्य भी हमें नहीं मिल सकता।" आगे आपने कहा कि "भारत की अधिकांश मुसलमान जनता तथा अपने मुसलमान सहयोगियों के लाख आपत्ति पर भी, महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ ही दिया। मुसलमानों से उन्होंने सलाह भी नहीं पूछी। यदि हम लोगों की सलाह मान ली गई होती, और हिन्दू-मुसलमानों के बीच समझौता कर लिया गया होता तो आज भारत में ये साम्प्रदायिक झगड़े न उठ खड़े होते, और स्वराज्य की ओर भी हमें अधिक सफलता मिली होती।" फिर आपने मुस्लिम अधिकारों के सम्बन्ध में फ़र्माया कि "इन अधिकारों की एक सूची १९२९ की अखिल भारतीय मुस्लिम परिषद में तैयार की गई थी। मुस्लिम लीग ने भी पीछे इसे स्वीकार कर लिया था। यही सूची जिन्ना की १४ शर्तों के नाम से पुकारी जाती है। हम उन्हें छोड़ने को तैयार नहीं हैं। मृत्यु के पूर्व मौलाना मुहम्मद अली ने भी हिन्दू-मुस्लिम समस्या के सम्बन्ध में एक लेख तैयार किया था, जिससे दोनों दलों के लोगों को सन्तोष हो सकता है।" "हम मुसलमानों ने बिना किसी बाहरी दबाव के १९२७ के मार्च महीने में अपने चिर-वाञ्छित पृथक् निर्वाचन को छोड़ कर सम्मिलित निर्वाचन स्वीकार करा लिया था, और मुसलमानों को भी इस पर सहमत करने में हम सफल हुए थे; किन्तु हमारे हिन्दू सहयोगियों ने मद्रास कॉङ्ग्रेस के प्रस्ताव को नामञ्ज़ूर कर, वास्तव में झगड़े का बीज बो दिया। आज मुसलमानों को इसके लिए राज़ी करना असम्भव है। अब हमें हिन्दुओं में भाव-परिवर्तन की प्रतीक्षा करना है।"

परिषद में अन्य कई प्रस्तावों के अतिरिक्त हिन्दू-मुसलिम दङ्गे के सम्बन्ध में निम्न लिखित प्रस्ताव उपस्थित किया गया, जो सर्व-सम्मति से पास हो गया :—

"यह परिषद हिन्दुओं की उद्दण्डता पर शोक प्रकट करती है, जिसकी वजह से बनारस, आगरा, कानपुर, मिर्ज़ापूर आदि स्थानों में दङ्गे हो गए और जिसमें निर्दोष और निःशस्त्र मुसलमान मारे गए तथा मुसलमान औरतों और बच्चों की भी हत्याएँ की गईं।

"इस परिषद को इस बात का पूरा विश्वास है कि कॉङ्ग्रेस सत्याग्रहियों की अहिंसा-प्रवृत्ति केवल एक पाखण्ड है। वास्तव में यह एक निन्दनीय राजनैतिक चाल है, जो एक शक्तिशाली साम्राज्य के सामने चली गई है।

"इस परिषद का यह विश्वास है कि हिन्दुओं का वर्तमान भाव अवश्य ही भारत में गृह-युद्ध उत्पन्न कर देगा। यह परिषद सरकार को चेतावनी देती है कि यदि वह ज़रा भी ग़ाफ़िल रहेगी तो इस अभागे देश का सर्वनाश हो जायगा।"

श्री० ज़हूर अहमद ने इस प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए कहा—"मुसलमान कॉङ्ग्रेस से दब कर रहें या नहीं, यही प्रश्न इस समय हमारे सामने है। यदि सरकार मुसलमानों की रक्षा नहीं कर सकती है, तो साफ़-साफ़ कह दे, और जब मुसलमान अपनी रक्षा के लिए हथियार ग्रहण करें, उस समय उसे उन पर गोलियों की वर्षा नहीं करनी चाहिए।" इसके बाद वक्ता ने महात्मा गाँधी के एक वक्तव्य का उल्लेख किया, जिसमें उन्होंने कहा था कि एक दिन भारत में गृह-युद्ध होगा, और तब तक जारी रहेगा, जब तक कि दोनों में से एक का नाश न हो जाय। वक्ता ने कहा कि "हमारी शक्ति की परीक्षा आज ही क्यों न की जाय, और उसीके निर्णय के अनुसार कार्य किया जाय?" इस पर बड़े ज़ोर से "अल्लाहो अकबर" की ध्वनि हुई। इसके बाद वक्ता ने कहा कि मुसलमानों के प्रति सरकार की सहानुभूति न होने का एक मात्र कारण यह है कि सरकार को मुसलमानों की शक्ति का परिचय नहीं मिला है।

> **जब एक प्रेस-प्रतिनिधि ने महात्मा गाँधी को श्री० ज़हूरअहमद का वह भाषण दिखाया, जिसमें उन्होंने कहा है कि "गाँधी जी ने कहा है कि देश में एक गृह-युद्ध होगा, जिसमें दोनों जातियों में से किसी एक का नाश होगा।" तो महात्मा जी ने कहा कि "मैंने जो कुछ कहा है, उसका इससे बढ़ कर दुष्टतापूर्ण अर्थ दूसरा नहीं हो सकता।"**

मौलाना अब्दुलमजीद बदाउनी ने प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—"कानपुर के वे शहीद धन्य हैं, जिन्होंने मुसलमानों के हृदय से मृत्यु के भय को भगा दिया है।"

श्री० फ़तहमुहम्मद ने कहा कि 'गाँधी जी की जय' का वास्तविक अर्थ "मुसलमानों का क्षय" है।

बम्बई के हाजी अलीमुहम्मद ने कहा कि बम्बई के मुसलमानों ने वहाँ के हिन्दुओं को ऐसा सबक़ सिखाया है कि वे दङ्गा करने का नाम भी नहीं लेंगे।

अन्त में मौलाना शौकतअली ने भाषणों के उत्तेजक भावों की निन्दा करते हुए कहा कि मुसलमान मिल कर कार्य करें, किन्तु प्रतिहिंसा उनका उद्देश्य नहीं होना चाहिए।

मुस्लिम नेशनलिस्ट पार्टी के सेक्रेटरी श्री० रफ़ी-अहमद किदवई ने निम्न-लिखित सूचना प्रकाशित की है :—

"गत २९वीं मार्च को कॉङ्ग्रेस के पण्डाल में नेशनलिस्ट मुस्लिम पार्टी की एक सभा हुई थी, जिसमें निम्न लिखित सज्जन उपस्थित थे :—मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद, डॉ० अन्सारी, ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और मिस सोफ़िया सोमजी। मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद ने अपनी वक्तृता में पञ्जाब, बङ्गाल, बम्बई और सीमाप्रान्त के मुसलमानों को राष्ट्रीय संग्राम में उचित भाग लेने के लिए बधाई दी। उन्होंने कहा कि यह बड़े सन्तोष की बात है कि दलबन्दी हो जाने पर भी, मुसलमानों के एक बड़े हिस्से ने इस आन्दोलन में भाग लिया है।

"डॉ० अन्सारी ने, साम्प्रदायिक झगड़ों को सुलझाने के लिए किए गए कार्यों का उल्लेख किया।

"सभा ने नेशनलिस्ट मुसलमानों की एक परिषद लखनऊ में करने का विचार किया।

"नेशनलिस्ट मुसलमानों ने दिल्ली में होने वाली अखिल भारतीय मुस्लिम परिषद में अपना प्रतिनिधि न भेजने का निश्चय किया है। तदनुसार किसी राष्ट्रवादी मुसलमान ने उसमें भाग नहीं लिया।"

* * *

(५वें पृष्ठ का शेषांश)

मेरा विश्वास है कि मैं आत्म-विकास के लिए ज़ोर देकर सारी जाति को विपत्ति में नहीं फँसा रहा हूँ, क्योंकि आत्म-विकास और राष्ट्रीय-विकास में घना सम्बन्ध है। कोई भी जाति, व्यक्ति के बिना, जिससे वह बनी है, आगे नहीं बढ़ सकती, और इसी प्रकार, जाति की प्रगति पर बिना प्रभाव डाले, कोई व्यक्ति भी आगे नहीं बढ़ सकता।

अन्तिम दोष मुझ पर बिना विचारे लगाया गया है। मैंने अपना कार्य दक्षिण अफ़्रिका से आरम्भ किया था, और वे कार्य दलितों की ओर से किए गए थे। दलितों को इससे लाभ पहुँचा। फिर हमें, चम्पारन, खेड़ा और अहमदाबाद में भी सफलता मिली। बोरसद और बारडोली के सत्याग्रह में किसानों को बहुत सफलता मिली है। जाति पर इस प्रकार की परीक्षा का क्या फल होता है, यह अभी नहीं कहा जा सकता।

जनता में जागृति

इन परीक्षाओं का ही प्रभाव है, कि जनता में आज इतनी जागृति फैली हुई है। मैं इससे अपनी प्रशंसा नहीं करता, मैं तो ईश्वर के हाथों का केवल एक यन्त्र हूँ। वास्तव में सत्य और अहिंसा की शक्ति ने ही ऐसा कमाल किया है। यदि हम लोगों ने पूर्ण स्वराज के लिए सत्याग्रह की घोषणा की थी, तो इसी महान उद्देश्य से हम गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में भी जा रहे हैं। यह सम्भव है कि, हमारा उद्देश्य सफल न हो, किन्तु यदि हम सरकार के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दें, तो यह भी हमारी भूल होगी। यदि हम इस समय का उचित उपयोग करें, जहाँ तक सम्भव हो, समझौते की शर्तों का उचित प्रतिपालन करें, विदेशी वस्त्र और मादक द्रव्यों का पूर्ण-रूप से बहिष्कार कर दें; और यदि हम खादी का पूर्ण-प्रचार कर दें, तो गोलमेज़ परिषद में उद्देश्य न सिद्ध होने पर भी हम अपने को युद्ध के लिए विशेष रूप से सुसज्जित पाएँगे। हम लोग कदापि यह विश्वास न रक्खें, कि समझौता हो जाने से ही हमारे उद्देश्य की सिद्धि हो गई है।

* * *

क्या मुसलमान वास्तव में राष्ट्रीयता के विरोधी हैं?

मुस्लिम परिषद् के सम्बन्ध में डॉ० आलम का वक्तव्य

"दिल्ली की मुस्लिम परिषद एक तमाशा थी"

"मुस्लिम जनता संयुक्त और स्वतन्त्र निर्वाचन चाहती है"

डॉ० मुहम्मद आलम ने, दिल्ली की मुस्लिम-कॉन्फ्रेन्स के सम्बन्ध में, फ्री प्रेस के प्रतिनिधि को अपना निम्न-लिखित वक्तव्य दिया है :—

"मैं परिषद में भाग लेने के लिए दिल्ली नहीं गया था, बल्कि मैं यह देखने के लिए गया था कि साम्प्रदायिक समझौते के सम्बन्ध में कुछ उन्नति हुई है या नहीं। इस परिषद को सभी दल के मुसलमानों की परिषद कहना उचित नहीं है, क्योंकि वास्तव में इसका सम्बन्ध मुसलमानों के एक विशेष गुट्ट से है, जिनमें अधिकांश केवल मनोरञ्जन के लिए राजनीति में टाँग अड़ाते हैं। इस परिषद् का राष्ट्रीय मुस्लिम दल जमायत-उल-उल्मा और सीमा-प्रान्त के नेताओं ने बहिष्कार किया है। वे इस परिषद् के सङ्गठनकर्ताओं के मत का विरोध करते हैं। इस परिषद में अनावश्यक बातों पर विचार किया गया है। जो लोग इसके मतों का समर्थन नहीं करते हैं, उन लोगों ने इसमें भाग न लेकर अच्छा ही किया है, क्योंकि इस परिषद का उद्देश्य निश्चित था और मतभेद के लिए यहाँ स्थान नहीं था। कुछ सदस्यों के विचार भिन्न थे, पर परिषद् का उद्देश्य तो सम्मिलित माँग पेश करना था, इसलिए कहा जाता है कि उन सदस्यों से विचार-परिवर्तन करने के लिए कहा गया। वास्तव में वह परिषद् एक तमाशा थी।

संयुक्त निर्वाचन

"मेरा विश्वास है कि वे सभी मुसलमान, जिन्होंने भारत के स्वातन्त्र्य युद्ध में किसी प्रकार भी भाग लिया है, इस विषय में एकमत हैं कि साम्प्रदायिक प्रश्नों पर कोई भी समझौता उन्हें तब तक मान्य न होगा, जब तक कि वह संयुक्त और स्वतन्त्र निर्वाचन के आधार पर न किया गया हो। पृथक निर्वाचन को वे राष्ट्रीय और साम्प्रदायिक दोनों हितों के लिए हानिप्रद समझते हैं। यदि सभी हिन्दू पृथक निर्वाचन के लिए सहमत भी हो जायँ तो भी, व्यक्तिगत रूप से, मैं इसे स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूँ। केवल मैं ही ऐसा नहीं चाहता, मेरे अनेक मित्र भी ऐसा ही चाहते हैं। मेरा विचार है कि संयुक्त निर्वाचन, कमज़ोर दल वालों का अस्त्र है। इसलिए मुसलमानों को अपने साम्प्रदायिक अधिकारों की रक्षा के लिए संयुक्त निर्वाचन की आवश्यकता समझनी चाहिए। कुछ लोगों का विचार है कि संयुक्त निर्वाचन कमज़ोर दल के लिए हानिप्रद है। किन्तु वास्तव में सिद्धान्त के अनुसार संयुक्त निर्वाचन से ही कमज़ोर दल का हित-साधन हो सकता है। यदि इस सम्बन्ध में वादविवाद खड़ा होगा तो मैं तो संयुक्त निर्वाचन ही के लिए लड़ूँगा। हिन्दू-महासभा पृथक निर्वाचन के लिए भले ही सम्मत हो जाय, मैं सम्मत नहीं हो सकता। एक दिन आएगा, जब हिन्दू पृथक निर्वाचन के लिए प्रयत्न करेंगे। और मुसलमान उनका विरोध करेंगे। आज यह बात असत्य भले ही जान पड़े, किन्तु किसी दिन सत्य सिद्ध होगी। सिन्ध का एक अलग प्रान्त बनाया जाना इसी ढङ्ग का एक उदाहरण है। एक दिन मुसलमानों ने इसका विरोध किया था, और हिन्दू इसके लिए लड़ते थे, किन्तु आज बात बिल्कुल उल्टी है।

पञ्जाब

"पृथक निर्वाचन, विशेषकर पञ्जाब के लिए बहुत ही हानिकर है। हमें किसी प्रकार भी इसके लिए तैयार नहीं होना चाहिए। दिल्ली-परिषद में पञ्जाब की ओर से जो लोग गए थे, उनमें से बहुतों ने इस बात का समर्थन किया था। मुस्लिम समाज का अधिकांश भाग राष्ट्रीय दल का अनुयायी है। इसका प्रमाण यह है कि गत सत्याग्रह आन्दोलन में प्रायः १२ हज़ार मुसलमानों ने जेल स्वीकार किया था। इतना ही प्रमाण काफ़ी नहीं है, हम और भी प्रमाण दे सकते हैं कि सारा समाज हमारे साथ है। वास्तव में मुसलमान इन 'राजभक्तों' का, जिनका इस परिषद् में आधिक्य है, साथ नहीं दे रहे हैं। मेरा विश्वास है कि अगले कुछ महीनों में यह बात पूर्णतया सिद्ध हो जायगी, जब कि जनता को इस बात का पता चल जायगा कि किस प्रकार आपस में झगड़े कराए जाते हैं। पृथकरण की नीति का प्रभाव प्रत्यक्ष है। थोड़े ही दिनों में लोग इसका अनुभव करने लगेंगे। वास्तव में मुसलमान जनता संयुक्त और स्वतन्त्र निर्वाचन चाहती है, किन्तु उसकी आवाज़ बहुत धीमी है। यदि उनके वास्तविक नेतागण उनकी आवाज़ को अधिक व्यक्त करें, तो पृथक निर्वाचन चाहने वालों को यह जान कर आश्चर्य होगा कि मुस्लिम जनता संयुक्त निर्वाचन के ही पक्ष में है। वास्तव में, व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से ही कुछ लोग, संयुक्त निर्वाचन का विरोध करते हैं।"

जमायत-उल-उलेमा में मौलाना आज़ाद का भाषण

"पृथक निर्वाचन की माँग मुसलमानों की कमज़ोरी है"

"मज़हब की दुहाई देना निन्दनीय है"

मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद ने कराची में होने वाले जमायत-उल-उलेमा के १० वें अधिवेशन में मुसलमानों की नीति के सम्बन्ध में एक प्रभावशाली भाषण दिया है। राजनीति से मुसलमानों का सम्बन्ध बतलाते हुए आप कहते हैं कि १२ वर्ष पहले, मुसलमानों के लिए 'राजनीति' एक अपवित्र पदार्थ थी। इसीलिए बहुत समय तक वे कॉङ्ग्रेस से अलग रहे। इस प्रकार मुसलमानों ने स्वयं अपनी राजनैतिक हत्या कर ली थी।

ख़िलाफ़त आन्दोलन

जब ख़िलाफ़त आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ तो मुसलमान इस आन्दोलन में कूद पड़े। किन्तु मुसलमानों को यह याद रखना चाहिए कि ख़िलाफ़त, एक धार्मिक समस्या थी, और इसके लिए त्याग कर, उन्होंने न तो हिन्दुओं की ही कुछ सहायता की और न देश के प्रति ही अपने कर्तव्य का पालन किया। इसके विपरीत, उन्हें हिन्दुओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए, क्योंकि उक्त आन्दोलन में हिन्दुओं ने उनका साथ दिया था। हिन्दुओं ने जब कभी कोई आन्दोलन शुरू किया, मुसलमान दूर हट कर ताकते रहे और जब फल प्राप्त करने का समय आया तो वे सबसे बड़ा भाग लेने के लिए पहुँच गए। क्या मुसलमानों के लिए यह लज्जा की बात नहीं है? क्या देश के प्रति अपने त्याग का उत्तरदायित्व इस प्रकार दूसरों के हिस्से छोड़ देना उनके लिए उचित है? जिस इस्लाम धर्म ने स्वतन्त्रता के लिए अनेक युद्ध किए हैं, क्या उसका भाव यही है? नहीं, इन सभी बातों से तो यह जान पड़ता है कि मुसलमानों ने आत्म-सम्मान खो दिया था, और उनके भीतर देशभक्ति का भाव नहीं रह गया था।

राष्ट्रीय आन्दोलन और मुसलमान

वर्तमान राष्ट्रीय आन्दोलन में मुसलमानों ने अपने गौरव की रक्षा की है। पञ्जाब, सीमा-प्रान्त, और बङ्गाल में तो वे बहुत आगे रहे हैं। किन्तु तो भी मुसलमानों का एक बहुत बड़ा भाग इस आन्दोलन से अलग रहा है। वे केवल अपने अधिकारों के लिए झगड़ा करते रहे हैं। मुझे अच्छी तरह याद है कि जिस समय मि० मॉन्टेगू भारत में आए थे, और कुछ सुधारों की योजना की गई थी, उसी समय, हैदराबाद के सय्यद बेलग्रामी ने, मुसलमानों की ओर से पृथक निर्वाचन की माँग पेश की थी। वास्तव में यह सब कार्रवाई शिमला से की गई थी, जहाँ स्वर्गीय नवाब मुश्नो-उल-मुल्क और सर आगा ख़ाँ, मि० मॉन्टेगू से सलाह-मशविरा कर रहे थे।

वास्तव में, पृथक निर्वाचन की माँग मुसलमानों की कमज़ोरी को प्रकट करती है। सरकार इस कमज़ोरी को समझती है। इसलिए वह इसका उपयोग करना चाहती है। इसलिए हमें सावधान हो जाना चाहिए।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

हिन्दू-मुस्लिम समस्या के सम्बन्ध में आपने कहा कि वर्तमान परिस्थिति में, देश के सामने यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है, जैसा कि गाँधी जी ने कहा है—"जब तक यह समस्या हल नहीं हो जाती है, तब तक, गोलमेज़ परिषद् में जाना और स्वराज्य के लिए प्रयत्न करना व्यर्थ है।"

किन्तु यह प्रश्न धार्मिक नहीं, आर्थिक है। उदाहरण-स्वरूप, बङ्गाल दो भागों में बँटा हुआ है, ज़मींदार और किसान। ज़मींदारों में अधिकांश हिन्दू और किसानों में अधिकांश मुसलमान हैं। यहाँ धर्म का कोई प्रश्न नहीं है। यहाँ तो प्रश्न यह है कि धनवानों से ग़रीबों की रक्षा की जाय। यहाँ धर्म, सभ्यता और प्रथा की दुहाई देना व्यर्थ है। जो लोग धर्म की दुहाई देते हैं, वे वास्तव में रोग के वास्तविक कारण को छिपाते हैं। बात असल यह है कि इस प्रकार के संरक्षण तो प्रत्येक शासन-विधान की प्राथमिक आवश्यकताएँ हैं। इनके लिए हो-हल्ला मचाना मूर्खता है।

कुमारी सोफ़िया ख़ातून का वक्तव्य

"स्वाधीनता-समर में भाग लेने वाले मुसलमान ही हज़रत के सच्चे अनुयायी हैं"

"मि० जिन्ना की १४ शर्तों पर अड़े रहना, वास्तव में भीख माँगना है"

कुमारी सोफ़िया ख़ातून अपनी यूरोप-यात्रा के सिलसिले में दक्षिण अफ़्रिका के केपटाउन नामक शहर को गई हैं। आपने वहाँ से एक वक्तव्य प्रकाशित किया है। वह नीचे दिया जाता है :—

"मुसलमानों ने जाति की स्वतन्त्रता के लिए इतना कम स्वार्थ-त्याग किया है कि उन्हें, साम्प्रदायिक अधिकारों के लिए दावा करने का कोई अधिकार नहीं है। मि० जिन्ना की १४ शर्तों का समर्थन किसी भी राष्ट्रीयतावादी मुसलमान ने नहीं किया है। जाति की स्वाधीनता के लिए हिन्दू और मुसलमान दोनों की सम्मिलित माँग ही अपेक्षणीय है। मुसलमानों की मानसिक वृत्ति बहुत हेय हो गई है। वे भिक्षा माँगने पर तुले हुए हैं। जिन्ना की १४ शर्तों पर अड़े रहना, उसी की बार-बार याचना करना, भिक्षा माँगना नहीं तो क्या है? हम योग्यता प्राप्त तो करना चाहते नहीं, किन्तु केवल मुसलमान होने की हैसियत से अधिकार प्राप्त करना चाहते हैं। मुसलमान शब्द का अर्थ भिक्षुक नहीं, बल्कि स्वाधीन है। जाति की स्वाधीनता के लिए कुछ सच्चे मुसलमानों ने जेल स्वीकार किया है। जब ये जाति के लिए क़ुर्बान करने वाले, हज़रत मुहम्मद के सच्चे अनुयायी कालकोठरी में कालयापन कर रहे थे, उस समय, १४ शर्तों की भीख माँगने वाले मुसलमान नई दिल्ली में आमोद-प्रमोद कर रहे थे और लाट साहब की सलामी बजा रहे थे। द्वैध शासन ने यह सिद्ध कर दिया है कि जाति का सुख वास्तव में कॉङ्ग्रेस ही है। किन्तु भला चोर भी धर्म की कथा सुनता है। स्वार्थवादी सम्प्रदाय में रहने की अपेक्षा तो इस जाति की मृत्यु ही अच्छी है। जिन लोगों में मनुष्यत्व का शेष भी नहीं रह गया है, मुसलमानों में वही लोग १४ शर्तों के बिना लोबी नहीं हटाना चाहते। ज़रा दक्षिण अफ़्रिका में आकर देखिए, हिन्दू मुसलमानों का स्वार्थ कितना अभिन्न है। पृथ्वी पर चारों ओर घूम कर देखिए, मुसलमान, कौन कहलाने के योग्य हैं। ईराक़ के होम सेक्रेटरी ने भगतसिंह की शोक-सभा में भाषण देते हुए कहा है कि, 'इस केपटाउन के भारतीय मुसलमानों में और किसी भी स्वाधीन देश के मुसलमानों में कोई अन्तर नहीं है। किन्तु भारतवर्ष में मुसलमानों का एक दल है, जो भिखमङ्गों की भाँति दूसरों के सामने हाथ पसारा करता है।"

* * *

सीमा-प्रान्त के गाँधी का भाषण

"कॉङ्ग्रेस, हमारे हज़रत की सब से प्यारी वस्तु, स्वतन्त्रता के लिए लड़ रही है।"

"मुसलमानों को इसका साथ देना चाहिए।"

गत ७वीं अप्रैल को सीमा-प्रान्त के गाँधी, ख़ाँ अब्दुल ग़फ़्फ़ार ने, दिल्ली की एक सार्वजनिक सभा में एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया है। अफ़ग़ानी आक्रमण का ज़िक्र करते हुए आपने कहा, कि यह अफ़वाह उन लोगों की फैलाई हुई है, जिन्हें सीमा-प्रान्त की शारीरिक शक्ति और भारत की मानसिक शक्ति की एकता फूटी आँखों भी नहीं सुहाती। महात्मा गाँधी, बर्मा, मद्रास आदि प्रान्तों में तो स्वतन्त्रतापूर्वक जा सकते हैं, किन्तु सीमा-प्रान्त जाने की आज्ञा उन्हें क्यों नहीं दी जाती? क्या सीमा-प्रान्त भारत के अन्तर्गत नहीं है?

साम्प्रदायिक दङ्गों के सम्बन्ध में आपने कहा, कि जो लोग यह चाहते हैं, कि हम (कॉङ्ग्रेसवादी) इस समय का अपनी शक्ति के सङ्गठन में उपयोग नहीं कर सकें, वे ही इन झगड़ों के लिए उत्तरदायी हैं। मस्जिद के सामने बाजा न बजाने का प्रश्न उपहासास्पद है। धर्म हमें घृणा नहीं, बल्कि प्रेम सिखाता है।

सीमा प्रान्तीय जातियों के प्रति सरकार की नीति के सम्बन्ध में आपने कहा कि सरकार इन्हें दबाने के लिए करोड़ों रुपए ख़र्च करती है, किन्तु यदि वे ही रुपए उनकी शिक्षा में ख़र्च किए जायँ, तो प्रेम और शान्ति के द्वारा उन्हें जीता जा सकता है।

कॉङ्ग्रेस और मुसलमान

कॉङ्ग्रेस के सम्बन्ध में आपने कहा—भारत में कॉङ्ग्रेस ही एक ऐसी संस्था है, जो ग़रीबों का पक्ष लेती है। हमारे हज़रत मुहम्मद को जो चीज़ सब से अधिक प्यारी थी, कॉङ्ग्रेस उसी के लिए लड़ती है। मुसलमानों को कॉङ्ग्रेस का साथ अवश्य देना चाहिए। पृथ्वी पर ऐसी कोई शक्ति नहीं है, जो ३५ करोड़ जनता की इच्छा-शक्ति को रोक सके। एक बार स्वातन्त्र्य-युद्ध में अग्रसर हो चुकने पर, कोई वस्तु हमारे मार्ग में बाधा नहीं पहुँचा सकती। अफ़ग़ानों को हिन्दू-मुस्लिम या सिक्ख के झगड़ों से कोई सम्बन्ध नहीं है।

* * *

"पृथक निर्वाचन से मुसलमानों को कोई लाभ नहीं है।"

अखिल भारतीय शिया-कॉन्फ़्रेन्स के सभापति का भाषण

लखनऊ में होने वाली अखिल भारतीय शिया-परिषद के सभापति राजा नवाबअली ने परिषद में भाषण देते हुए कहा है कि देश की स्वाधीनता के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता की भारी आवश्यकता है। दोनों पक्ष के जवाबदेह मनुष्यों को इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। इस साम्प्रदायिक मामले का निपटारा, ऊपरी दिल से नहीं, बल्कि भीतरी दिल से होना चाहिए। मुसलमानों के सम्बन्ध में आपने कहा है कि देश की उन्नति के लिए उन्हें हिन्दुओं का साथ देना चाहिए। सब से अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न, पृथक निर्वाचन के सम्बन्ध में आपने कहा कि "मुझे विश्वास है कि पृथक निर्वाचन से मुसलमानों को कोई लाभ नहीं होगा। यदि मुसलमान लोग इस बात पर विचार करें तो उन्हें साफ़ मालूम हो जायगा कि, पृथक निर्वाचन के लिए प्रयत्न कर, वे अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मार रहे हैं। परिस्थिति पर विचार करके ही यह परिषद संयुक्त निर्वाचन के लिए ज़ोर देती है। दिल्ली की मुस्लिम परिषद में जो प्रस्ताव पास किया गया है कि जब तक १४ शर्तें मञ्ज़ूर न की जाएँगी, तब तक मुसलमान देश की उन्नति के लिए हाथ न बँटा सकेंगे, उसकी ओर ध्यान आकर्षित करते हमें अपार दुःख होता है। यह प्रस्ताव साफ़ शब्दों में, गोलमेज़ परिषद के सामने की गई मुस्लिम नेताओं की राष्ट्रीय माँग का विरोध करता है।"

* * *

"मौलाना शौकतअली के भाषणों से केवल गुण्डापन ही फैल सकता है!"

मि० शेरवानी के विचार

मौ० शौकतअली के भाषण और वक्तव्य के सम्बन्ध में पूछने पर मि० टी० ए० के० शेरवानी ने 'लीडर' के सम्वाददाता से कहा है कि "मौलाना शौकतअली के भाषणों और वक्तव्यों को पढ़ कर मुझे अपार दुःख हुआ है। इस प्रकार के भाषणों से गुण्डापन का ही प्रचार हो सकता है। वास्तव में इससे मुसलमानों की हानि ही होगी। राष्ट्रवादी मुसलमानों को इन भाषणों पर ध्यान नहीं देना चाहिए। उन्हें उचित है कि वे अपने निर्धारित मार्ग पर ही अग्रसर हों। मुसलमानों को अब धोखा नहीं दिया जा सकता। मुसलमान अब राष्ट्रवाद की ओर झुक रहे हैं। मैं मौलाना साहब से अनुरोध करता हूँ कि वे अपने अपशब्दों को प्रमाणित करने की चेष्टा करें। अहिंसा के अवतार महात्मा गाँधी को चैलेञ्ज करने के पहले, मौलाना साहब यदि स्वयं अपनी कमज़ोरियों और बेवक़ूफ़ियों पर विचार कर लें तो अच्छा हो।"

—गत १२वीं अप्रैल को, आज़ाद-मैदान में एक सर्वसाधारण सभा में भाषण देते हुए, मि० के० एफ़० नरीमैन ने, मौलाना शौकतअली के सम्बन्ध में कहा है कि "मैं मौलाना शौकतअली की परवाह नहीं करता। वे अपने विचारों को बराबर बदलते रहते हैं। न मालूम आगे उनके विचार क्या होंगे। इस प्रकार के डाँवाडोल विचार वाले लोग, शिक्षितों पर अपना प्रभाव नहीं डाल सकते।"

* * *

सम्प्रदायवादियों के मुँह पर चपत

सय्यद अब्दुल्ला ब्रेलवी का भाषण

बम्बई का १४वीं अप्रैल का समाचार है, कि राष्ट्रवादी मुसलमानों की एक सभा में भाषण देते हुए 'बॉम्बे-क्रॉनिकल' के यशस्वी सम्पादक सय्यद अब्दुल्ला ब्रेलवी ने कहा है कि "हम राष्ट्रवादी मुसलमानों ने, संयुक्त निर्वाचन के पक्ष में अपना पक्का इरादा कर लिया है। भारत के भावी शासन-विधान में हमें संयुक्त निर्वाचन ही मिलना चाहिए, और इसके लिए हम महात्मा गाँधी से भी लड़ेंगे। हमारा विश्वास है कि यदि पृथक निर्वाचन मञ्ज़ूर हो गया, तो दोनों दल के सम्प्रदायवादी झगड़े उपस्थित करेंगे, और आज़ादी का मज़ा ग़रीबों को नहीं, अमीरों को मिलेगा। हम मुसलमान भारत की आज़ादी के लिए युद्ध करने में किसी से कम नहीं हैं, और यह हमारा निश्चय है कि हम तब तक भारत की आज़ादी के लिए लड़ेंगे, जब तक कि कराची कॉङ्ग्रेस की सभी शर्तें मञ्ज़ूर न कर ली जायँ। जिन लोगों ने स्वातन्त्र्य युद्ध में भाग नहीं लिया था, वे ही साम्प्रदायिक झगड़ों की जड़ हैं, और उनकी ये हरकतें राष्ट्रवादी मुसलमानों के लिए अपमानजनक हैं। दिल्ली की कॉन्फ़्रेन्स में, वास्तव में मुसलमानों का कोई भी सच्चा प्रतिनिधि नहीं गया था। गत आन्दोलन में भाग लेने वाला एक मुसलमान भी उसमें मौजूद नहीं था। ग़रीबों को कभी उन लोगों के फन्दे में नहीं पड़ना चाहिए, जो लोग उन्हें सम्प्रदाय के नाम पर ठगते हैं, बल्कि उन्हें राष्ट्रवादी मुसलमानों का साथ देना चाहिए।"

* * *

१६ अप्रैल, सन् १९३१

देश का गलित कोढ़

बीसवीं सदी के इस मध्याह्नकाल में—जबकि पाश्चात्य देशवासी दिनों-दिन अपना क्षेत्र विस्तृत करने की चिन्ता में लगे हैं; अपने अतुल वैभव से सन्तुष्ट न होकर, अन्य निकटवर्ती देशों को हड़प जाने की नित्य नई तरकीबें सोचने में लीन हैं, जबकि बीसवीं सदी का संसार बहुत तीव्र गति से विज्ञान और कला के पथ में अग्रसर हो रहा है; जब कि पाश्चात्य देशवासी अपने हवाई बेड़ों का सङ्गठन करके केवल ४८ घण्टों में इङ्गलैण्ड से भारत पहुँचने की स्कीमें तैयार कर रहे हैं, जबकि छोटे से छोटे राष्ट्र अपने देशवासियों को अधिक से अधिक वैभव, सुख और शान्ति पहुँचाने की चेष्टा में रत हैं—ऐसे उन्नति और विकास के इस युग में अभागे भारत के ३१ करोड़ (नई मनुष्य-गणना के अनुसार ३५ करोड़) निवासी, हिन्दू-मुस्लिम के उस घृणित समस्या को सुलझाने का प्रयत्न कर रहे हैं, जिसमें यह निश्चय करना है, कि बाजा मस्जिद के सामने बजे या उसके पीछे ! 'मग़रिब' के पहिले बाजा मस्जिद के सामने बजाया जा सकता है या उसके बाद !! गोकुशी आम सड़कों पर क़ानूनन हो सकती है या लुक-छिप कर !!! मन्दिर में केवल शङ्ख बजाया जाय या घड़ियाल भी साथ बजाए जा सकते हैं !!!

जिन उदाहरणों की चर्चा ऊपर की गई है, निस्सन्देह वे साधारण, अतएव उपेक्षणीय हैं, किन्तु इन साधारण घटनाओं के अन्तराल में देशवासियों की जो दूषित मनोवृत्ति छिपी हुई है, और जो ज़रा सा ठेस लगते ही हिन्दू-मुसलमानों के भीषण दङ्गों के रूप में हमारे सम्मुख प्रकट हो जाती है—जबकि देश का मनुष्यत्व पशुत्व में परिणत हो जाता है—तो उस घृणित मनोवृत्ति की उपेक्षा राजनीतिक दृष्टि से नहीं की जा सकती। देश के वक्षस्थल पर हाल ही में अनुष्ठित होने वाले मिर्ज़ापुर, बनारस, आगरा तथा कानपुर आदि के भीषण दङ्गे हमारी आँखों में उँगली डाल कर उनके कारणों पर विचार करने को हमें बाध्य कर रहे हैं। आए-दिन के होने वाले इन भीषण उपद्रवों के अन्तराल में छिपे हुए कारणों पर समय-समय पर विचार करते रहना हमारा भी एक दुखद-कर्तव्य रहा है और अधिक से अधिक चिन्तन करने पर जो निष्कर्ष हम निकाल सके हैं, उसकी चर्चा करना ही इस छोटे से लेख का उद्देश्य है। अस्तु,

हमें सब से पहिले उन कारणों पर विचार करना है, जिनके कारण प्रत्येक राष्ट्रीय आन्दोलन के बाद देश का वातावरण आज की भाँति कलुषित और हिंसापूर्ण हो जाता है ? आख़िर वह कौन सा ऐसा रहस्यपूर्ण कारण था, जिसने सन् १९२१ के सत्याग्रह आन्दोलन के विफल होते ही देश के वातावरण को आज ही की भाँति कलुषित एवं हिंसापूर्ण बना दिया था ? इस प्रश्न का उत्तर ही इन जातीय विभेदों और वैमनस्य का कारण सिद्ध हो सकता है और इसी प्रश्न पर हमें गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए।

यदि संसार की समस्त जातियों के उत्थान पर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार किया जाय, तो पता चलेगा; कि किसी भी देश में, किसी भी काल में और किसी भी जाति में विभीषणों की, जयचन्दों और अमीचन्दों की तथा मीर-जाफ़रों की कमी नहीं रहती। संसार के किसी भी उन्नतशील देश को उदाहरण के तौर पर ले लीजिए, हम आपको इन 'मीर जाफ़रों' के नाम गिना सकते हैं—जो अपना पेट पालने के लिए, अपना नेतृत्व क़ायम रखने के लिए तथा अपना बड़प्पन जताने के लिए—थोड़े से चाँदी के टुकड़ों पर अपना शरीर और अपनी आत्मा ही नहीं, अपना वह देश तक बेचने को तैयार हो जाते हैं, जिसकी मिट्टी और पानी से उनके शरीर की रचना हुई है ! इस प्रकार के मानव जाति के कलङ्क यदि भारतीय स्वतन्त्रता के आन्दोलन में रोड़े अटकाते हों, तो इसमें कौन सा आश्चर्य है ?

हमारे दुर्भाग्य से पण्डिताई, पुरोहिताई और महन्ती की भाँति नेतागिरी भी आज लोगों का पेशा और जीवन-यापन का साधन हो गया है। एक-दो नहीं, हम कोड़ियों ऐसे स्वयं-निर्मित नेताओं के नाम गिना सकते हैं, जिनके लिए मुट्ठी भर अन्न का ठिकाना नहीं था, वकालत अथवा बैरिस्टरी का पेशा उन्हें नहीं फला और जो कौड़ी के तीन थे—जिनसे कोई बुद्धिमान व्यक्ति अधिक बात तक करने में अपनी ज़िल्लत समझता था—वे आज इसी नेतागीरी के कारण मालामाल हो गए हैं। जिनके बैठने के लिए ज़मीन नहीं मिलती थी, इसी नेतागीरी की बदौलत उनकी कोठियाँ खड़ी हो गई हैं—जिन्हें दूसरों की चाकरी नहीं मिलती थी, उनके आगे दर्जनों नौकर हाथ बाँधे खड़े रहते हैं ! जिस पेशे से बिना हाथ-पैर हिलाए—बिना किसी प्रकार का परिश्रम किए इतना अधिक धन, ऐश्वर्य और प्रतिष्ठा प्राप्त होती हो, भला कौन मूर्ख उसे ग्रहण करना स्वीकार न करेगा ?

दूसरी ओर देश के उन पूज्य नेताओं के त्याग और तपस्या का उदाहरण है, जिन्होंने अपना सर्वस्व देश के श्रीचरणों पर अर्पित कर दिया है और जो देश की गुलामी की ज़ञ्जीर को एक बार ही तोड़ कर फेंक देने के लिए कटिबद्ध हो गए हैं—वे जनता के प्रिय हैं, पूज्य हैं और हैं उनके सर्वस्व। इन नेताओं की दृष्टि में हिन्दू और मुसलमानों का प्रश्न एक समान प्रश्न है। वे जो कुछ कर रहे हैं, भारतवासियों के लिए कर रहे हैं; हिन्दुओं और मुसलमानों को लक्ष्य कर नहीं। इनका दृष्टि-कोण राष्ट्रीय भावों से ओतप्रोत है, वे साम्प्रदायिक झगड़ों को रोष, घृणा एवं ग्लानि की दृष्टि से देखते हैं। किन्तु पहिली श्रेणी के स्वयम्भू नेताओं का सारा नेतृत्व सीमित रहता है साम्प्रदायिकता के सङ्कीर्ण दायरे में। आज हमारे दुर्भाग्य से हमारा देश अविद्या और जहालत का केन्द्र है। यहाँ की अधिकांश जनता हमारे गौराङ्ग महाप्रभुओं की कृपा से इस सङ्घर्ष के महान युग से कोसों पीछे पड़ी है, अतएव इन साम्प्रदायिक नेताओं की पाँचों उँगलियाँ घी में होने का यह अन्यतम कारण है। वे अपने देशवासियों की इस मूर्खता का अधिक से अधिक लाभ उठा रहे हैं और देश में होने वाले इन सारे साम्प्रदायिक उपद्रवों के लिए ये ही 'नेता' ज़िम्मेदार है ! जब तक इन स्वयम्भू नेताओं के विरुद्ध एक बहुत ज़बर्दस्त आन्दोलन उठा कर देशवासियों को इनके स्वार्थपूर्ण हथकण्डों से सचेत नहीं किया जायगा, तब तक इस समस्या का सुलझाया जाना सर्वथा असम्भव है। हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में शिक्षा का अधिक अभाव है, अतएव उनमें हठधर्मी का होना भी स्वाभाविक है और जिस जाति में अविद्या और हठधर्मी का सम्मिश्रण हो, उस जाति को मूर्ख बना कर अपना नेतृत्व क़ायम करना भी अपेक्षाकृत सहज है, ऐसी हालत में यदि मुस्लिम कठमुल्ले अपना उल्लू सहज ही में सीधा कर सकें, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ?

यदि सूक्ष्म दृष्टि से विगत राष्ट्रीय आन्दोलनों के इतिहास का निरीक्षण किया जावे तो पता चलता है, कि जब-जब देश में राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रादुर्भाव हुआ है, तब-तब राष्ट्रीयता के वेग में साम्प्रदायिक नेताओं का सर्वथा लोप हो गया है—केवल लोप ही नहीं, इनका अस्तित्व तक खटके में पड़ गया है; किन्तु जैसे ही आन्दोलन विफल अथवा स्थगित हुआ, वैसे ही मूर्ख देशवासियों पर इनका आधिपत्य जमता हुआ दिखाई देता है। दूर न जाकर, यदि सन् १९२१ के सत्याग्रह और ख़िलाफ़त आन्दोलन के इतिहास पर विचार किया जावे, तो हमारी इस धारणा का बहुत ही स्पष्ट प्रमाण मिल जाता है। पाठकों को स्मरण होगा सन्, १९१९-२१ में, जब कि सत्याग्रह आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था—इन साम्प्रदायिक विभेदों का देश में नामोनिशान तक नहीं था, किन्तु जैसे ही चौरीचौरा वाले हत्याकाण्ड के बाद महात्मा गाँधी ने अपने आन्दोलन को स्थगित किया, वैसे ही हिन्दू-मुसलमानों के उपद्रव प्रारम्भ हो गए थे और आज भी ठीक वही समस्या देश के सामने उपस्थित हुई है। पाठक देखेंगे मिर्ज़ापुर, आगरा, बनारस तथा कानपुर के सारे दङ्गे गाँधी-इर्विन समझौते के बाद ही हुए हैं और आज अनेक शहरों में दङ्गा हो जाने की पग-पग पर सम्भावना दिखाई दे रही है। इसका एकमात्र कारण यही प्रतीत होता है, कि देश के सामने आज जो कार्यक्रम उपस्थित है, उसमें साम्प्रदायिक नेताओं के लिए कोई भी स्थान नहीं है और उनके सामने प्रश्न है अपनी रोटियों का, अपने स्वार्थ का और अपने नेतृत्व का; सन् १९२१ के राष्ट्रीय आन्दोलन के विफल होते ही, "हिन्दू-सङ्गठन" तथा 'तबलीग़' और 'तनज़ीम' के विषैले आन्दोलनों का जन्म हुआ था और इन साम्प्रदायिक आन्दोलनों का नेतृत्व ग्रहण करने वाले वे ही "नेता' थे, जिनके लिए कॉङ्ग्रेस में कोई भी स्थान शेष नहीं रह गया था; किन्तु राष्ट्रीयता के इस प्रबल प्रवाह ने इन जातीय आन्दोलनों को पूरी तरह पनपने नहीं दिया। अतएव दिल मसोस कर इनमें से कुछ अधिक दूरदर्शी साम्प्रदायिक नेताओं ने तो राष्ट्रीय महासभा के चरणों पर अपना मस्तक रख दिया; किन्तु कुछ ऐसे भी नेता थे जिन्होंने अपने अनुचित दम्भ की रक्षा के लिए ऐसा नहीं किया और आज के सारे साम्प्रदायिक उपद्रवों के लिए ये ही मुट्ठी भर स्वयं-निर्मित नेता सर्वथा ज़िम्मेदार हैं और इनके विरुद्ध अगर आज देश की कोई शक्ति आवाज़ उठाने में समर्थ है, तो वह है राष्ट्रीयता की भावनाओं से सनी हुई उन्मत्त नवयुवकों की टोली। जब तक तरुण-भारत इस समस्या को हाथ में लेकर इन साम्प्रदायिक

'नेताओं' के मस्तक पर पाद-प्रहार न करेगा तब तक देश के वातावरण में किसी भी प्रकार का सुधार एक बार ही असम्भव है, अनिश्चित है और बालू में से तेल निकलने की आशा के समान मूर्खतापूर्ण है !!

इस सिलसिले में महात्मा गाँधी से भी हमें एक आवश्यक निवेदन करना है और वह यह, कि उन्हें व्यर्थ में हिन्दू-मुसलमानों की 'समस्या' को सुलझाने के प्रयत्न में अपनी शक्ति और समय का दुरुपयोग न करना चाहिए, बल्कि इसी समय और शक्ति को अशिक्षित देशवासियों को इन साम्प्रदायिक नेताओं के हथकण्डों से सचेत करने में लगाना चाहिए। हिन्दू-मुसलमानों के वैमनस्य का प्रश्न तो तब उपस्थित होता, जब कि देश के सारे मुसलमान एक ही विचार में रँगे होते! किन्तु यह बात नहीं है। हम देख रहे हैं देश के अधिकांश शिक्षित मुसलमान आज देश की स्वतन्त्रता के लिए अपना सर्वस्व निछावर करने को तैयार हैं और महात्मा गाँधी के नेतृत्व में कार्य भी कर रहे हैं। भारतीय मुसलमानों के प्रतिष्ठित नेताओं में से आज मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद, डॉक्टर अन्सारी, मौलाना कसूरी, डॉक्टर आलम, मौलाना ज़फ़र अली, मौलाना अताउल्लाशाह बुख़ारी, श्री० आसफ़ अली, श्री० शेरवानी, तथा सर अली और हसन इमाम आदि आदि अनेक गण्य-मान्य मुस्लिम नेता आज महात्मा गाँधी के कन्धे से कन्धा भिड़ा कर राष्ट्रोत्थान के इस महान् आन्दोलन में उनके सहायक हो रहे हैं। सीमा प्रान्त के 'गाँधी' ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ—जिनके अधीन सीमा प्रान्त के लगभग सारे पठान हैं—आज महात्मा जी की आज्ञा पर अपने जीवन तक की भेंट चढ़ाने का आश्वासन कॉङ्ग्रेस के खुले अधिवेशन में दे चुके हैं। आपने अपने दिल्ली और बम्बई के अभिभाषणों में खुले शब्दों में कहा है, कि वे और उनके सारे अनुयायी (ख़ुदाई-ख़िदमतगार) ही नहीं, सीमा प्रान्त के सारे पठान उस ओर होंगे, जिस ओर स्वतन्त्रता होगी। इस स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए यदि हिन्दू अधिक प्रयत्न करेंगे, तो वे सब उनका साथ देंगे, यदि सिक्ख करेंगे तो सिक्खों का साथ दिया जायगा और यदि स्वतन्त्रता के लिए मुसलमान युद्ध करेंगे तो वे मुसलमानों का साथ देंगे। मुसलमानों की विद्वत् परिषद (जमायतुल-उलेमा) आज राष्ट्रीयता की भावनाओं से ओत-प्रोत है; स्थान-स्थान पर राष्ट्रीय मुस्लिम दलों का निर्माण मुसलमान नेता स्वयं बड़े मनोयोग से कर रहे हैं, अखिल भारतवर्षीय शिया-मुस्लिम कॉन्फ़्रेन्स का दृष्टिकोण भी राष्ट्रीय विचारों का पोषक प्रतीत होता है। ऐसी हालत में हमारी तो यह निश्चित-धारणा है, कि हिन्दुओं की ओर से समझौता स्थापित करने के लिए जो भी उद्योग किए जायँगे, उनसे लाभ तो कुछ नहीं, किन्तु निर्धारित उद्देश्य-पूर्ति में वे घातक अवश्य सिद्ध होंगे। हमारा अध्ययन तो यह बतलाता है, कि "मर्ज़ बढ़ता गया, ज्यों-ज्यों दवा की" बालक यदि रोता हो तो उसे पेट भर कर रो लेने देना चाहिए। ज्यों-ज्यों आप उसे चुप कराने का प्रयत्न करेंगे, त्यों-त्यों वह और भी अधिक मचलने लगेगा। जो दृष्टान्त बालकों के सम्बन्ध में दिया गया है, आज के साम्प्रदायिक मुल्लाओं के लिए भी वही दृष्टान्त लागू है। इसका कारण भी स्पष्ट है, आज देश के शिक्षित और दूरदर्शी मुसलमान राष्ट्रीय आन्दोलन में देश के साथ हैं; जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, अतएव जब 'समझौते' का प्रश्न उपस्थित होता है, तो उन 'कट-मुल्लों' की विशेष पूछ होने लगती है, जिनका देश में कोई भी स्थान नहीं है और ऐसे साम्प्रदायिक नेताओं से इस सम्बन्ध में किसी भी प्रकार का परामर्श करना देश के इस कोढ़पूर्ण अङ्ग को सर्वथा अनुचित महत्व देना है। अपनी इस धारणा की पुष्टि में प्रमाण देने के लिए हमें दूर न जाना होगा। कराची कॉङ्ग्रेस के लिए प्रस्थान करने के पूर्व देहली में जिस दिन महात्मा गाँधी ने हिन्दू-मुस्लिम विषय पर एक व्याख्यान देते हुए अपने महात्मा-सुलभ-शब्दों में यह कह डाला कि "हिन्दू-मुसलमानों में एकता स्थापित करने के लिए मैं प्रत्येक मुसलमान के पास घुटनों के बल जाऊँगा और उससे इस सम्बन्ध में अपना हाथ बटाने की भिक्षा माँगूँगा।" उसी दिन से साम्प्रदायिक मुल्लाओं की बाछें खिल गई हैं और वे भी अपने को देश का एक अविच्छिन्न अङ्ग समझने और विष-वमन करने लगे हैं।

हम महात्मा गाँधी को सादर विश्वास दिलाना चाहते हैं, कि तरुण-भारत की दृष्टि में इन साम्प्रदायिक मुल्लाओं का कोई भी स्थान नहीं है और वह इस प्रकार के साम्प्रदायिक नेताओं को देश का गलित कोढ़ मात्र समझता है।

* * *

मदारी का बन्दर

इस वर्ष का ४थी और पाँचवीं अप्रैल का दिन भारतीय इतिहास का वह दुर्दिन समझा जायगा, जिस दिन मुट्ठी भर साम्प्रदायिक एवं श्री १००८ जगद्गुरु के शब्दों में "देहिपदपल्लवमुदारम" मुसलमानों द्वारा अङ्ग्रेज़ों की भारतीय राजधानी—दिल्ली में "अखिल भारतवर्षीय" मुस्लिम कॉन्फ़्रेन्स का अधिवेशन हुआ था। इस सभा की कार्यवाही और इसके द्वारा पास किए गए प्रस्तावों की जान-बूझ कर हमने अवहेलना की थी और इसी कारण 'भविष्य' के गताङ्क में हमने इन्हें प्रकाशित करना उचित नहीं समझा, पर चूँकि इस अङ्क में इस विषय पर हमें इन स्तम्भों में अपने विचार प्रकट करने थे और जब तक सारी घटनाएँ पाठकों के सामने न रक्खी जायँ, उन पर की गई टिप्पणी उनकी समझ में आसानी से न आती, इसलिए इस कॉन्फ़्रेन्स का संक्षिप्त विवरण पाठकों की जानकारी के लिए अन्यत्र दिया जाता है, जिससे इन मुल्ला-पन्थियों तथा "जी-हुज़ूरों" के हथकण्डे पाठकों की समझ में आ जावें। दूसरी ओर हम राष्ट्रीय विचार के पक्षपाती मुसलमान नेताओं तथा पत्रों के विचार भी उद्धृत कर रहे हैं, जिससे पाठकों को अपनी निजी धारणा निश्चित करने में सुविधा रहे और साथ ही उन्हें हमारे विचारों की सत्यता का प्रमाण भी मिल सके। अस्तु।

इस कॉन्फ़्रेन्स के सभापति की हैसियत से "बड़के भय्या" ने—जो किसी ज़माने में 'मुल्क की आज़ादी' के लिए बर्फ़ के समान घुले जाते थे—मुसलमानों की मङ्गल-कामना का ढोंग रचते हुए, जैसी पोच दलीलें पेश की हैं, उन पर जितनी भी दया प्रकट की जाय, थोड़ी है! जब कि साम्प्रदायिक मुल्लाओं द्वारा निर्मित इस परिषद का उद्देश्य ही देश की जाग्रत राष्ट्रीय भावनाओं का विरोध करना और महात्मा गाँधी तथा उनके अनुयायियों को गालियाँ देना मात्र था, तो इस परिषद में जो भी न कहा जाता, थोड़ा था। अस्तु।

इलाहाबाद के स्वनाम-धन्य साम्प्रदायिक नेता (जिनके हाथ में कहा जाता है, इलाहाबाद के कुञ्जड़े और क़स्साइयों का नेतृत्व है) श्री० ज़हूर अहमद साहब ने संयुक्त प्रान्त में होने वाले सारे साम्प्रदायिक उपद्रवों के लिए हिन्दुओं तथा कॉङ्ग्रेस एवं महात्मा गाँधी आदि राष्ट्रीय नेताओं को ज़िम्मेदार ठहराते हुए अपने जहालत से भरे हुए प्रस्ताव के समर्थन में फ़र्माया, कि महात्मा गाँधी बहुत दिनों से मुसलमानों के विरुद्ध अपनी चालें चल रहे हैं। उन्होंने (महात्मा गाँधी ने) यहाँ तक कह डाला है कि "यदि दशा शीघ्र न सुधारी गई, तो इस साम्प्रदायिक कलह में हिन्दू अथवा मुसलमानों का सर्वनाश निश्चित है—इत्यादि।" यद्यपि महात्मा गाँधी ने इसका विरोध करते हुए इसको हद दर्जे का गुण्डापन बतलाया है, किन्तु यहाँ तो प्रश्न था अपना उल्लू सीधा करने का; अतएव ज़हूर अहमद साहब ने फ़र्माया कि यदि महात्मा गाँधी का यह हौसला है, तो "मुसलमानों के लोहे की वे परीक्षा क्यों नहीं कर लेते?" महात्मा जी का अहिंसात्मक आन्दोलन ज़हूर अहमद साहब की दृष्टि में कोरा ढोंग है, इत्यादि, इत्यादि।

एक दूसरे मौलाना साहब ने फ़र्माया कि "महात्मा गाँधी की जय" बोलने का स्पष्ट अर्थ है "मुसलमानों की क्षय।"

एक तीसरे मौलाना साहब ने फ़र्माया कि "कानपुर के मुसलमानों ने मर कर मुसल्मानों के हृदयों से मृत्यु का भय निकाल दिया है और राहे-शहादत खोल दी है।"

बम्बई के एक कठमुल्ला ने तो कमाल की फ़राग़-दिली और बहादुराना इज़हार कर डाला। आपने फ़र्माया कि "हम बम्बई के मुसलमानों ने हिन्दुओं को बम्बई में ऐसा पाठ पढ़ा दिया है, जिसे यह कम्बख़्त आजीवन स्मरण रक्खेंगे।"

जब-जब इन मुल्लाओं द्वारा अपने इस प्रकार के उद्गार प्रगट किए गए, तब तब "अल्लाह हो अकबर" के नारे लगा कर उपस्थित मुसलमानों ने इन पर अपार हर्ष प्रकट किया—इसी प्रकार के अनेक अनर्गल प्रलाप परिषद में किए गए। सब से मज़ेदार बात तो यह थी कि सभा-भवन में एक भी व्यक्ति ने इन 'गर्मागर्म तक़रीरों' का विरोध नहीं किया—सारे प्रस्ताव 'सर्वसम्मति' से पास हो गए, पाठकों को हमें बतलाना न होगा, कि इस परिषद में सम्मिलित होने वाले कुछ ऐसे भी 'नेता' थे, जो समय-समय पर 'हिन्दू-मुस्लिम इत्तेहाद' के लिए वक्तव्य आदि निकाल कर अपने भोले देशवासियों की आँखों में धूल झोंका करते हैं। कुछ 'तक़रीरें' ऐसी भी हुई, जिनके द्वारा हिन्दुओं की हत्याएँ करने का खुला इशारा था, इसका एक उदाहरण ऊपर दिया भी गया है, किन्तु पाठकों को इस भ्रम में न पड़ना चाहिए, कि उनकी 'शान्ति और रक्षा' के पवित्र नाम को कलङ्कित करने वाली सरकार इन मुल्लाओं को गिरफ़्तार करेगी! यह स्वर्गीय खुदीराम बोस और स्वर्गीय चन्द्रशेखर 'आज़ाद' की जीवनियों का प्रकाशन थोड़े ही है, जिससे गवर्नमेण्ट का आसन क्रोध से प्रकम्पित हो उठेगा! यह "भारत में अङ्गरेज़ी राज्य" थोड़े ही है, जो ज़ब्त कर लिया जायगा! क्योंकि उसमें हिन्दू-मुसलमानों में स्थायी ऐक्य स्थापित करने का सफल प्रयत्न किया गया था। अस्तु।

हमें इन साम्प्रदायिक मुल्लाओं द्वारा प्रकट किए गए विषैले उद्गारों का उतना खेद नहीं है, जितना इस बात पर, कि आज देश के नवयुवकों में इतनी भी शक्ति नहीं है, कि वे इस प्रकार के कठमुल्लाओं के इन अनर्गल प्रलापों को प्रकट करना एक बार ही असम्भव कर सकें!

पाठक देखेंगे, "बड़के भय्या" ने सारा विष वमन किया है अपने "छोटके भय्या" स्वर्गीय मौलाना मोहम्मद अली की आड़ लेकर—उन्होंने केवल "छोटके भय्या" के मृत्यासन्न उद्गारों को इस कॉन्फ़्रेन्स में अपने भोले देशभाइयों के सामने अपनी तक़रीर के रूप में रक्खा है। स्वर्गवासी मौलाना मोहम्मद अली के जीवनकाल में मौलाना शौकतअली की कोई बात भी नहीं पूछता था, यह एक अप्रिय-सत्य है। भाई की मृत्यु के कारण 'नेतागीरी' की जो जगह ख़ाली हुई है, उसकी पूर्ति उनके लिए आवश्यक है और उनके इस रिक्त स्थान को हथियाने के लिए वे जो भी न करें, थोड़ा है। किन्तु इस सिलसिले में हम मौलाना शौकतअली साहब का ध्यान स्वर्गीय मौलाना मोहम्मद अली के उस व्याख्यान की ओर आकर्षित करना चाहते हैं, जो उन्होंने ३०वीं अक्टूबर सन् १९२७ को कलकत्ते में दिया था, उस व्याख्यान का कुछ महत्वपूर्ण अंश इस प्रकार है:—

"To-day we effected a revolutionary change. To-day we say to Mussalmans, you are free to kill cows, and we say to the Hindus you are free to play music before mosques. There is no longer the old competition of snatching some right or other from either community. There is no competition of force or fraud, but a healthy competition of love, kindness and consideration. I announce to-day in the Calcutta of Deshbandhu Das, that the Indian National Congress was never more Indian, national or greater than she is to-day. Following what she did in Bombay, she has to-day adopted a resolution which was a challenge to both Hindus and Mohamedans.

The challenge to the Hindus is that they are free to play music before any mosque at any time and no Mussalman is entitled to interfere with them and the only guard that has been placed over them is their own Hindu conscience. And we say to Mussalmans if you want to kill cows—which your religion does not enjoin but only permits—kill as many cows as you like. But if there is still a small voice in your heart, called the Muslim-Conscience, a sight that your blind eyes may not see but *Allah* sees, then defy that voice, defy that conscience and step from the side of *Allah*. The nobility of your religion—the nobility of your race is on trial to-day ! To-day the question is whether the Hindus are going to be more sparing or considerate or the Mussalmans. I am a Mussalman and I do not believe, what the Hindus believe, but if to *Param Brahma Mahadev* or *Ram* or *Allah* the shedding of cows blood is a sin, I tell you that the All India Congress Committee has earned a great reward from that *Allah* by saving so many cows; while cows were not free to be killed, more were killed. To-day when they are free, I challenge the Mussalmans to kill cows after this, if they can manage with goats instead. Every cow that will be saved, will be saved to the account of the All India Congress Committee. In the same way, it is a sin to disturb Mussalmans in their prayer in Mosques. I say the sin will not be committed now and reward for this will be the reward of the Congress. *From to-day you will see the dawn of a new era*—an era in which cows will be spared, not because you put restrictions, not because you put Sir Charles Tegart at the head of the procession, but because you put Hindu and Mussalman conscience at the head"

इन पंक्तियों का तात्पर्य यह है कि आज हम लोगों में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। आज हम लोग हिन्दू और मुसलमान, किसी भी जाति के पथ में कोई रुकावट उपस्थित नहीं कर रहे हैं। आज हम मुसलमानों से कहते हैं, तुम गोकुशी के लिए आज़ाद हो, और साथ ही हिन्दुओं से भी कहते हैं—तुम मस्जिदों के सामने बाजा बजाने के लिए स्वतन्त्र हो। अब पुरानी प्रतिस्पर्धा की कोई ऐसी बात नहीं है, कि एक जाति दूसरी जाति के अधिकारों को बलपूर्वक छीने। अब आपस में बल अथवा मक्कारी द्वारा नहीं, वरन् पारस्परिक प्रेम, दयालुता और न्याय में प्रतिस्पर्धा दिखाने का अवसर है। मैं आज देशबन्धु दास के कलकत्ते में यह बात घोषित करता हूँ, कि आज की अपेक्षा भारतीय कॉङ्ग्रेस कमिटी कभी भी अधिक राष्ट्रीय तथा महान् न थी। बम्बई वाली बैठक का अनुगमन करते हुए आज इसने एक ऐसा प्रस्ताव स्वीकृत किया है, जोकि हिन्दू और मुसलमान दोनों को चुनौती (Challenge) देने वाला है।

हिन्दुओं को इस बात का चैलेञ्ज है, कि वे किसी भी मस्जिद के सामने, किसी भी समय बाजा बजाने के लिए स्वतन्त्र हैं और किसी भी मुसलमान को उन्हें इस कार्य में बाधा देने का नैतिक अधिकार नहीं है। किन्तु उनके इस कार्य का उत्तरदायित्व उनके हिन्दुत्व और उनकी आत्मा पर है ! इसी प्रकार हम मुसलमानों से भी कहते हैं, कि यदि तुम गोकुशी करना चाहो—गोकुशी, जिसे करने को तुम्हारा मज़हब तुम्हें बाध्य नहीं करता, केवल जायज़ मात्र क़रार देता है, तो तुम जितनी गाएँ ज़िबह करना चाहो, कर सकते हो। लेकिन तुम्हारे दिलों में यदि कोई ऐसी आवाज़ उठे—वह आवाज़, जिसे इस्लामी हिदायत अथवा आत्मा की पुकार कहते हैं—जिसे तुम्हारी अन्धी आँखें नहीं देख सकतीं, लेकिन पाक-परवरदिगार देखता है—तो उस आवाज़ को, उस मज़हबी हिदायत को अपनी छाती से बाहर कर दो और ख़ुदा को अपने दिलों से निकाल दो ! आज तुम्हारे मज़हब का यक़ीन, तुम्हारी क़ौम का यक़ीन परीक्षा की कसौटी पर चढ़ा हुआ है। आज प्रश्न यह है, कि हिन्दू अधिक धर्मपरायण और सहिष्णु हैं या मुसलमान ज़्यादा मज़हबपरस्त और यक़ीन वाले हैं। मैं मुसलमान हूँ और मैं उन मज़हबी बातों में विश्वास नहीं करता, जिसमें हिन्दुओं का विश्वास है—लेकिन यदि परब्रह्म महादेव या राम अथवा अल्लाह के सामने गोकुशी करना गुनाह है, तो मैं आपसे यह कहता हूँ, कि अखिल भारतवर्षीय कॉङ्ग्रेस कमिटी ने इतनी गौओं की जानें बचा कर आज सब से अधिक सवाब कमाया है। जब गोकुशी करने की आज़ादी कॉङ्ग्रेस ने न दी थी, तो बहुत अधिक गौएँ ज़िबह होती थीं और आज, जब उसकी ओर से आज़ादी हो गई है, तो मैं मुसलमानों को आज चैलेञ्ज देता हूँ, कि यदि उनका उद्देश्य बकरों की क़ुर्बानी करने से ही सिद्ध न होता हो, तो वे अवश्य गोकुशी करें। प्रत्येक गाय, जो क़ुर्बानी से बचेगी, वह कॉङ्ग्रेस के हिसाब में बचेगी (अर्थात् इसका सारा श्रेय कॉङ्ग्रेस ही को होगा)। इसी तरह मुसलमानों को मस्जिद में नमाज़ पढ़ते समय अड़चनें पहुँचाना गुनाह है और मैं आज खुले शब्दों में कहता हूँ, कि भविष्य में यह पाप कदापि न किया जायगा और इसका पुण्य भी कॉङ्ग्रेस ही सञ्चित करेगी। आज एक नए युग का उदय हुआ है—उस युग का, जिसमें गाएँ ज़िबह होने से बचेंगी और नमाज़ ख़लल से बचेगी। इसलिए नहीं, कि इन कार्यों में आपने रुकावटें पैदा कर दी हैं, इसलिए भी नहीं कि सर चार्ल्स टेगार्ट (उस समय के कलकत्ता-पुलिस के कमिश्नर, जो हाल ही में विलायत चले गए हैं) जुलूस के आगे हैं, बल्कि इसलिए, कि हिन्दुओं और मुसलमानों के सिर पर उनके मज़हबों का क़र्ज़ लाद दिया गया है।"

मौलाना शौक़तअली साहब बार-बार इस बात को अपने व्याख्यानों में दोहराते फिरते हैं, कि यद्यपि स्वर्गीय मौलाना मोहम्मदअली उनकी गोद के खिलाए हुए थे, तथापि बहुत सी बातों में 'छोटके भय्या' आपके गुरु थे। क्या हम आशा करें कि "बड़के भय्या" स्वर्गीय मौलाना की इन पंक्तियों से शिक्षा ग्रहण करेंगे और अपने मुल्लापन की हरकतों से बाज़ आवेंगे ? हम "बड़के भय्या" और उनके अनुयायी, समय के कठ-मुल्लाओं से करबद्ध प्रार्थना करना चाहते हैं, कि अधमरी मुस्लिम जाति पर अब वे अधिक दया का प्रदर्शन करके सारी जाति के लिए क़ब्र न खोदें—स्वयं जिएँ और दूसरों को जीने दें ! हम उन्हें यह भी बतला देना चाहते हैं कि मुल्लापन का वह युग लद गया, जब वे मदारी की भाँति अपने बन्दरों को नचाया करते थे। बम्बई की ताज़ी घटना से उन्हें शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। जिस वेग से क्रान्ति की लहर आज भारत में हिलोरें ले रही है, वह इस मुल्लापन के निन्दनीय अवलम्ब को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देख सकती। अब भी अधिक विलम्ब नहीं हुआ है, यदि मौलाना साहब तथा उनके अनुयायी अपनी की हुई इन बेजा हरकतों का सचाई से प्रायश्चित्त करने का राष्ट्र को विश्वास दिला सकें, तो सम्भवतः वह उन्हें क्षमा कर दे, किन्तु यदि ऐसा न किया गया तो उनके लिए, उनके अनुयायियों के लिए तथा उस खूँटे के लिए भी, जिसके बल पर आज कठ-मुल्लाओं की सारी मण्डली उन्मत्त हो रही है—इसका परिणाम बहुत घातक सिद्ध हो सकता है।

अन्त में हम अपने उन भोले मुस्लिम भाइयों को भी सचेत कर देना चाहते हैं, जिनकी मूर्खता का ये लोग सरासर अनुचित लाभ उठा रहे हैं और उनकी सेवा की आड़ में उनके गलों पर छुरियाँ चला रहे हैं ! मदारी के डमरू की आवाज़ पर बन्दरों की भाँति नाचने से उन्हें साफ़ इन्कार कर देना चाहिए। इसी में उनका, उनके परिवार का और उनके देश का कल्याण है !

* * *

अज्ञात व्यक्तियों से—

विगत सप्ताह सारे देशवासियों के इतना अधिक विरोध तथा अनुनय-विनय करने पर भी देश के प्राङ्गण में कुछ ऐसी निर्मम हत्याएँ तथा हिंसात्मक काण्ड अनुष्ठित हो गए हैं, जिनके कारण विचारशील व्यक्तियों को भविष्य के लिए बड़ी चिन्ता हो रही है। मिदनापुर के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की दिन-दहाड़े निर्मम हत्या, देहली-शिमला एक्सप्रेस ट्रेन को उलट देने का निष्फल प्रयत्न, पेशावर के असिस्टेण्ट कमिश्नर—कैप्टन बार्न्स पर आक्रमण करने का उद्योग आदि के अतिरिक्त दो-तीन राजनैतिक डकैतियों का भी सन्देह किया जाता है, इधर-उधर दो-चार बमों आदि के फटने के समाचार भी आए हैं। एक ऐसे समय, जबकि देश के भावी शासन-विधान की योजना पर विचार किए जाने की बहुत-कुछ सम्भावना है, इस प्रकार के उपद्रवों का होना, उन अज्ञात व्यक्तियों के लिए वास्तव में बहुत लज्जाजनक है, जो इन उपद्रवों के लिए ज़िम्मेदार हैं।

हम इस बात को सर्वथा स्वीकार करने को तैयार हैं, कि गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार देश के उन नवयुवकों को—जिनका विश्वास हिंसात्मक क्रान्ति में है, अथवा उनके उन साथियों को, जो एक अनिश्चित-समय के लिए जेल में पड़े सड़ रहे हैं—कोई प्रत्यक्ष लाभ नहीं हुआ है; और यदि वे यह कहें, कि जिस प्रकार महात्मा गाँधी ने सरदार भगतसिंह आदि की फाँसी हो जाने पर अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कहा था, कि गाँधी-इर्विन समझौते में इस प्रकार का कोई विधान—कोई शर्त नहीं थी, जिसके अनुसार महात्मा गाँधी लॉर्ड इर्विन का हाथ फाँसी के वारण्ट पर हस्ताक्षर करने से पकड़ सकें; ठीक उसी प्रकार हिंसावादी

भी यह कह सकते हैं, कि गाँधी-इर्विन समझौते में इस प्रकार की भी कोई शर्त व्यक्त नहीं है, कि इस समझौते की सुदीर्घ अवधि में भारत में किसी भी प्रकार के हिंसात्मक काण्ड अनुष्ठित न होंगे। हिंसात्मक क्रान्ति के पक्षपाती यह भी कह सकते हैं, कि इस समझौते से उन्हें किसी भी प्रकार की दिलचस्पी नहीं है और न उन लोगों ने कभी महात्मा गाँधी का अहिंसात्मक नेतृत्व ही स्वीकार किया है—उनका आन्दोलन सर्वथा स्वाधीन है, अतएव उनके इस आन्दोलन का प्रभाव गाँधी-इर्विन समझौते पर न पड़ना चाहिए, इत्यादि।

एक हद तक हम उन नवयुवकों के मनोभावों की कल्पना कर सकते हैं और साथ ही इस समझौते द्वारा उन्हें होने वाली निराशा का भी अनुभव कर सकते हैं, किन्तु हम उनके इन विचारों का समर्थन वर्तमान राजनैतिक परिस्थिति को दृष्टि में रखते हुए, कदापि नहीं कर सकते। इस सिलसिले में हम इन नवयुवकों को केवल इतना ही स्मरण दिलाना चाहते हैं कि आख़िर उनका ध्येय क्या है? यदि हम भूल नहीं करते, तो उनका एक मात्र ध्येय है भारत की पराधीनता की बेड़ी को तोड़ कर भारतवासियों के मानवोचित अधिकारों की रक्षा करना। यदि वास्तव में उनका यही ध्येय है और यदि उनके उद्देश्यों को समझने में हमने भूल नहीं की है, तो हम हिंसात्मक विचार के पोषकों का ध्यान देश की वर्तमान राजनीतिक स्थिति पर आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझते हैं। हम स्वीकार करते हैं, कि यदि गवर्नमेण्ट ज़रा बुद्धिमानी से परिस्थिति को समझने का प्रयत्न करती, तो वर्तमान विषम परिस्थिति के उत्पन्न होने की सम्भावना ही नहीं थी—आज यदि समस्त राजनैतिक अपराधों के बन्दी जेल से मुक्त कर दिए गए होते, जैसा कि हम 'भविष्य' के इन्हीं स्तम्भों में विस्तृत रूप से लिख चुके हैं, तो हम गवर्नमेण्ट को इस बात का विश्वास दिलाते हैं, कि कुछ दिनों के लिए भारत से हिंसात्मक आन्दोलनों का सर्वथा लोप हो गया होता और तब तक इन काण्डों की पुनरावृत्ति की कोई सम्भावना न होती, जब तक गवर्नमेण्ट अपने दमन, अत्याचार एवं स्वेच्छाचारिता द्वारा इस आन्दोलन का पुनः आवाहन न करती। गवर्नमेण्ट ने देश की संयुक्त पुकार को ठुकरा कर वास्तव में बड़ी भयङ्कर और घातक भूल की है; किन्तु साथ ही हम यह भी नहीं चाहते, कि इस भूल का उत्तर भूलों से ही दिया जाय। हमारी तो निश्चित-धारणा है, कि शासक जाति द्वारा की हुई भूलों के प्रायश्चित्त तथा सुधार के लिए उसे अधिक से अधिक समय और साधन देना राजनीति का अन्यतम पहलू है और हमारे जिन पाठकों को हमारे इन विचारों में किसी प्रकार का सन्देह हो, वे किसी भी पराधीन देश के उत्थान के इतिहास को पढ़ कर अपनी इस शङ्का का समाधान कर सकते हैं।

हमारा ख़्याल है, आज हिंसात्मक विचारों के अधिकांश पक्षपाती स्वर्गीय सरदार भगतसिंह के आदर्शों तथा उनके विचार के क़ायल हैं। यदि यह बात ठीक है, तो हम स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की ही वे पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत करना चाहेंगे, जो उन्होंने, कहा जाता है, अपने किसी मित्र को दूसरी फ़रवरी अर्थात् गाँधी-इर्विन समझौते के एक दिन पूर्व लिखी थीं। (आपका यह पत्र अन्यत्र प्रकाशित भी हो रहा है) आपका कहना है:—

"मेरा यह दृढ़ विश्वास है, कि हम बम और पिस्तौल के उपायों से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। यह बात हिन्दोस्तान रिपब्लिकन पार्टी के इतिहास से आसानी से मालूम हो जाती है। केवल बम फेंकना, न सिर्फ़ व्यर्थ है, परन्तु बहुत बार तो हानिकारक भी है।"

इस समय समस्त भारत ने महात्मा गाँधी का नेतृत्व स्वीकार कर लिया है और अपनी हाल की सफलताओं को दृष्टि में रखते हुए, देशवासियों का विश्वास है, कि वे महात्मा जी के इस अहिंसात्मक आन्दोलन द्वारा अपना इच्छित ध्येय प्राप्त कर सकेंगे, एक ऐसी परिस्थिति में—एक ऐसे अवसर पर, जब कि देश के भावी शासन-विधान पर विचार किया जा रहा हो, इन हिंसात्मक काण्डों का होना सरासर मूर्खता का परिचायक है। महात्मा जी को भी इन दुर्घटनाओं से अपार क्लेश हुआ है और उन्होंने मिदनापुर (बङ्गाल) के डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की निर्मम हत्या के सम्बन्ध में जो वक्तव्य एक प्रेस-प्रतिनिधि को दिया है, उससे हिंसात्मक विचार के प्रत्येक पोषक को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। आपने कहा है:—

"मुझे इस हत्या से अपार दुःख हुआ है। इस प्रकार की हत्याएँ करने वाले नवयुवक किसी भी प्रकार की देश की भलाई नहीं कर रहे हैं। उन्हें यह स्वीकार करना होगा, कि गत वर्ष के अहिंसात्मक आन्दोलन द्वारा देश को अपार लाभ हुआ है। मेरा तो यह दृढ़ विश्वास है, कि यदि हिंसात्मक कार्य न किए गए होते तो इस आन्दोलन को और भी सफलता मिलती। मैं अब भी उन नवयुवकों से कहता हूँ, कि वे उस समय तक अपना कार्य बन्द किए रहें, जब तक कॉङ्ग्रेस का सिद्धान्त सत्य और अहिंसापूर्ण है और जब तक वह इन सिद्धान्तों के अनुसार कार्य कर रही है।

"यदि वे धैर्य धारण कर ही नहीं सकते, तो उन्हें समय की कोई निश्चित सीमा निर्धारित कर लेना चाहिए और अपने निर्धारित समय तक उन्हें केवल प्रतीक्षा ही नहीं करनी चाहिए, बल्कि इसका प्रचार भी करते रहना चाहिए।"

महात्मा गाँधी इस वक्तव्य से पूर्व भी कई बार अपने इन्हीं विचारों को प्रकट कर चुके हैं। उन्होंने अपना आन्दोलन प्रारम्भ होने के पूर्व ही कहा था, कि "यदि उनका यह आन्दोलन विफल हो गया, जिसकी बहुत कम सम्भावना है, तो उन्हें हिंसात्मक विचार के पोषकों की राह में रोड़े अटकाने का कोई नैतिक अधिकार न होगा और वे अपने आन्दोलन की इस विफलता को, यदि ऐसा हुआ, तो अहिंसात्मक आन्दोलन की पराजय समझेंगे।"

वर्तमान युग के महान तपस्वी के इस आश्वासन को दृष्टि में रखते हुए, हम देश के नाम पर उन अज्ञात व्यक्तियों से भिक्षा माँगते हैं, जो इस प्रकार के उद्दण्डतापूर्ण काण्डों के लिए ज़िम्मेदार हैं—कि देशोत्थान के इस महान आन्दोलन में वे बाधक न बनें और अपने विपक्षियों को मुँह चिढ़ाने का अवसर कदापि न दें। यदि उन्होंने हमारी इस प्रार्थना पर समुचित ध्यान न दिया, तो स्वतन्त्रता के वर्तमान आन्दोलन की विफलता का, यदि ऐसा हुआ तो—सारा कलङ्क उन्हीं के मत्थे मढ़ा जायगा और यह सर्वथा उचित भी होगा।

* * *

भूल-सुधार

'भविष्य' के गताङ्क की कुछ कॉपियों में देहली में होने वाली कॉन्फ़्रेन्स के मुसलमानों में मार-काट हो जाने का समाचार छप गया था, यह मार-काट बम्बई की एक सभा में हुई थी, देहली में नहीं। जिसमें एक मुसलमान को मृत्यु हुई और ९ घायल हुए थे। हमें इस भूल के लिए वास्तव में बहुत खेद है। पाठकगण अपनी कॉपियों में सुधार लेने की कृपा करें

कानपुर का भीषण दंगा

डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट का जनता की शिकायतों को झूठा साबित करने का निन्दनीय प्रयत्न

"हमने जो हथियार दिए हैं, उनका प्रयोग क्यों नहीं करते ??"

सहयोगी 'लीडर' को कानपुर के ज़िला मैजिस्ट्रेट की, वहाँ के दङ्गे के सम्बन्ध में एक चिट्ठी मिली है। वह इस प्रकार है:—

"कानपूर में इस बात की अफ़वाह है, और कुछ समाचार-पत्रों ने भी इस बात का ज़िक्र किया है कि वहाँ के दङ्गे के समय अगर किसी अधिकारी से सहायता माँगी जाती थी, तो वे उत्तर देते थे—"गाँधी या कॉङ्ग्रेस के पास जाओ।" मैं अपनी और ज़िले के अन्य अधिकारियों की ओर से, यह कह देना चाहता हूँ कि यह बात बिलकुल मनगढ़न्त है। किसी सहायता चाहने वाले से हम लोगों में से किसी ने भी ऐसी बात नहीं कही है; बल्कि जहाँ कहीं भी सहायता दी जा सकती थी, वहाँ हम सहायता देने का प्रत्येक प्रयत्न करते थे। इस प्रतिवाद को कृपया अपने पत्र में छाप दें।"

'लीडर' इस पत्र के सम्बन्ध में लिखता है:—

"इस पत्र का उल्लेख करते हुए हम कह देना चाहते हैं, कि जिस अफ़वाह का प्रतिवाद ज़िला मैजिस्ट्रेट मि० सेल ने किया है, वह कानपुर में घर-घर फैली हुई है। दो दिन हुए, हमें वहाँ के एक प्रतिष्ठित सज्जन की चिट्ठी मिली थी, जो इस प्रकार है:—

"दङ्गे के समय, २५वीं तारीख़ को, मेरे और मि० सेल के बीच जो बातचीत हुई है, उसका कुछ अंश मैं यहाँ पर देता हूँ।

"मैंने फ़ोन के द्वारा उनसे सहायता माँगी। मि० सेल ने कहा कि गाँधी के पास जाओ, हम कुछ नहीं कर सकते। मैंने दङ्गाइयों द्वारा श्री० द्वारिकाधीश का मकान जला दिए जाने की बात भी मि० सेल से कही थी।"

इस सम्बन्ध में एक और सज्जन ने, निम्नलिखित पत्र भेजा है:—

"२४वीं और २५वीं तारीख़ को, मेरे और मि० सेल के बीच जो बातचीत हुई, उसका एक अंश मैं यहाँ पर देता हूँ। मैंने उन्हें इस बात की सूचना दी कि मुसलमानों का एक दल हमारे मन्दिर और कोठी पर हमला कर रहा है, और वहाँ पुलिस का कोई प्रबन्ध नहीं है। मैंने उनसे प्रार्थना की कि वे कुछ हथियारबन्द सिपाही सहायता के लिए दें। उन्होंने उत्तर दिया कि, 'हमने जो हथियार दिए हैं, उनका प्रयोग क्यों नहीं करते?' उन्होंने यह भी कहा कि 'हम कुछ नहीं कर सकते' और अधिक सुनने का समय नहीं है।'

मुस्लिम सज्जनों की एक कमिटी ने भी, जो इस दङ्गे की जाँच के लिए नियुक्त हुई थी, अधिकारियों की लापरवाही के सम्बन्ध में अपना यह वक्तव्य प्रकाशित किया है:—

"अधिकारियों की लापरवाही के सम्बन्ध में, जो बातें सुनने में आई हैं, वे दुःखजनक हैं। लोगों ने आँखों देखी कितनी ही घटनाओं का बयान दिया है, जिनमें दङ्गाइयों के हाथ से लोगों को बचाने के लिए, अधिकारियों ने चेष्टा नहीं की। प्रतिष्ठित मनुष्यों की बातों पर भी ध्यान नहीं दिया जाता था। कोतवाल और उसके अधीन कार्य करने वालों की भी शिकायतें हमारे पास आई हैं।"
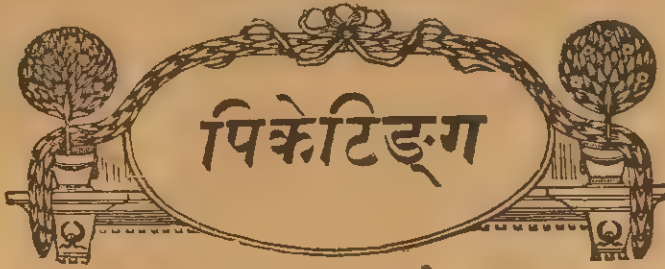
[श्री० हरिश्चन्द्र जी वर्मा, विशारद]

इन्दु 'भविष्य' पढ़ने में निमग्न थी। बाबू काशीनाथ ने दबे पाँव कमरे में प्रवेश कर, हाथ का बण्डल उसके समीप चारपाई पर फेंक दिया। आहट सुन इन्दु चौंक पड़ी। काशीनाथ खिलखिला कर हँसे। इन्दु सकुचा कर एक ओर खड़ी हो गई। कोट उतारते हुए काशीनाथ ने पूछा—क्या पढ़ रही थी?

हाथ के पत्र के 'टाइटिल पेज' को पति की ओर करके इन्दु ने कहा—कुछ नहीं, 'भविष्य' देख रही थी।

काशीनाथ चुप रहे। इन्दु ने एक दबी दृष्टि से बण्डल की ओर देख कर उनसे पूछा—यह क्या ले आए?

"देख न लो।"

इन्दु ने पत्र को चारपाई पर रख कर बण्डल हाथ में उठा लिया। उसे एक बार हाथ से दबा कर देखने के उपरान्त उसने खोला, उसमें एक सूट तथा एक कमीज का कपड़ा था। क्षण भर कपड़े को देख, इन्दु ने उसे चारपाई पर पटक दिया और पति की ओर देख कर बोली—फिर विलायती खरीद लाए।

"तो?"

"भला, कभी आपको समझ भी आवेगी? समस्त देश में तो स्वदेशी की धूम है, स्थान-स्थान पर पिकेटिङ्ग हो रही है, परन्तु आप अब भी विदेशी के ही पीछे पड़े हैं।"

"तो?"

"फिर वही तो। आप भी देश के लिए कुछ करेंगे या नहीं? लोग तो तन-मन-धन से स्वदेश-सेवा में लगे हैं और आप स्वदेशी वस्त्र तक नहीं पहन सकते?"

"अजी स्वदेशी कपड़ा अच्छा भी होता है?"

"होता क्यों नहीं; एक से एक बढ़ कर होता है। कभी आपने देखा, खरीदा या पहना हो तो जानें।"

"ख़ैर, मेरे लिए विदेशी ही अच्छा है, मैं स्वदेशी नहीं पहनता।"

"पहनते कैसे नहीं? आपको पहनना पड़ेगा।"—इन्दु ने आवेश में कहा।

काशीनाथ हँसे, बोले—अरे वाह !!

"अच्छा देखिएगा।"

२

एक दिन प्रभा ने पाठशाला से लौट कर इन्दु से कहा—माता जी! आज एक नवीन समाचार सुनने में आया है।

"क्या?"—इन्दु ने कौतूहलवश पूछा।

"कॉङ्ग्रेस के महिला-मण्डल ने यह प्रस्ताव पास किया है कि यदि एक सप्ताह के भीतर नगर के समस्त वकील स्वदेशी पहनने की प्रतिज्ञा न करें, तो उन पर पिकेटिङ्ग लगाया जावे और विदेशी-धारियों को कचहरी जाने से रोका जावे।"

साश्चर्य इन्दु ने कहा—अच्छा !!

"...... ।"

"तब तो उन्होंने वकीलों को इसका नोटिस दे दिया होगा?"

"जी हाँ; सबको प्रतिज्ञा-पत्र लिखने होंगे।"

"यह ठीक है।"

"अब तो पिता जी को भी प्रतिज्ञा करनी होगी?"

सुख-स्मृति

[प्रो० रामकुमार जी वर्मा, एम० ए०]

समय की शीतल साँस

तेरे जीवन का यह पहिला दिन है पहली रात
उसी समय तूने छीने जीवन तरुवर के पात
तू हँसता है, छूता है जग के सूखे कङ्काल
शिशुपन की क्रीड़ा में जीवन का यह रूप कराल!
वृद्ध सो रहा था तेरा ही स्वप्न रहा था देख
तीन पंक्तियों में मस्तक पर था आशा का लेख
वह आशा जो जर्जरपन में ले युवती का रूप
कङ्कालों से खेला करती तेरे ही अनुरूप!
तेरा जीवन है जग के फूलों का जीवन-नाश
शून्य बन गया है तेरी क्रीड़ा से यह आकाश
मेरा जीवन तो तुझसे भी शीतल है ओ क्रूर
क्यों रहता है फिर मेरे जीवन से इतना दूर?
सुख-स्मृति वर्षा-ऋतु की सरिता की है तरल तरङ्ग
उठ कर पत्थर से टकरा कर खाकर होती है भङ्ग
तेरे दुख में, सुख-स्मृति से मिलती है अधिक मिठास
तुझमें ही मेरा वसन्त है, तुझमें अमर विलास

समय की शीतल साँस

* * *

इन्दु मुस्कराई। उसने कहा—हाँ, अब तनिक उन्हें मालूम होगा।

प्रभा के भी अधरों पर मुस्कान की हल्की लाली दौड़ गई। उसने कहा—तो आप पिता जी से पूछिएगा।

"अच्छा।"—कह कर इन्दु चुप हो रही।

दूसरे दिन सन्ध्या को इन्दु ने पति से पूछा—आपने प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए?

"नहीं तो; क्यों?"—वे मुस्कराए।

इन्दु उनका उत्तर सुन कर चकराई। उसे कुछ कहते न बन पड़ा। अन्त में उसने कहा—क्या कोई हानि थी?

"हानि कैसे नहीं थी? इन कॉङ्ग्रेस वालों को किसी के वस्त्रों से क्या मतलब? कोई स्वदेशी पहने या विदेशी, वे किसी को रोकने वाले कौन होते हैं?"

"वे बेचारे किसी को क्यों रोकेंगे। वे तो नम्रता-पूर्वक, हाथ जोड़, पैरों पड़, अनुनय-विनय करते हैं। मानिए न मानिए, आप को अख्तियार है।"

"अजी नहीं। बात यह है कि 'बार' के कुछ वकील खद्दरधारी हैं। उन्हीं के बल पर......।"

इन्दु ने बात काट कर कहा—सम्भव है यही हो। परन्तु उसका सरल उपाय यही है कि आप भी प्रतिज्ञा-पत्र लिख कर स्वदेशी पहनना आरम्भ कर दीजिए।

काशीनाथ ने उठते हुए कहा—प्रतिज्ञा-पत्र क्यों लिखूँ?

"उसमें हानि ही क्या है?"

"क्यों नहीं है?"

"परन्तु यह आपका हठ कब तक चलेगा?"

"जब तक चले।"—कह कर काशीनाथ उठ कर बाहर चले गए।

३

इधर कई दिनों से 'बार एसोसिएशन' पर बड़े ज़ोर की पिकेटिङ्ग हो रही थी। प्रतिदिन प्रातःकाल ही से स्वयंसेविकाओं का दल 'बार' को घेर लेता। स्वदेशीधारी आते और बे रोक-टोक भीतर चले जाते, परन्तु जहाँ कोई विदेशी-धारी आया, तुरन्त ही वे पंक्तिबद्ध होकर तथा हाथ जोड़ कर खड़ी हो जातीं और उनसे भीतर न जाने की प्रार्थना करतीं। उनके न मानने पर पैर छूतीं, अनुनय-विनय करतीं और यथासम्भव उन्हें भीतर जाने से रोकतीं। बाबू काशीनाथ प्रथम तो दो-एक दिन कचहरी ही न गए; सोचते रहे कि क्या करें? परन्तु आज उनका एक विशेष मुक़द्दमा था, जिसमें उन्हें अवश्य जाना था। अतः वे कचहरी पहुँचे। पहले तो कुछ देर तक सबकी दृष्टि बचा कर इधर-उधर टहलते रहे, फिर मुक़द्दमे की पेशी का समय हो आया देख, कचहरी के द्वार पर पहुँचे, तो देखा कि वहाँ चार-पाँच स्वयंसेविकाएँ खड़ी हैं। इन्हें आगे बढ़ते देख कर एक ने अति कोमल स्वर में कहा—भाई साहब, आप........।

बात पूरी भी न हो पाई थी कि काशीनाथ, "चुप रहो जी, तुम्हें मुझे रोकने का कोई अधिकार नहीं" कह कर उसे एक ओर हटाते हुए भीतर घुस गए। स्वयंसेविकाएँ भौंचक्की सी खड़ी रह गईं। उन्हें किसी सभ्य पुरुष से ऐसी आशा न थी।

४

उस दिन सन्ध्या को जब बाबू काशीनाथ घर लौटे, तो इन्दु ने पूछा—आज कचहरी गए थे?

"क्यों नहीं जाता?"—गर्व से काशीनाथ ने उत्तर दिया।

"क्या आज पिकेटिङ्ग नहीं थी?"

"थी क्यों नहीं।"

"तब तो स्वयंसेविकाओं ने बड़ी प्रार्थना की होगी।"

"की क्यों नहीं। परन्तु उनकी सुनता कौन है। जहाँ एक बार डाँट कर 'चुप रहो, तुम्हें हमें रोकने का कोई अधिकार नहीं' कहा कि रास्ता साफ़ हो गया।"

इन्दु के कोमल हृदय पर एक आघात लगा। उसे पति से ऐसी आशा न थी। उसने मन में कहा—"इतना कठोर व्यवहार ! इतनी असभ्यता !!" उसके नेत्र डबडबा आए। परन्तु कुछ ही क्षण में उसने अपने को सँभाल लिया और मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए उसने कहा—"परन्तु यह तो आपने अच्छा नहीं किया।"

उसकी इस मुस्कान में आन्तरिक पीड़ा की स्पष्ट झलक थी। बाबू काशीनाथ ने कुछ उत्तर न दिया। वे पास ही पड़े हुए समाचार-पत्र को उठा कर उसके पृष्ठ लौटने लगे। इन्दु उनके पास से उठ कर बाहर चली गई।

५

दूसरे दिन जब बाबू काशीनाथ कचहरी पहुँचे तो वहाँ अजीब खलबली मची थी। आज स्त्रियों के अतिरिक्त पुरुष भी अधिक संख्या में उपस्थित थे। बाबू काशीनाथ उधर न जाकर पास के पार्क में बेञ्च पर जा बैठे। बारह बजने पर उनके मुहर्रिर ने आकर उन्हें चलने को कहा। वे धीरे-धीरे पुनः उसी द्वार पर पहुँचे। स्वयंसेविकाएँ इन्हें आते देख, उठ खड़ी हो गईं। जब वे उनके समीप पहुँचे तो अकस्मात् ठिठक गए। प्रथम तो नेत्रों पर विश्वास ही न हुआ, परन्तु फिर जो देखा तो इन्दु को सबके मध्य में खड़ा पाया। आश्चर्य तथा क्रोध से उनका मुख तमतमा उठा। एक पग आगे बढ़ कर उन्होंने पूछा—इन्दु ! तुम यहाँ कहाँ ?

इन्दु अब तक चुपचाप खड़ी थी। पति का प्रश्न सुन कर उसने नम्रता से कहा—आवश्यकतावश आज मैं भी यहाँ आने पर बाध्य हुई हूँ।

"आवश्यकता !"—आश्चर्य से काशीनाथ ने कहा।

इन्दु ने कुछ उत्तर न दिया। वह उसी तरह ही अचल भाव से खड़ी रही। अन्य सब स्वयंसेविकाएँ भी चुप खड़ी इस अपूर्व दृश्य को देख रही थीं। काशीनाथ ने कहा—अच्छा हटो, मुझे जाने दो ; देर हो रही है।

इन्दु ने पृथ्वी पर लेटते हुए कहा—आप मेरी छाती पर पैर रख कर जा सकते हैं।

काशीनाथ तनिक बिगड़े। बोले—क्या पागल हो गई हो ? लज्जा भी नहीं आती ; उठो, मुझे जाने दो।

इन्दु टस से मस भी न हुई। वह उसी प्रकार पति की ओर देखती रही। इन्दु की इस ढिठाई पर काशीनाथ जल उठे। उनके नेत्र लाल हो गए। क्रोधित स्वर में उन्होंने कहा—हटो, मुझे भीतर जाने दो।

इन्दु ने बात अनसुनी कर दी। काशीनाथ ने फिर कहा—मैं भीतर अवश्य जाऊँगा।

"तो मेरी छाती पर पैर रख कर जा सकते हैं।"

"देखो, अच्छा न होगा, द्वार छोड़ दो।"—उन्होंने फिर कहा।

इन्दु चुप रही ; उसने कुछ उत्तर न दिया।

"हटती हो या नहीं ?"—काशीनाथ ने ज़रा गर्म होकर कहा। परन्तु इन्दु पर जूँ तक न रेंगी, वह उसी भाँति पड़ी रही। काशीनाथ अधिक सहन न कर सके। पैर उठा कर वह तीव्रता से इन्दु के ऊपर होकर निकल गए। इन्दु काँप गई। उसे पति से ऐसी आशा न थी। दर्शक विमूढ़ नेत्रों से देख रहे थे। उन्होंने दाँत तले उँगली दबा ली।

६

सन्ध्या को कचहरी से निकलने के बाद जब काशीनाथ ने सुना कि इन्दु गिरफ़्तार हो गई, तो वे सन्न से रह गए। उनका हृदय अपने प्रति क्षोभ से भर गया। मार्ग में यही सोचते रहे कि मैंने भूल की, जो इतना क्रोध कर बैठा। यदि एक दिन कचहरी न जाता तो क्या हो जाता ? परन्तु क्या इसमें इन्दु का अपराध न था ? भला उसे इतने पुरुषों में बिना मेरी आज्ञा के छिप कर जाने की क्या आवश्यकता थी ? फिर बार-बार कहने पर भी वह अपने ही हठ पर अड़ी रही। आख़िर कोई कब तक सहन करता ?

खादी

[डॉ० माताप्रसाद त्रिपाठी "महेश"]

राष्ट्र का सन्देश सुना, उर में जगाया जोश ;
सत्य को पताका फहरा दी सीधी-सादी है।
हिंसा को मिटा के प्रगटाया है अहिंसा भाव;
भारत में क्रान्ति की लहर लहरा दी है॥
ज़ालिमों के ज़ुल्म को मिटाया है 'महेश' देश-
दारिद्र दबा के सुख-शान्ति बरसा दी है।
सत्वर स्वदेश हित लावगी स्वराज्य ऐसी—
सुखद स्वतन्त्रता की शान शुद्ध खादी है॥

* * *

घर पहुँचने पर बाबू काशीनाथ ने देखा, प्रभा उदास मुँह किए बैठी है। उसे माता की गिरफ़्तारी का समाचार पहले ही मिल चुका था। उसने कातर दृष्टि से पिता की ओर देखा। काशीनाथ के हृदय में एक चोट सी लगी। उस दिन उनका मन किसी कार्य में न लगा, उनके नेत्रों के सामने वही दिन का दृश्य घूमता रहा।

दूसरे दिन उन्होंने सोचा कि आज कचहरी न जाऊँगा, परन्तु तुरन्त ही मन में यह विचार आया कि यदि आज न गया तो मित्र लोग कहेंगे कि एक ही दिन में डर गए। वे कचहरी जाने को तैयार हो गए। वे रास्ते से जा रहे थे, परन्तु उनका ध्यान कहीं और ही था। उन्होंने देखा कि हर स्थान पर लोग उन्हीं की चर्चा कर रहे हैं। कचहरी पहुँचने पर उनके मित्र कैलाशनारायण मिले। इन्हें देख हाथ मिलाते हुए वे बोले—कहिए कल तो ख़ूब निबटी।

काशीनाथ ने कुछ उत्तर न दिया। वे मित्र की ओर देखते रहे। कैलाश ने उनकी पीठ पर हाथ मारते हुए कहा—परन्तु यार ! तुम्हारी बीबी निकली तो बड़ी दिलेर !

काशीनाथ फिर भी चुप रहे। कैलाश ने पूछा—आज कचहरी जाओगे ?

"यही तो सोच रहा हूँ।"—उन्होंने उत्तर दिया।

कैलाश—आओ न, अब क्या है ? तुमने तो कल ही बाज़ी मार ली। अब क्या डर है ?

दोनों मित्र कचहरी की ओर बढ़े। द्वार पर पहुँचे तो देखा कि आज प्रभा सामने खड़ी है। काशीनाथ चौंक पड़े। उनका हृदय बैठ गया। वे जिस साहस से यहाँ तक आए थे वह बिखर गया। प्रभा से यह बात छिपी न रही। उसने पिता के मुख पर भावों का परिवर्तन देखा, परन्तु वह हिली नहीं। बड़ी कठिनता से साहस बटोर कर काशीनाथ ने पूछा—प्रभा, तुम यहाँ क्यों ?

प्रभा बोली—"पुत्री को माता का साथ देना चाहिए। मैं भी आज वही करूँगी। कल आप माता जी की छाती पर पैर रख कर भीतर गए थे, आज आपको मेरे ऊपर से जाना होगा।" उसकी आवाज़ भर्राई हुई थी, आँखें डबडबा आई थीं और चेहरा लाल हो आया था।

प्रभा पृथ्वी पर लेट गई। काशीनाथ का कलेजा हिल गया। जो हृदय पत्नी की विनय पर न पसीजा था, वह पुत्री के तिरस्कारपूर्ण शब्दों से पिघल गया। वे अधिक सहन न कर सके। हाथ के पत्र फेंक, झपट कर उन्होंने प्रभा को उठा कर हृदय से लगा लिया। स्नेहवश प्रभा का कण्ठ रुँध गया। उसके नेत्रों से आँसू झरने लगे। काशीनाथ ने डबडबाए नेत्रों से कहा—प्रभा, मुझे क्षमा करो। मेरा हृदय......।

वे आगे कुछ न कह सके। दोनों इसी प्रकार घर को लौट आए।

७

इन्दु को ६ मास के कारावास का दण्ड मिला। अनेक प्रयत्न करने पर भी बाबू काशीनाथ उसे बचा न सके। क्योंकि वह मुक़दमे की पैरवी कराने को किसी तरह राज़ी न हुई।

इस बात को अब दो मास हो गए। काशीनाथ इस बीच में पूर्णतया बदल गए। अब उनके घर में खादी ही खादी दिखाई देती थी, विदेशी वस्त्र नाम को भी न था।

इधर देश की राजनैतिक स्थिति में भी परिवर्तन हुआ, महात्मा जी तथा वायसराय महोदय के समझौते के अनुसार देश के समस्त राजनैतिक क़ैदी छोड़े जाने लगे। आज इन्दु के छूटने का दिन था। बाबू काशीनाथ प्रभा को लेकर स्वयं जेल गए थे। सहस्रों मनुष्यों की भीड़ थी। ठीक ९ बजे इन्दु अन्य क़ैदियों के साथ बाहर निकली। महात्मा गाँधी, भारत-माता आदि की जय-जयकार से गगन थर्रा उठा। फिर पुष्पों की वर्षा हुई, प्रत्येक क़ैदी के गले में मालाएँ डाली गईं। फिर सब एक-दूसरे से मिले। प्रभा ने आगे बढ़ कर माता के चरण छुए। इन्दु ने झपट कर पति की पद-धूलि मस्तक पर लगा ली। फिर पति को सिर से पैर तक खादी-वेश में देख कर वह एक बार मुस्कराई। उसकी इस मुस्कान में विजय की स्पष्ट छाया थी !

लज्जावश काशीनाथ का मस्तक झुक गया।

* * *

वारन हेस्टिंग्ज़ और महाराज चेतसिंह

[पं० तेजनारायण काक, 'क्रान्ति']

काशी के विद्रोह के कई वर्षों बाद जब हाउस ऑफ़ कॉमन्स में वारेन हेस्टिंग्ज का मुक़द्दमा चल रहा था, तब उसके ऊपर शत्रुओं द्वारा लगाए गए बीस मुख्य अभियोगों में से "काशी के महाराज चेतसिंह के साथ किया गया नीच और घृणित व्यवहार" भी एक था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हेस्टिंग्ज के शत्रुओं ने, जिनमें बर्क, फ़ॉक्स, शारिडान प्रभृति अनेकों दिग्गज वाग्मी थे, अपनी वाक्य-कुशलता द्वारा उसके छोटे से छोटे दोष को भी तिल का ताड़ बनाने में ज़रा सी कोर-कसर न रक्खी, पर केवल इसीलिए हम ग्लीग महाशय अथवा हेस्टिंग्ज के अन्य प्रशंसकों के इस कथन से कदापि सहमत नहीं हो सकते कि हेस्टिंग्ज का प्रत्येक काम न्याय-युक्त था और उसने जो कुछ किया वह ठीक किया। क्या हेस्टिंग्ज के हित-विधायक मित्र विलियम पिट का महाराज चेतसिंह से सम्बन्ध रखने वाली घटना में उसे दोषी ठहराना इस बात का अकाट्य प्रमाण नहीं है कि उसके शत्रु ही नहीं, वरन् मित्र भी उसके दोषों को स्वीकार करते थे। हेस्टिंग्ज को निर्दोष सिद्ध करके उसकी प्रशंसा के व्यर्थ के पुल बाँधने को यदि पानी के ऊपर लकीर खींचने के समान निष्फल कहा जाय, तो कोई अत्युक्ति न होगी। दोष प्राणि-मात्र से होते आए हैं और यदि हेस्टिंग्ज से भी कोई अपराध हो गया तो यह किसी सांसारिक नियम का अपवाद नहीं कहा जा सकता। अपराध तो वास्तव में उन सज्जनों का है, जिन्होंने जान-बूझ कर सची बातों को झूठ तथा अप्रामाणिक सिद्ध करने में अपना बहुत सा अमूल्य समय व्यर्थ ही नष्ट किया है।

महाराज चेतसिंह सम्बन्धी घटना का संक्षिप्त ब्योरा इस प्रकार है। सम्राट औरङ्गज़ेब की मृत्यु के पश्चात् मुग़ल साम्राज्य की नींव डावाँडोल होने लगी। सारे देश में अराजकता फैल गई। फिर क्या था, जिसे देखिए वही अपनी मनमानी करने लगा। प्रत्येक सूबे का सूबेदार स्वतन्त्र बन बैठा। यहाँ तक कि देहली के आस-पास के कुछ भाग को छोड़ सारा देश मुग़लों के हाथ से निकल गया। ठीक इसी समय बनारस के राजा ने भी अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा करवा दी। अवध के नवाब शुजाउद्दौला ने बनारस को हस्तगत करने का यह अच्छा अवसर देखा। एक छोटा सा राज्य कब तक इतने बड़े सूबेदार का सामना करता? अन्त में बनारस के राजा को अवध के नवाब से हार माननी पड़ी और उसके अधीनस्थ होकर रहना पड़ा। विधाता की गति जानी नहीं जाती। अवध के नवाब को यह स्वप्न में भी ख़्याल नहीं था कि जिस बनारस को उसने बड़ी लालसा से इतने रक्तपात के पश्चात् विजय किया है, वही अब उससे छीन लिया जायगा। और यही कौन जानता था कि अवध के कुत्सित शासन से निकल कर थोड़े ही समय में बनारस को एक विदेशी जाति का दासत्व स्वीकार करना पड़ेगा, एक गहरे गर्त से निकल उससे भी अधिक भयानक तथा अन्धकारमय कूप में गिरना पड़ेगा? किन्तु हुआ ऐसा ही। रुहिला-युद्ध की समाप्ति होने के थोड़े ही समय उपरान्त शुजाउद्दौला की मृत्यु हो गई। उसके मरने पर उसके पुत्र आसफ़उद्दौला से जो नई सन्धि हुई, उसके अनुसार बनारस अङ्गरेज़ों को मिला। इसी समय से बनारस के महाराज चेतसिंह को साढ़े बाईस लाख रुपया प्रति वर्ष कम्पनी को कर-स्वरूप देना पड़ता था। चेतसिंह ने कभी रुपया चुकाने में विलम्ब नहीं किया। कदाचित इसी के फल-स्वरूप जब सन् १७७८ में अङ्गरेज़ तथा फ़्रान्सीसियों के बीच युद्ध छिड़ा, तो वारन हेस्टिंग्ज ने बँधे हुए वार्षिक कर के अतिरिक्त युद्ध के व्यय के लिए महाराज से पाँच लाख रुपए और माँगे। इस आदेश का पत्र जिस समय बङ्गाल काउन्सिल के सामने रक्खा गया तो उसके मेम्बरों ने उसकी कड़ी भाषा की आलोचना करते हुए उसे कुछ विनम्र बनाने की इच्छा प्रकट की। वे चाहते थे कि पत्र में 'Demand' शब्द की जगह 'Request' रख दिया जाय। क्योंकि उनका कहना था कि कर के अतिरिक्त चेतसिंह से और कुछ लेने का कम्पनी को कोई अधिकार नहीं है। वास्तव में बात भी ऐसी ही थी। परन्तु हेस्टिंग्ज यह सब कब मानने वाला था? उसके मतानुसार कम्पनी को जब चाहे जितना रुपया लेने का अधिकार प्राप्त था। अन्त में बहुत वाद-विवाद के बाद हेस्टिंग्ज ही की बात रही और वह पत्र ज्यों का त्यों महाराज चेतसिंह के पास भेज दिया गया। उत्तर में जब उन्होंने कहला भेजा कि रुपया उनसे केवल एक ही वर्ष के लिए लिया जावे तो उनकी इस "धृष्टता" पर चिढ़ कर हेस्टिंग्ज ने हुक्म दिया कि सब वर्षों का रुपया एक ही साथ चुकाना होगा। चेतसिंह बहुत घबराए और उन्होंने प्रार्थना-पत्र भेज कर हेस्टिंग्ज से रुपया चुकाने के लिए छः-सात महीने की मोहलत माँगी। पर अब हेस्टिंग्ज के क्रोध का वारापार नहीं रहा। भला उसे इतनी मानहानि कहाँ सहनीय थी? महाराज को उसी समय कहलाया गया कि या तो वे रुपया पाँच दिन के भीतर ही दे डालें, नहीं तो कम्पनी की ओर से समझ लिया जायगा कि वे ऐसा करने से इन्कार करते हैं। फिर इसका क्या परिणाम निकलेगा, यह वे भली-भाँति विचार सकते हैं। अपनी प्रार्थना का कुछ फल न निकलते देख, चेतसिंह ने किसी तरह सब रुपया जुटा कर नियत समय के भीतर ही कम्पनी के हवाले किया।

स्वर्गीय काशी-नरेश महाराज चेतसिंह

सन् १७७९ में रुपए की माँग फिर दोहराई गई। अबकी बार चेतसिंह ने बड़ी नम्रता-सहित प्रार्थना की कि कम्पनी से उन्होंने जो सन्धि की थी, उसके अनुसार कर के अतिरिक्त रुपया देने के लिए वे बाध्य नहीं हैं। हेस्टिंग्ज ने बिना कुछ सोचे-विचारे अङ्गरेज़ सेना को बनारस पर धावा बोल देने की आज्ञा दे दी। किन्तु चेतसिंह व्यर्थ का झगड़ा मोल लेना नहीं चाहते थे। अतः उन्होंने पचास हज़ार पौण्ड दे दिए। हेस्टिंग्ज ने इतने पर भी उनका पीछा नहीं छोड़ा और उन पर धावा करने को जो सेना भेजी गई थी, उसको किसी प्रकार की क्षति न पहुँचने पर भी उसके व्यय के लिए दण्ड-स्वरूप दो हज़ार पौण्ड और वसूल कर लिए। तीसरी बार फिर सन् १७८० में चेतसिंह से पाँच लाख रुपए माँगे गए। सीधी तरह प्राण न छुटते देख अबकी महाराज ने दूसरी युक्ति का आश्रय ग्रहण किया। उन्होंने हेस्टिंग्ज को बीस हज़ार पौण्ड घूँस में भेजे। कहते हैं, पहिले तो उसने इन्हें लेने से इन्कार किया, किन्तु पीछे न जाने क्या सोच कर ले लिया। इसी बात को उसके प्रतिद्वन्द्वी मुक़दमे के समय ले उड़े थे। बहुतों का मत है कि कम्पनी के कोषागार में टोटा आ जाने के कारण ही उसने यह रक़म लेना स्वीकार किया था और उसने उसे व्यय भी कम्पनी ही के ख़र्च में किया। किन्तु यदि उसकी अन्तरात्मा दोषी नहीं थी, तो उसने इस मामले को, अपने काउन्सिल के मेम्बरों से ऐसा कह कर कि यह रुपया मैं कम्पनी को अपने पास से देता हूँ, पाँच महीने

तक प्रकट क्यों नहीं होने दिया ? सब से अधिक आश्चर्य की बात यह है कि डाइरेक्टरों तक को इसकी कानोंकान खबर न होने पाई। हमें तो अवश्य कुछ दाल में काला दिखाई देता है। मालूम होता है कि पहिले लालच में पड़ कर उसने रुपया स्वीकार कर लिया, पर फिर भेद खुल जाने के भय से ऊपर लिखा हुआ बहाना बना, मामले को दबा दिया। वस्तुतः बात कुछ भी क्यों न हो, कम से कम हेस्टिंग्ज़ के लिए सब से सीधा मार्ग उपहार को अस्वीकार कर देना ही होता। केवल इतने ही पर बस न करके उसने वह पाँच लाख रुपया भी चेतसिंह से ले लिया और साथ ही दस हज़ार पौण्ड जुर्माने के तौर पर भी लिया। हेस्टिंग्ज़ भली-भाँति जानता था कि चेतसिंह ने बीस हज़ार पौण्ड इसीलिए दिए हैं कि उनसे पाँच लाख रुपया न लिया जाय। इतना जानते हुए भी जब उसने चेतसिंह के साथ छल तथा कौशल से काम लिया तो हम दावे के साथ कह सकते हैं कि सन् १७८३ में सिलेक्ट कमिटी की रिपोर्ट में इस मामले के प्रति जो कुछ लिखा था, वह अक्षरशः सत्य है। पाठकों के मनोरञ्जनार्थ हम उसे यहाँ उद्धृत करते हैं :—

"The complication of cruelty and fraud in this transaction admits of few parallels. Mr. Hastings.....displays him self as a zealous servant of the company, bountifully giving from his own fortune ......on the credit of supplies, derived from the gift of a man whom he treats with the utmost severity and whom he accuses in this particular of disaffection to the company's cause and interests. With £. 23,000 of the Raja's money in his pocket, he persecutes him to his destruction."*

इस विषय में अधिक टीका-टिप्पणी करना व्यर्थ है।

इतना सब कुछ हो जाने पर भी हेस्टिंग्ज़ को शान्ति नहीं मिली। थोड़े ही समय पहले दक्षिण के युद्धों में कम्पनी का बहुत रुपया चुक गया था। यदि रुपया नहीं मिलता तो दिवाला निकल जाने का भय था। गवर्नर हेस्टिंग्ज़ ने सोचा, चेतसिंह हाथ में है ही, इसीसे रुपए ऐंठना चाहिए। इससे अच्छा असामी और कहाँ मिल सकता है ? उसने तुरन्त एक उपाय खोज निकाला। चेतसिंह को कहलाया गया कि वह दो हज़ार घुड़सवार फ़ौज अङ्गरेज़ों को अपने पास से दे। हेस्टिंग्ज़ ने सोचा था कि जब महाराज तङ्ग आ जावेंगे और ऐसा करने से इन्कार करेंगे, तो वह तुरन्त उन्हें आज्ञा भङ्ग करने के अपराध में फाँस कर रुपया देने पर बाध्य करेगा और यदि ऐसा न हो सका तो अवध के हाथों बनारस फिर से बेच दिया जाएगा। किन्तु यहाँ तो बात ही उलटी पड़ गई। महाराज ने बड़ी कठिनाई से एक हज़ार फ़ौज इकट्ठी करके कहला भेजा कि वह बङ्गाल सरकार का हुक्म मानने को प्रस्तुत हैं। हेस्टिंग्ज़ ने किसी तरह दाल गलती न देख चुप्पी साध ली, मानो उसे यह ख़बर मिली ही नहीं; क्योंकि उसे तो महाराज से पचास हज़ार पौण्ड दण्ड में लेने थे। उसने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है। वह लिखता है :—

"I resolved to draw from his guilt the means of relief to the company's distres—to make him pay largely for his pardon, or to exact severe vengeance for past delinquency."†

उसने यह भी स्वयं ही लिखा है कि उसकी ओर से चेतसिंह को कोई उत्तर नहीं दिया गया था।‡

इतनी दूर से काम न बनता देख वारन हेस्टिंग्ज़ ने बनारस जाना ही स्थिर किया। वह जुलाई में कलकत्ते से रवाना हो गया। महाराज चेतसिंह उसकी अगवानी के लिए ६० मील चल कर बक्सर आए और बहुत आदर-सत्कार के साथ उसे काशी लिवा ले गए। यहाँ तक सुनने में आता है कि उन्होंने स्वयं अपनी पगड़ी उसके पैरों में रक्खी थी। बनारस आने पर हेस्टिंग्ज़ ने महाराज से मुलाक़ात करने से इन्कार किया और केवल अपनी शर्तें लिख कर उनके पास भिजवा दीं। उसी पत्र में उन पर आज्ञा उल्लङ्घन और कर देने में आनाकानी करने के दोष भी लगाए गए थे। चेतसिंह ने बड़ी नम्रता से अपने ऊपर लगाए गए झूठे आक्षेपों का उत्तर लिख भेजा। पर हेस्टिंग्ज़ तो रुपया लेने पर तुला हुआ था। वह इन सब बातों को कैसे मानता ? उसने महाराज के पत्र को झूठा तथा अपमानसूचक बतला कर उन्हें तुरन्त गिरफ़्तार कर लिया और उनके पहरे पर दो पल्टनें नियुक्त करवा दीं।

संसार का यह नियम है कि जब कोई वस्तु, चाहे वह कितनी ही तुच्छ क्यों न हो, बहुत दबाई जाती है, सीमा से अधिक दबाई जाती है, तब कभी न कभी उसका प्रतिघात अवश्य होता है। बनारस की प्रजा इतने दिन से ख़ून का घूँट पिए अपने राजा पर अङ्गरेज़ सरकार द्वारा किए गए अत्याचारों को चुपचाप देख रही थी। पर अब उसका क्रोध असह्य हो गया। वह भीषण ज्वालामुखी की भाँति भड़क उठा। क्या वह अपनी आँखों के सामने अपने प्यारे देव-तुल्य राजा को एक विदेशी गवर्नर द्वारा पददलित होते देख सकती थी ? कदापि नहीं। शहर में भयानक बलवा मच गया, भीषण मार-काट जारी हो गई। असंख्य अङ्गरेज़ सिपाही क़त्ल कर दिए गए और बचे-खुचों ने भाग कर अपने प्राणों की रक्षा की। पर ऐसे भयङ्कर समय में वारन हेस्टिंग्ज़ ज़रा भी विचलित नहीं हुआ। इसे यदि उसका मानसिक स्थैर्य न कहें तो और क्या ? अनेक दुर्गुण होने पर भी उसमें एक बड़ा भारी गुण था। वह था यही उसका मानसिक स्थैर्य। इसी के प्रताप से उसने अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भी बड़ी योग्यता से इतने उत्तरदायित्वपूर्ण पद का कार्य भली-भाँति सञ्चालन किया। उसने प्रति दिन की भाँति ही, मानो कुछ हुआ ही नहीं था, दो पत्र लिखे। उनमें से एक तो उसकी स्त्री के नाम था, जिसमें उसने उसे लिखा था कि वह ख़ूब सुरक्षित है, और दूसरा कम्पनी के नाम, जिसमें उन्हें बनारस सहायक सेना भेजने का आदेश किया गया था। अब कठिनाई यह थी कि पत्र लेकर जावे कौन, चारों ओर तो चेतसिंह की सेना ने घेर रक्खा था। अन्त में यह निश्चित हुआ कि कुछ स्वामिभक्त हिन्दू सिपाहियों के कानों के छिद्रों में, जो कि प्रायः बहुत बड़े हुआ करते थे और जिनमें बड़े-बड़े सोने के छल्ले पहिने जाते थे, वह पत्र लपेट कर डाल दिए जावें और फिर उन्हें भेज दिया जावे। इसमें सन्देह होने की कोई गुञ्जाइश भी नहीं थी, क्योंकि बहुधा यात्रा के समय लुट जाने के भय से लोग छल्ले उतार कर उनके स्थान में काग़ज़ अथवा और कोई चीज़ डाल लिया करते थे, ताकि कान बन्द न हो जावें। अस्तु, जिस किसी तरह दोनों पत्र निश्चित स्थान पर पहुँचा दिए गए।

इसी बीच में समय पाकर चेतसिंह निकल भागे। उन्होंने एक बार फिर हेस्टिंग्ज़ से सन्धि करने का प्रस्ताव किया, लेकिन उसने उसे अस्वीकार कर दिया। इधर एक नई घटना और घटी। एक नासमझ अङ्गरेज़ युवक ऑफ़िसर ने महाराज चेतसिंह के पड़ाव पर आक्रमण कर दिया। उसका ऐसा करना था कि सारी प्रजा उसकी सेना पर टूट पड़ी और उसे छिन्न विच्छिन्न कर दिया। अवध की प्रजा नवाब के शिथिल शासन से अत्यन्त अप्रसन्न थी ही, उसे जब काशी के विद्रोह के समाचार मिले तो उसने भी नवाब के विरुद्ध कर न देने की बग़ावत शुरू कर दी। पर अब तक हेस्टिंग्ज़ के गुप्तादेशानुसार अङ्गरेज़ों की एक बड़ी भारी सेना काशी में आ पहुँची थी। उसने शीघ्र ही विद्रोहियों का दमन करके वहाँ फिर से शान्ति स्थापित कर दी। महाराज चेतसिंह पर बग़ावत खड़ी करने तथा कृतघ्नता का दोष लगा कर उन्हें ग्वालियर भेज दिया गया। गद्दी का अधिकारी उनका भतीजा बनाया गया और उसके साथ जो नई सन्धि हुई, उसके अनुसार बनारस को साढ़े बाईस लाख से बढ़ा कर चालीस लाख रुपया बङ्गाल सरकार को कर में देने का तय पाया।

यही संक्षेप में काशी के विद्रोह की दुखद कहानी है। समस्त कथा को पढ़ जाने पर हमारे समक्ष तीन प्रश्न उपस्थित होते हैं, जिन पर हमें पृथक-पृथक सुचारु रूप से विचार करना होगा। प्रथम तो यह कि कर के अतिरिक्त हेस्टिंग्ज़ को चेतसिंह से रुपया लेने का अधिकार था अथवा नहीं ? दूसरे जब चेतसिंह ने हेस्टिंग्ज़ की प्रत्येक माँग की पूर्ति कर दी, तो उन्हें क़ैद क्यों किया गया ? हमारा अन्तिम प्रश्न इस बात का विवेचन करना होगा कि हेस्टिंग्ज़ का यह कार्य कहाँ तक सराहनीय कहा जा सकता है ?

यह विषय बड़ा विवादग्रस्त है कि महाराज

* *Reports of the House of Commons, Vol vi. p. 582.*

† Macaulay's *Warren Hastings.* (Ward Lock), *p. 98.*

‡ See His Narrative of the Insurrection which happened in the Zemeendary of Benares.

चेतसिंह से बङ्गाल सरकार का वास्तविक सम्बन्ध क्या था। कुछ लोगों के कथनानुसार तो चेतसिंह कम्पनी के आश्रित एक साधारण जमींदार थे और समय पर धन तथा धन से कम्पनी की सहायता करना उनका कर्त्तव्य था। परन्तु कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो इस बात से सहमत नहीं हैं। उनका कहना है कि चेतसिंह एक स्वतन्त्र राज्य के अधिकारी थे और वारन हेस्टिंग्ज़ को उनसे कर के अतिरिक्त और कुछ लेने का कोई अधिकार नहीं था। हमें दोनों ही पक्ष के कथन ठीक नहीं जँचते। वास्तव में बात कुछ और ही थी। हम ऊपर लिख आए हैं कि उस समय भारत की राजनैतिक स्थिति बहुत ही अस्थिर थी। मुग़ल साम्राज्य का ह्रास हो चुका था और चारों ओर अशान्ति तथा अराजकता की आँधी सी चल रही थी। ऐसे समय में, जब कि क़ायदे और क़ानून का अस्तित्व ही नहीं हो सकता, धूर्त्त और कपटी लोगों की ख़ूब बन आई थी और वे अपनी मनमानी कर रहे थे। यह बात हेस्टिंग्ज़ की पैनी दृष्टि से छिपी न रह सकी। अपना कार्य साधन करना ही उसका एकमात्र ध्येय था। चाहे उसके लिए कितनी ही धूर्त्तता अथवा कूटनीतिज्ञता से काम क्यों न लेना पड़े, कितने ही अकाण्ड-ताण्डव क्यों न करने पड़ें, इसकी उसे ज़रा भी परवा न थी। उसने तुरन्त अपना पथ निश्चित कर लिया। जब कभी कम्पनी को यह सिद्ध करने की आवश्यकता होती कि बङ्गाल से कर लेने का उन्हें अधिकार है, तो तुरन्त मुग़ल सम्राट की मुहर की हुई फ़र्मान दिखा दी जाती। पर इस फ़र्मान को देने वाला नाम-मात्र का सम्राट अन्धा शाहआलम था, यह नहीं बतलाया जाता था। उस समय वह भारत के शाहन्शाह दिल्लीश्वर सम्राट शाहआलम हो जाते थे। परन्तु जहाँ बादशाह ने बङ्गाल से कर लेने का अधिकार प्रकट किया कि उसे तुरन्त एक नाम-मात्र का सम्राट बता कर दुत्कार दिया जाता। कहने का तात्पर्य यह है कि चेतसिंह न तो ज़मींदार ही कहे जा सकते हैं और न स्वतन्त्र राजा ही। वास्तव में वह थे केवल वारन हेस्टिंग्ज़ के हाथ का एक खिलौना। यही कारण था कि उसने जब जैसा चाहा, वैसा ही महाराज चेतसिंह से कराया। ज़मींदार बना कर उनसे रुपया वसूल किया और स्वतन्त्र राजा कह कर उन्हें अपनी ओर मिलाए रक्खा। किन्तु हम इसमें हेस्टिंग्ज़ का कोई बड़ा भारी दोष नहीं समझते, क्योंकि उस समय का यह एक साधारण नियम-सा हो गया था। हाँ, इतना तो अवश्य कहना ही होगा कि अङ्गरेज़ी सभ्यता के "आदर्श सिद्धान्तों" की दृष्टि से उसका यह कार्य निन्दनीय था।

चेतसिंह ज़मींदार थे अथवा स्वतन्त्र राजा, इससे हमें कोई विशेष मतलब नहीं। निर्णय केवल इसी बात का करना है कि क्या कम्पनी ने उनसे कभी कोई ऐसी सन्धि की थी, जिसके द्वारा यह सिद्ध हो जाय कि वार्षिक कर के अतिरिक्त उसे और कुछ भी लेने का अधिकार था। यदि यह सत्य है तब तो हेस्टिंग्ज़ का कोई दोष नहीं कहा जा सकता, किन्तु अगर ऐसी कोई सन्धि नहीं हुई थी तो फिर निस्सन्देह वह दोषी ठहरता है। पाश्चात्य इतिहासकार विलसन साहब लिखते हैं कि इस आदेश की कोई सन्धि नहीं हुई थी, केवल बङ्गाल काउन्सिल ने एक ऐसा प्रस्ताव पास किया था, जोकि सन्धि के रूप में परिणत नहीं हुआ। उनका यह कथन ठीक नहीं है, क्योंकि यथार्थ में पाँच जुलाई सन् १७७५ को हेस्टिंग्ज़ और चेतसिंह के बीच जो सनद लिखी गई थी, उसमें लिखा था:—

"While he (Chait Singh) paid his contribution, no demand shall be made upon him by the Hon'ble Company, of any kind, or on any pretence whatsoever nor shall any person be allowed to interfere with his authority, or to disturb the peace of his country."*

सनद के उपरोक्त उद्धृत अंश से साफ़ प्रकट होता है कि हेस्टिंग्ज़ ने महाराज से वादा किया था कि कर के अतिरिक्त वह उनसे और कुछ नहीं माँगेगा और न किसी को उनके राज्य सम्बन्धी आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का ही अधिकार होगा। अब प्रश्न यह उठ सकता है कि वारन हेस्टिंग्ज़ ने ऐसी सन्धि की ही क्यों, जब कि वह एक सर्वोच्च शासक (Parmount Power) की हैसियत में चाहे जैसी सनद महाराज से लिखा सकता था? इसका उत्तर वह स्वयं इस प्रकार देता है:—

"Without some such an arrangement, Chait Singh will expect from every change of government, additional demands to be made upon him, and will ofcourse descends to all the arts of intrigue and concealment practised by other dependent Rajas."†

अब यह तो स्पष्ट सिद्ध हो गया कि ऐसी कोई शर्त सन्धि में अवश्य थी। आगे चल कर अपने ब्रिटिश भारत के इतिहास में, जिल्द ४, पृष्ठ २५६ पर विलसन साहब ने लिखा है कि सन् १७७६ में जो सनद चेतसिंह के साथ की गई थी, उसमें ऐसी कोई शर्त नहीं थी, और चूँकि इस सनद द्वारा पिछली सब सनदें रद्द हो गई थीं, इसलिए रुपया लेने के मामले में सन् १७७५ के प्रस्ताव की (जो कि वास्तव में सनद ही थी, जैसा कि ऊपर सिद्ध किया जा चुका है) दोहाई देना अत्यन्त अनुचित है। पर शायद विलसन साहब को यह नहीं मालूम था कि सन् १७७६ की सनद का वह अंश, जिसके द्वारा वह सन् १७७५ की सनद का रद्द होना बतलाते हैं, चेतसिंह के ही कहने-सुनने पर, कुछ ही समय बाद, स्वयं वारन हेस्टिंग्ज़ और उसकी कौन्सिल के मेम्बरों द्वारा निकाल दिया गया था और उसमें भी सन् १७७५ की सनद का यह अंश ज्यों का ज्यों बना रहा।‡ अतः सन् १७७५ की शर्तों पर सन् १७७६ की सनद का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। सब बातों पर ध्यान देने से यही निष्कर्ष निकलता है कि कर के अतिरिक्त हेस्टिंग्ज़ को चेतसिंह से एक फूटी कौड़ी लेने का भी अधिकार नहीं था। हाँ, यह बात दूसरी है कि सन्धि को हम एक रद्दी काग़ज़ का टुकड़ा ही समझें, जैसा कि आजकल की सभ्य जातियों का सिद्धान्त सा हो रहा है।

भारत के पाश्चात्य इतिहासकारों के मत से चेतसिंह पर हेस्टिंग्ज़ द्वारा किए गए अत्याचार, अत्याचार नहीं कहला सकते। वे तो केवल समयोचित कर्त्तव्य की पूर्ति के साधन मात्र थे। हेस्टिंग्ज़ की सी दशा में होने पर प्रत्येक मुख्य सरकार, चाहे वह भारतीय हो अथवा विजातीय, ऐसा ही करती। सेण्ट्रल गवर्नमेण्ट भी तो कोई अधिकार रखती है। जब समस्त साम्राज्य पर सङ्कट पड़ता है, उस समय स्थानीय प्रान्तों की सुख-शान्ति पर ध्यान नहीं दिया जा सकता, वरन् आवश्यकता पड़ने पर उनका बलिदान तक करना होता है। क्योंकि स्थानीय प्रान्तों की सुख-शान्ति भी तो मुख्य सरकार ही पर आश्रित है। जहाँ मुख्य सरकार का शासन शिथिल हुआ कि उसे शत्रुओं ने आ दबाया। उसी समय स्थानीय सरकारों के भाग्य का निबटारा भी हो जाता है। उन्हें परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़े रह कर नरक की यन्त्रणा भोगनी पड़ती है। वह समय ऐसा ही था। मैसूर के नवाब हैदरअली और मरहठों से कम्पनी के नौकर से लगा कर मुख्य अफ़सर तक सदा चौकन्ने रहते थे। न जाने वे कब चढ़ आवें, यही ध्यान उन्हें आठों पहर सताया करता था। ऐसे समय में सेना की सुव्यवस्था के लिए रुपया न रहा तो दो-दो बलिष्ट शत्रुओं के सम्मुख वह कर ही क्या सकती थी? इन्हीं सब कारणों से प्रेरित होकर यदि हेस्टिंग्ज़ ने चेतसिंह से येन-केन-प्रकारेण रुपया वसूल करने का प्रयत्न किया तो इसमें उसका दोष ही क्या था? क्या कम्पनी के पैर उखाड़ डालने के बाद किसी दिन बनारस पर भी हैदरअली न आ धमकता? प्रायः इसी प्रकार की युक्तियों द्वारा पाश्चात्य इतिहासकार हेस्टिंग्ज़ के पक्ष का समर्थन किया करते हैं। किन्तु हमें तो यह देखना ही होगा कि उनकी इन युक्तियों में कितना तथ्य है, कहाँ तक बल है।

थोड़ी देर के लिए मान लीजिए कि हेस्टिंग्ज़ ने जो कुछ किया, समय की प्रतिकूलता के कारण ही किया, तो भी नैतिक दृष्टि से उसका यह कार्य कदापि समीचीन नहीं कहा जा सकता। क्या एक बलवान मनुष्य का अपने दुर्बल पड़ोसी के प्रति ऐसा ही कर्त्तव्य है? क्या महात्मा ईसा के इस उपदेश का कि "Do unto your neighbour as you would that he should do unto you," एक भी अक्षर सत्य तथा सर्वमान्य नहीं? और

(शेष मैटर २०वें पृष्ठ के तीसरे कॉलम में देखिए)

Selections from the Letters, Despatches and other State Papers in the Foreign Dept. of the Govt. of India, 1772-85. G. W. Forrest, *Vol, ii, p. 402.*

† *Reports from Committees of the House of Commons. Vol. v. pp. 618-19.*

‡ *Selections from the Letters, Despatches and other State Papers in the Foreign Dept. of the Govt. of India.* G. W. Forrest, *Vol. ii. pp. 512, 549, 557.*

लेनिन

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

सोविएट प्रजातन्त्र तथा कम्यूनिस्ट इण्टर नेशनल का पिता, बोल्शेविक दल का नेता तथा रूस की अक्टूबर वाली क्रान्ति के सञ्चालक का नाम किसने न सुना होगा? लेनिन का पूरा नाम व्लडीमिर इलिइच लेनिन (Vladimir Ilyich) था। उसका जन्म सिमबिरस्क (अब उल्यानोव्स्क) नाम के एक क़स्बे में, सन् १८७० की ६वीं अप्रैल को हुआ था। उसका पिता, जिसका नाम इलिया निकोलिविच था, एक शिक्षालय में शिक्षक का काम करता था। और उसकी माता, मेरिया एलेक्ज़ेन्ड्रोवना थी बर्ग नाम के एक डॉक्टर की लड़की। उसके सब से बड़े भाई ने तीसरे एलेक्ज़ेण्डर को मार डालने का प्रयत्न किया था और इसी अपराध में उसे, सन् १८८१ में, प्राणदण्ड दिया गया था। लेनिन के जीवन पर इस घटना का बहुत असर पड़ा था। यहाँ तक कि इसी घटना ने उसे भविष्य का मार्ग बता दिया।

लेनिन ने सिमब्रिस्क जिमनासियम् में, सन् १८८७ में, अपनी शिक्षा पूरी की। उसे पुरस्कार में स्वर्ण-पदक भी मिला था। क़ानून का अध्ययन करने के लिए वह कज़ान विश्वविद्यालय में भरती हुआ। पर कुछ महीनों के बाद ही वह एक सभा में भाग लेने के अभियोग विश्वविद्यालय से निकाल दिया गया। सन् १८८९ के पहिले वह फिर विश्वविद्यालय में न आ सका। अपने विश्वविद्यालय-काल में वह अपना समय कार्ल मार्क्स की पुस्तकों का अध्ययन करने में बिताता था। और मार्क्स के दल के जो लोग वहाँ रहा करते थे, उनसे मिला करता था।

सन् १८९१ में लेनिन ने सेण्ट पिटर्सबर्ग विश्वविद्यालय से क़ानून की परीक्षा पास की और सन् १८९२ में उसने अपनी वकालत आरम्भ कर दी। पर उसका दिल इस काम में अधिक न लगता था। और वह मार्क्स के अध्ययन में ही जुटा रहता था। वह चाहता था कि मार्क्स के सिद्धान्तों का रूस के आर्थिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में प्रयोग किया जावे और चाहता था, उनके द्वारा तमाम संसार का उद्धार करना।

सन् १८९४ में वह सेण्ट पीटर्सबर्ग में आकर रहने लगा और अपना प्रचार-कार्य आरम्भ किया। उस समय कुछ ऐसे लोग थे, जो मार्क्स के सिद्धान्तों को ग़लत समझते तथा समझाते थे। लेनिन ने समाचार-पत्रों में ऐसे लोगों के विरुद्ध कई लेख लिखे।

सन् १८९५ में वह पहले-पहल रूस छोड़ कर विदेश गया और प्लेखनोव आदि मार्क्स के भक्तों से भेंट की।

जब वह लौट कर सेण्ट पिटर्सबर्ग आया तो आते ही उसने एक गुप्त सभा की स्थापना की। इस सभा का उद्देश्य था, मज़दूरों का उद्धार करना। बहुत शीघ्र यह सभा प्रसिद्ध हो गई। सभा द्वारा श्रमिकों में प्रचार-कार्य किया जाने लगा।

सन् १८९५ के दिसम्बर में लेनिन तथा उसके साथी गिरफ़्तार कर लिए गए। उसका १८९६ का सारा वर्ष कारागार में ही बीता। १८९७ में उसे तीन साल के लिए देश-निकाला दिया गया। इन वर्षों में वह पूर्वीय साइबेरिया के येनिसी प्रान्त में रहा। सन् १८९८ में उसने अपनी शादी एन० के० क्रुप्सकया के साथ की। इसी साल उसने अपनी सब से प्रसिद्ध अर्थशास्त्र-सम्बन्धी पुस्तक लिखी। इस पुस्तक का अङ्गरेज़ी नाम है—Development of Capitalism in Russia सन् १९०० में वह स्वीज़रलैण्ड गया। वह रूस में एक क्रान्तिकारी पत्र निकालना चाहता था। उसी का प्रबन्ध करने के लिए वहाँ गया था। इसी वर्ष के अन्त में 'इस्क्रा'

वर्तमान रूस के विधायक स्वर्गीय मोशिए लेनिन

(चिनगारी) पत्र का प्रथम अङ्क म्युनिच से निकला। इस पत्र का मोटो था, 'चिनगारी से लपट' (From spark to flame)

सन् १९०३ में दूसरी रूसी कॉङ्ग्रेस ब्रसेल्स तथा लन्दन में हुई। इस कॉङ्ग्रेस ने लेनिन तथा प्लेखनोव के बनाए हुए प्रोग्राम को मान लिया। पर इस कॉङ्ग्रेस में आपस में फूट पड़ गई और इसके दो दल हो गए। एक दल तो बोल्शेविकों का था और दूसरा था, मेनशेविकों का। बोल्शेविक दल का नेता लेनिन ही था। दोनों दलों में मुख्य अन्तर यह था कि मेनशेविक दल नरम विचार के धनिक लोगों से मिल कर काम करना चाहता था और बोल्शेविक दल किसानों से मिल कर कार्य करना चाहता था। उसे धनिकों से कुछ आशा न थी। इस फूट का अन्त में परिणाम यह हुआ कि सन् १९१४ में, द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय (Second International) का अन्त हो गया। सन् १९१७ में अक्टूबर की क्रान्ति हुई और सन् १९१८ में पार्टी का नाम 'सोशल डिमोक्रैट' से बदल कर 'कम्यूनिस्ट पार्टी' रख दिया गया। अस्तु।

सन् १९०४ में रूस और जापान में युद्ध हुआ। पाठकों को याद होगा कि इस युद्ध में जापान ने विजय पाई थी। यह पहला ही अवसर था कि एशिया के एक राष्ट्र ने यूरोप के एक बड़े राष्ट्र को युद्ध में पछाड़ा था। रूस की इस हार का उत्तरदायित्व रूस के शासकों पर ही था। अतएव रूस की जनता अपने शासकों से बहुत ही अप्रसन्न थी। इसके अलावा कुछ और भी ऐसी घटनाएँ हुईं, जिसने रूस की जनता को उत्तेजित कर दिया था। ९ जनवरी १९०५ को श्रमिकों पर गोलियाँ चलाई गई थीं, और तमाम देश में राजनैतिक हड़तालें हो रही थीं। लेनिन चाहता था कि ज़ारशाही के विरुद्ध जनता की एक सशस्त्र सेना का सङ्गठन किया जावे और साथ ही एक अस्थायी सरकार की स्थापना भी की जाय, जो किसानों तथा मज़दूरों को ज़ार के चङ्गुल से छुड़ा सके।

बोल्शेविक दल की तीसरी कॉङ्ग्रेस मई, १९०५ में हुई। इस कॉङ्ग्रेस ने एक नया प्रोग्राम बनाया, जिसमें ज़मींदारों की जायदादें ज़ब्त करना भी शामिल था।

सन् १९०५ के अक्टूबर में रूस भर में हड़ताल हुई। यह हड़ताल रूस के एक कोने से दूसरे कोने में फैल गई। इस बढ़ती हुई आँधी को देख कर रूस की ज़ारशाही सरकार सहम गई और अपने भविष्य के बारे में सोचने लगी। इस आँधी को रोकने के लिए तथा जनता को शान्त करने के लिए रूस के ज़ार ने एक तरकीब सोची। १७ अक्टूबर को ज़ार ने रूस के शासन-विधान के सम्बन्ध में एक घोषणा की।

जिस समय रूस में यह सब हो रहा था, उस समय लेनिन जिनेवा में था। परन्तु अब वहाँ रहना बेकार समझ कर, वह नवम्बर के आरम्भ में रूस लौट आया

और आते ही एक अपील निकाली। इस अपील में बोल्शेविकों से कहा गया था कि वे अपने दल में अधिक से अधिक मज़दूरों को शामिल करें।

१६०५ का वर्ष रूस तथा लेनिन के लिए बड़े महत्व का था। इस वर्ष में अनेक घटनाएँ हुई थीं। यहाँ तक कि कुछ समय के लिए रूस की जनता को राजनैतिक स्वतन्त्रता मिल गई थी, यद्यपि वे बहुत काल तक उसे रख न सके। इसी वर्ष श्रमिकों, सैनिकों तथा किसानों का ज़बरदस्त सङ्गठन किया गया और 'सोवियटों' की स्थापना की गई।

दिसम्बर के अन्त में रूस के प्रसिद्ध नगर मास्को में बलवा हुआ। पहिले तो ऐसा प्रतीत होता था कि यह विद्रोह दबाया न जा सकेगा। पर शीघ्र ही यह धारणा ग़लत प्रमाणित हुई और विद्रोह पूर्णतया कुचल दिया गया। इस विद्रोह के असफल होने का मुख्य कारण यह था कि देश के और दूसरे नगरों में तथा देहातों में पूरी शान्ति बनी रही।

इस घटना के पश्चात्, सन् १६०७ में, लेनिन को रूस एक बार फिर छोड़ना पड़ा। इस समय वह दस वर्ष तक बाहर रहा और सन् १६१७ के पहिले रूस लौट कर नहीं आया। सन् १६०७ से ही रूस में भयङ्कर दमन-काल का श्रीगणेश होता है। सैकड़ों पुरुष कारागारों में बन्द कर दिए गए। अनेकों को देश-निकाला और प्राणदण्ड दिया गया। क्रान्ति का नामोनिशान मिटाने का पूरा प्रयत्न किया गया।

सन् १६०७ में जब लेनिन रूस छोड़ कर भाग रहा था; तो एक समय वह मरते-मरते बचा। वह स्टॉकहोम जाना चाहता था। पुलिस उसका बुरी तरह पीछा कर रही थी। अगर वह अबो से स्टीमर में चढ़ कर जाता तो अवश्य ही पकड़ जाता। क्योंकि वहाँ पुलिस का कड़ा पहरा रहता था और बहुत से आदमी वहाँ स्टीमर पर चढ़ते हुए गिरफ़्तार किए जा चुके थे। लेनिन के एक साथी ने उसे क़रीब के एक द्वीप से स्टीमर पर चढ़ने की सलाह दी। रूस की पुलिस वहाँ उसे गिरफ़्तार नहीं कर सकती थी। पर उस द्वीप तक पहुँचने में बहुत दूर तक बरफ़ पर चलना पड़ता था। जाड़ा ख़ूब पड़ रहा था, स्थान-स्थान पर बरफ़ ख़तरनाक थी। कोई भी पुरुष अपने प्राण को सङ्कट में नहीं डालना चाहता था, अतएव पहिले तो लेनिन को कोई पथ-प्रदर्शक नहीं मिला। अन्त में, दो किसान, जो उस स्थान से भली प्रकार परिचित थे, यह कार्य करने को तैयार हो गए। रात को वे लोग बरफ़ पार करने लगे। एक स्थान पर जब लेनिन बरफ़ पार कर रहा था, तो उसके पाँव के नीचे की बरफ़ अकस्मात् खसक गई। उस समय संयोग से ही वह मरने से बच गया! जब उसके पैरों के नीचे से बरफ़ हट रही थी, तो उसने कहा था—आह! इस प्रकार मरना कितनी मूर्खता की बात है।

रूस से बाहर रह कर लेनिन ने मेनशेविकों तथा उन लोगों का, जो मेनशेविकों तथा बोल्शेविकों के मध्य में रहना चाहते थे, विरोध किया और उन बोल्शेविकों का भी विरोध किया, जो चाहते थे कि सोशल डिमोक्रेटिक दल के मेम्बर ड्यूमा (Duma) छोड़ कर चले आवें।

सन् १६१२ में रूस में मज़दूरों के आन्दोलन ने फिर ज़ोर पकड़ा। और सन् १६१४ तक यह आन्दोलन बढ़ता ही गया। सन् १६१२ में लेनिन ने प्रेग नगर में रूस के बोल्शेविकों की एक गुप्त कॉन्फ्रेन्स बुलाई। इस कॉन्फ्रेन्स ने एक नवीन केन्द्रीय कमिटी चुनी। बाहर ही रहते हुए लेनिन ने रूस के सेण्ट पिटर्सबर्ग नगर से 'प्रवदा' नाम के एक समाचार-पत्र के निकालने का प्रबन्ध किया। ये सारे काम लेनिन इस चतुराई से करता था कि रूस की सरकार दङ्ग रह जाती थी और उसका कुछ न कर पाती थी।

जुलाई १६१२ को लेनिन अपने घनिष्ट साथियों के साथ पेरिस छोड़ कर क्रेको चला गया। रूस में क्रान्ति बढ़ रही थी। उन दिनों प्रति दिन सारे बोल्शेविक पत्रों में अलग-अलग नाम से लेनिन लेख लिखा करता था। जिस पत्र में देखिए, लेनिन का लिखा हुआ कोई न कोई लेख अवश्य मिलेगा।

लेनिन की पत्नी—क्रूपस्कया—इस सारे सङ्गठन की केन्द्र थी। वही लोगों से मिला करती थी, लिखा-पढ़ी किया करती थी और सारा सङ्गठन का कार्य चलाती थी।

जब सन् १६१४ में यूरोप का महायुद्ध प्रारम्भ हुआ, उस समय लेनिन गलेशिया के पोरोनिन नाम के एक छोटे से नगर में था। पाठक जानते हैं कि गलेशिया ऑस्ट्रिया का एक प्रान्त था। ऑस्ट्रिया की पुलिस ने लेनिन को रूस का जासूस समझ कर गिरफ़्तार कर लिया। पन्द्रह दिन पश्चात् उसे ऑस्ट्रिया छोड़ देने की आज्ञा मिली। फलतः वह ऑस्ट्रिया छोड़ कर स्वीज़रलैण्ड चला गया।

१ नवम्बर, १६१४ को लेनिन ने एक मैनीफ़ेस्टो निकाल कर साम्राज्यवादी युद्ध का विरोध किया; उसने कहा कि इस युद्ध के लिए सभी बड़े राष्ट्र दोषी हैं, जो वर्षों से अपनी वस्तुओं के लिए बाज़ार बढ़ाने तथा अपने शत्रुओं को नष्ट करने के लिए युद्ध की तैयारी कर रहे थे। एक देश के धनी लोग दूसरे देश के धनिकों पर जो दोषारोपण कर रहे थे, वह संसार के श्रमिकों को धोखा देने का एक उपाय था। मैनीफ़ेस्टो में यह भी कहा गया था कि सोशल डिमोक्रेटिक दल के नेताओं का बहुमत युद्ध का समर्थन कर रहा था और सोशलिस्ट कॉङ्ग्रेसों के प्रस्तावों के विरुद्ध आचरण कर द्वितीय अन्तर्राष्ट्रीय (Second International) का अन्त कर रहा था। अपने मैनीफ़ेस्टो के अन्त में लेनिन ने ज़ोरदार शब्दों में तमाम देशों के सोशल डिमोक्रेटों से अपील की थी कि वे अपने-अपने देश की सरकार की हार मनावें।

लेनिन ने एक नवीन अन्तर्राष्ट्रीय दल की स्थापना करने के लिए प्रोग्राम बनाया और उसका ध्येय तथा नीति निश्चित की।

सन् १६१५ के सितम्बर में यूरोप के उन साम्यवादियों की, जो साम्राज्यवादी युद्ध के विरोधी थे, प्रथम कॉन्फ्रेन्स हुई। यह कॉन्फ्रेन्स स्वीज़रलैण्ड के ज़िमरवाल्ड नाम के एक नगर में हुई थी। इसमें ३१ डेलीगेटों ने भाग लिया था।

इस प्रकार लेनिन ने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में क़दम रक्खा! अब उसका कार्यक्षेत्र केवल रूस ही न रह गया। लेनिन अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र के लिए अत्यन्त उपयुक्त था। वह अङ्गरेज़ी, जर्मन तथा फ़्रेञ्च भाषाओं का विद्वान और साथ ही साथ स्वीडेन, इटली तथा पोलैण्ड की भाषाएँ भी जानता था।

लेनिन अभी स्वीज़रलैण्ड ही में था कि रूस में क्रान्ति आरम्भ हो गई। यह घटना फ़रवरी, सन् १६१७ की है। रूस में पुनः एक बार आग लग गई। भला अब लेनिन को स्वीज़रलैण्ड में चैन कैसे पड़ सकता था। वह रूस पहुँचने के लिए छटपटाने लगा। उसने वहाँ पहुँचने के लिए कितने प्रयत्न किए, पर इङ्गलैण्ड की सरकार ने विरोध किया और उसके प्रयत्नों को सफल न होने दिया। अतः लाचार होकर उसने जर्मनी होकर रूस जाने का निश्चय किया। उसे मार्ग में बड़ी कठिनाइयाँ हुईं। पर अन्त में वह अपने प्रयत्न में सफल हुआ और रूस पहुँच गया। इसके लिए उसे कुछ ऐसी बातें करनी पड़ीं कि जिनके कारण उसके शत्रुओं ने उस पर कितने ही घृणित अभियोग लगाए। पर लेनिन सहज ही घबड़ाने वाला पुरुष न था। वह उन बातों से विचलित नहीं हुआ और वे लोग उसका कुछ भी न बिगाड़ सके। लेनिन अपने दल का नेता बना ही रहा।

४ अप्रैल की रात थी। लेनिन ट्रेन से पेट्रोग्राड के फ़िनलियण्डस्की स्टेशन पर उतरा और उतरते ही एक व्याख्यान दिया। लोगों को अपनी बातें समझाईं। उसने कहा कि ज़ारशाही का अन्त कर देने से ही कार्य का अन्त नहीं होता। असल में यह तो कार्य का श्रीगणेश है। जब तक जनता सन्तुष्ट नहीं होती, तब तक काम अधूरा ही रहेगा। इसलिए उसने जनता से राजनैतिक शक्ति हाथ में लेने के लिए तैयार होने को कहा और उसके सामने इस कार्य के लिए एक प्रोग्राम भी रक्खा।

पर वह प्रोग्राम इतना गरम था कि कितने ही बोल्शेविकों ने उसका विरोध किया, प्लेखनोव ने लेनिन के इस प्रोग्राम को लेनिन की 'सनक' बतलाया था।

उस समय कुछ देशभक्त साम्यवादी अपने देश के धनवानों तथा बड़े आदमियों से मिल कर काम करना चाहते थे। रूस की 'क्रान्ति-विरोधिनी गुप्त सभा' बोल्शेविकों के विरुद्ध प्रचार कर रही थी। इस सभा ने ५ जुलाई को कुछ पत्र प्रकाशित किए थे, जिनमें यह दिखलाया गया था कि लेनिन को जर्मनी से सहायता मिलती थी और वह 'जर्मन जनरल स्टाफ़' के अधीन काम कर रहा था।

प्रचण्ड दमन से आन्दोलन पूर्णतया कुचल दिया गया और रूस की पुलिस लेनिन के पीछे हाथ धोकर पड़ गई। लेनिन भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर छिपता फिरता रहा, परन्तु छिपे-छिपे काम भी करता था। कुछ दिन तक वह पेट्रोग्राड में एक मज़दूर के घर में छिपा रहा। फिर वह वहाँ से भाग कर फ़िनलैण्ड चला गया। पर यह हालत बहुत काल तक न रही। बहुत शीघ्र एक दूसरी लहर आई और उसने एक बार फिर जनता में खलबली मचा दी। जनता फिर जाग्रत हुई। पेट्रोग्राड और मास्को के सोवियटों में बोल्शेविकों का बहुमत हो गया। लेनिन तो ऐसे अवसर की प्रतीक्षा ही कर रहा था। उसने जनता से, इस अवसर से लाभ उठा कर शासन-शक्ति को अपने हाथों में लेने की अपील की। 'अब या कभी नहीं' यही वह बार-बार कहता था। उसका कहना था कि ऐसा अवसर बार-बार नहीं आता। यदि इस अवसर से जनता ने लाभ नहीं उठाया, तो फिर वह वर्षों तक कुछ नहीं कर सकेगी।

अस्थायी सरकार के विरुद्ध क्रान्ति हुई और इसके साथ ही २५ अक्टूबर को सोवियट की द्वितीय कॉङ्ग्रेस की बैठक हुई। साढ़े तीन महीने छिपे रहने के पश्चात् अब लेनिन जनता के सामने आया और आते ही उसने आन्दोलन का नेतृत्व अपने हाथों में ले लिया। २७ अक्टूबर को कॉङ्ग्रेस की रात की बैठक में उसने एक योजना मेम्बरों के सामने रक्खी, जो सर्वसम्मति से मान ली गई। उस समय बोल्शेविकों की ओर से एक घोषणा निकाली गई थी, जिसमें यह कहा गया था कि रूस का शासनाधिकार अब सोवियट के हाथों में आ गया। रूस के किसानों ने भी बोल्शेविकों का साथ दिया और शासन की बागडोर जनता के हाथों में आ गई। लेनिन का प्रयत्न सफल हो गया।

पाठकों को याद होगा कि जिस समय रूस में यह सब हो रहा था, उस समय यूरोप में महासंग्राम जारी था। रूस की सोवियट के सामने युद्ध और शान्ति का प्रश्न उपस्थित हुआ। सोवियट दल के कुछ लोग युद्ध के पक्ष में थे, यद्यपि वे जानते थे कि रूस की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। पर लेनिन बहुत दूरदर्शी था, वह चाहता था कि जर्मनी से बहुत समय तक बातचीत जारी रक्खी जावे, ताकि रूस को प्रचार करने का अवकाश मिल जावे। पर यदि बातचीत अधिक काल तक न चल सके और जर्मनी युद्ध करने के लिए तैयार हो जावे तो रूस को उससे सन्धि कर लेनी चाहिए। चाहे रूस को

इस सन्धि के लिए कुछ देना ही क्यों न पड़े। इसका कहना था कि पश्चिम में जो क्रान्ति उठ रही है, वह आगे चल कर रूस की समस्त हानियों की पूर्ति कर देगी।

केन्द्रीय कमिटी की १८ फ़रवरी की बैठक में, इस प्रश्न पर ख़ूब बहस हुई। पर कमिटी का बहुमत लेनिन के पक्ष में था। फलतः जर्मनी से सन्धि कर ली गई। लेनिन के प्रस्ताव पर सोवियट सरकार का केन्द्र मास्को चला आया। जब पूरी तरह शान्ति स्थापित हो गई, तब लेनिन ने अपना ध्यान रूस की आर्थिक तथा साहित्यिक स्थिति सुधारने की ओर दिया।

पर अभी रूस के कष्टों का अन्त नहीं हुआ था। उसकी अग्नि-परीक्षा और भी होने को थी। सोवियट के विरुद्ध क्रान्ति उठ खड़ी हुई। ज़ेकोस्लोवाकों (Czecho-slovaks) ने सोवियट के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। २ अगस्त को आरचेञ्जल में और १४ अगस्त को बाकू में अङ्गरेज़ों ने हस्तक्षेप किया। रूस में खाद्य-पदार्थ भी न जाने दिए जाते थे। पर लेनिन इन बाधाओं से बिल्कुल नहीं घबड़ाया। उसने ख़ूब प्रचार किया। जनता को जगाया और कमर कस कर बाधाओं का सामना किया।

३० अगस्त की बात है। मज़दूरों की एक सभा हो रही थी, लेनिन उसमें व्याख्यान देने जा रहा था और अभी थोड़ी ही दूर गया था कि कपलन नाम के एक मनुष्य ने उस पर दो गोलियाँ चलाईं। लेनिन घायल हो गया, पर सौभाग्य से मरा नहीं। वह एक हट्टा-कट्टा पुरुष था। अतएव उसके ज़ख़्म शीघ्र ही अच्छे हो गए थे। सन् १९२१ में सोवियट ने विरोधी-दल को पूरी तरह से कुचल दिया।

लेनिन ने अपने जीवन में घोर परिश्रम किया था तथा अनेक कष्ट उठाए थे। उसे दिन-रात परिश्रम करना पड़ता था और बहुधा हफ़्तों तक वह चैन से बैठ भी नहीं सकता था। इन्हीं सब कारणों से उसकी तन्दुरुस्ती जवाब दे रही थी। सन् १९२२ के प्रारम्भ में उसके डॉक्टरों ने उसे काम करने से मना कर दिया। दिसम्बर में उसके दहिने हाथ और पाँव में लकवा मार गया।

रूस के प्रसिद्ध नगर मास्को के पास एक क़स्बा है, जिसका नाम है गार्की। इसी क़स्बे में लेनिन का इलाज हो रहा था। यहीं पर सन् १९२४ की २१ जनवरी के दिन, शाम के साढ़े छै बजे लेनिन ने इस असार संसार से सदा के लिए बिदा ले ली।

लेख के अन्त में मैं दो शब्द एन० के० क्रप्सकया—लेनिन की पत्नी—के बारे में भी कह देना चाहता हूँ। क्रप्सकया ने लगातार तीस वर्ष तक लेनिन के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर काम किया है। वह बराबर सारे सङ्गठनों की केन्द्र थी। सन् १९०१ से लेकर सन् १९०३ तक वह 'इस्क्रा' पत्र की सम्पादकीय मन्त्री थी। और उसके पश्चात् वह सोशल डिमोक्रैटिक पार्टी के अन्तर्गत बोल्शेविक दल की मन्त्री थी। सन् १९०५ से लेकर सन् १९०८ तक वह अपनी पार्टी के केन्द्रीय कमिटी की मन्त्री थी। जब वह १९१५-१६ में स्वीज़रलैण्ड में रहती थी, उसने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Popular Education and Democracy लिखी थी। जब वह १९१७ में लेनिन के साथ लौट कर रूस में आई, तो अक्टूबर की भावी क्रान्ति की तैयारी में लग गई। अक्टूबर की क्रान्ति के पश्चात् वह सोवियट सरकार के शिक्षा-विभाग में एक ऊँचे पद पर नियुक्त की गई। हाल ही में क्रप्सकया ने लेनिन पर एक पुस्तक लिखी है। उस पुस्तक का पहिला भाग निकल गया है। दूसरा अभी निकलने को है। पुस्तक का अङ्गरेज़ी नाम है—Memories of Lenin.

* * *

सबसे अच्छा देश हमारा

[श्री० अब्दुल असर हफ़ीज़, जालन्धरी]

सबसे अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा
देश हमारा जिसमें जारी हैं दरिया और नहरें
दरियाओं की मौजें प्यारी और नहरों की लहरें
जन्नत है एक एक किनारा
सब से अच्छा देश हमारा

सबसे अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें लम्बे-चौड़े हैं मैदान
इन मैदानों की ज़रख़ेज़ी पर दुनिया क़ुर्बान
सोना-रूपा इन पर वारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें हैं सरसब्ज़ हमारे खेत
ग़ल्लों और अनाजों से भरपूर हैं सारे खेत
दुनिया के जीने का सहारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें ख़ुशबूदार हैं ख़ाक औ धूल
बाग़ लगाते हैं हम दाता देता है फल-फूल
देखो बाग़ों का नज़्ज़ारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें गुज़रे हैं राँझा और हीर
उनके आईने में देखो उल्फ़त की तस्वीर
इश्क़ है या आतश का शरारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जिसमें रहते हैं हम भाई-भाई
उल्फ़त रखते हैं हम सब मुस्लिम सिक्ख हिन्दू ईसाई
आपस में है भाईचारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा जन्नत है भारत है इसका नाम
इसकी गोदी में हम 'हिन्दी' करते हैं आराम
हमको यह महबूब है सारा
सब से अच्छा देश हमारा

सब से अच्छा देश हमारा
प्यारा दुनिया भर से प्यारा !
देश हमारा, देश के हम हैं, आपस में है प्रीत
एक हैं सारे भारतवासी एक है सबकी रीत
साज़ हमारा है इकतारा
सबसे अच्छा देश हमारा !

(चन्दन)

* यह सुन्दर कविता पञ्जाब को लक्ष्य कर लिखी गई है, परन्तु हमने 'पञ्जाब' और 'पञ्जाबी' के स्थान पर 'भारत' और भारतवासी कर दिया है। आशा है, कवि महोदय हमें क्षमा करेंगे।

—सं० 'भविष्य'

(१७वें पृष्ठ का शेषांश)

क्या इसी सिद्धान्त का अनुसरण करने के लिए गत महायुद्ध में समस्त सभ्य संसार ने भाग नहीं लिया था? लोग कहेंगे, इस समय और उस समय में ज़मीन-आसमान का अन्तर है। आज समाज सभ्यता के सर्वोत्कृष्ट आसन पर विराजमान है। इस समय से उस समय की तुलना कैसी? पर मैं कहता हूँ कि महात्मा ईसा का वह वाक्य आज की ही भाँति उस समय भी समस्त संसार में शान्ति तथा आनन्द की अविरल धारा प्रवाहित करता हुआ विश्वमैत्री के पथ पर अग्रसर हो रहा था। यदि कुछ थोड़े से क्षुद्राशयों ने उसका स्वाद नहीं चक्खा, उसमें एक बार ग़ोता नहीं लगाया, तो इससे बनता-बिगड़ता ही क्या है? उस समय भी नैतिक विचार (Morailty) का आसन इतना ही ऊँचा था, जितना कि वह आज है।

केवल इतना ही नहीं, हेस्टिंग्ज़ के रुपया लेने की विधि भी गर्ह्य थी। जब सन्धि द्वारा ऐसी कोई शर्त न होने पर भी चेतसिंह बराबर उसकी इच्छानुसार उसे रुपया देते गए, उसका आदर करते गए, उसका हुक्म मानते गए, तब भी उन पर कृतघ्नता का झूठा दोष लगा कर उन्हें गद्दी से उतार देना हेस्टिंग्ज़ की बीभत्स स्वेच्छाचारिता के अतिरिक्त और कहा ही क्या जा सकता है। यदि बनारस के महाराज का यह कर्तव्य बतलाया जाता है कि वे अङ्गरेज़ सरकार की प्रत्येक आज्ञा का बिना जीभ हिलाए पालन करते, तो क्या प्रत्युत्तर में यह नहीं कहा जा सकता कि बनारस की प्रजा के सुख-शान्ति का प्रयत्न करना अङ्गरेज़ सरकार का कर्तव्य भी था? इतिहास साक्षी है कि उसने ठीक इसका उल्टा किया। एक सर्वमान्य राजा को गद्दी से हटा कर एक निपट निकम्मे राजा को उसने उसकी जगह स्थापित किया। अधिक लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है। वारन हेस्टिंग्ज़ के ये शब्द स्वयं उसे सबकी दृष्टि में दोषी ठहराते हैं। सन् १७७५ में बनारस जाने पर उसने लिखा था—"The Province of Chait Singh is as rich and well-cultivated a territory as any district, perhaps, of the same extent in India." किन्तु वही सन् १७८४ में बनारस के विषय में लिखता है—"I was followed and fatigued by the clamours of the discontented inhabitants and the cause of their dissatisfaction existed principally in a defective, if not corrupt and oppressive administration." * पर इस सब से क्या? यहाँ कर्तव्याकर्तव्य की तो चर्चा ही नहीं चलाई जा सकती। 'इस जगह तो जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली कहावत ही ठीक चरितार्थ होती है।

**Selections from the Letters Despatches, etc.*, G. W. Forrest, *Vol. iii, p. 1082.*

* * *

'भविष्य' की कराची-कॉङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ

कराची कॉङ्ग्रेस के सिंहद्वार का दृश्य—यह चित्र उस समय लिया गया था, जब कि महात्मा गाँधी आदि नेताओं का भाषण सुनने के लिए लोग पण्डाल में आ रहे थे।

महात्मा गाँधी, पण्डित मालवीय जी, आचार्य कृपलानी तथा श्री० नारायणदास आनन्द जी बेचर के साथ विषय-निर्वाचिनी समिति में जा रहे हैं।

श्रीमती सरोजिनी नायडू (बाईं ओर) और डॉ० अन्सारी राष्ट्रपति के कैम्प में खड़े-खड़े बातचीत कर रहे हैं।

श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय (मध्य में) तथा अन्यान्य कॉङ्ग्रेस-कर्मी महिलाएँ।
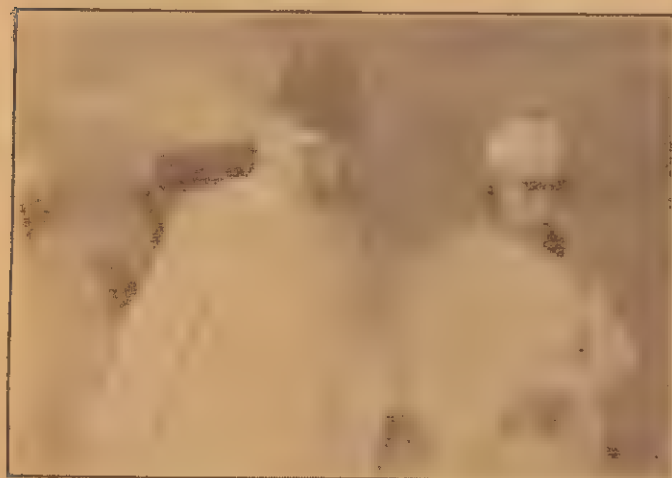
मौ० अब्दुल कलाम आज़ाद (बाईं ओर) और डॉ० अन्सारी, कराची कॉङ्ग्रेस की वर्किङ्ग कमिटी की मीटिङ्ग से लौट रहे हैं।

ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ—सीमा-प्रान्त के गाँधी—अपने लालकुर्ती-दल के कई स्वयंसेवकों के साथ, कराची कॉङ्ग्रेस-पण्डाल से लौट रहे हैं।

श्री० अब्बास तय्यब जी—कराची कॉङ्ग्रेस में आए हुए दो अमेरिकन जर्नलिस्टों से बातें कर रहे हैं।
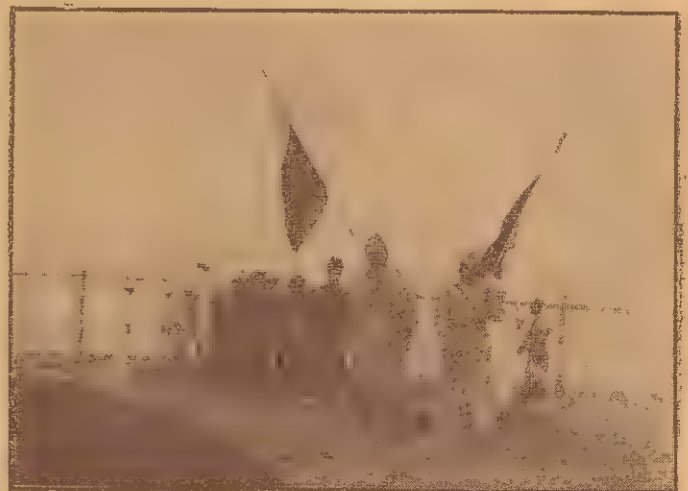
राष्ट्रपति सरदार पटेल का स्वागत-जुलूस कॉङ्ग्रेस-पण्डाल में प्रवेश कर रहा है। आगे-आगे स्वंयसेवक दल के दो सीनियर ऑफ़िसर और पीछे सीमा-प्रान्त के गाँधी के दल के बैण्ड बजाने वाले हैं।

'भविष्य' का कराची-कांग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ
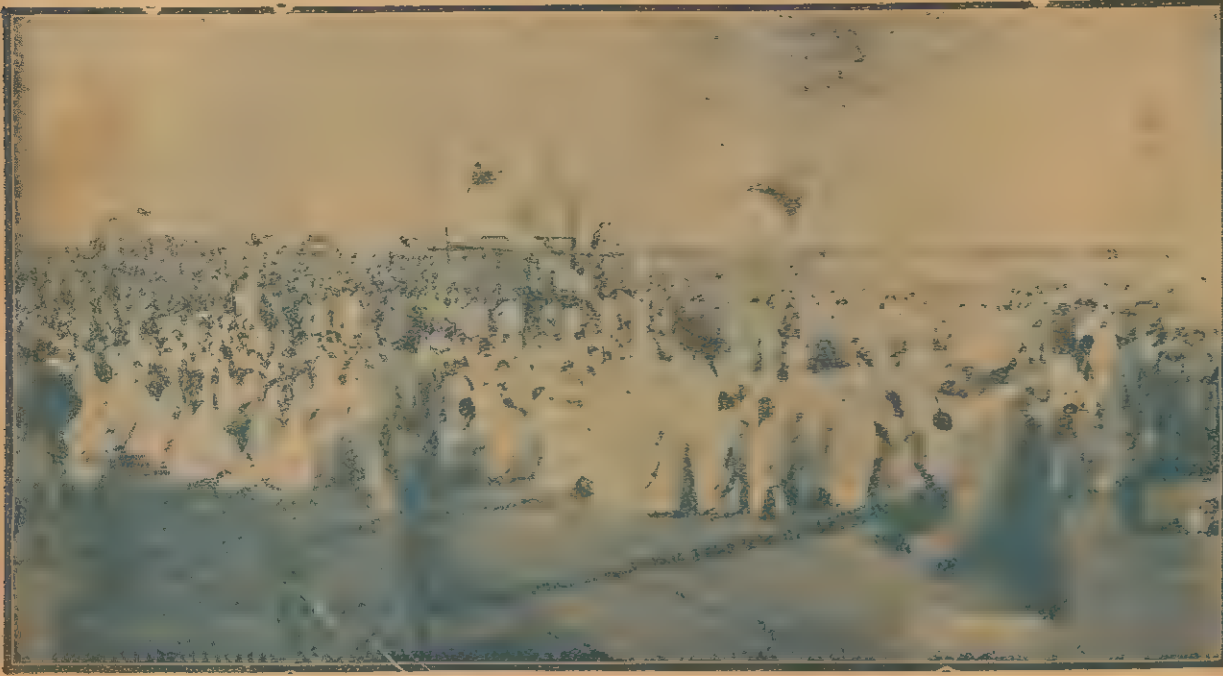
करांची कांग्रेस-पण्डाल

यह दृश्य गत २६ मार्च का है, जनता लाऊड-स्पीकर द्वारा महात्मा गाँधी का भाषण सुन रही है

महात्मा गाँधी

गत २६ मार्च को कॉङ्ग्रेस-मञ्च से लाऊड-स्पीकर द्वारा भाषण दे रहे हैं।
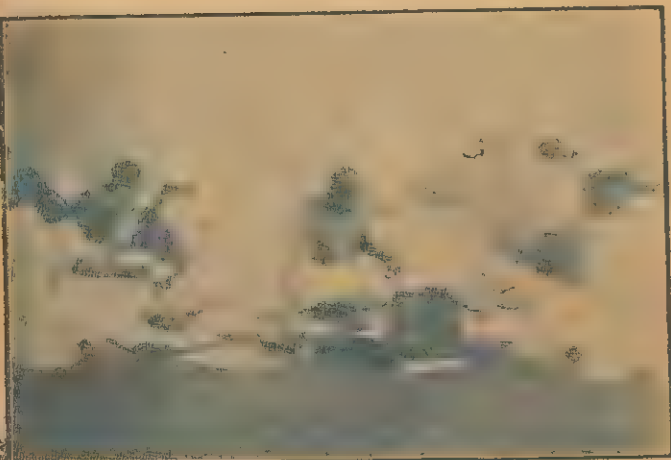
कराची के हरचन्दराय नगर की अपनी झोपड़ी में महात्मा गाँधी बैठे हुए चर्ख़ा कात रहे हैं। बाईं ओर सरदार पटेल और दाहिनी ओर सेठ जमनालाल जी बैठे हैं। पास ही श्रीमती मीराबाई खड़ी हैं।
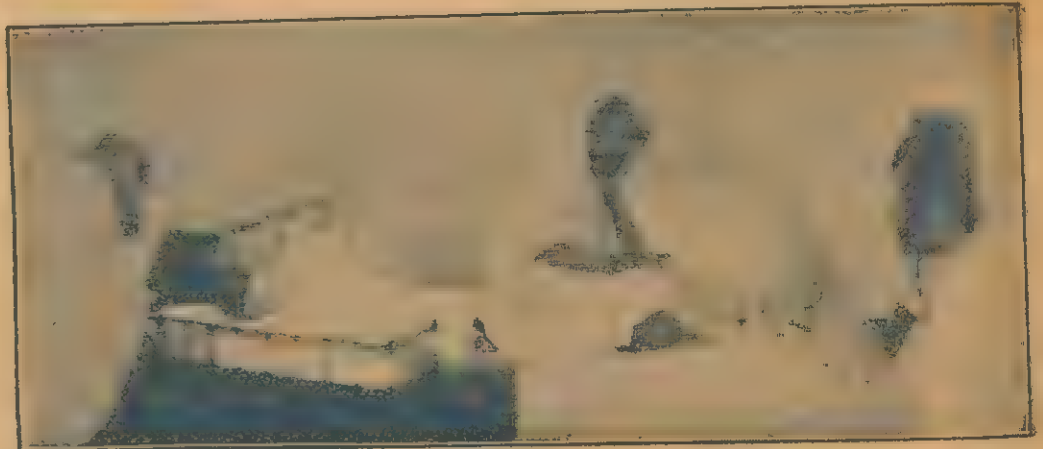
महात्मा गाँधी

कराची के हरचन्दराय नगर की झोपड़ी में बैठे हुए बातें कर रहे हैं
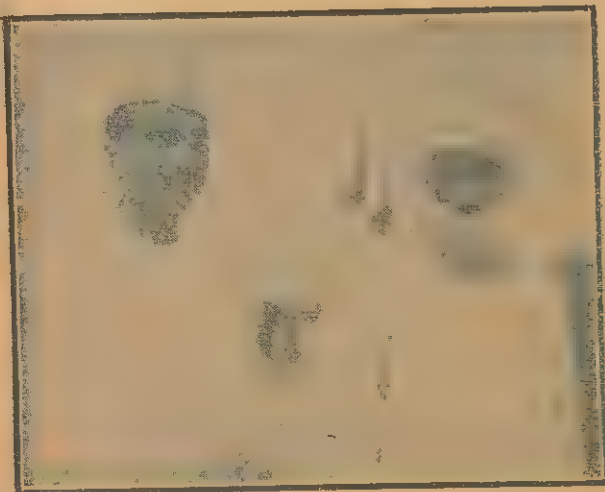
सीमा प्रान्त के सुप्रसिद्ध नेता सय्यद लाल बादशाह—कॉङ्ग्रेस-पण्डाल में जा रहे हैं।
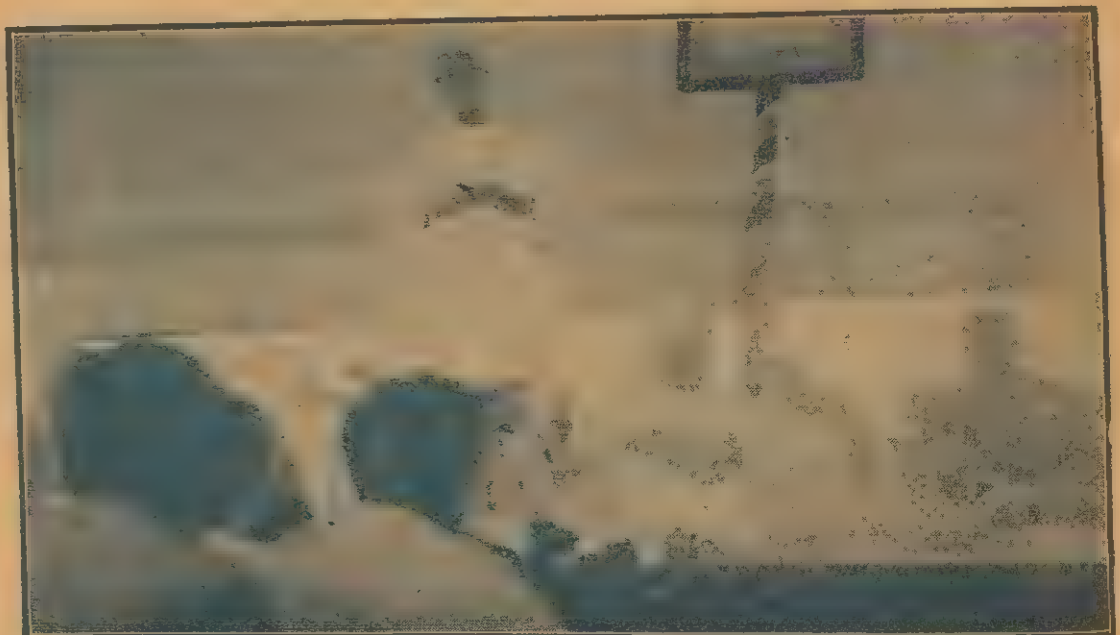
राष्ट्रपति सरदार पटेल

कराची कॉङ्ग्रेस की विषय-निर्वाचिनी समिति में भाषण कर रहे हैं

'भविष्य' की कराची-काङ्ग्रेस सम्बन्धी चित्रावली का एक पृष्ठ

लालकुर्ती-दल (ख़ुदाई ख़िदमदगार)

यह दृश्य उस समय का है, जब कि लालकुर्ती-दल के युवकों ने मलीर नाम के स्टेशन पर सरदार भगतसिंह की फाँसी से विक्षुब्ध होकर महात्मा गाँधी के विरुद्ध एक प्रदर्शन किया था।

राष्ट्रपति सरदार पटेल

कराची काँङ्ग्रेस में भारतीय पताका-उत्सव के समय लोगों के अभिवादनों का उत्तर दे रहे हैं।

सीमा-प्रान्त के गाँधी के ख़ुदाई ख़िदमदगार-दल के कुछ अफ़सर

महात्मा गाँधी और देवी मीराबाई—हरचन्दराय नगर में सान्ध्य-प्रार्थना के लिए जा रहे हैं।

सीमा-प्रान्त के गाँधी के ख़ुदाई ख़िदमदगारों की एक टोली

स्वर्गीय श्री० दत्तात्रेय—आप उन अमरों में अन्यतम हैं, जिनकी स्मृति में कराची काँङ्ग्रेस-पण्डाल के प्रधान द्वार का नाम 'शहीद फाटक' रक्खा गया था। आप कराची काँङ्ग्रेस कमिटी के उत्साही स्वयंसेवक थे और पुलिस की गोली से शहीद हुए थे।

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह का पारिवारिक परिचय

(१) सरदार किशनसिंह (२) श्रीमती अमर कौर (३) श्रीमती सरला देवी और (४) स्वर्गीय राजगुरु की माता। (नीचे बैठे हुए) सरदार भगतसिंह के छोटे भाई सरदार कुलतारसिंह—जिन्हें सरदार भगतसिंह ने अन्तिम पत्र लिखा था।

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की पूजनीया माता—श्रीमती विद्यावती

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की दादी और सरदार किशनसिंह की पूजनीया जननी

बाईं ओर से (१) धर्मपत्नो सरदार स्वर्णसिंह (सरदार भगतसिंह की चाची) (२) सरदार भगतसिंह की पूजनोया माता श्रीमतो विद्यावती (३) सरदार भगतसिंह को दादी और (४) धर्मपत्नो सरदार अजोतसिंह। नोचे बैठी हुई बालिका सरदार भगतसिंह को सहोदरा है।

दिल

जो तेग़े[1] नाज़ का बिस्मिल नहीं है,
हमारी राय में वह दिल नहीं है।
कभी उनकी झलक देखी थी मैंने,
मेरे क़ाबू में अब तक दिल नहीं है।
जिसे नफ़रत हो अच्छी सूरतों से,
नहीं है, वह नहीं है, दिल नहीं है।
यह खो जाए, कि रह जाए, तुम्हें क्या,
हमारा है, तुम्हारा दिल नहीं है!
तहोबाला[2] किया उलफ़त ने ऐसा,
जहाँ था, उस जगह अब दिल नहीं है।
गुज़रती है बड़े आराम के साथ,
मेरे पहलू में जब से दिल नहीं है।
ज़रा आँखें मिला कर, फिर तो कहिए,
हमारे पास तेरा दिल नहीं है!
कभी तुम जिसको ख़ुश होकर निकालो,
वह मेरी आरज़ूए दिल नहीं है।
—"नूह" नारवी

ख़्यालो फ़िक्र का आलम यही है,
मेरी दुनिया है, मेरा दिल नहीं है।
—"आफ़ताब" पानीपती

इसी ने मेरी यह हालत बना दी,
यह मारे[3] आस्तीं है, दिल नहीं है!
सताता तू है क्यों "राना" को इतना,
तेरे सीने में शायद दिल नहीं है!
—"राना" गवालियारी

यह दिल गुम गश्तए[4] मंज़िल नहीं है,
मैं गुमगश्ता हूँ, मेरा दिल नहीं है।
—"शाद" पीलीभीती

वह है मुट्ठी में क्या, कहते हो यह क्यों,
नहीं है, दिल नहीं है, दिल नहीं है।
—"शाकिर" गवालियारी

नयाज़े[5] इश्क़ के क़ाबिल नहीं है,
निगाहे नाज़ अब वह दिल नहीं है।
—"शैदा" अमरोहवी

जो तेग़े यार के क़ाबिल नहीं है,
कलेजा वह नहीं है, दिल नहीं है।
हम अपने दिल को, दिल समझे हुए हैं।
हमारा दिल, तो कोई दिल नहीं है।
अगर दिल है, तो दिल में है मुहब्बत,
मुहब्बत फिर कहाँ, जब दिल नहीं है!
करे अफ़शा[6] तुम्हारे इश्क़ का राज़,
हमारा दिल तो, ऐसा दिल नहीं है।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

क़ाबिल

हमारा दिल किसी क़ाबिल कभी था,
मगर अब यह, किसी क़ाबिल नहीं है।
—"नूह" नारवी

वह बोले देख कर तस्वीर मेरी,
हमारी बज़्म[7] के क़ाबिल नहीं है।
—"शाकिर" गवालियारी

घड़ी में दोस्त है, दुश्मन घड़ी में,
अभी उलफ़त के वह क़ाबिल नहीं है।
मेरा दिल लेके पछताओगे, यह तो,
किसी लायक़, किसी क़ाबिल नहीं है।
—"इन्दर" गवालियारी

हमारा दिल किसी क़ाबिल कभी था, मगर अब यह किसी क़ाबिल नहीं है।
ज़माने से बहुत हैं आप ग़ाफ़िल, ज़माना आपसे ग़ाफ़िल नहीं है।

किसी क़ाबिल हमारा दिल नहीं है,
बजा है, आपके क़ाबिल नहीं है।
मजाज़ी[8] जिसको कहती है ख़ुदाई,[9]
हक़ीक़त में, किसी क़ाबिल नहीं है।
समझते थे कि दुनिया होगी दुनिया,
मगर दुनिया किसी क़ाबिल नहीं है।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

महफ़िल

रहा करता है मजमा दुश्मनों का,
तेरी महफ़िल, तेरी महफ़िल नहीं है।
—"नूह" नारवी

नहीं है जिसमें "इन्दर" रौनक़े अफ़रोज़,[10]
वह महफ़िल तो, कोई महफ़िल नहीं है।
—"इन्दर" गवालियारी

किसी की जलवागाहे नाज़ है यह,
यह दुनिया क्या है, गर महफ़िल नहीं है।
—"जौहर" बुलन्दशहरी

मेरी दुनिया है मेरा दिल नहीं है,
रची बेवजह यूँ महफ़िल नहीं है।
—"शाद" निहोरवी

चमक जाती है क्यों बिजली सी अक्सर,
अगर वह रौनक़े महफ़िल नहीं है।
—"शाकिर" गवालियारी

अजब आराइशे[11] महफ़िल है लेकिन,
निशाने मालिके महफ़िल नहीं है।
—"शैदा" अमरोहवी

समझती है जिसे दुनिया क़यामत,
वही तो आपकी महफ़िल नहीं है?
जहाँ तुम हो, वहीं है महफ़िले नाज़,
तुम्हारी किस जगह महफ़िल नहीं है।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

ग़ाफ़िल

वही हुशियार है, जो बेख़बर है,
जो दीवाना है, वह ग़ाफ़िल नहीं है!
—"जौहर" बुलन्दशहरी

ख़ुदी को छोड़ दे बन्दे ख़ुदा के,
कि दम में कुछ अभी ग़ाफ़िल नहीं है!
—"शाद" पीलीभीती

वही इन्साँ है, जो दुनिया में रह कर,
ख़ुदा की याद से ग़ाफ़िल नहीं है!
—"शाकिर" गवालियारी

यह क्या कहते हो दिल को दिल नहीं है,
तुम्हारी याद से, ग़ाफ़िल नहीं है!

ज़माने से बहुत हैं, आप ग़ाफ़िल,
ज़माना आपसे ग़ाफ़िल नहीं है!
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

मंज़िल

उसे कहता हूँ मैं सहराए[12] उलफ़त,
जहाँ रहबर[13] जहाँ मंज़िल नहीं है!
तक़ाज़ा है जुनूँ का हर क़दम पर,
मुसाफ़िर यह तेरी मंज़िल नहीं है!
—"नूह" नारवी

राहे उलफ़त है कुछ ऐसी ख़तरनाक,
ठहरने की, कोई मञ्ज़िल नहीं है!
—"शाकिर" गवालियारी

क़दम राहे तलब में उठ चुका है,
हिरासे[14] दूरिए मञ्ज़िल नहीं है!
—"शैदा" अमरोहवी

यह अरमाँ सबको हम मञ्ज़िल पे पहुँचें,
मगर कोई सरे मञ्ज़िल नहीं है!
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

हासिल

जफ़ा[15] के बाद, इक़रारे वफ़ा क्या,
अब इन बातों से कुछ हासिल नहीं है!
—"नूह" नारवी

मेरा होना, न होने से है बदतर,
वह लाहासिल है, कुछ हासिल नहीं है!
—"शाद" पीलीभीती

जो कुछ दुनिया में देखा, तो यह देखा,
कि राहत[16] इस जगह हासिल नहीं है!
—"शाकिर" गवालियारी

बयाने दास्ताने ग़म से "शैदा"
बजुज़[17] अफ़सोस कुछ हासिल नहीं है!
—"शैदा" अमरोहवी

हमारी नेस्ती,[18] हस्ती[19] से अच्छी,
अगर जीने का कुछ हासिल नहीं है।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

बिस्मिल

जो दिल में आरज़ूए दिल नहीं है,
कोई क़ातिल, कोई बिस्मिल नहीं है।
—"नूह" नारवी

निगाहे नाज़ कब क़ातिल नहीं है,
वह दिल ही क्या है, जो बिस्मिल नहीं है
—"शाद" पीलीभीती

यह माना बज़्मे क़ातिल में है दुनिया,
मगर क्या है अगर "बिस्मिल" नहीं है।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—तलवार, २—उलट-पलट, ३—साँप, ४—खोया हुआ, ५—एहतियाज, ६—ज़ाहिर, ७—सभा, ८—जो हक़ीक़त न हो, ९—संसार, १०—शोभा बढ़ाने वाले, ११—सजावट, १२—जङ्गल, १३—साथी, १४—खटका, १५—ज़ुल्म, १६—आराम, १७—सिवाय, १८—न रहना, १९—रहना।

श्री सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

बहुत दिनों के बाद आपका पत्र मिला। आप तो अपने राम जी की तरह भाँग भी नहीं पीते, फिर क्या कारण है कि महीनों तक 'सटकसों' हो जाते हैं ? न चिट्ठी न पत्री ; न दीद न शुनीद। आखिर माजरा क्या है ? 'भूलि परे कि थके सघने बन-बीथिन में कहुँ कुञ्ज-बिहारी' का हाल तो नहीं हो गया अथवा नैनी-जेल के 'द्वादशाह' के मज़े अभी भूले नहीं हैं ? एक आदमी ने कानपुर के दाढ़ी-चोटी-सम्मेलन का समाचार सुनाया। कलेजा धड़क उठा, परन्तु फिर ख़्याल आया, कि आप तो इलाहाबाद में रहते हैं—अक्षयवट की छाया में। तब कहीं जान में जान आई। अन्यथा बिना भाँग छाने ही सात घड़े का नशा चढ़ जाने में देर क्या थी ?

ख़ैर, कानपुर का समाचार तो आपने सुना ही होगा। पूरे सप्ताह भर तक ख़ासी चहल-पहल रही। दाढ़ी-चोटी के दिल के अरमान पूरे हुए—बिहिश्त की भी आबादी बढ़ी और बैकुण्ठ की भी। ग़ाज़ियों और शहीदों के गलित शरीरों से ऐसी ख़ुशबू उड़ी, कि लखनऊ वाले हाजी असग़रअली मुहम्मदअली के विख्यात समातुल-अम्बर की ख़ुशबू सिर धुन कर रह गई। कौवों, चीलों और गिद्धों ने राजा युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ का आनन्द लूटा ! अग्निदेव भी निहाल हो गए। जानकारों का कहना है कि खाण्डव-दाह के बाद ऐसा रसना-तृप्तिकर स्वाद उन्हें कानपुर में ही प्राप्त हुआ है। मगर निन्दक तो सब जगह रहते हैं। कुछ अदूरदर्शी, अलज्ञ, अधार्मिक इस आत्म-मेध यज्ञ के लिए कानपुर के हिन्दू-मुसलमानों को कोस रहे हैं—वही कहावत है कि 'तेली का तेल जले और मशालची की छाती फटे !' स्वयं तो ऐसे कायर, कपूत और कञ्जूस कि धर्म और मज़हब के नाम पर एक रोआँ भी तोड़ कर न दें और दूसरों को ख़ून बहाते देखें तो 'हा हतोस्मि' कह कर छाती पीटने लगें ! इन मक्खीचूसों के समक्ष में इतना भी नहीं आता, कि आख़िर यह शरीर, धन-दौलत, घर-द्वार और बाल-बच्चे हैं किस मर्ज़ की दवा, जो धर्म के काम न आएँ ? वे बच्चे, जिनकी टाँगें चीर दी गई हैं, जीकर क्या अचार बनते या ओढ़ने-बिछाने के काम में आते ? वे अबलाएँ कैसे सीधे स्वर्ग जातीं, अगर कानपुर में यह धर्म-लीला न होती ? और सम्पादक जी, आपका भी इस कानपुरी आत्म-मेध से उपकार ही हुआ है। जले हुए घरों का फ़ोटो लेकर तस्वीरें छापिए, शहीदों और ग़ाज़ियों की जीवनियाँ छाप कर भावी वंशधरों के लिए एक नवीन आदर्श एकत्र कीजिए और मरे हुओं की आत्माओं की शान्ति के लिए तथा जीवितों को यह विषम विपत्ति सहन करने की शक्ति प्रदान करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना कीजिए। इसके साथ ही कानपुर की पुलिस की अद्भुत अलौकिक कार्य-कुशलता, सहनशीलता और शान्ति-प्रियता की तारीफ़ करना भी न भूलिएगा। नहीं तो हश्र के दिन अल्लाहताला के सामने आपको जवाबदेही करनी पड़ेगी और, मैं सच कहता हूँ, आपके सारे एह-सानों को बालाए-ताक़ रख कर आपके विरुद्ध गवाही दे दूँगा। मित्रता के लिए मैं आपके ऐसे 'केयरलेसनेस' को कदापि प्रश्रय नहीं दे सकता। आपद्ग्रस्त रक्षा के लिए बुला रहा है, और शान्ति तथा शृङ्खला की रक्षा करने वाली पुलिस मुस्कुरा रही है; भारत गिड़गिड़ा रहा है और पुलिस उसके साथ व्यङ्ग कर रही है ; बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ तलवार के घाट उतारी जा रही हैं और पुलिस तमाशा देख रही है !!! बतलाइए तो सही, ऐसी वज्रोपम दृढ़ता, राक्षस-विनिन्दित नृशंसता और पशु-पराक्कारिणी निर्लज्जता आपने कहीं देखी है ? कहीं देखी है आपने ऐसी निष्ठुरता, कि स्त्रियाँ और बच्चे घरों में बन्द करके जीते जी जलाए जाएँ और नगर-रक्षक-दल अविचल चित्त से खड़ा रहे ! अब बताइए, क्या आप बाध्य नहीं हैं, कानपुर की पुलिस के इन अनुपम गुणों की प्रशंसा करने को ?

सुनता हूँ, सम्पादक लोग बड़े विद्वान, त्रिकाल-दर्शी और विविध विषयों के जानकार होते हैं—इतिहास-ज्ञान तो मानो उनका पानी भरा करता है, परन्तु क्या आपने त्रैलोक के इतिहास में निष्ठुरता और राक्षसता का ऐसा नग्न अथच सजीव चित्र कहीं देखा है ? अगर नहीं तो आपका कर्तव्य है कि कानपुर की पुलिस की प्रशंसा करके अपनी लेखनी को सार्थक कर डालें।

मुझे अफ़सोस है कि भारतीय पुलिस के सिर पर अहर्निश अपना वरद-पाणि पसारे रहने वाले लॉर्ड इर्विन महोदय चले गए। इसीसे आपसे इतनी प्रार्थना कर रहा हूँ। वरना यह काम तो उन्हीं का था। क्योंकि पुलिस-स्तोत्र पाठ करने में जितनी निपुणता लॉर्ड महोदय ने प्राप्त कर ली थी, उतनी कोई जन्म-जन्मान्तर तक अभ्यास करने पर भी नहीं प्राप्त कर सकता। मेरी तो यह दृढ़ धारणा है, कि लॉर्ड इर्विन साहब भारतीय पुलिस की पूर्व-जन्म की जननी नहीं, तो मौसी अवश्य ही हैं। क्योंकि पुलिस के प्रति जिस स्नेहशीलता और प्रगाढ़ प्रेम का परिचय आपने दिया है, उससे आपके मातृत्वोचित हृदय का पता साफ़-साफ़ लग जाता है।

कानपुर का आत्म-मेध लॉर्ड महोदय की मौजूदगी ही में अनुष्ठित हो चुका था। फलतः इस अवसर पर पुलिस ने अपनी जिस कर्तव्य-शीलता का परिचय दिया था, उसकी भनक भी आपके कानों में अवश्य ही पड़ी होगी, परन्तु इतने पर भी आप उसके सम्बन्ध में दो-चार उत्साहवर्द्धक शब्द नहीं कह गए ! उचित तो था, कि पुरस्कार-स्वरूप उन्हें कुछ जागीरें दिलवा जाते और कानपुर के 'सरसैया घाट' पर महारानी विक्टोरिया की कमनीय मूर्त्ति की बग़ल में एक 'पुलिस-कीर्त्ति-स्तम्भ' स्थापित करा जाते। परन्तु मालूम होता है, बिदाई की दावतों और प्रेम-पात्रों से मिलने-जुलने में लगे रह गए। इसी से इस अत्यावश्यक कार्य का ख़्याल न रहा। ख़ैर, लॉर्ड इर्विन महोदय के इस अपूर्ण कार्य की पूर्त्ति लॉर्ड विलिङ्गटन महोदय कर देंगे, ऐसी मुझे आशा है। परन्तु कुछ भी हो, आप अपने कर्तव्य से विमुख न होइएगा और अपने अख़बारों में इस अनुपम कर्तव्यशीलता का उल्लेख अवश्य ही कीजिएगा। इसके साथ ही लॉर्ड इर्विन महोदय की कर्तव्यशीलता और गुण-ग्राहकता का भी उल्लेख करना न भूलिएगा। क्योंकि अपनी बादशाहत के अल्पकालीन स्थिति में जितनी महान कीर्त्ति और सुख्याति लॉर्ड इर्विन ने प्राप्त की है, उतनी शायद ही किसी राजप्रतिनिधि को नसीब हुई हो। पुलिस की प्रशंसा में, ऑर्डिनेन्स जारी करने में, श्रीमान् पटियाला-नरेश को दूध के धोए सिद्ध करने में, सरदार भगतसिंह आदि को फाँसी पर लटकाने में, विश्व-बन्धु महात्मा गाँधी को जेल भेजवाने में, भारतवासियों की उचित माँगों को ठुकराने में और सत्याग्रह आन्दोलन के सामने दाँत निपोरने में इन्होंने कमाल कर दिया है। यों तो इस देश में जितने राजप्रतिनिधि आए, उनमें एक-दो अपवादों को छोड़ कर, बाक़ी सारे के सारे सिविलियनों के हाथ के खिलौने बने रहे। परन्तु जैसा कठपुतली का नाच इन सिविलियनों ने लॉर्ड इर्विन को नचाया, वैसा किसी भी वायसराय को नहीं नचा सके। सीधापन और सरलता तो मानो विधाता ने आप में कूट-कूट कर भर दी है। हिन्दुओं के 'गोबर गणेश बाबा' की तरह, जहाँ नाइन ने बैठा दिया, बैठे हैं ! न हिलने से मतलब, न डोलने से काम। सिविलियनी विचारों और मतों के लिए मस्तिष्क को सदा 'To Let' रखते थे। दिन-दोपहर को अगर किसी सिविलियन ने कह दिया, कि आधी रात हो गई है, तो बस, आपने भी लम्बी तान दी। आपकी बला जाती है; खिड़की से झाँक कर देखने कि वास्तव में रात है या दिन ! पञ्जाब के सिविलियनों ने कह दिया कि भगतसिंह आदि को अगर फाँसी न दी गई, तो हम नौकरशाही को 'डाईवोर्स' कर देंगे, बस लाट साहब का कलेजा दहल उठा, जैसे आए दिन दङ्गों के कारण, आसन्न-वैधव्य की कल्पना से, लक्षा की महतारी का दिल दहल उठता है। हज़रत वायसराय क्या थे, मानो मोम के पुतले थे। ज़रा सी आँच लगी और पिघले ! ऐसा दुर्बल हृदय और आत्मश्लाघा-विहीन वायसराय मैंने तो कभी नहीं देखा था। क्या आश्चर्य है कि महात्मा गाँधी को सीमा-प्रान्त जाने देने के बारे में वहाँ के चीफ़ कमिश्नर ने एक धमकी झाड़ दी

(शेष मैटर २५वें पृष्ठ के पहले कॉलम के नीचे देखिए)

स्व० सरदार भगतसिंह और उनके साथियों का संक्षिप्त परिचय

[श्री० अभ्यङ्कर वर्मा, एम० ए०, एल्-एल० बी०]

सरदार भगतसिंह

वंश-परिचय

सरदार भगतसिंह जिस वंश के गौरव थे, वह गत पच्चीस वर्षों से अपनी देश-भक्ति और क़ुर्बानियों के लिए काफ़ी ख्याति प्राप्त कर चुका है। कहते हैं, इस ख़ान्दान के रक्त में कुछ ऐसे बीज हैं, जिसके कारण कोई भी व्यक्ति परतन्त्रता की हवा में रहना पसन्द नहीं करता। आपके पूज्य पिता सरदार किशनसिंह पञ्जाब के विख्यात देशभक्तों और स्व० लाला लाजपतराय के साथियों में हैं। आपके इतिहास-प्रसिद्ध चचा सरदार अजीतसिंह को कौन नहीं जानता? कौन नहीं जानता, कि आज भी वे देशभक्ति के अपराधी होने के कारण मातृ-भूमि के दर्शनों से वञ्चित हैं। आपके दूसरे चचा सरदार स्वर्णसिंह की देशभक्ति की कहानी भी पञ्जाब के प्रत्येक घर में कही और सुनी जाती है।

जन्म और नामकरण

सरदार भगतसिंह का जन्म १३ असौज, सम्वत् १८६४ शनिवार को लायलपुर (पञ्जाब) के बङ्गा नामक ग्राम में हुआ था। आपके जन्म से कई महीने पूर्व आपके पिता तथा आपके दोनों चचा—सरदार अजीतसिंह और सरदार स्वर्णसिंह पञ्जाब से भाग कर नेपाल चले गए थे। परन्तु जिस रोज़ सरदार का जन्म हुआ और लोग उनकी दादी को बधाइयाँ दे रहे थे, ठीक उसी समय आपके चचा सरदार स्वर्णसिंह भी घर आ पहुँचे। परन्तु सरदार किशनसिंह भी जेल में थे। आपके पास पुत्र उत्पन्न होने की ख़बर पहुँची, तो बड़े ख़ुश हुए और ईश्वर को धन्यवाद दिया।

सरदार भगतसिंह की दादी आपको बहुत प्यार करतीं तथा आपको 'भागोंवाला' अर्थात् भाग्यवान कहा करती थीं। इसीसे आपका नाम भी 'भगतसिंह' रक्खा गया था।

शिक्षारम्भ और बाल्य-जीवन

सरदार की बाल्यावस्था का अधिकांश समय आपकी दादी तथा आपकी माता की निगरानी में गुज़रा। इन दोनों महिलाओं के धार्मिक आदर्शों का बालक भगतसिंह पर काफ़ी प्रभाव पड़ा। आपकी मेधा-शक्ति भी अच्छी थी, इसलिए तीन वर्ष की अवस्था में ही आपको गायत्री मन्त्र याद हो गया। इसके बाद जब इनकी उम्र पाँच वर्ष की हुई, तो गाँव के प्राइमरी स्कूल में पढ़ने के लिए भेजे गए। यहाँ आपने कई साल तक शिक्षा प्राप्त कर बड़ी सफलता के साथ प्राइमरी परीक्षा पास की।

प्रारम्भिक पाठशाला में भरती होने के कुछ दिन बाद ही आपको एक बार अपने घर वालों के साथ लाहौर जाने का अवसर मिला। ये लोग वहाँ सरदार किशनसिंह के परम मित्र लाला आनन्दकिशोर के यहाँ उतरे थे, लाला जी ने बड़े प्यार से भगतसिंह को गोद में बिठा लिया और कपोलों पर थपकियाँ देते हुए पूछा—तुम क्या करते हो?

बालक ने अपनी तोतली बोली में उत्तर दिया—मैं खेती करता हूँ।

लाला जी—तुम बेचते क्या हो?

बालक—मैं बन्दूक़ें बेचता हूँ।

यह बातचीत इतनी प्यारी थी, कि इसका ज़िक्र कभी-कभी उनके बड़े हो जाने पर भी हुआ करता था। लड़कपन में भगतसिंह बड़े चतुर, चपल और खिलाड़ी थे। लड़कपन में ये शिवाजी की तरह दल बना कर अपने साथियों के साथ युद्ध-क्रीड़ा किया करते थे। आपको वीरतापूर्ण खेलों से अधिक प्रेम था।

लड़कपन में सरदार भगतसिंह को तलवार-बन्दूक़ से बड़ा प्रेम था। एक बार अपने पिता के साथ खेतों की ओर गए। किसान खेतों में हल चला रहे थे। बालक भगतसिंह ने पिता से पूछा, ये क्या कर रहे हैं? पिता ने समझाया—'हल से खेत जोत रहे हैं। इसके बाद अनाज बोएँगे।' इस पर भोले बालक ने कहा—अनाज तो बहुत पैदा होता है, मगर तलवार-बन्दूक़ सब जगह नहीं होती। ये किसान तलवार-बन्दूक़ की खेती क्यों नहीं करते?

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह

लाहौर-षड्यन्त्र वाले मुक़दमे में, एक दिन सरकारी वकील के किसी कथन पर सरदार भगतसिंह को हँसी आ गई। इस पर सरकारी वकील ने अदालत से शिकायत की कि सरदार भगतसिंह हँस कर अदालत की तौहीन कर रहे हैं। सरदार ने हँस कर उत्तर दिया—"मुझे तो ईश्वर ने हँसने के लिए ही पैदा किया है। मैं तमाम ज़िन्दगी हँसता रहा हूँ, हँसता रहूँगा। आज अदालत में हँस रहा हूँ, और ईश्वर ने चाहा तो फाँसी के तख़्ते पर भी हँसूँगा। वकील साहब इस समय तो मेरे हँसने की शिकायत कर रहे हैं, परन्तु जब मैं फाँसी के तख़्ते पर हँसूँगा, तब किस अदालत से शिकायत करेंगे?"

डी० ए० वी० स्कूल में

प्राइमरी परीक्षा पास करके भगतसिंह लाहौर चले आए और दयानन्द एङ्गलो-वैदिक विद्यालय में शिक्षा पाने लगे। यहाँ आपने नवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की। इसी समय सन् १९२१ में महात्मा गाँधी ने असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया। सारे देश में सरकारी तथा सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों का बहिष्कार आरम्भ हुआ, इसलिए भगतसिंह ने भी डी० ए० वी० स्कूल छोड़ दिया और लाहौर के भारतीय विद्यालय में चले आए। उस समय इस स्कूल के प्रधान प्रबन्धकर्त्ता भाई परमानन्द जी थे। आपने भगतसिंह की परीक्षा लेकर इन्हें एफ़० ए० क्लास में भर्ती कर लिया। सन् १९२३ में आपने एफ़० ए० की परीक्षा पास की और इसी समय आपकी श्री० सुखदेव तथा अन्यान्य क्रान्तिकारियों से जान-पहचान हुई। इधर घर वालों ने आपके विवाह का प्रबन्ध किया। कई जगह से बातचीत आरम्भ हुई। परन्तु इसकी ख़बर सरदार को मालूम हुई तो उन्होंने चट बोरिया-बिस्तर उठाया और लाहौर छोड़ कर अन्यत्र चले गए। कई दिनों के बाद आपके पिता को एक पत्र मिला, जिसमें लिखा था, कि मैं विवाह नहीं करना चाहता, इसीसे घर छोड़ दिया है। आप मेरे लिए कोई चिन्ता न करें। मैं बहुत अच्छी तरह से हूँ। अस्तु।

लाहौर से भाग कर आप दिल्ली आए और वहाँ के 'अर्जुन' नामक हिन्दी-पत्र के कार्यालय में सम्वाददाता का कार्य करने लगे। इसके बाद कानपुर आए और 'प्रताप' में काम करने लगे। यहाँ आप बलवन्तसिंह के नाम से विख्यात थे और इसी नाम से 'प्रताप' में लेख आदि भी लिखा करते थे। हिन्दी भाषा से आपको विशेष प्रेम था और लिखते भी सुन्दर थे।

इस साल गङ्गा और जमुना नदियों में भयङ्कर बाढ़ आई थी। संयुक्त प्रान्त के कई स्थानों में गाँव के गाँव इस भयङ्करी बाढ़ के कारण तबाह हो गए थे। श्री० बटुकेश्वरदत्त उन दिनों कानपुर में ही रहते थे। बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए उन्होंने एक समिति स्थापित की, सरदार भगतसिंह भी इस समिति के सदस्य बने और बड़े उत्साह से बाढ़-पीड़ितों की सेवा की। बहुत दिनों तक एक साथ रह कर कार्य करने के कारण श्री० बटुकेश्वरदत्त से आपकी घनिष्टता भी ख़ूब बढ़ गई। इन दोनों युवकों की सेवाओं का कानपुर की जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा। लोग इन्हें बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखने लगे। विशेषतः कानपुर के विख्यात राष्ट्र-सेवक स्वर्गवासी श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी इनके कामों से अत्यन्त प्रसन्न हुए और भगतसिंह को एक जातीय स्कूल का हेडमास्टर नियुक्त करा दिया।

इसी समय सरदार किशनसिंह जी को ख़बर मिली कि भगतसिंह कानपुर में हैं। उन्होंने अपने एक मित्र को तार दिया कि भगतसिंह का पता लगा कर कह दो कि उनकी माता अत्यन्त बीमार हैं।

शहीदी जत्थे का स्वागत

माता की बीमारी का समाचार सुनते ही सरदार भगतसिंह पञ्जाब के लिए रवाना हो गए और पिता को तार भी दे दिया कि मैं आता हूँ। इन दिनों 'गुरु का बाग़' वाला इतिहास-प्रसिद्ध अकाली आन्दोलन आरम्भ था। सारे पञ्जाब में एक तहलका सा मचा हुआ था। सत्याग्रही अकालियों का जत्था दूर-दूर से 'गुरु का बाग़' की ओर बढ़ रहा था। परन्तु कुछ 'हाँ-हुज़ूरी' दल इस आन्दोलन के विरुद्ध था। उसे यह आन्दोलन फूटी आँखों भी अच्छा नहीं लगता था। इसलिए उन्होंने निश्चय कि बङ्गा ग्राम की ओर से अकाली जत्थे का स्वागत न किया जावे और उन्हें यहाँ ठहरने न दिया जाय। कुछ लोगों ने इस बात की ख़बर सरदार किशनसिंह को, जो उन दिनों किसी कार्यवश लाहौर में थे, दी। उत्तर में सरदार साहब ने लिखा कि भगत वहाँ मौजूद है। वह जत्थे के ठहरने और 'लङ्गर' (भोजन) का सब प्रबन्ध कर लेगा, आप लोग किसी बात की चिन्ता न करें।

सुयोग पुत्र ने पिता के इस आदेश और इच्छा का पूर्णतया पालन किया। बङ्गा में जत्थे का ख़ूब स्वागत हुआ। लङ्गर का प्रबन्ध भी बड़ी धूमधाम से हुआ। विरोधी दल अड़ङ्गा लगाने से बाज़ नहीं आया। परन्तु सरदार भगतसिंह के सामने उसकी एक न चली।

सरदार भगतसिंह ने स्वयं आटा और घी जत्थे के प्रबन्धक के पास पहुँचाया, इससे गाँव वाले और भी उत्साहित हुए। जत्थे को १०१) रुपए की एक थैली भेंट की गई। भगतसिंह ने इस अवसर पर एक छोटी सी वक्तृता देकर, सत्याग्रह-सिद्धान्त को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए उन्हें बधाई दी।

पुलिस में रिपोर्ट

लायलपुर में सरदार भगतसिंह ने एक वक्तृता दी और कलकत्ता में मि० डे नाम के एक अङ्गरेज़ को गोली मार देने वाले श्री० गोपीनाथ साहा की प्रशंसा की। पुलिस ने इसकी रिपोर्ट ली और लायलपुर में आप पर मामला चला। आपके पिता भी चाहते थे कि भगतसिंह को थोड़ा सा जेल का अनुभव हो जाय, परन्तु अवसर न मिला। इसके बाद भगतसिंह लाहौर चले आए और वहाँ से कानपुर होते हुए बेलगाँव काँङ्ग्रेस में चले गए।

काँङ्ग्रेस से लौटने पर आपने अमृतसर के 'अकाली' नामक अख़बार के कार्यालय में काम करना आरम्भ किया और बलवन्तसिंह के नाम से बहुत दिनों तक 'अकाली' का सम्पादन करते रहे। इसी बीच में आप किसी काम से लाहौर आए। पुलिस आपकी तलाश में थी। इसलिए लाहौर आते ही आप गिरफ़्तार कर लिए गए और छः हज़ार की ज़मानत पर छोड़े गए।

डायरी फ़ॉर्म

सन् १९२७ में, अपने पिता की आज्ञा से सरदार ने लाहौर-वासियों को विशुद्ध दूध पहुँचाने के लिए एक स्कीम तैयार की और लाहौर के पास ही एक गाँव में एक वृहत् 'डायरी फ़ॉर्म' (दूध का कारख़ाना) स्थापित किया। यह कारख़ाना कुछ दिनों तक बहुत अच्छी तरह चला। परन्तु भगतसिंह के जीवन का उद्देश्य दूध बेचना न था, अतः वे किसी उद्देश्य से एक सप्ताह के लिए एकाएक ग़ायब हो गए। यह बात आपके पिता जी को बहुत बुरी मालूम हुई और जब आप वापस आए तो पिता ने नाराज़ होकर आपकी पीठ पर दो सोंटे रसीद किए। फलतः इसी समय से 'डायरी फ़ॉर्म' की भी इतिश्री हो गई।

सन् १९२८ में सरदार भगतसिंह ने पञ्जाब के शाहन्शाह चक नामक स्थान में रहना आरम्भ किया। इस दरमियान में वे कभी-कभी लाहौर भी आते और हफ़्तों और महीनों तक लापता रहते। इसी समय सरदार किशनसिंह के किसी मित्र ने कहा कि अगर आप भगतसिंह को हमें सौंप दें तो मैं आपको एक हज़ार रुपए मासिक दिया करूँ। पिता ने यह बात स्वीकार कर ली। भगतसिंह नौकरी करने के लिए घर से चले, परन्तु इसके बाद से फिर पता न चला कि कहाँ गए, किधर गए।

एसेम्बली बम-केस

इसके बाद विगत ८ अप्रैल, सन् १९२९ को दिल्ली में एसेम्बली बम-केस में आपकी और आपके साथी श्री० बटुकेश्वरदत्त की गिरफ़्तारी हुई। मामला चला और न्यायालय ने आपको आजीवन कालेपानी की सज़ा दी। इस मामले में अदालत के सामने आपने जो वक्तव्य दिया था, उसमें एसेम्बली में बम फेंकने का उद्देश्य बताते हुए आपने कहा था कि "समस्त देश के विरोध को ठुकराते हुए सरकार ने साइमन कमीशन भेज कर अपने बहरेपन का जो परिचय दिया है, उसी को दूर करने की इच्छा से हमने यह बम फेंका है। वास्तव में हमारा उद्देश्य किसी की हत्या करना न था।" परन्तु इतने पर भी आप पर तथा श्री० बटुकेश्वर पर हत्या की चेष्टा का अपराध लगाया गया और उपर्युक्त दण्ड दे दिया गया।

कराची काँङ्ग्रेस के अवसर पर स्वर्गीय सरदार भगतसिंह तथा उनके साथियों की फाँसी का समाचार सुन कर नगर-निवासियों ने उनके चित्र का एक बड़ा भारी शोक-जुलूस निकाला था—इस चित्र में पाठकों को उसी जुलूस का दृश्य मिलेगा। सम्मिलित जनता नङ्गे सिर थी और काले झण्डे भी साथ थे।

सौण्डर्स हत्या-काण्ड

जिस समय मशहूर साइमन कमीशन भारत के कई स्थानों में भ्रमण करता हुआ लाहौर पहुँचा था, उस समय उसके विरोध में वहाँ के नागरिकों ने एक जुलूस निकाला था और उसके अध्यक्ष थे, पञ्जाब-केसरी स्वर्गवासी लाला लाजपतराय। इस जुलूस को तितर-बितर करने के लिए, लाहौर की पुलिस ने मि० सौण्डर्स नाम के एक पुलिस कर्मचारी की अध्यक्षता में जुलूस वालों पर लाठियाँ चलाई थीं। स्व० लाला जी को भी चोट लगी थी, और परिणाम-स्वरूप, विगत १७ नवम्बर सन् १९२८ को लाला जी का स्वर्गवास हो गया। इस घटना के ठीक एक महीने बाद १७ दिसम्बर को मि० सौण्डर्स और सरदार चाननसिंह को गोली मारी गई और उन दोनों का देहान्त हो गया। पुलिस को सन्देह हुआ कि इस काण्ड से सरदार भगतसिंह का भी सम्बन्ध है, इसलिए पुलिस उन्हें ढूँढ़ रही थी। इतने में एसेम्बली बम-काण्ड हुआ, जिसका उल्लेख हम ऊपर कर आए हैं।

बम-फ़ेक्टरी और षड्यन्त्र

एसेम्बली बम-विस्फोट के बाद पुलिस को पञ्जाब में किसी बम के कारख़ाने का सन्देह हुआ। वह और बड़ी मुस्तैदी से इस बात का पता लगाने लगी। अन्त में १६ अप्रैल को लाहौर के काश्मीरी बिल्डिङ्ग में उसे एक बम का कारख़ाना मिला और सरदार भगतसिंह के साथी श्री० सुखदेव गिरफ़्तार किए गए। इस कारख़ाने के मिलने के साथ ही पुलिस ने घोषणा की कि इसके साथ ही भयङ्कर षड्यन्त्र भी है और इस षड्यन्त्र से सरदार भगतसिंह का भी सम्बन्ध है। अन्त में षड्यन्त्र सम्बन्धी मुक़दमा आरम्भ हुआ और मि० सौण्डर्स तथा सरदार चाननसिंह की हत्या का अपराध सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० चन्द्रशेखर आज़ाद पर लगाया गया।

षड्यन्त्र का मामला

रायसाहब पण्डित श्रीकिशन स्पेशल मैजिस्ट्रेट की अदालत में लाहौर षड्यन्त्र का मामला पेश हुआ। इस मुक़दमे के दौरान में समय-समय पर सरदार भगतसिंह ने जो बातें कहीं और जो काम किए, वे इतिहास में अनुपम हैं। जेल के कष्टों को दूर कराने के लिए आपके साथी श्री० यतीन्द्रनाथ ने तो जेल में अनशन करके अपनी बलि दे दी। इसी बीच में सत्याग्रह-आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और गवर्नर-जनरल लॉर्ड इर्विन ने इस मुक़दमे को जल्दी समाप्त करने के लिए एक ख़ास ऑर्डिनेन्स बना कर तीन जजों की एक ट्रिब्यूनल क़ायम कर दी। इस ट्रिब्यूनल में मामला फिर से चालू हुआ। अदालत के रुख़ को देख कर अभियुक्तों ने मुक़दमे में हिस्सा लेने से इन्कार कर दिया। इन लोगों ने सफ़ाई भी नहीं दी। आख़िर इन लोगों की ग़ैर-मौजूदगी में अदालत ने हुक्म भी सुना दिया। इस केस के दौरान में पूरे ११९ दिन अनशन-व्रत करके सरदार भगतसिंह ने सारे संसार को चकित कर दिया था।

फाँसी की सज़ा

७ अक्टूबर १९३० को सरदार भगतसिंह, श्रीयुत सुखदेव और श्रीयुत राजगुरु को फाँसी की सज़ा दे दी गई। ट्रिब्यूनल ने फाँसी की तारीख़ भी मुक़र्रर कर दी और फाँसी के वारण्ट भी बना दिए। ख़ास ऑर्डिनेन्स होने के कारण इस मामले की अपील हाईकोर्ट में नहीं हो सकी। हाईकोर्ट में इस बात की अपील की गई कि वायसराय को ट्रिब्यूनल बनाने का कोई अधिकार नहीं था—पर वह अपील ख़ारिज कर दी गई। प्रिवी-कौन्सिल में अपील की गई, पर वह भी नामञ्ज़ूर हुई। हाईकोर्ट में वकीलों ने अपील की कि फाँसी की सज़ा रद कर दी जाय, पर वह भी नामञ्ज़ूर हुई।

ट्रिब्यूनल ने फाँसी देने की तारीख़ अक्टूबर १९३० में मुक़र्रर की थी—वह तारीख़ निकल गई। उधर ऑर्डिनेन्स का समय समाप्त हो जाने से ट्रिब्यूनल भी समाप्त हो गया। वकीलों ने हाईकोर्ट में अपील की कि भारतीय दण्ड-विधान के अनुसार अब उन्हें फाँसी दिलाने का किसी को अधिकार नहीं है। पर यह अपील भी न मानी गई। सरदार भगतसिंह की ओर से दया की प्रार्थना करने के लिए एक अपील वायसराय के नाम लिखी गई, पर सरदार ने दया की भीख माँगना अस्वीकार करके हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया। यह दरख़्वास्त और लोगों की ओर से भेजी गई, पर वायसराय ने इसे मञ्ज़ूर नहीं किया। आपके साथी श्री० चन्द्रशेखर आज़ाद को पकड़ने की पुलिस ने बहुत कोशिश की, पर वे पकड़े न जा सके। पाँच हज़ार का पारितोषिक भी उन्हें पकड़ा न सका। आख़िर २७ फ़रवरी को प्रयाग में वे पुलिस से भिड़ कर और गोली मार कर

मर गए। सरदार भगतसिंह को फाँसी से बचाने के लिए एक बार फिर हाईकोर्ट से अपील की गई, पर वह भी मन्ज़ूर न हुई।

महात्मा जी का विफल प्रयास और फाँसी

महात्मा जी ने लॉर्ड इर्विन से कई दिन तक बातचीत करके सन्धि की शर्तें तय कीं और उनके अनुसार ४ मार्च को सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित कर दिया गया। इन शर्तों में महात्मा जी ने वायसराय से यह समझौता भी किया था कि इन्हें फाँसी अभी न लगाई जाय। इस सम्बन्ध में महात्मा जी का षड्यन्त्रकारियों की जान बचाने का उद्योग तो निष्फल हुआ ही, वायसराय का समझौता भी पूरा न हुआ। जब सरदार भगतसिंह को महात्मा जी के उद्योग का पता लगा तो आपने स्पष्ट कह दिया कि महात्मा जी हमें नहीं बचा सकते। हम राजबन्दी हैं। सरकार को चाहिए कि या तो हमें लड़ाई समाप्त होने पर छोड़ दे या गोली से उड़ा दे। हमें फाँसी लगाना, हमारा अपमान करना है। लाखों आदमियों के हस्ताक्षर से जो अपील की गई, उसका भी कोई फल नहीं हुआ, महात्मा जी की बात भी नहीं मानी गई। इस प्रकार लोकमत का निरादर करते हुए सरदार भगतसिंह, श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु को २३ मार्च, १९३१ को रात के पौने आठ बजे फाँसी पर चढ़ा दिया गया। इन नवयुवकों ने हँसते-हँसते फाँसी की रस्सी को चूमा और "इन्क़लाब ज़िन्दाबाद" के नारे लगाते हुए परमधाम को सिधार गए। फाँसी के समय सरदार की उम्र कुल २३ वर्ष की थी।

अन्त्येष्टि

'जेल मेनुएल' के अनुसार फाँसी देने का नियम प्रातःकाल है, पर सरदार और उनके साथी रात के अन्धकार में लटकाए गए। उनके निकट सम्बन्धियों और प्रियजनों के लिए उनसे अन्तिम भेंट करने की भी वाञ्छनीय सुविधा नहीं दी गई। यहाँ तक कि प्रदर्शन के भय से उनकी लाशें भी उनके घर वालों को नहीं दी गईं, और बल्कि रातोंरात मोटर-लॉरियों में भर के वे लाहौर से प्रायः चालीस मील की दूरी पर सतलज नदी के किनारे ले जाकर चुपचाप जला दी गईं। उनके भस्मावशेष से भी इतना भय किया गया कि वह सतलज की मझधार में प्रवाह कर दिया गया !!!

अन्य परिजन

भगतसिंह के दो छोटे भाई और तीन बहिनें हैं। भगतसिंह के माता-पिता के अतिरिक्त उनके बाबा-दादी भी जीवित हैं। बाबा सरदार अर्जुनसिंह जी ८० वर्ष से ऊपर हैं, लेकिन अजीतसिंह, सुवर्णसिंह—जिनकी मौत सन् १९०८ में जेल में हो चुकी है; इन दो पुत्रों को मातृवेदी पर होम कर और अब अपने पोते भगतसिंह के बलिदान पर वे गर्व करते हैं।

सरदार भगतसिंह का अन्तिम पत्र अपने भाई के नाम

३ मार्च, १९३१

अज़ीज़ कुलतार,

आज तुम्हारी आँखों में आँसू देख कर बहुत रंज हुआ। आज तुम्हारी बातों में बहुत दर्द था, तुम्हारे आँसू मुझसे बर्दाश्त नहीं होते।

बर्ख़ुर्दार हिम्मत से शिक्षा प्राप्त करना, और सेहत का ख़याल रखना।

हौसला रखना, और क्या कहूँ :—

उसे फ़िक्र है हरदम नया तर्ज़े जफ़ा क्या है,
हमें यह शौक़ देखें तो सितम की इन्तहा क्या है।
घर से क्यों ख़फ़ा रहें चर्ख़ का क्यों गिला करें,
सारा जहाँ अदू सही, आओ मुक़ाबला करें।

कोई दम का मेहमाँ हूँ, ऐ अहले महफ़िल,
चिराग़े सेहर हूँ, बुझा चाहता हूँ।
मेरी हवा में रहेगी ख़्याल की बिजली,
यह मुश्ते ख़ाक है, फ़ानी रहे या न रहे।

अच्छा आज्ञा ! "ख़ुश रहो अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं।" हौसला से रहना। नमस्ते !

तुम्हारा भाई,
भगतसिंह

* * *

क़ौम के नाम स्वर्गीय सरदार भगतसिंह जी का आख़िरी सन्देश !

नौजवान राजनीतिक कार्यकर्ताओं के प्रति—

[नीचे का पत्र हमने सहयोगी 'पञ्जाब केसरी' से उद्धृत किया है। सहयोगी का कहना है कि यह पत्र स्वर्गीय सरदार ने गत २ फ़रवरी, १९३१ को, जब कॉङ्ग्रेस और वायसराय में समझौते की बातचीत आरम्भ हुई थी, तब अपने किसी मित्र के पास भेजा था। मूल-पत्र अङ्गरेज़ी में और बड़ा था। उसकी सब महत्वपूर्ण बातें इसमें आ गई हैं। —स० 'भविष्य']

"प्यारे साथियो !

"इस समय हमारा आन्दोलन अत्यन्त महत्वपूर्ण परिस्थितियों में से गुज़र रहा है। एक साल के कठोर संग्राम के बाद गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स ने हमारे सामने शासन-विधान में परिवर्तन के सम्बन्ध में कुछ निश्चित बातें पेश की हैं, और कॉङ्ग्रेस के नेताओं को निमन्त्रण दिया है कि वे आकर शासन-विधान तैयार करने के काम में मदद दें। कॉङ्ग्रेस के नेता इस हालत में आन्दोलन को स्थगित कर देने के लिए उद्यत दिखाई देते हैं। वे लोग आन्दोलन स्थगित करने के हक़ में फ़ैसला करेंगे या उसके ख़िलाफ़, यह बात हमारे लिए बहुत महत्व नहीं रखती। यह बात निश्चित है कि वर्तमान आन्दोलन का अन्त किसी न किसी प्रकार के समझौते के रूप में होना लाज़मी है। यह दूसरी बात है कि समझौता जल्दी हो जाय या देरी में हो।

सरदार भगतसिंह तथा उनके साथियों को फाँसी होने पर देहली में आपका एक वृहत् मातमी जुलूस निकाला गया था, जिसमें आपका चित्र तथा एक कल्पित मूर्ति पालकी पर रख कर जुलूस के आगे रक्खी गई थी।

समझौता क्या है ?

"वस्तुतः समझौता कोई ऐसी हेय और निन्दा योग्य वस्तु नहीं, जैसा कि साधारणतः हम लोग समझते हैं। बल्कि राजनीतिक संग्रामों का समझौता एक अत्यावश्यक अङ्ग है। कोई भी क़ौम, जो किसी अत्याचारी शासन के विरुद्ध खड़ी होती है, यह ज़रूरी है कि वह प्रारम्भ में असफल हो, और अपनी लम्बी जद्दोजहद के मध्यकाल में इस प्रकार के समझौतों के ज़रिए कुछ राजनीतिक सुधार हासिल करती जाय, परन्तु वह अपनी लड़ाई की आख़िरी मञ्ज़िल तक पहुँचते-पहुँचते अपनी ताक़तों को इतना सङ्गठित और दृढ़ कर लेती है कि उसका दुश्मन पर आख़िरी हमला ऐसा ज़ोरदार होता है कि शासक-लोगों की ताक़तें उनके उस वार के सामने चकनाचूर होकर गिर पड़ती हैं। ऐसा भी हो सकता है कि उस

वक़् भी उसे दुश्मन के साथ कोई समझौता कर लेना पड़े। यह बात रूस के उदाहरण से भली-भाँति स्पष्ट की जा सकती है।

"१६०५ में रूस में क्रान्ति की लहर उठी। क्रान्तिकारी नेताओं को बड़ी भारी आशाएँ थीं। लेनिन उसी समय विदेश से लौट आया था—जहाँ वह पहले भाग कर चला गया था। वह सारे आन्दोलन को चला रहा था। लोगों ने कोई दर्जन भर भूमिपतियों को मार डाला, और कुछ मकानों को जला डाला। परन्तु वह क्रान्ति सफल न हुई। उसका इतना परिणाम अवश्य हुआ कि सरकार कुछ सुधार करने के लिए बाधित हुई, और "ड्यूमा" (एक प्रकार की पार्लामेण्ट) की स्थापना की गई। उस समय लेनिन ने "ड्यूमा" में जाने का समर्थन किया। परन्तु १६०६ में उसी का उसने विरोध शुरू कर दिया। परन्तु १६०७ में उसने दूसरी "ड्यूमा" में जाने का समर्थन किया, जिसके अधिकार बहुत कम कर दिए गए थे। इसका कारण यह था कि वह 'ड्यूमा' को अपने आन्दोलन का एक "प्लेटफ़ॉर्म" बनाना चाहता था।

"इसी प्रकार १६१७ के बाद जब जर्मनी के साथ रूस की सन्धि का प्रश्न चला, तो लेनिन के सिवा बाक़ी सभी लोग उस सन्धि के ख़िलाफ़ थे। परन्तु लेनिन ने कहा—'शान्ति-शान्ति और फिर शान्ति—किसी भी क़ीमत पर हो शान्ति। यहाँ तक कि यदि हमें रूस के कुछ प्रान्त भी जर्मनी के 'वार लॉर्ड' को सौंप देने पड़ें, तो भी शान्ति कर लेनी चाहिए।' जब कुछ बोल्शेविक नेताओं ने भी उसकी इस नीति का विरोध किया, तो उसने साफ़ कहा कि 'इस समय बोल्शेविक सरकार जर्मनी का मुक़ाबला करने में असमर्थ है, और इस समय हमारा पहला काम लड़ाई से हट कर अपनी सरकार को मज़बूत करना है।'

"जिस बात को मैं बताना चाहता हूँ, वह यह है कि 'समझौता' भी एक ऐसा हथियार है, जिसे राजनीतिक जद्दोजहद के बीच में पद-पद पर इस्तेमाल करना आवश्यक हो जाता है, जिससे एक कठिन लड़ाई से थकी हुई क़ौम को थोड़ी देर के लिए आराम मिल सके, और वह आगे युद्ध के लिए अधिक ताक़त के साथ तैयार हो सके। परन्तु इन सारे समझौतों के बावजूद जिस चीज़ को हमें भूलना न चाहिए, वह हमारा आदर्श है, जो हमेशा हमारे सामने रहना चाहिए। जिस लक्ष्य के लिए हम लड़ रहे हैं, उसके सम्बन्ध में हमारे विचार बिल्कुल स्पष्ट और दृढ़ होने चाहिए। यदि आप सोलह आने के लिए लड़ रहे हैं, और एक आना मिल जाता है, तो वह एक आना जेब में डाल कर बाक़ी पन्द्रह आने के लिए फिर जङ्ग छेड़ दीजिए। हिन्दुस्तान के मॉडरेटों की जिस बात से हमें नफ़रत है, वह यही है कि उनका आदर्श कुछ नहीं है। वे एक आने के लिए ही लड़ते हैं, और उन्हें इसीलिए मिलता कुछ भी नहीं।"

कॉङ्ग्रेस का उद्देश्य क्या है ?

इसके आगे सरदार जी ने अपने पत्र में इस बात की आलोचना की है कि "भारत की वर्तमान लड़ाई ज़्यादातर मध्य श्रेणी के लोगों के बल-बूते पर लड़ी जा रही है। जिनका लक्ष्य बहुत सीमित है। कॉङ्ग्रेस दुकानदारों और जीपतियों के ज़रिए इङ्गलैण्ड पर आर्थिक दबाव डाल कर कुछ अधिकार ले लेना चाहती है, परन्तु जहाँ तक देश की करोड़ों मज़दूर और किसान जनता का ताल्लुक़ है, उनका उद्धार इतने से नहीं हो सकता। यदि देश की लड़ाई लड़नी हो तो मज़दूरों, किसानों और सामान्य जनता को आगे लाना होगा, उन्हें लड़ाई के लिए सङ्गठित करना होगा। नेता उन्हें अभी तक आगे लाने के लिए कुछ नहीं करते, न कर सकते हैं। इन किसानों को विदेशी हुकूमत के जुए के साथ-साथ भूमिपतियों और पूँजीपतियों के जुए से भी उद्धार पाना है। परन्तु कॉङ्ग्रेस का उद्देश्य यह नहीं है।

"इसीलिए मैं कहता हूँ कि कॉङ्ग्रेस के लोग सम्पूर्ण क्रान्ति नहीं चाहते। सरकार पर आर्थिक दबाव डाल कर वे कुछ सुधार और लेना चाहते हैं—भारत की धनी श्रेणी के लिए कुछ रियायतें और चाहते हैं, और इसीलिए यह भी कहता हूँ कि कॉङ्ग्रेस का आन्दोलन किसी न किसी समझौते या असफलता के रूप में ख़तम हो जायगा।

नौजवानों का फ़र्ज़

"इस हालत में नौजवानों को समझ लेना चाहिए कि उनके लिए वक़् और भी सख़्त आ रहा है। उन्हें सावधान हो जाना चाहिए कि कहीं उनकी बुद्धि चकरा न जाय, या वे हताश न हो बैठें। महात्मा गाँधी की दो लड़ाइयों का अनुभव प्राप्त कर लेने के बाद वर्तमान हालात और अपने भविष्य के प्रोग्राम के सम्बन्ध में साफ़-साफ़ नीति निर्धारित करना हमारे लिए अब ज़्यादा ज़रूरी हो गया है।

"क्रान्ति चिरञ्जीवी" की पुकार

"इतना विचार कर चुकने के बाद मैं अपनी बात अत्यन्त सादे शब्दों में कहना चाहता हूँ :—

"आप लोग "क्रान्ति चिरञ्जीवी हो" (Long live Revolution) की पुकार करते हैं। यह नारा हमारे लिए बहुत ही पवित्र है, और इसका इस्तेमाल हमें बहुत ही सोच-समझ कर करना चाहिए।

हमारा लक्ष्य

"जब आप नारे लगाते हैं, तो मैं समझता हूँ कि आप लोग वस्तुतः जो पुकारते हैं वही करना भी चाहते हैं। एसेम्बली बम-केस के समय हमने "क्रान्ति" शब्द की जो व्याख्या की थी—'क्रान्ति' से हमारा अभिप्राय समाज की वर्तमान प्रणाली और वर्तमान सङ्गठन को पूरी तरह उखाड़ फेंकना है। इस उद्देश्य के लिए हम पहले सरकार की ताक़त को अपने हाथ में लेना चाहते हैं। इस समय शासन की मैशीन धनियों के हाथ में है। सामान्य जनता के हितों की रक्षा के लिए तथा अपने आदर्शों को क्रियात्मक रूप देने के लिए—अर्थात् समाज का नए सिरे से सङ्गठन कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों के अनुसार करने के लिए—हम सरकार की मैशीन को अपने हाथ में लेना चाहते हैं। हम इसी उद्देश्य के लिए लड़ रहे हैं। परन्तु इसके लिए हमें साधारण जनता को शिक्षित करना चाहिए।"

शासन-विधान की कसौटी

जिन लोगों के सामने इस महान क्रान्ति का लक्ष्य है, उनके लिए नए शासन-सुधारों की कसौटी क्या होनी चाहिए, इस पर विचार करते हुए उन्होंने लिखा है:—

"हमारे लिए निम्न-लिखित तीन बातें किसी भी शासन-विधान की परख के लिए देखना ज़रूरी है—

१—शासन की ज़िम्मेवारी कहाँ तक भारतवासियों के सुपुर्द की जाती है।

२—शासन-विधान को चलाने के लिए किस प्रकार की सरकार बनाई जाती है, और उसमें हिस्सा लेने का आम जनता को कहाँ तक मौक़ा मिलता है।

३—भविष्य में उससे क्या आशाएँ की जा सकती हैं। उस पर कहाँ तक प्रतिबन्ध लगाए जाते हैं।" इस सिलसिले में उन्होंने सर्व-साधारण को वोट देने का हक़ देने का समर्थन किया है।

पार्लामेण्ट के दो हाउसों के सम्बन्ध में विचार करते हुए लिखा है कि क्योंकि भारत-सरकार की 'कौन्सिल ऑफ़ स्टेट' सिर्फ़ धनियों का जमघट है, और लोगों को फाँसने का एक पिंजरा है, इसलिए उसे हटा कर एक ही सभा—जिसमें जनता के प्रतिनिधि हों, रखनी चाहिए।

"प्रान्तीय स्वराज्य" या "प्रान्तीय ज़ुल्म ?"

'प्रान्तीय स्वराज्य' का जो निश्चय गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में हुआ है, उसके सम्बन्ध में विचार करते हुए लिखा है कि जिस प्रकार के लोगों को वहाँ सारी ताक़तें दी जा रही हैं, उससे तो वह 'प्रान्तीय स्वराज्य' न होकर 'प्रान्तीय ज़ुल्म' हो जायगा।

समझौता क्या है ?

"इन सब अवस्थाओं पर विचार करके हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि सब से पहले हमें सारी अवस्थाओं का चित्र साफ़ तौर पर अपने सामने अङ्कित कर लेना चाहिए। यद्यपि हम यह मानते हैं कि समझौते का अर्थ कभी आत्म-समर्पण या पराजय स्वीकार करना नहीं, किन्तु एक क़दम आगे और फिर कुछ आराम है, परन्तु साथ ही हमें यह भी समझ लेना चाहिए, कि समझौता इससे अधिक भी और कुछ नहीं। वह अन्तिम लक्ष्य और हमारे लिए अन्तिम विश्राम का स्थान नहीं।"

* * *

इसके बाद उन्होंने अपने दल के लक्ष्य, और साधनों पर विचार किया है। "दल का नाम 'सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी' है, और इसलिए इसका लक्ष्य एक सोशलिस्ट या 'कम्युनिस्ट' सामाजिक सङ्गठन की स्थापना है। कॉङ्ग्रेस और इस दल के लक्ष्य में यही भेद है कि जहाँ 'राजनीतिक क्रान्ति से शासन-शक्ति अङ्गरेज़ों के हाथ से निकल कर हिन्दुस्तानियों के हाथों में आ जायगी, हमारा लक्ष्य शासन-शक्ति को उन हाथों के सुपुर्द करना है, जिनका लक्ष्य कम्युनिज़्म हो।' इसके लिए मज़दूरों और किसानों को सङ्गठित करना आवश्यक होगा। क्योंकि उन लोगों के लिए लॉर्ड रीडिङ्ग या इर्विन की जगह तेजबहादुर या पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास के आ जाने से कोई भारी फ़रक़ न पड़ सकेगा।

पूर्ण स्वाधीनता

"पूर्ण स्वाधीनता से भी इस दल का यही अभिप्राय है। जब लाहौर-कॉङ्ग्रेस ने पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पास किया, तो हम लोग पूरे दिल से इसे चाहते थे, परन्तु कॉङ्ग्रेस के उसी अधिवेशन में महात्मा जी ने कहा कि "समझौते का दरवाज़ा अभी भी खुला है।" इसका अर्थ यह था कि वह पहले जानते थे कि उनकी लड़ाई का अन्त किसी इसी प्रकार के समझौते में होगा। वे पूरे दिल से स्वाधीनता की घोषणा न कर रहे थे। हम लोग इसी बेदिली से घृणा करते हैं।"

कार्यकर्ताओं की आवश्यकता

इसके बाद आपने नौजवानों से अपील करते हुए कहा है कि इस उद्देश्य के लिए उन्हें कार्यकर्ता बन कर निकलना चाहिए। नेता बनने वाले पहले ही बहुत हैं। हमारे दल को नेताओं की आवश्यकता नहीं है। "अगर आप दुनियादार हैं, बाल-बच्चों और गृहस्थी में फँसे हैं, तो हमारे मार्ग पर मत आइए। आप हमारे उद्देश्य में सहानुभूति रखते हैं, तो और तरीक़ों से हमें सहायता दीजिए। सख़्त नियन्त्रण में रह सकने वाले कार्यकर्ता ही इस आन्दोलन को आगे ले जा सकते हैं। ज़रूरी नहीं कि दल इस उद्देश्य के लिए छिप कर ही काम करे। हमें युवकों के लिए 'स्वाध्याय-मण्डल'

(Study Circle) खोलने चाहिए। पैम्फ़्लेटों और लीफ़लेटों, छोटी पुस्तकों, छोटे-छोटे पुस्तकालयों और लेक्चरों, बातचीत आदि से हमें अपने विचारों का सर्वत्र प्रचार करना चाहिए।

सैनिक विभाग

"हमारे दल का एक सैनिक विभाग भी सङ्गठित होना चाहिए। कभी-कभी इसकी बड़ी ज़रूरत पड़ जाती है। इस सम्बन्ध में मैं अपनी स्थिति ज़्यादा साफ़ कर देना चाहता हूँ। मैं जो कुछ कहना चाहता हूँ, उसमें ग़लतफ़हमी की सम्भावना है। परन्तु आप लोग मेरे शब्दों और वाक्यों का कोई गूढ़ अभिप्राय न लें।

"यह बात प्रसिद्ध ही है कि मैं आतङ्ककारी (Terrorist) रहा हूँ, परन्तु मैं आतङ्ककारी नहीं हूँ। मैं एक क्रान्तिकारी (Revolutionary) हूँ, जिसके कुछ निश्चित विचार और निश्चित आदर्श हैं—जिसके सामने एक लम्बा प्रोग्राम है। मुझे यह दोष दिया जायगा, जैसा कि लोग रामप्रसाद बिस्मिल को भी देते थे कि फाँसी की कालकोठरी में पड़े रहने से मेरे विचारों में भी कोई परिवर्तन आ गया है। परन्तु ऐसी बात नहीं। मेरे विचार अब भी वही हैं, मेरे हृदय में अब भी उतना ही और वैसा ही उत्साह है, और वही लक्ष्य है, जो जेल से बाहर था। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि हम बम से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। यह बात हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के इतिहास से आसानी से मालूम हो जाती है। केवल बम फेंकना न सिर्फ़ व्यर्थ है, परन्तु बहुत बार हानिकारक भी है। उसकी आवश्यकता किन्हीं ख़ास अवस्थों में ही पड़ा करती है। हमारा मुख्य लक्ष्य मज़दूरों और किसानों का सङ्गठन होना चाहिए। सैनिक-विभाग युद्ध-सामग्री को किसी ख़ास मौक़े के लिए केवल संग्रह करता रहे।"

अन्त में नौजवानों से सोशलिस्ट रिपब्लिक के आदर्श के लिए उत्साहपूर्वक अपील करते हुए उन्होंने कहा है कि "यदि वह इसी प्रकार प्रयत्न करते जायँगे, तब जाकर—'एक साल में स्वराज्य' तो नहीं—किन्तु भारी क़ुर्बानी और त्याग की कठिन परीक्षा में से गुज़रने के बाद वे अवश्य विजयी होंगे। 'क्रान्ति चिरञ्जीवी हो!'"

* * *

(२७४ पृष्ठ का शेषांश)

हो और लाट साहब सिटपिटा कर रह गए हों।

एक दिन लल्ला की महतारी लल्ला के किसी काम से अत्यन्त प्रसन्न हुईं और उसका मुँह चूम कर कहने लगीं—"मेरा बेटा लाट साहब होगा।" यह सुन कर मेरा तो नशा किरकिरा हो गया। मैंने उन्हें डाँट कर कहा—"चुप भी रहो। क्यों बेचारे बच्चे को अभिशाप दे रही हो?"

लल्ला की महतारी हक्की-बक्की सी होकर मेरा मुँह ताकने लगीं। अन्त में मैंने जब लाट साहब की सारी कमज़ोरियों का हाल सुनाया तो उन्होंने "अच्छा, मेरा बेटा लाट साहब न होकर कानपुर का पुलिस कोतवाल होगा"—कह कर अपना अभिशाप वापस लिया। मैंने भी कहा—"एवमस्तु!"

आपका,

—विजयानन्द (दुबे जी)

* * *

स्वर्गीय श्री० सुखदेव का संक्षिप्त परिचय

जन्म

सरदार भगतसिंह के साथ फाँसी पर लटकाए जाने वाले, उनके अन्यतम साथी श्री० सुखदेव ख़ास लायलपुर (पञ्जाब) के रहने वाले थे। आपका जन्म मि० फाल्गुण सुदी ७, सं० १९६२ को पौने ग्यारह बजे दिन को हुआ था। आपके जन्म से तीन महीने पहले ही आपके पिता का देहान्त हो चुका था, इसलिए आपकी परवरिश और शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध आपके चचा लाला अचिन्तराम ने किया था।

शिक्षा और दीक्षा

पाँच वर्ष की उमर में बालक सुखदेव को पढ़ने के लिए स्थानीय 'धनपतमल आर्य-हाईस्कूल' में भरती किया गया। यहाँ आपने केवल सातवीं श्रेणी तक शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद फिर लायलपुर सनातनधर्म हाई-स्कूल में भेजे गए और सन् १९२२ में इसी स्कूल से द्वितीय श्रेणी से इण्ट्रेन्स की परीक्षा पास की थी। श्री० सुखदेव बड़े मेधावी और तीव्र-बुद्धिशाली थे। किसी परीक्षा में कभी अनुत्तीर्ण न हुए, वरन् प्रति वर्ष अच्छे नम्बरों के साथ 'पास' होते गए। आपका स्वभाव बड़ा ही शान्त और कोमल था, इसलिए आपके सहपाठी और शिक्षक सदैव आपका आदर और प्यार करते थे। कहते हैं, आपके स्वभाव पर आपकी माता के धार्मिक संस्कारों का विशेष प्रभाव पड़ा था। आपके स्वभाव में उदारता की मात्रा यथेष्ट थी। आप अपने सिद्धान्तों में बड़े दृढ़ थे। जो दिल में समा जाती थी, उसे वह सारे संसार के विरोध करने पर भी छोड़ना नहीं चाहते थे। आप अपनी धुन के पक्के थे। सहपाठियों में जब किसी विषय को लेकर तर्क-वितर्क उपस्थित होता तो आप बड़ी दृढ़ता से अपना पक्ष समर्थन करते और अन्त में आपकी अकाट्य युक्तियों के सामने प्रतिद्वन्दी को मस्तक झुका देना पड़ता। आर्य-परिवार में जन्म ग्रहण करने के कारण आपके विचारों पर आर्य-समाज का विशेष प्रभाव था। समाज के सत्सङ्गों में आप बड़े उत्साह से भाग लिया करते थे। इसके सिवा हवन, सन्ध्या और योगाभ्यास का भी शौक़ था। कुछ दिनों तक आपने बड़े उमङ्ग से इन धार्मिक क्रियाओं का पालन किया था।

झण्डे का अभिवादन

सन् १९१९ में पञ्जाब के कई शहरों में 'मार्शल-लॉ' जारी था। उस समय श्री० सुखदेव की उमर कुल १२ साल की थी और आप सातवीं कक्षा में पढ़ते थे। आपके चचा श्री० अचिन्तराम 'मार्शल-लॉ' के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए। बालक सुखदेव के मन पर इस घटना का विशेष प्रभाव पड़ा। लाला अचिन्तराम का कहना है कि उन दिनों सुखदेव कभी-कभी जेल में मुझसे मिलने आया करता था और अक्सर पूछा करता था कि क्या आपको यहाँ बहुत तकलीफ़ दी जाती है? मैं तो किसी को भी सलाम न करूँगा।

उसी ज़माने में एक दिन शहर भर की सभी पाठशाला और विद्यालयों के विद्यार्थियों को एकत्र करके 'यूनियन-जैक' (ब्रिटिश झण्डा) का अभिवादन कराया गया था, परन्तु श्री० सुखदेव इसमें सम्मिलित नहीं हुए थे और श्री० अचिन्तराम के जेल से वापस आने पर उन्होंने बड़े गर्व से कहा था कि मैं झण्डे का अभिवादन करने नहीं गया।

असहयोग आन्दोलन

सन् १९२१ में महात्मा गाँधी ने असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया। सारे देश में एक विचित्र जागृति की लहर दृष्टि-गोचर होने लगी। श्री० सुखदेव के जीवन में भी एक विचित्र परिवर्तन आरम्भ हुआ। स्वतन्त्र प्रकृति और उच्च विचार के होने पर भी श्री० सुखदेव को कपड़े-लत्ते का बड़ा शौक़ था। वे अच्छे और क़ीमती कपड़े बहुत पसन्द करते। हैट-कोट और टाई-कॉलर का भी शौक़ था। परन्तु इस आन्दोलन के आरम्भ होते ही उन्होंने विलायती और विलायती ढङ्ग के कपड़ों को सदा के लिए परित्याग कर दिया। पहनने के लिए कुछ खद्दर के कपड़े बनवाए और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें अपने हाथ से साफ़ कर लिया करते। इसके साथ ही इसी समय से हिन्दी भाषा सीखने और उसके प्रचार का भी शौक़ हुआ। वे अपने साथियों को हिन्दी भाषा की महत्ता और उसके सीखने की आवश्यकता बताया करते थे। उनका विचार था कि देश के उत्थान के लिए एक राष्ट्र-भाषा की आवश्यकता है और उस आवश्यकता की पूर्ति केवल हिन्दी भाषा ही कर सकती है।

घोड़ी के बदले फाँसी

हम ऊपर लिख आए हैं कि असहयोग आन्दोलन ने श्री० सुखदेव की कायापलट कर दी थी। सादगी उनके जीवन का ध्येय बन गया था और शायद राष्ट्र-सेवा ही जीवन का ध्येय भी बन चुकी थी। इधर माता और बहिन विवाह की चिन्ता करने लगीं, परन्तु चचा इसके विरुद्ध थे। क्योंकि आर्य-समाज के सिद्धान्त के अनुसार पच्चीस वर्ष की उमर से पहले लड़के को शादी करना उन्हें पसन्द न था। माता जब कहतीं, कि सुखदेव, मैं तुम्हारी शादी करूँगी और तुम घोड़ी पर चढ़ोगे तो श्री० सुखदेव सदैव यही उत्तर देते कि मैं घोड़ी पर चढ़ने के बदले फाँसी पर चढ़ूँगा।

पञ्च पाण्डव

सन् १९२२ में श्री० सुखदेव के एण्ट्रेन्स की परीक्षा पास कर लेने पर लाला अचिन्तराम जेल में थे। उन्होंने वहीं से आज्ञा दी कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए लाहौर के डी० ए० वी० कॉलेज में नाम लिखा लो। परन्तु श्री० सुखदेव ने ऐसा नहीं किया। उन्होंने चचा की इच्छा और आदेश के विरुद्ध 'नेशनल कॉलेज' में नाम लिखाया। यहीं उनका परिचय श्री० सरदार भगतसिंह आदि से हुआ। इनकी मण्डली में पाँच सदस्य थे। इन लोगों में परस्पर बड़ा ही प्रेम था। विद्यालय के अन्यान्य विद्यार्थी तथा कई शिक्षक इन्हें 'पञ्च पाण्डव' के नाम से याद किया करते थे।

विदेश-यात्रा का विचार

श्री० सुखदेव को एक बार यूरोप की यात्रा करने की बड़ी इच्छा थी। इसी इच्छा से आप स्वामी सत्यदेव के साथ भी कुछ दिनों तक रहे और वहाँ के विभिन्न देशों की भाषाएँ सीखने का विचार किया। परन्तु कई कारणों से आपको इसमें सफलता न मिली। फलतः तीन महीनों के बाद आपने स्वामी सत्यदेव जी का साथ छोड़ दिया।

पहाड़ी सैर

यूरोप-यात्रा के अतिरिक्त श्री० सुखदेव और उनके कई सहपाठियों को पहाड़ी सैर का भी बड़ा शौक़ था। फलतः सन् १९२० के ग्रीष्मावकाश में इन लोगों ने काङ्गड़ा के पहाड़ी प्रदेशों का पैदल भ्रमण करने का विचार किया। इस यात्रा में श्री० यशपाल भी इसके साथ थे। वापस आने के समय एक दिन इस पार्टी को दिन भर में ४२ मील की यात्रा करनी पड़ी थी और महीकरन से कुल्लू तक ३४ मील की यात्रा रात को एक बजे तक करनी पड़ी।

गिरफ़्तारी

साइमन कमीशन के आने पर पञ्च-पाण्डव ने निश्चय किया कि एक समारोहपूर्वक प्रदर्शन किया जाए। इसके लिए काली झण्डियाँ तैयार की जा रही थीं। सरदार भगतसिंह आदि पाँच-छः सज्जन अपने किसी मित्र के घर पर उक्त प्रदर्शन की तैयारी में लगे थे। लाला केदारनाथ जी सहगल भी थे। परन्तु उन्हें नींद आ गई और वे सो गए। सरदार भगतसिंह ने कहा, मुझे भी नींद आ रही है। मैं भी थोड़ा सो लूँ। परन्तु मित्रों ने इन्हें सोने न दिया। इसी समय उन्हें इस बात का ख़याल आया कि शायद पुलिस हमारे घर पर छापा मारे तो सुखदेव उस मकान से गिरफ़्तार हो जाएँगे। इसलिए एक आदमी श्री० सुखदेव को सावधान करने के लिए सरदार भगतसिंह के घर पर भेज दिया गया। थोड़ी देर के बाद उसने आकर ख़बर दी कि पुलिस सरदार भगतसिंह के मकान पर पहुँच गई है।

पुलिस ने श्री० सुखदेव से बहुत से प्रश्न किए। परन्तु उन्होंने किसी प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। अन्त में पुलिस ने उन्हें गिरफ़्तार कर लिया और दिन के १२ बजे तक कोतवाली में बिठा रक्खा। इसके बाद कुछ लोगों ने वहाँ जाकर इन्हें छुड़ाया।

स्वर्गीय श्री० सुखदेव

राजनीतिक शिक्षा

जब पञ्जाब में एक विप्लवी पार्टी क़ायम करने की सलाह हुई, तो सरदार भगतसिंह और श्री० सुखदेव ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि पञ्जाब के नवयुवकों को राजनीतिक शिक्षा दी जानी चाहिए। सरदार भगतसिंह ने प्रचार का कार्य आरम्भ किया। इसके बाद यह कार्य श्री० सुखदेव को सौंपा गया और आप बहुत दिनों तक बड़ी सफलता के साथ इसे करते रहे। आपका यह सिद्धान्त था कि Mine the work and thine the praise अर्थात्—"मैं केवल कार्य करना चाहता हूँ, प्रशंसा नहीं चाहता!"

गिरफ़्तारी और दण्ड

इसके बाद, १५ अप्रैल, सन् १९२९ को श्री० किशोरलाल और प्रेमनाथ के साथ श्री० सुखदेव की गिरफ़्तारी हुई। इसके बाद की घटनाओं का वर्णन सरदार भगतसिंह के परिचय में आ गया है, इसलिए उनके पुनरोल्लेख की आवश्यकता नहीं।

अन्त में ७ अक्टूबर, सन् १९३० को आपको फाँसी की सज़ा सुनाई गई और २३ मार्च, सन् १९३१ को २४ वर्ष की उमर में आप फाँसी पर लटका दिए गए!

* * *

श्री० शिवराम राजगुरु का संक्षिप्त परिचय

इन्हीं बिगड़े दिमाग़ों में घनी ख़ुशियों के लच्छे हैं।
हमें पागल ही रहने दो कि हम पागल ही अच्छे हैं।

—राजगुरु

वंश-परिचय

वीर-भूमि महाराष्ट्र के विख्यात नगर पूना के पास 'चाकन' नाम का एक छोटा सा गाँव है। जिस समय महाराष्ट्र-केसरी छत्रपति श्री० शिवाजी महाराज ने अपना 'हिन्दूराज्य' स्थापित किया था, उस समय यह 'चाकन' उस प्रान्त की राजधानी था। श्री० शिवाजी महाराज के प्रपौत्र श्री० साहूजी के राजत्व-काल में चाकन के एक पण्डित कचेश्वर नाम ब्राह्मण, ने सारे देश पर अपने पाण्डित्य का सिक्का जमाया था। एक बार राज्य-प्रबन्ध सम्बन्धी किसी कार्य के लिए श्री० साहूजी को चाकन आना पड़ा। वहाँ आपसे उपर्युक्त पण्डित जी से भेंट हुई। आप उनकी विद्वत्ता पर इतने मुग्ध हुए कि उन्हें अपने साथ सतारा लेते गए। थोड़े ही दिनों में श्री० साहूजी इन पण्डित जी के इतने भक्त बन गए कि इन्हें अपना गुरु मान लिया और 'राजगुरु' की उपाधि से विभूषित किया। उसी समय से 'राजगुरु' इस वंश की पदवी हो गई। श्री० शिवराम हरिजी राजगुरु इसी प्रतिष्ठित वंश के एक वंशधर थे।

पण्डित कचेश्वर जी के सम्बन्ध में एक और किम्बदन्ती मशहूर है। कहते हैं, उन दिनों अवर्षण होने पर लोग पण्डितों को जप करने के लिए विवश किया करते थे और जब तक वर्षा नहीं हो जाती थी, तब तक उनका पिण्ड नहीं छोड़ते थे। एक बार भीषण अवर्षण आरम्भ हुआ। सतारा के सभी बड़े-बड़े पण्डित जप कर चुके थे। अन्त में पण्डित कचेश्वर जी की बारी आई। विवश होकर उन्होंने भी जप आरम्भ कर दिया और आपके जप आरम्भ करने के दो-तीन दिन बाद ही पानी भी बरस गया। आसपास के चौरासी गाँवों में वर्षा हुई। इसे सब लोग पण्डित जी की किसी अलौकिक शक्ति की महिमा समझने लगे और दक्षिणा के रूप में एक ख़ासी रक़म पण्डित जी को प्राप्त हुई। उसी समय से इस 'राजगुरु' को अब तक प्रति वर्ष कुछ न कुछ प्राप्त होता है। यह नियम श्री० साहूजी महाराज के समय से ही चला आता है।

पण्डित जी के दो पुत्र थे, जिनमें छोटे तो वहीं सतारा में ही बस गए और बड़े पूना के पास खेड़ा नामक गाँव में आकर रहने लगे। यही खेड़ा श्री० शिवराम का जन्म-स्थान है। आपके पिता श्री० हरिनारायण जी राजगुरु के दो स्त्रियाँ थीं। श्री० हरिनारायण जी की दूसरी स्त्री से दो लड़के हुए। जिनमें बड़े श्री० दिनकर हरिनारायण हैं और छोटे श्री० शिवराम राजगुरु थे।

शिक्षा

श्री० शिवराम का जन्म सन् १९०९ में हुआ था। आप लड़कपन में बड़े ढीठ और ज़िद्दी थे। सन् १९१५ में जब शिवराम की उमर ६ वर्ष की थी, आपके पिता का देहान्त हो गया। आपके बड़े भाई श्री० दिनकर जी उन दिनों पूना में नौकरी करते थे। इसलिए पिता की मृत्यु के बाद आप सपरिवार पूना में ही रहने लगे। शिवराम प्रारम्भिक शिक्षा के लिए एक मराठी पाठशाला में भेजे गए। परन्तु उनकी वहाँ तबीयत पढ़ने-लिखने में नहीं लगती थी। ये अपना अधिकांश समय अपने सहपाठियों के साथ खेल-कूद करने में ही बिताया करते थे। अभी मराठी की आठवीं श्रेणी में ही थे कि सन् १९२४ में, जब कि आपकी उमर चौदह वर्ष की थी, एक दिन बड़े भाई ने डाँट-डपट की कि खेल-कूद छोड़ कर पढ़ने-लिखने में जी लगाओ। इससे भयभीत होकर आपने पाठ्य पुस्तक के एक उपन्यास को लेकर पढ़ना आरम्भ कर दिया। इस पर भाई और बिगड़े और कहा कि अगर तुम्हें पढ़ना नहीं है तो घर से निकल जाओ।

यात्रा

वही हुआ, श्री० शिवराम घर से निकल पड़े। उस समय इनकी जेब में ९ पैसे थे। रात इन्होंने पूना-स्टेशन के मुसाफ़िरख़ाने में बिताई। सवेरे वहाँ से उठे और बिना सोचे-विचारे अपने जन्म-स्थान खेड़ा में पहुँचे। परन्तु गाँव में इसलिए प्रवेश नहीं किया कि लोग पहचान लेंगे। सारी रात बिना खाए-पिए एक मन्दिर में पड़े रहे। दूसरे दिन नारायण नाम के एक दूसरे गाँव में पहुँचे और वहाँ भी गाँव से बाहर एक कुएँ पर बिताई। घर से जो ९ पैसे लेकर चले थे, उनके आम ख़रीद कर खा लिया था। तीसरे दिन भूख के मारे अँतड़ियाँ कुलकुला रही थीं। कुएँ के नीचे एक पक्षी का खाया हुआ आधा आम पड़ा था। आपने उठाया और गुठली समेत निगल गए। इस गाँव के स्कूल-मास्टर को इन पर बड़ी दया आई। उन्होंने इन्हें पास रख लिया। परन्तु इन्हें
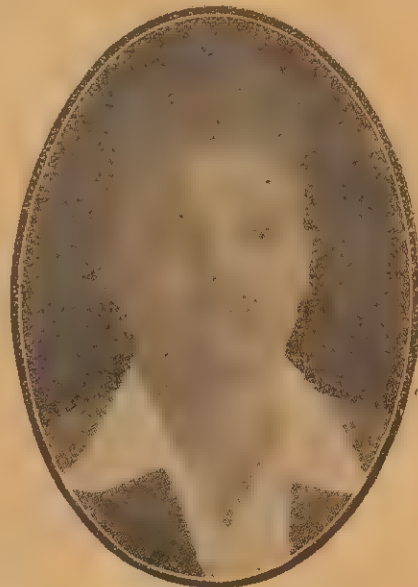
स्वर्गीय श्री० राजगुरु

अगर कहीं रहना ही होता तो घर छोड़ने की क्या ज़रूरत थी? दूसरे दिन बिना कहे-सुने उठे और एक तरफ़ को चल दिया। भूख लगने पर पेड़ों की पत्तियाँ चबा लेते और रात को किसी चट्टान या मैदान में सो जाते। एक दिन एक गाँव के बाहर मन्दिर के पास खेत में सो रहे थे, कि कुछ आदमियों ने दूर से देखा और प्रेत समझ कर ईंटें मारने लगे। जब उठे और पूछा कि मुझे क्यों मारते हो? तब उन लोगों का भ्रम दूर हुआ। अन्त में इन्होंने कहा कि मुझे भूख लगी है, कुछ खाने को दो। ख़ैर, उन लोगों ने कुछ खाने को दिया। खा-पीकर आप आगे बढ़े और कई दिनों में, इसी तरह १३० मील की यात्रा करके नासिक पहुँचे। वहाँ एक साधु की कृपा से, एक क्षेत्र में एक वक़्त बराबर खाने का प्रबन्ध हो गया। रात को साधु स्वयं कुछ दे दिया करते। रात को सोने के लिए घाट की सीढ़ियाँ थीं।

इसी तरह चार दिन बीत गए। एक दिन पुलिस का एक सिपाही आया और पकड़ कर थाने में ले गया। वहाँ पूछताछ होने पर आपने बताया कि मैं विद्यार्थी हूँ और संस्कृत पढ़ने की इच्छा से यहाँ आया हूँ।

इस तरह जब वहाँ से छुटकारा मिला तो आपने नासिक भी छोड़ा और घूमते-फिरते झाँसी पहुँचे। परन्तु वहाँ भी तबीयत नहीं लगी, इसलिए बिना टिकट के ही

(शेष मैटर ३७वें पृष्ठ के पहले कॉलम के नीचे देखिए).
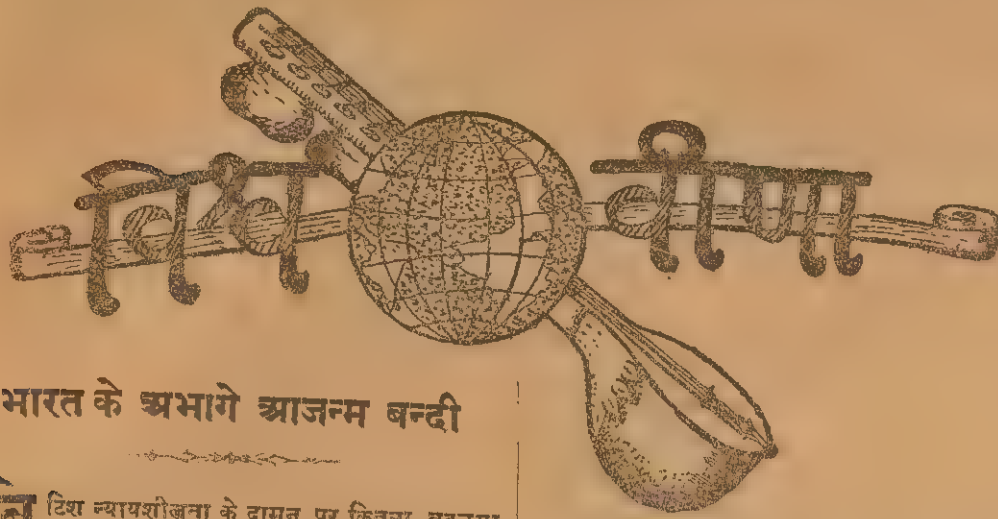
भारत के अभागे आजन्म बन्दी

ब्रिटिश न्यायशीलता के दामन पर कितना बदनुमा दाग़ है कि पञ्जाब और बर्मा षड्यन्त्रों के वे अभागे भारतवासी, जिनको सन् १९१५-१६ में आजीवन कारागार की सज़ा दी गई थी, अब तक छोड़े नहीं गए। इन राजनीतिक बन्दियों की संख्या प्रायः दो दर्जन है। साधारणतया आजीवन बन्दी तेरह या चौदह वर्षों तक जेलख़ाने में रक्खे जाते हैं—और इस मीयाद के बाद घृणित अपराधों के अपराधियों को भी छुटकारा मिल जाता है। परन्तु दुख है कि चौबीस देश-भक्त, जो अपनी क़ानूनी सज़ा नियमानुसार भोग चुके हैं, अब तक भारत के विभिन्न जेलख़ानों में बन्द हैं। सरकार का यह ढङ्ग एक क्षण के लिए भी उचित नहीं कहा जा सकता! शायद अभागा भारतवर्ष ही एक ऐसा देश है, जहाँ क़ैद की मीयाद पूर्ण हो जाने पर भी इसके निवासी बन्द रक्खे जाते हैं—और यह भी नहीं मालूम होता कि आख़िर कब तक छोड़े जावेंगे।

हम भारत-सरकार से ज़ोरदार शब्दों में पूछते हैं कि वह इन राजबन्दियों को पन्द्रह-सोलह वर्ष तक जेलख़ानों में बन्द रखने के बाद भी छुटकारे का अधिकारी क्यों नहीं समझती और वह उन्हें उस क़ानूनी अधिकारों से क्यों वञ्चित रखना चाहती है, जिससे घृणित अपराधों के अधिकारी भी लाभ उठाते हैं? आख़िर, वह कौन सी क़ानूनी दफ़ाएँ हैं, जिनके आधार पर किसी क़ैदी को क़ैद की मीयाद समाप्त हो जाने पर जेलों में बन्द रक्खा जा सकता है?

—'रियासत' (उर्दू)

* * *

(२६वें पृष्ठ का शेषांश)

रेलगाड़ी पर सवार होकर कानपुर चले आए। कानपुर के स्टेशन पर एक महाराष्ट्र सज्जन ने आपको भोजन कराया और अपने साथ लखनऊ ले गए। वहाँ से लखीमपुर-खेरी होते हुए आप पन्द्रहवें दिन काशी पहुँचे। यहाँ आपको कीचड़ में पड़ा हुआ एक पैसा मिला, जिसे उठा कर बड़े यत्न से धोती के कोने में बाँध लिया।

काशी आकर आप अहल्या घाट पर रहने लगे। कई दिनों के बाद एक क्षेत्र में भोजन का भी प्रबन्ध हो गया। एक पण्डित जी की पाठशाला में जाकर संस्कृत पढ़ने लगे और भाई को भी ख़बर दे दी कि मैं काशी आ गया हूँ और संस्कृत पढ़ना आरम्भ कर दिया है। भाई ने पाँच रुपए मासिक पढ़ाई के लिए भेजना आरम्भ कर दिया।

परन्तु क्षेत्र में भोजन करना आपको पसन्द नहीं था, इसलिए भोजन का प्रबन्ध सहपाठियों के साथ कर लिया। परन्तु यह सिलसिला भी बहुत दिनों तक नहीं चल सका। क्योंकि गुरु जी से अनबन हो जाने के कारण पाठशाला छोड़ देनी पड़ी। इसके साथ ही पढ़ने में दिल भी कम ही लगता था। पाठशाला छोड़ने पर अख़बार पढ़ने और कुश्ती लड़ने का शौक़ हुआ। परन्तु भोजन की फिर बड़ी तकलीफ़ हुई और यहाँ तक नौबत पहुँची कि फिर घास और पत्तियों का आश्रय लेना पड़ा।

अन्त में काशी से तबीयत उचटी तो नागपुर पहुँचे। उद्देश्य था, लाठी और गदका के खेल सीखना। सन् १९२८ में फिर कानपुर चले आए। अब तक राजनीति से कोई सम्बन्ध न था, परन्तु यहाँ आने के थोड़े दिनों के बाद ही आपके विचारों में परिवर्तन हो गया और आप एकाएक लापता हो गए। अन्त में लाहौर षड्यन्त्र-केस में गिरफ़्तार होने पर ही लोगों को आपका पता मिला।

* * *

क्या मिला?

कानपुर के ही नहीं, देश के समस्त हिन्दुओं और मुसलमानों को आख़िर कानपुर के झगड़े से मिला क्या? मर्दों, औरतों और बच्चों की जानें गईं, मकान जले, सम्पत्तियों का नाश हुआ, कठिन से कठिन कष्ट लोगों को सहन करने पड़े और इसके सिवा कुछ हासिल न हुआ। हिन्दू और मुसलमान ज़रा कलेजे पर हाथ रक्खें कि किसका अल्लाह और किसका परमेश्वर ख़ुश हुआ; किसका मज़हब बड़ा साबित हुआ और किसको क्या लाभ पहुँचा। गणेशशङ्कर-सा आदमी त्यागी, वीर, उदार-चित्त, देश पर बलिदान होने वाली आत्मा देश से उठ गया। सब धन-जन और सम्पत्ति के नाश से गणेशशङ्कर का विछोह ही कहीं अधिक कष्टप्रद है। हिन्दुओ, तुम कुछ सोचो और मुसलमानो, तुम भी ज़रा ग़ौर कर देख लो। किसी को कुछ हासिल न हुआ, हम लोगों के हिस्से में केवल सर्वनाश हो आया। कानपुर से हम सबको शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। कानपुर के बेताज के राजा का हमें अनुकरण करना चाहिए। गणेशशङ्कर ने मुसलमानों की रक्षा करते हुए अपना बलिदान कर दिया, राष्ट्र की इससे ऊँची कोई दूसरी सेवा हो नहीं सकती। अगर हिन्दुओं को गणेशशङ्कर का कुछ भी ख़्याल है, तो उनकी यह कोशिश होनी चाहिए कि गणेशशङ्कर-सी मृत्यु उनको प्राप्त हो। हमारे मुसलमान भाइयों को भी गणेशशङ्कर से नसीहत लेनी चाहिए। उनका आदर्श यह होना चाहिए कि जिस तरह से गणेशशङ्कर ने दूसरी क़ौम की रक्षा करते समय अपनी जान की परवा न की, उसी तरह से मुसलमानों को हिन्दुओं की रक्षा करते हुए प्राण त्याग देने की लालसा को हृदय में स्थान देना चाहिए। कानपुर के रक्तपात से अगर कोई लाभ उठाया जा सकता है, तो यही और कानपुर से हमें यही शिक्षा मिली है। क्या हम आशा करें कि देश के हिन्दू और मुसलमान कानपुर की शिक्षा को हृदयङ्गम करेंगे?

—'अभ्युदय' (हिन्दी) प्रयाग

* * *

साम्प्रदायिक दङ्गे

भारत-शत्रु सदैव इस बात का प्रचार किया करते हैं कि हिन्दू-मुसलमानों ने पारस्परिक विश्वास खो दिया है, सदैव लड़ने के लिए तैयार रहते हैं और जब इस बात के प्रमाण की आवश्यकता होती है, तो अपनी मूर्खता के कारण भारतवासी उसे सिद्ध करने में भी कोताही नहीं करते।

काशी में एक वस्त्र-व्यवसायी गोली से मार दिया गया। किसने उसे गोली मारी और क्यों मारी—इसका आज तक कोई पता नहीं लगा। इस सम्बन्ध में कोई अनुसन्धान भी नहीं हुआ। अथच मुसलमानों ने विश्वास कर लिया कि वह विलायती कपड़े बेचता था, इसलिए हिन्दुओं ने ही उसे गोली मार दी है। बस, साम्प्रदायिक दङ्गा आरम्भ हो गया। मिर्ज़ापुर में अफ़वाह उड़ी कि किसी मुसलमान ज़मींदार ने अपने हिन्दू नौकर के पास गो-मांस भेज दिया अथवा एक मरा हुआ गाय का बछड़ा अपनी किसी हिन्दू प्रजा के घर भेज दिया। बस, साम्प्रदायिक दङ्गा आरम्भ हो गया! आगरे में होली का जुलूस निकला। उसमें बाजे बज रहे थे। मसजिद के पास मुसलमानों ने रोका। फिर सनातन रीत्यनुसार—ढेलों की वर्षा और अन्त में साम्प्रदायिक दङ्गा।

थोड़े ही दिनों के अन्दर संयुक्त प्रान्त के कई स्थानों में दङ्गे हो गए। इसका कारण हिन्दू-मुसलमान का सञ्चित पाप ही है या कोई तीसरी अदृश्य शक्ति अपनी लीला दिखा रही है?

सन् १९१६ में जब कॉङ्ग्रेस और मुस्लिम लीग ने सम्मिलित होकर स्वायत्त शासन-सम्बन्धी प्रस्ताव पास किया था और हिन्दू-मुसलमानों में एक दृश्यमान एकता की प्रतिष्ठा हुई थी, तब भी भारत—विशेषतः संयुक्त प्रान्त—में ऐसे ही दङ्गों की सृष्टि हुई थी।

सन् १९२० में हिन्दू-मुसलमानों की राजनीतिक एकता मालाबार के मोपला अत्याचारों से नहीं नष्ट हुई, परन्तु उसके बाद ही भारत के नाना स्थानों में दङ्गे की सृष्टि हुई और उसके कारण वह इस तरह विनष्ट हुई कि फिर आज तक नहीं पनप सकी। निश्चय ही शरीफ़ लोग दङ्गे नहीं करते, वे केवल साम्प्रदायिक अधिकारों के लिए झगड़ते हैं और अविश्वास तथा असन्तोष की सृष्टि करते हैं। इससे भारत के शत्रुओं को सुयोग प्राप्त होता है और वे मौक़ा देख कर दङ्गा आरम्भ करा देते हैं। संयुक्त प्रान्त के इन दङ्गों से हमारी मूढ़ता और असहायावस्था का ही पता लगा है।

—आनन्द बाज़ार पत्रिका (बँगला) कलकत्ता

* * *

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

सारा गुड़ गोबर हो गया, ऐन ग्रीष्म में हिज़ होली-नेस की आशा-लता को तुषार मार गया! सोचा था, स्व-राज हो जाने पर लल्ला पञ्जाब या आसाम का गवर्नर हो जायगा, मोटी तनख़्वाह पाएगा, स्पेशल-ट्रेन पर चढ़ेगा और अपने राम भी बुढ़ौती में दोनों वक़्त दूधिया छानेंगे।

❀

इतना ही नहीं, श्रीमती हर-होलीनेस ने तो गहनों की फ़िहरिस्त भी मोरत्तब कर ली थी,—नेकलेस, इयरिङ्ग, बाजूबन्द, जड़ाऊ चूड़ियाँ, इत्यादि। श्रीजगद्गुरु बोले—'तालाब खुदा ही नहीं और मगरों ने डेरा डाल दिया!' तुम भी अजीब औरत हो। ज़रा स्वराज तो मिल जाने देतीं।

❀

मुआज़ अल्लाह! इतना सुनते ही आग-बबूला हो गईं और नासिका-छिद्रों को विस्फारित कर, 'भृकुटी धनुष चढ़ाय, अञ्जन बरुनी पनच कै, लोचन बाण चलाय' धीर गम्भीर स्वर से बोलीं—"अपनी कमाई तो भाँग-बूटी में गँवाई—एक छल्ला भी कभी नहीं बनवाया। अब जो भगवान ने बुढ़ौती में साध पूरी होने का आसरा दिखाया तो उसमें भी बाधा देने को तैयार हो गए! मेरा करम फूट गया जो तुम्हारे जैसे फक्कड़ के पाले पड़ी!"

❀

हिज़-होलीनेस उन्हें आश्वासन प्रदान करने का विचार ही कर रहे थे कि 'हॉकर' अख़बार दे गया। उलटते ही 'स्वराज सरकार के कर्मचारी और उनके वेतन' शीर्षक पर नज़र पड़ी। सोचा, शायद कॉङ्ग्रेस ने भी 'अग्र सोची सदा सुखी' की भाँति अभी से व्यवस्था आरम्भ कर दी। तब तो लल्ला की गवर्नरी के लिए अभी से एक 'अप्लीकेशन' झाड़ देना चाहिए।

❀

परन्तु अफ़सोस! कम्बख़्त कमन्द ऐसे बेमौक़े टूटी "दो-चार हाथ जब कि लबे बाम रह गया!" ग़ौर से देखा तो मालूम हुआ कि भावी स्वराज-सरकार की व्यवस्था नहीं, बल्कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू का व्याख्यान है, जिसमें आपने बताया है, कि स्वराज-सरकार के ऊँचे से ऊँचे कर्मचारी को भी केवल २००) ही वेतन मिलेगा! अब बताइए जनाब, इन २००) में कैसे दोनों वक़्त दुधिया छनेगी और कहाँ से श्रीमती हर-होलीनेस के लिए नेकलेस और इयरिङ्ग बनेंगे?

❀

पण्डित जी ने व्याख्यान क्या दिया, कितने ही भले आदमियों की कमर तोड़ कर रख दिया! हिज़-होली-नेस की दुधिया और हर-होलीनेस के इयरिङ्ग तक ही बात रहती तो कोई चिन्ता न थी। सब से अधिक नुक़-सान तो हुआ, हमारे मोटे मौलाना साहब का, जो साढ़े आठ सौ वर्षों तक सुचारु रूपेण भारत का शासन करने पर फिर कुछ दिनों तक अपनी सुचारुता का परिचय देने की तैयारी में थे।

❀

कहावत है कि 'अगर चूहे को गेहूँ मिल जाए तो क्या वह पूरियाँ पका कर खायगा?' वही हाल इन कम-बख़्त कालों का है। लक्षणों से मालूम होता है कि स्वराज मिलने पर भी इनकी तक़दीर में नैनीताल और मसूरी के मज़े नहीं बदे हैं।

❀

ज़रा सोचिए तो सही, वह स्वराज्य किस मर्ज़ की दवा होगा, जिसमें न गवर्नरों की मोटी तनख़्वाहें मिलेंगी और न नैनीताल दारजिलिङ्ग की ठण्डी हवा के मज़े मिलेंगे? इसलिए अपने राम की तो राय है कि क़यामत तक इस देश पर श्रीमती नौकरशाही की ही छत्र-छाया बनी रहे। कौन्सिलों में कुछ सीटें रिज़र्व हो जाएँ और ज़्यादा से ज़्यादा थानेदारियाँ अपने क़ब्ज़े में रहें। आशा है, मोटे मौलाना और उनके 'इक़बाली मददगार' भी श्रीजगद्गुरु की क़ीमती राय की ताईद करेंगे।

❀

भई, स्वतन्त्रता का अर्थ तो यह है कि न ऊधो का लेना, न माधो का देना! अपनी ज़मीन और अपना आसमान। किसी के घर में घुस जाओ, कोई बोलने वाला नहीं, किसी की कनपटी पर चाँटे जड़ दो, कोई चूँ करने वाला नहीं, किसी की टोपी उतार लो और वह झुक कर सलाम करने लगे। थोड़े शब्दों में बस—

परम स्वतन्त्र न सिर पर कोई,
भावे मनहिं करें सोइ-सोई।

❀

मगर इन कॉङ्ग्रेस वालों की धूर्तता तो देखो। सारा मज़ा ही किरकिरा करके रख दिया। उनके भावी स्वराज-विधान में ऐरे-ग़ैरे नत्थू-ख़ैरे सभी वोट दिया करेंगे, ग़रीब भी अमीरों की तरह भरपेट खायँगे, योग्य बन कर देश का नेतृत्व करेंगे। और सब को समान रूप से धार्मिक स्वतन्त्रता रहेगी। न बड़प्पन का आदर रहेगा और न तोंद की पूँछ!

❀

ग़र्ज़ें कि नौकरियों, वोटों और विशेष अधिकारों के बहाने दाढ़ी-चोटी के 'टग ऑफ़ वार' का मज़ा ही जाता रहेगा। इसी से 'मौलाना दी ग्रेट' और उनकी 'नाइट् वर्डस्वर्थ' चाहता है कि भोले-भाले मुसलमान इस स्वतन्त्रता-प्राप्ति के मार्ग में अपनी खोपड़ियाँ भिड़ा दें, ताकि उनके सिर का शनीचर उतर जाए और मौलाना की लीडरी भी क़ायम रह जाए।

❀

कुछ लोगों का एतराज़ है कि गत असहयोग के दिनों में मौलाना अङ्गरेज़ों की नौकरियों को 'हराम' समझते थे और लोगों को उसके विरुद्ध उभारा करते थे, अब कहते हैं, कि मुसलमानों को अधिक संख्या में अङ्ग-रेज़ी सेना में भर्ती हो जाना चाहिए, तो क्या अङ्गरेज़ों की नौकरी 'हलाल' हो गई?

❀

क्यों नहीं? क्या आपको मालूम नहीं, कि संसार परिवर्तनशील है और मौलाना ज़माने के साथ-साथ चलने वाले हैं। उन दिनों नौकरशाही से उनका ३६ का सम्बन्ध था और आजकल अल्लाह के फ़ज़ल से ६३ का है। लाट साहब के यहाँ से बुलाहट आती है, ज़ब्त ज़मीनें वापस मिल गई हैं; राउण्डटेबिल में जाने का निमन्त्रण मिलने वाला है। ग़र्ज़ें कि आजकल, माशा अल्लाह, आप भी पाँचो सवारों में हैं। ऐसी हालत में सन् १९२१-२२ का 'हराम' सन् १९३१-३२ में 'हलाल' हो गया तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? क्या दस वर्षों में यह मामूली सा परिवर्तन भी आपकी फूटी आँखें बरदाश्त नहीं कर सकतीं?

❀

हमारे मौलाना ज़माने के साथ चलने वाले आद-मियों में हैं। उन्होंने 'हराम' या 'हलाल' के बाप का क़र्ज़ नहीं खाया है। जब जैसा मौक़ा देखा, तब तैसी नीति रक्खी। अफ़ग़ानिस्तान के तख़्त पर बच्चा सक़ा था तो मौलाना उसके मद्दाह थे, अब नादिर ख़ाँ हैं, तो उन्हीं की तारीफ़ के पुल बाँध देते हैं।

❀

रईस ने कहा—"अमाँ, बैगन बड़ी वाहियात चीज़ है।" मुसाहब ने झट उत्तर दिया —"दरोंचे शक हुज़ूर, बिल्कुल बादी चीज़ है।" कई दिनों के बाद रईस ने फिर कहा—"भई, बैगन का भर्ता तो बड़ा ही लाजवाब होता है।" मुसाहब ने कहा—"नेहायत लज़ीज़, जनाब आली।" रईस ने कहा—"मगर उस रोज़ तो तुम कहते थे, बैगन बड़ी ख़राब चीज़ है और आज कहते हो, अच्छी है!" मुसाहिब बोला—"हुज़ूर, मैं आपका नौकर हूँ, न कि बैगन का।"

❀

फलतः हमारे मौलाना साहब भी किसी बैगन या आलू के नौकर नहीं हैं। मोटी तोंद और मोटी बुद्धि के आदमी जिधर ढालू पाया उधर लुढ़के, इसके लिए उन्हें दोष देना, उनकी बातों की आलोचना करना, उन पर व्यङ्ग्यवाण निक्षेप करना, अपनी शक्ति, श्रम और लेखनी के साथ बेइन्साफ़ी करना है। इसलिए श्रीजगद्गुरु की राय है कि उनके लिए मैदान ख़ाली रहे, ताकि बेचारे मनमाने ढङ्ग से लुढ़क सकें।

❀

डॉ० आलम तथा डॉ० किचलू आदि राष्ट्रवादी मुस-लमान लीडरों ने हमारे मौलाना की ओर इशारा करके कहा है कि वे किसी के प्रतिनिधि नहीं हैं। बला से नहीं हैं। प्रतिनिधित्व के लिए उनकी अपनी 'महिषोदर-मद-मर्दिनी' तोंद ही क्या कम है, जो बेचारे दूसरों का प्रतिनिधित्व करने जाएँ?

❀

श्रीजगद्गुरु भी ऐसे ही प्रतिनिधित्व के पक्षपाती हैं, जिसमें 'आम का आम और गुठलियों के भी दाम' प्राप्त होते हैं। एक ओर 'फ़ण्ड' और दूसरी ओर गोल-टेबिल का निमन्त्रण! कहीं तक़दीर ने ज़ोर मारा और सख़ी नौकरशाही ने प्रसन्न होकर सर पर 'सर' का सेहरा बाँध दिया तो इस 'आलमे फ़ानी' में भी 'मुल्के आबदानी' के लुत्फ़ हासिल हो जायँगे। इसीलिए मौलाना ने अभी से सर शफ़ी और सर फ़ज़ले हुसेन आदि 'सरों' की श्रेणी में बैठ कर सख़ी की नाज़बरदारी आरम्भ कर दी है।

❀

बात यह है कि कमबख़्त बुढ़ौती सर पर आ गई है। महात्मा गाँधी के साथ के कारण आबकारी की 'हौलियों' की सुगन्धि नाकों को याद नहीं रही। इधर राष्ट्रीयता का पथ ऐसा कण्टकाकीर्ण हो गया है कि बात-बात पर जेल और लाठियों से टक्कर लेने की नौबत आ जाती है। इसलिए दूरन्देश मौलाना ने पहले से ही अपना मार्ग निश्चित कर लिया है।

❀

रही मुसलमानों की भलाई-बुराई की बात, सो भाई साहब, बड़ों का क़ौल है कि 'पहले घर में चिराग़ जला कर तब मस्जिद में जलाया जाता है।' लेहाज़ा पहला और प्रधान प्रश्न ठहरा श्रीउदरदेव की पूर्ति का उपाय, उसके बाद देखा जायगा।

❀

भावष्य

विदूषक

नाम ही से पुस्तक का विषय इतना स्पष्ट है कि इसकी विशेष चर्चा करना व्यर्थ है। एक-एक चुटकुला पढ़िए और हँस-हँस कर दोहरे हो जाइए, इस बात की गारण्टी है। सारे चुटकुले विनोदपूर्ण और चुने हुए हैं। भोजन एवं काम की थकावट के बाद ऐसी पुस्तकें पढ़ना स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक है। बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष—सभी समान आनन्द उठा सकते हैं। मूल्य केवल १) ; स्थायी ग्राहकों से ॥)

यह बहुत ही सुन्दर और महत्वपूर्ण सामाजिक उपन्यास है। वर्तमान वैवाहिक कुरीतियों के कारण क्या-क्या अनर्थ होते हैं ; विविध परिस्थितियों में पड़ने पर मनुष्य के हृदय में किस प्रकार नाना प्रकार के भाव उदय होते हैं और वह उद्भ्रान्त सा हो जाता है—इसका जीता-जागता चित्र इस पुस्तक में खींचा गया है। भाषा सरल एवं मुहावरेदार है। मूल्य केवल २) ; स्थायी ग्राहकों से १॥)

विधवा-विवाह-मीमांसा

अत्यन्त प्रतिष्ठित तथा अकाट्य प्रमाणों द्वारा लिखी हुई यह वह पुस्तक है, जो सड़े-गले विचारों को अग्नि के समान भस्म कर देती है। इस बीसवीं सदी में भी जो लोग विधवा-विवाह का नाम सुन कर धर्म की दुहाई देते हैं, उनकी आँखें खुल जायँगी। केवल एक बार के पढ़ने से कोई शङ्का शेष न रह जायगी। प्रश्नोत्तर के रूप में विधवा-विवाह के विरुद्ध दी जाने वाली असंख्य दलीलों का खण्डन बड़ी विद्वत्तापूर्वक किया गया है। कोई कैसा ही विरोधी क्यों न हो, पुस्तक को एक बार पढ़ते ही उसकी सारी युक्तियाँ भस्म हो जायँगी और वह विधवा-विवाह का कट्टर समर्थक हो जायगा।

प्रस्तुत पुस्तक में वेद, शास्त्र, स्मृतियों तथा पुराणों द्वारा विधवा-विवाह को सिद्ध करके, इसके प्रचलित न होने से जो हानियाँ हो रही हैं, समाज में जिस प्रकार भीषण अत्याचार, व्यभिचार, भ्रूण-हत्याएँ तथा वेश्याओं की वृद्धि हो रही है, उसका बड़ा ही हृदय-विदारक वर्णन किया गया है। पढ़ते ही आँखों से आँसुओं की धारा प्रवाहित होने लगेगी एवं पश्चात्ताप और वेदना से हृदय फटने लगेगा। अस्तु। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल, रोचक तथा मुहावरेदार है। मूल्य केवल ३)

यह बङ्गला के प्रसिद्ध उपन्यास का अनुवाद है। लड़के-लड़कियों के शादी-विवाह में असावधानी करने से जो भयङ्कर परिणाम होता है, उसका इसमें अच्छा दिग्दर्शन कराया गया है। इसके अतिरिक्त यह बात भी इसमें अङ्कित की गई है कि अनाथ हिन्दू-बालिकाएँ किस प्रकार ठुकराई जाती हैं और उन्हें असहाय तथा विपदावस्था में पाकर किस प्रकार ईसाई और मुसलमान अपने चङ्गुल में फँसाते हैं। मूल्य ॥)

यह पुस्तक चौथी बार छप कर तैयार हुई है, इसीसे इसकी उपयोगिता का पता लगाया जा सकता है। इसमें वीर-रस में सने देशभक्ति-पूर्ण गानों का संग्रह है। केवल एक गाना पढ़ते ही आपका दिल फड़क उठेगा। राष्ट्रीयता की लहर आपके हृदय में उमड़ने लगेगी। यह गाने हारमोनियम पर गाने लायक एवं बालक-बालिकाओं को कण्ठ कराने लायक भी हैं। शीघ्रता कीजिए, थोड़ी सी प्रतियाँ शेष हैं। मूल्य ।)

☞ व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक इलाहाबाद

अनाथ पत्नी

इस पुस्तक में बिछुड़े हुए दो हृदयों—पति-पत्नी—के अन्तर्द्वन्द्व का ऐसा सजीव चित्रण है कि पाठक एक बार इसके कुछ ही पन्ने पढ़ कर करुणा, कुतूहल और विस्मय के भावों में ऐसे ओत-प्रोत हो जायँगे कि फिर क्या मजाल कि इसका अन्तिम पृष्ठ पढ़े बिना कहीं किसी पत्ते की खड़खड़ाहट तक सुन सकें।

अशिक्षित पिता की अदूरदर्शिता, पुत्र की मौन व्यथा, प्रथम पत्नी की समाज-सेवा, उसकी निराश रातें, पति का प्रथम पत्नी के लिए तड़पना और द्वितीय पत्नी को आघात न पहुँचाते हुए उसे सन्तुष्ट रखने को सचेष्ट रहना, अन्त में घटनाओं के जाल में तीनों का एकत्रित होना और द्वितीय पत्नी के द्वारा, उसके अन्तकाल के समय, प्रथम पत्नी का प्रकट होना—ये सब दृश्य ऐसे मनमोहक हैं, मानो लेखक ने जादू की क़लम से लिखे हों !!

शीघ्रता कीजिए, केवल थोड़ी ही प्रतियाँ शेष हैं। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय; मूल्य केवल लागत मात्र २); स्थायी ग्राहकों से १॥)

प्राणनाथ

यह वही उपन्यास है, जिसकी ६००० प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक चुकी हैं। इसमें सामाजिक कुरीतियों का ऐसा भण्डाफोड़ किया गया है कि पढ़ते ही हृदय दहल जायगा। नाना प्रकार के पाखण्ड, एवं अत्याचार देख कर आप आँसू बहाए बिना न रहेंगे। मूल्य २॥)

गल्पविनोद

इस पुस्तक में बहुत ही सुन्दर और रोचक सामाजिक कहानियों का अपूर्व संग्रह है। सभी कहानियाँ शिक्षाप्रद हैं और उनमें भिन्न-भिन्न सामाजिक कुरीतियों का नग्न-चित्र खींचा गया है। भाषा अत्यन्त सरल व मुहावरेदार; मू० १); स्था० ग्रा० से ।॥)

सन्तान-शास्त्र

पुस्तक का नाम ही उसका परिचय दे रहा है। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने वाले प्रत्येक नवयुवक को इसकी एक प्रति अवश्य रखनी चाहिए। इसमें काम-विज्ञान सम्बन्धी प्रत्येक बातों का वर्णन बहुत ही विस्तृत रूप से किया गया है। नाना प्रकार के इन्द्रिय-रोगों की व्याख्या तथा उनसे त्राण पाने के उपाय लिखे गए हैं। हज़ारों पति-पत्नी, जो कि सन्तान के लिए लालायित रहते थे तथा अपना सर्वस्व लुटा चुके थे, आज सन्तान सुख भोग रहे हैं।

जो लोग झूठे कोकशास्त्र से धोखा उठा चुके हैं, प्रस्तुत पुस्तक देख कर उनकी आँखें खुल जायँगी। काम-विज्ञान जैसे गहन विषय पर हिन्दी में यह पहिली पुस्तक है, जो इतनी छान-बीन के साथ लिखी गई है। भाषा अत्यन्त सरल एवं मुहावरेदार ; सचित्र एवं सजिल्द तथा तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर से मण्डित पुस्तक का मूल्य केवल ४) ; स्थायी ग्राहकों से ३) ; तीसरा संस्करण अभी-अभी तैयार हुआ है।

निर्मला

इस मौलिक उपन्यास में लब्धप्रतिष्ठ लेखक ने समाज में बहुलता से होने वाले वृद्ध-विवाह के भयङ्कर परिणामों का एक वीभत्स एवं रोमाञ्चकारी दृश्य समुपस्थित किया है। जीर्ण-काय वृद्ध अपनी उन्मत्त काम-पिपासा के वशीभूत होकर किस प्रकार प्रचुर धन व्यय करते हैं ; किस प्रकार वे अपनी वामाङ्गना षोड़शी नवयुवती का जीवन नाश करते हैं; किस प्रकार गृहस्थी के परम पुनीत प्राङ्गण में रौरव-काण्ड प्रारम्भ हो जाता है और किस प्रकार ये वृद्ध अपने साथ ही साथ दूसरों को लेकर डूब मरते हैं। किस प्रकार उद्भ्रान्ति की प्रमत्त-सुखद कल्पना में उनका अवशेष ध्वंस हो जाता है—यह सब इस उपन्यास में बड़े मार्मिक ढङ्ग से अङ्कित किया गया है।

यह वही क्रान्तिकारी उपन्यास है, जिसने एक बार ही समाज में खलबली पैदा कर दी है। भाषा अत्यन्त सरल एवं मुहावरेदार है। सुन्दर सजिल्द पुस्तक का मूल्य २॥) ; स्थायी ग्राहकों से १॥।=) मात्र !

विवाह और प्रेम

समाज की जिन अनुचित और अश्लील धारणाओं के कारण स्त्री और पुरुष का दाम्पत्य जीवन दुखी और असन्तोषपूर्ण बन जाता है एवं स्मरणातीत काल से फैली हुई जिन मानसिक भावनाओं के द्वारा उनका सुख-स्वाच्छन्द्यपूर्ण जीवन घृणा, अवहेलना, द्वेष और कलह का रूप धारण कर लेता है, इस पुस्तक में स्वतन्त्रतापूर्वक उसकी आलोचना की गई है और बताया गया है कि किस प्रकार समाज का जीवन सुख-सन्तोष का जीवन बन सकता है। विवाहित स्त्री-पुरुषों के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। भाषा सरल तथा मुहावरेदार है। मूल्य २); स्थायी ग्राहकों से १॥)

मालिका

यह वह मालिका नहीं, जिसके फूल मुरझा जायँगे; इसके फूलों की एक-एक पङ्खुरी में सौन्दर्य है, सौरभ है, मधु है, मदिरा है। आपकी आँखें तृप्त हो जायँगी। इस संग्रह की प्रत्येक कहानी करुण-रस की उमड़ती हुई धारा है।

इन कहानियों में आप देखेंगे मनुष्यता का महत्व, प्रेम की महिमा, करुणा का प्रभाव, त्याग का सौन्दर्य तथा वासना का नृत्य, मनुष्य के नाना प्रकार के पाप, उसकी घृणा, क्रोध, द्वेष आदि भावनाओं का सजीव चित्रण। आप देखेंगे कि प्रत्येक कहानी के अन्दर लेखक ने किस सुगमता और सचाई के साथ ऊँचे आदर्शों की प्रतिष्ठा की है। कहानियों की घटनाएँ इतनी स्वाभाविक हैं कि एक बार पढ़ते ही आप उसमें अपने परिचितों को ढूँढ़ने लगेंगे। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल, मधुर तथा मुहावरेदार है। शीघ्रता कीजिए, अन्यथा दूसरे संस्करण की राह देखनी होगी।

सजिल्द, तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर से सुशोभित ; मूल्य लागत-मात्र केवल ४) ; स्थायी ग्राहकों से ३)

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Printed and Published by Tribeni Prasad B. A. — (Editor) at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad

सम्पादक :—
श्री० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ... १२) रु०
छः माही चन्दा ... ६।।) रु०
तिमाही चन्दा ... ३।।) रु०
एक प्रति का मूल्य चार आने
Annas Four Per Copy

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़्री कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए।

वर्ष १, खण्ड ३ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; २३ अप्रैल, १६३१ | सं० ६, पूर्ण सं० ३०

भारत-कोकिला [illegible] नायडू

4

MOOKERJEA

THE FINE ART PRINTING COTTAGE. CHANDRALAK. ALLAHABAD.

स्थायी ग्राहकों से
केवल ३) ६०
व्यङ्ग-चित्रावली
यह चित्रावली भारतीय समाज में प्रचलित वर्तमान कुरीतियों का जनाज़ा है। इसके प्रत्येक चित्र दिल पर चोट करने वाले हैं। चित्रों को देखते ही पश्चात्ताप एवं वेदना से हृदय तड़पने लगेगा ; मनुष्यता की याद आने लगेगी ; और सामाजिक क्रान्ति की भावना प्रबल वेग से हृदय में उमड़ने लगेगी। प्रत्येक सामाजिक कुरीतियों का चित्रों द्वारा नग्न प्रदर्शन किया गया है। बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, छुआछूत, परदा-प्रथा, पण्डे-पुरोहितों तथा साधु-महन्थों के भयङ्कर कारनामे, अन्ध-विश्वास, पाखण्ड तथा आचरण सम्बन्धी नाना प्रकार की नाशकारी कुरीतियों का सजीव चित्र देखना हो तो इस चित्रावली को अवश्य मँगाइए। एकरङ्गे, दुरङ्गे, तथा तिरङ्गे चित्रों की संख्या लगभग २०० है। प्रत्येक चित्रों के नीचे बहुत ही सुन्दर पद्यमय पंक्तियों में उनका भाव तथा परिचय अङ्कित किया गया है। आज तक ऐसी चित्रावली कहीं से प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य केवल ४); स्थायी ग्राहकों से ३)
स्मृति-कुञ्ज
नायक और नायिका के पत्रों के रूप में यह एक दुखान्त कहानी है। हृदय के अन्तःप्रदेश में प्रणय का उद्भव, उसका विकाश और उसकी अविरत आराधना की अनन्त तथा अविच्छिन्न साधना में मनुष्य कहाँ तक अपने जीवन के सारे सुखों की आहुति कर सकता है—ये बातें इस पुस्तक में अत्यन्त रोचक और चित्ताकर्षक रूप से वर्णन की गई हैं। आशा-निराशा, सुख-दुख, साधन-उत्सर्ग, एवं उच्चतम आराधना का सात्विक चित्र पुस्तक पढ़ते ही कल्पना की सजीव प्रतिमा में चारों ओर दीख पड़ने लगता है। मूल्य केवल ३) ; स्थायी ग्राहकों से २।)
मूर्खराज
यह वह पुस्तक है, जो रोते हुए आदमी को भी एक बार हँसा देती है। कितना ही चिन्तित व्यक्ति क्यों न हो, केवल एक चुटकुला पढ़ने से ही उसकी सारी चिन्ता काफ़ूर हो जायगी। दुनिया के झञ्झटों से जब कभी आपका जी ऊब जाय, इस पुस्तक को उठा कर पढ़िए, मुँह की मुर्दनी दूर हो जायगी, हास्य की अनोखी छटा छा जायगी। पुस्तक को पूरी किए बिना आप कभी न छोड़ेंगे—यह हमारा दावा है। इसमें किशनसिंह नामक एक महामूर्ख व्यक्ति की मूर्खतापूर्ण बातों का संग्रह है। भाषा अत्यन्त सरल तथा मुहावरेदार है। मूल्य केवल २)
अपराधी
सच जानिए, अपराधी बड़ा क्रान्तिकारी उपन्यास है। इसे पढ़ कर आप एक बार टॉल्सटॉय के "रिज़रेक्शन" विक्टर ह्यूगो के "लॉ मिज़रेबुल" इबसन के "डॉल्स हाउस" गोस्ट और ब्रियो का "डैमेज़्ड गुड्स" या "मेटरनिटी" के आनन्द का अनुभव करेंगे। किसी अच्छे उपन्यास की उत्तमता पात्रों के चरित्र-चित्रण पर सर्वथा अवलम्बित होती है। उपन्यास नहीं, यह सामाजिक कुरीतियों और अत्याचारों का जनाज़ा है !!
सच्चरित्र, ईश्वर-भक्त विधवा बालिका सरला का आदर्श जीवन, उसकी पारलौकिक तल्लीनता, बाद को व्यभिचारी पुरुषों की कुदृष्टि, सरला का पतित किया जाना, अन्त को उसका वेश्या हो जाना, ये सब ऐसे दृश्य समुपस्थित किए गए हैं, जिन्हें पढ़ कर आँखों से आँसुओं की धारा बह निकलती है। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल तथा मधुर है। मूल्य केवल लागत मात्र २॥) स्थायी ग्राहकों से १॥।=)

वर्ष १, खण्ड ३ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; २३ अप्रैल, १९३१ | सं० ६, पूर्ण सं० ३०

सर्दार भगतसिंह आदि की लाशें कैसे जलाई गईं ? पृष्ठ—७

देहली षड्यंत्र केस के अभियुक्तों पर पुलिस का नृशंस अत्याचार पृष्ठ—३

बैरकों में पाखाना-पेशाब रक्खा गया :: शाकाहारी के मुँह में गोश्त ठूँसा गया

ख़ुदाई ख़िदमदगारों को बदनाम करने की चेष्टा :: पं० सन्तानम् का वक्तव्य

अफ़ग़ानिस्तान के भूतपूर्व सम्राट का पत्र ज़ब्त :: बर्मा में अभी तक विद्रोह जारी है !

(एसोसिएटेड प्रेस द्वारा २२वीं अप्रैल की रात तक आए हुए 'भविष्य' के विशेष तार)

—लाहौर का समाचार है, कि पं० के० सन्तानम् ने सीमा-प्रान्त के सम्बन्ध में अपना एक वक्तव्य प्रकाशित किया है। आप कहते हैं, कि प्रायः सभी प्रान्त वालों की यह शिकायत है, कि सरकार ने गाँधी-इर्विन समझौते की सभी शर्तों का पालन न कर, समझौते का अनादर किया है। सीमा-प्रान्त से आपको विश्वस्त-सूत्र से पता चला है कि, ख़ुदाई ख़िदमतगारों पर पुलिस का अत्याचार अभी जारी है। आपने ऐसी कितनी ही घटनाओं का उल्लेख किया है, जहाँ निर्दोष स्वयंसेवकों को बुरी तरह पीटा गया है। समझौते के ठीक एक सप्ताह के बाद, १२वीं या १३वीं मार्च को, कुछ स्वयंसेवक जो तहसील मर्दान को जा रहे थे, बिना किसी कारण के पुलिस द्वारा पीटे गए। २४वीं मार्च को, नौशेरा में एक पुलिस अफ़सर ने ख़ुदाई-ख़िदमतगारों को अपने पास बुलाया और उन्हें अपना युनिफ़ॉर्म (वर्दी) पहनने से मना किया। जब उन्होंने ऐसा करने से इन्कार किया, तो वे पीटे गए। इसी प्रकार की अनेक घटनाओं का आपने उल्लेख किया है।

फिर आप आगे कहते हैं, कि मेरे एक मित्र सूचना देते हैं, कि कुछ अधिकारीगण खुल्लमखुल्ला इस समझौते का विरोध करते हैं, और वे इसकी शर्तों का पालन करने के लिए तैयार नहीं हैं। कैप्टेन बार्न्स पर किए गए आक्रमण के सम्बन्ध में आपका कहना है, कि इस विषय में व्यर्थ ही तिल का ताड़ बनाया जा रहा है। यदि इसकी अच्छी तरह जाँच की जाय, तो मालूम हो जायगा, कि मि० बार्न्स पर वास्तव में आक्रमण नहीं किया गया है ; यह केवल सन्देह मात्र है कि कोई आदमी उनके बङ्गले पर छिपने की कोशिश कर रहा था। क्या वह कोई चोर नहीं हो सकता ? इस घटना से, चारसद्दा में होने वाले एक अभिनय का सम्बन्ध बतलाया जाता है। वास्तव में, इसके द्वारा, ख़ुदाई ख़िदमदगारों के प्रति निरर्थक लाञ्छन लगाने की निन्दनीय चेष्टा की गई है।

—२०वीं अप्रैल की शाम को बम्बई से पं० जवाहरलाल नेहरू लङ्का के लिए रवाना हो गए। स्वास्थ्य सुधारने के अभिप्राय से वे वहाँ क़रीब ३ सप्ताह तक रहेंगे।

—२०वीं तारीख़ की शाम को ६ बजे के क़रीब सियालदा स्टेशन पर, कहा जाता है, कि दो बङ्गाली नवयुवकों ने, जिनके पास दो तमञ्चे थे, रेलवे के क़ुलियों पर आक्रमण किया और रेलवे के ९,००० रुपयों की थैलियाँ लेकर चम्पत हो गए। एक संरक्षक के विरोध करने पर उसे छुरियों से बुरी तरह घायल किया गया। अभी तक कोई गिरफ़्तारी नहीं हुई है, पुलिस जाँच कर रही है।

लॉर्ड इर्विन

"ख़ुदा बख़्शे बहुत सी ख़ूबियाँ थीं जाने वाले में"

—लायलपुर से स्वर्गीय सरदार भगतसिंह के पिता अपने साथियों सहित १९वीं अप्रैल को साङ्गला-हिल (पञ्जाब) पधारे, जहाँ बड़ी धूमधाम से आपका स्वागत किया गया। कहा जाता है, कि सादी पोशाक में ख़ुफ़िया पुलिस के सिपाहियों से लाला भागमल भाटिया का घर, जहाँ ये लोग ठहरे हैं, घिरा रहता है। जिस ताँगे पर ये लोग आए थे, उसका लाइसेन्स छीन लिए जाने की धमकी भी दी गई है।

—ख़बर है कि महात्मा गाँधी अपने साथियों सहित बारडोली पहुँच गए हैं। एक प्रेस-प्रतिनिधि के पूछने पर श्री० महादेव देसाई ने कहा है, कि महात्मा जी के लन्दन जाने की बात अभी अनिश्चित है।

—दिल्ली का समाचार है, कि दिल्ली षड्यन्त्र-केस के अभियुक्तों के वकील ने इस आशय का एक प्रार्थना-पत्र अदालत के सामने पेश किया है, कि सभी सरकारी गवाह नियमानुसार साधारण जेलों में रक्खे जायँ, जिसमें उन पर पुलिस का कोई प्रभाव न पड़े। शनिवार को इस सम्बन्ध में फ़ैसला सुनाया जायगा।

—दिल्ली षड्यन्त्र केस में, सबूत की ओर से सरकारी वकील ने ४५६ गवाह पेश करने की सूचना दी है। कैलाशपति तथा अन्यान्य मुख़बिरों के बयानों की नक़ल अभियुक्तों को दे दी गई है। अदालत ने 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के सम्वाददाता को ठीक-ठीक रिपोर्ट न देने के लिए चेतावनी दी है। पुलिस का कहना है, कि अदालत में अभियुक्तों को हथकड़ी पहना कर लाने की बात झूठी है। अगली पेशी शनिवार को पड़ेगी।

—पेशावर का एक समाचार है, कि अमानुल्ला के पत्रों का फ़ारसी संस्करण, नए ऑर्डिनेन्स तथा क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेण्ट एक्ट के अनुसार ज़ब्त कर लिया गया है। इस पुस्तक को 'ज़मीन्दार' पत्र ने प्रकाशित किया था।

—रङ्गून का समाचार है, कि विद्रोहियों ने अनेक मुखियों के घरों को जला दिया है। उन्होंने लगान की रसीदें भी जला डाली हैं और बन्दूक़ें लूट ली हैं। कहा जाता है, कि पूना नामक गाँव जला डाला गया है, किन्तु यह ख़बर अभी अनिश्चित है। हूँगू नामक स्थान के घरों में आग लगाने के सम्बन्ध में ४१ गिरफ़्तारियाँ हुई हैं। पेपापोन के ट्रिब्यूनल ने ५ क़ैदियों को उनके विरुद्ध काफ़ी सबूत न मिलने के कारण छोड़ दिया है। अन्तिम गवाह ने अपने बयान में कहा है, कि सामासनि ने सरकार पर आक्रमण करने और लगान वसूलने में अड़चनें उपस्थित करने का षड्यन्त्र रचा था।

म्यामौङ्ग और ईंगाबू नामक स्थानों में अतिरिक्त-पुलिस रखने की आज्ञा दी गई है।

—बम्बई का १२वीं अप्रैल का समाचार है, कि सरकार ने एक विज्ञप्ति निकाल कर यह आज्ञा दी है, कि तीन को छोड़ कर शोलापुर-काण्ड के सभी क़ैदी छोड़ दिए जायँगे।

—बन्नू का १४वीं अप्रैल का समाचार है, कि कोई आदमी, जो गाँधी टोपी या खद्दर धारण किए हो, छावनी में नहीं जाने दिया जाता। पोस्ट-ऑफ़िस, तार-ऑफ़िस, ट्रेज़री-ऑफ़िस तथा अदालतें, सभी छावनी में ही हैं, इसलिए, अधिकारियों की इस धाँधली से जनता को बहुत कष्ट हो रहा है।

—नई दिल्ली का १८वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के अतिरिक्त-ज़िला-मैजिस्ट्रेट ने श्रीमती बासन्ती देवी और श्रीमती चमेली देवी नामक दो स्थानीय महिलाओं को जेल से छोड़ देने की आज्ञा दी है।

जनरल अवारी छोड़ दिए गए

"वे पागल नहीं हैं"

नागपुर का १६वीं अप्रैल का समाचार है, कि नागपुर के सत्याग्रही नेता श्री० अवारी, जो पागलख़ाने में रक्खे गए थे, गत रात्रि के समय बिना किसी शर्त्त के छोड़ दिए गए। आपके चार साल के क़ैद की अवधि भी लगभग पूरी हो चुकी थी।

कहा जाता है कि मध्य प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी के अध्यक्ष श्री० अभ्यङ्कर १४वीं अप्रैल को आपसे भेंट करने गए थे। ५ घण्टे की बातचीत के बाद श्री० अभ्यङ्कर ने सरकार को इस बात की सूचना दी, कि श्री० अवारी की दशा चिन्ताजनक है, वे छोड़ दिए जायँ। अधिकारीगण उन्हें ल्यूनेसी एक्ट (Lunacy Act) के अनुसार, ज़मानत पर छोड़ना चाहते थे। मि० अभ्यङ्कर ने कहा कि श्री० अवारी पागल नहीं हैं, इसलिए ज़मानत नहीं दी जा सकती। अन्त में वे बिना ज़मानत के छोड़ दिए गए हैं। श्री० अभ्यङ्कर ने इस बात की घोषणा की है कि डॉक्टरी विज्ञान किसी प्रकार यह सिद्ध नहीं कर सकता, कि श्री० अवारी पागल थे, या हैं।

—लाहौर का १६वीं अप्रैल का समाचार है कि, फ़िरोज़पुर में सतलज के किनारे, जहाँ सरदार भगतसिंह आदि की लाशें फूँकी गई थीं, गत १३ अप्रैल को एक मेला लगा और चिता-स्थान पर लोगों ने स्वर्गीय सरदार भगतसिंह की एक मूर्ति स्थापित कर दी। कहा जाता है कि १२वीं अप्रैल की रात को वह मूर्ति तोड़ डाली गई और ईंट, सुर्ख़ी आदि भी हटा ली गई। कहा जाता है कि जिस रात को यह घटना हुई, उसी रात को १० बजे के लगभग, 'मिलाप' के स्थानीय सम्वाददाता ने कुछ पुलिस वालों को वहाँ देखा था।

—रङ्गून का १७वीं अप्रैल का समाचार है कि बर्मा-सरकार ने वहाँ के विद्रोह के सम्बन्ध में निम्न-लिखित विज्ञप्ति प्रकाशित की है :—

गत ११वीं अप्रैल को थायेटमेयो ज़िले के कामा नामक स्थान में एक विद्रोह उठ खड़ा हुआ। पुलिस के ज़िला सुपरिण्टेण्डेण्ट मिलिटरी पुलिस का एक दल लेकर वहाँ गए, और उन्होंने विद्रोहियों का सामना किया। ६ विद्रोही मारे गए और अनेक घायल हुए। २०० विद्रोहियों के मारे जाने की अफ़वाह झूठी है। पुलिस की ओर केवल डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट को ही चोट आई है।

सिक्ख-लीग का अधिवेशन

सभापति मास्टर तारासिंह का अभिभाषण

८वीं अप्रैल को सिक्ख-लीग का अधिवेशन शुरू हुआ। श्री० सुभाषचन्द्र बोस, पं० मदनमोहन मालवीय, श्रीमती सरोजिनी नायडू और ग़ाज़ी अब्दुल रहमान आदि प्रतिष्ठित नेतागण उपस्थित थे।

सभापति मास्टर तारासिंह ने अपने भाषण के प्रारम्भ में कहा, कि यह 'सिक्ख-लीग' राष्ट्रीय महासभा की प्रतिद्वन्दी नहीं, बल्कि उसकी सहायक है और इसका अस्तित्व तभी तक रहेगा, जब तक सम्प्रदायवाद का अस्तित्व है। इसका उद्देश्य सिक्खों के अधिकारों की रक्षा करना मात्र है। आपने पृथक निर्वाचन के सम्बन्ध में कहा कि, सिक्खों ने बहुत पहले ही पृथक निर्वाचन का विरोध किया था, इसीलिए मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचन और संरक्षण के लिए व्यवस्था करना उचित समझा गया और सिक्खों को एक ओर छोड़ दिया गया। वास्तव में सिक्खों के लिए यह एक प्रकार का दण्ड था।

सुप्रसिद्ध सिक्ख-नेता बाबा गुरुदत्तसिंह जी, जो हाल ही में जेल से मुक्त किए गए हैं।

आपने आगे कहा, कि मुझे अब भी विश्वास है कि सिक्ख राष्ट्रीयता के लिए बलिदान करने को तैयार हैं, किन्तु साम्प्रदायिकता के लिए त्याग करने को वे तैयार नहीं हैं। कट्टर से भी कट्टर सम्प्रदाय की साम्प्रदायिकता के आगे वे झुकने के लिए तैयार नहीं हैं।

आपने यह भी कहा कि साम्प्रदायिकता का अभी अन्त नहीं हो गया है। इसकी नींव पर अब भी कार्य किए जा रहे हैं। ऐसी अवस्था में, इस साम्प्रदायिकता रूपी राक्षस से लड़ने के लिए सिक्खों के हाथ में भी कोई अस्त्र होना चाहिए। इस सम्बन्ध में वे त्याग नहीं कर सकते। त्याग सदा अच्छे उद्देश्य से होता है। सिक्ख ईश्वर और गुरु के लिए त्याग करने को तैयार हैं।

सिक्खों के भावों के सम्बन्ध में आपने कहा कि, यदि कोई सम्प्रदाय सिक्खों पर शासन करना चाहे, तो वे उसके साथ लड़ने के लिए तैयार होंगे। इसके बाद आपने सिक्खों की १७ शर्तों को पेश किया; जिसकी चर्चा 'भविष्य' के आगामी अङ्क में की जायगी।

—मोर्वी का १४वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ ६७ स्वयंसेवक, बहिष्कार आन्दोलन के सम्बन्ध में गिरफ़्तार कर लिए गए हैं।

—सिकन्दराबाद का १८वीं अप्रैल का समाचार है, कि शराब की दूकानों पर धरना देने वाले १३ स्वयंसेवक, अशान्ति फैलाने के अभियोग में गिरफ़्तार कर लिए गए हैं।

—तामलुक (बङ्गाल) का १६वीं अप्रैल का समाचार है, कि मिदनापुर के मैजिस्ट्रेट स्वर्गीय जेम्स पेड्डी की हत्या के सम्बन्ध में हिजलबरिया कॉङ्ग्रेस कैम्प की तलाशी ली गई, और श्री० अतुलचन्द्र मिश्र गिरफ़्तार कर लिए गए। इस गिरफ़्तारी के विरोध में वहाँ एक सभा भी की गई।

—ढाके का १७वीं अप्रैल का समाचार है, कि बाबू सन्तोषचन्द्र सेन गुप्त, बङ्गाल-ऑर्डिनेन्स के अनुसार कलकत्ते में गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। आप ढाके के रहने वाले हैं। फ़रीदाबाद में आपके एक मकान की तलाशी भी ली गई, किन्तु कोई सन्देहजनक वस्तु नहीं पाई गई।

—दिल्ली का १६वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के स्टेशन के समीप एकाएक बड़े ज़ोरों का धड़ाका हुआ, जिसके फल-स्वरूप ४ कुली बुरी तरह घायल हुए। कहा जाता है कि डफ़रिन पुल के पास, जो ख़ाली पैसेञ्जर-ट्रेन खड़ी थी, उसी के समीप धड़ाका हुआ। पीछे जाँच करने से पता चला कि गाड़ी के नीचे छेद हो गया था। रेलवे-लाइन को भी हानि पहुँची है। पुलिस इस मामले की जाँच कर रही है। यह बम की दुर्घटना बतलाई जाती है।

—स्वर्गीय विद्यार्थी जी की स्मारक-समिति ने, जिसके सदस्य पं० जवाहरलाल नेहरू, शेरवानी आदि नेतागण हैं, देश के सम्मुख १ लाख रुपए की माँग पेश की है, जो निम्न-लिखित कार्यों में व्यय किए जायँगे।

(१) विद्यार्थी जी के कुटुम्ब की सहायता।

(२) प्रताप-ट्रस्ट की सहायता।

(३) जहाँ विद्यार्थी जी ने अपना शरीर त्याग किया था, वहाँ फ़व्वारा या अन्य कोई स्मारक खड़ा करना।

(४) कानपुर ज़िले के नरवल ग्राम (जहाँ विद्यार्थी जी का वासस्थान है) के आश्रम को सहायता पहुँचाना।

(५) बचे हुए धन को संयुक्त-प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी को इस शर्त पर भेंट करना, कि इससे 'गणेश-शङ्कर राष्ट्रीय सेवा-सङ्घ' की स्थापना हो।

श्री० शिवप्रसाद गुप्त कोषाध्यक्ष बनाए गए हैं। कुल रुपया श्रीयुत श्रीप्रकाश जी, सेवाश्रम सिगरा, बनारस छावनी के पते से आना चाहिए।

—बम्बई का १८वीं अप्रैल का समाचार है, कि एक प्रेस-प्रतिनिधि के पूछने पर महात्मा जी ने कहा है, कि गोलमेज़ परिषद में उनके जाने की कम सम्भावना है। जब आपका ध्यान, मौलाना शौकत अली के इस वक्तव्य की ओर आकर्षित किया गया, जिसमें उन्होंने कहा है कि 'महात्मा गाँधी देश के लिए ख़तरनाक हैं' तो आपने कहा, कि वे मेरे पुराने दोस्त हैं। उन्हें बिना इस बात का भय किए हुए कि मैं इसका विरोध करूँगा, मेरे प्रति आलोचना करने का प्रत्येक अधिकार है।

भारतीय पुलिस की बर्बरता के नमूने

नौजवान सिर नीचे और पैर ऊपर करके लटका दिए गए

अदालत में देहली षड्यन्त्र केस के अभियुक्तों के सनसनीपूर्ण बयान

एक नवयुवक की माँ और बहिन को उसके सामने बेइज़्ज़त करने की धमकी !

उन्हें हफ़्तों सोने नहीं दिया गया :: अभियुक्त बुरी तरह पीटे गए :: वे बेहोश तक हो गए

"तुम अपनी मनमानी कर चुके, अब पुलिस की बारी है" :: मैजिस्ट्रेट पर भयङ्कर दोषारोपण

दिल्ली डिस्ट्रिक्ट जेल के उसी कमरे में, जहाँ स्वर्गीय सरदार भगतसिंह तथा श्री० बटुकेश्वर दत्त ने अपने एसेम्बली बम-काण्ड वाले माम ले में प्रथम बार "साम्राज्य-वाद का नाश हो" और "क्रान्ति चिरञ्जीवी हो" के नारे लगाए थे, १२ अप्रैल के ११॥ बजे दिल्ली षड्यन्त्र के अभियुक्तों का स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने मामला पेश हुआ। सदैव की भाँति ही इस बार भी पुलिस का कड़ा प्रबन्ध किया गया था। इस प्रबन्ध में मि० पील विशेष रूप से व्यस्त दीख पड़ते थे। निरीक्षण के लिए डिस्ट्रिक्ट जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट मेजर एसपिनल भी उपस्थित थे।

अभियुक्तों से भेंट

ट्रिब्यूनल के सदस्यों के आने के पहले मि० आसफ़अली, मि० फ़रीदुल हक़ अन्सारी और मि० बलजीतसिंह ने अभियुक्तों से उनके बैरक में भेंट की।

मि० बलजीतसिंह, जोकि अभियुक्तों की तरफ़ से सफ़ाई के वकील हैं, अभियुक्तों से मिलने की दरख़्वास्त कुछ घण्टे पहले भी पेश कर चुके थे, परन्तु उस समय जेल के अधिकारियों ने उसे अस्वीकार कर दिया था। मि० बलजीतसिंह ने सुपरिण्टेण्डेण्ट से इस बात की शिकायत की।

ट्रिब्यूनल के सदस्य १० बज कर, ५५ मिनट पर पहुँचे!

अभियुक्तों का प्रवेश

अभियुक्त दो-दो की क़तार में साढ़े ग्यारह बजे ट्रिब्यूनल के सामने लाए गए, और कठघरे के पीछे बैठा दिए गए। आने के साथ ही उन्होंने भगतसिंह चिरञ्जीवी हो" "क्रान्ति चिरञ्जीवी हो" "भगवतीचरण चिरञ्जीवी हो" "हिन्दुस्तानी प्रजातन्त्र-एसोसिएशन चिरञ्जीवी हो" आदि के पाँच मिनट तक नारे लगाए।

सबूत के वकील

मि० ज़फ़रुल्ला, ख़ाँ साहब मुहम्मद आमीन और कोर्ट-इन्स्पेक्टर सरदार भागसिंह सबूत के वकील थे। अभियुक्तों के वकील मि० आसफ़अली, मि० फ़रीदुल हक़, मि० बलजीतसिंह, मि० एस० एन० बोस और मि० बैनर्जी थे।

अभियुक्तों के पहुँचने के पहले मि० आसफ़अली ने ट्रिब्यूनल से कहा कि जेल के अधिकारियों ने आज सवेरे मि० बलजीतसिंह को अभियुक्तों से मिलने नहीं दिया। मि० आसफ़अली ने कहा कि हमें इस अदालत के सामने आज एक अत्यन्त गम्भीर मामला उपस्थित करना है। कल जेल में अभियुक्तों के साथ केवल इस-लिए बल-प्रयोग किया गया कि अभियुक्तों को उन्हें पहचान करने के लिए आए हुए मुख़बिर के पास कोई घातक अस्त्र होने का सन्देह हो गया था और इस सन्देह पर उन्होंने परेड में हाज़िर होने से इन्कार कर दिया। इस पर उनके साथ बल-प्रयोग किया गया, जिससे उनमें से कुछ को ऐसी चोटें आईं, जिनके निशान अब तक उनके बदन पर मौजूद हैं। मास्टर हर-केशसिंह इस बुरी तरह से पीटे गए कि सारी रात उनको बेहोशी के दौरे आते रहे। तीन दौरे तो स्वयं मेरे सामने आए थे।

मि० आसफ़अली ने कहा कि जेल तथा पुलिस के अधिकारियों ने बुद्धि से काम नहीं लिया। वे चाहते तो मुझे इस बात की सूचना भेज सकते थे। बात यह है, कि अभियुक्तों को मुख़बिर मदनगोपाल के पास तमञ्चा होने का सन्देह हो गया था। अभियुक्त चाहते थे कि उसकी तलाशी ले ली जाय। उन्होंने इसकी प्रार्थना की; परन्तु उस पर कुछ ध्यान नहीं दिया गया। इस पर उन्होंने शनाख़्त कराई जाने वाली परेड में भाग लेने से, तब तक के लिए इन्कार कर दिया, जब तक कि इस बात की शिकायत अदालत तक न पहुँच जाय और उस पर उसका निर्णय न दिया जाय।

पुलिस को भी शिकायत पेश करना है

सरकारी वकील मि० ज़फ़रउल्ला ने मि० पील से सलाह करने के बाद कहा, कि पुलिस के पास भी अभि-युक्तों के विरुद्ध शिकायतें हैं। अभियुक्तों ने मुख़बिरों पर तीन बार आक्रमण किया है। अभी कल ही एक ऐसा आक्रमण वे कर चुके हैं। अभियुक्तों का यह सन्देह, कि मुख़बिर के पास कोई घातक अस्त्र है, बिल्कुल निरा-धार था। वास्तव में वे शनाख़्त की कार्रवाई में बाधा डालना चाहते थे।

आर० बी० कुँवर सेन—कैसी बाधा डालना चाहते थे?

सरकारी वकील—अभियुक्त चाहते थे कि शनाख़्त की परेड में कुछ विद्यार्थी भी मिला दिए जाएँ।

आज की कार्रवाई में निम्न-लिखित अभियुक्त उप-स्थित थे। सर्व-श्री० विद्याभूषण आज़ाद, एम० ए०, बाबू-राम गुप्त, कपूरचन्द, भागीरथ लाल, रुद्रदत्त, गजानन्द पोलदार, ख़्यालीराम गुप्त, विमल प्रसाद जैन, हरद्वारी लाल गुप्त, प्रोफ़ेसर नन्दकिशोर निगम, एम० ए०, धन्व-न्तरि, एस० एच० वात्स्यायन, बी० डी० वैशम्पायन और हरकेशसिंह। श्री० विशम्भरदयाल एक ऑपरेशन होने के कारण उपस्थित न हो सके थे। जेल-औषधालय का डॉक्टरी सार्टीफ़िकट अदालत में दाख़िल किया गया।

प्रारम्भ में प्रोफ़ेसर निगम ने अभियुक्तों की तरफ़ से एक वक्तव्य पढ़ कर सुनाया, जिसे ट्रिब्यूनल के सदस्यों ने ध्यानपूर्वक सुन लिया।

अन्त में मि० आसफ़अली ने अदालत पर इस बात के लिए ज़ोर डाला कि शनाख़्त की कार्रवाई के लिए मि० जगदीशसिंह की जगह कोई दूसरा मैजि-स्ट्रेट नियुक्त किया जाय। आपने इस बात पर भी ज़ोर दिया, कि शनाख़्त की कार्रवाई के समय अभियुक्तों के वकील को उपस्थित रहने की अनुमति दी जाय। तीसरी बात, जिस पर आपने ट्रिब्यूनल का ध्यान आकर्षित किया, वह यह थी कि शनाख़्त-परेड के समय अभियुक्तों के साथ कुछ शिक्षित व्यक्ति तथा विद्यार्थी भी मिला दिए जायँ। ट्रिब्यूनल के सभापति ने उपरोक्त तीनों बातों को मञ्ज़ूर कर लिया है और डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट को मि० जगदीशसिंह के स्थान पर किसी दूसरे मैजिस्ट्रेट को नियुक्त कर देने के लिए लिखा गया है।

अभियुक्त के वकील शनाख़्त के समय उपस्थित रह सकेंगे और अभियुक्तों के साथ शामिल करने के लिए वे कुछ विद्यार्थियों तथा शिक्षित व्यक्तियों का भी प्रबन्ध कर सकेंगे। अभियुक्तों ने इन माँगों की स्वीकृति के लिए अदालत को धन्यवाद दिया। इसके बाद अदा-लत की कार्यवाही आज के लिए स्थगित हो गई।

अभियुक्तों की फ़रियादें

दिल्ली षड्यन्त्र केस में अभियुक्तों की ओर से प्रोफ़ेसर निगम ने स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने जो वक्तव्य पढ़ कर सुनाया था, वह इस प्रकार है :—

"हम दिल्ली षड्यन्त्र केस के अभियुक्त आपकी जान-कारी के लिए निम्न-लिखित बातों को प्रकट कर देना चाहते हैं।

हमारे देश में राजनीतिक बन्दियों की गिरफ़्तारी का तथा न्यायालयों में विचारार्थ उपस्थित करने के लिए उन्हें अनिश्चित समय तक रोक रखने का ढङ्ग न्याय का उपहास मात्र है। अकारण व्यक्तियों को गिर-फ़्तार कर लेना, पुलिस की हिरासत में मनमाने समय तक उन्हें बन्द कर रखना और पुलिस की इच्छानुसार मोहलत पर मोहलत देते जाना साधारण बातें हैं। मैजिस्ट्रेट, जिसका कर्त्तव्य है, कि हिरासत में बन्द क़ैदी के हित का ध्यान रक्खे, कभी मोहलत मञ्ज़ूर करने के पहले क़ैदी से उस विषय में पूछने की कौन कहे, उससे भेंट तक करने की आवश्यकता नहीं समझता। बार-बार शिकायतें पेश होती हैं, बार-बार हाईकोर्ट मातहत अदालतों को चेतावनियाँ देते हैं, परन्तु उन पर कभी कोई ध्यान नहीं दिया जाता। हम लोगों के सम्बन्ध

में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है, जिनमें कि मैजिस्ट्रेट कभी अभियुक्तों से मिलने तक न आया हो, जिनमें कि अभियुक्तों से उनके सम्बन्धियों तथा क़ानूनी सलाहकारों को हफ़्तों मिलने ही न दिया गया हो, या जिनमें कि अभियुक्तों की जेल तथा काल-कोठरियों की यातना-कथा सुनने तक से मैजिस्ट्रेटों ने इन्कार कर दिया हो! विपरीत इसके, इन मैजिस्ट्रेटों ने प्रायः पुलिस के कारनामों का समर्थन ही किया है। उन अत्याचारों के कारनामों के समर्थन में प्रकट किए गए उनके शब्द उन कारनामों को अत्यन्त नीच स्वरूप प्रदान कर देते रहे हैं! अभियुक्तों को पीटा गया, उन्हें गालियाँ दी गईं, उन पर आक्रमण किए गए, वे हफ़्तों रात और दिन जागते रक्खे गए, बुरा भोजन दिया गया, प्रायः कभी कुछ भोजन ही न दिया गया, स्नान नहीं करने दिया गया, बाल नहीं बनवाने दिया गया, डराए गए, धमकाए गए, कीड़ों से खाए हुए गन्दे कम्बल उन्हें ओढ़ने को दिए गए, बिना हवा की अन्ध-कोठरियों में छोड़े गए, पीठ और हाथ के बल चारपाइयों से बाँध दिए गए, बराबर खड़े रहने वाली हथकड़ियाँ पहनाई गईं, लम्बी-लम्बी सलाख़ें वाली बेड़ियाँ पहनाई गईं और अन्त में यह सब हो चुकने के बाद जब उन्होंने मैजिस्ट्रेट के सामने अपनी गाथा सुनाई तो उत्तर मिला—"जब तुम्हारे दिन थे तब तुमने मनमाना किया, अब पुलिस की बारी है, वह अपनी करेगी।" जाँच-अफ़सरों के सामने पहले हम लोग घण्टों खड़े रक्खे जाते थे, फिर कोठरियों में भेज कर सारी रात जागते रक्खे जाते थे, छातियों पर पिस्तौलें तान कर हम लोग धमकाए जाते थे। कोठरियों को दुर्गन्धिपूर्ण बनाने के लिए उनमें मैला तथा पेशाब लाकर रख दिया जाता था। ये सब तथा ऐसी ही अनेक दूसरी बातें जाँच के नाम पर की जाती थीं!!

इस वक्तव्य के द्वारा किसी प्रकार के उद्देश्य-सिद्धि की हमें आशा नहीं है। वास्तव में अब हम उस परिस्थिति से बहुत दूर हो गए हैं, जहाँ कोई किसी से कुछ आशा कर सके। फिर भी हम इन बातों को आपके सामने तथा आपके द्वारा जनता के सामने रख देना अपना कर्तव्य समझते हैं, जिससे संसार 'न्याय' के इस पाखण्ड का वीभत्स दृश्य देख सके।

दुर्व्यवहारों की व्यक्तिगत कहानी

कुछ ठोस उदाहरण देने के अभिप्राय से हम यहाँ सारांश में, अभियुक्तों पर व्यक्तिगत रूप से विचार करते हैं।

धन्वन्तरि और विद्याभूषण, पुलिस की हिरासत की हालत में हाथों में हथकड़ी डाल कर चारपाइयों से बाँध दिए गए थे, जिससे वे उठ कर बैठ नहीं सकते थे। उन्हें बिस्तर नहीं दिए गए। स्नान करना, बाल बनवाना, कपड़ा बदलना उनके लिए वर्जित था। वे मनुष्य की दैनिक आवश्यकताओं तक से वञ्चित रक्खे गए थे।

मेरठ की पुलिस ने, विमलप्रसाद जैन को हिरासत के समय दो रात बराबर ठण्डक और खुली हवा में रक्खा। रात भर उन्हें बरामदे में बैठा रहना पड़ता था। दिल्ली लाए जाने पर वे धमकाए गए, मारे गए, ठुकराए गए और छत में पैर के बल उल्टे बाँध कर लटकते रक्खे गए। फिर उनके हाथ, कुर्सी के-पायों के नीचे दबाए गए और उस पर जाँच के अफ़सर नन्दकिशोर बैठ गए। यह सब कई दिन तक बराबर होता रहा। जब इतने पर भी अभियुक्त से कुछ पता न चला, तो उससे कहा गया कि तुम्हारी माँ और बहिनों को यहीं लाकर तुम्हारी उपस्थिति में बेइज़्ज़त किया जायगा!!! विमलप्रसाद ने सी० आई० डी० सुपरिण्टेण्डेण्ट से जब इस बात की शिकायत की, तो उत्तर मिला कि मामले पर विचार किया जायगा और अपराधी को दण्ड दिया जायगा। लेकिन यहाँ पर यह कहने की आवश्यकता न होगी, कि अब तक वह मामला विचाराधीन ही पड़ा है।

भागीरथलाल धमकाए गए, पैर के बल उल्टे बाँध कर छत से लटकाए गए तथा विमलप्रसाद ही की तरह अन्य उपायों से भी ताड़ित किए गए। इस अभियुक्त के प्रति यह व्यवहार पूरे एक हफ़्ते तक जारी रहा।

कालकोठरी

रुद्रदत्त ने, जिसकी गिरफ़्तारी ११ नवम्बर को हुई थी, अपने प्रति किए गए दुर्व्यवहारों की शिकायत सिटी-मैजिस्ट्रेट मि० ईसर के सामने की; परन्तु वह मैजिस्ट्रेट बिना कुछ सुने ही वहाँ से चला गया। रुद्रदत्त पन्द्रह दिन से अधिक अपनी कोठरी से हिलने तक नहीं दिया गया। उसे न तो नहाने दिया जाता था और न कपड़ा बदलने दिया जाता था। दो कम्बल जो उसे मिले थे, वे बिल्कुल कटे-फटे थे। उसके कपड़े बरबाद कर दिए गए थे। मि० नन्दकिशोर ने उसे धमकाया और कुछ सादे काग़ज़ों पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया। बाद में मालूम हुआ कि वे काग़ज़ अभियुक्त के बनावटी बयान थे।

प्रोफ़ेसर ज़ञ्जीरों से बाँधे गए

प्रोफ़ेसर नन्दकिशोर, जो कि कानपुर में गिरफ़्तार हुए थे, दिन में केवल एक बार तीन आने के मूल्य का भोजन पाते थे। वे बीमार पड़ गए, परन्तु उनके लिए औषधि आदि का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया। परिणाम यह हुआ कि उनकी बीमारी बढ़ गई, यहाँ तक कि अब भी वे बीमार ही हैं। उन्हें अपने डॉक्टर द्वारा चिकित्सा कराने की आज्ञा नहीं दी गई। उनको बेड़ियाँ भी बहुत वज़नदार दी गई थीं। विश्वनाथ वैशम्पायन के साथ भी ऐसा ही किया गया। इनकी बेड़ियाँ इतनी लम्बी थीं कि वे चलने-फिरने में असमर्थ थे। डॉक्टर बाबूराम को दो महीने तक अपने सम्बन्धियों से मिलने ही न दिया गया। कुभोजन और पुलिस-अधिकारियों के अविचार-पूर्ण व्यवहार उनके लिए बड़े ही दुखदाई थे।

हरकेशसिंह को भी, बीमार पड़ जाने पर कोई औषधि नहीं दी गई। यही नहीं, बीमारी की हालत में भी वे पीटे गए तथा अन्य अनेकों प्रकार की यातनाएँ उन्हें दी गईं। यहाँ तक कि वे बेहोश हो-हो जाते थे। उनको नहाने न दिया जाता था। उनके स्वास्थ्य का ध्यान किसी को न था। उन्होंने विरोध-स्वरूप पाँच दिन तक अनशन भी किया था। परन्तु परिणाम यह हुआ, कि पुलिस ने उन्हें शाकाहारी जान कर उनके मुँह में जबरन गोश्त के टुकड़े ठूँस दिए। वे बराबर हथकड़ियों में रक्खे जाते थे।

वात्सायन लाहौर के क़िले में ज़मीन के अन्दर बनी हुई कोठरी में बन्द किए गए थे। आठ दिन तक पैर फैला कर उन्हें सोने तक नहीं दिया गया। और भी अनेक प्रकार की यातनाएँ उन्हें दी गई थीं, जिनका वर्णन उन्होंने अमृतसर की अदालत में किया था। वे अमृतसर वाले मामले में भी अभियुक्त हैं।

शनाख़्त की परेड

इन सब असुविधाओं के अतिरिक्त भी हम लोगों के साथ जेल में बहुत बुरे-बुरे व्यवहार किए गए हैं। शनाख़्त-परेड के अवसरों पर कितनी ही ग़ैर-क़ानूनी बातें की गईं, जिनका बराबर विरोध किया गया, परन्तु मैजिस्ट्रेटों ने उन बयानों को लिखने से इन्कार कर दिया। इनके विशेष विवरण हम लोग अवसर पड़ने पर अदालत के सामने प्रकाशित करेंगे।

ऊपर की लिखी घटनाएँ दिल्ली जेल की नहीं हैं। साधारणतया दिल्ली जेल के अधिकारियों के विरुद्ध हमारी कोई शिकायत नहीं है। अगर आगे कोई बात होगी तो आपके सामने हम प्रकट करेंगे।"

हस्ताक्षर—हरद्वारीलाल; भागीरथलाल; जी० आर० पोतदार; बी० जी० गुप्ता; धन्वन्तरि; वी० जी० वैशम्पायन; विमलप्रसाद जैन; रुद्रदत्त मिश्र; के० आर० गुप्त; एन० के० निगम; कपूरचन्द; एच० एस० त्यागी; एस० एच० वात्सायन; विद्याभूषण।

उपरोक्त वक्तव्य को अदालत ने फ़ाइल में दर्ज कर लिया।

मि० आसफ़अली ने अदालत से कहा कि अभियुक्तों से उनके ऊपर होने वाले आक्रमण के बारे में पूछा जाय।

प्रेज़िडेण्ट—मेरी समझ से इसके जाँच की कोई आवश्यकता नहीं है। क़ायदे की पाबन्दी होनी ही चाहिए।

मि० आसफ़अली—तो क्या आप अभियुक्तों पर होने वाले इन अत्याचारों पर अपनी मोहर लगाना चाहते हैं? यदि इसी प्रकार का बल-प्रयोग होता रहा तो परिणामों के लिए कोई उत्तरदायी न ठहराया जा सकेगा।

अन्त में अदालत इस विषय में प्रोफ़ेसर निगम की बात सुनने के लिए राज़ी हो गई।

प्रोफ़ेसर साहब ने कहा कि शनाख़्त की परेड के समय मुख़बिर मदनगोपाल के पास तमञ्चा था। जेल-अधिकारियों के सामने इस बात की शिकायत की गई और प्रार्थना की गई कि पहले उसकी तलाशी ले ली जाय, परन्तु यह प्रार्थना स्वीकार नहीं की गई। इस पर हम लोगों ने शनाख़्त स्थगित कर देने के लिए कहा। मैजिस्ट्रेट मि० जगदीशसिंह ने इस बात को भी नहीं माना। इस पर हमने शनाख़्त की परेड में बैठने से इन्कार कर दिया। इसके सिवाय और हम कर ही क्या सकते थे?

प्रोफ़ेसर साहब ने कहा, कि मि० जगदीशसिंह हम लोगों को यथेष्ट दण्ड दे चुके हैं, अब इनकी जगह में किसी और मैजिस्ट्रेट की नियुक्ति हो जानी चाहिए।

मि० ज़फ़रुल्ला—लेकिन इस बारे में अभी तो यह इकतर्फ़ा ही बयान हुआ है।

प्रेज़िडेण्ट—क्या आपको दूसरे मैजिस्ट्रेट का प्रबन्ध करने में कोई कठिनाई होगी?

मि० पील—यदि दूसरे मैजिस्ट्रेट की आवश्यकता सिद्ध हो जाय, तो हमें उसके प्रबन्ध करने में कोई कठिनाई न होगी।

अदालत ने अभियुक्त की माँग स्वीकार की

डॉ० बाबूराम, भागीरथ मल, और रुद्रदत्त ने प्रार्थना की, कि हमारे विरुद्ध जो गवाहियाँ अदालत के सामने आवें; उनकी नक़ल हम लोगों को हिन्दी में दी जाया करे। अदालत ने कहा कि उर्दू अदालत की भाषा है। अभियुक्त इस विषय में अपने वकील की सहायता ले सकते हैं।

आगामी कार्रवाई

इस मामले की अगली सुनवाई ता० २२ अप्रैल को होगी। उस दिन अभियुक्तों को गवाहियों का सारांश आदि दे दिया जायगा। उस दिन उनका उपस्थित होना आवश्यक नहीं है।

ता० २९ को सरकारी वकील अपना प्रारम्भिक वक्तव्य पेश करेगा। फिर ता० ३० से सबूत की गवाहियाँ प्रारम्भ होंगी।

इसके बाद वात्सायन ने कोर्ट से कहा, कि जेल में हम लोगों को बैठने की जगह की बड़ी कमी है, केस की तैयारी करने में हम लोगों को बड़ी कठिनाई होती है। इस पर तीनों जज तथा दोनों तरफ़ के वकील बैरक का निरीक्षण करने के लिए गए।

* * *

क्या मुसलमान वास्तव में राष्ट्रीयता के विरोधी हैं ??

"सम्प्रदायवादी मुसलमान, मुसलमानों के नाम पर कलंक हैं"

"सच्चा मुसलमान अपने देश की स्वाधीनता के लिए मर मिटने को तैयार है"

पञ्जाब के राष्ट्रवादी मुस्लिम दल के अध्यक्ष, मलिक बरकतअली ने अपना निम्न-लिखित वक्तव्य प्रकाशित किया है :—

"गत १३वीं अप्रैल को हम लोगों ने अपना दल क़ायम किया है। इस दल का नाम 'राष्ट्रवादी मुस्लिम-दल' क्यों रक्खा गया है, यह बता देना आवश्यक है। साधारणतया इस्लाम धर्म का एक सच्चा अनुयायी राष्ट्रवादी हुए बिना नहीं रह सकता। किन्तु यह हमारे लिए लज्जा और कलङ्क की बात है कि मुसलमानों का एक ऐसा दल भी निकल आया है, जो अपनी स्वार्थ-साधना के लिए देश को ग़ुलामी की ज़ंजीर में बँधा देखना चाहता है।"

आप आगे कहते हैं कि सम्प्रदायवादियों का कहना है कि "हम सेना का अधिकार स्वराज्य सरकार के हाथ में नहीं देख सकते, क्योंकि स्वराज्य का अर्थ है, हिन्दू-राज्य।" इसका अर्थ यह है कि वे इस महत्वपूर्ण अधिकार को अङ्गरेज़ों के ही हाथों में देखने के लिए तैयार हैं। इस प्रकार वे देश को स्वतन्त्र नहीं होने देना चाहते।

दिल्ली की मुस्लिम परिषद के सम्बन्ध में आपका कहना है कि, "कुछ 'जी हुज़ूरियों' ने इकट्ठे होकर वहाँ जो प्रस्ताव पास किया है, वह मुसलमानों के लिए लज्जास्पद है। यदि ओडायर या चर्चिल ऐसी बेहूदी बातें बकें, तो उनके लिए यह क्षम्य हो सकता है, किन्तु मुसलमानों के लिए अथवा किसी भी भारतीय के लिए ऐसी ऊल-जलूल बातें कहना उनके लिए लज्जाजनक है, और उनकी राजनैतिक अयोग्यता का परिचायक है।

हमारा आवश्यक कर्तव्य

"ऐसी अवस्था में, सच्चे मुसलमान होने की हैसियत से, मुसलमान के नाम पर किए जाने वाले ऐसे ख़ुराफ़ातों का प्रतिवाद करना हमारा आवश्यक कर्त्तव्य है। हमारे राष्ट्रीय और देशभक्ति-पूर्ण भावों पर किए गए आघात ने ही हमें 'सर्वदल मुस्लिम परिषद' के विचारों का प्रतिवाद करने के लिए बाध्य किया है। चुप्पी साधे रहना किसी भी दशा में अच्छा नहीं था, क्योंकि इससे ग़लतफ़हमी फैल जाने की सम्भावना थी। जैसा कि बर्क ने कहा है, यदि किसी मैदान में हज़ारों पशु शान्त-भाव से बैठे हों, और एक झाड़ी के नीचे कुछ कीड़े ज़ोरों से झनकार कर रहे हों तो यह भ्रम हो सकता है कि संसार में इन कीड़ों के सिवा और कुछ नहीं है। मैं यहाँ पर साफ़-साफ़ कह देना चाहता हूँ, कि दिल्ली की मुस्लिम परिषद में जिन लोगों ने अपनी जिह्वा का सदुपयोग किया था, वे आत्म-सम्मान की परवाह न करने वाले दुर्बल हृदय के व्यक्ति हैं। भारत का सच्चा मुसलमान अपने देश की स्वाधीनता के लिए उतनी ही जान देता है, जितना कि यहाँ की और कोई जाति दे सकती है।"

मौ० शौकतअली की चुनौती का मुँहतोड़ जवाब

"१६३१ के आन्दोलन में १ लाख मुसलमान क़ुर्बान होंगे"

मौलाना शौकतअली ने अपने पिछले वक्तव्यों और भाषणों में राष्ट्रवादी मुसलमानों की भरपेट निन्दा की थी और साथ ही आपने यहाँ तक कह डाला था कि ये राष्ट्रवादी मुसलमान केवल मुट्ठी भर मुसलमानों के नेता हैं, और हिन्दुओं के हाथों के पुतले हैं। डॉ० सय्यद महमूद मौलाना साहब के 'शिष्य' रह चुके हैं। आपने अपने 'राजनैतिक गुरु' की अनर्गल बातों के सम्बन्ध में जो कुछ भी कहा है, उसका सार नीचे दिया जाता है :—

"मौलाना शौकतअली पर 'मुट्ठी भर' राष्ट्रवादी मुसलमानों को चुनौती देने की धुन सवार है। सन् १६२१ के असहयोग आन्दोलन के समय मौलाना साहब मेरे राजनैतिक गुरु थे। उस समय उन्होंने मुझे तथा अन्य कितने ही मुसलमानों को राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के लिए उत्साहित किया था। अब इस समय यदि वे दूसरी राह पर जाना चाहें और पहले के सिद्धान्तों पर पानी फेर दें तो हम उनका अनुसरण नहीं कर सकते। इसलिए मैं उनका चैलेञ्ज नम्रतापूर्वक स्वीकार करता हूँ। यदि राष्ट्रीय आन्दोलन फिर जारी हो जाय, तो मौलाना साहब देखेंगे कि कितने मुसलमान इसमें भाग लेते हैं। गत आन्दोलन में पूरी तरह से सहयोग न देने का जो दोष मुसलमानों पर लगाया जाता है, इससे वे लज्जित हैं। सन् १६२१ में उन्होंने अन्य सम्प्रदायों से अपेक्षाकृत अधिक त्याग किया था। किन्तु सन् १६३० में एक विश्वसनीय और पुराने नेता के बहकाने में आकर ही वे हिन्दुओं से पीछे पड़ गए! मुझे आशा है कि १६३१ में एक लाख मुसलमान अपने प्यारे देश की स्वाधीनता के लिए अपनी क़ुर्बानी करेंगे।"

मुस्लिम जनता संयुक्त निर्वाचन के पक्ष में है

अखिल भारतीय राष्ट्रवादी मुस्लिम दल के सेक्रेटरी श्री० रफ़ीअहमद किदवई अपने वक्तव्य में कहते हैं :—

"दिल्ली की मुस्लिम परिषद मुस्लिम जनता के मत को व्यक्त नहीं करती है। यह परिषद तो केवल, कौन्सिलों तथा एसेम्बली के कुछ सदस्यों का जमाव मात्र था। इन्हें, एसेम्बली और कौन्सिलों के सदस्य होने का सौभाग्य इसलिए नहीं प्राप्त हुआ है कि ये अपनी जाति के बड़े हितैषी हैं, बल्कि इसलिए कि मूर्ख मुस्लिम जनता की धर्मान्धता और साम्प्रदायिकता से ये लाभ उठाना जानते हैं। वे यह जानते हैं, कि संयुक्त निर्वाचन से अनेक 'नेता' कहलाने वाले महानुभावों का नेतापन नष्ट हो जायगा, और इसलिए 'सर्वदल मुस्लिम परिषद' के द्वारा वे अपना प्रचार-कार्य करना चाहते हैं। मुस्लिम लीग के अधिकांश सदस्य संयुक्त निर्वाचन के पक्ष में हैं, जैसा कि उसके कलकत्ता और दिल्ली के अधिवेशनों में सिद्ध हो चुका है। इसी प्रकार केन्द्रीय ख़िलाफ़त कमिटी में भी अधिकांश लोग संयुक्त निर्वाचन के ही पक्ष में थे। जमायत-उल-उलेमा भी संयुक्त निर्वाचन ही के पक्ष में है। जब सभी राष्ट्रवादी मुसलमान सत्याग्रह आन्दोलन में कार्य कर रहे थे, उस समय सर्वदल मुस्लिम परिषद वालों ने यह दिखाना चाहा, कि सभी मुसलमान संयुक्त निर्वाचन के विपक्ष में हैं। लखनऊ की कॉन्फ्रेन्स से यह बात ग़लत साबित हो जायगी।"

* * *

फ़ैज़ाबाद में राष्ट्रवादी मुसलमानों की सभा

फ़ैज़ाबाद का १६वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ राष्ट्रवादी मुसलमानों की एक सभा हुई। मि० सरफ़राज़ अली बार-एट-लॉ ने भाषण देते हुए उन मुट्ठी भर साम्प्रदायिक मुसलमानों की सङ्कीर्णता पर अपार दुख प्रकट किया, जो देश की स्वाधीनता के लिए हाथ-पैर न हिलाने पर भी अपनी माँगों द्वारा समझौते में अड़ङ्गा उपस्थित कर रहे हैं। कुछ अन्य लोगों के भाषणों के पश्चात् एक कमिटी बनाई गई और पदाधिकारी चुने गए, जिनके नाम ये हैं—मि० शाहमुहम्मद शफ़ी, अध्यक्ष, मि० हमीदुद्दीन हैदर, एडवोकेट और ख़लील अहमद, उपाध्यक्ष; मि० सरफ़राज़ अली, बार-एट-लॉ, सेक्रेटरी; मि० ग़ुलाम हुसैन और मुहम्मद नसीर ज्वायण्ट सेक्रेटरी; मि० आग़ा मिर्ज़ा साहेब, कोषाध्यक्ष। कमिटी के सदस्यों के नाम ये हैं :—

मि० फ़ैयाज़ अली ख़ाँ, मुहम्मद याक़ूब, मि० रहमत हुसेन, मि० फ़ज़ल हुसेन, मि० अहमद अली, मि० अब्दुल ग़फ़ूर, मि० नसीर ख़ाँ, मि० अब्दुल ख़ैर, तथा ७ अन्य सज्जन।

* * *

संयुक्त निर्वाचन का समर्थन

फ़िरोज़ाबाद का १६वीं अप्रैल का समाचार है, कि मीर अकबर अली, रईस और ज़मींदार के सभापतित्व में वहाँ राष्ट्रवादी मुसलमानों की एक सभा हुई। सभा ने संयुक्त निर्वाचन का समर्थन किया। आगरा, बनारस और कानपुर में होने वाले दङ्गों के प्रति शोक-प्रकाश किया गया और अधिकारियों की उदासीनता की निन्दा की गई।

लखनऊ में राष्ट्रवादी मुसलमानों की विराट कॉन्फ़्रेन्स

"पृथक निर्वाचन ही सभी अनर्थों की जड़ है"

मुस्लिम परिषद के सभापति सर अली इमाम का अभिभाषण

लखनऊ का १८वीं अप्रैल का समाचार है, कि आज मुस्लिम परिषद की बैठक शुरू हुई। सभापति सर अली इमाम ने अपने भाषण के प्रारम्भ में पृथक निर्वाचन की समस्या का इतिहास बतलाते हुए कहा, कि सन् १९०९ के मार्ले-मिण्टो-सुधार से ही इस प्रश्न का जन्म होता है। आपने कहा—"मैंने स्वयं अपने इन दुष्ट हाथों से उस प्रार्थना-पत्र को सुधारा था और उस पर हस्ताक्षर किया था, जो लॉर्ड मिण्टो के पास पृथक निर्वाचन के सम्बन्ध में भेजा गया था। पीछे मुझे ज्ञात हुआ कि पृथक निर्वाचन हमारे लिए विष है। मैंने साफ़-साफ़ शब्दों में पीछे स्वीकार किया कि वह दोषपूर्ण है। मेरी अन्तरात्मा ने मुझे अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ देने के लिए बाध्य किया।"

मुसलमानों के सम्बन्ध में आपने कहा, कि जो लोग कहते हैं कि हमारी संख्या कम है, हम ग़रीब और कमज़ोर हैं, वे वास्तव में स्वतन्त्रता के प्रेमी नहीं हैं। सन् १९०९ से मेरा यह दृढ़ विश्वास रहा है, कि स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए हम जितना त्याग करें, उसीके अनुसार हमें फल भी मिलना चाहिए। यदि मुसलमान कहें, कि 'हम कुछ नहीं कर सकते, हिन्दू हमारे शत्रु हैं' तो उनके संरक्षणों पर कौन ध्यान दे सकता है? इस प्रकार के अड़ङ्गे उपस्थित करने का अर्थ है कि आप अङ्गरेज़ों पर ही निर्भर रहना चाहते हैं, स्वाधीनता नहीं चाहते।

हाँ, सीमा-प्रान्त के मुसलमानों के हृदय में स्वाधीनता की लगन है। भारतवर्ष की सेवा वे ही कर रहे हैं। जब भारत स्वाधीन हो जायगा, तब न हिन्दू-राज्य होगा, न मुस्लिम राज्य, बल्कि केवल स्वतन्त्रता का राज्य होगा, जिसमें प्रत्येक सम्प्रदाय को समान अधिकार मिलेंगे।

अनर्थों की जड़

पृथक निर्वाचन के सम्बन्ध में आपने कहा है, कि मेरा गत १० वर्षों का अनुभव है कि पृथक निर्वाचन ही सभी अनर्थों की जड़ है। केवल देश ही के लिए नहीं, विशेषतः मुसलमानों के लिए भी यह हानिप्रद है। नेहरू-रिपोर्ट के सम्बन्ध में आपने कहा कि मैं कौन्सिल आदि में सुरक्षित स्थानों के रक्खे जाने का भी विरोधी हूँ।

दूसरे दिन, १९वीं अप्रैल को डॉ० अन्सारी ने परिषद के सामने एक प्रस्ताव पेश किया। प्रस्ताव में निम्न-लिखित बातों पर ज़ोर दिया गया है:—

(१) देश के शासन-विधान में प्राथमिक अधिकारों की व्यवस्था होनी चाहिए।

(२) इन अधिकारों की रक्षा की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

(३) देश का भावी शासन-विधान फ़ेडरल होना चाहिए।

(४) सार्वजनिक नौकरियों के सम्बन्ध में कम से कम योग्यता को ही कसौटी मानना होगा। और किसी भी सम्प्रदाय को अपने उचित भाग से वञ्चित नहीं रखना होगा।

(५) सिन्ध एक अलग प्रान्त बनाया जाना चाहिए, और सीमा-प्रान्त तथा बलूचिस्तान का शासन ठीक उसी ढङ्ग से हो, जैसा कि भारत के अन्य प्रान्तों का होता है।

फ़ेडरल शासन-विधान में निम्न-लिखित बातें होनी चाहिएँ:—

(१) प्रत्येक बालिग़ को वोट देने का अधिकार।

(२) संयुक्त निर्वाचन।

(३) फ़ेडरल और प्रान्तीय शासन-समितियों में, अल्पसंख्यक सम्प्रदायों के लिए ३० प्रतिशत के हिसाब से स्थान सुरक्षित रहना चाहिए।

लखनऊ-परिषद द्वारा पास किए गए कुछ महत्वपूर्ण प्रस्ताव

(१) गत राष्ट्रीय आन्दोलन में, राष्ट्र ने जो अपूर्व बलिदान किया है, परिषद उसके लिए राष्ट्र का अभिनन्दन करती है, और इस बात पर हर्ष प्रकट करती है, कि इस आन्दोलन में मुसलमानों, विशेष कर सीमा-प्रान्त के मुसलमानों ने जिस उत्साह से भाग लिया है, वह उनके परम्परागत गौरव के अनुकूल है।

(२) कई प्रान्तों की सरकारों ने गाँधी-इर्विन समझौते की शर्तों का पूरी तरह पालन नहीं किया है, जिसके फल-स्वरूप कितने ही राजनैतिक क़ैदी जेलों में सड़ रहे हैं। यह परिषद सरकार के इस व्यवहार के प्रति खेद प्रकट करती है।

(३) यह परिषद अनेक स्थानों में होने वाले साम्प्रदायिक झगड़ों के प्रति खेद प्रकट करती है और मृतकों तथा आहतों के प्रति समवेदना प्रकट करती है। यह परिषद श्री०विद्यार्थी जी को देशभक्ति के प्रति श्रद्धा प्रकट करती है।

यह परिषद सभी सम्प्रदायों से अनुरोध करती है, कि कुछ स्वार्थियों द्वारा किए जाने वाले दूषित प्रचार की ओर वे ध्यान न दें और अत्यन्त उत्तेजना के अवसर पर भी शान्ति बनाए रक्खें और इस प्रकार वे देश की स्वाधीनता के शत्रुओं के फन्दे में न फँसें।

श्री० शेरवानी का समर्थन

मि० शेरवानी ने प्रस्ताव के समर्थन में भाषण देते हुए कहा—"यह कहना ग़लत है कि हिन्दू हमारे अधिकारों को मानने के लिए तैयार नहीं है। यदि आप चाहें तो कह सकते हैं कि हिन्दू हमारे अधिकारों की रक्षा करने के लिए तैयार नहीं हैं; किन्तु क्या एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय के अधिकारों की रक्षा कर सकता है? क्या कोई सम्प्रदाय किसी दूसरे सम्प्रदाय की रक्षा के भरोसे अपने अधिकारों का उपभोग कर सकता है? अधिकार दिए नहीं जाते, वे लिए जाते हैं। यदि मुझे हिन्दुओं से प्रेम है, तो रक्षा की आवश्यकता नहीं है। यदि प्रेम नहीं है, तो चाहे कितने ही संरक्षण क्यों न रक्खे जायँ, वे सूखे पत्ते की तरह उड़ जायँगे। मैं कॉङ्ग्रेस में इसलिए नहीं हूँ, कि मुझे हिन्दुओं की सहायता की आवश्यकता है; बल्कि इसलिए कि अपने अधिकारों के लिए सरकार से युद्ध करना है। यदि हिन्दू भी हमारे अधिकारों पर हस्तक्षेप करेंगे, तो मैं उनसे भी लड़ूँगा।"

आगे उन्होंने कहा कि हम दो में एक ही काम कर सकते हैं, चाहे तो ब्रिटिश सरकार का साथ दें, या स्वतन्त्रता के लिए संग्राम करें। किन्तु शासन अपने हाथों में रखना और हिन्दुओं से भी लड़ना, ये दोनों बातें नहीं हो सकतीं। इन ११ महीनों में हिन्दुओं का तन्ज़ीम इतनी दूर तक बढ़ आया है कि २०० वर्षों में कई गाँधियों की सहायता पाने पर भी ऐसा होना कठिन था।

मौलाना हसरत मोहानी—आप किस नीति के पक्ष में हैं?

मि० शेरवानी—आज़ादी की लड़ाई में शामिल होने के पक्ष में।

आगे मि० शेरवानी ने बतलाया, कि पृथक निर्वाचन का प्रश्न ही सभी अनर्थों का मूल है।

'भविष्य' के आगामी अङ्क में हम इस परिषद की अन्य कार्यवाहियों तथा व्याख्यानों की चर्चा करते हुए, अपने विचार प्रगट करेंगे।

* * *

मौलाना साहब इतनी पैंतरेबाज़ी क्यों दिखला रहे हैं?

"उनका अस्तित्व भारत के लिए भयावह है"

लाहौर १४ अप्रैल—कराची के श्री० आर० के० सिद्धव ने एसोसिएटेड प्रेस के एक प्रतिनिधि से कहा है, कि "सत्याग्रह आन्दोलन के शुरू से ही मैं मौलाना शौकतअली की गति-विधि का अध्ययन कर रहा हूँ। यद्यपि उन्होंने कई बार भयावह मार्ग का अवलम्बन किया है, तब भी मैंने उनके विषय में अपनी कोई सम्मति प्रकट नहीं की है। किन्तु जब से मौलाना साहब भारत को लौटे हैं, तब से सभ्यता और विवेक पर ध्यान ही देना उन्होंने छोड़ दिया है। अब बात बहुत बढ़ गई है और मैं मौलाना साहब से साफ़-साफ़ कह देना चाहता हूँ कि उनका अस्तित्व भारत के लिए भयावह है।

"बम्बई की एक सभा में भाषण देते हुए उन्होंने छाती फुला कर कहा है कि 'मैं लाखों गाँधी से लड़ने के लिए तैयार हूँ।' किसी ने भी ऐसी ऊल-जलूल बातों पर ध्यान नहीं दिया। यदि मौलाना समझते हैं, कि ऐसी-ऐसी पागलपन की बातें बक कर वे मुसलमानों की भलाई कर रहे हैं, तो यह उनकी भूल है। वास्तव में सभी बुद्धिमान मुसलमानों का विचार है, कि हाल के दङ्गों के सम्बन्ध में, मुसलमानों में असन्तोष फैलाने की चेष्टा कर, मौलाना साहब मुसलमानों की तो कोई भलाई नहीं कर रहे हैं, हाँ अपने स्वार्थ-साधन की चेष्टा वे अवश्य कर रहे हैं।

"मैं मौलाना साहब को गत १० वर्षों से जानता हूँ, और उनके विषय में सिर्फ़ इतना ही कहना चाहता हूँ कि, चूँकि कॉङ्ग्रेस में उनकी कोई पूछ नहीं है, इसीलिए वे इतनी पैंतरेबाज़ी दिखला रहे हैं।"

* * *

—बम्बई १५ अप्रैल—बम्बई के भूतपूर्व मेयर श्री० हुसेन भाईलाल जी ने मौ० शौकतअली के हाल के भाषण और वक्तव्य के सम्बन्ध में कहा है कि "उन्होंने जो कुछ कहा है, वह उनकी बुद्धिहीनता का परिचायक है। महात्मा जी देश में और विदेशों में भी सम्मान की दृष्टि से देखे जाते हैं। शौकतअली यदि उनके प्रति आदर-भाव प्रकट करते, तो उनकी बातों की ओर कोई ध्यान भी देता। किन्तु इस प्रकार की अण्ट-सण्ट बातें कह कर उन्होंने, न केवल अपने वक्तव्यों को बेहूदा बना दिया है, बल्कि असन्तोष फैलाने की भी उन्होंने चेष्टा की है।"

सरदार भगतसिंह आदि की लाशें किस तरह जलाई गईं ?

कमिटी के सामने आँखों-देखी गवाहियाँ :: घी के स्थान में मिट्टी के तेल का व्यवहार ?

सरदार भगतसिंह आदि के शव-दाह के विषय में जाँच करने के लिए कांग्रेस की ओर से जो कमिटी नियुक्त की गई थी, उसने लाजपतराय हॉल में १२वीं अप्रैल से बयान लेना शुरू कर दिया है। १२वीं अप्रैल को बयान शुरू होने के पहले डॉक्टर सत्यपाल ने बताया कि हमने पञ्जाब-सरकार के चीफ़ सेक्रेटरी से इस जाँच में सहायता देने का अनुरोध किया था, पर वहाँ से जवाब मिला, कि सरकार इस मामले की जाँच कर चुकी है और उसका नतीजा भी प्रकाशित कर दिया गया है; इसलिए अब वह और किसी जाँच में सहायता देना नहीं चाहती। इसके बाद फ़ीरोज़पुर कांग्रेस कमिटी के मन्त्री श्री० पृथ्वीचन्द वकील, मि० शफ़ाअतुल्ला, श्रीमती पार्वती देवी और श्रीमती सोंधी की गवाहियाँ हुईं।

श्री० पृथ्वीचन्द वकील का बयान

श्री० पृथ्वीचन्द ने अपने बयान में कहा, कि २४ मार्च को सवेरे ८ बजे मुझे मालूम हुआ, कि सरदार भगतसिंह आदि की लाशें, सतलज के किनारे, पुराने पुल के पास, जलाई गई हैं। मैंने पृथ्वीराम और जगन्नाथ को इस समाचार की सच्चाई की जाँच करने को कहा। उन्होंने सवा नौ बजे वापस आकर कहा, कि ख़बर ठीक है। उन्होंने यह भी कहा, कि उस जगह से मिट्टी के तेल की बू आ रही है और ज़मीन अभी तक गरम है। सवा दस बजे के क़रीब एक सिक्ख ठेकेदार ने भी आकर कहा कि रात ही को वहाँ लाशें दफ़ना दी गईं और ज़मीन से अभी तक मिट्टी के तेल की बू आ रही है।

थोड़ी देर बाद मुझे मालूम हुआ कि सरदार भगतसिंह और उनके साथियों के रिश्तेदार मौक़े पर आए हैं। कुछ मित्रों के साथ मैं भी वहाँ पहुँचा। मैंने देखा, कि जहाँ लाशें दफ़नाई गई थीं, वहाँ से किरोसिन तेल की गन्ध आ रही थी। कुछ अधजले कोयले के टुकड़े भी वहाँ पर पड़े हुए थे। मैंने मेहरचन्द फ़ोटोग्राफ़र को बुला कर उस स्थान का फ़ोटो खिंचवा लिया। एक आदमी ने, जिसका नाम कृपाराम है, मुझे एक अधजला मांस का टुकड़ा दिखाया। वह अठन्नी के बराबर था और आध इञ्च के क़रीब मोटा था। उसने कहा कि चींटियाँ उस टुकड़े को घसीट कर ले जा रही थीं। वहाँ मुझे यह भी मालूम हुआ, कि वहाँ एक कटी हुई हड्डी मिली थी, जिसे भगतसिंह के घर वाले ले गए।

छुट्टी के दिन हम लोग फिर उस स्थान पर गए। ख़ाँ शफ़ाअतुल्ला ने चिता-स्थान से क़रीब ३० क़दम के फ़ासले पर एक जगह दिखाई, जहाँ दाह-क्रिया के दूसरे दिन उसने ख़ून देखा था। हम लोगों को वहाँ कुछ कङ्कड़ मिले, जिन पर ख़ून लगा हुआ था। वे कङ्कड़ फ़ीरोज़पुर में मेरे पास रक्खे हुए हैं। पचास-साठ क़दम के फ़ासले पर एक झोपड़ी थी, जिसमें झोपड़ी वाले के सिवा एक और आदमी था। झोपड़ी वाले को कुछ मालूम न था, किन्तु उस दूसरे आदमी ने कहा, कि दाह-स्थल के पास एक जगह उसने ख़ून गिरा हुआ देखा था। रेल्वे-फाटक पर उस समय मौजूद, एक आदमी से पूछने पर उसे मालूम हुआ, कि रात को ४-५ लारियाँ वहाँ आई थीं, जिनमें अधिकतर अङ्गरेज़ थे। एक पर डेढ़-दो मन लकड़ी और मिट्टी के तेल के कनस्तर भी थे।

रायज़ादा हंसराज के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि जहाँ दाह क्रिया की गई थी, वहाँ तीन अर्थियाँ अलग अलग रख कर नहीं जलाई जा सकती थीं। अगर ऐसा किया जाता, तो पास वाली झाड़ियों तक आग का असर ज़रूर पहुँचता, और एक झाड़ी तो जल ही जाती।

जाँच-कमिटी के प्रधान—डॉक्टर सत्यपाल

मौलवी शफ़ाअतुल्ला का बयान

मौलवी शफ़ाअतुल्ला ने कहा, कि मैं एक सभा में भाषण दे रहा था, कि कृपाराम ने मुझे मांस का टुकड़ा और दूसरे कई लोगों ने हड्डियाँ दिखाईं। मैंने उपस्थित लोगों को वे चीज़ें दिखा दीं। २५ तारीख़ को सवेरे मैं उस स्थान पर गया, जहाँ लाशें जलाई गई थीं। वह जगह रस्सी से घेर दी गई थी, जिसमें लोग जूते पहन कर उस पर न जायँ। उस घेरे के अन्दर ३-४ फ़ुट ऐसी जगह थी, जहाँ से किरोसिन तेल की बू आ रही थी। खुरेदने से, वहाँ हड्डी के छोटे-छोटे टुकड़े निकलते थे। मेरे सामने वह जगह खोदी गई। उसमें से हड्डी के टुकड़े और अधजले कोयले निकले। उनसे मिट्टी के तेल की बू आ रही थी। वहाँ से कोई दो सौ गज़ के फ़ासले पर एक जगह ख़ून लगे हुए कङ्कड़ पड़े थे। मेरे साथियों ने उन्हें चुन लिया।

हमें मालूम हुआ, कि पुलिस वाले कसूर से ग्रन्थी और आचार्य लाए थे। वहाँ जाकर तलाश करने पर हमें जगन्नाथ आचार्य मिल गया, पर ग्रन्थी नहीं मिला। उसने साथ चल कर वह जगह दिखाई जहाँ लाश जलाई गई थी। उसने कहा कि तीनों लाशें एक-एक बालिश्त के फ़ासले पर रक्खी गई थीं। वह इससे अधिक कुछ नहीं बतला सका। कसूर में खोज करने पर मालूम हुआ, कि डिप्टी-पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट शिवदर्शनसिंह ने २३ मार्च की शाम को, एक दूकान से ४ टिन मिट्टी का तेल ख़रीदा था। डॉक्टर सत्यपाल की जिरह में गवाह ने कहा, कि जाँच करते समय कोई ऐसा आदमी मुझे नहीं मिला, जिसने लाशों को काटते हुए देखा हो।

श्रीमती पार्वती देवी का बयान

श्रीमती जी ने कहा, कि २४ मार्च को मैं सरदार भगतसिंह की बहिन और दूसरी कई स्त्रियों के साथ, सतलज के किनारे उस स्थान पर गई, जहाँ भगतसिंह आदि की लाशें जलाई गई थीं। मुझे वह जगह मालूम न थी। मैं लोगों से पूछताछ कर ही रही थी, कि इतने में मेरा पाँव एक ऐसी जगह जा पड़ा, जहाँ की ज़मीन गरम थी। वहाँ से मिट्टी के तेल की सख़्त बू आ रही थी। मैंने उस स्थान को खुरेदा तो कई छोटे-छोटे मांस के टुकड़े मिले। एक टुकड़ा अब भी मेरे पास है। श्रीमती सोंधी ने भी श्रीमती पार्वती देवी के बयान का समर्थन किया।

फ़ीरोज़पुर में जाँच-कमिटी

१५वीं अप्रैल को, जाँच-कमिटी फ़ीरोज़पुर पहुँची। वहाँ जाते समय सदस्यगण दाह-स्थान देखने के लिए भी गए। आज वह स्थान नहीं पहचाना जाता था, बालू से स्थान बराबर कर दिया गया था और स्वयंसेवकों द्वारा बनाया हुआ घेरा भी तोड़ डाला गया था। दो ख़ुफ़िया पुलिस के आदमी थोड़ी दूर से उस स्थान की निगहरानी कर रहे थे। सड़क के दूसरी ओर क़रीब एक फ़र्लाङ्ग की दूरी पर तीन ख़ीमे गड़े हुए थे, जिसमें १ दर्जन से अधिक पुलिस के सिपाही बैठे थे। ज़मीन के बराबर किए जाने के सम्बन्ध में पूछने पर सी० आई० डी० वालों ने अपनी अनभिज्ञता जतलाई।

फ़ीरोज़पुर में गवाहियाँ लेने पर, फ़ोटोग्राफ़र लाला मेहरचन्द, जिन्होंने दाह-स्थान का फ़ोटो लिया था, और कृपाराम नामक एक दूकानदार ने पिछले बयानों का समर्थन किया। कृपाराम ने कमिटी के सामने एक बोतल पेश की, जिसमें चिता-स्थान पर पाया गया मांस का एक टुकड़ा रक्खा गया था। टुकड़े का वज़न १ छटाँक के लगभग था।

हरवंशलाल नामक एक मोटर-ड्राइवर ने कहा, कि कृपाराम ने उसके सामने मांस का टुकड़ा चिता-स्थान पर पाया था। गवाह ने उससे एक छोटा सा टुकड़ा तावीज़ बनाने के लिए लिया।

नौजवान भारत-सभा के अध्यक्ष महाशय अमरनाथ ने कहा, कि उन्हें उस स्थान पर कुछ जली हुई हड्डियाँ

मिलीं। गवाह ने हड्डियों को कमिटी के सामने पेश भी किया।

पं० चिरञ्जीलाल ने भी मांस का एक टुकड़ा कमिटी के सामने पेश किया।

फ़िरोज़पुर के लाला मुकुन्दलाल, एडवोकेट ने कहा कि दाह-स्थान ४ वर्ग फ़ुट से ज़्यादा न होगा। इतने सङ्कीर्ण स्थान में तीन लाशें अलग-अलग नहीं जलाई जा सकती थीं। उन्होंने कहा कि जान पड़ता है, कि लाशों के जलने में काफ़ी लकड़ी का व्यवहार नहीं किया गया था, और हिन्दू या सिक्ख किसी की भी लाश किरोसन के तेल से जलाना धर्म के विरुद्ध है। मौलवी मुहम्मद हुसैन, दीवान दुर्गाप्रसाद, बाबा चरणसिंह, आदि वकीलों ने भी, जिन्होंने इस विषय की पूरी जाँच की थी, उक्त बयानों का समर्थन किया। डॉ० सत्यपाल के प्रश्न का उत्तर देते हुए मौलवी मुहम्मद हुसैन ने कहा, कि लाशों के काटे जाने की बात उन्होंने सुनी है, किन्तु इस विषय का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण उनके पास नहीं है।

ग्रन्थी ने क्या किया ?

सरदार लाभसिंह ने कसूर में कमिटी के सामने अपना बयान देते हुए कहा कि नत्थासिंह ग्रन्थी ने उससे कहा कि २३वीं मार्च की रात को वह बड़ी मुश्किल में पड़ा था। ग्रन्थी ने गवाह को बतलाया कि २३वीं मार्च की शाम को, ७ बजे के लगभग एक पुलिस का आदमी उसके पास आया और पुलिस के डिप्टी-सुपरिण्टेण्डेण्ट सुदर्शनसिंह के पास चलने को कहा। पुलिस के सिपाही ने कहा कि 'अखण्ड पाठ' के लिए ग्रन्थी की आवश्यकता है। वहाँ पहुँचने पर ग्रन्थी से कहा गया कि, गण्डासिङ्ह-वाला में पाठ की ज़रूरत है। इसके बाद आचार्य जगन्नाथ के साथ ग्रन्थी गण्डासिङ्घवाला लाया गया। उन लोगों के साथ किरोसिन तेल के ३ कनस्तर भी लाए गए। पुलिस के कुछ अफ़सर और कुछ कॉन्स्टेबिल भी उनके साथ थे। गण्डासिङ्घवाला स्टेशन पहुँचने पर उन्हें एक लॉरी मिली।

लाहौर से भी लॉरियाँ आईं

इसके बाद लाहौर की ओर से भी ४ लॉरियाँ आईं। एक लॉरी से पुलिस के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट अमरसिंह उतरे और वे ग्रन्थी की लॉरी में जा बैठे। उनकी आज्ञानुसार लॉरी पुराने पुल के पास लाई गई। अन्य लॉरियाँ भी वहीं आकर खड़ी हुईं। अमरसिंह ने ग्रन्थी और आचार्य से कहा, कि उनके साथ एक सिक्ख और दो हिन्दुओं की लाशें हैं, जिन्हें वे जलाना चाहते हैं। ग्रन्थी और आचार्य को उन मृतकों के नाम नहीं बतलाए गए। किन्तु तो भी ग्रन्थी को सन्देह हुआ कि ये लाशें, भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव की हैं। जब टॉर्च की सहायता से उसने लाशों को देखा तो मालूम हुआ कि मृतकों के मुँह और नाक से ख़ून बह रहा है। एक पुलिस कॉन्स्टेबिल ने लाशों की पोशाक को फाड़ डाला और स्नान करा कर कपड़े में उन्हें लपेटा, और एक ही चिते पर तीनों लाशों को रख दिया। लाश के ऊपर और नीचे लकड़ियाँ रक्खी हुई थीं। चिता पर मिट्टी का तेल डाल दिया गया। तब ग्रन्थी और आचार्य से अन्तिम संस्कार करने के लिए कहा गया। उन्होंने मिट्टी के तेल की सहायता से आग लगा दी। इसके बाद उनसे लॉरी में चले जाने के लिए कहा गया। लॉरी में आकर वे क़रीब २½ घण्टे तक पुलिस वालों की इन्तज़ारी में बैठे रहे। इतनी देर के बाद चिता पर पानी डाल दिया गया और कुदाली से भस्म, हड्डी आदि वस्तुओं को इकट्ठा कर कम्बलों में बाँधा गया और नदी में छोड़ दिया गया। इसके बाद ग्रन्थी और आचार्य कसूर लाए गए। वे ४½ बजे सुबह कसूर पहुँचे।

"ग़ुलाम कभी ईसाई नहीं हो सकते"

"यदि आप सच्चे ईसाई हैं तो देश के स्वातन्त्र्य समर में कूद पड़िए"

नागपुर सत्याग्रह समिति के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री० पी० के० साल्वे ने गत १२वीं अप्रैल को ईसाइयों की एक विराट सभा में हिन्दी में भाषण दिया है। ईसाइयों से उन्होंने अनुरोध किया है कि वे हिन्दी भाषा को अपनावें, क्योंकि वही स्वतन्त्र भारत की राष्ट्र-भाषा होगी। वर्तमान राजनैतिक परिस्थिति की ओर लक्ष्य कर आपने कहा कि प्रत्येक ईसाई का यह पहला कर्तव्य है, कि वह अपने देश की स्वाधीनता के लिए कुछ करे। यह सम्भव है कि क्षणिक सन्धि के समाप्त होते ही भद्र-अवज्ञा आन्दोलन की दूसरी लड़ाई शुरू हो जाय। इसमें सम्मिलित होने के लिए प्रत्येक ईसाई को तैयार रहना चाहिए, क्योंकि उस दशा में कम से कम १ करोड़ नर-नारियों को आन्दोलन में साथ देना होगा। आगे उन्होंने ईसाइयों से अनुरोध किया कि "यदि आप सच्चे ईसाई हैं, और परमात्मा में आपका पूर्ण विश्वास है, तो अपनी स्त्रियों और बच्चों को ईश्वर के भरोसे छोड़ कर, देश के स्वातन्त्र्य संग्राम में कूद पड़िए। कुछ ईसाई यह पूछेंगे, कि 'यदि अङ्गरेज़ यहाँ से चले गए, तो ईसाइयों की क्या दशा होगी?' मेरा विश्वास है कि स्वाधीन भारत के हिन्दू और मुसलमानों के साथ ईसाई उससे कहीं अच्छी दशा में रहेंगे, जितना कि अङ्गरेज़ों की ग़ुलामी में हैं। ग़ुलाम ईसाई नहीं हो सकता है।" फिर आपने कहा—"यदि भारतीय ईसाई आन्दोलन में भाग नहीं लेंगे, तो उन्हें अपने संरक्षणों के लिए प्रार्थना करने का भी अधिकार नहीं है। ईसाइयों को चाहिए कि वे महात्मा जी में विश्वास रक्खें और अपने को उनके हाथों में सौंप दें। रैमज़े मैकडॉनल्ड, वेजवुड बेन या लॉर्ड इर्विन, के० टी० पॉल और पारख्या सेल्वम की अपेक्षा महात्मा जी में विश्वास रखना अधिक श्रेयस्कर है।" इसके बाद आपने स्वदेशी प्रचार और मादक द्रव्यों के बहिष्कार के लिए ईसाइयों से अनुरोध किया। अन्त में निम्न-लिखित प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास किया गया :—

"इस सभा में एकत्र हम भारतीय ईसाई, राष्ट्रीय महासभा को उसकी बुद्धिमत्ता के लिए बधाई देते हैं, कि उसने गोलमेज़ परिषद के प्रतिनिधित्व के लिए अकेले महात्मा जी को ही चुना है। महात्मा जी में हमारा पूर्ण विश्वास है। हमें विश्वास है कि वे देश के लिए पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करेंगे, और अल्प-संख्यक सम्प्रदायों के हितों की पूर्ण रक्षा करेंगे।"

सिक्खों का अन्तिम संस्कार

गवाह ने आगे कहा कि वह सरदार अमरसिंह और लाला मणिराम के साथ ११½ बजे दाह-स्थान देखने गया था। चिता-स्थान किरोसिन तेल से भीगा हुआ था। वहाँ चीड़ की लकड़ियों के कोयले पड़े हुए थे, जिससे पता चला, कि लाशों के जलाने में चीड़ की लकड़ी का ही व्यवहार किया गया है।

अन्य प्रश्नों का उत्तर देते हुए गवाह ने कहा, कि सिक्ख-धर्म के अनुसार अन्तिम संस्कार के लिए एक घण्टे की आवश्यकता है। संस्कार ख़तम हो जाने के बाद चिता में आग लगाई जाती है। गवाह ने कहा कि उसकी राय में मृतकों का अन्तिम संस्कार उचित रीति से नहीं किया गया, क्योंकि न तो ग्रन्थी को उसके लिए समय ही दिया गया, और न वह अन्तिम संस्कार के लिए तैयार ही होकर आया था। इसके अतिरिक्त 'कढ़ाह प्रसाद' भी, जो इस संस्कार के लिए अत्यावश्यक है, तैयार नहीं कराया गया था। ग्रन्थी ने गवाह से कहा था, कि उससे कोई संस्कार नहीं कराया गया था।

सिक्ख-धर्मानुसार लाश को रात में जलाना मना है। इससे पहले ऐसी कोई घटना नहीं हुई थी, कम से कम गवाह ऐसी कोई घटना के विषय में नहीं जानता है।

डॉ० सत्यपाल के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए गवाह ने कहा, कि किसी सिक्ख की लाश को, मृतक के किसी सम्बन्धी या पुरोहित को छोड़ कर और कोई नहीं छू सकता। उसकी लाश को हर एक मनुष्य नहीं छू सकता है। ग्रन्थी ने उससे कहा था कि वे पुलिस कॉन्स्टेबिल, जिन्होंने मृतकों को स्नान कराया, भिन्न धर्मावलम्बी थे। ग्रन्थी ने यह भी कहा, कि अन्तिम संस्कार के सम्बन्ध में उससे कोई बात नहीं पूछी गई थी।

लाला मणिराम जैन ने अपना बयान देते समय डॉ० सत्यपाल के पूछने पर कहा कि ३ लाशों को अच्छी तरह जलाने के लिए २० मन लकड़ी की आवश्यकता है। हिन्दू-धर्म के अनुसार भी, मृतक के शरीर को उसके सम्बन्धी और पुरोहित के सिवा दूसरा कोई नहीं छू सकता और रात के समय लाश नहीं जलाई जा सकती। लाश जलाने के चौथे दिन भस्म इकट्ठा किया जाता है और वह हरद्वार भेजा जाता है।

मिट्टी के तेल के सम्बन्ध में

कसूर की म्युनिसिपल कमिटी के वाइस प्रेज़िडेण्ट डॉ० बोधराज ने कहा, कि वे 'ट्रिब्यून' के स्थानीय सम्वाददाता हैं। उन्होंने सरकारी और ग़ैर-सरकारी दोनों ज़रिए से जाँच की है। आचार्य और ग्रन्थी के पास भी वे पता लगाने के लिए गए थे। ग्रन्थी ने यह स्वीकार किया है कि लाशों के जलाने में मिट्टी का तेल काम में लाया गया है। गवाह ने तेल के ठेकेदार से भी इस बात की जाँच की थी। उसने यह बात स्वीकार की थी, कि पुलिस वाले उसके यहाँ से ४ टिन मिट्टी का तेल ले गए थे; किन्तु २४वीं तारीख़ को तेल लौटा दिया गया। इसके बाद सरदार नत्थासिंह कमिटी के सामने पेश किए गए।

सभापति ने सूचित किया कि उन्हें पता चला है कि पुलिस ने ग्रन्थी को बुला भेजा है। उन्होंने ग्रन्थी से पूछा कि वह अपना बयान देने के लिए तैयार है या नहीं। ग्रन्थी अपने मित्रों से इस सम्बन्ध में सलाह करने के लिए बाहर चला गया। और कुछ मिनटों के पश्चात् लौट कर उसने कमिटी से कहा कि वह अपना बयान देने के लिए तैयार नहीं है।

सभापति ने पूछा—अपना बयान देने में आपको किसी बात का डर है ?

ग्रन्थी—मैं इस समय कुछ नहीं कह सकता। मुझे इस पर सोच-विचार करने के लिए १५ मिनट का समय दीजिए।

गवाह को समय दिया गया। उसने फिर बाहर जाकर अपने मित्रों से सलाह ली। किन्तु एक घण्टा बीत जाने पर भी वह नहीं लौटा।

कमिटी का कार्य दूसरे दिन के लिए स्थगित कर दिया गया।
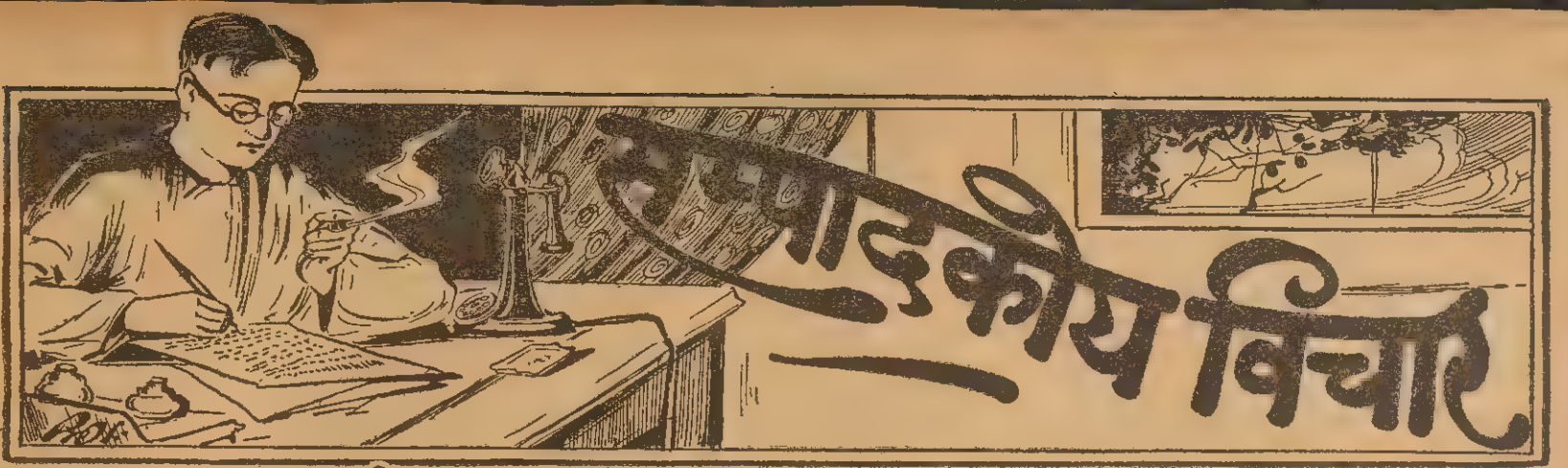
२३ अप्रैल, सन् १९३१

स्पेन में प्रजातन्त्र की विजय

न्याय एवं अत्याचार की भित्ति पर टिका हुआ शासन एक अनिश्चित काल तक देशवासियों को त्रस्त भले ही करे ; किन्तु अन्त में उसका करुणाजनक विनाश अवश्यम्भावी है, इसमें सन्देह नहीं। सारे ब्रह्माण्ड का इतिहास हमारी इस धारणा का पोषक है। इस रहस्यपूर्ण इतिहास में १४वीं अप्रैल, सन् १९३१ को एक और स्वर्ण-पृष्ठ जोड़ दिया गया है। पूरे आठ वर्ष की घोर एवं नारकीय यन्त्रणाएँ भोगने के पश्चात् इस दिन स्पेन के अत्याचारियों की पराजय और लोकमत की शानदार विजय हुई है। पशुबल का नृशंस उपयोग करने पर भी शासक लोकमत का दमन न कर सके !

स्पेन में होने वाले १४वीं अप्रैल के निर्वाचन ने प्रत्यक्ष कर दिया, कि लोकमत किस ओर है और प्रजा-पक्ष कितना प्रबल है। अपने प्राणों को भी सङ्कट में समझ कर, सम्राट एल्फ़ेन्ज़ों को सकुटुम्ब स्पेन से चुपके से भाग जाना पड़ा। आज तक सम्राट एल्फ़ेन्ज़ों का ठीक-ठीक पता नहीं चला, कि आख़िर प्राण-रक्षा के लिए उन्हें कहाँ और किसकी शरण लेनी पड़ी ? इस प्रकार स्पेन की जनता ने अपने देश में प्रजातन्त्र स्थापित करके संसार को अपनी स्वतन्त्र-प्रियता का जो परिचय दिया है, उससे पूँजीवाद के पोषकों के छक्के छूट गए हैं। यूरोप के, प्राचीनतम राजवंश का इस प्रकार बात की बात में अन्त हो जाना, कोई साधारण बात भी तो नहीं है।

विगत १२ वर्षों के भीतर कितने ही शासकों के राजमुकुट प्रजा द्वारा छीने और ठुकराए जा चुके हैं। नृशंस ज़ार का रूसियों ने बध किया ; पुरुषार्थ-हीन और रूढ़ियों की गोद में पले हुए ख़लीफ़ा को तुर्की ने पदच्युत किया, कर्तव्य-विमुख अहमदशाह को ईरानियों ने देश-निर्वासित किया और गत सप्ताह का समाचार है, कि स्पेन की त्रस्त जनता ने अपने ४४ वर्षों तक शासन करने वाले सम्राट एल्फ़ेन्ज़ों को अपने देश से बात की बात में खदेड़ भगाया है ! इन सारी घटनाओं से स्पष्ट पता चलता है, कि वर्तमान युग बहुमत और प्रजातन्त्र का महान युग है। सम्राटों और पूँजीवादियों के लिए आज संसार में कोई विशेष स्थान नहीं दिखाई देता। नृशंस अत्याचारों के बल पर देशवासियों को भयभीत एवं त्रस्त करने का युग संसार से लद चुका है। तोप और तलवार के बल पर राज्य करने वालों को इन शिक्षाप्रद घटनाओं से समुचित लाभ उठाना चाहिए। अपना और अपने परिवार का कल्याण चाहने वाले उच्छृङ्खल नरेशों को इन घटनाओं से लोकमत का मान करना सीखना चाहिए और अपनी अनुचित सत्ता को तिलाञ्जलि दे देना चाहिए—जनता को स्वयं उनके कम्पित कर से त्याग-पत्र लिखवाने के लिए अथवा अपने रक्त-रञ्जित करों से उनका राजमुकुट उतारने के लिए बाध्य करना बुद्धिमानी का परिचायक नहीं है—नृशंस शासकों की मनोवृत्ति में परिवर्तन होने से ही संसार में वास्तविक शान्ति की स्थापना हो सकती है, अन्यथा नहीं। हाल का स्पेन का इतिहास भी हमें यही बतलाता है, अस्तु।

सन् १९२३ में जनरल प्राइमो-डि-रिवेरा (Primo-de-Rivera) ने स्पेन की पार्लामेण्ट का अन्त करके सैनिक-शासन स्थापित किया था। एक ओर ज्यों-ज्यों सैनिक-शासन द्वारा नृशंस अत्याचारों का क्रम बढ़ता था, दूसरी ओर त्यों-त्यों जनता में असन्तोष की भीषण ज्वाला धायँ-धायँ करके जलने लगी ! भला यूरोपीय महासमर की जागृति के पश्चात् सैनिक-शासन को कौन जीवित देश सहन कर सकता था ? वहाँ की गवर्नमेण्ट ने समाचार-पत्रों को सेन्सर करना आरम्भ कर दिया, जनता की ज़बानों पर ताले ठोंक दिए गए, स्वातन्त्र्य-साहित्य को दबाया गया, पुस्तकों और समाचार-पत्रों की ज़ब्ती का बाज़ार गर्म हो गया, स्वतन्त्रता के दीवाने देश के पूज्य नेताओं को जेलों में ठूँस कर नाना प्रकार के कष्ट दिए गए, अनेक नवयुवक फाँसी पर चढ़ा दिए गए ! सारांश यह, कि पशुबल द्वारा जैसा और जितना भी दमन किया जाना सम्भव था, उसमें कोई कसर शासकों की ओर से उठा नहीं रक्खी गई ; पर इन सारे उपायों एवं साधनों द्वारा भी लोकमत का दमन नहीं किया जा सका। जेल, ज़ब्ती और प्राणदण्ड के भय ने भी आज़ादी के दीवानों को निश्चित-पथ से विचलित करने में अपनी हार मान ली। जन-शक्ति की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई बाढ़ को मदोन्मत्त सम्राट तथा उसके सैनिक-साथियों ने जान-बूझ कर नहीं देखा। वे आँखें मूँद कर वास्तविक स्थिति से अनभिज्ञ बने रहे। फल यह हुआ, कि वह प्रबल तथा दुर्धर्ष बाढ़ एल्फ़ेन्ज़ों को बहा ले गई—अब पता नहीं, वह उसे भवसागर के कौन से तट से टकरावेगी ?

जब जनता अपने असन्तोष का प्रदर्शन करती थी और श्रमजीवी लोग अपनी स्थिति के सुधार के लिए हड़तालें करते थे, तो एल्फ़ेन्ज़ों केवल मुस्करा दिया करता था। वह प्रायः कहा करता था—"हज़ार हड़तालें हों, हमें इसकी चिन्ता नहीं; केवल हमारे जनरलों की हड़तालें न होनी चाहिए।" त्रास-नीति के बल पर कई वर्ष तक राज्य कर लेने के कारण उसका विश्वास हो गया था, कि शस्त्र-शक्ति अमोघ-शक्ति है और दमन-नीति ही वास्तविक राजनीति है। "विनाशकाले विपरीत बुद्धिः" का इसे ज्वलन्त उदाहरण समझना चाहिए। गत १४ अप्रैल को लोकमत की विजय पर जनता हर्षनाद करने लगी, तो पुलिस वाले भी जनता के साथ हो गए और वे भी "प्रजातन्त्र की जय" बोलने लगे। 'राजभक्ति' और 'वफ़ादारी' का मनोहर दृश्य एल्फ़ेन्ज़ों ने भी अपने राजमहल के किसी झरोखे से अवश्य देखा होगा। सम्भवतः हर्ष-ध्वनि में उसने अपने सैनिकों के स्वर को भी पहचान लिया हो। अस्तु।

आर्थिक एवं राजनैतिक सङ्कटों से किंकर्तव्यविमूढ़ होकर, विगत अक्टूबर,१९३० में स्पेन की सैनिक-सरकार ने घोषित किया था कि नवम्बर में पार्लामेण्ट का नया निर्वाचन होगा। समाचार-पत्रों का सेन्सर भी किसी हद तक पहले की अपेक्षा कम कर दिया गया था और दमन-नीति भी एक हद तक स्थगित कर दी गई थी। साथ ही अपनी आर्थिक दुरवस्था को सुधारने के लिए कई अन्तर्राष्ट्रीय बैङ्कों से भी सैनिक-सरकार ने परामर्श आरम्भ कर दिया था ; परन्तु इन सारे प्रयत्नों का कोई भी प्रत्यक्ष फल नहीं हुआ। स्वतन्त्रता की प्रबल पिपासा इने-गिने सुधार-बिन्दुओं से शान्त नहीं हो सकती थी। उन्मत्त जनता ने स्वातन्त्र्य-सागर में ही ग़ोता लगाने की ठान ली थी ; अतः फिर भी श्रमजीवियों तथा विद्यार्थियों की हड़तालें होती रहीं। सरकार की ओर से इसका कारण साम्यवादियों का कूट-प्रचार एवं विश्व-विद्यालयों में आत्म-नियन्त्रण का अभाव बतलाया जाता था; जनता इन हड़तालों का कारण जन-सत्तात्मक शासन की अदम्य अभिलाषा बतलाती थी। समाचार-पत्रों में निरङ्कुश सत्ता की तीव्रतम आलोचनाएँ होने लगीं; शासन-विधि के विरोध में विराट सभाएँ होने लगीं; स्वयं सम्राट के विरुद्ध रोषपूर्ण भाषण दिए जाने लगे; किन्तु किसी अज्ञात कारणवश इन सारे प्रदर्शनों को दबाया नहीं गया। समाचार-पत्रों को केवल सरसरी तौर से देख कर छोड़ दिया जाने लगा। सार्वजनिक सभाओं के चारों ओर सैनिकों को खड़ा अवश्य रक्खा जाता था—परन्तु उनका उपयोग नहीं होता था ! सम्भवतः इसका कारण यह था, कि सरकार पग-पग पर अपने पक्ष की निर्बलता का अनुभव करने लगी थी और धीरे-धीरे अपनी सेना पर भी उसे अविश्वास होता जाता था। वास्तव में राजभक्त सेना और पुलिस के हृदयों में भी असन्तोष की ज्वाला प्रज्वलित हो उठी थी।

पाठकों को स्मरण होगा, विगत १२वीं और १३वीं दिसम्बर, १९३० को 'ज़का' नामक दुर्ग के सैनिकों ने विद्रोह कर दिया था और सारे अफ़सर क़ैद कर लिए गए थे। इन विद्रोहियों को दबाने के लिए तुरन्त 'राजभक्त' सेना भेजी गई और अन्त में 'बाग़ी' लोगों को बाध्य होकर आत्म-समर्पण कर देना पड़ा। इन बाग़ियों के नेता कैप्टन गलन और गर्शिया हरनाँडीज़ को प्राण-दण्ड दिया गया और १४वीं दिसम्बर को उन्हें गोली से उड़ा दिया गया। इसके पूर्व,नवम्बर १९३० में देश-व्यापी बलवे और हड़तालें हो चुकी थीं, जिनमें कितने ही मनुष्य मारे गए थे और अनेक घायल हुए थे। मेड्रिड और बारसलोना नामक नगरों में इन उत्पातों ने बड़ा भयङ्कर रूप धारण कर लिया था। कई दिनों तक बाज़ार आदि बन्द रहे थे और वहाँ का

शासन लुप्त-प्राय हो गया था। इन्हीं सब कारणों से पार्लामेण्ट का नया चुनाव अब तक स्थगित रक्खा गया था। यद्यपि ये सारे 'उत्पात' बलवे और हड़तालें स्वतन्त्रता की अदम्य अभिलाषा के परिचायक थे, परन्तु सरकार की ओर से एक विज्ञप्ति निकाल कर संसार को यह विश्वास दिलाने की यथाशक्ति चेष्टा की गई, कि "ये सारे उत्पात योंही अकस्मात हो गए हैं।" आधुनिक संसार में इस प्रकार की सरकारी विज्ञप्तियों पर कोई सहसा विश्वास नहीं करता और ज्यों-ज्यों इस प्रकार की विज्ञप्तियों की निस्सारता और खोखलापन प्रकट होता जाता है, त्यों-त्यों जनता का अविश्वास भी दिनोंदिन बढ़ता जाता है।

गत जनवरी, १९३१ में भी स्पेन की सरकार ने देश के जाग्रत आत्माभिमान को एक बार ही कुचल डालने के अनेक प्रबल प्रयत्न किए। एक बार फिर प्रेसों का गला घोंटा गया और सभाबन्दी का क़ानून जारी कर दिया गया; देश भर के सम्पूर्ण प्रसिद्ध नगरों में ज़ोरों से सैनिक शासन होने लगा; एक नगर से दूसरे नगर जाना, यहाँ तक कि स्वतन्त्रतापूर्वक जनता का पत्र-व्यवहार भी कठिन कर दिया गया। लगभग १०,००० स्वतन्त्रता के पुजारी जेलों में ठूँस दिए गए और कितनों को फाँसी पर लटका दिया गया, परन्तु शासकों के ये सारे प्रयत्न निष्फल सिद्ध हुए; दमन-चक्र इस रण-निनाद को शान्त नहीं कर सका। देश-प्रेमियों के एक नेता मेजर फ्रेन्को ने वायुयान द्वारा मेड्रिड नगर में क्रान्तिकारी पर्चे तथा पुस्तिकाएँ एवं पत्र बरसाए और इसके बाद वे पोर्चुगल चल दिए। उन्होंने एक पत्र के सम्वाददाता को इस युद्ध का ध्येय बतलाते हुए कहा था, कि "हम राजनैतिक और सैनिक विद्रोह के द्वारा स्पेन में पुनः उस न्याय और सम्मान तथा गौरव की स्थापना करना चाहते हैं, जो केवल प्रजातन्त्र शासन-शैली में ही सम्भव है।" इसी समय प्रधान राज-सचिव जनरल बेरङ्गूयर (General Berar-guer) ने भी अपना वक्तव्य प्रकाशित किया था, जिसमें उसने कहा था, कि "मुझे शान्ति-रक्षा करनी पड़ती है। जब तक बलवे और उत्पात जारी हैं, तब तक मुझे विवश होकर सैनिक-शासन रखना पड़ेगा। मुझे आशा है, यह स्थिति शीघ्र ही सुधर जावेगी। असाधारण साधनों का मैंने विवश होकर ही उपयोग किया है। मैं यह जानता हूँ, कि स्पेन के लोग स्वाधीनता के प्रेमी हैं और उसकी प्राप्ति के निमित्त वे इस समय अधीर हो रहे हैं। ज्यों ही मैं देखूँगा, कि वे अधिकारों का सदुपयोग करने के योग्य हो गए हैं, मैं उनको सब अधिकार दे दूँगा।" किन्तु इस प्रकार के अनेक आश्वासन सुनते-सुनते स्पेन-निवासियों के कान पक गए थे; उन्होंने राज-सचिव बेरङ्गूयर के इस वक्तव्य को उपेक्षा की दृष्टि से देखा और अपने स्वतन्त्रता के आन्दोलन में किसी प्रकार की शिथिलता न आने दी। अस्तु।

पूरे ८ वर्षों तक निरन्तर दमन-नीति का प्रयोग करने पर भी, जब परिस्थिति सरकार के वश में नहीं आ सकी, तो हार कर उसे वैध उपायों का आश्रय लेना पड़ा। गत २४ जनवरी, १९३१ को सैनिक-शासन हटा लिया गया और प्रेस तथा सभा-सम्बन्धी क़ानून रद्द कर दिए गए। सम्राट एल्फ़ोन्ज़ो अधिक रुचि और कर्तव्य-परायणता के साथ शासन-कार्य देखने लगा और साथ ही अपने सहायकों के दल के सङ्गठन का कार्य भी उसने आरम्भ कर दिया, इन प्रयत्नों के प्रभाव से देश में दो राजनैतिक दल हो गए। एक ओर स्वतन्त्रता के दीवानों का एक दल था, तो दूसरी ओर राजभक्तों का दूसरा दल भी धीरे-धीरे तैयार किया जाने लगा। ८वीं फ़रवरी, १९३१ को प्रधान-सचिव बेरङ्गूयर ने घोषित किया, कि १ली और १९वीं मार्च को डिपुटी और सिनेटरों का निर्वाचन किया जावेगा और २५वीं मार्च को पार्लामेण्ट का प्रथम अधिवेशन होगा।

आठ वर्षों के निरङ्कुश और नृशंस सैनिक शासन के पश्चात् इस घोषणा को सुन कर भी स्पेन वालों ने आनन्द नहीं मनाया, वास्तव में अत्याचार की स्मृतियाँ जनता चेष्टा करने पर भी नहीं भुला सकती थी। जनता सम्राट एल्फ़ोन्ज़ो के स्वेच्छाचारी शासन का अन्त करने के लिए कटिबद्ध हो चुकी थी; इसीलिए इस घोषणा का उस पर किञ्चित प्रभाव भी नहीं पड़ा, अतएव हड़तालों और बलवों का क्रम उसी प्रकार जारी रहा। जनता का यह रुख़ देख कर सरकार ने पार्लामेण्ट का निर्वाचन पुनः स्थगित कर दिया और पुनः प्रेसों का गला घोंटा जाने लगा और सभाओं पर कड़ी निगाह रक्खी जाने लगी!

स्पेन में इस समय भी राजभक्तों की कमी नहीं है। सैनिक बल के प्रयोग से थक कर सम्राट एल्फ़ोन्ज़ो ने निर्वाचन द्वारा अपने भाग्य की परीक्षा लेना चाहा। उसने अनेक उपायों द्वारा 'राजभक्त' लोगों के दल को आगे बढ़ाया और इस मास के प्रथम सप्ताह से पार्लामेण्ट के निर्वाचन की बड़ी धूमधाम से तैयारियाँ होने लगीं, किन्तु सम्राट एल्फ़ोन्ज़ो को शीघ्र ही इस बात का पता चल गया, कि प्रजातन्त्रवादी उसको सिंहासन-च्युत करने पर तुल गए हैं। १३ वीं एप्रिल को ही विदित होने लगा था, कि प्रजातन्त्रवादियों का पक्ष बहुत प्रबल है। अनेक राजभक्त लोग भी प्रजातन्त्र दल में सम्मिलित होने लगे। गोडलजर का प्रान्त, जो अपनी राजभक्ति के लिए सारे स्पेन में प्रसिद्ध था, अकस्मात प्रजातन्त्रवादी बन गया। इस समाचार से बादशाह सलामत और प्रधान-सचिव बड़े खिन्न हुए और समस्त "जी-हुज़ूरों" के दल में उदासी छा गई। प्रजातन्त्रवादियों को अपनी शक्ति का परिचय मिलते ही उनके नेताओं ने बड़ी गम्भीरता और धैर्यपूर्वक दूने वेग से अपना आन्दोलन जारी कर दिया। १२वीं एप्रिल को भावी विजय के उपलक्ष में जब जनता ने अपने जुलूस निकालने आरम्भ किए और आमोद-प्रमोद की ध्वनियाँ नगर में गूँजने लगीं, तो साम्यवादी नेताओं ने इस आशय की एक विज्ञप्ति प्रकाशित की, कि "हमें हल्ला और शोर नहीं चाहिए, हमको शान्त एवं दृढ़ निश्चय की आवश्यकता है।" १४वीं एप्रिल को जनता को इस बात का पूर्णरूपेण विश्वास हो गया, कि प्रजातन्त्रवादियों का दल इतना प्रबल है, जिसकी वे कल्पना भी न कर सके थे। ठीक इसी समय मेड्रिड में यह समाचार फैल गया, कि बादशाह सलामत ने अपनी हार मान कर राजपद त्याग दिया है। इस समाचार से जनता को जो अपार हर्ष हुआ, उसे व्यक्त करना सहज नहीं है। सारे नगर में आनन्द का समुद्र उमड़ पड़ा। इस समाचार का फैलना था, कि पुलिस और फ़ौज भी प्रजातन्त्रवादियों के साथ मिल कर प्रजातन्त्र का अभिनन्दन करने लगी। उसी दिन सायङ्काल को निश्चय रूप से पता लग गया, कि सम्राट एल्फ़ोन्ज़ो ने सिंहासन का परित्याग कर दिया है। बस फिर क्या था? मेड्रिड हर्ष से पागल हो गया। स्वयं राजकर्मचारी ही अपनी-अपनी मोटरों पर प्रजातन्त्र के लाल झण्डे लगा कर सारे शहर में घूमते हुए दिखाई देने लगे और वे ही प्रजातन्त्र की इस विजय की सूचना सर्व-साधारण को देने लगे। जिधर देखो उधर प्रजातन्त्र का अभिनन्दन होने लगा।

एल्फ़ोन्ज़ो की हार्दिक इच्छा थी, कि राजसिंहासन उसके पुत्र को मिल जाय; परन्तु जनता के नेताओं का कहना था कि त्याग-पत्र में इस प्रकार की कोई शर्त नहीं हो सकती, अतः बादशाह सलामत की यह अन्तिम इच्छा भी पूरी नहीं हुई और १४वीं अप्रैल की रात को उन्हें सकुटुम्ब अपने राजप्रासाद से एक अनिश्चित-स्थान के लिए विदा होना पड़ा। उनके साथ उस समय केवल उनके तीन पुराने मित्र थे। नए समाचारों से ऐसा प्रतीत होता है, कि बादशाह सलामत सम्भवतः फ़्रान्स अथवा इङ्गलैण्ड की शरण लेंगे।

१४वीं एप्रिल की शाम को ही सारे देश में प्रजातन्त्र शासन घोषित कर दिया गया और एल्फ़ोन्ज़ो के प्रतिनिधि एडमिरल अज़नार (Admiral Aznar) ने प्रजावादियों के प्रतिनिधि सेनोर ज़मोरा (Senor Zamora) को शासन-भार सौंप दिया। नए मन्त्रि-मण्डल में सेनोर ज़मोरा प्रधान-सचिव नियुक्त हुए हैं और ९ अन्य मन्त्रियों का भी निर्वाचन हुआ है। इनमें से ६ को विगत दिसम्बर, १९३० के बलवे में सैनिक न्यायालय ने ६ मास का कारावास-दण्ड दिया था, परन्तु सरकार ने थोड़े दिनों में उन्हें बिना किसी शर्त के मुक्त कर दिया था।

इस राज्य-क्रान्ति से त्रस्त होकर राजपक्ष के बड़े-बड़े अमीर लोग स्पेन छोड़ कर भाग रहे हैं। १९वीं एप्रिल का समाचार है, कि स्पेन की सीमा पर सब रेलगाड़ियाँ इन्हीं लोगों से खचाखच भरी हुई थीं—इसके साथ ही वे देशभक्त लोग स्वदेश लौट रहे हैं, जो दमन-चक्र से बचने के लिए अन्य देशों में भाग गए थे।

१६वीं एप्रिल के समाचारों से पता चलता है कि उरुग्वे, मैग्ज़िको, फ़्रान्स, चाइल तथा पोर्चगीज़ की सरकारों ने स्पेन के इस नए प्रजातन्त्र शासन को स्वीकार कर लिया है; किन्तु ब्रिटेन ने अभी तक ऐसा नहीं किया है, इसका कारण उपनिवेशों से इस सम्बन्ध में परामर्श करना बतलाया जाता है।

स्पेन का भावी इतिहास वास्तव में बड़ा मनोरञ्जक होगा। स्पेन का यह प्रजातन्त्र भविष्य में किस मार्ग का अनुकरण करता है, इतिहास के विद्यार्थियों को बड़े मनोयोग से इसका अध्ययन करना चाहिए!

* * *

"ख़ुदा बख़्शे, बहुत सी ख़ूबियाँ थीं जाने वाले में"

जिस समय ये पंक्तियाँ लिखी जा रही हैं, उस समय या तो लॉर्ड इर्विन 'होम' जाने वाले जहाज़ में बैठे होंगे या बैठने जा रहे होंगे। गोरे पत्रों ने आपके शासन-काल की जो भूरि-भूरि प्रशंसा की है, वह तो ठीक ही है; किन्तु हमारे आश्चर्य की सीमा नहीं रहती, जब हम देखते हैं, कि कुछ नर्म दल के पत्रों ने भी इन गोरे पत्रों के स्वर में स्वर मिलाकर देशवासियों की आँखों में धूल झोंकने का निन्दनीय प्रयत्न किया है। इन नर्म दल के पत्रों ने लॉर्ड इर्विन के शासन-काल को 'रामराज्य' तक कह डालने की धृष्टता की है। उनका कहना है, कि "लॉर्ड इर्विन जैसा विचारशील, न्याय-प्रिय और भारत का शुभचिन्तक वायसराय न तो आज तक भारत में आया था और न निकट-भविष्य में आने की सम्भावना है।" हमारा भी यही कहना है, कि इस प्रकार का कोई वायसराय अब तक भारत में नहीं आया था, जिसने अपने मानवीय अधिकारों की भिक्षा माँगने के कारण ६०,००० भारतवासियों को जेल भेज दिया हो; वास्तव में ऐसा कोई वायसराय भारत में अब तक नहीं आया, जिसने ऑर्डिनेन्स पास करने में रूस के स्वनाम-धन्य शासक ज़ार के भी दाँत खट्टे कर दिए हों!! अब तक भारत में कोई ऐसा भी वायसराय नहीं आया, जिसकी छत्र-छाया में भारतीय पुलिस इस प्रकार खुल-खेली हो और जिसके शासन-काल में भारतीय बहू-बेटियों पर पुलिस द्वारा इतने नृशंस, कमीने और लज्जा-

जनक अत्याचार हुए हों और न ऐसा वायसराय ही आया, जिसके शासन-काल में भूतपूर्व राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू तथा बङ्गाल के श्री० सुभाषचन्द्र बोस जैसे नेताओं तक को पुलिस की लाठियों द्वारा घायल होना पड़ा हो ! ऐसा भी कोई वायसराय अब तक भारत में नहीं आया, जिसके शासन-काल में दिन-दहाड़े कानपुर के दङ्गे जैसा वीभत्स काण्ड अनुष्ठित हुआ हो, न कोई इतना कमज़ोर वायसराय ही अब तक भारत में आया, जो नौकरशाही के गुर्गों की अँगुलियों पर इतना अधिक नाचा हो, जितना कि लॉर्ड इर्विन ! हमारी तो निश्चित धारणा है कि चलते-चलाते यदि गाँधी-इर्विन समझौता सफल न हुआ होता तो निश्चय था, कि काले झण्डों द्वारा लॉर्ड इर्विन की विदाई की गई होती। और यह सर्वथा उचित ही होता, लॉर्ड इर्विन का शासन वास्तव में ऑर्डिनेन्सों का शासन था। जिस शासन में साधारण क़ानून को बालाए-ताक़ रख कर ऑर्डिनेन्सों एवं पशुबल द्वारा शासन किया गया हो, उसके प्रधान की इस प्रकार और इन खुले शब्दों में प्रशंसा करना, केवल उस श्रेणी के भारतीयों का ही काम हो सकता है, जिसका निर्माण लॉर्ड मैकाले की शिक्षा-प्रणाली ने किया हो और केवल भारतवासी ही इस अपमान को सहन भी कर सकते हैं।

जिन नर्म दल के पत्रों को लॉर्ड इर्विन में कोई और गुण नहीं मिला, उन्होंने उनकी धर्म-प्रियता और ईसाइयत की प्रशंसा की आड़ में ही अपने पत्र के कॉलम रङ्ग डाले हैं, हम यह स्वीकार करते हैं, कि लॉर्ड इर्विन की धर्म-प्रियता का हमने कभी अध्ययन नहीं किया है, किन्तु हम ऐसे पत्रों को केवल यह बतलाना चाहते हैं कि किसी देश का शासन गिर्जाघर में ईसाइयत का उपदेश देने के समान सरल कार्य नहीं है। यदि लॉर्ड इर्विन भारत में ईसाई-धर्म का प्रचार करने के लिए सब से बड़े पादड़ी बना दिए जाते, तो हमें उनसे कोई शिकायत नहीं थी; बल्कि हम भी उनकी धर्मप्रियता की प्रशंसा किए होते। किन्तु भारत-जैसे विशाल देश के प्रधान की हैसियत से लॉर्ड इर्विन हद दर्जे के कमज़ोर और अदूरदर्शी वायसराय सिद्ध हुए हैं। चलते-चलाते बम्बई की एक 'जी-हुज़ूर' मुसलमानों की सभा में व्याख्यान देते हुए जिस अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने साम्प्रदायिक मुसलमानों की पीठ ठोंकी है और उन्हें अपनी १४ शर्तों पर अड़े रहने की छिपी हुई सलाह दी है—यह आपके शासन का अन्तिम कलङ्क रहेगा, जिसे सारे समुद्र का जल भी नहीं धो सकता। रही समाचार-पत्रों की तारीफ़, उसके सम्बन्ध में हमें एक मनोरञ्जक घटना का स्मरण हो आया है। एक बार स्वर्गीय सर असोतोष मुकर्जी से उनके किसी मित्र ने पूछा, कि "बङ्गाल के जो अमुक नए गवर्नर आ रहे हैं, वे कैसे हैं? उनके सम्बन्ध में आपके क्या विचार हैं?" आपने हँसते हुए इस प्रश्न का जो उत्तर दिया था, वह आज भी हमारे कानों में गूँज रहा है। आपने कहा—"एक ग़ुलाम देशवासी की हैसियत से मेरी सम्मति का कोई मूल्य नहीं हो सकता। ग़ुलाम देशवासियों का कर्तव्य है, कि चाहे जैसा भी गवर्नर या वायसराय हो, उसके आने पर उसका अभिनन्दन करना और जाने पर उसे मानपत्र दे देना। अब तक तो ऐसा ही होता रहा है, फिर मेरी सम्मति पूछ कर आप क्या कीजिएगा?"

स्वर्गीय सर असोतोष की इन सारमयी पंक्तियों में ही इन समाचार-पत्रों द्वारा की गई प्रशंसाओं का रहस्य पाठकों को मिलेगा।

* * *

कानपुर के दङ्गे के समय पुलिस क्या कर रही थी ?

एक सैनिक अफ़सर का बयान

कानपुर का १८वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के दङ्गे की जाँच के लिए जो कमिटी नियुक्त हुई है, उसके सामने अपना बयान देते हुए श्री० द्वारकाप्रसादसिंह एडवोकेट ने कहा है, कि सरकारी अफ़सरों ने दङ्गे को रोकने का कोई उपाय नहीं किया। उन्होंने उदासीनता और असहानुभूति दिखलाई। पुलिस की आँखों के सामने लूट और हत्याएँ हुईं, और वह चुप रही। परिस्थिति की गम्भीरता के सम्बन्ध में बाबू विक्रमाजीतसिंह ने ज़िला-मैजिस्ट्रेट को टेलीफ़ोन से कई ख़बरें दीं, किन्तु कोई ख़्याल नहीं किया गया। गवाह ने आगे कहा कि मैं २७वीं मार्च को, कलेक्टर और कमिश्नर के साथ, उन-उन स्थानों में गया, जहाँ की परिस्थिति अत्यन्त भयावह थी, पर मीलों तक पुलिस के किसी सिपाही का नामो-निशान भी नहीं था। कॉङ्ग्रेस के स्वयंसेवक, दङ्गे को शान्त करने के लिए अपनी शक्ति भर चेष्टा करते थे। स्थानीय हिन्दू नेता भी इस ओर सयत्न थे। गवाह ने कहा कि मेरा अनुमान है, कि लगभग ७०० मनुष्य इस दङ्गे में मारे गए और १,००० घायल हुए हैं तथा ५० लाख की आर्थिक क्षति हुई है।

कानपुर, २०वीं अप्रैल—आज सेना-विभाग के कुछ अफ़सरों ने कमिटी के सामने अपना बयान दिया। कैप्टेन फ़िलगेट ने अपने बयान के सिलसिले में कहा—"सन्ध्या समय, ६ बज कर १० मिनट के लगभग हम मूलगञ्ज के चौराहे पर पहुँचे। चौराहे को पार कर हम लोगों ने देखा कि एक आदमी पड़ा तड़प रहा है और सब-इन्स्पेक्टर लगभग ४० पुलिस के जवानों के साथ खड़ा है।"

सभापति—वह (इन्स्पेक्टर) क्या कर रहा था ?

गवाह—कुछ नहीं।

* * *

सभापति—मि० रॉजर के पास हथियारबन्द पुलिस आपने देखा था ?

गवाह—उनके पास सवार और पैदल पुलिस, जो हथियारबन्द थे, बहुत बड़ी संख्या में थी। मेरा ख़्याल है, कि मेरे पास जितने आदमी थे, उससे कहीं अधिक उनके पास थे, किन्तु उन्होंने कहा कि मैं भीड़ को हटाने में असमर्थ हूँ।

सभापति—ये पुलिस के जवान क्या कर रहे थे ?

गवाह—कुछ नहीं।

गवाह ने फिर बतलाया, कि जब फ़ायर-ब्रिगेड वाले चौक में एक मस्जिद की आग बुझा रहे थे, उस समय क़रीब २०-३० मनुष्यों ने होस पाइप (hose pipe) नष्ट कर दिया। उस स्थान पर पुलिस के क़रीब ८ सवार इधर-उधर घूम रहे थे। उन्होंने दङ्गाइयों को हटाने के लिए कुछ नहीं किया। गवाह ने कहा, कि जिस समय दङ्गाई पाइप को तोड़-फाड़ रहे थे, उस समय २-३ सवार तो क़रीब २ गज़ के फ़ासले पर थे, और दूसरे इधर-उधर फिर रहे थे। यदि वे चाहते तो दङ्गाइयों को भगा सकते थे। किन्तु उन लोगों ने कुछ नहीं किया। मैंने आक्रमण कर उन्हें भगाया।

* * *

संयुक्त राज्य अमेरिका की चार समस्याएँ

(१२वें पृष्ठ का शेषांश)

में ये संयुक्त अमेरिका के अधीन हैं। राष्ट्रपति विल्सन के समय से पहिले संयुक्त अमेरिका की इन रियासतों के सम्बन्ध में यह नीति थी कि किसी रियासत की जो सरकार अन्तर्राष्ट्रीय कर्तव्य का पालन रखने की क्षमता का परिचय और विश्वास दिला सकती थी, उसी को स्वीकार कर लिया जाता था। अमेरिका को इस बात की चिन्ता नहीं थी कि किस रियासत में कैसी शासन-प्रणाली है और एक शासन को बदल कर दूसरा कैसे स्थापित किया गया है। राष्ट्रपति विल्सन ने अमेरिका की इस पुरातन प्रथा को बदला और दूसरी नीति ग्रहण की। उसने घोषणा की कि जब कभी मध्य अमेरिका की किसी रियासत में राज्यक्रान्ति होगी और नवीन सरकार को स्वीकार करने का प्रश्न उपस्थित होगा, तो हम देखेंगे कि नई सरकार प्रजासत्तात्मक है या नहीं और लोकमत उसके अनुकूल है या नहीं। विल्सन के पश्चात् अमेरिका ने इन रियासतों के सम्बन्ध में पुनः परम्परागत नीति का अनुसरण करना आरम्भ कर दिया। इन रियासतों में आन्तरिक और पारस्परिक झगड़े निरन्तर हुआ करते हैं। गवर्नमेण्ट का चाहे जब बदल जाना तो साधारण सी बात है, परन्तु शासन का स्वरूप बदल जाना भी कोई असाधारण घटना नहीं मानी जाती है। इन निरन्तर झगड़ों को देख कर इनका निवारण करने के लिए इन रियासतों ने सन् १९२३ में एक सभा करके यह निश्चय किया कि यदि किसी रियासत में गवर्नमेण्ट क्रान्ति द्वारा बदली गई, तो नवीन सरकार को अन्य रियासतें उसी समय स्वीकार करेंगी, जब यह प्रत्यक्ष हो जायगा कि लोकमत इस परिवर्तन के अनुकूल है। फिर भी यह शर्त होगी कि नई सरकार का राष्ट्रपति या अन्य उत्तरदायी मन्त्री आदि क्रान्तिकारी नेता या उसका कोई सम्बन्धी न हो। रियासतों के इस आपसी समझौते को कुछ समय बाद संयुक्त अमेरिका ने भी मान लिया और तब से अब तक अमेरिका की नीति इसके अनुकूल रहती आई है।

पिछले कुछ वर्षों में जब कभी मध्य अमेरिका में सरकार के विरुद्ध विद्रोह हुआ है, तो संयुक्त अमेरिका ने सरकार को तो शस्त्र बेचे हैं, परन्तु बलवाइयों को नहीं; और एक रियासत में जब एक क्रान्तिकारी सरकार को नष्ट करके स्वयं राष्ट्रपति के सिंहासन पर बैठ गया, तो संयुक्त अमेरिका की सरकार ने उसको स्वीकार नहीं किया। फल यह हुआ कि शासन-सञ्चालन के लिए उसको कहीं से ऋण नहीं मिला और शीघ्र ही सिंहासन छोड़ कर उसे रुख़सत होना पड़ा। अमेरिकन सरकार की इस नीति का अमेरिका का एक दल बड़ा विरोधी है। संसार न्यायालय (World Court) के भूतपूर्व प्रसिद्ध जज श्रीयुत मूर ने योर्क के बार-एसोसिएशन के सामने भाषण देते हुए इस नीति की घोर निन्दा की थी। गत ६ फ़रवरी को सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट श्रीयुत हेनरी एल० स्टिमसन ने इस विषय पर एक भाषण दिया था, जिसमें सरकारी नीति का समर्थन है किया गया था। मार्च मास में इस भाषण पर अमेरिका के पत्रों में ख़ूब टीकाएँ हुई थीं।

जल-सेना-निरोध के सम्बन्ध में अमेरिका, ग्रेट-ब्रिटेन और जापान में सन्धि तो गत दिसम्बर में ही हो गई थी, परन्तु इसका स्थायी होना फ़्रान्स और इटली में पारस्परिक समझौता हो जाने पर निर्भर माना गया था। गत फ़रवरी में यह प्रकट हो गया कि फ़्रान्स और इटली में शस्त्रनिरोध विषयक समझौता नहीं हो सकता। अतः तीन महाराष्ट्रों की सन्धि भी नहीं के बराबर है। आगामी मई में जेनेवा में देखें क्या गुल खिलते हैं ?

* * *

संयुक्त राज्य अमेरिका की चार समस्याएँ

[डॉ० मथुरालाल शर्मा, एम० ए०, डी-लिट्]

ब्रिटिश राज्य से टक्कर लेने वाली दूसरी शक्ति इस समय केवल अमेरिका ही है। परन्तु ब्रिटिश राज्य में भारतवर्ष, मिश्र तथा उपनिवेश-सम्बन्ध आदि जैसे जटिल प्रश्न खड़े हो रहे हैं, वैसे अमेरिका में नहीं हैं। कारण यह है कि अमेरिका केवल लक्ष्मी का उपासक है और ब्रिटेन लक्ष्मी और शक्ति दोनों का। अमेरिका के सामने इस समय चार समस्याएँ हैं, मद्य-निषेध, साम्यवाद-प्रचार, मध्य अमेरिका के साथ सम्बन्ध और शस्त्र-निरोध। गत दस वर्षों से अमेरिका ने मद्य पीना, पिलाना, बेचना, ख़रीदना या बनाना ग़ैर-क़ानूनी क़रार दे रक्खा है। जिस समय यह आज्ञा हुई तो मद्य-प्रिय समुदाय की ओर से घोर विरोध किया गया था और यूरोपीय देशों में इस आज्ञा की खिल्ली उड़ाई गई थी। यूरोप और अमेरिका ठण्ढे देश हैं, मद्य पीना वहाँ सर्वव्यापी प्रथा है। दावतों में, होटलों में, दैनिक भोजनों में और मित्र-मण्डलियों में मद्य का व्यवहार एक साधारण सी बात है। अतः मद्य का नितान्त निषेध करना वास्तव में अमेरिका-सरकार के लिए एक साहस का कार्य था। इस समय केवल चिकित्सालय तथा वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में ही मद्य का प्रयोग हो सकता है। इसके लिए भी कठोर नियम बने हुए हैं। पिछले दस वर्षों से मद्य-निषेध नियम संयुक्त अमेरिका में जारी हैं, परन्तु साथ ही विरोध भी निरन्तर चल रहा है। समय-समय पर इस विषय में छोटे-मोटे दङ्गे भी हो जाते हैं और विरोधी सभाएँ भी हुआ करती हैं। उधर सरकार भी नियम को सदैव जारी रखने पर तथा मद्य-व्यसन का उच्छेद करने पर तुली हुई है। फिर भी अमेरिका-सरकार जनसत्तात्मक (रिपब्लिक) सरकार है। जिस क़ानून का भारी विरोध हो, वह वहाँ अधिक समय तक नहीं टिक सकता। इसलिए वास्तविक लोकमत जानने के लिए गत वर्ष सरकार ने श्री० जॉर्ज विकरशेम की अध्यक्षता में एक कमीशन बिठाया था। कई मास तक सहस्रों मनुष्यों के बयान लेकर तथा अन्य आवश्यक जाँच-पड़ताल करके इस कमीशन ने गत २० जनवरी को अपनी रिपोर्ट पेश की है। फ़रवरी और मार्च में अमेरिका के पत्रों में इसी रिपोर्ट की धूम थी और जनता में इसी की चर्चा। अमेरिका में ऐसी भी अफ़वाह है कि राष्ट्रपति ने श्रीयुत विकरशेम को एकान्त में बुला कर कह दिया था कि रिपोर्ट निषेध के अनुकूल हो। यह रिपोर्ट वास्तव में न निषेध के अनुकूल है और न प्रतिकूल। बहुत कम ऐसे विषय हैं, जिन पर सब सदस्य एकमत हों और वह भी कुछ शर्तों के साथ, वरना प्रत्येक बात पर किसी न किसी सदस्य का मतभेद अवश्य है।

कमीशन ने निषेध-क़ानून के दो प्रधान प्रश्नों पर अपनी सम्मति प्रकट की है। वे ये हैं कि लोकमत को निषेधानुकूल बनाया जावे या दण्ड-साधनों को दृढ़ और सफल बनाया जावे। प्रथम प्रश्न का उत्तर देते हुए कमीशन ने लिखा है कि "यदि दण्ड-साधनों का दस वर्ष तक पर्याप्त उपयोग करने पर भी यह मालूम हो कि लोकमत किसी क़ानून के अनुकूल नहीं हुआ है, क़ानून-भङ्ग की लोक-प्रवृत्ति घटती नहीं, बल्कि बढ़ती जाती है, असंख्य लोग सज़ा पाते हैं, परन्तु जनता पर निरोधात्मक प्रभाव नहीं पड़ता, तो इससे यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि क़ानून में कोई त्रुटि अवश्य है।" दूसरे प्रश्न के कमीशन ने दो उत्तर दिए हैं—"दण्ड-साधनों को अधिक दृढ़ और कठोर करने से मद्य-निषेध में पूर्ण सफलता होगी या नहीं, इस विषय में कोई निश्चयात्मक सम्मति नहीं दी जा सकती, क्योंकि इस विषय में अभी अनुभव नहीं किया गया है, अतः सब कल्पना ही कल्पना है। दूसरी बात यह कि निषेध-कर्मचारियों को घूस ख़ूब मिल सकता है। घूस की पुष्कलता को देखते हुए इन लोगों का वेतन बढ़ाने से भी कुछ काम नहीं चल सकता। मद्य-प्रिय सम्पन्न लोग अपने व्यसन को शान्ति करने के लिए कर्मचारियों को मनमानी रिश्वत दे सकते हैं।"

मद्य-निषेध कमीशन के प्रधान श्री० जॉर्ज डब्ल्यु० विकरशेम

कमीशन की सम्मति है कि निषेध-कार्य संयुक्त सरकार (फ़ेडरल गवर्नमेण्ट) के हाथ में रहना चाहिए, प्रान्तीय सरकारों के हाथ में नहीं। सामाजिक कार्यकर्ताओं ने कमीशन के सामने बयान देते हुए कहा है कि मद्य-निषेध के कारण सम्पत्ति का दुरुपयोग घट गया है और रहन-सहन का ढङ्ग अधिक उन्नत हो गया है। अन्त में कमीशन ने कई सिफ़ारिशें की हैं, जिनमें मुख्य ये हैं :—

(१) यह कमीशन मद्य की दुकानों को फ़िर से जायज़ कर देने का विरोधी है।

(२) यह कमीशन संयुक्त सरकार या प्रान्तिक सरकार द्वारा मद्य-वाणिज्य का भी विरोध करता है।

(३) इस कमीशन की सम्मति में हलकी शराबों के सम्बन्ध में भी क़ानून नरम नहीं होना चाहिए।

(४) इस कमीशन की सम्मति है कि इस समय निषेध के लिए न तो काफ़ी कड़ा क़ानून है और न जो है उसका पालन ही होता है।

कमीशन के ग्यारह मेम्बरों में से केवल चार इस बात पर एकमत हैं कि नितान्त निषेध व्यवहारात्मक है। शेष सात मेम्बर क़ानून में कुछ हेर-फेर करने के पक्ष में हैं। परन्तु सिद्धान्ततः सब कहते हैं कि मद्य-निषेध राष्ट्र के लिए हितकर योजना है।

मई सन् १९३० में अमेरिकन सरकार ने साम्यवादियों के विषय में जाँच करने के लिए भी श्रीयुत फ़िश की अध्यक्षता में एक कमीशन नियत किया था। इस कमीशन ने यह तो जाँच करने से पहिले ही मान लिया था कि साम्यवाद ख़तरनाक चीज़ है। गत २२ जनवरी को आठ मास की निरन्तर तथा सूक्ष्म जाँच के पश्चात् फ़िश कमीशन ने अपनी रिपोर्ट पेश की है, जिसमें बतलाया है कि अमेरिका में इस समय लगभग पाँच लाख साम्यवादी निवास करते हैं। ये लोग मास्को-सरकार के एजेण्ट हैं और राज्यक्रान्ति करवाना इनका उद्देश्य है। कमीशन ने सिफ़ारिश की है कि साम्यवाद के उत्पात से बचने के लिए ऐसे नियमों का निर्माण होना चाहिए, जिनके अनुकूल साम्यवादियों को अमेरिका में से निकाला जा सके, जो अब आना चाहते हैं उनको आने से रोका जा सके, और जो आ गए हैं उनको अमेरिका का नागरिक न माना जा सके। कमीशन की यह भी सम्मति है कि साम्यवादी साहित्य को ज़ब्त किया जावे और साम्यवादी दल का दमन किया जावे। कमीशन ने यह भी राय दी है कि अमेरिकन सरकार रूस में अपने एजेण्ट इस बात की जाँच करने को भेजे कि वहाँ कौन-कौन सी चीज़ें लोगों से ज़बरदस्ती मज़दूरी करवा कर तैयार करवाई जाती हैं। जो चीज़ें इस प्रकार तैयार करवाई जाती हों, उनका आयात या तो अमेरिका में बन्द कर दिया जावे या उन पर भारी कर लगाया जावे। इसके अतिरिक्त रूस के मेंगनीज़ और लकड़ी के पल्प पर तो गहरा कर लगा ही देना चाहिए। इन चीज़ों पर कर लगाने के लिए जब बिल पेश किए गए, तो उदार मेम्बरों ने उनका ज़ोरदार विरोध किया और बिल पास नहीं हो सके। परन्तु गत फ़रवरी मास में सरकार ने अपने एजेण्टों की रिपोर्ट पर विश्वास करके श्वेत-सागर (रूस के उत्तर में) के आस-पास के चार ज़िलों से आने वाली लकड़ी पर कर लगा ही दिया। फ़िश कमीशन की जाँच के फल की रूस में उत्सुकता से प्रतीक्षा की जा रही थी। जब रिपोर्ट प्रकाशित हुई तो रूस के पत्रों ने इसकी बड़ी तीव्र आलोचना की। एक पत्र ने लिखा था कि एजेण्टों द्वारा जाँच का आयोजन आकाश में पुष्प-चयन के समान है। दूसरे ने लिखा था कि साम्राज्यवादी और वैभवप्रिय अमेरिका को यथाश्रम फलदायक साम्यवाद भला कब रुच सकता है।

मध्य अमेरिका व्यापारिक और सैनिक दृष्टि से बड़े महत्व का स्थान है। जब से पनामा की नहर बनी है, तब से तो इसका महत्व और भी बढ़ गया है। मध्य अमेरिका में उत्तरी अमेरिका का दक्षिणी भाग, दक्षिणी अमेरिका का उत्तरी भाग और अनेक टापू सम्मिलित हैं, जो कई छोटी-छोटी स्वतन्त्र रियासतों में विभक्त हैं। अपने आन्तरिक प्रबन्ध में तथा अपनी शासन-प्रणाली बदलने तक में ये रियासतें गत एक शताब्दी से स्वतन्त्र हैं, पर अन्तर्राष्ट्रीय मामलों

(शेष मैटर ११वें पृष्ठ के तीसरे कॉलम में देखिए)

प्रतिज्ञा

[श्री० साधुशरण जी]

चरख़े को मेज़ पर रख कर विद्या कॉलेज चली गई, मानो अपने घर में असहयोग-आन्दोलन की व्याप्ति सूचित करने के लिए एक ध्वजा फहरा गई। प्रिन्सिपल साहब कॉलेज से लौटे तो सर्व-प्रथम उनकी दृष्टि चरख़े ही पर पड़ी। देह में आग-सी लग गई। उन्होंने पत्नी को पुकार कर पूछा—यह चरख़ा कैसा है?

"विद्या ले आई है।"

"क्यों, उसे चरख़े की क्या ज़रूरत थी? क्या मुझे बदनाम कराना चाहती है?"

"मैंने तो बहुत समझाया था; पर न मानी। आज कह कर गई है कि कॉलेज से अपना सम्बन्ध तोड़ कर आवेगी।"

इसी समय विद्या भी कॉलेज से आ पहुँची। प्रिन्सिपल साहब ने आँखें लाल करके पूछा—क्यों विद्या, तुम्हें चरख़ा लाने की क्या ज़रूरत थी?

"कातूँगी; अब जननी-जन्मभूमि की कुछ सेवा करूँगी। इसीलिए आज मैंने कॉलेज से भी अपना सम्बन्ध तोड़ दिया है।"—यह कह कर विद्या पिता के सामने से टल गई।

* * *

पत्नी को अपने विचारों और निश्चय में सहमत पाकर प्रिन्सिपल साहब ने विद्या को बुलाया और कहा—विद्या! हम लोगों ने निश्चय किया है कि अब तुम्हारा विवाह कर दिया जाय। तुम उन लड़कियों में नहीं हो, जो अशिक्षा के अन्धकार में पड़ी हैं। तुमने कॉलेज की शिक्षा पाई है और इस योग्य हो कि अपना हिताहित सोच सको; इसलिए हम लोग तुम्हारी भी राय ले लेना उचित समझते हैं।

"अभी इसकी क्या ज़रूरत है?"

"क्यों? समाज निन्दा करेगा। जब तक तुम कॉलेज में थीं, कहने का मौक़ा था, अभी पढ़ रही है। अब क्या उत्तर दिया जायगा?"

"सब बातों के लिए अवसर होता है। इस समय देश में स्वतन्त्रता का संग्राम छिड़ा है, हमारे लाखों भाई जूझ रहे हैं, इस समय क्या हमें अपने घर में उत्सव मनाना चाहिए? यदि पड़ोसी के घर में भी आग लगती है, तो हम चैन से नहीं बैठते; फिर यह तो सारे देश की आग है; अपने घर की आग है। अभी मैं देश की सेवा करना चाहती हूँ।"

"स्वतन्त्रता-संग्राम में जूझते हुए भी किसी का कोई काम नहीं रुकता। देश-सेवा तो तुम विवाहित होकर भी कर सकती हो। उस समय तुम्हें इस बात की और भी सुविधा रहेगी।"

विद्या आँखें नीची किए मौन खड़ी रही। फिर धीरे से कहा—"इस सम्बन्ध के मेरे विचार आप लोग विलो से पूछ सकते हैं।" प्रिन्सिपल साहब उत्सुक होकर पत्नी का मुख देखने लगे। विद्या चली गई।

२

असहयोग आन्दोलन की आँधी हाहाकार करके बह रही थी। आज युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों की एक महती सभा थी और उन्होंने आन्दोलन में भाग लेने का प्रस्ताव पास कर दिया था। विलास ने भी अपने सहपाठियों का साथ दिया था; पर उनका चित्त अशान्त था। वह किंकर्तव्य-विमूढ़ से हो रहे थे। सभा से लौटने पर 'किस मार्ग को ग्रहण करें' इसी प्रश्न पर विचार करने के लिए वह घण्टों से बैठे थे; पर कुछ निश्चय नहीं कर सकते थे। उद्विग्नता प्रति पल बढ़ती जा रही थी। अचानक टेलीफ़ोन की घण्टी बजी, विलास दौड़ कर फ़ोन के पास गए—विद्या थी। विलास की प्रसन्नता की सीमा ही न रही। मानो किसी जादू के असर ने पल मात्र में सारी चिन्ताओं को दूर कर दिया। विद्या ने पूछा—क्या आज छः बजे शाम को आप मुझसे पार्क में मिल सकते हैं?

जिसके क्षणिक दर्शन के लिए विलास तड़पते रहते थे, जिसका एक शब्द उनके हृदय में आह्लाद की स्रोतस्विनी बहा देता था, उसीके निमन्त्रण को वे कब अस्वीकृत कर सकते थे? उन्होंने अपनी स्वीकृति दे दी।

इस समय विलास के हृदय में हर्ष का समुद्र उमड़ा पड़ता था। वह अभी से चलने की तैयारियाँ करने लगे। मख़मली किनारे की मलमल की वह धोती, जिसे मैञ्चेस्टर की मिलों ने अपनी सारी कला ख़र्च करके बनाई थी, इटली का फ़्लेट कैप, चमचमाती हुई रेशमी कमीज़, पेरिस का लाजवाब रूमाल, रेशमी चादर, डासन के जूते और क़ीमती मोज़े, वेसलिन, पाउडर, इत्र आदि से उन्होंने ख़ूब सज कर शृङ्गार किया और नियत समय से बहुत पहले ही घर से चल पड़े।

विलास का अनुमान था, उनके पहुँचने के बहुत देर बाद विद्या आवेगी, पर दोनों ने दो फाटकों से एक ही साथ पार्क में प्रवेश किया। विलास का हृदय उछल पड़ा—उनका खोया हुआ हृदय-रत्न मिल गया। विद्या सफ़ेद खद्दर की साड़ी पहने थी; खादी ही के कुरते, अपने हाथ के बुने मोज़े और देशी केनवेस के जूते। विलास को आश्चर्य हुआ। उन्होंने पूछा—"यह क्या विद्या?" विद्या ने उँगली उठाते हुए कहा—आपके शरीर पर अब तक विदेशी वस्त्र! छिः! जल्द जलाओ।" विलास ने केवल मुस्करा दिया। दोनों एकान्त में एक बेञ्च पर बैठ कर वार्तालाप करने लगे। विलास ने पूछा—"आज कैसे तुमने मुझे याद किया विद्या?"

"बस इसीलिए कि विदेशी वस्त्रों को जलाइए, कॉलेज छोड़िए और देश-सेवा में मेरी सहायता कीजिए।

"क्या तुमने कॉलेज छोड़ दिया?"

"हाँ।"

"क्या प्रिन्सिपल साहब ने कुछ नहीं कहा?"

"कहेंगे क्या? कुछ और ठहरिए, देखिएगा, वह भी इस्तीफ़ा देंगे।"

विलास मौन हो गए। विद्या आन्दोलन में भाग लेने के लिए उन पर ज़ोर डालने लगी। विलास ने मुस्करा कर कहा—विद्या! अभी हम लोगों ने संसार का सुख ही क्या देखा है?

"छिः! ऐसे समय में जब भारतवासी घोर सङ्कट में फँसे हैं; बाल, वृद्ध, युवा, सभी अपने सर्वस्व का निछावर करके देश के उद्धार में लगे हैं, उस समय आपको अपने सुख की चिन्ता लगी है?"

"विद्या! तुम मेरे हृदय की वासनाओं को अच्छी तरह जानती हो!"

"हाँ, जानती हूँ; परन्तु उनकी पूर्ति का यह अवसर नहीं। जब तक हमारी मातृ-भूमि दुखी है; राष्ट्रीय अधिकारों से वञ्चित रहने के कारण हमारी उन्नति का मार्ग रुका हुआ है; दीनता के कारण हमारे असंख्य देश-भाई भूखों तड़प-तड़प कर प्राण दे रहे हैं, तब तक हमारे लिए प्रेम का सुखोपभोग करना, विलास-विहार में लिप्त होना तथा किसी तरह के राग-रङ्ग और उत्सव आदि में सम्मिलित होना उचित नहीं। जब देश ही सुखी और स्वतन्त्र नहीं, तब हम सुख की कामना रख कर भी सुखी कैसे बन सकते हैं? क्या आपको मालूम नहीं, राष्ट्र की स्वतन्त्रता ही समाज का जीवन है। पराधीन राष्ट्र का समाज कभी चिरकाल तक जीवित नहीं रह सकता। और राष्ट्रीय आन्दोलन ही युवक-युवतियों के विनोद-विलास की सामग्री है। जो युवक-युवती अपनी इस स्वर्गीय सामग्री का, अतुल रूपराशि का हँस-हँस कर उपभोग नहीं करते, क्या उनकी जीवन-यात्रा सार्थक कही जा सकती है?"

विलास मौन थे। विद्या पूर्ण आवेश के साथ अपना वक्तव्य उन्हें सुना रही थी। उसकी वाणी में मादकता थी, मोहिनी थी, स्वर में जादू का सा आकर्षण और शब्दों में बिजली थी। कहते-कहते जब आवेश से उसका स्वर काँपने लगता, मुख-मण्डल रक्त-वर्ण हो जाता, तब विलास के सम्मुख मानो प्यासी रणचण्डी का जीता-जागता चित्र खिंच जाता था। वह तो पहले से ही विद्या के एक शब्द पर अपने सर्वस्व का निछावर करने को तैयार थे; वह तुरन्त ही विद्या के विचारों से सहमत हो गए।

विद्या ने प्रेम से उनका हाथ पकड़ कर कहा—यों नहीं! यदि चलना है, तो पहिले प्रतिज्ञा कीजिए कि आगे पाँव बढ़ा कर फिर पीछे नहीं देंगे, चाहे मातृ-भूमि की स्वतन्त्रता के लिए हम लोग लड़ते-लड़ते मिट क्यों न जायँ।

विलास की भुजाएँ फड़कने लगीं। वह तमक कर खड़े हो गए, विद्या का हाथ पकड़ कर उसे भी खड़ा कर लिया और दोनों ने अपने हाथ ऊपर उठा कर एक स्वर में प्रतिज्ञा की—"आज से हम लोग अपने को जननी-जन्मभूमि के चरणों में अर्पित करते हैं और प्रतिज्ञा करते हैं कि जब तक जन्मभूमि स्वतन्त्र न होगी, तब तक हम विलास-विहार की किसी भी वस्तु का स्पर्श तथा किसी

भी सुख की कामना नहीं करेंगे, चाहे हम लोग अपने उद्योग में मिट ही क्यों न जायँ।"

दोनों के मुख-मण्डल रक्तवर्ण हो गए थे। क्षितिज पर फैली हुई चन्द्रमा की प्रथम किरणें मानो हँस-हँस कर इन्हें आशीर्वाद दे रही थीं कि तुम्हारी प्रतिज्ञाएँ पूरी हों; वृक्षों पर कोयल मानो गा रही थी, भारत स्वतन्त्र हो, उसका सिर ऊँचा हो।

३

विद्या के साथ अपना विवाह निश्चित होने की बात सुन कर विलास के आश्चर्य की सीमा ही नहीं थी। वह लाख सोच कर भी इस रहस्य का पता नहीं लगा पाते थे कि दो ही दिन पहले विद्या ने उनके साथ कैसी प्रतिज्ञा की थी और आज यह क्या होने जा रहा है। वे यह भी सुन चुके थे कि विन्नो की सम्मति से उन्हीं के साथ विद्या का विवाह निश्चित हुआ है; और साथ ही यह भी जानते थे कि विन्नो और विद्या में हृदय-हृदय का प्रेम-सम्बन्ध है। अतः इस पर उन्हें तनिक भी विश्वास न होता था कि विद्या की इच्छा के बिना विन्नो अपनी ऐसी सम्मति प्रकट करेगी। वह निरन्तर सोचते थे—"क्या विद्या दो ही दिनों में अपनी प्रतिज्ञा भूल गई? क्या विवाहित होकर विलास-विहार में लिप्त होने के लिए ही उसने वैसी प्रतिज्ञा की थी? क्या वह मेरी परीक्षा थी? यदि हाँ, तो ऐसी उलटी प्रतिज्ञा क्यों? प्रतिज्ञा-बद्ध होकर अपने देश का उद्धार किए बिना अब भला हम अपने विवाह का उत्सव कैसे मना सकते हैं?" फिर सोचते—"जान पड़ता है, प्रिन्सिपल साहब ने विद्या को आन्दोलन में भाग नहीं लेने दिया है। उस पर बेजा दबाव डाला गया है, इसीसे उसे विवश होकर अपनी प्रतिज्ञा भूल जानी पड़ी है।" वह चाहते थे कि एक बार विद्या से मिल कर इस बात की जाँच करें; परन्तु उसके साथ विवाह-सम्बन्ध निश्चित हो जाने के कारण ऐसा करते बहुत लज्जा होती थी। विवाह का दिन भी बहुत समीप था। विलास का चित्त बहुत चिन्तित था।

* * *

आज विद्या और विलास के विवाह की तिथि है। बड़ी तैयारियाँ हुई हैं। बड़ी धूमधाम के साथ बारात आई है और विन्नो के मकान में ही ठहराई गई है। चारों ओर नाच-रङ्ग, गाना-बजाना—चहल-पहल मची है; परन्तु विलास को इस उत्सव में आनन्द कहाँ? किसी भावी अनिष्ट की आशङ्का से उनका हृदय काँप रहा है।

दस बजे विवाह का मुहूर्त था; अभी आठ बजे थे। बाहर से आकर एक चपरासी ने विलास के हाथ में एक लिफ़ाफ़ा दिया। विलास ने उसे खोल कर पढ़ा—"क्या पाँच मिनट के लिए आप मेरे पाठनालय में आने की कृपा करेंगे? धृष्टता और अनौचित्य के लिए क्षमा।
—विन्नो।"

पत्र पढ़ कर विलास ने चपरासी से स्वीकृति का सङ्केत कर दिया। वह चला गया। इसके बाद वे भी धीरे से उठ कर विन्नो के पाठनालय में पहुँचे। वहाँ अकेली विद्या खड़ी थी। चार आँखें होते दोनों की दृष्टि नीचे हो गईं। कई मिनट बाद विलास ने पूछा—विन्नो कहाँ है?

"विन्नो ने नहीं, मैंने ही बुलाया है।"

"क्यों?"

"इसलिए कि मैं एक बार और तुम्हें 'विलास' कह लूँ। अब कुछ ही देर बाद तुम मेरे पति-परमेश्वर हो जाओगे। अब तक मैं अकेली थी, अब मुझे एक चिर-सहचर मिल जायगा; अब तक मेरा जीवन निर्गन्ध पुष्प के समान था, अब सुगन्धि से भर जायगा।"

"विद्या! तुम्हारी इस कार्रवाई पर मुझे बहुत आश्चर्य है?"

"मैं जानती थी कि तुम्हें आश्चर्य होगा। इसीलिए मैंने तुम्हें कष्ट दिया है। लेकिन आश्चर्य की कोई बात नहीं। मेरा और तुम्हारा विवाह सिन्दूर से नहीं होगा, वरन् रक्त की बूँदों से समझना, और उसका उद्देश्य सुख-पूर्वक गृहस्थी का सञ्चालन करना न होगा, वरन् असंख्य विपत्तियाँ झेलते हुए जननी-जन्मभूमि के सङ्कटों को दूर करना। अब तक तुम पराए थे, अब मेरे अपने हो। उस तरह देश-सेवा करने में हमारे मार्ग में अनेक बाधाएँ थीं, अब पूर्ण स्वतन्त्रता है। तब यदि तुम मेरा साथ न देते, तो मुझे निराश होकर बैठ रहना पड़ता; अब तुम पर मेरा अधिकार है, तुम्हें अपना कहने का दावा कर सकती हूँ, और यदि पीछे हटोगे, तो तुम्हें ज़बर्दस्ती खींच कर अपने साथ ले जा सकती हूँ। विलास!—बस, आख़िरी बार 'विलास'—मैंने अपने को जननी-जन्मभूमि के चरणों पर अर्पित कर दिया है। अतः मेरा पाणिग्रहण करने के पहले एक बार सोच लेना कि मुझसे तुम्हें किसी प्रकार का कोई सुख न मिलेगा। यदि तुम्हें सुख की कामना हो, आमोद-प्रमोद प्रिय हो, अपने प्राण की ममता हो, तुमने मातृ-भूमि के प्रेम के लिए नहीं, वरन् मेरे प्रेम के लिए वैसी प्रतिज्ञा की हो, तो मेरा जीवन नष्ट न करना। यदि मेरे मार्ग में बाधाएँ आवेंगी, मातृ-भूमि की सेवाओं से मैं वञ्चित की जाऊँगी, तो—पहले बतलाए देती हूँ—अपने रक्त से मातृ-भूमि के चरणों को धोकर अपना ऋण चुका दूँगी।"

प्रसन्नता से विलास का हृदय फूल उठा। उनके हाथ अनायास विद्या के आगे जुड़ गए। वह बोल उठे—"विद्या! मैं अपने प्राण त्याग दूँगा, पर मिलते हुए तुम्हारे जैसे स्त्री-रत्न को नहीं त्याग सकता। देवी! तुम धन्य हो।"

विद्या ने मुस्करा कर विलास के दोनों हाथ पकड़ लिए और उन्हें अलग करते हुए कहा—अच्छा जाओ, अपनी प्रतिज्ञा न भूलना।

विलास चले गए।

४

असहयोग आन्दोलन में भाग लेकर विलास ने देश में धूम मचा दी थी। उन्होंने अपनी देश-सेवा के लिए विशेषतः देहात को पसन्द किया था, और विद्या के साथ गाँव-गाँव तथा मुहल्ले-मुहल्ले में घूम कर सभाएँ करते, व्याख्यान देते, जनता को वर्तमान शासन की बुराइयाँ समझाते, स्वराज्य के लाभों को बतलाते तथा चरख़े, खद्दर और स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार की महत्ता समझाते थे। उन्होंने अपने गाँव को अपने कार्यक्षेत्र का केन्द्र बनाया था और वहीं चरख़े और करघे की शिक्षा देने के लिए एक स्कूल खोल रक्खा था। दूर-दूर के विद्यार्थी उनके स्कूल में उस कला की शिक्षा पाते थे। वह प्रति दिन सैकड़ों मज़दूरों को अपने पास से मज़दूरी देकर अपने यहाँ चरख़ा कतवाते; ग़रीबों को मुफ़्त चरख़ा और रुई देते, भूखों को भोजन और जिनके पास वस्त्र न होता, उन्हें पवित्र खद्दर पहनाते थे। वह स्वयं विद्या के काते हुए सूतों से अपने हाथों खद्दर बुन कर उसी की धोती और उसी के विद्या से सिला कर कुरते और टोपी पहनते थे। विद्या के आनन्द की सीमा ही नहीं थी। वह जैसा चाहती थी, वैसे ही उसके पति मिले थे। दोनों का जीवन बहुत पवित्र और सुखी था—साधारण भोजन, सीधा-सादा आच्छादन और बहुत सरल रहन-सहन। जनता भी विलास को बहुत प्यार करने लगी थी। जिस सभा में वह पहुँच जाते, हज़ारों की संख्या एकत्र हो जाती थी। एक बार हाथ उठा देते, तो सभी उनके लिए अपने प्राण देने को तैयार हो जाते।

परन्तु अधिकारियों से विलास का देश-प्रेम न देखा गया—आन्दोलन की स्थिति भयङ्कर हो गई थी। विद्यार्थी सरकारी स्कूल और कॉलेज छोड़ कर धड़ाधड़ राष्ट्रीय पाठशालों में नाम लिखा रहे थे। अङ्गरेज़ी सरकार के कर्मचारी इस्तीफ़ा दे-देकर बड़ी उत्सुकता से आन्दोलन में भाग ले रहे थे। जिधर देखिए, खद्दर का प्रचार, मादक द्रव्यों का तिरस्कार और विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार जारी था। सरकार की ओर से धर-पकड़ का बाज़ार भी ख़ूब गर्म था। विद्या की निर्भीक आलोचनाओं एवं निरङ्कुश निन्दाओं से सरकार जल-सी रही थी। निदान एक दिन विलास को अङ्गरेज़ी सरकार के जेल की मेहमानदारी स्वीकार करनी पड़ी। चलते समय उन्होंने विद्या से कहा—"विद्या! अपनी प्रतिज्ञा न भूलना।" इधर विलास पुलिस के साथ जेल जा रहे थे और उधर सान्ध्य-सूर्य की सुनहली किरणें काँपती-रोती क्षितिज में विलीन हो रही थीं। मानो संसार को उपदेश दे रही थीं, कि स्वेच्छाचारी शासन-तन्त्र भी कभी इसी तरह रोते-रोते प्रकृति की गोद में अन्तर्हित हो जाता है।

५

जेल की यन्त्रणा ने विलास के हृदय में बड़ा परिवर्तन कर दिया था। अब उन्हें बार-बार विद्या पर क्रोध आता—कैसी धोखेबाज़ और कैसी छलनी है, कितनी झूठी और कैसी निर्दयी है! तनिक जेल में मुझे देखने भी न आई! मीठी-मीठी बातें बना कर मुझे सरकार का विरोधी बना दिया; धोखा देकर मुझे इस बला में फँसा दिया और आप निश्चिन्त हो गई! मुँह से सहानुभूति का एक शब्द भी न निकला! जेल से निकलूँ तब उन्हें इस धोखे का मज़ा चखाऊँ।

इसी तरह के भिन्न-भिन्न मनसूबे बाँधते तथा विद्या पर क्रुद्ध होते एक दिन विलास जेल से निकले, मानो किसी ऐसे अगम लोक से, जहाँ जन-समुदाय के कोलाहल का नाम नहीं, चले आ रहे हों—बाहर का कुछ ज्ञान नहीं; संसार में क्या हो रहा है और अब तक क्या हुआ है, कुछ पता नहीं; बस केवल विद्या पर क्रोध आता था।

विलास को आशा थी कि उनके जेल से निकलने पर कुछ लोग उनका स्वागत करने आवेंगे; परन्तु बाहर निकल कर उन्होंने देखा, कोई भी नहीं; केवल वायु सन-सन करती हुई उनके गाँव की ओर मानो उनके साथियों को धिक्कारने जा रही थी—तुम लोग ऐसे हो कि अपने राजनैतिक क़ैदियों से इतनी भी सहानुभूति नहीं रखते कि उनके जेल से निकलने पर उनके स्वागत के लिए दो आदमी भेज देते। जो तुम्हारे लिए यन्त्रणाएँ भोगता है, उसके प्रति समवेदना के दो शब्द भी तुम्हारे मुँह से नहीं निकलते।

क्रोध से जलते हुए विलास जल्दी-जल्दी घर की ओर चले जा रहे थे। उनके हृदय में भिन्न-भिन्न भाव उठ रहे थे—कभी त्योरियाँ चढ़ जातीं, कभी आँखें लाल हो जातीं और कभी दाँत पीसने लगते थे। सहसा सामने से विद्या हाँफती-दौड़ती, पाँव-पियादे आती दिखाई पड़ी। विलास आपे से बाहर हो गए। विद्या दूर ही से आँसू बहाती दौड़ कर विलास से लिपट कर रोने लगी। विलास के शरीर में मानो किसी ने जलते हुए लोहे का तख़्ता सटा दिया। उन्होंने विद्या को ज़ोरों का एक ऐसा धक्का दिया कि वह धम् से दूर जा गिरी। विद्या मूर्च्छित थी, लेकिन विलास ने उसकी कुछ परवा न की। वह 'दुष्टा' 'छलनी' आदि शब्दों से उसकी भर्त्सना करते घर की ओर दौड़ चले।

घर पहुँच कर विलास ने देखा, उनके स्वागत के लिए हज़ारों मनुष्य आश्रम में एकत्रित थे। जेल तक चलने की तैयारियाँ हो रही थीं, देख कर कोई आँसू बहाने लगा, कोई उन्हें कलेजे से लगाने दौड़ा, कोई पाँव पकड़ने और कोई उनसे लिपट ही गया। विलास का क्रोध ठण्डा पड़ गया। उन्होंने बिना कुछ विश्राम

किए ही अपने आश्रम की जाँच की, उनके आश्चर्य की सीमा ही न थी। जिन कामों को उन्होंने प्रारम्भिक अवस्था में छोड़ा था, वे प्रौढ़ावस्था को प्राप्त थे। हर काम में पूरी उन्नति हो गई थी—चरख़े और करघे की संख्या कई गुनी बढ़ गई थी; जिन लोगों को वह असहयोग का विरोधी देख गए थे, उन्हें खद्दरधारी असहयोगी पाया। उन्होंने जब इस उन्नति का कारण पूछा, तब सभी विद्या के गुण गाने लगे। जिसके मुख सुनिए, विद्या का देश-प्रेम, देशी वस्तुओं के प्रचार की लगन, परिश्रम, अध्यवसाय, दृढ़ता, कार्यपटुता, धैर्य और अविश्रान्त क्रियाशीलता का गान! विलास के हृदय में वेदना हो उठी; परन्तु उनके विचार तो बदल गए थे।

६

विद्या को किसी और बात की चिन्ता न थी। विलास ने अपनी प्रतिज्ञा भुला दी थी। कॉङ्ग्रेस में वा कॉङ्ग्रेस की सार्वजनिक सभाओं में वे न जाते थे। अपने आश्रम की देख-भाल भी न करते थे। वह फिर पहले के विलासी बन गए थे। इन बातों की विद्या को कुछ भी चिन्ता न थी। परन्तु जब वह जनता में उनकी निन्दा सुनती, तब उसका हृदय तड़प कर रह जाता था। "विलास को तो देखो, कैसा धूर्त निकला, कितना कायर! कितना धूम मचाए हुए था! एक ही बार की जेलयात्रा से दुम दबा कर बैठा रहा।"—ये बातें विद्या के हृदय में हज़ारों बिच्छुओं के सम्मिलित डङ्क सी लगती थीं। वह अच्छी तरह जानती थी कि उसकी देश-सेवाओं को देख कर विलास जलते रहते हैं, उसका कॉङ्ग्रेस आदि में जाना, आश्रम के कामों को बढ़ाने में दिन-रात अथक परिश्रम करना, उन्हें बहुत बुरा लगता है; परन्तु उसे इन बातों की कुछ भी परवा न थी। वह निरन्तर अपने उद्योग में लगी थी। उसने विलास को अनेक बार समझाया था, पर कोरा उत्तर पाने के कारण उसे मुँह की खानी पड़ी थी। वह समाज में पति की प्रतिष्ठा और कीर्ति बनाए रखने के लिए बहुत प्रयत्न भी करती थी—"भाइयो और बहिनो! मैं जो कुछ कर पाती हूँ, केवल अपने पतिदेव के प्रोत्साहन से; उन्हीं के उपदेशों से।" परन्तु जिसको स्वयं भी आत्म-गौरव नहीं, अपने वचनों पर दृढ़ता नहीं, जो किसी स्वार्थ से प्रेरित होकर अथवा समाज में प्रसिद्धि और आदर प्राप्त करने के लिए दिखावटी प्रेम से देश-सेवा का ढोंग रचता है, उसकी प्रतिष्ठा और कीर्ति—यदि धूर्तता से कुछ मिल गई हो—दूसरा कब तक बनाए रह सकता है; और वह भी कब तक अपना ढोंग छिपाए रह सकता है! विलास समाज की नज़रों से गिर गए थे। सबके मुख से उनके लिए दुर्वचन ही निकलते थे। फिर भी अब तक विद्या अपने पति की ओर से निराश न थी; परन्तु उनकी आज की बातों ने उसके हृदय को विदीर्ण कर दिया—"दिन-दिन भर दौड़ लगाया करती है! मैं बताए देता हूँ, आज से फिर कभी कॉङ्ग्रेस में या घर से बाहर और कहीं गई, तो अच्छा न होगा।" विद्या के नेत्रों से झर-झर आँसू बहने लगे। उसने पति को कुछ भी उत्तर न दिया। विलास ने कुछ ठहर कर फिर गरजते हुए कहा—"कल ही मैं आश्रम के कुल चरख़ों और करघों को तोड़-ताड़ कर फेंके देता हूँ। तभी तुम्हारा खेल समाप्त होगा।" इस बार विद्या ने बहुत नम्र और मधुर स्वर में कहा—"जो तुम्हारे ख़रीदे और बनवाए हों, उन्हें तोड़ना; जो मेरे लिए हैं, उन्हें क्यों तोड़ोगे!" विलास आग-बबूला हो गए—"इनके लिए! मायके से लाई हैं। जब देखो चरख़ा, जब देखो करघा, जब खोजो कॉङ्ग्रेस में।"

"व्यर्थ दोष न दो। दिन भर में एक बार एकाध घण्टे के लिए कॉङ्ग्रेस में जाती हूँ; बाक़ी सब समय तुम्हारे नेत्रों के सम्मुख आश्रम में रहती हूँ।"

"कौन ज़रूरत है कॉङ्ग्रेस में जाने की व आश्रम में रहने की?"

"क्या तुम्हें वे बातें भूल गईं, जिन्हें मैंने विवाह से कुछ देर पहले तुमसे बिन्नो के पाठशाला में कहा था! उस समय तुमने मुझे किस मुँह से वचन दिया था?"

"बातें-वातें और वचन-वचन मैं कुछ नहीं जानता। बस, कल से तुम इस आँगन से एक पग भी बाहर नहीं निकल सकतीं। बड़ी देश-सेवा करने वाली बनी हैं। घर में और स्त्रियाँ नहीं । यही देश का उद्धार करेंगी!"

विद्या को भी क्रोध आ गया। इस बार उसने भी रुष्ट भाव से कहा—तो तुम मुझे रोक भी नहीं सकते। तुम्हीं क्या, जब तक जन्मभूमि स्वतन्त्र नहीं हो लेती, मेरे प्राण रहते कोई भी शक्ति मुझे मेरे पथ से विचलित नहीं कर सकती।

इधर विलास दाँत पीसने लगे, उधर विद्या अपनी आँखें पोंछती हुई अपने कमरे में चली गई।

७

विलास के आए-दिन के दुर्व्यवहारों से दुखी होकर विद्या अपने मायके चली आई थी। असहयोग-आन्दोलन स्थगित हो गया था। बहुतों के शरीर पर फिर से विदेशी वस्त्र चढ़ गया था। विद्यार्थी फिर सरकारी स्कूलों और कॉलेजों में अपना नाम लिखा चुके थे। बहुत लोग सरकारी नौकरी के लिए तरस रहे थे। परन्तु विद्या की लगन ठीक वैसी ही थी—चरख़े, करघे और खद्दर से वही प्रेम; स्वतन्त्रता की वही धुन।

मायके में रह कर भी विद्या ने अपना बोझ अपने माता-पिता पर न लादा था। वह अपने मुहल्ले की कई लड़कियों की गृह-शिक्षिका हो गई थी और हर महीने में पचास-साठ रुपए पैदा कर लेती थी। पठन-पाठन के अतिरिक्त अपने मायके की गृहचर्या सँभालने में भी उसे बहुत आनन्द मिलता था।

परन्तु विद्या का यह जीवन एक रुदनमय जीवन था। उसका पहला हास, उत्साह एवं उमङ्ग न जाने कहाँ चली गई थी। उनका स्थान वेदना और विषाद ने ले लिया था। वह आप ही रोती और आप ही अपने आँसू पोंछती थी; जननी-जन्मभूमि के प्रति आप ही अपना उद्गार निकालती और आप ही सुनती थी। जब कभी उसे अपनी प्रतिज्ञा के समय की विलास की बातें, विवाह के कुछ देर पहले का दिया हुआ वचन और बाद को उसे पथ से विचलित करने के लिए कहे गए कटु वाक्य याद आते, तो उसका हृदय घण्टों तक तड़पता रह जाता था; केवल आँसू उसके धैर्य थे। उसकी बुलाहट के लिए ससुराल से अनेक बार पैग़ाम और पत्र आए थे, पर उसने जाने से साफ़ इन्कार कर दिया था। यदि माँ-बाप या सास-ससुर उस पर ज़ोर डालते, तो वह स्पष्ट कह देती थी—"यदि आप लोग मुझे बाधित करेंगे, तो मैं अपने जीवन का अन्त करके अपनी शान्ति का मार्ग ढूँढ़ लूँगी।" परन्तु इसका कारण कुछ नहीं बतलाती थी। स्वयं विलास उसके पास बीती बातों को भुला कर घर चली आने के लिए बराबर पत्र लिखते थे; पर वह उन्हें हर बार यही उत्तर देती—"जो अपने वचन का धनी नहीं, उसका मुँह देखना पाप है।" यदि विलास उसे कुछ समझाने के लिए उसके पास आते, तो लोगों के लाख समझाने-बुझाने पर भी वह उनसे भेंट ही नहीं करती। सभी विवश थे। इसमें क्या रहस्य है, बहुत सोचने पर भी किसी को पता न लगता। विद्या के आचरण में जो किसी को किसी प्रकार का कण-मात्र दोष न मिलता था, इस कारण उसके स्वभाव का रहस्य और भी जटिल हो गया था। वर्ष पर वर्ष बीता जा रहा था।

अशान्त वायु-मण्डल के अतिरिक्त अशान्त चिन्तन भी विद्या को सदा व्यथित किए रहता था। असहयोग आन्दोलन की असफलता पर जब-तब उसके हृदय से आह निकलती—"ओह! देश स्वतन्त्र न हो सका।" उसने अपनी प्रतिज्ञा को बड़े अक्षरों में एक तख़्ते पर लिख कर अपने कमरे में लगा दिया था और प्रातःकाल बिस्तरे से उठते ही आवेशपूर्ण स्वर में एक बार उसे पढ़ लेती थी; फिर शान्त भाव से हाथ जोड़ कर अपनी प्यारी मातृ-भूमि की स्वतन्त्रता के लिए एक बार ईश्वर से प्रार्थना करती थी। पवित्र भारत-भूमि की विवश-वेदनाओं की स्मृति में उसके नेत्रों से झर-झर आँसू बहने लग जाते थे—"मेरा प्यारा भारत कैसे स्वतन्त्र होगा?" साल में एक बार विद्या अपनी देवी मातृभूमि की विधिवत् पूजा करती थी। उस दिन वह दिन भर व्रत रहती और रात्रि की निस्तब्धता में अपनी पुण्यमयी देवी की एक मूर्ति बना कर फल-फूल, पुष्प आदि से बड़े प्रेम के साथ उनकी पूजा करती थी। मातृभूमि के प्रति उसका अनुराग उत्तरोत्तर बढ़ता जाता था, आत्म-शक्ति प्रबल होती जाती थी, हृदय में आवेश भरता जाता था। पर खेद! उसे उनके उपयोग की कोई युक्ति न सूझती थी।

८

सन् १९३० की २६ जनवरी थी। भारत में पूर्ण स्वतन्त्रता-दिवस बड़े समारोह के साथ मनाया गया। आज विद्या की प्रसन्नता का क्या कहना था। उसकी चिर-तपस्या का फल मानो आज ही मिल गया। उसे ऐसा ज्ञान पड़ता था मानो उसकी प्रति दिन की प्रार्थना ईश्वर ने सुन ली है और अपनी अर्जित समस्त शक्तियों का सदुपयोग करने के लिए उसे प्राङ्गण में लाकर खड़ा कर दिया है। उसे विशेष प्रसन्नता इस बात की थी कि उसके पति—विलास—भी आज राष्ट्रीय झण्डा लिए जुलूस के साथ थे और राष्ट्रीय गान गाते हुए बड़े अभिमान के साथ सबके आगे-आगे चल रहे थे। जिधर-जिधर जुलूस गया, विद्या का ध्यान बार-बार अपने पति पर पड़ता था। आज उसके सन्तोष और प्रसन्नता की बड़ी लम्बी-लम्बी साँसें चल रही थीं।

उत्सव समाप्त हो जाने पर विद्या स्त्रियों के झुण्ड से अलग होकर घर जाने के लिए ज्योंही ताँगे में बैठने लगी, विलास उसके आगे आकर खड़े हो गए। उनके नेत्रों में आँसू थे। उन्होंने बड़े विनीत स्वर में कहा—"देवी, मुझे क्षमा करो।" विद्या के नेत्र भी सजल हो गए। उसने प्रेम से पति का हाथ पकड़ कर उन्हें ताँगे में बैठाते हुए कहा—"व्यर्थ में मेरे सिर पातक क्यों रखते हो? तुम मेरे पति-परमेश्वर हो, तुम्हें ऐसा न करना चाहिए।"

"देवी! मैंने बहुत घोर अपराध किया है। अब केवल क्षमा चाहता हूँ।"

"कोई भी अपराध नहीं किया! हम दोनों ने एक प्रतिज्ञा की थी; मैं उस पर अटल हूँ, तुम भूल गए। इसमें अपराध क्या?"

"यही बहुत भयङ्कर अपराध है। इसके लिए कोई दण्ड ही नहीं, बस क्षमा है।"

"यह तो ईश्वर और मातृभूमि के प्रति का अपराध है। तुम मेरे हो, मैं तुम्हारी हूँ। तुम्हारा अपराध मेरा अपराध है और मेरा अपराध तुम्हारा अपराध। यदि हम लोगों से कोई अपराध हो जायगा, तो ईश्वर हमें ज़रूर क्षमा करेगा।"

"घर चलो। मैंने अपनी करनी पर पूर्ण पश्चात्ताप कर लिया है, अब फिर अपनी प्रतिज्ञा पर अटल हूँ।"

"नहीं, अभी नहीं चल सकती—तब तक नहीं चल

(शेष मैटर १७वें पृष्ठ के पहले कॉलम के नीचे देखिए)

संसार-व्यापी भावी महायुद्ध की आशंका

[संसार पर आगामी युद्ध के काले बादल मँडराने लगे हैं और सभी राष्ट्र अपनी रक्षा के लिए चिन्तित हो रहे हैं। परन्तु युद्ध की तैयारी के सिवाय उन्हें रक्षा का कोई उपाय नहीं सूझता। राष्ट्रों को इस भावी सङ्कट से बचाने के लिए निरस्त्रीकरण ही एकमात्र उपाय है। इस सम्बन्ध में श्री० विल्फ्रेड बैलक नामक सुप्रसिद्ध लेखक के विचारों का सार नीचे दिया जाता है।
—सं० "भविष्य"]

इसमें सन्देह नहीं कि निरस्त्रीकरण का प्रश्न आजकल संसार का प्रमुख प्रश्न हो गया है। यह प्रश्न इसलिए और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गया है कि यदि राष्ट्रों ने निरस्त्रीकरण का प्रयत्न न किया और उनकी रक्त-पिपासा बढ़ती ही गई तो भावी प्रलयङ्करी युद्ध वर्तमान सभ्यता को रसातल में भेज देगा। उसकी आवश्यकता इसलिए भी प्रतीत होती है कि संसार के अधिकांश राजनीतिज्ञ और पशुबल—फ़ौज के हिमायती गत महायुद्ध की भयङ्कर क्षति को भूल कर, नए युद्ध की रचना कर, फिर से संसार पर एक भीषण आपत्ति लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। उनका मत है कि युद्ध से ही युद्ध का अन्त होगा। मनुष्यता का यह कितना भीषण व्यङ्ग है।

जो लोग यूरोपीय राष्ट्रों के भावी युद्ध की तैयारियाँ देख रहे हैं, उनका यह कर्तव्य है कि वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगा कर लोकमत तथा राजनीतिक जीवन को युद्ध के प्रतिकूल कर दें तथा उन्हें इस बात की घोषणा कर देना चाहिए कि गत महायुद्ध के पश्चात् युद्ध का अन्त कर देने की जो व्यवस्था की गई थी, समस्त राष्ट्र उसी का अवलम्बन करें। वास्तव में प्रयत्न इस बात का होना चाहिए कि संसार में युद्ध की नौबत ही न आने पाए। मुझे इस बात पर आश्चर्य होता है कि लोग इस बात का ख़्याल नहीं करते कि यूरोप के राजनीतिज्ञों ने सन् १९१४ के महायुद्ध के पहले के दाँव-पेचों का श्रीगणेश कर दिया है और जब तक उनकी कूटनीतिपूर्ण चालों का अन्त न कर दिया जायगा तब तक युद्ध का रोकना एकान्त असम्भव है। वातावरण देख कर यह अनुमान किया जाता है कि केवल २ वर्षों के अन्दर ही संसार-व्यापी प्रलयङ्करी युद्ध का सूत्रपात हो जायगा।

वर्सेलीज़ की सन्धि में युद्ध का जो बीज बोया गया था उसी समय से वह धीरे-धीरे अङ्कुरित होता रहा है और उससे राष्ट्रों की प्रतिहिंसा की अग्नि प्रज्वलित होती रही है। अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा जर्मनी में इस प्रतिहिंसा ने प्रचण्ड रूप धारण कर लिया है। और वास्तव में हमें जर्मनी की यह न्यायोचित माँग स्वीकार करनी पड़ेगी कि या तो मित्र-राष्ट्र वर्सेलीज़ की सन्धि से आठवें प्रस्ताव की शर्तें स्वीकार करें और उसके अनुसार वे निरस्त्र हो जायँ अथवा जर्मनी को भी अपने ही अनुरूप सशस्त्र बनने दें। यूरोप के सम्मुख निरस्त्रीकरण के लिए अब उपयुक्त अवसर आ गया है और यदि अब यह अवसर चूका तो हमें जर्मनी का सशस्त्र बनने का अधिकार स्वीकार करना पड़ेगा। परन्तु यदि हमने दूसरे पथ का अनुसरण किया और निरस्त्रीकरण से इन्कार किया तो भावी युद्ध सन् १९१४ के महायुद्ध से अधिक विकराल होगा और उसके परिणाम भी उससे अधिक भयङ्कर होंगे।

इस समय इटली भी जर्मनी के सशस्त्र बनने की माँग का समर्थन कर रहा है और उसकी इस चाल से यह प्रतीत होता है कि वह फ़ान्स के विरुद्ध अपनी शक्ति संग्रह करने के लिए ही ऐसा कर रहा है। इटली इस समय मध्य और पूर्वीय यूरोप के राष्ट्रों से मेल करने में व्यस्त है और इस प्रकार विगत युद्ध के समय के दो दल तैयार हो रहे हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि जर्मनी की यह नई माँग और इटली का समर्थन फ़ान्स अपने लिए ख़तरे की चीज़ें समझता है और उसका विरोध करने के लिए सम्पूर्ण शक्ति से तैयार है। इस प्रकार आठवें प्रस्ताव को छोड़ कर वर्सेलीज़ की सन्धि फ़ान्स की विरोधी साबित हुई है।

युद्ध के १२ वर्ष उपरान्त आज सन् १९३१ में यूरोप में फिर युद्ध के काले बादल मँडराने लगे हैं। और यदि शीघ्र ही इसका प्रतिकार न किया गया तो सन् १९४० में फ़ान्स उसी परिस्थिति में होगा जिस परिस्थिति में जर्मनी सन् १९१४ में था और उस समय इटली की सन् १९१४ के फ़ान्स की सी अवस्था हो जायगी। अब हमारे सामने प्रश्न यह उपस्थित होता है कि क्या स्थिति ऐसी ही बनी रहेगी अथवा राष्ट्रों की नीति-सञ्चालन का भार उन विवेकी और दूरदर्शी राजनीतिज्ञों के हाथ में जायगा जो युद्ध का त्याग करना चाहते हैं और अपने विश्व-शान्ति के आदर्श के स्वप्न को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए लालायित हैं। यदि निरस्त्रीकरण द्वारा शीघ्र ही शान्ति स्थापित न हुई तो यूरोप में एक छोटी सी हत्या युद्ध का बवण्डर खड़ा कर देगी जैसा गत महायुद्ध के समय हुआ था। और उसके बाद अस्त्र-शस्त्रों की दिगन्त-व्यापी झङ्कार और ज़हरीली गैसों से हमारी वर्तमान सभ्यता, जो महान होने का दम भरती है, धुएँ की तरह क्षण भर में विलीन हो जायगी।

हमें यह समझ लेना चाहिए कि हमारी वर्तमान सभ्यता में अब इतनी शक्ति नहीं रह गई है कि वह एक और महायुद्ध का धक्का सह सके। केवल नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से ही नहीं, व्यावहारिक और आर्थिक दृष्टियों से भी युद्ध हमारे लिए असाध्य हो गया है। जब स्थिति यहाँ तक पहुँच गई है तब साहस के साथ उसका सामना क्यों न किया जाय और क्यों न स्पष्ट रूप से कह दिया जाय कि युद्ध न होना चाहिए और अब युद्ध न होगा।

इसमें सन्देह नहीं कि निरस्त्रीकरण के मार्ग में भी बहुत सी बाधाएँ और ख़तरे हैं, परन्तु इस प्रश्न पर मनोयोगपूर्वक विचार करने के उपरान्त हमारी यह धारणा हो गई है कि निरस्त्रीकरण की अपेक्षा शस्त्रीकरण में सदैव अधिक ख़तरा है। यदि ब्रिटेन आज निरस्त्र हो जाय और इस बात का विचार न करे कि दूसरे राष्ट्र क्या करते हैं तो वह संसार के सम्मुख एक नैतिक आदर्श उपस्थित कर देगा; और उन राष्ट्रों में एक नया आकर्षण उत्पन्न हो जायगा। साथ ही इससे हमारी राष्ट्रीय प्रगति में सहायता मिलेगी। इससे सारे संसार का वायु-मण्डल बदल जायगा और उसमें शान्ति का एक नवीन वातावरण उत्पन्न हो जायगा।

कुछ लोग यह कहेंगे कि इस समय इङ्गलैण्ड के शासन की बागडोर मज़दूर-सरकार के हाथ में है और उसके पर-राष्ट्र सचिव मि० हेण्डरसन हैं, इसलिए निकट भविष्य में युद्ध की कोई सम्भावना नहीं है। यह मैं मान सकता हूँ, परन्तु हम केवल इच्छा मात्र से युद्ध से पिण्ड नहीं छुड़ा सकते। जब तक हम पर युद्ध का आतङ्क बना रहेगा तब तक हम ११ करोड़ पौण्ड के सालाना फ़ौजी ख़र्च की बचत नहीं कर सकते। चूँकि मज़दूर-सरकार इस समय इङ्गलैण्ड का शासन सञ्चालन कर रही है। हमें यह आशा करनी चाहिए कि वह अपने ही शासन-काल में निरस्त्रीकरण का प्रयोग कर, इङ्गलैण्ड को भावी युद्ध के सङ्कट से मुक्त कर देगी।

संसार पर इस समय युद्ध का भूत सवार है और राष्ट्र निरस्त्रीकरण के लिए तैयार नहीं हो रहे हैं। निरस्त्रीकरण के सम्बन्ध में कॉन्फ्रेन्सों पर कॉन्फ्रेन्सें होती जा रही हैं, परन्तु उनमें कोई ठीक निश्चय नहीं होने पाता। प्रत्युत राष्ट्र अपनी फ़ौजी शक्ति दिन प्रति दिन दृढ़ करने में रत हैं और युद्ध के सम्बन्ध में अभी जितने वैज्ञानिक आविष्कार हुए हैं उनसे युद्ध के साधन इतने अधिक बढ़ गए हैं कि भावी युद्ध में संसार पर भयङ्कर विपत्ति आए बिना नहीं रह सकती। लोग कह सकते हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् (लीग ऑफ़ नेशन्स) के अनुसार आगामी युद्ध में विषाक्त गैसों का प्रयोग नहीं किया जायगा। परन्तु यदि यह बात है तो संसार के प्रायः सभी राष्ट्र अपनी वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में ऐसे विषैले गैसों का आविष्कार क्यों कर रहे हैं; क्या उनका प्रयोग भावी युद्ध में रोका जा सकता है?

संसार आज निरस्त्रीकरण के पक्ष में है, परन्तु कमी है ऐसे दूरदर्शी राजनीतिज्ञों की, जिनमें इस बात का साहस हो कि वे संसार के लोकमत के अनुसार कार्य कर सकें। यद्यपि सभी नहीं तो अधिकांश राजनीतिज्ञों का मत वही है जो गत महायुद्ध के पहले था। उनका विश्वास अभी भी अन्तर्राष्ट्रीय मैत्री पर नहीं है और वे अभी राष्ट्रों को एक-दूसरे का शत्रु समझते हैं। यही कारण है कि पिछली अन्तर्राष्ट्रीय नवसेना कॉन्फ्रेन्स असफल हो गई। उसकी सफलता के लिए राष्ट्रों के समता भाव की अत्यन्त आवश्यकता है। संसार के राष्ट्रों के सामने एक नवीन अवसर आ रहा है और यदि वे चाहें तो पिछली सभी त्रुटियों का प्रतिकार कर सकते हैं। एक वर्ष के उपरान्त संसार के सभी राष्ट्रों का निरस्त्रीकरण-सम्मेलन होगा। वह इस सम्बन्ध की सम्पूर्ण समस्याओं पर विचार करेगा। हम यह विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि यदि वह सम्मेलन असफल हुआ तो हमारी सभ्यता का सर्वनाश हो जायगा। और जब राष्ट्रों की रक्षा के लिए दूसरा सम्मेलन बुलाया जायगा तब हम चारों ओर युद्ध से घिरे रहेंगे। यदि राजनीतिज्ञों के विचारों में परिवर्तन न हुआ तो उस सम्मेलन के असफल होने में भी कोई सन्देह नहीं। आज के स्वार्थ और कूटनीति से काम नहीं चल सकता और न इस प्रकार निरस्त्रीकरण ही सम्भव हो सकता है। गणित के सिद्धान्तों के अनुसार यह समस्या सुलझाने का प्रयत्न करना निरर्थक होगा। वह आत्मविश्वास का प्रश्न है, हमारी नैतिक शक्ति की परीक्षा है। उसमें इस बात की जाँच की जायगी कि हम अपने पड़ोसियों पर कितना विश्वास रखते हैं।

मेरी हार्दिक आकांक्षा है कि आगामी अन्तर्राष्ट्रीय निरस्त्रीकरण सम्मेलन में ब्रिटेन अपना नैतिक बल दिखलाएगा और वह निरस्त्रीकरण सम्मेलन को सफल बनाने का प्रयत्न करेगा। उसकी सफलता पर संसार की शान्ति निर्भर है और संसार उस शान्ति की प्रतीक्षा कर रहा है।
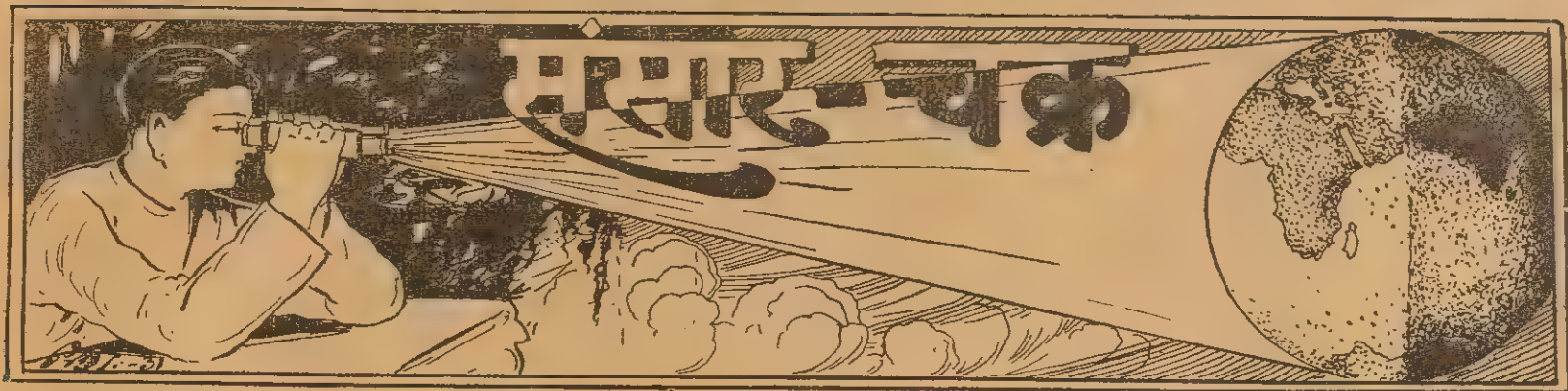
जर्मनी का प्रजातन्त्र

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

संसार के इतिहास में सन् १९१४ की ४थी अगस्त एक विशेष महत्व रखती है। यह वही तिथि है, जिस दिन जर्मनी के प्रबल प्रतापी सम्राट क़ैसर दूसरे विलियम ने संसार-व्यापी युद्ध का श्रीगणेश किया था। जिस युद्ध की भयङ्कर गर्जना संसार के एक कोने से दूसरे कोने तक गूँज उठी थी। जिस युद्ध ने संसार के कितने ही राज्यों की क़िस्मत का फ़ैसला कर दिया और साथ ही फ़ैसला हो गया स्वयं जर्मन-साम्राज्य का भी। एक समय था, जब जर्मनी में क़ैसरी शासन की तूती बोलती थी, जर्मनी का बच्चा-बच्चा क़ैसर विलियम के नाम से प्रभावान्वित हो उठता था और जर्मनी का प्रजातन्त्रीय दल एक कोने में पड़ा सिसक रहा था, या यों कहिए कि जिस दिन जर्मनी की रिस्टेज सभा में प्रजातन्त्र के अनुयायियों ने राज-सत्ता की महत्ता के आगे मस्तक नत किया था।

एक तरह से जर्मनी का इतिहास राजतन्त्र की सफलता का इतिहास है। इसी राजतन्त्र के युग में जर्मनी ने जो उन्नति की, जो यश कमाया, उसका उदाहरण इतिहास के पन्नों में नहीं मिलेगा। कला-कौशल, उद्योग-धन्धा, व्यापार-वाणिज्य कहाँ तक गिनाएँ—संक्षेप में देश के प्रत्येक अङ्ग ने उन्नति की पराकाष्ठा कर दिखाई थी। वही जर्मनी, जो छोटे-छोटे राज्यों का एक छोटा सा समूह था, प्रिन्स बिस्मार्क जैसे राजनीति-विशारदों को पैदा करके एक बहुत बड़ा प्रभावशाली और बलवान राष्ट्र बन गया था। उसके जनरल वान हिण्डेनबर्ग जैसे सेनापतियों की तलवारों की झङ्कार से फ़्रान्स और इङ्गलैण्ड के सैनिकों के दिल दहल जाते थे।

परन्तु बहुत जल्द लोगों को राजतन्त्र की कमज़ोरियाँ मालूम होने लगीं। युद्ध आरम्भ हुए अभी कुछ अधिक दिन नहीं बीते थे कि जर्मनी के आर्थिक क्षेत्र में खलबली मच गई। जनता को रोटियों के लाले पड़ने लगे। विदेशी नीति के सञ्चालन में राजतन्त्र बहुत असफल साबित हुआ। जर्मनी को चारों ओर सङ्कट के बादल घिरे दिखाई दिए।

प्रजातन्त्रवाद ने फिर जड़ पकड़ी। जनता राजतन्त्र का विरोध करने लगी। सब से प्रथम साम्यवादियों ने विरोध किया। उन्होंने युद्ध का खुल्लमखुल्ला विरोध किया और सन्धि करने के लिए ज़ोर देने लगे।

ज्यों-ज्यों जर्मनी के सङ्कट बढ़ते गए और ज्यों-ज्यों युद्ध में विजय पाने के लक्षण कम होते गए, त्यों-त्यों विरोधी दल की शक्ति बढ़ती गई। जनता युद्ध से यहाँ तक ऊब गई—क्योंकि विजय के कोई चिन्ह न थे—कि वह चाहती थी कि युद्ध में या तो शीघ्र हार हो जावे या सन्धि हो जावे। पर जर्मनी के शासक उपरोक्त दो में से किसी बात के लिए भी तैयार न थे। अतएव जनता शासकों की विरोधी बन गई।

सन् १९१६ के प्रारम्भ में स्पार्टकस लीग (Spartacus Laegue) की स्थापना की गई। इस लीग का उद्देश्य था युद्ध का अन्त करना। ६ महीने के अन्दर ही जर्मनी में पहिली राजनैतिक हड़ताल हुई और मजदूरों ने काम करना बन्द कर दिया।

इधर जर्मनी के चान्सलर बेथमैन-होलवेग (Bathmann-Hollweg) की धारणा थी कि इस युद्ध में जर्मनी को विजय मिलना असम्भव है। इसलिए जिस तरह हो अमेरिका के साथ दोस्ती क़ायम रक्खी जावे। परन्तु उधर लुडेनडोर्फ़ जर्मनी की विजय का स्वप्न देख रहा था और कहता था कि तीन महीने के अन्दर ही जर्मनी को विजय मिल जावेगी। अस्तु।

इधर जर्मनी में ये दलबन्दियाँ हो रही थीं, उधर पड़ोसी राज्य रूस में एक नया गुल खिला। रूस की जनता में ज़ारशाही के विरुद्ध क्रान्ति की आग भड़क उठी और संसार के देखते-देखते ४८ घण्टे के अन्दर ही शताब्दियों से प्रसिद्ध ज़ारशाही का रूस के इतिहास में सदा के लिए नाम मिटा दिया। क्रान्ति की इस अद्वितीय सफलता से सारा का सारा यूरोप एकदम चकित हो गया। ऐसा मालूम होता था कि जैसे किसी ने बारूद में आग लगा दी हो और एक धड़ाके के साथ ज़ारशाही रूपी बारूदख़ाना उड़ गया हो। इस क्रान्ति से यूरोप के कोने-कोने में सनसनी पैदा हो गई। और साथ ही जर्मनी में भी बिजली सी दौड़ गई।

जर्मनी में स्ट्राइकों की धूम मच गई। एक महीने के अन्दर ही कितनी ही हड़तालें हो गईं। गरम दल के साम्यवादियों ने अपनी एक मज़बूत पार्टी बनाई। सन् १९१७ के जुलाई महीने में उनकी तरफ़ से राज-सभा (Reichstag) में सन्धि का प्रस्ताव (Peace Resolution) उपस्थित किया गया। इस प्रस्ताव में साम्यवादियों ने सन्धि के बारे में अपने स्पष्ट विचार रक्खे और शासकों से इस प्रस्ताव को कार्यान्वित करने के लिए प्रार्थना की। जर्मनी के शासकगण भी स्थिति की भीषणता को समझ चुके थे, इसलिए जनता के आँसू पोंछने के लिए क़ैसर ने एक घोषणा-पत्र द्वारा जर्मनी के विधान में सुधार करने का आश्वासन दिया। परन्तु साम्यवादियों के सन्धि-प्रस्ताव की अवहेलना की गई। फिर क्या था, जनता में असन्तोष बढ़ा और चान्सलर बेथमैन को अपने पद से इस्तीफ़ा दे देना पड़ा।

बेथमैन के क्षेत्र से अलग हो जाने के पश्चात् जर्मनी के तत्कालीन शासन का पक्षपाती केवल वहाँ का सैनिक समुदाय ही रह गया था। जर्मनी के सम्मुख उस समय केवल दो ही मार्ग थे—(१) निरङ्कुश सैनिक शासन की घोषणा या (२) एक ऐसे मन्त्रि मण्डल की स्थापना, जिसके पक्ष में राजसभा (Reichstag) का बहुमत हो। परन्तु जर्मनी का भाग्य-विधाता क़ैसर उपर्युक्त दोनों मार्गों में से किसी के अवलम्बन-मार्ग के लिए भी तैयार न था। उसने प्रशा प्रान्त के अपने एक अफ़सर को चान्सलर नियुक्त किया। इस नवीन

(१५वें पृष्ठ का शेषांश)

सकती, जब तक मुझे पूर्ण रूप से विश्वास न हो जाय कि तुम अपनी प्रतिज्ञा पर सचमुच अटल हो। हाँ, मेरे साथ तुम मेरे यहाँ चलो।"

विलास की भी सन्तोष की लम्बी साँसें चलने लगीं। सङ्केत पाकर ताँगे वाले ने ताँगा हाँक दिया।

* * *

सत्याग्रह-आन्दोलन में भाग लेकर विलास और विद्या ने देश की जो अमूल्य सेवाएँ की हैं, उनके लिए हम उन्हें किसी पल भी नहीं भुला सकते। पति-पत्नी दोनों ने परस्पर गले लिपट कर भारत के उद्धार में अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया है। आज वे दोनों जेल में हैं; परन्तु उनकी प्रतिज्ञा सर्वत्र स्वतन्त्र चीत्कार कर रही है। वह केवल उन्हीं की प्रतिज्ञा नहीं, भारतवासी-मात्र की प्रतिज्ञा है, युवक-युवती-वृन्द की प्रतिज्ञा है। वह विद्या के कमरे की तरह बहुतों के कमरे में बड़े-बड़े अक्षरों में लिखी टँगी है। यही नहीं, बादलों के गर्जन, हवा के झोंके तथा प्रकृति की प्रत्येक ध्वनि में उसी का चीत्कार है। जब तक हम अपनी उस प्रतिज्ञा को पूरी नहीं कर लेते, क्या हम चैन ले सकते हैं?

* * *

चान्सलर का नाम था, मिकेलिस (Michaelis), यह बड़ा उद्दण्ड और निरङ्कुश शासक था।

मिकेलिस के स्टेज पर आने से प्रजातन्त्र-वादियों की आशाओं पर पानी फिर गया। परन्तु यह सब उन्हीं की करतूतों का फल था। उन्होंने ही बेथमैन को इस्तीफ़ा देने के लिए बाध्य किया था। वे समझते थे कि इस उपाय से वे शासकों को झुका लेंगे, पर यह उनकी भूल निकली। क़ैसर स्वयं बेथमैन से छुट्टी पाना चाहता था, क्योंकि बेथमैन उतना दक़ियानूसी न था। क़ैसर को अवसर मिल गया। उसने उस अवसर से लाभ उठा कर बेथमैन के स्थान पर राजतन्त्र के एक कट्टर भक्त को चान्सलर बना दिया। अस्तु।

परन्तु प्रजातन्त्रवादी इस अवहेलना को भूलने वाले न थे। वे सन्धि-प्रस्ताव को अपमानित होता नहीं देख सकते थे। उन्होंने दूने उत्साह से नवीन चान्सलर का विरोध किया। मिकेलिस चान्सलर के पद पर केवल ११० दिन रह सका और १११वें दिन उसे अपने पद से मजबूरन हट जाना पड़ा। इस बार क़ैसर ने काउण्ट हर्टलिङ्ग को मिकेलिस का उत्तराधिकारी बनाया।

हर्टलिङ्ग केवल समय बिताना चाहता था। जर्मनी के अन्यान्य शासक युद्ध में लिप्त थे। बोल्शेविक क्रान्ति के कारण रूस युद्ध से अलग हो गया था। जर्मनी के शासकगण जी तोड़ कर युद्ध में परिश्रम कर रहे थे। पर जर्मनी के भाग्य में विजय नहीं लिखी थी। ८ अगस्त १९१७ की हार ने जर्मनी की हिम्मत को एकदम पस्त कर दिया। इससे जर्मनी की सेना में अशान्ति फैल गई। अब तो लुडनडर्फ़ की भी आँखें खुल गईं। वह समझ गया कि सेना में न तो अब पुराना उत्साह है और न बल। वह निराश हो गया और युद्ध का अन्त करने के लिए स्वयं चिन्तित हो उठा।

उस समय जर्मनी के शासकों को चारों ओर सङ्कट ही सङ्कट दिखाई पड़ने लगे। घर में जनता असन्तुष्ट थी और देश के शासन में अपना हाथ चाहती थी। बाहर युद्ध का देवता जर्मनी से अप्रसन्न हो रहा था, और जर्मनी की हार निश्चित थी। इतने दिनों बाद शासकों की आँखें खुलीं, उनकी समझ में आया कि जनता को सन्तुष्ट करना चाहिए। जर्मनी की जनता विप्लव नहीं चाहती थी। वह चाहती थी केवल प्रजातन्त्र द्वारा देश का शासन और सन्धि अर्थात् युद्ध का अन्त।

बेडन के राजकुमार माक्स ने एक कैबिनेट (Cabinet) की स्थापना की। यह कैबिनेट राज-सभा के बहुमत पर निर्भर करती थी। इसमें साम्यवादियों के प्रतिनिधि भी शामिल थे। इस कैबिनेट के सामने दो महान कार्य थे—(१) सन्धि की बातचीत करना और (२) जर्मनी में वैध शासन की स्थापना करना। प्रजातन्त्रवादियों की यह प्रथम विजय थी। बिना किसी क्रान्ति के ही उन्होंने अपना कार्य कर लिया। जर्मनी के निरङ्कुश शासन का अन्त हो गया और हो गया इतनी आसानी से कि किसी को आँसू गिराने की कौन कहे, अफ़सोस करने का भी मौक़ा नहीं मिला।

इस नवीन वैध शासन की पीठ पर जनता का हाथ था। पुराने शासकगण तो विरोध करने का साहस रखते ही न थे। परन्तु गरम दल के लोग भी कुछ ठोस काम करने को तैयार न थे। यद्यपि वे लोग बोल्शेविक ढङ्ग की क्रान्ति करना चाहते थे। और इसी बात के लिए वे बर्लिन और म्युनिच में प्रचार भी कर रहे थे। पर जनता चूँकि उनका साथ देने को तैयार न थी, इसलिए वे भी कुछ करने की हिम्मत नहीं कर सकते थे। इसी समय एक घटना हुई और उसने तमाम हालत बदल दी। 'मरता क्या न करता' की नीति के अनुसार जर्मनी के जल-सेना के अफ़सरों ने अन्तिम प्रयत्न करना चाहा। यद्यपि शान्ति की बातचीत चल रही थी, पर उन्होंने एक बार पुनः युद्ध करना चाहा। २८ अक्टूबर, १९१७ की बात है, जर्मनी का एक बेड़ा युद्धक्षेत्र में था। युद्ध के तीन जहाज़ों के काम करने वालों ने लङ्गर उठाने से इन्कार कर दिया और विद्रोह की घोषणा कर दी। परन्तु दूसरे ही दिन वे लोग गिरफ़्तार कर लिए गए। इसके दो दिन बाद ही तमाम बेड़ों में विद्रोह फैल गया। नागरिकों ने भी विद्रोहियों का साथ दिया। जिन अफ़सरों ने विद्रोहियों को बलपूर्वक कुचलने का प्रयत्न किया, वे सब के सब गोलियों के शिकार बना दिए गए। तीसरी नवम्बर तक यह गृह-कलह कील और हैमबर्ग नगरों में फैल गया। यद्यपि कील के आन्दोलन में नागरिकों का भी हाथ था, पर वास्तव में यह सैनिकों का विद्रोह था।

बहुत शीघ्र यह क्रान्ति जर्मनी के समस्त नगरों में तथा सेना में फैल गई। जनरलों का आधिपत्य जाता रहा। राजकुमारों को घर छोड़-छोड़ कर भागना पड़ा। एक के बाद एक, अनेक सरकारों को इस्तीफ़ा देने पड़े। एक तरफ़ सातवीं नवम्बर, १९१७ को प्रसिद्ध प्रभावशाली वक्ता कर्ट-ईज़नर ने बवेरिया प्रदेश में प्रजातन्त्र की घोषणा कर दी और क़रीब-क़रीब सारे जर्मनी में सोवियटों की स्थापना की गई। ऐसा प्रतीत होता था कि बहुत शीघ्र सिपाहियों और मज़दूरों के राज्य की स्थापना हो जावेगी। केवल एक सुयोग्य नेता की आवश्यकता थी, जो क्रान्ति का सञ्चालन कर सके। परन्तु क्रान्ति के नेता इन बातों के लिए तैयार न थे। उस समय लेनिन की आवश्यकता थी। परन्तु जर्मनी में कोई लेनिन न था।

क्रान्ति ने युद्ध का तो अन्त कर दिया। प्रत्येक मिनट जनता सरकार के हाथों के बाहर निकल कर अराजक हो रही थी और प्रतिक्षण गरम दल की शक्ति बढ़ रही थी। किसी क्षण एक नेता का आगमन हो सकता था। जर्मनी को अराजकता से बचाने का केवल एक ही उपाय था और वह था, क्रान्ति का सुयोग सञ्चालन। यह काम बहुमत-साम्यवादी (Majority Socialists) ही कर सकते थे और उन्होंने ही किया भी।

उस पार्टी के सामने उस वक्त जीवन और मृत्यु का प्रश्न था। इस दल के नेता बड़े असमञ्जस में पड़े थे। वे क्रान्ति का अन्त कर राजतन्त्र का आह्वान नहीं देख सकते थे और न वे चाहते थे, बोल्शेविकों का राज्य। जर्मनी का प्रजातन्त्र अभी एक नन्हा-सा सुकुमार बच्चा था और उसे एक धाय की आवश्यकता थी।

२८वीं अक्टूबर को साम्यवादियों के प्रतिनिधि हर स्वीडमैन (Herr Scheidmann) ने अपनी पार्टी की ओर से सिंहासन छोड़ने के लिए क़ैसर को चेतावनी दी। ७ नवम्बर को इस चेतावनी ने अल्टीमेटम का रूप धारण कर लिया। क़ैसर ने इसकी अवहेलना की। दूसरे दिन साम्यवादियों ने कैबिनेट से इस्तीफ़ा दे दिया और क्रान्ति के नेता बन गए।

९ नवम्बर को कैबिनेट की बैठक हो रही थी। क्रान्ति के नेता सभा-भवन में घुस गए और वहाँ पहुँच कर घोषणा की कि जनता देश का शासन अपने हाथ में लेना चाहती है। राजकुमार ने क़ैसर को सिंहासन छोड़ने की सूचना देकर अपने पद से इस्तीफ़ा दे दिया। एबर्ट माक्स का उत्तराधिकारी नियुक्त हुआ। वह जर्मनी का डिक्टेटर बन बैठा। एबर्ट अराजकता तथा बोल्शेविज़्म से जर्मनी को बचाना चाहता था। उसने स्वतन्त्र दल वालों से मन्त्रि-मण्डल बनाने में सहयोग करने के लिए अपील की। १०वीं नवम्बर को जो मन्त्रि-मण्डल बना, उसमें दोनों पार्टी के प्रतिनिधि थे, इस मन्त्रि-मण्डल के निर्माण ने गरम दल के आगामी क्रान्ति के स्वप्न को नष्ट कर दिया।

११ नवम्बर को क्षणिक-सन्धि पर जर्मनी ने हस्ताक्षर कर दिए। बहुमत-साम्यवादी विधान-सभा को शीघ्र ही बुलाना चाहते थे, पर स्वतन्त्र दल वाले चाहते थे, कि विधान-सभा अभी न बुलाई जावे और इसी बीच में साम्यवादी सरकार की नींव दृढ़ कर ली जावे।

[अगले अङ्क में समाप्त]

* * *

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल० बी०]

अङ्क—२; दृश्य—१

साहित्यानन्द का सम्पादकीय कमरा

(मेज़ और फ़र्श पर काग़ज़ों और अख़बारों का ढेर लगा है। दो-चार टूटी हुई कुर्सियाँ रक्खी हैं। साहित्यानन्द सामने सादा काग़ज़, क़लम-दावात और कुछ पैकेट रक्खे ज़मीन पर पल्थी मारे बैठा हुआ हँस रहा है।)

साहित्यानन्द—(आप ही आप) आहाहाहाहा! आहाहाहा! ओहोहोहो! हीहीहीही! ऊहूहूहू!

(टेसू का एक लेई की प्याली लिए आना)

टेसू—लीजिए सरकार लेई तैयार हो गई। पैकेट चिपकाइए, अरे! आप तो हँस रहे हैं!

साहित्यानन्द—(हाथ के इशारे से टेसू को मना करता हुआ फिर हँसता है) आहाहाहाहा! हाहाहाहा! हीहीही......,

टेसू—अरे! यह क्या? सुनिए तो, इसे यहाँ रख दूँ?

साहित्यानन्द—चुप रह! (फिर हँसता है) आहाहाहा! हीहीही......

टेसू—(लेई रख कर खड़ा तमाशा देखता हुआ, आप ही आप) वाह! वाह! अरे! सरकार, वह देखिए, वह लेई रक्खी है।

साहित्यानन्द—(ग़ुस्से में उठ कर) फिर नहीं मानता; जब देखो तब यह दुष्ट काम ही के समय विघ्न डालता है।

टेसू—(दूर भाग कर) आप ही ने कहा था कि जल्दी से लेई बना ला। डेढ़ सौ पैकेट चिपकाना है।

साहित्यानन्द—मगर यह मैंने कब कहा था कि जब मुझे काम में देखना तभी फट पड़ना। अरे! 'परन्तु' के स्थान पर 'मगर' कह गया। राम! राम!

टेसू—आप काम कहाँ कर रहे थे। लेई थी नहीं, आप करते क्या?

साहित्यानन्द—(झपटता हुआ) क्या सम्पादकों का लेई चिपकाना ही काम होता है, सुअर का बच्चा?

टेसू—(दूसरी तरफ़ भाग कर) तब क्या सामने सादा काग़ज़ रक्खे मूठ-मूठ हीहीहीही करना भी कोई काम है?

साहित्यानन्द—मैं मूठ-मूठ हीहीहीही कर रहा था?

टेसू—तब क्या कर रहे थे?

साहित्यानन्द—मैं हास्य-टिप्पणी लिखने के लिए अपने हृदय में हास्य-भाव का सञ्चार कर रहा था मूर्ख! जिसे तूने आकर सब भ्रष्ट कर डाला। अब लिखूँ क्या अपना शीश?

टेसू—क्या? क्या? क्या?

साहित्यानन्द—(बैठता हुआ) नहीं समझता तो अपनी ऐसी-तैसी में जा। चल हट, मुझे काम करने दे। धत् तेरे की! बना-बनाया सब व्यर्थ हो गया। मुझे हास्य-भाव अब फिर आरम्भ से उत्पन्न करना पड़ा। (हँसने की कोशिश करता हुआ) आहा! आ! आ! अररररर! अब तो हँसी लुप्त हो गई। आती ही नहीं। आ—आ—आ—

टेसू—(पास आकर) लीजिए आ गया सरकार, कहिए।

शौकत अली कहते हैं, कि गाँधी से लड़ेंगे !!

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

क़ीमा नहीं मिलता, हमें बोटी नहीं मिलती,
रोना तो अब इसका है, कि रोटी नहीं मिलती!
शौकत अली इस ग़म में घुले जाते हैं दिन रात,
अफ़सोस है गाँधी की लँगोटी नहीं मिलती!

* * *

पीछे क़दम अपने, न पड़े हैं, न पड़ेंगे,
जिस बात पर अड़ जाएँगे, हम ख़ूब अड़ेंगे!
यह सुनके हँसी आती है अच्छी तरह सब को,
शौकत अली कहते हैं, कि गाँधी से लड़ेंगे!

* * *

चन्दे के बहाने से, मिलती है यह रोटी भी,
तक़दीर में क़ीमा है, क़िस्मत में है बोटी भी!
यह रङ्ग है फिर उस पर, कहते हैं यह मौलाना,
'गाँधी' के न हम तन पर छोड़ेंगे लँगोटी भी!!

* * *

साहित्यानन्द—(चिढ़ कर) अबे तुझे किसने बुलाया, जो आकर खोपड़ी पर सवार हो गया? उहुँक—उहुँक—मुण्ड पर आरूढ़ हो गया।

टेसू—आप ही ने तो अभी कहा कि आ-आ-आ तब मैं आया।

साहित्यानन्द—अबे गधे—उहुँक—गर्दभा, हाँ अबे गर्दभा, मैं तुझे पुकार रहा था कि हँसने की चेष्टा कर रहा था?

टेसू—आप आ-आ करके हँसना चाहते थे?

साहित्यानन्द—निस्सन्देह। बस अब भाग यहाँ से। पलायन कर। मुझे काम करने दे।

टेसू—(नक़ल करता हुआ) आ! आ! आ! यह किस ढङ्ग की हँसी है? (हँसता हुआ) अहाहाहा? भला ऐसी भी कहीं हँसी होती है? आहाहाहा! आहाहाहा! बाप रे बाप! दम फूल गया।

साहित्यानन्द—अयँ? अयँ? यह क्या? एक तो हमारी हँसी अटक गई और ऊपर से तू हँसता है? खड़ा तो रह पाजी!

(टेसू मेज़ और कुर्सियों के चारों तरफ़ भागता हुआ कभी उनके बीच में खड़ा हो जाता है, कभी बीच से निकल कर दूसरी तरफ़ भागता है। मगर साहित्यानन्द उसका पीछा करता हुआ सिर्फ़ चारों तरफ़ चक्कर लगाता है)

साहित्यानन्द—(दौड़ते-दौड़ते खड़ा होकर) अबे रुक जा। ठहर जा। हाय! हाय! फिर नहीं सुनता। (हाँफता है)

टेसू—(दौड़ता हुआ) नहीं-नहीं, आप मारेंगे।

साहित्यानन्द—(हाँफता हुआ ज़मीन पर बैठ कर) मारता तो अवश्य, परन्तु—परन्तु—आह! परन्तु यदि तू मेरी आज्ञा पालन करे तो क्षमा कर दूँगा।

टेसू—(दौड़ते-दौड़ते ठहर कर) हाँ? अच्छा कहिए, क्या हुकुम है?

साहित्यानन्द—इधर आ! आह! नहीं मारूँगा बे। इधर आ।

टेसू—(ज़रा दूर खड़ा होकर) यह लीजिए। मगर मैं समझ गया। आप यही कहेंगे कि बाहर का दरवाज़ा बन्द कर दो, ताकि कोई आपको लेई से चिपका-चिपका कर पैकेट बनाते देख न ले। इसके लिए आप न घबड़ाइए, उसे मैंने पहले ही से बन्द कर रक्खा है।

साहित्यानन्द—नहीं बे—

टेसू—तब तो आप यह कहेंगे कि मुझे सम्पादक कहा करो।

साहित्यानन्द—नहीं-नहीं, इस समय यह बात नहीं है।

टेसू—हाँ-हाँ, अभी नहीं, दूसरों के सामने, जब आप कुर्सी पर बहुत सँभल कर बैठते हैं, क्योंकि उसकी एक टाँग टूटी हुई है।

साहित्यानन्द—आह! नहीं।

टेसू—बस-बस, समझ गया। आप मुझे भी अपनी तरह अण्ड-बण्ड बोलना सिखाएँगे।

साहित्यानन्द—(चिढ़ कर) फिर नहीं सुनता, बक-बक किए जा रहा है। मैं कहता हूँ कि......

टेसू—जब संसारीनाथ अब कभी आए तो उसे डण्डे से मार भगाओ। यही न? यह तो मैं जानता हूँ।

साहित्यानन्द—तेरी ऐसी-तैसी? सुअर, पाजी, बदमाश कहीं का।

टेसू—और दुष्ट कहना तो आप भूल ही गए।

साहित्यानन्द—अब जो बोलेगा तो मुँह में कपड़ा ठूँस दूँगा। बस चुपचाप मुँह बन्द करके सुन, अन्यथा मारते-मारते......

टेसू—अच्छा अच्छा अच्छा, कहिए कहिए कहिए।

साहित्यानन्द—सुन। आजकल जनता की रुचि भ्रष्ट हो गई है। और वह हास्य को भी साहित्य का अङ्ग मानने लगी है और कहती है कि

इस रस में भी कई भेद है, अर्थात् व्यङ्ग, विनोद, हास्य, उपहास। इन सभों पर पत्र-पत्रिकाओं में एक न एक लेख अवश्य होना चाहिए। अतएव हम सम्पादकगण अपने-अपने पत्रों में हास्य की कुछ न कुछ सामग्री देने के लिए अब विवश हैं। परन्तु मुझे किसी भी हास्य-लेखक का पता नहीं मालूम—व्हुँक—ज्ञात है। इसलिए इस अभाव की पूर्ति मुझे अपने पत्र में स्वयं अपनी लेखनी द्वारा करना पड़ गया।

टेसू—आप कहते क्या हैं?

साहित्यानन्द—फिर बीच में बोला। अभी कहाँ कहता हूँ, अभी तो भूमिका बोल रहा हूँ।

टेसू—तभी समझ में नहीं आती! यह कोई नई बोली है क्या, कि जो बोले वही समझे, दूसरा नहीं?

साहित्यानन्द—अबे भूमिका समझना ठट्टा नहीं होता, आद्योपान्त धैर्यपूर्वक सुनेगा तब समझ में आएगी कि वैसे ही। हाँ, क्या कह रहा था?

टेसू—वही, जो समझ में नहीं आती।

साहित्यानन्द—हाँ, इसी अभाव की पूर्ति करने के लिए मैं अपनी सम्पादकीय टिप्पणियाँ हास्यरस में लिखने का प्रयत्न कर रहा था। यद्यपि हमारे ऐसे उच्चकोटि के साहित्यज्ञ को हास्य की ओर निरादर की दृष्टि से अवलोकना चाहिए, तथापि सम्पादक होने के कारण ग्राहकों के सन्तोषार्थ यह अधम कार्य करने के लिए मुझे विवश होना पड़ा। अस्तु।

टेसू—(साहित्यानन्द को अपनी बातों की धुन में मस्त पाकर—अलग) अब यह सत्यनारायण की कथा शुरू हुई। बस अब चुपके से खसक चलो।

(टेसू आँख बचा कर चल देता है।)

साहित्यानन्द—(उसी तरह) किसी ने बताया कि विपरीत घटनाओं के समावेश से हास्य उत्पन्न होता है, तो किसी ने कहा कि उल्टे ढङ्ग से आशय लिखने में शैली हास्यपूर्ण हो जाती है। परन्तु विपरीत घटना सोचते-सोचते मस्तिष्क में पीड़ा होती है, तो मुँह उल्टा करके लिखने में ग्रीवा टूटने—व्हुँक—भङ्ग होने लगती है। क्योंकि अभ्यास नहीं है। इसीलिए मैंने हास्य लिखने की यह नवीन और मौलिक युक्ति निकाली कि पहिले पेट भर के हँस लो, ताकि जब पेट में हँसी ठसाठस भर जाए तो वह लेखनी द्वारा आप ही आप अवश्य निकलेगी।

टेसू—(बाहर से झाँक कर अलग) ओ हो!

साहित्यानन्द—(उसी तरह) परन्तु खेद! खेद! खेद! तूने सब चौपट कर दिया। मेरे हास्य-भाव को विघ्न डाल कर खेद-भाव में परिवर्तन कर दिया। इस हानि का उत्तरदाता तू है, समझा? (इधर-उधर देख कर) अरे! कहाँ गया बे?

टेसू—(बाहर से झाँकता हुआ) कहिए-कहिए, मैं सुन रहा हूँ।

साहित्यानन्द—वहाँ क्या करने गया?

टेसू—आप कह चुके?

साहित्यानन्द—लगभग। बस अब केवल उपसंहार कहना और रह गया है। परन्तु तू वहाँ—

टेसू—उपसंहार?

साहित्यानन्द—हाँ-हाँ उपसंहार, जिसे कथा तथा वार्ता की दुम—नहीं—पूँछ कहते हैं। परन्तु......

टेसू—अच्छा कुछ सही, लगे हाथों उसे भी उगल डालिए, जब तक मैं खाना खा आऊँ।

साहित्यानन्द—क्या? तू खाना खाने—व्हुँक—भोजन भक्षने चला जाएगा तो मेरी हानि की पूर्ति कौन करेगा? यही तो कहना रह गया था।

टेसू—बहुत भूख लगी है सरकार!

साहित्यानन्द—(उठ कर) तेरे सरकार की ऐसी-तैसी। चल इधर। (झपटता है।)

टेसू—(भाग कर दूसरी तरफ़ जाता है) अच्छा कहिए, क्या करूँ।

साहित्यानन्द—पहिले इधर का दरवाज़ा तो बन्द कर लूँ तब बताता हूँ। नहीं तू पुनरपि भीतर पलायन कर जाएगा। (क्षण भर के लिए उधर जाकर लौट आता है) हाँ, तूने मेरे अत्यन्त उद्योगपूर्ण सञ्चित हास्य-भाव को अपने आगमन से भ्रष्ट करके विलीन कर दिया है, अतएव मुझसे तुझे हास्य फिर से—व्हुँक—पुनः से—एँ-एँ—(अपने जेब की तरफ़ हाथ ले जाता हुआ) हाँ, आविर्भूत करना पड़ेगा। समझा?

टेसू—हाँ।

साहित्यानन्द—क्या?

टेसू—यही अगड़म बगड़म सगड़म तग-ड़म........

साहित्यानन्द—अबे यह क्या?

टेसू—वही जो आप कह रहे थे।

साहित्यानन्द—हरामज़ादा, बदमाश, सुअर का बच्चा कहीं का। मैं अगड़म-बगड़म कह रहा था? अरे! राम! राम! इस मूर्ख से वार्ता करना भाषा का अपभ्रंश करना है। अबे मैं कहता हूँ कि तूने मेरी हँसी बिगाड़ी है, इसलिए तुझे मुझको हँसाना पड़ेगा!

टेसू—रहने दीजिए, आप तकलीफ़ न कीजिए, मुझे आप ही आहाहाहा—आपकी बात पर—आ-हाहाहा! हँसी आ रही है।

साहित्यानन्द—अबे तू मुझको हँसा। फिर नहीं सुनता? अपने ही हँस रहा है। मुझको नहीं हँसाता। गदहा कहीं का (तमाचा उठाता है)।

टेसू—हाँ-हाँ, मारिए मत। नहीं मेरी भी हँसी आहाहाहा—भड़क जायगी। हाथ जोड़ता हूँ, ज़रा हँस लेने दीजिए—आहाहाहा—

साहित्यानन्द—अच्छा तो मुझको भी हँसाता जा, नहीं तो मारता हूँ चपत।

टेसू—क्या? मैं आपको हँसाऊँ?

साहित्यानन्द—हाँ, क्योंकि मुझे हास्य-टिप्पणी लिखना है, तुझे नहीं।

(क्रमशः)

* * *

अपना

[कविवर पं० रामचरित जी उपाध्याय]

हम देखते नहीं क्या? तू देख काम अपना,
तू लूट कर हमें क्यों भरता न धाम अपना?
पर भूलना नहीं तू हम भी मनुष्य ही हैं,
रखना उचित हमें क्या होगा न नाम अपना?

*

तू छोड़ना कभी मत अघमय विचार अपना,
हम भी किया करेंगे दैशिक-प्रचार अपना।
तू डाल-डाल पर है, हम पात-पात पर हैं,
दुश्वार क्या तुझे है? कर ख़ूब वार अपना॥

*

प्यारा किसे नहीं है, सच बोल, देश अपना?
क्या फेंकना उचित है सिर से न क्लेश अपना?
कोढ़ी से कम न काला, सोरे से कम न नीलम,
अच्छा किसे न लगता राकेश-वेश अपना?

*

तू क्रूरता-सहित कम करना न क्रोध अपना,
हम भी न कम करेंगे दृढ़ आत्मबोध अपना।
स्थिर हो चुकी जगत में यह बात शोध करके,
कोई न चाहता है करना विरोध अपना॥

*

तू क्यों दिखा रहा है जो तोड़ ज़ोर अपना?
करता रहे न कैसे संसार शोर अपना?
चलता न वश किसी का बलवान या निबल हो,
जब देश की दशा पर मन है विभोर अपना॥

*

कर ले करा ले कुछ दिन तू गर्व-गान अपना,
हम क्यों बचा बचाया रक्खें न मान अपना?
जब ध्येय है सभी का आगे क़दम बढ़ाना,
तो हम न क्यों दिखाएँ विज्ञान-ज्ञान अपना?

*

क्या जाल है बिछाया तूने विशाल अपना?
हमने विशाल बाँधा कैसा ख़याल अपना?
तू चाल चल अनेकों पर दाल गल न सकती,
पामाल हम रहें क्यों हा फेंक माल अपना?

*

प्रिय है तुझे बड़ा हो कृत्रिम महत्व अपना,
रखना उचित हमें भी कैसे न स्वत्व अपना?
हम शत्रुता किसी से रखते नहीं हृदय में,
तू क्यों दिखा रहा है तृष्णा-परत्व अपना?

*

जपते न क्यों रहें हम स्वातन्त्र्य-मन्त्र अपना?
तू विश्व प्राणहारी मत रोक मन्त्र अपना।
है कौन राष्ट्रवादी जो राष्ट्र को बनाना—
भू पर न चाहता हो बस एकतन्त्र अपना?

*

हम मित्र मानते हैं सबको समान अपना,
तू क्यों विरोध का ही रखता विधान अपना?
तू क्रान्ति की कटारी कर में लिए खड़ा है।
रखना मिलाप हमने माना निधान अपना।

*

पड़ने न देना फीका तू रोष-रङ्ग अपना,
छोड़ें कभी न हम भी औचित्य-ढङ्ग अपना।
सावन से कम न भादों यह जानते सभी हैं,
सपना हमें समझ कर तू खोज सङ्ग अपना॥

* * *

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

दक्षिण के उन भारतीय सत्याग्रहियों का ग्रुप जो हाल ही में गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार कैनानोर जेल से मुक्त हुए हैं। यह चित्र जेल से मुक्त होते ही लिया गया था।

दक्षिण की उन आदर्श राजबन्दिनी महिलाओं का ग्रुप—जो राष्ट्रीय आन्दोलन में जेल गई थीं। ये सारी महिलाएँ गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार वेलोर के ज़िला-जेल से ७ वीं एप्रिल को मुक्त हुई हैं। 'भविष्य' का यह चित्र इन देवियों के जेल से बाहर निकलते ही लिया गया था।

ऊटकमाण्ड के महात्मा गाँधी के एक अनन्य वयोवृद्ध भक्त जो बड़े मनोयोग से महात्मा गाँधी का भाषण सुन रहे हैं। आप हाल ही में जेल से छूटे हैं।

कलकत्ते के सुप्रसिद्ध व्यापारी—श्री० हनुमान प्रसाद जी बागड़िया—पुलिस द्वारा भारतीय महिलाओं पर होने वाले नृशंस अत्याचारों के विरुद्ध टाउन हॉल में एक व्याख्यान देने के कारण आप भारतीय दण्ड-विधान की धारा १२४-अ के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए थे, किन्तु समझौता हो जाने के कारण आप छोड़ दिए गए।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

श्री० गेंदालाल जी—आप आगरा के एक उत्साही कार्य-कर्त्ता हैं। आप प्रभात-फेरी में भाग लेने के कारण सर्व-प्रथम गिरफ़्तार होने का सौभाग्य प्राप्त कर चुके हैं।

श्री० भगवान सेवक—आप आगरा डिस्ट्रिक्ट कॉङ्ग्रेस कमिटी के भूतपूर्व सभापति हैं। आपको संयुक्त प्रान्त का प्रथम सत्याग्रही क़ैदी होने का गौरव प्राप्त है। आप विगत १२वीं मार्च, सन् १९३० को ठीक 'डाण्डी-दिवस' को पकड़े गए थे। आपको ६ महीने की सज़ा दी गई थी।

श्री० महेन्द्र जी—आप आगरा उत्साही कार्यकर्त्ता हैं और ग़ैर-क़ानूनी पर्चा वितरण करने के अपराध में छः महीने की सज़ा काट चुके हैं।

श्री० सद्गोपाल जी—जिन्होंने हाल ही में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से बी० एस-सी० की परीक्षा मान सहित पास की है। आप अपने ही बनाए हुए नए यन्त्रों की परीक्षा कर रहे हैं।

कॉमरेड उस्मान हमीद क्वेटावाला—आप कराची डिस्ट्रिक्ट कमिटी तथा डिस्ट्रिक्ट ख़िलाफ़त कमिटी के सेक्रेटरी हैं। 'दर्दे-रतन' नाम की एक पुस्तिका का प्रचार करने के कारण आज कल आप जेल में हैं।

श्री० रहमतुल्ला—आप अनन्तपुर के म्युनिसिपल हाई-स्कूल के छात्र हैं। आपने पाश्चात्य खेलों के लिए प्रथम पुरस्कार पाया है।

मि० योगप्पा पिल्लई—आप ८० वर्ष के वृद्ध वदाकाङ्कुलम् (मद्रास) के रहने वाले प्रसिद्ध ईसाई हैं। आपकी भगवद्भक्ति से प्रसन्न होकर 'पोप' ने आपको 'वेन मरेरी' नामक स्वर्ण-पदक प्रदान किया है।

डी० ए० वी० कॉलेज देहरादून के १३ वर्षीय छात्र—श्री० हरिदयाल गुप्त—जिन्हें राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के कारण ३ मास का कठिन कारावास-दण्ड दिया गया था और जो हाल ही में रिहा हुए हैं।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ
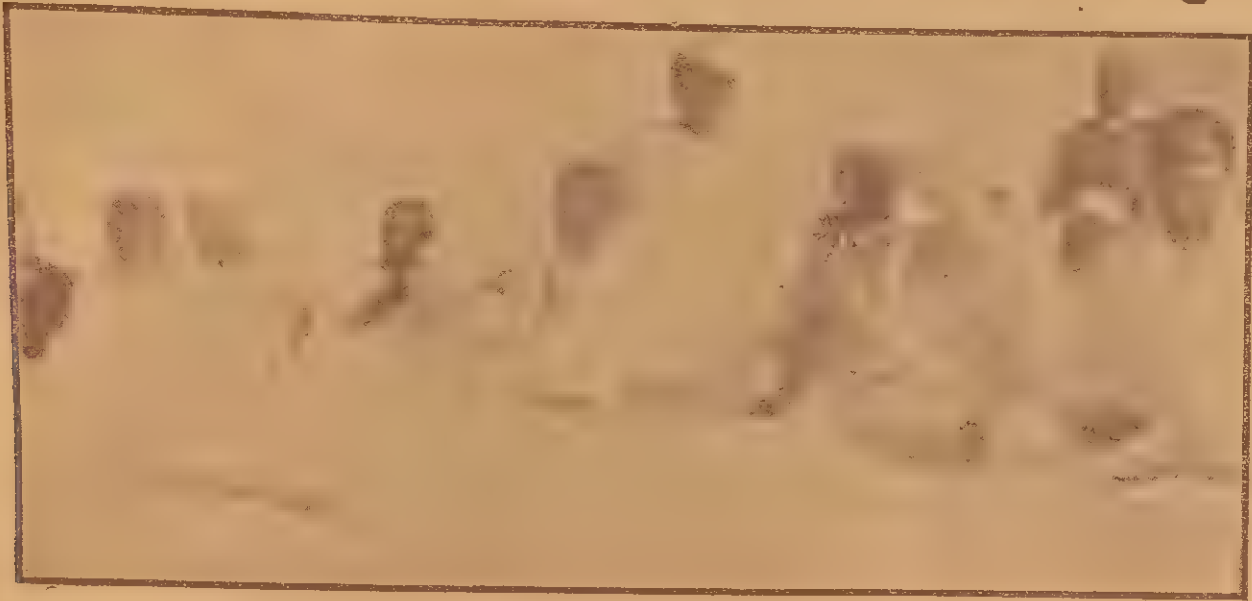
कराची काँङ्ग्रेस मञ्च पर बैठे हुए (बाईं ओर से) श्री० सेनगुप्त, आचार्य कृपलानी, महात्मा गाँधी, पं० मालवीय जी और श्री० सुभाषचन्द्र बोस।
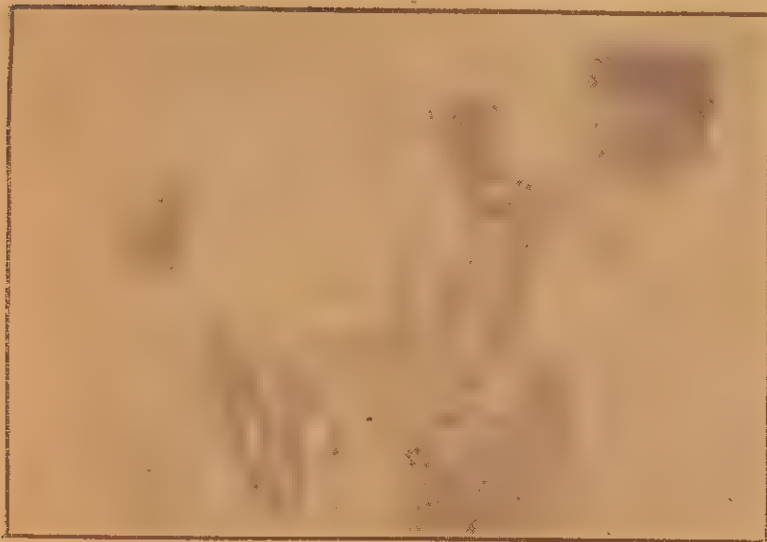
बाईं ओर से—पण्डित मदनमोहन मालवीय, अमेरिकन जर्नलिस्ट मि० कार्लटन वास्कवर्न (गाँधी टोपी वाले) और (हाथ जोड़े हुए) बोलपुर शान्ति-निकेतन के मि० बी० यु० क्युकर।
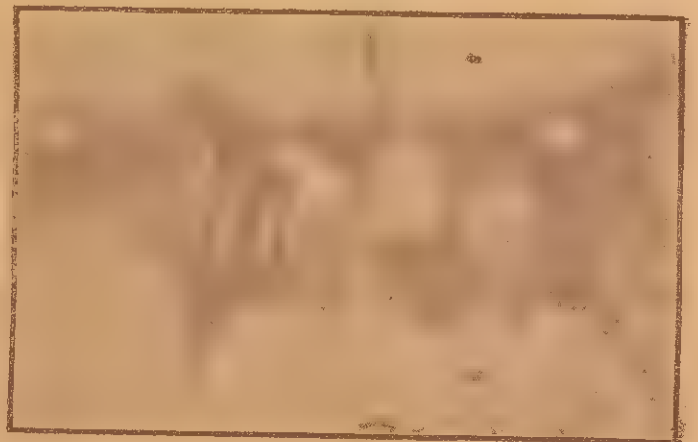
राष्ट्रपति सरदार पटेल आचार्य गिडवानी से बातचीत कर रहे हैं।

साहित्य-भूषण पं० वंशीधर मिश्र, एम० ए०, एल्-एल्० बी०—आप लखीमपुर-खीरी के प्रमुख राष्ट्रीय कार्यकर्ता हैं और ६ मास तक कारागार में रह कर हाल ही में जेल से मुक्त हुए हैं।

करांची के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय कार्यकर्ता—श्री० सेठ रामजी भाई—आपने कराची-काँङ्ग्रेस की स्वागतकारिणी सभा के सहायक प्रधान-मन्त्री की हैसियत से प्रशंसनीय कार्य किया है।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

ग्वालियर के उत्साही कॉङ्ग्रेस कार्यकर्ता—पं० विश्वम्भर दत्त सङ्कधर—आप हाल ही में जेल से छूटे हैं।

त्रिचनापल्ली (मद्रास) की अखिल भारतवर्षीय खादी-प्रदर्शिनी—उद्घाटनकर्ता आचार्य पी० सी० रॉय बीच में खड़े हैं।

कानपुर के उत्साही राष्ट्रीय कार्यकर्ता—भाई होरीलाल सक्सेना—आप तीन बार जेल हो आए हैं।

नैनीताल की महिला कॉङ्ग्रेस कमिटी की कुछ सदस्याएँ। बीच में (× निशान देखिए) काशीपुर (नैनीताल) कॉङ्ग्रेस कमिटी की अध्यक्षा कुँवरानी साहब काशीपुर, बैठी हैं। आपके पति-देवता—कुँवर आनन्दसिंह जी संयुक्त-प्रान्त के पहिले ज़मींदार हैं, जिन्हें भारतीय दण्ड-विधान की धारा १२४-ए (राजविद्रोह) के लिए ३ वर्ष का कारा-वासदण्ड दिया गया था।

पुलिस को भड़काने के अपराध में जेल जाने वाले सर्व-प्रथम मारवाड़ी युवक—श्री० रामस्वरूप भालोठिया (आगरा)—जो हाल ही में जेल से छूटे हैं।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रिन्सिपल पं० शेषाद्रि, एम० ए०—आप डेनवर (अमेरिका) में आगामी जुलाई में होने वाले अखिल विश्व-शिक्षा-सम्मेलन के लिए भारतीय प्रतिनिधि चुने गए हैं।

कानपुर के उत्साही राष्ट्रीय कार्यकर्ता—श्री० रामप्रसाद जी निगम (रामा बाबू) आप तथा आपका सारा परिवार जेल गया था। यह चित्र इस परिवार के हाल ही में जेल से छूटने पर लिया गया था।

दम में जब तक दम रहेगा, यह करेगा सामना ! क्या तमाशा दिल को समझा है तुम्हारे तीर ने ??
कोई समझे या न समझे, मैं तो समझा लफ़्ज़-लफ़्ज़; चुपके-चुपके कह दिया, सब कुछ तेरी तस्वीर ने !

तीर

इश्क़ की ख़ुद्दारियों का राज़[1] अफ़शा[2] कर दिया,
हुस्न की दुनिया में, चुटकी से निकल कर तीर ने ।
—"अख़गर" लखनवी

यह बताओ तो, करोगे किस पर अब मश्क़े-जफ़ा,
दिल की हालत ग़ैर कर डाली तुम्हारी तीर ने !
—"रहबर" सीतापुरी

और भी बेचैन दिल को कर दिया तस्वीर[3] ने,
क्या उड़ा ली दस्ते-क़ातिल की नज़ाकत तीर ने ?
यह मेरे दिल का लहू है, या जिगर का ख़ून है ।
देख तो लो किसको बींधा है तुम्हारे तीर ने ?
एक दिल बाक़ी रहा था, हसरतों का सोगवार,
वह भी ऐ क़ातिल, न छोड़ा आज तेरे तीर ने !
—"नश्तर" मेरठी

क्या कलेजा थाम कर फ़रियाद की नख़चीर[4] ने,
उस कमाँकश को भी तड़पाया बहुत इस तीर ने ।
हम भी क़ायल हो गए, दुनिया भी क़ायल हो गई,
नाम पैदा कर लिया काफ़ी तुम्हारे तीर ने ।
—"शातिर" इलाहाबादी

जब हवा बाँधी इधर, शौक़े दिले नख़चीर ने,
उस तरफ़ लीं करवटें, तरकश में उनके तीर ने ।
कोई देखे यह मुहब्बत में, मुहब्बत की कशिश,
लीं मेरे दिल की बलाएँ, बढ़ कर उनके तीर ने ।
पेशवाई के लिए पहलू में दिल बेताब है,
क्या इशारा कर दिया, तेरी नज़र के तीर ने ।
क्यों न दिल वाले मनाएँ, अपने-अपने दिल की ख़ैर,
पर निकाले, फिर नए सर से तुम्हारे तीर ने ।
दम में जब तक दम रहेगा, यह करेगा सामना,
क्या तमाशा दिल को समझा है, तुम्हारे तीर ने ?
देखना मुश्किल हुआ, पहिचानना मुश्किल हुआ,
इस तरह ज़ख़्मी किया, दिल को तुम्हारे तीर ने ।
आहे पुरतासीर से भी, वह बहुत डरने लगा,
किस क़यामत की हवा बाँधी हवाई तीर ने ।
क्यों न मैं शिकवा करूँ, तेरी निगाहे शोख़ का,
दिल उड़ाया है मेरा, इस उड़ने वाले तीर ने ।
दिल में आया, दिल में आकर, पार दिल से हो गया,
तीर वाले, चाल क्या सीखी है तेरे तीर ने ।
ख़ूने "बिस्मिल" से कुछ ऐसी सुर्ख़रूई[5] मिल गई,
रङ्ग दुनिया में जमाया और तेरे तीर ने ।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—भेद, २—ज़ाहिर, ३—देरी, ४—शिकार किया हुआ, ५—धाक बँधी,

ज़ञ्जीर

ख़्वाब में आया जो उनकी चश्मे मै गूँ[6] का ख़्याल,
आँखें ज़िन्दा में दिखाईं हलक़ए ज़न्जीर ने ।
—"अरमान" कानपुरी

हाथ मैंने कब लगाया है, तुम्हारी ज़ुल्फ़ को,
बेख़ता जकड़ा है मेरे पाँव को ज़न्जीर ने ।
—"राना" गवालियारी

हो गया असरारे[7] ज़िन्दा से ज़माना बाख़बर,
सबको चौंकाया मेरी हिलती हुई ज़न्जीर ने ।
—"शातिर" इलाहाबादी

केसर की क्यारी

(पहला हिस्सा)

'भविष्य' के विगत खण्ड में केसर की क्यारी शीर्षक के अन्तर्गत जितनी कविताएँ प्रकाशित हुई हैं, पाठकों के अनुरोध के कारण उनका एक सुन्दर संग्रह इसी नाम से शीघ्र ही प्रकाशित होगा और बहुत सी

नई कविताएँ भी

जोड़ दी जावेंगी । इस पुस्तक का सम्पादन कविवर 'बिस्मिल' दूसरी बार करेंगे, इसीसे पुस्तक की उत्तमता का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है । छपाई-सफ़ाई दर्शनीय होगी, पुस्तक सजिल्द प्रकाशित की जायगी । मूल्य लगभग २) रु० होंगे । शीघ्र ही अपना ऑर्डर रजिस्टर करा लीजिए, नहीं तो पछताना पड़ेगा ।

—व्यवस्थापक 'चाँद'

शमशीर

जान कर इसको तबर्रुक बाँट लें सब ख़ूबरू[8],
कर दिए जो दिल के टुकड़े आपकी शमशीर[9] ने ।
—"राना" गवालियारी

मेरे शौक़े जुबह की नाकामियाँ जाती रहीं,
आज सब अरमान पूरे कर दिए शमशीर ने ।
—"शाकिर" गवालियारी

जूए[10] ख़ूँ मक़तल के अन्दर दे रहा है क्या बहार,
गुल खिलाए हैं नए क़ातिल, तेरी शमशीर ने ।
दूर दम भर में हुआ सर से ख़ुमारे ज़िन्दगी,
काम आसाँ कर दिया, क़ातिल तेरी शमशीर ने ।
—"सिद्दीक़" देहलवी

६—मदभरी, ७—भेद, ८—अच्छी सूरत वाले, ९—तलवार, १०—नदी

तस्वीर

गो बहुत रोका लबे ख़ामोश की तक़रीर[11] ने,
राज़े उल्फ़त कह दिया, लेकिन तेरी तस्वीर ने ।
—"अख़गर" लखनवी

हुस्न के जलवे हैं, शर्मिन्दा निगाहे शौक़ से,
नक़्शा खींचा है, कुछ ऐसा यार की तस्वीर ने ।
—"अफ़ज़ल" इटावी

कब यह मुमकिन है, कि हट जाए ज़रा सी देर को,
बाँध रक्खा है नज़र को चाँद सी तस्वीर ने ।
—"जौहर" मीथुरावी

बुतपरस्ती[12], मेरे हक़ में, हक़-परस्ती हो गई,
दे दिया तेरा पता, मुझको तेरी तस्वीर ने ।
—"ज़िया" देबान्दपुरी

महवो बेख़ुद हो गया, उसका सरापा[13] देख कर,
कर दिया तस्वीर मुझको यार की तस्वीर ने ।
—"शाकिर" गवालियारी

सूरते यकता थी, होती किस तरह काग़ज़ पे नक़्श,
रङ्ग मानी[14] कर दिया फीका तेरी तस्वीर ने ।
—"सिद्दीक़" देहलवी

कौन कहता है, मुहब्बत की ज़बाँ होती नहीं,
कह दिया सब कुछ तेरी मुँह-बोलती तस्वीर ने ।
—"शैदा" कपूरथली

दिल बचाया हर तरह गो आशिक़े दिलगीर ने,
उसको अपना कर लिया, लेकिन तेरी तस्वीर ने ।
सर गुज़श्ते[15] ग़म कही यों आशिक़े दिलगीर ने,
हाथ फैलाए लपटने को तेरी तस्वीर ने ।
जब किया इज़हारे-ग़म कुछ आशिक़े दिलगीर ने,
किन बुरी नज़रों से देखा आपकी तस्वीर ने ।
हो गई चुपचाप दुनिया, दिल की दुनिया देख कर,
कर दिया तस्वीर आलम को, इसी तस्वीर ने ।
घर की ज़ीनत के लिए, सब मोल लेते थे सबीह[16],
मोल सबको ले लिया, लेकिन तेरी तस्वीर ने ।
अहले-महफ़िल नालओ फ़रियाद कर सकते नहीं,
सबको ख़ामोशी सिखाई, आपकी तस्वीर ने ।
नक़्शे हैरत बन गया, ऐशो-ग़म को देख कर,
मेरी आँखें खोल दीं इस दोरुख़ी तस्वीर ने ।
कोई समझे या न समझे, मैं तो समझा लफ़्ज़-लफ़्ज़,
चुपके-चुपके कह दिया सब कुछ तेरी तस्वीर ने ।
जिस्मे-इन्साँ से खुला राज़े मआले[17] ज़िन्दगी,
ख़ूब यह ख़ाका उड़ाया ख़ाक की तस्वीर ने ।
हज़रते 'बिस्मिल' के दिल का आज नक़्शा और है,
नीम-बिस्मिल कर दिया, क़ातिल तेरी तस्वीर ने ।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

११—बातचीत, १२—मूर्ति-पूजा, १३—सर से पैर तक, १४—चीन का एक मशहूर चित्रकार, १५—हाल १६—तस्वीर; १७—नतीजा ।

आधुनिक राजपूताना

निरङ्कुश शासन के गुण और दोष

["एक भूतपूर्व उच्च कर्मचारी"]

ब्रिटिश भारत के निवासी राजपूताने की वास्तविक स्थिति से बहुत कम परिचित हैं। इसका कारण यह है कि महाराजा अलवर और बीकानेर तो अपने भाषणों में अपने शासन को रामराज्य बतलाते हैं और ब्रिटिश भारत के उग्र राजनैतिक लोग उसको कंसराज्य कहते हैं। अभी पाठकों ने "लीडर" में पढ़ा होगा कि महाराजा बीकानेर, अलवर, धौलपुर आदि जब गोलमेज़ परिषद् में देश-हित करके अपनी-अपनी राजधानियों को लौटे, तो उनकी भक्त प्रजा ने उनका कैसा स्वागत किया। ऐसा प्रकाशित किया गया था कि इन प्रजाप्राण नरेशों के वियोग से लोग व्याकुल थे और अधीर हृदय से उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। जब स्वामी पधारे तो निर्निमेष नेत्रों से प्रजा ने उनको देखा, राज्य में आनन्द छा गया, सर्वत्र मङ्गल-ध्वनि होने लगी और लोगों के हर्ष की सीमा न रही। साथ ही हम यह भी सुनते हैं कि जाम साहब ने नमक बेचने का ठेका दे रक्खा है। जोधपुर में तीन सज्जनों को केवल इसलिए जेल में ढकेल दिया गया है, कि उन्होंने एक सभा करने का प्रयत्न किया था। बूँदी में कुछ ही वर्ष पूर्व रियासत के सिपाहियों ने स्त्रियों को भालों से छेद डाला था। बीजोलिया में न्याय-भिक्षु कृषकों को घोर यन्त्रणाएँ दी गई थीं। कोटा और टोंक में भूखे लोगों ने भारी बलवे कर डाले थे। अलवर-सरकार ने नीमूचाणों को तोपों से भून डाला था। अभी राजकोट के ठाकुर ने कई सत्याग्रहियों को लॉरी में भर कर अपनी रियासत से बाहर एक जङ्गल में छोड़वा दिया है। और कई रियासतों ने सत्याग्रह-संग्राम में सम्मिलित होने वाले अपने राज्य के निवासियों को देश से निर्वासित कर दिया है।

इस प्रकार, रामराज्य और कंसराज्य दोनों के चित्र साथ-साथ ही लोगों के सामने रक्खे जाते हैं। इससे पाठक भुलावे में पड़ कर कभी राजपूताने में सतयुग की और कभी पाशविक अत्याचार की कल्पनाएँ करने लगते हैं। वास्तव में राजपूताने की रियासतों में न कंसराज्य है और न रामराज्य। वहाँ निरङ्कुश या अनियन्त्रित राज्य है। महाराजाओं का वचन ही क़ानून और इन्साफ़ है। इसका यह अभिप्राय नहीं, कि इन रियासतों में लिखित क़ानून है ही नहीं और सदैव महाराजा मनमाने फ़ैसले दिया करते हैं। अधिकांश रियासतों में ब्रिटिश भारत का ही क़ानून जारी है। दो-तीन रियासतों में न्याय और प्रबन्ध-विभाग पृथक कर दिए गए हैं। परन्तु यह किसी महाराजा ने स्वीकार नहीं किया है कि शासन का सञ्चालन भी क़ानून के अनुसार ही होगा। क़ानून उसी समय तक क़ानून है, जब तक महाराजा साहब उसको मानते हैं। यदि क़ानून का पालन करने से उनकी इच्छा की पूर्ति न होती हो तो फिर वह क़ानून क़ानून नहीं है। ऐसी परिस्थिति में शासक के मुख से जो शब्द निकलें वही क़ानून हैं। यों तो प्रजा-सत्तात्मक राज्यों में भी राष्ट्रपति या नरपति को कुछ विशेषाधिकार होते हैं, परन्तु इन अधिकारों का प्रयोग सचिव-मण्डल की सम्मति से जनहित-साधन के निमित्त किया जाता है। ऐसे अधिकारों में और राजपूताने के शासकों के अधिकारों में ज़मीन-आसमान का अन्तर है। महाराजागण अपनी सत्ता का प्रयोग काम, क्रोध, लोभ या मोह की तरङ्ग में आकर करते हैं और नियन्त्रित शासक किसी विषम स्थिति के निवारण के लिए।

शासन की प्रत्येक प्रणाली में गुण भी होते हैं और दोष भी। यूनान के प्रसिद्ध नीतिज्ञ हकीम अरस्तू एकतन्त्र शासन को ही सर्वोत्तम शासन मानता है। परन्तु साथ ही वह यह भी कहता है, कि सत्ता के दुरुपयोग की इसी प्रणाली में सर्वाधिक सम्भावना है। यदि किसी प्रकार यह सम्भव हो सके कि राजा लोग सदैव प्रजाहित-चिन्तक ही बनते जावें और अपनी शक्ति का कभी दुरुपयोग न करें, तो एकतन्त्र शासन के बराबर कोई शासन ही नहीं है। प्रजातन्त्र विधान सत्ता के दुरुपयोग को रोकने का साधन है। कभी स्वार्थवश और कभी अज्ञानवश शासक अपनी शक्ति का अन्यथा प्रयोग करने लग जाता है। जब रक्षक भक्षक बनने लगता है तो उसको रक्षक ही बनाए रखने के लिए प्रजा उसके अधिकारों को सङ्कुचित तथा नियन्त्रित कर देती है। यदि प्रजा को ऐसा करना ही न पड़े तो फिर कहना ही क्या ? कवि पोप कहता है कि "शासन-प्रणाली के स्वरूप के विषय में विवाद करना मूर्खों का कार्य है। वही प्रणाली सर्वोत्तम है जो लोक-हित-साधक हो।" प्राचीन भारत में सब प्रकार की शासन-प्रणालियाँ प्रचलित थीं, परन्तु एकतन्त्र राज्य का प्राधान्य था। शास्त्रकारों ने राजा को अष्ट दिग्पालों के अंश का पुञ्ज माना है और उसकी आज्ञा मानना प्रजा का धर्म बतलाया गया है। साथ ही प्रजाहित-साधन राजा का प्रथम कर्तव्य निश्चित किया है। जो राजा कर ग्रहण करके उसको लोक-कल्याण में नहीं लगाता, उसको महाभारत में दस्यु अर्थात् चाण्डाल कहा गया है। निरङ्कुश सत्ता की भयङ्करता इस प्रकार के उपदेशों से दूर नहीं हो सकती। धर्म और कर्तव्य की भावना ने केवल एक ही अशोक का निर्माण किया। अहल्याबाई और रावरतन के समान न उनके पूर्वज थे और न उनकी सन्तान। अनियन्त्रित सत्ता के दुरुपयोग की अधिक सम्भावना तो है और सदुपयोग की कम। राजपूताने का इतिहास और उसकी वर्तमान अवस्था इस बात का प्रमाण है।

एकतन्त्र शासन में सब से बड़ा दोष तो यह है, कि राज्य का शासन एक सा नहीं रहता। कभी वह सुधरता है और कभी बिगड़ता है। बूँदी में एक नरेश ऐसे हुए थे, जिन्होंने अपने दुराचारी राजकुमार की हत्या करने वाले को दण्ड नहीं दिया था। फिर उनके बाद एक ऐसे भी हुए जो मद्य पीकर एक सूखे तालाब में शिकार करने चले गए। उसी समय घोर वर्षा होने लगी और तालाब पानी से भरने लगा। तो भी राव राजा साहब तालाब में से नहीं निकले और वहीं उनकी मृत्यु हो गई। एक नरेश के समय में बूँदी विद्या के लिए दूसरी काशी समझी जाती थी, परन्तु इस समय वहाँ एक नाम-मात्र का टूटा सा अङ्गरेज़ी स्कूल है, जहाँ से कभी-कभी कोई लड़का मैट्रिक पास कर लेता है। भूतपूर्व रावराणा झालावाड़ विद्या के बड़े प्रेमी थे। अपनी कोठी में उन्होंने अनेक सद्ग्रन्थों का उत्तम संग्रह किया था, परन्तु वर्तमान राजराणा साहब ने सब पुस्तकों को एक तरफ़ रखवा दिया है। महाराजा रामसिंह जी ने जयपुर में आर्ट्स कॉलेज, संस्कृत कॉलेज, महाराजा कॉलेज, कन्या-पाठशाला आदि की स्थापना की थी और अन्य कई प्रजा-हित के कार्य किए थे। महाराजा माधोसिंह ने उनको किसी प्रकार निभाया। पर क्या पता अब नवीन महाराजा क्या करते हैं। उस दिन "लीडर" में समाचार प्रकाशित हुआ था, कि उपयुक्त इमारत के अभाव से आगरा युनिवर्सिटी महाराजा कॉलेज जयपुर से सम्बन्ध विच्छेद करना चाहती है। महाराणा फ़तेहसिंह जी के देहावसान के पश्चात् से ही उदयपुर की गति और की और ही हो गई है। सर शुकदेव प्रसाद ने वहाँ पधार कर जो महाराणा से अङ्गरेज़-स्तोत्र का पाठ करवाया था, वह केवल कल की बात है। वर्तमान महाराजा बीकानेर के पिता उन्नत शासक नहीं थे, पर इन्होंने अपने शासन-

काल में अच्छी उन्नति कर दिखाई है। तो भी क्या गारण्टी है कि इनके बाद भी यह उन्नति होती रहेगी ?

इस प्रकार निरङ्कुश परम्परा के कारण विकासात्मक उन्नति नहीं होने पाती। कभी शासन बिगड़ता है और कभी सुधरता है। एक महाराजा के शासन-काल में जो सुधार होता है, वह दूसरे महाराजा के समय में नष्ट हो जाता है। शासकों की व्यक्तिगत तरङ्गों पर असहाय प्रजा सूखी घास की भाँति कभी इधर और कभी उधर तैरा करती है। जब एक महाराजा मरता है तो प्रजा में खलबली मच जाती है। कर्मचारीगण सब त्रस्त हो जाते हैं। ज़मींदार चिन्ता करने लगते हैं और सेठ-साहूकार अनेक प्रकार के सङ्कल्प-विकल्प में पड़ जाते हैं। नए महाराजा साहब कृषि-कर बढ़ावेंगे या घटावेंगे, कौन हाकिम अपने पद पर टिका रहेगा और कौन निकाला जावेगा, वेतन घटेगा या बढ़ेगा, व्यापार को उत्तेजन मिलेगा या धक्का पहुँचेगा, किस जागीरदार पर कुदृष्टि होगी और किस पर सुदृष्टि, किस पार्टी का ज़ोर बढ़ेगा और किसका घटेगा, राजप्रासाद में नर्तकियों का सम्मान होगा या मन्त्रियों का, महाराजा मद्य-सेवन करेंगे या शासन-चिन्ता—ऐसी बातें रात-दिन होने लगती हैं। लाश पर गिद्धों के समान जागीरदार और हाकिम नवोदित महाराजा पर टूट-टूट कर गिरने लगते हैं। प्रत्येक जागीरदार उसकी ख़ुशामद, नज़र या रिश्वत के द्वारा अपना बना कर अपने सम्मान की रक्षा, जागीर की वृद्धि और अपने परिवार की प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहता है। प्रत्येक हाकिम उसको अपने पक्ष में करके अन्य कर्मचारियों पर अपना आतङ्क जमाना चाहता है।

जब महाराजा वृद्ध और राजकुमार युवा होने लगता है तो रियासत के उच्च कर्मचारी शनैः-शनैः महाराजा की उपेक्षा और राजकुमार की चाटुकारिता करने लगते हैं। कभी-कभी रियासतों में महाराजा-पार्टी और राजकुमार-पार्टी बन जाती है। उदयपुर में ऐसा ही हुआ था और इस समय एक बड़ी रियासत में भी ऐसा ही हो रहा है। महाराज-कुमार शासन करने को अधीर हो रहे हैं और महाराजा शक्ति का त्याग करके अपने को उनके हाथ का खिलौना बनाने से डरते हैं। जब महाराज-कुमार का ज़माना आता है तो उसके बाप के भक्तों को या तो रुख़सत कर दिया जाता है या अपमानित करके एक तरफ़ बैठा दिया जाता है। जोधपुर में स्वर्गीय महाराजा के समय में सर शुकदेव ही जोधपुर में सब कुछ थे। जब वर्तमान महाराजा गद्दी पर बैठे तो सर शुकदेव को एक गाँव में बैठा दिया गया। उनका केवल पद ही नहीं छीना गया, बल्कि जोधपुर में उनका आना-जाना भी उनके अधिकार में नहीं रक्खा। झालावाड़ के दीवान उमरावसिंह तथा बूँदी के दीवान धन्नालाल के साथ भी यही बर्ताव किया गया। यदि महाराजा पुत्रहीन है, तो स्थिति और भी भयङ्कर रूप धारण कर लेती है। जिनका राजगद्दी पर कुछ भी अधिकार है वे सब महाराजा के कृपापात्र बन कर राज्य-प्राप्ति का प्रयत्न करने लगते हैं। जहाँ दो उम्मीदवार होते हैं, वहाँ दो दल बन जाते हैं। जागीरदार, हाकिम और सेठ-साहूकार सब दो पार्टियों में विभक्त हो जाते हैं। कभी-कभी दूसरी रियासतों के शासक भी इन प्रपञ्चों में पड़ जाते हैं। प्रायः ऐसा होता है कि किसी रियासत का एक उम्मीदवार से कोई विशेष सम्बन्ध होता है और किसी का दूसरे से। इस प्रकार गोदनशीनी (उत्तराधिकार) के विषय में रियासत के जागीरदार और हाकिमों की ही नहीं, बल्कि राजपूताने की अनेक रियासतों की दो पार्टियाँ बन जाती हैं। जागीरदार अपने गाँवों की और हाकिम अपने कर्तव्य की चिन्ता छोड़ कर अपने उम्मीदवार का पक्ष समर्थन करने में और दूसरे उम्मीदवार का पक्ष निर्बल करने में लग जाते हैं। प्रायः यह मामला कई वर्षों तक चलता है और इस अर्से में सब शासन शिथिल हो जाता है। ऐसे समय में गोरे

"याद मरने पे करेंगे मुझे याराने-वतन !"

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

बेहतरी चाहते हो, अपनी जो याराने[1]-वतन,
तुम बनो फ़ख़्रे[2]वतन, शाने वतन, जाने वतन।
एक का एक, नज़र आता है दुश्मन मुझको,
दोस्ती भूल गए अपनी वह याराने वतन।
हसरते दीद नहीं जिनको, नहीं वह आँखें,
दिल वह दिल ही नहीं, जिसको नहीं अरमाने-वतन।
हमको कुछ फ़िक्र नहीं, शर्म नहीं, ध्यान नहीं,
अपना घर भरने लगे लूट के सामाने वतन।
शान थी सारे ज़माने में बहुत कुछ कल तक,
आज मिट्टी में मिली जाती है, सब शाने वतन।
दिल तड़प उट्ठा, हुए आँखों से आँसू जारी,
याद परदेश में आए जो अज़ीज़ाने[3] वतन।
आते-जाते रहे, हर वक़्त हमारे दिल में,
बैठते-उठते, हमेशा रहे अरमाने वतन।
जीते जी क़द्र नहीं अहले वतन में "बिस्मिल",
याद मरने पे करेंगे मुझे याराने-वतन।

१—मित्रगण, २—शिरमौर, ३—कुटुम्बी।

रेज़ीडेण्ट साहब की तरफ़ सबकी आँखें लगी रहती हैं। दोनों तरफ़ से उनकी मेम साहिबा के वास्ते दुर्लभ फलों की डालियाँ, दुर्लभ पदार्थों की भेंट और शिकार के निमन्त्रण पहुँचने लगते हैं। महाराजा भी अपनी इच्छापूर्ति के लिए इन गोरे देवी-देवताओं की पूजा विशेष भक्ति और श्रद्धा के साथ करने लगता है। महाराजा चाहे जिसको गोद नहीं ले सकता। गोदनशीनी उस समय पक्की मानी जाती है, जब भारत-सरकार उसको मञ्जूर कर ले। इसलिए महाराजा को ऐसे गोरे प्रभुओं की शरण ग्रहण करनी पड़ती है, उनकी सरकार में प्रतिपत्ति हो।

जयपुर के स्वर्गीय महाराज ने जब पुत्र गोद लेने का विचार किया तो वहाँ ऐसी ही स्थिति उपस्थित हो गई थी। जयपुर राज्य में ईसरदा और झलाय, ये दो बड़ी जागीरें हैं। इन दोनों कुटुम्बों का राज्य-गद्दी पर अधिकार है। महाराजा ईसरदा से एक लड़के को गोद लेना चाहते थे और सरदार-दल झलाय के पक्ष में था। झलाय से बीकानेर महाराज का स्नेह था और ईसरदा के घराने से कोटा महाराज की रिश्तेदारी थी। अतः ईसरदा का पक्ष महाराजा जयपुर, कुछ सरदार और कोटा-नरेश ने ग्रहण किया और झलाय का पक्ष महाराजा बीकानेर तथा जयपुर के प्रमुख सरदारों ने, जिनके नेता थे चौमू के ठाकुर। बीकानेर की इस समय राजपूताने में धाक है। राजपूत-नरेशों में वे ही राजनीति को समझते हैं और ज़ोरदार भाषा में अपना मत पुष्ट करना जानते हैं। गवर्नमेण्ट में भी उनका काफ़ी मान है। इसलिए स्वर्गीय महाराजा जयपुर को चिन्ता हुई कि शायद गवर्नमेण्ट उनकी इच्छापूर्ति में बाधक बने और ईसरदा से गोद लेने की मञ्जूरी न दे। इस आशङ्का का निवारण करने के लिए जयपुर में ऐसे महापुरुषों को पधराया गया, जो गवर्नमेण्ट में ज़ोरदार समझे जाते थे। डॉक्टर रॉबर्ट्स को, रोग-चिकित्सा छुड़वा कर महाराजा ने गोदनशीनी की चिकित्सा के लिए जयपुर बुलवाया और राज-सभा का प्रधान बना कर सम्पूर्ण राजकार्य उसके सुपुर्द कर दिया। डॉक्टर रॉबर्ट्स वायसराय का इलाज कर चुका था, इसलिए रियासतों का प्रबन्ध करने की विशेष निपुणता भी उसे प्राप्त हो गई थी। जब महाराजा का पक्ष सबल हो गया, तो उन्होंने चौमू के ठाकुर को कौन्सिल मेम्बरी से हटा दिया, उनकी जागीर का कुछ अंश छीन लिया और भारी जुर्माना करके उनसे मिलना तक बन्द कर दिया। वर्तमान जयपुर-नरेश उस समय कोटा महाराज के पास रहते थे और महाराज-कुमार के साथ शिक्षा प्राप्त करते थे। वहाँ उनकी शरीर-रक्षा के लिए कड़ा प्रबन्ध किया जाता था, जिधर जाते थे उधर कई हथियारबन्द राजपूत उनके साथ रहते थे और जहाँ सोते थे उस मकान के आस-पास निरन्तर जागृत सशस्त्र पहरा रहता था। जब गवर्नमेण्ट ने उनको गोद ले लेने की इजाज़त दे दी तो कोटा से बन्द मोटर में उनको जयपुर ले जाया गया था। मोटर के साथ लगभग १०० सैनिक थे और कई गोरे अफ़सर भी। उस समय उनकी दशा लाहौर षड्यन्त्र-केस के सरकारी गवाह इन्द्रपाल से अधिक अच्छी नहीं थी। जो जयपुर में हुआ वही अन्य रियासतों में भी गोदनशीनी के समय होता है। जिस समय कोटा के वर्तमान महाराव को गोद लिया गया था उस समय वहाँ भी भयङ्कर स्थिति उपस्थित हो गई थी, जिसके कारण बरसों तक जागीरदार और हाकिमों में दलबन्दी चलती रही।

उत्तराधिकार सम्बन्धी ऐसी दलबन्दियों का शासन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। कुछ समय के लिए राजकार्य सब चौपट हो जाता है। न महाराजा का अपने काम में मन लगता है और न हाकिमों का। सबको अपने-अपने स्वार्थों की रक्षा की चिन्ता हो उठती है। ये सब अनियन्त्रित सत्ता के कुपरिणाम हैं। यदि शासक की व्यक्तिगत तरङ्गों से शासन-स्वरूप न बदलता होता तो उत्तराधिकार के समय रियासत में ऐसा राजनीतिक प्रक्षोभ उपस्थित न हुआ करता। परन्तु जब शासन-सूत्र एक व्यक्ति के हाथ में रहता है।

वह चाहे जिसको बना सकता है और चाहे जिसको बिगाड़ सकता है तो ऐसी दलबन्दियों का होना स्वाभाविक बात है।

जब नवीन शासक गद्दी पर बैठ जाता है तो उसकी व्यक्तिगत अनुरक्तियों के अर्चन-द्वारा सरदार और हाकिम उसके कृपा-भाजन बनने का यत्न करने लगते हैं। स्वयं शासक ही ऐसे लोगों को अपना विश्वासपात्र बना लेता है, जो उसकी इच्छा-पूर्ति में सहायक हों। कर्तव्य-परायणता की क़द्र अनियन्त्रित शासन में दुर्लभ है। यदि महाराजा विलास-प्रकृति का होता है तो जागीरदार या हाकिम में यह साहस नहीं होता कि उसको सन्मार्ग पर लाने की चेष्टा करे। उनको भय रहता है कि यदि राजा ने कोप-दृष्टि से देखा तो उनका सर्वनाश हो जावेगा। इसलिए सरदार और उच्च कर्मचारी हाँ में हाँ मिलाने में ही अपना

परन्तु अधिकांशतः यह बात सच है। दीवान और मोहकमे के हाकिम बनने के लिए तो अत्यन्त आवश्यकता महाराजा साहब और रेज़ीडेण्ट साहब को प्रसन्न करना है। एक समय जयपुर महाराज ने प्रसन्न होकर एक सईस को दीवान बना दिया था। बूँदी के दीवान धन्नामल को कोई भी भाषा भली प्रकार पढ़ना-लिखना नहीं आता। झालावाड़ में ठाकुर उमरावसिंह ने भी इसी प्रकार ऊँचा पद प्राप्त किया है। कई रियासतों में ऐसे जज हैं जिन्होंने मैट्रिक तक की भी योग्यता नहीं प्राप्त की है। तहसीलदार से इञ्जीनियर और डॉक्टर से दीवान बनना रियासतों में कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ऊँचा पद महाराजा की कृपा का फल होता है, योग्यता का नहीं।

विलासी नरेशों की अपव्ययता के कारण रियासतों में प्रायः दिवाले निकल जाते हैं। महा-

ऊसर भूमि को उपजाऊ बना कर रियासत के कृषकों का कल्याण किया है। अभी अलवर-नरेश ने तरङ्ग में आकर तत्काल एक कॉलेज की स्थापना कर दी, जिसमें एम० ए० तक पढ़ाई होती है। कोटा-नरेश स्वयं सब विभागों का निरीक्षण करते हैं। राज्य की आय का केवल थोड़ा सा अंश अपने ऊपर व्यय करते हैं, और प्रजा के दुख-दर्द को सुनने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। काशी विश्वविद्यालय के निर्माण में राजपूताने की रियासतों ने विपुल सहायता दी है। कार्यशील नरेश तुरन्त अपने राज्य को उन्नत कर देता है। दुख की बात यह है कि ऐसे अच्छे उदाहरण बहुत कम हैं और यह उन्नति विकास नहीं पा सकती। इसमें वास्तव में महाराजाओं का दोष नहीं है। आखिर वे हैं तो इन्सान ही, मानव दुर्बलताओं से वे परे कैसे हो सकते हैं? दोष है अनियन्त्रित
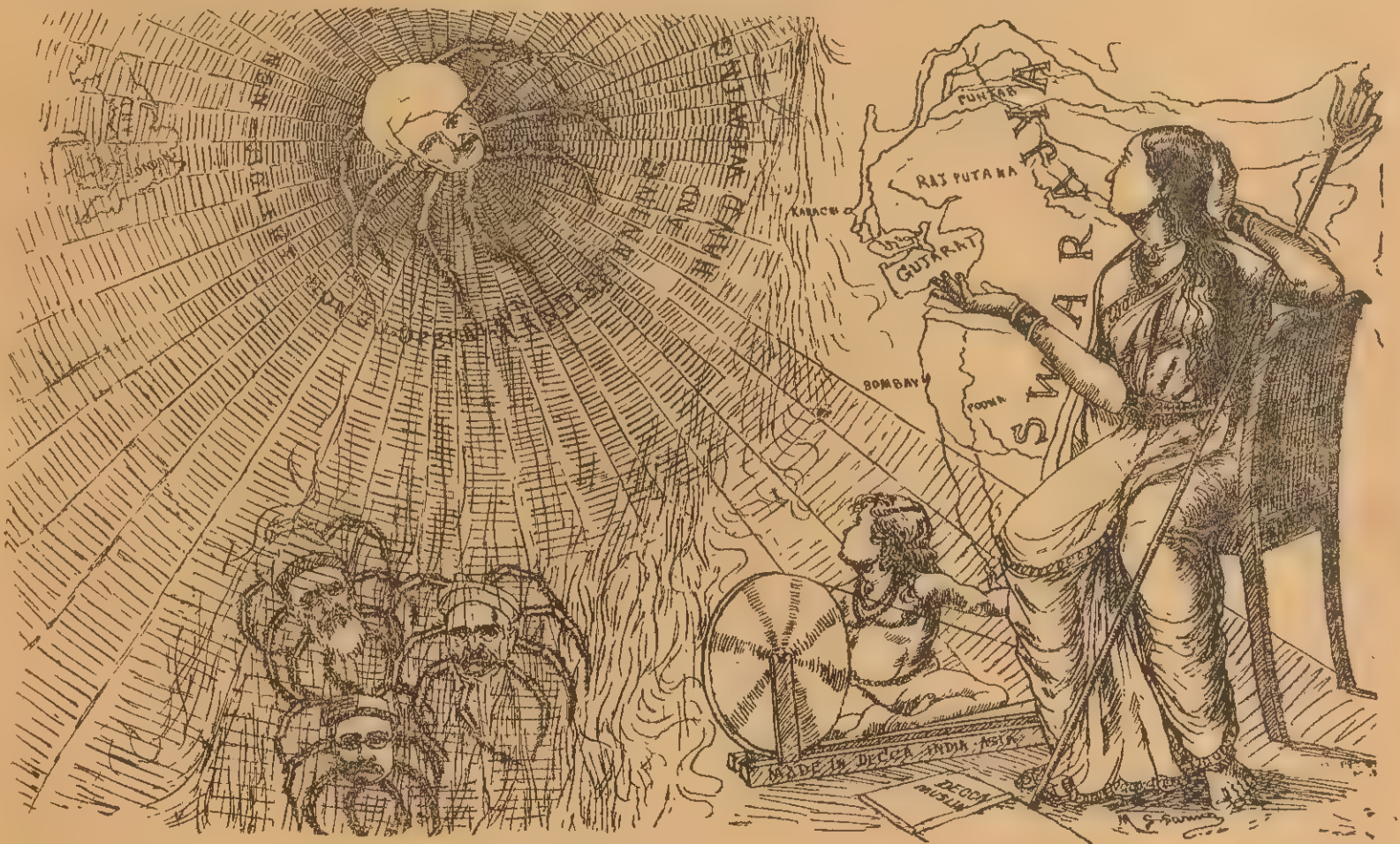
अहिंसात्मक असहयोग का अपूर्व जाल

शान्तिमय असहयोग के जटिल जाल के कोमल, किन्तु दीर्घ तारों में फँस कर ६,००० मील के फ़ासले पर निश्चिन्त बैठा हुआ इङ्गलैण्ड आज समीप खिंच आया है। पुरानी 'मकड़ियों' के जाल छिन्न-भिन्न हो चुके हैं। चर्खे वाला कोमल-काय ढाका-शिशु समुत्सुक दृष्टि से पुनः अपने 'मसलिन' के विश्वव्यापी प्रचार का सुख-स्वप्न देख रहा है। और स्वराज्य की प्रत्याशा में बैठी हुई बन्धन-विपीड़िता भारत-माता करुण कातर, किन्तु आशा-भरी नज़रों से अपनी प्यारी 'मकड़ी' की ओर निहार रही है। कैसी विचित्र मकड़ी है और कैसा है, अपूर्व उसका जाल!

कल्याण समझते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि महाराजा की विलासाग्नि को अधिकाधिक भड़काया जाता है और लोग इस प्रकार अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। जो भोग-विलास में सहायता देते हैं उनको ऊँचे-ऊँचे पद मिलने लगते हैं और रियासत में उनकी ही तूती बोलने लगती है। अतः रियासतों में उच्च पद प्राप्त करने के लिए विशेष योग्यता की उतनी आवश्यकता नहीं होती जितनी महाराजा साहब को प्रसन्न रखने में कुशलता की। कुछ रियासतें ऐसी भी हैं जिनमें ऐसा नहीं होता,

राजा को जिस बात का शौक़ हो गया वह तो पूरा होना ही चाहिए, चाहे राज्य-कोष में रुपए हों या न हों। अन्य विभागों का व्यय कम किया जाता है या कर लगाया जाता है। इससे भी काम न चले तो फिर ऋण लिया जाता है, या हीरे, जवाहर बेचे जाते हैं। इस प्रकार प्रजा का सुख और सम्पत्ति राजा की विलासाग्नि में स्वाहा होने लगता है।

इसमें सन्देह नहीं कि निरङ्कुश शासन में गुण भी हैं। महाराजा बीकानेर ने नहर-निर्माण द्वारा

शासन सत्ता का। इस शासन-विधि का अन्त होना चाहिए। नरेशों की सत्ता को सङ्कुचित और नियन्त्रित किए बिना रियासतों में कोई चिरस्थायिनी उन्नति नहीं हो सकती और न स्वतन्त्र भारत के साथ उनका संयोग ही हितकर हो सकता है। वायसराय ने गत १६ तारीख़ के भाषण में यह स्वीकार किया था कि रियासतों में भारी सुधारों की आवश्यकता है। महात्मा गाँधी कह ही चुके हैं कि निरङ्कुशवाद और प्रजातन्त्रवाद का मेल कैसा?

* * *

देवी सरोजिनी नायडू

(संक्षिप्त परिचय)

[श्री० ????]

प्राक्कथन

कविता ईश्वरीय विभूति है। जिस पर जगन्माता की परम कृपा होती है, उसी पुण्यात्मा को यह दिव्य विभूति प्राप्त होती है। कविता का प्राण है रस और भारतीय ऋषि ने इस रस को परमात्मा का आनन्द-स्वरूप माना है। इससे यह भली-भाँति सिद्ध होता है कि कवि के पवित्र महिमामय आसन पर आसीन होना परम पुण्य-फल है। स्वर्ग और संसार की अन्य समस्त विभूतियों के समान यदि इस पुण्य विभूति का भी उपयुक्त उपयोग किया जाय, तो उससे देश, धर्म और समाज की अशेष सेवा और सहायता की जा सकती है। कविता हृदय की भाषा है; इसीलिए वह मानव-हृदय पर पूर्ण प्रभाव डालने में समर्थ होती है। भावों के सुन्दर सुवर्ण-शिखर पर स्थित होकर, आनन्द के उज्ज्वल आवेश में, जब दिव्य कवि जनता को दिव्य सन्देश सुनाता है, तब जनता अपूर्व स्फूर्ति और आवेश के साथ उज्ज्वल आदर्श के पथ पर प्रधावित होने लगती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि कवि ने पराजित को विजय दिलाई है, निराश को उत्साह बँधाया है; दलित को उठा कर खड़ा किया है, प्रसुप्त को जाग्रत किया है और उद्भ्रान्त को सन्मार्ग पर लाकर खड़ा कर दिया है। मानव इतिहास के अध्ययन करने से यह पता चलता है कि जब जगदीश्वरी पददलित, पराजित एवं प्रसुप्त जाति का उद्धार करना चाहती है, तब वह उनके बीच में एक ऐसी ज्वलन्त आत्मा उत्पन्न करती है, जो अपनी कविता से, अपनी वज्र-गम्भीर वाणी से, अपनी कोमल, किन्तु स्फूर्तिमयी पदावली से उनमें एक अभूतपूर्व जागृति उत्पन्न कर देती है और विजय की ओर उन्हें ले जाती है। पराधीन भारत के इस युग में भी एक ऐसी ही महिमामयी आत्मा आविर्भूत हुई है और उसी का संक्षिप्त चरित्र लिखने का आज हमें, पुनीत सौभाग्य प्राप्त हुआ है। सब से बड़े आनन्द की बात तो यह है कि वह उज्ज्वल आत्मा मातृ-स्वरूप में आविर्भूत हुई है और मूर्तिमती कविता के समान सजीव, देश-प्रीति के समान वह हमें—इस पराधीन, पराजित, पददलित, पराक्रान्त भारतवासियों को—विजय की ओर ले जा रही है। कहने की आवश्यकता नहीं कि हम भारत-कोकिला देवी सरोजिनी की ओर सङ्केत कर रहे हैं।

जन्म और बाल्यकाल

सरोजिनी देवी की जन्मभूमि है दक्षिण हैदराबाद और उनका शुभ जन्म-दिन था १३ फ़रवरी सन् १८७९; उनके पिता का नाम था श्रीयुक्त डॉक्टर अघोरनाथ चट्टोपाध्याय; उनके पूर्वज ब्रह्मनगर (बङ्गाल) के रहने वाले थे। श्रीयुत अघोरनाथ जी स्वयं धुरन्धर विद्वान थे; सन् १८७७ में उन्होंने एडिनबरा के विश्वविद्यालय से विज्ञानाचार्य (Doctor of Science) की उपाधि प्राप्त की थी। उसके उपरान्त उन्होंने बॉन में कुछ बाल्यकाल तक अध्ययन किया था। भारतवर्ष में लौटने पर उन्होंने दक्षिण हैदराबाद में निज़ाम कॉलेज की संस्थापना की, और आजन्म शिक्षा के क्षेत्र में वे काम करते रहे। इन्हीं विद्वान पिता की ज्येष्ठ दुहिता हैं देवी सरोजिनी। उन्होंने अपने पिता के अनेक गुणों को प्राप्त किया है। जिस वंश में सरोजिनी देवी का जन्म हुआ है, वह सदा से ही अगाध विद्वत्ता और असीम ज्ञान के लिए प्रसिद्ध रहा है। अघोरनाथ जी भी वैसे ही धुरन्धर विद्वान थे। उनके हृदय में ज्ञान की अशेष पिपासा थी। वे रात-दिन अध्ययन करते थे और उनका अधिकांश समय अपने विज्ञान-मन्दिर ही में व्यतीत होता था। अपने पिता के विषय में स्वयं सरोजिनी देवी ने इस प्रकार

श्रीमती सरोजिनी नायडू

लिखा है—"मेरा अनुमान है कि समस्त भारतवर्ष में ऐसे कदाचित कुछ ही आदमी होंगे, जो विद्वत्ता में मेरे पिता से अधिक हों और ऐसे तो बहुत ही कम होंगे जिन्हें लोग इतना प्यार करते हों।"* अघोरनाथ जी ने विज्ञान की उपासना को ही अपने जीवन का प्रधान लक्ष्य बना लिया था। वे दुखी और दरिद्र की सहायता के लिए सदा मुक्तहस्त रहते थे। देवी सरोजिनी ने लिखा है कि मेरे पिता में वैज्ञानिक रहस्यों के जानने की जो प्रबल आकांक्षा थी, वही मेरे हृदय में सौन्दर्य की उपासना की वृत्ति बन कर प्रतिष्ठित हो गई। कहने का तात्पर्य यह है कि परम विद्वान अघोरनाथ जी की अशेष गुणावली की देवी सरोजिनी उत्तराधिकारिणी हुईं। पिता ने विज्ञान के क्षेत्र में जो परम ज्ञान प्राप्त किया था, दुहिता ने कविता के कानन में उसी ज्ञान को आदि-रस के रूप में उपलब्ध किया।

कविता की स्फूर्ति

हमने ऊपर कहा है कि अघोरनाथ जी का समस्त जीवन शिक्षा-क्षेत्र में व्यतीत हुआ था। ऐसे शिक्षा-तत्वज्ञ के तत्वावधान में बालिका सरोजिनी की शिक्षा प्रारम्भ हुई। अघोरनाथ जी कन्या को भी अपने ही समान विज्ञान की आचार्या बनाना चाहते थे, पर जगन्माता ने तो इस बालिका को किसी और ही उद्देश्य से भारत-माता की गोद में प्रेषित किया था। इसीलिए बाल्यकाल ही से सरोजिनी देवी के हृदय में रस की स्रोतस्विनी प्रवाहित होने लगी थी और जब वह ग्यारह वर्ष की अवस्था में गणित के एक जटिल प्रश्न को लगाने को व्यर्थ चेष्टा कर रही थीं, उसी समय सहसा उन्होंने एक कविता लिख डाली—गणित का प्रश्न उस कविता के प्रवाह में विलीन हो गया। उसी दिन से, ग्यारहवें वर्ष के उस पुनीत प्रभात से, सरोजिनी का कवित्वमय जीवन प्रारम्भ हुआ। १३ वर्ष की अवस्था में उन्होंने १३००पदों की 'झील की रानी'(Lady of the Lake) नामक एक विशाल कविता लिख डाली। इतना ही नहीं, उस त्रयोदश वर्षीया बालिका ने २,००० पंक्तियों का एक नाटक भी लिख डाला और यह नाटक केवल डॉक्टर के इस कथन को अप्रमाणित करने के लिए लिखा गया था कि सरोजिनी बीमार है। उसके उपरान्त किशोरावस्था ही में उन्होंने न मालूम कितनी कविताएँ और लेख लिख डाले। यह दैवी विभूति का ही चमत्कार है, नहीं तो जिस अवस्था में बालक-बालिकाएँ इधर-उधर खेलती कूदती फिरती हैं, उस अवस्था में ही देवी सरोजिनी, सुन्दर छायामय निकुञ्जों में बैठ कर वसन्त-कोकिला के स्वर में स्वर मिला कर कैसे कूक उठतीं?

इटली की यात्रा

सरोजिनी देवी ने अपनी १२ वर्ष की अवस्था में ही मद्रास विश्वविद्यालय की प्रवेशिका परीक्षा (Matriculation Examination) पास कर ली थी। उसके उपरान्त ऊँची शिक्षा प्राप्त करने के लिए वे सन् १८९५ में विलायत भेजी गईं और तीन वर्ष तक वहाँ रह कर उन्होंने किङ्ग्स कॉलेज लण्डन में शिक्षा प्राप्त की। कुछ समय तक वे गिरटन (Girton) में भी अध्ययन करती रहीं, परन्तु उसी समय उनका स्वास्थ्य फिर बिगड़ गया। बाल्यकाल से ही सरोजिनी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। अपने स्वास्थ्य को सुधारने के लिए उन्होंने इटली की यात्रा की। इटली अपनी प्रकृति-माधुरी के लिए जगत्प्रसिद्ध है। इटली दान्ते, वरजिल (Virgil) और पेट्रीआर्क जैसे महाकवियों और दार्शनिकों की जन्मभूमि है; इटली रॉफ़ेल, माइकेल और अञ्जिलो जैसे ललित कलाओं के विशेषज्ञों की जननी है। प्रकृति के मधुर सौन्दर्य की वह लीला-भूमि है; वहाँ का आकाश उज्ज्वल, जलवायु स्वास्थ्यकर और पृथ्वी ललित लीलामयी है। सुन्दरी इटली ने देवी सरोजिनी के हृदय-कमल को अपने सरस माधुर्य से, विमल विलास से और विपुल विभूति से उत्फुल्ल कर दिया और देवी सरोजिनी की रस-भारती और भी मधुर स्वर में गान करने लगी। इटली ने सरोजिनी देवी की प्रकृत-कविता को और भी ललित एवं कोमल बना दिया। सरोजिनी का कोमल मन-मानस इटली की अभिनव सुन्दरता पर विमुग्ध होकर भाव और रस की तरङ्ग-मालाओं से उद्वेलित होने लगा।

विवाह

सन् १८९८ के सितम्बर मास में सरोजिनी देवी हैदराबाद लौट आईं और उसी साल दिसम्बर मास में वे डॉक्टर नायडू के साथ शुभ विवाह-बन्धन में आबद्ध हो गईं। डॉक्टर नायडू यद्यपि अब्राह्मण थे, परन्तु सरोजिनी देवी ने उनके साथ विवाह करके अपनी स्वतन्त्र प्रकृति का अपूर्व परिचय दिया। यहाँ पर हम स्थल-सङ्कोच के कारण अन्तर्जातीय विवाहों के सम्बन्ध

* "I suppose, in the whole of India there are few men whose learning is greater than this and I don't think many men more beloved."

में विशेष कुछ लिखने में असमर्थ हैं, परन्तु हमें यह कहना ही पड़ता है कि सरोजिनी देवी ने प्राचीन अन्ध-परम्परा के शिर पर पाद-प्रहार करके सामाजिक सुधार के कठिन कार्य में अशेष सहायता पहुँचाई और अपनी सुधार-प्रिय प्रकृति का उज्ज्वल परिचय देकर उन्होंने सुधारक के साथ अपनी सहानुभूति प्रदर्शित की।

सामाजिक जीवन

दक्षिण हैदराबाद में रहने के कारण उन्हें इस्लाम धर्म की विशेषताओं और मुस्लिम संस्कृति से विशेष जानकारी हो गई और वहाँ के समाज में वे प्रमुख नेत्री के समान पूज्य हो गईं। परदे के पीछे रहने वाली मुस्लिम महिलाओं पर भी उनका यथेष्ट प्रभाव पड़ा और वे मुस्लिम देवियाँ उन्हें विशेष आदर और पूज्य दृष्टि से देखने लगीं। इसके साथ ही साथ देवी सरोजिनी के ऊपर इस सत्सङ्ग का मधुर प्रभाव बिना पड़े नहीं रहा और उनकी कविता में मुस्लिम महिलाओं की तेजस्विता और पवित्रता का यथेष्ट परिस्फुटन हुआ। समाज की सेवा और विपत्ति-ग्रस्त की सहायता करने में सरोजिनी देवी को परम आनन्द प्राप्त होता था। हैदराबाद में जो भयङ्कर जल-प्रवाह उस साल हुआ था, उस समय देवी सरोजिनी ने रात-दिन विपत्ति-ग्रस्त नर-नारियों की सेवा की थी और उन्हें यथाशक्ति सहायता पहुँचाई थी। इन पंक्तियों के लेखक को दो बार देवी सरोजिनी से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ है और उसने देखा है कि इन महिमामयी देवी का हृदय सदा वात्सल्य-रस से ओत-प्रोत रहता है और एक प्रकार की मधुर सुन्दर मुस्कान उनके मुख पर लीला करती रहती है।

वर्तमान जागृति और सरोजिनी की कविता

देवी सरोजिनी प्रकृत कवि हैं—यह बात हम ऊपर कह चुके हैं। इसमें सन्देह नहीं कि वर्तमान युग की जागृति में इन राष्ट्रीय कोकिला ने जो भाग लिया है, वह इस युग के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। यह निर्विवाद है कि इस राष्ट्रीय युग की सरोजिनी देवी सब से बड़ी कवयित्री हैं। कविवर रवीन्द्रनाथ की कविता में जो मधुर आध्यात्मिक भावों की सरिता प्रवाहित होती है, वह इन कवयित्री की वाणी में भले ही उतने परिमाण में न हो, पर यह निर्विवाद है कि सरोजिनी की कवित्वमयी वाणी ने भारतीय स्वतन्त्रता का सुन्दर सन्देश विशाल भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक परिव्याप्त कर दिया है। जिन्हें उनकी वक्तृता सुनने का अवकाश मिला है, वे जानते हैं कि उनकी वाणी में भारतीय आशाओं, आकांक्षाओं और अभिलाषाओं का जैसा सुन्दर और मधुर प्रस्फुटन होता है, वैसा किसी नेता, किसी कवि, किसी वक्ता एवं किसी लेखक की रचनाओं और वक्तृताओं में दृष्टिगोचर नहीं होता। उन्होंने समय-समय पर जो कविताएँ लिखी हैं, उनके तीन संग्रह प्रकाशित हुए हैं। एक का नाम है सुवर्ण-द्वार (The Golden Threshold), दूसरे का काल-विहङ्ग (The Bird of Time) और तीसरे का हत-पक्ष (Broken Wings)—इन तीनों ग्रन्थों में जो कविताएँ सङ्कलित की गई हैं, उनमें अपूर्व माधुर्य, अलौकिक रस और मधुर 'कोमल कान्त पदावली' के पग-पग पर दर्शन होते हैं। बड़े-बड़े अङ्गरेज़ समालोचकों ने मुक्त-कण्ठ से इन कविताओं की विशेषता और माधुर्य को स्वीकार किया है। यह एक साधारण बात नहीं है, विदेशी भाषा में कविता करके, विदेशी साहित्य-मन्दिर में अपने लिए एक विशिष्ट स्थान प्राप्त करना बड़ी प्रतिभा और योग्यता का काम है। यहाँ पर उनकी कविताओं की आलोचना करने के लिए हमारे पास पर्याप्त स्थल नहीं है, यह उनकी संक्षिप्त जीवनी है। इसीलिए हम विशेष कुछ न लिख कर केवल दो-एक बातें ही लिखेंगे और उतने ही से हमारे पाठकों को सन्तोष करना होगा। हम तो उन बातों को भी न लिखते, पर उनके जीवन से उन बातों का ऐसा घनिष्ठ सम्बन्ध है कि उन्हें यहाँ पर अङ्कित करना ही पड़ेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि देवी सरोजिनी का समस्त जीवन एक सुन्दर काव्य है और उस सुन्दर काव्य की आलोचना करते समय यह आवश्यक है कि हम उसके अन्तर-स्वरूप को कुछ-कुछ जान लें। देवी सरोजिनी ने स्वयं अपने विषय में एक स्थल पर लिखा है :—

"Into the strife of the throng and tumult
The war of sweet love against folly and wrong
Where brave hearts carry the sword of battle
'Tis mine to carry the banner of Song,
The solace of faith to the lips that falter,
The succour of hope to the hands that fail
The Tidings of Joy when Peace shall triumph
When Truth shall conquer and Love prevail."

इसका अर्थ करना सहज नहीं है। यह कवि के अन्तर की भाषा है, इसलिए हम इसका भावार्थ ही देते हैं—"जहाँ विश्व के विवाद और कोलाहल में मधुर प्रीति अज्ञान और अनौचित्य के साथ युद्ध करती है, वहाँ वीर हृदय तो संग्राम के लिए खड्ग ले जाते हैं, पर मेरा तो काम है वहाँ पर भी राग की वैजयन्ती को ले जाना। मेरा कर्तव्य है प्रकम्पित ओष्ठों को विश्वास की शान्ति प्रदान करना, पराजित हाथ को आशा की सहायता देना, और शान्ति की विजय पर, सत्य की विजय पर एवं प्रेम की विजय पर आनन्द का सम्वाद पहुँचाना।" यही देवी सरोजिनी के जीवन का ध्येय है। पराजित देश और पददलित जाति के लिए जिस दिव्य सहायता, सन्देश और सहानुभूति की परम आवश्यकता है, उन्हीं को कविता के स्वर्गीय प्रासाद से लाकर ईश्वरीय करुणा के समान उन्हें प्रदान करना ही सरोजिनी देवी के जीवन का प्रमुख लक्ष्य है और इसीलिए उन्होंने कविता के सान्ध्य-राग-रञ्जित शान्तिमय तपोवन का परित्याग करके सन्तप्त विश्व के ठीक मध्य में, आपत्तिग्रस्त देश-भाइयों और बहिनों के बिल्कुल बीच में, कोलाहल और कलह की रत्ती भर चिन्ता न करके, अपना स्थान ग्रहण किया है। शान्ति का विस्तार करना, विवाद का विध्वंस करना और विजय से सुवर्णासन पर आसीन आदर्शों की ओर अपने देश को ले जाना ही उनके कवि-जीवन की इष्ट-तपस्या है। इसलिए उन्होंने मद्रास प्रान्तीय परिषद के प्रमुख-पद पर आसीन होकर कहा था :—

सन् १९२४ में मोम्बासा-कॉङ्ग्रेस के तोरण द्वार से श्रीमती सरोजिनी नायडू प्रवेश करने जा रही हैं, अन्य सज्जन स्वागतकारिणी समिति के सदस्य हैं।

"बार-बार लोग मुझसे कहते हैं—'तुम स्वप्न के सुवर्ण-राज्य को परित्याग करके इस कोलाहलमय विश्व में क्यों आई हो? तुमने अपनी वंशी और वीणा का उन लोगों के वज्रनिनादी नगाड़ों से क्यों परिवर्तन कर लिया है, जो जाति को युद्ध के लिए आह्वान करते हैं।' यह सब मैंने इसलिए किया है कि गुलाब के उद्यान में स्थित सुवर्ण स्वप्न-प्रासाद में कवि का प्रकृत कर्मक्षेत्र नहीं है, उसका स्थान है जनता के मध्य में, बाज़ारों की धूल में। कवि के भाग्य का निबटारा होता है संग्राम की जटिल कठिनाइयों में। कवि होने के लिए सब से प्रमुख बात यह है कि वह भय के समय, पराजय की मुहूर्त में एवं निराशा के मध्य में, स्वप्न-राज्य में विचरण करने वाले से यह कहे—'अगर तुम सच्चा स्वप्न देख रहे हो, तो समझ लो कि सारी कठिनाइयाँ, सारे भ्रम, सारी निराशाएँ माया की लीला-मात्र हैं, पर सब से प्रमुख वस्तु है आशा। आज मैं तुम्हारे उच्च स्वप्न, तुम्हारे विपुल साहस एवं तुम्हारी अवश्यम्भावी विजयों का सन्देश सुनाने के लिए तुम्हारे सामने खड़ा हुआ हूँ।' इसलिए आज इस संग्राम के मुहूर्त में, जब विजय की उपलब्धि करना तुम्हारे अधीन है, मैं, एक निर्बल रमणी, अपने गृह से

बाहर आई हूँ; मैं स्वप्न-राज्य में विचरण करने वाली आज इस कोलाहलमय स्थल पर खड़ी होकर तुमसे कह रही हूँ--जाओ भाइयो ! विजय प्राप्त करो।"*

राजनीतिक क्षेत्र में सरोजिनी का अवतरण

कैसी ओजस्विनी कविता है और इस कविता में देवी सरोजिनी के जीवन का ध्येय कितने सुन्दर स्वरूप में प्रस्फुट हुआ है। और यही कारण है कि देवी सरोजिनी ने अपनी वंशी और वीणा छोड़ कर 'बिगुल' बजाना प्रारम्भ कर दिया है। जब देश विदेशियों के प्रहार से मर्माहत हो, जब देश-भाई और देश की बहिनें अभाव, आपत्ति और अत्याचार से जर्जर हो रहे हों, जब समाज और धर्म की सञ्जीवनी शक्ति शैतान के द्वारा दलित की जा रही हो, तब कवि को वीणा और वंशी से क्या काम है? तब तो एक हाथ में बिगुल और एक हाथ में कृपाण लेकर उसे युद्ध-स्थल में जाकर देश की युवक-वाहिनी का सञ्चालन करना होगा। इसीलिए आज देश के वास्ते उन्मादिनी होकर, देश के लिए अपने कवित्व-कुञ्ज का परित्याग करके, देशमाता के श्रीचरणों में अपने जीवन-कमल को उत्सर्ग करने के लिए, देवी सरोजिनी राजनीति के कण्टकमय क्षेत्र में अवतीर्ण हुई हैं।

एकता का सन्देश

पर देवी सरोजिनी ने राजनीति-क्षेत्र में पदार्पण करते ही देश के समस्त राजनैतिक दलों से एकता के लिए आग्रह किया। उन्होंने कहा कि देश-माता की सेवा के लिए सबको—हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जैन, सिक्ख, यहूदी, पारसी, लिबरल, स्वतन्त्र, इत्यादि को—एक मन, एक हृदय, एक निश्चय होकर कार्य करना चाहिए। इस समय देश में एकता के लिए सब से अधिक यदि कोई परिश्रम कर रहा है तो वह हैं देवी सरोजिनी। उन्होंने कोई अवसर ऐसा हाथ से नहीं जाने दिया, जब उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर विशेष ज़ोर न दिया हो। सन् १९१७ के अक्टूबर मास में उन्होंने पटना में कहा था :—

"इस विशाल देश में मुसलमान अपना घर बनाने को आए थे। वे इसलिए नहीं आए थे कि यहाँ से लूट-मार करके अपने घरों को चले जावें। वे इस देश में रहने के लिए आए थे और मातृभूमि को विभूतिमय बनाना ही उनका उद्देश्य था। तब वे इस भूमि के बच्चों से पृथक कैसे रह सकते हैं? क्या इतिहास यही बताता है कि वे प्राचीन समय में हिन्दुओं से पृथक रहते थे? अथवा वह यह बताता है कि एक बार जब उन्होंने इस देश को अपनी मातृ-भूमि बनाना निश्चित कर लिया, तब वे इस भूमि के बच्चे बन गए; हमारे बिल्कुल अपने हो गए।"*

इस प्रकार प्रारम्भ ही से देवी सरोजिनी हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य को भारतीय स्वतन्त्रता के संग्राम की सफलता का प्रमुख साधन कह कर उद्घोषित करती रही हैं। इस समय के राजनीतिक वातावरण में देवी सरोजिनी और महात्मा गाँधी, यह दो ही ऐसी महिमामयी आत्माएँ हैं, जिन पर अधिकांश मुसलमानों को भी विश्वास है और उसका प्रधान कारण यह है कि ये दोनों ही धार्मिक विषयों पर उदार-हृदय और निष्पक्ष चित्त से विचार करते हैं। इस समग्र हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य का सम्पादन यदि कोई सफलतापूर्वक कर सकता है, तो देवी सरोजिनी ही। अस्तु।

सत्याग्रह संग्राम

राजनीतिक क्षेत्र में अवतीर्ण होकर देवी सरोजिनी समस्त भारतवर्ष में भारतीय स्वतन्त्रता का सम्वाद पहुँचाने लगीं और राजनीतिक क्षेत्र के कालुष्य को दूर करने का प्रयत्न करने लगीं। १९१९ का साल भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण वर्ष है, क्योंकि उसी साल सब से पहिले भारत के संग्राम-क्षेत्र में रौलेट-बिल को दूर करने के लिए भारत के ऋषि गाँधी ने सत्याग्रह संग्राम की घोषणा की थी। उस समय सरकार और उसकी शक्ति की रत्ती भर चिन्ता न करके देवी सरोजिनी ने सब से पहिले सत्याग्रह की शपथ ली और स्वयं अपने कर-कमलों से ६ अप्रैल के शुभ दिन बम्बई के बाज़ारों में ज़ब्त किया हुआ साहित्य बेचा। इसमें सन्देह नहीं कि उनके इस साहसिक कार्य ने सत्याग्रह आन्दोलन की प्रगति को बहुत आगे बढ़ा दिया।

सन् १९२४ में ईस्ट अफ्रीका नेशनल कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन मोम्बासा में हुआ था, यह उसकी कार्यकारिणी समिति के सदस्य और स्वयंसेवक हैं। मध्य में देवी सरोजिनी नायडू बैठी हैं

स्त्रियों को मताधिकार

सन् १९१९ में वर्तमान सुधारों की आयोजना हो रही थी। उस समय श्रीमती सरोजिनी देवी ने स्त्रियों को मताधिकार दिए जाने के लिए अत्यन्त परिश्रम किया था। सन् १९१९ में वे अखिल भारतीय होमरूल लीग के डेपुटेशन की सदस्या होकर विलायत गईं और वहाँ पर उन्होंने स्त्रियों को मताधिकार दिए जाने के लिए ख़ूब आन्दोलन किया। सुधार-कमिटी को उन्होंने पहिले अपना लिखित वक्तव्य दिया और फिर उसके सामने ज़बानी भी अपने पक्ष का बड़ी तीव्रता और विद्वत्ता के साथ प्रतिपादन किया था। उनके लिखित वक्तव्य को पढ़ कर सुधार-कमिटी के सभापति ने कहा था :—

"If I may be allowed to say so, it illuminates our presaic literature with a poetic touch."

अर्थात्—"आपके लिखित वक्तव्य ने हमारे अरुचिकर विषय को कवित्व के द्वारा आलोकित कर दिया है।"

वर्तमान सुधार-बिल में प्रादेशिक सरकार को स्त्रियों के लिए मताधिकार प्रदान करने की जो सुविधा रक्खी गई है, वह वास्तव में श्रीमती सरोजिनी देवी के अजस्र परिश्रम का ही मङ्गलमय परिणाम है। विलायत में रह कर उन्होंने भारतीय स्वराज्य के लिए तीव्र आन्दोलन किया। भारत को लौटते ही उन्होंने फिर समग्र देश में दौरा करके राजनीतिक जागृति का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने महात्मा गाँधी को अपना 'आचार्य' स्वीकार किया और उन्हीं के सिद्धान्तों को जनता में प्रचारित करना प्रारम्भ कर दिया। महात्मा जी को वे उसी श्रेणी का महापुरुष मानती हैं, जिसमें

*Often and often have they said to me :—"Why have you come out of ivory tower of dreams to the market place? Why have you deserted the pipes and flutes of the poet to be the most strident trumpet of those who stand and call the nation to battle?" Because the function of a poet is not merely to be isolated in ivory towers of dreams set in a garden of roses, but his place is with the people, in the dust of the highways, in the difficulties of the battle is the poet's destiny. The one reason why he is a poet is that in the hour of danger, in the hour of defeat and despair, the poet should say to the dreamer. If you dream true, all difficulties, all illusions, all despair are but 'Maya'; the one thing that matters is hope. Here I stand before you with your higher dreams, your invincible courage, your indomitable victories. Therefore to-day in the hour of struggle when in your hands it lies to win victory for India, I, a weak woman, have come out of my home, I, a dreamer of dreams, have come into the market place, and I say "Go forth, comrades to victory."

*"In this great country, the Muslims came to make their home, not to carry spoils and to go back to their own home but to build permanently here their home and create a new generation for the enrichment of the motherland. How can they live separate from the people of the soil. Does History say that in the past they have lived so separate? Or rather it says that once having chosen to take up their abode in this land they became the children of the soil, the very flesh of our flesh, and blood of our blood."

बुद्ध, चैतन्य और रामानुज हैं। और इन्हीं महापुरुष के श्रीचरणों पर उन्होंने अपने को उत्सर्ग कर दिया है।

सरोजिनी की तेजस्विता और निर्भीकता

मार्शल-लॉ के समय पञ्जाब में भारतीय रमणियों के साथ जैसा कुत्सित व्यवहार किया गया था, उसने देवी सरोजिनी के हृदय को विदीर्ण कर दिया और सन् १९२० में, जब वे स्वास्थ्य-सुधार के लिए विलायत गई हुई थीं, उन्होंने एक मीटिङ्ग में भाषण करते हुए कहा था :—

"My sisters were stripped naked; they were flogged; they were outraged"

अर्थात्—"मेरी बहिनें नङ्गी की गईं, उन्हें कोड़े लगाए गए और उनकी शालीनता पर अनुचित प्रहार किया गया।"

उनके इस तीव्र कथन को सुन कर मिस्टर माण्टेग्यू का, जो उस समय भारतीय-सचिव थे, आसन डोल उठा। उन्होंने श्रीमती सरोजिनी देवी को लिखा कि वे अपने उन शब्दों को वापस लें और उन्हें अपरोक्ष रूप से डराया भी। पर देवी सरोजिनी और ही धातु की बनी थीं, उन्होंने बड़ी तेजस्विता और तीव्रता के साथ भारत-सचिव को उत्तर दिया और अपने कथन को राष्ट्रीय महासभा की कमिटी की रिपोर्ट से सिद्ध कर दिखाया। इसी प्रकार सन् १९२२ में उन्होंने कालीकट में भाषण देते हुए मोपलाओं पर किए हुए सरकार के पाशविक अत्याचारों की बात कही थी। उस समय भी उन्हें मद्रास-सरकार ने डराया-धमकाया था, पर देवी सरोजिनी ने उसकी रत्ती भर चिन्ता नहीं की और सरकार को अपनी धमकी को पूरी करने के लिए निर्भीक भाव से आह्वान किया। सरकार पराजित हुई। इन घटनाओं से देवी सरोजिनी के तेजस्वी प्रकृति का तथाच उज्ज्वल देशानुराग का पूर्ण परिचय प्राप्त होता है। सन् १९२० में उन्होंने पञ्जाब के अत्याचारों का विरोध करते हुए अपना 'क़ैसरे-हिन्द' पदक भी वापस कर दिया था, यह बात हम ऊपर कहना भूल गए।

महात्मा जी के प्रति सरोजिनी की अगाध श्रद्धा और लङ्का-यात्रा

सन् १९२२ ई० के ११ मार्च का दिन भारतीय राजनीतिक इतिहास का एक चिरस्मरणीय दिवस है। उस दिन भारत के सिद्ध योगेश्वर, शान्ति के अनन्य उपासक, विश्व के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष और वर्तमान युग के उपास्य-देव देवर्षि गाँधी को सरकार ने जेल की चहार-दीवारी में बन्द कर देने की आयोजना की थी! उनकी इस गिरफ़्तारी ने सरोजिनी देवी के हृदय पर भयङ्कर आघात किया और इस घटना के एक सप्ताह के उपरान्त १८ मार्च को अहमदाबाद में भाषण करते हुए देवी सरोजिनी ने गद्गद कण्ठ से, अश्रु-विलोचना होकर कहा था :—

"They might take him to the utmost ends of the earth but his destination remains unchanged in the hearts of his people who are both the heirs and the stewards of his matchless dreams and matchless deeds."

अर्थात्—"वह उन्हें पृथ्वी के अन्तिम छोर पर ले जा सकते हैं, पर उनका स्थान उनके देशभाइयों के हृदय में उसी भाँति अटल है और उनके देशभाई उनके अद्वितीय विचारों और अद्वितीय कर्मों के उत्तराधिकारी और उद्घोषक हैं।"

महात्मा जी ने जेल-भूमि को अपने चरण-रज से पवित्र करने के लिए जाते समय, उसी मृदु मुस्कान के साथ, जो उस निर्विकार योगी के अधरों पर, आत्मा की उज्ज्वल क्रान्ति-रेखा के समान सदा विलसित होती रहती है, कहा था :—"I entrust the *Unity* of India into your hands" अर्थात्—"भारतीय एकता को मैं तुम्हारे हाथों में सौंपता हूँ।" अपने आचार्य की, अपने 'बापू जी' की, अपने उपास्य देवता की, अपने राजनैतिक गुरु की, और "My Master" के इस अन्तिम आदेश की परिपूर्ति के लिए देवी सरोजिनी ने अथक परिश्रम किया। खद्दर की साड़ी से अपने कोमल कलेवर को आच्छादित करके, वे समस्त देश में महात्मा की अन्तिम आज्ञा का प्रचार करने के लिए भ्रमण करने लगीं, और इस अजस्र परिश्रम ने स्वास्थ्य को बड़ी हानि पहुँचाई। पर शरीर के शिथिल हो जाने पर भी आत्मा उसी प्रकार प्रखर और तेज थी; इसीलिए अपने स्वास्थ्य-सुधार की इच्छा से जब वे लङ्का द्वीप को गईं; तब वहाँ पर भी उन्होंने रात-दिन समय-कुसमय, अवसर मिलते ही, भारतीय योगेश्वर की सिद्धान्तावली का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया। सारे लङ्का में उनकी मधुर वाणी गूँज उठी, लङ्का के सुगन्धिमय निकुञ्जों में भारत-कोकिला की कोमल रागिनी परिव्याप्त हो गई। सारी लङ्का उस रागिनी की रस-सरिता में निमग्न हो गई। लङ्का से लौट कर भी दक्षिण भारत में उन्होंने गाँधी-सिद्धान्तों का प्रचार किया।

कौन्सिल-प्रवेश का विरोध

महात्मा गाँधी उस समय जेल में थे, जब सविनय आज्ञा-भङ्ग के सम्बन्ध में जाँच करने के लिए नियुक्त की हुई राष्ट्रीय महासभा की कमिटी ने नवम्बर, सन् १९२२ में अपनी रिपोर्ट उपस्थित की। कमिटी नियुक्त तो की गई थी आज्ञा-भङ्ग की जाँच करने के लिए और उसने अपना प्रमुख विषय बना लिया कौन्सिल-प्रवेश को। श्रीमती सरोजिनी देवी भी इस कमिटी की सदस्या चुनी गई थीं, पर स्वास्थ्य बिगड़ जाने से वे इसमें सम्मिलित न हो सकीं। वे इस कौन्सिल-प्रवेश की तीव्र विरोधिनी थीं, क्योंकि उनका विश्वास था और ठीक विश्वास था कि कौन्सिल-प्रवेश की आज्ञा देना असहयोग के शिर पर पाद-प्रहार करना है। गाँधी जी की अनुपस्थिति में चारों ओर एक प्रकार की अव्यवस्था सी हो गई थी; असहयोग के प्रति कॉङ्ग्रेस के नेताओं का विश्वास उठा जा रहा था, पर देवी सरोजिनी अपने आचार्य की आज्ञा और सिद्धान्तावली को अटल अचल भाव से अपनाए हुए थीं। फिर भी एकता के कारण उन्होंने अपने मत को राष्ट्रीय महासभा के अनुशासन के सामने नत कर दिया; वे केवल भारतीय एकता की साधना को ही अपना प्रमुख कर्तव्य मान कर अथक परिश्रम करने लगीं।

प्रवासी भारतवासियों की सेवा

प्रवासी भारतवासियों के सम्बन्ध में प्रारम्भ ही से अर्थात् राजनीतिक क्षेत्र में पदार्पण करने की मुहूर्त से ही सरोजिनी देवी आन्दोलन करती थीं। सदा ही वे उन विदेश में पड़े हुए आपत्ति-ग्रस्त भाइयों और विशेषतया विपत्ति-ग्रस्त बहिनों की दुखमयी स्थिति को दूर करने के लिए भारतीय जनता से आग्रह और अनुरोध करती रहती थीं। सन् १९१७ के जनवरी में नियम-बद्ध मज़दूर-प्रथा को दूर करने के लिए एक विराट सभा हुई थी, उसमें भाषण करते हुए देवी सरोजिनी ने प्रवासी बहिनों के साथ किए हुए कुत्सित पाशविक व्यवहारों को लक्ष्य करके तीव्र मर्मभेदी शब्दों में कहा था :—

"Let the blood of your hearts blot out the shame that your women have suffered abroad. The words that you have heard to-night must have kindled within you a raging fire. Men of India, let that be the funeral pyre of the indenture system. Words from me to-night! No tears from me to-night, because I am a woman and though you may feel the dishonor that is offered to your mothers and sisters, I feel the dishonor offered to me is the dishonor to my sex."

अर्थात्—"तुम अपने हृदय-शोणित से उस दारुण अपमान को धो डालो, जो तुम्हारी स्त्रियों को विदेशों में सहना पड़ा है। आज तुमने जो शब्द सुने हैं, उन्होंने अवश्य तुम्हारे हृदयों में एक भयङ्कर रोषाग्नि प्रदीप्त कर

सन् १९१४ में मांम्बासा में जो कॉङ्ग्रेस हुई थी, उसमें अध्यक्ष की हैसियत से देवी सरोजिनी नायडू व्याख्यान दे रही हैं।

आख़िर 'चाँद' में गुण क्या है ?

'चाँद' के ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखाना सद्‌विचारों को आमन्त्रित करना है।

'चाँद' ही समस्त भारत में ऐसा प्रभावशाली पत्र रहा है, जिसने अपने थोड़े से ही जीवन में समाज तथा देश में खलबली मचा दी है।

'चाँद' की प्रशंसा सभी श्रेणी के विचारशील व्यक्तियों, राजाओं, महाराजाओं, बड़े-बड़े प्रसिद्ध नेताओं और आला अफ़सरों ने की है। सभी भाषा के पत्र-पत्रिकाओं ने जितनी प्रशंसा 'चाँद' की की है, उतनी किसी पत्र की नहीं।

'चाँद' ही समस्त भारत में ऐसा प्रभावशाली एवं भाग्यशाली पत्र है, जो निर्धन की कुटिया से लेकर राजा-महाराजों की अट्टालिकाओं तक आपको मिलेगा।

'चाँद' तथा इस संस्था ने पत्र-पत्रिकाओं तथा अपने प्रकाशनों द्वारा थोड़ी-बहुत—जो भी सेवा भारतीय समाज और देश की की है, वह सहज ही विस्मरण करने की बात नहीं है।

'चाँद' के प्रत्येक अङ्क में आपको गम्भीर से गम्भीर राजनैतिक एवं सामाजिक लेखमालाओं के अतिरिक्त, सैकड़ों एकरङ्गे, दुरङ्गे और तिरङ्गे चित्र तथा कार्टून मिलेंगे, जो किसी भी पत्र-पत्रिका में आपको नहीं मिल सकते।

'चाँद' में प्रकाशित कविताओं के सम्बन्ध में कुछ कहना व्यर्थ है। जिस पत्रिका की उर्दू शायरी का सम्पादन कविवर "बिस्मिल" करते हों और हिन्दी कविताओं का सम्पादन करते हों कविवर आनन्दीप्रसाद जी श्रीवास्तव और प्रोफ़ेसर रामकुमार वर्मा, एम० ए०, जैसे सुविख्यात कवि, उस पत्रिका की कविताओं से कौन टक्कर ले सकता है ?

'चाँद' में प्रकाशित लेखों के सम्बन्ध में पाठकों को स्वयं निर्णय करना चाहिए। हम इस सिलसिले में केवल इतना ही निवेदन करना चाहते हैं, कि सभी सुप्रसिद्ध लेखकों का अभिन्न सहयोग 'चाँद' को प्राप्त है। फिर श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, श्री० विजयानन्द (दुबे जी) और हिज़ होलीनेस श्री० १०८ श्री० जगद्‌गुरु के चुटीले विनोद आपको किस पत्र-पत्रिका में मिलेंगे !!

❀ ❀ ❀

यदि अभी तक आप 'चाँद' के ग्राहक नहीं हैं, तो इन्हीं पंक्तियों को हमारा निमन्त्रण समझें और इष्ट-मित्रों सहित 'चाँद' के ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखा कर हमें और भी उत्साह से सेवा करने का अवसर प्रदान करें।

विज्ञापनदाता भी भरपूर लाभ उठा सकते हैं

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

दी होगी। भारत के पुरुषो ! इस अग्नि को नियमबद्ध मज़दूर-प्रथा की प्रज्वलित चिता बना दो। आज मुझसे आप शब्दों की आशा रखते हैं ! नहीं, आज मेरे आँसू बहाने का समय है, क्योंकि मैं स्त्री हूँ। तुम कदाचित अपनी माँ-बहिनों के प्रति किए हुए अपमानों का अनुभव कर रहे होगे। परन्तु मैं इन अपमानों को इस भाव में अनुभव करती हूँ कि मेरी जाति का अपमान मेरा निजी अपमान है।"

पूर्वीय और दक्षिण अफ्रिका की यात्रा

कैसे ज्वलन्त शब्द हैं और कैसे मर्मभेदी हैं ! कौन भारतीय इन शब्दों को सुन कर शान्त और स्थिर रह सकता है ! देवी सरोजिनी के इस प्रकार के तीव्र एवं तेजस्वी भाषणों ने देश की जनता को प्रवासी भाइयों और बहिनों की सहायता करने के लिए विशेष उत्तेजित और उत्साहित किया। सन् १९२४ में कीनिया-प्रवासी भारतवासियों ने देवी सरोजिनी को अपने यहाँ आमन्त्रित किया और सरोजिनी देवी ने पूर्वीय अफ्रिका की यात्रा करने के लिए प्रस्थान किया। १६ जनवरी को उन्होंने मोम्बासा की राष्ट्रीय महासभा का प्रमुख पद-ग्रहण किया और एक तेजोमय धारावाही भाषण दिया। उन्होंने भारतीय पक्ष को बहुत कुछ सफल बनाया और प्रवासी भाइयों और बहिनों को अपने स्वत्वों की रक्षा के लिए उत्साहित और प्रोत्साहित किया। उन्होंने उनसे कहा—"तुम एक स्वर में सरकार को यह उत्तर दे दो कि यद्यपि प्राकृतिक जगत में नदियाँ पीछे नहीं बहती हैं, पर हम तुम्हारी निश्चय-नदी को पीछे की ओर लौटा कर छोड़ेंगे।" दक्षिण अफ्रिका के भारतीयों ने भी इस दुर्लभ अवसर से लाभ उठाया और उनसे अपने यहाँ भी पधारने का सादर आग्रह किया। देवी सरोजिनी ने उनके अनुरोध को अमान्य नहीं किया। उस समय दक्षिण अफ्रिका में नेटाल ऑर्डिनेन्स बिल के विरुद्ध आन्दोलन हो रहा था और भारतीय प्रवासी उस दमनकारी बिल का विरोध करने का पूर्ण प्रबन्ध कर रहे थे। देवी सरोजिनी ने भी उन्हें उत्साहित किया और उन्हें अपने स्वत्वों के रक्षार्थ उत्तेजित किया। उस समय उन्होंने वहाँ पर जो ओजस्वी भाषण किए थे, उन्हें सुन कर वहाँ के गोरे-प्रवासी भी भारतीय पक्ष की सत्यता पर दूसरी ही दृष्टि से विचार करने को बाध्य हुए। श्रीमती सरोजिनी देवी ने जनरल स्मट्स, कर्नल क्रेसवेल इत्यादि वहाँ के गोरे अधिकारियों से भी भेंट की और बड़े आवेश और निष्पक्ष भाव से उन्होंने भारतीय पक्ष को उनके सामने समुपस्थित किया। उन्हें भी स्वीकार करना पड़ा कि भारतीय पक्ष में बहुत बड़ा सार है। जहाँ-जहाँ देवी सरोजिनी गईं, वहाँ-वहाँ उनका उत्साह, उल्लास और आवेश के साथ स्वागत किया गया और उन्हें अपनी विजय-यात्रा से पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। उन्होंने भारत की ओर से दक्षिण अफ्रिका में यह सन्देश सुनाया—"सम्भव हुआ तो भारत ब्रिटिश साम्राज्य में रहेगा, आवश्यकता हुई, वह उससे बाहर चला जायगा और इसका निर्णय दक्षिण अफ्रिका के अधीन है।"

वहाँ से सरोजिनी देवी रोडेसिया को गईं और वहाँ पर भी उन्होंने यूरोपियन और भारतीय प्रवासियों से वार्तालाप किया। वहाँ भी उन्होंने भारतीय भाइयों और बहिनों को अपने अधिकारों की रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग तक करने का उपदेश दिया।

इस प्रकार दक्षिण अफ्रिका में अपनी विजय-यात्रा को समाप्त करके जब वे जुलाई, सन् १९२४ को भारतवर्ष के लिए लौटीं, तब उनका अभूतपूर्व स्वागत किया गया। बम्बई बन्दर पर हज़ारों पुरुष और स्त्रियाँ उनके स्वागत के लिए एकत्रित हुईं और जब वे फिर भारत-माता की गोद में आईं, तब सहस्र कण्ठों ने 'सरोजिनी देवी की जय' कह कर उनके प्रति अपना आदर प्रकट किया।

सामाजिक विचार

हम यह पहले ही कह चुके हैं कि सामाजिक सुधार के सम्बन्ध में देवी सरोजिनी के विचार अत्यन्त परिमार्जित और सुसंस्कृत हैं। वे भारत के हिन्दू-समाज को अन्ध-पक्षपात और अन्ध-परम्परा के अत्याचार से बचाना चाहती हैं और वे नारी की शिक्षा और स्वतन्त्रता को देश और समाज के अभ्युत्थान के लिए एकान्त आवश्यक समझती हैं। समय-समय पर उन्होंने इस सम्बन्ध में अपने जो विचार प्रकट किए हैं, उन्हें पढ़ कर यही कहना पड़ता है कि वे जिस प्रकार राजनीतिक-स्वतन्त्रता की पक्षपातिनी हैं, उसी प्रकार सामाजिक स्वतन्त्रता भी उनके जीवन का लक्ष्य है। स्वयं ब्राह्मण-कन्या होकर उन्होंने अब्राह्मण की धर्मपत्नी बन कर जिस अदम्य साहस का परिचय दिया है, वह उनकी सामाजिक सिद्धान्तावली के सम्बन्ध में उनके स्वतन्त्र विचारों का द्योतक है। भारत की भावी स्त्रियों के सम्बन्ध में सम्भाषण करते हुए उन्होंने एक दिन कहा था—"ज़नाना और मरदाना की प्राचीन दीवार सदा के लिए टूट गई है। भावी भारत में स्त्री और पुरुष दोनों समान भाव से एक दूसरे की सहायता करते हुए और हाथ में हाथ देकर काम करते हुए दृष्टिगत होंगे।"* इससे यह स्पष्ट विदित होता है कि भारत से पर्दे की प्रथा के निवारण को वे सामाजिक सुधार का प्रमुख अंश मानती हैं। स्त्रियों के उद्धार के सम्बन्ध में अपना भाषण करते हुए उन्होंने कहा था—"It was the privilege of India to possess women who were bolder and braver than men" यह भारतवर्ष की प्राचीन महिमा थी कि उसकी पुत्रियाँ उसके पुत्रों से अधिक वीर और धीर होती थीं और वे यही चाहती हैं कि भारतीय रमणियाँ फिर उसी प्रकार वीर और धीर बनें।

*"The old partition of 'Zenana' and 'Mardana' is [illegible] down for [illegible]. It is [illegible] the [illegible] of the sexes that future India [illegible] come out man and woman working hand in hand and supplementing each other."

सरोजिनी देवी का सम्मान

जिस प्रकार आप महात्मा जी पर अगाध श्रद्धा और भक्ति रखती हैं, उसी प्रकार महात्मा जी भी उन्हें सदा स्नेह की दृष्टि से देखते हैं। उन्होंने इन्हें भक्त-कवियित्री 'मीराबाई' की पवित्र पदवी से विभूषित किया है। आप की अपूर्व शक्ति पर महात्मा जी का अविचल विश्वास है। इसीलिए विगत बार जेल जाते समय आपने भारतीय एकता को देवी सरोजिनी के हाथों में सौंपा था। आज भी भारतीय एकता का सूत्र इन्हीं महिमामयी देवी के हाथों में है और वही एक ऐसी दिव्य शक्ति-सम्पन्न आत्मा हैं, जो हिन्दू-मुस्लिम एकता के सम्पादन में सफल हो सकती हैं। यह अतिशयोक्ति नहीं है, क्योंकि महात्मा गाँधी के बाद देवी सरोजिनी ही एक ऐसी व्यक्ति हैं, जिन का मुसलमानों और हिन्दुओं पर समान विश्वास है। इसीलिए देश ने गत सन् १९२१ में अपना नेतृत्व इन्हीं के हाथों में सौंपा था। कानपुर कॉङ्ग्रेस की सभानेत्री की हैसियत से देवी ने जो कवित्वमय, ओजपूर्ण भाषण दिया था, उसका एक-एक शब्द कॉङ्ग्रेस के इतिहास की मूल्यवान सामग्री है। बेलगाँव कॉङ्ग्रेस के अवसर पर सभानेत्री का सम्मानपूर्ण पद इन्हीं को प्राप्त होने वाला था; परन्तु कई कारणों से उसे महात्मा गाँधी ने स्वयं ग्रहण किया था।

वर्तमान आन्दोलन और देवी सरोजिनी

भारत के वर्तमान स्वतन्त्रता आन्दोलन में सरोजिनी देवी ने जो काम किया है और कर रही हैं, वह अभी बिल्कुल ताज़ी घटना है और 'भविष्य' के पाठक उसे अच्छी तरह जानते हैं। सरोजिनी देवी के पदाङ्क का अनुसरण करके ही आज हज़ारों भारतीय महिलाएँ राष्ट्रीय संग्राम-क्षेत्र में अवतीर्ण हैं और इन्होंने इस संग्राम को सफल बनाने में जिस तेजस्विता, दृढ़ता, कष्ट-सहिष्णुता और त्याग का परिचय दिया है, उसका सारा श्रेय देवी सरोजिनी को है। क्योंकि देवी सरोजिनी

(शेष मैटर ३६वें पृष्ठ के पहले कॉलम के नीचे देखिए)

मोम्बासा कॉङ्ग्रेस की अध्यक्षा श्रीमती सरोजिनी नायडू को कॉङ्ग्रेस के स्वयंसेवकों ने जो भारी भोज दिया था उसकी छवि।

अजी सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

कई दिनों से यहाँ एक ऐसा अजीब मसला दरपेश है कि दुबे जी तो क्या, दुबाइन जी अर्थात् लल्ला की महतारी भी उसे हल करने में नितान्त असमर्थ साबित हो चुकी हैं। हज़ार मत्था मारने पर भी हम लोगों की समझ में नहीं आता कि आप ज़्यादा लायक़-फ़ायक़ हैं या आपके मोटी तोंद वाले मौलाना साहब। क्योंकि जिस तरह वे लट्ठ लेकर अक़्ल के पीछे पड़े हैं, उसी तरह आप और आपके अन्यान्य सहयोगी भी हाथ धोकर उनके पीछे पड़े हैं। अब आपही बताइए कि हम आपकी बुद्धि की प्रशंसा करें या आपके मौलाना साहब की? मौलाना अगर साम्प्रदायिकता के रोड़े अटका कर स्वराज्य की प्रगति के मार्ग के बाधक बन रहे हैं, तो आप लोग उन्हें तथा उनकी बकवास को असाधारण महत्व प्रदान कर, 'जैसे उदई वैसे भान, न उनके चुटिया न इनके कान' वाली कहावत को चरितार्थ कर रहे हैं। बेचारा सीधा-सादा मौलाना आपका अख़बार पढ़ता होगा तो मूँछों पर ताव देता होगा और मन ही मन कहता होगा कि 'वल्लाह! ईंजानिब भी लीडर हैं!' बतलाइए तो सही, एक भले-चङ्गे आदमी के लिए यह कितने दुख की बात है?

उस दिन हमारे पड़ोस के मुलई मेहतर को किसी ने 'राउत' कह दिया। इस पर मुलई जल-भुन कर कड़ाही के बैगन हो गए और दिन भर उस आदमी को, जिसने 'राउत' कह कर अपमान किया था, कोसते रहे! उनकी बीबी ने समझाया भी कि 'जाने दो, मोहल्ले के रईस के लड़के हैं, जो हँसी में या व्यंग्य से तुम्हें 'राउत' कह ही दिया तो तुम्हारा क्या बिगड़ गया? उस ज़रा सी बात के लिए सिर पर आसमान उठा कर अब क्यों बात का बतङ्गड़ बना रहे हो और बड़ों से रार बेसाह रहे हो?' मगर अर्द्धाङ्गिनी के इस 'हितं मनोहारि च दुर्लभम् वचन' को सुन कर भी मुलई के दिमाग़ का पारा सातवें आसमान से नीचे न उतरा। वे बार-बार यही कहते रहे कि 'हुँह, मुझे राउत कह दिया?' मैंने ऐसा कौन सा अपराध किया था? यही न कि ज़रा झाड़ू लगाने में देर हो गई थी? बस, इसी पर कहने लगे कि 'अब तुम मुलई नहीं, मुलई राउत हो गए हो, इसीसे तुम्हारी नींद देर से टूटती है।'

ख़ैर साहब, शाम हुई। मुलई अण्टी में चार पैसे लेकर ग़म ग़लत करने की सदिच्छा से प्रेरित होकर धीरे से ताड़ीख़ाने की ओर बढ़े और ढाल-ढूल कर पहर रात बीते, झूमते हुए और मधुर स्वर से 'बिरहा' अलापते हुए जब घर पर पहुँचे, तो लड़के ने आगे बढ़ कर कहा—कक्का, माँ की तबीयत ख़राब हो रही है, जल्दी जाकर रोटी खा लो।

इतना सुनते ही मुलई तो मानों लँगोटी से बाहर हो गए और बिगड़ कर बोले—कक्का तू और तेरा बाप, उल्लू का पट्ठा कहीं का, जानता नहीं, मैं राउत हूँ।

क़िस्सा-कोताह। अब मुलई उसी रोज़ से जब ताड़ी पीते हैं, तब अपने को राउत समझते हैं। उस हालत में जो उन्हें राउत नहीं कहता, उस पर बिगड़ उठते हैं। यहाँ तक कि बेचारी बीबी को भी वाध्य होकर उन्हें राउत ही कहना पड़ता है।

बताइए सम्पादक जी, अगर उस दिन वह भला आदमी उन्हें राउत न कहता तो बेचारे मुलई क्यों ऐसी ज़हमत में पड़ते? क्यों अपने को राउत समझते? यही नहीं, सुनते हैं, अब वे अपने को चौबीस घण्टे राउत समझते हैं, रउताई ठाठ से रहते हैं, बिरादरी की पञ्चायतों में भी राउत जी कहे जाते हैं।

यही हाल आपके बड़े मौलाना का है। बेचारे कहीं आबकारी के दारोग़ा थे। एकाएक 'पैन इस्लामिज़्म' का ख़ब्त खोपड़ी पर चढ़ बैठा। कलवरियों का मुआइना करने के लिए घोड़े पर सवार होकर गश्त करने की आदत तो थी ही, सपना देखने लगे कि हाथ में बुर्रानी शमशीर लिए घोड़े पर सवार होकर समस्त एशिया महादेश का दौरा कर रहे हैं और जहाँ जाते हैं, वहीं के लोग हाथ बाँधे हुए सुन्नत कराने के लिए तैयार हैं। एक दिन सवेरे आँख खुली तो वही दशा कि—"जो खुलीं अँखियाँ न तो चन्द्रमुखी न चँदोवा न चाँदनी चाँद न चन्द!"—देखते क्या हैं कि छिन्दवाड़े के किसी पुराने मकान में 'छोटे भैया' के साथ नज़रबन्द हैं। न बुर्रानी शमशीर का कहीं पता है, न अबलख़ घोड़े की हिनहिनाहट सुनाई देती है और न कोई सुन्नत कराने वाला ही दिखाई पड़ता है। इतने में एक दिन अफ़वाह सुनने में आई कि उनके तथा उनके छोटे भैया को नज़रबन्दी से मुक्त करने के लिए हिन्दू-मुसलमान दोनों ही जी-जान से आन्दोलन कर रहे हैं? कहीं वाग्मिवर विपिनचन्द्र पाल लेक्चर देते फिर रहे हैं और कहीं पण्डित मदनमोहन मालवीय तथा डॉ० एनी बेसेण्ट बड़े लाट का दरवाज़ा खटखटा रहे हैं। मौलाना की बाछें खिल गईं। कुछ दिनों के बाद अल्लाह के फ़ज़ल से छुटकारा मिल गया। साथ ही महात्मा गाँधी ने पीठ थपथपाते हुए कहा—"पट्ठे, तुम लीडर हो!",

"सच?"

"सच नहीं तो क्या, सत्याग्रही होकर मैं झूठ बोल रहा हूँ?"

"अरे वाह रे हम!"

बस जनाब, उसी दिन से मौलाना अपने को लीडर समझने लगे हैं—जैसे मुलई अपने को राउत समझते हैं। फलतः यह आपके और आपके महात्मा गाँधी की करनी का फल है। जो विष-वृक्ष आप लोगों ने बोया है, उसका कटु-फल कौन चखेगा? क्या आपने किसी पोथी में नहीं पढ़ा है कि—

नतीजा क्योंकर अच्छा हो,
न हो जब तक अमल अच्छा।
नहीं बोया तुख़्म अच्छा,
तो कब पाओगे फल अच्छा।

फलतः अब अगर मौलाना साहब गाँधी से—और वह भी एक-दो नहीं, पूरे एक लाख गाँधियों से—लड़ना चाहते हैं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? त्रेता या द्वापर युग के उस 'भस्म' नामधारी असुर ने भी तो ऐसा ही किया था। हिन्दुओं के भङ्गड़नाथ बम्भोला बाबा जब उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर बोले कि 'जा बेटा, तेरी मनोकामना पूरी हो, आज से तू 'भस्मासुर' हो गया और जिसके मस्तक पर हाथ रख देगा, वह अवश्य ही भस्मीभूत हो जायगा, तो असुर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और सोचने लगा कि इस बुड्ढे की बीबी बड़ी ख़ूबसूरत है, इसलिए क्यों न सब से पहले इसी के सिर पर हाथ रक्खा जाए? ऐसा करने से इसके कथन की परीक्षा भी हो जाएगी और सम्भवतः बीबी भी हाथ लगेगी। सो जनाब, सम्पादक जी महाराज, अगर आपके मोटे मौलाना साहब भी उसी आसुरी नीति से काम लेने का विचार कर रहे हैं, तो आप लोग उन पर इस प्रकार लाल-पीले क्यों हो रहे हैं?

सुनिए, मेरी सलाह मान कर एक रोज़ जितनी भी आपके पेट में समा सके, उतनी भंग छान कर किसी निर्जन स्थान में चुपचाप बैठ जाइए। परन्तु ख़बरदार, पैसे का मुँह देख कर उसमें काफ़ी बादाम और सन्तरे का रस डालने में कोताही न कीजिएगा, नहीं तो फिर हवाई जहाज़ के मज़े मिलने लगेंगे। समझ गए न? अस्तु। जब आप मेरे बताए तरीक़े के अनुसार गहरी छान कर बैठ जायँगे और अपनी कल्पना की आँखों के सहारे भारत की राजनीतिक प्रगति का 'सिंहावलोकन' आरम्भ कर देंगे तो आपको मालूम हो जाएगा कि मोटे मौलाना ने जो गर्दन उठा कर कुकड़ूँ-कूँ आरम्भ किया है, वह बावन तोले पाव रत्ती ठीक है। क्योंकि साम्प्रदायिकता का जनाज़ा इस देश से शीघ्र ही उठने वाला है और मौलाना की वह ताड़ी के नशे की 'रौताई' भी ज़िन्दादरगोर होने वाली है, इसीसे मौलाना की तोंद में अमावस्या का अन्धकार छा गया है। दूरदर्शी मौलाना और उनकी गोष्ठी के लोग यह अच्छी तरह देखने लगे हैं कि साम्प्रदायिक संस्कार-मुक्त राष्ट्रीय चिन्ता की बाढ़

(शेष मैटर ३८वें पृष्ठ के तीसरे कॉलम पर देखिए)

(३५वें पृष्ठ का शेषांश)

ही पहिली भारतीय महिला हैं, जिन्होंने मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए सब से पहले अग्रसर होकर सब प्रकार के कष्टों का स्वागत किया है। गत मई में नमक-सत्याग्रह के समय आपने जिस दृढ़ता और तेजस्विता का परिचय दिया था, वह भारत के स्वतन्त्रता के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। इस आन्दोलन में भाग लेने के कारण आपको कई महीने तक जेल की चहारदीवारी में भी बन्द रहना पड़ा है। सरोजिनी देवी हमारी राष्ट्रीय महासभा—कॉङ्ग्रेस—की एक स्तम्भ हैं। कॉङ्ग्रेस की आपने स्तुत्य सेवाएँ की हैं। देश के नवयुवकों को उद्बुद्ध करने में आपकी ओजमयी वाणी महामन्त्र का काम करती है। आपको अपने स्त्रीत्व का बड़ा अभिमान है। भारतीय स्त्री-समाज के उत्थान में भी देवी सरोजिनी ने बड़ा काम किया है। वे स्त्रियों के अधिकारों के लिए सदैव प्रयत्नशील रहती हैं। देवी सरोजिनी संसार की विख्यात महिलाओं में अन्यतम स्थान रखती हैं। साहित्य के साथ ही राजनीति-क्षेत्र में भी उन्होंने जो सम्मान-लाभ किया है और कर्तृत्व दिखाया है, वह बहुत कम महिलाओं को प्राप्त है। परमात्मा करे, इन महिमामयी देवी का नेतृत्व सफल हो और इनके निर्दिष्ट मार्ग का अवलम्बन कर हमारा महिला-समाज उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो जाय और देश स्वतन्त्र होकर देवी के चरणों पर अपनी श्रद्धा और भक्ति के प्रसून निवेदन करने का अवसर लाभ करे। एवमस्तु।

* * *

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

हमें यह जान कर प्रसन्नता हो रही है कि 'भविष्य' के कितने ही माननीय सहयोगियों ने चाणक्य बाबा के पुराने नीति-वाक्य—'परद्रव्येषु लोष्ठवत्'—को बदल कर 'परद्रव्येषु स्वीयवत्' कर दिया है। जब इस परिवर्तनशील संसार की सब बातें बदलती रहती हैं तो यह नीति-वाक्य भी क्यों न बदल जाए?

❀

फलतः इसी परिवर्तित नीति के अनुसार कतिपय समदर्शी सज्जन 'भविष्य' के लेखों, कार्टूनों और कविताओं को 'बाबा का माल' समझ कर बिना डकार लिए ही हज़म कर जाते हैं। इससे उन्हें दो लाभ होते हैं, एक यह कि उनके पाठक उनके गम्भीर ज्ञान और अनुपम सम्पादकीय योग्यता का लोहा मान जाते हैं और दूसरे उनकी 'हाथ की सफ़ाई' भी ख़ूब मँज जाती है। इस प्रकार, जो है सो 'गोरस बेचन हरि मिलन एक पन्थ काज' हो जाता है।

❀

आप कहेंगे, यह चोरी है, असभ्यता है, अशिष्टता है, परन्तु इसके उत्तर में श्रीजगद्गुरु का इरशाद है जिस प्रकार 'वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति' उसी प्रकार "साहित्यिक चोरी, चोरी न भवति!' बल्कि यह कला है और पुरुष-परम्परा से होती आई है। विश्वास न हो तो प्रमाण लीजिए।

❀

साक्षात् परब्रह्म परमेश्वर के अवतार भगवान श्री० कृष्णचन्द्र आनन्द-कन्द ने गोकुल और वृन्दावन की गोपियों का दही-मक्खन चुराया और खाया था। देवराज इन्द्र ने भी ऐसे ही किसी 'देवोपम' उद्देश्य की पूर्ति के लिए महर्षि गौतम के गृह में घुस कर प्रचुर पुरस्कार लाभ किया था, चन्द्र ने गुरु-गृह में और त्रैलोकाधिप भगवान विष्णु ने जालन्धर-भवन में अपनी कला-निपुणता का परिचय दिया था। फिर रावण, दुर्योधन और सिकन्दर आदि का तो ज़िक्र ही फ़ज़ूल है, क्योंकि—

जहँ अस दसा जड़न की बरनी,
को कहि सकै सचेतन करनी!

❀

इसलिए 'महाजनो येन गतः स पन्थाः' की रक्षा करते हुए हिन्दी के जिन सुयोग्य सम्पादक महोदयों ने इस पाप-ताप-पूर्ण घोर कलिकाल में भी इस प्राचीन कला की रक्षा कर रक्खी है, वे कम से कम हिन्दी-संसार के तो अवश्य ही कृतज्ञता-भाजन हैं और हिज़ होलीनेस की राय है कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के आगामी अधिवेशन में उनके प्रति अवश्यमेव सम्मान प्रदर्शित किया जाए और अगर नियम-सम्बन्धी व्यभिचार की सम्भावना न हो तो 'मङ्गलाप्रसाद पारितोषिक' भी ऐसे ही किसी सज्जन को दिया जाए।

❀

और हाँ, जिस तरह बानर-कुल-कमल-दिवाकर महावीर हनूमान जी ने अपनी बाल्यवस्था में ही सूर्य को निगल कर अपनी अलौकिक शक्ति का अद्भुत परिचय प्रदान किया था, उसी तरह, सुनने में आया है, कि कोई लखनौआ 'नवीन' भी, श्रीमन्महाराज जगद्गुरु के फ़तवों को निगल कर बाल्यावस्था में ही अपनी हस्त-लाघवता का परिचय दिया करता है।

❀

इसलिए इसे भी पुरस्कार मिलना चाहिए। क्योंकि इसी उमर में अपना कमाल दिखा कर इसने 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' का ज्वलन्त उदाहरण दिया है। हमारी यह दृढ़ धारणा है, कि आगे चल कर वह इस फ़न का उस्ताद साबित होगा और अगर ख़ुदा ने चाहा तो ताँतिया भील, रॉबर्ट मैकेयर, रॉबिनहुड, सुलताना, ड्रेक और इब्राहीम बेग आदि इस कला के सभी इतिहास-प्रसिद्ध आचार्यों का 'रिकार्ड बीट डाउन' कर देगा।

❀

इतना सुन कर श्रीमती हर होलीनेस, 'खञ्जन मञ्जु तिरीछे नैननि' श्रीजगद्गुरु की मशकोपम तोंद को निहार कर मन्द-मन्द मुस्काती हुई बोलीं—तुम्हें भी तिल का ताल बनाने ख़ूब आता है। बेचारे ने 'भङ्ग की तरङ्ग' में तुम्हारे दो-चार टिप्पण झटक लिए तो उसे ऐसा आकाश पर चढ़ाया कि ताँतिया भील और रॉबिनहुड की पदवी दे डाली। वही कहावत हुई कि—कहाँ राजा भोज और कहाँ गङ्गू तेली!

❀

वाह! क्या कहना है! 'भङ्ग की तरङ्ग में दो-चार टिप्पण झटक लिए!' अर्थात् बेहोशी की हालत में यह हरकते-नाशाइस्ता हो गई—'यह सरापा शोख़िए दस्ते हिना थी, मैं न था!' क्यों? तो देखना, भङ्ग की तरङ्ग में एक दिन हज़रत अपने किसी आत्मीय के घर में न घुस जाएँ!

❀

अजी हज़रताइन जी महारानी, ज़रा ऐसे 'भङ्ग की तरङ्ग' वालों से आप भी सावधान रहिएगा। क्योंकि आपके यह बूढ़े 'बेटर हाफ़' जी 'बिहारी' हैं और वह 'नवीन' है लखनौआ! एकदम 'तेरी मेरी जोड़ी बनी मज़ेदार' का मसला है। इसलिए श्रीजगद्गुरु के जायदाद मनक़ूला और ग़ैर-मनक़ूला पर उसका इस्तमरारी हक़ है। वह जिस तरह चाहे उसे अपने तसर्रुफ़ में ला सकता है। किसी की मजाल नहीं, जो चूँ करे।

❀

इसके सिवा एक बात और भी है। यानी आज से सालहा साल पहले लखनऊ में दिल्ली के किसी शायर का दीवान चोरी हो गया था और मुमकिन है इसी 'नवीन'-ख़ान्दान के किसी प्रवीन ने यह समीचीन कार्य कर डाला हो। ऐसी हालत में, उस पैतृक सद्गुण की रक्षा के लिए अगर उसकी थोड़ी सी तारीफ़ कर दी गई तो क्या यह किसी को व्यर्थ ही आकाश पर चढ़ा देना या तिल का ताल बना देना हो गया?

❀

तुम्हें कुछ ख़बर भी है, कि आजकल हिन्दी-संसार इस हस्त-लाघवता में कितना बढ़ा-चढ़ा है। ज़रा चिराग़ लेकर ढूँढ़ने की तकलीफ़ गवारा करो तो बड़े-बड़े बुज़ुर्गों की दाढ़ियों में भी तिनके दिखाई पड़ें। 'राम-राम जपना, पराया माल अपना' तो इस साहित्य-क्षेत्र का 'गुरुमन्त्र' हो रहा है। थोड़े शब्दों में बस यही कह देना काफ़ी होगा कि—'कोउ न रहा बिनु दाँत निपोरे!'

❀

किसी के अच्छे विचारों को अपने अख़बार में उद्धृत करना बुरा नहीं, किसी के चुटीले भावों को अपनी रचना में स्थान देना चोरी नहीं, और न किसी की कीर्ति को अपनाना ही पाप है। यह तो होना ही चाहिए। साथ ही वे भाव और विचार जिसके हों उसका नाम भी होना चाहिए। ताकि किसी दरिद्र के हाथ में मूल्यवान हीरे की अँगूठी देख कर, देखने वाले को यह अनुमान करने का मौक़ा न मिले कि कमबख़्त ने चोरी की होगी।

❀

समझीं न? यही बात है। वरना भङ्गड़ाचार्य श्रीजगद्गुरु के टिप्पणों में क्या धरा है? कौन कहे कि वे साहित्य के कोई बड़े मूल्यवान रत्न हैं। उस अयँ, बायँ, सायँ से अगर किसी ने थोड़ा सा लाभ उठा लिया तो अपना क्या बिगड़ गया? बात सिर्फ़ यह है कि 'दमड़ी की हँड़िया जाती है और कुत्ते की ज़ात पहचानी जाती है।' इसीसे थोड़ा सा ज़िकर कर दिया।

❀

"चलो मिल बैठें जाने दो कि ऐसा हो ही जाता है।" आओ ज़रा लॉर्ड इर्विन की विदाई के उपलक्ष में दो-चार शब्द कह दें, वरना बेचारे कहेंगे, कि चले आने पर हिज़ होलीनेस ने याद ही नहीं किया।

❀

हाँ, तो बेचारे बड़े लायक़ आदमी थे। जब तक इस देश में रहे तब तक ख़ासी चहल-पहल रही। हमारा तो ख़याल है कि भारत का नमक जिस ख़ूबी के साथ इन्होंने अदा किया, उस ख़ूबी के साथ अदा करना आज तक किसी माई के लाल—वायसराय से नहीं बन पड़ा होगा।

❀

और इसीसे नमक पर इनकी असीम ममता थी। क्या मजाल, जो कोई चुटकी भर नमक भी पृथिवी पर से उठा कर ज़बान पर रख ले। इसीसे जब महात्मा गाँधी ने नमक-सत्याग्रह आरम्भ किया तो लाट साहब ने ऑर्डिनेन्स उगलना आरम्भ किया और 'मरतिहु बार कटक संहारा' के अनुसार चलते-चलाते भी एक ऑर्डिनेन्स जारी करके अपने ऑर्डिनेन्सी मस्तिष्क की उर्वरता का परिचय देते गए।

❀

आज से पाँच वर्ष पूर्व, जब हिज़ होलीनेस केशव बाबा के स्वर में स्वर मिला कर गा रहे थे,—"केशव केसन अस करी, जैसे अरि न कराहिं, मृगनैनी गजगामिनी, बाबा कहि-कहि जाहिं!" उसी समय किसी ने कहा—अजी, घबराते क्यों हो? नए वायसराय खेती-शास्त्र के पुराने पण्डित हैं। हलायुध बलदेव की तरह हल लेकर पश्चिम सागर-सैकत पर उतरे हैं। ऐसे

वैज्ञानिक खाद का प्रयोग करेंगे, कि तुम्हारी बगुले सी सुफ़ेद दाढ़ी कौवे सी काली हो जाएगी। माशा अल्लाह, तबीयत फड़क उठी, जवानी के वे सरस दिन याद आ गए और बन्दा दोनों हाथों से कमर थाम कर सीधा खड़ा हो गया !

❀

इतने में ख़बर मिली कि बारदोली में आपने अपने किसान-प्रेम का परिचय देना आरम्भ कर दिया है। ऐसी वैज्ञानिक खाद का प्रयोग किया है कि बोते के साथ ही सारी खेती पक रही है। कमबख़्त सुफ़ेद दाढ़ी के स्याह होने की आशा के बदले निराशा की स्याही छा गई और मालूम हो गया कि यह बुढ़ौती है, जो आकर कभी जाने का नाम ही नहीं लेती। इसके कारण उत्पन्न हुई सुफ़ेदी लाइलाज है। यह वह खेती है, जो सूखने पर फिर हरी होने का नाम तक नहीं लेती।

❀

फलतः हिज़ होलीनेस तो स्थाली पुलाक न्याय के अनुसार इसी एक घटना से ताड़ गए थे कि दादा बाल्डविन ने भारतीय नौकरशाही के लिए विलायत से एक नई और जीती-जागती कठपुतली भेजी है, लेहाज़ा कुछ दिनों तक नया नाच देखने को मिलेगा। फिर तो सहृदयता, उदारता, न्याय-परायणता और मनुष्यत्व का ऐसा अभिनय देखने को मिला कि तबीयत प्रसन्न हो गई।

❀

"हम साबुन फ़हम हैं, ग़ालिब के तरफ़दार नहीं !" इसलिए जनाब अली, आपको बुरा लगे या भला, परन्तु श्रीजगद्गुरु तो अपने भूत लाट के गुणों के क़ायल हैं। इसलिए उनकी प्रशंसा में दो-चार शब्द कहे बिना नहीं रहेंगे। लॉर्ड इर्विन सत्य की ओर सदैव आकर्षित रहे हैं, इसलिए सत्याग्रह आन्दोलन को कुचलने में उन्होंने कोई दक़ीक़ा उठा नहीं रक्खा। लॉर्ड दूरदर्शी से थे, इसलिए जब आन्दोलन की प्रगति बहुत दूर चली गई तब उनकी नज़र उस पर पड़ी। लॉर्ड इर्विन उदारता थे, इसलिए नौकरशाही की माँगों की उन्होंने उदारतापूर्वक पूर्ति की। दरिद्रों की ओर उनका सदा ध्यान था, इसलिए दरिद्रों के मूँड़ पर लदे हुए नमक-कर को उठाना उन्होंने किसी तरह भी स्वीकार नहीं किया। शिक्षा-संस्थाओं की ओर लॉर्ड इर्विन का विशेष ध्यान था, इसलिए काशी-विद्यालय में एक नवीन भवन का शिलान्यास करते हुए एक सुन्दर वक्तृता दी थी ! उसे सहयोगी 'भारत' ने सुना था और वह आज भी उसके कानों में गूँज रही है ! लॉर्ड शान्ति के प्रेमी थे और उसकी स्थापना के लिए उन्होंने हज़ारों सिर फुड़वाए। लॉर्ड इर्विन सरल और साधु थे, इसलिए उन्होंने अपने को नौकरशाही से ऊँचा और स्वतन्त्र करने की कभी भी चेष्टा नहीं की। लॉर्ड इर्विन दृढ़ विचार के मनुष्य थे, इसलिए प्रेज़िडेण्ट पटेल के समझाने पर भी महात्मा गाँधी के सम्बन्ध में अपनी भ्रान्त धारणा पर दृढ़ रहे। लॉर्ड इर्विन बड़े सहृदय और दयालु थे, इसलिए सारे देश के चिल्लाते रह जाने पर भी सरदार भगतसिंह की फाँसी के सम्बन्ध में पञ्जाब की नौकरशाही की इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं कर सके। लॉर्ड इर्विन अपने कौल के पक्के थे, इसी से प्रान्तिक सरकारों द्वारा समझौते की शर्तें भी पूरी नहीं कर सके। अजी जनाब, कहाँ तक गिनाएँ। उस भड़भूजे ने बारह वर्ष तक दिल्ली में रह कर जो सुख्याति प्राप्त की थी, उसे लॉर्ड इर्विन ने केवल पाँच ही वर्षों में प्राप्त कर ली। इसलिए ईश्वर करें उनकी यात्रा निर्विघ्न समाप्त हो क्योंकि—

गुनह की गठरी लदी है सर पर
 क़दम उठाएँ ज़मीं से क्योंकर।
कड़ी है मंज़िल यह बोझ भारी,
 इलाही तोबा इलाही तोबा !

* * *

(३६वें पृष्ठ का शेषांश)

बड़े वेग से अग्रसर हो रही है। उस महावेगवती बाढ़ में सुविधावादी और सुविधाभोगी दल किधर बह जाएगा, इसका कुछ ठिकाना नहीं है। इसी चिन्ता के मारे वे बेचारे मर रहे हैं। सम्पादक हैं तो क्या, आपको यह अवश्य मालूम होगा कि डूबने वाला तिनके का टुकड़ा पाकर भी आशान्वित हो उठता है और उसी के सहारे अपनी रक्षा के व्यर्थ प्रयास में लग जाता है। साम्प्रदायिक भेद-भाव का दामन पकड़ कर, जो श्रीमती नौकरशाही की दी हुई भीख के सहारे उदरपूर्ति कर रहे हैं और करते रहना चाहते हैं, वे सहज ही अपनी रोज़ी छोड़ देने को भला कैसे तैयार हो जाएँगे ? पेट की मार बड़ी बुरी मार होती है। इस ख़न्दक़ को भरने के लिए लोगों को क्या-क्या नहीं करना पड़ता। सर फ़ज़्ले हुसैन और सर सफ़ी की नौकरियाँ, मि० फ़ीरोज़ नून की वज़ारत, सरकारी वकील मि० ज़ाफ़रअली की मोटी फ़ीस आदि व्यक्तिगत लाभों और सुविधाओं को अगर मुस्लिम सम्प्रदाय का लाभ बनाया जा सके और उनके एक दल को यह विश्वास दिलाया जा सके कि हम जो कुछ कर रहे हैं, तुम्हारी भलाई के लिए कर रहे हैं तो इसमें क्या बुराई है ? बस, इसी मनोवृत्ति का आश्रय लेकर आपके मौलाना साहब मदज़िल्लहू और उनके अन्यान्य अज़ीज़ महात्मा गाँधी, कॉङ्ग्रेस तथा हिन्दुओं को धुमका कर अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं और जब उनका सारा प्रयत्न व्यर्थता के कुऍं में छिप जाता है तो 'खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे' के अनुसार गाली-गलौज और वाही-तबाही बकने पर उतारू हो जाते हैं। यह प्रत्येक पेट-पन्थी के लिए स्वाभाविक और शास्त्र-सम्मत है और इसके लिए उन्हें कोसना या बुरा-भला कहना निरा लौंडापन है। फिर 'दाल-भात में मूसरचन्द' भी तो सदा से होते आए हैं। देश की स्वतन्त्रता के लिए दमन-चक्र के शिकार बने कॉङ्ग्रेस वाले और सेण्ट जेम्स पैलेस की अण्डाकार पञ्चायत में बैठी नौकरशाही की पिट्ठू मण्डली अर्थात् भारत के मॉडरेट। उसी परम्परागत प्रथा के अनुसार स्वतन्त्रता-संग्राम में कॉङ्ग्रेस के साथ मुसीबतें सहीं राष्ट्रवादी मुसलमानों ने और महात्मा गाँधी से चौदह रत्न झटकने आए मौलाना शौकतअली ! इसलिए, मैं तो समझता हूँ, यही सनातन-नीति है। इसके लिए मौलाना को कोसना और दूसना एकदम अनावश्यक है। आयन्दे आपकी मरज़ी। आपके हाथ में क़लम है और टेबिल पर काग़ज़, जो चाहिए सो लिखिए।

कुशल-समाचार देते रहिएगा। लल्ला की महतारी का शुभाशीर्वाद पहुँचे। आपका,

—विजयानन्द (दुबे जी)

भविष्य

पसारठकी सर्व प्रकार औषध
सस्ते दरमें बेचना शुरू कर दिया।

किराना, मशाला, पाचन, काढ़ा, घुटी, सर्व प्रकार काष्ठ औषध जड़ी बूटी (बन औषधियां) हरी और सूखी शुद्ध और ताजा यथार्थ मूल्यपर मिलेगीं। और भी कलकत्ते में मिलनेवाला देशी विलायती सब तरहका माल थोक और खुदरा कम खर्चेसे और हिफाजतके साथ भेजा जाता है। कुछ दाम अगाड़ी भेज देना होगा और विशेष हाल जाननेके लिये या कोई चीजका भाव मंगाना होवे तो -) आनाका टिकट भेजकर निश्चय कर लीजिये।

कमीशन एजेण्ट—भारत भैषज्य भण्डार
नं० ९ मल्लिक स्ट्रीट, (बड़ाबाजार) कलकत्ता।

कम क़ीमती और छोटा कैमरा ख़रीदना, रुपया बर्बाद करना है।

फ़ोटोग्राफ़ी सीख कर

२००) मासिक कमा लो
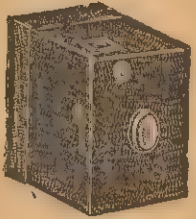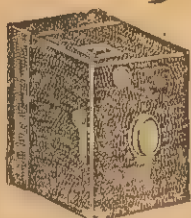
यह नई डिज़ायन का रॉयल हैण्ड कैमरा अभी आया है। इसमें असली जर्मनी लैंस व्यू फ़ाइण्डर और स्प्रिङ्ग शटर लगा है तथा ३।×४। इञ्च के बड़े प्लेट पर टिकाऊ और मनोहर तस्वीर खींचता है। फ़ोटू खींचने में कोई दिक्कत नहीं, स्प्रिङ्ग दबाया कि तस्वीर खिच गई। फिर भी शर्त यह है कि—

यदि कैमरे से तस्वीर न खिंचे तो
१००) नक़द इनाम

साथ में कुछ ज़रूरी सामान-प्लेट, सैल्फ़ टोनिङ्ग काग़ज़, प्लेट धोने के तीन मसाले, फ़ोटोग्राफ़िक लालटेन, २ तश्तरी, तस्वीर छापने का फ़्रेम, सरल विधि व स्वदेशी जेबी चर्ख़ा मुफ़्त दिया जाता है। मूल्य केवल ४) डाक ख़र्च ॥)

पता—माधव ट्रेडिङ्ग कम्पनी, अलीगढ़ नं० ४१

नवीन! स्प्रिङ्ग वाला! अद्भुत!

जेब का चरख़ा

यह हमने अभी तैयार किया है। समूचा लोहे का बना है। इससे स्त्री-पुरुष, लड़के-लड़कियाँ बड़े शौक़ से सूत कात-कात कर ढेर लगा देते हैं। यह चलने में निहायत हलका और देखने में ख़ूबसूरत है। मू० १।) डा० म० ।-)

पता—जी० एल० जैसवाल, अलीगढ़

दवाइयों में
ख़र्च मत करो

स्वयं वैद्य बन रोग से मुक्त होने के लिए "अनुभूत योगमाला" पाक्षिक पत्रिका का नमूना मुफ़्त मँगा कर देखिए।

पता—मैनेजर अनुभूत योगमाला
ऑफ़िस, बरालोकपुर, इटावा (यू० पी०)

गृहस्थों का सच्चा मित्र
३० वर्ष से प्रचलित, रजिस्टर्ड

बालक, वृद्ध, जवान, स्त्री, पुरुषों के शिर से लेकर पैर तक के सब रोगों की अचूक रामबाण दवा। हमेशा पास रखिए। वक्त पर लाखों का काम देगी। सूची मय कलेण्डर मुफ़्त मँगा कर देखो।

क़ीमत ।।।) तीन शीशी २) डा० म० अलग
पताः—चन्द्रसेन जैन वैद्य, इटावा

डॉक्टर बनिए

घर बैठे डॉक्टरी पास करना हो तो कॉलेज की नियमावली मुफ़्त मँगाइए!

इण्टर नेशनल कॉलेज (गवर्नमेण्ट रजिस्टर्ड)
३१ बाँसतल्ला गली कलकत्ता,

एक अजीब पुस्तक

हारमोनियम, तबला व सितार गाइड प्रकाशित हुई है, जिसकी मदद से २-३ माह में अनजान आदमी भी हारमोनियम, तबला व सितार बजाना सीख सकता है। क्योंकि इसमें नई-नई तर्ज़ों के गायनों के अलावा रागरागिनियों का अच्छी तरह से वर्णन किया है। मू० १।) पोस्ट ख़र्च ।); सच्चा इङ्गलिश टीचर पृष्ठ २१६; मूल्य डाक-व्यय सहित १॥)

पता—सत्यसागर कार्यालय नं० २५, अलीगढ़

भूत, भविष्य, वर्तमान बताने वाला जादू का

प्लानचेट

मैस्मेरिज़्म विद्या से भरा हुआ यह प्लानचेट गुप्त प्रश्नों का (जैसे रोग, यात्रा, परीक्षा का परिणाम। चोरी, खोए मनुष्य या गड़े धन का पता। व्यापार, रोज़गार में हानि या लाभ। इस वर्ष फ़सल अच्छी होगी या बुरी। विवाह होगा या नौकरी लगेगी कि नहीं। गर्भ में लड़का है कि लड़की। फ़लाँ काम सिद्ध होगा कि नहीं, इत्यादि) ठीक-ठीक उत्तर पेन्सिल द्वारा जिस भाषा में चाहो, लिख देता है। अभ्यास की तरकीब सहित मूल्य २॥) ; डाक-ख़र्च ॥)

पता—दीन ब्रादर्स अलीगढ़, नं० ११

रजिस्टर्ड **भारतीय कैमरा**

शीशा काटने की क़लम व जेबी चरख़ा मुफ़्त

हमारा स्वदेशी कैमरा बड़ी आसानी से प्लेट पर चाहे जिस चीज़ की साफ़ और सुन्दर, टिकाऊ तस्वीर खींचता है। बढ़िया फ़ोटो न खिंचे तो दाम वापिस। एक प्लेट, काग़ज़, मसाला, फ़्रेम, ३ डिश, सुर्ख़ लालटैन और हिन्दी में तरकीब साथ है। २॥×३॥ इञ्च साइज़ की तस्वीर खींचने वाला कैमरा का मूल्य ३।) रुपया ; डा० म० ॥=); ३।×४। इञ्च साइज़ की तस्वीर खींचने वाला कैमरा का मूल्य ४) रु०; डा० म० ।॥)

पता—दीन ब्रादर्स, नं० ८, अलीगढ़

यदि ज़्यादा ब्याज लेने वालों से बचना है, तो आज ही—

चार आना की पोस्टेज टिकिट

'दी चौहान 'पैसा' कार्यालय, बनखेड़ी G. I. P. R.'

के पास भेज कर 'बिना सूद क़र्ज़ लेने का फ़ॉर्म' मँगा लें और शीघ्र क़र्ज़ा हासिल करें। नियमानुसार बग़ैर ब्याज हर एक आदमी को रुपए १००) से ५००) तक उधार मिल सकते हैं।

हिन्दी हैण्ड प्रेस

हिन्दी भाषा प्रेमियो! आप इसमें कार्ड, लिफ़ाफ़ा, चैक, रोज़-मिती के पर्चे, छोटे-छोटे इश्तहार आदि छोटे काम स्वयं तुरन्त छाप कर काम में लाइए। बड़े काम की चीज़ है। शीशा धातु के अक्षर, मात्राएँ व स्पेस मिला कर ४०० टाइप हैं। प्रेस का साइज़ ७ इञ्च लम्बा और ४ इञ्च चौड़ा है। छापने के अन्य सामान स्याही की डिब्बी और छापने की विधि साथ में मौजूद है। मूल्य ५), डा० म० १) इसके लिए अधिक टाइप और स्याही भी हमारे यहाँ बिकती है।

पता—मैनेजर देशबन्धु कार्यालय,
मु० बिहारघाट, पो० राजघाट, जि० बुलन्दशहर

घर बैठे एक रुपया रोज़ पैदा करने का उपाय

क़सीदा काढ़ने की मशीन

इस मशीन द्वारा मख़मल पर ऊन के बेल-बूटे प्रत्येक स्त्री-पुरुष घर बैठे बड़ी आसानी से मन-चाहे काढ़ सकते हैं। टोपी, रूमाल, कुर्सी की गद्दियाँ, तकियों के गिलाफ़ भी काढ़े जा सकते हैं, जिससे एक रुपया रोज़ पैदा हो सकता है, चलाने की विधि मशीन के साथ भेजते हैं। मूल्य ५) रु०, डाक-व्यय ।=)

पता—एस० एन० पाठक एण्ड को०
सराय ख़िरनी, अलीगढ़

निर्वासिता

निर्वासिता वह मौलिक उपन्यास है, जिसकी चोट से क्षीणकाय भारतीय समाज एक बार ही तिलमिला उठेगा। अन्नपूर्णा का नैराश्यपूर्ण जीवन-वृत्तान्त पढ़ कर अधिकांश भारतीय महिलाएँ आँसू बहावेंगी। कौशलकिशोर का चरित्र पढ़ कर समाज-सेवियों की छातियाँ फूल उठेंगी। उपन्यास घटना-प्रधान नहीं, चरित्र-चित्रण-प्रधान है। निर्वासिता उपन्यास नहीं, हिन्दू-समाज के वक्षस्थल पर दहकती हुई चिता है, जिसके एक-एक स्फुलिङ्ग में जादू का असर है। इस उपन्यास को पढ़ कर पाठकों को अपनी परिस्थिति पर घण्टों विचार करना होगा, भेड़-बकरियों के समान समझी जाने वाली करोड़ों अभागिनी स्त्रियों के प्रति करुणा का स्रोत बहाना होगा, आँखों के मोती बिखेरने होंगे और समाज में प्रचलित कुरीतियों के विरुद्ध क्रान्ति का झण्डा बुलन्द करना होगा; यही इस उपन्यास का संक्षिप्त परिचय है। मूल्य केवल ३) रु०

लम्बी दाढ़ी

दाढ़ी वालों को भी प्यारी है बच्चों को भी,
बड़ी मासूम बड़ी नेक है लम्बी दाढ़ी।
अच्छी बातें भी बताती है, हँसाती भी है।
लाख दो लाख में बस एक है लम्बी दाढ़ी॥

ऊपर की चार पंक्तियों में ही पुस्तक का संक्षिप्त विवरण "गागर में सागर" की भाँति समा गया है। फिर पुस्तक कुछ नई नहीं है, अब तक इसके तीन संस्करण हो चुके हैं और ४,००० प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक चुकी हैं। पुस्तक में तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर के अलावा पूरे एक दर्जन ऐसे सुन्दर चित्र दिए गए हैं कि एक बार देखते ही हँसते-हँसते पढ़ने वालों के बत्तीसों दाँत मुँह से बाहर निकलने का प्रयत्न करते हैं। मूल्य केवल २॥); स्थायी ग्राहकों से १॥।=) मात्र!

बाल-रोग-विज्ञानम्

इस महत्वपूर्ण पुस्तक के लेखक पाठकों के सुपरिचित, 'विष-विज्ञान', 'उपयोगी चिकित्सा', 'स्त्री-रोग-विज्ञानम्' आदि-आदि अनेक पुस्तकों के रचयिता, स्वर्ण-पदक-प्राप्त प्रोफ़ेसर श्री० धर्मानन्द जी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य हैं, अतएव पुस्तक की उपयोगिता का अनुमान सहज ही में लगाया जा सकता है। आज भारतीय स्त्रियों में शिशु-पालन सम्बन्धी समुचित ज्ञान न होने के कारण सैकड़ों, हज़ारों और लाखों नहीं, किन्तु करोड़ों बच्चे प्रति वर्ष अकाल मृत्यु के कलेवर हो रहे हैं। इसमें बालक-बालिका सम्बन्धी प्रत्येक रोग, उनका उपचार तथा ऐसी सहज घरेलू दवाइयाँ बतलाई गई हैं, जो बहुत कम ख़र्च में प्राप्त हो सकती हैं। इसे एक बार पढ़ लेने से प्रत्येक माता को उसके समस्त कर्तव्य का ज्ञान सहज ही में हो सकता है और वे शिशु-सम्बन्धी प्रत्येक रोग को समझ कर उसका उपचार स्वयं कर सकती हैं। मूल्य २॥) रु०

दक्षिण अफ़्रिका के मेरे अनुभव

जिन प्रवासी भाइयों की करुण स्थिति देख कर महात्मा गाँधी; मि० सी० एफ़० एण्ड्रूज़ और मिस्टर पोलक आदि बड़े-बड़े नेताओं ने ख़ून के आँसू बहाए हैं; उन्हीं भाइयों की सेवा में अपना जीवन व्यतीत करने वाले पं० भवानीदयाल जी ने अपना सारा अनुभव इस पुस्तक में चित्रित किया है। पुस्तक को पढ़ने से प्रवासी भाइयों की सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक स्थिति तथा वहाँ के गौराङ्ग प्रभुओं की स्वार्थपरता, अन्याय एवं अत्याचार का पूरा दृश्य देखने को मिलता है। एक बार अवश्य पढ़िए और अनुकम्पा के दो-चार आँसू बहाइए!! मूल्य २॥) रु०

चुहल

पुस्तक क्या है, मनोरञ्जन की अपूर्व सामग्री है। केवल एक चुटकुला पढ़ लीजिए, हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जायँगे। काम की थकावट से जब कभी जी ऊब जाय, उस समय केवल पाँच मिनट के लिए इस पुस्तक को उठा लीजिए, सारी उदासीनता काफ़ूर हो जायगी। इसमें इसी प्रकार के उत्तमोत्तम हास्यरस-पूर्ण चुटकुलों का संग्रह किया गया है। कोई चुटकुला ऐसा नहीं है, जिसे पढ़ कर आपके दाँत बाहर न निकल आवें और आप खिलखिला कर हँस न पड़ें। भोजन के पश्चात् मनोरञ्जन के लिए ऐसी पुस्तकें पढ़ना स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभदायक है। बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष—सभी के काम की चीज़ है। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल लागत-मात्र १) ; स्थायी ग्राहकों से ॥।) ; केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं, शीघ्रता कीजिए, नहीं तो दूसरे संस्करण की राह देखनी होगी।

उपयोगी चिकित्सा

इस महत्वपूर्ण पुस्तक की एक प्रति प्रत्येक सद्गृहस्थ के यहाँ होनी चाहिए। इसको एक बार आद्योपान्त पढ़ लेने से फिर आपको डॉक्टरों और वैद्यों की ख़ुशामदें न करनी पड़ेंगी—आपके घर के पास तक बीमारियाँ न फटक सकेंगी। इसमें रोगों की उत्पत्ति का कारण, उसकी पूरी व्याख्या, उनसे बचने के उपाय तथा इलाज दिए गए हैं। रोगी की परिचर्या किस प्रकार करनी चाहिए, इसकी भी पूरी व्याख्या आपको मिलेगी। इस पुस्तक को एक बार पढ़ते ही आपकी ये सारी मुसीबतें दूर हो जायँगी। भाषा अत्यन्त सरल। मूल्य १॥)

चित्तौड़ की चिता

पुस्तक का 'चित्तौड़' शब्द ही उसकी विशेषता बतला रहा है। क्या आप इस पवित्र वीर-भूमि की माताओं का महान साहस, उनका वीरत्व और आत्मबल भूल गए? सतीत्व-रक्षा के लिए उनका जलती हुई चिता में कूद पड़ना, आपने एकदम बिसार दिया? याद रखिए! इस पुस्तक को एक बार पढ़ते ही आपके बदन का ख़ून उबल उठेगा! पुस्तक पद्यमय है, उसका एक-एक शब्द साहस, वीरता, स्वार्थ-त्याग और देश-भक्ति से ओत-प्रोत है। मूल्य केवल लागत मात्र १॥); स्थायी ग्राहकों से १=) रु०

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

सम्पादक :—
श्री० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ... १२) रु०
छः माही चन्दा ... ६॥) रु०
तिमाही चन्दा ... ३॥) रु०
एक प्रति का मूल्य चार आने
Annas Four Per Copy

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़्री कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए।

वर्ष १, खण्ड ३ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार; ३० अप्रैल, १९३१ | सं० ७, पूर्ण सं० ३१

C. F. Andrews

THE FINE ART PRINTING COTTAGE, CHANDRALAK, ALLAHABAD.

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' और विद्याविनोद-ग्रन्थमाला का प्रचार कर, वे संस्था की और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एकमात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; ३० अप्रैल, १९३१ | सं० ७, पूर्ण सं० ३१

चिटगाँव में सशस्त्र-विप्लववादियों के आक्रमण की आशङ्का !

दंगे के भय से बाबा ख़लीलदास काशी से निकाले गए !!

लंका में पं० जवाहरलाल नेहरू का अभूतपूर्व स्वागत

क्या कानपुर में एक नए षड्यन्त्र-केस की योजना हो रही है ??

देहली, बम्बई तथा इलाहाबाद आदि स्थानों में बक़रीद का त्योहार सकुशल निबट गया

(एसोसिएटेड प्रेस द्वारा २९वीं अप्रैल की रात तक आए हुए 'भविष्य' के विशेष तार)

—सहयोगी "सीलोन ऑबज़रवर" का कहना है, कि भूतपूर्व राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू के आगमन की सूचना पाते ही लङ्का के निवासी प्रेमोन्मत्त हो गए थे। आपके स्वागतार्थ एक विशेष स्वागतकारिणी-समिति का निर्माण किया गया था। पं० जवाहरलाल जी के कोलम्बो पहुँचते ही हज़ारों की संख्या में नर-नारी आपका स्वागत करने के लिए कोलम्बो-बन्दर पर एकत्र हुए थे। चारों ओर राष्ट्रीय झण्डे और गाँधी टोपियाँ ही दिखाई देती थीं। "क्रेकोविया" नामक जहाज़ के पहुँचते ही, जिस पर जवाहरलाल जी बम्बई से गए थे—सारा जहाज़ दर्शकों से घेर लिया गया। स्वागत-कारिणी समिति के अध्यक्ष श्री० डी० बी० जयतिलाका, उपाध्यक्ष श्री० एफ़० ए० ओबेस्करे, श्रीयुत और श्रीमती देसाई, श्री० अन्थोनी, श्री० सोमा सुन्दरम्, श्री० पड-मेली, श्री० पेरेरा आदि अनेक प्रतिष्ठित नगर-निवासियों तथा राष्ट्रीय नेताओं ने आपके तथा श्रीमती कमला नेहरू के गले में फूलों के हार डाले और उन पर मनों फूलों की वर्षा की गई। एक विशेष रूप से सुसज्जित मोटर में आपका जुलूस निकाला गया। दर्शकों ने जगह-जगह मोटर को रोक कर नेहरू महोदय के बोसे लिए और उन पर पुष्पों की वर्षा की। जुलूस में लगाए जाने वाले राष्ट्रीय नारों से सारा कोलम्बो एक बार ही प्रकम्पित हो उठा। जवाहरलाल जी की मोटर के फ़ुटबोर्ड पर चढ़ कर स्थान-स्थान पर प्रेमोन्मत्त नगर-निवासियों ने अपनी प्रथानुसार उन्हें चूमा। भीड़ इतनी अधिक थी कि स्वयंसेवकों के छक्के छूट गए। उन्हें कई मान-पत्र भेंट किए गए, जिसके उत्तर में भूतपूर्व राष्ट्रपति ने बड़े ही सारगर्भित एवं हृदयग्राही व्याख्यान दिए। सारांश यह, कि जवाहरलाल जी के वहाँ जाने से लङ्का में एक नवीन जीवन का सञ्चार हो गया है। शेष समाचार 'भविष्य' के आगामी अङ्क में प्रकाशित होंगे।

—शिमला का २९वीं अप्रैल की रात का समाचार है, कि देहली तथा बम्बई में बक़रीद का त्योहार सकुशल निबट गया। इलाहाबाद में भी किसी प्रकार का उपद्रव नहीं हुआ। कॉङ्ग्रेस कमिटी की ओर से मुसलमानों के लिए 'सबील' का विशेष प्रबन्ध किया गया था। इस सम्बन्ध में प्रयाग के अधिकारी बधाई के पात्र हैं।

—'हिन्दुस्तान टाइम्स' के विशेष सम्वाददाता को विश्वस्तसूत्र से पता चला है, कि सरकार एक नया 'षड्यन्त्र केस' खड़ा करना चाहती है। कहा जाता है, कि इस मामले में कम से कम ४० व्यक्ति फँसाए जायँगे। यह भी पता चला है, कि कानपुर ही इस मामले का केन्द्रस्थल होगा। यह आशङ्का की जाती है, कि संयुक्त-प्रान्त, दिल्ली और मध्यप्रान्त में गिरफ़्तारियाँ की जायँगी। कुछ सन्दिग्ध व्यक्तियों पर, जो गिरफ़्तार किए गए थे, किन्तु पीछे छोड़ दिए गए थे, कड़ी निगरानी रक्खी जाती है।

—चटगाँव का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के अधिकारियों को एक विशेष परिस्थिति उत्पन्न हो जाने से पल-पल यह आशङ्का हो रही है कि कहीं विप्लवकारी फिर आक्रमण न कर बैठें। इसी कारण बिना लाइसेन्स के जुलूस निकालने या सभाएँ करने की मनाही कर दी गई है। शहर में 'करफ़्यू ऑर्डर' जारी कर दिया गया है। ख़तरनाक स्थानों पर मिलिटरी का पहरा नियुक्त किया गया है।

आज के स्पेशल ट्रिब्यूनल में भी आर्मरी रेड केस (Armoury raid case) के सभी अभियुक्त एक पिञ्जड़े में बन्द रक्खे गए, जो ख़ास तौर पर इन्हीं लोगों के लिए बनवाया गया है। अदालत में हथियारबन्द सिपाहियों का कड़ा पहरा था, और बिना तलाशी के कोई भीतर नहीं जाने पाता था।

—बनारस का २७वीं अप्रैल का समाचार है कि वहाँ के ज़िला मैजिस्ट्रेट ने बाबा ख़लीलदास पर १४४वीं धारा जारी की है। कहा जाता है कि आप इस बात की कोशिश में थे कि बनारस के मुसलमान बक़रीद के अवसर पर दङ्गे की आशङ्का से, दो महीने के लिए बनारस छोड़ कर अन्यत्र चले जायँ। उन्हें बनारस से बाहर निकाल दिया गया है।

—लखनऊ का २८वीं अप्रैल का समाचार है, कि कालाकाँकर के राजा साहब की जो चल-सम्पत्ति गत मार्च में मालगुज़ारी की ख़रीफ़-क़िस्त न देने के कारण ज़ब्त कर ली गई थी, वह लौटा देने की आज्ञा दे दी गई है। पाठकों को स्मरण होगा कि इस सम्बन्ध में प्रान्तीय कौन्सिल में अविश्वास का प्रस्ताव भी पास हुआ था।

—बोरसद की ख़बर है कि महात्मा जी कुछ दिनों तक आराम करेंगे, इसलिए सार्वजनिक कार्यों में भाग लेना उन्होंने कुछ दिनों के लिए स्थगित कर दिया है। कहा जाता है कि समझौते के कारण जो परिस्थिति उत्पन्न हो गई है, वह जब तक हल नहीं हो जायगी, तब तक वे वहीं रहेंगे।

—लाहौर का २९वीं अप्रैल का समाचार है कि शेख़पूरा में पुलिस की ओर से एक विदेशी कपड़े की दूकान खोली गई है। कहा जाता है कि अन्य दूकानों पर कॉङ्ग्रेस वालों की पिकेटिङ्ग रहने से विदेशी कपड़े के व्यापार में धक्का पहुँचता है, इसीलिए यह योजना की गई है। इस दूकान से, पुलिस वाले किफ़ायत में कपड़े ख़रीद सकेंगे।

—बारडोली का समाचार है कि सर काऊस जी जहाँगीर और श्री० के० एफ़० नारीमन नवसारी में ठहरे हुए हैं। कहा जाता है कि जिन पारसियों ने आन्दोलन के समय सरकार की ज़ब्त की हुई ज़मीन को ख़रीदा था, उन्हें वे किसानों को लौटा देने के लिए समझाएँगे। उन लोगों ने मि० गार्दा से इस सम्बन्ध में बातें कीं। मि० गार्दा ही इस प्रकार की ज़मीनों के मुख्य ख़रीदार हैं। कहा जाता है कि मि० गार्दा ने उन ज़मीनों के ख़रीदने में जितने रुपए लगे हैं उतने ही, अर्थात् १२,०००) रुपए लेकर ज़मीनों को लौटा देना स्वीकार कर लिया है।

—लाहौर का २६वीं अप्रैल का समाचार है, कि शाहपुर के ज़मीन्दारों के मानपत्र का उत्तर देते हुए पञ्जाब के गवर्नर ने कहा है, कि हमारी सरकार ने समझौते की शर्तों का अक्षरशः पालन किया है, किन्तु कॉङ्ग्रेस वाले उसकी ओर ध्यान नहीं दे रहे हैं। आगे आपने, देश की परिस्थिति के सम्बन्ध में ज़िक्र करते हुए कहा, कि अब सरकार धैर्य धारण नहीं कर सकती। अब जहाँ वह आवश्यकता देखेगी, अपनी शक्ति का प्रयोग करेगी।

—कानपूर का समाचार है, कि श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की हत्या करने वाला मुसलमान पकड़ लिया गया है। पुलिस को उसके विरुद्ध पूरे प्रमाण मिले हैं। दो अन्य मुसलमान भी इसी सम्बन्ध में गिरफ़्तार हुए हैं।

—गत १८वीं अप्रैल का एक समाचार है, कि आगरा मेडिकल स्कूल के लगभग ३०० विद्यार्थियों ने, १० लड़कों के स्कूल से निकाल दिए जाने के कारण अनशन व्रत धारण किया है।

कहा जाता है कि गत साम्प्रदायिक दङ्गों के समय, मेडिकल स्कूल तथा अन्य कॉलेजों के लड़के लाचार होकर १५ दिनों के लिए शहर से बाहर चले गए थे। उनके लौटने पर मेडिकल स्कूल के ३ विद्यार्थी हत्या के अभियोग में ३०२ धारा के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए। स्कूल की परीक्षा समीप थी, इस कारण विद्यार्थियों ने इन गिरफ़्तारियों का प्रतिवाद किया। उन्होंने स्कूल के प्रिन्सिपल से इस बात की प्रार्थना की, कि परीक्षा एक महीने के बाद ली जाय; किन्तु उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया गया। इसके बाद उन्होंने शिक्षा-विभाग के अधिकारियों के पास तार भेजा। जब उनकी बातों पर कान नहीं दिया गया, तो उन्होंने परीक्षा न देने का विचार कर लिया। फलतः वे परीक्षा में नहीं बैठे। केवल कुछ विद्यार्थी, अधिकारियों के कहने-सुनने से हॉल में परीक्षा देने के लिए बैठे। अब अन्य विद्यार्थियों ने भी परीक्षा देने की इच्छा प्रकट की ; किन्तु प्रिन्सिपल ने इन्कार कर दिया तथा पुलिस के बुलाने की धमकी दी तथा वास्तव में फ़ोन के द्वारा पुलिस को ख़बर भी दे दी। विद्यार्थियों को प्रिन्सिपल के इस व्यवहार पर क्रोध आ गया। उन्होंने परीक्षा-कार्य में बाधा डालना शुरू किया। प्रिन्सिपल साहब तुरत १५० हथियार-बन्द पुलिस, ज़िला मैजिस्ट्रेट के साथ लेकर आ पहुँचे। परीक्षा-गृह में पुलिस का पहरा बिठा दिया गया। इसके बाद होस्टल से १३ लड़के पकड़ कर लाए गए, जिनमें १० को प्रिन्सिपल ने बिना समय दिए स्कूल से निकल जाने की आज्ञा दी। ज़िला मैजिस्ट्रेट ने भी उन्हें आगरा छोड़ देने का ज़बानी हुक्म सुनाया। ये लड़के जेल की गाड़ी द्वारा छावनी पहुँचाए गए। यही कारण है कि विद्यार्थियों ने अनशन व्रत धारण किया है। प्रिन्सिपल ने उनकी शिकायतों को सुनने से इन्कार कर दिया है। होस्टल पर पुलिस का अधिकार है। लड़कों को न तो होस्टल के अहाते से बाहर जाने दिया जाता है और न किसी बाहरी आदमी को ही उनसे मिलने दिया जाता है। बाहर से आने वाली और बाहर जाने वाली चिट्ठियों पर कड़ी नज़र रक्खी जाती है। जो लड़के स्कूल से निकाल दिए गए हैं, उनका असबाब, किताब आदि पुलिस उठा ले गई है। अनशन करने वाले विद्यार्थियों की दशा भी चिन्ता-जनक हो रही है। अस्पतालों के इन्स्पेक्टर जनरल और शिक्षा-विभाग के मन्त्री के पास इनकी दशा के सम्बन्ध में तार भेजा गया है।

—बङ्गलोर का १९वीं अप्रैल का समाचार है, कि बिन्नी मिल्स के किसी गोरे अफ़सर ने किसी कर्मचारी से गाँधी टोपी उतार देने को कहा। कर्मचारी के ऐसा करने से इन्कार करने पर गोरे ने स्वयं उसकी टोपी उतार कर फेंक दी और उसे बाहर निकाल दिया। इसके बाद उसने अन्य कर्मचारियों की गाँधी टोपियाँ भी उतार लीं। इस मनमानी से इन कर्मचारियों में बड़ी सनसनी फैली हुई है।

ख़ुफ़िया-पुलिस का मुँह काला

मर्दान का १९वीं अप्रैल का समाचार है, कि पञ्जाब के गवर्नर पर गोली चलाने वाले श्री० हरकृष्ण के पिता श्री० गुरुदासराम 'तलवार' जब लाहौर से वापस आ रहे थे, तो ख़ुफ़िया-पुलिस का कोई आदमी उनके साथ था। कहा जाता है, कि रश्की रेलवे-स्टेशन पर उतरने पर कोई अज्ञात व्यक्ति उस आदमी के मुँह में कालिख पोत कर चलता बना।

—मैमनसिंह का २०वीं अप्रैल का समाचार है, कि किशोरगञ्ज के बाबू महेशचन्द्र दास गुप्त के घर की तलाशी ली गई और उनके तृतीय पुत्र कविराज शतीश चन्द्र दास गुप्त, और बाबू चन्द्रकुमार विश्वास के एक पुत्र गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। कहा जाता है, कि बाबू चन्द्रकुमार विश्वास के पुत्र ट्रेन-डकैती के सम्बन्ध में गिरफ़्तार किए गए हैं।

'आगामी युद्ध १२ दिनों में समाप्त हो जायगा'

किसानों को ग़ाफ़िल नहीं रहना चाहिए

अहमदाबाद का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि यहाँ की एक विराट सभा में सरदार पटेल का भाषण हुआ। आपने कहा कि सरकारी कर्मचारी समझौते की शर्तों को तोड़ रहे हैं। मैं यह बात प्रमाणित करने के लिए तैयार हूँ। किसान अक्षरशः शर्तों का पालन कर रहे हैं। समझौता हो जाने पर भी सरकार की सारी शक्ति दमन करने के लिए तैयार है। सरकार के लिए आवश्यक है कि वह अपनी मनोवृत्ति को बदल दे।

किसानों से अनुरोध करते हुए, आपने कहा कि उन्हें ग़ाफ़िल नहीं रहना चाहिए। यदि सत्याग्रह आन्दोलन फिर शुरू किया गया, तो इस बार इस ढङ्ग से युद्ध किया जायगा कि १२ दिन में ही वह समाप्त हो जायगा।

विदेशी कपड़े के व्यापारियों को चेतावनी देते हुए, आपने कहा कि भारत के लिए अब विदेशी वस्त्र का व्यापार असंहनीय हो उठा है।

—मद्रास का २०वीं अप्रैल का समाचार है, कि आज सवेरे ३ घायल मनुष्य कुदप्पा से लाए गए, जिन्हें गोलियों की चोट लगी थी। कहा जाता है, कि इन लोगों ने गत १४वीं अप्रैल को पुलिस के एक सब-इन्स्पेक्टर पर आक्रमण किया था। इन्स्पेक्टर ने अपनी आत्म-रक्षा के लिए फ़ायर कर दिया, जिसके फल-स्वरूप वे घायल हो गए। ये तीनों व्यक्ति अस्पताल में रक्खे गए हैं। इन पर पुलिस का कड़ा पहरा है।

—टाँगाइल का २०वीं अप्रैल का समाचार है, कि एक गाँजा के दूकानदार की पत्नी ने आत्म-हत्या कर ली है। कहा जाता है, कि उस स्त्री ने अपने पति से गाँजे का व्यापार छोड़ देने की प्रार्थना की, किन्तु जब उसने ऐसा करने से इन्कार किया तो वह अपने शरीर पर मिट्टी का तेल छिड़क कर जल मरी।

—कलकत्ते का २०वीं अप्रैल का समाचार है, कि बङ्गाल क्रिमिनल लॉ एमेन्डमेण्ट-एक्ट के अभियुक्त श्री० सुबोध दे की मृत्यु हो गई। आपकी अवस्था केवल १८ वर्ष की थी। जेल ही में आपको टायफ़ाइड बुख़ार हो गया था। चिन्ताजनक दशा हो जाने के कारण आप छोड़ दिए गए थे। डॉक्टरों को आशा थी कि आप अच्छे हो जायँगे, किन्तु अचानक मृत्यु हो गई।

—ऊरगाँव का २१वीं अप्रैल का समाचार है, कि यहाँ शराब की दूकानों पर पिकेटिङ्ग जारी कर दी गई है। पिकेटिङ्ग का सङ्गठन ह्यूमेनिटेरियन लीग (Humanitarian League) वालों ने किया है। यह पिकेटिङ्ग शान्तिपूर्वक हो रही है। इस पिकेटिङ्ग से शराब की बिक्री बहुत कम हो गई है।

—मद्रास का २१वीं अप्रैल का समाचार है, कि यूरोपियन एसोसिएशन की स्थानीय शाखा ने इस आशय का प्रस्ताव पास किया है, कि यूरोपियन ऐसोसिएशन की कौन्सिल इस बात का पूरा प्रबन्ध करे, कि भारत के शासन-विधान सम्बन्धी समझौते की बात-चीत में यहाँ के यूरोपियन समाज का उचित प्रतिनिधित्व रहे, इस बात का ध्यान रक्खा जावे कि यहाँ के यूरोपियन व्यापारियों, चाय के काश्तकारों तथा कारख़ाने वालों के हितों की उपेक्षा न की जाय।

—अहमदाबाद का २१वीं अप्रैल का समाचार है, कि सरकार ने जो नवजीवन प्रेस और प्रेस की ज़मीन ज़ब्त कर ली थी, उसके सम्बन्ध में प्रेस के मैनेजर और सरकार से झगड़ा चल रहा है। सरकार की ओर से मैनेजर को सूचना दी गई कि मशीन और टाईप कुछ बम्बई और कुछ अहमदाबाद में पड़े हुए हैं ; उन्हें उठा कर ले जाइए। मैनेजर ने उत्तर दिया है कि पुलिस जहाँ से उन वस्तुओं को उठा कर ले गई है वहीं पहुँचा दे। सरकार प्रेस की ज़मीन भी लौटा देने के लिए तैयार है, किन्तु मालगुज़ारी के अलावा नोटिस की फ़ीस भी वसूल करना चाहती है। मैनेजर मालगुज़ारी देने के लिए तैयार है, किन्तु नोटिस की फ़ीस अदा करने से उन्होंने इन्कार कर दिया है और सरकार को उन्होंने लिखा है, कि मालगुज़ारी अदा हो चाहे न हो, समझौते की शर्तों के अनुसार वह ज़मीन लौटा देने के लिए बाध्य है।

—दिल्ली की २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि दिल्ली षड्यन्त्र-केस के एक अभियुक्त श्री० विश्वम्भरनाथ की मृत्यु सिविल अस्पताल में हो गई। आपको परिशिष्ट-शोथ (Appendicitis) नामक रोग हो गया था, जिसके लिए अस्पताल में ऑपरेशन भी किया गया था।

—मिदनापुर का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि मिदनापुर के मैजिस्ट्रेट स्वर्गीय जेम्स पेड्डी के हत्याकाण्ड के सम्बन्ध में एक पते की बात मालूम हुई है। कहा जाता है, कि जिस स्कूल में मि० पेड्डी को गोली मारी गई थी, उसीके समीप रहने वाली एक नौकरानी के छोटे लड़के ने लोगों से कहा है कि "बिमल भैया ने साहब (मि० पेड्डी) को मारा और मार कर वह भाग गया।" पुलिस ने यह समाचार पाकर श्री० विमलकुमार गुप्त के पिता श्री० अक्षयकुमार गुप्त के मकान की तलाशी ली। विमलकुमार स्कूल का विद्यार्थी है।

कहा जाता है कि अक्षयकुमार गुप्त ने पुलिस से कहा है, कि मेरे लड़के से मेरी नहीं बनती, इसलिए इस घटना से १५ दिन पहले मैंने उसे अपने घर से निकाल दिया था। मुझे यह नहीं मालूम कि आजकल वह क्या करता है।

कहा जाता है कि उस नौकरानी ने भी अपने लड़के की बातों का समर्थन किया है।

—अहमदाबाद का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि श्री० मणिलाल कोठारी, जो फ़ॉरेनर्स एक्ट के अनुसार गिरफ़्तार किए गए थे, आज छोड़ दिए गए हैं। कलक्टर के पूछने पर आपने ज़मानत देने से इन्कार किया। पीछे बम्बई-सरकार ने उन्हें छोड़ देने की आज्ञा दी। कहा जाता है, कि फ़ॉरेनर्स एक्ट के अनुसार जो मामला इन पर चलाया जाने वाला था, वह उठा लिया गया है।

—लाहौर का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि लाहौर हाईकोर्ट की आज्ञानुसार लाहौर षड्यन्त्र-केस के ४ मुख़बिर पुलिस की हिरासत से हटा कर सेण्ट्रल जेल में रक्खे गए हैं।

महिलाओं को निर्वाचन-अधिकार

दिल्ली का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि आज यहाँ की म्युनिसिपैलिटी में महिलाओं के वोट देने के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव पेश किया गया। गत वर्ष यहाँ की म्युनिसिपैलिटी ने स्त्रियों के वोट देने के अधिकार को सिद्धान्त के तौर पर स्वीकार कर लिया था। इस बार मुसलमानों ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। उन्होंने यह उज्र पेश किया कि उनकी स्त्रियाँ आगामी १० वर्षों तक इस प्रस्ताव से लाभ नहीं उठा सकेंगी। अन्त में यह निश्चित हुआ कि वोट देने वाली महिला में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए :—

(१) उसकी उम्र कम से कम २१ वर्ष की हो।

(२) उसके नाम से कोई ऐसा मकान हो, जिसका सालाना किराया कम से कम १२०) रु० हो। अथवा—

(अ) वह पढ़ी-लिखी हो और चुनाव के पहले, नवम्बर मास तक के ६ महीने वह यहाँ की म्युनिसिपैलिटी में रह चुकी हो। अथवा—

(ब) वह किसी ऐसे पुरुष की धर्मपत्नी या विधवा हो, जिसकी सम्पत्ति का सूद कम से कम १२०) रु० हो। अथवा—

(स) वह किसी ऐसे पुरुष की धर्मपत्नी हो, जो चुनाव के पहले इनकम टैक्स देता रहा हो।

—पटने का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि गङ्गाविशुन सुनार और भगवान सुनार, जिन पर बम रखने के सम्बन्ध में मुक़दमा चलाया गया था, निर्दोष पाकर छोड़ दिए गए हैं।

—लाहौर का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के एक उर्दू साप्ताहिक 'थड़दल' के सम्पादक श्री० फ़तहचन्द और मालिक श्री० रामलाल ३०२ धारा के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। कहा जाता है, कि उक्त पत्र में 'अङ्गरेज़ों को क़त्ल करो' शीर्षक एक लेख निकला था। ये गिरफ़्तारियाँ इसी के सम्बन्ध में की गई हैं।

—कलकत्ते का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि कलकत्ता हाईकोर्ट की स्पेशल बेञ्च ने मछुआ बाज़ार बम-केस का फ़ैसला कर दिया। सेशन्स जज के स्पेशल ट्रिब्यूनल ने १७ अभियुक्तों को ३ वर्ष से लेकर १० वर्ष तक की सज़ाएँ दी थीं। हाईकोर्ट ने ६ अभियुक्तों को छोड़ दिया है और निरञ्जनदास गुप्त की सज़ा १० वर्ष से घटा कर ७ वर्ष कर दी है। शेष अभियुक्तों की सज़ा ३-३ वर्ष की कर दी गई है।

देवघर षड्यन्त्र-केस के अभियुक्त श्री० सेन की शोचनीय दशा

'अमृतबाज़ार पत्रिका' ने हज़ारीबाग सेण्ट्रल जेल से छूटे हुए एक क़ैदी का पत्र प्रकाशित किया है, जिससे पता चलता है कि देवघर षड्यन्त्र-केस के अभियुक्त श्री० सुशीलकुमार सेन, जिन पर भारतीय दण्ड-विधान १२१-ए धारा के अनुसार अभियोग लगाया गया था, पागल हो गए हैं। कहा जाता है, कि जब आप गया-जेल में 'सी' श्रेणी में रक्खे गए थे, तो जेल के अधिकारियों के व्यवहार से तङ्ग आकर, आपने अनशन शुरू कर दिया था, और ४२ दिनों तक भूखे रहे थे। पहले ४ दिनों तक उन्हें ज़बरदस्ती खिलाने की कोशिश की गई थी। चाहे तो इस बल-प्रयोग से अथवा भूखे रहने के कारण, आपका मस्तिष्क बिगड़ गया है। अनशन तोड़ने पर भी आपकी दशा नहीं सुधरी। इसके बाद आप 'बी' श्रेणी में रक्खे गए। किन्तु भोजन, वस्त्र में परिवर्तन हो जाने पर भी अवस्था वैसी ही बनी रही। २६वीं मार्च को जेल के डॉक्टर ने उनके हिस्ट्री टिकट में लिखा था—"उदासीनता का भाव दिखलाता है और सबों से अलग रहना चाहता है। इसके मस्तिष्क के सम्बन्ध की रिपोर्ट, रिपोर्ट-बुक में लिख ली गई है।"

इसके बाद श्री० सुशीलकुमार हज़ारीबाग सेण्ट्रल जेल लाए गए और पञ्जाबी सेल में साधारण क़ैदियों के साथ रक्खे गए। इस समय से इनकी दशा ऐसी ही बनी हुई है। इनकी आँखें भी कुछ ख़राब हो गई हैं। वे क़रीब-क़रीब आधे पागल हो चुके हैं। अपने साथियों को भी नहीं पहचान सकते। उन्हें देखते ही क्रोधित हो उठते हैं। इनकी आधी सज़ा पूरी हो चुकी है। इनके स्वास्थ्य और मस्तिष्क की ऐसी नाज़ुक अवस्था हो गई है, कि यदि ये शीघ्र नहीं छोड़े गए तो फिर अच्छे होने की आशा जाती रहेगी।

—गत २३वीं अप्रैल का समाचार है, कि स्थानीय हाईकोर्ट ने मेरठ षड्यन्त्र-केस के अभियुक्त श्री० निम्बकर और श्री० हचिन्सन को इस शर्त पर ज़मानत पर छोड़ा है, कि जब तक उनका मामला चलता रहे, वे किसी प्रकार के प्रचार-कार्य में भाग न लें।

—बारडोली का २४वीं अप्रैल का समाचार है, कि सरदार बल्लभभाई पटेल, श्री० जयरामदास दौलतराम के साथ नवसारी से यहाँ पहुँचे। उन्होंने अफ़वा नामक ग्राम के घरों की नींव डाली, जो किसानों के छोड़ देने पर जला डाले गए थे। सरदार पटेल ने किसानों से कहा कि उन्हें स्वतन्त्र पक्षियों की तरह अपने घरों के नष्ट हो जाने की परवाह नहीं करनी चाहिए, क्योंकि घर तो बार-बार बनाया जा सकता है, किन्तु प्रतिष्ठा एक बार चली जाने पर फिर नहीं लौटती। इसलिए उन्हें और भी अधिक त्याग करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

—बारडोली का २४वीं अप्रैल का समाचार है, कि आज महात्मा जी की उन किसानों से बातें हुईं, जिनकी ज़ब्त जायदादें किसी तीसरे आदमी के हाथों चली गई हैं। महात्मा जी ने उन्हें समझाया, कि वे उन ख़रीदारों को किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुँचावें। महात्मा जी ने कहा कि उन्हें विश्वास रखना चाहिए, कि बहुत शीघ्र उनकी जायदाद उन्हें मिल जायगी। इस समय वे यह समझ कर सन्तोष करें, कि स्वतन्त्रता के लिए उन्होंने अपनी सम्पत्ति का त्याग कर दिया है।

—दैनिक 'लीडर' ने एक ज़मींदार का पत्र प्रकाशित किया है, जिससे विदित होता है कि कन्नौज के ज़मींदार रायबहादुर बाबू स्वरूपनारायण वकील की मोटर, ज़मींदारी की लगान न देने के कारण ज़ब्त कर ली गई है। पत्र से पता चलता है, कि उन्होंने लगान के रुपयों में से ७२ फ़ी सदी चुका दिया था।

—रङ्गून का २४वीं अप्रैल का समाचार है, कि थामेटमेयो ज़िले में ३० विद्रोही मारे गए हैं। पुलिस की ओर से कोई घायल नहीं हुआ है। कुछ बर्मी सेना वहाँ सहायता के लिए भेजी जा रही है।

—खुलना का एक समाचार है, कि बङ्गाल प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी के प्रमुख कार्यकर्ता श्री० सतीशचन्द्र चक्रवर्ती, जो समझौते की शर्तों के अनुसार जेल से छोड़ दिए गए थे, अपने घर पर ही नज़रबन्द रक्खे गए हैं।

—लाहौर का २४वीं अप्रैल का समाचार है, कि अमृतसर षड्यन्त्र केस के अभियुक्त श्री० आर्यमुनि छोड़ दिए गए हैं और श्री० सुशील से २ वर्षों तक नेकचलनी के लिए १,०००) रुपए का मुचलका माँगा गया है। अन्य दो अभियुक्तों की सज़ाएँ क़ायम रक्खी गई हैं।

—कलकत्ते का २५ वीं अप्रैल का समाचार है, कि स्थानीय यूरोपियन क्लब में किसी ने एक बम फेंक दिया, किन्तु बम फटा नहीं। कहा जाता है, बम बहुत भयानक था; ठीक ऐसा ही बम सर चार्ल्स टेगार्ट पर फेंका गया था। बम फेंकने वाले का कोई पता नहीं मिला।

—कराची का २३वीं अप्रैल का समाचार है, कि कल सन्ध्या-समय अचलसिंह पार्क में एक बम का धड़ाका हुआ, जिसके फल-स्वरूप एक स्त्री और ४ बालकों को चोट आई। इनमें से दो की दशा चिन्ताजनक है। घटना की जाँच की गई, किन्तु कुछ पता नहीं लगा।

—रङ्गून का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि अपयौक येले नामक स्थान में एक नया विद्रोह उठ खड़ा हुआ है। कहा जाता है, कि एक मुखिया, जो स्पेशल कॉन्स्टेबिल बनाया गया था, बाग़ी हो गया और ३० विद्रोहियों के साथ उसने पुलिस पोस्ट पर आक्रमण कर दिया, जिसके फल-स्वरूप एक स्पेशल कॉन्स्टेबिल मारा गया और एक सब-इन्स्पेक्टर घायल हुआ है। विद्रोही एक रिवॉल्वर, ७ बन्दूक़ें तथा अन्य सामान भी उठा ले गए हैं।

—बेसीन में एक बर्मी गिरफ़्तार किया गया है। कहा जाता है कि वह वहाँ विद्रोह खड़ा करने का प्रयत्न कर रहा था। पेगू में दो हत्याएँ हुई हैं। इनसीन और हेण्ज़ादा में अनेक डकैतियाँ भी हुई हैं।

—कोलम्बो २६वीं अप्रैल—पायोनियर का सम्वाददाता ख़बर देता है कि पं० जवाहरलाल नेहरू कल कण्डी पहुँचे। वहाँ उन्होंने टाउन हॉल में एक भाषण दिया। आपने भाषण में सामाजिक और आर्थिक समस्याओं पर विचार किया।

श्री० सेन गुप्त पर आक्रमण

मैमनसिंह का २४वीं अप्रैल का समाचार है कि श्री० जे० एम० सेनगुप्त, जो यहाँ की विद्यार्थी-परिषद के सभापति मनोनीत हुए थे, आज यहाँ पहुँचे। बार-लाइब्रेरी की अभ्यर्थना का उत्तर देकर आप अपने रहने के स्थान पर गए। यहाँ उनके विरोधी दल के कुछ नवयुवक लाठी आदि हथियार लेकर उनके आने की प्रतीक्षा में थे। जब आप परिषद में जाने के लिए मोटर पर रवाना हुए तो इन लोगों ने उन पर आक्रमण किया। श्री० सेन गुप्त को तो चोट नहीं आई, किन्तु परिषद के कुछ सङ्गठनकर्त्ता घायल हुए। अब परिषद वालों और उसके विरोधियों में युद्ध आरम्भ हो गया। दोनों ओर से ईंट-पत्थर की वर्षा होने लगी। श्री० सेन गुप्त ने दोनों दलों को शान्त करना चाहा। परिषद के विरोधियों को जब इस तरह सफलता नहीं मिली तो उन्होंने, परिषद के सङ्गठनकर्त्ताओं को परिषद स्थगित कर देने, और स्थान बदल देने के लिए कहा।

श्री० सेन गुप्त ने अपने वक्तव्य में इस घटना पर शोक प्रकट किया है, और कहा है कि यह कार्य उस दल के लोगों का है, जिन्हें अहिंसात्मक नीति पर विश्वास नहीं है। परिषद अन्त में स्थगित कर दी गई।

क्या वास्तव में भगतसिंह आदि की लाशें टुकड़े-टुकड़े कर डाली गई थीं ?

"मेरी यह धारणा है, कि मृत-शरीरों के प्रति अपमान-जनक व्यवहार किया गया है" —श्री० धन्नामल

जाँच कमिटी के सामने आँखों देखी गवाहियाँ

लाला चिन्तराम थापड़ का बयान

लाहौर का २२वीं अप्रैल का समाचार है, कि भगत-सिंह जाँच-कमिटी के सामने, आज सुखदेव के चचा लाला चिन्तराम थापड़ की गवाही हुई। अध्यक्ष के पूछने पर गवाह ने कहा, कि २३वीं मार्च को ७॥ बजे श्री० सुखदेव को फाँसी दी गई। उन्होंने आगे कहा, कि फाँसी के दिन मैं लाहौर ही में था, क्योंकि अपने भतीजे से अन्तिम भेंट करने की मेरी इच्छा थी। यह मुझे नहीं मालूम था कि फाँसी कब दी जायगी। १२ बजे दोपहर के समय मैंने सेण्ट्रल जेल के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट से पूछा, कि फाँसी किस तारीख़ को और किस समय दी जायगी, किन्तु मुझे कोई सूचना नहीं मिली। एक सभा में लाला जगन्नाथ ने मुझसे कहा कि ७ बज कर ४५ मिनट पर फाँसी दे दी गई है। यह ख़बर पाकर मैं सरदार किशन-सिंह के साथ पं० सन्तानम् के यहाँ पहुँचा, जो सेण्ट्रल जेल के समीप ही रहते हैं। यहाँ हमें मालूम हुआ, कि जेल के भीतर 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाए गए थे, जो बाहर भी सुनाई पड़े थे। इन्हीं नारों की आवाज़ से बाहर के लोगों को मालूम हो गया कि फाँसी दे दी गई। यहाँ मुझे मालूम हुआ कि सिटी-मैजिस्ट्रेट की मोटर पं० सन्तानम् के घर के समीप ही खड़ी है। सवा आठ बजे के लगभग मैं सरदार किशनसिंह के साथ सेण्ट्रल जेल के मुख्य दरवाज़े पर गया। फिर हम लोग जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट के क्वार्टर में गए। एक वार्डर ने आकर कहा कि डिप्टी सुप-रिण्टेण्डेण्ट बाहर गए हैं। हम लोगों ने वार्डर से किसी जेल के अफ़सर को बुला देने के लिए कहा, जिससे हम लोग लाशें माँगें। वार्डर ने कहा, कि कोई भी अफ़सर यहाँ नहीं है और हम लाशों के बारे में कुछ नहीं जानते। इसके बाद हम जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट मेजर चोपड़ा के यहाँ गए। किन्तु मालूम हुआ कि मेजर चोपड़ा भी कहीं बाहर गए हैं। तब हम लोग पं० सन्तानम् के यहाँ लौट आए। वहीं से डॉ० गोपीचन्द ने पञ्जाब-सरकार के होम-सेक्रेटरी, ज़िला मैजिस्ट्रेट, सिटी मैजिस्ट्रेट आदि से फ़ोन के द्वारा बातें कीं, किन्तु कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला। १०॥ बजे रात्रि के समय एक सरकारी कर्म-चारी ने सरदार किशनसिंह को सूचना दी, कि लाशें लाहौर से बाहर भेजी गई हैं। मेरे कुछ आदमी सेण्ट्रल जेल के दोनों दरवाज़ों पर खड़े थे, किन्तु इन दरवाज़ों से लाश ले जाते हुए उन्होंने नहीं देखा। १ बजे रात को एक आदमी ने मुझे सूचना दी कि लाशें सतलज के किनारे जला डाली गई हैं और इसकी सूचना भी ज़िला मैजिस्ट्रेट ने निकाल दी है; जो शहर की दीवालों पर चिपका दी गई है। मैंने स्वयं इस प्रकार का छपा हुआ नोटिस देखा।

अध्यक्ष के पूछने पर गवाह ने कहा, कि यदि श्री० सुखदेव का शरीर मुझे दे दिया जाता, तो तो आर्य-समाज के नियमानुसार मैं उसकी दाह-क्रिया करता। मैं मृत-शरीर को अच्छी तरह स्नान करा कर, उसे सफ़ेद खद्दर में लपेट देता और तब घी और अन्य सामग्रियों के साथ वैदिक मन्त्रों के उच्चारण के बाद दाह-क्रिया करता। मलिक जीवनलाल कपूर के पूछने पर गवाह ने कहा कि हम लोग सूर्यास्त और सूर्योदय के बीच के समय में दाह-क्रिया नहीं करते। हमारे धर्म में ऐसा करना निषिद्ध है। लाश के जलाने में या चिता में आग लगाने के लिए किरोसिन के तेल का व्यवहार नहीं किया जाता। हिन्दू या सिक्ख कोई भी ऐसा नहीं करता। ग़रीब से ग़रीब मनुष्य ऐसे अवसर पर घी काम में लाता है। एक लाश को जलाने के लिए कम से कम १२ मन लकड़ी की आवश्यकता है। इस काम के लिए चीड़ की लकड़ी काम में कभी नहीं लाई जाती।

डॉ० सत्यपाल के पूछने पर गवाह ने कहा, कि ६ फ़ीट चौड़े और ८ फ़ीट लम्बे स्थान में तीन लाशें अलग-अलग कदापि नहीं जलाई जा सकती हैं। तीन लाशें एक चिता पर भी नहीं जलाई जा सकती हैं। निकट सम्बन्धी ही मृत-शरीर को स्नान करा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति उसे नहीं छू सकता है। यदि एक मृत-देह को अच्छी तरह जलाया जाय, तो तीन दिन से पहले भस्म इकट्ठा नहीं किया जा सकता। तीन दिन से पहले हड्डियों का अच्छी तरह जलना सम्भव नहीं। तीन घण्टे में लाश भस्म नहीं हो सकती।

इसके बाद गवाह ने कहा, कि २४वीं मार्च को सबेरे मैं अन्य सम्बन्धियों के साथ दाह-स्थान पर गया। वहाँ मुझे मांस के छोटे-छोटे टुकड़े मिले, जो मेरी स्त्री के पास रक्खे हैं।

अध्यक्ष के पूछने पर गवाह ने कहा, कि मुझे एक विश्वसनीय व्यक्ति से—जिसका नाम मैं नहीं बतलाना चाहता—पता चला है कि जेल ही में लाशों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले गए थे और तब कम्बलों में बाँध कर, जिस दरवाज़े से जेल का कूड़ा-कर्कट उस रात को बाहर निकाला गया, उसी दरवाज़े से लाशें बाहर निकाली गईं।

तीन आदर्श बहिनें

पञ्जाब की विख्यात देश-सेविकाएँ, जो गाँधी-इर्विन समझौते के समय लाहौर के नारी-जेल से मुक्त की गई थीं। दाहिनी ओर से—कुमारी श्यामा ज़ुतशी, एम० ए०; कुमारी जानकी ज़ुतशी, एम० ए० और कुमारी मनमोहिनी ज़ुतशी, बी० ए०।

भगत धन्नामल का बयान

इसके बाद फ़िरोज़पुर के रहने वाले भगत धन्नामल का बयान हुआ। गवाह ने अध्यक्ष के पूछने पर कहा, कि फ़िरोज़पुर के लाला कृपाराम के साथ मैं २४वीं मार्च को १० बजे सबेरे दाह-स्थान पर गया। दाह-स्थान को खोदने पर, मांस के टुकड़े, जली हुई हड्डियाँ और पानी से भरा हुआ एक घड़ा, वहाँ मिले। उस स्थान से किरोसिन तेल की कड़ी बू आती थी। दाह-स्थान के समीप ही मैंने कुछ ऐसे स्थान भी देखे, जहाँ ख़ून के दाग़ लगे हुए थे।

मलिक जीवनलाल कपूर के पूछने पर गवाह ने कहा, कि मैंने हिन्दुओं के कितने ही मृत-शरीर जलाए हैं। एक लाश के जलाने में कम से कम १२ मन लकड़ी की आवश्यकता होती है। लाश के जलाने में मिट्टी के तेल का कभी प्रयोग नहीं किया जाता।

डॉ० सत्यपाल के पूछने पर गवाह ने कहा, कि कुछ विश्वसनीय व्यक्तियों से मुझे मालूम हुआ है, कि जेल में ही लाशों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले गए थे और वे टुकड़े थैलों में भर कर चिता-स्थान पर पहुँचाए गए थे। मेरी यह धारणा है, कि मृत-शरीरों के प्रति अपमानजनक व्यवहार किया गया है।

* * *

"मुर्ग़-दिल मत रो यहाँ आँसू बहाना है मना"

देहली षड्यन्त्र केस का सनसनीपूर्ण उद्घाटन

केसरिया साड़ियों में स्त्रियों के जत्थों ने राष्ट्रीय नारे लगाए

हिन्सात्मक क्रान्ति का जाल कैसे बिछाया गया ?

एक अभियुक्त की मृत्यु पर शोक प्रकाश :: अभियुक्त अदालत में पीठ फेर कर बैठे रहे !

सरकारी वकील जब तक वक्तव्य पढ़ता रहा ; तब तक अभियुक्त गाने गाते रहे !

दिल्ली षड्यन्त्र केस के स्पेशल ट्रिब्यूनल की बैठक, आज २४वीं एप्रिल को गवर्नमेण्ट ऑफ़ इण्डिया के सेक्रेटेरियट-भवन के दक्षिणी हिस्से में प्रारम्भ हुई। अभियुक्तों के आते ही, "क्रान्ति चिरञ्जीवी हो", "साम्राज्यवाद का नाश हो" के गगनभेदी नारों से सेक्रेटेरियट-भवन गूँज उठा। इसी समय मोटर लॉरी पर केसरिया रङ्ग की साड़ियाँ पहने, स्त्रियों का एक बड़ा जत्था भी आ पहुँचा। उसने एक जुलूस बना कर सेक्रेटेरियट-भवन के दक्षिणी हिस्से में प्रवेश किया और पाँच मिनट तक लगातार राष्ट्रीय नारे लगाए। प्रतिध्वनि में अभियुक्तों ने भी राष्ट्रीय नारों से उनका स्वागत किया।

पुलिस का ज़बरदस्त प्रबन्ध

पुलिस का प्रबन्ध बहुत ज़बरदस्त और विशाल पैमाने पर किया गया था। अदालत के अन्दर बहुत से स्त्री-पुरुष, दर्शक उपस्थित थे। अभियुक्त दो-दो की क़तार में ११ बज कर ४४ मिनट पर अदालत के अन्दर लाए गए। प्रवेश करते ही, उन्होंने फिर गगनभेदी स्वर में "क्रान्ति चिरञ्जीवी हो", "चन्द्रशेखर आज़ाद चिरञ्जीवी हो", "भगतसिंह चिरञ्जीवी हो", "साम्राज्यवाद का नाश हो" आदि के नारे लगाए। इसके बाद उन्होंने सम्मिलित स्वर में एक राष्ट्रीय गान गाया, जिसकी प्रारम्भिक पंक्तियों का सारांश इस प्रकार था:—"माँ, तुमसे बिदा लेकर आज हम विजय की अन्तिम लड़ाई लड़ने जा रहे हैं।"

स्पेशल ट्रिब्यूनल के सदस्यों ने ११ बज कर ५० मिनट पर अदालत के कमरे में प्रवेश किया। सरकारी वकील मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ थे। सफ़ाई की तरफ़ से मि० आसफ़अली, मि० एस० एन० बोस, मि० बलजीतसिंह और मि० फ़रीदुल हक़ अन्सारी उपस्थित थे।

हथकड़ियाँ हटाई गईं

प्रारम्भ में, श्रीयुत भूषण ने ट्रिब्यूनल के प्रेज़िडेण्ट का ध्यान अभियुक्तों की हथकड़ियों की ओर आकर्षित किया और उनसे पूछा, कि क्या अदालत में उन्हें हथकड़ियाँ पहने ही बैठे रहना होगा? इस पर प्रेज़िडेण्ट ने तुरन्त ही अभियुक्तों के हाथों से हथकड़ियों के हटा देने की आज्ञा दी। इसके बाद सफ़ाई के वकील मि० बलजीतसिंह ने अभियुक्त विशम्भरदयाल की मृत्यु पर खेद प्रकट किया। सरकारी वकील मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने उनका समर्थन किया और कहा, कि यह दुर्भाग्य की बात है, कि सरकार की ओर से अच्छी से अच्छी चिकित्सा का प्रबन्ध होने पर भी अभियुक्त की जान न बच सकी।

इसके बाद मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने अपना प्रारम्भिक वक्तव्य पढ़ना आरम्भ किया।

मि० आसफ़अली का विरोध

तुरन्त ही मि० आसफ़अली ने उठ कर वक्तव्य पढ़ने का विरोध किया। आपने कहा, कि क़ानून के अनुसार किसी मुक़दमे के प्रारम्भ में सरकारी वकील को वक्तव्य सुनाने का अधिकार केवल उस सेशन्स अदालत में है, जहाँ मामले का विचार जूरी की सहायता से होता हो। इस वक्तव्य से विचार होने के पहले ही अभियुक्तों के विरुद्ध लोकमत दूषित हो जाने का भय है। मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने कहा, कि मैं वक्तव्य पढ़ने के लिए कोई हठ करना नहीं चाहता। मेरा एकमात्र उद्देश्य इस अदालत के सामने मामले का सारांश प्रकट कर देना है, जिससे उसे मामले के समझने में सुविधा हो।

ट्रिब्यूनल ने ज़फ़रुल्ला ख़ाँ के तर्कों को स्वीकार करते हुए, उन्हें अपना वक्तव्य पढ़ने की आज्ञा दे दी।

अभियुक्तों का वक्तव्य

इसी समय श्रीयुत वात्सायन ने अभियुक्तों की ओर से, अपने साथी विशम्भरदयाल की मृत्यु के उपलक्ष में अदालत से आज के दिन की कार्रवाई स्थगित कर देने के लिए प्रार्थना की।

अदालत ने कहा, हमें दुख है कि हम आपकी प्रार्थना स्वीकार नहीं कर सकते। इस पर श्रीयुत वात्सायन ने कहा, कि अगर अदालत अपनी आज की कार्रवाई स्थगित करने को तैयार नहीं है तो हम उसमें किसी तरह का भाग लेने के लिए भी तैयार नहीं हैं। प्रोफ़ेसर निगम ने कहा, कि हम अभियुक्तों की ओर से आज के दिन के लिए अपने सफ़ाई के वकील वापस लेते हैं।

इतना कह कर अभियुक्तों ने अदालत की तरफ़ पीठ फेर ली और एक गीत गाना प्रारम्भ कर दिया, जिसकी प्रथम पंक्ति इस प्रकार है:—

"मुर्ग़-दिल मत रो यहाँ आँसू बहाना है मना।"

इसके कुछ ही पहले सरकारी वकील ने अपना वक्तव्य पढ़ना प्रारम्भ किया था। गाने की आवाज़ के आगे पढ़ना असम्भव हो गया। इस पर अदालत ने उन्हें और निकट आकर अपना वक्तव्य पढ़ कर सुनाने को कहा। जब तक सरकारी वकील वक्तव्य पढ़ते रहे, तब तक अभियुक्त भी बराबर गाते रहे।

सफ़ाई की ओर से आवेदन-पत्र

सरकारी वकील ने डेढ़ बजे अपना वक्तव्य समाप्त किया।

इसके बाद अदालत ने सफ़ाई की तरफ़ से पेश किए गए उस आवेदन-पत्र पर विचार किया, जिसमें मुख़बिरों को जेल की हवालात से हटा कर न्यायालय की हवालात में रखने की प्रार्थना की गई थी।

अदालत ने आवेदन-पत्र स्वीकार कर लिया और मुख़बिरों को न्यायालय की हवालात में रखने की आज्ञा दे दी। इस प्रबन्ध के हो जाते ही मुख़बिर दिल्ली डिस्ट्रिक्ट जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट मेजर एसपिनल की देख-रेख में कर दिए जायँगे।

इसके बाद अदालत की कार्रवाई स्थगित हो गई! अगली पेशी की तारीख़ २ मई नियत हुई है। उस दिन सबूत की ओर से १२ गवाह पेश होंगे।

आज की कार्रवाई भर में अभियुक्त बराबर गाते रहे। अदालत उनकी ओर से अन्यमनस्क थी।

* * *

सरकारी वकील का वक्तव्य

आज स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने सीनियर सरकारी वकील मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने अपने प्रारम्भिक वक्तव्य में बतलाया, कि उपस्थित १४ अभियुक्तों पर राजनीतिक उद्देश्य से हत्या करने, डाका डालने, विस्फोटक पदार्थ रखने और बनाने, पुलिस-अफ़सरों की हत्या करने के षड्यन्त्र रचने और क़ानून-विरुद्ध अस्त्र-शस्त्र रखने के अभियोग लगाए गए हैं। इन अभियुक्तों के नाम इस प्रकार हैं:—

सर्व-श्री० बी० पी० जैन, भगीरथलाल, बाबूलाल गुप्त, कपूरचन्द, धन्वन्तरि, विद्याभूषण, हरकेश, आर० डी० अरोरो, के० आर० गुप्त, हरद्वारीलाल, बी० आर० वैशम्पायन, एच० एस० वात्सायन, जी० एस० पोतदार और एन० के० निगम।

सबूत का मुख्य गवाह मुख़बिर कैलाशपति है, जिसके समर्थक ५ और दूसरे भी मुख़बिर हैं।

आगे चल कर आपने बतलाया, कि इस षड्यन्त्र की मुख्य घटना से जिन अभियुक्तों का सम्बन्ध है, उनकी संख्या ३० है, जिनमें एक स्त्री भी है। इनमें से १४ तो अभी अदालत के सामने उपस्थित हैं, ६ मुख़बिर बन गए हैं, और एक, विशम्भरदयाल अस्पताल में मर चुका है। शेष ९ फ़रार हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं:—

सर्व-श्री० काशीराम, भवानीसहाय, यशपाल, भवानीसिंह, प्रकाशो देवी, हज़ारीलाल, लेखराम, सम्पूर्नसिंह टण्डन, और रामचन्द्र शर्मा।

इसके बाद आपने षड्यन्त्रकारियों का इतिहास बतलाया। बङ्गाल में अनुशीलन समिति कैसे स्थापित की गई, महाराष्ट्र में उसकी शाखा कैसे खोली गई और फिर महाराष्ट्र शाखा कैसे नष्ट कर दी गई, इसका आपने ब्योरेवार वर्णन किया। आपने बतलाया कि बङ्गाल का क्रान्तिकारी दल अब भी मौजूद है।

हरदयाल ने वहीं से क्रान्तिकारी सिद्धान्त ले आकर यू० पी० और पञ्जाब में बोया था।

लाला हरदयाल के कार्य

प्रारम्भ में श्री० हरदयाल का काम ब्रिटिश नौकरियों के छोड़ने तथा ब्रिटिश संस्थाओं के बहिष्कार का प्रचार करना था। कैम्ब्रिज में शिक्षा प्राप्त करने की जो सरकारी छात्रवृत्ति मिली थी, उसे त्याग कर आपने अपने देशवासियों के सामने उपरोक्त बहिष्कार का उदाहरण रक्खा था। कुछ दिनों के बाद वे इङ्गलैण्ड से अमेरिका चले गए। परन्तु उनके शिष्यों ने भारत में उनका काम बराबर जारी रक्खा। वे आतङ्क और हिंसा का उपदेश बराबर फैलाते रहे। फल-स्वरूप बहुत सी राजनीतिक हत्याएँ हुईं। लॉर्ड हार्डिञ्ज के ऊपर १९१८ में जो बम फेंका गया था, वह उन्हीं की कार्रवाई थी। लाहौर के लॉरेन्स गार्डन वाले बम-विस्फोट में भी उन्हीं का हाथ था। कुछ समय तक उन्होंने स्वाधीनता सम्बन्धी उत्तेजक पर्चे बाँटे, जिनके आधार पर पुलिस ने गिरफ़्तारियाँ कीं, जिनमें क्रान्तिकारी-दल के कई बड़े-बड़े नेता भी थे।

थोड़े समय के लिए उत्तर भारत में क्रान्तिकारियों का ज़ोर हट गया, परन्तु इसी बीच में श्री० हरदयाल ने अमेरिका में वहाँ के हिन्दुस्तानियों का सङ्गठन करके एक ग़दर-पार्टी की स्थापना की। इस पार्टी का काम अमेरिका प्रवासी भारतीयों में तथा गुप्त दूतों द्वारा भारत में क्रान्ति का प्रचार करना था।

यू० पी० का दल

सन् १९१४ में ऐसे बहुत से गुप्त दूत विदेशों से भारत में आए थे। उन्होंने यहाँ क्रान्ति का प्रबल प्रचार किया। पञ्जाब इस प्रचार का मुख्य केन्द्र था। परन्तु कुछ दिनों बाद इनमें से बहुत से प्रचारक नज़रबन्द कर दिए गए, बहुत से अन्य विविध उपायों से रोक दिए गए और बहुतों को, उन पर मामला चला कर, 'भारत-रक्षा एक्ट' के अनुसार दण्ड दिया गया।

इसके बाद क्रान्तिकारी अपराध बन्द रहे। परन्तु सन् १९२२ में बङ्गाल की अनुशीलन समिति ने संयुक्त-प्रान्त में अपनी एक शाखा खोली, जोकि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के नाम से प्रसिद्ध है। इस शाखा ने एक केन्द्र-कमिटी तथा अन्य कितनी ही प्रान्तीय कमिटियाँ स्थापित कीं, जिनका कार्य प्रान्त भर में क्रान्ति का ज़बरदस्त प्रचार करना था। यू० पी० वाले क्रान्तिकारी दल ने प्रान्त के कई ज़िलों में डाके डाले, जिनमें काकोरी की रेल-डकैती प्रसिद्ध है। इसमें बहुत सी गिरफ़्तारियाँ हुईं और दल के बहुत से लोग पकड़ लिए गए।

काकोरी-काण्ड के बाद यू० पी० दल को टूटा हुआ देख कर कानपुर के श्री० विजयकुमार सिनहा तथा लाहौर के श्री० भगतसिंह रङ्ग-मञ्च पर प्रकट हुए। उन्होंने यू० पी० दल को फिर से सङ्गठित करने का सङ्कल्प किया। दिल्ली में एक गुप्त सभा की गई, जिसमें दूर-दूर के षड्यन्त्रकारी जमा हुए थे। उसमें तय हुआ कि हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन की स्थापना की जाय।

इसके बाद एक बार फिर से क्रान्तिकारी आन्दोलन वेग से चल निकला। इस दल ने दिसम्बर १९२८ में सॉण्डर्स की हत्या की, जोकि एक अत्यन्त होनहार अफ़सर थे। परिणाम यह हुआ कि अनेकों गिरफ़्तारियाँ हुईं। वॉयसराय के विशेषाधिकार से स्पेशल ट्रिब्यूनल की रचना हुई और अनेकों षड्यन्त्रकारियों का उसमें विचार हुआ। फिर भी कुछ लोग फ़रार ही रह गए। उन्होंने हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन का काम बराबर जारी रक्खा। लाहौर तथा दिल्ली के स्पेशल ट्रिब्यूनल इन्हीं की कार्रवाइयों के परिणाम हैं।

मुख़बिरों का कथन

मुख़बिर कैलाशपति, मदनगोपाल, गिरिवरसिंह, डी० वी० टेलाङ्ग, बालकृष्ण और रामलाल के कथनों से मालूम होता है, कि इस दल के षड्यन्त्रकारी केवल राजद्रोह के प्रचार तथा दल में नए सदस्यों के भर्ती करने का काम ही नहीं करते थे, बल्कि उसके साथ ही साथ दिल्ली तथा ग्वालियर आदि स्थानों में बम बनाने तथा डाका डालने के भी कार्य करते थे।

मुख़बिरों के कथन से मालूम होता है, कि दिल्ली की गाडोदिया स्टोर की सफल-डकैती इसी दल की करतूत थी। अक्टूबर १९३० में पुलिस अफ़सरों पर अभियुक्त धन्वन्तरि द्वारा किए गए घातक प्रयत्न भी इसी दल के कार्यक्रम थे।

यद्यपि इस दल का कोई प्रत्यक्ष कार्य नहीं प्रकट हुआ, फिर भी दल में नए सदस्यों से भर्ती करने तथा धन एकत्र करने का काम बराबर जारी रहा है। दिल्ली की डकैती में यथेष्ट धन मिल जाने से इस दल का कार्य अधिक वेग से चल निकला था। उस धन से दो महीने तक दिल्ली आदि स्थानों में बम बनाने का कार्य जारी रहा। इस कार्य में अधिकांश अभियुक्त शामिल थे। इनके कार्यक्रम जब तक कि सितम्बर सन् १९३० में कैलाशपति तथा धन्वन्तरि और बाद में अन्य २१ अभियुक्त नहीं गिरफ़्तार हो गए, बराबर जारी रहे।

इसे न्याय कहें या अन्याय ?

श्री० वीरेन्द्र पर अत्याचारों का पहाड़ ढाया जा रहा है

पिता पुत्र से नहीं मिल सकता

महाशय कृष्ण लिखते हैं :—

यह एक निर्दोष नवयुवक विद्यार्थी के साथ किए गए दुर्व्यवहारों का कारुणिक क़िस्सा है, जिसको गवर्नमेण्ट ने सन् १८१८ के तीसरे रेग्यूलेशन के अनुसार गिरफ़्तार कर लिया था।

"मेरा पुत्र वीरेन्द्र, फ़ोरमैन क्रिश्चियन कॉलेज लाहौर के बी० ए० क्लास का विद्यार्थी है। उसे पञ्जाब की पुलिस ने तीन-तीन बार निराधार सन्देह पर गिरफ़्तार किया और हर बार सबूत के अभाव में मामले पर विचार होने के पहले ही छोड़ दिया। परन्तु १० फ़रवरी को अचानक सन् १८१८ के तीसरे रेग्यूलेशन के अनुसार उसे फिर से गिरफ़्तार कर लिया। आज वह लाहौर सेण्ट्रल जेल में नज़रबन्द राजनीतिक बन्दी है। सम्भवतः यह आख़िरी गिरफ़्तारी पुलिस की अयोग्यता छिपाने की ग़रज़ से की गई है। किसी अभियुक्त का तीन-तीन बार गिरफ़्तार होना और हर बार सबूत के अभाव में छूट जाना, पञ्जाब-पुलिस की शान के ख़िलाफ़ था। इसीलिए २० वर्ष के इस नवयुवक को राजबन्दी बना कर जेल में ठूँस दिया, जिसका अपराध अब तक दुनिया को अज्ञात है। यह तो यह, इसके बाद की करतूतें और भी हृदय-वेधी हैं।

वकील के पत्र

"२री मार्च को एसेम्बली में मि० जगन्नाथ अग्रवाल के प्रश्न के उत्तर में भारत-सरकार के होम-मेम्बर ने कहा, कि वीरेन्द्र के अभियोगों की जाँच दो सेशन्स जज मिल कर करेंगे और जाँच कर लेने पर निर्णीत अभियोग की एक नक़ल उसे दे देंगे। जो कुछ वह उत्तर देना चाहेगा, उसे भी वे लिख लेंगे। इस पर लाहौर हाईकोर्ट के एडवोकेट श्री० रामलाल आनन्द ने होम-मेम्बर को एक पत्र लिख कर उनसे अभियोग की जाँच-पड़ताल करने वाले दोनों सेशन्स जजों के नाम तथा उनकी कार्य-विधि का ब्योरा पूछा। साथ ही आपने यह भी पूछा, कि क्या जाँच के समय अभियुक्त को उत्तर लिखाने तथा अन्य क़ानूनी कार्रवाइयों में सहायता पहुँचाने के लिए क़ानूनी सलाहकार उपस्थित रह सकते हैं?

"उसी दिन आपने लाहौर सेण्ट्रल जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट को भी एक पत्र लिखा; जिसका आशय यह था, कि मुझे क़ानून सलाहकार की हैसियत से वीरेन्द्र से मिलने दिया जाय। मिलने के समय, यदि आवश्यक समझा जाय तो पुलिस का पहरा भी थोड़े फ़ासले पर बना रह सकता है। इस पत्र के उत्तर में पुलिस के डिपुटी इन्स्पेक्टर जनरल ने अपने २५ मार्च के पत्र में मि० रामलाल को लिखा कि 'क़ानूनी सलाहकार अभियुक्त से एक सी० आई० डी० के अफ़सर की उपस्थिति में, जहाँ से वह सब बातचीत सुन सके, मिल सकता है।' पहले वाले पत्र के उत्तर में गवर्नमेण्ट ऑफ़ इण्डिया के होम डिपार्टमेण्ट ने ता० २८ मार्च को एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था कि 'आपका पत्र पञ्जाब-सरकार के पास विचारार्थ भेज दिया गया है।' ढोंग और पाखण्ड की हद हो गई! एक ख़ून का अपराधी तक, जिसका फ़ैसला सेशन्स और जूरी सुना चुकते हैं, अपील करने के लिए बिना किसी बाधा के और बिना पुलिस की उपस्थिति के अपने क़ानूनी सलाहकार से मिल सकता है, परन्तु एक निर्दोष छोकड़ा, जिसके विरुद्ध कोई सबूत नहीं है अपने वकील से, बिना एक सी० आई० डी० अफ़सर की निकट-उपस्थिति के नहीं मिल सकता!!

मिलने नहीं दिया गया

"निस्सन्देह उपरोक्त प्रतिबन्धों में क़ानूनी सलाह का विचार त्याग देना पड़ा। इसके बाद पञ्जाब गवर्नमेण्ट का एक पत्र मि० रामलाल एडवोकेट के नाम फिर आया, जिसमें लिखा था, कि जितनी सूचना आपको दी जा चुकी है, उससे अधिक सूचना दे सकना असम्भव है। इस पत्र के पहले ही वीरेन्द्र को उसका अभियोग-पत्र दे दिया गया था और उसका उत्तर अधिकारीगण दर्ज कर चुके थे।

"मुझे सन्देह है, कि यह मामला बहुत पहले ही सेशन्स जजों ने तय कर लिया था और उत्तर पुलिस के अनुकूल बनवा लिया था। यही कारण है कि इस कार्रवाई के समय में अभियुक्त से किसी को मिलने की आज्ञा नहीं दी गई और जिनको दी जा चुकी थी, उनसे वापस ले ली गई। यद्यपि होम-मेम्बर ने एसेम्बली में उत्तर देते हुए कहा था कि अभियुक्त से प्रति सप्ताह भेंट-मुलाक़ात हो सकेगी; फिर भी उनके कथन के शब्द का पालन तो हुआ; परन्तु भाव का पालन नहीं किया गया। तीन-चार मुलाक़ातों को छोड़ कर, शेष सब मुलाक़ातों में, या तो कोई पख़ लगा दी जाती थी या घण्टों रोकने के बाद नामञ्ज़ूरी दे दी जाती थी।

"वीरेन्द्र के सभी पत्रों पर सेन्सर रहता है। मेरे पास तक पहुँचते-पहुँचते उनकी अनेकों पंक्तियाँ मिटा दी जाती हैं। मेरे पत्र उसके पास पहुँचते हैं या नहीं, यह पुलिस ही जाने। वीरेन्द्र के विषय में जानकारी प्राप्त करने के जो भी उपाय काम में लाए जाते हैं, उन्हें पुलिस बेकार कर देती है। मैं नहीं जानता कि जेल के सीख़चों के पीछे क्या हो रहा है! वीरेन्द्र को बी० ए० की परीक्षा देने की अनुमति दे दी गई है; परन्तु उसके प्रबन्ध का व्यय हमसे १२०) लिया गया है; यद्यपि इसका दोषी न तो वीरेन्द्र है, न मैं हूँ। परीक्षा का स्थान बिल्कुल गुप्त रक्खा गया है। मुझे नहीं मालूम कि वह अपनी परीक्षा में क्या कर रहा है। और परीक्षा की तैयारी के लिए बाहर से उसे कोई सुविधा नहीं दी गई।

"औपनिवेशिक स्वराज्य का यह व्यावहारिक सच्चा स्वरूप है। फ़ौलादी ढाँचे में गाँधी-इर्विन वार्तालाप का यही प्रभाव है।"

* * *

कानपूर-पुलिस की अकर्मण्यता के कुछ ताज़े नमूने

मौ० शौकत और बाबा ख़लीलदास के भाषणों की चिन्गारियाँ

जब ज़ोरों से लूट-मार हो रही थी, तब पुलिस वाले ताश खेल रहे थे !!

मूलगञ्ज में दङ्गा शुरू होते ही मैजिस्ट्रेट भाग गया :: कानपुर हत्याकाण्ड के सम्बन्ध में आँखों-देखी गवाहियाँ

कानपूर २२वीं अप्रैल—आज लञ्च के बाद अपर इण्डिया चेम्बर ऑफ़ कॉमर्स के सेक्रेटरी मि० जे० जी० रायन ने अपना बयान दिया। गवाह ने अपने बयान में एक घटना का वर्णन करते हुए कहा, कि २६वीं मार्च की सुबह को जब मैं ग्वालटोली गया तो देखा कि बाज़ार में चारों ओर आग लगी हुई है, और कुछ पुलिस के सिपाही सड़क पर खड़े हैं। जब मैंने उनसे पूछा कि आग क्यों नहीं बुझाते, तो उन्होंने उत्तर दिया कि आज्ञा नहीं मिली है। गवाह ने आगे कहा कि कानपूर की पुलिस कानपूर के लिए कमज़ोर साबित हुई है। २४वीं और २५वीं मार्च को तो पुलिस का प्रबन्ध बहुत ही असन्तोषप्रद था।

इसके बाद बाबू नारायणप्रसाद निगम का बयान हुआ। आपने दङ्गे के तात्कालिक कारणों को बताते हुए कहा कि मुझे जाँच करने पर पता लगा, कि एक मुसलमान हेड कॉन्स्टेबिल, जो सम्भवतः ख़ुफ़िया पुलिस का आदमी था, सादी पोशाक में बादशाही नाका से मूलगञ्ज की ओर जा रहा था। इसी समय कुछ लड़कों ने उसका पीछा किया। वह कॉन्स्टेबिल मूलगञ्ज की ओर भागा और शेराबाबू के पार्क के समीप जाकर उसने यह चिल्लाना शुरू किया कि हिन्दू लोग मुझे पीट रहे हैं। उसकी यह चिल्लाहट सुन कर बहुत से मुसलमान अपने घरों से निकल आए और उन्होंने हिन्दुओं पर हमला कर दिया। इस दङ्गे की ख़बर आग की तरह फैल गई और परिणाम-स्वरूप चारों ओर दङ्गे होने लगे। २४वीं मार्च को शहर में रात भर शोर-गुल मचा रहा। गवाह ने कहा कि मैजिस्ट्रेट का यह कहना कि जब वह गश्त के लिए निकले थे, उस समय चारों ओर शान्ति थी, बिल्कुल ग़लत है।

कमिटी के अध्यक्ष ने गवाह से कहा कि एक अफ़सर ने अपने बयान में कहा है कि मूलगञ्ज के चौराहे पर मिलिटरी का एक दल था। गवाह ने कहा कि वहाँ से मिलिटरी हटा ली गई थी। यदि वह न हटाई जाती तो तिल का ताड़ न हो जाता। गवाह ने कहा कि परिस्थिति को क़ाबू में लाने के लिए न तो कोई गिरफ़्तारी की गई और न लाठी का ही कहीं प्रयोग किया गया।

गवाह ने आगे कहा कि अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने दङ्गे के समय मैजिस्ट्रेट से भेंट की, उन्हें सलाहें दीं, किन्तु मैजिस्ट्रेट साहब ने किसी की बातों पर भी कान नहीं दिया।

प्रश्न—क्या आप ऐसे सज्जनों के नाम बता सकते हैं, जिनकी बातों पर मैजिस्ट्रेट ने ध्यान नहीं दिया हो?

उत्तर—श्री० विक्रमाजीतसिंह, श्री० ब्रजेन्द्रस्वरूप और स्वयं गवाह।

गवाह ने आगे कहा कि, पुलिस और मिलिटरी की संख्या काफ़ी थी। यदि अधिकारीगण यह जानते होते कि कहाँ क्या हो रहा है, तो लोगों को इतनी मुसीबत नहीं उठानी पड़ती।

इसके बाद श्री० कृष्णलाल गुप्त एडवोकेट की गवाही हुई। उन्होंने अपने बयान के सिलसिले में कहा—"मैं अपने मकान से देखता था कि राह चलते निर्दोष लोगों पर गुण्डे आक्रमण करते और बड़ी निर्दयतापूर्वक उन्हें मारते थे। बेकनगञ्ज की ओर आक्रमणकारी सङ्गठित रूप में जा रहे थे। ४ बजे का समय था। मिल-मज़दूरों को छुट्टी हो चुकी थी। इन निर्दोष मज़दूरों की जानें बुरी तरह ली गईं। मेरी आँखों के सामने ही बेगुनाह लोगों को निर्दयी आक्रमणकारियों ने कुत्ते की तरह मारा।

बात थी झगड़े की, नाकूसो[1] अज़ाँ[2] का इम्तियाज़,
हक़ तो यह है, दोनों आवाज़ों में एक आवाज़ है। —'बिस्मिल'

१—शङ्ख, २—नमाज़ की सूचना, ३—पहचान,

अध्यक्ष—आप कल्पना-जगत में तो विचरण नहीं कर रहे हैं?

गवाह—आप जो कुछ समझें, मैं सच्ची बातें कह रहा हूँ, जिन्हें मैंने अपनी आँखों से देखी हैं।

गवाह ने आगे कहा कि जनता की जानोमाल की रक्षा के लिए कोई भी प्रबन्ध नहीं किया गया। जनता के बार-बार अनुरोध करने पर भी दङ्गाइयों को मनमानी करने दी गई। पुलिस की उदासीनता से दङ्गाइयों को किसी बात की फ़िक्र नहीं रह गई थी। कलक्टर साहब प्रत्येक बात शहर-कोतवाल पर छोड़ देते थे। डिप्टी मैजिस्ट्रेट दर्शकों की तरह तमाशा देखते थे। अधिकारियों ने सहायक सेना और मिलिटरी मोटरों से कोई काम नहीं लिया। यदि ऐसा किया जाता तो मामला यहाँ तक न बढ़ जाता। हाँ, सिविल लाइन में उन लोगों ने अच्छा प्रबन्ध किया था।

२३वीं अप्रैल—आज कुछ अन्य लोगों की गवाहियों के पश्चात् क्राइस्ट चर्च कॉलेज के प्रिन्सिपल श्री० चटर्जी का बयान शुरू हुआ। आपने अपने बयान में कहा कि जिन लोगों के ऊपर जनता के जानोमाल की रक्षा का दायित्व है, उनकी उदासीनता और किं-कर्तव्य विमूढ़ता ने ही मामले को सङ्गीन बना दिया था। निर्दोष व्यक्तियों के ऊपर आक्रमण किए जाते थे और पुलिस हाथ पर हाथ धरे तमाशा देखती थी। जिस समय परिस्थिति क़ाबू में आ सकती थी, उस समय यदि क़ानून और शान्ति के रक्षकगण उचित कार्यवाही करते, तो इस प्रकार अराजकता नहीं फैल जाती।

प्रश्न—क्या आप स्वीकार करते हैं कि पुलिस ने उचित कार्यवाही नहीं की?

उत्तर—हाँ!

इसके बाद गवाह ने अधिकारियों की असावधानता तथा पुलिस की कमज़ोरी के विषय में कह कर अपना बयान समाप्त किया।

सर्वेन्ट्स ऑफ़ पिपुल सोसायटी के श्री० हरिहरनाथ शास्त्री ने अपने बयान में कहा कि सन् १९२१ के असहयोग आन्दोलन के बाद से ही यहाँ के हिन्दू-मुसलमानों में अनबन रहती थी। १९३० में मुसलमानों ने अपना 'तन्ज़ीम' शुरू किया। कभी-कभी तन्ज़ीम का जुलूस शहर में होकर निकलता था। मौ० शौकतअली, बाबा ख़लील-

दास तथा एक अन्य स्थानीय मुस्लिम नेता साम्प्रदायिक भेद-भाव फैलाते थे, और कॉङ्ग्रेस के विरुद्ध प्रचार करते थे। सरकार ने तञ्ज़ीम की ओर ध्यान नहीं दिया। गवाह ने कहा कि इस दङ्गे का कारण आर्थिक या धार्मिक नहीं है। इसके भीतर राजनैतिक समस्या है। मुसलमानों ने सोचा कि हिन्दू उनका नाश कर हिन्दू-राज्य स्थापित करना चाहते हैं। गवाह ने कहा कि इस दङ्गे में ६०० मनुष्य मरे और १,१०० घायल हुए हैं। २९ लाख की सम्पत्ति नष्ट हुई है!

श्री० मदनलाल चौधरी ने अपने बयान में कहा कि जिस समय हिन्दू अहिंसात्मक आन्दोलन में कार्य कर रहे थे, उसी समय मुसलमानों ने 'तञ्ज़ीम' का सङ्गठन किया। इस तञ्ज़ीम के वालण्टियर लोग हथियार लेकर जुलूस निकालते और मनोमालिन्य पैदा करने वाले गीत गाते थे। सरकार इन मामलों में हस्तक्षेप न कर उनका उत्साह और भी बढ़ाती थी।

गवाह ने आगे कहा कि तीन दिनों तक भयङ्कर लूटपाट होती रही, किन्तु पुलिस ने इस अराजकता को रोकने के लिए कोई उपाय नहीं किया। गवाह ने कहा कि पुलिस की आँखों के सामने ही दङ्गाइयों ने मेरे मकान पर आक्रमण किया। किन्तु पुलिस ने किसी प्रकार की सहायता नहीं दी, किसी को गिरफ़्तार भी नहीं किया, फ़ायर-ब्रिगेड को भी सहायता देने से पुलिस ने इन्कार कर दिया। २६वीं मार्च को दो मिलिटरी मोटर फ़ीलख़ाना चौराहे के पास आकर खड़ी हुईं। पुलिस वालों ने पूछा—"यह रास्ता ख़तरनाक तो नहीं है?" एक ने कहा—"यहाँ बहुत से आदमी खड़े हैं। बखेड़ा मचने की आशा नहीं है।" इससे मालूम पड़ता है कि मानो वे ख़तरनाक जगहों में जाने से डरते थे या वहाँ जाने की उन्हें मुमानियत थी। कॉङ्ग्रेस वालों की वजह से यह दङ्गा नहीं हुआ था। मुसलमानों में रक्षा-कार्य अच्छा किया गया था। पुलिस वालों ने भी उनकी सहायता की। हिन्दुओं के बचाने का कोई उपाय नहीं किया गया था। पहली बात यह है कि उन पर यह आक्रमण अचानक हुआ था; और दूसरी बात यह है कि पुलिस ने उन्हें कोई सहायता नहीं पहुँचाई। हाँ, सेवा-समिति वालों ने अच्छा कार्य किया है।

२४वीं अप्रैल—आज बाबू ब्रजेन्द्रस्वरूप ने अपना बयान दिया। दङ्गे के कारणों को बताते हुए आपने कहा कि दङ्गे का कारण मुसलमान दूकानदारों की दूकान पर पिकेटिङ्ग नहीं है, बल्कि इसका कारण कुछ दूसरा ही है। इसके बाद आपने मुसलमान ख़ुफ़िया पुलिस वाली घटना (जो मूलगञ्ज में हुई थी) के सम्बन्ध में अपना बयान देते हुए कहा कि दङ्गे की जड़ यहीं से शुरू होती है।

अधिकारियों की लापरवाही के सम्बन्ध में आपने कहा कि, मुझे यह कहना पड़ता है कि स्थानीय अधिकारीगण और पुलिस की लापरवाही ने ही बात को इतना बढ़ा दिया। उन्होंने अपने कर्त्तव्य-पालन में अपनी अयोग्यता और अदूरदर्शिता का परिचय दिया है। मूलगञ्ज में दङ्गा आरम्भ होते ही मैजिस्ट्रेट साहब घर चले आए। यदि वह वहाँ ठहर कर दङ्गाइयों को दबाने की चेष्टा करते तो दङ्गा इतना विकट रूप नहीं धारण करता। आपने आगे कहा कि यह बड़े दुर्भाग्य की बात थी कि ऐसे विकट समय में भी मैजिस्ट्रेट साहब अपने बङ्गले में बैठे रहना ही अपना कर्त्तव्य समझते थे।

डिप्टी मैजिस्ट्रेट पं० रामेश्वरदयाल ने, जिन्हें दङ्गे के समय काम करना पड़ा था, अपने बयान में अपने कार्यों का वर्णन किया। नवाबज़ादा लियाक़तअली ख़ाँ के पूछने पर आपने कहा कि मैं लूट-मार रोकने के लिए गया था। मुझे यह पूर्ण विश्वास था कि कोई हिन्दू मुझ पर आक्रमण नहीं करेगा। इसलिए मैंने पुलिस की परवाह नहीं की, चौक में पुलिस की नज़रों के सामने लूट होती थी।

इसके बाद आपने अपने बयान में कहा कि हिन्दू-कॉन्स्टेबिल मुसलमानों की तथा मुसलमान कॉन्स्टेबिल हिन्दुओं की रक्षा की ओर ध्यान नहीं देते थे। अध्यक्ष के पूछने पर आपने कहा कि सभी कॉन्स्टेबिलों में यह भेद-भाव नहीं था।

२७वीं अप्रैल—आज दयानन्द एङ्ग्लो वैदिक कॉलेज के प्रिन्सिपल लाला दीवानचन्द का बयान हुआ। आपने अपने बयान में दङ्गे के समय की स्थिति का वर्णन करते हुए कहा कि आमतौर पर लोगों की यह धारणा है कि २४वीं मार्च से २६वीं मार्च तक कानपूर का शासन-कार्य बिल्कुल बन्द हो गया था। मेरा यह विचार है कि यदि अधिकारियों ने उचित कार्यवाही की होती तो इतनी लूट और हत्याएँ न हुई होतीं। फिर आपने आगे कहा कि प्रतिष्ठित नागरिकों की बातों पर ध्यान नहीं दिया जाता था। आगे नवाबज़ादा लियाक़त हुसैन ने आपसे पूछा—क्या आपका यह विचार है कि पुलिस लापरवाह थी और उसने कुछ नहीं किया?

उत्तर—मैंने देखा कि पुलिस के सिपाही ताश खेल रहे हैं और दङ्गे को दबाने का कोई प्रयत्न नहीं कर रहे हैं।

श्री० जोग की चुनौती

कानपूर का २८वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के प्रसिद्ध कॉङ्ग्रेस कार्यकर्ता श्री० जोग ने अपने वक्तव्य में कहा है कि मि० गेविन का यह कहना कि मैंने स्वयंसेवकों को मेस्टन रोड पर मुसलमानों की दूकानों पर धरना देने के लिए उत्साहित किया था, बिल्कुल ग़लत है। वास्तव में किसी भी हड़ताल के दिन मुसलमानों की दूकानों पर कभी पिकेटिङ्ग नहीं की गई। केवल 'मोतीलाल-दिवस' के अवसर पर, मुसलमान नेताओं से यह प्रार्थना की गई थी कि वे मुसलमानों से हड़ताल मनाने के लिए अनुरोध करें। सत्याग्रह आन्दोलन के समय भी मेस्टन रोड पर मुसलमानों की दूकानों पर नाम मात्र की पिकेटिङ्ग की जाती थी, और दबाव तो कभी डाला ही नहीं गया।

कॉङ्ग्रेस ने हमेशा यह कोशिश की है कि मुसलमानों के साथ किसी प्रकार का झगड़ा न हो और न उनके भावों पर चोट पहुँचे। मैं अपने वक्तव्य की सचाई के प्रमाण-स्वरूप इस बात का चैलेञ्ज करता हूँ, कि कोई भी मुसलमान दूकानदार यह सिद्ध कर दे कि उसकी दूकान ज़बरदस्ती बन्द कराई गई थी।

मि० एस० एम० बशीर ने अपना बयान देते हुए यह स्वीकार किया कि यदि परमात्मा के कुछ हिन्दू, वहाँ के मुसलमानों को शरण नहीं देते तो अधिकांश मुसलमान मारे जाते। अध्यक्ष ने आपसे पूछा—क्या हिन्दू, स्त्रियों पर आक्रमण एकदम ही नहीं करते थे?

गवाह—मुझे यह मालूम हुआ है कि हिन्दुओं ने मुसलमान औरतों और बच्चों को शरण दिया था; इस कारण उन्हें कोई भय नहीं था।

इसके बाद राधेश्याम नामक एक व्यक्ति की गवाही ली गई। उसने अपने बयान में लूट के सम्बन्ध में कहा, कि पुलिस की नज़रों के सामने, दङ्गाई थैलों में लूट का माल ले जाते थे, किन्तु पुलिस न तो उन्हें गिरफ़्तार ही करती थी और न उन्हें रोकने का ही प्रयत्न करती थी।

* * *

'मैं गाँधी के लिए वोट दूँगी'

एक अङ्गरेज़ महिला का महात्मा जी के प्रति भक्ति का प्रदर्शन

हाल ही में इङ्गलैण्ड के एक चुनाव में बड़ी मनोरञ्जक घटना घटी है, जिससे महात्मा जी के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का पता चलता है। कहा जाता है, कि एक वृद्धा ने पोलिङ्ग स्टेशन में पहुँच कर चुनाव-अफ़सर से पूछा कि "गाँधी को वोट देने के लिए मैं कहाँ निशान लगाऊँ?" चुनाव-अफ़सर यह सुन कर बहुत आश्चर्यान्वित हुआ। वृद्धा ने कहा—"गाँधी को मैं इसीलिए वोट देना चाहती हूँ, कि 'डेलीमेल' उन्हें वोट न देने के लिए प्रचार करता है।"

स्पेन का नया उत्तराधिकारी

पेरिस का २४वीं अप्रैल का समाचार है, कि डॉन कार्लस के पुत्र डॉन जेम ऑफ़ बोर्बन ने अपने को स्पेन की राजगद्दी का उत्तराधिकारी बताया है। अलफ़ॉन्ज़ो की अनुपस्थिति को अच्छा मौक़ा समझ कर, उसने एक वक्तव्य प्रकाशित किया है, जिसमें उसने राज-भक्तों से स्पेन के राजगद्दी के सच्चे अधिकारी को सहायता देने का अनुरोध किया है। उसने उन्हें आशा दी है, कि मैं कम्युनिज़्म का विरोध करूँगा। उसका कहना है, कि केवल एक ऐसे राजा की असफलता के कारण, जो अपनी प्रजा को सन्तुष्ट नहीं कर सका, राज्यतन्त्र का नाश नहीं हो जाना चाहिए।

—लन्दन का २०वीं अप्रैल का समाचार है, कि ब्रिस्टल के व्यापारिक और मज़दूर-सङ्घों ने अपनी परिषद में महात्मा गाँधी और भारत के व्यापारिक और मज़दूर-सङ्घों का ध्यान भारतीय किसानों और मज़दूरों को पूर्ण राजनैतिक अधिकार दिए जाने की ओर आकर्षित किया है। परिषद ने भारतीय कार्यकर्ताओं को बधाइयाँ दीं और उनके स्वातन्त्र्य-युद्ध में सफलता की शुभ-कामना प्रगट की।

इङ्गलैण्ड में भारतीय महिलाओं को बधाई

लन्दन का समाचार है, कि कॉमनवेल्थ ऑफ़ इण्डिया लीग की ओर से वहाँ एक महिला-परिषद की गई। परिषद में सम्मिलित अङ्गरेज़ महिलाओं ने भारतीय महिलाओं की वीरता और सच्ची लगन की भूरि-भूरि प्रशंसा की। श्रीमती पेथिक लॉरेन्स ने कहा, कि भारतीय महिलाओं ने जो आदर्श उपस्थित किया है, वह आधुनिक सभ्य के लिए सब से अधिक सनसनी फैलाने वाली घटना है। मिस सिल्विया पैङ्कहर्स्ट ने एक प्रस्ताव पेश किया, जिसमें राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक स्वतन्त्रता के संग्राम में वीरतापूर्वक मोर्चा लेने के लिए, भारतीय महिलाओं की प्रशंसा की गई थी। प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास हो गया।

परिषद ने सब से अधिक महत्वपूर्ण जो प्रस्ताव पास किया है वह यह है, कि भारतीय स्वराज्य-शासन-विधान में भारतीय जनता के आत्म-निर्णय के अधिकार को विशेष स्थान मिलना चाहिए।

परिषद ने कुछ अन्य प्रस्ताव भी सर्व-सम्मति से पास किए, जिनमें मेरठ षड्यन्त्र के अभियुक्तों को लगातार बहुत दिनों तक क़ैद में रखने की निन्दा की गई है और उनको छोड़ देने के लिए ज़ोर दिया गया है।

* * *

३० अप्रैल, सन् १९३१

अफ़ग़ानिस्तान का भविष्य

इधर कुछ दिनों से अफ़ग़ानिस्तान ने सारे संसार का—विशेषतः एशियाई देशों का ध्यान अपनी ओर पुनः आकर्षित किया है। अफ़ग़ानिस्तान की समस्या आज फिर एक बार राजनीति के विद्यार्थियों के लिए एक पहेली बन गई है। पाठकों को स्मरण होगा, अभी हाल ही में लाहौर के सुविख्यात उर्दू पत्र सहयोगी "ज़मींदार" में इस आशय का एक पत्र प्रकाशित हुआ था, कि अफ़ग़ानिस्तान की अधिकांश जनता वहाँ के वर्तमान सम्राट नादिर ख़ाँ से बहुत असन्तुष्ट हो गई है और उसने पुनः ग़ाज़ी अमानुल्लाह को अफ़ग़ानिस्तान का राजसिंहासन उन्हें सौंप देने का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया है। पत्र में यह भी प्रकाशित हुआ था, कि इस आशय का एक निमन्त्रण-पत्र अफ़ग़ानिस्तान के भूतपूर्व सम्राट ग़ाज़ी अमानुल्लाह ख़ाँ के पास भेजा गया था, जिसे उन्होंने स्वीकार भी कर लिया है। पत्र का कहना था, कि एप्रिल, १९३१ के अन्त तक अथवा मई तक, ग़ाज़ी अमानुल्लाह ख़ाँ ने अफ़ग़ानिस्तान की सीमा पर पहुँच जाने का निश्चय कर लिया है। अफ़ग़ानिस्तान की वर्तमान राजनीतिक अवस्था को दृष्टि में रखते हुए सहसा इस समाचार पर किसी को विश्वास नहीं होता था, किन्तु इस पत्र के प्रकाशित होने के कुछ ही दिनों बाद रयूटर ने भी इसी बात का समाचार दिया, कि ग़ाज़ी अमानुल्ला ख़ाँ ९वीं एप्रिल को नेपल्स से मक्का-मदीना की ओर रवाना हो गए हैं। केवल रयूटर ही नहीं; विलायत के 'मॉर्निङ्ग पोस्ट' में इस पत्र के रोम-स्थित एक सम्वाददाता का भी इसी आशय का एक समाचार प्रकाशित हुआ था, जिसमें कहा गया था, कि "अमानुल्ला के मित्रों ने उन्हें पुनः अफ़ग़ानिस्तान की गद्दी पर आसीन करने का निश्चय कर लिया है और वे इस सम्बन्ध में प्रयत्नशील भी हैं।" 'मॉर्निङ्ग पोस्ट' के रोम-स्थित सम्वाददाता का यह भी कहना था, कि ग़ाज़ी अमानुल्ला अपने कुछ मित्रों के साथ नेपल्स से पोर्ट सैद (सईद बन्दर) के लिए रवाना भी हो चुके हैं। सहयोगी 'ज़मींदार' में वह पत्र, जिसकी चर्चा ऊपर की गई है, 'मॉर्निङ्ग पोस्ट' में यह समाचार प्रकाशित होने के पहिले ही प्रकाशित हो चुका था। उसमें यह भी कहा गया था, कि ग़ाज़ी अमानुल्ला पहिले मक्का-मदीना जायँगे और इसके बाद अफ़ग़ानिस्तान के लिए कूच करेंगे। सहयोगी की पहिली भविष्यवाणी पूर्णतः ठीक उतरी। शिमला के २३वीं एप्रिल के एसोसिएटेड प्रेस के एक तार से पता चलता है, कि "अफ़ग़ानिस्तान के भूतपूर्व सम्राट ग़ाज़ी अमानुल्ला ख़ाँ जो "तीर्थ-यात्रा" के लिए हेजाज़ जा रहे हैं, आज जद्दा पहुँच गए।" जहाँ तक हमें स्मरण है, ग़ाज़ी अमानुल्ला ख़ाँ को अपने सुदीर्घ शासन-काल में—जबकि उन्हें अनेक सुविधाएँ प्राप्त थीं, "तीर्थ-यात्रा" की कभी नहीं सूझी। ग़ाज़ी अमानुल्ला ख़ाँ-जैसे कर्मशील व्यक्ति से इस बात की आशा भी नहीं की जा सकती, कि वे किसी तीर्थ-स्थान में जाकर 'इबादत' और 'सिजदा' में ही अपना शेष जीवन व्यतीत कर देंगे, अतएव हमें तो कुछ दाल में काला मालूम होता है। हमारा यह सन्देह सर्वथा निराधार हो, सो बात भी नहीं है। हम कुछ प्रमाण भी देने को तैयार हैं। अस्तु।

अभी हाल ही की बात है, कि समाचार-पत्रों में इस आशय का भी एक समाचार प्रकाशित हुआ था, कि अफ़ग़ानिस्तान के वर्तमान शासक सम्राट नादिर ख़ाँ को ब्रिटिश गवर्नमेण्ट ने १७० हज़ार पाउण्ड बिना सूद-ब्याज लिए ही क़र्ज़ दिया है और इसके अतिरिक्त एक बहुत बड़ी संख्या में अस्त्र-शस्त्र भी उन्हें ब्रिटिश गवर्नमेण्ट की ओर से भेंट किया गया है। जहाँ तक हमें स्मरण है, ब्रिटिश गवर्नमेण्ट की ओर से इस समाचार को न तो निराधार ही बतलाया गया है और न इसका खण्डन ही किया गया है; इसलिए हम केवल अपनी शङ्का-समाधान के लिए यह पूछना चाहते हैं, कि आख़िर अफ़ग़ानिस्तान में ऐसा कौन-सा सङ्कट इधर हाल ही में उपस्थित हो गया था, जिसके लिए ब्रिटिश गवर्नमेण्ट को इतनी अधिक सहायता देने की आवश्यकता पड़ी? फिर इसी सिलसिले में चलते-चलाते लॉर्ड इर्विन अपना १२वाँ ऑर्डिनेन्स भी पास करते गए, जिसका आशय यह है, कि यदि कोई पत्र ऐसा लेख, समाचार अथवा अफ़वाह छापेगा, जिसके द्वारा ब्रिटिश गवर्नमेण्ट तथा किसी अन्य राज्य में मनोमालिन्य पैदा होने की सम्भावना हो, तो उसके मुद्रक, प्रकाशक और सम्पादक को २ वर्ष तक का कठिन कारावास-दण्ड या जुर्माना अथवा दोनों की सज़ा दी जावेगी! इस ऑर्डिनेन्स के पास किए जाने से भी—जबकि इसके पास किए जाने का न तो कोई कारण दिखाई देता है और न गवर्नमेण्ट की ओर से ही कोई कारण बतलाया गया है, जैसा कि अन्य ऑर्डिनेन्सों को पास करते समय बतलाया जाता था—अवश्य यही सन्देह होता है, कि वर्तमान अफ़ग़ानिस्तान की अवस्था इस समय फिर रहस्यपूर्ण हो गई है और वह ऐसी साधारण नहीं है, जैसी नादिर ख़ाँ के मित्रों की ओर से बतलाई जाती है। भारतवासियों के प्रति घोर अविश्वास होने के कारण ब्रिटिश गवर्नमेण्ट भी उन्हें अन्दरूनी राजनैतिक मामलों का समाचार तक नहीं देना चाहती; अतएव भारतवासियों को अफ़ग़ानिस्तान तथा बर्मा आदि के सम्बन्ध में केवल उतनी ही बातें मालूम हो सकती हैं, जितनी ब्रिटिश गवर्नमेण्ट उन्हें अपनी ओर से बतलाना चाहे। उड़ते हुए जो थोड़े-बहुत समाचार भारतवासियों के कानों तक बहुत कठिनाइयों से पहुँच जाया करते थे, इस नए ऑर्डिनेन्स ने उनका द्वार भी बन्द कर दिया! अस्तु।

अफ़ग़ानिस्तान के वर्तमान शासक सम्राट नादिर ख़ाँ के प्रति प्रजा के कैसे विचार हैं, यह बतलाना कठिन है; किन्तु भूतपूर्व सम्राट अमानुल्ला ख़ाँ के प्रति प्रजा के विचार बड़े ही उदार और प्रेमपूर्ण थे, इसमें सन्देह नहीं। वास्तव में ग़ाज़ी अमानुल्ला ख़ाँ संसार के उन श्रेष्ठ और कुशल शासकों में से थे, जिनके हाथ में शासन का सूत्र आते ही मुर्दे राष्ट्रों में भी नवजीवन का सञ्चार हो जाता है और पिछड़ी हुई जातियाँ भी उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर विराजमान हो जाती हैं। अमानुल्ला ने अपने शासन-काल में अफ़ग़ानिस्तान की बर्बर प्रजा को सभ्य और अफ़ग़ान-राष्ट्र को संसार का एक महान शक्तिशाली राष्ट्र बनाने का जो विराट प्रयत्न किया था, वह पाठकों से छिपा न होगा। उनके सिंहासनारूढ़ होते ही अफ़ग़ानिस्तान की अस्त-व्यस्त और बिखरी हुई शक्तियों में एक नवीन स्फूर्ति का सञ्चार हो गया और वीर अफ़ग़ानों का जीवन एक नई ज्योति से प्रदीप्त हो उठा। अमानुल्ला के पूर्वजों के शासन-काल में अफ़ग़ानिस्तान कहने को तो स्वतन्त्र था, पर वास्तव में वह भारतीय गवर्नमेण्ट का ग़ुलाम मात्र था, एशिया की अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों को अपने क़ाबू में रखने के लिए ब्रिटिश गवर्नमेण्ट की ओर से अमानुल्ला के पिता अमीर हबीबुल्लाह को प्रति वर्ष १८ लाख रुपयों की भेंट नियमित रूप से दी जाती थी। स्वतन्त्रता-प्रिय अमानुल्ला के लिए परतन्त्रता-रूपी चाँदी की इस बेड़ी का भार वहन करना असह्य था। उन्होंने ब्रिटिश गवर्नमेण्ट से युद्ध करने की ठान ली। यह सन् १९१९ का ज़माना था। असहयोग आन्दोलन अपनी चरम-सीमा पर पहुँचा हुआ था और भारतीय गवर्नमेण्ट उस समय बड़ी भयभीत हो रही थी; अतएव उसे अफ़ग़ानिस्तान से ऐसे नाज़ुक समय में कलह मोल लेने का साहस न हुआ। भारतीय सरकार ने तुरन्त अफ़ग़ानिस्तान की पूर्ण-स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली। इस प्रकार असहयोग आन्दोलन के कारण देश में जो परिस्थिति उत्पन्न हो गई थी, अपनी दूरदर्शिता के कारण शाह-अमानुल्ला ने इससे पूरा-पूरा लाभ उठाया।

संसार के सभी देशों से अफ़ग़ानिस्तान की पूर्ण-स्वतन्त्रता स्वीकार कराने के बाद अमानुल्ला ने राज्य की भीतरी कमज़ोरियों को दूर करने की ओर ध्यान दिया। उन्होंने नवीन ढङ्ग से अपनी सेना का सङ्गठन किया, उसके सञ्चालन के लिए सुविधा-जनक मार्गों की व्यवस्था की। अफ़ग़ानिस्तान के बहुत से नवयुवकों को राज्य की ओर से छात्रवृत्ति देकर यूरोप के विश्वविद्यालयों में भेजा गया। इन महत्वपूर्ण सुधारों के फल-स्वरूप थोड़े ही दिनों में अफ़ग़ानिस्तान की शक्ति और प्रतिष्ठा इतनी अधिक बढ़ गई, कि जब अमीर अमानुल्ला पश्चिमी देशों का अनुभव प्राप्त करने के लिए यूरोप में भ्रमण कर रहे थे, उस समय संसार के बड़े-बड़े राष्ट्रों ने उनकी कृपा-कटाक्ष प्राप्त करने के लिए तथा अफ़ग़ानिस्तान से मैत्री स्थापित करने के लिए बड़े ठाठ-

बाट से उनका स्वागत करने में एक-दूसरे से मानो होड़ लगा लिया था। किसी ने अपनी संस्कृति की मधुरता दिखा कर उन्हें मुग्ध करने की चेष्टा की और किसी ने अपने सैनिक प्रभुत्व का प्रदर्शन कराके उन्हें भयभीत करने की; पर अमीर अमानुल्ला की स्वदेश-भक्ति एवं नीति-निपुणता—दोनों प्रशंसनीय थीं। उन्होंने न तो किसी के मधुर व्यवहारों के जाल में फँसना स्वीकार किया और न वे इन छिछोरे राष्ट्रों के पाशविक प्रभुत्व को देख कर भयभीत ही हुए—उनके इस भ्रमण का एक-मात्र उद्देश्य था, नए वैज्ञानिक तथा अन्यान्य आविष्कारों का अध्ययन करना तथा इनके द्वारा अपने विस्तृत राज्य को उन्नति-लाभ पहुँचाना; किन्तु आज हम इस बात का अनुभव कर रहे हैं, कि अमीर अमानुल्ला ख़ाँ ने अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनुचित जल्दबाज़ी से काम लिया और अन्त में यही जल्दबाज़ी उनके लिए घातक भी सिद्ध हुई। बिना अपने राज्य की सुदृढ़ व्यवस्था किए हुए तथा बिना अपने मित्र और शत्रु को पहचाने हुए, राज्य की बागडोर उनके हाथों में सौंप कर इस भ्रमण के लिए पाश्चात्य देशों में जाना ही उनके लिए तथा उनके राज्य के लिए काल सिद्ध हुआ।

अमानुल्ला ख़ाँ के निश्चित-शत्रु केवल सुयोग की प्रतीक्षा कर रहे थे। अमानुल्ला की विजय ने एशियाई प्रदेशों की स्वतन्त्रता के बैरियों के हृदयों पर जो भयङ्कर आघात किया था—वे इसके प्रतिशोध की बाट जोह रहे थे। पूँजीवाद के समर्थकों के लिए एशिया के सिंह-द्वार का इस प्रकार खुला रहना असह्य हो गया और यही कारण है, कि बैरियों द्वारा जो षड्यन्त्र वर्षों से रचे जा रहे थे, वे इतनी सरलतापूर्वक सफल हो सके। नहीं तो क्या मजाल थी शोराबाज़ार के एक क्षुद्र मुल्ला की, जो इतने बड़े राष्ट्र के विरुद्ध खुली बग़ावत की आवाज़ उठा सके? और क्या मजाल थी उस बच्चा सक्का नाम के भिश्ती-पुत्र की, जिसने कुछ दिनों तक अफ़ग़ानिस्तान के रक्त-रञ्जित राजमुकुट को अपने अपवित्र करों द्वारा कलङ्कित किया था? इस विश्वासघात में अफ़ग़ानिस्तान के प्रतिष्ठित अफ़सरों का भी कम हाथ न था और एक हद तक अफ़ग़ानिस्तान की जहालत भी शाह अमानुल्ला के इस पतन के लिए ज़िम्मेदार थी; कुछ भी हो, अमानुल्ला के प्रति इस प्रकार विश्वासघात का परिचय देकर अफ़ग़ानिस्तान ने जो पाप किया है, उसका दुष्परिणाम अभी उसे बहुत अधिक भोगना पड़ेगा। यदि सच पूछिए, तो शाह अमानुल्ला के सिंहासन का परित्याग करते ही अफ़ग़ानिस्तान के दुर्दिन के लक्षण प्रकट होने लगे थे, अमानुल्ला के शासन-काल में जिस अफ़ग़ानिस्तान के साथ भारतीय गवर्नमेण्ट मित्रता का व्यवहार करने में अपना सौभाग्य समझती थी, उसी अफ़ग़ानिस्तान के वर्तमान शासक का ब्रिटिश गवर्नमेण्ट से सहायता के लिए कर-बद्ध प्रार्थना करना, कैसे भीषण नैतिक पतन का परिचायक है?

धन-लोलुप एवं साम्राज्यवाद के उपासक यूरोपीय देशों का तो हमें पता नहीं, किन्तु समस्त पूर्वीय देशों ने उन्हें सदा आदर एवं प्रेम की दृष्टि से देखा है। राष्ट्रीय भारत ने अमानुल्ला ख़ाँ की इस विफलता पर सदा आँसू बहाए हैं। उनके व्यक्तित्व के लिए नहीं—अपने तथा समस्त एशियाई देशों के स्वार्थ से प्रेरित होकर; क्योंकि आज समस्त एशियाई देश पाश्चात्य राष्ट्रों की कूट-नीति और भयङ्कर आर्थिक लूटों का शिकार होकर जर्जर और शक्तिहीन हो रहे हैं और कौन कह सकता है, कि यदि विधि बाम न होता—आज यदि अफ़ग़ानिस्तान का शासन ग़ाज़ी अमानुल्ला ख़ाँ के हाथों में होता, तो एशियाई देशों की वर्तमान परिस्थिति में एक भीषण परिवर्तन न हो गया होता?

कुछ भी हो, अफ़ग़ानिस्तान का वातावरण एक बार पुनः अनेक सम्भावनाओं के आवरण में छिप कर सारे संसार को अपनी ओर आकृष्ट कर रहा है, भविष्य के गर्त में छिपी हुई इन सम्भावनाओं को ढूँढ़ निकालना राजनीतिज्ञों के लिए मनोरञ्जक विषय सिद्ध होगा, इसमें सन्देह नहीं।

* * *

राष्ट्रीय झण्डे की समस्या

इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं, कि अखिल भारतवर्षीय कॉङ्ग्रेस को जिस कमिटी ने वर्तमान राष्ट्रीय झण्डे के रङ्गों की सिफ़ारिश की होगी, उसमें अवश्य ही साम्प्रदायिक नेताओं का बाहुल्य रहा होगा। इस तिरङ्गे राष्ट्रीय झण्डे की जो व्याख्या की गई है, उसे सुन कर उन जातियों का निराश होना अनिवार्य था, जिनके सामने जातीयता का प्रश्न पहिले उपस्थित होता है और राष्ट्रीयता का उसके बाद में! निर्माण-कर्ताओं के मतानुसार इस झण्डे का लाल रङ्ग हिन्दुत्व का परिचायक बतलाया गया है; हरा रङ्ग मुसलमानों का और सफ़ेद रङ्ग अन्य जातियों का सम्मिलित-चिह्न माना गया है। यद्यपि हमने स्वयं प्रत्येक साम्प्रदायिक आन्दोलनों एवं भेद-भाव के कार्यों से हृदय की सारी शक्ति से घृणा की है, किन्तु न्याय की दृष्टि से हम इस सम्बन्ध में उन सिक्खों को दोषी नहीं ठहरा सकते, जिन्होंने सदा राष्ट्रीय झण्डे में अपना पीला रङ्ग भी जोड़ देने का कॉङ्ग्रेस से अनुरोध किया है। इसका एकमात्र कारण यही है, कि आज देश के दुर्भाग्य से मुसलमानों और सिक्खों में साम्प्रदायिकता एवं प्रतिस्पर्धा की भावनाएँ अन्य जातियों से अधिक जाग्रत प्रतीत होती हैं। अतएव मुसलमानों की भाँति सिक्खों में भी साम्प्रदायिक नेताओं का अभाव नहीं है और इन साम्प्रदायिक नेताओं ने भी मुसलमानों की भाँति विगत राष्ट्रीय आन्दोलन में जिस अदूरदर्शिता और हठधर्मी का परिचय दिया है, वह सर्वथा अक्षम्य है। इन साम्प्रदायिक नेताओं ने सिक्खों से विगत राष्ट्रीय आन्दोलन में तब तक भाग न लेने का, खुले शब्दों में अनुरोध किया था; जब तक उनका जातीय-चिन्ह भी राष्ट्रीय झण्डे में सम्मिलित न कर दिया जाय। अस्तु।

यदि इस राष्ट्रीय झण्डे के रङ्गों के निर्णय की घोषणा करते समय, इसमें साम्प्रदायिकता की पुट न देकर, वह व्याख्या की गई होती, जो गत २७वीं एप्रिल को बम्बई में राष्ट्रीय झण्डा-अभिवादन दिवस के उपलक्ष में एक सारगर्भित व्याख्यान देते हुए, देवी सरोजिनी नायडू ने की है; तो आज यह प्रश्न ही उपस्थित न हुआ होता। देवी जी ने कहा, कि हमारे राष्ट्रीय झण्डे के रङ्ग जातीयता के परिचायक कदापि नहीं हैं, बल्कि लाल रङ्ग का अर्थ, आपने स्वतन्त्रता के संग्राम में होने वाली राष्ट्रीय क़ुर्बानियों का द्योतक बतलाया; आपने कहा, यह रङ्ग उन शहीदों के ख़ून का रङ्ग है, जिन्होंने स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए अपने जीवन तक का बलिदान कर दिया है, हरे रङ्ग को आपने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए देश की निष्ठा और उमङ्गों का परिचायक बतलाया तथा सफ़ेद रङ्ग को आपने शान्ति, सत्य एवं अहिंसा का द्योतक बतलाया। किन्तु यह सारमयी व्याख्या एक ऐसे समय में की गई है, जब उसके द्वारा किसी भी प्रकार के लाभ की सम्भावना दिखाई नहीं देती, क्योंकि वर्षों तक इस सम्बन्ध में इतना तुमुल आन्दोलन सिक्खों की ओर से उठाया जा चुका है, कि अब इस जाति पर इस सुन्दर व्याख्या का प्रभाव पड़ ही नहीं सकता। अस्तु।

यह वास्तव में बड़े सन्तोष की बात है, कि राष्ट्रीय महासभा का ध्यान इस जटिल प्रश्न की ओर कराची कॉङ्ग्रेस के अवसर पर आकर्षित हुआ और उसकी कार्य-कारिणी सभा ने राष्ट्रपति सरदार बल्लभभाई पटेल, भूतपूर्व-राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू, डॉक्टर पट्टाभी सीतारमय्या, श्री० एस० एम० हार्डिकर, श्री० डी० बी० केलकर, श्री० मास्टर तारासिंह तथा मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद-जैसे सुविख्यात राष्ट्रीय नेताओं की एक कमिटी इस अभिप्राय से नियुक्त करके अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया है, कि वह प्रत्येक पहलू से इस समस्या पर विचार कर कॉङ्ग्रेस से इस बात की सिफ़ारिश करे, कि राष्ट्रीय झण्डे का रङ्ग अथवा उसका भावी स्वरूप क्या होना चाहिए?

इस सम्बन्ध में हमारी तो निश्चित-धारणा यह है, कि विभेदपूर्ण जातीय रङ्गों को तो किसी भी हालत में राष्ट्रीय झण्डे में स्थान न दिया जाना चाहिए; क्योंकि यदि सिक्खों के इस निस्सार आन्दोलन से प्रेरित होकर कॉङ्ग्रेस राष्ट्रीय झण्डे में पीला रङ्ग जोड़ देने का निश्चय करे तो कोई कारण नहीं है, कि बिना आन्दोलन खड़ा किए ही, अन्य सारी जातियों के रङ्ग अथवा धार्मिक चिन्हों को राष्ट्रीय झण्डे में स्थान न दिया जाय। आज यदि सिक्ख इस सम्बन्ध में आन्दोलन खड़ा कर सकते हैं, तो कल भारतीय क्रिश्चियन, पारसी तथा यहूदी लोग भी मचल सकते हैं। हमारी दृष्टि में राष्ट्रीय झण्डे का प्रश्न वास्तव में बड़ा जटिल प्रश्न है और राष्ट्रीय महासभा को इसे बहुत सावधानी से हल करना होगा। जब तक जनसाधारण राष्ट्रीय झण्डे को सम्मान की दृष्टि से न देखेगा, तब तक उस झण्डे की रक्षा हो ही नहीं सकती। देश की प्रत्येक जाति को राष्ट्रीय झण्डे को उसी दृष्टि से देखना चाहिए, जिस दृष्टि से प्रत्येक अङ्गरेज़ "यूनियन जैक" को देखता है, और उसके अपमान के लिए अङ्गरेज़ों का बच्चा-बच्चा अपना रक्त बहाने को सदा तैयार रहता है। जब तक भारतवासी सम्मिलित रूप से राष्ट्रीय झण्डे को इसी दृष्टि से न देखेंगे, तब तक उसके सम्मान तथा उसकी रक्षा का प्रश्न हल हो ही नहीं सकता।

एक बात और भी है. वर्तमान राष्ट्रीय झण्डा देखने में भी विशेष सुन्दर प्रतीत नहीं होता, जब कि अन्य देशों की राष्ट्रीय पताकाएँ अपनी निराली छटा से दर्शकों को अनायास ही अपनी ओर आकर्षित करती हैं। हमारा विचार है, कि भावी राष्ट्रीय झण्डे के निर्माण के सम्बन्ध में यदि अन्य स्वतन्त्र राष्ट्रों की सम्मति प्राप्त कर ली जावे तथा इसके बनाने वाले को एक विशेष पुरस्कार देने की घोषणा कर दी जावे, तो अनेक पाश्चात्य देशवासी भी इस जटिल प्रश्न को सुलझाने में हमारे सहायक हो सकते हैं; किन्तु विलम्ब करने का समय नहीं है, क्योंकि ईश्वर न करें, यदि पुनः राष्ट्रीय संग्राम छेड़ने का अवसर उपस्थित हो गया, तो इस बार के युद्ध में कम से कम हम वीर सिक्खों की उपेक्षा नहीं कर सकते—ऐसा करना वास्तव में बड़ी मूर्खता होगी।

* * *

न्याय का स्वाँग

गवर्नर-गोलीकाण्ड के सिलसिले में लाहौर के सुप्रसिद्ध पत्रकार महाशय कृष्ण के पुत्र श्री० वीरेन्द्र भी ४थी बार गिरफ़्तार कर लिए गए थे। अन्य षड्यन्त्रों के सिलसिले में वे इससे पहले तीन बार पकड़े जा चुके हैं; किन्तु उनके विरुद्ध कोई अभियोग सिद्ध न होने के कारण वे हर बार छोड़ दिए गए। इस मामले में भी उन्हें पहले गिरफ़्तार किया गया था, किन्तु इस बार भी सदा की भाँति पुलिस उनके विरुद्ध कोई अभियोग प्रमाणित न कर सकी और अदालत द्वारा वे रिहा कर दिए गए थे; किन्तु उनके मुक्त रहने में पञ्जाब-पुलिस को अराजकता का भय था, अतएव पुलिस की सिफ़ारिश से

वे क्रिमिनल-लॉ-एमेण्डमेण्ट की उस ३री धारा के अनुसार राजबन्दी बना कर लाहौर क़िले में क़ैद कर दिए गए हैं, जिसके शिकार होकर बङ्गाल के सैकड़ों प्रतिभाशाली नवयुवक बिना किसी अपराध के आज जेलों में पड़े घुल रहे हैं। अस्तु।

श्री० वीरेन्द्र इस वर्ष बी० ए० की परीक्षा में सम्मिलित होने वाले थे; बड़ी कठिनाइयों के बाद उन्हें परीक्षा-सम्बन्धी पर्चों को देने तथा उन्हें जेल में ही हल करने की अनुमति तो दे दी गई है; किन्तु इसके लिए उनसे बिना किसी अपराध के १२०) रु० की अतिरिक्त-फ़ीस ली गई है; उन्हें सगे-सम्बन्धियों से—यहाँ तक कि पिता तक से, न तो मिलने दिया जाता है और न उनके पत्र अविकल रूप से उन तक भेजे जाते हैं। इस सम्बन्ध में 'भविष्य' के इसी अङ्क में महाशय कृष्ण का एक वेदनापूर्ण पत्र वक्तव्य प्रकाशित किया जा रहा है, जिससे पाठक उन पर तथा उनके पुत्र पर होने वाले इन अवाञ्छनीय अत्याचारों का नग्न स्वरूप देखेंगे।

दूसरी ओर लाहौर के नए षड्यन्त्र-केस के अभियुक्तों के साथ क़ानून के नाम पर जैसा अत्याचार किया जा रहा है, वह भी उपेक्षणीय विषय नहीं है। हाईकोर्ट की आज्ञा के विरुद्ध भी इक़बाली गवाहों को ख़ुफ़िया-पुलिस से जेल में मिलने दिया जा रहा है; ताकि वे अपनी इच्छा और सुविधानुसार इन मुख़बिरों से मनचाहा बयान दिला सकें। ख़ुलो अदालत में मुख़बिर इन्द्रपाल के बयानों द्वारा पुलिस के जिन अत्याचारों का उद्घाटन हुआ है, उस पर जितना भी खेद प्रकट किया जाय, थोड़ा है।

अभियुक्तों की ओर से बार-बार प्रार्थनाएँ करने पर भी गवर्नमेण्ट ने कोई ध्यान नहीं दिया, अन्त में जब हाईकोर्ट में इस आशय का एक प्रार्थना-पत्र दिया गया, तब कहीं मुख़बिरों को जेल में भेजा गया, नहीं तो वे पुलिस की हिरासत में ही रक्खे जाते थे और अत्याचारों के भय से पुलिस जो चाहती थी, वही उन्हें कहने को वाध्य होना पड़ता था। इस सम्बन्ध में लाहौर हाईकोर्ट के जस्टिस भाईड तथा जस्टिस टैप ने जो फ़ैसला लिखा है, उससे यह स्पष्ट पता चल जाता है, कि षड्यन्त्र सम्बन्धी मामलों में न्याय की हत्या किस हद तक की जाती है। षड्यन्त्र-केस के सारे अभियुक्त प्रायः पुलिस की कृपा पर छोड़ दिए जाते हैं और पुलिस उन्हें अपनी पत्र-सम्पत्ति समझ कर उनका जैसा उपयोग करना चाहती है, करती है। देहली षड्यन्त्र-केस के अभियुक्तों पर होने वाले अत्याचारों का ज़िक्र भी पाठकों ने 'भविष्य' के गताङ्क में पढ़ा ही होगा। अस्तु।

षड्यन्त्र-केस के अभियुक्तों के प्रति आज इस देश में जैसा व्यवहार किया जाता है, उसमें न्याय से अधिक प्रतिहिंसा की भावना होती है—गत वर्षों में न्याय के नाम पर होने वाले इन नाटकों ने तो हमारी इस धारणा को और भी पुष्ट कर दिया है।

* * *

बङ्गाल की राजनीतिक दलबन्दी

इस सप्ताह बङ्गाल से दो-तीन ऐसे समाचार आए हैं, जिनसे मालूम होता है, कि वहाँ की राजनीतिक दलबन्दी अपनी सैद्धान्तिक सीमा का उल्लङ्घन कर व्यक्तिगत विद्वेष के रूप में परिणत हो रही है। श्री० सुभाषचन्द्र बोस के सहोदर श्री० शरच्चन्द्र बोस का एक मानहानि के मामले में पड़ कर, श्री० जे० एम० सेन गुप्त आदि से माफ़ी माँगना, चटगाँव में श्री० सेन गुप्त पर लाठियों का वार, मैमनसिंह में उन पर सशस्त्र जनता का आक्रमण आदि ऐसी घटनाएँ हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है, कि वहाँ के काँग्रेस वालों का पारस्परिक मनोमालिन्य सभ्यता और शिष्टता की सीमा से कहीं आगे निकल गया है। इसलिए इस बात की आवश्यकता है कि महात्मा गाँधी अथवा अन्यान्य अखिल भारतवर्षीय नेता इस झगड़े को मिटाने की चेष्टा करें, और बङ्गाल को पारस्परिक कलहाग्नि से बचाएँ। अन्यथा इस कलह से वहाँ की राजनीतिक प्रगति को भयङ्कर धक्का लगेगा और भविष्य में समस्या और भी जटिल हो जाएगी।

* * *

भारतीय पुलिस की प्रशंसा

कानपुर के साम्प्रदायिक दङ्गे में पुलिस ने जिस अकर्मण्यता और निर्लज्जता का परिचय दिया है, उसे देखते हुए हमें यह आशा हुई थी, कि भारतीय पुलिस के प्रशंसक इससे कुछ लज्जित होंगे और भविष्य में उसकी अकर्मण्यताओं पर प्रशंसा का पर्दा डाल कर, जनता की आँखों में धूल झोंकने के हास्यास्पद प्रयास से बाज़ आएँगे। परन्तु हाल में कलकत्ता के भूतपूर्व पुलिस-कमिश्नर सर रेजोनॉल्ड क्लार्क ने अपने एक व्याख्यान में भारतीय पुलिस की प्रशंसा करके हमें आश्चर्य में डाल दिया है और हमारी समझ में नहीं आता, कि आख़िर लज्जाशीलता, मनुष्यत्व और सत्य का इन गौराङ्ग महानुभावों की दृष्टि में कुछ मूल्य है भी या नहीं? आपने फ़रमाया है कि "प्रत्येक साम्प्रदायिक दङ्गे में भारतीय पुलिस की निरपेक्षिता पर विश्वास किया जा सकता है।" अर्थात् आपके मतानुसार, दङ्गों के समय पुलिस का चुपचाप तमाशा देखना और उसे रोकने की चेष्टा न करना, उसकी निरपेक्षिता और तटस्थता का परिचायक है और यही उसका कर्तव्य है। इसलिए आपका राय है कि "भावी शासन-विधान में पुलिस की रक्षा की यथोचित व्यवस्था होनी चाहिए।" इसके बाद पुलिस की राजभक्ति की प्रशंसा करते हुए, आपने कहा है कि "बार-बार की क्रान्ति के कारण पुलिस पर जो दबाव डाला गया है, वह अब असह्य हो गया है, इसलिए नए विधान में इस बात का आश्वासन होना आवश्यक है, कि पुलिस के ऊपर सहन-शक्ति से अधिक भार न लादा जाएगा।" हमारी समझ में पुलिस की इन प्रशंसाओं के शब्दों में जो मनोवृत्ति छिपी रहती है, उसका स्पष्ट आशय यही है, कि वैध या अवैध रीति से राजनीतिक आन्दोलनों को कुचल डालना ही पुलिस का प्रधान कर्तव्य है और अगर वह अपने इस कर्तव्य का पालन करती रहती है, तो उसे और कुछ करने की आवश्यकता नहीं। यही शान्ति और शृङ्खला की रक्षा है और इसीलिए ग़रीब भारतवासियों के लाखों रुपए पुलिस-विभाग पर ख़र्च हुआ करते हैं!

* * *

लट्ठबाज़ी की फ़िल्में

हाल ही में अपना अध्ययन समाप्त करके एक सज्जन जर्मनी से लौटे हैं, आपका कहना है, कि गत राष्ट्रीय आन्दोलन में पुलिस द्वारा भारतवासियों के लाठी से पीटे जाने के अनेक रोमाञ्चकारी दृश्यों की फ़िल्में तैयार करके जर्मनी और अमेरिका के बाईस्कोपों में दिखाई जा रही हैं। इन दृश्यों को देख कर अमेरिकन तथा जर्मनी की जनता को सहसा अपने नेत्रों पर विश्वास नहीं होता, वे इस बात की कल्पना तक नहीं कर सकते, कि बीसवीं सदी के इस उन्नति और विकास के युग में इन नृशंस उपायों का अवलम्ब लिया जा सकता है। प्रायः जर्मनी तथा अमेरिका की जनता प्रतिष्ठित प्रवासी भारतवासियों से इस सम्बन्ध में अनेक प्रश्न पूछती है। वे लोग पूछते हैं, कि क्या वास्तव में भारतवासी इतनी बेरहमी से पीटे जाते हैं, अथवा इस प्रकार के दृश्यों की व्यवस्था केवल फ़िल्म लेने के उद्देश्य से ही की गई है? वे पूछते हैं, कि क्या वास्तव में भारतीय सरकार प्रजा पर इतने अत्याचार करती है और भारतवासी इन सारे अपमानों को चुपचाप सह लेते हैं? इत्यादि। हाल ही में कुछ जर्मनी के समाचार-पत्रों ने इस सम्बन्ध के कार्टून भी अपने पत्रों में प्रकाशित किए हैं। अस्तु।

हमारे इन मित्रों को पता नहीं, कि केवल पुरुष ही नहीं, भारतीय महिलाओं को भी पुलिस के इन नृशंस प्रहारों को सहन करना पड़ा है, उनकी छातियों पर बन्दूक़ के कुन्दों तथा जूतों तक से आक्रमण किया गया है और इतना सब होते हुए भी, केवल इन अत्याचारों की जाँच करने से इन्कार ही नहीं किया गया, बल्कि चलते-चलाते वायसराय महोदय भाँड़ों के समान भारतीय पुलिस की 'सहनशीलता' तथा 'स्वामि-भक्ति' की दाद भी देते गए हैं और इस प्रकार पग-पग पर भारतवासियों का अपमान किया जाना, इस देश के शासकों तथा शासितों के लिए एक साधारण सी बात हो गई है!

हमें यह जान कर वास्तव में बड़ी प्रसन्नता हुई, कि इन लाठी-प्रहारों के कारण भारतवासियों की परवशता का चित्र पाश्चात्य देशवासियों के सम्मुख तो उपस्थित हो सका। अब वे लोग सरलता से इस बात का प्रमाण पा सकेंगे, कि ब्रिटिश गवर्नमेण्ट का यह दावा, कि वह केवल परोपकार की भावनाओं से प्रेरित होकर ही भारत का शासन-भार अपने हाथ में लिए हुए है—कहाँ तक ठीक है?

* * *

कपूरथला राज्य का आदर्श कार्य

यह समाचार बड़ी प्रसन्नता से सुना जाएगा, कि कपूरथला राज्य ने दलितों की सुविधाओं की ओर एक नया क़दम बढ़ाया है। राज्य के दलितों ने अपनी कई न्यायोचित माँगों की स्वीकृति के लिए अपने प्रतिनिधि श्री० लब्बूराम कालिया को महाराज की सेवा में भेजा था। हर्ष की बात है कि महाराज ने उनकी निम्नलिखित माँगें स्वीकार कर अपनी प्रजा-प्रियता का परिचय दिया है और इसके लिए आप धन्यवाद के पात्र हैं। महाराज ने यह स्वीकार कर लिया है, कि (१) दलित जातियों से बेगार न लिया जाएगा, (२) राज्य के आम कुओं पर उन्हें बेरोक-टोक पानी भरने दिया जाएगा। (३) दलितों की शिक्षा के लिए इस साल पाँच हज़ार रुपए की सहायता दी जाएगी और अगले साल और भी बढ़ा दी जाएगी, (४) आम ज़मीनों से उन्हें अपने पशुओं के लिए चारा और खेतों के लिए खाद लेने दिया जाएगा, और (५) प्रत्येक ग्राम में दलितों के 'मरघट' आदि के लिए ज़मीनें दी जायँगी। साथ ही इस प्रश्न पर विचार भी हो रहा है, कि सार्वजनिक सङ्घों तथा पञ्चायतों में उनके प्रतिनिधि रक्खे जायँ और हम आशा करते हैं कि इस प्रश्न की मीमांसा भी सन्तोषजनक रीति से हो जाएगी।

वास्तव में महाराज कपूरथला के ये कार्य आदर्श और अनुकरणीय हैं। परन्तु हम यह कहे बिना नहीं रह सकते, कि समस्त कपूरथला राज्य के दलित बालकों की शिक्षा के लिए केवल पाँच हज़ार रुपयों की सहायता 'ऊँट के मुँह में ज़ीरा' की तरह नगण्य है। इसलिए इस सम्बन्ध में रियासत को और भी उदारता से काम लेना चाहिए था। अधिक नहीं, महाराज ने विलायती कुत्तों और मोटरों के लिए जो धन ख़र्च किया है, उसकी चौथाई रक़म भी अगर दलितों की शिक्षा के लिए ख़र्च कर दें, तो बेचारों का बहुत-कुछ उपकार हो जाय। अस्तु।

क्या हम आशा करें कि इस सम्बन्ध में इस देश की अन्यान्य रियासतें भी कपूरथला का अनुकरण कर अपनी प्रजावत्सलता का परिचय देंगी?

* * *

क्या मुसलमान वास्तव में राष्ट्रीयता के विरोधी हैं ??

मुसलमानों की भीषण प्रतिज्ञा

'विदेशी कपड़े हाथ से भी न छुएँगे'

अमृतसर का एक समाचार है, कि राष्ट्रीय मुस्लिम नौजवान सङ्घ के तत्वावधान में, एक विराट सभा हुई। सय्यद अताउल्ला शाह बुख़ारी ने अपने भाषण में कहा कि हिन्दू राजनीति, शिक्षा और संस्कृति में मुसलमानों से बहुत बढ़े-चढ़े हैं।

राष्ट्रीय संग्राम में भाग लेने के लिए मुसलमानों को उत्साहित करते हुए आपने कहा, कि अङ्गरेज़ों ने मुसलमानों के हाथ से राज्य-सत्ता छीनी है, हिन्दुओं के हाथ से नहीं; इसलिए मुसलमानों को चाहिए, कि वे ही अङ्गरेज़ों से राज्य लौटाने का प्रयत्न करें।

इसके बाद आपने कहा, कि भावी शासन-विधान में विशेषाधिकार की आवाज़ लगाने के पहले, मुसलमानों को चाहिए कि वे कॉङ्ग्रेस कमिटी के सदस्य बन कर पहले कॉङ्ग्रेस-कमिटियों में तो ऊँचे-ऊँचे पद हासिल कर लें; फिर आपने अपने नन्हें बच्चे को गोद में उठा कर कहा कि यही मेरा इकलौता बच्चा है। यदि यह आज़ादी की लड़ाई में लड़ता हुआ गोली का शिकार बने तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। जब आपने विदेशी वस्त्र के बहिष्कार की अपील की तो मुसलमानों ने कलमा पढ़ कर शपथ खाई, कि भविष्य में वह विदेशी कपड़े हाथ से भी न छुएँगे।

मुसलमान जनता की मनोवृत्ति किस ओर है ?

स्थानीय 'लीडर' के एक सम्वाददाता महोदय लखनऊ से २२वीं अप्रैल को ख़बर देते हैं, कि राष्ट्रवादिता से खार खाने वाले कुछ मुसलमानों ने एक सभा कर, राष्ट्रीय मुस्लिम परिषद की खिल्ली उड़ाने की चेष्टा की। उनकी सभा में ३००-४०० से अधिक मुसलमान उपस्थित नहीं थे। मौ० हसरत मोहानी इसके सभापति बनाए गए थे। वे इसी कार्य के लिए कानपूर से बुलाए गए थे। कुछ राष्ट्रवादी मुसलमान नेता भी वहाँ का अभिनय देखने के शौक से वहाँ आ बैठे थे।

कहा जाता है कि उपस्थित मुस्लिम जनता ने राष्ट्रीयता के विरोधी, नेता बनने वाले मुसलमानों का भाषण सुनने से इन्कार कर दिया। तब सभापति महोदय ने मौलाना सबग़तुल्ला से व्याख्यान देने की प्रार्थना की। मौलाना साहब ने राष्ट्रीय मुस्लिम कॉन्फ्रेन्स में पास किए हुए प्रस्तावों तथा संयुक्त निर्वाचन के सम्बन्ध की बातें कह कर उपस्थित जनता को मन्त्र-मुग्ध कर दिया। इसके बाद सभापति ने अराष्ट्रीयतावादी मुस्लिम दल के सेक्रेटरी मि० ज़कीर अली को प्रस्ताव उपस्थित करने के लिए कहा; किन्तु जनता ने सेक्रेटरी साहब की बातों को सुनने तक से इन्कार कर दिया। चारों ओर गड़बड़ी मच गई और सभा भङ्ग हो गई।

"मैं धर्म का पक्का मुसलमान, किन्तु जाति का पक्का हिन्दुस्तानी हूँ"

अमृतसर का २१वीं अप्रैल का समाचार है, कि शहर कॉङ्ग्रेस कमिटी की तरफ़ से वहाँ एक सभा की गई। डॉ० किचलू ने अपने भाषण में साम्प्रदायिकता की निन्दा करते हुए कहा कि मैं धर्म का पक्का मुसलमान हूँ, पर जाति का पक्का हिन्दुस्तानी हूँ। धर्म का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है। जो लोग राष्ट्रीयता के बहाने साम्प्रदायिकता का प्रचार करते हैं, उनका कार्य निन्दनीय है।

"मुसलमान मिथ्या धर्म के बन्धन को तोड़ डालें"

१६वीं अप्रैल को पञ्चगाड़ा (हबड़ा) में होने वाली अखिल बङ्ग मुस्लिम एसोसिएशन की एक मीटिङ्ग में भाषण देते हुए कलकत्ता विश्वविद्यालय के वाइस चैन्सेलर श्री० हसन सुहरावर्दी ने कहा—"किसी भी ग़ैर-हिन्दू को, यदि वह आदर के योग्य है, हिन्दू अनादर की दृष्टि से नहीं देखते। इस सिलसिले में मैं यह कह देना अपना कर्तव्य समझता हूँ, कि लेजिस्लेटिव कौन्सिल तथा विश्वविद्यालय के चुनाव में उन्होंने कई बार मेरी सहायता की है।"

कलकत्ता विश्वविद्यालय के वाइस चैन्सेलर श्री० हसन सुहरावर्दी

सभापति ने कहा, कि हिन्दुओं को उच्च स्थान और शिक्षा-सम्बन्धी सफलताएँ लूट और दङ्गा करने से नहीं प्राप्त हुई हैं, बल्कि वह सरस्वती देवी की अनवरत आराधना का फल है। आपने आगे कहा कि यह अपार दुख की बात है, कि मुसलमानों में उत्साह और त्याग, साहस और शिक्षा-प्रेम की बहुत कमी है। मुसलमान ही भारत की उन्नति में बाधा-स्वरूप बने हुए हैं। मुसलमानों को चाहिए कि वे मिथ्या धर्म के बन्धन को तोड़ डालें और शिक्षा-प्रचार के लिए अन्य सम्प्रदायों से मिल कर काम करें।

लखनऊ की मुस्लिम परिषद के लिए सन्देश

"टुकड़ों के लिए लड़ना घृणास्पद है"

लखनऊ के राष्ट्रवादी मुस्लिम सम्मेलन के अवसर पर सभापति सर अली इमाम के नाम बाहर से अनेक सज्जनों और संस्थाओं ने अपनी-अपनी शुभाभिलाषाओं के सन्देश भेजे थे। उनमें से कुछ नीचे दिए जाते हैं:—

मि० गुलाम मुहम्मद मुहाउद्दीन, बाटला—"संयुक्त निर्वाचन ही एक मात्र औषध है। सफलता चाहता हूँ।"

सिन्ध के मुसलमान—"हम सिन्ध के मुसलमान सम्मेलन की सफलता चाहते हैं, और उसके प्रयत्नों का समर्थन करते हैं। मौलाना शौकतअली की चुनौती सम्मेलन स्वीकार कर ले।"

राजा नवाबअली—"मेरा विश्वास है, कि राष्ट्रवादी मुस्लिम सम्मेलन पृथक निर्वाचन प्रथा के कफ़न में आख़िरी कील ठोंक देगा और अपनी राष्ट्रीय एकता का स्पष्ट प्रमाण उपस्थित कर देगा।"

'जिन्ना की शर्तों से मुझे घृणा है'

एक मुस्लिम महिला के उद्गार

श्रीमती आयशा अहमद ने लखनऊ की मुस्लिम कॉन्फ्रेन्स को अपना सन्देश देते हुए कहा है:—

"भारतीय मुसलमान, भारतीय जाति का ही एक भाग हैं। वे साम्प्रदायिकता को सहन नहीं कर सकते। वे अपनी योग्यता के बल पर कार्यक्षेत्र में स्थान प्राप्त करेंगे। एक सच्ची मुसलमान महिला की हैसियत से मैं उन ख़ूफ़टों से तङ्ग आ गई हूँ, जो साम्प्रदायिकता के नाम पर वर्तमान और भावी युवकों के हृदयों में विष उगल रहे हैं। मुझे इस बात का अभिमान है कि उस भावी जाति की जननियों में से एक मैं भी हूँ, जिसे अपने साथियों से किसी प्रकार के अन्याय की आशङ्का नहीं है और जिसे विश्वास है, कि वह अपनी योग्यता के बल पर गौरव प्राप्त करेगी। मुझे जिन्ना की अथवा और किसी की भी शर्तों से घृणा है। मैं अपने बच्चों को कदापि इनका समर्थन करना नहीं सिखाऊँगी। मौलाना शौकतअली जब छाती फुला कर गर्व के साथ कहते हैं, कि मुसलमानों ने ८८० वर्षों तक भारत में राज्य किया है, उस समय मुझे अपार दुख होता है।

मैं अपने बच्चों में विशद भावनाएँ भर कर उन्हें सच्चा मनुष्य बनाना चाहती हूँ। उन्हें 'संरक्षणों' का गुलाम नहीं बनाना चाहती। मैं चाहती हूँ, कि वे या तो अपनी योग्यता से कुछ प्राप्त करें, नहीं तो उनका नाम संसार से मिट जाय। मुझे विश्वास है कि अनेक माताएँ मेरी ही तरह सोचती होंगी।

सबों के दिल में यह बात बैठ गई थी कि मुसलमानों का यह कलङ्क, कि वे भारत की स्वतन्त्रता के मार्ग के रोड़े हो रहे हैं—चाहे जैसे हो, धो डालना चाहिए। कॉङ्ग्रेस का साथ देने के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव पास किया गया है, उसके लिए युवक-समाज ही बधाई का पात्र है। वहाँ उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति का यह विचार था, कि भारत के आगामी स्वातन्त्र्य युद्ध में मुसलमानों का त्याग ही भारत के शासन-विधान में उनका स्थान निश्चित कर देगा।

मुसलमानों का त्याग ही उनके अधिकारों को निश्चित कर देगा

लखनऊ की मुस्लिम परिषद के सम्बन्ध में एक प्रेस-प्रतिनिधि के पूछने पर, स्थानीय सय्यद हैदर मेहदी, एडवोकेट ने कहा है, कि यह परिषद राष्ट्रीय आन्दोलन की सफलता का एक सच्चा नमूना है। आपने कहा, कि परिषद का प्रत्येक व्यक्ति सम्प्रदायवाद को चुनौती देने के लिए तैयार था। युवक-समाज तो समझौते के लिए संरक्षणों की भी आवश्यकता नहीं समझता था। विषय-निर्वाचिनी समिति की बहसों से यह साफ़ विदित होता था, कि हिन्दुओं तथा अन्य मुसलमानों से समझौता करने की उनकी वास्तविक इच्छा है।

* * *

मि० शिबली इब्राहीम बरहमपुर—"संयुक्त निर्वाचन और बालिग़-मताधिकार मुस्लिम जनता के मौलिक अधिकार हैं, बिना इनके स्वराज्य असम्भव और व्यर्थ है।"

मि० मीर शुकरुल्ला, जलगाँव (सी० पी०)—"टुकड़ों के लिए लड़ना घृणास्पद है। महात्मा जी को आत्म-समर्पण कर दो। उनके हाथों में मुस्लिम अधिकार सुरक्षित हैं।"

मि० जमाल हुसैन, आशियाना, नेवरा—"मुसलमान संयुक्त निर्वाचन चाहते हैं। देश की इच्छा है, कि साम्प्रदायिक-मुसलमानों का तीव्र विरोध किया जाय।"

भ्रम

[श्री० पाण्डेय बेचन शर्मा, 'उग्र']

बात पुरानी है, बहुत पुरानी।

मनुष्य कुछ-कुछ सयाना हो चला था। माता मनुष्यता की छाती पर अपने छोटे-छोटे सुकुमार अङ्गों को उचक-उचक कर चाव और चपलता से पुटक लेने ; और उसकी पय-गङ्गा में विस्मय-विमुग्ध भाव से पुलक-पुलक कर ग़ोते लगा लेने के बाद—अभी-अभी—वह माता-मही के विशाल वक्षस्थल पर, ठुमुक-ठुमुक गति से, उतरा था।

उसके नेत्र किनारेदार थे, नवनीतोज्ज्वल, कमल-दलायत। जब वह आश्चर्य-अवाक् होकर आकाश-अनभ्र पर दृष्टि डालता, तो उन आँखों का अनोखा क्षीर-समुद्र, नव-नील-नीर-समुद्र-सा लहरीला दिखाई पड़ता।

मालूम नहीं आश्चर्य से, अवशता, अज्ञान से या किससे, उसकी आँखों में, आँसुओं का ज्वार उमड़ आता।

आकाश के नीलाञ्चल में जैसे वह अपना कोई "पुराना परिचय" ढूँढ़ता ; पर कुछ निश्चित न कर पाता कि भ्रम से खेल रहा था या सत्य से।

वह, अक्सर लम्बी-लम्बी साँसें खींच कर दार्शनिकों की तरह गम्भीर भाव बनाता, हवा को सूँघता, जैसे कुत्ता किसी पूर्व-परिचित वस्तु को एकाएक सामने पाकर सूँघे। पर कुछ ठीक-ठीक समझ न पाता। हँसने लगता—मन्द, अमन्द, किलकिल, कलकल ! शायद, अपनी मूर्खता पर।

आकाश को ताक कर, हवा को सूँघ कर भी जब उसकी ज्ञानेच्छा पूर्ण न होती, तो प्रायः मेदिनी के रस-रज-अञ्चल में वह लोटपोट हो जाता ! ख़लास हुए नशैल की तरह। और छोटी तथा लाल जीभ निकाल कर वसुन्धरा की विभूति का स्वाद लेने लगता। वह मुस्कराता, मानो—"अब पहचाना !" मगर तुरन्त ही पुनः गम्भीर होते नज़र आता—चौंक कर धूलि-धूसरित मुख एक ओर फेर कर देखता—"ओ...अ...अ...अ...अ, माँ—मम्मा !"

मनुष्य की "मम्मा" अक्सर उसे इस विभूति-विलास के लिए दण्ड देती।

और मनुष्य हँसता।

मम्मा रोती, कहती—इस अभागे को विभूति ही में रस मिलता है—हे भगवान !

* * *

"हे भगवान !" मनुष्य ने पहले-पहल सुना। अब वह काफ़ी सयाना हो चुका था।

"माँ !" उसने पूछा—"हे भगवान का अर्थ ? यह किसका नाम है ?"

"सर्व-शक्तिमान, सहस्र-पादाक्षि शिरोरुबाहु परमात्मा ही का नाम भगवान है बच्चे ! वही हमारे कर्ता, धर्ता, हर्ता हैं।"

"झूठ !" उगते हुए मनुष्य ने माता मनुष्यता के अर्थ का विरोध किया—"बाज़ार वाले कहते थे—भगवान मेरा नाम है।"

"हा-हा-हा-हा !" करुणामयी जननी बालक की मूर्खता पर मनोहर-मोह से हँस पड़ी। आगे बढ़ कर उसने मनुष्य को गोद में भर लिया, चूमने लगी—"बेटा ! बाज़ार वाले ऐसे ही अर्थ का अनर्थ किया करते हैं।"

"तो मेरा नाम भगवान नहीं है ?"

"नाम भर है ; वह भी उसकी याद ताज़ी रखने के लिए। मगर, सत्यतः वह समुद्र है—तू एक विन्दु। तू आत्मा है, वह परमात्मा।"

माँ की बातों से मनुष्य का सन्तोष नहीं हुआ। बाज़ार वालों ने उसे मज़े में समझा दिया था कि भगवान वही है।

"...वे कहते थे—विद्वानों ने शास्त्रों का निरीक्षण करने के बाद मुझे 'भगवान' विघोषित किया था। और विद्वान लोग गुणानुसार ही तो नाम रखते होंगे ? तू मुझे जानती है अम्माँ ! भगवान तो मैं ही हूँ।"

"नहीं बेटे ! तू भगवान का प्रसाद है, दास है, उसके दयासागर की एक प्रेम-पुलकित लहर है।"

"नहीं, मैं भगवान हूँ, मैं भगवान हूँ।" कह कर मनुष्य आँगन में लोटने लगा। छैला कर रोने लगा कि माँ उसे भगवान मान ही ले।

माँ भी पिघल गई। उसने सोचा—ठीक ही तो कहता है, घट-घट-व्यापी राम।

मनुष्य को पुनः गोद में उठा कर माँ ने देखा, उसकी आँखों में आँसू भरा था ! "अच्छा-अच्छा !" वह सजल होकर उसको शान्त करने लगी—"रो मत लाल ! मैं तो हँसी करती थी। बाज़ार वाले सच कहते थे। तू ही भगवान है। मेरा भगवान !"

माँ की आँखों से, मौलसिरी के फूल से धवल दो अश्रु-विन्दु, भगवान के छोटे-छोटे चरणों पर गिर कर तल्लीन हो गए।

* * *

शक्तिवान होने पर बाज़ार वालों ने देखा, वह मनुष्य असाधारण शक्तिमान था।

माँ मनुष्यता के अन्य बच्चे जहाँ भी उस मनुष्य को पाते, दीप-पतङ्ग-सी हालत कर देते। सभी उस पर मुग्ध होकर उसके चारों ओर मँडराने लगते।

"बृहस्पति की तरह तू विद्वान है।"

"इन्द्र की तरह बलवान। ओ हो ! क्या आजानु-प्रलम्बित बाहु है।"

"तू चाहे तो आकाश चक्कर में आ जाय।"

"तू कोप कर काल-करवाल-क्रीड़ा करने लगे, तो यह ज़मीन पीपल के पत्ते सी हिल उठे !"

"तू ही पुरुषोत्तम है, हमारा नेता है।"

मनुष्य गर्व-गम्भीर भाव से दूसरे मनुष्यों की ओर देखता रहा। आँखों ही आँखों वह अपने भक्तों से बोल रहा था—सच पहचाना तुमने, मैं 'वही' हूँ।

उसकी नज़र अपनी भुजाओं पर गई, जो भरपूर गठीली और साधारण प्राणियों की छाती सी चौड़ी थीं।

और उसकी छाती कितनी चौड़ी थी ? प्हाड़ इतनी !

* * *

बाज़ार वालों ने बतलाया...

इस द्वीप के आगे सिंह-द्वीप है, उसके आगे प्रवाल-द्वीप, जिसके शासक यक्ष लोग हैं। फिर मणि-द्वीप, जहाँ नागों का राज्य है। मणि-द्वीप के आगे वह महान स्वर्ण-द्वीप है, जिसे लोग "सुवर्ण-द्वीप" कहते हैं। क्योंकि वहाँ के सभी प्राणी मुलायम सोने के बने हैं। उस द्वीप की प्रत्येक चीज़ ख़ालिस सोने की होती है। नदियों में सोना बहता है, उद्यानों में सोना फूलता है। सोने के वृक्षों पर सोनचिरैयाँ चारों ओर चहकती सुनी जाती हैं। वहाँ के लोग सोना खाते हैं, सोना जोतते-बोते हैं और सदैव स्वर्ण-सज्जित वातावरण में विचरण करते हैं !!

बाज़ार वालों ने उकसाया...

हे भगवान ! हम साधारण प्राणी सुवर्ण-द्वीप तक नहीं जा सकते। दस-बीस मनचलों ने कभी उधर जाने की चेष्टा भी की, तो शायद वे सिंह-द्वीप ही तक—सिंहों के जलपान की तरह—पहुँच सके।

और तू तो भगवान है। तेरे लिए सुवर्ण-द्वीप तक जाना, वहाँ से देवी स्वर्णमयी को स्वदेश ले आना—घर-घर सोना फैला देना, साधारण सी बात है।

बाज़ार वालों ने समझाया......

भगवन् ! सिंह, प्रवाल, मणि आदि द्वीपों पर विजय कर जो कोई सुवर्ण-द्वीप में जाता है; वहाँ वाले उसकी बड़ी ख़ातिर करते हैं। उसके आगमनोपलक्ष में, सात दिनों तक, सुवर्ण-द्वीप के सात महानागर सोने की होली खेलते हैं और सात रातों तक सोने की दीवाली देदीप्यमान होती है। जब विजयी स्वदेश लौटता है; तो वहाँ वाले एक कुमारी कन्या उसे उपहार में देते हैं, और "स्वर्ण-स्रष्टा" की पदवी। और स्वर्ण-कुमारी जिस द्वीप में पधारती हैं, उस द्वीप के अहोभाग्य !

आँखों में आँसू भर कर, भक्ति-विभोर-भावेन, बेचारे बाज़ार वाले मनुष्य के चरणों पर गिर पड़े......

"हे भगवान ! तू ही हमें सोना दे सकता है। तू ही स्वर्णकुमारी को स्वदेश में ला सकता है।"

भगवान के चेहरे से पता चलता था, कि आशा-वादिता का रङ्ग गुलाबी होता है, हल्का।

* * *

सिंह-द्वीप—पराजित। भगवान नृसिंह थे ! सिंहों ने दुम दबा कर उनकी गम्भीर स्तुति की और उपहार में उन्हें एक रथ दिया, जो हाथी-दाँत का बना और गज-मुक्ताओं से मण्डित था। उस रथ में सात महान सिंह जुते थे। सिंह-रथ ही पर सुवर्ण-द्वीप में प्रवेश किया जा सकता था।

भगवान के नेतृत्व में चलने वाले मनुष्यों ने सिंह-सम्राट से सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर कराया कि भविष्य में

सिंह लोग मनुष्यों के प्रति सदैव अहिंसात्मक रहेंगे। सन्धि-पत्र की एक प्रति, मनुष्यों के नेता, भगवान के पीताम्बर के एक कोने में बाँध दी गई।

आगे यक्ष थे, पक्ष-धर। भगवान को विपक्ष बनाना उन्होंने भी मुनासिब न समझा।

फिर सन्धि-पत्र की तैयारी, फिर हस्ताक्षर! अब ऊपर से मनुष्यों पर आक्रमण न हो सकेगा।

यक्षपति ने नेता भगवान के सिंह-रथ के लिए एक सारथी दिया। वह प्रवाल की तरह लाल-लाल था। नाम था, "रक्तासुर"।

अन्त में, साष्टाङ्ग प्रणाम करते हुए, यक्षपति ने भगवान को बतलाया—यह रक्तासुर ही सुवर्ण-द्वीप तक आपका सिंह-रथ ले जा सकता है। क्योंकि यह अमर है। युद्ध में गर्दन कटते ही पुनः अरि-मर्दन हो उठता है।

पराजित नागों ने सिंहरथ-सञ्चालन के लिए भगवान को सर्प विनिर्मित एक चाबुक दिया। साथ ही, सन्धि-पत्र में प्रतिज्ञा की, कि जब नेता भगवान स्वर्णकुमारी के साथ, सविजय लौटेंगे, तब नागों द्वारा सिंहरथ में सहस्र-सहस्र मणियाँ मण्डित की जायँगी।

अब नेता भगवान के पीताम्बर के तीनों छोरों में एक-एक गाँठ थी और प्रत्येक गाँठ में एक सन्धि-पत्र।

भगवान प्रसन्न-वदन थे। इस आशा से कि शीघ्र ही, पीताम्बर के चौथे कोने में भी सोने का सन्धि-पत्र बँधेगा!!

* * *

सुवर्ण-द्वीप में कोलाहल। स्थान-स्थान पर सुवर्ण-सुन्दरियाँ रसीले राग गा-गाकर अनोखे स्वदेशीय नाच नाच रही थीं।

सातों महानगर दूल्हों से सजे थे। चारों ओर एक ही चर्चा चल रही थी—कोई आने वाला है। बहुत दिनों बाद ऐसा अवसर आया है, जब स्वर्णकुमारी किसी योग्य अधिकारी के साथ, अन्य संसारियों को सोने का श्रवण-सुखद-सम्वाद सुनाने जायँगी। इससे हमारे प्यारे सुवर्ण-द्वीप की महिमा बढ़ेगी।

सुवर्ण-द्वीप के प्रथम फाटक पर ही भगवान नामधारी नेता के मनुष्य अनुगामी रोक दिए गए। सिंहरथ, रक्तासुर सारथी और भगवान, द्वीप की राजधानी कनक-कोट में जिस समय प्रविष्ट हुए, उसी समय, पूरब में, अरुण-रथ पर अंशुमाली आए। सहस्र-सहस्र पारदर्शी कर-जाल पसार कर, दिवाकर ने सुवर्ण द्वीप से सूर्य-लोक तक सोने का समूचा समुद्र लहरा दिया; जिसके ऊपर सोने का एक महान वितान तना था—आकाश।

सातों सिंह, हाथी-दाँत का उज्ज्वल-रथ, रथ की गज-मणियाँ, भगवान नेता और उनका सन्धि-पत्र-ग्रथित पीताम्बर; सुवर्ण-द्वीप में घुसते ही, सोने के समुद्र में तिरोहित हो गए।

सुवर्ण-द्वीप वालों ने केवल रक्तासुर को देखा, जिसके हाथ में नाग-पाश था। उन्होंने उसी को विश्व-विजयी माना। भगवान पर उनकी नज़र भी न गई।

तीन दिनों तक बराबर कनक-कोट के सुवर्ण नागरिक रक्तासुर को नमस्कार करते रहे। नौबत यहाँ तक आई कि चौथे दिन उसी को स्वर्णकुमारी भी मिलने को हुईं। अब भगवान घबराए।

"रक्तासुर!"

"जी!"

"सुवर्ण-द्वीप के प्राणी तो मेरी ओर देखते भी नहीं, क्यों? विश्व-विजयी हूँ मैं और पूजा हो रही है तुम्हारी?"

"इस द्वीप में केवल रक्त रङ्ग पहचाना जाता है।"

"और भगवान?"

"उहूँक? रक्त रङ्ग के बाद विजयी की पूजा होती है। यहाँ वाले भगवान को बिलकुल नहीं जानते।"

"वह—सामने—सोने की सेना कैसी?"

"स्वर्णकुमारी आ रही हैं, वरमाला डालने!"

भगवान पीताम्बर सँभालने लगे।

स्वर्ण-कुमारी कनक-कोट के प्राणियों के साथ स्वर्ण-पुष्पों की माला लिए आईं, वह रक्तासुर की ओर बढ़ीं।

व्यग्र भगवान, झपट कर, बीच में आ रहे—"यह विजय-माल मेरी है, भगवान मैं हूँ कुमारी!"

"कौन बोलता है, भगवान मैं हूँ?" साश्चर्य रक्तासुर की ओर देख कर कुमारी ने पूछा—"विजयी! यह वरमाला तुम्हारी है। हम लोग न तो इस बातुल भगवान को देख रहे हैं और न स्वर्ण-माल ही उस मायावी के लिए है।"

कुमारी ने रक्तासुर की ओर हाथ बढ़ाया। रक्तासुर ने मस्तक झुकाया, स्वर्ण-सुन्दरियाँ जय-जयकार करने लगीं। माला रक्तासुर के गले में चमकने लगी। मानो प्रवाल-पर्वत पर बिजली खेलती हो।

इसी समय मनुष्यों के नेता भगवान ने, कराल-करवाल के एक ही प्रहार से, रक्तासुर का मस्तक छिन्न कर दिया।

स्वर्ण-सुन्दरियाँ चिल्ला उठीं। कुमारी तो बेहोश होते-होते बचीं। मगर दूसरे ही क्षण उन्होंने देखा—विजयी रक्तासुर ज्यों का त्यों खड़ा मुस्करा रहा था।

अब भगवान और रक्तासुर जम कर लड़ने लगे। अनेक बार महाबाहु मानव भगवान के प्रहारों से रक्तासुर के मस्तक कट-कट कर गिरे, पर वह रहा अमर ही।

आख़िर, सुवर्ण-द्वीप में, स्वर्ण-कुमारी की लालसा में, रक्तासुर के हाथों, नेता भगवान को वैकुण्ठ-लाभ हुआ!

और, मरते दम तक, माता मनुष्यता का वह बीहड़ बालक अपने को भगवान ही समझता रहा।

* * *

उसी दिन से आज तक, स्वर्ण-कुमारी रक्तासुर की अङ्क-शायिनी हैं। रक्तासुर ही "स्वर्ण-स्रष्टा" माना जाता है। यक्ष, नाग, किन्नर, नर आदि किसी लोक को जब सोने की चाह होती है, तब रक्तासुर के नाम की माला फेरनी पड़ती है। भक्तों की पुकार सुनते ही उदार रक्तासुर उनकी ओर स्वर्ण-कुमारी के साथ दौड़ता है। लोग अपने-अपने कलेजे का ख़ून सहर्ष चढ़ा कर, प्रसाद-रूपेण उससे सोना पाते हैं और आनन्द-विभोर होकर "रक्तासुर की जय-जय" चिल्लाते हैं।

और उस भगवान का कोई नाम भी नहीं लेता, जो माता मनुष्यता के एक बङ्गड़-बालक के माथे में उदित होकर चार दिन चमक-दमक कर, उसी में डूब गया।

* * *

साफ़ बात

[कविवर श्री० रामचरित जी उपाध्याय]

टीप देते गला उसी के हम,
नोन खाते रहे जिसा के हम।
बात करते न हम बिना मतलब,
हो न सकते कभी किसी के हम॥

हाथ हमसे मिला लिया जिसने,
आत्म-बध क्या नहीं किया उसने?
जाल में क्या बिना फँसे कहिए—
एक पैसा हमें दिया किसने?

एक पल में परस्व हरते हम,
पाप के बाप से न डरते हम।
छीन करके ग़रीब की रोटी—
पेट भरते, न डूब मरते हम॥

दीजिए ध्यान हम जहाँ पहुँचे,
दैन्य-दुख भी तुरत वहाँ पहुँचे।
हम न पहुँचे कहाँ, अरे यारो?
वैश्य बन जब कि हम यहाँ पहुँचे॥

हम नगर से तनिक हटे रहते,
कौल पर हम नहीं डटे रहते।
बाप रहना कहीं, कहीं भाई,
साथ रहते न हम, बँटे रहते॥

विश्व कोसे हमें नहीं डर है,
हम जहाँ पर रहें वहीं घर है।
क्यों बने हम रहें न अलबेले?
धाक जब जम गई मही पर है॥

बात चिकनी बड़ी हमारी है,
नीति कितनी कड़ी हमारी है?
खोपड़ी पर पड़ी नहीं किसकी—
लोहबन्दी छड़ी हमारी है?

पदवियों को झड़ी लगाते हम,
दृष्टि सब पर गड़ी लगाते हम।
हर घड़ी थी घड़ी जहाँ कर में,
झट वहीं हथकड़ी लगाते हम॥

साफ़-सुथरा शरीर दिल गन्दा—
है हमारा बना जगत बन्दा।
हम बनाते उसे तुरत राजा,
जो कि देता हमें नगद चन्दा॥

हम हमेशा बने-ठने रहते,
हम सभी से सदा तने रहते।
जो हमारा ख़ुशामदी टट्टू,
हम उसी पर गनी बने रहते॥

बल निबल को सदा दिखाते हम,
छल निश्छल को सदा सिखाते हम।
स्पष्टवक्ता बना जहाँ कोई,
जेल का फल उसे चिखाते हम॥

स्वच्छ हम-सा न हंस है कोई,
उच्च हम सा न वंश है कोई।
बोल-बाला यहाँ हमारा है,
आज हम-सा न कंस है कोई॥

* * *

जर्मनी का प्रजातन्त्र

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

[शेषांश]

हुत-कुछ खींचातानी के बाद राष्ट्रीय सभा (National Assembly) का चुनाव हुआ। इस सभा की बैठक वीमर नगर में हुई। कैबिनेट ने अपने सारे अधिकार इसे सौंप दिए। एसेम्बली ने श्री० एबर्ट को जर्मन प्रजातन्त्र का प्रेज़िडेण्ट चुना और हर स्कीडमैन को मन्त्रि-मण्डल बनाने का कार्य सौंपा। नवीन मन्त्रि-मण्डल का निर्माण हुआ और इसमें बहुमत, साम्यवादी आदि तीन पार्टी के प्रतिनिधि शामिल हुए।

यद्यपि स्पार्टकस का होआ कुचल दिया गया था, पर उसमें अभी साँस बाक़ी थी। वेस्टफेलिया के खानों का प्रबन्ध साम्यवादी ढङ्ग पर कराने के लिए लोगों ने आम हड़ताल कर दी। राइनलैण्ड, सैक्सोनी और बवेरिया में हड़तालों की धूम मच गई। सरकार परेशान हो गई और सेना में रङ्गरूटों और अफ़सरों को भरती करने लगी। परन्तु वह जहाँ-जहाँ आन्दोलन को दबाती थी, वहाँ-वहाँ उसके नए-नए शत्रु पैदा हो जाते थे।

५ मार्च को बर्लिन में व्यापारिक सङ्घों ने मज़दूरों के आर्थिक सङ्कटों के विरोध में आम हड़ताल करवाई। बर्लिन की सड़कों पर जनता की बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठा थी। पुलिस जनता को हटाना चाहती थी, पर जनता टस से मस नहीं हो रही थी। पुलिस ने गोली चलाई। इसके जवाब में जनता ने भी गोली चलाई। वालण्टियरों ने मल्लाहों की सहायता से लिक्टनबर्ग को अपने अधिकार में कर लिया। सरकार को मौक़ा मिल गया। उसने स्पार्टकस-दल के कुछ लोगों पर कुछ पुलिस वालों को मार डालने का अभियोग लगाया। सरकारी सेना ने आकर आन्दोलन को बड़ी बेरहमी से कुचल डाला। आन्दोलन को दबाने में सरकार को इतनी बेरहमी से काम लेना पड़ा था कि तमाम मज़दूर सरकार के विरोधी बन गए। म्यूनिच में ईज़नर का क़त्ल हो जाने के बाद साम्यवादियों ने मज़दूरों के प्रजातन्त्र की घोषणा की। कम्यूनिस्टों ने इस प्रजातन्त्र को नष्ट कर, तलवार से शासन करना शुरू किया और कम्यूनिस्ट शासन का अन्त तभी हुआ, जब ख़ून की नदियाँ बह गईं। प्रतिदिन मेगडनबर्ग, ड्रेसडन, लीपज़िग और ब्रान्सविक में ख़ून-ख़राबी होने लगी।

इस क्रान्ति-युग का अन्त तभी हुआ, जब विधान-विधायिनी सभा की बैठक प्रारम्भ हो गई। इस सभा की बैठक वीमर नगर में हुई थी। इसीलिए जो विधान बन कर तैयार हुआ, उसे 'वीमर-विधान' कहते हैं। इस विधान का जर्मन प्रजातन्त्र के इतिहास में विशेष स्थान है। यह विधान निर्धारित है, प्रेज़िडेण्ट, चॉन्सलर और पार्लामेण्ट के अधिकारों के समझौते पर। यद्यपि प्रत्येक हालत में पार्लामेण्ट को प्रधान रक्खा गया है। प्रजातन्त्र का सिरमौर एक प्रेज़िडेण्ट होता है, जिसे इस विधान द्वारा बड़े-बड़े अधिकार दिए गए हैं। प्रेज़िडेण्ट को पार्लामेण्ट के साथ सदा सहयोग करना पड़ता है। यदि पार्लामेण्ट उससे सहमत न हो, तो वह उसे भङ्ग कर सकता है। पर एक पार्लामेण्ट के भङ्ग हो जाने के बाद यदि दूसरी पार्लामेण्ट भी उससे सहमत न हो तो वह उसे भङ्ग नहीं कर सकता। विशेष अवसरों के लिए प्रेज़िडेण्ट को निरङ्कुश अधिकार भी दिए गए हैं। प्रेज़िडेण्ट चान्सलर को नियुक्त करता है और चान्सलर मन्त्रियों को। राजतन्त्र की नीति का सञ्चालन चान्सलर ही करता है और इसके लिए वही उत्तरदायी है, पार्लामेण्ट के प्रति। चान्सलर या उसका कोई मन्त्री ही कोई नया क़ानून पार्लामेण्ट के सामने रखता है। परन्तु एक स्वतन्त्र मेम्बर को भी यह अधिकार प्राप्त है। इस विधान ने पार्लामेण्ट को क़ानून-निर्माण में सब से ऊपर रक्खा है और आमतौर से जब तक पार्लामेण्ट सहमत न हो, कोई नया क़ानून नहीं बन सकता।

कैबिनेट का निर्माण एक विशेष ढङ्ग पर होता है। जब एक कैबिनेट का निर्माण होने को होता है, तो प्रेज़िडेण्ट किसी पार्टी-लीडर को नहीं बुलाता, जैसा अन्य देशों में रीति है। वह बुलाता है, एक ऐसे राजनीतिज्ञ को, जो अपने नेतृत्व में कई पार्टियों का सहयोग प्राप्त कर सकता है। ऐसी प्रत्येक पार्टी को उसकी शक्ति के अनुसार कैबिनेट में स्थान मिलता है। इसीलिए बहुधा योग्य पुरुष कैबिनेट के बाहर रह जाते हैं और बहुधा कैबिनेट कमज़ोर होती है।

वीमर-विधान ने जनता के प्रथम अधिकारों की घोषणा भी की है। प्रत्येक पुरुष क़ानून के सम्मुख बराबर है। स्त्री और पुरुषों के अधिकार तथा कर्तव्य समान हैं और प्रत्येक को पूर्ण स्वतन्त्रता है, बोलने लिखने तथा विचार करने की। बालकों की रक्षा तथा शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया है। वीमर-विधान ने प्रत्येक स्त्री और पुरुष को धार्मिक, राजनैतिक तथा आर्थिक स्वतन्त्रता दी है। सरकार की तरफ़ से शिक्षा का निरीक्षण होता है। निजी सम्पत्ति को भी विधान में स्थान दिया गया है। पर ऐसी सम्पत्ति का प्रयोग समाज के विपरीत न होना चाहिए। भूमि का बटवारा तथा प्रयोग का निरीक्षण सरकार करती है। वीमर-विधान ने मज़दूरों की रक्षा का कार्य रीच (Rich) को विशेष तौर से सौंपा है। अस्तु।

प्रजातन्त्रीय जर्मनी पर सिर मुड़ाते ही ओले पड़े। अभी वीमर-सभा का कार्य समाप्त भी नहीं हुआ था कि वर्सलीज़ की सन्धि (Treaty of Versailles) हो गई। इस सन्धि ने जले पर नमक छिड़कने का कार्य किया। आज संसार में कोई भी ऐसा राजनीतिज्ञ न होगा, जो इस सन्धि का समर्थन करता हो। इस सन्धि ने आलसेस और लोरेन के प्रान्तों को जर्मनी से छीन लिया और जर्मनी पर भारी हर्जाना लाद दिया। यही नहीं, जर्मनी को निशस्त्र कर दिया गया और उसके उपनिवेश भी छीन लिए गए। संक्षेप में इस सन्धि द्वारा जर्मनी के पुराने शत्रुओं ने उसे राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में निकम्मा बना डालने में कोई बात उठा न रक्खी। यह सन्धि जर्मनी के लिए अपमानजनक थी।

जर्मनी की जनता समझती थी कि प्रजातन्त्रीय जर्मनी के साथ यूरोप के राष्ट्र अच्छा बर्ताव करेंगे और उससे पुराना बदला न लेंगे। परन्तु यह भूल निकली। यूरोप के राष्ट्र प्रजातन्त्र के साथ कोई भी रियायत करने को तैयार न थे। फ़्रान्स जर्मनी को अब भी अपना शत्रु ही समझ रहा था। जर्मनी की जनता अपने में प्रजातन्त्र क़ायम करने के लिए इसीलिए तैयार हो गई थी कि उसके साथ न्याय किया जावेगा। अब जर्मनी इस योग्य भी न रह गया था कि वह सन्धि का विरोध कर सकता। गृह-कलह ने उसे कमज़ोर कर दिया था।

'धोबी से न जीतें तो गदहा के कान उमेठें' की कहावत को चरितार्थ करते हुए जर्मनी की जनता सारा क्रोध प्रजातन्त्र पर उतारने लगी और प्रजातन्त्र को गालियाँ देने लगी। प्रजातन्त्र के विरोधी-दल को शक्ति-संग्रह करने का सुअवसर मिला। प्रजातन्त्र को पुनः कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

सन् १९२० की १०वीं जनवरी को सन्धि लागू हुई और अगले दो महीने प्रजातन्त्र के लिए बड़े दुखदायी साबित हुए। राइन प्रदेश शत्रुओं के हाथों में था। प्रशेसबर्ग, डानजिग, मेमल, अपर सिलेसिया तथा सार से जर्मनी का राष्ट्रीय झगड़ा हट चुका था। जर्मनी की जनता बहुत उत्तेजित हो चुकी थी और मित्र-राष्ट्रों के प्रतिनिधियों का स्थान-स्थान पर अपमान कर रही थी।

इसी जनवरी के महीने में मजदूरों की कौन्सिलों की स्थापना करने के लिए सरकार ने एक बिल पेश किया। स्वतन्त्र साम्यवादियों ने उस बिल के विरोध में एक बहुत बड़ा प्रदर्शन किया। सड़कों पर बहुत बड़ी भीड़ जमा हो गई। सरकारी सेना ने भीड़ पर गोली चलाई। स्वतन्त्र साम्यवादियों ने आम हड़ताल की घोषणा की, पर उन्हें इस कार्य में जनता से समुचित सहायता न मिली। इसलिए आम हड़ताल करने की योजना वापस ले ली गई। रेलवे को रीच के अधिकार में लाने की योजना ने तथा ईर्ज़बरजर की टैक्स-स्कीम ने आग में घी छोड़ने का कार्य किया। १०वीं जनवरी को किसी ने अर्थ-सचिव पर गोली चला कर उसे घायल कर दिया।

प्रजातन्त्र के विरुद्ध जनता का रुख देख कर सेना के कुछ अफ़सरों ने सरकार को अपने अधिकार में ले लेना चाहा। १०वीं मार्च को लटविज ने प्रेज़िडेण्ट एबट के सामने सेना की माँगों को रक्खा। सेना की माँगें बहुत गरम थीं। लटविज इन माँगों से तत्कालीन सरकार को भयभीत करना चाहता था और चाहता था उसे इस्तीफ़ा देने के लिए मजबूर करना। परन्तु वह अपने कार्य में सफल नहीं हुआ। उपर्युक्त चाल में असफल होने के पश्चात् सेना के अफ़सरों ने एक नई तरकीब सोची।

१२वीं मार्च की बात है। बर्लिन के बाहर एक सेना खड़ी थी और तैयारी कर रही थी, बर्लिन पर धावा करने की। सरकार ने भी बर्लिन में अपनी सेना जमा की, परन्तु उसकी सेना आक्रमण-कारियों को रोकने के लिए तैयार नहीं थी। बल्कि वह तैयार थी, सरकारी आज्ञा की अवहेलना करने के लिए। जब कैबिनेट ने यह हालत देखी तो उसके होश उड़ गए। राजधानी की रक्षा करना एकदम असम्भव था, कैबिनेट को अपनी जान खतरे में दिखाई पड़ने लगी। सारी की सारी कैबिनेट बर्लिन छोड़ कर ड्रेसडन भाग गई। केवल एक मेम्बर—स्चीफर—बर्लिन की रक्षा के लिए वहाँ रह गया। सरकारी सेना ने बर्लिन खाली कर दिया।

विद्रोहियों की सेना ने १३वीं तारीख़ को बर्लिन में प्रवेश किया। परन्तु उसे वहाँ सरकारी दल का कोई भी पुरुष न मिला। समझौते की कोई भी गुञ्जाइश न थी। सरकार ने समझौते के लिए बातचीत करने से साफ़ इन्कार कर दिया। कैप ने स्वयं अपने को चान्सलर नियुक्त कर दिया और कैप-कैबिनेट ने एसेम्बली भङ्ग कर दिया। परन्तु एसेम्बली के प्रेज़िडेण्ट फेहरेनबैच ने उसकी बैठक स्टेटगार्ट नगर में बुलाई। कैप की कैबिनेट में एक भी प्रतिभाशाली नेता न था। किसी स्थान पर जनता ने इस कैबिनेट का समर्थन नहीं किया और न कैप-कैबिनेट ने ही प्रयत्न किया जनता का सहयोग प्राप्त करने का। कैप को तथा उसकी कैबिनेट को अपनी सेना का भरोसा था और इस कैबिनेट का शासन भी वहीं तक था, जहाँ तक उसकी सेना की पहुँच थी। बर्लिन की जनता ही इस कैबिनेट की शत्रु हो रही थी। यह हालत देख कर दो दिन के अन्दर ही कैप ने सरकार से समझौता करने की प्रार्थना की। परन्तु अब समझौता कैसा? सरकार ने समझौता करने से इन्कार कर दिया और कैप से हथियार रख देने को कहा। कैप एकदम घबड़ा गया था और अपनी जान बचाने के लिए बर्लिन छोड़ कर भाग गया। कैप के और साथियों ने भी एकदम घुटने टेक दिए। सरकार की विजय हुई और उसने विद्रोही सेना को कैम्प में लौट जाने की आज्ञा दी। विद्रोही सेना को आज्ञा पालन करनी पड़ी। जब सेना

मर रहे हैं लीडरी के वास्ते

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

है यह ले-देकर, इसी के वास्ते,
दिल मिला है, दिल्लगी के वास्ते!
डिगरियाँ कॉलेज से लेकर दर-बदर,
फिर रहे हैं, नौकरी के वास्ते!
क्यों किसी से दुश्मनी हम मोल लें,
चार दिन की ज़िन्दगी के वास्ते!
कह रहा है, यह हमारा तजरुबा,
कौन मरता है किसी के वास्ते!
करते हैं साहब के बङ्गले का तवाफ़[1],
कुछ नहीं, एक नौकरी के वास्ते!
अच्छे हो जाएँ किसी सूरत से जल्द,
यह दुआ है "सेठजी"[2] के वास्ते!
कर रहे हैं कोशिशें जी तोड़ कर,
शेख़ साहब मेम्बरी के वास्ते!
साहब आने भी न पाए थे मगर,
झुक गए हम बन्दगी के वास्ते!
शौक़ से अब ख़र्च कर देते हैं हम,
मालोज़र "टी-पारटी" के वास्ते!
लीडरी "बिस्मिल" उन्हें मिलती नहीं,
मर रहे हैं लीडरी के वास्ते!

१—परिक्रमा, २—बाबू गणेशप्रसाद जी सेठ से मतलब है।

* * *

बर्लिन छोड़ रही थी, तब बर्लिन के नवयुवक प्रदर्शन कर रहे थे। सेना ने नौजवानों के झुण्ड पर गोलियाँ चलाईं और बहुतों को ज़मीन पर सुला दिया। बर्लिन के बाहर, रूर प्रान्त के ज़िलों में बोल्शेविक अपना उल्लू सीधा कर रहे थे। जैसे ही कैप ने बर्लिन पर दख़ल जमाया, वैसे ही बोल्शेविकों ने विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। इस बोल्शेविक विद्रोह का केन्द्र एसन नगर था। उन्होंने लाल गार्डों (Red Guards) को भरती किया और उनमें तमाम शस्त्र आदि बाँटे। कैप पर विजय प्राप्त कर लेने के पश्चात् सरकार ने बोल्शेविक विद्रोह की ओर अपना ध्यान दिया। सरकारी सेना और लाल गार्डों के बीच घमासान युद्ध हुआ और यद्यपि लाल गार्ड बड़ी बहादुरी से लड़े, पर अन्त में वे कुचल दिए गए। अप्रैल के मध्य तक बोल्शेविक विद्रोह का नाम-निशान तक मिट गया।

कैप-विद्रोह शान्त कर देने के पश्चात् कैबिनेट का सुधार किया गया। हरमैन मुलर नवीन चान्सलर नियुक्त हुआ। एसेम्बली भङ्ग कर दी गई और प्रथम प्रजातन्त्रीय रीचस्टैग का चुनाव हुआ। परन्तु मुलर की सरकार बहुत काल तक टिक न सकी। उस पर अविश्वास का प्रस्ताव आया, इसलिए उसे इस्तीफ़ा देना पड़ा। फ़ैहरेनबैच ने नई सरकार बनाई।

इस समय जर्मनी के सम्मुख हर्जाने (Reperations) का प्रश्न बड़ी कठिनाइयाँ उपस्थित कर रहा था। अभी तक बेचारे को पता ही न था कि उसे कितना हर्जाना देना होगा। तुर्रा तो यह था कि मित्र-राष्ट्र स्वयं भी कुछ नहीं जानते थे। रह-रह कर फ़्रान्स चीख़ उठता था और चाहता था कि यूरोप के नक़्शे से जर्मनी का नाम मिट जाय। इस हर्जाने के प्रश्न पर मित्र-राष्ट्रों की प्रतिदिन कॉन्फ़्रेन्सें हुआ करती थीं। जुलाई के महीने में स्पा में मित्र-राष्ट्रों ने अपनी माँगें जर्मनी को बतलाईं। सन्धि के पश्चात् यह प्रथम अवसर था कि मित्र-राष्ट्रों ने जर्मनी के मन्त्रियों से खुल्लम-खुल्ला बातचीत की थी। तीन महीने पश्चात् ब्रुसेल्स में विशेषज्ञों की फिर एक कॉन्फ़्रेन्स हुई और उसमें इस बात का प्रयत्न किया गया कि स्पा के सिद्धान्त कार्यान्वित किए जायँ। कई कॉन्फ़्रेन्सों के पश्चात् मित्र-राष्ट्रों ने अपनी माँगें निश्चित कीं। ११,३०,००,००,००० पौण्ड जर्मनी से हर्जाने के तौर पर तलब किए गए और उसे बतलाया गया कि वह किस तरह से इस रक़म को अदा करे। जर्मनी को निशस्त्र करने के लिए भी कई माँगें उसके सामने रक्खी गईं। जर्मनी की सेना में अधिक से अधिक १ लाख सिपाही रह सकते थे। क्रान्ति से बचने के लिए उसने जो नागरिक रक्षकों (Civil Guards) तथा पुलिस की भरती कर रक्खी थी, वह भी उसे भङ्ग कर देने की आज्ञा दी गई।

मित्र-राष्ट्रों ने यह माँगें जर्मनी के सामने अल्टीमेटम के रूप में रक्खा था। यह शर्त थी कि यदि जर्मनी ने इन माँगों को पूरा न किया तो मित्र-राष्ट्र उसकी भूमि पर अपना अधिकार जमा लेंगे और उसे लीग ऑफ़ नेशन्स से सर्वदा अलग रक्खा जावेगा।

मित्र-राष्ट्र अपनी बात पर कितने दृढ़ हैं, यह दिखलाने के लिए फ़्रान्स की सेना ने जर्मन राज्य में प्रवेश करना आरम्भ कर दिया। यह हालत देख कर जर्मनी की जनता क्रोध से पागल हो गई और कम्यूनिस्टों ने हाले में बलवा कर दिया। रूस के बोल्शेविक इस विद्रोह का सञ्चालन कर रहे थे और रुपए से इसकी सहायता कर रहे थे। पर मज़दूरों ने बलवाइयों का साथ नहीं दिया, इसलिए बहुत शीघ्र इस विद्रोह का अन्त हो गया।

जर्मनी की सरकार ख़ामोश होकर बैठ गई और बहुत काल तक अल्टीमेटम के उत्तर में हाँ या नहीं, कुछ भी नहीं कहा। मित्र-राष्ट्रों ने पुनः

आख़िरी अल्टीमेटम दिया। हर्जाने की रक़म ६,६०,००,००,००० पौण्ड कर दी गई। जर्मनी से कहा गया कि या तो वह १२ मार्च तक इन माँगों को स्वीकार करे, नहीं तो फ्रान्स की सेना 'रूर' प्रान्त पर फ़ौरन अधिकार कर लेगी। फ़लतः एक सप्ताह के अन्दर ही जर्मनी ने मित्र-राष्ट्रों की उपर्युक्त सभी माँगें स्वीकार कर लीं।

यद्यपि वर्थ कैबिनेट ने मित्र-राष्ट्रों के अल्टीमेटम को स्वीकार कर लिया, पर जर्मनी की कठिनाइयों का अभी अन्त नहीं हुआ। हर्जाने की समस्या एक बड़ी जटिल समस्या साबित हुई। मैं यहाँ इस प्रश्न पर अधिक नहीं लिखूँगा। इस पर तो एक मोटी किताब तैयार हो सकती है। पाठकों को इतना ही समझ लेना चाहिए कि हर्जाने का प्रश्न जर्मनी के जीवन-मरण का प्रश्न था। फ्रान्स जर्मनी में गृह-कलह फैलाना चाहता था। जर्मनी के सिक्के—मार्क—की दर प्रति क्षण तेजी से गिर रही थी और जर्मनी के दिवालिया हो जाने का डर था। स्थिति हाथ से बाहर होते देख कर वर्थ कैबिनेट ने इस्तीफ़ा दे दिया और डॉक्टर वर्थ मैदान से हट गए। परन्तु जर्मनी में उस समय दूसरा कोई भी ऐसा माँ का लाल ऐसा न था, जो कैबिनेट बना कर इस प्रश्न को हल करने का साहस करता। अतएव डॉक्टर वर्थ ने पुनः हिम्मत करके जिम्मेदारी अपने ऊपर ली। परन्तु डॉक्टर वर्थ भी स्थिति को सुधार न सके और जर्मनी को दिवालिया होने में केवल कुछ सप्ताह की देर थी। इस भयानक स्थिति को देख कर मित्र-राष्ट्रों के कान खड़े हुए। और उन्होंने स्थिति को सुधारने के लिए केनेस (Cannes) में अपनी एक कॉन्फ्रेन्स बुलाई। इस कॉन्फ्रेन्स का अभिप्राय था, एक आर्थिक कॉङ्ग्रेस की तैयारी करना, जो हर्जाने की समस्या को हल कर सके। इस कॉन्फ्रेन्स का श्रेय इङ्गलैण्ड के श्री० लॉयड जॉर्ज को था। यह कॉङ्ग्रेस जिनोआ में बुलाई गई थी।

परन्तु फ्रान्स का दिल अभी साफ़ नहीं हुआ था। वह इन बातों को जर्मनी की मक्कारी समझ रहा था। हाँ, ब्रयाण्ड जर्मनी के साथ समझौता करने को तैयार था। पर फ्रान्स की जनता जर्मनी की शत्रु हो रही थी। और किसी प्रकार की रियायत करने को तैयार नहीं थी। ब्रयाण्ड की सरकार ने स्तीफ़ा दे दिया और उसकी जगह पोयङ्कोर ने ले ली। पोयङ्कोर वह शख़्स था, जो जर्मनी के साथ सन्धि की शर्तों में एक शब्द की भी रियायत करना घोर पाप समझता था। ऐसी हालत में जिनोआ-कॉन्फ्रेन्स को कहाँ तक सफलता मिल सकती थी, यह पाठक स्वयं ही विचार लें। अस्तु।

जिनोआ कॉन्फ्रेन्स में संसार के सभी बड़े राष्ट्रों के प्रतिनिधि शामिल हुए थे। रूस ने भी इस कॉन्फ्रेन्स में भाग लिया था। अगर पोयङ्कोर चाहते तो यूरोप की आर्थिक हालत बहुत-कुछ सुधर सकती थी। पर उनका रुख़ बहुत कड़ा था। उनका यूरोप की हालत से कुछ भी सम्बन्ध न था। उनका लक्ष्य था जर्मनी को पैरों तले दबाए रखना। इस जिनोआ कॉन्फ्रेन्स का केवल एक ही अच्छा परिणाम हुआ और वह था जर्मनी और रूस की सन्धि। रूस ने जर्मनी से एक व्यापारिक सन्धि की।

पोयङ्कोर साहब जर्मनी के पीछे हाथ धोकर पड़े थे और वे जर्मनी को फूटी आँखों भी नहीं देख सकते थे। जर्मनी कुछ मोहलत चाहता था। पर पोयङ्कोर एक दिन की भी मोहलत नहीं देना चाहता था और चाहता था जर्मनी के रूर प्रान्त पर फ्रान्स का अधिकार। सन् १९२३ के आरम्भ में फ्रान्स की सेना रूर पर अधिकार करने के लिए रवाना हो गई। सम्भवतः फ्रान्स दुबल जर्मनी से युद्ध करना चाहता था और चाहता था

भविष्य से—

[श्री० लक्ष्मीधर जी औदीच्य]

बता कर जिसे प्रेम-उपहार,
दिया था तुमने विषम-वियोग;
प्रेयसी बना 'व्यथा' को हाथ !
शान्ति का कर डाला उपभोग।

माँगता है अब यह जीवन—
करुण-करुणा में उलझा मन।

बता दे सजनि, छिपाऊँ कहाँ—
हृदय में बिखरा उनका प्यार ?
चढ़ाऊँ किस वेदी पर आज,
पसीजे प्राणों की यह धार ?

लुटाऊँ किस पथ पर प्रतिकूल !
'साधना' के मुरझाए फूल ?

सुना है, है 'भविष्य' के पास,
हमारे जीवन का मधुमास,
'मिलन' की घड़ियाँ हैं उसमें,
शान्ति का उनमें पूर्ण-प्रकाश।

सखे ! कर सुखमय यह जीवन,
खिला दे 'आशा' का उपवन।

* * *

उसे पीस डालना। इस समय जर्मनी में कनो-कैबिनेट शासन कर रहा था। यह उसके लिए कठिन परीक्षा का काल था। जर्मनी का प्रजातन्त्र कसौटी पर चढ़ा था।

जर्मनी फ्रान्स से लोहा लेने को तैयार नहीं था। उसको तो अपनी जान के लाले पड़े थे। जर्मनी ने सविनय अवज्ञा (Passive Resistance) का शस्त्र अपने हाथ में लिया और रूर प्रान्त में फ्रान्स से असहयोग करना आरम्भ कर दिया। जर्मनी के सविनय अवज्ञा का मुक़ाबला फ्रान्स ने कठोरता और घोर दमन से किया। रूर प्रान्त में त्राहि-त्राहि मच गई। जर्मनी का उद्योग-धन्धा बिलकुल नष्ट हो रहा था। मार्क्स की दर प्रतिदिन गिर रही थी। एक समय तो मार्क्स की दर गिरते-गिरते १,०००,०००,०००,०००,०००,०००,००० हो गयी थी। इसका असर यूरोप के आर्थिक क्षेत्र पर बहुत ही बुरा पड़ रहा था। जर्मनी समझता था कि यदि यूरोपियन राष्ट्र यूरोप को बचाना चाहते हैं तो उन्हें रूर के प्रश्न पर दख़ल देना पड़ेगा। वह धैर्य और सब्र से उस समय की प्रतीक्षा कर रहा था। परन्तु यह सब होते हुए भी फ्रान्स के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी और पोयङ्कोर ने साफ़-साफ़ कह दिया कि जब तक जर्मनी पूर्णतया घुटने न टेक देगा, तब तक फ्रान्स की सेना रूर प्रान्त से नहीं हटाई जावेगी।

मित्र राष्ट्रों में भी आपस में हर्जाने के प्रश्न पर एकता न थी। परिस्थिति प्रतिदिन गम्भीर होती देख कर इङ्गलैण्ड ने तय किया कि हर्जाने का प्रश्न राजनीतिज्ञों के हाथों से लेकर अर्थशास्त्र के विशेषज्ञों को सौंप दिया जावे। अमेरिका की पहिले ही से यह राय थी। सन् १९२३ के मध्य में इङ्गलैण्ड ने अपनी राय मित्र-राष्ट्रों के सम्मुख रक्खी। जर्मनी इस प्रस्ताव से तुरन्त सहमत हो गया। संसार का रुख़ देख कर अन्त में फ्रान्स को भी सहमत होना पड़ा। डाज़ कमिटी (Dawes Committee) बैठी और जाँच का कार्य आरम्भ कर दिया।

डाज़-कमिटी ने हर्जाने के प्रश्न को केवल आर्थिक तौर से हल करने का प्रयत्न किया। राजनीति का बिलकुल समावेश नहीं किया गया। कमिटी ने केवल एक समस्या अपने सामने रक्खी और वह यह थी कि वह कितना हर्जाना दे और किस-किस तरकीब से दे। कमिटी ने अपनी रिपोर्ट तैयार कर मित्र-राष्ट्रों तथा जर्मनी के सामने रख दी। रिपोर्ट जर्मनी के पक्ष में थी। बहुत कुछ गृह-कलह और दलबन्दियों के पश्चात् जर्मनी ने डाज़ स्कीम को स्वीकार कर लिया और उसे कार्यान्वित करना आरम्भ कर दिया।

सन् १९१९ से एबर्ट जर्मनी का प्रेज़िडेण्ट था। उसने अपना काम बड़ी योग्यता से किया था। अकस्मात सन् १९२५ की २८वीं फ़रवरी को उसकी मृत्यु हो गई। अतः उसके उत्तराधिकारी की आवश्यकता हुई। प्रेज़िडेण्ट के चुनाव के लिए दो दफ़े वोट पड़े। दुबारा चुनाव में हिण्डनबर्ग जर्मनी का प्रेज़िडेण्ट चुन लिया गया। यह हिण्डनबर्ग कौन था। वही कैसर का दाहिना हाथ और गत महायुद्ध वाला जर्मनी का सब से बड़ा योद्धा। उसका तमाम जीवन देश की सेवा में ही बीता था और यदि बुढ़ापे में भी देश को उसकी आवश्यकता थी तो वह पीछे हटने वाला शख़्स न था। पहिले वह राजतन्त्र का दाहिना हाथ था, अब वह प्रजातन्त्र का सिरमौर बना। हिण्डनबर्ग का प्रेज़िडेण्ट बनना स्वीकार करने के मानी थे प्रजातन्त्र की महान विजय। राजतन्त्र के पोषकों ने प्रजातन्त्र की महत्ता तथा सफलता स्वीकार करके उसके आगे घुटने टेक दिए। मैं उपर्युक्त घटना को जर्मनी के प्रजातन्त्र की सब से बड़ी विजय मानता हूँ।

* * *

"यह पिकेटिङ्ग का असर है, जो दिवाला निकल गया"

'केवल न्यायोचित व्यापार' बनाए रखने की भिक्षा

भारत और ब्रिटेन का व्यापार-सम्बन्ध :: हाउस ऑफ़ कॉमन्स में बहस

बहिष्कार आन्दोलन का गम्भीर प्रभाव :: मिलों के स्वामी ध्यान दें

["एक कॉङ्ग्रेसमैन"]

[इस लेख में सुलेखक ने बहिष्कार को कॉङ्ग्रेस का सब से अधिक ज़बरदस्त, और प्रभावशाली अस्त्र प्रमाणित किया है। विराम-सन्धि के बाद भी लङ्काशायर की हालत वैसी की वैसी ही बनी रहने पर उस दिन हाउस ऑफ़ कॉमन्स में एक बहस हुई थी, जिसमें वक्ताओं ने 'असन्तुष्ट भारत की अपेक्षा सन्तुष्ट भारत' की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए कहा था कि हम भारत का अर्थ-शोषण करना नहीं चाहते, बल्कि हम भारत के साथ केवल 'न्यायोचित व्यापार' सम्बन्ध बनाए रखना चाहते हैं। लेखक ने सिद्ध किया है, कि लङ्काशायर की इस व्यापार-भिक्षा का रहस्य बहिष्कार ही है। इसके पहले कभी 'न्यायोचित व्यापार' की बात नहीं सुनाई पड़ी थी।

—सं० 'भविष्य']

बहिष्कार, कॉङ्ग्रेस का सब से अधिक प्रभावशाली, प्रबल और सद्यः फलप्रद प्रोग्राम रहा है। इसे हम कॉङ्ग्रेस-कार्य का निषेधात्मक और 'स्वदेशी' को आदेशात्मक पहलू कह सकते हैं। भारत के इस निषेधात्मक बहिष्कार-अस्त्र का प्रभाव व्यापार की मन्दी के मारे हुए लङ्काशायर पर अत्यन्त विकट और आश्चर्यजनक पड़ा। इसके एक ही झोंके ने उसकी कमर तोड़ दी। बेकारों की बाढ़ आ गई और मिलों में ताले पड़ गए। अब से कुछ समय पहले तक भारतीय नीति के निर्धारण में लङ्काशायर का बड़ा ही कुटिल और प्रभावशाली हाथ रहा करता था। इसी लङ्काशायर के लाभ के लिए ब्रिटेन ने भारत के बुनाई के उद्योग को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। भारत के पास इस अन्याय के प्रतिकार का कोई उपाय न था। परिस्थिति उत्तरोत्तर निराशाजनक होती गई। परन्तु इस बहिष्कार ने क्षण भर में ही लङ्काशायर के होश ठिकाने कर दिए। लङ्काशायर के साथ ही साथ मज़दूर-सरकार को भी घुटने टेक देने पड़े। अब तक ब्रिटेन कोरी प्रतिज्ञाएँ करता रहा, परन्तु इस राष्ट्र-व्यापी बहिष्कार ने असम्भव को भी सम्भव कर दिखलाया। निस्सन्देह बहिष्कार का प्रोग्राम विराम-सन्धि के अनुसार स्थगित कर दिया गया है, परन्तु समझदार लोग शब्दों पर नहीं लड़ा करते। 'स्वदेशी' अब भी मौजूद है। मिल-मालिकों से सहयोग करके देश ने अब से अधिक विशाल पैमाने पर स्वदेशी की जड़ जमाने का उपाय कर लिया है। यह ठीक है कि पिकेटिङ्ग का उग्र रूप हट जाने से कुछ देशद्रोही व्यापारियों ने विदेशी वस्तुओं के ऑर्डर भेज दिए हैं, फिर भी लङ्काशायर की यह आशा कि अब फिर से भारतीय ऑर्डरों का वही पुराना दरिया बहने लगेगा, निरी झूठी प्रमाणित हुई है। उसकी दशा अब भी वैसे ही बनी हुई है, जैसी कि बहिष्कार के समय थी। कॉङ्ग्रेस-प्रोग्राम में बहिष्कार से सब से अधिक लाभकारी परिणाम प्रकट हुआ है। हमारा कर्तव्य है कि हम इसे पूर्णता पर पहुँचा दें।

अभी उस दिन हाउस ऑफ़ कॉमन्स में 'लङ्काशायर के उद्योग-धन्धों की भारत का राजनीतिक परिस्थिति से क्या सम्बन्ध है?' इस पर विचार हुआ था। इस सम्बन्ध की बहस अत्यन्त रोचक हुई थी। उससे ब्रिटेन की मनोवृत्ति का परिचय मिलता है, और मज़दूर-सरकार ने कॉङ्ग्रेस के साथ जिस उद्देश्य से समझौता किया है, उस पर भी काफ़ी प्रकाश पड़ता है। अब तक जब-जब भारत ने किसी राजनीतिक अधिकार की माँग पेश की, तब-तब जवाब में ब्रिटेन ने अपना फ़ौलादी ढाँचा भारत के सामने कर दिया। ऐसा मालूम होता था, मानो ब्रिटिश राजनीति में पशु-शक्ति के सिवाय किसी दूसरी बात के लिए जगह ही नहीं है। लेकिन भारत के बहिष्कार-अस्त्र ने उन्हें कुछ सुनना और अनुभव करना सिखला दिया है।

खद्दर और स्वदेशी मिलों के कपड़े इस देश में मौजूद थे, परन्तु उनका अस्तित्व बनाए रखने तथा उनके प्रचार के लिए भारतीयों के संरक्षण की आवश्यकता थी। देश की सब से शक्तिशाली और व्यापक संस्था कॉङ्ग्रेस ने बहिष्कार के रूप में उन पर अपने संरक्षण का हाथ फैला दिया था। अब तक हिन्दुस्तानी मिलें कॉङ्ग्रेस की तरफ़ सन्देह की दृष्टि से देखा करती थीं, परन्तु अब, यद्यपि वह सन्देह बिल्कुल प्रेम में नहीं परिवर्तित हो गया है, वे अच्छी तरह समझने लगी हैं कि बिना कॉङ्ग्रेस की सहायता के उनके सम्पूर्ण प्रयत्न निष्फल हो सकते हैं, चाहे उनकी सहायता के लिए स्वयं सरकार ही क्यों न उपाय रचा करे। अब तक सभी बातों में सहायता के लिए मिल वाले नौकरशाही की ही तरफ़ झुका करते थे, परन्तु अब उन्हें मालूम हो गया है कि नौकरशाही पर सदैव आशा करना विश्वसनीय नहीं है। उद्धार का सब से उत्तम मार्ग कॉङ्ग्रेस से समझौता करके रहना ही है। हिन्दुस्तान से जो विदेशी कपड़े बाहर रवाना कर दिए गए हैं, उससे कॉङ्ग्रेस और व्यापारियों, दोनों का ही लाभ है। यद्यपि पूँजीवाद को तुरन्त ही कॉङ्ग्रेस-मनोवृत्ति में परिवर्तित कर लेना अभी कठिन है, फिर भी, दोनों का हित कुछ न कुछ समान होने से, आशा है, कि भविष्य में स्वराज्य की परिस्थिति उत्पन्न हो जाने पर वे उसके साथ अपना सामञ्जस्य स्थापित कर लेंगे।

खद्दर

[श्री० रामकुमार जी जैन]

निर्बल की आजीविका, है स्वदेश का प्राण।
खद्दर में झङ्कारती, है स्वातन्त्र्य सु-तान॥

❀

यह शान्तितत्त्व परिपूरक,
इन्दु समान शुभ्र शोभाधारी।
दृढ़ता का कवच, शक्ति का मन्त्र,
भव्य स्वातन्त्र्य छत्रधारी॥

❀

वैरागी का बाना, नाना—
वीरों का ग़ज़ब निशाना है।
शुभ धैर्य, शौर्य, औदार्य दया—
शम-दम का यही ठिकाना है॥

* * *

अब भी पिछड़े हुए हैं

यह खेद की बात है कि बम्बई के मिल-मालिक अब तक कॉङ्ग्रेस की बात को पूरा-पूरा नहीं पालन कर सके। अब भी वे अमेरिकन रूई तथा करोड़ों रुपए मूल्य के मिल के दूसरे विदेशी सामान मँगाते चले जा रहे हैं। अभी थोड़े ही दिन हुए हैं, उन्होंने विदेश से नक़ली रेशम का सूत मँगाना त्याग दिया है। यदि इसी प्रकार वे वस्त्र बनाने में सब सामान, जहाँ तक हो सके, स्वदेशी ही काम में लाएँ तो उनका और देश का और भी अधिक कल्याण हो। आवश्यकता है कि कॉङ्ग्रेस इस प्रश्न को अपने हाथ में अधिक गम्भीरता से ले ले। जैसा है वैसा ही बना रहने देना ठीक न होगा, इस प्रश्न को तुरन्त हाथ में ले लेना आवश्यक है। यह ठीक है कि गाँधी जी मिल के कपड़ों की अपेक्षा खद्दर पर ही अधिक ज़ोर देते हैं, फिर भी स्वदेशी की सफलता के लिए कुछ समय तक देशी मिल के कपड़ों का भी प्रबन्ध करना ही पड़ेगा।

लेकिन जैसा कि पहले कहा जा चुका है, हाउस ऑफ़ कॉमन्स की बहस बड़ी रोचक तथा ब्रिटिश मनोवृत्ति की परिचायक हुई है। सन्धि हो जाने पर भी बहिष्कार जारी है, इस बात पर क्रोध प्रकट करते हुए लॉर्ड स्टेनली ने कहा :—

"लङ्काशायर इस बात को मानता है कि असन्तुष्ट भारत की अपेक्षा सन्तुष्ट भारत लङ्काशायर का कहीं अधिक अच्छा ग्राहक होगा। इसीलिए वह आज भारत की आकांक्षाओं के प्रति अधिक सहानुभूति रखता है। परन्तु इसका अर्थ यह है कि जब हम मैत्री के लिए आगे बढ़ें, जैसा कि इधर महीने भर से हम बढ़ रहे हैं,

तो दूसरे पक्षवालों का भी कर्तव्य है कि वे आगे बढ़ कर इससे मिलें। यह नहीं कि मैत्री का उत्तर वे घृणा से दें।"

इसके अतिरिक्त लॉर्ड स्टेनली ने और कुछ ऊट-पटाँग बातें भी कही थीं, मगर यहाँ पर मैं उनका उल्लेख करना नहीं चाहता। उनके उत्तर में मेजर ग्राहम पोल ने जो कुछ कहा था, उसी को हम नीचे देते हैं:—

"बहिष्कार, हमारी हिन्दुस्तान के प्रति जो नीति रही है, उसी का परिणाम है। भूतकाल में हमने हिन्दुस्तान के हितों को अपने हितों के आगे सदैव दबाया है। लङ्काशायर ने जो कल बोया था उसी की आज वह फसल काट रहा है। हिन्दुस्तान अपनी बहिष्कार-नीति द्वारा उन्हीं बातों का प्रयोग कर रहा है, जो कि हम उसे सिखला चुके हैं।"

बात यह है कि लङ्काशायर के पैर का जूता एक पैर से दूसरे में बदल गया है, जिसे वह काट रहा है। लङ्काशायर बहिष्कार का सामना करने में असमर्थ है। लेकिन अब चाहे जो हो जाय, लङ्काशायर और भारत का पुराना व्यापार किसी तरह भी पनप नहीं सकता। फिर भी इस देश के साथ समझौता कर लेना उसके लिए अच्छा ही होगा। ज्यों-ज्यों समय बीतता जा रहा है, त्यों-त्यों देश में स्वदेशी की लहर बढ़ती जा रही है, और त्यों ही त्यों अर्थ-शोषण भी रुकता जायगा। एक दिन वह शीघ्र आने वाला है, जब भारत एक गज़ भी कपड़ा बाहर से न मँगाएगा, चाहे वह मैनचेस्टर हो या ब्रेडफ़र्ड हो।

वह 'भयानक अस्त्र'

कमाण्डर केनवर्दी तक ने, जो कि अपने को भारत का मित्र कहते हैं और जब तब इस देश पर रक्षा का हाथ भी फेर दिया करते हैं, कहा है कि "बहिष्कार के भयानक अस्त्र का प्रयोग बराबर बढ़ता ही जा रहा है, आशा है, वह रोक दिया जायगा। हिन्दुस्तान के इस बहिष्कार में केवल ग़रीबों ने ही भाग नहीं लिया, बड़े-बड़े रक्त-शोषक पूँजीपतियों तक ने इसकी सहायता की है।"

यहाँ के पूँजीपतियों को उपरोक्त शब्दों द्वारा जो विशेषण प्रदान किया गया है उससे, आशा है कि बम्बई के मिल-मालिकों की आँखें खुल जायँगी। अब तक ये मिल-मालिक लङ्काशायर से गाँठ बाँध कर अपनी स्थिति-सुधार की बात सोचा करते थे। एक मिल-मालिक तो यहाँ तक बढ़ गया था कि वह, लङ्काशायर और हिन्दुस्तान के मिल-मालिकों का गुट बना कर हिन्दुस्तान के साथ जापान के बढ़ते व्यापार की प्रतिद्वन्दिता करने की सोच रहा था। लेकिन अब इनमें से बहुतों के होश ठिकाने आ गए हैं और वे अपनी भलाई के लिए भारत-मन्त्री और लङ्काशायर से बातचीत न करके, सीधे कॉङ्ग्रेस से ही बातचीत करना अधिक श्रेयस्कर समझने लग गए हैं।

हाउस ऑफ़ कॉमन्स के वक्ताओं में एक-एक कर सबने भारत पर यह बात जँचाने की कोशिश की है कि लङ्काशायर का उद्देश्य भारत के साथ केवल "न्यायोचित व्यापार" बनाए रखना है। कच्चा माल विलायत भेज कर कपड़ा बनवा लेने और उसे कुछ मुनाफ़ा देकर फिर से ख़रीद लेने में भारत का ही हित है। उनका कहना है कि वे लङ्काशायर या इङ्गलैण्ड के किसी अन्य भाग के लिए भारत का अर्थ-शोषण नहीं करना चाहते, वे केवल "न्यायोचित व्यापार" के इच्छुक हैं, भारत के योग्य हो जाने पर उसे अपनी आर्थिक समस्या के नियन्त्रण का अधिकार मिल ही जायगा। लिबरल दल के नेता, सर एच० सेमुएल के कथन में कुछ अधिक बुद्धिमानी प्रकट होती है। आपने कहा:—

"यदि इस देश वाले विदेशी माल को इस देश में न आने देना उचित और अपने देश के लिए समृद्धि-वर्धक समझते हैं, तो वे कैसे कह सकते हैं कि वही उपाय भारत के लिए उचित और हितकर न होगा? वास्तव में ऐसा कहने वाले अपने तर्क को, अपने आप ही काटते हैं।"

उपरोक्त उद्धरणों से इङ्गलैण्ड पर पड़े हुए भारतीय बहिष्कार के प्रभाव का पता चलता है। ब्रिटेन वालों पर लाठी-काण्डों या अन्य अनेक प्रकार से सताए जाने वाले नर-नारी-समूहों का प्रभाव नहीं पड़ा, प्रभाव पड़ा है उनकी ख़ाली होती हुई जेबों का। परिणाम-स्वरूप आज एक आर्त स्वर सुनाई दे रहा है कि हम और कुछ नहीं, केवल 'न्यायोचित व्यापार' चाहते हैं।

एकमात्र औषधि

हिन्दुस्तान को अब इस बात पर हर्गिज़ विश्वास नहीं हो सकता कि कच्चा माल बाहर भेज कर वहाँ से बना-बनाया माल ख़रीद लेना उसके लिए लाभदायक हो सकता है। अब वह अपना बुनाई-कताई का उद्योग इस देश से नष्ट नहीं होने देगा, वह अपने कुशल कारीगरों को रोज़ी-हीन करके उनकी दशा डावाँडोल नहीं बना देना चाहता। चर्ख़े व कर्घे का उद्योग, लङ्काशायर से प्रतियोगिता रहने पर भी, स्थिर रह सका, यह हमारी सफलता है। फिर भी जनसाधारण की भीषण ग़रीबी के कारण उसे अपने पूर्ण-विकास में उतनी सफलता नहीं मिली, जितनी कि मिलनी चाहिए थी। एक तो कर्घे बिल्कुल पुराने ढङ्ग के हैं, दूसरे मूलधन की कमी के कारण लोग अपना माल बाज़ारों में फैला नहीं पाते। मिल के उद्योग के साथ ही साथ, कर्घे-चर्ख़े का भी उद्योग देश के कोने-कोने में फैला देना आवश्यक है। कम से कम प्रत्येक ज़िले में कताई-बुनाई का एक-एक केन्द्र स्थापित हो जाना चाहिए। पूँजीवाद, जिससे मज़दूर-समुदाय डर रहा है, उसकी एकमात्र औषधि खद्दर और चर्ख़ा है।

विदेशी कपड़ों के बॉयकॉट का बोझ

"यह पिकेटिङ्ग का असर है, जो दिवाला निकल गया!!"

जङ्गल-सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा आन्दोलन तथा कॉङ्ग्रेस के अन्य प्रोग्रामों ने निस्सन्देह जनसाधारण को कठिन से कठिन यातना तथा उत्तेजना के अवसरों पर भी विनयन में रहना सिखलाया है, परन्तु हमारे मालिकों पर उसके द्वारा वह असर नहीं पैदा हुआ, जो कि हम चाहते थे। असर विदेशी बहिष्कार का पड़ा है। विदेशी वस्त्र-बहिष्कार के लिए हमें कुछ अधिक मूल्य नहीं देना पड़ा। केवल थोड़े से त्याग का मूल्य चुकाना पड़ा है, जिसके लिए, आशा है, प्रत्येक व्यक्ति अपना कुछ न कुछ भाग समर्पण करने के लिए तैयार रहेगा। अर्थशास्त्र का हमारे देश के साथ क्या सम्बन्ध है और उसका क्या महत्व है, इस बात को संसार ने आज पहले-पहल जाना है। राष्ट्रों की एक-दूसरे को कुचल देने वाली लड़ाइयों का मूल उद्देश्य सदैव अर्थ-लोभ ही रहा है। सभी लड़ाइयों का उद्देश्य कमज़ोर राष्ट्रों का अर्थ-शोषण रहता है। हिन्दुस्तान को पश्चिमीय ढङ्ग की पूँजीवाद वाली लड़ाई से सावधान रहना चाहिए।

भावी संग्राम के लिए तैयार रहो

स्वयं गाँधी जी तक का ख़्याल है कि क्षणिक सन्धि और गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स राष्ट्र के लिए निराशा-जनक साबित हो सकती हैं। कोई भी कॉङ्ग्रेस का नेता यह नहीं समझता कि इङ्गलैण्ड या भारत में बातें कर लेने से उद्देश्य की प्राप्ति हो जायगी। हमें अपनी पहले की घटनाओं से शिक्षा ग्रहण करना चाहिए और भविष्य के लिए अपनी तैयारी करनी चाहिए। अब भी समय है कि हम अपने आपको पूर्ण रूप से तैयार कर लें। हमें अपने भावी संग्राम का नक़्शा अभी से बना लेना चाहिए और अत्यन्त भयानक से भयानक प्रकार के दमन के लिए तैयार हो जाना चाहिए। परन्तु आगामी अहिंसा संग्राम में भी सब से ज़बरदस्त अस्त्र यही बहिष्कार ही रहेगा। शायद तब तक लङ्काशायर अपनी परिस्थिति को स्वाभाविक समझ कर उसे भी क़बूल कर लेगा। लङ्काशायर अपने किए का फल पा रहा है। उसने अपनी हृदयहीन अर्थ-शोषण नीति के द्वारा भारतीय विद्रोह का क्षेत्र तैयार कर दिया है। भारतीय आत्मा मर नहीं गई, महात्मा गाँधी के अनुपम नेतृत्व में आज भारत जाग्रत हो गया। आज दिन जितने अनुयायी महात्मा गाँधी के हैं, उतने किसी नेता के नहीं हैं। उनका प्रभाव सारे संसार में फैलता जा रहा है। युद्धों द्वारा त्रस्त संसार महात्मा जी की शिक्षाओं में शान्ति पा रहा है। संसार के दलित और मज़दूर-वर्ग के लिए उन्होंने एक नई ही आशा का सन्देश दिया है। उनके नेतृत्व में अवश्य ही भारत अपनी सब से बड़ी मनोभिलाषा की पूर्ति कर लेगा। राष्ट्र की अभिलाषाएँ चाहे अभी ही, या सब की सब न पूर्ण हों, परन्तु उसने वह मार्ग पा लिया है, जिस पर चल कर वह अपने उद्देश्य तक पहुँच जायगा। भारतीयों को अब आगे ही आगे बढ़े चलना चाहिए। रुकना बाधक है। पीछे लौटना भयानक है।

* * *

यूरोपीय संगठन और शस्त्र-निरोध के थोथे प्रयत्न

[डॉ० मथुरालाल शर्मा, एम० ए०, डी-लिट्]

यूरोपीय महासमर के दोनों पक्षों का दावा था, कि युद्ध का ध्येय स्वातन्त्र्य स्थापन और निरङ्कुश शासन का अन्त करना है। राष्ट्रपति विल्सन ने मित्र-शक्तियों को इस स्पष्ट शर्त पर सहायता दी थी कि युद्ध की सफल समाप्ति पर पर-तन्त्र राष्ट्रों को स्वतन्त्र कर दिया जावे और भविष्य में इस प्रकार के सर्व-संहारक समर की आवृत्ति को रोकने का कोई व्यावहारिक प्रयत्न किया जावे। इन्हीं शर्तों की पूर्ति के लिए पश्चिम एशिया तथा अफ्रिका के अनेक देश अस्थायी रक्षित राज्य बना कर भिन्न-भिन्न यूरोपीय राष्ट्रों के सुपुर्द किए गए और भविष्य में अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों का निबटारा करने के लिए तथा सार्वभौम कल्याण-साधन के लिए, एक राष्ट्र-सङ्घ (लीग ऑफ़ नेशन्स) की रचना की गई। गत बारह वर्षों में इस सङ्घ ने क्या कार्य किया, इसका उल्लेख किसी अगले लेख में किया जावेगा। यहाँ हम गत कुछ मास में इस सङ्घ ने जो कार्य किया है, उससे पाठकों को परिचित करना चाहते हैं।

आरम्भ में राष्ट्र सङ्घ का ध्येय था, विश्वहित-चिन्तन, परन्तु पिछले एक वर्ष से इसमें अन्तर आने लगा है। अब राष्ट्र-सङ्घ वास्तव में शनैः-शनैः श्वेत राष्ट्रों का सङ्घ बनता जाता है। अमेरिका पहिले से ही कुछ मतभेद के कारण इस सङ्घ में सम्मिलित नहीं हुआ था। अतः यों कहना चाहिए कि राष्ट्र-सङ्घ यूरोप का सङ्घ बनता जाता है। युद्ध के पश्चात् जब एशिया में अपूर्व जागृति होने लगी, रूम स्वतन्त्र हो गया और पश्चिमी एशिया के मुसलिम देशों में यूरोपीय आधिपत्य का विरोध होने लगा, ईरान और अफ़ग़ानिस्तान ने पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली, चीन में प्रजातन्त्र स्थापित हो गया और भारत ने स्वराज्य प्राप्त करने का दृढ़ निश्चय कर लिया, तदुपरान्त समस्त एशिया में यूरोप की आर्थिक साम्राज्य-नीति का विरोध होने लगा तब राष्ट्र-सङ्घ विश्व-हित के ध्येय से पीछे हटने लगा। यों तो पहिले भी राष्ट्र-सङ्घ ने पद-दलित जातियों के उद्धार के लिए कोई प्रयत्न नहीं किया था। यत्न करता भी कौन? राष्ट्र-सङ्घ के सदस्यों में प्रभावशाली भी वे ही राष्ट्र हैं जो स्वयं साम्राज्यवादी हैं। तो भी स्वास्थ्य, मादक द्रव्य-निषेध, व्यापार-नीति आदि में सङ्घ ने कुछ कार्य अवश्य किया था। परन्तु अन्त में एशिया की जागृति को देख कर यूरोप को चिन्ता होने लगी। इसलिए जब उसने देखा कि उसकी आर्थिक नीति, राजनैतिक चालें और सैनिक दाँव-पेंच एशिया में नहीं चल सकते तो उसको अपने सङ्गठन की सूझी। काडेनहोवे कालर्गी नामक एक यूरोपीय विद्वान ने यूरोपीय सङ्गठन पर एक सुन्दर ग्रन्थ की रचना की, जिसमें आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा सैनिक कारणों की मार्मिक मीमांसा करते हुए यूरोपीय सङ्गठन का आदर्श पाठकों के सामने रक्खा। धीरे-धीरे इस विचार का यूरोपीय देशों में प्रचार होने लगा और राजनीतिज्ञ ऐसे सङ्गठन की आवश्यकता अनुभव करने लगे।

एरिस्टाइड ब्रियण्ड नामक फ्रेञ्च राजनीतिज्ञ ने राष्ट्र-सङ्घ की दसवीं एसेम्बली के सामने, सितम्बर सन् १९२९ में, सर्व-प्रथम इस सङ्गठन की आवश्यकता बताई और मई सन् १९३० में, इस विषय का एक गम्भीर तथा विस्तृत मसविदा बना कर लीग की एसेम्बली के सामने विचारार्थ पेश किया। ग्यारहवीं एसेम्बली में इस मसविदे पर बहस की गई और यूरोपीय राष्ट्रों के २१ पर-राष्ट्र-सचिवों की एक कमिटी बना कर यह मसविदा, विचारार्थ तथा सम्मत्यर्थ, उसके सुपुर्द किया गया। गत १६ जनवरी को इन २१ सचिवों ने मिल कर इस पर विचार किया। इतने राष्ट्रों के सचिवों का एकत्र होकर सङ्गठन पर विचार करना वर्तमान इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है? सब ने तय किया कि जब यूरोप का प्रत्येक राष्ट्र इस सङ्गठन में सम्मिलित हो तभी यह योजना सफल हो सकती है, अन्यथा नहीं। अतः २० जनवरी को यह प्रस्ताव पास किया गया कि रूम (टर्की) और रूस को भी सङ्गठन में सम्मिलित होने के लिए निमन्त्रित किया जावे। ८ फ़रवरी को एसेम्बली ने यह विज्ञप्ति प्रकाशित की थी कि आगामी मई में जेनेवा नगर में एसेम्बली का अधिवेशन होगा और उसमें रूस तथा रूम भी सम्मिलित होंगे।

सर आर्थर साल्टर—आप लीग की तरफ़ से चीन की आर्थिक समस्या हल करने में सहायता दे रहे हैं।

यूरोपीय सङ्गठन का अन्तिम ध्येय उन आर्थिक समस्याओं को हल करना है, जिनका प्रत्येक यूरोपीय राष्ट्र को सामना करना पड़ता है। प्रत्येक यूरोपीय राष्ट्र अपने कला-कौशल को उन्नत करने के लिए तथा उनको रक्षित रखने के लिए बाहर से आने वाली चीज़ों पर इतना कर लगा देता है, जिससे वे देश में या तो घुसें ही नहीं और यदि घुसें तो इतनी महँगी बिकें कि लोग उनको ख़रीद ही न सकें और बाध्य होकर स्वदेशी वस्तुओं का ही व्यवहार करें। यह नियम पक्के माल के लिए ही नहीं, बल्कि गेहूँ और अन्य कच्चे माल के लिए भी है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि एक देश का माल दूसरे देश में कठिनता से खपता है। उधर व्यवसाय-प्रधान देशों में माल की उपज बढ़ती जाती है। जिन देशों में गेहूँ अधिक पैदा होता है, उनके सामने भी यही प्रश्न है। यदि वे चाहते हैं कि उनका गेहूँ कम कर पर अन्य देशों में घुस सके तो उनको भी अन्य देशों के माल पर अधिक कर नहीं लगाना चाहिए। पहिले तो यूरोप का पक्का माल एशिया और अफ्रिका में खपता था। परन्तु अब एशियाई देशों के भी व्यवसाय उन्नत होते जाते हैं और प्रायः अधिकांश देशों में यूरोप के माल का बहिष्कार सा होता जाता है, इसलिए यूरोप की आर्थिक समस्या और भी अधिक जटिल और भयावह हो गई है। इसका उपाय सोचने के लिए ही यूरोपीय सङ्गठन की योजना की गई है। यदि यह योजना सफल हो गई तो संसार की स्थिति पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, यह एक विचारणीय विषय है। यूरोप अपने पक्के माल को अन्यत्र अर्थात् एशिया या अफ्रिका में खपाने का सङ्गठित प्रयत्न करेगा और जाग्रत एशिया उसका सङ्गठित बहिष्कार करेगा—ऐसी स्थिति का काल्पनिक चित्र बड़ा ही भयप्रद है। यूरोपीय सङ्गठन की योजना पर तो २३ राष्ट्रों ने आगामी मई में विचार करने का निश्चय ही कर लिया है, परन्तु एशिया में भी ऐसे सङ्गठन का विचार शनैः-शनैः जाग्रत हो रहा है। स्वर्गीय देशबन्धु दास ने तो एशिया-सङ्घ का विचार देश के सामने रक्खा था और गत दिसम्बर में बनारस में होने वाले अखिल एशियाई शिक्षा-सम्मेलन में भारतवर्ष तथा चीन के प्रतिनिधियों ने इस विचार की व्यावहारिकता को ओर भी कई बार सङ्केत किया था।

रूम और रूस का इस सङ्घ में सम्मिलित होना एक विचित्र बात है। क्योंकि रूम का अधिकांश भाग एशिया में है और उसकी राजधानी भी एशिया में ही है। तुर्क लोग धार्मिक दृष्टि से मुस्लिम जगत के एक अङ्ग हैं। यूरोपीय सङ्गठन में सम्मिलित होने पर क्या वे काम पड़ने पर मुस्लिम जगत के हितों का विरोध करेंगे? यदि ऐसा किया तो इस्लाम के इतिहास में यह एक अभूतपूर्व घटना होगी। रूस का राज्य उत्तरी और पश्चिमी एशिया में फैला हुआ है। यहाँ पर अनेक स्वतन्त्र साम्यवादी राज्य उसने स्थापित कर दिए हैं, परन्तु ये अन्तर्राष्ट्रीय विषयों में स्वतन्त्र नहीं हैं। यूरोपीय सङ्गठन में सम्मिलित होने पर रूस इन एशियाई प्रदेशों से सम्बन्ध छोड़ देगा या बनाए रक्खेगा, यह भी एक राजनैतिक उलझन है। ऐसी ही समस्या भारतवर्ष के विषय में भी यूरोप के सामने उपस्थित है।

गत २२ जनवरी को इन २१ यूरोपीय राष्ट्रों के पर-राष्ट्र सचिवों ने इस आर्थिक स्थिति को सुगम बनाने के निमित्त तीन कमिटियाँ बैठाई हैं। पहली कमिटी गेहूँ की खपत तथा उस पर कर आदि लगाने के विषय में विचार करके अपनी रिपोर्ट देगी। इस कमिटी में ग्यारह

(शेष मैटर ३३वें पृष्ठ पर देखिए)

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

सीमा-प्रान्त के "गाँधी" और उनका सङ्गठन

सीमा-प्रान्त निवासियों के हृदय-सम्राट ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

सीमा-प्रान्त के "गाँधी" और उनका सङ्गठन

पेशावर की महिलाओं के राष्ट्रीय जुलूस का दृश्य

ख़ुदाई ख़िदमदगारों से घिरा हुआ सीमा-प्रान्त के 'गाँधी'—ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ—का निवास-स्थान (उतमानज़ई)

पेशावर के पठान नेताओं सहित—

श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

बाईं ओर से बैठे हुए—श्री० ख़ान अब्दुल अम्बर ख़ाँ; श्री० सय्यद लाल बादशाह; लाहौर के राष्ट्रीय पञ्जाबी नेता—श्री० के० सन्तानम; श्री० ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ और श्री० ख़ान अलीगुल ख़ाँ।

पाठकों को स्मरण होगा, अभी हाल ही में श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ साहब ने फ़र्माया है, कि आगामी राष्ट्रीय युद्ध में, जब कभी ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हुई, तो वे अहिंसात्मक युद्ध के लिए एक लाख ख़ुदाई ख़िदमतगार भेंट करेंगे।

वार्षिक सम्मेलन के अवसर पर अपने अनुयायियों (ख़ुदाई ख़िदमदगारों) सहित सीमा-प्रान्त के 'गाँधी'—श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

[आप ही बीच में शुद्ध खादी की पोशाक में खड़े हैं]

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

पेशावर के नौजवान भारत-सभा के नेता—
कॉमरेड अब्दुल रहमान राया

चारसद्दा के सुप्रसिद्ध बैरिस्टर—
ख़ान अहमद ख़ाँ साहब

पेशावर के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता—
कॉमरेड अलीगुल ख़ाँ

उतमानज़ई के राष्ट्रीय नेता—
लाला चरणदास जी

पेशावर के सुप्रसिद्ध बैरिस्टर और राष्ट्रीय नेता—
ख़ान अब्दुल अब्बर ख़ाँ

लून ख़बर (तहसील मर्दन) के नेता—
कॉमरेड ग़ुलाम मोहम्मद

सीमा-प्रान्त के 'गाँधी' ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ के
भाई—डॉक्टर ख़ाँ साहब

अपने लालकुर्ती वाले संरक्षकों के साथ सीमा-प्रान्त के
'गाँधी'—ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

डॉक्टर ख़ाँ के पुत्र-रत्न—कॉमरेड
सैदुल्ला ख़ाँ

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

पेशावर के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता—
कॉमरेड पीरबख़्श ख़ाँ

पेशावर के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता लाला निहालचन्द की
कन्या-रत्न—श्रीमती सरस्वती देवी

डेरा इस्माइल ख़ाँ के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता—
सरदार भगवानसिंह जी

पेशावर में निकलने वाले स्वर्गीय सरदार भगतसिंह के मातमी-जुलूस का दृश्य

पेशावर के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता—
कॉमरेड गुलाम रब्बानी सेठी

डेरा इस्माइल ख़ाँ के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता—
लाला प्यारे ख़ाँ

पेशावर के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता—कॉमरेड
अल्लाहबख़्श बर्क़ी

कुछ न हो ग़म, कुछ न हो परवाए-बरबादी मुझे, ख़ाक में मिल कर अगर मिल जाय आज़ादी मुझे ।

सब से कहते फिरते हैं, वह मेरी बरबादी का हाल; कर रही है इस तरह मशहूर बरबादी मुझे ।

आज़ादी

फिर हुआ है, ताज़ा शौक़े ख़ाना-बरबादी[१] मुझे,
देखिए ज़िन्दाँ[२] से कब मिलती है आज़ादी मुझे !
बदवे[३] फ़ितरत से है, ज़ौक़े ख़ाना-बरबादी मुझे,
दी है मेरी रूह ने, तालीमे आज़ादी मुझे ।
—"अज़ीज़" लखनवी

हो गया जिस वक्त कुछ एहसास[४] अपनी क़ैद का,
हर नफ़स[५] देने लगा, पैग़ामे आज़ादी मुझे।
और लोगों की गिरफ़्तारी मुहब्बत में हुई,
चश्मे[६] क़ातिल से मिला फ़रमाने[७] आज़ादी मुझे।
रूह क़ैदे जिस्म में "अख़गर" बहुत घबरा गई,
मुन्तज़िर[८] हूँ दे अजल[९] फ़रमाने-आज़ादी मुझे।
—"अख़गर" लखनवी

ज़िन्दगी गर ख़त्म हो, ज़िन्दाँ में तो परवा नहीं,
मर के तो मिल जायगी, दुनिया से आज़ादी मुझे।
—"इन्दर" गवालियारी

क्यों नज़र आए न बरबादी में, आबादी मुझे,
ज़र्रा-ज़र्रा दे रहा है, दरसे[१०] आज़ादी मुझे।
छोड़ कर दैरो[११] हरम[१२] के इस तिलस्मे-राज़ को,
और भी कुछ दूर ले चल जोशे आज़ादी मुझे।
—"जमाल" इटावी

रञ्ज दुनिया, फ़िक्रे उक़बा,[१३] हिज्रे[१४] जानाँ बेकसी,
या इलाही इनसे होगी कब तक आज़ादी मुझे।
—"शाकिर" गवालियारी

बेख़ुदीये[१५] शौक़े बातिन[१६] ने किया है मुझको गुम,
मिल गई दोनों जहाँ, से ख़ूब आज़ादी मुझे।
—"शैदा" देहलवी

ग़म का कुछ ग़म है, न शादी की है कुछ शादी मुझे,
है मगर मद्दे नज़र भारत की आज़ादी मुझे।
इम्बिसातो[१७] ख़ुर्रमी[१८] पैदा न हो क्यों क़ल्ब को,
ईद के दिन से है बढ़ कर यूमे[१९] आज़ादी मुझे।
—"ऐश" अमरोही

कुछ न हो ग़म, कुछ न हो परवाए-बरबादी मुझे,
ख़ाक में मिल कर अगर मिल जाय आज़ादी मुझे।
यह है तन में क़ैद, जब तक मैं भी हूँ दुनिया में क़ैद,
रूह निकलेगी तो मिल जाएगी आज़ादी मुझे।
फूल तो हैं फूल, मैं दो-चार तिनके चुन सकूँ,
बाग़े-आलम[२०] में नहीं, इतनी भी आज़ादी मुझे !
रूह जब से ख़ानए तन में मेरे दाख़िल हुई,
है कहाँ पहिला सा हासिल, लुत्फ़े-आज़ादी मुझे!
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—घर का बरबाद होना २—क़ैदख़ाना, ३—आदि ४—ध्यान ५—साँस ६—आँख ७—हुक्म ८—जोहना ९—मौत १०—सबक़ ११—मन्दिर १२—काबा १३—परलोक १४—प्रियतम का विरह १५—आपे में न रहना १६—अन्दरूनी १७—ख़ुशी १८—आनन्द १९—दिन २०—संसार ।

बरबादी

ख़ाना वीराँ साज़िए[२१] वहशत तमाशा वह करें,
क्या मुबारक हैं, मेरे सामाने बरबादी मुझे।
—"अज़ीज़" लखनवी

राज़ कुछ तख़लीक़[२२] का समझा, तो मैं समझा यहाँ,
लाई दुनिया में अदम[२३] से, मेरी बरबादी मुझे।
—"इन्दर शर्मा" माञ्झवी

मैं अदम में, ऐ अदम वाले बहुत मसरूर[२४] था,
खींच लाई अर्सए[२५] हस्ती में बरबादी मुझे।
—"जमाल" इटावी

हो गई मेरे लिए तर्क़े-सुकूँ[२६] राहत-रसाँ[२७],
रास आई है तमन्नाओं की बरबादी मुझे।
—"शैदा" देहलवी

मौत ने आकर दिया, पैग़ामे तजदीदे[२८] हयात[२९],
वजह तसकीं हो गई, तकमीले[३०] बरबादी मुझे।
—"मुनौवर" देहलवी

आप जो भूले हुए हैं, उनसे यह कह दीजिए,
मञ्ज़िलों से आशना, करती है बरबादी मुझे।
—"कामिल" इटावी

मेरी बरबादी को काफ़ी है यही जोशे जुनूँ,
ढूँढ़ने जाना है क्या, सामाने बरबादी मुझे।
सब से कहते फिरते हैं, वह मेरी बरबादी का हाल,
कर रही है इस तरह, मशहूर बरबादी मुझे।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

शादी

एक ज़माना था कि यह दिल पर असर[३१] अन्दाज़ थे,
अब तो हैं अलफ़ाज़[३२] बे-मानी ग़मों शादी[३३] मुझे
—"मुनौवर" देहलवी

बाँधे बैठा हूँ, कफ़न सर से वतन के वास्ते,
झेलना आफ़ात[३४] का है बायसे शादी मुझे !
—"अरमान" कानपुरी

इस क़दर ख़ूगर[३५] जफ़ाएँ सहते-सहते हो गया,
ख़ार[३६] ग़म भी बन रहा है अब गुले[३७] शादी मुझे!
—"इन्दर शर्मा" माञ्झवी

दिल से ऐ "बिस्मिल" फ़िदा मैं उरूसे[३८] मर्ग[३९] पर
बस इसी से तो पसन्द आती नहीं शादी मुझे !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

२१—दीवानगी से भरा हुआ २२—पैदा होना २३—दूसरी दुनिया २४—आनन्द २५—संसार २६—चुप रहना २७—लाभदायक २८—नया २९—ज़िन्दगी ३०—पूरा होना ३१—असर डालने वाले ३२—शब्दों ३३—ख़ुशी ३४—दुःख ३५—आदी ३६—काँटा ३७—फूल ३८—दुलहिन ३९—मौत ।

फ़रियादी

आज निकला हूँ किसी महफ़िल से यूँ मायूस[४०] मैं,
हिल गए हफ़्त[४१] आस्माँ देखा जो फ़रियादी मुझे।
—"अज़ीज़" लखनवी

कर दिया है ख़ामुशी ने ज़ब्त का आदी मुझे,
अब नहीं कहते हैं, फ़रियादी भी, फ़रियादी मुझे !
—"मुनौवर" देहलवी

यह नहीं मुमकिन, कि मैं मिन्नत[४२] कशे अग़ियार हूँ,
तुम समझते हो तो समझे जाव फ़रयादी मुझे !
—"ऐश" अमरोही

फूल की तर[४३] दामनी पर ही नहीं कुछ मुनहसिर,
बाग़बाँ भी रो दिया, देखा जो फ़रियादी मुझे।
—"महवी" अम्बालवी

है पसन्द इस वजह से इज़हारे बरबादी मुझे,
जानता है कोई अपना, ख़ास फ़रियादी मुझे !
हश्र[४४] में भी दीद के क़ाबिल हैं उसकी शोख़ियाँ,
वह बुलाता है तो कह कर, अपना फ़रियादी मुझे !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

आबादी

छोड़ कर शहरे ख़मोशाँ[४५] जाऊँ किस ख़लवत में अब,
लो यहाँ भी तो नज़र आती है, आबादी मुझे।
एक मजलिस करके मैंने दिल का मातम कर लिया,
जब नज़र आई कहीं थोड़ी सी आबादी मुझे।
ढूँढ़ने निकला हूँ, मैं गोरे[४६] ग़रीबाँ के निशाँ,
देखना है एक नज़र फ़िहरिस्ते आबादी मुझे।
—"अज़ीज़" लखनवी

ऐ दिले नाशाद, चल कोहो[४७] बयाबाँ की तरफ़,
काटने को दौड़ती है अब तो आबादी मुझे।
—"शाकिर" गवालियारी

अपने ही रङ्गीं ख़यालों में है, आज़ादी मुझे,
मस्त रखती है, ख़ुदी में दिल की आबादी मुझे।
—"शैदा" देहलवी

हर तरफ़, हर सिम्त, है मजमा ग़मो अन्दोह का,
दिल की दुनिया में नज़र आई यह आबादी मुझे।
चश्मे[४८] इबरत में, जो बरबादी की है ज़िन्दा नज़ीर,
याद है शहरे ख़मोशाँ की वह आबादी मुझे।
मैंने जाना मञ्ज़रे गोरे ग़रीबाँ देख कर,
हासिले दुनिया है, यह थोड़ी सी आबादी मुझे।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

४०—निराशा ४१—सात ४२—एहसान लेना ४३—गुनाह ४४—प्रलय ४५—क़ब्रिस्तान ४६—दुखियों की क़ब्रें ४७—पहाड़ी ४८—शिक्षा लेने वाली आँख ।

साहित्य का सपूत

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—२ ; दृश्य—१

टेसू—तो आप हँसते क्यों नहीं ?

साहित्यानन्द—जब तू हँसाएगा तब तो हँसूँगा।

टेसू—मैं कैसे हँसाऊँ ?

साहित्यानन्द—यह मैं नहीं जानता। चाहे जैसे ही तुझे हँसाना पड़ेगा, अन्यथा तेरा अपराध क्षमा नहीं हो सकता।

टेसू—यह बड़ी मुश्किल है। रुलाना कहिए तो अभी यह कह कर कि आपका कोई मर गया है, रुला दूँ। गुस्सा दिलाने को कहें तो ऐसी गाली दूँ कि आप लड़ने लगें। क्योंकि यह सब तो आसान मालूम होते हैं, मगर हँसाना बड़ी टेढ़ी खीर है। समझ में नहीं...

साहित्यानन्द—अबे चुप चुप चुप चुप चुप—चुप !

टेसू—मगर क्यों क्यों क्यों क्यों क्यों क्यों—क्यों ?

साहित्यानन्द—एक तो कुछ अनाड़ियों ने हास्य को साहित्य में स्थान देकर साहित्य की दुर्दशा योंही कर डाली है, उस पर तेरी यह वार्ता वह जो कहीं सुन लेंगे, तो हास्य को साहित्य का सबसे कठिन अङ्ग मान बैठेंगे। समझा ?

टेसू—जी हाँ, कठिन है। अब मैं रोटी न खा आऊँ ?

साहित्यानन्द—तेरी ऐसी-तैसी। मैं कहता क्या हूँ और कम्बख़्त—उहुँक—दुष्ट समझता क्या है ? बचा, बिना मुझे हँसाए तू यहाँ से गमन नहीं कर सकता।

टेसू—तो मैं हँसाऊँ कैसे ? क्या आप बच्चा हैं कि लू लू लू लू करके हँसा दूँ ?

साहित्यानन्द—अबे तो थोड़ी देर—उहुँक—विलम्ब के लिए वही समझ ले। हँसा तो किसी प्रकार से।

टेसू—तो फिर हँसिए। हँसो मुन्ना, हँसो मुन्ना, लू लू लू लू। (ताली बजा कर कभी मुँह बिचकाता और कभी चोंच दिखाता हुआ) ऊ—ऊ—ऊ—ऊ—

साहित्यानन्द—(एकाएक गुस्से में आकर) आयँ ? आयँ ? यह क्या ? तू मुझे मुँह बिचकाता है। सुअर का बच्चा—उहुँक—सुअर का शिशु कहीं का ? मारते-मारते मुख अपभ्रंश कर दूँगा। इसीसे मैं अपने नातेदारों को कभी नौकर नहीं रखता था। साले भिखमङ्गे बन कर आते हैं और काम करने को कहो तो मुँह बिचकाते हैं। तेरी ऐसी-तैसी करूँ।

टेसू—अरे ! आप ही ने तो कहा था कि मुझे किसी तरह से हँसाओ, तब मैं (मुँह बिचका कर और चोंच दिखा कर) इस तरह हँसा रहा था।

साहित्यानन्द—इस तरह—उहुँक—इस प्रकार हँसाया जाता है, उल्लू के पट्ठे ?

टेसू—तब किस तरह हँसाऊँ ! आप ही बताइए।

साहित्यानन्द—कोई हँसी की बात कह कर हँसाओ।

टेसू—अच्छा।

साहित्यानन्द—अब ताकता—उहुँक—अवलोकता क्या है ? कहता क्यों नहीं ?

सैनिकों से—

[श्री० शोभाराम जी धेनुसेवक]

बढ़े चलो राष्ट्रीय समर में, सैनिक बन कर।
पीठ दिखाना नहीं, अड़ो अरि सम्मुख तन कर॥
देखो तुम पर वार करेंगे, बैरी हन कर।
सह लेना तुम उन वारों को, प्रमुदित मन कर।

हिंसा का प्रतिकार, अहिंसा से दिखलाना।
होगा तुमको विजय, शुभात्मिक बल से पाना॥
नहीं झिझकना पूर्ण विजय पाकर ही आना।
या माता के लिए वहीं सुख से मर जाना॥

मातृ-भूमि स्वाधीन बने, बस यही ध्यान हो।
पावें हम जो विजय, दिव्य गौरव निधान हो॥
हम भी रखते मान, हमारा पद समान हो।
पल भर भी परतन्त्र न अब हिन्दोस्तान हो॥

* * *

टेसू—अच्छा कहता हूँ। आप हँसने के लिए बिल्कुल तैयार हो जाइए।

साहित्यानन्द—यह ले (हँसने की तैयारी में मुँह खोल कर आ—आ करता है) आ—आ—हा—

टेसू—वाह ! वाह ! (एकाएक हँस पड़ता है) आहाहाहाहा ! आहाहाहाहा ! उफ़ ओ !

साहित्यानन्द—अरे ! तू फिर हँसने लगा ?

टेसू—कहता हूँ, कहता हूँ। सब्र कीजिए। ज़रा हँसी रुक ज—ज—जाए। आहाहाहा ! (हँसता है)

साहित्यानन्द—अच्छा, हँसता है तो हँस डाल। परन्तु धीरे-धीरे, ज़रा—उहुँक—तनिक रुक-रुक कर, ताकि मैं भी देख कर अनुकरण कर सकूँ। (नक़ल करने की कोशिश करता हुआ) आहा-आ—कैसे ? अबे इतनी शीघ्रता से नहीं। खण्ड-खण्ड करके हँस। फिर नहीं सुनता ?

टेसू—आहाहाहा ! बाप रे बाप, दम फूल गया।

साहित्यानन्द—हँस चुका ? अच्छा तो अब मेरे हँसने के लिए हास्य-वार्ता कह।

टेसू—कहता हूँ। हाँ, आपका—मगर मिहरबानी करके इस तरह मुँह फैला कर मुझे न घूरिए, नहीं फिर हँसी आजाएगी। ऊपर ताकिए ऊपर—मेरी तरफ़ नहीं। हाँ, अब ठीक है। अच्छा कहता हूँ।

साहित्यानन्द—हास्य-वार्ता है न ?

टेसू—बिल्कुल !

साहित्यानन्द—शुद्ध हास्यरस की ?

टेसू—शुद्ध-पुद्ध आप जानिए। मैं कहता हूँ। बस अब हँसने के लिए तैयार हो जाइए। हाँ, आसमान की ओर देखिए।

साहित्यानन्द—तैयार हो गया।

टेसू—सुनिए। आपका मुँह ..

साहित्यानन्द—(ऊपर मुँह उठाए हुए) अच्छा ?

टेसू—बिल्कुल...

साहित्यानन्द—अच्छा। परन्तु हँसी नहीं आई।

टेसू—घबड़ाइए नहीं, अब आती ही है। हाँ, आपका मुँह बिल्कुल...

साहित्यानन्द—(मुँह ऊपर किए हुए) आगे कह आगे। मैं हँसने के लिए मुँह फैलाए तैयार हूँ।

टेसू—बनबिलाव सा है।

साहित्यानन्द—अबे मेरा मुँह ?

टेसू—हाँ-हाँ, आप ही का।

साहित्यानन्द—(गुस्से में मारने को झपटता हुआ) तेरी ऐसी-तैसी, सूअर का बच्चा कहीं का, तुझे मैं कच्चा चबा जाऊँ।

टेसू—(पिछड़ता हुआ) झूठ नहीं सच। आप ख़ुद देख लीजिए।

साहित्यानन्द—अच्छा दिखा साले। न हुआ तो बताता हूँ।

टेसू—हाँ-हाँ, देख लीजिए। मैं झूठ थोड़े ही कहता हूँ। यहाँ से देखिए जहाँ मैं हूँ।

साहित्यानन्द—(जहाँ टेसू खड़ा था वहाँ जाकर) कहाँ है मेरा मुँह बनबिलाव सा ? दिखला।

टेसू—अब दिखलाऊँ कैसे ? आप तो अपने साथ अपने मुँह को भी लेते आए। अच्छा अब इधर आकर देखिए, और ईमान-धरम से आप ही कहिए कि है न बनबिलाव सा। मगर हाँ, यह क्या ? अपना मुँह वहीं छोड़ कर आइए, तब दिखलाई पड़ेगा।

साहित्यानन्द—अबे यह कैसे हो सकता है ?

टेसू—तब मेरी बात मान लीजिए।

साहित्यानन्द—(झपटता हुआ) परन्तु प्रथम तुझे भली-भाँति ताड़न कर लूँ, तब सत्य-असत्य का निर्णय होगा।

टेसू—(भागता हुआ) हाँ-हाँ, इस तरह मुझ

पर न झपटिए, नहीं तो आपको हँसाने के लिए जो अभी-अभी एक बढ़िया तरकीब सोची है, उसे भूल जाऊँगा।

साहित्यानन्द—(रुक कर) हाँ ? अच्छा वह क्या है, शीघ्र बता।

टेसू—आप उधर मुँह करके खड़े होइए।

साहित्यानन्द—यह ले।

(टेसू पीछे से साहित्यानन्द की कमर गुदगुदाता है। और साहित्यानन्द एकाएक बड़े ज़ोरों से हँस पड़ता है।)

साहित्यानन्द—आहाहाहाहा ! आहाहाहा ! यह युक्ति नि-नि-निसन्देह अनुपम है। आहाहा ! मेरा हास्य-भण्डार खु-खु-खुल गया। आहाहाहा ! अरे बस-बस-बस-बस। आहाहाहा ! (भागता है)

टेसू—(गुदगुदाता हुआ पीछा करता है) थोड़ा और, ताकि आपका भण्डार फिर कभी खाली न होने पावे।

साहित्यानन्द—(भागता हुआ) नहीं-नहीं, बहुत हो गया बहुत। आहाहाहा। आहाहा ! बस, अरे ! अब लिख लेने दे। आहाहाहा !

टेसू—हाँ-हाँ लिखिए। मना कौन करता है ?

साहित्यानन्द—(काग़ज़, क़लम, दावात के पास बैठ कर लिखने का उद्योग करता हुआ बीच-बीच में टेसू की ओर चौंक कर देखता जाता है।) देख, कहीं गुद-गुदा न देना। हाँ, लेखनी महारानी अब हास्य की धारा बहाओ। (ज़ोर लगाता हुआ) हुँहुँ ! हुँहुँ !

टेसू—अरे ! यह हुँहुँ क्या ?

साहित्यानन्द—चुप रह। हास्य निकालने के लिए ज़ोर—उहुँक—बल लगा रहा हूँ। हाँ, चल-चल-चल। अरे ! लेखनी तो चलती ही नहीं। ओ टेसुआ। टेसुआ ! टेसुआ !

टेसू—जी, कहिए कहिए कहिए !

साहित्यानन्द—अबे जल्दी से ज़रा—उँह—तनिक और तो कुरु भर देना।

टेसू—क्या मसाला खाली हो गया ? अच्छा अभी लीजिए, अच्छी तरह से भरे देता हूँ ! (साहित्यानन्द को गुदगुदाता है।)

साहित्यानन्द—आहाहाहाहा ! हीहीहीही ! बस-बस अरे ! उहुहुहुहु ! अबे ठहर-ठहर-ठहर। (लिखने की कोशिश करता है।)

टेसू—वाह ! यह तो लिखने का अजब निराला ढङ्ग है। एक आदमी जब इधर से गुदगुदावे, तब उधर क़लम चले। ऐसा तो मैंने न कभी देखा था और न सुना। मैंने भी दूसरी किताब तक पढ़ा था, मगर कभी किसी ने मुझे इस तरह लिखना-पढ़ना नहीं सिखाया।

साहित्यानन्द—अबे बक-बक मत कर।

टेसू—क्या लिख चुके आप ?

साहित्यानन्द—नहीं, अभी तो एक शब्द भी नहीं निकला। हुःहू ! हुःहू ! अरे ! फिर भी कुछ नहीं, जानो लेखनी में मोर्चा लग गया है।

टेसू—जी हाँ, यही बात है। नाच न जाने आँगन टेढ़।

साहित्यानन्द—(क़लम देता हुआ) अच्छा इसे तनिक साफ़—उहुँ ! शुद्ध तो कर दे, तो एक बार किटकिटा कर सारा बल लगा दूँ। यदि तब भी कुछ न निकले तो समझूँगा कि हास्य हम ऐसे उच्चकोटि के साहित्य-मर्मज्ञों के लिखने का पदार्थ नहीं है।

टेसू—(क़लम साफ़ करता हुआ) बेशक। अङ्गूर खट्टे हैं।

साहित्यानन्द—इसीलिए इसे हम लोगों को अनादर की दृष्टि से अवलोकना चाहिए और इसे अश्लील, अशुद्ध, अपवित्र, चरित्र-नाशक, कुत्सित प्रभावजनक इत्यादि-इत्यादि बताना चाहिए।

टेसू—हाँ-हाँ, सही है, खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे।

साहित्यानन्द—और यह भी कहना चाहिए कि हमारे साहित्य में शुद्ध हास्य-रस का बड़ा अभाव है और जिसे लोग हास्य मानते भी हैं, उसमें अधिकांश अंश तो अनुवादित है। ताकि हास्य का मान न बढ़े।

समाधि-लेख

(Epitaph)

[श्री० देवीप्रसाद जी गुप्त, 'कुसुमाकर' बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

यदि ज़िन्दगी में था मुझे तो,
बस यही अभिमान था।
पैदा हुआ जिस देश में,
वह देश हिन्दुस्तान था॥
जिस देश में गाँधी सरीखे,
देव के दर्शन किए।
वह दिव्य-वाणी नित्य उसकी,
सुन सके, जब तक जिए॥
उसकी अहिंसा सैन्य का मैं,
क्षुद्र सेवक एक था।
जिसकी विजय थी मार खाना,
मृत्यु ही अभिषेक था॥
मैं लाठियों की मार खाकर,
हो गया बलिदान हूँ।
बारह बरस का दुधमुँहा हूँ,
आर्य की सन्तान हूँ॥

* * *

टेसू—जी हाँ, घोड़ा परखें भवन चमार।

साहित्यानन्द—जानता है, क्यों हमें ऐसा करना चाहिए ? इसलिए कि इस बार हम भी साहित्य-सम्मेलन के सभापति हो जाएँ। डेढ़-डेढ़ हाथ के शब्द प्रयोग करके भाषा को दुर्गम्य बना ही रहा हूँ, बस जहाँ हास्य पर भी तुच्छ दृष्टि डालना आरम्भ कर दिया, तहाँ तो सभा-पतित्व मिल ही जायगा।

टेसू—क्यों नहीं। अन्धेर-नगरी चौपट राजा।

साहित्यानन्द—अबे तू प्रत्येक वार्ता के अन्त में क्या बुदबुदा देता है, जो बुद्धि ग्रहण नहीं कर पाती।

टेसू—यह तुर्कीबतुर्की है सरकार, न आपकी मैं समझूँ न मेरी आप। अच्छा लीजिए क़लम, अब लिखिए-लिखिए।

साहित्यानन्द—लिखता हूँ बे। कोलाहल क्यों करता है ? यह हास्य है, कुछ ठट्ठा नहीं। इसको तेरे बाप भी नहीं लिख सकते।...अच्छा, तनिक और तो गुदगुदा दे।

(भीतर के दरवाज़े पर थपथपी)

टेसू—वह देखिए, भीतर का दरवाजा कोई खुलवाना चाहता है।

साहित्यानन्द—(क़लम फेंक कर) धत् तेरे की, फिर विघ्न पड़ गया। मत खोल। वही राँड होगी—उहुँक—विधवा होगी चपला की माँ।

(बाहर के द्वार अर्थात दूसरी ओर थपथपी)

टेसू—अरे ! अब इधर कोई खटखटा रहा है।

साहित्यानन्द—यह तो बाहर का द्वार है। जानो कोई मिलने वाला आया। ठहर जा, लेई की प्याली छिपा दे।......अब रोशनदान से झाँक के देख कि खद्दरधारी है या नौकरशाही।

टेसू—कैसे देखूँ ? बहुत ऊँचा है।

साहित्यानन्द—मेरी ग्रीवा पर आरूढ़ होकर देख। (टेसू को अपनी गर्दन पर सवार करा कर उठाता है।) देखा ?

टेसू—हाँ।

साहित्यानन्द—(टेसू को उतार कर) बता, वह क्या पहने है, देशी या विलायती ?

टेसू—यह हम क्या जानें ?

साहित्यानन्द—तब देखा क्या अपना मुण्ड ? आ फिर आरूढ़ हो। (टेसू को गर्दन पर फिर चढ़ाता है।)

(द्वार पर फिर खटखटाहट)

टेसू—(साहित्यानन्द की गर्दन पर से रोशनदान की ओर) ठहरिए, इत्तला मिल गई है। फ़ुरसत मिलने पर बुलाहट होगी। (साहित्यानन्द से) ठीक कहा न ?

साहित्यानन्द—(टेसू को उतार कर) हाँ। अच्छा बोल क्या पहने है ?

टेसू—बहुत बढ़िया कपड़ा है।

साहित्यानन्द—तब विदेशी होगा। कोई नौकरशाही जान पड़ता है। अच्छा देना तो मेरा सम्पादकीय अँगरखा विलायती सासनलेट वाला।

(टेसू मेज़ के नीचे से एक चमकदार कुरता देता है, जिसमें खद्दर का अस्तर लगा हुआ है। उसे साहित्यानन्द जल्दी-जल्दी पहनता है)

टेसू—(साहित्यानन्द के कुर्ता पहनने के बाद) मगर उसका कपड़ा ऐसा थोड़े ही है। वह तो बहुत बढ़िया खद्दर मालूम होता है।

साहित्यानन्द—उल्लू कहीं का। तब पहिले क्यों नहीं बताया कि खद्दरधारी है राम ! राम ! (कुर्ते को उतारता है और फिर उसी को उलट कर पहनता है और जेब से गाँधी टोपी निकाल कर पहनता है।)

टेसू—मैं समझा यह रूमाल है।

साहित्यानन्द—अबे यह दोनों है। सासन-लेट की ओर यह रूमाल का काम देता है और खद्दर की ओर टोपी। देख, मैं अब तो देश का सपूत बन गया।

टेसू—हाँ, इसमें क्या शक है। मगर वह देश का सपूत नहीं, कोई सपुतनी सी जान पड़ती है।

(द्वार पर खटखटाहट)

साहित्यानन्द—क्या वह कोई स्त्री है ?

टेसू—हाँ, ऐसी ही कुछ दिखाई पड़ी थी। मगर इस वक्त ठीक याद नहीं।

साहित्यानन्द—हाय! हाय! तब इतना समय तूने क्यों नष्ट किया मूर्ख? और अब कहता है कि ठीक याद नहीं। चल इधर आ और आँखें फाड़ कर भली-भाँति देख। (गर्दन पर फिर सवार करा कर उठाता है।) बोल, स्त्री है या पुरुष?

टेसू—हमें तो न स्त्री न पुरुष, बल्कि कुछ गपड़चौथ सा दिखाई पड़ता है। और ऊपर उठाइए तो साफ़ दिखाई पड़े।

साहित्यानन्द—तेरी ऐसी-तैसी! जी चाहता है, यहीं से पटक दूँ।

टेसू—देखा-देखा, स्त्री है स्त्री।

साहित्यानन्द—(टेसू को उतार कर जल्दी-जल्दी कुर्ता-टोपी उतार कर मेज़ से नीचे फेंकता है और वहाँ से एक कोट निकाल कर पहनता हुआ) यह कोई लेखिका होगी। पहिले इनके लेख आते थे, तब चित्र, अब स्वयं यह लोग आने लगीं। धन्य भाग! इतने दिवसों पर्यन्त मेरी आशा सफल होती देख पड़ी। अब अवश्य ही मैं किसी साहित्य-पण्डिता से अपना पुनर्विवाह कर सकूँगा। क्योंकि जितनी सुगमता से सम्पादकों को उच्च शिक्षिता रमणियाँ मिल सकती हैं, उतनी अन्य किसी को नहीं, इसी उद्देश्य से तो हमने यह पत्र निकाला है। परन्तु हाय! वह कहीं चली न जाए। अरे! जल्दी से मेरा टोप निकाल टोप, इसी दिन के लिए उसे आज ही मोल लिया है। क्योंकि टोप-कोट में सुन्दरता द्विगुण हो जाती है। ठहर जा, जब मैं कुर्सी पर सम्हल कर बैठ जाऊँ। तब इसे पहनाना। (कोट पहन कर कुर्सी पर बैठता है।)

टेसू—पतलून तो आपने पहनी ही नहीं।

साहित्यानन्द—उसकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि टाँगें तो मेज़—उहुँक—उच्च चौकी के नीचे छिपी—उँह—गुप्त रहेंगी। हाँ, पहिले मेरा कोष यहाँ रख दे। यद्यपि अब तो भाषा बोलने का इतना अभ्यास हो गया है कि कोष की आवश्यकता नहीं पड़ती; तथापि अस्त्र-विहीन रहना उचित नहीं। (कुर्सी पर से उठ कर) हाँ, बहुत सी स्त्रियों के चित्र जो मैंने ऐसे शुभ अवसरों के लिए एकत्रित कर रक्खे हैं, उन्हें फैला कर रख दूँ, जिसमें वह जाने कि मैं लेखिकाओं का कैसा उपासक हूँ। (ऑफ़िस-बक्स में से कई फ़ोटो निकाल कर मेज़ पर फैलाता है।)

(द्वार पर फिर खटखटाहट)

साहित्यानन्द—(कुर्सी पर बैठ कर) अब शीघ्रता के साथ मुझे टोप पहना दे। क्योंकि कुर्सी टूटी होने के कारण दोनों हाथों से इसे ग्रहण किए रहना आवश्यकीय है।

टेसू—(टोप साहित्यानन्द की खोपड़ी पर बेढ़ा करके पहनाता हुआ) अरे! इसमें तो आपकी खोपड़ी ही नहीं जाती। (टोप के ऊपर दो-चार घूँसे जमा कर) टस से मस नहीं होती।

साहित्यानन्द—प्रातःकाल को जब इसे मैंने ख़रीदा—उहुँक—क्रय किया था तब तो मेरा मुण्ड उसमें घुस गया था।

टेसू—इतनी देर में आपकी खोपड़ी बढ़ गई होगी। अच्छा ठहर जाइए। (दौड़ कर एक कोने से बसुला लाता है।)

साहित्यानन्द—अबे यह क्या करेगा?

टेसू—ज़रा सी आपकी खोपड़ी छील दूँ। तब यह टोप मज़े में बैठ जाएगा। हाँ-हाँ, इस तरह मत चौंकिए, कुर्सी टूटी हुई है।

साहित्यानन्द—नहीं बे, ऐसा कहीं अनर्थ न कर देना। वह ले, द्वार फिर भड़भड़ाने लगा। बसुला नीचे फेंक।

(टेसू बसुला मेज़ के नीचे रखता है। द्वार पर लगातार भड़भड़ाहट, उसके बाद सरला का गुस्से में आना)

टेसू—जानो भड़भड़ाहट से सिटकिनी खुल गई।

सरला—उधर भी बन्द और इधर भी बन्द। और घण्टों भड़भड़ाने पर भी कोई नहीं सुनता। आख़िर हो क्या रहा है यहाँ? (मेज़ पर तस्वीरों को देख कर ठिठक पड़ती है। अरे! यह क्या?

साहित्यानन्द—(सरला को देख कर बड़े ज़ोर से चौंकता हुआ) यह चुड़ैल यहाँ कहाँ.........

(चौंकने में कुर्सी के साथ आप भी गिर पड़ता है) अरे! बाप रे बाप! हाय! दादा रे दादा! सर फूट गया।

टेसू—यह आप क्या ग़ज़ब करते हैं। आप साहित्य-सम्मेलन के सभापति होने वाले हैं, भाषा में रोइए भाषा में, बाप-बाप नहीं, बल्कि कहिए अरे! पिता रे पिता! हाय पितामह रे पितामह! मुण्ड फूटम।

साहित्यानन्द—(काँख-कूँख कर उठता हुआ) चुप बदमाश! (सरला से) तू यहाँ क्या करने फट पड़ी?

सरला—(अनसुनी करती हुई, तस्वीरें को दिखाती हुई) यह किन नानियों की तस्वीरें हैं। द्वार बन्द करके इन्हीं की पूजा की जा रही थी। क्यों, घिग्घी क्यों बँध गई? बोलते क्यों नहीं?

टेसू—ज़रा खोपड़ी तो सहला लेने दीजिए।

साहित्यानन्द—(अलग) हाय! हाय! यह तो बड़ा अनर्थ हुआ, जो इस दुष्टा की इन चित्रों पर कुदृष्टि पड़ गई। अब यह आकाश-पाताल एक कर देगी। क्या करूँ?

(चुपके-चुपके खसकता है)

सरला—बुढ़ापे में अब तुम्हें यह शौक़ पैदा हुआ? उधर कहाँ खसके जाते हो?

साहित्यानन्द—(बिना देखे हुए) अभी आता हूँ।

सरला—पहिले मुझे बताते जाओ कि यह किन चुड़ैलों की तस्वीरें हैं, तब कहीं जाना।

साहित्यानन्द—(जल्दी-जल्दी जाता हुआ) पेट बहुत गड़बड़ा रहा है।

(भाग जाता है)

सरला—(तस्वीरों को बटोरती हुई) तुम्हारे पेट की गड़बड़ाहट अभी ठीक करती हूँ। तुम भाग कर जाओगे कहाँ?

(तस्वीरें लेकर पीछा करती हुई जाती है)

टेसू—आहाहाहाहा! यह अच्छा उलटे लेने के देने पड़ गए। चलो मैं भी चल कर ज़रा इसका तमाशा देखूँ।

(जाता है)

(क्रमशः)

* * *

रजत-रज

[श्री० लक्ष्मीनारायण जी अग्रवाल]

ऐ कारुणिक हृदय! निर्मम से ममता की करुण कहानी कह कर तू अज्ञान क्यों बनता है?

❀

बलवान प्रायः धैर्यवान होता है।

❀

निर्बल सबल द्वारा सताए जाने से सबल होता है।

बालू के कण जल के साथ बहते-बहते नदियों द्वारा समुद्र में पहुँच, जल-गर्भ के भीतर पर्वत का निर्माण करते हैं।

❀

मनुष्य के मुख-मुकुर में उसकी चित्त-वृत्तियाँ झलकती हैं।

❀

कौमुदी से सिक्त जलाशय के तट पर प्रेम-मुग्ध कवि अर्द्ध-निमीलित नेत्रों से कभी स्मृति-पट पर और कभी चन्द्र-किरणों में हृदय के देवता की मूर्ति खोजता है।

❀

उषा अपने प्रियतम सूर्य के स्वागत में लीन होकर अपने अस्तित्व को मिटा देती है।

❀

पत्ते समीर से कहते हैं—हम सबके शरीर को हठपूर्वक झकझोर कर तुम किसका सन्देश देते हो?

❀

निद्रा सन्तोष की चेरी है; वासना की बैरिन।

❀

सुन्दरता हृदय को आकर्षित कर लेती है। यदि दीपक की शिखा चमकीली न होती, तो पतिङ्गे उस पर क्यों निछावर होते?

❀

देश के दीवानों के लिए मृत्यु का भय कहाँ?

❀

माली गुलाब को पनपाता है, परन्तु वह उसकी सुरभि को अपने ही तक सीमित नहीं रख सकता। वह किसी भी समीर के झोंके के साथ बह जाती है।

❀

जिस मनुष्य को अपनी वाणी पर अधिकार नहीं, वह अपनी इच्छा पर क्या अधिकार रख सकता है?

❀

विद्युत-प्रकाश में दीपक मलिन पड़ जाता है।

❀

संसार में जो मनुष्य अपनी रक्षा नहीं कर सकता, वह सदैव स्वार्थी और अन्यायी मनुष्यों का शिकार बना रहेगा।

❀

चन्द्र-किरणें पत्तों और पुष्पों पर छोटी बालिका की भाँति आनन्द से थिरकती हैं।

❀

जीवन के तूफ़ान में मनुष्य मनोविकारों के साथ मारा-मारा फिरता है।

❀

बल-प्रयोग में बल का सदा क्षय होता है।

❀

हे मेरे प्रिय! मेरी आत्मा को त्राण दो। मेरी आत्मा प्रेम की वेदना तथा भार से वर्षा के मारे हुए पुष्प की शोभा की भाँति म्लान है। अब तो दर्शन देकर मेरी आत्मा को त्राण दो।

यह पुस्तक 'कमला' नामक एक शिक्षित मद्रासी महिला के द्वारा अपने पति के पास भेजे हुए पत्रों का हिन्दी-अनुवाद है। इन गम्भीर, विद्वत्तापूर्ण एवं अमूल्य पत्रों का मराठी, बङ्गला तथा कई अन्य भारतीय भाषाओं में बहुत पहले अनुवाद हो चुका है। पर आज तक हिन्दी-संसार को इन पत्रों के पढ़ने का सुअवसर नहीं मिला था।

इन पत्रों में कुछ को छोड़, प्रायः सभी पत्र सामाजिक प्रथाओं एवं साधारण घरेलू चर्चाओं से परिपूर्ण हैं। उन पर साधारण चर्चाओं में भी जिस मार्मिक ढङ्ग से रमणी-हृदय का अनन्त प्रणय, उसकी विश्व-व्यापी महानता, उसका उज्ज्वल पति-भाव और प्रणय-पथ में उसकी अक्षय साधना की पुनीत प्रतिमा चित्रित की गई है, उसे पढ़ते ही आँखें भर जाती हैं और हृदय-वीणा के अत्यन्त कोमल तार एक अनियन्त्रित गति से बज उठते हैं। अनुवाद बहुत सुन्दर किया गया है। मूल्य केवल ३) स्थायी ग्राहकों के लिए २) मात्र !

आज हमारे अभागे देश में शिशुओं की मृत्यु-संख्या अपनी चरम-सीमा तक पहुँच चुकी है। अन्य कारणों में माताओं की अनभिज्ञता, शिक्षा की कमी तथा शिशु-पालन सम्बन्धी साहित्य का अभाव प्रमुख कारण हैं।

प्रस्तुत पुस्तक भारतीय गृहों की एकमात्र मङ्गल-कामना से प्रेरित होकर, सैकड़ों अङ्गरेज़ी, हिन्दी, बङ्गला, उर्दू, मराठी, गुजराती तथा फ्रेञ्च पुस्तकों को पढ़ कर लिखी गई है।

गर्भावस्था से लेकर ६-१० वर्ष के बालक-बालिकाओं की देख-भाल किस तरह करनी चाहिए, उन्हें बीमारियों से किस प्रकार बचाया जा सकता है, बिना कष्ट हुए दाँत किस प्रकार निकल सकते हैं, रोग होने पर क्या और किस प्रकार इलाज और शुश्रूषा करनी चाहिए, बालकों को कैसे वस्त्र पहनाने चाहिएँ, उन्हें कैसा, कितना और कब आहार देना चाहिए, दूध किस प्रकार पिलाना चाहिए, आदि-आदि प्रत्येक आवश्यक बातों पर बहुत उत्तमता और सरल बोल-चाल की भाषा में प्रकाश डाला गया है। मूल्य २); स्था० ग्रा० से १।।) मात्र !

छप रही है ! प्रकाशित हो रही है !!

[लेखक—अध्यापक ज़हूरबख़्श जी 'हिन्दी-कोविद']

'स्फुलिङ्ग' विद्याविनोद-ग्रन्थमाला की एक नवीन पुस्तक है। आप यह जानने के लिए उत्कण्ठित होंगे, कि इस नवीन वस्तु में है क्या ? न पूछिए कि इसमें क्या है ! इसमें उन अङ्गारों की ज्वाला है, जो एक अनन्त काल से समाज की छाती पर धधक रहे हैं, और जिनकी सर्व-संहारकारी शक्ति ने समाज के मन-प्राण निर्जीव-प्राय कर डाले हैं। 'स्फुलिङ्ग' में वे चित्र हैं, जिन्हें हम नित्य देखते हुए भी नहीं देखते और जो हमारे सामाजिक अत्याचारों का नग्न प्रदर्शन कराते हैं। 'स्फुलिङ्ग' देख कर समाज के अत्याचार आपके नेत्रों के सामने सिनेमा के फ़िल्म के समान घूमने लगेंगे। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि 'स्फुलिङ्ग' के दृश्य देख कर आपकी आत्मा काँप उठेगी, और हृदय ? वह तो एक-बारगी चीत्कार कर मूर्च्छित हो जायगा। 'स्फुलिङ्ग' वह वैतालिक रागिनी है, जो आपके सदियों के सोए हुए मन-प्राणों पर थपकियाँ देगी। 'स्फुलिङ्ग' में प्रकाश की वह चमक है, जो आपके नेत्रों में भरे हुए घनीभूत अन्धकार को एकदम विनष्ट कर देगी।

'स्फुलिङ्ग' में कुशल-लेखक ने समाज में नित्य घटने वाली घटनाएँ कुछ ऐसे अनोखे ढङ्ग से अङ्कित की हैं, कि वे सजीव हो उठी हैं। उन्हें पढ़ने से ऐसा बोध होता है, जैसे हमारे नेत्रों के सामने दीनों पर पाशविक अत्याचार हो रहा हो तथा हमारे कानों में उनकी करुण चीत्कार-ध्वनि गूँज रही हो। भाषा में ओज, माधुर्य और करुणा की त्रिवेणी लहरा रही है। हमारा अनुरोध है, कि यदि आपके हृदय में अपने समाज तथा देश के प्रति कुछ भी कल्याण-कामना शेष है, तो आज ही 'स्फुलिङ्ग' की एक प्रति ख़रीद लीजिए। पुस्तक छप रही है। शीघ्र ही ऑर्डर रजिस्टर करा लीजिए !

☞ व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक इलाहाबाद

भारतीय भारत

राजपूताना के जागीरदार

[एक भूतपूर्व उच्च कर्मचारी]

राजपूताने में जागीरदार लोग बड़े प्रभावशाली हैं। वहाँ इन्हीं का प्रभुत्व है और इन्हीं की प्रतिष्ठा; इन्हीं के पास शक्ति है और इन्हीं के पास लक्ष्मी। रियासतों की नीति और शासन तथा पतन और उत्थान में इन जागीरदारों का बड़ा हाथ होता है। राज्य के ये स्तम्भ, हाकिमों के हाकिम और प्रजा के लिए निरन्तर व्याधि हैं।

अधिकांश जागीरदार राजवंश के दूरस्थ या निकटस्थ सम्बन्धी होते हैं, और शेष वे लोग होते हैं जिन्होंने राजघराने की कोई विशेष सेवा की हो या किसी अवसर पर विशेष स्वामि-भक्ति का परिचय दिया हो। जब किसी महाराजा के एक से अधिक पुत्र होते हैं तो बड़े पुत्र को तो राज्यसिंहासन मिलता है और अन्य पुत्रों को प्रतिष्ठा-पूर्वक निर्वाह के लिए कुछ गाँव दे दिए जाते हैं। इस प्रकार किसी व्यक्ति विशेष को उसके निर्वाह के लिए या उसकी विशेष सेवाओं के लिए जो गाँव दिए जाते हैं, उसे 'जागीर' कहते हैं। जिसके पास 'जागीर' होती है वह 'जागीरदार' कहलाता है। महाराजा के छोटे पुत्रों में भी सबको बराबर जागीर नहीं मिलती। उनमें जो बड़ा होता है, उसे अधिक मिलती है और उससे छोटे को उससे कम। जिसके पास जितनी अधिक जागीर हो, उसे उतना ही राजवंश का निकटवर्त्ती सम्बन्धी समझना चाहिए, परन्तु सर्वत्र ऐसा नहीं है। कभी-कभी सङ्कट-समय में जिन लोगों ने असाधारण वीरता से या स्वामि-भक्ति से राजवंश की रक्षा की है, उनको राजा के सगे सम्बन्धियों से भी अधिक जागीरें दी गई हैं। जयपुर में खेतड़ी और सीकर के जागीरदार बहुत बड़े हैं, किन्तु राजगद्दी पर उनका कोई हक़ नहीं है। खेतड़ी और सीकर की वार्षिक आय लगभग बीस लाख रुपए है, परन्तु ये कहलाते हैं 'ठिकानें' (जागीरदार का मुख्य गाँव) ही। वर्तमान महाराजा जयपुर, जिस ठिकाने से गोद आए हैं, उसकी वार्षिक आय केवल १ लाख के लगभग है, परन्तु उसका सम्बन्ध राजवंश से अत्यन्त निकट का है। कोटा रियासत में सब से बड़ा ठिकाना या जागीर इन्द्रगढ़ है। परन्तु वर्तमान महाराव एक अत्यन्त साधारण परिवार से गोद आए हैं, जो राजवंश का नज़दीकी है। बीकानेर में यह बात नहीं है। वहाँ महाजन ठाकुर की जागीर सब से बड़ी है और वे ही महाराजा के निकटस्थ भाई हैं। उदयपुर और जोधपुर के भी सब से बड़े जागीरदार राजवंश से अत्यन्त दूर हैं।

जिन लोगों को विशेष सेवाओं के लिए जागीरें मिली हैं, वे सब राजपूत नहीं हैं और जो राजपूत हैं भी वे सब उस शाखा के नहीं हैं, जिसके हाथ में राज्य-सिंहासन है। राजपूत रियासतों में कितने ही ब्राह्मण, गूजर और मुसलमान तक जागीरदार हैं। टोंक, जो कि एक मुसलमानी रियासत है, वहाँ भी कई हिन्दू जागीरदार हैं। इनमें कई एक पुराने हैं और कई नए। जोधपुर में पण्डित सर शुकदेवप्रसाद, जयपुर में बाबू कान्तिचन्द्र मुकर्जी, और बूँदी में बाबू भट्टाचार्य अभी कल के जागीरदार हैं।

प्रत्येक रियासत में जागीरदारों की तीन श्रेणियाँ हैं। (१) ताज़ीमी, (२) नीमताज़ीमी, और (३) साधारण। ताज़ीमी जागीरदार या सरदार वह कहलाता है, जिसको महाराजा उठ कर अभिवादन करता है। नीमताज़ीमी का अभिवादन स्वीकार करते समय महाराजा पूरा नहीं उठता, किन्तु उठने की केवल चेष्टा मात्र करता है। साधारण जागीरदार की ओर महाराजा या तो थोड़ा सिर हिला देता है या केवल आँख से ही उसका अभिवादन स्वीकार कर लेता है। ताज़ीमी और नीमताज़ीमी सरदार एक पैर में सोने का ठोस कड़ा या 'लङ्गड़' पहने रहते हैं, जो महाराजा का 'बख़्शा' (प्रदान किया) हुआ होता है। राजपूताने में यह सोने का कड़ा प्रतिष्ठा का सब से बड़ा चिह्न है। इन सरदारों की स्त्रियाँ भी राजप्रासादों में महारानियों के पास पैर में सुवर्ण के अलङ्कार पहन कर जा सकती हैं। अन्य लोगों का पैर में सोना पहनना राज-विद्रोह समझा जाता है, और ऐसे लोगों को भारी दण्ड मिलता है। कभी-कभी ऐसे लोगों को भी सोना पहनने की इजाज़त मिल जाती है जो जागीरदार तो नहीं, परन्तु सम्पन्न होते हैं और साथ ही महाराजा के विशेष कृपा-पात्र होते हैं। धनवान परिवारों की उन रमणियों को भी पैर में सोने का ज़ेवर पहनने की इजाज़त हो जाती है, जिनका राजमहलों में विशेष मान होता है। ऐसी महिलाओं के पतियों को भी सोना 'बख़्शा' दिया जाता है। पैर में सोना पहनने की इजाज़त देने को राजपूताने में "सोना बख़्शना" कहते हैं। जिन जागीरदारों के पैर में सोना नहीं होता, उनको इसकी बड़ी लालसा रहती है। जिन लोगों की महाराजा तक गति हो जाती है और प्रतिष्ठित बन जाते हैं, वे सुवर्ण-प्राप्ति के लिए बड़े लालायित रहते हैं। कुछ वर्ष पूर्व जब लेखक एक रियासत में उच्च कर्मचारी था तो एक विद्वान चारण (भाट) सज्जन ने सुवर्ण-प्राप्ति की बड़ी लालसा प्रकट की। सोना बख़्शने में महाराजा का कम से कम ५०० या ६०० रुपया ख़र्च होता है और महाराजा थे परले सिरे के कृपण, अतः उन्होंने स्वीकार नहीं किया। अन्त में यह ठहरा कि सोने का कड़ा स्वयं चारण महाशय अपने ख़र्चे से बनवा कर महाराजा को चुपके से दे दें और महाराजा उसको आम दरबार में चारण को बख़्श दें। इस प्रकार सोना प्राप्त करके ये सज्जन अत्यन्त प्रसन्न हुए। साथ ही महाराजा को भी कम ख़ुशी नहीं हुई।

जागीरदार अपने महाराजा को 'अन्नदाता' कह कर सम्बोधित करते हैं और महाराजा भी उनसे सम्मानपूर्वक व्यवहार करता है। परन्तु कुछ, महाराजे ऐसे भी हैं जो अपने जागीरदारों का सलाम तक नहीं लेते। ब्रिटिश-राज्य की स्थापना से पूर्व जागीरदारों की ख़ूब चलती थी। नरेश उन्हें अपनी सत्ता के स्तम्भ मानते थे और शासन-सञ्चालन बहुत कुछ उनके अधीन रहता था। रियासतों की सेवा में जागीरदार ही युद्ध के समय उच्चाधिकारी बनाए जाते थे। परन्तु सन् १८१८ के बाद से जागीरदारों की महत्ता क्षीण होने लगी। अङ्गरेज़ी सरकार ने रियासतों की, बाहरी शत्रुओं से रक्षा करने की ज़िम्मेवारी अपने ऊपर ले ली, और आन्तरिक उत्पातों को शान्त करने में भी सहायता देने का वचन दे दिया। महाराजा के निस्सन्तान होने पर राज्यसिंहासन का उत्तराधिकारी कौन हो, इसका निर्णय भी सरकार ने अपने अधिकार में ले लिया। ऐसी अवस्था में जागीरदार का काम ही क्या रह गया? फलतः इस समय जागीरदार रियासत की शोभा मात्र हैं। वे राज-दरबार के अनावश्यक उपकरण बन गए हैं और इतिहासवेत्ताओं को अतीत काल का स्मरण मात्र दिलाते हैं।

इस समय महाराजा लोग जागीरदारों का वैसा सम्मान नहीं करते जैसा कि पूर्व समय में किया करते थे। महाराजा बीकानेर ने अभी कुछ समय पूर्व अपने राज्य के दो उच्च सरदारों को, जो उनके अत्यन्त निकटस्थ सम्बन्धी हैं, किसी कारण से अप्रसन्न होकर, देश से निर्वासित कर दिया है और उनका सर्वस्व छीन कर उन्हें बर्बाद कर डाला है। ये लोग जयपुर की राज-माता के भाई होते हैं; इसलिए वहाँ अपना जीवन-निर्वाह मात्र कर रहे हैं। एक अन्य जागीरदार को महाराजा बीकानेर ने किसी अपराध में क़ैद भी कर रक्खा है। जयपुर के भूतपूर्व महाराजा ने भी एक बड़े जागीरदार को किसी व्यक्तिगत मामले में अप्रसन्न होकर अपनी रियासत से निकाल दिया था, जो आजकल अपनी ससुराल काशी में बैठे हुए दिन व्यतीत कर रहे हैं। वर्तमान महाराजा जयपुर की गोदनशीनी का झगड़ा जिस समय चल रहा था, उस समय भूतपूर्व महाराजा जयपुर ने कई बड़े-बड़े जागीरदारों को उच्च पदों से हटा दिया था, उनकी जागीरें ज़ब्त कर ली थीं और उन पर भारी जुर्माना भी किया था। एक जागीरदार अर्से तक सलाम करने नहीं गया, इसलिए टोंक के नवाब ने उसकी जागीर ज़ब्त कर ली थी। नीमूचाणा के जागीरदार से कुपित होकर महाराजा अलवर ने तो उसके मकान पर तोपों के गोले तक बरसाए थे।

जब कोई जागीरदार निस्सन्तान मर जाता है तो उसके ठिकाने का किसको मालिक बनाया जावे या उसको रियासत में मिला लिया जावे, यह सब अधिकार महाराजा के हाथ में है। प्रायः मृतक जागीरदार की विधवा अपने पति-कुल में से किसी को गोद ले लेती है, परन्तु जब तक महाराज इसको स्वीकार न कर ले तब तक वह ठिकाने का मालिक नहीं समझा जाता। ऐसे अवसर पर ठिकाने की तरफ़ से महाराजा को जब ख़ासा नज़राना दिया जाता है, तब वह प्रसन्न होता है। जब कोई बड़ा जागीरदार मर जाता है तो

महाराजा उसके मकान पर सहानुभूति प्रकट करने जाते हैं। यह एक प्रकार का दस्तूर है, जो मृत्यु से १२ दिन के पश्चात् कभी भी किया जाता है। जब तक महाराजा यह दस्तूर पूरा न कर दें, तब तक मृतक जागीरदार का उत्तराधिकारी चाहे वह दत्तक हो या औरस, अपने सिर पर सफ़ेद पगड़ी बाँधे रहता है। सफ़ेद साफ़ा या पगड़ी बाँधना राजपूताने में शोक-चिह्न माना जाता है। परन्तु 'धाबाई' (गूजर) नाम के जाति वाले प्रायः सफ़ेद ही पगड़ी सदैव बाँधते हैं। यदि कोई जागीरदार अपने पिता की मृत्यु के बाद अधिक समय तक सफ़ेद पगड़ी पहने हुए दिखाई दे तो लोग समझने लगते हैं कि महाराजा उससे नाराज़ हैं। यों तो रियासतों में किसी के लिए भी कोई अटल और निश्चित क़ानून नहीं है, परन्तु जागीरदारों का मिताचरा और दायभाग तो महाराजा की ही वाणी है। प्राचीन हिन्दू रियासतों में परम्परागत शास्त्र-व्यवस्था का अभाव वास्तव में आश्चर्यकारी है। तभी तो इतिहासकार कहते हैं कि राजपूत वैदिक क्षत्रियों की सन्तानें नहीं हैं, बल्कि शक, हूँण और भीलों के वंशज हैं।

रहन-सहन में जागीरदार यथासम्भव अपने महाराजा का अनुकरण करता है। उसका मकान गढ़ कहलाता है और उसका अन्तःपुर रावला। उसके ज़नाने में उसी प्रकार दासियाँ होती हैं और उसकी व्यक्तिगत सेवा के लिए उसी प्रकार पासवान या दरोगा। विशेष अवसरों पर वह दरबार करता है और अपने कर्मचारियों तथा अन्य नौकरों से नज़रें लेता है। महाराजा के समान उसको भी शिकार और शराब का व्यसन होता है और एक स्त्री से शायद ही किसी जागीरदार को सन्तोष होता हो। खान-पान और रहन-सहन सब उसका राजसी ठाट का होता है। इस अनुकरण-प्रवृत्ति के कारण जागीरदारों की दशा अत्यन्त दयनीय और उपहास्य होती जा रही है। जागीरदारों में सीकर और खेतड़ी जैसे सम्पन्न ठिकाने अधिक नहीं हैं। जयपुर में प्रायः सब जागीरदार भरे-पूरे हैं, परन्तु परिमित और अल्प आय वाले जागीरदारों की संख्या किसी भी रियासत में कम नहीं है। लेखक ने ऐसे भी ताज़ीमी सरदार देखे हैं, जिनकी आय केवल पाँच सौ रुपए वार्षिक है। ऐसे लोग भी ज़नाने और मर्दाने का ढोंग, दास और दासी का आडम्बर तथा शिकार और शराब का चसका नहीं छोड़ते। इन पर भारी क़र्ज़ लदा रहता है और ये लोग वारुणी के प्रभाव में अपनी स्थिति की वास्तविकता को भूले रहते हैं। ऐसे निर्धन जागीरदारों के यदि दो-तीन पुत्र हो गए तो समस्या और भी अधिक कड़ी हो जाती है। ५००) की आय में से अधिकांश बड़े को मिलता है और १००) या १५०) रुपए छोटे को। इस प्रकार होते-होते कभी ताज़ीमी सरदार नितान्त अकिञ्चन और दरिद्रावस्था में पहुँच जाते हैं! शिक्षा और हुनर इन लोगों में है ही नहीं। अतः चपरासी, दरबान, बस्ताबर्दार और कोचवान आदि बन कर अपना निर्वाह करते हैं। तिस पर भी अपनी ताज़ीम की आन इनका पीछा नहीं छोड़ती। लेखक को मेरटा (जोधपुर) में इसका अत्यन्त रोचक दृष्टान्त मिला। एक सेठ के यहाँ एक राजपूत दरबान था। जब उससे कहा गया कि बक्स उठा कर अन्दर पहुँचा दो, तो उसने लाल-पीली आँखें करके कहा—"थें जाणों नहीं कि म्हूँ ताज़िमी ठिकाणारो भाई हूँ।" लेखक को ऐसे लोगों के दर्शन करने का यह प्रथम सौभाग्य था, अतः उसके कुछ समझ में नहीं आया। फिर सेठ जी ने सब मतलब समझाया।

जैसे ब्रिटिश भारत में 'महाराज' शब्द की दुर्गति है, उसी प्रकार राजपूताने में "महाराजा" "ठाकुर" तथा "ढीलाँ" शब्दों की दुर्दशा है। वास्तव में 'महाराजा' शब्द का प्रयोग "नरेश" के लिए ही होना चाहिए। परन्तु राजवंश के छोटे कुमार, जो जागीरदार बना दिए जाते हैं वे भी महाराजा ही कहलाते हैं। फिर उनके कई पुत्र होते हैं, तो छोटे पुत्रों को जागीर में से थोड़ा-थोड़ा भाग देकर अलग कर दिया जाता है। फिर भी यह लोग 'महाराजा' ही कहलाते रहते हैं। इस प्रकार अत्यन्त अकिञ्चन और दरिद्र हो जाने पर भी 'महाराजा' शब्द का रोग इनके चिपका ही रहता है। ब्रिटिश भारत में भोजन पकाने वाले 'महाराज' होते हैं, इसी प्रकार राजपूताने में पहरा देने वाले, और गाड़ी हाँकने वाले "महाराजा" होते हैं। "ठाकुर" और "ढीलाँ" शब्द का प्रयोग नरेश के लिए नहीं होता, ये शब्द ख़ास जागीरदारों के लिए हैं। परन्तु नामधारी जागीरदारों को यदि इन शब्दों से अभिहित न करके उनके व्यक्तिगत नाम से पुकारा जावे तो कभी-कभी कलह उत्पन्न हो जाने की सम्भावना है। महाराजा का लड़का 'महाराज-कुमार' और जागीरदार का लड़का 'कुँवर साहिब' कहलाता है। परन्तु लड़की चाहे राजवंश की हो या जागीरदार की, वह केवल "बाई साहब" ही कहलाती है—महाराजा की पुत्री को "महाबाई" नहीं कहा जाता। सब जागीरदारों की स्त्रियों को "ठकुराणी जी साहब" या "भीतर का सरदार" कहा जाता है। पाठकों को यह जान कर आश्चर्य होगा कि राजपूताने में "राजा" शब्द का प्रचार अत्यन्त कम है। प्रसिद्ध जागीरदारों में केवल दो ही राजा कहलाते हैं। महाजन (बीकानेर) के राजा और जावली (अलवर) के राजा। कोई-कोई जागीरदार रावल, राव और रावत भी कहलाते हैं। कोटा राज्य के कुछ जागीरदारों के लिए "आपजी" शब्द व्यवहृत होता है, जैसे रावल संग्रामसिंह, राव गणपतसिंह, रावत नारायणसिंह और आपजी धूलसिंह।

जागीरदारों के रावले (अन्तःपुर) प्रायः विलास, कलह आदि पाशविकता की प्रयोगशालाएँ हैं। राजपूताने में शायद ही कोई जागीरदार हो, जिसने केवल एक ही विवाह किया हो। प्रत्येक जागीरदार के घर में दो-तीन स्त्रियाँ विवाहिता होती हैं और कुछ "ख़वासें"। जब कोई जागीरदार अपनी स्त्रियों की किसी दासी से या गाँव की अन्य किसी स्त्री से प्रेम करने लगता है और प्रत्यक्ष में इस कार्य को स्वीकार करने लगता है तो वह स्त्री 'ख़वास' बन जाती है। दासियाँ और गाँव की स्त्रियाँ ठाकुर साहिब की ख़वास बनने में अपना परम सौभाग्य समझती हैं। ख़वास बन जाने पर वह स्त्री पर्दा करने लगती है और जागीरदारों के घर में उसका अधिकार माना जाने लगता है। ऐसी स्त्रियों से उत्पन्न होने वाली सन्तानें 'ख़वासीणो भाई' या 'ख़वासीणी बाई' कहलाती हैं। राजपूत इन लोगों को एक थाली में अपने साथ खाना नहीं खिलाते और जाति के पंक्ति में इनको दूर बैठना पड़ता है। ख़वासों के अतिरिक्त अन्य दासियों के जाल में भी जागीरदार प्रायः फँसे रहते हैं। रावले में सबसे अधिक माहात्म्य शराब का रहता है। जागीरदार, उसकी ठकुराणी और ख़वासें तथा प्रेम-पात्राएँ और कभी-कभी कुँवर साहिब और बाई साहिब तक शराब का सेवन करते हैं। जयपुर और जोधपुर में मद्यपान का बहुत ही प्रचार है। हमारा अनुमान है कि जागीरदारों में ५० प्रतिशत मौतें मद्यपान के कारण होती हैं। परस्पर ठकुराणियों में, ठकुराणी और ख़वासों में, इनकी दासियों में और दासियों की सन्तानों में निरन्तर कलह बना रहता है। कई जागीरदारों में इतनी स्त्रियों के भरण-पोषण की शक्ति नहीं होती, इसलिए अनेक आर्थिक समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। जागीरदार के विलासिता और पाशविकता से तङ्ग आकर ठकुरानियाँ अपने-अपने निर्वाह के वास्ते निश्चित मासिक रक़म माँगने लगती हैं, उधर ख़वासों और पात्रियों का तक़ाज़ा होने लगता है, ठाकुर साहब को बाजीकरण औषधियों के लिए तथा अपने आन्तरिक रोगों का इलाज कराने के लिए निरन्तर एक विश्वसनीय वैद्य की आवश्यकता होने लगती है। उधर कुँवर साहिब की शादी हो जाने पर दो रावले बन जाते हैं और पिता की लीलाओं का अनुकरण पुत्र भी करने लगता है। खाना, पीना, ज़ेवर, सन्तान, सम्बन्ध, विवाह आदि सबके लिए रावलों में युद्ध रहा करता है। इन टण्टों का निवारण करने के लिए प्रायः रियासत को हस्तक्षेप करना पड़ता है।

जिस समय तीन स्त्रियों के पति और पाँच ख़वासों के प्रेमी ठाकुर साहब ६५ वर्ष की अवस्था में एक २० वर्षीया यौवन-गर्विता रमणी को ब्याह कर घर पधारते हैं, तो अन्तःपुर में असली लङ्का-काण्ड आरम्भ हो जाता है। एक ओर बाजा बजता है, दूसरी ओर रोना आरम्भ होता है। दासियों के मङ्गल-गान और वञ्चिता स्त्रियों के करुण-क्रन्दन के संयुक्त स्वर से 'बाबा-बधू' का अभिनन्दन होता है। वृद्ध ठाकुर और नव-विवाहिता बधू शीघ्र ही मद्य की तरङ्गों पर सवार होकर आलोचना-सागर से पार हो जाते हैं। इस प्रकार मद्य, विलास, कलह और अनेक पत्नियों तथा उप-पत्नियों से परिपूर्ण अन्तःपुर में अनाचार और व्यभिचार का होना कौन सी आश्चर्य की बात है? अतृप्त काम का दुर्दम्य आवेश कठोर पर्दे की दीवार और जागरूक दरबानों की तलवारों में भी मार्ग ढूँढ लेता है। इधर ठाकुर साहब दासियों पर मोहित होते हैं तो उधर ठकुराणी जी किसी पासवान (दास) पर प्राण न्यौछावर कर देती हैं। बहुत कुछ छिपाने पर भी ऐसी कई घटनाएँ प्रकट हो चुकी हैं। आख़िर मानव-हृदय की दुर्बलता, नैसर्गिक आवेश, क़ुदरती प्यास और मद्य द्वारा भड़की हुई कामाग्नि को भी तो कोई रास्ता चाहिए! हमारे शास्त्रकारों ने कहा है कि यौवन, सम्पत्ति, प्रभुता और अविवेक, इनमें से प्रत्येक विनाश करने के लिए पर्याप्त हैं। फिर जहाँ चारों का गुट्ट हो वहाँ तो ख़ुदा हाफ़िज़!!

* * *

हर रङ्ग के हम फूल चुना करते हैं

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

बैठे हुए सर अपना धुना करते हैं,
अच्छी-बुरी बातों को सुना करते हैं।
है बाग़े-जहाँ में यही काम ऐ "बिस्मिल",
हर रङ्ग के हम फूल चुना करते हैं।

❀

हर वक़्त नया राज़ सुना करता हूँ,
बजता हुआ एक साज़ सुना करता हूँ।
"बिस्मिल" नहीं ग़मख़्वार कोई दिल के सिवा,
आप अपनी ही आवाज़ सुना करता हूँ।

❀

दिल दिल से मिलाते थे मगर दिल न मिला,
आपस में मिला दे, कोई कामिल न मिला।
"बिस्मिल" नज़र आए हमें लाखों बिस्मिल,
यह बात तो है झूठ कि क़ातिल न मिला।

❀

वल्लाह यह मुश्किल कोई मुश्किल में नहीं,
रहबर की ज़रूरत किसी मञ्ज़िल में नहीं।
"बिस्मिल" भी पहुँच जायँगे गिरते-पड़ते,
जब शौक़ नहीं दिल में, तो कुछ दिल में नहीं।

यूरोपीय सङ्गठन और शस्त्र-निरोध के थोथे प्रयत्न

(२०वें पृष्ठ का शेषांश)

देशों के प्रतिनिधि हैं। दूसरी कमिटी कृषि की उन्नति तथा कृषि-बैङ्क आदि सुविधाओं के विषय में अपनी विचारपूर्ण सम्मत पेश करेगी। तीसरी कमिटी का काम होगा, कार्य-प्रणाली निर्धारित करना। इन दोनों कमिटियों में भी प्रत्येक में, ११ देशों के प्रतिनिधि हैं। अन्तिम कमिटी कार्य-प्रणाली और तत्सम्बन्धी अन्य विषयों पर विचार करने के अतिरिक्त पासपोर्ट, डाकख़ाने, परदेशी व्यापारियों के साथ बर्ताव आदि कई अन्य विषयों पर भी अपनी राय देगी। सङ्गठन-कमिटी ने श्रीयुत ब्रियण्ड को यह अधिकार दे दिया है कि वह गेहूँ की निकासी करने वाले तथा ख़रीदने वाले देशों के प्रतिनिधियों की एक कमिटी बुला कर इस बात की योजना तैयार करें कि सन् १९३० के पुराने गेहूँ को क्या किया जावे। सङ्गठन-कमिटी ने सर्व-सम्मति से निम्न-लिखित प्रस्ताव भी पास किया है :—

"गत कुछ दिनों की बातचीत से यह विदित हुआ है कि भावी राजनैतिक स्थिति के विषय में जो व्यापक अविश्वास फैला है, उसके कारण वर्तमान आर्थिक कठिनाइयाँ हल नहीं होने पातीं। भावी अन्तर्राष्ट्रीय समर के विषय में नाना प्रकार की कल्पनाएँ हमारी सरकारों के मार्गों में सब से बड़े विघ्न हैं। हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि यूरोप में इस समय अनेक राजनैतिक समस्याएँ उपस्थित हैं, जो विश्वव्यापी आर्थिक सङ्कट के कारण और भी उग्र बनती जाती हैं। ऐसी स्थिति में हमारा सर्व-प्रथम कर्तव्य यह है कि हम समस्त यूरोप को यह विश्वास दिला दें कि यूरोप में युद्ध होने की कोई वर्तमान सम्भावना नहीं है। अतः इक्कीस यूरोपीय राष्ट्रों के पर-राष्ट्र सचिवों या ज़िम्मेदार प्रतिनिधियों की हैसियत से हम सूचित करते हैं कि जब कभी लड़ाई का मौक़ा आया तो हम राष्ट्र-सङ्घ की मध्यस्थता का उपयोग करवा कर रक्तपात को रोक सकेंगे।"

उपर्युक्त प्रस्ताव से पता चलता है कि यूरोप का वायु-मण्डल कैसा है। पारस्परिक सङ्घर्ष के कारण किसी समय समराग्नि धधक सकती है। इसकी सम्भावना कम करने के लिए तथा आर्थिक गुत्थियों को सुलझाने के लिए ही यह यत्न किया जा रहा है कि यूरोप का सङ्गठन हो। सङ्गठन का आरम्भिक कार्य सन्तोषप्रद हुआ है। सम्पूर्ण देशों के प्रतिनिधि इस विषय में एकमत थे कि आर्थिक उलझनों को शीघ्रातिशीघ्र सुलझाने की आवश्यकता है। ये लोग आगामी मई मास में जेनेवा नगर में उपस्थित होंगे और उप-कमिटियों की रिपोर्टों पर विचार करेंगे। यदि सङ्गठन दृढ़ हो गया तो राष्ट्र-सङ्घ का अधिकांश समय यूरोपीय विषयों पर ही व्यय हुआ करेगा। लीग (राष्ट्र-सङ्घ) के इस स्वरूप-परिवर्तन के विषय में गत जनवरी में बीकानेर के महाराज सर गङ्गासिंह ने अपना धीमा विरोध प्रकट किया था। उनका कहना था कि लीग या तो सार्वभौम ही रह सकती है या यूरोपीय ही।

इधर यह हो रहा है और उधर यूरोप की आर्थिक समस्याएँ अधिकाधिक उलझती जाती हैं। प्रत्येक देश आयात पर कर बढ़ा रहा है। इस विषय में किसी सन्धि के प्रस्ताव पर कोई ध्यान नहीं देता और लीग के ध्येयों की सर्वत्र अवहेलना की जा रही है। सन् १९२७ से अब तक इस स्थिति को सुधारने के लिए निरन्तर प्रयत्न किया जा रहा है, पर सफलता प्राप्त नहीं होती। इस हालत को देख कर लीग के आर्थिक विभाग के विद्वान मन्त्री सर आर्थर साल्टर ने अपने पद से, दिसम्बर सन् १९३० में, इस्तीफ़ा दे दिया था। उनका कहना था कि पारस्परिक आर्थिक सङ्घर्ष के स्वार्थनाद में सर्वहित का उपदेश किसी को सुनाई नहीं देता। जिस समय यह इस्तीफ़ा पेश हुआ, उसी समय भारत-सरकार और चीन-सरकार ने लीग से प्रार्थना की कि उनकी आर्थिक कठिनाइयों को दूर करने के लिए उनको कोई विशेषज्ञ दिया जावे। यह प्रार्थना लीग ने स्वीकार कर ली और सर आर्थर को इस कार्य के लिए नियुक्त कर दिया गया। ये महाशय इस समय चीन में हैं और वहाँ आर्थिक समस्याओं को हल करने में चीन-सरकार को सहायता दे रहे हैं।

आगामी मई के अधिवेशन में लीग के सामने अनेक गम्भीर प्रश्न उपस्थित होंगे। इनमें सब से कड़े प्रश्न हैं, शस्त्र-निरोध और यूरोपीय सङ्गठन। शस्त्र-निरोध का प्रश्न पिछले दस बरस से लीग के हाथ में है, परन्तु इसका फ़ैसला होता हुआ दिखाई नहीं देता। बल्कि यह उत्तरोत्तर अधिक जटिल होता जा रहा है। संयुक्त अमेरिका, ब्रिटिश साम्राज्य और जापान में जल-सेना-निरोध के विषय में गत वर्ष के अन्त में समझौता हो चुका था, जिसकी घोषणा राष्ट्रपति हूवर ने बड़े दिन को की थी। इस समझौते में यह एक स्पष्ट शर्त थी कि फ़्रान्स और इटली इसके अनुसार आपस में समझौता करके अपनी सेनाएँ सीमित करें, तभी यह सफल हो सकता है। यदि ये दोनों देश अपनी-अपनी सेनाओं को बढ़ाते जावें तो अमेरिका, ब्रिटेन और जापान अपनी जल-सेनाओं को सीमित कैसे रख सकते हैं? फ़्रान्स और इटली में शस्त्र-निरोध विषयक पारस्परिक समझौता हो जावे, इस अभिप्राय से जल-सेना के विशेषज्ञ अङ्गरेज़ श्रीयुत क्रेग पेरिस और रोम में कुछ समय तक रहे, परन्तु फल कुछ नहीं हुआ। इटली और फ़्रान्स का पारस्परिक अविश्वास दिन-दिन बढ़ता जाता है और भावी संग्राम की तैयारी के लिए दोनों अपनी सैनिक शक्ति बढ़ाते जाते हैं। इसलिए समझौते की बातचीत विफल हो गई और गत २० जनवरी को दोनों सरकारों ने इस विषय की एक विज्ञप्ति भी निकाल दी। दोनों देशों में पुनः तेज़ी के साथ शस्त्र-निर्माण होने लग गए हैं। यदि फ़्रान्स एक जहाज़ बनवाता है तो इटली भी फ़ौरन एक जहाज़ बनवाता है; यदि वहाँ एक तोप ढलवाई जाती है तो यहाँ भी वैसी ही तोप तैयार करवाई जाती है। इसको देखते हुए अमेरिका, ब्रिटेन व जापान का समझौता भी रद्द सा हो गया है। गत ४ फ़रवरी को हाउस ऑफ़ कॉमन्स में नौसेना के सरदार श्री० ए० बी० एलेक्ज़ेण्डर ने कहा था कि—"हमने फ़्रान्स और इटली को शस्त्र-निरोध के सिद्धान्तों को स्वीकार करवाने का भरसक यत्न किया है। परन्तु हम अपने प्रयास में विफल हो गए हैं, इसलिए अपनी स्थिति पर पुनः विचार करेंगे।

* * *

दीनबन्धु सी० एफ़० ऐण्ड्रूज़

[श्री० मुन्शी नवजादिकलाल जी श्रीवास्तव]

पढ़े-लिखे भारतवासियों में शायद ही कोई ऐसा हो, जिसने भारत-भक्त महात्मा ऐण्ड्रूज़ का नाम न सुना हो या उनके भारत-प्रेम से परिचित न हो। क्योंकि अङ्गरेज़ होकर भी महात्मा ऐण्ड्रूज़ भारत-प्रेमी—भारत-भक्त हैं और भारत की सेवा ही उनके जीवन का लक्ष्य है। अगर कभी ईश्वर की कृपा होगी, हम स्वतन्त्र होकर अपने इन दुर्दिन के सहायकों तथा हितैषियों के प्रति कृतज्ञता प्रकाश करने का सुअवसर पा सकेंगे, तो उस समय हमें सब से पहले महात्मा ऐण्ड्रूज़ का नाम याद आएगा। क्योंकि ऐसे महापुरुषों में आपका ही आसन सर्वश्रेष्ठ है और आपने ही इस पद-पद-दलित, पराधीन और दुख-दैन्य-पीड़ित देश के उद्धार के लिए सब से अधिक और सब से पहले चेष्टा की है। अङ्गरेज़ होकर भी अङ्गरेज़ों के स्वार्थपरता-पूर्ण पञ्जे से भारत-भूमि को विमुक्त करने में महात्मा ऐण्ड्रूज़ ने घोर परिश्रम किया है। हमारे वे लाखों अभागे भाई, जो विदेशों में तरह-तरह की लाञ्छनाएँ सहते हैं, जिन्हें हम 'प्रवासी-भारतवासी' के नाम से याद करते और जिनके घोर अपमान की रोमाञ्चकारी कहानी सुन कर, विवशता के अश्रु बहाया करते हैं, उनके लाञ्छना और अपमान के इतिहास से इस ईसाई साधु का बड़ा ही घनिष्ट सम्बन्ध है। भारत-माता के इन अभागे पुत्रों को विदेशियों की घृणित विद्वेषाग्नि से बचाने के लिए महात्मा ऐण्ड्रूज़ ने केवल कठिन परिश्रम ही नहीं किया है, बल्कि अपना समस्त जीवन अर्पण कर दिया है और यथेष्ट लाञ्छन और अपमान भी भोग चुके हैं। शर्तबन्द मज़दूर-प्रथा का मूलोच्छेद करने में इस महापुरुष ने जो काम किया था, वह स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य है। यदि अत्युक्ति न समझी जावे तो हम कहेंगे कि यदि महात्मा ऐण्ड्रूज़ न होते तो उस घृणित प्रथा का अस्तित्व भी इस धराधाम से विलुप्त न होता।

वास्तव में वह हृदय बड़ा ही गुणग्राही और कृतज्ञ है, जिसने सब से पहले महात्मा ऐण्ड्रूज़ को 'दीनबन्धु ऐण्ड्रूज़' की अवस्था प्रदान की थी। क्योंकि 'दीनबन्धुता' ही आपके जीवन का प्रधान लक्ष्य है। दीन-दुखियों की सेवा करने में आप अपार सुख का अनुभव करते हैं। प्राणिमात्र को कष्ट में देख कर आपका हृदय द्रवीभूत हो उठता और आँखें पसीज जाती हैं। फिर तो आप सब कुछ भूल कर उसकी सेवा में लग जाते हैं। हमारे इस कथन की पुष्टि केवल एक घटना से ही हो जाती है।

दक्षिण अफ़्रिका के प्रवासी भारतवासियों पर निर्दयी और निष्ठुर गोरों का घोर अत्याचार जारी था। दक्षिण अफ़्रिका के ऊजड़, अनुर्वर भूमि को मानव-वासोपयोगी बनाने के अपराध (!!!) में वहाँ के स्वार्थपर गोरे भारतीयों का मूलोच्छेद करने पर तुले हुए थे। महात्मा गाँधी ने इन अत्याचारों के प्रतिकार के लिए सत्याग्रह संग्राम जारी कर दिया था। महात्मा ऐण्ड्रूज़ उनके प्रधान सहकर्मी के रूप में उनकी सहायता कर रहे थे और उनकी वृद्ध माता इङ्गलैण्ड में मृत्यु-शय्या पर पड़ी थीं। उनकी बुढ़ौती की लाठी—उनका प्यारा ऐण्ड्रूज़ उनसे हज़ारों कोस दूर था। इस समय माता को उसकी तथा उसकी सेवाओं की बड़ी आवश्यकता थी। जीवन के अन्तिम दिन थे। पका आम कब चू पड़े, कौन जानता था? महात्मा ऐण्ड्रूज़ ने दुर्दशाग्रस्त प्रवासी भारतीयों तथा उन पर होने वाले अमानुषिक अत्याचारों का हाल माता को लिखा और पूछा—"क्या मैं आपके पास आकर आपकी सेवा-शुश्रूषा करूँ?" माता—विश्व-माता—ने उत्तर दिया—"नहीं, भारतीयों की सहायता करो और जब तक तुम्हारा काम समाप्त न हो जाय, तब तक मत आओ!" धन्य हो करुणामयी—स्नेहमयी और धन्य है, तुम्हारा पुत्र!

दीनबन्धु को भारतीय बच्चों और भारतीय विद्यार्थियों से अपार प्रेम है। समय-समय पर उनके कल्याण के लिए भी आप बहुत-कुछ किया करते हैं।

'चाँद' के असाधारण सम्मान से लोग क्यों डाह करते हैं ??

पृष्ठ-संख्या १३२
चित्र-संख्या १००

वार्षिक चन्दा ६॥) रु०
छः माही चन्दा ३॥) रु०

एक प्रति का मूल्य
दस आने मात्र !

सम्पादक :—
श्री० त्रिवेणीप्रसाद बी० ए०, स० 'भविष्य'

आख़िर 'चाँद' में गुण क्या है ?

'चाँद' के ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखाना सद्विचारों को आमन्त्रित करना है।

'चाँद' ही समस्त भारत में ऐसा प्रभावशाली पत्र रहा है, जिसने अपने थोड़े से ही जीवन में समाज तथा देश में खलबली मचा दी है।

'चाँद' की प्रशंसा सभी श्रेणी के विचारशील व्यक्तियों, राजाओं, महाराजाओं, बड़े-बड़े प्रसिद्ध नेताओं और आला अफ़सरों ने की है। सभी भाषा के पत्र-पत्रिकाओं ने जितनी प्रशंसा 'चाँद' की की है, उतनी किसी पत्र को नहीं।

'चाँद' ही समस्त भारत में ऐसा प्रभावशाली एवं भाग्यशाली पत्र है, जो निर्धन की कुटिया से लेकर राजा-महाराजों की अट्टालिकाओं तक आपको मिलेगा।

'चाँद' तथा इस संस्था ने पत्र-पत्रिकाओं तथा अपने प्रकाशनों द्वारा थोड़ी-बहुत—जो भी सेवा भारतीय समाज और देश की की है, वह सहज ही विस्मरण करने की बात नहीं है।

'चाँद' के प्रत्येक अङ्क में आपको गम्भीर से गम्भीर राजनैतिक एवं सामाजिक लेखमालाओं के अतिरिक्त, सैकड़ों एकरङ्गे, दुरङ्गे और तिरङ्गे चित्र तथा कार्टून मिलेंगे, जो किसी भी पत्र-पत्रिका में आपको नहीं मिल सकते।

'चाँद' में प्रकाशित कविताओं के सम्बन्ध में कुछ कहना व्यर्थ है। जिस पत्रिका की उर्दू शायरी का सम्पादन कविवर "बिस्मिल" करते हों और हिन्दी कविताओं का सम्पादन करते हों कविवर आनन्दीप्रसाद जी श्रीवास्तव और प्रोफ़ेसर रामकुमार वर्मा, एम० ए०, जैसे सुविख्यात कवि, उस पत्रिका की कविताओं से कौन टक्कर ले सकता है ?

'चाँद' में प्रकाशित लेखों के सम्बन्ध में पाठकों को स्वयं निर्णय करना चाहिए। हम इस सिलसिले में केवल इतना ही निवेदन करना चाहते हैं, कि सभी सुप्रसिद्ध लेखकों का अभिन्न सहयोग 'चाँद' को प्राप्त है। फिर श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, श्री० विजयानन्द (दुबे जी) और हिज़ होलीनेस श्री० १०८ श्री० जगद्गुरु के चुटीले विनोद आपको किस पत्र-पत्रिका में मिलेंगे !!

❀ ❀ ❀

यदि अभी तक आप 'चाँद' के ग्राहक नहीं हैं, तो इन्हीं पंक्तियों को हमारा निमन्त्रण समझें और इष्ट-मित्रों सहित 'चाँद' के ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखा कर हमें और भी उत्साह से सेवा करने का अवसर प्रदान करें।

विज्ञापनदाता भी भरपूर लाभ उठा सकते हैं

☞ व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

महात्मा ऐण्ड्यूज़ सरलता, साधुता, सत्यता और सहृदयता की मूर्ति हैं। आपके अपार गुणों और भारत-सेवा सम्बन्धी कार्यों का वर्णन इस छोटे से लेख में नहीं हो सकता और न वैसा करके सागर को गागर में भरने का हास्यास्पद प्रयास करना हमारा उद्देश्य ही है। हम तो नीचे लिखी पंक्तियों में उनका थोड़ा सा परिचय मात्र 'भविष्य' के पाठकों को देना चाहते हैं और साथ ही उनसे यह अनुरोध करना चाहते हैं कि वे एक बार महात्मा ऐण्ड्यूज़ का सम्पूर्ण जीवन-चरित अवश्य पढ़ जायँ।*

जन्म, बाल्यकाल और शिक्षा

श्री० ऐण्ड्यूज़ का पूरा नाम चार्ल्स फ़्रीअर ऐण्ड्यूज़ है। आपका जन्म सन् १८७१ की १२ फ़रवरी को इङ्गलैण्ड के कार्लाइल नामक नगर में हुआ था। आपके पितामह जॉन ऐण्ड्यूज़ एक नामी शिक्षक और बड़े दयालु थे। ईसाई धर्म के जिस सम्प्रदाय में आपका जन्म हुआ था, उसके सिद्धान्त आपके अन्तःकरण के विरुद्ध थे, इसलिए आप उसे परित्याग करके दूसरे सम्प्रदाय में सम्मिलित हो गए थे। परन्तु ऐसा करने के कारण आप को बड़ी आर्थिक क्षति उठानी पड़ी और आप नितान्त निर्धन हो गए। यहाँ तक कि उस निर्धनता ने अन्त तक आपके परिवार का पिण्ड नहीं छोड़ा।

आपके पिता जॉन ऐडविन ऐण्ड्यूज़ भी पिता की भाँति ही सरल स्वभाव और स्वतन्त्र विचार के थे तथा उन्हीं की तरह अपने सम्प्रदाय का त्याग किया था। फलतः इस मत-परिवर्तन के कारण आपको भी निर्धनता आदि कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

श्री० ऐण्ड्यूज़ की माता का नाम मेरी शारलोर था। आप एक आदर्श ईसाई रमणी थीं। विमल मातृ-स्नेह से आपका हृदय ओत-प्रोत था, आपके पाँच लड़के और नौ लड़कियाँ हुईं। हमारे चरित-नायक अपने माता-पिता की चौथी सन्तान हैं। बाल्यावस्था में ही आपके माता-पिता आपको धार्मिक शिक्षा दिया करते थे। छोटी ही उमर में इन धर्मोपदेशों का आपके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा और इसके लिए आप अपने माता-पिता के अत्यन्त कृतज्ञ हैं।

नौ वर्ष की उमर में आपको पढ़ने के लिए स्कूल में भर्ती कराया गया। इससे पहले घर पर ही पढ़ा-लिखा करते थे। यद्यपि बीमारी आदि के कारण लड़कपन में आप बड़े दुर्बल थे। परन्तु आपकी मेधा-शक्ति तीव्र थी। स्कूल की शिक्षा समाप्त करके आपने कॉलेज में अध्ययन आरम्भ किया और २५ वर्ष की उमर में केम्ब्रिज विश्वविद्यालय की अन्तिम परीक्षा में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण हुए। विद्यार्थी-जीवन में आपको बराबर छात्र-वृत्तियाँ और पारितोषिक आदि मिलते रहे।

विद्यार्थी-जीवन में पाठ्य पुस्तकों के सिवा आप बाहरी पुस्तकें भी बहुत पढ़ा करते थे। लैटिन और ग्रीक भाषा में कविता करने का भी आपको बड़ा शौक़ था। बहुत पढ़ने तथा गम्भीरतापूर्वक रहने के कारण सहपाठियों ने आपको 'प्रोफ़ेसर' की उपाधि दी थी। इसके सिवा आप चित्र-कला के भी बड़े प्रेमी थे और इसके लिए आर्ट स्कूल से कई बार पारितोषिक भी प्राप्त किया था।

आपके सहपाठी अपने स्कूल से एक मासिक पत्र निकाला करते थे। आपको उससे बड़ा प्रेम था और बहुत दिनों तक आप उसके सहकारी सम्पादक भी रहे।

* मि० ऐण्ड्यूज़ का 'एक भारतीय आत्मा' लिखित विस्तृत और विश्वस्त जीवन-चरित, दाम २) । मिलने का पता—व्यवस्थापिका 'चाँद' कार्यालय, इलाहाबाद।

श्री० ऐण्ड्यूज़ का भारत-प्रेम

भारत से श्री० ऐण्ड्यूज़ की सहानुभूति बहुत दिनों से है। आप अपनी बहुत छोटी उमर में अपनी माता से कहा करते थे—"माँ, मैं हिन्दुस्तान जाऊँगा।" आपने सुन रक्खा था कि हिन्दुस्तानी चावल अधिक खाते हैं, इसलिए आप भी बहुधा अपनी माता से चावल बनवा कर खाया करते थे। जब आप भात खाने बैठते तो आपकी माता हँसती और कहती—चार्ली, तुम कभी न कभी हिन्दुस्तान अवश्य जाओगे। जब आप कॉलेजों में पढ़ते थे, उन दिनों आपकी भारत जाने की लालसा और भी बढ़ गई थी। कारण यह था कि उन्हीं दिनों आपके एक मित्र मि० वैसिल वैस्टकौट केम्ब्रिज-मिशन के मिशनरी बन कर भारत आए थे। उस समय आपकी बड़ी इच्छा थी कि आप भी उनके साथ भारत आवें। मि० वैसिल वैस्टकौट स्वयं भी भारत-भक्त थे और प्रसङ्ग आने पर मि० ऐण्ड्यूज़ से भारत की प्रशंसा किया करते थे। उनकी बातों का ऐण्ड्यूज़ साहब के मन पर विशेष प्रभाव पड़ता था और तभी से आप भारत के प्रेमी बन गए। आपके एक और साथी मि० ई० डी० ब्राउन थे! ये पूर्वीय देशों की कई बार यात्रा कर चुके थे। उन्होंने भारतवर्ष भी देखा था। श्री० ऐण्ड्यूज़ रात के एक-एक बजे तक उनकी यात्रा की मनोरञ्जक कहानियाँ सुना करते थे। इसके सिवा भारत से लौटे हुए ईसाई-

> "सी० एफ़० ऐण्ड्यूज़ से ज़्यादा सच्चा, उनसे बढ़ कर विनीत, और उनसे बढ़ कर भारत-भक्त इस भूमि में दूसरा कोई देश-सेवक विद्यमान नहीं।" —म० गाँधी
>
> "केवल एक अङ्गरेज़ ऐसा है, जिसका नाम हमें कृतज्ञतापूर्वक लेना चाहिए और वह है मि० सी० एफ़० ऐण्ड्यूज़। वे अब हमीं में से एक हैं।" —ला० लाजपतराय
>
> "रेवरेण्ड ऐण्ड्यूज़ केवल हमारे मध्य ही नहीं रहते, बल्कि वे हमारे ही हैं।" —श्री० विजय राघवाचार्य

मिशनरियों से भी आप मिला करते और उनसे भारत के सम्बन्ध में बातचीत किया करते थे। ये लोग भारत का बड़ा ही अन्धकारमय चित्र खींचा करते थे।

श्री० ऐण्ड्यूज़ के मन पर इन बातों का बड़ा प्रभाव पड़ता था और भारत देखने की उनकी अभिलाषा उत्तरोत्तर बढ़ती जाती थी।

दीन-सेवा और धर्म-प्रचार

विद्याध्ययन समाप्त करने के बाद आपने दीन-दुखियों की सेवा की ओर मन लगाया और सण्डरलैण्ड तथा वाल्सवर्थ आदि स्थानों में प्रायः चार वर्षों तक बड़ी लगन के साथ यह कार्य करते रहे। इसके बाद आप धर्म-प्रचारक (पादड़ी) बने। आपकी प्रवृत्ति स्वभावतः ही धार्मिक थी। इसीलिए आपने धर्म-प्रचार तथा दीन-दुखियों की सेवा को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। आपने ऊँची परीक्षा पास की थी। अगर चाहते तो कोई अच्छी नौकरी मिल जाती अथवा कोई और ही व्यवसाय करके धनवान और सुखी बन जाते। परन्तु आपको लक्ष्मी का गुलाम बनना पसन्द नहीं था। आप लन्दन के मज़दूरों का दुख दूर करने की चेष्टा में लगे और चार वर्ष तक उन्हीं के साथ, उन्हीं की सेवा और सहायता में लगे रहे। इन मज़दूरों की दशा बड़ी दयनीय थी। दुराचार और दुर्व्यसन के ये शिकार बन गए थे। इनकी स्त्रियाँ तक शराबख़ोरी किया करती थीं। श्री० ऐण्ड्यूज़ ने बहुत दिनों तक इनके साथ रह कर इनका सुधार किया!

भारत-यात्रा

मज़दूरों की सेवा में अत्यधिक परिश्रम करने के कारण श्री० ऐण्ड्यूज़ का स्वास्थ्य बिगड़ गया। इसलिए डॉक्टरों की सलाह से आप केम्ब्रिज लौट आए और पैम्ब्रोक कॉलेज के फ़ैलो बन गए। यहाँ आप अध्यात्म-विद्या (Theology) का अध्ययन करते और धर्म के इतिहास पर व्याख्यान दिया करते थे। इसके सिवा विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में धर्म-सम्बन्धी पुस्तकें पढ़ा करते थे। इस समय आपका जीवन बड़ी शान्ति और आराम से व्यतीत होता था, परन्तु भारत-प्रेम ने आपको इस अवस्था में अधिक दिनों तक नहीं रहने दिया। आपने भारत आने की तैयारी आरम्भ कर दी। मित्रों ने मना किया, परन्तु आपने उसका कुछ ख़्याल नहीं किया। माता, भाइयों, बहिनों तथा अपने प्यारे मज़दूरों से मिल कर आप भारत के लिए चल पड़े।

इस समय एक बड़ी मज़ेदार घटना हुई। आप वाल्सवर्थ में अपने ग़रीब भाई-बहिनों (मज़दूरों) से मिलने गए। ये बिलकुल अशिक्षित और दक़ियानूसी विचार के थे। एक बुढ़िया ने, जो इन्हें अत्यधिक प्यार करती थी, जब सुना कि आप भारत जा रहे हैं, तो आँखों में आँसू भर कर कहने लगी—"मैंने सुना है कि हिन्दुस्तान वाले आदमियों को खा जाते हैं। मैं रात-दिन तुम्हारे लिए ईश्वर से प्रार्थना करती रहूँगी कि वे तुम्हें न खा जाएँ।"

ऐण्ड्यूज़ को इस पर बड़ी हँसी आई। उन्होंने भोली बुढ़िया को समझाया कि प्रायः हिन्दू लोग किसी प्रकार का मांस छूते भी नहीं। तब उसे सन्तोष हुआ।

२७ फ़रवरी, १९०४ को, अपनी आयु के ३४वें वर्ष में आपने इङ्गलैण्ड से भारत के लिए प्रस्थान किया और २० मार्च को भारत पहुँचे। उस दिन को आप एक पवित्र दिन मानते और कभी-कभी उसकी याद किया करते हैं।

भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रेम

भारत आने पर मि० ऐण्ड्यूज़ दिल्ली के मिशनरियों के सैण्ट स्टीफ़ेन्स कॉलेज में प्रोफ़ेसर हुए। कॉलेज के अधिकारियों ने आपको कॉलेज के प्रिन्सिपल का पद देना चाहा। परन्तु उस पद के अधिकारी कोई श्री० सुशील-कुमार रुद्र थे, इसलिए आपने उसे स्वीकार नहीं किया। स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि अगर श्री० रुद्र को वह पद न दिया जायगा, तो मैं कॉलेज से कोई सम्बन्ध न रक्खूँगा।

यहाँ आने पर यूरोपियनों ने आपको समझाया कि काले आदमियों से कदापि न दबना और न उनको बराबरी का दर्जा प्रदान करना। परन्तु आपने ऐसे सङ्कीर्ण विचारों को कभी भी प्रश्रय नहीं दिया।

एक बार गर्मी के दिनों में आपको दिल्ली से शिमला आने का अवसर मिला। यहाँ का चरित्र—अङ्गरेज़ों की फ़ज़ूलख़र्ची देख कर आपको बड़ा आश्चर्य हुआ। आपने अपनी एक पुस्तक में लिखा है—हिन्दुस्तान जैसे दरिद्र देश में, जहाँ लाखों आदमी भूखों मरते हैं, लाखों आदमियों को भरपेट मोटा अन्न भी नहीं मिलता, वहाँ ऐङ्ग्लो-इण्डियनों की फ़ज़ूलख़र्ची और भोग-विलास-पूर्ण जीवन वास्तव में बड़ा ही निन्दनीय है।"

सन् १९०६ में आप सनावर के फ़ौजी विद्यालय में अध्यापक थे। उन दिनों लाहौर का 'सिविल ऐण्ड मिलेटरी गज़ट' भारतवासियों की बड़ी निन्दा किया करता था। श्री० ऐण्ड्यूज़ को इस पर बड़ा क्रोध आया और उन्होंने कई ज़ोरदार लेख लिख कर उसके विचारों का खण्डन किया। इसी समय से आपका झुकाव भारतीय

राष्ट्रीयता की ओर हुआ। इसी समय आपने 'हिन्दुस्तान रिव्यू' में भारत की राष्ट्रीयता पर एक गवेषणापूर्ण निबन्ध लिखा, जो भारत के राजनीतिज्ञों में बड़े ध्यान और आदर के साथ पढ़ा गया था।

इस साल कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन कलकत्ते में हुआ था। केम्ब्रिज मिशन के अधिकारियों के मना करने पर भी आप इस कॉङ्ग्रेस में शामिल हुए। पहले-पहल 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग इसी कॉङ्ग्रेस में हुआ था। यहीं आपकी स्वर्गवासी गोपालकृष्ण गोखले से पहले पहल मुलाक़ात हुई थी। इस कॉङ्ग्रेस का एक महत्व-पूर्ण वर्णन आपने अख़बारों में लिखा था। कॉलेज के अधिकारियों को श्री० ऐण्ड्रयूज़ का भारतीयों के राष्ट्रीय आन्दोलन से सम्बन्ध रखना बहुत बुरा मालूम होता था और इसका परिणाम यह हुआ कि सन् १९१४ में आप कॉलेज से अलग हो गए।

इस सम्बन्ध में और भी कई मज़ेदार बातें हुईं। आपके भारत-प्रेम की ख़बर लाट साहब तक पहुँची। लाट साहब सख़्त नाराज़ हुए और लॉर्ड बिशप को लिखा कि क्या उस आदमी (मि० ऐण्ड्रयूज़) में मनुष्यत्व भी नहीं है? 'सिविल ऐण्ड मिलेटरी गज़ट' ने आपको 'भयङ्कर आन्दोलनकारी' की पदवी दी। अस्तु।

इन्हीं दिनों सरकार ने लाला लाजपतराय को देश से निर्वासित करके मण्डाले भेज दिया। मि० ऐण्ड्रयूज़ ने अपने लेखों और व्याख्यानों में इसकी घोर निन्दा की। जिस समय लाला जी का छुटकारा हुआ, उस समय ऐण्ड्रयूज़ साहब दिल्ली के सैण्ट स्टीफ़ेन्स कॉलेज के प्रोफ़े-सर थे। कॉलेज के प्रिन्सिपल अनुपस्थित थे। विद्यार्थी प्रोफ़ेसर साहब के पास पहुँचे और कहा कि हम अपने श्रद्धेय नेता के छुटकारे की ख़ुशी में रोशनी करना चाहते हैं। ऐण्ड्रयूज़ साहब ने प्रसन्न होकर कहा—"अवश्य आप लोग ख़ूब दीवाली मनाइए, इसके साथ ही दीवाली का सामान लाने के लिए आपने पास से पैसे भी दिए। इससे दिल्ली का यूरोपियन समाज आप पर सख़्त नाराज़ हुआ। सरकार के रिज़्ले सरक्यूलर की आपने कड़ी निन्दा की थी। अन्त में तो भारतीय आन्दोलन का आप पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि आपने मिशन से इस्तीफ़ा दे दिया और सारा समय भारत की हित-चिन्ता में व्यय करने लगे! साथ ही सरकार की पुलिस भी आपको राजद्रोही समझने लगी और सी० आई० डी० वालों ने आपकी कड़ी रखवाली आरम्भ की

दक्षिण अफ़्रिका की यात्रा

इस समय श्री० ऐण्ड्रयूज़ श्री० रवीन्द्रनाथ ठाकुर के बोलपुरस्थ शान्ति-निकेतन में रह कर शान्तिमय जीवन बिताना चाहते थे। परन्तु उसी समय महात्मा गाँधी ने दक्षिण अफ़्रिका का सुप्रसिद्ध सत्याग्रह संग्राम आरम्भ कर दिया। इसकी ख़बर पाते ही श्री० ऐण्ड्रयूज़ श्री० गोखले महाशय से सलाह लेकर दक्षिण अफ़्रिका चले गए और महात्मा गाँधी के लेफ़्टिनेण्ट के रूप में, बड़ी तत्परता के साथ इस संग्राम में भाग लिया। दुख है कि उस अपूर्व संग्राम का विवरण इस छोटे से लेख में देना सम्भव नहीं है, इसलिए इस सम्बन्ध में केवल इतना ही कह देना यथेष्ट होगा कि इस महान अवसर पर महात्मा ऐण्ड्रयूज़ ने जिस त्याग, लगन और भारत-प्रेम का परिचय दिया था, वह अलौकिक, अद्भुत और उनकी महत्ता का परिचायक है। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि इस संग्राम में मि० ऐण्ड्रयूज़ और मि० पोलक महात्मा गाँधी की दोनों भुजाएँ थे। दक्षिण अफ़्रिका के अत्याचारियों के कराल कवल से भारत-वासियों की रक्षा करने में इन दोनों अङ्गरेज़ वीरों ने अपूर्व वीरता का परिचय दिया था। उस समय मि० ऐण्ड्रयूज़ की स्नेहमयी जननी बीमार थीं। आपका उनकी सेवा के लिए इङ्गलैण्ड जाना अत्या वश्यक था। परन्तु दक्षिण अफ़्रिका के विपद्-ग्रस्त भारतीयों की सेवा छोड़ कर आप माता की सेवा करने नहीं गए। माता ने भी वहीं रहने की आज्ञा दे दी। जनरल स्मट्स के साथ महात्मा गाँधी का समझौता कराने में भी श्री० ऐण्ड्रयूज़ ने बड़ी चेष्टा की। समझौता हुआ और उसके कुछ दिन बाद ही आपकी माता का देहान्त हो गया।

दक्षिण अफ़्रिका का सत्याग्रह-संग्राम समाप्त हो जाने पर आप अपने पिता का दर्शन करने इङ्गलैण्ड गए और वहाँ से फिर भारत लौट कर क़ुली-प्रथा बन्द कराने की चेष्टा में लगे। उसके बाद फ़िजी गए और वहाँ के भारतीयों की सेवा की। क़ुली-प्रथा को बन्द कराने में श्री० ऐण्ड्रयूज़ ने स्तुत्य प्रयत्न किया था। इसके बाद मलाया स्टेट के भारतवासी मज़दूरों की दुर्दशा दूर करने में लगे।

पञ्जाब में श्री० ऐण्ड्रयूज़ के कार्य

रौलट ऐक्ट के कारण पञ्जाब जिन अमानुषिक अत्याचारों का शिकार बना था, वह एक इतिहास-प्रसिद्ध घटना है। इस समय श्री० ऐण्ड्रयूज़ ने पञ्जाब की बड़ी सेवा की थी। इस सम्बन्ध में 'एक भारतीय हृदय' लिखते हैं:—

"इसमें सन्देह नहीं, कि पञ्जाब की आपत्ति के दिनों में श्री० ऐण्ड्रयूज़ ने पञ्जाबी भाइयों की जो सेवा की, वह भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है।"

अन्यान्य कार्य

वास्तव में भारत श्री० ऐण्ड्रयूज़ का चिरऋणी है और शायद इससे कभी मुक्त भी नहीं हो सकता। दक्षिण अफ़्रिका, पूर्व अफ़्रिका, फ़िजी, सीलोन, चाँदपुर तथा अन्यान्य स्थानों के अत्याचार-पीड़ित भारतीय मज़दूरों की सहायता के लिए जितना परिश्रम श्री० ऐण्ड्रयूज़ ने किया है, उतना किसी भारतीय ने भी न किया होगा। आप नीरव-कर्मी हैं; चुपचाप काम करना अधिक पसन्द करते हैं। आपकी वाणी और लेखनी में अपूर्व शक्ति है। आप साहित्य के भी परम प्रेमी और अच्छे कवि हैं। आपने बहुत सी पुस्तकें भी लिखी हैं और लिखते रहते हैं। परन्तु आपका प्रत्येक कार्य दीन-दुखियों की सेवा के लिए ही होता है। आपका रहन-सहन भारतीय और स्वभाव सरल है। इसीलिए महात्मा गाँधी ने आपको 'दीनबन्धु' की उपाधि से विभूषित किया है और विश्व-प्रेमी कवि-सम्राट श्री० रवीन्द्र गाते हैं:—

प्रतीचीर तीर्थ हते प्राणरस धार,
हे बन्धु, एनेछो तुमि, करि नमस्कार।
प्राची दिलो कण्ठे तव बरमाल्य तार,
हे बन्धु, ग्रहण करो, करि नमस्कार।
खुलेछे तोमार प्रेमे आमादेर द्वार,
हे बन्धु प्रवेश करो, करि नमस्कार।
तोमारे पेयेछि मोरा दान रूपे जाँर,
हे बन्धु, चरणे तार करि नमस्कार।

* * *

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

बाद मुद्दत के राज़ अफ़शा हुआ ! आख़िरश मियाँ ज़हूर अहमद साहब ने दिल की बात कह ही डाली । हम भी सोचा करते थे कि या इलाही, माजरा क्या है ? क्यों कुछ मुसलमान भाई पृथक निर्वाचन के लिए मत्था पटक रहे हैं ? परन्तु कुछ समझ में ही नहीं आता था ।

❀

परन्तु भगवान—लाहौल बिला क़ूवत तौबा इल्ला-बिल्ला, ख़ुदा—भला करे मियाँ ज़हूर साहब का, आपने पृथक निर्वाचन के सारे समीचीन कारणों को एक साथ ही उगल कर सारा भ्रम दूर कर दिया है । अब ज़रा दिल लगा कर उन्हें सुन लीजिए और मियाँ साहब को दाद पर दाद देना आरम्भ कर दीजिए । ख़बरदार, जो इस मामले में ज़रा भी कञ्जूसी कीजिएगा तो मियाँ साहब नाराज़ हो जाएँगे ।

❀

हाँ तो आप फ़रमाते हैं—(१) मुसलमानों की ज़बान उर्दू है और कॉङ्ग्रेस समर्थन करती है हिन्दी का, (२) मुसलमान मांस खाते हैं और पं० जवाहर-लाल तथा गाँधी जी जैसे आदमी मांस खाना छोड़ रहे हैं, (३) कॉङ्ग्रेस वाले मुसलमानी पहनावा छोड़वा रहे हैं, क्योंकि पण्डित मोतीलाल जी पहले मुसलमानी पोशाक पहनते थे, परन्तु-गाँधी आन्दोलन धोती का प्रचार कर रहा है, इसके सिवा (४) अब लोग मुसल-मानी ढङ्ग की इमारतें भी नहीं बनवाते ! बस जनाब, इन्हीं महत्वपूर्ण कारणों से मुसलमानों को चाहिए कि पृथक निर्वाचन पर डटे रहें ।

❀

निस्सन्देह पृथक निर्वाचन के कारण-निर्देश में मियाँ जी दूर की कौड़ी लाए हैं । परन्तु न जाने अन्यान्य बहुत सी बातें आप कैसे भूल गए ! अजी जनाब, हिन्दू दाढ़ी नहीं रखते, सुन्नत नहीं कराते, रोज़ा नहीं रखते और न नमाज़ ही पढ़ते हैं ! और तो और, कमबख़्त पाख़ाने से आकर मिट्टी से हाथ साफ़ किया करते हैं ! अब आप ही 'ईमान-धरम' से बतलाइए, कोई भला आदमी इनके साथ सम्मिलित निर्वाचन की बात कैसे स्वीकार कर सकता है ?

❀

लेहाज़ा अगर आप चाहते हैं, कि मुसलमान पृथक निर्वाचन की माँग त्याग दें तो सब से पहले अपने लिए 'सुथना' और अपनी श्रीमती जी के लिए 'सुथनी' सिलवाइए तथा अपने चिरञ्जीव—उट्ठंक—सल्लमट्ठ को 'ख़ालिक़ बारी, सिरजनहार ; वाहिद एक, बदा करतार' का पाठ पढ़ाइए । हाँ, इस्तिन्जा के लिए थोड़ी सी मिट्टी पहले से ही रखवा लीजिएगा ।

❀

इसीलिए श्रीजगद्गुरु ने तो अभी से 'पीरे-मुग़ाँ' की पदवी प्राप्त कर ली है और दोनों वक़्त तसबीह लेकर 'लाइल्लाह-इल्-लिल्लाह' जपने लगे हैं । श्रीमती हर होलीनेस ने भी 'उतरना' पहनने के लिए कानों को छेदवा लिया है और कहती हैं, चन्द्रहार तुड़वा कर जड़ाऊ तौक़ बनवा दो । आख़िर, किया क्या जाए ? क्योंकि हिन्दू जब तक हिन्दू रहेंगे, तब तक मिस्टर ज़हूर भी अङ्गरेज़ों की ग़ुलामी नहीं छोड़ेंगे । लेहाज़ा मज-बूरी है ।

❀

मगर जनाब ; श्रीजगद्गुरु तो मुग्ध थे उस मह-फ़िल पर, जिसके सामने ऐसी मार्केदार बातें कही गई थीं । सोचा था, निश्चय ही पृथक निर्वाचन के सम्बन्ध में ज़हूर साहब की ये अकाट्य युक्तियाँ या ग़ैर-तरदीद दलीलें सुन कर जनता मुग्ध हो गई होगी और आपके दीर्घजीवन के लिए अल्लाह ताला से दुआ माँगने लगी होगी ।

❀

परन्तु एक कुँजड़े भय्या ने उठ कर सारा गुड़ गोबर कर दिया ! पृथक निर्वाचन के लिए जनाब ज़हूर साहब को यों पाजामे और धोती में भटकते देख कर उसने कहा—"यह सब आगामी म्युनिसिपल निर्वाचन के लिए हो रहा है । लोग चाहते हैं कि म्युनिसिपैलिटी की मेम्बरी मिल जाए । इसीलिए ऐसी बातें कहते हैं ।" उफ़ रे ज़ालिम, तेरी बेरहमी ! आख़िर तरकारी बेचने वाला कुँजड़ा ही तो ठहरा । एक ही जुमले में बैरिस्टर साहब की सारी दलीलों को कद्दू की तरह काट कर रख दिया । दईमारे को दया भी न आई !

❀

ख़ैर, इससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं । आपकी 'लीडरी' का रङ्ग गठा हुआ है । अल्लाह के फ़ज़्ल से दर्जनों कुँजड़े और क़साई आपके अनुयायी हैं । एक अप-वाद निकल ही गया तो क्या हुआ ? 'क़द्र गौहर शह बेदानद या बेदानद जौहरी !' इस पाजामे और धोती की दलील का मर्म समझना सब का काम नहीं । फड़क तो उठे होंगे, हमारे मोटे मौलाना इन दलीलों को सुन कर; और आशा है कि सेण्ट्रल ख़िलाफ़त कमिटी की ओर से जनाब ज़हूर साहब के लिए मुबारकबादी का तार भी आता होगा ।

❀

बङ्गाल के ब्राह्मण-कुल-भूषण श्री० कृष्णहरि बैनर्जी ने सात शादियाँ की हैं । माल 'सेकेण्ड हैण्ड' होते ही उसे फ़ौरन 'रिजेक्ट' करके दूसरा लाते हैं । अर्थात् इस घोर कलिकाल में भी आपने बड़ों के नाम और धर्म की रक्षा कर रक्खी है । सच पूछिए तो ऐसे ही धर्मात्माओं की कृपा से यह धरित्री शेषनाग के मस्तक पर टिकी है, नहीं तो अब तक अवश्य ही रसातल चली गई होती ।

❀

परन्तु यह कलियुग कमबख़्त भी क्या कम बदमाश है ? दुष्ट ने उनकी चतुर्था धर्मपत्नी को बहका कर अलीपुर की मैजिस्ट्रेटी में नालिश करा दी है कि 'जब से श्रीमती 'सातवीं' आई हैं, तब से "अली कली ही ते बिंध्यो" का व्यापार हो रहा है । पण्डित जी बेचारी 'पुरानियों' को पूछते भी नहीं ।' क्यों पूछें ? एक तो 'रिजेक्टेड' माल के लिए बेचारे को व्यर्थ ही गोदाम-भाड़ा देना पड़ता होगा, ऊपर से यह शिकायत कि 'पूछते भी नहीं !' हत् तेरी दुनिया की !

❀

दरख़्वास्त में कहा गया है, कि सन्तान होते ही बनर्जी महाशय बीबी बदल दिया करते हैं—"जिमि नूतन पट पहिरि के नर परिहरै पुरान !" भई, आज-कल फ़ैशन का ज़माना है । फ़्रान्स और अमेरिका वाले शौक़ीन नित्य ही पुराने फ़ैशन को छोड़ते और नए को ग्रहण करते जाते हैं । इसलिए अगर बैनर्जी महाशय भी हर 'सीज़न' में बीबी बदल देते हैं तो क्या बुरा करते हैं ?

❀

पुराने ज़माने में लोग सौ-सौ बीबियाँ करते थे । आजकल भी राजे-महाराजे दर्जनों बीबियाँ करते हैं । भगवान श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द-कन्द के सोलह हज़ार, एक सौ और आठ पटरानियाँ थीं, तो क्या आप चाहते हैं, कि उनके भक्त सात बीबी भी न करें ? अरे भाई, एकदम धर्म के साथ ही पूर्वजों का नाम भी मिटा देना चाहते हो क्या ?

❀

अलीगढ़ के अब्दुल रज़्ज़ाक हज्जाम ने अपनी तीन लड़कियों को एक साथ ही कुएँ में डाल दिया ! इसके लिए अदालत ने उसे सात साल तक कठिन कारागार की सज़ा दी है । इसलिए ठण्ढा मौसिम आने पर श्रीजगद्गुरु ने इस फ़ैसले के विरुद्ध जेहाद करने का इरादा किया है, क्योंकि मियाँ हज्जाम का काम, इनकी राय में, उन लाखों हिन्दुओं के कामों की अपेक्षा अधिक दयापूर्ण, मनुष्यत्वपूर्ण, धर्मपूर्ण, सहृदयतापूर्ण और सलज्जतापूर्ण है, जो अपनी लड़कियों को बहत्तर सालों को अर्पण कर देते, बाल-विवाह को धार्मिक बताते और बाल-विधवाओं को ज़बर्दस्ती दाम्पत्य सुख से वञ्चित करके समाज में व्यभिचार फैलाते हैं ।

❀

अलीगढ़ी नाई—नहीं 'न्यायी', उन धर्मढोंगी महामहोपाध्यायों से लाख दर्जे बढ़ कर न्यायी और धर्मात्मा है, जिन्होंने सारदा-क़ानून के विरोध में चार-चार और छः-छः महीने के शिशुओं तक का विवाह कर डाला है । ऐसे मानव-कुल-कलङ्क, घोर नारकीयों और पापियों को छोड़ कर क़ानून को कोई अधिकार नहीं था, अब्दुल रज़्ज़ाक को दण्ड देने का । फलतः श्रीजगद्गुरु आपाद-मस्तक से इस फ़ैसले की निन्दा करते हैं ।

❀

हः हः हः हः ! 'इन्तहाए नशा में आता है होश, होशियारी इन्तहाए नशा है ।' बूढ़ी जहाँ खोपड़ी छोड़ कर लघुशङ्का करने या ज़रा सा दम लेने गई नहीं, कि हज़रत जामे से बाहर हुए । क्या लिखने को और क्या लिख गए ! अमाँ, छोटी-छोटी, भोली-भाली, आलुला-यित कुन्तला और धूलि-धूसरित ; स्नेह, ममता और प्रेम की पुतलियाँ विधवाएँ ही तो इस समाज की शोभा हैं । डाल दो मुट्ठी भर पिसा हुआ 'राई-नून' उन 'बदवीं'

आँखों में, जिन्हें वह अठारह इन्च का सुन्दर वर और चौदह इन्च की गुड़िया-सी दुलहिन अच्छी नहीं लगती, और नरक में पड़ें उस कम्बख़्त नास्तिक के सात पुरखे, जिनकी फूटी आँखें बेचारे बूढ़ों को, वर-वेश में देखना पसन्द नहीं करतीं।

❀

तुम्हें चाहिए था जगद्गुरु, कि इन अनुपम—अलौकिक दृश्यों के लिए सनातन-धर्म के आचार्यों की ख़ैर मनाते, उनके स्वास्थ्य का 'टोस्ट' पान करते, उनके दीर्घ-जीवन के लिए शाह मदार की मज़ार पर फूल-बताशे चढ़ाते! इष्ट देवता से प्रार्थना करते कि भगवन, ये चिकनी खोपड़ियाँ इतनी चिकनी हो जायँ, कि जिस तरह कमल के पत्ते पर पानी की बूँद चक्कर काटा करती और ठहर नहीं पाती, उसी तरह बुद्धि भी इन खोपड़ियों पर चक्कर मारा करे और ठहर न सके।

❀

मगों के मुल्क, अर्थात् ब्रह्मदेश से शुभ समाचार आया है, ये कि एक दिन थायेटमऊ की पुलिस-छावनी पर प्रायः ५०० सशस्त्र विद्रोहियों ने हमला किया। कैम्प में मिलिटरी पुलिस के थोड़े से सिपाही और तीन अङ्गरेज़ अफ़सर थे। उन्होंने झटपट २५-३० विद्रोहियों को मार गिराया और बाक़ी विद्रोही भाग गए। परन्तु धर्म की महिमा देखिए, कि इस युद्ध में पुलिस का कोई आदमी घायल तक नहीं हुआ।

❀

होता कैसे जनाब, इधर से छोड़ी जाती थीं गोलियाँ और अभागे विद्रोही छोड़ते थे, मथुरा के पेड़े और खुरचन के लड्डू। फलतः गोली लगते ही विद्रोही तो मर जाते थे और हमारी सरकार की पुलिस खुरचन की मिठाई चाभ कर मस्त हो जाती थी।

❀

इसी वजह से तो महीनों हो गए; मगर बरमा का विद्रोह शान्त नहीं हुआ। आख़िर ये मिठाई के मज़े छोड़े क्यों जाएँ? वरना जब 'थोड़े से सिपाही' ५०० विद्रोहियों को मार कर भगा सकते हैं, तो इस विद्रोह के दमन करने में धरा ही क्या है? इसलिए जगद्गुरु की राय है, कि इसे कुछ दिन योंही चलने दिया जाय, ताकि खुरचन खा-खाकर सिपाहियों की तोंदें श्री० जगद्गुरु की तोंद को भी मात करने लगें।

❀

महात्मा गाँधी भी, माशा अल्लाह, अजीब तर्ज़ो-अन्दाज़ के आदमी हैं। मौक़ा पाते ही बेचारे सनातन-धर्मावलम्बियों पर एक छींटा छोड़ देते हैं। उस दिन बम्बई की एक सभा में कहने लगे—"अस्पृश्यता हिन्दू जाति का कलङ्क है और जब तक यह दाग़ नहीं मिट जाएगा, तब तक हम स्वराज्य के योग्य नहीं हो सकते।" बला से नहीं हो सकते। आपको मालूम नहीं कि सारन और चम्पारन की देहाती स्त्रियाँ गलगण्ड (घेघा) रोग को हँसली का अड्डा समझती हैं और उसे सौन्दर्य का एक आवश्यक अङ्ग मानती हैं। फलतः वह 'कलङ्क' का 'दाग़' नहीं, 'वरन्' हिन्दुत्व के मस्तक का कौस्तुभ है। अस्पृश्यता ही न रही, तो इस धर्म में रही क्या जायेगा जनाब?

* * *

[आलोचक—श्री० अवध उपाध्याय]

आँखों में—लेखक हरिकृष्ण 'प्रेमी'। प्रकाशक कलाधर-किरण-मण्डल, लश्कर ग्वालियर। सोल एजेण्ट साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग। पृष्ठ-संख्या लगभग ८०; मूल्य १।)

यह कविता की एक छोटी सी पुस्तक है। जैसा कि पुस्तक के नाम से प्रकट है। इस ग्रन्थ के सभी पद्य आँख के सम्बन्ध में लिखे गए हैं और कुछ पद्य वास्तव में बड़े मनोहर हैं। ग्रन्थकार की वेदनाएँ सच्ची, स्वाभाविक तथा अपनी हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही निम्न-लिखित पद बहुत सुन्दर है :—

पीछे इन दुखिया जीवन के
ये पागल पन्ने खोलो,
पहले कलुषित हृदय-वेदना—
के निर्मल जल में धोलो।

कहीं-कहीं पर प्रेमी जी की भाषा अत्यन्त अधिक सरस, सुन्दर तथा मनोहर हो जाती है, जैसा कि नीचे के पदों के पढ़ने से ज्ञात होगा :—

आँखों में प्यारे दर्शन हैं
अङ्कित है पहली तस्वीर!
भले मिटाओ, पर न मिटेगी—
यह पत्थर की अमिट लकीर।
निष्ठुरता की रगड़ लगा कर—
व्यर्थ मिटाने का है यत्न,
जितनी रगड़ो, उज्ज्वल होगी
हाँ, चलने दो यही प्रयत्न!
तोड़-तोड़ कर शत-शत बन्धन
लाँघ-लाँघ कर लाखों कोट!
मेरा प्यार सदा तव चरणों—
पर बरबस जावेगा लोट!
मेरे आँसू के धागों से,
पानी की ज़ञ्जीरों से
काली पुतली के पिंजरे में
बन्दी हो तुम कीरों-से!
अन्तरपट पर अङ्कित है जो,
हो कैसे आँखों की ओट?
तुम्हें क़ैद रखने को काफ़ी—
है मेरी आँखों का कोट।
बहुत झिझकते थे तुम मुझसे
सेवा करवाने में नाथ!
आँखों में ही अब तो तुम हो,
सब कुछ है मेरे ही हाथ।

इसी प्रकार इस पुस्तक में अनेक सुन्दर पद्य हैं। इस पुस्तक की सब से बड़ी विशेषता मुझे यह प्रतीत होती है कि लेखक के विचार मौलिक कवितामय हैं। आजकल के कवियों के सिर पर काठिन्य दोष प्रायः मढ़ा जाता है, परन्तु इस पुस्तक की भाषा अत्यन्त ही सरल तथा सुन्दर है। 'प्रेमी' जी की कुछ उपमाएँ वास्तव में अत्यन्त अधिक मनोहर हैं। मेरा पूर्ण विश्वास है कि हिन्दी-साहित्य में इस ग्रन्थ को अच्छा स्थान प्राप्त होगा और 'प्रेमी' जी उच्च-श्रेणी के कवि मान लिए जायँगे। इस ग्रन्थ के अधिक छन्द ताटङ्क हैं और कुछ वीर भी हैं।

* * *

क़ैसर की रामकहानी—अनुवादक श्री० पारसनाथ सिंह। प्रकाशक भारती पब्लिशर्स लिमिटेड, पटना। पृष्ठ-संख्या १४४; मूल्य १)

जर्मन देश के सम्राट क़ैसर को सब लोग जानते हैं। गत यूरोपीय महाभारत का वही प्रधान सूत्रधार था। उसने अपनी रामकहानी स्वयं लिखी है। उसने अपने ग्रन्थ में इस बात के सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि यूरोपीय महाभारत में सब दोष इङ्गलैण्ड का है और स्वयं क़ैसर दूध का धुला हुआ है। क़ैसर ने इस पुस्तक में वास्तव में जर्मनी के लोगों के सामने अपनी कैफ़ियत पेश की है और अपने को निर्दोष सिद्ध करने का घोर प्रयत्न किया है।

* * *

'विशाल भारत' कार्यालय की पुस्तकें

(१) **कुमुदिनी**—लेखक श्री० रवीन्द्रनाथ ठाकुर। अनुवादक धन्यकुमार जैन। प्रकाशक "विशाल-भारत" पुस्तकालय, १९०।२ अपर सरकूलर रोड, कलकत्ता। पृष्ठ-संख्या ३८४; मूल्य ३)

(२) **गल्पगुच्छ**—लेखक श्री० रवीन्द्रनाथ ठाकुर। अनुवादक श्री० धन्यकुमार जैन। प्रकाशक "विशाल-भारत" पुस्तकालय। पृष्ठ-संख्या २२२; मूल्य १॥)

(३) **भेड़ियाधसान**—लेखक श्री०परशुराम। अनुवादक श्री० धन्यकुमार जैन। प्रकाशक "विशाल-भारत" पुस्तकालय। पृष्ठ-संख्या १७८, मूल्य १।)

'विशाल-भारत' ने श्री० रवीन्द्रनाथ ठाकुर की सब पुस्तकों का अनुवाद करना प्रारम्भ किया है। वास्तव में यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि अब हिन्दी के पाठकों को श्री० रवीन्द्र बाबू की सब पुस्तकें पढ़ने के लिए मिलेंगी। कुछ लोग अनुवाद के विरुद्ध जान पड़ते हैं। परन्तु वास्तव में यह भयङ्कर भूल है। मेरा विचार है कि सब भाषाओं के सर्व-श्रेष्ठ लेखकों की सब कृतियों का हिन्दी भाषा में अनुवाद होना, लाभदायक ही नहीं, वरन् आवश्यक भी है। ऐसी पुस्तकें आदर्श का भी काम देती हैं और उनसे यह भी पता चलता है कि दूसरी भाषा के सर्वश्रेष्ठ लेखक किस प्रकार लिखते हैं। उनसे यह भी पता चलता है कि सर्व-श्रेष्ठ लेखक की सब कृतियाँ भी अच्छी नहीं होतीं। 'कुमुदिनी' श्री० रवीन्द्रनाथ ठाकुर का एक उपन्यास है और गल्प-गुच्छ उनके गल्पों का संग्रह तथा भेड़ियाधसान ६ छोटी-छोटी हास्यात्मक कहानियों का संग्रह है। इन सब पुस्तकों के अनुवादक श्री० धन्यकुमार जी जैन हैं। अनुवाद वास्तव में बड़ा सुन्दर हुआ है।

* * *

दीपावली—लेखक बाबू चन्द्रभानुसिंह, भूमिका-लेखक श्री० रामचरित उपाध्याय। प्रकाशक हिन्दी पुस्तकालय, बलिया। पृष्ठ-संख्या ६६; मूल्य ॥)

यह छोटी-सी पुस्तक श्री० चन्द्रभानुसिंह की कविताओं का संग्रह है। कविताएँ अच्छी तथा सरस हैं। कहीं-कहीं पर लेखक की उक्तियाँ वास्तव में बड़ी सरस तथा मनोहर हैं। धन के सम्बन्ध की कविता वास्तव में बड़ी सुन्दर है :—

काम का है धन नहीं वह भार है, दुःख सार है।
कोष में सञ्चित जो रहता—आलसी व्यापार है॥
भूख से पीड़ित हुए ही भ्रातृवर मर जायँ सब।
पास से निकले न कौड़ी—सम्पदा वह क्षार है॥

श्री० चन्द्रभानुसिंह में कवि-हृदय का अस्तित्व पाया जाता है।

* * *

वीर-शिरोमणि यतीन्द्रनाथ दास—संग्रहकर्ता मुकुन्दराम शर्मा। प्रकाशक नवयुवक हितैषी पुस्तकालय, देहरादून। पृष्ठ-संख्या १०४; मूल्य ।॥)

इस पुस्तक में वीर-शिरोमणि यतीन्द्रनाथ दास का अच्छा तथा रोचक जीवन-चरित्र है।

* * *

प्राप्ति-स्वीकार

(१) **सांसारिक सुख**—लेखक पं० सोमेश्वरदत्त शुक्ल, बी० ए०। प्रकाशक अभ्युदय प्रेस प्रयाग; मूल्य ।)

(२) **पारलौकिक मनोवृत्ति का दुष्परिणाम**—लेखक प्रो० जी० आर० पाण्डेय। प्रकाशक ब्रजलाल 'आर्य' (जज), ईश्वर-भवन, लुधियाना। पृष्ठ-संख्या २८; मूल्य ।)

(३) **उपन्यास-कुसुम**—सम्पादक श्री० दुलारेलाल श्रीवास्तव; मूल्य प्रति अङ्क ।)

(४) **उत्तराखण्ड की यात्रा**—लेखक श्री० मथुराप्रसाद। प्रकाशक राधारमण कान्त, विश्वेश्वरगञ्ज, बनारस सिटी। पृष्ठ-संख्या १५४; मूल्य ॥)

(५) **सन्त-जीवनी**—लेखक—गिरिजाकुमार घोष। प्रकाशक साहित्य-परिषद कार्यालय, गुरुकुल काँगड़ी। पृष्ठ-संख्या १०२; मूल्य ।॥)

(६) **साम्य-तत्व**—लेखक मास्टर चन्द्रिका प्रसाद वाथम, लखनऊ। प्रकाशक श्री० सरस्वती साहित्य-मन्दिर कार्यालय, ६६६ सआदतगञ्ज रोड लखनऊ। पृष्ठ-संख्या ११८; मूल्य ॥=)

(७) **त्रिगर्तोद्धारक शतक काव्य**—लेखक श्री० वृहद्बल 'संयमी' शास्त्री। प्रकाशक ब्रजलाल 'आर्य' (जज) ईश्वर-भवन, लुधियाना। पृष्ठ-संख्या ५६; मूल्य ।-)

* * *

शीघ्रता कीजिए !
नहीं तो पछताना पड़ेगा !!
मूल्य लागत मात्र केवल ४) रु०
स्थायी ग्राहकों से केवल ३) रु०
व्यङ्ग-चित्रावली
यह चित्रावली भारतीय समाज में प्रचलित वर्तमान कुरीतियों का जनाज़ा है। इसके प्रत्येक चित्र दिल पर चोट करने वाले हैं। चित्रों को देखते ही पश्चात्ताप एवं वेदना से हृदय तड़पने लगेगा ; मनुष्यता की याद आने लगेगी ; और सामाजिक क्रान्ति की भावना प्रबल वेग से हृदय में उमड़ने लगेगी। प्रत्येक सामाजिक कुरीतियों का चित्रों द्वारा नग्न प्रदर्शन किया गया है। बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, छुआछूत, परदा-प्रथा, पण्डे-पुरोहितों तथा साधु-महन्तों के भयङ्कर कारनामे, अन्ध-विश्वास, पाखण्ड तथा आचरण सम्बन्धी नाना प्रकार की नाशकारी कुरीतियों का सजीव चित्र देखना हो तो इस चित्रावली को अवश्य मँगाइए। एकरङ्गे, दुरङ्गे, तथा तिरङ्गे चित्रों की संख्या लगभग २०० है। प्रत्येक चित्रों के नीचे बहुत ही सुन्दर पद्यमय पंक्तियों में उनका भाव तथा परिचय अङ्कित किया गया है। आज तक ऐसी चित्रावली कहीं से प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य केवल ४); स्थायी ग्राहकों से ३)
स्मृति-कुञ्ज
नायक और नायिका के पत्रों के रूप में यह एक दुखान्त कहानी है। हृदय के अन्तःप्रदेश में प्रणय का उद्भव, उसका विकास और उसकी अविरत आराधना की अनन्त तथा अवि-च्छिन्न साधना में मनुष्य कहाँ तक अपने जीवन के सारे सुखों की आहुति कर सकता है—ये बातें इस पुस्तक में अत्यन्त रोचक और चित्ताकर्षक रूप से वर्णन की गई हैं। आशा-निराशा, सुख-दुख, साधन-उत्सर्ग, एवं उच्चतम आराधना का सात्विक चित्र पुस्तक पढ़ते ही कल्पना की सजीव प्रतिमा में चारों ओर दीख पड़ने लगता है। मूल्य केवल ३) ; स्थायी ग्राहकों से २।)
मूर्खराज
यह वह पुस्तक है, जो रोते हुए आदमी को भी एक बार हँसा देती है। कितना ही चिन्तित व्यक्ति क्यों न हो, केवल एक चुटकुला पढ़ने से ही उसकी सारी चिन्ता काफ़ूर हो जायगी। दुनिया के झंझटों से जब कभी आपका जी ऊब जाय, इस पुस्तक को उठा कर पढ़िए, मुँह की मुर्दनी दूर हो जायगी, हास्य की अनोखी छटा छा जायगी। पुस्तक को पूरी किए बिना आप कभी न छोड़ेंगे—यह हमारा दावा है। इसमें किशनसिंह नामक एक महामूर्ख व्यक्ति की मूर्खतापूर्ण बातों का संग्रह है। भाषा अत्यन्त सरल तथा मुहावरेदार है। मूल्य केवल २)
अपराधी
सच जानिए, अपराधी बड़ा क्रान्तिकारी उपन्यास है। इसे पढ़ कर आप एक बार टॉल्सटॉय के "रिज़रेक्शन" विक्टर ह्यूगो के "लॉ मिज़रेबुल" इबसन के "डॉल्स हाउस" गोस्ट और ब्रियो का "डैमेज़्ड गुड्स" या "मेटरनिटी" के आनन्द का अनुभव करेंगे। किसी अच्छे उपन्यास की उत्तमता पात्रों के चरित्र-चित्रण पर सर्वथा अवलम्बित होती है। उपन्यास नहीं, यह सामाजिक कुरीतियों और अत्याचारों का जनाज़ा है !!
सच्चरित्र, ईश्वर-भक्त विधवा बालिका सरला का आदर्श जीवन, उसकी पारलौकिक तल्लीनता, बाद को व्यभिचारी पुरुषों की कुदृष्टि, सरला का पतित किया जाना, अन्त को उसका वेश्या हो जाना, ये सब ऐसे दृश्य समुपस्थित किए गए हैं, जिन्हें पढ़ कर आँखों से आँसुओं की धारा बह निकलती है। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल तथा मधुर है। मूल्य केवल लागत मात्र २॥), स्थायी ग्राहकों से १।।।=)
व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग

की

कुछ उत्तमोत्तम पुस्तकें

धार्मिक पुस्तकें

सचित्र हिन्दी महाभारत—महाभारत का ऐसा प्रामाणिक और सुन्दर संस्करण आज तक और कहीं भी नहीं प्रकाशित हुआ। भाषा इतनी सरस और सरल है कि बूढ़े-जवान और स्त्री-बच्चे सभी इससे लाभ उठा सकते हैं। रङ्ग-बिरङ्गे और भावपूर्ण चित्रों की भरमार है। अब तक इसके २९ अङ्क प्रकाशित हो चुके हैं। प्रति अङ्क का मूल्य १।) और स्थायी ग्राहकों से १)

हिन्दी महाभारत—यह पुस्तक महाभारत के अठारह पर्वों की कथा का संक्षिप्त वर्णन है। सचित्र और सजिल्द पुस्तक का मूल्य ४)

महाभारत-मीमांसा—महाभारत-सम्बन्धी शङ्काओं का इसमें समाधान किया गया है। महाभारत पढ़ने से पहले यह पुस्तक एक बार अवश्य पढ़ लेनी चाहिए। मूल्य ४), महाभारत के स्थायी ग्राहकों के लिए केवल २॥)

रामचरित-मानस (सटीक)—रामचरित-मानस का यह संस्करण काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा के प्रतिष्ठित सदस्यों से शुद्ध करा कर प्रकाशित किया गया है। इसके टीकाकार हैं रायसाहब बाबू श्यामसुन्दर दास जी, बी० ए०। मूल्य ६)

दार्शनिक और आध्यात्मिक पुस्तकें

ज्ञानयोग (प्रथम और द्वितीय खण्ड)—इस पुस्तक में स्वामी विवेकानन्द के ज्ञानयोग-सम्बन्धी उन व्याख्यानों का संग्रह किया गया है जो उन्होंने योरप तथा अमेरिका में दिए थे। प्रत्येक खण्ड का मूल्य २॥)

ज्ञानेश्वरी—मराठी-साहित्य के उद्भट विद्वान् तथा सन्त श्री० ज्ञानेश्वर महाराज कृत गीता की व्याख्या का हिन्दी अनुवाद। मूल्य ४)

कर्मवाद और जन्मान्तर—यह बङ्गाल के सुप्रसिद्ध दार्शनिक बाबू हीरेन्द्रनाथ दत्त, एम० ए०, बी० एल०, 'वेदान्त-रत्न' की बँगला पुस्तक का अनुवाद है। इसके पढ़ने से कर्म के सम्बन्ध में बहुत सी विलक्षण बातें मालूम होंगी और जन्मान्तर होने के विलक्षण उदाहरण देखने को मिलेंगे। मूल्य केवल २॥)

गीता में ईश्वरवाद—यह पुस्तक भी उक्त लेखक की बँगला पुस्तक का अनुवाद है। इसमें ईश्वरवाद के सम्बन्ध में सभी प्रकार के सुप्रसिद्ध दार्शनिकों के मत संगृहीत किए गए हैं। मूल्य १॥)

साहित्यिक पुस्तकें

हिन्दी-भाषा और साहित्य—इस पुस्तक को रायसाहब बाबू श्यामसुन्दर दास, बी० ए० ने अपने अनेक वर्षों के अनुभव और परिश्रम-पूर्वक एकत्र की हुई सामग्री की सहायता से बड़ी छानबीन के साथ लिखा है। इसमें हिन्दी-साहित्य के प्रत्येक युग की मुख्य-मुख्य विशेषताओं तथा साहित्यिक प्रगति का उल्लेख किया गया है। मूल्य ६)

हिन्दी-साहित्य का इतिहास—इस पुस्तक में हिन्दी-साहित्य के इतिहास का विवेचनात्मक रूप से वर्णन किया गया है। इसके लेखक हैं, काशी हिन्दू-विश्वविद्यालय के हिन्दी-लेक्चरर पण्डित रामचन्द्र जी शुक्ल, बी० ए०। मूल्य केवल ४॥)

तुलसी ग्रन्थावली—इस पुस्तक में गोस्वामी तुलसीदास जी की समस्त रचनाओं का संग्रह, उनकी जीवनी तथा उनकी रचनाओं के सम्बन्ध में आलोचनात्मक निबन्ध हैं। पुस्तक तीन खण्डों में विभक्त है। प्रत्येक खण्ड का मूल्य २॥) और एक साथ लेने से तीनों का मूल्य ६)

हिन्दी रस-गङ्गाधर—यह संस्कृत के उद्भट विद्वान पण्डितराज जगन्नाथ के ग्रन्थ का हिन्दी-रूपान्तर है। आरम्भ में १०६ पृष्ठों में ग्रन्थकार का परिचय तथा विषय-विवेचन आदि है, जिससे ग्रन्थ को समझने में बड़ी सहायता मिलती है। मूल्य ३॥)

ऐतिहासिक पुस्तकें

मौर्य साम्राज्य का इतिहास—मौर्यकालीन भारत का यह बहुत प्रामाणिक तथा मौलिक इतिहास है। इस पुस्तक के लेखक श्रीयुत सत्यकेतु विद्यालङ्कार जी को ऐसी उत्तम और खोजपूर्ण पुस्तक लिखने के लिए हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से १२००) बारह सौ रुपए का मङ्गलाप्रसाद पुरस्कार मिला है। मूल्य ५)

योरप का इतिहास—यह श्रीयुत भाई परमानन्द, एम० ए० द्वारा लिखित योरप का बहुत ही प्रामाणिक और बिलकुल नए ढङ्ग का इतिहास है। मूल्य ४)

फ़्रान्स का इतिहास—फ़्रान्स की राज्यक्रान्ति में अत्याचार-पीड़ित जनता ने कैसा उग्र रूप धारण किया था और एकसत्तात्मक प्रणाली के पक्षपातियों को उनकी करनी का जो मज़ा चखाया था, इस पुस्तक की प्रभावशालिनी पंक्तियों में उसका विवरण पढ़ कर आपके हृदय में एक नवीन उत्साह का सञ्चार होगा। मूल्य ३)

विवरण के लिए बड़ा सूचीपत्र मँगाइए!

मिलने का पता :—

मैनेजर (बुकडिपो) इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग

Printed and Published by Tribeni Prasad B. A.—Editor, at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonston Road, C

THE BHAVISHYA

सम्पादक :—
प्रो० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ... १२) रु०
छः माही चन्दा ... ६।) रु०
तिमाही चन्दा ... ३।) रु०
एक प्रति का मूल्य चार आने
Annas Four Per Copy

भविष्य

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़ी कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़्ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए।

वर्ष १, खण्ड ३

इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; ७ मई, १९३१

संख्या ८, पूर्ण संख्या ३२

वर्ष १, खण्ड ३ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; ७ मई, १९३१ | सं० ८, पूर्ण सं० ३२

बर्मा में विद्रोह की भीषण ज्वाला

जेल में रिवॉल्वर, गोलियाँ तथा बम बनाने का सामान मिला !

स्व० सरदार भगतसिंह आदि के स्मारक के लिए १० लाख की अपील

पेशावर में विदेशी कपड़े की दूकानों पर रात-दिन पिकेटिङ्ग : : कलकत्ते में श्री० पूर्णचन्द्र दास गिरफ़्तार

(एसोसिएटेड प्रेस द्वारा ७वीं मई के प्रातःकाल तक आए हुए 'भविष्य' के विशेष तार)

—चिटगाँव की परिस्थिति में अभी तक किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ है। वहाँ का वातावरण अभी तक ख़तरे से ख़ाली नहीं है। समस्त ज़िले में विप्लवकारियों का आतङ्क छाया हुआ है। पग-पग पर किसी भीषण आक्रमण की सम्भावना है, इसी कारण अधिकारियों ने अस्त्र-शस्त्र बेचने वाले दूकानदारों तक के सारे हथियार, बारूद और गोलियाँ अपने क़ब्ज़े में कर ली हैं। २९ अप्रैल का समाचार है कि २०० गोरखों का एक विशेष जत्था भी नगर के रक्षार्थ बुलाया गया है।

७वीं मई के प्रातःकाल का तार है कि उन अभियुक्तों के सेल (जेल की कोठरी) में से, जिन पर षड्यन्त्र के सम्बन्ध में एक विशेष ट्रिब्यूनल की अदालत में मामला चल रहा है—२रिवॉल्वर, कुछ गोलियाँ और बम बनाने का सामान बरामद हुआ है, कहा जाता है, ये कुल चीज़ें उस समय ज़मीन में गड़ी हुई मिलीं, जबकि मरम्मत के लिए जगह खोदी गई थी ! जेल में पहरे का बहुत कड़ा प्रबन्ध कर दिया गया है। शहर में कर्फ़्यू ऑर्डर भी जारी है।

—कलकत्ते का ६ठी मई की रात का तार है कि बङ्गाल प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी के मन्त्री श्री० पूरनचन्द्र दास आज जैसे ही ढाका मेल से सियालदा में उतरे, वैसे ही ख़ुफ़िया पुलिस द्वारा गिरफ़्तार कर लिए गए। अभियोग का अभी तक पता नहीं चला है।

—लाहौर का ३०वीं अप्रैल का समाचार है, कि स्थानीय ब्रेडलॉ हॉल की एक सभा में इस आशय का प्रस्ताव पास किया गया, कि सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु तथा श्री० सुखदेव के स्मारक के लिए १० लाख रुपया इकट्ठा किया जाय। इसी निश्चय के अनुसार डॉ० अन्सारी, श्री० जे० एम० सेनगुप्त, श्री० सत्यमूर्त्ति, पं० जवाहरलाल नेहरू, पं० मदनमोहन मालवीय, मौलाना अब्दुलकलाम आज़ाद, श्री० के० एफ़० नरीमन, श्री० शिवप्रसाद गुप्त, श्री० अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, डॉ० महमूद, डॉ० किचलू, पं० सन्तानम्, डॉ० आलम तथा अन्य महानुभावों की एक कार्यकारिणी समिति क़ायम की गई है।

—रङ्गून के समाचारों से विदित होता है, कि विद्रोहियों का दमन अभी पूर्ण-रूप से नहीं हो सका है। इन्सीन और हेनज़ादा आदि स्थानों में विद्रोहियों ने उपद्रव मचा रक्खा है। ४थी मई का समाचार है कि ४० विद्रोहियों ने थॉयेटमेयो के किसी मुखिया के यहाँ डाका डाला। उसके यहाँ सरकारी काग़ज़-पत्र तथा रुपए-पैसे—जो कुछ मिले, विद्रोही लेकर चलते बने। इन्सीन से भी इसी प्रकार के दो डाके की ख़बर आई हैं। हेलगु का कोर्ट हाउस भी जला डाला गया है।

—रङ्गून का ७वीं मई के प्रातःकाल का तार है, कि कलम्योमा नामक गाँव में प्रोम ज़िला के सुपरिण्टेण्डेण्ट-पुलिस श्री० डब्ल्यू० एच० ऑस्टिन तथा पुलिस के एक जत्थे की ६० विद्रोहियों से मुठभेड़ हो गई। कल प्रातःकाल पुलिस के एक दारोग़ा साहब ३ सिपाहियों के साथ सही-सलामत लौटे और वेटिगन से ११ फ़ौजी जवानों को लेकर फिर घटनास्थल पर पहुँचे। वहाँ उन्हें १००विद्रोहियों ने घेर लिया, जिनमें से कहा जाता है, ७ मार डाले गए और कई घायल हुए। इसके दो घण्टे बाद प्रोम के डिप्टी कमिश्नर भी पुलिस के एक जत्थे के साथ घटनास्थल पर पहुँचे, उन्हें कुछ सिपाही तो मिले, लेकिन मि० ऑस्टिन का पता नहीं चला। ऐसा अनुमान किया जाता है, कि वे विद्रोहियों द्वारा मार डाले गए।

—'इण्डियन डेलीमेल' को विश्वस्त-सूत्र से पता चला है, कि महात्मा गाँधी ने गोलमेज़ परिषद में सहायता देने के लिए एक मन्त्रि-मण्डल नियुक्त किया है। उसमें निम्न-लिखित लोग हैं :—श्री० के० एफ़० नरीमैन, श्री० जमनालाल बजाज, श्री० जयरामदास दौलतराम, श्री० जे० एम० सेन गुप्त, और डॉ० आलम।

—ख़बर है कि ख़ाँ अब्दुल ग़फ़्फ़ार तथा उनके बड़े भाई डॉ० ख़ाँ साहिब को इस आशय के पत्र मिले हैं कि यदि वे राष्ट्रीय कार्यों में भाग लेना बन्द नहीं करेंगे, तो उन्हें देश-निकाले की सज़ा दी जायगी।

—कराँची कॉङ्ग्रेस से लौटने के बाद से ख़ाँ अब्दुल ग़फ़्फ़ार सीमाप्रान्त के अफ़ग़ानी जिरगों को सङ्गठित करने के लिए भ्रमण कर रहे हैं। शेरपाव, टाँगी, अबजाई आदि स्थानों में आप भ्रमण कर चुके हैं। जगह-जगह सहस्रों नर-नारियों ने आपका स्वागत किया ! आपने सबों से खद्दर अपनाने की अपील की। शङ्करगढ़ की एक बृहत सभा में आपने हिन्दू और मुसलमानों को आपस में सद्भाव बनाए रखने के लिए कहा।

—पेशावर के विदेशी कपड़े की दूकानों पर रात-दिन धरना जारी है। व्यापारियों ने समझौता करने के लिए ४ दिन का समय माँगा है। ४वीं मई की ख़बर है, कि गत रात्रि के समय फेरी देते हुए, एक स्वयंसेवक ने किसी मनुष्य को विदेशी कपड़े की गाँठ ले जाते हुए पकड़ा। वह मनुष्य एक दूकानदार का नौकर था, और वह अपने मालिक की आज्ञा से उन गाँठों को हटा रहा था। दूकानदार ने फिर इस प्रकार की चालबाज़ी न करने की प्रतिज्ञा की है।

—अलीगढ़ की कॉङ्ग्रेस कमिटी को इस आशय की ख़बर मिली है कि स्थानीय ज़मीन्दार अपने रैय्यतों से कर वसूल करने के लिए बड़ी बेरहमी कर रहे हैं। वे उन्हें नाना प्रकार के कष्ट देते हैं, तथा बुरी तरह पीटते हैं। किसानों में कर चुकाने की शक्ति नहीं है। स्थानीय कॉङ्ग्रेस कमिटी ज़िला मैजिस्ट्रेट के पास, इन बेचारे किसानों के ऊपर किए जाने वाले अत्याचारों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करने के लिए, एक डेपूटेशन भेजने वाली है।

—अलीगढ़ से एक सज्जन लिखते हैं कि आन्दोलन के समय जिन कॉङ्ग्रेस कार्यकर्त्ताओं की जायदादें, जुर्माने न देने के वजह से ज़ब्त कर ली गई थीं, वे अभी तक लौटाई नहीं गई हैं। कहा जाता है कि वे जायदादें नीलाम पर चढ़ाई जाने वाली हैं। ज़िला मैजिस्ट्रेट का ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया है।

—नागपुर का २री मई का समाचार है, कि 'जनरल' आवारी के कुछ अनुयायी धरना देते समय गिरफ़्तार कर लिए गए।

—लाहौर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि भाई सज्जनसिंह अपनी सज़ा काट कर रावलपिण्डी जेल से आ गए हैं। आपकी गिरफ़्तारी सत्याग्रह आन्दोलन के सम्बन्ध में हुई थी, पर गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार आप नहीं छोड़े गए थे।

जेल के सम्बन्ध में आपका कहना है, कि रावलपिण्डी जेल में इस समय ३८ सत्याग्रही क़ैदी हैं। सभी क़ैदियों का स्वास्थ्य ख़राब है। इनका वज़न बहुत घट गया है। इनमें अधिकांश लोगों को अतीसार हो गया है। लोग जेल के डॉक्टर की शिकायत करते हैं। मास्टर उजागर सिंह, श्री० भगवानदास, श्री० ईश्वरसिंह लम्बरदार, सरदार गुरुदत्तसिंह और सरदार सन्तोकसिंह, सेलों में बन्द रक्खे जाते हैं। मास्टर उजागरसिंह तो चौबीसों घण्टे सेल ही में बन्द रक्खे जाते हैं। चिन्ताजनक अवस्था होने पर भी ये लोग अस्पताल में भर्ती नहीं किए गए हैं।

—लाहौर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि सरदार अर्जुनसिंह मियाँवली जेल से छूट कर आ गए हैं। मास्टर काबुलसिंह के विषय में उनका कहना है, कि उनकी दशा बहुत ही चिन्ताजनक हो रही है। पहले उन्हें ३ साल की सज़ा दी गई थी, किन्तु अनशन करने के कारण उन्हें ७ माह की और सज़ा दी गई। उनके छूटने में अभी १५ मास बाक़ी हैं, किन्तु उनका स्वास्थ्य बहुत गिर गया है। उनका कान ख़राब हो गया है, फलतः वे सुन नहीं सकते। पाचन-शक्ति इतनी ख़राब हो गई है, कि दूध भी नहीं पचा सकते। ऐसी अवस्था में भी वे सेल में बन्द रक्खे गए हैं और उन्हें नित्य अपने हिस्से का काम करना पड़ता है।

—लाहौर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि बिलगा वालों ने एक राजनैतिक परिषद करने का निश्चय किया है। इस ख़बर ने वहाँ के अधिकारियों को चिन्तित कर दिया है। इस हौवे से जनता को अलग रखने के लिए वे नाना प्रकार के उपायों का अवलम्बन कर रहे हैं। कहा जाता है, कि एक अफ़वाह यह उड़ाई गई है कि यदि परिषद हुई तो गाँव में प्युनिटिव पुलिस बिठा दी जायगी। दूसरी अफ़वाह यह है, कि स्वागतकारिणी के अध्यक्ष श्री० उजागरसिंह तथा अन्य कॉङ्ग्रेस-कार्यकर्त्ता बहुत शीघ्र ही गिरफ़्तार कर लिए जायँगे। इन सब अफ़वाहों के होते हुए भी बहुत लोग कॉङ्ग्रेस के सदस्य बन गए हैं।

—पेशावर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि पञ्जाब-गवर्नर-गोली-काण्ड के अभियुक्त श्री० हरिकिशन के पिता श्री० गुरुदासमल फ़्रॉण्टियर क्राइम्स रेगुलेशन की ४०वीं धारा के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। कहा जाता है, कि आप पर अनुचित राजनैतिक कार्यवाहियों में भाग लेने का अभियोग लगाया गया है। आप मर्दान के अतिरिक्त-असिस्टेण्ट-कमिश्नर के सामने पेश किए गए। पुलिस के दो गवाहों ने आपकी कार्यवाही के सम्बन्ध में बयान दिया। आपका मामला अब असिस्टेण्ट-कमिश्नर की अदालत में पेश है।

—हमीरपुर का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि होशियारपुर ज़िला कॉङ्ग्रेस कमिटी के एक प्रमुख कार्यकर्ता, स्वामी बसन्त कमलदेव, भारतीय दण्ड-विधान की १०९वीं धारा के अनुसार यहाँ गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। आप हाल ही में सज़ा काट कर जेल से लौटे थे।

—बारडोली का २७वीं अप्रैल का समचार है, कि गत सत्याग्रह आन्दोलन में, स्थानीय अकोटि नामक ग्राम के किसानों को बहुत हानि सहनी पड़ी है। जब महात्मा जी वहाँ गए तो किसानों ने उनसे कहा कि उनकी २०,०००) रुपए की जायदाद केवल १,४००) रुपए में नीलाम कर दी गई है। वे दाने-दाने को मुहताज हो रहे हैं और कॉङ्ग्रेस की सहायता के बल पर जी रहे हैं। परन्तु इतने पर भी मामलतदार उनसे लगान माँग रहे हैं!

महात्मा जी ने उन लोगों से कहा, कि ऐसी अवस्था में वे समझौते की शर्तों के अनुसार कुछ समय के बाद भी लगान चुका सकते हैं। यदि वे लगान देने में समर्थ हैं, तो उन्हें इन्कार नहीं करना चाहिए, और यदि नहीं दे सकते हों तो इन्कार करने से डरना भी नहीं चाहिए; किन्तु ऐसी हालत में उसका फलाफल भोगने के लिए भी उन्हें तैयार रहना चाहिए।

—डेराइस्माइल ख़ाँ का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि एक स्थानीय व्यापारी ने, प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद फिर विदेशी कपड़े बेंचना शुरू कर दिया था। कॉङ्ग्रेस वालों ने उससे विदेशी कपड़े न बेंचने की प्रार्थना की, किन्तु उस व्यापारी ने उनकी प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया। अन्त में लाचार होकर उसकी दूकान पर शान्तिमय पिकेटिङ्ग की गई, जिसके फल-स्वरूप उसे माफ़ी माँगनी पड़ी और उसने भविष्य में विदेशी कपड़े न बेंचने की प्रतिज्ञा की।

—दिल्ली का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि चननशाह नामक एक पेशावरी पठान राजद्रोह के अभियोग में गिरफ़्तार किया गया है। कहा जाता है, कि एक सार्वजनिक सभा में, जिसमें ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ का भाषण हुआ था, इस पठान ने कुछ राष्ट्रीय गाने गाए थे।

—बोरसद का ३०वीं अप्रैल का समाचार है, कि आज एसोसिएटेड प्रेस के प्रतिनिधि मि० जेम्स ए० मिल्स के साथ बातें करते समय, न्यूयार्क की 'फ़ॉक्स मूवीटोन न्यूज़' नामक एक फ़िल्म-कम्पनी ने टॉकी सिनेमा के लिए महात्मा जी का फ़िल्म ले लिया। टॉकी सिनेमा के लिए महात्मा जी का यह पहला फ़िल्म लिया गया है।

—मुलतान से एक विचित्र घटना की ख़बर आई है। कहा जाता है, कि एक मुसलमान क़ुरान के कुछ पन्नों में विष्ठा लपेट कर मस्जिद में फेंकने ही जा रहा था, कि लोगों ने उसे पकड़ लिया। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही उस पर थूकने लगे। मालूम नहीं, मस्जिद को अपवित्र करने का उसका क्या उद्देश्य था?

* * *

—लन्दन का २७वीं अप्रैल का समाचार है, कि मि० बेन ने हाउस ऑफ़ कॉमन्स के एक कॉन्ज़रवेटिव सदस्य मि० फ़्रीमेन को बतलाया है, कि सत्याग्रह आन्दोलन के ७२९ क़ैदी अभी नहीं छोड़े गए हैं। बेन महोदय ने कहा है कि इनमें ७१६ क़ैदियों पर समझौते की शर्तें लागू नहीं होतीं, और शेष १३ का मामला अभी विचाराधीन है।

—लन्दन का २८वीं अप्रैल का समाचार है, कि लिवरपूल की एक कॉन्ज़रवेटिव सभा में भाषण देते हुए मि० बाल्डविन ने कहा कि यदि गाँधी-इर्विन समझौते की शर्तों का पूरा-पूरा पालन नहीं किया गया, तो बड़ी हानि होगी। जब तक भारत साथ नहीं देगा; ब्रिटिश साम्राज्य की आर्थिक एकता कभी पूर्ण नहीं हो सकती। भारतीय आन्दोलन की ख़बरों से लङ्काशायर के चिन्तित होने का उचित कारण है। इसीलिए यह उचित है कि हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स और हाउस ऑफ़ कॉमन्स दोनों में इस विषय पर विचार किया जाय। इससे हमारी अनेक कठिनाइयाँ दूर हो जाएँगी।

—लन्दन का २९वीं अप्रैल का समाचार है, कि वहाँ के दो कॉफ़ी हाउसों ने भारतीय छात्रों को भीतर आने देने से इन्कार कर दिया है। कहा जाता है कि एडिनबरा विश्वविद्यालय के छात्रों की प्रतिनिधि-सभा ने इसका ज़ोरों से विरोध किया है। २८वीं अप्रैल की रात को कुछ यूरोपियन और भारतीय विद्यार्थियों का डेपुटेशन उनके पास गया। यूरोपियन छात्रों को, तो भीतर जाने की अनुमति मिल गई, किन्तु भारतीय छात्रों को नहीं जाने दिया गया। इस पर यूरोपियन छात्रों ने कॉफ़ी हाउस में उपस्थित सज्जनों से इस मामले में भाग लेने के लिए अनुरोध किया। उन सज्जनों ने तुरन्त उस कॉफ़ी हाउस को छोड़ दिया! उस सभा ने कॉफ़ी हाउसों से इस प्रकार की अनुचित बाधाओं को उठा देने की प्रार्थना की है। उसने यह भी कहा है कि यदि ऐसा नहीं किया गया तो वे उन कॉफ़ी हाउसों का बहिष्कार कर देंगे।

—पेशावर के ३०वीं अप्रैल के एक समाचार से मालूम पड़ता है, कि अफ़ग़ानिस्तान औद्योगिक उन्नति की चेष्टा कर रहा है। कहा जाता है, कि यूरोप से कुछ मैशीनें मँगाई जा रही हैं, जिनसे काबुल में सूत कातने और कपड़े बनाने के कारख़ाने खोले जायँगे। इसके अतिरिक्त जलालाबाद में काग़ज़ बनाने का कारख़ाना और कन्दहार में ऊनी कपड़े का कारख़ाना भी खोला जायगा।

—लन्दन का ९वीं मई का समाचार है, कि आज भूमि-कर के सम्बन्ध में बहस होते समय, हाउस ऑफ़ कॉमन्स में एक विचित्र घटना हुई। महिलाओं की गैलरी से एक २२ वर्ष की युवती महिला ने बहस होते समय तीन बार गर्ज कर कहा—"मेरठ के क़ैदियों को छोड़ दो!" मामला यहाँ तक बढ़ा, कि पुलिस को हस्तक्षेप करना पड़ा। उक्त महिला वहाँ से हटा दी गई।

* * *

लाहौर की पुलिस तथा विप्लववादियों में भयङ्कर मुठभेड़

दोनों ओर से गोलियों की बौछार :: पुलिस के छः आदमी घायल

एक क्रान्तिकारी की मृत्यु :: श्री० सुखदेवराज घायल और गिरफ़्तार

३री मई को लाहौर के शालामार बाग़ में, जहाँ किसी समय मुग़ल बादशाह विलासामोद में निमग्न रहा करते थे, एक सनसनीपूर्ण घटना हो गई। पुलिस और दो विप्लववादी नौजवानों में देर तक गोलियाँ चलती रहीं। एक नौजवान, जिसका नाम श्री० जगदीशचन्द्र बताया जाता है; मारा गया और दूसरा जिसका नाम श्री० सुखदेवराज बताया जाता है और जो लाहौर षड्यन्त्र, बम्बई षड्यन्त्र तथा लेमिङ्गटन रोड षड्यन्त्र केसों का पलातक अभियुक्त बताया जाता है—ज़ख़्मी होकर गिरफ़्तार हो गया !

शालामार बाग़ पर घेरा

कहा जाता है, कि घटना के दिन सन्ध्या को ५-६ बजे के बीच लाहौर के किसी कॉलेज के एक विद्यार्थी ने लाहौर पुलिस के ख़ुफ़िया-विभाग को सूचना दी, कि श्री० सुखदेवराज और उसका एक साथी, शालामार बाग़ में मौजूद हैं। इस सूचना के पाते ही लाहौर-पुलिस और स्पेशल पुलिस के जवान बन्दूक़ों और रिवॉल्वरों से लैस होकर, अपने तमाम बड़े-बड़े अफ़सरों की निगरानी में, उपर्युक्त बाग़ के पास जा पहुँचे और उसे चारों ओर से घेर लिया। बाग़ के अन्दर जाने का जो रास्ता सड़क की ओर है, वहाँ पचास सशस्त्र सिपाही तैनात कर दिए गए। ऐसा मालूम होने लगा, कि पुलिस का यह विशाल दल किसी अतीव शक्तिशाली शत्रु का सामना करने की तैयारी में है।

पुलिस का बाग़ में प्रवेश

समस्त अत्यावश्यक पेश-बन्दियों के बाद, पुलिस के कुछ अफ़सर सिपाहियों की एक टोली के साथ बड़ी सावधानी से बाग़ के अन्दर दाख़िल हुए। उस समय पुलिस के सभी सिपाही बड़ी सतर्कता से अपनी बन्दूक़ें तैयार किए हुए और अफ़सर अपनी-अपनी पिस्तौलें हाथ में पकड़े हुए थे।

गिरफ़्तारी की सूचना

ज्योंही पुलिस ने बाग़ के भीतर प्रवेश किया, कहा जाता है, कि पुलिस ने दोनों नौजवानों को ललकार कर कहा कि 'इनको गिरफ़्तार कर लिया गया'। परन्तु वे दोनों नौजवान आपस में बातें कर रहे थे, उन्होंने पुलिस की इस आज्ञा की ओर विशेष ध्यान न दिया।

गोलियों की बौछार

इस पर कहा जाता है, कि पुलिस की ओर से गोली चलाई गई। यह नहीं कहा जा सकता, कि कितने फ़ायर हुए। परन्तु ऐसा मालूम होता है, कि पुलिस के फ़ायरों के परिणाम-स्वरूप दोनों नवयुवक घायल हो गए।

नियमानुसार युद्ध का दृश्य

जिस समय दोनों नौजवान घायल हुए। कहा जाता है, कि इनमें से एक श्री० जगदीश ने अपने पॉकेट से पिस्तौल निकाल कर फ़ायर करना आरम्भ कर दिया। इधर से पुलिस ने भी गोलियों की झड़ी लगा दी। इससे चन्द मिनटों के लिए यह शाही बाग़, जहाँ लोग सैर के लिए जाया करते हैं, समर-क्षेत्र बन गया।

श्री० जगदीश की मृत्यु !

इस अवसर में कहा जाता है, कि श्री० जगदीश की छाती, पेट तथा गले में कई गोलियाँ लगीं, जिससे वह घायल होकर ज़मीन पर गिर पड़ा और गिरते ही उसके प्राण निकल गए !

पुलिस को साधारण चोट

कहा जाता है, कि श्री० सुखदेव ने कई फ़ायर किए, परन्तु पुलिस के आदमियों में से किसी को ज़्यादा चोटें न लगीं। सिर्फ़ पाँच-छः सिपाही थोड़े-बहुत ज़ख़्मी हुए।

पुलिस को सूचना किस तरह मिली

कहा जाता है, कि पुलिस को श्री० सुखदेव और श्री० जगदीश सम्बन्धी सूचना किसी कॉलेज के विद्यार्थी द्वारा मिली थी, उस विद्यार्थी को इन दोनों के लाहौर में आने की ख़बर कैसे मिली, यह तो मालूम नहीं हो सका है, परन्तु लोगों का अनुमान है कि यह विद्यार्थी कोई पुलिस को रिपोर्ट देने वाला ही होगा।

दोनों क्रान्तिकारी लाहौर में कब आए ?

इनके लाहौर में आने के सम्बन्ध में दो प्रकार की बातें सुनी गई हैं। पहला बयान यों है, कि ये दोनों पन्द्रह दिनों से लाहौर में आए थे और प्रायः इधर-उधर घूमते-फिरते थे, इसलिए किसी विद्यार्थी ने, जो इन्हें पहचानता था, देख लिया और पुलिस को रिपोर्ट कर दी। दूसरा बयान इस तरह है, कि श्री० सुखदेव तीन रोज़ से बाग़बाँपुरा में आया हुआ था। परन्तु वह किसी ख़ास स्थान पर ठहरा हुआ न था, इसीलिए किसी ख़ास आदमी को उसके सम्बन्ध में कुछ सन्देह पैदा हुआ और उसने श्री० सुखदेव की निगरानी शुरू की। अन्त में उसीने पुलिस को ख़बर भी दी, जिससे शाम को पुलिस ने बाग़ को घेर लिया।

पुलिस शव भी लेती गई

श्री० सुखदेवराज को गिरफ़्तार करके लॉरी बन्द करने के साथ ही पुलिस ने श्री० जगदीश की लाश भी अपने क़ब्ज़े में कर ली और उसे भी लॉरी में बन्द करके क़िले में ले गई। कहा जाता है कि तलाशी लेने पर सुखदेवराज की जेब से ३१५) रु० और दो पिस्तौलें बरामद हुईं।

श्री० जगदीश कौन था ?

श्री० जगदीश का पूरा नाम जगदीशचन्द्र राय था, परन्तु आम तौर पर वह जगदीश के नाम से ही पुकारा जाता था। वह डेरा इस्माइलख़ाँ का रहने वाला एक होनहार युवक था। इस समय उसकी उम्र २२ या २३ साल की होगी। उसका सम्बन्ध एक उच्च वंश से था और उसके पिता एक उच्च कोटि के सरकारी अफ़सर हैं। श्री० जगदीश ने लाहौर के फ़ोरमन क्रिश्चियन कॉलेज में शिक्षा पाई और उसकी बुद्धि तीव्र और अपूर्व मेधाशील थी, इसलिए अपने सहपाठियों तथा प्रोफ़ेसरों का यह अतीव प्रिय पात्र था।

नौकरी

यों तो श्री० जगदीश में बचपन से ही देश-सेवा का भाव था; परन्तु कॉलेज-जीवन में उसके ये भाव ग़रीबों तथा सर्व-साधारण की सेवा-सम्बन्धी और भी बढ़ गए। परन्तु उसके पिता सरकारी कर्मचारी हैं, इसलिए वह राष्ट्रीय आन्दोलनों में खुल कर भाग नहीं ले सकता था और शायद यही कारण है, कि वह शीघ्र ही रेलवे में नौकर हो गया था।

राष्ट्रीय सभाओं से प्रेम

श्री० जगदीश सन् १९२६-२७ में कॉलेज का विद्यार्थी था, इसके बाद उसने नौकरी कर ली थी। परन्तु नौकरी कर लेने पर भी उसने देश-सेवा नहीं छोड़ी। सार्वजनिक सभाओं में वह बराबर भाग लिया करता था। इन्हीं दिनों लाहौर में कॉङ्ग्रेस होने वाली थी। इस अवसर पर समस्त सरकारी दफ़्तरों में हिदायत कर दी गई, कि कोई सरकारी या रेलवे-कर्मचारी सर्व-साधारण सभाओं में भाग न ले। परन्तु श्री० जगदीश ने इस आज्ञा की कोई परवाह न की। वह खुल्लमखुल्ला राष्ट्रीय सभाओं में भाग लेता रहा।

लाहौर में 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' की गूँज

इन्हीं दिनों लाहौर में दफ़ा १४४ लगा दी गई और 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' कहना ग़ैर-क़ानूनी क़रार दे दिया गया। इस अनुचित आज्ञा के विरुद्ध श्री० धन-वन्तरी ने, जो आजकल दिल्ली में क़ैद हैं, सत्याग्रह की घोषणा की और लट्ठबन्द पुलिस के प्रदर्शन के होते हुए भी, अपने नेतृत्व में इस आज्ञा के विरुद्ध पहला जत्था निकालने का निश्चय किया, इस जत्थे के लिए सत्याग्रहियों की आवश्यकता थी।

सत्याग्रही जगदीश

कई नवयुवकों ने अपने नाम लिखाए। जगदीश भी अपने दफ़्तर से उठ कर आया था और सारी बातें ध्यानपूर्वक सुनता रहा। अन्त में मित्रों के मना करने पर भी, वह इस जत्थे में शामिल हुआ और पुलिस द्वारा पीटा जाकर अन्त में गिरफ़्तार हो गया। परन्तु इसके विरुद्ध कोई प्रमाण न था, इसलिए अन्त में वह छोड़ दिया गया। इस पर उसके अफ़सरों ने उससे जवाब तलब किया। श्री० जगदीश ने उत्तर में लिखा, कि मैं नौकरी की परवाह नहीं करता; परन्तु मेरी सज़ा नहीं हुई है, इसलिए आप मेरे विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं कर सकते।

नौजवान भारत-सभा

श्री० जगदीश नौजवान भारत-सभा का एक उत्साही कार्यकर्ता था। भगतसिंह डिफ़ेन्स फ़ण्ड के रुपए एकत्र करने में भी इसने बड़ी मेहनत की थी।

श्री० सुखदेवराज का परिचय

इस घटना का दूसरा अभियुक्त, जिसे पुलिस ने गिरफ़्तार किया है, लाहौर-निवासी लाला गण्डाराम का पुत्र है। इसने लाहौर के सनातन-धर्म कॉलेज से बी० ए० पास किया था और एम० ए० की डिग्री प्राप्त करने के लिए डी० ए० वी० कॉलेज में भर्ती हुआ था। श्री० सुखदेवराज की उम्र इस समय २४ साल की है। इससे पहले यह तीन बार गिरफ़्तार हुआ था, परन्तु प्रत्येक बार छोड़ दिया गया था। श्री० सुखदेवराज 'स्टूडेण्ट यूनियन' लाहौर का एक उत्साही कार्यकर्ता था और कुछ दिनों तक बड़ी लगन के साथ यूनियन का कार्य करता रहा।

पहली गिरफ़्तारियाँ

श्री० सुखदेवराज प्रथम बार विगत २री फ़रवरी, सन् १९२८ को गिरफ़्तार हुआ था। यह गिरफ़्तारी

साइमन कमीशन के विरुद्ध प्रदर्शन करने के कारण हुई थी, परन्तु उस समय इस पर कोई मामला नहीं चलाया गया था।

दूसरी गिरफ़्तारी रङ्गून में हुई थी। वह सैर की इच्छा से बर्मा गया हुआ था। वहाँ से वह कलकत्ते लाया गया और फिर बङ्गाल की पुलिस ने उसे लाहौर की पुलिस के हवाले किया। परन्तु अन्त में प्रमाणाभाव के कारण वह छोड़ दिया गया।

तीसरी बार वह २३ दिसम्बर को, वायसराय की गाड़ी पर बम फेंकने के सन्देह में लाहौर कॉङ्ग्रेस नगर से गिरफ़्तार हुआ। परन्तु अन्त में प्रमाणाभाव के कारण छोड़ दिया गया।

गिरफ़्तारी के लिए दो हज़ार का इनाम !

इधर प्रायः एक वर्ष से यह नवयुवक लापता था। पुलिस ने इसकी गिरफ़्तारी के लिए दो हज़ार रुपए इनाम की घोषणा की थी। कहते हैं, पुलिस को तीन षड्यन्त्र के मुक़दमों के लिए श्री० सुखदेव की आवश्यकता थी। जिस दिन श्री० धन्वन्तरी दिल्ली में पकड़ा गया था, उस दिन उसका एक साथी भाग गया था। पुलिस का ख़्याल था, कि वह श्री० सुखदेवराज ही था। इस घटना के प्रायः छः महीने के बाद अन्त में वह ३री मई को गिरफ़्तार कर लिया गया है।

नेशनल न्यूज़ एजेन्सी का बयान

आज लाहौर में एक सनसनीपूर्ण घटना हो गई। उसका विवरण इस प्रकार है कि, एक फ़रार अभियुक्त जिसका नाम श्री० सुखदेवराज है और जो डी० ए० वी० कॉलेज का विद्यार्थी है, अपने साथी श्री० जगदीशचन्द्र के साथ शालामार बाग़ में टहल रहा था। इतने में किसी व्यक्ति ने, जो किसी कॉलेज का विद्यार्थी बतलाया जाता है, पुलिस को फ़ोन द्वारा ख़बर दी कि दो सन्देहात्मक युवक शालामार बाग़ की तरफ़ गए हैं। इस पर सी० आई० डी० विभाग के पुलिस-अफ़सर सदल-बल शालामार बाग़ पहुँचे और युवकों को देख कर चिल्लाने लगे कि इन्हें गिरफ़्तार कर लो। इस पर कहा जाता है, कि दोनों नवयुवकों ने पिस्तौलें निकाल लीं और पुलिस-दल पर गोलियाँ चलाने लगे। पुलिस-अफ़सरों ने भी उत्तर में गोलियाँ चलाईं, जिसका परिणाम यह हुआ कि एक क्रान्तिकारी, जिसका नाम श्री० जगदीशचन्द्र था, गोली लगने के कारण बेहोश होकर ज़मीन पर गिर गया। परन्तु पुलिस के अफ़सरों ने गोली चलाना बन्द नहीं किया। जगदीश गिरते ही मर गया। इसके सिवा कहा जाता है, कि श्री० सुखदेवराज की पिस्तौल जाम हो गयी और पुलिस ने उसे गिरफ़्तार कर लिया। इसके बाद पुलिस उसे अपनी लॉरी पर चढ़ा कर क़िले में ले गई। जगदीशचन्द्र की लाश पोस्ट मार्टम के लिए अस्पताल में भेज दी गई है।

फ़्री प्रेस का बयान

दिल्ली षड्यन्त्र केस का फ़रार अभियुक्त जगदीश और नए लाहौर षड्यन्त्र केस का पलातक अभियुक्त सुखदेवराज तथा कई पुलिस अफ़सरों में, शालामार बाग़ में, आज शाम को खुल्लमखुल्ला लड़ाई हुई। परिणाम-स्वरूप जगदीश तो वहीं मर गया, परन्तु सुखदेव गिरफ़्तार कर लिया गया। जगदीश की लाश पोस्ट मार्टम के लिए भेज दी गई। कहा जाता है, कि पुलिस अफ़सरों को भी कुछ चोटें आई हैं।

बाद की ख़बर है कि स्थानीय किसी कॉलेज के एक विद्यार्थी ने ढाई बजे पुलिस को ख़बर दी थी और इसी ख़बर के अनुसार पुलिस के कई अफ़सर ६० पुलिस-मैनों की टोली के साथ शालामार बाग़ में गए और उसके सभी प्रवेश-पथों को रोक लिया।

जिस समय पुलिस पहुँची, उस समय श्री० सुखदेवराज आराम कर रहा था और जगदीश बड़े दरवाज़े के क़रीब नहर के किनारे बैठा हुआ था। इतने में अचानक पुलिस ने इन्हें घेर लिया और लड़ाई आरम्भ हो गई। अभियुक्तों ने आत्म-रक्षा के लिए स्वतन्त्रतापूर्वक गोलियाँ चलाईं। कहा जाता है कि दो बार गोली चलने के बाद ही वे परास्त हो गए। जगदीश की गर्दन में गोली लगी और वह चक्कर खाकर नहर में गिर पड़ा। अधिक रक्त-स्राव होने के कारण वहीं उसका प्राण निकल गया। सुखदेव ने बच निकलने की चेष्टा की, परन्तु गिरफ़्तार कर लिया गया। कहा जाता है, कि सुखदेवराज के पास ३०८) और दो टिफ़िन के डब्बे बरामद हुए।

जगदीश रेलवे में नौकरी करता था और सुखदेव एम० ए० क्लास का विद्यार्थी था। दोनों फ़रार थे और उनकी गिरफ़्तारी के इनाम की घोषणा की जा चुकी थी।

पुलिस को श्री० सुखदेव के पिता का तार

श्री० सुखदेवराज, जोकि आज शालामार बाग़ में गिरफ़्तार किया गया है, उसके पिता लाला गणडाराम ने सी० आई० डी० के सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० जेङ्किन्स को तार दिया है, कि "मुझे मेहरबानी करके सूचित करें कि मेरे लड़के सुखदेव को, जो कि घायल होकर पकड़ा गया है, आप कब और किस मैजिस्ट्रेट के सामने रिमाण्ड के लिए पेश करेंगे, ताकि उसकी सफ़ाई का यथोचित प्रबन्ध किया जा सके"

* * *

संयुक्त प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन

अध्यक्ष तथा स्वागताध्यक्ष के भाषण

संयुक्त-प्रान्त का २४वाँ राजनीतिक सम्मेलन आज २री मई को सायङ्काल साढ़े ६ बजे प्रारम्भ हुआ। पण्डाल प्रशस्त भूमि पर बहुत सजावट के साथ बनाया गया था। सम्मेलन का कार्य वन्देमातरम् गान के साथ प्रारम्भ हुआ। बाद में स्कूली लड़कियों ने कुछ राष्ट्रीय गीत गाए।

स्वागतकारिणी सभा के सभापति श्री० सङ्कटाप्रसाद ने आगत प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए मिरज़ापुर नगर का ऐतिहासिक महत्व बतलाया। आपने कहा, कि यह वही स्थान है, जहाँ योगिराज भर्तृहरि ने तपस्या करके अपना शरीर छोड़ा था। परन्तु यह स्थान केवल तपोभूमि होने के कारण नहीं प्रसिद्ध है, यह बड़े-बड़े ऐतिहासिक वीरों का लीला-क्षेत्र भी रहा है। आल्हा और ऊदल की प्रसिद्ध लड़ाई इसी ज़िले के चुनारगढ़ में हुई थी। इसी क़िले को प्राप्त करके शेरशाह अपनी विजय-कीर्ति फैला सका था। बनारस के विद्रोहियों से जान बचा कर इसी मिरज़ापुर में वारेन हेस्टिंग्ज़ ने शरण ली थी।

व्यापारिक केन्द्र

रेल चलने के पहले मिरज़ापुर उत्तर भारत का व्यापारिक केन्द्र भी था। अब तो नए-नए उद्योग-धन्धे चल निकले हैं, यद्यपि कुछ समय से उनकी हालत अच्छी नहीं है। मिरज़ापुर का राष्ट्रीय कार्य सन् १९२१ से लेकर आज तक कुल मिलाकर अच्छा ही रहा है। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार में वह किसी से पिछड़ा नहीं है। इसके पश्चात् आपने पण्डित मोतीलाल नेहरू, मौलाना मुहम्मदअली और श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु पर शोक प्रकट किया। आपने कहा कि विद्यार्थी जी का बलिदान स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। इसके पश्चात् आपने राष्ट्रीय संग्राम के कार्यकर्ताओं का उल्लेख किया। साम्प्रदायिक दङ्गों के सम्बन्ध में आपने कहा कि राष्ट्रीय संग्राम के रुक जाने से लोगों में शिथिलता आ गई, जिससे बदमाशों को उपद्रव करने का अवसर मिल गया। परन्तु आशा है कि एकता के लिए किए जाने वाले प्रयत्न सफल होंगे।

गत वर्ष का राष्ट्रीय संग्राम

गत वर्ष के राष्ट्रीय संग्राम ने, जिसमें स्त्री-पुरुषों तथा सब प्रकार के लोगों ने भाग लिया था, शक्तिशाली ब्रिटिश-गवर्नमेण्ट को आत्म-शक्ति के सामने झुकने के लिए बाध्य कर दिया। भारत अब बिना स्वाधीनता प्राप्त किए चैन नहीं ले सकता। राष्ट्र अपने जीवन के सभी विभागों में आगे बढ़ गया है। आपने कहा कि अगले गोलमेज़ सम्मेलन के पहले घरेलू झगड़ों का तय हो जाना अत्यन्त आवश्यक है। अगर गोलमेज़ में गवर्नमेण्ट ने देश की माँग न पूरी की, तो स्वाधीनता-संग्राम फिर से छिड़ जायगा और उसमें यह देश बिलकुल प्रतिबन्धहीन स्वाधीनता निश्चय ही प्राप्त कर लेगा।

सम्मेलन के सभापति का भाषण

स्वागताध्यक्ष ने अपना भाषण समाप्त करने के बाद मनोनीत सभापति श्री० शेरवानी से अपना व्याख्यान प्रारम्भ करने को प्रार्थना की।

श्री० शेरवानी राष्ट्रीय नारों के बीच अपना व्याख्यान देने के लिए उठे। आपने कहा कि देश की ऐसी नाज़ुक अवस्था में मुझे अपने सम्मेलन का सभापति चुन कर जो आपने मेरे ऊपर विश्वास प्रकट किया है, उसके लिए मैं आपका हृदय से आभारी हूँ। देश का वातावरण सन्देह तथा आशङ्काओं से परिपूर्ण है। कोई नहीं कह सकता कि निकट-भविष्य में क्या होगा। अपने सभापति चुने जाने का समाचार मुझे देर से मिला। फिर भी यह मैंने समझ कर आपका आग्रह स्वीकार कर लिया है कि आपके संयुक्त-प्रान्त में राष्ट्रीयता का पूर्ण जागरण हो चुका है और आपको अब किसी राह दिखाने वाले की आवश्यकता नहीं रह गई। गत वर्ष के राष्ट्रीय संग्राम में ऐसे अवसर आए थे, जब सब के सब नेता जेलों में बन्द कर दिए गए थे, परन्तु आपके संग्राम की गति वैसी की वैसी ही तीव्र बनी रही।

कुटिल काल का चक्र

इसके बाद आपने पण्डित मोतीलाल नेहरू, मौलाना मुहम्मद अली तथा श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु पर शोक प्रकट किया। आपने पण्डित मोतीलाल नेहरू का ज़िक्र बड़े मर्मस्पर्शी शब्दों में किया। आपने कहा, पण्डित मोतीलाल केवल एक महान नेता ही नहीं थे, वे महान् योद्धा, सदैव न्याय की लड़ाई लड़ने वाले और एक सहृदय मित्र थे। उनमें अथक शक्ति, अनुपम दृढ़ता और विचित्र दूरदर्शिता थी। अगाध प्रेम, अत्यन्त ऊँचे दर्जे का आतिथ्य-सत्कार, सभ्य विनोद और हास्य उनके अत्यन्त आश्चर्यजनक गुण थे। २१ जनवरी को प्रधान मन्त्री के व्याख्यान पर विचार करने के लिए इलाहाबाद में वर्किङ्ग कमेटी की बैठक हुई थी, पण्डित जी की तबियत उस वक्त बहुत ख़राब थी। फिर भी उन्होंने हम लोगों को अपने पास बुलवाया। हम लोगों ने जो प्रस्ताव तैयार किया था वह उनके सामने रक्खा। पण्डित जी ने कहा—"यदि तुम लोगों की हिम्मत हार

गई हो तो मैं अपने इस मौत के बिस्तर से उठ कर अकेले लड़ूँगा।" वह बड़ी रात बीते तक बराबर बहस करते करते रहे, जिससे उनके ज्वर का ताप अचानक बढ़ गया। मैंने उनसे कहा कि परिश्रम के कारण आपका ताप बढ़ गया। उन्होंने अपनी स्वाभाविक मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया —"यदि आप लोग मेरा ताप कम करना चाहते हैं, तो अपना ताप ऊँचा रखिए।" मित्रो, आज वह महान देश-भक्त नहीं है, परन्तु वह राष्ट्र को अपना अनुपम जवाहर सौंप गया है।

मुझे अपने राजनीतिक गुरु मौ० मुहम्मदअली के लिए भी शोक है। उनकी निडर भावना, विश्वास की दृढ़ता, वाकचातुरी, उनका अनुपम उत्साह और भाषा पर अबाधित अधिकार, ये गुण हम सभी लोगों को बराबर याद रहेंगे। कुछ लोगों का यह ख़्याल है कि मौलाना मुहम्मदअली अन्त में राष्ट्रीयता के पथ से भ्रष्ट हो गए थे। आपने कहा कि यद्यपि इधर हममें मतभेद हो गया था, फिर भी वे अन्त तक राष्ट्रवादी रहे। उनके आख़िरी वक्तव्य की दो-चार ऐसी तहरीरें हैं, जिन्हें कुछ लोगों ने सामने आने से रोक दिया है। फिर भी उनमें से कुछ को मुझे देखने का मौक़ा मिला है। उन्हें देख कर मेरी यह राय हुई है कि मौ० मुहम्मदअली अन्त तक राष्ट्रवादी थे। मैं वचन दे चुका हूँ, इस कारण से आपके सामने उनका मज़मून नहीं प्रकाशित कर सकता, परन्तु मृतात्मा के प्रति न्याय के नाते मैं उस सज्जन से, जिसके पास मौ० मुहम्मदअली के वक्तव्य हैं, प्रार्थना करता हूँ कि वे उन्हें प्रकाशित कर दें। ख़िलाफ़त कमेटी के नाम सभापति की हैसियत से उन्होंने एक पत्र लिखा था। उसमें उन्होंने लिखा था—"मेरी इच्छा है कि आप लोग कॉङ्ग्रेस के साथ कन्धा से कन्धा भिड़ा कर आज़ादी की लड़ाई लड़ते, लेकिन चूँकि मैं लन्दन जा रहा हूँ, इसलिए मेरी ग़ैर मौजूदगी में कम से कम उन लोगों के मार्ग में कोई बाधा न पहुँचे, जो हिन्दुस्तान के आज़ादी की लड़ाई लड़ रहे हैं।"

श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी की मृत्यु का ज़िक्र करते हुए आपने कहा कि वे आजीवन सत्याग्रही रहे और अन्त में सत्याग्रही की तरह वीर-गति को प्राप्त हुए। उन्होंने दूसरों की जान बचाने में अपनी जान देकर एक अत्यन्त उच्च आदर्श उपस्थित किया है। उनकी मृत्यु से बढ़ कर कोई मृत्यु नहीं हो सकती। मैं ख़ुदा से इस्तेदुआ करता हूँ कि मेरा सौभाग्यपूर्ण अन्त किसी हिन्दू की रक्षा करने में हो। मैं उपरोक्त मृतात्माओं तथा राष्ट्रीय संग्राम में वीरगति पाने वाले कुटुम्बियों के साथ हार्दिक समवेदना प्रकट करता हूँ।

अहिंसात्मक संग्राम

आगे आपने कहा,—"मैं आपको संग्राम की सफलता के लिए बधाई देता हूँ। जो आपने बलिदान किए हैं उनमें इस प्रान्त की स्त्रियों का सब से भारी भाग है। मैं तो चाहता था कि इसमें नवयुवकों का अधिक से अधिक भाग होता। लेकिन मुझे विश्वास है कि अगली लड़ाई में नवयुवक दल, विशेषकर विद्यार्थी दल कहीं अधिक संख्या में भाग लेगा। इस युद्ध के द्वारा हमने संसार के सामने हिंसा पर अहिंसा की विजय प्रमाणित कर दी है। हमने कमज़ोर राष्ट्रों के सामने सबल राष्ट्रों के अर्थ-शोषण से बचने का उपाय उपस्थित कर दिया है। हमें आशा है कि हम आधुनिक सभ्यता वालों को यह बात सफलतापूर्वक सिखला देंगे कि संसार में सुख-शान्ति काग़ज़ी सन्धियों, समझौतों या गरोहबन्दियों से न हो सकेगी, सुख-शान्ति हार्दिक निःशस्त्रीकरण तथा स्वार्थत्याग के द्वारा ही होगी।

सरदार भगतसिंह, सुखदेव तथा राजगुरु के सम्बन्ध में आपने कहा कि यद्यपि हम उनकी नीति नहीं पसन्द करते, फिर भी हम उनके साहस तथा त्याग-भावना की प्रशंसा करते हैं। मैं बिना किसी हिचकिचाहट के यह बात स्वीकार करता हूँ कि सन् १९३० के पहले मैं अहिंसा को केवल नीति की दृष्टि से लाभकारी समझता था, परन्तु इस संग्राम से अब मेरा यह अटल विश्वास हो गया है कि भारत की स्वाधीनता का सर्वोत्तम तथा निश्चित उपाय अहिंसा ही है। लाहौर की फाँसियों ने एक बार फिर से हमारी असमर्थता को प्रकट करके दिखला दिया है।

संयुक्त प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन के प्रस्ताव

सभापति की ओर से नीचे लिखे प्रस्ताव पेश किए गए, जो सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुए:—

(१) यह सम्मेलन मौलाना मोहम्मदअली और पण्डित मोतीलाल, श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी, श्री० रामदहिन ओझा और इम्तियाज़-अहमद की मृत्यु पर शोक प्रकट करता है और उनके कुटुम्बियों के साथ समवेदना प्रकट करता है।

(२) यह सम्मेलन प्रान्त के उन वीर पुरुषों के प्रति, जिन्होंने गोलियों या लाठियों का सामना करते हुए या राष्ट्रीय कार्य करते हुए प्राणों का उत्सर्ग किया है, श्रद्धा प्रकट करता है और उनके कुटुम्बियों को विश्वास दिलाता है कि सारा प्रान्त उनके दुःख में हिस्सेदार है।

(३) अपने को राजनीतिक हिंसा-नीति से सर्वथा अलग रखते हुए यह सम्मेलन श्री० भगतसिंह और उनके दोनों साथी श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु तथा श्री० चन्द्रशेखर आज़ाद और श्री० शालिग्राम की वीरता, त्याग और देश-भक्ति की प्रशंसा करता है और उनके प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता है।

(४) यह सम्मेलन बनारस, कानपुर आगरा और मिर्ज़ापुर आदि स्थानों के साम्प्रदायिक दङ्गों पर अत्यन्त शोक प्रकट करता है। कॉन्फ्रेन्स की सम्मति में ऐसे दङ्गे हमारी राजनीतिक प्रगति के मार्ग में ज़बरदस्त बाधा डालते हैं और उनके बीच धर्म-स्थानों पर जो आक्रमण होते हैं, वे विरुद्ध हैं और धन-जन की जो भीषण क्षति होती है वह सर्वथा निन्दनीय है। इस सम्बन्ध में सम्मेलन को इस बात का गर्व है कि श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी हिन्दू-मुसलमानों की सेवा करते हुए वीर-गति को प्राप्त हुए और उसे आशा है कि उनकी यह अपूर्व आत्मबलि प्रान्त में ही नहीं, वरन् सारे देश में साम्प्रदायिक ऐक्य की नींव को दृढ़ करेगी।

गांधी-इर्विन समझौता

गाँधी-इर्विन समझौते के सम्बन्ध में मैं अधिक नहीं कहना चाहता। कराची कॉङ्ग्रेस ने उसे स्वीकार कर लिया है। मैं उसके विषय में केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि कराची में देश ने त्याग की अपेक्षा विनयन का कहीं अच्छा परिचय दिया है। बहुत से लोगों ने सोच रक्खा था कि कॉङ्ग्रेस दो दलों में विभक्त हो जायगी। परन्तु हम देखते हैं कि कॉङ्ग्रेस में जैसी एकता आज है, वैसी कभी नहीं थी।

साम्प्रदायिकता

आगे चल कर आपने कहा, कि "हममें से प्रत्येक व्यक्ति इस बात को जानता है कि राष्ट्रीय संग्राम के अवसर पर विरोधियों की ओर से इस बात के लिए प्रयत्न किया गया कि हिन्दुस्तान की दो बड़ी क़ौमों में लड़ाई हो जाय। लेकिन विरोधी अपने उपायों में सफल न हो सके। परन्तु कॉङ्ग्रेस-कार्य के बन्द हो जाते ही साम्प्रदायिकता सहसा उभड़ पड़ी। कानपुर तथा बनारस के पाशविक कृत्यों को सुन कर सर शर्म से झुक जाता है। आप सब कॉङ्ग्रेस वालों से मेरी प्रार्थना है, कि साम्प्रदायिकता के दैत्य से सदैव सावधान रहिए। साम्प्रदायिकता देश का सबसे ज़बरदस्त दुश्मन है। आप विश्वास रक्खें, देश में साम्प्रदायिकता के रहते हम आज़ादी नहीं हासिल कर सकते। मैं यह बात जानता हूँ कि सभी देशों में राष्ट्रीयता के जागरण के साथ-साथ एक प्रकार की सङ्कुचित देश-भक्ति का भाव पैदा हो जाता है। उसके परिणाम-स्वरूप साम्प्रदायिकता उत्पन्न हो जाती है। परन्तु जब साम्प्रदायिकता सम्पूर्ण जातियों में फैल जाती है तब वह एक भयानक बीमारी का रूप धारण कर लेती है। मैं आप सब लोगों को यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि धर्म का उच्छृङ्खलता से कोई सम्बन्ध नहीं है। हठधर्मी से धर्म का उच्च आदर्श नीचा हो जाता है। अपने सम्प्रदाय का प्रेम दूसरों से घृणा करने के रूप में बदल जाता है।

सन्देह का भाव

प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग भ्रमवश यह समझ लेते हैं कि हम अपने सम्प्रदाय का कार्य दूसरे सम्प्रदाय पर किसी तरह का आघात पहुँचाए बिना कर लेंगे। परन्तु एक सम्प्रदाय की साम्प्रदायिकता से दूसरों में भी साम्प्रदायिकता पैदा हो जाती है। साम्प्रदायिकता में केवल दुष्टता ही नहीं है, उसमें मूर्खता भी है। या तो एक सम्प्रदाय दूसरे को दाब ले या दोनों मिल कर सहयोग से रहें; इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। परन्तु पहला उपाय अन्त में निश्चय ही असफल होता है, इसलिए दूसरा ही उपाय व्यावहारिक है। चाहे जिस दृष्टि से भी साम्प्रदायिकता पर विचार कीजिए, उसमें स्वार्थी तथा पतित लोग ही लाभ उठाते हैं। साम्प्रदायिकता में सब प्रकार की हिंसाएँ सन्निहित रहती हैं। परन्तु किसी प्रकार की साम्प्रदायिक घटना के हो जाने पर लोग अपनी साम्प्रदायिकता को दोष न देकर सम्प्रदायवाद के विरोधियों को दोषी ठहराने लगते हैं। जो हो, कॉङ्ग्रेस वालों का कर्तव्य है कि वे साम्प्रदायिकता को जड़ से उखाड़ फेंकें।

मैं हिन्दुओं से दरख़्वास्त करना चाहता हूँ कि अल्पसंख्यक समुदाय में साम्प्रदायिकता अविश्वास की वजह से होती है, परन्तु बहुसंख्यक समुदाय में साम्प्रदायिकता नफ़रत की वजह से होती है।

इस सम्बन्ध में मैं अपने मुसलमान भाइयों से भी कुछ कह देना चाहता हूँ। बहुत-कुछ विचार करने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि देश में फैली हुई साम्प्रदायिकता का मुख्य कारण मुसलमानों की पृथक्करण वाली नीति है। आपने इस नीति को २० वर्ष तक आज़माया है और नतीजा भी देख लिया है। सम्प्रदायों में एकता होने के स्थान में भेद ही अधिक बढ़ता गया। अविश्वास से विश्वास नहीं पैदा हो सकता। साम्प्रदायिक संरक्षणों से काम नहीं चल सकता। सर्वोत्तम संरक्षण अपने साथ रहने वाले सम्प्रदायों की सहानुभूति है। सहानुभूति मिल कर काम करने से प्राप्त होती है। अपने-अपने त्याग तथा परिश्रम के अनुसार प्रत्येक सम्प्रदाय अपना स्थान प्राप्त कर लेता है। शोर मचाने से कुछ नहीं होता।

* * *

क्या कानपुर का दंगा ख़ुफ़िया पुलिस की साज़िश से हुआ था?

कानपुर की जाँच-कमिटी के सामने पुलिस पर भीषण दोषारोपण

कानपुर का गत दङ्गा वास्तव में सरकार के विरुद्ध ही हुआ था, किन्तु सरकार की चालबाज़ी से, ख़ुफ़िया-पुलिस वालों के द्वारा वह साम्प्रदायिक दङ्गे के रूप में परिणत कर दिया गया। एक सब-इन्स्पेटर साहब इक्के पर फ़तहपुर जा रहे थे। कुछ लोगों ने उन्हें इक्के से उतार कर पीटा। फिर एक ख़ुफ़िया पुलिस का आदमी फेरी वालों का-सा वेष बना कर जा रहा था, एक दूसरा ख़ुफ़िया-पुलिस का आदमी ग्राहक बन कर उससे कुछ ख़रीदने गया। इसी ख़रीद-फ़रोख़्त में दोनों में लड़ाई हो गई। फेरी वाला हिन्दू था और ग्राहक था मुसलमान। इस प्रकार साम्प्रदायिक दङ्गे की नींव पड़ी!!

—मजरुद्दीन

कानपुर, २० अप्रैल

आज कमीशन के सामने लाला रामरतन गुप्त की गवाही हुई। उन्होंने अपने बयान में कहा, कि गत २४वीं मार्च को मि० जोग ने फ़ोन द्वारा मुझे सूचना दी कि सरदार भगतसिंह को फाँसी दे दी गई है। इसके बाद मि० जोग कोतवाल साहब के साथ स्वयं चटाई-मुहाल में मेरे ऑफ़िस के समीप आए। उन्होंने मुझसे कहा कि सरदार भगतसिंह की फाँसी की वजह से बड़ी सनसनी फैली हुई है। इसके बाद ही हम लोग डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन श्री० रामनारायण गर्ग के साथ श्री० गणेशशङ्कर विद्यार्थी के यहाँ गए। इस समय क़रीब ११ बजे होंगे। इसी समय हमें ख़बर मिली कि बादशाही नाका में एक बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई है, और पं० रघुबरदयाल तथा श्री० इक़बालकृष्ण कपूर उसे शान्त करने की चेष्टा कर रहे हैं, किन्तु उसका फल कुछ नहीं हो रहा है। २ बजे के लगभग हमें मालूम हुआ कि मि० जोग को भी कुछ चोट आई है।

चिन्ताजनक परिस्थिति

इस समय तक विद्यार्थी जी को यह ख़बर नहीं थी, कि परिस्थिति कितनी नाज़ुक हो गई है। मैं विद्यार्थी जी के साथ कॉङ्ग्रेस ऑफ़िस गया, किन्तु मि० जोग के सम्बन्ध में कुछ नहीं मालूम हो सका। वहाँ से हम लोग सराफ़ा चले गए। वहाँ बड़ी सनसनी फैली हुई थी। हाल्सी रोड पर कोतवाल साहब खड़े थे। विद्यार्थी जी ने उन्हें सलाह दी, कि यदि कुछ बदमाश गिरफ़्तार कर लिए जायँ, तो परिस्थिति शान्त हो जायगी। किन्तु कोतवाल साहब ने विद्यार्थी जी की सलाह की ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। इसके बाद हम लोग मूलगञ्ज के चौराहे पर गए। हम लोगों ने देखा कि हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरे पर पत्थर फेंक रहे हैं और पुलिस वाले खड़े तमाशा देख रहे हैं। हम लोगों ने हिन्दुओं से हट जाने के लिए कहा। हिन्दुओं ने उत्तर दिया, कि यदि हम हट जायँगे, तो मुसलमान हमारा पीछा कर हमारे मकानों को लूट लेंगे। ऐसी परिस्थिति देख कर विद्यार्थी जी को बड़ी निराशा हुई।

दो लाशें

उसी समय हमें मालूम हुआ कि दङ्गाइयों ने एक इक्के पर के यात्रियों को मार डाला है। हम लोग एक मुसलमान के साथ घटनास्थल पर पहुँचे। वहाँ हम लोगों ने एक जला हुआ इक्का पाया, किन्तु यात्रियों का मृत-शरीर नहीं मिला। जो लोग वहाँ खड़े थे, उन्होंने कहा कि इक्के पर के यात्री भाग गए हैं। किन्तु पीछे हमें मालूम हुआ कि एक नाले में दो मृत-शरीर फेंके गए थे; जो ४-५ रोज़ के बाद मिले। जब हम लोग वहाँ से लौटे, तो देखा कि पुलिस के सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब की मोटर आ रही है। विद्यार्थी जी ने सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब की मोटर खड़ी कराई और जो-जो बातें हम लोगों ने देखी थीं, उसका वर्णन उन्होंने उनके सामने किया। उन्होंने सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब से यह भी कहा कि हमारी नज़रों के सामने दङ्गाइयों ने एक दूकान को लूटा, पुलिस के सवार वहाँ खड़े थे, किन्तु उन लोगों ने कुछ नहीं किया। सुपरिण्टेण्डेण्ट ने केवल इन बातों पर ही नहीं, बल्कि इनके सुनने तक से इन्कार कर दिया।

इसके बाद मैंने विद्यार्थी जी को लगभग १२० मुसलमानों के साथ आते देखा। इनमें केवल बच्चे और औरतें थीं। इसी समय एक मुसलमान ने विद्यार्थी जी से आकर कहा कि मेरे दो लड़के ख़तरनाक स्थान में हैं, आप ज़रा चल कर उन्हें बचा दीजिए। इसके बाद मैं पूर्व निश्चय के अनुसार बेकनगञ्ज चला गया। वहाँ ४ बजे सन्ध्या-समय मुझे फ़ोन द्वारा ख़बर मिली कि विद्यार्थी जी ख़तरे में हैं, उन्हें बचाने के लिए शीघ्र ही प्रयत्न करना चाहिए।

गवाह—परिस्थिति बहुत जल्द क़ब्ज़े में कर लीजिए, क्योंकि पुलिस कुछ नहीं कर रही है!

कमिश्नर—"अब तक तो लोग पुलिस को गालियाँ देते रहे हैं, अब उसकी सहायता चाहते हैं" ××× "कॉङ्ग्रेस वाले क्या कर रहे हैं? वे इस समय सामने आकर मामला शान्त क्यों नहीं करते?"

गवाह—(हँस कर) "यदि कॉङ्ग्रेस वालों को अधिकार और शस्त्र दिए जायँ तो वे २४ घण्टे के भीतर परिस्थिति को शान्त कर सकते हैं।"

विद्यार्थी जी की मृत्यु कैसे हुई?

यह ख़बर पाकर मैंने कॉङ्ग्रेस ऑफ़िस को फ़ोन किया और मैं स्वयं मेस्टन रोड पर गया और कोतवाल साहब से विद्यार्थी जी के सम्बन्ध में कहा। पं० रामेश्वरदयाल डिप्टी कलेक्टर मेरे साथ चलने को तैयार हुए। हम लोग कुछ ही दूर गए होंगे, कि एक लड़के से मुलाक़ात हुई जो विद्यार्थी जी के साथ था। उसने वह जगह बताई, जहाँ उसने विद्यार्थी जी का साथ छोड़ा था। वहाँ हम लोगों ने देखा कि कुछ मुसलमान खड़े हैं। उन लोगों से पूछने पर पता चला कि विद्यार्थी जी कुछ औरतों को दङ्गाइयों के हाथ से बचा कर लाठी मुहाल की ओर गए हैं। हम लोगों ने हिन्दुओं और मुसलमानों के सारे मुहल्ले छान डाले, किन्तु विद्यार्थी जी का पता नहीं चला। इसी बीच में हमें फ़ोन के द्वारा विद्यार्थी जी के सम्बन्ध में अनेक झूठी ख़बरें मिलीं। विद्यार्थी जी के लापता होने की बात सुन कर जनता में बड़ी खलबली मच गई। लोगों के क्रोध का ठिकाना नहीं रहा। किन्तु हम लोगों ने समझा-बुझा कर उन लोगों को शान्त किया।

दङ्गा कैसे शुरू हुआ

हड़ताल के दिन ख़ुफ़िया-विभाग का कोई मुसलमान कर्मचारी बादशाही नाके के समीप साइकिल पर जा रहा था। कुछ लड़कों ने उसे साइकिल से उतर जाने को कहा। जब उसने साइकिल से उतरने से इन्कार कर दिया तो लड़कों ने उस पर पत्थर फेंकने शुरू किए। कुछ हिन्दू-युवकों ने उसका पीछा भी किया। वह मुसलमान जब मूलगञ्ज के चौराहे के समीप पहुँचा तो, उसने चिल्ला-चिल्ला कर कहना शुरू किया, कि हिन्दू मुसलमानों को पीट रहे हैं, और मैं मरते-मरते बचा हूँ। यह सुन कर मुसलमान इकट्ठे हो गए और इस प्रकार दङ्गा शुरू हो गया। दोनों ओर से ईंट और पत्थर फेंके जाते थे। पुलिस वहाँ खड़ी थी, किन्तु वह केवल तमाशा देखती थी। लौटते समय हम लोगों ने देखा कि कुछ दङ्गाई एक मुसलमान की दूकान को लूटना चाहते हैं। हम लोगों ने बड़े प्रयत्न से उस दूकान को लुटने से बचाया। वहाँ पर पुलिस के कुछ सवार भी मौजूद थे। विद्यार्थी जी ने उन सवारों से पूछा कि आप लोगों के सामने यह लूटपाट हो रही है, आप लोग तमाशा क्यों देख रहे हैं? उन लोगों ने उत्तर दिया कि, इन लोगों को रोकने की आज्ञा हमें नहीं मिली है। इसके बाद हम लोग ए० बी० रोड के मन्दिर की ओर गए। हम लोगों ने देखा कि मन्दिर वास्तव में जल रहा है। मन्दिर की छत पर से एक मनुष्य, कोतवाल से अपने को बचाने की प्रार्थना कर रहा था, किन्तु कोतवाल ने कुछ ध्यान नहीं दिया। आम तौर पर लोगों का कहना है कि हड़ताल के दिन मुसलमानों को ज़बरदस्ती दूकानें बन्द करने को बाध्य किया गया, इसी कारण दङ्गा हुआ। वास्तव में, यह बात बिलकुल ग़लत है।

अधिकारियों की अकर्मण्यता

यहाँ के व्यापारियों का साधारणतया यह विचार है, कि यहाँ के अधिकारीवर्ग पहले ही से उनसे इसलिए रुष्ट थे, कि उन्होंने कॉङ्ग्रेस वालों को सहायता दी थी। अधिकारीगण इसलिए उन्हें यह शिक्षा देना चाहते थे, कि उनकी जानोमाल की रक्षा के लिए अधिकारियों की सहायता अनिवार्य है। कॉङ्ग्रेस वाले उनकी कुछ सहायता नहीं कर सकते। जनवरी में बिना लाइसेन्स के कण्टा, बल्लम आदि हथियार रखने की मनाही कर दी गई थी। ऐसी आज्ञा के जारी होते हुए भी, अशान्त परिस्थिति के समय, लोगों से इन हथियारों के ले लेने की कोई व्यवस्था नहीं की गई। दङ्गे के समय, कोतवाल साहब बराबर मेस्टन रोड पर मि० सिद्दीक़ के यहाँ रहे। शहर में चारों ओर घूम कर परिस्थिति देखने

की कोई परवाह नहीं की! कोतवाल साहब की इस अकर्मण्यता का बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। मि० सिद्दीक़ का निजी फ़ोन व्यवहार में लाकर अधिकारियों ने भारी भूल की। इसका फल यह हुआ कि हिन्दुओं के लिए अनेक उलझनें पैदा हो गईं, और वे अपनी इच्छानुसार किसी अधिकारी से बातें नहीं कर पाते थे। मि० सिद्दीक़ ने, जो कोतवाल साहब के दोस्त हैं, इस मौक़े से बहुत अनुचित लाभ उठाया। वे अक्सर पुलिस वालों को मनमानी ख़बरें, सलाह और आज्ञा दिया करते थे।

कमिश्नर साहब ने क्या कहा?

२६वीं मार्च को कमिश्नर कुँवर महाराज सिंह बाबू विक्रमाजीत सिंह और मि० सिद्दीक़ के साथ मेरे घर पर आए। मेरे चचा साहब ने उनसे प्रार्थना की कि परिस्थिति बहुत जल्द क़ब्ज़े में कर लीजिए, क्योंकि पुलिस कुछ नहीं कर रही है। उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया, कि "अब तक तो लोग पुलिस को गालियाँ देते रहे हैं, और अब उसकी सहायता चाहते हैं।" इतना कह कर वे चले गए। लौटती बार, संयोगवश, उनके मोटर के टायर में पञ्चर हो गया; इस कारण, उन्हें मोटर खड़ी करनी पड़ी। मुझे इस बार उनसे बातचीत करने का अच्छा मौक़ा मिला। बातचीत के सिलसिले में उन्होंने कहा, "कॉङ्ग्रेस वाले क्या कर रहे हैं? वे इस समय सामने आकर, मामला शान्त क्यों नहीं करते?" मैंने हँस कर उत्तर दिया, कि यदि कॉङ्ग्रेस वालों को अधिकार और शस्त्र दिए जायँ तो २४ घण्टे के भीतर वे परिस्थिति को शान्त कर सकते हैं। इसके बाद उन्होंने उपस्थित पुलिस वालों को लाठी लेकर, दङ्गाइयों को भगाने की आज्ञा दी। हेड-कॉन्स्टेबिल ने पूछा कि यदि लाठी का असर न हो तो गोली चलाई जा सकती है? कमिश्नर साहब ने उत्तर दिया कि किसी दशा में भी गोली नहीं छोड़ी जा सकती है। इन्हीं कारणों से, हिन्दुओं का विश्वास ज़िला मैजिस्ट्रेट, कोतवाल और सब-इन्स्पेक्टर पर से उठ गया है।

कानपुर, २री मई

आज कमीशन के सामने मि० मजरुद्दीन नामक एक व्यापारी ने अपना बयान दिया। आपने अपने बयान में कहा, कि कानपुर का गत दङ्गा वास्तव में सरकार के विरुद्ध ही हुआ था, किन्तु सरकार की चालबाज़ी से, ख़ुफ़िया-पुलिस वालों के द्वारा, वह साम्प्रदायिक दङ्गे के रूप में परिणत कर दिया गया। एक सब-इन्स्पेक्टर साहब इक्के पर फ़तहपुर जा रहे थे। कुछ लोगों ने उन्हें इक्के से उतार कर पीटा। फिर एक ख़ुफ़िया-पुलिस का आदमी फेरी वालों का सा वेष बना कर जा रहा था, एक दूसरा ख़ुफ़िया-पुलिस का आदमी ग्राहक बन कर उससे कुछ ख़रीदने गया। इसी ख़रीद-फ़रोख़्त में दोनों में लड़ाई हो गई। फेरी वाला हिन्दू था और ग्राहक था मुसलमान। इस प्रकार साम्प्रदायिक दङ्गे की नींव पड़ी!!

सरकार के विरुद्ध ऐसे भीषण अभियोग उपस्थित करने के कारण, कमीशन ने उनसे अनेक प्रश्न पूछे और अन्त में अपने कथन को प्रमाणित करने को कहा। गवाह ने कहा, कि मेरा ऐसा विचार है, कि यह दङ्गा ख़ुफ़िया-पुलिस का कराया हुआ है। मेरे पास इसका कोई प्रमाण नहीं है। हाँ, शहर में चारों ओर लोग ऐसा ही कहते हैं।

इसके बाद गवाह ने कहा, कि २४वीं मार्च को ११ से २ बजे तक मैं मूलगञ्ज में था। २५वीं मार्च को मैं ८ बजे सवेरे मूलगञ्ज के चौराहे पर गया। वहाँ मैंने देखा कि एक भीड़ इकट्ठी है और पत्थरों की वर्षा हो रही है। इधर हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरे पर ईंट-पत्थर फेंक रहे थे और उधर पुलिस खड़ी तमाशा देख रही थी।

आगे पूछने पर गवाह ने कहा, कि मैंने उस समय वहाँ पर मिलिटरी नहीं देखी।

*　*　*

बिजौलिया में फिर सत्याग्रह

सत्याग्रहियों पर पाशविक अत्याचार

उदयपुर के राणा के नाम श्री० हरिभाऊ उपाध्याय का तार

बिजौलिया के किसानों के दुख का अभी अन्त नहीं हुआ है। श्री० पथिक जी के निरन्तर आन्दोलन करने पर सन् १९२२ में ठिकानों को किसानों से समझौता करना पड़ा था। उस समय किसानों से यह कहा गया था कि ज़मीन का बन्दोबस्त बहुत शीघ्र कर दिया जायगा। १९२६ में मेवाड़ के हाकिमों ने बन्दोबस्त किया, किन्तु लगान बढ़ा दिया गया; सन् १९२२ के फ़ैसले की कुछ शर्तें भी ठिकाने की तरफ़ से तोड़ी गईं। किसानों ने इसका बार-बार प्रतिवाद किया। जब उनकी प्रार्थना पर ध्यान नहीं दिया गया, तब १९२७ में, इस अन्याय के विरोध में उन्होंने अपनी ज़मीनों से इस्तीफ़ा दे दिया। अधिकारियों ने इन इस्तीफ़ों की लेशमात्र परवा न कर ज़मीनों का दूसरे किसानों के हाथ बन्दोबस्त कर दिया। कहा जाता है, कि अधिकांश ज़मीन ज़बरदस्ती लोगों के मत्थे मढ़ दी गई। किसानों को जब इस प्रकार भी सफलता नहीं मिली तब उन्होंने लगान देना बन्द कर दिया। श्री० हरिभाऊ उपाध्याय ने किसानों और राज्य के हाकिमों से मिल कर इस मामले का निबटारा करना चाहा। उन्होंने किसानों को समझाया कि जब तक समझौते की आशा है, तब तक लड़ाई नहीं ठाननी चाहिए। वे मेवाड़-राज्य के बन्दोबस्त के हाकिम मि० ट्रेञ्च से मिले। मि० ट्रेञ्च ने उन्हें विश्वास दिलाया कि वे किसानों से समझौता करने के लिए तैयार हैं। किसानों की माँगें ये थीं:—

१—सन् १९२२ की शर्तों का पालन किया जाय।

२—लगान में ।) की कमी कर दी जाय और 'छटून्द' नामक लागत लगान में शामिल कर ली जाय, अलग न ली जाय।

३—जिन ज़मीनों के इस्तीफ़े दिए गए हैं वे लौटा दिए जायँ।

उपाध्याय जी और मि० ट्रेञ्च के बीच ये बातें तय हुईं:—

१—ठिकाने की ओर से किसानों को इस बात का विश्वास दिलाया जाय कि सन् १९२२ के फ़ैसले की शर्तें न तोड़ी जायँगी, और जो तोड़ी गई हैं उनकी पूर्ति करा दी जायगी।

२—'छटून्द' नामक लागत लगान में शामिल कर ली जायगी, लगान में ‐) फ़ी रुपया कमी कर दी जायगी और बाक़ी रक़म में आधी छूट दे दी जायगी।

३—जो ज़मीन ठिकाने के क़ब्ज़े में है वह लौटा दी जायगी और जो ज़मीन बन्दोबस्त में दे दी गई है, वह भी बन्दोबस्त वालों से कह-सुन कर लौटा दी जायगी।

किसान इस समझौते से प्रसन्न हुए और उन्होंने बाक़ी लगान अदा कर दिया। किन्तु इस समझौते की शर्तों की भी अवहेलना की गई। किसानों ने जिन ज़मीनों से इस्तीफ़ा दिया था, वे उनको नहीं लौटाई जा रही हैं। बन्दोबस्त लेने वाले कुछ किसान—इन्हें लौटा देने के लिए तैयार हैं, किन्तु रियासत के डर से वे ऐसा नहीं कर रहे हैं। उपाध्याय जी ने जेल से इन ज़मीनों के सम्बन्ध में एक पत्र मि० ट्रेञ्च के पास लिखा था। उन्होंने उत्तर में लिखा, कि मैंने बन्दोबस्त लेने वाले किसानों को समझाया, किन्तु वे ज़मीन लौटाने के लिए तैयार नहीं हैं।

अन्त में किसानों के धैर्य का बाँध टूट गया। उन्होंने बन्दोबस्त लेने वाले किसानों को सूचना दी कि यदि हमारी ज़मीनें हमें लौटाई नहीं जायँगी तो हम स्वयं अपनी ज़मीन पर क़ब्ज़ा करेंगे।

इस निश्चय के अनुसार गत २१ अप्रैल को लगभग ४०० किसानों ने अपनी ज़ब्त ज़मीनों को जोता। इनमें ७७ किसान गिरफ़्तार किए गए, किन्तु वे पीछे छोड़ दिए गए। फिर २३वीं अप्रैल को १४ सत्याग्रहियों पर हमला किया गया, और उनके औज़ार तोड़ दिए गए। कुछ सत्याग्रहियों को गहरी चोटें भी आईं। उनके नेता श्री० मणिलाल जी गिरफ़्तार कर लिए गए। किसानों की यह शिकायत है कि सत्याग्रहियों के घावों पर मरहम-पट्टी करना तो दूर रहा, उनकी क़ानूनी सुनवाई भी नहीं की जाती। श्री० मणिलाल जी को भी जेल में कठोर यातना सहनी पड़ रही है। कहा जाता है, कि उनके पैरों में डण्डेदार बेड़ियाँ डाल दी गई हैं। प्रमुख सत्याग्रहियों को देश-निकाले की धमकी दी जा रही है। किसान-पञ्चायत के नेता श्री० हरिभाऊ उपाध्याय ने श्रीमान् महाराणा साहब के पास इस सम्बन्ध में निम्न-लिखित तार भेजा है। उन्होंने महात्मा जी, मालवीय जी, वायसराय, पोलिटिकल एजेण्ट आदि के पास भी तार भेजे हैं।

"ता० ७ अप्रैल के अपने पत्र के सिलसिले में सूचित करता हूँ, कि बिजौलिया की परिस्थिति विकट होती जा रही है। समाचार है कि माण्डलगढ़ के जिन हाकिमों को क़ानून का पालन कराने के लिए नियुक्त किया गया था, वे सीमा से आगे बढ़ गए हैं और सत्याग्रहियों को ग़ैर-क़ानूनी तौर पर धमकियाँ दे रहे हैं। यों तो ठिकाने के पास यदि सत्याग्रहियों के विरुद्ध बाज़ाब्ता शिकायतें आवें, तो वह उन पर मुक़दमे चला कर सज़ा दे सकता है; पर इसके बजाय ठिकाने के अधिकारी शान्त सत्याग्रहियों पर बामीदारों के द्वारा हमले होने देते हैं, हमला करने वालों की जब शिकायतें उनसे की जाती हैं तो वे सुनने से इन्कार करते हैं। इसके अलावा जो प्रमुख सत्याग्रही अभी हिरासत में हैं, उनके साथ १९२२ के फ़ैसले के ख़िलाफ़ मामूली क़ैदियों का सा बर्ताव किया जा रहा है। खाने को उन्हें जौ का आटा दिया जाता है और उनके पैरों में डण्डेदार बेड़ियाँ डाली गई हैं। कहा जाता है कि ठिकाने के जेल-अधिकारियों ने स्थानीय नेता श्री० मणिलाल जी को कम्बल ओढ़ कर घण्टों तक निरन्तर धूप में बैठने को मजबूर किया। उन्होंने जब इसका विरोध किया तो जेल-अधिकारियों ने उन्हें बहुत मारा-पीटा। उन्हें दो दिन की भूख-हड़ताल भी करनी पड़ी। इतना होते हुए भी सारे सत्याग्रही पूर्णतः शान्त हैं। मैं श्रीमन्त से बड़ी नम्रता और व्याकुलता के साथ प्रार्थना करता हूँ, कि आप न केवल न्याय और मनुष्यता के ख़ातिर, बल्कि मेवाड़ के परम्परागत गौरव की रक्षा के ख़ातिर भी तत्काल इस मामले में हस्तक्षेप करने की कृपा करें। कृपया अत्याचारों को बन्द करने, अत्याचार करने वालों के विरुद्ध न्यायदान की पूरी सुविधाएँ दिलाने और घायलों के लिए शीघ्र और पूरी-पूरी चिकित्सा का प्रबन्ध करने की आज्ञा जारी कीजिए। यदि अपनी पुश्तैनी ज़मीनों पर फिर क़ब्ज़ा करने का सत्याग्रही किसानों का कार्य एक अपराध समझा जाय, तो उनके विरुद्ध ज़ाब्ते की कार्यवाही भले ही की जाय; परन्तु यह पशुता तो बिना विलम्ब रुक जानी चाहिए। कृपया ऐसा प्रबन्ध भी कर दीजिए, जिससे घायलों की सेवा-शुश्रूषा भली भाँति हो और कम से कम इतना तो ज़रूर हो, कि जो लोग मरहम-पट्टी के लिए भेजे जायँ, ठिकाने या राज्य के अधिकारी किसी तरह उनकी रोक-टोक न करें

देहली षड्यन्त्र केस में पुलिस की मनोरञ्जक गवाहियाँ!

बिना हुलिया और बिना वारण्ट के अभियुक्तों की निष्फल तलाश

नई दिल्ली का समाचार है, कि २री मई को स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने सरकारी गवाहों की गवाहियाँ ली गईं। अभियुक्तों की ओर के वकील श्री० बलजीतसिंह ने आरम्भ में यह उज्र पेश किया कि मुख़बिरों की अनुपस्थिति में मामले की कार्यवाही नहीं हो सकती है। उन्होंने बतलाया कि अभियुक्तों और मुख़बिरों में इस अन्तर के सिवा, कि मुख़बिरों को सम्राट ने क्षमा प्रदान कर दिया है, और कोई अन्तर नहीं है। मि० ज़फ़रुल्ला ने सरकार की ओर से बहस करते हुए कहा कि हिरासत में रक्खे जाने से जहाँ तक सम्बन्ध है, वहाँ तक तो सरकारी गवाहों और अभियुक्तों में कोई अन्तर नहीं है, किन्तु और सब बातों में दोनों में अन्तर है। मुख़बिरों का नाम, सरकारी गवाह होने की वजह से, चलान में दर्ज नहीं किया गया है और इसलिए उन पर मामला नहीं चल रहा है।

साढ़े दस बजे के लगभग अभियुक्त जेल से लाए गए। वे बन्द लॉरियों में पुलिस के कड़े पहरे में लाए गए थे। वे क्रान्तिकारी नारे लगाते थे। ११ बजे तक उन्हें नीचे ठहरना पड़ा। 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' के नारे के साथ उन्होंने अदालत में प्रवेश किया। दो राष्ट्रीय गीत भी उन्होंने गाए।

सवा ग्यारह बजे के लगभग जजों ने अदालत में प्रवेश किया। अभियुक्तों के वकील श्री० बलजीतसिंह ने अध्यक्ष का ध्यान, अभियुक्तों की बेड़ियों की ओर आकर्षित किया। बेड़ियाँ तुरन्त हटा देने की आज्ञा दी गई। प्रोफ़ेसर निगम ने प्रार्थना की, कि उनके कमरों में भी, उन्हें हथकड़ियाँ नहीं लगाई जायँ, किन्तु अदालत ने उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की।

पहली गवाही

सब से पहले सब-इन्स्पेक्टर काशीनाथ की गवाही ली गई। उसने अपने बयान में कहा कि मैंने फ़रार अभियुक्त सम्पूर्णसिंह टण्डन, यशपाल और मुसम्मात प्रकाशो के सम्बन्ध में काङ्गड़ा, गुरुदासपुर, होशियारपुर, अमृतसर, लाहौर, दिल्ली और बनारस में खोज की है, और अब भी मैं उनकी खोज में हूँ, किन्तु उनके मिलने की कोई आशा नहीं दिखाई पड़ती है। जब अभियुक्त की ओर के वकील मि० आसफ़अली, गवाह से जिरह करने के लिए खड़े हुए, तो सरकारी वकील ने इसका विरोध किया। उन्होंने कहा कि, गवाह से जिरह करने का मि० आसफ़अली को कोई अधिकार नहीं है। मि० आसफ़अली ने कहा कि उन्हें यह अधिकार प्राप्त है। यह मामला षड्यन्त्र-सम्बन्धी होने के कारण, किसी प्रकार की गवाही से, यहाँ तक कि फ़रार अभियुक्तों के सम्बन्ध की गवाही से भी, वर्तमान अभियुक्तों का सम्बन्ध है। यह सम्भव है, कि जिरह से यह बात सिद्ध हो जाय कि, फ़रार अभियुक्त कोई वास्तविक व्यक्ति नहीं हैं, बल्कि वे काल्पनिक व्यक्ति हैं।।

मि० ज़फ़रुल्ला ने कहा, कि वर्तमान गवाही में इस मामले का कोई विशेष भाग नहीं है। मामले के सम्बन्ध में अन्य गवाहों की गवाहियाँ होंगी।

मि० अमीरअली—तब इस गवाही का क्या अर्थ है?

मि० ज़फ़रुल्ला—इससे ट्रिब्यूनल को यह पता लगेगा, कि कुछ अभियुक्त अभी तक फ़रार हैं।

मि० कुँवर सेन—क्या आप कोई ऐसा प्रमाण बता सकते हैं, जिससे यह मालूम हो, कि अभियुक्तों को स्वयं जिरह करने का कोई अधिकार नहीं है?

मि० ज़फ़रुल्ला—इस विषय पर कोई विशेष प्रमाण नहीं है, किन्तु इन गवाहों का बयान, इस मामले का कोई भाग नहीं है।

मि० कुँवर सेन—क्या अदालत उनसे जिरह नहीं कर सकती है?

मि० ज़फ़रुल्ला—हाँ, कर सकती है।

श्री० कुँवर सेन—तब यदि अभियुक्त उनसे जिरह करें तो क्या हर्ज है?

ज़फ़रुल्ला—इसमें उज्र यह है कि वर्तमान गवाही, फ़रार अभियुक्तों के सम्बन्ध में है। इन अभियुक्तों से उसका कोई सम्बन्ध नहीं। इसलिए गवाह से जिरह करने का उन्हें अधिकार नहीं है।

मि० आसफ़अली—किन्तु फ़रार अभियुक्त को भी इन अभियुक्तों के साथ चलान किया गया है और फ़रार अभियुक्तों के सम्बन्ध की गवाही, इन अभियुक्तों पर भी लागू समझी जाती है। अभियुक्तों को यह सिद्ध करने का अधिकार है, कि न तो षड्यन्त्र ही हुआ और न कोई फ़रार ही है। प्रतिवादी का वकील, इसी बयान से किसी भी अभियुक्त के लिए 'अलीबी' सिद्ध कर सकता है।

प्रतिवादी पक्ष के वकील श्री० एस० एन० बोस ने कहा कि 'एविडेन्स एक्ट' के अनुसार ही जिरह करने का अधिकार दिया गया है, भारतीय दण्ड-विधान के अनुसार नहीं; और 'एविडेन्स एक्ट' अभियुक्तों को भी, गवाहों से जिरह करने का अधिकार देता है।

अन्त में ट्रिब्यूनल ने यह फ़ैसला दिया कि गवाहों को भी जिरह करने का अधिकार है।

आगामी सप्ताह से 'भविष्य' के इन्हीं स्तम्भों में पाठकों को देहली षड्यन्त्र केस में मुख़बिरों द्वारा दिए गए ऐसे सनसनीपूर्ण बयान मिलेंगे, जो शायद दूसरे पत्रों में न मिलें, क्योंकि 'भविष्य' की ओर से अदालत में एक विशेष प्रतिनिधि की नियुक्ति की गई है।

फ़रार अभियुक्तों की खोज

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर श्री० काशीनाथ ने कहा कि जिन फ़रार अभियुक्तों की खोज मैं कर रहा हूँ, उनके विरुद्ध लाहौर षड्यन्त्र-केस के सम्बन्ध में वारण्ट निकाले गए हैं। दिल्ली षड्यन्त्र केस के सम्बन्ध में, उन पर कोई वारण्ट जारी नहीं किया गया है। मुझे इन फ़रार अभियुक्तों का कोई निश्चित पता नहीं दिया गया है, और किन ज़रियों से मैं उनकी खोज करता हूँ, यह मैं अदालत के सामने नहीं बता सकता।

गवाह ने आगे कहा कि मैं इसका कोई प्रमाण पेश नहीं कर सकता कि मैं वास्तव में फ़रार अभियुक्तों की खोज में हूँ। मैंने यशपाल के सम्बन्धियों से उसके बारे में कुछ पूछ-ताछ नहीं की है। मुसम्मात प्रकाशो एक प्रतिष्ठित घराने की स्त्री है, किन्तु उसका पिता जुआरी और कोकेनख़ोर है। मैं नहीं कह सकता वह अभी तक गिरफ़्तार किया गया है या नहीं। इसके बाद गवाह ने तीन फ़रार अभियुक्तों का वर्णन किया और कहा कि उसके साथ अभियुक्तों को शनाख़्त करने वाले ख़ास आदमी भी रहते हैं।

अभियुक्त विद्याभूषण के पूछने पर गवाह ने कहा, कि यशपाल बहुधा यूरोपियन लिबास में रहता है, किन्तु वह खद्दर भी पहनता है।

दूसरी गवाही

इसके बाद गवाह मन्सबअली ने अपने बयान में कहा कि मैं १९३० के अक्टूबर से ही लेखराम को खोज रहा हूँ। दिल्ली, मथुरा, कराची, माउण्ट-आबू और लाहौर आदि स्थान मैंने छान डाले, किन्तु उसका कुछ पता नहीं चला। निकट-भविष्य में उसके गिरफ़्तार होने की सम्भावना भी नहीं है। श्री० एस० एन० बोस के जिरह करने पर गवाह ने कहा, कि अभियुक्त को खोजने के लिए मुझे लिखी हुई और ज़बानी दोनों प्रकार की आज्ञा मिली है। मुझे याद नहीं कि मैंने स्वयं उसके सम्बन्ध में किसी से पूछ-ताछ की हो। मेरे भेदिए इस प्रकार की पूछ-ताछ किया करते थे। यह सिद्ध करने के लिए कि मैं वास्तव में अभियुक्त की खोज में था, मेरे पास यहाँ सफ़र के ख़र्चे का बिल मौजूद नहीं है। अभियुक्त की कोई फ़ोटो भी मुझे नहीं दी गई है।

श्री० वात्सायन के प्रश्न का उत्तर देते हुए गवाह ने कहा, कि मैं लाहौर षड्यन्त्र केस के सम्बन्ध में अभियुक्त लेखराम की खोज करता था, किन्तु अब दिल्ली षड्यन्त्र के सम्बन्ध में भी वह चलान किया गया है। मुझे उसकी गिरफ़्तारी के लिए कोई वारण्ट नहीं दिया गया है।

हेड कॉन्स्टेबिल की गवाही

अपराध सम्बन्धी जाँच-विभाग के हेड कॉन्स्टेबिल जयप्रसाद ने अपने बयान में कहा, कि मैंने हज़ारीलाल और लेखराम की खोज हिस्सार और रोहतक में की है। मुझे हज़ारीलाल का कोई पता नहीं दिया गया था, किन्तु वे स्थान मुझे बताए गए थे, जहाँ वह बराबर आया-जाया करता था। किसी भी अभियुक्त के मिलने की आशा नहीं है।

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर गवाह ने कहा—किसी भी अभियुक्त के लिए मुझे वारण्ट नहीं दिए गए हैं, किन्तु उनकी फ़ोटो, उनके वर्णन के साथ, मुझे दी गई है। मैं लेखराम के घर पर नहीं गया। मैंने उसके ससुर से मुलाक़ात की, और उसकी स्त्री से भी कुछ प्रश्न किए। प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि मैं नहीं जानता कि लेखराम की स्त्री परदा करती है या नहीं। मैं उस स्थान का रहने वाला हूँ, जहाँ लेखराम हकीमी करते थे। कोई भी लेखराम के सम्बन्ध में कुछ नहीं बता सका। सभी लोगों ने यही कहा कि वह छिपा हुआ है।

लेखराम ज़िन्दा है या नहीं?

गवाह ने आगे कहा कि मैं यह भी नहीं कह सकता कि लेखराम जीवित है या नहीं, किन्तु मेरा ऐसा अनुमान है कि वह जीवित है, क्योंकि उसकी मृत्यु के सम्बन्ध में कोई ख़बर अख़बारों में मैंने नहीं देखी है। मि० बोस के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि मुझे याद नहीं कि मैंने हज़ारीलाल के सम्बन्ध में किसी से पूछताछ की हो। मैंने इसकी सूचना, अपनी रिपोर्ट में दे दी है। मैं सफ़र के ख़र्चे का बिल या अभियुक्तों के फ़ोटो यहाँ नहीं लाया हूँ।

(आगामी अङ्क में समाप्त)

सेण्ट्रल सिक्ख लीग की १७ शर्तें

(१) सिक्ख राष्ट्रीय शासन-व्यवस्था चाहते हैं, इसलिए वे किसी ऐसे नियम का समर्थन नहीं कर सकते जिसके द्वारा बहुसंख्यक सम्प्रदाय की सीटें व्यवस्थापक सभाओं में संरक्षित कर देने का विचार किया गया हो।

(२) पञ्जाब में सिक्खों का महत्व अपना सानी नहीं रखता। सिक्खों ने भारत की रक्षा में और राष्ट्रीय आन्दोलनों में काफ़ी त्याग किए हैं। पञ्जाब प्रान्त में जैसी उनकी स्थिति है, उसे देखते हुए वे पञ्जाब व्यवस्थापक सभा तथा शासन-सम्बन्धी अन्य विभागों के लिए ३० प्रतिशत प्रतिनिधित्व की माँग पेश करते हैं।

(३) पञ्जाब की कार्यकारिणी समिति में तथा पब्लिक सर्विस कमीशन में एक तिहाई सदस्य सिक्ख जाति के रहा करें।

(४) यदि उपरोक्त प्रस्तावों के आधार पर कोई निर्णय न हो सके, तो पञ्जाब प्रान्त का वह भाग, जो सीमा प्रान्त की तरफ़ है और जिसके निवासी अधिकांश में मुसलमान हैं, पञ्जाब से अलग करके सीमा प्रान्त में मिला दिया जाय जिससे कि शेष पञ्जाब के निवासियों का साम्प्रदायिक बल बराबर-बराबर हो जाय। उस हालत में निर्वाचन संयुक्त हो और सीटें संरक्षित न रक्खी जायँ।

(५) यदि उपरोक्त दो उपायों में से कोई भी स्वीकृत न हो तो उस हालत में हमारा प्रस्ताव है, कि पञ्जाब प्रान्त का शासन-भार उत्तरदायी केन्द्रीय शासन के अधिकार में तब तक के लिए सौंप दिया जाय, जब तक कि किसी प्रकार का साम्प्रदायिक समझौता न हो जाय।

(६) पञ्जाब प्रान्त की सरकारी भाषा पञ्जाबी हो। सिक्ख तथा अन्य दूसरे लोग अपनी इच्छानुसार गुरुमुखी लिपि के प्रयोग करने में स्वतन्त्र रहें।

(७) ब्रिटिश भारत के उच्च और निम्न दोनों व्यवस्थापक सभाओं में ५ प्रतिशत स्थान सिक्खों को मिलें।

(८) केन्द्रीय शासन की कार्यकारिणी में कम से कम एक सिक्ख अवश्य रक्खा जाय।

(९) यदि कोई फ़ौजी कौन्सिल बने, तो उसमें सिक्ख जाति के प्रतिनिधि यथेष्ट संख्या में रक्खे जायँ।

(१०) सिक्खों का फ़ौज के साथ सदैव से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है, इसलिए फ़ौज में सिक्खों की संख्या यूरोपीय युद्ध के पहले की संख्या से कम न रहे।

(११) अखिल भारतीय सर्विस कमीशन में सिक्खों का यथेष्ट प्रतिनिधित्व रहे। केन्द्रीय शासन के सर्विस कमीशन में भी उनके प्रतिनिधि रक्खे जायँ।

(१२) प्रान्तीय अधिकारों को छोड़ कर, शेष सब अवशिष्ट अधिकार केन्द्रीय शासन के अधीन रहें।

(१३) अल्प जातियों की रक्षा के लिए कुछ निश्चित अधिकार केन्द्रीय शासन के अधीन रहें।

(१४) दूसरे प्रान्तों में सिक्खों के लिए अन्य अल्प जातियों के समान ही संरक्षण रहें।

(१५) प्रान्तीय तथा केन्द्रीय शासन धार्मिक स्वाधीनता की घोषणा कर दें। परन्तु अब तक जितनी सम्पत्ति धर्म पर लग चुकी है, उसे छोड़ कर आगे धर्म पर कोई नवीन सम्पत्ति न लगा सके, ऐसा नियम कर दिया जाय।

(१६) जहाँ कुछ भी विद्यार्थी एक निश्चित संख्या में पाए जायँ, वहाँ राज्य की तरफ़ से उन्हें गुरुमुखी लिपि सिखाने का प्रबन्ध रहे।

(१७) शासन-विधान में सिक्खों के लिए निश्चय हुए संरक्षणों में कोई भी संरक्षण बिना सिक्खों की स्पष्ट अनुमति के हटाया न जा सकेगा।

उपरोक्त शर्तें साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्धति के किसी रूप में बनी रहने की हालत में ही लागू होंगी। राष्ट्रीयता के आधार पर कोई दूसरी योजना सामने लाए जाने पर उपरोक्त शर्तों में से यदि कोई शर्त उसके विपरीत पड़ेगी, तो सिक्ख उस पर ज़ोर न देंगे।

* * *

ख़ून के बदले ख़ून की घातक नीति

लाहौर की फाँसियाँ :: एक अँगरेज़ के विचार

बार-बार अमृतसर-काण्ड की पुनरावृत्ति करने से दोनों देशों की मैत्री मुश्किल होता जा रही है

लाहौर षड्यन्त्र-केस में सरदार भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव को दी गई फाँसी के सम्बन्ध में विलायत के "मैञ्चेस्टर गार्जियन" में लिखते हुए मि० होर्स जी० एलेक्ज़ेण्डर नाम के एक सुप्रसिद्ध अङ्गरेज़ लेखक ने निम्न-लिखित विचार प्रकट किए हैं:—

ठीक ऐसे समय, जब कि लोग यह उम्मीद करने लग गए थे, कि महात्मा गाँधी अपनी समझौता वाली नीति में, नवयुवक-दल के प्रबल विरोध करने पर भी, कॉङ्ग्रेस में विजयी होंगे, भगतसिंह और उनके साथी फाँसी पर लटका दिए गए! अगर लोगों को यह निश्चय हो गया होता, कि कैप्टेन सॉण्डर्स के असन्दिग्ध हत्याकारी ये ही व्यक्ति हैं, तो इनकी फाँसी के सम्बन्ध में, एक बार विरोध करके मौन होकर बैठ रहते। लेकिन इस मामले में जैसी कार्रवाई की गई है, उसे देखते हुए, कोई मौन नहीं बैठ सकता, बल्कि इसका तीव्र प्रतिरोध आवश्यक था।

इस मामले की मुख्य बातें भारतवर्ष के लोगों पर बहुत अच्छी तरह प्रकट हैं, कि किस तरह साइमन कमीशन लाहौर आया, किस प्रकार उसके विरुद्ध सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता लाला लाजपतराय के नेतृत्व में एक विराट प्रदर्शन हुआ और किस प्रकार कैप्टेन सॉण्डर्स द्वारा, जैसा कि लोग कहते हैं, लाला जी पर वार किया गया और कुछ ही दिनों बाद उनकी मृत्यु हुई। लाला जी की मृत्यु के कारण के विषय में डॉक्टरों में यद्यपि मतभेद था, लेकिन अधिकांश भारतीयों का यह दृढ़ विश्वास है, कि कैप्टन सॉण्डर्स के आक्रमण के आघात से ही उनकी मृत्यु हुई। इस मृत्यु के एक मास बाद, अनुमान है, कि प्रतिशोध की भावनाओं से प्रेरित होकर कैप्टन सॉण्डर्स की हत्या कर डाली गई। हत्याकारी लापता रहे। बहुत समय बाद भगतसिंह, जिन्हें एसेम्बली बम-काण्ड के मामले में सज़ा दी जा चुकी थी, और जिन्होंने स्वयं ही अपने को हिंसक क्रान्तिकारी स्वीकार किया था, कुछ अपने साथियों के साथ इस हत्या के लिए दोषी ठहराए गए। इस मामले के दौरान में कोर्ट में जो गवाहियाँ गुज़रीं, वे बहुत ही अपर्याप्त थीं। भगतसिंह एक अत्यन्त साहसी, निर्भीक और स्पष्टवादी युवक था। अपनी मातृ-भूमि के कल्याण के लिए वह किसी क्षण जीवनोत्सर्ग कर सकता था। उसने स्वयं ही कहा था, कि इस हत्याकाण्ड से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन वह और उसके साथी अपराधी ठहराए गए और फ़ैसले में उन्हें मृत्यु का दण्ड दिया गया। सारी अपीलें और सज़ा कम करने की प्रार्थनाएँ रद्द कर दी गईं और ठीक ऐसे समय, जब कि गाँधी जी कॉङ्ग्रेस को इस बात का विश्वास दिलाने जा रहे थे, कि सरकार ने अपना हृदय परिवर्तन कर लिया है, वे नवयुवक फाँसी पर चढ़ा दिए गए। हम इस मनोवृत्ति को किस बात का परिचायक समझें? मेरा पहला ख़्याल यही हुआ, कि कुछ इर्विन-गाँधी समझौते के शत्रु अधिकारी इस समझौते को किसी भी तरह भङ्ग करने पर तुले हुए हैं, इसीलिए इन फाँसियों के देने में इतनी जल्दी की गई है। ठीक ऐसे समय, जब कि लॉर्ड इर्विन ने पुलिस-जाँच की माँग के सम्बन्ध में अपने मातहतों का समर्थन किया था, कुछ लोग, मालूम होता है, उन्हें गिरा देने के लिए ही तत्पर थे। इसीलिए उन्होंने उपर्युक्त अभियुक्तों को फाँसी दे देने में इतनी जल्दी की।

लेकिन सम्भव है, यह बात न हो। हो सकता है, कि भारत-सरकार के कुछ विभागों को अपने दमन की घातक नीति पर ही पूरा विश्वास हो। ये महाशय पूर्वीय देशों के निवासियों की मनोवृत्ति को समझने का दावा करते हैं और कहते हैं कि पूर्वीय मनोवृत्ति तो केवल पशुबल का आदर करना जानती है, उस पर और किसी बात का प्रभाव नहीं पड़ता। शायद, उनका ख़्याल है कि कॉङ्ग्रेस इन फाँसियों से दब जायगी। परन्तु मेरा विश्वास है कि पूर्व और पश्चिम के बीच विषाक्त और अप्रिय सम्बन्ध पैदा करने के लिए सब से अधिक उत्तरदायी यही नीति है।

यही अवसर है कि इङ्गलैण्ड के निवासी चेत जायँ और समझ लें कि वास्तव में पूर्वीय और पश्चिमीय मनोवृत्ति में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। पूर्वीय या पश्चिमीय दोनों ही, चाहे थोड़े समय के लिए बल प्रयोग से भले ही दब जायँ, लेकिन याद रहे कि अवसर पाकर दबी हुई वस्तु अपने दूने वेग से उभड़ती है। मेरा तो अनुभव है और मैं जानता हूँ कि मेरे और भी मित्रों का ऐसा ही अनुभव है कि हिन्दुस्तानियों में अगर कोई विशेषता है, तो वह यही है, कि वे अल्प से अल्प उदारता, प्रेम और विश्वास से सहज ही वशीभूत हो जाते हैं। उनके ये लक्षण कमज़ोरी के चिन्ह कदापि नहीं हैं। वे थोड़े से भी विश्वास और सहानुभूति के आधार पर बड़ी शीघ्रता के साथ स्थायी मैत्री स्थापित कर लेते हैं। मेरा विश्वास है, कि हिन्दुस्तान के लोग अब भी दोस्ती चाहने वाले इङ्गलैण्ड का साथ दे सकते हैं। लेकिन बात यह है, कि बार-बार अमृतसर-काण्ड की पुनरावृत्ति करने से दोनों देशों की मैत्री मुश्किल होती जा रही है। उन लोगों को, जो वास्तव में पूर्व और पश्चिम में प्रेम स्थापित करना चाहते हैं, चाहिए कि भारतीयों के प्रति उदारता और सहृदयता का व्यवहार करें और अपने पुराने कृत्यों के लिए प्रायश्चित्त कर डालें।

* * *

महात्मा जी के नाम स्वर्गीय सुखदेव की खुली चिट्ठी

गत सप्ताह के सहयोगी "यङ्ग इण्डिया" में स्वर्गीय सुखदेव का एक पत्र, जो कहा जाता है, उन्होंने फाँसी के कुछ ही पूर्व महात्मा जी के पास भेजा था—प्रकाशित हुआ है, जिसका उत्तर भी महात्मा जी ने "यङ्ग इण्डिया" के इसी अङ्क में प्रकाशित किया है। दोनों इतने महत्वपूर्ण विषय हैं कि उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। श्री० सुखदेव का पत्र हिंसात्मक विचार के पक्षपातियों के सिद्धान्त जनता के सामने उपस्थित करता है और महात्मा जी का उत्तर अहिंसात्मक सिद्धान्तों का परिचायक है, अतएव पाठकों के विवेचनार्थ दोनों ही पत्रों का अविकल अनुवाद नीचे दिया जा रहा है।

—सं० 'भविष्य'

अत्यन्त सम्माननीय महात्मा जी,

आजकल के नए समाचारों से मालूम होता है, कि आपने सन्धि-चर्चा के बाद से क्रान्तिकारियों के नाम कई एक अपीलें निकाली हैं, जिनमें आपने उनसे कम से कम वर्तमान समय के लिए अपने क्रान्तिकारी आन्दोलन को रोक देने के लिए कहा है। वास्तविक बात यह है, कि किसी आन्दोलन को रोक देने का काम कोई सैद्धान्तिक या अपने वश की बात नहीं है। समय-समय की आवश्यकताओं का विचार करके आन्दोलन के नेता अपना और अपनी नीति का परिवर्तन किया करते हैं।

हमारा अनुमान है, कि सन्धि के वार्तालाप के समय आप एक क्षण के लिए भी यह बात न भूले होंगे, कि यह समझौता कोई अन्तिम समझौता नहीं हो सकता। मेरे ख़्याल से इतना तो सभी समझदार व्यक्तियों ने समझ लिया होगा, कि आपके सब सुधारों के मान लिए जाने पर भी देश का अन्तिम लक्ष्य पूरा न हो जायगा। कॉङ्ग्रेस, लाहौर कॉङ्ग्रेस के प्रस्तावानुसार स्वतन्त्रता का युद्ध तब तक लगातार जारी रखने के लिए बाध्य है, जब तक पूर्ण स्वाधीनता न प्राप्त हो जाय। बीच-बीच की सन्धियाँ और समझौते क्षणिक विराम मात्र हैं। जिनमें अगली लड़ाई के लिए अधिकाधिक शक्ति सङ्गठित करने का अवसर मिलता है। उपरोक्त सिद्धान्त पर ही किसी प्रकार का समझौता या विराम-सन्धि की कल्पना की जा सकती है।

समझौते के लिए उपयुक्त अवसर का तथा शर्तों का विचार करना नेताओं का काम है। यद्यपि लाहौर के पूर्ण स्वाधीनता वाले प्रस्ताव के होते हुए भी आपने अपना आन्दोलन स्थगित कर दिया है, फिर भी वह प्रस्ताव ज्यों का त्यों बना हुआ है। हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी के क्रान्तिकारियों का ध्येय इस देश में सोशलिस्ट प्रजातन्त्र प्रणाली स्थापित करना है। इस ध्येय में संशोधन के लिए ज़रा भी गुञ्जाइश नहीं है। वे तो अपना संग्राम, जब तक कि ध्येय न प्राप्त हो जाय और आदर्श की पूर्ण स्थापना न हो जाय, तब तक बराबर जारी रखने के लिए बाध्य हैं। परन्तु वे परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ-साथ अपनी युद्ध-नीति भी बदलते रहना जानते हैं। क्रान्तिकारियों का युद्ध भिन्न-भिन्न अवसरों पर भिन्न-भिन्न स्वरूप धारण कर लेता है। कभी वह प्रकट रूप रखता है, कभी गुप्त रूप धारण कर लेता है; कभी केवल आन्दोलन के रूप में हो जाता है और कभी जीवन और मृत्यु का भयानक संग्राम करने लग जाता है। वर्तमान परिस्थितियों में क्रान्तिकारियों के सामने आन्दोलन रोक देने के लिए कुछ विशेष कारणों का होना तो आवश्यक ही है। परन्तु आपने हम लोगों के सामने ऐसा कोई निश्चित कारण उपस्थित नहीं किया, जिस पर विचार करके हम अपना आन्दोलन रोक दें। केवल भावुक अपीलें क्रान्तिकारियों के संग्राम में कोई प्रभाव नहीं पैदा कर सकतीं।

समझौता करके आपने अपना आन्दोलन स्थगित कर दिया है, जिसके फल-स्वरूप आपके आन्दोलन के सब बन्दी छूट गए हैं। परन्तु क्रान्तिकारी बन्दियों के विषय में आप क्या कहते हैं? सन्, १९१५ के ग़दर पार्टी वाले राजबन्दी अब भी जेलों में सड़ रहे हैं, यद्यपि उनकी सज़ाएँ पूरी हो चुकी हैं। कोड़ियों मार्शल-लॉ के बन्दी अब भी जीवित ही क़ब्रों में गड़े हुए हैं! इसी प्रकार दर्जनों बब्बर अकाली क़ैदी जेल-यातना भोग रहे हैं। देवगढ़, काकोरी, मछुआ बाज़ार और लाहौर षड्यन्त्र-केस के अनेकों राजबन्दी अब भी जेलों में बन्द हैं। आधे दर्जन से अधिक षड्यन्त्र-केस लाहौर, दिल्ली, चटगाँव, बम्बई, कलकत्ता आदि स्थानों में चल रहे हैं। दर्जनों क्रान्तिकारी फ़रार हैं, जिनमें बहुत सी तो स्त्रियाँ हैं। आधे दर्जन से अधिक क़ैदी अपनी फाँसियों की बाट जोह रहे हैं। इन सब के विषय में आप क्या कहते हैं? लाहौर षड्यन्त्र-केस के तीन राजबन्दी, जिन्हें फाँसी देने का हुक्म हुआ है और जिन्होंने संयोगवश देश में बहुत बड़ी ख्याति प्राप्त कर ली है, क्रान्तिकारी दल के

स्वर्गीय सुखदेव

सब कुछ नहीं हैं। दल के सामने केवल इन्हीं के भाग्य का प्रश्न नहीं है। वास्तव में इनकी सज़ाओं के बदल देने से देश का उतना कल्याण न होगा, जितना कि इन्हें फाँसी पर चढ़ा देने से होगा।

परन्तु इन सब बातों के होते हुए भी आप इनसे अपना आन्दोलन खींच लेने की सार्वजनिक अपीलें कर रहे हैं। वे अपना आन्दोलन क्यों रोक लें, इसका आपने कोई निश्चित-कारण नहीं बतलाया? ऐसी परिस्थिति में आपकी इन अपीलों के निकालने का मतलब तो यही है, कि आप क्रान्तिकारियों के आन्दोलन को कुचलने में नौकरशाही का साथ दे रहे हैं! आप इन अपीलों के द्वारा स्वयं क्रान्तिकारी दल में विश्वासघात और फूट की शिक्षा दे रहे हैं। अगर यह बात न होती, तो आपके लिए सब से अच्छा उपाय यह था कि आप कुछ प्रमुख क्रान्तिकारियों से मिल कर इस विषय की सम्पूर्ण बातचीत कर लेते। आपको उन्हें आन्दोलन खींच लेने की सलाह देने के पहले अपने तर्कों को समझाने का प्रयत्न करना चाहिए था। मेरा ख़्याल है, कि साधारण जन-समुदाय की तरह आपकी भी यह धारणा न होगी कि क्रान्तिकारी तर्कहीन होते हैं और उन्हें केवल विनाशकारी कार्यों में ही आनन्द आता है। हम आपको बतला देना चाहते हैं, कि यथार्थ में बात इसके बिल्कुल विपरीत है। वे प्रत्येक क़दम आगे बढ़ाने के पहले अपनी चतुर्दिक परिस्थितियों का विचार कर लेते हैं। उन्हें अपनी ज़िम्मेदारी का ज्ञान हर समय बना रहता है। वे अपने क्रान्तिकारी विधान में रचनात्मक अंश की उपयोगिता को मुख्य स्थान देते हैं, यद्यपि मौजूदा परिस्थितियों में उन्हें केवल विनाशात्मक अंश की ओर ध्यान देना पड़ा है।

गवर्नमेण्ट क्रान्तिकारियों के प्रति पैदा हो गई सार्वजनिक सहानुभूति तथा सहायता को नष्ट करके किसी तरह उन्हें कुचल डालना चाहती है। अकेले में वे सहज ही कुचल दिए जा सकते हैं। ऐसी हालत में किसी प्रकार की भावुक अपील निकाल कर उनमें विश्वासघात और फूट पैदा करना, बहुत ही अनुचित और क्रान्ति-विरोधी कार्य होगा। इसके द्वारा गवर्नमेण्ट को, उन्हें कुचल डालने में प्रत्यक्ष सहायता मिलती है।

इसलिए आपसे हमारी प्रार्थना है, कि या तो आप कुछ क्रान्तिकारी नेताओं से, जो कि जेलों में हैं, इस विषय में कोई बातचीत करके कुछ निर्णय कर लीजिए या फिर अपनी अपीलें बन्द कर दीजिए। कृपा करके उपरोक्त दो मार्गों में से किसी एक का अनुसरण कर लीजिए और जिसका अनुसरण कीजिए, उसे पूरे दिल से कीजिए। अगर आप उनकी सहायता नहीं कर सकते, तो कृपा करके उन पर रहम कीजिए। और उन्हें अकेला छोड़ दीजिए। वे अपनी रक्षा अपने आप कर लेंगे। वे अच्छी तरह से जानते हैं, कि भविष्य के राजनीतिक युद्ध में उनका नायकत्व निश्चित है। जनसमुदाय उनकी ओर बराबर बढ़ता आ रहा है और वह दिन दूर नहीं है, जब कि उनके नेतृत्व में और उनके झण्डे के नीचे जन समुदाय उनके सोशलिस्ट प्रजातन्त्र के उच्च ध्येय की ओर बढ़ता हुआ दिखाई पड़ेगा।

या, यदि आप सचमुच उनकी सहायता करना चाहते हैं, तो उनका दृष्टिकोण समझने के लिए उनसे बातचीत कीजिए और सम्पूर्ण समस्या पर विस्तार के साथ विचार कर लीजिए।

आशा है, आप उपरोक्त प्रार्थना पर कृपया विचार करेंगे और अपनी राय सर्व-साधारण के सामने प्रकट कर देंगे।

आपका,

'अनेकों में से एक'

* * *

अनेकों में से एक (?)

(महात्मा गाँधी का उत्तर)

'अनेकों में से एक' द्वारा लिखित यह पत्र, सुखदेव का पत्र है। श्रीयुत सुखदेव सर्दार भगतसिंह के साथी थे। उपरोक्त पत्र उनकी मृत्यु के बाद मुझे मिला था। समयाभाव वश मैं इस पत्र को इससे पहले नहीं प्रकाशित कर सका। पत्र ज्यों का त्यों छाप दिया गया है।

पत्र का लेखक "अनेकों में से एक" नहीं है। अनेकों राजनीतिक स्वाधीनता के लिए फाँसी नहीं स्वीकार

करते। राजनीतिक हत्या चाहे कितनी ही निन्दनीय क्यों न हो, परन्तु ऐसे भयानक कार्यों के लिए प्रेरित करने वालों से, उनका देश-प्रेम और साहस छिपाए नहीं छिप सकता। हमें इस बात की आशा करनी चाहिए कि राजनीतिक हत्या का पन्थ बढ़ने न पावे। यदि स्वाधीनता प्राप्त करने का भारतीय प्रयोग सफल हो गया, जिसकी सफलता में कोई सन्देह नहीं है, तो राजनीतिक हत्या का पेशा दुनिया से सदैव के लिए उठ जावगा। जो हो, मैं तो इसी विश्वास को लेकर अपना काम कर रहा हूँ।

पत्र-लेखक का यह कहना ठीक नहीं है, कि मैंने क्रान्तिकारियों से उनके आन्दोलन स्थगित कर देने के लिए केवल भावुक अपीलें की हैं, विपरीत इसके मेरा तो दावा है, कि मैंने उन्हें वैसा करने के ठोस कारण बतलाए हैं। यद्यपि उन कारणों को मैं कई बार इस पत्र के कॉलमों में प्रकाशित कर चुका हूँ, फिर भी उन्हें यहाँ दुहराता हूँ :—

(१) क्रान्तिकारी कार्रवाइयों से हम ध्येय के निकट नहीं पहुँचे।

(२) इनके कारण देश का सैनिक व्यय बढ़ गया है।

(३) इनके कारण सरकार का दमन-चक्र बढ़ गया है, जिससे देश का कोई लाभ नहीं हुआ।

महात्मा गाँधी

(४) जब-जब कहीं क्रान्तिकारियों द्वारा कोई हत्या हुई है, तब-तब उस स्थान के लोगों पर उसका बुरा प्रभाव पड़ा है।

(५) क्रान्तिकारी कार्रवाइयों द्वारा जन-समुदाय की जागृति में कोई सहायता नहीं पहुँची।

(६) जन-समुदाय पर इनके कामों का असर दो तरह से बुरा पड़ा है। एक तो जनता को अतिरिक्त व्यय का भार सहन करना पड़ा है, दूसरे सरकार के अप्रत्यक्ष क्रोध का निशाना बनना पड़ा है।

(७) भारत की भूमि तथा उसकी परम्परा क्रान्तिकारी हत्याओं के उपयुक्त नहीं है। इस देश के इतिहास से जो शिक्षा मिलती है, उससे मालूम होता है कि राजनीतिक हिंसा यहाँ उन्नति नहीं कर सकती।

(८) यदि क्रान्तिकारी, जनसमुदाय को अपने मत में परिवर्तित कर लेने का विचार करते हैं, तो उस हालत में हमें स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए बहुत ज़्यादा तथा अनिश्चित समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

(९) यदि जनसाधारण हिंसात्मक उपाय का समर्थक हो भी जाय, तो उसका परिणाम अन्त में अच्छा नहीं हो सकता। यह उपाय, जैसा कि दूसरे देशों में हुआ है, स्वयं उस उपाय के सञ्चालकों को ही नष्ट कर देता है।

(१०) क्रान्तिकारियों के सामने उनके विपरीत उपाय अहिंसा की सार्थकता का भी प्रत्यक्ष प्रदर्शन हो चुका है। उन्होंने देखा होगा, कि अहिंसात्मक आन्दोलन, क्रान्तिकारियों की स्फुट हिंसा तथा कुछ-कुछ स्वयं अहिंसात्मक आन्दोलन वालों की हिंसा के होते हुए भी, कैसे बराबर अपनी गति पर चलता रहा।

(११) क्रान्तिकारी मेरी इस बात को मान लें, कि उनके आन्दोलन ने अहिंसात्मक आन्दोलन को कोई लाभ नहीं पहुँचाया, बल्कि हानि ही पहुँचाई है। यदि देश का वातावरण पूर्ण रीति से शान्त रहता तो हम अपने लक्ष्य को अब से पहले ही प्राप्त कर चुके होते।

मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि उपरोक्त बातें ठोस सत्य हैं, केवल भावुक अपीलें नहीं हैं। पत्र-लेखक ने, मैंने क्रान्तिकारियों से अब तक जो सार्वजनिक अपीलें की हैं, उनका विरोध किया है। लेखक का कहना है कि इन सार्वजनिक अपीलों को निकाल कर मैंने नौकरशाही को क्रान्तिकारियों के आन्दोलन दबाने में सहायता की है। नौकरशाही को क्रान्तिकारी आन्दोलन दबाने के लिए मेरी सहायता की आवश्यकता नहीं है। वह तो अपने अस्तित्व के लिए क्रान्तिकारियों से और मुझसे दोनों से लड़ रही है। उसे अहिंसात्मक आन्दोलन हिंसात्मक आन्दोलन की अपेक्षा अधिक भयानक मालूम होता है। वह हिंसात्मक आन्दोलन का सामना करना तो जानती है; परन्तु अहिंसात्मक से घबड़ाती है, जिसने उसकी जड़ बहुत पहले ही हिला दी है।

राजनीतिक हत्या करने वाले व्यक्ति अपने भीषण जीवन-पथ पर पैर रखने के पहले ही समझ लेते हैं, कि उन्हें अपने कार्यों का कौन सा मूल्य देना पड़ेगा। ऐसी अवस्था में सम्भवतः मेरा कोई भी कार्य उनकी स्थिति को किसी प्रकार से अधिक आशङ्काजनक नहीं बना सकता।

यह जान कर, कि क्रान्तिकारी दल अपनी कार्रवाइयों को छिप कर करता है, मेरे पास उस दल के अज्ञात सदस्यों तक अपील पहुँचाने का, सिवा सार्वजनिक रूप से लिखने के और कोई दूसरा उपाय नहीं रह जाता। मैं कह सकता हूँ, कि मेरी सार्वजनिक अपीलें बिल्कुल निरर्थक नहीं गईं। मेरे सहयोगियों में पहले के बहुत से क्रान्तिकारी हैं।

पत्र-लेखक की शिकायत है कि सत्याग्रही राजबन्दियों के अतिरिक्त दूसरे राजबन्दी नहीं छोड़े गए। 'यङ्ग इण्डिया' के पृष्ठों में लिख कर मैं बतला चुका हूँ कि किन कारणों से अन्य राजनीतिक बन्दियों के छोड़ने के विषय में मैं ज़्यादा ज़ोर नहीं दे सका। स्वयं मैं तो सब बन्दियों के छूट जाने के पक्ष में हूँ, और मैं उनके छुटकारे के लिए कोई प्रयत्न उठा न रक्खूँगा। मुझे मालूम है, कि कुछ बन्दियों को तो अब से बहुत पहले ही छूट जाना चाहिए था। कॉङ्ग्रेस ने इस सम्बन्ध में एक प्रस्ताव भी पास किया है। उसने श्रीयुत नैरीमन को अब तक के न छूटे हुए राजबन्दियों की नामावली बनाने का काम सौंप दिया है। नामावली तैयार हो जाते ही उन्हें छुड़ाने का प्रयत्न किया जायगा। परन्तु जो लोग छूट चुके हैं उन्हें क्रान्तिकारी हत्याओं को रोक कर हमारी सहायता करनी चाहिए। हत्या और छुटकारा दोनों बातें साथ-साथ नहीं हो सकतीं। निस्सन्देह ऐसे भी राजबन्दी हैं, जिन्हें तो हर हालत में छुड़ाना पड़ेगा। मैं इस सम्बन्ध में लोगों को यह विश्वास दिला देना चाहता हूँ, कि राजबन्दियों के छुटकारे में देरी का कारण हमारी इच्छा की कमी नहीं है, वरन् योग्यता की कमी है। यह भी याद रहे, कि यदि स्थायी समझौता हो गया तो सम्पूर्ण राजनीतिक बन्दियों को छोड़ना ही पड़ेगा। यदि स्थायी समझौता न हुआ, तो अभी जो लोग बाहर उनके छुड़ाने का प्रयत्न कर रहे हैं, वे उन्हीं के साथ जेल के अन्दर दिखलाई पड़ेंगे !!

* * *

स्वर्गीय सुखदेव का पत्र ?

सरकारी विज्ञप्ति की नक़ल

श्री० सुखदेव के चचा की शङ्का

[स्वर्गीय श्री० सुखदेव के पास एक ऐसी चिट्ठी पाई जाने के विषय में—जिससे स्वर्गीय मि० सॉण्डर्स की हत्या करने की बात स्वीकार की गई बतलाई जाती है—गवर्नमेण्ट की ओर से जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है उसे पाठकों के मनोरञ्जनाथ नीचे उद्धृत किया जाता है।

—सं० "भविष्य"]

लाहौर और युक्त प्रान्त की क्रान्ति के मामले में सज़ा पाने के पहले भगतसिंह को छोड़ कर सभी अभियुक्त बोर्स्टल जेल के एक हिस्से में रक्खे गए थे, जहाँ साधारणतया विचाराधीन क़ैदी रक्खे जाते हैं। भगतसिंह को एसेम्बली बम-केस में सज़ा मिल चुकी थी, इसलिए वे लाहौर सेण्ट्रल जेल में रक्खे गए थे।

७वीं अक्टूबर, १९३० को सज़ा सुनाई जाने के बाद नियमानुसार अभियुक्तों को सेण्ट्रल जेल में भेजे जाने की आज्ञा दी गई। यह स्थान-परिवर्तन पुलिस के पहरे में किया जाता है, अतः यहाँ भी पुलिस का प्रबन्ध किया गया। पुलिस के अफ़सर ने नियमानुसार अपने अधीन क़ैदियों की तलाशी ली। सुखदेव के हाथ में एक असमाप्त चिट्ठी पाई गई, जो हिन्दी में थी। इसे वह नष्ट कर देने का प्रयत्न कर रहा था, किन्तु नष्ट होने के पहले ही वह छीन ली गई। यह पत्र प्राप्त होने के बाद से ही एक जवाबदेह सरकारी अफ़सर के पास रक्खा गया। लेखक की अन्तिम अपील के फ़ैसले तक के लिए पत्र का प्रकाशन रोक लिया गया था। जनता की जानकारी के लिए पत्र का मज़मून यहाँ दिया जाता है :—

"प्यारे भाई, बहुत दिनों से मेरे हृदय में कुछ ऐसे भाव उठ रहे थे, जिन्हें कतिपय कारणों से मुझे अब तक दबाना पड़ा था; किन्तु मैं अब अधिक उन्हें नहीं दबा सकता और अब ऐसा करना ठीक भी नहीं समझता हूँ। मैं नहीं कह सकता, मेरे इस प्रकार के भावों को आप किस दृष्टि से देखेंगे। न मालूम आप उन पर ध्यान देंगे या नहीं, और आप उन्हें पसन्द करेंगे या नहीं। किन्तु मैं जो ठीक समझता हूँ वही कर रहा हूँ। उनके अनुसार कार्य करना आपकी इच्छा पर है। यदि आप इस पत्र का उत्तर दें तो बहुत अच्छी बात हो। इससे लाभ यह होगा कि मेरा भ्रम-निवारण हो जायगा, और मुझे इस बात का पता चल जायगा कि जेल की चहारदीवारी के भीतर बन्द रहने से मेरी विचारशक्ति तो नष्ट नहीं हो गई है, जिससे मैं व्यावहारिक क्षेत्र से दूर हट कर केवल हवाई क़िले बनाने में मस्त हूँ।

कार्य

"हम लोगों के जेल में आने के बाद से, बाहर की आबहवा कुछ गर्म रही है। 'कार्य' के विषय में अख़बारों से यह पता चलता है कि प्रत्येक प्रान्त में विशेष कर पञ्जाब और बङ्गाल में परिस्थिति कठिन है। वहाँ बम तो खेल सा हो गया है। पहले कभी इतने "कार्य" नहीं किए गए थे। इन्हीं कार्यों के विषय में मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूँ; और इन "कार्यों" के सम्बन्ध में अपनी सम्मति प्रकट करने के उपरान्त मैं अपने संस्था की इस "कार्य" विषयक नीति को बताऊँगा।

"हम लोगों ने केवल दो "कार्य" किए, एक सॉण्डर्स की हत्या और दूसरा असेम्बली में बम-काण्ड। इससे पहले भी हम लोगों ने दो-तीन बार प्रयत्न किया था, किन्तु सफलता नहीं मिली थी। इस सम्बन्ध में मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि हम लोगों के कार्य तीन प्रकार के थे—(१) प्रचार, (२) धन, (३) विशेष। इन तीनों में हमारा विशेष ध्यान, प्रचार-कार्य की ओर था। अन्य दो पर आवश्यकता पड़ने ही पर ध्यान दिया जाता था। इससे मेरा मतलब यह नहीं है कि उनका महत्व कम था, किन्तु हमारे अस्तित्व का उद्देश्य था प्रचार-कार्य। अन्य दो प्रकार के कार्य हमारे उद्देश्य नहीं थे। इन तीनों विषयों को साफ़-साफ़ समझाने के लिए मैं आपके सामने ये तीन घटनाएँ रखता हूँ—(१) असेम्बली-काण्ड, (२) पञ्जाब नेशनल बैङ्क की डकैती, (३) जगदीश चटर्जी को छुड़ाने का प्रयत्न।

प्रचार

"मैं पिछले दोनों प्रकार के 'कार्यों' को छोड़ कर यहाँ पर प्रचार-कार्य के ऊपर विचार करना चाहता हूँ। प्रचार शब्द से शायद इस प्रकार के कार्यों का बोध नहीं होता है। असल में ये कार्य जनता की इच्छा के अनुकूल ही होते थे। उदाहरणार्थ सॉण्डर्स की हत्या का ही कार्य ले लीजिए। जब लाला जी पर लाठी चलाई गई, तो सारे देश में बहुत ही खलबली मच गई। सरकार आग में और भी घी छिड़कने लगी। जनता बहुत ही असन्तुष्ट हो गई। जनता का ध्यान विप्लववादियों की ओर आकर्षित करने का यह अच्छा मौक़ा हम लोगों के हाथ में था।

"सब से पहले हम लोगों ने सोचा कि एक आदमी पिस्तौल लेकर जाय और स्कॉट को मार कर अपना आत्म-समर्पण कर दे। अपने बयान में वह कहे कि जब तक विप्लववादी जीवित हैं; तब तक राष्ट्रीय अपमान का बदला इसी प्रकार लिया जायगा। यह भी सोचा गया था कि तीन आदमी भेजे जायँ, क्योंकि मनुष्य की शक्ति बहुत कमज़ोर है। इसमें भी अपने बचाने का हमारा कोई प्रधान उद्देश्य नहीं था। ऐसा करने की इच्छा भी नहीं थी। हमारा विचार था कि हत्या के बाद यदि पुलिस हमारा पीछा करे तो उसका मुक़ाबला किया जाय। और जो जीता बचे और गिरफ़्तार किया जाय, वह अपना बयान दे।

प्रयत्न

"यह विचार कर, हम लोग डी० ए० वी० कॉलेज के होस्टल में आए। कार्य के समय ऐसा प्रबन्ध किया गया था कि भगतसिंह, जो स्कॉट को पहचान सकता था, पहली गोली दाग़े और राजगुरु थोड़ी दूर पर खड़ा होकर भगतसिंह की रक्षा करे, और यदि कोई भगतसिंह पर आक्रमण करे तो राजगुरु उसका मुक़ाबला करे। इसके बाद भगतसिंह और राजगुरु दोनों भाग जायँ। भागते समय पीछा करने वालों का मुक़ाबला करना सम्भव नहीं है, इसलिए पण्डित जी उन पीछा करने वालों से उनकी रक्षा करने के लिए तैनात रहें। साथ ही साथ हम लोगों ने यह भी निश्चय किया था कि अपनी जान बचाने की अपेक्षा उसके मारने की ओर ही विशेष ध्यान दिया जाय। हम लोग नहीं चाहते थे कि हमारी गोली का शिकार अस्पताल में मरे। इसी कारण

श्री० सुखदेव के चचा लाला चिन्तराम थापर को विश्वस्त-सूत्र से पता चला है कि फाँसी के पहले भगतसिंह और उनके साथियों ने अपने सम्बन्धियों के पास पत्र लिखा था, किन्तु वे उनके सम्बन्धियों को नहीं मिले। लाला चिन्तराम ने पञ्जाब-सरकार के होम सेक्रेटरी के पास दो पत्र भेजे हैं। पहली चिट्ठी में वे लिखते हैं :—

पत्र नं० १

"मुझे विश्वस्त-सूत्र से यह पता चलता है कि सरदार भगतसिंह, श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु ने फाँसी होने के पहले अपने सम्बन्धियों के लिए पत्र लिखा था। ये तीनों पत्र उपस्थित मैजिस्ट्रेट को दे दिए गए और वहीं उसी समय उन पर मुहर दे दी गई। ये पत्र अभी तक उनके सम्बन्धियों को नहीं दिए गए हैं। यह प्रार्थना की जाती है कि वे चिट्ठियाँ हम लोगों को बहुत शीघ्र दे दी जायँ।"

दूसरी चिट्ठी में लाला चिन्तराम लिखते हैं:—

पत्र नं० २

"स्वर्गीय श्री० सुखदेव के पास एक अधूरी चिट्ठी मिलने के सम्बन्ध में, जो उनकी लिखी हुई बताई जाती है, आपने जो विज्ञप्ति प्रकाशित की है, उसके सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूँ कि सुखदेव का एक मात्र छोटा भाई मथरादास बिल्कुल ही हिन्दी नहीं जानता, और यह सोचने की बात है कि यदि सुखदेव मथरादास के पास पत्र लिखना चाहता तो वह कदापि जान-बूझ कर उस भाषा में चिट्ठी न लिखता, जिस भाषा को उसका भाई नहीं जानता है।"

राजगुरु के गोली दाग़ने पर भी भगतसिंह ने तब तक गोली छोड़ना बन्द नहीं किया जब तक कि उसे विश्वास नहीं हो गया कि उसका कार्य सिद्ध हो गया।

राजनैतिक हत्या

"हत्या के बाद भागना हमारा उद्देश्य नहीं था। हम लोग जनता में यह विचार उत्पन्न कर देना चाहते थे कि यह एक राजनैतिक हत्या थी, और इसमें भाग लेने वाले मज़हबी के साथी नहीं, बल्कि विप्लववादी थे। इसलिए हम लोगों ने इसके बाद पर्चे चिपकाए, और कुछ पर्चे प्रकाशनार्थ भी भेजे।

"दुःख है कि उस समय न तो हमारे नेताओं ने और न प्रेस वालों ने ही हमें कोई सहायता पहुँचाई, और सरकार को धोखा देने के लिए उन लोगों ने अपने देश-वासियों को धोखा दिया। हम लोग चाहते थे कि वे ज़रा घुमा-फिरा कर यह लिखें कि यह हत्या एक राजनैतिक हत्या थी और यह सरकार की नीति का फल था, और सरकार ही ऐसे कार्यों के लिए उत्तरदायी थी। किन्तु यह सब बातें जानते हुए भी और मेरे बार-बार कहने पर भी उन लोगों ने ऐसा कहने का साहस नहीं किया। यह अच्छा हुआ कि हम लोग गिरफ़्तार हो गए और जनता के सामने सारा भेद खुल गया। प्यारे भाई, केवल इसी कारण मैं अपनी गिरफ़्तारी को अहोभाग्य समझता हूँ। इस कार्य के विषय में कह चुकने के बाद अब मैं उसकी नीति पर कुछ कहना चाहता हूँ।

(नोट—ठीक इसी समय हमें मालूम हुआ है कि आज मामले का फ़ैसला हो जायगा। ख़ाँ साहब और बख़्शी जी यह पूछने के लिए आए कि हम लोग वहाँ जाना चाहते हैं या नहीं। हम लोगों ने इन्कार कर दिया।)

सार्वजनिक सहायता

"मैं दिखाना चाहता हूँ कि हमारा विचार था कि जनता की इच्छा के अनुकूल ही हमारा कार्य हो, और वे सरकार के अत्याचारों के विरोध में किए जायँ, जिससे जनता इस ओर अपनी सहानुभूति प्रदर्शित करे, और सहायता दे। इसी विचार से हम लोग जनता में विप्लववादियों का आदर्श और उनकी चालों का प्रचार करना चाहते थे। ऐसे विचारों का उसके मुख से प्रकट होना, जो इन्हीं विचारों के लिए अब फाँसी पर लटकने वाला है, अधिक गौरवप्रद है।

"हमारा यह विचार था कि सरकार से प्रकट रूप से मुक़ाबला पड़ने पर, हम लोग अपने सङ्गठन के लिए एक निश्चित कार्यक्रम तैयार कर सकेंगे।

धन-व्यवस्था

"मैं अन्य दो प्रकार के कार्यों के सम्बन्ध में अधिक नहीं कहना चाहता। धन की व्यवस्था के सम्बन्ध में, उसके लिए डकैतियाँ करने में अधिक ध्यान और शक्ति ख़र्च करने की आवश्यकता नहीं थी, जैसा कि बङ्गालियों ने किया है। अनेक छोटी-मोटी डकैतियाँ सफल नहीं हुई हैं। हम लोगों ने विचार करने के पश्चात् अपने को जुएबाज़ी के लिए तैयार किया, जिसमें यदि हम सफल होकर निकल आवें तो एक बार ऐसा करके हम अपना कार्य ठीक तरह से कर सकेंगे, और धन की समस्या भी हल हो जायगी।

"सॉण्डर्स की हत्या के बाद, धन के लिए हमें बहुत सोच-विचार नहीं करना पड़ा। हम लोग शान्तिपूर्वक जितना धन इकट्ठा कर सकते थे, डकैतियों से उतना नहीं मिलता था। आजकल तो यह बहुत आसान हो गया है।

"विशेष कार्य अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर ही किए जाने चाहिए। उनकी संख्या भी परिमित ही होनी चाहिए।"

* * *
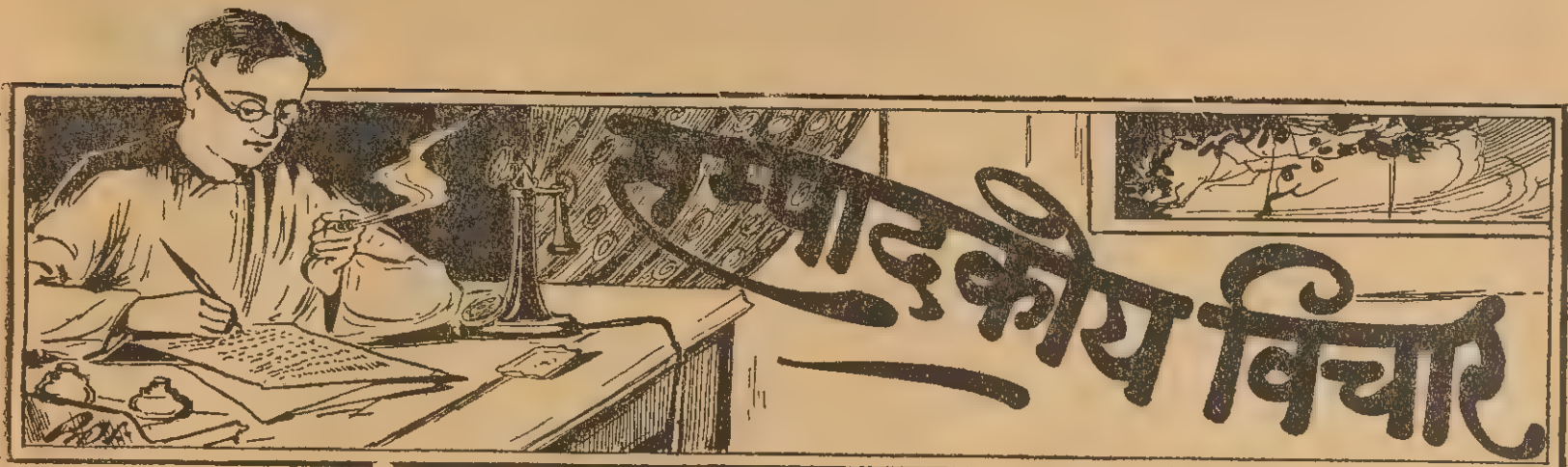
७ मई, सन् १९३१

स्वदेशी आन्दोलन

र्तमान सभ्यता भौतिक समृद्धि के आधार पर टिकी हुई है। शिल्प, वाणिज्य और व्यवसाय उसके साधन हैं; अर्थ उसका उपास्यदेव और सङ्गठन उसकी शक्ति है। आजकल संसार में सभ्यता और असहाय राष्ट्रों के उपकार के नाम पर जो कुछ भी हो रहा है, वह है आर्थिक लूट के लिए साम्राज्य का विस्तार और व्यापार की आड़ में शासित जातियों का रक्त-शोषण ! जो जाति आजकल सङ्गठित और अपनी ऐहिक आवश्यकताओं की पूर्ति में स्वतन्त्र नहीं है, वह सुखी और स्वाधीन नहीं रह सकती। विदेशी व्यापारी ज़बरदस्ती उसके हाथों अपना माल बेच कर उसके पतन का मार्ग खोल देते हैं। पहले उस जाति को जीवन की कई आवश्यक सामग्रियों के लिए विदेशी व्यापारियों पर निर्भर रहना सिखाया जाता है। फिर कुछ दिनों में—जब उसका रहा-सहा व्यवसाय भी नष्ट हो जाता है और उसके चरित्र में पर-निर्भरता का भाव स्थायी रूप से घर कर लेता है, तो उसे विलासिता की शिक्षा दी जाती है। विदेशी व्यापारी उस जाति के भोले-भाले व्यक्तियों के सामने अपने देश की बनी हुई भड़कीली और मोहक वस्तुएँ लाकर बिखेर देते हैं। भोग-विलास का प्रत्येक सामान उनके सामने सजा कर रख दिया जाता है। निरुद्योगी जाति में परिश्रम की ओर से विरक्ति और भोग की ओर स्वाभाविक प्रवृत्ति होती ही है—वह रङ्ग-बिरङ्गी भड़कीली वस्तुओं को देख कर उन पर मुग्ध हो जाती है। उन्हें पाने के लिए उसका मन लालायित हो उठता है। विक्षिप्त की भाँति वह अपना सर्वस्व अर्पण कर, विलास की प्रचण्ड अग्नि में कूद पड़ती है। विदेशी व्यापारी समझते हैं, हमारा जादू काम कर गया। वे उस अबोध जाति के हाथों में मिट्टी और पत्थर के खिलौने देकर उससे अमूल्य खाद्य पदार्थ और उसके देश की अन्य उपयोगी उपज ठग लेते हैं। इस प्रकार वह विलासी राष्ट्र दिनोंदिन दुखी और दरिद्र होने लगता है तथा उसकी उन्नति और विकास के शत्रु विदेशी व्यापारी उनका ख़ून चूस-चूस कर मोटे और लाल होने लगते हैं।

हम ऊपर कह आए हैं कि वर्तमान युग आर्थिक उत्कर्ष का युग है। इस युग में जीवन के प्रत्येक अङ्ग पर आर्थिक दृष्टि से विचार किया जाता है। धर्म की व्याख्या अर्थशास्त्र के शब्दों में होती है। समाज-निर्माण का प्रश्न आर्थिक सङ्घर्ष के समन्वय का प्रश्न समझा जाता है। आर्थिक समस्याएँ ही राष्ट्रों के राजनीतिक भाग्य का निर्णय करती हैं। जो देश आर्थिक दृष्टि से परतन्त्र होता है, उसका राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र रहना असम्भव हो जाता है। विदेशी व्यापारियों का बढ़ता हुआ समूह धीरे-धीरे उसके राजनीतिक मामलों में हस्तक्षेप करने लगता है और अन्त में उसकी स्वतन्त्रता अपहरण करके उसका शासक बन बैठता है। ऐसे शासकों की नीति क्या होगी, यह आसानी से समझ में आ सकता है। विदेशी बनियों की शासन-नीति का एकमात्र उद्देश्य होता है उस देश को चिरकाल तक परतन्त्र बनाए रख कर उसके रक्त से शासक जाति को पुष्ट करना !

विदेशी शासक अपने देश के शिल्प और व्यापार को प्रोत्साहन देते हैं और शासित जाति के उद्योग-धन्धों को नष्ट करते हैं। इस डकैती को स्थायी बनाने के लिए शासक जाति नाना प्रकार के कुत्सित और हृदयहीन उपायों का अवलम्बन करती है। वह शासित जाति के मन और हृदय पर अधिकार स्थापित करने के लिए उसके प्राचीन गौरव और साहित्य को नष्ट करने का प्रयत्न करती है। उसका सामाजिक सङ्गठन छिन्न-भिन्न कर देती है तथा उस जाति में विदेशी भावों का प्रचार करती है ! विदेशी शिक्षा के द्वारा उस देश के युवकों की मनोवृत्ति को ऐसे साँचे में ढाल देती है, कि वे शासक जाति के फ़ैशन और आमोद-प्रमोद का अनुकरण करने में ही अपने को धन्य समझने लगते हैं ! क्रमशः शासित जाति के धर्म, उसकी संस्कृति, उसकी सभ्यता और उसके सामाजिक जीवन—सब पर कुठाराघात होता है। वह जाति मृतप्राय हो जाती है और फल-स्वरूप कुछ ही काल के बाद उसका नाम इतिहास के पृष्ठों में शेष रह जाता है ! इस हृदयहीन हत्या का स्मरण करके क्रूर से क्रूर मनुष्य का हृदय भी एक बार काँप उठता है। नृशंसता की पराकाष्ठा के एक ऐसे ही भयावने दृश्य को देख कर एक यूरोपीय विद्वान चिल्ला उठा था—

". . . from the contemplation of which, the moralist will shrink, and the Christian protest against, with abhorrence. . ."*

अर्थात्—"......जिसका विचार करके कोई भी सदाचारी मनुष्य एक बार काँप उठेगा और कोई भी सच्चा ईसाई जिसका घृणा के साथ विरोध किए बिना नहीं रह सकता।......"

शासित जाति के अर्थ से लेकर आत्मा तक का विनाश करने के बाद ही शासक जाति विश्राम लेती है। इस राक्षसी नीति के कुचक्र में पड़ कर संसार की कितनी ही मनोरम सभ्यताएँ नष्ट हो चुकी हैं !! सभ्य संसार का सर्व-प्रथम मार्ग-प्रदर्शक मिश्र आज विदेशियों के पैरों के नीचे कराह रहा है ! बौद्ध-धर्म के शान्त वातावरण में निवास करने वाला, महात्मा कनफ़्युशियस की तपोभूमि चीन अस्त-व्यस्त और बेहाल है ! अमेरिका, दक्षिण और मध्य अफ़्रिका और ऑस्ट्रेलिया के आदि-निवासियों का आज दुनिया के परदे पर कहीं नामो-निशान नहीं। वे यूरोपीय जातियों की अर्थ-पिपासा की नाशक ज्वाला में पड़ कर अनन्त काल के लिए विलीन हो गईं ! भारतवर्ष भी आज इसी नीति के चङ्गुल में फँसा हुआ है। अङ्गरेज़-व्यापारियों के द्वारा उसके लहलहाते हुए जीवन, मनोहर ग्राम-संस्थाओं और उन्नतिशील कला-कौशल के दारुण सर्वनाश का लोमहर्षक वर्णन सुनने के लिए पाठकों को हृदय थाम लेना पड़ेगा।

भारतवर्ष में अङ्गरेज़ी सत्ता के विस्तार की प्रत्येक घटना इस बात की साक्षी देती है, कि भारतवर्ष का शासन इङ्गलैण्ड के आर्थिक लाभ की दृष्टि से किया जाता है। प्राचीन काल से अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक भारतवर्ष की अपूर्व समृद्धि का समाचार संसार के कोने-कोने तक फैला हुआ था। भारत के साथ व्यापार करके इटली के समुद्रतटवर्ती नगर वेनिस, मिलन, फ़्लॉरेन्स इत्यादि यूरोप के नन्दन कानन बन गए थे। यूरोप के लोग भारत को सोने की चिड़िया समझते थे और इस चिड़िया को फँसा कर मालामाल होने की तीव्र आकांक्षा ने ही उन्हें भारतवर्ष का जल-मार्ग ढूँढ़ निकालने में प्रवृत्त किया था। भारतवर्ष की खोज में भटकते हुए कोलम्बस ने एक नई दुनिया का आविष्कार कर दिया; किन्तु ज़िल और पेरू के सोने की खानों ने यूरोप की अर्थ-लिप्सा को सन्तुष्ट करने में सफलता नहीं पाई। इससे तत्कालीन यूरोप के भयङ्कर अर्थ-लोभ का कुछ पता लगता है। भारतवर्ष में आने के बाद पोर्चुगीज़, डच, फ़्रेञ्च और अङ्गरेज़ व्यापारी भारतीय व्यापार पर एकाधिपत्य स्थापित करने के लिए व्याकुल हो उठे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इन लोगों ने अनेक पारस्परिक युद्धों में एक-दूसरे के ख़ून से अपने हाथ तक रँगे ! अन्त में भारत के दुर्भाग्य या सौभाग्य से महावीर नेपोलियन के शब्दों में "बनियों के राष्ट्र" (Nation of Shopkeepers) अङ्गरेज़ों को इस कलह में सफलता मिली।

बङ्गाल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का इतिहास बेईमानी, घूसख़ोरी और भयङ्कर हत्याओं का इतिहास है। विलियम हॉविट नामक एक अङ्गरेज़ लिखता है—

". . . the mode by which the East India Company has possessed itself of Hindostan, is the most revolting and un-Christian that can possibly be conceived."*

अर्थात्—"जिस प्रकार से ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने हिन्दुस्तान पर अधिकार जमाया है, उससे अधिक वीभत्स और ईसाई सिद्धान्तों के विरुद्ध किसी दूसरे प्रकार की कल्पना तक नहीं की जा सकती।"

नवाब सिराजुद्दौला कम्पनी की बेईमानी और धींगा-धींगी का नियन्त्रण करना चाहता था। इसी अपराध के लिए शान्त-स्वभाव और प्रजाप्रिय सिराजुद्दौला को सिंहा-

* The Calcutta Review, vol. vii, (1847) p. 226.

* The English in India—System of Territorial Acquisition, by William Howitt.

सन-च्युत होना पड़ा ! दिल्ली के सम्राट ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के माल पर चुङ्गी माफ़ कर दी थी। नवाब मीर क़ासिम ने देखा, कि इससे देशी प्रजा का व्यापार नष्ट हो रहा है। उसने एलान कर दिया कि आज से हिन्दुस्तानी व्यापारियों के माल पर भी महसूल माफ़ किया जाता है। इससे नवाब के राजकोष को बहुत बड़ा घाटा था, किन्तु नवाब ने प्रजा के हित के लिए राजकोष की परवा न की। इस घोषणा को सुनते ही ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अङ्गरेज़-व्यापारियों का ख़ून गर्म हो गया। उन्होंने कहा—हम स्वयं कर न देंगे, किन्तु नवाब को देशी व्यापारियों से कर अवश्य लेना पड़ेगा। ऐसा नहीं होने से अङ्गरेज़-व्यापारी उनके मुक़ाबले में नहीं ठहर सकते। अन्त में कम्पनी ने षड्यन्त्र रच कर नवाब मीर क़ासिम को मसनद से वञ्चित किया। बक्सर-युद्ध में जब सम्राट शाहआलम, अवध के नवाब वज़ीर शुजाउद्दौला और नवाब मीर क़ासिम—तीनों एक साथ पराजित हुए, तब भी कम्पनी के अधिकारियों ने अपने अमानुषिक अर्थ-लोभ का भयङ्कर परिचय दिया। उन्होंने सम्राट शाहआलम को रिशवत देकर इस बात के लिए सनद प्राप्त कर लिया, कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा का कर वसूल करेगी और कोषहीन नवाब के ऊपर देश में शान्ति और व्यवस्था रखने का भार होगा। यहीं से भारतवर्ष पर क़ानूनी लूट और सङ्गठित डकैती (Legalised loot and organised plunder) का युग आरम्भ होता है।

अब ईस्ट इण्डिया कम्पनी बङ्गाल में मनमानी करने के लिए स्वतन्त्र थी। नवाब उसके हाथों की कठपुतली मात्र रह गया था। व्यापार के माल पर कर लगाने या न लगाने के अपने उत्तरदायित्वपूर्ण अधिकार का दुरुपयोग कर क्लाइव ने नमक-जैसे जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक पदार्थ पर ३५ फ़ी सदी कर लगाया और इसका ठेका कम्पनी के नौकरों को दे दिया !! क्लाइव की स्पष्ट नीति थी, कि जो वस्तु जीवन के लिए जितनी ही अधिक आवश्यक है, उस पर उतना ही अधिक कर लगाया जाना चाहिए। इससे कम्पनी को अधिक लाभ होगा ! उस समय कम्पनी के नौकर स्वतन्त्र रूप से अपना व्यक्तिगत व्यापार भी करते थे। इनका धन-लोभ यहाँ तक बढ़ा हुआ था, कि उनकी निन्दा करते हुए झूठे, रिशवतख़ोर और फ़रेबियों के सरदार क्लाइव तक को लिखना पड़ा था,"...... ये लोग (कम्पनी के अङ्गरेज़-नौकर) अपने-अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के पीछे इस उत्सुकता के साथ बढ़े चले जा रहे हैं, कि इनमें न तो अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान बाक़ी रह गया है और न वे अपने प्रभुओं के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करते हैं।" वह और भी लिखता है—"अङ्गरेज़ी बस्ती भर में शायद ही कोई एक अङ्गरेज़ ऐसा होगा, जिसने अल्प समय में ही अपार धन-राशि लेकर इङ्गलैण्ड लौट जाने का विचार न कर लिया हो।"

सुप्रसिद्ध अङ्गरेज़-लेखक डॉक्टर रसल लिखता है—

". . . the Government of the East India Company in India was tainted from the very first beginning with mighty vices, . . . for generation after generation, the great aim and object of the servants of the Company, from the high. civil and military functionaries downwards was to squeeze as large as possible a fortune out of the country as quickly as might be, and turn their backs upon it for ever, so soon as that object had been attained. . . ."*

* Dr. Russel.

अर्थात्—"भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन आरम्भ से ही घोर पापों में लिप्त था... ... पीढ़ी दर-पीढ़ी लगातार शासन और सेना-विभाग के उच्च से उच्च कर्मचारियों से लेकर, कम्पनी के छोटे से छोटे नौकर तक का केवल यही एकमात्र महान लक्ष्य और उद्देश्य था, कि जल्दी से जल्दी इस देश से एक बड़ी धन-राशि चूस ली जाय और इस उद्देश्य के पूर्ण होते ही सदा के लिए मुँह फेर लिया जाय........।"

कम्पनी के नौकर धन इकट्ठा करने के लिए खुल कर डाका डालते थे और उनको सज़ा नहीं दी जाती थी। इतिहास-लेखक टॉरेन्स लिखता है—

"The razzias made with impunity in Bengal and elsewhere . . . the counting house was deserted continually for marauding expedition . . during this period the business of a servant of the Company was simply to wring out of the natives a hundred or two hundred thousand pounds as speedily as possible, that he might return home."*

अर्थात्—"बङ्गाल तथा अन्य स्थानों में (कम्पनी के नौकर) डाका डालते थे और इसके लिए उन्हें सज़ा नहीं दी जाती थी......डाका डालने के लिए बार-बार अपनी दूकान छोड़ कर चले जाते थे......इस समय कम्पनी के प्रत्येक नौकर का यही काम था कि जहाँ तक जल्दी हो सके, भारतवासियों से दस-बीस लाख रुपया लूट-खसोट कर इङ्गलैण्ड को चलते बनें।"

कम्पनी के अङ्गरेज़ नौकरों का व्यक्तिगत व्यापार कही जाने वाली यह डकैती कितनी भयङ्कर रही होगी, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि स्वयं कम्पनी के डाइरेक्टरों तक ने यह स्वीकार किया है—

". . . we think the vast fortunes acquired in the inland trade have been obtained by a scene of most tyranic and oppressive conduct that ever was known in any age or country. . ."†

अर्थात्—"......हम समझते हैं कि देश के आन्तरिक व्यापार में जो अटूट सम्पत्ति कमाई गई है, वह ऐसे भयङ्कर अत्याचार और अन्यायों द्वारा प्राप्त हुई है, जिससे बढ़ कर अत्याचार और अन्याय किसी समय किसी भी देश में देखने-सुनने में न आए होंगे।......"

विलियम डिग्बी का अनुमान है कि सन् १७५७ ई० के पलासी-युद्ध से लेकर सन् १८१५ ई० के वाटर्लू युद्ध तक लगभग एक हज़ार मिलियन पाउण्ड अर्थात् पन्द्रह अरब रुपया शुद्ध लूट का भारत से इङ्गलैण्ड पहुँचा।‡

अब ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापार का नमूना भी देखिए। बङ्गाल के जुलाहों को ज़बरदस्ती पेशगी रुपया दे दिया जाता था और वे कम्पनी के ही नौकरों द्वारा ठहराए हुए क़ीमत पर कम्पनी के हाथों अपना माल बेचने के लिए बाध्य किए जाते थे। बङ्गाल-सरकार ने एक मनमाना क़ानून बना कर यह निश्चित कर दिया था कि जिसके ज़िम्मे कम्पनी का कुछ भी पावना हो अथवा जो किसी तरह भी कम्पनी के कपड़े के व्यापार से सम्बन्ध रखता हो, वह कभी कम्पनी का काम नहीं छोड़ सकता, न किसी दूसरे व्यापारी के लिए काम कर सकता और न उसे स्वयं अपने लिए ही काम करने की स्वतन्त्रता होगी। कम्पनी की माँग के मुताबिक़ माल न दे सकने पर जुलाहे हवालात में बन्द कर दिए जाते थे और उनका सब कच्चा और तैयार माल ज़ब्त कर लिया जाता था !

* Torren's Empire in Asia, pp. 82-83

† Letter from the Court of Directors to Lord Clive, dated May, 1766.

‡ Prosperous British India, by William Digby C. I. E. p. 33.

रेशम के कारीगरों पर इससे भी बढ़ कर अत्याचार होते थे। एक बार समस्त बङ्गाल में रेशम का दाम कुछ बढ़ गया। अङ्गरेज़ शासकों ने फ़ौरन कम्पनी के गुमाश्तों को हुक्म दिया कि रेशम के कारीगरों से बिना पूछे अथवा उनके हित का बिना विचार किए रेशम की क़ीमत कम कर दी जाय और नियत कर दी जाय।* रेशम के कीड़े पालने वाले काश्तकार और रेशम लपेटने वाले कारीगर केवल मात्र कम्पनी का काम करने के लिए बाध्य थे। अधिक मूल्य मिलने पर भी काश्तकार अपना माल किसी अन्य व्यापारी के हाथ नहीं बेच सकते थे। अगर बेचते तो कम्पनी के नौकर ख़रीदार के यहाँ से ज़बरदस्ती माल उठा ले जाते थे !

बोल्ट्स नाम का एक अङ्गरेज़-लेखक, जिसकी पुस्तक प्लासी-युद्ध के केवल दस वर्ष बाद ही प्रकाशित हुई थी, इस प्रकार लिखता है—

". . . inconceivable oppressions and hardships have been practised towards the poor manufacturers and workmen of the country, who are, in fact, monopolised by the Company as so many slaves . . Various and innumerable are the methods of oppressing the poor weavers, . . . such as by fines, imprsionments, floggings, forcing bonds from them, etc., by which the number of weavers in the country has been gradually decreased . . every kind of oppression to manufacturers of all denominations throughout the whole country has daily increased; in so much so that weavers, for daring to sell their goods, and *dallals* and *pykars* for having contributed to and connived at such sales, have, by Company's agents, been frequently seized and imprisoned, confined in irons, fined considerable sums of money flogged and deprived in the most ignominious manner, of what they esteem most valuable, their castes."†

अर्थात्—"..... ...देश के ग़रीब कारीगरों और मज़दूरों पर जैसे ज़ुल्म किए गए हैं, उनकी कल्पना तक नहीं की जा सकती। वास्तव में इनके साथ ऐसा मनमाना किया गया है, मानो वे कम्पनी के ग़ुलाम हों... ग़रीब जुलाहे बहुत से और असंख्य तरीक़ों से सताए जाते हैं। उदाहरण के लिए जुर्माना करना, क़ैद कर लेना, कोड़े मारना, ज़बरदस्ती दस्तावेज़ लिखा लेना इत्यादि, जिनके द्वारा देश में कपड़ा बुनने वालों की संख्या बेहद कम हो गई है..... देश भर के हर पेशे के कारीगरों के साथ सब प्रकार के अत्याचार दिनोंदिन बढ़ रहे हैं, यहाँ तक कि बुनने वाले यदि अपना माल किसी और के हाथ बेचने का साहस करते हैं और दलाल और पैकार इसमें सहायता देते हैं या इससे आँख बचा जाते हैं तो कम्पनी के नौकर अक्सर उन्हें पकड़ कर क़ैद कर लेते हैं, बेड़ियाँ पहना देते हैं, बड़े-बड़े जुर्माने वसूल करते हैं, कोड़े लगाते हैं और बड़े ही लज्जाजनक उपायों से उनकी सब से अधिक मूल्यवान वस्तु—जाति—से भी भ्रष्ट कर देते हैं।"

[अगले अङ्क में समाप्त]

* Mr. Saunder's evidence in March, 1831 before the Parliamentary Committee.

† Consideration on Indian Affairs, by Bolts

* * *
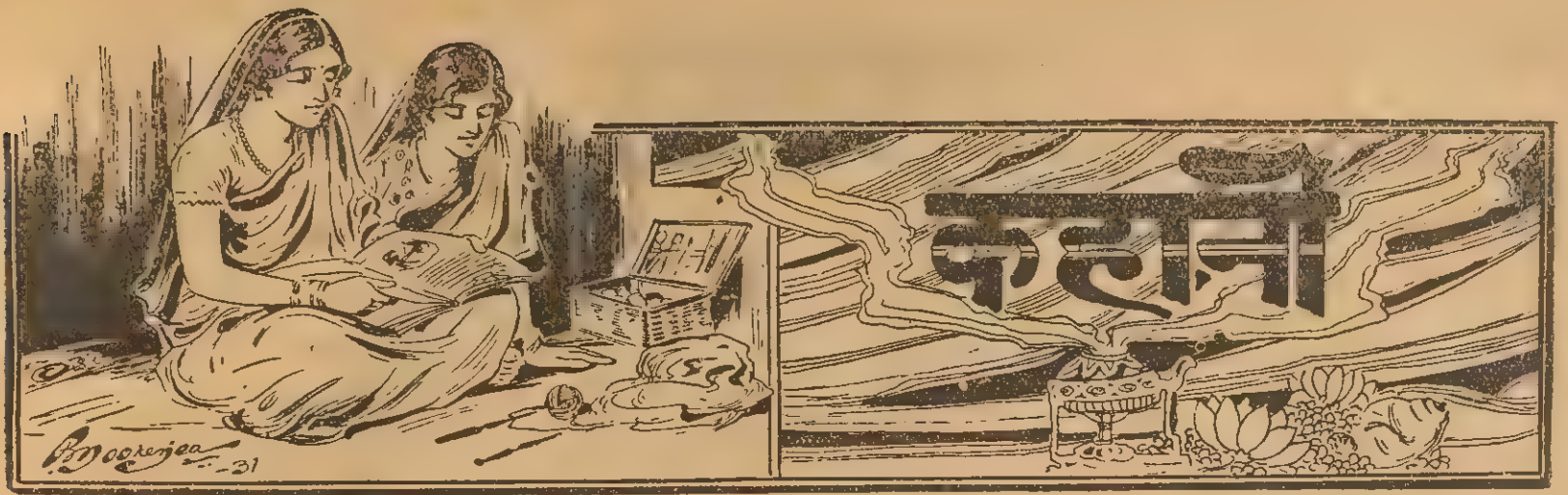
विराम-सन्धि

[श्री० पाण्डेय बेचन शर्मा, 'उग्र']

हमारे गाँव का नाम रसूलपुर है, पर उसमें, न तो कोई मस्जिद-मक़बरा है और न मुसलमान। गाँव में अधिकतर क्षत्रिय बसते हैं। फिर ब्राह्मणों की गणना है। वैश्यों के "अल्प-मत" के एकमात्र प्रतिनिधि हैं साहु चतुर्भुज, जिनकी पन्सारी की दूकान चलती है। पहले साहु जी लेन-देन भी करते थे; मगर गाँव के ब्राह्मणों के मारे उन्होंने यह व्यापार बन्द कर दिया। ब्राह्मण लोग पहले तो सूद-ब्याज का वादा कर साहु से रुपए लेते, पर "लैके दियो न जाय।" जब-जब साहु जी तक़ाज़े जाते, ब्राह्मण लोग उनके हाथ में कुश पकड़ा देते और पञ्चपात्र लेकर गोदान-मन्त्र पढ़ने को प्रस्तुत हो जाते। अगर साहु जी ज़रा भी सख़्त-सुस्त-सा मुँह बनाते, तो कुलाभिमानी, ज्ञानी-विप्रों का कोई बालक परशुरामावतार धारण कर लेता और परशु के स्थान पर डण्डा या जूता तान कर खड़ा हो जाता—"सहसबाहु भुज छेदनहारा, परशु विलोकु ....।"

इस तरह गाहियों गोदान करने के बाद ही, साहु चतुर्भुज जी महाजनी के बन्धन से मुक्त हुए।

गाँव में दो-तीन घर उनके भी हैं, जिन्हें लोग "अछूत" कह कर द्रवित होते हैं। सभी चमार हैं, द्विजों का हल जोतने वाले और ठाकुरों को दशमी, दीवाली पर देशी, डबलङ्ग जोड़े पहनाने वाले।

दस साल पहले उक्त चमारों को हमारे गाँव में कोई अछूत भी समझता था, तो महज़ नाम-मात्र के लिए। कोई चमार युवक गाँव के किसी ब्राह्मण या क्षत्रिय को 'चचा' कह कर पुकारता, किसी को 'भैया' या 'दादा'। ऐसे ही हमारी महिला या तो उनकी 'मतवा' थीं, अथवा 'काकी', 'बहिन', 'फुआ' या 'नानी'। जब हम छोटे थे, हमारी माताएँ चमार-परिवारों का परिचय हमें सम्बन्धियों के रूप में देतीं। किसी बूढ़ी चमारिन को देखते ही हम 'चाची-चाची' चिल्ला उठते और जवान को 'बहिन-बहिन'। हमें ज़रा भी ऐसा भेद न मालूम पड़ता, कि ये चाचियाँ या बहिनें हमीं-सी न होकर, कुछ और हैं, न्यून या अछूत हैं।

भले ही आर्यसमाज का इसमें दोष न हो; पर हमारे गाँव वालों ने तिरस्कार के भाव से चमारों को अछूत समझना उसी दिन से आरम्भ किया, जिस दिन रसूलपुर में समाज का पहला प्रचारक जलसा हुआ!

उस जलसे में आर्यसमाज के अनेक विख्यात उपदेशक और संन्यासी पधारे थे और दो-तीन अच्छे भजनीक भी।

* * *

उस जलसे का ज़रा विस्तृत वर्णन किए बग़ैर इस कहानी की तस्वीर शुद्ध न हो सकेगी। उसका सम्पादन खुले मैदान में हुआ था। बीच में चौकियों का मञ्च, मञ्च पर दरी-चाँदनी और सभापति की मेज़-कुर्सी। ग्रामीण दर्शकों के बैठने के लिए कुछ दूर तक दरियाँ और अधिकतर टाट का प्रबन्ध था। कई गाँव के लोग, विज्ञापन बाँट कर बुलाए गए थे।

भीड़ अच्छी थी। कोई तीन हज़ार ग्रामीण एकत्र थे। ध्यान से देखने से दर्शकों का अधिकांश उसी लिबास में दिखाई पड़ता था, जिसे धारण करने से गाँधी जी "महात्मा" हो गए। घुटनों के ऊपर कमर को छिपाए कपड़े का एक-एक मोटा टुकड़ा और कन्धे पर एक दूसरा वस्त्र-खण्ड या मैली-कुचैली "अँगौछी"। नङ्गे पाँव, मुँह में चुरुट नहीं, सिगरेट-बीड़ी नहीं; मगर चुटकी भर तम्बाकू और चूना होठ में दबा हुआ। प्रायः सबके।

हज़ार में पचीस दर्शक ग्रामीण ऐसे भी रहे होंगे, जिनके तन पर दुरुस्त कपड़े थे। शेष सभी "लँगोटी बाबा" के छोटे भाई थे। महात्मा जी ज्ञान से विवश होकर लँगोटी-बाबा बने हैं और वे अज्ञान से विवश होकर। बड़े और छोटे भाई की समझ में बस इतना ही फ़र्क़ है।

बाहर से आए उपदेशक और संन्यासी, जो मञ्च पर बैठे थे, चारों ओर से घूरे जा रहे थे। मञ्च पर हमारे रसूलपुर का कोई भी नहीं था। क्योंकि उस समय तक गाँव के ज्ञानियों ने आर्यसमाज के सिद्धान्तों को अपने अयोग्य ही माना था।

इसी कारण और; हमारे गाँव के मैदान में समाज की विख्यात ढोल के भड़भड़ाने की ज़रूरत हुई। वह ठीक वक़्त से एक विकट-वदन वृद्ध भजनीक के भीषण स्वर के साथ भड़भड़ाई।

गाँव के गन्दे, धूलि-धर बीहड़ बच्चे अभी तक एक गधे को रगेद रहे थे, उसकी दुम में हड़-हड़-कारी ताड़ के सूखे पत्ते बाँध कर, ढोल-ध्वनि सुनते ही सभा की ओर दौड़ आए और भजनीक के मुँह की ओर देख कर आश्चर्य करने लगे।

खलिहान में बँधे पशुओं तक के कान खड़े हो गए। भजनीक के अस्पष्ट-भजन के साथ—

यदि ऋषि दयानन्द ना होते
तो उड़ जाते भारत-कर से, ज्ञान-धर्म के तोते।

मञ्च पर बैठे मञ्जीर बजाने वाले, ढोल भड़भड़ाने वाले और आधा दर्जन अन्य गायक-अगायकों ने, दिक्कम्पकारी-स्वर में वृद्ध भजनीक का सस्वर समर्थन किया—

यदि ऋषि दयानन्द ना होते।
होकर उच्चैःश्रवा, बने थे हम सब, कल तक खोते
गन्दो लादी, दुष्ट-रूढ़ियों की सशङ्क-मन ढोते
आज ऋषी ने ज्ञान कराया,
सत्य अर्थ, परकाश लखाया,
ओङ्कार का मन्त्र सिखाया,
छूआछूत-भूत भय-मारा भागा रोते-रोते।
भड़भड़भड़भड़!—भड़भड़भड़भड़।
यदि ऋषि दयानन्द ना होते।

इस बार भड़भड़ाहट ऐसी सर्व-मोहिनी हुई, कि चिल्लाने में वृद्ध-भजनीक जी को, जो दढ़ियल पञ्जाबी थे, अपने तनोबदन का होश भी न रहा। बेचारे के मुँह में नक़ली दाँतों का सेट था, जो तान-मुर्की लेने और अललाने में एक बार ढीला पड़ गया और ऊपर का हिस्सा हज़ार प्रयत्न कर सँभालते रहने पर भी, टपाक से मेज़ के कोने पर आ रहा और वहाँ से छटक कर स्वामी ओङ्कारानन्द जी के मुण्डित खल्वाट सर पर तड़ से जा पड़ा।

स्वामी जी जनता के ठीक सामने, अर्ध-मुद्रित नेत्र, कुछ-कुछ गायन के अर्थ का आनन्द ले रहे थे और बहुत-कुछ अपने उस व्याख्यान के बारे में विचार रहे थे, जो आगे उन्हें देना था। सर पर "तड़ांक" होते ही उनका कलेजा उछल पड़ा। आर्यसमाज की सभाओं में प्रायः जूते बरस जाते हैं। स्वामी जी ने पहले वैसा ही कुछ समझा। तुरन्त ही मनुष्य का असली बॉडी-गार्ड घटनास्थल की ओर दौड़ा—स्वामी जी का दाहिना हाथ सर पर गया। तब तक दाँत का सेट उनके सामने आ गिरा। वह लाल-लाल था और लाल लार से भरा था। क्योंकि गाने के पहले भजनीक जी ने पर्याप्त पान की बुकनी मुँह में भर ली थी।

हाथ में लिब-लिब स्पर्श और लाल-लाल देखते ही ओङ्कारानन्द जी को शिरोभङ्ग का विश्वास हो गया। वह जीवट के वीर-पुरुष थे। तुरन्त ही तन कर और घूँसा तान कर, खड़े हो गए—

"किस दुष्ट ने यह नीचता की है? उसको नामर्द की तरह छिपना नहीं, मर्द की तरह सामने आना चाहिए!"

उधर, दाँत गिरते ही, भजनीक का भजन वैसे ही चुप हो गया, जैसे बड़ी गोलाई से क्षुद्र दायरे में सुई के घुसते ही, ग्रामोफ़ोन चुप हो जाता है। ढोल-मञ्जीर बोलते रहे, मैशीन की कर-कर-आवाज़ की तरह।

"आयँ!!" जनता में कलरव।

"चुप क्यों हो गए—वाह! क्या तड़प के गा रहा था बुड्ढा!"

"अरे, यह क्या! बुड्ढे के मुँह से क्या गिरा?"

मञ्च पर किसी ने कहा—ओहो! भजनीक जी के दाँत गिर गए!!

मगर ग्रामीण अज्ञान......

"दाँत कैसे गिरे? और स्वामी जी किस पर बिगड़े हैं?"

"गवैये पर। बुड्ढे के मुँह से दाँत गिर पड़े, देखते नहीं, संन्यासी की खोपड़ी लाल हो गई। चि-चि-चि!"

"भजनीक का दुपट्टा देखो, रङ्ग उठा है। मुँह का सारा मवाद टपक पड़ा—हि-हि-हि-हि!"

एक जवान अपनी हँसी न रोक सका। इसी समय स्वामी ओङ्कारानन्द जी घटना का असली मर्म, सबका

मुँह देख कर, समझ गए। उन्हें भजनीक के निकले दाँतों पर एक बार बड़ा क्रोध हुआ। वैसे वह स्वभाव के परम-शान्त विख्यात थे, सभाओं में विपक्ष द्वारा अनेक बार अपमानित होने पर भी धैर्य छोड़ते उन्हें किसी ने नहीं देखा था। मगर पान की पीक में जो घृणा थी, उसे वह न छिपा सके। दूर फेंक देने के विचार से भजनीक के दन्त-दल पर उन्होंने एक लात लगाया; मगर दिल का क्षोभ इतना बलवान था कि वह लात अङ्गद के पैर की तरह सेट पर चप-से बैठ गया। वह चूर्ण-विचूर्ण हो गया।

इसी कारण उस जलसे में वह वृद्ध भजनीक पुनः न गा सका और जलसे की चिर-स्मरणीयता ज़रा मनोरञ्जक हो गई।

* * *

जलसे के दूसरे दिन रसूलपुर में बड़ा कोलाहल रहा। ख़ास कर मेरे दरवाज़े पर। क्योंकि मेरे पिता रसूलपुर के सरपञ्च हैं, ब्राह्मण भी; और मैंने आर्य-समाजियों की सभा में, कल अछूतोद्धार का समर्थन किया। दो घण्टे तक भाषण करने के बाद स्वामी ओङ्कारानन्द ने श्रोतृ-मण्डली से जब यह पूछा कि—"कौन-कौन से कुलीन भाई, आज ही से यह प्रतिज्ञा करते हैं कि वे इस कोढ़ का इलाज दिलोजान से करेंगे और भविष्य में परमात्मा के किसी भी बच्चे को अछूत या नीच न समझेंगे?" उस समय, सब से पहले मेरा हाथ उठा और इसके बाद मेरे बाल-बन्धु ठाकुर श्रीसिंह और गुलाबसिंह के। हम तीनों, गर्मी की छुट्टी में गाँव लौटे थे—लखनऊ-कॉलेज से। हम लोगों ने निश्चय कर रक्खा था कि हमारे पूज्य-श्रेष्ठ चाहे असन्तुष्ट ही क्यों न हों; पर समाज की बुरी रूढ़ियों का विध्वंस करना ही होगा।

हम तीनों अपने गाँव के पहले आर्यसमाजी हैं और चौथा है वह जवान चमार रघुवीर, जो गाँव के पूरबी कोने पर मिट्टी और फूस की घरनुमा—झोपड़ी या झोपड़ी-नुमा घर में, एकमात्र अपनी बूढ़ी माँ के साथ, रहता है। हमारे ही साथ वह भी समाज का मेम्बर हुआ। हम तीनों ने उस दिन की सभा में, स्वामी ओङ्कारानन्द जी की आज्ञा से रघुवीर को गले से भी लगाया था।

"यह नहीं होने का।" गाँव के रूढ़िवादी बूढ़ों ने कहा—"चमारों को गले लगाना—छिः!"

"एक चमार तो जनेऊ तक पहन कर आया था; और मञ्च पर संन्यासियों तथा द्विजों के साथ बैठा था।"

"अरे! यह रघुबिरवा साला"—एक अधेड़ क्षत्रिय बोले—"कल न जानें कहाँ से उस सभा में रसूलपुर का नाम हँसाने को पहुँच गया।"

मुझे ताना देते हुए एक वृद्ध क्षत्रिय ने, जिन्हें सब लोग "दादा" कहते थे, कहा—"अब धर्म का नाश ही समझो। जब उच्च कुल के बच्चे इस तरह मल-जल-योग करने लगे तब औरों की कौन कहे?" मेरे पिता का नाम लेकर वृद्ध ठाकुर ने कहा—"रामचन्द्र दुबे का ख़ान्दान भी तर गया।"

इसी समय एक ओर से रघुवीर की बूढ़ी माँ आई, अपनी सदैव कीचड़ में डूबी रहने वाली आँखों में आँसू भरे।

"क्यों रघुवीर की माँ! अब तू भी पण्डिताइन बनेगी? तेरा लड़का तो आर्यसमाज का मेम्बर होते ही पण्डित हो गया है।"—मेरे पिता जी ने उस वृद्धा पर व्यङ्ग्य-बाण छोड़ा। वह तो आप ही रो रही थी।

"निकाल दिया है पण्डित बाबा"—कमर सीधी कर वह बोली—"कल से ही मैंने उसे घर से निकाल दिया है। उसको तो उस चमरे ने बहका दिया था, जो अली-गढ़ से जनेऊ पहन कर आया था। रघुबिरवा ऐसी ग़लती मेरे जीते-जी नहीं कर सकता पण्डित महराज!"

इसके बाद पुराण-पन्थी हज़ार चिल्लाए, उन्होंने मुझे और भाई श्रीसिंह, गुलाबसिंह को जातिच्युत आदि करने की धमकियाँ भी दीं; पर हम अपने टेक पर टिके रहे। हमेशा रघुवीर से बराबरी से मिलते, उसके साथ हँसते-बोलते, खाते-पीते। खाते-पीते ज़रूर ज़रा छिप कर। तब तक लोकमत के विरुद्ध जाने में बड़ा डर लगता था।

रघुवीर की माँ, रोज़ हज़ार-हज़ार गालियाँ, अपनी झोपड़ी के दरवाज़े पर बैठ कर, उसको देती। कहती—यह अभागा झूठे ही गाँव में अशान्ति फैला रहा है। पागल हो गया है जो बड़े-बड़ों के मेल में मिलना चाहता है। हम चमार हैं तो क्या बुरे हैं? अपना रोज़गार करते हैं और राम का दिया खाते हैं। जब राम ही ने हमें ब्राह्मण-क्षत्री, राजा-रईस नहीं बनाया तो अब वह शौक़ आर्यसमाज की मेम्बरी से नहीं पूरा हो सकता। अरे मेरे भगवान! मेरे लड़के रघुबिरवा को क्या हो गया है!

* * *

भाई रघुवीर जब आर्यसमाज के मेम्बर हुए, उस समय उनकी माता का वय सत्तर और एक एकहत्तर वर्ष का था,

खोज

[कवि-सम्राट पं० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय 'हरिऔध']

किसके करों से है धवलिमाँ निराली मिली,
किसके धुलाए हैं धवल फूल धुलते।
किसके कहे से ओस-बिन्दु सुमनावलि से,
मोह कर मानस हैं मोतियों से तुलते॥
'हरिऔध' किसके सहारे से समीर द्वारा,
मञ्जुल मही में हैं मरन्द भार दुलते।
किसके लुभाने के बहाने मनमाने कर,
रात में ख़ज़ाने रत्नराजि के हैं खुलते।

* * *

आज वह इक्यासी वर्ष की बूढ़ी है। पिछले दस वर्षों में ऐसा एक दिन भी न गया होगा, जब उनकी माँ ने उन्हें आर्यसमाजी होने के लिए हज़ार-पाँच सौ गालियाँ न दी हों! हज़ार-पाँच सौ तो मैं कम समझता हूँ। गाँव का कोई "कुलीन" व्यक्ति, इच्छा करते ही, रघुवीर की माँ को भड़का देता और वह बूढ़ी भड़कते ही अपने लड़के को सामने-पीछे सदैव—अविराम स्वर से गालियाँ देने लगती।

ब्राह्मणों के बच्चे बुढ़िया को छेड़ते—ओरे रघुवीर की माँ! तेरा लड़का तो 'आर्या' हो गया। मेरे बाबू जी कहते थे—आर्यों का सात पुश्त नरक में निवास करता है।

"नरक में?"—स्तम्भित बूढ़ी ब्राह्मण बालक से पूछती—"आर्य नरक में जाते हैं? हाय रे रघुबिरवा! इस मुँहझौंसे ने मेरे ख़ान्दान का नाश कर दिया।"

कोई क्षत्रिय चिढ़ाता—अरे रघुबिरवा की माँ! अब तू दशमी-दीवाली पर हमारे यहाँ से त्योहारी न पावेगी और न बच्चे होने पर 'सौर' सँभालने! गाँव वालों ने आर्यों का बॉयकॉट किया है। और तू तो आर्या रघुबिरवा की माँ है न?

बूढ़ी, आँखों का कीचड़ पोंछती, गले को मिनटों तक खाँस कर साफ़ करती और अपने यजमानों को नाराज़ करने वाले पुत्र को तब तक गालियाँ देती जब तक उसकी आवाज़ न बैठ जाती! शाम को अपने काम-धन्धे से फ़ुर्सत पाकर ज्योंही रघुवीर घर आते, उनकी माँ उन्हें गालियाँ दे चलती। वह पहले तो घण्टों तक उसे बकने देते। मगर फिर भी जब शान्त होते न देखते तो गले और पाँवों के सहारे बूढ़ी को गोद में उठा लेते, झोपड़ी से सैकड़ों गज़ आगे दौड़ जाते और कहते—जब मरना ही है, तो चिल्ला कर क्यों जान देती है। चल! आज तुझे कुएँ में फेंक दूँ। रहे बाँस न बजे बाँसुरी।

और तब, उस रात के लिए, वह चुप होती। मगर सुबह किसी के याद दिलाते ही, फिर वही रफ़्तार!

बूढ़ी को चिढ़ा कर रघुवीर को गालियाँ दिलाने में गाँव वालों को कुछ अपूर्व आनन्द आता।

लेकिन "भाई रघुवीर" (हम लोग उन्हें इसी नाम से हमेशा पुकारते) मामूली आर्यसमाजी नहीं थे। धुन के पक्के, रङ्ग के चोखे। सारा दिन उनका "काम-धन्धा" क्या था? आस-पास के गाँवों में जाना, वहाँ के अछूतों से मिलना, उनके बच्चों को साफ़ करना, बड़ों को सफ़ाई समझाना, उन्हें नशा वग़ैरह से दूर करने की चेष्टा करना।

भाई रघुवीर का आत्म-त्याग ऐसा उज्ज्वल था कि पिछले दस वर्षों में रसूलपुर के चतुर्दिक-स्थित बीसों गाँवों के अछूतों के वह एकछत्र नेता हो गए!

नेता—जिसको खाने के लिए दुनिया में गालियाँ हैं, और ग़म; तथा पीने के लिए अपमान और आँसू!

* * *

गत वर्ष का वह कोलाहलकारी राष्ट्रीय आन्दोलन, जो आजकल गम्भीर-चुप है, तूफ़ान की तरह पुनः जागने के लिए अथवा उषा-काल की तरह श्यामल से अरुणोज्ज्वल होने के लिए।

उस आन्दोलन में रसूलपुर ने प्रायः कुछ नहीं किया। क्योंकि वहाँ के ब्राह्मणों को "स्वराज्य" नहीं, "मुक्ति" चाहिए—जो अङ्गरेज़ नहीं दे सकते। और जिसे भगवान भूरि-भूरि भजन के बाद ही देते हैं। क्षत्रियों को ग़रीबों की राष्ट्रीय गवर्नमेण्ट नहीं, "सूर्य" या "चन्द्र-कुल" का साम्राज्य चाहिए; जो, उनका दृढ़ विश्वास है, पाँच सौ वर्षों के भीतर, कल्कि अवतार के साथ होगा। हमारे गाँवों के क्षत्रिय, इस बीच में किसी आन्दोलन में पड़ कर अपना समय या बल नहीं नष्ट करना चाहते।

रहे वैश्यों के नेता चतुर्भुज साहु, सो उन्हें जीते जी "रामराज्य" नहीं, आटा-चावल-दाल के ग्राहक चाहिए। मरने के बाद का प्रबन्ध उन्होंने जवानी ही में, एक बढ़िया गो-दान देकर कर रक्खा है। दान लेने वाले गाँव के ब्राह्मण ने उन्हें बतला दिया है कि वह बछिया अब देवताओं के नन्दन वन में बड़ी हो गई होगी। उसके गाहियों कच्चे-बच्चे होंगे, जो समय पर साहु जी को परम सरलता से वैतरणी के उस पार पहुँचा देंगे।

मगर हम चार आर्यसमाजियों को रसूलपुर के इस राष्ट्रीय-वैराग पर बड़ी ग्लानि हुई। हमने बहुत सोच-समझ कर अपना हक़ अदा करने का निश्चय किया।

निश्चय हुआ, एक दिन "स्वतन्त्रता-दिवस" मनाने का और उसी दिन नमक-क़ानून तोड़ने का। अस्तु, गाँव-गाँव में दौड़ लगा कर भाई रघुवीर ने सभा का विज्ञापन किया। पास की शहर-कॉङ्ग्रेस कमिटी से दस आने का एक तिरङ्गा-झण्डा मँगवाया गया और गत दिसम्बर की एक तारीख़ को हमने अपने गाँव के मैदान में राष्ट्रीय ध्वजारोपण किया। दस-बीस अन्य ग्रामीणों के साथ नमक भी बनाया गया।

उधर नौकरशाही हमारे गाँवों के आस-पास राष्ट्रीय रोग न फैलने देने का क़स्द कर चुकी थी। हमारी सभा की सूचना शहर कोतवाली में पहुँचते ही, कोतवाल ने पहले भाई रघुबीर को बुला कर डाँटा—ख़बरदार! अगर इधर के गाँवों में बदअमली फैलाओगे, तो ऐसे पीटे जाओगे कि मरने पर भी न भूले!" मगर हम लोग तो रसूलपुर की इज़्ज़त बचाने पर तुले थे।

परिणामतः सभा होने के पूर्व ही लाठी-पुलिस और घुड़सवारों का दस्ता रसूलपुर में हाज़िर था। झण्डा ऊँचा होते ही पुलिस की लाठियाँ उठीं—लाठियाँ उठते ही, मारे गर्व के हमारे सर ऊँचे उठ गए। हम निरीहों पर क्रूर मार पड़ते देख कर सारा रसूलपुर और आस-पास के एकत्र दर्शक भी ग़ुलामी की नींद से जाग उठे—"महात्मा गाँधी की जय" के साथ।

मार-पीट के बाद, हम चारों आदमी गिरफ़्तार कर लिए गए, जिनमें एक तो ख़ून से लतपत और बेहोश तक था—रघुबीर। उसे पुलिस वालों ने चुन कर ख़ूब ही मारा था।

सप्ताह भर जेल-अस्पताल-सेवन के बाद हम चारों को ७-७ महीने की सख़्त सज़ा हुई।

* * *

"समय पलटि पलटै प्रकृति" बहुत सच्ची बात है। अब रसूलपुर के ब्राह्मण-क्षत्रिय भाई रघुबीर की प्रशंसा करने लगे—"चमार था तो क्या, था बड़ा बहादुर। इतनी लाठियाँ किसी और पर पड़तीं तो वह या तो यमराज के दरबार में अपनी जन्मपत्री सुनता होता या सालों अस्पताल में, गुड़-हल्दी खाता। मगर रघुबीर के मुँह पर 'उफ़' तक नहीं, माथे पर बल तक नहीं! आख़िर था तो क्या, रघुबिरवा वीर था, यह सच है।"

अब गाँव वाले रघुबीर की माँ को इसलिए न उभारते कि वह उसे गाली दे। मगर बूढ़ी गालियाँ तो देती ही। "रघुबिरवा" को अब नहीं, गाँव वालों को। इसलिए कि उन्होंने उसे उभार कर जेल में भिजवा दिया, इतने डण्डे लगवाए!

"हे भगवान! हमारे सभी मुद्दई मर जायँ और उन्हें देखने को न तो दूसरी रात नसीब हो, न दिन। इन्हीं ने मेरे भोले-भाले बेटे रघुबिरवा को बहका कर पहले आर्या बनाया और अब मुरदा बनवा कर जेल भेज दिया। हे भगवान! नाश हो उस गाँधी का और चारों ओर फैली उत्पात की आँधी का!"

जब वह 'गाँधी' का नाम लेकर रोने-सरापने और गालियाँ देने लगती, तब गाँव के बच्चे उसे न क्षमा कर सकते। ज़मीन से कङ्कड़-पत्थर उठा कर उस बूढ़ी को मारने लगते—हरामज़ादी चमाइन! महात्मा जी को गालियाँ देगी तो तेरी नाक काट ली जायगी।

वह ढेले खाती जाती, आँसू पोंछती और गाँधी, कॉङ्ग्रेस और गाँव के बदमाशों को गालियाँ देती जाती। गाँव की गली-गली में रोज़ यही नाटक होता। रात हो जाने पर वह अपनी झोपड़ी में लौटती, दरवाज़े पर पाँव फैला कर बैठ जाती और फिर वही स्वर अलाप चलती। पास-पड़ोस वाले पहले तो, मारे डर के नज़दीक न आते; यदि आते भी, तो गन्दी गालियाँ सुनते।

झोपड़ी के द्वार पर बैठ कर जब यह गालियाँ बकती तब, शायद हमेशा यही सोचती कि उसका रघुबिरवा बाहर से आता होगा—उसे बकते सुन कर बिगड़ेगा; पर वह चुप न होगी। रघुबिरवा उसे गोद में उठावेगा और कुआँ में झोंक देने की धमकी देगा।

पर वह तो जेल में था और दूसरी बार बीमार था। वह अपनी "मावा" को सँभालने कैसे आता? वह सचमुच न आता। रात बहुत बीत जाती। बूढ़ी की आवाज़ उसका साथ देने से इन्कार करने लगती।

वह गालियों का प्रवाह रोक कर, आँसुओं की धारा बहाने लगती—अरे मोर रजवा × × ×

याने, रघुबिरवा।

* * *

भाई श्रीसिंह, गुलाबसिंह और मैं लखनऊ जेल में रक्खे गए थे। भाई रघुबीर फ़ैज़ाबाद में। लखनऊ जेल में फ़ैज़ाबाद से बदल कर कुछ क़ैदी आए थे और उन्हीं से भाई रघुबीर की दूसरी बीमारी का पता चला था। पता चला उन्हें ख़ून के दस्त आ रहे थे।

गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार जब हमारी रिहाई हुई और लखनऊ वालों ने, एक तरह के विजयोल्लास से, कई सौ क़ैदियों के साथ हमारा स्वागत किया, उस समय अपने बीच में रघुबीर भाई की अनुपस्थिति हमें बहुत खली। छूटने के बाद लखनऊ के मित्र हमें दो-चार दिन वहाँ रोकना चाहते थे और शायद हम रुकते भी, अगर हमारे साथ भाई रघुबीर होते। उन्हीं से मिलने के लिए लखनऊ त्याग, हम तुरन्त अपने शहर और उसके निकटस्थ रसूलपुर गाँव की ओर झपटे। रसूलपुर से एक कोस पूर्व ओर रामपुर का बाज़ार है, उसे ही हम "शहर" कहते हैं।

शहर वालों ने हमारा हार्दिक स्वागत किया। वहीं गाँव के कई ब्राह्मण-क्षत्रिय भाई भी मिले, जो कॉङ्ग्रेस के नए कार्यकर्ता थे। हमारे जेल जाने के बाद रसूलपुर में भी एक छोटी सी कॉङ्ग्रेस कमिटी स्थापित की गई थी।

वहीं हमें पहली बार पता लगा, भाई रघुबीर का, एक सप्ताह पूर्व, फ़ैज़ाबाद जेल में देहान्त हो चुका है। पुलिस की लाठियाँ उन पर ऐसी निर्दयता से बरसी थीं, कि वह अधिक दिनों तक जीवित न रह सके। वहीं सुना, यह ख़बर गाँव वालों ने रघुबीर की बूढ़ी माँ को दे दी है। वहीं पता चला, बूढ़ी इस ख़बर को सच नहीं मानती। कहती है—"दुश्मन होने के कारण गाँव वाले उसे झूठे ही चिढ़ाते हैं।" वहीं बताया गया, रघुबीर भाई के निश्चय मर जाने पर भी वह बूढ़ी अभी रोती है, गालियाँ देने के बाद, इस आशा में कि उसका लड़का उसे चुप कराने आता होगा। वहीं हमें मालूम हुआ, अब गाँव भर की बड़ी करुण सहानुभूति उस बूढ़ी के प्रति है। पर वह तो सहानुभूति पर गालियाँ देती है!

लोगों ने बताया कि हमारे स्वागत के लिए भेद-भाव भूल कर सारा रसूलपुर बन्दनवारों और पुष्पों से सजाया गया है। लोगों को घर सजाते देख और उनसे सुलह की चर्चा सुन कर रघुबीर की माँ ने भी अपनी झोपड़ी पर आम के पत्तों का बन्दनवार बाँधा है—जिसके बीच-बीच में गेंदे के फूल हैं। बूढ़ी ने अपने काँपते हाथों से उसे सजाया है! उसकी यह पागल-लीला देख कर गाँव की बूढ़ियों के आँसू रुकते ही नहीं। वे उसे यह समझाने की कोशिश करती हैं कि उसका यह सब साज़ोसामान व्यर्थ है। उसका बेटा तो जेल में मर गया, पर वह मानती ही नहीं। कहती है—बेटे मरे होंगे मुद्दइयों के, मेरा रघुबिरवा तो आवेगा सब के साथ।

भाई रघुबीर की माँ की कहानी सुन कर हम सब के सब रो पड़े—आह, बेचारी!!

हमें गाँव में देखते ही लोग लिपटने को दौड़े। बच्चे पुष्प लिए, जवान आरती, माताएँ अभिषेक को अश्रु-जल। हम दिवसावसान काल में रसूलपुर पहुँचे थे।

पहले भाई श्रीसिंह का घर पड़ता था। लोगों का उत्साह-चीत्कार सुनते ही श्रीसिंह अपने द्वार की ओर दौड़े। तुरन्त उन्होंने बन्दनवार तोड़-ताड़ डाला। पास के एक क्षत्रिय के हाथ में जलती आरती की थाल ज़मीन पर उलट दी—उत्सव नहीं! जब तक गाँव की एक माँ के आँसू शान्त नहीं होते, तब तक एक भी माता उत्सव नहीं मना सकती।

इसके बाद अपनी अश्रुमयी माताओं को भूल, हम तीनों, तुरन्त रघुबीर की झोपड़ी के द्वार पर पहुँचे; जहाँ, बन्दनवार के नीचे बैठी, वह बूढ़ी-जननी गाँव वालों को गाली दे रही थी। वह सचमुच पागल हो गई थी। उसने हममें से किसी को भी नहीं पहचाना। हम उसे ज़रा भी शान्त होने को कहते, तो वह गालियाँ देने और रोने लगती और रसूलपुर वालों के नाश की प्रार्थना करने; जो "झूठे ही" उसके "बचे को" मरा कहते थे।

उसका वह पागलपन आह! हम लोग उस बेचारी बूढ़ी की दुर्गति पर पिघल-पिघल उठे।

१० बजे रात तक हम उसके सामने थे और तब तक, वह केवल गालियाँ दे रही थी, कीचड़ भरी आँखें बन्द किए। इसके बाद, ज़रा ताज़ा होने के विचार से, हम लोग अपने-अपने घर की ओर लौटे। मगर उस बूढ़ी के कारण हमारे हृदय वज़नी हो गए थे। मानो कलेजे पर पहाड़ रक्खा हो।

कोई बारह बजे रात रोने की आवाज़ सुनाई पड़ी—"अरे...मो...र.. र...ज...वा...!" वह उसी अभागिनी की आवाज़ थी। मैं तो पागल हो गया। मेरे आँसू बाँध तोड़ कर बहने वाली नदी से बह निकले। मन में ऐसा हुआ कि जब तक यह बूढ़ी रोती रहेगी तब तक आराम से सोने का विचार भी हराम है।

मैं झोपड़ी की ओर दौड़ा। देखा वह ड्योढ़ी पर अपना बुढ़ापा-जर्जर सुफ़ेद-माथा पटक रही थी। झोपड़ी में अन्धकार था, बाहर भी। वह करुण-स्वर में सोहनी-रागिनी-सी गाकर रो रही थी—"अरे मोरे रजवा!"

मैंने झपट कर उसको गोद में उठा लिया। छाती से लगा लिया—"मावा!—माई!—अम्माँ!!"

उसे लेकर मैं सैकड़ों गज़ दूर दौड़ गया। जैसे भाई रघुबीर दौड़ा करते थे। मैंने कहा—चुप भी रहेगी; या तुझे कुएँ में झोंक दूँ?

वह छाती से चिपक कर मेरे सर पर हाथ फेरने लगी। उसने समझा, उसका "रघुबिरवा" ही आ गया!

वह बोली—इतने दिनों तक तू कहाँ था मुँहझौंसा!

* * *

देखो जिसे उसी को, है अरमाने लीडरी!

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

दिन रात सब के दिल में है, अरमाने लीडरी,
देखे तो कोई, वसअते[1] मैदाने लीडरी!
दामन गुले[2] मुराद से हैं वह भरे हुए,
हाथ आ गया है, जिनका गरेबाने लीडरी!
कमज़ोर इसकी नींव है, बुनियाद कुछ नहीं,
क़ायम न रह सकेगा, यह ऐवाने[3] लीडरी!
पब्लिक में आप, और दी स्पीच पुर-असर[4],
पैदा यहीं से हो गए सामाने लीडरी!
दो दिन में देखते हैं, बड़ा रङ्ग जम गया,
फूले फलेगा और गुलिस्ताने[5] लीडरी!
क्या जाने क्या करेगा, यह अब लीडरी का शौक़,
देखो जिसे उसी को है अरमाने लीडरी!
क़ुर्बानियों के साथ, करो ख़िदमते वतन,
यह रूहे लीडरी है, यही जाने लीडरी!
"बिस्मिल" की हर जगह नहीं पब्लिक में पूछताछ,
यह किस उम्मेद पर करें अरमाने लीडरी!

१—फैलाव, २—फूल, ३—महल, ४—ज़ोरदार, ५—बाग़।

जर्मनी का प्रजातन्त्र

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

(उपसंहार)

अपने पिछले लेख में मैंने प्रजातन्त्रीय जर्मनी की कुछ कठिनाइयों का ज़िक्र किया था। पाठकों ने पढ़ा होगा कि हर्जाने के बहाने फ़्रान्स जर्मनी को कुचल देना चाहता था और रह-रह कर उसके मस्तक पर पदाघात कर रहा था। अन्त में अमेरिका तथा इङ्गलैण्ड की दूरदर्शिता तथा बुद्धिमानी ने हर्जाने के प्रश्न को बहुत कुछ सरल कर दिया था। अपने लेख के अन्त में मैंने यह भी कहा है कि हिण्डनबर्ग का प्रेज़िडेण्ट बनना प्रजातन्त्र की सब से बड़ी विजय थी।

यद्यपि जर्मनी दुर्बल, निस्सहाय तथा क्षीण हो रहा था। पर फ़्रान्स उसे हौआ समझता था। इसके सिवा अन्यान्य पड़ोसी राष्ट्रों की शक्ति को भी वह अपने लिए बहुत हानिकर समझ रहा था। इसीलिए जब लीग ऑफ़ नेशन्स ने निशस्त्रीकरण के प्रश्न को फ़्रान्स के सम्मुख रक्खा तभी उसने यह रोना रोया कि ऐसा करने से उसका अस्तित्व ख़तरे में पड़ जावेगा। वास्तव में वह रक्षा के नाम पर अनुचित लाभ उठा कर पड़ोसी राष्ट्रों को दबाए रखना चाहता था। और चाहता था, संसार के राष्ट्रों द्वारा तत्कालीन स्थिति में परिवर्तन न होने देने का आश्वासन।

फ़्रान्स तथा अन्य राष्ट्रों ने आपस में यह तय किया कि यदि कोई राष्ट्र शान्ति भङ्ग करने का प्रयत्न करेगा तो सभी राष्ट्र मिल कर उसका विरोध करेंगे और उससे लोहा लेंगे। इस सन्धि को अङ्गरेज़ी में 'जिनेवा प्रोटोकाल' कहते हैं। जिस समय यह सन्धि हुई थी, उस समय इङ्गलैण्ड में मज़दूर-दल का शासन था। जब इङ्गलैण्ड में मज़दूर पार्टी पदच्युत हुई तब मैक्डॉनल्ड के उत्तराधिकारी ने उपर्युक्त 'प्रोटोकाल' को मानने से साफ़ इन्कार कर दिया। क्योंकि उससे इङ्गलैण्ड की ज़िम्मेदारी बहुत बढ़ जाती थी। इसलिए चेम्बरलेन ने वहीं, जिनेवा में ही, उस सन्धि को सदा के लिए दफ़ना दिया।

सन् १९२९ के प्रारम्भ में जर्मनी के प्रति फ़्रान्स का रुख़ बहुत कड़ा था। रूर प्रदेश अभी तक पूर्णतया ख़ाली नहीं हुआ था। जनवरी के अन्त तक इङ्गलैण्ड को 'कोलोन प्रदेश' ख़ाली कर देना चाहिए था, पर उसने भी ऐसा करने से इन्कार कर दिया। उसका कहना था कि जर्मनी ने अपनी शर्तों का पालन नहीं किया है। एक बार पुनः मित्र-राष्ट्रों ने जर्मनी को छेड़ना प्रारम्भ कर दिया। इस असन्तोषप्रद स्थिति में स्ट्रेसमैन को सुनहला अवसर मिला। फ़्रान्स की मनोवृत्ति ने यूरोप की रक्षा का प्रश्न खड़ा कर दिया था। फ़्रान्स अपने को सुरक्षित नहीं समझता था। परन्तु प्रश्न यह था कि अगर फ़्रान्स सुरक्षित नहीं था, तो यूरोप के कितने राष्ट्र अपने को सुरक्षित समझ सकते थे? जिनेवा प्रोटोकाल ने फ़्रान्स को सुरक्षित करने का तो प्रयत्न किया था, पर अभी तक जर्मनी की रक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया था। और यदि यूरोप के किसी भी राष्ट्र को रक्षा की आवश्यकता थी तो वह जर्मनी ही था। जिनेवा प्रोटोकाल का अन्त हो जाने के पश्चात् से रक्षा का प्रश्न समस्त यूरोप के दिमाग़ में चक्कर लगाने लगा। स्ट्रेसमैन ने इस स्थिति से लाभ उठाते हुए फ़्रान्स और जर्मनी के बीच एक सन्धि होने का प्रस्ताव फ़्रान्स के सम्मुख रख दिया। स्ट्रेसमैन के पहिले ही ब्रियाण्ड और कुनो इस सन्धि की चर्चा कर चुके थे।

स्ट्रेसमैन के इस प्रस्ताव ने फ़्रान्स को एकदम कसौटी पर चढ़ा दिया। वह अपनी रक्षा चाहता था और चाहता था कि उसके सीमा प्रान्त सुरक्षित रहें। उसको सब से अधिक डर राइन सीमा प्रान्त पर था और वह डर था जर्मनी से। अब जर्मनी स्वयं फ़्रान्स से इसी बात पर सन्धि करने को तैयार हो गया। ऐसी दशा में यदि फ़्रान्स अपनी बात का पक्का था तो उसे जर्मनी के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेना चाहिए था, परन्तु मुश्किल तो यह थी कि यदि वह जर्मनी के साथ सन्धि कर लेता है, तो उसे अपनी बराबरी का पद दे देता है और फिर जर्मनी को दबा नहीं सकता। दूसरी तरफ़ यदि प्रस्ताव को अस्वीकार कर जर्मनी से सन्धि करने से इन्कार करता है, तो वह संसार की दृष्टि में गिर जाता है। ऐसी दशा में जर्मनी की प्रेस्टीज बढ़ जाती है। इन्हीं कारणों से इस समय फ़्रान्स की हालत साँप-छछूँदर की सी हो रही थी।

यह सब स्ट्रेसमैन के दिमाग़ की उपज थी; क्योंकि वह बड़ा ही दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। बल्कि यह कहना अत्युक्ति न होगा कि वर्तमान जर्मनी का वह सब से बड़ा राजनीतिज्ञ था। वह समझता था कि फ़्रान्स का राइन सीमा-प्रान्त सुरक्षित होने से जर्मनी का सीमा-प्रान्त भी सुरक्षित हो जावेगा, मित्र-राष्ट्रों को जर्मन राज्य ख़ाली कर देना पड़ेगा और जर्मनी की भूमि का हड़पना बन्द हो जावेगा।

अपना प्रस्ताव उपस्थित कर मित्र-राष्ट्रों में फूट डाल कर स्ट्रेसमैन चुप हो गया और समय की प्रतीक्षा करने लगा। वह चाहता था कि अब मित्र-राष्ट्र ही इस सम्बन्ध में आगे क़दम बढ़ावें। जर्मनी के सौभाग्य से ब्रियाण्ड फ़्रान्स का वैदेशिक मन्त्री बना। यह वही व्यक्ति था, जिसने स्वयं जर्मनी से सन्धि का प्रस्ताव किया था। अतएव जर्मनी के लिए मार्ग सरल हो गया और शीघ्र ही फ़्रान्स तथा जर्मनी के बीच में 'राइन पैक्ट' नाम का समझौता हो गया। अब फ़्रान्स ने जर्मनी से लीग ऑफ़ नेशन्स में शामिल होने के लिए कहा। स्ट्रेसमैन यही चाहता भी था। वह जानता था कि वारसाईल की क़ैद से बचने का केवल यही एक उपाय है। सन् १९१९ में बेचारा जर्मनी लीग से अछूत की भाँति निकाल दिया गया था। मित्र-राष्ट्र उसे लीग से निकाल कर उसका अपमान करना चाहते थे। जर्मनी इस अपमान का अनुभव भी कर रहा था। इसीसे वह लीग में शामिल होने के लिए भिक्षा नहीं माँगना चाहता था। वरन् चाहता था मित्र-राष्ट्र ही इसके लिए उसे न्योता दें। स्ट्रेसमैन ने ऐसा करने के लिए फ़्रान्स को मजबूर भी कर दिया। जिस फ़्रान्स ने जर्मनी को लीग से निकाला था, वही अब उसे लीग में शामिल होने के लिए न्योता देने लगा। इस पर तुर्रा यह कि जब जर्मनी को फ़्रान्स का न्योता मिला, तो स्ट्रेसमैन साहब ने फ़रमाया कि मैं जर्मनी का लीग में शामिल होना आवश्यक नहीं समझता, पर यदि मित्र-राष्ट्र उसे शामिल करना चाहते हैं, तो मुझे कोई विरोध भी नहीं है।

पाठकों को यहाँ पर यह भी समझ लेना चाहिए कि इस प्रश्न पर लीग के छोटे मेम्बरों में घोर असन्तोष फैल गया। छोटे राष्ट्रों ने देखा कि बड़े-बड़े राष्ट्र अपनी भलाई के लिए जो चाहते हैं, वही लीग से करा लेते हैं। और छोटे राष्ट्रों के हित का कुछ भी ध्यान नहीं रखते। अतएव छोटे राष्ट्रों ने बड़े राष्ट्रों की इस नीति का विरोध किया। स्पेन, ब्रेज़ील, चीन और पोलैण्ड ने अपने-अपने लिए लीग की कौन्सिल में स्थायी स्थान माँगा। इस माँग से बड़े राष्ट्र बहुत ही घबड़ाए। सबको एक साथ ही कौन्सिल में स्थान देना मुमकिन नहीं था। ख़ैर, बहुत समझाने-बुझाने के बाद पोलैण्ड, स्पेन और चीन ने अपनी माँगें वापस ले लीं। पर ब्रेज़ील अपनी बात पर अड़ा रहा और किसी तरह सहमत नहीं होता था। अस्तु।

अन्त में जर्मनी लीग ऑफ़ नेशन्स का मेम्बर बनाया गया और उसे कौन्सिल में भी स्थायी स्थान दिया गया। यूरोप की राजनीति में एक नए युग का श्रीगणेश हुआ।

'राइन पैक्ट' पर इटली के भी हस्ताक्षर थे और वह लीग के प्रश्न पर जर्मनी का समर्थक था। टिरोल में थोड़े से जर्मन रहते थे। उन पर फ़ेसिस्ट शासन-काल में घोर अत्याचार हुए। जर्मनी के पत्रों ने इन अत्याचारों का घोर विरोध किया। जनता ने प्रदर्शन कर अपना क्रोध प्रकट किया। फ़रवरी के महीने में, बवेरिया की सभा में सरकार से इस सम्बन्ध में अनेक प्रश्न किए गए। प्रधान-मन्त्री डॉक्टर हेल्ड ने उन प्रश्नों का उत्तर देते हुए इटली पर बहुत से दोषारोपण किए। परन्तु इटली का प्रतिनिधि सिगनर मुसोलिनी चुप रह जाने वाला शख़्स न था। उसने बड़े ज़ोरदार शब्दों में इटली का पक्ष समर्थन किया और जर्मनी को ख़ूब खरी-खरी सुनाई। मुसोलिनी की बातें सुन कर जर्मन-जनता आग-बबूला हो गई। इसलिए स्थिति को हाथ से बाहर होते देख कर, इच्छा न रहते हुए भी, स्ट्रेसमैन को जनता को शान्त करना पड़ा। उसने एक कड़ा व्याख्यान देकर इटली को बहुत-कुछ भला-बुरा कह डाला। इससे जनता कुछ शान्त हुई। परन्तु स्ट्रेसमैन को इस बात का बड़ा दुःख हुआ कि दक्षिणी जर्मनी के कुछ अदूरदर्शी

राजनीतिज्ञों की बेवक़ूफ़ी के कारण उसे एक मित्र-राष्ट्र को नाराज़ करना पड़ा और वह भी ऐसे अवसर पर, जबकि उसकी मित्रता की अत्यावश्यकता थी।

उपर्युक्त घटना ने डॉक्टर हेल्ड के हौसले को और भी बढ़ा दिया। उसने एक व्याख्यान देकर जर्मनी के वैदेशिक मन्त्री तथा उसके कैबिनेट पर घोर आक्रमण किया। अभी कैबिनेट चैन से बैठने भी न पाई थी कि उसे एक दूसरे विरोध का सामना करना पड़ा। तत्कालीन सरकार ने विदेशों के जर्मन 'कनसुलेटों' (उपनिवेशों) में उड़ने वाले राष्ट्रीय झण्डे के रङ्गों में परिवर्तन करना चाहा। सरकार की इस नीति से गरम दल के लोगों में घोर असन्तोष फैला। उन्होंने सरकार पर अविश्वास का प्रस्ताव पेश करने की सूचना दी और अन्त में अविश्वास का प्रस्ताव ३० वोटों से पास भी हो गया। फलतः कैबिनेट ने इस्तीफ़ा दे दिया। अनेक कठिनाइयों के पश्चात् डॉ० मार्क्स ने दूसरी कैबिनेट का निर्माण किया। परन्तु डॉक्टर मार्क्स की कैबिनेट एक कमज़ोर कैबिनेट थी, और वह उससे येन-केन-प्रकारेण काम चलाना चाहता था। पर वह अधिक काल तक क़ायम न रह सकी। उसे भी शीघ्र स्तीफ़ा देना पड़ा। इसके बाद प्रेज़िडेण्ट और डॉक्टर मार्क्स ने मिल कर एक दूसरी कैबिनेट का निर्माण किया।

१९२१ में ही एक ऐसी सरकार का निर्माण हुआ, जो प्रजातन्त्रीय होने के साथ ही साथ मज़बूत भी थी। पार्लामेण्ट का बहुमत इस सरकार के साथ था और यह बड़ी आसानी से विरोधियों का सामना कर सकती थी। इस सरकार ने सबसे बड़ी बुद्धिमानी का जो कार्य किया, वह यह था कि हर स्ट्रेसमैन को अपने स्थान पर बने रहने दिया। कौन्सिल में स्थान पाने के पश्चात् जर्मनी ने अपनी नीति से अपने शत्रुओं को अत्यन्त निराश कर दिया। उसने सर्वदा शान्ति-नीति का समर्थन किया और अपनी मनोवृत्ति से प्रमाणित कर दिया कि वह युद्ध का सब से बड़ा विरोधी और शान्ति का पोषक है। इस तरह और उसने संसार के राष्ट्रों में अपना पुराना स्थान प्राप्त कर लिया। वारसाईल की सन्धि के होते हुए भी अब वह स्वतन्त्र था और अन्यान्य राष्ट्रों के बराबर था। लीग के अन्दर बड़े राष्ट्रों का एक गुट्ट है और जर्मनी भी उस गुट्ट में शामिल है। बड़े राष्ट्रों के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर अब वह भी संसार की समस्याओं को सुलझाता है। जब इटली के झगड़े ने यूरोप में युद्ध के बादल इकट्ठे कर दिए थे, तब फ़्रान्स और इङ्गलैण्ड ने जर्मनी को साथ लेकर शान्ति का प्रयत्न किया था। जर्मनी ने इङ्गलैण्ड, रूस, इटली, स्पेन आदि से व्यापारिक सन्धियाँ कीं। सन् १९२७ में लीग ऑफ़ नेशन्स की एसेम्बली में स्ट्रेसमैन ने यह प्रस्ताव रक्खा कि चूँकि जर्मनी पूर्णतया निशस्त्र हो चुका है; अतएव अब और राष्ट्रों को भी निशस्त्र होने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। परन्तु इस प्रश्न का अभी तक कोई निबटारा नहीं हुआ है। फ़्रान्स ने जर्मनी से यह वादा किया था कि उसकी जितनी सेना राइन पर पड़ी है, उसमें से दस हज़ार सैनिक हटा लिए जावेंगे। अक्टूबर के महीने में फ़्रान्स ने अपने ये वचन पूरे भी कर दिए। जब अमेरिका ने युद्ध का अन्त कर देने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि करने का प्रस्ताव किया था, तब उसके प्रस्ताव का जर्मनी में ज़ोरदार स्वागत हुआ था और सन् १९२८ की गर्मियों में सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिए स्ट्रेसमैन स्वयं पेरिस गए थे।

यद्यपि डॉज़ कमिटी ने हर्जाने की समस्या को बहुत-कुछ सरल कर दिया था, परन्तु फिर भी जर्मनी की कठिनाइयों का अन्त नहीं हुआ। क्योंकि उसके लिए सन्धि की उन शर्तों का पालन करना अत्यन्त कठिन हो गया। इसलिए इच्छा रहते हुए भी वह उन शर्तों को पालन नहीं कर सकता था। अतएव इस समस्या को हल करने के लिए एक और कमिटी बिठाई गई। इस कमिटी को 'यङ्ग कमिटी' कहते हैं। इस कमिटी ने हर्जाने के प्रश्न को फिर से हल करने के लिए एक विशाल योजना जर्मनी के सम्मुख रक्खा है, परन्तु इस योजना से वह प्रश्न कहाँ तक हल हो जावेगा, यह तो भविष्य के गर्भ में है।

अन्त में मैं दो शब्द जर्मनी की शचा-व्यवस्था के बारे में कह देना चाहता हूँ। जर्मनी में शिक्षा अनिवार्य है—६ वर्ष से १४ वर्ष तक प्रत्येक बालक को किसी शिक्षालय में अवश्य पढ़ना पड़ता है। जर्मनी के स्कूलों के शिक्षकों को सरकारी सार्टीफ़िकेट प्राप्त करना पड़ता है।

सन् १९२६-२७ में जर्मनी में ५२,७८५ सरकारी प्रारम्भिक शिक्षालय थे। जिनमें १,८०,९६४ शिक्षक काम कर रहे थे। इन शिक्षकों में १,३७,१७३ पुरुष थे और ४३,७९१ स्त्रियाँ। विद्यार्थियों की संख्या ६६,५९,७६९ थी, जिनमें से ३३,५६,७४० लड़के थे और ३३,०३,०२९ लड़कियाँ थीं। सरकारी प्रारम्भिक शिक्षालयों के अलावा ५७२ निजी शिक्षालय थे, जिनमें ३६,९९१ विद्यार्थी पढ़ रहे थे। इनमें से १५,२११ लड़के थे और २१,७८० लड़कियाँ थीं।

सन् १९२० की २८वीं अप्रैल को यह क़ानून बना कि प्रत्येक जर्मन बालक को चार वर्ष तक प्रारम्भिक शिक्षा लेनी होगी। इन प्रारम्भिक शिक्षालयों के बाद मिडिल स्कूल हैं। इनकी विशेषता यह है कि इनमें अङ्गरेज़ी और फ्रेञ्च भाषाएँ पढ़ाई जाती हैं। सन् १९२६-२७ में १,५७४ मिडिल स्कूल थे, जिनमें १२,४१५ शिक्षक काम करते थे। इन स्कूलों में २,६३,९९२ विद्यार्थी पढ़ते थे, जिनमें १,२२,७९९ लड़के थे और १,४१,१९३ लड़कियाँ थीं। विश्वविद्यालयों के लिए लड़कों को तैयार करने के लिए सेकेण्डरी मदरसे भी हैं। इनका शिक्षा-काल ९ वर्ष का है। इन स्कूलों में कुछ स्कूल अपने-अपने विषयों में विशेषता रखते हैं। किसी-किसी में अर्थमेटिक (अङ्कगणित) की विशेष पढ़ाई होती है और किसी में वर्तमान भाषाओं की विशेष पढ़ाई होती है। लड़कियों के लिए विशेष मिडिल स्कूल हैं, जो उन्हें विश्वविद्यालय की शिक्षा के लिए तैयार करते हैं। सन् १९२६-२७ में लड़कों के लिए १,५९८ मिडिल स्कूल थे, जिनमें २७,४७८ शिक्षक काम करते थे और ५,१८,७८८ लड़के पढ़ते थे। लड़कियों के लिए ९३४ हाई स्कूल थे, जिनमें १५,४४६ शिक्षक काम करते थे और २,७१,२८७ लड़कियाँ शिक्षा पाती थीं। जर्मनी में १० विशेष विद्या-सम्बन्धी हाईस्कूल हैं तथा दो पशु-चिकित्सा सम्बन्धी कॉलेज हैं। सन् १९२८ में इन दोनों कॉलेजों में ५७६ विद्यार्थी शिक्षा पाते थे। जर्मनी में चार कृषि-सम्बन्धी कॉलेज हैं, जिनमें १४८३ लड़के शिक्षा पाते थे। सङ्गीत-विद्या सम्बन्धी १२ कॉलेज हैं, जिनमें ४,४९५ विद्यार्थी सङ्गीत-विद्या सीखते हैं। जर्मनी प्रजातन्त्र में २३ विश्वविद्यालय हैं। सन् १९२८ में इन विश्वविद्यालयों में ५,४०६ शिक्षक पढाते थे। इन शिक्षकों में से ४३ स्त्रियाँ थीं, और ८३,१७२ विद्यार्थी शिक्षा पाते थे। इन विद्यार्थियों में से १२,०३७ लड़कियाँ थीं। सन् १९२८ में विदेशों के ४,०७३ विद्यार्थी शिक्षा पा रहे थे।

युद्ध ने जर्मनी को अत्यन्त दुर्बल तथा ज़ख़्मी कर दिया था। परन्तु अब उसके घाव भर चले हैं और बहुत शीघ्र वह अपने पुराने पद पर आ जावेगा। उसके पश्चात् यूरोप तथा संसार के प्रति उसकी क्या मनोवृत्ति होगी, यह एक विचारणीय प्रश्न है। मैं आशा करता हूँ कि नवीन जर्मनी संसार की शान्ति का सब से बड़ा पोषक होगा।

* * *

मध्य यूरोप की समस्याएँ

[डॉक्टर मथुरालाल जी शर्मा, एम० ए०, डी-लिट्]

राष्ट्रीय उद्योग-धन्धों की उन्नति के लिए रूस ने, सन् १९२९ में, एक विशेष आयोजन किया था। इस आयोजन के अनुसार सरकार ने वहाँ के सब व्यवसाय अपने अधीन कर लिए हैं और घरू कारख़ाने प्रायः बन्द हो गए हैं। जो कुछ हैं, उनको कई क़ानूनी अड़चनें और आपदाएँ उठानी पड़ती हैं। हड़ताल करना क़ानूनन नाजायज़ कर दिया गया है और जो लोग परिश्रम कर सकने योग्य हैं, उनको विवश होकर कार्य करना पड़ता है। सस्ता माल उत्पन्न करने, देश की बेकारी को हटाने, राष्ट्रीय वाणिज्य को उन्नति करने और दुर्भिक्षों के आक्रमण को रोकने के निमित्त रूसी शासन-सञ्चालकों ने यह आयोजन किया था। जिस समय इसका आरम्भ किया गया था, उस समय यूरोप और अमेरिका ने इसको शेख़चिल्ली की तजवीज़ और अव्यवहार्य आदर्श कह कर इसकी हँसी की थी, परन्तु पिछले अट्ठारह मास के अनुभव ने सिद्ध कर दिया है कि यह आयोजन कितनी दूरदर्शिता के साथ आरम्भ किया गया था। इस समय रूस का तैयार किया हुआ, सस्ता माल यूरोप के प्रत्येक नगर में दिखाई देता है। भारी कर लगाने पर भी यह लाभ के साथ-सर्वत्र बेचा जाता है। औद्योगिक संसार रूस का पञ्च वर्षीय आयोजन देख कर हैरान है। यह आयोजन वैसे तो सिर्फ़ पाँच वर्षों के लिए आरम्भ किया गया था, सरकार देखना चाहती थी कि यह सफल हो सकता है या नहीं, परन्तु गत दो वर्षों की सफलता ने सिद्ध कर दिया है कि यह आयोजन अत्यन्त व्यवहार्य और लाभकारी है। इस सफलता को देखते हुए हम कह सकते हैं कि रूस में इसको सरकार की स्थायी नीति और शासन-विधि का अङ्ग और उद्देश्य बना दिया जावेगा।

इस समय संसार के औद्योगिक देश इस आयोजन से अत्यन्त दुखी हैं। जितना सस्ता माल रूस तैयार कर सकता है, उतना सस्ता वे पैदा नहीं कर सकते। इसलिए रूसी माल का प्रचार और व्यवहार प्रतिदिन बढ़ता जाता है। इस विषय में गत मास में 'लण्डन-टाइम्स' ने लिखा था कि "हमारे देश का व्यवसाय, रूसी व्यवसाय का मुक़ाबला नहीं कर सकता। रूसी सरकार तो स्वयं ही एक कम्पनी बन गई है। उतनी पूँजी, शक्ति और सङ्गठन अन्य देशों के व्यापारिक सङ्घों के पास कहाँ से आ सकता है? ऐसा जान पड़ता है कि रूस शीघ्र ही अन्य देशों के व्यवसायों को चौपट कर डालेगा।" इस भावी विपत्ति के निवारण का उपाय यह पत्र यह बतलाता है कि रूसी माल को देश में आने से रोका जावे। फ़्रान्स, बेलजियम आदि-आदि देशों में भी यही हलचल है। बड़े-बड़े कारख़ानों के मालिक रूसी माल के सस्तेपन से त्रस्त हैं और अपनी-अपनी सरकारों पर रूसी माल के बहिष्कार करने का ज़ोर डाल रहे हैं। सबका यही कहना है कि यदि भारी औद्योगिक विनाश से बचना है, तो रूस के साथ कोई व्यापारिक सन्धि न रक्खी जावे। साथ ही रूस पर एक लाञ्छन यह भी लगाया जाता है कि श्रमजीवियों का, हड़ताल करने का अधिकार छीन कर, उनकी मज़दूरी निश्चित करके तथा प्रत्येक स्वस्थ श्रमजीवी को क़ानूनन परिश्रम करने के लिए विवश करके रूस ने एक प्रकार से दास-प्रथा पुनर्जीवित करने का उद्योग

किया है। अभी कुछ अर्सा हुआ, संयुक्त राज्य अमेरिका की व्यवस्थापिका सभा में श्रीयुत कण्डल ने यह बिल पेश किया था कि रूसी माल पर कर बढ़ाया जावे और सरकारी एजेण्टों द्वारा इस बात का पता लगाया जावे कि रूस में बेगार-प्रथा का क्या स्वरूप जारी किया गया है?

इस प्रकार सम्पूर्ण यूरोप और अमेरिका की भौंहें रूस की तरफ़ टेढ़ी हो रही हैं। अमेरिका ने तो कुछ रूसी माल पर कर भी बढ़ा दिया है। किन्तु अभी किसी यूरोपीय देश की सरकार ने अपना रुख़ नहीं बदला है। रूस के साथ सबकी व्यापारिक सन्धियाँ जारी हैं। केवल जर्मनी और इटली, ये दो देश हैं, जो प्रत्यक्ष या परोक्ष में रूस के विरोधी गुट में सम्मिलित नहीं हैं। इसका कारण यह है कि जर्मनी और इटली दोनों वर्सेल की सन्धि के विरोधी हैं। इन दोनों देशों से तथा रूम (टर्की) से मित्रता स्थापित करके रूस ने भारी राजनीतिज्ञता का परिचय ही नहीं दिया है, बल्कि यूरोप के स्वार्थ-सङ्घ में फूट डाल दी है। आगामी मई मास में जब यूरोपीय सम्मेलन पर विचार किया जावेगा तो ऐसा जान पड़ता है कि रूस, जर्मनी और इटली का एक स्वर होगा और शेष यूरोप का दूसरा।

रूस के पञ्च-वर्षीय आयोजन के फल-स्वरूप, उसके निर्यात, सन् १६२६-३० में पिछले वर्ष से लगभग सवाए हो गए हैं, परन्तु तो भी उसके आयात निर्यात से कहीं अधिक हैं। अमेरिका में रूसी व्यापार के ख़रीद और फ़रोख़्त का अनुपात ६:१ और इङ्गलैण्ड में ३:१०९ है। अमेरिका ने तिस पर भी साम्य-वादी कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार रूसी माल पर भारी कर लगा कर एक प्रकार से उसका बहिष्कार किया है। परन्तु इङ्गलैण्ड में अभी ऐसा नहीं हुआ है। ग्रेट ब्रिटेन में भी साम्यवाद के प्रचार की कई बार शिकायतें हुई हैं, परन्तु रूसी माल को बहिष्कृत करने का या उस पर भारी कर लगाने का कोई व्यापक आन्दोलन नहीं है। इसका कारण मज़दूर-सरकार की नीति जान पड़ता है। वास्तव में अमेरिका ने रूसी माल पर कर लगा कर अन्तर्राष्ट्रीय औदार्य का परिचय नहीं दिया है।

जर्मनी और पोलैण्ड में इधर कुछ अर्से से बड़ी खींचातानी हो रही है। नहीं कह सकते कि यह मतभेद किस दिन भयङ्कर रूप धारण कर ले। इसका कारण है वर्सेल की सन्धि। महासमर के अन्त में जब जर्मनी को लुञ्ज-पुञ्ज किया गया था तो उसका कुछ हिस्सा पोलैण्ड में सम्मिलित कर दिया गया था। इस हिस्से में जर्मन जाति के लोग अधिकतया बसे हुए हैं। पोलैण्ड के समस्त निवासियों को मिलाने पर इन लोगों की संख्या अत्यन्त अल्प है। अतः पोलैण्ड की पार्लामेण्ट में इनकी कुछ नहीं चलती। ऐसी अल्प संख्यक जनता के अधिकारों की रक्षा के निमित्त राष्ट्र-सङ्घ ने नियम बना रक्खे हैं, परन्तु या तो पोलैण्ड सरकार उन नियमों की उपेक्षा करती है या पोलैण्ड-निवासी जर्मन और अधिक अधि-कार चाहते हैं। गत नवम्बर में पोलैण्ड को अपर सिले-सिया नामक प्रान्त में, जहाँ जर्मन लोगों की बस्ती अधिक है, जब पार्लामेण्ट के लिए निर्वाचन होने लगा तो जर्मन लोगों में बहुत असन्तोष फैल गया था। गत जनवरी में जर्मनी के चान्सलर (प्रधान-मन्त्री) श्रीयुत ब्रूनिङ्ग ने इस प्रान्त का दौरा किया था। जर्मनी में पोलैण्ड सरकार के व्यवहार के प्रति बड़ा असन्तोष है और उधर पोलैण्ड-निवासी जर्मन लोगों को भी इस बात की शिकायत है कि उनके असली देश ने उनको एक प्रकार से भुला-सा दिया है। श्रीयुत ब्रूनिङ्ग के दौरे का यही अभिप्राय था कि जर्मन-जनता को सन्तोष हो जाए कि सरकार इस विषय में उपेक्षा नहीं कर रही है और पोलैण्ड के जर्मनों को सान्त्वना हो जावे कि जर्मनी ने उनको भुला नहीं दिया है। वे निराधार और असहाय नहीं हैं, उनकी भी कोई सुनने वाला है।

जर्मन-सरकार इस मामले को राष्ट्र-सङ्घ तक पहुँचाना चाहती थी। उधर पोलैण्ड के परराष्ट्र-सचिव श्री० ज़ालस्की ने भी घोषित किया था कि अल्पसंख्यक लोगों का मामला (Minority problem) पोलैण्ड की राजनैतिक एकता को हानि पहुँचाने के लिए जो बहाना बनाया जा रहा है, उसका पोलैण्ड-सरकार प्राणपण से विरोध करेगी। आख़िर, गत जनवरी में यह मामला लीग (राष्ट्र-सङ्घ) की कौन्सिल तक पहुँचा ही। लीग-कौन्सिल ने यह व्यवस्था दी कि यह मामला केवल पोलैण्ड और लीग के बीच में है। जर्मनी को इसमें हस्तक्षेप करने का या बोलने का कोई अधिकार नहीं है। लीग ने इस मामले की जाँच करने के लिए एक कमिटी बिठाई, जिसके रिपोर्ट पेश करने पर कौन्सिल ने पोलैण्ड को धीमे शब्दों में दोषी ठहराते हुए, आयन्दा के लिए सचेत किया है। कमीशन ने रिपोर्ट में लिखा है कि पोलैण्ड ने जर्मनों की अल्पसंख्या (Minority) के साथ अन्याय तो अवश्य किया है, परन्तु साथ ही इसकी भावी आवृत्ति को रोकने का प्रयत्न किया जा रहा है और जिन कर्मचारियों ने पक्षपात किया था, उनके ऊपर मुक़दमे चलाए जा रहे हैं। यह रिपोर्ट ऐसी कूटनीतिक सफ़ाई के साथ लिखी गई है कि पोलैण्ड और जर्मनी दोनों ही सन्तुष्ट रहें और जो शिकायत है उसका भी अन्त हो जावे। श्रीयुत हेण्डरसन (अङ्गरेज़ी परराष्ट्र-सचिव) और श्रीयुत ब्रियाण्ड (फ्रेञ्च परराष्ट्र-सचिव) ने पोलैण्ड सरकार को लिखा है कि यदि कौन्सिल की चेतावनी को उसने नतशिर-सा स्वीकार करके उस पर फ़ौरन अमल नहीं किया, तो पोलैण्ड के विरुद्ध जो उक्रेन की शिकायतें हैं, उनसे उसको भारी क्षति पहुँचेगी। देखें इस चेतावनी और धमकी का पोलैण्ड पर क्या असर होता है।

श्री० जोसेफ़ स्टैलिन
रूसी सोवियट के डाइरेक्टर, जिनके पञ्च वर्षीय आयोजन ने संसार में खलबली मचा दी है।

नॉर्वे, स्वीडन, डेनमार्क और एस्टोनिया पर विश्व-व्यापी आर्थिक पतन का गहरा प्रभाव पड़ रहा है। यों तो कौन सा देश है जो इसका अनुभव न कर रहा हो, परन्तु इन छोटे-छोटे देशों में यह समस्या अधिक भयङ्कर है। गत १२ जनवरी को स्वीडन की रिक्सडेग (पार्लामेण्ट) में यही प्रधान विषय था। सम्राट् ने जो भाषण दिया, उसमें आर्थिक पतन का विस्तृत उल्लेख करके कहा गया था कि राज्य-कोष तथा प्राइवेट उद्योग-धन्धों पर इसका अत्यन्त चिन्ताजनक प्रभाव पड़ रहा है, इसलिए या तो कर बढ़ाना पड़ेगा या पिछली बचत का उपयोग करना पड़ेगा। उधर व्यापार-शैथिल्य के कारण कार-ख़ानों के मालिकों ने घोषणा की थी कि वर्तमान मज़दूरी की दर से कारख़ानों को भारी क्षति पहुँच रही है, इस-लिए उसमें १० प्रतिशत कमी की जावेगी। इस घोषणा से श्रमजीवी लोगों ने क्रुद्ध होकर गत फ़रवरी में यह प्रतिघोषणा निकाली थी कि या तो १० प्रतिशत मज़-दूरी और बढ़ाई जावे, अन्यथा एक सङ्गठित हड़ताल की जावेगी। आख़िर हड़ताल हुई और सरकार तथा समाज-सेवी नेताओं के संयुक्त प्रयत्न से भी उसका निवारण नहीं हुआ। मार्च का मास कैसे गुज़रा, इसका अभी समा-चार नहीं आया है। नॉर्वे की स्टोरटिङ्ग (पार्लामेण्ट) की गत बैठक में भी वाणिज्य-शिथिलता की विशेष चर्चा थी। वहाँ बेकारी भयानक रूप से बढ़ती जाती है, और सरकार ने बेकार लोगों के सहायतार्थ १ लाख क्रोमर (नॉर्वे का सिक्का) की मञ्ज़ूरी दी है। गत २ फ़रवरी को डेनमार्क के नक्सकाऊ नामक नगर में ५०० बेकार मज़दूर मिल कर अधिकारियों के पास गए और कहा कि या तो हमको खाने को दो या उपार्जन का कोई साधन बतलाओ। गत वर्ष डेनमार्क में बेकारों की संख्या २६,००० थी। परन्तु इस समय ७६,००० से ऊपर है। फ़ोकेटिङ्ग (पार्लामेण्ट) की गत बैठक में इस विषय पर विचार किया गया था। एस्टोनियन सरकार ने भी अभी अपने वार्षिक बजट में एक करोड़ क्राउन की तख़फ़ीफ़ (कमी) की है। इसके फल-स्वरूप कर बढ़ाया गया है, स्कूलों की फ़ीस में वृद्धि की है, और सरकारी नौकरों का वेतन तथा पेन्शनें घटा दी गई हैं।

अभी कुछ वर्ष हुए, फ़िनलैण्ड ने द्वादश वर्षीय मद्य-निषेध क़ानून पास किया था, जो अब तक चल रहा है। परन्तु वहाँ भी अमेरिका-जैसी कठिनाइयाँ उपस्थित होती जाती हैं और स्थिति काफ़ी विचारणीय है। पुलिस-विभाग ने रिपोर्ट की है कि सन् १६२६ में साढ़े नौ लाख लिटर (माप) शराब ज़ब्त की गई थी, परन्तु इस वर्ष अर्थात् सन् १६३० में साढ़े दस लाख लिटर ज़ब्त की गई है। सन् १६२६ में शराब पीने के अपराध में २३ हज़ार मनुष्यों को दण्ड दिया गया था और सन् १६३० में २५ हज़ार को। यह भी प्रकट किया गया है कि अन्य जुर्म कम हो रहे हैं। सुधार-सङ्घों की ओर से समाज-सचिव को प्रार्थनाएँ भेजी गई हैं कि भविष्य में मद्य-निषेध नियम का अधिक कठोरतापूर्वक पालन करवाने का आयोजन किया जावे।

ज़ेकोस्लोवेकिया की जनता में कई जातियाँ सम्मि-लित हैं। इनमें ज़ेकों की संख्या ६५·५ प्रतिशत, जर्मनों की २३·५ प्रतिशत, हङ्गेरियों की ५·४ प्रतिशत, रूथेनि-यनों की ३·३ प्रतिशत, यहूदियों की १·३ प्रतिशत और पोल लोगों की ०·५ प्रतिशत है। हाल में जो मनुष्य-गणना हुई है, उसमें अल्पसंख्यक जातियों को यह आशङ्का थी कि सरकार गणना इस विधि से करेगी, जिससे उनकी संख्या और भी कम प्रकट हो। कई सप्ताह तक इन जातियों ने बड़ा तूफ़ान उठाया था। सरकार ने जर्मन और जौचक जातियों के बहुसंख्यक गणकों को इस कार्य के लिए नियुक्त करके जनता के असन्तोष को शान्त किया। ज़ेकोस्लोवेकिया की सब रेलें सरकारी सम्पत्ति हैं और प्रबन्ध सब सरकार के हाथ में है। अभी हाल में ही

(शेष मैटर २६वें पृष्ठ पर देखिए)

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

डॉ० डी० राघवेन्द्र राव, एम० आर० सी० एस०, एल० आर० सी० पी० (लण्डन), जो कोचीन राज्य में चिकित्सा तथा सफ़ाई विभाग के चीफ़ ऑफ़िसर नियुक्त हुए हैं।

श्री० थु० थिन मौङ्ग। रङ्गून कॉरपोरेशन ने आपको सन् १९३१ के लिए अपना मेयर निर्वाचित किया है।

लेजिस्लेटिव एसेम्बली के नए प्रेज़ीडेण्ट सर इब्राहीम रहमतुल्ला ख़ाँ

मिस० ए० आर० हेरिस, लखनऊ के गर्ल्स नॉर्मल स्कूल की सञ्चालिका, जिन्होंने गत नए साल के उपलक्ष में द्वितीय श्रेणी का क़ैसरे-हिन्द पदक प्राप्त किया है।

कुमारी शीलाराव—जिन्होंने अखिल भारतवर्षीय टेनिस टूर्नामेण्ट की स्त्री-प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया है।

श्री० जे० पी० श्रीवास्तव, एम० एल० सी०, जो राजा बहादुर कुशलपालसिंह के स्थान पर, संयुक्त प्रान्त की सरकार के शिक्षा-मन्त्री नियुक्त हुए हैं।

मि० ई० सी० आग़ाबेग, जो आसनसोल की मेसर्स आग़ा-बेग ब्रादर्स के मैनेजिङ्ग पार्टनर हैं और जिन्होंने आसनसोल की म्युनिसिपैलिटी को २०,०००) रु० पानी-कल का भवन बनवाने के लिए दिया है। इसके सिवा गिर्जे, मस्जिदें, पाठशालाएँ और अस्पताल आदि बनवाने में भी आपने विपुल अर्थ दान किया है। आसनसोल डिवीज़न के भारतीय और यूरोपीय अधिवासियों के सुख-स्वच्छन्दता के लिए आपने कितनी ही कीर्तियाँ स्थापित की हैं।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ
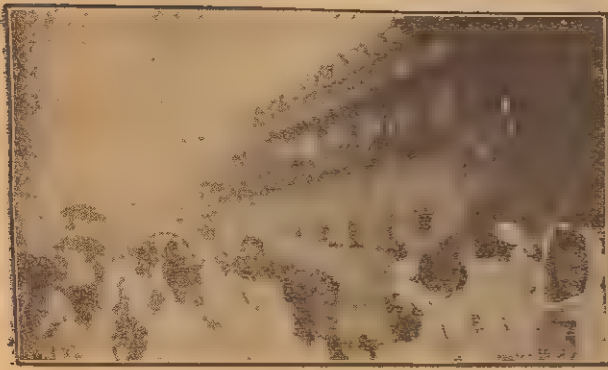
त्रिचनापल्ली (मद्रास) के अखिल भारतवर्षीय खादी-प्रदर्शिनी का स्वागत-समारोह ।

भारत-सरकार के शिक्षा-मन्त्री—सर फ़ज़ले हुसेन, जो दिल्ली यूनिवर्सिटी के कन्वोकेशन के सभापति बनाए गए थे। यह सम्मान पाने वाले आप सर्व-प्रथम भारतीय हैं।

त्रिचनापल्ली (मद्रास) के अखिल भारतवर्षीय खादी-प्रदर्शिनी के उद्घाटनकर्ता आचार्य पी० सी० राय का स्वागत-समारोह।

कानपुर की राष्ट्रीय कार्यकर्त्री—श्रीमती शान्ता देवी शर्मा—जो हाल ही में जेल से छूटी हैं।

डॉ० श्रीमती सुखताङ्कर—आप बम्बई के म्युनिसिपल कॉरपोरेशन की सदस्या हैं।

मध्य प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी के आठवें डिक्टेटर—डॉक्टर के० सी० बघेल, जिन्होंने सरकारी नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया है।

स्वर्गीय पं० मोतीलाल नेहरू के श्राद्ध के दिन रङ्गून (बर्मा) में निकलने वाले बृहत् जुलूस का एक भाग।

कालीकट (दक्षिण) के कॉङ्ग्रेस की सातवीं डिक्टेटर—श्रीमती भगी धाटामनी—राष्ट्रीय कार्यों में आप विशेष भाग लेती हैं।
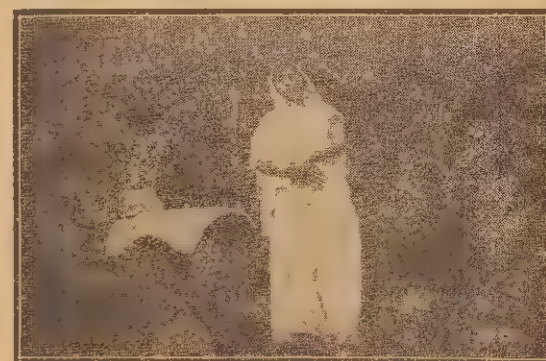
मसूरी कॉङ्ग्रेस कमिटी की प्रधाना—श्रीमती सावित्री देवी श्रीवास्तव। कानपुर में होने वाले सङ्गीत समाज की आप सभानेत्री चुनी गई थीं।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

धात्री केथेलिन रैम्बले—मद्रास प्रेज़िडेन्सी की सर्वोच्च धात्री-परीक्षा पास करने के उपलक्ष में वहाँ के धात्री एसोसिएशन ने आपको एक पदक प्रदान किया है।

श्री० डी० एस० अयाधुराई—आप एक मद्रासी हैं। आपने गत जनवरी में एक विशालकाय चीता मारा था, जिसका चित्र ऊपर दिया है।

हिज़ हाईनेस ठाकुर साहब धर्मेन्द्रसिंह जी—आप राजकोट स्टेट के नए शासक हैं। आपको हाल ही में अपने स्टेट का शासनाधिकार प्राप्त हुआ है।

कुन्नूर (मद्रास) की मादक-निवारिणी क्रस्तान महिला-समिति की सदस्याएँ। बीच में (टोपी लिए) समिति की सभानेत्री श्रीमती डी० ई० सिलवा।

श्री० कल्याणदास भाईदास सराफ़—आप बम्बई की सराफ़ एसोसिएशन के सभापति हैं।

श्रीमती एल० सी० जैन—आप अभी हाल ही में इङ्गलैण्ड से आई हैं और इलाहाबाद की 'गर्ल गाइड कमिश्नर' नियुक्त हुई हैं।

राजा ऋषिकेश लाहा, सी० आई० ई०; आप बङ्गाल नेशनल चेम्बर ऑफ़ कॉमर्स के प्रेज़िडेण्ट चुने गए हैं।

हमने माना कि बहुत देखे हैं मरने वाले, आप मरने का हमारे भी तमाशा देखें।
आईना सामने रख लीजिए, खुल जाय अभी; आप क्या चीज़ हैं, यह आप तमाशा देखें !

दुनिया

ज़र्रे-ज़र्रे से अयाँ[1] जलवए यकताई है,
क़तरे-क़तरे में जो पिनहाँ[2] है, वह दुनिया देखें।
—"शैदा" देहलवी

अब किसी दूसरे आलम का तमाशा देखें,
दीदए[3] शौक़ न जाती हुई दुनिया देखें।
—"अख़गर" लखनवी

वह मेरे नज़आ[4] के, आलम का तमाशा देखें,
अब जो आए हैं, तो जाती हुई दुनिया देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

तुझको देखें, तेरी दुनिया का तमाशा देखें,
दोनों आँखों में नज़र एक है क्या-क्या देखें !
—"शैदा" देहलवी

फ़लसफ़ी[5] बहस में क्या जलवा ख़ुदा का देखें,
डोर उलझी है, तो फिर उसका सिरा क्या देखें।
बाग़े-आलम की बहुत हमने बहारें देखीं,
मर के क्या जाने कहाँ जायँ हम और क्या देखें ?
—"दुर" ग्वालियारी

लोग दुनिया जिसे कहते हैं, वह है आलमे[6]ख़्वाब
इसमें क्या ख़ाक रहें और इसे क्या देखें !
—"राना" ग्वालियारी

देख कर हाल मेरा उठ गए वह यह कह कर,
इसमें अब क्या है, इसे बैठ के हम क्या देखें !
—"शाकिर" ग्वालियारी

तुझको देखें कि तेरी ज़ुल्फ़े चलीपा देखें।
महवे हैरत हैं, कि हम इश्क़ में क्या-क्या देखें !
—"सब्र" मुरादाबादी

यह तमन्ना[7] थी कि हुस्ने रुख़े ज़ेबा देखें,
तुम छुपे बैठे हो परदे में तो हम क्या देखें !
वक़्त कम, और ज़माने में हज़ारों मञ्ज़र,
पूछते हैं, निगहे शौक़ से, क्या-क्या देखें ?
घर लुटा, देश लुटा, अपने सब अहबाब लुटे,
गर्दिशे[8] बख़्त से देख अभी क्या-क्या देखें !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

कलेजा

जल बुझा शमआ[9] पे हो-हो के फ़िदा परवाना,
इतनी सी जान का दिल देखें कलेजा देखें !
—"शाकिर" ग्वालियारी

कशमकश में तेरे ज़ख़्मी हैं कि अब क्या देखें,
तीर देखें तेरा, या अपना कलेजा देखें।
—"सब्र" मुरादाबादी

फिर चले तीरे-नज़र, फिर वह तमाशा देखें,
क्या मेरा दिल है, मेरे दिल का कलेजा देखें !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—प्रकट, २—छुपा हुआ, ३—आँखें, ४—अन्तिम समय, ५—तार्किक, ६—नींद की दुनिया, ७—अभिलाषा, ८—तक़दीर का उलट-फेर, ९—दीपक।

तमन्ना

फीकी पड़ जायगी, "अरमान" हिना[10] की रङ्गत,
मल के हाथों से मेरा ख़ूने तमन्ना देखें।
—"अरमान" कानपूरी

मौत की फ़िक्र में, बेमौत मरा जाता हूँ,
मुझको देखें, वह मेरे दिल की तमन्ना देखें।
छुपने वाले, हवसे तालिबे[11] दीदार तो देख,
यह तमन्ना है कि हम हस्बे[12] तमन्ना देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

दौरे गरदूँ[13]ने बदल दी है कुछ उसकी हालत,
अब हो क्या रङ्ग, तिलस्माते[14]जहाँ का देखें।
महव हो जायँ तेरे नक़्शे क़दम पर मिट कर,
देख कर पाँव तेरा मुँह न किसी का देखें !
—"शैदा" देहलवी

आँख पड़ जाय बुतों पर जो सनम[15]ख़ाने में,
जलवए हुस्न में एक नूर ख़ुदा का देखें।
—"रौनक़" देहलवी

सदक़े[16]सदक़े तेरे पे जलवए[17] जानाँ सदक़े,
जो तुझे देख लें वह मुँह न किसी का देखें।
अब उन्हें चैन नहीं, अब उन्हें आराम नहीं,
देखने वाले असर मेरी[18]फ़ुग़ाँ का देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

शौक़[19]सिजदा में, वहीं फ़र्शे ज़मीं हों आँखें,
जिस जगह पर भी तेरा नक़्शे कफ़े[20] पा देखें।
—"रौनक़" देहलवी

ख़्वाब में जिसने दिखाई है झलक धुँधली सी,
काश आँखों से उसी बुत का[21]सरापा देखें।
—"क़मर" चरथावली

सर झुका कर वहाँ आँखों से लगाएँ[22]उश्शाक़,
यह जो रस्ते में तेरा नक़्शे कफ़े पा देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

तमाशा

बाग़े आलम में, जो रङ्गे[23]गुले यकता देखें,
ऐन कसरत[24] में भी वहदत[25] का तमाशा देखें।
नज़र आ जाय तस्सवुर[26] में तजल्ली[27] उनकी,
जलवए तूर का हम दिल में तमाशा देखें।
—"रौनक़" देहलवी

१०—मेहदी, ११—प्रेमी, १२—जी भर, १३—आसमान का चक्कर, १४—संसार का तमाशा, १५—मन्दिर, १६—निछावर, १७—ज्योति, १८—फ़रियाद, १९—बन्दना करना, २०—पाँव का निशान, २१—सर से पैर तक, २२—प्रेमियों, २३—फूल, २४—बहुत, २५—एक, २६—ध्यान, २७—ज्योति।

अपनी हस्ती का जो एहसास[28] ख़ुद आराई[29] हो
जुज़वे[30] में कुल का नज़र आए तमाशा देखें।
—"शैदा" देहलवी

तूर[31] पर बर्क़[32] से यह होश ने मूसा से कहा,
हम कहाँ तक तेरे जलवे का तमाशा देखें।
—"अख़गर" लखनवी

शोलारु[33] तुमको अगर हज़रते मूसा देखें,
है यक़ीं तूर का वह फिर न तमाशा देखें।
—"अरमान" कानपूरी

खुल न जाएँ कहीं असरारे[34] जुनूनो वहशत,
आईनाख़ाना में क्यों अपना तमाशा देखें।
—"अकमल" इटावी

आईना में जो वह अपना रुख़े[35] ज़ेबा देखें,
ख़ुद तमाशाई बनें, और तमाशा देखें।
—"दास" मुरादाबादी

वह हमारे दिले पुर-दाग़ को देखें आकर,
जाके गुलशन में न फूलों का तमाशा देखें।
—"राना" ग्वालियारी

किब्रो[36] नख़वत के जिन आँखों पर पड़े हैं परदे,
ख़ाक वह क़ुदरते ख़ालिक़ का तमाशा देखें।
शाम से ता ब-सहर,[37] और सहर से ता शाम,
हम कहाँ तक तेरे जलवे का तमाशा देखें।
—"शाकिर" ग्वालियारी

आज उनके भी उड़े हाथ के तोते "तायर",
आके बालीं[38] पर अगर मेरा तमाशा देखें।
—"तायर" बरेलवी

दिल की ज़िद है, कि निकल जाऊँगा पहलू से अभी
आँखें कहती हैं ज़रा और तमाशा देखें।
—"क़मर" चरथावली

हमने माना, कि बहुत देखे हैं मरने वाले,
आप मरने का हमारे भी तमाशा देखें।
हमसे औरों से ज़माने में सरोकार नहीं,
तू दिखाए जो तमाशा, वह तमाशा देखें।
आईना सामने रख लीजिए, खुल जाय अभी,
आप क्या चीज़ हैं, यह आप तमाशा देखें।
आतिशे[39] इश्क़ से दिल ख़ाक हुआ जाता है,
घर किसी का जले और आप तमाशा देखें।
ख़ाक होने के सिवा, जिस्म में रक्खा क्या है,
मौत आ जाय तो सब उसका तमाशा देखें।
है यक़ीं हज़रते "बिस्मिल" की तरह हों बिस्मिल
आप अगर उनके तड़पने का तमाशा देखें।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

२८—ख़याल, २९—अपने को सँवारना, ३०—हिस्सा, ३१—पहाड़ का नाम है, ३२—बिजली, ३३—प्रेमिका, ३४—भेद, ३५—सुन्दर चेहरा, ३६—ग़रूर, ३७—सुबह, ३८—सिरहाना, ३९—आग।

अजी सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

आज कानपुर के दङ्गे का कुछ विवेचन करने की इच्छा हो रही है। कानपुर का दङ्गा भी, सच मानिए, ईश्वर की लीला थी ! लोगों के लिए मनुष्य का मार डालना खटमल के मार डालने के समान था और घर फूँक देना ऐसा था, जैसे आपके प्रेस में कभी-कभी रद्दी फूँक दी जाती है। पुलिस ने उस समय ब्रह्म का पार्ट जिस ख़ूबी से खेला है, वह सर्वथा प्रशंसनीय था। मनुष्यों की हत्या, घरों का लूटा जाना और फूँका जाना उसके लिए एक तमाशा था। माया में फँसे हुए प्राणी एक दूसरे का गला काट रहे थे और पुलिस यह लीला देख कर हँस रही थी। यदि कभी कोई सहायता के लिए उसको पुकारता था तो वह मानो सुनती ही न थी। सुने भी तो कैसे? मनुष्य कर्म-बन्धन तथा माया में फँसा हुआ दुख-सुख झेलता है। ब्रह्म उसमें हस्तक्षेप नहीं करता—हस्तक्षेप करे तो विश्व का सब कार्य ही उलट-पुलट हो जाय! इसी प्रकार यदि पुलिस हस्तक्षेप करती तो दङ्गे का सब कार्य उलट-पुलट हो जाता। कहते हैं कि गज की टेर सुन कर भक्त-वत्सल भगवान नङ्गे पैरों दौड़ पड़े थे। तो जनाब, वह कोई थर्ड-क्लास भगवान होंगे। फ़र्स्ट-क्लास भगवान अर्थात् ब्रह्म जूतियाँ चटकाते हुए भी नहीं घूमते—नङ्गे पैरों भला कौन दौड़ेगा? पुलिस ने भी यही किया, उसने माया में पड़े हुए प्राणियों की ज़रा भी परवा न की। यदि वह थर्ड-क्लास भगवान की तरह होती तो पीड़ितों की पुकार सुन कर निश्चय ही अपने बूट उतार कर फेंक देती और नङ्गे पैरों दौड़ पड़ती। वह तो ब्रह्म की भाँति निर्लेप तथा निर्विकार होकर चुपचाप सब लीला देखती रही। उसके लिए दङ्गा बिलकुल साधारण बात थी और क्यों न होती? यह तो संसार है, इसमें ऐसा होता ही रहता है।

अब ज़रा माया में पड़े हुए प्राणियों की लीला सुनिए। कानपुर के दङ्गे का सूत्रपात, जहाँ तक अपने राम को मालूम हुआ है, इस प्रकार हुआ कि दो मुसलमान, जिनके सम्बन्ध में कहा जाता है, कि ख़ुफ़िया पुलिस के आदमी थे, बूचड़ख़ाने की ओर दौड़ते हुए गए और चिल्ला कर बोले कि—"मुसलमानो! तुम्हें शर्म नहीं मालूम होती, यहाँ बैठे हो,बादशाही नाके पर हिन्दू मुसलमानों को पीट रहे हैं।" इतना सुनते ही मुसलमान लोग उठे और अपने पड़ोसी हिन्दुओं को पीटने लगे। सम्पादक जी, यह मनोवृत्ति आज तक मेरी समझ में नहीं आई, कि यदि कोई मुझसे आकर कहे कि अमुक स्थान में मुसलमान हिन्दुओं को पीट रहे हैं तो मैं हिन्दुओं की सहायता के लिए उस स्थान पर जाने की अपेक्षा उठ कर अपने पड़ोसी मुसलमान को पीटने लगूँ। साँप का विष झाड़ने वाले लोगों के सम्बन्ध में यह किम्बदन्ती अलबत्ता सुनने में आई है कि उनमें यह कमाल होता है कि जो कोई उनसे जाकर कहता है कि अमुक आदमी को साँप ने काट खाया तो वह सूचना देने वाले को तमाचा मारता है। तमाचे के लगते ही सूचना देने वाला बेहोश होकर गिर पड़ता है और उधर सर्पदंष्ट अच्छा हो जाता है। और इधर सूचना देने वाले के शरीर में सर्प-विष आ जाता है जिसे झाड़ने वाला मन्त्र द्वारा दूर कर देता है। यदि ऐसा कमाल भी होता कि अपने पड़ोसी को पीटने से दूसरी जगह का दङ्गा अपने आप शान्त हो जाता और इधर थोड़ी देर परस्पर लड़-भिड़ कर ये भी शान्त हो जाते, तब भी कुछ बात होती। परन्तु यहाँ तो विष उतरने की अपेक्षा दूना चढ़ता है। वल्लाह क्या कमाल है, यद्यपि वीरता और न्याय इसमें लेशमात्र भी नहीं है। वीरता और न्याय तो तब हो, जब हम उन्हीं का सामना करें और उन्हीं को ठोकें-पीटें जिन्होंने कि ठोंक-पीट-काण्ड प्रारम्भ किया है। इसमें भगवान जाने कौन सी बहादुरी है कि राम से बदला लेने के लिए श्याम को पीट दिया जाय! और फिर ऐसी दशा में, जबकि राम की हमने कभी सूरत भी नहीं देखी और श्याम एक मुद्दत से हमारा पड़ोसी है। यह तो वैसी ही बात हुई कि कोई व्यक्ति यह सुन कर कि अमुक के पुत्र ने अपने पिता को पीटा, अपने पुत्र को पीटने लगे। क्यों? इसलिए कि पुत्र ने पिता को पीटा, इसलिए पुत्र को दण्ड अवश्य मिलना चाहिए। इस बात से कोई सरोकार नहीं कि किस पिता के बदले में कौन पुत्र पिटता है। इस अन्धेर का भी कुछ ठिकाना है! इन भले आदमियों के लिए उस समय न पुलिस का अस्तित्व रह जाता है न न्यायालय का। यों साधारणतया लड़ाई-झगड़ा होने पर पुलीस तथा न्यायालय की शरण ली जाती है, परन्तु लोग कभी-कभी अपने हाथ में क़ानून की नकेल पकड़ कर सरकार का पार्ट स्वयम् ही अदा करने पर कटिबद्ध हो जाते हैं। यद्यपि इसमें नुक़सान उठाना पड़ता है; क्योंकि ऐसा करने में स्वयम् सरकार बहादुर भी पिट जाती है।

इस प्रकार के दङ्गों की एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि अपराधी के बदले में निरपराध को दण्ड मिलता है। कानपुर के दङ्गे में हिन्दू-मुसलमान लड़े और दोनों ने बड़ी वीरता दिखाई। ख़ूब स्त्रियों और बच्चों पर हाथ साफ़ किए गए। जब से अङ्गरेज़ी राज्य हुआ तब से लोगों का अस्त्र-शस्त्र चलाने का अभ्यास छूटा हुआ है। अतएव इस विचार से, कि यह विद्या बिल्कुल लुप्त न हो जाय, लोग इस प्रकार कभी-कभी 'स्वाध्याय' कर लिया करते हैं। परन्तु यह स्वाध्याय अशिक्षित लोगों तक ही सीमाबद्ध रहता है। पढ़े-लिखे और बुद्धिमान लोग ज़रा सोच-समझ कर काम करते हैं। एक वकील साहब के मकान पर जब मुसलमानों ने आक्रमण किया तो वह बन्दूक़ बग़ल में रख कर क़ानून की पुस्तक के पृष्ठ उलटने लगे और यह देखने लगे कि वह किस दफ़ा के अनुसार बन्दूक़ का उपयोग कर सकते हैं। गँवार मुसलमानों ने उन्हें इतना समय भी न दिया कि वह उस दफ़ा को ढूँढ लेते। बेचारों ने विवश होकर यह निश्चय किया कि चाहे मकान लुट जाय और सब लोग मार डाले जायँ, परन्तु वह बन्दूक़ न चलाएँगे। परिणाम यह हुआ कि उनका मकान लुट गया। उनके और उनके परिवार के प्राण कुछ हथियारबन्द पुलिस के आ जाने से बच गए। अब लोग उन्हें बेवक़ूफ़ बनाते हैं, कि बन्दूक़ के होते हुए घर लुटवा दिया। अपने राम की समझ में उन्होंने बड़ी बुद्धिमानी का काम किया। अजी जनाब, बन्दूक़ इस काम के लिए थोड़े ही है। वह तो ब्याह-शादी में ज़रा भड़भड़ाहट करने और शान जमाने के लिए या फिर बन्दरों को धमकाने और कबूतर-बत्तख़ को मोक्ष दिलाने के लिए होती है। यदि बन्दूक़ से मनुष्य-हत्या हो जाती तो दफ़ा ३०२ में चालान न हो जाता। इससे यह अच्छा है कि बन्दूक़ की ओर ऐसे समय में देखे ही नहीं। परमात्मा की इच्छा होगी तो जानोमाल बच ही जायगा, अन्यथा बन्दूक़ क्या, बन्दूक़ की परदादी तोप भी नहीं बचा सकती। ३०२ दफ़ा के अनुसार फाँसी पर लटक कर मरने से तो यह अच्छा है कि अहिंसात्मक सत्याग्रही की तरह सकुटुम्ब वीर-गति को प्राप्त हो। वीर-गति से मरने वाले को स्वर्ग अवश्य मिलता है—यह सब जानते हैं। तो जनाब, घर का एक आदमी स्वर्ग को जायगा तो उसकी दुम में बँधे हुए उसके कुटुम्बी भी बिना टिकिट स्वर्ग में घुस ही जायँगे। भला बताइए तो यह श्रेष्ठ है या फाँसी के तख़्ते पर मरना और अपने कुटुम्ब को निस्सहाय रोता-बिलखता छोड़ जाना।

इस पर भी लोग उक्त वकील साहब को बेवक़ूफ़ समझते हैं। लोगों में दूरदर्शिता का माद्दा तो है ही नहीं। इसके अतिरिक्त ऐन मौक़े पर हरामज़ादी क़ानून की किताब धोखा दे गई। घर में टेलीफ़ोन भी नहीं था जो मैजिस्ट्रेट से पूछ लेते कि "हुज़ूर, मुसलमान मारे डाल रहे हैं, हुक्म हो तो एकाध बन्दूक़ मार दूँ, वरना आप पर से न्योछावर हो जाऊँ। मुझे मुसलमानों से इतना डर नहीं लगता, जितना कि फाँसी के तख़्ते से। बिना आपकी आज्ञा के बन्दूक़ चलाऊँगा तो आप बिना फाँसी दिए छोड़ेंगे नहीं।" अब वकील साहब को टेलीफ़ोन अवश्य लगवा लेना चाहिए और एक शीशे की अलमारी में क़ानून की किताब प्रत्येक समय खुली धरी रहे, जिसमें कि आवश्यकता पड़ने पर पृष्ठ उलटने की ज़रूरत न पड़े।

एक लाला साहब के यहाँ दो बन्दूक़ें थीं और द्वार पर दो गोरखे कुकड़ियाँ लिए पहरा दे रहे थे। जब मुसलमानों का आक्रमण हुआ तो गोरखों ने बन्दूक़ें माँगीं। परन्तु लाला साहब ने जो बन्दूक़ों की तरफ़ देखा तो बन्दूक़ों के पीछे उन्हें दफ़ा ३०२ तथा फाँसी के तख़्ते की झलक भी दिखाई पड़ गई। बस फिर क्या था, साफ़ इन्कार कर गए। बेचारे दोनों गोरखे कुछ देर तक कुकड़ी से लड़े, तत्पश्चात मारे गए। लाला साहब ने मुसलमानों को दो हज़ार रुपए देकर कुछ घण्टों की मोहलत माँगी तब प्राण बचे; और वह मकान तथा माल-असबाब छोड़ कर सकुटुम्ब अपनी प्राण सम प्यारी सुन्दर बन्दूक़ों सहित भाग निकले। उनका मकान फूँक दिया गया और असबाब लूट लिया गया। यद्यपि तहख़ाने में होने के कारण बारह बोरे सोना-चाँदी बच गया, जिसे वह शान्ति होने पर निकाल ले गए।

लाला साहब दशहरे पर बन्दूकों का पूजन करने तथा ब्याह-शादी में व्यवहार निभा देने के अतिरिक्त यह भी नहीं जानते, कि बन्दूक किस मरज़ की दवा है।

शान्ति स्थापित होने के पश्चात् एक दिन अफ़वाह उड़ी कि आज मुसलमान सङ्गठित होकर हमला करेंगे। एक सज्जन घबराए हुए दौड़े आए और बोले—"अब क्या होगा—कैसे प्राण बचेंगे?" एक व्यक्ति पूछ बैठा—"आपके यहाँ कोई हथियार है?" बोले—"हाँ, बन्दूक है।" प्रश्न किया गया कि "तब फिर इतनी घबराहट क्यों है?" बोले—"बन्दूक तो है, पर बन्दूक चलाने वाला कोई नहीं है।" सब लोग हँस पड़े। अपने राम होते तो कह देते—"बाबू जी, बन्दूक बेचने वाले ने आपको ठग लिया। बन्दूक के साथ बन्दूक चलाने वाला मुफ़्त मिलता है, वह उसने आपको नहीं दिया।" तब एक सज्जन, जो बन्दूक का सदुपयोग जानते थे, उनके घर पर रात भर रहे। उन्होंने दूसरे दिन मित्रों से कहा—"ऐसे लोगों को तो लाइसेन्स दिया ही नहीं जाना चाहिए।" एक पोस्ट ऑफ़िस के एक कर्मचारी उस समय, जबकि दङ्गा पूर्णरूपेण जारी था, इस भय से पोस्ट ऑफ़िस चले, कि ग़ैर-हाज़िरी होने से कहीं डिसमिस न कर दिए जायँ—यद्यपि दङ्गे के कारण उस दिन पोस्ट ऑफ़िस बन्द था। हाथ में बन्दूक लिए हुए मुसलमानों की भीड़ के पास पहुँच कर बोले—"मुझसे कोई बोला तो बन्दूक मार दूँगा।" मुसलमानों ने बन्दूक देख कर कहा—"बाबू जी को जाने दो।" जब बाबू जी बन्दूक लिए हुए भीड़ में पहुँचे तो तड़ातड़ ऊपर लाठियाँ बरस पड़ीं, बाबू साहब की लाश अलग गिरी और बन्दूक अलग। मुसलमान लाश को वहीं छोड़, बन्दूक लेकर चम्पत हो गए। एक महोदय पिस्तौल हाथ में लिए पिट कर चले आए—जान बच गई, इतनी ख़ैर हुई। जान पर नौबत पहुँच गई, परन्तु न तो पिस्तौल हाथ से छूटा और न पिस्तौल से गोली। मित्रों के बीच में आए तो पिस्तौल हिला-हिला कर अपनी मुसीबत का वर्णन करने लगे। एक महोदय मुस्करा कर बोले—"बाबू जी, पिस्तौल जेब में रख लीजिए, कहीं कोई छीन न ले।" सम्पादक जी, कहाँ तक लिखूँ, ऐसी न जाने कितनी घटनाएँ हुईं।

साथ ही यह भी हुआ कि चार-छः हिन्दुओं ने केवल लाठी और ईंटों की मार से पचासों मुसलमानों को भगा दिया। कुछ मुसलमानों ने भी बड़ी वीरता दिखाई, अपनी स्त्री-बच्चों को निस्सहाय छोड़, केवल अपने प्राण लेकर भाग निकले। इसीसे अपने राम का यह कहना है कि यह दङ्गा ईश्वर की लीला थी। लोगों में अब तक इतना भय समाया हुआ है कि साधारण सी बात में भगदड़ मच जाती है। १० अप्रैल की रात को सड़क पर दो साँड़ लड़ पड़े, पुलिस वालों ने उन्हें भगाने के लिए हल्ला मचाया। उस हल्ले को सुन कर शहर भर के लोग, जो अपनी-अपनी छतों पर पड़े थे, चिल्लाने लगे। इस चिल्लाहट को सुन कर एक धनाढ्य परिवार के सज्जन यह समझ कर, कि फिर दङ्गा हो गया, इतनी घबराहट के साथ उठे कि तीन खण्ड की छत से नीचे आ गिरे। दूसरे दिन अस्पताल में उनका देहान्त हो गया। २५ अप्रैल की शाम को अपने राम चौक में एक मित्र की दूकान पर बैठे हुए थे। सहसा भगदड़ मच गई। लोग बेतहाशा भागने लगे और दूकानें बन्द होने लगीं। कुछ लोगों ने पूछा—"क्या बात है, क्यों भाग रहे हो?" तो कोई उत्तर नहीं देता, भागे चले जा रहे हैं। एक-दो ने उत्तर भी दिया तो बोले—"पता नहीं क्या बात है!"

असङ्गठित भारतीय पत्रकार

जो समुचित सङ्गठन न होने के कारण अत्याचारों के शिकार हो रहे हैं।

पाश्चात्य देशों के प्रेस-यूनियन

जिनके नाम-मात्र से जॉनबुल साहब की नानी मरती है।

पता नहीं, परन्तु फिर भी भागे चले जा रहे हैं। दो-तीन मुसलमान भय के मारे नालियों में गिर गए। आख़िर कुछ आदमी आगे बढ़े, पता लगाया तो मालूम हुआ कि मेस्टन रोड पर एक बाइसिकिल-सवार गिर पड़ा, उधर से एक बारात आ रही थी—बारात के कुछ आदमी उसे उठाने दौड़े—बस इतनी सी बात में भगदड़ मच गई। अपने राम तो यह दशा देख कर स्तम्भित रह गए। कानपुर का इतना पतन हो गया! जिस कानपुर में लोग किसी भी समय किसी भी मुहल्ले में बेधड़क चले जाते थे, उसी कानपुर में इस समय इतना आतङ्क है, कि लोग घर के बाहर निकलते हुए डरते हैं। पता नहीं, पूर्वावस्था आने में कितने दिन लगेंगे।

पता नहीं, हिन्दू-मुसलमानों का यह वैमनस्य कब दूर होगा। उस दिन एक महोदय ने कहा कि "जनाब, यह वैमनस्य कभी दूर नहीं हो सकता।" उनसे पूछा गया—"क्यों?" बोले—"दोनों की प्रत्येक बात एक-दूसरे के विरुद्ध पड़ती है।" फिर सवाल किया गया—"उदाहरण दीजिए!" कहने लगे—"ज़रा ग़ौर कीजिएगा!" मैंने कहा—"मैं ज़रा नहीं, बहुत ग़ौर कर रहा हूँ, आप कह चलिए।" बोले—"देखिए, मुसलमान पाजामा पहनते हैं और हिन्दू धोती।"

मैंने कहा—वाक़ई, धोती-पाजामे में सदैव भिड़न्त होती रहती है, अतएव इनके पहनने वालों का भी लड़ते रहना स्वाभाविक ही है।

वह बोले—और सुनिए। हिन्दू चोटी रखते हैं और मुसलमान दाढ़ी।

मैं बोला—यह भी बड़ी ज़बर्दस्त दलील है। बड़ी ख़ैरियत हुई कि हिन्दुस्तान चीन में नहीं है, वरना रात-दिन जूता चलता रहता। चीनियों की चोटियाँ बहुत लम्बी होती हैं।

वह—हिन्दू रोज़ नहाते हैं, मुसलमान रोज़ नहीं नहाते।

मैं—ख़ूब! यह भी पक्की बात है। आगे चलिए।

वह—नहाते समय हिन्दू पहले पैर धोते हैं, परन्तु मुसलमान हाथ धोते हैं।

मैं—बेशक, ये सब बातें लड़ाई की जड़ हैं।

वह—ऐसी दशा में बताइए मेल कैसे हो सकता है?

मैंने कहा—यह न कहिए, हो सब कुछ सकता है। संसार में असम्भव कुछ भी नहीं है।

वह—कैसे हो सकता है, बताइए?

मैं—देखिए, न हिन्दू धोती पहनें न मुसलमान पाजामा, बल्कि घाघरा पलटन (हाईलैण्डर्स) की तरह दोनों घघरिया पहनें। न हिन्दू चोटी रक्खें, न मुसलमान दाढ़ी। सप्ताह अथवा महीने में एक दिन ऐसा नियुक्त कर लिया जाय जिस दिन हिन्दू-मुसलमान दोनों नहाया करें, वैसे कोई न नहाय। नहाते समय न हिन्दू पैर धोवें न मुसलमान हाथ—इन दोनों अवयवों को पानी से बिलकुल अलग रक्खा जाय। कहिए जनाब, तब तो मेल हो जायगा?

वह महोदय नाराज़ होकर बोले—आप युक्ति बताते हैं या मज़ाक़ करते हैं?

मैंने कहा—दोनों काम करता हूँ, आप न समझें तो क्या करूँ।

सम्पादक जी, क्या आप कोई ऐसी युक्ति बता सकते हैं, जिससे कि हिन्दू-मुसलमानों का यह चिर-वैमनस्य दूर हो सके?

भवदीय,

विजयानन्द (दुबे जी)

* * *

मध्य यूरोप की समस्याएँ

(२०वें पृष्ठ का शेषांश)

सरकार ने एक ऐसी योजना की है, जिससे हड़ताल आदि का कोई मौक़ा ही नहीं आ सकेगा। इस योजना के अनुसार लाभ का ६० प्रतिशत रेलवे के मज़दूर कर्मचारियों में विभक्त कर दिया जावेगा और शेष सरकार लेगी। ज़ेकोस्लोवेकिया की भाँति युगोस्लोवेकिया की जनता में भी कई जातियाँ सम्मिलित हैं, जिनमें मुख्य हैं सर्वक्रोट और स्लोवन। महासमर के बाद इन जातियों में कई बार पारस्परिक कलह हो चुका है, परन्तु गत एक वर्ष से सब मेलपूर्वक रहने लगी हैं। फिर भी क्रोट लोग अभी पूर्णतया सन्तुष्ट नहीं हुए हैं। इसका कारण यह है कि इनको इटली प्रायः उकसाया करता है। गत फ़रवरी में क्रोट लोगों ने सरकार के विरुद्ध कई जुलूस निकाले और चार स्थानों पर बम फटे।

'भविष्य' के पूर्व-अङ्क में बतलाया जा चुका है कि फ़्रान्स और इटली में घोर पारस्परिक अविश्वास है। जब तीन महान शक्तियों में (ग्रेटब्रिटेन, अमेरिका और जापान) जल-सेना-निरोध के सम्बन्ध में समझौता हुआ था तो आशा की गई थी कि फ़्रान्स और इटली में भी ऐसा समझौता हो जावेगा। इस विषय में बातचीत आरम्भ की गई थी और अङ्गरेज़ परराष्ट्र-मन्त्री ने पेरिस तथा रोम का, इस विषय में दोनों राष्ट्रों को उचित अन्तराष्ट्रीय सलाह देने की ग़रज़ से दौरा भी किया था, पर गत फ़रवरी में यह प्रकट हो गया था कि समझौता नहीं हो सकता और दोनों राष्ट्र पुनः पूर्ववत् धड़ाधड़ सैनिक, जलयान और अन्य शस्त्रास्त्र बनवाने लग गए थे। परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि बातचीत फिर भी जारी रक्खी गई और अङ्गरेज़ी परराष्ट्र-मन्त्री श्रीयुत हेण्डरसन ने इस मामले में विशेष दिलचस्पी के साथ काम किया। अब १ अप्रैल का समाचार है कि फ़्रान्स और इटली में जल-सेना-निरोध के सम्बन्ध में कुछ समझौता अवश्य हो गया है। इङ्गलैण्ड के कुछ पत्रों का तो कहना है कि यह समझौता वास्तव में दो राष्ट्रों का समझौता नहीं है, किन्तु दोनों ओर के परराष्ट्र-मन्त्रि-मण्डल के सदस्यों की एक-दूसरे के प्रति चिकनी-चुपड़ी बातें हैं। इस बात को भ्रान्तिमूलक बतलाने के लिए श्रीयुत एलेक्ज़ेण्डर ने, जो स्वयं श्री० हेण्डरसन के साथ थे, हल नगर में व्याख्यान देते हुए कहा है कि, "यह समझौता अफ़सरों का समझौता नहीं, बल्कि दोनों राष्ट्रों का समझौता है। हमें कोई ऐसी बात नहीं करनी चाहिए, जिससे इसको क्षति पहुँचे और किए-कराए काम पर पानी फिर जावे। हमको आशा है कि यह अस्थायी समझौता शीघ्र ही आगामी फ़रवरी को होने वाली राष्ट्रसङ्घ की बैठक में स्थायी सन्धि के रूप में परिणत हो सकेगा।"

ऐसा जान पड़ता है कि फ़्रान्स के पूर्व मन्त्री श्री० स्टीड, जिनके मन्त्रि-मण्डल को केवल छः सप्ताह के बाद ही त्याग-पत्र देना पड़ा, इटली के साथ समझौता करने के विरुद्ध थे। वर्तमान मन्त्री श्री० लावल की नेक सलाह से यह समझौता हुआ है, यह अनुमान युक्तियुक्त विदित होता है। फिर भी अभी फ़रवरी बहुत दूर है। इस अर्से में क्या होगा, किसको मालूम?

इटली में इस समय मुसोलिनी का अखण्ड राज्य है। उसने सम्राट को नेपाल के राजा की भाँति एक कोने में धर रक्खा है। मुसोलिनी की देशभक्ति, कार्यशक्ति, धी और मति सब अद्भुत हैं, परन्तु लोक-स्वातन्त्र्य का वह कम क़ायल है। उसके विरोधी निर्भीकतापूर्वक अपने विचार प्रकट करने में स्वतन्त्रता का उपयोग नहीं कर सकते। फ़ैसिस्टवाद का गुण-गान करो तब तक तो स्वतन्त्रता है, उससे इधर-उधर डिगे तो राज-विद्रोह। फ़ैसिस्ट-शासन इस बात में चीन के वर्तमान शासन से बहुत मिलता-जुलता है। ऐसी दशा में जो लोग शासन में सुधार या परिवर्तन चाहते हैं, उनको अपने विचारों का गुप्त प्रचार करना पड़ता है। अभी थोड़े दिन हुए, जब आठ विद्वान व्यक्तियों पर सैनिक न्यायालय के सामने इस बात पर अभियोग चलाया गया था कि उन्होंने गुप्त साहित्य के प्रचार द्वारा बलवा करवाने तथा शासन को उलट देने का प्रयत्न किया है। अभियुक्तों में एक वकील, एक प्रोफ़ेसर, एक सम्वाददाता, एक प्रसिद्ध गल्प-लेखक और एक प्रसिद्ध विदुषी उपन्यास-लेखिका थीं। इनमें से तीन को रिहा कर दिया गया और शेष को ३ साल से १९ साल तक के कारावास का दण्ड दिया गया है। मुसोलिनी है तो निरङ्कुश शासक, परन्तु उसने इटली के मस्तक को अन्तर्राष्ट्रीय जगत में ख़ूब ऊँचा किया है। गत जनवरी में संयुक्त राज्य अमेरिका के एक सैनिक अफ़सर मेजर जनरल स्मडले डी बटलर ने यह समाचार प्रकाशित कर दिया था कि एक समय वह मुसोलिनी के साथ इटली में घूम रहा था तो एक लड़की मोटर से कुचल कर मर गई। मुसोलिनी ने मोटर तो ठहराई नहीं, बल्कि यह कहा कि प्रधान-मन्त्री की सैर में यदि एक जान चली भी गई तो कौन बड़ी बात है। जब यह समाचार अमेरिका में फैला तो मुसोलिनी ने अमेरिका सरकार से ज़ोर के साथ इस विषय में जवाब तलब किया, तो अमेरिकन सरकार ने तत्काल स्पष्ट क्षमा-याचना कर ली और मेजर जनरल बटलर पर अभियोग चलाया।

* * *

सेवा-सूत्र*

[अनुवादक—श्री० भक्तदर्शन]

ग़रीबों की सेवा परमात्मा की उपासना है। अपनी भक्ति को जीर्ण-शीर्ण लोगों की सेवा में प्रतिबिम्बित करो।

चिल्लाहट और दिखावट से दूर रहो। निस्स्वार्थ सेवा के छोटे-मोटे कामों से प्रसन्नता प्राप्त करो।

सब प्राणियों के लिए सहानुभूति रक्खो।

सेवा के द्वारा आत्मशुद्धि करो।

दरिद्र नारायण की सेवा करो। तुम्हें तुम्हारा इच्छित पुरस्कार—प्रेम के प्रभु का साक्षात्कार—प्राप्त होगा।

आदर्श के सच्चे सेवकों के बिना कोई भी नगर मरु-भूमि तुल्य है।

सेवा-शक्ति का रहस्य त्याग है।

भावी धर्म सेवा और त्याग का धर्म होगा।

बिना कष्ट उठाए सहानुभूति पैदा नहीं हो सकती। सेवा का अर्थ है औरों के कष्टों को दूर करने के लिए उद्यत होना।

यदि तुम वास्तव में सेवा करना चाहते हो, तो जो कुछ तुम आज कर सकते हो उसे कल पर मत छोड़ो।

परमेश्वर का एक अस्त्र (Instrument) बन जाओ—तुम्हारे अन्दर से एक शक्ति उत्पन्न होगी जो लोगों की सहायता करेगी। प्रभु के चरण-कमलों की सर्वोत्तम भेंट स्वयं अपने आपको चढ़ा देना है। 'समर्पित' जीवन महान शक्तियों का केन्द्र हुआ करता है।

सेवा का पुरस्कार है और अधिक सेवा करने की शक्ति।

सेवा की यह एक कसौटी है—क्या तुम्हारा हृदय शुद्ध होता जा रहा है? क्या तुम उस 'स्वर्गीय केन्द्र' (Divine Centre) के समीप आते जा रहे हो?

यदि तुम एक सच्चा सेवक बनना चाहते हो, तो भाग्य-विधाता परमात्मा पर विश्वास रक्खो।

यदि तुम सेवा के पथ पर अग्रसर होना चाहते हो, तो उन्हें आशीर्वाद दो जो तुम्हें सताते हैं।

शान्ति की भावना में आगे बढ़ो; और इस अभिलाषा को प्रकट करो कि क्या कभी मैं उस 'अदृश्य' (The unknown) का एक शान्त अज्ञात सेवक बन सकूँगा?

उच्च गिरि-शृङ्गों पर मत चढ़ो, वरञ्च ग़रीबों की झोपड़ियों में घुसो और प्रेम-देव की अभ्यर्थना के लिए उनसे एकात्मता प्राप्त करो।

'भाई' का अर्थ है भार-वाहक—यदि तुम सेवा के इच्छुक हो, तो दूसरों का भार हटाओ।

जिसने आत्म-दमन करना नहीं सीखा, उसे सेवा करना नहीं आया।

कठिनाइयों से मत घबड़ाओ। विश्वास रक्खो कि यदि तुम्हारा हृदय पवित्र है तो पृथ्वी, आकाश तथा सब देवगण तुम्हारे सहायक होंगे।

धन्य हैं वे, जो ग़रीबों के आँसू पोंछते हैं तथा ग़रीबों के कष्टों में श्रीकृष्ण की आवाज़, मनुष्यता के उस चिरन्तन प्रेमी की आवाज़ सुनते हैं।

* साधु श्री० टी० एल० वास्वानी की नव-प्रकाशित 'आँसू' (Tears) नामक पुस्तिका से।

* * *

भावी भारतीय स्वराज्य की व्याख्या और उसका परिणाम

[श्री० भोलालाल दास जी, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

यों तो कराची काँङ्ग्रेस कई बातों के लिए विशेषता रखती है, किन्तु उसकी सब से बड़ी विशेषता स्वराज्य की व्याख्या है। जिस स्वराज्य के लिए आज भारत के नर-नारी और बूढ़े-बच्चे, सभी लालायित हो रहे हैं तथा जिसके लिए आज दस-ग्यारह वर्षों से इतना ज़बरदस्त और सर्व-व्यापी आन्दोलन हो रहा है, उसके वास्तविक रूप को अब तक कोई नहीं जान सका था। संक्षेप में स्वराज्य का अर्थ 'Government of the people by the people for the people' अर्थात् "जनता के लिए, जनता द्वारा, जनता का राज्य" समझा जाता था। किन्तु इस मोटे अर्थ का बोध तो छोटे से "स्वराज्य" शब्द से भी हो जाता था। परन्तु स्वराज्य का वास्तविक स्वरूप क्या होगा, इसको कोई भी नहीं जानता था। इसलिए सभी अपने-अपने मत के अनुसार इसका अर्थ लगाया करते थे। ऐसी स्थिति में कराची काँङ्ग्रेस ने इस व्याख्या के द्वारा जनता को अपना ध्येय स्थिर करने में बड़ी मदद दी है। यद्यपि यह व्याख्या भी पूर्ण और अन्तिम नहीं है, फिर भी इसमें स्वराज्य का भावी खाका अच्छी तरह खिंच गया है।

कई गोरे पत्रों और राजनीतिज्ञों ने इस व्याख्या को रूसी सोशलिज़्म की नक़ल बतलाया है, किन्तु यह उनकी भूल है। क्योंकि स्वतन्त्रता की असलियत प्रत्येक देश और समय के लिए एक ही रहती है, इस हिसाब से सोशलिज़्म के सिद्धान्तों का भी इसमें समाविष्ट होना अस्वाभाविक नहीं है, किन्तु इसी कारण उसे सोशलिज़्म नहीं कहा जा सकता। यद्यपि सोशलिस्ट सरकार में स्वतन्त्रता की आजकल पराकाष्ठा देखी जाती है। हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल जी नेहरू, जिनका हाथ इस व्याख्या में सर्वोपरि है, सोशलिस्ट विचारों के पूर्ण समर्थक हैं, तथापि हमें इस व्याख्या में सोशलिज़्म की गन्ध भी नहीं मिलती है। वरन् हमें तो इसके प्रतिकूल, इसमें प्रमुख बातों का निरूपण सोशलिज़्म सिद्धान्तों के विरुद्ध ही नज़र आता है। हम न तो इसमें पूँजीपतियों का विरोध पाते हैं और न ज़मींदारों के विनाश का प्रयत्न। हमें न तो इसमें धर्म का ह्रास दिखाई पड़ता है और न समाज का काया-पलट ही नज़र आता है। ऐसी स्थिति में इसे सोशलिस्ट का अनुकरण बतलाना अर्थ का अनर्थ करना और पक्षपात है। यह उन्हीं लोगों की स्वार्थमयी व्याख्या है, जिनके लिए स्वतन्त्रता का थोड़ा आन्दोलन भी साम्राज्य नष्ट होने के बराबर भयानक है। हम तो यही कहने के लिए बाध्य हैं कि भारतीय नेताओं ने अपनी निजी परिस्थिति के अनुकूल अपना मार्ग स्वतन्त्र रीति से ढूँढ़ निकाला है। वे केवल अपने देश, काल और पात्र के विचार से ही इस व्याख्या पर उपनीत हुए हैं। इस व्याख्या से जहाँ हमारे विरोधियों की तिल्ली चमकेगी, वहाँ इसके उपासकों की अनेक दुर्भावनाएँ भी नष्ट होकर आन्दोलन में ख़ासा ज़ोर पहुँचेगा।

बाहरी दुनिया को इससे हमारे दृढ़ सङ्कल्प का पता अवश्य लगेगा और यह कुछ कम लाभ की बात नहीं है। बहुत दिनों तक हमारे भाग्य-विधाताओं ने संसार में इस बात का डङ्का पीट रक्खा था कि भारतवासी अपनी विविध अनेकताओं के कारण कोई सम्मिलित माँग उपस्थित ही नहीं कर सकते। किन्तु नेहरू-रिपोर्ट ने उसका मुँहतोड़ उत्तर देकर संसार को बतला दिया था कि भारतवर्ष में न तो राजनीतिज्ञों का अभाव है और न एकता का ही। फिर भी उसका मसविदा अधिक से अधिक औपनिवेशिक स्वराज्य के उद्देश्य से ही लिखा गया था और उसमें ब्रिटिश सम्बन्ध को अनुच्छेद्य मान कर ही कुल बातों का समावेश किया गया था, जिसके कारण हम अन्यान्य राष्ट्रों के समकक्ष होने की योग्यता नहीं रखते थे और न उनकी सहानुभूति के योग्य ही हो सकते थे। क्योंकि वह एक प्रकार से 'मियाँ-बीबी' के झगड़े का फ़ैसला था, जिसमें दूसरा कोई राष्ट्र दख़ल नहीं दे सकता था। किन्तु जब सरकार ने नेहरू रिपोर्ट की माँगें पूरी नहीं कीं और लाहौर काँङ्ग्रेस ने स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी तो हमारी यथार्थ स्थिति समस्त संसार के समक्ष आई और अब वह इङ्गलैण्ड का घराऊ नहीं रहा। ऐसी स्थिति में हमारे लिए अनिवार्य था कि हम अपने ध्येय को संसार के समक्ष और भी प्रत्यक्ष रूप से रक्खें। इस दृष्टि से कराची काँङ्ग्रेस ने इस विषय में आशातीत सफलता प्राप्त की है। अब दुनियाँ आँखें खोल कर देख सकती है कि भारत की ३५ करोड़ जनता किस प्रकार की स्वतन्त्रता चाहती है और इङ्गलैण्ड के साथ जो उसका अहिंसात्मक युद्ध चल रहा है, उसका उद्देश्य क्या है। संसार की पञ्चमांश जनता का हिताहित अब संसार के सभी देश भली-भाँति सोच सकते हैं। कोई भी विरोधी विज्ञापनबाज़ी अब इस स्पष्ट व्याख्या के आगे नहीं टिक सकती है।

इस बाहरी उपकार के अलावा देश का जो भीतरी उपकार इससे हुआ है, वह तो और भी अच्छा है। न मालूम कितनी मिथ्या धारणाएँ इस अभागे और मूर्ख देश में स्वराज्य के विरुद्ध फैली हुई हैं। सब से बड़ी आपत्ति तो उन मुसलमानों की है, जो अपने को पहले मुसलमान और पीछे हिन्दुस्तानी ख़्याल करते हैं। यदि मुसलमानों में पहिले हिन्दुस्तानी और पीछे मुसलमान होने का भाव उत्पन्न हो जाय, जैसा कि हिन्दुओं में पहले हिन्दुस्तानी और पीछे हिन्दू होने का भाव है, तो यह आपत्ति स्वयं मिट जायगी। आज जो मुसलमान राष्ट्रीय विचार के हैं, उनकी बुद्धि में ऐसी कोई आपत्ति नहीं है, तो भी साम्प्रदायिक मुसलमान नेताओं का समुदाय दुर्भाग्यवश, इस दुर्भावना में पड़ा हुआ है कि स्वराज्य होने से मुसलमानों की स्थिति शोचनीय हो जायगी—उनके धर्म, सभ्यता और भाषा का नाश हो जायगा, इत्यादि। इस विचार से उनका सिद्धान्त यह है कि पहले हिन्दू-मुसलमानों में समझौता हो ले, पीछे कोई स्वराज्य स्थापित हो। राष्ट्रीय विचारों के मुसलमानों और साम्प्रदायिक विचार के मुसलमानों में इस समझौते के सम्बन्ध में गहरा मतभेद है। हम स्पष्ट स्वीकार करते हैं कि साम्प्रदायिक विचार वाले मुसलमानों का सन्तोष इस व्याख्या से तो क्या, किसी भी उपाय से नहीं हो सकता है। उनके सन्तोष का उपाय केवल यही है कि चाहे जैसे हो, मुसलमानों को कुल अधिकार दे दिया जाय, किन्तु इतना अवश्य है कि कराची काँङ्ग्रेस की इस व्याख्या से राष्ट्रीय विचार के मुसलमानों को पूर्ण सन्तोष हुआ है। क्योंकि इसमें न केवल मुसलमानी धर्म, सभ्यता, भाषा और आचार-विचार की पूर्ण रक्षा की गई है, प्रत्युत सभी अल्प-संख्यक समाजों की वैयक्तिकता स्थिर रक्खी गई है। यद्यपि काँङ्ग्रेस इससे पहले से भी मुसलमानों की सभ्यता आदि को अक्षुण्ण रखने की प्रतिज्ञा कर चुकी है, और नेहरू-रिपोर्ट में भी उसका पूर्ण विधान किया गया है, तथापि इस व्याख्या से यह स्पष्ट हो गया है, कि किसी भी दशा में इनकी अवहेलना नहीं हो सकती। सच पूछिए तो अब साम्प्रदायिक नेताओं को भी आपत्ति करने का कोई स्थान नहीं रहा। अब वे समझें या न समझें, परन्तु काँङ्ग्रेस ने अपने कर्त्तव्य का पालन कर दिया है, और उसीके परिणाम-स्वरूप आज राष्ट्रीय विचार के मुसलमान नेता काँङ्ग्रेस का साथ दे रहे हैं तथा साम्प्रदायिक समुदाय से अपना मतभेद प्रगट करते हुए सम्मिलित निर्वाचन का समर्थन कर रहे हैं।

दूसरी महान आपत्ति उन हिन्दू हठधर्मियों की थी, जो स्वराज्य की स्थापना से अपने धर्म की हानि समझते थे। उनका ख़याल था कि स्वराज्य होने से जात-पाँत, धर्म और आचार सब एक हो जायँगे। यद्यपि

आकांक्षा

[श्री० देवीप्रसाद (कुसुमाकर) बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

निर्दयता करती प्रहार हो,
निर्भय होकर दीनों पर।
दर्प चढ़ा हो धाक जमाने,
फ़ौलादी सङ्गीनों पर।
दीन निहत्थे लोगों पर भी,
गोले जहाँ बरसते हों।
अपने स्वत्व जहाँ पाने को,
व्याकुल लोग तरसते हों।
प्रकृति-धनी हो देश किन्तु वह,
तरस रहा हो दानों को।
सहना हो दिन-रात दम्भ के,
घृणायुक्त अपमानों को।
स्वावलम्ब की भक्ति जहाँ हो,
इज़्ज़त की लेने वाली।
मातृ-भूमि की सेवा होवे,
जहाँ जेल देने वाली।
निर्भय चैन जहाँ करना हो,
मूर्तिमान होकर दूषण।
जहाँ स्वाभिमानी लोगों की,
हथकड़ियाँ होवें भूषण।
आत्म-शक्ति देकर प्रभु! मुझको,
उसी देश में उपजाना।
देश-भक्ति का बाना तुम हो,
अपने हाथों पहनाना॥

* * *

राष्ट्र की उन्नति के लिए यह बात आवश्यक है, तथापि कराची कॉङ्ग्रेस ने ऐसी कोई व्याख्या नहीं की है जिससे यह समझा जावे कि स्वराज्य की स्थापना से जात-पाँत या धर्म आदि के नाश का कोई सम्बन्ध हो। यह तो संसार का नियम है कि पुरानी चीज़ें बेकार होकर अपने आप ही मिट जाती हैं तथा अपने भग्नावशेष से नवीन और लाभदायी वस्तुओं को उत्पन्न करती हैं। आज वर्तमान सनातनधर्म की भी वही दशा है। इस रूप में अब वह किसी प्रकार नहीं टिक सकता। समय उसको स्वयं परिवर्तित कर देगा और जो धर्म शुद्ध तथा सनातन है, वह स्वयं क़ायम हो जायगा। यह निश्चय है कि सनातनधर्म की असलियत को कोई नहीं मिटा सकता। किन्तु समय-समय पर उसमें जो बहुत से अतात्विक और बेकार ढोंग पैदा होते रहते हैं, उनका समय ख़ुद नाश करके धर्म को पूर्व स्थिति पर लाता रहता है। इसलिए कराची-कॉङ्ग्रेस ने राष्ट्र को धर्म से निष्पक्ष रख कर बहुत अच्छा काम किया है। उसने प्रत्येक नागरिक को धर्मादि के विषय में पूरी वैयक्तिक और सामाजिक स्वतन्त्रता दी है तथा यह निश्चय किया है कि स्वराज्य सरकार किसी भी धर्म की पक्षपातिनी नहीं होगी। सनातनधर्म के हिमायतियों को यह भय था कि स्वराज्य होने से वर्णव्यवस्था नष्ट हो जायगी तथा रूस के समान-धर्म को देश-निकाला दिया जायगा। परन्तु अब इस शङ्का का कोई स्थान नहीं है। प्रत्येक हिन्दू या मुसलमान, सिक्ख या क्रिस्तान अपने-अपने धर्म का पालन करने या न करने में स्वतन्त्र है। जात-पाँत के ढकोसलों को ही सनातनधर्म मानने वाले व्यक्ति स्वतन्त्रतापूर्वक इसकी जड़ को और भी मज़बूत बना सकते हैं। राष्ट्र उन्हें बाधा नहीं देगा। किन्तु विश्वास ऐसा किया जाता है, कि लोकमत इन्हें स्वयं नष्ट कर देगा। ख़ैर, कुछ भी हो, अब किसी को धर्म-नाश करने का कलङ्क राष्ट्र के मत्थे मढ़ने की गुञ्जाइश नहीं रही।

दूसरी बड़ी आपत्ति देश के अन्दर ज़मींदारों और पूँजीपतियों की थी। उनको भी भय था कि भावी स्वराज्य गवर्नमेण्ट में हमारी सत्ता का नाश हो जायगा, परन्तु इस व्याख्या ने इनकी शङ्काओं को भी निर्मूल कर दिया है। स्वराज्य सरकार न तो ज़मींदारों की ज़मींदारी छीनेगी और न पूँजीपतियों के कल-कारख़ानों को ही राष्ट्रीय बना लेगी। हाँ, कृषक और कर्मियों के हितार्थ वह जहाँ मालगुज़ारी का दर घटा देगी वहाँ कारख़ानों में काम करने वाले कर्मियों को पूरा वेतन तथा आराम दिलाने की व्यवस्था करेगी। इस विधान से एक ओर जहाँ भारतवर्ष के विशाल कृषक-समुदाय को अपार आनन्द हुआ वहाँ सभी श्रमजीवियों के स्वत्व-रक्षा का प्रयास भी, सफल हुआ। अलबत्ता उपज के ऊपर कृषकों से एक प्रकार के कर को उगाहने का प्रस्ताव किया गया है, किन्तु इसमें कृषकों के भयभीत होने की कोई बात नहीं है। क्योंकि उनको आज अगणित अप्रत्यक्ष करों का भार वहन करना मुश्किल हो रहा है—यदि उनमें कमी की जावे—जैसा कि कॉङ्ग्रेस का निश्चय है, और सरकार अपना ख़र्च कम करके प्रजा को उनसे युक्त कर दे तो यह प्रत्यक्ष कर प्रजा के लिए महान लाभदायी होगा। दूसरी बात यह है कि साथ ही साथ मालगुज़ारी और लगान भी कम करने की व्यवस्था की गई है। अतः कुल मिला कर प्रजा को भारी लाभ है। वस्तुतः नेताओं ने इस बात का पूर्ण विचार रक्खा है कि भावी स्वराज्य से साधारण प्रजा का ही विशेष उपकार हो और वह वस्तुतः जनता का स्वराज्य कहा जा सके। हम इस व्याख्या में उसकी पूर्ण व्यवस्था देखते हैं।

इस प्रकार इस व्याख्या ने लगभग सभी आपत्तियों का उत्तर दिया है। किन्तु अब अछूतों की ओर से यह आपत्ति की जा सकती है कि जब कॉङ्ग्रेस ने जात-पाँत के बखेड़ों को यों ही छोड़ दिया है, तब तो हम लोगों की सामाजिक स्थिति ज्यों की त्यों ही गिरी रहेगी। किन्तु यह आपत्ति भी क्षणिक है। क्योंकि इस व्याख्या ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि प्राइमरी शिक्षा अनिवार्य कर दी जावेगी और सरकारी स्कूल, कुएँ, सड़कें नौकरियों आदि का मार्ग सब के लिए एक-सा खुला रहेगा। किसी व्यक्ति के जात-पाँत या धर्म के कारण उसकी योग्यता में कोई फ़र्क़ नहीं आने पावेगा, सब को अपनी उन्नति करने का पूर्ण अवसर प्राप्त होगा और यदि उनमें स्पृहा होगी तो हर्गिज़ वे गिरे हुए नहीं रहेंगे। दूसरी बात यह है कि देश जैसे-जैसे अपने उद्योग-धन्धों की वृद्धि करता जायगा, वैसे ही वैसे श्रमजीवियों की स्थिति भी अच्छी होती जायगी और उनके साथ-साथ अछूतों की भी उन्नति होती जायगी। इसके सिवा लोकमत इन ढकोसलों के विरुद्ध जैसे-जैसे दृढ़ होता जायगा वैसे-वैसे अछूतपन का भेदभाव भी नष्ट होता ही जायगा और इस शङ्का का कोई स्थान नहीं रहेगा!

एक और बड़ा बखेड़ा जो इस व्याख्या ने तय किया है वह यह है, कि भारतीय स्त्रियों को पुरुषों के साथ वह लड़ाई लड़ने की ज़रूरत नहीं रही, जिसके लिए इङ्गलैण्ड आदि देशों की स्त्रियों को वर्षों परेशानी उठानी पड़ी थी। इसने स्पष्ट रूप से बतलाया है कि सरकारी नौकरी या वोट आदि में स्त्री-पुरुष का भेद नहीं रक्खा जायगा। मताधिकार का प्रश्न भारतीय नेताओं ने पहले से ही स्त्रियों के पक्ष में स्थिर किया था, किन्तु यह उनकी उदारता और भावी हानि-लाभ के विचारों पर निर्भर था। गत आन्दोलन में भारतीय ललनाओं ने इसका पूर्ण मूल्य चुका दिया है, अतः अब वे इसकी यथार्थ अधिकारिणी भी हैं। थोड़ी सी सङ्कीर्णता बड़ा-बड़ा दुष्परिणाम कालान्तर में उपस्थित कर देती है और यदि भारतीय पुरुष-समाज स्त्रियों के इस उचित अधिकार को इस समय स्वीकार नहीं करता तो कौन जानता था यहाँ भी कुछ दिनों में रूस और अमेरिका का दृश्य उपस्थित होता। दुर्भाग्यवश स्त्री-समाज में बहुतों की यह धारणा है कि उन देशों की स्त्रियाँ सर्वथा अच्छी दशा में हैं, किन्तु हमारे समाज का सङ्गठन और विशेषतः हमारे घरों का दायित्व जिस ढङ्ग से निर्मित हुआ है, वह हमारी सभ्यता का ख़ासा परिणाम है। उसको बिल्कुल उलट देना अपने अस्तित्व को खो देना होगा। अतः उसकी त्रुटि मात्र की पूर्ति कर देना मानो सोने में सुगन्ध भर देना है।

यह तो हुआ देश के बाहरी और भीतरी प्रभावों का संक्षिप्त चित्र, किन्तु इस व्याख्या से देश की मौजूदा सरकार पर भी काफ़ी प्रभाव पड़ा है। लाहौर-कॉङ्ग्रेस ने पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास किया है, जिसका अर्थ साम्राज्य से बाहर जाने का भी है। सरकार को अब पूर्ण अवसर है कि वह भारत को इस प्रकार का स्वराज्य देकर साम्राज्य के अन्दर रक्खे या उसकी माँग को इधर-उधर करके उसे साम्राज्य से वहिर्गत हो जाने के लिए बाध्य कर दे। इसमें अब शक नहीं है कि गाँधी-इर्विन समझौते ने यदि भारत में पूर्ण शान्ति स्थापित नहीं की तो एक ज़बर्दस्त आन्दोलन का सूत्रपात होगा और भारत पूर्ण स्वतन्त्र होकर ही चैन लेगा।

* * *

साहित्य का सपूत

[श्री० जो० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—२; दृश्य—२

साहित्यानन्द के मकान का पिछवाड़ा

(संसारीनाथ साहित्यानन्द के मकान के पिछवाड़े की दीवाल फाँद कर बदहवास निकलता है।)

[नोट—दीवाल पर से कूदने का इन्तज़ाम खिसकने वाले बग़ली पर्दे (Sliding Wing) में होना चाहिए, वरना पर्दे की तरतीब ठीक नहीं बैठेगी, क्योंकि इसके पहले के दृश्य में मेज़-कुर्सियाँ हैं, जिसके आगे पट-परिवर्तन के लिए पर्दा गिराना ज़रूरी है।]

संसारी—(घबड़ा कर भागता हुआ) बाप रे बाप ! यह मर्दूद यहाँ भी पहुँच गया।

(संसारीनाथ घूम-घूम कर पीछे देखता हुआ भागता जाता है। सामने से एकाएक जदुनाथ आ पड़ता है और उससे टकरा जाता है।)

जदुनाथ—संसारीनाथ ! अरे !!!

संसारी—हाय ! क्या अब इधर से भी पहुँच गए ?

जदुनाथ—कौन, संसारीनाथ ?

संसारी—तुम हो ? मैं समझा साहित्यानन्द।

जदुनाथ—वाह भई ! इतने दिनों के बाद मिले भी तो अन्धे होकर। क्या प्रेम ने तुम्हारी आँखें भी छीन लीं या यह तुम्हारी लेखनी की करामात है ? क्योंकि इन दिनों तुम लेख भी सुना, बड़े ज़ोरों से लिखते हो ? मगर इतने बौखलाए हुए क्यों हो ?

संसारी—कुछ न पूछो। बेमौत मर रहा हूँ। तक़दीर से लड़ रहा हूँ। (पीछे ताक कर) मगर कहीं वह यहाँ भी न आ जाए।

यदुनाथ—अरे क्यों ! आदमी हो या घनचक्कर ? इधर-उधर क्या देख रहे हो ?

संसारी—आह ! कभी आदमी ज़रूर था, मगर जब से प्रेम के चक्कर में पड़ा तब से सचमुच घनचक्कर बन गया।

जदुनाथ—फिर लगे वाही-तबाही बकने ? क्या हुआ क्या ? कुछ कहो तो सही !

संसारी—पूछ कर क्या करोगे ? क्या अब भी तुम्हारा पेट नहीं भरा ? अब तो दर्शनों तक के लिए तरसता हूँ। रातो-दिन रो-रोकर मरता हूँ, तुम्हीं लोगों की बदौलत। तुम्हारी ही सलाह में पड़ कर चपला के साथ शादी करने का प्रस्ताव साहित्यानन्द से उस दिन कर बैठा था, जिसका नतीजा यह हुआ कि अब उनके घर में मेरी पैठ तक नहीं होती। दूर ही से मुझे देख कर डण्डा लिए दौड़ते हैं। आज महीनों तड़पने के बाद जब नहीं सब्र कर सका तो बड़ी हिम्मत करके लुक-छिप कर उनके यहाँ गया।

जदुनाथ—अच्छा-अच्छा, तब क्या हुआ ? बातचीत हुई ?

संसारी—आह ! बातचीत की कहाँ नौबत आई ? मैं चपला के पास पहुँच भी न सका था कि बीच ही में वह फट पड़े।

जदुनाथ—वह कौन ?

संसारी—वही साहित्यानन्द और कौन ? वह मियाँ-बीबी दोनों बैठक से लड़ते हुए निकले। मुझे छिपने का कहीं मौक़ा न मिला तो झट पाख़ाने में घुस गया।

जदुनाथ—राम ! राम ! तुम्हारी अक़्ल बिल्कुल ही मारी गई ? जब तुम उससे इतना डरते हो तब उसके यहाँ गए क्यों ? ख़ैर कहो, उसके बाद क्या हुआ ?

संसारी—हुआ क्या ? बीबी की फटकारों का जवाब जब साहित्यानन्द को कुछ न सूझा तो अपनी जान चुराने के लिए उन्होंने भी लोटा लेकर पाख़ाने ही की शरण ली।

जदुनाथ—(एकाएक हँस कर) वाह ! वाह ! आहाहाहा ! तब तो ससुर-दामाद की अच्छी मुठभेड़ हुई होगी !

संसारी—होती तो। मगर मैंने इसकी नौबत ही नहीं आने दी। झट उन्हीं के कन्धे पर लात रख कर दीवाल फाँद गया और वैसे ही तुम मिले।

जदुनाथ—(बड़े ज़ोरों से हँसता हुआ) आहाहाहा ! आहाहाहा ! उफ़ ! पेट में बल पड़ गए। यह तो सोने में सुहागा हुआ। उस बेचारे के कन्धे तुम्हें बड़ी दोआएँ देते होंगे। अब वह ज़रूर तुम्हें अपनी लड़की ब्याह देगा।

संसारी—क्यों नहीं ? पावें तो मुझे कच्चा चबा जाएँ। तभी तो घूम-घूम कर देख रहा हूँ, कहीं आते न हों।

जदुनाथ—तुमने काम ही ऐसा लाजवाब किया है। अब भी वह तुमसे ख़फ़ा न हों, तो ताज्जुब ही है।

संसारी—उनकी ख़फ़गी का हाल न कहो। अगर उन्हें कम से कम यही मालूम हो जाए कि उनके अख़बार में श्रीमती तिलोत्तमा देवी के नाम से लेख सब मेरे ही लिखे हुए होते हैं, तो वह अपना सारा अख़बार का अख़बार ही जला दें।

जदुनाथ—क्या ? क्या ? क्या ? तुम्हीं तिलोत्तमा देवी हो ? तभी मुझे तुम्हारे नाम से किसी अख़बार में भी लेख नहीं दिखाई पड़ा। हालाँकि जब से सुना कि तुम अब लेख भी लिखने लगे हो, उसी वक़्त से मैं तुम्हारा लेख अख़बारों में ढूँढ़ता हूँ।

(रमाकान्त का आना)

रमाकान्त—वाह भाई संसारीनाथ ! जब तुमने साहित्यानन्द के पिछवाड़े बसेरा डाल रक्खा है तब भला तुम घर पर कैसे मिल सकते थे ? एक तो महीनों के बाद आज दौरे पर से लौटा तो सीधे तुम्हारे यहाँ लपका। जब नहीं मिले और (जदुनाथ की तरफ़ इशारा करके) इनसे भी पूछने पर तुम्हारा कुछ पता न चला तो मैं समझ गया कि हज़रत अपनी 'प्रेमगली' का चक्कर लगा रहे होंगे। आख़िर मिले यहीं। कहो कैसे रहे भाई ?

जदुनाथ—अजी हाल-चाल पीछे पूछना, पहिले यह तो सुन लो। आप ही हैं श्रीमती तिलोत्तमा देवी।

रमाकान्त—सचमुच ? वाह ! वाह ! अरे ! भई तुम्हें लेख लिखने का शौक़ कैसे चर्रा उठा !

संसारी—जब कभी दिल पर चोट लगेगी तो इसका भेद मालूम हो जाएगा।

जदुनाथ—सच कहते हो उस्ताद। मान गया। बिना चोट खाए भावों का ठीक-ठीक ज्ञान नहीं होता। और बिना इस ज्ञान के कोई लेखक लेखक नहीं हो सकता और न कवि कवि। जब दिल पर चोट लगती है और भाव तिलमिला उठते हैं तब उन्हें बिना उगले रहा भी नहीं जाता।

संसारी—उफ़ ! ग़ज़ब करते हो भाई जदुनाथ। तुमसे असलियत छिप नहीं सकती।

रमाकान्त—मगर हमारे यहाँ की जीवनियों में यह बातें देखने में नहीं आतीं।

जदुनाथ—कैसे आएँ, जीवनी जीवनी हो तब तो ? यहाँ तो जीवनी के नाम से ख़ुशामद-गाथा लिखी जाती है—बड़े उच्च-कुल में उत्पन्न हुए। उच्च शिक्षा पाई। परीक्षा में प्रथम होते थे। बड़े भले मानुष थे। डेढ़ सौ किताबें लिखीं। वग़ैरह-वग़ैरह। पूछिए, भला इन बातों से किसी को क्या मतलब या दिलचस्पी ? दुनिया में उनके ऐसे करोड़ों उच्च शिक्षा वाले पड़े हैं। इसीसे यहाँ जीवनियों का कुछ भी महत्व नहीं है।

रमाकान्त—(हँस कर) तब जीवनियों में क्या होना चाहिए लेकचराधिराज ?

जदुनाथ—हँसने की बात नहीं है। किसी की जीवनी हमेशा किसी न किसी गुण ही के लिए लिखी जाती है। इसलिए इसमें उन घटनाओं और परिस्थितियों की अच्छी छान-बीन होनी चाहिए, जिनके द्वारा उस गुण की उपज, वृद्धि, परिवर्तन इत्यादि हुए हैं, ताकि दुनिया उससे सबक़ ले। विदेशी जीवनी-लेखक तो इन बातों के पीछे मर मिटते हैं, इनके रहन-सहन, आचार-विचार निजी पत्रों तक में ढूँढ़ते हैं, देखो Boswell ने Cromwel की जीवनी के लिए क्या नहीं किया। तब जाकर वह जीवनियाँ साहित्य का अङ्ग बनाती हैं।

संसारी—वाह भाई जदुनाथ, तुम्हारी बातों का अगर संग्रह किया जाए तो साहित्य-सुधार पर बड़ी अच्छी पुस्तक बन जाए।

जदुनाथ—तुम क्यों न कहोगे ऐसा ? लेखक हो न ?

रमाकान्त—हाँ, यह तो मैं भूल ही गया। हाँ भई संसारीनाथ, तुम्हें उपनाम ही रखना था तो कोई मर्दाना नाम रखते ? ज़नाना नाम क्यों रक्खा ? क्यों, सखी-भाव का कुछ ज़ोर तो नहीं है ?

संसारी—राम कहो। मर्द का चोला पाकर मुझे औरत बनना पसन्द नहीं। कौन ज़नख़ों की तरह 'अय बहिनी, अय दीदी' कह कर अपनी औक़ात ख़राब करे और दूसरों से अपनी ही नहीं, बल्कि अपने धर्म की भी हँसी करावे ? अगर ईश्वर मुझे इस रूप में नहीं मिल सकते तो उन्होंने मुझे यह चोला दिया क्यों ? ऐसे ईश्वर को मेरा दूर ही से प्रणाम है, जो असली कौन कहे, बनावटी औरतों तक पर भी रीझ जाते हों ?

रमाकान्त—तब तुमने तिलोत्तमा का नाम क्यों रक्खा ?

जदुनाथ—कहते क्यों नहीं, कि सम्पादकों की आँखों में धूल झोंकने के लिए।

संसारी—हाँ भई, यही बात है। जब देखा कि नए लेखकों की कहीं पैठ नहीं होती और सब जगह से मेरे लेख वापस आने लगे, तब मैंने यह चाल खेली और तारीफ़ है कि मेरे इतने लेख छप जाने के बाद भी अगर अपने नाम से कोई लेख भेजूँ तो वह अब भी उसी तरह वापस आ जायगा।

जदुनाथ—क्यों नहीं ? बड़े सम्पादकों के पास नए लेखकों के गुण और दोष परखने या सलाह बताने के लिए समय नहीं और टुटपुँजियों को तमीज़ नहीं। और तुमने भी तो अपने लेखों के लिए साहित्यानन्द का अख़बार चुना। क्योंकि तिलोत्तमा के लेख उसीमें मैं ज़्यादातर देखता हूँ। ऐसे ऐरे-ग़ैरे पचकल्यानियों से इसके सिवाय उम्मीद ही क्या हो सकती है, जो सिर्फ़ दूसरों ही के पद-चिन्हों पर क़दम रखना जानते हैं ?

संसारी—क्या करता ? सब से पहिले उन्हीं पर मेरा चकमा चल गया। क्योंकि स्त्रियों के लेखों के लिए ख़ास तौर से उन्होंने विज्ञापन दे रक्खा था।

जदुनाथ—हाँ, वह जानता होगा कि नए लेखकों के बदले नई लेखिकाओं के लेख चुनने में अपनी योग्यता की आबरू बहुत कुछ बची रह सकती है। क्योंकि इनके लेखों में अगर दोष भी होंगे तो पाठक समझेंगे कि सम्पादक जी उनका उत्साह बढ़ा रहे हैं।

संसारी—और दूसरे असलियत तो यह थी कि मुझे अपनी चपला को अपना हृदय चीर कर दिखाना मञ्ज़ूर था। इसीलिए मैंने उसके घर का अख़बार चुना, ताकि वह उसे पढ़ने के लिए आसानी से पा सके। सच पूछो तो उसीके लिए मैं लेखक बना और उसीके लिए मैं लिखता भी हूँ।

रमाकान्त—उसे क्या मालूम कि तुम्हीं तिलोत्तमा हो ?

संसारी—उसे न मालूम होगा तो फिर किसे मालूम होगा ? सौ-सौ ख़ुशामदें करके टेसुआ से यह भेद उसके पास मैंने पहिले ही कहला भेजा था।

रमाकान्त—यह कहो। तुमने टेसुआ को अपनी तरफ़ कर लिया।

संसारी—मगर इससे क्या ? साहित्यानन्द तो अपनी तरफ़ नहीं हैं। एक तो योंही नाराज़ थे, अब और जामे से बाहर हो गए। यही तो रोना है।

जदुनाथ—(सोचते-सोचते चौंक कर) भला तिलोत्तमा के लेखों की माँग के लिए तुम्हारे साहित्यानन्द भी कभी पत्र भेजते हैं ?

संसारी—बराबर। पहिला लेख पहुँचते ही उन्होंने तो ख़तों का ताँता बाँध दिया है।

जदुनाथ—बस अब मार ली बाज़ी। दोस्त अब मत घबड़ाओ। चपला की शादी तुमसे करा कर छोड़ूँगा। इसके लिए मुझे एक चाल सूझ गई। अब उसके जितने भी ख़त तिलोत्तमा के नाम से आएँ उनके जवाब मुझसे लिखवाया करो। और तुम अपने लेखों की भाषा जितनी भी कठिन बना सको, बनाओ। हालाँकि ऐसा करना अपनी भाषा की जड़ खोदना है। जिसे सरल लिखने की योग्यता नहीं होती, वही इसे अपनी ख्याति झाड़ने के लिए अपनाते हैं। मगर ख़ैर, यहाँ तो उल्लू को उल्लू बना कर अपना काम निकालना है।

संसारी—तिलोत्तमा के नाम से तो उनका एक आज ही ख़त आया है, जिसका जवाब अभी तक मैंने नहीं दिया है।

जदुनाथ—लाओ उसे हमें दो।

संसारी—यहाँ कहाँ ? घर पर है।

जदुनाथ—चलो फिर वहीं चलो। इसी दम से मैं अपनी कार्रवाई शुरू करता हूँ।

रमाकान्त—मगर यह क्या कहा कि कम योग्यता वाले कठिन भाषा अपनाते हैं। भला यह कैसे मुमकिन हो सकता है ?

जदुनाथ—सरल लिखना कठिन है और कठिन लिखना आसान, लिख कर देखो तब पता चलेगा। भाषा की शान विचारों में है, विचारों का प्रभाव शैली में है और शैली की जान सरलता में होती है।

(बातें करते-करते सब का जाना और चपला का अपने मकान की दीवाल पर दिखाई पड़ना।)

चपला—(अपनी दीवाल से झाँकती हुई) अरे ! यहाँ तो कोई नहीं। मगर इधर ही से उनकी बातचीत की भनक सुनाई पड़ रही थी। हा ! मैं भी कैसी अभागिनी हूँ कि आज वह इतने दिनों के बाद घर में आए भी तो......(एक तरफ़ देख कर) अरे ! पिता जी आ रहे हैं। और हाथों में क्या लिए हैं ?

(दीवाल पर से सर हटा लेती है ; और बीच-बीच में थोड़ा-थोड़ा झाँकती है।)

साहित्यानन्द—(बहुत से कमानीदार चूहेदानी लिए हुए) साला मेरे ही कन्धे पर चढ़ कर सर से दीवाल फाँद गया ; मानो मैं मनुष्य नहीं, सीढ़ी था। ऐसी दुष्टता ? उसकी ऐसी-तैसी करूँ। साला अब पिछवाड़े के मार्ग से आता-जाता—उहुँक आगमन और प्रस्थान करता है। इसी हेतु मैं चूहों को फाँसी देने वाली इतनी कमानीदार चूहेदानियाँ तुरन्त हाट से क्रय कर लाया। अब इन्हें उसके मार्ग में बिछा दूँगा। बस जैसे ही वह यहाँ आएगा और उसका पैर—उहुँक पाद किसी न किसी चूहेदानी पर पड़ा, तहाँ उसकी कमानी कचाक से लगेगी और उसका अङ्गुष्ठ खटाक से कट कर पृथक हो जायगा, तब साले को मेरे कन्धे पर आरूढ़ होने का आनन्द मिलेगा ? (दाँत किटकिटा कर) क्या बताऊँ, जब वह दीवाल—उहुँक—भीत फाँद गया तब जाना कि वह संसारीनाथ है, नहीं तो मैं अपने कन्धों को ऐसा हिला देता कि साला धमाक से नीचे गिरता और तड़ाक से मैं उस पर चढ़ बैठता—उहुँक—आरूढ़ बैठता। अरे बाप रे बाप ! हाय ! हाय ! मर गया ! इस

हिलने-डुलने में एक चूहेदानी की कमानी मेरे ही हाथ में लग गई। हाय ! हाय ! उँगलियाँ आधी-आधी कट गईं।

(बैठ कर रोता और अपने हाथ से चूहेदानी छुड़ाता है।)

साहित्यानन्द—(कराहता और अपना ख़ून-भरा हाथ झटकता हुआ) अब जाकर उसके मार्ग में इन चूहेदानियों को बिछा दूँ। नहीं फिर किसी की कमानी जो छटक गई तो यह हाथ भी खण्डित हो जाएगा।

(चूहेदानियाँ लेकर एक तरफ़ जाता है और चपला दीवाल पर अपना सर निकालती है।)

चपला—हाय ! यह जानमारू कार्रवाई क्या मेरे संसारीनाथ के लिए हो रही है ? नहीं-नहीं, प्राण दे दूँगी, मगर उनका एक बाल भी बाँका न होने दूँगी। कहीं वह इधर ही से आ न पड़ें। अभी-अभी उनकी आवाज़ इधर ही सुनाई भी पड़ी थी। हाय ! क्या करूँ ?

(साहित्यानन्द का आना)

साहित्यानन्द—बिछा दिया। मार्ग भर में बिछा दिया। परन्तु अब भी सन्तोष नहीं हुआ। अच्छा अब जाकर एक युक्ति और करता हूँ।

(जाता है।)

(चपला दीवाल पर से एक रस्सी लटकाती है और उसके सहारे उतरती है।)

चपला—अब जल्दी से जाकर मैं इन जानमारू चूहेदानियों को रास्ते से हटा कर अलग पेड़ों के पास फेंक दूँ। जहाँ कोई जाता न हो। नहीं तो कौन ठीक, वह इधर ही आ पड़ें और तब हाय !......

(उसी तरफ़ जाती है, जिधर साहित्यानन्द चूहेदानियाँ लगा आया था।)

(लठैतमल और डण्डेबाज़ का दूसरी तरफ़ से आना।)

लठैतमल—वाह-वाह ! हमका हीयाँ पठै के अपने गायब हो गए ? कहो हो डण्डेबाज वै केहर गए केहर ?

डण्डेबाज़—वही तो हम भी देख रहे हैं लठैतमल। चलो उनको बुला लावें। हम लोग ऐसी कच्ची गोलियाँ नहीं खेलते।

(दोनों फिर लौट जाते हैं)

(चपला का आना)

चपला—सब हटा कर पेड़ों के पास कर आई। अब जाकर जी में जी आया।

(रस्सा के सहारे दीवाल पर चढ़ जाती है)

(साहित्यानन्द, लठैतमल और डण्डेबाज़ का आना)

साहित्यानन्द—अरे ! हमारे यहाँ उपस्थित रहने की क्या आवश्यकता ? कौन सा महाकार्य है ? तुम लोग जाकर पेड़ों की आड़ में गुप्त रहो। जब उस मार्ग पर किसी को चिल्लाते हुए सुनना, वैसे ही दौड़ कर उसे मारना आरम्भ कर देना। परन्तु सावधान, तुम लोग मार्ग पर नहीं, वरन् किनारे हट कर चलना !

डण्डेबाज़—यह सब सही है, मगर जब आप यहाँ मौजूद रहें तभी हम लोग यह काम करेंगे।

साहित्यानन्द—अच्छा यही सही। जाओ उस पेड़ की आड़ कर गुप्त हो जाओ। मार्ग से हट कर चलो। हाँ, अब ठीक है।

(दोनों का चूहेदानियों की ओर जाना)

साहित्यानन्द—अब ईश्वर उस साले संसारीनाथ को इधर भेज दे, तो बस आनन्द ही आनन्द है। आता ही होगा। परचा हुआ है। नीचे कमानियाँ अङ्गुष्ठ काट लेंगी, और ऊपर से डण्डे पड़ेंगे।

(नेपथ्य में रोने और चिल्लाने की आवाज़)

साहित्यानन्द—ओहोहो ! आ गया और फँस गया। तभी साला चिल्ला रहा है, अब साले पर मार पड़ेगी। आहाहाहाहा !

(डण्डेबाज़ और लठैतमल का लँगड़ाते हुए आना)

डण्डेबाज़—अरे बाप रे बाप, मर गए ! पेड़ के पास चूहेदानी लगा कर और वहाँ हम लोगों को इस तरह धोखा देकर भेजना ?

लठैतमल—देखत का हौ। मार सारे के खोपड़ी दुइ होए जाए। हाय ! दादा हमहूँ लङ्गड़ होय गएन। मार-मार, सारे के जीयत न छाँड़।

(दोनों साहित्यानन्द को मारते-मारते भगा ले जाते हैं)

[पट-परिवर्तन]

(क्रमशः)

* * *

भारतीय भारत

भारत की देशी रियासतें

"रियासत" के उद्गार

कलसिया-नरेश पर सिगरेट पीने का अभियोग

सिक्खों में सिगरेट पीना उसी तरह 'हराम' है, जिस तरह मुसलमानों के लिए सुअर या हिन्दुओं के लिए गोमांस। कलसिया-नरेश के सिगरेट पीने के सम्बन्ध में लाहौर का एक सिक्ख अख़बार लिखता है, कि उसके सम्पादक ने ख़ुद अपनी आँखों से राजा साहब को गोल्ड फ़्लेक सिगरेट पीते हुए देखा है और आपका यह अपराध अक्षम्य है। इस सहयोगी से हम पूछना चाहते हैं, कि कौन सा राजा या महाराजा है, जो सिक्ख कहलाते हुए भी सिगरेट नहीं पीता? पञ्जाब में सिक्खों में पटियाला, नाभा, झिन्द, कपूरथला, कलसिया और फ़रीदकोट छः रियासतें हैं, इनमें नाभा तो देशान्तरित हैं और फ़रीदकोट के राजा नाबालिग़। बाक़ी चार में से कौन सा ऐसा है, जो सिगरेट नहीं पीता और प्रतिशत मुसलमान या हिन्दू रजवाड़े कितने हैं, जो अपने धर्म पर दृढ़ हैं और 'हराम' चीज़ों से परहेज़ करते हैं?

हमारे ख़्याल में इन महाराजाओं और नवाबों को धर्म को छोड़ देना चाहिए, ये जैसा चाहें अपने विचार रक्खें, परन्तु देखना यह है कि इनकी दूसरी करतूतों के कारण इनकी प्रजा पर क्या प्रभाव पड़ता है और अगर ये अपनी प्रजा के कष्ट के कारण हैं, तो क्यों न इनके साथ सहयोग की सम्पूर्ण समाप्ति कर दी जाए?

महाराजा कपूरथला का २५वाँ हज

भारत के देशी रजवाड़े यूरोप की यात्रा को उतना ही आवश्यक समझते हैं, जितना कि एक मुसलमान हज को। इसलिए अगर रजवाड़ों की यूरोप-यात्रा की उपमा उनकी हज-यात्रा से दी जाए तो कोई अनुचित बात न होगी। यह बात दिलचस्पी से सुनी जाएगी, कि कपूरथला-नरेश हर साल की तरह इस साल फिर विलायत चले गए। यह यूरोप-यात्रा आपका पचीसवाँ 'हज' है। इस सम्बन्ध में समस्त पूर्व में कोई भी आपकी समता नहीं कर सकता।

एक ओर तो कपूरथला राज्य के किसानों और ज़मींदारों की दुरवस्था पराकाष्ठा को पहुँच गई है और राज-कर की अधिकता उनके लिए महान् विपत्ति का कारण बन रही है और उधर महाराजा साहब हिन्दुस्तान से कुछ दिनों के लिए विलायत नहीं जाते, वरन् विलायत से चन्द रोज़ के लिए हिन्दुस्तान आते हैं। फलतः जब चेम्बर का अधिवेशन समाप्त हो गया, तो आपने भी अपनी यात्रा के लिए बिस्तर बाँधना आरम्भ कर दिया। क्या कपूरथला के महाराजा साहब ठण्डे दिल के साथ अपनी रियासत से अनुपस्थिति और प्रजा को दूसरों के भरोसे पर छोड़ने के प्रश्न पर विचार करेंगे?

भूपाल का 'रियासत' के मुक़दमे में कितना ख़र्च हुआ

हमारे सम्वाददाता ने भूपाल से सूचना दी है, कि 'रियासत' के सम्पादक पर चलाए गए मुक़दमे में अब तक भूपाल-राज्य के सत्तर हज़ार से अधिक रुपए ख़र्च हुए हैं, इसलिए नवाब साहब और राज्य के उच्च पदाधिकारियों में चर्चा हो रही है, कि इसकी जाँच के लिए एक कमीशन नियुक्त किया जाए, कि इतने रुपए कहाँ और कैसे ख़र्च हुए।

हमारे ख़्याल में अगर भूपाल-सरकार ने इधर क़दम बढ़ाया और रुपए के ख़र्च के सम्बन्ध में एक 'स्वतन्त्र' कमीशन नियुक्त करके जाँच की गई, तो निस्सन्देह जन-साधारण के विचार से यह कार्य अत्यन्त लाभजनक होगा। क्योंकि ऐसे मुक़दमों के अन्त तक अगर भारत-सरकार के कुछ ही सौ रुपए ख़र्च होते हैं, तो क्या कारण है कि भूपाल के ख़ज़ाने को सत्तर हज़ार का बोझ उठाना पड़ा? और तुर्रा तो यह है कि अभी मुक़दमा अपने प्रारम्भिक अवस्था में ही है। इस्तग़ासा के अभी चौथाई गवाह भी ख़तम नहीं हुए।

नवाब भूपाल

भूपाल-राज्य के इस मुक़दमे में अगर अब तक सत्तर हज़ार रुपए ख़र्च हुए हैं, तो हमारा अनुमान है, कि इस मुक़दमे के अन्त तक और फिर इस मुक़दमे से पैदा होने वाले दूसरे मुक़दमों (जिनका होना अनिवार्य है और जो हमारी ओर से होंगे) के लिए राज्य के सम्भवतः पाँच-छः लाख रुपए ख़र्च हो जाएँगे। अब आप स्वयं विचार कीजिए कि यह तमाम बोझ किसकी गर्दन पर पड़ेगा? बेचारी भूपाल की प्रजा ने ऐसा कौन सा अपराध किया है कि उसके साठ लाख तो गद्दी के उत्सव में, विलायत में, बरबाद कर दिए गए और मुक़दमों के लिए इस बेरहमी से रुपए ख़र्च किए जा रहे हैं।

चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस का रुपया कब मिलेगा

हमें विश्वस्त-सूत्र से मालूम हुआ है कि चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस का दस लाख रुपया 'पटियाला स्टेट बैङ्क' के नाम पर रियासत पटियाला के ख़ज़ाने में जमा था, जिसको पटियाला के 'अटल प्रतापी' ने गोलमेज़ के दिनों में मोटरें आदि ख़रीदने में ख़र्च कर डाला और वापस आए तो आपको चान्सलरशिप से जवाब मिल गया। अब नया समाचार है कि नए चान्सलर साहब यह रुपए माँग रहे हैं और पटियाला-नरेश बग़लें झाँक रहे हैं। दौड़-धूप हो रही है कि कहीं से ऋण लेकर रुपए दे दिए जाएँ।

महाराज पटियाला को इस दस लाख की साधारण सी रक़म की क्या चिन्ता है? प्रजा अपना पसीना बहाने के लिए तैयार रहे। चार-पाँच करोड़ पहले का भी तो क़र्ज़ है। दस लाख और सही। जो चार-पाँच करोड़ उतारेगा, वह दस लाख भी उतार देगा। महाराजा ने तो विलायत में आनन्दपूर्ण दिन बिताया और मोटर बेचने वालों के दिलों पर अपनी उदारता का सिक्का जमा आए।

गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में कर्नल हक्सर के चर्बे

पिछले पाँच-छः वर्षों में पटियाला-नरेश ने चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस के फ़ण्ड के साथ जिस बेरहमी का बर्ताव किया है और पानी की तरह रुपए बहाए हैं, वह जानकारों से छिपा नहीं है। उसका अन्दाज़ा केवल इसी से हो सकता है कि चेम्बर के सिर्फ़ एक सफ़ेद हाथी कर्नल हक्सर की तनख़्वाह आठ हज़ार रुपए महीना थी। हालाँकि आप ग्वालियर में तीन हज़ार रुपए से अधिक नहीं पाते थे।

अब कर्नल हक्सर के सम्बन्ध में हाल में ख़बर मिली है कि जब आप गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस के प्रतिनिधि बन कर गए थे तो आपकी यात्रा में एक लाख,साठ हज़ार रुपए ख़र्च हुए हैं, जो सब के सब चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस के मत्थे पड़े हैं। अब इससे अनुमान किया जा सकता है कि महाराज पटियाला ने चेम्बर ऑफ़ प्रिन्सेस में किस बेहयाई के साथ अपनी उदारता का परिचय दिया है, किस बेदर्दी से रुपए उड़ाए गए हैं और इसकी ज़िम्मेदारी किस पर है?

क्या अन्यान्य रजवाड़े अपने भूतपूर्व चान्सलर से पूछेंगे कि चेम्बर के रुपए के साथ भी क्यों पटियाला के ख़ज़ाने का सा व्यवहार हुआ और इस उदारता का लाभ महाराज पटियाला के सिवा और किस राजा को मिला?

गोलमेज़ की सेवा में हैदराबाद के २६ लाख

हैदराबाद से हमारे सम्वाददाता ने गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स के डेपुटेशन के सम्बन्ध में कुछ ख़बरें भेजी हैं, जिनमें कहा गया है कि, इस डेपुटेशन ने, जिसके सर अकबर हैदरी, कर्नल सर ट्रेञ्ज, नवाब मेहदी जङ्ग और सर रेज़ीनाल्ड ग्लेसनी मेम्बर थे, अपनी इस यात्रा में २६ लाख ख़र्च किया। ज़रा अनुमान कीजिए कि अगर रियासतें अपनी प्रजा को अधिकार देने की ओर पैर भी बढ़ाती हैं तो किस शान के साथ? नहीं कहा जा सकता कि रियासत हैदराबाद के फ़ेडरेशन में शामिल होने के बाद वहाँ की बेकस प्रजा को क्या फ़ायदा पहुँचेगा और हैदराबाद के निज़ाम अपनी स्वेच्छाचारिता से कैसे बाज़

आवेंगे, जिन्होंने श्रीगणेश पर ही २६ लाख पर पानी फेर दिया।

अफ़सोस है कि हैदराबाद का ख़ज़ाना वहाँ किसी ज़िम्मेदार एसेम्बली के सामने जवाबदेह नहीं है, अन्यथा इस ख़र्च की तफ़सील पूछी जाती कि अढ़ाई महीने के अन्दर छब्बीस लाख, जिसकी प्रति दिन की औसत ३५

महाराजा पटियाला

हज़ार के क़रीब होती है, कहाँ, किस तरह और क्योंकर ख़र्च हुए और इस ख़र्च से वहाँ की प्रजा को क्या लाभ पहुँचा?

काङ्ग्रेस और महाराज नाभा

गुरुद्वारा प्रबन्धक कमिटी (जो सिक्खों की सब से बड़ी और शक्तिशालिनी संस्था है) ने हाल में प्रस्ताव द्वारा कॉङ्ग्रेस से प्रार्थना की है कि महाराज नाभा अपने स्वतन्त्र विचारों के कारण गद्दी से अलग किए जाकर नज़रबन्द हैं, उनकी मदद की जाए। और सिक्खों में उस समय तक शान्ति नहीं हो सकती, जब तक आपको अपनी गद्दी पर फिर से नहीं बिठाया जाता।

महाराज नाभा का गद्दी पर बिठाया जाना एक महत्वपूर्ण विषय है, परन्तु नहीं कहा जा सकता कि उस पर कभी विचार होगा या नहीं? और अगर विचार होगा तो कब? क्योंकि वर्तमान सरकार जिसे एक निश्चित विषय समझे हुई है और भावी स्वराज्य सरकार ने अपने प्रारम्भिक ज़माने के अन्दर ही सभी देशी नरेशों को गद्दी से उतारने की ओर क़दम बढ़ाया है। परन्तु यह कितने दुख और लज्जा की बात है कि महाराज नाभा को बिना अपराध बताए ही अपने वतन से दो हज़ार मील की दूरी पर बिना किसी मीयाद के नज़रबन्द कर दिया गया है।

सरकार से जनता यह पूछने का अधिकार रखती है कि वह कौन सी बग़ावत थी, जिसके लिए महाराज नाभा पर सन् १८१८ की तलवार इस्तेमाल की गई। अगर देश-प्रेम और स्वतन्त्रता-प्रेम ही वह अपराध है तो क्यों लॉर्ड इर्विन आज महात्मा गाँधी के पैरों पर झुके हैं और भारत को स्वायत्त शासन दिया जा रहा है?

आवश्यकता है कि कॉङ्ग्रेस अपनी पूरी शक्ति महाराज के लिए लगाए और अगर अधिक नहीं तो कम से कम आपको देश-निकाले और नज़रबन्दी से तो मुक्त किया जाए?

निज़ाम का फ़ेडरेशन से तौबा!

दो सप्ताह हुए हमने एक प्राइवेट समाचार के आधार पर लिखा था कि हैदराबाद के निज़ाम भावी फ़ेडरेशन में सम्मिलित होना नहीं चाहते। और उसके लिए सर अकबर हैदरी की वक्तृताओं को सख़्त नापसन्द किया गया है। आज हमारे इस समाचार का समर्थन हो गया। निज़ाम-सरकार ने फ़ेडरेशन के सम्बन्ध में जो घोषणा की, वह हमारे पास पहुँच गई है। उससे यह साफ़ प्रकट होता है कि निज़ाम फ़ेडरेशन से तौबा करते हुए अपने लिए इसे ख़तरनाक बताते हैं। और इस हालत में उसमें सम्मिलित हो सकते हैं कि आपकी स्वेच्छाचारिता में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो, बल्कि उसके समर्थन में एक नया सार्टीफ़िकेट भी दे दिया जाए। इस घोषणा की चन्द शर्तें देखिए। आप फ़रमाते हैं :—

(१) रियासत हैदराबाद उस समय फ़ेडरेशन में सम्मिलित होगी, जब कि सर्व-श्रेष्ठ देशी रियासत होने की हैसियत से उसकी 'पोज़िशन' सुरक्षित रहेगी और उसके बादशाही अधिकारों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न हो।

(२) हैदराबाद रियासत के फ़ेडरेशन में सम्मिलित होने या न होने का निश्चय गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स के निर्णयों के बाद होगा। वर्तमान निज़ाम अन्यान्य देशी रजवाड़ों की तरह फ़ेडरेशन में सम्मिलित होने के लिए बाध्य नहीं हैं। क्योंकि अन्यान्य रजवाड़ों का प्रतिनिधित्व ख़ुद उनके अधिपतियों ने किया था।

(३) फ़ेडरल सब-कमिटी की सिफ़ारिशों में जब तक यथेष्ट सुविधाएँ न हों, हैदराबाद किसी प्रकार के त्याग के लिए तैयार नहीं है।

आत्म-बल

[श्री० 'मगन']

जो परिपूरित 'धन-बल' 'मद-
बल', 'भुज-बल', 'पशु-बल' से है!
हम उसे समझते निर्बल;
जो रहित 'आत्म-बल' से है!!

❀

'धन' क्या है? झूठी 'छाया';
'मद' क्या है? मन का 'मल' है!
'भुज-बल'? विश्वास रहित है!
'पशु-बल'? बिलकुल निष्फल है!!

❀

'श्री', 'ऋद्धि', 'सिद्धि', 'विद्या', 'यश';
चरणों में गिरते आकर!
दृढ़ 'आत्म-बली' के आगे;
'ब्रह्माण्ड' काँपता थर-थर!!!

* * *

(४) कुछ विषयों के अतिरिक्त फ़ेडरल सरकार रियासतों के भीतरी अधिकारों में दख़ल न दे।

(५) डिफ़ेन्स और ख़ारिजी सम्बन्ध केवल सम्राट के अधिकार में होना चाहिए।

(६) बड़ी रियासतों को उनके विस्तार के अनुसार फ़ेडरेशन में भाग दिया जाए!

इस शर्तों से अनुभव किया जा सकता है कि रियासत हैदराबाद फ़ेडरेशन में सम्मिलित हो सकती है, जब कि उसे भीतरी मामलों में पहले की तरह ही स्वेच्छाचारी रहने दिया जाए। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या यह मुमकिन है और क्या इस नीयत पर इन लोगों को भारत का हितैषी कहा जा सकता है?

काश्मीर में एसेम्बली और सुधार

जम्मू का समाचार है कि महाराज काश्मीर पहली मई को वहाँ पहुँच जाएँगे और आपके आने पर एसेम्बली की घोषणा की जाएगी। इस घोषणा के बाद तुरन्त ही उसके अनुसार कार्य भी आरम्भ कर दिया जाएगा।

इस समय कई रियासतों में एसेम्बलियाँ क़ायम की गई हैं, परन्तु कोचीन, त्रिवाङ्कुर जैसी दो-तीन रियासतों को छोड़, बाक़ी एसेम्बलियाँ धोखे की टट्टी हैं। इसलिए

महाराजा काश्मीर

हम महाराज काश्मीर को बतलाना चाहते हैं कि अगर वह एसेम्बली की घोषणा कर रहे हैं, तो अपनी नेकनीयती का प्रमाण देते हुए, उसे एक ज़िम्मेदार इन्स्टीट्यूशन बनाएँ, न कि भूपाल, झिन्द और कपूरथला की तरह लोगों को उल्लू बनाने का सिर्फ़ एक ज़रिया।

काश्मीर में इस समय केवल कई अख़बारों का आना ही नहीं बन्द है, बल्कि अत्यन्त घृणित तरीक़े से वहाँ के एकमात्र अख़बार 'रणवीर' को भी बन्द कर दिया गया है। अब अगर वहाँ एसेम्बली बनाई जा रही है, तो प्लेटफ़ॉर्म और प्रेस को भी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।
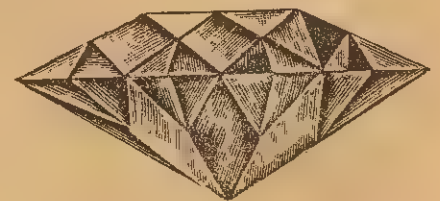
* * *
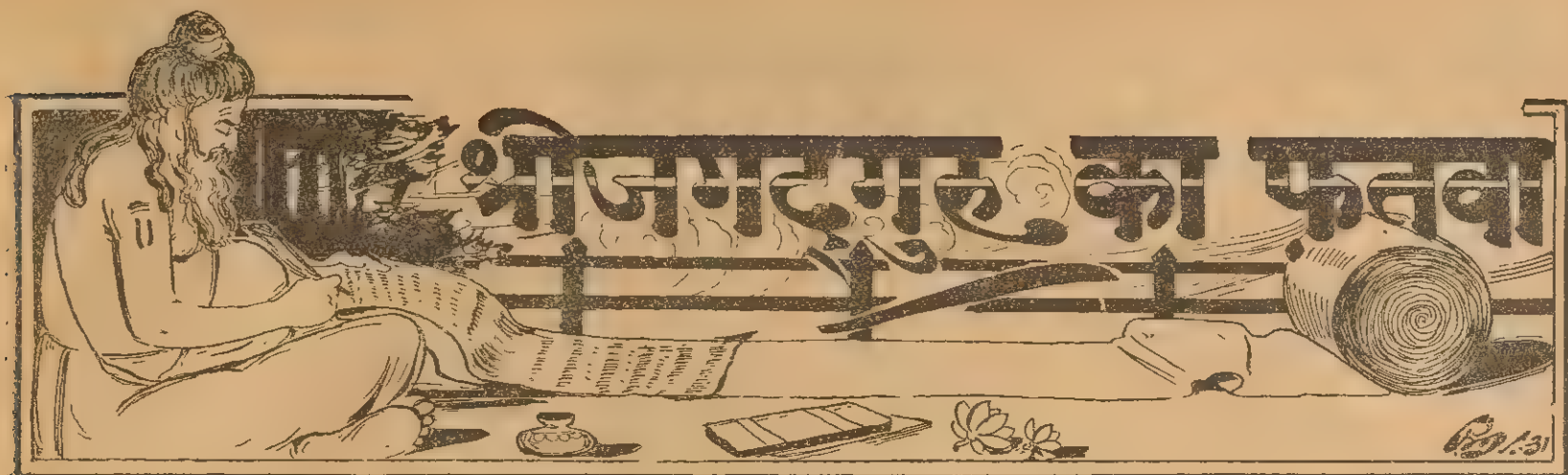
[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

पुराने ज़माने की बात है। देश में धर्म, भगवान की तूती 'हँपों-हँपों' रव से बोल रही थी। बङ्गाल और मिथिला में पवित्र कौलिन्य प्रथा प्रचलित थी। क़सम ख़ुदा की, उन दिनों के लुत्फ़ों की याद आती है तो निगोड़ी जिह्वा वहीं लार टपका कर सारी तोंद को ही खत्तफत्त कर देती है।

❀

उस धर्मयुग में श्रीजगद्गुरु जैसे कुलीनों को आजकल की तरह भङ्ग-बूटी के लिए फ़तवा नहीं लिखना पड़ता था और न महोदर की पूर्ति के लिए मौ० शौकतअली की तरह 'ख़िलाफ़ती' रोज़गार ही करना पड़ता था। बात यह थी कि जिस तरह आजकल गुरु लोग चेले मूँड़ा करते और गुलछर्रे उड़ाया करते हैं, इसी तरह उन दिनों कुलीन लोग ब्याह किया करते और चाँदी काटा करते थे। किसी के सौ बीबियाँ होती थीं तो किसी के दो सौ और ढ़ाई सौ। एकदम 'आम का आम और गुठलियों के दाम' की बहार थी।

❀

तोंद और दाढ़ी में परिवर्तन की आवश्यकता नहीं। बस, मान लीजिए कि श्रीजगद्गुरु 'कुलीन' हैं और १५१ शादियाँ कर चुके हैं। हठात् एक दिन एक नाई इक्यावनवीं ससुराल से एक पत्र लेकर पहुँचा। ससुर जी ने एक बार पधारने की कृपा करने के लिए प्रार्थना की थी। इस बुलाहट का कारण, अगर ख़ुदा ने अक़्ल दी हो तो स्वयं समझ जाइए। गुरु जी ने बही खाता निकाली। और चश्मा लगा कर ससुरालों की लम्बी 'लिस्ट' देख कर बोले—

❀

"कहाँ से आए—पुरुषोत्तमपुर से? हाँ, सन् १७८९ में यह शादी मैंने की थी।" ससुर जी ने पत्र के अन्त में साफ़-साफ़ लिख दिया था—"पधारने में विलम्ब कीजिएगा तो सारी इज़्ज़त मिट्टी में मिल जाएगी। अब इस अधीन के मान के आप ही रक्षक हैं। इस कुल को कलङ्क से बचाइए।"

❀

श्रीजगद्गुरु के 'वार्धक्य-विसिकुड़ित' होंठों पर मुस्कुराहट की एक स्पष्ट रेखा दौड़ गई। नाई से बोले—"कह देना, मान की रक्षा मुफ़्त में नहीं होती। सवारी के लिए सोलह कहारों वाली पालकी, १,००१) पधराई, मान-मरम्मत का मेहनताना ५०,००१) और अगर निशा-यापन की व्यवस्था अन्तःपुर में होगी तो उसकी दक्षिणा अलग होगी। समझे?"—"समझ गया, कृपानिधान!" नाई ने उत्तर दिया।

❀

यही दशा हमारे लँगोटी-बाबा की है। आप भी 'पधरौनी' पर अड़ गए हैं और फ़रमाते हैं कि (१) जब तक फ़ौजी ख़र्च में काफ़ी कमी न की जाएगी, (२) रियासतों की प्रजा का संरक्षण न होगा, (३) देश को आर्थिक स्वतन्त्रता न दी जाएगी और (४) सरकारी ऋण के बारे में पूरी जाँच न हो लेगी तब तक लन्दन के मँड़वे में क़दम भी न रक्खेंगे। अन्तःपुर की दक्षिणा अभी अलग है। फलतः बी ब्रितानिया के मान का अल्लाह ही वली है!

❀

मगर जनाब, बिल्कुल एकतरफ़ा विचार न कीजिएगा। ज़रा कुलीन जामाता के ससुर जी की उस समय की उस सुखकर अवस्था का भी अनुमान कीजिए, जिस समय आप खाट पर बैठे हुए 'दौहित्र' खेलाते होंगे और सुन्दर शिशु अपनी छोटी मुट्ठी में नाना जी की मूँछें पकड़ कर खींचता होगा। उस 'सात स्वर्ग अपवर्ग सुख' की तुलना में तुच्छ पधरौनी की हक़ीक़त ही क्या है?

❀

ख़ैर भई, पधरौनी और ठहरौनी के मज़े तो उन्हें लेने और देने वाले जानें, हम बारातियों को तो रात भर के आमोद-प्रमोद के लिए कुछ सुन्दर सामान चाहिए, सो अल्लाह के फ़ज़्ल से आजकल कानपुर में कौड़ियों के मोल मिल रहा है। आयुष्मती पुलिस के नाज़ो-अन्दाज़ की कहानियों से अख़बारों के कलेवर होलिहारों के दुपट्टे बन रहे हैं।

❀

भगवान भला करे, पुलिस के डिप्टी-इन्स्पेक्टर जनरल मि० बेल का। आपने अपनी गवाही में 'यथानामो तथा गुणः' को अक्षर-अक्षर चरितार्थ कर डाला है। ठीक 'बेल' की भाँति गोल और ठोस बुद्धि के आदमी हैं। मगर, माशाअल्लाह 'गङ्गा पीना' तो क्या अगर चाहें तो एक ही गण्डूष में 'सातो समुद्र' पी जावें। पुलिस के कलङ्क की स्याही सोखने के लिए यह अच्छा 'ब्लाटिङ्ग' पेश किया है, यारों ने कमीशन के सामने!

❀

कौन कहता है, दङ्गे के समय पुलिस तास खेलती थी, 'टुकुर-टुकुर दीदम दम न कसीदम' का पार्ट कर रही थी? अजी, वे झूठे हैं, ईर्ष्यालु और परनिन्दक हैं। दूसरे का पानी मारना इनका काम है। वे पानी में आग लगाने वाले जो न कहें वह थोड़ा है। बेचारी ने दङ्गा रोकने में अपनी जान लड़ा दी थी और झूठे कहते हैं, पुलिस ने कुछ किया ही नहीं! वही कहावत हुई कि 'मुर्ग़ी की जान गई और खाने वाले को स्वाद ही न मिला!'

❀

नैहाटी के एक बूढ़े अग्रवाल-कुल-भूषण ने परलोक-पथ के लिए एक षोड़शी सङ्गिनी संग्रह किया था। माल राजपूताने से चालान होकर नैहाटी पहुँच गया था। परन्तु अड़ङ्गाबाज़ों ने ऐसी लकड़ी मारी कि जाल में फँसा हुआ शिकार उड़ गया और बेचारे बड़े लाला कमर थाम कर रह गए!

❀

ज़रा सोचने की बात है, कि अगर नैहाटी के बड़े लाला की शादी हो जाती और वे दो-चार वर्ष तक नई ललाइन के साथ रह कर परलोक-पथ के लिए थोड़ा सा सामान मोहय्या कर लेते तो उन कमबख़्तों का क्या बिगड़ जाता, जिन्होंने 'दाल-भात में मूसरचन्द' बन कर बेचारे की सारी आशाओं पर पानी फेर दिया है?

❀

यह तो मानी हुई बात है कि लाला जी ललाइन जी को अपने साथ न ले जाते। उनके परलोक-प्रस्थान के बाद वे (अर्थात् ललाइन जी) निश्चिन्ततापूर्वक बैठी-बैठी रुद्राक्ष की माला फेरतीं, पास-पड़ोस के नवयुवक भाभी जी से मिलने आते, 'बूढ़ों का ब्याह हो और जवानों के घर नौबत बजे' यह पुरानी कहावत चरितार्थ होती और इस असार संसार में कुछ दिनों तक लाला जी की एक जीती-जागती स्मृति रह जाती।

❀

बेचारी दान-पुण्य करतीं, गङ्गा नहातीं, देवपूजन करतीं और कथा सुनने जातीं। इससे सनातन-धर्म की उन्नति होती और लाला जी को भी परलोक में सुख और शान्ति प्राप्त होती। परन्तु इन सुधारकों की खोपड़ी में इतनी बुद्धि कहाँ, जो इन तत्वपूर्ण बातों की गवेषणा कर सकें?

❀

ख़ैर, 'पछड़ने से डरते नहीं पहलवाँ!' लाला जी को हताश नहीं होना चाहिए। पास में पैसा हो तो यहाँ षोड़शियों और चतुर्दशियों की कोई कमी नहीं है। न तीर ख़ाली जाने से शिकारी को हताश होना चाहिए और न दाँव ख़ाली जाने से खिलाड़ी को। इसलिए हमारी सलाह है कि लाला जी एक बार फिर प्रयत्न करें, अन्यथा—

'ख़ारे-हसरत क़ब्र तक दिल में खटकता जाएगा,
मुर्ग़ बिस्मिल की तरह लाशा फड़कता जाएगा!

❀

हाय प्रभुवर, इस कलिकाल में तुम्हारी जो न दुर्गति हो जाए, वही थोड़ी है। सुनते हैं सीमा-प्रान्त के सनातनधर्म कॉन्फ्रेन्स ने प्रस्ताव पास किया है कि देव-मूर्त्तियों को खद्दर पहनाया जावे। बताइए, यह मई की गरमी और खद्दर की पोशाक! एक तो 'तितलौकी दूसरे नीम चढ़ी!' क़सम शाह मदार की, प्रभुवर की सारी देह में घमौरी हो जायगी, बेचारे परेशान हो जाएँगे।

❀

इसलिए हिज़ होलीनेस इस प्रस्ताव का घोर विरोध करते हैं। क्योंकि यह प्रस्ताव असामयिक, अनुचित और अप्रासङ्गिक है। अगर लोगों का हौसला इसी तरह बढ़ने दिया जाएगा तो एक दिन यह भी प्रस्ताव कर देंगे कि ठाकुर जी सुबह-शाम दो घण्टे चर्ख़ा काता करें और ठकुराइन जी रूई में से बिनौले चुना करें!

❀

अरे वाह रे हम! जो भविष्यद्वाणी की थी, वही हुआ। सम्मेलन के आगामी अधिवेशन के सभापति के लिए श्री० रत्नाकर जी चुन लिए गए। फलतः इस साल के सम्मेलन में जैसा कि श्रीजगद्गुरु पहले ही फ़रमा

चुके हैं, सुरमई आँखों की ख़ासी बहार रहेगी। सभापति सुरमा-प्रेमी, स्वागताध्यक्ष सुरमा-प्रेमी और अन्यतम कार्यकर्ता सुरमाप्रेमी। इसलिए प्रतिनिधियों को भी चाहिए कि अपनी-अपनी आँखों में सुरमा लगा कर सम्मेलन में पधारें, ताकि कम से कम दर्शकों को महाराज रणजीतसिंह के दरबार की तो याद आ जाए।

❀

ख़ैर, सम्मेलन का अधिवेशन इस महीने के अन्त में होगा। परन्तु तैयारियाँ महीनों पहले से जारी हैं। गाङ्गेय जी ने मलाई की कुलफ़ियों का और पं० बनारसी दास जी चतुर्वेदी ने 'टट्टियों' (अवश्य ही ख़स की) का भार अपने हाथ में लिया है। बाक़ी 'तरावट' पहुँचाने का भार पं० रामशङ्कर जी त्रिपाठी के ज़िम्मे है। फलतः प्रतिनिधियों को मई की गरमी से बचाने के लिए काफ़ी इन्तज़ाम किया गया है।

❀

हमारे नए बड़े लाट बहादुर ने आते ही जिस सरलता और फ़रमाँ-बरदारी का परिचय दिया है, बड़े दुःख की बात है कि बहुत कम लोगों ने उस पर ध्यान दिया है। इससे मालूम होता है कि ईं-जानिब की तरह 'ख़ुर्दबीन' अर्थात् सूक्ष्म-दर्शी इस देश में बहुत कम हैं।

❀

ख़ैर, लाट साहब ने अपने विलायती सूत्रधारों से पूछा है कि आगामी ९ मई को शिमला म्युनिसिपैलिटी के मानपत्र का उत्तर देना है, इसलिए बताइए, कि हम किस नीति का अवलम्बन करें, अर्थात् घूँघट खोल कर नाचें या परदे में ? वाक़ई मसला ग़ौर-तलब है। क्योंकि इधर नौकरशाही है और उधर मज़दूर-शाही—एक को ताण्डव पसन्द है और दूसरे को 'खेमटा'!

❀

मगर अपने राम तो 'इर्विनी नृत्य' के विशेष पक्षपाती हैं। बेचारे ने श्याम को भी न छोड़ा और कुल को भी कलङ्क से बचा लिया। भारत के सुप्रसिद्ध नर्त्तक—अजी, वही बताशों पर नाचने वाले—स्वर्गीय पण्डित गिरिधारी तिवारी होते तो 'सुभान अल्लाह' अश-अश करके रह जाते।

❀

कॉङ्ग्रेस के एक बूढ़े बाबा ने ६५ वर्ष की उमर में, अपने प्रेम-विकम्पित हाथों से पाँचवीं बार एक पञ्चदश वर्षीया का पाणि-पीड़न किया है। परन्तु जनाब, मुफ़्त में नहीं, बल्कि बदले में एक साढ़े तीन वर्ष की कन्या का विवाह २४ वर्ष के युवक से कर चुके हैं! बताइए, अब कौन कमबख़्त कहेगा कि बूढ़े बाबा ने अन्याय किया है ? हिसाब लगाइए तो जमा-ख़र्च ठीक उतरेगा। अगर थोड़ा-सा फ़र्क़ निकलेगा तो महज़ ब्याज का। सो कारबार में तो ऐसा होता ही है।

❀

प्राप्ति-स्वीकार

स्वदेशी चूड़ियाँ—हमें यह देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि स्वदेशी आन्दोलन के प्रारम्भ होते ही हमारे अनेक भाइयों ने देशी चीज़ें बनाने का उद्योग आरम्भ कर दिया है। चूड़ियों को भारतीय स्त्रियाँ सौभाग्य-चिन्ह समझती हैं। और वास्तव में यह बड़े लज्जा की बात थी, कि कपड़ों को भाँति स्त्रियों को बिन्दी, सेंदुर और चूड़ियों तक के लिए विदेशों की कृपा पर अवलम्बित रहना पड़ता था।

विगत राष्ट्रीय आन्दोलन में अन्य सारी विदेशी वस्तुओं के साथ ही साथ अधिकांश भारतीय महिलाओं ने अपनी सब से प्रिय वस्तु चूड़ियों तक का बहिष्कार इसलिए कर दिया था, कि वे विदेशी थीं। बात बिल्कुल साधारण है, किन्तु इस साधारण सी बात से हमें भारतीय महिलाओं की उस जाग्रति का पता चलता है, जिनसे विदेशों तक में उनकी क़ुर्बानियों की धाक बँध गई है।

जो चूड़ियाँ हमारे पास समालोचनार्थ भेजी गई हैं, हम दावे के साथ कह सकते हैं, कि वह किसी भी तरह जापान, ऑस्ट्रिया तथा ज़ेकोस्लोवेकिया से आने वाली चूड़ियों से कम नहीं हैं। जिन बहिनों को आवश्यकता हो, वे—दि हनुमान ग्लास वर्क्स, फ़ीरोज़ाबाद (यू०पी०) से मँगा सकते हैं। शायद नमूने की चूड़ियाँ मुफ़्त भेजी जाती हैं। दूकानदार भी इससे विशेष लाभ उठा सकते हैं। इनका मूल्य विदेशी चूड़ियों की अपेक्षा बहुत कम है।

हमें यह जान कर और भी प्रसन्नता होती है, कि यह कार्य शिक्षित व्यक्तियों ने अपने हाथ में लेकर देश के सामने एक अनुपम आदर्श उपस्थित किया है। इस फ़र्म के मालिक पं० सुशीलचन्द्र चतुर्वेदी, बी० एस-सी०, एल्-एल्० बी० तथा प्रधान मैनेजर श्री० गङ्गाप्रसाद जैन, एम० ए०, एल्-एल्० बी० बधाई के पात्र हैं। हम कारख़ाने की हृदय से उन्नति चाहते हैं।

* * *

नैवेद्य (डाबर शृङ्गारदान)—कलकत्ते के सुप्रसिद्ध फ़र्म डॉक्टर एस० के० बर्मन, (पोस्ट बॉक्स नम्बर ५५४, कलकत्ता) ने हमारे पास एक 'डाबर' नामक शृङ्गारदान समालोचनार्थ भेजा है, जिसमें ८ प्रकार की शृङ्गार-सामग्रियाँ (साबुन, तेल, मञ्जन, पाउडर, इत्र और क्रीम आदि) के नमूने ख़ास-ख़ास ख़ानों में सजा कर रक्खे गए हैं।

आज प्रति वर्ष हमारे देश का करोड़ों रुपया इस प्रकार की शृङ्गार-सामग्रियों में विदेशों को जा रहा है और इसी धन से पाश्चात्य देशवासी मालामाल और भारतवासी कङ्गाल हो रहे हैं! आज देश के सौभाग्य से भारतवासियों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है और अब वे स्वदेश की बनी हुई चीज़ों को अपनाने लगे हैं। हमारा अनुमान है कि देवियाँ इन स्वदेशी शृङ्गार-सामग्रियों से सन्तुष्ट होंगी। डॉक्टर बर्मन की यह संस्था पिछले २० वर्षों से देश की सेवा कर रही है और इसलिए इसके सञ्चालक बधाई के पात्र हैं। बक्स तथा लेबुल और पैकिङ्ग आदि की सफ़ाई की हमें शिकायत है। यदि इस ओर विशेष ध्यान दिया जाय तो कोई वजह नहीं है, कि लेबुलों की छपाई और पैकिङ्ग आदि ठीक उस ढङ्ग की न हो सके, जैसी मनमोहक विदेश वाले करते हैं। यह केवल ध्यान देने की बात है, और हमें आशा है, संस्था के ज़िम्मेदार व्यक्ति इस ओर विशेष ध्यान देंगे और इस सम्बन्ध में बङ्गाल कैमिकल वर्क्स वालों से मित्रवत् शिक्षा ग्रहण करेंगे।

विशेष विवरण के लिए अन्यत्र प्रकाशित आपका विज्ञापन देखिए

* * *

दन्त-रक्षक—यह एक देशी मञ्जन है। फ़ी डिब्बी का मूल्य ।) है और दन्त-रक्षक कम्पनी, नई सड़क, लश्कर ग्वालियर से मँगाया जाता है। कम्पनी का दावा है कि दाँतों की सब बीमारी में यह मञ्जन लाभ पहुँचाता है।

* * *

B. A.—Editor, at The Fine Art Printing Cottage

28, Edmonstone Road,

बर्मा में विद्रोही अदालत और पुलिस की चौकियाँ जला रहे हैं

बम द्वारा आदमपूर ज़िला कॉङ्ग्रेस कमिटी के मन्त्री की मृत्यु !

चटगाँव भेजे गए एक पार्सल में ३०० कारतूस मिले

महात्मा गाँधी देवी कस्तूरी बाई सहित शिमला पहुँच गए

(एसोसिएटेड प्रेस द्वारा १४ वीं मई के प्रातःकाल तक आए हुए 'भविष्य' के विशेष तार)

—लाहौर का १३वीं मई का समाचार है, कि आदमपुर (पञ्जाब) ज़िला कॉङ्ग्रेस कमिटी के सेक्रेटरी श्री० चननसिंह की आदमपुर में एक बम-दुर्घटना के कारण मृत्यु हो गई है, और एक कॉङ्ग्रेस कार्यकर्त्ता श्री० गुरुदत्तसिंह बुरी तरह घायल हुए हैं।

पुलिस ने श्री० गुरुदत्तसिंह को गिरफ़्तार कर लिया है। होशियारपुर की ज़िला कॉङ्ग्रेस कमिटी के ऑफ़िस की तलाशी भी ली गई है।

—पेशावर का समाचार है कि एक सिक्ख युवक काबुल में गिरफ़्तार किया गया है, उसकी तलाशी लेने पर उसके पास कुछ पर्चे मिले, जो अफ़ग़ानिस्तान के भूतपूर्व सम्राट ग़ाज़ी अमानुल्ला ख़ाँ के पक्ष में प्रचार करने की दृष्टि से लिखे गए थे।

—शिमला का १३वीं मई का समाचार है, कि आज दोपहर में महात्मा गाँधी श्रीमती कस्तूरीबाई के साथ यहाँ सकुशल पहुँच गए। एसोसिएटेड प्रेस के प्रतिनिधि के पूछने पर महात्मा जी ने कहा, कि मैं मि० ईमर्सन का पत्र पाकर यहाँ आया हूँ। यहाँ होने वाली फ़ेडरल स्ट्रक्चर कमिटी की मीटिङ्ग के सम्बन्ध में मुझे कुछ ज्ञात नहीं है। साम्प्रदायिक समझौते के सम्बन्ध में पूछने पर आपने कहा कि अभी मैं बोरसद के मामले में फँसा हुआ हूँ। मैं नहीं कह सकता कि मैं लन्दन जाऊँगा भी या नहीं।

गाँधी जी यहाँ तीन दिनों तक रहेंगे। उसके बाद आप नैनीताल जायँगे, क्योंकि संयुक्त प्रान्त के गवर्नर का भी एक निमन्त्रण उन्हें मिला है।

—रङ्गून का ११वीं मई का समाचार है, कि कल ४५० के लगभग विद्रोहियों ने हेनज़ादा के पुलिस-स्टेशन पर आक्रमण किया। पहरे वाले ने तुरन्त एलार्म देकर सबों को सजग कर दिया। दोनों ओर से कुछ देर तक घनघोर युद्ध होने के बाद कुछ सिपाही घायल हुए। इनमें से एक की अवस्था चिन्ताजनक है। विद्रोहियों की ओर से ४ व्यक्ति मारे गए हैं तथा ५ गिरफ़्तार किए गए हैं।

थाटन की जजी अदालत जला डाली गई है। बेसीन में नए उपद्रव उठ खड़े हुए हैं। मायुङ्गम्या में भी उपद्रव उठ खड़े होने की आशङ्का की जाती है। थारावड्डी, इन्सीन आदि स्थानों का वातावरण भी अशान्त बतलाया जाता है। पुलिस की कई चौकियाँ तथा थाने जला डालने के समाचार भी प्रायः नित्य ही आ रहे हैं।

रङ्गून का १३वीं मई की रात का तार है, कि ११वीं मई को ज़िब्यूगन (ज़िला थारावाडी) के समीप फिर सिविल पुलिस और विद्रोहियों में भयङ्कर मुठभेड़ हो गई। थारावाडी पुलिस थाने के अफ़सर और १५ सिपाहियों से भी विद्रोहियों की मुठभेड़ हुई, परिणाम-स्वरूप पुलिस-ऑफ़िसर तथा दो सिपाही बुरी तरह घायल हुए और हेड-कॉन्स्टेबिल विद्रोहियों द्वारा मार डाला गया। विद्रोही २ बन्दूकें भी ले गए। विद्रोहियों के हताहत व्यक्तियों का अभी तक कोई पता नहीं चल सका है। प्रोम का समाचार है, कि गत सप्ताह विद्रोहियों द्वारा मारे जाने वाले सुपरिंटेण्डेन्ट पुलिस—मि० ऑस्टिन तथा एक बर्मन दारोग़ा की झौंसी हुई लाशें म्योमा के समीप मिली हैं।

—कलकत्ते का १३वीं मई की रात का तार है, कि गत सोमवार की रात को मुन्शीगञ्ज (ढाका) के अन्तर्गत देवभोग नामक स्थान के एक साहूकार के मकान में पुलिस तथा डाकुओं की भीषण मुठभेड़ हो गई। पुलिस के एक दारोग़ा के सर में भयङ्कर चोट आई है तथा फनीभूषण नामक एक दूसरे दारोग़ा भी ख़ून से लत-पथ पाए गए हैं। कहा जाता है, ५ डाकू गिरफ़्तार किए गए हैं, लगभग २० डाकुओं के सफलतापूर्वक निकल जाने की ख़बर है।

—पेशावर का १०वीं मई का समाचार है, कि लगान न देने के अभियोग में वहाँ ५ ख़ुदाई ख़िदमतगार गिरफ़्तार किए गए हैं। कहा जाता है कि उन्होंने लगान में ५) रुपए तथा गेहूँ देना स्वीकार किया था, किन्तु कमिश्नर ने इसे लेने से इन्कार कर दिया। फलतः वे चरसदा की हिरासत में रक्खे गए हैं। कुछ अन्य ख़ुदाई-ख़िदमतगारों पर भी वारण्ट जारी किया गया है।

कहा जाता है कि लालकुर्ती वालों के कैप्टेन मनःज़ुल्ला ख़ाँ जेल की सेल में बन्द किए गए हैं, वहाँ उनके भोजन का उचित प्रबन्ध नहीं है।

—पाठकों को विदित होगा कि जनरल आवारी हाल ही में बहुत आन्दोलन के बाद पागलख़ाने से रिहा किए गए थे। अब ख़बर मिली है, कि गत ७वीं मई को आप फिर गिरफ़्तार कर लिए गए। पुलिस उन्हें बलात् लॉरी पर बिठा कर ले गई। आपके साथ श्रीमती गङ्गाबाई चौबे और श्री० नवीनचन्द्र भी गिरफ़्तार कर लिए गए हैं !

जनरल आवारी का मामला जेल ही में चलाया गया और उन्हें आर्म्स एक्ट की १९ (ए) तथा ११६ धाराओं के अनुसार डेढ़-डेढ़ वर्ष की क़ैद की सज़ा दी गई है। सज़ाएँ अलग-अलग भोगनी पड़ेंगी। अन्य अभियुक्तों के मामले का फ़ैसला अभी नहीं हुआ है।

—चिटगाँव का ११ मई का समाचार है कि एक सन्दिग्ध पार्सल, जो हाल ही में डिगारा लॉस्ट प्रॉपर्टी ऑफ़िस (Lost Property Office) से चिटगाँव भेजा गया था, आसाम-बङ्गाल रेलवे के अधिकारियों ने डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पास भेज दिया। सब डिविज़नल ऑफ़िसर के सामने पार्सल खोलने पर उसमें से ३०० कारतूस मिले हैं। कहा जाता है, इसके अतिरिक्त पार्सल में २० छूटे हुए कारतूस भी बरामद हुए हैं। पुलिस जाँच कर रही है।

—देहली का ११वीं मई का समाचार है कि एक हलवाई की भट्ठी में, जब कि वह मिठाइयाँ बना रहा था, एक बड़े ज़ोर का धड़ाका हुआ और कड़ाई उलट गई, जिससे हलवाई पर गर्म घी उलट जाने के कारण वह जल गया। कहा जाता है, कि यह धड़ाका बम फटने का था, जो किसी ने भट्ठी में डाल दिया था। पुलिस के जाँच करने पर भट्ठी में शीशे के टुकड़े भी मिले हैं, तहक़ीक़ात जारी है।

—सहयोगी 'हिन्दोस्तान टाइम्स' के विशेष प्रतिनिधि का कहना है, कि गत रविवार की रात को देहली का सारा स्टेशन ख़ुफ़िया पुलिस तथा गोरे सार्जेण्टों से इसलिए घेर लिया गया था, कि पुलिस को पता चला था कि देहली षड्यन्त्र केस के फ़रार अभियुक्त श्री० यशपाल देहली में थे और उस रोज़ वे देहली से बाहर जाने वाले थे, कहा जाता है, पिछले एक सप्ताह से देहली की ख़ुफ़िया पुलिस बहुत ज़्यादा सतर्क है; क्योंकि उसे अन्य कई अभियुक्तों के भी देहली में होने का सन्देह है। सारे शहर में पुलिस का आतङ्क बतलाया जाता है।

—'हिन्दुस्तान टाइम्स' के एक सम्वाददाता का कहना है, कि मेरठ षड्यन्त्र-केस की पैरवी में सरकार किस प्रकार बाधाएँ उपस्थित करती है, इसका पता ट्रेड यूनियन कॉङ्ग्रेस के सेक्रेटरी श्री० देशपाण्डे के एक पत्र से लगा है। कहा जाता है कि जून, १६३० में न्यूयार्क से ५०० डॉलर का एक चेक रजिस्ट्री द्वारा बम्बई की डिफ़ेन्स कमिटी के पास भेजा गया था। किन्तु हाल में संयुक्त राज्य अमेरिका के पोष्ट ऑफ़िस ने उन्हें सूचना दी है, कि उक्त रजिस्टर्ड पत्र भारत-सरकार की आज्ञानुसार रोक लिया गया है।

—कानपुर का ११वीं मई का समाचार है कि स्थानीय ज़िला कॉङ्ग्रेस कमिटी के एक उत्साही कार्यकर्त्ता पं० देवनारायण पाण्डे झिञ्झक रेलवे स्टेशन पर गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। कॉङ्ग्रेस कार्य करते हुए आप दसवीं बार गिरफ़्तार किए गए हैं।

—कराची कॉङ्ग्रेस के बाद ही उसकी कार्यकारिणी समिति ने श्री० के० एफ़० नरीमन को उन क़ैदियों की एक सूची बनाने की आज्ञा दी थी, जो अभी तक जेलों में बन्द हैं और जिन्हें सन्धि की शर्त्तों के अनुसार छोड़ दिया जाना चाहिए था। मि० नरीमन की जाँच से पता चला है कि १०६५ क़ैदी—जिन्हें गाँधी-इर्विन समझौते के अनुसार छोड़ दिया जाना चाहिए था—अभी तक नहीं छोड़े गए हैं। उनका प्रान्त-वार ब्योरा इस प्रकार है:—पञ्जाब ८६; सीमा-प्रान्त ५०; आन्ध्रदेश १०; कर्नाटक २; आसाम २८; सी० पी० (मराठी) ६; सी० पी० (हिन्दी) ८६; महाराष्ट्र १२४; बम्बई सिटी १०; बङ्गाल ६७०; मेरठ-केस के अभियुक्त ३०=१०६५।

—लाहौर से चलती ट्रेन से एक क़ैदी के निकल भागने की ख़बर आई है। कहा जाता है कि पुलिस ने कस्तूरीलाल नामक एक व्यक्ति को एक जाली चेक के सम्बन्ध में जम्मू में गिरफ़्तार किया था। जब पुलिस उक्त व्यक्ति को ट्रेन से सियालकोट लिए जा रही थी, उसी समय क़ैदी के डब्बे में बैठे हुए अन्य दो व्यक्तियों ने पुलिस वालों पर फ़ायर करना शुरू किया। इसके बाद वे क़ैदी के साथ चलती ट्रेन से कूद कर भाग निकले। घायलों में एक की मृत्यु हो गई और दो अस्पताल में पड़े हैं, जिनकी दशा भी चिन्ताजनक बतलाई जाती है।

—शरतनगर की १२वीं मई की एक ख़बर है, कि शरतनगर और दिलपसार स्टेशनों के बीच रेलवे लाईन की कई फ़िशप्लेट हटा दी गई थी, जिसके फल-स्वरूप एक पसेञ्जर ट्रेन पटरी से नीचे गिर पड़ी। इञ्जिन-ड्राइवर के सिवा और किसी को चोट नहीं आई है।

—चटगाँव का ११वीं मई का समाचार है, कि वहाँ झरजरियावट्टाली के समीप एक पसेञ्जर ट्रेन लाईन-च्युत हो गई। कुछ यात्रियों को चोट आई है, किसी की जान नहीं गई है।

चटगाँव से, एक पोस्ट ऑफ़िस में भीषण डकैती की एक ख़बर आई है। कहा जाता है कि गत ७वीं मई की रात को हथियारबन्द डकैतों ने नोआखाली के सब-पोस्ट ऑफ़िस पर छापा मारा और १२०५) रु० नगद तथा बीमा तथा पार्सल आदि वस्तुएँ लेकर चलते बने। इन वस्तुओं के मूल्य का अभी ठीक-ठीक पता नहीं चला है।

—कहा जाता है कि कच्छ स्टेट में बाहर जाने वाले माल पर एक नया कर लगा दिया गया है। यह भी पता चला है कि बाक़ी लगान, तक़ावी और ऋणों के वसूलने में रैयत पर बड़ी सख़्ती की जा रही है। बोरसद की ७वीं मई की एक ख़बर है, कि राजधानी क़स्बे के ३३ गाँवों के किसानों ने इन अत्याचारों के प्रतिवाद-स्वरूप तीन दिनों तक अनशन किया। महात्मा जी के इस सम्बन्ध में समझौते के लिए, कुछ कॉङ्ग्रेस कार्य-कर्ताओं के वहाँ भेजने पर, अधिकारियों ने ग़रीब किसानों के साथ रियायत करने का वचन दिया है। एक्सपोर्ट ड्यूटी के सम्बन्ध में यह कहा गया है, कि वह परीक्षार्थ केवल दो मास के लिए जारी की गई है। दो मास के बाद उस पर विचार किया जायगा।

—रङ्गून का ६वीं मई का समाचार है, कि स्यापोन की स्पेशल ट्रिब्यूनल ने, जिसके हाथ में थारावड्डी के विद्रोहियों का मामला है, १५ व्यक्तियों को फाँसी तथा ५६ व्यक्तियों को कालेपानी की सज़ा दी है। २४ व्यक्ति छोड़ दिए गए हैं।

—हाल के समाचारों से पता चलता है कि कानपूर में अभी तक पूर्ण रूप से शान्ति स्थापित नहीं हो सकी है। अकेले दुकेले राह चलते लोगों पर आक्रमण अभी जारी है। पुलिस का कोई वश नहीं चल रहा है। कहा जाता है कि गत ६वीं मई को कॉटन मिल्स के समीप तीन गाड़ीवान बुरी तरह पीटे गए। १०वीं मई को एक मनुष्य छूरे के साथ गिरफ़्तार किया गया है। एक व्यक्ति तालुक मुहाल में घायल किया गया है। रात के समय मकानों पर पत्थर फेंके जाते हैं। जनता में घबड़ाहट फैली हुई है।

—पाठकों को विदित होगा कि चाँदपुर के इन्स्पेक्टर की हत्या के सम्बन्ध में श्री० रामकृष्ण विश्वास को स्पेशल ट्रिब्यूनल ने प्राणदण्ड की आज्ञा सुनाई थी; और स्पेशल ट्रिब्यूनल के इस फ़ैसले के बाद श्री० विश्वास की माता ने बङ्गाल के गवर्नर से अपने पुत्र के लिए दया-याचना की थी। कलकत्ते की ६वीं मई की ख़बर है कि बङ्गाल गवर्नर ने उक्त प्रार्थना अस्वीकृत कर दी है। अभियुक्त के वकील ने वायसराय के पास तार भी भेजा था कि अभियुक्तों की फाँसी स्थगित कर दी जाय, जिसमें प्रिवी-कौन्सिल के सामने मामला उपस्थित किया जा सके। इसके लिए लन्दन, एटर्नी के पास काग़ज़-पत्र भेजा जा रहा है। फाँसी २१ मई तक स्थगित कर दी गई है।

—लन्दन के समाचारों से विदित होता है, कि लङ्काशायर वाले भारतीय मुसलमान व्यापारियों के साथ एक कम्पनी खड़ी करने का विचार कर रहे हैं। वे अन्य मुसलमान व्यापारियों को भी सहायता देकर ब्रिटिश माल को खपत कराना चाहते हैं।

—लाहौर का ८वीं मई का समाचार है, कि आज पञ्जाब कौन्सिल में मि० सेवकराम ने इस बात की आपत्ति की, कि सिविल सेक्रेटरियट में हिन्दुस्तानियों को बिना तलाशी लिए नहीं जाने दिया जाता, किन्तु एङ्गलो इण्डियन और यूरोपियन की कोई तलाशी नहीं ली जाती है।

—बम्बई का समाचार है कि लेमिङ्गटन रोड शूटिङ्ग केस के सारे अभियुक्त छोड़ दिए गए हैं। ये अभियुक्त अक्टूबर, १६३० के प्रथम सप्ताह में गिरफ़्तार किए गए थे। अदालत की कार्यवाही के समय, पुलिस की ओर से प्रमाण इकट्ठा करने के लिए मुहलत पर मुहलत माँगी गई थी। २३ दिनों तक लगातार मामला चलने पर भी पुलिस एक व्यक्ति तक को किसी अभियोग में दोषी नहीं सिद्ध कर सकी। प्रधान जूरी ने ५ बार दृढ़तापूर्वक कहा कि अभियुक्त निर्दोष हैं।

—ख़बर है कि कानपूर के दङ्गे की जाँच करने वाले सरकारी कमीशन ने वहाँ के प्रमुख कॉङ्ग्रेस कार्यकर्ता श्री० जोग को कमीशन के सामने अपनी गवाही देने के लिए आमन्त्रित किया था; किन्तु श्री० जोग ने यह आमन्त्रण इसलिए अस्वीकृत कर दिया, कि सरकारी अफ़सरों ने कॉङ्ग्रेस के सामने गवाही देने से इन्कार कर दिया था।

—बम्बई का ७वीं मई का समाचार है, कि लसलगाँव के समीप बॉम्बे पेशावर एक्सप्रेस लाइन-च्युत हो गई। जाँच करने पर पता लगा कि लाइन के फ़िशप्लेट हटा लिए गए थे। किसी को चोट नहीं आई है।

—रङ्गून का ७वीं मई का एक समाचार है, पश्चिमी रङ्गून में एक मनुष्य दिन दहाड़े लूट लिया गया। कहा जाता है, कि एक व्यापारी का दरबान १५,०००) रुपए लेकर जा रहा था, रास्ते में एक मोटर उस आदमी के समीप आ खड़ी हुई और कुछ आदमियों ने उतर कर उस मनुष्य से रुपए छीन लिए। अभी तक कोई गिरफ़्तार नहीं किया गया है।

—अमृतसर का समाचार है कि तरनतारन में एक साधारण सभा को पुलिस ने अपने बाहुबल से भङ्ग कर दिया।

कहा जाता है कि सिटी कॉङ्ग्रेस कमिटी के सेक्रेटरी डॉ० आत्मासिंह की गिरफ़्तारी पर 'इन्क़िलाब बाग़' में एक सभा की गई। जिस समय सभा में राष्ट्रीय गान गाया जा रहा था, उसी समय पुलिस का एक दल आ उपस्थित हुआ और उसने उन लोगों से सभास्थल छोड़ देने के लिए कहा। लोगों के ऐसा करने से इन्कार करने पर उन लोगों ने लाठी-प्रयोग द्वारा सभा भङ्ग की।

कहा जाता है कि कुछ पुलिस वाले रात भर तरनतारन की सड़कों पर चक्कर लगाते रहे और सड़क पर जो कोई मिलता उसे वे गाली देते और पीटते थे।

—मछलीपट्टम का समाचार है कि वहाँ श्रीकाकुलम में झण्डा-समारोह के अवसर पुलिस ने लाठी-वर्षा की, जिसके फल-स्वरूप ३ व्यक्ति घायल हुए हैं।

कानपुर में पुलिस का दिवाला

जाँच कमिटी के सामने कलक्टर और पुलिस-कप्तान की गवाही

कोतवाल की "कार्यशीलता" की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई

जनता की आँखों में धूल झोंकने का निन्दनीय प्रयत्न :: अफ़सरों के ऊटपटाङ्ग उत्तर

कानपुर के दङ्गे की सरकारी जाँच आज ७ मई को समाप्त हुई। कुल मिला कर लगभग एक सौ गवाहियाँ हुईं। आज की गवाहियों में पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० ई० एम० रॉजर्स डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट मि० जे० एफ़० सेल तथा कोतवाल ख़ाँ बहादुर ग़ुलामहुसेन ने पुलिस तथा अन्य स्थानीय अधिकारियों पर अब तक के गवाहों द्वारा लगाए गए अभियोगों की सफ़ाई देने का प्रयत्न किया।

पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० ई० एम० रॉजर्स ने कहा कि पुलिस पर मुख्य पाँच दोष लगाए गए हैं। (१) दङ्गे के अवसर पर पुलिस ने गिरफ़्तारियाँ नहीं कीं, (२) लाठी नहीं चलाई, (३) गोली नहीं चलाई, (४) फ़ौज तुरन्त ही नहीं बुलाई गई, और (५) डराने-धमकाने का प्रदर्शन नहीं किया गया।

गिरफ़्तारियों के सम्बन्ध में आपने कहा कि पुलिस की कमी के कारण उपद्रवियों को गिरफ़्तार करना कठिन था। लाठी चलाने के सम्बन्ध में आपने कहा कि कई मौक़ों पर मेरे सामने पुलिस ने लाठी चलाई थी। गोली चलाने की कोई आवश्यकता न थी, क्योंकि भीड़ बहुत अधिक एकत्र नहीं होती थी। मुश्किल से दो-दो, तीन-तीन सौ आदमी दोनों तरफ़ दिखलाई पड़ते थे। पुलिस द्वारा हटाए जाने पर भी वे मौक़ा पाते ही फिर से एकत्र हो जाते थे। उस वक़्त यह मालूम होता था कि गोली चलाने से तुरन्त ही सारे शहर में लूट, हत्या और अग्निकाण्ड शुरू हो जायगा। क़ानून के अनुसार ग़ैर-क़ानूनी मजमे को तितर-बितर करने में कम से कम बल का प्रयोग करना चाहिए। फ़ौज बुलाने के सम्बन्ध में आपने कहा कि पौने पाँच बजे शाम तक जो ख़बरें मेरे पास पहुँची थीं, उनसे यह नहीं मालूम होता था कि पुलिस परिस्थिति को क़ाबू में न ला सकेगी। पुलिस की कमी के कारण चारों तरफ़ प्रदर्शन करना मुश्किल था। इसके बाद आपने फ़ौजी अफ़सरों द्वारा लगाए गए अभियोगों का खण्डन किया।

आपने कहा कि मेरे या मेरे किसी अफ़सर के सामने कहीं भी कोई अग्निकाण्ड, हत्या या लूट नहीं हुई। लोगों का यह कहना बिल्कुल ग़लत है कि पुलिस के अधिकारियों द्वारा कोई आदेश ही नहीं मिला था। पुलिस ने तेरह दफ़ा गोलियाँ चलाईं, जिसमें दो मरे थे और बहुत से घायल हुए थे। लोगों ने पुलिस पर शहर के बदमाशों को गिरफ़्तार न करने का भी दोषारोपण किया है। उन्हें नहीं मालूम कि हम लोग २४ ता० की रात को बदमाशों के घरों पर उन्हें गिरफ़्तार करने के लिए गए, परन्तु कोई मिला नहीं। वे इतने बेवक़ूफ़ नहीं हैं, कि दङ्गे के समय अपने घरों पर बैठे रहते। घरों पर मिल जाते तो भी उनको गिरफ़्तार करना कठिन था। हम क़ानून की किस दफ़ा से उन्हें पकड़ते, उन पर मामला चलाते और अदालत से हिरासत में रखने की मुहलत माँगते?

इसके बाद आपने ख़ान बहादुर सय्यद ग़ुलाम हुसैन (कानपुर के कोतवाल) के कार्यों की प्रशंसा की। आपने कहा कि इस दङ्गे में सय्यद ग़ुलाम हुसैन से बढ़ कर किसी ने कार्य नहीं किया। एक सप्ताह तक उनसे कम शायद ही कोई सोया हो।

आपने जाँच कमीशन के प्रेज़िडेण्ट मि० कीन के एक प्रश्न के उत्तर में कहा कि पुलिस हत्याओं का पता बराबर लेती रहती थी।

प्रेज़िडेण्ट—गवाहों का यह कथन मेरी मिसिल में दर्ज है, कि सन् १९२७ वाले दङ्गे में ज़िला मैजिस्ट्रेट तथा मि० एण्डरसन ने दङ्गे के समय ही गिरफ़्तारियाँ की थीं। इस दङ्गे में ऐसा क्यों नहीं किया गया?

मि० रॉजर्स—तब और अब की परिस्थिति में अन्तर है। हम लोगों को देखते ही उपद्रवी भग जाते थे!

नवाबज़ादा—तब और अब के दङ्गे में अन्तर इतना ही है कि इस बार का दङ्गा पहले की अपेक्षा अधिक भयानक हुआ। लेकिन मेरी समझ से भीड़ों के एकत्र होने और दङ्गा मचाने में कोई विशेषता न थी।

इस प्रश्न के उत्तर में, कि २४ ता० को मेस्टन रोड पर जब दोनों सम्प्रदायों के दल आमने-सामने खड़े थे तब गोली क्यों नहीं चलाई गई, मि० रॉजर्स ने कहा कि वे दोनों दल एक-दूसरे से कुछ दूर फ़ासले पर सिर्फ़ खड़े थे, इसलिए मैंने गोली चलाना उचित नहीं समझा।

नवाबज़ादा—लोगों का कहना है कि मि० सिद्दीक़ के घर के पास ही एक सार्वजनिक पुस्तकालय है, पुलिस बजाय सिद्दीक़ की जगह के, उस सार्वजनिक स्थान को काम में ला सकती थी।

उत्तर—मुझे बतलाया गया था कि उस स्थान पर सब से निकटस्थ टेलीफ़ोन मि० सिद्दीक़ का है। प्रजा की रक्षा का इससे उत्तम उपाय नहीं हो सकता था।

नवाबज़ादा—आपका कहना है कि पुलिस अब तक शान्ति क़ायम करने के कड़े प्रयत्नों के लिए बदनाम रही है। क्या आप ऐसा कोई उदाहरण बतला सकते हैं, जिसमें लोगों ने कभी साम्प्रदायिक दङ्गों के दबाने के लिए पुलिस द्वारा किए गए दमन की निन्दा की हो?

मि० रॉजर्स—मैं तुरन्त कोई उदाहरण नहीं बतला सकता।

नवाबज़ादा—क्या आपका ख़्याल है कि यहाँ के अधिकारियों ने जो प्रबन्ध किया था, उससे अच्छा प्रबन्ध नहीं किया जा सकता था?

मि० रॉजर्स—मेरी पुलिस का प्रबन्ध जितना उत्तम हो सकता है, उतना था।

प्रश्न—क्या आप समझते हैं, कि आपकी पुलिस ने अपना कर्तव्य पूर्णतया पालन किया है?

उत्तर—यह प्रश्न ही दूसरा है। मुख्य प्रश्न आपका यह था, कि क्या यहाँ की पुलिस का प्रबन्ध उत्तम था?

प्रश्न—मेरे प्रश्न का यह भी मतलब है कि क्या यहाँ की पुलिस का प्रबन्ध दङ्गे के अवसर पर भी अच्छा था?

उत्तर—जो कुछ मैंने देखा उसके अनुसार मैं कह सकता हूँ, कि प्रबन्ध अच्छा था।

प्रश्न—मुझे आशा है कि अब आपको इस दङ्गे के सम्बन्ध की सम्पूर्ण वस्तुस्थिति मालूम हो गई है। शायद आपको यह भी मालूम हो चुका होगा, कि इस दङ्गे से लोगों को कितनी हानि पहुँची है।

उत्तर—मेरा तो यह निश्चित ख़्याल है कि पुलिस ने अपनी तरफ़ से कोई बात उठा नहीं रक्खी। प्रबन्ध जितना उत्तम हो सकता था, उतना अच्छा था।

प्रश्न—तो क्या साम्प्रदायिक उपद्रव के अवसरों पर किसी समझदार नागरिक को अपने जान-माल की हिफ़ाज़त की आशा, जितनी इस दङ्गे में हुई है, उससे अधिक के लिए करना, बुद्धिमत्तापूर्ण होगा?

उत्तर—नहीं।

प्रश्न—क्या कानपुर में ता० २४ मार्च को ५५७ सिपाहियों और अफ़सरों, ३२ अफ़सरों और ८५२ ब्रिटिश सैनिकों तथा २१ अफ़सरों और ३४१ ऑक्ज़िलरी फ़ोर्स के सैनिकों के होते हुए भी साधारण नागरिक इससे अधिक जान-माल के हिफ़ाज़त की आशा नहीं कर सकता?

उत्तर—मैंने जो उत्तर दिया है वह केवल पुलिस-शक्ति के आधार पर दिया है। जितने आदमी हमारे पास थे, उसके अनुसार हमने उनकी रक्षा की।

प्रश्न—मालूम होता है, आपके पास पुलिस के अतिरिक्त जो अन्य शक्तियाँ मौजूद हैं, उनका विचार नहीं करते।

उत्तर—नहीं।

प्रश्न—लेकिन स्थानीय अधिकारीगण वक़्त पड़ने पर पुलिस के अतिरिक्त शक्तियों का भी तो उपयोग कर सकते हैं।

उत्तर—कर सकते हैं, परन्तु उस पर विचार करना हमारा काम नहीं है।

प्रश्न—किसी गवाह ने कहा है कि फ़ौज से केवल एक कम्पनी माँगी गई थी।

उत्तर—परिस्थिति क़ाबू के बाहर हो जाने पर मैंने कलक्टर से केवल सैनिकों के लिए कहा था।

प्रश्न—क्या आपने उन्हीं सैनिकों के लिए कहा था जो फूलबाग में थे?

उत्तर—मैंने किसी सैनिक-दल विशेष के लिए नहीं कहा था।

प्रश्न—क्या आपने कलक्टर से आवश्यक सैनिकों की संख्या नहीं बतलाई थी?

उत्तर—नहीं।

प्रश्न—सैनिक अधिकारी यह कैसे जानते, कि आपको कितने सैनिकों की आवश्यकता है?

उत्तर—कितनी संख्या में सैनिक कहीं भेजे जा सकते हैं, इसका विचार करना सैनिक अधिकारियों का काम है। इसके लिए क़ानून बना हुआ है। उन्हें केवल परिस्थिति बतला दी जाती है।

प्रश्न—लेकिन क्या आप उन्हें अपनी सलाह नहीं दे सकते थे कि आपको कितने सैनिकों की आवश्यकता होगी।

उत्तर—हम लोग इस मामले में कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकते। फ़ौजी कमाण्डर ही इन बातों का निर्णायक है।

प्रश्न—क्या सेना-विभाग को नगर की परिस्थिति का ज्ञान था? क्या उसकी राय से उतने सैनिक, जितने उसने भेजे थे, यथेष्ट थे?

उत्तर—मैं नहीं कह सकता। मैंने कलक्टर को यह सूचना दे दी थी कि परिस्थिति नाज़ुक है और मैं उसे क़ाबू करने में असमर्थ हूँ। मैंने सेना बुलाने के लिए भी उनसे कह दिया था।

प्रश्न—लेकिन आपकी सूचना तो बहुत अस्पष्ट थी।

उत्तर—जब मैंने कह दिया कि परिस्थिति ख़राब है, मेरी पुलिस उसका मुक़ाबिला नहीं कर सकती, तो इसका अस्पष्ट अर्थ यही था कि जितने अधिक सैनिक भेजे जा सकें उतने भेज दिए जायँ। यह मेरी निजी सम्मति है, मैं सैनिक-नीति में कोई दख़ल नहीं देना चाहता।

प्रश्न—२१ तारीख़ की सन्ध्या को आपके पास २७० आदमी बाहर से और आ गए थे, परन्तु फिर भी आप परिस्थिति में कोई सुधार नहीं कर सके?

उत्तर—हाँ, नहीं कर सका। उस समय तक परिस्थिति इतनी भीषण हो चुकी थी, कि अतिरिक्त-पुलिस-शक्ति के पहुँच जाने पर भी वह सम्पूर्ण स्थानों के लिए यथेष्ट प्रमाणित नहीं हुई।

मि० रॉजर्स ने कहा कि २१० सशस्त्र कॉन्स्टेबिलों का और प्रबन्ध हो जाने से दङ्गा क़ाबू में किया जा सकता था।

प्रेज़िडेण्ट—क्या इस दङ्गे में मिल-मज़दूरों ने कोई विशेष उपद्रव किया है?

मि० रॉजर्स—कोई विशेष उपद्रव नहीं किया।

प्रश्न—क्या आपको यह ख़बर है, कि उपद्रवियों में मिल-मज़दूर विशेष रूप से न सही, तो साधारण रीति से अवश्य शामिल थे?

उत्तर—मुझे इसकी ख़बर नहीं है।

डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट मि० सेल का बयान

आपने अपने लिखित बयान में अधिकारियों पर लगाए गए दोषारोपणों का खण्डन किया।

नवाबज़ादा लियाक़तअली ख़ाँ ने मि० सेल से पूछा कि आपने अपने लिखित बयान में जो यह कहा है कि जाँच-कमीशन के सामने दूसरे लोगों की गवाहियों की तरह हमें क़ानूनी सलाह की सहायता नहीं मिल सकी, इसका क्या मतलब है?

मि० सेल—कमीशन के सामने गवाही देने वाली पार्टियों में से कम से कम एक पार्टी के सहायक बहुत से वकील थे। हम लोगों के पास ऐसी कोई सहायता न थी, हम लोगों ने अपने बयानों को अपने आप तैयार किया है।

प्रश्न—क्या आपने २४ ता० को फ़ौज बुलाने के समय फ़ौजी अफ़सर को यह नहीं बतलाया, कि आपको कितनी सेना की आवश्यकता थी।

उत्तर—जहाँ तक मुझे याद है, मैंने शायद फूलबाग़ में जो सैनिक कम्पनी खड़ी थी, उसी को मेस्टन रोड भेजने के लिए कहा था।

प्रश्न—क्या आपने उसे यथेष्ट समझा?

उत्तर—हाँ।

प्रश्न—बाद में शाम के वक्त आपने और अधिक सैनिकों को भेजने के लिए कहा था। क्या उस समय आप और सैनिक अधिकारियों के बीच इस सम्बन्ध में कोई निर्णय हुआ था?

उ०—मुझे ठीक-ठीक याद नहीं है। मुझे इतना ही याद है कि मि० रॉजर्स ने मुझसे अधिक सैनिकों की आवश्यकता बतलाई थी। मैंने मि० रॉजर्स की बात फ़ौज के कर्नल से कह दी थी। कर्नल ने कहा—"मैं और भी सैनिक कम्पनियाँ भेज सकता हूँ।" इससे अधिक हम लोगों ने कोई बातचीत नहीं की।

प्र०—क्या आपको फ़ौज बुलाने के समय इस बात का ज्ञान था, कि कितनी सैनिक शक्ति की आवश्यकता पड़ेगी?

उ०—मि० रॉजर्स ने जब देखा कि शहर के बाहरी मुहल्लों से कुछ लाशों का आना प्रारम्भ हो गया है, तो उन्होंने मेरे पास ख़बर भेजी, कि परिस्थिति भयानक होती जा रही है। मुझे याद है कि फ़ौज के कर्नल ने मुझसे कहा था, कि एक कम्पनी छावनी की बैरकों में रिज़र्व रहेगी। उन्होंने यह मुझसे कब कहा था, यह मुझे याद नहीं है।

प्र०—आपको यह कब मालूम हुआ, कि परिस्थिति सचमुच भयानक हो गई है?

उ०—मुझे कई मौक़ों पर मालूम हुआ। पहले मुझे ९ बजे शाम को, जब कुछ सेना बुलाई गई थी, तब मालूम हुआ। इसके बाद मुझे ६ बजे रात को मालूम हुआ। परन्तु इसके बाद फिर दूसरे दिन ६ बजे तक परिस्थिति सुधरी रही।

प्र०—मतलब यह है, कि २४ ता० को ६ बजे रात से लेकर २५ ता० को ६ बजे सुबह तक आपका ख़्याल रहा, कि आपके पास दङ्गे को शान्त करने के लिए यथेष्ट शक्ति मौजूद थी।

उ०—हाँ।

प्र०—यह आपको कब मालूम हुआ कि दङ्गा शान्त करने के लिए आपके पास यथेष्ट-शक्ति नहीं है?

उ०—मुझे यह २५ ता० की सुबह को किसी समय मालूम हुआ था।

प्र०—क्या आपको यह याद है, कि आपने चीफ़ सेक्रेटरी को ख़बर दी थी, कि लखनऊ से कुछ फ़ौज भेज दी जाय?

उ०—मुझे याद नहीं, कि मैंने यह कहा था या नहीं।

प्र०—इस प्रश्न के द्वारा मैं मालूम करना चाहता हूँ, कि चीफ़-सेक्रेटरी को यह बात मालूम थी या नहीं, कि आपके पास दङ्गा शान्त करने के लिए यथेष्ट-शक्ति नहीं है? मैं इस प्रश्न के द्वारा यह भी जानना चाहता हूँ, कि आपने चीफ़-सेक्रेटरी के पास परिस्थिति की भयङ्करता और अधिक शक्ति की आवश्यकता की सूचना भेजी या नहीं?

उ०—मुझे खेद है कि यह बात मैं स्वयं आपको नहीं बतला सकता। इन बातों को याद रखना बहुत मुश्किल है।

'परिस्थिति में सुधार'

प्रश्न—शहर की हालत बराबर जानते रहने का आपके पास कौन सा ज़रिया था?

उत्तर—सुबह-शाम मैं स्वयं चक्कर लगाता था। इसके अतिरिक्त मि० बैरन तथा पुलिस-अफ़सरों से भी टेलीफ़ोन द्वारा ख़बरें मिलती थीं। कुछ नागरिक भी मेरे पास आया करते थे।

प्र०—आपने २६ ता० को चीफ़ सेक्रेटरी से टेलीफ़ोन द्वारा कहा था कि 'परिस्थिति में काफ़ी सुधार' हो गया है, जब कि गवाहों के कथनानुसार २६ ता० को सुबह चारों ओर हत्याएँ हो रही थीं और मकान जलाए जा रहे थे। ऐसी परिस्थिति तो काफ़ी सुधरी हुई नहीं कही जा सकती?

उ०—टेलीफ़ोन बिगड़ गया था। चीफ़ सेक्रेटरी के पास तारों से ख़बरें भेजनी पड़ीं।

प्र०—गवाहों के कथनानुसार २४ ता० को ६ बजे रात से लेकर २९ ता० को दोपहर तक परिस्थिति बड़ी भयानक रही। हम लोगों का भी ऐसा ख़्याल है, कि २५ तथा २६ तारीख़ें सब से अधिक भयानक थीं।

प्र०—आपने चीफ़ सेक्रेटरी के पास जो २४ ता० को ख़बर भेजी थी, उसमें अधिक पुलिस की आवश्यकता नहीं बतलाई थी।

इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दिया गया।

प्र०—जब आप शेरा बाबू के यहाँ थे, तब मुसलमानों ने क्या आप से यह शिकायत नहीं की थी कि मस्जिद पर हमला हो रहा है?

उ०—कुछ मुसल्मानों और कुछ हिन्दुओं ने अपनी-अपनी शिकायतें पेश की थीं। मैंने उनसे कहा कि उन मस्जिदों और मन्दिरों को कल देख लूँगा।

प्र०—२४ तारीख़ को जितना समय आपने शहर में व्यतीत किया था, क्या उसका कोई नोट भी आपने लिखा था?

उ०—मैं तीन बजे शहर गया था और चार बजे वापस आया।

प्र०—और रात में?

उ०—६ बजे के बाद।

प्र०—आप २१ तारीख़ को सुबह शहर गए थे। क्या आप दिन में भी गए थे?

उ०—शायद शाम तक नहीं गया।

प्र०—आपके चार बजे मेस्टन रोड से जाने के वक्त क्या किसी प्रकार का उपद्रव हो रहा था?

उ०—शायद कुछ ईंटे वग़ैरह चल रही हों।

प्र०—क्या आप मस्जिद की हालत का कुछ पता लेने नहीं जा सकते थे?

उ०—मैंने समझा कोई विशेष बात न होगी। मैंने यह नहीं सुना कि लूट हो रही थी।

प्र०—मेरा ख़्याल है, कि आपने अपने बयान में कहा था कि आप मेस्टन रोड से इसलिए चले गए थे कि आपको १४४ दफ़ा का हुक्म लिखना था।

उ०—हाँ। वहाँ काग़ज़-क़लम का अभाव था। इसके अतिरिक्त मुझे सन् , १९२७ के समय जारी किए गए हुक्म को भी देखना था।

प्र०—क्या दङ्गा शान्त करने के लिए आपने ग़ैर-सरकारी आदमियों की मदद नहीं ली?

उ०—परिस्थिति की भयानकता के कारण मुझे उनसे मदद माँगने का ख़्याल ही नहीं आया, हम लोग स्वयं ही बहुत व्यस्त थे।

प्र०—अधिकारियों पर जो दोष लगाए गए हैं, वे आपको मालूम हो चुके हैं और जनता को जान-माल का जो नुक़सान पहुँचा है, वह भी आपको मालूम हो गया! आप यह भी जानते ही हैं कि आपके पास कितनी शक्ति थी और कितनी का उपयोग आप कर सकते थे, इन बातों को ध्यान में रख कर क्या आप बतला सकते हैं कि जो कुछ आपने किया, उससे अच्छा नहीं किया जा सकता था? या इससे अच्छे की आशा की जा सकती है?

उ०—हम लोगों का मुख्य कार्य सड़कों पर क़ब्ज़ा बनाए रखना और भीड़ों को तितर-बितर कर देना था।

प्र०—वास्तव में आपके सामने कानपुर में सेना या पुलिस-शक्ति की कमी का प्रश्न नहीं था। आप परिस्थिति की भयानकता से अनभिज्ञ थे।

उ०—दोनों ही बातें थीं। परन्तु यदि पास में यथेष्ट शक्ति होती, तो २१ तारीख़ को मुहल्लों तथा शहर के बाहरी हिस्सों में हमने शान्ति क़ायम कर दी होती।

प्र०—परन्तु आप शान्त क़ायम कैसे कर देते, जब आपको यही नहीं मालूम था कि कहाँ क्या हो रहा है?

उ०—निसन्देह ख़बरों के मिलने में कुछ कमी रही।

प्र०—जितने सैनिक थे उनसे एक हज़ार अधिक सैनिकों के होने पर भी, मैं समझता हूँ, कि आप परिस्थिति को सुधार नहीं सकते थे, यदि आपके पास पहुँचने वाली ख़बरों और परिस्थिति के ज्ञान का यही हाल था।

उ०—मैं समझता हूँ, तङ्ग गलियों वाले मुहल्ले में शान्ति क़ायम करने की कठिनाइयों का भी कुछ ध्यान रखना चाहिए।

कलावती देवी की अस्मत पर हाथ?

सी० आई० डी० के डी० एस० पी० नन्दकिशोर पर भीषण दोषारोपण !!

सरकारी-गवाह कैलाशपति मुख़बिर कैसे बनाया गया ?

देहली षड्यन्त्र-केस के सामने गवाहों के सनसनीपूर्ण बयान

अदालत में अन्तिम मुग़ल-सम्राट "बहादुरशाह ज़िन्दाबाद" के गगनभेदी नारे

महारानी लक्ष्मीबाई, ताँतिया टोपी और सन् ५७ के विप्लवकारियों की याद !

देशी रियासतों में खोज :: प्रतिवादी वकीलों के पीछे भी खुफ़िया पुलिस लगा दी गई !!

तारीख़ ३री का समाचार है, कि अपनी जिरह में श्री० वात्स्यायन ने गवाह से पूछा, कि फ़ुट-कॉन्स्टेबिल से उसकी तरक़्क़ी क्योंकर हुई ? गवाह ने इसका कारण बतलाने से इन्कार किया। अदालत के इसी प्रश्न के पूछने पर गवाह ने उत्तर दिया—मैंने एक बम-केस का पता लगाया था।

प्रश्न—कौन बम-केस ?

उत्तर—मैंने सरकारी गवाह कैलाशपति को गिरफ़्तार किया था।

प्रश्न—कैलाशपति मनुष्य है या बम-केस है ? (हास्य-ध्वनि)

अभियुक्त विद्याभूषण के पूछने पर गवाह ने कहा, कि उक्त दोनों फ़रार-अभियुक्तों के अतिरिक्त, काशीनाथ, भवानीसिंह और भवानीसहाय की भी खोज मैं करता था। ये सभी अभी तक फ़रार हैं। वात्स्यायन और निगम की खोज मैंने नहीं की है।

गवाह ने आगे कहा, कि मैं लेखराम को अच्छी तरह जानता हूँ। हम दोनों एक ही स्थान के रहने वाले हैं। मि० बैनर्जी के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा कि मैं और लेखराम रोहतक में ४ वर्षों तक साथ थे।

इन्स्पेक्टर की गवाही

युक्तप्रान्तीय पुलिस के एक इन्स्पेक्टर त्रिलोकसिंह ने कहा, कि मैंने ब्रिटिश गढ़वाल के अनेक स्थानों में भवानीसिंह की खोज की है। वहाँ उसके कुछ सम्बन्धी रहते हैं। अभियुक्त का पिता रिटायर्ड सरकारी कर्मचारी है। सरकार की ओर से उसे पेन्शन भी मिलती है। बहुत खोज करने पर भी अभियुक्त का कहीं पता नहीं लगा और उसके शीघ्र गिरफ़्तार होने की कोई आशा भी नहीं है।

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर गवाह ने कहा, कि अभियुक्त की गिरफ़्तारी के लिए मुझे कोई वारण्ट नहीं दिया गया है, किन्तु मुझसे कहा गया था, कि गोडोडिया स्टोर्स डकैती केस से सम्बन्ध में अभियुक्त के नाम वारण्ट है। मैं अभियुक्त के पिता केप्टेन नाथासिंह को बचपन से ही जानता हूँ। मैं उसी गाँव का रहने वाला हूँ, और गाँव के रिश्ते से अभियुक्त मेरी स्त्री का भाई होता है। मैंने अभियुक्त भवानीसिंह को क़रीब १२ वर्षों से नहीं देखा है, और उसका जो विवरण मैंने अदालत के सामने किया है, वह मुझे लिख कर दिया गया था। मेरे पास अभियुक्त की फ़ोटो नहीं है। मैंने श्रीनगर और अयूरी नामक गाँवों में तथा लैन्सडाउन में अभियुक्त के सम्बन्धियों से उसके बारे में पूछ-ताछ की थी। १७ दिसम्बर के बाद से भवानीसिंह को खोजने का कोई विशेष प्रयत्न मैंने नहीं किया।

मि० आसफ़अली—जब ९ महीने पहले तुमने उसकी खोज की थी, तो इस समय तुम कैसे कह सकते हो, कि उसका पता नहीं लग रहा है ?

गवाह—उन पहाड़ी स्थानों में जहाँ अभियुक्त के आने-जाने की सम्भावना है, मेरे अनेक सम्बन्धी रहते हैं। यदि वह लौट कर उन स्थानों में आया होता, तो मेरे सम्बन्धी मुझे अवश्य सूचना दे देते। गवाह ने आगे कहा कि मुझे नहीं मालूम कि अभियुक्त जीवित है या नहीं। मि० बोस के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा कि अभियुक्त की आयु इस समय २२ वर्ष की होगी।

देशी रियासतों में अभियुक्तों की खोज

दिल्ली-पुलिस के जैग़म हुसेन ने अपने बयान में कहा, कि मैंने भवानीसहाय की खोज रिवाड़ी, अजमेर, अलवर स्टेट, जयपुर और इन्दौर आदि स्थानों में की है। मेरा विचार है कि अभियुक्त के शीघ्र ही गिरफ़्तार होने की कोई आशा नहीं है।

मि० आसफ़अली के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि मैं अभियुक्त को व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता, और उसकी गिरफ़्तारी के लिए मेरे पास कोई वारण्ट नहीं है। मुझे ज़बानी कहा गया है कि भवानीसहाय दिल्ली बम केस नं० १२८ का ३१७वीं धारा के अनुसार अभियुक्त है। मुझे उसकी कोई फ़ोटो नहीं दी गई है। उसको पहचानने वाला कोई आदमी भी मेरे पास नहीं है, किन्तु उसका विवरण लिख कर मुझे दिया गया है।

गवाह का बयान समाप्त होने के पहले ही अदालत दूसरे दिन के लिए स्थगित कर दी गई। अभियुक्तों के 'देशद्रोहियों का नाश हो' की आवाज़ से सारी अदालत गूँज उठी।

*　　*　　*

नई दिल्ली का ४थी मई का समाचार है कि आज १० बज कर २० मिनट पर अभियुक्तों ने 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद' के नारे के साथ अदालत में प्रवेश किया। फिर वे २ मिनट तक राष्ट्रीय गान गाते रहे। १० बज कर ३० मिनट से अदालत की कार्यवाही शुरू हुई। श्री० बोस के जिरह करने पर गवाह जैग़म हुसेन ने कहा कि मैंने अपने भेदियों के द्वारा रिवाड़ी में भवानीसहाय के सम्बन्ध में पूछताछ कराई थी। मैंने स्वयं पूछताछ नहीं की। मैं अपने भेदियों का नाम बताने के लिए तैयार नहीं हूँ। अलवर में वहाँ की पुलिस के ज़रिए मुझे गुप्तचर मिले थे। जयपुर में मैंने स्वयं दूकानों और घरों में पूछताछ की थी। मैं वहाँ के किसी दूकानदार या मकान-मालिक का नाम नहीं बता सकता। मैं इन्दौर भी गया था, किन्तु यह मुझे याद नहीं, कि कितने दिनों तक वहाँ ठहरा था। मैंने धर्मशालों में, तथा स्कूल-कॉलेजों में उसकी खोज की। गवाह ने उन व्यक्तियों के नाम बतलाने से इन्कार किया, जिनसे उसने अभियुक्त के सम्बन्ध में पूछताछ की थी।

श्री० विद्याभूषण आज़ाद के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि मैं षड्यन्त्र केस के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता। अधिकारियों की ओर से मुझे कहा गया था, कि भवानीसहाय एक बम-केस में अभियुक्त है। अलवर में मैं रेलवे-पुलिस की चौकी में ठहरा था, किन्तु उस चौकी के अफ़सर का नाम मुझे याद नहीं है। भवानीसहाय मध्यम क़द का अर्थात् ५ फ़ीट, ८ इञ्च के लगभग की ऊँचाई का मनुष्य है।

यशपाल

इसके बाद लाहौर के ख़ुफ़िया-विभाग के हेड कॉन्स्टेबिल रामसरन दास की गवाही हुई। उसने अपने बयान में कहा कि मैं यशपाल को खोजने के लिए नियुक्त किया गया था। यशपाल काङ्गड़ा ज़िले के अन्तर्गत भमपाल नामक गाँव का रहने वाला है। मैं अभी तक उसकी खोज में हूँ। मैं यशपाल की खोज में अनेक देशी रियासतों में भी गया हूँ। उसका पता लगना कठिन है। वह लाहौर षड्यन्त्र का भी अभियुक्त है।

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर, गवाह ने कहा कि मैं यशपाल को उसके चेहरे से पहचान सकता हूँ। यशपाल के गाँव भमपाल में मेरे कुछ सम्बन्धी रहते हैं। मैंने कई बार यशपाल को देखा है। गवाह ने कहा, कि जहाँ तक मुझे याद है, मैंने दो बार यशपाल को देखा है, एक बार तो ९ वर्ष पहले मैंने उसे देखा था। लाहौर षड्यन्त्र के सम्बन्ध में एक वारण्ट भी उसकी गिरफ़्तारी के लिए मुझे दिया गया था, किन्तु दिल्ली षड्यन्त्र के सम्बन्ध में कोई वारण्ट नहीं दिया गया है। गवाह ने आगे बतलाया, कि अपने भेदियों के द्वारा ख़बर पाकर ही मैं देशी रियासतों में उसे खोजने गया था। २० दिन पहले मैं उसे अरकी नामक स्थान में खोज रहा था। और गत दो दिनों से मैं उसे दिल्ली में खोज रहा हूँ। गवाह ने कहा, कि यशपाल का एक दूसरा नाम रलपाल भी है। मुझे नहीं मालूम उसके दो ही नाम

हैं या अधिक। मुझे नहीं मालूम यशपाल भारत में है या नहीं?

श्री० बलजीतसिंह के पूछने पर गवाह ने कहा, कि जब मैं यशपाल की खोज में जाता था, तो पिस्तौल नहीं रखता था। मि० बैनर्जी के पूछने पर गवाह ने कहा कि अभियुक्त से अपनी रक्षा करने के लिए मैंने कोई उपाय नहीं किया। गवाह ने अपना वर्तमान पता बतलाने से इन्कार किया।

* * *

सरकारी वकील के जिरह करने पर हबीब हुसेन ने कहा कि मैंने मेरठ, नैनीताल, हल्द्वानी, कोटद्वारा और रुड़की में, सम्पूर्णसिंह टण्डन और भवानीसिंह की खोज की है, किन्तु उनका कोई पता नहीं लगा। निकट-भविष्य में भी उनके गिरफ़्तार होने की कोई आशा नहीं है।

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर गवाह ने कहा कि टण्डन का एक दूसरा नाम आसफ़ भी है, किन्तु मुझे यह नहीं मालूम कि भवानीसिंह का भी कोई दूसरा नाम है या नहीं। मुझे उनकी गिरफ़्तारी के लिए वारण्ट नहीं दिए गए थे। उन्हें पहचानने वाला कोई आदमी भी मुझे नहीं दिया गया था। मैं केवल अफ़सरों के बतलाए हुए स्थानों में उनकी खोज करता था। मुझे यह पता लगा था कि अभियुक्त हल्द्वानी में है। इस पते के बताने वाले का नाम मैं नहीं कहना चाहता। सिर्फ़ इतना ही बता सकता हूँ, कि वह पुलिस का कोई भेदिया नहीं है। मैं अभियुक्तों के किसी भी मित्र या सम्बन्धी का नाम नहीं बता सकता, जिनके द्वारा मैंने अभियुक्तों के सम्बन्ध में पूछताछ की है। मैंने अभियुक्तों की खोज में उन सभी स्थानों का भ्रमण किया है, जहाँ-जहाँ उनके जाने की सम्भावना है। ऐसा कोई विशेष स्थान नहीं है, जहाँ अभियुक्तों ने स्थिरतापूर्वक वास किया हो; इस कारण, मुझे साधारण तौर से इधर-उधर उनकी खोज करनी पड़ी है। मैंने सम्पूर्णसिंह टण्डन को दिल्ली में देखा था, जहाँ वे रामजस कॉलेज के प्रोफ़ेसर थे। यह बात मुझे उस कॉलेज के लड़कों से मालूम हुई, किन्तु मैंने वहाँ के प्रिन्सिपल से इस सम्बन्ध में कोई पूछताछ नहीं की। मैंने भवानीसिंह के सम्बन्ध में उसके पिता नाथूसिंह से कोई पूछताछ नहीं की है, और मैं नहीं जानता कि अभियुक्त जीवित है, और भारत में है या नहीं।

श्री० बोस के प्रश्नों का उत्तर देते हुए गवाह ने कहा, कि २ वर्षों से मैं टण्डन के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता। मैंने पहले-पहल उसे रामजस कॉलेज से आते समय देखा था। मुझे याद नहीं, किसने मुझे बताया था कि यही सम्पूर्णसिंह हैं। उसके बतलाने का क्या उद्देश्य था, यह भी मैं नहीं कह सकता। भवानीसिंह को मैं इसलिए जानता हूँ कि वह अक्सर टण्डन से मिलने जाया करता था।

श्री० बलजीतसिंह के पूछने पर गवाह ने कहा कि मुझे यह नहीं मालूम कि, दिल्ली में जो एक मनुष्य गिरफ़्तार हुआ था, उसके बयान के अनुसार, मेरठ में अभियुक्तों की खोज की गई थी या नहीं।

अभियुक्त निगम के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा कि टण्डन इतिहास का अध्यापक था, और भवानीसिंह दिल्ली में पढ़ता था, किन्तु मुझे यह नहीं मालूम कि वह किस स्कूल या कॉलेज में पढ़ता था।

अभियुक्त विद्याभूषण के पूछने पर गवाह ने कहा कि किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में अपना सन्देह दूर करना, मेरी ड्यूटी का एक अङ्ग है, इस कारण मैंने स्वयं भवानीसिंह के सम्बन्ध में पता लगाया था। उसकी खोज करने की आज्ञा मिलने से पहले, उसकी गति-विधि का निरीक्षण करने की आज्ञा मुझे नहीं दी गई थी। मैंने हल्द्वानी में एक यात्री से अभियुक्तों के सम्बन्ध में कुछ पूछताछ की। संयोगवश वह मनुष्य भवानीसिंह के विषय में जानता था।

दिल्ली के ख़ुफ़िया-विभाग के सब-इन्स्पेक्टर मोतीराम ने यशपाल, भवानीसहाय और मुसम्मात प्रकाशो की खोज के सम्बन्ध में अपना बयान दिया। उसने कहा कि मैंने अलीगढ़, मथुरा, खुरजा, बुलन्दशहर, ग़ाज़ियाबाद, हिस्सार, भवानी, तेजारा, अलवर और राजगढ़ आदि स्थानों में उनकी खोज की है। गवाह ने कहा कि इन अभियुक्तों के निकट-भविष्य में गिरफ़्तार होने की कोई सम्भावना नहीं है।

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर गवाह ने कहा कि अभियुक्त धन्वन्तरि की गिरफ़्तारी पर मुझे कोई पुरस्कार नहीं मिला। जिस समय उनकी गिरफ़्तारी हुई, उस समय मैं दिल्ली के बाहर था। मैंने अभियुक्तों को नहीं देखा था, किन्तु मुझे उनके विवरण लिख कर दिए गए थे। भवानीसहाय को पहचानने वाला एक आदमी मेरे साथ दिया गया था। अभियुक्त के किसी मित्र या सम्बन्धी से मैंने कोई पूछताछ नहीं की है। मेरे साथ के एक सब-इन्स्पेक्टर के ज़रिए ही मुझे कुछ बातें मालूम हुई थीं। यशपाल और मुसम्मात प्रकाशो का कोई दूसरा नाम नहीं है। किन्तु भवानीसहाय के रामप्रसाद, रामनाथ और शायद श्रीकृष्ण भी नाम हैं। मैं यह नहीं कह सकता, कि अभियुक्त इस देश में है, और जीवित है या नहीं।

इसी समय अदालत लञ्च के लिए बरख़ास्त हुई।

लञ्च के बाद मोतीराम का बयान फिर शुरू हुआ। मि० बोस के पूछने पर गवाह ने कहा, कि मुझे यह नहीं मालूम कि मुसम्मात प्रकाशो पर्दानशीन है या नहीं।

मि० अन्सारी के पूछने पर गवाह ने कहा कि बिना अफ़सरों की आज्ञा के मैं किसी व्यक्ति की निगरानी नहीं करता हूँ।

ख़ुफ़िया पुलिस के कॉन्स्टेबिल अमीरचन्द ने अपने बयान में कहा कि मैंने भवानीसहाय और काशीराम की खोज की है। उनके शीघ्र गिरफ़्तार होने की कम सम्भावना है।

मि० आसफ़अली के जिरह करने पर गवाह ने कहा कि मैं यशपाल और मुसम्मात प्रकाशो को नहीं जानता हूँ, किन्तु भवानीसहाय और काशीराम को १६२१ से जानता हूँ, जबकि काशीराम ने दिल्ली में एक भाषण दिया था। काशीराम का और कोई नाम है या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता। भवानीसहाय उस समय मेरा पड़ोसी था। मुझे अभियुक्तों के सम्बन्ध में केवल लिखित विवरण दिए गए थे, उनको फ़ोटो मुझे नहीं दी गई थीं। जिस समय मैं भवानीसहाय की खोज करने निकला, उस समय मुझे यह पता नहीं था कि वह मेरा पड़ोसी है। मैं अभियुक्त की खोज में हिस्सार, भवानी, तेजारा, राजगढ़, अलवर, जयपुर और इन्दौर गया। राजगढ़ में भवानीसहाय के चचा से मेरी मुलाक़ात हुई। उन्होंने मुझे बतलाया कि भवानीसहाय दो महीने पहले राजगढ़ में था, और फिर वह अलवर गया था, जहाँ उसके कुछ सम्बन्धी रहते हैं।

* * *

२वीं मई का समाचार है, कि आज दलीपसिंह ने अपने बयान में कहा कि मैंने सिकन्दराबाद (यू० पी०) में रामचन्द्र शर्मा की खोज की है। किन्तु मि० आसफ़अली के जिरह करने पर गवाह ने कहा कि सिकन्दराबाद नहीं, सिकन्दराराव में मैंने उसकी खोज की है। गवाह ने आगे कहा कि मैं अब भी दिल्ली में अभियुक्त को पहचानने वाले एक आदमी की सहायता से, उसकी खोज कर रहा हूँ।

मि० आसफ़अली—गत दो महीनों से उसका कोई पता लगा है?

गवाह—नहीं।

ख़ुफ़िया-विभाग के इन्स्पेक्टर चैतराम ने कहा कि मैं भी शर्मा की खोज में हूँ। गवाह ने बताया कि गत सत्याग्रह आन्दोलन के समय अभियुक्त बुलन्दशहर का 'डिक्टेटर' था।

मि० आसफ़अली के पूछने पर गवाह ने कहा कि शर्मा के 'डिक्टेटर' होने का कोई काग़ज़ी सबूत मेरे पास नहीं है, किन्तु मुझे पता चला था कि उकसाव (Instigation) ऑर्डिनेन्स के अनुसार उस पर वारण्ट जारी किया गया था। शर्मा पर कभी निगरानी नहीं रक्खी गई। मैं वॉयसराय के सम्बन्ध के बम-काण्ड के सम्बन्ध में, नलगढ़ा उसकी खोज करने गया था।

ख़ुफ़िया पुलिस के कॉन्स्टेबिल रविदत्त ने अपने बयान में कहा, कि मुझे काशीराम को बीकानेर में गिरफ़्तार करने का अधिकार दिया गया था। मैंने वहाँ एक कन्या-पाठशाला में उसे खोजा। मैं अपनी लड़की को उस पाठशाले में भर्ती कराने के बहाने वहाँ गया था।

दिल्ली के ख़ुफ़िया-विभाग के हेड कॉन्स्टेबिल रिसालसिंह ने कहा, कि मैं हज़ारीलाल की खोज में झाँसी और कानपुर गया था।

मि० बोस के जिरह करने पर गवाह ने कहा कि अभियुक्त का घर बिहार में है, यह मैं जानता था। मैंने अभियुक्त को कई बार दिल्ली में देखा था। उसकी कोई फ़ोटो मेरे पास नहीं है। उस पर दिल्ली के क्वीन्स गार्डन के गोली-काण्ड के सम्बन्ध में अभियोग है। गोली-काण्ड के बाद से ही वह फ़रार है। मि० आसफ़अली के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि उस गोली-काण्ड के सम्बन्ध में मैंने किसी पुलिस-अफ़सर के सामने कुछ बयान नहीं दिया है। मि० आसफ़अली ने अदालत से कहा, कि गवाह तो कहता है कि उस गोली-काण्ड के सम्बन्ध में उसने कोई बयान नहीं दिया है, परन्तु उसने दिल्ली के इन्स्पेक्टर अब्दुल वाहिद के सामने जो बयान दिया था, उसकी नक़ल मेरे पास है।

* * *

६ मई का समाचार है, कि आज अभियुक्तों ने अदालत में काकोरी-शहीदों के गाने गए। अभियुक्त वात्सायन ज्वर से पीड़ित था, इसलिए श्री० बलजीतसिंह ने अभियुक्त को बैठने के लिए कुर्सी दिए जाने की प्रार्थना की। अदालत ने प्रार्थना स्वीकार कर ली।

अदालत की कार्यवाही शुरू होने पर, इन्स्पेक्टर अब्दुल वाहिद के सामने दिए गए सरकारी गवाह कॉन्स्टेबिल-रिसालसिंह के बयान के सम्बन्ध में बहुत वाद-विवाद हुआ। प्रतिवादी पक्ष के वकील मि० आसफ़अली ने जिरह करते हुए उस बयान का एक वाक्य पढ़ा, और गवाह से पूछा कि यह वाक्य उसने अपने बयान में कहा था या नहीं? गवाह ने कहा कि मुझे याद नहीं कि इन्स्पेक्टर वाहिदअली के सामने मैंने कभी यह बयान दिया है या नहीं। गवाह के यह कहने पर, कि बयान की अनेक बातें ग़लत हैं, जजों ने यह सलाह की कि इन्स्पेक्टर वाहिदअली को गवाह से जिरह करने के लिए बुलाया जाय या नहीं। अन्त में यह स्थिर किया गया कि वाहिदअली के बुलाने की आवश्यकता नहीं है।

ट्रिब्यूनल का अधिकार

मि० आसफ़अली ने यह प्रश्न उपस्थित किया कि ट्रिब्यूनल को, इन अभियुक्तों के मामले का फ़ैसला करने का अधिकार नहीं है। ट्रिब्यूनल के अध्यक्ष ने उत्तर में कहा कि, यदि हम लोगों को फ़ैसला करने का अधिकार नहीं है, तो आप हाईकोर्ट जा सकते हैं। मि० आसफ़अली ने कहा कि वर्तमान अदालत सेशन्स अदालत है,

और इसलिए नियमानुसार यहाँ जूरी का होना अत्यावश्यक है। दण्ड-विधान की २६८वीं धारा के अनुसार सेशन्स कोर्ट में जूरी या असेसरों को ही विचार करने का अधिकार है।

अभियुक्तों के वकील ने फिर आगे बतलाया, कि जब वादी यूरोपियन और प्रतिवादी भारतीय होता है, तो ऐसी दशा में, क़ानून के अनुसार जूरी के द्वारा विचार होता है। वर्तमान मामले में सभी अभियुक्त वॉयसराय की ट्रेन उलटने या मि० पीज़ पर आक्रमण करने के सम्बन्ध में गिरफ़्तार किए गए हैं। इस प्रकार यहाँ वादी-दल यूरोपियन और प्रतिवादी-दल भारतीय है। अतएव इस मामले का विचार जूरी के सामने होना चाहिए। जब तक जूरी नहीं बुलाए जायँगे, तब तक क़ानून के अनुसार, यह मामला चल नहीं सकता है।

रायबहादुर कुँवर सेन (कमिश्नर)—क्या लाहौर षड्यन्त्र केस में यह प्रश्न उपस्थित किया गया था?

मि० आसफ़अली—नहीं। किन्तु हरकिशन के मामले में मैंने यह प्रश्न उपस्थित किया था, और वहाँ जूरी बुलाए गए थे। हरकिशन के मामले से यह मामला बहुत मिलता-जुलता है, क्योंकि वहाँ सर ज्यॉफ़े डे मॉण्टमॉरेन्सी पर आक्रमण किया गया था, और यहाँ लॉर्ड इर्विन पर आक्रमण करने की चेष्टा की गई थी।

फ़रार अभियुक्त

इसके बाद, सरकारी वकील ने यह सिद्ध करना चाहा, कि काशीराम, यशपाल, मुसम्मात प्रकाशो आदि ६ अभियुक्त वास्तव में फ़रार हैं। प्रमाण में अपने ख़ुफ़िया पुलिस वालों का बयान पेश किया। आपने अदालत से यह अनुरोध किया कि वर्तमान अभियुक्तों के विरुद्ध जो गवाहियाँ दर्ज की गई हैं, वे ५१२वीं धारा के अनुसार फ़रार अभियुक्तों के विरुद्ध भी दर्ज कर ली जायँ। सरकारी वकील ने आगे कहा कि, फ़रार अभियुक्तों के सम्बन्ध में सरकारी गवाहों के बयान को असत्य प्रमाणित करने का सब से सहल उपाय यह है, कि उन अभियुक्तों को अदालत के सामने पेश कर, यह सिद्ध कर दिया जाय कि वे फ़रार नहीं हैं!!

मि० आसफ़अली ने उत्तर में कहा कि किसी भी बयान से यह सिद्ध नहीं होता है, कि ये फ़रार मनुष्य अभियुक्त हैं। केवल चालान से ही उनका अभियुक्त होना सिद्ध नहीं होता है। ऐसा कोई प्रमाण हमारे सामने नहीं है, जिससे यह सिद्ध हो कि इस मामले में काशीराम, भवानीसहाय आदि व्यक्तियों की ज़रूरत है। केवल उच्च कर्मचारियों की आज्ञा से ही उनकी आवश्यकता सिद्ध नहीं होती है। वे आज्ञाएँ भी अदालत के सामने पेश नहीं की गई हैं। फ़रार व्यक्तियों के फ़ोटो भी नहीं पेश की गई हैं, इसलिए केवल ज़बानी बयान का कोई मूल्य नहीं है।

पुलिस के बयान का समर्थन करने के लिए कोई स्वतन्त्र गवाह नहीं पेश किया गया है। फ़रार व्यक्तियों को पहचानने वाले जो व्यक्ति गवाहों के साथ भेजे गए थे, वे भी पेश नहीं किए गए हैं। सारांश में ख़ुफ़िया पुलिस के बयान को पुष्ट करने के लिए कोई भी ग़ैर-सरकारी व्यक्ति अदालत के सामने पेश नहीं किया गया है। जिससे मालूम हो कि गवाह सचमुच फ़रार व्यक्तियों की खोज में थे। यह षड्यन्त्र का मामला है। अभियुक्तों के ऊपर भयङ्कर अभियोग लगाए गए हैं जो अगर प्रमाणित हो जायँ, तो अभियुक्तों को काले पानी तक की सज़ा हो सकती है। इसलिए किसी भी बयान का प्रमाण माँगना मेरे लिए अनिवार्य है।

मैं यह नहीं कहता, कि सरकार को इन व्यक्तियों से कोई विद्वेष है। किन्तु पुलिस तो 'क़ैसर की स्त्री' की तरह सशङ्क रहा करती है।

मुख़बिर झूठी गवाही दे सकते हैं

मुख़बिर अपनी जान बचाने के लिए और मामले को भयङ्कर सिद्ध करने के लिए अनगिनत झूठ बोल सकते हैं; और ख़ुफ़िया वाले तो दूसरे के विरुद्ध कहानियाँ गढ़ कर ही जीते हैं!

क्या ऐसे ही मनुष्यों पर विश्वास करने के लिए आप मुझे कहते हैं? कृपा कर किसी ऐसे सज्जन को लाइए जो यह सिद्ध करे कि काशीराम आदि ६ व्यक्ति वास्तव में फ़रार हैं। पुलिस के बयानों से साफ़ मालूम पड़ता है, कि पुलिस वाले या तो किसी अनिर्दिष्ट वस्तु की खोज में थे या वे आनन्द के लिए यात्रा करते थे (सभी हँसते हैं) केवल कुछ ख़ुफ़िया वालों के भ्रमण के लिए ही, जो या तो अपने घर जाते होंगे या आनन्द के लिए दूसरे स्थानों में भ्रमण करते होंगे, इतने रुपए की बर्बादी की गई है!!

गई। लञ्च के बाद २½ बजे से फिर अदालत की कार्यवाही शुरू हुई।

मि० आसफ़अली ने ख़ुफ़िया पुलिस वालों के बयान के सम्बन्ध में अपनी बहस जारी रखते हुए कहा, कि उन लोगों ने फ़रार व्यक्तियों को खोजने का कष्ट नहीं उठाया है। प्रोफ़ेसर टण्डन के विषय में किसी ने भी रामजस कॉलेज के प्रिन्सिपल से यह नहीं दरयाफ़्त किया, कि वे छुट्टी में गए हैं, या उन्होंने नौकरी छोड़ दी है। मुसम्मात प्रकाशोदेवी का जो विवरण भिन्न-भिन्न गवाहों ने दिया है, वह भी विरोधात्मक है।

आपने आगे कहा कि फ़रार व्यक्तियों के विरुद्ध दिल्ली षड्यन्त्र केस में कोई वारण्ट नहीं निकाला गया, है। लाहौर केस का वारण्टइ सके लिए पर्याप्त नहीं है, क्योंकि यह कुछ ठीक नहीं है कि लाहौर केस के फ़रार दिल्ली केस में भी फ़रार हैं!

"खाऊँ किधर की चोट, बचाऊँ किधर की चोट!"

इन गवाहों ने जो बयान पेश किए हैं, उनका कोई मूल्य नहीं है। ये क़ानून की रक्षा करने वाले (ख़ुफ़िया पुलिस) फ़रार-व्यक्तियों की खोज में स्वयं ही बुरी तरह झेंपे हैं। 'मध्यम क़द, लाल साड़ी, किसी अङ्ग में तिल का चिह्न है—' अभियुक्तों के सम्बन्ध में इस प्रकार के विवरणों का कोई मूल्य नहीं। इस प्रकार के जो विवरण गवाहों को दिए गए थे, वे बहुत ही अपर्याप्त थे और कितने ही स्थानों पर विरोधात्मक भी थे।

फ़रार व्यक्तियों के अभियुक्त होने की कोई घोषणा नहीं की गई है। और वे वास्तव में फ़रार हैं या नहीं? यह भी सिद्ध नहीं किया गया है। कोई व्यक्ति, जो घर से कहीं बाहर गया हो, बिना सरकारी जाँच और विज्ञप्ति के फ़रार अभियुक्त नहीं कहा जा सकता। ऐसा कोई भी व्यक्ति अदालत के सामने पेश नहीं किया गया है, जो यह सिद्ध करे कि उसने किसी भी अभियुक्त को फ़रार होते देखा है।

इसके बाद लञ्च के लिए अदालत बरख़ास्त कर दी

इन सभी कारणों से, फ़रार व्यक्तियों पर से मामला उठा लेना ही उचित होगा। यदि ऐसा नहीं किया गया, तो उन सभी प्रमाणों को अदालत के सामने पेश करना होगा जो अब तक पेश नहीं किए जा सके हैं।

मि० एस० एन० बोस (प्रतिवादी दल के वकील) ने अपने बहस के सिलसिले में कहा कि सरकारी गवाहों के बयान से साफ़ मालूम पड़ता है कि हज़ारीलाल और मुसम्मात प्रकाशो को खोजने की कोई चेष्टा नहीं की गई है।

अभियुक्त वात्सायन ने कहा, कि फ़रार अभियुक्तों के अस्तित्व को प्रमाणित करने की कोई चेष्टा नहीं की गई है। गवाहों को अभियुक्तों के कुल-शील का भी कुछ पता नहीं है!

सरकारी वकील की बातें

सरकारी वकील ने मि० आसफ़अली के जूरी सम्बन्धी प्रश्न पर कहा, कि इस मामले में कोई भी वादी यूरोपियन नहीं है। यह ठीक है कि वॉयसराय की ट्रेन को उलटने का प्रयत्न किया गया था, किन्तु लॉर्ड इर्विन

को उससे चोट नहीं पहुँची थी और वे अदालत में वादी के स्वरूप में लाए भी नहीं जा सकते हैं। मि० पील को भी चोट नहीं पहुँची थी, इस कारण वे वादी नहीं हैं। यदि अभाग्यवश उन्हें चोट आई होती, तो आज इस मामले का कुछ दूसरा ही रूप होता।

इस मामले से वास्तव में किसी यूरोपियन का सम्बन्ध नहीं है, इसलिए यहाँ जूरी की आवश्यकता नहीं है।

इस विषय का फ़ैसला दूसरे दिन के लिए रिज़र्व रक्खा गया।

अदालत का फ़ैसला

७वीं मई का समाचार है, कि आज ट्रिब्यूनल ने यह फ़ैसला सुना दिया, कि वे ६ व्यक्ति जो फ़रार बतलाए जाते हैं, वास्तव में फ़रार हैं और ५१२वीं धारा के अनुसार उनके विरुद्ध गवाहियाँ दर्ज की जा सकती हैं। जूरी के सम्बन्ध में, जो प्रार्थना की गई थी वह भी अस्वीकृत कर दी गई।

मि० पील का बयान

इसके बाद ख़ुफ़िया पुलिस के स्पेशल सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० पील की गवाही हुई। आपने अपने बयान के सिलसिले में कहा, कि मुख़बिर कैलाशपति के कहने पर मैंने पुलिस के सीनियर सुपरिण्टेण्डेण्ट से एक जैन युवक की तलाशी लेने को कहा, जो दरीबा में दूकानदारी करता था। यह तलाशी, एसिड, रिवॉल्वर तथा कुछ अन्य पदार्थों के सम्बन्ध में ली गई थी। यूनिवर्सल ड्रग स्टोर्स की भी तलाशी लेने की आज्ञा मैंने दी थी। मैंने विशेशरसिंह को नलगढ़ा की डेयरी फ़ॉर्म की तलाशी लेने की आज्ञा दी, जहाँ एक मोटर-साइकिल के कल-पुर्ज़े रक्खे जाने का सन्देह था। ११वीं नवम्बर को मैंने इन्स्पेक्टर चेनशाम को ब्रह्मानन्द की गिरफ़्तारी के लिए भेजा। ब्रह्मानन्द का लाइसेन्स देखने से पता चला, कि सन् १९३० के फ़रवरी से अक्टूबर तक उसने ६०० गोलियाँ ख़रीदी हैं।

गवाह ने आगे कहा, कि २०वीं नवम्बर को दिल्ली षड्यन्त्र केस रजिस्टर्ड हुआ था। मैंने १ली नवम्बर से अनुसन्धान करना शुरू किया। ६वीं दिसम्बर को मैं झण्डेवालाँ के एक मकान की तलाशी लेने गया। वहाँ ४ चूड़ियाँ तथा कुछ अन्य चीज़ें मिलीं।

मि० आसफ़अली ने सरकारी वकील से पूछा, कि वे उन चीज़ों को अदालत के सामने पेश करने के लिए तैयार हैं या नहीं? सरकारी वकील ने कहा कि वे चीज़ें परीक्षा के लिए केमिकल एक्ज़ामिनर के पास भेज दी गई हैं।

ट्रिब्यूनल ने मि० आसफ़अली को मि० पील से जिरह करने की आज्ञा दे दी।

मि० आसफ़अली ने जिरह में गवाह से पूछा—कैलाशपति के गिरफ़्तार होने के पहले, वॉयसराय की ट्रेन उड़ाए जाने के सम्बन्ध में आपको कुछ मालूम था या नहीं?

उत्तर—था।

प्रश्न—इस बात का पता आपको कब लगा?

उत्तर—वास्तव में, इन्द्रपाल की गिरफ़्तारी के बाद इसका पता लगा था।

प्रश्न—इसके पहले निश्चित रूप से कुछ मालूम नहीं था?

उत्तर—नहीं, अभियुक्तों को गिरफ़्तार करने के लिए कोई पक्का प्रमाण उस समय तक नहीं मिला था।

इसके बाद गवाह ने बतलाया, कि मेरे पास नित्य गुमनाम चिट्ठियाँ आया करती थीं, जिनमें झूठी ख़बरें, तथा बनावटी नाम लिखे होते थे। मैं उन पर विश्वास नहीं करता था। इसके बाद गवाह ने कहा कि हमारा स्टाफ़ ान्तिकारियों के सम्बन्ध में विशेष ज्ञान रखता है। इस पर मि० आसफ़अली ने इस सम्बन्ध में गवाह की परीक्षा लेने के इरादे से जिरह करना शुरू किया:—

प्रश्न—क्रान्तिकारियों के सङ्गठन का कब तक का आपको ज्ञान है?

उत्तर—मुझे पहिली बार १९२८ की शरद-ऋतु में इस सम्बन्ध में काम करना पड़ा था।

प्रश्न—इस मामले को हाथ में लेने के पहले आपको दो वर्ष का अनुभव है?

उत्तर—हाँ, किन्तु युक्त प्रान्त के ख़ुफ़िया विभाग में भी मुझे कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ था?

प्रश्न—१९२८ के पहले आपने क्या विशेष ज्ञान प्राप्त किया था?

उत्तर—मैंने, १९१४ के लाहौर केस और काकोरी आदि षड्यन्त्र के मामलों के फ़ैसले पढ़े थे।

प्रश्न करने पर गवाह ने कहा, कि मैं नाथू भाइयों के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता हूँ। वकील ने गवाह को याद दिलाया कि सन् १९०६ में वे पूना से काले पानी भेजे गए थे। सरकारी वकील ने इन प्रश्नों पर एतराज़ किया। मि० आसफ़अली ने कहा मैं गवाह के क्रान्तिदल के सङ्गठन सम्बन्धी ज्ञान की परीक्षा ले रहा हूँ!

अध्यक्ष—मुझे इसमें औचित्य नहीं जान पड़ता।

मि० आसफ़अली—मैं यह सिद्ध करना चाहता हूँ, कि मि० पील का इस सम्बन्ध में ज्ञान बहुत ही थोड़ा है, और यह सम्भव है कि उनके सहकारियों ने उन्हें ग़लत ख़बरें दी हों।

ट्रिब्यूनल ने यह फ़ैसला किया, कि इस सम्बन्ध में जिरह नहीं हो सकती है, और गवाह के विशेष ज्ञान की परीक्षा नहीं ली जा सकती।

इसके बाद गवाह ने बतलाया, कि कुछ अभियुक्तों का सम्बन्ध बम्बई के लेमिङ्गटन रोड शूटिङ्ग केस से भी है।

प्रश्न—किन-किन अभियुक्तों का उससे सम्बन्ध है?

उत्तर—हमें निश्चित रूप से पता चला है, कि अभियुक्त वैशम्पायन का सम्बन्ध उस मामले से है। बम्बई पुलिस ने उस केस के सम्बन्ध में मुझे कोई सूचना नहीं दी है, किन्तु जान पड़ता है कि उसके सभी अभियुक्त छोड़ दिए गए हैं; और वैशम्पायन पर अभियोग उपस्थित नहीं किया गया। मैंने धन्वन्तरि और सुखदेवराज का चालान नहीं देखा है। मैंने पुलिस के सुपरिण्टेण्डेण्ट के पास लिखा था, कि ३०७वीं धारा के अनुसार जो अभियोग उन पर है वह हटा लिया जाय, जिसमें धन्वन्तरि को षड्यन्त्र केस का अभियुक्त बनाया जा सके। इस मामले में सुखदेवराज की आवश्यकता नहीं है।

प्रश्न—क्या दिल्ली षड्यन्त्र केस से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है?

उत्तर—वह लाहौर केस का अभियुक्त है।

प्रश्न—मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है। मैं जानना चाहता हूँ, कि इस मामले में उसकी आवश्यकता क्यों नहीं है?

इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया गया।

प्रश्न—क्या यह सच है कि आपके ऊपर आक्रमण करने के लिए षड्यन्त्र रचा गया था?

उत्तर—अनुसन्धान करते समय मुझे इस बात का पता चला है।

प्रश्न—क्या आपको पूरा विश्वास है, कि इस सम्बन्ध में षड्यन्त्र रचा गया था?

उत्तर—मुझे केवल कैलाशपति से यह मालूम हुआ था।

प्रश्न—क्या उसकी बातें विश्वसनीय हैं?

सरकारी वकील—यह प्रश्न उचित नहीं है।

मि० आसफ़अली ने कहा कि यह प्रश्न सर्वथा उचित है, क्योंकि इससे गवाह का व्यक्तिगत सम्बन्ध है। ट्रिब्यूनल ने इस प्रश्न को उचित ठहराया।

इसके बाद मि० आसफ़अली और सरकारी वकील में गर्मागर्म बहस शुरू हो गई। मि० आसफ़अली ने कहा—मैं नहीं जानता था, कि सरकारी वकील, मि० पील को गर्म आलू की तरह यहाँ टपका देंगे।

सरकारी वकील—मैं ऐसे शब्दों का घोर विरोध करता हूँ।

मि० आसफ़अली—इन शब्दों के विरोध करने की कोई आवश्यकता नहीं है। सर तेज बहादुर सप्रू जैसे व्यक्तियों ने हाईकोर्ट के सामने ऐसे शब्दों का व्यवहार किया है।

श्री० बलजीतसिंह ने अदालत से प्रार्थना की कि मामला स्थगित कर दिया जाय। किन्तु यह प्रार्थना अस्वीकृत कर दी गई।

अनुचित तलाशी

श्री० बलजीतसिंह ने ट्रिब्यूनल के सामने यह शिकायत पेश की, कि हरद्वारीलाल के चचा बालकृष्णलाल की अनुचित तलाशी ली गई है। उन्होंने कहा, कि बालकृष्णलाल की धोती खोल कर तलाशी ली गई थी।

एक पत्र-प्रतिनिधि ने भी यह शिकायत की, कि सरजण्ट बक्सटन ने उसकी अनुचित तलाशी ली थी। सरजण्ट को यह शक हो गया था, कि मेरे पायजामे में अस्त्र छिपे हुए हैं।

अभियुक्तों ने भी इस प्रकार की तलाशियों का घोर विरोध किया। उन्होंने प्रतिज्ञा की, कि जब तक इस प्रकार की अनुचित तलाशियों का लेना बन्द नहीं किया जायगा, तब तक हम अदालत में उपस्थित नहीं होंगे।

अदालत ने इस मामले की जाँच करने का वादा किया। मि० आसफ़अली ने अभियुक्तों को विश्वास दिलाया, कि उनकी शिकायतें दूर कर दी जायँगी।

प्रधान मुख़बिर का सनसनीपूर्ण बयान

९वीं मई को देहली षड्यन्त्र केस के प्रधान मुख़बिर कैलाशपति अस्थाना का वह बयान पढ़ा गया, जोकि उसने सिटी मैजिस्ट्रेट के सामने दिया था। वह इस प्रकार है:—

१९२३ में, जब मैं इलाहाबाद के एक स्कूल में पढ़ता था, शचीन्द्रनाथ से मेरी भेंट हुई। उसने क्रान्तिकारी साहित्य की कुछ पुस्तकें, तथा हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन का एक पीला पर्चा मुझे दिया। इसके बाद मैं उस एसोसिएशन का सदस्य हो गया।

सन् १९२७ में कानपूर में श्री० विजयकुमार सिन्हा षड्यन्त्रकारी से मेरी भेंट हुई। इसके बाद मैं सान्याल (काकोरी के अभियुक्त) को मुक्त करने के एक षड्यन्त्र के सम्बन्ध में उन्नाव गया और वहाँ एक मुसलमान का मकान किराए पर ले लिया। वहीं मनोहरलाल से मेरी भेंट हुई।

पोस्ट ऑफ़िस का रुपया ले भागा

१९२८ के जनवरी या फ़रवरी के महीने में मैं इलाहाबाद से गोरखपुर गया। मार्च महीने में मैंने गोरखपुर के डाक विभाग में नौकरी कर ली। वहीं राजगुरु और एम० पी० अवस्थी से मेरी भेंट हुई। कुछ दिनों के बाद मेरी बदली बरहलगञ्ज के सब-पोस्ट ऑफ़िस में हो गई। २६-६-२८ को मैं वहाँ से २,३००) रुपए लेकर चम्पत हुआ, और लार रोड स्टेशन पर ही अपनी साइकिल छोड़, ट्रेन से रवाना हुआ। कानपूर पहुँच कर पाण्डे और हलदर को मैंने वे रुपए दे दिए। २६-६-२८ को मैं शिव-वर्मा के यहाँ रहा, और वहीं सुखदेव, आज़ाद और डॉक्टर गयाप्रसाद से मेरी जान-पहचान हुई। इसके

बाद में लाहौर के लिए रवाना हुआ। हरदोई में प्रताप (महावीरसिंह) भी आ मिले। लाहौर पहुँच कर मैं पहले सरदार भगतसिंह से मिला, और सुखदेव, यशपाल, मनोहरलाल आदि से भी मिला। सुखदेव ने एडवर्ड होस्टल में एक कमरा किराए पर ले लेने के लिए मुझसे कहा। मैंने अपना नाम बदल कर राजबलिप्रसाद रक्खा, और इसी नाम से मकान किराए पर लिया।

सन्, १९२८ के अगस्त में सुखदेव, दल की केन्द्रीय सभा की एक मीटिङ्ग में शामिल होने के लिए दिल्ली गया। वहाँ से लौट कर उसने कहा कि एसोसिएशन का नाम बदल कर 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन' रक्खा गया है, और वह (सुखदेव) तथा भगतसिंह पञ्जाब के; बी० के० सिंह और शिववर्मा युक्त-प्रान्त के, फणीन्द्रनाथ घोष बिहार और उड़ीसा के और कुन्दनलाल राजपूताने के सङ्गठनकर्ता नियुक्त किए गए हैं। उसने यह भी बतलाया कि आज़ाद सेना-विभाग के प्रधान नियुक्त किए गए हैं।

सन्, १९२८ के सितम्बर मास के अन्त में मैंने होस्टल छोड़ दिया और ग्वालमण्डी के एक मकान में रहने लगा, जिसे प्रताप ने किराए पर लिया था।

अक्टूबर के आरम्भ में मैं अमृतसर चला गया और सुल्तान बाज़ार में एक मकान किराए पर लेकर रहने लगा। एक-डेढ़ महीने के बाद मैंने दूसरा मकान लिया, और सन्, १९२९ के फ़रवरी महीने तक वहाँ रहा।

नेशनल बैङ्क में डकैती

नवम्बर, १९२८ के मध्य में मैं लाहौर चला आया। इस समय हमारा उद्देश्य था पञ्जाब नेशनल बैङ्क में डाका डालना। मैं पहले तो मज़ङ्ग के एक मकान में ठहरा, पीछे ग्वालमण्डी चला आया और किशोरीलाल के मकान पर रहने लगा। इसके बाद मैं, महावीरसिंह, जयगोपाल, राजगुरु, कुन्दनलाल, किशोरीलाल, आज़ाद, सरदार भगतसिंह, सुखदेव, हंसराज वोहरा और बी०के० सिंह से मिला। किन्तु बैङ्क पर डाका डालने में सफलता नहीं मिली। सॉण्डर्स की हत्या के क़रीब दो दिन पहले ही मैं अमृतसर चला गया।

फ़रवरी, १९२९ के आरम्भ में मैं दिल्ली चला आया। यहाँ पहुँच कर मैंने अपना असबाब ऑफ़िस में छोड़ दिया और हार्डिञ्ज लाइब्रेरी में बी० के० सिंह और जयदेव से मिला। जयदेव मुझे रामसरूप धर्मशाले में ले गया। वहाँ जयदेव और काशीराम के साथ मैं क़रीब एक महीने तक रहा। वहाँ काशीराम को मेरा परिचय दिया गया, कि मैं क्रान्तिकारी संस्था का सदस्य हूँ। विमलप्रसाद जैन, नन्दकिशोर निगम, भवानीसहाय और भवानीसिंह से भी मेरा उसी समय सम्पर्क हुआ। मैंने इन लोगों को क्रान्तिकारी विचारों की ओर आकर्षित कर लिया।

सॉण्डर्स की हत्या

कुछ समय बाद ग्वालियर के गोपालकृष्ण पौराणिक से मेरी जान-पहचान हुई। मैंने उन्हें अपना नाम दयाकृष्ण श्रीवास्तव, बी० ए० बतलाया। मैं भटनावार के आदर्श विद्यालय का हेडमास्टर बनने के लिए तैयार हो गया। २१वीं मार्च, १९२९ से मैं उक्त स्कूल में काम करने लगा। २½ महीने वहाँ काम करने के बाद मैं दिल्ली चला आया। मैं बी० पी० जैन के यहाँ गया और फिर उनके साथ सिसाना गया। बी० पी० जैन मुझे सिसाना के समीप एक गाँव में, एक मन्दिर के पुजारी के साथ छोड़ कर, दिल्ली लौट गया। दो दिन बाद काशीराम मुझसे वहाँ मिला। तब मैं दिल्ली लौट आया। कुछ दिनों के बाद मैं, काशीराम और भवानीसहाय के साथ ग्वालियर गया। मैं और भवानीसहाय तो ग्वालियर उतर गए, किन्तु काशीराम झाँसी चला गया। ग्वालियर में हम लोग अपना नाम बदल कर डफ़रिन-सराय में रहने लगे। दो दिन के बाद हम लोग लक्ष्मीनारायण के धर्मशाला में चले गए। वहाँ काशीराम भी हम लोगों से आ मिला। इसके बाद हम लोग आर्यसमाज, लश्कर चले गए। वहाँ भगवानदास भी हम लोगों से आ मिला। एक या दो दिन के बाद काशीराम और भवानीसहाय हरदोई चले गए और भगवानदास मुझे लेकर एक मकान में चले आए, जो गजानन्द तथा सदाशिव पोद्दार ने क्रान्तिकारी दल के लिए किराए पर ले रक्खा था। वहाँ वैशम्पायन, आज़ाद और सदाशिव भी रहते थे। यहाँ सभी लोग डी० वी० तैलङ्ग की सहायता से Picric Acid और Fulminate of Mercury बनाया करते थे। वैशम्पायन Apparatus और एसिड इत्यादि लाया था। ३ कनस्तरों में तैयार किए हुए बम रक्खे थे। इनमें से एक परीक्षा के लिए पटका गया था। ढले हुले हुए लोहे का एक बम भी यहाँ रक्खा गया था। वैशम्पायन ही यह बम लाया था। यहीं आज़ाद ने सॉण्डर्स और चननसिंह की हत्या के सम्बन्ध का ब्योरेवार वृत्तान्त मुझे बतलाया। उसने यह भी कहा, कि इस हत्या के लिए, वह (आज़ाद) राजगुरु, सरदार भगतसिंह और जयगोपाल उत्तरदायी हैं।

मि० हार्टन की हत्या का उद्योग !

इसके बाद मैं आर्थिक प्रबन्ध करने के लिए दिल्ली चला आया, और यहाँ क़रीब हफ़्ते भर ठहरा। बी० पी० जैन ने भगीरथ से मेरा परिचय कराया, जो उस समय लछमनदास के धर्मशाले में रहता था। इसके बाद मैं ग्वालियर लौट गया और मि०हार्टन और ख़ैरातनबी को मारने का उद्योग करने लगा, किन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण सफलता नहीं मिली।

सितम्बर, १९२९ में एम० पी० अवस्थी एक ट्रङ्क लाया, जिसमें एक ढले हुए लोहे का बम भी था। मैंने बम तथा भगवानदास ने एक साफ़ा लिया।

बम और रिवॉल्वर

सितम्बर, १९२९ के दूसरे सप्ताह में मैं ग्वालियर से दिल्ली लौट आया। मेरा उद्देश्य यहाँ अपने दल का सङ्गठन करना था। भगवानदास और सदाशिव भी हमारे आने के बाद ही 'एम' से मिलने के लिए बम्बई चले गए। दोनों कनस्तर बम, ढले हुए लोहे का बम, ट्रङ्क आदि चीज़ें भी वे अपने साथ लेते गए। मुझे ग्वालियर में ही एक ३२० बोर की रिवॉल्वर दी गई थी। एक ऑटोमेटिक पिस्तौल तथा एक या दो अन्य पिस्तौलें भगवानदास और सदाशिव को भी दी गई थीं।

भगवानदास और सदाशिव की गिरफ़्तारी

दिल्ली लौटने के तीसरे दिन मुझे मालूम हुआ, कि भगवानदास और सदाशिव भुसावल में गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। उस समय भवानीसिंह सिरकी बाज़ार के एक मकान में रहता था। मैंने ग्वालियर से लाया हुआ बम बी० पी० जैन को दिखलाया। उसने वह बम मिस्त्रियों को दिखलाया।

भगवतीचरण और यशपाल

सितम्बर महीने में भवानीदयाल के ज़रिए, पटने के हज़ारीलाल और विश्वम्भरदयाल से मेरी जान-पहचान हुई। अक्टूबर, १९२९ में काशीराम लाहौर से और निगम कलकत्ते से लौट आए। काशीराम लछमनदास की धर्मशाले में तथा निगम और भवानीसिंह हिन्दू-कॉलेज के होस्टल में ठहरे। भवानीसिंह के छोड़े हुए मकान में भवानीसहाय रहने लगे। मैं निगम के साथ होस्टल में ठहरा और उसे अपने दल का सदस्य बना लिया। कुदसिया गार्डन में भगवतीचरण से मेरी भेंट हुई, और पीछे यशपाल से भी मेरी जान-पहचान हुई। भगवतीचरण मुझे नया बाज़ार में अपने मकान पर ले गया, जहाँ वह यशपाल के साथ ठहरा हुआ था। भगवतीचरण ने अपना नाम हरीश और यशपाल ने जगदीश रक्खा था। मैंने निगम से उनकी जान-पहचान कराई। यशपाल और गिरधारीलाल एक ही साथ भोजन करते थे, और दोनों में बहुत मित्रता थी। नवम्बर में जब वैशम्पायन लाहौर जा रहा था, उसी समय मैंने निगम, भवानीसिंह, यशपाल और भगवतीचरण से उसका परिचय कराया।

इसके बाद मैं भवानीसिंह के साथ कानपुर गया। मैं दिल्ली और राजपूताने का सङ्गठनकर्ता बनाया गया, और बी० बी० तिवारी संयुक्तप्रान्त के सङ्गठनकर्ता बनाए गए। यह भी निश्चित किया गया, कि डाके डाल कर धन इकट्ठा किया जाय। इसके बाद मैं फिर दिल्ली लौट आया।

वॉयसराय-ट्रेन-दुर्घटना

नवम्बर, १९२९ के दूसरे सप्ताह में, आज़ाद और वैशम्पायन दिल्ली आए। मैंने आज़ाद को भगवतीचरण और यशपाल का परिचय दिया। मैंने भगवतीचरण के पास २० बम पाए। यह पता मिल जाने पर मैं वॉयसराय की ट्रेन उड़ाने के सम्बन्ध में आज़ाद से परामर्श करने के लिए फिर कानपुर गया।

दिसम्बर, १९२९ के तीसरे सप्ताह में मैंने बी० पी० जैन को अर्जुनलाल सेठी के यहाँ दल के लिए कुछ रुपए लाने के लिए अजमेर भेजा। बी० पी० जैन लौट आए और केशवचन्द्र गुप्त के द्वारा अपना रिवॉल्वर उन्होंने अर्जुनलाल के पास भेज दिया, जिससे वह रुपए इकट्ठा कर सकें।

२२-१२-२९ को मैं नया बाज़ार के मकान में भगवतीचरण, यशपाल, आज़ाद, लेखराम आदि से मिला। उसी दिन मैं कुदसिया गार्डन में फिर आज़ाद, भगवतीचरण, यशपाल आदि से मिला। यहाँ आज़ाद ने यह घोषणा की, कि भगवतीचरण और यशपाल ने वॉयसराय की ट्रेन उड़ा देने का पूरा प्रबन्ध कर लिया है।

आज़ाद और मैंने सिरकी बाज़ार के मकान में रात बिताई। दूसरे दिन हम लोग न्यू होस्टल में भवानीसिंह के कमरे में चले गए। वैशम्पायन ने निगम के साथ होस्टल ही में रात बिताई थी।

विप्लव-शिक्षा का केन्द्र

२४वीं दिसम्बर को वैशम्पायन लाहौर चला गया। २६वीं तारीख़ को मैं, आज़ाद और बी० पी० जैन के साथ नजफ़गढ़ चला गया, और वहाँ रामचन्द्र शर्मा तथा ब्रह्मानन्द वकील के साथ डेयरी फ़ॉर्म में ठहरा। हम लोगों ने नजफ़गढ़ को ही विप्लव-शिक्षा का केन्द्र बनाना निश्चित किया, क्योंकि रामचन्द्र शर्मा हमारे दल के साथ सहानुभूति रखते थे। यह भी निश्चित किया गया कि रामचन्द्र शर्मा के लाइसेन्स से एक राइफ़ल ख़रीदी जाय। १-१-३० को हम लोग दिल्ली लौट आए, और भवानीसिंह के कमरे में हम लोगों ने रात बिताई। किन्तु दूसरे दिन सवेरे हम निगम के पास चले आए।

२-१-३० को यशपाल, निगम के यहाँ हम लोगों से मिला, और उसने वॉयसराय की ट्रेन सम्बन्धी घटना का ज़िक्र किया। ४-२-३० को भगवतीचरण, आज़ाद और यशपाल कुदसिया गार्डन में इकट्ठे हुए। मैं भी वहाँ था। वहाँ यह निश्चित हुआ, कि मैं यशपाल की वह मोटर-साइकिल, जिस पर सवार होकर वह वॉयसराय की ट्रेन उड़ाने के लिए गया था, छिपा आऊँ; और भगवतीचरण कॉङ्ग्रेस के अहिंसात्मक आन्दोलन सम्बन्धी प्रस्ताव के उत्तर में एक पर्चा लिखें, और वह

पर्चा स्वाधीनता दिवस के अवसर पर अर्थात् २६-१-३० को वितरण किया जाय।

बी० पी० जैन अजमेर के अर्जुनलाल सेठी के यहाँ से रिवॉल्वर लेकर लौट आए। एक सप्ताह के बाद मैं और बी० पी० जैन एक दिन के लिए अजमेर गए। मैंने पहले ही मदनगोपाल को अपने आने के सम्बन्ध में तार दे दिया था।

मोटर-साइकिल

यशपाल ने निगम के कमरे में अपनी मोटर-साइकिल रक्खी थी। भवानीसिंह, भवानीसहाय, बी० पी० जैन तथा मैंने यह निश्चित किया कि साइकिल के कल-पुर्ज़े खोल डाले जायँ, और उसका प्रधान भाग बी० पी० जैन के द्वारा रामचन्द्र शर्मा के पास भेज दिया जाय। कुछ पुर्ज़े नष्ट कर दिए जायँ और शेष निगम को, बेंचने के लिए दे दिया जाय। इस निश्चय के अनुसार बी० पी० जैन साइकिल की इञ्जिन और मेगनेटो रामचन्द्र शर्मा के यहाँ रख आए, जो उस समय 'असली घी स्टोर्स' में रहते थे। अन्य कल-पुर्ज़े निगम के पास रहे। यह साइकिल यशपाल ने ३२०) रुपए में दिल्ली के वाल्टर लॉक्स एण्ड को० के यहाँ से १९२५ में ख़रीदी थी। १९३० के जनवरी के मध्य में भगवतीचरण ने ख़्यालीराम से मेरा परिचय कराया। मुझसे बताया गया कि ख़्यालीराम भी दल के सदस्य हैं।

रामचन्द्र शर्मा ने आज़ाद के दिए हुए १२०) रुपए से इलाही बख़्श की दूकान से एक २०० नं० का सेवेज़ राइफ़ल ख़रीदा।

जनवरी, १९३० के तीसरे सप्ताह में, कानपुर के निगम का तार पाकर, मैं वहाँ गया और Philosophy of the Bomb नामक पर्चे अपने साथ लेता आया। दिल्ली पहुँच कर मैंने अपना असबाब प्रेमदत्त के यहाँ छोड़ दिया और सिरकी बाज़ार में भवानीसहाय के मकान पर गया। दूसरे ही दिन मैंने भवानीसहाय को वे पर्चे दे दिए।

२४-१-३० को निगम के कमरे में, भवानीसिंह और निगम के साथ पर्चे के वितरण के सम्बन्ध में मैंने बहस की। भवानीसिंह, विश्वम्भरदयाल, भगीरथ, भवानीसहाय, ख़्यालीराम गुप्त, बी० पी० जैन आदि २५-१-३० को पर्चे वितरण करने के पक्ष में थे।

मैंने हज़ारीलाल को मोटर चलाना सीखने के लिए अम्बाला भेज दिया।

मदनगोपाल

२६-१-३० को मैं अजमेर गया और मदनगोपाल के यहाँ १५ दिनों तक ठहरा रहा। वहाँ मैंने अपना नाम बदल कर कामताप्रसाद रख लिया था। मदनगोपाल को मैंने अपने दल का सदस्य बना लिया। फ़रवरी, १९३० के दूसरे सप्ताह में मैं दिल्ली लौट आया, और दूसरे ही सप्ताह अपने दल की एक सभा में उपस्थित होने के लिए कानपुर चला गया। सभा में यह निश्चित किया गया, कि लाहौर षड्यन्त्र केस के अभियुक्तों को मुक्त करने का प्रयत्न किया जाय। यह भी निश्चित किया गया, कि यशपाल पञ्जाब का सङ्गठनकर्ता बनाया जाय और महाराष्ट्र तथा बङ्गाल के प्रतिनिधि हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन की जनरल कौन्सिल में सम्मिलित किए जायँ। भगवतीचरण ने लाहौर षड्यन्त्र केस के क़ैदियों को बचाने के मनसूबे को लिख डाला। मैं दूसरे ही दिन दिल्ली लौट आया। १९३० के फ़रवरी मास के अन्त में मैंने होस्टल छोड़ दिया और सिरकी बाज़ार में भवानीसहाय के मकान पर अप्रैल १९३० के अन्त तक रहा।

मार्च में मदनगोपाल अजमेर से दिल्ली आया, और एक-दो दिन रह कर, एक हवाई पिस्तौल लेकर वह चला गया। पिस्तौल उसने पीछे लौटा दी थी। इसी महीने के मध्य में मैं, आज़ाद, भवानीसहाय, बी० पी० जैन और भवानीसिंह के साथ नलगढ़ा गया और रामचन्द्र शर्मा के डेयरी फ़ॉर्म में ठहरा। हम लोगों ने अपने-अपने नाम बदल लिए थे। वहाँ रामचन्द्र शर्मा की राइफ़िल से हम निशाना मारने का अभ्यास करने लगे। इसके बाद मैं दिल्ली लौट आया और छैलबिहारी से मिला। पीछे उसे अपने दल का सदस्य बना लिया। मार्च महीने के अन्त में मैं अजमेर गया और वहाँ से मदनगोपाल के साथ, दल का एक केन्द्र स्थापित करने के इरादे से जयपुर गया। एक-दो दिन के बाद मैं दिल्ली लौट आया।

हज़ारीलाल अम्बाले से मोटर का काम सीख कर आ गए। अप्रैल के दूसरे सप्ताह में आज़ाद, छैलबिहारी, हज़ारीलाल, विश्वम्भरदयाल और भवानीसिंह गोली चलाने का अभ्यास करने के लिए गढ़वाल चले गए। एक सप्ताह के बाद मैं अजमेर जाकर मदनगोपाल और उसके मित्र रुद्रदत्त से मिला और रुद्रदत्त को अपने दल का सदस्य बना लिया। इसके बाद मैं दिल्ली लौट आया। इसी समय मैं कुदसिया गार्डन में आज़ाद और भगवतीचरण से मिला और इस बात को सलाह की, कि मज़दूर क़ैदियों को मुक्त करने के लिए, तनख़्वाह बाँटने के दिन रेलवे क्लियरिङ्ग एकाउण्ट-ऑफ़िस पर डाका डाला जाय। किन्तु यह षड्यन्त्र सफल नहीं हो सका।

आज़ाद से मुझे यह मालूम हुआ, कि वॉयसराय की ट्रेन उड़ाने के सम्बन्ध में ख़्यालीराम ने भगवतीचरण को एसिड आदि से सहायता पहुँचाई थी। मई के आरम्भ में आज़ाद, यशपाल तथा अन्य कई लोग गोली चलाने का अभ्यास करने के लिए नलगढ़ा चले गए।

लगभग दो वर्षों में होने वाली इन सारी घटनाओं को सिलसिलेवार याद रखने के लिए—जिसमें प्रत्येक दिन की घटना का उल्लेख तारीख़ और समय के साथ किया गया है—पाठकों को सरकारी गवाह कैलाशपति की स्मरण-शक्ति की तारीफ़ करनी पड़ेगी। —सं० 'भविष्य'

क़ैदियों को मुक्त करने का प्रयास

मैं कानपुर गया और बी० बी० तिवारी से एक बम-सेल माँग लाया। कुछ दिनों बाद लाहौर षड्यन्त्र केस के क़ैदियों को, छुड़ाने के बाद उनके रहने का प्रबन्ध करने के लिए मैं भवानीसहाय के साथ जयपुर गया। वहाँ से दिल्ली लौट आया।

मैं ख़्यालीराम की दूकान से एक ट्रङ्क लाया। खोलने पर देखा कि उसमें ४ बम तथा कुछ अन्य चीज़ें थीं। भगवतीचरण क़ैदियों को मुक्त करने के सम्बन्ध में लाहौर चले गए। मैं आज़ाद के ज़रिए रमेशभूषण से मारवाड़ी धर्मशाला में मिला और मैंने उसका पता लिख लिया। मैंने हरद्वारीलाल से आज़ाद के लिए एक कोट और एक क़मीज़ बनवा लेने के लिए कहा। उसने मोहन ब्रदर्स से इन चीज़ों को तैयार करा लिया। २०-५-३० को क़ैदियों को मुक्त करने के सम्बन्ध में, आज़ाद मदनगोपाल के साथ लाहौर गया।

ख़्यालीराम गुप्त ने रामलाल से मेरा परिचय कराया और यह भी बतलाया, कि वह हमारे दल का सदस्य है। उसने पिकरिक एसिड बनाने की तरकीब जानने की इच्छा प्रकट की।

कुछ समय बाद ख़्यालीराम के ज़रिए कुदसिया गार्डन में आसफ़ से मेरा परिचय हुआ। ख़्यालीराम ने मुझे यह बतलाया कि आसफ़ भी हमारे दल का सदस्य है। आसफ़ ने मुझे बतलाया कि बम फट जाने की वजह से भगवतीचरण की मृत्यु हो गई है और वैशम्पायन ज़ख़्मी हो गया है। उसने यह भी कहा कि आज़ाद तथा कुछ अन्य लोग लाहौर षड्यन्त्र केस के क़ैदियों को छुड़ाने के लिए गए हैं, और उसे रुपए इकट्ठा करने के लिए दिल्ली भेजा गया है। तीन या चार दिन के बाद आसफ़ लाहौर चला गया।

यूनिवर्सल ड्रग स्टोर्स

मैं हज़ारीलाल के ज़रिए यूनिवर्सल ड्रग स्टोर्स के कम्पाउण्डर बालकृष्ण तथा प्रोप्राइटर बाबूराम से मिला। हज़ारीलाल उस समय बालकृष्ण के साथ रहता था। बालकृष्ण ने मुझे कान-दर्द की दवा दी। वे लोग हमारी संस्था से सहानुभूति रखते थे। बाबूराम ने बम बनाने के लिए हमें एसिड देना स्वीकार किया। उसने मई से अगस्त तक हमें नाइट्रिक एसिड, सल्फ़रिक एसिड आदि सामान दिए और उसे १४०) या १५०) रुपए जून में तथा ६००) अगस्त में दिए गए।

मैंने गिरिवरसिंह से भवानीसहाय को अपने प्रेस में भर्ती कर लेने के लिए कहा, क्योंकि इससे हमारी संस्था को बहुत लाभ पहुँचता। मैं पहले ही से जानता था कि गिरिवरसिंह हमारे दल का सदस्य है। भवानीसहाय भी गिरिवरसिंह के साथ एक ही प्रेस में काम करने लगा।

जून के आरम्भ में मैं निगम के मकान पर वैशम्पायन से मिला और उसके साथ कुदसिया गार्डन में गया। आसफ़ और धन्वन्तरि (प्रेम) भी वहाँ मिले।

आज़ाद ने लाहौर से लौट कर सरदार भगतसिंह और दत्त को जेल-मुक्त करने में किस प्रकार असफलता मिली, इसका वृत्तान्त कह सुनाया। उसने यह भी कहा कि भावलपुर की बम-दुर्घटना के बाद यशपाल ने मदनगोपाल को कुलू और छैलबिहारी को शिमला भेज दिया है, जहाँ वे दोनों अपना नाम बदल कर नौकरी कर रहे हैं।

बम-फ़ैक्टरी

निगम के मकान पर एक बैठक हुई। उसमें मैं उपस्थित था। वहाँ यह निश्चय किया गया कि एक फ़ैक्टरी खोली जाय, जिसमें दिखाने के लिए तो साबुन बनाए जायँगे, किन्तु वास्तव में वहाँ पिकरिक एसिड तथा इसी प्रकार के अन्य पदार्थ बनाए जायँगे। बी० पी० जैन को उसका मैनेजर नियुक्त किया गया। यह भी निश्चित किया गया कि आज़ाद कानपुर में बम बनाने की एक फ़ैक्टरी खोले। इस मीटिङ्ग में बी० पी० जैन, निगम, काशीराम, आज़ाद और वैशम्पायन उपस्थित थे।

जून के तीसरे सप्ताह में मैं, भगीरथ के ज़रिए हरकेश से मिला। हरकेश को हमारी संस्था के उद्देश्यों से सहानुभूति थी, और वह सदस्य भी बनना चाहता था। मैं आज़ाद और धन्वन्तरि से कुदसिया गार्डन में मिला और वहाँ यह निश्चय किया गया कि १-७-३० को रेलवे क्लियरिङ्ग एकाउण्ट्स ऑफ़िस पर डाका डाला जाय। इसी निश्चय के अनुसार १-७-३० को आज़ाद, लेखराम, धन्वन्तरि, काशीराम, विद्याभूषण और वैशम्पायन, जो इस मामले में भाग लेने वाले थे, न्यूहोस्टल में भवानीसिंह के कमरे में इकट्ठे हुए। किन्तु उस दिन पं० मोतीलाल नेहरू की गिरफ़्तारी के कारण शहर में हड़ताल मनाई गई, इस कारण हमें सफलता नहीं मिल सकी।

गडोडिया स्टोर्स डकैती

६-७-३० को आज़ाद, लेखराम, धन्वन्तरि, काशीराम, विद्याभूषण न्यूहोस्टल में भवानीसिंह के कमरे में उपस्थित हुए और वहाँ उन्होंने गडोडिया स्टोर्स पर

डाका डालने का निश्चय किया। इस निश्चय के अनुसार आज़ाद, लेखराम, काशीराम, धन्वन्तरि, विद्याभूषण और विश्वम्भरदयाल ने डाका डाला और १२,०००) रुपया लूटा।

८-७-३० को मदनगोपाल को आने के लिए तार भेजा गया। उसी दिन वह दिल्ली आ पहुँचा। कुछ दिनों के बाद वह विश्वम्भरदयाल को साथ लेकर अजमेर चला गया। वह अपने साथ एक पिस्तौल भी लेता गया, जो मैंने कामताप्रसाद के नाम से इलाहीबख़्श की दूकान से ख़रीदा था। मैंने ख़्यालीराम को बम आदि बनाने के लिए अपरेटस ख़रीदने के लिए १००) रुपए दिए।

१०वीं जुलाई को आज़ाद, धन्वन्तरि और मैं एडवर्ड्स पार्क में इकट्ठा हुए और गडोडिया डकैती के रुपयों का व्यय किस प्रकार किया जाय, इस पर बहस हुई। अन्त में यह निश्चित हुआ कि मुझे २,५००), बी० पी० तिवारी को ७,५००) और धन्वन्तरि को ३,०००) रुपए सङ्गठन-कार्य तथा बम की फ़ैक्टरी आदि खोलने के लिए दिया जाय।

बी० पी० जैन और यशपाल ने झण्डेवाला रोड पर एक मकान किराए पर लिया। प्रकाशो और गिरिवरसिंह (गङ्गाराम) भी फ़ैक्टरी में रहने के लिए आए। फ़ैक्टरी का नाम 'दी हिमालयन टॉयलेट्स' रक्खा गया था। यशपाल ने तार देकर एक वैज्ञानिक को भी बुला लिया। हरद्वारीलाल ने फ़ैक्टरी के काम के लिए काठ के कुछ सामान दिए। उसे यह अच्छी तरह मालूम था कि बम आदि के बनाने के लिए ही इन चीज़ों की आवश्यकता है। फ़ैक्टरी में पिकरिक एसिड और गन-कॉटन तैयार किए जाते थे। इसके लिए यशपाल, वैज्ञानिक और मैं एसिड लाया करता था। बी० पी० जैन, गिरिवरसिंह और मुसम्मात प्रकाशो इस काम में हमें सहायता दिया करते थे। ख़्यालीराम ने कुछ और अपरेटस ख़रीदे। मैं गिरिवरसिंह की सहायता से बाबूराम के यहाँ से एसिड आदि लाया करता था।

ख़्यालीराम के सलाह देने पर रामलाल ने संस्था के लाभ के ख़्याल से ख़ुफ़िया-विभाग में नौकरी कर ली।

मैं अपनी संस्था की एक शाखा खोलने के इरादे से भगीरथ के साथ जयपुर गया, और मैंने मदनगोपाल के ज़रिए उसके वहाँ रहने का प्रबन्ध कर दिया।

विष बनाने का कार्य

अगस्त के प्रथम सप्ताह में पिकरिक एसिड बनाने का कार्य फिर शुरू किया गया। वैज्ञानिक, यशपाल, मुसम्मात प्रकाशो, गिरवरसिंह और बी० पी० जैन इसमें भाग लेते थे। ३० पाउण्ड के लगभग पिकरिक एसिड फ़ैक्टरी में तैयार की गई थी। निट्रोग्लिसरिन और पिक्रोक्लोरिन भी वहाँ तैयार किए जाते थे। बी० पी० जैन विष तैयार करने के लिए क्रोटन सीड्स भी ले आए थे।

इसी समय मैंने मदनगोपाल को दिल्ली आने के लिए तार दिया, किन्तु उसने तार दिया कि मैं आने में असमर्थ हूँ। तब मैंने रुद्रदत्त के हाथ एक रिवॉल्वर, गोलियाँ, कुछ पुस्तकें तथा एक बम उसके पास भेज दिए। आज़ाद को मैंने एक तार दिया कि ३-८-३० को होने वाली सभा स्थगित कर दी जाय।

मैंने इलाहीबख़्श की दूकान से एक और हवाई पिस्तौल ख़रीदी।

विप्लव की तैयारी

६ठी या ७वीं अगस्त को मैं और धन्वन्तरि संस्था की मीटिङ्ग में उपस्थित होने के लिए कानपूर गए। यह निश्चय किया गया था कि यशपाल को उसके कुकर्मों के लिए गोली मार दी जाय और उसके स्थान पर धन्वन्तरि को नियुक्त किया जाय। यह भी निश्चय किया गया कि अब विप्लव का कार्य शुरू कर देना चाहिए।

कानपूर में रहते समय मैंने आज़ाद विद्याभूषण और वैशम्पायन को बलभद्र के यहाँ रहते देखा। वहीं वे हथियार आदि भी थे, जो गडोडिया डकैती के रुपए से आज़ाद ने ख़रीदे थे।

मैं दिल्ली लौट गया और वहाँ से मैंने यशपाल को कानपूर भेजा, किन्तु दूसरे ही दिन वह ज़िन्दा लौट आया।

११ वीं मई का समाचार है कि आज १० बज कर ५० मिनट पर अभियुक्तों ने क्रान्तिकारी नारे लगाते हुए अदालत के कमरे में प्रवेश किया। 'अन्तिम मुग़ल बादशाह बहादुरशाह ज़िन्दाबाद' 'महारानी लक्ष्मीबाई ज़िन्दाबाद', 'ताँतिया टोपी ज़िन्दाबाद' आदि नारों से सारी अदालत गूँज उठी। अभियुक्तों ने सन् ५७ के विप्लवी नेताओं के प्रति आदरभाव प्रदर्शित किया, और दो राष्ट्रीय गान भी उन्होंने गाए। आज अभियुक्तों के लिए टेबिल-कुर्सी का प्रबन्ध किया गया था, जिसमें उन्हें अपने मामले में भाग लेने में सुविधा हो।

ख़ुफ़िया पुलिस की निगरानी

मि० फ़रीदुलहक़ अन्सारी ने अदालत से इस बात की शिकायत की, कि अभियुक्तों के सम्बन्धियों तथा उनके वकीलों को ख़ुफ़िया पुलिस वाले बहुत तङ्ग करते हैं। अभियुक्तों के मामले की पैरवी के लिए जो कमिटी क़ायम की गई है, उसके सदस्यों तथा सेक्रेटरी पर भी कड़ी निगरानी रक्खी जाती है। यहाँ तक कि जिस दूकानदार से अभियुक्तों के लिए जलपान ख़रीदा गया था, वह भी ख़ुफ़िया वालों की निगरानी से नहीं बच सका है। अभियुक्तों के वकील ने ख़ुफ़िया वालों से अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना की।

मि० पील की जिरह

मि० आसफ़अली के प्रश्न करने पर मि० पील ने कहा कि लेमिङ्गटन रोड शूटिङ्ग केस में वैशम्पायन नाम के दो अभियुक्त थे, वी० आर० वैशम्पायन और दूसरे जी० आर० वैशम्पायन। केवल जी० आर० वैशम्पायन का मामला वहाँ चला, किन्तु वह छोड़ दिया गया। गवाह ने कहा कि मैं समझता हूँ कि वास्तव में वी० आर० वैशम्पायन के विरुद्ध, जो इस मामले का अभियुक्त है—अभियोग उपस्थित करने का विचार किया गया था। किन्तु मुझे यह नहीं मालूम कि उसके विरुद्ध अभियोग हटा लिया गया या उपस्थित ही नहीं किया गया।

प्रश्न—क्या आपको निश्चय है कि इस मामले के अभियुक्त वैशम्पायन का नाम वी०आर० वैशम्पायन है?

उत्तर—हाँ, हम लोग उसे वी० आर० वैशम्पायन ही कहते हैं।

मि० अब्दुल अज़ीज़ की हत्या

गवाह ने मि० अब्दुल अज़ीज़ की हत्या के सम्बन्ध में कहा कि जहाँ तक मैं जानता हूँ, पञ्जाब के पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० अब्दुल अज़ीज़ की हत्या के सम्बन्ध में किसी पर मामला नहीं चला है। जहाँ तक मुझे याद है, उस समय की रिपोर्टों से पता चला था कि कुछ ऐसे गवाह भी हैं, जिन्होंने मि० अब्दुल अज़ीज़ के हत्यारे को घटना के बाद भागते देखा था। यह हत्या अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में हुई थी।

इसके बाद गवाह ने क्रान्तिकारियों के पिकरिक एसिड आदि बनाने के सम्बन्ध में अपना बयान दिया। उसने कहा, कि मैं नहीं जानता हूँ कि साबुन बनाने के लिए पिकरिक एसिड की आवश्यकता होती है या नहीं? साबुन के कारबार के सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं जानता। मैं यह भी नहीं जानता, कि किसी व्यापारिक कार्य में पिकरिक एसिड का व्यवहार किया जा सकता है या नहीं? कानपुर की बम-फ़ैक्टरी में मैं नहीं गया था।

प्रश्न—क्या अपनी जाँच में आपको इसका सन्तोषजनक पता लगा है कि गडोडिया स्वदेशी स्टोर्स में डकैती होते समय कैलाशपति घटनास्थल पर मौजूद नहीं था?

सरकारी वकील ने इस प्रश्न को अनुचित ठहराया। उन्होंने कहा कि गवाह को इस विषय का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं है।

अदालत ने भी इस प्रश्न को अनुचित ठहराया। इसके बाद गवाह ने कहा कि मुख़बिर और अभियुक्तों के अलावा, मेरे इस मामले का चार्ज लेने के पहले दिल्ली की ख़ुफ़िया पुलिस ने, भगवतदयाल एम० ए०, प्रभास बैनर्जी, रघुवीरसिंह, भोलानाथ और अमीरसिंह को गडोडिया स्टोर्स डकैती के सम्बन्ध में गिरफ़्तार किया था। हमीद ख़ाँ मेरी आज्ञा से गिरफ़्तार किया गया था। मेरा ख़्याल है कि मुसद्दीलाल भी मेरी ही आज्ञा से गिरफ़्तार किया गया था। ये ७ अभियुक्त चलान बनने के पहले ही छोड़ दिए गए थे। हमीद ख़ाँ और मुसद्दीलाल कैलाशपति के बताने पर गिरफ़्तार किए गए थे।

प्रश्न—बी० बी० तिवारी, एम० पी० अवस्थी, के० सी० गुप्त, राजेलाल और भगवानदास के नाम भी कैलाशपति ने बतलाए हैं; इस मामले में वे क्यों नहीं अभियुक्त बनाए गए?

गवाह ने उत्तर में कहा कि मैं इस मामले को दिल्ली की घटनाओं तक ही परिमित रखना चाहता हूँ। भगवानदास भुसावल केस में लम्बी क़ैद की सज़ा भुगत रहा है।

प्रान्तीय सङ्गठनकर्ता

प्रश्न—कैलाशपति ने कहा है कि बी० बी० तिवारी संयुक्त-प्रान्त के सङ्गठनकर्ता थे। आपने उन्हें गिरफ़्तार क्यों नहीं किया; वे क्यों छोड़ दिए गए?

उत्तर—कैलाशपति के बयान में इस बात का पूरा प्रमाण नहीं है, कि बी० बी० तिवारी का दिल्ली की घटनाओं से सम्बन्ध है। उससे केवल यही पता चलता है कि वॉयसराय की ट्रेन उलटने के सम्बन्ध में जो मीटिङ्ग हुई थी, बी० बी० तिवारी वहाँ उपस्थित थे।

प्रश्न—राजेलाल क्यों नहीं गिरफ़्तार किए गए?

उत्तर—उनकी गिरफ़्तारी के लिए कोई प्रमाण नहीं मिला।

प्रोफ़ेसर निगम

प्रश्न—क्या यह सच है कि पहले आपने प्रोफ़ेसर निगम को इस मामले में अभियुक्त नहीं बनाने का विचार किया था?

उत्तर—उनकी गिरफ़्तारी के लिए उचित प्रमाण मिलने पर मैंने उन्हें अभियुक्त बनाने का विचार किया था।

प्रश्न—किस क़ानून के अनुसार आपने तथा आपके मातहतों ने कैलाशपति से प्रश्न किए थे?

उत्तर—क्रिमिनल प्रोसीजर कोड के १४वें अध्याय के अनुसार।

प्रतिवादी पक्ष के वकील की माँगें

मि० आसफ़अली ने अदालत के सामने निम्नलिखित माँगें पेश कीं :—

(१) ख़ुफ़िया पुलिस द्वारा लिए गए कैलाशपति के बयान के नोट।

(२) मि० पील के द्वारा सम्पादित इन नोटों की नक़ल; और

(३) सिटी मैजिस्ट्रेट के सामने दिए गए कैलाशपति का बयान।

अध्यक्ष—असली नोट कहाँ हैं? क्या वह पुलिस की डायरी का एक भाग है?

कोर्ट-इन्सपेक्टर—वे जाँच करने वाले अफ़सरों के पास हैं।

सरकारी वकील ने कहा कि सभी चीज़ें उचित समय पर दी जायँगी।

गवाह ने आगे कहा कि तलाशियों के समय जो किताबें मिली हैं, मैंने पढ़ीं नहीं है। उनमें से कुछ किताबें सरकार द्वारा ज़ब्त हैं। मैंने हेरल्ड लस्की की 'कम्यूनिज़्म' नामक पुस्तक नहीं पढ़ी है।

प्रश्न—आपको सी० आई० ई० की पदवी कब मिली थी?

उत्तर—१६२३ में

चूड़ियाँ

इसके बाद अदालत के सामने वे चूड़ियाँ पेश की गई', जो तलाशी लेते समय मिली थीं।

प्रश्न—इन चूड़ियों के विषय में ख़ास बात क्या है?

उत्तर—इससे यह पता चलता है कि घर में कोई स्त्री भी रहती थी।

प्रश्न—यह भी सम्भव है, कि कोई लड़का इन्हें कहीं से उठा लाया हो?

उत्तर—हाँ, यह भी हो सकता है।

गवाह ने ऐसा कोई विचार नहीं प्रकट किया, जिससे विदित हो कि ये चूड़ियाँ किसी ऐसी स्त्री की हैं, जिसका इस मामले से सम्बन्ध है।

श्री० एस० एन० बोस के जिरह करने पर गवाह ने कहा कि सम्भवतः ३०वीं या ३१वीं अक्टूबर को सिविल लाइन की पुलिस की हिरासत में मैं कैलाशपति से मिला था।

प्रश्न—क्या आपने उससे पूछा था कि उस हिरासत में वह कैसे आया?

उत्तर—नहीं।

गवाह ने कहा कि पहली बार मैंने आध घण्टे तक उससे बातें कीं। मैंने कोई प्रश्न नहीं पूछा।

प्रश्न—किस विषय पर बातचीत हुई थी?

उत्तर—मेरे मातहतों के पूछताछ करने के पहले कैलाशपति मुझसे मिलना चाहता था। वह इस बात का प्रमाण चाहता था, कि मेरे मातहत के अफ़सर किसी जवाबदेह-अफ़सर की आज्ञा से यह पूछताछ रहे हैं या नहीं? जाँच समाप्त होने तक कैलाशपति पुलिस की हिरासत में था।

गवाह ने कहा कि मैं केवल झण्डेवालाँ की तलाशी के समय उपस्थित था। वहाँ अदालत में पेश की हुई इन चूड़ियों के अतिरिक्त और कोई वस्तु नहीं थी।

इसके बाद अदालत लञ्च के लिए बर्ख़ास्त कर दी गई।

लञ्च के बाद फिर मि० पील की जिरह शुरू हुई। मि० बोस के प्रश्न करने पर गवाह ने कहा कि मि० निगम मेरे इस मामले का चार्ज लेने के बाद गिरफ़्तार किए गए थे। ख़्यालीराम और वैशम्पायन भी मेरे चार्ज लेने के बाद ही गिरफ़्तार किए गए हैं। पोतदार, मेरे कहने पर झाँसी में गिरफ़्तार किए गए हैं। कुछ अभियुक्त ४थी नवम्बर को गिरफ़्तार किए गए हैं। मेरे चार्ज लेने के समय इन अभियुक्तों के रिमाण्ड की अवधि ख़तम हो चुकी थी। मुझे उनके रिमाण्ड और चलान आदि के सम्बन्ध में कुछ नहीं मालूम है। मैं नहीं जानता, कि मेरे चार्ज लेने के पहले स्थानीय पुलिस ने क्या-क्या किया था। जहाँ तक मुझे याद है, मि० ईसर और मियाँ जगदीशसिंह ने मामले की मुलतवी स्वीकार की थी। मैंने मियाँ जगदीशसिंह के पास कोई अपूर्ण चलान नहीं भेजा था। धन्वन्तरि के चलान को छोड़ कर, अदालत का वर्तमान चलान पहला ही चलान है। मामले की मुलतवी के लिए मैं कभी अदालत में नहीं गया था। उस मामले के लिए कोर्ट-इन्स्पेक्टर सरदार भागसिंह ज़िम्मेदार हैं। सरदार भागसिंह मामले को मुलतवी कराने के सम्बन्ध में मुझसे सलाह लिया करते थे। उस समय, धन्वन्तरि का मामला मि० ईसर के सामने, तथा अन्य अभियुक्तों के मामले मियाँ जगदीशसिंह के सामने पेश थे।

मुख़बिर की प्रेमिका

गवाह ने आगे कहा कि कैलाशपति के साथ मुसम्मात कलावती नाम की एक स्त्री भी गिरफ़्तार की गई थी। उसके पति का नाम राजबलिप्रसाद था। मैं नहीं जानता, वह कितने दिनों तक हिरासत में रक्खी गई थी।

प्रश्न—वह कौन थी?

उत्तर—वह कैलाशपति की प्रेमिका थी। (हास्य-ध्वनि) गवाह ने कहा कि वह मुझसे मिली थी।

कैलाशपति किस प्रकार मुख़बिर हुआ

प्रश्न—वह किस लिए आपको देखने आई थी?

उत्तर—दिल्ली पुलिस के अपने प्रति किए गए दुर्व्यवहारों की शिकायत करने के लिए।

प्रश्न—उसने आपसे क्या शिकायत की थी?

बलात्कार करने का अभियोग

उत्तर—उसने कहा कि उसके साथ बलात्कार किया गया था।

प्रश्न—क्या उसने किसी अफ़सर का नाम भी बतलाया था?

अध्यक्ष—यह प्रश्न किस प्रकार उचित हो सकता है मि० बोस?

मि० बोस—यह दिखाने के लिए, कि कैलाशपति किस प्रकार सरकारी गवाह बना।

मि० पील—उसने इस सम्बन्ध में ख़ुफ़िया विभाग के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट लाला नन्दकिशोर की शिकायत की थी।

मि० बोस—यह शिकायत तो बहुत भीषण है।

गवाह—यह शिकायत उसके साथ बलात्कार करने के सम्बन्ध में है।

गवाह ने आगे कहा कि कैलाशपति ने उसके सम्बन्ध में मुझसे कुछ नहीं कहा था। वह कैलाशपति के साथ, एक ही मकान में गिरफ़्तार की गई थी।

प्रश्न—उसकी रिहाई के लिए कौन ज़िम्मेदार है?

उत्तर—मैं उसकी रिहाई के लिए ज़िम्मेदार नहीं हूँ। मैं यह भी नहीं जानता कि किस अफ़सर ने उसे रिहा किया था। सम्भवतः डिप्टी सुपरिन्टेण्डेण्ट लाला नन्दकिशोर ने ही उसे रिहा किया था। गवाह ने आगे कहा कि जिस समय कैलाशपति पुलिस की हिरासत में था, उस समय अनेक प्रकार के लोग उससे मिलने जाया करते थे। इनमें अधिकांश पुलिस के अफ़सर और उसके सम्बन्धी होते थे। कलावती ने भी एक या दो बार उससे भेंट की थी।

मुख़बिर क़िले में किस प्रकार रहता था

इसके बाद गवाह ने बतलाया कि जनवरी के प्रथम सप्ताह में, मुख़बिर कैलाशपति क़िले में भेज दिया गया। वहाँ पुलिस कॉन्स्टेबिलों की उस पर कड़ी निगरानी रहती थी। उसको वहाँ हटाने की ज़िम्मेदारी मेरे ऊपर थी। २१वीं अप्रैल तक वह वहाँ रक्खा गया। इस बीच में बहुधा ख़ुफ़िया पुलिस वाले उससे मिला करते थे।

इस समय मुख़बिर कहाँ रक्खा गया है?

गवाह ने आगे कहा कि कैलाशपति इस समय यूरोपियन वार्ड में रक्खा गया है। गवाह ने कहा कि २१वीं अप्रैल के बाद मैं उससे कई बार मिला हूँ। पीछे गवाह ने अपनी भूल सुधार कर कहा, कि २१वीं अप्रैल के बाद मैं उससे एकदम नहीं मिला हूँ, ख़ुफ़िया पुलिस का कोई भी अफ़सर उससे नहीं मिला है।

इसके बाद गवाह ने बतलाया कि मुख़बिर बालकृष्ण नवम्बर के पहले सप्ताह में तथा मुख़बिर डी० बी० तैलङ्ग अन्तिम सप्ताह में गिरफ़्तार किए गए थे। मुख़बिर मदनगोपाल नवम्बर के मध्य में गिरफ़्तार किया गया था।

फ़ोटो की किताब

गवाह ने आगे बतलाया कि ख़ुफ़िया पुलिस के पास दिल्ली और लाहौर केस के फ़रार अभियुक्तों की फ़ोटो और विवरणों की एक किताब है। यह किताब नवम्बर १६३० के अन्त में निकाली गई थी। मैंने उसे दिसम्बर में देखा था।

प्रश्न—क्या उस पुस्तक की एक प्रति आप यहाँ पेश करने के लिए तैयार हैं?

उत्तर—नहीं।

प्रश्न—यदि अदालत ऐसा करने की आज्ञा दे तो आप पेश करेंगे?

उत्तर—यदि दिल्ली की ख़ुफ़िया पुलिस मुझे किताब की एक प्रति देगी, तो मैं पेश कर सकता हूँ।

मि० बोस ने अदालत से उक्त पुस्तक की एक प्रति पेश की जाने की आज्ञा देने की प्रार्थना की।

प्रश्न—क्या वर्तमान अभियुक्तों में से भी किसी की फ़ोटो उसमें है?

उत्तर—केवल वी० जी० वैशम्पायन की फ़ोटो उसमें है।

प्रश्न—क्या निगम की फ़ोटो भी उसमें है?

गवाह ने पहले तो उत्तर दिया कि मुझे याद नहीं है, फिर पीछे कहा कि निगम की फ़ोटो उसमें नहीं है।

(क्रमशः)

—मिदनापुर का ७वीं मई का समाचार है, कि मि० पेड्डी के हत्या-काण्ड के १४ अभियुक्त आज सदर सब-डिविज़नल अफ़सर के सामने पेश किए गए। कोर्ट-इन्स्पेक्टर ने अदालत के सामने कहा, कि ऐसे प्रमाण मौजूद हैं, जिनसे यह सिद्ध होता है कि यह हत्या-काण्ड विप्लवी-दल के षड्यन्त्र का फल है, और अभियुक्तों में से ७ व्यक्ति क्रान्तिकारी संस्था के सदस्य हैं। अदालत के सामने यह भी कहा गया कि ऐसे गवाह भी पेश किए जा सकते हैं, जिन्होंने अपनी आँखों से विमलदास गुप्त को मि० पेड्डी की हत्या करते देखा है। विमलदास गुप्त फ़रार है, किन्तु ज्योतिजीवन घोष हत्या के दिन तथा उसके पहले दिन विमलदास के साथ देखा गया था। निम्न-लिखित व्यक्तियों का क्रान्तिकारी-दल का सदस्य होना बतलाया जाता है:—वीरेन्द्रकुमार दत्त, प्रफुल्लकुमार त्रिपाठी, ब्रजकुमार चक्रवर्ती, अमरचन्द्र चट्टोपाध्याय, परिमल राय, फणिभूषण कुन्दु और शचीन्द्रनाथ मैती।

कुछ अभियुक्तों को १०,०००) रुपए की ज़मानत पर छोड़े जाने की आज्ञा दी गई है।
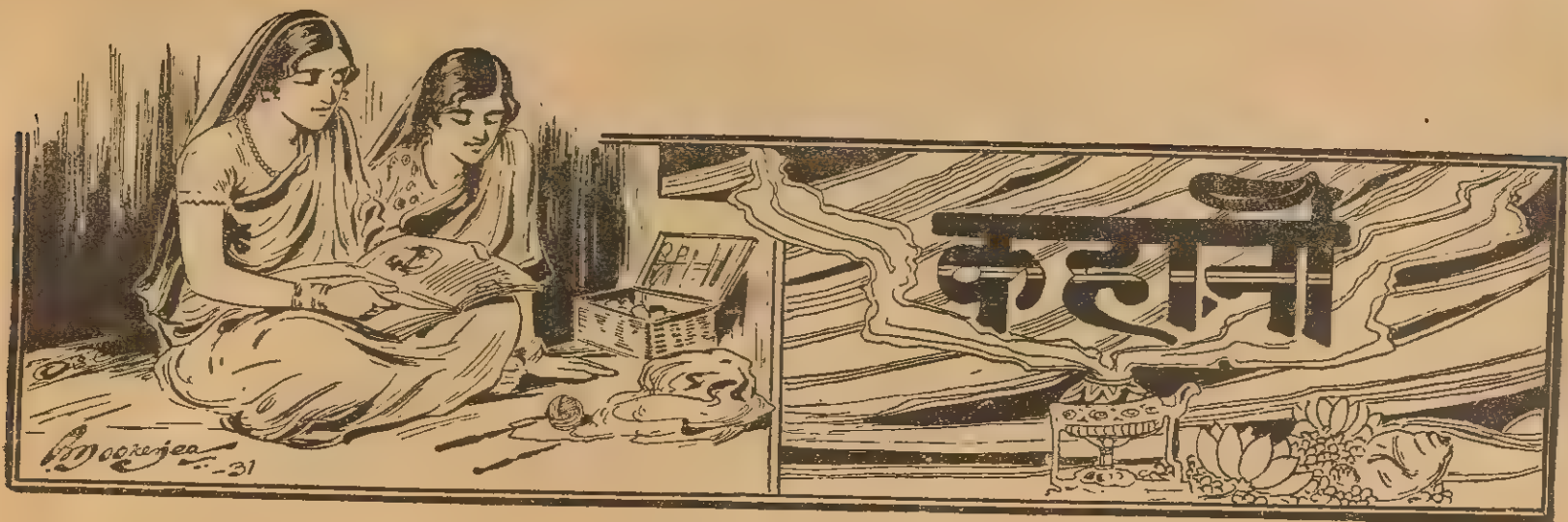
[पाण्डेय बेचन शर्मा, "उग्र"]

व्यापारी

(काव्य-कहानी)

मैं छोटा-सा था व्यापारी,
इलका अपना खेवा था,
मैं माटी लेकर निकला था !
मिसिरी थी ना मेवा था।

❀

और, वहाँ बाज़ार लगा था !
और वहाँ बाज़ार लगा था
मन-मोहन का मेला था,
रतन, जवाहर, हीरा, मोती,
पूरा रेला-पेला था !
गुल-बुलबुल-बहार बिकते थे,
रङ्ग बँधा अलबेला था।
मैं माटी लेकर निकला था
सब में एक—अकेला—था !

❀

क्रय-विक्रय विस्मय-मय विनिमय !
चमक-दमक की चाह सभी को
मेरा सौदा मैला था,
नज़र नहीं उस पर टिकती थी
गो, चरणों में फैला था !
टूट-टूट कर रूप-रङ्ग पर—
मोहकता के अङ्ग-अङ्ग पर—
हाव-भाव का ज़ोर-शोर था
घर-घर, दर-दर, नर-नर, सर-सर !

❀

मुझ पर नहीं निगाह किसी की......
आह ! पड़े जब एक-एक कर
जाते, नज़र अनेक—
अपनी-अपनी रुचि की गठरी
बाँधे, सहित विवेक !
धनिक-वणिक यह गए, श्रमिक
वह, उधर चले विद्वान् ;
नृप यह गए ! कुँवर वह जाते,
बाँध रहे सामान !!
असफलता से मैं घबराया......

❀

भर आया लहरीला-मानस
—"हे मेरे भगवान !"
ढीले हुए तार आँसू के,
चलते, गीले-गान
कहने लगे कहानी अपनी,
जिसमें थी असफलता घोर
बड़ी वेदना-मय-नगण्यता
उस बिखरी-माटी की ओर।
मैं माटी लेकर निकला था !

❀

वह आए भगवान !
जब पूरब का हुआ उजाला
पश्चिम के घर फैल,
अन्धकार से आँख-मिचौनी
लगा खेलने—मैल !
तब, उस ओर, दिव्य-दल आया।

[पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र']

विधि-हरि-हर विख्यात
—अपनी-अपनी शक्ति सँवारे—
आए, करते बात—
"भक्त के बस में हैं हम लोग !
नहीं है मुक्त अमरता आह !!"

❀

मैं वि-भक्त-सा रहा घूरता
भक्त-मण्डली हुई अधीर,
पद-अनुरक्त दौड़ते आए
सख़्त-सुस्त कहने गम्भीर—
"ए माटी वाले ! फिर-फिर क्यों
यहाँ व्यर्थ फैलाता है ?
क्यों आँखों में धूल झोंकने
इस बज़ार में आता है ?
रहते हैं भगवान यहाँ, सुन !
कर देवेंगे तेरा नाश—
वह सहस्र-कर, वह सहस्र-पद,
वह सहस्र-मन-बुद्धि-प्रकाश !"

❀

स-भय हुई मेरी निर्भयता...
गले लिपट कर लगी उदासी
करने हाहाकार—अपार,
मानो चिपक गया छाती से
वह, मैला, माटी का भार !
"भाग...भाग !" मैं लगा सोचने—
"जीवन हुआ अ-भाग—अ-भाग !
राग-राग के राग अलापे
फल में सुना—विराग-विराग !"

❀

भाग...भाग ! मैं लगा सोचने...
"जग से भाग, भाग जग-मग से,
डगमग-पग से ? क्या परवाह !
चल रे—छोड़ ! मोह माटी का
इसकी कहाँ किसी को चाह ?
इसे पड़ी रहने दे यों ही,
जब यह जीवन पावेगी ;
पुलक, पिघल, घुल-मिल कर
ख़ुद ही महा-मही हो जावेगी..."

❀

तब तुम—एकाएक ! पधारे...
विकल-भाव से, कल-स्वभाव से
तुम कुछ ढूँढ चले उस ओर
जिधर, जगमगाती-मणियाँ थीं
सन्ध्या को बतलातीं—भोर !
देख रहा था मैं, दुत्कारे गए,
पड़ी फटकार बहुत !
था अचरज में, चाह रहे तुम
क्या ऐसा—अलभ्य, अद्भुत !
तब तक तुम मेरे ढिग आए......

❀

मैंने देखा, थे तुम सुन्दर !
केश तुम्हारे सुन्दर-तर
बिखरे-सँवरे थिरक रहे थे
लहरा कर, भ्रू-मस्तक पर !
जीवनमय थे नैन-निराले
प्राण-स्पर्श-कर, मधुमय बोल !
क्या जानें क्यों समझ गया मैं
—"तुम लोगे यह माटी मोल !"

❀

(शेष मैटर १७वें पृष्ठ पर देखिए)
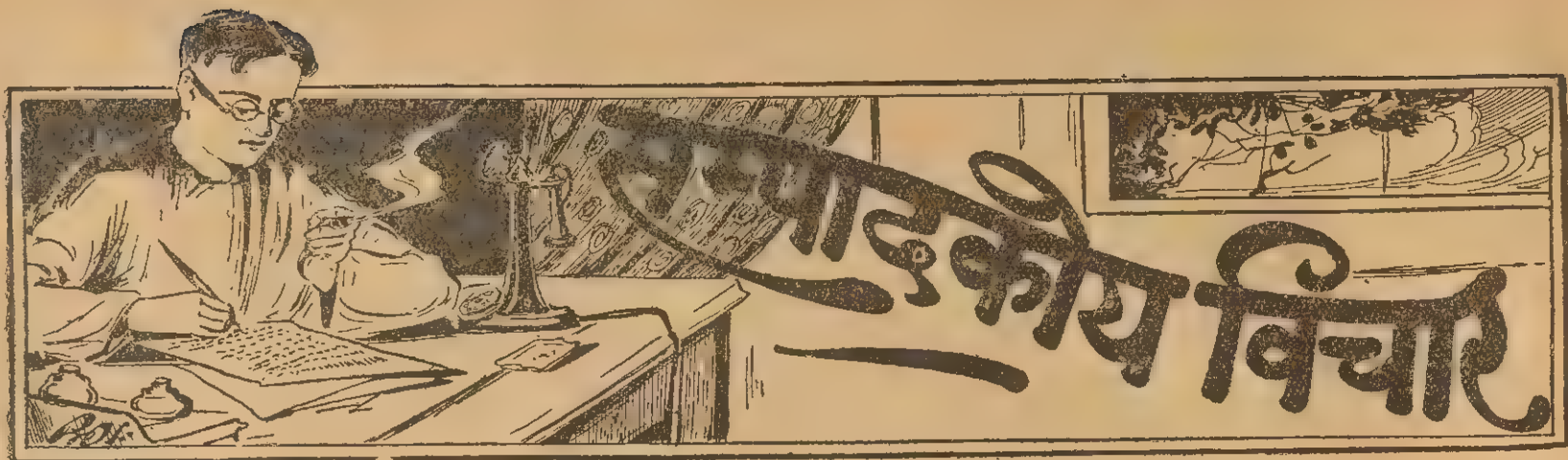
१४ मई, सन् १९३१

स्वदेशी आन्दोलन

(शेषांश)

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अत्याचारों की तुलना संसार के इतिहास में मिलना असम्भव है। प्रसिद्ध लेखक बोल्ट्स एक स्थान पर लिखता है—

". . . upon their inability to perform such agreements as have been forced upon them by the Company's agents. . . have had their goods seized and sold on the spot to make good the deficiency; and winders of raw silk, . . . have been treated also with such injustice, that instances have been known of their cutting off their thumbs to prevent their being forced to wind silk. "*

अर्थात्—"........कम्पनी के गुमाश्ते उन पर (जुलाहों पर) ज़बरदस्ती भारी काम करने का इक़रारनामा मढ़ देते हैं और जब वे इक़रारनामे के मुताबिक़ काम पूरा नहीं कर पाते तो उस कमी को पूरा करने के लिए उनका माल-असबाब उसी जगह नीलाम कर दिया जाता है ; कच्चा रेशम लपेटने वालों पर इतना भयङ्कर अत्याचार हुआ है, कि इस प्रकार के उदाहरण देखे गए हैं, कि उन्होंने स्वयं अपने हाथ से अपने अँगूठे काट डाले, जिससे रेशम लपेटने के लिए उन्हें कोई मजबूर न कर सके !"

कौन ऐसा निर्दय मनुष्य होगा, जिसकी आँखों में इस रोमाञ्चकारी कहानी को पढ़ कर ख़ून के आँसू न उतर आवें ? अर्थ-लोभ का यह भीषण ताण्डव देख कर महमूद और नादिर ख़ाँ को अत्याचारी कहने में मनुष्य की वाणी लज्जित हो जाती है। इन्हीं अत्याचारों पर टीका करते हुए इङ्गलैण्ड के प्रसिद्ध वक्ता एडमण्ड बर्क ने वहाँ की पार्लिमेण्ट के सामने कहा था—

Commerce, which enriches every other country in the world, was bringing Bengal to total ruin. . . . These traders appeared everywhere ; they sold at their own prices, and forced the people to sell to them at their own prices also. It appeared more like an army going to pillage the people, under pretence of commerce, than anything else. In vain the people claimed the protection of their own Country Courts. This English army of traders, in their march, ravaged worse than a Tartarian conquerer. . . . Thus this miserable country was torn to pieces by the horrible rapaciousness of a double army."*

अर्थात्—"व्यापार, जो संसार के और सब देशों को धनवान बनाता है, बङ्गाल को सर्वनाश की ओर ले जा रहा था। ....ये व्यापारी हर एक जगह पहुँचते थे, अपना माल अपने ही दामों पर बेचते थे, और दूसरे लोगों का माल भी उन्हें मजबूर करके अपने ही दामों ख़रीदते थे। बिल्कुल ऐसा मालूम होता था, मानों व्यापार के बहाने कोई फ़ौज लोगों को लूटने जा रही है। वहाँ की प्रजा देशी अदालतों से न्याय की प्रार्थना करती थी ; किन्तु व्यर्थ। कम्पनी के व्यापारियों की यह सेना अपनी कूच में तातारी आक्रमणकारियों से भी बढ़ कर लूट-मार मचाती थी।.........इस प्रकार यह अभागा देश दो सेनाओं के बीच भयङ्कर अपहरण का शिकार बन कर टुकड़े-टुकड़े किया जा रहा था।"

इधर बङ्गाल को विदेशी व्यापारी इस प्रकार नोच-नोच कर खा रहे थे, उधर यूरोप में दूसरा ही गुल खिला हुआ था ! सन् १७६८ ई० में जेम्स वॉट नामक अङ्गरेज़ ने स्टीम एञ्जिन का आविष्कार किया। इससे यूरोप के उद्योग-धन्धों में क्रान्ति हो गई। भारत की लूट का जो रुपया इङ्गलैण्ड पहुँचा था, उसकी सहायता से बड़े-बड़े कारख़ाने खोले गए। थोड़े परिश्रम और अल्प व्यय में ही प्रचुर परिमाण में माल तैयार होने लगा। इसके पहले विदेशियों ने कभी स्वप्न में भी न सोचा था, कि वे किसी ज़माने में अपने देश का बना हुआ माल भारत में लाकर बेच सकेंगे। अब तक वे भारतवर्ष की बनी हुई चीज़ें, ख़ास कर कपड़ा, यूरोप के बाज़ारों में पहुँचाने वाले एजेण्ट मात्र थे। किन्तु अब दृष्टि-कोण बदल गया। शिल्पीय क्रान्ति (Industrial Revolution) के बाद, सन् १८१३ ई० में पहली बार यह तय हुआ, कि भारतवर्ष के उद्योग-धन्धों का समूल नाश किया जाय। भारतवर्ष से केवल कच्चा माल ख़रीदा जाय और इङ्गलैण्ड के बने हुए माल ज़बरदस्ती भारतवासियों के गले मढ़े जायँ। इस सिद्धान्त को कार्यरूप में परिवर्तित करने के लिए कम्पनी ने सात नियम बनाए—

(१) इङ्गलैण्ड में बना हुआ माल नाममात्र महसूल पर या बिना महसूल भारत में आने दिया जाय।

(२) इङ्गलैण्ड में भारत के बने हुए माल पर इतना भारी कर लगाया जाय, कि वह विलायती माल के मुक़ाबले में मँहगा पड़े और वहाँ उसकी बिक्री बन्द हो जाय।

(३) भारतवर्ष में चुङ्गी के नियमों और चुङ्गी की दर में ऐसा उलट-फेर किया जाय, जिससे भारतवर्ष का कच्चा माल इङ्गलैण्ड के व्यापारियों को सस्ते दामों में मिल सके और भारतवर्ष में तैयार होने वाला इतना मँहगा पड़े, कि भारतवर्ष में भी विलायती माल के मुक़ाबले में उसका बिकना बन्द हो जाय।

(४) अङ्गरेज़-व्यापारियों को हर तरह की सहायता और सुविधा दी जाय।

(५) भारतीय कारीगरों पर दबाव डाल कर ज़बरदस्ती उनकी कारीगरी के रहस्यों का पता लगाया जाय और वे रहस्य इङ्गलैण्ड के कारीगरों को बताए जाएँ। प्रदर्शिनियों के द्वारा भारतवासियों की आवश्यकताओं का पता लगाया जाय।

(६) माल ढोने के लिए भारतवर्ष में रेलें जारी की जायँ।

(७) भारतवर्ष के बाज़ारों को स्थायी रूप से अपने क़ब्ज़े में रखने के लिए भारतवर्ष में साम्राज्य का विस्तार किया जाय और भारतवासियों को सदा के लिए ग़ुलाम बना कर रक्खा जाय।

इन नियमों को सफल बनाने के लिए कैसी-कैसी भयङ्कर चालें चली गईं और भारतीय प्रजा के हित की दुहाई देकर किस प्रकार उनके उद्योग-धन्धों का सर्वनाश किया गया, यह किसी वृहत पुस्तक का विषय हो सकता है, हम यहाँ इसके परिणामों तक ही अपनी दृष्टि परिमित रक्खेंगे।

सन्, १८१३ ई० के बाद से भारत से विदेश जाने वाले कपड़े का परिमाण घटने लगा। और थोड़े ही दिनों के बाद भारतवर्ष में विलायती कपड़े का आना भी प्रारम्भ हो गया। अब इङ्गलैण्ड से भारतवर्ष में सूत, बुना हुआ सूती कपड़ा, रेशमी कपड़ा, ऊनी माल, मैशीनरी और लोहे की चीज़ें आती थीं और उनके बदले में भारतवर्ष से कच्ची रुई, नील, नाज, चमड़ा, जूट, अफ़ीम, बीज और चाय आदि कच्चा माल ढोया जाता था। इस व्यापार का सब से घातक स्वरूप यह था, कि भारतवर्ष में सब से अधिक मूल्य का सूती कपड़ा आता था, जिसका अधिकांश भारतवर्ष की ग़रीब प्रजा ख़रीदती थी और भारतवर्ष से सब से अधिक मूल्य का नाज विदेशों में जाता था। कहने की आवश्यकता नहीं, कि घरेलू उद्योग-धन्धों के नष्ट हो जाने के कारण भारत की दरिद्र प्रजा के पास ज़मीन का लगान चुकाने और वस्त्र ख़रीदने के लिए अपने मुँह का अन्न बेच देने के अतिरिक्त और कोई उपाय न था ! हिन्दुस्तान प्लेग, महामारी, हैज़े और अकाल का घर बन गया। इधर हमारे शासक हमारे मुँह की रोटी छीन लेने के लिए कितने व्याकुल थे, इसका पता इसीसे लग सकता है, कि सन् १८७६-७७ ई० में भारतवर्ष में बहुत बड़ा अकाल पड़ा था, अन्न के लिए त्राहि-त्राहि मच गई थी, हज़ारों आदमी मर रहे थे ; किन्तु उस साल इतना अधिक अन्न विलायत भेजा गया, जितना उसके पहले अङ्गरेज़ी शासन के आरम्भ से लेकर उस समय तक कभी नहीं भेजा गया था।

साल			विलायत जाने वाले अन्न का मूल्य पाउण्डों में !
१८७५	...	...	५४,८८,१६९
१८७६	...	...	६४,२१,१३७
१८७७	...	...	७९,८८,१८९

इङ्गलैण्ड के व्यापारियों का इतने से भी सन्तोष नहीं

* Ibid.

* Burke in his Impeachment of Warren Hastings.

हुआ ! उन्होंने सोचा, भारतवर्ष से कच्चा माल इङ्गलैण्ड तक लाने और फिर इङ्गलैण्ड से बना हुआ माल भारतवर्ष ले जाने में बहुत-सा रुपया ख़र्च होता है, क्यों न हम भारतवर्ष में ही चल कर अपने कारख़ाने खोलें ? झटपट उन्होंने भारतवर्ष के उपजाऊ मैदानों में नील, अफ़ीम, चाय, कॉफ़ी आदि की खेती आरम्भ कर दी। बङ्गाल के किसानों पर निलहे गोरे जो अत्याचार करते थे, उसे देख कर अभी हाल तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी का ज़माना याद आ जाता है। आज की अवस्था यह है, कि हमें अपने ही घर में सिर पटकने के लिए कहीं स्थान नहीं। देश के अधिकांश उद्योग-धन्धे विदेशी पूँजीपतियों के हाथ में हैं !!

भारतवर्ष की आत्मा इस घातक शोषण नीति से पूर्णतया परिचित हो गई है। भारतवासी भली-भाँति समझ गए हैं, कि हमारे बाज़ारों में विदेशी माल की खपत ही हमारा परतन्त्रता का केन्द्र-स्तम्भ है। इस भयङ्कर अवस्था की ओर हमारे राष्ट्रीय नेताओं का ध्यान बहुत पहले ही आकर्षित हुआ था; किन्तु इस पर लॉर्ड कर्ज़न की कृपा जब तक न हुई, तब तक हमारी मोह-निद्रा भली-भाँति भङ्ग न हुई। बङ्ग-भङ्ग के बाद जिस स्वदेशी आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था, उसमें हमें पूर्ण सफलता न मिली। ग़ुलाम राष्ट्रों में, जैसा प्रायः हुआ करता है, स्वार्थ और विश्वासघात की भावनाओं ने हमें आगे बढ़ने से रोक दिया। किन्तु हज़ार कठिनाइयों के होते हुए भी हमें जो आंशिक सफलता मिली, वह लॉर्ड कर्ज़न का अभिमान चूर्ण करके बङ्गाल को पुनः एक करने में समर्थ हो सकी थी।

असहयोग-आन्दोलन के आरम्भ-काल से अब तक विदेशी बहिष्कार और स्वदेशी प्रचार के क्षेत्र में हमारी राष्ट्रीय प्रगति कितना आगे बढ़ गई है और इससे स्वराज्य प्राप्त करने का हमारा मार्ग कितना सुगम हो गया है, इसका इतिहास अभी तक अपूर्ण है, इसके सम्बन्ध में अन्तिम सम्मति निर्धारित करने का समय अभी तक उपस्थित नहीं हुआ है। किन्तु कुछ दिन हुए भारतीय राष्ट्रीय महासभा की विदेशी वस्त्र-बहिष्कार समिति ने संख्याओं के आधार पर जो एक छोटी सी, किन्तु खोजपूर्ण पुस्तिका प्रकाशित की थी, उससे तीन बातें पूर्णतः स्पष्ट हो जाती हैं—(१) भारतवासी संसार की सब से ग़रीब प्रजा हैं, (२) संसार के सभी धनी राष्ट्र भारतवर्ष के हाथों अपना माल बेच कर उसकी रही-सही सम्पत्ति भी लूट रहे हैं और (३) भारतवासी यदि चाहें तो इस आर्थिक लूट से छुटकारा पा सकते हैं।

पुस्तिका बताती है कि भारतीय राष्ट्र नगरों से दूर—बहुत दूर—ग्रामों में निवास करता है।

सम्पूर्ण जन-संख्या	३१,८९,००,०००
नगरों की जन-संख्या	३,२४,००,०००
ग्रामों की जन-संख्या	२८,६४,००,०००

अर्थात् सम्पूर्ण जन-संख्या का ८९.८ या ९० प्रतिशत ग्रामीण है !!

इन २८ करोड़, ६४ लाख ग्रामीण भारतवासियों की आर्थिक दशा क्या है ? एक भारतवासी की प्रतिदिन की आय क्या है और अन्य देश का एक नागरिक प्रतिदिन कितना कमाता है ?

प्रति व्यक्ति के प्रतिदिन की आय का औसत :—

	रु०	आ०	पा०
युनाइटेड स्टेट्स ऑफ़ अमेरिका	३	०	०
ऑस्ट्रेलिया	२	४	०
ग्रेट ब्रिटेन	२	१	४
कनाडा	१	१०	८
भारतवर्ष	०	१	७

ध्यान रहे, कि इस १ आ० ७ पा० के दैनिक औसत में ३ करोड़, २४ लाख नगरनिवासियों की अपेक्षाकृत बड़ी आय भी शामिल है। यदि नगरनिवासियों की आमदनी निकाल कर हिसाब लगाया जाय तो प्रत्येक भारतीय ग्रामीण की दैनिक औसत आय १ आ० ७पा० से अवश्य ही बहुत कम निकलेगी !!!

जिस देश के प्रति व्यक्ति की दैनिक औसत आय १ आ० ७ पा० है, उसका ६६ करोड़ रुपया प्रतिवर्ष केवल कपड़े और सूत के मूल्य-स्वरूप विदेश में चला जाता है। विदेशी वस्त्र का एक बड़ा भाग २८ करोड़ ६४ लाख ग्रामवासियों द्वारा व्यवहृत होता है। पिछले दस वर्षों में भारतवर्ष की क्षुधा-पीड़ित प्रजा ने इङ्गलैण्ड, जापान तथा अन्य देशों को ६६३ करोड़ रुपया दिया है, जिसका हिसाब इस प्रकार है :—

सन्	भारतवर्ष में आए हुए विदेशी कपड़े और सूत का मूल्य रुपयों में
१९१८-१९	५७, ४१,०००
१९१९-२०	५६,१२,०००
१९२०-२१	९७,८६,०००
१९२१-२२	६४,६७,०००
१९२२-२३	६७,७७,०००
१९२३-२४	६४,७०,०००
१९२४-२५	७९,०९,०००
१९२५-२६	६२,२०,०००
१९२६-२७	६१,६८,०००
१९२७-२८	६१,९२,०००

सन् १८९९ ई० से सन् १९२८ ई० तक विगत २९ वर्षों में भारतवर्ष में उत्पन्न होने वाले और विदेशों से आए हुए कपड़े का हिसाब लगा कर देखा गया है, कि भारतवर्ष के प्रत्येक व्यक्ति का कपड़े का सालाना औसत ख़र्च १२.८६ गज़ है। विगत केवल दस वर्षों का हिसाब लगाने से यह ख़र्च १३.०८ गज़ के लगभग आता है, किन्तु १९१९-२० में, जब कपड़ा मँहगा हो गया था, यह ख़र्च केवल ८.८ गज़ ही रह गया था।

भारतवर्ष में ख़र्च होने वाले कुल कपड़े का लगभग एक तृतीयांश विदेश से आता है, अर्थात् यदि प्रत्येक भारतवासी के कपड़े का सालाना ख़र्च का औसत १३ गज़ मान लिया जाय, तो प्रति व्यक्ति के लिए ४⅓ गज़ कपड़ा विदेश से आता है और शेष ८⅔ गज़ इसी देश में मिलों और हाथ के करघों से पैदा होता है। इस प्रकार विदेशी वस्त्र के पूर्ण बहिष्कार का प्रश्न केवल प्रति व्यक्ति ४⅓ गज़ कपड़ा और भारतवर्ष में पैदा करने का प्रश्न मात्र रह जाता है। कुल भारतवर्ष के लिए ४⅓ × ३१,८९,००० = लगभग १,३८,००,००,००० गज़ कपड़ा और बनना चाहिए।

विशेषज्ञों ने हिसाब लगा कर देखा है, कि एक आदमी प्रति घण्टा ३५० गज़ की साधारण चाल से ८ घण्टे में इतना काफ़ी सूत कात सकता है, जिससे १ गज़ हो सके। यदि एक आदमी साल में ३०० दिन, प्रति दिन ८ घण्टे के हिसाब से काम करे तो ३०० गज़ कपड़ा पैदा कर सकता है। इस प्रकार १,३८,००,००,००० गज़ कपड़ा और पैदा करने के लिए १,३८,००,००,००० ÷ ३०० = ४६,००,००० कातने वालों की आवश्यकता है।

अर्थात् भारतीय जन-संख्या के प्रति २०० में से तीन मनुष्य यदि इस प्रकार चरख़ा कातना आरम्भ कर दें, तो विदेशी वस्त्र-बहिष्कार की समस्या हल हो जाती है। आवश्यकता केवल इस बात की है, कि हम सच्ची लगन से काम करने को तैयार हो जायँ।

अब ज़रा भारतवर्ष के बेकारों की संख्या भी देखिए। ऐसा अनुमान लगाया गया है, कि जितने ग्रामीण लोग साल में प्रायः तीन महीना बेकार रहते हैं उनकी संख्या ११ करोड़ के लगभग है। उनमें से केवल १८४ लाख आदमी अर्थात् प्रत्येक ६ बेकार मनुष्यों में से केवल एक अपनी बेकारी के समय का सदुपयोग कर सूत कातना आरम्भ कर दे, तो विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का प्रश्न हल हो जाय। प्रति दिन ८ घण्टे कातने से उन्हें कम से कम एक आना अवश्य मिल सकता है। जिस अभागे देश के करोड़ों प्राणियों की दैनिक आय १ आ० ७ पा० से बहुत कम है, उसके बेकार मनुष्यों के लिए प्रति दिन १ आने की आमदनी का उपाय ईश्वरीय आशीर्वाद नहीं तो और क्या है ?

बहिष्कार-समिति ने जिस खोज और परिश्रम के साथ इन संख्याओं को प्रकाशित कर विदेशी वस्त्र-बहिष्कार के महत्वपूर्ण प्रश्न को हमारे सामने इतने सरल रूप में रख दिया है, इसके लिए वह बधाई की पात्र है। किन्तु क्या हम अपने परिश्रमी भाइयों को बधाई देकर ही सन्तुष्ट हो जायँगे ? इतने सुलभ उपाय के रहते हुए भी यदि हम विदेशी वस्त्र का पूर्ण बहिष्कार करने में सफल न हों तो इससे यही समझना चाहिए, कि हमने अपने परावलम्बन का वास्तविक स्वरूप अभी तक नहीं समझा है। किस प्रकार दरिद्र भारत दिन-दिन दरिद्रतर होता जा रहा है, 'जीवेयम् शरदः शतम्' का मन्त्र जपने वाले भारतवासियों की औसत आयु २३ वर्ष ही क्यों रह गई है, ग्रीष्म की कड़ी धूप और सावन की मूसलधार वर्षा में अनवरत परिश्रम करके भी भारतीय कृषकों को सूखी रोटी नसीब क्यों नहीं होती, हमारे शिक्षित युवकों में यौवन-सुलभ उत्साह और कार्य-तत्परता का अभाव क्यों होता है, हिन्दू-मुसलमानों में कलह और विद्वेष कौन उत्पन्न कराता है, हमारे सामाजिक सुधार के मार्ग में रोड़े क्यों अटकाए जाते हैं, हमारी सभ्यता जीर्ण-शीर्ण और विशृङ्खल क्यों हो रही है, भारत का जातीय जीवन द्रुतवेग से यमराज के द्वार की ओर क्यों दौड़ा जा रहा है—आदि प्रश्नों के मूल कारण पर हमने अभी तक विचार नहीं किया है। भारतवर्ष की आर्थिक लूट को अनन्त काल तक जारी रखने के लिए ही हमें उपरोक्त उपायों से कमज़ोर बनाया जा रहा है। शासित जाति की दुर्बलता ही विदेशी शासन का बल है और उसका दैन्य विदेशी शासकों का ऐश्वर्य ! प्रत्येक व्यक्ति, जो कौच पर लेट कर बिजली के पङ्खे के नीचे स्वर्ग-सुख का आनन्द अनुभव करता है, उसे समझ लेना चाहिए, कि उसके मख़मली गद्दे के लिए किसी परिश्रमशील मज़दूर के मुँह का कौर छिन गया है, उसका नेवीकट (Navy Cut) सिगरेट भारतीय बच्चों की मृत्यु-संख्या में हृदय-विदारक उन्नति करने के बाद उसके अधरों तक पहुँच सका है। प्रत्येक सूई और पिन, जो हम विदेश से मोल लेते हैं, हमें एक पग जातीय मृत्यु के नज़दीक पहुँचा देती है। सबसे बड़े दुर्भाग्य की बात तो यह है, कि हमारे पाप का प्रायश्चित्त हमारे ही पतन तक समाप्त नहीं होता—इसका घातक प्रभाव भारतवर्ष के समुद्र-मार्ग के आस-पास के देशों की स्वतन्त्रता पर भी पड़ता है। मिश्र, टर्की, अरब, पर्शिया, अफ़ग़ानिस्तान आदि देशों की स्वतन्त्रता अपहरण करने के लिए ब्रिटिश-सरकार जो इतनी उत्सुक रहती है, इसका रहस्य भारतवर्ष से इङ्गलैण्ड के आवागमन का मार्ग सुरक्षित रखने के उलझे हुए प्रश्नों में ही पाया जा सकता है।

अब विदेशी वस्त्र पहनने वाले हमारे भाई और बहिनें हृदय पर हाथ रख कर अपने अन्तःकरण से पूछ देखें कि अपने तैंतीस करोड़ भाइयों को नरक की यन्त्रणा देकर, भारत के पड़ोसी राष्ट्रों की स्वतन्त्रता को ख़तरे में डाल कर, शासक जाति के आर्थिक पतन का साधन उपस्थित कर और स्वयं अपनी ही सन्तति को मृत्यु के मुख में फेंक कर भी विदेशी वस्त्र पहनना चाहते हैं या नहीं ?

* * *

व्यापार-सम्बन्ध के लिए ब्रिटेन की व्याकुलता

विगत राष्ट्रीय आन्दोलन के समय ब्रिटेन में ब्रिटिश माल के बहिष्कार के सम्बन्ध में इतनी चख़-चख़ न थी, जितनी कि इधर विराम-सन्धि के बाद से सुनने में आ रही है। ब्रिटेन का विश्वास था, कि शायद ऑर्डिनेन्सों से बहिष्कार आन्दोलन दब जाय। फिर सोचा गया, कि शायद सन्धि कर लेने से परिस्थिति सुधर जाय; परन्तु इतने पर भी जब व्यापारिक स्थिति वैसी की वैसी ही बनी रही, तब ब्रिटेन एक बार ही घबड़ा उठा है। आजकल कॉमन्स तथा लॉर्ड सभाओं में 'भारत की परिस्थिति' पर प्रायः नित्य ही मनोरञ्जक बहसें हो रही हैं, व्यापारिक केन्द्रों के डेपुटेशन बनते हैं और भिन्न-भिन्न प्रकार की सभाएँ करके ब्रिटेन की बेकारी की समस्या पर भाषण दिए जाते हैं। कोई धमकी देता है, कोई सहानुभूति दिखलाता है और कोई भावी शासन-विधान में भारत के साथ व्यापार करने का बराबरी का अधिकार चाहता है! मतलब यह, कि सभी दल और सभी मत के लोग, किसी न किसी प्रकार, भारत के साथ व्यापार बनाए रखना चाहते हैं। भारत बार-बार कहता है, कि हममें तुम्हारे माल ख़रीदने की सामर्थ्य नहीं है, हम ग़रीब हैं, हमारी आमदनी बहुत घट गई है, परन्तु ब्रिटेन कहता है, कुछ भी हो, तुम्हें हमारा माल ख़रीदना ही पड़ेगा!

महात्मा गाँधी कह चुके हैं, कि हम किसी दुश्मनी से बहिष्कार नहीं करते, हम तो केवल अपनी आर्थिक दशा का सुधार कर रहे हैं। परन्तु कमाण्डर बेन वर्दी ने उस दिन कहा कि, "इन लोगों से कोई कह दे, कि हम गोलमेज़ में इसी शर्त पर शरीक होंगे, कि ब्रिटेन की भारत के साथ की व्यापारिक स्वाधीनता बनी रहेगी और फ़ौलादी ढाँचे का कुछ न कुछ अंश क़ायम रहेगा।" गोलमेज़ में न शरीक होने की धमकी बिल्कुल बेकार है। भारत ने न कभी गोलमेज़-सम्मेलन करने की ब्रिटेन से प्रार्थना ही की थी, न आज वह गोलमेज़ में जाने के लिए उत्सुक ही है। ब्रिटेन ने ही गोलमेज़ परिषद का आयोजन किया और ब्रिटेन ने ही इस देश से उसमें शामिल होने के लिए हज़ार बार मिन्नतें कीं। गोलमेज़ हो या न हो, कोई शामिल हो या न हो, नौजवान-भारत को इसकी ज़रा भी परवाह नहीं है। यदि सच पूछा जाय, तो तरुण-भारत गोलमेज़ परिषद में भाग लेना चाहता ही नहीं—उसे अपनी शक्ति पर विश्वास हो गया है और उसी के बल पर वह अपने को स्वाधीन करने पर तुल गया है।

रह गई व्यापार की स्वाधीनता की बात; इस विषय में ब्रिटेन को समझ लेना चाहिए कि भारत ब्रिटेन की व्यापारिक स्वाधीनता को अपने स्वराज्य-लाभ की शर्त नहीं बना सकता। जिस भारत ने ब्रिटेन से सम्बन्ध-विच्छेद तक का अधिकार अपने ही अधीन रख छोड़ा है, वह ब्रिटेन की व्यापारिक ग़ुलामी को स्वराज्य की शर्त भला कैसे बना सकता है? स्वार्थान्ध ब्रिटेन इसे नहीं समझता। स्वयं उसके उपनिवेश तक जब इन मामलों में स्वतन्त्र हैं, तो भारत-सरीखे ग़रीब देश से कैसे यह आशा की जा सकती है, कि वह मैञ्चेस्टर और लङ्काशायर से कपड़ा कता-बुना कर पहनेगा? निस्सन्देह भारत ने ब्रिटेन की आदत को ख़राब कर दिया है, इसलिए वह आज इस नई परिस्थिति में बहुत बड़े कष्ट का अनुभव कर रहा है; परन्तु अब सिवा इसके, कि ब्रिटेन अपने रहन-सहन को बदल कर कम ख़र्च में ज़िन्दगी बसर करना सीखे, और दूसरा उपाय उसके लिए शेष नहीं है? अब तक रेशम, तञ्ज़ेब और मख़मल पहनने वाला भारत भी तो यही कर रहा है!!

* * *

लॉर्ड रीडिङ्ग की बौखलाहट

लॉर्ड सभा में बोलते हुए लॉर्ड रीडिङ्ग ने कहा है, कि सर्वसाधारण में फैले हुए भ्रम के निवारणार्थ यह स्पष्ट कर देने की आवश्यकता है, कि गोलमेज़ के अगले अधिवेशन में स्वीकृत संरक्षणों (Safeguards) में किसी प्रकार की कमी न की जा सकेगी। अपने कहा, कि कम से कम लिबरल दल वालों का मत इस सम्बन्ध में बिल्कुल स्पष्ट है और वह साफ़ कह देना चाहता है, कि संरक्षण भारत-हित के लिए अनिवार्य हैं। संरक्षणों की प्रयोग-विधि में चाहे जो मतभेद हो; परन्तु स्वीकृत संरक्षणों के मूल-तत्व नहीं हटाए जा सकते।

आगामी गोलमेज़ परिषद में यही तो तय होना है, कि संरक्षण भारत के हित के लिए आवश्यक हैं या नहीं? जो बात इतने स्पष्ट रूप में भारत के लिए हित की है, उसके समझाने के लिए इतने उतावलेपन की क्या आवश्यकता है? गोलमेज़ में लॉर्ड रीडिङ्ग-सरीखे भारत-'हितैषियों' को अपनी बात प्रमाणित करने के लिए काफ़ी अवसर मिलेगा, अस्तु।

जब ब्रिटेन के प्रधान-मन्त्री ने गोलमेज़ को स्थगित करते समय अपनी अन्तिम घोषणा निकाली थी और उसमें उन्होंने कहा था, कि जो संरक्षण भारत के हित के लिए अनिवार्य समझे जायँगे, केवल वे ही शासन-विधान में रक्खे जायँगे, उस समय या उसके पूर्व ही लॉर्ड रीडिङ्ग तथा उनके मतावलम्बियों को आपस में निर्णय करके अपना भ्रम-निवारण कर लेना चाहिए था।

अब तक ऐसी कोई भी घोषणा ब्रिटेन की तरफ़ से नहीं हुई, जिसका अर्थ आगे चल ब्रिटिश राजनीतिज्ञों ने कुछ दूसरा ही बतला कर मूल अर्थ को नष्ट न कर दिया हो। गोलमेज़ परिषद वाली घोषणा में भी यदि ऐसा ही हो, तो हमें आश्चर्य न होगा। यदि शासनारूढ़ मज़दूर-दल भी लॉर्ड रीडिङ्ग के अर्थ का समर्थन कर दे, तो ब्रिटेन की नीति स्पष्ट हो सकती है; परन्तु अभी तक तो उसने ऐसा नहीं किया। सम्भवतः वह गोलमेज़ परिषद के पहले ऐसा नहीं करना चाहता। जब से भारत में अङ्गरेज़ी राज्य क़ायम हुआ है, तब से सिविलियनों की भारत के प्रति नमकहरामी करने की एक निश्चित-नीति-सी हो गई है। भारत में जिस प्रकार साम्प्रदायिक 'नेता' अपने देशवासियों की आँखों में धूल झोंक कर अपना उल्लू सीधा करते हैं, ठीक उसी प्रकार भारत के पैसों से पुश्त-दर-पुश्त पलते रहने वाले सिविलियन भी इङ्गलैण्ड में जाकर वहाँ के भोले देशवासियों को भारत की वास्तविक परिस्थिति से अनभिज्ञ रखने की चेष्टा करते पाए गए हैं। एक समय भारत की स्वाधीनता-प्राप्ति के लिए बर्फ़ के समान घुलने का उपक्रम करने वाले भारत के भूतपूर्व वॉयसराय लॉर्ड रीडिङ्ग आज यदि इस प्रकार नमकहरामी का परिचय दे रहे हैं—तो भारतवासियों को उसमें आश्चर्य न करना चाहिए।

* * *

लङ्काशायर का भारत-प्रेम

विलायत के 'सण्डे टाइम्स' पत्र में 'स्क्रूटेटर' ने लङ्काशायर की दीनावस्था का वर्णन करते हुए, एक जगह भारत के श्रमजीवियों के प्रति भी दया दिखलाई है। उसका कहना है, भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन में भारतीय पूँजीपतियों ने केवल अपने स्वार्थ-साधन के लिए भाग लिया था। ब्रिटिश माल के बहिष्कार की आड़ में वे अपने अधिक से अधिक लाभ का उपाय सोच रहे थे। परन्तु ये पूँजीपति अपने श्रमजीवियों के साथ बहुत ही निकृष्ट श्रेणी का व्यवहार करते हैं। उनके मिलों की हालत जैसी घृणित है, वह तो है ही; वे अपने मज़दूरों से पाई-पाई का लाभ खींच लेने में नहीं चूकते। भारत को स्वतन्त्रता देने का अर्थ यही होगा, कि भारत का ग़रीब श्रमजीवी दल मुट्ठी भर पूँजीपतियों की ग़ुलामी में बराबर पिसते रहने के लिए छोड़ दिया जायगा!

भारत के बहिष्कार आन्दोलन के पहले कभी लङ्काशायर का ऐसा श्रमजीवी-प्रेम हमारे सुनने में नहीं आया था। सम्भव है अपनी हीन दशा से दूसरों की हीन दशा का भी ध्यान हो आया हो। यद्यपि सुनते आए हैं, कि ब्रिटिश जाति में कल्पना-शक्ति बहुत कम होती है। परन्तु इस उदाहरण से मालूम होता है, कि इस देश के बहिष्कार ने उनकी अब तक की सुषुप्त कल्पना-शक्ति को एक बार ही जाग्रत कर दिया है। इसीलिए वही लङ्काशायर, जिसने कभी इस देश के उद्योग-धन्धों को तरह-तरह के निन्दनीय उपायों द्वारा नष्ट करके असंख्य भारतीयों की जीविका का अपहरण किया था, आज भारत के श्रमजीवियों की भारतीय पूँजीपतियों से रक्षा करने की बात कर रहा है!

विदेश के इन नए भारत-प्रेमियों को मालूम हो जाना चाहिए, कि इस देश के असंख्य श्रमजीवियों की रक्षा इस देश के पूँजीपतियों से न करके, पहले लङ्काशायर से ही करनी है! उससे रक्षा कर लेने पर इस देश के पूँजीपतियों से रक्षा कर लेना बहुत सरल होगा। तब तक देश के पूँजीपतियों से कम से कम कुछ लोगों को मज़दूरी तो मिलती ही जायगी। इस देश के श्रमजीवियों को अपने देश की स्वतन्त्रता से कोई डर नहीं है। लङ्काशायर को चाहिए कि भारतीय श्रमजीवियों की चिन्ता छोड़ कर अपने यहाँ के ढाई लाख बेकारों की समस्या हल करने का उपाय सोचे, हमारा ख़ुदा हाफ़िज़ है!

* * *

कॉमन्स सभा में कानपुर का दङ्गा

अभी उस दिन कॉमन्स सभा में कानपुर के दङ्गे के सम्बन्ध में एक सदस्य के प्रश्न का उत्तर देते हुए भारत-मन्त्री श्री० वेजवुड बेन ने बतलाया कि "इस दङ्गे में कुछ औरतें और बच्चे, जिनमें हिन्दू और मुसलमान दोनों थे, मारे गए हैं और लगभग चार सौ के ऊपर गिरफ़्तारियाँ हुई हैं, परन्तु यह नहीं मालूम हो सका है, कि इनमें से किसी पर हत्या करने का दोष लगाया गया है या नहीं।" देखने में यह एक अत्यन्त सीधा-सादा उत्तर है, परन्तु अन्दर से उतना ही कुटिलतापूर्ण भी है। केवल 'कुछ औरतें और बच्चे मारे गए' और 'चार सौ के ऊपर गिरफ़्तारियाँ हुई'! आपने यह बताने का कष्ट नहीं उठाया कि चार-चार रात और दिन बराबर लूट-मार, हत्या-काण्ड और अग्नि-काण्ड जारी रहा, पुलिस बैठी ताश खेलती रही और फ़ौज खड़ी-खड़ी सविनय अवज्ञा का मौन प्रदर्शन करती रही! आपने यह भी नहीं बतलाया, कि उस नगर के निवासियों का विश्वास वहाँ के अधिकारियों पर से इतना ज़्यादा हट गया था, कि उन्होंने अधिकारियों के तमाम विश्वास दिलाते रहने पर भी चौदह रोज़ तक अपने बाज़ार नहीं खोले; परन्तु कॉङ्ग्रेस के दो-चार नेताओं के जाते ही, जिनके पास विश्वास दिलाने के लिए न कोई फ़ौज थी, न पुलिस थी, कुछ घण्टों के अन्दर बाज़ार खोल दिए गए। निस्सन्देह आप इन सब बातों को बता कर इस देश की उच्छृङ्खल नौकरशाही के पापाचारों का रहस्योद्घाटन नहीं कराना चाहते—ब्रिटिश शासन-नीति का यह सनातन नियम है!

* * *

१९०५ की रूसी क्रान्ति

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च स्कॉलर]

सार के इतिहास के पन्ने क्रान्तियों से भरे पड़े हैं। यदि आप उन क्रान्तियों का अध्ययन करें और उनके कारणों का पता लगावें तो आपको मालूम होगा कि उनके होने का एक ही कारण है, और वह है सर्व-साधारण का आर्थिक सङ्कट। थोड़े से पूँजीपतियों का सर्व-साधारण की गाढ़ी कमाई से फ़ायदा उठाना और सुख भोग करना तथा शासक-वर्ग का इन्हीं पूँजीपतियों का साथ देना। गत उन्नीसवीं सदी में ऐसी कितनी ही क्रान्तियाँ हुई हैं। साथ ही बीसवीं सदी में जो भीषण क्रान्ति हुई है, जिसने ३८ घण्टे के अन्दर ही रूस का तख़्ता उलट दिया और एक नए युग का श्रीगणेश किया, उसका कारण भी उपर्युक्त ही था। सन् १९१७ की रूस की क्रान्ति एक ऐसी क्रान्ति थी, जिसने रूस की ज़ारशाही का तो अन्त किया ही, साथ ही संसार के अन्य निरङ्कुश शासकों की भी कुम्भकर्णी निद्रा को तोड़ दिया। बल्कि एक तरह से तो इस क्रान्ति ने सारे संसार के पूँजीपतियों को सजग कर दिया।

रूस में इससे पहले, सन् १९०५ में भी एक क्रान्ति हुई थी, जिसका सरग़ना मोशिए लेनिन था। वह क्रान्ति भी आर्थिक सङ्कटों के कारण ही हुई थी और महात्मा लेनिन के शब्दों में वह १९१७ वाली बड़ी क्रान्ति की भूमिका-मात्र थी। अस्तु, उन क्रान्तियों का हाल जानने से पहिले रूस के आर्थिक इतिहास के सम्बन्ध में थोड़ी सी जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक है।

इन क्रान्तियों से पहले रूस में धनवानों और ज़मींदारों की तूती बोलती थी। वे देश की सम्पत्ति, व्यापार और भूमि के स्थायी स्वामी बन बैठे थे। मज़दूर और किसान सवेरे से शाम तक मेहनत करके एड़ी-चोटी का पसीना एक करते थे; परन्तु उन्हें भर पेट भोजन और तन भर कपड़ा भी नसीब नहीं होता था; वरन् उलटे उन्हें उन धनिकों और ज़मींदारों के नित नए अत्याचारों का शिकार होना पड़ता था। उपजाऊ भूमि में से, जहाँ साधारण किसान के पास औसतन् आठ या नौ एकड़ ज़मीन थी वहाँ आम तौर पर प्रत्येक ज़मींदार ८०,००० एकड़ ज़मीन का मालिक था। मोशिए लेनिन ने अपनी एक कृषि-सम्बन्धी प्रसिद्ध पुस्तक में बताया है कि रूस में ऐसे ज़मींदारों की संख्या ७०० थी और उनके पास सब मिला कर सारे रूस की उपजाऊ भूमि का तीन चौथाई हिस्सा था। इन ७०० ज़मींदारों के पास ६,००,००० किसानों से तिगुनी भूमि थी। ये ज़मींदार स्वयं तो बहुत थोड़ी अर्थात् एक पञ्चमांश ज़मीन जोतते-बोते थे और अधिकतर भूमि दूसरे किसानों को लगान पर दे दिया करते थे। १९वीं सदी के अन्त में काली भूमि के ज़मींदार अपनी भूमि का आधा हिस्सा और दूसरे प्रदेशों के ज़मींदार अपनी भूमि का ३० से ४० प्रति शत भाग किसानों को मालगुज़ारी पर दे दिया करते थे। किसानों को बहुत लगान देना पड़ता था। बहुधा किसानों को, अपने उपार्जित अन्न का आधा भाग ज़मींदारों को दे देना पड़ता था। कहीं-कहीं किसानों को ज़मींदारों का बेगार भी करना पड़ता था। इसके सिवा उन्हें अपने हल से ज़मींदारों की भूमि भी जोत देनी पड़ती थी। ये ज़मींदार खेती के लिए आधुनिक वैज्ञानिक साधनों से काम नहीं लेते थे, क्योंकि उनका लक्ष्य होता था—किसानों से लगान वसूल करना।

किसानों की स्थिति बड़ी ही ख़राब हो रही थी। इनमें जो थोड़े से धनी थे, उनके पास भी अपनी खेती सुधारने के लिए साधन न थे। फलतः दिन प्रति दिन किसानों की आर्थिक हालत गिरती जाती थी। उनकी इस गिरती हुई आर्थिक स्थिति का अन्दाज़ा निम्न-लिखित अङ्कों से लगाया जा सकता है :—

यूरोपीय रूस के ४० प्रान्तों के किसानों के घोड़ों* की संख्या, सन् १८८८ से लेकर सन् १८९८ तक के दस वर्षों में, बहुत घट गई थी। सन् १८८८ में इन किसानों के पास १,९०,००,००० घोड़े थे। परन्तु सन् १८९८ में केवल १,७०,००,००० घोड़े रह गए। यानी इन दस वर्षों में २० लाख घोड़े घट गए थे। इसी भाँति बैल आदि की संख्या भी आलोच्य वर्षों में ३,४०,००,००० से २,४०,००,००० हो गई थी, यानी दस वर्षों में १ करोड़ बैल आदि पशु घट गए थे। इन्हीं वर्षों में केन्द्रीय रूस के कई प्रान्तों की दशा और भी बदतर हो गई थी। वहाँ के ज़मींदार किसानों पर विशेष अत्याचार करते थे।

उन्नीसवीं सदी के अन्तिम तीस वर्षों में रूस में पूँजीपतियों ने बड़ी उन्नति की। तमाम देश में कल-कारख़ानों का जाल बिछ गया। किसी-किसी कारख़ाने में १०,००० तक मज़दूर काम करते थे। इन वर्षों में यूरोप के अन्य देशों की अपेक्षा रूस ने अधिक उन्नति की। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में कच्चे लोहे की पैदावार में तमाम संसार में, रूस का चौथा स्थान था। रूस में जितना कच्चा लोहा पैदा होता था उतना ऑस्ट्रिया-हङ्गरी, बेलजियम और फ़्रान्स मिल कर भी पैदा नहीं कर सकते थे। लोहे और कोयले की पैदावार में रूस ने संसार में सब से अधिक उन्नति की थी। तेल की पैदावार में केवल अमेरिका ही रूस का मुक़ाबला कर सकता था। सन् १८९० में अमेरिका रूस से अधिक तेल पैदा कर सकता था। परन्तु दस वर्षों में रूस ने इतनी उन्नति की कि सन् १८९९ में रूस अमेरिका से भी बाज़ी मार ले गया। इसके सिवा तेल भी वह अमेरिका से उत्तम पैदा करने लगा। रूई के उद्योग-धन्धे में बीसवीं सदी के प्रारम्भ में, रूस केवल अमेरिका तथा इङ्गलैण्ड से पीछे तथा अन्य सभी तमाम देशों से आगे था। इस तरह एक तरफ़ तो रूस में, बड़े पैमाने के उद्योग-धन्धों की उन्नति हो रही थी और दूसरी तरफ़ छोटे पैमाने के उद्योग-धन्धों का नाश हो रहा था। उपर्युक्त उन्नति को सब से बड़ी सहायता रेल से मिली थी। प्रति वर्ष रूस में रेल का विस्तार बढ़ रहा था। सन् १८६० में वहाँ रेलवे लाइन १,२४० मील लम्बी थी। पर सन् १९०० में उसका विस्तार बढ़ कर २७,८१० मील तक पहुँच गया। रेल की जितनी उन्नति हो रही थी उतनी ही उन्नति उससे सम्बन्ध रखने वाले उद्योग-धन्धों की भी हो रही थी। मज़दूरी के सस्तेपन ने भी इस उन्नति में बड़ी सहायता की। इसके कारण पूँजीपतियों को अधिक लाभ होता था। पश्चिमी यूरोप के देशों की अपेक्षा रूस में मज़दूरी की दर कहीं सस्ती थी। जब विदेशी पूँजीपतियों ने देखा कि रूस में पूँजी से अधिक लाभ उठाया जा सकता है तो उन्होंने भी वहाँ अपनी पूँजी लगाना आरम्भ कर दिया। फलतः बीसवीं सदी के प्रारम्भ में रूस में ६० करोड़ रूबल्स विदेशी पूँजी

* रूस में जोतने का काम बहुधा घोड़ों से लिया जाता है। इसके सिवा हमारे देश की तरह बैल भी व्यवहार में लाए जाते थे। ये ही दो प्रकार के पशु रूसी किसानों की खेती के प्रधान अवलम्ब हैं। —सं० 'भविष्य'

व्यापारी (काव्य कहानी)

(१३वें पृष्ठ का शेषांश)

मेरी माटी के प्रिय-गाहक
बोले—"मैं वह शिल्पकार हूँ
जो ऐसी माटी लेकर,
सम्यक्-जीवन इसमें देकर,
मूर्ति सजाता नव, सुन्दर !
मैं रचता नर, नर-पति, पशु-पति,
श्री, श्री-पति, सब एक समान
मेरी माया के पुतले हैं—
धनिक, वणिक, अ-पठित, विद्वान
तुम यह माटी मुझे सौंप दो !"

❀

अञ्जलि भर-भर, सिहर-सिहर कर,
जब मैं उनके अञ्चल में—
सुरभित-पट के, धूलि सजाने
लगा—अश्रु के काजल में,
तब ; वह ऐसे लगे देखने
उभर-उभर कर मेरी ओर—
मानो, मैं सर्वस्व सौंपता था
उनको—आनन्द-विभोर !

❀

मेरी माटी के प्रिय-गाहक !
मेरा भार उतार, मलिन-तर
मेरे तन को उज्ज्वल कर,
दे सुवर्ण-सच्चा मन-मन-भर
रज को रजत-विनिन्दक कर—
उन्नत कर मम मस्तक-वर—
अन्तर्धान हुए सत्वर !

* * *

लगी हुई थी। यह पूँजी मुख्यतः फ़्रान्स और जर्मनी की थी। विदेशी पूँजी के बल-पर ही कोयले का धन्धा चल रहा था और एलेक्ज़ेण्डर कारख़ाने की भाँति बहुत से कारख़ाने इसी विदेशी पूँजी पर निर्भर रहते थे। इन कारख़ानों में लाखों मज़दूर काम करते थे। जिस तेज़ी से उन्नीसवीं सदी के अन्त में रूस ने उद्योग-धन्धे में उन्नति की, उसी तेज़ी से बीसवीं सदी के पहिले दस वर्षों में उसने उसकी अवनति भी कर डाली। इस अवनति का बड़ा ज़बरदस्त कारण रूस की कृषि-अवनति थी। रूस की पैदावार बहुत कम हो गई। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में किसान विशेषतः दरिद्र थे। ज़मींदार उन पर अधिक अत्याचार कर रहे थे। पहले की अपेक्षा भूमि कम जोती-बोई जाती थी। किसानों के पास पहले की अपेक्षा बहुत कम जानवर थे। उनकी दीन-हीन दशा रूस के उद्योग-धन्धों में उन्नति नहीं होने देती थी।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में रूस के मज़दूरों में घोर असन्तोष फैल रहा था। वे अपनी स्थिति से पूर्णतया असन्तुष्ट थे और उसका सुधार करना चाहते थे। उन्होंने घोर आन्दोलन करना आरम्भ किया। इस आन्दोलन ने शासकों को चिन्तित कर दिया। वे उसे दबाना चाहते थे, पर समर्थ नहीं हुए। अतएव उन्होंने एक नई तरकीब सोची। आन्दोलन को शान्तिमय तथा वैध बनाए रखने का प्रयत्न किया। मज़दूर अपना असन्तोष प्रकट करने के लिए भले ही आन्दोलन करते रहें, परन्तु वह शान्तिमय तथा वैध हो। रूस के ख़ुफ़िया-पुलिस के प्रधान ने, जिसका नाम सबटव था, क़ानूनी सङ्घों की स्थापना की। ये सङ्घ उसीके नामानुसार 'सबटव सङ्घ' के नाम से प्रसिद्ध थे। इन अर्ध सरकारी सङ्घों का काम देश के मज़दूरों को अपने में शामिल किए रहना और उनके आन्दोलन का स्वयं सञ्चालन कर उसे शान्तिमय बनाए रखना था। देश भर में इन सङ्घों की शाखाएँ थीं। इनके अपने क्लब थे, जिनमें मज़दूर निःशुल्क शामिल हो सकते थे। ख़ुफ़िया-पुलिस इनकी रक्षा करती थी और ख़र्च के लिए धन देती थी। इन क्लबों में मज़दूरों के लाभ के लिए व्याख्यान दिए जाते थे। मज़दूरों को वहाँ बहुत से मनोरञ्जन के सामान भी मिलते थे। चूँकि जो मज़दूर इन 'सबटव-सङ्घों' के सभासद थे, वे हड़तालों में भाग लेते थे, अतएव इन सङ्घों को भी हड़तालों में भाग लेना पड़ता था। सबटव की योजना थी, कि इसके सङ्गठन के नेता मज़दूरों को शान्तिमय बनाए रहें और मज़दूरों के प्रति रियायत करने के लिए मालिकों पर ज़ोर डालें। ये रियायतें कुछ महत्व भले ही न रखती हों, पर वे ऐसी अवश्य हों, जिनसे मज़दूर प्रसन्न रह सकें। सन् १६०२ की १६वीं फ़रवरी को मास्को के सबटव-सङ्घ ने मज़दूरों के एक प्रदर्शन का सङ्गठन किया। इस प्रदर्शन में दस हज़ार से अधिक मज़दूर शामिल हुए थे। मज़दूरों को फाँसने के लिए सरकार ने जो यह जाल बिछाया था, उसका अन्त क्रान्ति ही ने किया।

दक्षिण में ख़ुफ़िया-पुलिस को और भी कम सफलता मिली; क्योंकि वहाँ जो मज़दूर सबटव-सङ्घ में शामिल हुए थे, वे हड़ताल-आन्दोलन में उन सारे सङ्घों को घसीट लाए। सन् १६०३ के हड़ताल-आन्दोलन में मज़दूरों ने सबटव-सङ्घों पर पूरा अधिकार कर लिया। फलतः दक्षिण में ये सङ्घ अपने कार्य में इतने असफल रहे, कि शावेविच नाम के एक सबटव-एजेण्ट को देश-निकाले की सज़ा दी। और उसी समय से सबटव स्वयं सरकार की नज़रों से गिर गया।

पुलिस द्वारा मज़दूर-आन्दोलन को रोकने का सब से बड़ा केन्द्र पिटर्सबर्ग था। यहाँ का पादड़ी गपन ख़ुफ़िया-पुलिस का एजेण्ट था। ख़ुफ़िया-पुलिस गपन की सहायता करती थी। वह मनमानी सभाएँ कर सकता था। सङ्गठन का ख़र्च चलाने के लिए पुलिस उसे रुपए देती थी। गपन को अपने निजी ख़र्चे के लिए भी पुलिस से रुपए मिलते थे। गपन के सङ्घ ने अपना कार्य सन् १६०३ से प्रारम्भ किया। उसका जाल अनेक ज़िलों में फैल गया। वीबर्ग, वसीलियच, नेवस्की, कलमस्क, नर्व, मास्को, कलपिनव, सेस्ट्रो आदि ज़िलों में उसकी शाखाएँ थीं। सन् १६०४ के दिसम्बर में ४ मज़दूर बरख़ास्त किए गए। ये गपन-सङ्घ के सभासद थे। अतएव सङ्घ की ओर से एक डेपुटेशन डाइरेक्टर के पास भेजा गया। इस डेपुटेशन ने डाइरेक्टर से प्रार्थना की, कि बरख़ास्त किए हुए मज़दूर पुनः बहाल कर दिए जावें। परन्तु डेपुटेशन की प्रार्थना स्वीकार नहीं की गई। गपन ने डाइरेक्टर तथा पुलिस के प्रधान से बार-बार प्रार्थना की, पर उसका कुछ भी परिणाम न हुआ। इसलिए लाचार होकर गपन-सङ्घ के मज़दूरों ने हड़ताल करने का विचार किया।

पहिली जनवरी को सङ्घ ने पुटीलन के कारख़ाने में हड़ताल करने का निश्चय किया। निकाले हुए मज़दूर यहीं काम करते थे। तीसरी जनवरी को हड़ताल हो गई। मज़दूरों की मुख्य माँगें ये थीं:- (१) प्रतिदिन आठ घण्टे से अधिक काम न करना, (२) पुरुषों के वेतन में ६६ फ़ी सदी तथा औरतों के वेतन में १०० फ़ी सदी तरक़्क़ी और (३) कारख़ानों में स्वास्थ्य वर्धक प्रबन्ध। देखते-देखते इस हड़ताल ने विशाल रूप धारण कर लिया। बात की बात में अनेक और कारख़ानों में हड़तालें हो गईं। यहाँ तक कि पिटर्सबर्ग के तमाम मज़दूरों ने, जिनकी संख्या १ लाख ४० हज़ार थी, हड़ताल कर दी। इन हड़ताल करने वालों में प्रेस के कर्मचारी तक शामिल थे, इसलिए इस हड़ताल के कारण पिटर्सबर्ग से अख़बार तक न निकल सकते थे।

गपन के प्रस्ताव के अनुसार मज़दूरों ने ज़ार के भवन तक जुलूस ले जाने का निश्चय किया। गपन ने एक ओजस्वी भाषण द्वारा मज़दूरों को उत्साहित करते हुए उन्हें ख़ूब ही सब्ज़ बाग़ दिखलाया। उसने यहाँ तक कह डाला कि यदि ज़ार हमारी प्रार्थना न सुनेंगे, तो हम लोग ज़ार से कोई सरोकार न रक्खेंगे।

६वीं जनवरी को मज़दूरों का जुलूस नर्व से रवाना हुआ। गपन उसका सञ्चालक था। जुलूस में लाल झण्डा एक भी न था। गिरजाघरों के झण्डे और सब से आगे थी ज़ार की तस्वीर। जुलूस धीरे-धीरे अपने मार्ग में बढ़ रहा था। सरकार की तरफ़ से भी काफ़ी प्रबन्ध था। ८वीं जनवरी की रात को ज़ार ने ६वीं जनवरी के लिए ग्राण्ड ड्यूक व्लाडीमिर को डिक्टेटर नियुक्त कर उसे निरङ्कुश अधिकार दे दिया। जनता को शान्त रखने का उसे आदेश दे दिया गया था। वह जनता के विरुद्ध अपनी तमाम सेना का प्रयोग कर सकता था। पिटर्सबर्ग में इतनी सेना इकट्ठी की गई थी कि तमाम शहर में सेना ही सेना दिखाई पड़ती थी।

जब जुलूस कुछ दूर जा चुका, तो उसे सामने सेना खड़ी हुई दिखाई दी। किसी ने जुलूस को नहीं रोका और जुलूस बढ़ता गया। परन्तु जब वह सेना के नज़दीक पहुँचा तो एकाएक घुड़सवारों ने उस पर हमला कर दिया। जब घुड़सवार जनता को पीटते हुए जुलूस के उस पार पहुँच गए, तब इस पार जनता पर गोलियाँ चलाई गईं। इसके बाद फिर घुड़सवारों ने हमला किया। भागते हुओं के सिर धड़ से अलग कर दिए गए। जो घायल थे वे मौत के घाट उतार दिए गए। गपन ने येन-केन-प्रकारेण अपनी रक्षा की। यह क़त्लेआम कुछ समय तक जारी रहा। स्चलसेलबर्ग में भी मज़दूरों पर गोली चलाई गई। मज़दूर छाती खोल कर खड़े हो गए और कहने लगे—"हम लोग जान दे देंगे, पर एक इञ्च भी पीछे नहीं हटेंगे।"

अब ज़रा ट्राट्ज़की पुल का भी हाल सुन लीजिए। जब जुलूस सेना के बिलकुल पास पहुँच गया, तब सेनापति ने हुक्म दिया – 'फ़ायर !' उसके मुँह से आज्ञा निकलते ही घुड़सवारों ने कार्य आरम्भ कर दिया। मज़दूर औरतें, बच्चे तथा बूढ़े ज़मीन पर पड़े दिखाई देने लगे।

वासीलिवस्की द्वीप में मज़दूरों ने दूसरा ही ढङ्ग अख़्तियार किया। उन्होंने सरकारी स्थानों को तोड़-फोड़ डाला और घुड़सवारों पर ईंटें, पत्थर तथा गोलियाँ चलाईं।

६वीं जनवरी के हत्याकाण्ड के विरोध में समस्त रूस के मज़दूरों ने हड़ताल कर दी। अनेक स्थानों पर मज़दूरों और पुलिस तथा सेना में सङ्घर्ष हुआ।

अब तक रूस के किसानों तथा मज़दूरों का ज़ार पर बहुत-कुछ विश्वास था। वे ज़ार को निर्दोष समझते थे और समझते थे कि इन सारे अत्याचारों के उत्तरदायी ज़ार के अफ़सर ही हैं। उनका यह भी विश्वास था कि ज़ार को उनके कष्टों का पता नहीं है, अन्यथा वे अवश्य ही उनके कष्ट दूर कर देते। परन्तु ६वीं जनवरी की घटना ने उनकी आँखें खोल दीं। उनकी अज्ञानता, विश्वास तथा आशा पर पानी फिर गया। ज़ार पर से सदा के लिए उनका विश्वास उठ गया। और उन्होंने अपने पाँव पर खड़ा होना सीख लिया। ६वीं जनवरी के पश्चात् रूस की जनता ने ज़ारशाही का अन्त करने का निश्चय कर लिया। रोज़ा लक्ज़मबर्ग ने ठीक ही कहा था कि ६ जनवरी वाले मज़दूरों के प्रदर्शन के चारों तरफ़ कार्ल मार्क्स की आत्मा मँडरा रही थी, यद्यपि उसके आगे-आगे गिरजाघर के झण्डे तथा ज़ार की तस्वीर थी।

मज़दूरों के आन्दोलन ने ६ जनवरी के पश्चात् विशाल रूप धारण कर लिया। जनवरी से लेकर अक्टूबर तक के महीने आन्दोलन के लिए बहुत महत्वपूर्ण थे। इन महीनों में प्रत्येक दिवस तथा प्रत्येक सप्ताह आन्दोलन बढ़ रहा था। प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में मज़दूर शामिल होते रहे। यहाँ तक कि सन् १६०५ के मध्य तक रूस के तमाम मज़दूर आन्दोलन में भाग लेने लगे। इस आन्दोलन के दो रूप थे। पहिला रूप राजनैतिक था और ज़ारशाही का अन्त करना चाहता था तथा दूसरा रूप आर्थिक था और मिल-मालिकों को ठिकाने लगाना चाहता था। मज़दूरों की सब से बड़ी राजनैतिक माँग यह थी कि विधान-विधायिनी सभा शीघ्र बुलाई जावे। प्रतिदिन आठ घण्टे से अधिक काम न लेने की उनकी सब से बड़ी आर्थिक माँग थी।

रूस के अनेक ज़िलों—विशेषतः पोलैण्ड में—मज़दूरों ने ज़ारशाही के विरुद्ध हथियार उठा लिए। गर्मियों में इवानवबसनेसेंस्क में हड़ताल हुई। ४०,००० मज़दूर इस हड़ताल में शरीक हुए थे। हड़ताल एक सप्ताह तक जारी रही। शहर में मज़दूरों को सभा करने की आज्ञा न थी। अतएव उन्होंने टल्का नदी के किनारे अपनी सभा की। पूँजीपति उनके साथ कुछ रियायत करने को तैयार थे। परन्तु मज़दूरों की मुख्य माँगों को वे अनसुनी कर रहे थे। इधर मज़दूरों को दानों के लाले पड़ने लगे और उनके बाल-बच्चे भूखों मरने लगे, अतः मज़दूर अपने कामों पर वापस चले गए। परन्तु उन्होंने पूँजीपतियों से साफ़ कह दिया कि यद्यपि हम वापस आ रहे हैं। परन्तु हम अपने को पराजित नहीं समझते।

इस बढ़ते हुए आन्दोलन से सहम कर तथा उसे शान्त करने के लिए ज़ार ने कुछ रियायतें कीं। परन्तु

ये रियायतें नितान्त निस्सार थीं, इसलिए मज़दूरों ने उनकी पूरी अवहेलना की। ज़ार ने 'सिनेटर शिद्लोवस्की कमीशन' नियुक्त किया। इसका काम था, मज़दूरों की नाराज़गी के कारणों को मालूम करना। ज़ार ने एक और 'बलिजिन कमीशन' नियुक्त किया। इस कमीशन का कार्य था स्टेट ड्यूमा बुलाने के लिए एक योजना तैयार करना। इस ड्यूमा को केवल बहस करने का अधिकार था, क़ानून बनाने का नहीं।

मज़दूर इन रियायतों से बिल्कुल सन्तुष्ट न हुए। उन्होंने उनकी फिर अवहेलना की। अब मज़दूरों ने अपने आन्दोलन को किसानों में फैलाना आरम्भ किया। दो महीने के अन्दर ही केन्द्रीय रूस, पोलैण्ड, पश्चिमीय सूबों, बाल्टिक तथा काकासस के किसानों में आन्दोलन फैल गया। अमीर-ग़रीब—सभी किसान-आन्दोलन में भाग लेने लगे। ३१ जुलाई को मास्को में 'अखिल रूसी-किसान-सङ्घ' की प्रथम गुप्त कॉङ्ग्रेस हुई। किसानों के आन्दोलन के भी, मज़दूर-आन्दोलन की भाँति दो रूप थे—(१) आर्थिक और (२) राजनैतिक। किसान आन्दोलन के अगुआ वे किसान थे, जो किसी समय सेना में काम कर चुके थे। जिन किसानों ने रूस की सेना में भरती होकर, रूस-ज़ापान युद्ध में भाग लिया था, वे पराजित होकर अपने-अपने घर लौट आए थे। वे ही इस आन्दोलन में सब से अधिक दिलचस्पी ले रहे थे।

सन् १९०५ की गर्मियों में काले सागर में एक रूसी बेड़ा पड़ा था। इसी बेड़े के 'पोटेम्किन' नाम के एक 'क्रूज़र' ने आर्थिक सङ्कटों के कारण १४ जून को विद्रोह कर दिया। क्रूज़र के खेने वालों ने अपने अफ़सरों को पकड़ लिया, अपनी राजनैतिक माँगें पेश कीं और ओडेसा के हड़तालियों के साथ अपनी सहानुभूति दिखलाई। 'पोटेम्किन' का एक मल्लाह एक अफ़सर द्वारा मार डाला गया। उसको गाड़ने के लिए वे लोग किनारे आए। अपना कार्य समाप्त कर वे पुनः समुद्र में चले गए। इस विद्रोह को दबाने के लिए सरकार ने एक बेड़ा भेजा। १७ जून को क्रूज़र की इस बेड़े से भेंट हुई। 'पोटेम्किन' बेड़े तक खेता चला गया और दूसरे जहाज़ों के मल्लाहों से विद्रोह में शामिल होने के लिए कहा। उस बेड़े के एक बड़े जङ्गी जहाज़ ने 'पोटेम्किन' का साथ दिया। पर वह अधिक काल तक विद्रोह पर टिक न सका और बहुत शीघ्र विद्रोह को हटा लिया। कुछ दिनों बाद 'पोटेम्किन' ने भी आत्म-समर्पण कर दिया! कुछ लोग गिरफ़्तार कर लिए गए और कुछ भाग गए और उनका पता न चला।

उपर्युक्त घटना अपने ढङ्ग की पहिली घटना थी। यद्यपि यह विद्रोह असफल रहा, तथापि यह बड़ा ही महत्वपूर्ण था।

सन् १९०५ की सब से महत्वपूर्ण घटना अक्टूबर की हड़ताल थी। इस हड़ताल का श्रीगणेश मास्को से हुआ था, जहाँ के मज़दूर हड़ताल करने में सब से आगे थे। सितम्बर के अन्त में मास्को के प्रेस-कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी। प्रतिदिन हड़ताल फैलने लगी और कर्मचारियों के नए-नए समुदाय हड़ताल में आने लगे। ब्रेस्टर रेलवे में हड़ताल हुई। २० सितम्बर को स्टेट रेलवे के कर्मचारियों की कॉङ्ग्रेस पिटर्सबर्ग में हुई। रूस की सरकार इस कॉङ्ग्रेस से बहुत भयभीत थी और उसके कार्यों को पसन्द नहीं करती थी। उसने कॉङ्ग्रेस के डेलीगेटों को गिरफ़्तार कर लिया। जब मास्को में इस गिरफ़्तारी की ख़बर पहुँची, तो रेलवे के तमाम मज़दूरों ने हड़ताल कर दी और विद्रोह की तैयारी करने लगे।

(अगले अङ्क में समाप्त)

* * *

लीग ऑफ़ नेशन्स और कोरिया का स्वातन्त्र्य आन्दोलन

[श्री० देवकीनन्दन विभव, एम० ए०]

साम्राज्यवाद संसार में अनेक पापों और अशान्तियों का कारण है। जब तक संसार की बड़ी-बड़ी शक्तियाँ साम्राज्य-विस्तार की आकांक्षा अपने हृदय-तल में छिपाए रहेंगी, तब तक उच्च से उच्च सिद्धान्त और विकासपूर्ण तर्कवाद सार्वभौमिक शान्ति और समृद्धि स्थापित करने में असफल ही होते रहेंगे। 'आत्म-निर्णय' (Self-determination) का सिद्धान्त अकाट्य उच्च और महान है, सभी सभ्य राष्ट्रों ने इसे स्वीकार किया है। परन्तु यह सिद्धान्त केवल सबल राष्ट्रों के लिए है, निर्बलों के लिए नहीं। संसार की बड़ी-बड़ी शक्तियों के सामने जब इसी सिद्धान्त का दलित राष्ट्रों के सम्बन्ध में प्रयोग करने का प्रश्न आता है, तब वे अपने विचित्र तर्कवाद से इसे कुचल डालते हैं। और, तारीफ़ यह है कि संसार की दृष्टि में तब भी वे भलेमानुस और सभ्य ही बने रहते हैं।

यूरोप की शक्तियों की मदान्धता का हाल पाठक बहुत पढ़ चुके हैं। अब ज़रा एक एशियायी महाशक्ति की लीला भी पढ़िए। जापान आजकल एशिया की एक महान-शक्ति है। उसने एशिया का माथा ऊँचा किया है। एशिया के देश उससे भावी प्राच्य और पाश्चात्य संघर्ष में नेतृत्व ग्रहण करने की आशा करते हैं। एशिया की बिखरी हुई छोटी-छोटी शक्तियों को ही संङ्गठित करके जापान, अमेरिका और यूरोप की शक्तियों से प्रतियोगिता में अपने अस्तित्व को स्थिर और विस्तीर्ण बना सकता है। एशिया के बाज़ारों से ही जापान ने इतनी उन्नति प्राप्त की है और भविष्य में वे ही उसकी आशाएँ हैं। परन्तु यह सब कुछ होने पर भी जापान की शक्तियों का उपयोग एशिया के हित में नहीं हो रहा है। जापान ने शिक्षा, कला-कौशल और व्यापार आदि में तो पाश्चात्य देशों का अनुसरण किया ही है, इसके अतिरिक्त वह उनकी अन्य कुटिल नीतियों और दूषणों के पङ्क में भी उन्हीं की तरह फँसता जाता है। इङ्गलैण्ड, जर्मनी और फ़्रान्स आदि की तरह साम्राज्य-विस्तार की लालसा उसमें भीतर ही भीतर ख़ूब धधक रही है। जिस तरह यूरोप की शक्तियाँ नए-नए देशों और उपनिवेशों में अपने साम्राज्य का विस्तार करने लगी हैं, उसी तरह जापान अपने अड़ोस-पड़ोस के देशों को, जो उसके भाई-बन्धु हैं, शिकार बनाने में व्यस्त है। जिनके आधार पर उसने अपनी इतनी उन्नति और विकास किया है। यूरोप की शक्तियाँ चीन में जिस नीचतापूर्ण नीति का अवलम्बन करती रही हैं, उसका समर्थन किसी भी तर्क द्वारा नहीं हो सकता। परन्तु चीन के सम्बन्ध में जापान की जो नीति रही है, वह भी बड़ी ही निन्दनीय और घृणित है। एक ओर अगर जापान चीन को यूरोप की शक्तियों के प्रभाव से बचाना चाहता है, तो दूसरी ओर उसे समूचा निगल जाने की धुन में है। फिर कोरिया की स्वतन्त्रता का अपहरण करने तथा उसकी राष्ट्रीय भावनाओं को कुचलने में जापान ने जिन साधनों का उपयोग किया है, उससे क्या जापान पर किसी भी एशियाई शक्ति का कुछ विश्वास रह जाता है? वहाँ उसने जिस निर्लज्जतापूर्ण दमन-नीति का प्रयोग किया है, उससे यह बात साबित होती है कि साम्राज्यवाद की लालसा में फँसा हुआ एशिया का एक राष्ट्र भी वही कुकृत्य कर सकता है, जो यूरोप की शक्तियाँ साम्राज्य-विस्तार की लालसा में करती रही हैं।

जापान के पूर्व में कोरिया नाम का एक बहुत छोटा सा देश है और इन दोनों के बीच में समुद्र की उत्ताल तरङ्गें अपना खेल खेलती रहती हैं। इधर दो शताब्दियों से जापान की जन-संख्या अधिक तेज़ी से बढ़ रही है, इसलिए इस समस्या को हल करने के लिए वह नए-नए क्षेत्र अपने अधिकार में करना चाहता है। यही कारण कोरिया की स्वतन्त्रता-अपहरण का भी है। जापान पचास-साठ वर्ष पहले एक साधारण राष्ट्र था। उसने कई बार परोक्ष रूप से कोरिया को हड़प जाने की चेष्टा की, परन्तु चीन के हस्तक्षेप के कारण वह अपनी मनोकामना पूरी करने में असफल रहा।

कोरिया छोटा सा देश है, परन्तु उसमें राष्ट्रीयता की आग सदा से धधकती रही है। सन् १८७६ में कोरियनों ने कई जापानियों को मार डाला। बस जापान को कोरिया से छेड़छाड़ करने का अवसर मिल गया। अन्त में दोनों देशों में समझौता हुआ। कोरिया ने अपने बन्दरगाह में जापान को कुछ व्यापारिक अधिकार दे दिए, परन्तु साथ में ही जापान से अपनी स्वतन्त्रता भी स्वीकार करा ली। कोरियावासी अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए व्याकुल थे, इसलिए उन्होंने अन्य देशों से भी सन्धि करना चाहा। अमेरिका से भी सन्धि हो गई और उसने स्वीकार किया कि यदि कोई देश उसकी स्वतन्त्रता अपहरण करने की चेष्टा करेगा तो अमेरिका उसकी रक्षा करेगा।

सन् १८८१ में कोरिया में भयङ्कर अकाल पड़ा। उपद्रव होने लगे और लोगों ने जापानी दूतावास पर भी आक्रमण कर दिया। कई जापानी मारे गए और कुछ भाग गए। इस घटना से जापान के लिए फिर कोरिया पर आक्रमण कर उसे अपने अधीन करने का बहाना मिल गया, परन्तु कोरिया की सरकार ने एक लाख येन और कुछ व्यापारिक सहूलियतें देकर उसे शान्त किया।

जापान, कोरिया पर अपना प्रभुत्व जमाने की हर तरह से कोशिश कर रहा था, परन्तु चीन उसके मार्ग का महान बाधक था। वह कोरिया में जापान का बढ़ता हुआ प्रभाव देख कर सजग हो गया था। फलतः उसने भी कोरिया में अपने दस हज़ार सैनिक भेज दिए थे। चीन एक प्रकार से बहुत दिनों से कोरिया का संरक्षक बना चला आता था, इसलिए जापान के लिए आवश्यक था कि वह पहले कोरिया को चीन के प्रभाव से मुक्त करे और उसके सैनिकों को निकाल बाहर करे। उसने कोरिया के विद्रोहियों को भड़का कर सङ्गठित किया और चीन को यह कह कर कि वह बलवाइयों को दबाने के लिए, कोरिया के बादशाह की सहायता के लिए, सैनिक भेज रहा है, अपने दस हज़ार सैनिक सियोल रवाना कर दिए। जब कोरिया में चीन की अधिक शक्ति हो गई तो जापान ने कोरिया के बादशाह को अपनी नई-नई शर्तें मानने के लिए विवश किया। सब से पहले उसने कोरिया को चीन की संरक्षता तोड़ने और चीनी सैनिकों को अपनी सीमा से निकाल बाहर करने के लिए विवश किया। साथ ही उसने कोरिया

की बहुत सी खानें और रेलवे-सम्बन्धी अधिकार हड़प कर, सियोल पर भी क़ब्ज़ा कर लिया।

इसी समय चीन और जापान में पारस्परिक मन-मुटाव हो गया और अन्त में दोनों देशों में युद्ध छिड़ गया। इस युद्ध में चीन पराजित हुआ। जापान ने अपने मार्ग की बाधा को हटी हुई देख कर कोरिया पर बेधड़क पञ्जा बढ़ाना शुरू किया। कोरिया के सम्राट के लिए उसने पहले ही अपने पचास सलाहकार भेज दिए थे और वे कोरिया से ऐसी व्यापारिक शर्तें स्वीकार कराने की चेष्टा कर रहे थे, जिनसे उसकी स्वतन्त्रता पर सीधा प्रहार होता था। कोरिया की रानी ने इन शर्तों का विरोध किया। बादशाह भी जापान के बढ़ते हुए हाथ से चौकन्ना हो गया था। इस पर जापानी सेनाओं ने बादशाह का महल घेर लिया, रानी मार डाली गई, बादशाह क़ैद कर लिया गया, और जापान का एक पिट्ठू वहाँ का शासक बना दिया गया।

इस समय यदि रूस जापान की प्रतिस्पर्धा में न खड़ा हो जाता तो कोरिया की स्वतन्त्रता का अन्त हो गया होता। परन्तु जापान की बढ़ती हुई शक्ति ने रूस को सजग कर दिया था। अवसर देख कर कोरिया का बादशाह जापान की क़ैद से निकल भागा और रूस के आश्रय में चला गया। जापान को शक्तिशाली रूस से लोहा लेने का साहस न था, इसलिए कोरिया की स्वतन्त्रता की रक्षा हो गई। सन् १८८६ में कोरिया, जापान और रूस में एक सन्धि हो गई, जिसमें यह निश्चय हुआ कि जापान और रूस दोनों अपनी-अपनी सेनाएँ कोरिया से हटा लें, कोई उसकी सेना और पुलिस के सञ्चालन-कार्य में हस्तक्षेप न करे और जापान वहाँ रहने वाली अपनी प्रजा की हरकतों की ज़िम्मेदारी ले।

इस तरह कोरिया को अपनी राष्ट्रीय शक्तियों के सङ्गठित करने का अच्छा अवसर मिल गया। परन्तु वहाँ के शासकों ने इसका उचित प्रयोग करने की चेष्टा न की। उनके स्वेच्छाचार और अत्याचारों ने कोरिया में एक नवीन भाव को जन्म दिया। कुछ देश-भक्तों ने समझ लिया कि जब तक उनके देश में एक नवीन शासन-प्रणाली का, जिसमें जनता का शासकों पर अङ्कुश रहे, जन्म न होगा तब तक देश का कल्याण नहीं हो सकता। प्रजातन्त्र के यही प्रारम्भिक विचार थे। इस नवीन विचार के मनुष्यों ने एक नई संस्था का जन्म दिया, जिसका नाम "स्वातन्त्र्य समाज" था। फ़िलिप जैसन इस आन्दोलन का जन्मदाता था। वह कोरिया-सरकार द्वारा १८७४ में निर्वासित कर दिया गया था। परन्तु कोरिया, जापान और रूस का समझौता होने के बाद उसे फिर कोरिया में आने की आज्ञा मिल गई।

'स्वातन्त्र्य समाज' शुद्ध राष्ट्रीयता का पोषक था। वह कोरिया में जापानी आधिपत्य का विरोधी तो था ही, साथ ही वह रूस के बढ़ते हुए प्रभाव और हस्तक्षेप को भी रोकना चाहता था। सन् १८८६ से पहले कोरिया की सेना का शिक्षा-भार जापानियों के हाथों में था, अब बादशाह और उसकी सरकार यह कार्य-भार रूस को देना चाहती थी। 'स्वातन्त्र्य समाज' ने इसके विरोध में अपनी आवाज़ उठाई और इसके दस हज़ार सदस्य राज-महल के पास इकट्ठे हुए और जब तक बादशाह ने रूसी अफ़सरों को बिदा नहीं कर दिया, तब तक वहाँ से नहीं हटे। परन्तु 'स्वातन्त्र्य समाज' इतने से ही सन्तुष्ट नहीं हुआ। उसका नेता सिङ्गमेनरी इन बातों पर ज़ोर देने लगा कि कोरिया को अब अपने देश में विदेशियों के प्रभाव और हस्तक्षेप का पूर्णतः अन्त कर देना चाहिए। जो व्यापारिक सुविधाएँ अन्य देशों को दी जायँ, उनमें कोरिया की स्वाधीनता की पूरी रक्षा हो, राजनीतिक अपराधियों के मामले न्याय के आधार पर खुली अदालतों में हों और देश के शासन की व्यवस्था ठीक की जाय। जब शासकों ने इन माँगों पर कुछ ध्यान न दिया, तो सारे देश में भीषण आन्दोलन की लहर फैल गई। सभाओं और प्रदर्शनों की धूम मच गई। पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ भी अपने घरों से निकल कर आन्दोलन में भाग लेने लगीं। बादशाह चौंक उठा। उसने आज्ञा दी कि 'स्वातन्त्र्य समाज' बन्द कर दिया जाय और जो न माने उसे गिरफ़्तार कर लिया जाय। हज़ारों मनुष्य अपने को गिरफ़्तार कराने के लिए पुलिस-स्टेशनों पर इकट्ठे होने लगे। सरकार घबड़ा गई। उसकी जेलों में इतने आदमियों को रखने की जगह न थी, इसलिए उसने उनके १७ नेताओं को गिरफ़्तार कर लिया। इससे जनता का क्रोध और भी भड़क उठा और उसने प्रतिवाद में बड़ी-बड़ी सभाएँ कीं। परिणाम यह हुआ कि सरकार ने नेताओं को छोड़, उनकी माँगों पर उचित ध्यान देने का वचन दिया।

कोरिया का बादशाह इस समय रूस के हाथ की कठपुतली बना हुआ था। उसमें उसके विरुद्ध कुछ करने का साहस न होता था। जनता ने जब बादशाह का यह रुख़ देखा तो फिर वह उठ खड़ी हुई। सरकार के विरोध में सभाएँ और प्रदर्शन होने लगे। शासकों ने क्रुद्ध होकर जुलूसों पर पुलिस को आक्रमण करने की आज्ञा दी। परन्तु उस समय कोरिया की पुलिस में भी राष्ट्रीय भावों की कमी नहीं थी। उसने अपने हथियार फेंक दिए और अपने निहत्थे तथा निरपराध भाइयों पर आक्रमण करने से साफ़ इन्कार कर दिया। इस पर सेना बुलाई गई। उसने अपनी पाशविक शक्ति से जनता पर आक्रमण करके उसे तितर-बितर कर दिया। दूसरे दिन जनता ने सरकार की पाशविक शक्ति का सामना करने के लिए निष्क्रिय-प्रतिरोध का अवलम्बन करने का निश्चय किया। हज़ारों मनुष्य राजमहल के पास धरना देकर बैठ गए। बादशाह ने फिर एक चाल चली— उनकी माँगों को पूरा करने का वचन दिया। परन्तु फिर भूल गया, सभाएँ फिर सङ्गीनों द्वारा बन्द की जाने लगीं और सार्वजनिक नेता गिरफ़्तार करके जेलों में भेज दिए गए।

इस समय पूर्व में रूस और जापान के हितों का इतना सङ्घर्ष हो चला था कि शीघ्र कोरिया के प्रश्न को लेकर उनमें महायुद्ध छिड़ गया। छोटे से जापान ने विशाल-काय रूस को पछाड़ दिया। इस युद्ध ने कोरिया के भाग्य का भी निर्णय कर दिया। अन्य शक्तियों का साम्य नष्ट हो गया और जापान उसका प्रयोग अपने हित में करने के लिए स्वतन्त्र हो गया। रूस-जापान युद्ध में जापान की विजय और कोरिया का स्वातन्त्र्य नाश एक साथ ही हुआ। बादशाह से ज़बरदस्ती एक सन्धि-पत्र पर दस्तख़त कराए गए और इसके बाद उसकी शक्ति-बस नाम-मात्र को रह गई।

जापान ने अपनी शताब्दियों की आकांक्षा को पूरी करने के लिए धीरे-धीरे कोरिया के शासन के प्रत्येक विभाग में अपना प्रभुत्व स्थापित करने की चेष्टा का प्रारम्भ किया। अनेक विभागों में कोरियनों की जगह जापानी नियुक्त किए गए। जापान यह समझता था कि कोरिया की राष्ट्रीय भावनाओं का जब तक अन्त न होगा तब तक उसे स्थायी सफलता नहीं मिलेगी, इसलिए उसने कोरिया के प्रत्येक राष्ट्रीय आन्दोलन पर अपना अङ्कुश रक्खा और बिना उसकी आज्ञा के किसी तरह की सभा और प्रदर्शन करना बन्द कर दिया। जिन लोगों ने जापान की इस नीति का विरोध किया, उन्हें या तो निर्वासित कर दिया गया अथवा जेल में ठूँस दिया गया। यही नहीं, जापान ने कोरिया में जापानियों को बसाने के लिए उन्हें अनेक सुविधाएँ दीं और बहुत सी ज़मीन उन्हें नाम-मात्र के मूल्य पर दे दी।

सन् १६०५ में जापान ने कोरिया के बादशाह के सामने कई विचित्र शर्तें पेश कीं। उन शर्तों का तात्पर्य यही था कि कोरिया की वैदेशिक नीति के निर्णय करने का अधिकार जापान के हाथ में हो और कोरिया का शासन जापानी प्रधान और वकील की देख-रेख में हो। जनता ने इस तरह की शर्तों का पूर्ण विरोध किया। सम्राट भी इस तरह की शर्तें स्वीकार नहीं करना चाहता था। उसने अपना एक प्रतिनिधि अमेरिका के प्रेज़िडेण्ट रूज़वेल्ट के पास, अपनी दुख-गाथा सुनाने और सन् १८८२ की सन्धि का स्मरण दिलाने के लिए भेजा। यही नहीं, उसने अपना एक प्रतिनिधि हेग-कॉन्फ्रेन्स में भी भेजा। परन्तु हेग-कॉन्फ्रेन्स ने उसकी बातों को सुनने तक से इन्कार कर दिया। प्रेज़िडेण्ट रूज़वेल्ट ने स्पष्ट कह दिया कि जो राष्ट्र अपने स्वावलम्बन पर निर्भर नहीं रह सकता, दूसरा उसकी कोई मदद नहीं कर सकता। यह घटना इस बात को अच्छी तरह से स्पष्ट कर देती है कि संसार के उच्च अन्तर्राष्ट्रीय सिद्धान्त केवल बलशाली देशों के हित के लिए ही हैं, निर्बल और दलित राष्ट्रों के लिए उनका कोई प्रयोग नहीं है। इधर जब बादशाह ने नवीन सन्धि-पत्र पर दस्तख़त करने से इन्कार किया तो जापान ने उसे तख़्त से उतार कर क़ैद कर लिया और उसीके वंश के अपने एक कठपुतले को बादशाह बना कर अपनी शर्तों पर दस्तख़त करा लिए। नए बादशाह को कोई अधिकार नहीं था। शासन का सारा काम जापान के रेज़िडेण्ट-जनरल के हाथ में था। कोरिया की बची-खुची स्वतन्त्रता का भी अन्त हो गया।

जापान ने कोरिया की स्वतन्त्रता का अपहरण कर लिया, लेकिन उसकी राष्ट्रीय भावनाओं को न कुचल सका। जब वह अधिक दमन करता था तो यह शक्ति भी भीतर ही भीतर प्रवाहित होने लगती थी और मौक़ा पाते ही यह दावानल की तरह भड़क उठती थी। सन् १६०६ में एक कोरिया-निवासी ने प्रिन्स इटो को मार डाला। उसके स्थान में काउण्ड टिरोची रेज़िडेण्ट-जनरल बन कर आया। सारे देश में फ़ौजी शासन की व्यवस्था की गई। धर-पकड़ होने लगी। ८० हज़ार से भी अधिक देश-भक्त जेलों में ठूँस दिए गए। स्त्री, बच्चे और वृद्ध तक कोड़ों से पीटे गए। देश में चारों तरफ़ हाहाकार मच गया। हज़ारों कोरियावासी अपना घर-द्वार और सम्पत्ति छोड़ कर मञ्चूरिया चले गए।

जापान के भयङ्कर अत्याचारों से पीड़ित होकर हज़ारों कोरियन युवक पहाड़ों में छिप गए और अपना सामरिक सङ्गठन करने लगे। वे अवसर पाते ही जापानी सैनिकों पर टूट पड़ते और उन्हें मार-काट कर पहाड़ों में भाग जाते थे। इससे चिढ़ कर जापान ने और भी भयङ्कर दमन प्रारम्भ कर दिया। देश-भक्तों के गाँव के गाँव जला दिए, लोगों को क़त्ल किया और स्त्रियों तक की इज़्ज़त पर हमला किया। बड़े-बड़े सार्वजनिक नेता पकड़ लिए गए और उन्हें सात-सात और दस-दस साल के लिए कारागार में बन्द कर दिया। कारागार में भी उन्हें महान यन्त्रणाएँ दी जाती थीं। उन्हें नङ्गा करके कोड़े लगाए जाते थे और उनके हाथ काठ में दे दिए जाते थे।

(अगले अङ्क में समाप्त)

* * *

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

(दाहिने) पं० रामचन्द्र शर्मा वैद्यराज और पं० हरिहरदत्त शर्मा, एम० ए०—दोनों ही सज्जन कनखल (हरद्वार) के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता हैं।

कुमारी जी० एम० डीसोज़ा ; एल० आर० सी० पी० (लण्डन) एम० आर० सी० एस० (इङ्गलैण्ड) आप मट्टानचेरी (कोचीन) के 'वीमेन एण्ड चिल्ड्रेन हॉस्पिटल' की सर्जन इन्चार्ज हैं।

श्री० पं० तुलाराम जी आगरा वार-कौन्सिल के १७वें डिक्टेटर। आप तीन महीने की सज़ा काट चुके हैं।

रायबरेली ज़िले के कॉङ्ग्रेस कार्यकर्त्ताओं के सहभोज का दृश्य—यह सहभोज गत १९ मार्च को श्री० पित्रेय जी द्वारा ऊँचाहार ग्राम में दिया गया था। बीच में × चिन्हयुक्त खड़े, श्री० पित्रेय जी और बैठे हुए श्री० शीतलासहाय जी।

श्री० मदनमोहन उपाध्याय—आप प्रयाग के एक उत्साही राष्ट्रसेवक हैं। ९ मास की कठिन सज़ा भोग चुके हैं।
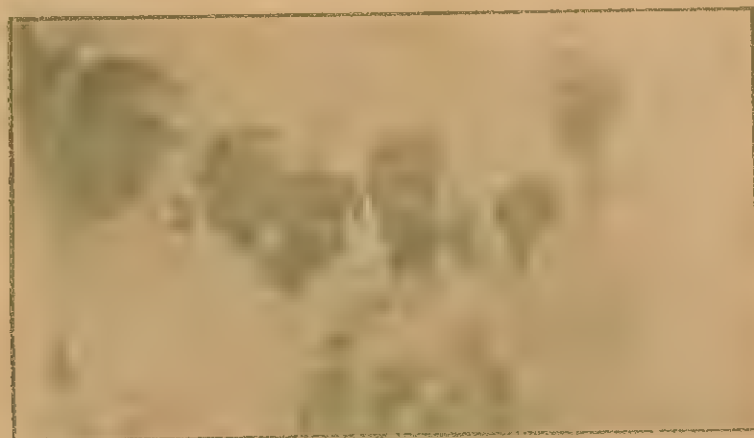
यह चित्र उस समय का है, जबकि कराची में, श्री० एफ़० के० नरीमेन आदि बम्बई के प्रतिनिधि, बम्बई में एक जुलूस निकालने के लिए, सरदार किशनसिंह से स्वर्गीय सरदार भगतसिंह का भस्मावशेष ले रहे हैं। पुष्पाच्छादित मञ्जूषे में सरदार के चित्र के साथ उनका भस्मावशेष है।
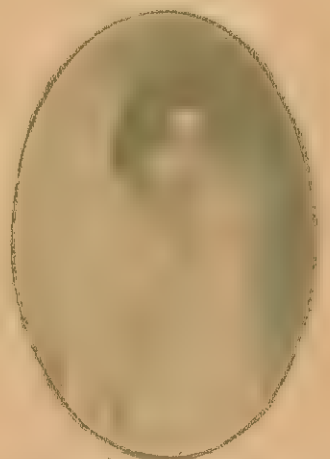
श्रीमती मारग्रेट बी० सिंह—आप पटने के बादशाह नवाब रजवी प्रेक्टीसिङ्ग स्कूल की प्रधान शिक्षयित्री हैं।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

प्रतिभाशाली उर्दू पत्र-सम्पादकों की चित्रावली

ऑनरेबल जस्टिस सर अब्दुल क़ादिर सरपरस्त स० 'अदबी दुनिया'

प्रो० मुहम्मद हुसेन सम्पादक 'हसन-ख़याल'

मि० महमूद अहमद इरफ़ानी स० 'इस्लामी-दुनिया' क़ाहिरा

मि० अज़ीमुलकरीम स० 'नौबहार'

मि० सय्यद हामिदअली स० 'बालसखा'

मि० बदाउज़्ज़माँ स० 'अज़ीज़'

मि० अमीन सलोनवी स० 'नज़र'

प्रो० ज़फ़रताबाँ स० 'दौरान-उम्र'

मि० कैफ़ी चिरैयाकोटी स० 'सुमन'

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

कुमारी शकुन्तला देवी—आप दातागञ्ज (बदायूँ) के मुख़्तार पं० मुकुटबिहारी लाल सनाढ्य की कन्या हैं। आपकी उम्र अभी केवल बारह वर्ष की है, किन्तु इस साल आपने व्याकरण की मध्यमा की परीक्षा दी है।

चि० निमाई—यह १२ महीने का सुन्दर शिशु इलाहाबाद के डॉ० पी० एल० चटर्जी का पौत्र है। इसे चर्खा चलाने का बड़ा शौक़ है। बालक बड़ों की अपेक्षा स्वराज्य का सच्चा समर्थक प्रतीत होता है।

राष्ट्रीय महिला-मण्डल, कराची—इन महिलाओं ने गत सत्याग्रह-संग्राम में अपूर्व कार्य किया है। बैठी हुई सभी महिलाएँ जेल-यात्रा कर चुकी हैं। नीचे बैठा हुआ दस वर्ष का एक बालक है, जो कोड़ों की मार खा चुका है।

श्रीमती डबल्यू० वाई० एम० कुक—आप पटने के "बादशाह नवाब रजवी ट्रेनिङ्ग कॉलेज" की लेडी प्रिन्सिपल नियुक्त हुई हैं।

श्रीमती माया दीक्षित—आप अमरावती की ख्यातनामा महिला हैं। गत आन्दोलन में आपने अपूर्व राष्ट्रीय कार्य किया है।

दक्षिण कनाडा में पट्टूर शाखा के 'वीमेन्स इण्डियन एसोसिएशन' द्वारा सञ्चालित हिन्दी क्लास की कुछ अध्यापिकाएँ तथा छात्राएँ। बैठी हुई महिलाओं में बाईं तरफ़ से तीसरी श्रीमती पी० सीतादेवी प्रधान हिन्दी अध्यापिका हैं। आपकी सेवाओं के उपलक्ष में छात्राओं ने आपको एक स्वर्ण-पदक प्रधान किया था।

काँग्रेस से वापस लौटने पर पेशावर में सीमा-प्रान्त के "गाँधी" ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ के अभूतपूर्व स्वागत का दृश्य —बीच में पाठक गाँधी-टोपी पहने हुए ख़ाँ साहब को देखेंगे।

सीमा-प्रान्त के सुप्रसिद्ध वयोवृद्ध राष्ट्रीय नेता —आग़ा लाल-बादशाह के स्वागत का दृश्य - जबकि वे काङ्ग्रेस से सीमा-प्रान्त वापस लौटे थे।

चारसद्दा (सीमा-प्रान्त) के इस अभागे शहीद का शव— जो 'मोतीलाल-दिवस' के दिन पुलिस की गोलियों का शिकार हुआ था।

साक़ी का अक्से-रुख़ नहीं जामे-शराब में ! वह चाँद है, जो डूब गया आफ़ताब में !!
मतलब यह है, कि क़त्ल करूँगा अताब में ! तलवार उसने भेज दी ख़त के जवाब में !!

जवाब

क़ासिद के आते-आते ख़त एक और लिख रखूँ,
जानता हूँ, वह जो लिखेंगे जवाब में।
—"ग़ालिब" देहलवी

उनको कहाँ है सब्रो तहम्मुल[1] अताब[2] में,
दम भर के बाद और ख़त आया जवाब में।
क्या-क्या फ़रेब दिल को दिए इज़्तिराब[3] में,
उनकी तरफ़ से आप लिखे ख़त जवाब में।
जी चाहता है, छेड़ के हूँ उससे हम[4]-कलाम,
कुछ तो लगेगी देर सवालो-जवाब में।
आशिक़ तो कब दबेंगे फ़रिश्तों से बादे[5] मर्ग,
तकरार हो न जाय सवालो-जवाब में।
—महाकवि "दाग़" देहलवी

इज़हारे शौक़ उसने किया भी तो किस तरह,
भेजा मेरा ही ख़त मेरे ख़त के जवाब में।
रहना था चुप तुझे, मेरे इज़हारे हाल पर,
लाखों सवाल हो गए पैदा जवाब में।
पहिले लिखा कुछ और फिर उसने लिखा कुछ और,
यों आए दो ख़त एक मेरे ख़त के जवाब में।
—"नूह" नारवी

मेरे पयामे[6] शौक़ का अञ्जाम[7] देखिए,
सर नामावर[8] का भेज दिया है जवाब में।
—"रफ़ीक़" साहब

'हाँ' का सवाल ख़त में है ऐ नामावर फ़िज़ूल,
लिक्खा गया 'नहीं' भी, न उनसे जवाब में।
—"ज़या" देवान्दपुरी

मतलब यह है, कि क़त्ल करूँगा अताब में,
तलवार उसने भेज दी ख़त के जवाब में।
अटका हुआ हूँ, देखिए होता है क्या मआल[9],
हङ्गामे[10] नज़्अ उनसे सवालो जवाब में।
महशर[11] में तुझको दावरे[12] महशर रहे ख़्याल,
यह दिन गुज़र न जाय सवालो-जवाब में।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

हबाब

मेरी नमूद[13] क्या है जहाने-ख़राब[14] में,
बिजली में है चमक कि हवा है हबाब[15] में
—"अज़हर" अमृतसरी

गुज़री जो सर से मौज तो पानी में मिल गया
कितनी ख़ुदी[16] भरी थी दिमाग़े-हबाब में !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—सब्र, २—ग़ुस्सा, ३—बेक़रारी, ४—बातचीत करना, ५—मरने के बाद, ६—पैग़ाम, ७—नतीजा ८—ख़त ले जाने वाला, ९—नतीजा, १०—अन्तिम समय, ११—प्रलय, १२—न्याय करने वाला, १३—जीवन, १४—मिटने वाला संसार, १५—बुल्ला, १६—ग़ुरूर।

शबाब

शोख़ी[17] ने तुमको डाल दिया इज़्तिराब में,
कुछ तमकनत[18] का लुत्फ़ न देखा शबाब में
—महाकवि "दाग़" देहलवी

ताक़ाने-इश्क़[19] कौन है ऐसा मेरी तरह,
रोती हैं हसरतें मुझे अहदे[20] शबाब में।
—"नूह" नारवी

"आबिद" बलाये-इश्क़े बुताँ[21] में कहाँ फँसे,
तुमने यह घुन कहाँ से लगाया शबाब में।
—"आबिद" इलाहाबादी

क्या जानें आप हाल नशेबो फ़राज़े[22] इश्क़,
रखिए क़दम सँभाल के अहदे शबाब में !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

हिसाब

क्यों फ़िक्र इस क़दर है रक़ीबों[23] के बाब[24] में,
उनके गुनह भी डाल दो मेरे हिसाब में।
दुनिया की बाज़े[25] पुर्स से अब तक नहीं निजात,
उलझा हुआ हूँ हश्र के दिन भी हिसाब में।
—महाकवि "दाग़" देहलवी

दोनों ने घर किया है निगाहे इन्तेख़ाब[26] में,
दिल भी हिसाब में है, जिगर भी हिसाब में।
क्या रोज़े हश्र[27] हम कहें उनके जवाब में,
दुनिया के हैं गुनाह हमारे हिसाब में।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

आब

रखना क़दम तसौवरे[28] जानाँ[29] सँभाल कर,
काई है जा बजा मेरी चश्मे[30] पुर-आब में।
—महाकवि "दाग़" देहलवी

रुकता नहीं मिज़ा[31] से यह फ़ितना बला का है,
तिफ़ले सरशिक मचला है चश्मे पुर-आब में।
—"आबिद" इलाहाबादी

बहते हैं अश्क़[32] हर घड़ी दिन हो कि रात हो,
दरिया का जोश है मेरी चश्मे पुरआब में।
चमकी सरों पर, और दिलों से गुज़र गई,
बिजली का था असर तेरी तेग़े[33] ख़ुशआब में।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१७—चञ्चलता, १८—ग़ुरूर, १९—हताश, २०—ज़माना, २१—अच्छी सूरत वाले, २२—उतार-चढ़ाव, २३—दुश्मन, २४—सम्बन्ध, २५—सवाल जवाब, २६—पसन्द करना, २७—प्रलय का दिन, २८—ध्यान, २९—माशूक़, ३०—आँखें पानी भरी हुई, ३१—बरौनी, ३२—आँसू ३३—पानी रखने वाली तलवार।

शराब

ए शेख़ जो बताए मये-इश्क़[34] को हराम,
ऐसे को दो लगाए भिगो कर शराब में !
कुछ शान मग़फ़रत[35] से नहीं दूर ज़ाहिदो[36],
डूबें गुनाह बादाकशों[37] के शराब में।
—महाकवि "दाग़" देहलवी

मुझ तक कब उनकी बज़्म[38] में आया था दौरे जाम
साक़ी ने कुछ मिला न दिया हो शराब में।
—"ग़ालिब" देहलवी

फूलों का रङ्ग और कुछ अङ्गूर का अरक़
कोई हराम चीज़ नहीं है शराब में।
साक़ी जो मेहर्बां है, तो पीने का ज़िक्र क्या,
निकलूँगा मैकदे[39] से नहा कर शराब में।
—"नूह" नारवी

कहते हैं रिन्द[40] हज़रते वाएज़[41] से बार-बार,
तोबा को ग़ोता दीजिए जामे-शराब में।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

ख़्वाब

ता फिर न इन्तज़ार में नींद आए उम्र भर,
आने का अहद कर गए आए जो ख़्वाब में!
—"ग़ालिब" देहलवी

हरदम छुपाए रहते हैं रुख़[42] को नक़ाब में,
बेपर्दा अब नज़र नहीं आते वह ख़्वाब में !
—"ज़या" देवान्दपुरी

ताब

"ग़ालिब" छुटी शराब पर अब भी कभी-कभी,
पीता हूँ रोज़ अब्रो[43] शबे-माहताब[44] में !
—"ग़ालिब" देहलवी

"हिन्दी" ने आज देख लिया किसको ख़्वाब में
सीने में इज़्तिराब है दिल पेचो-ताब में !
—"हिन्दी" साहब

उस ज़ुल्फ़े ख़मब-ख़म[45] की है उल्फ़त का यह असर,
दिल है मुसीबतों में, जिगर पेचोताब में।
ख़ुरशीद[46] का जवाब है दाग़े जिगर "ज़या",
यह भी तो उससे कम नहीं कुछ आबोताब[47] में।
—"ज़या" देवान्दपुरी

"बिस्मिल" जो मेरे दिलको है उस महजबीं[48] का शौक़,
लिखता हूँ मैं ग़ज़ल भी शबे-माहताब में !
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

(शेष मैटर ३१वें पेज में देखिए)

३४—प्रेम की मदिरा, ३५—ईश्वर की कृपा, ३६—परहेज़गारो, ३७—शराबी, ३८—सभा, ३९—शराबख़ाना, ४०—शराबी, ४१—नसीहत करने वाला, ४२—चेहरा, ४३—बदली, ४४—चाँदनी रात, ४५—घूँघर वाले बाल, ४६—सूरज, ४७—चमक, ४८—चाँद-सी सूरत,

कुछ चुनी हुई उत्तमोत्तम पुस्तकों की संक्षिप्त सूची

स्त्रियोपयोगी

- आदश महिला (इं० प्रे०) २)
- अपराधी (चाँ० का०) २॥)
- अश्रुपात (गं० पु० मा०) १।)
- अरत्तणीया (इं० प्रे०) १)
- अनाथ पत्नी (चाँ० का०) २)
- अनाथ बालक (इं० प्रे०) १)
- अबलाओं का इन्साफ़ (चाँ० का०) ३)
- अबलाओं पर अत्याचार (चाँ० का०) २॥)
- अमृत और विष (दो भाग) (चाँ० का०) ५)
- अञ्जना देवी (ना० दा० स० ऐ० सं०) ॥=)
- आदर्श महिलाएँ (दो भाग) (रा० द० पा०) १।)
- आदर्श रमणी (नि० चं०) ॥=)
- आरोग्य-साधन (हिं० पु० ए०) ।=)
- आर्य-महिला-रत्न (ब० प्रे०) २।), २॥)
- ईश्वर य न्याय (गं० पु० मा०) ॥)
- उमासुन्दरी (चाँ० का०) ।॥)
- कन्या-दिनचर्या (ओं० प्रे०) ।)
- कन्या-पाकशास्त्र (") ।)
- कन्याओं की पोथी (सा० हि० मं०) १)
- कन्या शिक्षावली (चार भाग) (हिं० मं०) ॥=)
- कमला के पत्र (चाँ० का०) ३)
- " (अङ्गरेज़ी) (") ३)
- कुल-लक्ष्मी (हिं० मं०) १।)
- कुल-ललना (गृ० ल०) ।॥=)
- कोहेनूर (ब० प्रे०) १॥), २)
- ग्रह का फेर (चाँ० का०) ।॥)
- गायत्री-सावित्री (बेल० प्रे०) ।)
- गार्हस्थ्य-शास्त्र (ब० मा० ग्रं०) १)
- गीता-भाषा (मे० ब० दा०) १॥)
- गुदगुदी (चाँ० का०) ॥)
- गुप्त सन्देश (गं० पु० मा०) ॥=)
- गृहधर्म (ना० दा० स० ऐ० सं०) ।॥)
- गृहिणी-गौरव (ग्रं० मा०) १॥), २)
- गौरीशङ्कर (चाँ० का०) ॥=)
- घरेलू चिकित्सा (") ।॥)
- चित्तौड़ की चिता (चाँ० का०) १॥)
- चौक पूरने की पुस्तक (चि० प्रे०) १)
- जनन-विज्ञान (पा० ऐ० कं०) ३), ३॥)
- जननी-जीवन (चाँ० का०) १।)
- तारा (इं० प्रे०) १)
- दम्पति सुहृदय (हिं० मं०) १)
- दाम्पत्य जीवन (चाँ० का०) २॥)
- दिव्य देवियाँ (गृ० मी०) १॥=)
- दुलहिन (हिं० पु० भं०) ।)
- देवी जोन (प्रका० पु०) ।=)
- देवी पार्वती (गं० पु० मा०) १), १॥)
- देवी द्रौपदी (पॉपुलर) ॥=)
- देवी सती (गं० पु० मा०) ॥=)
- नवनिधि (हिं० ग्रं० र० का०) ।॥)
- नल-दमयन्ती (ब० प्रे०) १॥), १।॥), २)
- " " (पॉपुलर) ॥)
- " " (गं० पु० मा०) ।॥)
- नन्दन-निकुञ्ज (गं० पु० मा०) १), १॥)
- नारी-उपदेश (गं० पु० मा०) ॥)
- नारी-विज्ञान (पा० ऐ० को०) २), २॥)
- निर्मला (चाँ० का०) २॥)
- पतिव्रता (इं० प्रे०) १)
- पतिव्रता गान्धारी (इं० प्रे०) ॥=)
- पार्वती और यशोदा (इं० प्रे०) ॥=)
- प्राचीन हिन्दू माताएँ (ना० दा० ऐ० सं०) १)
- भारत की देवियाँ (ब० प्रे०) ।-)
- भारत के स्त्री-रत्न (दो भाग) (स० सा० मं०) १=)
- भारत की विदुषी नारियाँ (गं० पु० मा०) ॥)
- महासती मदालसा (ब० प्रे०) १॥), २), २।)
- माता के उपदेश (सर० भं०) ।-)
- माता-पुत्र (न्म० स० ऐ० सं०) १॥=)
- मुस्लिम-महिला-रत्न (ब० प्रे०) २।), २॥), २॥।)
- शैव्या-हरिश्चन्द्र (ब० प्रे०) २॥), २॥।), ३)
- सती बेहुला (ब० प्रे०) २।), २॥), २॥।)
- सती सीता (पा० ऐ० को०) ॥=)
- सती-सुकन्या (ब० प्रे०) १।), १॥), १॥।)
- संयुक्ता (पॉपुलर) ॥=)
- संसार की असभ्य जाति की स्त्रियाँ (प्र० पु०) २॥)
- सीतादेवी (पॉपुलर) ॥=)
- सुभद्रा (ब० प्रे०) २), २।), २॥)
- सुहागरात (अभ्युदय) ४)
- स्त्री और पुरुष (स० सा० मं०) ।=)
- स्त्री-सुबोधिनी (न० कि० प्रे०) २)
- स्त्री-कर्तव्य-शिक्षा (का० पु० मं०) २।)
- हरिश्चन्द्र-शैव्या (ब० प्रे०) २॥)

नवयुवकोपयोगी

- आत्मोपदेश (स० सा० मं०) ।)
- आनन्द की पगडण्डियाँ (हिं० ग्रं० र०) १॥)
- आरोग्य-साधन (म० गाँधी) ।=)
- इन्साफ़-संग्रह (तीन भाग) (इं० प्रे०) १॥)
- ईश्वरीय बोध (ज्ञा० हि०) ।-)
- ईसाप-नीति (इं० प्रे०) २)
- उद्योगी पुरुष (प्रका० पु० मा०) ।=)
- उपदेश-कुसुम (इं० प्रे०) ≡)
- ऋद्धि (इं० प्रे०) १॥।)
- कर्मयोग (गं० पु० मा०) ॥)
- कारनेगी और उसके विचार (गं० पु० मा०) ॥=)
- क्या करें ? (स० सा० मं०) ।॥)
- गुलिस्ताँ (इं० प्रे०) २)
- " (इ० दा० कं०) २॥)
- गोबर-गणेश संहिता (हिं० ग्रं० र०) ॥-)
- चरित्र-गठन (इं० प्रे०) १)
- चॉकलेट (बी० स० पु०) १)
- जीवन का सद्व्यय (गं० पु० मा०) १)
- जीवन के आनन्द (इं० प्रे०) १।)
- जैसे चाहो वैसे बनो (हिं० सा० मं०) ≡)॥
- टॉल्सटॉय के सिद्धान्त (प्र० पु०) १।)
- तपस्वी अरविन्द के पत्र (हि० मं०) ।=)
- दाम्पत्य विज्ञान (पाठक कं०) २), २॥)
- दिव्य जीवन (सं० सा० प्र० मं०) ।=)
- देश-दर्शन (हिं० ग्रं० र०) २), ३)
- नवीन पत्र-प्रकाश (मि० बन्धु का०) १।)
- नीति रत्नमाला (गं० पु० मा०) ।)
- " " (इं० प्रे०) ॥=)
- पतियों को सीख (मनोरमा के पत्र) ३॥)
- पौराणिक उपाख्यान-माला (रा० ना० ला०) १।)
- प्राचीन पण्डित और कवि (गं० पु० मा०) ॥=), १।=)
- प्रातःकाल और सायङ्काल के विचार (हिं० सा० मं०) ।=)
- प्रेत-लोक (रा० श्या०) १)
- प्रेम (हिं० मं०) ।=)
- फ़िज़ी द्वीप में मेरे २१ वर्ष (प्र० पु० मा०) ॥=)
- फ़िज़ी में भारतीय प्रतिज्ञा-बद्ध कुली-प्रथा (प्रका० पु०) १)
- बच्चों का चरित्र-गठन (ड० ब० ऑ०) ॥)
- बच्चों के सुधारने के उपाय (हिं० ग्रं० र०) ॥=)
- बालचर-जीवन (ल० प्रे०) १)
- बाल-विनोद (५ भाग) (इं० प्रे०) १॥)॥
- ब्रह्मचर्य (ज० शं० वैद्य) ।), ।=)
- " (स्वा० गं०) १।)
- ब्रह्मचर्य-विज्ञान (स० सा० मं०) ॥-)
- ब्रह्मचर्य ही जीवन है (ज्ञा० हि०) ।॥)
- भारतीय अर्थशास्त्र (गं० पु० मा०) २॥), ३॥)
- भिखारी से भगवान (गं० पु० मा०) १), १॥)
- भिन्न-भिन्न देशों के अनोखे रीति-रिवाज (मि० बं० का०) ॥=)
- मानव-जीवन (हि० ग्रं० र०) १॥)
- मितव्यय (इं० प्रे०) १।)
- मितव्ययता (हिं० ग्रं० र०) ।॥=)
- वक्तृत्व-कला (मि० बं० का०) १।)
- व्यावहारिक सभ्यता (स० सा० मं०) ।)॥
- विवेक वचनावली (हिं० पु० ए०) ।)
- व्यावहारिक पत्रबोध (हिं० पु० ए०) ॥=)
- शेक्सपीयर कथा-गाथा (रा० ना० ला०) १।)
- श्रीकृष्ण-चरित्र (श्या० ला० व०) ।=)
- श्रीकृष्ण-चरित्र (पु० भं०) २॥)
- सदाचार-दर्पण (मि० बं० का०) १॥)
- सदाचार-सोपान (सर० भं०) ।=)
- समाज (हिं० ग्रं० र०) ।॥=)
- " (इं० प्रे०) १)
- संक्षिप्त शरीर-विज्ञान (गं० पु० मा०) ॥=)

व्यवस्थापिका 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

भारतीय किसानों का विप्लव

[श्री० एच० एन० ब्रेल्सफ़र्ड]

['भविष्य' के पाठक जानते हैं कि मि० एच० एन० ब्रेल्सफ़र्ड ब्रिटिश पार्लामेण्ट तथा लेबर-पार्टी के एक योग्य सदस्य हैं। आप सत्याग्रह संग्राम के अवसर पर इस देश का भ्रमण करने आए थे। विलायत लौट कर इस देश के सम्बन्ध में, वहाँ के समाचार-पत्रों में आपने अनेकों लेख लिखे हैं। आपके लेखों को वहाँ के लोग बड़े ध्यान से पढ़ते हैं। उनमें यहाँ के किसानों की भयङ्कर ग़रीबी का हाल पढ़ कर लोग प्रश्न करने लगते हैं कि "अगर वहाँ के किसानों की हालत इतनी अधिक ख़राब है तो आश्चर्य है कि वे विप्लव क्यों नहीं कर देते ?" इस लेख में मि० ब्रेल्सफ़र्ड ने उन कारणों को बतला जिनसे कि अब तक किसानों ने विप्लव नहीं किया। परन्तु आपका अनुमान है कि निकट भविष्य में ही भारतीय किसानों का एक देश-व्यापी विप्लव होगा।

—सं० "भविष्य"]

भारत के सम्बन्ध में प्रकाशित मेरी लेख-माला के प्रथम दो लेखों को पढ़ चुकने के बाद अधीर पाठक मुझसे एक प्रश्न पूछने के लिए उतावले हो रहे होंगे कि "अगर भारत की दशा ऐसी बुरी है, जैसी कि इन लेखों में वर्णन की गई है, तो वहाँ के किसान और मज़दूर विप्लव क्यों नहीं कर देते ?" मेरा उत्तर है कि इस प्रश्न के पीछे पश्चिमीय मनोवृत्ति छिपी हुई है। पाठकों के उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर देने से पहले मुझे यहाँ भारत के सम्बन्ध की कुछ मुख्य-मुख्य बातों का उल्लेख कर देना आवश्यक मालूम होता है।

भारतीय जीवन में केवल दुख ही दुख नहीं है, चाहे वह ग़रीब से ग़रीब ग्राम्य जीवन ही क्यों न हो। परम्परा से होते चले आने वाले पर्व और उत्सव बराबर ही होते रहते हैं, चाहे करों और ऋणों का कितना ही बड़ा बोझ उन पर क्यों न लदा हो। नृत्य और गान-वाद्य किसी न किसी सम्बन्ध में नित्य ही हुआ करते हैं। मन्दिरों की दैनिक पूजा-प्रार्थना तो सदैव सुखकारी ही होती है। हिन्दू-धर्म में दुखदाई रस्मों का कोई स्थान ही नहीं है। मुझे मालूम होता है कि भारतीयों की आश्चर्य-जनक धीरता तथा शान्ति-प्रियता का कारण उनका आधे पेट भूखा रहना भी है। मैंने एक अङ्गरेज़ अफ़सर के मुँह से सुना है कि भारतीय रङ्गरूटों को जो पहिली बात सिखलानी पड़ती है, वह है भरपेट भोजन करना। साधारण भारतीय मज़दूर में इतनी शक्ति नहीं रहती कि वह अपने ऊपर होने वाले किसी अन्याय का बदला घूँसों से ले सके। यूरोपियन मज़दूरों की तुलना में, पञ्जाबी किसानों को छोड़ कर, शेष किसानों की ताक़त आधी होती है।

जाति-पाँति तथा धर्म

भारतवासियों के विषय में दूसरी बात जो है, उसका सम्बन्ध जाति-पाँति तथा धर्म से है।

भारत में परम्परागत प्रथाओं तथा सामाजिक रीतियों का बन्धन बड़ा ज़बरदस्त है। जीवनचर्या की साधारण से साधारण बात में जाति और धर्म का प्रतिबन्ध दिखलाई पड़ता है। जीवन, पुराने आदेशों और निषेधों के जाल में शैशवावस्था से ही कुछ ऐसा जकड़ दिया जाता है कि बड़ा होने पर भारतीय स्वभाव में केवल आज्ञाकारिता ही रह जाती है। रूढ़ियों के विरुद्ध बग़ावत करने का साहस बिरले ही भारतीय कर सकते हैं। प्रत्येक वर्ण अपना निराला आदर्श और ढङ्ग रखता है। कोई कभी अपने वर्ण की खचित रेखा से बाहर जाने का प्रयत्न नहीं करता। साहस और उत्साह केवल लड़ने वाली तथा शासन करने वाली जातियों में पाया जाता है। दूसरी जातियाँ न तो इस बात की कोई इच्छा ही रखती हैं, न उनके प्रति, जिनके पास ये गुण हैं, किसी प्रकार की ईर्षा ही रखती हैं। किसी भारतीय को किसी के सामने अपनी कमज़ोरी या कायरता स्वीकार करने में कोई लज्जा नहीं मालूम होती। एक बार एक बड़े ही योग्य हिन्दू सज्जन ने मुझसे कहा—"मेरे पिता कायर थे, मैं अर्ध-कायर हूँ, मेरी सन्तान बहादुर होगी।" उनका मतलब यह था कि कायर बनाने वाली रूढ़ियों के बन्धन धीरे-धीरे टूटते जा रहे हैं। इन रूढ़ियों ने शताब्दियों से लोगों को तरह-तरह के अत्याचार सहने के लिए बाध्य किया है।

भारतीय जीवन में धर्म का भी अपना एक निराला ही स्थान है। सम्पूर्ण दृश्य संसार की माया है। उसे बदलने का प्रयत्न करना व्यर्थ है। सम्पूर्ण जीव-जगत जीवन के विराट चक्र में बराबर घूम रहा है। अछूत सोचता है,

श्री० एच० एन० ब्रेल्सफ़र्ड

किसी पूर्व जन्म के पाप से आज मैं अछूत हो गया हूँ, अपना अछूत धर्म यदि नियमपूर्वक जीवन में पालन कर लूँगा तो अगले जन्म में सम्भव है, इससे कोई उच्च श्रेणी प्राप्त हो जाय।

भारतीय कब विप्लव करते हैं ?

उपर्युक्त प्रकार की वर्णव्यवस्था तथा जीवन के सम्बन्ध में प्रचलित ऐसे दृष्टिकोण से दो प्रकार के परिणामों की उत्पत्ति हुई है। एक तो व्यक्ति, अपने शारीरिक और मानसिक जगत में, हद दर्जे का विनयशील बन गया है। भारतीयों की इस विनयशीलता को देख कर यूरोपियन दर्शक आश्चर्य-चकित हो जाता है। लेकिन व्यक्ति की इस विनयशीलता का परिणाम यह होता है कि जब कभी किसी जाति, समाज, गाँव या राष्ट्र में किसी की तरफ़ से कोई आन्दोलन उठ खड़ा होता है, तब उस समाज, जाति या राष्ट्र के व्यक्ति एक होकर ऐसा सङ्गठित दृश्य उपस्थित कर देते हैं, जिसे देख कर एक यूरोप-निवासी दङ्ग रह जाता है। वह ऐसा ही सुदृढ़ सङ्गठन अपने देश में देखने की अभिलाषा करने लग जाता है। वही व्यक्ति, जो किसी अपमान, अत्याचार को कभी चुपचाप, बिना क्रोध तक प्रकट किए, सहन कर लेता है, सामूहिक विप्लव के समय एक अत्यन्त अद्भुत शक्ति का प्रदर्शन करता है।

गाँधी-आन्दोलन के प्रति जन-समुदाय की सहानुभूति होने के मूल में भारतीयों की यही मनोवृत्ति छिपी हुई है। कुछ योग्य व्यक्तियों ने पहले उनकी नीति पर सन्देह प्रकट किया था, परन्तु धीरे-धीरे उनमें से कुछ तो मौन हो रहे और अवशिष्टों ने अन्त में उन्हीं के पथ का अनुसरण कर लिया। इस आन्दोलन में हज़ारों की संख्या में बड़े-बड़े व्यापारियों तथा दूकानदारों ने अपने को नष्ट कर दिया है। फिर भी जो कुछ उन्होंने किया, वह सब प्रसन्नतापूर्वक किया है। जो कोई इस आन्दोलन से बचने का प्रयत्न करता था, उसे उसीके घर वाले, स्त्री और बच्चे तक, लज्जित करते थे। गाँवों में तो कहीं-कहीं ऐसे व्यक्ति लोकमत द्वारा दण्डित भी हुए थे।

वर्ण-व्यवस्था के बन्धन नगरों में बराबर ढीले पड़ते जा रहे हैं। रेल, ऑफ़िस और कल-कारख़ानों के समीप ऐसी व्यवस्थाएँ अधिक समय तक कैसे पनप सकती हैं ? परन्तु लोकमत से डरने की मनोवृत्ति भारतीयों में वर्ण-व्यवस्था के टूट जाने के बहुत समय बाद तक भी शायद बनी रहेगी। बम्बई और कलकत्ता के मिलों में काम करने वाले मज़दूर सैकड़ों वर्णों के और अनेक भाषाओं के बोलने वाले होते हैं। अतः इन्हें किसी एक ट्रेड यूनियन का स्थायी सदस्य बनाने का काम बड़ा कठिन होता है। फिर भी, इनकी शक्ति का पता कभी किसी हड़ताल के होने पर लगता है। बिना किसी प्रकार के स्थायी कोष और बिना किसी प्रकार की आजीविका-प्रबन्ध के जिस स्थिरता और धैर्य के साथ ये मज़दूर हड़ताल करते हैं, उसका नमूना यूरोपीय देशों की सुसङ्गठित ट्रेड यूनियनों तक में सदैव देखने को नहीं मिलता। भारतीय समाज में व्यक्तिवाद को प्रश्रय नहीं दिया गया है। उस समाज में आज्ञाकारिता और निष्क्रियता के ही गुण उत्पन्न किए जाते हैं। परन्तु किसी कार्य के लिए एक बार सञ्चालित हो जाने पर सारा समाज एक हो जाता है। उस समय विरोधी बहुत ही कम दिखलाई पड़ते हैं।

शक्ति का ज्ञान

गाँधी-आन्दोलन के द्वारा ग्रामों में अपनी शक्ति का ज्ञान पैदा हो गया है। वे अब अपने को अकेला नहीं समझते। अगर कहीं बङ्गाल ने सुना कि गुजरात ने करबन्दी का आन्दोलन आरम्भ कर दिया है, तो वह सोचने लगता है कि हम भी बङ्गाल में करबन्दी का आन्दोलन क्यों न चला दें? परिवर्तन तथा जागृति की भावना बहुत दूर-दूर तक फैल गई है। संयुक्त प्रान्त के किशनपुर गाँव में भ्रमण करते समय मैंने ग़रीब से ग़रीब किसानों के मुख-मण्डल पर उस जाग्रत भावना के चिह्न देखे थे। मैंने उनसे कोई राजनीति सम्बन्धी प्रश्न नहीं पूछा, क्योंकि ऐसे प्रश्नों के उत्तर की आशा उनसे नहीं की जा सकती थी। परन्तु संयोगवश उनमें से एक ने किसी बात के सम्बन्ध में स्वयं 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया। मैंने देखा कि इस शब्द के प्रयोग करते ही उपस्थित ग्रामीणों के चेहरों पर ज्योति की एक सुन्दर रेखा दौड़ गई। एक साथ ही मानो वे किसी आशा से आशान्वित हो उठे। मैंने उनसे पूछा कि स्वराज्य हो जाने पर उनकी दशा में क्या सुधार हो जायगा? उत्तर में उनमें से बहुत से एक साथ ही बोल उठे। धीमे कण्ठों से एक संयुक्त, परन्तु दृढ़ स्वर में उत्तर मिला—"स्वराज्य में हमारा भू-कर नाम मात्र का रह जायगा।" उन्होंने कहा—"आप विश्वास रखिए, हम लोग जानते हैं कि स्वराज्य का क्या मतलब है।" उनमें से अनेकों ने गाँधी को एक बार पास के ज़िले से होकर कहीं जाते समय देखा था।

अब तक इन कृषकों ने कर न देने की बात नहीं सोची थी। वे देने में असमर्थ थे, बस इतना ही उन्हें मालूम था। अपनी इस असमर्थता को ज़मींदार के सामने प्रकट कर देने के लिए वे तैयार थे। ज़मींदार भी सम्भवतः कर स्थगित कर देने के सिवाय और कर ही क्या सकता था? किसान तो यह जानते हैं कि हमसे कोई ले ही क्या सकता है, जो था वह गिरवी रक्खा है। अगर कोई चाहे तो हमारा ऋण ले सकता है। इन किसानों का, ज़मींदार के प्रति जो भाव था, उसमें आलोचना तथा भय दोनों का विचित्र सम्मिश्रण था। ज़मींदार महाशय प्रान्तीय व्यवस्थापक सभा के सदस्य हैं। चुनाव के समय इन्होंने अपने आपको गाँधी का अनुयायी घोषित किया था, यद्यपि कॉङ्ग्रेस स्वयं कौन्सिल-बहिष्कार की घोषणा कर चुकी थी। ये ज़मींदार महाशय खद्दर पहनते थे और उनकी मोटरकार में राष्ट्रीय झण्डा भी उड़ता रहता था। किसानों ने कहा कि गाँव को धोखा देकर इन्होंने वोट डलवा लिए। किसानों का मुखिया अपने भारतीय सुलभ सहज और सच्चे भाव से बोल उठा—"अगर ज़मींदार के इस धोखे का पता हम लोगों को चल भी जाता तो क्या होता! हम लोगों को वोट तो देना ही पड़ता। न देते तो ज़मीनें छिन जातीं।"

मैंने सोचा, ज़मींदार का सामना करने के पहले इन कृषकों को दल बना कर अपना सङ्गठन करना पड़ेगा।

करबन्दी की चढ़ाई

लेकिन मैंने जो कुछ सोचा था, वह ग़लत प्रमाणित हुआ। अपनी यात्रा में इलाहाबाद का भ्रमण करते समय मुझे मालूम हुआ कि करबन्दी का आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया गया है, सो भी कॉङ्ग्रेस के नेतृत्व में, जो कि अब तक करबन्दी के विषय में हिचकिचा रही थी। अन्य राष्ट्रीय संस्थाओं की तरह, कॉङ्ग्रेस में भी सभी श्रेणी के लोग मौजूद हैं। उसके मुख्य कार्यकर्ताओं में तो अधिकतर ज़मींदार, महाजन और वकील ही हैं, शेष स्वयंसेवक आदि ग़रीब श्रेणियों के हैं। इस प्रकार के धनिक लोगों के होते हुए कॉङ्ग्रेस के नेतृत्व में करबन्दी आन्दोलन का चलाया जाना आश्चर्यजनक बात थी। गुजरात के किसानों की बात न्यारी थी, क्योंकि अपने खेतों के वे स्वयं मालिक हैं। बङ्गाल आदि प्रान्तों ने पुलिस-टैक्स न देने का ही आन्दोलन चलाया था; इसका कारण यह था कि उत्तर तथा मध्य भारत के प्रान्तों में ज़मींदारी प्रथा का चलन है। इस प्रथा में सरकार और किसान के बीच में ज़मींदार हैं। ज़मींदार किसान से कर वसूल करके कुछ हिस्सा स्वयं रख लेता है और कुछ नियत हिस्सा सरकार को दे देता है। ज़मींदारी प्रथा वाले प्रान्तों में करबन्दी का आन्दोलन चलाने से किसानों और ज़मींदारों को आपस ही में लड़ना पड़ता जिसे कॉङ्ग्रेस नहीं चाहती थी। फिर भी इलाहाबाद के आस-पास के गाँवों ने कॉङ्ग्रेस से करबन्दी आन्दोलन का नेतृत्व करने के लिए कहा। बात यह थी कि किसान कर देने में बिल्कुल असमर्थ थे। कॉङ्ग्रेस ने इस विकट परिस्थिति में यह निश्चय किया कि किसान ज़मींदार का अंश तो दे दें, परन्तु वह अंश जो ज़मींदार सरकार को देता है, न दें। साथ ही ज़मींदार इस बात का प्रतिज्ञा-पत्र लिख दे कि जो अंश वे किसानों से पाएँगे वह अंश वे सरकार को न दे डालेंगे। ज़मींदारों में ऐसे 'बॉण्ड' या प्रतिज्ञा-पत्र लिखने की हिम्मत नहीं थी।

मैं इस करबन्दी आन्दोलन की प्रगति जानने के लिए बराबर इच्छुक रहा हूँ, परन्तु लण्डन के दैनिक पत्रों में तो ऐसी ख़बरें छपतीं ही नहीं। मैंने एक अमेरिकन समाचार-पत्र में पढ़ा था कि करबन्दी आन्दोलन के लिए भारत के किसी भाग में कहीं प्रदर्शन का आयोजन हो रहा था, जिसे सरकार ने गोली चला कर तितर-बितर कर दिया। इस गोली-काण्ड में अनेकों के हताहत होने की बात भी उसमें लिखी थी। दिसम्बर मास में हिन्दुस्तान छोड़ते समय मैं अनुमान कर रहा था कि कुछ ही महीनों में सम्भवतः कृषकों का देशव्यापी आन्दोलन छिड़ जायगा। उस समय हिन्दुस्तान की जो हालत थी, वह रूस की प्रथम क्रान्ति के समय की हालत से बिल्कुल मिलती-जुलती थी। शासन-शक्ति का वैसा ही अधःपतन था, राष्ट्र का वैसा ही एक स्वर था और वैसी ही ग़रीबी की व्यापकता थी। मैंने भारत में कुछ ज़मींदारों से भी बातचीत की थी। उनमें से कुछ अन्यमनस्क थे। उन्हें किसी हानि का डर नहीं था। उनकी ज़मींदारियाँ गिरवी थीं और उपज ऐसी थी कि मज़दूरों की मज़दूरी तक के लिए भी पूरा न पड़ता था।

क्रान्ति की सूचना

मैं नहीं जानता भविष्य में क्या होगा। भविष्य गाँधी के निर्णय पर अवलम्बित है। सरकार उनको बिल्कुल ही समझने में असमर्थ है। उसे बिना बातचीत के और बिना किसी शर्त के सम्पूर्ण राजबन्दियों को छोड़ देना चाहिए था। उसे पुलिस की करतूतों की जाँच भी कराना चाहिए था। अनुचित शान की रक्षा करने में वह अपने विनाश की तैयारी कर रही है।

मेरे इस लेख के लिखते समय गाँधी जी हिन्दुस्तान में सन्धि की बातों पर विचार कर रहे होंगे। यदि उन्होंने सन्धि के पक्ष में निर्णय किया तो एक बार फिर से चारों ओर शान्ति फैल जायगी और उस हालत में किसानों को अपने ज़मींदारों और महाजनों के विरुद्ध लड़ने के लिए एक दूसरे नेता की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु यदि गाँधी ने लड़ाई जारी रखने का सिगनल दिया तो किसानों में राष्ट्रीय नहीं, तो कम से कम सामाजिक क्रान्ति पैदा हो जायगी। धनी सहायकों की सहायता हट जाने पर साधारण जनता अपने ध्येय को अधिक स्पष्ट देख सकने में समर्थ होगी।

* * *

रजत-रज

[संग्रहकर्ता—श्री० लक्ष्मीनारायणजी अग्रवाल]

काँटा काँटे से निकलता है।

❀

गगनचुम्बी शैल-शिखर, बर्फ़ का मोटा लिहाफ़ ओढ़े ठिठुर कर सोता है।

❀

वृक्ष के शुष्क हो जाने पर उसके पल्लव जीवित नहीं रह सकते।

आत्मा के प्रयाण कर जाने के अनन्तर मांस-पिण्ड सर्वथा निरर्थक है।

❀

उत्थान ही पतन का मूल कारण है।

❀

दुर्जन से विषधर उत्तम है; क्योंकि यह एक ही बार डसता है और वह बार-बार दुख देता है।

❀

क्रोध में मधुर स्मृतियों का लोप हो जाता है।

❀

छली पवन प्रातःकाल वाटिका में प्रेमी बन कर आता है और पुष्पों के मुख चूम-चूम कर स्नेह जताने के बहाने से ओस-कणों को उनकी गोद से छीन ले जाता है।

❀

मनुष्य प्रत्येक दशा में अपने हृदय की सान्त्वना का आधार ढूँढ़ लेता है।

❀

चन्दन ने कुण्ठित होकर मनुष्य से कहा—हे निर्दय नर! तू घिस-घिस कर मेरे शरीर को क्यों नित्य क्षीण करता जाता है?

मनुष्य बोला—इसमें बुराई ही क्या है? क्या देवता के मस्तक पर चढ़ कर अन्त में तुझे सुख नहीं मिलता?

❀

सम्भव असम्भव से पूछता है—"तुम्हारा निवास कहाँ है?"

उत्तर मिलता है—"निर्बल के स्वप्न में"

❀

क्या छोटों का प्रेम बड़ों के प्रेम से बड़ा नहीं हो सकता?

❀

निद्रा सन्तोष की चेरी है और वासना की बैरिन।

❀

लघुता की प्रभुता तिमिर-मध्य ही है। ऊषा का आगमन होते ही एक-एक करके तारागण लुप्त हो जाते हैं।

❀

कवि-हृदय की वसन्त-वाटिका में जो भाव-कुसुम खिलते हैं, उन्हीं के द्वारा सरस्वती की पूजा होती है।

❀

कुरूप कालिमाधारी कलानिधि मनोहर है या प्रखर प्रकाश वाला प्रभाकर?

❀

रवि मेघों की पिचकारी लेकर वर्षा से होली खेलता है।

वर्षा की सतरङ्गी सारी इन्द्रधनुष के रूप में फैल जाती है।

* * *

गुजरात का किसान

[महात्मा गाँधी]

‘किसी को बदनाम करके उसे दबोच देना’ एक लोकोक्ति है। ‘गुजरात का किसान भ्रष्ट है, उसने समझौते की शर्तों का पालन नहीं किया’ ऐसा कह कर उसकी बदनामी उड़ा देना आसान है। कुछ दिन हुए एक प्रेस-प्रतिनिधि से मैंने कहा था, कि यह दुर्भाग्य की बात है, कि मि० बेन ने गुजरात के किसानों पर समझौता न पूरा करने का ग़लत लाञ्छन लगाया है। मि० बेन का कहना था कि गुजरात के किसान अपना लगान नहीं अदा कर रहे हैं। इस दोषारोपण को सुन कर पहले मैं आश्चर्य में पड़ गया था, क्योंकि मेरा यह विश्वास था, कि गुजरात का किसान चाहे कितनी ही बुरी हालत में क्यों न हो, समझौते की शर्तों को अपनी शक्ति भर पूरा करेगा।

दिल्ली में मुझसे शिकायत की गई थी, कि बारडोली तथा वलोड से २८ फ़रवरी के पहले तक बहुत काफ़ी रक़म वसूल हुई, परन्तु उसके बाद से १५ मार्च तक के बीच में केवल ३,२१२) रु० वसूल हुए। शिकायत करने वालों का अभिप्राय यह था, कि समझौता के वक़्त से बहुत कम वसूली हुई है।

समझौते की घोषणा ७ मार्च को हुई थी। मैं सरदार वल्लभभाई के साथ १४ मार्च को बारडोली पहुँचा था। यह तो स्पष्ट ही है कि जब तक हम लोग बारडोली न पहुँच जाते, किसानों को सम्पूर्ण परिस्थिति न समझा देते और वे अपने-अपने घरों को वापस न आ जाते, तब तक उनसे किसी बात की आशा नहीं की जा सकती थी। जो हो, किसानों ने जो कुछ दिया है, उसका ब्योरा नीचे दिया जाता है :—

तारीख़	बारडोली	वलोड
१५-३-३१ से पहले की वसूली	२,५००)	२०,०००)
१६ मार्च	...	..
१७ ,,	२००)	...
१८ ,,	४००)	...
१९ ,,	२००)	१३६)
२० ,,	...	२२८)
२३ ,,	५००)	३७६)
२४ ,,	१,७००)	१,११४)
२५ ,,	८००)	३६४)
२६ ,,	१,०००)	...
२७ ,,	१,०००)	११७)
३० ,,	२,०००)	२,२२६)
३१ ,,	१,५००)	१,६४६)
१ अप्रैल	४,०००)	१,३६१)
२ ,,	२,०००)	१,२०८)
७ ,,	१०,०००)	१,८२६)
८ ,,	६००)	२,२४६)
९ ,,	२,२००)	२,४२६)
१० ,,	५,५००)	१,३७६)
११ ,,	६,८००)	१,७००=)॥
१३ ,,	२०,०००)	६,६३२॥≡)॥।
१४ ,,	६,५००)	१,४५५॥≡)॥।
१५ ,,	१०,०२८)	१,०११॥।)७
१६ ,,	११,४४६)	२,७६१।-)४
१७ ,,	७,६२२)	३,७३६)
१८ ,,	६,६८१)	५,५४५॥।=)
२० ,,	११,५१८)	६,३४६॥≡)
२१ ,,	७,३६५)	१,८५६॥≡)
२२ ,,	६,१६२)	३,४२१।=)६
२३ ,,	४,४५६)	१,०६०।)
२४ ,,	६,०००)	४,००६।=)७
२५ ,,	७,१२६)	१,१६२≡)५
२६ ,,	...	५,५००)
	१,५४,४०७)	८३,५२८॥।)२

मैं दावे के साथ कहता हूँ कि बारडोली के किसानों ने अपनी तरफ़ से कुछ उठा नहीं रक्खा। इतना भी उन्होंने उस हालत में किया है, जब कि उनकी ज़ब्त की हुई ज़मीनें लौटाई नहीं गई थीं, कुछ बेंच भी दी गई थीं, पुराने पटेल और तलाती, जिन्होंने इस्तीफ़ा दे दिया था, नियुक्त नहीं हुए थे, सब राजबन्दी नहीं छोड़े गए थे और कुछ के विरुद्ध मामला चल ही रहा था।

परन्तु यहाँ मैं इस विषय पर पटाक्षेप कर देना आवश्यक है। मैं कह सकता हूँ कि स्थानीय अधिकारियों के साथ मैत्री-भाव क़ायम करने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। नतीजा यह हो रहा है कि जो बातें आज से बहुत पहले ही गवर्नमेण्ट की तरफ़ से पूरी हो जानी चाहिए थीं, वे अब भी अपूर्ण बनी हुई हैं और यद्यपि लगान अदा करने के विषय में लोगों में कोई अनिच्छा नहीं है, फिर भी किसानों के सिर पर दमन और धमकी की नङ्गी तलवार लटकती रक्खी गई है। यह कार्रवाई खेड़ा से प्रारम्भ की गई है। मालूम होता है, अधिकारीगण इस बात को हृदय से नहीं अनुभव करते कि देश और गवर्नमेण्ट के बीच कम से कम अस्थायी सुलह हो गई है और कोशिशें की जा रही हैं कि वह सुलह स्थायी हो जाय।

स्थायी सुलह के मार्ग में कठिनाइयाँ बहुत हैं। लेकिन मैंने तो लॉर्ड इर्विन को वचन दे दिया है कि जहाँ तक मनुष्य से सम्भव है, मैं अपनी पूर्ण शक्ति से इस बात का प्रयत्न करूँगा कि यह सन्धि टूटने न पाए। इस समझौते को लोगों ने ‘सभ्य पुरुष के समझौते’ के नाम से भी पुकारा है। मैं जानता हूँ कि लॉर्ड इर्विन इस बात के लिए हृदय से उत्सुक थे कि उनके अधीनस्थ कर्मचारीगण समझौते की शर्तों को पूर्ण रूप से पालन करें, क्योंकि वे मुझसे वही बात कॉङ्ग्रेसवालों द्वारा कराने के लिए कई बार कह चुके थे।

मैंने जनता का जितना विश्वास आकर्षित कर लिया है, उतने के लिए ही यथेष्ट कष्ट का अनुभव कर चुका हूँ। परन्तु अब इस बात को मैं अधिक समय तक छिपा नहीं रख सकता कि लक्षण कुछ अच्छे नहीं दिखलाई पड़ते। सत्याग्रही के पास लोकमत और कष्ट-सहन के अतिरिक्त दूसरा कोई अस्त्र नहीं है। कोई मेरे इस लेख का अर्थ, जितना साधारणतया शब्दों से बोध होता है,

* आनों के बाद जो अङ्क दिए गए हैं, उन्हें पाठक अङ्गरेज़ी पाई समझें।

उससे अधिक न लगावें। मुझे आशा है और मैं इसके लिए ईश्वर से प्रार्थना करूँगा कि अगले सप्ताह में मैं आप लोगों को बतला सकूँ कि आकाश से ख़तरनाक बादल हट गए हैं।

गाँवों के प्रति हमारा कर्तव्य

पिछले साल के युद्ध से राष्ट्र के स्वाधीनता-संग्राम के लिए विदेशी वस्त्र-बहिष्कार की उपयोगिता भली-भाँति प्रमाणित हो गई है। विदेशी वस्त्र के आयात में कमी देखने से बहिष्कार-प्रोग्राम की सफलता का पता लगता है। हमें अपनी इस सफलता से सन्तुष्ट होने का अधिकार है, परन्तु सफलता के सन्तोष में हमें बहिष्कार-प्रोग्राम के मुख्य उद्देश्य को न भुला देना चाहिए। हमको याद रखना चाहिए कि हमारा राष्ट्र लाखों ग्रामीण घरों में निवास करता है।

बहिष्कार-प्रोग्राम का सञ्चालन इस रीति से होना चाहिए कि उसका अत्यधिक लाभ ग्रामीणों को मिले। ऐसा न होने से बहिष्कार-प्रोग्राम का मूल उद्देश्य नष्ट हो जायगा। ग्रामीणों को बहिष्कार से अत्यधिक लाभ पहुँचाने का यही उपाय है कि लोग खादी को सब वस्त्रों से ऊपर स्थान दें।

इसके लिए हमें अपनी रुचियों को बदल देने की आवश्यकता है। हमें खुरखुरी, मोटी खादी पहनने का स्वभाव डालना चाहिए। भारत में पैदा होने वाली रूई अधिकतर छोटे रेशे वाली और कातने में कम नम्बर का सूत पैदा करने वाली होती है। कातने वाले प्रायः अब तक मोटा ही सूत कातते रहे हैं। उन्होंने अब तक या तो अपनी निजी आवश्यकताओं के लिए काता है या आस-पास रहने वाले पड़ोसियों के लिए काता है। इसलिए तुरन्त अच्छे नम्बर का सूत कातने लगना उनके लिए अभी कठिन है। यह बात सारे उत्तर भारत के लिए लागू है। पञ्जाब, यू० पी०, बिहार और बङ्गाल में भी, जहाँ लाखों बेकार या अर्ध-बेकार चर्खे चलते हैं, मोटी ही खादी बुनी जाती है। दक्षिण में कुछ हद तक महीन और मध्यम दर्जे की खादी मिल जाती है, परन्तु वहाँ भी अधिकतर खादी कम नम्बर सूत की ही बिनी जाती है। अखिल भारतीय चर्खा-सङ्घ, जिसका कार्यक्षेत्र बहुत बढ़ गया है, इन प्रान्तों में खादी उत्पन्न करने की सुविधाओं का दशमांश भी प्रयोग में नहीं ला सका। मोटी खादी उत्पन्न करने का बहुत विस्तृत क्षेत्र है। यदि राष्ट्र मोटी खादी को अपना ले तो बहुत हद तक खादी विदेशी कपड़े के स्थान की पूर्ति करने लग जाय। इससे एक लाभ यह होगा कि कुल आमदनी देश की जन-संख्या में बँट जायगी, केवल कुछ पूँजीपतियों के पास न सिमट जायगी।

बहिष्कार की दृष्टि से जो कुछ खादी का महत्व है वह तो है ही, देश की वर्तमान आर्थिक परिस्थिति की दृष्टि से भी उसका कम महत्व नहीं है। रूई तथा खाद्य पदार्थों की बाज़ार-दर घट जाने से गाँवों की दशा बहुत बुरी हो गई है। पैदावार के मूल्य से जोतने-बोने आदि के व्यय भी पूरे नहीं पड़ते। इसलिए कम रूई बोने वाले किसान कुछ अधिक आमदनी कर लेने के विचार से अपने घरों में दो-एक चर्खे भी चलाने लगे हैं। इसी प्रकार दूसरी वस्तुओं के पैदा करने वाले किसानों ने भी कुछ सूत कात कर अपनी आय बढ़ाने का उपाय किया है। इसका परिणाम यह हुआ है कि देश के भिन्न-भिन्न भागों में आस-पास के गाँवों से झुण्ड के झुण्ड ग्रामीण सूत लेकर किसी निकटस्थ खादी-केन्द्र में बेचने के लिए एकत्र होते हैं। गत वर्ष के पहले भी सूत की उपज इतनी अधिक थी, कि खादी-केन्द्र उसका प्रबन्ध करने में असमर्थ थे। परन्तु अब पहले से भी कठिन

(शेष मैटर ३२वें पृष्ठ पर देखिए)

अजी सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

स्वर्गीय मौलाना मुहम्मदअली की तो अच्छी कट गई। वह जैसे भी थे ग़नीमत थे और अब तो यही कहना पड़ेगा कि—"ख़ुदा बख़्शे, बहुत सी ख़ूबिया थीं मरने वाले में।" मुसलमान लोग अब तक बड़े गर्व के साथ कहते हैं कि—"जनाब, मुहम्मदअली ने राउण्ड-टेबिल कॉन्फ़्रेन्स में धूम मचा दी और जो कहा, वह करके दिखा दिया।" अर्थात् बिना आज़ादी लिए ज़िन्दा हिन्दोस्तान नहीं लौटे। हालाँकि हिन्दुस्तान के डॉक्टरों ने, उनका स्वास्थ्य देख कर, उन्हें पहले ही इङ्गलैण्ड जाने से रोका था। अपने राम तो यह समझते हैं, कि डॉक्टरों ने जो कहा था वही हुआ। ख़ैर उनकी तो अच्छी कटी। अब बड़े भैया आक़िबत के बोरिए बटोरने के लिए रह गए। फ़ार्सी की एक कहावत है कि—"गर पिदर नतवानद पिसर तमाम कुनद !" अर्थात् जो कार्य पिता नहीं कर पाता उसे पुत्र पूरा करता है। यदि इसी कहावत को यों कहा जाय कि—"गर बिरादरे ख़ुर्द नतवानद, बिरादरे कलाँ तमाम कुनद।" अर्थात् जो छोटा भाई नहीं कर सका, उसे बड़ा भाई पूरा करेगा। इसमें सन्देह नहीं, कि बड़े भैया हैं बड़े मेधावी, तब तो अकेले सैकड़ों "गाँधी" का सामना करने की शक्ति रखते हैं। जिस प्रकार भीम में दस सहस्र हाथियों का बल था, उसी प्रकार बड़े भैया में सैकड़ों "गाँधी" की शक्ति विद्यमान है। कसर इतनी है कि वह शक्ति केवल दो अङ्गुल की ज़बान में ही क़ैद होकर रह गई—यदि कहीं शरीर भर में फैली होती तो फिर क्या था—उस समय मौलाना जिहाद के झण्डे का बाँस पकड़े घूमते होते। उनकी जीभ में भी जो शक्ति है वह "बापू" नाम का जाप करके उत्पन्न हुई है। शुक्र है, कि अनुष्ठान पूरा न हो पाया, यदि पूरा हो गया होता, तो शायद मौलाना अल्लाह मियाँ के सामने भी ख़म ठोंक कर खड़े हो जाते। फ़िलहाल तो वह योग-भ्रष्ट योगी की भाँति ठोकरें खाते घूम रहे हैं।

मौलाना को मुसलमानों के भविष्य की जितनी चिन्ता है उतनी कदाचित बिहिश्त में बैठे हुए इस्लाम के जन्मदाता हज़रत मुहम्मद साहब को भी न होगी। बेचारे करें क्या, उनका दिल ही ऐसा है। वह तो बहुत चाहते हैं कि बुढ़ापे में एकान्तवासी होकर "अल्लाह ! अल्लाह !" जपा करें, परन्तु कमबख़्त दिल नहीं मानता। जब वह देखते हैं कि मुसलमानों में कोई अच्छा लीडर नहीं है तो दिल में गुदगुदी पैदा होती है। सोचते हैं—हम में कोई ऐब तो है नहीं, न काने हैं, न अन्धे, न लूले, न लँगड़े। शरीर भी अपने सीमा प्रान्त के बाहर तक अपना क़दम जमाए हुए है। ऐसी दशा में क्यों न लीडरी के लिए ज़ोर लगाया जाय। लीडर होना भी ऐसा चाहिए कि जो मील भर की दूरी से दिखाई पड़ जाय और हज़ारों आदमियों के बीच में भी इस प्रकार चमके जैसे गेहूँ के ढेर में मटर का दाना। गाँधी जी जैसे 'लीडर' किस काम के, जो चार आदमियों के बीच में भी न दिखाई पड़ें। यही सब सोच-विचार कर बेचारे उठे। परन्तु अपने राम का यह विश्वास है कि जिस समय मौलाना उठे होंगे, उस समय किसी ने अवश्य छींका होगा। क्योंकि बेचारे अभी लीडर बन भी न पाए और लोगों ने लठियाना आरम्भ कर दिया।

मौलाना का ख़्याल है, कि गाँधी जी मुसलमानों का गला काटना चाहते हैं। परन्तु अपने राम की समझ में यह नहीं आता कि गाँधी जी जैसा दुर्बल-शरीर व्यक्ति मौलाना जैसे मोटे-ताज़े मुसलमान का गला कैसे काट सकता है। मौलाना का गला काटने में मौलाना के दर्ज़ी को कितना कष्ट उठाना पड़ता होगा—इसका अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है। मौलाना का कथन यह भी है कि "गाँधी जी" मुसलमानों को परस्पर लड़वाना चाहते हैं। सो अपने राम की समझ में इस कार्य को स्वयं मौलाना जिस ख़ूबी से कर सकते हैं और कर रहे हैं उस ख़ूबी से "गाँधी जी" कभी नहीं कर सकते, क्योंकि मौलाना तो इस कला के आचार्य हैं। उनकी लीडरी तो इसी कला पर निर्भर है। जो बात अधिक मुसलमानों ने कही, बस मौलाना ने ठीक उसके विरुद्ध कहना प्रारम्भ किया। इस पर उधर मुसलमानों में चख़-चख़ चली और इधर समाचार-पत्रों में मौलाना पर टीका-टिप्पणी होने लगी। बस मौलाना की लीडरी की देग चढ़ गई। लेकिन बहुत बड़ा भारी अफ़सोस यह है, कि सदा एक आँच की कसर रह जाती है—देग निगोड़ी भली-भाँति पकने नहीं पाती। इस मामले में मौलाना का भाग्य मौलाना का साथ ऐन मौक़े पर छोड़ देता है। जान पड़ता है, जितना हृष्ट-पुष्ट उनका शरीर है, उतना उनका भाग्य नहीं है। यदि कहीं ऐसा होता तो मौलाना हिन्दुस्तान को बग़ल में दाब कर मक्का-मदीना चले जाते।

मौलाना संयुक्त निर्वाचन के बहुत ही ख़िलाफ़ हैं। वह चाहते हैं कि मुसलमान अपना ढाई चावल का पुलाव अलग ही पकावें, जिससे कि मौलाना को भी खुरचन-वुरचन मिलती रहे। संयुक्त निर्वाचन में मौलाना को पुलाव की झलक भी देखने को न मिलेगी। पुलाव दूसरे लोग चख जायँगे और ख़ाली देग मौलाना को माँजनी पड़ेगी। इस काम से मौलाना बहुत ही घबराते हैं। इसके अतिरिक्त संयुक्त निर्वाचन में मौलाना को हिन्दुओं से मिल-जुल कर रहना पड़ेगा। यह काम ऐसा असाध्य है, कि मौलाना से कभी हो ही नहीं सकता। मौलाना जिस समय स्वर्ग से इस मर्त्यलोक में अवतरित होने के लिए चले थे, उस समय अल्लाह मियाँ को यह वचन देकर चले थे, कि हिन्दुओं से कभी मेल न करेंगे। अतएव वह यदि मेल कर लें, तो अल्लाह मियाँ नाराज़ होकर उन्हें बिहिश्त में घुसने न देंगे। हालाँकि मौलाना को बिहिश्त की कोई अधिक परवाह नहीं; परन्तु जब हूर, ग़िलमाँ, शराबे-तहूरा, चश्मे-कौसर और दरख़्ते-तूबा का ध्यान आ जाता है, तो छाती पर साँप लोट जाता है। इन चीज़ों के कारण बिहिश्त में जाना आवश्यक है। मर्त्यलोक में वह जितने कष्ट झेल रहे हैं वह केवल इस भरोसे पर कि बिहिश्त में उक्त सब पदार्थ उन्हें अवश्य मिलेंगे। अतएव हिन्दुओं से मेल करके अल्लाह मियाँ को नाराज़ कर देने का साहस मौलाना में नहीं है। सम्पादक जी, कदाचित आप यह शङ्का करें कि यदि ऐसी बात थी तो मौलाना ने इतने दिनों तक गाँधी जी के पैर क्यों दाबे। इसका कारण केवल यह था कि मौलाना गाँधी जी को मुसलमान बनाने का प्रयत्न कर रहे थे और अपनी समझ में उन्होंने गाँधी जी को मुसलमान बना ही लिया था—केवल बाक़ायदा कलमा पढ़ाने की देर थी; परन्तु एक दिन ख़्वाब में हज़रत मुहम्मद साहब आए और उन्होंने मौलाना को डाँट कर कहा—"क्यों बे, तू हिन्दू होता जा रहा है ?" तब मौलाना की आँखें खुलीं कि मैं चला था गाँधी जी को मुसलमान बनाने, सो उलटा मैं ही हिन्दू बनने लगा। बस उसी दिन से मौलाना ने क़सम खा ली कि गाँधी जी से सदा दूर ही रहेंगे और उनके प्रत्येक कार्य का विरोध करेंगे। सम्पादक जी, अपने राम को यह बात एक बहुत ही प्राइवेट आदमी से मालूम हुई है—केवल आपको बता रहा हूँ और किसी से न कह दीजिएगा। यह भी सुनने में आया, कि जिस समय ख़्वाब में मुहम्मद साहब ने मौलाना को डाँटा तो मौलाना फूट-फूट कर रोए और बोले—"या हज़रत, मैं तो गाँधी जी को कुफ़्र से निकाल कर ईमान की रोशनी में लाना चाहता था—मेरा इरादा हिन्दू बनने का हर्गिज़ नहीं था। और मैं अब आप से वादा करता हूँ कि जब तक ज़िन्दा रहूँगा—हमेशा गाँधी जी की मुख़ालफ़त करता रहूँगा—चाहे बात जा हो या बेजा। तब हज़रत ने फ़र्माया कि—"अच्छा जा, अगर तू ऐसा करेगा तो बिहिश्त में तुझे तेरे ही मानिन्द तन्दु-

---

केसर की क्यारी

(२५वें पृष्ठ का शेषांश)

आफ़ताब

वह नाला-दिल में ख़स[४९] के बराबर जगह न पाय
जिस नाला से शिगाफ़[५०] पड़े आफ़ताब में
—"ग़ालिब" देहलवी

साक़ी भी है शरीक जो दौरे-शराब में,
अब और चार चाँद लगे आफ़ताब में।
साक़ी का अक्से[५१]-रुख़ नहीं जामे-शराब में,
वह चाँद है जो डूब गया आफ़ताब में।
—"नूह" नारवी

ख़राब

आँख अपनी बन्द होते ही परदे से उठ गए,
देखा था हमने ख़ाक जहाने-ख़राब में।
महाकवि "दाग़" देहलवी

अपने को मैं शुमार करूँ किस हिसाब में,
है एक जहाँ-ख़राब, जहाने-ख़राब में।
अच्छा है देख जाओ कि वस्ले-अख़ीर है,
अब क्या धरा है आशिक़े ख़ाना ख़राब में।
—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

४९—तिनका, ५०—दरार ५१—परछाईं।

रुस्त हूर मिलेगी।" सो सम्पादक जी, मौलाना अपने डील-डौल की हूर प्राप्त करने के लिए यह सब पापड़ बेल रहे हैं। वरना जनाब, चाहे संयुक्त निर्वाचन हो चाहे पृथक, मौलाना के ठेंगे से। हाँ, पृथक निर्वाचन होने से इतना लाभ मौलाना को अवश्य हो सकता है कि इक्के वाले, ताँगे वाले, ठेले वाले, भिश्ती, कुँजड़े, क़साई, घोसी, धुनिए, जुलाहे—इन सबकी कृपा से मौलाना कौन्सिल की कुर्सी तक पहुँच ही जायँगे। संयुक्त निर्वाचन में कौन्सिल की चपरासगीरी भी शायद ही मिल सके, क्योंकि कौन्सिल के चपरासियों के लिए यह बहुत आवश्यक है कि वह फुर्तीले और दौड़-दौड़ कर काम करने वाले हों, ऐसे चपरासियों का वहाँ काम नहीं, जो पारा पिए हुए चूहे की भाँति हिल-डुल भी न सकें।

मौलाना में सब से बड़ा गुण एक यह है कि कभी किसी बात पर स्थिर नहीं रहते। इतने भारी शरीर में, इतना हल्का चित्त! यह बड़ी विचित्र बात है। इसका एक बहुत बड़ा कारण यह प्रतीत होता है कि मौलाना बेचारे स्वयम् तो कभी कुछ नहीं कहते। उनकी असली राय क्या है और वह क्या चाहते हैं—यह तो कदाचित अल्लाह मियाँ ही जानते हों। वह जो कुछ कहते हैं, केवल अपने श्रोताओं को ख़ुश करने के लिए। जिस बात में उनके श्रोता प्रसन्न होते हैं, वह वही कहते हैं। वह जानते हैं कि गँवार और बेपढ़ी मुसलमान जनता हिन्दुओं के विरुद्ध कहने से ही प्रसन्न होती है और यह समझती है कि जो हिन्दुओं का विरोधी है वही उनका सच्चा शुभचिन्तक है। इसीलिए बेचारे मौलाना को उनको ख़ुश करने के लिए हिन्दुओं के विरुद्ध अफ़ीम उगलनी पड़ती है। इस पर आप कदाचित यह शङ्का करें कि यदि ऐसी बात है तो बड़े भैया पढ़े-लिखे और समझदार मुसलमानों की जमाअत से क्यों भागते हैं? इसका कारण अपने राम की समझ में यह है कि पढ़े-लिखे लोग यह बात जानते हैं कि मौलाना अफ़ीम-विभाग के अफ़सर रह चुके हैं इस कारण यह जब उगलेंगे तब अफ़ीम ही उगलेंगे। अतएव वे इन्हें पतियाते ही नहीं। मौलाना भी समझते हैं कि—"इन मुँहफटों के बीच में हर तरह से मुश्किल है। यदि इनके मन की कहूँगा तो ये लोग मेरी नेकनियती पर विश्वास नहीं करेंगे और जो इनके विरुद्ध कहूँगा तो हत्थे पर ही टोक देंगे। इनके सामने ज़बान खोलना अपनी आबरू गँवाना है। इसलिए इनसे दूर रहना ही अच्छा है। कुँजड़े-क़साई भले, जो चुपचाप हमारी बात सुन कर ख़ुश हो जाते हैं।"

बड़े भैया मुसलमानों से कहते हैं कि तुम्हें हिन्दुओं से लड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए और सरकार से भी लड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए। बेशक, बिल्कुल तैयार हैं, केवल आपके हुक्म भर की देर रहना चाहिए। क्योंकि जल्दी में काम ख़राब होता है। जिस प्रकार आप तमाम ज़माने भर से लड़ने को तैयार हैं, उसी प्रकार आपके अनुयायी भी लड़ने को तैयार हैं। अल्लाह मियाँ दो अक्ल की ज़बान सलामत रक्खें और उसे तेज़ रखने के लिए चटपट सालन सप्लाई करते रहें—फिर देखिए कैसी घमासान लड़ाई होती है कि शॉर्ट-हैण्ड जानने वाले रिपोर्टर भी मुँह बाए खड़े देखते रहें। अपने राम को इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं कि यदि मौलाना चाहें तो हिन्दुओं को सुबह-शाम कोस-कोस कर नेस्तोनाबूद कर दें, क्योंकि मौलाना और उनके समस्त अनुयायी अल्लाह मियाँ के बहुत ही प्यारे बन्दे हैं और हिन्दू सब काफ़िर और मुरतिद हैं। रही ब्रिटिश सरकार, सो उसे हराना कौन बड़ी बात है। जहाँ मौलाना ने यह एलान किया कि उन्हें स्वराज्य-वराज्य की कोई आवश्यकता नहीं—बस ब्रिटिश सरकार नोकदुम भाग खड़ी होगी। कसर केवल इतनी ही है कि कुछ नासमझ और बेवक़ूफ़ मुसलमान मौलाना का विरोध कर रहे हैं, और मौलाना जैसे योग्य, बुद्धिमान और राजनीति का क़ीमा बना कर खा जाने वाले व्यक्ति का कहना नहीं मानते। सब से बड़ा रोना तो यही है कि मुसलमानों में एका नहीं, सङ्गठन नहीं। चौबीस करोड़ हिन्दुओं ने केवल महात्मा जी को अगुआ बना दिया और उनको यह अधिकार दे दिया कि वह स्याह करें या सफ़ेद—सब ठीक है और सात करोड़ मुसलमान मौलाना को अगुआकार नहीं बना रहे हैं। इसी से तो कभी-कभी यह इच्छा होती है कि फ़क़ीर बन कर छोटे भैया की क़ब्र पर जा बैठें।

सम्पादक जी, अपने राम को अफ़ीमचियों के बहुत से क़िस्से मालूम हैं, इस कारण अपने राम मौलाना की बातों को अधिक महत्व नहीं देना चाहते। मौलाना बहुत दिनों तक अफ़ीम-विभाग के कर्मचारी रहे हैं, अतएव उनके दिमाग़ में अफ़ीम का असर कहाँ तक न पहुँचा होगा। और मैं आपको भी यही सलाह दूँगा कि आप भी उनकी बातों को अफ़ीमचियों की गप्प ही समझें।

भवदीय,
—विजयानन्द (दुबे जी)

* * *

गुजरात का किसान

(२९वें पृष्ठ का शेषांश)

परिस्थिति उत्पन्न हो गई है। मूल-धन बहुत नियमित होने के कारण खादी-केन्द्र सबका सब सूत नहीं ख़रीद पाते, बहुत से कातने वालों को योंही लौट जाना पड़ता है। ऐसी हालत में यदि खादी की माँग बढ़ जाय और तदनुसार खादी की उत्पत्ति भी बढ़ जाय, तो बहुत से सूत कातने वालों को सहायता मिल सकती है। खादी की माँग बढ़ जाने से लोग उसमें मूल-धन लगाने के लिए भी आकर्षित हो सकते हैं। इस प्रकार बहिष्कार की दृष्टि से तथा देश की वर्तमान आर्थिक कठिनाई की दृष्टि से भी खादी को अपनाना देश का कर्तव्य है।

जो लोग खादी की धोती या साड़ी, भारीपन के कारण पहनने में कठिन अनुभव करते हैं, वे भी अपनी दूसरी आवश्यकताओं के लिए, जैसे तौलिया, क़मीज़, कोट, चादर, दरी और ऐसी ही अनेक दूसरी वस्तुओं के लिए खादी का प्रयोग कर सकते हैं। इस उपाय से आजकल उत्पन्न होने वाले सूत से कहीं अधिक सूत की खपत सम्भव हो जायगी। इन बातों को समझने के लिए केवल कल्पना-शक्ति के उचित अभ्यास की आवश्यकता है। देश के जल-वायु तथा ग्रामीणों के साधनों के अनुरूप पोशाक बना लेने पर बहुत सी वस्तुओं की आवश्यकता दूर हो जायगी। धोती और साड़ी की लम्बाई में कमी की जा सकेगी और सर पर पगड़ी या साफ़ा की जगह टोपी रक्खी जा सकेगी। अधिक आराम और सफ़ाई की सुविधा भी हो जायगी। वस्त्रों के व्यय में तो कमी हो ही जायगी।

* * *

इस्लाम और स्वदेश-प्रेम

दिल्ली के 'निज़ामुल-मशायख़' नामक मासिक पत्र में उसके सम्पादक मौ० वाहिदी साहब ने मुसलमानों के स्वदेश-प्रेम के सम्बन्ध में हाल ही में एक महत्वपूर्ण लेख लिखा है, उसकी कुछ पंक्तियों का अनुवाद यहाँ दिया जाता है। आशा है, इससे मुसलमान ही नहीं, वरन् हिन्दू भी लाभ उठाएँगे।

—स० 'भविष्य']

निस्सन्देह इस्लाम किसी देश, प्रान्त या नगर में सीमित नहीं है। जिस तरह आदमी 'हिन्दू' कह देने से हिन्दुस्तान का रहने वाला और 'अङ्गरेज़' कहने से इङ्गलिस्तान का रहने वाला समझा जाता है उसी तरह केवल 'मुसलमान' कह देने से किसी देश विशेष के अधिवासी का बोध नहीं होता। मुसलमान के लिए यह कहना पड़ेगा कि वह भारतीय मुसलमान है, या चीन, या अफ़्रीकी, तब उसके वतन का पता लगेगा। इस्लाम सार्वभौमिक राष्ट्रीयता का पता देता है, यानी सारे संसार से प्रेम करना सिखाता है। इस्लाम के पैग़म्बर का दूसरा नाम 'रहमतुल-आलमीन' अर्थात् विश्व-हितैषी है।

परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि पैग़म्बर साहब संसार के हितैषी थे और अपने देश के अहितैषी। वास्तव में अपने देश पर अनुग्रह की वर्षा करके उन्होंने स्वदेश-प्रेम को धर्म का एक अङ्ग बना दिया। इस्लाम धर्म में जिन चीज़ों का समावेश है, या जिन वस्तुओं की समष्टि का नाम इस्लाम धर्म है, उनमें एक स्वदेश-प्रेम भी है। शायद ही किसी धर्म में स्वदेश-प्रेम के सम्बन्ध में ऐसे ज़ोरदार और स्पष्ट शब्द कहे गए होंगे और किसी पैग़म्बर ने अपने देश की इतनी सेवा न की होगी, जितनी हज़रत मुहम्मद ने की थी। मुहम्मद साहब अगर ईश्वर के प्रेमी न भी होते—इनमें ईश्वर-प्रेम और पैग़म्बरी के ख़याल को अलग करके भी देखिए, तब भी वे अपने वतन के शान्ति विधायक और स्वदेश-प्रेमी की हैसियत से संसार के इतिहास में अद्वितीय हैं। तीस वर्षों की चेष्टा से आपने जङ्गली, गँवार और शासन-शक्ति से अनभिज्ञ अरब को ऐसा बना दिया कि सारे संसार पर उसका सिक्का बैठ गया। अरब वाले केवल स्वयं ही सभ्य और शिक्षित नहीं हो गए, बल्कि सारे संसार को सभ्यता और विद्या की शिक्षा देने के लिए निकल पड़े। उन्होंने केवल अपने को ही विद्या से विभूषित नहीं किया, बल्कि सारे संसार को पाठ पढ़ाया। अरब ने केवल अपने को ही स्वतन्त्र नहीं किया, वरन् संसार के एक बड़े भाग पर शासन भी किया। यह सब कुछ हज़रत मुहम्मद के देश-प्रेम का परिणाम था। क्या आदम से लेकर आज तक कोई ऐसा मनुष्य पैदा हुआ है, जिसने अपने देश को इस प्रकार उन्नति के शिखर पर पहुँचाया हो? परन्तु दोहाई है इन्हीं हज़रत मुहम्मद साहब की कि जिनकी सन्तान आज कम से कम हिन्दुस्तान में तो स्वदेश-प्रेम को पाप समझती है।

मैं नहीं जानता कि जो धर्म (दीन) संसार भर के लिए तो अनुग्रह कहलाए, जो संसार भर से प्रेम करना सिखाए, "हुब्बुल वतन मन-इल-ईमान" अर्थात् 'स्वदेश-प्रेम-धर्म है' की शिक्षा प्रदान करे, उसके अनुयायी अपने देश की सेवा से क्यों विमुख हैं? क्या अब मुसलमानों में धर्म का कोई अंश बाक़ी नहीं रह गया है? क्या हिन्दुस्तान के मुसलमान संसार भर से वैसा ही प्रेम करते हैं, जैसा उनके पैग़म्बर चाहते थे?

पैग़म्बर साहब ने अगर दुनिया से ऐसी ही मुहब्बत की होती जैसी कि आज हिन्दुस्तान में मुसलमान कर रहे हैं, तो दुनिया में वह एक आदमी को भी अपने दीन में सम्मिलित नहीं कर सकते थे और हिन्दुस्तान के मुसलमान जैसी आज दुनिया से मुहब्बत कर रहे हैं, वैसी ही मुहब्बत अगर इस्लामी मुहब्बत कहलाएगी तो एक दिन हिन्दुस्तान में एक भी मुसलमान नहीं रहेगा। कहीं यह भी देखा है कि अपने घर से तो प्रेम न हो और दूसरों के घर से प्रेम हो? अपने मुहल्ले, शहर, प्रान्त और देश से तो प्रेम न हो और दूसरों के मुहल्ले, शहर, प्रान्त और देश से प्रेम हो!

असल बात तो यह है कि अब हमें अपने स्वार्थ के सिवा और किसी से कोई प्रेम नहीं है। हिन्दुस्तान के मुसलमानों में जो जितना ही बड़ा है, वह उतना ही अपने स्वार्थ में निमग्न है। झूठा है वह जो स्वदेश-प्रेमी नहीं है और पैन इस्लामिज़्म का स्वप्न सुनाता है। उसे केवल अपने स्वार्थ से प्रेम है और वह प्रेम भी ऐसा है, जिसे स्वार्थपरता कहते हैं, जिससे वह शायद संसार में तो कुछ सुख भोग ले, परन्तु अन्त में उसका मुँह काला होगा। हमारे बड़े आदमियों को घर, मुहल्ला, शहर और देश क्या, अपने बच्चों से भी प्रेम नहीं होता। मैं ग़लत कहता हूँ तो आप बतलाइए कि हमारे लीडरों में कितनों की औलाद ऐसी लायक़ निकली है, जैसी लायक़ साधारण लोगों की औलाद है? संसार भर से प्रेम करने वाले मुसलमान-लीडरों में किसका बेटा स्वदेश-भक्त मोतीलाल के बेटे जवाहरलाल की तरह है? ख़ैर, जवाहर जैसा बेटा तो किसी देश-प्रेमी हिन्दू का भी नहीं है। किसी मुसलमान लीडर का बेटा केवल शिक्षित ही दिखा दीजिए। केवल धार्मिक शिक्षा प्राप्त सही। अथवा केवल सांसारिक विद्याओं का पण्डित सही। कोई मौलवी ही बतलाइए, कोई ग्रेजुएट दिखलाइए, सोचिए, ढूँढ़िए।

विश्वास रखिए, एक नहीं मिलेगा। हमारे नेताओं को अपनी स्वार्थपरता से इतनी फ़ुर्सत नहीं कि वे अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा की ओर ध्यान दें। उन्हें सारे संसार से प्रेम करने और सार्वभौमिक राष्ट्रीयता की बुनियाद डालने का इतना ध्यान रहता है कि अपने देश से लेकर अपने घर तक से ग़ाफ़िल हो जाते हैं।

थोड़े दिनों से केवल पञ्जाब के मुसलमानों में पञ्जाबियत का भाव पैदा हुआ है। और इनमें जीवन के चिन्ह पाए जाने लगे हैं, उनका कारण यही उनकी प्रान्तिकता है। हिन्दुओं में यह भाव बहुत दिनों से था। हिन्दू पहले बङ्गाली होता है, फिर हिन्दुस्तानी। पहले मद्रासी या पञ्जाबी आदि होता है तब हिन्दुस्तानी।

देख लीजिए, जो पहले बङ्गाली थे, वही अन्त में भारतीय प्रमाणित हुए। इसी तरह अगर मुसलमान 'रहमतुल-हिन्द' (भारत-प्रेमी) बनेंगे तो 'रहमतुल-आलम' (विश्व-प्रेमी) भी साबित होंगे। नहीं तो उनकी 'रहमत' के 'र' अक्षर पर बिन्दु लग चुका है और वह रहमत के स्थान पर 'ज़हमत' (कष्ट) बन गया है। अगर यह इसी तरह क़ायम रह गया तो सारे संसार में फैल जाएगा और फैल कर ऐसा मिटेगा, कि फिर क़यामत (प्रलय) से थोड़े ही दिन पहले तक हमारा पता लगे तो लगे, अन्यथा फिर नहीं लगेगा।

* * *

साहित्य का सपूत

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—२; दृश्य—३

पार्क

(रमाकान्त का एक अख़बार पढ़ते हुए आना)

रमाकान्त—(पढ़ता-पढ़ता एकाएक नफ़रत से अख़बार दूर फेंक देता है) राम ! राम ! ऐसा पक्षपात ?

(जदुनाथ का आना)

जदुनाथ—ओहो ! तुम पहले ही से यहाँ पहुँच गए। मगर तुम तो—(सूरत ग़ौर से देख कर) क्यों, क्या हुआ क्या ?

रमाकान्त—आज के अख़बार में कल के तमाशे का हाल नहीं पढ़ा, जो यहाँ की शिक्षित मण्डली ने खेला था ?

जदुनाथ—नहीं तो। क्यों ?

रमाकान्त—तमाशा तो हमने और तुमने दोनों ही ने देखा था। जैसा था वह हम-तुम ख़ूब जानते हैं।

जदुनाथ—हाँ-हाँ। मगर जब नाटक ही ऊटपटाँग हो तो खेलने वालों का क्या दोष ? जब लोग लेखन-कला का गणेशायनमः नाटक हो लिख कर करना चाहते हैं, तब नाटक-कला की दुर्दशा न होगी तो होगी क्या ? यह नहीं ख़्याल करते कि केवल बातों ही में चरित्र-चित्रण, भाव-प्रदर्शन, घटना-विकास करना और उनमें दृश्यों की ऐसी तरतीब बाँधना कि वह घटना-चक्र और साथ ही रङ्गमञ्च पर ठीक बैठती जाएँ, इनके अलावे बातें भी इतनी स्वाभाविक हों कि उनके नाट्य में कहीं भी अड़चन न पड़े, खेल नहीं है। जब लेखनी लेखन-कला पर पूरा अधिकार जमा ले और लिखने वाला स्टेज-ज्ञान और नाट्य-मर्म से भली-भाँति परिचित हो जाए, तब कहीं उसे नाटक लिखने की हिम्मत करनी चाहिए। वरना वह नाटक ही क्या, जो रङ्गमञ्च पर ठीक न उतरे ? हालाँ कि कुछ लोगों ने इस ऐब को छिपाने के लिए ही एक नया नाम 'पाठ्य-नाटक' निकाला है। उनका सर ! नाटक भी भला कहीं ख़ाली पढ़ने के लिए होता है ? ऐसा होता तो फिर गल्प और उपन्यास की क्या ज़रूरत थी ?

रमाकान्त—वही तो। एक तो नाटक दो कौड़ी का था, उस पर वह खेलने वालों की काट-छाँट से और भी चौपट हो गया था। मगर—(अख़बार उठाता है।)

जदुनाथ—वह तो हुआ ही चाहे, क्योंकि नाटक में कोई भी अंश बेकार नहीं होता। जिसे हम बेकार और भद्दा समझते हैं, वह अक्सर दृश्यों की तरतीब और घटनाओं का क्रम ठीक बैठालने की ख़ातिर या दर्शकों को ज़रा सा उकता कर यह बोध कराने के लिए होता है कि इसके पहिले की घटना घटित हुए बहुत या कुछ न कुछ समय हो गया।

रमाकान्त—(अख़बार की तरफ़ इशारा करके) मगर यह अक़्ल का दुश्मन इन बातों को समझे तब तो, जिसने इस नाटक की तारीफ़ों से कॉलम के कॉलम भर दिए हैं। और प्रहसन जो उसके साथ खेला गया था और जिसने सच पूछो तो तमाशे में जान डाल दी थी, उसी की बदौलत दर्शक अन्त तक जुटे रहे, उसके बारे में इसने कुछ लिखा ही नहीं। गोया इस अन्धे को वह दिखाई ही नहीं पड़ा था। शायद इस बेवक़ूफ़ की समझ में गम्भीर अंश के लेखक ने हाथ से लिखा था और प्रहसन के लिखने वाले ने पैर से। यह देखो तो।

जदुनाथ—अजी मारो गोली। इन निपोड़सङ्खों को मैं ख़ूब जानता हूँ। इनका साहित्य-सम्मेलनों की स्पीचों तक में यही हाल है। यह लोग कला की ख़ूबियाँ क्या जानें ? पेड़ के पत्ते देखते हैं, जड़ नहीं। बस विषय पर मुग्ध होना जानते हैं, क्योंकि कला परखने की इतनी अक़्ल कहाँ ? तब यह कैसे समझें कि साहित्य में असली चीज़ कला है, जो ख़राब से ख़राब विषय को भी उत्तम कर दिखाती है और जिसके बिना उत्तम से उत्तम विषय भी दो कौड़ी का है। गम्भीर अंश का विषय धार्मिक और बड़े-बड़े शब्दों में था। इसलिए इसने आँख मूँदे तारीफ़ कर दी होगी। यह न देखा कि इसमें कला का क्या हाल है ?

रमाकान्त—क्या बताऊँ, हमारे हास्य लेखक-गण भी बड़े दब्बू मालूम होते हैं, जो इनकी धाँधली चुपचाप सहते जाते हैं और इनकी ख़बर नहीं लेते।

जदुनाथ—क्या ज़रूरत ? यह लोग हैं कौन, तीन में या तेरह में ?

रमाकान्त—कम से कम बनते तो हैं बड़े ज्ञानी, भाषा-प्रचारिणी-सभा के मेम्बर।

जदुनाथ—जाव भी। जहाँ ऐसे लोग मेम्बर होंगे वहाँ भाषा-प्रचारिणी काहे को, बल्कि भाषा-हत्याकारिणी सभा बन जाएगी। हमारे हास्य-लेखकों का इन पर लेखनी उठाना अपनी लेखनी का अपमान करना है। उनकी निगाहों में यह लोग इतनी भी इज़्ज़त के क़ाबिल नहीं हैं। वह ख़ूब जानते हैं कि साहित्य की क़दर और भाषा की तरक़्क़ी जनता के हाथ में है। तभी तो हास्य-लेखकों में कोई इनकी ओर फूटी आँख से भी नहीं देखता।

(संसारीनाथ का कुछ ख़त लिए हुए आना)

संसारी—भई साहित्यानन्द पर तुम्हारा चकमा तो असर करने लगा। यह देखो, उसका आज का ख़त, जिसे उसने तिलोत्तमा के नाम से भेजा है और जिसे मैं अभी-अभी डाकख़ाने से लेकर आ रहा हूँ।

(ख़त जदुनाथ को देता है)

रमाकान्त—पढ़ो-पढ़ो। देखें इस दफ़े उसने क्या लिखा है।

जदुनाथ—(ख़त पर सरसरी नज़र डालता हुआ) लिखा क्या है ? रङ्ग जमता जा रहा है। चित्र की माँग है। दर्शनों की लालसा है। (ख़त पर नज़र डाले हुए) ओहो ! फ़ोटो के लिए तो इस दफ़े हाथ जोड़ कर प्रार्थना है। (सामने से पत्र हटा कर) अभी क्या, जब तिलोत्तमा के पीछे इसे पागल बना दूँ, तब मेरा नाम जदुनाथ है। उसके बाद तो उसे उँगलियों पर नचाना बाएँ हाथ का खेल है। फिर तो जो चाहूँगा, उससे करा लूँगा। मेरी छेड़ख़ानियों ने कहाँ तक काम किया है, इसको जाँचने के लिए मैंने तिलोत्तमा की तरफ़ से उसे कल लिख भेजा है कि मैं अभी कुमारी हूँ और पिता जी पुराने ख़्याल के हैं। इसलिए न मैं पर्दे के बाहर निकल सकती हूँ और न किसी फ़ोटोग्राफ़र के सामने बैठ कर फ़ोटो खिंचवा सकती हूँ। चित्र कहाँ से भेजूँ। यदि आप कृपा कर कल साढ़े पाँच बजे शाम को मत्थे पर हरा टीका लगा कर पार्क में टहलने के लिए आवें तो मैं अपने कोठे पर से दूरबीन द्वारा आपका दर्शन पाकर अपना जन्म सफल कर लूँगी।

रमाकान्त—ओहो ! यह चाल तो अच्छी चले उस्ताद, और यह ख़त उसे आज ही मिला होगा।

जदुनाथ—इसीलिए तो तुम लोगों को इस वक़्त यहाँ मिलने को कहा था। मेरा ख़्याल है कि यह ख़त अपना असर ज़रूर दिखाएगा और वह दौड़ता हुआ आएगा। मैंने टेसुआ से भी कह दिया है कि जब वह आने लगे तो मुझे ख़बर कर दे। ख़ैर, अभी बहुत वक़्त बाक़ी है। हाँ संसारीनाथ, जब तक तुम भी अपने मत्थे पर एक हरा टीका लगाओ।

(अपनी जेब से रङ्ग की डिब्बी निकालता है)

संसारी—(घबड़ा कर) क्यों ?

जदुनाथ—ताकि प्रेम का नशा डाह की आँच से उस पर और जल्दी चढ़ जाए। तुम्हारी पेशानी पर अपना ही ऐसा टीका देख कर वह यह समझे कि तुम भी तिलोत्तमा के लिए यहाँ आए हो।

रमाकान्त—बहुत ठीक ! यह ख़ूब सोचा। प्रेम में दिल बड़ा शक्की हो जाता है। वह ज़रूर यही समझेगा।

संसारी—मगर वह मुझसे कहीं और न बिगड़ जाएँ ?

जदुनाथ—और अभी क्या वह कम बिगड़ा हुआ है ? अजब आदमी हो, जब देखो तब तुम्हें लेहाज़ ही मारे डालता है। अगर तुम चपला को पाना चाहते हो, तो जैसा कहता हूँ वैसा करो, नहीं जाने दो। हमारा क्या ?

संसारी—नहीं भाई, ख़फ़ा न हो। हाथ जोड़ता हूँ। चपला की ख़ातिर मैं सब कुछ झेलने को तैयार हूँ।

जदुनाथ—(संसारीनाथ के हरा टीका लगाता हुआ) अब तुम आए रास्ते पर। बस अब इतना करो कि जब साहित्यानन्द आवे तो उसके सामने ख़ूब अकड़-अकड़ कर इस तरह घूमना कि मानो तुम उसे पहचानते ही नहीं। समझे ! जब तक हम लोग तिलोत्तमा के बाप और नौकर बन कर आएँगे और टीका पहचान कर तुमसे मिलेंगे, फिर देखना तमाशा। वह लो, टेसुआ भी आ गया। क्यों रे, क्या हाल है ? आ रहे हैं ?

टेसू—आने की तैयारी कर रहे हैं। ख़ूब टीका-ऊका लगाया है। (संसारीनाथ की तरफ़ देख कर) बस-बस ऐसा ही।

रमाकान्त—क्या अभी घर से चले नहीं ?

टेसू—नहीं, अभी जो आज दिन भर में कविता लिखी है। उसे रट रहे हैं। कहते हैं कि उसे पार्क में चल कर ख़ूब चिल्ला-चिल्ला कर पढ़ेंगे, ताकि अड़ोस-पड़ोस के सभी मुहल्ले वाले सुन सकें। अच्छा अब जाता हूँ।

(जाता है)

जदुनाथ—ओहो ! यह ज़ोर ?

रमाकान्त—उसकी कविता सुनने क़ाबिल होगी।

जदुनाथ—यह अच्छी कही; भला वह कविता क्या कहेगा अपना सर ! कविता कहने के लिए दिल-दिमाग़ और ज़बान चाहिए। वह कविता नहीं, कविता की टाँग अलबत्ता तोड़ सकता है।

रमाकान्त—वही क्यों ? कविता की टाँग आजकल बहुत से लोग तोड़ते हैं भाई।

संसारी—मगर यह धाँधली तभी तक है, जब तक कविता की भाषा बोल-चाल की भाषा से भिन्न रक्खी जाती है।

रमाकान्त—अब यह भी बोले।

जदुनाथ—साहित्य के विषय पर इनकी ज़बान ख़्वाह-मख़्वाही खुलेगी। आख़िर लेखनी का असर कहाँ जा सकता है ? ख़ैर, ठीक कहते हैं। तभी तो कविता में न

कोई शब्दों के चुनाव और न उनके इस्तेमाल पर ध्यान देता है—जो शब्द जहाँ चाहते हैं, झट खींच-खाँच या सिकोड़-फिकोड़ कर ठूँस देते हैं। वाक्यों तक को भी तोड़-मोड़ कर बुरी तरह उलट-पलट देने से बाज़ नहीं आते। जुमले का सर यहाँ है तो धड़ का साढ़े तीन कोस तक पता नहीं; और धड़ है भी तो पेट पीठ के ऊपर और पीठ टाँग के नीचे है। इसीसे न उसमें कुछ मज़ा होता है, न ख़ूबी होती है, और न असर ही होता है। बल्कि सुनने तक में बुरी और भद्दी मालूम होती है। यह कविता क्या ख़ाक दिल पर लग सकती है, जिसके मानी घण्टों सर मारने पर खुलें।

संसारी—ऐसी हाथापाई भला कहीं बोल-चाल की भाषा में चल सकती है? जहाँ ज़रा शब्दों और वाक्यों का बेजा इस्तेमाल हुआ, तहाँ वे कानों में खटक कर फ़ौरन कहने वाले की ज़बान पकड़ लेंगे।

रमाकान्त—क्यों नहीं! मगर मुश्किल तो यह है कि हमारी वर्णमाला में ए ऐ, ओ औ का कोई ह्रस्व अंश है ही नहीं। हालाँकि बोलने में ये बहुत सी जगहों पर ह्रस्व ही बोले जाते हैं। जैसे "तो क्या हुआ" में "तो"। "कहने को बात रह गई" में "को"। अब यही फ़िक़रे अगर हम पद में लावें तो हिन्दी-पिङ्गल के क़ायदे पर "तो" और "को" को डबल मात्रा में रख कर छन्द बैठालना पड़ेगा। क्योंकि ह्रस्व मात्रा इनकी है नहीं। तब बोल-चाल का मज़ा या उसके ऐसा बहाव इसमें कैसे आ सकता है?

जदुनाथ—यह न कहो। कहने वाला अपनी ज़बान की सफ़ाई लाख ढङ्ग से दिखला सकता है। फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि हमारी वर्णमाला का यह ऐब हमारे इस घमण्ड को, कि नागरी-लिपि में हर तरह के उच्चारण के शब्द सही-सही लिख सकते हैं, तोड़ रहा है। क्योंकि हमारे पास ह्रस्व एकार न होने के कारण Set, Pet, Men, Ten ठीक-ठीक लिख नहीं सकते। इसलिए इन चारों स्वरों का ह्रस्व अंश रखना बहुत ज़रूरी है। इनके बदले में ऋ ॠ ऌ ॡ को स्वरों की श्रेणी से अगर अलग कर दें तो कमी-बेशी दोनों बराबर हो जाए और नुक़सान भी कुछ न हो। क्योंकि अव्वल तो उच्चारण के लेहाज़ से ऋ-ऌ को स्वरों में रखना ही नहीं चाहिए और दूसरे इनका काम रेफ़ और ईकार से बख़ूबी चल सकता है।

रमाकान्त—मगर ह्रस्व ए, ऐ, ओ, औ, को लिखिगा किस तरह, यह तो बताइए।

जदुनाथ—"म" की तरह "ए" का मत्था खोल देने से ह्रस्व "ए" हो सकता है। और जहाँ पाइयों का मामला है, वहाँ ऊपर की पाइयों को पट से चत कर देने से काम बन सकता है। इस तरह से हमारी वर्णमाला का यह बेढब ऐब भी दूर होगा और पिङ्गल के नियमों को बदलने की कोई ज़रूरत भी न पड़ेगी।

साहित्यानन्द—(नेपथ्य में) अबे टेसुआ! अब तो पार्क—उड्डँक—उपवन आ गया। अब मैं अपने रबड़-छन्द का पढ़ना शुरू कर दूँ?

जदुनाथ—(चौंक कर) अरे! आ गया। आओ भाई रमाकान्त, चलो झटपट भेष बदल कर आवें। और तुम संसारीनाथ यहीं रह कर जैसा कहा है वैसा करना।

रमाकान्त—ज़रा उसकी कविता सुन लूँ तब।

जदुनाथ—नहीं जी, आओ चलो!

(जदुनाथ रमाकान्त को पकड़ ले जाता है और दूसरी तरफ़ से साहित्यानन्द और टेसू का आना)

साहित्यानन्द—(संसारीनाथ को बिना देखे हुए) क्यों बे, तू उत्तर क्यों नहीं देता?

टेसू—मैंने कुछ सुना ही नहीं, जवाब क्या दूँ?

साहित्यानन्द—क्यों नहीं सुना?

टेसू—(कान खुजाता हुआ) आपने रास्ते में एक दफ़े जो अपनी कविता पढ़ी तो उसका एक बड़ा सा शब्द मेरे इस कान में अटक गया है, जो निकाले से नहीं निकलता।

साहित्यानन्द—हाँ, अच्छा उस कान—उड्डँक—कर्ण से सुन।

टेसू—(घूम कर) कहिए।

साहित्यानन्द—उस पेड़ के पास चला जा और वहाँ से अवलोक कि मेरा यह टीका दिखाई पड़ता है या नहीं।

टेसू—(दूर जाकर) यहाँ से तो नहीं दिखाई पड़ता।

साहित्यानन्द—अच्छा टीके को तनिक और चटक और बड़ा—उड्डँक—महान कर दूँ। (जेब से रङ्ग की डिब्बी निकाल कर टीका बड़ा करता है।) अब तो देख।

टेसू—हाँ, अब कुछ-कुछ दिखाई पड़ने लगा।

साहित्यानन्द—अच्छा वहीं रह। अब मैं अपनी कविता पाठ करता हूँ। देख सुनाई पड़ती है या नहीं। रबड़ छन्द है रबड़। इसके पद रबड़ की भाँति जितना चाहो, उतना बढ़ जाते हैं। सुन—

(जेब से काग़ज़ निकाल कर चिल्ला-चिल्ला कर पढ़ता है)

प्रेम-सुन्दरी!
प्रेम-सुमन की माला पहने स्नेह-सुरभि के माते अलि चञ्चल गुञ्जार रहे।
मत्त तरङ्गिणि!
वृत्तहीन—दिक्काल—विक्रीड़ित
तरलित तुङ्ग—तमाल—विचुम्बित
नभवन—शिखर—विहारिणि
कब आओगी?

संसारीनाथ—(अलग) ओहो! यह कविता सुन कर तो मेरी भी अब सामने जाने की हिम्मत पड़ गई। (टहलता है।)

टेसू—(धत्-धत् करता हुआ साहित्यानन्द पर फट पड़ता है।) धत्! धत्! धत्! अरे! आप हैं? मैं समझा कुत्ता भूँक रहा। क्योंकि कुछ समझ तो मिला नहीं, ख़ाली भों-भों की सी आवाज़ मालूम हो रही थी।

(क्रमशः)
(Copyright)

* * *

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

किसी के 'प्रान में कान्ह जुबान में नाहीं' था, मगर यहाँ आजकल लोगों के प्रान और ज़बान दोनों में कानपुर की चर्चा है। अख़बार वाले तो, ख़ुदा झूठ न बुलवाए, कानपुर की बदौलत मालामाल हो गए। एडीटरों की पौ-बारह है। मज़ामीन मानो हाथ बाँधे खड़े हैं। मैटर घटता है? कुछ परवाह नहीं, जाँच कमिटी की प्रोसीडिङ्ग कहीं छपी होगी, किसी गवाह के बयान की क़ान-पूँछ तराश कर भर दीजिए।

❀

और कुछ न बन पड़े तो सरकारी जाँच कमीशन के हिन्दू मेम्बर मि० दुबे की नीरव भाषा की ही तारीफ़ कर दीजिए। 'यथा नामो तथा गुणाः!' आरम्भ से ही दुबे तो ऐसे दुबे कि सगबगाने का नाम ही नहीं लिया। अच्छा 'साची गोपाल' चुन कर भेज दिया था। माशा अल्लाह, अपने राम तो सरकार के इस निर्वाचन-चतुरता पर मुग्ध हैं।

❀

उधर अगर किसी हिन्दू गवाह ने मुसलमानों के तन्ज़ीम आन्दोलन का ज़िक्र कर दिया तो नवाबज़ादा साहब का 'जलु छुह गथड पाक बरतोरा!' फिर तो प्रश्नों की वह बौछार शुरू होती थी, कि बेचारे गवाह के लिए सींग छिपाना मुश्किल हो जाता था।

❀

ख़ैर, यह 'टाँय-टाँय फिस' भी कम मज़ेदार नहीं रही। दङ्गे के समय जिन्हें दिया लेकर ढूँढ़ने पर भी सरकार और उसकी पुलिस तथा पलटन का पता नहीं लगा था, उनका भ्रम दूर हो गया होगा, और अब निश्चिन्तता-पूर्वक वे सखी नौकरशाही के रामराज्य के मज़े लेंगे।

❀

यों तो कानपुर के दङ्गे का सातो काण्ड ही पुर-लुत्फ़ रहा, मगर अपने राम के 'समझानुसार' सब से अधिक दिलचस्प रहा, उसका उत्तर-काण्ड। कहा भी है कि "बाल का शुरू उत्तर का अन्त, जो बूझे सो पूरा सन्त।" फलतः जिन लोगों को अब तक श्रीजगद्गुरु की "सन्तता" में सन्देह रहा हो, उन्हें चाहिए कि उसका संशोधन करा डालें और अगर गुञ्जाइश न हो तो अन्त में एक "शुद्धि-पत्र" जोड़ लें।

❀

हाँ, तो पुलिस वहाँ दङ्गे के दिनों में काफ़ी मुस्तैदी दिखा रही थी। मगर दङ्गा करने वाले उसे कुछ इन्तज़ाम करने का मौक़ा ही नहीं देते थे। आग लगा कर भाग जाते थे, लूट कर खिसक जाते थे, पुलिस पकड़ने जाती तो गुण्डों को घर में पाती ही न थी। रास्तों पर जो रहते वे पुलिस-लॉरी देखते ही नौ-दो ग्यारह हो जाते। अब बताइए बेचारी पुलिस करती तो क्या करती?

❀

इसलिए श्रीजगद्गुरु की राय है कि अगर भविष्य में आप लोग या आपके गुण्डे लोग कहीं दङ्गा करें तो इन ज़रूरी हिदायतों की अवश्य पाबन्दी करें, ताकि पुलिस को दङ्गा शान्त करने या अपने कर्तव्य का पालन करने में कोई दिक़्क़त न हो, वरना उसे मजबूर होकर ताश खेलना आरम्भ कर देना पड़ेगा।

❀

वे हिदायतें यों हैं कि (१) आग लगाने वाले आग लगा लेने पर उस समय तक कहीं न जाएँ, जब तक पुलिस आकर उन्हें पकड़ न ले, (२) दङ्गे में गुण्डई से अवकाश पाते ही गुण्डे अपने घरों में चले जाएँ, ताकि पुलिस जब उन्हें पकड़ने आए तो उसे ख़ाली हाथ न लौटना पड़े, और (३) पुलिस की लॉरियाँ देख कर तितर-बितर हो जाना महा कमीनापन है—दङ्गा-शास्त्र के विरुद्ध है। ऐसा करने से पुलिस बेचारी गोली नहीं चला सकती। इसलिए दङ्गाकारियों को चाहिए कि दङ्गा करने के समय पुलिस की लॉरियाँ देख कर भागा न करें।

❀

इस हिदायत को याद रखिए और सहयोगी 'वर्तमान' की ज़बानी कुछ और याद रखने योग्य मज़ेदार बातें और सुन लीजिए। वह लिखता है :—

"इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि कानपुर आने के लिए मुसलमान डिप्टी कलेक्टर तथा पुलिस अफ़सरान छटपटाया करते हैं। कानपुर मालदार ज़िला है। यहाँ डालियों और रिश्वतों की आमदनी का कोई हिसाब नहीं है। कोकेन और जुए से यहाँ पर पुलिस को बँधी हुई आमदनी होती है। बिना ज़ोर या ज़बर्दस्ती दिखलाए ही यहाँ के पुलिस अफ़सरान दो-तीन वर्ष के अन्दर लाख दो लाख कमा ले जाते हैं! कोर्ट-इन्स्पेक्टर होम-मेम्बरों के पैरों पर गिर कर कानपुर भेजे जाने की कोशिश किया करते हैं! प्रान्तिक सरकार से ये सब बातें छिपी नहीं हैं।"

❀

छिपी कैसे रहें जनाब, श्रीमती त्रिकालदर्शिनी हैं—भूत, भविष्य और वर्तमान उनके लिए हस्तामलकवत है। इसके सिवा एक तो पुलिस स्वयं ही उनकी चहेतियों में है, तिस पर दाढ़ी वाली! इसीके बदौलत तो बेचारी मूसरों ढोल बजाती हैं। फिर, कानपुर ही क्यों? संयुक्त प्रान्त में और भी कई स्थान हैं, जहाँ बिना दाढ़ी की पुलिस उन्हें अच्छी ही नहीं लगती।

❀

अमाँ, शोभा और सौन्दर्य भी कोई चीज़ है या नहीं? काशी हिन्दू-प्रधान नगर है, हिन्दुओं का तीर्थ-स्थान है, इसलिए जब से अङ्गरेज़ी राज्य क़ायम हुआ है, तब से शायद ही वहाँ एक या दो 'अ-दाढ़ी' कोतवाल भेजे गए हैं। बाबा विश्वनाथ की पुरी में बिना दाढ़ी का कोतवाल! राम-राम! कोई सुनेगा तो क्या कहेगा?

❀

फिर पुलिस अफ़सरी के लिए दाढ़ीदार जवान होते भी हैं मौज़ूँ। मासिवा इसके दाढ़ी-दल इससे प्रसन्न भी रहता है। फलतः यह आवश्यक है कि उन्हें कानपुर जैसे ज़रख़ेज़ ज़िले में रक्खा जाए, ताकि उनकी मुट्ठी गरम होती रहे और उनकी बदौलत गरम होता रहे श्रीमती जी का पहलू!

❀

परन्तु हिज़ होलीनेस कानपुर की चर्चा में ऐसे फँसे कि मोटे मियाँ मद ज़िल्लहू की याद ही नहीं रही, हालाँकि उनके भोंपू का भों-भों अभी पूर्ववत् ही है। बल्कि यों कहिए कि ज्यों-ज्यों गरमी बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों वह पञ्चम से सप्तम की ओर बढ़ा जा रहा है। एक तो बिना पेंदी का नगाड़ा; तिस पर यह मई की गरमी, ख़ुदा न करे, कहीं फट पड़ा तो सारे देश में दुर्गन्धि फैल जाएगी।

❀

ख़ैर, अबकी मोटे मियाँ के भोंपू में से जो घोर रव निकला है, उसका तात्पर्य यह है कि अगर महात्मा गाँधी गोलमेज़ में नहीं जाएँगे तो भी मैं अवश्य जाऊँगा। अवश्य जाइए। मगर साथ में थोड़ा सा तेल और एक तुला-दण्ड भी अवश्य लेते जाइएगा; ताकि लौटने के समय मुण्डानल दादा दोनों हाथों में कोंपर थमा देंगे और आप चाटते चले आइएगा।

❀

आपने महात्मा गाँधी को धमकी दी है कि अगर वे आपकी आज्ञा मान कर साम्प्रदायिक निर्वाचन नहीं स्वीकार कर लेंगे, तो मुसलमान नाराज़ हो जायँगे और देश में साम्प्रदायिक अशान्ति की वृद्धि होगी अर्थात् शौकतपन्थी दल हिन्दुओं को पीस कर पी जाएगा। दुख है कि अख़बार वाले इस बात के लिए मद ज़िल्लहू को कोस रहे हैं। शायद उन्हें मालूम नहीं कि बेचारा आजकल इन्हीं बातों की रोटी खाता है।

❀

एक सज्जन कहने लगे कि यह सूफ़ी की क़ब्र-सा पेट वाला मौलाना मुसलमानों का साढ़साती है, यह उन्हें तबाह करने आया है। परन्तु अपने राम की राय है कि यह भारत की राजनीतिक प्रगति के मार्ग का 'कुन्दा' है और किसी मदारी के अप्रत्यक्ष हाथों ने इसे हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच लुढ़का दिया है। लेहाज़ा जब तक दाढ़ी-चोटी में तनातन नहीं होगी, तब तक यह अपना कर्णकटु भोंपू भी बन्द नहीं करेगा।

❀

दुख है, कि लाहौर के मुसलमानों ने काला झण्डा दिखा कर बेचारे का बिस्मिल्लाह ही ग़लत कर दिया। सोचा होगा कि बैठे-ठाले कुछ दिनों के लिए कबाब-रोटी की व्यवस्था हो जाएगी। मगर वहाँ 'गो बैक' का ऐसा नारा लगा कि नगाड़े की आवाज़ नक्कारख़ाने में तूती की आवाज़ हो गई। ख़ैर, अब कलकत्ते पहुँचे हैं। अगर बैठ गया सिप्पा तो पौबारह है, नहीं तो जठर-ज्वाला के मारे बुढ़ौती किरकिरी हो जाएगी।

❀

इधर 'पारस' नाम के अख़बार को पता लगा है कि ये और इनके स्वर्गीय सहोदर शाह अमानुल्ला के विरोधियों से पैसे ऐंठते रहे, इसके बाद बच्चा सक़ा को 'मर्दे मजाहिद' की पदवी देकर मुट्ठी गरम की और अब शाह नादिर ख़ाँ को ग़ाज़ी की पदवी दे रहे हैं। मगर मुसलमानों को क्या कहा जाए कि इन बातों को जानते हुए भी भोंपू में मुट्ठी भर मिर्चों की बुकनी नहीं झोंक देते।

❀ ❀ ❀

भारतीय भारत

['रियासत' के उद्गार]

महाराज पटियाला की लड़कियों की शादी की पहेली

महाराज पटियाला की एक लड़की की शादी पिछले सप्ताह हो चुकी है और दो लड़कियों की शादियाँ आगामी सप्ताह में होने वाली हैं। इन तीनों लड़कियों के सम्बन्ध में जो विवरण 'रियासत' कार्यालय में आया है, वह बड़ा ही मनोरञ्जक है। उसमें कहा गया है, कि एक लड़की तो सरदार अमरसिंह (ये वही सरदार अमरसिंह हैं, जिनकी धर्मपत्नी को महाराज पटियाला ने बलपूर्वक उड़ा लिया था, जो अब तक महाराज के राजभवन में है और जिसके सम्बन्ध में पञ्जाब की रियासतों के भूतपूर्व गवर्नर जनरल मि० क्रम्प की चिट्ठी अख़बारों में छपी थी कि सरदार अमरसिंह इस स्त्री का मूल्य बीस हज़ार रुपए महाराज पटियाला से ले लें और अपना अधिकार छोड़ दें।) की पत्नी के गर्भ से है, दूसरी दलीप कौर (निहत सरदार लालसिंह की विधवा) के गर्भ से और तीसरी अनवर जान रण्डी के पेट से। पिछले सप्ताह वाली शादी जो बिजावर के युवराज से हुई है, महाराज पटियाला चाहते थे कि इस लड़के की शादी सरदार अमरसिंह की स्त्री के गर्भ से पैदा लड़की से की जाय। परन्तु जब इस शादी का समाचार सरदार अमरसिंह को मिला तो आपने एक तार महाराज बिजावर को भेजा। यह तार १६ अप्रैल सन् १९३१ को अम्बाला शहर के तार-घर से भेजा गया है, इस तार का नम्बर १६ है और उसका मज़मून इस प्रकार है:—

"सेवा में, हिज़ हाईनेस राजासाहब, बिजावर। वह कन्या जिसे ब्याहने के लिए आप आ रहे हैं, मेरी पत्नी अमर कौर की पुत्री है और उस ब्याह के परिणाम के आप ज़िम्मेदार होंगे।—अमरसिंह।"

इस तार के पहुँचने पर बिजावर में तो सनसनी फैली ही, महाराज पटियाला भी घबराहट में पड़े कि अब क्या हो? ख़ैर, बिजावर और पटियाला के बीच कई तार आए-गए। परिणाम यह हुआ कि महाराज बिजावर अपने राजकुमार की शादी के लिए पटियाला आए और अमरसिंह की पत्नी की कन्या के बदले राजकुमार बिजावर को अनवर जान रण्डी के गर्भ से पैदा लड़की ब्याह दी गई। इस शादी में महाराज पटियाला ने अपने समधी को सवा लाख रुपए नक़द और अपनी लड़की को दो लाख के गहने दिए।

इस शादी के बाद बाक़ी दो लड़कियाँ हैं, जिनमें से एक तो नैपाल के किसी राजपूत जागीरदार से ब्याही जाएगी और दूसरी इलाहाबाद के किसी जागीरदार से। इन शादियों के सम्बन्ध में, समाचार है कि सरदार अमरसिंह ने निश्चय किया है, उनकी बीबी की लड़की से जो व्यक्ति शादी करेगा, उस पर ये अङ्गरेज़ी राज्य में फ़ौजदारी मुक़दमा दायर करेंगे। क्योंकि सरदार अमरसिंह का कहना है कि जिस समय महाराज पटियाला ने उनकी बीबी को उड़ाया था, उस समय वह गर्भवती थी, यह लड़की गर्भ में थी। इसलिए वह लड़की सरदार अमरसिंह की है और उसकी शादी उसके पिता की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कोई नहीं कर सकता; क्योंकि लड़की अभी नाबालिग़ है। इसी तरह का नोटिस भी दुलहा साहब को दे दिया गया है। अब अनवर जान तवायफ़ वाली लड़की का क़िस्सा सुनिए! अनवर जान के ख़ान्दान के लोग और पटियाला के मुसलमानों का दल शोर मचा रहा है कि यह लड़की चूँकि मुसलमान औरत के गर्भ से है, हिन्दू लड़के को क्यों ब्याही गई? और क्यों प्रचलित प्रथा के विरुद्ध एक मुसलमान तवायफ़ की औलाद हिन्दू के सुपुर्द की गई?

पटियाला के हमारे एक दोस्त का कथन है कि महाराज पटियाला का पञ्जाब स्टेट्स पीपिल्स कॉन्फ़्रेन्स के सेक्रेटरी के चरणों पर पगड़ी रखना सिर्फ़ इसलिए था कि इन शादियों के अवसर पर किसी प्रकार का आन्दोलन न हो। परन्तु सरदार अमरसिंह की बहादुरी, आत्माभिमान और आत्म-मर्यादा की दाद देनी चाहिए कि इन पर कई बार झूठे मुक़दमे चलाए गए। यातनाएँ दी गईं। लाखों रुपए के लोभ दिखाए गए, परन्तु इस मर्द ने सब पर लात मार दी और वह लड़की तथा दुलहे पर फ़ौजदारी मुक़दमा करने के लिए मैदान में उतर रहा है; जो निश्चय ही सारे भारत के देशी रजवाड़ों के लिए इबरत पैदा करने का सबब होगा।

शाह स्पेन के नाम भारतीय नरेशों का पैग़ाम

काठियावाड़ के विख्यात अख़बार "सौराष्ट्र" में भारत के पाँच नरेशों—महाराज पटियाला, जाम साहब नवानगर, महाराज अलवर, महाराज बीकानेर और महाराज बड़ौदा की ओर से एक पैग़ाम छपा है, जो इन नरेशों ने स्पेन के सिंहासनच्युत बादशाह अल्फ़ेन्ज़ो को, हाल में भेजा है। तार द्वारा भेजे गए इस पैग़ाम में लिखा है:—

"आपके ऊपर जो विपत्ति पड़ी है, उसे देख कर हमें बहुत दुख हो रहा है। कुछ मूर्ख और स्वार्थपर लोगों के आन्दोलन के कारण सर्व-साधारण में अपने राज्यों के सम्बन्ध में अविश्वास बढ़ता जा रहा है, परन्तु इसके होते हुए भी हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि ईश्वर ने संसार के विभिन्न विचार के करोड़ों लोगों पर शासन करने के लिए शासक वंशों को इस धरा-धाम पर पैदा किया है। इसलिए आप आख़िरी दम तक लड़िए और अपने ईश्वरदत्त अधिकारों की रक्षा कीजिए। हम आपकी सहायता के लिए तैयार हैं, हालाँकि हम भी यहाँ जीवन और मृत्यु की कशमकश में पड़े हैं।"

शाह अल्फ़ेन्ज़ो की ओर से इन नरेशों को निम्नलिखित उत्तर प्राप्त हुआ है:—

"आपके तार के लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। इससे मुझे बड़ी सान्त्वना प्राप्त हुई है। मैं यह भी मानता हूँ कि हमारे राजघराने और हमारे राज्य संसार की भलाई के लिए हैं। हमें ईश्वर की आज्ञानुसार प्रजा का सेवक होना चाहिए। आपके तार के बाद मैंने अपना विचार बदल दिया है। मैंने राजसिंहासन को छोड़ नहीं दिया है। केवल अपने कुछ अधिकारों को छोड़ा है और उसकी घोषणा भी कर दी है। मैं आशा करता हूँ कि आप मेरी मदद करेंगे और मेरा राज्य तथा मेरे ईश्वरदत्त अधिकारों के लिए कोई बात उठा न रखेंगे।"

उपर्युक्त बातें 'सौराष्ट्र' के सिवा किसी दूसरे समाचार-पत्र में नहीं छपी हैं और मालूम होता है कि हमारे सहयोगी ने, इसे किसी तरह पाँच-छः राज्यों में से किसी एक के यहाँ से प्राप्त किया है। वस्तुतः इन रजवाड़ों का तार और उसका उत्तर दोनों ही विशेष मनोरञ्जक हैं। रियासतों की बेबस प्रजा को राजाओं का वह वाक्य तो मज़े ले-लेकर पढ़ना चाहिए कि यहाँ भी रजवाड़े जीवन और मृत्यु की कशमकश में पड़े हैं।

पटियाला से सरदार नानकसिंह का वारण्ट रद्द

पटियाला से अभी हाल में ही समाचार मिला है कि पटियाला के भूतपूर्व सुपरिण्टेण्डेण्ट ऑफ़ पुलिस सरदार नानकसिंह, जो सरदार लालसिंह की हत्या के अपराध में आजीवन क़ैद थे, और जो जाँच-कमीशन के अवसर पर पटियाला से भाग गए थे, या भगा दिए गए थे, अब बिल्कुल स्वतन्त्र रूप से लाहौर पहुँच गए हैं। रियासत पटियाला ने, आप पर जो वारण्ट था, उसे रद्द कर दिया है।

सरदार नानकसिंह पटियाला के वह व्यक्ति हैं कि अगर आपका जीवन-चरित्र प्रकाशित किया जाए, तो उसमें देशी रियासतों के अत्याचारों और स्वेच्छाचारिता की इतनी बातें मिलेंगी कि उन्हें पढ़ कर रूस के ज़ार को भी लज्जित हो जाना पड़ेगा। चूँकि सरदार नानकसिंह का रियासत पटियाला के गत बीस वर्षों के इतिहास से विशेष सम्बन्ध है, इसलिए यह अनुचित न होगा कि आज हम आपके स्वतन्त्र होने पर आपके कार्यों का संक्षिप्त परिचय पाठकों को प्रदान करें।

सरदार नानकसिंह पटियाला के सी० आई० डी० के सुपरिण्टेण्डेण्ट थे। जब पटियाला नरेश स्वर्गवासी सरदार लालसिंह की बीबी दलीपकौर पर प्रेमासक्त (इसे प्रेम कहना प्रेम की तौहीन है, इसलिए कामासक्त कहना चाहिए) हुए तो सरदार लालसिंह की पटियाला में हत्या हुई, जिसके साथ सरदार नानकसिंह का सम्बन्ध बताया जाता है। इस हत्या के कुछ दिन बाद सरदार नानकसिंह ने हत्या-सम्बन्धी सब पत्रादि पञ्जाब के तत्कालीन छोटे लाट सर माइकेल ओडायर को दिखा दिया। सर माइकेल ने महाराजा पटियाला से जवाब तलब किया, तो महाराज को वे पत्रादि हस्तगत कर लेने की आवश्यकता हुई। उन्होंने सरदार नानकसिंह को लालच देकर फिर वापस बुलवाया और उन्हें तरक़्क़ी पर नौकरी दी गई। सरदार नानकसिंह के पटियाला पहुँचने के एक सप्ताह बाद उनकी गिरफ़्तारी हो गई और आप पर जेलख़ाने में वह अत्याचार हुए कि सुन कर कलेजा काँप जाता है। और यह सब कुछ इसलिए किया गया कि आप वह काग़ज़ात लौटा दें, जिससे इस हत्या का सम्बन्ध महाराज से साबित होता था। अन्त में आपने काग़ज़ात दे दिए।

इसके बाद पञ्जाब के भूतपूर्व अन्यतम मन्त्री सरदार बहादुर सर सुन्दरसिंह मजीठिया बीच में पड़े, कि अगर काग़ज़ात महाराज को मिल जायँ तो सरदार नानकसिंह छोड़ दिए जायँ। इस सुलह कराने के उपलक्ष में सरदार सुन्दरसिंह भी चालीस हज़ार रुपए खा गए। काग़ज़ात वापस दे दिए गए, पर सरदार नानकसिंह को छोड़ा न गया। आप पर हत्या का अपराध लगा कर आजीवन क़ैद की सज़ा दे दी गई। ....

....

ख़ैर, सरदार नानकसिंह इस समय आज़ाद हैं और उन्हें ख़ुश करने के लिए महाराज पटियाला ने ४० हज़ार रुपए दिए हैं। परन्तु सरदार साहब को रुपए के लोभ में न पड़ कर मैदान में आ जाना चाहिए और महाराज की करतूतों को जनता के सामने रख देना चाहिए।

* * *

निर्वासिता वह मौलिक उपन्यास है, जिसकी चोट से दीर्घकाय भारतीय समाज एक बार ही तिलमिला उठेगा। अन्नपूर्णा का नैराश्यपूर्ण जीवन-वृत्तान्त पढ़ कर अधिकांश भारतीय महिलाएँ आँसू बहावेंगी। कौशलकिशोर का चरित्र पढ़ कर समाज-सेवियों की छातियाँ फूल उठेंगी। उपन्यास घटना-प्रधान नहीं, चरित्र-चित्रण-प्रधान है। निर्वासिता उपन्यास नहीं, हिन्दू-समाज के वक्षस्थल पर दहकती हुई चिता है, जिसके एक-एक स्फुलिङ्ग में जादू का असर है। इस उपन्यास को पढ़ कर पाठकों को अपनी परिस्थिति पर घण्टों विचार करना होगा, भेड़-बकरियों के समान समझी जाने वाली करोड़ों अभागिनी स्त्रियों के प्रति करुणा का स्रोत बहाना होगा, आँखों के मोती बिखेरने होंगे और समाज में प्रचलित कुरीतियों के विरुद्ध क्रान्ति का झण्डा बुलन्द करना होगा ; यही इस उपन्यास का संक्षिप्त परिचय है। मूल्य केवल ३) रु०

दाढ़ी वालों को भी प्यारी है बच्चों को भी,
बड़ी मासूम बड़ी नेक है लम्बी दाढ़ी।
अच्छी बातें भी बताती है, हँसाती भी है।
लाख दो लाख में बस एक है लम्बी दाढ़ी॥

ऊपर की चार पंक्तियों में ही पुस्तक का संक्षिप्त विवरण "गागर में सागर" की भाँति समा गया है। फिर पुस्तक कुछ नई नहीं है, अब तक इसके तीन संस्करण हो चुके हैं और ४,००० प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक चुकी हैं। पुस्तक में तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर के अलावा पूरे एक दर्जन ऐसे सुन्दर चित्र दिए गए हैं कि एक बार देखते ही हँसते-हँसते पढ़ने वालों के बत्तीसों दाँत मुँह से बाहर निकलने का प्रयत्न करते हैं। मूल्य केवल २॥); स्थायी ग्राहकों से १॥।=) मात्र !

बाल-रोग-विज्ञानम्

इस महत्वपूर्ण पुस्तक के लेखक पाठकों के सुपरिचित, 'विष-विज्ञान', 'उपयोगी चिकित्सा', 'स्त्री-रोग-विज्ञानम्' आदि-आदि अनेक पुस्तकों के रचयिता, स्वर्ण-पदक-प्राप्त प्रोफ़ेसर श्री० धर्मानन्द जी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य हैं, अतएव पुस्तक की उपयोगिता का अनुमान सहज ही में लगाया जा सकता है। आज भारतीय स्त्रियों में शिशु-पालन सम्बन्धी समुचित ज्ञान न होने के कारण सैकड़ों, हज़ारों और लाखों नहीं, किन्तु करोड़ों बच्चे प्रति वर्ष अकाल मृत्यु के कलेवर हो रहे हैं। इसमें बालक-बालिका सम्बन्धी प्रत्येक रोग, उनका उपचार तथा ऐसी सहज घरेलू दवाइयाँ बतलाई गई हैं, जो बहुत कम ख़र्च में प्राप्त हो सकती हैं। इसे एक बार पढ़ लेने से प्रत्येक माता को उसके समस्त कर्त्तव्य का ज्ञान सहज ही में हो सकता है और वे शिशु-सम्बन्धी प्रत्येक रोग को समझ कर उसका उपचार स्वयं कर सकती हैं। मूल्य २॥) रु०

दक्षिण अफ़्रिका के मेरे अनुभव

जिन प्रवासी भाइयों की करुण स्थिति देख कर महात्मा गाँधी ; मि० सी० एफ़० एण्ड्रूज़ और मिस्टर पोलक आदि बड़े-बड़े नेताओं ने ख़ून के आँसू बहाए हैं ; उन्हीं भाइयों की सेवा में अपना जीवन व्यतीत करने वाले पं० भवानीदयाल जी ने अपना सारा अनुभव इस पुस्तक में चित्रित किया है। पुस्तक को पढ़ने से प्रवासी भाइयों की सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक स्थिति तथा वहाँ के गौराङ्ग प्रभुओं की स्वार्थपरता, अन्याय एवं अत्याचार का पूरा दृश्य देखने को मिलता है। एक बार अवश्य पढ़िए और अनुकम्पा के दो-चार आँसू बहाइए !! मूल्य २॥) रु०

चुहल

पुस्तक क्या है, मनोरञ्जन की अपूर्व सामग्री है। केवल एक चुटकुला पढ़ लीजिए, हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जायँगे। काम की थकावट से जब कभी जी ऊब जाय, उस समय केवल पाँच मिनट के लिए इस पुस्तक को उठा लीजिए, सारी उदासीनता काफ़ूर हो जायगी। इसमें इसी प्रकार के उत्तमोत्तम हास्यरस-पूर्ण चुटकुलों का संग्रह किया गया है। कोई चुटकुला ऐसा नहीं है, जिसे पढ़ कर आपके दाँत बाहर न निकल आवें और आप खिलखिला कर हँस न पड़ें। भोजन के पश्चात मनोरञ्जन के लिए ऐसी पुस्तकें पढ़ना स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभदायक है। बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष—सभी के काम की चीज़ है। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल लागत-मात्र १) ; स्थायी ग्राहकों से ॥।) ; केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं, शीघ्रता कीजिए, नहीं तो दूसरे संस्करण की राह देखनी होगी।

उपयोगी चिकित्सा

इस महत्वपूर्ण पुस्तक की एक प्रति प्रत्येक सद्गृहस्थ के यहाँ होनी चाहिए। इसको एक बार आद्योपान्त पढ़ लेने से फिर आपको डॉक्टरों और वैद्यों की ख़ुशामदें न करनी पड़ेंगी—आपके घर के पास तक बीमारियाँ न फटक सकेंगी। इसमें रोगों की उत्पत्ति का कारण, उसकी पूरी व्याख्या, उनसे बचने के उपाय तथा इलाज दिए गए हैं। रोगी की परिचर्या किस प्रकार करनी चाहिए, इसकी भी पूरी व्याख्या आपको मिलेगी। इस पुस्तक को एक बार पढ़ते ही आपकी ये सारी मुसीबतें दूर हो जायँगी। भाषा अत्यन्त सरल। मूल्य १॥)

चित्तौड़ की चिता

पुस्तक का 'चित्तौड़' शब्द ही उसकी विशेषता बतला रहा है। क्या आप इस पवित्र वीर-भूमि की माताओं का महान साहस, उनका वीरत्व और आत्मबल भूल गए ? सतीत्व-रक्षा के लिए उनका जलती हुई चिता में कूद पड़ना, आपने एकदम बिसार दिया ! याद रखिए ! इस पुस्तक को एक बार पढ़ते ही आपके बदन का ख़ून उबल उठेगा ! पुस्तक पद्यमय है, उसका एक-एक शब्द साहस, वीरता, स्वार्थ-त्याग और देश-भक्ति से ओत-प्रोत है। मूल्य केवल लागत मात्र १॥); स्थायी ग्राहकों से १=) रु०

Printed and Published by Tribeni Prasad B. A.—Editor, at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad

सम्पादक :—
प्रो० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ... १२) रु०
छः माही चन्दा ... ६॥) रु०
तिमाही चन्दा ... ३॥) रु०
एक प्रति का मूल्य चार आने
Annas Four Per Copy

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा प्रति कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए।

वर्ष १, खण्ड ३

इलाहाबाद—बृहस्पतिवार : २१ मई, १९३१

संख्या १०, पूर्ण संख्या १४

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' और विद्याविनोद-ग्रन्थमाला का प्रचार कर, वे संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एकमात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड २ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; २१ मई, १९३१ | सं० १०, पूर्ण सं० ३४

बर्मा में पुलिस-अफ़सरों की निर्मम हत्याएँ और शस्त्रों की लूट

कलकत्ते के चीनी और जापानियों पर विदेश से शस्त्र मँगाने का सन्देह

फ़ीरोज़पुर ज़िले में पुलिस ने गोलियाँ चला दीं :: काबुल में बम मिले !

गोलमेज़ परिषद् का दूसरा अधिवेशन सितम्बर के पहिले सप्ताह से प्रारम्भ होगा

(एसोसिएटेड प्रेस द्वारा २०वीं मई की रात तक आए हुए 'भविष्य' के ख़ास तार)

—शिमला से २०वीं मई का तार है कि श्री० आर० एस० राजवाडे, (भूतपूर्व सम्पादक "कर्मयोगी") जिन्हें शोलापूर मार्शल लॉ के सम्बन्ध में एक लेख लिखने के अपराध में ७ वर्ष का कठिन कारावास दण्ड दिया गया था, रिहा कर दिए गए हैं।

—नैनीताल का २०वीं मई का तार है, कि महात्मा गाँधी ने १९वीं मई की शाम को एक सार्वजनिक सभा में व्याख्यान देते हुए कहा, कि जब तक भारतवासी खद्दर का उपयोग तथा इसका प्रचार नहीं करते, तब तक गोलमेज़ परिषद में जाने से कोई लाभ नहीं हो सकता। क्योंकि बिना इसके भारतवासी अपने उस ध्येय को प्राप्त नहीं कर सकते, जिसके लिए कॉङ्ग्रेस उद्योग कर रही है। यह सभा एक स्थान में हुई थी, जिसके लिए गवर्नमेण्ट ने विशेष रूप से आज्ञा देने की कृपा की थी।

—पेशावर का १९वीं मई का तार है, कि काबुल में कुछ ऐसे विद्यार्थी गिरफ़्तार कर लिए गए हैं, जिनके पास बम बरामद हुए हैं।

—२० मई का सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट का जो तार वॉयसराय के पास आज आया है, उसमें कहा गया है, कि गवर्नमेण्ट ने फ़ेडरल स्ट्रक्चर कमिटी का अधिवेशन आगामी २९ जून को करना स्वीकार कर लिया है और गोलमेज़ परिषद का दूसरा अधिवेशन लन्दन में सितम्बर के पहिले सप्ताह से आरम्भ किया जायगा।

—लन्दन, का ११ वीं मई का समाचार है, कि इङ्गलैण्ड की पार्लमेण्ट के हाउस ऑफ़ कॉमन्स में मि० बेन ने अर्ल विण्टरटन से कहा कि भारत-सरकार से कहा जाए कि वह बर्मा-विद्रोह सम्बन्धी सम्पूर्ण विवरण भेज दे, ताकि हाउस को उस पर विचार करने का अवसर मिले। अपूर्ण सूचनाओं के अनुसार सुनने में आया है, कि अब तक एक हज़ार विद्रोही मारे गए हैं और दो हज़ार गिरफ़्तार किए गए हैं।

—रङ्गून की १९वीं मई की एक ख़बर है कि यामथीन में कुछ विद्रोहात्मक पर्चे पाए गए हैं। इन पर्चों में भद्र अवज्ञा आन्दोलन और लगानबन्दी के सम्बन्ध की बातें थीं। कहा जाता है कि फूङ्गू के पुङ्गियों (बर्मन-धर्म-गुरुओं) ने इन पर्चों को मिन्गू ज़िले में बँटवाया था।

—बर्मा की १८वीं मई की एक ख़बर है कि विद्रोहियों ने सर्वे-विभाग के डाइरेक्टर कर्नल मॉर्शीड को एक जङ्गल में मार डाला है। कहा जाता है, कि वे घोड़े पर सैर करने के लिए गए थे, किन्तु उनका घोड़ा ख़ाली लौटा और उसकी ज़ीन पर ख़ून के दाग़ लगे हुए थे। खोज करने पर कर्नल मॉर्शीड की लाश २४ घण्टे बाद शहर से ४ मील की दूरी पर एक जङ्गल में पाई गई। उनके शरीर पर गोली के चिन्ह थे।

—इनसीन (बर्मा) के समाचारों से पता चलता है कि वहाँ ६ डकैतियाँ डाली गई हैं। विद्रोहियों ने कई पुलिस की चौकियाँ गत सप्ताह में जला डालीं और बन्दूकें, रिवॉल्वर तथा गोलियाँ लूट ले गए। कहा जाता है कि विद्रोही ख़ास तौर से शस्त्रों के संग्रह में विशेष तल्लीन हैं।

—थारावड्डी के समीप पुलिस वालों की विद्रोहियों के साथ मुठभेड़ हुई, जिसमें कैप्टेन जोन्स घायल हुए। विद्रोहियों की ओर के कुछ लोग भी घायल हुए तथा मारे गए।

—हाल ही में बर्मा-सरकार ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया है, जिससे पता चलता है, कि वहाँ के विद्रोह को शान्त करने में बहुत कुछ सफलता मिली है। किन्तु इसी वक्तव्य में इस बात का भी ज़िक्र आया है, कि वहाँ के प्रधान-सेनाध्यक्ष की सलाह से बर्मा-सरकार भारत से अतिरिक्त सेना मँगाने वाली है।

—शिमला के एक समाचार से पता चलता है कि एक असाधारण गज़ट के द्वारा हेनज़ादा में भी विद्रोह ऑर्डिनेन्स जारी किए जाने की घोषणा की गई है।

—गत १९वीं मई का फ़िरोज़पुर का एक समाचार है कि वहाँ पुलिस और गाँव वालों में एक भयङ्कर मुठभेड़ हो गई, जिसके फल-स्वरूप २ व्यक्ति मरे और १२ घायल हुए। कहा जाता है कि अधिकारीगण बहुत दिनों से, ख़ुयान सरवर नामक एक गाँव में, पुलिस स्टेशन स्थापित करना चाहते थे। किन्तु उक्त गाँव के कुछ लोग यह बात पसन्द नहीं करते थे। इस कारण, जब पुलिस-स्टेशन वहाँ क़ायम किया गया तो गाँव वालों ने पुलिस को अपने कुओं पर आने देने से इन्कार कर दिया। १६वीं मई को कुछ पुलिस वाले एक कुएँ पर गए। कहा जाता है कि पुलिस वालों की इस धृष्टता पर गाँव वाले नाराज़ हो गए, और क़रीब २५० लठबन्द व्यक्तियों ने उन्हें घेर लिया और उन्हें पीटना शुरू किया। पुलिस वालों ने लाचार होकर फ़ायरें शुरू कर दीं, जिसके फल-स्वरूप २ व्यक्ति मरे और ७ बुरी तरह घायल हुए। इन घायलों में से दो को और मृत्यु हो गई है। १० व्यक्तियों को हल्की चोट आई हैं। ३० व्यक्ति इस सम्बन्ध में गिरफ़्तार किए गए हैं। मामले की जाँच हो रही है।

—पटने का १९वीं मई का समाचार है, कि पुलिस ने पटना रेलवे-स्टेशन पर दो नवयुवकों को गिरफ़्तार किया है। इनमें से एक के पास से एक रिवॉल्वर मिला है।

—लाहौर का १६वीं मई का समाचार है, कि 'ज़मींदार' पत्र के सम्पादक, प्रकाशक तथा मुद्रक सय्यद ग़ुलाम हुसैन फ़ॉरेनर्स एक्ट के अनुसार गिरफ़्तार किए गए। कहा जाता है कि यह गिरफ़्तारी 'ज़मींदार' में प्रकाशित उन लेखों के सम्बन्ध में हुई है, जिनमें अफ़ग़ानिस्तान के भूतपूर्व अमीर अमानुल्ला का पक्ष-समर्थन किया गया है और अफ़ग़ानिस्तान की वर्तमान सरकार की कड़ी आलोचना की गई है। शाह साहब को ज़मानत पर रिहा कर दिया गया था, किन्तु शाम को आप फिर गिरफ़्तार कर लिए गए।

—कलकत्ते का १९वीं मई का एक समाचार है, कि वहाँ ७२ व्यक्ति विदेशों से गुप्त रूप से शस्त्र मँगाने के अभियोग में गिरफ़्तार किए गए हैं। इनमें चीनी; जापानी तथा कुछ हिन्दू और मुसलमान भी शामिल हैं।

पुलिस का कहना है कि ये व्यक्ति, अलग-अलग या मिल कर, विदेशों से शस्त्र मँगाते थे, जिन्हें उन्होंने कलकत्ते में छिपा रक्खा है।

सभी ज़मानत पर छोड़े गए हैं।

—पेशावर का १९वीं मई का समाचार है, कि अफ़ग़ानिस्तान के अमीर नादिरशाह ने फ़्रान्स से, १० हज़ार बन्दूकें और ७० हज़ार पौण्ड की लागत की एक करोड़ कारतूसें मँगाई हैं। इससे पहले, अफ़ग़ानिस्तान में लड़ाई का इतना सामान एक साथ कभी भी नहीं मँगाया गया था।

—सत्याग्रह आन्दोलन के समय, जलालपुर और बारडोली तालुक़ों में जिन लोगों ने ज़ब्त-शुदा जायदादें ख़रीदी थीं, उनमें से अनेक उन्हें लौटाने के लिए तैयार हो गए हैं। श्री० मानकजी धानजी शा, और श्री० कवासजी बहराम शा ने १८१ एकड़ ज़मीन अपने वास्तविक मालिक के पास लौटा दी है। मि० बी० जी० मेदीवाला नामक एक सज्जन ने भी ५० एकड़ ज़मीन लौटा दी है।

—अहमदाबाद का १६वीं मई के एक समाचार से विदित होता है, कि बालासिनोर स्टेट के १५ गाँवों के पट्टीदारों ने बेगार-प्रथा के प्रतिवाद में, स्टेट छोड़ दिया है। वे इन्दराना नामक गाँव के समीप, पेड़ों के नीचे दिन काट रहे हैं। वे इस प्रथा का प्रतिवाद करने के लिए एक डेपूटेशन बना कर, पोलिटिकल एजेण्ट के पास भी गए थे, किन्तु उन्होंने उस डेपुटेशन को बालासिनोर स्टेट के नवाब के पास जाने के लिए कहा। मोदासा और कपदरञ्ज कॉङ्ग्रेस कमिटियों के सभापति भी इसी मामले में, नवाब साहब से मिलने गए हैं।

—मथुरा की १५वीं मई की एक ख़बर है कि श्री०रामगोपाल आज़ाद, १०वीं मई के अपने एक भाषण के सम्बन्ध में १२४-ए धारा के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए हैं।

—ढाका से दिनदहाड़े एक भीषण डकैती होने की ख़बर आई है। कहा जाता है कि गत १६वीं मई को, एक पोस्ट-ऑफ़िस के इन्स्पेक्टर ४ डाकियों के साथ; लॉरी पर रुपयों के थैले लेकर जा रहे थे। अचानक ४ हथियारबन्द नवयुवकों ने लॉरी घेर ली, और ८००) रुपए का एक थैला लेकर ज़नाना मिशन के कम्पाउण्ड की चहारदीवारी फाँद कर वे चम्पत हो गए। कुछ लोगों ने उनका पीछा किया, किन्तु उन नवयुवकों ने अपनी रिवॉल्वरों से फ़ायर शुरू कर दी, जिससे पीछा करने वालों को उन्हें पकड़ने का साहस नहीं हुआ। किसी को चोट नहीं आई है। अभी तक कोई गिरफ़्तार नहीं किया गया है।

—अमृतसर से ५ बालकों के एक भीषण धड़ाके से घायल होने की ख़बर आई है। घायल बालकों में से एक के कहने से पता चलता है, कि उसने किसी स्थान पर छोटी गोली के समान एक गोल वस्तु पाई और उसे पटाका समझ कर उसने अपने एक साथी को दिखलाया। दोनों ने सलाह कर यह निश्चित किया कि यह पटाका स्कूल में पटका जाय। इस निश्चय के अनुसार वह लड़का उस वस्तु को स्कूल ले गया और एक ईंट पर उसे रख कर दूसरी ईंट से उस पर आघात किया। फलस्वरूप ५ लड़के, जो यह तमाशा देखने के लिए वहाँ इकट्ठे हुए थे, बुरी तरह घायल हुए। लड़के अस्पताल में हैं। कहा जाता है, उस गोली में कुछ विस्फोटक पदार्थ थे। पुलिस इस मामले की जाँच कर रही है।

—कलकत्ते का १५वीं मई का समाचार है, कि कॉर्पोरेशन प्राइमरी स्कूल के दो शिक्षक श्री० धीरेन्द्रकुमार और श्री० सुकुमार गुह, बङ्गाल क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेण्ट एक्ट के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए हैं।

—कलकत्ते में महिलाओं ने 'पिकेटिङ्ग बोर्ड' नामक एक नई संस्था खोली है। गाँधी-इर्विन समझौते के बाद, इस संस्था की ३५ महिलाओं ने पहले-पहल बड़ा बाज़ार में पिकेटिङ्ग शुरू की। इस पिकेटिङ्ग से वहाँ के व्यापारियों में बड़ी खलबली मच गई और बहुतों ने विदेशी कपड़े न मँगाने की प्रतिज्ञा की है।

—गौहाटी के एक पेन्शनयाफ़्ता सिविल-सर्जन श्री० एच० के० दास ने गत माह में 'नदौर रैयत-कॉन्फ़्रेन्स' का सभापतित्व ग्रहण किया था। आपने अपने अभिभाषण में भगतसिंह के सम्बन्ध में भी कुछ कहा था।

अब ख़बर मिली है कि आसाम-सरकार के चीफ़ सेक्रेटरी ने उनके पास इस आशय की एक सूचना भेजी है, कि इस 'बदचलनी' के कारण उनकी पेन्शन क्यों न ज़ब्त कर ली जाय?

सीमा-प्रान्त तथा पञ्जाब प्रान्तीय हिन्दू-परिषद्

सीमा-प्रान्त और पञ्जाब प्रान्तीय हिन्दू-परिषद् ने निर्वाचन के सम्बन्ध में निम्न-लिखित प्रस्ताव पास किया है:—

"यह परिषद् पृथक निर्वाचन का विरोध करती है, क्योंकि यह राष्ट्रीयता तथा प्रजातन्त्र-शासन के विरुद्ध है। यदि सारे भारत में संरक्षणरहित संयुक्त निर्वाचन को अपनाया जाय तो यह परिषद् उसका हार्दिक स्वागत करेगी। यदि ऐसा न हो सके तो प्रत्येक प्रान्त में संख्या के अनुसार अल्प-मत वालों के लिए संरक्षण की व्यवस्था की जाय। यदि इसमें भी सफलता न मिले तो अल्प-मत सम्बन्धी प्रश्न 'लीग ऑफ़ नेशन्स' के सम्मुख निर्णय के लिए उपस्थित किया जाय।"

—लखनऊ के समाचारों से मालूम होता है कि गत १०वीं मई को सलेमपुर के राजा साहब ने पृथक निर्वाचन-दिवस मनाने के अभिप्राय से एक सभा करने की चेष्टा की थी। बड़ी मुश्किल से, निश्चित समय से ३ घण्टे बाद शम्सुल-उलेमा अब्दुल हमीद के सभापतित्व में सभा शुरू हुई। मुश्किल से ५०० मनुष्य सभा में एकत्रित हुए होंगे। मि० क़िदवई आदि राष्ट्रीय नेताओं के आ जाने से सभापति ने अपना आसन त्याग दिया, और ख़ाँ बहादुर मेहदी हसन को उनका स्थान ग्रहण करना पड़ा। जब संयुक्त निर्वाचन के विरोध में प्रस्ताव उपस्थित किया गया, तो मि० फ़क़ीरअली ने उसका विरोध किया। प्रस्ताव का समर्थन करने वाले मि० बशीर अहमद के भाषण से सभा में चारों ओर खलबली मच गई। श्रोताओं ने उनका भाषण सुनने से इन्कार किया और राष्ट्रीय नेता श्री० ख़लिक़ुज़्ज़माँ से भाषण देने के लिए प्रार्थना की गई। श्री० ख़लिक़ुज़्ज़माँ ने संयुक्त निर्वाचन पर ख़ूब ज़ोरदार भाषण दिया। राष्ट्रीयतावादी नेताओं के भाषण के बाद लोग अपने-अपने घर जाने लगे और वोट लेने के समय केवल १०० मनुष्य सभा में उपस्थित रह गए। पृथक निर्वाचन सम्बन्धी प्रस्ताव के विरुद्ध ही अधिक लोगों ने वोट दिया, किन्तु सभापति ने प्रस्ताव पास कर दिया। जब उनसे वोट गिनने के लिए कहा गया, तो उन्होंने सभा भङ्ग कर दी।

ज़मींदार की ज़्यादती

एटा के एक ज़मींदार के घृणित अत्याचार की एक ख़बर मिली है। कहा जाता है कि आगरा के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता श्री० मुन्शीलाल गोस्वामी को, ज़मींदार दलजीतसिंह ने अपने नौकरों द्वारा बुरी तरह पिटवाया। जब इससे भी उसे सन्तोष नहीं हुआ, तो उन्हें अपनी गढ़ी के भीतर ले जाकर स्वयं भी उसने पीटा। कहा जाता है, कि वे जूतों से पीटे गए। यह समाचार पाते ही आस-पास के गाँवों में सनसनी फैल गई और क़रीब ३ हज़ार किसानों ने, काले झण्डों के साथ एक जुलूस निकाला। एक सभा भी की गई, जिसमें ज़मींदार के घृणित कार्य की निन्दा की गई।

कहा जाता है कि ज़मींदार के कोप का कारण यह है, कि श्री० मुन्शीलाल गोस्वामी ने किसानों को सङ्गठित बनाना तथा उनके बीच में स्वयंसेवक भर्त्ती करना शुरू किया था। इस सङ्गठन के कारण वहाँ के किसान, ज़मींदार के अत्याचारों को सहन करने से इन्कार करते थे। कहा जाता है कि गोस्वामी जी अदालती कारंवाई करने का विचार कर रहे हैं।

—मुल्तान का १२वीं मई का समाचार है, कि आज फ़िरोज़दीन नामक एक व्यक्ति ने मॉण्टगुमरी जेल में नूरा नामक एक व्यक्ति की हत्या के सम्बन्ध में अपना बयान दिया।

गवाह ने कहा कि मैं १२४-ए धारा के अनुसार गिरफ़्तार किया गया था, और घटना के समय जेल में ही था। उसने आगे कहा कि जब मैं ६ नं० के बैरक में था, उसी समय मुझे चिल्लाने की आवाज़ सुनाई पड़ी। घटनास्थल पर पहुँच कर मैंने देखा कि एक क़ैदी ज़मीन पर पड़ा हुआ है, और गुरुदत्तसिंह उसकी छाती पर बैठा हुआ है। ७ या ८ अन्य मनुष्य उसे लाठी तथा घूसों से मार रहे थे। दो आदमी नूरा की टाँग पकड़े हुए थे, और एक मनुष्य उसको गुदा में एक डण्डा ठूँस रहा था। यह घटना देख कर मैं अपने बैरक में लौट गया और यह बात मैंने अन्य क़ैदियों से कही। सेशन्स जज ने अभियुक्त को एक वर्ष का कठिन कारावास दण्ड दिया है।

—पाठकों को विदित होगा कि गत १ली मई को मौ० शौकतअली मेरठ गए थे, किन्तु वहाँ वह अपना विष-वमन नहीं कर सके थे; जिस समय मौलाना साहब मेरठ स्टेशन पर उतरे, उसी समय दूसरी गाड़ी से वहाँ के कलक्टर साहब भी उतरे। कलक्टर साहब ने मौलाना का स्वागत करते हुए कहा कि आप यहाँ भाषण नहीं दे सकते। यही कारण था कि मौलाना साहब ने वहाँ से अपना बोरिया-बँधना लेकर चलने में ही ख़ैरियत समझा था।

—गत मास के पिछले सप्ताह लन्दन की एक सभा में भारत के सम्बन्ध में भाषण देते हुए मि० लॉयड जॉर्ज ने कहा था कि भारत की समस्या वर्तमान काल की एक महत्वपूर्ण समस्या है। उसे अपनी स्वतन्त्रता की चिन्ता है और हमें अपने व्यापार की। भारत के राजनीतिज्ञ एक स्वर से औपनिवेशिक शासन-विधान माँग रहे हैं। मैं अनुभव करता हूँ, कि इस माँग में ज़ोर है। परन्तु हमारे मतानुसार औपनिवेशिक स्वराज्य और पूर्ण स्वतन्त्रता, जिसके सम्बन्ध में लाहौर कॉङ्ग्रेस ने प्रस्ताव स्वीकृत किया है, कोई अन्तर नहीं है। मैं ब्रिटिश सरकार को परामर्श दूँगा कि अगर वह भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य देना चाहती है तो उचित यह होगा कि पूर्ण स्वाधीनता ही दे दे। क्योंकि संरक्षण के जिस अधिकार को अपने हाथों में रखने के लिए हम पूर्ण स्वतन्त्रता देने से इन्कार करते हैं, वह औपनिवेशिक स्वराज्य देने से भारत के हाथों में चला जाता है!

"कुत्तों और विदेशियों के लिए स्थान नहीं है"

युवक यदि उठ खड़े हों तो वे क्या नहीं कर सकते हैं ?

केरल की छात्र-परिषद् में श्री० के० एफ़० नॉरिमन की गर्जना

"हमारे अधःपतन का एकमात्र कारण हमारे शासकों की अर्थ-शोषण नीति है"

केरल की छात्र-परिषद् के सभापति श्री० के० एफ़० नॉरिमन ने अभिभाषण देते हुए कहा :—

"युवको, इस समय हमारे सामने एक गम्भीर समस्या उपस्थित है; वह है देश की पूर्ण स्वाधीनता। यदि यह समस्या हल हो जाय तो हमारी अन्य बुराइयाँ भी सहज ही दूर हो जायँगी। युवको, इसलिए आपसे मेरा अनुरोध है कि इस समय पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति के लिए अपने समस्त विवादों को मिटा कर आप अपनी पूर्ण शक्ति स्वाधीनता की प्राप्ति में लगा दें। जब तक देश विदेशी शासन की ज़ञ्जीर से बँधा है, तब तक आपकी डिग्रियों और सनदों से किसी प्रकार के लाभ की आशा नहीं। जब तक यह ग़ुलामी, आपके अस्तित्व को अपमानजनक सिद्ध कर रही है, आपके दिल और दिमाग़ पर असर कर रही है, तब तक छात्र-वृत्तियों और तमग़ों का मूल्य कुछ भी नहीं है। यह दासता आपके शरीर और आत्मा की तौहीन कर, घर और बाहर यह सिद्ध कर रही है, कि आप पतनोन्मुख हैं! अपढ़, किन्तु स्वतन्त्र रहना अच्छा है, किन्तु विद्वान और पराधीन होना अच्छा नहीं। आप में जो जितना ही अधिक शिक्षित है, वह उतना ही बड़ा ग़ुलाम है। स्वामी विवेकानन्द ने एक बार युवकों को सलाह दी थी कि 'अपनी सारी किताबें, सारी सनदें समुद्र में फेंक दो और निश्चिन्त होकर देश की स्वाधीनता के लिए प्रयत्न करो।

राष्ट्र और नवयुवक

"युवको! आप ही देश के जीवन और देश की आशा हैं। मेरे इस कथन में ज़रा भी अत्युक्ति नहीं है। देश के वयोवृद्ध नेता सोच सकते हैं, विचार सकते हैं और स्कीमें बना सकते हैं, किन्तु उन विचारों और उन स्कीमों को कार्य-रूप में परिणत करने की शक्ति युवकों में ही है। इसके लिए उन्हें ही आगे बढ़ना पड़ेगा। बिना इनकी सहायता के सारे मनसूबे मिट्टी हो जायँगे।

"किसी भी देश के अर्वाचीन अथवा प्राचीन इतिहास की ओर ग़ौर कीजिए; आयर्लैण्ड, रूस, चीन, टर्की, या अन्य किसी भी पूर्वी अथवा पश्चिमी देश को स्वाधीनता-प्राप्ति के लिए युवकों से ही सहायता लेनी पड़ी है। हमारे देश के युवक भी, अपने देश की स्वाधीनता के लिए अपना बलिदान करेंगे, और अपनी मातृ-भूमि को दासत्व की बेड़ी से मुक्त कर देंगे, इसमें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है।

"इस बात की बहुधा शिकायत की जाती है, कि वर्तमान शिक्षा-प्रणाली इसी विचार से हमारे देश में प्रचलित की गई है कि हम सदा ग़ुलाम बने रहें। यह बात सच है, इस शिक्षा-प्रणाली से राष्ट्रीयता के भावों का उदय नहीं हो सकता। सच्ची राष्ट्रीयता और देश-भक्ति के भावों को कुचलने के लिए, शासकगण किस प्रकार 'राज-भक्तों' और क्रुकों को ईजाद करते हैं, इसका कुछ क़िस्सा मैं आपको सुनाऊँगा।

"कुछ वर्ष हुए, जब मैं बम्बई की धारा-सभा का सदस्य था। मैंने कौन्सिल में शिक्षा-मन्त्री से एक मार्के का प्रश्न किया। मैंने उनसे पूछा, कि क्या स्कूल और कॉलेज के लड़कों को, इङ्गलैण्ड के राजा-रानियों की फ़िज़ूल क़िस्सा-कहानियों की अपेक्षा, अपने देश के महापुरुषों की जीवनियों को पढ़ाना श्रेयस्कर नहीं होगा? हेनरी ने कितने विवाह किए थे, या एलिज़ाबेथ कौन-कौन कपड़े पहनती थी, उसके कितने प्रेमी थे, सर वाल्टर रैले कैसा रसिक था, आदि कथाओं से भारतीय विद्यार्थियों को क्या लाभ पहुँचता है? बेचारे शिक्षा-मन्त्री बड़े घबड़ाए। उन्होंने बहुत देर तक कोई उत्तर नहीं दिया। अन्त में यूरोपियन होम-मेम्बर उनकी सहायता को आए। होम-मेम्बर के बताने पर मिनिस्टर साहब ने ग्रामोफ़ोन के रेकार्ड की तरह, उत्तर दिया कि भारतीय नेताओं के भाषण, उनके लेख और उनकी जीवनियाँ भारतीय विद्यार्थियों के लिए ख़तरनाक हैं, इसलिए उन्हें छोड़ देना ही अच्छा है! तात्पर्य यह कि इङ्गलैण्ड के बादशाहों की झूठी गौरव-कहानी, और उनके दरबारों की बाहरी तड़क-भड़क भारतीय विद्यार्थियों के लिए अध्ययन की अच्छी सामग्री है, क्योंकि इससे ब्रिटिश साम्राज्य को कुछ हानि नहीं पहुँच सकती है। यदि हमारे विद्यार्थी गाँधी और तिलक के जीवन-चरित्र का अध्ययन करें और उनका अनुसरण करने लगें तो शासकों के लिए ख़ैरियत कहाँ? एक गाँधी यदि सारे ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ को हिला सकते हैं, तो अनेक गाँधियों के उत्पन्न हो जाने पर तो हमारे शासकों को अपना बोरिया-बँधना लेकर भागना ही पड़ेगा। ऐसा भी सम्भव है कि बोरिया-बँधना भी ले जाने की तकलीफ़ उन्हें नहीं उठानी पड़े, क्योंकि वह भी तो हमारा ही है।

श्री० के० एफ़० नॉरिमन

"यही हमारे देश की शिक्षा-प्रणाली का उद्देश्य है। यहाँ अङ्गरेज़ों का यह सिद्धान्त काम में लाया जा रहा है कि 'पहले अपनी रक्षा का उपाय करना चाहिए और उसके बाद दूसरों की भलाई करनी चाहिए।'

दूसरी कहानी

"बम्बई के टेकनिकल कॉलेज की एक घटना है, जिससे उक्त सिद्धान्त चरितार्थ होता है। उक्त कॉलेज में हर साल, विद्यार्थियों को किसी मनुष्य की आकृति का बूटा काढ़ना पड़ता था। यह कहने की आवश्यकता नहीं, कि केवल यूरोपियनों की आकृति के ही बूटे काढ़े जाते थे। किसी हिन्दुस्तानी की अपेक्षा, प्रिन्सिपल साहब, या उनकी मेम साहबा अथवा कोई इञ्जिन-ड्राइवर की आकृति काढ़ना ही श्रेयस्कर समझा जाता था। एक बार किसी देशभक्त लड़के ने महात्मा गाँधी की आकृति के सम्बन्ध में प्रस्ताव किया। प्रिन्सिपल साहब तुरन्त बिगड़ उठे। ऐसे मनुष्य की आकृति भला उन्हें कब पसन्द आ सकती थी? उन्होंने महात्मा गाँधी की आकृति के सम्बन्ध में चट निषेधाज्ञा निकाल दी। विद्यार्थियों ने क़रीब दो वर्षों तक इस पर आन्दोलन किया। अन्त में यह निषेधाज्ञा हटा ली गई।

"ऊपर जिस टेकनिकल कॉलेज का ज़िक्र आया है, उसके सभी छात्र हिन्दुस्तानी थे और वह हिन्दुस्तानियों के ही चन्दे से चलता था। किन्तु तो भी विद्यार्थियों पर इस प्रकार की बाधाएँ उपस्थित की जाती थीं!

"सभी जगहों की ऐसी ही हालत है। क्या आपको याद नहीं, कि स्कूल और कॉलेजों में राष्ट्रीय गान तक रोक दिए गए थे? यदि कोई 'Rule Britannia' अर्थात् 'ऐ ब्रिटेन हम पर शासन करो' यह गान गाए तो गवर्नर और मिनिस्टर साहब भी तान में तान मिलाएँगे, और 'इनकोर! इनकोर!!' की ध्वनि करेंगे; किन्तु यदि आप एक सीधा-सादा 'बन्देमातरम्' गीत गाएँ तो अधिकारी अपने कान मूँद लेंगे, उन्हें इससे क्रान्ति की बू आएगी, और वे गाने वाले को सज़ा देंगे, अथवा निकाल देंगे! जिस गाने को वे चाहते हैं उसको अगर आप गाएँ भी तो उसमें इतना अन्तर अवश्य कर दें—'ऐ ब्रिटेनिया तुम शासन करो, तुम समुद्र की लहरों पर शासन करो, किन्तु भारतवासी कभी तुम्हारे दास होकर नहीं रहेंगे।'

भारतीय सभ्यता

"मेरे नौजवान दोस्तो! एक क्षण के लिए ज़रा ग़ौर तो करो, तुम्हारे बाप-दादे कौन थे और कैसे थे और सदियों पहले—अङ्गरेज़ों के आने के पूर्व—आपका देश कैसा था? अपने देश की गौरव-कहानी जानने के लिए आपको झूठे इतिहासकारों की पुस्तकें पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। मैं मोहनजादड़ो से आपके लिए, बहुत ही सनसनीपूर्ण और कारुणिक सन्देशा लाया हूँ। शायद आपने मोहनजादड़ो का नाम सुना होगा। हमारे विरोधी वैज्ञानिकों का भी कहना है कि मोहनजादड़ो भारत की कम से कम ५ हज़ार वर्ष की गौरव-कहानी है!

"अपने देश के प्राचीन कीर्ति-स्तम्भों को देख कर प्रत्येक देशभक्त भारतीय की आँखें सजल हो आती हैं।

देश- विदेश से सैकड़ों-हज़ारों यात्री यहाँ आते हैं और विस्मय के सागर में डूब जाते हैं। हमारे वर्तमान शासकों का देश, जिस समय उजड़ और वीरान पड़ा था, जिस समय वहाँ लोग अर्द्धनग्नावस्था में रहते थे, उस समय हमारा देश गौरव के उच्च शिखर पर आसीन था। ७ हज़ार वर्ष पहले ग्रेट-ब्रिटेन का जन्म भी नहीं हुआ था और इसके बहुत दिनों बाद तक वहाँ के लोग, मनुष्य की अपेक्षा बन्दरों से कहीं अधिक मिलते-जुलते थे। हमारी ही प्राचीन सभ्यता ने उन्हें पहले-पहल मानवोचित रहन-सहन के तरीक़े बतलाए। और यह कितने आश्चर्य की बात है, कि आज हमारा ही देश विदेशियों के शासन की ज़ञ्जीर में बँधा हुआ है। भारत दिन-ब-दिन अधःपतन की ओर झुकता जा रहा है। प्राचीन गौरव की कोई निशानी इसमें अब शेष नहीं रह गई है। यदि यही दशा रही तो सम्भव है, कुछ दिनों में संसार के नक़्शे में भारत का नक़्शा नहीं दिखाई पड़े !!!

ब्रिटिश-शासन और भारत

"यदि आप भारत के आर्थिक इतिहास पर ध्यान दें, तो आपको पता चल जायगा, कि ब्रिटिश-शासन और भारत से क्या सम्बन्ध है। आप श्री० रमेशचन्द्र दत्त की किताबों को पढ़ें, श्री० दादाभाई नौरोजी का अध्ययन करें, तब आपको पता चलेगा, कि यह सुवर्णमयी भारत-भूमि एकाएक गौरव के उच्च गिर-शिखर से रसातल को कैसे पहुँच गई है ? आप सच मानिए, कि भारत के इस महान अधःपतन का एकमात्र कारण, हमारे शासकों की अर्थ-शोषण नीति ही है। यही विषय आपके अध्ययन की उपयुक्त सामग्री है। स्कूल और कॉलेजों में आप इस सम्बन्ध में कुछ नहीं जान सकते।

"युवको, आप शहरों में रहते हैं। आपको अपने हज़ारों क्षुधा-पीड़ित और रोग-ग्रस्त भाइयों के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञान नहीं है। आप गाँवों में जाइए, और ब्रिटिश शासन का सच्चा रूप वहाँ आपको दिखलाई पड़ेगा। दीन-हीन कृषक, टूटे झोपड़े में पड़े रहते हैं; उनके खाने का ठिकाना नहीं है, उनके पहरने का ठिकाना नहीं है; न वे शिक्षित हैं, और न यही जानते हैं, कि शिक्षा क्या वस्तु है; वे दिहाती कुत्तों की भाँति रहते हैं और शहरी चूहों की मौत मरते हैं ! वे रोगी हैं, उनके गाँव में अस्पताल नहीं है, किन्तु हमारी सरकार की दया से वहाँ भट्टीख़ाने की कमी नहीं है !!

चीन के युवक

"अपना भाषण समाप्त करने के पहले मैं चीन के सम्बन्ध में आपको कुछ सुनाऊँगा। चीन और भारत में बहुत-कुछ समानता है। विदेशी महाप्रभुओं ने उसके किनारे के सभी अच्छे-अच्छे सामुद्रिक स्थान हथिया लिए थे। हाल की बात है, कि कुछ चीनी युवक जो अमेरिका से लौटे थे, सङ्घाई गए। आप जानते होंगे कि सङ्घाई में अङ्गरेज़ों की बस्ती थी। वहाँ की एक बस्ती में एक बोर्ड टँगा हुआ था, जिस पर लिखा था:—

'चीनियों और कुत्तों के लिए यहाँ आना मना है।' यह देख कर उन चीनी युवकों के हृदय पर बड़ा भारी आघात पहुँचा। यह उनकी सहनशक्ति के बाहर की बात थी। उन्होंने उसी समय वहाँ पर यह प्रतिज्ञा की, कि चाहे जो कुछ हो इस अन्याय और अत्याचार का अन्त करना होगा। उसी समय से वहाँ युवकों का आन्दोलन शुरू हुआ और इतने थोड़े समय में उसने जो आशातीत सफलता प्राप्त कर ली है, वह प्रत्यक्ष है। उन्हीं युवकों ने उसी स्थान पर फिर एक बोर्ड लगा दिया, जिस पर लिखा था कि—'कुत्तों और विदेशियों के लिए स्थान नहीं है।'

"युवकों की अन्तरात्मा पर आघात पहुँच जाने से वे क्या कर सकते हैं, ऊपर के उदाहरण से इसका साफ़-साफ़ पता चल जाता है। भारत के युवक भी जब जग जायँगे, तो कितना ही अत्याचार और दमन क्यों न हो, उनकी गति अबाध रहेगी। उस समय सम्मेलनों और परिषदों की कोई आवश्यकता नहीं होगी। वे स्वयं अन्य देश के युवकों की भाँति अपना निर्दिष्ट ध्येय प्राप्त कर लेंगे।"

* * *

जेल के अत्याचार

अमृतसर, १२ मई। आज जब श्री० त्रिपाठी, गुरुदयाल, चमन, चिराग़दीन और अन्यान्य राजनीतिक क़ैदी अपने मुक़दमे के सम्बन्ध में उपर्युक्त अदालत में आए, तो श्री० त्रिपाठी ने एक मैला जाँघियाँ, जिस पर पाख़ाना लगा हुआ था, अदालत में पेश किया और अदालत का ध्यान आकर्षित करते हुए कहा, कि सिविल सर्जन ने मुझे तथा मेरे साथियों के स्वास्थ्य पर ध्यान देकर, ज़मानत पर छोड़ देने की सिफ़ारिश की थी, परन्तु हमारी ज़मानतें मन्ज़ूर नहीं की गईं। परन्तु अदालत ने मेहरबानी करके हमें बी० क्लास में कर दिया था। जिस दिन अस्वस्थता के कारण हमें बी० क्लास दिया गया था, उसी दिन जब कि हम जेल वापस गए, तो जाते ही हमें बेड़ियाँ पहनने की आज्ञा, सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब ने दी। और मुझे 'डण्डा-बेड़ी' पहना दी गई। श्री० त्रिपाठी ने कहा कि मेरा स्वास्थ्य इतना ख़राब है कि मैं चल-फिर तक नहीं सकता और मेरी नाक से ख़ून भी गिरता है। यहाँ तक कि कभी अर्द्ध-बेहोशी भी हो जाती है। परन्तु इन बातों की कोई सुनवाई नहीं हुई। मुझे एकान्त कोठरी में रहने का आदेश दिया गया। कमज़ोरी और डण्डा-बेड़ी के कारण मैं चल-फिर नहीं सकता था !

श्री० त्रिपाठी ने अदालत का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करते हुए कहा—यह वह जाँघिया है, जिसमें आज सवेरे मुझे पाख़ाना हो गया। बेड़ी के कारण तथा कमज़ोरी के कारण मैं चल नहीं सकता था, इसलिए पाख़ाना जाने के समय रास्ते में ही मेरी जाँघिया ख़राब हो गई।

जिस समय श्री० त्रिपाठी यह बातें अदालत से कह रहे थे, उस समय उनकी आँखों में आँसू भर आया था। इस घटना से अदालत में सनसनी फैल गई। अदालत ने इस सम्बन्ध में उन्हें आज्ञा दी कि अपनी तमाम शिकायतों के सम्बन्ध में एक दरख़्वास्त लिख कर अदालत में दें।

लॉर्ड वैलिङ्गडन से महात्मा गाँधी की भेंट

वॉयसराय के गार्ड ने बन्दूक झुका कर महात्मा जी का सम्मान किया !

शिमला का १४वीं मई का समाचार है, कि ४ बजे के लगभग महात्मा गाँधी वॉयसराय-भवन को गए। वहाँ पहुँचने पर वायसराय के गार्ड ने अपनी बन्दूक झुका कर महात्मा जी के प्रति सम्मान प्रदर्शित किया। वॉयसराय से १ घण्टे तक बातचीत कर जब आप बाहर निकले तो पत्र-प्रतिनिधियों ने प्रश्नों की झड़ी लगा दी। महात्मा जी ने केवल यही उत्तर दिया कि बातचीत आशाजनक है; अब दुबारा, लॉर्ड विलिङ्गडन से मिलने की आवश्यकता नहीं है।

किसी ने महात्मा जी से पूछा—"क्या आप शिमला को स्वराज्य सरकार की राजधानी बनाना पसन्द करेंगे ?" उन्होंने उत्तर दिया कि "हमें पाँच हज़ार मञ्ज़िलों से नीचे जाना होगा, क्योंकि स्वराज्य सरकार जनता की होगी और जनता में ही रहेगी।"

आपका विश्वास है कि केन्द्रीय सरकार सन्धि की शर्तों का पालन करने की कोशिश कर रही है।

भूपाल में, डॉ० अन्सारी और मौ० शौकतअली की बहसों को आपने आशाजनक बतलाया है।

शिमला १७ मई—आज महात्मा जी नैनीताल पहुँचे। यहाँ ६ दिनों तक रह कर आप बोरसद के लिए रवाना हो जाएँगे।

"द्विविधा में दोऊ गए—माया मिली, न राम !!"

मातहतों को सु० पुलिस का आदेश

"खुद गोली न खाकर, क्रान्तिकारियों पर गोली चला दिया करो"

एक मुख़बिर सी० आई० डी० विभाग का आदमी निकला !

बम बनाने के लिए जर्मनी से नाइट्रिक-एसिड आता था !

अभियुक्तों के बच्चों तक को पुलिस कठघरे के पास से उठा ले गई !!

६३७ नम्बर के टाँगे पर पुलिस वाले दिन में तीन-तीन बार मुख़बिरों से मिलने जेल जाते थे

अभियुक्तों ने अदालत में "विश्वासघातियों का नाश हो" के नारे लगाए !

देहली का १२ मई का समाचार है, कि आज दिल्ली षड्यन्त्र केस के मामले में अभियुक्तों की ओर से सी० आई० डी० के स्पेशल सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० पील से जिरह की गई।

मि० आसफ़अली के एक प्रश्न के उत्तर में मि० पील ने कहा, कि मैंने कल की गवाही में यह नहीं कहा था कि झण्डेवालाँ की तलाशी में जो कुछ चूड़ियों के टुकड़े मिले थे वे इस षड्यन्त्र से सम्बन्ध रखने वाली किसी स्त्री के नहीं हैं। मैंने कहा था—"मैं नहीं कह सकता कि चूड़ियों के ये टुकड़े इस षड्यन्त्र से सम्बन्ध रखने वाली किसी ख़ास स्त्री के हैं।" मेरा आशय यह था, कि चूड़ियों के ये टुकड़े इस षड्यन्त्र से सम्बन्ध रखने वाली किसी न किसी स्त्री के ज़रूर ही हैं।

मि० एस० एन० बोस के प्रश्न के उत्तर में मि० पील ने कहा, कि सी० आई० डी० के इन्स्पेक्टर मि० मुमताज हुसेन ने मेरे पास कैलाशपति के बयान का संक्षिप्त विवरण भेजा था। इसकी मूल लिपि ख़ुफ़िया विभाग के अफ़सरों के पास लौटा दी गई थी। पता नहीं कि वह उनके पास मौजूद है या नहीं।

इसके बाद सबूत की ओर से दिल्ली तथा लाहौर षड्यन्त्र केस के फ़रार अभियुक्तों के चित्रों की एक पुस्तिका ट्रिब्यूनल के सामने पेश की गई। चित्रों के साथ अभियुक्तों की हुलिया भी दर्ज थी।

मि० पील ने कहा कि मैं नहीं कह सकता कि पुलिस ने इन चित्रों को कब और कहाँ से प्राप्त किया।

अन्य प्रश्नों के उत्तर में आपने कहा, कि अभियुक्त बाबूराम की दूकान, यूनिवर्सल ड्रग स्टोर्स की तलाशी मेरी आज्ञा से हुई थी। दूकान के कुछ रजिस्टर मुझे दिखलाए गए थे। मुझे नहीं मालूम कि दिल्ली के बाज़ारों में सलफ़्यूरिक तथा नाइट्रिक एसिड की विशेष खपत है। परन्तु पुलिस विभाग की जाँचों से मालूम हुआ है, कि यूनिवर्सल ड्रग स्टोर्स की तरफ़ से जर्मनी की किसी कम्पनी के नाम बहुत अधिक एसिड के लिए ऑर्डर भेजा गया था।

इसके बाद आपने बतलाया कि वॉयसराय की स्पेशल ट्रेन वाली बम-घटना की खोज में हिन्दुस्तान भर की ख़ुफ़िया पुलिस लगी थी। इस मामले में पञ्जाब के सी० आई० डी० विभाग से मेरे पास अक्सर ख़बरें पहुँचा करती थीं।

मि० बलजीतसिंह के प्रश्न के उत्तर में आपने कहा कि सम्पूर्ण हिन्दुस्तान के षड्यन्त्र-अपराधों का भार मेरे ज़िम्मे नहीं है। मैं केवल अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के कार्यों के लिए उत्तरदायी हूँ। आपने कहा कि अभियुक्त धनवन्तरि का चित्र मिसिल में दर्ज है। यह चित्र विज्ञापन-पत्रों में प्रकाशित हो चुका है और उसकी प्रतियाँ पञ्जाब तथा अन्य प्रान्तों में वितरित भी हो चुकी हैं।

इस मामले में रघुवीरसिंह नाम का एक व्यक्ति गिरफ़्तार किया गया था। मुझे रघुवीरसिंह की गिरफ़्तारी का विवरण नहीं मालूम, कि रघुवीरसिंह रायबहादुर और ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट मि० पारसदास का भतीजा है।

एक दूसरे प्रश्न के उत्तर में गवाह ने कहा कि "क्रान्तिकारी दल के लोग किसी भी पुलिस अफ़सर को अच्छी निगाह से नहीं देखते। परन्तु केवल कैलाशपति ही ऐसा व्यक्ति था, जिसने मुझसे बतलाया कि षड्यन्त्रकारियों की तरफ़ से मेरे ऊपर आक्रमण होने का प्रबन्ध किया जा रहा है।

प्रश्न—क्या कैलाशपति के बतलाने पर आपने अपनी रक्षा का कोई प्रबन्ध किया ?

उत्तर—हाँ, पहले की अपेक्षा घर और दफ़्तर के पहरों को अधिक मज़बूत कर दिया।

प्र०—क्या अब भी आपको क्रान्तिकारियों द्वारा गोली से उड़ा दिए जाने का भय बना हुआ है ?

अदालत ने इस प्रश्न के पूछने की इजाज़त नहीं दी। मि० बलजीतसिंह ने कहा, कि इस प्रश्न के द्वारा मैं यह साबित करना चाहता हूँ कि गवाह डरा हुआ है।

इसके बाद गवाह ने कहा कि मैं उस अवसर पर उपस्थित था, जब सरकार की ओर से पुलिस-अफ़सरों को वॉयसराय द्वारा तमग़े दिए गए थे। वीरभद्र तिवारी के सम्बन्ध में आपने कहा, कि उनकी गिरफ़्तारी काकोरी-केस में हुई थी, परन्तु मामला नहीं चलाया गया। मैं यह नहीं कह सकता कि वे इस शर्त पर छोड़े गए थे, कि वे पुलिस को षड्यन्त्रकारियों की ख़बरें बतलाया करेंगे। मेरे विभाग का कोई भी आदमी तिवारी से मिलने के लिए फ़ैज़ाबाद जेल नहीं गया था। सी० आई० डी० की प्रार्थना पर तिवारी फ़ैज़ाबाद जेल से हटा कर इलाहाबाद लाए गए थे।

मि० बलजीतसिंह ने कहा कि तिवारी सी० आई० डी० से सम्बन्ध रखते हैं और वे पुलिस के गुप्तचर हैं।

सी० आई० डी० ने ज़मानत दी

प्र०—क्या यह बात सच है, कि तिवारी को छुड़ाने के लिए शम्भूनाथ, सी० आई० डी० के अफ़सर, ने उनकी ज़मानत की थी ?

उ०—मैं नहीं जानता।

आगे एक प्रश्न के उत्तर में गवाह ने कहा, कि मुझे यह नहीं मालूम कि तिवारी फ़रार अभियुक्तों के पते बताने की शर्त पर छूटे थे।

गोली मारने के लिए आदेश

प्र०—क्या यह बात सच है, कि आप अपने मातहतों को यह आदेश दे चुके हैं कि रात के समय यदि क्रान्तिकारी या फ़रार अभियुक्त कहीं मिल जायँ तो वे उन्हें गोली से उड़ा दें ?

उ०—मैंने अपने मातहतों को यह आदेश दिया है, कि जहाँ तक हो, वे ख़ुद गोली न खायँ, बल्कि उन्हीं पर चला दें।

आपने कहा, कि मैंने ऐसा आदेश अपने कर्मचारियों को, षड्यन्त्रकारियों के आक्रमणों से बचे रहने के लिए दिया है। एलफ़्रेड पार्क में चन्द्रशेखर आज़ाद की घटना का समाचार मैंने सुना था। शालामार बाग़ में मारे गए जगदीश की पञ्जाब के किसी षड्यन्त्र केस में ज़रूरत थी। शालिगराम शुक्ल, जो कानपुर में मारे गए थे, उनकी भी पिकेटिङ्ग-ऑर्डिनेन्स के एक केस में ज़रूरत थी।

गवाह ने कहा, कि मेरी समझ से एलफ़्रेड पार्क में जो व्यक्ति मारा गया था, वह वास्तव में चन्द्रशेखर आज़ाद ही था। मैंने उसका मिलान एक फ़ोटो से किया था।

सफ़ाई के वकील ने गवाह से अदालत में फ़ोटो पेश करने के लिए कहा। सरकारी वकील ने इसका विरोध किया। सफ़ाई के वकील मि० बलजीतसिंह ने कहा कि सफ़ाई के लिए फ़ोटो का पेश होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि आज़ाद इस मामले का मुख्य पात्र है। सम्भव है कि सफ़ाई की ओर से वह गवाह बना कर पेश किया जाय। अदालत ने फ़ोटो पेश करने की इजाज़त नहीं दी।

एक दूसरे प्रश्न के उत्तर में गवाह ने कहा कि सम्भवतः आज़ाद, विशेश्वरनाथ, जगदीश आदि षड्यन्त्रकारी इसलिए मारे गए, कि वे पुलिस-अफ़सरों को गोली मारना चाहते थे।

एक प्रश्न के उत्तर में गवाह ने कहा, कि मुझे नहीं मालूम कि खड़बावली के असली घी स्टोर्स वाले चम्पालाल को सी० आई० डी० में जगह दी गई है। मुझे यह भी नहीं मालूम कि उसने अभी हाल ही में पुलिस अफ़सरों को कोई पार्टी दी थी।

कमलावती इस मामले की कोई अभियुक्त नहीं है। उसे पुलिस की हिरासत में रखने का कारण यह था, कि वह कैलाशपति के साथ ही एक ही घर में पाई गई थी।

मुझे नहीं मालूम कि उसके पति राजबलीप्रसाद की पहले लाहौर षड्यन्त्र केस में गिरफ़्तारी हुई थी।

प्र०—क्या कैलाशपति को उसकी 'सेवाओं' के लिए १२०) रु० मासिक पेन्शन देने का वचन दिया गया है? उसमें से ३०) रु० मासिक कैलाशपति की 'प्रेमिका' को भी देने के लिए कहा गया है, यदि वह भी सबूत की तरफ़ से गवाह बन जाय?

उ०—जहाँ तक मुझे मालूम है, कोई रक़म देने का वचन नहीं दिया गया।

प्र०—इस समय उसका भरण-पोषण कौन करता है।

उ०—मेरा ख़्याल है कि जेल के अधिकारीगण।

प्र०—क्या पुलिस की तरफ़ से उसे कोई भत्ता भी मिलता है?

उ०—न्यायालय की हिरासत में रक्खे जाने के पहले पुलिस उसका भरण-पोषण करती थी।

इन्स्पेक्टर का दुर्व्यवहार

गवाह ने कहा, यह बात ठीक है कि चेतरामसिंह इन्स्पेक्टर ने अभियुक्त विमल के साथ दुर्व्यवहार किया है। मैंने चेतरामसिंह इन्स्पेक्टर को अब आगे से ऐसी बात न करने की चेतावनी दे दी है।

प्र०—क्या आपने अभियुक्त विमल से यह कहा था कि "मैंने अपने मातहतों से सुना है डी० एस० पी० नन्दकिशोर का व्यवहार कुछ अभियुक्तों के प्रति पशुतापूर्ण था?

उ०—नहीं, मैंने नहीं कहा था।

इसके बाद अदालत जलपान के लिए स्थगित हो गई।

अदालत के फिर बैठने पर अभियुक्त श्री० विद्याभूषण ने शिकायत की, कि कोर्ट-इन्स्पेक्टर सरदार भागसिंह का मि० पील के पास, जिनकी गवाही अभी समाप्त नहीं हुई है, जाना अनुचित है। अदालत ने सरदार भागसिंह को मि० पील के पास जाने से मना कर दिया।

अभियुक्त श्री० विद्याभूषण के प्रश्न के उत्तर में मि० पील ने कहा कि मैं यह नहीं कह सकता कि इन्स्पेक्टर चेतरामसिंह जाँच के सिलसिले में कितनी बार नीलगढ़ गए थे। मैंने उन्हें कैलाशपति के कथनानुसार ब्रह्मानन्द को गिरफ़्तार करने के लिए भेजा था। परन्तु ब्रह्मानन्द गिरफ़्तार नहीं किया गया।

प्र०—क्यों गिरफ़्तार नहीं किया गया?

उ०—इसका जवाब इन्स्पेक्टर चेतरामसिंह अपनी गवाही में बतलाएगा।

प्र०—क्या उसने आपसे कुछ बतलाया था?

उ०—हाँ।

प्र०—क्या बतलाया था?

उ०—उन्होंने मुझसे बतलाया था कि मैंने ब्रह्मानन्द से बातचीत कर ली है, उसने मेरे पास आने के लिए कहा है।

प्र०—क्या ब्रह्मानन्द ने फ़रार-अभियुक्त रामचन्द्र को गिरफ़्तार करा देने का वचन दिया था और क्या इसीलिए वह गिरफ़्तार नहीं किया गया?

अदालत ने इस प्रश्न के पूछने की इजाज़त नहीं दी। परन्तु मि० आसफ़अली के यह कहने पर, कि प्रश्न बिल्कुल उचित और प्रासङ्गिक है, अदालत ने उस प्रश्न के पूछने की इजाज़त दे दी।

मि० पील ने उत्तर में कहा, कि ब्रह्मानन्द कोई वचन देने के कारण नहीं छोड़ दिया गया था।

इसके बाद आपने कहा, कि हरद्वारीलाल तथा कैलाशपति एक साथ ही गिरफ़्तार किए गए थे, परन्तु मैं यह निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि कमलावती कैलाशपति के साथ गिरफ़्तार हुई थी, या नहीं। मैंने उसकी गिरफ़्तारी या उसके छुटकारे के मामले में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। मुझे मालूम है कि हरद्वारीलाल एक बार छोड़ दिए जाने के बाद फिर गिरफ़्तार कर लिया गया था।

जॉनबुल का कार्यक्रम

प्र०—वह पहले क्यों छोड़ दिया गया था?

अदालत ने यह कह कर इस प्रश्न के पूछने की इजाज़त नहीं दी, कि गवाह की इस विषय में कोई व्यक्तिगत जानकारी नहीं है।

गवाह ने कहा कि कैलाशपति से ख़बर मिलने पर उसको फिर से गिरफ़्तार करना आवश्यक समझा गया।

ग़ैर-क़ानूनी हिरासत

गवाह ने कहा यह मैं मानता हूँ, कि विमल, हरकेश, भागीरथलाल, बाबूराम, विद्याभूषण आदि अभियुक्त लगभग दो-दो महीने तक पुलिस की हिरासत में बन्द रहे हैं। बाबूराम का कोई भी सम्बन्धी मेरे पास अभियुक्त से मिलने की इजाज़त लेने नहीं आया। मुझे यह नहीं मालूम कि हिरासत के समय अभियुक्त बाबूराम से कोई व्यक्ति मिल नहीं पाया।

प्र०—क्या आपने पुलिस को यह आज्ञा नहीं दी थी, कि अभियुक्तों के सम्बन्धी उनसे मिलने न पाएँ?

उ०—इस विषय में मैंने कोई आम हुक्म नहीं निकाला था।

प्र०—तो ख़ास हुक्म क्या थे?

उ०—मुझे याद नहीं, कि मैंने कोई ख़ास हुक्म जारी किया था!

इसके बाद आपने कहा कि मुझे अपने डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट तथा इन्स्पेक्टर पर पूर्ण विश्वास है। अभियुक्तों की तरफ़ से यदि किसी तरह की शिकायत होती, तो अवश्य ही वे मुझसे कहते। मैं अभियुक्तों के पास, उनकी शिकायतों को जानने के लिए सब के पास, व्यक्तिगत रूप से जाने की आवश्यकता नहीं समझता!

"मुझे याद नहीं"

गवाह ने कहा कि मुझे यह याद नहीं कि किस ने टेलीफ़ोन द्वारा सदर बाज़ार से ख़बर दी थी कि अभियुक्त हरकेश पीटे जाने के कारण अनशन कर रहा है। मुझे नहीं पता, कि अभियुक्त रुद्रदत्त को पिस्तौल दिखला कर धमकाया गया था।

प्र०—क्या आपने पिस्तौल दिखा कर उसे धमकाया था?

उ०—नहीं।

गवाह ने कहा कि मुझे यह नहीं मालूम, कि हरकेश को पीटते-पीटते बेहोश कर दिया गया था।

प्र०—यह आपसे किसने कहा कि एक अभियुक्त के सम्बन्ध में आज जो मैंने "प्रेमिका" शब्द का प्रयोग किया है, उस पर आपत्ति की गई है।

उ०—मैं नाम नहीं बतला सकता।

प्र०—क्या आप अपनी गवाही के सम्बन्ध में और किसी से भी बातें करते हैं?

उ०—हाँ, मैं इस विषय में ख़ाँन अब्दुल समद, डी० एस० पी० और मि० ड्लिस से बातें करता हूँ।

प्र०—क्या "प्रेमिका" शब्द पर मुख़बिर कैलाशपति ने आपत्ति की है?

उ०—जहाँ तक मुझे मालूम है कैलाशपति ने तो सुना भी नहीं है कि "प्रेमिका" शब्द का व्यवहार किया गया है।

प्र०—क्या आपको मालूम है, कि आपके सी० आई० डी० विभाग के अफ़सर कैलाशपति से न्यायालय की हिरासत में अक्सर ही मिलते रहे हैं?

उ०—मैं अपने मातहतों को उनसे या किसी अभियुक्त से मिलने के विषय में मना कर चुका हूँ।

प्र०—लेकिन क्या आपको मालूम है, कि आपके आदेशों को मातहतों ने पालन नहीं किया और वे बराबर मुख़बिरों से जाकर मिलते रहे हैं?

उ०—नहीं।

इसके बाद एक प्रश्न के उत्तर में गवाह ने इस बात को क़बूल किया कि जहाँ मुख़बिर रहते हैं वहाँ जेल के पीछे वाली दीवार में एक नया दरवाज़ा बनाया गया है।

प्र०—क्या यह बात ठीक है, कि एक पुलिस-अफ़सर बदल कर जेल-अफ़सर बना दिया गया है?

उ०—एक पेन्शन-प्राप्त सब-इन्स्पेक्टर मुख़बिरों की देख-रेख करने के लिए अतिरिक्त-जेलर बना दिए गए हैं।

प्र०—क्या यह भी सच है कि मुख़बिरों वाले वार्ड के पहरेदार पुलिसमैन हैं?

उ०—वार्डरों की नियुक्ति पुलिस के सीनियर सुप-

रिण्टेण्डेण्ट की सहायता से हुई थी। स्पेशल पुलिस के कुछ पुलिसमैन, जो कि शीघ्र ही बरख़ास्त किए जाने वाले थे, बरख़ास्त करके जेल-वार्डर नियुक्त कर दिए गए थे।

मुख़बिरों के लिए भोजन-प्रबन्ध

एक प्रश्न के उत्तर में आपने कहा, कि मुझे नहीं मालूम कि मेरे स्पेशल स्टाफ़ के आदमी अब भी मुख़बिरों के पास जेल में भोजन-सामग्रियाँ लेकर जाया करते हैं। मि० आसफ़अली ने बतलाया, कि उस टाँगे का नम्बर ६३७ है, जिसमें स्पेशल पुलिस के आदमी नित्य-प्रति तीन-तीन बार जेल जाया करते हैं और वहाँ यूरोपियन वार्ड के पास ठहरते हैं। मैं समझता हूँ कि ये सब काम साधारण पुलिस के आदमी नहीं करते।

प्र०—क्या यह बात आप से डी० एस० पी० अब्दुल समद ने कही थी, कि कैलाशपति कमलावती के लिए "प्रेमिका" शब्द प्रयोग किए जाने का विरोध करेगा?

गवाह ने कहा कि डी० एस० पी० ने कैलाशपति पर इस शब्द-प्रयोग का क्या प्रभाव पड़ेगा, इसका उतना ख़्याल नहीं किया, जितना कि इस बात का ख़्याल किया, कि "प्रेमिका" शब्द एक स्त्री के लिए प्रयोग करना कलङ्कजनक होगा।

स्त्री की चूड़ियाँ

स्त्री की चूड़ियों के विषय में प्रश्न करने पर गवाह ने कहा कि मेरा विश्वास है, कि तलाशी में जो चूड़ियाँ मिली थीं वे किसी स्त्री-अभियुक्त की हैं—मेरा यह अनुमान है; हो सकता है यह अनुमान ग़लत हो।

प्र०—क्या आपने इस बात का पता लगाने का कोई प्रयत्न किया कि ये चूड़ियाँ किसकी हैं?

उ०—मैंने प्रयत्न किया है।

इसके बाद सफ़ाई की ओर से यह पूछने पर, कि क्या आपके इस अनुमान का, कि ये चूड़ियाँ किसी स्त्री-अभियुक्त की हैं, कोई प्रमाण है? आपने कहा कि मेरे पास कोई प्रमाण नहीं है, परन्तु मैं समझता हूँ कि इस मामले में अभियुक्तों के साथ स्त्री-अभियुक्त भी रही हैं।

जिस मकान में क्रान्तिकारी दल के लोग रहते थे वह सितम्बर महीने में ख़ाली हो गया था।

यह प्रश्न करने पर, कि सितम्बर महीने से लेकर जब तलाशी हुई है, उस समय तक के बीच में क्या आपको मालूम है कि मकान में कौन-कौन लोग आकर रहे? गवाह ने कहा, कि मुझे नहीं मालूम!

मुख़बिर, सी० आई० डी० का आदमी

सरकारी वकील ज़फ़रुल्ला ख़ाँ के प्रश्न के उत्तर में गवाह ने कहा, कि मुख़बिर रामलाल तैलङ्ग अक्टूबर सन् १९३० के चार महीने पहले सी० आई० डी० विभाग में नियुक्त था।

एक दूसरे प्रश्न के उत्तर में, जिस पर सफ़ाई-पक्ष के वकील मि० बोस ने आपत्ति की, गवाह ने कहा, कि अभियुक्त से वार्तालाप करने के बाद मैं इस निश्चय पर पहुँचा, कि कमलावती द्वारा डी० एस० पी० नन्दकिशोर पर लगाया गया दोषारोपण बिल्कुल निराधार और झूठा था।

इसके बाद अदालत स्थगित हो गई।

* * *

दूसरे दिन की बैठक में मुख़बिर कैलाशपति के बयान हुए। स्पेशल ट्रिब्यूनल की अदालत के अन्दर और बाहर आज पुलिस का असाधारण प्रबन्ध किया गया था। दर्शकों की गैलरियाँ स्त्री और पुरुष दर्शकों से खचाखच भरी हुई थीं।

प्रारम्भ में मि० आसफ़अली ने अदालत से शिकायत की, कि उत्तमप्रकाश नाम का एक सबूत का गवाह दर्शकों की गैलरी में बैठा हुआ है। अदालत के पूछने पर अभियुक्त धन्वन्तरि ने उसकी ओर इशारा करते हुए कहा, कि यह वही गवाह है, जिसने जेल में हम लोगों की शनाख़्त की थी। उसे अपनी गवाही हो जाने के पहले दर्शक की गैलरी में बैठने का कोई अधिकार नहीं है। उत्तमप्रकाश ने कहा, कि मुझे मालूम नहीं था, कि मैं गवाह हूँ। अदालत ने उसे कमरे के बाहर हो जाने का हुक्म दिया और कहा, कि आगे से अब कोई भी गवाह दर्शकों की गैलरी में न बैठने पाए।

सी० आई० डी० का झुण्ड

अभियुक्त वात्स्यायन ने अदालत से कहा, कि सी० आई० डी० विभाग के बहुत से आदमी दर्शकों की गैलरियों में बैठे हुए हैं, परन्तु अभियुक्तों के सम्बन्धी जगह की कमी के कारण कमरे के बाहर खड़े हुए हैं। इस पर अदालत ने सम्बन्धियों को कमरे के अन्दर आने की इजाज़त दे दी।

११ बज कर ४० मिनट पर मुख़बिर कैलाशपति अपनी गवाही देने के लिए खड़ा हुआ।

सबूत की ओर से मुख़बिर के बयान की नक़लें अभियुक्तों में वितरित कर दी गईं। इसके बाद मुख़बिर से अदालती शपथ लेने के लिए कहा गया। परन्तु सफ़ाई के वकील मि० आसफ़अली ने बीच ही में आपत्ति करते हुए कहा, कि मुख़बिर पहले अभियुक्त रह चुका है, इसलिए उससे शपथ नहीं ली जा सकती, जब तक कि यह न प्रमाणित कर दिया जाय, कि उसे क़ानून से क्षमा-प्रदान हो चुकी है।

सरकारी वकील—कैलाशपति अभियुक्त नहीं है।

मि० आसफ़अली—क्या आपका यही कथन है?

सरकारी वकील—उपस्थित गवाह को २ जनवरी को सिटी-मैजिस्ट्रेट मि० ईसर के सामने क्षमा-प्रदान की जा चुकी है। इसलिए अब वह मुख़बिर है।

मि० आसफ़अली—कैलाशपति अभियुक्त था, इसलिए उसकी गवाही गवाह की हैसियत से तब तक नहीं हो सकती, जब तक कि उसके क्षमा-प्रदान का अदालती सबूत न पेश कर दिया जाय।

इस पर सरकारी वकील ने मैजिस्ट्रेट की अदालत की लिखित कार्यवाही पेश की और कहा कि उपस्थित गवाह वास्तव में मुख़बिर है।

मि० आसफ़अली ने ट्रिब्यूनल का ध्यान क्रिमिनल प्रोसीजर कोड की दफ़ा ३३७ की तीसरी उपधारा की ओर आकर्षित करते हुए कहा, कि सरकारी वकील का यह कहना, कि मुख़बिर अभियुक्त नहीं है, अत्यन्त आश्चर्यजनक है। यदि वह अभियुक्त नहीं है तो ज़मानत पर छोड़ क्यों नहीं दिया गया? क्षमा-प्रदान का यह स्पष्ट मतलब है कि कैलाशपति अभियुक्त था।

ट्रिब्यूनल के एक सदस्य, रायबहादुर कुँवरसेन—क्या मैजिस्ट्रेट की अदालत की मिसिल जो ट्रिब्यूनल के सामने अभी पेश की गई है, क्षमा-प्रदान प्रमाणित करने के लिए यथेष्ट नहीं है?

मि० आसफ़अली—नहीं, जब तक कि मि० ईसर न प्रमाणित कर दें।

अभियुक्त प्रो० निगम—क्षमा-प्रदान में कोई शर्तें रक्खी गई हैं या नहीं?

मि० आसफ़अली—अभी इस प्रश्न के उत्तर के लिए ठहरिए, अभी तक तो क्षमा-प्रदान की ही बात प्रमाणित नहीं हुई।

सरकारी वकील मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने एविडेन्स एक्ट की १३३वीं धारा की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहा, कि मुख़बिर की हैसियत गवाह की तरह है।

ट्रिब्यूनल के अधिकार के बाहर

ट्रिब्यूनल के प्रेज़िडेण्ट ने कहा, कि हमें चीफ़ कमिश्नर द्वारा बताए गए कुछ निश्चित अभियुक्तों को छोड़ कर, दूसरे किसी व्यक्ति पर विचार करने का अधिकार नहीं है। यदि मुख़बिर अपने बयान में बदल जाय और सबूत-पक्ष उस पर मामला चलाना चाहे, तो भी हमें अधिकार नहीं है कि हम उस पर विचार कर सकें।

मि० आसफ़अली ने कहा कि मेरा विरोध मिसिल में दर्ज कर लिया जाय, क्योंकि अपील में यह बात बहुत महत्वपूर्ण होगी। मेरे कहने का सारांश यह है, कि कैलाशपति की हैसियत केवल अभियुक्त की है जब तक कि उसके क्षमा-प्रदान की बात क़ानून से प्रमाणित न कर दी जाय।

अदालत ने इस विषय में अपना निर्णय देते हुए कहा, कि मुख़बिर अभियुक्त नहीं है और उससे शपथ ली जा सकती है। ट्रिब्यूनल को ट्रिब्यूनल के विधान के अनुसार किसी को अभियुक्त घोषित करने का अधिकार नहीं है।

शाबाश बहादुर!!

इस पर कैलाशपति ने शपथ लेकर अपना बयान प्रारम्भ कर दिया। उसने कहा, कि मैं आजमगढ़ का निवासी हूँ और २८ या २९ दिसम्बर को दिल्ली में गिरफ़्तार हुआ था। सिटी मैजिस्ट्रेट मि० ईसर ने मुझे क्षमा प्रदान की थी।

एक अभियुक्त—शाबाश बहादुर!

इसके बाद उसने क्रान्तिकारी दल से अपने सम्बन्ध स्थापित होने का इतिहास बतलाया। उसने कहा कि इलाहाबाद के दरियागञ्ज (दारागञ्ज?) स्कूल में पढ़ते समय शैलेन्द्रनाथ चक्रवर्ती से मेरा परिचय हुआ था। शैलेन्द्रनाथ चक्रवर्ती मुझे क्रान्तिकारी ढङ्ग की पुस्तकें पढ़ने के लिए दिया करता था। तीन-चार महीने के बाद उसने मुझे हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन का छपा हुआ एक पीला पर्चा दिया था। उसने मुझसे पूछा, कि "क्या इन नियमों का पालन कर सकते हो?"

सरकारी वकील—वे कैसे नियम थे?

मि० आसफ़अली—यह पूछने की आवश्यकता नहीं है।

सरकारी वकील—चक्रवर्ती का तुमसे यह पूछने का मतलब क्या था?

गवाह—मेरी समझ से उसका मतलब मुझे अपने क्रान्तिकारी दल का सदस्य बनाने का था। दल का मुख्य कर्तव्य भारत को स्वाधीन बनाना था?

सरकारी वकील—किन उपायों से?

मि० आसफ़अली ने इस प्रश्न पर आपत्ति करते हुए कहा, कि वह पीला पर्चा, जो कि कैलाशपति को दिया गया था, वही क्यों न उपस्थित कर दिया जाय?

मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने कहा कि पहले के लाहौर षड्यन्त्र केस की मिसिल मँगाई गई है, उसके आ जाने पर पर्चा पेश किया जायगा।

गवाह ने कहा—दल का उद्देश्य सशस्त्र क्रान्ति के द्वारा भारत को आज़ाद करना था।

इसके बाद गवाह ने कहा कि चक्रवर्ती ने मुझे सभा का सदस्य बना लिया।

मि० आसफ़अली ने कहा—यह कोई गवाही नहीं है। चक्रवर्ती कोई षड्यन्त्रकारी नहीं था।

गवाह ने कहा कि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन का सङ्गठन अखिल भारतीय पैमाने पर किया गया था।

विजयकुमार सिन्हा से मुलाक़ात

सन् १९२९ में चक्रवर्ती ने ३०) रु० तथा एक पत्र देकर मुझे कानपुर भेजा। कानपुर रेलवे-स्टेशन पर

विजयकुमार सिन्हा मिले। सिन्हा मुझे अपने घर कराचीख़ाना ले गए। मैंने उन्हें वह पत्र और २५) रु० दे दिए। ५ रुपए अपने ख़र्च में लगे। तीसरे दिन सिन्हा ने मुझे उन्नाव भेजा। उनके आदेशानुसार मैंने वहाँ एक मकान किराए पर ठीक किया। उसके बाद मैं कानपुर लौट आया। कानपुर में सिन्हा और मैंने, लखनऊ जेल से एक क़ैदी को छुड़ाने के लिए उपाय सोचे। परन्तु हमारे उपाय सफल न हुए।

मि० आसफ़अली ने इस कथन पर आपत्ति की। आपने कहा, कि इस बात का अदालत में पेश करना मामले से कोई सम्बन्ध नहीं है। ट्रिब्यूनल ने आपकी बात स्वीकार कर ली।

गवाह ने कहा कि इसके बाद मैं इलाहाबाद चला गया और वहाँ से तीन-चार महीने के बाद गोरखपुर चला गया। गोरखपुर में मैंने रेलवे के ऑडिट ऑफ़िस में नौकरी कर ली। तीन-चार महीना काम करने के बाद मैं पोस्ट ऑफ़िस विभाग में नौकर हो गया। इस बीच में मैं चक्रवर्ती से इलाहाबाद में तीन दफ़ा मिला। चक्रवर्ती ने मुझसे, गोरखपुर के एम० पी० अवस्थी के द्वारा कानपुर के विजयकुमार सिन्हा से बराबर सम्बन्ध

श्री० विजयकुमार सिन्हा

बनाए रखने के लिए कहा था। अवस्थी के नाम उन्होंने मुझे एक परिचय-पत्र भी दिया था।

अवस्थी से मुलाक़ात

सरकारी वकील—क्या आपने चक्रवर्ती से क्रान्ति सम्बन्धी बातें की थीं?

मि० आसफ़अली—मैं इस प्रकार के प्रश्नों का घोर विरोध करता हूँ।

सरकारी वकील—तुमने अवस्थी से क्या बातें कीं?

गवाह ने कहा कि अवस्थी से मेरी कोई बातचीत नहीं हुई थी। उसने एक दिन कहा था, कि पोस्ट-ऑफ़िस का रुपया लेकर भाग जाओ। वह क्रान्तिकारियों के उपयोग में आएगा।

मि० आसफ़अली—क्या अवस्थी भी कोई अभियुक्त या फ़रार है?

सरकारी वकील—नहीं।

मि० आसफ़अली—तो इस सम्बन्ध की गवाही कैसे प्रासङ्गिक हो सकती है?

आपने कहा कि अब तक मुख़बिर की जितनी गवाही हुई है, वह सब अप्रासङ्गिक है। गवाही तो इस बात की होनी चाहिए कि षड्यन्त्र क्या था?

ट्रिब्यूनल के प्रेज़िडेण्ट ने कहा कि जो विषय चल रहा है वह प्रासङ्गिक है।

अदालत में साइकिल

गवाह ने अपनी गवाही के सिलसिले में कहा कि एम० पी० अवस्थी ने मुझे, पोस्ट ऑफ़िस का रुपया लेकर भाग जाने के लिए एक साइकिल दी थी। लेकिन रुपया लेकर भाग जाने का अवसर नहीं मिला। इसी बीच मैं बरहालगञ्ज ब्राञ्च पोस्ट-ऑफ़िस में बदल दिया गया। वहाँ मैं सन् १९२८ के जून महीने तक रहा। जून के आख़ीर में सुरेन्द्र पाण्डेय विजयकुमार सिन्हा के यहाँ से पत्र लेकर मुझसे मिले। पत्र में रुपया लेकर शीघ्र कानपुर आने के लिए कहा गया था।

सफ़ाई-पक्ष के वकील मि० बलजीतसिंह ने सुरेन्द्र पाण्डे के नाम लिए जाने का विरोध किया। आपने कहा, कि वे लाहौर ट्रिब्यूनल द्वारा बरी किए जा चुके हैं। इस सम्बन्ध में आपने लाहौर हाईकोर्ट की एक नज़ीर

श्री० शिववर्मा

भी पेश की—परन्तु अदालत ने उनकी बात को नहीं माना और गवाह के बयान का कुछ अंश मिसिल में दर्ज कर लिया।

गवाह ने कहा कि इसके एक सप्ताह बाद मैं कानपुर सिन्हा से मिलने के लिए गया। सिन्हा ने मुझसे पोस्ट-ऑफ़िस को लूट लेने और साइकिल द्वारा कानपुर चले आने के लिए कहा।

२६ जून को ११ बजे सुबह मैं पोस्ट-ऑफ़िस का सब रुपया साइकिल पर लेकर रवाना होगया।

मि० आसफ़अली—क्या इस जुर्म के लिए भी मुख़बिर को क्षमा-प्रदान किया जा चुका है?

सरकारी वकील—हाँ, उन सभी जुर्मों के लिए उसे क्षमा मिल गई है, जो कि उसने हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के सदस्य की हैसियत से किए हैं।

इसके बाद गवाह ने कहा कि मैं साइकिल पर लार-रोड स्टेशन पहुँचा। मेरे पास उस समय ३,२००) या ३,१००) रुपए थे।

* * *

अभियुक्त के बच्चे का रुदन

इसी बीच अदालत के एक पुलिसमैन ने अभियुक्त हरद्वारीलाल की पाँच वर्षीया बालिका को, जो कि अपने पिता के पास जाना चाहती थी, ज़बरदस्ती खींच कर अलग कर दिया। बालिका ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। अभियुक्तों ने इसका तीव्र विरोध किया।

इसके बाद अदालत जलपान के लिए स्थगित हो गई। कैलाशपति के जाते समय अभियुक्तों ने "विश्वास-घातियों का नाश हो" के नारे लगाए।

अदालत के फिर बैठने पर अभियुक्त वात्स्यायन ने ट्रिब्यूनल के प्रेज़िडेण्ट से कहा कि अभियुक्तों के बच्चे अभियुक्तों से क्यों नहीं मिलने दिए जाते? हममें से अधिकतर अभियुक्त अविवाहित हैं, इसलिए मिलने वाले बच्चों की संख्या अधिक न होगी।

प्रेज़िडेण्ट—आप लोगों में कितने अभियुक्त विवाहित हैं?

उ०—तीन।

प्र०—सब मिला कर कितने बच्चे हैं?

उ०—सात।

मि० आसफ़अली ने भी अदालत से कहा कि अभियुक्तों के बच्चों को उनसे मिलने की इजाज़त दे दी जाय।

अदालत ने इस बात पर सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से विचार करने का वचन दिया।

इसके बाद गवाह ने अपनी गवाही प्रारम्भ की। उसने कहा कि लार रोड स्टेशन पर साइकिल छोड़ कर रेल-द्वारा मैं बनारस होता हुआ कानपुर पहुँचा। कानपुर में वाजपेयी के मकान पर गया। ५००) वाजपेयी और शेष सब रुपया पाण्डे को दे दिया। शिववर्मा और विजयकुमार सिन्हा बराबर मिलते थे। डॉ० ए० वी० कॉलेज-होस्टल में सुखदेव से भी मुलाक़ात हुई, जिनको मैं एक ग्रामीण समझता था। चन्द्रशेखर आज़ाद और गयाप्रसाद से भी वहीं भेंट हुई। हरदोई में शिववर्मा और प्रताप मिले। शिववर्मा ने प्रताप को मेरे अधिकार में सुपुर्द कर दिया। हम लोग लाहौर पहुँचे लाहौर स्टेशन पर सुखदेव हम लोगों को लेने आए थे। स्टेशन के बाहर सरदार भगतसिंह मिले। सरदार भगतसिंह हम लोगों को गोलबाग़ ले गए। फिर हम चारों यशपाल के घर गए। पहली रात को हम पाँचों आदमी वहीं सोए थे। दो-तीन दिन के बाद एडवर्ड होस्टल में एक कमरा किराए पर लिया गया। वहाँ मैं तीन महीने तक रहा। डॉ० गयाप्रसाद भी एक महीना साथ रहे थे। सुखदेव से मालूम हुआ कि क्रान्तिकारी दल का नाम बदल कर सोशलिस्ट रिपब्लिकन

डॉक्टर गयाप्रसाद

ऐसोसिएशन कर दिया गया था। उन्हीं से मालूम हुआ था कि दल का सम्पूर्ण सङ्गठन-कार्य प्रान्तों में विभक्त कर दिया गया है। यू० पी० के नायक सिन्हा और शिववर्मा, पञ्जाब के भगतसिंह और सुखदेव, राजपूताना के कुन्दनलाल और बिहार के फनीन्द्रनाथ बनाए गए थे। चन्द्रशेखर आज़ाद सम्पूर्ण भारत के प्रधान सेनापति बनाए गए थे।

मि० आसफ़अली—गवाही में कही हुई उपरोक्त बातें सुनी हुई हैं, गवाह को उनका व्यक्तिगत ज्ञान नहीं है।

प्रताप भारत मोटर ट्रेनिङ्ग कॉलेज में मोटर चलाना सीख रहा था। उसने बतलाया कि उसका असली नाम महावीरसिंह था। अमृतसर में मैं एक महीना ठहरा था। शिववर्मा इलाहाबाद के मासिक पत्र "चाँद" के "फाँसी-अङ्क" के लिए लेख लिखने में बहुत अधिक व्यस्त थे।

रुपए की ज़रूरत

नवम्बर महीने में सुखदेव ने मुझसे कहा, कि दल को रुपए की सख़्त ज़रूरत है।

मैं लाहौर गया। वहाँ स्टेशन पर महावीरसिंह मिले। बाद में जयगोपाल, राजगुरु, कुन्दनलाल, आज़ाद, भगतसिंह और सुखदेव भी मिले। किशोरीलाल से भी पहले-पहल भेंट हुई। एक रोज़ सभा की गई। आज़ाद ने मुझसे कहा कि कल पञ्जाब नेशनल बैङ्क लूटा जायगा, इसके लिए सब लोग तैयार रहो।

इसके बाद अदालत स्थगित हो गई।

(क्रमशः)

* * *

केरल प्रान्तीय राजनीतिक परिषद में श्री० सेनगुप्त की गर्जना

"आगामी गोलमेज़-परिषद एक तमाशा होगी"

"पूर्ण स्वाधीनता से कम कुछ भी हमें स्वीकार नहीं हो सकता"

"आगामी संग्राम में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ हमारी शक्ति की परीक्षा हो जायगी"

"जब तक आर्थिक और सामाजिक अन्याय की भित्ति चकनाचूर न हो जाय, तब तक देश को शान्ति नहीं मिल सकती"

गत ३री मई को श्री० जे० एम० सेन गुप्त के सभापतित्व में केरल प्रान्तीय परिषद हुई। गत सत्याग्रह आन्दोलन में भारतवासियों ने किस उत्साह और लगन से भाग लिया था, उसका उल्लेख करते हुए आपने अपने अभिभाषण में कहा—"बारह महीनों तक ऐसा जान पड़ता था, मानो सूखी हड्डियों में फिर नए जीवन का सञ्चार हो आया हो। औरतों और बच्चों तक के हृदयों में देश के प्रति अपूर्व प्रेम जागृत हो उठा था। उनकी भोली आँखों में देश की व्यथा और अपमान का प्रतिबिम्ब खिंचा हुआ था, उनके नेत्रों से देश को विदेशी शासन से स्वतन्त्र करने की महत्वाकांक्षा भी फूटी पड़ती थी। जब हम गत वर्ष के इतिहास की ओर ग़ौर करते हैं, तो हमारा हृदय अभिमान से परिप्लावित हो उठता है। आज भारत में ऐसा कौन बचा है, जिसकी छाती डण्डी (जहाँ महात्मा गाँधी ने पहला धावा किया था) का नाम सुन कर गर्व से फूल न उठती हो और कॉङ्ग्रेस के गौरव को स्मरण कर जो आनन्दातिरेक से सिहर न उठता हो ?

सत्याग्रह आन्दोलन और उसके बाद

सज्जनो, गाँधी-इर्विन समझौते ने कुछ दिनों के लिए आन्दोलन को स्थगित कर दिया है। सम्राट के प्रतिनिधि ने, एक विद्रोही और अर्द्धनग्न-नेता की सलाह के लिए एक आसन पर आमन्त्रित कर ब्रिटेन और भारत के सम्बन्ध के इतिहास में एक नई घटना उपस्थित कर दी है। इसमें लॉर्ड इर्विन की तारीफ़ नहीं है। लॉर्ड इर्विन की सरकार भी इसके लिए प्रशंसा की पात्र नहीं है। तारीफ़ है इसमें आपकी और तारीफ़ है उन औरतों और बच्चों की, जिनके लिए मातृभूमि के स्वातन्त्र्य युद्ध में बड़ा से बड़ा त्याग भी तुच्छ है। इन लोगों ने ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी, कि सरकार उसकी अवहेलना न कर सकी। लॉर्ड इर्विन अच्छी तरह जानते थे कि इस फ़क़ीर के पीछे कितनी बड़ी शक्ति है। वे यह भी अच्छी तरह जानते थे कि ऑर्डिनेन्सों से राज्य नहीं चल सकता। उन्हें इस बात का भी पता था, कि जब तक महात्मा गाँधी सरकार का विरोध करते रहेंगे, तब तक अङ्गरेज़ों का राज्य-सञ्चालन एक तमाशा ही रहेगा। यह समझौता दोनों ओर के वैमनस्य को दूर करने के लिए ही किया गया है। किन्तु यह समझौता अस्थायी-सन्धिमात्र है। यदि सन्धि की शर्तें पूरी न की गईं, तो दोनों पक्ष को युद्ध छेड़ने का अधिकार है। महात्मा गाँधी ने साफ़-साफ़ शब्दों में कहा है, कि "आगामी कुछ महीनों में या तो हम पूर्ण स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे या मैं और सरदार पटेल फिर जेल जायँगे।" अभी विजय प्राप्त नहीं हुई है। हमारा उद्देश्य अभी सिद्ध नहीं हुआ है।

समझौते की शर्तों में ऐसी कोई बात नहीं है, जो कॉङ्ग्रेस-प्रतिनिधियों को पूर्ण-स्वाधीनता की माँग पेश करने से रोक सके। स्वतन्त्र भारत ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत रहेगा या उससे बाहर, इस बात का निश्चय भारतवासी ही कर सकेंगे। भारत अपने आन्तरिक शासन में तथा अपनी परराष्ट्र सम्बन्धी नीति में पूर्ण स्वाधीनता चाहता है। जनता या कॉङ्ग्रेस इससे कम में सन्तुष्ट नहीं हो सकती। इस प्रकार की राजनैतिक स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में भारत ज़रा भी नहीं दब सकता।

भावी गोलमेज़-परिषद में अनेक समस्याएँ उपस्थित होंगी। संरक्षणों और सङ्घ-सरकार के अधिकारों के सम्बन्ध में अनेक विवाद उपस्थित होंगे। शासन-विधान में संरक्षणों का होना कोई नई बात नहीं है। इङ्गलैण्ड और अमेरिका के शासन-विधान में इस प्रकार के संरक्षण मौजूद हैं। किन्तु उनका रूप कुछ दूसरा ही है।

भारत के भावी शासन-विधान में उपस्थित किए जाने वाले संरक्षणों को, मि० मैकडॉनल्ड ने तीन भागों

श्री० सेन गुप्त

में विभाजित किया है। इनमें एक संरक्षण तो शासक-मण्डली के लिए है। मि० रेमज़े मैकडॉनल्ड शासकों के हाथ में कुछ सुरक्षित अधिकार, इसलिए देना चाहते हैं, कि जब शासन-विधान भङ्ग हो जाय, या ऐसा होने की सम्भावना हो, उस समय शासकवर्ग अपने सुरक्षित अधिकारों द्वारा शासन-विधान की रक्षा कर सकें।

इसके बाद दूसरे प्रकार के संरक्षण की बारी आती है। मि० मैकडॉनल्ड आर्थिक और ऋण सम्बन्धी नीति में भी संरक्षण रखना चाहते हैं। आप इस प्रकार के संरक्षण पर अधिक ज़ोर देते हैं। आपका कहना है कि इससे लाभ इङ्गलैण्ड को नहीं, बल्कि भारत को है। किन्तु प्रधान-मन्त्री यह नहीं कह सकते कि इङ्गलैण्ड ही भारत के आर्थिक और ऋण सम्बन्धी कार्यों के सञ्चालन में दक्ष है। वास्तव में अङ्गरेज़ों ने भारत में जिस आर्थिक नीति का अवलम्बन किया है, वह संसार के इतिहास का एक कलङ्कपूर्ण अध्याय है। अङ्गरेज़ों ने अपने व्यापार के लाभ के लिए ही आर्थिक नीति को अपने हाथ में रक्खा है। किसी भी स्वतन्त्र देश ने अपनी आर्थिक स्वतन्त्रता को विदेशियों के हाथों नहीं सौंपा है !

मि० मैकडॉनल्ड का तीसरा संरक्षण है, अल्प-मत वालों के सम्बन्ध में। मैं समझता हूँ कि अङ्गरेज़ व्यापारियों के अधिकार के सम्बन्ध में यह संरक्षण क़ायम किया गया है।

अब प्रश्न यह उठता है, कि क्या हम भविष्य में यूरोपियनों को अपना देश इस प्रकार लूटने देंगे ? भारतवर्ष की इस समय जैसी सामाजिक अवस्था है, उसके अनुसार भारत में रहने वाले यूरोपियनों को अपने शासनाधिकार से हम वञ्चित नहीं कर सकते। आज तक अङ्गरेज़ सरकार, भारतवासियों की कोई परवाह न कर, केवल अङ्गरेज़ों तथा यूरोपियनों की ही भलाई की दृष्टि से कार्य करती आ रही है ! अब हमें इस भेद को दूर करना होगा। म्युनिसिपल-लॉ का यह सिद्धान्त है, कि प्रत्येक नागरिक के साथ समानता का व्यवहार किया जाय। हम इस नियम को भङ्ग नहीं करना चाहते।

महिलाओ और सज्जनो! लक्षणों से यह स्पष्ट विदित होता है कि सरकार अपने अधिकार को नहीं छोड़ना चाहती। व्यापारिक संरक्षणों से जहाँ तक सम्बन्ध है, अङ्गरेज़ आत्म-समर्पण करने के लिए ज़रा भी तैयार नहीं हैं। मेरी यह धारणा कि आगामी गोलमेज़-परिषद केवल एक तमाशा होगी। अङ्गरेज़ अपने व्यापारिक हितों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होंगे, और भारतवासी अपने जातिगत हितों के सम्बन्ध में आत्मसमर्पण नहीं करेंगे। मैं आपसे कह चुका हूँ, कि यह सन्धि चिरस्थायी नहीं है। हाँ, इसे चिरस्थायी बनाना अङ्गरेज़ों के हाथ में है। मेरी यह दृढ़ धारणा है कि संसार में ऐसी कोई भी शक्ति नहीं है, जो भारतवासियों को संसार के राष्ट्रों की पंक्ति में स्थान ग्रहण करने में बाधा पहुँचा सके। हमारी स्वतन्त्रता की यात्रा में, ऐसी कोई भी विघ्न-बाधा नहीं है, जो हमें अग्रसर होने से रोक सके। मैं अपने सामने स्वतन्त्र और संयुक्त भारत का चित्र देख रहा हूँ। इस चित्र के साथ ही मैं उस संग्राम का भी चित्र देख रहा हूँ, जिसमें ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ हमारी शक्ति की परीक्षा हो जायगी।

केरल के नागरिको, मैं आप से और आप ही के द्वारा समस्त भारतीय जनता से अनुरोध करता हूँ, कि कमर कस कर तैयार हो जाओ। मैं कॉङ्ग्रेस के निर्भय और वीर कार्यकर्त्ताओं से तथा किसानों के दुख में काम आने वाले भाइयों से अनुरोध करता हूँ, कि अपनी शक्ति का सञ्चय करो और न्याय, समानता तथा भ्रातृत्व के लिए अपना बलिदान करने के लिए तैयार रहो, जब तक स्वतन्त्रता प्राप्त न हो जाय—जब तक आर्थिक और सामाजिक अन्याय की भित्ति चकनाचूर न हो जाय—तब तक देश को शान्ति नहीं मिल सकती। पूर्ण स्वाधीनता से कम कुछ भी हमें स्वीकार नहीं हो सकता। इसी सिद्धान्त को अपना सहचर बना कर हमें निर्भीक भाव से अग्रसर होना चाहिए !!"

* *

मेरठ षड्यन्त्र-केस के अभियुक्तों के सनसनीपूर्ण बयान

विश्व-व्यापी विप्लव में भारत का स्थान

"क्रान्ति की ओर बढ़े चलो"

श्रमजीवी क्रान्ति का समर्थन :: कॉङ्ग्रेस के सिद्धान्तों की निन्दा

मेरठ षड्यन्त्र केस के अभियुक्त श्रीयुत जोशी ने अदालत के सामने अपना बयान देते हुए राष्ट्रीय क्रान्ति के सम्बन्ध में कहा, कि "ब्रिटिश साम्राज्यवाद का असर भारतवासियों के जीवन में बहुत अन्दर तक प्रवेश कर गया है। ब्रिटिश साम्राज्यवाद निर्बलों के अर्थ-शोषण करने का एक अत्यन्त जटिल और सङ्गठित यन्त्र है। इसका अन्त सैनिक ढङ्ग के षड्यन्त्रों या किसी दल-विशेष के विप्लव से नहीं हो सकता। जन-समूह से अलग किए जाने वाले प्रयत्न व्यर्थ प्रमाणित होते हैं। दलगत विप्लवों से केवल इस बात का पता चलता है, कि लोग साम्राज्यवाद से असन्तुष्ट हैं और उसके विरुद्ध युद्ध करना चाहते हैं। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के मुक़ाबले में लड़ाई छेड़ने के लिए साधारण जन-समूह का ज़बरदस्त सङ्गठन करना होगा। ब्रिटिश साम्राज्यवाद एक प्रकार की सङ्गठित समाज-व्यवस्था है और राष्ट्रीय क्रान्ति उसके विरुद्ध राष्ट्र की भली-भाँति सङ्गठित श्रेणियों का सामूहिक संग्राम है। अतः राष्ट्र की स्वाधीनता-प्राप्ति के लिए संस्थाओं का सङ्गठन अत्यन्त आवश्यक है।"

मज़दूरों तथा किसानों के यूनियनों के विषय में श्रीयुत जोशी ने कहा, कि "इन सामूहिक सङ्गठनों का ध्येय मज़दूरों तथा किसानों के हितों की रक्षा करना है। ये सङ्गठन उनकी दैनिक शिकायतों को दूर करने के साथ ही साथ अर्थ-शोषण प्रणाली को नष्ट कर देना चाहते हैं। ये दोनों ही कार्य उनके युद्ध के दो हिस्से हैं। शान्तिमय अवसरों पर वे रक्षात्मक उपायों से युद्ध करते हैं और क्रान्ति के समय आक्रमणात्मक उपायों का प्रयोग करते हैं। श्रमजीवी दल इन्हीं सङ्गठनों के द्वारा पूँजीवादियों की साम्राज्यवादिता से रक्षात्मक या आक्रमणात्मक प्रकार का युद्ध करता है। सुधारवाद श्रमजीवी आन्दोलन के विपरीत है, इसलिए हम लोग उसके विरुद्ध लड़े और अपने आन्दोलन से उसे दूर हटा दिया।"

मि० जमनादास मेहता, श्री० सुभाषचन्द्र बोस और श्री० रुइकर-सरीखे राष्ट्रीय सुधारवादियों ने चाहा, कि क्रान्तिकारी श्रमजीवी आन्दोलन उन पूँजीपति सुधारवादियों के आन्दोलन के अधीन हो जाय, जिन पूँजीपति सुधारवादियों ने श्रमजीवियों की दैनिक आर्थिक स्थिति के सुधार का कभी कोई प्रयत्न नहीं किया। राष्ट्रीय सुधारवादी लोग पूँजीपतियों के एजेण्ट हैं। उनका उद्देश्य एक तरफ़ क्रान्तिकारी श्रमजीवी आन्दोलन की बाढ़ को रोकना और दूसरी ओर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के मुक़ाबले में पूँजीपतियों की शक्ति को बढ़ाना है।

सामाजिक सुधारवादी

जोशी तथा बखेल सरीखे सामाजिक सुधारवादी कहते हैं, कि मज़दूरों तथा किसानों को राजनीति में पड़ने की कोई ज़रूरत नहीं है। मानो मज़दूर और किसानों को ब्रिटिश साम्राज्यवाद से कोई कष्ट नहीं पहुँचता। उनका कहना है, कि श्रमजीवी दल को केवल अपनी आर्थिक दशा के सुधार का प्रयत्न करना चाहिए। मतलब यह है, कि श्रमजीवी दल को ग़ुलामी दूर करने का प्रयत्न न करके, केवल ग़ुलामी में संशोधन कराने का प्रयत्न करना चाहिए! श्रीयुत जोशी ने कहा, कि "ये सामाजिक सुधारवादी, जो श्रमजीवियों को राजनीति में न पड़ने और समाज के मौजूदा ढाँचे को बनाए रखते हुए, उन्हें अपनी आर्थिक दशा के सुधार की सलाह दे रहे हैं, वास्तव में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के एजेण्ट हैं। राष्ट्रीय तथा सामाजिक, दोनों ही प्रकार के सुधारवादी श्रमजीवी दल के युद्ध की निन्दा करने में एक हो गए हैं। वे श्रमजीवी श्रेणी की स्वाधीनता को पसन्द नहीं करते।"

श्रीयुत जोशी ने आगे चल कर अपने बयान में कहा, कि हम लोग श्रमजीवियों को यह पहले ही बतला चुके हैं, कि उनकी दशा में तब तक कोई स्थायी परिवर्तन नहीं हो सकता, जब तक कि वे अपने शत्रु, पूँजीवाद प्रथा को नष्ट न कर देंगे। इसीलिए हम लोगों ने श्रमजीवी-श्रेणी को अन्य श्रेणियों से मिलने नहीं दिया और श्रेणी-युद्ध की नवीन नीति को ग्रहण किया। हम लोगों ने मज़दूरों तथा किसानों का साथ स्वच्छ क्रान्तिकारी नीति के आधार पर दिया था, भ्रष्ट सुधारवादी नीति के आधार पर नहीं।

कॉङ्ग्रेस से मतभेद

कॉङ्ग्रेस के सम्बन्ध में अपने दृष्टिकोण को बतलाते हुए, श्रीयुत जोशी ने कहा, कि "हमारा और कॉङ्ग्रेस का मतभेद मौलिक है। कॉङ्ग्रेस और हमारे बीच का भेद पूँजीवाद और श्रमजीवीवाद का भेद है। हमारे और कॉङ्ग्रेस के बीच वैसा ही भेद है, जैसा कि पूर्ण स्वाधीनता और औपनिवेशिक स्वराज्य के बीच में है। इसके बाद श्रीयुत जोशी ने कॉङ्ग्रेस के स्वाधीनता-प्रस्ताव का इतिहास बतलाया। आपने कहा, कि दिल्ली की विराम-सन्धि करके कॉङ्ग्रेस ने अपने स्वाधीनता-प्रस्ताव का उल्लङ्घन किया है। कॉङ्ग्रेस वालों पर विश्वासघात का दोषारोपण किया जा सकता है। उन्होंने साम्राज्यवाद से सहयोग करने का मार्ग ग्रहण किया है।"

अपने अभियोग के सम्बन्ध में श्रीयुत जोशी ने कहा—"इस मामले में वास्तव में हम लोगों का विचार नहीं हो रहा है, विचार तो इस समय ब्रिटिश साम्राज्यवाद का हो रहा है। निर्णायक जज हमारे भारतीय श्रमजीवी हैं। हम अभियुक्त नहीं हैं, हम स्वयं मुद्दई हैं। हमें इस विषय में कुछ भी सन्देह नहीं, कि हमारे वास्तविक जजों का अन्तिम निर्णय यही होगा कि "क्रान्ति की ओर बढ़े चलो।"

इसके बाद जज ने श्रीयुत गौरीशङ्कर को अपना बयान देने के लिए कहा। श्रीयुत गौरीशङ्कर गत यूरोपीय युद्ध के समय ब्रिटिश जाति की तरफ़ से लड़ चुके हैं। आपने उस समय ब्रिटिश जाति का साथ देना कैसे उचित समझा था, इसका विवरण बतलाया। आपने कहा कि लड़ाई से वापस आने पर मुझे अपने देश की सेवा करने की अभिलाषा हुई, इसलिए मैं कॉङ्ग्रेस का सदस्य बन गया। मैंने खद्दर का प्रचार किया और किसानों तथा मज़दूरों का सङ्गठन किया। मेरे 'मज़दूर-किसान सङ्घ' से इस मज़दूर तथा किसान-पार्टी का कोई सम्बन्ध नहीं है। दूसरे अभियुक्तों के साथ अपने सम्बन्ध के विषय में आपने कहा, कि "यह बात ठीक है, कि मुज़फ़्फ़र अहमद ने अखिल भारतवर्षीय मज़दूर तथा किसान कॉन्फ्रेन्स के लिए चन्दा एकत्र करने के अभिप्राय से मुझे कुछ रसीद-बुकें दी थीं। परन्तु बाद में जोशी और मुज़फ़्फ़र के यहाँ से कुछ अनिश्चित ढङ्ग के पत्रों के आने पर मैंने उस विषय में फिर कोई कार्रवाई नहीं की।" श्रीयुत जोशी के सम्बन्ध में आपने कहा, कि मुझे यह अच्छा नहीं मालूम होता था कि एक ऐसा व्यक्ति, जो अभी केवल विद्यार्थी था और जिसे दुनिया के सम्बन्ध में केवल किताबी ज्ञान था, मुझे किसी तरह की सलाह दे। मैं जोशी के आदेशों पर कुछ ध्यान नहीं दिया करता था। एक बार मैंने उन्हें लिख दिया था, कि मैं कॉङ्ग्रेस के साथ कन्धे से कन्धा भिड़ा कर कार्य कर रहा हूँ।

अन्त में श्रीयुत गौरीशङ्कर ने कहा कि मैं सात वर्ष से पक्का कॉङ्ग्रेसवादी हूँ। मैं कॉङ्ग्रेस के सिद्धान्त तथा उसके कार्यक्रम को किसी भी संस्था की अपेक्षा अधिक अच्छा समझता हूँ। कॉङ्ग्रेस देश भर की संस्थाओं से उच्च संस्था है और मैं उसके आदेशों को वचन तथा कार्य से पालन करना अपना कर्तव्य समझता हूँ।

श्रीयुत एम० ए० मजीद

इसके बाद अदालत ने श्रीयुत एम० ए० मजीद से अपना बयान देने के लिए कहा। आपने भी उर्दू में अपना बयान दिया। श्रीयुत मजीद ने कहा, कि "मैं स्वीकार करता हूँ कि मैं भारत के कम्यूनिस्ट पार्टी का, जो कि कोई ग़ैर-क़ानूनी संस्था नहीं है, सदस्य हूँ। मेरी गिरफ़्तारी के समय इस संस्था का कम्यूनिस्ट इन्टर-नेशनल के साथ कोई सम्बन्ध नहीं स्थापित हुआ था। फिर भी मैं कम्यूनिस्ट इन्टर नेशनल के प्रोग्राम का पूर्ण समर्थक हूँ।

"इतिहास की गति देखने से पता चलता है, कि भारत संसार की क्रान्ति में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग लेगा। बहैसियत कम्यूनिस्ट के मुझे उस क्रान्ति के परिणामों के विषय में कोई सन्देह नहीं है। मैंने पञ्जाब की मज़दूर तथा किसान-पार्टी के कार्यों में भाग लिया है, इस बात को मैं मानता हूँ। उस पार्टी का उद्देश्य क्रान्ति के द्वारा स्वाधीनता प्राप्त करना, पूँजीवाद को नष्ट करना तथा मज़दूरों और किसानों का प्रजातन्त्र क़ायम करना था। सार्वजनिक उपयोग की वस्तुओं को सहज सुलभ करना, उद्योग-धन्धों को प्रजातन्त्र शासन के अधीन कर देना, मज़दूरों के काम करने के घण्टों को कम करके ८ घण्टा प्रतिदिन कर देना भी उस पार्टी के कार्यक्रम में था। यह पार्टी कम्यूनिस्ट पार्टी न थी—वह केवल एक राष्ट्रीय क्रान्तिकारी संस्था थी।"

इसके बाद श्रीयुत मजीद ने कॉङ्ग्रेस तथा मज़दूर और किसान-पार्टी के बीच का अन्तर बतलाया। आपने कहा, कि कॉङ्ग्रेस का कार्यक्रम सुधारात्मक है, क्रान्तिकारी नहीं है। कॉङ्ग्रेस पूँजीवाद को नष्ट नहीं कर देना चाहती; केवल उसमें कुछ सुधार कर देना चाहती है! विपरीत इसके मज़दूर तथा किसान-पार्टी का उद्देश्य पूँजीवाद को नष्ट कर देना है!

इसके बाद आपने कम्यूनिस्ट पार्टी तथा मज़दूर और किसान-पार्टी का अन्तर बतलाया। आपने कहा, कि कम्यूनिस्ट पार्टी का निकट-ध्येय प्रजातन्त्रात्मक राष्ट्रीय क्रान्ति करके श्रमजीवी दल का आधिपत्य क़ायम करना है। उसका अन्तिम ध्येय राष्ट्रीय प्रजातन्त्र की क्रान्ति कराना है। मज़दूर तथा किसान-पार्टी का इनमें से केवल एक ही ऐतिहासिक ध्येय है।

* * *

क्या भारतीय महिलाएँ भी हिंसात्मक क्रान्ति की ओर बह रही हैं?

काशी के एक बम-सम्बन्धी मामले में तीन बंगाली स्त्रियाँ

पाठकों को स्मरण होगा, लाहौर षड्यन्त्र केस में कई महिलाओं के सम्मिलित होने की बात कही जाती है। श्रीमती दुर्गा देवी, श्रीमती सुशीला देवी तथा सुसम्मात प्रकाशो देवी के नाम फ़रार-अभियुक्तों की सूची में गवर्नमेण्ट की ओर से प्रकाशित हो चुके हैं और इनके पकड़ने के लिए पुरस्कारों की भी घोषणाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं। देहली षड्यन्त्र केस में श्रीमती कमलावती देवी के पकड़े जाने तथा उनके कथनानुसार हिरासत में उनके सतीत्व पर आक्रमण करने का समाचार पाठक गत सप्ताह के 'भविष्य' में पढ़ चुके हैं, अब इन समाचारों को दृष्टि में रखते हुए, यह सन्देह निराधार नहीं कहा जा सकता, कि देश की महिलाएँ भी अब हिंसात्मक क्षेत्र में उतरने लगी हैं। इसके परिणाम पर विचार करना इस समय हमारा उद्देश्य नहीं है, हम केवल विचारशील देशवासियों का ध्यान इस ओर आकर्षित मात्र करना चाहते हैं।

—स० 'भविष्य'

उस दिन काशी के स्पेशल मैजिस्ट्रेट श्री० रघुनन्दन-लाल दर की अदालत में उस नए मुक़दमे की पेशी हुई थी, जिसमें कहा जाता है कि विगत २५ सितम्बर, सन् १६३० को श्री० विमलकुमार राय, श्रीमती मृणालिनी दासी, श्रीमती योगमाया दासी और श्रीमती राधारानी के घर से बम बनाने के सामान बरामद हुए थे।

अदालत ने सब से पहले ख़ुफ़िया पुलिस के इन्स्पेक्टर श्री० हबीबुल्ल मलिक का बयान लिया। गवाह ने कहा, कि गत ८ सितम्बर को दुर्गाकुण्ड की चौकी के पीछे एक बम का धड़ाका हुआ, जिससे लखपतिया नाम की एक स्त्री घायल होकर मर गई। मैं इस मामले की जाँच कर रहा था। मुझे ख़बर मिली, कि मुहल्ला हाथी-फाटक के मकान-नम्बर ३२।२७ में भभकने वाले पदार्थ और हथियार हैं। तदनुसार मैं २५ सितम्बर को दशाश्वमेध के दारोग़ा राना हरनामसिंह, कतिपय पुलिस-मैन, हरी, गौरीशङ्कर तथा उमाधन भट्टाचार्य को लेकर उस मकान में गया। जब हम लोग अन्दर गए और मकान की तलाशी लेने की इच्छा प्रकट की, तो योगमाया ने वारण्ट दिखाने को कहा। इस पर मैंने कहा—मैं बिना वारण्ट के भी तलाशी ले सकता हूँ और मैंने तलाशी लेना आरम्भ कर दिया। एक कमरे के दक्षिण-पश्चिम कोने में एक सूट-केस मिला। उसे मैंने गवाहों के सामने खोला। उसमें से ऐसी चीज़ें बरामद हुईं, जिनसे मालूम होता था, कि इनसे बम बनाए जा सकते हैं। मैंने उन चीज़ों की फ़िहरिस्त बनाई और उस पर गवाहों के हस्ताक्षर करा लिए।

तलाशी के बाद, जिस समय फ़िहरिस्त बनाई जा रही थी, पुलिस-सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री० मानसिंह भी आ पहुँचे। इसके बाद मैंने मृणालिनी, योगमाया और सुविमलकुमार राय को गिरफ़्तार कर लिया। उमाधन की ज़बानी मालूम हुआ, कि तीनों अभियुक्त गत असाढ़ महीने से इस मकान में रहते हैं और ३॥) मासिक भाड़ा देते हैं। जाँच के समय तीनों अभियुक्तों ने हमसे कहा था, कि आठ-नौ दिन हुए यह सूट-केस राधारानी हमारे यहाँ रख गई थी। राधारानी उस दिन नहीं मिली।

२८ सितम्बर को मालूम हुआ, कि अस्सी मुहल्ले के मकान नं० १।६७ में लीलावती के यहाँ राधारानी छिपी है। मैंने फ़ौरन उस मकान की तलाशी ली। परन्तु राधारानी वहाँ भी न मिली। इतने में अम्बिकाप्रसाद ने मुझे बताया, कि दो स्त्रियाँ मकान की छत पर आकर मेरे घर की औरतों में बैठी हैं। मैंने अम्बिकाप्रसाद के घर में जाकर राधारानी को गिरफ़्तार कर लिया। उसी दिन मैंने भागवतप्रसाद और रमणीमोहन की भी तलाशी ली। भागवतप्रसाद से मालूम हुआ कि बनारस बम-केस की पैरवी के लिए एक कमिटी बनाई गई है और उसके लिए चन्दा एकत्र किया जाता है। उसने यह भी बतलाया, कि इसके लिए एक नोटिस नेशनल प्रेस में छपा है। मैंने नेशनल प्रेस जाकर उस नोटिस की असली प्रति अपने क़ब्ज़े में कर ली। गत १० अक्टूबर को सब चीज़ें रासायनिक परीक्षा के लिए भेजी गईं और जब उनकी रिपोर्ट आ गई, तो ज़ाब्ता-फ़ौजदारी की दफ़ा १६४ के अनुसार अभियुक्तों का बयान लेकर उनका चालान कराया गया।

श्री० उमाधन भट्टाचार्य की गवाही

इसके बाद उमाधन भट्टाचार्य की गवाही हुई। इसने कहा कि मकान नं० ३२।२७ मैंने किराए पर लिया है और अपनी ओर से दूसरे किराएदारों को दे रक्खा है। गत असाढ़ में उसका एक कमरा ३॥) महीने पर मृणालिनी तथा सुविमल को दिया था। इसी कमरे की तलाशी मेरे सामने हुई थी। ये सब चीज़ें मेरे सामने बरामद हुई थीं और फ़िहरिस्त पर मेरा ही हस्ताक्षर है।

राना हरनामसिंह की गवाही

इसके बाद तीसरे गवाह दारोग़ा राना हरनामसिंह की गवाही हुई। इसने पहले गवाह की तलाशी सम्बन्धी बातों का समर्थन करते हुए कहा, कि सूट-केस से सुतली की १८ पिण्डियाँ, १५ कारतूस, १ पुड़िया बारूद, दो ख़ाली नारियल, १ लोहे का चोंगा, कुछ लोहे का बुरादा और कई शीशियाँ मिलीं। इसके अलावा और भी बहुत सी चीज़ें सूट-केस में मिलीं, जिनकी फ़िहरिस्त बनाई गई और उस पर गवाहों के दस्तख़त करा लिए गए।

मेरे इलक़े में 'युवक-सङ्घ' नाम की एक संस्था है, जो ग़ैर-क़ानूनी विघोषित की जा चुकी है। गत १७ सितम्बर को मैंने इस सङ्घ के कार्यालय की तलाशी ली थी। इसके रजिस्टर से मालूम हुआ, कि भागवतप्रसाद और राधारानी भी इसके सदस्य हैं।

इसके बाद गवाह ने सूट-केस के वहाँ रक्खे जाने के बारे में उन्हीं बातों की ताईद की, जो पहले गवाह ने बताया था।

श्री० नलिनीमोहन की गवाही

चौथे गवाह नलिनीमोहन राय ने कहा कि मेरे सामने कमरे की तलाशी हुई तथा सूट-केस मय सामान के बरामद हुआ। मृणालिनी ने उस समय कहा था कि यह सूट-केस यहाँ राधारानी रख गई है। हमने अक्सर पहले मृणालिनी, योगमाया और राधारानी को पिकेटिङ्ग करते देखा है।

पाँचवें गवाह हरी अहीर ने नलिनी की बातों का समर्थन करते हुए कहा कि मेरे सामने तलाशी हुई और सूट-केस बरामद हुआ।

विगत सोमवार को इस मुक़दमे की दूसरी पेशी उपर्युक्त अदालत में हुई। राधारानी की ओर से श्री० अमोलकचन्द वकील पैरवीकार थे। मृणालिनी दासी जेल में बीमार थीं, इसलिए उनकी हाज़िरी माफ़ कर दी गई।

मुहम्मद लुक़मान की गवाही

मुहम्मद लुक़मान नाम के एक हेड-कॉन्स्टेबिल ने कहा कि मैं मार्च, १६२८ से जनवरी, १६३१ तक कोतवाली में हेड मुहर्रिर था। गत २५ सितम्बर को ख़ुफ़िया विभाग के दारोग़ा ने एक सूट-केस तथा दो बण्डल मुहर किए हुए मुझे मालख़ाने में रखने के लिए दिए थे, जो अदालत में मौजूद हैं।

युवक-सङ्घ और उसके सदस्य

इसके बाद गवाह भागवतप्रसाद ने अपने बयान में कहा कि सन् १६३० में यहाँ एक 'युवक-सङ्घ' नाम की संस्था थी। मैं इसका सदस्य था। योगमाया तथा मृणालिनी भी उसकी स्वयंसेविकाएँ थीं। मैं राधारानी को जानता हूँ। इसके दो मकान हैं—एक ख़ालिसपुरा में और दूसरा भेलूपुरा में। २५ सितम्बर सन् १६३० को मेरे मकान की तथा योगमाया और रमणीमोहन के मकानों की तलाशियाँ हुईं। इसके बाद मुझे मालूम हुआ कि मेरे नाम वारण्ट है, इसलिए मैं भाग गया। इसके बाद अक्टूबर, १६३० में वापस आया तो मुझसे राधारानी से भेंट हुई। वह उस समय ज़मानत पर छूटी हुई थी। उसने कहा कि हमारे मुक़दमे की पैरवी की जाए, ताकि हम लोग छूट जायँ। मैं राधारानी को श्री० शिवप्रसाद वेरी वकील के यहाँ ले गया। राधा के भाई का नाम मणीन्द्र है। उसने पैरवी के लिए कमेटी बनाने और चन्दा वसूल करने की बात कही। इसके बाद चन्दे के लिए नेशनल प्रेस में नोटिस छपाया गया। और उसे लेकर मिरज़ापुर चन्दा वसूल करने गया, राधा भी साथ थी। लौटते हुए राधारानी ने मुझसे कहा कि सूट-केस पुलिस उठा ले गई है, वह दयानन्द का है। दयानन्द परमानन्द का भाई है। मणीन्द्र ने मुझसे यह भी कहा था, कि कहीं उस सूट-केस को छिपा कर रख दो। उसमें बम बनाने का सामान है। तब मैंने उसे योगमाया के घर में रख दिया और उसे तथा उसकी माँ को बता दिया था, कि इसमें बम बनाने का सामान है।

* * *

हाईकोर्ट में प्रान्तीय सरकार की स्वेच्छाचारिता की निन्दा

चीफ़-जस्टिस और जस्टिस अब्दुल क़ादिर की कड़ी फटकार

सरकार की ओर से रहस्यपूर्ण मौनावलम्बन

पाठकों को स्मरण होगा कि लाहौर हाईकोर्ट ने नए षड्यन्त्र केस के मुख़बिरों को पुलिस की हिरासत से हटा कर सेण्ट्रल जेल में रक्खे जाने की हाल ही में आज्ञा दी थी। हाईकोर्ट की यह आज्ञा अमल में नहीं लाई जा रही है। फलतः हाईकोर्ट और सरकार में इस विषय में विवाद चल रहा है।

इस केस के अभियुक्तों के मामले की जाँच करने वाली स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने पब्लिक प्रॉसिक्यूटर ने चार दिन की मुहलत माँगी थी। चार दिन के बाद उन्होंने उत्तर दिया, कि मैं सरकार की नीति के सम्बन्ध में कुछ नहीं कह सकता। मुझसे कहा गया है, कि स्थानीय सरकार ने अपने ऊपर पूर्ण उत्तरदायित्व ले लिया है।

चीफ़ जस्टिस सर शादीलाल ने कहा, कि इस सम्बन्ध में मौन धारण कर सरकार अपनी सङ्कीर्णता का परिचय दे रही है। एक साधारण मनुष्य यदि मौनावलम्बन करे तो वह क्षम्य है, किन्तु सरकार के लिए ऐसा करना बहुत ही अनुचित है।

अभियुक्तों की ओर के वकील लाला जगन्नाथ ने कहा कि सरकार हाईकोर्ट की आज्ञा की अवहेलना करने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा रही है।

चीफ़ जस्टिस ने कहा, कि कोर्ट अवश्य इस बात पर ध्यान रक्खेगी कि उसकी आज्ञा के अनुसार कार्य हो रहा है या नहीं।

जस्टिस सर अब्दुलक़ादिर ने कहा कि पब्लिक प्रॉसिक्यूटर, सरकार और कोर्ट के बीच में सम्बन्ध-सूत्र हैं। सरकार को उनके द्वारा सच्ची बातें प्रकट कर देनी चाहिए थीं। हाईकोर्ट की आज्ञा की अवहेलना कर, सरकार और उसके एजेण्ट वास्तव में कोर्ट के महत्व को नष्ट कर रहे हैं।

सर शादीलाल—हमें इस बात की ख़बर मिलनी चाहिए कि मुख़बिर कहाँ और कैसे रक्खे गए हैं।

सरकारी वकील—वे लाहौर सेण्ट्रल जेल में, वहाँ के सुपरिण्टेण्डेण्ट के चार्ज में रक्खे गए हैं।

सर शादीलाल—क्या ख़ुफ़िया पुलिस के लोग वहाँ पहुँच जाते हैं?

सरकारी वकील—मैं नहीं जानता।

सर अब्दुल क़ादिर अभियुक्त इस सम्बन्ध में साफ़-साफ़ कहते हैं कि ख़ुफ़िया पुलिस वाले बिना रोक-टोक के उनके पास जाते हैं। ख़ुफ़िया पुलिस वाले वहाँ किस लिए जाते हैं। क्या आपका यह विचार है, कि अदालत के सामने सरकार को कुछ विशेष अधिकार है? यदि आप ऐसा समझते हों, तो प्रमाण दीजिए।

सरकारी वकील ने इस विषय पर सरकार से सम्मति लेने के लिए समय माँगा।

सर शादीलाल—आपको काफ़ी समय मिल चुका है। ४ दिन की मुहलत के बाद पब्लिक प्रॉसिक्यूटर आए तो उन्होंने अनिश्चित उत्तर दिया। क्या अदालत के सामने आप भी इसी तरह पेश आना चाहते हैं? यदि ऐसी ही बात है तो जान पड़ता है, कि अदालतों के सम्बन्ध में कुछ लोगों का विचित्र ख़्याल है।

सर अब्दुल क़ादिर—सरकार को यह अनुभव करना चाहिए, कि यदि वह अदालतों के साथ इस तरह पेश आएगी तो इससे न्याय में धक्का पहुँचेगा और यह स्वयं सरकार के हितों के विरुद्ध होगा। आज सरकार इस तरह पेश आती है, तो कल दूसरे लोग भी इसी तरह पेश आने लगेंगे।

लाला जगन्नाथ ने कहा, कि जब कोर्ट ने सेन्ट्रल जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट को मुख़बिरों को अपने जेल में भर्ती करने के लिए कहा तो सुपरिण्टेण्डेण्ट ने उत्तर दिया कि मुझे इस विषय में कोई आज्ञा नहीं मिली है और जेल में स्थान भी नहीं है। यह वास्तव में अदालत के विरुद्ध अवज्ञा का भाव फैलाना है। लाला जगन्नाथ ने आगे कहा कि हम भद्र-अवज्ञा आन्दोलन के सम्बन्ध में बहुत सुन चुके हैं, किन्तु यह अन्तिम स्थान है, जहाँ अवज्ञा की आशा की जा सकती थी।

श्री० सुखदेव की चिट्ठी के सम्बन्ध में अधिकारियों का कोरा जवाब!

चिट्ठी के लिए श्री० सुखदेव की माता की उत्सुकता

चीफ़ सेक्रेटरी के नाम लाला चिन्तराम थापड़ की चिट्ठी

स्वर्गीय श्री० सुखदेव के चचा लाला चिन्तराम थापड़ ने पञ्जाब-सरकार के चीफ़ सेक्रेटरी के पास निम्न-लिखित प्रार्थना-पत्र भेजा है:—

"मैं सुखदेव से लाहौर सेण्ट्रल जेल में २री मार्च को मिला था। उसने मुझसे कहा था, कि मैंने अपनी माता के पास हिन्दी में एक चिट्ठी लिखी है, जो डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट के पास है। डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब वहीं पर मौजूद थे। उन्होंने मुझसे कहा, कि बातचीत समाप्त कर, जब आप जाने लगेंगे, तो वह चिट्ठी मैं आपको दे दूँगा।

"बातचीत समाप्त कर जब मैंने उनसे चिट्ठी माँगी, तो उन्होंने कहा कि यद्यपि चिट्ठी में कोई ऐसी बात नहीं है, जिससे वह रोकी जा सके, तो भी मैं सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब को दिखा कर दे दूँगा; आप दूसरे दिन किसी आदमी को भेज दीजिएगा। दूसरे दिन मैंने अपने पुत्र मथरादास को चिट्ठी के लिए भेजा। उससे कहा गया कि चिट्ठी अभी सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब को नहीं दिखलाई गई है। सुखदेव की वह चिट्ठी प्राप्त करने में इस प्रकार असफल हो मैं लाहौर से लायलपुर चला आया। कुछ दिनों के बाद जेल के अधिकारियों ने मुझे सूचना दी कि २३वीं मार्च तक सुखदेव से मैं मिल सकता हूँ। यह सूचना पाकर मैं २३वीं मार्च को सेण्ट्रल जेल में गया, और डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट से, सुखदेव की चिट्ठी लौटा देने के लिए फिर कहा। उन्होंने कहा कि क़ैदी से मिलने की बात पहले तय हो जानी चाहिए, उसके बाद चिट्ठी लौटा दी जायगी। किन्तु सुखदेव से अन्तिम बार भेंट करने में भी इतनी बाधाएँ उपस्थित की गईं कि मुझे तथा सुखदेव के अन्य सम्बन्धियों को, बिना उससे भेंट किए ही लौट आना पड़ा। २४वीं मार्च को डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट से मैं फिर मिला और मैंने एक टाईप की हुई चिट्ठी उन्हें दी, जिसमें सुखदेव की किताबें तथा उसकी चिट्ठी माँगी गई थी। उन्होंने चिट्ठी पढ़ कर कहा कि चिट्ठी तथा किताबें बहुत शीघ्र लायलपुर के पते से लौटा दी जायँगी।

"डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट के यहाँ से मैं सीधे जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट के बङ्गले पर गया, और सुखदेव की चिट्ठी तथा किताबें लौटा दी जाने के सम्बन्ध में उनसे प्रार्थना की, सुखदेव की माता इस चिट्ठी के लिए बड़ी उत्सुक थीं। सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब ने मुझे विश्वास दिलाया, कि ये चीज़ें बहुत जल्द लायलपुर भेज दी जायँगी। ३१वीं मार्च तक प्रतीक्षा करता रहा; किन्तु जेल के अधिकारियों ने मुझे कोई सूचना नहीं दी। १ली अप्रैल को मैंने जेल के अधिकारियों के पास इस सम्बन्ध में एक पत्र लिखा और होम सेक्रेटरी के पास भी मैंने एक लम्बी चिट्ठी लिखी।

"इतनी कोशिश-पैरवी के बाद २१वीं अप्रैल को मुझे यह रूखा जवाब मिला कि सुखदेव ने कोई चिट्ठी लिख कर नहीं दी है। इस उत्तर से मानो मेरे पैर के नीचे से पृथ्वी खिसक गई। मैं बहुत ही क्षुब्ध हुआ। फाँसी के दिन सरदार भगतसिंह, श्री० सुखदेव और श्री० राजगुरु ने जो चिट्ठियाँ लिखी थीं, उनके सम्बन्ध में भी आपका ध्यान आकर्षित करना अनुचित नहीं होगा।

"इन चिट्ठियों के सम्बन्ध में मुझे एक उच्च कर्मचारी के सम्बन्धी से पता चला है। मैं अपनी बातों के प्रमाण में काग़ज़ात पेश कर सकता हूँ। मैंने २४वीं मार्च को होम सेक्रेटरी के पास इन चिट्ठियों के सम्बन्ध में लिखा था, किन्तु उन्होंने यह रूखा जवाब दिया, कि क़ैदियों ने कोई पत्र नहीं लिखा था।

"मैं प्रार्थना करता हूँ, कि इस मामले की जाँच की जाय और उसका जो नतीजा निकले उसकी सूचना मुझे दी जाय।"

२१ मई, सन् १९३१

भावी परिस्थिति की गम्भीरता

धीनता संग्राम के स्थगित हो जाने से देश का सब से बड़ा लाभ यह है, कि वह इस सन्धि की क्षणिक अवधि में अपनी और अपने विरोधियों की शक्ति का ठीक-ठीक अन्दाज़ा लगा सकता है, और अपनी ग़लतियों की पुनरावृत्ति रोकने के नए-नए उपाय सोच सकता है। बिना विराम के विकास नहीं होता। जीवन के प्रत्येक कार्य की, उसकी शक्ति के अनुसार, एक सीमा होती है। उस सीमा के आगे उस कार्य को जारी रखने के लिए बीच में विराम देना अनिवार्य है, कारण यह है, कि विराम की ही अवस्था में प्रकृति आगे के लिए अपनी शक्ति सञ्चय करती है। बुद्धिपूर्ण कार्य और विराम का सामञ्जस्य ही जीवन की सफलता का रहस्य है। विराम प्रकृति की एक अनिवार्य आवश्यकता है, कमज़ोरी की निशानी नहीं। उसे कमज़ोरी की निशानी समझ कर जो लोग प्रकृति के एक अनिवार्य नियम की अवहेलना करते हैं, उन्हें कभी न कभी इस अप्राकृतिक अवहेलना के लिए बहुत अधिक मूल्य देना पड़ता है। देश की इस विराम अवस्था में लोग भावी स्वाधीनता संग्राम की परिस्थितियों का अनुमान लगा सकते हैं और तदनुसार अपनी मोर्चेबन्दी का प्रबन्ध भी सोच सकते हैं। प्रत्येक आन्दोलन के बाद देश की ज़िम्मेदारी अधिकाधिक बढ़ती चली जा रही है। अतएव इस लेख में हम भारत के भावी स्वाधीनता संग्राम की एक जटिल परिस्थिति पर विचार करना चाहते हैं। अस्तु।

देश की तथा गवर्नमेण्ट की मौजूदा हालत को देखते हुए, ऐसा मालूम होता है कि अगले संग्राम में, यदि दुर्भाग्यवश ऐसा अवसर उपस्थित हुआ, तो हमें एक ज़बरदस्त आत्म-परीक्षा देनी होगी। अब तक देशवासियों को तरह-तरह के कष्ट देकर केवल उन्हें अपने निर्धारित लक्ष्य से विचलित करने का प्रयत्न किया गया है; किन्तु आगे चल कर पतन के प्रलोभन भी हमारे सामने रक्खे जायँगे, क्योंकि पहला उपाय देश के जाग्रत आत्माभिमान को दबाने में सर्वथा असफल प्रमाणित हो चुका है।

विगत राष्ट्रीय संग्राम ने गवर्नमेण्ट की ताक़त का बाह्य-स्वरूप एक बार ही नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। ब्रिटिश सत्ता का अनुचित आतङ्क लोगों के दिलों से बिल्कुल दूर हो गया है। अभी तक देश के दैनिक शासन के लिए पुलिस और अदालत यथेष्ट समझी जाती थीं। जनता के हृदय में पुलिस का आतङ्क था और अदालत का आदर था। यही दोनों बातें मिल कर शासन-चक्र बराबर चलाए जा रही थीं, परन्तु अब यह बात नहीं रही। अधिकांश देशवासियों के हृदय में, न अब पुलिस का आतङ्क है और न अदालत का सम्मान ही शेष रहा है। एक वह समय था, जबकि सात हज़ार मील दूर बैठे शहन्शाह के प्रतिनिधि के नाते गाँव के एक मामूली चौकीदार में बड़े-बड़े जन-समूहों को एक उँगली के इशारे से तितर-बितर कर देने की क्षमता थी; परन्तु वही भेड़-बकरीवत् जन-समूह आज लगातार लाठी-प्रहारों से भी टस से मस नहीं होता! वे न्यायालय, जहाँ की दीवारें तक कभी न्याय की गम्भीरता और निष्पक्षता का मौन-विज्ञापन दिया करती थीं—आज घृणा, अन्याय, प्रतिशोध और हिंसा के वायु-मण्डल से ढक गए हैं। न्यायाधीशों की आँखों के सामने अदालत के कमरों में पुलिस 'अभियुक्तों' के साथ मनमाना अत्याचार कर रही है, अभियुक्त अदालत का ध्यान आकर्षित करते हैं; परन्तु न्यायाधीश चुपचाप बैठे रहते हैं—इन न्यायाधीशों की इस परवशता पर हमारे हृदय में एक बार ही दया का श्रोत उमड़ पड़ता है! बार-बार के ऐसे दृश्यों ने न्यायाधीशों के स्वतन्त्र अस्तित्व पर सन्देह तो पैदा कर ही दिया है, साथ ही न्याय की तेजस्विता भी नष्ट कर दी है! वास्तव में इन तरल-पदार्थ रूपी न्यायाधीशों ने ब्रिटिश-सत्ता पर सब से ज़बरदस्त आघात किया है। केवल इसलिए, कि इस देश के निवासियों को ब्रिटिश न्यायालयों में सब से अधिक विश्वास था। नौकरशाही तथा न्यायालय के कुत्सित सम्बन्ध ने जनता में न्यायालयों के प्रति घृणा का भाव कूट-कूट कर भर दिया है। इसीलिए लाखों की संख्या में लोग अदालत की कार्रवाई में बिना भाग लिए जेल जाने लगे हैं।

न्याय को निष्पक्ष बनाए रखने के लिए संसार के सभी उन्नत देशों में यह नियम है कि अभियोग लगाने वाले और उसके निर्णय करने वाले अलग-अलग विभाग होते हैं, परन्तु यहाँ की अनियन्त्रित शासन-प्रणाली संसार भर से न्यारी है। पुलिस और अदालत किसी भी शासन-व्यवस्था के मूल स्तम्भ होते हैं। इनका डाँवाडोल होना शासन-व्यवस्था के अधःपतन की प्रारम्भिक सूचना है। सत्याग्रह संग्राम के रोकने में पुलिस के प्रयत्न बिल्कुल निरर्थक और थोथे मालूम होते थे। ऐसा मालूम होता था, मानो कुछ मनुष्यों का सङ्गठित समूह लाठी से पानी जुदा करने का उपहास्य-प्रयत्न कर रहा है!!

देश की नौकरशाही इन सब बातों को ख़ूब समझती है और यह भी समझती है, कि उसने सविनय अवज्ञा के अहिंसात्मक आन्दोलन का सामना करके कोई कीर्ति नहीं कमाई है, किन्तु भविष्य में वह कोई दूसरा ही उपाय काम में लाना चाहती है। अमन और क़ानून की कशमकश में न तो अमन की रक्षा हुई न क़ानून की; परन्तु अमन की उसे चिन्ता भी नहीं है, उसे एकमात्र चिन्ता क़ानून-रक्षा की है। अमन की चिन्ता होती, तो कानपुर की फ़ौज और पुलिस खड़ी-खड़ी हत्याकाण्ड और अग्निकाण्ड न देखती। आठ-आठ रात और दिन कानपुर-जैसे अन्यतम व्यापारिक केन्द्र का दङ्गा इतना भीषण न हुआ होता! प्रजा त्राहि-त्राहि करती हो और ज़िलाधीश अपने बँगले पर सुख की नींद सोता हो, इस घटना से देशवासियों को शिक्षा ग्रहण करना चाहिए! हमें भ्रम में न पड़े रहना चाहिए। कानपुर के अधिकारियों ने अमन और हिन्दुस्तानियों की जानो-माल की रक्षा का भार लगभग त्याग ही दिया था, इसकी ज़िम्मेदारी उसने गाँधी और कॉङ्ग्रेस, को दे दी थी—यह घटना अभी कल की है!

सच बात तो यह है, कि देश और नौकरशाही की लड़ाई उस हद तक पहुँच चुकी है, जहाँ अब परस्पर किसी प्रकार की आशा-निराशा की बात पैदा ही नहीं होती। दोनों तरफ़ के लोग अपनी-अपनी स्थिति समझ चुके हैं। अब तो केवल अपने-अपने अस्तित्व की लड़ाई शेष है। ऐसी अवस्था में वर्तमान शासन-प्रणाली के लिए चोरी, डकैती, हत्याकाण्ड, अग्निकाण्ड और तरह-तरह के दङ्गे रोकना या उनके लिए प्रबन्ध करते फिरना सिवा शक्ति के अपव्यय के और क्या हो सकता है? प्रश्न तो यह है, कि यह सब किया भी किसके लिए जाय? क्या उन्हीं के लिए, जिन्होंने उसके शासन की जड़ हिला दी है? उनके लिए, जिनके दिलों में ब्रिटिश शासन-प्रणाली के प्रति कृतज्ञता का लेश मात्र भी शेष नहीं रह गया है? देश को सावधान हो जाना चाहिए! अब इस शासन-प्रणाली को उसकी जान-माल हिफ़ाज़त करने से विशेष सरोकार नहीं रह गया है। उसका एक-मात्र ध्यान क़ानून की रक्षा करना है, सो भी व्यवस्थापिका सभाओं द्वारा पास किए गए क़ानूनों का नहीं, बल्कि केवल एक व्यक्ति के विशेषाधिकार द्वारा बनाए गए ३२ करोड़ ('नई' मनुष्य-गणना के अनुसार ३५ करोड़ ??) नर-नारियों पर लागू होने वाले ऑर्डिनेन्सों का! विगत राष्ट्रीय संग्राम में देशवासी इस बात का भी पूर्णतया अनुभव प्राप्त कर चुके हैं।

देश भर में विशृङ्खलताओं को पूरी तरह से खुल खेलने का मौक़ा दिया जायगा। बड़े-बड़े और छोटे-छोटे अव्यवस्था फैलाने वाले नित्य नए दल नौकरशाही की ओर से क़ायम किए जायँगे। नित्य नई चढ़ाइयाँ और भिन्न-भिन्न प्रकार के धावे होंगे और साधारण दैनिक शासन के प्रतिबन्ध उनमें कोई दस्तन्दाज़ी न करेंगे। अपढ़, गँवार और ग़रीब मनमानी करने की इस स्वाधीनता को ही स्वराज्य समझ लेंगे और इस प्रकार देश का वातावरण अशान्त बनता चला जायगा! विशृङ्खलताओं के बीज बोए जायँगे और उन्हें पूरे हद तक बढ़ने का अवसर दिया जायगा। कॉङ्ग्रेस का अन्दोलन शान्तिमय है। गवर्नमेण्ट चाहे कितना भी उद्योग करे; किन्तु इस अभागे देश की नौकरशाही और पुलिस उसको ऐसा शान्तिमय वातावरण कदापि नहीं रहने दे सकती। सम्भवतः साधारण दैनिक शासन द्वारा समाज में कुछ हद तक अमन बनाए रख कर उसने अब तक कॉङ्ग्रेस का बल ही बढ़ाया है। अब वह इस बल के आधार को खींच लेना चाहती है, जिससे इस देश के

स्वतन्त्रता-प्रेमियों की शक्ति बँट जाय और वह सङ्गठित-शक्ति शासन-प्रणाली के विरुद्ध काम में न लाई जा सके। देशवासियों को अपनी इस नई परिस्थिति और उसकी ज़िम्मेदारी से सावधान हो जाना आवश्यक है। ऐसी परिस्थिति भविष्य में और भी भयङ्कर रूप धारण कर सकती है। विरोधियों को उसकी चिन्ता नहीं है, क्योंकि वह उनके बल-प्रयोग का स्वर्ण-अवसर होगा। नौकरशाही की सञ्चित शक्ति का उपयोग ऐसे ही अवसरों पर हो सकता है; किन्तु देश का कर्तव्य है, कि वह उसे ऐसा अवसर न प्रदान करे। किसी डर से नहीं, वरन् अपने ही कल्याण के लिए। अव्यवस्था से देश का कल्याण नहीं हो सकता। यदि अव्यवस्था से कल्याण होना होता, तो सन् '२७ में ही हो जाता। देश को केवल इस ग़ैर ज़िम्मेदार शासन-प्रणाली को बदल देने की लड़ाई ही नहीं लड़ना है, बल्कि उसे स्वयं अपने देशवासियों की अव्यवस्थाओं का भी सामना करना पड़ेगा!

देश में अमन बनाए रखने का काम बहुत-कुछ देशवासियों को अपने हाथों में ले लेना पड़ेगा, क्योंकि वर्तमान शासन-प्रणाली इस विषय में उदासीन हो गई है। देश को इस अवसर के दुरुपयोग से बचाने के लिए प्रबल प्रयत्न करने की ज़रूरत पड़ेगी। बड़े-बड़े और छोटे-छोटे दलों को दलगत स्वार्थ और लूट से रोकना होगा। लोगों का ध्यान छोटे-छोटे स्वार्थों में फँसने से रोक कर राष्ट्रीय स्वार्थ की तरफ़ बराबर बनाए रखना पड़ेगा। सर्वसाधारण में इस बात का प्रचार करना होगा, कि 'स्वराज्य' अनियन्त्रण या अव्यवस्था का पर्यायवाची नहीं है, वह भी एक प्रकार का नियन्त्रण ही है। यदि हम ये सारी बातें सफलतापूर्वक कर सकें, तभी हम इस जाल में फँसने से बच सकेंगे, जो कि देश भर में विश्रृङ्खल प्रवृत्तियों को मनमानी करने का मौक़ा देकर तैयार किया जा रहा है। देशवासियों को इस नई परिस्थिति पर ज़रा ठण्डे दिल से विचार करना चाहिए।

* * *

चीन की नई समस्या

भारत का पड़ोसी चीन एशिया का एक उदीयमान एवं उज्ज्वल राष्ट्र है। उसके उत्तरोत्तर ऊपर उठते हुए राष्ट्रीयता-सूर्य के सामने चीन की प्राचीन अराष्ट्रीय पद्धतियाँ अन्धकार की तरह विलीयमान होती चली जा रही हैं।

चीन की नानकिङ्ग सरकार ने चीन में रहने वाले विदेशियों पर लागू होने वाले एक नए क़ानून की घोषणा की है, जिसके अनुसार आगामी पहली अक्टूबर, १९३१ से विदेशियों के अदालती मामलों का विचार उनकी अपनी-अपनी अदालतों में न होकर, चीन की राष्ट्रीय अदालतों में ही हुआ करेगा। इसके लिए जहाँ विदेशियों के प्रमुख केन्द्र हैं, वहाँ दीवानी तथा फ़ौजदारी की ख़ास अदालतें नियत कर दी जायँगी।

चीन में रहने वाले विदेशी इस क़ानून से बहुत असन्तुष्ट हुए हैं। इस सम्बन्ध में उनमें और सरकार के बीच बहुत समय तक बातचीत चलती रही, परन्तु परिणाम कुछ नहीं निकला। एशियाई देशों की राष्ट्रीयता साम्राज्यवादियों के समझ में नहीं आती, इसीलिए चीन की राष्ट्रीयता मानने में वे सङ्कोच करते हैं। स्वयं वे अपने-अपने देशों में एशियाई नागरिकों के लिए उन देशों में प्रवेश करने तक के सम्बन्ध में कैसे-कैसे कड़े क़ानून बनाते हैं, इस पर उनका ध्यान नहीं जाता। चीन ने तो उपरोक्त क़ानून द्वारा चीन देश की अदालत के सामने केवल देशी तथा विदेशी नागरिकों की समानता ही क़ायम की है। वास्तव में विदेशियों के प्रमुख केन्द्रों में उनके लिए ख़ास अदालतों के प्रबन्ध कर देने की घोषणा करके उसने विदेशियों के साथ कुछ रियायत ही की है। परन्तु वे साम्राज्यवादी विदेशी, जो कभी चीन को पैरों तले दबा कर रख चुके हैं, अब इन बातों से कैसे सन्तुष्ट हो सकते थे? उनका कहना है, कि हमें अपनी अदालतों द्वारा अपने मामलों के विचार कराने का अधिकार तब तक बना रहे, जब तक कि हमें चीनी अदालतों पर विश्वास न हो जाय। जब तक इन महाप्रभुओं का विश्वास नहीं जम जाता, तब तक के लिए विदेशी चीन को ख़ाली ही क्यों नहीं कर देते? जब चीनी अदालतों पर विश्वास जम जाय तब वे आकर रह सकते हैं; व्यर्थ की इस छेड़छाड़ से क्या लाभ सोचा गया है? जिस देश में रहना है, उसके निवासियों से अपने लिए अधिक न्याय की इच्छा रखने वालों को उस देश में रहने का कोई अधिकार नहीं है। चीन चीनियों का है, जैसे इङ्गलैण्ड अङ्गरेज़ों का है और फ़्रान्स फ़्रेञ्चों का।

सुना जाता है, कि इन विदेशियों में से ब्रिटेन सब से अधिक असन्तुष्ट है। फ़्रान्स, जापान, संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका आदि चीन की राष्ट्रीयता स्वीकार करने में अधिक आना-कानी नहीं कर रहे हैं, किन्तु ब्रिटिश-सिंह अभी ऐसा करने को तैयार नहीं है। हाल के समाचारों से पता चलता है, कि अङ्गरेज़ों का एक जङ्गी जहाज़ चीन की ओर रवाना हो चुका है। यद्यपि इसका कोई स्पष्ट कारण नहीं बतलाया गया है, किन्तु यदि इस नई समस्या पर खींचातानी दोनों ओर से बढ़ गई, तो परिस्थिति भयङ्कर हो जाने की सम्भावना है।

* * *

अङ्गरेज़ व्यापारियों का प्रलाप

यूरोपियन एसोसिएशन के सभापति मि० विलियर्स आजकल ब्रिटेन में भारत के अङ्गरेज़ व्यापारियों के हितों की रक्षा के लिए प्रचार-कार्य कर रहे हैं। आप इस सम्बन्ध में प्रधान-मन्त्री, मि० बेन, लॉर्ड पील, मि० चर्चिल, मि० बाल्डविन और लॉर्ड रीडिङ्ग से मिल चुके हैं। आपका कहना है कि "भारत को अब तक जितना शासन-सुधार मिल चुका है, वह बहुत अधिक है। अङ्गरेज़ व्यापारी इससे अधिक त्याग करने के लिए तैयार नहीं हैं। यदि ब्रिटेन ने भारत के साथ अब कुछ भी रियायत की, तो वह याद रहे कि अङ्गरेज़ व्यापारी भारत के मुसलमानों तथा अन्य अल्प-संख्यकों को अपनी तरफ़ मिला लेंगे और बल प्रयोग करने तक से न हिचकेंगे।"

बल प्रयोग करने की बात कोई नई नहीं है। बल-प्रयोग तो अङ्गरेज़ी शासन के प्रारम्भ से लेकर आज तक बराबर ही होता आया है, परन्तु उसे सफलता नहीं मिली। मुसलमानों तथा अन्य अल्प-संख्यकों को अपनी तरफ़ मिलाने के प्रयत्न भी धीरे-धीरे असफल ही प्रमाणित होते जा रहे हैं। ऐसी धमकियों से अब भारतवासी विचलित नहीं होते। भारतवासियों के पास बल-प्रयोग का सामना करने के लिए जो अस्त्र मौजूद है, वह संसार भर में किसी के पास भी नहीं है। हमारे इस अस्त्र के सामने युद्ध करने के आधुनिक सभी सामान पुराने और निरर्थक प्रमाणित हो चुके हैं। वायुयानों का कार्यक्षेत्र आकाश में, स्थल-सेना का पृथ्वी-तल में और जल-सेना का समुद्र-तल में परिमित है, परन्तु सत्याग्रही सेना का कार्यक्षेत्र वह विचित्र प्रदेश है, जहाँ वायुयान नहीं पहुँचते, स्थल-सेनाएँ नहीं पहुँचतीं और न जल-सेनाएँ ही पहुँच सकती हैं। अच्छा हो, यदि अङ्गरेज़ व्यापारी बल प्रयोग करने के पहले अपने बल और हमारे बल का ठीक-ठीक अनुमान लगा लें।

* * *

मुसलमानों का अपमान!

अभी हाल ही में, भारत की 'गौराङ्ग सभा' (यूरोपियन एसोसिएशन) के सभापति मि० विलियर्स ने अपने एक भाषण में कहा है, कि भारत-प्रवासी अङ्गरेज़ों को चाहिए, कि मुसलमानों को मिला कर हिन्दुओं को शिक्षा देने की चेष्टा करें। इसके बाद हाल में 'मैञ्चेस्टर गार्जियन' ने सलाह दी है, कि मुसलमानों को रुपए देकर उनसे विलायती कपड़े की दूकानें खुलवानी चाहिए। यद्यपि हम इस तरह की बातों के लिए अङ्गरेज़ों को दोष देना नहीं चाहते—क्योंकि हमारे बहिष्कार आन्दोलन से उनकी स्वार्थपरता को बुरी तरह ठेस लगी है, इसलिए वे बौखला उठे हैं और भारत के बाज़ार में अपना माल बेच कर मालामाल बने रहने के लिए तरह-तरह की तरकीबें सोचा करते हैं—परन्तु मुसलमानों के सम्बन्ध में उनकी जो धारणा है, वह वास्तव में बड़ी ही अपमानजनक है। क्या उपर्युक्त कथनों से यह बात प्रमाणित नहीं होती कि अङ्गरेज़ भारत के मुसलमानों को देशद्रोही समझते हैं और आशा करते हैं, कि वे रुपए के लोभ में पड़ कर देश की भलाई-बुराई का ख़्याल न करके विलायती कपड़े के प्रचार में अङ्गरेज़ों का साथ देंगे? मुसलमानों को—विशेषतः राष्ट्रीय विचार के मुसलमानों को—ऐसी अपमानजनक उक्तियों का विरोध करना चाहिए।

* * *

'मरे को मारे शाह मदार?'

भारत का रेलवे-विभाग कुछ दिनों से अपना ख़र्च घटाने की चेष्टा में था और इसके लिए कई उपाय भी सोचे गए थे; परन्तु हाल की ख़बरों से पता लगा है कि सनातन प्रथानुसार स्वल्प वेतन वाले भारतीय कर्मचारियों को निकाल देना ही, सबसे बढ़ कर समीचीन उपाय मान लिया गया है और 'शुभस्य शीघ्रम्' के अनुसार सन् १९१९ और २० के पाँच वर्षों में जो भारतीय कर्मचारी बहाल किए गए थे, उन्हें नौकरी छोड़ देने के लिए नोटिसें भी दी जाने लगी हैं। फलतः इस अन्धाधुन्ध बढ़ती हुई बेकारी के मामले में रेलवे-विभाग की इस 'ग़रीब मार' नीति का परिणाम कितना भयावह होगा, यह बताने की आवश्यकता नहीं। रेलवे-विभाग में मोटी तनख़्वाहें और प्रचुर 'अलाउन्स' पाने वाले अङ्गरेज़ कर्मचारियों की कमी नहीं है, अगर उनमें से कुछ, जिनका कार्य-काल समाप्त होने को है, हटा दिए जाते या कुछ दिनों के लिए, उन्हें कुछ कम वेतन देकर काम कराया जाता, तो सम्भवतः ख़र्च घटाने वाली समस्या आसानी से हल हो जाती और बेचारे ग़रीब भारतवासियों की रोज़ी मारने की आवश्यकता न पड़ती। परन्तु ग़रीबों का गला घोंट कर अपनी तोंदें मोटी करने वाले निष्ठुर प्रकृति वालों से ऐसी आशा करना केवल विडम्बना मात्र है; क्योंकि वे जानते हैं कि भारतवासी पराधीन हैं और उनमें इस अन्याय के प्रतिकार की क्षमता नहीं है।

* * *
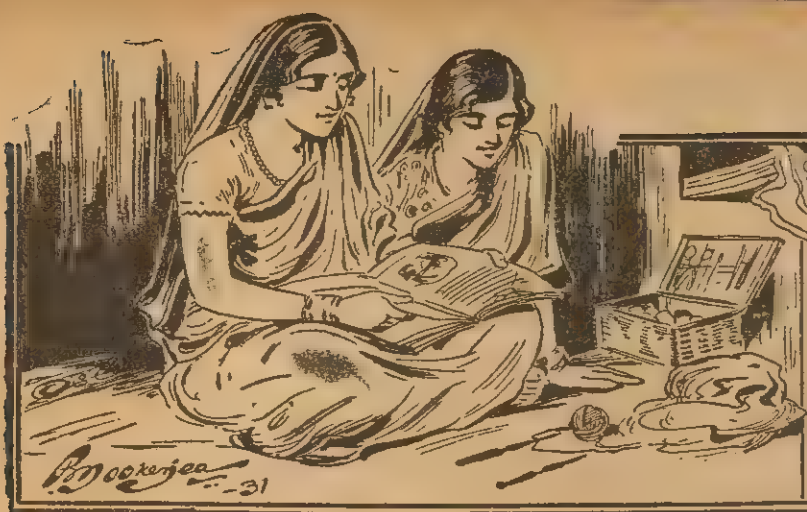
स्वदेश के लिए !

[श्री० "अरुण"]

ड्रोवेस्की ने पूछा—पिता ! सच्चा सैनिक कौन है ?

उत्तर मिला—देश-सेवक।

"धर्म किसे कहते हैं ?"

"स्वदेश-सेवा को।"

"शान्ति कहाँ है ?"

"कर्त्तव्य-पालन में।"

"सफल-जीवन किसे कहते हैं ?"

"जो स्वदेश-सेवा में उत्सर्ग हो।"

"मुक्ति कैसे मिलती है ?"

"मरने में—स्वदेश के लिए !"

अट्ठारह वर्ष का अल्हड़ युवक कुछ चौंका—ठठा कर हँस पड़ा। बोला—सच ! स्वदेश के लिए !

थोड़ी देर जहाँ का तहाँ खड़ा-खड़ा कुछ सोचता रहा। फिर पादरी को सलाम कर एक ओर चल दिया।

प्रकृति नीरव थी।

युवक ने सुना—रास्ते के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष उसकी ओर देख कर कह रहे थे—'स्वदेश के लिए !'

शीतल समीर भी सुवासित पुष्पों का सौरभ लेकर कह रहा था—'स्वदेश के लिए !'

सन्ध्या ने—जाते-जाते ड्रोवेस्की से रागमयी भाषा में कहा—'स्वदेश के लिए !'

उसके अन्तस्तल से अचानक ध्वनि निकली—'स्वदेश के लिए !'

२

ज़ारशाही का ज़माना था। नौकरशाही की तूती बोल रही थी। पूँजीपतियों का अत्याचार दिनों-दिन बढ़ता जा रहा था। श्रमजीवियों में घोर असन्तोष फैल रहा था। सारे रूस में त्राहि-त्राहि मची हुई थी।

निरपराध, निर्दोष, अपने पसीने की गाढ़ी कमाई खाने वाले, असहाय ग़रीबों को पीस डालने के लिए नए-नए कर लगाए जा रहे थे। दमन के घोर से घोर साधनों का आविष्कार और उपयोग हो रहा था। अधिकारियों की बन आई थी। कूटनीति का बाज़ार गरम था। कोई पूछ-जाँच करने वाला न था।

इस राजनैतिक प्रगति के विरुद्ध आन्दोलन करने वाले सैकड़ों देशभक्त वीर फाँसी चढ़ चुके थे। हज़ारों निर्वासित होकर साइबेरिया में अपने जीवन की अन्तिम घड़ियाँ गिन रहे थे। मास्को के कारागार की अँधेरी कोठरियों में सैकड़ों ने तड़प-तड़प कर अपने प्राण दिए थे। असंख्य निर्दोष नवयुवकों को विद्रोही बता कर तोप से उड़वा दिया गया था। केवल—"स्वदेश के लिए !"

अत्याचार की—मृत्यु की—भीषण कसौटी पर कसे जाकर भी स्वाधीनता के पुजारी, देश के मतवाले वीरों का उत्साह अदम्य था ! शान्तिमय क्रान्ति का अमोघ अस्त्र हाथों में लेकर उन्होंने राज-सत्ता को कर्तव्य के मैदान में ललकारा ! हँसते हुए मृत्यु का स्वागत किया ! फाँसी के फन्दों को विजय-माल की भाँति गले में पहिना ! नरक-सदृश कारागार को भी मुक्ति का द्वार समझ कर सहर्ष अपनाया ! कठिन यन्त्रणाओं को चुपचाप सहन किया ! यातनाओं का आलिङ्गन करने में उन्होंने अपना गौरव समझा ! किन्तु कर्त्तव्य से विमुख न हुए ! केवल—"स्वदेश के लिए !"

परन्तु सहनशीलता की भी एक सीमा होती है !

अधिकारी-वर्ग अपनी दमन-नीति को ज़ोरों के साथ स्थायी बना चुके थे, उनकी निरङ्कुशता बढ़ती जा रही थी !

देश भर में विप्लव की भयङ्कर आग भभक उठी ! प्रतिशोध और प्रतिहिंसा का भाव पीड़ित प्रजा के बच्चे-बच्चे के हृदय में जाग्रत हो गया !

फिर क्या था ! जैसे को तैसा !

३

"सलाम क्यों नहीं किया ?"

"मेरा कौन लगता था, जो सलाम करता !"

"पहिचानते भी हो ?"

"होगा कोई—मुझसे क्या !"

"मालूम हो जायगा—तुमसे क्या ?—ज़ार का प्राइवेट सिपाही था ! समझे ?"

"हूँ।"

"ड्रोवेस्की ! तुम बड़े विचित्र हो। भई, परेशान हूँ तुम्हारे पीछे !"

"क्यों ?"

"अपने साथ-साथ मुझे भी ले डूबोगे—काम ही ऐसे करते हो !"

"तो चली जाओ मेरे पास से, मुझे तो अकेले ही आनन्द आता है।"

"यह नहीं हो सकता !"

"अच्छा मैं ही जाता हूँ—सलाम !"

वह चलने लगा।

फ़्लोरा ने उसका हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा—"मैं न जाने दूँगी.........।"

"छोड़ दो,—"

"न—तुम नाराज़ हो गए ड्रोवेस्की !"

"कौन कहता है ! मुझे जाने दो, अब देर होती है।"

"थोड़ी देर और बैठो, फिर चले जाना।"

"देर हो रही है फ़्लोरा !" ड्रोवेस्की चल खड़ा हुआ !

फ़्लोराइना कुछ सोचती रही, फिर उठ कर उसके पीछे-पीछे चली।

चौमुहानी पर पहुँच कर ड्रोवेस्की ने पीछे घूम कर देखा, फ़्लोरा उसके साथ धीरे-धीरे चली आ रही थी !

ड्रोवेस्की ने रोष-भरे स्वर में कहा—तुम क्यों आईं यहाँ ? किसने तुमसे मेरे पीछे लगने को कहा था ?

फ़्लोरा ने चुपचाप सिर झुका लिया !

ड्रोवेस्की आगे गली में जाकर अदृश्य हो गया।

फ़्लोरा की डबडबाई आँखों से दो आँसू टपक पड़े !

वह भी गली में आकर ड्रोवेस्की के मकान के चबूतरे की सीढ़ियों पर बैठ गई !

अँधेरा हो चला था !

४

आधी रात बीत चुकी थी। गली में सन्नाटा छा रहा था। केवल थोड़ी दूर पर एक लालटेन टिमटिमा रही थी।

ड्रोवेस्की ने मेज़ का ड्रायर खोल कर एक रिवॉल्वर निकाला। उसे घुमा-फिरा कर अच्छी तरह देखा, घोड़े की परीक्षा की। फिर कपड़े से उसकी नली साफ़ करके गोलियों की बेल्ट से छः कारतूस निकाल कर उसमें लगाए, रिवॉल्वर को ओवरकोट की जेब में डाला। सिगरेट सुलगाया और धीरे से दर्वाज़ा ठेल कर बाहर आया।

फिर लौट पड़ा—कुछ भूल रहा था ! बक्स खोल कर एक फ़ोटो निकाला और उसे जेब में रख कर बड़ी सतर्कता से बाहर निकला। कान गली की ओर लगे हुए थे ! ताला बन्द न करके, उसने किवाड़ आगे को खींच दिए और चबूतरे पर आ गया।

सीढ़ी पर उतरते ही उसका पैर किसी कोमल चीज़ पर पड़ा और वह फिसल कर गली में मुँह के बल धड़ाम से जा गिरा। लैम्प के झिलमिल प्रकाश में उसने देखा, कोई सीढ़ियों से उठ कर उसकी ओर बढ़ा ! ड्रोवेस्की का हाथ रिवॉल्वर पर पहुँचा ! अनिष्ट की आकांक्षा से वह सतर्क हो गया ! किन्तु यह क्या !

"चोट तो नहीं आई ?"—किसी ने धीमे स्वर में पूछा।

"अरे फ़्लोरा ! तुम कहाँ ?"—ड्रोवेस्की का सिर फ़्लोराइना की गोद में था !

"बोलो—चोट तो नहीं आई ?"

"नहीं।"

"कहाँ जा रहे थे ?"

"पहिले तुम बताओ, इतनी रात को यहाँ क्या कर रही थीं ?"

"जो न बतलाऊँ—"

"मैं भी न बताऊँगा कि मैं कहाँ जा रहा था।"

"सच ?"

"सच नहीं, तो क्या ग़लत !"

ड्रोवेस्की ने उसका मुँह चूम लिया।

फ़्लोरा हँसने लगी।

"तुम बड़े पागल हो !"

"तुमसे कम ही।"

"अच्छा, एक बात कहूँ ?"

"कहो।"

"मानोगे ?"

"मानने लायक़ होगी तो क्यों न मानूँगा।"

"नहीं, वचन दो कि मानोगे—मानने लायक़ है।"

"वाह ! पहले बतला दो।"

"जाओ, फिर आज से—"

फ़्लोरा मुँह फेर कर बैठ गई।

ड्रोवेस्की उठ बैठा। देखा, फ़्लोरा रो रही थी। उसने पुकारा—फ़्लोराइना! तुम्हें क्या हो गया है?

वह चुप थी।

"अच्छा रूठो मत। कहो क्या कहती थीं? मैंने व्यर्थ ही तुम्हारा हृदय दुखा दिया।"—ड्रोवेस्की ने उसे अपने बाहु-पाश में कस कर जकड़ लिया। बड़ा शीत पड़ रहा था, दोनों उठ कर भीतर—बैठक में आ गए।

फ़्लोरा ने कहा—वचन देते हो? मानोगे मेरी बात?

मन्त्र-मुग्ध सा ड्रोवेस्की कह गया—हाँ, मानूँगा।

"तो सवेरे ही मास्को से चले जाओ!"

ड्रोवेस्की पर मानो बिजली गिर पड़ी। उसने फ़्लोराइना के दोनों हाथ अपने हाथों में लेकर कहा—क्यों प्यारी फ़्लोरा, ऐसा क्यों?

"यह न बताऊँगी—अपना वचन स्मरण कर लो!"

"फ़्लोरा! बस, इतना बतला दो, क्यों?"

फ़्लोराइना की आँखों के आँसू न रुके। वह ड्रोवेस्की के कन्धे पर सिर रख कर रोती हुई बोली—प्यारे ड्रोवेस्की! तुम्हीं मेरे लिए सब कुछ हो—तुम्हारे ही लिए कहती हूँ!

ड्रोवेस्की भी एक अबोध बालक की भाँति रो पड़ा।

दोनों प्रेमियों के आँसू एक होकर बह चले। निशानाथ भी खुले हुए द्वार से झाँक कर अपनी किरणों से उन दोनों के पवित्र स्पर्श का अनुभव कर रहे थे।

५

दूसरे दिन।

मास्को में।

शहर के फाटक पर बड़े सवेरे एक घुड़सवार पहुँच कर फाटक खुलवाने का प्रयत्न कर रहा था। थोड़ी देर में फाटक खुला, सन्तरियों ने अपनी बन्दूक़ें उसकी ओर सीधी कर दीं। यही राज-नियम था। उनके नायक ने पूछा—नाम बतलाओ।

"रोमनविच"

"कहाँ जाओगे?"

"बाहर—जङ्गल में।"

"कितनी दूर?"

"यही—दो-तीन मील—"

"क्या काम है?"

"लकड़ी लाना है।"

"पासपोर्ट दिखलाओ?"

युवक घुड़सवार इधर-उधर ताकने लगा।

नायक ने इस बार कड़क कर कहा—पासपोर्ट दिखलाओ?

उसने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया। युवक सवार कुछ ठिठका, फिर पलक मारते अपनी जेब से पिस्तौल निकाल कर लगातार तीन फ़ायरों से दो सन्तरियों और नायक को जहाँ का तहाँ ठण्डा करके सरपट भाग निकला।

'लेना, लेना' करके सिपाही चिल्ला पड़े। गोलियाँ चलाते हुए थोड़ी दूर तक पीछे दौड़े, पर उन्हें उस सवार की धूल भी नहीं मिली।

तीन दिन बाद।

शहर की चौमुहानियों पर नोटिस चिपके हुए थे, जिन पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—

१५,००० रूबल इनाम

राजद्रोही निहिलिस्ट-दल का प्रधान-मन्त्री ईवान ड्रोवेस्की राजकर्मचारियों की हत्या करके मास्को से भाग गया, उसे जीवित या मृत, किसी भी दशा में, सरकार में उपस्थित करने वाले को उपरोक्त इनाम दिया जायगा।

हस्ताक्षर,

—प्रिन्स रूडोविच

जनता उनके पढ़ने के लिए चारों ओर से उमड़ी चली आ रही थी, लोग एक दूसरे पर गिरे पड़ते थे।

छोटे-बड़े, बालक-वृद्ध सबने पढ़ा और पढ़ा एक स्त्री ने, जिसका जीवन-सूत्र अभागे ड्रोवेस्की—राजद्रोही ड्रोवेस्की के साथ बँधा हुआ था!

उस अभागिनी की आत्मा एक बार काँप उठी!

क्या ड्रोवेस्की—देश-भक्त ड्रोवेस्की ने उसे याद किया होगा?

जीवन के प्रवाह में आशा का बाँध टूट कर बह चला। उस पुण्य-स्मृति को हृदय में छिपाए फ़्लोराइना घर लौट आई।

६

दरवाज़े पर किसी ने पुकारा—फ़्लोरो?

स्वर परिचित सा ज्ञात हुआ!

"कौन है?"

"ईवान।"

फ़्लोराइना ने उठ कर द्वार खोल दिया। ड्रोवेस्की कमरे में आते ही धम्म से फ़र्श पर बैठ गया। सिर और कपड़ों पर धूल जमी हुई थी, बाल बिखरे हुए, वेश-भूषा अस्त-व्यस्त! मानो वह किसी दूर की यात्रा से लौटा हो। फ़्लोरा देखती रह गई। ड्रोवेस्की ने पानी माँगा। पानी पीकर कुछ स्वस्थ होने पर उसने कहा—"प्यारी! सम्भवतः यह हमारी अन्तिम भेंट है!" उसका गला भर आया! फ़्लोराइना भी रो पड़ी!!

"प्रियतम! ईश्वर के लिए ऐसा न कहो।"

"नहीं फ़्लोरा, सरकारी गुप्तचर मेरा पीछा कर रहे हैं, मुझे शीघ्र ही देश छोड़ना पड़ेगा............किन्तु नहीं, न जा सकूँगा! प्यारी मातृभूमि! तुझे न छोड़ सकूँगा—मृत्यु पर्यन्त नहीं!"

फ़्लोरा उसके गले से लिपट गई। ड्रोवेस्की उठ खड़ा हुआ।

"जाता हूँ—विदा दो!"

"................!"

"कायर की मौत न मरूँगा, विश्वास रक्खो प्रिये! मेरे हाथ में शस्त्र रहते कोई मेरी छाया भी स्पर्श नहीं कर सकता।"

"प्यारे ड्रोवेस्की! उफ़! मुझे भी साथ ले लो!"

"नहीं फ़्लोरा! अभी तुम्हारी आवश्यकता नहीं है। रूस के मर्द अभी जीवित हैं। क्रान्ति के यज्ञ का अनुष्ठान हो चुका है, पूर्णाहुति बाक़ी है। जानती हो, रूस का बच्चा-बच्चा आज प्रतिहिंसा से पागल हो रहा है! विदा दो! आज एक बड़ा भारी काम करना है।"

"प्रियतम!"

"चलता हूँ प्यारी फ़्लोरा!"

उत्तर की प्रतीक्षा न कर ड्रोवेस्की द्वार खोल कर निकल गया। फ़्लोराइना मार्ग की ओर देखती रही। वह शीघ्र ही दृष्टि से ओझल हो गया।

परन्तु यह क्या? देखते-देखते लगभग पचास सरकारी सैनिकों ने आकर फ़्लोराइना का मकान घेर लिया।

चार सैनिक अपनी बन्दूक़ें सँभालते हुए घर में घुस आए। उनके कप्तान ने पूछा—ड्रोवेस्की कहाँ गया? बोलो मिस!

"कौन ड्रोवेस्की? किसे पूछते हो?"—फ़्लोराइना घबड़ा कर उठ खड़ी हुई।

"हाँ! तुम क्या जानो—बड़ी भोली हो! अभी इसी मकान में वह घुसा था!"

सिपाहियों ने घर का कोना-कोना छान डाला, निराश होकर वे फ़्लोराइना को गिरफ़्तार कर ले चले!

फ़्लोरा के जीवन में वह दिन बड़ा विचित्र था!

७

निहिलिस्ट-दल की गुप्त-समिति की बैठक थी, एक सदस्य ने कहा—इस बार प्रिन्स रूडोविच पर हमारा लक्ष्य रहेगा।

दूसरे ने हँस कर जवाब दिया—जी हाँ, इतने दिनों से उसका कुछ न बिगाड़ सके और अब.........

"इससे क्या—मुझे विश्वास है—पूरा विश्वास है कि इस बार हम लोग उस नर-पिशाच को अवश्य ही ठिकाने लगा सकेंगे।"

"मौत के मुँह में कौन जाने को तैयार होगा?"

"किन्तु उसका अत्याचार—देखते हो, कितना बढ़ रहा है!"

"लेकिन कहने और करने में बड़ा अन्तर होता है।"

"अच्छी बात है, तुम प्रस्ताव कर देना, बाक़ी सब मैं ठीक कर लूँगा।"

"मन्ज़ूर है।"

दोनों दरवाज़े की ओर देखने लगे। पाँच-सात सदस्यों सहित सभापति ने प्रवेश किया।

उसके आसन ग्रहण करने पर सभा की कार्यवाही आरम्भ हो गई।

प्रिन्स रूडोविच का प्रस्ताव रक्खा गया। समर्थन हुआ। बहुमत अनुकूल देख कर सभापति ने अपना निर्णय देते हुए कहा—"भ्रातृवर्ग! प्रिन्स रूडोविच के अत्याचारों से आप लोग भली-भाँति परिचित हैं। इस समय वह ज़ार का दाहिना हाथ होकर देश पर मनमाना ज़ुल्म कर रहा है, राज्य-शासन में उसकी इच्छा—उसकी आज्ञा—ही क़ानून का काम कर रही है, ऐसे देशद्रोही को मिटा देना हमारा आवश्यक कर्त्तव्य है। हमारी संस्था देश की संस्था है। अविचारी शासन का अन्त कर देना हमारा धर्म है, किन्तु मैं जानना चाहता हूँ कि इस महान कार्य को हाथ में लेने के लिए कौन तैयार है? यह निश्चय समझना चाहिए कि असंख्य सेना के पहरे में घुस कर प्रिन्स को मारना और सही-सलामत लौट आना असम्भव है। ऐसी दशा में अपने प्राणों की बाज़ी लगा कर इस देश-द्रोही की हत्या करने का साहस कौन करता है?

"हम लोग पहिले भी इस प्रयत्न में तीन बार असफल हो चुके हैं। लाख सतर्क रहने पर भी प्रत्येक बार हमारे किसी न किसी भाई को जान से हाथ धोना पड़ा है। इस बार अपने उद्देश्य की सफलता के लिए हमें प्राणपण से चेष्टा करनी चाहिए।"

सभा में सन्नाटा छा गया।

प्रस्तावक ने आगे बढ़ कर अपना नाम दिया। उसकी देखादेखी और दो सदस्य तैयार हो गए।

इसी समय प्रधान-मन्त्री ड्रोवेस्की ने अपने आसन पर खड़े होकर कहा—"मेरी सभा से प्रार्थना है कि वह मुझे भी इस कार्य के लिए एक बार अवश्य अवसर दे।"

सभापति ने चारों नाम लिख लिए। क्रम निर्धारित करने के लिए चिट्ठी डाली गई।

एक चिट्ठी निकली। सब लोग उत्सुकता से उधर ही देखने को झुके। सभापति ने पढ़ा—"ईवान ड्रोवेस्की"

ड्रोवेस्की के चेहरे पर दृढ़ता की मुस्कराहट की एक रेखा दौड़ गई!

सभा में करतल-ध्वनि होने लगी!

(शेष मैटर ३०वें पृष्ठ के दूसरे कॉलम में देखिए)

१९०५ की रूसी-क्रान्ति

[श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए०, रिसर्च-स्कॉलर]

(शेषांश)

तवीं अक्टूबर १९०५ को कज़ान रेलवे का चलना बन्द हो गया और कुछ दिनों के अन्दर मास्को की तमाम रेलों का काम एकदम रुक गया। अन्त में जब डाक और तार के कर्मचारियों ने भी हड़ताल कर दी, तो वह और भी भीषण हो गया। धीरे-धीरे मास्को से पिटर्सबर्ग तक रेलवे की हड़ताल फैल गई। कुछ ही दिनों के बाद यह इतनी विस्तृत हो गई कि रूस में कोई भी ऐसा औद्योगिक केन्द्र अथवा कारख़ाना न था, जहाँ के मज़दूर इस हड़ताल में शामिल न हों। रेलगाड़ियों का आना-जाना बन्द था। तार भी रुक गए। अख़बार बन्द हो गए। रोशनी का कोई प्रबन्ध नहीं रहा। प्रतिदिन प्रदर्शन होता था, जिसमें जनता हज़ारों की तादाद में शरीक होती थी। प्रतिदिन स्थान-स्थान पर सभाएँ होती थीं। प्रदर्शनों तथा सभाओं की मानो रूस में आँधी-सी आ गई थी। प्रदर्शन या सभा के पश्चात् बहुधा जनता तथा पुलिस या सैनिकों में सशस्त्र सङ्घर्ष भी हो जाते थे। सड़कों पर, स्थान-स्थान पर सरकार की तरफ़ से मार्ग बन्द कर दिए गए थे, कि जुलूस निकल न सके। कई स्थानों में, जहाँ रास्ता बन्द कर दिया गया था, जनता तथा पुलिस में लड़ाई हो गई। १० अक्टूबर को खारकोव में, ११ अक्टूबर को यकटिरिनोस्ला में और १६ अक्टूबर को ओडेसा में यही हुआ।

१३ अक्टूबर को 'सोवियट ऑफ़ वर्कर्स डिफ़रीज़' की प्रथम बैठक पिटर्सबर्ग में हुई और बहुत शीघ्र यह सोवियट केवल पिटर्सबर्ग ही नहीं, बल्कि तमाम रूस का नेता बन गया। इस हड़ताल-आन्दोलन को देख कर सरकार के होश उड़ गए। वह प्रतिदिन भीषण होता जाता था। सरकार ने उसे दबाने के अनेक उपाय किए, परन्तु सफलता उससे कोसों दूर थी। अतः उसे झुकना पड़ा। १७ अक्टूबर को ज़ार ने एक मैनीफ़ेस्टो निकाल कर जनता को राजनैतिक स्वतन्त्रता देने का आश्वासन दिया और लेजिस्लेटिव एसेम्बली या स्टेट ड्यूमा बुलाने की घोषणा की।

परन्तु रूस के हड़तालियों ने इस जाल में फँसने से इन्कार कर दिया और अपना कार्य जारी रक्खा। "वर्कर्स डिफ़रीज़ सोवियट न्यूज़" ने अपने २० अक्टूबर के अङ्क में उपर्युक्त मैनीफ़ेस्टो की चर्चा करते हुए लिखा था—"अन्त में हम लोगों को विधान दे दिया गया है! हम लोगों को वैध स्वतन्त्रता है, पर एसेम्बली सैनिकों से घिरी रहेगी। हम लोगों को बोलने की स्वतन्त्रता है, पर सेन्सर जैसा का तैसा बना है। हम लोगों को शिक्षा की स्वतन्त्रता है, पर विश्वविद्यालयों में अब भी सैनिक मौजूद हैं। हम लोगों को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता है, पर जेलख़ाने क़ैदियों से खचाखच भरे हैं। हम लोग विधान पा गए हैं, पर निरङ्कुश शासन भी मौजूद है। हम लोगों को सब कुछ दिया गया है और कुछ भी नहीं।"

क्रान्ति के नेता चाहते थे कि आन्दोलन बन्द न किया जावे। जब लेनिन ने मैनीफ़ेस्टो का हाल सुना तो उसने लिखा—"नरम-विचार के धनी लोगों को यह समझ लेना चाहिए कि मैनीफ़ेस्टो में केवल शब्द तथा वादे हैं। पर अब केवल वचनों में कौन विश्वास करता है? ज़ार के वादे को कौन पूरा करेगा?......क्या जनता ने स्वतन्त्रता के युद्ध में अपना रक्त बहाया है, अपने को ब्यूरोक्रेसी के हाथों में सौंप देने के लिए और केवल शब्दों और वादों में बदल जाने के लिए? नहीं, ज़ारशाही घुटने टेकने से अभी बहुत दूर है। निरङ्कुश शासन अभी अटल है। क्रान्ति के कार्यकर्ताओं को अभी अनेक लड़ाइयाँ लड़ना है। उनकी प्रथम विजय उनकी शक्ति को बढ़ाएगी और युद्ध के लिए नए साथी तैयार करेगी।"

उपर्युक्त विचारों से प्रभावित होकर मज़दूरों ने १७ अक्टूबर के बाद भी हड़ताल जारी रक्खी। परन्तु भावी युद्ध की तैयारी करने के लिए अवकाश की आवश्यकता थी। अतः पिटर्सबर्ग के मज़दूरों की कौन्सिल ने २१ अक्टूबर को हड़ताल-आन्दोलन बन्द करने का निश्चय किया और कुछ दिनों के अन्दर ही हड़तालों का अन्त हो गया।

१७ अक्टूबर के मैनीफ़ेस्टो के बाद नरम दल के धनी लोग सरकार की तरफ़ हो गए और मज़दूरों के विरोधी बन गए। वे अधिक आर्थिक हानि सहने को तैयार न थे।

अक्टूबर की हड़ताल के बाद किसानों में भी आन्दोलन शुरू हुआ। वे अपनी स्थिति से पहिले से ही असन्तुष्ट थे। उन्होंने उसे सुधारने के लिए आन्दोलन आरम्भ किया। इस आन्दोलन ने भी शीघ्र ही अत्यन्त भीषण रूप धारण कर लिया। केन्द्रीय रूस, बाल्टिक, पोलैण्ड और काकासस के गाँवों में तहलका मच गया। किसानों ने ज़मींदारों की सम्पत्ति लूट ली। उनकी जायदादें नष्ट-भ्रष्ट कर दीं, ज़मींदार लोग अपने-अपने गाँव छोड़ कर प्राण लेकर भाग गए। इस आन्दोलन में ज़मींदारों के लगभग २,००० मकान आदि नष्ट कर दिए गए थे। काकासस प्रदेश में किसान आन्दोलन ने राजनैतिक जामा पहन लिया था। अनेक स्थानों में किसानों और मज़दूरों में घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित हो गया था। १९०७ की ७वीं नवम्बर को अखिल रूस किसान-सङ्घ की दूसरी कॉङ्ग्रेस हुई। इसने मुख्य-मुख्य आर्थिक समस्याओं को हल किया और आवश्यक राजनैतिक माँगें पेश कीं।

क्रान्ति की लहर सेना में भी जा पहुँची। नवम्बर के मध्य में पिटर्सबर्ग की सेना की कई टुकड़ियों में उत्पात मचने लगा। जनवरी के मध्य में काले सागर के एक बेड़े ने विद्रोह का झण्डा ऊँचा कर दिया। "ओट्स्चकव" नाम के एक क्रूज़र ने १९ नवम्बर को विद्रोह किया। इस विद्रोह का नेता स्चमिड्ट था। बलवाइयों ने क्रूज़र पर लाल झण्डा खड़ा कर दिया। और भी अनेकों जहाज़ों ने "ओट्स्चकव" का अनुकरण किया। स्चमिड्ट ने ज़ार के पास तार भेज कर विधान-विधायिनी सभा की माँग पेश की। पर यह विद्रोह भी शीघ्र दबा दिया गया।

मज़दूरों की माँगें अब और भी अधिक हो गईं। उन्होंने अपना ज़बरदस्त सङ्गठन किया। नवम्बर के महीने में कई नगरों में मज़दूर-सोवियटों की स्थापनाएँ की गईं। २२ नवम्बर को मास्को के मज़दूरों की सोवियट की पहिली बैठक हुई। इसमें ८०,००० मज़दूरों के १८० प्रतिनिधि शरीक हुए थे। पिटर्सबर्ग के मज़दूरों की सोवियट सब से आगे थी। यही सोवियट रूस के तमाम मज़दूरों की पथ-प्रदर्शिका और सन् १९०५ की क्रान्ति की अगुआ थी। जनवरी के अन्त तक पिटर्सबर्ग के मज़दूरों ने क्रान्ति में सब से अधिक भाग लिया था। अक्टूबर और नवम्बर के महीनों में पूँजीपतियों तथा ज़ार के विरुद्ध पिटर्सबर्ग के मज़दूरों ने घोर युद्ध किया। वे दो बातें चाहते थे। प्रथम तो दिन में आठ घण्टे से अधिक काम न करना और द्वितीय, दूसरी राजनैतिक आम हड़ताल।

३१ अक्टूबर को सोवियट ने काम करने का समय प्रतिदिन आठ घण्टे कर देने के लिए युद्ध करना निश्चय किया। मज़दूरों ने पूँजीपतियों के सामने अपनी माँगें रक्खीं और आठ घण्टे काम कर चुकने के बाद वे काम करने से इन्कार करने लगे। जिन मिलों और कारख़ानों के मालिकों ने उनका विरोध किया वहाँ उन्होंने हड़ताल कर दी। मज़दूरों के इस रुख़ को पूँजीपति सहन न कर सके। उन्होंने बदला लेना प्रारम्भ किया। अपनी मिलें और कारख़ाने बन्द कर दिए और झुण्ड के झुण्ड मज़दूरों को निकाल दिया। यही नहीं, उन्होंने मज़दूरों की तनख़्वाहें भी दबा लीं।

पूँजीपतियों के इस विकराल दमन ने मज़दूरों की हिम्मत को पस्त कर दिया। अनेक स्थानों पर उन्होंने घुटने टेक दिए और काम पर लौट गए। अतः सोवियट ने भी आन्दोलन स्थगित कर दिया। इस आन्दोलन के

असफल होने का सब से बड़ा कारण यह था कि इसका सारा बोझ केवल पिटर्सबर्ग के मज़दूरों पर था, देश के और मज़दूर हाथ खींचे बैठे थे।

पिटर्सबर्ग के मज़दूरों की सोवियट का दूसरा काम था, आम हड़ताल! यह हड़ताल पहली से सातवीं नवम्बर तक रही। इस हड़ताल के दो राजनैतिक कारण थे। २६ अक्टूबर को क्रान्सटाड्ट की सेना ने विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह के नेता सैकड़ों सैनिक तथा मल्लाह थे। उन सब पर कोर्ट-मार्शल में मुक़दमा चलाया गया। २६ अक्टूबर को पोलैण्ड में सरकार ने मार्शल-लॉ की घोषणा की। उपर्युक्त दोनों घटनाएँ ही हड़ताल की जन्मदात्री थीं। इस हड़ताल में मज़दूरों ने अपूर्व एकता दिखलाई। लाखों मज़दूरों ने इसमें भाग लिया था।

१ नवम्बर को सोवियट के आदेशानुसार डाक और तार के कर्मचारियों ने भी हड़ताल कर दी।

पर रूस की ज़ारशाही अभी मज़बूत थी। मज़दूरों का सामना करने को मुस्तैद थी। सरकार ने सोवियट को कुचलने का निश्चय किया। वह सोवियट को ही सब अनर्थों की जड़ समझती थी। सोवियट में इतनी शक्ति थी कि हड़ताल के समय स्टेट-रेलवे, ज़ार की सरकार का कहना न मान कर, सोवियट की आज्ञा का पालन करती थी। प्रेस, जिनमें तमाम अख़बार तथा सरकारी पत्र आदि छपते थे, सोवियट के कहने पर ही चलते थे। सोवियट के कहने पर ही फ़ैक्टरियों ने अपना काम बन्द कर दिया। नगर को पानी मिलना सोवियट की इच्छा पर निर्भर था। ट्राम्बें भी उसकी आज्ञा बिना नहीं चल सकती थीं। सेनाएँ भी ज़ार के विरुद्ध होती जाती थीं और सोवियट से सहानुभूति रखती थीं। क्या सोवियट ज़ार की सरकार के विरुद्ध एक नवीन सरकार की नींव रख रही थी?

अतः ज़ार की सरकार ने सोवियट को मटियामेट करने की ठान ली। घोर दमन से काम लेना आरम्भ किया। मज़दूरों की सभाएँ भङ्ग कर दी जाती थीं। क्रान्ति के जितने नेता थे, सब के सब गिरफ़्तार कर लिए गए। पुलिस अधाधुन्ध अत्याचार करने लगी। परन्तु सरकार के इस दमन को देख कर भी पिटर्सबर्ग की सोवियट विचलित नहीं हुई। उसने सरकार को और भी तङ्ग करना प्रारम्भ किया। २२ नवम्बर को उसने सरकार का आर्थिक बॉयकॉट करने का निश्चय किया। उसने मज़दूरों को बैङ्कों से अपने-अपने रुपए वापस ले लेने को कहा और आदेश दिया कि मज़दूर अपनी तनख़्वाहें सोने के रूप में माँगें। सरकार ने इस नवीन आक्रमण के उत्तर में सोवियट के चेयरमैन को पकड़ लिया। फलतः २७ नवम्बर को सोवियट ने सशस्त्र विद्रोह करने का निश्चय किया।

ज़ार की सरकार ने भी आन्दोलन को दबाने के लिए अनेक उपायों से काम लिया। ३री दिसम्बर को सोवियट की बैठक हो रही थी। सरकार ने, जितने मेम्बर बैठक में भाग ले रहे थे, सबको गिरफ़्तार कर लिया। इधर मज़दूरों की सोवियटों ने राजनैतिक आम हड़ताल करवाने का निश्चय कर लिया। ८ दिसम्बर को पिटर्सबर्ग की सोवियट ने हड़ताल करवाई। मास्को की सोवियट ने ७ दिसम्बर को हड़ताल कर दी। अब तक पिटर्सबर्ग के मज़दूर ही हड़तालों का सञ्चालन करते आए थे, पर अब उनमें पुरानी शक्ति न रह गई थी, अतः वे हड़ताल को सफल बनाने में सफल नहीं हुए। अब मास्को के मज़दूर आगे आए और उन्होंने ज़ोरों की हड़ताल की। ६ दिसम्बर को १,५०,००० मज़दूर मास्को की हड़ताल में शामिल थे। वहाँ का गवर्नर-जनरल स्थिति की गम्भीरता को समझ रहा था। उस समय मास्को में सेना नहीं थी। और जो थी, वह विश्वसनीय नहीं थी। सरकार आन्दोलन को शीघ्र ही दबा देना चाहती थी, ताकि वह अधिक बढ़ न सके। ८ दिसम्बर को स्थान-स्थान पर मज़दूरों की सभाएँ हो रही थीं। सरकारी सेनाओं ने इन सभाओं को जा घेरा। ऐसी एक सभा फ़्लीडर इण्डस्ट्रियल सेकेण्डरी स्कूल में हो रही थी। पुलिस और सेना ने सभा-स्थल पर धावा किया। सभा-भङ्ग की आज्ञा देकर लोगों को वह स्थान ख़ाली कर देने को कहा। सभा में जो डेलीगेट उपस्थित थे, उन्हें पुलिस ने पौन घण्टे का समय दिया। इसके बाद उन्हें सभा-स्थल से चले जाने को कहा गया। डेलीगेट आपस में सलाह करते रहे। तत्पश्चात् एक मत से पुलिस कमाण्डर—रचमनिनोव—से स्पष्ट कह दिया कि वे पुलिस की आज्ञा मानने को तैयार नहीं हैं। रचमनिनोव ने उन्हें पुनः विचार करने के लिए दस मिनट का समय दिया और उसके पश्चात् सभा-भवन पर गोली चलाने की धमकी दी। दस मिनट भी समाप्त हो गए और सभा-भवन ख़ाली नहीं हुआ। उसके बाद का हाल एक ऐसे सज्जन के शब्दों में, जो वहाँ उस समय उपस्थित थे, यों है:—

"अन्तिम बिगुल की प्रतिध्वनि अभी विलीन भी न हो पाई थी, कि आज्ञा दी गई—"कम्पनी एटेन्शन!" दूसरी मञ्ज़िल की खिड़कियों पर निशाना लगाओ—एक लहमे की ख़ामोशी—फ़ायर। गोलियों की एक बौछार! शीशों का टूटना और उत्तर में खिड़कियों से गोलियों की वर्षा। यद्यपि मैंने तब तक युद्ध में भाग नहीं लिया था। पर मैं समझ गया कि लड़ाई में भाग लेने का मौक़ा आ गया है। मेरे चारों तरफ़ गोलियाँ सन-सन कर रही थीं। रचमनिनोव ने तोपख़ाने को आज्ञा दी। शब्दों में यह नहीं बताया जा सकता कि हम लोगों पर, ऊँची इमारतों के बीच में घिरे हुए इन तोपख़ाने की गोलियों का क्या असर हुआ।......... इमारतों से गोलियों की भीषण वर्षा, घायल सैनिकों और पुलिस का कराहना, सर्वत्र रक्त का बहना, अपने साथियों को घायल देख कर सैनिकों का अपार क्रोध!

"एकाएक एक खिड़की खुली और एक वस्तु बाहर आती हुई दिखाई दी। प्रत्येक पुरुष चिल्ला उठा—'बम-बम!'....................तत्पश्चात् शीघ्र ही कोई भीतर से चिल्ला उठा—'हम लोग आत्म-समर्पण करते हैं!'............तब गोली चलना बन्द हुई और हारे हुओं ने इमारत छोड़ दी।"

अक्टूबर के मैनीफ़ेस्टो के बाद यह पहिला ही अवसर था, कि राजनैतिक प्रश्नों पर विचार करने के लिए इकट्ठे हुए शान्तिमय नागरिकों पर गोली चलाई गई थी। इस घटना से ही सशस्त्र विद्रोह का श्रीगणेश हुआ। १० दिसम्बर को मास्को की सड़कों पर बमबाज़ी की गई। शान्तिमय सभाएँ राइफ़ल की गोलियों से भङ्ग कर दी गईं। मशीनगनों ने गोलियों की वर्षा की और तोपों ने गोलों की। मास्को का विद्रोह जनता का प्रथम सशस्त्र विद्रोह था। शस्त्र उठाने वालों की संख्या अधिक न थी और न उनके शस्त्र-अस्त्र ही उत्तम थे। पर उनसे सहानुभूति रखने वालों की संख्या अधिक थी। कुछ दिनों तक बराबर मास्को की सड़कों पर युद्ध होता रहा। कभी क्रान्तिवादियों की विजय होती और कभी उनकी हार। मास्को की सड़कें स्थान-स्थान पर बन्द कर दी गई थीं। क्रान्ति को दबाने के लिए जो सेना आती, उससे क्रान्तिकारी सरकारी पक्ष छोड़ कर क्रान्ति की तरफ़ आने की अपील करते। बहुधा उन्हें इस अपील में सफलता भी मिलती। अतः सरकार अपनी सेनाओं पर बहुत अधिक निर्भर नहीं करती थी। ८ दिसम्बर को एक सरकारी सेना को जनता ने राज़ी करके मैदान से हटा दिया। १० दिसम्बर को एक स्थान पर एक सेना खड़ी थी। दो लड़कियाँ लाल झण्डा लिए उनके पास तक दौड़ी चली गईं और उनके पास पहुँच कर उनसे कहा—"हमें मार डालो, क्योंकि जीते जी हम झण्डा नहीं छोड़ेंगी।" उनकी यह बात सुन कर सैनिकों को शर्म लगी और उन्होंने अपने घोड़ों का मुँह मोड़ दिया। सेना को जनता के साथ इतनी सहानुभूति थी कि जनरल दुबसव का कहना था कि मास्को की सेना के १५,००० सैनिकों में से केवल ५,००० पर विश्वास किया जा सकता था।

सरकार और क्रान्तिकारियों में सब से ज़बरदस्त मुठभेड़ मास्को ज़िले के प्रेसनिया स्थान पर हुई। प्राहोरोव फ़ैक्टरी के मज़दूरों ने अपनी एक सेना खड़ी कर ली, वहाँ पर सरकारी सेना बहुत ही थोड़ी थी। मज़दूरों की कौन्सिल सशस्त्र विद्रोह का केन्द्र बन गई। प्रेसनिया और शचका के दो ज़िले विद्रोहियों के हाथों में चले गए। इन ज़िलों में सरकारी ख़बरें पहुँच ही न पाती थीं। वहाँ के लोगों का विश्वास था कि नई सरकार की स्थापना हो गई है। विद्रोहियों की आज्ञा सर्वत्र मानी जाती थी। पर इन सब बातों के होते हुए भी उनकी सेना में २०० से अधिक सैनिक न थे। १६ दिसम्बर को सरकारी सेना ने ज़िले को घेर लिया और विद्रोहियों को कुचलना आरम्भ किया। १८ दिसम्बर को विद्रोही अच्छी तरह कुचल दिए गए। १६ दिसम्बर को मास्को के मज़दूरों की सोवियट ने हड़ताल का अन्त कर दिया।

पाठक यह न समझ लें कि यह सशस्त्र विद्रोह केवल मॉस्को में ही था। रूस के अनेक नगरों में यही हालत थी। रोडरोव-आन-डान का विद्रोह विशेषतः मास्को-विद्रोह से मिलता-जुलता था। जैसे ही मास्को से राजनैतिक आम हड़ताल की ख़बर वहाँ पहुँची तो वहाँ के मज़दूरों ने भी हड़ताल कर दी। सैकड़ों नौजवानों की एक सेना खड़ी कर ली गई। टमरनिक स्थान इस विद्रोह का केन्द्र था। १५ दिसम्बर से २० दिसम्बर तक टमरनिक पर बराबर बमबाज़ी होती रही। सरकार की तरफ़ से ज़िले पर अधिकार करने के लिए बहुत प्रयत्न किए गए, पर वे सब असफल हुए। क्रान्तिकारियों ने पूरा शासन-विभाग खड़ा कर लिया। जनता की ओर से एक जेलख़ाना बनाया गया, जिसमें पुलिस के जासूस आदि बन्द किए जाते थे। परन्तु यह विद्रोह शीघ्र दबा दिया गया। ऐसे विद्रोह को कुचलने के लिए सरकार के पास साधनों की कमी न थी। जनता का एक दल प्रारम्भ से ही इस विद्रोह का विरोध कर रहा था। मेनशेविक सशस्त्र विद्रोह करने के विरोधी थे। वे केवल जनता में प्रचार करना चाहते थे। मेनशेविकों के नेता जॉर्ज प्लेख़नोव ने स्पष्ट शब्दों में इस विद्रोह की निन्दा की। उसका कहना था कि जनता अभी इन सब बातों के लिए तैयार नहीं है।

यद्यपि विद्रोह शान्त कर दिया गया था, पर इस विद्रोह में जनता को जो अनुभव प्राप्त हुए थे, उन्होंने उसे भविष्य के लिए और मज़बूत बना दिया। क्रान्ति की इस असफलता से लेनिन बिल्कुल हताश नहीं हुआ। जैसा कि इस लेख के प्रारम्भ में कह चुके हैं, वह इस क्रान्ति को भावी क्रान्ति की भूमिका मात्र समझता था। उसने लोगों को इस अनुभव से लाभ उठा कर ज़ोरों से कार्य करने की सलाह दी। ख़ैर! फ़िलहाल क्रान्ति के दब जाने के अगले कुछ वर्षों के लिए आन्दोलन बहुत-कुछ ठण्डा हो गया और प्रतिक्रियावादियों की बन आई।

* * *

लीग ऑफ़ नेशन्स और कोरिया का स्वातन्त्र्य आन्दोलन

[श्री० देवकीनन्दन जी विभव, एम० ए०]

(शेषांश)

कोरिया के ईसाई भी चुप न थे। उन्होंने भी अन्य धर्मावलम्बी कोरियनों के कन्धे से कन्धा भिड़ा कर इस महायज्ञ में अपनी आहुतियाँ दीं। सन् १९१८ में जनरल टिरौची ने वहाँ के ईसाइयों के प्रति ऐसे-ऐसे जघन्य कार्य किए, जिससे किसी सहृदय मनुष्य की आत्मा काँपे बग़ैर नहीं रह सकती। एक गाँव में तो जापानियों ने सब ईसाइयों को गिरजे में भर कर आग लगा दी और जिन्होंने भाग कर प्राण बचाने की कोशिश की, उन पर गोलियाँ चला कर उन्हें मार डाला गया। अन्य कुछ प्रसिद्ध ईसाइयों को रेज़िडेण्ट-जनरल को मारने के षडयन्त्र में फाँसा गया, इसमें कोरिया के भूतपूर्व वैदेशिक सहायक मन्त्री वैस-युन-चिहो भी थे। सभ्य-संसार इसे भली प्रकार जानता है कि इस अभियोग में कहाँ तक सत्यता थी, पर फिर भी उन्हें लम्बी-लम्बी सज़ाएँ दे दी गईं।

कोरिया में जिस समय यह महायज्ञ हो रहा था, और देशभक्त उसमें अपनी आहुतियाँ दे रहे थे, उसी समय अमेरिका के प्रेज़िडेण्ट विल्सन ने अपने चौदह सिद्धान्तों की घोषणा की, जिनमें एक यह भी था कि आत्म-निर्णय (Self-determination) का प्रत्येक निर्बल से निर्बल राष्ट्र का जन्म-सिद्ध अधिकार है और राष्ट्रीय परिषद (League of Nations) का यह भी एक ध्येय है कि छोटे-छोटे राष्ट्र ग़ुलामी से मुक्त होकर स्वतन्त्र कर दिए जायँ।

प्रेज़िडेण्ट विल्सन एक बड़े आदर्शवादी थे। हमें उनकी ईमानदारी में सन्देह नहीं। वे जो कुछ कहते थे, सम्भव है उसे करना भी चाहते हों, परन्तु उनका सारा सिद्धान्तवाद केवल गोरे राष्ट्रों के लिए था। यह कहा जाता है, कि जर्मनी आकांक्षाशील, संसार की शान्ति और स्वाधीनता का शत्रु तथा लड़ाई के सभ्य सिद्धान्तों का तोड़ने वाला था, इसलिए अमेरिका न्याय और शान्ति के सिद्धान्तों को अपने रक्त से सींचने के लिए कूद पड़ा। प्रेज़िडेण्ट विल्सन ने स्वयं जर्मनी से युद्ध-घोषणा करने से पहले कहा था—"The day has come, when America is privileged to spend her blood and might for the principles, which give her birth and happiness and the peace which she has treasured"

अमेरिकनों ने फ़्रान्स की रण-भूमि में अपना रक्त बहाया, परन्तु कोरिया में (?) क्या लीग ऑफ़ नेशन्स की एक साम्राज्यवादी सत्ता एक निर्बल और पद-दलित राष्ट्र को अपने नीचातिनीच साधनों से नहीं कुचल रही थी? उस महान आत्म-निर्णय के सिद्धान्त के लिए कितने अमेरिकनों ने कोरिया की भूमि में अपना रक्त बहाया? क्या वहाँ शान्ति और न्याय के सिद्धान्तों का ख़ून नहीं हो रहा था? यही नहीं, कोरिया ने अन्य दलित राष्ट्रों की तरह जब प्रेज़िडेण्ट विल्सन के आत्म-निर्णय और लीग ऑफ़ नेशन्स की बात सुनी तो उसके हृदय में भी आशा का सञ्चार हुआ। उसने पेरिस की परिषद में सम्मिलित होने के लिए अमेरिका में रहने वाले अपने तीन कोरिया-वासियों को चुना। परन्तु न्याय और शान्ति के पुजारी अमेरिका ने उन्हें पासपोर्ट नहीं दिया। धन्य है, अमेरिका का सिद्धान्तवाद! यही नहीं, मित्र-शक्तियाँ जब पेरिस में 'शान्ति और न्याय' की योजना करने का खेल खेल रही थीं, उस समय कोरिया की दुख-गाथा सुनाने के लिए कोरिया का एक युवक नेता क्रिडसिक किम किसी तरह पेरिस जा पहुँचा, परन्तु आदर्शवाद के महान पुजारियों ने उसकी एक बात सुनने से भी इन्कार कर दिया।

कोरिया को शीघ्र ही यह अच्छी तरह ज्ञात हो गया कि उसकी रक्षा स्वयं उसके अतिरिक्त संसार की कोई भी शक्ति नहीं कर सकती। संसार की बड़ी-बड़ी शक्तियाँ जो प्रोपेगेण्डा के लिए बड़े-बड़े सिद्धान्त बघार रही थीं, महायुद्ध के समाप्त होते ही वे अपने असली रूप में प्रकट होने लगीं। कर्नल हाउस ने विल्सन के सम्बन्ध में एक बार लिखा था—"He has a heroic bite. I am afraid it is his destiny to adhere to something that will sink with him." वह भविष्य-वाणी सत्य हुई। प्रेज़िडेण्ट विल्सन के चौदह सिद्धान्त काग़ज़ पर ही लिखे रह गए और जो महायुद्ध 'स्वाधीनता और स्वातन्त्र्य' के उच्च सिद्धान्तों के लिए बतलाया जाता था, वही कुछ निर्बल शक्तियों को बाँट खाने का साधन बनाया जाने लगा।

कोरिया को इस बात का निश्चय था कि जापान के सामने सशस्त्र विरोध सफल होना असम्भव है, इसलिए उसने एक नए और शान्तिमय मार्ग का अवलम्बन किया। कोरिया-निवासियों को पेरिस में अपने प्रतिनिधि का अपमान होने और उनके नाममात्र के बादशाह की मृत्यु के समाचार एक साथ ही मिले। प्रजातन्त्र के भाव जनता में पहले ही से घर कर रहे थे। अब उन्हें उनको कार्य-रूप में लाने का सुयोग मिल गया। कोरिया के नेताओं ने सन् १९१९ में प्रजातन्त्र की घोषणा करने का निश्चय किया और उसके लिए एक मसविदा तैयार किया। इस स्वातन्त्र्य घोषणा के अन्त में लिखा था :—

१—हमने यह कार्य सत्य, धर्म और जीवन की प्रेरणा तथा अपनी जाति की प्रार्थना से उनके स्वातन्त्र्य प्राप्त करने की आकांक्षा का प्रदर्शन करने के लिए हाथ में लिया है। इस कार्य में इसलिए किसी को किसी पर अत्याचार नहीं करना चाहिए।

२—प्रत्येक व्यक्ति को हर समय प्रत्येक स्थान पर अपनी इस आकांक्षा का प्रदर्शन हर्ष के साथ करना चाहिए।

३—सब काम इस उत्तमता के साथ किए जायँ कि हमारा बर्ताव अन्त तक प्रशंसनीय और न्याय-सङ्गत हो।

कोरिया ने महात्मा गाँधी के उसी मार्ग का अनुकरण किया, जिसे उन्होंने इस शताब्दी के कुछ प्रारम्भिक वर्षों में दक्षिण अफ़्रिका में और फिर भारतवर्ष में किया है। उसके नेताओं ने कहा कि हम अपनी कठिन से कठिन सहनशीलता और आत्म-संयम से अत्याचारियों के हृदय और पञ्जे को ढीला कर देंगे, हम जेल की यातनाएँ और मृत्यु की टिकटी का चुम्बन करेंगे, पर अत्याचार का उत्तर अत्याचार से नहीं देंगे। लेकिन हमारी यह अहिंसा हमारी निर्बलता की परिचायक न होगी। घोर दमन भी हमें हमारे पथ से विचलित न कर सकेगा। उन्होंने घोषणा की थी, कि जो कोरियावासी अत्याचार और हिंसा का उपयोग करेगा वह देशद्रोही समझा जायगा और उसके कार्य से हमारे ध्येय में बड़ा धक्का पहुँचेगा।

सन् १९१९ में कोरिया के प्रजातन्त्र का घोषणा-पत्र एक ही समय, एक ही दिन, गाँव-गाँव और नगर-नगर में सुनाया गया। इस दिन कोरिया में नवीन युग का जन्म हुआ। चारों तरफ़ उत्सव और जलसे हुए। सरकारी नौकरों ने अपनी-अपनी वर्दियाँ फाड़ कर फेंक दीं और प्रजातन्त्र के प्रति अपनी भक्ति प्रकट की। जिस समय यह घोषणा-पत्र कोरिया के कोने-कोने में पढ़ा जा रहा था, उस समय इस घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर करने वाले ३३ नेताओं ने मुख्य-मुख्य जापानी-कर्मचारियों को एक भोज में निमन्त्रित किया था और अन्त में अकस्मात स्वातन्त्र्य-घोषणा का अल्टीमेटम पढ़ कर सुना दिया। यही नहीं, उन्होंने कहा —"हमने अपना काम कर लिया है, अब आप हमें जेल भेज सकते हैं।" टेलीफ़ोन द्वारा पुलिस बुलाई गई और उन्हें हथकड़ी भर कर जेल भेज दिया गया।

इसके बाद के एक-दो वर्षों की घटनाएँ कोरियनों के अदम्य साहस, राष्ट्रीय भावों की प्रबलता और सहन-शक्ति को अच्छी तरह प्रकट करती हैं। उनमें उस राष्ट्रीय जीवन का विकास पूर्ण हो चुका था जब पाशविक शक्ति के बड़े से बड़े बन्धन भी उस प्रवाह को रोकने में असमर्थ होते हैं। जब एक व्यक्ति कोरिया की राष्ट्रीय पताका फहराने के लिए जापान के नियत किए हुए कठिन दण्ड को देखता है, और फिर उस दण्ड को भी सह कर कोरियनों को अपनी पताका की रक्षा में दत्त-चित्त देखता है तो उसे यह अनुभव हुए बिना नहीं रह सकता कि वह उस स्थिति को पहुँच चुका है जब मृत्यु या स्वातन्त्र्य केवल दो ही आकांक्षाएँ होती हैं। जापान ने राष्ट्रीय झण्डे के प्रदर्शन के लिए मृत्यु-दण्ड नियत किया था, परन्तु स्वातन्त्र्य घोषणा के दिन सब मकानों और सब व्यक्तियों के पास यह झण्डे थे। कोई भी शक्ति एक राष्ट्र को फाँसी पर नहीं टाँग सकती, जापानी मुँह बाए रह गए।

कोरियनों में अपनी राष्ट्रीय पताका के सम्मान के भाव इतने जागृत हो गए थे कि अवसर पड़ने पर बच्चे, विद्यार्थी और स्त्रियाँ जापानी अफ़सरों की नाक के नीचे उसका प्रदर्शन करने में भी नहीं चूकते थे। एक स्कूल का जलसा हो रहा था। बड़े-बड़े जापानी कर्मचारी उपस्थित थे। अन्त में एक ग्यारह वर्ष का कोरियन छोकरा उठा। उसने जापानी कर्मचारियों को सम्बोधन करके कहा, हम अब आपसे एक चीज़ और माँगते हैं। इसके बाद अपने जेब से एक छोटी सी पताका निकाली और उसे ऊँचा करके कहा— 'हमारा देश हमें वापस कर दो। ईश्वर करे कोरिया चिरायु हो। 'मैंसी' हमारे देश के बन्देमातरम् की तरह कोरियनों का जय-घोष है। सब लड़के चिल्ला उठे—'मैंसी', 'मैंसी', 'मैंसी'। उन्होंने अपने सार्टिफ़िकेट फाड़ कर फेंक दिए और चल दिए। उस छोटे से छोकरे ने यह जानते हुए कि वह, वह अपराध कर रहा है, जिसके लिए कई लोगों को फाँसी पर लटकाया जा चुका है, यह कार्य अपने ऊपर लिया था।

एक ओर यूरोप में मित्र-शक्तियाँ 'शान्ति और न्याय' की स्थापना के लिए बड़ी-बड़ी परिषदें कर रही थीं और लीग ऑफ़ नेशन्स का ध्येय यह बतलाया जाता था, कि उसका उद्देश्य एक सबल राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र के स्वातन्त्र्य और स्वाधीनता की रक्षा करके संसार में स्थायी शान्ति स्थापित करना है, तो दूसरी ओर उनका ही एक

सदस्य—जापान—कोरिया में उस भीषण नीति का अवलम्बन कर रहा था, जो शताब्दियों से संसार में महान क्रान्तियों और अशान्ति का कारण हुई है। लीग ऑफ़ नेशन्स की एक धारा थी :—

Any war or threat of war, whether it effects members of the League or not, is declared to be a matter of concern to the whole league, and the League shall take any action that may be deemed wise and effective to safe guard the peace of nations. It is the right of any member to bring to the notice of the Assembly or Council any circumstance affecting international relations which threatens to disturb international peace.

हम आगे दिखलावेंगे कि कोरिया में जापान जिन साधनों का उपयोग कर रहा था, वे यदि यूरोप में होते तो संसार में अपना रङ्ग लाए बग़ैर न रहते ? क्या यदि कोई शक्ति एक गोरे देश पर इस तरह के अत्याचार करती तो अन्य देश चुप रहते ? क्या लीग ऑफ़ नेशन्स इस तरह उसकी अवहेलना करती ? पोलैण्ड, ज़ेकोस्लोवेकिया, युगोस्लेविया और अन्य प्रजातन्त्र, जिन्होंने कोरिया के मुक़ाबिले में अपने राष्ट्रीय भावों की रक्षा के लिए बहुत कम आत्म-त्याग किया, इस बात के उदाहरण नहीं हैं कि लीग ऑफ़ नेशन्स केवल गोरे देशों के लिए है ? यदि नहीं, तो उपरोक्त धारा के अनुसार क्यों नहीं किसी सदस्य ने लीग ऑफ़ नेशन्स में यह प्रश्न रक्खा और क्यों नहीं उसने बीच में पड़ कर जापान से कहा कि कोरिया से अपना हाथ उठा लो ?

कोरिया ने अपनी स्वातन्त्र्य-घोषणा में जब जापान के आधिपत्य को दूर कर, देश में प्रजातन्त्र स्थापित करने का दृढ़ निश्चय प्रगट किया, तो जापान भी उसकी इस राष्ट्रीय भावना को कुचलने के लिए पूरी तरह तैयार हो गया। जापानी सिपाहियों को राष्ट्रीय जुलूस और सभाएँ भङ्ग करने के लिए लाठी और तलवार दे दिए गए। इनके भयङ्कर अत्याचार प्रत्येक दिन की एक साधारण बात हो गई थी, सड़कों और बाज़ारों में देशभक्तों पर लाठियों की वर्षा होती थी। एक बार एक व्यक्ति के हाथ और कान काट कर उसे सड़क पर छोड़ दिया गया। जेलें देशभक्तों से ठसाठस भर गईं, परन्तु इससे कोरियावासी डरे नहीं, बल्कि उनका निश्चय और भी दृढ़ होता गया।

व्यापारियों और दुकानदारों ने राष्ट्रीय आन्दोलन से पूर्ण सहानुभूति दिखलाई। उन्होंने इन भयङ्कर अत्याचारों के विरोध-स्वरूप अपनी दुकानें बन्द कर दीं, जापानी शासकों ने दुकानों पर सिपाही खड़े कर दिए और दुकानदारों को हुक्म दिया कि वे अपनी दुकान खोलें। उन्होंने अपनी दुकानें खोलीं तो सही, परन्तु सिपाहियों के हटते ही फिर बन्द कर देते थे अथवा ग्राहक जो चीज़ उनसे माँगने आते थे, उनसे कह देते थे कि हमारे यहाँ नहीं है।

विद्यार्थियों—लड़के और लड़कियों—ने 'मैंसी' 'मैंसी' जय-घोष किया और स्कूलों से बाहर निकल आए ? अध्यापक और अध्यापिकाएँ इन्तज़ार में बैठी रहीं, परन्तु कोई विद्यार्थी वापस नहीं आया। उन्हें सार्टिफ़िकेट न देने की धमकी दी गई, पर उन्होंने स्वयं अपने हाथ से सार्टिफ़िकेट फाड़ कर फेंक दिए। सियोल के सब छात्र—लड़के और लड़कियाँ—एक जगह एकत्रित हुए। जापानी सैनिकों ने इनको आकर घेर लिया और उन पर लाठियों से आक्रमण किया। क़रीब २०० लड़के और १२० लड़कियाँ गिरफ़्तार कर ली गईं।

अन्य स्थानों में, छात्राएँ नगर और बाज़ार में राष्ट्रीय प्रदर्शन करने लगीं। उनके राष्ट्रीय जय-घोष से आकाश व्याप्त हो गया। 'कोरिया चिरायु' हो 'जापान का नाश हो' 'कोरिया-प्रजातन्त्र की जय' आदि जय-घोष नागरिकों में जीवन प्रदीप्त करते थे। इनके हाथ में राष्ट्रीय पताका थी और वे पुलिस और सरकारी कर्मचारियों को सम्बोधन करके कहती थीं—"हम राष्ट्रीय पताका धारण करती हैं, आओ हमें गिरफ़्तार करो।"

स्त्रियों और लड़कियों ने सभी जगह अदम्य साहस का परिचय दिया। इनमें बड़े घरों की स्त्रियाँ भी थीं। सार्वजनिक सभाओं और प्रदर्शनों में यह अपनी पूर्ण शक्ति से सहयोग करती थीं। अनेक कठिनाइयाँ और मुसीबतें भी इन्हें इनके पथ से विचलित करने में असमर्थ हुईं। पुरुषों पर ही नहीं, बल्कि स्त्रियों पर भी डण्डे चलाए जाते थे। यही नहीं, उन्हें नङ्गा करने की भी चेष्टा की जाती थी, पर स्त्रियाँ न दबीं, न दबीं। उन्होंने अपनी लज्जा-निवारण के लिए ऐसे वस्त्र बनाए जो शरीर से चिपके रहते थे और कठिनाई से उतर सकते थे। जेलों में भी स्त्रियों के साथ बुरा व्यवहार किया जाता था। कितनी ही लड़कियों को घण्टों घुटनों के बल बिठाया जाता था, कितनों ही पर लात चलाए गए। इसका परिणाम यह हुआ कि कोरिया-निवासियों में जापानियों के प्रति और भी घृणा के भाव भभक उठे। उनके आन्दोलन में उस नवीन जीवन और साहस की लहरें हिलोरें मारने लगीं, जो एक राष्ट्र को 'मृत्यु या विजय' के पथ पर अग्रसर करने को आवश्यक हैं।

स्त्रियों और लड़कियों के साथ जब यह व्यवहार था, तब पुरुषों का क्या कहना है ? उनका तो जीवन, धन और सम्पत्ति सभी ख़तरे में था। जेल में और जेल के बाहर अत्यन्त अमानुषिक अत्याचार होते थे। कोरिया का एक अमेरिकन कर्मचारी जेल की घटनाओं के सम्बन्ध में लिखता है—"मैं जहाँ यह बैठा लिख रहा हूँ, उससे दो सौ गज़ दूरी पर प्रतिदिन मार-पीट जारी रहती है। क़ैदी खम्भों से नङ्गे बाँध दिए जाते हैं और उनके बदन पर इतने कोड़े लगाए जाते हैं कि वे बेचारे बेसुध हो जाते हैं। बेहोश होने पर क़ैदी के बदन पर पानी छिड़का जाता है और होश में आने पर फिर उस पर कोड़ों की मार पड़ती है। कभी-कभी एक ही आदमी दिन में कई बार पीटा जाता है। विश्वस्त-सूत्र से मालूम हुआ है कि इस प्रकार पीटने से लोगों के हाथ-पैर तक टूट गए हैं। स्त्रियों और पुरुषों के अतिरिक्त बच्चे भी गोलियों और सङ्गीनों से भोंक कर मार दिए गए हैं।" यह सब उन कोरियनों के साथ हो रहा था जो जापानियों से किसी भी तरह बल में कम न थे। ऐसी परिस्थिति में भी उन्होंने जिस तरह पूर्ण शान्ति और सहन-शक्ति का परिचय दिया, वह कोरिया के लिए अत्यन्त सराहनीय है। अनेक बार रक्तपात होने से बच गया और इसका अधिक श्रेय ईसाई नेताओं को है।

कोरिया ने जापान के दमन का उत्तर दूसरी ही तरह दिया। सरकार एक मनुष्य को पकड़ती थी, पर उसी काम के करने के लिए दस आदमी आ जाते थे। इस तरह कोरिया ने अपने प्रायः १,६६,००० सुपुत्रों को जेल भेज दिया और तारीफ़ यह है कि इनमें से केवल ८,३२१ आदमियों पर ही मुक़दमे चलाए गए, बाक़ी बिना मुक़दमे चले ही जेलों में सड़ रहे थे। दमन से ही एक देश के राष्ट्रीय भावों की गहराई की परीक्षा होती है, उससे यदि वास्तव में उस देश में राष्ट्रीयता का कोई आधार होता है तो वह नष्ट नहीं होता, बल्कि दिन पर दिन और भी अधिक शुद्ध और दृढ़ होता जाता है।

जापान की सरकार ने कोरिया के गवर्नर-जनरल को आज्ञा दी कि और भी कड़े उपायों का अवलम्बन लें और जो व्यक्ति जापान के आधिपत्य को उखाड़ने की चेष्टा करे उसे कम से कम दस साल की सज़ा दी जाय। परन्तु कोरियनों का इससे डरना तो दूर रहा, उन्होंने शीघ्र ही कोरियन प्रजातन्त्र का व्यवस्था-पत्र बना कर प्रकाशित कर दिया। इसमें उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता के मूल-आधारों की घोषणा करते हुए कहा कि हम अपने जन्म-सिद्ध अधिकारों की रक्षा, स्वातन्त्र्य और साम्य के विस्तार के लिए, साधुता और दया के सिद्धान्तों के लिए, पूर्वीय संसार की शान्ति और विश्व के कल्याण के लिए कोरिया के स्वातन्त्र्य की घोषणा कर रहे हैं। इसमें बतलाया गया कि उनके इस प्रजातन्त्र-विधान में स्त्रियों और पुरुषों को समान अधिकार रहेंगे और उसमें उनके औद्योगिक, राजनीतिक, धार्मिक, लिखने और भाषण सम्बन्धी पूर्ण स्वतन्त्रता की रक्षा की जायगी। यही नहीं, उन्होंने संसार को यह भी सूचना दे दी कि जापान यदि इसी तरह न्याय और विवेक को कुचल कर उनके कर्तव्य और सम्पत्ति पर आक्रमण करता रहा, तो हम अपनी स्वतन्त्रता के लिए अस्त्र ग्रहण करने में भी न चूकेंगे। अस्त्र ग्रहण करने में हमें अत्यन्त खेद होगा, परन्तु हमारा विश्वास है कि कोरिया की स्वाधीनता हमारे सब सिद्धान्तों से ऊपर है और कोरिया का प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन की आहुति देकर भी उसकी रक्षा करना चाहता है।

जापान ने कोरिया के राष्ट्रीय भावों को कुचलने के लिए धीरे-धीरे सब अस्त्रों का प्रयोग किया, परन्तु उसे तनिक भी सफलता न मिली। कोरिया अभी पूर्ण सफल नहीं हुआ, अभी उसे जापान के साम्राज्यवाद से बचने के लिए बहुत-कुछ करना है। यह प्रगति गत बारह वर्ष से चल रही है। जापान को भी अपने पाशविक बल पर विश्वास नहीं रहा है, वह समझता है कि कोरिया स्वतन्त्र राष्ट्र है और जापानियों का वहाँ आधिपत्य अधिक दिन तक नहीं रह सकता। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि कोरिया जापान के आधिपत्य से पूर्ण मुक्त हो जायगा, परन्तु उसके मामले ने यह स्पष्ट कर दिया है कि संसार की शक्तियों का आधार अब भी पाशविक बल पर टिका हुआ है। लीग ऑफ़ नेशन्स की छोटे राष्ट्रों की रक्षा करने की घोषणा स्वार्थ और धूर्तता से भरी हुई है और अभी अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और साम्य के दिन बहुत दूर हैं। संसार की सारी सन्धियाँ, समझौते और परिषदों के हाथ और अधिक मज़बूत करने के लिए हैं और उनका उपयोग परिस्थिति और अवसर पर ही निर्भर है। कोरिया ने जब अमेरिका को उसके साथ की हुई सन्धि का स्मरण दिलाया, तो प्रेज़िडेण्ट रुज़वेल्ट ने जवाब दिया कि, "कोरिया अमेरिका से किस तरह आशा करता है कि वह उसके लिए वह काम कर देगा, जो वह स्वयं अपने लिए नहीं कर सकता।"

जापानियों ने कोरिया में वही किया, जो उन्होंने उद्योग, धन्धों, शिक्षा, सैनिक-व्यवस्था आदि के साथ ही पाश्चात्य देशों से सीखा है। इङ्गलैण्ड, जर्मनी, फ़्रान्स, स्पेन, हॉलैण्ड आदि के इतिहास इन्हीं स्वेच्छाचारों से भरे पड़े हैं। परन्तु हम इस पर भी जापान की अधिक कड़े शब्दों में टीका करते हैं। क्यों ? इसलिए कि जापान बुद्ध के अहिंसा-मार्ग का अनुयायी है, उसने पूर्वीय सभ्यता में जन्म लिया है, उससे पूर्व को आशा है और पूर्व की शक्तियाँ ही उसे जीवित रखने में सफल हो सकती हैं। कोरिया उसका पड़ोसी है, एक रङ्ग, एक धर्म—सब कुछ एक है। जापान को उसकी स्वतन्त्रता में बाधक नहीं, वरन सहायक होना चाहिए।

* * *

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

भारतवासियों के हृदय-सम्राट

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

प्रतिभाशाली उर्दू पत्र-सम्पादकों की चित्रावली

श्री० एम० ए० रहमान मालिक "नूरजहाँ"

श्री० नियाज़ फ़तहपुरी, सम्पादक "निगार"

श्री० जमाल साबिरी, सम्पादक "अलीगढ़ पत्र"

मौलाना सैयद ज़फ़र मेहदी साहब गुहर, सम्पादक "सहेल-यमन"

ख़्वाजा हसन निज़ामी, प्रधान सम्पादक "मुनादी"

मिस्टर अमरचन्द कैश सम्पादक "सुदर्शन"

श्री० ज़फ़र अब्बास, सम्पादक "नज़ारा"

श्री० बतसम निज़ामी, सम्पादक "नर्गिस"

श्री० सय्यद ज़वार अब्बास, सम्पादक "इलाहाबाद युनिवर्सिटी उर्दू एसोसिएशन मैगज़ीन"

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

श्रीमती ए० पी० अडीसेशिया—आप वेलोर (मद्रास) की ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट और कई संस्थाओं की मन्त्रिणी तथा सभानेत्री आदि हैं।

मुन्शी सुखदेवप्रसाद सिनहा 'बिस्मिल' इलाहाबादी—आप उर्दू के प्रसिद्ध शायर और 'भविष्य' के 'केसर की क्यारी' स्तम्भ के सम्पादक हैं।

पं० रघुवंशरल गौड़—आप अलीगढ़ बार-कौन्सिल के डिक्टेटर थे, जो सरकारी सेना को भड़काने के अभियोग में गिरफ़्तार हुए थे और हाल ही में छूटे हैं।

राष्ट्रीय एकता के शहीद श्री० गणेशशङ्कर जी विद्यार्थी के शव-दाह के समय का कारुणिक दृश्य।

कुमारी डी० के० पट्टामल—आप कञ्जीवरम (मद्रास) के सरकारी स्त्री-विद्यालय की छात्री हैं। एक नाटक में यम का पार्ट करने तथा सुन्दर गाने के लिए आपने स्वर्ण-पदक प्राप्त किया है। आपकी अवस्था अभी केवल १४ वर्ष है।

श्री० हरिशङ्कर विद्यार्थी—आप स्वर्गवासी श्री० गणेशशङ्कर जी विद्यार्थी के सब से बड़े पुत्र हैं।

प्रिन्सिपल ए० के० शाह—आप कलकत्ते के अन्ध-विद्यालय के प्रिन्सिपल हैं और अन्धों के सम्बन्ध में होने वाले विश्व-सम्मेलन के भारतीय प्रतिनिधि की हैसियत से अमेरिका गए हैं।

श्री० ब्रजबिहारी मेहरोत्रा—आप 'भविष्य' के अन्यतम लेखक श्री० प्रभुदयाल जी मेहरोत्रा, एम० ए० के कनिष्ठ सहोदर तथा पोखरायाँ (कानपुर) तहसील कॉङ्ग्रेस कमिटी के प्रधान हैं। आप ६ मास का कठिन कारागार भोग चुके हैं।

३ री मई की सन्ध्या को

लाहौर के शालामार बाग़ में पुलिस की गोलियों के शिकार

२२ वर्षीय नवयुवक—स्वर्गीय श्री० जगदीशचन्द्र जी

(अब तक के समाचारों से पता चलता है, कि आपके विरुद्ध कहीं भी और किसी भी षड्यन्त्र केस में कोई मामला नहीं था, न आप 'फ़रार' थे और न आपके विरुद्ध कोई प्रमाण ही मिला है)

यह भी बहुत है उनका जो, इतना लेहाज़ है, देखा हमें, तो शर्म से नीची निगाह की।

दिल पर निगाह करके, जिगर पर निगाह की, तुमने सिखा दी दोनों को लय आह-आह की।

निगाह

उन पर न और कुछ हुई तासीर आह की,
इतना हुआ ज़रूर कि फिर कर निगाह की।
यह भी बहुत है उनको, जो इतना लेहाज़ है,
देखा हमें, तो शर्म से नीची निगाह की।
कहिए शबाब का तो ज़माना गुज़र गया,
अब भी निगाह में है वह शोख़ी[१] निगाह की।

—"नूह" नारवी

मञ्ज़ूर है जो सैर सफ़ेदो-सियाह[२] की,
गर्दिश[३] को देख दीदए इबरत[४] निगाह की।
अफ़शाए[५] राज़[६] गिरियए याक़ूब[७] हो गया,
तस्वीर आँसुओं में थी नूरे-निगाह की।

—"अज़ीज़" लखनवी

मतलब यह है कि दिल को मिला देगा ख़ाक में,
उसने जो फ़र्तें[८] शर्म से नीची निगाह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

गुनाह

परवाने को मिली है, मकाफ़ाते[९] आशिक़ी,
पर क्या जले कि जल गई फ़र्दें[१०] गुनाह की।
आज़ादगाने इश्क़ की गुस्ताख़ियाँ तो देख,
ख़ुद दाद माँगते हैं तुझी से गुनाह की।

—"अज़ीज़" लखनवी

रहमत[११] ने मुझ पे हश्र में ऐसी निगाह की,
सर से उतर के गिर पड़ी गठरी गुनाह की।
चल कर ज़रा ख़ुदा के लिए देख लीजिए,
मय्यत[१२] उठी है आपके एक बेगुनाह की।
महशर[१३] में सब को बारिशे-रहमत पे नाज़ है,
धोएगा इससे हर कोई फ़र्दें गुनाह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

गवाह

महशर में उनको देख के अल्लाह रे ख़ुशी।
तरदीद[१४] कर रहा हूँ ख़ुद अपने गुनाह की।

—"अज़ीज़" लखनवी

उनकी तरफ़ जो दावरे-महशर[१५] भी हो गया,
बेकार हश्र में है गवाही गवाह की।
महशर में कोई दावरे-महशर अब आ गया,
डर है बिगड़ न जाय गवाही गवाह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—चञ्चलता, २—काला-सफ़ेद, ३—चक्कर, ४—शिक्षा ग्रहण करने वाली आँखें, ५—ज़ाहिर करना, ६—भेद, ७—पैग़म्बर का नाम है, जो अपने पुत्र हज़रत यूसुफ़ के विरह में रोते-रोते अन्धे हो गए थे, ८—बहुत, ९—बदला, १०—काग़ज़, ११—ईश्वर, १२—लाश, १३—प्रलय, १४—रद करना, १५—प्रलय का न्याय करने वाला,

आह

पुरसिश[१६] हुई जो हश्र[१७] में हाले तबाह की,
हमने जवाब देने से पहिले एक आह की।
लाखों अदाएँ देख कर उस रश्के-माह[१८] की,
जब हो सका न सब्र तो हमने एक आह की।
पहुँचा कहाँ से इसका असर देखिए कहाँ,
मैंने जो की फ़ुग़ाँ[१९] तो फ़रिश्तों ने आह की!

—"नूह" नारवी

घबरा के सबने उनकी तरफ़ एक निगाह की,
किस दिल शिकस्ता ने[२०] दमे आख़िर यह आह की।

—"अज़ीज़" लखनवी

ग़ुस्से में तुमने क्या किसी जानिब निगाह की,
आती है यह कहाँ से, सदा[२१] आह-आह की!
दिल पर निगाह करके जिगर पर निगाह की,
तुमने सिखा दी दोनों को लय आह-आह की।
तलवार छुट के गिर पड़ी क़ातिल के हाथ से,
मक़तल में ऐसी "बिस्मिले" मुज़तर[२२] ने आह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

गाह

मूसा की बेख़ुदी[२३] ने वह नक़्शा मिटा दिया,
तस्वीर खिंच चली थी तेरी जलवागाह[२४] की।

—"अज़ीज़" लखनवी

कहती है जिसको ख़ल्क़[२५] तजल्ली में बर्क़[२६] तूर,
हलकी सी वह झलक थी तेरी जलवागाह की।
दावा बहुत था तूर पे मूसा को दीद का।
देखी गई झलक न तेरी जलवागाह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

ख्वाह

दुहरा रहे हो तुम जिसे तलवार टेक कर।
तक़रीर[२७] क्या यही थी किसी उज्ऱ-ख़्वाह[२८] की

—"अज़ीज़" लखनवी

तुमने यह किस अदा से करम की निगाह की,
सूरत बदल गई जो दिले दाद-ख़्वाह[२९] की।
सब दमबख़ुद हैं हश्र में कुछ बोलते नहीं,
तुमने हँसी उड़ाई यह किस दाद-ख़्वाह की।
महशर में चुप खड़े हुए हैं बोलते नहीं,
सूरत वह देख-देख के हर दादख़्वाह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१६—पूछ-ताछ, १७—प्रलय, १८—चाँद सी सूरत, १९—आह, २०—दुखी हृदय, २१—आवाज़, २२—बेचैन, २३—आपे में न रहना, २४—ज्योति की जगह, २५—संसार, २६—बिजली, २७—बातचीत, २८—माफ़ी चाहने वाला, २९—इन्साफ़ चाहने वाला,

तबाह

तुम आप अपनी ज़ुल्फ़े[३०] परेशाँ को देख लो,
तस्वीर यह है एक मेरे हाले तबाह की।

—"नूह" नारवी

उड़ती हुई यह ख़ाक परेशान, यह हवा,
तशरीह[३१] है "अज़ीज़" के हाले तबाह की।

—"अज़ीज़" लखनवी

देता है बार-बार दुहाई निगाह की,
तुमने यह किस ग़रीब की मिट्टी तबाह की!!
किस बेरुख़ी से आपने मुझ पर निगाह की,
दुनिया ख़राब की, मेरी मिट्टी तबाह की!
क्यों मुझसे पूछने लगे वह माजराए[३२] दिल,
जिनको ख़बर नहीं मेरे हाले तबाह की!
हैरान हूँ कि इसकी तुम्हें कुछ ख़बर नहीं,
शुहरत तमाम है मेरे हाले तबाह की!
इस पर कभी मिटे, कभी उस पर फ़िदा हुए,
"बिस्मिल" इसीमें तुमने जवानी तबाह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

सियाह

तारे दिखाई देने लगे आसमान पर,
अल्लह रे तीरगी[३३] मेरे रोज़े सियाह[३४] की।
क्या पूछना है, काकुले-शब-रङ्ग[३५] यार का,
गोया वह रात है मेरे रोज़े-सियाह की।

—"नूह" नारवी

लिक्खा मिला मसविदये[३६] शामे हिज्र[३७] में,
यारब दराज़ उम्र हो ज़ुल्फ़े सियाह की।

—"अज़ीज़" लखनवी

गर्दिश जो देख लेगा तुम्हारी निगाह की,
वह क्या करेगा सैर सफ़ेदो-सियाह की।
दिल से तसव्वरे[३८] शबे ग़म पर निसार हूँ,
तस्वीर देख ली तेरी ज़ुल्फ़े सियाह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

राह

ज़ाहिद तवाफ़े[३९] दैरो-[४०] हरम[४१] से हुसूल क्या,
सब कुछ किया किसी ने अगर दिल में राह की।
अच्छी वह दोस्ती है जो मौक़े के साथ हो,
वह दुश्मनी भी ख़ूब जो हो राह-राह की।

—"नूह" नारवी

कहती है रूह आई हैं जितनी कि हिचकियाँ,
उतनी ही मैंने ठोकरें खाई हैं राह की!

—"अज़ीज़" लखनवी

नाला[४२] वही है जिसने कलेजे में घर किया,
बस है वह आह जिसने तेरे दिल में राह की।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

३०—बिखरे हुए बाल, ३१—बयान, ३२—हाल, ३३—अँधेरा, ३४—ख़राब दिन, ३५—काले रङ्ग के बाल, ३६—मज़मून, ३७—विरह की शाम, ३८—ध्यान, ३९—परिक्रमा, ४०—मन्दिर, ४१—काबा, ४२—फ़रियाद।

कुछ चुनी हुई उत्तमोत्तम पुस्तकों की संक्षिप्त सूची

संक्षिप्त स्वास्थ्य-रक्षा (गं० पु० मा०) ।=)
सन्तान कल्पद्रुम (हिं० ग्रं० र०) १)
संसार-सुख-साधन (सर० मं०) ।≡)
साम्यवाद (हिं० ग्रं० र०) २॥)
स्वास्थ्य की कुञ्जी (गं० पु० मा०) १।)
सुख और सफलता के मूल सिद्धान्त =)॥
सुख की प्राप्ति का मार्ग (हिं० सा० मं०) ।=)
सौ अजान एक सुजान (गं० पु० मा०) १)
स्वदेश (हिं० ग्रं० र०) ॥=)
स्वावलम्बन(हिं०ग्रं०र०) १॥)
हिन्दी करीमा (प्र० पु०) ।-)
हिन्दुस्तानी शिष्टाचार (रा० ना० ला०) ॥=)
हिन्दू-तीर्थ (") ॥)
हिन्दू सङ्गठन (भाई परमानन्द) १)

बालकोपयोगी

अच्छी आदत डालने के उपाय (हिं० ग्रं० र०) =)॥
अद्भुत कहानियाँ(दो भाग) (हिं० पु० ए०) १)
अनोखी कहानियाँ (इं० प्रे०) ।)
अल्फ़ाबेटिकल चार्ट (रा० ना० ला०) २)
आकाश की बातें (हिं० मं०) ≡)
आकाश की सैर (हिं० पु० ए०) १।)
आरव्योपन्यास (दो भाग) (इं० प्रे०) १।)
हल और बिल की कहानियाँ (मि० बं० का०) ≡)
ईसप की सचित्र कहानियाँ (इं० प्रे०) २)
ऐतिहासिक कहानियाँ (इं० प्रे०) १।)
कीड़े-मकोड़े(गं०पु०मा०)॥=)
खिलवाड़ (गं०पु०मा०) ।)
खिलौना (इं० प्रे०) ।≡)
खेल-खिलौना(हिं०पु०ए०)।≡)
खेल-तमाशा (इं० प्रे०) ।)
खेल-पचीसी (गं० पु० मा०) ।=)
गज्जू और गप्पू (मि० बं० का०) ≡)
गधे की कहानी (गं० पु० मा०) ।॥)
गोबर-गनेश (इं०प्रे०) ॥≡)
चमत्कारी बालक (इं० प्रे०) ।=)
ढपोरशङ्ख (क० का०) ।)
देवनागर वर्णमाला (इं० प्रे०) ॥=)
नटखटी रीछ (मि० बं० का०) ≡)
नवीन पत्र-प्रकाश (") १।)
नानी की कहानी (गृ० ल०) ॥-)
" " (हिं० पु० ए०) ॥।-)
नीति रत्नमाला (गं० पु० मा०) ।)
" " (इं० प्रे०) ॥=)
नीति शिक्षावली (हिं० मं०) -)॥
परियों का देश (गृ०ल०) १)
परोपकारी हातिम (गं० पु० मा०) ॥)
परीक्षा कैसे पास करना (मि० बं० का०) =)
पहेली-पुञ्ज (हिं० प्रे०) ।=)
पहेली बुझौवल (मि० बं० का०) ॥)
पारस्योपन्यास (इं०प्रे०)१॥)
पिता के उपदेश (हिं० ग्रं० र०) =)
पौराणिक उपाख्यान-माला (ना० रा० ना०) १।)
प्रह्लाद (इं० प्रे०) ।)
पृथ्वीराज (पॉपुलर) १)
फ़व्वारा (इं० प्रे०) १)
बच्चों का प्यारा कृष्ण (स० आ०) ॥)
बच्चों का चरित्र-गठन (ड० ब० आ०) ।)
बाल आरव्योपाख्यान (चार भाग) (इं० प्रे०) २॥)
बालक (सन्तराम) १)
बाल-कथा-कहानी (आठ भाग) (हिं० मं०) ३)
बाल कवितावली (गृ० ल०) १)
बालगीता (इं० प्रे०) ॥।)
बालगीतावली (") ॥=)
बाल-नाटकमाला (मि० बं० का०) ।=)
बालनीति कथा (दो भाग) (गं० पु० मा०) २॥)
बाल पुराण (इं० प्रे०) ॥=)
बाल रामायण (") ॥=)
" " (हिं० पु० ए०) ॥-)
बाल विनोद (पूरा सेट) (इं० प्रे०) १॥।)॥
बाल विलास (गं० पु० मा०) ।)
बाल हितोपदेश (इं० प्रे०) ॥)
बाला बोधिनी (पाँच भाग) (इं० प्रे०) १॥≡)
बालोपदेश (") ॥=)
भक्त ध्रुव (पॉपुलर) ॥=)
भक्त प्रह्लाद (") ॥=)
भारत के सपूत (गं० पु० मा०) ॥)
भीष्म (पॉपुलर) ॥=)
मज़ेदार कहानियाँ (मि० बं० का०) ।)
मज़ेदार ख़ज़ाना (इं० प्रे०) ।=)
मनोरञ्जक कहानियाँ (चाँ० का०) २)
मनोहर ऐतिहासिक कहानियाँ (चाँ० का०)१॥)
महाभारतीय सुनीति (ग्रं० मं०) ॥=)
माता के लाल (शि० का०) ॥)
मेवाड़ गौरव (पॉपुलर) १)
रसीली कहानियाँ (इं० प्रे०) ॥।)
रॉबिन्सन क्रूसो (रा० ना० ला०) १)
" (इं० प्रे०) १॥)
लड़कियों का खेल (गं० पु० मा०) ॥)
लड़कों का खेल (इं० प्रे०) ।)
लवकुश (निहालचन्द) १॥)
वन कुसुम (इं० प्रे०) ।=)
विचित्र-वीर (") ॥)
विज्ञान की सरल बातें (ला० रा० ना०) ।-)
विद्यार्थियों का स्वास्थ्य (मि० बं० का०) ।=)
वीर अभिमन्यु (पॉपुलर)॥=)
वीर लवकुश (") ॥=)
शाहज़ादा और फ़क़ीर (मि० बं० का०) ॥)
शेख़चिल्ली की कहानियाँ (इं० प्रे०) ॥=)
सच्ची मनोहर कहानियाँ (रा० ना० ला०) ॥=)
सदाचार सोपान (सं० मं०) ।=)
सदाचारी बालक (हिं० ग्रं० र०) =)॥
समुद्र की सैर (हिं० पु० ए०) ॥)
सरल व्यायाय (इं० प्रे०) ॥)
सियार पाँड़े (हिं० पु० मं०) =)
सोने का झरना (इं० प्रे०) ॥)
हँसी खेल (गृ० का०) ॥)
" " (गं० पु० मा०) १)
हिन्दी गाना (हिं०प्रे०)॥=)
हिन्दी शेक्सपियर (छः भाग) (इं० प्रे०) ३॥।)

उपन्यास

गौर मोहन (इं० प्रे०) २)
लाल चीन (" ") १॥)
नवीन संन्यासी (" ") ३॥)
सुधा (" ") २)
अकबर (ला० प्रे०) ॥)
अद्भुत अलाप (गं० पु० मा०) ॥।), १)
अनाथ पत्नी (चाँ० का०)२)
अनोखी कहानियाँ (इं० प्रे०) ।)
अन्नपूर्णा का मन्दिर (हिं० ग्रं० का०) १॥)
अपराधी (चाँ० का०) २॥)
अबला (गं०पु०मा०)१), १॥)
अमृत और विष (चाँ० का०) ५)
अन्तरणीया (इं० प्रे०) १)
आरण्यबाला (ड० ब० ऑ०) १॥=)
अलिफ़-लैला (ब० वि० प्रे०) २॥)
अवध की बेगम (ब० प्रे०) ॥=)
अहङ्कार (प्रेमचन्द) ॥)
अश्रुपात (गं० पु० मा०) १), १॥)
आशा पर पानी (चाँ० का०) ॥)
आँख का नशा (ड० ब० ऑ०) १।)
आँख की किरकिरी (हिं० ग्रं० र०) १॥), २)
आँख के आँसू (ड० ब० ऑ०) ॥=)
इन्द्रधनुष (बी० स० पु०) १॥)
इन्साफ़-संग्रह (२ भाग) (इं० प्रे०) १॥)
इन्साफ़ की कहानियाँ (इं० प्रे०) २)
उषाकाल (हिं० पु० ए०) ५॥), ६॥)
एकलव्य (ड० ब० ऑ०)॥)
कथा कादम्बिनी (सा० भ० लि०) ॥)
कनक-रेखा (हिं०ग्रं०का०) १)
कप्तान की कन्या (बी० स० पु०) १।)
करुणा (इं० प्रे०) ३॥)
करुणादेवी (बेल०प्रे०) ॥=)
कर्तव्याघात (हिं० पु०) २॥)
कर्मक्षेत्र (ब० प्रे०) ३), ३॥), ३॥)
कर्मफल (गं० पु० मा०) १॥)
कङ्कणचोर (ड० ब० ऑ०) २)
कामिनी कञ्चन (नि० चं०) ३), ३॥)
काथा-कल्प (आ० पु०)३॥)
कोहेनूर (ब० प्रे०) १॥)
खरा सोना (हिं० पु० ए०) १)
गल्पगुच्छ (इं० प्रे०) ३॥)
गल्प-विनोद (चाँ० का०) १)
गोरा (प्र० पु०) ३)
घर और बाहर (प्र०पु०)१)
चरित्रहीन (हिं०पु०ए०) ३)
चन्द्रकला (हिं० ग्रं० का०) ॥=)
चन्द्रनाथ (" ") ॥)

भारतीय भारत

राजपूताने के जागीरदार

[एक भूतपूर्व उच्च कर्मचारी]

[पूर्ण-संख्या ३१ से आगे]

जागीर के गाँवों की दशा रियासत के गाँवों की अपेक्षा अधिक हीन और शोचनीय होती है। कहने को तो जागीरदार को प्रायः केवल ज़मीन का लगान वसूल करने का ही अधिकार होता है, परन्तु व्यवहारतः रियासत जागीर के गाँवों के प्रति अपना कोई उत्तर-दायित्व नहीं समझती। रियासत की ओर से जागीर के गाँवों में न स्कूल खोले जाते हैं और न अस्पताल; वहाँ न पुलिस के चौकीदार होते हैं और न कोई सफ़ाई का प्रबन्ध। रियासत मान लेती है कि यह प्रबन्ध जागीरदार करेगा, परन्तु साथ ही साथ उस पर कोई दबाव भी नहीं डाला जाता। फलतः कुछ अत्यन्त बड़ी जागीरों को छोड़ कर शेष ठिकानों में न अस्पताल हैं और न स्कूल। रात-दिन कमा कर जागीरदार का कोष भरने वाले दीन कृषकों को समय पर दवाई की एक पुड़िया भी नहीं मिलती और न उनके होनहार बच्चों को दो अक्षर पढ़ने का ही अवसर मिलता है। जागीरदार कहते हैं कि शिक्षा और स्वास्थ्य का प्रबन्ध करना उनका कर्तव्य नहीं है और रियासतें कहती हैं कि जागीर के गाँवों में स्कूल और अस्पताल ठिकाने के होने चाहिए। इस मतभेद के कारण ठिकाने और रियासत दोनों का धन बच जाता है और ठिकानों की जनता रोग और अन्धकार में फँसी हुई अपने दिन बिताती रहती है।

यह बात सच है कि ठिकाने के पट्टों में इस बात का उल्लेख नहीं होता कि जनता के प्रति जागीरदार का क्या कर्तव्य है? कारण यह मालूम होता है कि स्वयं महाराजाओं को ही अपने कर्तव्य का ज्ञान नहीं है, फिर वे दूसरों को कैसे कर्तव्य का स्मरण दिलाएँ। इसके अतिरिक्त अधिकांश ठिकाने उतने ही प्राचीन हैं, जितनी स्वयं रियासतें। मध्य-काल में शिक्षा तथा स्वास्थ्य-विधान शासकों का कर्तव्य, भारतवर्ष में क्या, कहीं भी नहीं माना जाता था। यूरोप में भी अट्ठारहवीं शताब्दी के अन्त में शासकों की ओर से स्कूल तथा अस्पताल खोले गए थे। भारतीय रियासतों में उस समय विद्या को प्रोत्साहन अवश्य दिया जाता था और अच्छे विद्वानों का मान भी होता था, परन्तु जनता को विशेष प्रकार से शिक्षित बनाने के लिए सङ्गठित विभाग किसी भी रियासत में नहीं था। पूर्व और पश्चिम के सम्पर्क से रियासतों में तो शिक्षा-विभाग स्थापित हो गए, किन्तु ठिकानों में यह प्रकाश अभी तक नहीं पहुँचा। आश्चर्य की बात यह है कि उन्नत रियासतों ने भी जागीरदारों का ध्यान अब तक इस ओर आकर्षित नहीं किया है और न जागीरदारों ने स्वयं ही जनता के प्रति अपना कर्तव्य पूरा किया है। जोधपुर के उन ठिकानों पर तो शिक्षा-विभाग की तरफ़ से ज़ोर डाला जा रहा है, जो नाबालग़ी में हैं। ऐसी जागीरों में प्रायमरी स्कूल और दस-बीस दवाइयों वाले अस्पताल स्थापित होने लग गए हैं, परन्तु जहाँ जागीरदार ज़ोरदार हैं, वहाँ रियासत वाले चूँ भी नहीं करते।

मान लीजिए कि किसी ठिकाने की वार्षिक आय अर्थात् ज़मीन का लगान जङ्गल की बिक्री तथा चुङ्गी आदि एक लाख रुपए है। यह सब आय जागीरदार की सम्पत्ति समझी जाती है और अपनी प्रजा को आराम के लिए इसमें से एक पैसा भी ख़र्च करना उसके लिए लाज़मी नहीं है। शिक्षा, अस्पताल, पुलिस, सेना, न्यायालय आदि किसी की उसको आवश्यकता नहीं। अपनी शान के वास्ते तथा विशेष अवसरों पर अपने नरेश की सवारी में सम्मिलित होने के लिए उसको कुछ आदमी और घोड़े अवश्य रखने पड़ते हैं, परन्तु ये सब भी अधिकतर उसके व्यक्तिगत आराम के लिए हैं। शेष धन उसके भोग और विलास में ख़र्च होता है। पहिले लेख में बतलाया जा चुका है कि ऐसा जागीरदार शायद ही कहीं मिले, जिसने एक ही विवाह किया हो और जो मद्य न पीता हो। इन व्यसनों की व्याधि के कारण राजपूताने के ६० प्रतिशत जागीरदार ऋण से दबे हुए हैं। थोड़ी आय वाले ठाकुर लोग भी दो-तीन युवतियाँ और दो-चार मद्य की बोतलें अपने लिए अत्यन्त आवश्यक समझते हैं। जिनकी आमदनी ख़ासी है, वे लोग तो शिमला, मन्सूरी और उटी पर विहार किया करते हैं।

राजपूतों के विलास में पाशविकता अधिक है और संस्कृति कम। जयपुर के अतिरिक्त अन्य रियासतों में कला का कोई आदर नहीं है। मुग़लों के विलास से कला को बड़ा प्रोत्साहन मिला था, परन्तु राजपूतों के विलास से केवल नैतिक पतन हुआ है। जागीरदारों के अन्तःपुर में न गायिकाएँ होती हैं, न नर्तकियाँ। जिस समय ठाकुर साहब "काँसाँ आरोगने" (भोजन करने) बैठते हैं तो एक या दो स्त्रियाँ मोटी और भद्दी आवाज़ से ढोलक पीट-पीट कर बेसुरा माँड़ या सोरठ चीख़ने लगती हैं। ऐसी स्त्रियाँ "ढोलण" या "बारठेण" कहलाती हैं। जब डीलाँ दारू पीकर बेसुध हो जाते हैं, तब भी यह विचित्र "गाना" चला करता है। इस कला-प्रदर्शन के वास्ते इन स्त्रियों को नित्य कुछ रोटियाँ और एक दोना दाल मिला करती है। जयपुर की ढोलणियाँ माँड गाने में प्रसिद्ध हैं, परन्तु इनको भी गायिकाएँ नहीं कहा जा सकता। कला प्रेमी ठाकुर साहिब कभी-कभी इन अप्सराओं पर मुग्ध हो जाते हैं। एक रियासत के अङ्गहीन नरेश ढोलण-मण्डली के बड़े क़द्रदाँ हैं। जयपुर के दो-तीन ठिकाने के ठाकुरों ने तो "ढोलणों" पर प्राण निछावर कर रक्खे हैं। कोटा राज्य में तीन-चार वर्ष पूर्व एक बड़ी मनोरञ्जक घटना हुई बतलाई जाती है। इस घटना के नायक थे, दो जागीरदार और एक ढोलण। यदि दो-चार ढोलणों के चित्र 'भविष्य' में दिए जावें तो पाठकों को पता चले कि जागीरदार लोग रूप और यौवन के कितने अच्छे पारखी हैं।

जागीरदारों के यहाँ नाच या तो होता ही नहीं और जो होता भी है तो उसको नाच कहना इस शब्द का दुरुपयोग करना है। चैत्र के महीने में राजपूताने में एक त्यौहार मनाया जाता है, जिसको 'गणगौर' कहते हैं। इसका विस्तृत उल्लेख किसी आगामी लेख में किया जावेगा। यहाँ प्रसङ्गवश इससे सम्बन्ध रखने वाले नाच के विषय में कुछ लिखना है। ठिकानों की डावड़ियाँ इस अवसर पर अपनी "नृत्य-कला" का प्रदर्शन करती हैं। अपने सम्पूर्ण शरीर को, यहाँ तक कि आँख, कान, मुख और उँगलियों तक को ढक कर वह अपना नाच दिखाने को तैयार होती हैं। प्रायः ठाकुर साहिब स्वयं इस कला-रस का आस्वादन करने के लिए सामने विराजते हैं। परन्तु यदि उनको सुरा देवी की उपासना से अवकाश न मिल सके तो डावड़ियाँ ठिकानों के आन्तरिक नौकर आदि दर्शकों को ही प्रसन्न करके अपने को धन्य मान लेती हैं। डावड़ियाँ बारी-बारी से दो-दो या चार-चार, बीस-तीस क़दम आगे बढ़ती और पीछे चली जाती हैं। इसमें उनको पैर तो हिलाने ही पड़ते हैं, परन्तु हाथों को कुछ आवश्यकता से अधिक हिलाती हैं। यही कारण है कि इसको नाच कहा जाता है। राजपूताने में इसका पारिभाषिक नाम "सारोला" है। आगे बढ़ने और पीछे हटने को सारोला देना कहते हैं। ठाकुर लोग इस कला की सुन्दरता का अनुभव अवश्य करते होंगे, परन्तु लेखक को तो सारोला एक प्रकार की सैनिक 'ड्रिल' मालूम होती है।

जागीरदारों के अन्तःपुरों में स्त्रियाँ इस समय भी वैसे ही कपड़े पहनती हैं, जैसे वे अलाउद्दीन ख़िलजी के ज़माने में पहनती थीं। केवल लहँगे के आकार और वज़न में कुछ अन्तर आया है; शेष तद्वत् है। ठकुरानी और डावड़ियाँ एड़ी तक नीचा लहँगा पहनती हैं और उस पर कहीं ४ गज़ और कहीं २½ गज़ की साड़ी पहनी जाती है। इसके अतिरिक्त एक चोली और कुरती भी पहनी जाती है। प्रायः ये सब कपड़े एक रङ्ग के होते हैं। सम्पन्न ठकुरानियाँ सोने और चाँदी के अनगढ़ तथा बेहूदे बहुमूल्य अलङ्कारों से लदी रहती हैं। राजपूत-महिलाएँ अपने बालों को अत्यन्त कस कर बाँधती हैं और आगे की लटों को गोंद से चिपका कर उस पर गोटा लगाती हैं। सामने ललाट के ऊपर छोटे अमरूद के आकार का एक गहना होता है, जिसको 'राखड़ी' कहते हैं, पहनती हैं। अत्यन्त सुन्दर युवती भी इस पोशाक को पहन कर अपने लावण्य को छिपा डालती है। परदे के कारण इन स्त्रियों को काल-परिवर्तन तथा नवीन शैली आदि फ़ैशन का पता नहीं चलता। उच्च शिक्षित आधुनिक महिलाओं का राजपूताने में प्रायः अभाव ही है। अतः कला का कोई भी अङ्ग अब तक तो जागीरदारों के रावले में प्रवेश नहीं कर पाया है, भविष्य की भगवान जानें। कुछ शौक़ीन तबीयत के युवक जागीरदारों को अब राजपूताने की महिलाएँ पसन्द नहीं आतीं, इसलिए संयुक्त-प्रान्त के ताल्लुक़ेदारों के साथ विवाह-सम्बन्ध बढ़ते जाते हैं। एक साहब ने तो सुदूर मद्रास प्रान्त की प्रमदा पसन्द की है और दूसरे ने नेपाल की नवोढ़ा। यदि जागीरदारों की कन्याओं को आधुनिकता से वञ्चित रक्खा गया, तो इसका परिणाम बहुत बुरा होगा।

* * *

कॉङ्ग्रेसवादियों का कर्तव्य

["एक कॉङ्ग्रेसमैन" नामधारी इस लेख के सुयोग्य लेखक ने कॉङ्ग्रेस वालों तथा कॉङ्ग्रेस के कार्यों से सहानुभूति रखने वाले तमाम देश-भाइयों से अपील की है कि लोग, बिना इस बात का विचार किए कि गाँधी-इर्विन समझौता उचित हुआ है या अनुचित, कॉङ्ग्रेस वालों का शक्ति भर साथ दें। महात्मा गाँधी की सफलता राष्ट्र की सफलता होगी।

—स० 'भविष्य']

कुछ महीने पहिले किसी को विश्वास नहीं हो सकता था कि इस साल कॉङ्ग्रेस का अधिवेशन होगा, क्योंकि देश की इस सब से बड़ी संस्था की प्रत्येक कारंवाई ग़ैर-क़ानूनी क़रार दे दी गई थी। यहाँ तक कि कार्यकारिणी कमिटी भी ग़ैर-क़ानूनी ठहरा दी गई थी। जिसके बड़े-बड़े सदस्य और स्वयं कॉङ्ग्रेस के राष्ट्रपति इस सरकारी स्वेच्छाचारिता के विरोध करने के अपराध में जेल भेज दिए गए थे। ख़ैर, अब बातें बदल गई हैं और न्यूनाधिक परिणाम में हम फिर से एक असाधारण समय से निकल कर साधारण समय में आ गए हैं। विराम-सन्धि के बाद से देश विश्राम लेने लग गया है और एक बार उसने फिर से प्रस्ताव पास करने का पुराना कार्य प्रारम्भ कर दिया है। शायद ऐसा होना स्वाभाविक ही था। कॉङ्ग्रेस के अधिवेशन में पुराने साल भर के कार्यों का सिंहावलोकन होना और आगामी साल के लिए नए कार्यों को निर्धारित करना आवश्यक ही है। कराची कॉङ्ग्रेस ने पहले के निर्धारित रास्ते से मुड़ कर महात्मा गाँधी के नेतृत्व में एक नया ही अध्याय आरम्भ कर दिया है। जो कुछ कॉङ्ग्रेस ने किया है, वह ठीक है या ग़लत, अब इस विवाद से कोई लाभ नहीं। गाँधी-इर्विन समझौते पर कॉङ्ग्रेस ने अपनी स्वीकृति की मुहर लगा दी है; अब इस विषय पर कुछ कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं रही।

स्वागतकारिणी के सभापति डॉ० चोइथराम गिडवानी तथा कॉङ्ग्रेस के सभापति सरदार वल्लभभाई पटेल, दोनों ही ने अपने भाषणों में समझौते का समर्थन किया है। सम्भव है, इन भाषणों से कुछ लोग समझें कि देश को समझौते के औचित्य पर आवश्यकता से अधिक बतला दिया गया है। इस अत्युक्ति के लिए वे विवश थे, क्योंकि देश के कुछ अत्यन्त प्रमुख कॉङ्ग्रेस वालों तक के दिलों में भी समझौते के औचित्य के विषय में सन्देह था। परन्तु चूँकि गाँधी जी उससे सन्तुष्ट हैं, इसलिए देश ने भी उसे वैसे का वैसा ही मान लिया है। दो व्यक्ति समझौते के विरोधी जान पड़ते थे, परन्तु अपनी ओर लोकमत की कमी देख कर उन्होंने प्रकट विरोध नहीं किया। ऐसा उचित ही था, क्योंकि यह समय दलबन्दी का नहीं है। हिन्दुस्तान ने गोलमेज़ द्वारा बातचीत करके देश की समस्या सुलझाने का विचार कर लिया है। निस्सन्देह कॉङ्ग्रेस पूर्ण स्वाधीनता का ध्येय नहीं छोड़ेगी। उसको ऐसा करने की आवश्यकता भी नहीं है। यह उच्च ध्येय तो हमारे सामने सदैव ही रहना चाहिए, चाहे उसकी प्राप्ति में, जिसका भार हमीं पर निर्भर है, देर लगे या जल्दी।

निराशावादिता

जो हो, कोई भी इस बात को देख सकता है, कि कॉङ्ग्रेसी नेताओं के विचार गोलमेज़-सम्मेलन के परिणामों के विषय में निराशाजनक हैं। पण्डित जवाहरलाल ने गोलमेज़ में जाने वाले दल के साथ जाने से इन्कार कर दिया है। इङ्गलैण्ड का वातावरण पक्ष में नहीं है। इङ्गलैण्ड की नीति व्यापार पर निर्भर रहती है, जो कि आजकल बहुत गिरा हुआ है।

इङ्गलैण्ड को शायद आशा थी कि हिन्दुस्तान से ऑर्डरों का आना शुरू हो जायगा, लेकिन बात ऐसी नहीं हुई, जिससे लङ्काशायर की मिलें तबाह हो रही हैं। चर्चिल यद्यपि अपनी पार्टी के नेता बनने के प्रयत्न में अभी सफल नहीं हुए, फिर भी उनकी गति दृढ़ ही होती चली जा रही है। लिबरलों में फूट पैदा हो गई है और साइमन-दल उससे अलग हो गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अभी हो या कुछ देर बाद वे भारत-विपक्षियों से मिल कर मज़दूर तथा लिबरलों की संयुक्त स्कीमों का विरोध करेंगे। मि० लॉयड जॉर्ज कुछ ऐसे बेपेंदी के लोटा, सनकी और सिद्धान्तहीन व्यक्ति हैं, जिनका विश्वास नहीं किया जा सकता कि वे मज़दूर-दल का बराबर साथ देते रहेंगे। यहाँ तक कि स्वयं मज़दूर-दल में भी विभिन्न मत के लोग मौजूद हैं। अगर उसमें एक ओर कट्टर साम्राज्यवादी जे० एच० टॉमस हैं, तो दूसरी ओर घोर कम्यूनिस्ट मि० मैक्सटन हैं। रहे मि० मैकडॉनल्ड, इनसे यह विश्वास नहीं कि ये सदैव भारत के प्रति उचित नीति का ही पालन करेंगे। तमाम चतुर राजनीतिज्ञों की तरह उन्होंने अपने उन सब सिद्धान्तों को भुला दिया है, जिनसे उनकी परिस्थिति में कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। राजनीतिज्ञ ज्यों-ज्यों उम्र में बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों उसके उत्साह और सिद्धान्त में नरमी आने लगती है। एक बार शक्ति हाथ में आ जाने पर वे अब उससे पृथक होना नहीं चाहते। सारांश यह कि इङ्गलैण्ड की परिस्थिति इस देश के लिए आशाजनक नहीं है।

ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के दिलों में भारत के स्वाधीनता-संग्राम वालों से कोई प्रेम नहीं पैदा हो गया, जिससे विवश होकर उन्होंने इस देश की राजनीतिक हालत पर फिर से विचार करने की बात स्वीकार कर ली है। उन्होंने इस देश और अपने देश की दशा पर विचार करके ही ऐसी स्वीकृति दी है। बहिष्कार के प्रभाव को पार्लामेण्ट ने स्वयं ही स्वीकार किया है। यह वही असर है, जिसके कारण मज़दूर-दल की बात और दलों ने मान ली है। बहिष्कार अब भी मौजूद है। यद्यपि अब उसने राजनीतिक अस्त्र के बदले आर्थिक रूप धारण कर लिया है। कोई भी सरकार, जैसा कि मि० बेन ने कहा था, तलवार के बल से किसी को किसी की वस्तु ख़रीदने के लिए बाध्य नहीं कर सकती। यद्यपि ब्रिटिश वस्त्र को छोड़ कर अन्य ब्रिटिश वस्तुओं पर के बहिष्कार को हटा लिया गया है, फिर भी सब से आवश्यक बहिष्कार तो बना ही हुआ है। इसके साथ ही साथ इस देश के मिल-मालिकों ने कॉङ्ग्रेस का साथ देकर उस बहिष्कार को और भी स्थायी और मज़बूत बना दिया है।

क्रुद्ध युवक

एक-दो महीने पहले इन बातों पर विचार करने की कोई आवश्यकता न पड़ती। क्योंकि देश तीव्र गति से अपने ध्येय की ओर बढ़ा चला जा रहा था। लेकिन अब वे सब बातें स्थगित कर दी गई हैं और एक नया ही रास्ता अख़्तियार किया गया है। इस सम्बन्ध में यह प्रश्न हो सकता है कि क्या गोलमेज़ की बातचीतों से ध्येय की प्राप्ति हो सकती है? स्वयं गाँधी जी ने स्वीकार किया है कि यह क्षणिक सन्धि है और वह तभी तक के लिए है, जब तक कुछ इस तरफ़ या उस तरफ़ निर्णय न हो जाय। निकट भविष्य में क्या होगा, यह एक प्रश्न है। काफ़ी संख्या में नवयुवकगण इस समझौते से नाराज़ हैं। लेकिन वे क्या करना चाहते हैं, यह नहीं मालूम।

प्रश्न यह है कि क्या ये युवक कोई रचनात्मक स्कीम बना सकते हैं? जहाँ तक मेरा ख़्याल है, उनके पास न तो कोई स्कीम है और न उसको कार्यान्वित करने की प्रबल प्रेरणा ही है। असन्तोष मात्र से कोई लाभ नहीं, जब तक उनके सामने ध्येय-प्राप्ति का कोई रचनात्मक उपाय न हो। यद्यपि कहने में कठोर मालूम होता है, परन्तु वास्तव में बात यह है कि कुछ समय बाद यह सब असन्तोष और विरोध दूर हो जायगा। थोड़े से नवयुवक गाँधी जी तथा अन्य नेताओं की संयुक्त शक्ति को नहीं हटा सकते। एक बात और है। देश में इस समय कोई ऐसा नेता नज़र नहीं आता, जो इन तमाम बिखरे हुए असन्तुष्टों को एक सूत्र में बाँध सके। यह कहना कठिन है कि ऐसा नेता अभी मिलेगा या नहीं, यद्यपि इसमें सन्देह नहीं कि परिस्थितियाँ नेता उत्पन्न कर देती हैं, लेकिन इस समय तो कोई नहीं दिखाई पड़ता। यद्यपि श्री० सुभाष बोस और पं० जवाहरलाल भी मौजूद हैं।

झूठे अभियोग

मज़दूर-दल अलग गाँधी जी पर अभियोग लगा रहा है। उस दल में यद्यपि नेता अवश्य हैं, परन्तु वे बातें अधिक करते हैं और काम कम, हालाँकि उस दल में काम की ही बड़ी आवश्यकता है। यह कह देना बहुत सरल है कि गाँधी जी पूँजीपतियों से मिल गए हैं। हो सकता है, गाँधी जी पूँजीपतियों से मिल गए हों, परन्तु उससे यह मतलब नहीं कि उन्होंने मज़दूरों को धोखा दिया है। साल भर के राष्ट्रीय आन्दोलन को इन पूँजीपतियों ने अपनी पूरी मदद से चलाया है। यूरोपीय मुल्कों तक में मज़दूर अपने ध्येय से अभी बहुत दूर हैं। रूस को छोड़ कर हर जगह मज़दूर अब भी पूँजीपतियों के अधीन ही हैं। हड़तालों से विशेष लाभ नहीं होता। सब प्रकार के सङ्गठन, ट्रेड यूनियन, कोष और मज़दूरों के हित के लिए बनाए गए क़ानूनों के

रहते हुए भी यूरोप के मज़दूर पूँजीपतियों के विरुद्ध बहुत अधिक विजय प्राप्त नहीं कर सके हैं, फिर इस देश में, जहाँ मज़दूर और पूँजीपति दोनों ही अभी विदेशी शासन के आधिपत्य में हैं, आपस ही में लड़ना कहाँ तक उचित होगा? किसानों और मज़दूरों को कोई अधिकार-वञ्चित नहीं करना चाहता। निस्सन्देह वे अनेक ऐसी बातों से अलग रक्खे गए हैं, जिनसे उनका घोर सम्बन्ध है और जिन पर उनका अधिकार होना चाहिए। लेकिन बात यह है कि जब तक विदेशी शासन के पञ्जे से लोग बाहर नहीं हो लेते, तब तक वे वस्तुएँ और वे अधिकार उन्हें नहीं मिल सकते। जब तक यह विदेशी जुआ उतार कर नहीं फेंका जाता, तब तक न मज़दूर रक्षित हैं, न पूँजीपति। तब तक न किसी को अपना न्यायोचित भोग ही मिल सकता है और न अपने ध्येय की प्राप्ति ही हो सकती है। मज़दूर नेताओं को चाहिए कि मज़दूरों की शक्ति का इधर-उधर अपव्यय न करके उनका दृढ़ सङ्गठन करें।

कॉङ्ग्रेस का समर्थन करो

इस समय सब से अच्छा उपाय यही है कि रचनात्मक कार्य करते हुए भविष्य की प्रतीक्षा की जाय, जैसा कि कॉङ्ग्रेस कर रही है। वास्तव में कॉङ्ग्रेस ने तो बहुत समय पहले से लोगों को रचनात्मक कार्य के लिए आदेश दे रक्खा था, परन्तु लोगों ने उसका पालन बहुत कम किया था। यहाँ तक कि खादी का काम भी बहुत पिछड़ा हुआ था। परन्तु एक ही साल के आन्दोलन ने इस कार्य को बहुत आगे बढ़ा दिया। जो कुछ साल भर में हुआ है, उतना कई सालों में भी नहीं हुआ था। बारडोली के बाद देश सो गया था, लेकिन पिछले साल के अप्रैल मास से धीरे-धीरे उठ कर वह दानव-रूप होकर आगे बढ़ा। जो बात देश एक बार कर चुका है, वह दूसरी बार भी कर सकता है। देश ने प्रतिज्ञा कर ली है। गाँधी जी ने समझौते का पालन करने का सङ्कल्प कर लिया है। देश का परम कर्त्तव्य है कि वह शक्ति भर उनकी सहायता करे। अगर इसके अतिरिक्त कोई और मार्ग होता, तो देश ने स्वीकार कर लिया होता, लेकिन देश के सामने दूसरा कोई रास्ता नहीं है। जो अपने ध्येय तक पहुँचने के लिए अधीर हों, उन्हें अपने को क़ाबू में रखना चाहिए। हम लोगों को कॉङ्ग्रेस की आज्ञा पालन करनी चाहिए। कॉङ्ग्रेस देश की सामूहिक तथा उसकी उच्च से उच्च बुद्धि की प्रतिनिधि है। जो कॉङ्ग्रेसमैन हैं या जो कॉङ्ग्रेसमैन न होते हुए भी आन्दोलन के अनुगामी हैं, जिनकी संख्या बड़ी है, उन सबका कर्तव्य है कि वे कॉङ्ग्रेस की आज्ञा पूर्ण रूप से मानते चलें। सम्भव है, गोलमेज़ से कोई परिणाम न निकले या कम से कम ऐसा परिणाम न निकले, जिसको हम लोग चाहते हैं। परन्तु सफलता के लिए हमें संयुक्त रहना आवश्यक है। हमें अपने ध्येय को सामने रखते हुए बराबर कॉङ्ग्रेस का साथ देना चाहिए। अगर हम ऐसा न कर सकें तो कम से कम ऐसा भी कुछ वचन या कार्य से न करें, जिससे कॉङ्ग्रेस की शक्ति में धक्का लगता हो। हमें गाँधी जी की शक्ति को बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। अगर गाँधी जी विफल हुए तो विफलता राष्ट्र की होगी। तब राष्ट्र का कर्तव्य होगा कि पूरी शक्ति के साथ वह अपने ध्येय की ओर फिर से बढ़े। इस बीच में हमें व्यर्थ वाद-विवाद की अपेक्षा उतना तो अवश्य ही करना चाहिए, जितना करने के लिए हमें कॉङ्ग्रेस की तरफ़ से आज्ञा हुई है।

* * *

स्वदेश के लिए !

[१६वें पृष्ठ का शेषांश]

८

राजद्रोही अपराधियों के विचार के लिए जेल की चहारदीवारी के भीतर ही न्यायालय था।

उस दिन न्याय का नाटक आरम्भ हुआ। विचाराधीश के पद पर प्रिन्स रूडोविच विराजमान थे।

बन्दिनी फ़्लोरा लाई गई।

विचारक ने पूछा—तुम्हारा नाम?

"फ़्लोराइना।"

"कहाँ रहती हो?"

"मेडलिन स्ट्रीट में।"

"तुम्हारे ऊपर जो अभियोग है, उसे जानती हो?"

"क्या?"

"ड्रोवेस्की को पहिचानती हो?"

"हाँ।"

"वह कहाँ है?"

"मालूम नहीं।"

"उस दिन वह तुम्हारे घर गया था?"

"हाँ"

"वह निहिलिस्ट है, यह भी जानती हो?"

"नहीं।"

"झूठ कहती हो—अवश्य जानती होगी!"

"........"

"गुप्त-समिति की बैठक कहाँ होती है—बताओ?"

"मुझे नहीं मालूम।"

"बदमाश—तेरा भी उनसे संसर्ग जान पड़ता है—तुझे भी दण्ड मिलना चाहिए!"

"मैं निर्दोष हूँ।"

"एक राजद्रोही को तुमने अपने यहाँ आश्रय दिया, यह अपराध क्या कम है?"

"अन्यायी शासक की आज्ञा का और उसके राज-नियमों का उल्लङ्घन करना प्रत्येक देश-भक्त का कर्त्तव्य है।"

"ड्रोवेस्की का पता बतला देने पर तुम छोड़ दी जा सकती हो।"

"प्राण रहते मैं ऐसा पाप न करूँगी।"

"एक बार सोचो मिस! अभी तुम बिल्कुल नादान हो, मुझे तुम्हारी अवस्था पर दया आती है।"

"प्रिन्स! तुम्हारी उस दया से मृत्यु की यातना अधिक श्रेयस्कर है।"

"समय देता हूँ—क्या तुमको जीवन का बिल्कुल मोह नहीं है?"

"देशद्रोही बन कर जीने की अपेक्षा देश के लिए प्राण दे देना सौ गुना अच्छा है।"

"हठीली लड़की! जा अपने कर्मों का फल भोग—प्राणदण्ड—२७ जुलाई को।"

"धन्यवाद!"

"ले जाओ इसे।"

सिपाहियों ने फ़्लोराइना को ले जाकर जेल की एक अँधेरी बदबूदार कोठरी में बन्द कर दिया। उस दिन २२ तारीख़ थी—अभी पाँच दिन शेष थे!

फ़्लोराइना ने एक ठण्डी साँस ली—क्या ड्रोवेस्की से अन्तिम भेंट न हो सकेगी?

९

वही भयानक तारीख़ थी।

शाम के पाँच बजे होंगे।

एक खम्भे के चारों ओर लकड़ियों का ऊँचा ढेर लगा हुआ था। उसी ढेर पर हाथ-पैर बँधी हुई फ़्लोराइना खड़ी थी। दो जल्लाद उसके शरीर को मोटी ज़ञ्जीरों से खम्भे से बाँध रहे थे।

चारों ओर सशस्त्र सैनिकों का पहरा था, प्रिन्स रूडोविच राज-अधिकारियों सहित इस अमानुषिक कृत्य को देखने के लिए सपरिवार पधारे थे। सामने एक ऊँचे चबूतरे पर उनके बैठने का स्थान था।

जनता के लोगों को उस स्थान पर आने की मनाही थी। जेल के फाटक पर उनका एक समुद्र-सा उमड़ता चला आ रहा था। अधिकारियों ने आत्म-रक्षा का समुचित प्रबन्ध किया था—डर कर! केवल उस निर्दोष बालिका से! उस छोटे से शरीर को नष्ट कर देने के लिए इतनी सतर्कता!

प्रिन्स ने अन्तिम बार पूछा—फ़्लोराइना! अब भी निहिलिस्ट-दल का पता बतला दो—छूट सकती हो।

बालिका ने घृणा से अपना मुँह दूसरी ओर फेर लिया।

आज्ञा पाकर लकड़ियों के ढेर में आग लगा दी गई!

फ़्लोरा हँस रही थी।

स्वदेश-वन्दना का गीत उसके मुँह से धीरे-धीरे निकल रहा था!

ऐसी दृढ़ता किसी ने न देखी थी!

इतने में राजकर्मचारियों में से एक युवक चुपचाप आगे बढ़ कर उधर ही लपका, जिधर चिता जल रही थी। किसी ने उसे न देखा।

उसने प्रिन्स के सामने जाकर ज़ोर से पुकारा—ईवान ड्रोवेस्की को मैं पकड़ लाया हूँ—मुझे इनाम मिलना चाहिए!

सबका ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो गया।

प्रिन्स ने पूछा—कहाँ है?

"पकड़ोगे?"

"हाँ।"

"तो पकड़ लो—ड्रोवेस्की जीता-जागता तुम्हारे सामने है।"

सिपाही दौड़े, किन्तु इसके पहले ही ड्रोवेस्की के हाथ के पिस्तौल से निकली हुई चार गोलियों ने प्रिन्स रूडोविच की खोपड़ी को जर्जर कर दिया था! प्रिन्स का मृत शरीर गिर पड़ा। सब लोग देखते रह गए!

"क्रान्ति चिरजीवी हो"—ड्रोवेस्की ने कहा—जनता चिल्ला उठी—"क्रान्ति चिरजीवी हो।"

जेल का फाटक टूट चुका था! ड्रोवेस्की दौड़ कर फ़्लोरा के पास पहुँचा।

"प्रिये!"

"प्रियतम!"

आग की लपटें ऊँची हो रही थीं, दोनों अन्तिम बार मिल गए।

राजसैनिकों की बन्दूक़ों ने एक बार गरज कर उन दोनों प्रेमियों का गोलियों से स्वागत किया!

ड्रोवेस्की और फ़्लोराइना दोनों मृत्यु की गोद में सो गए!

केवल—"स्वदेश के लिए!"

जनता ने इस बलिदान को आँखें फाड़-फाड़ कर देखा और देखा राजसत्ता ने, जिसकी नींव को इन दो प्राणियों के रक्त ने हिला दिया था!

सुना जाता है कि प्रजातन्त्र की स्थापना होने पर इन दोनों शहीदों का एक दिव्य स्मारक मास्को नगर में निर्माण किया गया है, जिस पर लिखा है—"स्वदेश के लिए!"

* * *

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—२ ; दृश्य ३ का शेषांश

(संसारीनाथ सामने टहलता है, फिर भी ऐन मौक़ों पर अपना मुँह छिपा लेता है।)

साहित्यानन्द—(घबड़ा कर) एँ ! कुत्ता ? कहाँ ? कहाँ ? मूर्ख कहीं का, यहाँ कुत्ता कहाँ है बे ?

टेसू—यही तो मुझे भी अब ताज्जुब है। मगर तब यह भूँकने की आवाज़ कहाँ से आ रही थी ? मैंने इस कान से अच्छी तरह से सुना था।

साहित्यानन्द—ओहो ! वह कान—उहुँक—कर्ण तो तेरा प्रथम ही से भ्रष्ट है, तभी।

टेसू—तो क्या आप ही कुत्ते की बोली बोल रहे थे ?

साहित्यानन्द—(चिढ़ कर) कुत्ते की बोली नहीं बे। तनिक उच्च स्वर से स्वरचित कविता पाठ कर रहा था। जिसको सुनने के लिए उच्च अट्टालिकाओं पर न जाने कितनी ही साहित्यिक रमणियाँ लालायित होंगी।

टेसू—वह कविता थी ? राम ! राम !

साहित्यानन्द—हाँ-हाँ, कविता थी ? हम-ऐसे उच्च कवि-श्रेष्ठों की ऐसी ही कविता होती है।

टेसू—कैसी ?

साहित्यानन्द—देख ऐसी। फिर से सुन ले—

मत्त तरङ्गिणि !
वृत्तहीन-दिक्काल-विक्रीड़ित
तरलित तुङ्ग-तमाल-विचुम्बित
नभ-वन शिखर विहारिणि
कब आओगी ?

टेसू—(अलग) वाह ! वाह ! भों भों भों भों कब आओगी ? (प्रकट) इसके क्या मतलब ?

साहित्यानन्द—मतलब ? आहाहाहा ! अरे मूर्ख, मतलब भी उहुँक-अर्थ भी भला हम सरीखे कवि-सम्राटों की कविता का कहीं समझ में आ सकता है ? वह कविता ही क्या, जिसका अर्थ समझ में आ जाए ? यदि कविता सभी की समझ में आ जाए, तब उसके अर्थ-गौरव का महत्व क्या रह जायगा ? इसको केवल साहित्यिक व्यक्तिगण समझते हैं।

टेसू—यह बात है ? अच्छा, तो आपकी इस कविता का मतलब वह क्या समझेंगे ?

साहित्यानन्द—समझेंगे नहीं बे ! समझेंगी कह। जिनको समझना है वह बड़ी विदुषी और बड़ी पण्डिता हैं। अपने लेखों में तीन-तीन सतर के एक-एक शब्द प्रयोग करती हैं। वह बड़ी देर से दूरबीन लिए मेरी प्रतीक्षा कर रही होंगी। तभी तो मैंने कहा है, हे नभ-वन-शिखर विहारिणी अर्थात् अपनी उच्च अट्टालिका पर विहार करने वाली और अट्टालिका भी (ज़ोर से राग में पढ़ता हुआ)—

वृत्तहीन दिक्काल-विक्रीड़ित
तरलित तुङ्ग-तमाल-विचुम्बित—

टेसू—(राग मिला कर) चना जोर गरम.........

साहित्यानन्द—यह क्या ?

टेसू—मैं समझा इसके बाद आप यही कहेंगे।

साहित्यानन्द—(बहुत बिगड़ कर मारने को झपटता हुआ) ठहर तो बदमाश ! तेरी ऐसी-तैसी करूँ !

(टेसू भाग कर संसारीनाथ के पीछे छिपता है और उसको ढकेल कर अच्छी तौर से साहित्यानन्द के सामने कर देता है। अब साहित्यानन्द संसारीनाथ को सर से पैर तक देखता है और उसके मत्थे पर हरा टीका देख कर एकाएक सटपटा जाता है। संसारीनाथ लापरवाही से वहाँ से हट कर फिर टहलने लगता है)

साहित्यानन्द—अयँ ? यह भी हरा टीका लगाए हुए है।

टेसू—(पास आकर) क्या आप मुझे मारना भूल गए ?

साहित्यानन्द—चुप रह, सब गड़बड़ हो गया। अरे ! टेसू !

टेसू—कहिए-कहिए, मैं तो यहीं हूँ।

साहित्यानन्द—वह भी हरा टीका लगाए हुए है।

टेसू—जी हाँ। और आप से अच्छा।

साहित्यानन्द—(संसारीनाथ की ओर घूम-घूम कर देखता हुआ) यह तो वही पाजी संसारीनाथ है।

टेसू—और घण्टों से वह यहीं चक्कर लगा रहे हैं।

साहित्यानन्द—क्या कहा, घण्टों से ? हाय ! तब तो सब चौपटाध्याय हो गया, अब क्या करूँ ?

टेसू—क्या हुआ क्या ?

साहित्यानन्द—(अपनी धुन में) और यहाँ टहल—उहुँक—भ्रमण किस प्रकार कर रहा है, मानो मुझे जानता ही नहीं। ऐसी धृष्टता, ऐसी उद्दण्डता, ऐसी दुष्टता ?

टेसू—किस पर आप इतना बिगड़ रहे हैं ?

साहित्यानन्द—(अपनी धुन में) और उस पर हरा टीका लगा कर आया है। इस दुष्ट को हरा टीका लगा कर यहाँ आने की क्या आवश्यकता थी ?

टेसू—तो उन्हें आप बुला कर पूछते क्यों नहीं ?

साहित्यानन्द—आह ! उससे बोलना तो और भी अपने को अपमानित करना है। क्या करूँ, कहीं वह धोखा न खा जाएँ ?

टेसू—कौन ?

साहित्यानन्द—कुछ नहीं।

(जदुनाथ और रमाकान्त का भेष बदल कर आना)

जदुनाथ—(बुड्ढे के रूप में संसारीनाथ को घूर कर देखता हुआ) अल्ला आप ही हैं।

रमाकान्त—(गँवार के रूप में) हाँ सरकार, (संसारीनाथ को बता कर) यही होयँ। जस तिलोत्तमा रानी बताइन हैं वइसे देखी यह हरियर टीका लगाए है।

साहित्यानन्द—(ताज्जुब में, अलग) यह क्या ? तिलोत्तमा रानी। हरियर टीका ?

जदुनाथ—(चश्मा लगा कर, ग़ौर से देखता हुआ) हाँ-हाँ, आप ही हैं। मैं तिलोत्तमा का पिता हूँ।

रमाकान्त—अउर हम सरकार के नौकर हन।

साहित्यानन्द—(अलग) तिलोत्तमा के पिता और नौकर ? इन लोगों को उस पाजी संसारीनाथ से क्या प्रयोजन ?

टेसू—(साहित्यानन्द से) वह लोग आप ही को समझ कर उनसे बोल रहे हैं। आपने देखा नहीं, इन लोगों ने टीका ही देख कर उन्हें पहचाना है ? सुनिए, सुनिए, उनकी बातें तो सुनिए !

(जदुनाथ और संसारीनाथ कभी चुपके-चुपके, कभी ज़ोर से बातचीत करते हैं और साहित्यानन्द और टेसू छिप कर इन लोगों की बातचीत सुनने की कोशिश करते हैं।)

जदुनाथ—(ज़ोर से) जी हाँ, मुझे तो आपके दर्शनों की तभी से लालसा थी, जब से आपने उसके लेखों को प्रकाशित कर साहित्य में उसका उत्साह बढ़ाया।

(संसारीनाथ चुपके-चुपके उत्तर देता है।)

साहित्यानन्द—(अलग) हाय ! हाय ! यह तो सचमुच मेरा भ्रम उस पाजी पर कर रहे हैं।

जदुनाथ—तिलोत्तमा ने शायद आपका चित्र किसी पत्र या पत्रिका में देखा होगा। तभी तो उसने कोठे पर से देखते ही आपको पहचान लिया। और जल्दी से आकर मुझे बताया कि वह देखिए, सम्पादक जी हरा टीका लगाए पार्क में टहल रहे हैं। बस वैसे ही आपकी सेवा में लपका।

साहित्यानन्द—(अलग) अररररर ! तिलोत्तमा को भी इसी मूर्ख पर मेरा भ्रम हुआ। हाय ! हाय ! बड़ा अनर्थ हो गया।

टेसू—आपका टीका दिखाई न पड़ा होगा। कैसे दिखाई पड़े ? एक तो बेचारे बुड्ढे आदमी, दूसरे ऐनक लगाए हुए।

साहित्यानन्द—(घबड़ा कर) हाय ! क्या करूँ ? इस भ्रम को कैसे मिटाऊँ ?

टेसू—मैं बताऊँ, आप एक के बदले दो तीन टीका लगा लीजिए, जिसमें कोई न कोई तो उन्हें दिखाई पड़ जाए।

साहित्यानन्द—हाँ-हाँ, यह युक्ति ठीक होगी।

(जल्दी से रङ्ग की डिब्बी निकाल कर अपनी पेशानी पर दो-चार टीका लगाता है और जदुनाथ और रमाकान्त की तरफ़ मुँह बढ़ा-बढ़ा कर सामने करता है। मगर वह लोग ऐन मौक़ों पर दूसरी ओर मुँह फेर लेते हैं। तब साहित्यानन्द दूसरी तरफ़ जाता है। मगर उधर भी वही हाल होता है।)

रमाकान्त—अब सरकार घर न चला जाय। तिलोत्तमा रानी जलपान के लिए आसरा देखत हुइहैं।

जदुनाथ—हाँ-हाँ। (संसारीनाथ से) आइए, अपनी चरण-धूलि से मेरी कुटी को पवित्र कीजिए। पास ही है।

साहित्यानन्द—(अलग) हाय ! हाय ! यह पाजी अब मेरा ही सब आनन्द लूटने जा रहा है। क्या करूँ ? यह अनर्थ अब नहीं देखा जाता।

टेसू—घबड़ाने से काम न चलेगा। जल्दी से आप और टीके लगा लीजिए। अभी उन्हें दिखाई नहीं पड़ा।

साहित्यानन्द—अच्छा ! अच्छा ! मेरी तो बुद्धि इस समय कुछ काम नहीं करती, ले मैं अपने मुँह भर में टीका ही टीका लगाए लेता हूँ। अब तो इन अन्धों को दिखाई पड़ेगा।

(जदुनाथ, रमाकान्त और संसारीनाथ एक तरफ़ जाने लगते हैं। साहित्यानन्द अपने चेहरे भर में बीसों टीका लगाए पागलों की भाँति दौड़ कर उन लोगों के सामने जाता है। वैसे ही वे लोग उधर से पलट कर दूसरी ओर हो जाते हैं। साहित्यानन्द दौड़ कर उधर जाता है। उधर भी यही हाल होता है। इसी बीच में टेसू के इशारे पर कुछ लड़के आ पड़ते हैं और साहित्यानन्द को देख-देख कर हँसते हैं, और उसे आगे जाने नहीं देते हैं। जदुनाथ वग़ैरह चल देते हैं।)

साहित्यानन्द—हाय ! हाय ! वह लोग चले गए। अरे दुष्टो ! अरे पाजियो मेरा मार्ग छोड़ो। आह !

(साहित्यानन्द झौखला कर दूसरी ओर भाग जाता है और लड़के उसके पीछे ताली पीटते और लू-लू करते जाते हैं।)

पट-परिवर्तन

(क्रमशः)

* * *

गाँधीजी से मिलने के पहले ब्रिटेन को तैयार हो जाना चाहिए

सैनिक व्यय कम करने के लिए ; भारतीय ऋण की जाँच करने के लिए ; आर्थिक नीति का समर्पण कर देने के लिए और देशी राज्यों की प्रजा के अधिकार संरक्षित करने के लिए !

मि० ब्रेल्सफ़र्ड की चेतावनी

कराची कॉङ्ग्रेस ने महात्मा गाँधी को लन्दन के गोलमेज़ सम्मेलन में शामिल होने का अपना आदेश-पत्र दे दिया है। इसके द्वारा उन्हें गोलमेज़ सम्मेलन की सम्पूर्ण कार्रवाई में अपने इच्छानुकूल निर्णय देने का अधिकार मिल गया है। उनके साथ आने वाले दूसरे प्रतिनिधि केवल सहायक और सलाहकार के रूप में रहेंगे। लन्दन के विचित्र रङ्गमञ्च पर इस अनोखी मौलिक मूर्ति के प्रवेश करते ही सम्पूर्ण सभ्य संसार की दृष्टि उस ओर खिंच जायगी। एक बार सारा संसार दर्शक बना हुआ, शासक जाति की तलवार के साथ रक्तपात-रहित विप्लव का द्वन्द युद्ध देखेगा।

कराची कॉङ्ग्रेस के पास किए हुए प्रस्ताव सहज ही समझ में आ सकते हैं। पूर्ण स्वाधीनता वाले ध्येय को दुहराने के साथ ही साथ कॉङ्ग्रेस ने अपने प्रतिनिधि महात्मा जी को गोलमेज़ सम्मेलन से अधिक से अधिक स्वाधीनता ले आने की आज्ञा दी है। इतना तो सभी समझ सकते हैं कि वे, अब तक जो कुछ गोलमेज़ में मिल चुका है उससे अधिक ही लेने के लिए लन्दन आएँगे। संरक्षणों का कुछ न कुछ अंश अवश्य ही निकाल देना पड़ेगा और जो कुछ रहेगा भी, वह हिन्दुस्तान की स्वीकृति से ही रह सकेगा।

ठोस वस्तु

गोलमेज़ सम्मेलन की बातचीतों में ग़लतफ़हमियों के पैदा हो जाने का डर है, अगर अभी से ही हम उस पुरुष के विषय में, जिसके साथ हमें बातें करनी हैं, पूरी जानकारी न प्राप्त कर लें। वे अत्यन्त रहस्यमय प्रकृति के होते हुए भी बिल्कुल ठोस ढङ्ग से सोचने-विचारने वाले व्यक्ति हैं। वे कोई शासन-विधान के विशेषज्ञ नहीं हैं। वे एक उघारे बदन रहने वाले मनुष्य हैं। आडम्बरहीन एक साधारण कोठरी उनका निवास-स्थान है, और शुष्क द्राक्ष तथा बकरी का दूध उनका भोजन है। उनकी आँखें सदैव आसपास के भूखे तथा पीड़ित किसानों की ओर लगी रहती हैं। उनकी ग़रीबी दूर करने के उपाय हम लोगों के विचारों से चाहे जितने ही भिन्न क्यों न हों, परन्तु उन्हें समझ लेने से कम से कम हमें उस पुरुष की विचार-धारा का पता लग जाता है।

वे गोलमेज़ में किसी प्रकार के शाब्दिक उलझन में पड़ने नहीं आएँगे। वे कुछ निश्चित, ठोस बातें चाहते हैं, जिनको वे अपने सरल परन्तु ज़ोरदार शब्दों में पहले ही प्रकट कर चुके हैं। आप सैनिक व्यय, सरकारी वेतन तथा भूमि-कर के आधा कर देने की माँग पेश कर चुके हैं। भारत का एक साधारण ग्रामीण तक इन शर्तों को जानता है, वह इन शर्तों के शब्दों में ही बातें करता है। यह लिखते समय मेरे सामने वह दृश्य उपस्थित हो जाता है,जबकि एक विशालकाय शिक्षित सिक्ख किसान ने मुझे उन शर्तों का मर्म समझाया था। सेना और अर्थ पर भारतीयों के नियन्त्रण की चर्चा करते समय मि०गाँधी उस विषय को अधिकारों और संरक्षणों की दृष्टि से विचार नहीं करेंगे, वे सेना के बचे हुए व्यय को किसानों के लिए उतना मन अधिक ग़ल्ला समझ कर उस पर विचार करेंगे। कारण कि किसानों के लिए दिन में एक बार भी भरपेट भोजन मिल जाना सौभाग्य की बात है। सम्भवतः विवाद का विषय यह न होगा, कि सैनिक व्यय के लिए एक निश्चित रक़म भारत की आय में से अलग कर दी जाय या नहीं।

सैनिक व्यय का भार

मुख्य प्रश्न यह होगा कि सैनिक व्यय कितना कम से कम किया जा सकता है। यदि गोलमेज़ में भारत सन्तुष्ट हो गया तो निस्सन्देह सैनिक व्यय में बहुत बड़ी कमी हो जायगी। तब सीमा प्रान्त की जङ्गली जातियों का दृष्टिकोण भारत के प्रति वही न रहेगा, जो कि आज विदेशी शासकों के प्रति है। अभी ज़्यादा दिन नहीं हुए, जब कि अफ़्रीदियों ने अपनी सन्धि की शर्तों में पहली शर्त गाँधी के छुटकारे की रक्खी थी। लोकमत का प्रभाव भारत में बहुत ही दृढ़ है। यह ठीक है कि अभी तक उसका उपयोग शासन के कार्यों में नहीं किया गया। परन्तु स्वराज्य के अधिकार मिल जाने पर अवश्य ही उसका उपयोग किया जायगा।

गोलमेज़ कॉन्फ्रेन्स के आगामी अधिवेशन के लिए सबसे उत्तम और पहली तैयारी यह हो सकती है, कि यहाँ के लोग भारत के सैनिक व्यय के कम करने तथा सेना के शीघ्र से शीघ्र भारतीयकरण के उपाय सोच डालें। लेकिन इस बात के सोचने में हमें, भारतीय सेना के साम्राज्य सम्बन्धी महत्व को न भूल जाना चाहिए। पूर्वीय देशों में ब्रिटिश साम्राज्य की जो नीति है, उसमें भारतीय सेना का महत्वपूर्ण स्थान है। इस बात को साइमन कमीशन ने भी अपनी रिपोर्ट में स्वीकार किया था। जहाँ तक पूर्वीय देशों की साम्राज्य-नीति का भारतीय सेना से सम्बन्ध है, वहाँ तक सेना साम्राज्य नीति के अधीन रहनी चाहिए। रूस की ओर सावधान रहना आवश्यक है। सैनिक विषयों पर विचार होने के साथ ही साथ भारतीय ऋण की समस्या भी हल हो जानी चाहिए। ऋण की समस्या बहुत विचारणीय है। उदाहरणार्थ क्या बर्मा जीतने का व्यय भी भारत के ऋण में जोड़ा जा सकता है?

व्यापारिक अधिकार

भारतीय समस्या मुख्य में आर्थिक है। सैनिक व्यय के बाद जो दूसरा जटिल विषय गोलमेज़ के सामने उपस्थित होगा, वह ब्रिटेन और भारत का व्यापारिक सम्बन्ध होगा। इस सम्बन्ध में पहली गोलमेज़ का निर्णय बहुत अनिश्चित और अस्पष्ट है। कॉङ्ग्रेस ने ब्रिटेन और भारत के व्यापारिक अधिकार की बराबरी का घोर विरोध किया है। भारतीय अपने उद्योग-धन्धों की रक्षा हर प्रकार से करेंगे, इसे स्वीकार कर लेने के लिए हमें तैयार हो जाना चाहिए। लङ्काशायर ने बङ्गाल के आश्चर्यजनक बुनाई के उद्योग को बिल्कुल नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। परन्तु अब भाग्य का चक्र फिर से भारत के अनुकूल हुआ है। हम भारत को उसे अपना जहाज़ी बेड़ा क़ायम करने में भी कोई रुकावट नहीं डाल सकते। अन्य उपनिवेशों की भाँति उसे भी अपना जहाज़ी बेड़ा रखने का अधिकार है।

जो हो, अब किसी न किसी प्रकार से भारत, ब्रिटिश जहाज़ी कम्पनियों, ब्रिटिश बैङ्कों तथा ब्रिटिश एलेक्ट्रिक कम्पनियों के व्यापारिक एकाधिकार को छीनने का प्रयत्न करेगा। यदि ब्रिटिश व्यापारियों की व्यापार-रक्षा के लिए कोई क़ानून बनाना आवश्यक समझा जाय तो अवसर पड़ने पर उस क़ानून पर विचार करने का अधिकार न्यायालयों के अधीन रहना चाहिए, किसी गवर्नर के अधीन नहीं! हमें अब पहले की तरह किसी विशेषाधिकार को कम से कम भारत के अर्थ-शोषण के काम में प्रयोग करने का साहस न करना चाहिए।

गोलमेज़ के अव्यवस्थित निर्णय

यहाँ तक राष्ट्रीय आन्दोलन का साथ दिया जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि इतना हो जाने पर भी भारत में अन्य देशों की तरह भिन्न-भिन्न श्रेणियों का प्रतियोगिता-युद्ध चलता ही रहेगा। परन्तु भावी शासन-विधान का निर्माण करते समय हमें इस बात पर ध्यान रखना होगा कि तराज़ू के पलड़े जहाँ तक सम्भव हो, बराबरी पर रहें। जब हम इस दृष्टि से गोलमेज़ के अब तक के निर्णयों को देखते हैं, तो हमें पता चलता है कि देशी राज्यों के सम्बन्ध में ग़लती की गई है। सङ्घ-शासन-परिषद में देशी राज्यों के प्रतिनिधि जनता द्वारा निर्वाचित होकर न आयेंगे, बल्कि नरेशों द्वारा नियुक्त किए जायँगे। ये प्रतिनिधि लोक-प्रतिनिधि न होकर नरेशों के प्रतिनिधि होंगे। इन प्रतिनिधियों तथा ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधियों को मिलाने से सङ्घ-शासन-सभा में बहुमत पूँजीवादियों का ही रहेगा। ब्रिटिश भारत में केवल दस प्रति-शत जन-संख्या को वोट देने का अधिकार रहेगा। इसका परिणाम यह होगा कि प्रतिनिधियों का चुनाव प्रायः ज़मींदार, महाजन और वकीलों की श्रेणियों में से हुआ करेगा।

इस प्रकार की व्यवस्था से भारत का कोई हित न होगा। ग़रीबी बनी ही रहेगी। कारण कि भूमि-कर, नमक-कर, विदेशी जहाज़ों के बेड़े तथा व्यापारिक एकाधिकारों की अपेक्षा पूँजीपतियों के अत्याचार और बेगार, भारत की ग़रीबी के कहीं अधिक ज़बरदस्त कारण हैं। ग्रामीण कर देते हैं, परन्तु राज्य की तरफ़ से उसका लाभ, उन्हें बहुत कम मिलता है। केवल स्कूलों, सड़कों, अस्पतालों, नहरों और अकाल की सहायताओं के रूप में कुछ प्राप्त हो जाता है। परन्तु ज़मींदार से तो किसान कुछ भी नहीं पाता। ज़मींदार अपनी आमदनी का कोई भी हिस्सा किसान की या खेती की उन्नति में नहीं व्यय करता।

मतलब यह कि पहली गोलमेज़ की कार्रवाइयों में देश के सब प्रकार के हितों की रक्षा का ध्यान नहीं किया गया। कहने के लिए तो यह सिद्धान्त ज़रूर स्थिर कर लिया गया था कि विधान में प्रत्येक अल्प जाति की हित-रक्षा का ध्यान रक्खा जायगा, परन्तु वास्तव में सिवा साधारण जनता के हित की रक्षा के और सबके हितों की रक्षा कर दी गई है। देशी राज्यों की प्रजा को कोई अधिकार ही नहीं दिया गया। वहाँ के प्रतिनिधि नरेशों के नियुक्त प्रतिनिधि हुआ करेंगे। आश्चर्य की बात तो यह है कि ऐसे अव्यवस्थित विधान की रचना मज़दूर-सरकार के शासन-काल में हो रही है।

* * *

अजी सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

लङ्काशायर के मिल-स्वामी आजकल बेतरह परेशान हैं। भारतवर्ष के बॉयकॉट से बेचारों की नींद हराम हो गई है। अपने राम की समझ में यह बॉयकॉट बिल्कुल नियम-विरुद्ध है; क्योंकि कहावत है कि "पीठ की मार दे ले, परन्तु पेट की मार न दे।" इस कहावत के अनुसार यह बॉयकॉट सोलहो आने बेजा है। विशेषतः जब कि उपरोक्त कहावत एक हिन्दुस्तानी कहावत है। हिन्दुस्तानियों को अपनी कहावतों का अक्षरशः पालन करना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करेंगे, तो उनकी कहावतों का कोई मूल्य नहीं रह जायगा। इसके अतिरिक्त इस समय लङ्काशायर का बॉयकॉट करना गुरुद्रोह के समान है। जिस लङ्काशायर ने भारत को ऐसे-ऐसे बढ़िया कपड़े पहनाए, जिस लङ्काशायर ने भारतवर्ष को कपड़ा बनाना सिखाया, जिस लङ्काशायर ने अपने हानि-लाभ का ख़्याल न करके, भारत के मिलों को कपड़े की मैशीनें सप्लाई कीं, उस लङ्काशायर से ऐसा व्यवहार ! इस कृतघ्नता का भी कोई ठिकाना है !! यदि विलायत वाले मैशीनों का आविष्कार न करते, तो भारत के मिलों की क्या दशा होती ? भारतवर्ष के हित के लिए लङ्काशायर ने क्या नहीं किया ? नई-नई मैशीनें बनाईं, रङ्ग-बिरङ्गे कपड़े बनाए, उतनी दूर से जहाज़ पर लाद कर भेजे और भगवान जाने कौन-कौन से काया-कष्ट सहे। बेचारे ने सब कुछ किया, कुछ भी उठा नहीं रक्खा। भला बताइए तो सही, विलायत में धोती जोड़े कौन पहनता है ? साड़ियों की खपत विलायत में कितनी है ? परन्तु फिर भी बेचारा लङ्काशायर ये चीज़ें पूर्ण निस्स्वार्थ भाव से केवल हिन्दुस्तान के लिए बनाता रहा। जो व्यक्ति स्वयम् मर-खप कर ऐसी वस्तु बनावे, जो उसके किसी काम की न हो, उस व्यक्ति को आप क्या कहेंगे ? अपने राम तो उस आदमी को दो ही उपाधि दे सकते हैं—या तो प्रथम श्रेणी का बेवक़ूफ़ या प्रथम श्रेणी का परोपकारी। कुछ लोग इस पर कह सकते हैं कि यह तो उसने अपने आर्थिक लाभ के लिए किया—यह तो व्यापार था ; इसमें परोपकार की कौन सी बात है। ऐसे लोगों के लिए अपने राम का यह उत्तर है कि आर्थिक लाभ तथा व्यापार के सैकड़ों रास्ते हैं। यदि लङ्काशायर धोती जोड़े न बना कर पतलूनें बनाता, तो क्या उसे लाभ न होता ? जैसे हिन्दुस्तान धोतियाँ ख़रीदता रहा है, यदि उसी तरह अन्य देश लङ्काशायर की पतलूनें ख़रीदते तो अवश्य लाभ होता। अब यह बात ही दूसरी है कि कोई ख़रीदे ही नहीं। इसे बेचारा लङ्काशायर क्या करे ?

हिन्दुस्तान के बॉयकॉट के कारण लङ्काशायर को इतनी घबराहट क्यों है ? इसका कारण यह नहीं है कि वह कोई ऐसी चीज़ नहीं बना सकता जो दूसरे देशों में खप सके। वह अभी ऐसी-ऐसी चीज़ें बना सकता है कि अन्य देश वाले तुरन्त उसकी नक़ल कर लें ; परन्तु बात केवल यह है कि उसे धोती जोड़े और छींट बनाने की आदत पड़ गई है। कहावत भी है कि अभ्यास क्रमशः स्वभाव हो जाता है। अतएव इतने दिनों का अभ्यास अवश्य स्वभाव बन गया होगा। इधर आदमियों का अभ्यास हुआ उधर मैशीनों के पुर्ज़े भी सदा एक चीज़ बनाते रहने के कारण इस करवट से घिसे कि अब उनमें कोई दूसरी चीज़ बन ही नहीं सकती। अब आप ही बताइए, ऐसी दशा में बेचारा लङ्काशायर क्या करे ? उधर मिल के कर्मचारी अन्य कोई वस्तु बनाना नहीं चाहते, इधर मैशीनें बना नहीं सकतीं। न कहिएगा, कितनी बड़ी मजबूरी है। भगवान ऐसी मजबूरी किसी बाल-बच्चे वाले पर न डाले। इसमें सारा अपराध हिन्दुस्तान का है। पहले तो उसने बेचारे से अपने मतलब की चीज़ें बनवा कर आदत ख़राब कर दी और अब जब कि वह अन्य किसी के काम की चीज़ बनाने के काम का न रहा तब अब बॉयकॉट कर रहे हैं। क्या भगवान इस अन्याय को न देखेगा ? लोग कहते हैं कि लङ्काशायर का व्यापार सुदृढ़ बनाने के लिए हिन्दुस्तान का उद्योग-धन्धा नष्ट किया गया। यह भी बिल्कुल नासमझी की बात है। जिसे हिन्दुस्तानी उद्योग-धन्धा नष्ट होना बताते हैं वह न नष्ट था न भ्रष्ट। वह तो हिन्दुस्तान को आराम पहुँचाने की बात थी। यदि हिन्दुस्तानियों के हाथ से काम छुड़ा कर अङ्गरेज़ स्वयम् वह काम करने लगें तो आराम किसे मिला ? अङ्गरेज़ लोग उन राजाओं में नहीं हैं जो स्वयम् तो मख़मली गद्दों पर लोटा करें और प्रजा मेहनत-मज़दूरी करे। अङ्गरेज़ स्वयम् मेहनत-मज़दूरी करते हैं और अपनी प्रजा को आराम पहुँचाते हैं। हिन्दुस्तानियों में बुद्धि तो है ही नहीं, जो इन बारीक बातों को समझ सकें। जब से महात्मा जी ने खद्दर तथा चर्ख़े का प्रचार किया, तब से हिन्दुस्तानियों को कितना कष्ट हो रहा है। रुई इकट्ठी करो, उसे धुनको, फिर कातो, तत्पश्चात् बुनो तब कहीं कपड़ा पहनना नसीब हो ; और वह भी ऐसा कि बदन छिल जाय। पहले यह दिक़्क़त कहाँ थी ? आराम से बाज़ार गए, खट से रुपए फेंके, चट से कपड़ा ले आए, झट सिलवाया और फट पहन लिया। न चर्ख़े से मतलब था न धुनकी से। रही यह बात कि रुपए अधिक देने पड़ते थे और रुपया सब विदेश चला जाता था। सो जनाब, रुपए अधिक देने की बात तो यह है कि या तो आराम ही उठा लिया जाय या रुपया ही बचा लिया जाय—दोनों काम साथ-साथ नहीं हो सकते। लोग नौकर क्यों रखते हैं ? आराम ही के लिए न ! यदि अपने हाथ से काम कर लिया जाय तो नौकर की तनख़्वाह का रुपया बचे या नहीं ? तो क्या वे लोग बेवक़ूफ़ हैं जो रुपए ख़र्च करके नौकर रखते हैं ? दूसरी बात रुपया विदेश जाने की है—सो चला जाय, हमारी बला से। उसके बदले में आराम तो मिलता है और बढ़िया-बढ़िया डिज़ाइनों के दर्शन तो होते हैं। और रुपया तो निमित्त मात्र है—असली चीज़ तो अन्न-वस्त्र है। सो अन्न भी भूमि से उत्पन्न होता है और कपास भी। सो जनाब, अङ्गरेज़ कुछ भूमि तो उठा नहीं ले जा सकते। भूमि तो रहेगी ही और जब भूमि रहेगी तो अन्न-वस्त्र भी मिलता ही रहेगा—रुपया चाहे रहे चाहे भाड़ में जाय। बल्कि रुपया जितना कम रहे उतना अच्छा—चोर-डाकुओं का भय न रहेगा। सम्पादक जी, ये बातें सर्वसाधारण नहीं समझ सकते। यह बात अर्थ-शास्त्री ही समझ सकते हैं। और अर्थ-शास्त्री भी कैसे ? अपने राम जैसे, जो अर्थ-शास्त्र को कोई चीज़ ही नहीं समझते। ऐसी दशा में यदि लङ्काशायर वाले यह कहते हैं कि हिन्दुस्तानियों को कपड़ा ख़रीदने के लिए मजबूर किया जाय, तो क्या बेजा कहते हैं ? कुछ लोगों का कहना है कि अङ्गरेज़ों की समस्त फ़ौजें भी हिन्दुस्तानियों को लङ्काशायर का कपड़ा ख़रीदने के लिए मजबूर नहीं कर सकतीं। अपने राम को यह बात फूटी आँखों भी नहीं सुझाई देती। क्यों नहीं मजबूर कर सकतीं ? आख़िर लोग जेल क्या अपनी ख़ुशी से चले जाते हैं, फाँसी क्या अपनी इच्छा से लटक जाते हैं। सरकार ही तो उन्हें ऐसा करने के लिए मजबूर करती है। इसी प्रकार कपड़ा ख़रीदने के लिए भी मजबूर कर सकती है। अजी जनाब, सरकार बहादुर चाहे तो यह प्रबन्ध कर सकती है कि प्रत्येक महीने प्रत्येक घर में, उस घर की आवश्यकतानुसार कपड़े के थान पुलिस द्वारा पहुँचवा दिया करे और उनके घर से मूल्य के रुपए मँगवा लिया करे। लोग ख़ुशी से रुपए न दें तो पुलिस ज़बरदस्ती छीन लाया करे। यदि रुपए न मिलें तो मेज़, कुर्सी, बर्तन—जो कुछ मिले, ले आया करे। म्यूनिसिपैलिटी पुलिस का टैक्स वसूल करने में जब रुपए के बदले मेज़, कुर्सियाँ ली जा सकती हैं तो कपड़े के मूल्य के बदले में भी ये चीज़ें ली जा सकती हैं। लोग रुपए छिपा सकते हैं, ज़ेवर छिपा सकते हैं, परन्तु मेज़, कुर्सी इत्यादि नहीं छिपा सकते ! जिसके घर में कुछ भी न मिले, उसे सरकार जेल में भिजवा सकती है। जब यह दशा होगी तब लोग झख मारेंगे और लङ्काशायर का कपड़ा ख़रीदेंगे। और फ़िलहाल तो सब से सरल युक्ति यह है कि जब तक मर्दुमशुमारी के हिसाब से हिन्दुस्तान का प्रत्येक आदमी इस बात का वादा न कर ले कि वह प्रत्येक महीने में लङ्काशायर का कम से कम एक थान अवश्य ख़रीदेगा तब तक स्वराज्य दिया ही न जाय। वादा ख़ाली ज़बानी न हो—पक्की लिखा-पढ़ी करा ली जाय—हिन्दुओं से गङ्गामाई की और मुसलमानों से क़ुरान-मजीद की क़सम खिलवा ली जाय—तब स्वराज्य दिया जाय। यदि लङ्काशायर वाले यह युक्ति ले जायँ तो देखिए उनका कपड़ा इस तरह बिकने लगे जैसे बनारस का माल। सम्पादक जी, कृपा करके मेरी ओर से यह युक्ति लङ्काशायर वालों के कानों तक पहुँचा दीजिए। मुझे यह विश्वास है कि इसके बदले में वे मुझे रायबहादुर या दुबे बहादुर की उपाधि अवश्य देंगे, परन्तु अपने राम को किसी उपाधि की आवश्यकता नहीं है। अपने राम तो केवल परोपकार के लिए यह सब कर रहे हैं। अधिक से अधिक लङ्काशायर वाले इतनी कृपा करें कि अपने राम को कपड़ा ख़रीदने से मुस्तसना कर दें; क्योंकि यदि उन्होंने अपने राम के यहाँ कपड़े के थान भिजवा कर ज़बरदस्ती रुपया वसूल किया तो बड़ी थुकाफ़ज़ीहती होगी। रुपया अपने राम के पास है नहीं—यदि तवा-कड़ाही ले गए तो लल्ला की महतारी घर में न बैठने देगी, इसलिए अपने राम पर कृपा रक्खें—बस अपने उपकार के बदले में अपने राम केवल इतना ही चाहते हैं।

भवदीय,

—विजयानन्द (दुबे जी)

* * *

स्त्री-शिक्षा

—*—

सहयोगी 'ट्रिब्यून' में स्त्रियों की शिक्षा का रूप कैसा होना चाहिए, इस पर एक महत्वपूर्ण अग्र-लेख प्रकाशित हुआ है। पाठकों के लाभार्थ उसका भावानुवाद नीचे दिया जाता है :—

प्रोफ़ेसर कर्वे ने भारत में स्त्री-शिक्षा के प्रचार में बड़ा उद्योग किया है। लन्दन के ईस्ट इण्डिया एसोसिएशन में आपने अपने मनोवाञ्छित विषय पर एक व्याख्यान दिया है। उक्त संस्था में प्रकट किए गए विचारों में मतभेद होना स्वाभाविक है। उदाहरण-स्वरूप अङ्गरेजी को शिक्षा का माध्यम बनाने अथवा उसे एक महत्वपूर्ण अनिवार्य विषय मान कर उसके स्थान पर कोई आधुनिक भारतीय भाषा के रखने के विषय पर बहुत कुछ कहा जा सकता है। इसी प्रकार आजकल स्त्री-शिक्षा को भारतीय समाज के अनुरूप बनाने के बदले उन्हें पुरुषों की भाँति शिक्षा देने के विषय में दो विचार न केवल सम्भव ही हैं, वास्तव में ऐसा है भी। दूसरे प्रश्न के विषय में हमारा विचार है कि स्त्रियाँ स्वयं ही निर्णय कर लें कि उन्हें किस प्रकार की शिक्षा दी जाय। उनसे यह आशा करना ठीक नहीं कि वे सदा के लिए ही इस प्रश्न को हल कर लें, जब तक कि शिक्षा और अधिक प्रचार उनमें न हो जाय। पहले प्रश्न के विषय में विद्वानों की सम्मति से जान पड़ता है कि यह प्रश्न स्वयं ही हल हो जायगा, जैसा कि पुरुषों के विषय में हुआ है। हाँ, एक बात निश्चय है। साधारण जनता की दृष्टि में और अन्त में स्वयं स्त्रियों की ही दृष्टि में स्त्री-शिक्षा को पतित किए बिना और दोनों—स्त्री और पुरुष—के पब्लिक और प्राइवेट अथवा ऊँची नौकरियों में अधिकार के प्रति उलझन पैदा किए बिना आप लड़कों की शिक्षा के लिए एक माध्यम और लड़कियों के लिए दूसरे माध्यम की व्यवस्था नहीं कर सकते।

जहाँ दो विचार नहीं है अथवा नहीं हो सकता है, वैसा विषय है जैसे 'स्त्री-शिक्षा के प्रचार के लिए एक अत्यन्त साहसपूर्ण मसविदे के बनाने की अत्यधिक आवश्यकता।' प्रोफ़ेसर कर्वे ने कहा है कि भारत में स्त्री-शिक्षा की उन्नति सुस्ती से नहीं, किन्तु शीघ्रतापूर्वक करनी चाहिए, ताकि वर्तमान शिक्षित पुरुषों और स्त्रियों की संख्या में जो असमानता है वह दूर हो जाय। यदि इस असमानता को हम दूर करना चाहें, तो एक बात जो अत्यन्त आवश्यक है वह यह है कि सरकार लड़कियों के स्कूल में उससे अधिक सहायता दे, जितनी कि अभी तक उसने दी है। स्त्रियों और पुरुषों की शिक्षा में कितना अन्तर है अर्थात् स्त्रियाँ कितनी पिछड़ी हुई हैं, इसका पता तभी लग सकता है जब शिक्षितों की संख्या से जन-संख्या का मिलान किया जाय।

शिक्षित-पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की निकटतम पहुँच बर्मा ने किया है, जहाँ कि १९२५-२६ की स्त्रियों की जन-संख्या में २.२७ शिक्षिता हैं और शिक्षित पुरुषों की संख्या ३.७९ फ़ी सदी है। उसी साल में दूसरे बड़े प्रान्तों में शिक्षितों की संख्या इस प्रकार है :—

प्रान्त	स्त्री	पुरुष
मद्रास ...	२·२७ ...	... ८·४
बम्बई ...	२·१५ ...	... ८·२७
बङ्गाल ...	१·७ ...	... ७·४
यू० पी० ...	·५१ ...	... ४·६२
पञ्जाब ...	·८२ ...	... ७·९२
बिहार-उड़ीसा	·६७ ...	... ५·५२

तीन वर्षों से अधिकांश प्रान्तों की दशा कुछ बदल गई है। किन्तु सारांश में अभी ज्यों की त्यों है।

Sjt. Amrit Lal Bhatia, B. Sc., LL. B., writes from Muttra:

. . . you are to be congratulated for your fearless journalism at great personal risk and monetary sacrifice. Yours is an unparallelled record in the cause of social reform and advancement. . . .

और हमें कहना पड़ता है कि शिक्षा के विषय में स्त्री और पुरुषों में यह गम्भीर असमानता, देश की मानसिक और नैतिक उन्नति के लिए न केवल एक महान बाधा है, किन्तु दोनों जातियों के उस अविच्छिन्न सम्बन्ध पर, जिस पर कि समाज और उसके सदस्यों का सुख निर्भर करता है, यह विपत्ति है। यदि समूचे भारत को लिया जाय तो ३१ मार्च १९२७ को ३·५ मिलियन स्त्री और २२·७ मिलियन पुरुष शिक्षित हैं, जहाँ कि जन-संख्या स्त्रियों की १५९ मिलियन और पुरुषों की १६९ मिलियन है। यह कहना कठिन है कि दोनों में कौन अधिक हृदय-द्रावक है। वह भयङ्कर अज्ञान और निरक्षरों का समूह वा स्त्री-पुरुषों की संख्या में वह महान अन्तर। देश में रहने वाले ३२८ मिलियन जनता में ३०० मिलियन से अधिक एकदम ही निरक्षर भट्टाचार्य हैं, और उन २६ मिलियन में स्त्रियाँ केवल ३·५ मिलियन हैं, जो कि साधारण भाषा में यह कहा जा सकता है कि ⅞ शिक्षित मनुष्यों से अधिक को निरक्षर स्त्रियों से ही सन्तुष्ट रहना पड़ता है। और जो यह जानते हैं कि स्त्रियों का बच्चों के चरित्र और मस्तिष्क पर कितना बड़ा प्रभाव है, वे भविष्य में होने वाले नागरिकों के लिए उनकी मानसिक, सामाजिक और राजनैतिक भलाई के लिए समाज में व्यवस्था कर सकते हैं। वे यह भी समझ सकते हैं कि वास्तव में भारत का स्थान सभी प्रकार से आज कितना ऊँचा होता, यदि अन्तिम ४० वर्षों में शिक्षा का यहाँ उतना ही प्रचार हुआ होता है जितना कि उदाहरण-स्वरूप जापान में हुआ है, और स्त्री और पुरुष दोनों जाति के बीच इस विषय में समानता आ जाती।

यदि हम इस असन्तोषजनक अवस्था का कारण जानना चाहें तो हमें कहना पड़ता है कि यह भारत के राजनैतिक भाग्य-विधाताओं की असहानुभूति है—वह असहानुभूति जो मिल के शब्दों में, एक स्वाभाविक वस्तु है, जब कि एक जाति दूसरी जाति के शासन के अन्तर्गत है। कठोर हदबन्दियों के होते हुए भी जिसके अन्दर मिनिस्टरों को सभी जगह काम करना पड़ता था, उत्तरदायी शासन में भारत ने जो उन्नति की है, वह स्वराज्य और राजनैतिक दासत्व में अन्तर का अन्तिम प्रमाण है।

* * *

श्रीजगद्गुरु का फ़तवा

[हिज़ होलीनेन्स श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

बाबा शाह मदार की दया से बङ्गाल के विख्यात विश्व-प्रेमी। दार्शनिक-प्रवर कवि-सम्राट डॉक्टर सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर (नहीं, 'टैगोर' क्योंकि 'ठाकुर' शब्द में ठेठ भारतीयता की बदबू भरी है, इसलिए वह विश्व-प्रेम का विघातक है) महोदय की ७०वीं वर्ष गाँठ साङ्गोपाङ्ग एवं निर्विघ्न सम्पन्न हो गई, इसलिए कवि-सम्राट को श्रीजगद्गुरु की ओर से बहुत-बहुत बधाई और महाकवि ग़ालिब के शब्दों में, यह शुभकामना है कि—

तुम सलामत रहो हज़ार बरस,
हर बरस के हों दिन पचास हज़ार !

❀

इस शुभ अवसर पर कविवर के भक्तों ने उन्हें बधाई दी है, इसलिए कविवर ने भी, 'मन तोरा हाजी बगोयम तू मरा हाजी बगो' की प्राचीन नीति के अनुसार, उन्हें अपना एक छोटा सा अलहामी सन्देश देने की कृपा की है। क्योंकि बक़ौल मियाँ नज़ीर अकबराबादी—

कलजुग नहीं, कर-जुग है यह,
यहाँ दिन को दे और रात ले,
क्या ख़ूब सौदा नक़द है,
इस हाथ दे उस हाथ ले।
यह सौदा दस्तबदस्ती है !

❀

यद्यपि सौजन्यता के दुर्वह भार से दब कर विश्व-प्रेमी ने कहा है कि "मैं दार्शनिक अथवा पैग़म्बर नहीं हूँ" परन्तु श्रीजगद्गुरु (अगर फाँसी पर लटका दिए जाँए तो भी) यह बात मानने को तैयार नहीं हैं। क्योंकि आपकी वह श्रीजगद्गुरु की सी तुषार-शुभ्र दाढ़ी, आपाद विलम्बित अरग़वानी चोग़ा, नवोढ़ा-विनिन्दित व्रीड़ावतन मुखभङ्गिमा और ग़ुलाम देश में जन्म लेकर भी विश्व-प्रेम की बाँग, बाप क़सम, चिल्ला-चिल्ला कर कह रही है कि आप पैग़म्बर हैं !

❀

और, फिर पैग़म्बर के सिवा किस के बाप की मजाल है जो कह दे, कि चर्ख़े और खद्दर से कुछ नहीं होगा, राष्ट्रीय पताका कोई चीज़ नहीं और अब से 'बन्देमातरम्' न कह कर 'बन्देभारतम्' कहा जाए ? हमारी तो दृढ़ धारणा है, कि पैग़म्बर होने के कारण ख़्वाजा ख़िज़्र या जिब्राइल ने ही ये बातें श्रीमान को बताई होंगी अथवा शान्ति-निकेतन के शीतल-स्निग्ध लता-कुञ्ज में थिरक-थिरक कर, विकासोन्मुखी किशोरियों को नृत्य-कला सिखाते-सिखाते 'अलहाम' हुआ होगा। ऐसी दशा में हम कैसे मान लें कि श्रीमान पैग़म्बर नहीं हैं !

❀

आपके पर-पदानत पर-पददलित पराधीन देश-वासी देश और विदेश में ठोकरें खाते हैं ; विश्व उन्हें पराधीन—ग़ुलाम—समझ कर उनसे घृणा करता है और आप उन्हीं में से एक होकर विश्व-प्रेम के गीत गाते हैं, आपके करोड़ों देश-भाई भूखों मर रहे हैं और आप शान्ति-निकेतन के उपवन परिवेष्टित बँगलों में 'बीसवीं' सदी की सभ्यतानुमोदित महन्ती के मज़े लेते हैं, बेचारे ग़रीब अपने देश को आर्थिक अधःपतन से बचाने के लिए खद्दर और चर्ख़े का आश्रय ले रहे हैं और आप उसकी निन्दा कर रहे हैं, आपके पराधीनता-पीड़ित देश-वासी मातृ-भूमि को बन्धन-मुक्त करने की चेष्टा में फाँसी पर लटक रहे हैं, लाठियों से सिर फुड़वा रहे हैं, जेलों में सड़ रहे हैं और अपने सारे सुखों को छोड़ कर दरिद्रता का आलिङ्गन कर रहे हैं और उन्हें भावुकतापूर्ण प्रदर्शन-कारी समझ रहे हैं। ऐसी दशा में भला बताइए तो सही, हम कैसे मान लें कि आप पैग़म्बर नहीं हैं ?

❀

आप मानिए या न मानिए, अपने राम तो डङ्के की चोट कहेंगे, कि आप पैग़म्बर हैं। क्योंकि आप नाचते हैं, गाते हैं, कविता लिखते हैं, एम्पायर थियेटर में 'एक्टिङ्ग' करते हैं, शान्ति-निकेतन में बसन्तोत्सव और ग्रीष्मोत्सव मनाते हैं, छात्रों और छात्रियों को देशोद्धारिणी ललित कलाओं की शिक्षा देते हैं, व्याख्यान देते हैं, भारत को ग़ुलाम बनाने वालों ने 'रवीन्द्र' होने पर भी आपको 'नाइट' (रात ?) की पदवी से विभूषित किया है और इसके सिवा कभी-कभी आप 'दाल-भात में मूसरचन्द' की तरह करघे और चर्ख़े में भी टाँग अड़ा दिया करते हैं। यह सब पैग़म्बरी औसाफ़ नहीं हैं तो क्या हैं ?

❀

जिस चर्ख़े और करघे ने मान्चेस्टर और लङ्काशायर की मोटी तोंदों में भूकम्प मचा दिया है, जिसका आश्रय पाकर देश में लाखों बेकार 'सा-कार' हो गए हैं और अनाथा, विधवाएँ जिसकी बदौलत सूखी रोटियाँ पा जाती हैं, उसके सम्बन्ध में, कौन कम्बख़्त आप जैसे कोरे कवि से पूछने गया था कि 'वह अच्छा है या बुरा ?' कौन यह जानना चाहता था, कि बन्देमातरम् कहना उचित है या बन्देपितरम् ? किसे आपसे यह उपदेश ग्रहण करने का ख़ब्त सवार था कि राष्ट्रीय प्रतीक का सम्मान किया जाए या नहीं ? यह सम्पूर्ण अयाचित भाव से ग़रीब देश पर 'रहमत की बारिश' आपने पैग़म्बर होने के कारण ही तो किया है ! वरना, इस बेवक़्त की शहनाई की आवश्यकता ही क्या थी ?

❀

इतने पर आप कहते हैं कि "मैं पैग़म्बर नहीं हूँ !" आह प्रभो ! क्यों इस तरह की बातें कह कर अज्ञानान्धकार में फँसे हुए प्राणियों को भुलावे में डाल रहे हैं ? विश्व-नियन्ता की रची हुई भव-भ्रान्ति ही क्या कम थी, जो दयामय एक नवीन भ्रान्ति-जाल में बेचारों को जकड़ रहे हैं ? यह तो कहिए कि पैग़म्बरों की रग पहचानने वाले श्रीजगद्गुरु अभी जीते हैं, वरना ये 'आँख के अन्धे नाम नयनसुख' सचमुच मान बैठते कि आप पैग़म्बर नहीं हैं। भला श्रीमुख से निकली हुई वाणी पर कौन कमबख़्त अविश्वास कर सकता था ?

❀

सचमुच ये देशोद्धार के लिए ज़हमतें उठाने वाले कोरे भावुक हैं और "अपनी सब शक्तियों को भावुकता-पूर्ण प्रदर्शनों में ही ख़र्च" किए डालते हैं और "उनको कार्यरूप में परिणत" नहीं करते। इसका कारण यह है कि ये श्रीमान की तरह 'रियलिस्ट' नहीं हैं। इसीसे इन्हें चन्द्रमण्डल में 'रमणी-मुख' नहीं दिखाई देता और न वायु-विताड़ित शाल्मली शाखा को मर्मर-ध्वनि में मियाँ तानसेन का धम्मार तथा निर्झरिणी के कल-निदान में बैजू बावरा का ध्रुपद ही सुनाई देता है।

❀

काश, महात्मा गाँधी, स्व० लाला लाजपतराय, स्व० लोकमान्य, स्व० देशबन्धु, स्व० पं० मोतीलाल और पण्डित मालवीय जी आदि निरे भावुक न होकर सर रवीन्द्र की भाँति ही 'यथार्थवादी' होते, तो माशा अल्लाह बड़ा मज़ा रहता। सारा देश हवा के झोंके में विरह-वेदना का हाहाकार सुना करता, कोयल की कूक में विहाग के मज़े मिलते, हिमालय की बर्फ़ीली चोटियाँ शुभ्र किरीटधारी किन्नरों के रूप में दिखाई देतीं और कलकत्ते के चिड़ियाख़ाने में बङ्गालियों की 'कन्सर्ट पार्टी' का मज़ा मिलता।

❀

और सुनिए, प्रत्येक प्रान्त में एक-एक 'शान्ति-निकेतन' और उनकी दुमों में 'विश्व-भारतीयाँ' होतीं। कभी 'चन्दन के गोल तिलक' पर पुस्तक लिख कर मालवीय जी सवा लाख का 'नोबुल प्राइज़' फटकारते और घेलुए में 'सर' बन जाते और कभी 'नारायण' मासिक पत्र में वैष्णव धर्म की प्रशंसा करने के कारण श्री० देशबन्धु को अमेरिका से निमन्त्रण मिलता। कहीं कविता की मन्दाकिनी प्रवाहित होती और कहीं पूर्वी हवा में सङ्गीत की मूर्च्छना सुनाई देती। बस, फिर क्या ? देश एकदम उन्नति के सातवें आसमान पर पहुँच जाता और दादा मुग्धानल देव एक ख़रीते में स्वराज बन्द करके रवीन्द्र बाबू के पास भेज देते।

❀

मगर यहाँ तो इस लँगोटी वाले ने मुनक़्क़े खाकर ऐसा रङ्ग जमाया है, कि विश्व-प्रेम का गीत गाए बिना ही सारा विश्व उसके चरणों में नत-मस्तक हो रहा है, इसलिए उसके कामों में नुक़्ताचीनी करके—जिस क्षेत्र में सम्मान प्राप्त करने की योग्यता, साहस और अधिकार नहीं है, उसमें भी टाँग अड़ा कर—थोड़ी सी सुख्याति झटक लेने में बुराई ही क्या है ? और न होगा तो 'मान न मान, मैं तेरा मेहमान' वाली कहावत ही चरितार्थ हो जाएगी।

❀

अन्यथा, हमें जहाँ तक मालूम है, कविवर श्रीजगद्गुरु की तरह बूटी भी नहीं छानते जो नशे के झोंक में बहक गए होंगे। हाँ, यह बात ठीक है कि बेचारे कल्पना-जगत् के जीव हैं, कल्पना कर लिया होगा, कि चर्ख़े की घरघराहट कविता की बाधक है। इसलिए कभी-कभी चौंक उठते हैं और प्रसङ्ग-अप्रसङ्ग की परवाह न करके उसके सम्बन्ध में कुछ कह देते हैं। क्योंकि हमें जहाँ तक याद है, इस सम्बन्ध में यह आपका तीसरा या चौथा स्तुत्य-प्रयत्न है। इसलिए उन्हें समझ लेना

चाहिए कि चर्खा "साऊण्डलेस" भी होता है और 'मौन भाषा' में भी ग़रीबों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित किया करता है। फलतः बेचारे पर दया ही बनी रहे तो अच्छा है।

❀

आइए, आपको एक क़िस्सा सुनाएँ। एक दिन कवि-सम्राट अपने शान्ति-निकेतन के 'आनन्द-भवन' में बैठे हुए, शायद तपोज्ज्वलता की वृद्धि के लिए, अपने चेहरे पर पाउडर लगा रहे थे और सामने वाले कुएँ से एक पनिहारिन पानी भर रही थी। संयोगवश कुएँ की पक्की जगत की ठोकर से उसका घड़ा फूट गया और सारा जल ज़मीन पर फैल गया।

❀

कविवर का कोमल हृदय भला यह दारुण दृश्य कैसे देख सकता? आप सिर थाम कर झुक पड़े और बड़ी देर तक बेहोशी की हालत में पड़े रहे। अन्त में ईश्वर के अनुकम्पा की! विश्व के भाग्य से आपकी मूर्च्छा भङ्ग हुई तो आपने करुण-कोमल स्वर में अपने किसी पार्श्ववर्ती को बुला कर कहा—पनिहारिनों को मना कर दो कि इस कुएँ से जल न लिया करें, क्योंकि मैं ऐसा भीषण दृश्य नहीं देख सकता। कहीं फिर ऐसी ही दुर्घटना हुई तो सम्भव है, मेरा 'हार्ट-फ़ेल' हो जाए।

❀

वाह रे विश्व! बेटा है प्रचण्ड भाग्यवाला, तभी तो ऐसा लोमहर्षण दृश्य देख कर भी कविवर जीते रह गए! उफ़! ज़रा सोचिए तो सही, जगत की कठोर ठोकर से मासूम घड़े का पेट फट गया और मेद-मज्जा तथा हृत्पिण्ड के साथ उसका सारा आमाशय, निकल कर पृथिवी पर फैल गया। ठोकर लगने के समय उसके मुँह से जो करुण-कातर ध्वनि निकली होगी, वह कितनी हृदय-विदारिणी रही होगी, उसे, हे चर्ख़े की घरघराहट में दिन-रात रहने वाले कठोर-हृदय प्राणी, तुम नहीं समझ सकते!!

❀

श्रीजगद्गुरु के 'तोंद-फ़्रेण्ड' अर्थात् मौलाना मद ज़िल्लहू आजकल कलकत्ते में 'ठण्डा शर्बत' और फ़्रौजदारी बालाख़ाने के अम्बूरी तम्बाकू के मज़े ले रहे हैं। आपके उद्योग से जो वहाँ पृथक निर्वाचिनी मुस्लिम मजलिस होने वाली है, उसके स्वागताध्यक्ष ने मुसलमानों को लिखा है कि—"हम लोग चारों ओर से शत्रुओं द्वारा आक्रान्त हो रहे हैं। इसलिए आत्मरक्षार्थ हमें प्राणपण से जङ्ग करना चाहिए, अन्यथा इस्लाम का ध्वंस अनिवार्य ही समझिए।"

❀

ठीक ऐसा ही भयावह और विभीषिकापूर्ण पत्र लिखा था, पोर्ट आर्थर के बन्दी जनरल स्टोसेल ने रूस के ज़ार को! परन्तु अपने राम का तो कहना है कि ख़ौफ़ज़दा होने की कोई बात नहीं, क्योंकि अकेले एक लाख गाँधियों से लड़ने वाले घटोत्कचोपम उदर धारी मौलाना तो मौजूद ही हैं। जहाँ उन्होंने भारतव्यापी साम्प्रदायिक दङ्गे की धमकी दी, कि बस, क़िला फ़तह! भुशुण्डि के मुँह के सामने किसकी मजाल है जो ठहर सकेगा?

* * *

शीघ्रता कीजिए !
नहीं तो पछताना पड़ेगा !!
मूल्य लागत मात्र केवल ४) रु०
स्थायी ग्राहकों से केवल ३) रु०
व्यङ्ग-चित्रावली
यह चित्रावली भारतीय समाज में प्रचलित वर्तमान कुरीतियों का जनाज़ा है। इसके प्रत्येक चित्र दिल पर चोट करने वाले हैं। चित्रों को देखते ही पश्चात्ताप एवं वेदना से हृदय तड़पने लगेगा; मनुष्यता की याद आने लगेगी; और सामाजिक क्रान्ति की भावना प्रबल वेग से हृदय में उमड़ने लगेगी। प्रत्येक सामाजिक कुरीतियों का चित्रों द्वारा नग्न प्रदर्शन किया गया है। बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, छुआछूत, परदा-प्रथा, पण्डे-पुरोहितों तथा साधु-महन्तों के भयङ्कर कारनामे, अन्ध-विश्वास, पाखण्ड तथा आचरण सम्बन्धी नाना प्रकार की नाशकारी कुरीतियों का सजीव चित्र देखना हो तो इस चित्रावली को अवश्य मँगाइए। एकरङ्गे, दुरङ्गे, तथा तिरङ्गे चित्रों की संख्या लगभग २०० है। प्रत्येक चित्रों के नीचे बहुत ही सुन्दर पद्यमय पंक्तियों में उनका भाव तथा परिचय अङ्कित किया गया है। आज तक ऐसी चित्रावली कहीं से प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य केवल ४); स्थायी ग्राहकों से ३)
स्मृति-कुञ्ज
नायक और नायिका के पत्रों के रूप में यह एक दुखान्त कहानी है। हृदय के अन्तःप्रदेश में प्रणय का उद्भव, उसका विकाश और उसकी अविरत आराधना की अनन्त तथा अविच्छिन्न साधना में मनुष्य कहाँ तक अपने जीवन के सारे सुखों की आहुति कर सकता है—ये बातें इस पुस्तक में अत्यन्त रोचक और चित्ताकर्षक रूप से वर्णन की गई हैं। आशा-निराशा, सुख-दुख, साधन-उत्सर्ग, एवं उच्चतम आराधना का सात्विक चित्र पुस्तक पढ़ते ही कल्पना की सजीव प्रतिमा में चारों ओर दीख पड़ने लगता है। मूल्य केवल ३); स्थायी ग्राहकों से २।)
मूर्खराज
यह वह पुस्तक है, जो रोते हुए आदमी को भी एक बार हँसा देती है। कितना ही चिन्तित व्यक्ति क्यों न हो, केवल एक चुटकुला पढ़ने से ही उसकी सारी चिन्ता काफ़ूर हो जायगी। दुनिया के झञ्झटों से जब कभी आपका जी ऊब जाय, इस पुस्तक को उठा कर पढ़िए, मुँह की मुर्दनी दूर हो जायगी, हास्य की अनोखी छटा छा जायगी। पुस्तक को पूरी किए बिना आप कभी न छोड़ेंगे—यह हमारा दावा है। इसमें किशनसिंह नामक एक महामूर्ख व्यक्ति की मूर्खतापूर्ण बातों का संग्रह है। भाषा अत्यन्त सरल तथा मुहावरेदार है। मूल्य केवल २)
अपराधी
सच जानिए, अपराधी बड़ा क्रान्तिकारी उपन्यास है। इसे पढ़ कर आप एक बार टॉल्सटॉय के "रिज़रेक्शन" विक्टर ह्यूगो के "लॉ मिज़रेबुल" इबसन के "डॉल्स हाउस" गोर्स्ट और ब्रियो का "डैमेज़्ड गुड्स" या "मेटरनिटी" के आनन्द का अनुभव करेंगे। किसी अच्छे उपन्यास की उत्तमता पात्रों के चरित्र-चित्रण पर सर्वथा अवलम्बित होती है। उपन्यास नहीं, यह सामाजिक कुरीतियों और अत्याचारों का जनाज़ा है !!
सच्चरित्र, ईश्वर-भक्त विधवा बालिका सरला का आदर्श जीवन, उसकी पारलौकिक तल्लीनता, बाद को व्यभिचारी पुरुषों की कुदृष्टि, सरला का पतित किया जाना, अन्त को उसका वेश्या हो जाना, ये सब ऐसे दृश्य समुपस्थित किए गए हैं, जिन्हें पढ़ कर आँखों से आँसुओं की धारा बह निकलती है। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल तथा मधुर है। मूल्य केवल लागत मात्र २॥), स्थायी ग्राहकों से १॥।=)
व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

Registered No. A—2085

Printed and Published by Tribeni Prasad B. A.—Editor, at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad

सम्पादक :—
प्रो० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ... १२) रु०
छः माही चन्दा ... ६॥) रु०
तिमाही चन्दा ... ३॥) रु०
एक प्रति का मूल्य चार आने
Annas Four Per Copy

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़ी कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक्ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए।

वर्ष १, खण्ड २ | इलाहाबाद—वृहस्पतिवार ; २८ मई, १९३१ | सं० ११, पूर्ण सं० ३५

[illegible] टैगोर, जिन्होंने हाल ही में [illegible] मनाया है।

4

THE FINE ART PRINTING COTTAGE, CHANDRALOK, ALLAHABAD.

शीघ्रता कीजिए !
नहीं तो पछताना पड़ेगा !!
मूल्य लागत मात्र केवल ४) रु०
स्थायी ग्राहकों से केवल ३) रु०
व्यङ्ग-चित्रावली
यह चित्रावली भारतीय समाज में प्रचलित वर्तमान कुरीतियों का जनाज़ा है। इसके प्रत्येक चित्र दिल पर चोट करने वाले हैं। चित्रों को देखते ही पश्चात्ताप एवं वेदना से हृदय तड़पने लगेगा ; मनुष्यता की याद आने लगेगी ; और सामाजिक क्रान्ति की भावना प्रबल वेग से हृदय में उमड़ने लगेगी। प्रत्येक सामाजिक कुरीतियों का चित्रों द्वारा नग्न प्रदर्शन किया गया है। बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, छुआछूत, परदा-प्रथा, पण्डे-पुरोहितों तथा साधु-महन्तों के भयङ्कर कारनामे, अन्ध-विश्वास, पाखण्ड तथा आचरण सम्बन्धी नाना प्रकार की नाशकारी कुरीतियों का सजीव चित्र देखना हो तो इस चित्रावली को अवश्य मँगाइए। एकरङ्गे, दुरङ्गे, तथा तिरङ्गे चित्रों की संख्या लगभग २०० है। प्रत्येक चित्रों के नीचे बहुत ही सुन्दर पद्यमय पंक्तियों में उनका भाव तथा परिचय अङ्कित किया गया है। आज तक ऐसी चित्रावली कहीं से प्रकाशित नहीं हुई। मूल्य केवल ४); स्थायी ग्राहकों से ३)
स्मृति-कुञ्ज
नायक और नायिका के पत्रों के रूप में यह एक दुखान्त कहानी है। हृदय के अन्तःप्रदेश में प्रणय का उद्भव, उसका विकाश और उसकी अविरत आराधना की अनन्त तथा अविच्छिन्न साधना में मनुष्य कहाँ तक अपने जीवन के सारे सुखों की आहुति कर सकता है—ये बातें इस पुस्तक में अत्यन्त रोचक और चित्ताकर्षक रूप से वर्णन की गई हैं। आशा-निराशा, सुख-दुख, साधन-उत्सर्ग, एवं उच्चतम आराधना का सात्विक चित्र पुस्तक पढ़ते ही कल्पना की सजीव प्रतिमा में चारों ओर दीख पड़ने लगता है। मूल्य केवल ३) ; स्थायी ग्राहकों से २।)
मूर्खराज
यह वह पुस्तक है, जो रोते हुए आदमी को भी एक बार हँसा देती है। कितना ही चिन्तित व्यक्ति क्यों न हो, केवल एक चुटकुला पढ़ने से ही उसकी सारी चिन्ता काफ़ूर हो जायगी। दुनिया के झञ्झटों से जब कभी आपका जी ऊब जाय, इस पुस्तक को उठा कर पढ़िए, मुँह की मुर्दनी दूर हो जायगी, हास्य की अनोखी छटा छा जायगी। पुस्तक को पूरी किए बिना आप कभी न छोड़ेंगे—यह हमारा दावा है। इसमें किशनसिंह नामक एक महामूर्ख व्यक्ति की मूर्खतापूर्ण बातों का संग्रह है। भाषा अत्यन्त सरल तथा मुहावरेदार है। मूल्य केवल २)
अपराधी
सच जानिए, अपराधी बड़ा क्रान्तिकारी उपन्यास है। इसे पढ़ कर आप एक बार टॉल्सटॉय के "रिज़रेक्शन" विक्टर ह्यूगो के "लॉ मिज़रेबुल" इबसन के "डॉल्स हाउस" गोस्ट और ब्रियो का "डैमेज़्ड गुड्स" या "मेटरनिटी" के आनन्द का अनुभव करेंगे। किसी अच्छे उपन्यास की उत्तमता पात्रों के चरित्र-चित्रण पर सर्वथा अवलम्बित होती है। उपन्यास नहीं, यह सामाजिक कुरीतियों और अत्याचारों का जनाज़ा है !!
सच्चरित्र, ईश्वर-भक्त विधवा बालिका सरला का आदर्श जीवन, उसकी पारलौकिक तल्लीनता, बाद को व्यभिचारी पुरुषों की कुदृष्टि, सरला का पतित किया जाना, अन्त को उसका वेश्या हो जाना, ये सब ऐसे दृश्य समुपस्थित किए गए हैं, जिन्हें पढ़ कर आँखों से आँसुओं की धारा बह निकलती है। पुस्तक की भाषा अत्यन्त सरल तथा मधुर है। मूल्य केवल लागत मात्र २॥), स्थायी ग्राहकों से १॥।=)
व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' और विद्याविनोद-ग्रन्थमाला का प्रचार कर, वे संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एकमात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३ — इलाहाबाद—बृहस्पतिवार; २८ मई, १९३१ — सं० ११, पूर्ण सं० ३५

जेल में श्री० सुखदेवराज से इलाहाबाद के वकीलों की भेंट

महात्मा गाँधी की द्विविधापूर्ण बातें :: पाठक स्वयं निर्णय करें !!

भूतपूर्व—प्रेज़िडेण्ट पटेल की महात्मा गाँधी को चेतावनी !

देशवासियों में असन्तोष की आग :: जगह-जगह बम फट रहे हैं !!!

['भविष्य' के विशेष प्रतिनिधि द्वारा]

पञ्जाब के विख्यात विप्लवकारी श्री० सुखदेवराज, एम० ए० ने, जो आजकल यहीं यूरोपियन लॉक-अप में रक्खे गए हैं और जिनके सम्बन्ध का विस्तृत समाचार अन्यत्र प्रकाशित हुआ है—डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट को एक पत्र लिखकर इलाहाबाद के सुप्रसिद्ध वकील डॉक्टर कैलाशनाथ जी काटजू से मिलने की इच्छा प्रगट की थी, जिसकी आज्ञा दे दी गई। फल-स्वरूप डॉक्टर काटजू ने आपसे २६ मई के प्रातःकाल भेंट की। 'भविष्य' के विशेष सम्वाद्दाता को डॉक्टर काटजू ने बतलाया है, कि वे पूर्णतया प्रसन्न हैं। उन्हें बहुत आराम से रक्खा गया है। एक काफ़ी बड़े सोख़चेदार कमरे में वे बन्द रक्खे जाते हैं। एक टेबुल, कुर्सी तथा चारपाई भी उन्हें दी गई है। फ़र्श पर दरी बिछी हुई है। पढ़ने को पत्रादि भी उनकी इच्छानुसार भेज दिए जाते हैं। उनके लिए खाना लाने के लिए कोई बनियां नियुक्त कर दिया गया है। उनके हाथ में हथकड़ी अथवा पैर में बेड़ियाँ आदि कुछ भी नहीं डाली गई हैं। लिखने-पढ़ने का सामान भी उन्हें दिया गया है। कपड़े वे अपने ही पहनते हैं। बार-बार पूछने पर भी श्री० सुखदेवराज ने कहा कि पुलिस तथा जेल वालों का व्यवहार अब तक उनसे बहुत शिष्ट रहा है और वे ख़ूब प्रसन्न हैं। चूँकि डॉक्टर काटजू नित्य नहीं आ सकते थे, इसलिए क़ानूनी सलाह के लिए इलाहाबाद हाईकोर्ट के एडवोकेट तथा प्रसिद्ध राष्ट्रीय कार्यकर्ता श्री० विश्वमित्र 'भविष्य' में उनसे मिलते रहेंगे।

२७वीं मई को ११ बजे दिन में श्री० विश्वमित्र भी आपसे मिले। जो बातें डॉक्टर काटजू की ज़बानी मालूम हुई थीं, 'भविष्य' के विशेष सम्वाददाता को आपने भी वही बातें बतलाईं; किन्तु आपका कहना है कि जो खाना उनके सामने लाया गया था, वह बहुत ही साधारण था, चावल बहुत ख़राब था।

कहा जाता है, आपके मिलने के पहिले ही २४वीं मई को सी० आई० डी० के विशेष अफ़सर मि० नटबावर (जिनसे स्वर्गीय 'आज़ाद' की मुठभेड़ हुई थी) भी आपसे मिलने आए थे। लगभग ४ घण्टे तक श्री० सुखदेवराज तथा मि० नटबावर में बातें हुईं। सारी बातें घटना का टोह लगाने तथा राजनीतिक विषय पर हुईं। अन्त में मि० नटबावर ने उनसे स्पष्ट कह दिया, कि वे उन्हें शनाख़्त-परेड में नहीं पहचान सकते थे—इसीलिए वे मिलने आए हैं। कहा जाता है, श्री० सुखदेवराज से आपका व्यवहार भी बड़ा शिष्ट एवं मित्रवत था।

यह भी पता लगा है कि जिस लड़के की बाइसिकिल छीनी गई थी, वह आजकल शायद मसूरी में है और पुलिस ने उसे बुलाया है। उसके आ जाने पर शनाख़्त-परेड का आयोजन किया जायगा। श्री० विश्वमित्र को इस बात की बड़ी शिकायत है कि यूरोपियन लॉक-अप के जेलर की मार्फ़त उन्होंने ख़ुफ़िया पुलिस के डी० आई० जी० के पास इस आशय का एक प्रार्थना-पत्र भेजा था, कि शनाख़्त-परेड के समय उन्हें बहैसियत क़ानूनी-सलाहकार के वहाँ उपस्थित रहने की आज्ञा दी जाय, किन्तु जेलर ने आपसे कहा, कि ऐसी आज्ञा नहीं दी जा सकती !

श्री० सुखदेवराज का कहना है कि उनके साथ पञ्जाब पुलिस के एक डिपुटी सुपरिण्टेण्डेण्ट तथा ३९ अन्य अफ़सर आए हैं और सम्भवतः ३१वीं मई को ये लाहौर वापस भेज दिए जाएँ; क्योंकि २री जून को लाहौर-षड्यन्त्र केस में उनकी पेशी होने वाली है।

—बारडोली का २७वीं मई की रात का तार है कि गोलमेज़ परिषद के सम्बन्ध में बहुत हद तक महात्मा गाँधी ने अपने विचार बदल दिए हैं। पहिले आपने गोलमेज़ परिषद में तब तक भाग लेने से इन्कार कर दिया था, जब तक हिन्दू-मुस्लिम समझौता न हो ले। एसोसिएटेड प्रेस का कहना है, कि महात्मा जी ने अब यह निश्चय किया है, कि वे हिन्दू-मुस्लिम समझौता न होने पर भी गोलमेज़ परिषद में भाग लेंगे, यदि गवर्नमेण्ट अपनी ओर से सन्धि की शर्तों को बराबर ईमानदारी से निबाहती रहे। आपका कहना है कि ऐसी हालत में वे गोलमेज़ परिषद की कार्यवाही में भाग न लेते हुए भी कॉङ्ग्रेस का दृष्टिकोण परिषद के समक्ष उपस्थित कर सकेंगे !

—पेशावर के २७वीं मई की रात के तार के अनुसार हज़ारा और गिलज़ई के लोगों में युद्ध होना बतलाया जाता है। कहा जाता है कि ब्रिटिश फ़ौज ने तुरन्त पहुँच कर तुरन्त झगड़ा शान्त कर दिया। एसोसिएटेड प्रेस का यह भी कहना है, कि भीषण बारिश के कारण अफ़ग़ानिस्तान से काबुल के तार बेकाम हो गए हैं, किन्तु इससे 'लोई जिर्गा' होने में कोई असुविधा नहीं होगी, जिसके लिए बड़ी-बड़ी तैयारियाँ हो रही हैं।

—बारडोली का २७वीं मई की रात का तार है, कि पुलिस ने २३ व्यक्तियों को दो सरकारी पुलिस वालों तथा दो बड़ोदा पुलिस वालों पर बुरी तरह आक्रमण तथा उन्हें घायल करने के अभियोग में गिरफ़्तार किया है। कहा जाता है, इन लोगों ने पुलिस वालों पर उस समय आक्रमण किया, जबकि वे सेठ गोपाल नामक एक व्यक्ति को चोरी के अपराध में गिरफ़्तार करने गए थे। यह चोरी उस खेत में हुई बतलाई जाती है, जो लगान न देने के कारण ज़ब्त कर लिया गया था !

—पेशावर का २७वीं मई की रात का तार है, कि वहाँ के चीफ़-कमिश्नर ने लाहौर के सुप्रसिद्ध पत्र 'ज़मींदार' का वह अङ्क ज़ब्त कर लिया है, जिसमें अफ़ग़ानिस्तान के भूतपूर्व सम्राट अमानुल्ला की प्रशंसा तथा "अफ़ग़ानिस्तान की स्वतन्त्रता ख़तरे में" बतलाई गई थी। यह ज़ब्ती नए ऑर्डिनेन्स के अनुसार हुई है।

श्री० वी० जे० पटेल ने लन्दन से महात्मा जी के पास निम्न-लिखित सन्देशा भेजा है :—

"मेरी यह धारणा उत्तरोत्तर दृढ़ होती जा रही है, कि लॉर्ड इर्विन के साथ आपका समझौता उचित समय से पहले हुआ है। मैंने बराबर सन्धि की शर्तों के प्रति अपनी निराशा प्रकट की है; क्योंकि ब्रिटेन, कॉङ्ग्रेस के साथ उचित समझौता करने में विलम्ब करने से क्या हानि है, इस बात का अनुभव नहीं कर रहा है। मेरा विचार है, कि इस समय आप दो कारणों को ध्यान में रख कर यहाँ आवें। पहली बात तो यह है कि आपके यहाँ आने से संसार को इस बात का विश्वास हो जायगा, कि आप सचमुच सन्धि को चिरस्थायी बनाना चाहते हैं और दूसरी बात यह है कि यदि ब्रिटेन इस बात का अनुभव करे— जिसमें मुझे सन्देह है—कि आपके यहाँ से ख़ाली हाथ लौट जाने में ख़तरा है, तो समझौते की आशा है। किन्तु, ब्रिटेन यदि कॉङ्ग्रेस के साथ समझौता करने में आनाकानी करे, और संसार की दृष्टि में समझौते की कोई आशा न रहे, तो आपको सत्याग्रह आन्दोलन और विलायती कपड़े का बहिष्कार फिर ज़ोरों में शुरू कर देना चाहिए। लॉर्ड इर्विन के साथ आपके समझौते के कारण, कुछ ऐसी बातें उपस्थित हो गई हैं, कि यदि आप यहाँ आने से इन्कार कर देंगे, तो संसार इसका कुछ दूसरा ही अर्थ समझेगा; किन्तु यदि आपके यहाँ आने पर भी समझौता न हो सका, तो कॉङ्ग्रेस नहीं, बल्कि ब्रिटेन इसके लिए दोषी ठहराया जायगा, और संसार कॉङ्ग्रेस और सत्याग्रह आन्दोलन के पक्ष में अपनी सम्मति देगा।"

—मिदनापुर का २१वीं मई का समाचार है कि, पेड्डी-हत्याकाण्ड के सम्बन्ध में जो १५ व्यक्ति गिरफ़्तार किए गए थे, उनमें से १० को सब डिविज़नल अफ़सर ने छोड़ दिया, किन्तु इनमें से ५ फिर बङ्गाल आर्डिनेन्स के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। ४ व्यक्ति ज़मानत पर छोड़े गए हैं। इनका मामला ४थी जून से शुरू होगा।

कानपूर में बम का धड़ाका

कानपूर का २२वीं मई का समाचार है कि गत रात्रि के समय १० बजे मेस्टन रोड पर सनातन-धर्म इण्टरमीडियट कॉलिज के समीप एक बम का धड़ाका हुआ। किसी को चोट नहीं पहुँची है। पुलिस इस घटना की तहक़ीक़ात कर रही है।

असिस्टेण्ट कलक्टर पर आक्रमण

अहमदाबाद का २२वीं मई का एक समाचार है कि कल रात्रि के समय वहाँ के असिस्टेण्ट कलक्टर पर, जिस समय वे अपने बँगले में सोए हुए थे, किसी ने गोली चलाई; किन्तु निशाना चूक गया। आक्रमणकारी की बहुत खोज की गई, किन्तु कोई पता नहीं चला।

—पाठकों को स्मरण होगा कि बालासिनोर स्टेट के कुछ लोगों ने बेगार प्रथा के विरोध में गाँव छोड़ दिया था और वे स्टेट की सीमा से बाहर जा बसे थे। समझौते के लिए नवाब साहब के पास एक डेपुटेशन भी गया था। अब ख़बर मिली है, कि नवाब साहब ने यह फ़ैसला किया है कि बरसात के दिनों में, तथा अफ़सरों के व्यक्तिगत कार्यों के लिए बेगार नहीं ली जायगी। उन्होंने यह भी निश्चय किया है, कि उनकी आगामी वर्षगाँठ के दिन बेगार प्रथा के एकदम उठा दिए जाने की घोषणा की जायगी। किन्तु लोग इससे सन्तुष्ट नहीं हैं। उन्होंने यह निश्चय किया है, कि बेगार-प्रथा जब तक एकदम नहीं उठा दी जायगी, तब तक वे नहीं लौटेंगे।

कोर्ट इन्स्पेक्टर पर आक्रमण

आक्रमणकारी रिवॉल्वर लेकर चम्पत हुआ

मैमनसिंह का २१वीं मई का समाचार है कि कोर्ट इन्स्पेक्टर हेमचन्द्र उकील कचहरी से सन्ध्या समय अपने घर को लौट रहे थे, इसी समय किसी ने पीछे से उन पर आक्रमण किया और ज्योंही वह ज़मीन पर गिरे, त्योंही आक्रमणकारी उनकी रिवॉल्वर लेकर चम्पत हो गया। उनका अर्दली भी उनके बचाने की कोशिश में ज़ख़्मी हुआ। पुलिस ने इस सम्बन्ध में दो व्यक्तियों को गिरफ़्तार किया है। इनमें विनयेन्द्रराय नामक एक व्यक्ति हैं, जो हाल ही जेल से लौटे थे।

इलाहाबाद में श्री० सुखदेवराज

पाठक एल्फ़ेड पार्क के समीप होने वाली चन्द्रशेखर आज़ाद वाली घटना भूले न होंगे। उन्हें याद होगा, कि जिस समय आज़ाद की पुलिस से मुठभेड़ हुई थी, उसी समय एक व्यक्ति एक कॉलिज के विद्यार्थी से साईकिल छीन कर रफ़ूचक्कर हो गया था। इस घटना के १०-१२ दिन बाद वह साइकिल एक पत्र के साथ उसी विद्यार्थी के मकान पर पाई गई। पत्र में, हिन्दुस्तान रिपब्लिकन सेना के एक सिपाही को सहायता देने के लिए धन्यवाद दिया गया था। पत्र पर 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी के प्रधान सेनापति, का हस्ताक्षर है। कहा जाता है, कि वह हस्ताक्षर 'बलराज' का है।

कलकत्ते में होने वाले अखिल भारतवर्षीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति—श्री० बाबू जगन्नाथ दास जी 'रत्नाकर' बी० ए०

पाठक शालामार बाग़ की घटना भी भूले न होंगे। ख़ुफ़िया पुलिस का सन्देह है कि शालामार बाग़ वाले श्री० सुखदेवराज ही सम्भवतः स्वर्गीय पं० चन्द्रशेखर आज़ाद के साथी थे, उन्होंने ही उक्त विद्यार्थी से साइकिल छीनी थी, और वह पत्र भी उन्हीं का लिखा हुआ है!

इसी सम्बन्ध में श्री० सुखदेवराज लाहौर से गत २२वीं मई को इलाहाबाद जाँच के लिए लाए गए हैं। वहाँ आपके हस्ताक्षर से पत्र का हस्ताक्षर मिलाया जायगा, और शनाख़्त-परेड भी कराई जायगी!

कहा जाता है कि २री जून को आप लाहौर की अदालत में पेश किए जाने वाले हैं, इस कारण २री जून से पहले आप वहाँ भेज दिए जायँगे।

—कानपूर के २५वीं मई के समाचारों से पता चलता है, कि वहाँ प्रत्येक क्षण दङ्गे की आशङ्का की जाती है। शहर में १४४वीं धारा जारी की गई है, पर तो भी बिना लाइसेन्स के लोग हथियार निकालते हैं और कोई आपत्ति नहीं की जाती। कहा जाता है, कि एक बार मोहर्रम का एक जुलूस बिना लाइसेन्स के हथियार लिए हुए निकला। एक इन्स्पेक्टर ने इस जुलूस को रोका, और फ़ोन द्वारा उच्च अधिकारियों को इस बात की ख़बर दी गई। अधिकारियों ने ज़मानत लेकर जुलूस वालों को छोड़ दिया। यह भी कहा जाता है कि उन्हें उसी समय हथियारों के लिए लाइसेन्स दे दिए गए। मुहर्रम के जुलूसों ने स्थान-स्थान पर उपद्रव किए हैं, किन्तु उनके उपद्रवों को रोकने के लिए कोई विशेष चेष्टा नहीं की गई है। जिन रास्तों से जुलूस गुज़रते हैं, उन रास्तों पर की दूकानें बन्द हैं। ज़िला मैजिस्ट्रेट और पुलिस के सुपरिण्टेण्डेण्ट के पास भी लोग डेपुटेशन लेकर गए थे, उन लोगों ने डेपुटेशन को आश्वासन दिया, किन्तु परिस्थिति को शान्त बनाए रखने की कोई चेष्टा नहीं की जा रही है।

होशियारपुर में बम-दुर्घटना

होशियारपुर का २२वीं मई का समाचार है कि वहाँ गढ़शङ्कर तहसील में एक बम का भीषण धड़ाका हुआ। एक अकाली सिक्ख के हाथ में गहरी चोट आई है। वह गिरफ़्तार कर लिया गया है। कहा जाता है कि जहाँ बम फटा था, वहाँ से पुलिस ने ३ बम बरामद किए हैं। ख़बर है कि इस सम्बन्ध में कुछ और गिरफ़्तारियाँ भी होंगी।

क्या श्री० बटुकेश्वरदत्त आदि कालेपानी भेजे जायँगे ?

'हिन्दुस्तान टाइम्स' के एक सम्वाददाता द्वारा दी गई ख़बरों से पता चलता है, कि श्री० बी० के० दत्त आदि विप्लवी क़ैदी मुल्तान के सेन्ट्रल जेलों से मद्रास प्रेज़िडेन्सी के किसी जेल में भेज दिए गए हैं। कहा जाता है कि सबसे पहले श्री० बटुकेश्वरदत्त भेजे गए। उसके बाद श्री० विजयकुमार सिंह तथा डॉ० गयाप्रसाद, मुल्तान के नए जेल से तथा ३ अन्य क़ैदी पुराने जेल से मद्रास भेजे गए।

ऐसा अनुमान किया जाता है, कि लाहौर के प्रथम षड्यन्त्र केस के क़ैदी, जिन्हें आजीवन क़ैद की सज़ा दी गई है, मद्रास के प्रेज़िडेन्सी जेलों में रक्खे गए हैं। कहा जाता है कि इन क़ैदियों के इस प्रकार हटाए जाने

में कुछ रहस्य है। सम्भव है कि सरकार उन्हें काला-पानी भेजना चाहती हो।

कलकत्ते में होने वाले हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के बीसवें अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष—श्री० पं० सकलनारायण शर्मा, "तीर्थ-त्रय"। आप वयोवृद्ध साहित्यिक महारथी तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर हैं।

—लाहौर का २२वीं मई का समाचार है कि पञ्जाब-सरकार ने ३ पर्चों को ज़ब्त कर लिया है। इनमें एक का नाम है 'मुहम्मदी गोला, उर्फ़ रद्दी मिर्ज़ा।' दूसरा पर्चा है 'मातृभूमि की पुकार।' इसका पहला वाक्य है "क्रान्ति के फ़रिश्ते बढ़े चलो" और अन्तिम वाक्य है "इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद।"

—रङ्गून का २०वीं मई का समाचार है कि कल कुछ विद्रोहियों ने सरकारी कैम्प पर धावा किया। एक सिपाही मारा गया, और दूसरा बुरी तरह घायल हुआ। ३ अन्य सिपाही और एक पुलिस के सब इन्स्पेक्टर भी ज़ख़्मी हुए हैं। एक विद्रोही भी मारा गया है।

थायेटम्यो के समाचारों से विदित होता है कि बर्मा राइफ़िल्स और मिलिटरी पुलिस से लगभग १०विद्रोहियों की मुठभेड़ हुई। ७ विद्रोही मारे गए और २ गिरफ़्तार किए गए। विद्रोहियों के पास एक तोप भी मिली है, जो कहा जाता है, उनकी निजी कारीगरी का नमूना है।

—मियङन (बर्मा) नामक स्थान के पूर्व में भी विद्रोहियों ने उत्पात मचाया है। थारावड्डी के समाचारों से मालूम होता है कि वहाँ ५ डकैतियाँ डाली गई हैं और ७००) की जायदाद लूट ली गई है।

टड्कई नामक स्थान में कुछ हथियारबन्द लुटेरों ने चीनियों की एक नाव को, जिस पर धान भरा था, लूट लिया।

प्रोम का समाचार है कि वहाँ का एक मुखिया विद्रोहियों द्वारा मार डाला गया है।

—कसूर तहसील के अन्तर्गत मानकपुर नामक गाँव के एक शिक्षक सरदार बग्घासिंह ने पुलिस के एडिशनल सुपरिण्टेण्डेण्ट के सामने इस बात की शिकायत की है कि एक सब-इन्स्पेक्टर ने उनके साथ दुर्व्यवहार किया है। सरदार बग्घासिंह का कहना है कि पुलिस ने एक फ़ौजदारी मामले में उनसे किसी गाँव वाले के विरुद्ध गवाही देने के लिए कहा था, किन्तु उनके इस प्रकार की झूठी गवाही देने से इन्कार करने पर सब-इन्स्पेक्टर ने उनके साथ दुर्व्यवहार किया।

—पेशावर का २१वीं मई का समाचार है कि पञ्जाब नौजवान भारत-सभा के अध्यक्ष मौलवी अहमदरीन को फ़्रण्टियर क्राइम्स रेगुलेशन की ३६वीं धारा के अनुसार ३ वर्ष के लिए निर्वासन-दण्ड दिया गया है।

—बम्बई का २२वीं मई का समाचार है कि इस्माइल इब्राहीम नामक एक व्यक्ति 'नारकुण्डा' स्टीमर पर से उतरते समय सन्देह पर गिरफ़्तार कर लिया गया। तलाशी लेने पर उसके पास एक ५ नली रिवॉल्वर और दो बक्स, जिसमें २५-२५ गोलियाँ भरी हुई थीं, पाए गए। उसके पास कोई लाइसेन्स नहीं था। वह अभी पुलीस की हिरासत में रक्खा गया है।

—अजमेर के १६वीं मई के एक समाचार से पता चलता है कि श्रीमती रामदेवी नाम की एक महिला कार्यकर्त्री, जो बिजौलिया सत्याग्रह के सम्बन्ध में गिरफ़्तार की गई थीं, उदयपुर से किसी अज्ञात स्थान को भेज दी गई हैं। उनके सम्बन्ध में जनता को कुछ भी पता नहीं है।

राजपूताना कॉङ्ग्रेस कमिटी के भूतपूर्व सेक्रेटरी श्री० लादूराम शर्मा भी, जिन्हें बिजौलिया से आजीवन निर्वासन दण्ड दिया गया था, किसी अज्ञात स्थान को भेज दिए गए हैं।

—ख़बर है कि बिजौलिया में सत्याग्रह जारी है और सत्याग्रही किसान धड़ाधड़ गिरफ़्तार किए जा रहे हैं। माण्डलगढ़ में ४ किसान गिरफ़्तार किए गए हैं। पुलिस ने एक पञ्चायती सभा में भी एक सत्याग्रही, तथा एक किसान को गिरफ़्तार कर लिया है।

महाराजा महमूदाबाद का स्वर्गवास !

महमूदाबाद के महाराजा सर मुहम्मद ख़ाँ बहादुर की असामयिक और अचानक मृत्यु पर हम हार्दिक शोक प्रकट करते हैं। स्वर्गीय महाराजा साहब देश और जाति के सच्चे हितैषियों में से थे। ब्रिटिश राज्य के अन्तर्गत एक रियासत के शासक होते हुए भी आपने जिस उत्साह से कॉङ्ग्रेस का साथ दिया था, और समय-समय पर सरकार की या अपने देश-वासियों की जिस निर्भीकता और सचाई के साथ आलोचना की थी, वह देशी नरेशों के लिए आदर्श-स्वरूप है। आप मुसलमान थे और सच्चे मुसलमान थे; किन्तु उन मुसलमानों में से नहीं थे, जो देश के हितों की ओर ध्यान न देकर साम्प्रदायिक हितों की ओर अधिक ध्यान देते हैं। आपकी मृत्यु से देशी नरेशों के समाज में एक ऐसा स्थान ख़ाली हो गया है, जिसकी पूर्ति की शीघ्र सम्भावना नहीं। हम ईश्वर से आपकी आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना करते हैं।

—आगरे का एक समाचार है कि स्थानीय ज़िला राजनैतिक परिषद का अधिवेशन १५वीं और १६वीं जून को होगा। लखनऊ के एडवोकेट बाबू मोहनलाल सक्सेना इसके सभापति चुने गए हैं।

श्रीमती पार्वती देवी की अध्यक्षता में, १५वीं जून को एक किसान-परिषद भी वहाँ होने वाली है।

—किशोरगञ्ज का २१वीं मई का समाचार है, कि यङ्ग कॉमरेड्स लीग के सदस्य श्री० नगेन्द्रचन्द्र सरकार को स्थानीय पुलिस ने गिरफ़्तार कर लिया है। उनकी गिरफ़्तारी का कारण अभी अज्ञात है। नगेन्द्र बाबू हाल ही में एक मामले से छूटे थे, जिसमें बिना लाइसेन्स के एक रिवॉल्वर रखने का अभियोग इन पर लगाया गया था।

—बारडोली का २६वीं मई का समाचार है, कि महात्मा जी कल बारडोली पहुँच गए। आप श्री० पटेल से बारडोली की परिस्थिति के सम्बन्ध में सलाह करेंगे। गाँधी जी का विश्वास है कि बारडोली के किसानों ने लगान चुकाने में सन्तोषप्रद तत्परता दिखलाई है। आप आशा करते हैं, कि अधिकारी-गण लगान वसूलने के लिए नोटिसें नहीं जारी करेंगे। यदि वे ऐसा करें, तो उनका यह काम समझौते के विरुद्ध समझा जायगा। आन्दोलन के समय जिन लोगों ने सरकारी नौकरी छोड़ दी थी, उनके सम्बन्ध में आपका विश्वास है कि वे फिर अपने स्थान पर भर्ती कर लिए जायँगे।

*   *   *

कलकत्ते में होने वाले हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के बीसवें अधिवेशन की स्वागत-कारिणी समिति के प्रधान-मन्त्री—श्री० कुमार कृष्णकुमार जी, एम० ए०, बी० एल०। आप कलकत्ते के सुप्रसिद्ध व्यवसायी तथा कॉरपोरेशन के कौन्सिलर हैं।

मथुरा में संयुक्त प्रान्तीय नौजवान सभा का विराट अधिवेशन

"समानता बनाए रखने के लिए हमें गुलामी का नाश करना होगा"

सभापति की हैसियत से सुभाष बाबू का विचारपूर्ण अभिभाषण

"हमारे युवकों को स्वतन्त्र भारत—पूर्ण स्वतन्त्र भारत को ध्यान में रख कर उसके लिए अपना जीवन बलिदान करने के लिए पागल हो उठना चाहिए। भारतवर्ष के सामने बड़ा महान् कर्तव्य पड़ा हुआ है। उसे अपने को स्वाधीन बनाना है और फिर उसे मानव जाति का उद्धार करना है।"

मथुरा में २२वीं मई को युक्तप्रान्तीय नौजवान भारत-सभा का अधिवेशन बड़े समारोह से मनाया गया। श्री० सुभाषचन्द्र बोस ने सभापति की हैसियत से भारतीय नौजवान-सभा के उद्देश्य को बतलाते हुए, अपने अभिभाषण में कहा :—

"भारत-नौजवान-सभा कोई स्थानीय या प्रान्तिक संस्था नहीं है। इसका सम्बन्ध सारे भारतवर्ष से है, और भिन्न-भिन्न प्रान्तों में, इसके नाम और कार्यक्रम में अन्तर होते हुए भी, इसके उद्देश्य में एकता है। देश के एक विशेष वातावरण ने ही इस संस्था को जन्म दिया है।

इस युवक-आन्दोलन के पीछे एक अपूर्व शक्ति काम कर रही है। देश की वर्तमान अवस्था ने युवकों के हृदय को आन्दोलित कर दिया है; वे देश और समाज की उन बुराइयों को दूर करना चाहते थे, जो उनकी दृष्टि में देश और समाज को बुराई पहुँचाने वाली हैं, और साथ ही वे देश में एक नया वातावरण उत्पन्न करना चाहते थे; किन्तु देश में कोई ऐसी संस्था नहीं थी, जो उनकी इच्छा पूर्ण कर सकती। यह संस्था उसी लगन और महत्वाकांक्षा का फल है।

काँङ्ग्रेस और युवक-संस्था

राष्ट्रीय महासभा को एक निर्धारित सीमा के भीतर कार्य करना पड़ता है। इसके ऊपर जो उत्तरदायित्व है, वह युवक-संस्थाओं में, जो अभी बचपन की हालत में हैं, नहीं हो सकता है। राष्ट्रीय महासभा को, सारे देश को अपने साथ ले चलना पड़ता है, इस कारण वह तेज़ी से क़दम नहीं उठा सकती। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय महासभा का सम्बन्ध विशेषकर राजनीति से है, अतएव वह साधारणतया अराजनैतिक मामलों में भाग नहीं लेती। इसे, सारे देश को अपने साथ ले चलने के लिए, प्रत्येक समाज, प्रत्येक सम्प्रदाय और प्रत्येक संस्था की माँगों और इच्छाओं पर ध्यान देना पड़ता है।

किन्तु युवक-संस्थाओं में यह बात नहीं है। इनके विचार बहुत तीव्र हैं। राष्ट्रीय महासभा की अपेक्षा, ये अधिक स्वतन्त्रतापूर्वक सोच-विचार सकती हैं। इस समय इन्हें सारे देश को अपने साथ नहीं ले चलना है। इनका उद्देश्य केवल युवकों को सङ्गठित करना है। राष्ट्रीय महासभा की भाँति किसी प्रकार के उत्तरदायित्व का भार भी इनमें नहीं है। इस कारण ये इच्छानुसार कार्य कर सकती हैं, और बिना किसी व्यक्ति या संस्था को विरोधी बनाए, अपने विचारों को मनमाना रूप दे सकती हैं। काँङ्ग्रेस की संस्थाओं और युवक-संस्थाओं में विरोध-भाव उत्पन्न न होने देने के लिए दो बातें आवश्यक हैं। युवकों के हृदय में, काँङ्ग्रेस के साथ मिल कर कार्य करने का भाव होना चाहिए, और काँङ्ग्रेस को भी युवकों के उद्देश्य के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करनी चाहिए। मेरी यह दृढ़ धारणा है कि, काँङ्ग्रेस और इन नवयुवक संस्थाओं में कोई आन्तरिक विद्वेष नहीं है।

प्रत्येक युवक को इस बात का अनुभव करना चाहिए, कि काँङ्ग्रेस राष्ट्र के लिए है; इसलिए उसे कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए, जिससे काँङ्ग्रेस की प्रतिष्ठा कम हो, या उसे किसी प्रकार की हानि पहुँचे। काँङ्ग्रेस को भी नौजवानों को सन्देहपूर्ण दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। युवकों के साथ देने से काँङ्ग्रेस की शक्ति बढ़ेगी, घटेगी नहीं। काँङ्ग्रेस एक प्रगतिशील संस्था है। वह देश के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करने जा रही है। इसे अन्तर्राष्ट्रीय महत्व प्राप्त है। अनेक महापुरुषों के बलिदान से इसकी नींव पक्की हुई है। इसके नेतागण, भारत के राजनैतिक-गगन में, देदीप्यमान तारक-मण्डली की भाँति चमक रहे हैं। और अन्त में मैं आपसे पूछता हूँ, इस धरातल पर महात्मा गाँधी के समान दूसरा नेता आप कहाँ पा सकते हैं? यदि काँङ्ग्रेस आज स्वतन्त्रता के लिए युद्ध न करती होती, और इसके नेतागण निस्स्वार्थ और राष्ट्रवादी न होते, तो मैं नौजवानों को काँङ्ग्रेस का साथ देने के लिए नहीं कहता, और ऐसी हालत में मैं उनके लिए दूसरा ही मार्ग बतलाता; किन्तु वास्तव में काँङ्ग्रेस नौजवानों से भी उतना ही सम्बन्ध रखती है, जितना कि औरों से। इतना ही नहीं, मैं यह भी कह सकता हूँ कि औरों की अपेक्षा नौजवानों से काँङ्ग्रेस का अधिक सम्बन्ध है क्योंकि नौजवान ही भारत के भावी कर्णधार हैं। इसलिए यदि नवयुवकगण काँङ्ग्रेस से मिल कर कार्य करना शुरू कर दें, तो वह दिन दूर नहीं, जब काँङ्ग्रेस उनके हाथ में आ जाय।

श्री० सुभाषचन्द्र बोस

कुछ साधारण सिद्धान्त

यदि हम भिन्न-भिन्न राजनैतिक और सामाजिक आदर्शों का विश्लेषण करें, जो समय-समय पर मानव-जाति को प्रगतिशील बनने के लिए उत्तेजित करते आए हैं, तो हम कुछ साधारण सिद्धान्तों पर पहुँचेंगे। यदि हम अपने हृदय की भली-भाँति परीक्षा करें, और उसके भीतर इस बात का अनुसन्धान करें कि वे कौन सी वस्तुएँ हैं, जो हमारे जीवन को सच्चा जीवन बना सकती हैं, तो भी हम उसी नतीजे पर पहुँचेंगे। किसी भी तरीक़े से हम इसी नतीजे पर पहुँचते हैं, कि हमारे सामूहिक जीवन में न्याय, समानता, स्वतन्त्रता, नियमशीलता और प्रेम का होना बहुत आवश्यक है। हमारे प्रत्येक कार्य में न्याय-भाव का होना अत्यावश्यक है। इसमें तर्क की ज़रूरत नहीं। न्यायी और निष्पक्ष बनने के लिए सभी मनुष्यों को समानता की दृष्टि से देखने की आवश्यकता है, और मनुष्यों में समानता का भाव लाने के लिए उन्हें स्वतन्त्र बनाने की आवश्यकता है। गुलामी चाहे राजनैतिक हो अथवा सामाजिक या आर्थिक, वह मनुष्य की स्वाधीनता का विघातक है, और उससे अनेक प्रकार की असमानताएँ उठ खड़ी होती हैं। इसलिए समानता को दृढ़ बनाए रखने के लिए हमें गुलामी का, चाहे वह किसी भी रूप में क्यों न हो, नाश करना पड़ेगा। किन्तु स्वाधीनता का अर्थ, अनियमशीलता या स्वेच्छाचारिता नहीं है। स्वाधीनता का अर्थ यह नहीं है कि क़ानून हटा दिए जायँ। स्वाधीनता का अर्थ यह है, कि क़ानून का जो बन्धन हमारे ऊपर बलपूर्वक डाला गया है, उसे तोड़ कर हम अपना क़ानून बनावें, और उसी का पालन करें। यह नियम-बन्धन केवल उसी समय के लिए नहीं है, जब कि हमने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली हो, बल्कि उस समय के लिए यह और भी आवश्यक है, जब हम उसकी प्राप्ति के लिए युद्ध कर रहे हों। इसलिए व्यक्ति के लिए या समाज के लिए—किसी के लिए भी नियमशीलता बहुत आवश्यक है।

न्याय, समानता, स्वाधीनता और नियमशीलता का प्रेम से घना सम्बन्ध है। यदि मानव-जाति के प्रति हमारे हृदय में प्रेम नहीं है, तो किसी के साथ हम न्याय या समानता का व्यवहार नहीं कर सकते। ऐसी दशा में हम स्वतन्त्रता के लिए न तो लड़ सकते हैं और न आत्म-बलिदान ही कर सकते हैं। इस कारण उपर्युक्त ५ सिद्धान्तों पर ही हमारे सामूहिक जीवन की नींव खड़ी होनी चाहिए। मैं कह सकता हूँ, कि ये ही ५ सिद्धान्त साम्यवाद के सार हैं। इसी साम्यवाद को मैं भारतवर्ष में देखना चाहता हूँ।

भारतीय साम्यवाद

मेरा विश्वास है कि भारतवर्ष राजनीति और साम्यवाद की एक ऐसी इमारत खड़ी करने में समर्थ होगा, जिससे सारा संसार कुछ शिक्षा ग्रहण करेगा, जिस प्रकार बोलशेविज़्म से मानव जाति आज लाभ उठा रही है। किन्तु सिद्धान्त अक्षरशः कार्यरूप में परिणत किए जा सकते हैं, ऐसा मेरा विश्वास नहीं है। कार्लमार्क्स के सिद्धान्तों

का अनुसरण जब रशिया में किया गया, तो उससे बॉलशेविज़्म की उत्पत्ति हुई, इसी प्रकार जब साम्यवाद को भारतवर्ष के वातावरण के अनुकूल बनाकर उसका अनुसरण किया जायगा तो एक नए भारतीय साम्यवाद की उत्पत्ति होगी। देश के वातावरण को क़लम के एक ही धक्के से बदला नहीं जा सकता है। इस कारण सिद्धान्तों पर उसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

हमें बिना सोचे-समझे दूसरों का अनुकरण नहीं करना चाहिए। यह एक कहावत है, कि जो वस्तु एक के लिए खाद्य-पदार्थ है वह दूसरे के लिए विष हो सकती है; यह बहुत सत्य है। इस कारण मैं उन लोगों को सावधान कर देना चाहता हूँ, जो लोग आँखें मूँदकर बॉलशेविज़्म की नक़ल करना चाहते हैं। बॉलशेविज़्म के सम्बन्ध में मैं कह सकता हूँ, कि यह समय उसकी परीक्षा का है। न केवल मार्क्स के सिद्धान्तों से वह पथभ्रष्ट हुआ है, किन्तु लेनिन आदि बॉलशेविक नेताओं के सिद्धान्तों से भी यह गिरा जा रहा है। यह परिवर्तन रशिया की विचित्र परिस्थिति के कारण ही हुआ है। हमारी समझ में रशिया के बॉलशेविक जिस कार्य-प्रणाली का अनुसरण कर रहे हैं, वह भारतवर्ष के लिए लाभजनक नहीं है। इसके उदाहरण-स्वरूप मैं कह सकता हूँ, कि यद्यपि कम्यूनिस्टों ने मानव-जाति को अपनी ओर आकर्षित करने की बड़ी चेष्टा की है, तो भी वे भारतवर्ष पर कुछ अधिक प्रभाव नहीं डाल सके हैं। इसका कारण यह है, कि उनकी कार्यप्रणाली इस ढङ्ग की है कि लोग इसके मित्र चाहे न बनें, किन्तु मित्र अवश्य शत्रु बन जाते हैं।

पूर्ण स्वाधीनता

मैं यहाँ पर आप लोगों को पूर्ण स्वाधीनता का सन्देशा सुनाने आया हूँ। पूर्ण स्वाधीनता से मेरा मतलब है ब्रिटिश साम्राज्यवाद से सम्बन्ध-विच्छेद। इस सम्बन्ध में किसी को कोई ग़लतफ़हमी नहीं होनी चाहिए। दूसरी बात यह है, कि हम पूर्ण आर्थिक और सामाजिक स्वाधीनता चाहते हैं। आय के सभी ज़रिए हमारे हाथ में होंगे और जातिबन्धन तथा छुआछूत का भेद-भाव उठा देना पड़ेगा। समाज में प्रत्येक मनुष्य का स्थान समान होगा। न कोई ऊँच होगा और न कोई नीच।

एक नया सन्देश

इसलिए जो लोग समाज में पीड़ित किए जाते हैं, उनके प्रति हमारा एक नया सन्देश है। जो लोग मज़दूरी करके अपनी जीविका चलाते हैं तथा जो समाज में हीन दृष्टि से देखे जाते हैं, उनके प्रति हम एक नया सन्देशा लेकर आए हैं। यदि मैं उन्हें इस सन्देशे को, इस पूर्ण स्वाधीनता के सन्देशे को सुनाऊँगा तो, इसमें सन्देह नहीं कि वे हर्ष के मारे उत्तेजित हो उठेंगे। और जब तक समाज के इन अङ्गों को, जिनमें क्रान्ति के तत्व भरे पड़े हैं—सञ्चालित न किया जायगा, और उन्हें उत्साहित न किया जायगा, तब तक हमें स्वाधीनता मिलने की आशा नहीं। स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए हमें उन्हें इस नए सन्देशे को सुनाना पड़ेगा, जो मानव-जीवन की काया पलट कर देता है।

गत ३० वर्षों से—विशेषतया गत १० वर्षों से भारतवर्ष में अनेक प्रकार के पश्चिमी सिद्धान्तों की बाढ़ सी आ गई है। इनमें कुछ तो पूर्व पर अपना प्रभाव नहीं डाल सकते, और कुछ का प्रभाव सर्वव्यापी है।

नौजवान-भारत-सभा की कार्य-प्रणाली

नौजवान-भारत-सभा का केन्द्र देश के कोने-कोने में होना चाहिए। इस प्रकार के केन्द्रों में प्रत्येक युवक को भाग लेना चाहिए। युवक और युवतियों की शिक्षा का उचित प्रबन्ध होना चाहिए; क्योंकि ये ही देश की भावी आशा हैं। यह शिक्षा एकाङ्गी नहीं होनी चाहिए। सभी आवश्यक विषयों की शिक्षा दी जानी चाहिए, जिससे हमारे युवक और युवतियों का, न केवल मानसिक बल्कि शारीरिक और नैतिक बल भी समुन्नत हो। जब तक इस प्रकार के उद्देश्य को ध्यान में रख कर हम इस संस्था का विस्तार नहीं करेंगे, तब तक इस युवक आन्दोलन के उन्नति करने की आशा नहीं।

इस संस्था के द्वारा हमारे युवक और युवतियाँ जब शिक्षा प्राप्त कर प्रचार-कार्य के योग्य हो जायँगी, तब उन्हें सङ्गठन-कार्य करना पड़ेगा।

सङ्गठन-कार्य के लिए मैं निम्न-लिखित कार्य-प्रणाली पेश करता हूँ :—

(१) साम्यवादी कार्य-क्रम के अनुसार किसानों और मज़दूरों का सङ्गठन।

(२) नवयुवक और नवयुवतियों का स्वयंसेवक के दल के रूप में सङ्गठन, और उन पर नियमों का कड़ा बन्धन।

(३) धार्मिक और सामाजिक अन्धविश्वासों को दूर करने का पूर्ण आन्दोलन।

(४) महिला-समाज में स्वाधीनता और समानता के सन्देशे का प्रचार करने के लिए, युवतियों का सङ्गठन।

(५) देश में जागृति तथा नए भावों के प्रचार के लिए साहित्य की सृष्टि।

जब हमारे युवक शिक्षित हो जाएँगे, तो वे ही भारतीय जनता के हृदय में स्वतन्त्रता का भाव उत्पन्न कर देंगे। जहाँ भारतवासियों के हृदय में स्वाधीनता का भाव उदय हुआ, कि ग़ुलामी की बेड़ी के चूर-चूर होते देर नहीं लगेगी। हमारे युवकों को स्वतन्त्र भारत—पूर्ण स्वतन्त्र भारत को ध्यान में रख कर, उसके लिए अपना जीवन बलिदान करने के लिए पागल हो उठना चाहिए। भारतवर्ष के सामने बड़ा महान् कर्त्तव्य पड़ा हुआ है। उसे अपने को स्वाधीन बनाना है, और फिर उसे मानव-जाति का उद्धार करना है।

आज हमारा देश संसार के साम्राज्यवाद की कुञ्जी है। इसलिए भारतवर्ष की स्वाधीनता का अर्थ है, साम्राज्यवाद का नाश। इसी एक कारण से भारत को बचाने की आवश्यकता है। दूसरी बात यह है कि भारतवर्ष को संसार की सभ्यता में कुछ नई चीज़ देनी है, इसलिए भी इसकी रक्षा की आवश्यकता है। मैंने बार-बार कहा है, कि संसार भारतवर्ष से कुछ पाने की आशा करता है, और इसके लिए वह प्रतीक्षा कर रहा है। भारत की राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक इमारत संसार के प्रति उसका अन्तिम उपहार होगा—सारी मानव-जाति के लिए यह एक नई चीज़ होगी।

मित्रो, इस कारण हमें इस बात का दृढ़ निश्चय कर लेना चाहिए कि हम भारत को स्वतन्त्र बनाएँगे, क्योंकि भारत के स्वतन्त्र होने का अर्थ है मानव जाति का उद्धार!

* * *

नया षड्यन्त्र !!

लाहौर का २३वीं मई का समाचार है, कि शाहदरा नामक एक छोटे से रेलवे स्टेशन के समीप ३ व्यक्ति गिरफ़्तार किए गए हैं। लाहौर के एक मकान से पुलिस को एक पिस्तौल, तथा कुछ अन्य हथियार भी मिले हैं। अफ़वाह है कि पुलिस को नए षड्यन्त्र के सम्बन्ध में पता चला है, और ये गिरफ़्तारियाँ उसी से सम्बन्ध रखती हैं।

सप्ताह की डायरी

(तीसरे पृष्ठ का शेषांश)

—नई दिल्ली के २१ मई के समाचारों से पता चलता है कि स्थानीय पुलिस ने १६ स्थानों की तलाशियाँ लीं। एक किताब की दूकान तथा एक प्रेस पर भी धावे डाले गए, जिसके फल-स्वरूप 'आहुति' नामक किताब की कुछ प्रतियाँ ज़ब्त कर ली गई हैं।

—लाहौर का २२वीं मई का समाचार है, कि स्थानीय पुलिस ने सरदार भगतसिंह, श्री० राजगुरु और श्री० सुखदेव के चित्रों के सम्बन्ध में मेहता हाफ़टोन कम्पनी, मदन हाफ़टोन कम्पनी, तथा सन्तराम और श्री० नारायणदत्त सहगल की दूकानों और अरोड़बन्स प्रेस की तलाशियाँ लीं। सरदार भगतसिंह आदि के चित्र ज़ब्त कर लिए गए हैं।

—२३वीं मई का एक स्थानीय समाचार है, कि सपरिषद गवर्नर ने 'अभ्युदय' का भगतसिंह-अङ्क ज़ब्त कर लिए जाने की घोषणा प्रकाशित की है।

पुलिस के एक दल ने 'अभ्युदय' प्रेस की तलाशी ली और 'अभ्युदय' के भगतसिंह-अङ्क की ७५ प्रतियाँ वह उठा ले गई।

कलकत्ते में होने वाले हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के बीसवें अधिवेशन की स्वागत-कारिणी-समिति के संयुक्त-मन्त्री—श्री० ठाकुर रामपरीक्षा सिंह जी। आप कलकत्ता विश्व-विद्यालय की उच्च-श्रेणी के एक प्रतिभाशाली छात्र हैं।

—कलकत्ते का २१वीं मई का समाचार है कि कवि-सम्राट डॉ० रवीन्द्रनाथ ठाकुर इन्फ़्लुएञ्ज़ा से पीड़ित हैं। आप इस समय कलकत्ते में ही हैं।

—कलकत्ते का २२वीं मई का समाचार है कि वहाँ देवीपद मुखर्जी नामक एक व्यक्ति की तलाशी ली गई। कहा जाता है कि दो छुरे, कुछ ज़ब्त किताबें, कुछ नोट-बुक, नाइट्रिक और कॉर्बोलिक एसिड की कुछ बोतलें, पब्लिक प्रॉसिक्यूटर तथा बनारस के पावर-हाउस के मकानों के नक़्शे उसके पास मिले।

—कलकत्ते का २१वीं मई का समाचार है कि स्थानीय विद्यासागर कॉलेज के एक विद्यार्थी किशोरीलाल-दत्त बङ्गाल क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेण्ट एक्ट के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए हैं।

* * *

देहली-षड्यन्त्र केस की अत्यन्त मनोरञ्जक कार्यवाही

देहली का १४वीं मई का समाचार है, कि स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने दिल्ली षड्यन्त्र केस से ख़ास मुख़बिर कैलाशपति के आने में आज देरी हुई। अभियुक्त चुपचाप बेकार बैठने से ऊब गए। अभियुक्त विद्याभूषण ने ट्रिब्यूनल के प्रेज़िडेण्ट से कहा—"महाशय, मुख़बिर अब तक नहीं आया, क्या तब तक हम लोग विश्रामालय में आराम करने के लिए जा सकते हैं?" प्रेज़िडेण्ट ने कहा—"नहीं।" इस पर विद्याभूषण ने फिर कहा, "क्या तब तक हम लोग गाना गा सकते हैं?" प्रेज़िडेण्ट ने मुस्करा कर कहा—"मेरे विचार से नहीं।"

ठीक इसी समय एक यूरोपियन इन्स्पेक्टर की निगरानी में मुख़बिर हाज़िर हुआ।

आज़ाद के नेतृत्व में

मुख़बिर कैलाशपति ने हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन द्वारा पञ्जाब नेशनल बैङ्क के लूटे जाने की स्कीम के सम्बन्ध में अपनी आगे की गवाही में कहा, कि चन्द्रशेखर आज़ाद के नेतृत्व में लूटने वाली पार्टी की व्यवस्था की गई थी। सुखदेव के लिए बैङ्क के दरवाज़े पर खड़े पहरा देने वाले सन्तरी की बन्दूक़ छीनने का और हंसराज, राजगुरु और आज़ाद के लिए बैङ्क के बाहर पहरा देने का काम तय हुआ था। मुझको और भगतसिंह को टेलीफ़ोन पर क़ब्ज़ा करने का काम दिया गया। जयगोपाल और किशोरीलाल को रुपया लेकर भाग जाने का काम दिया गया था। निश्चय हुआ था कि महावीरसिंह मोटर हाँक कर हम लोगों को मोज़ङ्ग हाउस पहुँचाएगा। परन्तु यह सब स्कीम पूरी नहीं उतरने पाई, इस कारण हम लोग पञ्जाब नेशनल बैङ्क को लूटने नहीं पाए। इस स्कीम के सोचने के दो दिन बाद हम लोग ३ बजे दोपहर को बैङ्क तक गए, परन्तु भगतसिंह और महावीरसिंह के न पहुँचने के कारण हम लोग वापस चले आए। आज़ाद ने रिवॉल्वर और पिस्तौल का प्रयोग सबको बतला दिया था।

सॉण्डर्स-हत्या के पहले और बाद

मि० आसफ़अली ने ट्रिब्यूनल से कहा—जनाब, क्या यह सब गवाही की भूमिका चल रही है?

सरकारी वकील—हाँ।

मि० आसफ़अली—यह तो बहुत लम्बी भूमिका है। मि० पोल ने अपनी सबूत की गवाही में कहा था, कि इस केस की गवाही का प्रसङ्ग दिल्ली तक परिमित रहेगा, परन्तु मैं तो देखता हूँ कि जो गवाही इस वक़्त हो रही है, उसका दिल्ली से कोई सम्बन्ध नहीं है।

गवाह ने कहा कि इसके बाद मैं अमृतसर चला गया। वहाँ से सॉण्डर्स की हत्या के कुछ दिन पहले मैं लाहौर चला आया। मि० सॉण्डर्स की हत्या के दो सप्ताह बाद मैंने सुखदेव और भगतसिंह से यू० पी० लौट जाने की इच्छा प्रकट की।

दिल्ली में हार्डिंज लायब्रेरी के समीप मुझे सिन्हा मिले। सिन्हा ने दिल्ली में मेरा जयदेव कपूर से परिचय कराया। जयदेव के साथ मैं जमनाघाट के रामसरूप की धर्मशाला में ठहरा। वहाँ काशीराम भी रहते थे। शिववर्मा और सुखदेव वहाँ हम लोगों से मिलने के लिए आया करते थे। अभियुक्त निगम जयदेव के कमरे की बग़ल में और अभियुक्त विमलप्रसाद जैन भी पास के एक दूसरे कमरे में रहते थे।

मुख़बिर ने प्रो० निगम की ओर सङ्केत करके शनाख़्त करते हुए कहा, कि विमल अपने को अभियुक्तों के बीच में छिपा रहा है।

विद्याभूषण ने कहा—मुख़बिर को अभियुक्तों के कटघरे में आकर शनाख़्त करनी चाहिए।

"अच्छी बात"

विद्याभूषण ने सरकारी वकील के, प्रत्येक प्रश्न के साथ बार-बार "अच्छी बात" कहने का विरोध किया। उसने कहा कि सरकारी वकील प्रत्येक प्रश्न के बाद "अच्छी बात" "अच्छी बात" कह कर मुख़बिर को सङ्केत करता है कि जो कुछ वह उत्तर दे रहा है, वह ठीक है।

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि मैं प्रो० निगम, भवानीसहाय और विमल से "भारत की क्रान्ति" के विषय में प्रायः बातचीत किया करता था।

एक अभियुक्त—क्रान्ति से तुम्हारा क्या अभिप्राय है?

मुख़बिर—क्रान्ति से मेरा अभिप्राय इन्क़िलाब से है।

मुख़बिर ने कहा कि निगम, भवानीसहाय और विमल भी मुझसे क्रान्तिकारी विषयों पर बातें किया करते थे।

प्रश्न—क्रान्ति के सम्बन्ध में उनके क्या विचार थे?

मि० आसफ़अली ने यह कह कर, कि मुख़बिर कोई मनोविज्ञानी नहीं है, जो अभियुक्तों के मन की बात बतला दे, इस प्रश्न के पूछने का विरोध किया।

मुख़बिर ने कहा कि मेरी तरह इन्क़िलाब द्वारा उन तीनों व्यक्तियों का भी उद्देश्य भारत को स्वतन्त्र करना था। इसके बाद मुख़बिर ने कहा, कि फ़रार अभियुक्त भवानीसहाय का मकान शहर में था। परन्तु हम लोगों से मिलने के लिए वह जमनाघाट आया करता था। फ़रार अभियुक्त भवानीसिंह से भी मेरा परिचय है। मैं उसे क्रान्तिकारी साहित्य पढ़ने के लिए दिया करता था। भवानीसिंह भी मेरे विचारों से सहमत था।

शिववर्मा और जयदेव शहर में मकान लेकर रहने लगे। ग्वालियर के गोपालकृष्ण पौराणिक जमनाघाट के बग़ल की धर्मशाला में ठहरे थे। उनका एक स्कूल था, उसके लिए वे हेडमास्टर की तलाश में थे। मैंने उन्हें कृष्ण श्रीवास्तव, बी० ए० के नाम से अपना परिचय दिया। उन्होंने मुझे हेडमास्टर बना लेना स्वीकार कर लिया।

साइमन ट्रेन उड़ाने की स्कीम

१७ मार्च को सुखदेव ने मुझे मेरठ जाने के लिए कहा, परन्तु यह समझ कर कि दूसरे ही दिन साइमन कमीशन दिल्ली पहुँचने वाला है और कमीशन की ट्रेन उड़ा देने का प्रबन्ध भी हुआ है—मैंने दिल्ली में रहना उचित नहीं समझा। मेरठ जाना भी मैंने ठीक नहीं समझा, इसलिए मैं ग्वालियर स्टेट में अपनी हेडमास्टरी की नियुक्ति पर चला गया। दो-ढाई महीना हेडमास्टरी करके मैं दिल्ली लौट आया। दिल्ली में मैं विमलप्रसाद जैन के घर गया। वहाँ से देहरादून के पते पर काशीराम को पत्र लिखा। काशीराम मुझसे दिल्ली से पन्द्रह मील दूर एक जैन-मन्दिर में मिला। वहाँ से हम दोनों साइकिल पर दिल्ली आए।

हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन सेना का एक ज़िम्मेदार व्यक्ति

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि काशीराम ने मुझे झाँसी के गणेश मन्दिर के सीताराम शोरी का पता लिख कर दिया और कहा कि यह व्यक्ति हिन्दुस्तान रिपब्लिकन सेना के एक प्रमुख और ज़िम्मेदार व्यक्ति से परिचय कराएगा। काशीराम और भवानीसहाय के साथ मैं झाँसी गया। काशीराम ग्वालियर में उतर गए। मैं काशीराम के साथ डफ़रिन अस्पताल में ठहरा था। यहाँ अशरफ़ नाम के एक व्यक्ति से मुलाक़ात हुई, जो कि पहले सी० आई० डी० विभाग में काम कर चुका था। दूसरे दिन काशीराम से एम० पी० अवस्थी और भगवानदास मिले। काशीराम वहाँ से आगरा चले गए, और मैं भगवानदास के साथ झाँसी के आर्य-समाज में ठहर गया। कुछ दिनों के बाद मैं जी० एस० पोद्दार के यहाँ रहने के लिए चला गया।

इसके बाद सरकारी वकील के पूछने पर मुख़बिर ने जी० एस० पोद्दार की शनाख़्त की।

मुख़बिर ने कहा कि एक सप्ताह बाद चन्द्रशेखर आज़ाद और सदाशिव राव आए। आज़ाद ने वैशम्पायन से पिकरिक एसिड बनाने और कहीं से उसके लिए आवश्यक सामान लाने के लिए कहा। वैशम्पायन ने सब सामान लाकर एकत्र कर दिया।

बम कैसे बनाए गए?

इसके बाद मैंने, आज़ाद और सदाशिव राव, पोद्दार सब ने मिल कर पिकरिक एसिड बनाने की चेष्टा की। दो बार असफल हुए, तीसरी बार दल के एक सदस्य डी० ए० वी० तैलङ्ग की सहायता से सफलता मिली। फिर सिगरेट केस के टिन-बक्सों में आत्म-रक्षा के लिए तीन बम भी बनाए गए। बम बनाने में वैशम्पायन द्वारा लाई गई वस्तुओं से काम लिया गया था। उस वक़्त आत्म-रक्षा के लिए बमों के अतिरिक्त दूसरे अस्त्र-शस्त्र न थे। आज़ाद के पास दो पिस्तौलें थीं।

* * *

पञ्जाब के सुप्रसिद्ध विप्लवकारी नेता

स्वर्गीय श्री० भगवतीचरण जी

कहा जाता है, गत वर्ष आज ही के दिन (२८वीं मई, १९३०) को एक भयङ्कर विस्फोटक की असफल-परीक्षा में रावी के किनारे किसी जङ्गल में आपकी मृत्यु हुई थी। आपके पिता की राज-भक्ति से प्रसन्न होकर गवर्नमेण्ट ने उन्हें "राय साहब" की उपाधि से विभूषित किया था ; किन्तु पुत्र का अटल विश्वास हिंसात्मक क्रान्ति द्वारा भारत को स्वतन्त्र करने का आजीवन रहा—यद्यपि अपनी इस धारणा का उन्हें बहुत अधिक मूल्य देना पड़ा है ! कहा जाता है, आपने अपनी लाखों की सम्पत्ति विप्लवकार्य में स्वाहा कर दी। मृत्यु के पूर्व ही आपकी गिरफ़्तारी के लिए वारण्ट निकल चुका था, किन्तु लाख प्रयत्न करने पर भी आप पुलिस वालों के चङ्गुल में न आ सके और मृत्यु पर्यन्त स्वतन्त्र रहे। लाहौर आदि स्थानों में आपके कई मकान आदि थे, जो कहा जाता है गवर्नमेण्ट ने ज़ब्त कर लिए हैं। लाहौर षड्यन्त्र-केस के 'फ़रार' अभियुक्तों में पाठकों ने श्रीमती दुर्गादेवी का नाम भी सुना होगा, वे आपही की धर्म-पत्नी हैं—जो कहा जाता है, अपने ५-६ वर्ष के एक लड़के सहित लापता हैं। लैमिङ्गटन रोड 'षड्यन्त्र' केस में 'हरि' नामक जिस बालक का ज़िक्र आया था, वह आपही का लड़का बतलाया जाता है।

जलपान के बाद अदालत के फिर बैठने पर मुख़बिर ने अपनी गवाही में आगे कहा कि एक बम हम लोग पहाड़ी पर परीक्षा करने के लिए ले गए। परीक्षा में सफलता मिली। रुपए की कमी होने पर आज़ाद ने वैशम्पायन को रुपया लाने के लिए भेजा, परन्तु वैशम्पायन को इस कार्य में सफलता नहीं मिली। मैं दिल्ली चला आया। दिल्ली में काशीराम ने लछमनदास की धर्मशाला में भागीरथ से मेरा परिचय कराया।

सरकारी वकील के प्रश्न करने पर मुख़बिर ने भागीरथ की ओर इशारा करके उसकी शनाख़्त की।

मैं ग्वालियर चला गया। वहाँ अपने मित्रों से मिला। ग्वालियर में शङ्करराव ने हम लोगों से कहा था कि वह भगवतीचरण, आज़ाद और कुछ दूसरे लोगों से मिलना चाहता है, परन्तु हम लोगों ने यह सुना था कि वह सी० आई० डी० का आदमी है, इसलिए हमने उन्हें मिलाने से इन्कार कर दिया।

दिल्ली का सङ्गठनकर्त्ता

आज़ाद और वैशम्पायन रुपया एकत्र करने के लिए कानपुर गए। कुछ दिनों के बाद वैशम्पायन कुछ ,रुपया पी; सदाशिव, सखाराम; वैशम्पायन, बचन; डी० बी० तैलङ्ग, मुण्ड और मैं कल्यान के नाम से प्रसिद्ध था।

अभियुक्त चिल्ला उठे—"वाह-वाह, आपने ख़ूब कल्यान किया !" इस पर अदालत में बड़ी हँसी हुई।

मुख़बिर ने कहा कि एम० पी० अवस्थी 'ख़ञ्जर' के नाम से प्रसिद्ध थे।

दिल्ली पहुँचने पर मैं विमल और भागीरथ के साथ ठहरा था। भागीरथ ओखघाट में रहता था। अक्टूबर तक वह हम लोगों के साथ रहा। वह फ़रार अभियुक्त भवानीसिंह के साथ भी रहता था। दिल्ली में उसने कोई ख़ास काम नहीं किया। अक्टूबर में काशीराम लाहौर से दिल्ली वापस आ गए और निगम हिन्दू कॉलेज के प्रोफ़ेसर तथा न्यूहोस्टल के सुपरिण्टेण्डेण्ट नियुक्त हो गए। अक्टूबर में हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के सदस्य निगम, विमल, भवानीसहाय, भवानीसिंह, भागीरथ और काशीराम दिल्ली में थे। दिल्ली में मुझे मालूम हुआ कि भगवानदास और सदाशिव भुसावल स्टेशन पर गिरफ़्तार हो गए।

थे। उस समय वे बिजली की बैटरियों के प्रयोग में व्यस्त थे। उस प्रयोग के द्वारा वे वॉयसराय की स्पेशल ट्रेन उड़ाना चाहते थे। भगवतीचरण ने उस प्रयोग की सम्पूर्ण कार्रवाई मुझे समझाई थी। नया बाज़ार में भगवतीचरण हरीश के नाम से और यशपाल जगदीश के नाम से प्रसिद्ध थे। मैंने भगवतीचरण और यशपाल से प्रो० निगम का परिचय कराया था।

प्र०—क्या तुमने उन्हें यह बतलाया था, कि प्रो० निगम भी दल के सदस्य हैं ?

मुख़बिर—हाँ।

मि० आसफ़अली—प्रश्न करने का यह ढङ्ग क़ानूनन् अनुचित है। इस प्रश्न से उत्तर का भी सङ्केत मिल जाता है।

बम से उड़ाने की स्कीम

प्र०—उन्होंने वॉयसराय की ट्रेन उड़ाने का निश्चय क्यों किया था ?

उ०—पहले मेरा और आज़ाद का विचार ख़ाँ बहादुर अब्दुल अज़ीज़, मि० हॉर्टन, डी० एस० पी० मि० ख़ैरातनबी और कुछ अन्य व्यक्तियों को मारने का था, परन्तु भगवतीचरण की सलाह हुई कि इन ग़रीब आदमियों को मारने में शक्ति का अपव्यय होगा। उतनी ही शक्ति लगा कर वॉयसराय को ही क्यों न उड़ा दिया जाय। मैंने भगवतीचरण और यशपाल से वैशम्पायन का परिचय कराया था। वैशम्पायन ने मुझे चन्द्रशेखर आज़ाद का पता बतलाया। आज़ाद का कानपुर का पता मूलगञ्ज में गिरजाघर के पास रहने वाले रामसिंह या शिवसिंह के ठिकाने पर था।

रटा हुआ क़िस्सा

मि० आसफ़अली ने अदालत से कहा कि अभियुक्त प्रश्नों का ठीक-ठीक उत्तर न देकर, अपने रटे हुए क़िस्से को बराबर बयान कर रहा है।

प्रेज़िडेण्ट—यही बात कई बार मेरे ध्यान में भी आई है।

इसके बाद गवाह ने कहा, कि मैंने भवानीसिंह को कानपुर भेज दिया। लौटने पर भवानीसिंह ने कहा, कि आज़ाद, भगवतीचरण और यशपाल से मिलने के पहले मुझसे मिल लेना चाहते हैं। इस पर मैं भवानीसिंह के साथ कानपुर गया। वहाँ आज़ाद से मिला और दो-तीन दिन वहीं रहा भी। संध्या समय मैं, आज़ाद, वीरभद्र तिवारी और सतगुरुदयाल अवस्थी सब लोग कॉङ्ग्रेस ऑफ़िस के सामने मिला करते थे।

वीरभद्र तिवारी संयुक्त प्रान्त के प्रान्तीय सङ्गठनकर्त्ता हुए थे और सतगुरुदयाल अवस्थी बङ्गाल के दल से सम्पर्क बनाए रखने के लिए तिवारी के सहकारी थे। मैं यू० पी० और दिल्ली का सङ्गठनकर्त्ता नियुक्त हुआ था।

अभियुक्त—शाबाश ! वाह !! वाह !!!

इसके बाद गवाह ने कहा कि आज़ाद फिर से दल का प्रधान सेनापति चुना गया। हम लोगों में यह भी तय हुआ था कि दल का मज़बूती के साथ सङ्गठन करने के लिए धन एकत्र किया जाय। धन एकत्र करने का उपाय डकैती तय हुआ था। मैंने आज़ाद से भगवतीचरण से मिलने के लिए कहा। आज़ाद ने दिल्ली आकर भगवतीचरण से मिलने का वचन दिया। इसके बाद मैं दिल्ली चला गया।

एक सप्ताह के बाद आज़ाद भी दिल्ली आए। मैं उन्हें नया बाज़ार भगवतीचरण और यशपाल से मिलाने के लिए ले गया।

इसके बाद अदालत उस दिन के लिए स्थगित हो गई।

देशवासियों का स्वप्न

एक रिवॉल्वर और एक पिस्तौल लेकर वापस आया। आज़ाद ने मेरे पास एक रिवॉल्वर, ३०) रु० और एक सन्देश भेजा, जिसमें कहा गया था कि दिल्ली आकर दल का फिर से सङ्गठन करो। भगवानदास और सदाशिव से राजगुरु के पास जाने के लिए कहा गया। उनको आज़ाद की दो पिस्तौलें दी गईं। दो बम भी भगवानदास साथ लेता गया।

मुख़बिर ने अदालत के सामने उपस्थित बमों, दो पिस्तौलों और रिवॉल्वर आदि की शनाख़्त की।

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि आज़ाद के कथनानुसार मैं उसी दिन शाम को दिल्ली के लिए रवाना हो गया था। मुझे नहीं मालूम कि भगवानदास और सदाशिव को बमों और पिस्तौलों के देने का क्या अभिप्राय था। ग्वालियर से दिल्ली के लिए रवाना होने के पहले एक दिन एम० पी० अवस्थी मिले थे। वे अपना एक खुला ट्रङ्क छोड़ गए थे, जिसमें दो पी० एफ़० बिल्ले, एक दरी, एक बम, एक खद्दर का कोट और एक पगड़ी थी। बम मैंने अपने पास रख लिया।

"पण्डित जी" या "महाशय जी"

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि आज़ाद "पण्डित जी" या "महाशय जी" के नाम से प्रसिद्ध थे। पोद्दार,

मि० आसफ़अली—क्या यह भी कोई गवाही है ? ये बातें प्रसङ्गहीन हैं ?

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि मैंने अपना बम विमल को दिखलाया था। विमल ने मुझसे कहा कि फाटक हबश ख़ाँ के मिस्त्री से इसी प्रकार का दूसरा बम बनवा दूँगा ; परन्तु विमल इस कार्य में सफल नहीं हुआ, क्योंकि बिजली वाले को कुछ कौतूहल हुआ और उसे कुछ सन्देह भी होने लगा। अक्टूबर सन् १९२९ में भवानीसिंह हिन्दू होस्टल में शामिल हो गया। भवानीसहाय ने एक मकान किराए पर ले लिया।

श्री० भगवतीचरण से परिचय

अक्टूबर के महीने में काशीराम के द्वारा मेरा भगवतीचरण से परिचय हुआ था। भगवतीचरण के एक प्रश्न के उत्तर में मैंने कहा था, कि धनाभाव के कारण पार्टी का काम कुछ हो नहीं सका। भगवतीचरण आज़ाद से परिचय करना चाहता था। मैंने उसको परिचय कराने का वचन दिया। मैं भगवतीचरण से प्रायः मिलता था। भगवतीचरण के साथ फ़रार अभियुक्त यशपाल भी कई बार दिखलाई पड़ा था। एक मोटरसाइकिल की घटना से यशपाल के हाथ और पैर घायल हो गए थे। एक दिन वे सब मुझे नया बाज़ार ले गए

(क्रमशः)

* * *

सीमा-प्रान्त के पशु तक "ख़ुदाई-ख़िदमतगार" बन गए !

लोगों ने भैंसों, बैलों, घोड़ों और बकरियों तक को लाल रङ्ग में रँग दिया !!

पठानोंने गाँधी-टोपी पहनना शुरू कर दिया :: घर-घर राष्ट्रीय झण्डा फहरा रहा है !!!

पेशावर ज़िला आजकल 'ख़ुदाई ख़िदमतगारों' के कार्यक्षेत्र का प्रधान केन्द्र बना हुआ है। ख़ुदाई ख़िदमतगार निष्क्रिय प्रतिरोध के अनुयायी हैं और उनका उद्देश्य देश को पराधीनता के पञ्जे से मुक्त करना है। पेशावर के प्रत्येक गाँव, क़स्बे और नगर में इनके प्रचारक फिर रहे हैं और स्वयंसेवक भर्ती कर रहे हैं।

तहसील मर्दान

इस तहसील में कोई ग्राम ऐसा नहीं है, जहाँ आजकल 'लालकुर्ती' दल की भर्ती का ज़िक्र न हो ! जो लोग मर्दान आकर यह तमाशा देखते हैं, वे घर लौटने पर झट एक सभा कर डालते हैं और लाल कुर्ते बनवा कर ख़ुदाई-ख़िदमतगारों में भर्ती हो जाते हैं। इसके बाद फिर मर्दान या अलानज़ई जाकर आवश्यक उपदेश ग्रहण कर लेते हैं। जहाँ-जहाँ ऐसे लाल कुर्ती वाले मौजूद हैं, वहाँ-वहाँ वे प्रति दिन शाम को क़वायद करते दिखाई देते हैं। प्रत्येक स्वयंसेवक से शपथ ली जाती है। वह पवित्र होकर मसजिद में आता है और क़ुरान-शरीफ़ हाथ में लेकर शपथ खाता है कि मैं कॉङ्ग्रेस के बताए मार्ग पर चलूँगा, और कभी उसकी आज्ञाओं का उल्लङ्घन नहीं करूँगा। अगर मैं गिरफ़्तार हो गया, तो न ज़मानत देकर छूटने की कोशिश करूँगा और न माफ़ी माँगूँगा।

स्वयंसेवकों की भर्ती

जब से महात्मा गाँधी और लॉर्ड इर्विन की क्षणिक सन्धि हुई है, तब से इस प्रान्त में सीमान्त के गौरव ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ के आन्दोलन के कारण अफ़ग़ान-जिरगे क़ायम होकर स्वयंसेवकों की भर्ती का काम ज़ोरों से जारी हो गया है। फलतः कोहाट, बन्नू, डेराइस्माइल ख़ाँ, हज़ारा और पेशावर के मर्दान, चारसद्दा, भवाली और नौशहरा तहसीलों में जितने अफ़ग़ान-जिरगे अर्थात् अफ़ग़ानों की सभाएँ हुई हैं, उनमें शामिल होने वाले तमाम लोगों ने अपने-अपने नेताओं की अधीनता में लालकुर्ती-दल में स्वयंसेवक की काफ़ी भर्ती की है।

तहसील मर्दान के ख़ुदाई ख़िदमतगार बड़े ज़ोशो-ख़रोश के साथ काम कर रहे हैं। होती-मर्दान के ख़ान अमीर मुहम्मद ख़ाँ की अधीनता में बहुत से स्वयंसेवक भर्ती होकर अपने दस्तूर के मुताबिक़ क़वायद-परेड करते और बड़ी सावधानी से अपने नेताओं की बातें सुनते हैं। आज-कल ख़ान अमीर मुहम्मद ख़ाँ अपने इलाक़े के ख़ुदाई ख़िदमतगार फ़ौज का निरीक्षण कर रहे हैं।

कहा जाता है, कि पिछले दिनों अफ़ग़ान-गौरव ख़ान बादशाह ख़ाँ तहसील मर्दान के इलाक़े में आए थे और एक सभा में क्षणिक समझौते के सम्बन्ध में व्याख्यान दे रहे थे, इतने में किसी ख़ुदाई ख़िदमतगार ने शिकायत की कि होती के नवाब साहब के इलाक़े में स्वयंसेवक पीटे जाते हैं। यह सुन कर आपने अपने भाषण को जारी रखते हुए कहा, कि नवाब साहब अगर हमारे एक मुसलमान भाई हैं, तो उनके ख़िलाफ़ हमारी एक उचित शिकायत है और उन्हें समझाना हमारा फ़र्ज़ है। वे मर्द-मैदान बन कर हमारे सामने आवें और बतावें कि जब नौकरशाही हमें स्वयंसेवक भर्ती करने और अफ़ग़ान-जिरगे क़ायम करने में कोई बाधा नहीं देती और जब कि हम शान्तिपूर्वक अपना काम करते हैं, तो नवाब साहब ने क्यों हमारे स्वयंसेवकों को पिटवाया है ? इसके बाद आपने कहा कि हमारा यह पैग़ाम होती के नवाब साहब तक पहुँचाया जावे। इसके बाद कहा जाता है, कि ख़ान अमीर ख़ाँ कई ख़ुदाई ख़िदमतगारों के साथ नवाब साहब के महल के द्वार पर पहुँचे और कहा कि नवाब साहब बाहर आकर इस बात का उत्तर दें कि जब ख़ुद सरकार से, समझौते के बाद, हमें शान्तिपूर्वक अपना काम करने की आज्ञा मिल गई है, तो नवाब साहब ने स्वयंसेवकों को क्यों पिटवाया है ? इस पर कहा जाता है कि नवाब साहब घर से बाहर नहीं आए। परन्तु जब ख़ान बादशाह ख़ाँ को इस बात की ख़बर मिली तो आप बहुत असन्तुष्ट हुए और कहा कि इस बात के लिए आपके पास जाने की हमें कोई आवश्यकता न थी। अगर स्वयंसेवक अपने कर्त्तव्य का पालन करने में मार खावें तो भी उन्हें शान्त रहना चाहिए।

सीमा-प्रान्त के गाँधी—ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ

अफ़ग़ान-जिरगे

ख़ान बादशाह ख़ाँ के जाने के बाद से इस इलाक़े में अफ़ग़ान-जिरगों की धूम सी मच गई है। ख़ुदाई ख़िदमतगारों की भर्ती भी बड़े ज़ोरों से हो रही है। इन ख़ुदाई ख़िदमतगारों की कुर्तियाँ लाल होती हैं। इनकी यहाँ इतनी धूम है, कि लोगों ने अपने पालतू जानवरों—भैंसे, बैलों, घोड़ों, बकरियों और मुर्ग़ों तक को लाल रङ्ग में रँग दिया है, मानो यहाँ के पशु तक ख़ुदाई ख़िदमतगार अथवा स्वयंसेवक हैं ! कहते हैं, इस इलाक़े के ज़मींदारों की अपेक्षा मोहमन्द ज़मींदार अधिक अग्रसर हैं। इन लोगों ने अपने कपड़े लाल कर लिए हैं और गाँधी-टोपियाँ पहनने लग गए हैं। ये लोग कॉङ्ग्रेस की पताका लेकर अपने भाई-बन्दों में घूमते और कॉङ्ग्रेस के नाम पर बैर-विग्रह भूल कर तथा मिल-जुल कर रहने की और शान्ति तथा सफ़ाई से रहने की अपील करते हैं। इसके अलावा कुछ ज़मींदार ऐसे भी हैं जो हाकिमों से डर कर इन कार्यकर्त्ताओं से अलग ही रहना चाहते हैं। वे कहते हैं कि आप महात्मा गाँधी के अनुयायी बन कर उनके आदेशानुसार चलते हुए हमें हिन्दुओं का ग़ुलाम बना रहे हैं। उनका यह भी कहना है, कि अगर हम लोग ख़ुदाई ख़िदमतगारों की तरह लाल कपड़े पहनें तो गिरफ़्तार कर लिए जायँ और हमारे इनाम आदि ज़ब्त कर लिए जायँगे। इसीलिए ये लोग इस आन्दोलन के विरोधी हैं और इसके विरुद्ध सरकारी आदमियों को ख़बरें भी पहुँचाया करते हैं। परन्तु इन विरोधियों के होते हुए भी दिन पर दिन लालकुर्ती दल की वृद्धि होती जाती है। कहते हैं, मह-मन्दों और कमालज़ई के अफ़ग़ान ख़ुदाई ख़िदमतगारों की प्रार्थना पर ख़ान अमीर महमद ख़ाँ एक रोज़ ग़दर नामक गाँव में गए। वहाँ आपका बड़े धूम-धाम से स्वागत हुआ। लालकुर्ती दल के स्वयंसेवकों की सेना अपने नेताओं की अधीनता में आपके स्वागत के लिए खड़ी थी। आपके पधारते ही 'अल्लाहो-अकबर' 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' 'हिन्दोस्तान ख़राँसाँ आज़ाद' 'लाल कपड़ा आज़ाद' 'महात्मा गाँधी की जय' 'बादशाह ख़ान फ़ख़्रे-अफ़ग़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ज़िन्दाबाद' के नारों से आकाश गूँज उठा। इस स्वागत-समारोह में कई जत्थे सम्मिलित थे। प्रत्येक जत्थे के पास राष्ट्रीय पताका थी। इन्होंने फ़ौजी तरीक़े से अपने नेताओं को सलाम किया। मर्दों के अलावे बूढ़ी स्त्रियों की तादाद भी काफ़ी थी।

इसके बाद सभा हुई और ख़ाँ साहब ने एक समयोपयोगी भाषण दिया। अपने भाषण में आपने कहा, कि "बड़े दुख की बात है कि लोग अङ्गरेज़ी क़ानून से डरते हैं और कहते हैं कि उसके ख़िलाफ़ जाने से हम गिरफ़्तार कर लिए जाएँगे, परन्तु ख़ुदाई हुक्म यानी क़ुरान शरीफ़ की आज्ञाओं पर अमल नहीं करते। यों तो ये सभी मुसलमान कहलाते हैं, परन्तु वास्तव में सच्चे मुसलमान वही हैं, जो ख़ुदा और रसूल की आज्ञाओं को मानते हैं।"

इसके बाद हिन्दू-मुस्लिम एकता की चर्चा करते हुए आपने कहा, कि "समय बहुत थोड़ा है। हिन्दू-मुसलमान सब एक मन और एक प्राण होकर देश की सेवा करें। हम सीमा प्रान्त को आज़ाद करने की चेष्टा में हैं। स्त्रियों को सम्बोधन करके आपने कहा कि हम आपको आपके अधिकार दिलाएँगे। आपको चाहिए कि अपने पतियों को तङ्ग न करें; उनसे जामदानी, चिकन, सलमा-सितारा तथा जापानी और विलायती कपड़े न माँगें। चर्ख़ा कातें और खद्दर पहनें तथा इसी का प्रचार करें।"

इसके बाद आपने कहा, कि "एक देशी इक्स्ट्रा-असिस्टेण्ट कमिश्नर तीन सौ रुपए तनख़्वाह लेकर दस-बारह घण्टे काम करता है और उसके मुक़ाबले में एक अङ्गरेज़ असिस्टेण्ट कमिश्नर हज़ार-बारह सौ रुपए लेकर केवल पाँच घण्टे काम करता है। आपने कहा कि हम मालगुज़ारी कम करा देंगे और इसी तरह अङ्गरेज़ी सरकार से अपने सब अधिकार ले लेंगे।" इसी समय सावलदेर नामक गाँव से एक ख़ुदाई ख़िदमतगार आया और कहने लगा कि हमारे गाँव में नायब तहसीलदार आया है और उसके साथ सेना की एक टुकड़ी भी है। वह सन्,

(शेष मैटर १२वें पृष्ठ के तीसरे कॉलम के नीचे देखिए)

२८ मई, सन् १६३१

अभागा कानपुर

क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है, कि जिस शासन की आय का अधिकांश केवल सेना और पुलिस पर ख़र्च हो जाता है, वह कानपुर-सरीखे स्थानीय दङ्गों को भी नहीं रोक सकता? जो नौकरशाही जनता के शान्तिमय जुलूसों और सभाओं पर अमन और क़ानून की आड़ में साल भर तक बराबर लाठियों और गोलियों की वर्षा करती रही, वह चार-चार रात और दिन अरक्षित स्त्री-पुरुषों और बच्चों का बध किस निर्मम भाव से खड़ी देखती रही है, इसका कुछ परिचय कानपुर जाँच-कमिटी के सामने दी हुई गवाहियों से मिलता है। कमीशन ने कानपुर के अधिकारियों से पूछा, कि तुमने गोली चलाने की आज्ञा क्यों नहीं दी? इस पर उन्होंने कहा कि क़ानून में लिखा है, कि भीड़ के तितर-बितर करने में कम से कम शक्ति का प्रयोग करना चाहिए! अङ्गरेज़ी शासन में शासकों के क़ानून-पालन के ऐसे व्यङ्ग-उपहासों का भारतवासियों को ख़ूब अनुभव है। भीड़ के तितर-बितर करने में 'कम से कम' बल प्रयोग करने के अगणित उदाहरण मौजूद हैं। निःशस्त्र नागरिकों की सभा को तितर-बितर करने के लिए 'गोली बारूद रहते' तक मैशीन-गनों की बौछार करते रहना आवश्यकता की सीमा से बाहर नहीं समझा जाता; परन्तु कानपुर में हत्या, लूट और अग्नि-काण्ड के लिए एकत्र भीड़ों पर लाठी-वर्षा तक करने में 'अधिक बल' का प्रयोग करना समझा गया। कमीशन ने पूछा, कि दङ्गा शुरू होते ही परिस्थिति क़ाबू में क्यों नहीं लाई गई? सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस ने कहा, कि पुलिस यथेष्ट नहीं थी। परन्तु प्रश्न तो यह है, कि दो रोज़ बाद अतिरिक्त-पुलिस के पहुँच जाने पर भी दङ्गा शान्त क्यों नहीं हुआ? कमीशन ने पूछा कि क्या आप समझते हैं, कि आपकी पुलिस का प्रबन्ध बिल्कुल ठीक था? उत्तर मिला—"जितना उत्तम प्रबन्ध हो सकता था, उतना किया गया।" इस पर कमीशन ने फिर पूछा—"तो क्या जितनी जान-माल की हिफ़ाज़त इस दङ्गे में हुई, उससे अधिक की आशा कानपुर का कोई नागरिक आगे के लिए न करे?" उत्तर मिला—"नहीं।"

शासन विषयों में क्या ऐसा उद्धत उत्तर सिवा इस देश की ग़ैर-ज़िम्मेदार नौकरशाही के और कोई दे सकता है? अगर इस देश का शासन राष्ट्रीय होता, तो एक तो कानपुर के सदृश घटना ही न होती और यदि हो जाती, तो उसके लिए ज़िम्मेदार शासकों को देश के सामने कैफ़ियत देनी पड़ती और यदि उसमें वे ऐसी ही ग़ैर-ज़िम्मेदार ढङ्ग की बातें करते, जैसी कि कानपुर जाँच-कमीशन के सामने वहाँ के अधिकारियों ने की हैं, तो वे एक क्षण भी अपने ओहदों पर क़ायम न रहने पाते, उन पर देश के साथ विश्वासघात करने, हत्या, लूट और अग्नि-काण्ड करने और उत्तेजन देने के अभियोग लगाए जाते। एक स्वर से जनता ने जैसी गवाहियाँ उनके विरुद्ध दी हैं, उससे भी तीव्र गवाहियाँ देती और अन्त में अपराधी शासकों को दण्ड-विधान का कठोर से कठोर दण्ड दिया जाता। वे, कानपुर के स्वेच्छाचारी अधिकारियों की तरह—इतना सब होने के बाद भी जैसे स्वच्छन्द और रक्षित अपने ओहदों पर आसीन हैं—वैसे कदापि न रह सकते!

कानपुर के अधिकारियों को ओहदों से अलग करने की बात तो बहुत दूर की है। हाल ही में संयुक्त प्रान्त के गवर्नर सर मॉल्कम हेली कानपुर पधारे थे और आप वहाँ के कलक्टर मि० सेल के यहाँ चाय पीने के लिए भी गए थे। चाय के टेबुल पर वास्तव में जो बातें हुई होंगी, उनसे वर्तमान शासन-प्रणाली की मनोवृत्ति का एक हद तक अन्दाज़ा लगाया जा सकता है।

पुलिस और सेना प्रजा के जान-माल की हिफ़ाज़त के लिए रक्खी जाती हैं। हिन्दुस्तान की ग़रीब जनता, जिसके पास अपने बच्चों की शिक्षा, उनके स्वास्थ्य और भोजन के लिए भी पैसा नहीं है, अपनी आमदनी का सब से अधिक हिस्सा सेना और पुलिस पर ख़र्च करती है। स्वभावतः आशा की जाती है, कि मौक़ा पड़ने पर इन विभागों के कर्मचारी अपने कर्तव्यों का पालन करेंगे। परन्तु कानपुर के अधिकारियों ने प्रजा के साथ जैसा विश्वासघात किया है, उसे देखते हुए हम कह सकते हैं, कि यदि हमारा शासन राष्ट्रीय होता तो ये अधिकारी जाँच-कमीशन के नियुक्त होने के पहले ही हत्या आदि गुरुतर अपराधों के अपराधियों की तरह आज सीख़चों के अन्दर बन्द पाए जाते। एक मिनट भी इनका बाहर रहना सार्वजनिक हित-रक्षा के विरुद्ध समझा जाता। परन्तु ग़ुलाम भारतवर्ष में ऐसे नृशंस कार्य करने वाली नौकरशाही को तमग़े और इनाम मिलते हैं! हमारी कठिन कमाई द्वारा जिनका पालन-पोषण होता है, उन्हें निकाल सकना तो दूर रहा, हम भविष्य में उनका पालन-पोषण तक बन्द नहीं कर सकते—हमारी परवशता का यह कितना दारुण चित्र है!!

हमें इस देश पर हुकूमत करने वालों से, कानपुर में जो धन-जन की हानि हुई है, उसका हर्जाना वसूल करने का पूरा हक़ है। यदि कानपुर के अधिकारियों ने अपना कर्तव्य ईमानदारी से पालन किया होता, तो दङ्गा दबाने में असफल होने पर भी, हम उन पर कोई दावा न रखते। परन्तु वस्तु-स्थिति तो यह है, कि उन्होंने किसी प्रकार का भी प्रयत्न नहीं किया। उनका कोई आदमी न तो मारा गया, न ज़ख़्मी ही हुआ। दङ्गे के शान्त होने में भी नौकरशाही का कोई हाथ नहीं था। जाँच कमिटी के सामने गवाही देते हुए स्वयं मि० गोविन जोन्स और मि० हून ने कहा है, कि दोनों सम्प्रदायों के लोग जब थक गए, तब दङ्गा बन्द हो गया; दङ्गा शान्त करने में पुलिस या फ़ौज का कोई हाथ नहीं था।

पुलिस और फ़ौज का हाथ होता, तो जनता ने उनके ऊपर विश्वास करके उनके कहने से बाज़ार भी खोल दिया होता। परन्तु बाज़ार तब तक नहीं खुले, जब तक कि कॉङ्ग्रेस के कुछ प्रमुख नेताओं ने आकर लोगों से खोलने के लिए नहीं कहा। भारत का ट्रस्टी ब्रिटेन अक्सर कहा करता है कि "यदि हम हिन्दुस्तान से अपना शासन हटा लें, तो हम ईश्वर के सामने एक भारी अपराध के ज़िम्मेदार ठहराए जायँगे। हिन्दू-मुसलमान आपस में लड़ मरेंगे और चारों ओर अराजकता फैल जायगी।" किन्तु हमारी धारणा सर्वथा इसके विपरीत है। हम समझते हैं, कि हिन्दुस्तान से यदि ब्रिटेन अपना शासन हटा ले, तो ईश्वर के सामने वह एक महान पुण्य-कार्य करेगा। जो पाप उसके शासन हटा लेने के बाद उत्पन्न होगा, वह तो वास्तव में उसके शासन-काल में ही अधिक हो रहा है। हम तो समझते हैं, कि ज्यों-ज्यों ब्रिटिश शासन इस देश में पुराना होता जा रहा है, त्यों-त्यों वह पाप भी अधिक बढ़ता जा रहा है। यदि यहाँ से वह अपना शासन हटा ले, तो हम समझते हैं, कि जिस पाप की उसे आशङ्का है, वह अपने आप ही हट जायगा। यदि इस देश की शासन-मण्डली में इतना अधिक ईश्वर-भय है तो हमारे कथनानुसार एक बार आज़माइश कर लेने में कोई हानि नहीं है। देख लिया जाय, कि ब्रिटिश शासन में हिन्दू-मुसलमान अधिक लड़ते हैं, या ब्रिटिश शासन के हट जाने पर? हमारा तो विश्वास है कि कम से कम कानपुर में जितना हिन्दू-मुसलमान लड़े हैं, उससे अधिक ब्रिटिश शासन के हट जाने पर वे कदापि न लड़े होते!

कानपुर वालों को जब यह मालूम हो गया, कि इससे अधिक जान-माल की हिफ़ाज़त की आशा इस देश की नौकरशाही से न करना चाहिए, तब उन्होंने सब काम अपने आप करना शुरू कर दिया। यदि पुलिस और फ़ौज की सहायता की आशा का सर्वथा परित्याग करके नगरनिवासी स्वयं शान्ति स्थापित करने का कार्य अपने हाथ में न ले लिए होते और यदि कराची कॉङ्ग्रेस कुछ राष्ट्रीय विचार के नेताओं को तुरन्त न भेज दिए होती, तो हमारा ख़्याल है, कि यह भीषण दङ्गा अभी बहुत दिनों तक जारी रहता और सम्भवतः कानपुर शहर का नक़्शा आज की अपेक्षा बहुत अधिक छोटा हो गया होता!

हमें आशा है विचारशील देशवासी कानपुर की इस भयानक दुर्घटना से पर्याप्त मात्र में शिक्षा ग्रहण करेंगे और वर्तमान नौकरशाही का तब तक विश्वास न करेंगे, जब तक वह पुनः देश के प्रति अपनी ज़िम्मे-

दारी का अनुभव न करने लगे—'भविष्य' के गताङ्क में भी वर्तमान नौकरशाही की इस कलुषित मनोवृत्ति पर हमने यथाशक्ति प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है।

* * *

विद्यार्थियों का अपमान

नैनीताल से आए हुए हाल ही के समाचारों से पता चलता है, कि हमारी संयुक्त-प्रान्तीय गवर्नमेण्ट ने—जिसे अपनी स्वेच्छाचारपूर्ण शासन-प्रणाली के लिए सदा गर्व रहा है—अपने एक वक्तव्य द्वारा बतलाया है, कि उन विद्यार्थियों को, जो गत राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के कारण जेल जा चुके हैं, सरकारी नौकरियाँ न दी जावेंगी। ऐसे विद्यार्थियों की संख्या लगभग २५० बतलाई जाती है।

दूसरा समाचार यह है, कि संयुक्त-प्रान्तीय गवर्नमेण्ट ने इस आशय का भी एक आज्ञा-पत्र प्रयाग-विश्वविद्यालय के वायस चान्सलर के नाम सर्व-साधारण के सूचनार्थ भेजा है, कि भविष्य में प्रयाग-विश्वविद्यालय अथवा उससे सम्बन्ध रखने वाली किसी भी इमारत पर राष्ट्रीय झण्डा न फहराने दिया जायगा!

जो विद्यार्थी गर्मी की छुट्टियों के कारण अपने-अपने घर गए हैं, उन्हें इस आज्ञा-पत्र द्वारा साफ़ तौर से सावधान करने का आदेश दिया गया है और यह भी कहा गया है, कि छुट्टियों के बाद जो विद्यार्थी अपने अध्ययन के उद्देश्य से लौटेंगे या विश्वविद्यालय में नए-नए भर्ती होंगे, उनसे इस बात की आशा की जायगी, कि उन्हें अधिकारियों की इस आज्ञा का सर्वथा पालन करना होगा, अथवा यों कहिए कि केवल उन्हीं विद्यार्थियों को विश्वविद्यालय में पुनः आने का निमन्त्रण दिया गया है, जिनमें इस अपमान को बिना एक भी शब्द मुँह से निकाले सहन करने की ईश्वर-प्रदत्त क्षमता है!

जब कि एक ओर केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारें गाँधी-इर्विन समझौते को अपनी ओर से अक्षरशः पालन का ढोंग रच रही हैं, इस प्रकार नादिरशाही फ़र्मानों के प्रकाशन को क्या कहा जाय? यह बतलाना वास्तव में बड़ा ही कठिन है।

इन फ़र्मानों को दृष्टि में रखते हुए, एक बात तो स्पष्ट है, वह यह कि यदि भारतीय विद्यार्थी विगत राष्ट्रीय आन्दोलनों में अधिक संख्या में और उतना भाग लेते, जितना देशवासियों को उनसे आशा थी, तो आज उनका इस प्रकार का अपमान कदापि न हुआ होता। गवर्नमेण्ट को इस बात का पूरा-पूरा विश्वास है—और उसके इस विश्वास को हम सर्वथा निराधार भी नहीं कह सकते—कि सदियों से ग़ुलामी की गोद में पलते रहने के कारण भारतीय विद्यार्थियों का एक बार ही नैतिक पतन हो गया है। आज यदि ऐसा न होता, तो देश की ग़ुलामी को चिरस्थायी बनाए रखने वाले भारत के समस्त विश्वविद्यालयों में उल्लू बोलते सुनाई पड़ते और उसके विद्यार्थीगण देश की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के साधनों में अपने त्याग और क़ुर्बानियों द्वारा चीन, जापान तथा अमेरिका के विद्यार्थियों के समक्ष वह आदर्श उपस्थित किए होते, जो इन देश के विद्यार्थियों ने आज हमारे सामने रक्खे हैं! अस्तु।

किसी ज़माने में सरकारी नौकरियों की भले ही क़द्र की जाती रही हो; किन्तु आज न तो यह बात ही रही है और न सभी विद्यार्थियों को सरकारी नौकरियाँ ही मिल सकती हैं। आज प्रत्येक प्रान्त में वर्ष भर में न्यूनाधिक ५-६ डिपुटी कलक्टर, ८-१० आई० सी० एस० और १०-१५ व्यक्ति पुलिस की नौकरियों के लिए चुने जाते हैं। किन्तु दुर्भाग्यवश प्रत्येक विद्यार्थी अपने हृदय में डिपुटी कलक्टर अथवा आई० सी० एस० होने की आशा रखता है और केवल इसी निस्सार आशा के कारण वह अपना सर्वस्व - यहाँ तक कि आत्म-सम्मान की रक्षा की परवाह तक नहीं करता—इससे अधिक भारतीय विद्यार्थियों का और क्या पतन हो सकता है?

आज हमारे शासक भारतीय विद्यार्थियों की 'शिक्षा' पर लोकलाज के भय से जो थोड़ा-बहुत व्यय कर रहे हैं, वह परोपकार की भावना से प्रेरित होकर नहीं, बल्कि अपने स्वार्थों के लिए। लॉर्ड मैकॉले के शब्दों में जिस शासन का उद्देश्य यह हो, कि "हमें भारत में इस तरह की एक श्रेणी पैदा करने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए, जो कि हमारे और उन करोड़ों भारतवासियों के बीच, जिन पर हम शासन करते हैं, समझाने-बुझाने का काम करें; ये लोग ऐसे होने चाहिएँ, जो कि केवल रक्त और रङ्ग की दृष्टि से हिन्दुस्तानी हों; किन्तु जो अपनी रुचि, भाषा, भावों और विचारों की दृष्टि से अङ्गरेज़ हों"*—उस गवर्नमेण्ट से यह आशा करना, कि वह भारतीय विद्यार्थियों के नैतिक, आत्मिक एवं मानसिक उन्नति में सहायक होगी अथवा उन्हें अपने विश्वविद्यालय पर राष्ट्रीय झण्डे फहराने देगी—पत्थर से पानी निकालने की आशा के समान दुराशा-मात्र है।

इस उन्नति और विकास के युग में भारतीय विद्यार्थी अपने इन अपमानों को—जिनकी चर्चा ऊपर की गई है, आँखें मूँद कर सह लेंगे—हमें इसमें भी सन्देह है।

* "We must do our best to form a class, who may be interpreters between us and the millions whom we govern; a class of persons Indian in blood and color, but English in taste, in opinions, words and intellect."

—*Macaulay's Minutes of 1835*

* * *

ब्रिटेन के "शुभचिन्तकों" के षड्यन्त्र

सहयोगी "हिन्दुस्तान टाइम्स" के विशेष सम्वाद्दाता ने नौकरशाही के समझौता भङ्ग करने के, एक 'षड्यन्त्र' का पता लगाया है। इस षड्यन्त्र का उद्देश्य लॉर्ड विलिङ्गडन को, इर्विन-नीति त्याग कर उसके स्थान पर दमन-नीति ग्रहण करने के लिए विवश करना था! मालूम हुआ है, कि इसके लिए नौकरशाही ने तीन मोर्चे तैयार किए थे। पहला मोर्चा समझौता-भङ्ग के सम्बन्ध में प्रमाण एकत्र करना था। इसके लिए, सर मैलकम हेली के आने के पहले ही, यू० पी० गवर्नमेण्ट ने शिकायतों का एक विस्तृत विवरण तैयार कर लिया था। मि० इमर्सन ने यू० पी० के सम्बन्ध में गाँधी जी के सामने जो शिकायतें पेश की थीं, उसका वास्तविक रहस्य यही है। पञ्जाब-गवर्नमेण्ट ने सरदार भगतसिंह और उनके साथियों को फाँसी देकर कॉङ्ग्रेस के विरुद्ध शिकायतें पैदा करने का एक विस्तृत क्षेत्र तैयार किया। सीमा प्रान्त में ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ के कार्यों को "सरहद्दी हौआ" का रूप दिया गया। समझौते के अनुसार ज़ब्त ज़मीनों के लौटाने का प्रयत्न करने के लिए बम्बई-गवर्नमेण्ट ने गुजरात के किसानों पर समझौता भङ्ग करने का दोष लगाया। इस प्रकार नौकरशाही ने लॉर्ड इर्विन के यहाँ से जाने के पहले ही लॉर्ड विलिङ्गडन द्वारा दमन-नीति चलाने का सम्पूर्ण षड्यन्त्र रच लिया था। लॉर्ड इर्विन के चले जाने पर पञ्जाब के गवर्नर ने अपने सुझाव के भाषण द्वारा उस षड्यन्त्र को सञ्चालित कर दिया। वह भाषण बहुत सोच-विचार कर भारत-सरकार के गृह-सदस्य तथा अन्य अनेक लोगों की सलाह से तैयार किया गया था। भाषण का समय भी पहले से ही निश्चय कर लिया गया था।

समझौता भङ्ग करने का दूसरा मोर्चा देशी नरेशों को सङ्घ-शासन-व्यवस्था के विरुद्ध बना देना था। सहयोगी "हिन्दुस्तान टाइम्स" के विशेष प्रतिनिधि को विश्वस्त सूत्र से ख़बर मिली है, कि इस सम्बन्ध में भारत-सरकार के पोलिटिकल विभाग द्वारा देशी नरेशों के नाम गुप्त-पत्र भी भेजे गए हैं।

तीसरा मोर्चा एङ्गलो-इण्डियन पत्रों का कॉङ्ग्रेस पर समझौता भङ्ग करने का दोषारोपण करना और साम्प्रदायिक भावों को उत्तेजित करना था; परन्तु लॉर्ड विलिङ्गडन तथा होम-सेक्रेटरी मि० इमर्सन की कुशलता से भारत के अन्न और वस्त्र पर पलने वाली नौकरशाही के ये तीनों मोर्चे अब तक असफल रहे हैं।

सहयोगी "हिन्दुस्तान टाइम्स" के कुशल सम्वाद्दाता द्वारा पता लगाया हुआ नौकरशाही का उपरोक्त षड्यन्त्र केवल इस देश की चहार-दीवारी के भीतर ही परिमित नहीं है; इङ्गलैण्ड में भी इसकी एक ज़बरदस्त शाखा है। लॉर्ड रॉथरमियर, मि० चर्चिल, लॉर्ड रीडिङ्ग आदि अनेक महापुरुष वहाँ वही कार्य कर रहे हैं, जो यहाँ की नौकरशाही कर रही है। समझौता भङ्ग करने के लिए आतुर शासकों में ऐसे लोगों की कमी नहीं है, जो एक बार हिन्दुस्तान के साथ अपने पशु-बल की पूर्ण आज़माइश कर लेना चाहते हैं। भारतवासियों को यह बात ख़ूब मालूम है। उनकी दृष्टि में नौकरशाही के षड्यन्त्रों का कोई महत्व नहीं है। स्वाधीनता-पथ पर क़दम रखने के पहले ही वे रास्ते में टकराने वाली वस्तुओं का अनुमान लगा चुके हैं—भारत और ब्रिटेन अब बहुत जल्द उस मुक़ाम पर पहुँचने वाले हैं, जहाँ समझौता भङ्ग करने के लिए किसी तरफ़ से किसी तरह के गुप्त षड्यन्त्र की आवश्यकता न रह जायगी। समझौते के बने रहने में विशेष लाभ ब्रिटेन का ही है; भारत का नहीं; और जो लोग इस समझौते पर कुठाराघात करने पर तुले हैं, उनसे बढ़ कर ब्रिटेन का दूसरा शत्रु संसार में नहीं हो सकता। पर क्या मदान्ध ब्रिटेन अपने इन "शुभचिन्तकों" की ओर विशेष ध्यान देगा, जो आज उसकी क़ब्र खोद रहे हैं??

* * *

बर्मा-'विद्रोह' की पहेली

पड़ोसी अफ़ग़ानिस्तान और बर्मा की वास्तविक परिस्थितियों के विषय में हिन्दुस्तानियों को सदैव अन्धकार में रखना इस देश के विदेशी शासकों का सनातन नियम रहा है। अपने देश के एक हिस्से—सीमा-प्रान्त तक की ख़बरें—हम लोगों के पास बहुत कम पहुँच पाती हैं। जब तब 'गोला-बारी' हो जाना या चलते-फिरते आदमियों पर किसी फ़ौजी नियम के अनुसार गोली चल जाना, इन स्थानों के लिए एक साधारण सी बात है। हम लोगों को ऐसे समाचारों या उनके कार्य-कारणों के बताने की कोई आवश्यकता नहीं समझी जाती। इतना ही नहीं, अनेक लोक-प्रिय शासकों की हत्याओं और राज्य-परिवर्तनों के अत्यन्त महत्वपूर्ण समाचार तक हम लोगों के पास बिल्कुल अधूरे और रँगे हुए पहुँचते हैं।

बर्मा में इधर महीनों से जो कुछ हो रहा है, उसके विषय में सिवा इसके कि 'विद्रोहियों' और फ़ौजों में मुठभेड़ हुई, इतने विद्रोही मारे गए, इतने घायल हुए और इतने गिरफ़्तार हुए—कोई घटना-क्रम की बात नहीं बतलाई जाती। 'विद्रोह' क्यों और कैसे प्रारम्भ हुआ? इसका आज तक पता नहीं चला। 'विद्रोहियों' की क्या माँगें हैं, किस बात के लिए वे लड़ते हैं—इस विषय पर कोई प्रकाश नहीं डाला गया। जो समाचार आए हैं उनसे मालूम होता है, कि एक मज़बूत शिकारी दल

किसी जङ्गल में डेरा डाले महीनों से जङ्गली पशुओं के शिकार खेलने में लगा हुआ है। समाचार-पत्रों में कभी पञ्जाबी शिकारी दल के शिकारों की, कभी गोरखों और गोरों के शिकारों की संख्या छप जाया करती है। शिकार इतनी अधिकता से मिल रहे हैं, कि फ़ौजों का भेजना बराबर जारी है! 'बर्मा-विद्रोह' को दबाने के लिए ख़ास-ख़ास पलटनें चुनी जा रही हैं और उनका सङ्गठन किया जा रहा है!!

एङ्गलो-इण्डियन पत्रों के प्रतिनिधि बर्मा की ख़बरें भेजने में इस बात का विशेष ध्यान रखते हैं, कि कब और कहाँ हिन्दुस्तानियों पर 'विद्रोहियों' ने हमला किया। ऐसी शायद ही कोई बर्मा की ख़बर निकली हो, जिसमें यह न कहा गया हो, कि अमुक पर स्थान 'विद्रोहियों' ने हिन्दुस्तानियों पर आक्रमण नहीं किया। हमारी समझ से हिन्दुस्तानियों के सम्बन्ध में इतनी उदारता के साथ ख़बरों के भेजने में कुछ रहस्य ज़रूर है। बर्मा और भारत की एकता की बात अब से पहले शायद इतनी प्रगाढ़ कभी नहीं थी। ब्रिटेन बर्मा को भारत से अलग कर देना चाहता है और बर्मा भारत के साथ मिल कर रहना चाहता है। ऐसी परिस्थिति में बर्मा वालों द्वारा हिन्दुस्तानियों पर आक्रमण होने की बात ब्रिटेन वालों ही के लाभ की अधिक मालूम पड़ती है। जिन हिन्दुस्तानियों पर आक्रमण होने की बात कही जाती है, वे सरकारी आदमी हैं या ग़ैर-सरकारी, बिना इस बात को जाने हुए, यह कैसे कहा जा सकता है, कि बर्मा के 'विद्रोही' हिन्दुस्तानी मात्र पर आक्रमण करते हैं या केवल उन पर, जो कि सरकार के साथ होकर 'विद्रोहियों' के विरुद्ध लड़ाई लड़ रहे हैं। भारत और बर्मा के पारस्परिक वायुमण्डल को देखते हुए अनुमान तो यही होता है, कि बर्मा के 'विद्रोही' केवल उन हिन्दुस्तानियों पर आक्रमण करते हैं, जो कि उनके विरुद्ध सरकार का साथ दे रहे हैं।

बर्मा के 'विद्रोहियों' के दबाने के लिए गवर्नमेण्ट जो आवश्यकता से अधिक सख़्ती कर रही है, उसका विरोध हो चुका है। उस दिन भारत-मन्त्री ने हाउस ऑफ़ कॉमन्स में बतलाया, कि अब तक १,००० विद्रोही मारे गए हैं और २,००० क़ैद किए गए हैं, कहा जाता है कि गिरफ़्तार हुए अधिकांश 'विद्रोहियों' को स्पेशल ट्रिब्यूनल सीधे फाँसी की ओर भेज रही है।

गत सप्ताह की एक सरकारी विज्ञप्ति में कहा गया है, कि बर्मा के 'विद्रोह' का कारण बहुत-कुछ आर्थिक भी है। इसलिए विज्ञप्ति का कहना है, कि गवर्नमेण्ट 'विद्रोह' को दबाने के साथ ही साथ आर्थिक सुधार का भी प्रयत्न कर रही है। यदि इस 'विद्रोह' का कारण आर्थिक ही है, तो विद्रोह उठ खड़े होने के पहले ही क्यों न आर्थिक सुधार की चिन्ता की गई? क्या हज़ारों आदमियों की हत्या करने के बाद ही यह सुधार सोचा जा सकता था? बर्मा की परिस्थिति का हम बड़े मनोयोग से अध्ययन कर रहे हैं, और आशा है बहुत शीघ्र ही बर्मा की इस पहेली पर हम स्पष्ट रूप से प्रकाश डालने में समर्थ हो सकेंगे।

* * *

श्री० शेरवानी का भाषण

प्रयाग के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता श्री० तसद्दुक़ अहमद ख़ाँ शेरवानी ने साम्प्रदायिकता की भर्त्सना करते हुए गत २०वीं मई को सहारनपुर में एक बड़ा ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था, जिसमें आपने कहा :—

"युक्त प्रान्त के मुसलमानों ने राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रति जो उपेक्षा-भाव प्रदर्शित किया है, वह बहुत ही शोचनीय है। यदि वे अपनी इस मनोवृत्ति को नहीं बदलेंगे, तो यही उनके हितों के लिए घातक सिद्ध होगी। मुसलमानों की इस प्रकार की मनोवृत्ति के लिए, वे 'नेता' कहलाने वाले लोग ज़िम्मेदार हैं, जो मुसलमानों को सच्चे रास्ते से खींच कर बुरे रास्ते पर ले जाना चाहते हैं। मेरा यह दृढ़ विश्वास है, कि भारत बहुत शीघ्र स्वराज्य प्राप्त करेगा, और किसी प्रकार की बाधा भी उसे अपना ध्येय प्राप्त करने से नहीं रोक सकेगी। मुसलमानों को, आँखें खोल कर ज़रा देखना चाहिए, कि भारत के राजनैतिक रङ्ग-मञ्च पर क्या हो रहा है। देश के इतिहास में जो सब से बड़ी घटना होने वाली है, उसके लिए उन्हें तैयार रहना चाहिए। संसार साँस रोक कर अहिंसात्मक युद्ध की ओर देख रहा था। इस अहिंसात्मक युद्ध ने युद्ध के अन्तर्राष्ट्रीय महत्व में परिवर्तन उपस्थित कर दिया है। अहिंसात्मक युद्ध की सफलता, संसार के युद्ध-सम्बन्धी विचारों में क्रान्ति उपस्थित कर देगी।"

आगे आपने कहा कि "कॉङ्ग्रेस, भारतीय जनता मात्र की है; किसी विशेष सम्प्रदाय या श्रेणी से इसका सम्बन्ध नहीं है। स्वराज्य सरकार के अन्तर्गत कोई भी मनुष्य भूखा या नङ्गा नहीं रह सकेगा। स्वराज्य सरकार, प्रत्येक भारतवासी को शिक्षित बनाना तथा उसकी जीविका के लिए प्रबन्ध करना अपना कर्त्तव्य समझेगी। यदि इतने पर भी कोई बेकार रह जायगा, तो सरकार को उसके भोजन और वस्त्र का प्रबन्ध करना पड़ेगा। मुसलमानों को राष्ट्रीय उद्देश्य की सिद्धि के लिए सब प्रकार से साथ देना चाहिए।"

क्या हम आशा करें, कि पृथकवाद के समर्थक मुसलमान अपने ही एक मुस्लिम भाई की इन सचाइयों पर ठण्डे दिल से विचार करेंगे?

* * *

डॉक्टर आलम का भाषण

मथुरा ज़िला राजनैतिक परिषद् के सभापति की हैसियत से २०वीं मई को लाहौर के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता डॉक्टर आलम ने भी गुमराह मुसलमानों एवं भारतीय नौजवानों को लक्ष्य कर जो महत्वपूर्ण भाषण दिया है, वह वास्तव में साम्प्रदायिकता के मर्म-स्थल पर कुठाराघात करने वाला है। हमें आशा है, देशवासी निम्न पंक्तियों पर विशेष रूप से ध्यान देंगे। आपने कहा :—

"कोई भी सच्चा धर्म दूसरे धर्म से घृणा करना नहीं सिखलाता है। वह धर्म, जो हत्या और रक्तपात करना सिखलाता है, जो औरतों पर हाथ उठाने के लिए कहता है और जो भाई-भाई में वैमनस्य उत्पन्न करता है, धर्म कहलाने के योग्य नहीं है! नास्तिक होकर रहना अच्छा है, किन्तु मुल्ला और पण्डित बन कर भूखों और दरिद्रों को सताना अच्छा नहीं! इन मुल्लाओं और पण्डितों ने ही हमारा सत्यानाश किया है। इन्होंने ही हमें पथ-भ्रष्ट किया है। इन्हीं मुल्लाओं और पण्डितों के कारण लोग धर्म से उकता गए हैं और हमारे नौजवानों का हृदय धर्म के प्रति विद्रोही हो उठा है। भारत के नौजवानों का विश्वास धर्म पर से उठ गया है, किन्तु इस प्रकार की मनोवृत्ति अभी सीमा के भीतर ही है।

"हम धर्म को राष्ट्रीयता से अलग नहीं कर सकते। वह धर्म, जो हमें राष्ट्रीयता का भाव नहीं सिखाता है, जो हमें अपने देश के लिए जीना और देश ही के लिए मरना नहीं सिखलाता है, वह धर्म ही नहीं है! धर्म और राष्ट्रीयता में से किसी एक को दूसरे से अधिक महत्वपूर्ण हम नहीं कह सकते—ऐसा कहना मूर्खता है।

"कट्टर हिन्दू या कट्टर मुसलमान होना कोई ख़राब बात नहीं है। धर्म बदला जा सकता है; किन्तु देश नहीं बदला जा सकता। ऐसा करना असम्भव है। युवको! सच्चा धार्मिक और सच्चे देशभक्त बनो!! आजकल धर्म एक फ़ैशन हो गया है। मैं ऐसे धर्म से घृणा करता हूँ। जिन लोगों के हृदय में ईश्वर के प्रति सच्ची श्रद्धा है, और जो लोग सच्चे दिल से ईश्वर पर विश्वास नहीं करते, ये दोनों ही अपनी सचाई के लिए प्रशंसा के पात्र हैं। दोनों अपनी सचाई से संसार पर अपना प्रभाव डालते हैं। महात्मा गाँधी और सरदार भगतसिंह, ये दो उदाहरण हमारे सामने मौजूद हैं। केवल फ़ैशन के लिए धार्मिक बनने वालों का कोई स्थान नहीं है!

"हम अपने राष्ट्रीय कार्य-क्षेत्र में, एक निश्चित स्थान पर पहुँच गए हैं। हमारा ध्येय हमारी नज़रों के सामने है। एक क़दम और बाक़ी है, फिर तो फल हमारे हाथ में है। इस समय हम स्वर्ग और नरक के बीच में हैं। यदि एक क़दम भी हम पीछे हटे तो हमारा नाश अवश्यम्भावी है। हिन्दू और मुस्लिम नौजवानो, हमारे परिश्रम को सफल या असफल बनाना तुम्हारे ही हाथों में है। यदि तुम हमारा साथ नहीं देना चाहते हो, तो ख़ुदा के लिए, हमारे मार्ग के रोड़े मत बनो। यदि तुम हमें सहायता देना चाहो, तो गत दो वर्षों से जिस साम्प्रदायिक दङ्गे का सूत्रपात हुआ है उसे रोक कर, हमारी सहायता कर सकते हो। मुसलमानों की १४ शर्तों, सिक्खों की ३० शर्तों और हिन्दुओं की ७० शर्तों के फेर में मत पड़ो। इस पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। कॉङ्ग्रेस का साथ दो, और फिर देखोगे कि कॉङ्ग्रेस तुम्हारी है।"

परमात्मा देशवासियों को इन पंक्तियों के आशय को समझने की बुद्धि प्रदान करें—हमारी यही प्रार्थना है।

* * *

(६वें पृष्ठ का शेषांश)

१९३१ की बक़ाया मालगुज़ारी वसूल करने आया है। हमने ख़ान साहब के कहने से मालगुज़ारी दे दी है। परन्तु हमारे जिन भाइयों के पास फ़िलहाल रुपए नहीं हैं, वे हिरासत में बिठाए गए हैं। इसके सिवा तहसीलदार ने एक हुक्मनामा जारी करके ज़मींदारों से पूछा है, कि तुम अङ्गरेज़ी हुकूमत चाहते हो, या कॉङ्ग्रेसी अथवा इस्लामी हुकूमत? उनसे इस पर दस्तख़त भी करवाया जाता है। बतलाइए, हम लोग क्या करें? नायब तहसीलदार ने हमें रोक रक्खा था, इसी से हम आपकी सेवा में शीघ्र नहीं पहुँच सके।

इसके उत्तर में ख़ाँ साहब ने कहा, कि तहसीलदार से कह दो कि वह मालगुज़ारी वसूल करे और इस फेर में न पड़े, कि हम कैसी और किसकी हुकूमत चाहते हैं? परन्तु अगर उसे दरियाफ़्त करना ही हो, तो उससे कह देना चाहिए कि मर्दान जाकर हमारे सरदार से पूछ ले। वही उसे बता देंगे, कि हम कैसी हुकूमत चाहते हैं। चूँकि मालगुज़ारी देना वाजिब है, इसलिए उसे दे दो और किसी सूरत में क़ानून के ख़िलाफ़ कोई काम न करो। यद्यपि नौकरशाही ने नायब तहसीलदार के साथ फ़ौज का दस्ता इसीलिए भेजा है, कि लाल कुर्ती दल से मुठभेड़ हो जाए, तथापि तुम लोग ख़ूब शान्त रहना। अगर तहसीलदार ज़्यादा तङ्ग करे, तो उसके साथ चले जाना; परन्तु किसी प्रकार के हुक्मनामे पर दस्तख़त न करना।

इसके बाद आपने कहा कि जिन लोगों ने क़ुरान-शरीफ़ की शपथ खाई है कि हम ख़ुदाई ख़िदमदगार बन कर अपने नेताओं के आदेशानुसार चलेंगे, क़ैद होने पर सरकार से माफ़ी नहीं माँगेंगे और ज़मानत देकर छुटकारा पाने की कोशिश न करेंगे, वे हाथ उठावें। इस पर सभी लालकुर्ती वालों ने हाथ उठा कर अपनी प्रतिज्ञा को दुहराते हुए कहा—हम अपने नेताओं की आज्ञा मानेंगे, किसी हालत में माफ़ी नहीं माँगेंगे, स्वयंसेवकों की भर्ती जारी रक्खेंगे और हिन्दू-मुसलमान मिलकर रहेंगे।

* * *
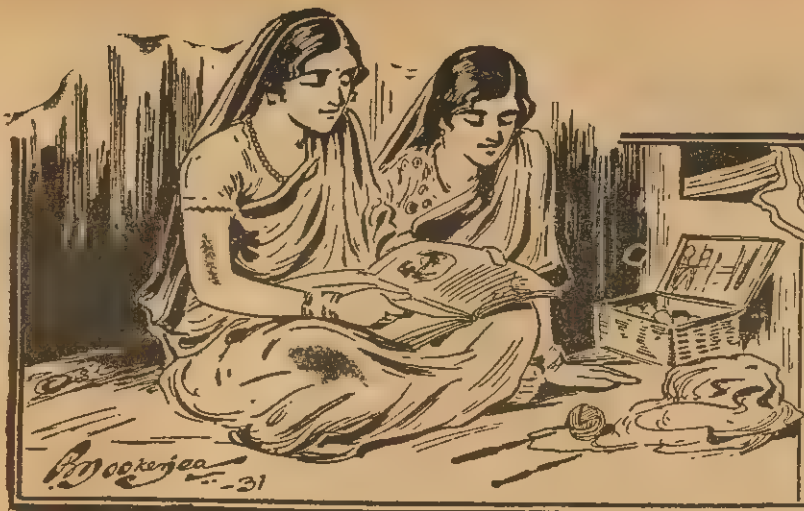
बदमाश !

[श्री० पाण्डेय बेचन शर्मा, "उग्र"]

मारे मुहल्ले का वह जो त्रिभुवन-नाथ है बुड्ढा; अव्वल-दर्जे का मक्खीचूस है। उम्र तो है उसकी हाथ से लकड़ी पकड़ कर चलने की, पर वह दाँत से कौड़ी पकड़ता चलता है!

वह भी भोगने के लिए नहीं, दानार्थ भी 'नैव' केवल जोड़ने के लिए!

मगर, लक्ष्मी की कृपा...! "पुरुष-पुरातन" की वह "चञ्चला"—औरत, एक बार लड़कपन में, जो त्रिभुवन-नाथ पर आशिक़ हुई सो हुई। मुहल्ले की दादियाँ साँझ-सवेरे साश्चर्य-गलचौर करती हुई कहती हैं—"त्रिभुवननाथ के घर पर लक्ष्मी टाँग तोड़ कर बैठ गई हैं!"

लेकिन, जो लोग चञ्चला की मायाविनी प्रकृति को समझते हैं, वे बूढ़ियों की बातों पर केवल मुस्करा देते हैं। कहते हैं—लक्ष्मी यदि किसी के यहाँ पाँव तोड़ कर बैठ जायँ, तो नारायण का संसार सँभालना तो दूर, अपना पीताम्बर सँभालना भी दुश्वार हो जाय। शेष, भू-भार उतार कर अपार-पारावार के महाकार में मिला दें। अजी जनाब! यह तो भगवती माया ही हैं, जिनके लिए सृष्टि कर कोई अपने को कर्त्ता कहता है, दया-दृष्टि कर धर्त्ता और प्रलयाग्नि-वृष्टि कर संहर्त्ता। परदे में वही चञ्चला चमकती हैं, बाहर-बाहर उनके बेदाम के ग़ुलाम नाचते हैं।

ऐसी सर्व-व्यापिनी, विश्व-विमोहनी, भला एक जगह टिक सकती हैं—टाँग तोड़ कर—छिः!

त्रिभुवननाथ जब दस वर्ष का था, तभी अपने नाना की सम्पत्ति के लिए गोद ले लिया गया था। उस समय वह सम्पत्ति, चल-अचल कुल मिला कर, बीस हज़ार रुपयों से अधिक की न थी। मगर, पिछले साठ वर्षों में त्रिभुवननाथ दो लाख का अधिकारी हो गया। इस समय उसकी अवस्था पछत्तर साल की है।

त्रिभुवननाथ की एक सुन्दरी स्त्री है—अट्ठारह वर्षीया, और एक लड़का है, जवान, जिसके वय का बीसवाँ वर्ष चल रहा है। अर्थात्, त्रिभुवननाथ की यह पाणि-गृहीता चौथी है। पाँच वर्ष हुए इस औरत को उसने चाँदी के जाल में फँसाया था; नहीं तो, भला ख़ुशी से उसे कोई आँखों वाला बाप अपनी बेटी देता? बात यों है। इस युवती के पिता को त्रिभुवननाथ ने असल में ९ सौ रुपए ऋण दे रक्खा था, जो पाँच वर्ष पूर्व, स-सूद-दर-सूद, पूरे पाँच हज़ार हो गया था! अब या तो वह ग़रीब त्रिभुवननाथ के तेरह वर्ष के "बच्चे" को चौदह वर्ष की एक माँ देता, या अपना चिथड़ा-लत्ता, अरतन-बरतन, घर-बाहर। बस, बुड्ढे की गोटी लाल हो गई।

पाँच हज़ार मूल्य पर औरत का सौदा त्रिभुवननाथ कदापि न करता, यदि उसे बुढ़ौती में जवान बीबी के गुण-गुण न मालूम होते। कुछ लोग उसके सौभाग्य या दुर्भाग्य से व्यग्र होकर कहते—"यह साला औरत खाकर जीता है।" मगर ज़्यादातर लोग यह मानते हैं कि वह पुरुषत्वहीन है, दिखावट और घर सँभालने के लिए औरत पर औरत ब्याह कर लाता है, उन्हें खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने की इतनी तकलीफ़ें देता है, कि वे या तो बदचलन हो जाती हैं या ज़हर खाकर सो रहती हैं।

और त्रिभुवन का वह लड़का, जवान सुखदेव? मुहल्ले वाले कहते हैं—त्रिभुवन की तीसरी स्त्री, उसकी जननी, ऐसी बदमाश थी—कि दोहाई! उसने मुहल्ले भर के युवकों को परका रक्खा था। उस पर प्रेत और प्रेतनियाँ भी आतीं और उन्हें उतारने वाले, महीने में पन्द्रह दिन त्रिभुवननाथ के घर के आगे-पीछे मँडराते नज़र आते।

किसी प्रेत-पिशाच के प्रसाद ही से सुखदेव ने संसार का मुँह देखा है, ऐसी उन सब लोगों की धारणा है, जो त्रिभुवननाथ को और उसकी झुकी कमर को ज़रा भी पहचानते हैं।

लोग कहते हैं—इसी लिए वह लौंडा ऐसा विकट बदमाश है।

※

वह लौंडा—मैं उसे तब से जानता हूँ जब से वह हमारी दुनिया में साँस लेने लगा है। एक ही मुहल्ले में रहने से स्वभाव चाहे न मिलता हो, पर उसका पिता त्रिभुवन है हमारा मित्र। और एक बात और। विचार, सिद्धान्त, मिले या न मिले, पैसे वालों की परवा, साधारणतः सभी लोग करते हैं। पैसा ही एक ऐसा मल है, जिसे ढोने वाले को लोग अस्पृश्य नहीं समझते। बल्कि, अर्थ-मल-वाहक को हक़-नाहक़ लोग प्रेम-पुलकित भाव बना कर छाती और गले से लगाते फिरते हैं। किसी के हाथ में वह मल लगे, जिसे ग़रीब भङ्गी ढोता है, तो तुरन्त ही वह व्यक्ति व्यग्र-भावेन निर्मल होने को दौड़ता है। मगर अमीर-भङ्गी का भार, चाँदी-मल हाथ लगते ही मनुष्य अपने हाथों के बाहर होकर बड़े चाव से मल-मल हो उठता है। इस त्रिभुवननाथ ही को देखिए।

पहले तो वह "हाय लड़का! हाय लड़का!" किया करता था—निपूता होने के कारण जनम भर की कन्जूस कमाई, आँखें मुँदते ही क्या जाने किसके हाथ में चली जायगी, यह सोच कर जिस दिन सुखदेव पैदा हुआ उसी दिन से घर में जो सवा पाव रोज़ दूध लिया जाता था, बन्द कर दिया गया। कारण, वह ग्वाला ही मर गया जो, सूद के पैसे में, दूध दे जाता था। सुखदेव के जन्म के दो वर्ष पूर्व त्रिभुवन ने उस ग्वाले को २) रुपए ऋण दिया था। दो पैसे रोज़ या सवा पाव सुच्चा दूध, सूद के वादे पर। ग्वाला बेचारा दो साल तक बराबर सवा पाव दूध त्रिभुवन के दरवाज़े पर—एक सलाम और चार चापलूसियों के साथ—पहुँचाता रहा, पर उसके पास कभी दो रुपए पूरे न जुड़ सके। आख़िर वह मर ही गया। ठीक उसी दिन, जिस दिन सुखदेव ने जन्म का जगमग देखा। इसीलिए त्रिभुवन ने उस दिन को बड़ा मनहूस समझा। जब घर के भीतर से, सूद पर चाकरी करने वाली मज़ूरिन यह कहने आई कि—"सरकार! बधावे बजें, घर में लाल ने जन्म लिया है।" तब त्रिभुवन अपने उस ऋणी-मुख़्तार के बुलवाने की व्यवस्था कर रहा था, जो सूद में उसके मुक़दमे लड़ दिया करता है। उसके कान में भी बधावे की बात न जा सकी—वह, अहीर की बकरियाँ क़ुर्क़ कराने की घातें, टहल-टहल कर और उछल-उछल कर सोचता रहा।

जब सुखदेव की माँ सूतिकागार से बाहर आई तो वह दूध-पूत से पूर्ण थी। त्रिभुवन ने उसे समझाया—अब, जब भगवान ने अपना ही घर दूध से भर दिया है, तब पाव-सवा पाव के लिए गाय, ग्वाला, बकरियों का मुँह देखना फ़िज़ूल है।

सुखदेव की माँ त्रिभुवन की कन्जूसी जानती ही नहीं, भोग रही थी। वह उसकी ऐसी दुष्ट, स्वार्थ-भरी सलाहों का मर्म समझती थी। इसीलिए वह उस खूसट का प्यार नहीं करती थी और पुरुषत्व की दृष्टि से प्यार करने योग्य त्रिभुवननाथ के पास था ही क्या? इसीलिए वह उससे नफ़रत करती। पहले बोलती ही नहीं; बोलती तो गालियाँ दे चलती और घृणा से ज़मीन पर थूक कर पाँव रगड़ने लगती। त्रिभुवन उसे इन सब बातों की पूर्ण स्वतन्त्रता देता—नहीं देता तो पैसे।

पैसे उसे, मुहल्ले तथा इधर-उधर के, "जानकार" यार देते। बदले में वह उन्हें अपना व्यभिचारी प्यार देती!

जब सुखदेव दो साल का था, उस वक़्त उसकी माँ मुहल्ले भर में दुर्गन्ध फैला रही थी। मगर कहे तो क्या और सुने तो कौन? अङ्गरेज़ी राज और "तेली का तेल"—फिर बीच में बोलने वाला बेवक़ूफ़ नहीं, तो और क्या कहा जाता? अस्तु।

अपने दरवाज़े पर बैठे-बैठे हम रोज़ सुनते कि, यार लोग आठों पहर, त्रिभुवन के दरवाज़े पर डेरा डाले रहते हैं। वह दिन भर और आठ बजे रात तक, कमर झुकाए, गली-गली में घूम-घूम कर अपने रुपयों का सूद तहसीलता फिरता और इधर उसकी बीवी अपनी आर्थिक समस्या, घर बैठे हल करती।

लोग बतलाते, शाम को वह सजी-बजी अपने दरवाज़े पर या पिछवाड़े, सुखदेव को गोद में लिए खड़ी रहती है। समझे-सधे "सज्जन" आते हैं। वे लड़के के हाथ में रुपया या रुपए देते हैं और माँ के मुँह से चुम्मा या चुम्मे लेते हैं!!

जब सुखदेव पाँच वर्ष का नटखट बालक था, उसकी जननी की तनिक सी नैया भव-सागर में डूब गई। भरपूर थपेड़े खाते-खाते वह जर्जर हो गई थी।

और तब तक, उस लड़के ने बाप को गन्दी गालियाँ देने, दूसरों से रुपए-पैसे लेने और फिर हृदय से लग कर, चुम्बन देने का पाठ पढ़ा था! अपनी माँ से!!

बाप को तो अपना ही पाठ रटने से फ़ुरसत नहीं थी।

※

पाँचवें वर्ष से वय के सत्रहवें साल तक सुखदेव त्रिभुवननाथ के तत्वावधान में रहा। पुत्र के प्रति पिता की जो स्वाभाविक वात्सल्य-भावना होनी चाहिए, वह सुखदेव के प्रति त्रिभुवन के मन में कदापि न थी। लोग इसके दो कारण बतलाते हैं—एक त्रिभुवन का अर्थ-प्रेम, जिसके आगे वह संसार के किसी भी भाव-अनुभाव-विभाव को नगण्य मानता और दूसरा लड़के की असलियत में सन्देह। सुखदेव, सचमुच त्रिभुवन का पुत्र न मालूम पड़ता। कहाँ वह बुड्ढा, निस्तेज, निस्सार जीव और कहाँ सुन्दर सुखदेव! मुहल्ले के अच्छे-अच्छों के बालकों से भी सुखदेव अधिक सुश्री और तेजस्वी था। वह किसी तरह भी त्रिभुवन का पुत्र होने योग्य नहीं था।

मुहल्ले के लोग कभी-कभी सुखदेव के व्यवहार से चिढ़ कर उसके स्वरूप को अपमानित करते; कहते—"कमअसल है न साला! तभी ऐसा सुन्दर होने पर भी शैतान सा बदमाश है।"

त्रिभुवन के मन में सुखदेव की असलियत के बारे में सन्देह ही नहीं, पूरा विश्वास था। इसीलिए वह उसके हित की कभी न सोचता। वह अच्छे की सोहबत में पड़ता है या बुरे की, इसकी कभी परवा न करता और शहर के विख्यात बदमाशों के पास भी—अपने रुपए के तक़ाज़े पर या सूद के रोज़ाना पैसे लाने को उसे भेजता। पढ़ने-लिखने की तो चर्चा तक न चलाता। कहता—"पढ़ने के नाम पर फ़िज़ूल लोग अपने पैसे और वक़्त का नुक़सान करते हैं? एक वक़्त हमारी ज़िन्दगी में ऐसा आता है, जब पढ़े हों या अनपढ़े, अपने लाभ की बातें आदमी की समझ में ख़ुद-बख़ुद आने लगती हैं। और बारह बरस तक सरस्वती की दिल्ली में भाड़ झोंकने का अधिक से अधिक यही तो अर्थ है, कि आदमी 'अपना भला' समझने लगे।"

सुखदेव की पढ़ने की ओर प्रवृत्ति भी न थी। भरसक वह एक क्षण भी घर पर न बैठना चाहता। हमेशा इस गली से उस गली में दौड़ना चाहता। गली-गली के लड़कों को बुरी बुरी गालियाँ देता। उन्हें वैसा बनाना चाहता जैसे को समाज के लोग "बुरा" कहते हैं। अनेक बार वह लड़के-लड़कियों को चूमते और उनसे चूमे जाते हुए देखा, पकड़ा, लतिआया गया था।

ज्यों-ज्यों सुखदेव की बदमाशियों की शिकायतें त्रिभुवन के पास आतीं, त्यों-त्यों वह उसे अधिक से अधिक अपने अनुशासन में रखने का ज़ोर मारता। आज्ञाभङ्ग पर अक्सर उसे थप्पड़, लात, घूँसे और बेंत से मारता। वह ऐसे अवसरों पर त्रिभुवन के हाथों पिट तो ज़रूर जाता, पर उससे घोर युद्ध करता हुआ—उस पर थूकता हुआ—अयोग्य गालियाँ देता हुआ।

पर मार के आगे भूत भी भागता है, इस मन्त्र को त्रिभुवननाथ ने जकड़ कर पकड़ रक्खा था। वह सुखदेव को तब तक मारता, जब तक वह पूरी तरह परास्त न हो जाता; और परास्त होते ही, पहले उससे अपना हुक्म मनवाता। कहता—दौड़ता हुआ जा!—अरे!! अभी खड़ा है! दौड़ता हुआ जा!

कहाँ जा, क्यों जा, यह पहले कुछ न बतलाता। पिटने से थका सुखदेव अपने झुके बाप का राक्षसी मुख देखने लगता। भयभीत-सा।

"अरे—अभी गया नहीं!"

"कहाँ?"—वह धीरे से पूछता।

"अली बाज़ार, रज्जबअली एक्कावान के यहाँ। ब्याज के पैसे लेने!"

"अभी"—अब डरते-डरते सुखदेव कहता—"अभी वह एक्का लेकर स्टेशन गया होगा। रात को लौटता है।"

"अरे रात के बच्चे!"—बुड्ढा उसे एक कनथप्पड़ और लगाता—"गली-गली घूम कर बदमाशी कर सकता है और अपने बाप के पैसे लाने के लिए उस एक्कावान के दरवाज़े पर दस मिनट बैठ नहीं सकता—भाग! भाग!!"

त्रिभुवन डण्डा तान कर उसे दौड़ाता और सुखदेव छूट कर भागता।

मुहल्ले के लोगों ने बेहया होकर दस-दस बार त्रिभुवन को बताया, कि रज्जबअली एक्कावान शहर का मशहूर आवारा है। उनके पास भेजना सुखदेव की बदमाशियों पर पॉलिश कराना होगा।

एक दिन कुछ लोगों ने उसे बतलाया कि रज्जबअली अपने एक्के पर बैठा कर सुखदेव को शहर की सड़क-सड़क की हवा खिलाता है। यदि लड़के के तेज से आकर्षित होकर लोग उसके बारे में उससे पूछते हैं, तो वह कहता है कि सुखदेव उसका 'रखेला' है।

भग्न-भारत

[श्री० चन्द्रदत्त पाण्डेय]

देव! आज क्यों लोट धूलि में,
अविरल अश्रु बहाते हो?
चिन्ता-सागर में प्लावित हो,
कहाँ, किधर को जाते हो?
बन्धु! पड़े हो म्लान-मना क्यों,
उठो जगो अब मत सोओ।
व्रीड़ा के अञ्चल के भीतर,
यों मुँह करके मत रोओ।
विश्व-मञ्च पर मौन-व्यथा का
करुणा-दृश्य दिखाते हो?
दुखी दुखी के दुख में होने,
का था पाठ सिखाते हो?
सोओ मत यों देव! उठो अब,
सुख-स्वप्नों को बिसरा कर।
उदय हुआ है रवि प्राची में,
विपुल-ज्योति से अञ्जलि भर।

* * *

"त्रिभुवन दादा!"—लोगों ने बुड्ढे को समझाने की चेष्टा की—"तुम बहुत बुरा करते हो, जो ऐसे बदमाशों के पास सुखदेव को भेजते हो।"

"चलो-चलो!" एक ही त्रिभुवन का उत्तर होता—"तुमसे सलाह कौन माँगता है? अरे वाह भाई! अब कोई अपना रुपया-पैसा भी न वसूल करे। कौन साला कहता है कि रज्जबअली सुखदेव के साथ बदमाशी करता है? अजी मैं समझता हूँ। लोगों की छाती फटती है कि यह त्रिभुवन चार पैसे क्यों बना लेता है। हाय री कम्बख़्त दुनिया!!"

जो हो, पर इसमें कोई सन्देह नहीं, कि तेरह वर्ष के वय में सुखदेव औरतों को घूरना, मर्दों के गले से लिपटना, किसी के भी पैसे को पलक झपते ही घुमा देना, और बड़े-छोटे सबके सामने बदतहज़ीब रहने आदि का अभ्यासी हो गया था।

वह ज़्यादातर भठियारों की सोहबत में रहता, क्योंकि त्रिभुवन के असामियों में ऐसे ही नीच लोग होते, जो उससे दस-पाँच रुपए, रोज़ाना सूद की शर्त पर लेते—रुपए कभी न देते और रोज़ के पैसे बराबर भरते जाते।

उन लोगों ने बड़े प्रेम से बालक सुखदेव को बीड़ी पीना, बीड़ी में गाँजा पीना और गाँजे में चरस पीना सिखलाया।

कई बार मुहल्ले के लड़कों को बीड़ी में गाँजा पिलाते हुए सुखदेव पकड़ा और बेभाव पीटा गया था।

वह मार खाने में रुस्तम हो गया था या कुत्ता; जो दो पग दूर बढ़ते ही—भयानक से भयानक लतखोरी भूल जाता है।

❀

उस दिन प्रातः ६ बजे हाथ में नीम की दतून लिए मुँह साफ़ करता अपने दरवाज़े पर जो आया तो क्या देखता हूँ, गली में चारों ओर लाल पगड़ी की भरमार है। त्रिभुवन का घर घिरा हुआ है और उसके दरवाज़े पर मुहल्ले के अनेक लोग साश्चर्य, सभय, खड़े हैं। मेरे द्वार के पास भी एक सिपाही खड़ा था।

"क्या है जमादार साहब, आज सवेरे-सवेरे?"—मैंने दरियाफ़्त किया।

"तुम्हारे मुहल्ले में चोरों का लकड़दादा रहता है। वही गिरफ़्तार किया गया है।"

"कौन? कौन?"

"वही—त्रिभुवन का जवान पट्ठा सुखदेव। इधर एक साल के भीतर जितनी चोरियाँ इस शहर में और इसके आसपास हुई हैं, सब में उस बदमाश का नाम है।"

त्रिभुवन के घर की ओर देखते हुए मैंने पूछा—तलाशी हो रही है क्या?

"हाँ, भीतर कोतवाल साहब, छोटे दारोग़ा और बड़े जमादार तलाशी ले रहे हैं। गवाह की तरह मुहल्ले के ३-४ आदमी भी हैं।"

इसी समय घर में से बड़े जमादार निकल कर उस सिपाही के पास आए।

"उत्तमसिंह! झपट कर ज़रा थाने पर तो जाओ और एक बड़ी हथकड़ी लेकर फ़ौरन आओ। हमारे साथ जितनी हथकड़ियाँ हैं, उनमें एक भी उसकी ज़बरदस्त कलाई पर नहीं चढ़तीं।"

"कुछ माल बरामद हुआ?"

"ओह—बहुत। कई चोरियों की चीज़ें निकली हैं। अच्छे-अच्छे कपड़े, सन्दूक़ें, गहने, बर्तन। या अल्लाह? यह मुहल्ला तो डाकुओं का अड्डा निकला?"

मारे शर्म के मेरा सर झुक गया—नीम और मुँह के कुरस को ज़मीन पर थूकते हुए जमादार से मैंने कहा—एक मछली सारा तालाब गन्दा कर देती है।

"गन्दा? छिः—तौबा!" जमादार ने नफ़रत से कहा—"यह बुड्ढा त्रिभुवन पूरा शैतान है।"

"वह भी घर में मिला?"—सिपाही ने पूछा!

"कहाँ—वह तो चार ही बजे से सूद के पैसे तहसीलने निकलता है और हम यहाँ पहुँचे थे ठीक पाँच बजे। घर में एकाएक घुसने पर हमने देखा—वह बदमाश सुखदेव अपने बाप की नई जोरू के साथ लिपट कर ख़र्राटे ले रहा था! वाह रे ज़माना?"

"छिः-छिः!"—सिपाही थाने की ओर बढ़ता हुआ बोला—"ऐसे नालायक़ का तो सर काट लेना चाहिए।"

"उसे बाप की जोरू के साथ सोते देख कोतवाल साहब को ऐसा ग़ुस्सा आया कि उन्होंने ज़ोर-ज़ोर से कई बेत लगा कर उसको उठाया। इस नीचता के लिए जवाब तलब होने पर उसने निधड़क बताया कि उसका बाप हिजड़ा है और वह जान-बूझ कर उस औरत को उसके साथ सोने देता है।"

"क्या उसका बयान पुलिस ने लिख लिया ?"—मैंने पूछा।

"हाँ, बयान ख़तम होने के बाद मैं बाहर आया हूँ।"

"चोरी की चीज़ों के बारे में उसने क्या कहा ?"

"क़बूल करता है। कहता है, मुझे आप लोग मारिए या सताइए नहीं—नहीं तो मैं भी हाथ छोड़ूँगा। मैं क़बूल करता हूँ; मैंने चोरियाँ की हैं।"

मैंने पूछा—त्रिभुवन भी फँसेगा इस मामले में ?

"ज़रूर।" जमादार ने दृढ़ता से कहा—"सारी ख़ुराफ़ातों की जड़ तो वही बुड्ढा है, रुपए का ग़ुलाम।"

इसी वक्त दो-तीन सिपाहियों के बीच में घिरा बुड्ढा त्रिभुवन आता दिखाई पड़ा। वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाता आ रहा था—हे भगवान ! ऐसा लड़का दुश्मन को भी न देना। इस बदमाश ने बैठे-बिठाए मेरे सर पर आफ़त का पहाड़ ढा दिया है !

❀

सब कुछ बरामद हुआ, मगर त्रिभुवन के घर से रुपया एक भी न निकला। शहर का विख्यात कन्जूस और धनी होने के कारण वह हमेशा पुलिस वालों की नज़र में काँटे सा खटकता था। कोतवाल के बाद कोतवाल आए और चले गए, पर त्रिभुवन किसी के चङ्ग पर न चढ़ सका। इसका पुलिस वालों को बड़ा ख़ार था। पर त्रिभुवन हमेशा समाज के चोरों से मिल कर उनकी "कमाई" कौड़ियों के भाव ख़रीदता और फिर उनसे रुपए पर रुपए सीधे करता। पुलिस वालों की कच्ची आँखों में सरासर धूल झोंक कर।

सुखदेव यदि मूर्ख और बातुल न होता, तो त्रिभुवन की क़लई कभी न खुलती। वह तो वही जिस-तिस पर बमक कर बक देता कि तुम्हें रातों-रात लुटवा न दूँ तो यह नहीं और वह नहीं। धीरे-धीरे पुलिस वालों की नज़र उस पर गई। उसकी डायरी लिखी जाने लगी। उसका पीछा किया जाने लगा। उसके मिलने-जुलने वालों का चरित्र अध्ययन किया जाने लगा। पुलिस पहचान गई, त्रिभुवन के कुपुत्र की खाल में उसके नीच व्यापार को।

पुलिस वालों ने अपने गोयन्दों से जब अच्छी तरह पता पा लिया कि अब त्रिभुवन के घर में काफ़ी प्रमाण एकत्र है—उसकी गर्दन नापने के लिए—तब बड़े विश्वास और आशा से, प्रातःकालीन मन्द-मलय-समीरण के साथ, चुपचाप छापा मारा था। उनको विश्वास था कि त्रिभुवन के घर में हज़ारों की झङ्कार नाचती नज़र आवेगी। मगर, वहाँ नज़र आई एक फूटी कौड़ी भी नहीं !

"साला गाड़ कर रखता होगा"—कोतवाल ने सोचा और बस, त्रिभुवन का सारा घर खोद डाला गया। जिस कमरे में वह सोता था उसको पुलिस वालों ने चारों ओर से कमर-गहरा खोदा, मगर भगवान की तरह वहाँ भी रुपए न मिले। अब उनका क्रोध प्रचण्ड हुआ त्रिभुवन पर।

"नक़द रुपए कहाँ छिपाया है हज़रत ?"—कोतवाल ने उससे डाँट कर पूछा।

"दोहाई है कोतवाल साहेब की !"—बुड्ढा रट चला अपना अध्याय—"जिस ससुरे के पास एक कौड़ी भी हो हुज़ूर ! पैसा-पैसा को तबाह हूँ। गली-गली ठोकरें खाता फिरता हूँ और तिस पर भी लोग रुपए नहीं लौटाते।"

इतना कह कर त्रिभुवन रोने का नाट्य करते हुए बोला—दोहाई हुज़ूर की, खाने बिना हम लोग मरे जा रहे हैं।

वह अभी बकता ही, अगर जमादार ने उसे एक थप्पड़ न जमा दिया होता—"साला ! चोरी का माल सकार कर सेठ बना है और रुपयों का पता पूछने पर ढँढ़रच करता है ! जोखनसिंह ! इसको उस कमरे में ले जाकर इसका 'बयान' लो।"

"बयान लो" का अर्थ बाद में हमने समझा, जब कमरे से फटाफट जूते की आवाज़ और फिर त्रिभुवन की चीत्कार सुनाई पड़ी ! दर्शक लोग दहल-से उठे—पुलिस के इस "बयान लेने" पर हम सब धीरे-धीरे वहाँ से सरकने लगे।

अभी उसका फटाफट बयान हो ही रहा था कि सभी दर्शक घटनास्थल से सरक गए। पुलिस के सधे गवाहों को छोड़ कर।

सच-झूठ की राम जानें, उस तलाशी के बारे में, बाद में, शहर में बड़ी-बड़ी बदशकल ख़बरें फैलीं। लोग फुसफुसा कर बातें करते थे—त्रिभुवन बुरी तरह जुतिआया गया, रुपयों का पता बताने के लिए। उसे पचासों तरह से—थुका-चटा कर, नङ्गा कर, उलटे टँगा कर—ज़लील किया गया, कि वह नक़दी माल का पता दे। यहाँ तक कि उसकी बीबी तक को पुलिस छेड़ने पर उतर आई। वह तो सुखदेव मरने-मारने पर अड़ गया, तब उसकी इज़्ज़त बची।

मगर था त्रिभुवन का सोना खोटा; उसका कोना बुरी तरह दबता था। उसके उस जीवन के कारण, जिस पर समाज नफ़रत भेजता है। उसके घर पर सचमुच चोरी का माल निकला था। उसका पारिवारिक इतिहास भी सर्व-साधारण की दृष्टि में निहायत अश्लील था। उसकी अर्थ-पिशाचता से लोगों को चोट लगती थी। अस्तु।

पुलिस के अन्यायी आचरण थे ज़रूर, पर त्रिभुवन की ओर से कोई किस मुँह से क्या बोलता ?

जिसकी पिछली तीन औरतें एक भाव से समाज की दोनों आँखों में परिहास, विलास या घृणा की पात्री रह चुकी हों—चौथी की कहानी भी स्वभावतः निस्तेज हो—उस पर यदि पुलिस ने कुछ ज़ुल्म किया, तो बुरा किया, मगर ठीक ही किया—जैसे को तैसा। ऐसा सोच कर तलाशी की, नीचताओं पर हैरत करने वाले समाजी ग़ैरत से चुप रहे !

❀

त्रिभुवन के असामी लोग उसकी विपत्ति का समाचार सुन कर मन ही मन प्रसन्न हो रहे थे, कि अच्छा हुआ बदमाश फँसा। अब सुबह-सुबह उसका मनहूस मुँह तो देखने को न मिलेगा ! मगर दूसरे ही दिन जब वह उनके दरवाज़े पर लाठी पटकता और गला साफ़ करने के लिए खाँसता सुनाई पड़ा, बेचारे ऋणी बहुत उदास हुए।

दरियाफ़्त करने पर मालूम क्या हुआ, कि त्रिभुवन ज़मानत पर छूट गया और सुखदेव नहीं छोड़ा गया। दूसरे दिन १० बजे जमादार और दो-तीन पुलिस वाले त्रिभुवन के घर पर आए और उसे तथा उसकी जवान बीबी को कोतवाली पर लिवा गए। और इसके बाद शहर में ख़बर फैली, कि कोतवाल त्रिभुवन की बीबी पर आशिक़ हो गया है और रिश्वत-रूप में उसको बँगले पर बुला कर त्रिभुवन को बेदाग़ छोड़ देने को तैयार है। उसी दिन रात को १ बजे अपनी बीबी और एक कॉन्स्टेबिल के साथ त्रिभुवन घर पर लौटा—यह तो मुहल्ले वाले भी जानते हैं।

उधर अदालत में सारा दोष सुखदेव के माथे पर मढ़ा जाने लगा कि यही असली बदमाश है, सारा सामान इसी की कोठरी में बरामद हुआ है। बेचारे बूढ़े रईस त्रिभुवन के घर का यह जवान पट्ठा कलङ्क है। स्वयं त्रिभुवन का बयान ऐसा था, जैसे वह पुलिस का गवाह है। उसका झूठा कथन सुन कर सुखदेव भरे अदालत उसे गालियाँ देने लगा। उसने कहा—मैं सब समझता हूँ, बुड्ढे। जानता हूँ तू क्यों और कैसे पुलिस वालों से मिल गया।

सुखदेव ने अदालत के सामने जूता फेंक कर अपने बाप को मारा। इससे उसका मुक़दमा और भी बिगड़ गया। उसे दो साल की सख़्त सज़ा हुई !

सज़ा होने के तीसरे दिन सुखदेव जेल से भागा—रातों-रात और सीधे अपने घर पर आया। कोई ३ बजे रात त्रिभुवन के घर से चिल्लाने की आवाज़ सुनाई पड़ी। त्रिभुवन गली में दौड़-दौड़ कर चिल्ला रहा था—"ख़ून ! ख़ून !!"

मुहल्ले के सैकड़ों प्राणियों ने जब उसके घर को घेर कर, भीतर घुस कर जाँच करना शुरू किया, तब पता चला कि ख़ून तो किसी का नहीं हुआ—हाँ, त्रिभुवन की बीबी और पुलीस का जमादार बुरी तरह घायल हुए हैं, जिन्हें साथ ही एक कमरे में सोते पाकर सुखदेव ने आक्रमण किया था। मगर जमादार था काफ़ी मज़बूत। घायल होने पर भी उसने सुखदेव को हत्या-काण्ड करने के पूर्व ही गिरफ़्तार कर लिया। अस्तु।

इस बार की गिरफ़्तारी में सुखदेव पर बड़े-बड़े सङ्गीन अभियोग थे। इस बार केस सेशन तक गया और मुक़दमे के दौरान में पुलिस और जेल वालों ने उसे मारा-पीटा भी बहुत। अन्त में, उसे आजन्म कारावास-दण्ड मिला और वह बड़ी सावधानी से बरेली सेण्ट्रल जेल में भेज दिया गया।

जिस समय उसे आजन्म कारावास का दण्ड दिया गया—वह बीस वर्ष और कुछ महीने का युवा था।

❀

यद्यपि अब सुखदेव जेल में है, फिर भी, शहर वाले उसे भूले नहीं हैं। वह 'बदमाश सुखदेव' के नाम से अवसर याद किया जाता है।

मगर जब हमारे मुहल्ले के कुछ विवेकी पुरुष विचार से काम लेते हैं, तब सुखदेव का 'बदमाश' प्रमाणित होना मुश्किल हो जाता है। पाँच वर्ष तक एक प्रकार की बदमाशी उसे उसकी कुमाता ने सिखाया—भला कह कर। फिर, प्रायः जेल जाने तक, वह मक्खीचूस और नीच त्रिभुवन के दुर्भावों और बुरे षड्यन्त्रों का अभ्यास करता रहा—डण्डे और थप्पड़ों की मार के साथ। वह ऐसे वातावरण में उत्पन्न हुआ, जिसमें उसे वैसा ही ज्ञान मिला, जिसे लोग "बदमाशी" कहते हैं। उसकी जगह पर समाज का कोई भी बालक शायद बदमाश से एक इञ्च भी कम न होता। अस्तु।

हमारी नज़र में सुखदेव से बड़ा बदमाश है पुराना पापी त्रिभुवन, और वह समाज, जो त्रिभुवन-ऐसों को पहचान कर भी अपने बीच में पनपने देता है। मगर क़ानून और उसका सूत्र-सञ्चालन करने वाले समाज के रक्षक त्रिभुवन को बदमाश न प्रमाणित कर सके और वह बेचारा लड़का, मुफ़्त में अपने दुष्ट बाप के पापों के प्रायश्चित के लिए नरक में ठेल दिया गया।

वह आज भी बरेली सेण्ट्रल जेल में है और आज भी उसका नामधारी बाप धड़ल्ले से शहर में अपना व्यापार करता है। वही, सूद पर रुपए उड़ाने का और चोरी का माल पचाने का। लोग कहते हैं—अब वह पुलिस से मिल कर अपना रोज़गार करता है।

* * *

ब्रिटेन की राज्य-क्रान्ति

[श्री० नरसिंहराय जी शुक्ल]

डर राजत्व-काल (१४८५-१६०३) का प्रायः अन्त हो चला था। उक्त वंश में कोई उत्तराधिकारी न रह गया। अतः शासन की बागडोर स्टुअर्ट वंश में चली गई। गत गृह-युद्ध (गुलाब युद्ध) के कारण प्रजा को बहुत दुख उठाना पड़ा था, अतः उसने ट्यूडर का एकाधिपत्य शासन स्वीकार कर लिया था। परन्तु अब समय में काफ़ी परिवर्तन हो चुका था। सुधारवाद का पूर्ण रूप से प्रचार हो चुका था। यूनानी विद्या के प्रचार के साथ-साथ यूनानी शासन-प्रणाली, प्रजातन्त्रवाद की लहर यूरोप के शक्तिशाली नरेशों को भयभीत कर रही थी। एक प्रकार से यूरोप का सारा वायु-मण्डल धार्मिक तथा राजनैतिक क्रान्तिवाद से अवच्छिन्न था। जर्मनी और फ्रान्स में अभी धार्मिक क्रान्ति हो रही थी, परन्तु ब्रिटेन में यही क्रान्ति दूसरे रूप में अवतरित हुई। आज जिस शासन-प्रणाली का रूप हम ब्रिटेन में देखते हैं, उसका जन्म इसी राज्य-क्रान्ति के कारण हुआ था।

इधर तो जनता में इस प्रकार के भाव थे, उधर स्टुअर्ट वंशी राजा लोग ठीक इसके विपरीत थे। उनका विचार था कि राजा एक ईश्वरीय शक्ति है। उसके दण्ड (व्यवस्था) को प्रजा को बिना किसी प्रकार के विरोध के मान लेना चाहिए। प्रजा में यह प्रश्न उठता था कि किस विशेष अधिकार से राजा राज्य करता है? परम्परागत ईश्वरीय नियमानुसार, जैसा कि पादड़ी तथा राजा लोग मानते हैं अथवा पार्लामेण्ट की आज्ञा या क़ानून से? यदि राजा सचमुच ईश्वरीय नियमानुसार सिंहासन का अधिकारी है, तो उसकी इच्छाओं के विरुद्ध जाना ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध जाना होगा?

राज्य-पक्ष का समर्थन करने वाले राजा को परम्परागत ईश्वरीय नियमानुसार सिंहासन का अधिकारी मानते थे। वे कहते थे कि राजा की इच्छा ही क़ानून है। वह जो कुछ चाहे कर सकता है। दूसरे दल के प्रजावर्ग (पार्लामेण्ट) का कहना था कि क़ानून प्रधान है। क़ानून ही राजा को बनाता है। राजा की इच्छा क़ानून नहीं है, वरन क़ानून की इच्छा राजा है। क़ानून बनाने का अधिकार किसे है? राजा को या प्रजा को अथवा राजा तथा प्रजा दोनों को?

उपर्युक्त प्रश्न तो केवल वाग्युद्ध के लिए थे, सिद्धान्त-मात्र थे। झगड़े के तीन रूप बने। प्रथम—धार्मिक कारण, द्वितीय—राजनैतिक तथा तृतीय—आर्थिक। स्टुअर्ट वंशी राजा उपर्युक्त तीनों बातों में हस्तक्षेप करना चाहते थे। अपना मनमाना अधिकार और बल-प्रयोग करना चाहते थे। परन्तु प्रजा यह नहीं चाहती थी।

जेम्स की प्रथम पार्लामेण्ट की बैठक सन् १६०४ में हुई। राजा के न्यायालय ने गाडविन नाम के एक व्यक्ति का पार्लामेण्ट में बैठने का अधिकार छीन लिया। क्योंकि गाडविन का देश-निकाला हुआ था। "हाउस ऑफ़ कॉमन्स" ने यह एलान किया कि पार्लामेण्ट में बैठने या न बैठने का प्रश्न हल करने का अधिकार केवल पार्लामेण्ट को है; राजा का इस सम्बन्ध में हस्तक्षेप करना सर्वथा अनुचित है। जेम्स प्रथम (राजा) ने उत्तर दिया कि पार्लामेण्ट को अधिकार देने वाला राजा है। पार्लामेण्ट को कोई अधिकार नहीं कि राज्याधिकार की अवहेलना करे। परन्तु अन्त में जेम्स को हार माननी पड़ी।

जेम्स प्रथम ने अपनी आय बढ़ाने के लिए एक नया कर लगाया। बेर नामक एक व्यक्ति ने यह कर देना अस्वीकार किया। इसलिए उस पर न्यायालय में अभियोग चला। न्यायाधीशों ने, राजा के पालतू टट्टू होने के कारण, बेर के विरुद्ध अपना फ़ैसला दिया। इससे प्रभावान्वित होकर जेम्स ने और भी अनेक कई नए-नए कर लगाए।

पहली पार्लामेण्ट सन् १६११ में विसर्जित कर दी गई। १६१४ में दूसरी पार्लामेण्ट बुलाई गई। यह भी केवल दो मास के लिए थी। सन् १६२१ में तीसरी बुलाई गई, उसमें एक विचित्र बात थी। पहिले के डरपोक लोगों के स्थान पर अच्छे-अच्छे लोग आ गए थे। उन्होंने राजा के मन्त्रियों पर अविश्वास का प्रस्ताव पास कर, उन्हें पदच्युत कर देने का पुराना अस्त्र ग्रहण किया। हाउस ऑफ़ कॉमन्स ने इस बैठक में राजा के कई प्रभावशाली मन्त्रियों के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास किया।

दूसरा अस्त्र हाउस ऑफ़ कॉमन्स ने 'स्वतन्त्र भाषण' के सम्बन्ध में ग्रहण किया। राजा जेम्स ने हाउस के सदस्यों का स्वतन्त्र भाषण का अधिकार छीन लिया था। परन्तु वे उसे अपना जन्म-सिद्ध अधिकार मानते थे। इस समय (तीसरी पार्लामेण्ट सन् १६२१) जेम्स प्रथम अपने पुत्र के साथ स्पेनिश राजकुमारी से ब्याह की बात कर रहा था। परन्तु हाउस ऑफ़ कॉमन्स स्पेनिशों के विरुद्ध था। वह इस विवाह-सम्बन्ध को अच्छा न समझता था। फलतः पार्लामेण्ट ने एक प्रस्ताव पास करके राजा से प्रार्थना की कि विवाह-सम्बन्ध की चर्चा स्थगित कर दी जाय। इस पर जेम्स प्रथम ने पार्लामेण्ट को कड़ी डाँट बताई और भविष्य के लिए चेतावनी दी कि पुनः कभी राज्य के गम्भीर विषयों में हस्तक्षेप न करें। परन्तु राजा की इस धमकी का उल्टा असर हुआ। अङ्गरेज़ जाति भला अपने जन्म-सिद्ध अधिकार को कब छोड़ सकती है। १५ दिसम्बर सन् १६२१ की आधी रात को मोमबत्ती के प्रकाश में हाउस ऑफ़ कॉमन्स ने विरोधात्मक प्रस्ताव पास करके तय किया कि "भाषण की स्वतन्त्रता ब्रिटिश जाति का जन्म-सिद्ध अधिकार है।" जेम्स प्रथम पार्लामेण्ट के इस अशिष्टता-पूर्ण व्यवहार से अप्रसन्न हुआ और क्रोध में आकर उस पन्ने को, जिस पर यह प्रस्ताव लिखा था, फाड़ कर फेंक दिया। परन्तु जनता पर इसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा।

सन् १६२४ में चौथी पार्लामेण्ट की बैठक हुई। राजा और पार्लामेण्ट का झगड़ा अभी भी वैसा ही था और सन् १६२५ में जेम्स प्रथम के मर जाने पर उसके पुत्र चार्ल्स प्रथम के साथ भी चलता रहा।

राज्याधिकार के सम्बन्ध में जैसे विचार जेम्स प्रथम के थे, वैसे ही वरन् उससे भी कहीं अधिक सङ्कीर्ण विचार उसके पुत्र चार्ल्स प्रथम के थे। राज-सिंहासन को वह ईश्वर-प्रदत्त समझता था और जो इस विचार के प्रतिकूल दिखाई देता, उसे वह राजद्रोही समझता था।

चार्ल्स प्रथम ने अपने शासन-काल के आरम्भिक चार वर्षों में पार्लामेण्ट की तीन बैठकें कराईं और प्रत्येक से बारी-बारी लड़ा। ग्यारह वर्षों तक स्वेच्छाचार-पूर्ण शासन करता रहा। अन्त में स्कॉटलैण्ड के साथ युद्ध छिड़ने पर धन की आवश्यकता से लाचार होकर उसे पुनः पार्लामेण्ट की बैठक करनी पड़ी। इसी पार्लामेण्ट के द्वितीय अधिवेशन ने राज्य-दण्ड को शिथिल करने की अभिलाषा से युद्ध की घोषणा की। चार्ल्स प्रथम कैथलिक धर्म का मानने वाला था और पार्लामेण्ट में विशेषता थी, प्रोटेस्टैण्टों की। इसके सिवा मूल विषय देश के शासनाधिकार का था। पार्लामेण्ट चाहती थी कि शासनाधिकार उसी के हाथ में रहे और राजा चाहता था कि वह अपनी इच्छानुसार प्रजा पर शासन करे। फल-स्वरूप भीषण गृहयुद्ध का श्रीगणेश हुआ, जो सन् १६८८ में क्रान्ति के रूप में परिवर्तित हो गया।

चार्ल्स की प्रथम पार्लामेण्ट सन् १६२५ में बैठी। इस समय वह स्पेन पर आक्रमण करने के लिए सेना भेजने की तैयारी में था और डेनमार्क को द्रव्य भेजना चाहता था। इन कामों के लिए अधिक रुपयों की आवश्यकता थी। परन्तु पार्लामेण्ट ने रुपया देना स्वीकार न किया। क्योंकि उसे चार्ल्स की सरकार पर विश्वास न था। परिणाम यह हुआ कि बड़ी कठिनाई के बाद चार्ल्स को इच्छित द्रव्य का केवल सातवाँ भाग प्राप्त हो सका।

राजा के व्यक्तिगत ख़र्चे के लिए प्रजा 'टनेज' तथा 'पाउण्डेज' नाम के दो कर दिया करती थी। ये कर गत दो शताब्दियों से राजा के आजीवन-काल के लिए, उसके शासन-काल के आरम्भ में ही, प्रजा द्वारा स्वीकृत किए जाते थे। परन्तु इस पार्लामेण्ट ने उसे केवल एक वर्ष के लिए ही स्वीकृत किया।

चार्ल्स की दूसरी पार्लामेण्ट सन् १६२६ में बैठी। इस बैठक से पहले ही 'कैडिज़-बेड़ा' के नष्ट हो जाने तथा फ़्रान्स के राजा से ऋण लेने की बात का पता पार्लामेण्ट को लग चुका था। हाउस ऑफ़ कॉमन्स ने 'कैडिज़-बेड़ा' जाँच-कमिटी बनाने के लिए राजा को लाचार किया। उसने कह दिया कि जब तक जाँच करने के लिए राजा प्रस्तुत न हो जायँगे, तब तक

उनकी किसी प्रकार की आर्थिक माँग पूरी न की जाएगी। हाउस ऑफ़ कॉमन्स इस जाँच की आड़ में राजा के मन्त्री बकिङ्घम की चाल-चलन का रहस्य जानना चाहता था। चार्ल्स ने कहा कि वह अपने मन्त्रियों के चाल-चलन की जाँच करे या न करे, पार्लामेण्ट को इस सम्बन्ध में कुछ भी कहने का अधिकार नहीं है। इधर हाउस ऑफ़ कॉमन्स ने राजा का यह रङ्ग देख कर दूसरा पैंतरा बदला। उसने बकिङ्घम पर अविश्वास तथा उसको पदच्युत करने का प्रस्ताव पास कर डाला। इन दिनों हाउस ऑफ़ कॉमन्स के अगुआ सर जॉन इलियट थे। ये कार्निशमैन थे और बड़े उच्च विचार के प्रतिभाशाली वक्ता थे। बकिङ्घम के ऊपर होने वाले प्रस्ताव के कारण राजा ने पार्लामेण्ट को विसर्जित कर दिया।

तीसरी पार्लामेण्ट सन् १६२८ में बैठी। इस बार चार्ल्स प्रथम अत्यन्त क्रुद्ध था और उसने कह दिया था कि यदि अब की पार्लामेण्ट ने उसकी किसी बात का विरोध किया तो वह उन तमाम शक्तियों का प्रयोग करेगा जो ईश्वर ने ऐसे अवसरों पर वर्तने के लिए मनुष्यों को दी हैं। चार्ल्स ने कहा, इसे केवल मेरी धमकी न समझो; क्योंकि धमकी तो मैं केवल बराबर वालों को दिया करता हूँ। राजा के इस औद्धत्य से पार्लामेण्ट बहुत अप्रसन्न हुई। इसके सिवा उसकी अप्रसन्नता के और भी अनेक कारण थे। राजा ने लोगों से जबरन क़र्ज़ लेना आरम्भ कर दिया था। पाँच सज्जन, जिन्होंने राजा को क़र्ज़ देने से इन्कार कर दिया था, बिना प्रमाण कारागार भेज दिए गए थे। इसका कारण 'राजा का विशेष अधिकार' बताया गया। इस घटना से सारी अङ्गरेज़ जाति खलबला उठी। स्वतन्त्र भाषण के अधिकार के साथ-साथ व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अपहरण होते देख जनता आगबबूला हो उठी।

तीसरी पार्लामेण्ट इन बुराइयों को दूर करना चाहती थी। उसने राजा के सामने एक "अधिकारों का ख़रीता" उपस्थित किया। ख़रीते में लिखा था कि—(१) बिना पार्लामेण्ट की स्वीकृति लिए कर वसूल करने तथा ऋण लेने का अधिकार राजा को नहीं है। (२) बिना काफ़ी प्रमाण मिले राजा किसी व्यक्ति को कारागार में नहीं रख सकता। (३) उन दिनों इङ्गलैण्ड के राजे सरकारी सेना तथा नाविक-दल के सिपाहियों को प्रजा के घर भेज दिया करते थे और प्रजा को उनका ख़र्च देना पड़ता था। पार्लामेण्ट ने यह नियम बना दिया कि भविष्य में ऐसा नहीं हो सकता।

राजा ने ख़रीते को न मानने का प्रयत्न किया। परन्तु अन्त में लाचार होकर सब बातें स्वीकार कर लेनी पड़ीं। किन्तु स्वीकार कर लेने पर भी उसने कभी इन नियमों का पालन नहीं किया।

तीसरी पार्लामेण्ट का द्वितीय अधिवेशन सन् १६२९ में हुआ। उसने एक स्वर से घोषित किया कि राजा ने ख़रीते के एक भी नियम का पालन नहीं किया। परिणामस्वरूप राजा और पार्लामेण्ट का मनमुटाव बढ़ता गया। चार्ल्स पार्लामेण्ट को विसर्जित करना चाहता था, परन्तु इसके पहिले ही पार्लामेण्ट के सदस्यों ने एक दिन अर्ध रात्रि को पार्लामेण्ट-भवन के किवाड़ बन्द कर, तीन प्रस्ताव पास कर डाले। एक प्रस्ताव में कहा गया था कि—

'पार्लामेण्ट की स्वीकृति के बिना जो धर्म में नया परिवर्तन करेगा, कर देने के लिए औरों को उसकावेगा अथवा स्वयं कर देगा, वह देशद्रोही समझा जावगा और स्वतन्त्रता का घातक क़रार दिया जायगा।"

सन् १६२९ की पार्लामेण्ट के ये अन्तिम प्रयत्न थे। क्योंकि इस प्रस्ताव के पश्चात् ही वह विसर्जित कर दी गई। पार्लामेण्ट का प्रतिभाशाली नेता सर जॉन इलियट टावर में बन्द कर दिया गया और अन्त में वहीं उसकी मृत्यु हो गई।

राजा-प्रजा के युद्ध का प्रथम अध्याय समाप्त हो चुका। सन् १६०३ से लेकर सन् १६२९ तक पार्लामेण्ट प्रजा के अधिकारों की रक्षा के लिए बार-बार ज़ोर देती रही और दूसरी ओर राजा अपने राजदण्ड के बल पर उसकी माँगों को कुचलता रहा। परन्तु पार्लामेण्ट के सदस्य हताश न हुए। सर जॉन इलियट के बलिदान से उनमें और भी उत्साह आ गया था और वे अब अधिक शक्तिमान होकर लड़ने को तैयार थे।

तीसरी पार्लामेण्ट के विसर्जित करने के बाद चार्ल्स प्रथम ने ग्यारह वर्षों तक बिना पार्लामेण्ट के शासन किया। अपने इस शासन-काल में वह प्रजा से बड़ी निर्दयतापूर्वक धन लेता रहा, अपने धार्मिक विचारों को सब के सिर पर लादता रहा तथा बिना किसी विचार किए ही लोगों को जेल भेजता रहा।

इस शर्त को अस्वीकार कर दिया और वाइट द्वीप को छिप कर भाग गया। जेल में रहते हुए ही वह स्कॉटलैण्ड वालों के साथ गुप्त षड्यन्त्र कर रहा था। स्कॉटलैण्ड वालों से उसने यह समझौता किया कि पुनः सिंहासनारूढ़ हो जाने पर इङ्गलैण्ड में 'प्रेसबिटिरियन' मत की स्थापना की जाएगी। इङ्गलैण्ड के 'प्रेसबिटिरियन' भी चार्ल्स से मिल गए। फलतः पुनः युद्ध का श्रीगणेश हुआ। एक ओर चार्ल्स प्रथम और प्रेसबिटिरियन तथा दूसरी ओर पार्लामेण्ट की सेना थी।

क्रॉमवेल ने सन् १६४८ में प्रेस्टन नामक स्थान पर स्कॉटलैण्ड वालों पर आक्रमण कर, उन्हें पराजित किया। जिन दिनों द्वितीय युद्ध जारी था, उन्हीं दिनों चार्ल्स पार्लामेण्ट-दल से छिप-छिप कर बातें करता रहा तथा उनमें फूट डालने का भी प्रयत्न करता था। इस द्वितीय युद्ध के समय क्रॉमवेल ने निश्चय किया था कि चार्ल्स को अब की जब गिरफ़्तार करके लावेगा तब उससे पूरा बदला चुकावेगा।

६ दिसम्बर सन् १६४८ को कर्नल प्राइड ने पार्लामेण्ट-भवन के फाटक पर खड़े होकर उन १४३ सदस्यों को बाहर निकाल दिया, जो उसके मत के विरुद्ध प्रमाणित हुए। पश्चात् पार्लामेण्ट ने चार्ल्स प्रथम के ऊपर अभियोग चलाया। प्रजा ने अपने राजा को अपराधी क़रार दिया। उस अपराध के लिए चार्ल्स को मृत्यु-दण्ड दिया गया!

३० जनवरी, सन् १६४९ को पाड़ पर सम्राट चार्ल्स मृत्यु की प्रतीक्षा में खड़ा है। पल्टन चारों ओर से पाड़ को घेरे हुए है।

'कोर्ट ऑफ़ स्टार चैम्बर' तथा 'हाई कमीशन' द्वारा भी उसने प्रजा पर घोर अत्याचार किए।

चार्ल्स के इन अत्याचारों से प्रजा घबरा उठी। पार्लामेण्ट-भवन में जो वाग्युद्ध चलता था, वह अन्त में सशस्त्र क्रान्ति के रूप में परिवर्तित हो गया। चार्ल्स प्रथम तथा उसकी प्रजा में युद्ध की घोषणा हो गई। चार्ल्स ने सेना इकट्ठी कर नोटिङ्घम नामक स्थान पर अपना झण्डा गाड़ दिया। प्रजा का साधारण वर्ग पार्लामेण्ट के पक्ष में था तथा धनी लोग चार्ल्स के पक्ष में। एजहिल, चार्ल्सग्रूव, अडवल्टनमूर तथा न्यूज़्बरी इन चार स्थानों में घमासान युद्ध हुआ। सन् १६४४ में क्रॉमवेल ने मार्स्टनमूर स्थान पर चार्ल्स प्रथम की सेना को पूर्णरूप से पराजित किया। अन्त में चार्ल्स ने आत्म-समर्पण कर दिया।

चार्ल्स के आत्म-समर्पण करने के थोड़े दिन बाद ही पार्लामेण्ट तथा उसकी सेना में भी भयङ्कर विग्रह फैल गया। इस विग्रह की जड़ धार्मिक मतभेद ही था। सेना ने चार्ल्स से मिल कर समझौता करना चाहा, जिसकी एक शर्त यह थी कि तमाम धर्म वालों के साथ समानता का व्यवहार किया जायगा। परन्तु चार्ल्स ने

संसार के इतिहास में ऐसी घटनाएँ कम सुनने में आई हैं। यह घटना सर्व-प्रथम थी। अपने राजा को मृत्यु का दण्ड देना उस समय तक इतिहास में नहीं पाया गया था। अपनी आज़ादी के लिए अपने राजा तक की हत्या करने वाली अङ्गरेज़ जाति जब भारतवर्ष में उसके सुपुत्रों को देश-प्रेम के अपराध में जेल, काला-पानी तथा फाँसी की सज़ाएँ देती है तो महान आश्चर्य होता है।

३० जनवरी सन् १६४९ को दो बज कर ४ मिनट पर चार्ल्स को फाँसी दी गई!!! चार्ल्स की फाँसी से इङ्गलैण्ड की सहृदय जनता दहल उठी। फाँसी के समय चार्ल्स के धैर्य, उत्साह, वीरता ने उपस्थित जनता के हृदय में एक नवीन भाव उत्पन्न कर दिया था। जनता में त्राहि-त्राहि मच गई!!!

* * *

ग्रामों की ओर

[श्री० ब्योहार राजेन्द्रसिंह, भूतपूर्व एम० एल० सी०]

महात्मा गाँधी, देश के अन्य प्रधान नेता तथा दूसरे दूरदर्शी महानुभाव सदा से इस बात पर ज़ोर देते आए हैं, कि ग्रामों की ओर से ही देश की समस्या हल होगी, अतः हमें सब से पहले उन्हीं के सङ्गठन, सुधार और संस्कार की ओर ध्यान देना चाहिए। किन्तु अभी तक लोगों ने इसे केवल सिद्धान्त-रूप से ही माना है—कार्यरूप में परिणत करने की चेष्टा बहुत कम की गई है। सिद्धान्त-रूप से किसी विषय को स्वीकार करना, कार्य की पहली सीढ़ी है, परन्तु जब तक उसके आगे की सीढ़ी पर पैर न बढ़ाया जाय, तब तक वास्तविक लक्ष्य तक नहीं पहुँचा जा सकता।

स्थायी सुधार-कार्य तथा स्वराज्य आन्दोलन, दोनों दृष्टि से ग्रामों में काम करने की आवश्यकता है। इन्हीं दो दृष्टियों से कुछ लोग इस दिशा में कार्य भी करते हैं। किन्तु इन दोनों को परस्पर विरोधी न समझ कर एक-दूसरे का सहायक ही समझना चाहिए। वर्तमान आन्दोलन से यह बात स्पष्ट हो गई है कि जहाँ पहले ही से विधायक कार्य स्थायी रूप से होता आया है, उन्हीं स्थानों की जनता ने आन्दोलन को भी सफलतापूर्वक अपनाया है। अतः स्थायी कार्य का महत्व किसी प्रकार कम नहीं किया जा सकता। यद्यपि कभी-कभी आन्दोलन की उत्तेजना में भी अच्छी तैयारी हो जाती है, परन्तु वह स्थायी नहीं होती। आग लगने पर पानी डालने की नीति समीचीन मानी जा सकती है, किन्तु आग लगने पर कुआँ खोदने की नीति मूर्खता के सिवा और कुछ नहीं कही जा सकती।

यह विधायक कार्य शान्ति के समय जितनी अच्छी तरह किया जा सकता है, उतना युद्ध के समय नहीं। शान्ति का अवसर हमें फिर मिल गया है—चाहे वह स्थायी हो या क्षणिक। अतः इस अवसर को हमें हाथ से न जाने देना चाहिए और अपनी सारी शक्तियों को विधायक या रचनात्मक कार्यों में लगा देना चाहिए। इस समय ग्रामों में लगातार फसल आदि ख़राब होने से तथा अर्थाभाव के कारण लोग आपत्ति में हैं। अतः यदि इस अवसर पर उनकी सहायता और उसके साथ-साथ उनका सङ्गठन किया जाय तो कार्य बड़ी सुगमता से और शीघ्र होगा।

इस समय कॉङ्ग्रेस की ओर से ग्राम-सङ्गठन तथा आन्दोलन सम्बन्धी जो कार्य हम अपने हाथों में ले सकते हैं, उनमें से कुछ ये हैं :—

१—स्थान-स्थान पर किसान-मालगुज़ारों की सभाएँ करा के, उनकी असली स्थिति की जाँच करना तथा फसल आदि सम्बन्धी वास्तविक अवस्था तथा किसानों की माँगों को अधिकारियों तक पहुँचाना।

२—स्थायी रूप से ग्राम, परगना तथा तहसील की किसान-मालगुज़ार सभाओं का सङ्गठन कराना, जो सदा ग्रामों के हित के कार्यों को कर सकें। ग्राम-सभा के प्रतिनिधियों से तहसील-सभा तथा इसी प्रकार ऊपर की सभाओं का सङ्गठन करना, जिससे प्रान्त भर में ग्रामवासियों का एक विराट सङ्घ हो जावे।

३—कार्य-सञ्चालन के लिए ग़ल्ले या नक़दी के रूप में प्रत्येक ग्राम-सभा से एक-एक कोष इकट्ठा कराना, जिसका अधिकांश भाग ग्राम में रहे और कुछ भाग परगना तथा तहसील सभाओं में चला जावे। इस समय ग़ल्ला इकट्ठा करने का कार्य आसानी से हो सकता है। यद्यपि इस समय ग्रामवासी कष्ट में हैं, किन्तु हमें विश्वास है कि अपने लाभ के लिए अपनी फसल का कुछ हिस्सा देने में उन्हें इन्कार न होगा।

४—इस कार्य के लिए प्रत्येक ग्राम से स्वयंसेवक भर्ती करना तथा उनका सङ्गठन करना।

५—स्वयंसेवकों द्वारा गाँवों में तकली, चर्ख़े तथा खादी का प्रचार कराना। इसके लिए आवश्यक है कि केन्द्रों में ऐसे प्रतिष्ठान स्थापित हों जहाँ लोग चर्ख़े, पोनी, कपास तथा खादी ख़रीद और बेच सकें। सूत के बाज़ार भरवाना, कताई-बुनाई का प्रबन्ध, चर्ख़ों की होड़ कराना तथा खादी की प्रदर्शनी आदि का भी प्रबन्ध किया जावे।

६—विदेशी वस्त्र-बहिष्कार और स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार तथा इनकी प्रतिज्ञाएँ लेना।

७—पञ्चायत आदि के द्वारा शराब-बन्दी तथा विदेशी कपड़े का प्रचार बन्द कराना।

८—ग्रामों में रहने वाली अछूत जातियों की दशा सुधारने पर भी विशेष ध्यान दिया जावे।

९—ग्राम-सभा की साप्ताहिक बैठक हो तथा परगना-सभा की पाक्षिक, जिसमें ग्रामवासी अपने हित की बातों पर विचार करें तथा समय-समय पर नगरों से वक्ता, उपदेशक और कथावाचक आदि बुलाए जावें।

१०—पारस्परिक झगड़े निबटाने के लिए ग्राम-पञ्चायतों की स्थापना की जावे।

११—इस बात पर ज़ोर दिया जावे कि प्रत्येक ग्राम में कम से कम एक साप्ताहिक पत्र अवश्य मँगवाया जावे, जिससे लोगों को प्रान्त तथा देश के समाचार मालूम होते रहें। पत्रों को पढ़ कर सुनाने का भी प्रबन्ध हो।

१२—ग्रामवासियों की ज्ञान-वृद्धि के लिए चलते-फिरते पुस्तकालयों का प्रबन्ध किया जावे और उनके द्वारा पुस्तकों का एक-एक सेट ग्रामों में भिजवाया जावे। फिर एक मास के बाद उसे दूसरे ग्राम में भेज कर पहले ग्राम को दूसरा सेट दिया जावे।

यह कार्य डि० कौन्सिल, स्कूलों तथा सहकारी-सभाओं द्वारा अच्छी तरह हो सकता है।*

अब प्रश्न यह है कि इसे करे कौन? क्योंकि बिना कार्यकर्ता के कोई भी कार्य नहीं चल सकता। शहर में रहने वाले कार्यकर्ता तो कभी-कभी सभाओं में जाकर भाषण मात्र दे सकते हैं, परन्तु ग्रामों की ओर किसी की दृष्टि नहीं जाती। हमारी राय में नगर के कार्यकर्ताओं को ही यह कार्य अपने हाथ में लेना चाहिए। उन्हें ग्रामों को ही अपना कार्य-क्षेत्र बना कर अधिक समय इसी कार्य के लिए देना चाहिए। ग्रामों का कार्य ऐसा है कि वहाँ केवल भाषण दे देने से ही काम न चलेगा, बल्कि कार्यकर्ताओं को ग्रामों में ही अपना केन्द्र बना कर और वहीं अधिक समय रह कर कार्य करना पड़ेगा। इन अवैतनिक कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त कुछ वैतनिक कार्यकर्ता भी होने चाहिए, जो कि अपना सारा समय ग्रामों में ही बितावें तथा वहीं अपना कार्य-क्षेत्र बनावें। प्रत्येक तहसील में आरम्भ के लिए, एक या दो कार्यकर्ता से भी काम चल सकता है।

किन्तु स्थायी कार्य करने के लिए हमें ग्रामीण कार्यकर्ताओं को ही समस्त कार्य सँभालने के योग्य बनाना होगा। बाहर के वैतनिक या अवैतनिक कार्यकर्ता तो केवल मार्ग-प्रदर्शन कर सकते हैं, असली कार्य तो उन्हीं ग्राम-निवासी उत्साही कार्यकर्ताओं पर ही छोड़ना पड़ेगा। प्रत्येक केन्द्र में ऐसे कुछ उत्साही लोग मौजूद हैं, जिन्हें थोड़ी सी ही शिक्षा देकर योग्य कार्यकर्ता बनाया जा सकता है। इनमें उत्साह होते हुए भी उपयुक्त कार्य-प्रणाली की इतनी कमी है कि बिना कुछ विशेष शिक्षा दिए ठीक-ठीक कार्य नहीं हो सकता। अतः कॉङ्ग्रेस को एक ऐसा केन्द्र स्थापित करना चाहिए, जहाँ ग्रामीण कार्यकर्ता थोड़े ही समय में ग्राम-सङ्गठन आदि के कार्य चलाने के लिए आवश्यक बातों का साधारण ज्ञान प्राप्त कर सकें। प्रेम-महाविद्यालय तथा साबरमती-आश्रम आदि में इस प्रकार के कार्यकर्ता तैयार करने का विशेष प्रबन्ध किया गया है। यदि हो सके तो वहीं से कार्यकर्ता बुला कर अपने यहाँ के कार्यकर्ता शिक्षित किए जावें अथवा अपने कार्यकर्ता उन स्थानों को भेजे जावें। यदि ग्राम-केन्द्रों में ऐसे कार्यकर्ता रक्खे जावेंगे तो शीघ्र ही वे वहाँ के ग्रामीण भाइयों ही में स्वयंसेवक तथा अन्य कार्यकर्ता तैयार कर ग्राम-सङ्गठन के कार्य को अच्छी तरह चला सकेंगे।

ग्रामों में अगर कुछ स्थायी कार्य करना है तो वह तब तक न हो सकेगा, जब तक हमारे शिक्षित वर्ग के लोग ग्राम-जीवन को स्वीकार कर अपना निवास ग्रामों ही में न बनावेंगे। नगरों के विलास तथा आमोद-प्रमोदमय जीवन को छोड़ कर जब तक हम ग्रामों का कष्टमय जीवन स्वीकार नहीं करते, तब तक असली ग्राम-सङ्गठन और ग्रामोत्थान होना एक स्वप्न-मात्र है। बारडोली आदि में इतना दृढ़ सङ्गठन का तत्व यही है, कि वहाँ के कार्यकर्ताओं ने ग्राम-जीवन को स्वीकार कर, अपना जीवन ग्रामीण भाइयों के जीवन से बिलकुल मिला दिया था। बिना इसके ग्राम-जीवन का आमूल अथच स्थायी सुधार तथा सङ्गठन बिलकुल असम्भव है—कॉलेज छोड़ने वाले विद्यार्थियों से भी महात्मा गाँधी जी ने हाल ही में यही कहा है कि उन्हें ग्रामीण जीवन अङ्गीकार कर दरिद्र-नारायण की सेवा करनी चाहिए।

इस सम्बन्ध में, क्या मैं अपने विद्यार्थी भाइयों का ध्यान ग्रामों की ओर आकर्षित करूँ? बड़े-बड़े "कैरियरों" (Career) की आकांक्षा अपने दिलों से निकाल कर यदि वे ग्रामों की सेवा को अपने जीवन का लक्ष्य बना लें, तो ग्राम-सङ्गठन का कार्य सुगम हो जावे। यदि वे अपना सारा समय इस काम में नहीं दे सकते तो क्या इतना भी अधिक है कि वे गर्मी की छुट्टियों आदि का समय अपने अन्नदाता ग्रामीण भाइयों के बीच में बिता कर उनकी सेवा करें? यदि वे इसके उत्तर में अङ्गड़ाई लेते हुए कहें कि "इस जलती हुई धूप में कौन घर से निकले" तो फिर हमें उनसे और कुछ नहीं कहना है और तब देश की स्वाधीनता अभी आकाश-कुसुमवत् ही समझनी चाहिए।

* * *

* सहकार सेन्ट्रल बैङ्क, जबलपुर ने इस प्रकार का एक पुस्तकालय स्थापित किया है तथा सिहोरा बैङ्क में भी चालू है। —लेखक

राजपूताने के जागीरदार

[एक भूतपूर्व उच्च कर्मचारी]

(३)

ब्रिटिश भारत के ज़मींदार और ताल्लुक़ेदारों की भाँति राजपूताने के जागीरदारों को भारी कर नहीं देना पड़ता। ये लोग रियासतों को बरायनाम दो सौ, चार सौ रुपए वार्षिक दिया करते हैं, जो टोका कहलाता है। इसलिए अपनी ज़मीन, जङ्गल और ज़कात से जो कुछ भी आय होती है, वह सब जागीरदार की सम्पत्ति है। अधिकांश जागीरदारों को अपने गाँवों पर केवल यही अधिकार होता है कि भूमि-कर वसूल कर लें, अपने गाँवों में जिसको चाहें बसावें और जिसको चाहें निकाल दें। कोटा, बूँदी, झालावाड़, टोंक, धौलपुर, भरतपुर, प्रतापगढ़, बाँसवाड़ा, डूँगरपुर, सिरोही, शाहपुरा और अलवर के जागीरदारों के इतने ही अधिकार हैं। अन्य रियासतों के बड़े-बड़े जागीरदारों को कुछ दीवानी और फ़ौजदारी के अधिकार भी दिए हुए हैं। किसी जागीरदार को दूसरे दर्जे के मैजिस्ट्रेट के अधिकार हैं और किसी को तीसरे दर्जे के मैजिस्ट्रेट के। जागीरदारों के फ़ैसलों की अपीलें रियासत की अदालतों में हो सकती हैं।

दीवानी और फ़ौजदारी के मामले ठिकानों (जागीर) के 'कामदार' (प्रबन्धक) के सामने पेश हुआ करते हैं। जहाँ तक लेखक को मालूम है, किसी भी ठिकाने का कामदार कोई क़ानूनी परीक्षा पास किया हुआ नहीं है। अधिकांश कामदार केवल राजस्थानी भाषा जानने वाले, लेन-देन और वसूली के काम में चतुर तथा भली प्रकार लेखा-हिसाब करने वाले होते हैं। इसके अतिरिक्त ठिकानों में कोई निश्चित क़ानून भी नहीं है। जनता में ठिकाने के विरुद्ध कोई मुक़दमा चलाने का तो साहस ही नहीं होता, और जब दो व्यक्ति कामदार के पास न्याय-भिक्षा के लिए जाते हैं, तो उसे अपनी लेन-देन की बुद्धि के अनुसार जैसा सूझ पड़ता है, वैसा फ़ैसला कर देता है। इन फ़ैसलों में कामदार अपने ठिकाने के हित पर अधिकतर दृष्टि रखता है। यथासम्भव वह अपराधियों को जुर्माना करके छोड़ दिया करता है। कारावास का दण्ड ठिकानों में बहुत कम दिया जाता है। इस नीति के कारण ठिकानों को आर्थिक लाभ होता है और जनता में असन्तोष भी नहीं फैलने पाता। यह दण्ड-प्रणाली भारत की प्राचीन न्याय-नीति के अनुकूल है। प्राचीन भारत में भी अधिकांश अर्थ-दण्ड ही दिया जाता था। कारावास-दण्ड केवल घोर अपराध करने पर मिलता था और वह भी वैकल्पिक था। जुर्मानों के अतिरिक्त ठिकानों में कई प्रकार का शारीरिक दण्ड भी दिया जाता है। आज से बीस वर्ष पूर्व तक तो कितने ही ठिकानों में अत्यन्त नृशंस तरीक़े प्रचलित थे, परन्तु अब ये लुप्त होते जा रहे हैं। इस समय भी जो शारीरिक दण्ड दिए जा सकते हैं, वे ब्रिटिश भारत की पुलिस के लिए अनुकरणीय हैं।

जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर तथा कोटा के कुछ ठिकानों में "कट्ठा" अब तक प्रचलित है। यह भारी लकड़ी का बना हुआ एक भयङ्कर यन्त्र होता है, जिसमें अपराधी की टाँगें ख़ूब चौड़ी करके फँसा दी जाती हैं। इस प्रकार टाँगें फँसा देने पर वह आदमी बैठ नहीं सकता। "कट्ठा" में रख कर यदि कामदार साहब या "डीलाँ" भूल गए तो वह व्यक्ति कई दिन तक उस नारकी यन्त्रणा को भोगा करता है। "कट्ठा" की सज़ा अपराधी को तो दी ही जाती है, पर ठिकाने का कर देने में विलम्ब या इन्कार करने वालों को भी कभी-कभी इसमें धर दिया जाता है। यदि सूक्ष्म जाँच की जाए तो इस समय भी ६० प्रतिशतक बड़े ठिकानों में कट्ठा मिल सकता है। परन्तु इसका उपयोग शनैः-शनैः कम अवश्य हो रहा है। जोधपुर के एक ठिकाने में जब लेखक ने एक कट्ठा पड़ा हुआ देखा तो कामदार से कहा कि यह पाशविक दण्ड-विधि जारी नहीं रखनी चाहिए। उत्तर मिला कि अब कट्ठे का उपयोग कभी नहीं होता, वह केवल लोगों को त्रस्त करने के लिए तथा आज्ञाकारी बनाए रखने के लिए रख छोड़ा गया है। दूसरे ही दिन लेखक ने देखा कि एक बूढ़ा उस कट्ठे में विराजमान है। कामदार साहब ने फ़रमाया कि उस व्यक्ति के यहाँ दो साल का भूमि-कर बाक़ी है और वह इसी दण्ड का अधिकारी है। ठाकुर साहब, जो मेयो कॉलेज के पढ़े हुए हैं, उन्होंने भी इस बात का अनुमोदन किया। कट्ठे में रखने के सिवाय और भी कई प्रकार के शारीरिक दण्ड ठिकानों में दिए जाते हैं। माथे पर भारी पत्थर रखवा कर धूप में घण्टों तक खड़ा रखना ठिकानों में साधारण दण्ड समझा जाता है। कहीं-कहीं हाथ-पैर रस्सों से बाँध कर मनुष्य को वृक्ष से लटका दिया जाता है। जब असह्य वेदना से विह्वल होकर वह ठाकुर साहब की इच्छा पूर्ण करना स्वीकार कर लेता है तब उसको खोला जाता है। हमारे एक वृद्ध मित्र ने हमसे कहा था कि कोटा राज्य के एक जागीरदार ने लगभग तीस वर्ष पूर्व इस प्रकार की सज़ा दी थी। अपराध यह था कि लगान से पन्द्रह रुपए नहीं वसूल हुए थे। चार-पाँच घण्टों तक उस बेचारे किसान को एक नीम के वृक्ष से लगभग १५ फ़ुट ऊँचा लटकाए रक्खा। गाँव के स्त्री-पुरुष उस दृश्य को देख कर अकुला गए और रोने लगे। एक महिला ने करुणा से पिघल कर अपने नाक की नथ खोल कर आपजी के पास भेजी, तब उस पुरुष को खोला गया। ऐसा ही करुणापूर्ण दृश्य लाम्बा नामक ठिकाने में लेखक ने अपनी आँखों से देखा है। ठाकुर साहब की एक युवती डावड़ी (दासी) को एक सईस ने भगा कर ले जाने का प्रयत्न किया। वह इसमें असफल हुआ और पकड़ा गया। ठाकुर साहब ने आदेश किया कि उसको रस्से से बाँध कर वृक्ष से लटका दिया जावे। यह समाचार बात की बात में सब गाँव में फैल गया और लगभग दो सौ स्त्री-पुरुष तथा बच्चे उस दृश्य को देखने के लिए एकत्र हो गए। जिस समय उस नवयुवक के हाथ-पैर रस्से से जकड़े जा रहे थे तो बच्चे त्रस्त होकर अपनी माताओं से चिपक जाते थे और सब स्त्रियाँ सिसकियाँ भर रही थीं। ठाकुर साहब पास ही एक मैली सी गद्दी पर बैठे हुए हुक़्क़ा पी रहे थे। आख़िर नवयुवक को जकड़ दिया गया और रस्सा एक वृक्ष की मोटी शाखा पर फेंक कर खींचा जाने लगा। जब वह नवयुवक भूमि से लगभग पाँच फ़ुट ऊँचा उठ गया तो रस्सा शाखा से बाँध दिया गया। इस प्रकार न्याय का उद्धार करके ठाकुर साहब 'सैलाँ पधार गए' (पाख़ाने में चले गए)। इधर करुणा-प्रकृति दर्शकों का हृदय फटने लगा और कुछ लोगों ने मिल कर यह प्रस्ताव किया कि ठाकुर साहब से प्रार्थना की जावे कि ५०) रुपए दण्ड लेकर उस नवयुवक को छोड़ दें। लगभग एक घण्टे में जब ठाकुर साहब आए तो लोगों का निवेदन सुना और ५०) दण्ड के प्राप्त हो जाने पर उस अभागे युवक को छोड़ कर हुक्म दिया कि वह एक घण्टे के अन्दर ठिकाने के गाँव से निकल जावे। उस समय लेखक के एक रिश्तेदार ठिकाना लाम्बा में वकील (मुन्शी) थे और वह उनके पास गया हुआ था।

आज से लगभग छः वर्ष पूर्व ठिकाना उणियारा में भी हमने दण्ड का विचित्र ढङ्ग देखा। हमको वहाँ एक नौकरी की तलाश में जाना पड़ा था। मन्दिर की छतरी में बैठे हुए जब हमने यह दृश्य देखा तो दूसरे दिन रात में ही हम किराए का घोड़ा लेकर भाग निकले। हमको पता नहीं लगा कि उस व्यक्ति ने क्या अपराध किया था, पर उसको दण्ड इस प्रकार दिया गया था। एक जलते हुए पत्थर पर उसको खड़ा किया गया था और छोटी सी लँगोटी के सिवाय उसके शरीर के सब कपड़े उतार लिए गए थे। उसके सिर पर लगभग २० सेर गोबर का एक टाँगला (खाँची) रक्खा हुआ था। दो आदमी उसको काफ़ी मोटी लकड़ी से पैरों में मार रहे थे। उसको हुक्म था कि यदि गोबर का टाँगला गिर गया तो उसको गोबर खिलाया जावेगा। यह ग़नीमत थी कि टाँगला नहीं गिरा और उसको गोबर खाने की नौबत नहीं आई। शायद सौभाग्यवश लकड़ी मारने वाले पूर्णतया कर्तव्य-परायण नहीं थे। वाई, आढवा और कूचावन ठिकानों में अपराधियों को जूतों से पीटा जाता है। एक ठिकाने में इस कार्य के लिए विशेष प्रकार का मज़बूत और भारी जूता बनवा रक्खा है। उसको शक्ल जूते की है, पर वास्तव में है वह चमड़े की गदा। कभी-कभी ५० जूते तक की सज़ा दी जाती है। डिग्गी, बेगूँ, भाटगूँड़ा, गोदा, ईसरदा, राउतड़ा, बगड़ी साँको, जतन-

बड़, सवाड़, बलवन, बँबूल्या आदि ठिकानों में भी जूतों से मारना जारी है, पर साधारण जूते का ही उपयोग होता है। सुना है कि साँको की विधवा ठकुराणी, जो शिक्षित महिला हैं, उन्होंने शारीरिक दण्ड देना बन्द करवा दिया है।

ठिकानों की दो विशेषताएँ हैं,—अनेक प्रकार के कर और मनमानी बेगार। जागीरों में भूमि-कर भी निश्चित नहीं है। जितना सम्भव होता है, किसानों से चूस लिया जाता है। वर्ष के अन्त में जो लगान बढ़ा दे, उसी को ज़मीन जुतवा दी जाती है। सीकर, खेतड़ी, चोमू और उणियारा जैसे बहुत बड़े ठिकानों में तो ऐसा नहीं होता, परन्तु बीच के ठिकानों में ऐसा अधिक होता है। अपनी आय को बढ़ा कर ऐश्वर्यशाली बनने की धुन में ठाकुर लोग उचित और अनुचित को भूल जाते हैं। बिसाऊ, पोखरण और कोयला जैसे ठिकानों में भी नज़राना लेकर ज़मीन जुतवाने की प्रथा जारी है। भूमि-कर के सिवाय ठिकानों में अन्य कई कर प्रचलित हैं। लगभग १० वर्ष पूर्व बिजोलिया ठिकाने में ८६ कर लिए जाते थे। इनसे तङ्ग आकर ही वहाँ की जनता ने श्री० विजयसिंह जी पथिक के योग्य नेतृत्व में सत्याग्रह संग्राम आरम्भ किया था और निरन्तर तीन वर्ष तक अन्य कर तो क्या, ज़मीन का लगान तक नहीं दिया था।* बिजोलिया के समान अन्य ठिकानों में कर नहीं है, परन्तु तो भी सात या आठ प्रकार के कर तो साधारण सी बात है। राजपूताने में ऐसी कई जातियाँ हैं, जिनमें विधवा-विवाह परम्परा से प्रचलित है। जब कभी ऐसी विधवा विवाह कर लेती है, तो उसके पति से ठिकाने वाले कर लिया करते हैं। इस कर का परिमाण प्रायः वर की साम्पत्तिक स्थिति पर निर्भर है। कई ठिकानों में 'चरख़ा-कर' और 'करघा-कर' भी लिया जाता है। इससे पाठकों को यह न समझ लेना चाहिए कि राजपूताने के जागीरदार स्वदेशी आन्दोलन के विरोधी हैं और प्रचार को रोकने के लिए कर लगाया गया है। चरख़ा और करघा राजपूताने में पहिले से ही ख़ूब प्रचलित था और ये कर परम्परागत हैं। भैंस, बकरी, ऊँट और घोड़ा आदि पशुओं पर भी कर लिया जाता है। खटीक (क़साई) को या तो कर देना पड़ता है या मुफ़्त में मांस। यदि किसी के यहाँ कोई भोज हो तो उसको ठिकाने के कुछ नौकरों को खाना खिलाना पड़ता है। यह भी एक प्रकार का टैक्स ही है। जोधपुर के ठिकानों में चमारों को वर्ष में एक बार एक अच्छा जोड़ा बना कर जागीरदार को भेंट करना पड़ता है, जो उसके तथा परिवार के काम आता है।

ठिकाने के गाँवों में रहने वालों को सब से बड़ा दुःख है बेगार। इस व्याधि से जनता में कोई मुक्त नहीं है। किसान, व्यापारी, मज़दूर, ब्राह्मण—सबको किसी न किसी काम में फँसना पड़ता है। ये लोग जागीरदार के गाँव में रहते हैं, इसलिए वह इनसे बेगार करवाना अपना अधिकार समझता है। किसान की खेती चाहे बरबाद हो जावे, परन्तु जागीरदार के लिए उसी समय उसको अपने बैल, गाड़ी, आदमी बेगार में देने पड़ते हैं। इसका एवज़ उसको कुछ नहीं दिया जाता। यदि ठाकुर साहब भले आदमी हुए तो बैलों के वास्ते कुछ घास और आदमियों के वास्ते जुवार का तीन पाव आटा कभी-कभी दे देते हैं, वरना नहीं। कई बार देखा गया है कि किसान की फ़सल खेत में पड़ी हुई है और उसकी गाड़ी ठिकाने की बेगार में लगी हुई है। किसान को चाहे १००) की हानि हो जावे, परन्तु जागीरदार ॥) प्रति दिन किराया ख़र्च करके दूसरी गाड़ी नहीं मँगवाता। कभी-कभी किसान की ज़मीन पड़ती रह जाती है और उसके बैल ठिकाने की बेगार में लगे रहते हैं। विशेष अवसरों पर खाना बनाने और परोसने में ब्राह्मणों से भी बेगार ली जाती है। कुछ ठिकाने ऐसे भी हैं, जहाँ ब्राह्मणों से दिन भर खाना बनवा कर उनको एक समय भी भोजन नहीं करवाया जाता। कुचामण ठिकाने में इस प्रकार की बेगार अब भी ली जाती है। यदि वहाँ कोई मेहमान जाता है तो उसका भोजन बनाने के लिए गाँव में कोई ब्राह्मण बेगार बुलवा लिया जाता है, पर उसको सख़्त हिदायत होती है कि खाना घर जाकर खावे। पाठकों को यह जान कर और भी आश्चर्य होगा कि कुचामण का कामदार बी० ए० है और वहाँ के ठाकुर साहब मैंयो कॉलेज के स्नातक तथा राजपूताने के प्रसिद्ध और उन्नत जागीरदार आपजी ओङ्कारनाथ सिंह जी के नाती हैं। आपजी ओङ्कारनाथसिंह जी कोटा राज्य में पलायथा के जागीरदार हैं। इनके गाँवों में न बेगार है और न लगान के सिवाय अन्य कर। वे ख़ुद उच्च शिक्षित सज्जन हैं और उनके आधे दर्जन पुत्रों में से पाव दर्जन एम० ए० हैं। एक लड़का महाराजा जयपुर के साथ इङ्गलैण्ड में शिक्षा प्राप्त करने भी गया था। आप छोटे से जागीरदार हैं, परन्तु अपने गाँवों में स्कूल, अस्पताल, पञ्चायत, सफ़ाई आदि सबका प्रबन्ध कर रक्खा है। गाँव के कई विद्यार्थियों को वज़ीफ़े देकर बाहर भी पढ़ाते हैं। ऐसे उन्नत और शिक्षित सज्जन के नाती की यह दशा कि भोजन बेगार में बनवाएँ—कितनी शोचनीय बात है। अधिकांश ठिकानों में न नाई को हजामत की बनवाई दी जाती और न धोबी को कपड़ों की धुलवाई। रङ्गरेज़ बेगार में कपड़ा रँगता है और चमार बेगार में लकड़ी काट कर लाते हैं, कवेलू बनाते, मकानों पर छप्पर डालते, खाइयाँ भरते और ख़ाली करते हैं। ठिकानों में जब मेहमान आते हैं तो गाँव में से खाटें और पलङ्ग बेगार में मँगवा लिए जाते हैं और इसी प्रकार दूध आता है। जब ठाकुर साहब के घर में श्राद्ध होते हैं तो गाँव भर के बच्चों को दूध या दही नहीं मिल सकता। सब ठाकुर साहब के गढ़ में पहुँच जाता है। कोई पैसा माँगने का दुस्साहस तो कर ही नहीं सकता और जो करे भी तो उसकी जूतों से ख़बर ली जाती है। जब ठिकानों में विवाह होता है तो गाँव वालों को बड़ा कष्ट दिया जाता है। महीनों पहिले से तो बेगार में आटा पिसवाना आरम्भ हो जाता है। ठाकुर साहब की शादी के उपलक्ष में गाँव की स्त्रियों को कई मास तक रोज़ कई सेर आटा पीसना पड़ता है। विवाह के अन्य कार्य के लिए भी गाँव के आदमियों से काम लिया जाता है। इतना ही नहीं, विवाह का व्यय भी अपनी जागीर के गाँवों के मत्थे ही मढ़ा जाता है। सब किसानों और व्यापारियों से न्योते के नाम पर धन एकत्र किया जाता है, जो कभी-कभी विवाह के ख़र्च से भी अधिक होता है।

परन्तु सब प्रकार के कर और बेगार समान रूप से सब जागीरों में प्रचलित नहीं है। कहीं कम है और कहीं अधिक। कुछ ठिकाने ऐसे भी हैं, जहाँ बेगार तथा अन्य अनुचित कर उठा दिए गए हैं, परन्तु ऐसे उन्नत ठिकानों के नाम उँगलियों पर गिने जा सकते हैं। कितने ही ठाकुर और कवँर अब उच्च-शिक्षित होते जाते हैं, कई विदेश-यात्रा भी कर चुके हैं, समय की गति से भी सब अनभिज्ञ नहीं हैं। तो भी ठिकानों की दशा शीघ्रता के साथ सुधरती हुई दिखाई नहीं देती। रियासतों से जो कर हटा दिए गए हैं, वे ठिकानों में जारी हैं। राज्य ने बेगार बन्द कर दिया है, परन्तु ठिकाने ले रहे हैं। शिक्षित जागीरदारों के यहाँ ऐसा होना बड़ी लज्जा की बात है। प्रायः देखा गया है कि जागीरदार अपने जघन्य स्वार्थ को उस समय त्यागते हैं, जब या तो रियासत का उन पर दबाव पड़ता है या जनता अकुला कर सत्याग्रह करती है। परन्तु बुद्धिमत्ता इसी में है कि काल-गति को देख कर जागीरदार स्वयं अपनी सत्ता को शनैः-शनैः त्यागते जावें। इसमें उनका और उनकी सन्तानों का हित है। वर्तमान युग लोकसत्ता का युग है। जनता की शक्ति ने ज़ार, क़ैसर, ख़लीफ़ा, शाह और अल्फ़ान्सों को दर-दर का भिखारी बना दिया, तो दस-पाँच गाँवों के जागीरदारों की क्या हस्ती है? आपजी ओङ्कारनाथसिंह जी, ठाकुर देवीसिंह जी, ठाकुर कल्याणसिंह जी, ठाकुर चैनसिंह जी आदि सुशिक्षित, उन्नत, अनुभवी तथा राजमान्य जागीरदारों को इस ओर बढ़ना चाहिए और अपने भूले भाइयों को चेताना चाहिए। यदि अन्य कूपमण्डूक तथा मूर्ख जागीरदारों को भाँति ये भी अपने-अपने स्वार्थों की सिद्धि में ही लगे रहे तो इनकी सत्ता और शिक्षा से क्या लाभ?

* * *

* गत २१ अप्रैल से बिजोलिया में फिर सत्याग्रह आरम्भ हो गया है और अधिकारी-वर्ग दमन-नीति का आश्रय लेकर उसे कुचल डालना चाहते हैं। उस समय जिन शर्तों पर समझौता हुआ था, उनका सम्यक पालन अभी तक नहीं हुआ है।

— सं० 'भविष्य'

भारत-गान

[कविवर श्री० आनन्दिप्रसाद जी श्रीवास्तव]

स्वर्ण सा सुन्दर भारत देश,
इसमें सुन्दर-सुन्दर वन हैं,
सुन्दर से सुन्दर उपवन हैं,
गौरवमय तरुमय गिरिगन हैं,
सरिता हैं कल, त्रिविध पवन हैं,
इसका सुन्दर वेश।

❀

अपरिमेय है अन्न यहाँ पर,
यह है मीठे फल का आकर,
फुलवारी है परम मनोहर
इसमें औषधि परम स्वास्थ्यकर,
नहीं किसी को क्लेश।

❀

इससे ज्ञान कहाँ न गया है,
इसमें सब से अधिक दया है,
इसका प्यार सदैव नया है,
क्षमावान यह पूर्णतया है,
इसमें पाप न लेश।

❀

हैं चौंसठ करोड़ इसके कर
शत्रु-जनों को यह भीषणतर,
कँपती पृथ्वी इससे थर-थर,
पर यह जग की विष-अशान्ति-हर
मानो स्वयं महेश।

❀

जग ज्ञानालोकित करता है,
उसमें नित्य प्रभा भरता है,
यही तारता है, तरता है,
मोक्षोद्देश्य हृदय धरता है,
चरमोन्नत हद्देश।

* * *

लाहौर का एक आदर्श परिवार

लाहौर की सुप्रसिद्ध नेत्री श्रीमती लाडोरानी ज़ुतशी अपनी तीन कन्याओं सहित—

कुमारी मनमोहिनी ज़ुतशी, एम० ए० ; कुमारी जानकी ज़ुतशी, एम० ए० ; कुमारी श्यामा ज़ुतशी, एम० ए०—
ये सारी देवियाँ गाँधी-इर्विन समझौते के कारण जेल से मुक्त हुई थीं।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

प्रतिभाशाली उर्दू पत्र-सम्पादकों एवं सञ्चालकों की चित्रावली

श्री० मुहम्मद इसहाक़, स० सम्पादक "जाम जहाँनुमा"

श्री० मुशीर अहमद अलवी, सम्पादक "तनक़ीद"

श्री० रफ़ी अजेबी, सञ्चालक "कैफ़"

स्व० हकीम बरहम, सम्पादक "मुशरक़"

श्री० सालिक व महर सम्पादक "इन्क़िलाब"

श्री० वाहिदा, सम्पादक "निज़ामुलमशायख़"

श्री० मुहम्मद मन्ज़ूर फ़ाज़िल, सम्पादक "बेदार"

श्री० बशीर अहमद, सम्पादक "अज़ीज़"

श्री० कोड़ेमल आनन्द, सम्पादक "हमदर्द तर्म"

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

शेर-बकरी के एक घाट पर पानी पीने की लोकोक्ति तो पाठक प्रायः सुनते हो होंगे; किन्तु इस चित्र में पाठक देखेंगे, अमेरिका के एक सज्जन, जिन्हें गिलहरियाँ पालने का शौक़ है—उन्हें कुतिया का दूध पिलवाते हैं। इस चित्र में यही दृश्य अङ्कित है। अमेरिकन सज्जन की कुतिया बड़े प्रेम से गिलहरियों को दूध पिला रही है।

माथरे क्षत्रिय जाति के एक होनहार नवयुवक—श्री० गजामन बी० माथरे, ए० आर० आई०, बी० ए० (लन्दन), जो १४वीं मई को विलायत से निर्माण-कला (Architecture) के विशेषज्ञ होकर लौटे हैं।

श्री० रियोलिट (Mr. Rhyolite) नामक एक अमेरिकन इञ्जीनियर की कारीगरी का विचित्र नमूना—जिसने शराब और ताड़ी की बोतलों से ही अपना मकान तैयार किया है। छत और बरामदों को छोड़ कर, सारा मकान बोतलों का ही बना है। कहा जाता है, इसमें कुल १३,००० बोतलें लगी हैं और सारे संसार में अपने ढङ्ग का यह अनोखा मकान है।

चीन की सुप्रसिद्ध कलाविद्—कुमारी कान त्से लान (Miss Kwan Tse Lan) जो चित्रकारी और रङ्गसाज़ी के कार्य में अपना सानी नहीं रखतीं।

दाहिने, कॉमरेड दिलपालसिंह और बाएँ, ब्रह्मचारी कृष्णचन्द्र त्यागी—ये दोनों युवक मेरठ ज़िले के उत्साही कार्यकर्त्ता हैं और देश-सेवा के पुरस्कार-स्वरूप जेल-यात्रा भी कर चुके हैं।

पण्डित कृपाराम मिश्र 'मनहर'—आप गढ़वाल ज़िले के प्रसिद्ध त्यागी कॉङ्ग्रेस कार्यकर्त्ता हैं।

और इनका एक-मात्र लक्ष्य एशियाई महिलाओं का एक सुदृढ़ एवं प्रभावशाली सङ्गठन करना है ।

हमको तमाम उम्र यह अरमान हो रहा, क्योंकर निकालता है कोई दिल की आरज़ू।
मैं क्या बताऊँ, क्या कहूँ, क्या जानते नहीं; वह मुझसे पूछते हैं, मेरे दिल की आरज़ू॥

दिल

क्यों वह नज़र लड़ा के तग़ाफ़ुल[1] से काम लें,
क्यों दिल के साथ-साथ मिटे दिल की आरज़ू?
दुनिया में अब तुम्हें यही क्या काम रह गया,
इस दिल की आरज़ू, कभी उस दिल की आरज़ू?
करते नहीं वह क़त्ल मुझे इस ख़्याल से,
निकले न दम के साथ कहीं दिल की आरज़ू।
पाऊँगा फिर न मैं कभी इसको निकाल कर;
फिर-फिर के दिल ही दिल में रहे दिल की आरज़ू।
हमको तमाम उम्र यह अरमान ही रहा,
क्योंकर निकालता है, कोई दिल की आरज़ू?
ऐसा कोई नहीं, जिसे हसरत कोई न हो,
वह दिलरुबा[2] हैं उनको भी है दिल की आरज़ू।
ऐसा न हो कि पूछ के वह शर्मसार[3] हों,
मैं क्या बताऊँ क्या है, मेरे दिल की आरज़ू।
घर चाहिए कोई इसे, रहने के वास्ते,
क्यों आरज़ू को हो न, मेरे दिल की आरज़ू?
जिस ख़ूबरू[4] का ख़्वाब में आना मुहाल[5] था,
पहलू में उसको लाई मेरे दिल की आरज़ू।

—"नूह" नारवी

इस आरज़ू में जान भी अपनी निकल गई,
पूरी मगर हुई न कभी दिल की आरज़ू।
बाहें गले में डाल के कहता है यह कोई,
दिल से निकाल, हो जो तेरे दिल की आरज़ू।
ऐ हमनशीं[6] ख़्याल यह तेरा फ़ुज़ूल है,
वह और दिल से पूछें, मेरे दिल की आरज़ू।
वीरां[7] हो यह मकान न ऐसा ख़ुदा करे,
रह जाय दिल ही दिल में मेरे दिल की आरज़ू।
जिस दिल से फिर गई है तुम्हारी निगाहे-लुत्फ़[8],
अब फिर हुई है इसको, उसी दिल की आरज़ू।
मैं क्या बताऊँ, क्या कहूँ, क्या जानते नहीं,
वह मुझसे पूछते हैं, मेरे दिल की आरज़ू।
ऐसे कहाँ नसीब, जो देखें बहारे-गुल[9],
कुञ्जे[10] क़फ़स[11] है और अनादिल[12] की आरज़ू।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—ग़फ़लत, २—दिल ले जाने वाला, ३—लज्जित, ४—अच्छी सूरत वाला, ५—कठिन, ६—साथी ७—उजड़ा, ८—कृपा-दृष्टि, ९—बसन्त ऋतु, १०—कोना ११—पिंजड़ा, १२—बुलबुल,

क़ातिल

वह क़त्ल कर गया, जो यह बरबाद कर गई,
क़ातिल से कम न था, मेरे क़ातिल की आरज़ू।

—"नूह" नारवी

पूरी कहाँ हुई दिले-बिस्मिल की आरज़ू,
अब तक उसे है ख़ञ्जरे-क़ातिल की आरज़ू।
ज़र्रे हमारी ख़ाक के उड़ते हैं हर तरफ़,
क्या थी हवाए दामने-क़ातिल की आरज़ू।
अल्लाह रे कुश्तगाने[13] मुहब्बत के हौसले,
जाती नहीं है मर के भी, क़ातिल की आरज़ू।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

केसर की क्यारी
(पहिला हिस्सा)

'भविष्य' के विगत खण्ड में केसर की क्यारी शीर्षक के अन्तर्गत जितनी कविताएँ प्रकाशित हुई हैं, पाठकों के अनुरोध के कारण उनका एक सुन्दर संग्रह इसी नाम से शीघ्र ही प्रकाशित होगा और बहुत सी

नई कविताएँ भी

जोड़ दी जावेंगी। इस पुस्तक का सम्पादन कविवर 'बिस्मिल' दूसरी बार करेंगे, इसीसे पुस्तक की उत्तमता का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय होगी, पुस्तक सजिल्द प्रकाशित की जायगी। मूल्य लगभग २) रु० होंगे। शीघ्र ही अपना ऑर्डर रजिस्टर करा लीजिए, नहीं तो पछताना पड़ेगा।

—व्यवस्थापक 'भविष्य'

महफ़िल

देखा तो यह भी अर्शए[14] महशर[15] से कम नहीं,
मुद्दत से थी हमें तेरी महफ़िल की आरज़ू।

—"नूह" नारवी

लाई है आज सारे ज़माने को खींच कर
कूचे की आरज़ू, तेरी महफ़िल की आरज़ू।
सब कह रहे हैं यह, तेरी महफ़िल में बैठ कर,
अब जीते जी न हो किसी महफ़िल की आरज़ू।
दुनियाए बेसबात[16] की महफ़िल तो देख लो,
बाक़ी है दिल में हश्र के महफ़िल की आरज़ू।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१३—प्रेम में मरे हुए, १४—मैदान, १५—क़यामत, १६—क़ायम न रहने वाली,

साहिल

उभरेंगे हम न बहरे[17] मुहब्बत में डूब कर,
वह और हो हैं, जिनको है साहिल की आरज़ू।
ऐ "नूह" दिल लगी मेरी तूफ़ान ही सही,
क्या बहरे-ग़म में हो मुझे साहिल की आरज़ू।

—"नूह" नारवी

दरियाए-ग़म में और है, क्या दिल की आरज़ू,
कश्ती की आरज़ू, कभी साहिल की आरज़ू।
दरियाए-ग़म में डूबने वाले को बे-सबब,
साहिल के सिम्त[18] ले चली साहिल की आरज़ू।
जब डूबना लिखा हो हमारे नसीब में,
तो बहरे-ग़म में क्या करें साहिल की आरज़ू?
दरियाए-इश्क़ में है जिसे डूबने को चाह,
होती नहीं उसे कभी साहिल की आरज़ू।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

महमिल

क्यों अब तुम्हें नहीं है मेरे दिल की आरज़ू,
लैला[20] को होनी चाहिए महमिल[21] की आरज़ू।

—"नूह" नारवी

सुनते हैं हम कि क़ैस[22] को मजनू बना गई,
महमिल की और लैलिए महमिल की आरज़ू।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

मञ्ज़िल

ऐ रहरवाने[23] इश्क़ यह क्या इज़तिराब[24] है,
मञ्ज़िल पर आके है तुम्हें मञ्ज़िल की आरज़ू।
रुकने से तेरे मुझको यह मालूम हो गया,
पाए-तलब[25] तुझे नहीं मञ्ज़िल की आरज़ू।
आगे क़दम बढ़ाओ न ऐ रहरवाने-इश्क़,
बरबाद कर न दे तुम्हें मञ्ज़िल की आरज़ू।
देता है सब को तौसने[26] उम्रे-रवाँ[27] सबक़,
हर वक़्त इसको रहती है मञ्ज़िल की आरज़ू।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

* * *

१७—समुन्दर, १८—किनारा, १९—तरफ़, २०—जिस पर मजनू आशिक़ था, २१—परदा, २२—मजनू का असली नाम, २३—बटोही, २४—बेचैन, २५—पाँव, २६—घोड़ा, २७—चलने वाला।

कुछ चुनी हुई उत्तमोत्तम पुस्तकों की संक्षिप्त सूची

चन्द्रभागा (ब० बु० हि०) १॥)
चन्द हसीनों के खुतूत (बो० स० पु०) ॥।)
चित्रशाला (दो भाग) (गं० पु० मा०) ३), ४)
चित्रावली (हिं० ग्रं० र०) ॥=)
चौबे का चिट्ठा (हिं० ग्रं० र०) १)
जन्मभूमि (दो भाग) (ड० ब० ऑ०) १)
अब सूर्योदय होगा (गं० पु० मा०) १), १॥)
जयमाल (हिं० पु० भं०) ।=)
जर्मन जासूस की राम-कहानी (प्र० पु०) ।-)
ज़हर का प्याला (ड० ब० ऑ०) १)
टाम काका की कुटिया (इं० प्रे०) २॥)
टॉलस्टॉय की कहानियाँ (हिं० पु० ए०) १)
डाकघर (इं० प्रे०) ।-)
तारा (" ") १)
देवी पार्वती (गं० पु० मा०) १), १॥)
देहाती समाज (इं० प्रे०) २)
नवनिधि (हिं० ग्रं० र०) ॥।)
नवनिकुञ्ज (हिं० पु० ए०) १)
धोखे की टट्टी (इं० प्रे०) ॥)
नन्दनभवन (पा० एँ० को०) ॥=)
निर्मला (चाँ० का०) २॥)
नानी की कहानी (हिं० पु० ए०) ॥)
पतिता की आत्मकथा (चाँ० बु० डि०) १॥)
पति-पत्नी प्रेम (ना० दा० स०) ॥।)
पतिव्रता मनसा (एस० आर० बेरी) ॥)
परिणीता (इं० प्रे०) १)
पञ्चपल्लव (" ") १॥)
पवित्र पापी (गं० पु० मा०) ३), ३॥)
पण्डित जी (इं० प्रे०) १॥)
पाथेयिका (व० भा० ग्रं०) १)
पाप-परिणाम (ह० कं०) १)

पारस्योपन्यास (इं० प्रे०) १॥)
पोतकी माला (" ") ॥।)
पौराणिक कथाएँ (हिं० पु० ए०) २॥=)
प्रतिभा (हिं० ग्रं० र०) १।)
प्राणनाथ (चाँ० का०) २॥)
प्रतिशोध (हिं० पु० ए०) १॥।)
प्रिया (" ") १॥=)
प्रेम का फल (ब० बु० हि०) ।=)
प्रेमकान्त (मतवाला) १॥)
प्रेमपचीसी (हिं० पु० ए०) २॥), २॥।)
प्रेमपथ (हिं० पु० भं०) २)
प्रेम-प्रमोद (चाँ० का०) २॥)
प्रेम प्रसून (गं० पु० मा०) १=), १॥=)
प्रेम पूर्णिमा (हिं० पु० ए०) २)
प्रेम आश्रम (" ") ३॥)
प्रेमिका (हिं०पु०भं०) २॥)
प्रोत्साहन (हिं०पु०ए०) ॥-)
फ़व्वारा (इं० प्रे०) १)
बड़ी दीदी (" ") १)
बड़े घर की बड़ी बात (ड० ब० ऑ०) १)
बलिदान (प्र० पु०) २)
बहता हुआ फूल (गं० पु० मा०) २॥), ३)
बिदा (गं० पु० मा०) २॥)
भिखारिणी (बी० स० पु०) ३)
मझली दीदी (इं० प्रे०) १)
मणिमाला (इं० प्रे०) २॥)
मधुकरी (मतवाला) ३)
मिस्टर व्यास की कथा (गं० पु० मा०) २॥), ३)
मुसकान (सा० मं०) १)
मूर्खराज (चाँ० का०) २)
रत्नदीप (इं० प्रे०) २)
रङ्गभूमि (गं० पु० मा०) ५), ६)
रङ्ग-महल-रहस्य (बी० स० पु०) ४॥)
राजकुमार कुणाल (ख० वि० प्रे०) १।)
राजर्षि (इं० प्रे०) १।)
रॉबिन्सन क्रूसो (" ") १॥)
" " (रा० ना० ला०) ७)

रावण राज्य (ड० ब० ऑ०) २॥।)
रूपनगर की राजकुमारी (लक्ष्मी० पु०) ३)
वज्राघात (प्र० पु०) २॥)
वनकन्या (ब० बु० हि०) ।)
वरदान (ग्रं० भं०) १॥।), २।)
वाराङ्गना-रहस्य (पा० एँ० को०) ५)
विचित्र वधू रहस्य (इं० प्रे०) १)
विचित्र योगी (गं० पु० मा०) १), १॥)
विधवा आश्रम (ना० दा० एँ० सं०) १॥)
विधाता का विधान (हिं० ग्रं० र०) २॥), ३)
विमाता (हिं० पु० भं०) २॥)
विजया (गं० पु० मा०) १॥), २)
विषाक्त प्रेम (पु० भं०) १।)
वेनिस का बाँका (का० मा० पु०) १)
वेदना (चाँ० बु० डि०) २॥)
शशाङ्क (इं० प्रे०) ३)
शशिप्रभा (वै० प्रसाद) २॥)
शाही चोर (ना० दा० सं०) ।)
शाही जादूगरनी (ना० दा० सं०) १॥), २)
शाही डाकू (ना० दा० सं०) १॥), १॥।), २)
शाही लकड़हारा (ना० दा० सं०) २), २।), २॥)
शीलादेवी (इं० प्रे०) २)
शान्ति कुटीर (हिं० ग्रं० र०) १॥।)
शीशमहल (वं०प्रे०) २), २॥)
शेक्सपियर कथागाथा (रा० नारायण ला०) १॥)
षोड़शी (इं० प्रे०) १।)
सर्वस्व समर्पण (हिं० पु० ए०) ४)
सुप्रभात (ना० दा० सं०) १॥), २।
सेवासदन (हिं० पु० ए०) २॥), ३)

सोने की प्याली (ड० ब० ऑ०) ॥।)
सोने की राख (ड० ब० ऑ०) ॥)
हवाई क़िला (व० प्रे०) १॥), २)
हृदय का काँटा (त०भा०) १॥)
हृदय की प्यास (गं० पु० मा०) १॥), २)
हेमचन्द्र (ड० ब० ऑ०) १।), १॥=)

स्व० बङ्किमचन्द्र चटर्जी के उपन्यास

आनन्द मठ (हिं० पु० ए०) ॥।)
इन्दिरा (") ।≡)
कपाल कुण्डला (ख० वि० प्रे०) ॥=)
देवी चौधरानी (हिं०पु०ए०) ॥।)
मृणालिनी (ख० वि० प्रे०) ॥=)
विष-वृक्ष (हिं० पु० ए०) १)
राजसिंह (ह० दा० कं०) २)
युगलाङ्गुलीय (ख० वि० प्रे०) =)
सीताराम (पु० भं०) १॥)
बङ्किम निबन्धावली (हिं० ग्रं० र०) ॥।=)
लोक-रहस्य (हिं० पु० ए०) ॥=)
" " (ह० दा० कं०) १।)

नाटक और प्रहसन

(१) पौराणिक, ऐतिहासिक और सामाजिक

अचलायतन (गं० पु० मा०) ॥।), १)
अज्ञातवास (ब० बु० डि०) १)
अत्याचार (ड० ब० ऑ०) ॥।)
अञ्जना (हिं० ग्रं० र०) १।)
अन्धेरनगरी (भारतेन्दु) ।-)
अशोक (हिं० पु० भं०) १।)

उस पार (हिं० ग्रं० र०) १=)
कपटी मुनि (ब०बु०डि०) ।)
कर्बला (गं० पु० मा०) १॥,) २)
कर्मवीर (व्या० सा० मं०) १॥)
कलियुग आगमन (ड० ब० ऑ०) ≡)
काठ का उल्लू (ड० ब० ऑ०) ॥।)
कामना (हिं० सा० भं०) १)
काशी विश्वनाथ (ड० ब० ऑ०) ॥।)
किन्नरी (सा० ग्रं० मा०) १)
किङ्गलियर (ड० ब० ऑ०) ॥।)
कृष्णाकुमारी (गं० पु० मा०) १॥)
कृष्णार्जुन युद्ध (प्र० पु०) ॥=)
ख़ाँजहाँ (गं० पु० मा०) १=), १॥=)
ग़रीब हिन्दुस्तान (ड० ब० ऑ०) ॥।)
गौतम बुद्ध (ड० ब० ऑ०) १)
घोटाला पर घोटाला (ड० ब० ऑ०) ।)
घोंघा बसन्त (") ।)
चन्द्रगुप्त (हिं० ग्रं० र०) १)
चार बेचारे (बी० स० पु०) १॥)
चाँद बीबी (सा० म० लि०) १।), १॥।)
चिरकुमार सभा (हिं० ग्रं० र०) १।), २)
छत्रपति शिवाजी (हिं० क० त० प्र०) १।)
जनक नन्दिनी (व्या० सा० मं०) २)
जयद्रथ-बध (गं० पु० मा०) ॥।=)
झाँसी-पतन (ड० ब० ऑ०) ॥)
ठोंक-पीट कर वैद्यराज (हिं० ग्रं० र०) ।=)
डाकघर (इं० प्रे०) ।-)
तिलोत्तमा (मैथिली०) ॥)
दानी कर्ण (ड० ब० ऑ०) १)

अजी सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

आम लोगों का यह ख़याल है कि कानपुर का दङ्गा पुलिस की बदौलत हुआ—अर्थात् पुलिस ने दङ्गा रोकने की कोई कोशिश नहीं की। परन्तु अपने राम इस बात की एक मात्रा भी सही नहीं मानते। पुलिस और दङ्गा करावे—हरे ! हरे ! पुलिस दङ्गा करा ही नहीं सकती। जो शान्ति और रक्षा का काम करता हो, वह दङ्गा कैसे करा सकता है ! उसे दङ्गा कराने की युक्ति ही नहीं मालूम। यदि केवल इस बात से, कि पुलिस ने दङ्गा रोकने का प्रयत्न नहीं किया, यह अनुमान लगाया जाय कि पुलिस ने ही दङ्गा कराया—तो यह बात भी ग़लत है। पुलिस ने दङ्गा रोकने की बहुत कोशिश की। सच मानिए, यदि पुलिस दङ्गा रोकने की कोशिश न करती, तो आप समझते हैं, क्या हो जाता ? हिन्दुस्तान के नक़्शे में से कानपुर का नामोनिशान मिट जाता। यह पुलिस के प्रयत्न का ही फल है, कि इतने बड़े दङ्गे में कुल चार-पाँच सौ आदमी मरे और सवा चार सौ के लगभग मकान नष्ट हुए। यदि पुलिस प्रयत्न न करती तो कानपुर में आदमी के नाम चिड़िया का बच्चा और मकान के नाम चील का घोंसला भी न बचता। सो जनाब, चार-पाँच सौ आदमियों का मर जाना कोई बड़ी बात नहीं। प्लेग तथा हैज़े में तो इनसे कहीं अधिक मनुष्य मर जाते हैं और भूकम्प आने से इससे कहीं अधिक मकान नष्ट हो जाते हैं। यह सब कुछ नहीं, बाज़ा वर्ष ही मनहूस होता है। यह सम्वत् बहुत ख़राब है। थोड़ी देर को मान भी लिया जाय कि कानपुर में आग दङ्गाइयों ने लगाई; परन्तु बाहर देहातों से जो गाँव के गाँव फुँक जाने के समाचार आ रहे हैं, सो क्या वे सब झूठ हैं ? और यदि सच हैं तो वहाँ किसने आग लगाई ? इसी से अपने राम की यह धारणा हुई है, और अभी हाल ही में हुई है, कि यह सब सरासर ग़लत है। यह जो कुछ हुआ, सब होनहार था। जहाँ मि० सेल से कलक्टर, मि० बेरन जैसे एडिशनल मैजिस्ट्रेट, मि० रोजर्स जैसे पुलिस-सुपरिन्टेण्डेण्ट तथा मि० ग़ुलाम हुसेन जैसे कोतवाल हों, वहाँ दङ्गा हो जाना कोई मज़ाक़ नहीं था। सेल साहब इतने शान्तिप्रिय आदमी—ओफ़ भूल गया—आदमी नहीं, अङ्गरेज़, साहब ! हाँ तो साहब हों वहाँ दङ्गा हो जाय ! उनकी शान्तिप्रियता का एक मँझला नमूना यह है कि दङ्गे के समय बेचारे अपने बँगले के बाहर नहीं निकले। निकलते भी तो कैसे ? शान्तिप्रिय साहब ठहरे—दङ्गे की सूरत से नफ़रत। ऐसी दशा में अपनी आँखों से दङ्गा कैसे देखते, कहीं जी मचलाने लगता, या तबीयत बिगड़ जाती तो क्या होता ? और भी बेजा होता। यदि दङ्गाइयों को पता लग जाता कि कलक्टर साहब बीमार हो गए, तो उनका साहस और भी बढ़ जाता। इसलिए उस समय उन्हें अपना चित्त ठिकाने रखने की अत्यन्त आवश्यकता थी। इसके अतिरिक्त एक ख़तरा और भी था। यदि उन पर कोई आक्रमण कर बैठता और उनके चोट-चपेट लग जाती अथवा—यदि भविष्य में फिर कभी इस प्रकार का अवसर पड़े तो ईश्वर ऐसा कदापि न करे और सेल साहब जब तक गङ्गा-यमुना में पानी रहे तब तक कच्छपावतार की तरह जल-बिहार किया करें, यदि उनकी जान चली जाती तो क्या होता ? कानपुर अनाथ हो जाता। तब और भी ग़ज़ब होता ! अथवा उनके चोट लगती तो उन्हें क्रोध आता। उस क्रोध में यदि वह तोपें लगवा कर कानपुर उड़वा देते तो क्या होता ? इसीसे अपने राम का यह फ़ैसला है कि सेल साहब ने बड़ी बुद्धिमत्ता की, जो गङ्गा के तट पर (अपने बङ्गले में) बैठे ईसा मसीह से दङ्गे के शान्त हो जाने की प्रार्थना करते रहे। और उनकी प्रार्थना स्वीकृत भी हुई। दङ्गा शान्त हुआ और फिर हुआ और क्यों न होता ! सीधे-सच्चे और पुण्यात्मा साहब ठहरे—उनकी प्रार्थना ख़ाली थोड़ा ही जा सकती थी !

कुछ लोग उन पर इसलिए नाराज़ हैं कि जब उनसे सहायता के लिए प्रार्थना की गई तो उन्होंने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया। ध्यान कैसे देते ? ध्यान देना व्यर्थ था, क्योंकि वह जानते थे कि यह दङ्गा एक न एक दिन अवश्य शान्त होगा और इसमें मरेंगे भी वही, जिनकी मौत आई है। बिना मौत के कोई किसी को मार नहीं सकता और जिसकी मौत आ गई है, उसे कोई बचा नहीं सकता। अज्ञानी लोग इस तथ्य को नहीं समझते; परन्तु सेल साहब तो अज्ञानी नहीं हैं—आई० सी० एस० की परीक्षा पास हैं। वह सब समझते हैं, सब जानते हैं, परन्तु ज़बान से नहीं कहते। कहें भी तो किससे ? कोई समझने वाला भी तो हो। दूसरे रहस्य की बातें सर्व-साधारण से कही भी नहीं जा सकतीं।

मि० बेरन ज्वाइन्ट मैजिस्ट्रेट भी बड़े ही भले आदमी हैं। उन्होंने भी मन ही मन दङ्गा रोकने की बहुत बड़ी चेष्टा की। परन्तु जनाब, दङ्गा जब हो गया तब कहीं जल्दी रुकता है ! इसके अतिरिक्त वह ठहरे डि० मैजिस्ट्रेट के मातहत—उनके ही क़दमों पर चला चाहें। ज्वाइन्ट मैजिस्ट्रेट जब तक डि० मैजिस्ट्रेट के क़दमों पर न चलेगा, तब तक डि० मैजिस्ट्रेट कैसे होगा ? और डि० मैजिस्ट्रेट होना अत्यन्त आवश्यक है, अन्यथा जीवन ही बेकाम है। वह भी मि० सेल की भाँति ईसा-मसीह का स्मरण करते रहे। ठीक भी है—सङ्कट के समय परमात्मा ही याद आता है। मनुष्य का चाहा कभी नहीं होता—परमात्मा का ही चाहा होता है—इसलिए हाथ-पैर हिलाना व्यर्थ है। इतने पर भी उन्होंने यथाशक्ति प्रयत्न किया, ख़ूब दौड़े-धूपे; परन्तु बेचारे क्या करते ? दङ्गाई लोग मूर्ख थे—इतने मूर्ख थे, कि उन्होंने ज़रा भी समझ से काम नहीं लिया। उनसे तो कॉङ्ग्रेस वाले कहीं अच्छे। एक तो बेचारे हिंसात्मक उपद्रव नहीं करते, दूसरे गिरफ़्तार होने पर चुपचाप अपनी ख़ुशी से जेल में जाकर बैठ जाते हैं। ऐसे लोगों पर लाठी-प्रहार करने में कुछ आनन्द भी आता है। दङ्गाइयों पर लाठी-प्रहार करने में कुछ आनन्द नहीं। एक तो कमबख़्त भाग जाते हैं—खड़े नहीं रहते। हालाँकि जगद्गुरु के फ़तवानुसार उन्हें भागना नहीं चाहिए—खड़े रहना चाहिए। यह बिल्कुल सच है कि जब दङ्गाई आग लगा कर, लूट कर, हत्या करके भाग खड़े होते हैं, तो उन्हें कैसे गिरफ़्तार किया जा सकता है। बहादुरी के मानी तो यह है कि वे भागें नहीं, खड़े रहें। उस समय पुलिस तथा अधिकारी यदि उन्हें गिरफ़्तार न करें, तो उनका क़ुसूर है। भगोड़ों को ढूँढ़ना, उनका पीछा करना, तत्पश्चात् उन्हें गिरफ़्तार करना, यह बड़ा तूले-अमल है। इतनी परेशानी कौन उठाए ? इसलिए यही नीति अच्छी है, कि अच्छा बच्चा, इस समय तुम्हारा जो जी चाहे करो, तुमसे कोई न बोलेगा, आख़िर कभी तो थकोगे ही, उस समय समझ लिया जायगा।

मि० रोजर्स (पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट) बेचारे बिल्कुल नए आदमी थे। उन्हें शहर के गली-कूचों का पता नहीं, बदमाशों का हुलिया नहीं मालूम, न किसी से जान न पहचान। ऐसी दशा में वह प्रबन्ध भी क्या करते ! इसके अतिरिक्त उन्हें पहले कभी ऐसा दङ्गा देखने को नहीं मिला था। उन्हें ठीक तरह यह भी पता नहीं था कि साम्प्रदायिक दङ्गे को रोकना भी चाहिए या नहीं—यदि रोकना भी चाहिए, तो कितने दिनों बाद। इन सब बातों की जानकारी प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक था, कि पहले वह दङ्गे का भली-भाँति अध्ययन कर लेते। अध्ययन करने के लिए यह भी ज़रूरी था कि दङ्गा कुछ दिनों चलने दिया जाय और क्या ! अध्ययन कुछ एक दिन में थोड़ा ही हो जाता है। और ऐसा अवसर बार-बार थोड़ा ही मिलता है। इन सब बातों को सोच-समझ कर वह दङ्गे का अध्ययन करने लगे। यदि पहले से ही उनका अध्ययन होता तो जनाब, वह दङ्गा जेल के फाटक की भाँति क्षण भर में बन्द करवा देते।

रहे कोतवाल साहब, सो जनाब, वह आदमी तो हैं नहीं—साक्षात् देवता हैं। पिछले सत्याग्रह आन्दोलन में उन्होंने कैसे-कैसे काम किए। कॉङ्ग्रेस वालों का वह साथ दिया कि लोग उन पर बलि-बलि जाते थे। सत्या-

---

फ़रियादे बिस्मिल

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

तुम शाद[1] किसी दिन, दिले-नाशाद करोगे,
या बैठते-उठते, यूँहीं बेदाद करोगे।
यह कह के कोई उनसे हुआ उनपे तसद्दुक़[2],
रोओगे बहुत जब हमें तुम याद करोगे।
अरमानो तमन्ना[3] हैं मेरे दिल में हज़ारों,
क्या दूसरी दुनिया नई आबाद करोगे ?
करते हो हमें क़त्ल, मगर सोच-समझ लो,
पछताओगे-पछताओगे, जब याद करोगे।
मिट जायगा दुनिया से निशाँ अहले-वफ़ा का,
तुम रोज़ सितम[4] यूँहीं जो ईजाद करोगे।
यह भी कोई इक़रार है, यह भी है कोई शर्त,
हम याद करेंगे तो हमें याद करोगे।
उस वक़्त भी निकलेगी न क्या दिल की कुदूरत[5],
मिट्टी किसी बेकस[6] की जो बरबाद करोगे।
बेसाख़्ता[7] आँखों से निकल आएँगे आँसू,
ऐ अहले वतन जब मुझे तुम याद करोगे।
यह लुत्फ़ तुम्हारा न रहेगा कोई दिन में,
"बिस्मिल" पे रवाँ ख़ञ्जरे-बेदाद[8] करोगे।

१—ख़ुश, २—निछावर, ३—इच्छा, ४—ज़ुल्म, ५—मैल, ६—ग़रीब, ७—अचानक, ८—ज़ुल्म।

ग्रहियों ने इतना ऊधम मचाया, परन्तु उन्होंने न कभी लाठी-प्रहार करवाया, न गोली चलवाई। सत्याग्रहियों को गिरफ़्तार भी करते थे, तो अफ़सरों के हुक्म से मजबूर होकर! परन्तु सच मानिए, गिरफ़्तारी के समय उनकी आँखों में आँसू निकल आते थे। ऐसे सज्जन व्यक्ति के लिए कहा जाता है कि उन्होंने दङ्गाइयों को उत्साहित किया। शिव! शिव! जब लोगों में ऐसी कृतघ्नता है तो किसी के साथ कोई नेकी क्यों करेगा?

कहा जाता है कि उन्होंने दङ्गाइयों को गिरफ़्तार नहीं किया और जो कुछ अन्य अफ़सरों द्वारा गिरफ़्तार करके उनके सुपुर्द किए गए, उन्हें भी छोड़ दिया। इस पर अपने राम का कहना यह है कि कोतवाल साहब इतने शरीफ़ और भले आदमी हैं कि किसी को गिरफ़्तार करना तो वह जानते ही नहीं। न जाने पूर्व-जन्म में कौन पाप किए थे, जो पुलिस की नौकरी करनी पड़ी, अन्यथा वह इस महकमे के योग्य ही न थे। उनके जैसा आदमी, जिसके शरीर में हृदय के अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं, पुलिस वालों जैसी हृदयहीनता कहाँ से लावें। यह तो ख़ैर दङ्गे का मामला था; जब दङ्गा नहीं था तब उन्होंने अपनी इसी हृदय की हृदयता के कारण कभी जुआरियों और कोकेन-फ़रोशों को नहीं पकड़ा। क्यों पकड़ते? जो जैसा करेगा वह वैसा भरेगा—अल्लाह मियाँ सबको देखते हैं और वही सबको कर्मों का फल देते हैं। फिर बन्दा अपनी टाँग अड़ा कर गुनहगार क्यों बने? दङ्गे के समय बदमाशों को पकड़ने से क्या फ़ायदा था? यह माना, वे लड़ रहे थे—तो आपस ही में तो लड़ रहे थे; किसी दूसरे से तो नहीं लड़ रहे थे। हाँ, यदि सरकार के विरुद्ध कोई सर उठाता तो अलबत्ता वह कुछ हाथ-पैर हिलाते; क्योंकि सरकार का नमक खाते हैं। उस समय यदि नमकहरामी करते तो ख़ुदा भी नाराज़ होता। मामूली लड़ाई-दङ्गे तो हुआ ही करते हैं। गिरफ़्तार हुए आदमियों को उन्होंने क्यों छोड़ दिया? इसमें भी बड़ी गूढ़ बात थी, जिसे अपने राम के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता। कारण यह था कि यदि बिना हौसले निकले हुए लोग पकड़ लिए जाते, तो पुनः दङ्गा होने की सम्भावना रहती; क्योंकि लोग अपने बचे-खुचे अरमान निकालते ही। इसलिए उन्होंने बदमाशों को छोड़ दिया कि जाओ अपने हौसले पूरे कर लो, ताकि भविष्य में शान्त होकर तो बैठो। अरे हाँ, एक दफ़ा जो कुछ होना हो, हो जाय—नित्य की दाँता किट-किट तो मिटे। रोज़ की कलह से एक बार जी भर के निबट लेना अच्छा है। इन सब बातों को सोचते-समझते हुए अपने राम का यह अन्तिम निर्णय है कि कानपुर के अधिकारियों ने जो कुछ किया वह ठीक किया। उस समय ऐसी ही मसलहत थी और भविष्य में पूर्ण शान्ति स्थापित करने के लिए दङ्गे का चरम सीमा पर पहुँच जाना आवश्यक था। और अब जो वह गिरफ़्तारियाँ कर रही है, वह भी बिल्कुल उचित है। क्योंकि पहले लड़ लेने दो, पीछे गिरफ़्तार करो, यह पुलिस की पुरानी नीति है। और अपने राम की यह भी राय है कि कानपुर-निवासी जो इन अधिकारियों के कानपुर से हटा दिए जाने पर ज़ोर दे रहे हैं, यह उनकी महामूर्खता है; क्योंकि यदि ये लोग कानपुर से हटा दिए गए तो कानपुर के भाग्य फूट जायँगे और जिस नगर में ये लोग भेजे जायँगे उसके नसीब खुल जायँगे।

भवदीय,

—विजयानन्द (दुबे जी)

* * *

संघ-शासन-व्यवस्था

[इस लेख के सुयोग्य लेखक—श्री० हनवन्तसहाय जी एक पुराने देश-भक्त हैं। आपने इस लेख में गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स में प्रस्तावित सङ्घ-शासन-व्यवस्था पर अपने कुछ बड़े ही गम्भीर विचार प्रकट किए हैं। सङ्घ-शासन-व्यवस्था किन परिस्थितियों में सफल हो सकती है, इसे आपने अमेरिका तथा स्वीटज़रलैण्ड के दो उदाहरण देकर बहुत अच्छी तरह से समझाया है। आपने इस समस्या पर भारतीय परिस्थिति के अनुसार विचार किया है। पाठकों की जानकारी के लिए हम आपके विचार 'पीपुल' नामक सुप्रसिद्ध अंगरेज़ी पत्र से यहाँ उद्धृत करते हैं।

—सं० 'भविष्य']

सत्य, अहिंसा और शान्ति की मूर्ति महात्मा गाँधी के अजेय झण्डे के नीचे, साल भर से पूर्ण स्वराज्य के लिए अहिंसात्मक संग्राम करने वाले हमारे हज़ारों देश-भाइयों ने, अपने देश के लिए, कभी स्वप्न में भी ऐसे सङ्घ-शासन-विधान की बात न सोची होगी, जैसे सङ्घ-शासन-विधान की घोषणा ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री ने, गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स के समय, १९ जनवरी, सन् १९३१ को की थी।

यह घोषित सङ्घ-शासन-व्यवस्था संरक्षण और उत्तरदायित्व के परस्पर विरोधी तथा असन्धेय तत्वों का एक विचित्र जञ्जाल है, जिसका आधार साम्प्रदायिकता रक्खा गया है। आर्थिक मामलों से सम्बन्ध रखने वाले संरक्षणों पर हमारे कुछ प्रमुख राजनीतिज्ञ तथा अर्थशास्त्रज्ञ प्रकाश डाल चुके हैं। इन सब ने एक स्वर से इन संरक्षणों की निन्दा की है। उनका कहना है कि ये संरक्षण उत्तरदायित्व को बिल्कुल शून्य बना देते हैं। फिर भी उन संरक्षणों पर यथेष्ट प्रकाश नहीं डाला गया, जिनका उद्देश्य अल्प जातियों की रक्षा करना तथा नरेन्द्र-मण्डल के ईश्वर-प्रदत्त अधिकारों को अक्षुण्ण बनाए रखना और यूरोपियनों के विशेषाधिकारों की गारण्टी करना बतलाया जाता है। परन्तु भारतवासियों के सामने जो सब से अधिक विचारणीय विषय इस समय उपस्थित है, वह शासन का मूल ढाँचा ही है। प्रधान मन्त्री ने अपनी घोषणा में इस ढाँचे के आधार-सिद्धान्त का स्पष्टीकरण नहीं किया। आगे चल कर भारत में सङ्घ-शासन-व्यवस्था होगी, बस इतनी घोषणा कर दी गई है। नए सङ्घ-शासन-व्यवस्था को निश्चित स्वरूप प्रदान करने का काम ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधियों और देशी राज्यों पर छोड़ दिया गया है। अब तक यह भी नहीं निश्चय हुआ कि सङ्घ-शासन में प्रवेश करने पर राजाओं को कौन-कौन से अधिकार केन्द्रीय शासन के अधीन समर्पित कर देने होंगे। राज्यों की आन्तरिक व्यवस्था कैसी होगी, इसकी तो अभी कोई चर्चा ही नहीं है।

ऐसी अनिश्चित और अस्पष्ट परिस्थिति में, मुझे आश्चर्य है कि कॉङ्ग्रेस के नेता, जो स्वाधीनता का सार लिए बिना समझौते की कोई बात तक नहीं करना चाहते थे, कैसे सत्याग्रह युद्ध स्थगित कर देने पर राज़ी हो गए? गोलमेज़ की शर्तें ऐसी अस्पष्ट और अनिश्चित हैं कि कॉङ्ग्रेस तथा ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधियों के किसी विषय में एक मत हो जाने पर भी देशी राजा अपनी अस्वीकृति से उस एक मत को निरर्थक बना सकते हैं, चाहे वह विषय, जिस पर वे अस्वीकृति दे रहे हों, कितना ही अधिक राष्ट्रोपयोगी और भारत की एकता के लिए अनिवार्य क्यों न हो। भारतीय नरेश न तो अपनी प्रजा या राज्य के सच्चे प्रतिनिधि हैं, न उनके दिलों में सङ्घ-शासन-व्यवस्था निर्माण करने और उसमें प्रवेश करने की वह लगन ही है, जोकि ब्रिटिश भारत के प्रतिनिधियों में है। उनमें राष्ट्रीय स्वाधीनता या राष्ट्रीय उन्नति की भावना कहाँ है? बहुतेरे भारतीय नरेश तो अब से बहुत पहले कह चुके हैं कि हमारा सीधा सम्बन्ध ब्रिटिश राज्य से रहेगा और भारत के सङ्घ-शासन में हम सभी शामिल होंगे, जब देख लेंगे कि सम्पूर्ण भारत पर ब्रिटिश आधिपत्य बना हुआ है। क्या ऐसी ग़ुलाम मनोवृत्ति का उन लोगों की मनोवृत्ति के साथ किसी भी प्रकार सामञ्जस्य हो सकता है, जिनका स्पष्ट लक्ष्य तुरन्त पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करना या कम से कम ऐसा स्वराज्य प्राप्त कर लेना है, जिसका अधिकांश भाग तुरन्त हस्तान्तरित कर दिया जाय और शेष के लिए एक निश्चित अवधि तय कर दी जाय। ब्रिटेन-भक्त, अनुत्तरदायी देशी राजाओं और राष्ट्र-भक्त उत्तरदायी, लोक-प्रतिनिधियों को एक सङ्घ-शासन-व्यवस्था में गूँथ देने का प्रयत्न किया जा रहा है। ऐसे परस्पर विरोधी परमाणुओं से बने सङ्घ-शासन-व्यवस्था में, ब्रिटिश भारत के लोक-प्रतिनिधियों और सङ्घ-शासन-व्यवस्था में प्रविष्ट देशी राजाओं का आपसी सम्बन्ध कैसा रहेगा, यह वर्णन करने की अपेक्षा कल्पना करने से अधिक समझ में आ सकता है।

मैं साहस के साथ कह सकता हूँ कि ऐसी अस्पष्ट परिस्थिति में कॉङ्ग्रेस का गोलमेज़ में शामिल होना अत्यन्त असामयिक और राजनीतिक दृष्टि से एक भारी भूल है। युद्ध की अपेक्षा शान्ति अच्छी होती है, परन्तु तब, जब कि उसके लिए अवसर भी अनुकूल हो। युद्ध, हिंसामय हो या अहिंसामय, सदैव निर्णयात्मक होना चाहिए। कॉङ्ग्रेस को विराम-सन्धि की घोषणा तब तक न करनी चाहिए थी, जब तक कि ब्रिटिश भारत के भावी पद का ठीक-ठीक निर्णय न हो जाता।

विराम-सन्धि की शर्तें, सन्तोषजनक न होते हुए भी, क्षम्य हैं, परन्तु उसके द्वारा स्वाधीनता-प्राप्ति के मार्ग में जो एक रुकावट बढ़ गई है वह उपेक्षणीय नहीं है। यदि वर्तमान आन्दोलन इस शर्त पर स्थगित किया जाता कि ब्रिटेन ब्रिटिश भारत को औपनिवेशिक स्व-

राज्य दे देगा, देशी नरेश और ब्रिटिश भारत वाले अपने आन्तरिक सम्बन्धों का समझौता कर लें, तो उस हालत में देशी नरेशों और कॉङ्ग्रेस की स्थिति कुछ और ही होती। तब कॉङ्ग्रेस अपनी परिस्थिति के बल का अनुभव देशी नरेशों को करा सकती और देशी नरेश भी देश की परिवर्तित परिस्थिति में अपने परिवर्तन की आवश्यकता ठीक-ठीक समझ लेते। देशी राजाओं को, नई परिस्थिति की आवश्यकता से विवश हो, कॉङ्ग्रेस के साथ अपने भावी पद और हैसियत की बातें करनी पड़तीं। वे दो में से एक बात कर सकते थे। या तो वे ब्रिटेन से सम्बन्ध बनाए रख कर बिल्कुल स्वतन्त्र रहने की बात सोचते या ब्रिटिश भारत के साथ मिल कर सङ्घ-शासन में प्रविष्ट हो जाते। ब्रिटिश भारत से अलग, स्वतन्त्र रहने का निर्णय करने में उन्हें सोचना पड़ता कि उससे बिल्कुल अलग और स्वतन्त्र अस्तित्व रखना सुरक्षित और सम्भव भी है या नहीं, परन्तु यदि उपरोक्त निर्णय न करके वे ब्रिटिश भारत के साथ मिल कर रहने और सङ्घ-शासन में प्रविष्ट होने की बात सोचते तो उन्हें अवश्य ही अखिल भारतीय प्रश्नों में, केन्द्रीय शासन के अधीन हो जाना पड़ता—अर्थात् वे अपने राज्य-सम्बन्धी आन्तरिक मामलों में तो अन्य प्रान्तीय सरकारों के सदृश ही पूर्ण स्वतन्त्र रहते, परन्तु उन मामलों में, जिनका सम्बन्ध सम्पूर्ण भारतीय राष्ट्र से है, उन्हें केन्द्रीय शासन की अधीनता में ही रहना पड़ता। परन्तु इस समय, भारत के पद का निर्णय हुए बिना ही विराम-सन्धि हो जाने से, जैसी अवस्था उत्पन्न हो गई है, उसमें यह आशा करना कि देशी नरेश राष्ट्रीय एकता की उपयोगिता समझ कर सङ्घ-शासन में सम्मिलित होंगे और उस हालत में अपने कुछ अधिकारों को केन्द्रीय शासन के अधीन कर देने के लिए राज़ी हो जायँगे, दुराशा मात्र है। ब्रिटिश भारत के जन-प्रतिनिधियों तथा देशी नरेशों की आन्तरिक प्रेरणाओं में भारी अन्तर होने के कारण, कॉङ्ग्रेस और देशी नरेश आमने-सामने विरोधियों के रूप में खड़े हो गए हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि जहाँ पहले, भारत के लिए पूर्ण या औपनिवेशिक पद के माँग की बात मुख्य रूप से विचारणीय थी, वहाँ अब मुख्य विचारणीय बात यह हो रही है कि कॉङ्ग्रेस और देशी राजाओं का सम्बन्ध क्या हो। इसलिए इस समय की कठिनाई का रहस्य उतना यह नहीं है कि ब्रिटिश भारत देशी राजाओं के मामले में किसी दूसरी दृष्टि से विचार कर रहा है और ब्रिटिश सरकार कुछ दूसरी ही तरह से, जितना यह कि इस आन्तरिक केन्द्र में मुख्य प्रश्न विचार-क्षेत्र से बाहर पड़ गया है। कॉङ्ग्रेस आगे बढ़ते ही अपने आपको देशी राजाओं के विरोध में खड़ी पाएगी, जिनके पक्ष में सहायता के लिए ब्रिटिश और भारत सरकारें रहेंगी। अभी तक कॉङ्ग्रेस को केवल भारत-सरकार या ब्रिटिश-सरकार का सामना करना पड़ता था। अब हालत यह रहेगी कि ब्रिटिश और भारत सरकारें तो कॉङ्ग्रेस के विरोध में रहेंगी ही, साथ में देशी राजा भी हो जायँगे। इस प्रकार स्वाधीनता की लड़ाई पहले की अपेक्षा अब बिना ज़रूरत अधिक कठिन बना दी गई है।

अब तक सरकार से अपने स्वराज्य-पद के लिए लड़ने में देशी राजा सन्धि के कारण दख़ल नहीं दे सकते थे, लेकिन अब वे अपने आपको विरोधी हालत में पाकर अवश्य ही कॉङ्ग्रेस का विरोध करेंगे। अब तो उन्हें भारत के किसी भी प्रकार के पद के प्राप्त करने में दख़ल देने का बहाना मिल गया है। ब्रिटेन की तरफ़ से यह तो पहले ही कह दिया गया है, क्योंकि भावी शासन-विधान में देशी राजाओं का भी स्थान रहेगा।

मि० जिन्ना ने ठीक ही कहा है कि अगर कॉङ्ग्रेस इतनी ही छोटी सी बात पर विराम-सन्धि की घोषणा करने को तैयार थी तो अब से बहुत पहले उसे गोलमेज़ में शामिल हो जाना चाहिए था। महात्मा जी के लिए पूर्ण आदर रखते हुए भी मैं उनके पूर्ण स्वराज्य के नवीन अर्थ का विरोध करता हूँ। यदि स्वराज्य के साथ पूर्ण का विशेषण लगा देने पर भी उसका मतलब पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं होता तो पूर्ण स्वतन्त्रता की घोषणा करना और उसे कॉङ्ग्रेस का निकट से निकट ध्येय कहना केवल पाखण्ड है।

अब भी समय है कि कॉङ्ग्रेस घोषित कर दे, कि जब तक ब्रिटिश भारत को पूर्ण स्वराज्य न प्राप्त हो जायगा, तब तक वह आगामी गोलमेज़ में किसी भी तरह की बातचीत करने को तैयार नहीं है। जब तक यह मुख्य प्रश्न न तय हो जाय, तब तक राजाओं का गोलमेज़ की किसी तरह की बहस में शामिल होना भी न्याय के बिल्कुल विरुद्ध है। हाँ, जब ब्रिटिश पार्लामेण्ट में ब्रिटिश भारत के पद का निबटारा हो जाय, तब इस बात पर विचार किया जा सकता है, कि भारत में ब्रिटिश भारत और देशी राजाओं का क्या सम्बन्ध हो, जो निस्सन्देह ब्रिटिश भारत की प्राप्त स्वाधीनता, और राष्ट्रीयता को आधार मान कर ही स्थिर किया जा सकता है। राजाओं को अपनी स्थिति का सम्पूर्ण राष्ट्र के हित के साथ सामञ्जस्य करना ही पड़ेगा।

इसलिए पूर्ण स्वाधीनता का सवाल, जो कि इस देश के करोड़ों नर-नारियों और विशेषकर कॉङ्ग्रेस के लिए जीवन और मरण का प्रश्न बन गया है, इस देश के शासकों के साथ पहले हल हो जाना चाहिए। देशी राज्यों के साथ हमारा क्या सम्बन्ध रहेगा, यह सवाल तब हल कर लिया जायगा, जब पहले ब्रिटिश भारत का पद एक बार निश्चयपूर्वक तय हो जाय। इस समय कॉङ्ग्रेस और देशी राजाओं का साथ नहीं हो सकता। क्योंकि वे इङ्गलैण्ड की विदेशी ताक़त के भक्त हैं। इसलिए इस समय देशी राजाओं और ब्रिटिश भारत का प्रश्न हो न उठना चाहिए। कॉङ्ग्रेस तथा अन्य सार्वजनिक नेताओं का, इस बात पर विचार करना समय खोना है।

अब हम यहाँ पर, दूसरे देशों में सङ्घ-शासन स्थापित होने की क्या-क्या परिस्थितियाँ थीं और वे कैसे स्थापित हुए, इस पर कुछ विचार प्रकट करना चाहते हैं। सङ्घ-शासन-विधान के अत्यन्त सफल उदाहरण अमेरिका और स्वीटज़रलैण्ड हैं। अमेरिका में, सङ्घ-शासन-व्यवस्था क़ायम होने के कई कारण थे। उसके संयुक्त राज्यों में जातिगत, धर्मगत और भाषा सम्बन्धी भिन्नताएँ थीं। प्रत्येक राज्य यथेष्ट बड़ा और धन-धान्य से पूर्ण था। वे अपने-अपने राज्यों में सदैव स्वतन्त्र रहना ही अधिक पसन्द करते थे। फिर भी राजनीतिक कारणों से बिल्कुल अकेला रहना ठीक न समझ कर वे, कुछ बातों में, जिनमें अकेले की अपेक्षा समूह में रहना अधिक लाभकारी और कल्याणकारी हुआ करता है, एक हो गए। और इन सामूहिक बातों का सञ्चालन-सूत्र, केन्द्रीय शासन बना कर, उसके अधीन कर दिया गया। उन संयुक्त राज्यों ने अपनी स्वतन्त्रता का वह अंश केन्द्रीय शासन के अधीन कर दिया, जो प्रान्तीय कम और राष्ट्रीय अधिक था। अर्थात् उन मामलों में, जिनमें सम्पूर्ण राष्ट्र के लाभ-हानि का प्रश्न था, प्रान्त केन्द्रीय शासन के अधीन बन गए; शेष आन्तरिक अर्थात् प्रान्तीय मामलों में वे पूर्ण स्वतन्त्र बने रहे। अमेरिका में सङ्घ-शासन-व्यवस्था क़ायम होने का एक कारण यह भी था कि उसके स्वाधीनता-संग्राम ने उसमें राष्ट्रीयता का भाव उत्पन्न कर दिया था। लोगों ने सङ्घ-व्यवस्था के राजनीतिक तथा आर्थिक लाभों पर भी ध्यान दिया। परन्तु अमेरिका में सङ्घ-शासन-व्यवस्था के सफल होने का कारण यह था कि उसके संयुक्त राज्यों की शासन-व्यवस्थाएँ एक ही ढङ्ग की थीं और केन्द्रीय शासन-विधान भी उसी के ढङ्ग का बनाया गया था।

स्वीटज़रलैण्ड में सङ्घ-शासन-व्यवस्था होने के पहले, वहाँ भिन्न-भिन्न प्रान्तों में, जाति, भाषा और सभ्यता-सम्बन्धी विषमताओं के बड़े ही विचित्र और विकट दृश्य उपस्थित थे। पचीसों प्रान्त, जो कि सङ्घ-शासन-व्यवस्था में सम्मिलित हुए, एक प्रकार से छोटे-छोटे स्वतन्त्र राष्ट्र थे। लेकिन उनकी शासन-व्यवस्था प्रजातन्त्रात्मक थी। बहुत समय तक विदेशी शासन के कष्टों का अनुभव प्राप्त कर लेने पर उन्हें सङ्घ-शासन में परस्पर सम्मिलित हो जाने का कल्याणकारी मार्ग सूझा था। प्रत्येक प्रान्त की अपनी राष्ट्रीयता थी और अपना व्यक्तित्व, इसलिए वे अपने-अपने प्रान्तीय मामलों में पूर्ण स्वतन्त्र बने रहे। परन्तु राजनीतिक लाभ या सामूहिक रक्षा की दृष्टि से वे सङ्घ-शासन-व्यवस्था में प्रविष्ट हो गए। राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर स्वीटज़रलैण्ड के संयुक्त प्रान्त परस्पर मिल जाने के लिए इतने उत्सुक थे कि उन्होंने अपनी स्वाधीनता का बहुत बड़ा अंश केन्द्रीय शासन के अधीन कर दिया। आज स्वीटज़रलैण्ड की सङ्घ-शासन-व्यवस्था इस बात का प्रमाण है कि इतनी अधिक विभिन्नता रखने वाले लोग भी किस तरह एक शासन-व्यवस्था में सुखपूर्वक रह सकते हैं।

इन दोनों उदाहरणों से यह बात बिल्कुल साफ़-साफ़ मालूम हो जाती है, कि सङ्घ-शासन-विधान केवल उन्हीं राष्ट्रों ने अपनाया है, जिनके भिन्न-भिन्न भाग स्वयं भी अलग-अलग राष्ट्र थे और जो अपने विशेषतायुक्त व्यक्तित्व को हर हालत में बनाए रखना चाहते थे। फिर भी एक उच्च प्रकार की एकता या राष्ट्रीयता से प्रेरित थे। वे अपनी-अपनी स्वतन्त्र इकाइयों को अक्षुण्ण बनाए रखते हुए भी समूह में रहने के लाभों का उपयोग करना चाहते थे। मतलब यह कि सङ्घ-शासन-प्रणाली की आवश्यकता वहीं पैदा हुई है, जहाँ सङ्घ में आए हुए राष्ट्र अपनी अलग-अलग इकाई की स्वाधीनता को मुख्य और सङ्घ-शासन में शामिल होने को गौण समझते थे।

भारतवर्ष के प्रान्तों या देशी राज्यों के बीच अपनी-अपनी प्रान्तीय इकाई के लिए ऐसा विरोध-भाव नहीं है, जैसा कि दूसरे सङ्घ-शासन-प्रणाली वाले देशों में मौजूद है। इस देश में भिन्न-भिन्न भाषाओं का बोला जाना कोई अधिक महत्व का विषय नहीं है। अमेरिका और स्वीटज़रलैण्ड में, जहाँ की शासन-प्रणाली व्यवहार-रूप में एकतन्त्रात्मक (Unitary) ही है, भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं। अमेरिका में अङ्गरेज़ी राज-भाषा है, स्वीटज़रलैण्ड में जर्मन, फ़्रेञ्च और इटालियन तीनों भाषाएँ राज-भाषा हैं। देशी राज्यों का प्रश्न शेष भारत के प्रश्न से विशेष अन्तर नहीं रखता। केवल ऐतिहासिक अन्तर की अपेक्षा और कोई अन्तर नहीं है। लेकिन यह बात स्मरण रहे कि सङ्घ-शासन-व्यवस्था के लिए भिन्न भिन्न प्रान्तों या राष्ट्रों की शासन-प्रणालियों का समान रूप का होना आवश्यक है। दूसरी बात जो सङ्घ-शासन-व्यवस्था के लिए आवश्यक है, वह यह है कि प्रान्तों या संयुक्त राष्ट्रों का शासन-प्रबन्ध प्रजातन्त्रात्मक होना चाहिए। जर्मनी के नए विधान के अनुसार वहाँ के संयुक्त राष्ट्रों की शासन-व्यवस्थाएँ प्रजातन्त्रात्मक बना दी गई हैं। ऐसा करने का उद्देश्य राष्ट्र की सब से बड़ी कार्यकारिणी या केन्द्रीय शासन को प्रजासत्तात्मक बना देना था। सङ्घ-शासन के संयुक्त राज्यों में कहीं प्रजातन्त्र और कहीं राजतन्त्र दोनों होने से केन्द्रीय शासन भी मिश्रित प्रकार का बना रहता है। वह पूर्ण प्रजासत्तात्मक नहीं हो सकता। जर्मनी के नए विधान के समर्थन में, नेशनल एसेम्बली में २४

निर्वासिता वह मौलिक उपन्यास है, जिसकी चोट से क्षीणकाय भारतीय समाज एक बार ही तिलमिला उठेगा। अन्नपूर्णा का नैराश्यपूर्ण जीवन-वृत्तान्त पढ़ कर अधिकांश भारतीय महिलाएँ आँसू बहावेंगी। कौशलकिशोर का चरित्र पढ़ कर समाज-सेवियों की छातियाँ फूल उठेंगी। उपन्यास घटना-प्रधान नहीं, चरित्र-चित्रण-प्रधान है। निर्वासिता उपन्यास नहीं, हिन्दू-समाज के वक्षस्थल पर दहकती हुई चिता है, जिसके एक-एक स्फुलिङ्ग में जादू का असर है। इस उपन्यास को पढ़ कर पाठकों को अपनी परिस्थिति पर घण्टों विचार करना होगा, भेड़-बकरियों के समान समझी जाने वाली करोड़ों अभागिनी स्त्रियों के प्रति करुणा का स्रोत बहाना होगा, आँसुओं के मोती बिखेरने होंगे और समाज में प्रचलित कुरीतियों के विरुद्ध क्रान्ति का झण्डा बुलन्द करना होगा; यही इस उपन्यास का संक्षिप्त परिचय है। मूल्य केवल ३) रु०

दाढ़ी वालों को भी प्यारी है बच्चों को भी,
वड़ी मासूम बड़ी नेक है लम्बी दाढ़ी।
अच्छी बातें भी बताती है, हँसाती भी है।
लाख दो लाख में बस एक है लम्बी दाढ़ी॥

ऊपर की चार पंक्तियों में ही पुस्तक का संक्षिप्त विवरण "गागर में सागर" की भाँति समा गया है। फिर पुस्तक कुछ नई नहीं है, अब तक इसके तीन संस्करण हो चुके हैं और ९,००० प्रतियाँ हाथों-हाथ बिक चुकी हैं। पुस्तक में तिरङ्गे प्रोटेक्टिङ्ग कवर के अलावा पूरे एक दर्जन ऐसे सुन्दर चित्र दिए गए हैं कि एक बार देखते ही हँसते-हँसते पढ़ने वालों के बत्तीसों दाँत मुँह से बाहर निकलने का प्रयत्न करते हैं। मूल्य केवल २॥); स्थायी ग्राहकों से १।॥=) मात्र!

बाल-रोग-विज्ञानम्

इस महत्वपूर्ण पुस्तक के लेखक पाठकों के सुपरिचित, 'विष-विज्ञान', 'उपयोगी चिकित्सा', 'स्त्री-रोग-विज्ञानम्' आदि-आदि अनेक पुस्तकों के रचयिता, स्वर्ण-पदक-प्राप्त प्रोफ़ेसर श्री० धर्मानन्द जी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य हैं, अतएव पुस्तक की उपयोगिता का अनुमान सहज ही में लगाया जा सकता है। आज भारतीय स्त्रियों में शिशु-पालन सम्बन्धी समुचित ज्ञान न होने के कारण सैकड़ों, हज़ारों और लाखों नहीं, किन्तु करोड़ों बच्चे प्रति वर्ष अकाल मृत्यु के कलेवर हो रहे हैं। इसमें बालक-बालिका सम्बन्धी प्रत्येक रोग, उनका उपचार तथा ऐसी सहज घरेलू दवाइयाँ बतलाई गई हैं, जो बहुत कम ख़र्च में प्राप्त हो सकती हैं। इसे एक बार पढ़ लेने से प्रत्येक माता को उसके समस्त कर्त्तव्य का ज्ञान सहज ही में हो सकता है और वे शिशु-सम्बन्धी प्रत्येक रोग को समझ कर उसका उपचार स्वयं कर सकती हैं। मूल्य २॥) रु०

दक्षिण अफ्रिका के मेरे अनुभव

जिन प्रवासी भाइयों की करुण स्थिति देख कर महात्मा गाँधी; मि० सी० एफ़० एण्ड्रूज़ और मिस्टर पोलक आदि बड़े-बड़े नेताओं ने ख़ून के आँसू बहाए हैं; उन्हीं भाइयों की सेवा में अपना जीवन व्यतीत करने वाले पं० भवानीदयाल जी ने अपना सारा अनुभव इस पुस्तक में चित्रित किया है। पुस्तक को पढ़ने से प्रवासी भाइयों की सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक स्थिति तथा वहाँ के गौराङ्ग प्रभुओं की स्वार्थपरता, अन्याय एवं अत्याचार का पूरा दृश्य देखने को मिलता है। एक बार अवश्य पढ़िए और अनुकम्पा के दो-चार आँसू बहाइए!! मूल्य २॥) रु०

चुहल

पुस्तक क्या है, मनोरञ्जन की अपूर्व सामग्री है। केवल एक चुटकुला पढ़ लीजिए, हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जायँगे। काम की थकावट से जब कभी जी ऊब जाय, उस समय केवल पाँच मिनट के लिए इस पुस्तक को उठा लीजिए, सारी उदासीनता काफ़ूर हो जायगी। इसमें इसी प्रकार के उत्तमोत्तम हास्यरस-पूर्ण चुटकुलों का संग्रह किया गया है। कोई चुटकुला ऐसा नहीं है, जिसे पढ़ कर आपके दाँत बाहर न निकल आवें और आप खिलखिला कर हँस न पड़ें। भोजन के पश्चात् मनोरञ्जन के लिए ऐसी पुस्तकें पढ़ना स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त लाभदायक है। बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष—सभी के काम की चीज़ है। छपाई-सफ़ाई दर्शनीय। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल लागत-मात्र १) ; स्थायी ग्राहकों से ॥।) ; केवल थोड़ी सी प्रतियाँ और शेष हैं, शीघ्रता कीजिए, नहीं तो दूसरे संस्करण की राह देखनी होगी।

उपयोगी चिकित्सा

इस महत्वपूर्ण पुस्तक की एक प्रति प्रत्येक सद्गृहस्थ के यहाँ होनी चाहिए। इसको एक बार आद्योपान्त पढ़ लेने से फिर आपको डॉक्टरों और वैद्यों की ख़ुशामदें न करनी पड़ेंगी—आपके घर के पास तक बीमारियाँ न फटक सकेंगी। इसमें रोगों की उत्पत्ति का कारण, उसकी पूरी व्याख्या, उनसे बचने के उपाय तथा इलाज दिए गए हैं। रोगी की परिचर्या किस प्रकार करनी चाहिए, इसकी भी पूरी व्याख्या आपको मिलेगी। इस पुस्तक को एक बार पढ़ते ही आपकी ये सारी मुसीबतें दूर हो जायँगी। भाषा अत्यन्त सरल। मूल्य १॥)

चित्तौड़ की चिता

पुस्तक का 'चित्तौड़' शब्द ही उसकी विशेषता बतला रहा है। क्या आप इस पवित्र वीर-भूमि की माताओं का महान साहस, उनका वीरत्व और आत्मबल भूल गए? सतीत्व-रक्षा के लिए उनका जलती हुई चिता में कूद पड़ना, आपने एकदम बिसार दिया? याद रखिए! इस पुस्तक को एक बार पढ़ते ही आपके बदन का ख़ून उबल उठेगा! पुस्तक पद्यमय है, उसका एक-एक शब्द साहस, वीरता, स्वार्थ-त्याग और देश-भक्ति से ओत-प्रोत है। मूल्य केवल लागत मात्र १॥); स्थायी ग्राहकों से १=) रु०

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

फ़रवरी, सन् १९१९ को भाषण देते हुए प्रियस ने कहा था—

"जर्मन-विधान में इस नए नियम का परिणाम यह होगा कि सङ्घ-शासन का प्रत्येक प्रान्त एक-दूसरे के सदृश हो जायगा और उनके फल-स्वरूप सम्पूर्ण जर्मन राष्ट्र पहले की अपेक्षा कहीं अधिक सुदृढ़ और सङ्गठित हो जायगा। स्वीटज़रलैण्ड की पहली वाली सङ्घ-शासन-व्यवस्था और जर्मनी को १८१५ वाली राष्ट्रों की समिति, जिसमें जर्मनी के सब प्रान्त एक शासन-तन्त्र के सूत्र में बँधे हुए थे, न केवल बुरी तरह असफल सिद्ध हुईं, वरन् उनका संयुक्त राष्ट्रों पर बहुत बुरा असर पड़ा। सङ्घ-शासन का उद्देश्य कुछ स्वतन्त्र राष्ट्रों या प्रान्तों को एक बड़ी राष्ट्रीयता के सूत्र में बाँधना है। इसका अर्थ यह है कि जो राष्ट्र अब तक बिल्कुल स्वतन्त्र थे, वे अब एक बड़े राष्ट्र के अन्तर्गत हो गए। इस हैसियत में वे अपनी स्वतन्त्रता का प्रयोग बड़े राष्ट्र के एक भाग की हैसियत से करते हैं। उनके शासन और अधिकार केवल स्थानीय बातों तक परिमित रहते हैं। अगर देशी राज्य अपने स्वत्वों या विशेषाधिकारों को इस हद तक समर्पित कर सकें, जिसमें उनकी हैसियत उपर्युक्त स्थानीय ढङ्ग की हो जाय, तो फिर सङ्घ-शासन-व्यवस्था की ज़रूरत ही नहीं रह जाती। क्योंकि इस हालत में फिर भारत के अन्य प्रान्तों और देशी राज्यों में कोई अन्तर न रह जायगा। अगर ऐसा न हुआ अर्थात् देशी राज्यों की राजतन्त्रात्मक स्थिति ज्यों की त्यों बनी रही तो सङ्घ-शासन का उद्देश्य ही नष्ट हो जायगा, जो कि राष्ट्र का एकीकरण और सङ्गठन है। शासन का विकासात्मक होना अत्यन्त आवश्यक है। क्या कोई व्यक्ति ऐसे शासन-विधान से, जो कि प्रजातन्त्र और राजतन्त्र का सम्मिश्रण हो, किसी प्रकार के क्रम-विकास की आशा कर सकता है?"

सङ्घ-शासन-प्रणाली प्रजातन्त्र का एक पुराना स्वरूप हो गया है, जिसकी ओर अब उन राष्ट्रों तक का कोई आकर्षण नहीं रहा, जो एक सौ वर्ष पहले उसके अत्यन्त प्रेमी थे। यूरोपीय महायुद्ध के बाद पोलैण्ड और यूगोस्लाविया के लिए, जो कि युद्ध के बाद के बिल्कुल नए और उदीयमान राष्ट्र हैं, इसी सङ्घ-शासन-योजना का प्रस्ताव किया गया था। लेकिन इन तरुण राष्ट्रों ने यह कह कर इस प्रकार की शासन-प्रणाली को अस्वीकार कर दिया कि इस प्रणाली से राष्ट्र की एकता में बाधा पहुँचेगी, जिस बात की इन राष्ट्रों को अत्यन्त आवश्यकता थी।

अन्य नए और पुराने देशों में भी, जहाँ कहीं इस सङ्घ-शासन-प्रणाली का प्रयोग हुआ, यह प्रणाली या तो बिल्कुल असफल हुई या परिवर्तित होकर एक तन्त्रात्मक प्रणाली में बदल गई। हिन्दुस्तान में भी इसका परिणाम इससे अधिक अच्छा नहीं हो सकता। जो भारतवर्ष आज वास्तव में इकाई होता हुआ सिर्फ़ कुछ असङ्गठन के कारण बिखरा हुआ दिखाई पड़ रहा है, वह याद रहे, कि सङ्घ-शासन-व्यवस्था हो जाने पर अस्वाभाविक टुकड़ों में बँट जायगा।

तब, स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि भारत की शासन-प्रणाली कैसी होनी चाहिए? इसके लिए भारत के पुराने राज्य-प्रबन्ध का इतिहास, सामाजिक विकास, संसार के इस देश पर पड़ने वाले प्रभाव, आधुनिक रुचि और लोगों की परिस्थितियों का अध्ययन करना आवश्यक है। निस्सन्देह इस समस्या का हल बहुत-कुछ इस देश के लोगों की परिस्थिति पर निर्भर है। वर्तमान शासकों की दृष्टि में तो यह देश विभिन्न प्रकार की जातियों, सभ्यताओं और सम्प्रदायों का एक विचित्र झुण्ड है, जिसको यदि वे अपने फ़ौलादी ढाँचे के अन्दर कसे न रक्खें तो अमन और क़ानून का स्थिर रहना असम्भव हो जाय। इसलिए यदि कोई विधान वे इस देश के लिए सोच सकते थे, तो वह यही सङ्घ-शासन-विधान हो सकता था, जिसमें अल्प जातियों के लिए, विशेष सुविधा पाते रहने वालों के लिए और स्वयं साम्राज्य-शक्ति के लिए विविध प्रकार के संरक्षण हैं। राष्ट्र-सङ्घ ने ऐसी ही नीति मध्य यूरोप के नए राष्ट्रों के साथ भी बर्ती है।

एक राष्ट्र-भक्त हिन्दुस्तानी की दृष्टि से तो वस्तु-स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत है। उसकी दृष्टि में तो यह सङ्घ-शासन-व्यवस्था, ये अल्प जातियों के संरक्षण और साम्प्रदायिक निर्वाचन पुरानी रीति-नीति को बनाए रखने तथा साम्राज्य-शक्ति का पञ्जा प्रकारान्तर से जमाए रखने के प्रयत्न मात्र हैं। इस ओर किसी का ध्यान नहीं जाता कि साम्प्रदायिक भेदों और झगड़ों को आवश्यकता से अधिक बढ़ा बना कर दिखलाने पर भी किस प्रकार एक से अधिक अवसरों पर उन्हीं विभिन्न सम्प्रदाय वालों ने इस विदेशी नौकरशाही से, कभी कौन्सिल-क्षेत्रों में और कभी बाहर, विशाल सामूहिक आन्दोलनों द्वारा एक साथ भिड़ कर मोर्चा लिया है। क्या यह सच नहीं है कि साम्प्रदायिक दङ्गे केवल उन्हीं स्थानों में

Sjt. Daya Krishna, M. A., Director of Education, Kotah State writes:

. . . you will be glad to know that I am getting your CHAND for all the girl's and middle schools in the district and at my inspection of schools I always try to find out if the boys and *teachers* read it regularly. I have also got a copy of your excellent book *Samaj Darshan* which appealed to me so much 8 years ago, and recommended in every Middle School Library in the district.

I compliment you most sincerely on the admirable service you are doing through your publications to the community and specially to the female section of it and I hope you will continue in your work heedless of all orthodox opposition and senseless criticisms. . . .

होते हैं, जहाँ सरकारी सत्ता का अधिक से अधिक प्रभाव रहता है? कौन नहीं जानता कि जब से साम्प्रदायिक निर्वाचन प्रथा चली, तब से ये दङ्गे भी बढ़ गए हैं। हमारे देश में कुछ लोग ऐसे हैं, जिनकी दृष्टि-क्षितिज जातीयता के बाहर कभी जाती ही नहीं। इसका कारण यह है कि इनके मस्तिष्क साम्प्रदायिक शिक्षा-संस्थाओं द्वारा बिल्कुल साम्प्रदायिक ढङ्ग के ढाल दिए गए हैं। दूसरे साम्प्रदायिकता द्वारा वे सरकारी नौकरी पाने की विशेष सम्भावना देखते हैं। इस प्रकार प्रत्येक वस्तुओं को वे साम्प्रदायिक कोण से देखने के अभ्यासी हो जाते हैं।

स्वर्गीय मौलाना मुहम्मदअली ने गोलमेज़ सम्मेलन के प्रारम्भिक अधिवेशन में भाषण करते हुए ठीक ही कहा था कि—'हिन्दू-मुस्लिम समस्या भेद-नीति के पुराने सिद्धान्त से उत्पन्न हुई है, जिस क्षण हिन्दू-मुसलमान एक हो जाने का इरादा कर लेंगे, उसी क्षण ब्रिटिश शासन असम्भव हो जायगा।' आज घटनाएँ उनके शब्दों को ठीक प्रमाणित कर रही हैं। अशिक्षित, परन्तु बहादुर गोरखों और पठानों को देखिए, और देखिए इनसे भी अधिक बहादुर उन पर्दानशीन औरतों को, जिन्होंने अभी अहिंसात्मक युद्ध किया है। मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि वे अपने कार्यों के राष्ट्रीय महत्व को भली-भाँति समझते हैं। कुछ पठान नेता, जो मेरे साथ गुजरात स्पेशल जेल में क़ैद थे, एक स्वर से कहते थे कि हम हिन्दुस्तानी हैं और हम सिवाय भारतीय राष्ट्र की स्वाधीनता के और किसी भी दूसरे मतलब से यह लड़ाई नहीं लड़ रहे हैं। स्त्रियों के साथ मुझे अपने इस प्यारे नगर में काम करने का मौक़ा मिला है और मैं जानता हूँ कि उन सब में एक ही राष्ट्रीय भावना भरी हुई थी। फिर भी जो थोड़े से भारतीय और राजा ब्रिटिश आधिपत्य के लिए आतुर दीख पड़ें, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। जर्मनी का पश्चिमीय भाग जब फ़्रान्स वालों के आधिपत्य से छूट कर फिर से जर्मनी में मिल गया तब बहुत समय तक उस भाग के निवासियों को बर्लिन के बजाय पेरिस की ही बातें अच्छी मालूम होती रहीं। यह स्वाभाविक है। राष्ट्र की बहुत बड़ी-बड़ी बातों के सामने इन छोटी-छोटी बातों का कोई महत्व नहीं है। इनके लिए राष्ट्र के सामूहिक हित का बलिदान नहीं किया जा सकता। ये बातें अपवाद-स्वरूप हैं। सारांश यह कि भारतवर्ष में राष्ट्रीय एकता मौजूद है और वह किसी भी राष्ट्र से कम नहीं है। उसके निवासी किसी भी राष्ट्र के बराबर ही राष्ट्रीय स्वाधीनता के योग्य हैं। रहे ये थोड़े से रूढ़ि-पन्थी राजा और देश के अन्य निवासी। इनके लिए मैं बेकन के शब्दों में एक चेतावनी दे देना चाहता हूँ—"वह व्यक्ति, जो नई व्याधियों के उत्पन्न होने पर नए उपाय काम में नहीं लाता, अवश्य ही नई व्याधियों में फँसेगा। युग-प्रवाह बड़ा प्रबल होता है। × × × पुरानी प्रथा को क़ायम रखने का हठ नई प्रथा की अपेक्षा कम उपद्रवकारी नहीं है।"

भावी शासन-विधान कैसा हो, इसके उत्तर में मुझे सिवा इसके और कुछ नहीं कहना है कि ऐसा कोई भी विधान भारतीयों के लिए सन्तोषजनक न होगा, जिस विधान में किसानों और ग़रीबों का उत्थान तुरन्त न होने लग जाय। इस देश में तब तक शान्ति नहीं हो सकती, जब तक राष्ट्र अपने ग़रीबों और अनजानों का ऋण नहीं अदा कर देता। ऐसे शासन-विधान का नाम चाहे जो कुछ हो।

शासकों और उनके बुद्धिमान वायसराय के प्रति मुझे इतना ही कहना है कि उनका भला इसी में है कि वे महात्मा गाँधी द्वारा बताई हुई कॉङ्ग्रेस की माँग स्वीकार कर लें। किसी तरह की टाल-मटोल करना अच्छा न होगा। भारत का यह पावना बहुत पुराना हो गया है। टाल-मटोल करने से उन्हीं का अधिक नुक़सान होगा, हिन्दुस्तानियों का सिर्फ़ थोड़ा कष्ट और बढ़ जायगा।

* * *

साहित्य का सपूत

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क २ ; दृश्य ४

साहित्यानन्द के मकान का पिछवाड़ा

(टेसू जल्दी-जल्दी एक बड़ा-सा पीपा—जिसका मुँह सामने की तरफ़ खुला हुआ है, लुढ़काता हुआ आता है।)

टेसू—बस-बस, अब यहीं इसी में छिप जाऊँ, नहीं पकड़ पाएँगे तो आज मार ही डालेंगे।

साहित्यानन्द—(नेपथ्य में) कच्चा चबा जाऊँगा। मुण्ड-उण्ड, हस्त-पाद सब भङ्ग कर दूँगा।

टेसू—(पीछे की तरफ़ देख कर) वह लो, वह सर पर पहुँच ही गए।

(जल्दी से पीपे में घुस कर सामने की तरफ़ मुँह कर लेता है। वैसे ही साहित्यानन्द एक खड़ाऊँ पहने और दूसरा खड़ाऊँ मारने के लिए हाथ में ताने हुए दौड़ता हुआ आता है।)

साहित्यानन्द—(दौड़ता हुआ) साले ने घर आते ही मेरी स्त्री से जड़ दिया, कि आपके सम्पादक जी यानी मैं उपवन में कोठेवालियों को गा-गाकर रिझा रहा था। इतना बड़ा विश्वासघात ? (दाँत पीस कर) अच्छा बचा, जितनी डाँटें तूने उस डाइन से खिलवाई हैं, सब की कसर अभी निकालता हूँ। (रुक कर इधर-उधर देखता हुआ।) परन्तु अररररर ! यहाँ तो वह पाजी दिखाई नहीं पड़ता। कहाँ गया, कहाँ ? मैंने उसको अपने दोनों—उहुँक—उभय नेत्रों से इसी ओर पलायन करते देखा है और इतनी ही दूर में वह सशरीर अलोप हो गया ? आश्चर्य और घोर आश्चर्य है।

टेसू—(पीपे से झाँक कर) जी हाँ।

साहित्यानन्द—(चौंक कर) एँ ?.. कुछ नहीं। उस चुड़ैल के प्रचण्ड कोलाहल से मेरी श्रवण-शक्ति अवश्य भ्रष्ट हो गई होगी। इसी हेतु हवा की सनसनाहट में भी मुझे मनुष्य की भनभनाहट ज्ञात होती है। हुआ ही चाहे, क्योंकि मैंने तो अपने द्वार पर पहुँचते ही उस पाजी टेसुआ को तिलोत्तमा के पिता को निमन्त्रित करने के लिए कहा था। ताकि वह यहाँ पधार कर मुझे भली-भाँति पहचान—उहुँक—चीन्ह लें। मेरी योग्यता को जान कर अपना भ्रम दूर कर सकें। मेरे आदर-सत्कारों से मुग्ध होकर अपने यहाँ जलपान करने के लिए मुझे बुलावें, उस लम्पट दुराचारी संसारीनाथ को नहीं। परन्तु वह दुष्ट तो वहाँ जाने के प्रथम ही न जाने कब घर में ऐसी अग्नि लगा गया कि आँगन में पैर रखते ही मैं भस्म हो गया। वह हत्यारिणी चपला की माँ व्याघ्रणी की भाँति उच्च नाद करती हुई ऐसी डौंकी कि श्रवण-शक्ति की कौन कहे, यहाँ सभी शक्तियाँ शिथिल पड़ गईं। यही बड़ा सौभाग्य था कि मेरे चरणों की द्रुत-गति नष्ट होने से बच गई। अन्यथा गृह से उस समय बाहर निकलना दुर्लभ हो जाता। परन्तु अब तो घर में जाना दुर्लभ है। क्योंकि उस दुष्टा ने मुझे बाहर करके घर के सभी द्वार बन्द कर लिए। अब तिलोत्तमा के पिता का किस प्रकार से आदर-सत्कार कर सकूँगा ? क्या पहन-ओढ़ कर उन पर अपनी योग्यता और वैभव का प्रभाव डाल सकूँगा ?

टेसू—(पीपे से झाँक कर) लहँगा-ओढ़नी पहन कर।

साहित्यानन्द—एँ फिर ? (कान खड़ा कर ध्यान से सुनने की कोशिश करता है।) कुछ नहीं। हाँ ! सब चौपट हुआ ! बिगड़ी बात—उहुँक—वार्ता संशोधित होकर भ्रष्ट हो गई ? और यह सब उसी पाजी टेसुआ के कारण, इसी से तो शरीर में अग्नि लगी हुई है। उस साले का मुण्ड बिना विदीर्ण किए मैं आज मानूँगा नहीं। इधर से गया है तो इधर ही से वह पुनः आगमन भी करेगा। इसलिए यहीं उसकी प्रतीक्षा करनी चाहिए। संयोग से बैठने के लिए यह पीपा अच्छा प्राप्त हुआ। (पीपा पर बैठना चाहता है।)

टेसू—(पीपे से झाँक कर) मगर ज़रा सम्हल कर बैठिएगा।

साहित्यानन्द—(चौंक कर खड़ा होता हुआ) क्या ? कौन है ?.........धत् तेरे की ! (कानों को उँगली से साफ़ करता हुआ) यह कानों का भ्रम रह-रह कर अद्भुत शङ्का उत्पन्न कर देता है। (पीपे पर दोनों पैर एक ही तरफ़ लटका कर बैठता है।) हाँ, क्या सोच रहा था ? विसर्जन कर गया। जाने दो—उहुँक—गमन करने दो। मैंने इसी उद्देश्य से पत्र निकाला था कि साहित्यिक संसार में अपनी धाक जमाने के साथ शिक्षित महिलाओं के परिचय का सौभाग्य भी प्राप्त करूँ। विज्ञापन दे-देकर इन लोगों के लेख तथा फ़ोटो इसी हेतु मँगवाता और निरन्तर प्रकाशित करता आया कि इनको मुग्ध करके इनके प्रेम का आनन्द उठाऊँ और फिर उनमें से चुन कर सब से उच्च रूप, गुण तथा योग्यता वाली आदर्श रमणी से अपना साहित्यिक विवाह कर सकूँ।

टेसू—(पीपे से झाँक कर) ओहो ! ख़्याल तो बड़ा अच्छा और अनोखा है। पैसा कमाने के लिए अख़बार तो बहुतेरे निकालते हैं, मगर जोरू फँसाने के लिए अख़बार निकालते इन्हीं को देखा।

साहित्यानन्द—क्या-क्या-क्या ? (उठ कर इधर-उधर देखता है। और स्टेज पर घूम कर चारों तरफ़ ग़ौर से देखता है) कहीं पर कोई भी नहीं। परन्तु मनुष्य ही के समान कुछ शब्द सुनाई अवश्य पड़ा था। ओहो ! समझ—उहुँक—बोध कर गया। यह मेरे ही शब्दों की प्रतिध्वनि है, तभी स्पष्ट रूप से कर्णगोचर नहीं होती। अस्तु अभी तक टेसुआ नहीं लौटा। अच्छा कभी तो आएगा। (आकर पीपे पर फिर वैसे ही बैठता है।) हाँ, इतने परिश्रम के बाद भाग्य से एक आदर्श रमणी से पत्रों ही पत्रों में प्रेम का आभास भी प्राप्त होने लगा था कि उसका आनन्द लूटने के समय वह साला—उहुँक—जोरू का भ्राता संसारीनाथ फट पड़ा। वह मेरे स्थान पर जाकर मेरा जलपान उड़ाए और मैं यहाँ बैठा हवा खाऊँ। उसके हिस्से में रसगुल्ला, मोहन-भोग और मेरे हिस्से में—उहुँक—खण्ड में (जेब से कुछ पत्र निकाल कर) ये सञ्चित पत्र ? न भक्षण करने योग्य और न चाटने योग्य। उफ़ ! सोचते ही शूल की सी पीड़ा उठती है। एकान्त में पाऊँ तो उस हराम-ज़ादे—उहुँक—व्यभिचार-पुत्र को (दाँत पीस कर) इतना मारूँ, इतना मारूँ, इतना......

टेसू—पहिले अपनी तो ख़बर लीजिए।

(टेसू पीपे से चुपके-चुपके अपने हाथों को निकाल कर ज़मीन पर टेक लगाता है और भीतर ही भीतर अपने धड़ से पीपा लुढ़का कर साहित्यानन्द को गिरा देता है। जब तक साहित्यानन्द ज़मीन पर चिल्लाता हुआ पड़ा रहता है, तब तक टेसू अपने हाथों की टेक से पीपा का मुँह पीछे की तरफ़ करके उसमें ज्यों का त्यों घुसा रहता है।)

साहित्यानन्द—अरे ! बाप रे बाप ! अङ्ग-अङ्ग भङ्ग हो गए। हाय ! हाय ! मुण्ड भी विदीर्ण हो गया। (उठता हुआ) हत तेरे पीपे की। साला स्वयं ही लुढ़क गया। (खड़ा होकर बदन झाड़ता हुआ) मुझसे भूल हो गई, जो इस पर इस प्रकार बैठा था। यहाँ बैठने के लिए कोई अन्य उचित स्थान भी तो नहीं है। और टेसुआ को मारे बिना यहाँ से प्रस्थान करना भी ठीक—उहुँक—शुद्ध नहीं है। अपने द्वार पर जाकर प्रतीक्षा कर नहीं सकता। क्योंकि मेरी हत्यारिणी स्त्री द्वार बन्द किए हुए है। और मेरी ऐसी हीन दशा में वहाँ तिलोत्तमा के पिता जो कहीं आ पड़े तो आह ! तो न मुख दिखाते बन पड़ेगा और न मुख छिपाते। वह मुझे देख कर भला तिलोत्तमा से मेरे सम्बन्ध में क्या कहेंगे ? हाय ! मेरी सारी प्रतिष्ठा उसकी दृष्टि में भङ्ग हो जाएगी। नहीं-नहीं, इस रूप में मुझे इस समय अपने द्वार पर जाने का साहस नहीं होता। जब तक टेसुआ नहीं आएगा तब तक वह चुड़ैल कदापि द्वार नहीं खोलेगी। इसलिए यहीं चुपचाप बैठे रहना उचित है। अच्छा, अब मैं इस पर इस भाँति बैठूँगा तब कैसे यह लुढ़केगा।

(पीपे पर सामने की तरफ़ मुँह करके घोड़े पर बैठने की तरह बैठता है। वैसे ही जदुनाथ तिलोत्तमा के बाप के रूप में आता है।)

जदुनाथ—अरे ! क्या सम्पादक जी आप हैं ?

साहित्यानन्द—कौन, तिलोत्तमा के पिता ? हाय ! हाय !

(पीपे पर से उतरने की कोशिश करता है, मगर वैसे ही टेसुआ पीपे से अपना आधा धड़ निकाल कर, जो साहित्यानन्द के पीछे होने के कारण उसे दिखाई नहीं पड़ता, अपने हाथों के बल से अपने चारों तरफ़ घूमता है। उसके साथ-साथ पीपा भी अपने ऊपर साहित्यानन्द को लिए हुए घिरनी की भाँति चक्कर खाने लगता है।)

साहित्यानन्द—अरे ! अरे ! हाय ! बाप रे बाप ! यह क्या होने लगा।

ड्रॉप

दूसरा अङ्क समाप्त

(क्रमशः)

* * *

क्या श्री० सुखदेवराज पर ८ अभियोग चलाए जायँगे ?

लाहौर, १२ मई। आज फिर स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने, नवीन लाहौर षड्यन्त्र वाले मुक़दमे की पेशी हुई। अभियुक्तों ने प्रतिदिन की तरह अदालत में आते ही 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगाए और सम्मिलित स्वर से राष्ट्रीय गान गाए गए। इस्तग़ासा की तरफ़ से रायबहादुर पं० ज्वालाप्रसाद पब्लिक प्रॉसीक्यूटर और रायसाहब गोपाललाल पैरवीकार थे। अभियुक्तों की ओर से एडवोकेट लाला श्यामलाल, लाला अमोलकराम, श्री० अमरनाथ और मेहता प्राणनाथ पैरवीकार थे।

वकील के जिरह के उत्तर में सरकारी-गवाह गोविन्दसहाय ने कहा, कि मैंने किसी से नहीं सुना था, कि बड़े लाट की गाड़ी पर किसी ने बम मारा था। मैंने कल शनाख़्त करते हुए इन्द्रपाल (साधू) से कहा था, कि साधू जी, हम पर बड़ी मार पड़ी है। मैंने पुलिस के सामने बयान देते हुए कभी नहीं कहा, कि कुन्दन की दरख़्वास्त, दफ़ा १८७ ताज़ीरात-हिन्द के अनुसार मेरे विरुद्ध काम में लाई गई, उसकी छानबीन इन्स्पेक्टर मेहरअली ने की थी। कुन्दन ने मेरे विरुद्ध कोई अर्ज़ी नहीं दी थी। मुझे सब-इन्स्पेक्टर ने यह नहीं कहा था, कि मैं अगर इस मुक़दमे में गवाही दे दूँगा, तो मुझ पर मुक़दमा नहीं चलेगा। इसके बाद गवाह ने मुमताज़ हुसेन इन्स्पेक्टर की पहचान की और कहा कि यही वह पुलिस अफ़सर है, जिसने मुझे धमकी दी थी।

इसके बाद श्री० एफ़० एल० अमीन की गवाही आरम्भ हुई। उसने कहा—मैं वाटर लॉक कम्पनी का, गत मई १९२८ से मैनेजर हूँ। ता० २ नवम्बर को रामेश्वरदयाल नाम के, एक व्यक्ति के हाथ मैंने, एक मोटर साइकिल ३२०) रु० में बेची थी। इसके बाद गवाह ने उस आदमी के हस्ताक्षर की पहचान की और फिर कहा कि जब मैंने यह मोटर साइकिल ख़रीदी थी, तो यह ठीक चलती थी और इसमें किसी प्रकार का दोष नहीं था।

इसके बाद गवाह को मोटर साइकिल के पुर्ज़े दिखाए गए, तो उसने कहा कि ये उन पुर्ज़ों जैसे हैं, जो मैशीन में लगाए गए थे। परन्तु ठीक तौर पर नहीं कह सकता कि ये वही पुर्ज़े हैं। मेरा बयान पुलिस के सामने भी हुआ था।

लञ्च के बाद

लञ्च के बाद सभी अभियुक्त हथकड़ियाँ डाल कर जेल भेज दिए गए। जाते हुए अभियुक्तों ने 'भगतसिंह ज़िन्दाबाद', 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद', और 'शहीदाने-वतन ज़िन्दाबाद' के नारे लगाए।

पुलिस का ज़बरदस्त पहरा

अदालत की आज्ञा के अनुसार पुलिस श्री० सुखदेवराज को शाही क़िले में ले गई थी, इसलिए उसे फिर अदालत में वापस लाने के समय पहरे की काफ़ी व्यवस्था की गई थी। अदालत के चारों ओर शस्त्रधारी सिपाहियों का पहरा बिठा दिया गया। इसके सिवा सी० आई० डी० के आदमी भी सड़क पर घूमने लगे।

श्री० सुखदेव का आगमन

प्रायः ३ बजे श्री० सुखदेवराज पुलिस के सिपाहियों से भरी हुई लॉरी में बिठा कर अदालत में लाए गए। उनके हाथों में हथकड़ियाँ थीं। इस मोटर में जो पुलिस अफ़सर थे, वे सभी हथियारबन्द थे। मोटरगाड़ी से उतार कर श्री० सुखदेव अदालत के कमरे में लाए गए। सुखदेव ने हँसते हुए कमरे में प्रवेश किया।

हथकड़ी उतार दी गई

श्री० श्यामलाल ने अदालत से प्रार्थना की, कि श्री० सुखदेवराज, एम० ए० की हथकड़ी उतार दी जाय। क्योंकि हमें इनसे मुक़दमे के सम्बन्ध में बातचीत करनी है। इस प्रार्थना के अनुसार हथकड़ी उतार दी गई और बातचीत करने की आज्ञा भी दे दी गई। जब वकीलगण श्री० सुखदेव से बातचीत कर रहे थे, तब सी० आई० डी० के अफ़सर कुछ फ़ासले पर खड़े थे। इस समय

श्री० सुखदेव के पिता लाला गण्डामल तथा उनके बहुत से रिश्तेदार दर्शकों की गेलरी में बैठे थे।

इसके बाद वकीलों में इस बात पर बहस हुई, कि सुखदेवराज के विरुद्ध सभी मामले एक साथ ही चलाए जाएँ, या अलग-अलग। सफ़ाई के वकील लाला श्यामलाल ने कहा कि बेहतर होगा, कि श्री० सुखदेव को इसी मामले में शरीक किया जाए, क्योंकि यह एक षड्यन्त्र का मुक़दमा है।

श्री० अमोलकराम कपूर ने कहा, कि श्री० सुखदेवराज यह जानना चाहते हैं, कि इस्तग़ासा उनके विरुद्ध ट्रिब्यूनल के सामने मुक़दमा चलाना चाहता है या और किसी अदालत में ?

पब्लिक प्रॉसीक्यूटर रायबहादुर पण्डित ज्वालाप्रसाद ने कहा कि वे श्री० सुखदेव के विरुद्ध दो सरकारी गवाहों—इन्द्रपाल और मदनगोपाल—के अलावा ३० और गवाह पेश करना चाहते हैं और मुक़दमे को दो-तीन सप्ताह के अन्दर ही समाप्त कर देना चाहते हैं।

श्री० सुखदेवराज ने पब्लिक प्रॉसीक्यूटर से पूछा, कि सरकार उनके विरुद्ध कितने मुक़दमे चलाया चाहती है और उनका आधार क्या है ?

उत्तर में सरकारी वकील ने कहा कि सरकार श्री० सुखदेव के विरुद्ध सात-आठ मुक़दमे चलाना चाहती है, जो इस प्रकार हैं—(१) बम्बई षड्यन्त्र वाले मुक़दमे में दफ़ा ३०७ के अनुसार, (२) मि० धन्वन्तरी के साथ ख़ानबहादुर अब्दुल अज़ीज़ को मारने के लिए गुरुदासपुर जाना, दफ़ा ३०२, (३) दिल्ली षड्यन्त्र—डाका डालने और बमबाज़ी के अपराध में, दफ़ा ३११ के अनुसार. (४) बहावलपुर बम-केस, दफ़ा ३०७, (५) इलाहाबाद में पुलिस के साथ लड़ कर श्री० चन्द्रशेखर 'आज़ाद' नामक, जो फ़रार अभियुक्त मारा गया था, उसके साथ श्री० सुखदेवराज भी थे, जो मौक़ा पाकर रफ़ूचक्कर हो गए, इस अपराध के लिए दफ़ा ३०७ के अनुसार, (६) शालामार बाग़ में पुलिस अफ़सरों पर गोली चलाने के अपराध में, दफ़ा ३०७ के अनुसार, (७) लाहौर षड्यन्त्र केस में, फ़रार अभियुक्त भगवतीचरण के साथ बमबाज़ी में शामिल होने के अपराध में, दफ़ा ४,५,६ के अनुसार और (८) बहावलपुर की कोठी में जो बम फटा था, उससे भी इस व्यक्ति का सम्बन्ध है। सरकारी गवाह इन्द्रपाल ने अपने बयान में कहा था कि एक दिन यशपाल ने उसे (इन्द्रपाल को) बतलाया था कि सुखदेवराज उसके विरुद्ध प्रचार कर रहा है। इससे साफ़ प्रकट होता है कि इस मुक़दमे में भी वह एक षड्यन्त्रकारी है!

श्री० सुखदेवराज ने कहा, कि शनाख़्त-परेड पर जो आदमी मेरे साथ शामिल किए जाते हैं, वे अधिकतर सी० आई० डी० के आदमी होते हैं। इसके बाद उन्होंने कहा, मुझे लिखने के लिए क़लम-दावात और पिता से मिलने के लिए सुविधाएँ मिलनी चाहिएँ।

इस पर ट्रिब्यूनल के जज मि० सलीम ने कहा कि शनाख़्त-परेड के समय आपका वकील वहाँ उपस्थित रहा करेगा। क़लम, स्याही और काग़ज़ भी मिल जाएँगे। इसके सिवा सफ़ाई के वकील को प्रति दिन मिलने की भी आज्ञा दे दी गई। हफ़्ते में तीन रोज़ पिता भी मिल सकते हैं।

इसके बाद उक्त जज ने सरकारी वकील से कहा, कि वह आगामी १६ तारीख़ को निश्चय करके बताएँ कि अभियुक्त पर पहले कौन सा मुक़दमा चलाया जाएगा। इसके साथ ही गवाहों के नाम और उनकी गवाहियों के नोट भी अभियुक्त को दिए जाएँ और यह भी बतलाया जाय, कि सरकार उसके विरुद्ध मुक़दमा इसी अदालत में चलाना चाहती है, या किसी दूसरी अदालत में ? इसके बाद श्री० सुखदेव हथकड़ी लगा कर शाही क़िले में भेज दिए गए और मुक़दमा मुलतवी हो गया।

* * *

मनोरञ्जन और शिक्षा

कौटुम्बिक वेतन

साधारणतः देखा जाता है और बड़े-बड़े कारखाने वालों एवं दूकानदारों ने धनवान होने के लिए यही सिद्धान्त बना रक्खा है, कि ख़र्च कम और काम अधिक निकालने में ही अधिक लाभ होता है। भारत और इङ्गलैण्ड में इसी सिद्धान्त के कारण श्रमजीवियों और मिल-मालिकों अथवा पूँजीपतियों में सदैव अनबन रहती है और पूँजीपतियों की इस नीति के कारण श्रमजीवियों में असन्तोष बना रहता है—समय-समय पर गोलियाँ चलती हैं और हज़ारों व्यक्तियों की व्यर्थ ही मृत्यु हो जाती है। सम्भवतः यही सब दुर्व्यवस्था देख कर अमेरिका के सुप्रसिद्ध धनाढ्य मिस्टर हेनरी फ़ोर्ड ने कौटुम्बिक वेतन-पद्धति (Family Wages System) का अनुसन्धान किया और उसके द्वारा उपरोक्त सिद्धान्त को निर्मूल सिद्ध करके यह दिखा दिया है, कि अधिक वेतन देने से अधिक लाभ हो सकता है। इस पद्धति का अभिप्राय यही है, कि श्रमजीवी के काम के आधार पर वेतन निश्चय न करके उसके द्वारा पालन होने वाले कुटुम्ब पर वेतन निर्धारित करना। इस प्रकार श्रमजीवी के कुटुम्ब की न्यूनता और आधिक्य पर वेतन की न्यूनता और अधिकता निर्णीत करना ही इस पद्धति का मूल तत्व है। इसमें सन्देह नहीं, कि मिस्टर हेनरी फ़ोर्ड का यह अनुसन्धान बड़ा ही आश्चर्य-चकित कर देने वाला है और साधारण व्यापारी को बड़े ही असमञ्जस में डाल देता है। व्यापार तो लाभ के लिए किया जाता है, उससे और श्रमजीवी के कुटुम्ब से क्या सम्बन्ध? व्यापार कोई दान-क्षेत्र तो है नहीं; उसे काम न करने वाले व्यक्ति के भरण-पोषण का भार सिर उठाने से क्या प्रयोजन? परन्तु फ़्रेञ्च व्यापारियों ने इस पद्धति का अनुसरण करके इसकी उपयोगिता सिद्ध कर दी है।

फ़्रान्स में इसको कौटुम्बिक भत्ता (Allocations family Aid) कहते हैं। इसके अनुसार श्रमजीवी को वेतन तो दिया जाता है; परन्तु पूँजीपतियों की ओर से एक कोष (Funds) स्थापित कर दिया गया है और उस कोष में से प्रत्येक श्रमजीवी को उसके कुटुम्ब के अनुसार कौटुम्बिक भत्ता मिलता है। साधारणतः एक व्यक्ति के कुटुम्ब को २८ फ़्राङ्क, दो व्यक्तियों के कुटुम्ब को ६७ फ़्राङ्क, ३, ४, ५ और ६ व्यक्तियों के कुटुम्ब को क्रमशः ११६, १८२, २५३ और ३२८ फ़्राङ्क भत्ता-रूप में दिए जाते हैं। फ़्रान्स में ऐसे फ़ण्ड को संग्रह करने के लिए तथा उसका उचित रूप से व्यवहार करने के लिए अब सङ्गठित रूप से कार्य होने लगा है और अब तक तत्सम्बन्धी २२८ संस्थाएँ स्थापित हो गई हैं और उनके द्वारा २ करोड़ ६२ लाख फ़्राङ्क संग्रह होकर १७॥ लाख श्रमजीवियों में वितरित हुए हैं। यह धन मिल-मालिकों के सङ्घ द्वारा ही दिया गया है। अन्य व्यापारियों ने भी इस पद्धति को अपनाकर जो धन अपने यहाँ काम करने वाले श्रमजीवियों को दिया है, वह और जोड़ दिया जाय, तो इसका परिमाण १४ करोड़ ७५ लाख हो जाते हैं और उससे लाभ उठाने वालों की संख्या ४१ लाख ७१ हज़ार तक पहुँच जाती है। इस सम्बन्ध में विचारणीय बात यही है, कि इस पद्धति को वहाँ की सरकार ने नहीं, वरन् स्वयं पूँजीपतियों ने अपनाया और प्रचारित किया है। वे स्वयं इस देश-हित के साथ अपना लाभ देखते हैं; क्योंकि श्रमजीवियों में कठिनता उपस्थित होने पर ही असन्तोष उत्पन्न होता है एवं उसके परिणाम-स्वरूप हुई हड़ताल और उपद्रवों से देश और पूँजीपतियों की आर्थिक क्षति होती है। अतः इस पद्धति के लाभ को अनुभव करके इस पद्धति को समस्त फ़्रान्स में प्रचारित करने के लिए वहाँ की लोक-सभा (Parliament) में एक बिल उपस्थित होने वाला है। क्या भारत के पूँजीपति इस पद्धति का अध्ययन करके उसको अपनाएँगे?

—"हरेन्द्र" याज्ञिक

* * *

पक्षियों की पञ्चायत

बहुत से मनुष्यों ने पक्षियों के झुण्ड के झुण्ड पेड़ों अथवा पहाड़ियों पर बैठे अकसर देखें होंगे, किन्तु उनमें से बहुत कम लोगों को इस बात का ज्ञान होगा कि वे कदाचित अपने साथी के अपराध का विचार करने के लिए एकत्र हुए हैं?

ऐसे पक्षियों की पञ्चायत किसी विशिष्ट समय के अन्तर में नित्य हुआ करती है और मुख्यतः कौए, गौरइया इत्यादि पक्षियों में यह प्रथा प्रचलित है। अपराधी को न्यायालय में लाया जाता है और जब तक कि फ़ैसला नहीं सुना दिया जाता, सब पक्षी टाँय-टाँय चिल्लाते रहते हैं।

यदि अभागे पक्षी पर अपराध सिद्ध हो जाता है, तो समस्त पक्षिमण्डल उस पर टूट पड़ता है और उसे चोंचों से मार डालता है।

किसी अन्य पक्षी के घोंसले से तिनके चुराने के अपराध में प्राणदण्ड नहीं दिया जाता, किन्तु छः सात पक्षी मिल कर अपराधी का घोंसला तोड़ डालते हैं।

जब गौरइयों की पञ्चायत में किसी पक्षी का अपराध सिद्ध हो जाता है और वह अपराध प्राणदण्ड के योग्य नहीं होता, तो कुछ गौरइयाँ दण्ड का फ़ैसला सुनाती हैं और स्वतः उसे उचित दण्ड देती हैं। इसके पश्चात् सब पक्षी उसका अपराध भूल जाते हैं और उसे अपने दल में फिर से शामिल कर लेते हैं।

* * *

[हिज़ होलीनेस श्री० वृकोदरानन्द विरूपाक्ष]

एक हमारे 'अभ्युदय' दादा हैं कि मौक़ा ताक कर एक शिगूफ़ा छोड़ देते हैं और कुछ दक्षिणा सीधी कर लेते हैं। कभी अश्विनी-मुद्रा की शिक्षा देकर देश में ब्रह्मचारियों की भरमार कर देते हैं और कभी परम पतिव्रता मनोरमा बाई के पत्रों का संग्रह प्रकाशित कर, घर-घर सीताओं और सावित्रियों की रेल-पेल मचा देते हैं। देश का व्यापार चौपट हो रहा है, परन्तु यहाँ 'सदा दीवाली सन्त घर' का व्यापार चल रहा है।

❀

हाल में, शायद इसी परोपकार-वृत्ति के दुरपेटने से मजबूर होकर, आपने केवल चार गण्डे का एक 'भगतसिंह-अङ्क' निकाल डाला था। उसमें बातें वही थीं, जो अख़बारों में छप चुकी हैं। परन्तु जिस तरह मधु और घी समान मात्रा में एकत्र होकर महा अनिष्टकारी विष बन जाता है, उसी तरह यह भगतसिंह सम्बन्धी समाचारों और विवरणों का संग्रह अर्थात् 'अभ्युदय' का 'भगतसिंह-अङ्क' भी हमारी परमाराध्य सखी नौकरशाही के लिए विषवत हो गया था।

❀

परन्तु बक़ौल शख़्से 'दुश्मन अगर क़वीस्त तो निगहबाँ क़वीतरास्त !' अर्थात् शत्रु अगर बलवान है तो बचाने वाला उससे भी बलवान है। लेहाज़ा जनाब,'अभ्युदय' के इस 'भगतसिंह-अङ्क' की प्रतियाँ जब लोगों के घर पहुँच गई तो श्रीमती नौकरशाही के राम-राज्य की नौका भी डगमगा उठी। परन्तु जब निदान समझ में आ गया तो चिकित्सा में क्या देर लग सकती है! फ़ौरन वह 'भगतसिंह-अङ्क' ज़ब्त कर लिया गया। फलतः श्रीमती की डगमग नौका का पतवार भी सीधा हो गया। अब की तो बेचारी बाल-बाल बच गई, आइन्दा राम मालिक हैं।

❀

दादा 'अभ्युदय' जी के उस 'भगतसिंह-अङ्क' की सब से बड़ी विशेषता थी, "भगतसिंह का अन्तिम गान !" जिसे बेचारा मरते दम तक न भूल सका। बात यह थी कि वह 'न भूतो न भविष्यति' गान ही ऐसा था कि मरते दम तक तो क्या, मरने के बाद भी कोई उसे भूलने का नाम नहीं ले सकता।

❀

कवित्व, भाव, भाषा, उपमा, अलङ्कार, छन्द, गति, यति, जमक, अनुप्रास और प्रसाद आदि जितने गुण एक छन्दोबद्ध गान में होने चाहिएँ, वे सभी उसमें मौजूद हैं। उस अमर छन्द वाले, अमर गान की रचना करने में अमर कवि ने सङ्गीत और कविता, दोनों को ऐसा चारों ख़ाने चित पछाड़ा है कि दई मारे अगर जीते बच गए तो आजीवन याद रखेंगे, कि पड़ा था कभी किसी सङ्गीत-मर्मज्ञ सुकवि से पाला !

❀

हाय रे चौअन्नी, कमबख़्त ऐसे ही मौक़ों पर श्रीजगद्गुरु को धोखा दे जाती है। इसलिए बेचारे न तो वह 'भगतसिंह-अङ्क' ही देख सके और न वह 'अन्तिम गान' ही। सिर्फ़ 'आज' की कृपा से दो-तीन लाइनों का दर्शन हो सका है, जो इस प्रकार हैं :—

"इसी रङ्ग में गाँधी जी ने नमक पर धावा बोला।
भगत-दत्त ने छोड़ा बम का गोला।
पद्मकान्त ने मॉडर्न पर धावा बोला !"

इसमें अन्तिम लाईन, तो माशा अल्लाह, लाख रुपए की है; बशर्ते कि उसमें इतना और जोड़ दिया जाये—

चौअन्नी के लिए चतुर ने चहक चोंच है खोला।
कविता अरु सङ्गीत दोउन का फाड़ा चोली चोला
है 'अन्तिम सङ्गीत', नहीं यह चौबोला या रोला।
ठाले में सद्युक्ति ढूँढ़ ले और "मगन रहु चोला"।

❀

ख़ैर साहब, सरदार भगतसिंह जी ने बड़ा काम किया जो अन्त में लोगों को यह बताते गए कि—"पद्मकान्त ने मॉडर्न पर धावा बोला !" अन्यथा वह अश्रुतपूर्व, अद्वितीय और अलौकिक वीरतापूर्ण ऐतिहासिक कार्य बिल्कुल प्रच्छन्न ही रह जाता और अगली पीढ़ी के ऐतिहासिकों में इस बात को लेकर भयङ्कर वाद-विवाद चल पड़ता।

❀

कोई कहता, यह कार्य पं० पद्मसिंह शर्मा नाम के महापुरुष ने किया होगा, जो बड़े वीर थे और 'विद्यावारिधि' की धधकती 'ज्वाला' में कूद पड़े थे। ये महापुरुष ईसा की उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में आविर्भूत हुए थे और बीसवीं शताब्दी के मध्य तक मौजूद थे। साहित्य-नगर के सुप्रसिद्ध 'विहारी-सौध' का शिलान्यास इन्हीं के कर-कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ था। इतिहास लिखने वालों ने भूल से 'पद्मसिंह' की जगह 'पद्मकान्त' लिख दिया होगा।

❀

परन्तु बङ्गाल के ऐतिहासिक इस बात को हर्गिज़ स्वीकार न करते। वे इसका सारा श्रेय श्री० राधा कमल मुखोपाध्याय को देते और इस बात को सिद्ध करते कि जिस शताब्दी की यह घटना है, उस शताब्दी में श्री० राधाकमल का मौजूद रहना स्वयं-सिद्ध है। फलतः 'खोट्टा' लोगों ने द्वेष-वश "आरं एई अलौकिक श्रेय होइते एक जन बाँगाली के बोञ्चित करि बार जन्य" 'राधाकमल' की जगह 'पद्दो (पद्म) कान्त' लिख दिया होगा।

❀

और जनाब, अब तक तो लोग यही समझे बैठे थे कि श्री० पद्मकान्त जी केवल युग-प्रवर्तक कवि हैं, परन्तु सरदार भगतसिंह के 'अन्तिम गान' की बदौलत यह बात मालूम हो गई, कि युग-प्रवर्तक कवि के अतिरिक्त आप भगतसिंह, राजगुरु और बटुकेश्वर दत्त आदि की तरह 'धावा-बोलक' भी हैं और वह भी 'मॉडर्न' पर !

❀

परन्तु यहाँ तो ऐसे सङ्कीर्ण-हृदय लोग मौजूद हैं, जो "देखि न सकहिं पराइ विभूती !" इस 'अन्तिम-गान' को लोक-लोचन के समक्ष रखने के लिए दादा 'अभ्युदय' के प्रति कृतज्ञता प्रकाश करना तो दूर रहा, बार लोग उन्हें कोस रहे हैं। इसमें उनकी फूटी आँखों को 'सरदार भगतसिंह का अपमान' दिखाई पड़ रहा है। उनकी दृष्टि में 'मॉडर्न पर धावा' कोई महत्वपूर्ण कार्य ही नहीं है ! अरे वाह रे, कार्यों की कसौटी वाले !

❀

परन्तु श्री० जगद्गुरु 'धावा बोलने' के महत्व को अच्छी तरह समझते हैं और लड़कपन में, बाल-गोपालों की महती सेना के साथ बाबा लेखादास के अमरूद के पेड़ों पर धावा बोल भी चुके हैं। बाबा लेखादास एक टाँग के लँगड़े थे, परन्तु ढेले चलाने में सव्यसाची को भी मात कर देते थे। जिस वक़्त "कौन हौ रे सरवा" कह कर लाठी के सहारे उचकते हुए, उन्होंने हमारी 'वानर सेना' पर ढेला-वृष्टि आरम्भ कर दी, उस वक़्त हमीं थे जो सर्र से नौ दो ग्यारह हो सके !

❀

बाप रे बाप ! तभी से मालूम हो गया कि धावा बोलना कोई हँसी-खेल नहीं है। इसके लिए पैरों में पलायन शक्ति की आवश्यकता होती है और खोपड़ी में उपस्थित बुद्धि की। यह कला है, साधना है, योग है—य पलायति स जीवति इसका मूल मन्त्र है। यह कोई दिल्लगीबाज़ी नहीं है। इसका महत्व कोई भगतसिंह ही समझ सकता है। 'जुआ युद्ध पासे का सार, ये क्या जानें जाति गँवार !'

❀

कलकत्ते में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का बीसवाँ अधिवेशन हो रहा है। वहाँ के हिन्दी-रसिकों ने अपनी विशाल नगरी के उपयुक्त ही विशाल-वपु सभापति भी चुना है। आपका नाम 'रत्नाकर' भी माशा अल्लाह, विशालता और गम्भीरता का ही द्योतक है।

❀

'छायावाद' और 'रहस्यवाद' के 'बाधाबन्ध-विहीन' युग में ब्रजभाषा के 'रत्नाकर' को साहित्य-सम्राट् के सिंहासन पर समासीन करके कलकत्ते वालों ने बता दिया है कि अभी हिन्दी-संसार में वृद्धा ब्रजभाषा के क़द्रदानों की कमी नहीं है। अभी भी यहाँ उनकी कमान सी कमर और झुर्रीदार कपोलों पर हज़ार जान से निछावर होने वाले मौजूद हैं।

❀

इसके सिवा 'ऐन जवानी में माँझा ढील' सम्मेलन को भी एक ऐसी ही वयोवृद्धा और जहाँदीदा धात्री की आवश्यकता थी, जो तीमारदारी में निपुण, टोटकों की जानकार और धात्रि-विद्या में डिप्लोमा-प्राप्त हो। क्योंकि बेचारे को किसी पुरानी डाइन की नज़र लग गई है।

❀

इसलिए, श्री जगद्गुरु की सलाह है कि श्री रत्नाकर जी सब से पहिले उसके गले में काल भैरव का 'गण्डा' बाँध कर ललाट पर काजल का तिलक लगा दें और मुमकिन हो तो इलाहाबादी दाइयों के चङ्गुल से बेचारे को मुक्त करने की चेष्टा करें। क्योंकि इन मनचलियों का सारा समय तो छैल-चिकनियों के साथ हँसी-मज़ाक़ में ही बीत जाता है, रोगी को पथ्य-पानी देने का समय ही नहीं पातीं।

❀

हम तो कहते हैं कि न हो तो उसे अपने साथ लखनऊ ही लेते जायँ, परन्तु सुना है, गोमती के पानी में कोई ऐसी ख़सूसियत होती है, कि उसे कुछ दिन पीने के बाद आँखों में सुरमा लगाने की आवश्यकता अनिवार्य हो जाती है। इसके सिवा वहाँ के चौक नामक स्थान को भी लोगों ने बुरी तरह बदनाम कर रक्खा है। फलतः लखनऊ इसके लिए मौज़ूँ स्थान न होगा।

❀

तो क्या कलकत्ता सूटेबिल स्थान होगा? लाहौल-विलाक़ूव्वत! वहाँ की आबोहवा तो साहित्यिक सभाओं के लिए और भी गई बीती है। कितनी ही नई और पुरानी तथा हट्टी-कट्टी प्रसूतियाँ वहाँ मृतवत्सा की पदवी पा चुकी हैं। नान्दीमुख श्राद्ध के समय तो बच्चे बड़े मोटे-तगड़े और होनहार दिखाई पड़ते हैं, परन्तु दाँत निकलते ही ऐसे पिलपिला उठते हैं कि फिर 'डोंगरे का बालामृत' भी कोई काम नहीं देता।

❀

ख़ैर, कुछ भी हो, अपने राम की तो सवा सोलह आने यही राय है, कि अगर सम्मेलन को त्रिवेणी में आत्म-विसर्जन करने से बचाने की इच्छा हो तो उसे उधर ही कहीं—कानपुर या बनारस में—धूनी रमा कर अलख जगाने दिया जाय; क्योंकि भारद्वाज आश्रम में रह कर बेचारा पूरी तपस्या कर चुका है। अब अगर फिर उसे यहीं आने दिया गया तो निश्चय ही भव-बन्धन से विमुक्त होने की चेष्टा में लग जाएगा।

❀

परन्तु कुछ अनुभवियों का कहना है, कि काशी की 'नागरी-प्रचारिणी-सभा' को छोड़ कर, हिन्दी की जितनी संस्थाएँ हैं, उनमें से शायद ही कोई ऐसी हो, जिसने बीस वर्ष से अधिक की परमायु प्राप्त की हो। अगर यह कथन सत्य है और शास्त्र-सम्मत है तो श्री० जगद्गुरु अपना सारा उपर्युक्त निवेदन—अथ से इति तक—वापस लेने को तैयार हैं। फलतः जिन आँखों ने आज का सम्मेलन सम्बन्धी फ़तवा पढ़ा हो वे रो-धोकर अपने कुकर्म का प्रायश्चित्त कर डालें!

❀

किसी दलाल भाई ने 'यङ्ग-इण्डिया' में लिखा है कि औरतें फिर विलायती कपड़े ख़रीदने लगी हैं। तो क्या बुरा करती हैं? एक तो फ़ैशन का युग, दूसरे मई का महीना। ऐसी अवस्था में खद्दर पहन कर कौन गर्मी से पिघलने और 'भुँचड़ू' सी सूरत बनाने जाए? देश की भलाई के लिए शौक़ीनी छोड़ना न तो भले आदमी का काम है और न 'भले आदमिन' का!

❀

सर विलियम बर्डउड किसी समय इस देश के प्रधान सेनापति थे और आजकल अपनी अमूल्य सेवा के बदले पेन्शन पा रहे हैं। फलतः उसी 'पुरातनी प्रीति' के नाते भारत पर आपकी बड़ी दया रहा करती है। बल्कि यों कहिए, कि सुअवसर और सुयोग पाकर कभी-कभी वह दया ऐसी भड़क उठती है कि बेचारे परेशान हो जाते हैं।

❀

अभी हाल ही की बात है, आपको उस पुराने रोग अर्थात् भारत-प्रेम का दौरा हो गया था। इसलिए अपने देशवासियों की ज्ञानवृद्धि तथा भारतीय राजनीतिज्ञों को अज्ञानान्धकार से निकालने के लिए आपने कई अत्यन्त मौलिक, उपादेय और सारगर्भित बातें कह डाली हैं। अगर सुनने की इच्छा हो तो उपयुक्त कर्णशलाका द्वारा पहले अपने कर्ण-कुहरों को परिष्कार कर लीजिए।

❀

सर बर्डउड ने फ़रमाया है—'भारतीय राजनीतिक देश-प्रेम की तो बड़ी बड़ाई किया करते हैं, परन्तु अपने देश के सम्बन्ध में जानते कुछ भी नहीं। वे इस बात का प्रचार किया करते हैं कि ब्रिटिश शासन के कारण भारत की आर्थिक दुरवस्था हुई है, परन्तु हिन्दू राज्य में भारत की कैसी आर्थिक दुरवस्था थी, इसकी उन्हें ख़बर ही नहीं है।' उदाहरण स्वरूप आपने जो कुछ फ़रमाया है, उसे पढ़ कर आप यही कहेंगे कि बारह बरस दिल्ली में रहा पर भाड़ ही झोंका किया।

❀

ख़ैर, आप फ़रमाते हैं—"महाभारत में लिखा है कि ईसा से २४० वर्ष पहले, महाराज अशोक के शासनकाल में एक लाख आदमी मरे थे और डेढ़ लाख बन्दी हुए थे। १५९५ ईस्वी में, अकबर के राजत्वकाल में, ऐसा भीषण अकाल पड़ा था कि ब्राह्मणों को कुत्ते तक मार कर खा जाना पड़ा था। लाशों से रास्ते भर गए थे, जिससे सारे देश में भयङ्कर महामारी फैल गई थी।"

❀

बस, अधिक नहीं, माफ़ कीजिए और इतने से ही समझ लीजिए कि यह बर्डउड कैसा 'उड-बर्ड' (कठफोड़वा पक्षी) है। ऐसे ही मौलिक ज्ञान वाले सख्त नौकरशाही के 'राजकर्मचारी' बन कर इस देश में आते हैं। इसी से तो उनका राज्य राम राज्य का भी कान कतर रहा है और श्रीमती के सुयश-सागर में बूढ़ा भारत ऐसा डूबा है कि उभरने का नाम ही नहीं लेता।

❀

मुफ़्त ! मुफ़्त !! मुफ़्त !!

जो कवच २) में मिलता था, आज वह सिर्फ़ १२ दिन के वास्ते मुफ़्त भेजा जाता है। यह कवच संसार भर के जादू, तन्त्र-मन्त्र, ज्योतिष चमत्कारों से परिपूर्ण है, इसके धारण करने से हर तरह के काम सिद्ध होते हैं। जैसे रोज़गार में लाभ, मुक़दमे में जीत, सन्तान-लाभ, हर तरह के सङ्कटों से छुटकारा, इम्तिहान में पास होना, इच्छानुसार नौकरी मिलना, जिसको चाहे वस कर लेना, हर प्रकार के रोगों से छुटकारा पाना, देश-देशान्तरों का हाल क्षण भर में जान लेना, भूत-प्रेतों को बस में कर लेना, स्वप्न-दोष का न होना, मरे हुओं से बातचीत करना, राज-सम्मान होना, कहाँ तक गिनाएँ, बस जिस काम में हाथ डालिएगा, फ़तह ही फ़तह है। १२ दिन तक फ़्री, बाद १२ दिन के १ कवच का मूल्य २), तीन का ५॥) डाक-महसूल ॥≈) ; ध्यान रहे मरे हुओं की १ पुश्त तक का हाल बतावेगा, दूसरे के ज़िम्मेदार हम नहीं। अगर कोई झूठा साबित करे तो १२) इनाम। सन्तान चाहने वाले स्त्री और पुरुष दोनों ही कवच मँगावें।

पता—एस० कुटी हाटखोला (कलकत्ता)

रजिस्टर्ड

शान्तिधारा

महात्मा का प्रसाद नीचे लिखे रोगों में रामबाण है, जैसे हैज़ा, प्लेग, दस्त, डकटी, पेचिश, फ़सली बुख़ार, मलेरिया, निमोनिया, फोड़ा-फुन्सी, हड्डी के जोड़ों का दर्द, कान व पेट का दर्द, दमा, खाँसी, सर्दी, बिच्छू-साँप और-और ज़हरीले डङ्कों का काटना, कुछ दिन नियमानुसार लेप करने से स्वेत-कुष्ठ जड़ से मिट जाता है। हर एक घर में सदा रखने की चीज़ है। मूल्य छोटी शीशी ।॥), बड़ी १), एक बार ६ शीशी मँगाने से डाक-ख़र्च माफ़।

शान्तिधारा औषधालय

८२ कोलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता

असल रुद्राक्ष माला

🖕) आना का टिकट भेज कर १० दाना नमूना तथा रुद्राक्ष माहात्म्य मुफ़्त मँगा देखिए।

रामदास एण्ड को०,

३ चोरबगान स्ट्रीट, कलकत्ता

लूटो ! लूटो !! ख़ूब लूटो !!!

हमारी मशहूर दाद की दवा २४ घण्टे में दाद को साफ़ कर देती है। १ दर्जन का दाम ३।), दो दर्जन एक साथ लेने से ३ सच्ची घड़ियाँ ठीक समय बताने वाली गारण्टी सहित, साथ में पैर के नाप का जूता भी मुफ़्त मिलेगा। डाक-महसूल १ दर्जन ॥), दो दर्जन १)

पता—फ़्रेण्ड्स ऑफ़ इण्डिया, हाटखोला (कलकत्ता)

सच्चा और असली

"नेत्र-बन्धु सुर्मा"

रतौंधी, तारीकी, धुन्ध, जाला, माड़ा, लाली, मोतियाबिन्द, ढलका, नाख़ूना और खुजली अर्थात् नेत्र सम्बन्धी तमाम रोगों को जड़ से आराम कर देने के लिए हमारा यह नेत्र-बन्धु सुर्मा अपूर्व बल और गुण सम्पन्न है। अगर आँखों में किसी क़िस्म की शिकायत न भी हो तो भी इसे बराबर लगाने से नेत्र की ज्योति तेज बनी रहती है, आँखों में होने वाली तमाम बीमारियों से बचाए रखता है। बच्चे, जवान, मर्द और औरत सबको समान रूप से हितकारी है। दाम प्रति तोला १) रुपया, डा० म० अलग। एक तोला से कम सुर्मा नहीं मिलेगा।

पता—एस० ए० बी० बक्सी एण्ड कं०

कोठी नं० ७० कोलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता

दी कलकत्ता होमियो फ़ारमेसी की

असली और ताज़ी दवाइयाँ -)॥ प्रति ड्राम क्रमशः २४, ३०, ४८, ६०, और १०४ शीशियों वाले फ़ैमिली बक्स की क़ीमत मय एक ड्रापर और हिन्दी में एक चिकित्सा-विधान के ३), ३॥), ५॥), ६॥।) और १०॥।≈) गोलियाँ, दूध की मिठाई, ग्लूब फ़ाएल्स, कार्क, कार्डबोर्ड-केस वग़ैरह सस्ते दाम पर मिलते हैं। उल्लिखित फ़ैमिली बॉक्स यदि अङ्गरेज़ी में चिकित्सा-विधान सहित लेना हो तो १) अधिक लगेगा।

पता—एस० आर० बिस्वास एन्ड सन्स, ७५—१ कोलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता

डॉक्टर बनिए

घर बैठे डॉक्टरी पास करना हो तो कॉलेज की नियमावली मुफ़्त मँगाइए! पता—

इण्टर नेशनल कॉलेज (गवर्नमेण्ट रजिस्टर्ड)

३१ बाँसतल्ला गली, कलकत्ता

आगे के लिए अभी से चेत जाइए

(सम्वत् १९८८ का हाल)

यदि आप यह जानना चाहें कि हमारा यह साल कैसा रहेगा—कौन वस्तु ख़रीद कर बेचने में लाभ होगा, नौकरी कब लगेगी, तरक़्क़ी, तबादला कब होगा, विवाह कब होगा, सन्तान क्या होगी, अचानक धन-प्राप्ति, मुक़दमे की हार-जीत, इम्तिहान पास, रोग-कष्ट, मृत्यु इत्यादि—तो आज ही एक पोस्ट कार्ड पर किसी फूल का नाम व अपना नाम और उमर लिख भेजिएगा। हम साल भर में होने वाले माहवारी हालात १।) रु० में भेज देंगे। भृगु-संहिता से तमाम उमर का हाल २॥) रु० में। जन्म-कुण्डली की नक़ल भेजें या दाहिने हाथ का पञ्जा छाप कर भेजें। विधि न मिली तो रुपया वापस करेंगे।

पता—मैनेजर ज्योतिषशास्त्र कार्यालय

(४) पो० बहरोड, राज्य अलवर

ग्रैण्ड क्लियरिङ्ग सेल !!

दोनों हाथों लूटिए !!!

हमारे निहायत ख़ुशबूदार ओटो मोहिनी एसेन्स (मूल्य प्रत्येक शीशी ८ आना) की ६ शीशियाँ ख़रीदने वाले को निम्न-लिखित चीज़ें उपहार में दी जायँगी १—नं० ३६ एच० की सुन्दर और मज़बूत घड़ी; १ फ़ैन्सी पॉकेट वाच (गारण्टी ३ वर्ष); १ द्वाय रिस्टवाच (लेदर बैण्ड के साथ) १ रूमाल; १ जोड़ी जूता (ज़ीन का बना हुआ), १ मनीबेग; १ फ़ाउण्टेन पेन; १ ड्रापर; १ चश्मा; १ सेट कुर्ते की बटन; ८ अँगूठियाँ। दाम इन उपहार की चीज़ों के साथ ६ शीशियों का केवल ३) पोस्टेज १० आना।

पता—एम० एन० वाच को०,

२०, जयमित्र स्ट्रीट, हथखोला, कलकत्ता

श्रीमहालक्ष्मी

और

वसन्त-बिहार

के जो सर्वप्रिय सुन्दर तिरङ्गे चित्र 'चाँद' में प्रकाशित हो चुके हैं, ग्राहकों के अनुरोध से इन्हें बड़े साइज़ में भी छपाया गया है। इन चित्रों का साइज़—

१५ × २०

है। ८० पाउण्ड के बढ़िया काग़ज़ पर छपे हैं। मूल्य फ़ी कॉपी ॥।) ; डाक-व्यय १ से ६ कॉपी तक ॥) ; थोक व्यापारियों के लिए ख़ास रियायत की जायगी। चित्र इतने सुन्दर छपे हैं कि फ़्रेम लगा, जिस कमरे में लगा दीजिए, उसी की शोभा बढ़ जायगी।

'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

पुस्तक क्या है, शिक्षा और विनोद की अनुपम वस्तु है। प्रत्येक चिट्ठी में सामाजिक तथा राजनैतिक कुरीतियों की ऐसी धज्जी उड़ाई गई है कि आप हँसते-हँसते लोट-पोट हो जायँगे! पुस्तक हाथ में लेते ही छोड़ने की इच्छा नहीं होती।

अङ्गरेज़ी के सुप्रसिद्ध दैनिक "पायोनियर" की सम्मति है :—

PIONEER

MAY 25, 1930

This book contains a series of letters by "Vijya- [illegible] lighter vein, and do credit to the writer. Most of his [illegible] him two annas to buy some paper. He could not satisfy her that he really would buy paper and not *Bhang* and could not explain how he needed as much paper as would cost two annas! He was assaulted, and saved the earthen pitcher by letting the poker fall on him rather than the utensil containing cold water! The Hindi is very easy, [illegible] Sahib who wanted to give a Rai Sahibship" to "Vijya- [illegible] Rai Sahibship should be given to "Lalla ki Mahtari." The book is neatly printed in the usual style of the CHAND Press Publications.

छपाई-सफ़ाई दर्शनीय; मूल्य ३); स्थायी ग्राहकों से २।)

यह वही पुस्तक है, जिसकी ६,००० प्रतियाँ हाथोंहाथ समाप्त हो चुकी हैं; जिसने असंख्य स्त्रियों को पाकशास्त्र की पण्डिता बना कर उनका जीवन सार्थक किया है; और जिसके लिए हमारे पास बधाइयों तथा प्रशंसा-पत्रों के ढेर लग गए हैं।

इस पुस्तक में प्रत्येक प्रकार के अन्न तथा मसालों के गुण- [illegible] दिया गया हो। प्रत्येक तरह के मसालों का अन्दाज़ साफ़ तौर से [illegible] प्रकार की मिठाइयाँ, नमकीन, बङ्गला मिठाई, पकवान, सैकड़ों [illegible]

[illegible]

पाक-चन्द्रिका

चाँद-कार्यालय, इलाहाबाद

[illegible] at The Fine Art Printing Cottage
28, Edmonstone Road, Chandralok—Allahabad

सम्पादक :—
श्री० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०

तार का पता :—
'भविष्य' इलाहाबाद

'भविष्य' का चन्दा

वार्षिक चन्दा ... १२) रु०
छः माही चन्दा ... ६॥) रु०
तिमाही चन्दा ... ३॥) रु०
एक प्रति का मूल्य चार आने
Annas Four Per Copy

एक प्रार्थना

वार्षिक चन्दे अथवा फ़ी कॉपी के मूल्य में कुछ भी नुक़्ताचीनी करने में पहिले मित्रों को 'भविष्य' में प्रकाशित अलभ्य सामग्री और उसके प्राप्त करने के असाधारण व्यय पर भी दृष्टिपात करना चाहिए।

वर्ष १, खण्ड ३ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार ; ४ जून, १९३१ | संख्या १२, पूर्ण सं० ३६

हिन्दू-पति—स्वर्गीय महाराणा प्रत

सत्ता के विरुद्ध लड़ते-लड़ते माघ, सम्वत् १६५३ को प्राण त्यागा था)

५०) रु० की पुस्तकें

२) रु० मासिक क़िश्त पर कैसे ली जा सकती हैं ?

(१) जो लोग अपनी ज्ञान-वृद्धि के उत्सुक हैं और प्रत्येक मास पुस्तकें मँगवाया करते हैं—जिससे बार-बार उन्हें डाक-व्यय देकर सरकारी ख़ज़ाना भरना पड़ता है—उनकी सुविधा के लिए तथा हिन्दी के प्रचार को दृष्टि में रखते हुए यह निश्चय किया गया है, कि कार्यालय से ५०) रु० के मूल्य का इच्छानुकूल पुस्तकें इस स्कीम के अनुसार प्रत्येक मेम्बर को रेलवे-पार्सल द्वारा भेज दी जावें और वे नियमित रूप से प्रत्येक मास के पहले सप्ताह में २) रु० कार्यालय को भेजते रहें।

(२) पुस्तकें केवल 'चाँद' तथा 'भविष्य' के प्रतिष्ठित ग्राहकों को ही दी जावेंगी, हर किसी को नहीं।

(३) कार्यालय का छपा हुआ प्रार्थना-पत्र इसी के साथ भेजा जा रहा है। ग्राहकों को इसी पर हस्ताक्षर करके भेजना चाहिए।

(४) प्रार्थना-पत्र स्वीकृत होने पर पुस्तकें देने पर विचार किया जायगा, यदि किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार का सन्देह उपस्थित हुआ, तो बिना किसी प्रकार का कारण बतलाए, उन्हें इन्कार कर दिया जायगा।

(५) सब प्रकार का इतमीनान हो जाने से यहाँ से इक़रारनामा हस्ताक्षर करने के लिए भेजा जायगा और साथ ही उनके पास पुस्तकों का बड़ा और नया सूचीपत्र भेज दिया जायगा, ताकि ग्राहक अपनी इच्छानुकूल पुस्तकें पसन्द करके अपना ऑर्डर बना कर भेज सकें।

(६) सूचीपत्र में जिन पुस्तकों का उल्लेख न होगा और यदि ग्राहक अन्य पुस्तकें मँगाना चाहेंगे तो उन्हें भेजने के लिए संस्था बाध्य न होगी।

(७) इन पुस्तकों पर किसी भी प्रकार का कमीशन नहीं दिया जायगा, चाहे वे अपनी प्रकाशित हों अथवा बाहरी (कमीशन केवल नक़दी पुस्तकें ख़रीदने पर ही देने का नियम है—इसे पाठक स्मरण रक्खें)।

(८) ऑर्डर देते समय ग्राहकों को ५०) रु० की जगह ६०-७० रुपयों की पुस्तकों का ऑर्डर बना कर भेजना चाहिए, क्योंकि प्रायः ऐसा होता है, कि माँगी हुई समस्त पुस्तकें स्टॉक में तैयार नहीं होतीं, अतएव उस समय जो भी पुस्तकें तैयार होंगी, उनमें से ५०) रु० के मूल्य की पुस्तकें भेज दी जावेंगी।

(९) पुस्तक भेजने में रेल का जो किराया लगेगा (जो नाम-मात्र का होता है) वह, तथा बिल्टी की रजिस्ट्री आदि का व्यय, ग्राहकों को ही देना होगा।

(१०) बिल्टी रेल तथा डाक-व्यय के अतिरिक्त ६) रु० की वी० पी० द्वारा भेजी जायगी, और शेष २२ क़िश्तें २) रु० मासिक की होंगी, जो प्रत्येक अङ्गरेज़ी मास के प्रथम सप्ताह में आ जाना चाहिए। भेजने में जो व्यय होगा वह ग्राहकों को ही देना होगा।

(११) यदि २ क़िश्तें पिछड़ गईं तो शेष सारा रुपया ग्राहकों को एक-मुश्त फ़ौरन चुका देना होगा! अन्यथा क़ानूनी कार्रवाही की जायगी और मुक़दमे के ख़र्च लिए ग्राहकों को ज़िम्मेदार होना पड़ेगा।

(११) यदि एक वर्ष तक प्रत्येक मास को क़िश्त समय पर अदा होती रही, तो उस ग्राहक को दूसरी बार भी ५०) रु० की पुस्तकें इसी शर्त पर भेज दी जावेंगी—पर यदि एक भी क़िश्त समय पर न पहुँची अथवा मुक़दमा आदि करना पड़ा तो उस ग्राहक से भविष्य में कोई व्यवहार न रक्खा जायगा।

हमें पूर्ण आशा है, पढ़ने के व्यसनी पाठक इस नई स्कीम द्वारा ईमानदारी से उचित लाभ उठावेंगे और हमें भी उत्तरोत्तर सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे।

* *

उपरोक्त नियमों में किसी भी प्रकार का परिवर्त्तन नहीं किया जायगा, व्यर्थ में आए हुए पत्रों का तब तक उत्तर नहीं दिया जायगा, जब तक पते का टिकटदार लिफ़ाफ़ा पत्रोत्तर के लिए न भेजा जायगा।

—मैनेजिङ्ग डाईरेक्टर की आज्ञा से

व्यवस्थापक 'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक,

इलाहाबाद

ऑर्डर-फ़ॉर्म

श्री० प्रबन्धक महोदय,

'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

महाशय जी,

मुझे आपकी नई स्कीम बहुत पसन्द है। आप मेरा नाम इसके मेम्बरों की सूची में लिख लें और प्रकाशित होते ही पुस्तकों का नया सूचीपत्र तथा इक़रारनामे (Agreement) का फ़ॉर्म हस्ताक्षर करने के लिए भेज दें। मुझे ५०) रु० के मूल्य की पुस्तकें एक साथ मँगाना स्वीकार है। ६) का वी० पी० (डाक-व्यय सहित) स्वीकार कर ली जायगी और नियमित रूप से आपको २) रु० हर मास के शुरू में पहुँचते रहेंगे।

मेरा 'चाँद'/'भविष्य' का ग्राहक-नम्बर —————— है।

हस्ताक्षर ——————

पूरा पता ——————

——————

——————

यदि पुस्तक मँगाना चाहते हों तो इसी ऑर्डर-फ़ॉर्म को साफ़-साफ़ भर कर भेजने की कृपा करें ताकि शर्तनामा हस्ताक्षर करने के लिए भेजा जा सके।

Our London Office
11, Aldwych, W. C. 2

Telephone : 205
Telegrams : 'Bhavishya'

इस संस्था के प्रत्येक शुभचिन्तक और दूरदर्शी पाठक-पाठिकाओं से आशा की जाती है कि यथाशक्ति 'भविष्य' तथा 'चाँद' और विद्याविनोद-ग्रन्थमाला का प्रचार कर, व संस्था को और भी अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करेंगे !!

पाठकों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि इस संस्था के प्रकाशन विभाग द्वारा जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं, वे एकमात्र भारतीय परिवारों एवं व्यक्तिगत मङ्गल-कामना को दृष्टि में रख कर प्रकाशित की जाती हैं !!

वर्ष १, खण्ड ३ | इलाहाबाद—बृहस्पतिवार; ४ जून, १९३१ | सं० १२, पूर्ण सं० ३६

चटगाँव और बर्मा में विद्रोह की आग

६०० विद्रोहियों ने पुलिस और फ़ौज पर आक्रमण किया !

चटगाँव को अदालत को सुरङ्ग द्वारा उड़ाने की भयङ्कर चेष्टा !!

बिजली के तारों से जुड़े हुए 'डाइनामाईट' ज़मीन खोद कर निकाले गए !

(३री जून की रात तक आए हुए 'भविष्य' के ख़ास तार)

बर्मा और चटगाँव की परिस्थिति दिनोदिन बड़ी गम्भीर होती जा रही है, और यदि असन्तोष की इस भीषण ज्वाला को शीघ्र ही शान्त करने का समुचित प्रयत्न न किया गया तो हमें भय है, ब्रिटिश सत्ता को इससे टकरा कर बहुत कुछ हानि उठानी पड़ेगी। निम्नाङ्कित 'भविष्य' के विशेष तारों से पाठक परिस्थिति की भीषणता का अनुमान कर सकते हैं :—

—२री जून का समाचार है, कि आज प्रातःकाल चटगाँव में ८ ऐसे कनस्तर मिले, जिनके 'डाइनामाईट' (बड़े भयङ्कर विस्फोटक, जिनसे सुरङ्ग तथा बड़ी-बड़ी इमारतें उड़ाई जा सकती हैं) होने का सन्देह किया जाता है। इस सिलसिले में निवारण घोष नामक एक नवयुवक (जो इन्हें कहीं ले जा रहा था) गिरफ़्तार किया गया है। कहा जाता है, जो बयान उसने दिया है, उसके आधार पर नालापाड़ा के मकान में तलाशी लेने पर ठीक उसी प्रकार के ३ और 'डाइनामाईट' बरामद हुए। दोपहर के बाद इसी प्रकार के ४ 'डाइनामाईट' अदालत की इमारत के समीप ही कचहरी-हिल नामक स्थान पर मिले। इनके चारों ओर बिजली के तार लपटे हुए थे और इस तार का एक सिरा घास से ढकी हुई ज़मीन के भीतर ही भीतर क़रीब ५० फ़ीट दूरी पर ले जाया गया था। जिस समय ये कनस्तर १५ इञ्च गहरी ज़मीन खोद कर निकाले गए, उस समय वहाँ डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट, डिपुटी इन्स्पेक्टर जनरल तथा सुपरिण्टेण्डेण्ट ऑफ़ पुलिस उपस्थित थे। बाद में ट्रिब्यूनल के कमिश्नरों ने भी, जो चटगाँव-षड्यन्त्र केस का निर्णय करने के लिए नियुक्त किए गए हैं, उस स्थान का निरीक्षण किया।

—दूसरा तार है कि कल रात में चटगाँव से १२ मील दूर हाथाज़ारी नामक थाने के हरिश्चन्द्र नामक एक दारोग़ा और सिपाहियों पर, जब कि वे शफ़ीनगर नामक स्थान की डकैती के सम्बन्ध में जाँच कर रहे थे—१५ मुसलमानों ने भयङ्कर आक्रमण करके इन पुलिस वालों को बुरी तरह घायल कर डाला। तीनों हस्पताल भेजे गए हैं।

—रङ्गून का २री जून का समाचार है, कि कल रात में रङ्गून-माण्डले मेल का एक इञ्जन और ३ थर्ड-क्लास के डब्बे पटरी से हट जाने के कारण चकनाचूर हो गए और ६ मुसाफ़िरों को चोटें आईं। घायल व्यक्ति प्यू-हस्पताल में भेजे गए हैं। रङ्गून से मेल शाम को रवाना हुआ था और यह दुर्घटना मील ११५।११ वाले पुल पर हुई बतलाई जाती है। कहा जाता है, कि रेल की पटरी हटाने के लिए भयङ्कर विस्फोटक पदार्थ से काम लिया गया था और इस कार्य के लिए विद्रोहियों पर सन्देह किया जाता है।

—प्रोम (बर्मा) का समाचार है, कि पुलिस और विद्रोहियों में फिर भीषण मुठभेड़ हो गई। कहा जाता है, जिस समय पुलिस का एक अफ़सर १० फ़ौजी सिपाहियों के साथ वैटिगन नामक स्थान से किसी डकैती की जाँच करने के अभिप्राय से जा रहा था, उसने ५ विद्रोहियों को क्वीनगी नामक स्थान के पास देखा और एक को गोली से मार डाला। जब कि वह मृतक के शरीर की परीक्षा कर रहा था, उसी समय इन्या नामक गाँव से क़रीब १०० विद्रोहियों ने निकल कर पुलिस वालों पर आक्रमण कर दिया। पुलिस ने भी गोलियाँ चलाईं। कितने मरे, इसका कोई पता नहीं चला है। एक हेड कॉन्स्टेबिल लापता बतलाया जाता है।

दूसरे दिन पञ्जाबी पल्टन घटना-स्थल पर भेजी गई। पैरों का निशान ढूँढ़ते हुए फ़ौज पौङ्गीक्याङ्ग नामक स्थान पर पहुँची और ४ पुङ्गी (बर्मी धर्म-गुरु) तथा ५ अन्य व्यक्ति गिरफ़्तार कर लिए गए, जिनके पास मार-काट तथा डकैती का सामान होना बतलाया जाता है; किन्तु उसी समय चारों ओर के गाँवों से निकल कर लगभग ५०० विद्रोहियों ने फ़ौज पर भीषण आक्रमण कर दिया। ४ घण्टे तक दोनों ओर से भीषण युद्ध होता रहा। इस युद्ध में फ़ौज ने १० विद्रोहियों को मार गिराया।

विद्रोहियों ने, कहा जाता है, आस पास की पुलिस-चौकियों पर भी आक्रमण किया, चारों ओर के घरों में आग लगाया और २ मुखियों के मकानों को भी जला कर ख़ाक कर डाला और जो कुछ उन्हें मिल सका, लूट-खसोट कर चम्पत हो गए। इतना भीषण युद्ध होने पर भी पुलिस और फ़ौज ने बड़ी बहादुरी का परिचय दिया और कहा जाता है, उन्हें कोई विशेष क्षति नहीं उठानी पड़ी। थागवड्डी से भी इसी प्रकार के भीषण समाचार आ रहे हैं।

—शिमला की ख़बरों से पता चलता है, कि फ़ेडरल स्ट्रक्चर कमिटी की बैठक ५वीं सितम्बर तक शुरू हो जायगी।

कहा जाता है कि फ़ेडरल स्ट्रक्चर कमिटी के लिए ८ अतिरिक्त व्यक्तियों के नाम पेश किए गए हैं, जिनमें सम्भवतः महात्मा जी, मालवीय जी, सर पुरुषोत्तम दास ठाकुरदास, रीवाँ के महाराज, साङ्गली के चीफ़, डॉ० शफ़ात अहमद ख़ाँ और एन० एम० जोशी का भी नाम है।

—लन्दन ३० मई—भारतीय धारा-सभा के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री० वी० जे० पटेल ने लन्दन में एक भाषण देते हुए भारत पर वर्तमान समय में होने वाले अत्याचारों के सम्बन्ध में ब्रिटिश-सरकार की कड़ी निन्दा की है। आपने कहा कि सन् ५७ के बलवे के बाद इस तरह का अत्याचार और कभी नहीं हुआ है। आपने पूछा कि क्या मि० मैकडॉनल्ड ने अपने जीवन की सारी प्रतिज्ञाओं को भङ्ग कर दिया है ?

आगे आपने कहा, कि भारत और ब्रिटेन अब ऐसे रास्ते पर आ गए हैं, जहाँ से उन्हें अलग होना पड़ेगा। अब प्रश्न यही रह गया है, कि वे मित्र बने रह कर अलग होंगे या शत्रु बन कर ??

—पेशावर का ३०वीं मई का समाचार है कि अफ़ग़ानिस्तान ने फिर फ़्रान्स से हथियार मँगाए हैं। कहा जाता है कि इस बार २२,००० फ़्रेञ्च राइफ़लें ब्रिटिश-भारत की राह से अफ़ग़ानिस्तान भेजे गए हैं।

—लाहौर का ३१वीं मई का समाचार है कि आज खुफ़िया विभाग की पुलिस ने मेसर्स लाजपतराय एण्ड सन्स की दूकान की तलाशी ली और 'सोज़-ए-वतन' नाम की एक पुस्तक की सभी प्रतियाँ उठा कर ले गई।

—लाहौर का ३१वीं मई का समाचार है कि वहाँ कुछ समाचार-पत्रों के ऑफ़िसों की दीवारों पर क्रान्तिकारी पर्चे चिपके हुए पाए गए हैं। कहा जाता है कि ये पर्चे ख़ून से लिखे गए हैं, और इनमें इस बात की धमकी दी गई है, कि क्रान्तिकारी ऐसे प्रत्येक भारतवासी की जान लेंगे, जिसने अपने देश के साथ विश्वासघात किया है।

—कलकत्ते का ३०वीं मई का समाचार है कि बनारस के राजा गोकुलचन्द ने हिन्दी पुस्तकों के प्रकाशन के लिए हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन को १०,०००) रु० का दान दिया है। श्री० बहादुरसिंह ने इलाहाबाद में हिन्दी-साहित्य की एक म्युज़ियम स्थापित करने के लिए १२,५००)रु० का दान दिया है। श्री० सीताराम सक्सेना ने प्रत्येक वर्ष हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ महिला-लेखिका को २००) का पुरस्कार देने की घोषणा की है।

—बारडोली का १ली जून का समाचार है, कि एसोसिएटेड प्रेस के प्रतिनिधि के यह पूछने पर कि सर चिम्मनलाल सीतलवाद का यह कहना, कि महात्मा जी क्षण-क्षण अपने विचार बदल रहे हैं, ठीक है या नहीं, महात्मा जी ने कहा, कि मैं नहीं समझता हूँ कि मैं अपने विचारों को बदल रहा हूँ।

गोलमेज़-परिषद के सम्बन्ध में पूछे जाने पर महात्मा जी ने कहा, यदि मैंने परिषद में भाग लिया, तो मैं अपनी पूरी शक्ति के साथ कॉङ्ग्रेस की माँगों को वहाँ पेश करूँगा। मैं वहाँ वास्तविक कार्यों में भाग लूँगा, न कि केवल एक दर्शक की भाँति कार्यवाही देखूँगा।

—पाठकों को विदित होगा कि पञ्जाब के विख्यात विप्लवकारी श्री० सुखदेवराज, एम० ए० गत २२वीं मई को लाहौर से इलाहाबाद लाए गए थे। कहा जाता है कि २७वीं मई के सन्ध्या-समय यूरोपियन लॉकअप में आपकी शनाख़्त-परेड हुई। एल्फ्रेड पार्क वाली घटना के समय जिस विद्यार्थी की साइकिल छीनी गई थी, वह शनाख़्त करने के लिए मसूरी से बुलाया गया था।

कहा जाता है कि ७॥ बजे रात में, लालटेन और टॉर्च लाइट की सहायता से शनाख़्त-परेड की गई। श्री० सुखदेवराज ने पुलिस से कहा था, कि शनाख़्त-परेड के समय उनके साथ कुछ विद्यार्थी भी खड़े किए जायँ, किन्तु ऐसा नहीं किया गया। पुलिस ने १०-१२ अन्य व्यक्तियों को शनाख़्त-परेड में खड़े होने के लिए पेश किया।

कहा जाता है कि गवाह रामकृष्ण मेहरा ने श्री० सुखदेवराज को पहचान लिया और कहा कि यह वही व्यक्ति है, जिसने मुझसे साइकिल छीनी थी।

गत ३०वीं मई को यूरोपियन लॉकअप में श्री० सुखदेवराज की दूसरी बार शनाख़्त-परेड की गई। कहा जाता है कि आज श्री० सुखदेवराज ने शनाख़्त-परेड में सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया और वे उन व्यक्तियों से दूर हट कर खड़े हुए, जो शनाख़्त-परेड में शामिल होने के लिए लाए गए थे। उनके इस विषय में एतराज़ करने का कारण यह बतलाया जाता है, कि वे चाहते थे कि शनाख़्त-परेड में अधिकांश लोग ऐसे हों, जो उनकी तरह दाढ़ी-मूँछ मुड़ाए हों, किन्तु इस बात पर ध्यान नहीं दिया गया। इसी कारण शनाख़्त-परेड शुरू होने के पहले वे अपने कमरे में चले गए। किन्तु थोड़ी देर बाद पुलिस द्वारा वे परेड में लाए गए। यह भी कहा जाता है, कि वे परेड में शामिल न होकर अलग ही खड़े रहे।

कहा जाता है कि शनाख़्त करने के लिए पुलिस के ६ आदमी बुलाए गए थे। इनमें से केवल एक व्यक्ति श्री० सुखदेवराज को पहचान सका।

गत ३१वीं मई को श्री० सुखदेवराज लाहौर को भेज दिए गए।

—सीराजगञ्ज (बङ्गाल) का २८वीं मई को समाचार है कि बाबू व्योमकेशचन्द्र लाहिरी नामक एक राजनैतिक कार्यकर्ता बङ्गाल ऑर्डिनेन्स के अनुसार गिरफ़्तार करके पबना भेज दिए गए हैं।

१ लाख सैनिक भर्ती करने की प्रतिज्ञा

महाराष्ट्र-केसरी सेनापति बापत ने बम्बई में एक अभिनन्दन पत्र के उत्तर में कहा है कि:—

मेरे सामने इस समय, स्वतन्त्रता के दीवाने १ लाख सैनिक एकत्र करने का कर्तव्य उपस्थित है। मैं १०वीं जून से पूना से अपना कार्य आरम्भ करूँगा, और इस कार्य के लिए सारे महाराष्ट्र, और आवश्यकता पड़ने पर सारे भारत का भ्रमण करूँगा। जब पूरे एक लाख सैनिक इकट्ठे हो जायँगे तो मैं उन्हें गाँधी जी के हाथों सौंप दूँगा। वे अपनी इच्छानुसार उनका उपयोग करेंगे।

—मिदनापुर का २८वीं मई का समाचार है, कि स्थानीय कॉङ्ग्रेस कार्यकर्त्ता बाबू जीवनरञ्जन सरकार तथा श्री० सुशीलचन्द्र दत्त नामक एक विद्यार्थी मदारीपुर में गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। बाबू ज्ञानेश्वरदास नामक एक अन्य कॉङ्ग्रेस कार्यकर्त्ता पर भी वारण्ट जारी किया गया है। कहा जाता है, कि इन पर क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेण्ट एक्ट के अनुसार कार्रवाई की जायगी।

—कानपूर के समाचारों से पता चलता है कि गत ३०वीं मई को वहाँ फिर दङ्गा हो गया। कहा जाता है कि मूलगञ्ज के चौराहे पर दङ्गाइयों ने भीषण उत्पात करना शुरू किया, जिसके फल-स्वरूप पुलिस को गोली चलानी पड़ी। अब तक के समाचारों से पता चलता है कि दङ्गे से तथा पुलिस की गोलियों से ४ व्यक्ति मरे हैं और २८ घायल हुए हैं। परिस्थिति अब शान्त बतलाई जाती है।

—रङ्गपुर (बङ्गाल) का २८वीं मई का समाचार है, कि आज तड़के ही पुलिस ने यहाँ के ७ प्रतिष्ठित सज्जनों के मकानों की तलाशी ली। किन्तु कोई सन्देहजनक वस्तु नहीं पाई गई। श्री० निर्मल समद्दार और श्री० दिनेश गुह नामक दो नवयुवक बङ्गाल क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेण्ट एक्ट के अनुसार गिरफ़्तार कर लिए गए हैं।

—दिल्ली का २८वीं मई का समाचार है कि गत रात्रि को लाट स्ट्रीट पर एक मिठाई वाले की दूकान में बम का एक भीषण धड़ाका हुआ। कहा जाता है कि धड़ाका के बाद ही एक युवक सदर बाज़ार की ओर भागता हुआ नज़र आया। वह पकड़ लिया गया। युवक ने पुलिस को अपना नाम डी० पी० शर्मा बतलाया है। इस धड़ाके के सम्बन्ध में मल्लू नामक एक और युवक भी गिरफ़्तार किया गया है। कहा जाता है कि इस हलवाई की दूकान पर दो बार पहिले भी बम का धड़ाका हो चुका है।

—बलियाकण्डी (बङ्गाल) का २७वीं मई का समाचार है कि चिकण्डी कॉङ्ग्रेस कमिटी के सेक्रेटरी बाबू मनोरञ्जन भट्टाचार्य गिरफ़्तार कर, फ़रीदपुर भेज दिए गए हैं और वहाँ बङ्गाल क्रिमिनल लॉ एमेण्डमेण्ट एक्ट के अनुसार क़ैद रक्खे गए हैं।

—भोल का २७वीं मई का समाचार है, कि वहाँ की जनता पर, जो एक सभा के लिए एकत्रित हो रही थी, पुलिस ने लाठी चला दी। भीड़ में औरत और बच्चे भी शामिल थे। लाठी के प्रहार से कुछ लोग घायल हुए हैं। घायलों में एक पुलिस-क्लर्क का लड़का भी है।

—कलकत्ते का २१वीं मई का समाचार है कि श्री० हरिपद सेन और श्री० नारायण चैटर्जी को, दिनेश गुप्त और रामकृष्ण विश्वास दिवस के सम्बन्ध में पर्चे चिपकाने के अभियोग में १)-१) रु० के जुर्माने की सज़ा दी गई है!

—कलकत्ते के समाचारों से पता चलता है कि वहाँ के प्रेज़िडेन्सी जेल के कुछ राजनैतिक क़ैदियों ने जेल के अधिकारियों के दुर्व्यवहार के प्रतिवाद में अनशन-व्रत ग्रहण किया है। कहा जाता है कि जेल के अधिकारियों ने किसी क़ैदी की माता का, जो अपने पुत्र से भेंट करने के लिए आई थी, अपमान किया है। इसके प्रतिवाद में क़ैदियों ने यह भी निश्चय किया है कि जब तक उनकी बातों पर विचार नहीं किया जायगा, वे अपने सम्बन्धियों से नहीं मिलेंगे।

—होशियारपुर का २६वीं मई का समाचार है कि श्री० ऊधोराम सूद नामक एक विद्यार्थी को, जिसके मकान की तलाशी आदमपुर में बम के धड़ाके के सम्बन्ध में ली गई थी, पुलिस ने पुलिस-स्टेशन पर बुलाया। कहा जाता है, पुलिस-स्टेशन से वह अब तक नहीं लौटा है।

—बनारस का २७वीं मई का समाचार है कि बनारस बम केस की एक अभियुक्त श्रीमती सधारानी देवी को वहाँ के स्पेशल मैजिस्ट्रेट ने ज़मानत पर छोड़ दिया है।

* * *

देहली षड्यन्त्र केस की अत्यन्त मनोरंजक कार्यवाही

'सभी षड्यन्त्रकारी दलों का उद्देश्य ब्रिटिश-शासन को उखाड़ फेंकना है'

'सी० इन सी०' और 'मिस्ट्रेस ऑफ़ दी हाउस' कौन थे ??

'वीरभद्र तिवारी दुमुँही चालें चलता था :: वह पुलिस को ख़बरें पहुँचाता था'

श्रीमती दुर्गा देवी ने सरदार भगतसिंह को छुड़ाने के लिए ३,००० रु० दिए !

आज ता० १६ मई की बैठक में दिल्ली षड्यन्त्र केस के मुख़बिर कैलाशपति ने एम० पी० अवस्थी की पगड़ी की शिनाख़्त की, जो कि उसने भगवानदास के लिए ख़रीदी थी। इसके बाद दो दरियों की भी शिनाख़्त की जिनमें से एक मृत विशम्भर दयाल को दी गई थी और एक एम० पी० अवस्थी की थी। अपना बयान जारी रखते हुए सरकारी गवाह ने कहा कि विशम्भरदयाल दल का सदस्य था। मेरा और उसका परिचय सितम्बर १९२९ में भवानीसिंह के द्वारा हुआ था। भवानीसिंह ने फ़रार अभियुक्त हज़ारीलाल से भी परिचय कराया था।

वॉयसराय की ट्रेन-घटना

इसके बाद मुख़बिर ने वॉयसराय की ट्रेन उड़ाए जाने का क़िस्सा प्रारम्भ किया। उसने कहा, आज़ाद के यहाँ से चले जाने पर बङ्गाल से हीरेन्द्रनाथ मजूमदार दिल्ली के बङ्गाली विद्यार्थियों का सङ्गठन करने के लिए आए। हीरेन्द्रनाथ ने काशीराम से कहा कि चूँकि मैं यहाँ दल का सङ्गठन करने के लिए आया हूँ, इसलिए मैं यहाँ के स्थानीय नेताओं से मिलना चाहता हूँ। मैं हीरेन्द्रनाथ से मिला। उस समय काशीराम भी उपस्थित थे।

एक क़ानूनी प्रश्न

सरकारी वकील ने पूछा—हीरेन्द्र ने क्या कहा था ?

मुख़बिर—उसने कहा था कि क्रान्तिकारियों की प्रान्तीय संस्थाओं में परस्पर घनिष्ट सहयोग की आवश्यकता है।

मि० आसफ़अली—गवाही का यह अंश ग़ैर-क़ानूनी है, जब तक कि हीरेन्द्रनाथ मुख़बिर के उपरोक्त कथन का समर्थन न करे।

प्रेज़िडेण्ट—क्या हीरेन्द्रनाथ इस मामले में गवाह है ?

सरकारी वकील—नहीं।

सरकारी वकील ने कहा, कि जो कुछ हीरेन्द्रनाथ ने मुख़बिर से कहा था, वह क़ानूनन् गवाही के अन्दर है। मि० आसफ़अली ने कहा कि हीरेन्द्रनाथ इस मामले का कोई षड्यन्त्रकारी नहीं है, न उसके ऊपर कोई मामला है, इसलिए हीरेन्द्र और कैलाशपति के आपस की बातचीत की गवाही बिल्कुल अप्रासङ्गिक है। इस पर सरकारी वकील मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने कहा कि हीरेन्द्रनाथ षड्यन्त्रकारी है, उसने प्रान्तीय दलों के एकीकरण की बात की थी, इसलिए उसकी बातचीत इस मामले की गवाही में प्रासङ्गिक है। मि० आसफ़अली ने कहा कि एक तो इस समय हीरेन्द्रनाथ पर कोई मामला नहीं चल रहा है। दूसरे मि० पील ने प्रारम्भ में ही कह दिया था, कि इस मामले की सीमा दिल्ली की घटनाओं तक ही परिमित रहेगी, इसलिए उपस्थित मामले के दायरे को बढ़ाना उचित नहीं है। चौधरी ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने कहा कि हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन का सम्बन्ध बङ्गाल के षड्यन्त्रकारी-दल से भी है, इसलिए हीरेन्द्रनाथ की बातचीत इस मामले की गवाही में प्रासङ्गिक है। सभी षड्यन्त्रकारी-दलों का उद्देश्य ब्रिटिश-शासन को उखाड़ फेंकना है।

इस सम्बन्ध में दोनों ओर की बहस सुन चुकने के बाद ट्रिब्यूनल के सदस्यों ने परस्पर परामर्श करके सरकारी वकील को प्रश्न पूछने की इजाज़त दे दी। मि० आसफ़अली का विरोध अदालत ने मिसिल में दर्ज कर लिया।

मुख़बिर ने अपनी गवाही के सिलसिले में आगे चल कर कहा, कि मैंने हीरेन्द्रनाथ से पूछा कि तुम्हारे दल का प्रमुख व्यक्ति कौन है, जिससे इस सम्बन्ध में बातें हो सकती हैं। हीरेन्द्र ने कहा, कि लाहौर कॉङ्ग्रेस में अतुल गङ्गोली से मिलिए। हीरेन्द्र ने गङ्गोली के नाम मुझे एक परिचय-पत्र दिया। परन्तु मैं लाहौर कॉङ्ग्रेस नहीं गया। परिचय-पत्र मैंने वीरभद्र तिवारी को दे दिया।

दिल्ली में भगवतीचरण और यशपाल के दो मकान थे। एक नया बाज़ार में था। दिसम्बर महीने के प्रारम्भ में वे लोग वॉयसराय की स्पेशल ट्रेन उड़ाने के सम्बन्ध में परामर्श करने के लिए कानपुर गए थे। कानपुर से वापस आने पर वे लोग मुझे दिल्ली में मिले। भगवतीचरण ने स्पेशल उड़ाने की सम्पूर्ण स्कीम, जो कि दल में तय हुई थी, मुझे बतला दी। स्पेशल ट्रेन की घटना के बाद पुलिस की कार्रवाई के डर से उन्होंने मुझे दिल्ली से पहले से ही बाहर चले जाने के लिए कहा। मेरे पास रुपया नहीं था। मैंने रुपया लाने के लिए विमलप्रसाद जैन को अजमेर के कॉङ्ग्रेस-नेता अर्जुनलाल सेठी के पास भेजा, क्योंकि मुझे मालूम था कि अर्जुनलाल सेठी क्रान्तिकारियों से सहानुभूति रखते हैं।

श्री० अर्जुनलाल सेठी

विमलप्रसाद जैन ने लौट कर बतलाया कि अर्जुनलाल के पास रुपया नहीं है, परन्तु अर्जुनलाल ने कहा है कि अगर शस्त्र ले आओ तो रुपए का प्रबन्ध हो सकता है।

इस पर मि० आसफ़अली ने कहा कि श्रीयुत अर्जुनलाल सेठी न तो इस षड्यन्त्र के कोई अभियुक्त हैं, न किसी षड्यन्त्रकारी दल के सदस्य हैं, इसलिए उनके विरुद्ध दिया हुआ बयान मिसिल में न दर्ज होना चाहिए। इसके अतिरिक्त उनके सम्बन्ध में मुख़बिर ने जो कुछ कहा है, वह दूसरों से सुना हुआ है।

सरकारी वकील ने कहा कि इस बयान से यह मालूम होता है कि मुख़बिर ने षड्यन्त्र में कितना भाग लिया है और उसका अर्जुनलाल सेठी से कैसे परिचय हुआ।

अदालत ने सरकारी वकील के मत को ग्रहण करते हुए अर्जुनलाल के विरुद्ध दिए हुए बयान को मिसिल में दर्ज कर लिया।

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि मैंने ३२० बोर वाला रिवॉल्वर अर्जुनलाल के पास भेज दिया। यह वही रिवॉल्वर था, जिसका प्रयोग राजगुरु ने सॉण्डर्स की हत्या में किया था।

मि० आसफ़अली ने कहा—क्या यह भी कोई गवाही है ?

कॉङ्ग्रेस के कुछ नेता वॉयसराय की ट्रेन उड़ाने के विरुद्ध थे।

मुख़बिर ने कहा कि आज़ाद और वैशम्पायन २२ दिसम्बर को कानपुर से आकर मुझे विमलप्रसाद जैन के घर पर मिले। आज़ाद को मैं नया बाज़ार वाले मकान में ले गया। वहाँ भगवतीचरण, फ़रार यशपाल और लेखराम तथा दूसरे लोग मिले। निश्चय हुआ कि उसी दिन ११ बजे दिन को क़ुदसिया बाग़ में दल की एक सभा की जाय। मैं सभा में गया था। आज़ाद ने कहा कि यशपाल और भगवतीचरण को वॉयसराय की स्पेशल ट्रेन उड़ाने का काम दिया गया था, परन्तु स्वर्गीय गणेशशङ्कर विद्यार्थी-सरीखे कुछ कॉङ्ग्रेस के नेता इस कार्य के विरुद्ध हैं, इसलिए मेरी राय से यह कार्य अभी स्थगित रक्खा जाय। इस विषय पर बहुत देर तक बहस होती रही। पाँच बजे शाम को निर्णय हुआ कि ट्रेन न उड़ाई जाय।

सरकारी वकील—क्या इस निर्णय के विरुद्ध भी कोई था ?

मुख़बिर—हाँ, भगवतीचरण, यशपाल और वीरभद्र तिवारी विरुद्ध थे। उनका कहना था कि स्पेशल ट्रेन अवश्य उड़ाई जाय।

सभा के समाप्त हो जाने पर भगवतीचरण अपने घर से कुछ छपी हुई नोटिसें लाया। वे ट्रेन-घटना के बाद बाँटने के लिए छापी गई थीं। नोटिस में ट्रेन उड़ाने के कारण बतलाए गए थे।

मि० आसफ़अली ने कहा—नोटिस के बिना यह गवाही निरर्थक है। ट्रेन उड़ाने का निश्चय बदल देने पर मुख़बिर को नोटिसें नष्ट कर देने के लिए दे दी गई थीं। सबूत-पक्ष यह नहीं प्रमाणित कर सका, कि नोटिसें अब भी मौजूद हैं। इस विषय में मुख़बिर की गवाही को बहुत सन्देह की दृष्टि से देखना चाहिए। हाईकोर्ट की नज़ीरें पेश करते हुए आपने कहा कि अदालत को किसी से काग़ज़ात में लिखी बातों की ज़बानी गवाही नहीं माननी चाहिए, जिस काग़ज़ात की मौजूदगी सबूत-पक्ष न साबित कर सका हो।

सरकारी वकील ने कहा कि ऐसे काग़ज़ात की गवाही क़ानूनन् ली जा सकती है।

मुख़बिर ने दल के सादे फ़ॉर्मों की शिनाख़्त की और कहा कि नोटिसें इन्हीं फ़ॉर्मों पर छापी गई थीं। एक प्रश्न के उत्तर में उसने कहा कि मुझे नोटिस की मूल-लिपि का पता नहीं है, न मुझे यही मालूम है कि कितनी प्रतियाँ छपी थीं।

रायबहादुर कुँवर सेन (जज)-मूल-लिपि कहाँ है?

मुख़बिर—मुझे नहीं मालूम।

सरकारी वकील—उन नोटिसों में लिखा क्या था?

"भारत का घोर शत्रु"

मुख़बिर ने कहा—नोटिस में लिखा था कि तत्कालीन वॉयसराय (लॉर्ड इर्विन) भारत का सब से बड़ा शत्रु था, उसे मार डालना उचित था। इसके कारण भी बताए गए थे।

ट्रेन उड़ा दी गई

२३ दिसम्बर को ३ बजे दोपहर के समय विमल ने भवानीसिंह के कमरे में आकर कहा कि वॉयसराय की ट्रेन उड़ा दी गई। इसके दूसरे दिन वैशम्पायन लाहौर चले गए, आज़ाद और विमल के साथ मैं नालगढ़ चला आया। हम लोग फ़रार रामचन्द्र शर्मा के कृषि-फ़ार्म में ठहरे थे। नालगढ़ को एकान्त और रक्षित स्थान समझ कर हम लोगों ने उसे दल का शिक्षण-केन्द्र बनाना निश्चय किया।

प्रश्न—शिक्षण-केन्द्र से तुम्हारा क्या अभिप्राय है?

उत्तर—शिक्षण-केन्द्र से मेरा अभिप्राय उस स्थान से है, जहाँ गोली चलाने और अन्य अस्त्रों के प्रयोग करने की शिक्षा दी जाती है।

रामचन्द्र शर्मा के लायसेन्स से एक बन्दूक़ ख़रीदने का विचार हुआ था।

पहली जनवरी को आठ बजे रात को हम लोग दिल्ली चले आए। निगम आज़ाद से मिलने के लिए बड़े उत्सुक थे। मैंने आज़ाद से निगम का परिचय करा दिया। दूसरी जनवरी को यशपाल मिले। मैंने पूछा, दल के निर्णय के विरुद्ध वॉयसराय की ट्रेन क्यों उड़ाई गई? यशपाल ने कहा मैं अपने साथियों से विवश था। उसने बतलाया कि मैं अपने साथी के साथ वहाँ गया और बम से सम्बन्ध रखने वाले बिजली की बटन (Switch) को दबा दिया। रास्ते में मोटर-साइकिल बिगड़ गई। हम दोनों शहर तक उसे ढकेल ले गए और एक मिस्त्री के यहाँ छोड़ दिया। यशपाल ने बतलाया कि इसके बाद हम दोनों सेकण्ड क्लास का टिकट लेकर ग़ाज़ियाबाद चले गए। ट्रेन उड़ाने के समय हम लोगों ने फ़ौजी वर्दी पहन ली थी।

चार हज़ार रुपया किसने दिया?

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि वॉयसराय की ट्रेन उड़ाने के लिए ४,०००) एकत्र किए गए थे। इस धन का अधिक भाग "हिन्दुस्तान टाइम्स" पत्र के रिपोर्टर, श्री० चम्मनलाल और एक पञ्जाबी ठेकेदार के द्वारा मिला था।

मि० आसफ़अली ने कहा—गवाही का यह अंश रिपोर्टर, मि० चम्मनलाल के विरुद्ध नहीं कारगर हो सकता।

अभियुक्त चिल्ला उठे—"चमन! अब हमारे कठघरे के अन्दर आ जाओ।"

प्रेज़िडेण्ट ने सरकारी वकील से पूछा—क्या मुख़बिर के बयान का यह अंश दर्ज करना मामले के लिए आवश्यक है?

सरकारी वकील ने कहा—"न दर्ज करने में कोई हर्ज नहीं है।"

इस पर अदालत ने वह अंश मिसिल में नहीं दर्ज किया।

मुख़बिर ने कहा, कि इसके एक सप्ताह के बाद आज़ाद कानपुर चले आए। निश्चय हुआ था कि मोटर-साइकिल नष्ट कर दी जाय। दूसरे दिन साइकिल के हिस्से खोल डाले गए। कुछ हिस्से असली घी-स्टोर्स में पहुँचा दिए गए, कुछ निगम के एक मित्र के यहाँ पहुँचा दिए गए, कुछ फेंक दिए गए और कुछ रामचन्द्र शर्मा के यहाँ रख दिए गए।

* * *

दूसरे दिन की बैठक के प्रारम्भ में सफ़ाई के वकील मि० आसफ़अली ने स्पेशल ट्रिब्यूनल से कहा कि इस केस के मुख़बिर यूरोपियन वार्ड में एक साथ ही रक्खे गए हैं। वे रोज़ आपस में मिल कर गवाहियों के विषय में चर्चा करते हैं। ट्रिब्यूनल ने इस मामले पर विचार करने का वचन दिया।

मि० आसफ़अली ने कहा, कि अब तक हम लोगों को अभियुक्तों के, पुलिस के सामने दिए हुए, बयानों की नक़लें भी नहीं मिलीं। मुझे सन्देह है, कि पुलिस के अधिकारी उन बयानों से मुख़बिर की गवाही का मिलान करके उसमें अपने पक्ष की मज़बूती के लिए संशोधन और परिवर्तन करते रहते हैं।

प्रेज़िडेण्ट—यह तो एक गम्भीर अभियोग है।

मि० आसफ़अली—मैं कोई अभियोग नहीं लगाता, परन्तु बयानों की नक़लों के देने में जो देरी हो रही है, वह सन्देह से बाहर बात नहीं है।

मुख़बिरों के एक साथ रखने के विषय में अदालत के प्रश्न करने पर सरकारी वकील ने कहा—मुझे इस विषय में कोई ख़बर नहीं मिली।

प्रेज़िडेण्ट—हम पता लगाएँगे।

इस पर मि० आसफ़अली ने मुख़बिर कैलाशपति से पूछा—क्या तुम लोग एक साथ नहीं रक्खे जाते?

कोर्ट-इन्स्पेक्टर ने कैलाशपति से कहा—तुम उत्तर देने के लिए बाध्य नहीं हो।

इस पर अदालत में हँसी हुई।

मि० आसफ़अली ने ट्रिब्यूनल से कहा, कि इस विषय में सीधे मुख़बिर से ही क्यों न पूछ लिया जाय।

प्रेज़िडेण्ट—मैं पता लगा लूँगा।

इसके बाद मामले की कार्रवाई शुरू हुई। प्रारम्भ में मुख़बिर ने दल के कुछ काग़ज़ातों की शिनाख़्त की। उसने कहा कि 'अर्जुन' भगवतीचरण का बनावटी नाम था। 'सी० इन सी०' शब्द आज़ाद के लिए प्रयुक्त होते थे, जिनका अर्थ 'कमाण्डर इन चीफ़' या प्रधान सेनापति था। "मिस्ट्रेस ऑफ़ दी हाउस" फ़रार प्रकाशो देवी का नाम था।

इसके बाद अपनी गवाही के सिलसिले में मुख़बिर ने कहा, कि वीरभद्र तिवारी ने 'यङ्ग सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी, बङ्गाल' के प्रतिनिधि से कहा कि हम लोग उनके साथ सहयोग करने की बात पर भगतसिंह और उनके साथियों को छुड़ा लेने के बाद विचार करेंगे।

धावा करने का सङ्कल्प

यह मालूम करके कि गैस बनाने वाला उपाय नहीं सफल हो सकता, उन लोगों ने लाहौर षड्यन्त्र केस पर विचार करने वाली अदालत पर धावा बोलने का निश्चय किया। मैंने अजमेर से मदनगोपाल को बुला कर भगवतीचरण से परिचय करा दिया। मदनगोपाल को मैंने कुछ पुस्तकें और एक पिस्तौल दी थी। कुछ सदस्य बन्दूक़, पिस्तौल और रिवॉल्वर चलाना सीखने के लिए नालगढ़ चले गए।

प्रश्न—कारतूसें किसकी लगती थीं?

मि० आसफ़अली ने कहा, कि यह प्रश्न उत्तर का भी सङ्केत करता है, इसलिए क़ानूनन् अनुचित है।

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि मैं अजमेर चला गया। आज़ाद और भगवतीचरण दिल्ली में ख़्यालीराम गुप्त के घर पर रहते थे। आज़ाद ने एक बार मुझसे ग्वालियर में रक्खे हुए बम बनाने के औज़ारों को लाने के लिए कहा था। हरद्वारीलाल से मेरा परिचय विशम्भरदयाल ने कराया था। हरद्वारीलाल टेलर-मास्टर था। कुछ समय के बाद वह दल का सदस्य बना लिया गया।

अभियुक्त—वाह! वाह! बड़े सच्चे हो, शाबाश!

फ़रार अभियुक्त हज़ारीलाल को मैंने मोटर ड्राइवरी सीखने के लिए अम्बाला भेज दिया था। आज़ाद, छैलबिहारी, विशम्भरदयाल और भवानीसिंह निशाना चलाने का अभ्यास करने के लिए भवानीसिंह के घर गढ़वाल चले गए।

मि० आसफ़अली—यह कोई गवाही नहीं है।

मुख़बिर—मैंने ही उनको भेजा था।

अभियुक्त—अच्छा! आप ही ने उनको भेजा था?

तीन दिन अभ्यास करने के बाद आज़ाद वग़ैरह गढ़वाल से वापस आ गए। साथ में भवानीसिंह के पिता की २ बोर वाली बन्दूक़ भी लेते आए थे।

"भारत में अङ्गरेज़ी राज्य"

अजमेर जाने पर मदनगोपाल ने मुझसे "भारत में अङ्गरेज़ी राज्य" पुस्तक माँगी थी। मैंने उससे पुस्तक का मूल्य भेजने के लिए कहा। उसने १०) सेण्ट स्टेफ़िन्स कॉलेज के फ़र्स्ट इयर कक्षा के छात्र कृष्णकुमार के पते पर भेज दिया। कृष्णकुमार भवानीसिंह का मित्र था। मेरे और भवानीसिंह के पत्र उसी के पते पर आया करते थे।

मई महीने के प्रारम्भ में आज़ाद कुछ सदस्यों के साथ निशाना चलाने का अभ्यास करने के लिए नालगढ़ चले गए।

प्रश्न—भगतसिंह आदि को छुड़ाने के लिए अदालत पर जो धावा बोलने का सङ्कल्प किया गया था, उसका क्या हुआ?

उत्तर—धन की कमी थी, इसलिए पहले इस कार्य के लिए धन एकत्र करने का निश्चय किया गया।

धन-प्राप्ति के उपाय

धन कैसे एकत्र किया जाय, इस पर विचार करने के लिए मैं, भगवतीचरण और आज़ाद कुदसिया बाग़ में एकत्र हुए। हम लोगों ने रेलवे क्लिअरिङ्ग एकाउन्ट्स ऑफ़िस के कर्मचारियों का वेतन, जो लगभग ९० हज़ार रुपयों के होता है, लूटने का विचार किया। निश्चय हुआ कि वेतन मिलने के दिन लॉरी पर बैङ्क से रुपया आने के समय आक्रमण करके लूट लिया जाय। इसके बाद लूट का रुपया लिए हुए मोटर काश्मीरी गेट के पास ठहरे। वहाँ अभियुक्त वैशम्पायन कुछ रुपया साथ लेकर उतर जाय। फिर वहाँ से चल कर मोटर कुदसिया बाग़ में ठहरे, वहाँ से साइकिल पर शेष सब रुपया अजमेरी गेट पर रहने वाले हरद्वारीलाल के घर पहुँचा दिया जाय। परन्तु भगवतीचरण की स्त्री श्रीमती दुर्गादेवी ने भगतसिंह आदि के छुटकारे के लिए ३,०००) दे दिए, इसलिए उपरोक्त लूट का विचार छोड़ दिया गया।

इसके बाद आज़ाद ने मुझे कुछ नोटिस फ़ॉर्म तथा वीरभद्र तिवारी से एक पिस्तौल लाने के लिए कानपुर भेज दिया।

चटगाँव के क्रान्तिकारी नेता

निश्चय हुआ था कि भगतसिंह और उनके साथियों को छुड़ा लेने के बाद नोटिस फ़ॉर्मों को छापने और उन्हें वितरित करने का कार्य किया जायगा। तिवारी ने मुझसे कहा, कि इधर कानपुर में कई जगह तलाशियों के होने के कारण सब चीज़ें एक गाँव में पहुँचा दी गई हैं। मैं बिना कोई चीज़ लिए दिल्ली लौट आया। तिवारी ने मुझसे कहा था कि कुछ चटगाँव के क्रान्तिकारी नेता आज़ाद से मिलना चाहते हैं। मैंने आज़ाद से कानपुर जाने के लिए कहा। आज़ाद ने कानपुर से आने पर चटगाँव के क्रान्तिकारियों से मिलने का ज़िक्र किया था।

प्रश्न—इसके बाद?

मुख़बिर दो मिनट तक कोई उत्तर नहीं दे सका। अभियुक्तों ने कहा—क्या आज भी भूल गए?

तीन ट्रङ्कों में क्या था?

मुख़बिर ने कहा कि भगवतीचरण ने मुझसे ख़याली-राम गुप्त के यहाँ से कुछ चीज़ें लाकर अपने यहाँ हिफ़ाज़त से रख लेने के लिए कहा था। मैं ख़यालीराम के यहाँ से तीन ट्रङ्क लाया। उनमें कई तरह के तेज़ाब थे। ट्रङ्कों में ताले बन्द थे। तालियाँ मुझे दे दी गई थीं। ट्रङ्कों में ६० पाउण्ड नाइट्रिक और सलफ़्यूरिक एसिड थी, ४ बम थे, कुछ गन-कॉटन और कुछ कपड़े थे। भगवतीचरण के लिखे कुछ लेख आदि भी थे।

मई महीने के तीसरे सप्ताह में मैं भगतसिंह और उनके साथियों के छुटकारे के सम्बन्ध में लाहौर चला गया।

निश्चय हुआ था कि छुटकारे के बाद अभियुक्तों को भिन्न-भिन्न सुरक्षित स्थानों में पहुँचा दिया जायगा। भगवतीचरण के लाहौर चले जाने के बाद एक दिन आज़ाद मुझे मारवाड़ी धर्मशाला में ले गया। वहाँ उसने मुझसे धर्मशाला के ऊपर जाकर रमेश नाम के एक व्यक्ति को बुला लाने के लिए कहा। मैं गया और रमेश को नीचे लिवा लाया। एक घण्टे तक वे दोनों गुप्त रूप से बातचीत करते रहे। बातचीत के बाद आज़ाद ने मुझसे कहा कि रमेश २,५००) रुपया देगा वह लेकर तुम्हें लाहौर जाना है।

इसके बाद अदालत जलपान के लिए स्थगित हो गई।

गाडोदिया स्टोर्स की डकैती

अपनी गवाही के सिलसिले में मुख़बिर कैलाशपति ने कहा, कि रेलवे क्लियरेन्स एकाउन्ट्स ऑफ़िस के लूटने का विचार स्थगित कर देने का समाचार हम लोग न्यू-हिन्दू होस्टल में जाकर लेखराम, भवानीसिंह, वैशम्पायन और विद्याभूषण को बतला आए।

इसके बाद सरकारी वकील के एक प्रश्न के उत्तर में मुख़बिर ने कहा, कि हरकेश म्यूनिसिपल स्कूल में अध्यापक था। अभियुक्त भागीरथ ने जून के महीने में उसका परिचय मुझसे कराया था। यशपाल के साथ एक विजय नाम का फ़रार अभियुक्त आया था। उसके रहने का प्रबन्ध हरकेश के साथ स्कूल-क्वार्टर में कर दिया गया था। परन्तु जब स्कूल के अधिकारियों ने स्कूल के हाते में एक बाहरी व्यक्ति के रहने में आपत्ति की तब हरकेश ने विवश होकर स्कूल-क्वार्टर को छोड़ दिया और एक किराए के मकान में विजय के साथ रहने लगा। जून के दूसरे सप्ताह में मैंने अभियुक्त बाबूराम गुप्त की दूकान से सौ पाउण्ड पोटैशियम क्लोरेट ख़रीदा। उसी महीने में हज़ारीलाल ने इर्गटन रोड पर कहीं से एक साइकिल चुराई, जिसे मैंने क्रान्तिकारियों के इस्तेमाल के लिए पटना भेज दी।

प्रश्न—बाबूराम गुप्त की दूकान से तुमने और भी कुछ ख़रीदा था?

उत्तर—मैंने ११ पाउण्ड कारबॉलिक एसिड ख़रीदा था, जिसके दाम बाद में दे दिए गए थे।

इसके बाद मुख़बिर ने अभियुक्त हरकेश की शिनाख़्त की।

गाडोदिया स्टोर कैसे लूटा गया?

मुख़बिर ने कहा कि दल के कार्यों के लिए आज़ाद रुपए की फ़िक्र में था। इसके लिए दल के कुछ सदस्य मेरठ और मुज़फ़्फ़रनगर भेजे जा चुके थे। मैंने आज़ाद से गाडोदिया स्टोर्स लूटने का विचार प्रकट किया। ४ जुलाई को मैं, आज़ाद और विशम्भरदयाल गाडोदिया स्टोर्स देखने के लिए गए।

विशम्भरदयाल स्टोर में नौकर था। दो-तीन घण्टे के बाद लौट कर आज़ाद ने दल से कहा कि गाडोदिया स्टोर लूटा जायगा। मैं, धनवन्तरि, काशीराम, विद्याभूषण, लेखराम और भवानीसिंह, सब ने मिल कर इस कार्य के लिए ६ जुलाई की तारीख़ निश्चय की।

६ जुलाई की शाम को हम लोगों की एक सभा हुई। उसमें तय हुआ कि धन्वन्तरि के साथ मैं क्वीन्स गार्डन में टाउन हॉल के पीछे साइकिल पर जाकर पहले से ही उपस्थित रहूँ। लेखराम, काशीराम, आज़ाद और विद्याभूषण के लिए मोटर पर जाना निश्चय हुआ। प्रत्येक व्यक्ति की भिन्न-भिन्न पोशाक थी।

प्रश्न—मोटर हाँकने वाला कौन था?

उत्तर—लेखराम।

क्वीन्स गार्डन पहुँचने पर मोटर महिला कॉङ्ग्रेस ऑफ़िस के पास रोक दी गई। लेखराम मोटर पर बैठा रहा और दूसरे लोग उतर कर टाउन हॉल के पीछे हमारे पास आ गए। क़रीब आध घण्टे के बाद विशम्भरदयाल गाडोदिया स्टोर गया और वहाँ से ख़बर लाया कि रोकड़ गिनी जा रही है। ख़बर पाते ही दल तुरन्त गाडोदिया स्टोर के लिए रवाना हो गया। धनवन्तरि से पहुँचते ही स्टोर के दरवाज़े पर खड़ा हो जाने के लिए कह दिया गया था। उसका काम स्टोर के अन्दर किसी बाहरी आदमी को आने से रोकना था। दूसरे लोगों का काम स्टोर के अन्दर का रुपया लूटना था। मैं हिन्दू होस्टल भेज दिया गया। मेरा काम होस्टल के फाटक को, मोटर आने के लिए खुला रखना था।

सरकारी वकील के प्रश्न के उत्तर में मुख़बिर ने कहा कि स्टोर का रुपया लूटने का काम काशीराम, विद्याभूषण, आज़ाद और विशम्भरदयाल को दिया गया था।

अभियुक्त—शाबाश!

मुख़बिर ने कहा कि हिन्दू होस्टल पहुँचने के थोड़ी ही देर बाद स्टोर से लूट का माल लिए हुए दल के लोग मोटर पर आ गए। हम लोग भवानीसिंह के कमरे में एकत्र हुए। साथ में दो या तीन बण्डल करेन्सी नोट थे, तीन रुपयों से भरे थैले थे और एक छोटी सी थैली में रेज़गारी वग़ैरह थीं।

लूट के सम्बन्ध में मालूम हुआ कि आज़ाद ने स्टोर में पहुँचते ही ख़ज़ाञ्ची को धमकाया, जिसने डर कर कुञ्जी वग़ैरह दे दी। लौटते समय कुछ लोगों ने रास्ता रोकने का प्रयत्न किया, जिस पर आज़ाद ने गोली चला दी।

प्रश्न—दल के लूट से वापस आने के पहले भवानीसिंह के कमरे में कौन-कौन लोग बैठे थे?

उत्तर—केवल मैं और भवानीसिंह

डेढ़ घण्टे के बाद मैं विशम्भरदयाल के साथ सीताराम बाज़ार वापस आ गया और दूसरे लोग रात भर होस्टल में ही रहे।

लूट के रुपयों का उपयोग

दूसरे दिन आज़ाद ने मुझसे बतलाया कि लूट में तेरह हज़ार रुपए से कुछ ऊपर मिला है। उसने कहा कि इनमें से ६ हज़ार रुपया कानपुर में बम बनाने की फ़ैक्टरी खोलने में व्यय किया जायगा। बचा हुआ रुपया दल के कार्य-सञ्चालन के लिए दल के सदस्यों में विभक्त कर दिया गया।

कुछ दिनों बाद मैंने दिल्ली में इलाहीबख़्श कम्पनी की दूकान से एक हवाई बन्दूक़ ख़रीदी। पञ्जाब नेशनल बैङ्क के लूटने की तैयारी के विचार से मैं अपने साथियों के साथ लाहौर के "मोज़ङ्ग हाउस" में उसके द्वारा निशाना चलाने का अभ्यास किया करता था।

१० जुलाई की शाम को दिल्ली के एडवर्ड पार्क में आज़ाद, धनवन्तरि और दूसरे लोग एकत्र हुए। मैं भी उपस्थित था। दल के किस कार्य में रुपया व्यय किया जाय, इस पर विचार हुआ। चार हज़ार रुपए जो मुझे दिए जा चुके थे, उनमें से पन्द्रह सौ रुपए ले लिए गए। बचे हुए रुपयों से पर्चे वग़ैरह छापने के लिए एक साइक्लोस्टाइल मैशीन ख़रीदने और दिल्ली में एक बम-फ़ैक्टरी क़ायम करने का विचार हुआ।

सीमा प्रान्त वालों की सहायता

दो हज़ार रुपए सीमा प्रान्त की जातियों में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध प्रचार करने के लिए पहले से ही अलग कर लिए गए थे। धनवन्तरि ने यह रुपया आसफ़ के द्वारा एक ऐसे व्यक्ति के पास भेज दिया, जिसका अफ़्रीदियों के नेता बादशाह गुल से निकट सम्बन्ध रहता था। निश्चय हुआ था कि पन्द्रह सौ रुपए जो मुझसे ले लिए गए थे वे वीरभद्र तिवारी को यू० पी० में प्रचार-कार्य के लिए दे दिए जायँ।

इसके बाद मुख़बिर ने कहा कि गाडोदिया स्टोर की डकैती के बाद विशम्भरदयाल का दिल्ली में रहना सुरक्षित न समझ कर मैंने उन्हें अजमेर के मदनगोपाल के साथ अजमेर में रहने के लिए भेज दिया।

अभियुक्तों की शिकायतें

जलपान के लिए अदालत के स्थगित होने के कुछ पहले अभियुक्त वात्सायन ने अभियुक्तों की ओर से अदालत से इस बात की शिकायत की, कि जेल में वकीलों से मिलने के विषय में अधिकारियों द्वारा अनावश्यक रुकावटें डाली जाती हैं। उसने कहा कि जेल के अधिकारी हम लोगों के इतने निकट खड़े होते हैं कि अपने वकीलों से परामर्श करना असम्भव रहता है। अदालत ने इस विषय में जेल-अधिकारियों से जाँच करने का वचन दिया।

जलपान के बाद अदालत के फिर बैठने पर सरकारी वकील मि० ज़फ़रुल्ला ख़ाँ ने मि० आसफ़अली के कल की एक शिकायत का उत्तर देते हुए कहा, कि जाँच करने पर मालूम हुआ है कि मुख़बिर जेल में एक साथ रक्खे गए हैं। अलग-अलग रखने के लिए जगह यथेष्ट नहीं है। अदालत चाहे तो जेल का स्वयं निरीक्षण कर सकती है। परन्तु जगह की कमी का ख़याल रखते हुए, मुख़बिरों के परस्पर मिलने या गवाही के सम्बन्ध में परस्पर बातचीत करने में रुकावट डालने के लिए अदालत जो भी प्रतिबन्ध निश्चय करेगी, उसमें मुझे कोई आपत्ति न होगी। आपने यह भी कहा कि "अब तो मुख़बिर न्यायालय की हिरासत में हैं, पुलिस की हिरासत में नहीं हैं।" यह बात ग़लत है कि इस हालत में भी मुख़बिरों से सी० आई० डी० के आदमी मिला करते हैं।

मि० आसफ़अली ने उत्तर देते हुए कहा, कि जेल के अन्दर की जगह के विषय में मुझे यह बात बहुत अच्छी तरह मालूम है कि मुख़बिरों को बहुत सहूलियत के साथ अलग-अलग रक्खा जा सकता है।

इस सम्बन्ध में आपने जेल के अन्दर के कुछ हिस्सों का उदाहरण भी दिया।

जेल के भीतर की बातें

मुख़बिरों से सी० आई० डी० अफ़सरों के मिलने के विषय में मि० आसफ़अली ने कहा कि यूरोपियन वार्ड, जिसमें मुख़बिर रक्खे गए हैं, एक अलग ही जेल बन गई है। उसका सम्पूर्ण नियन्त्रण जेल-अधिकारियों ने पुलिस को दे रक्खा है। यूरोपियन वार्ड के पीछे की तरफ़ जो एक नया दरवाज़ा बना दिया गया है, वह मुख़बिरों से बराबर मिलते रहने की सुविधा के लिए ही बनाया गया है।

अभियुक्त वात्सायन ने कहा, कि पुलिस और सी० आई० डी० के आदमी जेल के अन्दर उसी पिछले दरवाज़े से प्रवेश करते हैं। असिस्टेंट सब-इन्स्पेक्टर

मोतीराम तथा अन्य लोग प्रतिदिन ही जेल का चक्कर लगाने आते हैं। वे रात को ८ बजे से लेकर ११ बजे के बीच में आया करते हैं।

इस पर ख़ाँ बहादुर अमीरअली जज (ट्रिब्यूनल के सदस्य) ने कहा, कि यदि जेल में मुख़बिरों से पुलिस की घनिष्टता के सम्बन्ध में ऐसी ज़ोरदार शिकायतें हैं, तो सफ़ाई-पक्ष इन शिकायतों के आधार पर अदालत के सामने एक हलफ़नामा क्यों न पेश कर दे?

मि० आसफ़अली ने हलफ़नामा पेश करने के विषय में विचार करने को कहा।

इसके बाद प्रेज़िडेण्ट ने अभियुक्तों से कुछ ऐसे उदाहरण बतलाने के लिए कहा, जिनमें वकीलों से मिलने में अनावश्यक रुकावट डाली गई हो। अभियुक्तों ने उन वकीलों के नाम बतला दिए, जिन्हें अभियुक्तों से मिलने की इजाज़त नहीं दी गई।

अदालत में गड़बड़

अभियुक्तों ने इस बात पर बार-बार ज़ोर दिया कि अदालत हमारी शिकायतों का कोई निश्चित उत्तर दे। उधर सरकारी वकील ने "बैठ जाओ" कह कर मामले की कार्रवाई प्रारम्भ करनी चाही; परन्तु अभियुक्तों ने सरकारी वकील का बोलना असम्भव कर दिया। उन्होंने कहा, कि सफ़ाई-कमिटी के प्रतिनिधियों को सफ़ाई-पक्ष के वकील के पास बैठने की अनुमति मिलनी चाहिए। उन्होंने अदालत की दर्शक गैलरियों में ऊँच-नीच के भेद-भाव का और दर्शकों की अपमानजनक ढङ्ग से तलाशी लेने का भी विरोध किया।

प्रेज़िडेण्ट ने उनकी शिकायतों के दूर करने का वचन दिया।

छोटे-छोटे दल बना कर देश भर में युद्ध प्रारम्भ करने की नीति

इसके बाद मुख़बिर कैलाशपति ने अपनी गवाही के सिलसिले में कहा, कि गाडोदिया स्टोर की डकैती के बाद आज़ाद ने सोचा था कि बम-फ़ैक्टरियाँ क़ायम करके देश भर में लुक-छिप कर छोटे-छोटे दल बना कर युद्ध करने की स्कीम काम में लाई जाय। बम-फ़ैक्टरियों के लिए कुछ विशेषज्ञों का प्रबन्ध कर लिया गया था। यशपाल ने तार द्वारा लाहौर से एक वैज्ञानिक को बुलाया था। वैज्ञानिक के आने पर यशपाल, विमलप्रसाद जैन, प्रकाश और मैंने मिल कर फ़ैक्टरी में प्रयोग किया था। फ़ैक्टरियों का व्यय स्टोर के लूटे हुए रुपयों से चलता था।

इसके बाद अदालत स्थगित हो गई।

दूसरे दिन मुख़बिर कैलाशपति ने इसके आगे अपनी गवाही प्रारम्भ करने के पहले अभियुक्त वात्सायन की शिनाख़्त की। उसने कहा कि यही "वैज्ञानिक" हैं।

एक दिन शाम के वक्त कुदसिया गार्डन में मुझे आसफ़ (टण्डन) मिले। धनवन्तरि, सुखदेवराज और विशेसरनाथ भी मिले। धनवन्तरि ने सुखदेवराज और विशेसरनाथ को कहीं शरण देने के लिए कहा। सुखदेवराज हैमिल्टन रोड पर भवानीसिंह के यहाँ और विशेसरनाथ भवानीसहाय के यहाँ ठहरा दिए गए। गाडोदिया स्टोर की लूट का जो हिस्सा वीरभद्र तिवारी के लिए रक्खा था, वह चन्द्रशेखर आज़ाद कानपुर जाते समय ले गए थे।

ऐसिड घट जाने पर मैं अभियुक्त बाबूराम की दूकान से ख़रीद लिया करता था। आख़ीर जुलाई से प्रारम्भ अगस्त तक के बीच में मैंने लगभग ८० से ९० पाउण्ड सलफ़्यूरिक एसिड १०० पाउण्ड नाइट्रिक एसिड और ९ या १० जोड़े रबड़ के दस्ताने ख़रीदे थे। इसके अतिरिक्त और भी बहुत सी चीज़ें ख़रीदी थीं। पहली दफ़ा मैं ठेले पर सामान लदवा कर ले गया था। दूसरी दफ़ा मुख़बिर गिरिवरसिंह के साथ ताँगे पर ले गया था।

प्रश्न—पिकरिक एसिड बनाने के लिए इनके अतिरिक्त और कौन सी वस्तुओं की ज़रूरत थी?

उत्तर—विमलप्रसाद दो बिजली के पङ्खे लाया था।

इस पर अदालत में बड़ा ठहाका लगा।

मुख़बिर ने कहा कि कारबॉलिक एसिड मैं अपने घर से लाया करता था। हम लोग बम-फ़ैक्टरी में तेल, साबुन और क्रीम आदि भी बनाया करते थे।

यशपाल और विमल क्रीम और तेल के लिए दिल्ली प्रिन्टिङ्ग वर्क्स से लेबिल छपा लाए थे। फ़ैक्टरी का नाम "हिमालयन टवाएलेट" और साबुन का नाम "बसन्त-पराग" रक्खा गया था। "हिमालयन टवाएलेट" के नाम से डाकख़ाने से पत्र आते थे।

"क्रान्तिकारी पुस्तकें"

निगम के भाई के नाम एक वी० पी० आई। वी० पी० में पाँच पुस्तकें थीं (१) लाला लाजपतराय द्वारा लिखित 'यङ्ग इण्डिया', (२) लेनिन के विचारों का संग्रह, (२ भाग) (Selections from Lenin), (३) सोवियट रूस (Soviet Russia), (४) विद्रोही चीन (China in Revolt), (५) आधुनिक भारत (Modern India)

बम बनाने के नुस्खे

विजय ने असली घी-स्टोर्स के पते पर विमल के नाम तीन रजिस्ट्री पत्र भेजे। उनमें बम बनाने के कुछ नुस्ख़े दिए हुए थे। मैं वात्सायन को केवल "साइन्टिस्ट" (वैज्ञानिक) के नाम से जानता था।

कुछ दिनों के बाद ऐसा मालूम हुआ कि फ़ैक्टरी का मकान बड़ा है और पुरुषों की संख्या भी अधिक है, इससे सन्देह उत्पन्न हो सकता है। कुछ औरतों का रखना भी ज़रूरी है। विमलप्रसाद अपनी स्त्री को ले आया, परन्तु वह बीमार हो जाने के कारण दस-बारह रोज़ में चली गई।

अभियुक्त विद्याभूषण ने चिल्ला कर कहा—और कमला कहाँ थी?

इस पर अदालत में हँसी हुई।

इसके बाद सरकारी वकील ने पूछा—क्या पिकरिक एसिड बनाने में तुम्हें सफलता मिली थी?

उत्तर—हाँ।

इसके बाद मुख़बिर ने कहा, कि प्रो० निगम जुलाई महीने में काश्मीर में थे। उन्होंने तार द्वारा १००) माँगा था। मैं फ़ैक्टरी में नहीं रहता था। मैं सीताराम बाज़ार में रहता था। मैं भागीरथ के साथ जुलाई महीने में जयपुर गया था। वहाँ हम लोग दल की एक शाखा स्थापित करना चाहते थे। वहाँ मैं कैलाश नाम के एक व्यक्ति के घर गया, परन्तु वे मिले नहीं। इसके बाद हम लोग अजमेर चले गए।

एक चुराई हुई बन्दूक़

मदनगोपाल ने मुझे १२ बोर वाली एक बन्दूक़ दिखलाई। उसने कहा कि इसे हेमचन्द्र द्वारा मैंने चोरी से प्राप्त की है। मैंने उसे दिल्ली ले आने के लिए कहा। इसके बाद सरकारी वकील के पूछने पर मुख़बिर ने अदालत में उपस्थित बन्दूक़ की शिनाख़्त की और कहा कि यह वही बन्दूक़ मालूम होती है।

इसके बाद मुख़बिर ने कहा, कि राजालाल से मेरा परिचय भवानीसिंह के द्वारा हुआ था। मैं राजालाल को पढ़ने के लिए पुस्तकें दिया करता था।

प्रश्न—जुलाई महीने में और कोई बात हुई?

मुख़बिर दो मिनट तक चुप रहा। इस पर अभियुक्त विद्याभूषण ने कहा—क्यों नहीं कह देते कि याद नहीं है?

मुख़बिर—मुझे कोई ख़ास घटना याद नहीं है।

इसके बाद मुख़बिर ने कहा, कि अगस्त महीने में ६ दिन तक पिकरिक एसिड बनती रही। जुलाई और अगस्त महीने में ३० पाउण्ड पिकरिक एसिड बनी। इन वस्तुओं के बनाने में यशपाल, साइन्टिस्ट, विमल, और प्रकाशो देवी के साथ मैं भी रहा करता था।

पिको क्लोरिन बेहोशी की दवा थी। हम लोग हाइड्रोसिनिक एसिड भी तैयार करना चाहते थे। उससे बिना प्रयास हत्या की जा सकती है।

ख़रगोशों और चूहों पर हाथ साफ़ हुआ

पिक्रोक्लोरिन गैस की आज़माइश हम लोगों ने दो ख़रगोशों पर की थी। एक कमरे में दो ख़रगोश बन्द कर दिए गए उसी में कुछ गैस छोड़ दी गई। ख़रगोश बेहोश हो गए। पोटैशियम केनाइड का प्रयोग दो चूहों पर किया गया। विमल दो चूहे ख़रीद लाया। पोटैशियम केनाइड के इञ्जेक्शन के प्रभाव से वे दोनों मर गए।

विद्याभूषण—तो तुम यहाँ कैसे चले आए?

इस पर अदालत में हँसी हुई।

इसके बाद अदालत सम्भवतः मोहर्रम की तातील के कारण एक सप्ताह के लिए स्थगित हो गई।

१ली जून की कार्यवाही

नई दिल्ली १ली जून—आज प्रतिवादी पक्ष के वकील चौधरी ज़फ़रुल्ला के जिरह करने पर मुख़बिर कैलाशपति ने अपने बयान के सिलसिले में कहा, कि अगस्त, १९३० के मध्य में, आज़ाद और जैन ने रैवेल्व राइफ़ल के लिए १००, बन्दूक़ के लिए १०० और पिस्तौल के लिए ५० गोलियाँ ख़रीदी थीं। यशपाल के जाने के बाद से फ़ण्डाँ वाला फ़ैक्टरी का काम बन्द कर दिया गया था। आज़ाद अगस्त के तीसरे सप्ताह तक दिल्ली में थे। उन्होंने मुझसे कहा था कि फ़ैक्टरी को स्थायी बनाने के लिए एक ऐसे वैज्ञानिक की आवश्यकता है, जो विस्फोटक पदार्थों के परीक्षण कार्य में दक्ष हो और इस कार्य में अपना पूरा समय दे सके। इस सम्बन्ध में हवड़ा के कुछ लोगों के नाम लिए गए जो एम० एस-सी० पास थे। इसी समय १०० पाउण्ड एसिड मँगाने का भी विचार किया गया। मुझे मालूम हुआ कि पुलिस, निगम के यहाँ भवानीसिंह की खोज कर रही है। मैंने एसिड, हथियार आदि सभी वस्तुएँ शहर के अन्य लोगों के पास रख दीं। मैंने बाबूराम गुप्त के यहाँ एसिड और हरकेश के यहाँ गोली आदि रक्खी थी। अगस्त के तीसरे सप्ताह में बी० पी० जैन अमृतसर से यह समाचार लाया कि यशपाल जिसे अपने कुछ अपराधों के लिए दल के सामने जाँच के लिए उपस्थित होने को कहा गया था और जो फ़रार था, शीघ्र ही दिल्ली लौट आएगा। दूसरे ही दिन जैन मुसम्मात प्रकाशो को फ़ण्डाँ वाला फ़ैक्टरी में लाया। यशपाल भी कुछ ही दिनों बाद दिल्ली आया और उसने मुझसे कहा, कि मैं अपने अपराधों की जाँच के लिए तैयार हूँ। मैंने आज़ाद और तिवारी को बुलाया। आज़ाद दूसरे ही दिन दिल्ली आ पहुँचे और यशपाल के साथ बहुत देर तक उन्होंने बातचीत की। उसी दिन आज़ाद ने मुझे सूचना दी कि यशपाल ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है और उसे क्षमा कर दी गई है। यह भी निश्चित हो गया कि भविष्य में मुसम्मात प्रकाशो यशपाल की पत्नी समझी जायगी।

लाहौर के अभियुक्तों को बचाने की तैयारी

उसी दिन सन्ध्या-समय आज़ाद, धनवन्तरि, दीदी और यशपाल इकट्ठे हुए। मैं भी वहाँ उपस्थित था। हम लोगों ने यह निश्चय किया कि लाहौर के अभियुक्तों को छुड़ाया जाय। धनवन्तरि इसी सम्बन्ध में लाहौर भेजे गए। इसी बैठक में यह भी निश्चत किया गया कि यशपाल फिर, धनवन्तरि के स्थान में, पञ्जाब-प्रान्त का सङ्गठनकर्त्ता बनाया जाय। धनवन्तरि और यशपाल के लाहौर चले जाने के बाद मैं आज़ाद के साथ अजमेर गया। यहाँ आज़ाद ने, १ली सितम्बर को लोको ऑफ़िस की तनख़्वाह के रुपयों को, इम्पीरियल बैङ्क से लाए जाते समय लूटने का एक षड्यन्त्र रचा। आज़ाद ने विचार किया कि बिना मोटर की सहायता के सफलता पाना कठिन है। अगस्त के अन्तिम सप्ताह में, दिल्ली लौटने पर, मुझे मालूम हुआ कि पुलिस ने वॉयसराय की ट्रेन-दुर्घटना के सम्बन्ध में लाहौर में कुछ गिरफ़्तारियाँ की हैं। इसलिए हम लोगों ने क़ज़वाँ-वाला फ़ैक्टरी बन्द कर देने का विचार किया।

धनवन्तरि ने लाहौर से लौट कर कहा, कि यशपाल पञ्जाब में दल के विरुद्ध षड्यन्त्र रच रहा है और इसमें इन्द्रपाल भी शामिल है। इसी षड्यन्त्र के अनुसार इन्द्रपाल तथा कुछ अन्य लोग गिरफ़्तार किए गए थे। यह कहा गया था कि इन्द्रपाल ने एक बक्स में कुछ विस्फोटक पदार्थ, तथा एक डायरी, जिसमें दल के कुछ सदस्यों के नाम तथा पते लिखे हुए थे, रख कर उस बक्स को जान-बूझ कर लाहौर के बाज़ार में छोड़ दिया था।

उस ट्रङ्क से एक धड़ाका होने पर पुलिस ने जाँच की और उस डायरी में लिखे हुए नामों के अनुसार दल के कुछ लोगों को गिरफ़्तार किया। इस षड्यन्त्र के उद्देश्यों में से एक उद्देश्य यह भी था, कि दल को लाहौर के अभियुक्तों को छुड़ाने में सफलता न मिल सके। इसलिए यशपाल को पञ्जाब से हटा दिया गया और रेलवे ट्रेनों को उलटने के षड्यन्त्र का अध्ययन करने का विशेष कार्य उसके हाथों सौंपा गया।

विश्वासघात का दूसरा उदाहरण

विश्वासघात का एक दूसरा उदाहरण कानपुर में पाया गया। यहाँ बी० बी० तिवारी दल का कार्य करते हुए, पुलिस को सारी बातों का पता देता जाता था। इसका फल यह हुआ, कि बी० बी० तिवारी के स्थान में विद्याभूषण नियुक्त किए गए।

मुख़बिर ने आगे, दिल्ली के पुलिस-सुपरिण्टेण्डेण्ट मि० पील और काकोरी षड्यन्त्र केस के मुख़बिर शिवचरण की हत्या के सम्बन्ध के षड्यन्त्रों का वर्णन किया। इसके बाद अदालत की कार्यवाही लञ्च के लिए स्थगित कर दी गई। नाश्ता-पानी के बाद एकाएक जजों ने आकर कहा, कि चूँकि मुख़बिर कैलाशपति की तबीयत एकाएक ख़राब हो गई है, इसलिए आज अदालत बर्ख़ास्त की जाती है। सफ़ाई के वकील यदि चाहें तो काग़ज़ातों का निरीक्षण कर सकते हैं, अतः अदालत बर्ख़ास्त हो गई।

(क्रमशः)

* * *

कराची में बम का धड़ाका

कराची का २८वीं मई का समाचार है, कि कल सन्ध्या-समय सिविल एण्ड मिलिटरी क्लब में; जहाँ यूरोपियन और एङ्गलो इण्डियन प्रायः एकत्र होते हैं, एक भीषण धड़ाका हुआ। एक सिपाही ने, जो वहाँ के दरवाज़े बन्द कर रहा था, पुलिस को इस बात की सूचना दी। घटनास्थल पर काँच के और पत्थर के टुकड़े आदि पाए गए हैं। पुलिस इसकी जाँच कर रही है।

बिजौलिया में पशुता का ताण्डव

उदयपुर राज्य का भीषण कलंक

सार्वजनिक कार्यकर्ता लाठियों और जूतों से पीटे गए

बिजौलिया-सत्याग्रह के नेता श्री० हरिभाऊ उपाध्याय ने अजमेर से निम्न-लिखित समाचार हमारे पास प्रकाशनार्थ भेजा है :—

आजकल बिजौलिया में पशुता का ख़ूब ही ताण्डव हो रहा है। गाँवों में फ़ौज और पुलिस के सवार बराबर घूमते रहते हैं। कञ्जर, साँसी आदि जरायम-पेशा लोगों तथा फ़ौज और पुलिस के आदमियों की सहायता देकर ठिकाने वाले नए बापोदारों से खेत जुतवा रहे हैं। यदि कोई सत्याग्रही किसान खेतों पर जाता है, तो बुरी तरह पीटा जाता है।

गिरफ़्तारियों का ताँता भी वैसा ही लगा हुआ है। १७ ता० को दुपहर को सत्याग्रही कार्यकर्ता श्री० ओङ्कारलाल जी को गिरफ़्तार कर लिया गया। वह किसानों की एक सभा में गए हुए थे। वहाँ वह अपनी बात पूरी भी न कह पाए थे कि सहसा कई पुलिस वाले उन पर टूट पड़े और लगे गन्दी-गन्दी गालियाँ सुनाने और लात-घूँसे जमाने। बाद में हथकड़ी डाल कर उन्हें सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री० मदनसिंह सुरडिया के पास ले जाया गया। ये महाशय उनके साथ बुरी तरह से पेश आए। कोतवाली में श्री० ओङ्कारलाल जी के पैरों में डण्डेदार बेड़ियाँ डाल दी गईं। उनके साथ दो किसान भी गिरफ़्तार किए गए थे, पर उन्हें २१-२१ जूते मार कर छोड़ दिया गया।

'तरुण राजस्थान' के भूतपूर्व सहायक सम्पादक तथा राजस्थान ग्राम-प्रचारक मण्डल के कार्यकर्ता श्री० अचलेश्वरप्रसाद जी शर्मा के साथ राज्य-कर्मचारियों ने और भी पाशविक व्यवहार किया। वह बिजौलिया के गिरधरपुरा नामक ग्राम में ठहरे हुए थे। गत १६ ता० की दुपहर को कुछ सिपाही एकाएक उनके मकान में जा घुसे और भूखे भेड़िए की तरह उन पर टूट पड़े। सिपाहियों ने उन्हें लाठियों और जूतों से ख़ूब ही पीटा। जब पीटते-पीटते वे थक गए, तो उन्होंने अचलेश्वरप्रसाद जी को हथकड़ी डाल कर घोड़ों के पास बिठा दिया। यहाँ सिपाहियों ने गालियों और लज्जाजनक आक्षेपों की झड़ी लगा दी। थोड़ी ही देर बाद कुछ सिपाहियों के साथ कोतवाल महाशय भी घटनास्थल पर आ पहुँचे। आपने आते ही हुक्म दिया—"लगाओ साले के जूते!" फिर क्या था? जो सिपाही देर से आए, उन्होंने भी अपने-अपने मन की मुराद पूरी कर ली।

क़रीब ३ बजे श्री० अचलेश्वरप्रसाद जी को ३ किसानों के साथ पुलिस के पहरे में पैदल जिल्लमीपुरा नाम के गाँव में ले जाया गया। उनके सिर पर कपड़ों आदि की गठरी भी रख दी गई। जिल्लमीपुरे में कोई ५०-६० सिपाहियों के साथ मदनसिंह सुरडिया डेरा डाले हुए पड़े थे। इनका व्यवहार बड़ा असभ्यतापूर्ण रहा। शाम को उन्हें बिजौलिया कोतवाली में ले जाया गया और तीन डण्डों वाली बेड़ियाँ उनके पैरों में डाल दी गईं।

रात को भी अचलेश्वरप्रसाद जी ने शारीरिक वेदना के कारण भोजन करने से इन्कार कर दिया था, इस पर कोतवाल फिर उत्तेजित हो उठा और जूते मारने की धमकी भी दी, किन्तु कुछ किसानों के बीच-बिचाव करने के कारण यहाँ तक नौबत नहीं पहुँची।

दूसरे दिन सवेरे सत्याग्रही कार्यकर्त्ता श्री० प्यारचन्द जी और ओङ्कारलाल जी को लकड़ी चुन लाने को कहा गया। उनके पैरों में डण्डेदार बेड़ियाँ पड़ी हुई थीं। वे शौचादि के लिए भी कठिनाई के साथ जा पाते थे, इसलिए उन्होंने नम्रतापूर्वक अपनी असमर्थता ज़ाहिर की। फिर क्या था? सिपाही लोग लगे उन दोनों के धड़ाधड़ जूते मारने एवं हथकड़ी डाल कर घसीटने। दोनों बहादुर भाइयों ने इस समय भी अपने सत्याग्रहीपन का ख़ासा परिचय दिया और पूर्ण शान्त व अविचल रहे।

२४ ता० को सुबह श्री० अचलेश्वरप्रसाद जी और ओङ्कारलाल जी की बेड़ियाँ निकलवा दी गईं और उनको दो सिपाहियों के साथ पैदल डाबी (बूँदी राज्य) के लिए चालान कर दिया गया। भूखे-प्यासे वे तीन बजे डाबी पहुँचे। दोनों सिपाहियों में से एक भी रास्ते का जानकार नहीं था, अतः उन्हें पहाड़ी घाटियों में कितनी देर तक भटकना पड़ा, यह नहीं कहा जा सकता। डाबी में पहुँचते ही सारे कपड़े (धोती भी) खुलवा कर उनकी तलाशी ली गई। पश्चात् मज़बूत बेड़ियाँ लगा कर एक अँधेरी और गन्दी कोठरी में डाल दिया गया। शाम को सिपाहियों के पहरे में वे शौचादि से निवृत्त होने गए। वापस आते समय कन्धों पर रख कर पानी भरा एक-एक घड़ा भी उन्हें ही उठा कर लाना पड़ा। थाने में पहुँचने पर उनसे कहा गया कि वे अपने पैसों से भोजन का सामान ख़रीद कर लावें। २५ ता० को २० मील का रास्ता पैदल तय कर दोपहर को कड़ी धूप में कोई ११ बजे से डाबी से बरूँदण पहुँचे। वहाँ उन्हें मुक्त कर दिया गया।

छत से गिर पड़ा

मोहनलाल नामक युवक को भी कोतवाल गजानन जी ने बहुत पिटवाया। जब उसने कहा, कि मेरा बयान लीजिए, तो उन्होंने बुरी तरह बिगड़ कर कहा—'तुम्हारा मुँह देखने का धर्म नहीं है—तुम मर क्यों नहीं जाते?' इस पर उसके दिल को बड़ी चोट पहुँची और वह ऊपर छत पर से यह कह कर कूद पड़ा कि लो, मेरा मुँह न देखना। उसका सिर फट गया है। और भी बहुत चोट आई है।

तलाशी

२० ता० को पुलिस ने गिरफ़्तार किसान-नेता श्री० माणिकलाल जी का मकान घेर लिया और उसकी तलाशी ली। इस अवसर पर श्री० माणिकलाल जी की धर्मपत्नी को गालियाँ देकर उनका अपमान भी किया गया।

जेल में दुर्व्यवहार

जेल में बन्द सत्याग्रहियों से लकड़ियाँ चिरवाने, पत्थर उठवाने और घास खुदवाने का काम लिया जाता है, हालाँ कि वे अभी ज़ेर तजवीज़ क़ैदी हैं। उनके रहने के स्थान भी बड़े ही गन्दे हैं। किन्तु सत्याग्रही सभी कष्टों को बड़ी वीरतापूर्वक सहन कर रहे हैं।

मेरठ षड्यन्त्र केस में श्री० केदारनाथ सहगल की गर्जना

"हथियार रखना देशवासियों का ईश्वर-दत्त अधिकार है"

कौन्सिलें मिट्टी का खिलौना हैं, जिन पर रंग और रोग़न लगा कर चित्रकारी की गई है

"अगर हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य हिन्दोस्तान में न होता तो वहाँ हमारी हुकूमत भी क़ायम नहीं रह सकती थी। यह भी सच है, कि हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य की बुनियाद ब्रिटिश शासन के समय से ही आरम्भ हुई है।" —मिनियार्ड

(पञ्जाब एक्ज़िक्यूटिव कौन्सिल के भूतपूर्व सीनियर मेम्बर)

मेरठ षड्यन्त्र-केस के अन्यतम अभियुक्त लाला केदारनाथ सहगल ने, अपने मुक़दमे के दौरान में, जो लिखित वर्णन-पत्र अदालत के सामने पेश किया है, उसका कुछ अत्यावश्यक अंश 'भविष्य' के पाठकों के मनोरञ्जनार्थ नीचे दिया जाता है :—

"ज़बर्दस्त मारे और रोने न दे"

भारतीय दण्ड-विधान की जो धारा लाला जी पर लगाई गई है, उसका विश्लेषण करते हुए आपने अपने बयान में लिखा है, कि यद्यपि यह धारा मेरे ऊपर नहीं लगाई जा सकती, परन्तु चूँकि नौकरशाही पुलिस हमें 'भारत' नाम के बड़े जेलख़ाने में देखना पसन्द नहीं करती, इसीलिए यह तान मुझ पर तोड़ी गई है। मेरे सभापतित्व में मेरठ में किसी किसान-पार्टी की बुनियाद न पड़ी थी और न कोई इस तरह का प्रस्ताव ही पास हुआ। मज़दूर-किसान-सम्मेलन का जो अधिवेशन मेरठ में हुआ था, उसका किसी अखिल भारतीय संस्था से सम्बन्ध था, यह बिल्कुल ग़लत बात है। क्योंकि यहाँ ऐसी कोई पार्टी नहीं है। मगर यहाँ तो यह क़िस्सा है कि "ज़बर्दस्त मारे और रोने न दे।"

साम्प्रदायिकता का भूत

इसके बाद आपने जालन्धर में दी हुई अपनी एक वक्तृता का उल्लेख करते हुए लिखा है—यह सभा कॉङ्ग्रेस लीडरों की थी और इसमें मैंने कॉङ्ग्रेस के उद्देश्यों को बतलाते हुए हिन्दू-मुस्लिम एकता पर ज़ोर दिया था। मैंने लोगों को बताया था कि साम्प्रदायिकता के विचारों ने देश को तबाह कर दिया है। पहले धर्म और पीछे देश—यह विचार देश और जाति के लिए अत्यन्त घातक है। इस विचार को दिल में रख, कोई भी मनुष्य संसार का शुभचिन्तक नहीं बन सकता। इसी विचार ने देश को उन्नति की ओर अग्रसर नहीं होने दिया है। यही वह वस्तु है, जिसके कारण साम्प्रदायिक निर्वाचन का झगड़ा उठ खड़ा हुआ है। कॉङ्ग्रेस में इसी विचार के आदमी हैं। उसके नेताओं में इतनी शक्ति नहीं है कि वे ऐसे विचार वालों को प्रश्रय देने से बाज़ आवें और उनकी ग़लतियों को उन्हें समझा दें।

"ख़ालिस देशभक्त संस्था"

इसके बाद आपने 'नौजवान भारत-सभा' का उल्लेख करते हुए कहा—यह सभा कॉङ्ग्रेस का दाहिना हाथ थी। ख़ालिस देश-भक्ति इसकी बुनियाद थी। उसकी यह धारणा थी कि जब तक भारतवासियों को पहले भारतीय तब इसके बाद और कुछ होने की शिक्षा नहीं दी जाएगी, तब तक देश की नौका का पराधीनता के भँवर से उद्धार न होगा। इसलिए जो लोग देश में हिन्दू-मुस्लिम या सिक्ख राज्य स्थापित करने का स्वप्न देख रहे हैं, सबसे पहले उन्हें सन्मार्ग पर लाने की चेष्टा होनी चाहिए और साम्प्रदायिकता का बीहड़ वन उखाड़ कर उसके स्थान पर राष्ट्रीयता का सुन्दर पौधा लगाना चाहिए, जिसकी छाया में रह कर भारत के सभी सम्प्रदाय वाले सानन्द जीवन बिता सकें।

"पकड़-धकड़ विभाग" को चैलेञ्ज

इसके बाद अपने भाषण में मैंने कॉङ्ग्रेस के उद्देश्यों की व्याख्या करते हुए हिन्दू-मुस्लिम एकता पर ज़ोर दिया था, छूतछात छोड़ने को कहा था और स्वदेशी ग्रहण करने का उपदेश दिया था। आपने कहा कि मेरे ख़याल में ऐसे व्याख्यान रोज़ ही हुआ करते हैं। यह व्याख्यान केवल जनता में देशभक्ति का प्रचार करने के लिए दिया गया था और यही नौजवान भारत-सभा का उद्देश्य भी था। मैंने इस व्याख्यान को आरम्भ से अन्त तक बार-बार पढ़ा है; परन्तु मुझे कोई ऐसी बात नज़र नहीं आती, जो आपत्तिजनक हो। मैं चाहता हूँ कि वादी-पक्ष मुझे वह दिखा दे कि मेरे किन वाक्यों में से सम्राट को तख़्त से वञ्चित करने की बू आती है, ताकि मैं इसका भी कुछ उत्तर दे सकूँ। इस व्याख्यान में वही बातें कही गई हैं, जो प्रतिदिन कही जाती हैं और उन्हीं बातों का उल्लेख है जो प्रतिदिन हुआ करती हैं। इस व्याख्यान में न तो लोगों को हड़ताल करने को उत्साहित किया गया है और न इसके द्वारा किसी षड्यन्त्र की योजना की गई है। इसमें किसी प्रकार का अन्तर्जातीय प्रचार भी नहीं है। मैं सरकार के 'पकड़-धकड़-विभाग' को खुला चैलेञ्ज देता हूँ, कि वह मेरे उस व्याख्यान के किसी एक वाक्य से प्रमाणित कर दे कि उसमें कोई भी आपत्तिजनक बात थी। अगर मेरा यह भाषण दफ़ा १२१ में आ सकता है, तो मैं फिर नौकरशाही को एक ख़तरे का एलार्म देता हूँ, कि ऐसे मुक़दमों के लिए प्रति मास एक करोड़ रुपए ख़र्च करने को तैयार रहे; क्योंकि आजकल इससे भी कड़े व्याख्यान रोज़ ही हुआ करते हैं। इसके साथ ऐसे व्याख्यानदाताओं के लिए नए जेलख़ाने तैयार होने चाहिएँ या चोरों और डाकुओं को छोड़ कर ऐसे लोगों के लिए स्थान ख़ाली करा रखना चाहिए! मैं 'मे डे' (मई दिवस) की सभा में मौजूद था, परन्तु मुझे 'मे डे' का इतिहास नहीं मालूम है। सिवा इसके कि १ली मई को पञ्जाब में सख़्त गर्मी आरम्भ हो जाती है और लोग शाम को शहर छोड़ कर 'म्युनिसिपल मैदानों' में चले जाते हैं। परन्तु मैं इतना जानता हूँ कि मई का दिन हो या जून-जुलाई का, कोई दिन ऐसा आवे कि इस देश की विभिन्न जातियाँ आपस में दूध और पानी की तरह मिल जावें और आराम से जीवन व्यतीत करना सीखें। इसी सभा में श्री० मगनलाल गाँधी की मृत्यु के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव भी पास हुआ था।

हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य का कारण

इसके उपरान्त आपने अपने भाषण के अन्यान्य विषयों का उल्लेख करते हुए हिन्दू-मुस्लिम-वैमनस्य का ज़िक्र किया और कहा कि अङ्गरेज़ी राज्य के पहले यहाँ ऐसे झगड़े नहीं होते थे। पञ्जाब एक्ज़िक्यूटिव कौन्सिल के भूतपूर्व सीनियर मेम्बर मि० मिनियार्ड ने लिखा है, कि "अगर हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य हिन्दुस्तान में न होता तो वहाँ हमारी हुकूमत भी क़ायम नहीं रह सकती। यह भी सच है कि हिन्दू-मुस्लिम-वैमनस्य की बुनियाद ब्रिटिश शासन के समय से ही आरम्भ हुई है।" यह तो एक अङ्गरेज़ की राय है, परन्तु सचाई इस हद तक है, कि यहाँ पहले इस प्रकार के फ़साद हुए ही न थे, जैसे आजकल होते हैं। कई स्थानों पर सरकारी अफ़सर अपनी आँखों से ख़ून और हत्या की वारदातें देखते रह गए हैं। आपने कानपुर के दङ्गे का उदाहरण देकर कहा—"क्या संसार की कोई सरकार इस बात का गर्व कर सकती है, जिसके शासन-काल में दिन-दहाड़े ऐसी घटनाएँ हों?"

इसके बाद हिन्दू-मुस्लिम दङ्गों के सम्बन्ध में सरकारी कर्मचारियों की लापरवाही का उल्लेख करके आपने कहा कि इस सभा में मुझे एक प्रस्ताव उपस्थित करने को दिया गया था, जो इस प्रकार था—

"लाहौर-निवासियों की यह साधारण सभा बम्बई और खिलुआ के हड़तालियों पर गोली चलाने के लिए अपनी आन्तरिक घृणा प्रगट करती है और एसेम्बली के राष्ट्रीय विचार वाले सदस्यों से प्रार्थना करती है कि वह मिलर की तरह राष्ट्रीय सभाओं के बारे में कोई क़ानून पास कर दें।"

"मिट्टी का खिलौना"

बस, सब से बड़ा अपराध मेरा यही है, कि मैंने यह प्रस्ताव उपस्थित कर दिया। परन्तु मुझे लज्जा होती थी कि एसेम्बली के मेम्बरों से कोई प्रार्थना की जाए, जिनकी वहाँ कोई बात ही नहीं सुनता। अगर बहुमत से वे कोई प्रस्ताव पास भी कर लेते हैं तो उस पर अमल नहीं किया जाता। यह कौन्सिलें एक मिट्टी का खिलौना हैं, जिन पर रङ्ग और रोग़न लगा कर एक चित्रकारी की गई है। मैं यह भी नहीं स्वीकार करता कि ग़रीब मज़दूरों की ओर से न्याय की माँग पेश करना कोई अपराध है। जिस देश में ६८ प्रतिशत किसान और मज़दूर हैं, वहाँ अगर इस तरह की बातें अपराध हैं तो मेरा अवशिष्ट जीवन जेल में ही कटेगा; क्योंकि मैं उन मज़दूरों की सेवा के लिए अपनी स्वतन्त्रता अर्पण कर चुका हूँ, जो अपने देश में रहते हुए सब प्रकार के आराम से वञ्चित हैं। जहाँ दूसरे देशों में अगर कोई मज़दूर बेकार हो जाता है, तो सरकार उसे सब प्रकार से सहायता करती है। इङ्गलैण्ड के मज़दूर को, जो विवाहित नहीं होता, ७२ शिलिङ्ग माहवार दिया जाता है, ताकि वह बेकारी की हालत में फ़ाक़ा करके न मरे; और अगर वह विवाहित है तो उसे और भी मिलता है। इसके सिवा बेकारों को काम देने की भी चेष्टा की जाती है। परन्तु हमारे देश में बेचारे मज़दूरों

को क्या दशा है ? पिछले दिनों बङ्गाल में एक आदमी ने भूख की ज्वाला से तङ्ग आकर अपने बच्चे को पाँच रुपए में बेच दिया था !

इसके आगे भारत के ग़रीब मज़दूरों की दशा का अत्यन्त कारुणिक वर्णन करके आपने तीव्र शब्दों में उन पर गोलियाँ चलाने की निन्दा की और पूछा कि क्या उनके सम्बन्ध में एक प्रस्ताव पास कर लेना भी पाप है ? फिर भारत के लिखने और बोलने की स्वतन्त्रता का उल्लेख करके आपने कहा कि लोग कहा करते हैं कि भारत में बोलने और लिखने की आज़ादी है, वे आँखें खोल कर देखें, कि किस तरह कुछ भाषणों के कारण आज हम लोग दो वर्षों से जेल में सड़ाए जा रहे हैं।

कीर्ती-कॉन्फ्रेन्स का प्रस्ताव

इसके बाद आपने कालों और गोरों के सम्बन्ध में पक्षपातपूर्ण नीति का उल्लेख किया तथा पञ्जाब प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन और 'कीर्ती कॉन्फ्रेन्स' में अपने शामिल होने का ज़िक्र करके बताया कि इन दोनों सभाओं में भी मैंने कोई ऐसी बात नहीं कही थी, जो आपत्तिजनक हो। आपने कहा कि अगर इस्तग़ासा को मेरा कोई भाषण आपत्तिजनक प्रतीत हुआ तो उसने उसे अदालत के सामने अब तक उपस्थित क्यों नहीं किया है ?

आपने कहा कि सन् १९१४ में यूरोपीय महासमर के समय देश के लोगों को पहले तो ख़ूब सब्ज़-बाग़ दिखाया गया और अन्त में काम निकल जाने पर उन्हें अँगूठा दिखा दिया गया। इसीलिए 'कीर्ती-कॉन्फ्रेन्स' में मेरे द्वारा यह प्रस्ताव पेश हुआ था, कि भविष्य में ऐसे अवसर आने पर हम किसी का रक्त बहाने के काम में शामिल न होंगे। और, ऐसा प्रस्ताव उपस्थित होने का कारण यह था कि उन दिनों सरकार और अफ़ग़ानिस्तान में लड़ाई छिड़ने की गरम अफ़वाह फैल गई थी।

इसके साथ ही आपने तत्कालीन परिस्थिति का विशद वर्णन करते हुए यह भी बताने की चेष्टा की, कि इस अफ़वाह का कारण क्या था ? आपने कहा कि मैं युद्ध का विरोधी हूँ, ग़रीब अनपढ़ लोगों को चन्द रुपयों का लालच देकर संग्राम में ले जाना और मनुष्यों के ख़ून की नदियाँ बहा देना मैं नहीं पसन्द करता। स्वयं देश और धन पर अधिकार जमाना और हज़ारों बच्चों को यतीम और औरतों को विधवा बनाना, माता-पिताओं को सन्तानहीन कर देना, कितनी बड़ी नृशंसता है !! इन बातों का ख़याल भी दिल में कँपकँपी पैदा कर देता है। मेरी राय में संसार से इस प्रकार की लड़ाइयों का अस्तित्व ही मिट जाना चाहिए।

इसके बाद आपने इङ्गलैण्ड की निरस्त्रीकरण नीति की आलोचना करके कहा कि अगर मि० मैकडॉनल्ड निरस्त्रीकरण की बातें कहते हैं, तो संसार में पैग़म्बर की तरह पूजे जाते हैं, और मेरे जैसा एक ग़ुलाम देश का अधिवासी अगर यही बातें कहता है, तो वह जेल की चहार-दीवारी में बन्द कर दिया जाता है।

लाल झण्डा

आगे चल कर आपने 'कीर्ती कॉन्फ्रेन्स' के एक प्रस्ताव का उल्लेख किया; जिसमें कहा गया था कि राष्ट्रीय झण्डे का रङ्ग लाल होना चाहिए। आपने इस विषय पर काफ़ी प्रकाश डालते हुए तथा लाल रङ्ग के सम्बन्ध में ज़ोरदार दलीलें पेश करते हुए राष्ट्रीय झण्डे का महत्व बताया और कहा कि यह बिलकुल ग़लत अनुमान है कि मैं किसी दूसरी जाति के झण्डे के नीचे रहना चाहता हूँ और यूनियन जैक का विरोधी हूँ। इस्तग़ासा मेरे कथन के किसी शब्द से इस बात को प्रमाणित नहीं कर सकता।

हथियार रखने का अधिकार

फिर हथियार रखने के सम्बन्ध में लोगों को उत्साहित करने के अपराध का खण्डन करते हुए सहगल जी ने कहा कि बेशक मैंने इस सम्बन्ध में एक प्रस्ताव उक्त कॉन्फ्रेन्स के सामने उपस्थित किया था और इसके सम्बन्ध में एक व्याख्यान भी दिया था। प्रस्ताव का आशय यह था कि अपनी आज़ादी और रक्षा के लिए हथियार रखना प्रत्येक मनुष्य का ईश्वरदत्त अधिकार है। इसलिए मैं देश से अपील करता हूँ कि वह इस अधिकार को प्राप्त करने के लिए घोर आन्दोलन करे।

इस प्रस्ताव के समर्थन में मैंने जो भाषण दिया था, उसे इस्तग़ासा ने पेश नहीं किया है। यह कैसा अन्धेर है कि प्रस्ताव की प्रति तो अदालत में पेश कर दी गई, परन्तु उसके समर्थन में जो भाषण दिया गया था, वह नहीं पेश किया गया। क्या यही ईमानदारी है ? इससे तो यह मालूम होता है कि विद्वान सरकारी वकील साहब अदालत को बिलकुल अँधेरे में रखना चाहते हैं।

प्रत्येक मनुष्य को हथियार रखने का अधिकार है

मैंने जो प्रस्ताव जनता के सामने उपस्थित किया था, वह मनुष्य-मात्र के ईश्वर-दत्त अधिकार के सम्बन्ध में था। प्रत्येक मनुष्य को हथियार रखने का अधिकार है ? क्या कोई बता सकता है कि संसार में कोई ऐसा देश है, जहाँ के अधिवासियों को हथियार रखने की मुमानियत है ? आज तक जितने ग्राम डाकुओं के अत्याचारों से नष्ट हुए हैं, या जितने आदमी निहत हुए हैं, वह हथियार न रखने की आज्ञा के कारण हुए हैं। क्योंकि डाकू या चोर कहीं न कहीं से हथियार संग्रह कर लेते हैं; परन्तु बेचारे ग़रीब गाँव वाले क्या करें ? अगर वे चोरी से हथियार रक्खें तो जेल जाएँ। इसलिए एक पिस्तौल तमाम गाँव को चुप कर देती है और डाकू आराम से अपना काम करके चल देते हैं। थाना दस-बीस मील के फ़ासले पर है। पुलिस जब तक आवे तब तक डाकू कहाँ से कहाँ चले जाते हैं।

मेरा दृढ़ विश्वास है कि जितनी लड़ाइयाँ, दङ्गे या हिन्दू-मुस्लिम फ़साद देश में होते हैं; सबका कारण हथियार न होना है। क्योंकि कोई हथियारबन्द बहादुर जाति एक-दूसरे से इस तरह झगड़े नहीं किया करती। देखिए, इङ्गलैण्ड में कभी इस प्रकार के वाहियात दङ्गे नहीं होते। हालाँकि वहाँ हर आदमी हथियार रख सकता है। परन्तु हिन्दोस्तान के ३५ करोड़ आदमी भेड़ों से भी गए-गुज़रे हैं। दूसरे मुल्कों की स्त्रियाँ भी हथियार चलाना जानती हैं, फिर क्या वजह है कि हम इस ईश्वर-दत्त अधिकार से वञ्चित हैं ?

इसके बाद आपने कहा कि इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में जो भाषण मैंने दिया था, उसमें कौन सा ऐसा शब्द है, जिससे प्रकट होता है कि मैंने कोई षड्यन्त्र किया है। मैंने लोगों से यह नहीं कहा कि जङ्गी जहाज़ या मैशीनगनें अपने पास रक्खें। मैंने अपनी जान और माल की रक्षा के लिए हथियार रखने की बात कही थी, सरकार से बग़ावत करने की नहीं। मेरी राय में सरकार को स्वयं लोगों को शस्त्रविद्या की शिक्षा देनी चाहिए और भारत के सर्वसाधारण को दूसरी जातियों के मुक़ाबले समर-क्षेत्र में उतरने के योग्य बनाना चाहिए।

इसके आगे आपने किसान-पार्टी के उद्देश्यों और नियमों का ज़िक्र करके कहा, कि मैं केवल उसके लायलपुर वाले अधिवेशन में शामिल हुआ था।

कराची कॉङ्ग्रेस के भावी स्वराज-व्यवस्था सम्बन्धी प्रस्ताव का उल्लेख करके आपने कहा कि इस प्रस्ताव के सामने कीर्ती-किसान पार्टी का प्रस्ताव या उद्देश्य कोई महत्व नहीं रखता।

कीर्ती-किसान पार्टी के प्रारम्भिक इतिहास का विशद वर्णन करने के बाद आपने नौजवान भारत-सभा का उल्लेख करके बताया कि इसका उद्देश्य केवल हिन्दुओं, मुसलमानों और सिक्खों को एकता सूत्र में आबद्ध करना था, ताकि वे राजनीतिक अधिकार प्राप्त करने के लिए अलग-अलग सभा-समितियों की स्थापना करना छोड़ कर सम्मिलित शक्ति से आन्दोलन करें। इसके साथ ही किसानों और मज़दूरों को भी जाग्रत किया जाए। क्योंकि उन्हीं की अवस्था का सुधार करने के लिए सारे आन्दोलन हो रहे हैं।

* * *

हज़ारों-लाखों गाँधियों से लड़ने की तय्यारियाँ

४ जून, सन् १६३१
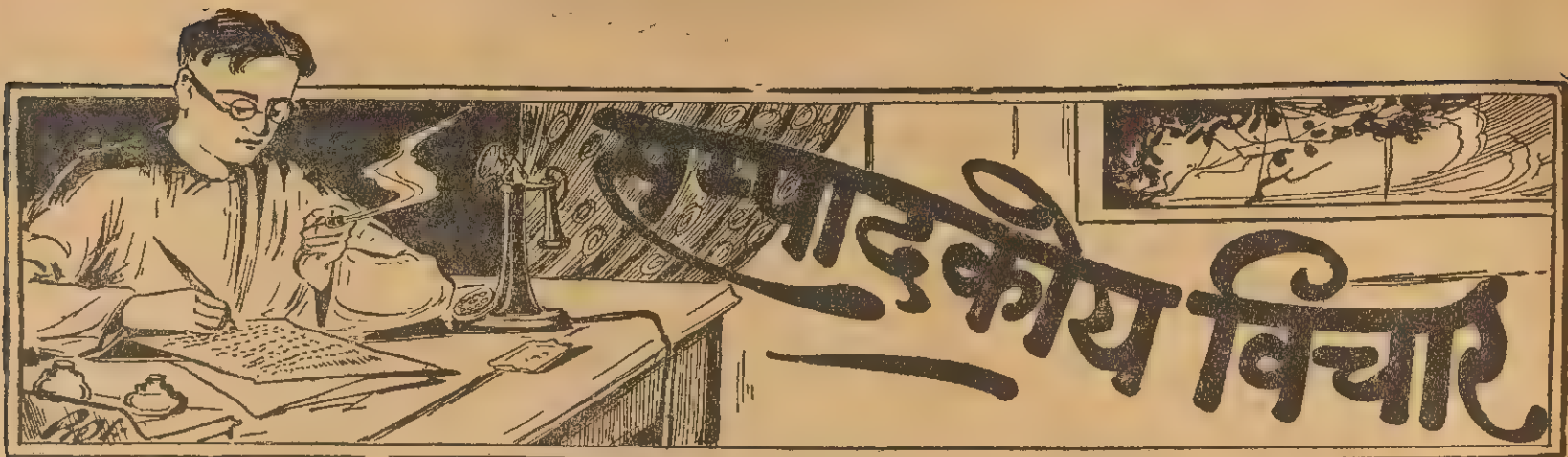
ज़ब्तियों का रोग

स्मृति-रक्षा का प्रश्न

लाहौर का ३०वीं मई का समाचार है, कि प्रान्तीय गवर्नमेण्ट ने वहाँ "स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर"—(At the altar of Liberty) शीर्षक वह पोस्टर ज़ब्त कर लिया है, जिसमें स्वर्गीय श्री० भगवतीचरण (जो कहा जाता है, गत वर्ष २८वीं मई की शाम को रावी के किनारे किसी भयङ्कर विस्फोटक की असफल परीक्षा में मरे थे), स्वर्गीय श्री० विश्वेश्वरनाथ (जो कहा जाता है. गत ९वीं नवम्बर को धर्मपुर (लाहौर) में पुलिस से लड़ने के कारण उसकी गोली के शिकार हुए थे) ; और स्वर्गीय श्री० विनय बोस (कहा जाता है, जिन्होंने बङ्गाल के इन्स्पेक्टर-जनरल ऑफ़ पुलिस स्वर्गीय मि० लोमैन तथा बङ्गाल की जेलों के इन्स्पेक्टर-जनरल स्वर्गीय मि० सिम्पसन की हत्याएँ की थीं और अन्त में जिन्होंने स्वयं आत्म-हत्या करके अपनी इहलीला समाप्त कर दी थी)—के चित्र-मात्र छपे थे !

इसके पहिले भी हम इसी प्रकार के अनेक समाचार पढ़ चुके हैं, जिसमें स्वर्गीय सरदार भगतसिंह तथा उनके साथियों के चित्रादि भी पञ्जाब गवर्नमेण्ट द्वारा ज़ब्त कर लिए गए थे। इस प्रकार की ज़ब्तियाँ जितनी अधिकता से पञ्जाब में हुई हैं, उतनी अन्य प्रान्तों में नहीं। इसका एक कारण यह भी हो सकता है, कि नए नियम के अनुसार यदि कोई वस्तु एक प्रान्त में ज़ब्त कर ली जाती है, तो वह समस्त भारत के लिए ज़ब्त समझी जाती है—सम्भवतः इसीलिए अन्य प्रान्तीय सरकारों ने इन ज़ब्तियों का सारा श्रेय पञ्जाब गवर्नमेण्ट को ही देना उचित समझा। स्वर्गीय सरदार भगतसिंह सम्बन्धी कुछ पर्चे भी देहली आदि स्थानों में हाल ही में ज़ब्त कर लिए गए थे ; उनके जीवन-सम्बन्धी हिन्दी की एक पुस्तिका, जो सम्भवतः काशी में प्रकाशित हुई थी, वह भी ज़ब्त कर ली गई और हाल ही में स्थानीय सहयोगी "अभ्युदय" का "भगतसिंह-अङ्क" ज़ब्त कर लिया गया ; जिसमें सिवा उनके जीवन-सम्बन्धी केवल उन समाचारों तथा घटनाओं का सङ्कलन मात्र था, जो समय-समय पर देश के अनेक पत्रों में प्रकाशित हो चुके थे।

इधर हाल ही की ज़ब्तियों में सब से मनोरञ्जक ज़ब्ती श्री० शचीन्द्रनाथ सन्याल द्वारा लिखित "बन्दी-जीवन" नामक पुस्तक की हुई है, इस ज़ब्ती का श्रेय हमारी प्रान्तीय गवर्नमेण्ट को है। पाठकों को इस सिलसिले में यह स्मरण रखना चाहिए, कि यह पुस्तक लगभग ९ वर्षों से छप कर हज़ारों की संख्या में बिक चुकी थी और अब तक इसके तीन या चार संस्करण प्रकाशित हो चुके थे ! पाठकों को शायद हमें यह बतलाना न होगा, कि इस पुस्तक को यदि क्रान्तिकारियों की पग-पग पर होने वाली विफलताओं का इतिहास कहा जाय तो अनुचित न होगा ! ये सारी पुस्तकें, चित्र तथा पोस्टर आदि भारतीय दण्ड-विधान की १२४-ए धारा के अनुसार ज़ब्त किए गए हैं। हमारी तो निश्चित धारणा है कि इस प्रकार की सारी ज़ब्तियाँ सर्वथा वर्तमान क़ानून के विरुद्ध हुई हैं और हो रही हैं। भारतीय दण्ड-विधान की धारा १२४-ए में स्पष्ट कहा गया है, कि "वह व्यक्ति दण्ड-विधान की इस धारा के अनुसार दण्डित होगा, जो ब्रिटिश-भारत में क़ानून द्वारा स्थापित ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के विरुद्ध घृणा के भाव उत्पन्न करेगा अथवा ऐसा करने का प्रयत्न करेगा × × × इत्यादि।" (× × × creating or attempting to create disaffection against the Government established by Law in British India××× etc) हम लाख चेष्टा करने पर भी यह नहीं समझ पाए हैं, कि किसी क्रान्तिकारी नवयुवक की जीवनी, चित्र अथवा पोस्टर द्वारा ब्रिटिश-सिंह के प्रति घृणा के भाव कैसे फैल जाता है अथवा विप्लवकारियों के किए गए कार्यों की चर्चा-मात्र से, जिसमें 'गवर्नमेण्ट' शब्द तक का उल्लेख नहीं है "ब्रिटिश भारत में क़ानून द्वारा स्थापित ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के विरुद्ध घृणा" का भाव कहाँ से उत्पन्न हो जाता है ?? हमारा तो ख़्याल है कि ये सारी ज़ब्तियाँ क़ानून के सर्वथा विरुद्ध हुई और हो रही हैं और इनके विरुद्ध एक भारत-व्यापी आन्दोलन होना चाहिए और देश के प्रतिष्ठित क़ानूनज्ञों को इस ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए। इस सिलसिले में हम यह भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं,कि ऐसे चित्रों अथवा पुस्तकों के प्रकाशन के गुण अथवा दोष पर हम विचार नहीं कर रहे हैं। पुस्तकें क़ानून के विरुद्ध हैं, अथवा नहीं ; इस बात की मीमांसा करना भी इस लेख का उद्देश्य नहीं है ; हम केवल इतना ही कहना चाहते हैं, कि भारतीय दण्ड-विधान की जिस धारा के अनुसार ये चीज़ें ज़ब्त की जा रही हैं, वह सर्वथा प्रचलित-क़ानून के विरुद्ध है और आज के भारतीय दण्ड-विधान में ऐसी एक भी धारा नहीं है, जिसके अनुसार यह ज़ब्तियाँ क़ानूनन जायज़ क़रार दी जा सकें और जब तक इस प्रकार की ज़ब्तियों के लिए एक विशेष क़ानून का निर्माण नहीं किया जाता, तब तक इन चीज़ों की ज़ब्तियों को क़ानूनन जायज़ ठहराना 'क़ानून' के उस पवित्र नाम का उपहास करना होगा, जिस पर ब्रिटिश-गवर्नमेण्ट को सदा नाज़ रहा है !

इन चित्रों और पोस्टरों की उच्छृङ्खल ज़ब्तियों के एक दूसरे पहलू पर भी हम विचार करना चाहते हैं। हमारा कहना है, कि जब मेजर हडसन जैसे नृशंस हत्यारे की—जिसने देहली के अन्तिम मुग़ल सम्राट बहादुरशाह के लड़कों (मिर्ज़ा मुग़ल और मिर्ज़ा अख़्ज़र सुल्तान [बेटे] तथा मिर्ज़ा अबूबकर [पोते] की इतनी निर्मम हत्याएँ की थीं और जिसके विरुद्ध लॉर्ड रॉबर्ट तक ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'Forty-one years in India' में लिखा है कि "हडसन का यह कार्य ब्रिटिश शासन का एक लज्जाजनक कलङ्क रहेगा)—स्मृति-रक्षा की जा सकती है, जब लॉर्ड लॉरेन्स जैसे नृशंस और अत्याचारी शासक के बुत जगह-जगह स्थापित किए जा सकते हैं तथा उसकी 'कीर्ति' और 'जाति-प्रेम' को चिरस्थायी बनाए रखने के लिए उसके नाम पर मोहल्ले एवं शहर तक बसाए जा सकते हैं ; और जब जनरल नील जैसे निर्मम हत्यारों की स्मृति-रक्षा के लिए जगह-जगह उसकी मूर्तियाँ प्रतिष्ठित की जा सकती हैं और उसके नाम से सड़कें निकाली जा सकती हैं (लखनऊ में 'नील रोड' आज तक मौजूद है), तब कोई कारण नहीं है, कि देश की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए (चाहे उनके साधन कितने ही भ्रमपूर्ण क्यों न हों) हँसते-हँसते मृत्यु का आलिङ्गन करने वाले इन नवयुवकों का परिचय तक देशवासियों को न कराया जावे; उनके कार्यों की स्वतन्त्रतापूर्वक आलोचना तक न की जा सके और उनके मृत्यु-दिवस पर दो आँसू भी हम न बहा सकें !!

ऐसे अवसरों पर गवर्नमेण्ट की ओर से कहा जाता है, कि ये सारे अत्याचार ईस्ट इण्डिया कम्पनी के ज़माने में और उसके अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा हुए थे, जिसके लिए ब्रिटिश सरकार दोषी नहीं ठहराई जा सकती ; इस थोथी और सर्वथा निराधार दलील के उत्तर में क्या हम गवर्नमेण्ट से पूछ सकते हैं, कि जब से शासन की बागडोर स्वर्गीया महारानी विक्टोरिया के हाथों में आई थी, तब से आज तक क्या गवर्नमेण्ट ने भारतवासियों के आत्म-सम्मान को दृष्टि में रखते हुए, कभी भी इन अत्याचारी, नृशंस एवं हत्यारे अफ़सरों की स्मृतियों को—उनके बुतों को उखाड़ कर फेंकने का प्रयत्न किया है ? क्या इन नृशंस हत्यारों के नाम पर रक्खे जाने वाले सड़कों, मोहल्लों तथा शहरों में से एक का नाम भी बदलने की चेष्टा की है ? इसके विरुद्ध हम अनेक ऐसे उदाहरण दे सकते हैं, जब कि नवयुवकों ने इन नर-पशुओं की स्मृतियों को नाश करने का प्रयत्न किया और इस पर उन्हें एक से एक कठोर दण्ड दिए गए ! लाहौर में लॉर्ड लॉरेन्स की प्रतिमूर्ति (Statue) को हटाने के लिए नवयुवकों ने जो प्रयत्न किए थे और उसका उन्हें जो पुरस्कार मिला था, वह घटना अभी पुरानी नहीं हुई है। सन् १९२७ में मद्रास नगर के माऊण्ट रोड पर अवस्थित मेजर नील की प्रतिमूर्ति हटाने के लिए नवयुवकों ने जो सत्याग्रह किया था तथा ब्रिटिश अदालत से उन्हें इस सर्वथा उचित कार्य का जो पुरस्कार मिला था, वह भूलने वाली घटना नहीं है। १ली सितम्बर, सन् १९२७ को अङ्गाची अम्मल नामक एक ऐसी

मद्रासी महिला ने भी सत्याग्रह किया था—जिसके पति को भी इसी अपराध के लिए कठिन कारावास-दण्ड दिया गया था, किन्तु उन्हें भी कठिन कारावास दण्ड देकर भारतीय राष्ट्रीयता का घोर अपमान किया गया था।

एक ऐसी परिस्थिति में, जबकि गवर्नमेण्ट ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन-काल में और उसके कर्मचारियों द्वारा किए गए ऐसे नृशंस अत्याचारों से घृणा प्रदर्शित करने का उपक्रम करते हुए भी उनकी स्मृतियों को अक्षुण्ण एवं चिरस्थायी बनाए रखने पर कटिबद्ध है तो उस गवर्नमेण्ट को इन नवयुवकों की स्मृति-रक्षा में बाधक बनने का कोई नैतिक हक़ नहीं है और प्रत्येक आत्माभिमानी देशवासी को इन उदाहरणों के आधार पर, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है, गवर्नमेण्ट के इस निन्दनीय कार्य का घोर विरोध करना चाहिए—आत्म-सम्मान के मामले में शासक और शासित जाति में इतना अन्तर कदापि न होना चाहिए!

* * *

पक्षपात और उसका परिणाम

इस वर्ष के मुहर्रम में कहीं-कहीं इस अभागे देश की नौकरशाही ने जिस सिद्धान्तहीन मनोवृत्ति का निन्दनीय परिचय दिया है, वह सार्वजनिक हित और सुशासन के नियमों के सर्वथा विरुद्ध है।

दिल्ली की बात है। मुहर्रम का जुलूस निकल रहा था। जुमा-मस्जिद के पास जुलूस में सम्मिलित मुसलमानों ने पुलिस से कहा, कि तुम लोग हम लोगों के चारों ओर घेरा डाल कर हमारे ताज़ियों की रस्सियाँ पकड़ कर चलो, जिससे जुलूस में चलने वाले लोगों को छाती पीटने में सुविधा हो और वे सड़क के इधर-उधर खड़े लोगों से रक्षित भी रहें। सुपरिण्टेण्डेण्ट पुलिस ने कहा, कि पुलिस का काम तुम लोगों के चारों ओर घेरा डाल कर चलने का अथवा ताज़िए की रस्सी पकड़ने का नहीं है। मैं इस काम के लिए पुलिस की मदद नहीं दे सकता।

बस, इतने पर मुसलमान लोग रूठ गए और ताज़िया वहीं रख कर आगे बढ़ने से उन्होंने इन्कार कर दिया। इस पर तमाम अधिकारीगण एकत्र हो गए और आपस में सलाह-मशविरा करके यह तय किया गया, कि थोड़े पुलिस के आदमी चारों ओर खड़े कर दिए जायँ। परन्तु जुलूस वाले उतने आदमियों को अपर्याप्त कह कर फिर रूठ गए। तीन घण्टे तक फिर अधिकारियों में परस्पर विचार होता रहा। अन्त में जब ४० आदमी घेरा बना कर तथा ताज़ियों की रस्सियाँ पकड़ कर चलने के लिए तैनात कर दिए गए, तब जाकर कहीं जुलूस उठा। देहली के मैजिस्ट्रेट ने स्वयं भी एक ताज़िए की रस्सी पकड़ी। सहयोगी 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के एक प्रतिनिधि के पूछने पर आपने कहा कि वे मुसलमानों से डर कर ऐसा नहीं कर रहे हैं, बल्कि सेवा-भाव से!!

कानपुर में जुलूस वाले इस बात पर अड़ गए, कि जब तक 'गाँधी सेवा-समिति' नाम का एक साइनबोर्ड, जोकि सड़क के ऊपर लगा हुआ था, न हटा लिया जायगा, तब तक वे आगे ही न बढ़ेंगे। यद्यपि बोर्ड के पास ही—बोर्ड से क़रीब ४ फ़ीट नीचे बिजली के तार लगे हुए थे; परन्तु वे जुलूस में बाधक नहीं समझे गए। मुसलमानों का कहना था, कि वे उस साइनबोर्ड के नीचे अपने झण्डे नहीं झुका सकते, जिस पर 'गाँधी' का नाम अङ्कित है!!

बातें बहुत छोटी और लड़कपन की सी मालूम होती हैं; परन्तु सार्वजनिक मामलों में थोड़े से उच्छृङ्खल लोगों की ऐसी अनुचित माँगों का समर्थन कर देने से उच्छृङ्खल लोगों के लिए एक सफल-नज़ीर क़ायम हो जाती है। वे उसे अपना उचित अधिकार समझ कर बराबर क़ायम रखने का प्रयत्न तो करते ही हैं; साथ ही उसी ढङ्ग से मिलती-जुलती नई-नई माँगों का निर्माण भी करते रहते हैं।

जुलूस वालों के लिए घेरा तैयार करना या बेमतलब रास्ते का कोई साइनबोर्ड हटाना कोई धार्मिक आवश्यकता की बात नहीं है, जिसके लिए दिल्ली के अधिकारीगण घण्टों परामर्श करते रह गए और अन्त में मुसलमानों की सारी अनुचित एवं तत्वहीन माँगों के आगे उन्होंने सर झुका दिया। उच्च से उच्च अफ़सरों का इस तरह से घण्टों विचार करते रहना, ऐसी-ऐसी बेढङ्गी बातों को महत्व प्रदान करना नहीं तो और क्या है? जुलूस के चारों ओर यदि पुलिस घेरा बनाने से अथवा ताज़ियों की रस्सियाँ पकड़ने से इन्कार कर देती, तो पुलिस के किस कर्तव्य का उल्लङ्घन हो जाता या इससे मुसलमानों के धर्म पर कौन सा हस्तक्षेप होता था?

ऐसी अनुचित बातों को प्रश्रय देने की नीति समाज और शासन—दोनों ही के लिए भयावह सिद्ध हो सकती है। इस देश की नौकरशाही की नीति में कोई सामञ्जस्य नहीं दिखलाई पड़ता। शासन-कार्यों का यह असामञ्जस्य अवश्य ही एक दिन स्वयं नौकरशाही के लिए घातक सिद्ध होगा। ऐसे छोटे-छोटे उदाहरणों द्वारा वह अपनी नैतिक दुर्बलता को (जोकि उसकी मौलिक विशेषता है) एवं अपनी कलुषित मनोवृत्ति को अधिकाधिक स्पष्ट करती जा रही है और इसका स्पष्ट अर्थ यही हो सकता है, कि इस समय इस देश की नौकरशाही ने मानो यह निश्चय कर लिया है, कि मुसलमान जो भी करेंगे, वह सदा उनकी पीठ ठोकती रहेगी; ताकि हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रश्न दिन-दिन गम्भीर होता जाय; किन्तु हम इसमें नौकरशाही का उतना दोष नहीं देखते, जितना मुसलमानों का! जब अपना सोना ही खोटा है, तो परखने वाले का इसमें क्या दोष हो सकता है? जबकि देश के अधिकांश मुसलमान अपने देश को कौड़ियों के मूल्य में बेचने पर लगे हैं; जबकि वे स्वयं देश की ग़ुलामी को चिरस्थायी बनाए रखने पर तुले हैं, तो इसमें शासकों को अधिक दोषी ठहराना उनके साथ अन्याय करना होगा; किन्तु ब्रिटेन के एक सच्चे शुभचिन्तक के नाते हमारा इतना कह देना आवश्यक प्रतीत होता है, कि आज वह जिस दूषित मनोवृत्ति को प्रश्रय दे रहा है; जिस कुटिल नीति का देश में बीज वपन कर रहा है, पनपने पर यह बीज उसके लिए अवश्य ही विष-वृक्ष सिद्ध होगा—हम देखेंगे हमारी इस धारणा में कहाँ तक सार है?

❀

सीमा-प्रान्त के 'गाँधी' की परीक्षा!

सीमा-प्रान्त के "गाँधी" ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ, सीमा-प्रान्त के गौरव, महात्मा जी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन के सौन्दर्य और इस देश के हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न की एक सजीव आशा हैं। आप कॉङ्ग्रेस और अहिंसा-सिद्धान्त के कट्टर अनुयायी हैं। आप इस समय सीमा-प्रान्त में चारों ओर घूम-घूम कर ख़ुदाई ख़िदमतगारों का सङ्गठन और कॉङ्ग्रेस के आदेशों का प्रचार कर रहे हैं। क्षणिक-सन्धि के अनुसार आप भी अपने प्रान्त में लगान आदि के विषय में सन्धि का अक्षरशः पालन कराने का प्रयत्न कर रहे हैं; यद्यपि वहाँ की नौकरशाही मौक़े-बेमौक़े अपनी पुरानी नीति को व्यवहार में लाने से नहीं चूकती। सन्धि के बाद भी ख़ुदाई ख़िदमदगारों को पकड़वा कर पिटवा देना, उन्हें रोक रखना, उनके लाल कुर्तों पर आपत्ति करना, डरा-धमका कर किसी बात की प्रतिज्ञा कराने का प्रयत्न करना आदि—नित्य की होने वाली साधारण बातें हैं।

परन्तु इन सब उत्तेजना देने वाली बातों के होते हुए भी वहाँ के लोग अहिंसा-सिद्धान्त पर दृढ़ हैं। जगह-जगह अफ़ग़ान जिरगों का क़ायम होना, लाल-कुर्ते वाले स्वयंसेवकों का बड़ी-बड़ी तादादों में भर्ती होना और क़ुरान हाथ में लेकर कॉङ्ग्रेस के बताए मार्ग पर चलने, कभी उसकी आज्ञाओं का उल्लङ्घन न करने और गिरफ़्तार हो जाने पर ज़मानत न देने और माफ़ी न माँगने की शपथ लेने का काम बराबर जारी है। स्त्रियों से कहा जा रहा है, कि अब वे जामदानी चिकन, सलमा-सितारा तथा जापानी और विलायती कपड़े न माँगें, चर्ख़ा कातें, खद्दर पहनें और प्रचार-कार्य करें।

परन्तु सीमा-प्रान्त की नौकरशाही विराम-सन्धि की कुछ भी परवाह न करके स्वदेशी, एकता और विराम-सन्धि सदृश निर्दोष कार्यों के प्रचार में भी बाधाएँ उपस्थित कर रही है। अनेक स्थानों में ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ पर भारतीय दण्ड-विधान की १४४वीं धारा लगा कर इन कार्यों से उन्हें रोका जा रहा है। परन्तु ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार ख़ाँ ने सन्धि को सदैव दृष्टि में रखते हुए इन अनुचित और सन्धि-विरोधी सरकारी आज्ञाओं का उल्लङ्घन नहीं किया। एक तरफ़ से सन्धि-पालन का यह ख़्याल है, दूसरी ओर से उसके उल्लङ्घन का जैसा अविचारपूर्ण प्रयत्न किया जा रहा है वह प्रकट ही है। पता नहीं कि नौकरशाही अपने इन आचरणों द्वारा किस भविष्य का निर्माण कर रही है?

❀

ख़ुफ़िया पुलिस का गुण्डापन

बम्बई की सुप्रसिद्ध नेत्री श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय के नाम से 'भविष्य' के पाठक अपरिचित न होंगे। गत राष्ट्रीय संग्राम में बम्बई की महिलाओं ने जिस उत्साह से भाग लिया था, उसके नेतृत्व का सारा श्रेय इन्हीं देवी जी को है। महिलाओं के अतिरिक्त पुरुषों में भी जो जाग्रति आपके द्वारा उत्पन्न हुई है, उसकी चर्चा 'भविष्य' के इन्हीं स्तम्भों में समय-समय पर हम करते रहे हैं। सारांश यह, कि बम्बई में सत्याग्रह की अग्नि प्रज्वलित करने का अधिकांश श्रेय आप ही को रहा है। ऐसी हालत में पुलिस वालों की निगाह में उनका खटकते रहना हमारे लिए कोई आश्चर्य की बात नहीं; किन्तु हाल ही में ख़ुफ़िया पुलिस वालों के जिस निन्दनीय गुण्डापन का हाल आपने बम्बई के एक प्रेस-प्रतिनिधि को बतलाया है, वह सर्वथा अक्षम्य है। संक्षिप्त घटना इस प्रकार है:—

अभी हाल ही में देवी जी लङ्का भ्रमणार्थ पधारी थीं और २८वीं मई को बम्बई वापस लौटी हैं। आपने प्रेस-प्रतिनिधि से कहा कि—"यों तो कोलम्बो से मद्रास तक ख़ुफ़िया पुलिस ने मेरा पीछा किया; पर इसमें कोई विशेष आपत्ति करने की गुञ्जाइश नहीं थी; किन्तु मद्रास से आगे रेलवे-पुलिस ने बड़ा ऊधम मचाया। प्रत्येक स्टेशन पर उनमें से दो पुलिस वाले मेरे डब्बे के सामने खड़े होकर तथा मेरी ओर इशारा कर-करके बातें करते और भीड़ का ध्यान मेरी ओर आकर्षित करते थे। एक बार जब मैं आराम करने के अभिप्राय से लेट गई, तो वे बार-बार अन्य मुसाफ़िरों से मेरे सम्बन्ध में पूछ-ताछ करने लगे। जब मैं हुगली स्टेशन पर उतरी तो वहाँ के कॉङ्ग्रेस कमिटी के मन्त्री मेरा स्वागत करने के लिए मुझसे मिले। सफ़ेद-पोश पुलिस द्वारा हम लोगों का वहाँ भी पीछा किया गया और बिना कोई कारण

बतलाए हमें वहाँ खड़े हो जाने की आज्ञा दी गई। हमसे कहा गया, कि हमें वहीं रुकना पड़ेगा! जब हम लोग उन लोगों की अवहेलना करके गाड़ी में बैठे, तो उन्होंने गाड़ी वाले को खड़े रहने की आज्ञा दी। इस समय वर्षा हो रही थी और हमारे बार-बार विरोध करने पर भी हमें बारिश में ही खड़े रक्खा गया!! इसके बाद गाड़ी पुलिस-चौकी ले जाई गई और वहाँ भी हमें रोका गया। वहाँ दो व्यक्ति काग़ज़ आदि लेकर हमारे सामने आके खड़े हुए और न जाने उन्होंने एक साथ ही कितने सवालात पूछ डाले—तब कहीं हमें आगे बढ़ने की इजाज़त भी दी गई।"

इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं, कि समस्त भूमण्डल में भारतीय पुलिस जैसी उद्दण्ड पुलिस ढूँढ़े भी न मिलेगी। आज शायद ही कोई ऐसा प्रभावशाली वक्ता, पत्रकार अथवा लेखक होगा, जिसका बुरी तरह पीछा न किया जाता हो। स्वर्गीय श्री० गोखले, तथा सर सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी जैसे नर्म विचार के नेताओं तक का पीछा किया जाता था। स्वामी रामतीर्थ महाराज जैसे परमहंस संन्यासी तक को आजीवन इस बात की शिकायत रही। हाल ही में प्रयाग के सर तेजबहादुर सप्रू जैसे सरकारी आदमियों (पाठकों को स्मरण होगा, आप केन्द्रीय सरकार के क़ानूनी-सदस्य रह चुके हैं) तक के पीछे ख़ुफ़िया पुलिस का साया बतलाया जाता था। किन्तु यदि हम भूल नहीं करते तो किसी प्रतिष्ठित महिला को इस प्रकार ज़लील करने का यह पहिला ही अवसर है। हमें भय है, यदि इस प्रकार के गुण्डेपन का तीव्र विरोध न किया जायगा, तो भविष्य में महिलाओं पर और भी अधिक अत्याचार हो सकते हैं। क्या केन्द्रीय सरकार की नेकनीयती तथा ईमानदारी पर जो-जान से निसार होने वाले महात्मा गाँधी लॉर्ड वैलिङ्गडन के कानों तक पुलिस वालों का यह दुस्साहस पहुँचाने की कृपा करेंगे??

* * *

सम्मेलन के सभापति का भाषण

गत २६, २७, २८ और २९ मई को कलकत्ते में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का २०वाँ अधिवेशन था। ब्रज-भाषा के महान कवि और वयोवृद्ध हिन्दी-साहित्य महारथी श्री० जगन्नाथदास 'रत्नाकर' बी० ए० ने सभापति का आसन ग्रहण किया था। श्री० रत्नाकर जी पुराने साहित्यिक हैं। हिन्दी से आपका पुराना सम्बन्ध है। इसलिए आपका भाषण सुन्दर, सारयुक्त और समयोपयोगी हुआ है। वह न तो अनावश्यक रूप से लम्बा है और न बहुत छोटा। फलतः कई दृष्टियों से उत्तम और संग्रहणीय है।

सब से पहले, आवश्यक शिष्टाचार के बाद, सभापति महोदय ने हिन्दी-भाषा की उत्पत्ति पर विचार किया है और बताया है, कि इसकी जननी केवल ब्रजभाषा ही नहीं, वरन् पञ्जाबी भाषा भी है। अर्थात् इन्हीं दो भाषाओं के संयोग से हिन्दी-भाषा की उत्पत्ति हुई है। इसके सम्बन्ध में आपने कुछ उदाहरण भी उपस्थित किए हैं, जो भाषा तत्वविदों के लिए विचारणीय हैं।

इसके बाद सभापति महोदय ने हिन्दी की उन्नति के सम्बन्ध में भारतेन्दु श्री० हरिश्चन्द्र और आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के श्लाघनीय प्रयत्नों का उल्लेख करते हुए काशी-नागरी-प्रचारिणी की सेवाओं का ज़िक्र किया है तथा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उत्पत्ति का संक्षिप्त इतिहास बताते हुए उसके क्रमिक विकास पर सन्तोष प्रकट किया है। परन्तु साथ ही आपको इस बात के लिए करुणा भी उत्पन्न हुई है, कि सम्मेलन के स्थायी सदस्यों और हितैषियों की संख्या बहुत कम है। हिन्दी-वालों की इस उदासीनता पर क्षोभ प्रकट करते हुए आपने कहा है कि—"यह हमारे लिए लज्जा की ही नहीं, वरन् कलङ्क की बात है।"

इसके आगे सम्मेलन के प्रतिनिधियों को हिन्दी की वर्तमान अवस्था का दिग्दर्शन कराते हुए आपने उस पर सन्तोष प्रकट किया है और कहा है कि—"यदि इसी रूप में इसका विकास होता रहा, तो वह दिन अब दूर न समझना चाहिए, जबकि इसमें प्रत्येक प्रकार के उत्तमोत्तम ग्रन्थ प्राप्त होने लगेंगे और इसमें गूढ़ से गूढ़ वैज्ञानिक विषयों के लिखे जाने की योग्यता आ जायगी।" इस सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए आपने उपन्यास, नाटक, कहानी, समालोचना, तुलनात्मक आलोचना, सामयिक पत्र, मासिक पत्र आदि साहित्य के सभी अङ्गों पर प्रकाश डाला है और स्वतन्त्र विषयों की आदर्श पत्रिकाओं की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया है। इसके साथ ही आपने पत्र-पत्रिकाओं के विविध विषय सम्पन्न विशेषाङ्कों का उल्लेख करके यह परामर्श दिया है कि विशेषाङ्क विषय-विशेष के ही निकाले जाएँ।

सद्ग्रन्थों के प्रकाशन की ओर हिन्दी के लेखकों और प्रकाशकों का ध्यान आकर्षित करते हुए सभापति महोदय ने बताया है कि—"आजकल जितनी अन्धाधुन्धी पुस्तकों के प्रकाशन की ओर है, उतनी न होनी चाहिए।"

गद्य साहित्य के सम्बन्ध में इतनी बातें कहने के बाद, सभापति महाशय ने हिन्दी की पद्य-प्रणाली तथा उसकी उन्नति को असन्तोषजनक बताया है और इस सम्बन्ध में आपने भी प्रायः वही बातें कही हैं, जो सम्मेलन के भूतपूर्व सभापति पण्डित पद्मसिंह शर्मा ने मुज़फ़्फ़रपुर के सम्मेलन-मञ्च से कही थीं। आपने हिन्दी—खड़ी बोली के वर्तमान कवियों की छन्द, व्याकरण और परिपाटी इत्यादि से स्वच्छन्द रहने की मनोवृत्ति की निन्दा की है और उर्दू शायरों का उदाहरण देकर हिन्दी कवियों को भी किसी 'उस्ताद' से इसलाह लेने की सलाह दी है।

श्री० रत्नाकर जी ब्रजभाषा के महाकवि और उसके अनन्य प्रेमी हैं! इसलिए उसकी शुभचिन्तना आपके लिए स्वाभाविक है। फलतः आपने सम्मेलन को ब्रज-भाषा का एक उत्तम कोष और एक प्रामाणिक व्याकरण तैयार करने की भी सलाह दी है।

अपने भाषण के अन्त में आपने सम्मेलन की वर्तमान व्यवस्था सम्बन्धी त्रुटियों का उल्लेख करके "निःशङ्क होकर इसकी अवस्था में सुधार" करने की सलाह दी है। आपने सम्मेलन के लिए ऐसे कार्यकर्ता नियुक्त करने की भी सलाह दी है, जो बहुधन्धी न हों और "जीविकोपार्जन के उपरान्त जितना समय उनके पास हो, सब सम्मेलन की सेवा में अर्पित करने को तैयार हों।"

हमारी समझ में अगर सभापति महाशय 'निःशङ्क होकर' सम्मेलन की व्यवस्था सम्बन्धी बातों पर कुछ और प्रकाश डालने की कृपा करते तो बेचारे सम्मेलन का विशेष उपकार होता। क्योंकि सम्मेलन के इलाहाबादी कार्यकर्ताओं के पारस्परिक मतभेद ने इसे 'दो नारियों का कन्त' बना दिया है और जब तक वह मतभेद मिट नहीं जाता, तब तक न तो कोई बहुधन्धी इसका सुधार कर सकता है और न एकधन्धी। इस सम्बन्ध में सम्मेलन के इस अधिवेशन ने क्या व्यवस्था की है, यह तो हमें मालूम नहीं, क्योंकि अभी तक हमें उसकी पूरी कार्यवाही देखने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है। परन्तु हमारी सीधी और स्पष्ट सम्मति है, कि सम्मेलन की बागडोर सम्पूर्ण रूप से इलाहाबादियों के हाथों में ही छोड़ कर हिन्दी जनता निश्चिन्त न हो जाए, वरन समय-समय पर स्वयं भी इसकी सुधि लेती रहे। क्योंकि सम्मेलन की शिथिलता के कई कारणों में से एक प्रधान कारण, उसकी ओर से सर्व-साधारण हिन्दी-प्रेमियों की उदासीनता भी है। हमें अख़बारों में यह पढ़ कर दुख हुआ है कि इस साल सम्मेलन में प्रतिनिधियों की संख्या अन्यान्य वर्षों की अपेक्षा कम रही। आशा है, सम्मेलन के नवीन कर्णधार अपने प्रयत्नों द्वारा सम्मेलन की भीतरी त्रुटियों के सुधार के साथ ही उसकी ओर से बढ़ती हुई जनता की उदासीनता भी दूर करने की चेष्टा करेंगे और उसे एक जीवित संस्था के रूप में परिणत कर सुयश के भागी बनेंगे।

* * *

मुसलमानों की मनोवृत्ति

गत सप्ताह कलकत्ता के कॉलेज स्ट्रीट में दिन-दहाड़े एक बङ्गाली पुस्तक-विक्रेता और उसका कर्मचारी मार डाला गया था, जिसके लिए दो पञ्जाबी मुसलमान पकड़े गए हैं। कहा जाता है, कि उक्त अभागे पुस्तक-विक्रेता ने एक पुस्तक प्रकाशित की थी और दुर्भाग्यवश उसमें मुसलमानों के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद की एक तस्वीर भी छाप दी थी। बस, इससे इस्लाम-धर्म की तौहीन हो गई और उसका बदला उसे जान से मार कर चुकाया गया। अभी यह मामला विचाराधीन है, इसलिए हम इस सम्बन्ध में कुछ कहना नहीं चाहते। परन्तु हमें यह जान कर आश्चर्य हुआ है, कि उस दिन, जब ये दोनों अपराधी अदालत में ले जाए जा रहे थे, तो मुसलमानों के एक दल ने बड़े उमङ्ग के साथ "अल्ला हो अकबर" के नारे लगा कर उनकी अभ्यर्थना की और खुले-आम उनके इस घृणित कर्म का समर्थन किया। सम्भव है, इसके द्वारा उन्होंने एक बड़ा भारी धार्मिक कृत्य कर डाला हो; परन्तु वास्तव में यह उनकी घृणित मनोवृत्ति का परिचायक है। इससे न तो इस्लाम का ही कोई उपकार होगा और न ख़ुदा ही प्रसन्न होगा। इसलिए मुसलमान नेताओं से हमारी प्रार्थना है कि वे इस तरह की मनोवृत्तियों को रोकने की चेष्टा करें और अपनी क़ौम वालों को धार्मिक कट्टरता की भयङ्कर व्याधि से बचाएँ—जो आज देश के सर्वनाश का कारण हो रही है!

* * *

स्व० भगतसिंह आदि की याद में अमेरिका-प्रवासी सिक्खों का अखण्ड पाठ

स्टॉकटिन (अमेरिका) के 'स्पेसिफ़िक कोस्ट ख़ालसा दीवान' के प्रस्ताव

'स्पेसिफ़िक कोस्ट ख़ालसा दीवान' स्टॉकटिन, अमेरिका के मन्त्री ने लाहौर के सहयोगी 'मिलाप' को लिखा है कि गत बैसाखी के दिन उपर्युक्त संस्था की ओर से एक बृहद् 'दीवान' हुआ और स्व० सरदार भगतसिंह, स्व० श्री० राजगुरु और स्व० श्री० सुखदेव की आत्माओं के कल्याणार्थ श्रीगुरुग्रन्थ साहब के अखण्ड पाठ का भोग पड़ा तथा एक प्रस्ताव द्वारा इनके परिवार-वर्ग से समवेदना प्रकट की गई। इसके सिवा और भी कई प्रस्ताव स्वीकृत हुए, जिनके द्वारा सिक्ख सरदारों को, स्वतन्त्रता-संग्राम में भाग लेने के लिए बधाई दी गई, पन्थ से छूतछात को उठा देने की प्रार्थना की गई, कॉङ्ग्रेस से पृथक निर्वाचन की लानत दूर करने को कहा गया तथा सरदार मानसिंह, पं० मोतीलाल नेहरू और मौ० मुहम्मदअली की मृत्यु पर शोक प्रकट किया गया।

* * *
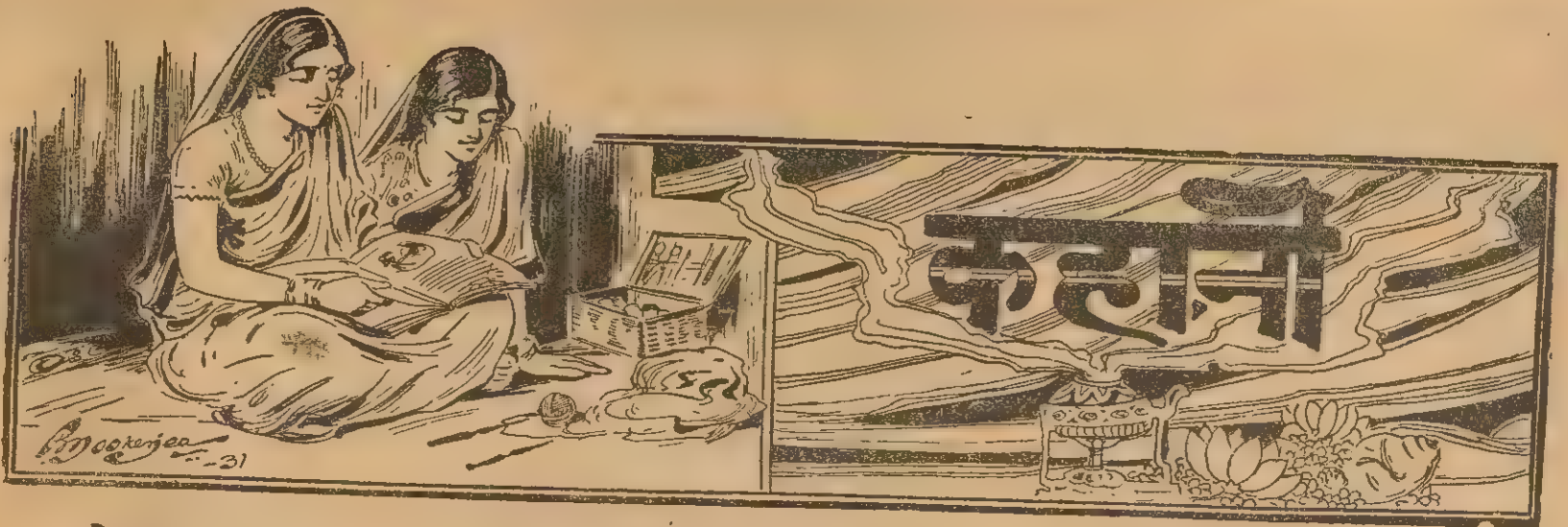
मेरा ब्याह

[श्री० ऋषभचरण जी जैन]

हसा मेरे नौकर बासो ने ऊपर आकर कहा—भैया, पुलिस आ गई !

क़लम रक्खी मेज़ पर, और कुर्सी सरका कर मैंने बासो की तरफ़ देखा। बोला—क्या ?

"भैया, पुलिस आ गई !"

'पुलिस आ गई' का वीभत्स भाव बासो की आँख, नाक और भाव-भङ्गी से झरा पड़ता था। मानो भौंहें मिल कर एक हो जायँगी और आँखें मिचना चाहती हैं, पर मिच नहीं सकतीं।

मैंने बासो की बात सुनी तो सर उठा कर खड़ा हो गया और नीचे आकर देखा, बहुत से आदमी खड़े हैं।

सब से आगे एक पञ्जाबी-हिन्दू अफ़सर था। पुलिस-अफ़सर का वेश इस ज़माने में किससे छिपा है ? लाल पगड़ी वाले सिपाही भी तो आजकल नित की चीज़ हैं ! इसीलिए इनकी रूप-रेखा बताने की ज़रूरत नहीं। हाँ पीछे था, गली वालों, शोहदों और बच्चों का एक झुण्ड, जिनमें से प्रत्येक के मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही थीं, और सभी दर्शक बने, मुझे नाटक का सूत्रधार समझ कर मेरे लिए आँखें बिछाए खड़े थे।

मैंने अफ़सर को देखा और अफ़सर ने मुझे। मैं भी हँसा और अफ़सर भी।

पुलिस-अफ़सर को अभिवादन तो किया नहीं जा सकता ! हँस कर ही मैंने कहा—बड़े इन्तज़ार के बाद जनाब की तशरीफ़ आवरी हुई !

मैंने कहा न—अफ़सर भी मुझे देख कर हँसा था, सो हँस कर ही बोला—चलिए, 'इन्तज़ार में जो मज़ा है......'इत्यादि !

असल में तलाशी एक किताब के बारे में थी। मैं किताबों का काम करता था और मेरी एक किताब ज़ब्त हो चुकी थी। मज़े की बात सुनिए, कि चार दिन पहले ज़ब्ती की ख़बर अख़बारों में निकल चुकी और पुलिस आज आई, तलाशी लेने ! जो किताबें बची भी थीं, वे क्या अब घर में रक्खी थीं ?

बहादुर हूँ या नहीं, कह नहीं सकता; पर अफ़सर के साथ दिलेराना गुफ़्तुगू सुन कर आप भ्रम में न पड़ें ! बात यह थी, कि जब घर में जोखों की चीज़ नहीं, तो डरना क्यों ? क्यों न सीना तान कर बात करें, जो सर्व-साधारण में एक बार 'वाह-वाह' तो हो जाय !

ख़ैर, मैंने कहा—तो कहिए ?

अफ़सर आदत के मुताबिक़ कह उठा—जो हुक्म !

"जी नहीं, हुक्म मैं क्या चलाऊँगा।"—मैंने जैसे उसकी भूल सुधारी—"अर्ज़ यह है, कि आप कै जने भीतर आएँगे ?"

"कै जने ?"—अफ़सर ने पीछे की भीड़ पर नज़र घुमा कर कहा—"जै को आप कहेंगे ?"

फिर झट संशोधन किया—मैं, कुछ सिपाही और दो-तीन और......

'दो-तीन और' से अभिप्राय ख़ुफ़िया-पुलिस के सफ़ेद-पोश भलेमानसों से था।

मैंने कहा—तो आते जाइए !

"क्या ?"

"आप लोगों की तलाशी लूँगा !"

"तलाशी ?"—अफ़सर झिझका—"साहब, तलाशी ......ले लीजिए...... पर क्यों...? हमारे पास क्या है...?"

"अजी साहब"—मैंने हँस कर कहा—"तलाशी कैसे न लूँ ? आज जनाब किताब ढूँढ़ने आए हैं, कल बम ढूँढ़ने आ सकते हैं ! मैं भी तो अपना बचाव..."

आगे की बात मैंने कही नहीं या किसी ने सुनी नहीं—याद नहीं। पर इतने पर ही अभीष्ट हलचल पैदा हो चुकी थी।

पुलिस वाले सिटपिटा गए थे, गली वाले ख़ुश होकर और मुँह फेर कर हँसने लगे थे, और बच्चे कुछ न समझ कर, कौतूहल और अचरज की मूर्त्ति बने, ज्यों के त्यों खड़े थे !

और बासो, जिसके शरीर की खाल ज़ोर-ज़ोर से थर्रा रही थी, चुपके से मेरे पास आकर बोला—न, भैया ! ऐसी नादानी मत करो, पुलिस से बिगाड़... ..

बात पूरी सुने बिना ही मैंने उसे ढकेल दिया।

२

तलाशी के लिए मुझे उनके कपड़े थोड़े ही उतरवाने थे, ज़रा लोगों के सामने शेख़ी बघारनी थी ! अफ़सर की नीयत पर मैं सरासर हमला कर चुका था—तो भी वह बेचारा तैयार हो गया !

ख़ैर, ज़रा यों ही छू-छा कर तलाशी का अभिनय और अनुष्ठान पूरा हुआ, और अब मेरे घर की तलाशी की बारी आई।

मेरे आचरण से अफ़सर कुछ श्री-हत हो गया था ! चेहरे की रौनक़ में कमी आ गई थी, और आँखों में शरम के आसार दिखाई देने लगे थे। मुझे इस परिवर्त्तन पर हँसी आई और दया भी।

अफ़सर ने अपनी शरम हँसी में छिपाई और बोला—कहिए, कितनी किताबें हैं ?

जवाब पहले ही से सोचा हुआ था—किताब तो एक भी नहीं है—हाँ, आप अपना फ़र्ज़ अदा कर सकते हैं।

शरम अभी मिटी नहीं थी, इसलिए फिर हँसी की ज़रूरत पड़ी, और अफ़सर बोला—अजी, फ़र्ज़ क्या साहब, हम लोगों की बड़ी मुसीबत है......

"क्या मुसीबत है"—यह बताने के पहले अफ़सर ने ख़ुफ़िया के भलेमानसों की तरफ़ देख कर कहा—"लो देख लो भाई इधर-उधर आलमारियों में; कोई है तो नहीं किताब......!"

मैंने धीरे से कहा—अजी अब रक्खी है किताब......!

कहा तो धीरे से था, पर अफ़सर ने सुन लिया। हँस कर बोला—आई नो दैट मिस्टर......आई नो !

मैं मुस्कराने लगा, और बोला—अजी जनाब, आप भी ग़ज़ब करते हैं ! चार दिन ख़बर निकले हुए...... और आज आप तलाशी लेते हैं ! भला अब कहाँ किताब... ..।

गली के जो दो-चार प्रौढ़ व्यक्ति आए थे, उनके सङ्केत पर मुझे रुकना पड़ा।

पण्डित जयनाथ ने अफ़सर से कहा—दारोग़ा जी, ख़्याल न करें, अभी लड़का ही है !

अफ़सर साहब की झेंप अब मिटी, और उन्होंने स्नेह-दृष्टि से मुझे ताक कर कहा—जी हाँ, मैं ख़ुद समझता हूँ, मुझे तो ऐसे निडर नौजवानों से बड़ी ही मुहब्बत है। ख़ुद मैं बाल-बच्चे वाला आदमी हूँ; तीन लड़के हैं, दो लड़कियाँ हैं। एक लड़का तो ठीक इनके जितना है। कॉलेज में पढ़ता है। क्या करें साहब, हमारी तो मुसीबत है।

क्या मुसीबत है ?—यह उन्होंने अब बताना शुरू किया:—

"अजी जनाब, आख़िर हम भी तो हिन्दुस्तानी हैं, हम में भी तो हुब्बुलवतनी का जज़बा है, हम भी तो इसी हिन्द की ख़ाक से पले हैं ! क्या हम यह नहीं समझते ? हम लोग बुरे आदमियों को सज़ा देने के लिए बने हैं, न कि अपने ही भाइयों से दुश्मनी करने के लिए ! अपने जीवन का दुःख हमी लोग जानते हैं। जनाब, लोग हमें नफ़रत की नज़र से देखते हैं, अङ्गरेज़-अफ़सर तक हम से हिक़ारत करते हैं, भले घर की बहू-बेटियों को जेल जाते देखते हैं, तो हमारी छाती फटने लगती है और तो और ....हँसी की हँसी, और दुःख का दुःख। मैं अपनी ही बात कहूँ, जब घर में घुसता हूँ, तो बाल-बच्चे उछल-उछल कर 'टोडी बच्चा, हाय ! हाय !' की धुन लगा देते हैं, मेरी सगी औरत ने कई दफ़ा पिकेटिङ्ग में जाना चाहा, पर क्या करें साहब, लाचारी के आँसू बहाने के सिवा और कर ही क्या सकते हैं !"

पण्डित जयनाथ ने सिर हिला कर कहा—जी हाँ हुज़ूर, यह तो है ही, आख़िर कुनबे-वाले आदमी ठहरे, ख़र्च.........।

"अजी, ख़र्च को भट्टी में डालो"—अफ़सर महाशय कहने लगे—"हम लोगों का तो फ़र्ज़ ही......।"

"जी हाँ, फ़र्ज़ भी तो कोई चीज़ है ! आख़िर अमन में तो सरकार आपको घर बैठे तनख़्वाह दे, अब ज़रूरत के वक़्त आप पर उम्मीद न रक्खे, तो किस पर......"

"अजी, इस फ़र्ज़ को मारिए गोली"—अफ़सर ने फिर बात काटी—"मतलब यह है, कि सरकार ने हमारा फ़र्ज़ एक अजीब क़िस्म का बनाया है। आपको एतबार न आएगा, कई बार इस्तीफ़ा पेश कर चुका, पर नायब कोतवाल ने हर बार लौटा दिया, बल्कि पिछली दफ़ा तो यह धमकी दी, कि 'घर-घसीटे जाओगे; ज़्यादा कॉङ्ग्रेस के चक्कर में न पड़ना।' अब साहब, नौकर

छोड़नी मञ्ज़ूर, रूखी-सूखी खानी मञ्ज़ूर, भूखे रहना मञ्ज़ूर, पर जेल जाना मञ्ज़ूर नहीं। अब आप जानिए, कच्चा कुनबा है।"

पण्डित जयनाथ ने, और बाक़ी सब ने, सिर हिला कर कहा—हाँ साहब, कच्चा कुनबा है, क्या किया जाय!

"बस, तो, इसीलिए पड़ा हूँ, इस नर्क में!"—अफ़सर साहब ने कहा—"और एक ख़्याल यह भी है, कि घर पड़ा-पड़ा तो देश की या देश-भाइयों की क्या ख़िदमत करूँगा, इस जगह रह कर ज़रूर कुछ न कुछ कर सकता हूँ। समझे आप! लोग पुलिस के महकमे को चाहे जितना नीच और तोता-चश्म कहें, पर मैं आपसे सच कहता हूँ, मैंने आज तक किसी बे-क़ुसूर को नहीं सताया!"

जिनसे कहा जा रहा था, उन सबने फिर सिर हिला कर कहा—हाँ जी, कोई पाँचों उँगली एक-सी थोड़ा-ही होती हैं!

तलाशी हो चुकी, और किताब कोई मिली नहीं, तो दारोग़ा जी कुर्सी सरका कर लिखने बैठे।

दारोग़ा जी ने जो लिखा, वह ज्यों का त्यों तो मुझे याद नहीं, किन्तु भावार्थ यह था—

"मिस्टर..... वल्द .... के घर में आज तलाशी ली गई। जिन लोगों की मौजूदगी में तलाशी ली गई, उनके दस्तख़त नीचे हैं। घर में कोई किताब नहीं मिली। तारीख़ ....."

दारोग़ा जी ने दस्तख़त किए—रामकिशोर गुप्त।

"गुप्त?—तब तो सजातीय ही हैं"—यह मैं सोच ही रहा था कि दारोग़ा जी ने मुझसे भी दस्तख़त कराए, फिर कहा—"आइए, पण्डित जयनाथ जी।"

वे कर चुके, तो फिर दूसरे आए, तीसरे आए, अन्त में आए वृद्ध और हिलते-काँपते एक सज्जन—जिनकी आँखें डर से धँसी जाती थीं, और चेहरा फ़क़् पड़ गया था। झट हाथ आगे बढ़ा कर मुड़िया-अक्षरों में दस्तख़त कर दिए।

दारोग़ा जी ने पूछा—क्या नाम?

वृद्ध ने मरी आवाज़ से कहा—रुग्गनमल, ग़रीब-निवाज!

"क्या?"

अब आवाज़ ज़रा करारी हुई—रुग्गनमल, ग़रीब-निवाज!

"रुग्गनमल?"

"जी हाँ, रुग्गनमल, ग़रीब-निवाज।"

बुड्ढा तीनों बार 'ग़रीब-निवाज' कहना न भूला—इस पर दारोग़ा जी भी हँसे, मैं भी हँसा, सिपाही भी हँसे, और सब भी हँसे।

३

यह सब ख़त्म हो चुका था, कि एक छोटा लड़का आया, और एक किताब मुझे देकर बोला—भाई साहब ने दी है!

दारोग़ा जी ने कहा—क्या किताब है?

मैंने कहा—जी, कुछ नहीं, मामूली नॉविल है, एक दोस्त पढ़ने ले गए थे, उन्होंने भेजी है!

दारोग़ा जी ने नॉविल हाथ में लेकर कहा—लो भाई, हमें भी दोस्त बना लो!

अब मैंने हेकड़ी न की, और बोला—ज़रूर, यह तो मेरा सौभाग्य होगा।

"तो आपके यहाँ तो किताबों का काफ़ी स्टॉक है!"

"जी हाँ, शहर के सभी बुकसेलर मुझसे किताबें ख़रीदते हैं। थोक कार-बार करता हूँ।"

"आपके यहाँ कुछ पुस्तकें ऐसी भी हैं, जो लड़कियों के पढ़ने लायक़ हों!"

"लड़कियों के पढ़ने लायक़?"—मैंने कहा—"कितनी बड़ी लड़कियों के लायक़?"

"यही कोई चौदह-पन्द्रह बरस की।"—दारोग़ा जी बोले—"मेरी ही लड़की है!—नवीं क्लास में पढ़ती है। हिन्दी-किताबों की बड़ी शौक़ीन है। मेरे बड़े कान खाती है। पर मुझे फ़ुर्सत कहाँ? अब आपने दोस्ती क़बूल कर ली है, तो यह मुश्किल आसान हो जायगी! लाइए, अगर कुछ अच्छी-अच्छी किताबें हों, तो दिलवाइए।"

मैंने समझा—दारोग़ा जी ने अच्छे फूल रक्खे! आगया न पुलिसपन! मुझसे भी बाज़ नहीं आए!

पर बात हो चुकी थी! मजबूर था। उदास होकर उठा और इधर-उधर देख-भाल कर दो-तीन छोटी-छोटी पुस्तकें दारोग़ा जी के सामने पटक दीं। बोला—"लीजिए, इस वक़् 'स्टॉक' ख़त्म हो चुका है। अब की दफ़ा, नया माल आने पर.........।

दारोग़ा जी ने जेब से बटुआ निकालते हुए कहा—अच्छा, ख़ैर, इनका बिल......? और पुस्तकें नहीं हैं?

बटुआ देखा, तो सारी उदासी दूर हो गई, बोला—अजी, बिल-विल की बात तो जाने दीजिए; फिर दोस्ती ही क्या रही? हाँ, देखिए—देखता हूँ, और पुस्तकें मिल जायँ शायद......।

अब की बार कई किताबें मिल गईं!

"हाँ तो, बिल दीजिए!"—दारोग़ा जी ने बटुआ खोल कर कहा।

"वाह साहब! बिल की बात छोड़िए......।"

"न साहब, यह कैसे हो सकता है? बिल दीजिए!"

और दो-एक बार 'हाँ-न' हुई। दारोग़ा जी ने किताबें एक सिपाही को दीं और दस रुपए का नोट मेरे सामने रख दिया।

मैंने बिल बना दिया, और दो रुपए छः आने वापस दे दिए।

कुर्सी छोड़ कर दारोग़ा जी ने कहा—तो आपके यहाँ नई-नई किताबें तो आती ही रहती होंगी?

"जी हाँ, आती रहती हैं।"

"तो आप छाँट-छाँट कर रख लिया करें, मेरा नौकर आकर ले जाया करेगा। बिल साथ दे दिया...।"

मैं बोला—वह सब हो जायगा, मेरा आदमी 'लोकल' ग्राहकों को पुस्तकें 'सप्लाई' किया करता है, वही आपके यहाँ दे आया करेगा!

"वाह! तब तो बात ही क्या है!"—फिर हँस कर बोले—"हाँ, मेरे नौकर को लोग देखेंगे, तो न जाने क्या सन्देह करने लगें! आप ही भेज दिया करें। पर देखिए, किताबें अच्छी-अच्छी, शिक्षाप्रद छाँट कर भेजें। आप मुझ से ज़्यादा अच्छा 'सलेक्शन' कर सकते हैं। याद रखिएगा, सुशीला......लड़की अभी चौदह-पन्द्रह वर्ष की ही है!"

दारोग़ा जी और उनके साथी चल दिए।

४

कलकत्ते से नई किताबें आईं, तो लोकल-ग्राहकों के लिए, एक-एक सेट तैयार करने लगा।

दारोग़ा जी के लिए भी—कुमारी सुशीला देवी, सुपुत्री दारोग़ा रामकिशोर जी गुप्त, के नाम—एक सेट तैयार किया।

शाम को आदमी रुपया ले आया।

फिर तो हर हफ़्ते किताबें जाने लगीं। तीन या चार मर्तबा गई थीं, कि एक दिन आदमी एक पुर्ज़ा भी लाया।

पुर्ज़े पर हिन्दी के सुन्दर-सुन्दर अक्षरों में कुछ पुस्तकों के नाम लिखे हुए थे।

आदमी ने कहा—दारोग़ा जी की लड़की ने ये किताबें और मँगाई हैं।

किताबें अच्छी-अच्छी थीं। एक सीता जी का जीवन-चरित्र था, एक इतिहास की पुस्तक थी, दो शिक्षाप्रद उपन्यास थे।

दूसरे फेरे में, और किताबों के साथ ये चार किताबें भी मैंने भेज दीं।

अब हर दफ़ा आदमी एक पर्चा लाने लगा। कभी सिर्फ़ किताबों के नाम लिखे रहते, कभी नामों के बाद—'ये पुस्तकें शीघ्र (अथवा अति-शीघ्र) भेज दीजिएगा।' एक बार लिखा था—'श्रीमान्! कृपया निम्न-लिखित पुस्तकें अत्यन्त शीघ्र भेजने की दया कीजिएगा!'—फिर एक बार 'श्रीमान् महाशय जी' कह कर सम्बोधित किया गया था।

जिस घटना का उल्लेख करने के लिए, ऊपर का पैरा लिखा, वह जब घटी, तो उससे पहले भी एक पुर्ज़ा आया था, और उसमें ज़रा घसीट के अक्षरों में लिखा हुआ था—

"श्रीमान् महाशय जी,

मैं नवीं जमात में पास होकर दसवीं में चढ़ गई हूँ। आपको सुन कर ख़ुशी होगी, कि मैं दूसरे नम्बर पर आई हूँ। सरला ने तीन नम्बर मुझसे ज़्यादा पाए, इसलिए वह पहले नम्बर पर (ब्रैकेट में लिखा हुआ था—First) आ गई। अब अध्यापिका जी ने मुझसे कुछ पुस्तकें छुट्टियों में पढ़ने के लिए कहा है। मैं उन पुस्तकों की सूची आपके पास भेज रही हूँ। आप कृपा करके लिखें, कि ये पुस्तकें आपके यहाँ से मिल सकती हैं या नहीं। न मिल सकती हों, तो आप मेहरबानी करके कहीं से मँगा दें। दाम बाबू जी दे देंगे। आपकी बड़ी कृपा होगी। किताबें जल्दी मिलनी चाहिए, क्योंकि मैं शीघ्र ही पहाड़ पर जाने वाली हूँ!—सुशीला देवी।"

किताबें कुछ मेरे पास मौजूद थीं, कुछ बाज़ार से मिल सकती थीं। मैंने एक पर्चे पर लिख कर भेज दिया—"बहिन जी, सभी पुस्तकें मिल सकती हैं। कल आपकी सेवा में भेज दी जायँगी।"

आध घण्टे बाद नौकर जवाब लेकर लौटा। लिखा था—

"भाई जी, आप कल सारी पुस्तकें ज़रूर-ज़रूर भेजने की कृपा कीजिएगा। मैं बाट देखूँगी—बल्कि अगर आप और बहुत सी पुस्तकें ट्रङ्क में भर कर भेज दें, तो मैं छाँट लूँगी। पहाड़ पर पढ़ने के लिए मैं बहुत सी किताबें लेना चाहती हूँ। आपकी दया होगी।"

उस दिन के इस शुद्ध व्यावसायिक पत्र-व्यवहार ने मेरे मन में एक ऐसा अजीब भाव पैदा किया, जिसे आपको बताते भी हिचकता हूँ। कितनी निर्दोष और सरल लेखन-शैली थी, इस बालिका की!

५

अगले दिन ख़ासा धर्म-सङ्कट आ पड़ा। उस दिन था, बुढ़ा-माता का मेला, और नौकर लोग उस दिन सब ग़ायब थे। किताबें मैंने शाम को ही छाँट ली थीं, पर देखिए न संयोग! इस बुड्ढी माता के मेले का न ध्यान था, न गुमान!

अब करूँ क्या? उसको वचन दे दिया गया। वह प्रतीक्षा करेगी! किताबें न पहुँचीं तो क्या सोचेगी? कैसे भाव उसके मन में पैदा होंगे? बेचारी सरल लड़की! कैसा भीषण धक्का उसके कोमल हृदय पर लग सकता है!

पर कैसे भेजूँ, किताबें? मैनेजर भी तो नहीं आया आज! बासो कम्बख़्त भी आज तो नई वास्कट पहन कर चलता बना है! करूँ क्या......?

मेरी कमज़ोरी देखिए, बार-बार अपने जाने की बात मन में आती थी, और बार-बार उसे बाहर निकाल फेंकने के लिए आत्मा पर बलात्कार करता था!

अब उस समय के मानसिक सङ्घर्ष का विश्लेषण

ईमानदारी से नहीं कर सकूँगा, इसलिए यह कह कर मुझे अपने आत्म-समर्पण का परिचय देना पड़ता है...... कि मैंने पुस्तकें क़ुली के सिर पर रखवाईं और चल पड़ा।

अप्रैल का महीना था, और नौ बजे का वक्त। धूप ज़्यादा तेज़ नहीं थी। चलता-चलता दारोग़ा जी के घर पहुँच गया।

मकान ख़ूबसूरत और ख़ुलासा था। सीढ़ियाँ चढ़ रहा था तो दो लड़कियों की आवाज़ आई। दोनों बारी-बारी से यह विख्यात पञ्जाबी गीत गा रही थीं :—

"बन्सी बजदी ना—
कृष्ण बिना,
रेंदी ना—
गोपाल बिना !—इत्यादि।"

सहसा किसी प्रौढ़ा का स्वर सुन पड़ा—"नी शीला !"

"हाँ माँ !" लड़कियों में से एक ने कहा।

"अरी, खसमाँ-खाणी, उत्थे की फ़िज़ूल दी बकवास......(आगे के कुछ शब्द साफ़ न सुन पड़े)... रोटी नहीं खाणी...?"

सहसा मैंने आवाज़ दी—दारोग़ा जी !

जवाब भीतर से न मिल कर पीछे से मिला—अख़्ख़ा ! आप हैं! धन्य है यह टोडी कि आज आप यहाँ आए ! चलिए, भीतर तशरीफ़ ले चलिए !

दारोग़ा जी शायद हवाख़ोरी से लौटे थे। सफ़ेद क़मीज़, ख़ाकी नेकर, जूता-मोज़ा, और हाथ में चाबुक।

"मैंने झेंप कर कहा—जी, यह किताबें...

"अच्छा, भीतर तो चलिए ! (क़ुली से) ले आ भाई, भीतर आ जा !"

"जी, मैं तो जाता हूँ—" मैंने कहा—"आज आदमी सब मेले में चले गए हैं। किताबें शायद ज़रूरी थीं, मैंने सोचा हर्ज होगा, इससे ख़ुद ही लिवा लाया हूँ।"

"अच्छा, अच्छा, बहुत अच्छा किया ! मगर ज़रा भीतर तो चलिए ! मुद्दत बाद तो आपके दर्शन हुए हैं !"

अब 'ना-नू' करके अपने आपको ज़्यादा धोखा न दे सका और भीतर चला।

६

शीला और उसकी बहिन अभी तक रोटी खाने नहीं गई थीं। बहिन तो छः-सात बरस की बच्ची थी और शीला कोई पन्द्रह बरस की। पञ्जाबी की लड़की, पन्द्रह बरस की, पूरी औरत बन जाती है, पर मानसिक विकास में प्रौढ़ता नहीं आती। पन्द्रह बरस की वह जवान छोकरी, माँ के मुँह से 'खसमाँ-खाणी' का ख़िताब सुन कर भी, उसी विकार-हीन भाव से हँस-हँस कर 'बन्सी बजदी ना' का गीत गा रही थी !

तम्बाकू़ी रङ्ग की धोती, ज़र्द जम्पर, पैर नङ्गे और लम्बी चोटी थी।

यह चोटी इसलिए दिखाई दी, कि धोती का पल्ला सिर पर न रह कर, कन्धे पर पड़ा था।

दारोग़ा जी ने घुसते ही कहा—शीला, ले, ये बाबू जी तेरी किताबें लाए हैं।

शीला ने मुझे देखा, और शर्माई, पर पञ्जाबी लड़कियों का शर्माना सिर ढकने, या चेहरा लाल बना लेने से ज़ाहिर नहीं होता, चपलता त्याग कर सहसा गम्भीर बन जाना ही, उनकी शर्म का काफ़ी से ज़्यादा बड़ा लक्षण है !

शीला का शर्माना भी ऐसा ही था !—गीत गाना ख़तम हुआ, आँखें गुम-सुम बन गईं, मुँह पर गम्भीरता छिप गई, और सहमी सी होकर वह पिता के पास आ खड़ी हुई।

दारोग़ा जी ने उसकी कमर थपक कर कहा—देख, ये बाबू जी तेरे वास्ते किताबें लाए हैं।

कलिकाल

[कविवर—पं० रामचरित जी उपाध्याय]

जब तक हरित चरण तू आया यहाँ नहीं था,
तब तक न दौर दौरा दुख का यहाँ कहीं था—
क्यों दूसरी जगह में पौरा गया न तेरा ?
अपना जमाना अड्डा आकर तूझे यहीं था ?

❀

प्रति गेह में कलह की क्यों आग को लगाया ?
दुर्भाव को भिड़ा कर सद्भाव को भगाया।
मारी अकाल लाकर कलिकाल ! साथ अपने,
सुख-नींद में रहे हम तू ने वृथा जगाया॥

❀

थी दूध की नदी भी बहती कभी यहीं पर,
जो सुख रहा यहाँ पर वह था नहीं कहीं पर।
यदि तू यहाँ न आता बरबाद हम न होते,
मोहताज आज हम सा कोई नहीं मही पर॥

❀

पकवान खा रहे थे पशु भी कभी यहाँ के,
सुर-से सुखी कभी थे मानव सभी यहाँ के।
अति कष्ट मिल चुके हैं तेरे करों अरे कलि,
अगणित ग़ज़ब गिरेंगे सिर पर अभी यहाँ के॥

❀

तुझसे घृणा हमारी बढ़ती रहेगी तब तक,
पौरा यहाँ से तेरा जाए कहीं न जब तक।
अपने हृदय में तूने सोचा नहीं कभी क्या ?
अन्याय का निबेड़ा बेड़ा चलेगा कब तक॥

❀

हम कब स्वकीय भाषा-भूषित-वदन रहेंगे ?
कलि ! जब नहीं यहाँ पर तेरे सदन रहेंगे।
दुर्दैन्य दूर होगा तत्काल साथ तेरे,
फिर देखना वदन निज निकले रदन रहेंगे॥

❀

आया जहाँ से कलि ! तू, जाना तुझे वहीं है,
सच बात सुन बपौती तेरी यहाँ नहीं है।
फिर सृष्टि सत्ययुग की होगी, न देर होगी,
दुर्विधि-निशा यहाँ से अब दूर हो रही है॥

❀

है कौन कर्म बाक़ी जिसको किया न तू ने ?
है कौन धर्म बाक़ी जिसको लिया न तू ने ?
अब ऊब हम गए हैं अन्याय देख तेरे,
है कौन कष्ट बाक़ी जिसको दिया न तू ने ?

❀

अति शीघ्र सत्ययुग का होगा यहाँ ज़माना,
जाना तुझे पड़ेगा क्योंकर रहा बहाना ?
यह विश्व का नियम है कोई न स्थिर रहेगा,
दबना उसे पड़ेगा जो चाहता दबाना॥

❀

भृगुनाथ-जन्म होगा अवसान भी खलों का,
फूलो फली मही पर होगा भला भलों का।
यह धाँधली न तेरी ऐसी मची रहेगी,
कलि ! घोंटना घटेगा तेरे करों गलों का॥

❀

उठ जायगा यहाँ से तेरा अधर्म-डेरा,
रह जायगा यहाँ पर दुर्नाम एक तेरा।
आए-गए न कितने तेरे समान जग में ?
होता वहीं उजेला रहता जहाँ अँधेरा॥

शीला ने नज़र भर कर मुझे ताका और अनुमान से पहचान कर, दोनों हाथ जोड़े। बोली—नमस्ते...!

मैंने भी 'नमस्ते' कहा।

तब क़ुली के सिर से गट्ठा उतरवाया गया, और शीला, बीच-बीच में छोटी बहिन को डाँटती हुई, किताबें उठा कर रखने लगी।

इधर, बैठ कर, दारोग़ा जी मुझसे बातें करने लगे।

शीला, बीच-बीच में—कभी दारोग़ा जी को बीच में डाल कर, और कभी मुझसे मुँह पर मुँह—किताबों के बारे कुछ कहती रही।

दारोग़ा जी से जो बातें हुईं, महत्वपूर्ण होने पर भी—कहानी का कहानीपन नष्ट होने के भय से मैं विस्तार-पूर्वक उनका उल्लेख नहीं कर सकता। मेरी बाबत सभी कुछ उन्होंने पूछ और जान लिया। अविवाहित हूँ, वैश्य हूँ, बी० ए० तक पढ़ा हूँ, पिता नहीं हैं, माँ हैं, बैङ्क में रुपया जमा है, उसके सूद से काफ़ी आमदनी है, इत्यादि। सब बातों का यह क्रम मेरा अपना बनाया हुआ है—यह आप नोट कर लें !

और भी कुछ बातें हुई थीं। उनसे यह ज़ाहिर होता था कि दारोग़ा साहब विनोदी आदमी हैं, और अपनी नौकरी से घोर असन्तुष्ट हैं ; अफ़सरों से डरते हैं, नहीं अब तक इस्तीफ़ा दे दिए होते।

शीला ने चलते-चलते मुझसे अच्छी-अच्छी पुस्तकें भेजने की प्रार्थना की थी, और हाथ जोड़ कर नमस्ते किया था।

दारोग़ा साहब ने उसके प्रस्ताव में यह संशोधन किया था कि पुस्तकें भेजूँ नहीं, ख़ुद ही लिवा कर लाऊँ !

७

इसके बाद कई बार दारोग़ा जी के घर जाने का मौक़ा पड़ा। 'मौक़ा पड़ा' न कह कर 'मौक़ा ढूँढ़ा गया' कहूँ तो ईमानदारी की बात होगी। कई बार में हमेशा दारोग़ा जी से भेंट हुई, और ख़ूब बातें हुईं। उन्होंने मुझे परखा—मैंने उन्हें। सच्ची बात यह है कि पहले-पहले मैं उन्हें लफ़्फ़ाज़ी और बातूनी के आगे कुछ नहीं समझता था, पर धीरे-धीरे मेरा यह भ्रम दूर होने लगा। उनकी लफ़्फ़ाज़ी की तह में मुझे तथ्य दिखाई पड़ने लगा, कठोरता के नीचे जाँ-निसारी और मोहब्बत का मीठा स्रोत नज़र आने लगा, पुलिस की भयानक वर्दी के भीतर मुझे क्रमशः देवत्व और महत्त्व का दर्शन होने लगा। पहले-पहल उनके प्रति मेरा व्यवहार उच्छृङ्खल, उपेक्षा-पूर्ण और विरक्ति-सूचक होता था, अब मैं मन में, और शब्दों में उनका आदर और उनसे हमदर्दी करने लगा।

मेरे इस भाव-परिवर्तन में शीला कहाँ तक कारण थी ?—यह नहीं बताऊँगा !

यह शीला जैसे मेरे मन के एक निर्दिष्ट भाग पर अधिकार करने लगी, हृदय के एक अँधेरे कोने में जैसे प्रकाश करने लगी, एक दृढ़ और निश्चित इरादे को जैसे ठोकर मार-मार कर कमज़ोर करने लगी। और अनजान में, अप्रत्यक्ष भाव से, जैसे मेरे पास हो पास आने लगी।

पर, बादल जैसे थमा खड़ा था—मेह की बूँदें न पड़ी थीं, कि सहसा बिजली कड़क उठी।

शायद गधे वासो की कारस्तानी थी। वह हमेशा से मुझ पर गोद-खिलाई का अपना एक अधिकार समझता आया है, और उस अधिकार का दुरुपयोग करता आया है, और यह भी उसी अधिकार में शामिल करता आया है, कि उसके दुरुपयोग के बाद कोई उसे कुछ न कहे।

तो, उसने जड़ दिया माँ के कानों में और माँ ने बुला कर डाँटा मुझे—"क्यों रे ! तूने मुझे तो हमेशा

रुसवा किया ! जिन जिन को ज़बान दे दी गई, उन-उन सगाइयों को तूने तुरत-फुरत तुड़वा दिया ! लक्ष्मी-सी लड़कियाँ खो दीं, कुबेर की-सी ससुरालों पर लात मारी, मैंने हा-हा खाई, हाथ जोड़े—उस पर ध्यान न दिया, अब उसपञ्जाबी दारोग़ा के घर......"

आगे न माँ ने कहा, न मैंने सुना। जैसे किसी ने मुझे उठा कर जलते तेल के कड़ाह में डाल दिया। माँ कठोर बेशक थीं और स्वाभिमान के आगे मोहब्बत को लात मार देना भी उनकी प्रकृति थी, पर जैसे वे बार-बार रोकर, हा-हा खाकर आत्म-समर्पण कर चुकी थीं, वैसे ही मैंने आशा की थी, इस बार भी करेंगी और ख़ुश होकर धन्य-भाग्य मानेंगी।

पर इस विभ्राट की तो मैंने कल्पना भी न की थी ! स्वजातीय होने पर भी, केवल प्याज़ खाने के अपराध पर पञ्जाबियत की मौलिक आपत्ति को लेकर माँ अकस्मात इस प्रकार बरस पड़ेंगी, इसका गुमान भी मुझे न था।

उस दिन से मैंने दारोग़ा जी के घर जाने की क़सम खा ली।

८

उस दिन कुछ न खाया, घर में ठहरा भी नहीं। शहर के बाहर एक गाँव के बग़ीचे में पड़ा दिन-भर रोता रहा। इस रुदन का रहस्य आपको समझाने की मुझमें शक्ति नहीं है। माँ की निष्ठुरता असह्य थी या दारोग़ा जी के घर वालों का वियोग, इसका जवाब, पूछे जाने पर, न मैं तब दे सकता था, न अब दे सकता हूँ। दिन में सैकड़ों तरह के ख़याल मन में आते। नदी में डूबना, ज़हर खाना, रेल की पटरी पर सोना, इस असार संसार और नश्वर शरीर को त्यागने के कई उपाय दिमाग़ में आए, और प्रत्येक नए उपाय के दिमाग़ में आते ही हिचकी भर-भर कर रोना आया !!

रोया चाहे कितना ही, पर उस दिन किसी उपाय पर अमल करने का साहस इस नायक को न हुआ।

शाम हुई, तो भूख लगी। घर आया। आशा थी—माँ ज़रूर खाना खिला देंगी। लड़ कर, झगड़ कर, क़सम दिला कर; और ज़्यादा ज़िद करूँ, तो मुमकिन है, अपने अन्यायपूर्ण आदेश को वापस भी ले लें !

पर यह माँ न जाने किस लोहे की बनी थी, कि देखा तो माथे पर बल डाल कर मुँह फेर लिया, और काम में लग गईं।

आँसू दुगने-चौगुने वेग से उमड़ आए, और मैं उल्टे पैरों घर से निकल गया।

यह पहला मौक़ा था, यह पहली घटना थी, यह पहला अनुभव था। बार-बार जी में आता था, किसी तरह मर जाऊँ, गड़ जाऊँ, माँ को मुँह न दिखाऊँ, और वह जीवन-भर मेरी याद में तड़प-तड़प कर आँसू बहाएँ।

और इस कल्पना के साथ ही फिर हिचकी भर आई !

हार कर रात को नौ बजे लौटा, और सीधा कमरे में घुस कर खाट पर लेट गया, और रोने लगा। संसार मुझे अन्धकारमय दिखाई देने लगा, मनुष्य-जीवन व्यर्थ लगने लगा और हिन्दुस्तान की स्त्रियों को इतना बेवक़ूफ़ बनाने के लिए परमात्मा को कोसने लगा।

सहसा कोई कमरे में घुसा। मैंने झट आँसू पोंछे और करवट ले ली। आगन्तुक व्यक्ति कई मिनिट तक चुप रहा, फिर माँ के परिचित हाथ ने मेरा मस्तक छुआ और आवाज़ आई—पगले, आज एकादशी मनाई है क्या ?

मैंने माँ का हाथ झटक कर परे हटा दिया।

माँ हँस पड़ी, और बोली—अरे बावले, चल खड़ा हो, पूरी खा चल कर !

मैं क्या जवाब देने वाला था ?

अब माँ ने बाज़ू पकड़ कर मुझे चित कर दिया। मैंने फिर करवट ले ली; उन्होंने फिर चित किया, मैंने फिर करवट ले ली।

और दो-तीन मिनट की कश-म-कश के बाद माँ भी हँस पड़ीं, और मैं भी हँस पड़ा।

मैंने समझा, बासो की शिकायत का रङ्ग हल्का पड़ गया है !

माँ ने खाना खिला ही दिया।

९

अगले दिन मैं नहा-धोकर निबटा, तो माँ पास आकर बैठीं। धीरे-धीरे बात चली।

"देख बेटा—"

"हाँ !"

"अब तू समझदार हुआ।"

"हाँ।"

"तेरी जितनी उमर वाले दो-तीन बच्चों के बाप हैं।"

"फिर ?"

"छज्जूमल की लड़की है। गोरी भभूका, बिल्कुल मेम जैसी है। कल छज्जू की बहू पैरों पर गिर पड़ी ! तू ख़ुद जाकर देख ले। वे बेचारे तो......"

मैंने चिल्ला कर कहा—तू बैठने देगी या नहीं ?

"क्यों ? आख़िर क्यों ?"

"मैं ब्याह-व्याह नहीं करने का !"

"फिर क्या करेगा ?"

"बस, मैं तो साधू बनूँगा। ऐसी की तैसी में गया, यह घर का जञ्जाल !"

माँ हँसी न रोक सकी।

माँ तो हँसी, परन्तु जैसे तत्ते तवे पर तेल पड़ गया। चिल्ला कर मैं बोला—बस, बस, मुझसे यह सब कहने की कोई ज़रूरत नहीं। तुम बूढ़ी हुई, और मेरी हँसी कराते शर्म नहीं आती तुम्हें ! बस, जाओ ! रक्खो, अपना ससुरा घर, मैं तो जाता हूँ आज ही !

माँ का स्वाभिमान जैसे जाग्रत हो गया, और वह उठ खड़ी हुईं।

उठते-उठते बड़बड़ाईं—याद रख बन्दे, उस पञ्जाबी के घर तुझे जाना नहीं होगा !"

हाय ! बासो साले ने कैसा गहरा रङ्ग चढ़ाया है ! कल से सूरत भी तो नहीं दिखाई।

माँ चली गईं, तो मैं आगामी कार्य-क्रम के विषय में सोच ही रहा था, कि सहसा एक आदमी कमरे में आया। और एक ख़त उसने मुझे दिया।

ख़त दारोग़ा साहब का था, और ख़त लाने वाला उनका नौकर ! ख़त में लिखा था—

"माई डियर........,

यह ख़बर तुम्हें देते हुए मुझे ख़ुशी है, कि कल मैंने इस्तीफ़ा दे दिया। हज़ार शुक्र है ईश्वर का, कि इस बवाल से मेरा पीछा छूटा !

ख़त में ज़्यादा नहीं लिख सकता। मेहरबानी करके तुम आज यहीं भोजन करना। तुमसे और भी बात करनी है। मैं जल्द ही पहाड़ पर जाने वाला हूँ। ज़रूर आना !

—रामकिशोर"

मैंने इस ख़त को दर्जनों बार पढ़ा, और पहली बार मेरे मन में, माँ की आज्ञा उल्लङ्घन करने का विचार आया !

मैं नहीं जानता, माँ के व्यक्तित्व में ऐसा क्या जादू है—कि तब तक मैंने उसके ख़िलाफ़ जाने की कल्पना भी न की, और तब क्षण भर की भी, तो अपने मुँह पर आप तमाचा मार कर उसके लिए पछताया। और सोच-साच कर मैंने जवाब लिखा—

"मान्यवर,

ख़त मिला। पढ़ कर ख़ुशी हुई। आपकी मानसिक दृढ़ता ने मेरे मन में आपका आसन बहुत ऊँचा कर दिया है। आप-जैसे महापुरुष पैर पूजने योग्य हैं। आपके दर्शन करना मैं तो अपना अहो-भाग्य मानता। पर यह लिखते हुए मेरा हृदय कटता है कि मैं अब आगे आपके दर्शन न कर सकूँगा—ईश्वर को यही मञ्जूर था ! मैं मजबूर हो गया। मुझे क्षमा कर दीजिएगा, और सदा के लिए भूल जाइएगा।

आपका स्नेह-पात्र—
अभागा........"

पत्र काफ़ी अस्वाभाविक हो गया था, पर मैं तो समझता हूँ, स्वाभाविक लिखना उस समय सम्भव ही न था।

जवाब जब मैं भेज चुका, तो आध घण्टे ख़ूब रोया, और तब उठ कर चल दिया।

१०

उस दिन फिर दिन भर बाग़ में पड़ा रहा, फिर नदी में डूबने, रेल की लाइन पर सोने, और ज़हर खाने के विचारों की पुनरावृत्ति हुई, फिर हिचकी ले-लेकर रोया, और फिर संसार की असारता और मनुष्य-देह की नश्वरता पर वैराग्य का उदय हुआ।

शाम हुई, तो फिर भूख लगी और घर की तरफ़ चल दिया।

उस दिन माँ ने मुँह न फेरा, देखा और मुस्करा पड़ीं। दालान में बड़ी दरी बिछी थी, तीन-चार जूठी थालियाँ पड़ी थीं, चूल्हे में तब तक आग सुलग रही थी, पानदान खुला पड़ा था। जान पड़ता था, मेरे पीछे मेहमान लोग आए थे।

कमरे में गया। मेज़ पर सिग्रेट की राख पड़ी थी, फ़र्श अस्त-व्यस्त था, ज़मीन पर जूते की कुछ मिट्टी झड़ गई थी, एक तरफ़ पीकदान रक्खा था।

फिर दफ़्तर में जाकर देखा, बुड्ढा बासो हँसता-हँसता, सारे कर्मचारियों की भीड़ लगाए, कोई ख़बर सुना रहा था।

इस गोरखधन्धे से दिल हैरान हो गया। दफ़्तर में भी न बैठ सका, और फिर घर आया।

माँ ने थाली परस कर सामने रख दी।

मैं बोला—भूख नहीं है।

"खा भी ले"—माँ ने कहा—"आज नए मेहमान आए थे।"

"वह तो मैं भी देख रहा हूँ"—मैं बोला—"मैं आज रोटी न खाऊँगा।"

"अरे, तू खा तो सही"—माँ ने हँस कर कहा—"आज तेरे वह दारोग़ा साहब आए थे।"

"अरे ! अच्छा ?"—मैं उछल पड़ा।

"हाँ; और उनकी स्त्री भी आई थीं।"

मैंने दूसरा "अरे !" कह दिया।

"दोनों लड़कियाँ भी......"

अब मैं मानो आकाश से गिरा। चिहुँक कर माँ की तरफ़ देखा।

माँ बे-साख़्ता हँस पड़ीं। बोलीं—ले, अब तो खा, अब तो तेरे दिल की ही होगी !

कल मेरा ब्याह है।

* * *
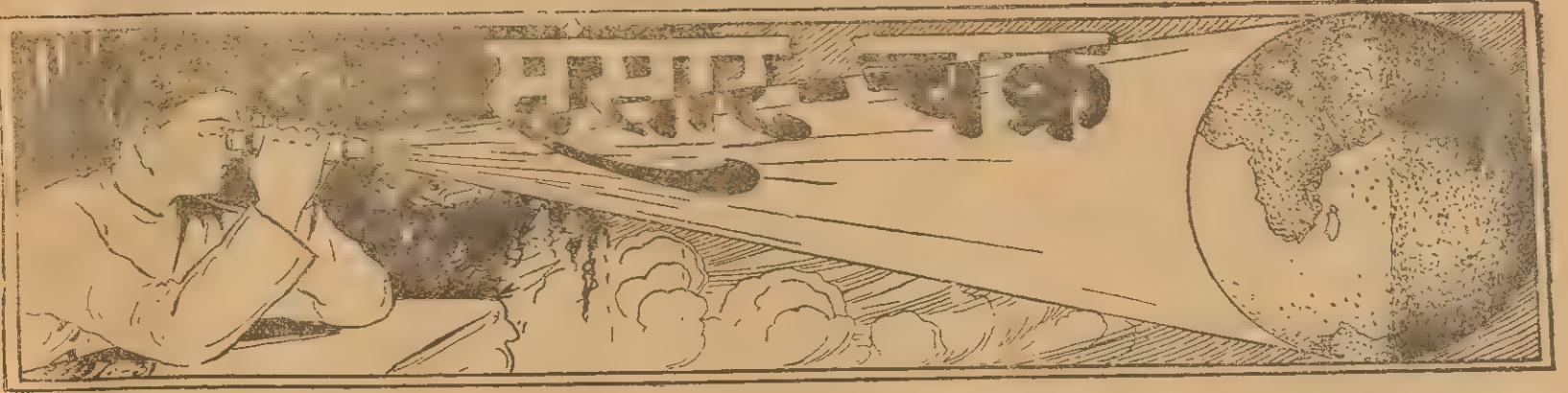
कोरिया का रंगमञ्च

[श्री० लहरी]

रिया, जापान की सम्पत्ति है। साम्राज्यवादी जापान ने जिन कुत्सित उपायों द्वारा कोरिया की स्वाधीनता का ध्वंस किया है, उनको स्मरण करते ही हृदय में आग सी धधकने लगती है। छोटे-छोटे राष्ट्रों को बिना तकलीफ़ डकार जाने वाले राष्ट्रों में से जापान भी है और साम्राज्यवादी पैंतरेबाज़ी से उसने कोरिया को हज़म किया है। निरङ्कुशता, अत्याचार और पैशाचिक क्रूरता की विभीषिका ने बेचारे कोरियनों को दासत्व की जलती हुई ज़ञ्जीर में बाँध दिया है। ग़ुलाम हिन्दोस्तान उस पाशविकता का यथेष्ट अनुभव कर चुका है, इसी कारण वह कोरिया की ग़ुलामी की विवशता ख़ूब महसूस करता है। दुराचार का ताण्डव कोरिया के वक्षस्थल पर होता है, दमन के हथौड़े रात-दिन उसकी हड्डियों को कचूमर कर रहे हैं, दानवी वृत्तियों ने उसके अङ्ग-अङ्ग का मांस नोच खाया है और पारस्परिक विषमता पैदा करके उन्हें सिर उठाने का भी मौक़ा नहीं दिया जाता। कोरिया पर जापान का आधिपत्य किस तरह स्थापित हुआ है, यह बताना अधिक मूल्यवान नहीं है; क्योंकि भारत सरीखे ग़ुलाम देश को, बड़े राष्ट्र छोटे राष्ट्रों को किस तरह पराधीन करते हैं, अब ख़ूब याद हो गया है। जिस कौटिल्य से भारत-माता के पैरों में बेड़ियाँ डाली गई हैं, जिस दाँव-पेंच एवं नृशंसता से चीनी अफ़ीमची और ग़ुलाम हुए थे, वही रामकहानी कोरिया की है, वही पुरदर्द दास्तान जापान के भीषण दमन का है। कहना चाहिए कि सभ्य (?) राष्ट्र निर्बल देशों को ग़ुलाम बनाने की मैशीन हैं।

जापान सागर में ऊँट की गर्दन सरीखा चीन का पूर्व भाग कोरिया कहलाता है। एशिया के पूर्वी तट पर पीत समुद्र और जापान सागर के मध्य में जो प्रायः द्वीप हैं, वही ग़ुलाम कोरिया है। जापान और कोरिया के बीच समुद्र की जो पतली रेखा है, वही इन दोनों देशों में अन्तर है, अन्यथा कोरिया जापान से जुदा होता।

शासन की तुला तलवार, न हुई है, न होगी। जिस राष्ट्र की छाती पर विजेता तलवार के सहारे मूँग दला करते हैं, वह राष्ट्र बहुत काल तक दब्बू बना नहीं रह सकता। "Black times prelude to prosperity" अर्थात् दुखमय काले दिन अभ्युदय की ओर ले जाते हैं और तलवार के बल पर जो शासन होता है वह काले दिनों के निर्माण में अपूर्व सहायता पहुँचाता है। कहना चाहिए, विपत्ति हमारे विकास की जननी है। अपने वैयक्तिक जीवन में कोई भी राष्ट्र कितना ही सुसभ्य और उदार हो; किन्तु शासक या विजेता बनते ही वह महारुद्र-सा संहारक बन बैठता है। उसका दिल पत्थर हो जाता है, उसे अपने स्वार्थ की तामसी में दूसरों के उत्कर्ष की इच्छा-विद्युत का कौंधना विष-पान सा मालूम होने लगता है। जापान सरकार ने कोरिया में जिस बर्बरता का उद्दण्ड अभिनय किया है, उसका चित्र पाठकों के सामने खींचना है। इस सरकार की बीभत्स कूटनीति द्वारा जनता पिस रही है—उनकी मनोवृत्ति ऐसी विक्षुब्ध तथा असन्तुष्ट हो गई है कि साम्राज्यवाद के ख़ूनी पञ्जे से उसका उद्धार अदूर भविष्य में होता दिख रहा है।

एक नौजवान, विदेशी सरकार के लिए, बारूदख़ाना है। किसी विजित राष्ट्र की नवयुवक-शक्ति को जाग्रत होने देना, विजेता के लिए अपने हाथों अपने विनाश का आयोजन करना है। प्रत्येक अनियन्त्रित शासन ख़ूब जानता है कि यदि देश का विद्यार्थी-समाज जागृत हो उठा, यदि उसने ठान लिया कि हम अपने पैरों पर खड़े होकर रहेंगे, यदि उसे देश की स्वतन्त्रता की ऐसी प्यास लगी है जो बिना स्वतन्त्रता के तृप्त हो ही नहीं सकती, निश्चय ही वह राष्ट्र स्वाधीन हो जाता है। वह ग़ुलामी के विषैले वातावरण में स्वतन्त्रता की मादक सुरभि बिखेर देता है। "रख दे कोई ज़रा सी ख़ाके-वतन कफ़न पर"—का भाव जागृत होते ही, वे परतन्त्र एक क्षण नहीं रह सकते। इतिहास क्रान्तियों का बाज़ार है। उनमें प्रायः सभी ऐसे आख्यान हैं, जिनमें युवक-शक्ति का प्रधान भाग है। चीन-स्वातन्त्र्य का श्रेय युवकों को है। रूस में लेनिनवाद का जन्म युवकों की अदम्य शक्ति से हुआ है—ट्रॉटस्की और स्टैलिन नवयुवक ही हैं। ताज़ी अहिंसात्मक स्पेन-क्रान्ति के विधाता नौजवान ही हैं। कोरिया के स्वामी अपने स्वामित्व को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए इस युवक-शक्ति को पनपने देना पाप समझते हैं। जापान सरकार भूल नहीं सकती कि विद्यार्थी-सम्प्रदाय और नवयुवकों को पतित अवस्था में रखने में ही उसका फ़ायदा है। फलतः कोरियन युवक क़ानून के शिकञ्जे में भरसक दबोचे जाते हैं, जिससे कि विप्लव की हू-हू वायु का वेग जापानी सरकार का पाया न उखाड़ दे।

विजेता अपनी सत्ता को चिरजीवी बनाने के उद्देश्य से यह आवश्यक समझता है कि उसकी जनता में अपेक्षाकृत अज्ञानता हो। इसी कारण प्रत्येक विजेता विजितों की शिक्षा का यथेष्ट प्रबन्ध नहीं करता। प्रयोजन यह रहता है, यदि वे अज्ञान होंगे तो उन्हें अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों के मूलोच्छेद का कोई कारण नहीं। जहाँ उन्हें ज्ञान हुआ, इतिहास उनकी आँखें खोल देता है और वे स्वतन्त्रता-प्राप्ति का अविरल, अचूक प्रयास करेंगे और सत्ता की जड़ उखाड़ कर फेंक देंगे।

कोरिया के शिक्षालयों की एक तो अत्यन्त बुरी हालत है, दूसरे शिक्षालयों की अपेक्षा पुलिस-थाने अधिक हैं। इसके अर्थ यही हैं कि ऐसी अल्प शिक्षा दी जाने पर भी यदि विद्यार्थी विप्लववादी हो उठें तो यथाशीघ्र उन्हें फ़ौजी ताक़त के बल पर कुचल दिया जावे। कोरियन शालाएँ ऐसी शोचनीय अवस्था में हैं कि उनका होना, न होने से भी ख़राब है। एक तो साधनहीन बालक अध्ययन करने से वञ्चित रह जाते हैं। इन बालकों की संख्या उन उम्मीदवारों की आधी होती है जो शाला में भर्ती होने को आते हैं। साधन के अभाव ने आधे राष्ट्र की आत्मा—भावी युवकों—को अज्ञान-अन्धकार में ढकेल दिया है। किस तरह वे अपने उत्कर्ष का प्रयत्न करें, जब वे जानते ही नहीं, कि उन्हें ऐसा प्रयत्न क्यों करना चाहिए। देश में सरकारी और ग़ैर-सरकारी शालाएँ २,००२ हैं। इन स्कूलों में कुल विद्यार्थी ४,६६,६०२ पढ़ते हैं। इस प्रकार कोरिया की जनता में से सौ पीछे केवल दो व्यक्तियों को टूटी-फूटी शिक्षा दी जाती है। जापानी विद्यार्थियों की संख्या ४३,८८१ है अर्थात् कोरिया में उनकी जन-संख्या का दस प्रति शत! यह विषमता केवल छोटी शालाओं में ही नहीं है, अपितु ऊँची शिक्षा में भी यही व्यतिक्रम दीख पड़ता है। समस्त कोरिया में कॉलेज की शिक्षा पाने वाले विद्यार्थी सिर्फ़ २५७, किन्तु मुट्ठी भर जापानी लोगों में ५२० जापानी कॉलेज में अध्ययन करते हैं। इस विवरण का आशय यही है कि कोरियन युवक जान-बूझ कर शिक्षा से वञ्चित रक्खे जाते हैं, इसलिए कि वे अपने देश को आज़ाद करने के पागलपन से बचे रहें। इसे यदि नृशंसता न कहें तो क्या कहें?

जापान सरकार की ऐसी बर्बरता का कारण यही है कि कोरिया को वह पींजड़े की चिड़िया ही बनाए रक्खे। वह आहत कोरिया कराहा करे और सरकार गुलछर्रे उड़ाया करे। शिक्षा ऐसी दूषित होने पर भी इतनी ख़र्चीली है कि रक़म की संख्या देख कर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है। किसी कोरियन प्रकाशक को पाठ्य पुस्तक प्रकाशन का अधिकार नहीं है। यह जापानी सरकार की बपौती है। सिओल में एक नीम-सरकारी जापानी कम्पनी है, जो 'कोरियन प्रकाशक समिति' कहलाती है। यही कम्पनी ही ४०,००,०० विद्यार्थियों के लिए पुस्तकें प्रकाशित करती है। सिओल की स्कूल-समिति ने एक जाँच-कमिटी नियुक्त की थी, जिसने अपनी रिपोर्ट में बतलाया था कि साधारण पुस्तकों का दाम सौ गुना अधिक है। ऐसे एकाङ्गी पक्षपात का परिणाम यही होता है कि यह कम्पनी मनचाहे मूल्य पर पुस्तकें बेचा करती है। गत १९३० में प्रकाशित एक रिपोर्ट से पता चला है कि गए वर्ष इस कम्पनी ने २०,००,०० डॉलर* का लाभ उठाया है। पुस्तकों के मूल्य को बेहद बढ़ा देना ताकि ग़रीब विद्यार्थी पुस्तकें ख़रीद ही न सकें, एक कुटिल नीति है। ग़रीब विद्यार्थियों को अशिक्षित रख कर अनुचित लाभ उठाया जाना, एक राष्ट्र के प्रति घोर पाप है—उस राष्ट्र की उन्नति की बढ़ती हुई लतिका को

* एक डॉलर लगभग ३) रुपए के बराबर होता है।

कुठार डालना है। मनुष्य को उसके मानवी अधिकारों से वञ्चित रखना, भीषण अत्याचार है। जापान-सरकार का ध्येय यही दीख पड़ता है कि प्रजा निपट जाहिल-जपाट बनी रहे तो उन्हें अपना शासन चलाने में किसी बाधा का सामना नहीं करना पड़ेगा। ग़रीब विद्यार्थी पढ़ ही नहीं सकता। प्रतिबन्धन इतना ही नहीं है। जिनके पिता या अभिभावक २०,००० डॉलर से कम के अधिपति हैं, उन बालकों को मिडिल स्कूल में लिया ही नहीं जाता। कोई किसान या श्रमजीवी किसी सार्वजनिक स्कूल में भर्ती नहीं किया जा सकता। जो ग़रीब बालक जापानी भाषा से अनभिज्ञ है, वह बदक़िस्मत प्रारम्भिक शिक्षा पाने का भी अधिकारी नहीं है। राजदण्ड पाए हुए तथा जो जापानी सत्ता को अस्वीकार करते हैं, उनके लड़कों को किसी भी शाला में पैर रखने के लिए स्थान नहीं है। जो अच्छे वंश के नहीं, उन्हें ऊँचे स्कूलों में जाने की सख़्त मुमानियत है। यह क्या है—भीषण बर्बरता। अच्छे ख़ानदान का सवाल पेश होते ही यह कहना पड़ता है कि ख़ुदा ने ग़लती की, जो हर एक कोरियन को उच्च वंश में जन्म न दिया। अत्याचार की यही चरम सीमा है। प्राकृतिक व्यवसाय में ही जब मीन-मेष लगने लगा तो मानवता कहाँ रही? ऐसे जघन्य कारनामों का हाल पढ़ कर एक जापान का हिमायती भी क्रोध से पागल हो उठेगा।

भारत की ग़ुलामी का एक कारण यह भी है कि उसे मातृ-भाषा में शिक्षण मिलता ही नहीं। किसी राजनीति-पटु व्यक्ति ने कहा था—"If you want to change a nation, change its language first" अर्थात् यदि तुम किसी राष्ट्र में परिवर्तन उपस्थित करना चाहते हो, तो पहले उसकी भाषा बदल दो। इसके मानी हैं राष्ट्र को ग़ुलाम बनाना। जापान-सरकार और ब्रिटेन सब एक ही थैले के चट्टे-बट्टे हैं, इसी कारण जापान-सरकार ने भी कोरिया को हड़प जाने के लिए इसी शस्त्र का उपयोग किया है। वहाँ के किसी भी स्कूल में कोरियन भाषा का उपयोग होना दुस्साध्य है। साथ ही पाठ्य-क्रम से कोरिया का इतिहास हटा लिया गया है। कहना न होगा कि किसी भी राष्ट्र को उसके भूतकालीन इतिहास से वञ्चित रखना, सरासर पैशाचिकता है। फिर तुर्रा यह कि पढ़ाई की फ़ीस जन-साधारण के सुभीते की नहीं है, केवल अमीर ही शालाओं में लड़कों को भेज सकते हैं। इस विषमता के कारण प्रजा ज्ञान-शून्य रही आती है। जो विद्यार्थी एक महीने भी फ़ीस नहीं दे सकता, उसका नाम काट दिया जाता है तथा पुलिस उसके अभिभावक की किसी भी चीज़ को नीलाम कर, फ़ीस वसूल करने की उत्तरदायी नियुक्त की जाती है। धार्मिक सभा-सोसाइटी का जीवन भी पुलिस के भ्रू-विलास पर निर्भर है। एक सभा होना हो तो पूर्व ही पुलिस की आज्ञा का प्राप्त करना अनिवार्य है। स्कूल में जो लड़के लिख कर, बोल कर या काम करके अपने शिक्षकों के मन के विपरीत कार्य करते हैं, वे निकाल दिए जाते हैं या क़ैद कर लिए जाते हैं। गत नवम्बर सन् १९२८ तक ८७ स्कूलों से २,०४८ विद्यार्थी किसी न किसी अपराध के कारण निकाल दिए गए थे। सैकड़ों विद्यार्थी जेल की चहार-दीवारी में बन्द हैं।

दमन दौड़ते हुए घोड़े को चाबुक के समान होता है। आत्म-गौरव भी कोई चीज़ है। इतना घोर अत्याचार तथा आत्मा का हनन विद्यार्थी सहन नहीं कर सकता। फलतः असन्तोष बढ़ रहा है। दमन की चक्की और वेगवती हो गई और सन् १९२९ में दुगुने विद्यार्थी जेलों में ठूँस दिए गए। नौजवानों का ख़ून खौल उठा। १९२९ के दिसम्बर तथा १९३० की जनवरी में बलवों का ताँता बँध गया। स्थान-स्थान पर रक्तपात और मुठभेड़ें होने लगीं। क्रान्ति का भयानक आवेग आने वाला है, इसकी बलवे पूर्व सूचना थे। जापानी पुलिस ने निर्दयता का नाटक खेला और १,००० व्यक्तियों को क़ैद किया तथा ९ फाँसी पर लटकाए गए। धर-पकड़ और फाँसियों ने कोरियन विप्लव को उत्तेजित किया और दमन भी भीषण गति से होने लगा। दिनों-दिन गिरफ़्तारियों का बाज़ार गर्म होने लगा। चीन तथा कोरिया से आए हुए समाचारों से पता चलता है कि ७८ विद्यार्थी फाँसी की रस्सी से लटकाए गए। जेलें ठसाठस भरी जाने लगीं और विभिन्न यातनाओं द्वारा विद्यार्थियों को तड़पाया जाने लगा। ऐसे विद्यार्थीगण १७,००० के क़रीब थे, और दिन-दिन बढ़ते ही जाते हैं। विदेशों में कोरिया की सच्ची हालत का पता नहीं दिया जाता, फिर भी गुप्त-रीतियों से कुछ ख़बरें मिल जाया करती हैं।

उठते हुए आन्दोलन में केवल पुरुषों ने ही हाथ नहीं बटाया, स्त्रियाँ भी महाशक्ति के रूप में पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा लगा कर कार्य कर रही हैं। उनके साथ भी वैसा ही दुर्व्यवहार होता है, जैसा कि विद्यार्थियों के साथ। भारत में मातृशक्ति ने जिस विशाल हृदय का परिचय देकर आन्दोलन की ताक़त को द्विगुणित कर दिया है, वैसी ही स्थिति है कोरिया में। सैकड़ों जेलों में भर दी गई हैं, कितनों को नर्क-यातनाएँ भोगनी पड़ती हैं, कई शहीद हो गईं। नर्क-यातनाओं का हाल पढ़ कर रोमाञ्च होता है। शासक जाति शासितों पर कितना ज़ुल्मो-जफ़ा कर सकती है, इसके काले उदाहरण कोरिया में मिलेंगे या वहाँ मिलेंगे जहाँ ब्रिटेन और जापान की सत्ता है। पशुता कहाँ तक पहुँच सकती है, यह इन्हीं दो राष्ट्रों ने बतलाया है। सभ्य कहलाने वाले यही राष्ट्र जब ऐसे पशुत्व पर तुले हुए हैं तो जङ्गली जातियों की हिंसक प्रवृत्ति देख कर हमें नाक-भौं नहीं सिकोड़ना चाहिए, प्रत्युत उन्हें भी ब्रिटेन तथा जापान के समकक्ष सभ्य कहना चाहिए। इसीलिए यङ्गइण्डिया में एक बार निकला था—"Western civilisation is the civilisation of hunters." पाश्चात्य सभ्यता शिकारियों की सभ्यता है।

कोरिया की आत्मा को जागृति और क्रान्ति की लहर भिगो रही है। नौजवानों ने शपथपूर्वक निश्चय किया है कि वे विदेशी राज्य के जुए को अधिक काल तक न रक्खे रहेंगे। 'विद्यार्थी-समिति' का बनना विद्यार्थियों का सङ्गठित होकर जापानी सरकार के मुक़ाबले खड़े होने का आयोजन है। समूचे कोरिया में 'समिति' की शाखाएँ फैल गई हैं। विद्यार्थियों तथा नवयुवकों ने इरादा कर लिया है कि कुछ भी हो, अपने देश को आज़ाद करके ही छोड़ेंगे। उन्होंने कुछ निश्चय किए हैं। स्कूलों में कोरियन अध्यापक नियुक्त किए जाने के सम्बन्ध में आन्दोलन ज़ोर पकड़ रहा है। पाठ्य-क्रम कुछ भी अनाप-शनाप नहीं होना चाहिए, वरन् ऐसा हो जिससे विद्यार्थी जीवन की योग्यता तथा महत्ता का पात्र हो। कोरियन भाषा का धड़ल्ले से प्रचार हो और स्कूलों में उसे अनादृत न किया जाना चाहिए। स्कूलों में विद्यार्थियों की सरकार स्थापित हो तथा उन्हें दण्ड तथा निर्वासन से मुक्त कर राजनैतिक उद्वेलना में स्वतन्त्रतापूर्वक भाग लेने दिया जाय। उक्त सभी बातों के सम्बन्ध में ख़ूब घमासान आन्दोलन हो रहा है और क्रियात्मक आन्दोलन का उत्तर दमन से दिया जा रहा है।

चीनी भाषा में प्रकाशित एक पत्र से पता चला है कि विद्यार्थी-समितियों में 'पूर्ण स्वतन्त्रता' का प्रस्ताव पास हो गया है। पूर्ण स्वाधीनता का दीवाना कोरिया अपने अनेकों बाल-वीरों की बलि चढ़ा चुका है, एवं वहाँ का वातावरण अत्यन्त विक्षुब्ध हो रहा है। विप्लव की भयानक आँधी चल रही है, विकट आन्दोलन चल रहा है। विद्यार्थी-विप्लव के सम्बन्ध में प्रकाशित जापानी पुलिस की विज्ञप्ति से ज्ञात होता है कि रेलवे स्टेशन पर कुछ जापानी तथा कोरियन विद्यार्थियों की भिड़न्त हो जाने से कुछ विद्यार्थी घायल हो गए हैं। किन्तु यह मिथ्या है। यथार्थ में विद्यार्थी-आन्दोलन को रौंद डालने के लिए पुलिस ने मदान्ध होकर दमन किया, जिसको ऐसे ऊल-जलूल बहानों द्वारा, टाला जाता है। कोरिया का वर्तमान राजनैतिक आन्दोलन आज़ादी के दीवाने विद्यार्थी सम्प्रदाय-मात्र का आन्दोलन है, जिसमें शिक्षक तथा प्रोफ़ेसर मनोयोगपूर्वक हाथ बटा रहे हैं। १०८ विद्यार्थी बलिदान हो गए। वहाँ ६०० गिरफ़्तारियाँ हो गई हैं। कोरिया में जापानी सरकार के विपरीत एक शब्द कहना तथा राजनीति के नाम पर कुछ भी करने का परिणाम अत्यन्त भयङ्कर होता है। जापान ने अमानुषीय अत्याचार करने पर कमर कस ली है और कोरियन विद्यार्थी-समाज भी बद्ध-परिकर होकर डटा हुआ है। राष्ट्रीय कोरियन लड़ाई को अपने कार्य का प्रधान क्षेत्र बना रहे हैं। राष्ट्रीय समिति भी वहीं है। कोरिया आज़ाद चीन को देख कर फूला नहीं समाता। वहाँ के राष्ट्रवादियों का विश्वास है कि स्वतन्त्र चीन तथा आज़ाद भारत कोरिया को बन्धन-मुक्त करेगा। आन्दोलन की प्रगति के जो समाचार मिल रहे हैं, उनसे अनुमान कर सकते हैं कि निकट-भविष्य में जापान-सरकार को विद्यार्थी-समाज का लोहा मानना पड़ेगा। भारत भी अपनी स्वतन्त्रता को प्राप्त करने के लिए भावी संग्राम छेड़ेगा, उस समय हमारे विद्यार्थी-सम्प्रदाय को पीछे रह जाने का कोई कारण नहीं है। एक बार की महान क्रान्ति आज़ादी के दिलाने में कभी असमर्थ नहीं हो सकती। ईश्वर कोरिया और भारत को शीघ्र मुक्त करे।

* * *

राजपूताने के नरेशों की दिनचर्या

(२०वें पृष्ठ का शेषांश)

की पुरातन मैत्री का प्रभाव है। महाराजाओं के काँसे में (भोजन में) अनेक प्रकार के जलचर, थलचर और नभचरों का मांस होता है, परन्तु जङ्गली सुअर, हिरण, ख़रगोश, तीतर, बटेर, मुर्ग़ी और बकरा दयालु नरेशों को अधिक प्रिय है। राजपूताने के क्षत्रिय अपनी स्त्रियों या प्रेमिकाओं के साथ एक ही थाली में भोजन किया करते हैं। भोजन करते समय कोई स्त्री या पुरुष कहानी कहा करता है। यह ज़रूरी नहीं है कि महाराज उसको सुनें। जैसे बारेठणियों का गाना हुआ करता है उसी प्रकार यह कहानियाँ हैं। प्रातः और सायं दोनों समय इसी प्रकार भोजन होता है। रात्रि के भोजन के पश्चात् फिर नाच-रङ्ग और गाना-बजाना आरम्भ हो जाता है। इस विलासमय कोलाहल में जब महाराजा साहब की आँखें भारी होने लगती हैं तो वे सो जाते हैं।

चौथी श्रेणी के महाराजाओं का भोग-विलास सीमित और परिमित है। बाह्य आडम्बर तो सबका एक सा है, परन्तु यह केवल परम्परागत है। कर्तव्यपरायण और चिन्ताशील नरेश भोग-विलास में ही अपना समय नहीं बिताते। बल्कि एक-दो महाराजा ऐसे भी हैं जो प्रबन्ध-कार्य की बहुतायत के दिनों में समय पर भोजन तक नहीं करते। सरदी और धूल की परवाह न करके राज के दफ़्तरों को सँभालते हैं। अपनी शिक्षा और बुद्धि के अनुसार अपीलें सुनते हैं। छोटे आदमियों को मुँह नहीं लगाते और समय पर सब काम करते हैं। विलास और कर्तव्य दोनों का समय निश्चित किया है। जहाँ तक लेखक को मालूम है, ऐसे नरेश केवल दो ही हैं। इस लेख में किसी भी श्रेणी के नरेश का नाम प्रकट करना उचित नहीं समझा गया है, अतः हम इनके नाम भी गुप्त ही रखना चाहते हैं।

* * *

भारतीय भारत

राजपूताने के नरेशों की दिनचर्या

[एक भूतपूर्व उच्च कर्मचारी]

आर्य-शास्त्रों में जो नरेशों के गुण और कर्तव्य बतलाए गए हैं, उस कसौटी से वर्तमान नरेशों को परखा जावे तो कोई भी खरा सोना साबित नहीं हो सकता। और तो क्या, कोटा और बीकानेर के दरबार तक शास्त्रोक्त परिभाषा के अनुसार आदर्श से अत्यन्त दूर हैं। इसमें सन्देह नहीं कि शास्त्र-प्रदर्शित गुण केवल एक स्तुत्य आदर्श है और उस तक पहुँचना साधारण व्यक्तियों की शक्ति से बहुत परे है। परन्तु जब देशी रियासतों में आधुनिक शासन-प्रणाली जारी करने तथा वैयक्तिक अधिकारों की घोषणा करने का प्रश्न उठता है तो अलवरेन्द्र और बीकानेर महाराज रामराज्य की तान सुना कर देशी तथा विदेशी श्रोताओं को भुलावे में डालने की कोशिश किया करते हैं। परन्तु वास्तव में प्राचीन शासनादर्श के अनुसार वर्तमान हिन्दू-नरेश अपने शासन का सञ्चालन करने लगें, तो उनकी जनता का असन्तोष ही दूर न हो जाए, बल्कि संसार के सामने एक अनुकरणीय शासन-पथ उपस्थित हो जाए। जन-सत्तात्मक शासन लोक-कल्याण का एक साधन मात्र है—उद्देश्य नहीं। यदि अनियन्त्रित राज-तन्त्र द्वारा ही लोक-हित और सार्वजनिक अभ्युदय सम्भव हो जाय तो फिर प्रक्षोभ और आन्दोलन की आवश्यकता ही क्या रहे!

आर्य-शास्त्रों ने बतलाया है कि राजा को आठ लोक-पालों के अंश से विधाता ने निर्मित किया है। जिन देशों में राजा नहीं होता वहाँ न लोक-मर्यादा की रक्षा हो सकती है और न मनुष्य अपनी व्यक्तिगत कमाई का निर्भय उपभोग ही कर सकता है। लोक-स्थिति की रक्षा के निमित्त जब परमेश्वर ने एक नियन्ता की आवश्यकता समझी तो उसने राजा की सृष्टि की। मनुष्यों में राजा भगवान के समान है। उसकी भुजा में विजय और मुख में लक्ष्मी का निवास है। चाहे वह बच्चा ही क्यों न हो, प्रजा को उसकी अवज्ञा न करनी चाहिए। वह वास्तव में एक महान देवता है, जो मानव-कलेवर धारण किए हुए है। राजा को ऐसा उच्च पद लेने के साथ ही उसके कर्तव्य भी बड़े कड़े और कठिन निश्चित किए गए हैं। त्रयी, वार्ता और दण्ड-नीति की शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात जितेन्द्रियता, सहिष्णुता, वीरता, गुणग्राहिता कार्य-तत्परता, दया-दाक्षिण्य और प्रजाहितरतता आदि अनेक श्रम-साध्य देव-दुर्लभ गुणों की प्राप्ति राजा के लिए आवश्यक मानी गई है। यह परम्परा भारतवर्ष में वैदिक काल से ग्यारहवीं शताब्दी तक जारी थी। सम्पूर्ण आर्य-साहित्य इस बात का साक्षी है और सैकड़ों शिला-लेखों से इस बात की पुष्टि होती है। वास्तव में राजा उसी को माना जाता था जो अपनी प्रजा का अनुरञ्जन कर सके और उसको अपनी सन्तान के समान माने। राजा-प्रजा के पारस्परिक सम्बन्ध और कर्तव्य की पिता-पुत्र के सम्बन्ध से तुलना करना भारत की प्राचीन परम्परा है। वास्तव में इस तुलना में राजा के सम्पूर्ण कर्तव्यों का समावेश हो जाता है। पिता अपने पुत्र के लिए क्या नहीं करता, और क्या नहीं करना चाहिए? रक्षा, पालन, पोषण, शिक्षा, उन्नति, अभ्युदय आदि के लिए पिता अपनी सन्तान के निमित्त जो कुछ भी करे, सब थोड़ा है। उसके कर्तव्य की पूर्ति कभी होती ही नहीं। इसी प्रकार राजा अपनी प्रजा के कल्याण के लिए जो कुछ करे, सब थोड़ा है। जो महाराजा अपनी प्रजा की कमाई के लाखों रुपए अपने व्यर्थ विलास में स्वाहा करते हुए एक छोटा सा कॉलेज या टूटा सा अस्पताल स्थापित करके या दुर्भिक्ष-पीड़ित कृषकों को लगान में कुछ छूट देकर प्रजा-पालक कहलाने के उम्मीदवार हैं, उनको इस आदर्श का भी ध्यान रखना चाहिए। हिन्दू राज्यादर्श (Hindu Kingship) की प्राचीनता की दुहाई देकर जो निरङ्कुशता की रक्षा करना चाहते हैं, उनको साथ ही यह भी सोचना चाहिए कि राजा का कर्तव्य कितना कठिन है। राज वास्तव में भोग के लिए नहीं है, कर्तव्य के लिए है और यह इतना कठिन कर्तव्य है कि इसका यथोचित अनुभव कर लेने पर कई ईमानदार नरेशों को अपने पद का त्याग करने में हर्ष होगा और कई राजकुमार, जो राज्यसिंहासन के उम्मीदवार हैं, वे पेन्शन लेकर यूरोप में रहना बेहतर समझेंगे।

यह दुख की बात है कि उपरोक्त आदर्श का पालन तो दूर रहा, राजपूताने के नरेशों को इसका ज्ञान-मात्र भी नहीं है। यह प्रजा का दुर्भाग्य है कि अधिकांश नरेशों का समय या तो भोग-विलास में व्यतीत होता है या व्यर्थ के प्रपञ्चों में। उनको न अपने कर्तव्य की चिन्ता है और न प्रजा के कष्टों की ख़बर। जिस प्रकार व्यभिचारी स्त्री-पुरुष अपने बच्चों को नालियों में फेंक कर स्वयं आनन्द लूटते हैं, उसी प्रकार अधिकांश नरेश अपनी पुत्रवत् प्रजा को राक्षस-कर्मचारियों के सुपुर्द कर, स्वयं विलास में डूबे रहते हैं। हिन्दू-सभ्यता के लिए इससे अधिक सन्ताप की और क्या बात हो सकती है? जब हम लोग देखते हैं कि छः हज़ार मील दूर से आने वाले स्वार्थी गोरों का शासन भी हमारे चन्द्रवंशी और सूर्यवंशी नरेशों के शासन से कहीं अच्छा है, तो लज्जा से हमारा मस्तक झुके बिना नहीं रह सकता। क्या ही अच्छा हो, कि इन दुखभरी पंक्तियों को नरेशगण पढ़ें या पढ़वा कर सुनें!!

दिनचर्या की दृष्टि से राजपूताने के नरेश चार श्रेणियों में विभक्त किए जा सकते हैं। प्रथम वे, जो अपने घर का काम छोड़ कर राजनैतिक ख्याति की प्राप्ति के लिए रात-दिन काग़ज़ रगड़ा करते हैं; दूसरे वे जो अपने घर का काम छोड़ कर इधर-उधर योंही समय काटने के लिए भटका करते हैं; तीसरे वे जो अपने ही विलास-सागर में डूबे रहते हैं और चौथे वे जो अपनी बुद्धि के अनुसार अपना राजकार्य देखते हैं। यह दुखभरी बात है कि चौथी श्रेणी में केवल एक-दो नरेश ही हैं। राजपूताने के दो महाराजाओं को अपनी रियासतों के प्रबन्ध की इतनी चिन्ता नहीं है, जितनी अन्तर्राष्ट्रीय जगत में ख्याति स्थापित करने की, ब्रिटिश साम्राज्य की समस्याओं को हल करने की और सनातन-धर्म का उद्धार करने की। इस क्षेत्र में इन्होंने क्या कार्य किया है और कहाँ तक सफलता प्राप्त की है, इसकी विवेचना किसी अगले लेख में की जाएगी। यहाँ हम पाठकों को केवल इनकी दिनचर्या से परिचित कराना चाहते हैं।

प्रथम श्रेणी के दोनों नरेश न समय पर सोते हैं और न समय पर जगते हैं। यदि साधारण प्राणियों के समान सोवें या जागें तो फिर महाराजा ही क्या? रात के १ बजे सोना और दिन को ६ बजे जगना इन कर्तव्य-परायण भूपतियों के लिए साधारण बात है। यह सन्तोष की बात है कि नाना प्रकार के देश और वेष देख चुकने पर भी इनको अपने धर्म का स्मरण है, अतः नित्य कुछ पूजा-पाठ किया जाता है। इससे निवृत्त हो जाने पर ये अपने महान कार्य में प्रवृत्त हो जाते हैं और प्रायः जब तक जगते रहते हैं, तब तक काम करते रहते हैं। साम्राज्य की कठिनाइयों को हल करने में कभी-कभी तो इतने व्यस्त हो जाते हैं कि भोजन करते समय भी इनके परराष्ट्र-सचिव हाथ जोड़े सामने खड़े रहते हैं। परन्तु ऐसा अवसर मास में एक या दो बार ही होता है। दिन भर इनका दफ़्तर चलता रहता है। उच्च गोरे अफ़सरों के साथ पत्र-व्यवहार, गुप्त तार, भाषणों के मसविदे, देशी और विदेशी अङ्गरेज़ी समाचारों की छानबीन आदि कार्यों की प्रधानता रहती है। जब महान कार्यों से अवकाश मिलता है, तो अपने राज्य के काम को भी देखते हैं। परन्तु रियासत के साधारण कार्यों को देखना महाराजाधिराजों का कर्तव्य नहीं है। स्कूल, कॉलेज, अस्पताल या दुर्भिक्ष-पीड़ित कृषकों को देखने का इन्हें समय नहीं मिलता। वास्तव में इनको अन्तर्राष्ट्रीय कार्य इतना करना पड़ता है कि शेर का शिकार और कला-कलित प्रमदाओं के गान के लिए भी कभी-कभी कठिनता से समय मिलता है। जिन नरेशों का अधिकांश समय विदेशों में कटता है, उनकी दिनचर्या का लेखक को सुना-सुनाया ज्ञान है। एक बार उसको एक महा-राजा के साथ विदेश जाने का मौक़ा तो मिल गया था, परन्तु महाराजा साहब की गोरी महिला-सेक्रेटरी ने रुष्ट होकर उसको कैरो से ही २००) दिलवा कर वापस भेजवा दिया। विदेश-प्रिय नरेश जब भारत में टिकते हैं तो इनका अधिकांश समय यूरोप के चित्र देखने में, अपने लीलास्थलों के स्मारकों की रक्षा करने में, और वहाँ के ख़रीदे हुए कुत्ते, मोटरें, केमेरे, बाजे, सईस और व्यसनों के साथ विनोद करने में व्यतीत होता है। अभी एक महाराजा साहब विलायत से पधारे हैं। आपकी वार्षिक आय तो है लगभग १० लाख रुपए, परन्तु २ लाख की मोटरें और १ लाख का दूसरा सामान ख़रीद कर लाए हैं। यहाँ इस सामान को सुचारु-रूपेण सुर-क्षित करने में इतने व्यस्त हैं कि न किसी की प्रार्थना

सुनने का उनको समय है और न रियासत के प्रबन्ध को देखने का ध्यान। नए कैमेरों के द्वारा अन्तःपुर का अप्सराओं के फ़ोटो खींचने में, उनको धोने में और जड़ने में आपको बड़ी रुचि है। इससे जब अवकाश मिलता है तो अपनी नई मोटरों का आनन्द लूटते हैं। जब कोई अङ्गरेज़-मित्र अपनी धर्मपत्नी के साथ मिलने आ जाता है तो आप गद्गद हो जाते हैं। दिन भर में मुश्किल से आधा घण्टा राज्य के प्रबन्ध के लिए दिया जाता है और सो भी अत्यन्त अरुचि के साथ।

तीसरी श्रेणी के नरेशों की दशा अत्यन्त दयनीय है। इस समय राजपूताने के नरेशों में, जहाँ तक हमें पता है, कोटा-नरेश के सिवाय अन्य किसी को मद्यपान से घृणा नहीं है। परन्तु तीसरी श्रेणी के नरेशों का यह प्रधान गुण है। इनको न रियासत की चिन्ता है और न साम्राज्य का ध्यान, न विदेश-यात्रा की अभिलाषा है और न नाना प्रकार के शौक़। इन नरेशों को केवल दो ही विषयों की ओर अनुरक्ति रहती है, अर्थात् मद्य और मदालसा। गायन और नृत्य का भी उन तक प्रवेश हो जाता है, परन्तु ये केवल उपकरण मात्र हैं। इस अजस्र विलास से थक कर सो जाते हैं तब, या जब शिकार की ख़बर आती है तब, इन दो ही अवसरों पर इनको मद्य और स्त्रियों से छुट्टी मिलती है। कुछ रसिक नरेश तो शिकार में भी रमणियों को साथ रखते हैं और शराब की बोतलों के बॉक्स इनके साथ-साथ चला करते हैं। ऐसे महाराजाओं के अन्तःपुर में रमणियों की भरमार रहती है। कुछ विवाहिता होती हैं और कुछ अविवाहिता। इनके अतिरिक्त युवती दासियाँ और पातुरियाँ। सबकी संख्या मिला कर एक सहस्र तक हो जाना तो अत्यन्त साधारण बात है। इस समय एक छोटी सी रियासत में लगभग दो सहस्र स्त्रियाँ अन्तःपुर में रहती हैं। इनमें ६ स्वर्गीय महाराजा की युवती विधवाएँ हैं, ५ वर्त्तमान रोगी महाराजा की रानियाँ। लगभग ३० बाप-बेटों की उपपत्नियाँ और शेष दासियाँ आदि। महाराजा साहब बारेठणियों के गाने की ध्वनि से लगभग ११ बजे जगते हैं। नित्यक्रिया से निबटने पर चाटुकार लोग उनको घेर लेते हैं। कोई शेर के शिकार की मनोरञ्जक कहानियाँ सुनाता है और कोई किसी सुन्दरी के लावण्य का वर्णन करता है। जिधर महाराजा देखता है, वह पुरुष अन्नदाता, पृथ्वीनाथ आदि शब्दों का उच्चारण करता हुआ हाथ जोड़ कर खड़ा हो जाता है। ये लोग जिधर महाराजा की प्रवृत्ति और अनुरक्ति देखते हैं, उसी विषय की बातें किया करते हैं। यदि महाराजा और दीवान में अनबन है, तो दीवान के वास्तविक और काल्पनिक गुणों का वर्णन हुआ करता है और उसके सम्बन्ध में अनेक विचित्र कथाएँ गढ़ कर महाराजा को सुनाई जाती हैं। यदि किसी हाकिम से महाराजा नाराज़ हैं तो उसकी भी-यही दशा होती है। नरेश मद्य के नशे में सदैव चूर तो रहते ही हैं, उस तरङ्ग में जो बात ध्यान में जँच गई, सो जँच गई। तुरन्त आज्ञा होती है और उसका पालन करवाया जाता है। शराबी नरेशों के पास अधिकांश पासबान, दरोगा और इसी श्रेणी के अन्य लोग रहा करते हैं। इन लोगों की प्रबन्ध या अन्य सद्विषय में तो गति होती ही नहीं, अतः हेय विषयों की ही बातचीत हुआ करती है। जब राजनीतिक निन्दा और प्रपञ्च की बातें समाप्त हो जाती हैं, तो शिकार की चर्चा शुरू होती है। इसमें महाराजा या महाराज-कुमार के शौर्य का उल्लेख, उनके निशाने की प्रशंसा, मारे हुए पशुओं की लम्बाई-चौड़ाई और दुर्धर्षता आदि का ज़िक्र होता है। जब शिकार की ख़बर आती है तो एक क्षण के लिए महाराजा के शिथिल शरीर में चेतना आ जाती है। मद्य के बिना आवेश का केवल यही अवसर है। ललना-प्रिय नरेशों के सामने ये 'हाँ अन्नदाता' लोग रियासत की या बाहर की सुन्दर युवतियों का नख-शिख वर्णन किया करते हैं। प्रायः एक आदमी वर्णन करता है और दूसरा उसकी पुष्टि। अपने व्याख्यान को रोचक बनाने के लिए कभी-कभी चित्रों का भी व्यवहार किया जाता है। महाराजा अपने अर्द्ध-निमीलित नेत्रों से इन चित्रों को देख कर प्रसन्न और शिथिल कर्णेन्द्रियों से कथाओं को सुन कर गद्गद हुआ करते हैं। राजपूताने के जागीरदार अपनी लड़कियों को नरेशों के साथ ब्याहने के लिए बड़े उत्सुक रहते हैं। महाराजा की पहली शादी तो किसी नरेश की पुत्री से ही होती है, परन्तु उसके बाद अनेक जागीरदार-पुत्रियाँ स्वीकार कर ली जाती हैं। महाराजा द्वारा अपनी पुत्रियों की भेंट स्वीकार करवाने के वास्ते जागीरदार लोग 'हाँ अन्नदाता' गणों को ख़ूब तृप्त किया करते हैं। इन लोगों को ऐसे अवसर पर जागीरदारों से तो भेंट मिलती ही है, परन्तु यदि महाराजा साहब का भी चित्त प्रसन्न हो गया तो फिर इनका पूरा सन्तोष किया जाता है। इन नियमानुकूल विवाहों के अतिरिक्त महाराजाओं के दूसरे विवाह भी अनेक प्रकार के हुआ करते हैं, परन्तु इस विषय का विस्तृत वर्णन यहाँ अप्रासङ्गिक होगा।

जिस समय नरेश अन्तःपुर में विराजते हैं, उस समय तो अनेक स्त्रियों से घिरे रहते ही हैं, परन्तु बाहर मर्दाने में भी इनके सामने दस-बीस वाराङ्गनाओं का होना आवश्यक है। जिस समय चाटुकार लोगों की बातों में विषय के अभाव से या जीभों की थकान के कारण विराम होता है, तो वेश्याओं का गान या हाव-भावपूर्ण लास्य (श्रृङ्गार-नृत्य) आरम्भ हो जाता है। शराब के कारण महाराजा साहब की आँखें कभी खुलती हैं और कभी बन्द होती हैं। गाने के तत्व को तो शायद ही कोई महाराजा समझता हो। अतः ऐसे समय पर उनके कान काम नहीं करते। जब-जब उनकी आँखें खुलती हैं तो वेश्याओं के अर्द्धनग्न शरीर के रूप-रस का किञ्चित पान कर लेते हैं। अजस्र विलास से थकित सुप्त शरीर में न कलध्वनि से चैतन्य आता है और न लावण्य-दर्शन से स्फूर्ति। वेश्याओं का नृत्य और गायन वास्तव में 'हाँ अन्नदाता' लोगों के वास्ते होता है।

जिस समय ऐसे नरेशों के पास इनके दीवान रियासत के प्रबन्ध-सम्बन्धी काग़ज़ों को लेकर आते हैं और महाराजा साहब उनको सुनते हैं तथा हुक्म देते हैं, वह दृश्य अत्यन्त रोचक होता है। ऐसे समय पर वेश्याएँ हटा दी जाती हैं और बाक़ायदा इजलास का स्वरूप बना लिया जाता है, पर वास्तव में महाराजा के लिए कोई क़ानून नहीं है। यदि वह चाहे तो वेश्याएँ भी वहाँ खड़ी रह सकती हैं और शराब का प्याला भी चल सकता है। जिस समय दीवान किसी मुक़दमे की मिसिल को पढ़ कर महाराजाधिराज महामहेन्द्र बहादुर जी० सी० एस० आई० को सुनाता है, तो न्यायी नृपति या तो वेश्याओं की तीखी चितवन को निहारा करते हैं या नींद में ख़र्राटे लिया करते हैं और बीच-बीच में बिना समझे-बूझे 'हाँ' कर दिया करते हैं। यदि किसी पर जुर्माना करना हो या उसकी सम्पत्ति ज़ब्त करना हो तो महाराजा की आँखें प्रायः खुल जाया करती हैं और उसकी न्यायशीलता जागृत हो उठती है। ऐसे मौक़े पर दीवान की तजवीज़ से अधिक जुर्माना करने का हुक्म देकर महाराजा साहब अपनी न्याय-प्रियता का परिचय देने से नहीं चूकते। अन्य विषयों में न्यायी भूपति कभी हस्तक्षेप नहीं करते। राज्य-शासन दीवान का काम है और महाराजा साहब का काम भोगना। जहाँगीर बादशाह कहा करता था कि "पावभर कबाब हो और शेर भर शराब हो—यह सल्तनत नूरेजहाँ फिर ख़ूब हो या ख़राब हो।" अपने भूतपूर्व प्रभुओं की लीला का अनुकरण करके ऐसे नरेश अपनी अटूट राजभक्ति और क्षत्रिय-कर्तव्य का कैसा सुन्दर परिचय देते हैं !! हम आशा करते हैं कि ऐसे नरेशों की निन्दा करने वालों की किसी दिन विजयानन्द दुबे जी ख़ूब ख़बर लेंगे !

इस प्रकार न्याय-वितरण और शासन-सञ्चालन से थक कर जब महाराजा 'सेला पधारते हैं' अर्थात शौच जाते हैं तो उनको पाख़ाने में पूरे दो घण्टे लगते हैं। यदि हाथ-मुँह धोना या स्नान मर्दाने में हुए तो लगभग एक दर्जन आदमी हाज़िरी में खड़े रहते हैं। किसी के हाथ में मिट्टी है, किसी के हाथ में पानी का गङ्गासागर। तीन-चार आदमियों के पास शरीर पोंछने के कई तौलिए होते हैं और कुछ के पास, दन्त-मञ्जन, तैल, इत्र आदि। एक-दो आदमी मरहम और रुई लिए हुए खड़े रहते हैं। जब नरेश हाथ धोने को पटे पर बैठते हैं तो एक आदमी दौड़ कर उनके हाथों में मिट्टी रख देता है। महाराजा प्रायः हाथ मिला कर मिट्टी को चुपड़ लेते हैं और फिर जल की तेज़ धार से वह धुल जाती है। कभी-कभी ऐसा होता है कि मिट्टी हाथ में रखते ही गिर जाती है और केवल पानी से हाथ गीले कर लिए जाते हैं। तदुपरान्त महाराजा टाँगें फैला कर पीछे किसी का सहारा लेकर बैठ जाते हैं। एक आदमी एक टाँग धोने लगता है और दूसरा आदमी दूसरी टाँग। इसी प्रकार हाथ धुलते हैं और इसी प्रकार पेट, पीठ तथा अन्य भाग। रियासतों में यह तरीक़ा है कि छत्रधारी नरेश के शिर से ऊपर किसी का हाथ न पहुँच जाए। अतः बग़ल से नरेश के मस्तक पर पानी डाला जाता है। महाराजा स्वयं अपने वीर हाथों से अपने हाथों को मल लेते हैं। परन्तु प्रायः वे यह कष्ट नहीं उठाते। पानी की धारा के साथ ही जो मैल निकल जाती है, वह काफ़ी है। शेष छत्रधारी की शोभा बढ़ाया करती है। शिर को स्वयं महाराजा ही पोंछते हैं और शेष शरीर को पास वाले लोग। यदि शराब के कारण महाराज के शरीर पर जगह-जगह घाव और फोड़े हुए या अन्य रोगों के ज़ख़्म हुए तो पहले उन पर मरहम लगाया जाता है और फिर पोशाक धारण करवाई जाती है। कई महाराजाओं को तो धोती तक पासबान पहनाते हैं। स्नान के समय की एक उल्लेखनीय बात यह है कि मुख, हाथ, पेट, पीठ, पैर आदि अङ्गों को पोंछने के लिए अलग-अलग तौलिए होते हैं। यदि यह सब क्रियाएँ ज़नाने में हों तो वहाँ सब कार्य स्त्रियाँ करती हैं। इस प्रकार स्नान-विहार के पश्चात् कुछ समय के लिए नरेश या तो पूजा-पाठ का ढोंग करते हैं या फिर महफ़िल होने लगती है। यदि महफ़िल मर्दाने में हुई तो मुँह-लगे लोग महाराजा को घेर लेते हैं, और ठकुर-सुहाती प्रपञ्चमय बातें होने लगती हैं। यदि अन्नदाता रावला में पधार गए तो फिर कहना ही क्या ? वहाँ अनेक युवतियों की मधुमयी बातें और विलास-कलाएँ उनको कभी इधर खींचती हैं और कभी उधर। मद्य की तरङ्ग में जिधर नज़र पड़ गई और जिधर लड़खड़ाते हुए चल पड़े, उसका भाग्य जगा या और शेष निराश रमणियाँ अपने भाग्य को कोसने लगीं। जिस समय महाराज अपनी कृपा-पात्रा महिला के साथ एक थाली में 'काँसा आरोगने' विराजते हैं, तो रावले में एकदम विशेष प्रकार का गान आरम्भ हो जाता है। ये गायिकाएँ होती हैं, बारेठणियाँ या ढोलणियाँ। इनका संक्षिप्त वर्णन पिछले लेख में भी दिया जा चुका है। महाराजाओं के रावले में जानेवाली ढोलणियाँ कुछ अधिक चतुर होती हैं। ये प्रायः माँढ गाती हैं, परन्तु जयपुर की ढोलणियाँ ग़ज़लें गाने का उपहास्य प्रयास भी किया करती हैं। यह शायद जयपुर और दिल्ली

(शेष मैटर १८वें पृष्ठ के तीसरे कॉलम के नीचे देखिए)

❋ 'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ ❋

श्रीमती मैसी—जिन्हें लन्दन के ट्रिनिटी सङ्गीत महाविद्यालय ने उच्च सङ्गीत परीक्षा पास करने के लिए एक 'सिल्वर कप' प्रदान किया है।

लाला श्रीराम जी—आप भारतीय चेम्बर ऑफ़ कॉमर्स के प्रधान हैं और दिल्ली में एक सार्वजनिक सभा-भवन बनवाने के लिए आपने वहाँ की म्युनिसिपैलिटी को १ लाख रुपए दिया है।

बम्बई के जे० जे० स्कूल ऑफ़ आर्ट के सुप्रसिद्ध कलाविद— श्री० गोपाल डी० ड्यूस्कर।

गांधी हस्पताल (हरचन्दराय-नगर, कराची) के प्रमुख कार्य-सञ्चालकगण

बाल-सभा, आगरा के प्रमुख कार्यकर्ता, बाँईं ओर से—श्री० मूलचन्द मित्तल, श्री० गौरीशङ्कर शर्मा, श्री० रमनलाल जी।

☜ श्री० रामेश्वरप्रसाद बागला, एम० एल० ए०—आप कानपुर के विख्यात व्यवसायी हैं। सरकार ने आपको जनेवा की अन्तर्जातीय मज़दूर सम्मेलन के लिए प्रतिनिधि चुना है।

☞ स्वर्गीय प्रिन्सिपल एम० सी० साहनी भूतपूर्व एम० एल० सी०—आप सिन्ध-प्रान्त के विख्यात सुधारक और कार्यकर्ता थे।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

आगरे की स्वदेशी बीमा कम्पनी के डायरेक्टरगण, बाँईं ओर से—श्री० श्रीचन्द्र जी, पं० विश्वेश्वरदयाल चतुर्वेदी, सेठ अचलसिंह जी, बाबू रामेश्वरनाथ टण्डन, पं० श्रीकृष्णदत्त पालीवाल, बाबू रामकिशोर, पं० सुशीलचन्द्र चतुर्वेदी। (इस कम्पनी ने अपना सारा काम यथासाध्य हिन्दी में ही करने का निश्चय किया है)

गाँधी हस्पताल (हरचन्दरायनगर, कराची) का आयुर्वेदिक विभाग

श्रीमती काले—आप आन्ध्र राज्य की 'स्टेट एसेम्बली' की सदस्या हैं।

श्री० एस० वी० पुनताम्बेकर, एम० ए०, (ऑक्सन) बार-एट-ला। आप काशी हिन्दू-विश्व-विद्यालय के इतिहास-विभाग के प्रधान हैं और आगामी जुलाई में होने वाले ब्रिटिश एम्पायर युनिवर्सिटी कॉङ्ग्रेस के प्रतिनिधि चुने गए हैं।

गाँधी हस्पताल (हरचन्दरायनगर, कराची) का बाहरी दृश्य

कराची के राजबन्दियों का ग्रूप—जो हाल ही में मुक्त हुए हैं

कराची के उन राष्ट्रीय कार्यकर्ता तथा नेताओं का ग्रुप, जो गत राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के कारण जेल गए थे। बीच में पाठक उन तीन अभागे बच्चों को देखेंगे, जिन्हें उनकी जेल की अवधि में दो-दो बार कोड़े भी लगाए गए थे! पहली क़तार में पाठक सिन्ध की उन वीर रमणियों को देखेंगे जो अपनी स्वतन्त्र-प्रियता के कारण जेल भेजी गई थीं। इनमें से चार महिलाएँ कराची की 'डिक्टेटर' भी रह चुकी हैं। इनके पीछे की क़तार में पाठक सिन्ध के सुप्रसिद्ध नेतागण—डॉक्टर चोथराम, प्रो० गिडवानी, श्री० नारायणदास आनन्द जी बेछर तथा स्वामी गोविन्दानन्द आदि राष्ट्रीय नेताओं को देखेंगे।

'भविष्य' की साप्ताहिक चित्रावली का एक पृष्ठ

कुमारी एलिन विलियम्स—आप अभी कुल १६ वर्ष की हैं। आपको वेला (वॉयलिन) बजाने के लिए लण्डन के रॉयल एकाडमी के म्युज़िक बोर्ड ने छात्रवृत्ति दी है।

'चाँद' और 'भविष्य' के हिन्दी कविता-सम्पादक और प्रयाग-विश्वविद्यालय के प्रतिभाशाली प्रोफ़ेसर—श्री० रामकुमार जी वर्मा, एम० ए०।

कुमारी ई० सा० विलियम्स—आप बरेली की इन्स-पेक्ट्रेस ऑफ़ गर्ल्स स्कूल हैं। आपने हाल ही में नागपुर विश्व-विद्यालय से एम० ए० की परीक्षा पास की है।

गाँधी हस्पताल (हरचन्दराय-नगर, कराची) के आयुर्वैदिक विभाग के कुछ प्रधान कार्यकर्ता

श्री० शङ्करस्वरूप भटनागर—आप आगरे के प्रमुख राष्ट्र-सेवक हैं और ६ मास का कठिन कारावास दण्ड भुगत कर हाल ही में जेल से छूटे हैं।

महन्त सीताराम जी शास्त्री, नासिक—आप पहले सनातनी महन्त हैं, जिन्होंने अछूतोद्धार कार्य में प्रमुख भाग लिया है। आपके विचार राष्ट्रीय और उदार हैं। अन्य 'महन्त' नामधारी देश के कलङ्कों को आपसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

वह सितम पर, ज़ुल्म पर, बेदाद पर तैयार हैं, मैं हूँ आमादा फ़ुग़ाँ पर, आह पर, फ़रियाद पर !

रङ्ग दुनियाए-मुहब्बत का बदल जाएगा अब, सैकड़ों फ़ितने उठेंगे, इक मेरी फ़रियाद पर !!

बेदाद

अब वही कसते हैं आवाज़ें मेरी फ़रियाद पर,
काँप उठते थे जो पहले शिकवए[1] बेदाद पर।
पेश आए लुत्फ़ से, तो लुत्फ़ क्या बाक़ी रहा,
कीजिए बेदाद ही अब ख़ूगरे[2] बेदाद पर।

—"नूह" नारवी

हश्र[3] में शिकवा करूँ आज़ार[4] का मुमकिन नहीं,
उम्र भर मैंने दुआएँ दीं, उन्हें बेदाद पर।

—"ज़या" देवान्दपुरी

करके उसने क़त्ल मुझको लाश भी की पायमाल[5]
यह सितम पर है सितम, बेदाद है बेदाद पर।
और हों जौरो जफ़ा कुछ और हों ज़ुल्मो-सितम
ग़ैर-मुमकिन है, कि निकले 'उफ़' तेरी बेदाद पर।

—"शातिर" इलाहाबादी

गुल चढ़ाएगा वह क़ब्रे आशिक़े नाशाद पर,
जो न डाले ख़ाक अपने कुशतए बेदाद पर।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

सय्याद

रहम अब लाज़िम है तुझको, बुलबुले नाशाद पर,
बाज़ुओं में रह गए गिनती के ऐ सय्याद पर !
फ़स्ले-गुल[6] में क्या करे बुलबुल नशेमन[7] का ख़्याल,
एक नज़र है बाग़बाँ पर, एक नज़र सय्याद पर!
देखिए अब हो चमन में क्या मआले[8] अन्दलीब[9]
बाग़बाँ की भी तबीयत आ गई सय्याद पर।

—"नूह" नारवी

क्यों न आफ़त आए जानें बुलबुले नाशाद पर,
ज़िन्दगी या मौत जब हो मुनहसिर सय्याद पर,
सैकड़ों फन्दों से तुझको दाम[10] में यह लाएगा,
देख ऐ बुलबुल न जा मक्कारिए सय्याद पर।

—"ज़या" देवान्दपुरी

आओ देखें तो ज़रा ऐ हम-सफ़ीराने[11] चमन,
सर झुकाए कौन बैठा है, दरे सय्याद पर ?
मर गई कुञ्जे कफ़स[12] में क्या तड़प कर अन्दलीब,
छाई है कैसी उदासी ख़ानए सय्याद पर !

—"शातिर" इलाहाबादी

यह सितम तुर्फ़ा सितम है बुलबुले नाशाद पर,
क्यों कतरता है क़फ़स में रोज़ ऐ सय्याद पर !
आए हैं अहले-चमन किसकी रिहाई के लिए,
आज हङ्गामा[13] बपा है क्यों दरे सय्याद पर ?
बर्क़[14] गिरने को गिरी, लेकिन कहीं हट कर गिरी,
आँच तक आने न पाई ख़ानए[15] सय्याद पर !

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१—गिला, २—आदी, ३—क़यामत, ४—दुख, ५—मिटाना, ६—बहार के दिन, ७—घोंसला, ८—नतीजा, ९—बुलबुल, १०—जाल ११—साथी, १२—पिंजड़ा, १३—शोर, १४—बिजली, १५—बहेलिया का घर,

फ़रियाद

क्या अजब कुछ मेहर्बाँ हों वह दिले नाशाद[16] पर,
अब दुआ का भी इज़ाफ़ा[17] मैं करूँ फ़रियाद पर।
जिसने वक़्ते नज़्आ[18] बेदर्दों को मुज़्तर[19] कर दिया,
सौ असर सदक़े[20] मेरा इस आख़िरी फ़रियाद पर!
वह सितम[21] पर, ज़ुल्म पर, बेदाद पर तैयार हैं,
मैं हूँ आमादा फ़ुग़ाँ पर, आह पर, फ़रियाद पर !

—"नूह" नारवी

रङ्ग दुनियाए-मुहब्बत का बदल जाएगा अब,
सैकड़ों फ़ितने[22] उठेंगे इक मेरी फ़रियाद पर।

—"ज़या" देवान्दपुरी

क्या बताऊँ क्या गुज़रती है दिले नाशाद पर,
तानाज़न[23] होते हैं, जब वह नालओ फ़रियाद पर।

—"शातिर" इलाहाबादी

यह ज़बाँ-बन्दी भी एक बेदाद[24] है, बेदाद पर,
मुहर अब तुमने लगा दी, क्यों लबे-फ़रियाद पर,
रात को यह वाक़आ गुज़रा हरीमे नाज़[25] में;
चौंक उट्ठे वह, किसी के नालओ फ़रियाद पर !

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

मीयाद

जिस्म से निकलेगी लेकिन कब, यह कुछ खुलता नहीं
रूह को हैरत है अपनी क़ैद बेमीयाद पर !!

—"नूह" नारवी

रञ्ज तुम करते हो क्यों ऐ हमसफ़ीराने-चमन,
मैं वह क़ैदी हूँ रिहा हो जाऊँगा मीयाद पर।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

बुनियाद

दिल से क्यों आहे शरर-अङ्गेज़[26] निकली ऐ "ज़या"
हो गए वह आग उल्फ़त में इसी बुनियाद पर।

—"ज़या" देवान्दपुरी

बुतकदे[27] की नींव ज़ाहिद किस क़दर मज़बूत थी,
आज तक काबा भी है क़ायम उसी बुनियाद पर।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

ईजाद

सारा आलम है सनाख़्वाँ[28], सारी दुनिया मद्दहगो[29],
ज़ुर्म साबित किस तरह हो; उस सितम-ईजाद पर?

—"ज़या" देवान्दपुरी

यह शिगूफ़े रात-दिन खिलते हैं किस बुनियाद पर,
मुझको हैरत है बिनाए गुल्शने[30] ईजाद पर।
यह समझ लें अपने दिल में वादिए पुरख़ार[31] है,
फूलने वाले न फूलें गुल्शने-ईजाद पर !

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

१६—दुखी, १७—बढ़ाना, १८—अन्तिम समय, १९—बेचैन, २०—निछावर, २१—ज़ुल्म, २२—फ़िसाद, २३—ताना मारना, २४—ज़ुल्म, २५—महल में, २६—चिनगारी भरी हुई, २७—मन्दिर, २८—तारीफ़ करने वाला, २९—प्रशंसक, ३०—संसार-वाटिका, ३१—काँटा,

नाशाद

वाह क्या कहना तेरा ऐ ज़ब्ते आहे आतशीं,[32]
गिर पड़ी बिजली हमारे ही दिले-नाशाद पर !
आप आए बन पड़ी मेरे दिले-नाशाद की,
आप बिगड़े बन गई मेरे दिले-नाशाद पर।
ज़िन्दगी में दिल से निकली थी जो आहे शोलाबार[33]
बन गई वह शम्आ[34] क़ब्रे-आशिक़े नाशाद पर।

—"नूह" नारवी

यह तग़ाफ़ुल[35] है बुरा, यह बेरुख़ी अच्छी नहीं,
रहम कुछ लाज़िम है अपने आशिक़े नाशाद पर !

—"ज़या" देवान्दपुरी

जान लें अहबाब, मरने की अलामत यह भी है,
चारागर[36] रोए जो हाले आशिक़े नाशाद पर !
झाँकना फिर झाँक कर परदे में छुप जाना तेरा,
यह नया तूने सितम ढाया दिले-नाशाद पर !
पञ्जए-सय्याद में वह, अब है ऐ अहले-चमन,
देखिए क्या-क्या न गुज़रे बुलबुले नाशाद पर।

—"शातिर" इलाहाबादी

ख़ूने नाहक़ का कहीं दावा न हो जल्लाद पर,
तेग़ क्यों रक्खी है क़ब्रे आशिक़े-नाशाद पर।
अहले-दिल अहले-मुहब्बत अहले-इश्क़ अहले-जुनूँ,
सबको हसरत आएगी मेरे दिले नाशाद पर !
तङ्ग आकर दे दिया सब चारासाज़ों ने जवाब,
आप ही अब रहम खाएँ आशिक़े-नाशाद पर।
हिल रही है किस लिए गोरे-ग़रीबाँ[37] की ज़मीं,
रो रहा है कौन क़ब्रे आशिक़े-नाशाद पर।

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

याद

क्या बताऊँ किस तरह गुज़रा ज़माना हिज्र[38] का
मौत की भी याद आती थी, तुम्हारी याद पर।

—"नूह" नारवी,

मर गया मैं राह उसकी देख कर वादे की शब,[39]
भूलने वाला पशेमाँ[40] अब है अपनी दाद पर !

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

जल्लाद

बेगुनह के क़त्ल करने का पता देने लगे,
ख़ून के क़तरे थे जितने ख़ञ्जरे जल्लाद पर,

—"शातिर" इलाहाबादी

हर किसी के नाम में तख़सीस[41] होनी चाहिए,
क्यों न ऐ "बिस्मिल" मिटें हम ख़ञ्जरे जल्लाद पर !

—"बिस्मिल" इलाहाबादी

३२—प्रेम-परिपीड़न, ३३—आग बरसाने वाली, ३४—दीपक, ३५—ग़फ़लत, ३६—दवा करने वाला, ३७—क़ब्रिस्तान, ३८—विरह, ३९—रात, ४०—लज्जा, ४१—विबषता !

कुछ चुनी हुई उत्तमोत्तम पुस्तकों की संक्षिप्त सूची

दुखियाभारत (उ०ब०ऑ०) ॥)
दुर्गावती (गं० पु० मा०) १), १॥)
दुर्गादास (हिं० ग्रं० र०) १)
दुर्लभ बन्धु (भारतेन्दु) ॥)
देश-दशा (उ० ब० ऑ०) ॥)
देश-दीपक (ना०रा०सा०) ॥)
देशोद्धार (उ० ब० ऑ०) ।)
द्रौपदी स्वयम्बर („) ॥)

नाटक

धर्म और अधर्म ॥)
धर्मयोगी (उ० ब० ऑ०) ॥), १)
नल-दमयन्ती („) ॥)
नागानन्द (ब० प्रे०) ।)
नाक में दम (उ० ब० ऑ०) ।)
नूरजहाँ (हिं० रा० र०) १=)
नेत्रोन्मिलन (हिं० पु० ए०) ॥-)
पतिव्रता (गं० पु० मा०) १।=)
पतिव्रत (उ० ब० ऑ०) ॥)
पत्नी-प्रताप (बेताब) ॥=)
परिवर्तन (रा० श्या०) १)
परम भक्त प्रह्लाद („) १)
परीक्षित (उ० ब० ऑ०) ॥)
परोपकार (ब० ए० को०) १॥)
पाषाणी (हिं० ग्रं० र०) ॥)
पूर्व भारत (गं० पु० मा०) ॥।=), १।=)
प्रायश्चित्त (हिं० ग्रं० र०) ।)
बलिदान (सा० म० लि०) १।)
बुद्ध-चरित्र (गं० पु० मा०) ॥), १।)
भक्त चन्द्रहास (नि० ऍ० को०) १॥)
भक्त सुदामा (उ० ब० ऑ०) १)
भारत-दर्पण (ना० रा० सा०) १)
भारत-दुर्दशा (भारतेन्दु) -)।
भारत-माता (रा० श्या०) ।)
भारत-रमणी (हिं० ग्रं० र०) ॥=)
भारतवर्ष (उ० ब० ऑ०) ॥)
भीष्म (प्र० पु०) ॥)
„ (हिं० ग्रं० र०) १।)
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र नाटकावली (ख० वि० प्रे०) ३)
„ „ (इं० प्रे०) ३॥)
भीष्म (प्र० पु०) ॥)
„ (हिं० ग्रं० र०) १।)
भीष्म-प्रतिज्ञा (उ० ब० ऑ०) ॥)
भूल-चूक (बी० स० पु०) ॥)
मध्यम व्यायोग (गं० पु० मा०) =)
मशरिक़ी हूर (रा० श्या०) १)
महात्मा ईसा (बी० स० पु०) २)
महामाया (एस० आर० बेरी) १)
महाभारत (बेताब) ॥=)
महाराणा प्रतापसिंह (हिं० ग्रं० र०) १॥)
मुक्तधारा (प्र० पु०) ॥=)
मूर्ख-मण्डली (गं० पु० मा०) ॥=)
मेवाड़-पतन (हिं० ग्रं० र०) ॥=)
रणधीर-प्रेम मोहिनी (हिं० पु० ए०) ॥=)
राजा-रानी (इं० प्रे०) १)
राव बहादुर (गं० पु० मा०) ॥), १)
रुक्मिणी मङ्गल (रा० प्रे०) ॥)
लबड़धोंधों (गं० पु० मा०) ॥=), १।=)
वीर अभिमन्यु (रा० श्या०) १)
वीरबाला (उ० ब०ऑ०) ॥)
वेटिङ्गरूम (") ।)
शकुन्तला (") ॥)
शङ्ख की शरारत (बेताब) ।-)
शाहजहाँ (हिं० ग्रं० र०) १)
श्रवणकुमार (राधेश्याम) ॥)
सटक सीताराम (उ० ब० ऑ०) ।)
सती सुकन्या (") ॥)
सती सुलोचना (") ॥)
सत्यनारायण (निहाल) १)
सत्य हरिश्चन्द्र (इं० प्रे०) ≡)
„ „ (उ० ब० ऑ०) ॥)
सत्याग्रही प्रह्लाद (निहा०) १)
सत्य विजय (उ०ब०ऑ०) ॥)
समाज (सा० से० का०) ॥=)
सम्राट अशोक (उ० ब० ऑ०) ॥)
सम्राट परीक्षित (निहाल) १।)
सम्म प्रतिमा (ज०प्रे०) ॥=)
संग्राम (हिं० पु० ए०) १॥)
सावित्री सत्यवान (उ० ब० ऑ०) ॥)
सम्पादक की दुम (") ।)
सिंहल विजय (हिं ग्रं० र०) १=)
सीता (") ॥-)
सीता बनवास (उ० ब० ऑ०) ॥)
सुहराब रुस्तम (हिं० ग्रं० र०) ॥=)
सूम के घर धूम (") ।)
सोडे की बोतल (उ० ब० ऑ०) ।)
हरिओ३म् तत्सत् (") ।
हिन्द (एस० आर० बेरी) १)

थिएट्रिकल नाटक

अत्याचार (उ० ब० ऑ०) ॥)
असीरे हिर्स (उप० ब०) ।≡)
अज्ञातवास (ब० प्रे०) १)
आज़ादी या मौत (उ० ब० ऑ०) ॥)
आतिशी नाग (") ॥)
आँखों का गुनाह (") ॥)
कञ्जूस की खोपड़ी (") ॥)
काली नागिन (") ॥)
ख़ुशामदी टट्टू (") ।)
ख़ूने-नाहक़ (") ।≡)
ख़ूबसूरत बला (") ॥)
ख़्वाबेहस्ती (") -)
गड़बड़ घोटाला (") ≡)
गङ्गावतरण (") ॥)
ग़रीब किसान (") ॥)
गोरखधन्धा (") ॥)
चक्रवर्ती चन्द्रगुप्त ॥=)
डुप्लीकेट (उ०ब०ऑ०) ।=)
दामी कर्ण (") ॥)
दिलफ़रोश (") ॥)
दुश्मने-ईमान (") ॥=)
द्रौपदी स्वयम्बर (") ॥)
धर्मोजय (उ० ब० ऑ०) ॥), १)
धर्मयोगी (") ॥)
नई रोशनी (") ॥)
नल-दमयन्ती (") ॥)
परशुराम (") ॥)
बिल्व मङ्गल (") ॥)
भक्त ध्रुव (") ॥)
भक्त सुदामा (") ॥)
भारत रमणी (") ॥)
मदिरा देवी (") ॥)
महात्मा कबीर (") १)
महाभारत (") ॥)
विश्वामित्र (") ॥)
वीर अभिमन्यु (राधे०) १)
„ „ (उ० ब० ऑ०) ॥)
वीर छत्रसाल (") ॥)
वीर बाला (") ॥)
शहीदे-नाज़ (") ।≡)
श्रवणकुमार (") ॥)
सटक सीताराम („) ।)
सती सारन्धा (") ॥)
सती सुलोचना (") ॥)
सत्य हरिश्चन्द्र (") ॥)
सिलवर किङ्ग (") ॥)
सफ़ेद ख़ून (") ॥)
संसारचक्र (") ॥)
सीता-बनवास (") ॥)
सुनहरी ख़ञ्जर (") ॥=)
शैदे-हविस (") ॥)
सौभाग्य सुन्दरी (") ॥)
हरि ॐ तत्सत् (") ।)
हिन्दू ललना (") ॥)
हुब्बे-वतन (") ॥)

इतिहास

अकबरी दरबार (इं० प्रे०) २॥)
मुसलमानी राज्य का इतिहास (इं० प्रे०) २॥)
लन्दन पेरिस की सैर (इं० प्रे०) २)
अलबेरुनी का भारत (इं० प्रे०) सेट ।)
आधुनिक इङ्गलैण्ड (इं० प्रे०) २)
भूपरिचय (") २॥)
भूप्रदक्षिणा (") १०)
अफ़ग़ानिस्तान (पॉपुलर) २)
अङ्गरेज़ जाति का इतिहास (ज्ञा० मं०) २)
अङ्गरेज़ी राज्य का इतिहास (ज़ब्त) (चाँ० का०) १६)
अशोक के धर्म-लेख (ज्ञा० मं०) २॥)
आदर्श भूमि अथवा चित्तौर (इं० प्रे०) १॥)
आधुनिक भारत (हिं० पु० ए०) ॥)
इटली की स्वाधीनता (स० भा० ग्रं०) ॥)
इत्सिङ्ग की भारत-यात्रा (इं० प्रे०) २॥)
इङ्गलैण्ड का इतिहास (दो भाग) (गं० पु० मा०) ३), ४)
ग्रीस का इतिहास (स० भा० ग्रं०) १=)
चीन की राज्य-क्रान्ति (प्र० पु०) १॥)
चेतसिंह और काशी-विद्रोह (प्र० पु०) ॥=)
जापान की राजनीतिक प्रगति (ज्ञा० मं०) ३॥=)
जापान का इतिहास (गं० पु० मा०) ॥=), १=)
तिब्बत में तीन वर्ष (हिं० पु० ए०) २॥)
पश्चिमी यूरोप (दो भाग) (ज्ञा० मं०) ४।-)
पञ्जाब का भीषण हत्या-काण्ड (नि० चं०) १॥)
पञ्जाब-हरण (हिं० पु० ए०) २)
प्राचीन भारत (ज्ञा० मं०) ३।-)
बीसवीं सदी का महाभारत (प्र० पु०) ॥)
भारतवर्ष का इतिहास (मि० बं०) ३)
भारतवर्ष का इतिहास (इं० प्रे०) १॥)

सत्याग्रह संग्राम में कॉङ्ग्रेस हस्पताल का सेवा-कार्य

घायल सैनिकों की अनुपम शुश्रूषा :: अखिल भारतीय संगठन की योजना

[श्री० डी० डी० साठे, सुपरिण्टेण्डेण्ट कॉङ्ग्रेस फ़्री हस्पताल, बम्बई]

[इस लेख के लेखक बम्बई के सुप्रसिद्ध कॉङ्ग्रेस फ़्री हस्पताल के सुपरिण्टेण्डेण्ट श्री० डी० डी० साठे महोदय हैं। सत्याग्रह संग्राम के समय लेखक के कथनानुसार बम्बई नगर कुरुक्षेत्र या पानीपत का ऐतिहासिक मैदान बना हुआ था। तीन-चार सौ घायल सैनिकों का प्रति दिन कॉङ्ग्रेस फ़्री हस्पताल में पहुँचाया जाना एक साधारण सी दैनिक घटना हो गई थी। लेखक ने बतलाया है कि राष्ट्र की पुकार पर दौड़ पड़ने वाले इन नवयुवकों ने, जिन्हें पहले से कोई सूचना नहीं मिली थी, न किसी सैनिक कॉलेज में युद्धक्षेत्र के घायलों की चिकित्सा-सम्बन्धी शिक्षा मिली थी और न जिन्हें कभी युद्धक्षेत्र देखने का अवसर ही प्राप्त हुआ था, किस प्रकार सत्याग्रह संग्राम में घायल सैनिकों की शुश्रूषा की है। उनकी योग्यता की प्रशंसा देश-विदेश के बड़े-बड़े आदमियों ने की है। लेखक का कहना है कि इन कॉङ्ग्रेस हस्पतालों के कारण स्वयंसेवकों तथा साधारण जनता के दिलों में एक बल सा पैदा हो गया था। उत्तम चिकित्सा और उत्तम शुश्रूषा के कारण, सैनिक कई-कई बार अच्छे होकर संग्राम में प्रवृत्त होते दिखलाई पड़े थे।

—सं० "भविष्य"]

महात्मा गाँधी का सत्याग्रह संग्राम संसार के लिए एक अभूतपूर्व अनुभव है। इस लेख के लेखक को आज से बारह वर्ष पूर्व महात्मा जी से कुछ बातचीत करने का अवसर प्राप्त हुआ था, तब उन्होंने कहा था कि एक बार फिर से मैं बिना शस्त्रों की सहायता के स्वराज्य प्राप्त करने का प्रयोग करने वाला हूँ। यह कहते समय उन्हें अपने प्रयोग की सफलता में पूर्ण विश्वास था। हर्ष की बात है कि आज उन्होंने संसार के सामने बिना किसी प्रकार के आधुनिक शस्त्र-प्रयोग के एक महान क्रान्ति का दृश्य उपस्थित कर दिया है। जिस अहिंसात्मक युद्ध का प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करने के लिए इस देश में फ़्रान्स, जर्मनी, अमेरिका और इङ्गलैण्ड आदि देशों के बड़े-बड़े अनुभवी पत्र-प्रतिनिधि आए थे।

आज़ाद मैदान का कुरुक्षेत्र

इस सत्याग्रह संग्राम में बम्बई का आज़ाद मैदान कुरुक्षेत्र या पानीपत का मैदान बन गया था, जिसमें कॉङ्ग्रेस फ़्री हस्पताल का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। तारीफ़ की बात यह है कि कॉङ्ग्रेस हस्पताल कॉङ्ग्रेस द्वारा सञ्चालित कोई संस्था न थी। ऐसा होना ठीक ही था, क्योंकि यह मानी हुई बात है कि युद्ध और सेवा-शुश्रूषा तथा हस्पताली कार्यों को युद्ध के कार्यों से अलग ही रखना चाहिए।

हस्पताल सञ्चालन का उद्देश्य

निस्सन्देह डॉक्टरी पेशे की साधारण दया-भावना को लेकर ही यह संस्था स्थापित हुई थी। उत्तम चिकित्सा और उत्तम सेवा के कारण, कॉङ्ग्रेस हस्पताल में आए हुए अनेक घायल सैनिक कई-कई बार राष्ट्रीय संग्राम में शामिल हो सके। मातृभूमि की वेदी पर बड़ी से बड़ी भेंट चढ़ाने की होड़ में वे बार-बार अच्छे होकर इस संग्राम में प्रवृत्त हो जाते थे। लेकिन इस बात को उद्देश्य बना कर हस्पताल स्थापित करने वालों ने हस्पताल नहीं स्थापित किया था, कॉङ्ग्रेस वालों को सैनिकों की कमी न थी। फिर भी, इस संस्था के स्थापित करने वालों में कुछ राष्ट्रीय भावना अवश्य थी। हम लोगों की एक यह भी इच्छा थी कि इस आधुनिक सभ्यता के मुक़ाबिले में अपने व्यावसायिक कर्तव्यों की सफलता दिखला सकें।

भारत-स्थित 'कॉमेट' (Comet) पत्र के सम्वाददाता ने अपने गत २६ नवम्बर के पत्र में लिखा था कि हिन्दुस्तानी डॉक्टरों की हिन्दुस्तानी डिग्रियों का पद जो ब्रिटेन की डिग्रियों के मुक़ाबले में नीचा कर दिया गया है, उसी से क्रुद्ध होकर बड़े-बड़े डॉक्टरों ने सरकार के विरुद्ध कॉङ्ग्रेस फ़्री हस्पताल में अपनी सेवाएँ प्रदान की हैं। इस सम्बन्ध में मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तानियों के प्रति इससे अधिक नीच आक्षेप नहीं हो सकता था। सम्वाददाता की मूर्खता पर दया आती है।

हमें इस बात का हर्ष है कि हम लोग अपने व्यावसायिक गुणों को उच्च से उच्च माध्यम में प्रदर्शित कर सके। हम यह बात अपनी तरफ़ से नहीं कहते, बल्कि भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के प्रतिनिधियों द्वारा दी हुई सम्मतियों के आधार पर कहते हैं।

अवसर पड़ने पर, राष्ट्र-सञ्चालन के प्रत्येक विभाग में भारतीयों ने अपनी योग्यता दिखलाई है। सेना-विभाग को छोड़ कर ऐसा कोई विभाग नहीं है, जिसमें भारतीयों ने अपनी प्रबन्ध-कुशलता न दिखलाई हो। ब्रिटिश शासन-काल में केवल सैनिक नियन्त्रण की योग्यता दिखलाने का अवसर नहीं मिला है। लेकिन इस सत्याग्रह संग्राम ने राष्ट्र की इस छिपी शक्ति को भी प्रकट कर दिया है। सत्याग्रह संग्राम की विशालता तब मालूम होती है, जब हम देखते हैं कि लगभग साठ हज़ार से अधिक लोग इस युद्ध में सिर्फ़ जेल गए और कम से कम इससे दस गुनी संख्या में और लोगों ने इस युद्ध में भाग लिया। बड़ी-बड़ी संख्या में वालण्टियरों को ट्रेनिङ्ग देना, उनके लिए आर्थिक प्रबन्ध करना, उनके लिए भोजन आदि का प्रबन्ध करना, उन्हें ठीक अवसर पर और ठीक स्थान पर युद्ध के लिए भेजते रहना आदि बातें राष्ट्र की सैनिक योग्यता के प्रमाण हैं।

चिकित्सा-प्रबन्ध

इस लेख में मैं रोगियों तथा घायलों की चिकित्सा तथा शुश्रूषा के सम्बन्ध में कुछ लिखना चाहता हूँ। हमारे कार्यों से चारों ओर कितना सन्तोष प्रकट किया गया, यह मैं पहले ही बतला चुका हूँ। यह बात ध्यान में रहे कि स्वाधीनता के इस सत्याग्रह संग्राम में शुश्रूषा और चिकित्सा का काम करने वाले सभी नवयुवक थे, जिन्हें इस कार्य की पहले से न कोई सूचना मिली थी, न किसी कॉलेज-विशेष में इस सम्बन्ध की कोई विशेष शिक्षा मिली थी और न कभी किसी युद्धक्षेत्र में जाने और ऐसे कार्यों के करने का अवसर ही मिला था। मातृभूमि की पुकार पर दौड़ पड़ने वाले ये सब बूढ़े, जवान, स्त्री और बच्चे अभिनन्दनीय हैं, जिनमें सब कुछ त्याग करने के लिए विचित्र होड़ लगी हुई थी।

महात्मा गाँधी ने, जोकि इस सत्याग्रह संग्राम के नायक थे, राष्ट्र के सामने इस बात की घोषणा पहले से ही कर दी थी कि कोई भी राष्ट्रीय सैनिक हिंसा का बदला हिंसा से न लेगा और अपने ऊपर पड़ने वाले सब प्रकार के कष्टों को स्वीकार कर लेगा। राष्ट्रीय सैनिकों ने जिस उत्तमता के साथ इस आज्ञा का पालन किया है उसे स्वयं सरकार भी नहीं इन्कार कर सकती। लेकिन सरकार ने जैसा बदला दिया वह कोई छिपी हुई बात नहीं है। उसने आर्यों की धर्म-युद्ध-पद्धति का पालन नहीं किया। उसने स्वराज्य के अहिंसात्मक सैनिकों पर लाठियों से लेकर गोली तक का व्यवहार किया है।

कार्य की गुरुता

राष्ट्रीय प्रदर्शन के प्रत्येक अवसर पर इस राष्ट्र को सदुद्देश्य के लिए मर मिटने की अपनी प्रबल भावना की परीक्षा देनी पड़ी है। प्रत्येक प्रदर्शन के अवसर पर सारे देश में स्वयंसेवक घायल होते थे। राष्ट्र अपनी परीक्षा में सफल उतरा है। इस सम्बन्ध में इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि अकेले बम्बई नगर में चार महीने के अन्दर कॉङ्ग्रेस फ़्री हस्पताल की तरफ़ से लगभग ६ हज़ार घायलों की मरहम-पट्टी की गई होगी, तीन-चार सौ घायलों का प्रतिदिन कॉङ्ग्रेस हस्पताल में लाया जाना एक साधारण सी दैनिक बात हो गई थी। मुख्य-मुख्य अवसरों के लिए बहुत बड़े प्रबन्ध करने पड़ते थे। हमारे हस्पताल में यों तो सौ चारपाइयों का दैनिक और स्थायी प्रबन्ध रहता ही था, परन्तु बड़े-बड़े राष्ट्रीय प्रदर्शनों के अवसरों के लिए तीन-चार सौ अतिरिक्त चारपाइयाँ सदैव तैयार रहा करती थीं।

धरसाना की चढ़ाई से प्रारम्भ

हस्पताल का विवरणात्मक इतिहास न बतला कर यहाँ इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि २५ मई, १९३० ई० को इस हस्पताल की स्थापना की गई थी। उस दिन इस हस्पताल में धरसाना से नमक की चढ़ाई में घायल होकर ६ आदमी आए थे।

आर्यों के प्राचीन ग्रन्थों में घायलों और उनक शुश्रुषा की बात मिलती है। शुक्राचार्य की अमृत सञ्जीवनी युद्ध के घायलों की ही औषधि थी। अमृत का अर्थ ही जो मरा नहीं अर्थात् घायल है। असुरों ने शुक्राचार्य की अधीनता में सुरों से अधिक घायलों की चिकित्सा-कला में कुशलता प्राप्त कर ली थी। मध्य शिया के सुरों के गुरु वृहस्पति ने इस कमी को पूरा करने के लिए अपने बेटे कच को अपने प्रतिद्वन्द्वी शुक्र के विश्वविद्यालय में पढ़ने भेजा था।

अहिंसात्मक संग्राम

विश्व-व्यापी युद्ध का क्या अर्थ है। यद्यपि भारत का संग्राम अहिंसात्मक रहा है, फिर भी उसमें युद्ध के सभी लक्षण मौजूद थे। यह राष्ट्र-व्यापी युद्ध था। इसलिए स्वभावतः इस शान्तिमय युद्ध में भी साधारण युद्ध की ही तरह युद्ध-सम्बन्धी हस्पताल आदि प्रबन्धों की आवश्यकता पड़ी थी, क्योंकि अहिंसा का पालन तो एकतरफ़ा ही था, अपर पक्ष हिंसक था। ही है। बहुतों के लिए वह एक तीर्थ-स्थान सा हो गया था, जहाँ आने से दर्शक में कभी न मिटने वाला एक प्रकार का राष्ट्रीय ओज उत्पन्न हो जाता था।

दूसरे नगरों में भी हस्पतालों की स्थापना

देश में कॉङ्ग्रेस आन्दोलन के बढ़ने के साथ ही साथ, पुलिस का लाठी-काण्ड भी बढ़ता गया। परिणाम यह हुआ कि कलकत्ता, मद्रास, लखनऊ और यवतमाल आदि सभी स्थानों में कॉङ्ग्रेस हस्पतालों की स्थापना आवश्यक हो गई। इन हस्पतालों के स्थापित होने से लोगों के उत्साह द्विगुणित हो गए और कॉङ्ग्रेस आन्दोलन में सम्मिलित होने वाले लोगों की संख्या भी बढ़ गई।

युद्धक्षेत्र से घायलों के हटाने-बढ़ाने का काम

हस्पतालों की स्थापना के साथ ही साथ देश भर में घायल होने वाले लोगों के सङ्गठन की भी आवश्यकता बढ़ती गई। घायलों को ढोने वाले स्वयंसेवक-दल का काम घायल होते ही सैनिकों की प्रारम्भिक चिकित्सा करके हस्पतालों में पहुँचा देना रहा करता था। देश में चारों ओर ऐसे घायल ढोने वाले छोटे-छोटे दलों के उत्पन्न हो जाने का परिणाम यह हुआ कि इन सबको एक सूत्र में मिला कर रेडक्रॉस सोसायटी के ढङ्ग की, एक अखिल भारतीय संस्था बना दी गई। घायलों की प्रारम्भिक चिकित्सा करने तथा उन्हें ढोने वाले इन छोटे-छोटे दलों को अखिल भारतीय स्वरूप में सङ्गठित करने का श्रेय बम्बई मेडिकल यूनियन को प्राप्त है। मेरी राय में अगर इस संस्था के प्रवर्तक महोदय इस संस्था का सङ्केत-चिन्ह, रेडक्रॉस तथा रेड अर्धचन्द्र की तरह रेड चर्ख़ा रक्खें तो बड़ा सुन्दर हो। भारतीय राष्ट्र के तिरङ्गे झण्डे में स्थित इस चर्ख़े ने ही असंख्य नर-नारियों से इस युद्ध में तरह-तरह के बलिदान करवाए हैं। इस संस्था के प्रान्तीय तथा ज़िला-सदस्यों की यह उत्कट इच्छा है कि ज़िला तथा प्रान्त में आवश्यकतानुसार छोटे-छोटे तथा बड़े-बड़े कुछ ऐसे हस्पताल खोले जायँ, जिनमें घायल तथा बीमार स्वयंसेवकों और कॉङ्ग्रेस से सहानुभूति रखने वालों की चिकित्सा और मरहम-पट्टी हुआ करे। मेरी सम्मति से कॉङ्ग्रेस को इस सदुत्साह से लाभ उठाने का अच्छा अवसर है। कॉङ्ग्रेस, सर्वसाधारण की औषधि सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति के लिए अपनी ओर से इस सम्बन्ध में एक स्वतन्त्र विभाग क़ायम कर सकती है।

महात्मा जी का डण्डी प्रस्थान

स्वयंसेवकों के लिए चिकित्सा द्वारा सहायता पहुँचाने का प्रथम विचार डॉ० एस० के० वैद्य, डॉ० जी० वी० देशमुख और मेरे मन में उत्पन्न हुआ था। उस समय महात्मा जी डण्डी की प्रसिद्ध यात्रा कर रहे थे। महात्मा जी के साथ वाले स्वयंसेवकों के लिए ऐसी किसी सहायता की आवश्यकता न थी। लेकिन धरसाना, वडाला और दूसरी चढ़ाइयों के होने पर सम्पूर्ण दृश्य युद्ध के स्वरूप में बदल गया और तब हस्पताल के प्रबन्ध की आवश्यकता साफ़-साफ़ दीख पड़ने लगी।

बम्बई नगर शीघ्र ही युद्ध का एक मुख्य केन्द्र बन गया। भारत के तमाम हिस्सों से नेता और स्वयंसेवक बम्बई नगर में आए। बम्बई नगर इस युद्ध-सञ्चालन का प्रथम नगर बन गया। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि बम्बई की कॉङ्ग्रेस हस्पताल देश भर के लिए एक नई वस्तु हो गई। यह बात सबने मानी है कि इस संस्था ने राष्ट्रीय कार्य में बड़ी सहायता पहुँचाई है। स्वयंसेवकों के दिलों में ही नहीं, सर्व-साधारण के दिलों में भी इस संस्था के कारण एक अपूर्व बल पैदा हो गया था। वे समझते थे कि घायल होने पर हमारी रक्षा और शुश्रूषा के लिए हमारा कॉङ्ग्रेस हस्पताल तो मौजूद

स्थायी संस्था

विराम-सन्धि के समय से ही कुछ लोगों ने प्रश्न करना प्रारम्भ कर दिया था कि इस कॉङ्ग्रेस हस्पताल का क्या होगा? मेरा उत्तर यह है कि यह सन्धि क्षणिक सन्धि है, स्थायी शान्ति नहीं है, ऐसी अवस्था में कॉङ्ग्रेस फ़्री हस्पताल की आवश्यकता नहीं समाप्त हो जाती। इसकी आवश्यकता तब तक बनी रहेगी, जब तक कि कॉङ्ग्रेस का ध्येय नहीं प्राप्त हो जाता। इसलिए मैं इस संस्था को अभी बन्द कर देने के पक्ष में नहीं हूँ। मैं तो चाहता हूँ कि यह कॉङ्ग्रेस फ़्री अस्पताल संस्था एक स्थायी संस्था हो जाय। मैं जानता हूँ, दूसरे बहुत से सज्जनों की भी ऐसी ही इच्छा है। सत्याग्रह संग्राम में इस संस्था ने जैसी उच्च कोटि की सेवा की है, उसे देख कर सभी लोग चाहते हैं कि यह संस्था स्थायी बना दी जाय। शान्ति के समय में भी यह संस्था लोकोपकारी सिद्ध हो सकती है। बम्बई नगर की जैसी दशा है उसे, और विशेषकर लाखों की संख्या में श्रमजीवियों की जैसी दशा है, उसे भी देखते हुए मैं कह सकता हूँ कि लोग कॉङ्ग्रेस हस्पताल के स्थायी हो जाने की बात का हृदय से स्वागत करेंगे। बम्बई का कॉङ्ग्रेस-भवन एक गौरव की वस्तु है। उसकी ओर से किसी मज़दूर-प्रधान केन्द्र में हस्पताल क़ायम हो जाने से अवश्य ही उसके गौरव की वृद्धि होगी। मेरी समझ में मज़दूरों की बस्ती में एक नया कॉङ्ग्रेस-भवन बनाने की जो योजना उपस्थित है, उसे यदि हस्पताल का स्वरूप प्रदान कर दिया जाय तो अच्छा हो। जनता अब तक की तरह से ही बराबर कॉङ्ग्रेस हस्पताल को अपनी सहायता पहुँचाती रहेगी। इस मामले में बम्बई प्रान्तीय कॉङ्ग्रेस कमिटी को विचार करना आवश्यक है। मुझे एक बात का प्रस्ताव और करना है, वह यह कि स्थायी रूप से कॉङ्ग्रेस फ़्री हस्पताल के स्थापित हो जाने पर उसमें कुछ आयुर्वेदिक प्रणाली की चिकित्सा का भी स्थान होना चाहिए।

* * *

बम्बई के कॉङ्ग्रेस फ़्री अस्पताल के उत्साही डॉक्टरों, नर्सों और वालण्टियरों का ग्रुप, जिन्होंने सत्याग्रह-संग्राम में देश की अपरिमित सेवा की थी।

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह

[श्री० जितेन्द्रनाथ सन्याल]

पहला परिच्छेद

वंश-परिचय और बचपन

सरदार भगतसिंह ने लायलपुर ज़िले के एक प्रसिद्ध सिक्ख वंश में जन्म ग्रहण किया था। इनके पूर्वज महाराज रणजीतसिंह के समय में 'खालसा सरदार' के नाम से प्रसिद्ध थे। पश्चिम में ख़ूँख़ार पठानों और पूर्व में शक्तिशाली अङ्गरेज़ों के विरुद्ध, सिक्ख-साम्राज्य फैलाने में, इन लोगों ने सिक्ख शासकों को यथेष्ट सहायता पहुँचाई थी। उनके लिए अपना ख़ून बहा कर इस परिवार ने पुरस्कार-स्वरूप काफ़ी जायदाद भी प्राप्त की थी।

भगतसिंह के पितामह सरदार अर्जुनसिंह पहले एक बड़े ज़मींदार थे। आपकी अवस्था यद्यपि इस समय ८० वर्ष से अधिक है, तथापि आप अभी हट्टे-कट्टे हैं। लाहौर षड्यन्त्र केस में आप बड़े मनोयोग से भाग लिया करते थे। राष्ट्रीयता का भाव आप में कूट-कूट कर भरा है। सरदार बहादुरसिंह और दिलबाग़सिंह आदि इनके भाई-बन्धु सरकार की सेवा करने के कारण धनवान हो गए हैं और इस समय उच्च श्रेणी के रईसों में गिने जाते हैं। परन्तु सरदार अर्जुनसिंह ने एक दूसरे ही पथ का अनुसरण किया, जिससे मनुष्य न तो धनवान ही बन सकता है और न नाम ही कमा सकता है। सरदार भगतसिंह की दादी श्रीमती जयकौर, हिन्दू-परिवार की एक आदर्श महिला हैं। आप ही ने अपने पुत्रों और पौत्रों का पालन-पोषण किया है। आप एक वीर महिला हैं। अब भी आप प्रसिद्ध देशभक्त सूफ़ी अम्बाप्रसाद के विषय में अपने उद्गार प्रकट किया करती हैं। सूफ़ी अम्बाप्रसाद बहुधा इन लोगों से मिलने आया करते थे। एक बार, जब सूफ़ी साहब सरदार अर्जुनसिंह के यहाँ आए हुए थे, पुलिस उन्हें गिरफ़्तार करने के लिए आ धमकी, किन्तु इस वीर महिला ने बड़ी बुद्धिमानी से उन्हें बचा लिया।

सरदार अर्जुनसिंह के तीन पुत्र थे—सरदार किशनसिंह, सरदार अजीतसिंह और सरदार स्वर्णसिंह। ये तीनों भाई अपने सच्चे देश-प्रेम के लिए सारे पञ्जाब में प्रसिद्ध हैं। क़ैद, निर्वासन तथा दरिद्रता के द्वारा इनकी देशभक्ति की कड़ी परीक्षा हो चुकी है।

कहा जाता है कि सरदार भगतसिंह के चचा सरदार अजीतसिंह ने ही लाला लाजपतराय को राजनैतिक क्षेत्र की ओर आकर्षित किया था। सरदार अजीतसिंह अच्छे धनवान थे, किन्तु राजनैतिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए पञ्जाब को सङ्गठित करने के उद्देश्य से उन्होंने अपने गार्हस्थ्य जीवन के सुखों पर लात मार दिया। इसी समय, अर्थात् १९०४-५ के लगभग, दैवयोग से बङ्ग-भङ्ग हुआ। सारे बङ्गाल ने लॉर्ड कर्ज़न के इस कार्य का ज़ोरों से विरोध किया। बङ्गाल के इस आन्दोलन से सुदूरस्थ पञ्जाब भी प्रभावित हो उठा। वहाँ भी लाला लाजपतराय, सरदार अजीतसिंह और इनके घनिष्ट मित्र सूफ़ी अम्बाप्रसाद, अपने ओजस्वी भाषणों से देश में उत्तेजना फैलाने लगे। इस आन्दोलन में सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह तथा उनके चचा सरदार स्वर्णसिंह ने भी उचित भाग लिया। सरदार किशनसिंह ने यद्यपि सुवक्ता होने की ख्याति नहीं प्राप्त की है, किन्तु देश में जागृति फैलाने के लिए आपने ठोस कार्य बहुत किए हैं। सरदार भगतसिंह के पिता और चचा लोग, राष्ट्रीय फ़ण्डों में उदारतापूर्वक चन्दे दिया करते थे। सरदार अर्जुनसिंह इस सम्बन्ध में अपनी प्रसन्नता प्रकट किया करते थे।

आधुनिक भारत के इतिहास में, पहले पहल १९०७ में, १८१८ का तीसरा रेगुलेशन काम में लाया गया। उस समय से इस रेगुलेशन ने ब्रिटिश सरकार का बहुत उपकार किया है। बङ्गाल और पञ्जाब दोनों ही प्रान्तों में इस रेगुलेशन का भरपूर प्रयोग किया गया है। लाला लाजपतराय और सरदार अजीतसिंह को भी इस क़ानून की चपेट में आने का सम्मान प्राप्त हुआ। सरदार अजीतसिंह को, बिना उनके मामले की जाँच किए ही, क़ैद की सज़ा दे दी गई। आप प्रायः एक वर्ष तक बर्मा में नज़रबन्द रक्खे गए। इसके बाद छूट कर पञ्जाब आ गए। इसी समय, सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह और उनके चचा सरदार स्वर्णसिंह राजद्रोहात्मक व्याख्यानों के लिए क़ैद किए गए। इस प्रकार ये लोग इस क्षेत्र में मार्ग-प्रदर्शक बने। सरदार स्वर्णसिंह की मृत्यु जेल ही में हो गई। उस समय उनकी अवस्था २८ वर्ष से भी कम थी। इसी समय, १९०७ के अक्टूबर में, शनिवार के प्रातःकाल सरदार किशनसिंह के दूसरे पुत्र सरदार भगतसिंह का जन्म हुआ। क्या यह केवल संयोग था, अथवा लीलामय ईश्वर की कोई विचित्र लीला थी? सरदार भगतसिंह के बचपन के सम्बन्ध में अधिक बातें हमें मालूम नहीं हैं; किन्तु यह प्रसिद्ध है कि पाठशाला की तङ्ग कोठरियों की अपेक्षा, विस्तृत मैदान वे अधिक पसन्द किया करते थे। वे अपने बड़े भाई सरदार जगतसिंह के साथ बाँगा नामक स्थान के एक प्राइमरी स्कूल में भर्ती किए गए। यह स्थान उनकी जन्मभूमि लायलपुर ज़िले में ही है। ११ वर्ष की अवस्था में ही जगतसिंह की मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु से बालक भगतसिंह के कोमल हृदय को बड़ा धक्का लगा। इसके बाद सरदार किशनसिंह नवानकोट चले आए। नवानकोट लाहौर के समीप है। यहाँ उनकी कुछ ज़मीन-जायदाद है। इस समय सरदार भगतसिंह को किसी हाई-स्कूल में भर्ती कराने की आवश्यकता थी। सिक्खों के लिए उस समय ख़ालसा हाईस्कूल में पढ़ना एक नियम सा हो गया था, किन्तु उस स्कूल के अधिकारियों का झुकाव राजभक्ति की ओर अधिक होने के कारण, सरदार किशनसिंह को वह पसन्द न था। इसलिए सरदार भगतसिंह लाहौर के दयानन्द एङ्ग्लो वैदिक स्कूल में भर्ती किए गए। यह घटना अति साधारण जान पड़ती है, किन्तु इससे यह स्पष्ट है कि एक धर्मनिष्ठ सिक्ख होते हुए भी सरदार किशनसिंह ने केवल एक ही बात का विचार कर, अपने पुत्र को सिक्ख-स्कूल में न भेज कर आर्यसमाजी स्कूल में ही भेजना उचित समझा। इस स्कूल से सरदार भगतसिंह ने मैट्रिकुलेशन की परीक्षा पास की। इसके बाद आप नेशनल कॉलेज में पढ़ने लगे; जहाँ आजकल ब्राडला हॉल है। ९वीं श्रेणी में पढ़ते समय, आप कानपुर कॉङ्ग्रेस में गए थे। कॉलेज में सुखदेव और यशपाल से आपकी अन्तरङ्ग घनिष्ठता हो गई थी।

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह के पितामह
सरदार अर्जुनसिंह जी

इसी समय से सरदार भगतसिंह के हृदय में देशभक्ति के भाव उठने लगे। आपकी अवस्था अभी पूरी चौदह वर्ष की भी नहीं हुई थी कि आपने बड़े उत्साह से पञ्जाब की क्रान्तिकारी संस्थाओं में भाग लेना शुरू किया। १९२१ में असहयोग आन्दोलन की असफलता के पश्चात्, अनेक नवयुवक महात्मा गाँधी के बताए हुए मार्ग को छोड़ कर अपने ध्येय की प्राप्ति के लिए दूसरा मार्ग ढूँढने लगे। इसी समय पञ्जाब में "बब्बर अकाली" नामक एक दल उठ खड़ा हुआ था। इस दल के लोग देश की स्वाधीनता के लिए हिंसात्मक उपायों का प्रचार करते थे। जिस मार्ग का उन्होंने अनुसरण किया था, सम्भव है, बहुत लोगों को वह पसन्द न आए, किन्तु उनमें कुछ ऐसे लोग थे, जो सच्चे त्यागी कहे जा सकते हैं। १९१४ और १९१५ के लाहौर षड्यन्त्रों में सिक्खों ने जो अपूर्व आत्म-बलिदान किया था, उसका प्रभाव भी उस समय के युवकों पर कम नहीं पड़ा। सरदार भगतसिंह के लेखों से पता चलता है कि उन पर भी सिक्खों के उस महान त्याग का पूरा प्रभाव पड़ा था।

मुफ़्त ! मुफ़्त !! मुफ़्त !!

जो कवच २) में मिलता था, आज वह सिर्फ़ १५ दिन के वास्ते मुफ़्त भेजा जाता है। यह कवच संसार भर के जादू, तन्त्र-मन्त्र, ज्योतिष चमत्कारों से परिपूर्ण है, इसके धारण करने से हर तरह के काम सिद्ध होते हैं। जैसे रोजग़ार में लाभ, मुक़दमे में जीत, सन्तान-लाभ, हर तरह के सङ्कटों से छुटकारा, इम्तिहान में पास होना, इच्छानुसार नौकरी मिलना, जिसको चाहे वस कर लेना, हर प्रकार के रोगों से छुटकारा पाना, देश-देशान्तरों का हाल क्षण भर में जान लेना, भूत-प्रेतों को बस में कर लेना, स्वप्न-दोष का न होना, मरे हुओं से बातचीत करना, राज-सम्मान होना, कहाँ तक गिनाएँ, बस जिस काम में हाथ डालिएगा, फ़तह ही फ़तह है। १५ दिन तक फ़्री, बाद १५ दिन के १ कवच का मूल्य २), तीन का ५॥) डाक-महसूल ।=) ; ध्यान रहे मरे हुओं की ९ पुश्त तक का हाल बतावेगा, दूसरे के ज़िम्मेदार हम नहीं। अगर कोई झूठा साबित करे तो १५) इनाम। सन्तान चाहने वाले स्त्री और पुरुष दोनों ही कवच मँगावें।

पता—एस० कुटी हाटखोला (कलकत्ता)

रजिस्टर्ड

शान्तिधारा

महात्मा का प्रसाद नीचे लिखे रोगों में रामबाण है, जैसे हैज़ा, प्लेग, दस्त, उलटी, पेचिश, फ़सली बुख़ार, मलेरिया, निमोनिया, फोड़ा-फुन्सी, हड्डी के जोड़ों का दर्द, कान व पेट का दर्द, दमा, खाँसी, सर्दी, बिच्छू-साँप और-और ज़हरीले डङ्कों का काटना, कुछ दिन नियमानुसार लेप करने से श्वेत-कुष्ठ जड़ से मिट जाता है। हर एक घर में सदा रखने की चीज़ है। मूल्य छोटी शीशी ॥), बड़ी १), एक बार ६ शीशी मँगाने से डाक-ख़र्च माफ़।

शान्तिधारा औषधालय

८२ कोलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता

असल रुद्राक्ष माला

=) आना का टिकट भेज कर १० दाना नमूना तथा रुद्राक्ष माहात्म्य मुफ़्त मँगा देखिए।

रामदास एण्ड को०,

३ चोरबगान स्ट्रीट, कलकत्ता

लूटो ! लूटो !! ख़ूब लूटो !!!

हमारी मशहूर दाद की दवा २४ घण्टे में दाद को साफ़ कर देती है। १ दर्जन का दाम ३।), दो दर्जन एक साथ लेने से ३ सच्ची घड़ियाँ ठीक समय बताने वाली गारण्टी सहित, साथ में पैर के नाप का जूता भी मुफ़्त मिलेगा। डाक-महसूल १ दर्जन ॥), दो दर्जन १)

पता—फ्रेण्ड्स ऑफ़ इण्डिया, हाटखोला (कलकत्ता)

सच्चा और असली

"नेत्र-बन्धु सुर्मा"

रतौंधी, तारोकी, धुन्ध, जाला, माड़ा, लाली, मोतियाबिन्द, ढलका, नाख़ूना और खुजली अर्थात् नेत्र सम्बन्धी तमाम रोगों को जड़ से आराम कर देने के लिए हमारा यह नेत्र-बन्धु सुर्मा अपूर्व बल और गुण सम्पन्न है। अगर आँखों में किसी क़िस्म की शिकायत न भी हो तो भी इसे बराबर लगाने से नेत्र की ज्योति तेज बनी रहती है, आँखों में होने वाली तमाम बीमारियों से बचाए रखता है। बच्चे, जवान, मर्द और औरत सबको समान रूप से हितकारी है। दाम प्रति तोला १) रुपया, डा० म० अलग। एक तोला से कम सुर्मा नहीं मिलेगा।

पता—एस० ए० बी० बक्सी एण्ड कं०

कोठी नं० ७० कोलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता

दी कलकत्ता होमियो फ़ारमेसी की

असली और ताज़ी दवाइयाँ =)॥ प्रति ड्राम क्रमशः २४, ३०, ४८, ६०, और १०४ शीशियों वाले फ़ैमिली बक्स की क़ीमत मय एक ड्रापर और हिन्दी में एक चिकित्सा-विधान के ३), ३॥), ५॥), ६॥) और १०॥=) गोलियाँ, दूध की मिठाई, व्यूब फ़ायल्स, कार्क, कार्डबोर्ड-केस वग़ैरह सस्ते दाम पर मिलते हैं। उल्लिखित फ़ैमिली बॉक्स यदि अङ्गरेज़ी में चिकित्सा-विधान सहित लेना हो तो १) अधिक लगेगा।

पता—एस० आर० बिस्वास एण्ड सन्स, ७५—१ कोलूटोला स्ट्रीट, कलकत्ता

डॉक्टर बनिए

घर बैठे डॉक्टरी पास करना हो तो कॉलेज की नियमावली मुफ़्त मँगाइए ! पता—

इण्टर नेशनल कॉलेज, (गवर्नमेण्ट रजिस्टर्ड)

३१ बाँसतल्ला गली, कलकत्ता

आगे के लिए अभी से चेत जाइए

(सम्वत् १९८८ का हाल)

यदि आप यह जानना चाहें कि हमारा यह साल कैसा रहेगा—कौन वस्तु ख़रीद कर बेचने में लाभ होगा, नौकरी कब लगेगी, तरक़्क़ी, तबादला कब होगा, विवाह कब होगा, सन्तान क्या होगी, अचानक धन-प्राप्ति, मुक़दमे की हार-जीत, इम्तिहान पास, रोग-कष्ट, मृत्यु इत्यादि—तो आज ही एक पोस्ट कार्ड पर किसी फूल का नाम व अपना नाम और उमर लिख भेजिएगा। हम साल भर में होने वाले माहवारी हालात १।) रु० में भेज देंगे। भृगु-संहिता से तमाम उमर का हाल २॥) रु० में। जन्म-कुण्डली की नक़ल भेजें या दाहिने हाथ का पञ्जा छाप कर भेजें। विधि न मिली तो रुपया वापस करेंगे।

पता—मैनेजर ज्योतिषशास्त्र कार्यालय

(४) पो० बहरोड, राज्य अलवर

श्रीमहालक्ष्मी

और

वसन्त-विहार

के जो सर्वप्रिय सुन्दर तिरङ्गे चित्र 'चाँद' में प्रकाशित हो चुके हैं, ग्राहकों के अनुरोध से इन्हें बड़े साइज़ में भी छपाया गया है। इन चित्रों का साइज़—

१५ × २०

है। ८० पाउण्ड के बढ़िया काग़ज़ पर छपे हैं। मूल्य फ़ी कॉपी ॥); डाक-व्यय १ से ६ कॉपी तक ।); थोक व्यापारियों के लिए ख़ास रियायत की जायगी। चित्र इतने सुन्दर छपे हैं कि फ़्रेम लगा, जिस कमरे में लगा दीजिए, उसी की शोभा बढ़ जायगी।

'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद

ग्रैण्ड क्लियरिङ्ग सेल !!

दोनों हाथों लूटिए !!!

हमारे निहायत ख़ुशबूदार ओटो मोहिनी एसेन्स (मूल्य प्रत्येक शीशी ८ आना) की ६ शीशियाँ ख़रीदने वाले को निम्न-लिखित चीज़ें उपहार में दी जायँगी १—नं० ३६ एच० की सुन्दर और मज़बूत घड़ी; १ फ़ैन्सी पॉकेट वाच (गारण्टी ३ वर्ष); १ ट्वाय रिस्टवाच (लेदर बैण्ड के साथ) १ रूमाल; १ जोड़ी जूता (क्रीन का बना हुआ), १ मनीबेग; १ फ़ाउण्टेन पेन; १ ड्रापर; १ चश्मा; १ सेट कुर्ते की बटन; ८ अँगूठियाँ। दाम इन उपहार की चीज़ों के साथ ६ शीशियों का केवल ३) पोस्टेज १० आना।

पता—एम० एन० वाच को०,

२०, जयमित्र स्ट्रीट, हथखोला, कलकत्ता

सरदार भगतसिंह के पिता सरदार किशनसिंह १९१४ और १९१५ की क्रान्तिकारी संस्थाओं को बराबर अपने कार्यों से सहायता पहुँचाते रहे थे। सर माइकेल ओडायर ने "India as I knew it" नामक अपनी पुस्तक में इस बात का उल्लेख किया है। बल्कि उसमें तो यहाँ तक कहा गया है कि सरदार किशनसिंह ने क्रान्तिकारी नेताओं को हज़ारों रुपए की सहायता पहुँचाई थी। इन्हीं अपराधों के कारण, डिफ़ेन्स ऑफ़ इण्डिया एक्ट (Defence of India Act) के अनुसार आप नज़रबन्द कर दिए गए। कहावत है, कि 'जैसा पिता वैसा पुत्र'। इस कारण इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं कि सरदार भगतसिंह भी बब्बर अकालियों के हिंसात्मक क्रान्ति के पथ की ओर अग्रसर हुए।

गुप्त संस्थाओं का पुलिस की नज़रों से बचना कठिन है। इस दल के सम्बन्ध में भी पुलिस को पता मिल गया और इसके अधिकांश सदस्य गिरफ़्तार कर लिए गए। इस कारण भगतसिंह ने पञ्जाब छोड़ दिया और वे कानपुर चले आए। ऐसा उन्होंने दो कारणों से किया; एक तो वे पुलिस की दृष्टि अपने ऊपर नहीं पड़ने देना चाहते थे और दूसरे, अपने लिए एक दूसरे कार्य-क्षेत्र की खोज में थे। कानपुर में स्वर्गीय गणेशशङ्कर विद्यार्थी से उनकी जान-पहचान होगई। दोनों की यह मित्रता आजीवन बनी रही। सरदार भगतसिंह के जीवन में यह समय बड़े महत्व का था। क्योंकि इसी समय से आप भारत की एक सुसङ्गठित क्रान्तिकारी संस्था का एक मुख्य अङ्ग बन गए। इसी समय से, आपका जीवन भारतीय क्रान्ति के इतिहास का एक अध्याय बन गया। अब हम उस क्रान्तिकारी संस्था के सम्बन्ध में कुछ लिखेंगे, जिसके लिए भगतसिंह ने अपने को अर्पण कर दिया था।

* * *

दूसरा परिच्छेद

'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन'

यहाँ पर हमारा अभिप्राय, भारत के विप्लव आन्दोलन का पूरा इतिहास देने का नहीं है। हम यहाँ उसका परिचय-मात्र देना चाहते हैं।

१९१४ तक भारत के अनेक प्रान्तों—विशेषतः बङ्गाल में अनेक गुप्त संस्थाएँ फैली हुई थीं। यूरोपीय महासमर के आरम्भ होने पर, अनेक विप्लवी संस्थाओं को भारत में क्रान्ति का झण्डा ऊँचा करने का अच्छा सुयोग मिला। इसी उद्देश्य से श्री० रासबिहारी बोस, श्री० यतीन्द्रनाथ मुखर्जी, श्री० शचीन्द्रनाथ सन्याल, श्री० वी०जी० पिङ्गले, सरदार कर्तारसिंह, ठाकुर पृथ्वीसिंह और बाबा सोहनसिंह आदि विप्लवी नेताओं ने कुछ सिक्ख और राजपूत रेजिमेण्टों को अपनी ओर मिला कर भारत में क्रान्ति का डङ्का बजाने का षड्यन्त्र रचा। किन्तु ईश्वर की इच्छा कुछ और ही थी। विश्वासघात के कारण यह षड्यन्त्र सफल नहीं हो सका। केवल सिङ्गापुर में एक विद्रोह उठ खड़ा हुआ, किन्तु उसे भी जापानियों ने दबा दिया। अधिकारियों को ज्योंही क्रान्तिकारियों के षड्यन्त्र का पता लगा, त्योंही उन्होंने उन सेनाओं के—जिन पर क्रान्तिकारियों के साथ मिल जाने का सन्देह किया जाता था—हथियार छीन लिए और उन पर यूरोपियन सेना का कड़ा पहरा बिठा दिया। इसके बाद उस सेना के सिपाही फ़्रान्स के उन स्थानों में भेज दिए गए, जहाँ युद्ध ने भयङ्कर रूप धारण कर लिया था। साथ ही साथ डिफ़ेन्स ऑफ़ इण्डिया एक्ट की घोषणा कर दी गई और पञ्जाब, युक्त-प्रान्त तथा बङ्गाल में ७ हज़ार से अधिक मनुष्य गिरफ़्तार कर लिए गए। १९१६ तक तो क्रान्तिकारी संस्थाओं का केवल अस्थि-पञ्जर अवशेष रह गया।

इसी समय भारत के राजनैतिक-क्षेत्र में महात्मा गाँधी के रूप में एक नई शक्ति का आविर्भाव हुआ। उनके आदर्श और त्याग ने युवकों पर बहुत प्रभाव डाला और अनेकों ने असहयोग आन्दोलन में उनका साथ दिया। किन्तु "बारडोली की पराजय" (जैसा कि क्रान्तिकारी कहा करते हैं) और उसके बाद असहयोग आन्दोलन की असफलता के कारण विप्लव आन्दोलन ने फिर ज़ोर पकड़ना शुरू किया। १९२४ तक फिर कई गुप्त संस्थाएँ स्थापित हो गईं। बङ्गाल के पुराने विप्लववादियों ने फिर अपना सङ्गठन करना शुरू कर दिया। किन्तु १९२५ के बङ्गाल ऑर्डिनेन्स ने उन पर कठोर प्रहार किया। युक्त-प्रान्त और पञ्जाब में श्री० शचीन्द्रनाथ सन्याल, श्री० योगेशचन्द्र चटर्जी, पं० रामप्रसाद बिस्मिल आदि विप्लववादियों द्वारा सङ्गठित भिन्न-भिन्न संस्थाओं ने मिल कर एक दल बना लिया। इसी समय इलाहाबाद में इन लोगों की एक मीटिङ्ग हुई, जिसमें संस्था के लिए एक शासन-विधान का निर्माण किया गया और उसका नाम "हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन" रक्खा गया। पञ्जाब छोड़ कर कानपुर आने के बाद सरदार भगतसिंह इसी संस्था में सम्मिलित हुए। दल में उनका नाम 'बलवन्त' रक्खा गया। इसी नाम से वह बहुधा पत्रों में लेख भी लिखा करते थे। दल के प्रधान सङ्गठनकर्ता थे, श्री० जगदीशचन्द्र चटर्जी और दल में मि० राय के नाम से ये पुकारे जाते थे। सरदार भगतसिंह इन्हीं की देख-रेख में काम करने लगे।

१९२६ में सुप्रसिद्ध काकोरी-ट्रेन डकैती हुई। इस डकैती में, हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के सदस्यों ने लखनऊ के समीप काकोरी नामक स्थान में चलती ट्रेन को रोक कर सरकारी ख़ज़ाना लूट लिया था। पुलिस की अनवरत जाँच-पड़ताल से क्रान्तिकारी संस्था के विस्तार का पता चला, और पीछे काकोरी षड्यन्त्र केस में भी अनेक गुप्त बातें प्रकट हुईं। इसी समय के लगभग सरदार भगतसिंह लाहौर लौट गए।

स्वर्गीय सरदार भगतसिंह के विद्यार्थी-जीवन का चित्र

* * *

तीसरा परिच्छेद

अध्ययन

दिल्ली के एसेम्बली बम केस में अदालत के समक्ष अपने स्मरणीय वक्तव्य में सरदार भगतसिंह ने कहा था कि "हम नम्रतापूर्वक इतिहास के गम्भीर विद्यार्थी होने

का दावा कर सकते हैं।" इसी वक्तव्य में आपने अपने विस्तृत अध्ययन और ज्ञान का भी परिचय दिया था। १९२५-२६ में आपने अपने ज्ञान की इतनी वृद्धि कर ली, कि अपने आगामी जीवन में आपको बराबर उससे सहायता मिलती रही। लाला लाजपतराय द्वारा खोले हुए नेशनल कॉलेज में आप भर्ती हो गए और बड़े मनोयोग से इतिहास, राजनीति और अर्थशास्त्र का अध्ययन करने लगे। यहाँ श्री० सुखदेव और श्री० भगवतीचरण, ये दो इनके दृढ़ अनुयायी थे। इन तीनों ने कुछ औरों के साथ मिलकर रूसी क्रान्तिकारी चायकोव्स्की और क्रॉप्टकिन की तरह एक गुट बना लिया था, जहाँ केवल अध्ययन सम्बन्धी चर्चा हुआ करती थी। 'सर्वेण्ट्स ऑफ़ दी पिपुल सोसायटी' द्वारकादास लाइब्रेरी में इन उत्साही युवकों के लिए मनचाही पुस्तकें मँगा कर उनके अध्ययन में उदारतापूर्वक सहायता पहुँचाया करती थी।

सरदार भगतसिंह बड़ी उत्सुकता और लगन के साथ पुस्तकों का अध्ययन करते थे। इस सम्बन्ध में नेशनल कॉलेज के प्रोफ़ेसर छबीलदास और द्वारकादास लाइब्रेरी के लाइब्रेरियन श्री० राजाराम जैसे व्यक्तियों के प्रमाण मौजूद हैं। नेशनल कॉलेज की लाइब्रेरी में भी सरदार भगतसिंह की देख-रेख में पुस्तकों का अपूर्व संग्रह हो चला। हमने सत्साहित्य का ऐसा अपूर्व संग्रह और कहीं नहीं देखा है। इटली, रूस और आयलैंण्ड की क्रान्ति सम्बन्धी नवप्रकाशित पुस्तकों का तथा रूसी-विप्लव आन्दोलन के प्राचीन इतिहास सम्बन्धी अनेक अमूल्य पुस्तकों का भी संग्रह किया गया था। किन्तु नेशनल कॉलेज की बार-बार तलाशी ली जाने के कारण, पुलिस अनेक पुस्तकें उठा ले गई, और अब केवल एक छोटा सा संग्रह बचा हुआ है। किन्तु जो कुछ बचा हुआ है, उसी से सरदार भगतसिंह की प्रतिभा और परिश्रम का पता चलता है।

सरदार भगतसिंह राजनीति के बड़े उत्साही और अध्ययनशील विद्यार्थी थे। किन्तु वे केवल किताबों में ही नहीं डूबे रहते थे, वरन् भिन्न-भिन्न स्थानों का भ्रमण किया करते, क्रान्तिकारी दलों की सभाओं में जाया करते, युक्त-प्रान्त तथा बङ्गाल की गुप्त समितियों के सदस्यों से मिला करते और विप्लव आन्दोलन की प्रगति को विशेष सावधानी से लक्ष्य किया करते थे। जिस समय काकोरी का षड्यन्त्र केस चल रहा था, उस समय वे कई बार लखनऊ आए और गुप्त रूप से उन्होंने ज़िला-जेल में षड्यन्त्र केस के विचाराधीन क़ैदियों से पत्र-व्यवहार किया। उन क़ैदियों ने सरदार भगतसिंह को इस बात की सलाह दी कि उनके जेल से छुड़ाने का उपाय किया जाना चाहिए। सरदार भगतसिंह उन लोगों के बचाने का उपाय करने लगे। इस काम में वे दो बार गिरफ़्तार होते-होते बचे। जब उन्हें सफलता नहीं मिली, तो वे कानपुर चले आए और वहीं कुछ दिनों तक रहे।

इसी समय १९२६ के आरम्भ में जब वे कानपुर में ठहरे हुए थे, उन्होंने अपने को एक प्रतिभाशाली सङ्गठन-कर्त्ता होने का परिचय दिया। काकोरी षड्यन्त्र केस के फलस्वरूप हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन भङ्ग हो गई थी। सभी नेता जेल में थे, और थोड़े से अनुभवहीन व्यक्ति जो बच गए थे, कुछ करने में असमर्थ थे। सरदार भगतसिंह कानपुर के विजयकुमार सिंह तथा लाहौर के श्री० सुखदेव के साथ, युक्त-प्रान्त और पञ्जाब में क्रान्तिकारी-दल को फिर से सङ्गठित करने लगे।

* * *

चौथा परिच्छेद

क्रान्तिकारी दल में प्रारम्भिक कार्य

सरदार भगतसिंह के जीवन में, १९२६ से १९२८ तक का समय अत्यन्त विक्षोभपूर्ण है। काकोरी षड्यन्त्र केस में चार अभियुक्तों को प्राणदण्ड तथा अन्य अभियुक्तों को दीर्घ कारावास का दण्ड दिया गया था। युवक भगतसिंह का हृदय अपने प्यारे मित्रों की मृत्यु का बदला लेने के लिए उत्तेजित हो उठा। प्रतिहिंसा की प्रबल उत्तेजना से प्रेरित हो, १९२७ में उन्होंने अपने दिल की जलन मिटाने की चेष्टा की, किन्तु सफलता नहीं प्राप्त हुई।

क्रान्ति के मैदान में सुचारु रूप से कार्य करने के लिए दल के कार्यक्षम युवकों की एक सभा कानपुर में की गई, जिसमें दल को सुसङ्गठित और शक्तिशाली बनाने का निश्चय किया गया। सरदार भगतसिंह और विजयकुमार सिंह ने युक्त-प्रान्त और बिहार में भ्रमण कर, युवकों के सङ्गठन का भार अपने ऊपर लिया।

इस प्रस्ताव के अनुसार, कार्य का अभी श्रीगणेश भी नहीं हुआ था कि एक विचित्र घटना ने सरदार भगतसिंह के कार्य में बाधा उपस्थित कर दी।

१९२६ का साल था और अक्टूबर का महीना। लाहौर में दशहरा का मेला शुरू हो गया था। एक दिन की बात है कि रामलीला के एक मेले में किसी ने एक बम फेंक दिया। पञ्जाब की पुलिस ने विचित्र तर्कों द्वारा यह सिद्ध किया कि यह काम विप्लववादियों का ही है। अब वह किसी ऐसे विप्लववादी को ढूँढ़ने लगी, जो उक्त घटना के समय लाहौर में मौजूद रहा हो।

इस मामले में पुलिस का मतलब सरदार भगतसिंह से सिद्ध हो जाता था। अतएव वे गिरफ़्तार कर बोर्स्टल जेल में बन्द कर दिए गए। कई दिनों तक एकान्त-कोठरी में बन्द रक्खे जाने के बाद भी न तो वे मैजिस्ट्रेट के सामने पेश किए गए और न उन्हें यही बतलाया गया कि वे किस अभियोग में गिरफ़्तार किए गए हैं। एक बार उन्हें इस जेल को अच्छी तरह देखने-भालने का भी अवसर मिल गया। यह वही जेल था, जहाँ २½ वर्ष बाद उन्होंने तथा उनके मित्रों ने, राजनैतिक क़ैदियों के साथ दुर्व्यवहार किए जाने के कारण कठिन अनशन-व्रत धारण किया था।

अन्त में उन्हें बताया गया कि उन पर मेले में निर्दोष व्यक्तियों की हत्या करने का अभियोग लगाया गया है। यह बात जान कर उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। वे तो लड़कपन ही से यह बात अच्छी तरह जानते थे कि क्रान्ति सम्बन्धी षड्यन्त्र में गिरफ़्तार किया जाना कोई बड़ी बात नहीं है, किन्तु यह ख़याल उन्होंने स्वप्न में भी नहीं किया था कि उन पर निरपराध स्त्री-पुरुषों की हत्या का अभियोग लगाया जायगा!

यह मामला बहुत दिनों तक चलता रहा। मैजिस्ट्रेट ने उन्हें ज़मानत पर छोड़ने से पहले ६०,०००) का मुचलका माँगा। इतने रुपयों का प्रबन्ध करने में सरदार भगतसिंह के परिवार को कोई विशेष कठिनाई नहीं उठानी पड़ी। वे ज़मानत पर छोड़ दिए गए। बहुत दिनों तक मामला चलने के बाद हाईकोर्ट ने मैजिस्ट्रेट की मुचलका सम्बन्धी आज्ञा को रद्द कर दिया। इस मामले का सारा क़िस्सा पुलिस की चालबाज़ी का भण्डाफोड़ है। इससे पता चलता है कि उसने किस तरह सरदार भगतसिंह को एक ऐसे मामले में हैरान किया, जिससे उनका अणुमात्र भी सम्बन्ध नहीं था।

जिन दिनों वे मुचलके पर छूटे थे, उन दिनों वे दल के कार्यों में भाग नहीं ले सके। इस समय का उपयोग उन्होंने सार्वजनिक कार्यों में किया। इस क्षेत्र में भी वे अग्रगण्य कार्यकर्ताओं में गिने जाने लगे। इस समय उन्होंने नौजवान भारत-सभा के सङ्गठन में प्रमुख भाग लिया; और काकोरी षड्यन्त्र केस में फाँसी की सज़ा पाने वाले क्रान्तिकारियों की स्मृति में सार्वजनिक प्रदर्शन कराने में भी उनका भारी हाथ था। नौजवान भारत-सभा पञ्जाब के युवकों की प्रमुख राष्ट्रीय संस्था हो गई और कॉङ्ग्रेस के कार्यों पर भी उसका काफ़ी प्रभाव पड़ा। उक्त सार्वजनिक प्रदर्शन, काकोरी षड्यन्त्र केस के अभियुक्तों की फाँसी के एक साल बाद किया गया था, और वह 'काकोरी-दिवस' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

जिस समय सरदार भगतसिंह 'काकोरी-दिवस' का प्रबन्ध कर रहे थे, उस समय उनके दिल में यह विचार उठा कि १९१५-१६ के लाहौर षड्यन्त्र में जिन युवकों ने आत्म-बलिदान किया है, इस अवसर पर व्याख्यान देकर उनके जीवन पर भी प्रकाश डाला जाय। इस कार्य के लिए उन्होंने अनेक अज्ञात स्थानों से उन युवकों के चित्र इकट्ठे किए और मैजिक-लालटेन के लिए उनके स्लाइड बनवाए। इन लालटेन-स्लाइडों को साथ लेकर आपका विचार उत्तरी भारत में भ्रमण कर स्थान-स्थान पर व्याख्यान देने का था। यद्यपि वे सारे उत्तरी भारत में, अपने इस प्रस्ताव को कार्यरूप में परिणत नहीं कर सके, तो भी लाहौर में उन्हें काफ़ी सफलता मिली। पहली ही बार जब ब्राडला हॉल में लालटेन-लेक्चर दिया गया, तो हॉल में तिल धरने की भी जगह नहीं बची थी। लोगों ने बड़े ध्यान से व्याख्यान सुना। यहाँ पर यह बता देना आवश्यक है कि सरदार भगतसिंह, मुचलके के कारण स्वयं व्याख्यान देने में असमर्थ थे। किन्तु वे अपने सहायक श्री० भगवतीचरण को सभी बातें समझा दिया करते और व्याख्यान के सम्बन्ध में नोट भी दे दिया करते थे। इन लालटेन-लेक्चरों का इतना अधिक प्रभाव लोगों पर पड़ा, कि पञ्जाब-सरकार को इस सम्बन्ध में निषेधाज्ञा निकालनी पड़ी। यह वे ही भगवतीचरण थे, जो २६ जनवरी १९३१ से आरम्भ होने वाले लाहौर षड्यन्त्र केस के प्रमुख व्यक्ति थे और जिनके विषय में यह कहा जाता है कि बम बनाते समय एक भयङ्कर धड़ाका होने के कारण उनकी मृत्यु हो गई। लाहौर षड्यन्त्र केस में, जिसमें सरदार भगतसिंह और श्री० बटुकेश्वर दत्त आदि अभियुक्त थे, ये फ़रार थे।

नौजवान भारत-सभा के सङ्गठन सम्बन्धी सरदार भगतसिंह के विचार अध्ययन के विषय हैं। दरिद्रता की संसार-व्यापी समस्या पर विचार कर वे इस नतीजे पर पहुँचे थे, कि भारत की पूर्ण-स्वाधीनता के लिए, केवल राजनैतिक ही नहीं, बल्कि यहाँ की जनता की आर्थिक स्वाधीनता की भी आवश्यकता है। इसलिए नौजवान भारत-सभा की कार्य-प्रणाली कम्युनिस्ट ढङ्ग की बनाई गई थी। वास्तव में इसका मुख्य उद्देश्य था, मज़दूरों और किसानों का सङ्गठन करना। इसी उद्देश्य से भारतीय युवकों का आह्वान किया गया था।

इस प्रकार हम सरदार भगतसिंह के विचारों में एक अद्भुत परिवर्तन पाते हैं। १९२६-२७ में वे त्रासवाद को क्रान्तिकारी दल के हाथों का एक प्रधान अस्त्र समझते थे। देश के अनेक प्रमुख व्यक्तियों के विरोध करने पर भी जब काकोरी षड्यन्त्र केस के अभियुक्तों को फाँसी दे दी गई, तब त्रासवाद (Terrorism) पर उनका विचार और भी दृढ़ हो गया। किन्तु जब उन्होंने भारतीय समस्याओं का गम्भीर रूप से अध्ययन किया तो आपके विचारों में भी परिवर्तन हुआ। नेशनल कॉलेज लाहौर में पढ़ते समय वे धीरे-धीरे पक्के साम्यवादी बन गए, और रूस को आदर्श की दृष्टि से देखने लगे।

(क्रमशः)

साहित्य का सपूत

[श्री० जी० पी० श्रीवास्तव, बी० ए०, एल्-एल्० बी०]

अङ्क—३ ; दृश्य—१

धनीराम का मकान

(धनीराम का बड़बड़ाते हुए, डण्डा लिए निकलना)

धनीराम—नाक में दम है। न जाने यह कम्बख़्त पागल कहाँ से आ गया है कि दो-तीन दिन से इसने आसमान सर पर उठा रक्खा है। जब देखो तब कभो अगवाड़े और कभी पिछवाड़े गला फाड़ कर न जाने क्या चिल्लाया करता है। कम्बख़्त ने रात में एक घड़ी सोना तक हराम कर दिया है। आज आवे तो बिना मारे छोड़ूँगा नहीं। दासी, ओ दासी, ज़रा एक गिलास पानी लाना!

दासी—(नेपथ्य में) लाई सरकार।

(दासी एक गिलास पानी लेकर आती है। धनीराम पानी पीता है)

धनीराम—(गिलास देता है) दो पान भी दे जाना।

दासी—अभी सरकार बाज़ार से पान लाई नहीं। मसाला पीस लूँ, तो जाऊँ।

धनीराम—अच्छा।

(दासी गिलास लेकर अन्दर जाती है और धनीराम सोचता और बड़बड़ाता हुआ टहलता है)

धनीराम—उस बेवक़ूफ़ को चिल्लाने के लिए दुनिया में कहीं और जगह नहीं है, जो अड्डा कर मेरी ही खोपड़ी पर आकर बर्राता है? और तारीफ़ यह कि बड़े राग और सुर में, गोया अपने हिसाब कोई कविता पढ़ता है। तेरी कविता की ऐसी-तैसी करूँ।

(यदुनाथ अपने असली रूप में आता है)

यदुनाथ—क्या है बाबू धनीराम? आज किस पर आप इतना बिगड़े हुए हैं?

धनीराम—क्या बताऊँ, उस ख़ब्तुलहवास ने तो घर भर को परेशान कर रक्खा है, जो उस दिन जब तुम अपने बनावटी रूप में हम लोगों को धोखा देने आए थे, तुम्हारे पीछे-पीछे यहाँ तक आया था और जिससे तुम अपना पिण्ड छुड़ाने के लिए जल्दी से मेरे मकान में घुस गए थे?

यदुनाथ—अच्छा। क्या किया उसने?

धनीराम—अजी उसी दिन से जहाँ ज़रा शाम हुई कि यहाँ आकर मेरे मकान का चक्कर लगाता है और आधी-आधी रात तक न जाने क्या गा-गाकर बका करता है।

यदुनाथ—ओहो! यह तो बड़े मज़े की ख़बर है। यही तो मैं आप से जानने आया था कि वह आदमी फिर इधर कभी दिखाई पड़ा था या नहीं।

धनीराम—बस, आज वह आख़िरी दफ़े दिखाई पड़ेगा—देखते हो यह डण्डा।

यदुनाथ—हाँ-हाँ, कहीं ऐसा ग़ज़ब भी न कीजिएगा। सारा मज़ा किरकिरा हो जाएगा।

धनीराम—भाड़ में जाए ऐसा मज़ा।

यदुनाथ—भाई वह कोई पागल नहीं, बल्कि सम्पादक है। ज़रा आजकल उसका दिमाग़ हम लोगों ने × × ×

धनीराम—तो हमसे क्या मतलब? हम कारबारी आदमी अपना लेखा-बही छोड़ कर कभी कोई चीज़ पढ़ी नहीं। हम सम्पादक-टम्पादक क्या जानें?

यदुनाथ—आपसे मतलब न हो न सही, आपकी कोठी से तो उसे मतलब है, जिसमें वह समझता है कि उसकी प्रेमिका रहती है।

धनीराम—क्या? क्या? क्या वह बदमाश × × ×

यदुनाथ—नहीं-नहीं, बिगड़ने की बात नहीं, बल्कि हँसने की है। उसे हम लोगों ने मार मार कर तिलोत्तमा नामक एक रूपवाली लड़की का आशिक़ बना दिया है और उसी लड़की का, उस दिन मैं भेष बदले हुए, बाप बना हुआ था। मैंने उस दिन ताड़ा कि वह मेरा पीछा करके मेरे मकान का पता जानना चाहता है। पार्क के सामने आपकी बड़ी सी कोठी दिखाई पड़ी। बस, झट पट उसी में घुस कर अपने असली रूप में फिर निकल गया। इसीसे वह इसे तिलोत्तमा का मकान समझ कर इसका चक्कर लगाता होगा। और तारीफ़ यह कि मैं अब तक उसे इस भ्रम में भी डाले हुए हूँ कि मैं और तिलोत्तमा दोनों ही अभी उसके सम्पादक होने में शक करते हैं।

धनीराम—उसे भ्रम में डालो या चूल्हे में झोंको। मेरे सर तुमने यह आफ़त क्यों ढकेली?

यदुनाथ—भाई हर काम में कुछ बाहरी ठाट-बाट की ज़रूरत पड़ती है। वह बिना धनी लोगों के सहयोग के पूरा नहीं उतरता। अगर इस मामले में आपकी कोठी की मदद न लेता तो तिलोत्तमा की धाक उस पर अच्छी तरह से जमाने के लिए मेरे पास ऐसी कोठी कहाँ से आती?

(साहित्यानन्द नेपथ्य में चिल्ला कर कविता पढ़ता है)

प्राणे प्राण हृदय हृदये तुम,
श्वरी बल्लभा मेरी।
नस-नस गाती गीत सदा हैं
पद्मलोचना तेरी॥

धनीराम—वह लो, आ गया। सुनो और समझो तुम्हीं, क्या कह रहा है। बस इस वक़्त से इसी तरह चिल्ला-चिल्ला कर नाक में दम करता है।

यदुनाथ—वाह! वाह! "श्वरी बल्लभा मेरी"। अजी भाई साहब, इसको आप चिल्लाहट कहते हैं, उसका आनन्द तो लीजिए। ऐसी कविताएँ ज़िन्दगी में सुनने को भला कहाँ नसीब होती हैं?

धनीराम—क्या बताऊँ। तुम न आ जाते तो इसी डण्डे से आज अच्छी तरह आनन्द लेता। (अपने घर की तरफ़ मुँह करके) अरी दासी, पान लाने तू अभी तक बाज़ार नहीं गई?

दासी—(नेपथ्य में) जाती हूँ सरकार, ज़रा हाथ धो लूँ।

धनीराम—अच्छा आओ, भीतर चल कर बैठें।

यदुनाथ—हाँ-हाँ, ज़रा मुझे भी सूरत बदलने का मौक़ा मिल जाय।

(दोनों का मकान में जाना और वैसे ही साहित्यानन्द का बाहर से आना)

साहित्यानन्द—उस दिवस जब तिलोत्तमा के पिता मेरे यहाँ पधारे थे, तो मेरी कलहप्रिया स्त्री ने मेरे सैकड़ों उहुँक—शत-शत उद्घाटन करने पर भी गृह का द्वार नहीं खोला। इसी हेतु मैं उन्हें अपने सम्पादकीय कार्य का कुछ भी परिचय नहीं दे सका। अन्यथा उन्हें अवश्य विश्वास पड़ जाता कि मैं ही सम्पादक हूँ। तब से मैं बराबर—उहुँक—क्रमशः इनके द्वार पर आकर नित नवीन स्व-रचित कविताओं द्वारा अपनी विलक्षण योग्यता की उच्च स्वर में घोषणा करता हूँ जिसमें उन पर तथा तिलोत्तमा पर मेरी साहित्यिक योग्यता का प्रभाव पड़ कर, उनका भ्रम मिटे और वे दोनों ज्ञात करें कि मैं ही असली सम्पादक—उहुँक—मूल सम्पादक हो सकता हूँ और वह पाजी संपारीनाथ, जो मेरे स्थान पर आरूढ़ होकर उन लोगों को धोखा दिए हुए है, बिल्कुल नक़ली—उहुँक—छाया, हाँ छाया सम्पादक है। परन्तु खेद! मेरे नित-नित आने पर भी उनका दर्शन नहीं होता। इससे यही बोध होता है कि अभी तक मेरी कविता उन लोगों के कर्णगोचर नहीं हुई। अच्छा, इस बार तनिक और उच्च स्वर से पाठ करता हूँ—

प्राणे प्राण हृदय हृदये तुम,
श्वरी बल्लभा मेरी।

(दासी का मकान से बाहर निकलना और साहित्यानन्द को देख कर ठिठकना)

साहित्यानन्द—(अलग) अरे! धन्य भाग! अन्त में मेरी कविता पर मुग्ध होकर स्वयं तिलोत्तमा ही निकल पड़ीं। अवश्य वही हैं। तभी तो मेरी कविता का मर्म समझ कर बावली-सी हो रही हैं। अन्य कोई हम-ऐसे उच्च कविगण की कविता पर मुग्ध होना क्या जाने? आहा!! यह मेरी कविता का प्रभाव है कि यह ऐसी उन्मादिनी हुई कि मलिन वस्त्र धारण किए ही बहिर्गत हो गईं। वाह रे हम!

दासी—(अलग) यह मुआ रास्ते में खम्भा सा अड़ा खड़ा है। मैं बाज़ार कैसे जाऊँ?

साहित्यानन्द—आहा! आप मुझे सम्बोधन कर रही हैं? क्षमा कीजिए, मैं सुन न सका। जी हाँ, मैं ही सम्पादक हूँ। तभी तो इतनी उच्चकोटि की कविता रच सका, जिसका मर्म आप तो अपने योग्यता-बल से बोध कर ही गई होंगी, तथापि उसके गुणों का बखान मेरे मुख से भी सुन कर उसकी शोभा निरखिए, ताकि मेरे विषय में तनिक भी सन्देह न रह जाए। बिना टीका-टिप्पणी के हम ऐसे उच्च कवियों की कविताओं में आनन्द भला कहाँ मिलता है?

दासी—(अलग) यह कम्बख़्त रास्ते से हटेगा या नहीं?

साहित्यानन्द—जी हाँ, इसमें शब्द-लालित्य और अलङ्कार शोभा दोनों ही है। देखिए हृदयेश्वरी और प्राण-बल्लभा के पद में प्रथम अंश कहाँ है और द्वितीय अंश कहाँ है। एक आकाश में है तो दूसरा पाताल में। सुनिए—

प्राणे प्राण हृदय हृदये तुम,
श्वरी बल्लभा मेरी।

देखा? और तारीफ़ यह—उहुँक—प्रशंसा यह है कि 'श्वरी' और 'बल्लभा' को चाहे प्राणे और प्राण से जोड़िए, चाहे हृदये और हृदय से। दोनों ही शब्द पद में हैं। यही तो इसमें शब्द-लालित्य है।

इसका प्रथम अन्वय कर लीजिए, तब वाक्य का यथार्थ रूप ज्ञात हो सकता है। वैसे नहीं। यही विशेषता तो हम-ऐसे कवि-सम्राटों के पदों में होती है। यदि हम लोग ऐसा न करें तो फिर गद्य और पद्य में भेद ही

क्या रह जाए ? अच्छा अब अलङ्कार-शोभा का भी रसास्वादन कर लीजिए।

नस-नस गाती गीत सदा है,
पद्मलोचनी तेरी।

अर्थात् जिस भाँति सारङ्गी के तार सङ्गीत उत्पन्न करते हैं, उसी भाँति पद्मलोचना तेरी नसें गान करती हैं। कैसा अद्भुत और वास्तविक अलङ्कार है, क्योंकि सच पूछिए तो नसों से ही ताँत बनती है। और ताँत से भी बजाने पर तार के समान ध्वनि प्रकट की जा सकती है। आहा ! कैसा गुप्त भाव है।

(यदुनाथ अपने बनावटी रूप में मकान से निकलता है)

साहित्यानन्द—कौन तिलोत्तमा के पिता ? ओहो ! आज मानो बड़े अच्छे—उहुँक—महान सुन्दर का मुख देख कर चला था। सौभाग्य ही सौभाग्य। आहा ! (आवेश में आगे बढ़ जाता है)

जदुनाथ—(अनसुनी करता हुआ) क्यों दासी, तू किससे बातें कर रही है ?

दासी—मैं क्या करती। यही रास्ता घेरे खड़े थे।

साहित्यानन्द—अरे ! यह दासी है। राम ! राम ! छिः ! छिः !

(दाँतों से उँगली दबाए, सर झुका लेता है। वैसे ही दासी रास्ता पाकर चल देती है और दूसरी तरफ़ से जदुनाथ बाहर की ओर जाता है)

साहित्यानन्द—(अकेला पश्चात्ताप के भाव में, वैसे ही सर झुकाए हुए) हत् तेरे की ! मेरा सकल परिश्रम व्यर्थ गया। आज की मेरी सारी कविता ही नष्ट हो गई। हाय ! हाय ! (जिधर दासी खड़ी थी, उधर बढ़ता हुआ) क्यों री मूर्खा, जब तू दासी थी तब तूने मुझे प्रथम ही क्यों नहीं बता कर सचेत कर दिया ? दुष्टा, मूर्खा, धूर्ता—(स्थान ख़ाली देख कर) परन्तु अरे ! यह तो है ही नहीं। ऐसी पाजी है कि बिना सूचना दिए ही खिसक गई। (घूम कर उधर बढ़ता हुआ जिधर यदुनाथ खड़ा था) भगवन् ! मैं दासी से आप ही के विषय में पूछ रहा था कि आप गृह में सुशोभित हैं या नहीं। क्योंकि उस दिन मेरा गृह बन्द होने के कारण आपको विश्वास न हो सका कि वह सम्पादकीय भवन मेरा है और मैं ही उसका सञ्चालक जी तथा सम्पादक जी हूँ। अतएव उसी भ्रम के मिटाने के हेतु मेरे अनेक बार आने पर भी आपका साक्षात् नहीं प्राप्त हुआ था—(स्थान ख़ाली पाकर इधर-उधर देखता हुआ) अरे ! लो यह भी मानो अभ्यन्तर प्रवेश कर गए। ओहो ! साहित्यिक भाषा बोलने में ध्यान शब्दों ही पर बना रहा। इसीसे पता नहीं चला कि कब यह अभ्यन्तर गमन कर गए। अब क्या करूँ। कविता पढ़ूँ या पुकारूँ ? दोनों ही कार्य करूँ। आज तो वह गृह में हैं ही। (द्वार पर पुकारता हुआ) महोदय, महोदय, श्रीमान, भगवन्, महानुभाव.........

(नेपथ्य में)—कौन है ?

साहित्यानन्द—(अलग) बस-बस, अब झट से कविता पढ़ दूँ। जिसमें उनका ध्यान आकर्षित हो जाने से वह उनके कर्णगोचर होकर उन पर अपना प्रभाव तुरन्त डाल दे।—(चिल्ला कर पढ़ता हुआ)

प्राणे प्राण हृदय हृदये तुम—

(घनीराम डण्डा लिए ग़ुस्से में मकान से बाहर आता है)

घनीराम—(आते ही मारने को झपटता हुआ) फिर लगे तुम शोर मचाने।

साहित्यानन्द—(भागता हुआ) अररररर ! यह कौन निकल पड़ा ? हाँ-हाँ, यह क्या ? मैं शोर नहीं मचाता। कविता पढ़ रहा हूँ कविता। सम्मेलनों में लोग कविता पढ़ते हैं प्रचारार्थ। पत्रिकाओं में प्रकाशित कराते हैं, काहे के लिए, बस प्रचारार्थ। और मैंने निज कण्ठ-ध्वनि से इस भाँति कविता-प्रचार करने की यह नवीन युक्ति निकाली है, जिसमें शिक्षित-अशिक्षित दोनों ही इसका आनन्द ले सकें। यह तो देखिए।

घनीराम—(मारने के लिए पीछा करता हुआ) अच्छा, इसका पुरस्कार भी तो लेते जाओ। तेरी कविता की ऐसी-तैसी। अब तक न जाने मैं कैसे सब्र करता आया। तेरे बदमाश की। ज़रा ठहर तो जा।

साहित्यानन्द—हाय ! हाय ! अब नहीं भागा जाता। अरे बाप रे बाप !

(घनीराम मारता-मारता साहित्यानन्द को भगा ले जाता है)

पट-परिवर्तन

(क्रमशः)

* * *

ब्रह्म-देश का विद्रोह

अङ्गरेज़ सरकार के ग्रह इस समय अच्छे नहीं जान पड़ते। गत वर्ष जब भारत का आन्दोलन प्रारम्भ हुआ, तब भारत-सरकार को ऐङ्गलो इण्डियन पत्रों ने दमन की सलाह दी थी। सरकार ने दमन किया, और परिणाम-स्वरूप उसने भारतवासियों के मन पर से अपना विश्वास उठा लिया। परिणामतः पूरा दमन आज़माने पर, समस्त नेताओं को जेल भेज देने पर, और केवल ऑर्डिनेन्सों से शासन करने पर भी शान्ति, सरकार के किए न हुई। क़ानून और व्यवस्था का घमण्ड करने वाली सरकार, इन्हीं दो कार्यों में बुरी तरह असफल हुई। अन्त में क़ानून और व्यवस्था देश में तभी क़ायम हुई, जब उसके क़ायम होने में, अङ्गरेज़ सरकार की विरोधिनी कॉङ्ग्रेस और उसके नायक ने अपनी मुहर लगाई। अब भारत के पड़ोसी ब्रह्म-देश में गड़बड़ खड़ी हुई है। यद्यपि उस हलचल को, अभी पूरा एक वर्ष नहीं हुआ, किन्तु लगभग ६ महीने होने पर आए हैं। सरकार ने पहिले तो इस दङ्गे का स्वरूप बताते हुए उसे गिरे हुए भाव के कारण व्याकुल किसानों की हलचल बताया, फिर किसी बर्मी सरदार द्वारा ब्रिटिश सरकार को उलट कर, ब्रह्मा के राजा बनने का प्रयत्न बताया, और पुनः सरकार अनाज के भावों के गिरने के कारण विद्रोह होने के कारण को दुहराने लगी। दुख की बात यह है कि ब्रिटिश सरकार के मन का तौल बहुत जल्दी बिगड़ जाता है; और तौल बिगड़ जाने पर, सरकारी अधिकारियों के पास यह विवेक नहीं रह जाता कि उन्हें क्या करना चाहिए। इसीलिए, इस देश में जब कोई आन्दोलन होता है, तब वह उस समय तक असफल रहता है, जब तक सरकार का तौल नहीं बिगड़ता। सरकार का तौल बिगड़ते ही आन्दोलन-कर्त्ताओं को सरकार को परास्त करने का मुँह-माँगा वरदान मिल जाता है। ब्रह्म-देश में भी सरकार का तौल बिगड़ने के कारण ब्रह्म-देश की सरकार लगभग १,००० ब्रह्मदेशियों के मारे जाने और एक बड़ी तादाद के लोगों को जेल में भेजने के पश्चात्, यद्यपि अपने पत्रक में तो यह विश्वास दिलाती है कि ब्रह्मदेश का विद्रोह उसके क़ाबू में आ गया; परन्तु ता० २७ के 'टाइम्स ऑफ़ इण्डिया' में उस पत्र का सम्वाददाता लिखता है कि—"बर्मा की स्थिति बहुत गम्भीर हो गई है और एकदम कड़े उपायों के बिना ब्रह्म-देश को भयङ्कर और लगातार ग़दर से नहीं बचाया जा सकता।" 'टाइम्स' का सम्वाददाता सरकार को सलाह देता है कि वह "मार्शल-लॉ, फ़ौजी क़ानून की घोषणा करे, और किसी भी शस्त्र या जान को जोखिम पहुँचा सकने वाले उपकरण के हाथ में रखने पर, ब्रह्म देशीय जनता को मृत्यु-दण्ड मिलने की दुहाई फेर दे।" देश में भयङ्कर ग़रीबी है, सरकार क़र्ज़े पर क़र्ज़ ले रही है, और तिस पर मार्शल-लॉ से ब्रह्म-देश पर राज्य करने की सलाहें हैं। ऐसी स्थिति में भगवान ही सरकार की रक्षा करे तो करे !

कुछ लोग और हैं। ब्रह्मा के विद्रोह का कारण उनकी नज़र से सरकार के लिए लाभदायक है। विद्रोह में ब्रह्मा वालों ने कुछ भारतवासियों को भी मारा है। उधर ब्रह्मा की सरकार के आदमी यह कहते नहीं चूकते कि भारतवासी ब्रह्मा की जनता को व्यापार द्वारा चूसे जा रहे हैं। अतः ब्रिटिश सरकार द्वारा राउण्डटेबिल कॉन्फ़्रेन्स में यह जो कहा गया था, कि बर्मी लोग भारतवासियों को नहीं चाहते, और वे भारत से अलग रहना चाहते हैं; सरकार की इस बात को संसार में सिद्ध कर दिखाने का यह दङ्गा, मानो स्वर्ण-सन्धि है! परन्तु इस विषय में दो बातें पूछी जा सकती हैं! एक तो यह कि भारतीयों से कई गुना अधिक बड़ा व्यापार उस देश का, अङ्गरेज़ों के हाथ में है, तब वे अपने बड़े चूसने वालों को छोड़ कर छोटे चूसने वालों को क्यों मार रहे हैं? दूसरे यदि इस दङ्गे से बर्मा को भारत से भिन्न करने का अर्थ निकाला जाय, तो सरकार ब्रह्म देशीयों को दमन करने के बजाय, उनका समर्थन क्यों नहीं करती? दूसरी बात यह कही जाती है कि सरकार ने राउण्डटेबिल कॉन्फ़्रेन्स में यह कहा है कि सेना का वर्तमान ख़र्च कम नहीं किया जा सकता। अपने शान्त आन्दोलन के द्वारा भारतवासियों ने तो, भारत में अवसर नहीं दिया कि जिससे कोई बड़ा सैनिक प्रदर्शन सरकार कर सके। किन्तु बर्मा, ब्रह्म-देशीयों के पास शस्त्र होने, और उनका अहिंसा का निश्चय न होने के कारण, महीनों तक चलने वाला ब्रह्म-देश का झगड़ा, गोलमेज़ परिषद् में सरकार को यह प्रमाणित करने का मौक़ा देगा कि भारत की सेना और उसका ख़र्च किसी प्रकार कम नहीं किया जा सकता। अभी तक भारतीय नेता यह दलील दिया करते थे कि भारत के धन से परिपुष्ट सेना विदेशों में जाकर इङ्गलैण्ड के लिए लड़ा करती है। उसका भारत में कोई उपयोग नहीं होता। अब सरकार खुले हृदय से कह सकेगी कि यह देखो, सेना का उपयोग! देश ही के अन्दर उपयोग हो रहा है!

* * *

बर्मी किसानों का अन्न का भाव गिरने पर व्याकुल हो उठना स्वाभाविक है। परन्तु सरकार को उनका लगान मुआफ़ करने की बात इतनी देरी से क्यों सूझी? एक उपाय ऐसा भी था, जिसे बिना एक पाई ख़र्च किए सरकार कर सकती थी। क्या उसने इस गिरे हुए भाव के ज़माने में जापान और चीन से ब्रह्म-देश में आने वाले चावल को रोका? इससे सम्भव है, भारी सहायता न होती; परन्तु बर्मा के चावल का कुछ भाव तो बढ़ता, और विद्रोह रोकने में कुछ सहायता तो हो जाती। फिर अनाज का भाव क्या दक्षिण ब्रह्म देश ही में गिरा, उत्तर में नहीं? यदि वहाँ भी गिरा तो वहाँ के किसानों ने विद्रोह क्यों नहीं किया? इसके सिवा सरकार चाहती क्या है? ब्रह्म-देश के विद्रोह को रोकना, या ब्रह्म देश के ग़द्दारों को सबक़ सिखाना? यदि सबक़ ही सिखाना हो तो, एक बड़ा क़र्ज़ लेकर, एक बार ही गोला-बारूद ब्रह्म-देश पर बरसा दिया जाय। और यदि विद्रोह को शान्त करना है, तो ब्रह्मा के राजनैतिक नेताओं को सरकार ने अपने विश्वास से बाहर क्यों फेंक रक्खा है? भारत के देशी नरेशों को सुधारने और प्रजा-हितकारी बनने का उपदेश देने वाला शासन, क्या यह बात ख़ुद नहीं जानता कि प्रजा-सत्ता के बढ़ते हुए भावों के दिनों में, जनता पर मार्शल-लॉ और बन्दूक़ें शासन नहीं कर सकतीं? और आज के सुधरे हुए युग में वह शासन आदर्श शासन नहीं कहा जा सकता, जो अपनी अच्छाई पर जनता को आकर्षित न रख सके, और जिसे भूख से व्याकुल प्रजा तक का शासन बारूदख़ानों के द्वारा करने की सूझे! इसके सिवा एरावती का पूर्वी किनारा अभी भी सङ्कट से बचा हुआ है, परन्तु एरावती नदी की लहरें कितने दिन उसे बचा पाएँगी, यदि ब्रिटिश-सेना की बन्दूक़ें ब्रह्म-देश की तेल की खानों में आग लगाने ही पर तुल पड़ेंगी?

* * *

बर्मी किसान तो लड़ाई के लिए अयोग्य होता है। एक तो कुछ अफ़ीमची, फिर स्त्री से अधिक काम लेने वाला और सुस्त। तिस पर भगवान बुद्ध के 'न मारने और हिंसा न करने' के मज़हब का क़ायल। तिस पर अङ्गरेज़ों और भारतीयों के हाथ व्यापार सौंप कर लड़ाई का भारी उपकरण जो धन है, उससे ख़ाली। भारत के राजपूत, सिक्ख, पठान और 'मङ्गल पाण्डे' की सन्तान, दोआबे के किसान, भाव गिरने से, सरकार से लगान मुआफ़ कराने को पूर्ण हद तक भी न उभड़े, और ब्रह्म-देश के अयोग्य किसान मरने-मारने पर उतारू? ज़रा बात समझ में कम ही आती है। अनाज के भावों का गिरना अनेक कारणों में से एक क्यों न हो, किन्तु सर्वथा यही कारण तो विद्रोह का नहीं हो सकता। इधर ब्रह्म देशीय जनता के नेता एक तरफ़ तो यह कहते हैं कि वे भारत से अपना सम्बन्ध-विच्छेद नहीं चाहते और दूसरी तरफ़ वे सरकार को सलाह दे रहे हैं कि वह दमन-नीति को बन्द कर, जनता को शान्त होने का अवसर दे। सरकार नेताओं की इन बातों को क्यों नहीं मानती? इसके सिवा केवल बर्मी जनता के कहने से ही सरकार भारत से ब्रह्म देश को अलग रखना चाहती है और वह भी केवल ब्रह्म-देश के हित के लिए? ब्रह्म-देश की तेल की खदानें किसके हाथ में हैं? वहाँ का समुद्री व्यापार कौन चला रहा है? वहाँ के बाज़ार क्या ब्रह्मी जनता के हाथ में हैं? क्या ब्रह्मी जनता का बनाया हुआ माल ही वहाँ बिकता है? ब्रह्म-देश की प्रधान बैङ्कों में किसका मूलधन लगा हुआ है? ब्याज से विशेष लाभ कौन उठा रहा है? यदि यह सब कुछ यूरोपियनों के हाथ में है तो क्या सरकार को इस बात का भय नहीं है कि यदि ब्रह्म-देश भारत से मिल गया और भारत को स्वराज्य मिल गया तो यह सारी महान् सम्पत्ति ब्रह्म-देश के हाथ में चली जायगी? तब फिर ब्रह्म-देश को भारत से अलग रखने में अधिक लाभ किसको है? ब्रह्मी जनता को या ब्रिटिश जाति को? इधर अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से एशिया का महत्व और प्रभाव बढ़ता जा रहा है? अमेरिका स्वतन्त्र हो गया और यूरोप में एक-दूसरे के घर व्यापार करने को जगह नहीं बची। किन्तु क़ुस्तुनतुनियाँ से लेकर क्याउचाउ तक सारा एशिया व्यापार के लिए खुला पड़ा है। जब भारत स्वतन्त्रता के लिए कोशिश कर रहा है, तब क्या ब्रह्म-देश की जनता को ब्रह्म-देश भारत से अलग चाहिए? या बलवान जहाज़ी, हवाई और मुल्की फ़ौजी अड्डों को एशिया में सबल बनाए रखने के लिए ब्रह्म देश जैसा समुद्र और तेल की खदानों वाला, काहिल किसानों का मुल्क सरकार को अपने लिए चाहिए?

(शेष मैटर ३७वें पृष्ठ के पहले कॉलम के नीचे देखिए)

अजी सम्पादक जी महाराज,

जय राम जी की !

जान पड़ता है आजकल कानपुर पर मङ्गल-ग्रह की दया-दृष्टि है; क्योंकि आजकल कानपुर वालों को मार-काट की बातों के अतिरिक्त और किसी बात में आनन्द ही नहीं आता। कुछ पढ़े-लिखे तथा कुछ ऐसे आदमी, जो यह समझते हैं, कि जब तक वह सुरक्षित हैं, तब तक चाहे मुसलमान मरें या हिन्दू, उनकी बला से—इनको छोड़ कर, अन्य सब लोगों का भेजा हिन्दू-मुस्लिम मनोमालिन्य की समस्या से लड़ा करता है। "होशो-हवास खो दिए उसकी निगाह ने" के अनुसार किसी ने ऐसा जादू डाला है कि लोग सब कुछ भूल गए। न कहीं स्वराज्य की चर्चा है, न गोलमेज़ कॉन्फ़्रेन्स का ज़िक्र है और न महात्मा गाँधी के विचार जानने की उत्कण्ठा है। जिससे मिलिए वह पहला प्रश्न यही करता है—"कहिए, सब कुशल तो है ? आपके मुहल्ले में तो कोई झगड़ा-फ़साद नहीं ?" कोई लालबुझक्कड़ महाशय सिर हिलाते हुए बड़ी गम्भीरता से कहते हैं—"अभी एक बार फिर झगड़ा होगा और अवश्य होगा।" मानो उन महाशय के पास झगड़े के लिए हिन्दू-मुसलमानों का नोटिस पहुँच गया है। कोई साहब फ़र्माते हैं—"अजी जनाब, उस दफ़ा हिन्दू धोखे में रहे, इससे नुक़सान उठा गए, इस बार सब तैयार बैठे हैं; अगर बज गई तो ऐसी बजेगी कि मुसलमानों को भागते राह न मिलेगी।" मानो मुसलमानों के भागने के रास्ते बन्द करने का ठेका इन्हीं महाशय को मिला है। कोई महोदय इधर-उधर देख कर धीरे से यह गुप्त रहस्य बतलाते हैं कि—"इस बार हिन्दू पुलिस भी तैयार बैठी है। अगर मुसलमान पुलिस ने ज़रा भी मुसलमानों का पक्ष लिया, तो हिन्दू पुलिस हिन्दुओं की मदद करेगी।" इतना सुनते ही उनके साथ वाले दूसरे महोदय कहते हैं—"कल एक आरम पुलिस (आर्म्ड पुलिस) वाले से मेरी बातचीत हुई थी। वह कहता था—'बाबू, हम लोग तो भगवान से मनाते हैं कि एक बार झगड़ा और हो जाय तो ज़रा जी के अरमान तो निकलें।' सो जनाब, हिन्दू आरम पुलिस वाले गोली-बारूद से लैस बैठे हैं।" वह महाशय उस समय यह भूले हुए थे कि आर्म्ड पुलिस में मुसलमान भी तो हैं, हिन्दू अपने अरमान निकालेंगे तो क्या वे अपने अरमानों को पिटारे में ही बन्द रक्खेंगे। एक महोदय ने अपनी समझ में बड़ा भयानक समाचार सुनाया, बोले—"बाहर से पान्सै (पाँच सौ) मुग़लिया आए हैं।" इसके आगे की बात उन्होंने नहीं बताई। यदि बताने की कृपा करते तो कहते—"उनकी बिल्टी मेरी जेब में पड़ी है, छुड़ाने के लिए स्टेशन जा रहा हूँ।"

इसी प्रकार मुसलमानों में किसी ने उड़ा दिया कि बाहर से तीन-चार सौ गङ्गापुत्र आए हैं। बस फिर क्या था, उस दिन मुसलमानी मुहल्लों में अच्छा ख़ासा रत-जगा हो गया।

इस प्रकार नित्य नवीन अफ़वाहें उड़ती हैं। और ऐसी अफ़वाहें, जिनका सिर न पैर; परन्तु लोग उन पर भी विश्वास कर लेते हैं। इन अफ़वाहों को सुन-सुन कर अपने राम की मण्डली के एक सज्जन की जीभ में भी खुजली पैदा हुई। उन्होंने एक ऐसे आदमी को ताका कि जो किसी भी बात पर विश्वास कर लेने के लिए कमर कसे घूमते रहते हैं। उनसे कहा—"कुछ और भी सुना ?" वह बोले—"क्या ? हमने तो नहीं सुना।" कहा गया—"इतवार को लखनऊ का टिकिट बन्द रहता है।" उन्होंने बड़े आश्चर्य से पूछा—"अच्छा, यह क्यों ?" उत्तर मिला—"लखनऊ के मुसलमानों ने सरकार को अर्ज़ी दी थी कि हमको ख़ौफ़ है कि कानपुर के हिन्दू लखनऊ में आकर कुछ झगड़ा न करें, इसलिए उनका आना बन्द किया जाय।" वह महोदय प्रसन्न होकर बोले—"देखा ! यह रुआब है हिन्दुओं का। मुदा भइया खाली इतवार को काहे बन्द रहता है। क्या और दिन नहीं आ सकते हैं ?" कहा गया—"और दिन सब अपने काम-काज में लगे रहते हैं। अपना काम-काज छोड़ के कोई क्यों जाने लगा। इतवार को सबकी छुट्टी रहती है न, इससे।"

वह अक़्ल के पुतले सिर हिला कर बोले—"बहुत ठीक ! अब समझ में आ गया।" परन्तु फिर कुछ सन्देह उत्पन्न हुआ तो बोले—"मुदा भाई साहब, अख़बारों में तो कहीं यह निकला नहीं।" उन्हें बताया गया—"ऐसी बातें कहीं अख़बारों में छपा करती हैं। अख़बारों में छपें तो तमाम हिन्दुस्तान के हिन्दुओं को पता लग जाय कि लखनऊ के मुसलमानों पर चढ़ाई बोली गई है। तब तो चारों तरफ़ के हिन्दू लखनऊ की तरफ़ दौड़ पड़ें।"

इतना सुन कर उन महाशय की समस्त शङ्काओं का निवारण हो गया और उन्हें पूरा विश्वास हो गया। उन्होंने यहाँ तक कह डाला—अच्छा बता दिया, हमें अक्सर लखनऊ जाना पड़ता है। सो अब इतवार को न जायँगे। इतवार को जाना ही पड़ा तो मोटर से चले जायँगे।

उनको इतना भी न सूझा कि जिस प्रकार वह मोटर से लखनऊ जा सकते हैं, उसी तरह बहुत से लोग जा सकते हैं, फिर रेल का टिकिट बन्द करने से क्या लाभ हुआ। उन्होंने इस बात का ज़िक्र और लोगों से भी किया। कुछ ने, जो उन्हीं की भाँति बुद्धि-भवानी के सपूत थे, विश्वास कर लिया। परन्तु जब कुछ लोगों ने उन्हें बेवक़ूफ़ बनाया और समझाया, तब उनकी समझ में आया कि ऐसा होना असम्भव है।

मुहर्रम के आरम्भ होते ही निराशावादियों के मुख पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि इन दिनों में कानपुर रसातल को चला जायगा। नित्य सवेरे उठ कर यही सोचते थे कि आज ख़ैरियत नहीं है—आज अवश्य कुछ न कुछ होकर रहेगा। उधर मुसलमानों में कुछ आवश्यकता से अधिक आशावादी लोगों ने सोचा कि अब क्या है, अब हिन्दुओं से समझ लेंगे। "सइयाँ भए कोतवाल अब डर काहे का !" कानपुर में मुसलमान अधिकारियों की अधिकता के कारण उन्होंने सोचा कि हम जो चाहेंगे, वह कर डालेंगे।

मुहर्रम आरम्भ होने पर दफ़ा १४४ लगा दी गई, २४ मई को मुहर्रम का जुलूस निकलने वाला था। मुसलमान बिना अस्त्र-शस्त्रों के जुलूस कैसे निकालते, नाक न कट जाती और विशेषतः अब्बाजान के समान कोतवाल और दादाजानवत् कलक्टर रहते हुए ! मुसलमानों ने ज़िद्दी लड़के की भाँति कहा—"अब्बाजान, हम तो मुहर्रम में तलवारें और बल्लम लेकर निकलेंगे।" अब्बाजान बोले—"न बेटा, ऐसा मत करो, दफ़ा १४४ लगी है।" ज़िद्दी बेटे बोले—"आपके होते हुए हमें उसका क्या डर है।"

अब्बाजान यह सुन कर दादाजान के पास दौड़े कि—"लड़के तलवार लेकर निकलने की ज़िद कर रहे हैं।" दादाजान उस समय कदाचित दादीजान से लड़े हुए बैठे थे, बोले—"ऐसा नहीं हो सकता।" अब्बाजान लौट आए और लड़कों को फिर समझाया। पर वे एक न माने, बोले—"तो जाइए, हम जुलूस ही न निकालेंगे।" अब्बाजान पुनः दादाजान के पास दौड़े गए और समाचार सुनाया और सिफ़ारिश भी की कि, "क्या हर्ज है, निकलने दीजिए, कोई उपद्रव न करने पावेंगे, मैं काफ़ी इन्तज़ाम रक्खूँगा।" दादाजान ने इजाज़त दे दी कि अच्छा निकलने दो। फिर क्या था, मुसलमानों ने रात के आठ बजे जुलूस निकाला। शहर भर में घूमे। ख़ूब छाती फाड़-फाड़ कर हिन्दुओं का

किस तरह "गाँधी" को मोटर की इजाज़त मिल गई

[कविवर "बिस्मिल" इलाहाबादी]

इसमें क्या 'ऑनर' मिला, क्या इसमें इज़्ज़त मिल गई
वह समझते हैं, कली यों दिल की शायद खिल गई
सुनते हैं 'लन्दन' में है अब आजकल 'शिमला' का ज़िक्र
किस तरह "गाँधी" को मोटर की इजाज़त मिल गई

× × ×

शेख बुद्धू जायँगे, गङ्गा बरहमन जायँगे
वह अगर अकड़ेंगे, यह अपनी जगह तन जायँगे
दोनों मिल जाएँ तो कोई बेहतरी की बात हो
सुनते हैं इस शर्त पर "गाँधी" भी लन्दन जायँगे

* * *

(२६वें पृष्ठ का शेषांश)

भारत ही की तरह बर्मी लोग भी भाईचारे से ही क़ाबू में आवेंगे। दमन को हारना पड़ेगा, और यद्यपि सिङ्गापुर का जहाज़ी अड्डा और तेल की खदानें ब्रिटिश सरकार की सहायक रहेंगी, तथापि उस शासन का मूल्य ब्रह्म-देश के ग़रीब किसानों से वसूल किए लगान के मूल्य से महँगा पड़ेगा। अतः हम तो सरकार से निवेदन करेंगे कि दमन बहुत हुआ, अब वह शान्ति से काम ले।

—कर्मवीर (हिन्दी)

❀

दिल दहलाने वाले 'नारे' लगाए। और हिन्दुओं को भयभीत करने के लिए चिल्लाने में स्वयम् भी बेहोश हो गए। कहीं किसी को गालियाँ दीं, कहीं किसी को तलवारें दिखाईं। कहीं गोश्त फेंका, कहीं हड्डी फेंकी। कहीं दूकानों के परदे काट डाले, कहीं साइनबोर्ड उखाड़ फेंके। अब्बाजान भी साथ थे और अपने होनहारों की यह वीरता देख कर कदाचित मन ही मन प्रसन्न होते हों कि हमारे सुपुत्र बड़े बहादुर हैं।

अब क्या था, सपूतों का साहस बढ़ गया। दूसरे दिन साइनबोर्ड पर मचल गए कि जब तक यह न हटाया जायगा, तब तक आगे न बढ़ेंगे। परन्तु उस साइनबोर्ड को हटाना अब्बाजान की शक्ति के बाहर की बात थी। हिन्दुओं से साइनबोर्ड हटा लेने के लिए कहा गया, परन्तु हिन्दू भी ज़िद पकड़ गए। कुछ कॉङ्ग्रेसमैन, जो कानपुर में स्वर्गीय गणेशशङ्कर विद्यार्थी का स्थान प्राप्त करने के लिए प्लेग-आक्रान्त चूहे की तरह व्याकुल हैं, यह समझते हैं कि जो कानपुर में हिन्दू-मुसलिम एकता कराने में सफल होगा वही कानपुर का नेता बनेगा और गणेश जी का आसन ग्रहण कर सकेगा। अतएव हिन्दू-मुसलिम एकता स्थापित कराने की बौखलाहट में ये लोग मुसलमानों की कोई भी शर्त मानने को तैयार रहते हैं, यहाँ तक कि यदि इनसे कहा जाय तो कदाचित मुसलमान हो जाने को भी तैयार हो जायँ—मतलब निकल जाने पर पीछे चाहे फिर शुद्ध हो जायँ। इन कॉङ्ग्रेसमैनों ने बीच में पड़ कर उस दिन साइनबोर्ड को कुछ थोड़ा सा सरकवा कर जुलूस निकलवा दिया। फिर क्या था, मुसलमान भाइयों का मिज़ाज फ़लके-हफ़्तुम पर पहुँच गया। समझे, मार लिया है धापड़ वाले को!

२७ मई को मुसलमान भाई इतने दुलार में आ गए कि पहले से ही साइनबोर्ड हटवाने की युक्तियाँ भिड़ाने लगे। उन्होंने कानपुर के नेतृत्व की उम्मीदवारी करने वालों को राज़ी भी कर लिया; परन्तु बाज़ार वाले अड़ गए। उन्होंने कहा—"चाहे जो हो, परन्तु साइनबोर्ड नहीं हटेगा।" मुसलमानों ने कहा—"तो हम अलम ही न निकालेंगे।" सोचे थे कि ऐसा कहने से दादाजान फिर ज़िद पूरी करने की कोशिश करेंगे। परन्तु उनके दुर्भाग्य से परदादाजान भी आ धमके। उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि यदि उन्हें अलम निकालना है तो निकालें, वरना अपने घर बैठें—साइनबोर्ड नहीं हटेगा। मजबूरन अथवा ख़ुशी से अब्बाजान और दादाजान को भी परदादाजान की बात का समर्थन करना पड़ा। यह दशा देख कर मुसलमानों ने हड़ताल कर दी और अब तक हड़ताल किए हुए हैं। न अलम निकाले, न शबे-शहादत मनाई, न ताज़िए दफ़नाए। एक तरफ़ से सबका बॉयकॉट कर दिया। अफ़सोस! उन्हें यह पता नहीं था कि इस ज़िद का यह परिणाम होगा, अन्यथा यह प्रश्न ही न उठाते। परन्तु अब तो शान का सवाल आ गया। शान किरकिरी न हो—चाहे ताज़िए दफ़नाए जायँ या न दफ़नाए जायँ। यह मुसलमान भाइयों की धार्मिकता का हाल है। धर्म जाय चूल्हे-भाड़ में, शान क़ायम रहनी चाहिए। मुहर्रम के जुलूस में स्वयं तो घोड़ों, इक्कों, ऊँटों तथा तख़्तों पर सवार होकर चलें और हिन्दुओं से यह आशा रक्खें कि वे अपनी दूकानों के चबूतरे पर भी न खड़े हों, नीचे उतर कर ताज़िए की ताज़ीम करें। वाह री ताज़िएदारी!

सम्पादक जी, यह दशा है। फ़िलहाल २८ तारीख़ को बाज़ार की यह स्थिति थी कि मेस्टन रोड पर एक ओर मुसलमान और दूसरी ओर हिन्दू जमा थे। बीच में पुलिस गार्ड थी। हिन्दू मुसलमानों को और मुसलमान हिन्दुओं को देख रहे थे। दोनों अपनी-अपनी ओर भयभीत थे। मुसलमान समझते थे कि हिन्दू कुछ न कुछ उपद्रव अवश्य करेंगे और हिन्दू समझते थे कि मुसलमान कुछ न कुछ उत्पात उठावेंगे। हालाँकि इतना दम दोनों में से एक में भी नहीं है। ख़ाली जीभों की लपालपी है। बड़ी बहादुरी करेंगे तो इक्के-दुक्के रास्ता चलने वाले को अँधेरे-उजाले पीट कर अपना दिल बहला लेंगे। सो यह प्रवृत्ति हिन्दुओं में नहीं मुसलमानों में अधिक है। वे इस ताक में बहुत रहते हैं कि किसी ग़रीब राहगीर को पीट कर हिन्दुओं को भयभीत करें। बहादुर बहुत हैं न? बहादुरों का गुण यही है। ख़ैर, फ़िलहाल तो ताज़िए ठण्डे हैं। हाँ, यदि माँ-बाप सरकार की थोड़ी सी भी सहायता मिल जाय तो फिर देखिए, कैसा जोश और गर्मी आती है। बेचारे कॉङ्ग्रेस वाले चले थे वैमनस्य दूर कराने, सो वह और भी बढ़ गया। चौबे जी छब्बे जी होने गए थे, सो दुबे ही रह गए।

भवदीय,
—विजयानन्द (दुबे जी)

रजत-रज

[संग्रहकर्ता—श्री० लक्ष्मीनारायण जी अग्रवाल]

छली पवन प्रातःकाल वाटिका में प्रेमी बन कर आता है और पुष्पों का मुख चूम-चूम कर स्नेह जताने के बहाने ओस-कणों को उनकी गोद से छीन कर ले जाता है।

❀

मनुष्य-जीवन विविध भावनाओं के अभिनय की रङ्ग-भूमि है, आशा पर्दे की ओट से सहायता करने वाला कुशल प्रयोजक।

❀

चन्द्र-किरणें पत्तों और पुष्पों पर छोटी बालिका की भाँति आनन्द से थिरकती हैं।

❀

बत्ती उसका देने से दीपक अधिक प्रकाशवान हो जाता है।

❀

सौन्दर्य की उपासना हृदय से होती है, बाह्य नेत्रों से नहीं।

❀

आश्रयहीनता विपत्ति को असह्य बना देती है। अन्धकार में निर्जनता और भी भयप्रद हो जाती है।

❀

संसार की सभी अवस्थाओं का आदि और अन्त वेदना से पूर्ण होता है।

दूसरे की वेदना में हमारा जन्म होता है, अपनी वेदना में हमारी मृत्यु।

❀

मतवाले के झूमने का रहस्य कौन बता सकता है? चढ़े हुए नशे की व्याख्या क्या हो सकती है?

❀

[हिज़ होलीनेस श्रीवृकोदरानन्द विरूपाक्ष

वाह कानपुर ! पट्ठे ने 'फिर से लड़े सो कायर नहीं,' इस पुरानी कहावत को चरितार्थ करते हुए लगे हाथ वीरता की भी नाक रख ली। अमाँ, मुहर्रम ही क्या, जो दो-चार शहीद न हों !

❀

ख़ैर, यह दङ्गे की दुम अच्छी रही। श्रीमती सखी नौकरशाही को गत दङ्गे का कलङ्क धोने का मौक़ा मिल गया और 'हाय हुसेन, हम न हुए' वालों के दिल का अरमान भी निकल गया। आशा है, अब कानपुर से कमबख़्त कुफ़्र सदा के लिए दुम दबा कर नौ-दो-ग्यारह हो गया होगा।

❀

कहते हैं, इस 'बचकाने' दङ्गे का कारण एक साइन-बोर्ड था। उसके नीचे से अगर गत वर्षों की तरह इस वर्ष भी 'अलम' निकल जाता तो सारा मुहर्रमी महोत्सव ही 'अल्लम-ग़ल्लम' हो जाता। क्योंकि उस साइनबोर्ड पर महाकाफ़िर गाँधी का नाम लिखा था और अलम की अटल प्रतिज्ञा थी, कि अब की वह उस नाम के सामने सर नहीं झुका देगा।

❀

साइनबोर्ड के नीचे बिजली का तार था, परन्तु वह क़ुरानमजीद की शरीअत के अनुसार खिंचा हुआ था, अथवा उसकी सुन्नत या ख़तना हो चुका था, इसलिए वह विशुद्ध इस्लामी था और उसके नीचे अलम बख़ुशी और बरज़ामन्दी झुक सकता था। क्योंकि उसे हटाने की चेष्टा 'म्याऊँ' के गले में घण्टी बाँधने की तरह ज़रा ख़तरनाक था। परन्तु काफ़िर तो ठहरे केले के पौधे, उन्हें काटने के लिए तो खपरेल का टुकड़ा ही काफ़ी है।

❀

बात यह थी कि गत दङ्गे के समय काफ़िरों ने मरने में बड़ी कञ्जूसी दिखाई थी। इतना प्रयत्न करने पर भी काफ़ी तादाद में नहीं मरे थे, इसलिए उस घाटे की पूर्ति की चेष्टा अत्यावश्यक थी। इसीलिए पहले उनके मन्दिरों में मांस के टुकड़े फेंके गए, वे ज़बरदस्ती दूकानों से घसीटे गए और उन्हें गालियाँ दी गईं। परन्तु तो भी कमबख़्तों ने चूँ तक नहीं की।

❀

तब अन्त में, बमजबूरी तमाम साइनबोर्ड का झगड़ा खड़ा किया गया और बफ़ज़लहु अल्लाहताला काम-याबी भी हासिल हो गई। कुछ काफ़िर मरे और कुछ अस्पतालों में विश्राम लेने चले गए। वर्ष दिन का त्यौहार साङ्गोपाङ्ग और सविधि सम्पन्न हुआ। नहीं तो ख़ारे-हसरत क़ब्र तक खटकता ही रह जाता !

❀

इस मामले में कानपुर के मुसलमान लीडरों ने बड़ी ईमानदारी और न्याय-प्रियता से काम लिया। उन्होंने मुसलमानों से ज़िद छोड़ने की प्रार्थना न करके हिन्दुओं से साइनबोर्ड ही हटा देने की प्रार्थना की। क्योंकि बुद्धिमानों का क़ौल है कि—

जो बनि आवै सहज में वाही में चित दे !

❀

अच्छा जनाब, मारिए गोली कानपुर को। टूटने दीजिए कुफ़्र। आइए, ज़रा कलकत्ते की सैर करें। घबराइए नहीं, वहाँ पानी बरस चुका है और बङ्गाल का देशी 'चुसुआ' आम भी बाज़ार में आ गया है। फलतः संयुक्त प्रान्त की तरह ११४ और १६ डिग्री की गरमी का मुक़ाबला नहीं है। हाँ, जो वियोगी हों, उधर न ताकें, क्योंकि—

> कछु की कछू है जाति है
> धन जोय संयोगिन दसा,
> कह गति वियोगिन की—
> जिन्हें सालति मिलन की लालसा !

❀

ख़ैर जनाब, गत सप्ताह कलकत्ते में हिन्दी-साहित्य सम्मेलन की और 'मुर्ग़ की दुम में नमदा' की तरह कवि-सम्मेलनों की ख़ासी धूम रही। किसी मनचले ने "सारे हैं" समस्या दे दी थी, इसलिए एक दिन के कवि-सम्मेलन में श्रोताओं को 'भठियारख़ाने' का भी मज़ा मिल गया। भई, ज़रा 'नीको पै फीकी' की तरह टेस्ट बदलने के लिए कुछ तो चाहिए ही। फलतः अपने राम तो इस साहित्यिक सुरुचि के तहे-दिल से एडमायरर हैं।

❀

मगर पण्डित बनारसीदास जी चतुर्वेदी को तो, जब से वरों* ने खदेड़ा और बेचारे को बाध्य होकर घासलेटीपन का आश्रय लेना पड़ा, तब से ऐसा घासलेटी रोग हो गया है, कि कुछ न पूछिए। फलतः आपने और आपके अन्यान्य कई साथियों ने बेवक़्त की शहनाई की तरह वावेला मचा कर 'सारे हैं' का सारा मज़ा ही किरकिरा कर दिया, अन्यथा श्रोताओं को ठीक वही मज़ा मिल जाता जो राम-कलेवा-कार के मतानुसार श्रीरामचन्द्र को जनकपुर में मिला था।

❀

कवि तो बाधा-बन्ध-विहीन, बिना रस्सी के बैल की तरह, स्वच्छन्द होते ही हैं। उन्हें अगर छन्दःशास्त्र आदि की आवश्यकता नहीं, तो फिर श्लीलता और अश्लीलता के फेर में पड़ कर समय नष्ट करने की भी आवश्यकता नहीं। आख़िर लखनऊ के मियाँ चिरकीन और अवध के 'विशाल' कवि क्या अमर कवियों में नहीं हैं ? हमारी तो राय है कि 'दुइ पट भीतर आइके' सूर और तुलसी पिसान हो जायँगे, परन्तु इन कविता-कानन की डुरियों का बाल भी बाँका न होगा।

❀

सुनते हैं, अब की हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभा-पति महोदय की स्पीच 'दिल-ख़ुशाल' की तरह सरस और मधुर रही—न तुर्शी, न मिठास की तीव्रता। एक-एक शब्द ग़टाग़ट नीचे उतरते गए, किसी श्रोता को कान हिलाने की भी आवश्यकता न पड़ी। इसके सिवा साहित्यिक 'ठूँठों' की ख़बर लेने वाले काशी के काले 'कोंपल' जी भी अब की सम्मेलन में नहीं पधारे थे। इसलिए सभापति जी भी धड़ल्ले से सारी के सन्निकट तक अपनी स्पीच पढ़ गए।

❀

अबकी सम्मेलन में सब से बड़ी मार्केदार बात कही कविवर पं० सूर्यकान्त जी त्रिपाठी 'निराला' ने। आपने 'छायावाद' और 'रहस्यवाद' का तत्व समझाते हुए कहा—"परिदृश्यमान छाया के अन्दर जो सार वस्तु है, वही छायावाद है।" आख़िरश आपने लोगों को 'छाया-वाद' का तत्व समझा कर ही दम लिया। परन्तु बेचारे जगद्गुरु ने तो अपने झोपड़े के आस-पास के तमाम वृक्षों की 'परिदृश्यमान' छायाओं को टटोल डाला, परन्तु कोई 'सार वस्तु' उसमें दृष्टि-गोचर न हुई !

❀

भई, छाया के अन्दर 'सार वस्तु' की बात, माशा-अल्लाह एक ही रही! और निराला जी की इस छायावाद की नवीन व्याख्या ने 'मथवा मूल बिलौजा टीका' को भी मात कर दिया। इसलिए अब तक तो छायावादी कविताओं के अन्दर अर्थ ढूँढ़ने की ही ज़हमत उठानी पड़ती थी, परन्तु अब परिदृश्यमान छाया के अन्दर सार वस्तु भी ढूँढ़नी पड़ेगी। वही कहावत हुई कि गए थे, रोज़ा छुड़ाने नमाज़ गले पड़ी।

❀

ज्यों-ज्यों गोल टेबिल के लम्बे दिन निकट आते जाते हैं, त्यों-त्यों विलायत के 'भारत-बन्धुओं' की बेचैनी भी बढ़ती जाती है। ख़ास करके लॉर्ड मेस्टन और साइ-मन सप्तक वाले सर जॉन साइमन की हालत तो बहुत ही ख़राब है। बेचारे आहार-निद्रा भूल कर अपने देशवासियों को सचेत और सावधान करने में लगे हैं, बाबा सूरदास की इन पंक्तियों के अनुसार :—

> सिखिन सिखर चढ़ि टेर सुनायो।
> बिरहिनि ! सावधान है रहियो—
> चढ़ि पावस दल आयो !

❀

इन दोनों सज्जनों की राय है कि भारत की शान्ति और श्रृङ्खला की रक्षा का भार अङ्गरेज़ों को अपने कन्धे पर रखना ही पड़ेगा, अन्यथा महा अनर्थ हो जाएगा, धरा धँस जायगी, हिमालय चूर हो जाएगा और ब्रिटिश जाति संसार में मुँह दिखाने के क़ाबिल भी नहीं रह जायगी !!

❀

फलतः अपनी जाति वालों को इस प्रकार निष्काम धर्म का उपदेश प्रदान करने के लिए अपने राम लॉर्ड मेस्टन और सर जॉन साइमन का तहे-दिल से शुक्रिया अदा करते हैं और इस नेकनीयती और पर-हितैषिता के लिए उन्हें बधाई देते हैं। मगर इस देश के कमबख़्त काले ऐसे एहसान-फ़रोश हैं, कि अपना हित और अन-हित भी नहीं समझ सकते। भारत के सम्बन्ध में इतनी उदार सम्मति देने पर भी कमबख़्तों ने इन महानुभावों के प्रति कृतज्ञता नहीं प्रगट की !

❀

* यह एक ऐतिहासिक घटना है और इसका विर[illegible]य 'सैनिक'-सम्पादक श्री० श्रीकृष्णदत्त पालीवाल [illegible] पास संग्रहीत है।—फ़तवाकार।

'चाँद' असाधारण सम्मान से लोग क्यों डाह करते हैं ??
मूल्य
सम्पादक :—
श्री० त्रिवेणीप्रसाद, बी० ए०, सं० 'भविष्य'
वार्षिक चन्दा ६॥) रु०
छः माही चन्दा ३॥) रु०
चाँद
आख़िर 'चाँद' में गुण क्या है ?
'चाँद' के श्रेणी में नाम लिखाना सद्विचारों को आमन्त्रित करना है।
'चाँद' ही रत में ऐसा प्रभावशाली पत्र रहा है, जिसने अपने थोड़े से ही जीवन में समाज तथा देश में खल-बल है।
'चाँद' को सभी श्रेणी के विचारशील व्यक्तियों, राजाओं, महाराजाओं, बड़े-बड़े प्रसिद्ध नेताओं और आला है। सभी भाषा के पत्र-पत्रिकाओं ने जितनी प्रशंसा 'चाँद' की की है, उतनी किसी पत्र को नहीं।
'चाँद' ही रत में ऐसा प्रभावशाली एवं भाग्यशाली पत्र है, जो निर्धन की कुटिया से लेकर राजा-महाराजों की ओं तक आपको मिलेगा।
'चाँद' तथा ने पत्र-पत्रिकाओं तथा अपने प्रकाशनों द्वारा थोड़ी-बहुत—जो भी सेवा भारतीय समाज और देश की वह सहज ही विस्मरण करने की बात नहीं है।
'चाँद' के प्रत्येक आपको गम्भीर से गम्भीर राजनैतिक एवं सामाजिक लेखमालाओं के अतिरिक्त, सैकड़ों एकरङ्गे, दुरङ्गे चित्र तथा कार्टून मिलेंगे, जो किसी भी पत्र-पत्रिकाओं में आपको नहीं मिल सकते।
'चाँद' में प्रका वताओं के सम्बन्ध में कुछ कहना व्यर्थ है। जिस पत्रिका की उर्दू शायरी का सम्पादन कविवर "बिस्मि ते हों और हिन्दी कविताओं का सम्पादन करते हों कविवर आनन्दीप्रसाद जी श्रीवास्तव और प्रोफ़ेसर मार वर्मा, एम० ए०, जैसे सुविख्यात कवि, उस पत्रिका की कविताओं से कौन टक्कर ले सकता है
'चाँद' में प्रकाशि के सम्बन्ध में पाठकों को स्वयं निर्णय करना चाहिए। हम इस सिलसिले में केवल इतना ही निवेदन हते हैं, कि सभी सुप्रसिद्ध लेखकों का अभिन्न सहयोग 'चाँद' को प्राप्त है। फिर श्री० जी० पी० श्रीव विजयानन्द (दुबे जी) और हिज़ होलीनेस श्री १०८ श्री० जगद्गुरु के चुटीले विनोद आपको कि मिलेंगे !!
यदि अभी तक ग्राहक नहीं हैं, तो इन्हीं पंक्तियों को हमारा निमन्त्रण समझें और इष्ट-मित्रों सहित 'चाँद' के ग्रा में नाम लिखा कर हमें और भी उत्साह से सेवा करने का अवसर प्रदान करें।
ता भी भरपूर लाभ उठा सकते हैं
'चाँद' कार्यालय, चन्द्रलोक, इलाहाबाद